भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

पत्रिका विभाग सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

वर्ष १८ . अंक १ सोमवार, ४ अक्तूबर, '७१

सत्याग्रह और सर्वोदय

सत्याग्रह के बिना सर्वोदय असंगत है। यहाँ सत्याग्रह का तात्पर्य लेना चाहिए। सत्य का आग्रह अहिंसा के बिना हो ही नहीं सकता। इसलिए सर्वोदय की सिद्धि अहिंसा की सिद्धि पर निर्भर है। अहिंसा की सिद्धि तपश्चर्या पर निर्भर है। तपश्चर्या सात्त्विक होनी चाहिए। उसमें अविश्रान्त उद्यम विवेक इत्यादि समाविष्ट हैं। शुद्ध तप में शुद्ध ज्ञान होता है। अनुभव बताता है कि लोग अहिंसा का नाम तो लेते हैं, लेकिन बहुतों को मानसिक आलस्य इतना रहता है कि वे वस्तुस्थिति से परिचय तक करने का श्रम नहीं उठाते। दृष्टान्त लीजिए-हिन्दुस्तान कंगाल है। हम दरिद्रता दूर करना चाहते हैं। किन्तु दरिद्रता कैसे आयी, यह कैसे दूर हो सकती है, आदि का अध्ययन कितने लोग करते हैं? अहिंसा का भक्त तो ऐसे ज्ञान से परिपूर्ण होना चाहिए।

हम तो जहाँ मिले वहाँ से सत्य लेंगे। जहाँ देखें वहाँ उसकी प्रशंसा करेंगे, उसका अनुकरण करेंगे अर्थात् सर्वोदय के प्रत्येक वाक्य में अहिंसा और ज्ञान का दर्शन होना चाहिए।

११-३-'३८ मो० क० गांधी

गांधी पुराना पड़ गया ?

गांधीजी ने जीते-जी जो सवाल उठाये थे क्या वे हल हो गये ? अगर हल हो गये तो गांधी की अब कोई जरूरत नही। अगर उन सवालों के कोई नये जवाब निकल आये हों तब भी गांधी की जरूरत नही है। हम मान लेंगे कि गांधी आये, और जो करना था करके गये। हम नये जमाने में हैं, नये जमाने की बात सोचेंगे, गांधी से अपने को क्यों बांधें ?

लेकिन गांधी के जाने के इतने वर्ष बाद भी हम देख रहे हैं कि जो सवाल गांधी ने उठाये थे वे आज जनता के सवाल बन गये हैं, और वह उनका हल पाने के लिए अधीर हो रही है।

जनता के सवाल क्या हैं ? अधिक नही, हम कुछ ही सवालों को चुन लें। देश के करोड़ों लोगों के सामने सबसे बड़ा सवाल है रोटी का। कल-कारखाने बने, व्यापार बढ़ा, नयी-नयी नौकरियां निकलीं, फिर भी बेरोजगारी की संख्या बढ़ती ही जा रही है। सौ में केवल एक आदमी है जिसकी एक दिन की आमदनी ढाई रुपये या उससे ज्यादा है। साठ फीसदी लोग तो सारी जिन्दगी आधा पेट खाकर बिता देने को विवश हैं। नीचे की बढ़ती हुई गरीबी, ऊपर की बढ़ती हुई अमीरी : यह खाई चौड़ी होती ही जा रही है। क्या हमने सोचा कि ऐसा क्यों है ? एक-के-बाद दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं का क्या हुआ ? क्या गरीबी मिटी, विषमता घटी ? इतने दिन बाद अब योजना के जानकार लोग भी कहने लगे हैं कि सामान्य आदमी को योजना का प्रसाद नही मिला। योजना रोजगार की बननी चाहिए; खेती-उद्योग की बननी चाहिए; योजना बनाने का काम विकेन्द्रित होना चाहिए। मूल दोष योजना की कल्पना में ही था।

गांधीजी ने क्या कहा था ? गांधीजी ने कहा था कि हमारे देश में जीवन की इकाई गांव है, जिला या राज्य नही। इसलिए गांव को ही विकास की इकाई मानना चाहिए। गांव में नया ज्ञान और नये साधन पहुंचने चाहिए ताकि गांववाले हर खेत का उत्पादन बढ़ायें और हर घर का उद्योगीकरण करें। अपने कच्चे माल से अपने ही हाथों पक्का माल तैयार करें। लेकिन यह नहीं हुआ। हुआ यह कि हमने उनको साधन दिया जो सम्पन्न थे, और उनके भरोसे उत्पादन बढ़ाया। अगर वैसा हुआ होता तो क्या होता ? सारे देश में एक नया जीवन दिखायी देता, करोड़ों हाथ उत्पादन करते और मुंह भोग लगाते दिखायी देते; भूख मिटती, विषमता घटती, दिमाग खुलता, समस्याओं से जूझने के लिए नया पुरुषार्थ जगता, देश में नयी चेतना, नया संगठन, नयी एकता दिखायी देती। विदेशी अर्थनीति से शहर मुक्त होते और शहरी अर्थनीति के शोषण से गांव। ऐसे मुक्त स्वायत्त गांवों का महासंघ भारत होता, और उन्हींके सर्वसम्मत प्रतिनिधियों के हाथों में सरकार रहती। न आज की दलबन्दी होती, न राजनीति व्यवसाय बनती।

गरीबों के देश में हमने औद्योगिक नगरों के रूप में कुछ इने-गिने अमीरी के 'पाकेट' बनाये और मान लिया कि देश 'आधुनिक' हो रहा है। हमने विकास में जनता को नही शरीक किया। उसे छोड़कर यंत्रों, विशेषज्ञों, अफसरों और पूंजीपतियों (पूंजी सरकारी या निजी) के मेल से दौलत पैदा की गयी। स्वभावतः जनता वंचित रह गयी। सारी दौलत उन्हींके पास चली गयी जिन्होंने जनता को अलग रखा था। यह इसलिए हुआ कि हमने उत्पादन की सारी पद्धति, और उसके यंत्र आदि केन्द्रित रखे, और श्रम के स्थान पर पूंजी को प्रधानता दी। अपनी परम्परा और परिस्थिति के अनुसार नयी पद्धति और यांत्रिकी नहीं विकसित की। गांधीजी की स्वदेशी को हमने भुला दिया।

गांधीजी ने दरिद्रनारायण की बात कही थी। 'अन्तिम व्यक्ति' को विकास का मापदंड माना था। यह कहा था कि अगर पूंजी का कोई मालिक है, तो श्रमिक भी अपने श्रम का मालिक है, दोनों मालिकों की समान हैसियत है। गांधीजी कहते थे कि जिसके हाथ में सम्पत्ति है वह सचमुच स्वामी नही, 'ट्रस्टी' है जिसे अपने ट्रस्ट का अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने का अधिकार नहीं है। ऐसी व्यवस्था में शोषण के लिए कहां स्थान है ? हम अपनी योजनाओं से स्वामित्व, मुनाफाखोरी; और शोषण की व्यवस्था जरा भी नही बदल सके।

दूसरा प्रश्न शिक्षण का लीजिए। शिक्षण में ही किसी देश का भविष्य है। लेकिन हमारे शिक्षण की जो दुर्गति है वह इस बात का अन्तिम प्रमाण है कि देश के कर्णधारों के सामने भविष्य का कोई चित्र नहीं है। गांधीजी ने नये समाज के लिए नयी तालीम की बात कही थी—ऐसी नयी तालीम, जो विद्यार्थी को उत्पादक बनाये, उसके दिमाग को खोले, चरित्र को ऊंचा उठाये, और उसे प्रकृति और समाज के साथ जोड़े। लेकिन हमने नया समाज बनाने की बात ही नही सोची तो शिक्षा को नयी क्यों बनाते ? गुलामी का झंडा बदला, किन्तु गुलामी की शिक्षा नहीं बदली। परिणाम सामने है—हाथ से बेकार, दिमाग से गुलाम, स्वास्थ्य से जर्जर, संस्कारों से शून्य युवक और युवती ! देश के भविष्य की हत्या करनेवाली शिक्षा 'चल रही' है।

वास्तव में स्वतंत्र भारत के नेताओं और शासकों ने देश को ऐसी दिशा दे दी जो गांधी की दिशा नही थी। उन्होंने मान लिया कि देश का भविष्य सरकार में है, समाज में नही। उनका सारा समय सरकार बनाने-बिगाड़ने में लगता रहा है, समाज बनाने में नही। जो कभी समाज के सेवक और स्वतंत्रता के सेनानी थे वे सत्ता में चले गये। यह सोचकर गये कि उनका राज्य

कल्याणकारी होगा। कल्याणकारी राज्य में गांधी के रचनात्मक कार्य की क्या जरूरत ? लेकिन सत्ता में आकर वे स्वयं भ्रष्ट हुए, और समाज को कुमन्त्रणाओं और समस्याओं के जंगल में भटकने को छोड़ दिया। मरने के पहले अपने अन्तिम वसीयतनामे में गांधीजी ने कांग्रेस के लोगों को सलाह दी थी कि सरकार दूसरों के हाथ छोड़कर उन्हें समाज में जाना चाहिए। शिव का स्थान इन्द्रासन पर नहीं, गणों के साथ श्मशान में है। नेता इन्द्रासन का वैभव छोड़कर शिव बनने को तैयार नहीं थे। गांधीजी को चिन्ता थी कि स्वतन्त्रता तो मिल गयी किन्तु गांव-गांव, शहर-शहर का 'स्वराज्य' कैसे होगा ? स्वराज्य सरकार के कानून से नहीं होगा, उसके लिए समाज की शक्ति चाहिए—लोकशक्ति चाहिए। वह जानते थे कि जब राज्य की शक्ति बढ़ती है तो जनता की शक्ति घटती है। वह गांव और शहर में लोकशक्ति को संगठित करना चाहते थे और राज्यशक्ति को क्रमशः सीमित। हमने इसका ठीक उलटा किया। इसी कारण से हम अपनी आंखों के सामने देख रहे हैं कि स्वतन्त्रता के इतने वर्षों बाद जनता कितनी असहाय, हताश, और पुरुषार्थहीन हो गयी है। उसमें अपनी समस्याओं से जूझने की शक्ति नहीं रह गयी है। जीवन में जैसे कोई मूल्य ही नहीं रह गये हैं। चारों ओर अन्याय, अभाव, और अज्ञान का बोलबाला है, फिर भी जनता अचेत है, अत्यन्त संकुचित स्वार्थों और संघर्षों में डूबी हुई।

पिछले चौबीस वर्षों में क्या देश में कुछ हुआ नहीं ? हुआ, बहुत कुछ हुआ। भव्य भवन बने, सड़कें बनीं, रेलें निकलीं, हवाई जहाज चले, बड़े-बड़े कारखाने खड़े हुए, विज्ञान संस्थान स्थापित हुए, बाजार शौकीनी के सामानों से पट गये, लेकिन ...? लेकिन मनुष्य नहीं बना। उसका कोई सवाल नहीं हल हुआ। उसके संस्कार ऊंचे नहीं उठे। नेता उसे चुनाव की घूंटी और वादों के दर्शन पर पालते रहे। लेकिन वह आज भी वंचित, बहिष्कृत, कुसंस्कृत है। सही दिशा में दो-चार कदम भी तो उठे होते।

समाजवाद की चर्चा है। पूंजीवाद बढ़ता ही जा रहा है। शान्ति की अपील है। हिंसा नहीं रुकती। नैतिकता की याद दिलायी जाती है, अनैतिकता और भ्रष्टाचार की कोई सीमा नहीं है। जनता को दुहाई दी जाती है, हर जगह नेताशाही और नौकरशाही ही हावी है। गांव से लेकर दिल्ली तक हर जगह एक 'विशिष्ट वर्ग' (इलीट) बन गया है जो अपने ही हित को देश का हित मानता है।

अगर यह संकट ही तो इस संकट का समाधान किसके पास है ? क्या राजनीति के पास है ? कोई भी दल हो, हर दल का विश्वास सत्ता में है तथा उसी विकास-योजना और शिक्षा-नीति में है जो सरकार द्वारा सोची जाय, सरकार द्वारा चलायी जाय—बशर्ते सरकार उसकी हो ! किसी वामपंथी दल ने भी अभी तक 'स्वामित्व' (ओनरशिप) की कोई नयी योजना नहीं रखी है, नये समाज की रचना का कोई चित्र नहीं प्रस्तुत किया है। सब लोकतन्त्र चाहते हैं, लेकिन अहिंसा में विश्वास नहीं जमता। क्या हिंसा के साथ लोकतन्त्र चल सकता है ? हम दम भरते हैं विज्ञान का लेकिन सत्य से मुंह मोड़ते हैं। जो विज्ञान सत्य के सिवाय दूसरी कोई सत्ता नहीं मानता—ईश्वर की भी नहीं—वह असत्य के साथ कैसे टिकेगा ? जब हम इतने असत्य और हिंसा से घिरे हुए हैं तो हमें सत्य और अहिंसा नहीं तो और किस चीज की जरूरत है ? अगर नहीं जरूरत है तो भ्रष्टाचार और मिथ्याचार से घबड़ाहट क्यों ?

जो गांधी व्यक्ति था वह मर चुका। लेकिन मरने के पहले वह जो सत्य छोड़ गया, जो दिशा बता गया, जो मूल्य स्थापित कर गया, विकास, राजनैतिक संगठन की जो रूपरेखा बना गया, उनकी मृत्यु कैसे होगी ? वह जो सवाल उठा गया वे ज्यों-के-त्यों हैं। वह जो उत्तर बता गया वे पुराने नहीं पड़े हैं। उन उत्तरों के सिवाय अभी तक दूसरे उत्तर कहां हैं ? प्रश्न आंखें मूंदकर मान लेने का नहीं, आंखें खोलकर देखने और समझने का है।

पश्चिम में वैभव से ऊबे हुए युवकों-युवतियों के लिए एक ही उत्तर है : गांधी। भारत की भूखी, नंगी, टूटी जनता के लिए एक ही उत्तर है : गांधी। गांधी सत्य का नाम है, पुराने या नये के अंधविश्वास का नहीं।

एक बार हम आग्रहों को छोड़कर गांधी की कही बातों को फिर परख तो लें। ●

सच्चे लोकतंत्र का अभिप्राय

● स्वराज्य से मेरा अभिप्राय है लोक-सम्मति के अनुसार होनेवाला भारतवर्ष का शासन। लोक-सम्मति का निश्चय देश के बालिग लोगों की बड़ी-से-बड़ी तादाद के मत द्वारा हो, फिर वे चाहे स्त्रियां हों या पुरुष। ये लोग ऐसे हों जिन्होंने अपने शारीरिक श्रम के द्वारा राज्य की कुछ सेवा की हो और जिन्होंने मतदाताओं की सूची में अपना नाम लिखवा लिया हो।

● सच्चा लोकतन्त्र केन्द्र में बैठे हुए बीस व्यक्तियों द्वारा नहीं चलाया जा सकता। उसे प्रत्येक गांव के लोगों को नीचे से चलाना होगा।

मो० क० गांधी

गांधी, सर्वोदय, विनोबा और आधुनिक चिंतन

ज्यॉफरी ऑस्टरगार्ड

सर्वोदय विचार के मुख्य स्रोत गांधी थे। गांधी के बिना निःसंदेह, देर या सवेर, भारत राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर लेता, लेकिन उनके बिना कोई सर्वोदय आन्दोलन नहीं होता। गांधी कर्मयोगी थे। वह सामाजिक या राजनैतिक सिद्धान्तकार (थियरिस्ट) नहीं थे। उनके विचार अधिकतर उनके अपने अनुभव और गहरे चिंतन पर आधारित होते थे। यद्यपि उन्होंने बहुत कुछ लिखा परन्तु किसी भी अवसर पर अपने दर्शन को उन्होंने व्यवस्थित तौर पर पेश नहीं किया। दूसरों ने जब इसका प्रयत्न किया, (यह आश्चर्यजनक नहीं है) तो उनके दर्शन में उन्हें काफी कमियाँ, असंलग्नताएं, असामंजस्य नजर आये। गांधी स्वयं इन असामंजस्यों को जानते थे, परन्तु उन्हें उन्होंने महत्व नहीं दिया। सत्य को खोजनेवाला होने के नाते उन्होंने कभी पूर्णतः सामंजस्य का दावा नहीं किया, यह माना कि सभी सत्य सापेक्ष हैं और अपने अनुयायियों को यह कहा कि किसी विशेष बात पर उनके अन्तिम वक्तव्य को प्रमाण माना जाये, परन्तु आखरी फैसले के तौर पर नहीं। यह रूप प्रचलित सर्वोदय सिद्धान्त की विशेषता है।

यह एक विकासशील सिद्धान्त है, जो अब तक अन्तःप्रेरणा के रूप में उन लोगों द्वारा व्यक्त किया गया है जो गांधी के शब्दों में 'सत्य के प्रयोग' में लगे हुए हैं। यह एक प्रयोगरत सिद्धान्त है जो अपने आप को केवल कर्म में और कर्म के द्वारा व्यक्त करता है। इससे एक संकेत यह मिलता है कि प्रचलित सर्वोदय विचार में गांधी का क्या स्थान है। उनके उत्तराधिकारी उनके कन्धों पर खड़े हैं, और जहाँ तक उन्होंने देखा था उससे आगे देख सकते हैं। जहाँ तक अब तक दीख पड़ा है उससे गांधी के मौलिक सिद्धांत को चुनौती नहीं दी जाती परन्तु उन सिद्धान्तों का कार्यान्वयन कैसे होगा, बदलती हुई परिस्थिति, नये अनुभव और नयी अन्तर्दृष्टि की रोशनी में यह एक अनुकूल संयोजन की बात है। इससे सम्बन्धित यह वास्तविकता है कि गांधी के उत्तराधिकारी, विनोबा ने गांधी के विचारों को क्रांतिकारी स्वरूप दिया और आगे बढ़ाया। गांधी ने हमेशा यह साफ साफ बताया कि उनके विचार क्रान्तिकारी हैं, परन्तु उनके समय में ध्यान राजनैतिक स्वतंत्रता के संघर्ष पर लगे होने के कारण उनके क्रान्तिकारी स्वरूप को दबा देना दूसरों के लिए आसान था। ऐसे लोगों में बहुत से कांग्रेसी भी थे।

गांधी एक व्यावहारिक आदर्शवादी थे। उनका आदर्श समाज 'ज्ञान के प्रकाश से युक्त अराजकता' की परिस्थिति थी। परन्तु उन्होंने इस दर्शन को व्यक्त करने में अधिक समय नहीं लगाया। वे व्यावहारिक कर्म बताने के लिए अधिक उत्सुक थे। उनके रचनात्मक कार्यक्रम को आसानी के साथ सामाजिक सुधार का कार्यक्रम कहा जा सकता है, जो आदर्श आधारित है न कि मूल्य, विश्वास और सिद्धान्त आधारित। वास्तव में गांधी स्वयं कार्यक्रम को इस निगाह से नहीं देखते थे, और न उनका उत्तराधिकारी, सर्व सेवा संघ, इसे इस निगाह से देखता है। एक आदर्श आधारित कार्यक्रम में भूदान एक अनुपूरक विषय लगता है। परन्तु इसका छिपा हुआ क्रान्तिकारी रूप जल्दी ही सामने आ गया है, मुख्य रूप से जब भूदान ग्रामदान हो गया। कुछ लोगों का मानना है कि विनोबा ने गांधी के विचार के युटोपियाई पहलू पर जोर दिया है। और यह सिद्धान्त अब क्रान्ति का स्पष्ट दर्शन बन गया है—सम्पूर्ण रूप से नये मूल्यों पर समाज के पुनर्निर्माण की उनकी पुकार केवल भारत के लिए नहीं बल्कि पूरे मानव समुदाय के लिये है। सर्वोदय विचार पर आखिरी आम राय को संक्षेप में बताना कठिन है। इसका सम्बन्ध है भारतीय संस्कृति के पारम्परिक अंशों से। इस विचार को सर्वोदय का भारतीय दर्शन कहा जा सकता है, मुख्यतः समाजवाद का भारतीय दृष्टिकोण, और यह मुख्य भारतीय मूल्यों को नवीन स्वरूप देना चाहता है।

सर्वोदय विचार पारम्परिक है या आधुनिक ? इस प्रश्न का उत्तर है कि यह दोनों में से कोई एक नहीं है, यह दोनों का मिश्रण है, अहिंसा उसकी कसौटी है, जिस पर पारम्परिक और आधुनिक मूल्यों को स्वीकार किया जाये या समाप्त किया जाये। वास्तव में 'पारम्परिक' और 'आधुनिक' का भेद करना गलत होगा। डोक ने गांधी के बारे में सही ही कहा है 'उन्हें पुराने या नये समाज में रखना कठिन है, यद्यपि उनका प्रतीकवाद पारम्परिक है। उनके विचार और व्यूह-कौशल में अहिंसा, त्याग-तपस्या, समझौता तथा सम्मत पर जोर है। उनका यह कौशल, परमार्थवादियों, भाग्यवादियों तथा कर्मवादियों, सबके लिए रोचक है।'

गांधी के वचनों का भाष्य करते समय यह देखने की आवश्यकता रहती है कि उनका अर्थ क्या है, और ये किस उद्देश्य से बोले गये हैं। वास्तव में, गांधी ने उन्हें नये जन आन्दोलन के उद्देश्य और उसकी आवश्यकताओं के अनुकूल किया, जिनका उद्देश्य राष्ट्रीय स्वतंत्रता, सामंजस्य और आत्मसम्मान है।

गांधी की लेखनी में, हमें पारम्परिक और आधुनिक मतीवाद का संतुलित मिश्रण मिलता है। विनोबा के भाषणों में ये कम संतुलित मालूम होते हैं, क्योंकि उनके भाषण अधिकतर ग्रामीणों के बीच हुए हैं। परन्तु जैसा कि बंदरानंद और फिशर ने लिखा है कि वह अपने दर्शन

की मान्यों के शब्दों में बताते हैं, संस्कृत से परिचित पुराने मुहावरे, परिभाषा, और सन्दर्भ का प्रयोग करते हैं, परन्तु उनके भाषणों में शब्दों की पारम्परिक कल्पनाओं में परिवर्तन हो गया है, क्योंकि वे आधुनिक परिस्थिति के अनुसार बना दिये गये हैं और उनपर पश्चिम के उदार-मानव परंपराओं का प्रभाव आ गया है। गांधी की तरह विनोबा भी पारम्परिक कल्पनाओं को नये और आधुनिक अर्थ देते हैं। विनोबा के पारम्परिक मुहावरों के पूरक रखकर जयप्रकाश नारायण की सिखनी आधुनिक मुहावरों में है। वह सर्वोदय के विचार को शिक्षित लोगों के जल्दी समझाने योग्य भाषा में रखते हैं। प्रश्न है जिन उद्देश्यों की सिद्धि के लिए सर्वोदय की पारम्परिक कल्पनाओं का आश्रय लिया जाता है, क्या वे आधुनिक हैं? पर यह एक कठिन मुद्दा है। इसका आधार इस बात पर है कि आप 'आधुनिकता' से क्या समझते हैं। अगर 'आधुनिकता' का अर्थ 'पश्चिमी संस्कृति' है तो निस्सन्देह सर्वोदय आधुनिक नहीं है, परन्तु इसी पहलू पर तो मतभेद है।

सर्वोदय : भारतीय अराजकतावाद

हमलोग सर्वोदय विचार को अराजकतावाद का भारतीय संस्करण मानते हैं। ऐसे कथन से गलतफहमी पैदा होती है, क्योंकि स्वयं सर्वोदयी लोग अपने को अराजकतावादी नहीं कहते। भारत में पश्चिमी देशों की तरह अराजकतावाद को हिंसा से सम्बन्धित समझा जाता है, और टालस्टाय की तरह, जो पश्चिमी देशों में अहिंसक अराजकतावाद के सबसे बड़े व्याख्याता थे, सर्वोदयवाले ऐसा स्टेट पसन्द करते हैं जिसमें शासनाधिकार की कोई गंध न हो। अगर हम सर्वोदय के सामाजिक और राजनैतिक सिद्धान्त को देखें तो वह अराजकतावाद की एक किस्म नजर आयेगा।

इसलिए हम सर्वोदय सिद्धान्तों की तुलना पश्चिमी अराजकतावाद से करेंगे जो आधुनिक से शुरू होकर क्रोपाटकिन होता हुआ मलतेस्ता तक आता है।

सर्वोदय और पश्चिमी अराजकतावाद में बहुत हद तक समानता है। दोनों आधुनिक राज्य को एक बड़ी बाधा मानते हैं, कारण राज्य जोर एवं दबाव के कानूनी यंत्रों का एकाधिकार (मोनोपली) रखने का दावा करता है, और एक स्वतंत्र, सहयोगी सामाजिक व्यवस्था में, जिसमें लोग सदाचार का व्यवहार करेंगे, बड़ी रुकावट डालता है। परिचित अराजकतावाद के लहजे में विनोबा एक जगह कहते हैं 'अगर मैं किसी दूसरे मनुष्य के शासन में हूँ तो, मेरी अपनी सरकार कहाँ है? अपनी सरकार का अर्थ है अपने पर शासन करना। स्वराज्य का एक चिह्न यह है कि समाज के किसी बाहरी शक्ति को अपने पर नियंत्रण न करने दिया जाये और स्वराज्य का दूसरा चिह्न यह है कि किसी दूसरे पर शक्ति का प्रयोग न किया जाय—यह दोनों मिलकर स्वराज्य है—जिसमें न तो आत्म-समर्पण है और न शोषण'।

अराजकतावादी और सर्वोदयी दोनों यह मानते हैं कि व्यक्ति का कर्तव्य यह है कि वह राजनैतिक आज्ञा-पालन से पहले अपने विवेक का कहना माने, और यह अधिक महत्वपूर्ण है। इनमें से कोई भी ऐसा समाज नहीं चाहता है, जिसमें व्यक्ति पर कुछ दबाव हो। परन्तु दोनों ही यह मानते हैं कि एक व्यवस्थित समाज के लिए जो दबाव आवश्यक है, वह ऐच्छिक हो। दोनों ही सामाजिक नियंत्रण और सभाव स्थापित करने के लिए नैतिक सत्ताधिकार पर जोर देते हैं और मानते हैं कि अगर उचित सामाजिक संस्थाएँ मिलें, तो वह पूरे तौर से राजनैतिक और कानूनी सत्ताधिकार का स्थान ले सकती है।

अपने पर शासन करनेवाले व्यक्तियों का एक स्वतंत्र समाज स्थापित करने की जो आवश्यक परिस्थिति है उसको प्राप्त करने के लिए दोनों के बीच कोई मतभेद नहीं है। सर्व प्रथम यह है कि उत्पादन के साधन की हैसियत से स्वत्व मिल्कियत की संस्थाओं का खात्मा। परिवार की तरह, समाज में भी, मिल्कियत ऐसी हो, जिसमें हरएक अपनी योग्यता के अनुसार काम करे और आवश्यकता के अनुसार पाये। आज के भारत के सर्वोदयवादियों के लिए इसका अर्थ है ग्रामदान द्वारा गांव की जमीन की मिल्कियत ग्राम-सभा को बनाना और गांव के बाहर गांधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त की स्वीकृति। (ट्रस्टीशिप का विचार यह है कि कोई भी निजी सम्पत्ति रख सकता है, परन्तु वह उसे समाज की ओर से रखता है, और उसे समाज की सेवा के लिए प्रयोग में लाता है।)

सर्वोदयवादी और अराजकतावादी दोनों एक ऐसे समाज के कायल हैं, जिसमें नागरिक स्वतंत्र भी हों और बराबर भी। पूर्ण समानता सम्भव नहीं है, परन्तु जैसा कि विनोबा ने इसे कहा है कि जो असमानता हाथ की पाँच उँगलियों में है वह उससे अधिक नहीं होगी। सर्वोदय और अराजकतावाद जिस बात पर जोर देते हैं वह यह है कि भिन्न व्यक्ति जो भिन्न प्रकार के काम करते हैं, उनका समान नैतिक, सामाजिक और आर्थिक मूल्य मानने की आवश्यकता है। क्रोपाटकिन के सम्पूर्ण कार्य और टालस्टाय के रोटी-श्रम (ब्रेड लेबर) पर जोर को दुहराते हुए गांधी और विनोबा मानसिक और शारीरिक श्रम में भेद खत्म करने, और हाथों से किये जानेवाले काम की प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए कहते हैं। सर्वोदय का चरखे पर जो जोर है, वह इस बात का प्रतीक है कि किस प्रकार सभी पुरुषों और स्त्रियों से उत्पादक श्रम की आशा रखनी चाहिए।

शोषण और अत्याचार से मुक्त समाज की एक महत्वपूर्ण शर्त, जिसपर अराजकतावादी और सर्वोदयवाले दोनों जोर देते हैं, विकेन्द्रीकरण है, अर्थात् सामाजिक सत्ता को बड़े पैमाने पर विकेन्द्रित कर देना चाहिए। १९वीं शताब्दी के अराजकतावादी कम्यूनिस्ट के लिए यह परिस्थिति प्राप्त हो जाये, अगर स्थानीय कम्यून को सामाजिक संगठन की बुनियादी इकाई माना जाये। (अपने भीतरी मामलों में पूर्णतः स्वाधीन होते हुए,

यह संघात्मक तौर पर स्थानीय, राष्ट्रीय स्तर पर दूसरे कम्यूनों से सम्बन्धित होंगे।) सर्वोदयवालों के लिए गाँव बुनियादी इकाई होगी। हर गाँव एक छोटा गणराज्य होगा, और दूसरे गाँवों से सम्बन्धित होगा, जैसा कि गांधीजी ने कहा है, स्तूप की तरह नहीं, बल्कि नीचे से ऊपर की ओर। ऐसे विकेन्द्रीकृत शासनतन्त्र में अर्थ-व्यवस्था भी विकेन्द्रित होगी। बड़े स्तर के उद्योगों के केन्द्रों से बचना है या इन्हें कम-से-कम कर देना है। उद्योगों को गाँवों में लाना है, ताकि गाँव या गाँव के समूह के लिए सम्भव हो सके कि वे एक कृषि औद्योगिक समुदाय बन सकें जो वहाँ के लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति में आत्म-निर्भर हो। सर्वोदय की वर्तमान पीढ़ी १९वीं शताब्दी के अराजकतावादियों की तरह अर्थप्रबन्ध के विकेन्द्रीकरण को समय के पीछे ले जाने की कोशिश नहीं मानते। विनोबा आधुनिक तकनीक विज्ञान को अमान्य नहीं करते। इससे भिन्न क्रोपाटकिन की तरह वे मजदूरी के साधन हटाने और उत्पादन बढ़ाने का स्वागत करते हैं। वह इस बात पर जोर देते हैं कि शिल्पविज्ञान को सामाजिक शोषण की पद्धति न बनने दिया जाये और उसे सभी लोगों की भलाई में लगाया जाये।

अराजकतावादियों की तरह सर्वोदय भी परम्परागत राजनैतिक कारंवाई के विरुद्ध है। राज्य को कोई सेवा नहीं करना चाहिए। विनोबा कहते हैं कि "मेरी आवाज अच्छी सरकार के विरुद्ध उठी है, बुरी सरकार को तो महाभारत में व्यास बहुत पहले ही फटकार चुके हैं। लोग अच्छी तरह जानते हैं कि बुरी सरकार को नहीं रहने देना चाहिए, और लोग हर जगह इसके विरुद्ध प्रतिरोध करते हैं। परन्तु जो बात हमें गलत लगती है, वह है अच्छी सरकार का भी अपने ऊपर शासन चलने देना। जो व्यक्ति राजनैतिक सत्ता भलाई करने के लिए भी प्राप्त करते हैं वे आखिर में भ्रष्ट हो जाते हैं। सत्ता की गद्दी, इसके प्राप्त करनेवाले पर जादू कर देती है।"

कई कारणों से संसदीय लोकतंत्र को भी बुरा कहा गया है। चुनाव के बावजूद राज्य की नीति जनमत के द्वारा मार्गदर्शन नहीं लेती। इसमें बहुसंख्यक के शासन का सिद्धान्त माना जाता है जिसका व्यव-हारिक अर्थ यह हो सकता है कि अल्प-संख्यक पर बहुसंख्यक का अत्याचार हो, न कि सबकी भलाई। सर्वोदयियों के लिए ऐसा निश्चय केवल सर्वसम्मति से हो सकता है। फिर संसदीय लोकतन्त्र में राजनैतिक दल होते हैं जो सत्ता के लिए घूस, धमकी, जबरदस्ती, सबसे काम लेते हैं। विरोधी उम्मीदवार॰ को बदनाम भी करते हैं। "दृष्टिकोण का मतभेद एक स्वस्थ चिन्ह है' विनोबा कहते हैं, 'परन्तु जब विभिन्न विचार की बुनियाद पर दल बनते हैं तो उनका सम्बन्ध विचार से कम और संघटन, अनुशासन और प्रचार से अधिक होता है। दल राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने का एक यंत्र है। सत्ता का महत्व अधिक होता है, और विचार केवल सत्ता और राजनैतिक स्पर्धा का ट्रेड मार्क बन जाता है।'

परम्परागत राजनैतिक कारंवाई के बदले, सर्वोदयी, अराजकतावादियों की तरह, लोगों के द्वारा प्रत्यक्ष कारंवाई के समर्थक हैं। राजनीति की जगह लोकनीति होनी चाहिए, क्योंकि राज-नीति में टक्कर, मुकाबिला, बुद्धिजीवियों का संघर्ष, दबाव, सौदेबाजी साम्प्रदायि-कता, और दूसरे खेल होते हैं जबकि लोकनीति में लोग अपनी भीतरी शक्ति से परिचित होते हैं, और अपनी समस्या-ओं का स्वयं समाधान करते हैं। विनोबा इसके अन्तर को बताते हुए कहते हैं— 'भूदान का उद्देश्य समाज को मजबूत करना है, इसलिए यह एक राजनैतिक आन्दोलन है, परन्तु जो आज के राज-नैतिक तरीकों से भिन्न है। हमलोगों का उद्देश्य एक नये प्रकार की राजनीति बनाना है।'

यही नयी तरह की राजनीति थी जिसने १९५२ में महान समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण जैसे व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित किया। अपने निबन्ध 'समाजवाद से सर्वोदय की ओर' में जयप्रकाश नारायण ने उन कारणों का उल्लेख किया है जिन्होंने उनसे यह कदम उठवाया। 'मैंने दलगत और सत्ता की राजनीति से अलग होने का निश्चय किसी व्यक्तिगत मायूसी और नफरत के कारण नहीं किया, बल्कि इसलिए कि मुझे यह स्पष्ट भान हुआ कि राजनीति से उद्देश्य—समानता, स्वतन्त्रता, भाईचारा—नहीं सधते। सर्वोदय की राजनीति का न तो कोई दल हो सकता है, और न सत्ता से सम्बन्ध। बल्कि इसका उद्देश्य यह देखना होगा कि सत्ता के सभी केन्द्र खत्म हो जायें। इस नयी राजनीति का जितना अधिक विकास होगा, पुरानी राजनीति उतनी ही सिमटेगी। राज्य वास्तविक तौर पर मुरझा जायेगा।

नयी राजनीति की रणनीति इस विश्वास पर आधारित है कि—'क्रान्ति कभी भी सत्ता या दलगत राजनीति से सम्पन्न नहीं होती।' सर्वोदय क्रान्ति अरा-जकतावादी क्रान्ति की तरह केवल नीचे से लायी जा सकती है, ऊपर से नहीं। सर्वोदय कार्यकर्ता क्रान्तिकारी दल नहीं बनाते। वे केवल सहायता और सलाह देते हैं परन्तु लोगों को मुक्ति के लिए स्वयं पहल करना होता है। (मूल अंग्रेजी पुस्तक 'दी जेमिस पुनर्विनाट्स' से)

ग्वालियर में आचार्यकुल

ग्वालियर आचार्यकुल की ओर से स्थानीय मध्यभारत हिन्दी साहित्य सभा-भवन में ग्वालियर संभाग के राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त शिक्षकों का सम्मान-समारोह आयोजित किया गया। जिला ग्रामस्वराज्य-समिति ग्वालियर के संयोजक श्री प्रेमनारायण शर्मा ने बताया कि आचार्यकुल ग्वालियर जिले के ग्रामदान पुष्टि अभियान में अपना पूरा योगदान देगा।

—प्रोफेसर गुरशरण
संयोजक

बंगला देश बनाम अहिंसा

—मनमोहन चौधरी

बंगला देश में हो रही घटनाओं पर सर्वोदय आन्दोलन में लगे पूरे भारत के कार्यकर्ताओं ने जिस तरह अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की, उससे इस आन्दोलन का मूलभूत आध्यात्मिक स्वास्थ्य झलकता है। सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने संकट में घिरे लोगों के मुक्ति-संग्राम को पूरा हार्दिक समर्थन दिया। उनकी इस कृति से संभव है बाहर के कुछ शान्तिवादी मित्रों के मन में इनके प्रति तिरस्कार के भी भाव जगे हों। प्रश्न यह उठाया गया है कि 'क्या अहिंसा के पुजारी को किसी हिंसक संघर्ष का समर्थन करना चाहिए? वह पीड़ित लोगों के प्रति सहानुभूति दिखा सकता है, उनकी आकांक्षाओं की वह प्रशंसा कर सकता है, परन्तु हिंसक संघर्ष का वह समर्थन कैसे कर सकता है?'

गांधीजी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा को जैसा मैंने समझा है, यह कोई ऐसा मूल्य या गुण नहीं है जो मानव के अधिकार, गणतंत्र, राजनैतिक स्वतंत्रता आदि मूल्यों से अलग-थलग हो और अपने आप में कोई मूल्य या गुण हो। उससे विपरीत, सही बात तो यह है कि ये, और अनेक अन्य गुण और मूल्य 'अहिंसा' के अंदर में हैं। मैं किसी ऐसे व्यक्ति की कल्पना ही नहीं कर सकता जो गणतंत्र में विश्वास नहीं करे और रंग-भेद, जाति-भेद आदि बरतता हुआ अहिंसावादी भी हो सकता है। परन्तु दूसरी तरफ, मेरा यह दृढ़ मत है कि जिस आदमी का ऊपर कहे मूल्यों में पक्का विश्वास है वह अहिंसा के पथ पर कई कदम आगे बढ़ चुका है। दूसरी बात यह है कि अहिंसा बरतने के लिए निर्भीकता प्रारंभिक बिन्दु है। यही कारण है कि गांधीजी ने बताया था कि जो मनुष्य अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए हिंसा करता है वह उस कायर से लाख गुना अच्छा है जो अपना कर्तव्य छोड़ भाग खड़ा होता है। यही कारण है कि पोलैण्डवालों ने नाजियों के आक्रमण का जो प्रतिरोध किया था, वह यद्यपि हिंसक था, तथापि गांधीजी ने उसकी प्रशंसा की थी और उसे 'करीब-करीब अहिंसा' कहा था।

बंगला देश के लोग सताये हुए हैं। उन्होंने मनुष्य की तरह जीने के अपने अधिकार की सुरक्षा के लिए हथियार उठाया है। वे झुकने से इनकार कर रहे हैं। वे अपनी राजनैतिक मुक्ति चाहते हैं। वे जाति-भेद से अपने को मुक्त करना चाहते हैं। निरंकुश शासन के आगे कायरों की तरह घुटने टेकने से वे इनकार कर रहे हैं। ऐसे कदमों को मैं बहादुरी के कदम मानता हूँ। इसलिए मैं पूरे दिल से इनका समर्थन करता हूँ। ऐसा संघर्ष हिंसक होने पर भी एक राष्ट्र के पुरुषार्थ के विकास की एक कड़ी है। वे सीधे सीना तानकर खड़े हो रहे हैं। अतः इनका पुरुषार्थ विकसित हो रहा है। इस तरह की निर्भीकता और पुरुषार्थ के बिना अहिंसा संभव ही नहीं है।

हाँ, मैं आक्रामक और सुरक्षात्मक हिंसा में एक हद तक भेद अवश्य करता हूँ। आम चुनाव का उपयोग करने की चिन्ता किये बिना, आम जनता का समर्थन प्राप्त करने और गणतंत्र की ओर मुड़ने के प्रस्ताव की संभावनाओं की खोज किये बिना—यह प्रस्ताव चाहे जितना भी भ्रामक क्यों न रहा होता—बंगला देश के किसी दल ने यदि तानाशाही का जुआ उतार फेंकने के लिए कोई हिंसात्मक षड्यंत्र रचा होता तो बात दूसरी होती। उस हालत में उस दल की तमन्नाओं के प्रति मैंने सहानुभूति प्रगट की होती, परन्तु उसके तरीके का समर्थन नहीं किया होता।

परन्तु अवामी लीग ने तो गणतंत्र की ओर मुड़ने के प्रस्ताव की नेकनीयती से मान लिया, और बातें जब इससे विपरीत की जाने लगीं तो उसने अहिंसात्मक असहयोग का सहारा लिया। उसके आन्दोलन का यह पहलू मनुष्य के इतिहास में अहिंसा की सफलता का एक अत्यन्त गौरवपूर्ण अध्याय की तरह लिखा जायगा। अवामी लीग के मार्गदर्शन में लोगों ने तानाशाही की नीयत पर जब कोई शंका नहीं की, तब इसने अत्यन्त ही दगाबाजी और बर्बरता से लोगों पर हमले बोल दिये। तानाशाही शासन ने तो समझा कि वह सब तरह के विरोधों को सदा के लिए समाप्त कर देगा। उसमें जितने लोगों की कीमती जानें ली जायेंगी, इसका हिसाब उसने एकदम नहीं लगाया। उनलोगों ने तो यह सोचा था कि मामला एक सप्ताह में समाप्त हो जायगा। बंगला देश के लोगों ने 'उफ' किये बिना सीना तानकर अपनी आहुतियाँ चढ़ायीं। मानव की भावना किस तरह अजेय हो सकती है यह उसका एक ज्वलन्त उदाहरण है।

बंगला देश के लोग यदि हिंसा का पूर्णतः त्याग कर दिये होते और वर्तमान क्रूर दमन के बावजूद अहिंसक संघर्ष जारी रखे होते तो यह अधिक भव्य उपलब्धि होती। परन्तु उन्हें इसका अभ्यास नहीं कराया गया। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि आज दुनिया में एक भी ऐसा आदमी नहीं है जो अहिंसक प्रतिकार का तरीका जानता हो और उससे भी बड़ी बात यह है कि बंगला देश में जो संहारात्मक दमन का चक्र चलाया जा रहा है उसके विपरीत अहिंसक संघर्ष चलाने की क्षमता आज किसी आदमी में नहीं है। मैं इस बात को बार-बार और जोर देकर कहता हूँ कि आज दुनिया में एक भी ऐसा व्यक्ति मौजूद नहीं है जिसे ऐसी परिस्थिति में प्रभावपूर्ण अहिंसक कार्यकलाप चलाने की विधि मालूम हो एवं उसमें यह योग्यता हो। हमलोगों को याद रखना चाहिए कि यह प्रतीकात्मक प्रदर्शन करने का प्रश्न नहीं है, परन्तु साढ़े सात करोड़ लोगों की

आजादी का नेतृत्व करने का प्रश्न है। इस परिस्थिति में अहिंसक प्रतिकार करने में जो विफलता है वह बंगला देश के लोगों की नहीं परन्तु उन लोगों की विफलता है जो अहिंसा का आग्रह रखते हैं। इतने पर भी मैं दुहरा कर यह कहता हूँ कि इस विपत्ति के प्रति भारतीय सर्वोदय आन्दोलन की जो प्रतिक्रिया हुई वह यह जाहिर करती है कि इस आन्दोलनवाले लोगों ने गांधीजी की क्रान्तिकारी अहिंसा की भावना को ठीक-ठीक ग्रहण कर लिया है और इसे एक निर्जीव रूढ़ि में परिवर्तित नहीं किया। इस तरह इस हार में भविष्य की सफलता के बीज अब भी मौजूद हैं।

ऐसे समय में मेरा कर्तव्य क्या होता है?

ऐसी हालत में भारत में सर्वोदय आन्दोलन के द्वारा अहिंसा की शक्ति को और अधिक प्रगट करने में अपने को मैं नम्रता-पूर्वक लगा दूंगा, और बंगला देश के लोगों को उस काम के लिए उपदेश देने में चुप्पी लगाये रहूँगा, जो काम इस समय न तो मैं स्वयं कर सकता हूँ और न संसार का कोई और आदमी ही।

लोगों में राजनैतिक चेतना जगाने, अधिकारियों का प्रतिरोध करने के लिए उनको संगठित करने आदि जिस किसी भी काम में मैं जीवन भर सक्रिय रहा और उससे जो पाठ मैंने सीखे उस अनुभव को मैं नम्रतापूर्वक बंगला देश के लोगों की सेवा में इस आशा से रख रहा हूँ कि मेरे अनुभव के कुछ कण उन्हें अपने प्रतिकार को तेज और मजबूत करने में मददगार होंगे और उनकी लक्ष्य-सिद्धि की शीघ्रता में सहायक होंगे।

जैसा कि मैं समझता हूँ अहिंसात्मक प्रतिरोध और क्रान्तिकारी छापामार युद्ध-नीति में एक बहुत ही महत्वपूर्ण तत्व समान है। दोनों ही तरह के संघर्षों की जड़ जनता में रहे यह आवश्यक है। दोनों का समर्थन लोगों द्वारा हो, यह भी आवश्यक है। संक्षेप में यह नहीं कि जनता को यह अनुभूति होना आवश्यक है कि दोनों तरह का संघर्ष उसी का है। इसके लिए आवश्यक यह है कि लोगों में बहुत ही ऊँची कोटि की राजनैतिक चेतना हो। उनमें यह योग्यता हो कि अलग-अलग एक दूसरे से कटी हुई हालत में रहकर भी अपने को सम्भाले रखें। चेहरे पर जरा भी शिकन लाये बगैर घोर कष्ट सहने की उनमें क्षमता हो। स्वतंत्रता के लिए लड़नेवालों का रुख लोगों के प्रति सेना के रुख से बिलकुल भिन्न होगा। सेना में भरती लोगों का रुख सामन्तवादी होता है। उनका मिजाज लोगों पर हुक्म चलाने का होता है। परन्तु छापामार युद्ध के सैनिकों को अपने को लोगों का एक अंग मानकर चलना पड़ता है।

बहुत दिनों तक चलाये जानेवाले क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए साफ, सुव्यवस्थित सामाजिक उद्देश्य और आदर्श लोगों के सामने रहने चाहिए जिनसे जनता के बड़े समूह को प्रेरणा मिल सके। राष्ट्र की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए किया जानेवाला संघर्ष विशुद्ध उत्कट मानवतावादी दृष्टिकोण रख सकता है, जैसा कि रवि बाबू की और गांधीजी की राष्ट्रीयता में था अथवा, जैसा कि कुछ हद तक कम्यूनिस्ट क्रान्तिकारियों ने किया था। दूसरे-दूसरे अनेक तत्व भी हैं जिनके बल से दोनों तरह के संघर्ष के फर्क को समझा जा सकता है।

मैं बंगला देश के लिए लड़नेवालों की मदद नम्रतापूर्वक इस तरह करूँगा कि हिंसक और अहिंसक संघर्ष के तत्वों को, उनके भेद को, वे समझ सकें, परख सकें, और सही निर्णय ले सकें। मैं यह इस आशा से करूँगा कि क्रम-क्रम से बंगला देशवासी अहिंसा के रास्ते पर आगे बढ़ सकेंगे और उनमें अहिंसक प्रतिकार की शक्ति उत्पन्न हो जायगी।

'शान्ति बनाये रखने' के अर्थ में एक विरूपण आ गया है। उसके कारण समझौता, क्षतिपूर्ति, लेने-देने आदि का मधुर अथवा बेसुरा राग इसमें समाया रहता है। कम-बेश दो बराबर शक्तिवाले दलों में जब कोई संघर्ष हो, तब यह तरीका काम दे सकता है। झगड़नेवालों की जमात छोटी हो या बड़ी कम-बेश बराबर ताकतवाले दो देशों, जातियों, वर्गों, भाषाइयों अथवा दो व्यक्तियों का ही झगड़ा क्यों न हो, उनके बीच उस तरह का समझौता कराना ठीक है। परन्तु जब एक दल दूसरे के मुकाबिले अत्यन्त अधिक शक्तिशाली हो और वह

पूर्व बंगाल के अवैतिक गवर्नर चिकित्सक मलिक की दुर्दशा।
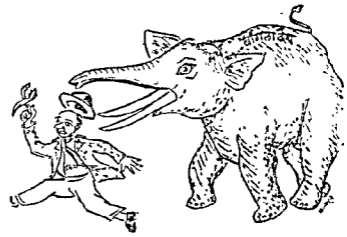
उसकी गरदन पर सवार हो, उसकी सांस ही रोक रहा हो, उस हालत में समझौता और पुनर्मिलन की बातचीत करना हास्यास्पद है। यह तभी संभव है जब कमजोर फरीक ताकतवर पक्ष से मुक्त हो जाय और अपने को अपनी कमजोरी से भी मुक्त महसूस करने लगे। इसलिए शान्ति-स्थापना के काम में यह बात भी शामिल है कि उस क्षेत्र में भी जहाँ कानूनिक शान्ति है, वैसी शान्ति जिसे उचित रूप में ही गांधीजी 'कब्रिस्तान की शान्ति' कहते थे, अन्याय को मिटानेवाला असन्तोष बटोर कर खड़ा कर दिया जाय और हलचल पैदा किया जाय।

इस अर्थ में एक शान्तिवादी कार्यकर्ता की हैसियत से मैं यह चाहूँगा कि पश्चिम पाकिस्तान में भी दमन मिटाने वाला असन्तोष खड़ा हो—वहाँ की तानाशाही के प्रति लोग विद्रोह कर दें और इसका जुआ अपने कन्धे पर से उतार फेंकें। मैं यह चाहता हूँ कि पश्चिमी देशों के वे लोग जो अधिक सुविधा की स्थिति में हैं ऐसा दबाव डालें कि सच्ची बातें और खबरें, विश्वसनीय आदर्श एवं सुन्दर पश्चिम पाकिस्तान की जनता तक पहुँचे। 'बंगला देश पाकिस्तान का आन्तरिक मामला है' ऐसा कहनेवाले उस क्षेत्र में बहुत लोग हैं। 'आन्तरिक मामला' नामक कथन का उपयोग सरकार के लिए कुछ काम का हो सकता है। इतिहास में कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जब इस विचार ने कुछ हद तक बड़े देशों को छोटे देशों के मामले में किसी न किसी तरह हस्तक्षेप करने से रोका। परन्तु आज बंगला देश में दृष्टि-भिन्न है। वहाँ सत्ता के मद में अन्धे सत्ता हथियानेवालों के एक समूह ने अपने ही देश के लोगों को दबाने का अभियान शुरू कर दिया है। कम्युनिस्टों ने एक दिन यह विश्वास प्रकट किया है कि दुनिया के मजदूर एक हो जायँ। संसार के किसी भी हिस्से की जनता की तकलीफों को दूर करने का उन्होंने अपना जिम्मा माना है। उनके इस मानवीय दृष्टिकोण का मैं हमेशा प्रशंसक रहा हूँ। यह अजब बात है कि इसकी आड़ में कम्युनिस्ट सरकारों ने अपनी सत्ता विस्तृत करने में इस कथन का उपयोग किया है। किसी देश के लोगों का जब निरंकुशता से दमन किया जाता है तब वह उस देश का आन्तरिक मामला नहीं रह जाता, वरन वह संसार के सब देशों के लोगों की चिन्ता का मामला बन जाता है। ●

बाबूराव की बेचैनी

सतीश कुमार : सर्वोदय-क्रांति की रूपरेखा इतनी व्यापक और सर्वांगीण होते हुए भी भारत के युवा क्रान्तिकारियों को उसके प्रति आकर्षण दिखाई नहीं देता। बल्कि वे हमें सुधारवादी बुर्जुआ कहकर नकार देते हैं। कमी कहाँ है?

बाबूराव : कमी उन युवकों की है, यह कह देना काफी सरल होगा। वे हमारी विचार-धारा का अध्ययन नहीं करते इसलिए उन्हें हमारा क्रान्तिकारी आन्दोलन समझ में नहीं आता, यह कह देना भी आसान होगा। परन्तु यह उत्तर सवाल को टालने जैसा है, क्योंकि आपके

बाबूराव चन्दावार : क्रांति के लिए समर्पित सवाल का उत्तर इतना सरल और आसान नहीं है। तरुणों को कभी भी पुस्तकीय क्रांति के प्रति आकर्षण नहीं होता। पुस्तकों में पढ़ी गई क्रांति को समझना सम्भव भी नहीं है। गांधी के प्रति लोगों का आकर्षण पुस्तकें पढ़कर नहीं हुआ। क्रांति को जीना पड़ता है। क्रांति-जीवी ही तरुणों को क्रांति की ओर आकृष्ट कर सकता है। गांधीजी के जीवन में क्रांति के दर्शन होते थे और इसीलिए वे प्रतिक्रान्ति के विरुद्ध डटकर खड़े हो जाते थे। विनोबा के प्रति भी लोगों का आकर्षण उनकी पुस्तकें पढ़कर नहीं हुआ बल्कि उनकी पदयात्रा ने, जो कि क्रांति को जीने का एक माध्यम था, युवकों को आकृष्ट किया। पुस्तकें पढ़कर तो केवल विचारों की सफाई होती है।

सतीश कुमार : तो क्या आपका खयाल है कि हम सर्वोदयवाले क्रांति-जीवी नहीं हैं, केवल क्रांति-भाषी हैं?

बाबूराव : मुझे दुःख के साथ आपके इस सवाल का उत्तर स्वीकारात्मक देना पड़ेगा। जब हम भाषण देने खड़े होते हैं या लेख लिखने बैठते हैं, तब हमारे जैसा क्रान्तिकारी कोई नहीं होता पर हम मात्र 'उपदेशक' बनकर अपना समाधान और आत्म-संतोष कर लेते हैं। उपदेशकों ने या चिन्तकों ने अगर क्रांति करने में कामयाबी पाई होती तो भारत में अब तक हजारों क्रांतियाँ हो गयी होतीं। क्रांति ज्ञान-प्रधान या भक्ति-प्रधान नहीं बल्कि कर्म-प्रधान होती है, जब कि उपदेशक और चिंतक के लिए चिन्तन का महत्त्व अधिक होता है और कर्म का स्थान गौण। क्रांतिकारी के लिए कर्मयोगी हुए बिना कोई चारा नहीं। इसका यह तात्पर्य नहीं कि क्रांतिकारी ज्ञान और भक्ति से शून्य होता है। मेरा तात्पर्य इतना ही है कि क्रांति और कृति का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। सर्वोदय आन्दोलन में लगे हुए हमलोगों का जीवन, अगर देखें तो सर्वोदय-विचार के दर्शन मुश्किल से होंगे। यदि हमारे जीवन में सर्वोदय नहीं है तो लोग हमारी ओर आकृष्ट क्यों हों?

सतीश कुमार : क्या आप सर्वोदय कार्यकर्ता को पवित्रतावादी बनाना चाहते हैं ?

बाबूराव : कतई नहीं । मैं किसी भी अर्थ में पवित्रतावाद का हामी नहीं हूँ । हमारे जीवन और विचार में अन्तर्विरोध न हो, इतना ही मैं चाहता हूँ । भूमि के साथ, संपत्ति के साथ, दहेज प्रथा के साथ, विवाह-प्रथा के साथ, हमारे रुख में और हमारी कृति में यदि भेद है तो हम अपने विचार को स्थापित करने में कामयाब नहीं हो सकते । इससे भी बड़ी बात जो मैं कह रहा था, उसका सम्बन्ध हमारे व्यक्तिगत जीवन से इतना नहीं, जितना सामाजिक प्रतिबद्धता के साथ है । अन्याय का विरोध लिखकर या बोलकर करना एक सुधारवादी तरीका है । उस अन्याय के विरुद्ध खड़े हो जाना और उसे समाप्त किये बिना चैन से न बैठना क्रांतिकारी तरीका है । इस क्रांतिकारी तरीके में अन्यायी से प्रेम और अन्याय से संघर्ष करना पड़ता है । यह अहिंसक संघर्ष क्रांति को जन्म देता है । अहिंसक संघर्ष से रहित होकर अन्याय का विरोध तो सभी करते हैं । पर उसमें से क्रांति पैदा नहीं होती ।

सतीश कुमार : जब हम विचार को समझेंगे ही नहीं तो क्रांतिकारी कैसे बनेंगे ? अपनी पुस्तकों, लेखों और भाषणों को 'उपदेश' की श्रेणी में डालकर क्रांति के मार्ग भ्रष्ट हो जाने का खतरा पैदा कर दिया है । विशेष रूप से अहिंसक-क्रांति तो शुद्ध रूप से विचारों पर ही आधारित है और विचारों के वाहक हैं—भाषण, लेख, पुस्तकें आदि ।

बाबूराव : इस तरह से बातचीत करने में यह खतरा है कि आप मुझे पुस्तकों, लेखों और भाषणों का विरोधी मान बैठेंगे । पर आप जानते हैं कि मैं खुद भी एक लेखक हूँ । पर सवाल यह है कि भारतीय क्रांति केवल पढ़े-लिखों की क्रांति नहीं हो सकती । इसे सर्व-जन-क्रांति होना चाहिए । सर्व-जन आपके इन शहरी माध्यमों से परिचित नहीं है । गाँव के सरल और भावनाशील किसान बुद्धिजीवियों के तर्क-वितर्क से ज्यादा जीवत और ज्वलंत उदाहरण को आसानी से समझ सकते हैं । गाँव में जो अन्याय हो रहा है, उसको समाप्त करने का 'उपदेश' देने के बजाय उसे समाप्त करने के लिए आपने अहिंसक संघर्ष, सत्याग्रह, अन्यायी के साथ असहयोग आदि चलाये तो लोगों के तुरंत समझ में आ जायेगा कि आपका 'क्रांति' से क्या तात्पर्य है और व धीरे-धीरे आपकी तरफ आकृष्ट होंगे ।

सतीश कुमार : लेकिन इस तरह का अहिंसक संघर्ष या सत्याग्रह हम सर्वोदय कार्यकर्ता चलायें या जनता खुद चलाये ?
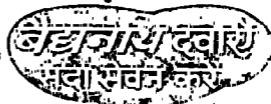
बाबूराव : जब काम का असली मौका आता है, तब हम जनता से अपने को अलग करके बच निकलें यह ठीक नहीं । हम और जनता जब तक अलग-अलग रहेंगे, तब तक हमें क्रांति की बात करने का कोई अधिकार नहीं । हम भी कहीं न कहीं के नागरिक हैं । इस समाज के साथ हमारा तादात्म्य या सम्बन्ध है । हम आसमान से टपके हुए कोई जन-शिक्षक नहीं कि हम जनता को राह बतायें और जनता उस राह पर चले । हम और जनता एक हैं । जहाँ भी हमारी संख्या अन्याय का प्रतिकार करने के लिए सक्षम हो, वहाँ हमें प्रतिकारात्मक कारंवाई से पीछे नहीं हटना चाहिए : तभी आम जनता और विशेष रूप से तरुण इस अहिंसक क्रांति की ओर आकृष्ट होंगे । वरना उनके सामने नक्सलवादी कारंवाई के अलावा कोई विकल्प ही नहीं रहता ।

सतीश कुमार : विनोबा सूक्ष्म सत्याग्रह की बात कहते हैं । क्या आप उनसे सहमत हैं ?

बाबूराव : असहमत होने का कोई सवाल ही नहीं है । जिस क्रांतिकारी की संवेदनशीलता सूक्ष्म-स्तर तक पहुँच जाये, उसके लिए वही स्तर सर्वश्रेष्ठ होगा । हम सभी उस स्तर पर पहुँचें ऐसी कोशिश करनी चाहिए । पर कोई यह कहे कि स्वास्थ्य के लिए दूध बहुत अच्छा है, पर दूध उपलब्ध कर सकने की हमारी क्षमता न हो तो रोटी खानी ही नहीं चाहिए, तो यह ठीक नहीं । दाल-रोटी दूध की तरह सम्पूर्ण भोजन भले ही न हो, वह भूख तो मिटाती ही है । इसी तरह अहिंसक प्रतिकार की कारंवाई सूक्ष्म सत्याग्रह जितनी आध्यात्मिक और परिपूर्ण भले ही न हो, वह तात्कालिक अन्याय को मिटाने की शक्ति तो हमें प्रदान करती ही है । ●

'गरीबी हटाओ' : गांधी की याद

—अशोक मेहता

[अंग्रेजी स्टेट्समेन में छपे श्री अशोक मेहता के एक लेख का सार हम उन्हीं के शब्दों में दे रहे हैं। अशोकजी जैसे समाजवादी, अर्थशास्त्री का, जो सरकार और योजना आयोग के भीतर का प्रत्यक्ष अनुभव रखते हैं, यह लेख विशेष महत्व रखता है। यह लेख इस बात की चेतावनी है कि विकास के प्रचलित तौर-तरीकों से हमारी समस्याएँ हल नहीं हो सकतीं। भारत के लिए, जिसकी परम्परा प्रतिभा और परिस्थिति निराली है, अपनी मनश विकास की नीति और पद्धति चाहिए। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य उसी दिशा में एक प्रयत्न है।—सं०]

'गरीबी हटाओ'। कौन है जो इससे सहमत नहीं है? लेकिन कैसे हटे, इस पर दिमाग साफ नहीं।

गरीबी हटाने के लिए लोगों को जो 'त्याग' करना पड़ता है उसकी तैयारी कहाँ है? मध्यम वर्ग, जो कुल समाज का १० प्रतिशत है अपनी रहन-सहन में किसी प्रकार की कटौती के लिए तैयार नहीं है।

दुनिया के हर देश में गरीब हैं—धनी देशों में भी। फ्रान्स में करीब २७ प्रतिशत परिवार गरीबी की लाइन से नीचे हैं—गरीबी की जो लाइन वहां समझी जाती है उससे। इसी तरह अमेरिका में २४ प्रतिशत परिवार 'गरीब' समझे जाते हैं। अमेरिका में जिन परिवारों की वार्षिक आय ३० हजार रुपये से कम है वे गरीब समझे जाते हैं और सार्वजनिक सहायता के पात्र माने जाते हैं। लेकिन जब न्यूयार्क के गवर्नर राक फेलर ने ऐसे परिवारों की सहायता देना शुरू किया तो जो सम्पन्न थे उनकी ओर से इतना शोर मचा कि उन्हें ३० हजार से नीचे उतर कर २८ हजार रुपये तक के परिवारों को ही सीमा माननी पड़ी। लन्दन के सुप्रसिद्ध साप्ताहिक 'इकोनॉमिस्ट' ने हाल में लिखा : 'मध्यम वर्ग का रुख गरीबों और उनकी समस्याओं के प्रति बहुत दुराग्रहपूर्ण हो गया है।'

दुनिया के लोग दूसरों का सहायता देने से थक गये हैं—'एड फेटीग' हो गया है। उनका दूसरे देशों के ही नहीं, अपने ही देश के गरीबों के प्रति भी यही रुख है। अमेरिका में यह हाल तब है जब निक्सन के अनुसार शीघ्र अमेरिका के सामने मुख्य प्रश्न दौलत पैदा करने का नहीं रहेगा बल्कि उस दौलत को इस्तेमाल करने का होगा। ऐसी स्थिति में वहां के गरीब इस प्रश्न का उत्तर दूसरे ढंग से दे रहे हैं—'विकेन्द्रित हिंसा' से।

कुछ दिन हुए जब स्वीडेन के प्रधानमंत्री ने तय किया कि नीचे की मजदूरी ऊपर की मजदूरी की अपेक्षा ज्यादा बढ़ायी जाय, तो विषमता घटाने के उनके इस प्रयत्न का जोरदार विरोध हुआ। स्वयं ज्यादा मजदूरी पानेवाले मजदूरों ने विरोध किया।

प्रो० दांडेकर ने हाल में भारत की गरीबी का अध्ययन किया है। उनका कहना है कि 'गरीबी हटाओ' की देशव्यापी योजना में ऊपर के ५ प्रतिशत लोगों को अपने खर्च में १५ प्रतिशत की, और उसके बाद के ५ प्रतिशत को साढ़े सात प्रतिशत की कटौती के लिए तैयार होना पड़ेगा। क्या सरकार ऐसा करने की दिशा में कदम उठा सकेगी?

'गरीबी हटाओ' का नारा चुनाव जीतने के लिए अच्छा है लेकिन सरकार में आने पर बात बदल जाती है। वहां धीरे-धीरे चलना ज्यादा यथार्थ और व्यावहारिक मालूम होता है। किसी समस्या का आशु समाधान सूझता नहीं।

विषमता घटानी हो तो उत्पादन बढ़ाना जरूरी है। यह केवल आर्थिक प्रेरणा (इकनामिक इन्सेन्टिव) से नहीं होगा, इसके लिए समाज के पूरे वातावरण का बल चाहिए। १९५० से ५५ तक जब सामान की बहुत कमी थी फिर भी जापान ने अपनी राष्ट्रीय आय का २५ प्रतिशत उत्पादन में लगाया। बाद को जब स्थिति सुधरी तो ३३ प्रतिशत तक लगाया जाने लगा। जापान में सरकार तथा नागरिक, दोनों अपने ऊपर दूसरे देशों की तुलना में, बहुत कम खर्च करते हैं। यही जापान के औद्योगिक 'कौतुक' का रहस्य है। चीन में भी यह रकम २४ प्रतिशत तक पहुँच गयी है। उन देशों में अनुकूल वातावरण के कारण ऐसा करना सम्भव होता है।

समाजवाद की नैतिक बुनियाद है समाज-निष्ठा। इस तथ्य को शुरू के स्वप्नवादी समाजवादियों ने समझा था, और अब चीन में माओवादियों ने समझा है। मन में अपने समाज के प्रति यह वृत्ति न हो तो केवल आर्थिक प्रेरणाएँ श्रमिक को भीतर से खोखला रखती हैं। सोवियत रूस में भी जीवन के 'आध्यात्मिक गुण' का महत्व माना जाने लगा है। क्रान्ति और समाजवाद के ५० साल के अनुभव से ये बुनियादी सत्य सामने आये हैं।

गांधीजी ने राजनैतिक आकांक्षा को नैतिक लक्ष्य के साथ जोड़ा था। यह माना था कि राजनैतिक मन्त्रों की सार्थकता उसी में है कि जनता के चरित्र और व्यक्तित्व का विकास हो, न कि कुछ भौतिक उद्देश्यों की पूर्ति होकर रह जाय। उन्होंने देख लिया था कि भारत की एकता भावना के स्तर पर ही सम्भव है, मात्र रोटी के नारों से नहीं।

राजनीति के मौजूदा सिक्के घिस रहे हैं। जैसे-जैसे वे घिसेंगे लोग नये सिक्के उन तथ्यों और मूल्यों की छाप में बनाएँगे जिनके लिए गांधीजी जीये और मरे। और शायद भारत-जैसे देश के विकास के लिए सांस्कृतिक क्रान्ति की आवश्यकता है, राजनीति की सत्तर-ज्योत से काम नहीं चलनेवाला है। ●

पुष्टि में लगे हुए साथियों की दूसरी गोष्ठी

३०, ३१ अगस्त १९७१ : भवानीपुर : पूर्णियाँ

बिहार के सघन पुष्टि क्षेत्रों में लगे हुए साथियों की दूसरी बैठक ३०, ३१ अगस्त को भवानीपुर (पूर्णियाँ) में हुई। रुपौली के बाद भवानीपुर दूसरा प्रखण्ड है जो सघन पुष्टि के लिए लिया गया है।

गोष्ठी में झाझा (मुंगेर), मुसहरी और वैशाली (मुजफ्फरपुर) तथा रुपौली और भवानीपुर (पूर्णियाँ) के साथी आये थे। श्री वैद्यनाथ बाबू और श्री राममूर्तिजी भी दोनों दिन शरीक रहे।

सबसे पहले साथियों ने अपने-अपने क्षेत्र के पुष्टि-कार्य की खास-खास बातें बतायीं।

झाझा (मुंगेर) - श्री शिवानन्द भाई .

प्रखण्ड में कुल १८१ गाँव हैं। १६१ का ग्रामदान हुआ है। १२६ में ग्रामस्वराज्य सभाएँ बनी हैं। ८६ में बीघा-कट्ठा बँटा है। ५६ में ग्रामकोष निकल रहा है। क्षेत्र में २२ प्रतिशत आदिवासी हैं जिनमें लगभग ७५ प्रतिशत ग्रामदान में शामिल हैं। मुसलमान लगभग २५ प्रतिशत हैं जिनमें तीन चौथाई ग्रामदान में शामिल हैं।

प्रखण्डस्वराज्य सभा तथा अधिकांश ग्रामस्वराज्य-सभाओं की बैठकें नियमित होती हैं। लोग बड़ी संख्या में शरीक होते हैं। सामन्य लोग भी आते हैं, क्योंकि इन बैठकों में वे अपनी बात खुलकर कह सकते हैं।

क्षेत्र में चलनेवाली विकास योजनाएँ लोगों को मंच पर लाने में बहुत सहायक हुई हैं। उनके द्वारा अनेक गाँवों के हित इकट्ठा हुए हैं, और लोगों को तात्कालिक लाभ की आशा दिखायी देने लगी है। यह भी हुआ कि पुष्टि और विकास के कामों को बिना कार्यकर्ताओं के ऊपर कर नीचे ग्रामस्वराज्य-सभाओं तक पहुँच रही है।

लोग अन्याय और अभाव के प्रति जागरूक हो रहे हैं। आगे बढ़ने की आकांक्षा पैदा हो रही है। नये लोग जिम्मेदारी लेने के लिए सामने आ रहे हैं।

कुल ५६ गाँवों में २० हजार से अधिक का ग्रामकोष इकट्ठा हुआ है। प्रखण्डस्वराज्य-सभा के पास लगभग पौने चार हजार का विकास कोष है। कुल ५० हजार का विकास कोष इकट्ठा करने का प्रयत्न है।

पुष्टि के लिए झाझा के साथ चकाई प्रखण्ड भी जोड़ा गया है। ५६ ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बन चुकी हैं।

मुसहरी श्री उमेशचन्द्र त्रिवेदी

यहाँ १७ पंचायतें, ११८ रेवेन्यू गाँव हैं। ७२ रेवेन्यू गाँवों और १५ टोलों में ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बनी हैं। लगभग ३० प्रतिशत गाँवों में बीघा-कट्ठा निकला है। मुसहरी शहर का प्रखण्ड है। शहर के प्रभाव के कारण गाँव-गाँव में राजनीति है और मजदूर भी जहाँ-तहाँ संगठित हैं।

अनेक बड़े जमीनवाले, मुखिया, महाजन, तथा विद्वान कहे जानेवाले प्रोफेसर आदि खुल्लम-खुल्ला विरोध में हैं।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं का वातावरण उत्साहप्रद है। बैठकें होती हैं। उनकी तारीखें निश्चित कर दी गयी हैं। कोशिश रहती है कि हर परिवार से कम-से-कम एक व्यक्ति अवश्य आवे। इस आधार पर लगभग एक चौथाई ग्रामस्वराज्य-सभाओं में ७५ प्रतिशत उपस्थिति होती है, शेष तीन चौथाई में ५० प्रतिशत। ग्रामकोष निकल रहा है। विनियोग की कठिनाई है। कुछ जगह कोष में हर 'दाना' का अनाज आता है। मजदूर को जरूरत पर अगर १ मन दिया जाता है तो वह १ मन १० सेर वापस करता है। बीमारी में भी सहायता दी गयी है। जिन गाँवों में ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बनी हैं उनसे कोई नया मामला अदालत में नहीं गया है।

मजदूर टोलों में भी सवर्ण, सम्पन्न ही नेता बन जाते हैं। लेकिन जब यह जोर दिया गया कि अनुपात के अनुसार ग्रामस्वराज्य-सभा के पदों में मजदूरों को स्थान मिलना चाहिए, तो मिला।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं की बैठकों के कारण वर्ग-विद्वेष घटा है, लेकिन सामान्य 'एटीट्यूड' पुराना ही है। न्याय की भावना नहीं आयी है, समता का मानस नहीं बन रहा है। जो बोले उसे ठीक कर देने या पुलिस से मिलकर सताने की नीति ठीक मानी जाती है।

कुछ सभाएँ अनीति में हस्तक्षेप करने लगी हैं।

मजदूरी नहीं बढ़ी है। कहीं-कहीं सुबह से २ बजे तक (आधा दिन) के काम के लिए सूखा ५० पैसा देते हैं। मजदूरी में अच्छा अनाज देना, कोष से सहायता देना, मजदूर के साथ मारपीट का व्यवहार न करना, झूठे मुकदमे में न फँसाना—इन बातों में सुधार हुआ है।

हिंसावालों की सक्रियता जारी है। मजदूरों के रजिस्टर्ड यूनियन भी बन रहे हैं। हिंसावाले कहते हैं: 'इस तरह कितना समय लगेगा? भूमि के टुकड़े छोड़कर भूमिहीनता मिटती है या विषमता से मुक्ति दिलाती है? विकास के काम धनियों को और अधिक धनी बना रहे हैं, उनके मजदूरों को क्या मिलेगा?'

मजदूरों का झुकाव अभी भी उग्रवादियों की ओर अधिक है।

स्थानीय नेतृत्व की 'क्वालिटी' नहीं बदल रही है।

विकास के कार्यों से परमुखापेक्षिता बढ़ रही है। जिनको हमारे विकास-कार्यों से लाभ नहीं पहुँचा है वे विरोधी हो जाते हैं। लोगों के मन में विकास के लाभ ही मुख्य प्रेरणा बन गये हैं।

वैशाली (मुजफ्फरपुर) - श्री नक्षत्रदेव जी .

न बाहर के साथी हैं, न साधन। पुरुषार्थ में पूर्ण स्वावलम्बन है। विचार की व्यापक मान्यता है। बड़े लोगों का भी विरोध प्रकट नहीं हुआ है। विवाद आदि का कोई आकर्षण नहीं है। जमीन बहुत अधिक कीमती है इसलिए

बीघा-कट्ठा देना भारी लगता है।

जो भी बीघा-कट्ठा जमीन बँटी है उससे मजदूरों में आशा जगी है। एक ग्रामस्वराज्य-सभा बनी है। तीन पंचायतों का सीमित क्षेत्र लिया गया है।

प्रखंड भर में सर्वोदय मित्र बनाना शुरू हुआ है। १ हजार का लक्ष्य है।

रुपौली-भवानीपुर (पूर्णिया)— श्री अनिरुद्ध बाबू :

रुपौली में २१ पंचायतें, ४६ रेवेन्यू गाँव है। ६८ ग्रामस्वराज्य-सभाएँ गठित हुईं, जिनमें ३६ रेवेन्यू गाँव तथा ३१ टोले हैं।

कुछ ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बहुत सक्रिय हैं। एक ने मजदूरी का भी सवाल उठाया है। मालिकों ने मजदूरी बढ़ा दी। बाढ़ के कारण सरकार की ओर से दी जानेवाली रिलीफ में ग्रामस्वराज्य-सभाओं की सक्रियता के कारण धांधली बहुत कम हो सकी।

सभाएँ गाँव के मामले भी हल कर रही हैं।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं को पुष्ट करने की ओर विशेष ध्यान है। क्षेत्र पहले से आन्दोलन-प्रधान है। मजदूरों को मुकाबिले में डटने का अभ्यास है। दलबंदी की राजनीति खूब है। सभी दलवाले ग्रामस्वराज्य-सभा के मंच पर आ रहे हैं—गाँव के बाहर अपने अलग मंच पर कुछ भी करें।

२२ गाँवों का कागज कानूनी पुष्टि के लिए तैयार हुआ है। ●

जिला तरुण-शांतिसेना शिविर : सहरसा

शिक्षा में क्रान्ति की आवाज देकर तरुणमन को आकर्षित करने का प्रयास सहरसा में भी बहुत सफल रहा। इसका प्रमाण तो मिला १ अगस्त, 'शिक्षा में क्रान्ति दिवस' को ही जब जिले भर के विभिन्न सरकारी व गैर-सरकारी स्कूलों के छात्र व शिक्षक करीब ३ हजार की संख्या में जुलूस निकाल रहे थे।

यह बात सर्वमान्य है कि सामाजिक क्रान्ति से अलग शिक्षा में क्रान्ति का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता है। इसलिए सोचा गया कि अब एक शिविर के माध्यम से स्कूलों में सामाजिक क्रान्ति का सदेश पहुँचाया जाय। हर स्कूल की 'तरुण-शांतिसेना' के प्रभारी तथा संयोजकों को एवं जिन स्कूलों में संगठन नहीं हो सका था उनमें से एक शिक्षक तथा एक छात्र को आमंत्रण भेजा गया कि ४, ५, ६ सितम्बर को मधेपुरा नगर के सेन्ट्रल उच्च विद्यालय में भारतीय तरुण-शांतिसेना की ओर से जिलास्तरीय शिविर के आयोजन में शामिल होवें।

चूँकि शिविर के अर्थ तथा व्यवस्था का भार अकेले तत्काल नगरस्वराज्य-समिति नहीं उठा सकती थी इसलिए एक दिन की जिम्मेवारी स्थानीय आचार्यकुल तथा एक दिन की प्रांतीय तरुण-शांति-सेना समिति ने उठायी।

शिविर के संचालन हेतु कुछ राष्ट्रीय तथा प्रांतीय स्तर के व्यक्तियों को भी आमंत्रण दिया गया था पर कुछ-न-कुछ विशेष कारणों से वे नहीं आ सके। अब परिस्थितिवश गणसेवकत्व मजबूरी हो गयी। गणसेवकत्व सफल रहा ऐसा हम कह सकते हैं क्योंकि रात्रि में होनेवाली मुक्त चर्चा में पूछने पर भी किसी ने व्यवस्था या व्यवहार के प्रति कोई शिकायत नहीं की।

जिले भर के २१ उच्च विद्यालयों, दो कालेजों तथा तीन ग्रामसभाओं के युवकों ने शिविर में भाग लिया, कुल मिलाकर शिविरार्थियों की संख्या ६८ थी जिनमें ४८ छात्र तथा २० शिक्षक थे। परम्परानुसार मार्गव्यय का पूरा भार तथा शिक्षण संस्थाओं से अवकाश लेने की पूरी जिम्मेदारी शिविरार्थियों पर ही थी।

विचार के घूँट पिलाने का भार मुख्यतः श्री धीरेन्द्र मजूमदार पर ही पड़ा। श्री कृष्णराज भाई तथा श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणाजी ने भी इस कार्य में सहयोग दिया। बहुगुणाजी ने गुरु और शिष्य के सम्बन्धों की चर्चा करते हुए कहा कि आज के जमाने में इस सम्बन्ध का आधार सख्यभाव ही हो सकता है। उन्होंने यह भी याद दिलायी कि यह हमारा नया नहीं, पुराना ही मूल्य है। श्री कृष्णराज भाई ने आचार्यकुल, तरुण-शांतिसेना तथा ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रमों को इस भूमिका में रखा कि यह काम कार्यकर्ताओं का नहीं, नागरिकों का ही है। नागरिकों का कर्तव्य है कि वे इन जिम्मेदारियों को उठायें। यह आह्वान शिक्षक तथा छात्रों के लिए बहुत प्रेरक सिद्ध हुआ। पहले ही दिन अपने उद्घाटन भाषण में

सम्पादक

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सोमवार

वर्ष : १८

अंक : ३४
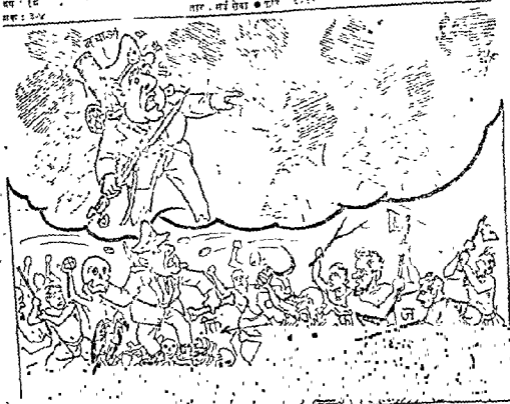
वहम और तथ्य

चीन का माओ : भारत का विनोबा

क्रांति के विश्लेषण में जब हम जाते हैं स्वभावतः उन मुल्कों की चर्चा होती है, जिनमें पुरानी व्यवस्थाएँ तोड़कर कुछ नया करने का प्रयास हुआ है। रूसी क्रान्ति के बाद, साम्यवादी क्रांति की परिभाषा में माओ ने एक अध्याय जोड़ा, एक नया आयाम प्रकट किया—मजदूर की जगह किसान परिवर्तन का वाहक बना। माओ की असामान्यता से इनकार नहीं, चीन की उपलब्धियों को स्वीकारने में हिचक नहीं। पर उन्हें प्राप्य से कुछ अधिक श्रेय देने का लोभ भी नहीं है।

"चीन की सफलता का रहस्य वह मुक्ति है जो माओ की व्यवस्था में चीन की स्त्री, युवक और श्रमिक को प्राप्त हुई है। माओ ने तीनों को एक नया जीवन दिया है—सुखी, स्वतंत्र, सार्थक।" यदि यह सच है तो निःसंदेह इस पूरी प्रक्रिया की गति, विनोबा-गांधी की अहिंसक प्रक्रिया से तीव्र और ज्यादा फलदायी है। एक सार्थक मुक्ति का भोगी, स्वतंत्र जीवन जीनेवाला सुखी मनुष्य हमारी कल्पना के समाज का प्रतिनिधि है। यदि वह चीन में उपलब्ध है तो मुझे गांधी और माओ में सौदा मंजूर है। उसकी कुर्बानी, हिंसा के बाद, यदि माओ ऐसा समाज बना चुका है तो उसने कोई ज्यादा कीमत नहीं वसूली है चीन से। न तो साम्यवादी रूस ऐसा समाज बना सका है और न पूंजीवादी अमेरिका और सर्वोदय-वाले तो इस तुलना में बहुत पीछे छूट गये हैं।

चीन के गाँव और कम्यून के रोजमर्रे के जीवन में पुलिस का हस्तक्षेप नहीं है—पर क्या 'हस्तक्षेप' नहीं है? नागरिक की मर्यादा का हनन 'पुलिस के हस्तक्षेप' से नहीं, 'हस्तक्षेप' से होता है और वह चीन में है—अपने विकटतम रूप में है। माओ ने सैनिक को नागरिक नहीं बनाया वरन् नागरिक को सिपाहीगिरी टिकाये व चलाये रखने का यंत्र बना दिया। वहाँ का नागरिक, नागरिकता का पोषक नहीं, माओ के सुनिश्चित वाक्यों का संरक्षक है और तरस का विषय यह है कि वह स्वयं अपने विरुद्ध, शासक के हित का रक्षण कर रहा है और फिर भी माओ सैनिक भी पालता है और फौज भी पालता है। माओ ने सैनिक को नागरिक नहीं बनाया, नागरिक का अस्तित्व ही मिटा दिया।

माओ की शक्ति जनता है और उसे उसने मुक्ति का स्पर्श कराया है, जीवन का नया मार्ग दिखलाया है—सुखी, सार्थक जीवन दिया है। तो फिर चीन में सैनिक बनाम नागरिक संघर्ष क्यों होगा? सैनिक का नागरिकीकरण हुआ, सुखी सार्थक जीवन मिला। अब वह किस साम्य की माँग करेगा? और यदि इस संघर्ष की आशंका है, इस माँग की निश्चितता है तो चीन के नागरिक को वह कुछ भी नहीं मिला जो स्वतंत्र होता है, सार्थक होता है, सुखी होता है।

"क्यूँ गुलाम मुसलिम होते ही दिल गुमसुम सा हो जाता है,
क्यूँ मुख को उठे पग जाते हैं, क्या शान दीवाना भूल गया?
है कितनी गजब यह खामोशी, ऐ वतने वतन, ऐ वतने वतन!
हम साज उठाना भूल गये, मुर्शिद भी तराना भूल गया।"

नागरिक शक्ति को नागरिकता का करार देने का 'राज' कभी माओ ने बताया नहीं और चीन का नागरिक, नागरिकता के तराने भूल गया। तुलनात्मक रूप से चीन का मनुष्य सुखी है पर मानवीय नहीं, यांत्रिक है।

अपनी जानकारी में, जिसका क्षेत्र बड़ा ही सीमित है, आधार पर मुझे ऐसा लगता है कि माओ ने चीन में अपनी क्षमता भर प्रयोग कर लिया। अब वह अपने दिन पूरे कर रहा है। पर इतना निश्चित है कि माओ के बाद चीन में सामाजिक व्यवस्था के स्तर पर भी व्यापक परिवर्तन होंगे और चीन कोई और रास्ता खोजेगा।

६ सितम्बर '७१ के आपके संपादकीय को पढ़कर कुछ प्रश्न मन में खड़े हुए जिन्हें आप साथियों के विचारार्थ भेज रहा हूँ।

—कुमार प्रशान्त
काली कोठी चकारी
मुजफ्फरपुर (बिहार)

"खूब खाओ और मरो"

स्पेनी भाषा की एक कहावत है—"बीमारी का पिता चाहे जो हो, माता उसकी हमेशा गलत खुराक ही होती है।" संयुक्त राष्ट्र-संघ के एक विशेषज्ञ ने अभी हाल में बताया कि "भारत में एक आदमी खूब खा सकता है फिर भी जल्दी मर सकता है।" उसने आगे कहा, "खाने की चीजों में इतनी मिलावट है कि भारत के लोग रोज ऐसी चीजें खा रहे हैं जो खाने लायक नहीं हैं। इतना ही नहीं उनके खाने में जान का खतरा है। शायद ऐसी है कि मौजूदा पीढ़ी को शुद्ध चीजों का स्वाद तक मालूम नहीं है। जो चीजें खाते हैं उनसे उन्हें पूरा पोषण नहीं मिलता। लोगों की इस तरह गिरती हुई जीवनी शक्ति का देश को भयंकर दंड भोगना पड़ेगा। ऐसे लोग, जो बार-बार बीमार पड़ेंगे क्या उत्पादन करेंगे, और क्या उनसे विकास के काम होंगे?"

चाय और मिठाई में चाँदी के वरक की जगह रांगे के वरक, हल्दी, पीले रंगों और दूसरी रंगीन मिठाइयों में ऐसे रासायनिक पदार्थ, जिनसे कैंसर तक हो, चाय में चने का छिलका पीसा हुआ, मसालों और बढ़िया घी में भी चर्बी, चीनी के बदले सैकरीन तथा दूसरे रासायनिक रंग, जो कैंसर पैदा करते हैं, पानी मिले दूध को गाढ़ा करने के लिए तरह-तरह के पदार्थ, दालों में खेसारी, चावल में कंकड़, जीरे में घास के बारीक टुकड़े, घी में चर्बी, अस्पताल में पानी की सुइयाँ और दवाएँ—ये मिलावट की कुछ मिसालें हैं।

हममें से जो लोग खूब खा रहे हैं, वे भी स्वास्थ्य गँवाकर जिन्दा रहे हैं।

काम नहीं, दाम नहीं, आराम नहीं

अभी हाल में एक गाँव के मुसहर टोले में हैजा फैला। एक लड़का मर गया। ६ जवान मुसहर हैजे के शिकार होकर बीमार पड़े थे। पास की एक सेवा संस्था में अस्पताल था। गाँव के एक सज्जन ने वहाँ खबर दी। संस्था के डाक्टर गये। गाँव में लोगों को टीका लगाया, और किसी तरह समझा-बुझाकर मरीजों को अस्पताल ले गये। वहाँ उनकी दो दिन तक चिकित्सा हुई। सब अच्छे हो गये। पथ्य देने का समय आया। प्रश्न हुआ चावल कहाँ से आयेगा? मुसहरों के घर में एक दाना चावल नहीं था। जिन मालिकों के यहाँ ये मुसहर मजदूरी करते हैं उन्होंने पथ्य के लिए चावल देने की जरूरत समझी नहीं। हैजा तो गया लेकिन पेट की ज्वाला कैसे मिटे? पूछने पर मालूम हुआ कि काम है नहीं, मजदूरी मिलती नहीं, तो घर में चावल कहाँ से आये?

एक मुसहर की औरत अपने बर्तन—थाली, लोटा जो भी रहा होगा—गिरवी रखे, और दो किलो (मोटा, पत्थर मिला) चावल लायी। पथ्य बना, पेट में कुछ खुराक पड़ी।

बिहार में १९६१ की जनगणना में २९ प्रतिशत भूमिहीन मजदूर थे। १९७१ में उनकी संख्या बढ़कर ४८ प्रतिशत हो गयी। यह संख्या कहीं-कहीं ६० प्रतिशत तक है। अगर बँटाईदारों को भी भूमिहीन ही मान लें तो भूमिवालों की संख्या बहुत कम रह जाती है। अब तक भूमिहीन मजदूर ज्यादातर हरिजन और आदिवासी थे, लेकिन अब दूसरी जातियों के गरीब भी अपने छोटे टुकड़ों से हाथ धोकर भूमिहीन होते जा रहे हैं। मेहनत बेचनेवाले बढ़ते जा रहे हैं, लेकिन बाजार में मेहनत के खरीददार नहीं हैं।

इस साल महाजनों ने एक नया धंधा शुरू किया है। गर्मी में वर्षा के कारण खलिहान से रब्बी नष्ट हुई। बारिश में ज्यादा वर्षा के कारण या बाढ़ के क्षेत्रों में पानी में डूबने के कारण मकई की फसल हाथ से गयी। दक्षिण बिहार के जिन हिस्सों में बाढ़ नहीं थी वहाँ धान की फसल खेतों में खड़ी है—अच्छी नहीं है, फिर भी है। लेकिन सवाल है कि जब तक धान पकेगा, कटेगा, दौंजा जायगा, तब तक पेट कैसे पाला जायगा? न कोई उद्योग है, न धंधा, और न मिट्टी आदि काटने का ही कोई काम है। मजदूर करा करे, खेत-हीन खेतिहर कैसे जीये? महाजनों ने मौका देखकर इस शर्त पर रुपया देना शुरू किया है कि जब धान कटेगा तो गरीब इस वक्त लिये हुए कर्ज की अदायगी में अपना धान १२ रुपये मन के हिसाब से महाजन को देगा। धान कटने के दो महीने पहिले ही बिक गया, और जब फसल पर बाजार-भाव २५ रुपये मन से कम नहीं होगा तो इस वक्त १२ रुपये मन में ही बिक गया!! धान कटेगा, खलिहान से महाजन के घर जायगा। जिस गरीब ने जोता-बोया उसके घर क्या आयेगा? नया कर्ज, नया सूद, बेरोजगारी और भूख के अखण्ड दिन और अखण्ड रातें!

बरसों पहिले डा० लोहिया ने अपने जीवन-काल में संसद के एक भाषण में कहा था कि देश के ६० फीसदी लोग २० पैसे रोज पर गुजर कर रहे हैं। तब से बढ़ती हुई कीमतों के कारण २० पैसा खिसक कर नीचे आ गया होगा और ६० प्रतिशत बढ़कर ऊपर पहुँच गया होगा। इस बीच देश वस्त्र के अलावा अन्न में भी स्वावलंबी हो चुका है। लेकिन आँखें उठाकर चारों ओर देखिए तो गरीबी ही नहीं गरीबी से भी नीचे बिलकुल कंगालियत फैली हुई दिखाई देती है। अगर अखबार पढ़िये तो बढ़ती हुई समृद्धि के आँकड़ों की भरमार रहती है। आँकड़ों से बढ़कर दुनिया कोई दूसरी चीज भी है?

अर्थशास्त्रियों में एक बहस छिड़ी हुई है कि गरीबी से बेरोजगारी पैदा होती है या बेरोजगारी से गरीबी? इनमें से कौन कारण है और कौन परिणाम? दूर करना हो तो किसे पहिले दूर किया जाय? जो बेरोजगार है, भूखा है उसे पहिले-पीछे की बात समझ में नहीं आती, वह इतना ही चाहता है कि उसे बराबर काम मिलता रहे और पूरी मजदूरी मिलती रहे। वह जानता है कि काम नहीं मिलेगा तो खाली पेट रहना होगा, और काम मिला भी किन्तु दाम पूरा न मिला तो खुद को और बच्चों को आधे पेट खाकर सोना पड़ेगा।

नाम समाजवाद हो, या कोई और, करोड़ों लोगों के सामने सवाल है काम का, दाम का, आराम का। वे इस क्रम को जानते हैं, और उनकी ओर से माँग भी इस क्रम की ही है। पंचवर्षीय योजनाएँ इस वादे से शुरू हुई थीं कि भारत के हर नारी, पुरुष-स्त्री, को काम मिलेगा, दाम मिलेगा, आराम मिलेगा। लेकिन कहाँ मिला? योजनाओं के साथ-साथ बेरोजगारी बढ़ती ही गयी, बढ़ती ही जा रही है। कारखानों के माल के दाम बेतहाशा बढ़े, लेकिन छोटे किसान, खेतिहर मजदूर, दस्तकार को मिलनेवाले दाम कितने बढ़े? और, आराम की तो बात ही बेकार है। नेहरू का कहना कि 'आराम हराम है' करोड़ों के लिए किसी दूसरे अर्थ में सार्थक हो गया है।

योजनाएँ बड़े-बड़े उद्योगों से शुरू हुई। उद्योगों के नाम से समृद्धि के बड़े-बड़े 'तीर्थ' बने, रेगिस्तान में नखलिस्तान नजर आये। जब ये तीर्थ बन चुके तो दूसरा यह नारा लगा कि खेती में उत्पादन बढ़ना चाहिए ताकि विदेशी अन्न की मुहताजी छूटे। खेती में 'हरित क्रान्ति' हुई, उत्पादन बढ़ा, बाजार अन्न से भर गये। लेकिन बाजारों का भरना एक बात है, और लोगों के पेटों का भरना बिलकुल दूसरी। पेट भरने के लिए काम चाहिए, काम नहीं होगा तो अन्न के लिए दाम कहाँ से आयेगा? इसलिए अब इतने दिनों बाद यह कहा जा रहा है कि 'क्षेत्रीय विकास' (एरिया डेवलपमेण्ट) की योजनाएँ बननी चाहिए

ताकि खेती, खेती के साथ चलनेवाले उद्योग, तथा क्षेत्र की भूमि, इन तीनों का विकास साथ-साथ हो ताकि क्षेत्र की मनुष्य-शक्ति इस त्रिविध खेती-केन्द्रित विकास-योजना में लग सके। योजना कोई भी हो, सरकार ही उसे बनाती है, और सरकार ही उसे चलाती है। सरकार मानती ही नहीं कि उसकी शक्ति के अलावा देश में जनता की भी शक्ति होती है, जिसके बिना विकास होता नहीं, देश बनता नहीं।

सर्वोदय आन्दोलन पिछले बीस वर्षों से बराबर कहता आ रहा है कि हमारी समस्याओं की कुंजी न केवल कुछ बड़े-बड़े उद्योगों में है, न बड़े-बड़े फार्मों में, वह है साढ़े पाँच लाख गांवों में। हर गाँव का विकास होना चाहिए। कुछ चुने हुए गाँव वालों का विकास नहीं, बल्कि एक इकाई के रूप में सम्पूर्ण गाँव का समग्र विकास—ऐसा विकास जिसमें गाँव का हर व्यक्ति शरीक हो, पुरुषार्थ में भी, और प्रसाद में भी। विकास गाँव की खेती का, उद्योग का, शिक्षा का, स्वास्थ्य का, सगठन का, व्यवस्था का—हर चीज का। गाँव-गाँव के श्रम, पूँजी तथा अन्य साधनों को, ग्राम-हित और राष्ट्र-हित में लगाने की एजेंसी संघटित गाँव ही हो सकता है।

गाँव को सामने रखने पर गाँव के साधनों के, मुख्य रूप से भूमि के, स्वामित्व का प्रश्न सबसे पहिले पैदा होता है। भूमि मालिकों के हित में बेची और खरीदी जाती रहे, तो गाँव की खेती-औद्योगिक अर्थनीति का कोई आधार नहीं रह जाता। भूमि किसकी होगी, उसे कौन जोतेगा-बोयेगा, तथा उससे होनेवाली कमाई किसको कितनी मिलेगी, ये सब बातें तय होनी चाहिए। उत्पादन का बढ़ना तभी सार्थक है जब उत्पादक भी बढ़ें। उत्पादक बढ़ेंगे तो धन बँटेगा। अगर ऐसा करना हो तो गाँव और शहर तथा गाँव और सरकार का क्या सम्बन्ध होगा, यह भी तय होना चाहिए। गाँव की स्वाधीनता और गाँव की स्वायत्तता, दोनों साथ साथ चलनेवाली चीजें हैं। राष्ट्र के नाम में सरकार हर चीज पर हावी होती जाय, और राष्ट्रीयकरण के नाम में सरकारीकरण होता जाय, इससे जनता का ह्रास ही होगा, विकास नहीं। और अगर गाँवों का ह्रास होगा तो शहर और सरकार का भी ह्रास अनिवार्य है, क्योंकि ८० प्रतिशत ग्राहक, करदाता, और मतदाता गाँवों में ही रहते हैं। ग्रामीण अर्थनीति का विकास भूमि की निजी मालकियत के आधार पर नहीं हो सकता। भूमि पर गाँव का सामूहिक स्वामित्व कायम होना चाहिए। खेती की पद्धति पारिवारिक, सहकारी, सामूहिक, चाहे जो अपनायी जाय। गाँव का स्वामित्व यानी गाँव में रहनेवाले सभी व्यक्तियों को लेकर बनी हुई स्वायत्त ग्रामस्वराज्य-सभा का स्वामित्व। यह ग्रामस्वराज्य-सभा ही गाँव के विकास और भीतरी व्यवस्था की जिम्मेदारी ले सकती है। यह काम सरकार की शक्ति के बाहर है।

इसलिए जहाँ तक सर्वोदय आन्दोलन का सम्बन्ध है वह काम और दाम, गरीबी और बेरोजगारी के प्रश्न को इसी दृष्टि से देखता है। वह मानता है कि ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए ग्रामसभा को ही शिक्षण और साधन के द्वारा पुष्ट करना चाहिए ताकि उसमें यह सामर्थ्य आये कि वह काम, दाम और आराम की कमी को घर-घर पहुँचा सके। यही बात नगर पर भी लागू होती है। कानून, धन, ज्ञान-विज्ञान की शक्ति, जितनी भी शक्तियाँ अभाव, अन्याय, और अज्ञान को दूर कर सकें वे सब ग्रामस्वराज्य-सभा (और नगरस्वराज्य-सभा) को उपलब्ध कराना सरकार का काम है। योजना गाँव (नगर) की हो, पर वही साधन समाज और सरकार के हों। यह तरीका है गाँव-गाँव में, घर-घर में, लोकतंत्र और समाजवाद पहुँचाने का। यही तरीका है जन-जन के जीवन में शान्ति और समृद्धि लाने का।

लोग काम चाहें, और उन्हें काम न मिले, लोग काम करें और उन्हें पूरा दाम न मिले, क्या ऐसी व्यवस्था कब तक चलेगी? जिन्हें काम, दाम और आराम नहीं मिल रहा है, और जिनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ रही है, वे अब यह प्रश्न भी पूछने लगे हैं: ऐसी व्यवस्था को चलने ही क्यों देना चाहिए?' जब मनुष्य देखता है कि व्यवस्था नहीं बदल रही है तो वह व्यक्तियों से बदला लेने पर उतारू हो जाता है। हमारे देश का लोक-मानस इसी बदले की भावना से भरता जा रहा है। जब काम नहीं, दाम नहीं, आराम नहीं, तो मनुष्य करे क्या? ●

अन्तरराष्ट्रीय शान्ति-आन्दोलन

इन्टरनेशनल फेलोशिप आफ रीकान्सिलिएशन के २० सदस्यों की एक बैठक हॉलैण्ड के जीस नामक स्थान में १६ से २० अगस्त तक हुई। पश्चिम यूरोप के नौ देशों के प्रतिनिधि उसमें शरीक थे। काफी बहस-मुबाहिसे के बाद तीन बातों पर वे एक मत हुए।

पहली बात यह कि यूरोपीय स्तर पर काम करनेवालों का एक समुदाय संघटित किया जाय जो यूरोप की घटनाओं का निरीक्षण और अध्ययन करे और यह तय करे कि नाटो, कामन मार्केट आदि जैसी घटनाओं पर अहिंसक प्रतिकार का क्या स्वरूप हो।

दूसरी बात यह है कि एक अन्तर-राष्ट्रीय प्रशिक्षण केन्द्र हो। इस केन्द्र पर अहिंसा के सिद्धान्त, अहिंसक कार्यपद्धति और संगठन का प्रशिक्षण प्रत्यक्ष कार्य द्वारा हो। एक राष्ट्र के कार्यकर्ता दूसरे राष्ट्र में काम करने में कैसे सहायक हो सकेंगे यह प्रक्रिया यहीं से विकसित होगी।

तीसरी बात यह कि यूरोप के सभी देशों में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

—[illegible] (पीस न्यूज से)

सुलभ ग्रामदान और सूक्ष्म सत्याग्रह की प्रक्रिया

मनमोहन चौधरी

पिछले कुछ दिनों से मैं सुलभ ग्रामदान-आन्दोलन से सम्बन्धित एक प्रश्न पर गम्भीरता से सोच रहा हूँ। भूदान-आन्दोलन के प्रारंभिक दिनों में विनोबाजी ने भूमिहीनों के लिए छठा हिस्सा भूमि की माँग की थी। बाद में उन्होंने इस माँग को घटाकर बीसवाँ हिस्सा किया। इस कदम का औचित्य उन्होंने सत्याग्रह की सूक्ष्म से सूक्ष्मतर प्रक्रिया कहकर सिद्ध किया। उनका तर्क यह था कि छठा हिस्सा भूमि की माँग से भूमिवान भयभीत हो जाते हैं। फिर वे 'भागीदारी' (हिस्सा बाँट कर देने) के विचार की ओर से अपने दिमाग का दरवाजा बन्द कर लेते हैं। लक्ष्य है उनके दिमाग को 'भागीदारी' का विचार स्वीकार करने के लिए खोलना। बीसवें हिस्से की माँग से वे भयभीत नहीं होते। इससे भूमिवानों के हृदय में प्रवेश करने में सहायता मिलती है। 'सुलभ ग्रामदान' के पक्ष में भी यही तर्क दिया गया था। उस समय तो इस तर्क से मुझे पूरा समाधान हो गया था। पर इधर हाल में मेरे दिमाग में इस तर्क पर शंकाएँ उठने लगी हैं।

'सूक्ष्म से सूक्ष्मतर' प्रक्रिया की खूबसूरती और ताकत यह है कि पीड़ित समुदाय अपनी माँग घटा कर अपनी उदारता दिखलाता है। परन्तु उदारता का उद्गम-स्थल आन्तरिक शक्ति की भावना हो न कि विवशता की भावना। जब दो ऐसे समुदाय एक दूसरे के सामने हों जिनकी हैसियत में एक दूसरे से बहुत अन्तर हो—एक की मुट्ठी में सभी सम्पत्ति हो, सत्ता के सब स्थान हों और दूसरा करीब-करीब पूर्ण असहाय और कमजोर हो—तब सत्याग्रह की प्रक्रिया में पहला कदम यह होगा कि कमजोर फरीक के मन से उसकी निरीहता और कमजोरी की भावना हटा दी जाय और उसके मन में एक आन्तरिक शक्ति की भावना जगायी जाय, जिससे कि वह महसूस करने लगे कि जिससे उसका मुकाबिला है उससे वह कमजोर नहीं है, वरन उसके बराबर है। तभी वह अपनी बिलकुल उचित माँग को कम कर सकता है अथवा अपनी माँग को—अधिकारयुक्त (जायज) माँग को—छोड़ भी दे सकता है जिससे कि वह अपने पूर्वकथित विरोधी का हृदय जीत सके। परन्तु जब तक वह यह महसूस करता है कि वह बेबस है, बेचारा है, कमजोर है, जब तक वह यह नहीं महसूस करता कि उसमें भी आन्तरिक शक्ति है, तब तक उसकी माँग को कम करना 'सूक्ष्म से सूक्ष्मतर' सत्याग्रह की प्रक्रिया नहीं होगी, वरन वह उसकी निरीहता की, उसकी कमजोरी की झलक होगी। नतीजा बिलकुल स्पष्ट है। विरोधी पर कोई असर नहीं होगा, अपेक्षित असर की तो बात दूर है।

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में जमीन के बड़े-बड़े मालिक ताकतवान फरीक हैं, और भूमिहीन गरीब किसान कमजोर और पीड़ित फरीक। भूमिहीनों में अधिकतर हरिजन और आदिवासी हैं। वे सिर्फ आर्थिक सुविधाओं से ही वंचित नहीं हैं बल्कि सामाजिक स्तर पर भी पीड़ित और दलित हैं। आन्दोलन ने यदि इन लोगों को अपनी शक्ति का भान कराया होता और भूमिवानों का हृदय जीतने के लिए उन्होंने यदि अपनी माँग घटा दी होती तब उसका सचमुच कोई असर होता। परन्तु वस्तुस्थिति तो यह है कि वे आज भी उसी स्थिति में हैं जिस स्थिति में पहले थे। पहले ऊँची माँग करके और बाद को इसे कम करनेवाले तो विनोबा और सर्वोदय कार्यकर्ता हैं। इसमें भूमिहीनों और गरीब किसानों की शक्ति और उदारता की झलक का कोई प्रश्न ही नहीं है। यही कारण है कि 'सूक्ष्म से सूक्ष्मतर' सत्याग्रह की प्रक्रिया का अपेक्षित प्रभाव इसमें पड़ा है ही नहीं।

एक बार श्री नारायण देसाई ने 'प्रेमाक्रमण' का विचार रखा था। इस सुझाव में भी ये ही कमियाँ हैं। इसको व्यवहार में तभी लाया जा सकता है जब दोनों दल करीब-करीब समान ताकतवाले हों। परन्तु जहाँ यह आधार नहीं है वहाँ सत्याग्रह की प्रक्रिया यह होगी कि पहले कमजोरों के हृदय में आन्तरिक शक्ति जगायी जाय और विवशता की भावना से उन्हें मुक्त किया जाय। सत्याग्रह का यह सर्व प्रथम लक्ष्य होगा।

भूदान आन्दोलन ने आमतौर से एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया, जिसमें गरीबों के हृदय में आशा की एक किरण जगी, उनकी कुछ अपेक्षाएँ बढ़ीं। परन्तु उनको अपने हृदय में शक्ति का कोई भान नहीं हुआ। इस आन्दोलन में उत्पीड़न और अत्याचार के विरुद्ध जिन क्षेत्रों में प्रतिरोध और सत्याग्रह खुल्लम-खुल्ला संगठित किया गया है वहाँ उत्पीड़ितों को अपनी शक्ति का भान अवश्य हुआ है। ग्रामदानी गाँवों के गरीबों, हरिजनों और आदिवासियों को जबतक यह भान नहीं हो जायगा कि ग्रामदान से उनकी शक्ति बनती है तब तक वे तथाकथित उग्रवादी आन्दोलनों की ओर आकर्षित होते रहेंगे।

गरीबों और दलितों, के मन में यह शक्ति जगाने में ग्रामस्वराज्य-सभा, समर्थ हो सकती है। सम्पन्न और बड़े किसान आमतौर पर ग्रामसभा के गठित होने के विरोधी हैं। इससे जाहिर है कि इसकी सम्भावनाओं का उन्हें अन्दाज मिल गया है। परन्तु गरीब लोग उसकी ओर से उदासीन हैं। उनके मन में डर है, भय है, कि गाँव के बड़े लोग ग्रामसभा पर भी उसी तरह हावी रहेंगे जिस तरह अबतक वे गाँव के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन पर हावी रहे हैं। मेरा ख्याल है कि 'सर्वसम्मति' पर हमलोग जो जोर देते हैं, उसकी तह में जाने पर, गरीबों की इस आशंका में वृद्धि की सम्भावना दिखाई देगी। जहाँ गरीब लोग हैं वहाँ 'सर्वसम्मति' बहुत आसानी से हो जाती है, कारण, वे

घुटने टेक देने के आदी हैं। गाँव के बड़े लोगों की ओर से जो प्रस्ताव, गाँव में रखे जाते हैं उसे वे सिर झुकाकर मान लेते हैं। ग्रामसभाओं को सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम कैसे *बनाया जाय*, अभी तक हमलोगों के हाथ यह कुंजी नहीं आयी है।

अभी पिछले दिनों जब विनोबाजी से मेरी मुलाकात हुई, तब मैंने अपनी शंकाएँ उनके सामने रखीं। गरीबों के दान के सूक्ष्म प्रभाव पर उन्होंने जोर देते हुए कहा कि जब उन्होंने हर आदमी से, *गरीब किसानों से भी*, भूदान माँगना शुरू किया था तब गरीबों से छोटे-छोटे दान के *लाखों दान-पत्र मिले थे*। उसी से राजा रामगढ़ और राजा राका जैसे बड़े-बड़े भूमिवानों के हृदय के द्वार खुले और लाखों एकड़ का भूदान मिला। उन्होंने यह भी कहा कि लोग यदि सिर्फ दूसरों से हड़पने की बात सोचेंगे और उनके पास जो है उसमें भागीदारी की बात नहीं सोचेंगे तो यह प्रक्रिया सत्याग्रह से *बिल्कुल भिन्न होगी* और परिणाम अपेक्षानुसार नहीं आयेगा। उन्होंने कहा कि देने को हरएक के पास कुछ न कुछ है। यहाँ तक कि अस्पताल में पड़ा लकवे का मरणासन्न रोगी भी दूसरों को कुछ न कुछ दे ही सकता है—दूसरों के लिए प्रेमाश्रु के दो बूँद ही सही। दान देने की मनुष्य की यह शक्ति ही उसमें यह प्रतीति पैदा करती है कि समाज में उसका भी मूल्य है, उसका भी स्थान है। उसके दान की शक्ति से दूसरे सूक्ष्मरूप से प्रभावित होते हैं। यह भी उन्होंने कहा कि उन्होंने जमीन का जो हिस्सा माँगना शुरू किया था वह भूमिहीनों का प्रतिनिधि होकर। इसी हैसियत से उन्होंने भूमि की माँग छठा हिस्सा से घटाकर बीसवाँ हिस्सा कर दिया था।

मैंने विनोबाजी से कहा कि मैं यह महसूस करता हूँ कि 'दान' और 'भागीदारी' का सामाजिक प्रभाव संदेह से परे है। दान का जब व्यापक प्रयोग होता है तब वह सामाजिक शक्ति बन सकता है। पर यह 'दान' दाता को समाज के ऊँचे और सम्पन्न वर्ग के लोगों की *सामाजिक और आर्थिक गुलामी से मुक्त* नहीं कर सकता। अपने से अधिक विपन्न लोगों के लिए उसके हृदय की करुणा उसे अपने ऊपर होनेवाले अन्याय और अत्याचार से बचा नहीं पाती। इससे वह अपने जूए को उतारकर *फेंक नहीं पाता*। मैंने जो प्रश्न उठाया वह 'हड़प बनाम दान' का नहीं था, परन्तु कुछ वैसी प्रक्रिया शुरू करने का था जिससे विपन्नों की विवशता की भावना दूर हो।

मैंने यह सुझाव दिया कि गाँव के लोग जब दान दें मुझे तब उन्हें यह तय करने का अधिकार रहे कि दूसरे कितनी *जमीन देंगे*। 'सूक्ष्म से सूक्ष्मतर' की ओर जाने का यह वास्तविक प्रारम्भ-बिन्दु हो सकता है। वह इस बात से सहमत हुए। उन्होंने कहा कि बीसवें हिस्से की माँग तो मात्र सांकेतिक है। वह बोले, "मैं तो यह कहता ही रहा हूँ कि सभी बातें, अन्तिम बात तक, मैं ही क्यों कहूँ? मेरे बाद आनेवाले लोगों के लिए भी कहने और करने लिए कुछ होना चाहिए! मैं जो बीसवाँ हिस्सा माँग रहा हूँ वह प्रारम्भ मात्र है। ग्रामस्वराज्य-सभा में बैठकर ग्रामीणों को यह तय करने का अधिकार होगा कि गाँव का कौन व्यक्ति कितनी जमीन देगा।"

वह इस बात से भी सहमत हुए कि गरीब लोग जब ग्रामस्वराज्य-सभा में *बराबर की हैसियत से* भाग लेने लगेंगे तो उनके मन से बेबसी की भावना घटने लगेगी और अन्ततः समाप्त हो जायगी। उन्होंने यह भी कहा कि यह बात ठीक है *कि गाँव के गरीब ग्रामसभा में अमीरों* के हाथी हो जाने के भय से भयभीत हैं। आपस का विश्वास और प्रेम जब अविश्वास और भय को दूर कर देगा, तब ग्रामसभा की शक्ति बढ़ेगी।

"मैंने यह बताया कि ग्रामदान कानूनों में बीसवें हिस्से को लोच बना देने का सुझाव है। गाँववाले दान में कितनी जमीन दें, यह तय करने का अधिकार ग्रामसभा का है, यह बात यदि स्पष्ट कर दी जाय तो आन्दोलन में बल आयेगा। मैंने यह भी सुझाया कि आपस के स्नेह और सहयोग की आवश्यकता है, इसमें शक नहीं, तथापि जब तक भय और *अविश्वास का पर्दा दूर नहीं हटता, तब* तक वह आ नहीं सकता। इसे किस तरह दूर हटाया जा सकता है इस सम्बन्ध में अभी तक हमलोगों के सामने कोई साफ चित्र नहीं उभरा है।

वह मेरे सुझाव के पहले हिस्से से सहमत हुए पर साथ ही इस बात पर *उन्होंने जोर दिया कि सम्बन्धित व्यक्ति* को इस बारे में अपनी राय व्यक्त करने का अधिकार होना चाहिए।

इस कथन के दूसरे हिस्से के *सम्बन्ध* में उन्होंने कहा कि भय और अविश्वास कोई नयी बात नहीं है। कोई आठ-दस-सौ वर्षों से यह चला आ रहा है। श्रम के विभाजन के विचार को आधार मान कर *वर्ण का निर्माण हुआ था*। इतिहास के किसी क्षण में सड़ी-गली जातिप्रथा ने उसका स्थान ले लिया। इस समय अपने देश में अनगिनत जातियाँ और उपजातियाँ हैं। स्त्रियों को दबा कर रखने की प्रथा भी उसी तरह दुखद है। इन सब बातों को *बदलना है। यह सब काम आसान नहीं है।*

इस बातचीत से जो एक महत्व का मुद्दा निकला, वह यह कि ग्रामदानी गाँव में किस आदमी को कितनी जमीन दान में देने के लिए कहा जाय, यह अधिकार ग्रामसभा को हो। मेरा ख्याल है कि इस आधार को स्वीकार कर लेने से आन्दोलन अधिक मजबूत होगा। सर्व सेवा संघ को इसपर विचार करना चाहिए।

(मूल अंग्रेजी से)

अनुवादक—हेमनाथ सिंह

आचार्य संवाद

आज की रद्दी तालीम को आचार्यकुल ही बदल सकेगा

आज रद्दी से रद्दी तालीम दी जा रही है। अगर यही यह जाहिर किया जाए कि सबसे रद्दी तालीम का कोई नमूना पेश करो, ऐसा जो नमूना पेश करेगा उसको महावीर चक्र देंगे, अगर ऐसा कहीं जाहिर किया जायगा, तो मेरा ख्याल है कि यह जो स्कीम है सरकार की, उसी को महावीर चक्र मिलेगा। इससे बदतर शिक्षा-योजना बनाना चाहें तो बना नहीं सकेंगे। पुराने जमाने की बन चुकी है एक दफा, और वही जारी है।

जब स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, उन दिनों मैं देहात में काम करता था। मुझे बुलाया गया कि आज से आजादी मिल गयी है और आपका भाषण वहाँ वर्धा में रखना है। मैंने कहा ठीक है। वर्धा में मैं गया और लोगों से पूछा, "आज से पुराना साम्राज्य का जो झण्डा चलता था, वह चलेगा ?" बोले "नहीं चलेगा। आज झण्डा बदल गया है।" तो मैंने कहा कि, "आज अगर झण्डा बदल गया है, तो तालीम भी आज ही बदलनी चाहिए। पुरानी तालीम अगर जारी है, तो समझना चाहिए कि पुराना राज ही चल रहा है। नाम भले नया राज है, लेकिन राज पुराना है। तालीम पुरानी नहीं होनी चाहिए, नयी तालीम होनी चाहिए। जैसे झण्डा नया, वैसे तालीम नयी। और नयी तालीम की एक योजना बापू ने पेश की थी, पर मान लीजिए कि वह योजना सबको पसन्द नहीं आती तो मैं क्या करूँगा ? स्वराज्य प्राप्ति के बाद मैं जाहिर करूँगा कि ६ महीने सब विद्वानों की सभाएँ होंगी और ६ महीने चर्चा करके वे लोग निर्णय करेंगे शिक्षा का और जो निर्णय होगा, तदनुसार शिक्षा चलायी जायेगी। तब तक शालाएँ बन्द रहेंगी, और सब विद्यार्थियों को सूचना दी जा रही है कि गाँव गाँव में जाकर काम करो, गाना गाओ, स्वराज्य मिला है, क्यों जाते हो स्कूलों में ? स्कूल ६ महीने बन्द हैं। ऐसा मैं करता और ६ महीने के बाद जो योजना सब लोग पेश करते, तदनुसार तालीम चलती।"

परन्तु उलटा हुआ। वही रद्दी तालीम ही जारी रही। और उस पर दो-दो कमीशन बैठाये गये और एक-एक कमीशन की रिपोर्ट मेरा ख्याल है सात-आठ सौ पन्नों से कम नहीं होगी। ये बड़ी-बड़ी रिपोर्टें हो गयीं और सब-की-सब वैसी ही पड़ी रहीं। और यहाँ तक कि हमारी प्रधान मंत्री इन्दिराजी बोलीं कि स्वराज्य के बाद हमने कई गलतियाँ की हैं, उनमें एक गलती यह है कि पुरानी तालीम ही चलायी गयी। वही का वही पुराना ढाँचा कायम रखा। अब सवाल यह है कि अब इन्दिराजी भी शिकायत करती हैं इस तालीम की, तो आखिर यह तालीम है किसके हाथ में ? तो बोलते हैं कि वह फुटबॉल का खेल है। वह कहते हैं, प्रान्त का काम है। अब प्रान्तवाला कहता है कि ऊपर से आदेश मिले, केन्द्र से, तद-नुसार करना अच्छा रहेगा। केन्द्रवाला कहता है प्रान्त का काम है। तो यह फुटबाल का खेल चला, टालते रहे, इधर से उधर और आज तक कुछ भी फर्क हुआ नहीं। जो तालीम पुराने जमाने में चलती थी, जिससे ऊब करके बापू ने तालीम लेना छोड़ दिया, वही तालीम आज भी चल रही है।

आज की तालीम में तुलसीदास की रामायण पढ़ाई नहीं जायेगी। क्यों ? क्योंकि यह 'सेक्युलर स्टेट' है, इस वास्ते रामायण नहीं चाहिए। परन्तु अब क्या करें ? रामायण भी एक साहित्य की किताब है, इस वास्ते एक थोड़ा सा अंश, जिसको 'पोर्शन' कहते हैं अंग्रेजी में, नमूने के तौर पर रखेंगे—तुलसीदास का, सूरदास का ! रामायण पढ़ी नहीं जा सकती, बाइबिल पढ़ नहीं सकते, कुरान होगी नहीं ! महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वरी सिखायी पड़ती है बच्चों को एम० ए० के क्लासेज में, साहित्य होने के नाते। और ये कमबख्त पुराने जो सन्त हो गये, उनमें कुछ साहित्यिक भी हो गये। अब क्या किया जाय ? साहित्य के नाते उनकी किताबों को थोड़ा रखना ही पड़ता है। किन्तु जहाँ तक हो सके, साहित्यिक गद्य ही लगे, उसकी अपनी जो गंध है वह न लगे। यह जो नीति है अपनी, क्या नीति है वह ?" सर्व धर्म के लिए समान 'अभाव', सर्व धर्म समान अभाव; गांधीजी का सूत्र था सर्व धर्म समभाव, लेकिन यह सर्व धर्म समान अभाव की तालीम चलती है। परिणाम तो उसका यह है कि विद्यार्थियों को आध्यात्मिक श्रद्धा पैदा नहीं होती। यह हालत आज की तालीम की है।

इस वास्ते यह सारी तालीम बदलना यह हमारे क्षेत्र में आता है। इतना सारा प्रचण्ड कार्य, यह आचार्यकुल कर सकेगा क्या ? तो मेरा मानना है कि यही कर सकेंगे। और ये अगर नहीं कर सकते तो दूसरा कोई कर सकनेवाला नहीं है। इतना समझ लेना चाहिए कि यह कार्य केवल आपके जिम्मे है। आप में साहित्यिक भी पड़े हैं और शिक्षक भी पड़े हैं, और दोनों प्रकार की शक्ति भावी दुनिया बनानेवाली है। मैंने जाहिर किया था कि इस दुनिया में दो चीजें चलेंगी— एक तो विज्ञान, जिससे रोज जीवन बदलेगा। दूसरा अध्यात्म। और तीसरा इन दोनों को जोड़नेवाला एक साहित्यिक, दूसरा अध्यापक। ये दोनों विज्ञान और अध्यात्म को जोड़ने का काम करेंगे। यह जोड़ने का काम करनेवाले आप हैं। इसलिए आपका भविष्य उज्ज्वल है, और आपके कंधे पर जो भार है, वह दूसरा कोई उठा नहीं सकता। और आप में 'कुल की भावना' रही, एकता की भावना

[illegible] हैं, तो बहुत बड़ी ताकत पैदा होगी।

एकता की भावना का यह अर्थ नहीं कि हर एक को नया-नया सूझे नहीं, अलग-अलग सूझे नहीं, जो मुझे सूझे वही दूसरे को सूझे, वही तीसरे को भी सूझे; यदि ऐसा होता तो दुनिया में इतने मनुष्य काहे को पैदा होते ? फिर एक मनुष्य से ही काम चल जाता ! लेकिन भिन्न-भिन्न मनुष्य होते हैं, भिन्न-भिन्न चिन्तन होते हैं, यह अच्छा है। परन्तु एकबार ध्यान मेरा गया गीता के विश्वरूप दर्शन की तरफ, और एक बात मेरे ध्यान में आयी जो तुरन्त उसे मैंने लोगों के सामने रखी कि विश्वरूप दर्शन में हजारों हाथ, हजारों आँखें, हजारों सिर, लेकिन हजारों हृदय नहीं बताया है, हृदय एक है। यह समझने की बात है। 'समानीव आकूति समाना हृदयानि वः'

तुम्हारे सबके सिर में एक ही विचार होना चाहिए, यह गलत बात। अनेक विचार अनेकों के होंगे, और सब मिल करके परिपूर्ण विचार बनेगा। इस वास्ते विचारों की भिन्नता जरूरी है, और विचारों का जोड़ होना जरूरी है। परन्तु हृदय एक होना चाहिए। अब अगर विश्वरूप के हृदय अलग-अलग हो जाते, तो मामला बड़ा कठिन हो जाता।

इस वास्ते इस आचार्यकुल में अनेकों के अनेक विचार चलेंगे। यह बहुत अच्छा है, और सबका मिलकर सम्मिलित जो विचार होगा, यानी सबकी राय जो समान बनेगी, वही दुनिया के सामने रखा जायगा। तो उसको एक बल मिलेगा। और वह तब होगा जब विचार की स्वतन्त्रता और हृदय की एकता होगी।

इससे ज्यादा आपका समय लेना उचित नहीं। आप जो काम कर रहे हैं उससे मुझे *बहुत ही प्रसन्नता है*। परमेश्वर आपको सफल करें। सबको प्रणाम, जय जगत् ! (केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के बीच)

ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार

२३-९-७१

पुष्टि कैसे ?

किस क्षेत्र को पहले लें

(१) स्पष्ट है कि हम उसी क्षेत्र (प्रखंड) को चुनेंगे जिसका 'दान' हो चुका है। लेकिन 'दान' की परख कर लेनी चाहिए। 'दान' अगर कच्चा होगा तो क्षेत्र अनुकूल नहीं होगा। ७५ प्रतिशत हस्ताक्षरों में भले ही कुछ कमी हो—ज्यादा कमी न हो—लेकिन जो हस्ताक्षर हों वे सही हों। बिहार के मुसहरी ब्लाक के गाँवों में हस्ताक्षर पूरे नहीं थे, लेकिन जो थे वे सही थे। जिसका हस्ताक्षर था उसने यह नहीं कहा कि हस्ताक्षर उसका नहीं है।

हस्ताक्षर सही भी हों, लेकिन यदि उस क्षेत्र में प्राप्ति के समय विचार अच्छी तरह नहीं समझाया गया हो तो काम को कच्चा मानना चाहिए। विचार-प्रचार अच्छा हुआ हो और हस्ताक्षर में कुछ कमी हो तो काम चल जायगा।

(२) क्षेत्र ऐसा होना चाहिए जिसमें हमारे आन्दोलन के कुछ ऐसे समर्थ सहयोगी हों, जिनका अपने इलाके में असर हो, और जो कुछ समय दे सकते हों। निर्णय करने के पहिले हम उनसे मिलकर उनकी राय ले लें तो अच्छा होगा।

(३) क्षेत्र में कोई ऐसा सेवक हो, संस्था का कार्यकर्ता हो या नागरिक हो, जिसने अपनी सेवा और सम्पर्क से अपना प्रभाव पैदा किया हो, लोगों का विश्वास प्राप्त किया हो। बिहार के जिन क्षेत्रों में पुष्टि का सघन कार्य हो रहा है वे इसी तरह के हैं। यों तो वैद्यनाथबाबू का सेवा-क्षेत्र पूरा बिहार रहा है, लेकिन सघन कार्य की दृष्टि से रुपौली (पूर्णिया) उनका विशेष क्षेत्र रहा है। सहरसा में महेन्द्रभाई, वैशाली (मुजफ्फरपुर) में लक्ष्मणदेव भाई, जमालपुर (मुंगेर) में शिवानन्द भाई, शेरघाटी (गया) में त्रिपुरारि भाई की सेवा है, परिचय और प्रभाव है। ऐसे व्यक्ति नहीं होने तो काम शुरू करना सम्भव न होता। मुसहरी अपवाद है, लेकिन जे० पी० भी अपवाद हैं; उनका हर जगह प्रभाव है, और उनकी राष्ट्रीय सेवाओं की पूँजी बहुत बड़ी है।

अभी आन्दोलन की जो स्थिति है उसमें इस तरह के आधार के बिना काम नहीं चल सकता।

क्षेत्र के चुनाव में एक भूल से बचना चाहिए। क्षेत्र गरीब है, पिछड़ा हुआ है, उसको सेवा की जरूरत है : इसलिए उसे चुन लेना चाहिए, यह सोचना गलत है। हमें हर वक्त इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे आन्दोलन में सेवा है, भरपूर सेवा है, किन्तु यह मुख्य रूप से सेवा का आन्दोलन नहीं है। इसका लक्ष्य है लोकशक्ति प्रकट करना, शांति की शक्ति से, जनता के प्रत्यक्ष निर्णय से, समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया विकसित करना। हमारे शुरू के क्षेत्र प्रयोग और अभ्यास के क्षेत्र होंगे, 'डेमन्स्ट्रेशन' के होंगे। उनमें हमें शांति और विकास की पद्धति की परीक्षा करनी है। हमारी शक्ति थोड़ी है, साधन कम हैं; हमें उन्हें बहुत सोच-समझकर कुछ चुने हुए क्षेत्रों में ही लगाना चाहिए, यों ही बिखेरना नहीं चाहिए।

इसी तरह हम कभी-कभी किसी प्रमुख व्यक्ति के प्रभाव में आ जाते हैं, और उसके आग्रह के कारण काम शुरू कर देते हैं। हो सकता है वह दिल से चाहता हो कि उसके क्षेत्र में सर्वोदय का काम हो, यह भी हो सकता है कि मात्र उसकी महत्वाकांक्षा हो। ऐसी स्थिति में हम कार्यकर्ताओं को किसी के कहने से नहीं, अपने विवेक से क्षेत्र का निर्णय करना चाहिए। निर्णय जिले के लोगों को मिलकर करना चाहिए। उन्हें समझना चाहिए कि *सघन कार्य एक प्रखंड में होगा*, किन्तु जिम्मेदारी जिले की सामूहिक है।

भूदान यज्ञ : दिनांक २९ अक्टूबर, '७१ के अंक का परिशिष्ट

अंक १, अक्टूबर '७१
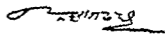
इस डाइजेस्ट के विषय में

सर्वोदय आन्दोलन से सहानुभूति रखनेवाले तथा मित्रों की संख्या देश के विभिन्न भागों में बहुत है और वह दिनोंदिन बढ़ रही है। पर दुर्भाग्य यह है कि इस आन्दोलन की प्रगति की समुचित जानकारी के अभाव में, सामान्य तौर पर उनकी यह धारणा बनी है कि सर्वोदयवालों द्वारा कुछ हो नहीं रहा है। दूसरी ओर, वस्तुस्थिति यह है कि आजादी मिलने के बाद देश में सम्भवतः कार्यकर्ताओं का कोई दूसरा समूह या संगठन ऐसा नहीं है जो पूरे देश के लाखों गाँवों—साढ़े पाँच लाख में करीब पौने दो लाख गाँवों—के करीब-करीब हर घर में एक नयी आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था की आशा और उत्साह बढ़ाने वाला संदेश और उसे प्राप्त करने की युक्ति लेकर पहुँचा हो।

गत वर्ष विनोबाजी की ७५ वीं वर्षगाँठ के अवसर पर ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह के सिलसिले में हमलोगों का ध्यान आन्दोलन की इस कमी की ओर खास तौर से गया। हमलोगों में से अनेक को यह देखकर बहुत प्रसन्नता हुई थी कि लोगों में, बुद्धिजीवियों में भी, विनोबाजी एवं सर्वोदय कार्यकर्ताओं द्वारा गत कुछ वर्षों में किये गये काम के लिए गहरी और व्यापक प्रशंसा है। इन मित्रों को आन्दोलन की गतिविधि की यदि नियमित जानकारी मिलती रहे, तो उनकी यह भावना एवं प्रशंसा क्रमशः सहानुभूति, समर्थन और सहयोग में बदल सकती है।

इसलिए सर्व सेवा संघ ने यह निश्चय किया है कि सर्वोदय-आन्दोलन की गतिविधियों का एक संक्षिप्त विवरण (डाइजेस्ट) साल में कम-से-कम तीन बार प्रकाशित किया जाय। हमलोगों की यह योजना है कि इस आन्दोलन में लगे हमारे साथी विभिन्न शहरों में युवकों, शिक्षकों, व्यापारियों, राजनीतिज्ञों, महिलाओं आदि मित्रों के हाथ में यह विवरण स्वयं जाकर दें। हम आशा करते हैं कि इस तरह के व्यक्तिगत सम्पर्क से हम लोगों को इस आन्दोलन को और अधिक विस्तृत पृष्ठभूमि में आँकने का मौका मिलेगा। इन मित्रों को भी इससे आन्दोलन की अधिक स्पष्ट जानकारी हो सकेगी। आन्दोलन में लगे और आन्दोलन के बाहर के उन साथियों के साथ, जो एक नयी सामाजिक रचना में दिलचस्पी रखते हैं, जानकारी के आदान-प्रदान का, बातचीत का, यह प्रारम्भ है। अतः हमारा विश्वास है कि ऐसा करने से हमलोग दोनों तरफ से विचार-विनिमय करने में समर्थ हो सकेंगे।

[signature]

सर्वोदय का दृष्टिकोण

[विनोबा के प्रवचनों से संकलित]

ग्रामदान क्या है ?

ग्रामदान यानी सत्यम्, शिवम् ,सुन्दरम् की त्रयी। सत्य वह जिसकी हमें आज अत्यन्त आवश्यकता है। सत्य यानी परिस्थिति की वास्तविकता, जिसकी हम अवहेलना नहीं कर सकते। भारत में दरिद्रता सबसे बड़ा सत्य है। ग्रामदान इसके सम्पूर्णतः निराकरण के लिए है।

दूसरा, ग्रामदान प्रेम से प्रेरित करके त्याग करने का आह्वान करता है। साम्यवाद के साथ ही सिर काटना जुड़ा हुआ है। ग्रामदान 'शिवम्' है, क्योंकि उसके द्वारा खुश-हाली और कल्याण होता है।

तीसरा, ग्रामदान के रास्ते पर चलने से गाँव का एक सुन्दर स्वरूप बनता है। सबके पास खेती करने के लिए भूमि होगी, गांव साफ-सुथरा होगा, पूरा गाँव समुदाय एक सुगठित परिवार जैसा होगा। यह सुन्दरम् है। इसलिए थोड़े में ग्रामदान सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् है!

केवल ग्राम-स्वामित्व और भूमिहीनो को भूमि का मिलना ही ग्रामदान नही है, बल्कि ग्रामदान का अर्थ और अधिक व्यापक है। ग्रामदान गाँव के हर घर से असत्य को मिटाने, मनुष्य और मनुष्य के बीच स्नेहभाव पैदा करने, गाँव की हर तरह की गंदगी दूर करने, और एक सुन्दर जीवन विकसित करने के लिए है। अगर गांव का जीवन सब तरह से सुन्दर बनेगा, तो नगरो और महानगरो के लोग उसका अनुकरण करेंगे। आज ठीक इसके विपरीत है। गांव के लोग शहर के लोगो की नकल करते है।

साम्यवाद और ग्रामदान

साम्यवाद मे पहले राज्य सत्ता प्राप्त करेगा, और तब क्रान्ति आयेगी, लेकिन साम्यवादी यह नही कह सकते कि कब राज्यसत्ता जनता को सौंपी जायगी। इसका मतलब कि वे स्वप्नलोक में रह रहे हैं। लेकिन हम जो गाँवों मे कर रहे है, वह अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक है।

बंगलादेश

सम्पूर्ण यूरोप 'क्रिश्चियन' है लेकिन 'क्रिश्चियनिटी' उनको एक राष्ट्र में सघटित नहीं कर सकी है। मजहब अब 'आउट-डेटेड' हो चुका है। भूख का सवाल प्रमुख है। आज भूखा कौन है? नि.सन्देह बंगलादेश। और भूखों का कोई धर्म नहीं होता।

पश्चिम पाकिस्तान द्वारा पूर्व बंगाल में लोगों का विधिवत शोषण और दमन होता रहा है। पूर्व बंगाल में अधिक लोग रहते हैं लेकिन पाकिस्तान की शासकीय सेवाओ और सेनाओ मे उनको उचित स्थान नही दिया गया। इनमें पश्चिम पाकिस्तान के ही लोग बहुत अधिक सख्या में जमे रहे हैं। विकास का अधिकतम फायदा पश्चिमी पाकिस्तान ने उठाया है। पूर्व बंगाल दरिद्र बना रहा है, और आज भी इस उप-महाद्वीप में वह सबसे अधिक गरीब है। पहली बार हुए आम चुनाव में मुजीब की अवामी लीग को ६८ प्रतिशत मत प्राप्त हुए और पाकिस्तान की 'नेशनल असेम्बली' में भी उन्हें स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ। लेकिन उन्हे धोखा दिया गया और उनको लोकतांत्रिक शासन स्थापित नही करने दिया गया।

जेलखानेकी मानसिकता

आज सामान्य मनुष्य की स्थिति आश्चर्यजनक है। जब वह किसी के कुकर्मों के बारे में सुनता है, तो झट उस पर विश्वास कर लेता है, लेकिन जब उसे किसी के सुकर्मों की जानकारी मिलती है, तो वह सबूत चाहता है। अच्छाई के लिए सबूत चाहिए, बुराई के लिए नही। इसे मैं जेलखाने की मानसिकता कहता हूँ।

हर मनुष्य मूलतः अच्छा है

मूलतः हर मनुष्य अच्छा है, ईमानदार है, और अगर कोई व्यक्ति बदनाम है, लेकिन किसी अच्छे काम में लगता है, तो भी उसका स्वागत करना चाहिए। •

कुछ प्रमुख घटनाएँ

ग्रामस्वराज्य-कोष समर्पण

गतवर्ष २ अक्टूबर '७० को ग्रामस्वराज्य-कोष समर्पण के अवसर पर सेवाग्राम की बैठक में सभी राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। आचार्य विनोबा भावे ने उसमें प्रवचन किया। कोष के महत्व के सम्बन्ध में बोलते हुए उन्होंने पुराने समय में मृत व्यक्तियों की यादगार में इकट्ठा किये गये कुछ कोषों के नाम गिनाये, और कहा कि यह कोष एक जीवित व्यक्ति के नाम से इकट्ठा किया गया है। ग्रामस्वराज्य के लक्ष्य को लोगों का समर्थन प्राप्त है, इसका यही सबसे बड़ा सबूत है। दूसरे कोषों से यह कोष भिन्न है। इसका विनियोग राज्य स्तर और जिला स्तर पर होगा। यह तीन वर्ष में समाप्त कर दिया जायगा। उन्होंने यह राय दी कि सर्वोदय-आन्दोलन की गतिविधि तेज करने के लिए लोगों के समर्थन से ग्रामस्वराज्यकोष-संग्रह हमेशा किया जाय।

व्यापक आवेष्टन

इस बैठक के बाद सर्व सेवा संघ का अधिवेशन हुआ। उसमें इस बात की चर्चा हुई कि गांवों के पुनर्निर्माण में अधिक लोगों को लगना चाहिए—उन लोगों को भी लगना चाहिए जिन्होंने ग्रामस्वराज्य-कोष में दान दिया है। लोकसेवक के प्रतिज्ञापत्र को इस दृष्टि से संशोधित करने का निश्चय किया गया कि जिन लोगों ने ग्रामस्वराज्य के विचार को समर्थन दिया है, उन्हें इस आन्दोलन में भाग लेने का अधिक अवसर मिल सके।

तरुण-शान्तिसेना-शिविर

२३ और २४ अक्टूबर '७० को अखिल भारत तरुण-शान्ति-सेना का शिविर और सम्मेलन दादा धर्माधिकारी और आचार्य राममूर्तिजी के मार्गदर्शन में इन्दौर में हुआ। शिविर और सम्मेलन की अध्यक्षता मन्दाकिनी दवे नाम की एक लड़की ने की। उसने अपने भाषण के क्रम में कहा कि "हमलोग यहाँ इसलिए एकत्रित हुए हैं कि हमारे सामने, समाज के सामने, आज जो अनेक ज्वलन्त समस्याएँ हैं उन्हें हम अहिंसक तरीके से सुलझा सकते हैं, इस बात में हम अपना पक्का विश्वास जाहिर कर सकें।"

कलकत्ता में शान्ति-कूच : शान्ति का आक्रमण

चारों तरफ हिंसा और आतंक का वातावरण देख लोगों का आत्म-विश्वास पुनः जगाने के लिए पश्चिमी बंगाल के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने एक प्रभावकारी शान्ति आन्दोलन चलाया। गत २४ दिसम्बर' ७० को हुगली जिले के त्रिवेणी नामक स्थान से उन्होंने एक शान्ति-यात्रा निकाली। इसमें एक दर्जन से अधिक शान्ति-सैनिक सम्मिलित हुए थे। हुगली और हावड़ा के उद्योग-क्षेत्रों से गुजरते हुए इस दल ने कलकत्ते की यात्रा की। लोगों ने यात्रियों का स्वागत किया और उत्साह बढ़ाया। विभिन्न स्थानों पर विभिन्न स्तरों के लोग यात्रा में साथ भी रहे। इस तरह शान्ति के आक्रमण का श्रीगणेश हुआ।

इसके बाद पश्चिम बंगाल सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने कलकत्ते में पचास दिनों की यात्रा की। श्री प्रफुल्लचन्द्र सेन आदि राज्य के प्रमुख लोगों ने उनका साथ दिया। उनलोगों ने उन मुहल्लों में पड़ाव रखे जिन्हें उग्रवादियों का गढ़ समझा जाता है। उस क्रम में उन मुहल्लों के निवासियों की पद-यात्रियों के साथ बहुत लम्बी बहसें भी होती थीं। नक्सलवादियों ने भी बहस में भाग लिया। दोनों शान्ति-यात्राओं से आतंकग्रस्त लोगों के मन में विश्वास जगा। उग्रवादियों के भी ध्यान में यह आया कि क्रान्ति की जो उनकी तमन्ना है, वह गलत दिशा में मुड़ी हुई है।

गत १६ और २० जनवरी '७१ को वाराणसी में ग्रामदान विकास समिति (सोसाइटी फार डेवलपिंग ग्रामदान) के तत्वावधान में ग्रामदान-विकास पर एक गोष्ठी हुई। श्री जयप्रकाश नारायण ने इसकी अध्यक्षता की। देश के विभिन्न भागों से आये प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इन प्रतिनिधियों में संस्थाओं के एवं ग्रामनिर्माण क्षेत्र में काम कर रहे अन्य कार्यकर्ता भी थे।

एक सुझाव यह सामने आया कि ग्रामदान विकास कार्य के लिए कार्यकर्ताओं का एक दल तैयार किया जाय। इंजीनियरिंग और टेक्नीकल इंस्टीट्यूट के नवजवान, जिन्हें अब तक कहीं काम नहीं मिला है, उन्हें इस काम में लगाया जाय। इसके लिए एक योजना बनाने का निश्चय किया गया।

सर्वोदय के लिए विस्तृत आधार

गत २१, २२ और २३ जनवरी '७१ को वाराणसी में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि विभिन्न कामों में लगे सर्वोदय विचार एवं आन्दोलन से सहानुभूति रखनेवाले मित्रों से व्यक्तिगत सम्पर्क बनाये रखा जाय।

जगन्नाथन्‌जी का उपवास

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् ने गत ३० जनवरी से भूमि-समस्या के समाधान के लिए उपवास किया था। पूर्वी तंजावूर जिले में ९० प्रतिशत हरिजन भूमिहीन हैं। उनके पास अपने रहने का घर बनाने लायक भी जमीन नहीं है। लगातार की जा रही हरिजनों की इस उपेक्षा से वे काफी दुःखी थे। हरिजनों को वास की जमीन वहाँ के जमींदार दें, इसके लिए यह उपवास उनसे प्रार्थना-स्वरूप किया गया था।

वलीवलम् गांव में मन्दिर की जमीन से हरिजनों को गैरकानूनी ढंग से बेदखल किया गया था। उसके लिए सत्याग्रह का अन्तिम चरण उपवास था। हरिजनों का जमीन मिल गयी और उपवास सफलता के साथ समाप्त हुआ।

सर्वोदय सम्मेलन, नासिक

इस वर्ष अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन गत ८, ९ और १० मई '७१ को नासिक में हुआ। श्री सिद्धराज ढड्ढा ने अध्यक्षता की। श्री जयप्रकाश नारायण ने सम्मेलन के उद्घाटन-समारोह में भाग लिया। देश के विभिन्न भागों से सम्मेलन में आये हुए प्रतिनिधियों ने पूरे आन्दोलन का सिंहावलोकन किया और साथ बैठकर आत्मचिंतन किया। आन्दोलन की धीमी गति पर नवजवान अधीर दिखाई पड़े और देश के सामने खड़ी समस्याओं के समाधान के लिए उन्होंने अधिक उग्र कदम उठाये जाने की माँग की। सम्मेलन में बोलते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने स्वतंत्रता-संग्राम में जूझ रहे बंगलादेश के लोगों की हर तरह से मदद करने की अपील की। संसार-व्यापी क्रान्तियों का इतिहास बताते हुए उन्होंने इस आन्दोलन की सही पृष्ठभूमि प्रस्तुत की। कुछ प्रतिनिधियों ने विरोध-प्रदर्शनों द्वारा तात्कालिक लक्ष्य प्राप्त करने के जो सुझाव दिये, उनसे वे सहमत नहीं हुए। उन्होंने कहा, "हमलोग समाज में व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध में परिवर्तन लाने की चेष्टा कर रहे हैं। उसकी सफलता को राजनैतिक मापदण्ड से नहीं नापा जा सकता।"

जयप्रकाश नारायण का सांगठनिक भ्रमण

बंगलादेश के लिए संसार के प्रमुख देशों की एक यात्रा जे० पी० ने की। दिल्ली से १५ मई को निकलकर वे कई देशों की राजधानियों में गये और वहाँ बंगलादेश में हो रहे नरसंहार के विरुद्ध विश्व-विवेक जागृत करने का प्रयत्न किया। भ्रमण काल में वह सरकार चलानेवाले जन-प्रतिनिधियों एवं जनमत निर्माण करनेवाले नेताओं से मिले। वे आम-सभाओं में एवं पत्र-प्रतिनिधियों की गोष्ठियों में बोले। उन्होंने रेडियो और टेलीविजन के माध्यमों से भी अपने विचार प्रकट किये। चालीस दिनों की यात्रा कर वे वापस भारत लौटे।

कुछ महत्वपूर्ण निर्णय

शक्ति-केन्द्र

३, ४, ५ अक्टूबर'७० को सेवाग्राम में सर्व सेवा संघ के वार्षिक अधिवेशन में यह निर्णय लिया गया कि पूरे देश में कुछ शक्ति-केन्द्र स्थापित किये जायें। प्रारम्भ में बिहार, महाराष्ट्र, मैसूर और उत्तर-प्रदेश में ऐसे ५१ केन्द्र स्थापित करने का निर्णय लिया गया।

विस्तृत आधार

वाराणसी में गत २१, २२ और २३ जनवरी की बैठक में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने यह निर्णय किया कि सर्वोदय आन्दोलन में लगने का आधार अधिक विस्तृत बनाने के लिए लोक-सेवक प्रतिज्ञा-पत्र की शर्तें ऐसी बनायी जायें कि अधिक-से-अधिक लोगों को लोक-सेवक बनने में सुविधा हो। यह भी निर्णय लिया गया कि ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह में जिन हजारों दाताओं ने सहयोग दिया है, कोष के विनियोग के सम्बन्ध में उनको भी जानकारी दी जाय।

नगर में सर्वोदय कार्य

प्रबन्ध समिति ने एक प्रस्ताव द्वारा यह तय किया कि शहरों से ग्रामस्वराज्य कोष के लिए जो चन्दा मिला है, उसका अंश वहीं खर्च किया जाय। प्रबन्ध समिति की आम राय यह थी कि यह अंश शहरों में शान्ति-स्थापना के काम में, उद्योग-धन्धों कारखानों के मजदूरों और मालिकों के सम्बन्ध सुधारने में एवं नागरिक शान्ति स्थापित करने में खर्च किया जाय।

कश्मीरी नेता

एक प्रस्ताव में प्रबंध समिति ने कश्मीर में हुई उन घटनाओं पर गहरी चिन्ता व्यक्त की, जिनमें तीन कश्मीरी नेताओं के कश्मीर-प्रवेश और जनमत संग्रह मोर्चे पर प्रतिबन्ध लगाया गया तथा बहुत से लोगों को गिरफ्तार किया गया। संसद के चुनाव के चन्द सप्ताह पहले उठाये गये सरकार के इन कदमों पर खेद प्रकट किया गया। सरकार के इस काम से गणतंत्र में चुनाव के इस तरीके पर ही शंका और भय व्यक्त किया जाने लगा है।

मतदाता शिक्षण

प्रबन्ध समिति ने तय किया कि संसद के मध्यावधि चुनाव के पूर्व करीब साढ़े चुने हुए संसद चुनाव-क्षेत्रों में पुरजोर मतदाता शिक्षण का कार्यक्रम चलाया जाय। और इस बात पर रहे कि हर मतदाता को अपना मत स्वतन्त्रतापूर्वक प्रकट करने का अवसर मिले और वोट प्राप्त करने के लिए कोई भी किसी गन्दे तरीके का इस्तेमाल न करे। समिति ने तय किया कि मतदाता-शिक्षण कार्यक्रम का एक अंग यह हो कि मतदाताओं के लिए एक चुनाव घोषणा-पत्र प्रसारित किया जाय, जिसमें विभिन्न पहलुओं पर सर्वोदय-आन्दोलन का रुख क्या है, यह बताया जाय।

समय की रिक्तता नहीं

नासिक सम्मेलन के ठीक पहले सर्व सेवा संघ की एक बैठक में एक प्रस्ताव द्वारा यह तय किया गया :

ग्रामदान प्राप्ति के लिए हस्ताक्षर-अभियान यथोपूर्वक चलता रहे। हस्ताक्षर प्राप्त करने और ग्रामदान पुष्टि का कार्यक्रम चलाने के तरीके को इससे स्पष्ट किया गया। इसमें यह कहा गया कि ग्रामदान का संकल्प और पुष्टि एक ही कार्य के दो पहलू हैं, इसलिए दोनों कामों के बीच अधिक समय की रिक्तता नहीं रहनी चाहिए, एक के बाद दूसरा काम लगातार किया जाय।

कुछ तथ्यपरक आँकड़े
(३१ अगस्त '७१ तक)

राज्य	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिलादान
बिहार	६०,०६५	५७३	१५
तमिलनाडु	३०,६०५	३१४	११
उत्तर-प्रदेश	३२,६६३	१८६	८
उड़ीसा	१२,६३६	७०	२
मध्य प्रदेश	१०,८८६	४०	७
आन्ध्र प्रदेश	४,२३१	१५	१
महाराष्ट्र	४,६२५	१७	१
मैसूर	१,६२४	१४	१
राजस्थान	२,०६७	२	१
पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश	४,०११	७	—
असम, मेघालय	१,६८२	१	—
गुजरात	१,१११	३	—
पश्चिम बंगाल	७५८	—	—
केरल	५१८	—	—
दिल्ली	७४	—	—
जम्मू-कश्मीर	१	—	—
कुल योग	१,६८,०५८	१,२४२	४७

सहरसा जिले में ग्रामदान के बाद का काम

एक अध्ययन

अक्टूबर १९६९ के अन्तिम सप्ताह में अ० भा० सर्वोदय समाज सम्मेलन राजगीर में बिहारदान की घोषणा हुई। बिहार राज्य देश का प्रथम ग्रामदानी राज्य हो गया। फिर बिहार में ही ग्रामस्वराज्य-निर्माण का यानी ग्रामीण जीवन व्यवस्था और अर्थ-व्यवस्था के पुनर्निर्माण का काम शुरू किया गया। इसे ग्रामदान-पुष्टि कहा जाता है। विनोबाजी का आग्रह यह रहा है कि ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर कर ग्रामीणों ने जो घोषणा की, उसको कार्यरूप में परिणत किया जाना चाहिए। अपने आश्रम, वर्धा लौटने के पहले बिहार छोड़ते समय उन्होंने कार्यकर्ताओं से निवेदन किया कि 'बिहारदान की पुष्टि एक वर्ष में होनी चाहिए।'

आन्दोलन में उतार-चढ़ाव होते रहते हैं। बिहार-दान के समय बिहार में उत्साह का जो ज्वार था, वह बाद में भाटे में परिवर्तित हो गया। कई जगह ग्रामदान-पुष्टि के छिट-पुट प्रयास किये गये। गया जिले के कौआकोल प्रखण्ड में और मुंगेर जिले के झाझा प्रखण्ड में खास चेष्टाएँ हुईं। परन्तु ठोस काम तो जून १९७० में मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी प्रखण्ड में शुरू हुआ। बहुत थक जाने के बाद जयप्रकाशजी हिमालय में विश्राम करने गये थे। मुसहरी के गाँवों में कत्ल की कई घटनाएँ घटी थीं। दो सर्वोदय कार्यकर्ताओं को भी उनकी हत्या की धमकी दी गयी। जयप्रकाशजी को यह मालूम हुआ और वे विश्राम के लिए हिमालय में नहीं रुके, सीधे मुसहरी आये, जहाँ उन्होंने घोषणा की कि समाज के जीवन से हिंसा के कारणों को मिटाने के काम में वे प्राणपण से जुट रहे हैं। इसके लिए उन्होंने ग्रामदान-पुष्टि से काम की शुरुआत की, और इस काम को एक तीव्र गति प्राप्त हुई।

श्री जयप्रकाश नारायण ने अपनी गतिविधि मुसहरी तक ही सीमित रखी। यह मुजफ्फरपुर जिले का एक प्रखण्ड है। कार्यकर्ताओं ने यह महसूस किया कि मुसहरी से प्रेरणा लेकर वे बिहार के एक क्षेत्र में लगेंगे। बिहार को विनोबाजी काफी अच्छी तरह जानते हैं। उन्होंने यह सुझाव दिया कि इस आन्दोलन का सबसे अधिक शक्तिशाली व्यक्ति राज्य के सबसे कठिन जिले में लगे हैं, इसलिए अन्य कार्यकर्ताओं को पुष्टि के लिए सबसे हल्के जिले को चुनना चाहिए। वैसा जिला सहरसा है। इस सुझाव को तत्काल स्वीकार कर लिया गया और इस तरह सहरसा ग्रामदान-पुष्टि का राष्ट्रीय मोर्चा बन गया।

अखिल भारत स्तर से श्री कृष्णराज मेहता और सुश्री निर्मला देशपाण्डे सहरसा में आयीं। पुष्टि की हवा बनाने के लिए उनलोगों ने विभिन्न राजनैतिक दलों के स्थानीय नेताओं, सरकारी कर्मचारियों, प्रखण्ड अधिकारियों, शिक्षकों एवं अन्य व्यक्तियों को इस काम में लगाने की चेष्टा की। उन लोगों ने उत्साहवर्धक अनुकूलता प्रकट की। सहरसा जिला पीढ़ियों से बाढ़ और कोशी के कटाव से सताया हुआ है। यह मिथिला का एक अंग है। यहाँ के लोग तो मानो कुछ किये जाने की बाट ही जोह रहे थे। दिसम्बर '७० से वहाँ चहल-पहल शुरू हुई। बिहार ग्रामस्वराज्य समिति का प्रधान कार्यालय सहरसा लाया गया। यह कैम्प कार्यालय पूरे जिले के चहल-पहल का केन्द्र बन गया।

पहले मरौना प्रखण्ड को हाथ में लिया गया। फिर महिषी, सुपौल और चौसा में हाथ लगाया गया। श्री महेन्द्रनारायण सिंह के प्रगतिशील नेतृत्व में जिले के सर्वोदय कार्यकर्ता मरौना में भिड़ गये। राज्य के बाहर से आनेवाले कार्यकर्ता महिषी में लगे। बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के कार्यकर्ताओं के एक दल ने सुपौल का जिम्मा लिया। बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मन्त्री श्री विद्यासागर के नेतृत्व में बिहार के कार्यकर्ताओं ने चौसा प्रखण्ड में अपनी शक्ति लगाने का निश्चय किया। इन प्रखण्डों में करीब २४० कार्यकर्ताओं ने काम प्रारंभ किया। कृष्णराजजी और निर्मलाजी की उपस्थिति से लोगों को बराबर प्रेरणा मिलती रही है।

प्रारंभ से ही इस अभियान का लक्ष्य यह रहा कि अधिक-से-अधिक स्थानीय लोगों, खासकर क्षेत्र के जागृत लोगों, को इस काम में शामिल होने और इसे अपनी जिम्मेदारी मानने के लिए, उनके अन्दर सामाजिक जिम्मेदारी की भावना जगायी जाय और उन्हें यह भान करा दिया जाय कि उनकी मदद उनको अपने अन्दर की शक्ति से ही सम्भव है। अभियान का लक्ष्य था लोकशक्ति जागृत करना, इसलिए, जमीन बाँटने के काम

को प्रथम कदम के रूप में नहीं लिया गया। जिले की भौगोलिक बनावट और लोगों की मन स्थिति को देख यह कदम बहुत आवश्यक था।

यही कारण है कि प्रारंभ में जिले के २३ प्रखण्डों में से ४ प्रखण्डों में ग्रामसभा बनाकर सबसे पहले लोक-शक्ति संघटित करने पर जोर दिया गया। स्वभावतः सबसे पहले ग्रामसभाएं बनायी गयी। इसके पीछे दृष्टि यह रही कि ये ग्रामसभाएं तदर्थ भले ही हों, पर जब तक ग्रामदान की पुष्टि नहीं होती, ये काम करें। इसके साथ-साथ गाँव के जवानों की शक्ति को गाँव के निर्माण में लगाने की दृष्टि से ग्राम-शान्तिसेना बना ली जाती है, जिसमें वयस्कों के साथ मिलकर नवजवान भी काम कर सकें।

ग्रामदान के लिए पुष्टि के कागजात प्राप्त करने में और पुष्टि के लिए दाखिल करने के लिए इन कागजों की खाना-पूर्ति का काम पूरा करने में सर्वोदय-कार्यकर्ता ग्रामसभा के सदस्यों की मदद करते हैं। ग्रामदान की पुष्टि के लिए ये कागजात बहुत आवश्यक हैं। गांव की बीघा-कट्ठा (२०वाँ भाग) जमीन निकालने में भी कार्यकर्ता मदद करते हैं। यह सब कर चुकने के बाद ग्रामस्वराज्य के आदर्शों के अनुकूल गांव के काम की जिम्मेदारी ग्रामसभा पर आ जाती है।

एक दूसरा प्रमुख काम, जो इन साथियों ने हाथ में लिया, है कचहरी से मुकदमे वापस कराकर ग्रामसभा द्वारा उसको सुलझवाना। इसके लिए खुली अदालत होती है, जिसमें सब कोई भाग ले सकता है।

इसके साथ ही गाँव की उपज में से ग्रामकोष के लिए मनसेरा (४० वां भाग) निकाला जाने लगा है। मजदूरी करनेवाले भी अपनी कमाई का तीसवां हिस्सा ग्रामकोष में देते हैं। ग्रामकोष का उपयोग ग्रामीण स्वय ग्रामविकास के काम में करते हैं।

ग्रामसभा के पदाधिकारियों और नेताओं को ग्रामस्वराज्य का विचार और कार्य-पद्धति समझाने के लिए अनेक शिविर लगाये गये और सम्मेलन किये गये। गाँव के निर्माण का युवकों को प्रशिक्षण देने के लिए, शान्तिसेना के शिविर भी लिये गये। इस काम में सह-योग देने के लिए शिक्षकों, प्रखण्ड विकास कार्यालय से सम्बन्धित व्यक्तियों आदि के साथ नियमित सम्पर्क रखा जाने लगा।

जून '७१ तक में मरौना प्रखण्ड में पुष्टि का काम पू... हो गया। प्रखण्ड के ६८ गाँवों में से ७४ गांवों में पुष्टि की शर्तें पूरी हुई यानी इन गांवों की ७५% से अधिक जनसंख्या ५एवं १% से अधिक भूमि ग्रामदान में शामिल हो गयी। भूमिहीनों में १८० एकड़ जमीन बाँटी गयी। ६६ ग्रामसभाएं सक्रिय हैं। १७ में ग्रामकोष निकाला जाता है। एक हजार से अधिक व्यक्ति ग्राम-शान्तिसेना में शामिल हुए हैं, और २६ शिक्षक आचार्यकुल में।

महिषी प्रखण्ड में भी काम की प्रगति प्रभावकारी एवं उत्साहजनक है। इस प्रखण्ड में मुख्यतः मैथिल ब्राह्मण रहते हैं। इसमें काम करनेवाले कार्यकर्ता मुख्यतः राज्य के बाहर के हैं। प्रखण्ड में ७६ रेवेन्यू गांव हैं। टोलों की संख्या कुल मिलाकर एक सौ से कुछ अधिक ही है। इनमें से ६४ गांवों का ग्रामदान हो चुका है। अधिक गांवों में काम-चलाऊ ग्रामसभाएं बना ली गयी हैं। और भी बनायी जा रही हैं। १४ गांवों में बाजाप्ता ग्रामसभाएं बन चुकी हैं। १३ गांवों में बीघा-कट्ठा में प्राप्त जमीन भी बाँट दी गयी है। इस प्रखण्ड में एक दर्जन से अधिक शांतिसेना-शिविर लगाये जा चुके हैं, और करीब ६०० तरुण-शांतिसैनिक बन चुके हैं। ४४ शिक्षक आचार्यकुल के सदस्य हैं।

सुपौल प्रखण्ड में खादी-क्षेत्र के अनुभवी कार्यकर्ता लगे हुए हैं। जून '७१ तक ७५ गांवों का भूदान हो चुका है। २३ गांवों में ग्रामसभाएं बन चुकी हैं। भूमिहीनों में बीघा-कट्ठा में प्राप्त ३० एकड जमीन बांटी जा चुकी है। ३०४ तरुण-शांति-सैनिक बने हैं, और ५० शिक्षक आचार्यकुल के सदस्य।

चौसा प्रखण्ड में काम १६७१ की फरवरी से शुरू हुआ। प्रखण्ड की १६ पंचायतों में से ६ में पुष्टि-कार्य शुरू किया गया है। ११ गांवों में ग्रामसभाएं बनी हैं। ३ अन्य गांवों में कामचलाउ ग्रामसभाएं बनायी गयी हैं। भूमिहीनों में बीघा-कट्ठा में प्राप्त करीब ४० एकड जमीन बांटी गयी है। ४६ शिक्षक आचार्यकुल के तथा २०० नवजवान तरुण-शांतिसेना के सदस्य बने हैं।

अभी कुछ दिनों पहले सिंहेश्वर प्रखण्ड में काम शुरू किया गया है। काम का सिलसिला इस प्रखण्ड में भी वही है, जो अन्य प्रखण्डों में है।

—प्रभाष जोशी

सर्वोदय डाइजेस्ट

आपकी रुचि की कुछ पुस्तकें

सर्व सेवा संघ, वाराणसी

अंग्रेजी | मूल्य रु० पै०

१—फ्रैगमेन्ट्स आफ ए विजन : ए जर्नी थ्रू इंडिया'ज कन्ट्रीसाइड
लेखिका—एरिका लिण्टन १५-००

२—डे-टू-डे विथ गांधी—सेक्रेटरीज डायरी —महादेव देसाई
पापुलर एडीशन १५-००
लाइब्रेरी एडीशन २०-००

३—इन्टीग्रल रिवोल्यूशन : ऐन अनैलिटिकल स्टडी आफ गांधियन थाट —इन्दु टिकेकर
सजिल्द १०-००
अजिल्द ६-००

नवचेतना प्रकाशन, वाराणसी

४—फेस-टू-फेस —जयप्रकाश नारायण १-००

आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

५—दी जेन्ट्ल अनार्किस्ट्स (ए स्टडी आफ दी सर्वोदय मूवमेन्ट)—प्रोफेसर आस्टरगार्ड ५-५० पौंड

पीपुल्स ऐक्शन, नयी दिल्ली

६—यू ऐण्ड एलेक्शन (ए पीपुल्स ऐक्शन पैम्फलेट) १-००

७—जय बांगला ,, ,, १-००

हिन्दी

सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली

८—विनोबा : व्यक्तित्व और विचार ४०-००

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी

हिन्दी

९—विनोबा और सर्वोदय क्रान्ति —काका कालेलकर रु० ५-००

१०—गांधी : जैसा देखा समझा विनोबा ने
संग्रहकर्ता : कान्तिलाल शाह रु० ४-००

११—आमने सामने (फेस-टू-फेस का हिन्दी संस्करण) —जयप्रकाश नारायण
अजिल्द रु० ०-८५
सजिल्द रु० १-००

१२—आंखो देखा हाल —ग्रामदानी गांवों की विकास कथा रु० १-५०

१३—शान्ति : प्रयोग और चिन्तन —धीरेन्द्र मजूमदार रु० ६-००

सर्व सेवा संघ द्वारा प्रकाशित

प्रधान कार्यालय गोपुरी, वर्धा, महाराष्ट्र

क्षेत्र चुन लेने के बाद

(१) मित्र प्राप्त करना : क्षेत्र में पहुँचकर सबसे पहिले हम अपने मुख्य मित्रों और सहयोगियों की (सिर्फ उसी क्षेत्र के नहीं, बल्कि पूरे जिले के) एक छोटी बैठक बुला लें और पुष्टि के कार्यक्रम पर विस्तारपूर्वक चर्चा कर लें। उनका कितना सहयोग मिलेगा, कितने खर्च का स्थानीय तौर पर प्रबन्ध हो सकेगा; पूरा समय देने वाले कितने साथी मिलेंगे, आंशिक समय देनेवाले कितने मिलेंगे, आदि बातों पर चर्चा कर लेनी चाहिए। काम को आगे तभी बढ़ाना चाहिए जब बाहर के और स्थानीय कार्यकर्ताओं तथा सक्रिय सहयोगियों की संख्या २२ से २५ तक हो। यह संख्या एक प्रखण्ड के लिए है। इससे कम में काम नहीं चलना। केवल आंशिक समय देनेवाले सहयोगियों से भी काम नहीं चलता। कम-से-कम ४-५ स्थायी कार्यकर्ता होने ही चाहिए, तभी आंशिक समय देनेवाले सहयोगियों के समय का लाभ लिया जा सकता है।

(२) सम्पर्क . जब मित्रों की इस छोटी गोष्ठी से पुष्टि के कार्यक्रम को मान्यता मिल जाय, और ऐसा लगे कि स्थानीय सहयोग मिल सकता है तो हमें थोड़ा व्यापक सम्पर्क करना चाहिए। निम्नलिखित विशिष्ट लोगों से मिलकर उनके सामने पुष्टि की योजना रखनी चाहिए और सहयोग का निवेदन करना चाहिए :

(क) जिले के सरकारी अधिकारी—जिला मजिस्ट्रेट, एस० पी०, जिला नियोजन अधिकारी, पंचायत अधिकारी, शिक्षा अधिकारी, एम० पी०, एम० एल० ए०, जिला परिषद् के अध्यक्ष; रचनात्मक संस्थाओं के लोग।

(ख) सब-डिवीजन के एस० डी० ओ०

(ग) (सघन-कार्य के लिए लिये जानेवाले) ब्लाक के बी०डी० ओ०, तथा अन्य सब अधिकारी, स्कूलों और कालेजों के हेडमास्टर-प्रिंसिपल, उस क्षेत्र के एम० एल० ए०; बी० डी० सी० के सदस्य, अन्य मुख्य सामाजिक, राजनैतिक कार्यकर्ता।

जो न मिलें उनके घर पत्र छोड़ देना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि कोई मुख्य व्यक्ति छूटने न पाये। सब लोगों में सबसे अधिक सहयोग की आशा विद्यालयों के शिक्षक-विद्यार्थियों तथा बी० डी० ओ० से रहती है।

(३) पहली गोष्ठी : इतना सम्पर्क कर लेने पर पता चल जाता है कि कितने लोग अनुकूल हैं, कितने सक्रिय सहयोग करेंगे, और कितने पूरा, या आंशिक, समय देकर काम करेंगे। जिले भर के ऐसे लोगों की अलग-अलग सूची बना लेनी चाहिए। सूची बन जाय तो क्षेत्र (जिसमें काम करना हो) के मुख्य सहयोगी आपस में गोष्ठी का स्थान और समय तय करें। सम्पर्क और गोष्ठी के बीच कम-से-कम सप्ताह बीतना चाहिए।

अगर कोई गाँव ऐसा हो जो गोष्ठी अपने यहाँ आमंत्रित करे तो सबसे अच्छा। लेकिन गाँव सड़क से इतनी दूर न हो कि लोगों को पहुँचने में बहुत असुविधा हो। भोजन खर्च के लिए स्थानीय आधार आवश्यक है। अतिथि गाँव के घर-घर में बँटकर खा सकते हैं। अगर क्षेत्र इतना भी नहीं कर सकता तो उसकी अनुकूलता का क्या अर्थ है?

अगर गाँव कोई ऐसा न हो, और स्थानीय तौर पर खर्च की व्यवस्था हो गयी हो, तो गोष्ठी किसी विद्यालय में की जा सकती है। प्रखंड के केन्द्रीय स्थान पर भी की जा सकती है।

तारीख तय हो जाने पर सबको पत्र आमंत्रण भेज देना चाहिए। जितने लोगों से मिला जा सके मिलकर आने का अनुरोध करना चाहिए। गोष्ठी में कितने लोग आते हैं, इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। गोष्ठी एक ही दिन की हो। दोपहर के पहले दो-ढाई घंटे की बैठक हो, और १२-१ के बीच भोजन करके ढाई से साढ़े चार, पाँच बजे तक दूसरी बैठक। इतना समय काफी है।

गोष्ठी में काम की पूरी कल्पना और योजना रख देनी चाहिए। खर्च का मोटा अनुमान भी बता देना चाहिए। कार्य-योजना और बजट पहिले से बनाकर रखना चाहिए ताकि बैठक में जल्दी-जल्दी कुछ कहने की बेबसी न हो।

गोष्ठी में उस क्षेत्र के जो सहयोगी हों उन्हें बताना चाहिए कि वे कार्यक्रम किस तरह कहाँ से शुरू करना चाहते हैं।

इसी गोष्ठी में यह भी तय हो जाना चाहिए कि कार्यक्रम के प्रारम्भ में कार्यकर्ताओं का जो प्रशिक्षण-शिविर होगा, वह कहाँ होगा, और मोटे तौर पर उसका खर्च क्या होगा।

आये हुए सज्जनों में जो बन सकें उन्हें उसी जगह 'सर्वोदय-मित्र' (३ ६५६० वार्षिक) बना लेना चाहिए।

चर्चा के अन्त में उस प्रखण्ड की 'प्रखण्ड तदर्थ ग्रामस्वराज्य समिति' बनानी चाहिए, जो उस क्षेत्र में पुष्टि का काम करेगी। समिति बन जाने के बाद उस क्षेत्र में पुष्टि का जितना काम हो सब समिति के नाम से हो।

संस्था के कार्यकर्ता समिति के सदस्य भले ही रहें, पदाधिकारी न बनें, लेकिन मन में बराबर यह बात रखें कि काम पूरा उन्हें ही करना है नाम दूसरों का होगा।

तदर्थ ग्रामस्वराज्य समिति के सदस्यों से निवेदन करना चाहिए कि वे रु० ३.६५ देकर 'सर्वोदय-मित्र' बन जायँ, तथा (उनमें जो चुने गये क्षेत्र के हों) वे सबसे पहिले अपना बीघा-कट्ठा समर्पण करने के लिए तैयार रहें। जब तक वे खुद आगे नहीं बढ़ेंगे, तब तक दूसरों से आगे बढ़ने को कैसे कहेंगे, और कहेंगे भी तो असर क्या होगा?

—राममूर्ति

बल्देवगढ़ की गाड़ी आगे बढ़ी

बल्देवगढ़ विकास खण्ड का मुख्यालय और साढ़े तीन हजार की जनसंख्या वाला गाँव है। ७ जून '७१ को यहाँ पुष्टि अभियान श्री काशिनाथ त्रिवेदी के मार्ग-दर्शन और श्री चतुर्भुज पाठक के संयोजकत्व में शुरू हुआ था। २२ जुलाई को यहाँ की ग्रामसभा ने सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य के विचार को अमान्य कर दिया था। और ऐसी कठिन स्थिति गाँव में पैदा हो गयी थी कि केन्द्र में रहनेवाले कार्यकर्ताओं का गाँव में निकलना, बैठना, दूभर हो गया था। सब जगह हमलोग उपेक्षा और अनादर की दृष्टि से देखे जाने लगे थे। गाँव में कोई भी भाई-बहन हम लोगों से बात करने तक को राजी नहीं थे। चालीस पंचायतों वाले विकास खण्ड क्षेत्र में बल्देवगढ़ के बिगड़े वातावरण का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और सब जगह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की चारों शर्तों के प्रारम्भ करने में इन्कारी की आवाज आ रही थी।

इस प्रकार प्रतिकूल वातावरण को देख और समझकर इस अभियान में लगे हम सभी साथियों ने बल्देवगढ़ गाँव और क्षेत्र की जनता के नाम एक अपील, १ अगस्त '७१ को प्रसारित की। उस अपील के प्रभावस्वरूप गाँव के लोग मिलने-जुलने लगे। केन्द्र के साथी कार्यकर्ताओं के घोर परिश्रम के फलस्वरूप १८ अगस्त '७१ को ग्राम बल्देवगढ़ में एक आमसभा हुई और ग्रामस्वराज्य के विचार को पुनः लोगों के सामने प्रस्तुत किया गया। परिणामतः उसी आमसभा में ग्रामस्वराज्य की पृष्ठभूमि को भली-भाँति समझते हुए तीन किसानों ने अपनी भूमि की मालकियत ग्रामसभा को सौंपने एवं २० वाँ हिस्सा भूमिहीनों को देने की घोषणा की। ९ छोटे किसानों ने भी ग्रामस्वराज्य के विचार को मानकर उपर्युक्त घोषणा की। गाँव के प्रमुख व्यक्तियों में ३ लोगों ने अपनी आमदनी का बीसवाँ हिस्सा, और गाँव के दो प्रमुख मजदूरों ने गाँव के मजदूरों की ओर से एक दिन की कमाई ग्रामकोष में देने की घोषणा की। इस प्रकार बल्देवगढ़ में ग्रामस्वराज्य की दिशा में हम एक कदम आगे बढ़े।

दिनांक १९ अगस्त से २५ अगस्त तक एक सप्ताह का कार्यक्रम बल्देवगढ़ के समीप की छः पंचायतों में विचार-प्रचार के लिए बना और सभी साथी छः टोलियों में बँट कर क्षेत्र में फैल गये।

दिनांक ५ सितम्बर' ७१ को बल्देवगढ़ की ग्रामसभा की बैठक हुई। इस बैठक में ग्रामसभा ने २२ जुलाई के प्रस्ताव को निरस्त करने के लिए नया प्रस्ताव पारित किया। इस प्रस्ताव में ग्रामस्वराज्य के सम्पूर्ण विचार को स्वीकार करते हुए ग्रामदान की चार बुनियादी शर्तों में से प्रथम दो, ग्रामसभा एवं ग्रामकोष, को प्रारम्भ करने का निश्चय, और उन्हें व्यवस्थित करने के बाद शेष दो शर्तों की ओर कदम बढ़ाने का सर्वसम्मति से निर्णय हुआ। इस निर्णय का भी प्रभाव क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य के काम को गति प्रदान करने में सहायक सिद्ध हुआ है।

११ सितम्बर, विनोबा-जयंती के सिलसिले में अनेक कार्यक्रमों के साथ गाँव की ग्रामस्वराज्यसभा का गठन करने के लिए एक विशाल आमसभा बुलाई गयी जिसमें सर्वोदय विचार की देश और दुनिया में आवश्यकता पर विभिन्न वक्ताओं ने प्रकाश डाला। इसी आमसभा में बल्देवगढ़ की ग्रामस्वराज्यसभा के गठन और ग्रामकोष की स्थापना का प्रस्ताव पारित हुआ। सर्वसम्मति से श्री स्वरूप सिंह ग्रामसभा के अध्यक्ष घोषित किये गये। इसी अवसर पर शासकीय अधिकारी एवं नागरिकों ने ग्रामकोष की स्थापना हेतु नकद राशि आमसभा में अध्यक्ष को भेंट की, और इस प्रकार विनोबा-जयंती के मंगल दिवस पर बल्देवगढ़ की ग्रामसभा का गठन और ग्रामकोष की स्थापना हुई। कार्यक्रम समाप्त हुआ।

ग्राम खोड़ेरा से सूचना आयी है कि ११ सितम्बर को वहाँ भी ग्रामदान की चारों शर्तें सर्वसम्मति से स्वीकार हो गयी हैं, तथा बड़े उत्साह के साथ गाँव और क्षेत्र में कार्यक्रम लागू करने का वातावरण तैयार हो रहा है।

बल्देवगढ़ में और आसपास के क्षेत्रों में तरुण-शान्तिसेना एवं ग्राम-शान्तिसेना के गठन का कार्य भाई श्री रामगोपाल दीक्षित के नेतृत्व में चल रहा है।

—यशवन्त कुमार सिंधु

बंगलादेश अन्तरराष्ट्रीय मित्र समिति

गत १८ से २० सितम्बर तक दिल्ली में हुए बंगला देश पर अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों ने नवनिर्मित अन्तरराष्ट्रीय मित्र समिति के लिए लन्दन को अपना मुख्यालय चुना है। यह निर्णय श्री जयप्रकाश की अध्यक्षता में हुई एक बैठक में लिया गया।

बैठक ने भारत में अपना कार्यालय खोलने के लिए कलकत्ता को चुना है तथा श्री जयप्रकाश नारायण को इस मित्र समिति के गठन की पूरी जिम्मेदारी सौंप दी है। इस समिति के विभिन्न देशों में कार्यालय खोले जायेंगे जो अपने-अपने क्षेत्र के नागरिकों को बंगला देश की मुक्ति संग्राम की जानकारी देते हुए उनसे इस संघर्ष में सक्रिय सहयोग प्रदान करने की अपील करेंगे। यह समिति अन्तरराष्ट्रीय संगठनों, देशी-विदेशी सरकारों, गैर सरकारी संगठनों और संयुक्तराष्ट्र संघ को भी बंगला देश की सारी घटनाओं से पूरी तरह परिचित रखेगी।

सम्मेलन के विदेशी प्रतिनिधि श्री डोनाल्ड ग्रूम इन समितियों को गठित करने के लिए संयोजक चुने गये हैं। (सर्वोदय)

इन्दौर का राष्ट्रीय सहमति मंच-सम्मेलन

[गत ११, १२, १३ सितम्बर, १९७१ को राष्ट्रीय सहमति मंच का प्रथम सम्मेलन इन्दौर में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में भाग लेनेवाले नेताओं और प्रतिनिधियों ने देश की राष्ट्रीय समस्याओं के बारे में सर्व-सम्मत हल निकालने का प्रयास किया। उस सम्मेलन की एक संक्षिप्त रपट यहाँ प्रस्तुत है। —सम्पादक]

गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने भारत के प्रथम राष्ट्रीय सहमति मंच, के तीन दिवसीय अधिवेशन का ११ सितम्बर, संध्या ५ बजे इन्दौर के रवीन्द्र नाट्य गृह में उद्घाटन किया। उद्घाटन के पूर्व सहमति मंच का इतिहास बताते हुए श्री रामेश्वरदयाल तोतला ने कहा कि सन् १९७० की २, ३ फरवरी को दिल्ली में सभी दलों के लगभग १०० व्यक्तियों की बैठक गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में बुलायी गयी। इस बैठक में देश के गिरते हुए नैतिक स्तर, हिंसा व तनाव, युवकों की समस्याओं व नेतृत्व के अभाव पर चिन्ता प्रकट की गयी और इन समस्याओं पर इन्दौर में सहमति प्राप्त करने हेतु यह पहला अधिवेशन बुलाने का निर्णय किया गया। अभी तक मंच का कार्य एक आयोजक समिति ही सम्भालती आ रही है।

महाराष्ट्र विधान सभा के अध्यक्ष बाबा साहब भारदे ने कहा कि देश में एक-राय होने के लिए अनेक मुद्दे हैं जबकि मतभेदों के कम। देश में अच्छे काम के लिए भी गुंजाइश है यद्यपि देश के चुनावों में गन्दगी है, भ्रष्टाचार है, हिंसा है लेकिन लोकतंत्र के लिए चुनाव जरूरी है।

मंच की आयोजक समिति के अध्यक्ष श्री आर० आर० दिवाकर ने अपने भाषण में कहा कि मंच को अराजनैतिक स्तर पर चलाकर ही प्रभावशाली कदम बढ़ाना होगा। सहमति मंच के द्वारा मुक्त भाव एवं मुक्त मन से सोचने समझने की प्रेरणा मिल सके, ताकि हम हर मुश्किल को सरलता से हासिल कर सकें। तभी हमारा यह अधिवेशन सफल सिद्ध होगा।

अधिवेशन की स्वागत समिति के श्री मुकुन्द कुलकर्णी, श्री मनोहर सिंह मेहता, श्री प्रताप सिंह बागना एवं श्री आर० एम० तोतला ने प्रारम्भ में अतिथियों का भावभीना स्वागत किया।

मंच के अधिवेशन में लगभग २०० प्रतिनिधियों ने देश के विभिन्न क्षेत्रों से आकर भाग लिया। सहमति मंच के दूसरे दिन की कार्यवाही के अन्तर्गत सुबह के अधिवेशन में सात वक्ताओं के भाषण हुए। समाजवादी नेता श्री एन० जी० गोरे और जनसंघ के श्री पीताम्बर दास ने अपने भाषण के पूर्व साफ तौर पर स्पष्ट किया कि वे इस मंच पर अपने दलों के प्रतिनिधि के रूप में नहीं आये हैं, लेकिन समय आने पर अपने दलों को मंच के विचारों से अवगत और सहमत करा सकते हैं। राजस्थान के श्री मोहन सिंह मेहता ने कहा कि इस सम्मेलन में कुछ दलों के प्रतिनिधित्व का अभाव एक खटकने वाली बात है। सच भी था कि सत्ता कांग्रेस यानी इन्दिरा सरकार का कोई प्रतिनिधि इस मंच के सम्मेलन में प्रतिनिधित्व नहीं करने आया। कुछ सदस्यों ने सम्मेलन की अल्प उपस्थिति पर भी दुःख प्रकट किया और बताया कि सम्मेलन में देश भर के ९७ प्रतिनिधि आये हैं और शेष स्थानीय प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

सम्मेलन के भाग ले रहे प्रतिनिधियों के भाषणों के बाद सामूहिक चर्चा का दौर चला। सामूहिक चर्चा के चार प्रमुख विषय थे। गिरता हुआ नैतिक स्तर, हिंसा तथा साम्प्रदायिक तनाव, युवकों की समस्याएँ, उचित नेतृत्व का अभाव। इस दिन दोपहर के सत्र में हुए समूहों की चर्चाओं एवं उनकी सिफारिशों पर १३ सितम्बर को प्रात: प्रस्ताव पारित हुए एवं बहसें हुईं और सहमति के लिए जोरदार मंथन चला।

अधिवेशन के तीसरे दिन खुले सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए मंच के अध्यक्ष श्री आर० आर० दिवाकर ने हर कठिन काम को करने का विश्वास दिलाते हुए राष्ट्रीय चरित्र को उन्नत करने की बात पर अधिक बल दिया और अन्त में देश के विभिन्न भागों से आये प्रतिनिधियों एवं अधिवेशन के कार्यकर्ताओं के प्रति आभार प्रकट किया। अधिवेशन की समाप्ति पर अन्तिम भाषण देते हुए श्री तोतला ने कहा कि भले ही कोई एक ही कार्यक्रम बनायें लेकिन वह ठोस हो, उस पर सभी दलों की सहमति हो, और उसका क्रियान्वयन किया जा सके। आज जो देश में मानसिक विकृति है वही असन्तोष का मूल कारण है। अतः क्रान्ति विचारों में हो, मन में हो, क्योंकि आज हम यहाँ १०० प्रतिनिधि ही हैं, कल यह संख्या बढ़कर लाखों होगी।

देश में यूं तो अनेक अधिवेशन, सम्मेलन आयोजित होते रहते हैं, लेकिन सहमति मंच शायद इन सबसे हटकर एक अलग और देश की वर्तमान परिस्थितियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। (सप्रेस) —रमेश श्रम 'निर्मम'

'दी कामन मैन'

आजकल सामान्य आदमी (दी कामन मैन) की बहुत चर्चा होती है। वही लोकतंत्र का 'उपास्य' है। राजनीति उसी पर चल रही है, जी रही है, पल रही है। वह 'कामन मैन' कौन है? क्या सड़क पर चलने वाला, रिक्शा खींचने वाला, बोझा ढोने वाला आदमी 'कामन मैन' है? नहीं। 'कामन मैन' मनुष्य का वह 'तत्व' है जो हममें, आपमें, सबमें, समान रूप से मौजूद है यानी 'कामन' है। सामान्य आदमी का दिन-रात जप करने वाले नेताओं और धर्म-गुरुओं ने इस सामान्य तत्व को कहाँ पहचाना?

'दी कामन मैन' की यह परिभाषा स्वर्गीय आनन्द कुमार स्वामी ने दी है, जो भारतीय कला के ज्ञानी थे।

अफगानिस्तान में शान्ति-यात्रा

अफगानिस्तान में मेरी विश्वशान्ति पदयात्रा का कार्यक्रम, उसकी व्यवस्था और संयोजना किस प्रकार हो, यह मेरी चिन्ता का विषय था। 'काबुल टाइम्स' को मेरे आने की सूचना थी, इण्टरव्यू हुआ और फोटो सहित आधे पेज का समाचार छपा। सरकारी एजेन्सी और अन्य समाचार-पत्र वालों ने भी इण्टरव्यू लिये। फोटो सहित समाचार छापे। अफगानिस्तान रेडियो ने यात्रा का उद्देश्य प्रसारित किया।

अफगानिस्तान सरकार की ओर से विदेश मंत्री ने कहा कि हमारी सरकार शान्ति चाहती है, युद्ध तथा अणु-आयुधों का लगातार उसने सख्त विरोध किया है, और मैं उन्हीं का कार्य कर रहा हूं।

शिक्षा मंत्री ने कहा, "शान्ति का यह कार्य लोकशिक्षण का कार्य है। शिक्षा-संस्थाओं पर इसकी मुख्य जिम्मेदारी है। लोकशिक्षण के इस कार्य में अफगानिस्तान की शिक्षण संस्थाएं आपके साथ हैं। सरकार का समर्थन, आशीर्वाद और शुभकामना आपके साथ है।"

विदेश उपमंत्री द्वारा पुलिस, सिपाही तथा गांव के मुखियों को मेरी इस पदयात्रा का कार्यक्रम तथा उसमें सहयोग देने की सूचना दी गयी और मुझे एक परिचय-पत्र मिला। शिक्षा मंत्री ने कैम्प-प्रवास कायम किये और रास्ते के ६ 'प्राविंशियल डायरेक्टर आफ एजूकेशन' को टेलीफोन से स्वयं आध घण्टे के भीतर-भीतर इत्तिला की और उनके नाम पत्र तैयार करवा कर मुझे दिये गये। उन्होंने उठते-उठते कहा, "मैं यदि जवान होता तो अवश्य आपके साथ चलता। आपको कोई तकलीफ रास्ते में हो तो टेलीफोन से इत्तिला कीजिएगा।"

अब मैं सरकारी मेहमान था। इससे पूर्व मैंने इसकी कल्पना भी नहीं की थी।

काबुल यूनिवर्सिटी में ५-६ बैठकें हुईं। इण्डियन चैम्बर आफ कामर्स की भी बैठक हुई और उसमें मेरे प्रवास के लिए एक हजार अफगानी मुद्रा की सहायता करने का निश्चय हुआ, जिसका अन्ततः डाक-खर्च में उपयोग किया गया।

अफगानिस्तान की इस पद-यात्रा में शिक्षकों तथा विद्यार्थियों का सक्रिय सहयोग रहा। मेरे कार्यक्रम की पहले से सब जगह सूचना थी और एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव तक की व्यवस्था बहुत ही अच्छे ढंग से की गयी। भाषा की समस्या का विशेष सामना नहीं करना पड़ा। शिक्षा-विभाग की ओर से अंग्रेजी जानने वाले शिक्षक की व्यवस्था दो-भाषिये के रूप में की गयी। इससे मैं लोगों के सामने युद्ध के खिलाफ मानवता के प्रति जघन्य अपराध, पूर्ण निःशस्त्रीकरण की मांग तथा विश्व-शान्ति के विकल्प पर स्वतन्त्रता-पूर्वक विचार रख सका। हर स्कूल में शिक्षकों तथा विद्यार्थियों की सभा तथा गांवों में सार्वजनिक सभाएं होती थीं। शिक्षकों तथा विद्यार्थियों का भरपूर स्नेह मिला। एक पड़ाव से दूसरे दूसरे पड़ाव तक स्कूल के विद्यार्थियों की वानर सेना तथा कई जगह उत्साह-पूर्वक अध्यापकों की जमात साथ थी। प्रान्त के शिक्षा निदेशक ने मेरे सफल कार्यक्रम के लिए हर सम्भव प्रयत्न किये। खाने-पीने की हर जगह सुविधाजनक व्यवस्था थी।

अफगानिस्तान में आतिथ्य-सत्कार की मिसाल अनोखी है। यद्यपि मेरी व्यवस्था शिक्षण संस्थाओं के जिम्मे थी, लेकिन विद्यार्थियों के द्वारा मेरे आगमन की सूचना गांव-गांव तक पहुंच चुकी थी। जिस गांव से निकलूं, वहां बिना दूध की काली चाय अथवा कहवा, रोटी और सूखा मेवा खाये बिना निकलने की इजाजत नहीं होती थी। काबुल से रवाना होते समय मुझे 'कोची' जाति से विशेष सतर्क रहने की चेतावनी दी गयी थी। यह खानाबदोश जाति है और काफिले के काफिले घूमते रहते हैं। लेकिन मुझे तो उनका भी प्रेमल आतिथ्य मिला। उनके निर्मल मन और प्रेम व्यवहार की याद मुझे अब भी बार-बार आती है। यद्यपि वे आर्थिक दृष्टि से गरीब हैं, लेकिन मन के अमीर हैं। झुण्ड के झुण्ड काफिले आते थे और निकल जाते थे लेकिन रास्ते में हर काफिले की ओर से मुझे आतिथ्य सत्कार मिला चाय और रोटी के साथ। अफगानिस्तान का ऐसा कोई वर्ग नहीं बचा, जिसके साथ हमारा सम्पर्क न आया हो। गजनी, काबुल और कंधार प्रदेशों के महामहिम राज्यपालों से मिलना भी हुआ और उनका समर्थन, शुभ-कामना और शक्ति बीच-बीच में मिलती रही।

अफगानिस्तान में पुलिस विभाग ने मेरी सुरक्षा के लिए एक पुलिस का आदमी नियुक्त किया, जिसे मैंने एक दिन के बाद सादर विदा कर दिया क्योंकि मुझे वहां की जनता में भरोसा हो गया था। इसलिए मैंने कहा कि "अफगानिस्तान में मुझे कोई डर नहीं है और मैं यदि मारा जाऊं तो इसकी जिम्मेदारी मेरी स्वयं की होगी।" अन्त में शिक्षा-विभाग की ओर से दो स्काउट मेरे साथ हो लिये, जो रास्ते भर साथ रहे।

कंधार से हैरात तक के रास्ते में ५०-६० मील के फासले पर न बस्ती है, न पेड़ की छाया और न पानी है, इसलिए इस रास्ते को मैंने मोटर से पार किया। हैरात में अच्छा कार्यक्रम रहा।

जब मैं काबुल पहुंचा था, तब मैं किसी से भी परिचित नहीं था और वहां से रवाना होने पर मुझे लगभग डेढ़ सौ ऐसे मित्रों से विदा लेनी पड़ी, जिनकी मधुर स्मृतियां अफगानिस्तान के प्रवास में मुझे हृदय आन्दोलित करती रही थीं और उन हजारों मित्रों से दूर होने पर हार्दिक वेदना भी सहन करनी पड़ी, जिनके सम्पर्क में अपनी इस पदयात्रा में आया था।

अफगानिस्तान और भारत के सम्बन्ध बहुत पुराने हैं। दोनों देशों की संस्कृति और परम्परा एक रही है। यद्यपि राजनैतिक-भौगोलिक दृष्टि से हम आज अलग हैं, लेकिन भावात्मक दृष्टि से दोनों देश एक हैं, दोनों में कोई अन्तर नहीं है।

—रामसहाय पुरोहित

गर्भपात कानून

—सिद्धराज ढड्ढा

गर्भवती स्त्री का जीवन बचाने के सिवाय किसी भी दूसरे कारण से गर्भपात करना या कराना, वह उस स्त्री तथा गर्भपात करने वाले दोनों के लिए भारत के मौजूदा कानून (इण्डियन पिनलकोड, धारा ३१२) में जुर्म माना गया है। इसी प्रकार के या इससे भी सख्त कानून दुनिया के दूसरे देशों में भी थे अथवा हैं।

एक का जीवन बचाने के लिए दूसरे का जीवन लेना कुछ संयोगों में अपराध नहीं माना जाता है, पर इसके अलावा किसी भी मानव-प्राणी की हत्या सामाजिक और नैतिक, दोनों दृष्टि से अपराध है। गर्भपात या भ्रूणहत्या भी उसी श्रेणी में है। इसके अतिरिक्त, गर्भपात के परिणाम केवल सम्बन्धित व्यक्ति तक सीमित नहीं रहते हैं, उसके सामाजिक परिणाम भी बहुत व्यापक और विशेष महत्व के हैं। इसे ध्यान में रखकर ही भारतीय समाजशास्त्रियों ने भ्रूणहत्या की गिनती महापापों में की है।

आज की दुनिया में प्रगतिशीलता के नाम पर स्वच्छन्द व्यवहार की ओर झुकाव बढ़ रहा है, और कई देशों में भ्रूणहत्या से सम्बन्धित कानूनों को ढीला किया जा रहा है। भारत सरकार ने जो कानून अब बनाया है उसकी मुख्य बातें नीचे लिखे अनुसार हैं :

(१) इस कानून में बताये गये मर्यादों और कारणों से गर्भपात किया जाय तो वह अपराध नहीं माना जायगा।

(२) गर्भाधान हुए १२ हफ्ते से अधिक समय नहीं हुआ हो, तो कोई भी रजिस्टर्ड चिकित्सक (मेडिकल प्रेक्टीशनर) और १२ हफ्ते से अधिक लेकिन २० हफ्ते से अधिक समय न हुआ हो तो, कोई भी दो रजिस्टर्ड चिकित्सक, प्रामाणिकता (इन गुड फेथ) से इस राय के हों कि गर्भाधान चालू रहने देने में गर्भवती स्त्री के जीवन को खतरा है, अथवा उसके शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को हानि होने का खतरा है, अथवा जन्म लेने पर सन्तान को ऐसी शारीरिक या मानसिक विकृति होने का खतरा है, जिससे वह पंगु (हैंडिकेप्ड) रह जायेगा तो गर्भाधान का अन्त किया जा सकता है।

स्पष्टीकरण -

(अ) कोई गर्भवती स्त्री यह कहे कि गर्भाधान बलात्कार से हुआ है, तो ऐसे गर्भाधान से उत्पन्न परिणाम से स्त्री के मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर हानि होना सम्भव है, ऐसा मान लेना चाहिए।

(ब) सन्तान की संख्या मर्यादित करने के लिए कोई विवाहित स्त्री या उसका पति कृत्रिम उपाय काम में ले, और वह निष्फल होने से गर्भाधान हो जाय, तो इस प्रकार अनिच्छा से हुए गर्भाधान से परिताप पैदा होगा, जिससे स्त्री के मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर हानि सम्भव है, ऐसा मान लेना चाहिए।

(३) गर्भाधान चालू रहने देने में स्वास्थ्य को हानि होने का खतरा है या नहीं, यह तय करने में गर्भवती स्त्री के आस-पास के वातावरण (मौजूदा तथा निकट भविष्य में होने वाले) को ध्यान में लाया जा सकेगा।

(४) सरकारी अस्पताल या सरकार द्वारा स्वीकृत स्थान के सिवाय अन्य किसी स्थान पर गर्भाधान का अन्त नहीं लाया जा सकेगा।

(५) ऊपर बताये गये अनुसार गर्भपात के लिए समय-मर्यादा, स्थान-मर्यादा और दो डाक्टरों की सम्मति आदि की मर्यादा, बाँधने में आयी है। लेकिन कोई रजिस्टर्ड चिकित्सक प्रामाणिकता से ऐसा मत रखे कि गर्भवती स्त्री की जिन्दगी बचाने अथवा उसके शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर व स्थायी हानि होने से रोकने के लिए तत्काल गर्भाधान का अन्त करना जरूरी है, तो वह उपर्युक्त मर्यादाओं का पालन न करते हुए भी वैसा कर सकेगा।

(६) इस कानून के अनुसार कोई रजिस्टर्ड चिकित्सक प्रामाणिकता के साथ या वैसे इरादे से गर्भाधान का अन्त करे और उससे कुछ हानि हो या हानि की सम्भावना हो तो उसके खिलाफ अदालत में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकेगी।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो जायगा कि कानून की दृष्टि से अब गर्भपात की कार्रवाही को इतना आसान और ढीला बनाया जा रहा है कि उसके लिए कोई खास रुकावट नहीं रह जायगी। इतनी ढिलाई बहुत कम देशों में हुई है। स्त्री गर्भपात की इच्छा जाहिर करे और डाक्टर उसमें सहमत हो तो दोनों के लिए मार्ग खुला है। डाक्टर के लिए तो यह कमाई का साधन है इसलिए सहमत होना उसके तो हित में ही है। कानून में लगभग सारी जिम्मेदारी और अधिकार डाक्टर के हाथ में दिये गये हैं। कानून में प्रामाणिकता (गुडफेथ) पर जगह-जगह जोर दिया गया है, लेकिन डाक्टर ने प्रामाणिकता से काम नहीं किया, यह तो भी साबित करना लगभग असम्भव है, पर इस कानून में तो इतने छिद्र हैं और इतनी बचने रखी गयी है कि इस बारे में डाक्टर को कोई खतरा नहीं है।

पुराने कानून में स्त्री की प्राणरक्षा को ही गर्भपात के लिए जायज कारण माना गया है लेकिन नये कानून में प्राण-रक्षा के अलावा स्त्री के 'शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को हानि होने का

भूदान-यज्ञ : सोमवार, २५ अक्टूबर, '७१

खतरा' भी गर्भपात के लिए एक कारण माना गया है। यहाँ तक भी गनीमत थी, लेकिन गर्भाधान चालू रहने से स्त्री को शारीरिक अथवा मानसिक हानि का खतरा था या नहीं, इस बारे में आगे जाकर कोई सवाल खड़ा न हो और कानून की पकड़ करीब-करीब न रहे इस दृष्टि से इसी कानून में यह पहले से ही तय कर दिया गया है कि किन परिस्थितियों में यह मान ही लिया जाना चाहिए कि गर्भवती स्त्री के मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर हानि होगी। इस प्रकार कानून में डाली हुई मर्यादाओं का बहुत अर्थ नहीं रह जाता।

गर्भाधान रोकने का कृत्रिम उपाय किया गया या नहीं और करने पर भी वह असफल हुआ, यह तो सम्बन्धित स्त्री या पुरुष ही कह सकता है, डाक्टर कैसे जाने ? डाक्टर को तो जो वह कहेगी उसे मानना होगा। और कृत्रिम उपाय करने के बावजूद गर्भाधान होता है तो उससे स्त्री को इतना ज्यादा मानसिक परिताप होगा कि गर्भपात जरूरी है—यह विधान तो आश्चर्यजनक है! इसमें ऐसी कोई मर्यादा भी नहीं है कि दो-तीन सन्तानें हो चुकी हो और फिर ऐसे उपाय निष्फल जायें तो गर्भपात करना। प्रथम गर्भाधान में भी गर्भपात किया जा सकता है। इसके लिए स्त्री की जिन्दगी को खतरा अथवा शारीरिक हानि की सम्भावना हो, यह भी जरूरी नहीं है। केवल इतना काफी है कि सन्तान नहीं चाहिए, उसके लिए कृत्रिम उपाय किये लेकिन वह निष्फल गये, इसलिए गर्भपात करना है। इससे अधिक स्वच्छन्द व्यवहार की कल्पना करना मुश्किल है!

ऊपर दी गयी कानून की व्याख्या के पैरा नं० २ में गर्भवती स्त्री के 'आस-पास' के (सामाजिक, आर्थिक) वातावरण का जिक्र है, और वह भी केवल मौजूदा वातावरण का नहीं बल्कि नजदीकी भविष्य में हो सकने वाले वातावरण का भी, यह भी ऐसा विधान है कि जिससे गर्भपात चाहने वाली स्त्री को अथवा कराने वाले को पूरी छूट मिलती है।

इस नये कानून के लिए कारण यह दिया जाता है कि पुराना कानून सख्त होने से बहुत बड़ी संख्या में गर्भपात का काम छिपे-चोरी 'नीम हकीम' लोगों के जरिये होता था, जिसकी वजह से स्त्री को शारीरिक हानि और जान की जोखिम रहती थी।

नये कानून के लिए लोगों का समर्थन प्राप्त करने की दृष्टि से भारत सरकार की ओर से जो प्रचार किया जा रहा है उसमें एक ओर तो अनचाहे गर्भाधान के बोझ और शर्म से दुखी स्त्री का चित्र खींचा जाता है जिससे लोगों की दया-भावना को उभारा जा सके और दूसरी ओर छिपे-चोरी, गन्दे-सन्दे वातावरण में, मनचाहा पैसा ऐंठने की दृष्टि से गर्भपात कराने वाली अधकचरी दाइयों या डाक्टरों की राक्षसी प्रतिमा खड़ी की जाती है जिससे लोगों को यह लगे कि सरकार शोषक और हृदयहीन लोगों से बचाव के लिए ही यह कानून बना रही है।

स्वास्थ्य और परिवार नियोजन विभाग के केन्द्रीय राज्यमंत्री श्री डी० पी० चट्टोपाध्याय ने कहा है कि राज्यसभा ने जो बिल पास किया है वह 'पिनलकोड की कुछ शर्तों को ढीला करने के अलावा और कुछ नहीं करता।' पर कानून की जो धाराएं ऊपर दी गयी हैं उनसे यह स्पष्ट है कि इस कानून का उद्देश्य सिर्फ पुराने कानून की सख्ती को ढीला करने या स्त्रियों की प्राणरक्षा अथवा उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा का नहीं है बल्कि असली मकसद तो जन-संख्या-वृद्धि को रोकने के लिए गर्भपात का सहारा लेने का है। सन्तति न होने के लिए कृत्रिम उपाय किया जाय यह समझ में आ सकता है, लेकिन उसके लिए भ्रूण हत्या करना भी जायज है, यह खतरनाक विधान है और गंभीरता-पूर्वक सोचने की बात है। आज परिवार नियोजन के लिए कृत्रिम उपायों का व्यापक प्रचार हो रहा है, उसके साथ-साथ अब भ्रूणहत्या का भी प्रचार होगा और उसकी योजना भी?

स्त्री को शारीरिक और मानसिक हानि से बचाने के लिए अथवा उसकी जान की जोखिम कम करने के लिए गर्भपात जरूरी है ऐसा कहा जाता है, लेकिन स्वयं गर्भपात से भी कितनी शारीरिक और मानसिक हानि होती है इसके बारे में कुछ नहीं कहा जाता। निष्णात डाक्टरों का कहना है कि :

'अगर गर्भ के कारण मानसिक दुष्परिणाम हो सकता है तो वह गर्भपात से भी हो सकता है। ऐसी स्त्रियाँ बहुत कम होती हैं, भले ही वे अनचाहे हुए गर्भाधान से कितना भी मुक्त होना चाहती हों, जिनको गर्भपात के बाद पश्चाताप नहीं होता। यह प्रतिक्रिया मातृत्व की स्वाभाविक भावना अथवा वृत्ति के कारण होती है। अगर वास्तव में स्त्री को यह भरोसा हो कि गर्भपात उसकी जान को बचाने के लिए जरूरी था, तब तो शायद यह प्रतिक्रिया कुछ नरम पड़ जाती है, लेकिन अगर गर्भपात तुच्छ, तात्कालिक भावनावश किया गया हो तो स्त्री फिर जीवनभर अपने इस अपराध की भावना से दुख पाती रहती है।'

गर्भपात का यह विधान वास्तव में लाखों निरीह व निसहाय बच्चों की—ऐसे प्राणियों की जो मुकाबिला नहीं कर सकते—हत्या को मान्यता देने के समान है। इसका सामाजिक और नैतिक पहलू और भी अधिक गंभीरता से विचार करने लायक है। अपने अहंकार में मनुष्य यह मान लेता है कि उसके खुद के तात्कालिक सुख अथवा स्वेच्छाचार के लिए लाखों निसहाय प्राणियों की हत्या करना भी जायज है। हजारों वर्षों की साधना और प्रयत्न से साधे गये जीवन के पावित्र्य (सेंक्टिटी) के मूल्य को तुच्छ स्वार्थ के लिए नष्ट करने की कोशिश की जा रही है। खासकर स्त्रियों के ध्यान में यह आना चाहिए कि यह उनको केवल भोग का साधन बनाने की और उनके स्त्रीत्व और मातृत्व को नष्ट करने की योजना है।●

गांधी-जयन्ती समाचार

देश के कोने-कोने में गांधी जयंती धूमधाम से मनाई गयी। अब तक प्राप्त समाचारों का सार यहाँ प्रस्तुत है।

इलाहाबाद में अखंड सूत्र यज्ञ से कार्यक्रम का श्रीगणेश हुआ। उसके बाद सर्वधर्म प्रार्थना हुई। इस अवसर पर एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया, जिसके प्रमुख वक्ता आन्ध्र के प्रसिद्ध सर्वोदयी नेता प्रो० गोरा थे। उन्होंने गांधीजी के आदर्श और व्यवहार की एकता के महान गुण की याद दिलाते हुए सत्याग्रह और रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति अभिमुख होने की आवश्यकता पर जोर दिया और सरकार पर निर्भर न रह कर जन-आधारित समाजव्यवस्था की महत्ता समझायी। इस सभा की अध्यक्षता शिक्षा शास्त्री व इतिहासज्ञ प्रो० ओ० पी० भटनागर ने की।

वाराणसी में हरिजन सेवक संघ तथा गांधी शांति प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्वधान में एक गोष्ठी का आयोजन किया गया। परिसंवाद का विषय था समाज परिवर्तन के गांधी-मार्ग का भविष्य। गोष्ठी में कुल आठ वक्ताओं ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये। सर्वोदय मंडल व खादी निकेतन आश्रम के सम्मिलित प्रयास से मथुरा में सर्वोदयपर्व मनाया गया जिसकी पूर्णाहुति गांधी जयंती के अवसर पर की गयी। उस दिन प्रभात फेरी, अखंड सामूहिक सूत्रयज्ञ, बापू जीवन दर्शन पर गोष्ठी, सामूहिक प्रार्थना, गीता प्रवचन का पाठ आदि दिन भर के कार्यक्रम आयोजित किये गये। जिला सर्वोदय मंडल गाजीपुर की ओर से गांधी जयंती के उपलक्ष में प्रभात फेरी, सूत्रयज्ञ व सार्वजनिक सभा में प्रार्थना व श्रद्धांजलि अर्पित करने का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

बिहार: सारन जिला सर्वोदय मंडल ने प्रार्थना, सूत्रयज्ञ, रामायण पाठ गांधी-विचार पठन का कार्यक्रम आयोजित करके और ३ माह में १ हजार रु० का सर्वोदय साहित्य बेचने का निर्णय करके गांधीजी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की। नरसिंहपुर में खादी सदन की ओर से २४ घंटे की रामधुन के साथ अखंड सूत्रयज्ञ में २४ बहनों और १६ भाइयों ने भाग लिया और २२९ गुंडियों की कताई हुई। बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ धनबाद की ओर से सूत्रयज्ञ, प्रार्थना व सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। सभा समाप्ति के बाद २५००) रु० की खादी बिक्री हुई।

हरियाणा

प्रान्तीय नशाबन्दी समिति के संयोजक तथा वयोवृद्ध सर्वोदय नेता दादा गणेशी लाल ने हिसार में गांधी जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित सभा में नशाबन्दी का कार्य सरकार अपने हाथ में उठाये, इसकी माँग करते हुए १५ अक्तूबर को प्रतीकात्मक उपवास किया।

प० बंगाल

सर्वोदय विचार परिषद कलकत्ता के तत्वावधान में गांधी जयन्ती के उपलक्ष में ४८ घंटे का अखंड सूत्रयज्ञ सम्पन्न हुआ। सूत्रयज्ञ का उद्घाटन श्री मनी गोपाल भट्टाचार्य द्वारा परमचन्द जी के सभापतित्व में आयोजित एक समारोह हुआ। समापन प्रसिद्ध सर्वोदयी नेता श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने किया।

राजस्थान

प्राथमिक सर्वोदय मण्डल राजसमन्द गाँव की ओर से सामूहिक सूत्रयज्ञ, प्रार्थना सभा, सर्व-धर्म भजन आदि का कार्यक्रम हुआ। गजस्थान खादी ग्रामोद्योग विद्यालय सोडाबास में आयोजित सार्वजनिक सभा में बोलते हुए श्री पूर्णचन्द जैन ने गांधीजी के जीवन व कार्यक्रमों पर प्रकाश डाला। बाँसवाड़ा जिला सर्वोदय मंडल घाटोल में विनोबा जयन्ती से लेकर गांधी जयन्ती तक का सर्वोदय-पर्व मनाया गया। गांधी जयन्ती के दिन २४ घंटे का अखंड सूत्रयज्ञ हुआ, प्रभात-फेरी, प्रार्थना व सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। इस जिले की ग्रामसभा कुन्डाल ने सर्वधर्म-समभाव और पूर्ण वस्त्र स्वावलम्बन की प्रतिज्ञा की, तथा तीन वर्ष में गाँव को पूर्ण स्वावलम्बी बनाने की इच्छा व्यक्त की।

असम

शांति केन्द्र कुमारी कटा तथा तामुलपुर आंचलिक ग्रामदान संघ के सम्मिलित प्रयास से प्रभातफेरी, श्रमदान, सामूहिक प्रार्थना, सूत्रयज्ञ, साहित्य तथा खादी बिक्री का कार्यक्रम आयोजित किया गया। रु० १६२२ की खादी बहनों और कुनकर बहुओं ने घर-घर जाकर बेची तथा रु० १०.९६ पैसे का सर्वोदय-साहित्य बिका।
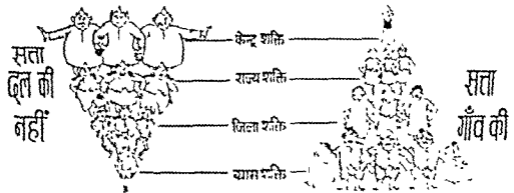
बंगला देश और भारत का भविष्य

जैसी कि अपेक्षा थी वर्षा-ऋतु समाप्त होते ही हमारे सत्ताधीशों की जबान खुल गयी है और उन्होंने अपेक्षानुसार हल्ला गुल्ला करना शुरू कर दिया है। सबसे जोरदार आवाज में हमारे योग्य सुरक्षा मन्त्री बोल रहे हैं। परन्तु वे इस देश के लोगों की बुद्धि का अपमान कर रहे हैं और दुनिया की नजर में अपने को हास्यास्पद बना रहे हैं। अन्य देशों के लोगों को सही सही बातों की जानकारी हमारा जितना अन्दाज है उससे अधिक है। जालन्धर में सुरक्षा मन्त्री ने कहा, 'करीब आधा पाकिस्तान तो समाप्त हो चुका है। भारत को युद्ध करने की जरूरत ही नहीं होगी। जेनरल यहिया खाँ यह महसूस कर रहे हैं कि बंगला देश में मुक्ति वाहिनी विजयी हो रही है और धीरे धीरे संसार का लोकमत पाकिस्तान के प्रतिकूल होता जा रहा है।' उनका जो सबसे अधिक हास्यास्पद कथन है वह यह है कि 'बंगला देश को स्वतन्त्र करने के लिए मुक्ति वाहिनी के सिर्फ एक और धक्के की जरूरत है।'

इसमें सन्देह नहीं कि सुरक्षा मन्त्री श्री जगजीवन राम की जानकारी अधिक स्पष्ट है। बंगला देश के छापामारों के पास कितने कम हथियार हैं और उनके पास तोप, बमगोले, आधुनिक हथियार और युद्ध के भारी सामान कितना कम है, नाम-निहायत से भी कम, इस बात को वे अच्छी तरह जानते हैं। इस तरह के हथियारों से रहित और अधकचरी ट्रेनिंग वाली मुक्ति-वाहिनी बंगला देश में पाकिस्तान के पाँच डिविजन शस्त्र से लैस फौज को मार भगायेगी, ऐसा सोचना बिलकुल दिवा-स्वप्न के जैसा है। सबसे दुखद बात तो यह है कि ऐसे कथनों से देश के लोग बेहद भ्रम में पड़ते हैं।

यह ठीक है कि अपनी आजादी प्राप्त करने के लिए लड़ने का काम बंगला देश के लोगों का है। परन्तु इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि बंगला देश के लोग बिना किसी की मदद के अपने बल-बूते पाकिस्तानी फौज को नहीं हरा सकेंगे, चाहे वे कितनी भी बहादुरी, लगन और समर्पण बुद्धि से क्यों न लगे रहें। किसी न किसी को उनकी मदद में लगना ही है। भारत के अलावा और किसको गरज है कि वह ऐसा करे? यह सिर्फ पड़ोसी को सहायता देने का प्रश्न नहीं है।

बंगला देश भारत के जीवन-मरण का प्रश्न है। सिर्फ एक करोड़ शरणार्थियों के बोझ का प्रश्न नहीं है। रूस और अमेरिका यदि पाकिस्तान को नहीं मना सके तो शरणार्थियों की संख्या एक करोड़ और हो जा सकती है। हमारे देश की आर्थिक हालत पहले से ही नाजुक है। शरणार्थियों के आने का तांता यदि इसी तरह बँधा रहा तो इस देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक सुरक्षा का क्या हाल होनेवाला है इसे एक मन्दबुद्धिवाला आदमी भी समझ सकता है।

प्रश्न हमारे जीवन मरण का है—हम यदि संसार में आत्म-सम्मान और प्रतिष्ठा के साथ जीना चाहते हैं तो। निक्सन और पोदगोर्नी की समझ में यह बात भले ही न आवे, पर दिल्ली के शासकों को तो समझ लेना ही चाहिए कि बंगला देश जब तक स्वतन्त्र सार्वभौम सत्ता प्राप्त देश नहीं बन जाता तब तक एक भी शरणार्थी लौटकर जानेवाला नहीं है—कम से कम एक भी गैर-मुसलमान या राजनैतिक चेतना वाला मुसलमान तो नहीं लौटेगा। तथाकथित अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा चाहे जितना भी प्रेरित किया जाय बंगला देश की स्वतंत्रता पर आधारित कोई भी 'राजनैतिक समाधान' यहिया खाँ को स्वीकार हो नहीं सकता।

अमेरिका और रूस की बात छोड़िये। वे दोनों ही पाकिस्तान के मामले को अपने देश के हित की दृष्टि से देखते हैं। भारत के शासकों में अब भी वे लोग हैं जो आजादी हासिल करने के सिपाही रहे हैं। यह पाकिस्तान के तोड़ने का प्रश्न नहीं, बंगला देश को उपनिवेशवाद के चंगुल से मुक्त करने का आन्दोलन है। बंगला देश के लोग सात महीने से लड़ रहे हैं। वे अपनी सार्वभौम स्वतंत्रता के मदद की घोषणा बार बार कर रहे हैं। फिर भी भारत के नेता 'बातचीत द्वारा राजनैतिक हल' निकालने की बात किये जा रहे हैं।

पार्लियामेन्ट में बाहर प्रधान मन्त्री बंगला देश से सम्बन्धित भारत की दृढ़ता के विषय में बहुत ऊँची-ऊँची बातें कहती रही हैं। परन्तु समय बीतता जा रहा है, और परिस्थिति गंभीर से गंभीरतर होती जा रही है। इस तरह की बात और कदम में जो अन्तर है उस कारण संसार में इस देश की प्रतिष्ठा बहुत घटी है। ऐसी निष्क्रिय ऊँची बातों का दूसरा नुकसान यह हुआ है कि देश के लोगों में एक तुष्टि की वृत्ति आ गयी है और वे पाकिस्तान की ओर से निश्चिन्त से हो गये हैं। स्वतंत्रता के बाद हमारे देश के सबसे कठिन घड़ी में नेतृत्व का जो दिवाला निकल रहा है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

मैं प्रधानमंत्री या किसी और की टीका नहीं कर रहा हूँ। यह समय बहादुरी से बोलने का नहीं, हिम्मत से कदम उठाने का है। बंगला देश का राजनैतिक हल भारत के हाथों में है। भारत मित्रहीन नहीं है। भारत को दूसरों की आवश्यकता है तो दूसरों को भी भारत की आवश्यकता है।

मेरा नम्र सुझाव यह है कि देश के इस संकट काल में दल के मोह से ऊपर उठकर प्रधानमंत्री पूरे देश को अपने नेतृत्व में साथ लें, लोगों को साफ साफ बतायें कि राष्ट्र की इज्जत से जीने के लिए लोगों को कितनी कुर्बानी देनी होगी। देश उनका साथ देगा।

—जयप्रकाश नारायण

(२७, २८ अक्टूबर के 'इण्डियन एक्सप्रेस' में प्रकाशित लेख के आधार पर)

नगरों में क्रान्ति कैसे होगी ?

'नगर स्वराज्य की रूपरेखा और कार्यक्रम' शीर्षक का ९ अगस्त १९७१ के 'भूदान-यज्ञ' में छपा श्री सिद्धराजजी का लेख देखा।

ग्रामदान आंदोलन के अन्तर्गत ग्राम-सभा के मार्फत ग्रामस्वराज्य की हमारी रचना का आधार मानकर नगरस्वराज्य की रूपरेखा आपने बतायी है। लेकिन ग्राम और नगर की मूलभूत रचना में हो बड़ा अन्तर है, उसे ध्यान में रखना होगा। ग्राम की रचना में आज मुख्यतः खेती आधार-भूत है। जो भी गाँव में बसा है वह खेतीवाला या खेती में काम करने वाला होता है। बढ़ई, लुहार आदि अनुषंगिक धंधे भी आज खेती के औजारों तक ही सीमित रह गये हैं। ग्रामसभा में जो सदस्य बैठेंगे, उनका 'इन्टरेस्ट' प्रधानतया गाँव की खेती के उत्पादन में वृद्धि और उसकी पूर्ति में आवश्यक ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहन, यह होगा। गाँव की सफाई, आरोग्य, और झगड़ों का आपसी निपटारा, ये बातें भी ग्रामसभा के लिए कठिन नहीं होंगी, क्योंकि हित-विरोध बहुत अधिक नहीं होता। शिक्षण का प्रश्न एक राष्ट्रीय समस्या बना हुआ है इसलिए सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन किये बगैर ग्रामाभिमुख शिक्षण का मामला मुश्किल कठिन दिखता है। रक्षण का सवाल गाँवों के लिए बहुत बड़ा नहीं है। ग्राम-शांति-सेना के मार्फत वह आसान हो सकेगा।

नगरों का चित्र इससे बहुत भिन्न है। नगर में आकर बसनेवाले का मुख्य 'इंटरेस्ट' धनार्जन का होना है। मजदूर से लेकर व्यापारी और उद्योगपतियों तक इसी उद्देश्य से नगर में जमा होते हैं। हाईस्कूल और कालेज की पढ़ाई भी नगरों में बसने का आकर्षण होती है। शहर में कोई आकर बसे, इस पर कोई अंकुश नहीं लग सकता, लगना भी नहीं चाहिए। समाज की गिरती हुई आर्थिक परिस्थिति लोगों को नगरों का आश्रय लेने को बाध्य करती है। प्लाट खरीदकर मकान बनाने वाला, कोई दुकान, धंधा या कारखाना खोलनेवाला व्यक्ति अपनी अपनी पूँजी के अनुसार उस सीढ़ी की चोटी तक पहुँच जाता है। वकील और डाक्टर, ये भी धंधेवालों में ही गिने जायेंगे। सरकारी महकमों में काम करने वाले लोगों का भी एक बड़ा वर्ग नगरों में होता है।

इस तरह अनेकविध 'इंटरेस्ट' रखने वालों का जमघट जिस नगर में बसता है, वहाँ 'कामन इंटरेस्ट' कौन सा होगा ? शोषण के और असमानता के जहाँ अड्डे होंगे वहाँ हितविरोध और संघर्ष की जड़ें गहरी होती जाती हैं।

फिर पुलिस, तहसीलदार, कलेक्टर, अदालत और जेल, ये सरकारी तंत्र तो नगरों में रहेंगे ही।

आजकल जिला परिषद और पंचायत परिषदों के हाथ में सत्ता के विकेंद्रीकरण के नाम पर अधिकाधिक सत्ता देने की ओर राज्यों का झुकाव है। उसका मुख्य हेतु तो अपने राज्यस्तरीय या केंद्रस्तरीय सत्ता के स्थानों को सुरक्षित रखने के लिए एजेन्टों की पंक्ति खड़ी करने का ही होता है। जो पार्टी-पालिटिक्स ऊपर होती है, उसी की बुनियाद जिला परिषदों के मार्फत पक्की की जाती है। नगरपालिका और नगरमहापालिकाओं के पालिटिक्स से नगरवासी तंग आ जाते हैं। फिर भी वहाँ ऐसे ही व्यक्ति को चुन दिया जाता है जो लोगों के स्वार्थों की पूर्ति कर देता हो।

इस जंजाल में से नगरस्वराज्य का कैसे निर्माण होगा ? नगरपालिका के चुनाव सर्वसम्मति से हों और नगरपालिका का कार्य व्यक्तिनिष्ठ स्वार्थ की अपेक्षा समाजनिष्ठ सेवा की दृष्टि से चले, इस दिशा में लोगों को मनाना होगा। लेकिन समाज में शिष्टाचार बना जा रहा भ्रष्टाचार इसमें सबसे अधिक बाधक बनता है। व्यक्ति सुधरेगा तभी समाज सुधरेगा, यह सत्य होते हुए भी परिस्थितियाँ व्यक्ति को विवश कर देती हैं। ऐसा यह दुष्ट-चक्र है। सरकारी कानून से या अंकुशों से भ्रष्टाचार कम होने की अपेक्षा बढ़ता ही है। इसलिए जन-जीवन पर सरकारी अंकुश कम-से-कम हो, इसका भान होने की जरूरत है। लेकिन सरकार और जनता दोनों अभी तो उलटी दिशा में ही सोचती जा रही हैं। अनुभव से ठोकरें खाकर शायद बुद्धि ठिकाने आयेगी, ऐसा विश्वास रखकर *लोक-शिक्षण* की क्षीण आवाज की रट लगाते रहने के सिवाय आज दूसरा उपाय नहीं दीख रहा है।

नगरों की भयानक से भयानकतर बनती जा रही स्थिति सुसह्य बनाने की दिशा में भले कुछ कार्यक्रम चलें, लेकिन इसमें क्रांति लाने वाला कार्यक्रम अभी हमारे हाथ नहीं लगा है यह मानना होगा।

—दत्तोबा दास्ताने
गांधी सेवा संघ, सेवाग्राम

नगर स्वराज्य का सहचिंतन

ता० १३ सितम्बर के 'भूदान-यज्ञ' में 'सहचिन्तन' स्तम्भ के अन्तर्गत नगर-स्वराज्य के सम्बन्ध में श्री उमेशचन्द्र त्रिवेदी का लेख मैंने पढ़ा। त्रिवेदीजी ने नगर-स्वराज्य के विषय पर अच्छा विश्लेषण किया है और चिन्तन के लिए कुछ मुद्दे प्रस्तुत किये हैं।

उनका कहना है कि जब हम नगर-स्वराज्य की बात करते हैं तो उसमें गरीबी, विषमता, शोषण और बेकारी जैसी समस्याओं के निराकरण की योजना शामिल होनी चाहिए। यह सही है कि *ग्रामस्वराज्य या नगरस्वराज्य का हमारा* आन्दोलन इस प्रत्यय के साथ ही चल रहा है कि इन समस्याओं का समाधान उसमें से होना चाहिए। पर जहाँ तक मैं समझता हूँ ग्रामस्वराज्य में भी हमारा मुख्य लक्ष्य यह है कि ग्रामसमाज जागृत हो और ग्रामसभा के रूप में संगठित होकर सक्रिय हो। उसके बाद गरीबी आदि

समस्याओं का निराकरण ग्रामसमाज का काम है। इसी प्रकार नगर-स्वराज्य के पीछे भी मुख्य उद्देश्य सीधे इन समस्याओं के निराकरण का नहीं है, बल्कि मोहल्ला समाजों के जरिए नागरिकों को जागृत और संगठित करने का है ताकि फिर इन समस्याओं के बारे में वे खुद सोचें और कदम उठावें।

नगरों में उद्योग और व्यापार मुख्य आर्थिक प्रवृत्ति है। त्रिवेदीजी का यह कहना सही है कि औद्योगिक और व्यापारिक संस्थानों का ट्रस्टीकरण आवश्यक है। पर नगरस्वराज्य की जो रूपरेखा मैंने प्रस्तुत की थी वह मुख्यतः संगठन की दृष्टि से थी। ट्रस्टीशिप आदि के लिए अलग से कार्यवाही हाथ में ली जा रही है।

मोहल्ला-सभा आदि के व्यवस्था खर्च के सम्बन्ध में भी मैंने योजना में कुछ संकेत किये थे। सर्वोदय-पात्र शहरों के लिए आसान है ऐसा मानकर उसका सुझाव दिया गया है, पर ग्रामकोष की तरह मोहल्ला-सभा के कोष के बारे में भी सोचा जा सकता है। इसके अलावा समय-समय पर विशेष कामों के लिए धन की आवश्यकता हो, वह उस-उस काम के लिए जुटाया जा सकता है। नगरों में शायद यह तरीका आसान होगा।

मुख्य प्रश्न कुछ शहरों में नगर-स्वराज्य के कार्यक्रम के प्रयोग का है। कुछ नगरों में इसकी चर्चा चली है। आशा है, हमारे साथी जगह-जगह शहरों में पहले इस विषय पर गोष्ठियाँ आयोजन करेंगे जिनमें नगर-स्वराज्य की रूपरेखा पर अच्छी तरह से चर्चा हो और फिर प्रयोग करने का तय किया जाय। मैंने जो रूपरेखा प्रस्तुत की है, वह चिन्तन और प्रयोग के लिए आधार मात्र है। अवश्य ही अनुभव और चिन्तन से उसमें परिवर्तन, संशोधन होना चाहिए।

आपका

—सिद्धराज ढड्ढा

सवाल बंगला देश का नहीं है !

दो खण्डों का आजाद पाकिस्तान।
जनता का बल था पूर्वी भाग में,
देखते-देखते पूर्वी पाकिस्तान
जलने लगा पश्चिम की आग में।
कि जनता से दूर हटकर
सैनिक-शक्ति का पश्चिम में विकास हुआ
और आखिरकार बहाना मिला
बंगला देश में फौजी-शक्ति के गरल का निकास हुआ।
यह जो शोषण है
और दमन है बंगला देश का, बंगला देश का नहीं है,
यह जो अत्याचार है पाकिस्तान का, पाकिस्तान का नहीं है।
यह शोषण है जनता की समृद्धि का,
दमन है उसकी सांस्कृतिक भक्ति का,
और यह जो अत्याचार है,
अत्याचार है हिंसा की बेटी सैनिक-शक्ति का।
लेकिन,
शोषण तो प्रमाण है जनता के हीन अस्तित्व का,
दमन सबूत है उनके सर उठाने जगने स्वाभिमान का,
व अत्याचार तो सेना के अस्तित्व का परिणाम है
इसलिये कि हिंसा ही तो फौज का इन्तिजाम है।
सेना लड़ती है दूसरे देश की सेना से
या फिर किसी देश की जनता से,
पर यदि लड़ने को कुछ नहीं मिला
तो नोचेगी अपने ही शरीर के अंग को
मसलेगी, कुचलेगी अपने ही ... के
गुदगुदाते मानव उमंग को।
इसलिये बार-बार याद आ जाती है हमें उस गांधी की बात,
जिसने सिखाया था यह निष्कर्ष
कि जनता को अपनी मुक्ति के लिए
करना पड़ेगा कभी-न-कभी
फौजी शक्ति से संघर्ष।
कि फौज तो है हिंसा की शक्ति
फिर कैसे पाओगे शस्त्र से मुक्ति
जब फौज के पास है विनाश शस्त्रागार
जिसे लालची रहती है तुम्हारे ही देश की सरकार ?
इसलिये,
मैं करता हूँ तुम सबसे यह मनुहार
कि जनता की मुक्ति के लिए
डालो विचार और प्रेम की बुनियाद।
जनता की शक्ति शस्त्र नहीं,
है शुद्ध विचार,
कि आदमी के हृदय में धड़कता है
सबों के लिये, सबका निर्मल प्यार।

पुष्टि अभियान का सन्दर्भ : समस्याएँ और उनका हल

प्रश्न श्री उमेशचन्द्र त्रिवेदी के : उत्तर श्री धीरेन्द्रभाई के

प्रश्न : ग्रामसभा का नाम ग्राम-स्वराज्य-सभा, प्रखण्डस्वराज्य-सभा और जिला स्वराज्य-सभा हो अथवा ग्रामसभा, प्रखण्डसभा और जिलासभा हो ?

उत्तर : व्यावहारिक दृष्टि से ग्रामस्वराज्य-सभा नाम सही होगा। कुछ राज्यों में ग्राम पंचायतों को 'ग्रामसभा' की संज्ञा दी गयी है। हमारा यह संघटन उससे भिन्न है, ऐसा दीखना चाहिए। तात्विक दृष्टि से भी ग्रामस्वराज्य शब्द जरूरी है। क्योंकि इस क्रान्ति का मूल तत्व राज्य के स्थान पर स्वराज्य की स्थापना करना है। हम दुनिया के सामने राज्य और स्वराज्य की वैचारिक भिन्नता को रखना चाहते हैं। उसी तरह हर स्तर पर स्वराज्य शब्द का इस्तेमाल होना चाहिए।

प्रश्न . ग्रामस्वराज्य-सभा का स्वरूप और उसका आर्थिक कार्यक्रम क्या हो ? 'स्वरूप' से मेरा तात्पर्य कार्य समिति की गठन की प्रक्रिया और उसके कार्य से है।

उत्तर : ग्रामस्वराज्य-सभा 'लोक' द्वारा सर्वसम्मति से चुनी हुई सभा है। …के सारे काम सीधे इस सभा के …ंग से हो सकें, इसके लिए आवश्यक लोकशिक्षण की प्रक्रिया चलनी चाहिए। किसी तरह इतना यह कार्य किसी प्रकार की प्रतिनिधि-संस्था के हाथ में नहीं रहना चाहिए। वस्तुत: आज जो प्रतिनिधि-तंत्र को लोकतंत्र की संज्ञा दी जाती है, हम उसी को बदलने की क्रान्ति करना चाहते हैं। हम प्रत्यक्ष-लोकतंत्र की स्थापना करना चाहते हैं। अगर किसी विशिष्ट काम के लिए कुछ अधिक योग्य व्यक्तियों को अलग से काम की जिम्मेदारी देने की आवश्यकता हो तो ग्रामस्वराज्य-सभा अस्थायी तदर्थ समितियाँ बना सकती है, जिनकी अवधि उस विशिष्ट काम के पूरा होने तक ही रहे।

प्रश्न : गरीबी, विषमता और शोषण को दूर करने के लिए ग्रामस्वराज्य-सभा क्या करे ? बीघा-कट्ठा से न तो भूमिहीनता मिटती है, और न जिनको जमीन मिलती है उनको भी जरूरत-भर मिल पाती है। वैसे गाँव में विकास के बहुत साधन भी इकट्ठे कर दिए जायँ तो उनको क्या लाभ मिलेगा, जिनके पास जीविका का कोई आधार ही नहीं है। उस हालत में ग्रामस्वराज्य-सभा की क्या सार्थकता रह जाती है ?

उत्तर : बीघा-कट्ठा निकालने के कार्यक्रम को गरीबी मिटाने या भूमिहीनता मिटाने के काम के साथ जोड़ना नहीं चाहिए। वह मालिक और मजदूर के बीच सम्बन्ध निर्माण का कार्यक्रम है, ऐसा मानना चाहिए। सदियों के शोषण और दमन की कार्रवाइयों के कारण मालिक और मजदूर एक दूसरे के आमने-सामने अन्तर्विरोधी स्थिति में खड़े हैं। अगर हम ग्रामसमुदाय या ग्रामपरिवार बनाना चाहते हैं तो सर्वप्रथम इनके बीच सद्भाव पैदा करना होगा ताकि वे एक दूसरे के समीप आकर पूरे समाज के भविष्य की योजना बना सकें। यह जो सामीप्य साधने की प्रक्रिया है, इसी की कोख में से समृद्धि निर्माण का चिन्तन शुरू होगा, जिसके फलस्वरूप गरीबी मिटेगी। अगर हम इस प्रक्रिया को प्राधान्य न देकर कृत्रिम तरीके से साधन मुहैया कर गरीबी मिटाने का प्रयास करेंगे, तो हम प्रयास का रूप ऊपर के छिलके जैसा बनेगा और वह अन्तर्चेतना के स्रोत के अभाव में सूख जायेगा।

प्रश्न : प्रखण्डस्वराज्य-सभा के गठन की प्रणाली, उसका स्वरूप और कार्यक्रम क्या होना चाहिए ? गाँव की विकास-योजना में उसकी क्या भूमिका रहनी चाहिए ?

उत्तर : प्रखण्डस्वराज्य-सभा के प्रतिनिधियों का चुनाव तथा उनकी संख्या का निर्धारण ग्रामस्वराज्य-सभा करेगी। प्रतिनिधि गाँव का कोई भी सदस्य हो सकता है। सर्वोदय-सेवकों में इस बात पर गलतफहमी है। वे इन समितियों या सभाओं से राजनैतिक पक्ष के सदस्यों को अलग रखना पसन्द करते हैं। वे भूल जाते हैं कि उनका लक्ष्य पक्षमुक्त समाज बनाने का है। जो लोग पहले ही पक्षमुक्त हैं, उन्हें मुक्ति की साधना करनी है क्या ? मुक्ति की साधना तो उन्हें करनी है जो पक्षगत पद्धति के शिकार हैं। जब उन्हें पक्षमुक्त कार्यक्रम में शामिल किया जायेगा तभी तो उनको अवसर मिलेगा। सब पक्ष के लोग एक पक्षमुक्त मंच पर जब काम करने लगेंगे तब उनकी प-भावना के निरसन की प्रक्रिया शुरू होगी।

प्रश्न : जिला स्वराज्य-सभा का गठन, स्वरूप और कार्यक्रम क्या होगा ? गाँव की योजना के साथ उसका क्या सम्बन्ध होगा ?

उत्तर : जिला स्वराज्य-सभा का निर्माण ग्रामस्वराज्य-सभा द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन से होगा। उसमें कुल मिलाकर एक हजार से लेकर तीन हजार तक सदस्य जिला स्वराज्य-सभा के हो जायेंगे। जब ग्रामस्वराज्य-सभा के स्तर पर परस्पर सम्मान और सहकार का अभ्यास काफी विकसित हो जायेगा, तब उतनी बड़ी सभा का संचालन बहुत कठिन नहीं होगा। बिहार के इतिहास में वैशाली के गणराज्य का उदाहरण सामने है ही, जिसमें ७७७७ सदस्य एक साथ बैठकर सर्वसम्मति से राज्य का कार्य चलाते थे। ऐसा गणराज्य जिला के क्षेत्र से बड़ा नहीं होता था।

प्रश्न . विश्व स्वराज्य-सभा की रचना कैसे होगी तथा 'लोक' के साथ उसका क्या सम्बन्ध होगा ?

उत्तर . विश्व स्वराज्य-सभा की बात अभी नहीं सोचनी चाहिए। स्वराज्य की रचना में मुख्य जिम्मेदारी और शक्ति ग्रामस्वराज्य-सभा में होगी और बचे हुए काम की जिम्मेदारी प्रखण्ड, जिला आदि सूत्रों पर होगी। जब तक समुचित विकास-प्रक्रिया द्वारा जिला-स्तर तक-

कार्य-संचालन व्यवस्थित नहीं हो जाता है, तब तक यह कल्पना नहीं की जा सकती है कि जिले के बाहर के वृत्तों के लिए किस अनुपात में और किस प्रकार के कार्यक्रम शेष रहेंगे। उसका अन्दाज लगने पर ही आगे के वृत्तों का स्वरूप तथा परस्पर सम्बन्ध की कल्पना की जा सकती है।

प्रश्न : प्रखण्ड स्वराज्य-सभा में आचार्यकुल तथा ऐसी ही अन्य प्रखण्ड स्तरीय संस्थाओं का क्या स्थान होगा? कुछ प्रमुख लोगों को, उनकी सेवा उपयोगी होने पर, प्रखण्ड-सभा के सदस्यों द्वारा सर्वसम्मति से नामजद किया जा सकता है या नहीं?

उत्तर : प्रखण्डस्वराज्य-सभा के साथ आचार्यकुल का सम्बन्ध 'गुरु-शिष्य' का होगा। आचार्यकुल समाज के नित्य कर्मों से ऊपर रहकर तथा पूरे समाज पर विहंगम दृष्टि और भविष्य पर दूर दृष्टि रखकर समाज का मार्गदर्शन करेगा।

प्रश्न : ग्रामकोष में ग्रामस्वराज्य-सभा के सदस्यगण स्वेच्छा से सहज और नियमित रूप से अंशदान नहीं करते है। संग्रह, सुरक्षा, हिसाब और विनियोग की दृष्टि से ग्रामकोष का कार्य ग्रामदान *प्राप्ति और बीघा-कट्ठा निकालने* से भी बहुत कठिन है। ऐसी हालत में कौन-सा तरीका हो सकता है, जिससे यह काम आसान हो जाय?

उत्तर : *ग्रामसभा* के सदस्य स्वेच्छा से अंशदान तभी करेंगे, जब हम शिक्षण-प्रक्रिया से ग्रामभावना तथा ग्रामस्वराज्य के लिए स्वाभिमान पैदा करेंगे। वस्तुतः हमारी क्रान्ति भौतिक परिस्थिति के परिवर्तन के लिए नहीं है, बल्कि समाज की मन-स्थिति के परिवर्तन के लिए है। मन स्थिति-परिवर्तन के परिणामस्वरूप जो परिस्थिति का परिवर्तन होगा, उसी का नाम ग्रामस्वराज्य है। अगर केवल बाह्य संघटन एवं सहायता द्वारा परिस्थिति परिवर्तन हो भी गया, तो वह 'स्वराज्य' नहीं होगा, राज्य की एक प्राथमिक इकाई मात्र होगा। जिसको राष्ट्रीय राज्य के सहारे ही बनाये रखना सम्भव होगा। वस्तुतः सर्वोदय की यह क्रान्ति बुनियादी तौर पर नयी संस्कृति के निर्माण की क्रान्ति है। अब तक समाज ने यह माना है कि हिंसा और शस्त्र की शक्ति ही एकमात्र सामाजिक शक्ति है। गांधी पहला मनुष्य हुआ, जिसने सामाजिक शक्ति के रूप में *शस्त्रनिरपेक्षता* की बात कही। हम शस्त्रनिरपेक्ष सामाजिक-संस्कृति निर्माण करना चाहते हैं।

दूसरी बात यह है कि अबतक समाज की समस्त क्रियाशीलता के लिए विशिष्ट व्यक्ति तथा विशिष्ट संस्थाओं को ही साधन माना गया है। हम वैयक्तिक या संस्थावादी क्रियाशीलता को समाप्त कर प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक क्रियाशीलता को अधिष्ठित करना चाहते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि उपनिषदकाल में जिस तरह नयी संस्कृति के *अधिष्ठान* के लिए स्थान-स्थान पर लोकशिक्षकों का *आश्रम बना था* और असंख्य लोकशिक्षक परिव्राजक के रूप में जन-जन में फैले हुए थे, उसी तरह आज भी जीवनदानी लोक-सेवकों को स्थान-स्थान पर बैठना तथा लोकयात्रा टोलियों में यात्रा करनी चाहिए। यह आवश्यक है। केवल यन्त्रवत वैधानिक तथा संघटनात्मक पुष्टि से क्रान्ति की निष्पत्ति नहीं होगी। यही कारण है कि दरभंगा का जिलादान होते ही विनोबाजी ने देश को आचार्यकुल का संदेश दिया। ●

विज्ञान भी अज्ञान का साथी

मन-चिकित्सा (साइकेट्री) मनोविज्ञान की एक मुख्य शाखा है जिसका प्रयोग मानसिक रोगों की चिकित्सा में कुशलता पूर्वक किया जा रहा है। लेकिन जब विज्ञान जीवन के ऊँचे मूल्यों से अलग हो जाता है तो किस तरह अज्ञान का साथी और दुराव (प्रेजुडिस) का समर्थक बन जाता है, यह मन चिकित्सा के इन विषयों पर दृष्टिकोण से प्रकट है :

१—सम-लैंगिक सम्बन्ध रखने वालों (होमोसेक्सुअल) को अमेरिकी समाज हमेशा से अपराधी समझता रहा है, और उन्हें तरह-तरह की यातनाओं का शिकार बनाता रहा है। मन-चिकित्सा मानती है कि ऐसे लोग 'रोगी' हैं जिनका सही इलाज होना चाहिए। रोगी होने का यह अर्थ तो होता ही है कि रोगी अपने आचरण पर अंकुश नहीं रख सकता। यह सोचकर रोगी समझा जानेवाला आदमी गैर-जिम्मेदार बन जाता है, और समाज भी समझने लगता है कि यह हैवानी कामवासना का शिकार है, जब कि सही बात यह है कि स्वाभाविक या अस्वाभाविक, लैंगिक प्रेरणा एक ही है। विज्ञान इस सम्बन्ध में इससे अधिक अभी कुछ कहने की स्थिति में नहीं है, फिर भी समाज जिसे *अपराधी मानता है* उसे विज्ञान द्वारा रोगी कहलाकर समाज से अलग माना जा रहा है।

२—मन-चिकित्सा में ऐसी बातें लिखी और कही गयी हैं, जिनसे समाज को स्त्रियों को हीन समझने का एक बहाना मिल गया है। फ्रायड ने यही माना कि स्त्री को सुख और सम्पूर्णता की अनुभूति तभी होती है जब मर्द की मर्दाना शक्ति का उस पर 'प्रभुत्व' हो। आज भी मन-चिकित्सा यही कहती जा रही है कि स्त्री को पुरुष का संरक्षण चाहिए, और उसे पुरुष की संगत और मातृत्व की अनिवार्य आवश्यकता है, आदि। तरह-तरह की बातें कहकर स्त्री की हीनता (पैसिविटी) का गुण-गान किया जाता है, और पुरुष का "पुरुषत्व" बताया जाता है।

३—अमेरिका में गरीब और कालों के प्रति दुराव एक राष्ट्रीय रोग बन गया है। मन-चिकित्सक समुदाय भी इस रोग से मुक्त नहीं है। मन-चिकित्सक भी अमीर और गोरे की जिस तरह चिकित्सा करते हैं, उस तरह गरीब और काले की नहीं करते। यह मान लिया जाता है कि कालों के मनोविकारों का स्रोत उनके समाज में है जब कि गोरों के मनोविकार मनोवैज्ञानिक कारणों से है। दुराव का यह रुख उनकी चिकित्सा को आमतौर पर प्रभावित करता है। ●

पुष्टि-क्षेत्र : आशा और विश्वास का क्षेत्र

पुष्टि के बारे में एक बात ध्यान में रखनी चाहिए। हमारा आन्दोलन जन-आन्दोलन कैसे बने, यह चिन्ता स्वाभाविक है, और हममें से हर एक को होनी चाहिए, लेकिन चिंतन की यह मांग है कि हमें परिस्थिति की सही परख भी होनी चाहिए। देश की मौजूदा परिस्थिति समाज-परिवर्तन के बुनियादी प्रश्न पर व्यापक जन-आन्दोलन के अनुकूल नहीं है। किसी तात्कालिक प्रश्न पर विरोध और 'प्रोटेस्ट' का प्रदर्शन संघटित करना एक बात है, और सम्पूर्ण परिस्थिति से विद्रोह की प्रेरणा पैदा करना बिलकुल दूसरी। देश में जितनी मुख्य सुविधा और सत्ता की है उतनी अभी न्याय और समता की नहीं हुई है—कम-से-कम उस न्याय और समता की नहीं है जिसमें हमसे नीचेवाले भी हमारी बराबरी में आने की बात हो। क्रान्ति के सही मूल्यों का लोक-मानस में अभी गहरा प्रवेश नहीं हुआ है। इस स्थिति के कई कारण हैं, लेकिन स्थिति यही है। और इसी स्थिति में हमें काम करना है। हमें जनता और कार्यकर्ता दोनों में ग्राम-स्वराज्य की क्रान्ति के प्रति एक नया विश्वास पैदा करना है। दोनों के मन में शंका है, अनास्था है। लोग चाहते हैं कि सर्वोदय का कहीं 'डेमन्स्ट्रेशन' हो। लोग ग्रामदान की व्यावहारिकता का प्रत्यक्ष प्रमाण चाहते हैं। क्या सचमुच भूमिवाले भूमि का स्वामित्व छोड़ सकते हैं? भूमिहीन को अपनी जोत की भूमि दे सकते हैं? गाँव के सब लोग इकट्ठा बैठकर आपस के प्रश्नों पर आपसी ढंग से सोच सकते हैं? पुलिस अदालत के बिना भी काम चल सकता है? इस तरह के अनेक प्रश्न हर जगह पूछे जाते हैं। पूछने वालों को हम अपने तर्क से चुप भले ही कर दें, लेकिन बात बहुत कम लोगों के दिल में बैठती है। इसलिए पुष्टि का पहला लक्ष्य है विश्वास पैदा करना, जनता के अन्दर आशा और आस्था का संचार करना। यह 'चमत्कारवाद' नहीं है, यह अहिंसक क्रान्ति की शक्ति प्रकट करने की चुनौती है जिसकी उपेक्षा इतने ग्रामदान जिलादान-राज्यदान के बाद किसी हालत में नहीं की जा सकती।

१९२८ में बारदोली न हुई होती, तो शायद १९३० का आन्दोलन न हुआ होता। हमें देशभर में ग्राम-स्वराज्य की कुछ 'बारदोलियाँ' बनानी हैं ताकि जनता का खोया हुआ विश्वास वापस आये, क्रान्ति नये सिरे से लोकमानस में प्रतिष्ठित हो। जिन-जिन क्षेत्रों में हमारे साथी परिस्थिति से जूझ रहे हैं वे इसी भावना से काम कर रहे हैं। उनके मन में 'करो या मरो' की प्रेरणा है। जनता की शक्ति से पुष्टि हो यह सबसे अच्छी बात होगी, लेकिन अगर किसी क्षेत्र में कार्यकर्ताओं की शक्ति से, उनके साहस और समर्पण से, प्रभावित होकर गाँव के लोग पुष्टि की दिशा में आगे बढ़ते हैं और उनमें गतिशीलता पैदा होती है तो उस स्थिति का भी, आज की परिस्थिति में, हमें स्वागत करना चाहिए। यह कहकर कि यहाँ कार्यकर्ता शक्ति प्रधान रही है, लोकशक्ति गौण, हमें इस सफलता का ऐतिहासिक महत्व घटाना नहीं चाहिए। सत्तावाद और कल्याणवाद से हटी हुई क्रान्तिकारी लोकशक्ति के निर्माण और संघटन का पूरा प्रश्न प्रयोग की अवस्था में है। अहिंसा के लिए तो प्रयोग है ही, हिंसा के लिए भी है। हिंसा भी वर्ग-संघर्ष से दूर जाकर एक ओर आतंकवाद और दूसरी ओर संसदीय सत्तावाद के दलदल में फँस गयी है। अहिंसा के लिए तो हर जगह सुधारवाद का प्रलोभन बिखरा पड़ा है।

इन बातों को सामने रखकर हमें पुष्टि के कार्य को अपनी सारी शक्ति से आगे बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। समय तेजी के साथ हाथ से निकल रहा है। बहुत अच्छा होगा कि देश के हर जिलादानी क्षेत्र में सघन पुष्टि के लिए एक या दो ब्लाक लिये जायँ, लेकिन यदि साथी और साधनों के अभाव में ऐसा नहीं हो पाता है तो पूरे राज्य में कुछ चुने हुए क्षेत्र लिये जायँ, और पूरी शक्ति और साहस के साथ उनमें लगा जाय, लेकिन इस बात का ध्यान रहे कि *प्रचार क्षेत्र पूरे राज्य को माना जाय*, और अधिक-से-अधिक जगहों में शान्ति-सेना, तरुण-शान्तिसेना, आचार्यकुल आदि प्रवृत्तियाँ किसी न किसी रूप में चलती रहें ताकि क्रान्ति की गूँज बराबर बनी रहे। इस दृष्टि से अब हम कुछ जिलों में *पुष्टि के सघन कार्य-क्षेत्र चुनें*, तो साथ-साथ यह भी सोचें कि पूरे जिले को (नगरों सहित) प्रभाव क्षेत्र और राज्य को प्रचार क्षेत्र कैसे बनाया जा सकता है। हमारी योजना में तीनों सीढ़ियाँ हों पुष्टि-क्षेत्र, प्रभाव-क्षेत्र, प्रचार-क्षेत्र।

पुष्टि-क्षेत्र . व्यूह रचना

१—अभी देश के जिन-जिन क्षेत्रों में पुष्टि का सघन काम हो रहा है, उनमें हर एक में कोई-न-कोई ऐसा व्यक्ति बैठा हुआ है जिसका क्षेत्र में अपने व्यक्तित्व और सेवा के कारण प्रभाव है। ऐसा होना स्वाभाविक है। अहिंसक लोकशक्ति का निर्माण नवशिशुओं का खेल नहीं है। इसमें शुरू में मुख्य व्यक्तियों को पड़ना ही चाहिए। चन्द्र-लोक के पहले यात्री सामान्य 'रंगरूट' नहीं थे।

तो, सबसे पहले यह तय करना चाहिए कि *पुष्टि-क्षेत्र में कौन मुख्य* व्यक्ति मुख्य रूप से अपना समय और शक्ति देगा, कौन उसके साथी होंगे, और क्या आर्थिक व्यवस्था होगी। ग्राम-स्वराज्य कोष का इस्तेमाल सबसे पहले पुष्टि में होना चाहिए।

२—पहली गोष्ठी . सबसे पहिले क्षेत्र के मुख्य सहयोगियों (कार्यकर्ता और

नागरिक) से मिलकर उनकी गोष्ठी करनी चाहिए और पुष्टि की पूरी योजना सामने रखनी चाहिए। क्षेत्र में ऐसे चार छः लोग जरूर होने चाहिए जो अपना पूरा या आंशिक समय देने को तैयार हों। गोष्ठी में पुष्टि-कार्य की प्रारंभिक रूप-रेखा तैयार कर लेनी चाहिए।

३ —दूसरी गोष्ठी : पहली छोटी गोष्ठी के बाद शीघ्र दूसरी बड़ी गोष्ठी ब्लॉक के किसी केन्द्रीय स्थान पर बुलानी चाहिए जिसमें अपने मुख्य सहयोगी तो हों ही, उनके अलावा ऐसे सरकारी, अर्द्ध-सरकारी और गैर-सरकारी लोग भी हों जिनके प्रभाव का लाभ हमें काम में लेना है। कुछ लोगों को 'नौकर' समझ कर या कुछ को 'नेता' कहकर छोड़ देना ठीक नहीं है। हमारा आन्दोलन 'सर्व' का है, हमें 'सर्व' के सामने अपनी बात रखनी ही चाहिए और जिसका जितना सहयोग मिल जाय लेना चाहिए।

दूसरी गोष्ठी में लोगों के हाथ में रखने के लिए हमारे पास निम्नलिखित प्रचार साहित्य होना चाहिए :

(क) ग्रामदान की मुख्य शर्तें - जमीन की खरीद-बिक्री, बंधक, स्वामित्व आदि के बारे में जरूरी बातें लिखी हों। नोटिस छोटी हो, एक ओर साफ-साफ कुछ बड़े टाइप में छपी हो—ऐसी हो जिसे पढ़कर ग्रामदान की मुख्य बातें फौरन दिमाग के सामने आ जायें।

(ख) ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य : ग्रामस्वराज्य क्या है ? इसमें थोड़े में ग्रामस्वराज्य के तत्व समझाये गये हों। ग्रामस्वराज्य-सभा पर विशेष जोर दिया गया हो। प्रखण्डस्वराज्य सभा का भी उल्लेख हो।

(ग) क्षेत्र के निवासियों से पुष्टि के लिए अपील। ड्राफ्ट पहिले से तैयार हो जिस पर गोष्ठी में आये हुए सज्जनों के हस्ताक्षर करा लिये जायें। क्षेत्र के प्रमुख व्यक्तियों के हस्ताक्षर से क्षेत्र की जनता के नाम अपील होनी चाहिए।

—राममूर्ति

अंकतेश्वर सत्याग्रह सफल

अंकतेश्वर (गुजरात) के आदिवासियों ने श्री हरिवल्लभ भाई परीख के नेतृत्व में जमींदार से अपनी जमीन मुक्त कराने के लिए गत साल चार बार अहिंसक और शांतिमय ढंग से सत्याग्रह किया था और इस सत्याग्रह के दरम्यान ५८० आदिवासी बहनों व भाइयों को जेल में भी जाना पड़ा था। आश्वासनों के बावजूद समस्या हल नहीं हुई। इसलिए इस साल पुन. उन्होंने और अधिक सघटित सत्याग्रह की तैयारी की। आखिर में सरकारी तंत्र का जड़ता टूटी और उक्त अन्याय को दूर करने के लिए कुछ सही कदम उठाने को उन्हें मजबूर होना पड़ा। उसी तरह जमींदार के दिल पर भी आदिवासियों की अहिंसा और शांतिमय तरीके से अपनी मांग पेश करने का असर पड़ा और वे २८ एकड़ ३४ डिसमिल जमीन अपने मालिकों से मुक्त करने को राजी हो गये। दोनों ओर से मुकदमे वापिस ले लिये गये। फरवरी '७२ तक अपनी फसल काटने के बाद जमींदार जमीन दे देंगे, ऐसा तय हुआ।

ऐसा सुखद समाधान हो जाने से सबको अत्यन्त खुशी हुई। समझौते के बाद जब अंकतेश्वर गाँव के दो किसान नेता जमींदार को नमन करने झुके तो जमींदार ने दोनों के हाथ पकड़ लिये और उनसे हाथ मिलाये। किसान और जमींदार के मिलन का यह दृश्य सबके दिल को छू गया।●

सिंहभूम जिला सर्वोदय मण्डल का गठन

गत १४ सितम्बर को चाईबासा में लोकसेवकों की बैठक में सिंहभूम जिला सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन हुआ। श्री शुभनाथ देवगम अध्यक्ष, श्री योगेश्वर तिवारी और आरिफ गद्दो मन्त्री तथा श्री अयूब खाँ सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि चुने गये।●

बंगला देश विश्व विवेक जागरण पदयात्रा

—नारायण देसाई

गत १४ अक्तूबर को मुर्शिदाबाद जिला के बहरमपुर नगर से बंगला देश से दिल्ली तक की विश्व-विवेक जागरण पदयात्रा का आरम्भ हुआ।

पदयात्री हैं ३३ तरुण शरणार्थी, जो मार्च महीने के पाकिस्तानी हत्याकाण्ड के बाद कई महीनों तक बंगला देश में रहकर स्वाधीनता का संग्राम लड़ चुके हैं। अधिकांश पदयात्री कालेज या युनिवर्सिटी के छात्र हैं। दो ऐसे हैं जो विद्याभ्यास समाप्त करके नौकरी कर रहे थे। *पदयात्रियों में अधिक मुसलमान हैं, हिन्दू* उनसे कुछ कम हैं। लेकिन अपने आपको हिन्दू या मुसलमान कहलाना पदयात्री पसन्द नहीं करते। वे अपने आपको बंगाली कहना अधिक पसंद करते हैं।

विश्व-विवेक जागरण पदयात्रा का उद्देश्य जगत का विवेक बंगला देश की समस्या के सम्बन्ध में जाग्रत करने का है। ३० जनवरी १९७२ को वे दिल्ली पहुँचने की उम्मीद रखते हैं। दिल्ली में विभिन्न देशों के दूतावासों में जाकर वे अपनी बातें रखेंगे। रास्ते में ग्राम-ग्राम और नगर-नगर में वे अपनी बातें समझाते जाते हैं। इसीके द्वारा अपनी बात सारे जगत के कानों तक पहुँचाने की भी उन्हें उम्मीद है।

पदयात्रियों की माँग पाकिस्तान सरकार से यह है कि वे तुरंत बंगला देश छोड़ जायें और सारे अत्याचार और मानवता के अधिकारों का हनन समाप्त करें। *अमरीका, ब्रिटिश तथा अन्य* सरकारों से उनकी यह माँग है कि वे पाकिस्तान को दी जानेवाली सैनिक तथा अन्य सहायता बंद करें, भारत सरकार से वे यह माँग करेंगे कि वह ऐसे कदम उठाये जिससे बंगला देश में ऐसी स्थिति बन सके कि यहाँ से आये शरणार्थी वापस घर जा सकें। वे भारत सरकार ने आज तक शरणार्थियों तथा बंगला देश सरकार को जो सहायता दी है उसके लिए आभार भी प्रकट करेंगे।

यात्रा अ० भा० शान्ति-सेना मंडल द्वारा आयोजित की गयी है। किन्तु जिले-जिले में उनके स्वागत के लिये स्वागत-समितियाँ गठित की जा रही हैं, जो स्थानीय व्यवस्था का सारा भार उठा रही हैं। यद्यपि यह किसी राजनैतिक पक्ष की ओर से आयोजित कार्यक्रम नहीं है, फिर भी बंगाल में यह पाया गया कि आदि कांग्रेस, बंगला कांग्रेस, नव कांग्रेस और छात्र परिषद के कार्यकर्ताओं ने इसकी सफलता के लिए पूरी मदद की। सभी ने अपने कुछ कार्यकर्ताओं को पदयात्रा में कुछ दिनों के लिए शामिल होने के लिए भी भेजा।

पदयात्रियों के पास जूते नहीं थे। कुछ के चप्पल टूट गये। कुछ के पैरों में छाले पड़ गये। हाथ में चप्पल उठाकर कई यात्री चलते पाये गये। मंडल शीघ्र ही इन्हें पदयात्रा के योग्य जूते दिलाने का प्रबंध कर रहा है। किसी पदयात्री के पास बिस्तर नहीं है। कपड़ों के पास बदलने के कपड़े भी नहीं हैं। उनको यात्राकाल के दरम्यान उत्तर भारत की सख्त सर्दी से गुजरना पड़ेगा। इसके लिए भी प्रबंध करना होगा। उनके तेल, साबुन तथा अन्य जेब-खर्च के लिए भी व्यवस्था करनी होगी। सभी ओर से सहायता अपेक्षित है।

सभाओं में अक्सर दो या तीन *पदयात्री तथा एकाध विशिष्ट अतिथि बोलते* हैं। पदयात्री जबान बंगला में ही बोलते हैं, अपनी कहानी सुनाते हैं और अपने विचार भी रखते हैं। इन जवानों को राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत देखकर श्रोता मुग्ध हो जाते हैं। दिन-ब-दिन इन व्याख्यानों के मुद्दों में भी वृद्धि हो रही है।

पदयात्रा के अनुशासन के नियम पदयात्री लोग स्वयं ही तय करके बना लेते हैं। यात्रा के समय पूरा समय दो दो कतार बनाकर चलते हैं। रास्ते में अधिक बातचीत करने की इजाजत नहीं रखी है।

बीच में जब विश्राम होता है तब बैठने, लेटने या सिगरेट फूँकने की छूट होती है। पदयात्रा के नायक, व्याख्याता, घोषणा बोलनेवाले आदि बारी-बारी से बदलते हैं। लेकिन सब सभाओं में सभी पदयात्री अपना अपना परिचय देते हैं।

घोषणाएँ भी कुछ दिलचस्प हैं

जय बंगला— जय बंगला।

मुक्ति संग्राम— चलछे, चलछे।

सब कथार शेष कथा—बंगला देशेर स्वाधीनता।

आमार भाई तोमार भाई—मुजीब भाई, मुजीब भाई।

विश्व-विवेक— जागो जागो।

व्याख्यानों में कभी व्यक्तिगत अनुभवों की कहानी सुनाई जाती है, कभी बंगला देश की स्वाधीनता के संग्राम का इतिहास सुनाया जाता है, कभी धर्म-निरपेक्षता, गणतंत्र और मुक्ति का आग्रह उनका क्यों है यह समझाया जाता है। किन्तु सब व्याख्यानों में एक स्वर सामान्य है: राजनैतिक समाधान अब एक ही स्वीकार किया जा सकता है—बंगलादेश की सम्पूर्ण स्वाधीनता।

पदयात्रा २ नवम्बर को बिहार के जामताड़ा ग्राम में प्रवेश करेगी। ६ दिसम्बर को यात्रा उत्तर प्रदेश के सैयदराजा ग्राम में प्रवेश करेगी और २७ जनवरी को गाजियाबाद से दिल्ली की *सीमा में प्रवेश करेगी।*

पदयात्रा के आयोजन के लिए आर्थिक सहायता की अपेक्षा है। आगे-आगे स्थानों में स्वयंसेवकों की भी अपेक्षा है। इसके प्रचार की भी अपेक्षा है। बिहार, उत्तर प्रदेश और दिल्ली के यात्रा-पथ तय होने पर भविष्य में प्रकाशित किये जायेंगे।

आगरा में सर्वोदय-सेवाकार्य

आगरे में शुरू से यह परम्परा चली आ रही है कि कार्यकर्ताओं में आपस का स्नेह है, और यह परम्परा सर्वोदय के काम में भी चली आ रही है। कांग्रेस के दो टुकड़े हो गये, उसमें जरूर आदमी दो कैम्पों में बँट गये, लेकिन जो आदमी हमारे साथ सर्वोदय में काम कर रहे थे, वे अपने स्थान पर हैं। हमने नये-नये आदमी भी इस काम के लिए खोज कर निकाले हैं।

हमने काम का बँटवारा कर रखा है। विद्यार्थियों में, शिक्षकों में और बुद्धिजीवियों में। सारा काम गांधी प्रतिष्ठान के जरिये होता है। वहीं पर गोष्ठियाँ होती हैं और हम सबलोग सहयोग देते हैं। यहीं पर नये-नये लड़के भी इकट्ठे होते हैं। कुछ नौजवान निकले हैं, जिन्होंने ९ अगस्त शिक्षा में क्रान्ति-दिवस का बड़ा अच्छा आयोजन किया और अब भी वे हमारे काम में सहयोग देते हैं।

सर्वोदयकार्य के लिए हमने यहाँ दो संस्थाएँ बनायी हैं :

(१) सर्वोदय चरखा मण्डल—यह उन कार्यकर्ताओं का संगठन है जो चर्खा कातते हैं और हर रविवार को इकट्ठे होते हैं। ये लोग सतत कार्य करते हैं। अब तक एक भी रविवार नहीं छूटा। इन लोगों ने महीनों और बरसों हरिजन बस्तियों में बैठ कर वहाँ की सफाई करायी, फर्श पक्के कराये, नल लगवाए, बिजली लगवाई, तब वहाँ से हटे। इस प्रकार सदर भट्टी नाम के स्थान में मेहतरों की बस्ती में लगातार बैठने के बाद एक स्कूल की बिल्डिंग बनवाई। और वहाँ अब एक स्कूल चलता है जिसमें करीब २०० बच्चे सुबह पढ़ते हैं और दोपहर को काम करने के बाद जब औरतें लौट आती हैं तब उनको पढ़ाया जाता है, और कुछ दूसरे काम सिखाये जाते हैं। इसी संगठन के द्वारा मोहल्ला मटोले में सर्वोदय-पात्र रखकर एक धर्मशाला बनवायी। वहाँ पर १९ औरतें चरखे चलाती हैं। ये औरतें पहले शराब 'बेचती' थीं, और कोई अच्छे काम नहीं करती थीं। अब गांधी आश्रम के सहयोग से करीब १०० दो तकुवों का अम्बर चर्खे चल रहे हैं। इनमें से एक बहन ६ रुपये रोज कमाती है।

(२) अस्पताल सर्वोदय समिति—इसमें बहुत-से शहर के कार्यकर्ता हैं। ये लोग नियमपूर्वक सरोजनी नायडू अस्पताल में जाते हैं। यह संस्था रजिस्टर्ड है। मरीजों का खाना देखते हैं, दवायें दिलवाते हैं, कोई गरीब होता है, उसको अपने पास से दवा दिलवाते हैं। इस समिति की हर महीने के पहले सोमवार को मीटिंग होती है, और महीने भर के काम की रिपोर्ट पेश की जाती है। इस समिति के पास कोई माहवारी फीस लेने का प्रबन्ध नहीं है, मगर कभी धन की कमी नहीं पड़ी।

इसके अलावा सर्वोदय सेवा मण्डल नाम से को भी एक संस्था बनायी है। इसमें सर्वोदय के सिद्धान्तों को मानने वाला कोई भी व्यक्ति शामिल हो सकता है। यह संस्था भी रजिस्टर्ड है। हमारे कार्यकर्ताओं ने सर्वोदय-पात्र के जरिये, चंदे आदि से धन एकत्रित करके एक सर्वोदय-केन्द्र नाम की इमारत खड़ी की है। इसमें हमारे कार्यकर्ता रहते हैं, जो जन-आधारित हैं। श्री गुरु दयाल भूदान-यज्ञ मँगाते हैं और उसको बाँटते हैं, तथा और जो काम होते हैं वे इसी केन्द्र से होते हैं। इस सर्वोदय सेवा मण्डल में सब लोग मिलकर काम करते हैं। इसमें अधिकतर ऐसे आदमी हैं जो अपना खाने-कमाने का काम करते हैं, और बाकी जो समय मिलता है, वह इस काम में लगाते हैं। लोक-सेवक की कुछ ऐसी निष्ठाएँ थीं, जिनको सबलोग नहीं मान सकते थे, इसलिए यह संस्था बनायी थी, और सारा काम इसी के जरिये होता आ रहा है।

हमारे यहाँ ग्रामदान का काम बहुत दिन पहले शुरू हुआ था। डा० पटनायक आये थे। उन्होंने अभियान शुरू किया था। दानपत्रों पर हस्ताक्षर कराये थे और आठ-आठ दिन में एक-एक तहसील ग्रामदान में आ गयी थी। इस प्रकार सारा जिला ग्रामदान में २ अक्टूबर १९६९ के पेशतर हो गया था, और इसकी घोषणा हमने २ अक्टूबर के समारोह में कर दी थी। उस ग्रामदान में केवल हस्ताक्षर कराये गये थे, वह भी मास्टरों द्वारा, दूसरे जिले और हमारे जिले के कार्यकर्ताओं द्वारा। इस ग्रामदान के काम में शुरू-शुरू में हमारे साथ जिले में गांधी आश्रम के कार्यकर्ताओं ने काम किया और श्री विमल लाल भाई ने भी काम किया। अब गांधी-आश्रम के श्री चन्द्रभान सिंह ने सारे जिले का काम सम्हाल लिया है।

हमारे यहाँ से पाँच कार्यकर्ता सहरसा गये थे। उनमें से तीन लौट आये हैं, और अब केवल दो आदमी वहाँ हैं।

जिले में ग्रामदान-पुष्टि का काम शुरू करने का इरादा है। अभी हमने कुछ काम शमशाबाद ब्लाक में शुरू किया है। शमशाबाद में हमें अच्छे कार्यकर्ता मिल गये हैं। वहीं पर अध्यापक भी अच्छा काम कर रहे हैं। तहसील सर्वोदय मण्डल की स्थापना हो गयी है। शमशाबाद में सर्वोदय अस्पताल भी खोला है। वहाँ गरीबों को निःशुल्क दवाई बाँटी जाती है। हर रविवार को वहाँ बैठक होती है और शहर से कोई-न-कोई वहाँ पहुँच जाता है।

हमलोगों के पास एक सर्वोदय-पुस्तक-भण्डार भी है। यह पुस्तक-भण्डार बाल मुकुन्द मल्ला के यहाँ है। वे ही साहित्य मँगाते हैं, और हम सबलोग उसे बेचते हैं। दो महीने पहले नाई की मण्डी क्षेत्र चुना था। क्योंकि उसमें हिन्दू और मुसलमानों की, सिंधी और पंजाबियों की मिश्रित आबादी है। वहाँ घर-घर में जाकर पुस्तकें बेची गयीं। करीब आठ सौ घरों से सम्पर्क हुआ और नये-नये कार्यकर्ता मिले। उससे बड़ा उत्साह बढ़ा।

इधर बंगला देश सहायता समिति भी बनायी। उसके जरिये ४-५ हजार रुपए हमने इकट्ठे किये। कपड़े व दवाइयाँ भी इकट्ठी करके भेज दीं।

—ओ० एम० शिरोमणि

सामयिक चर्चा

प्रस्तावित प्रेस बिल

किसी भी गणतांत्रिक देश का अखबार उस देश के लोगों के विचार व्यक्त करने का सबसे बड़ा पुरजोर जरिया है। इसलिए गणतांत्रिक देशों में यह सावधानी रखनी पड़ती है कि अखबारों के मुँह पर ताला न लगाये। अखबारों में लिखने और अपनी बात फैलाने की आजादी का उपयोग यह किया जाता है कि सरकार द्वारा किये गये गलत काम के खिलाफ जनमत बनाया जा सके और सरकार को मजबूर किया जा सके कि वह गलत नीति छोड़े और उसके बदले सही नीति अपनाये। सरकार यदि नहीं सुने तो फिर चुनाव के द्वारा उसे बदला जा सकता है। इन सब बातों में अखबार बहुत मददगार होते हैं।

अखबारों की इस आजादी का कुछ लोग कभी-कभी दुरुपयोग करते हैं। ऐसे लोग कभी-कभी ऐसी बातें भी छापते हैं जिससे देश के एक धर्म के माननेवाले, एक प्रान्त में रहनेवाले, एक भाषा बोलनेवाले लोग दूसरे धर्म, प्रान्त, भाषावाले लोगों से लड़ जायँ और इस तरह अथवा किसी और तरह से देश में भेद-भाव बढ़ जाय एवं देश कमजोर पड़ जाय, देश के टुकड़े टुकड़े हो जायँ। अखबारों के इस गलत उपयोग को भी रोकने की सावधानी रखनी पड़ती है। कभी-कभी तो यह मुश्किल होता है कि इन सावधानियों के नाम पर शासन करनेवाला दल अपने विरोधियों को कुचलने की कोशिश करता है, इसलिए यह भी सावधानी रखनी पड़ती है कि सरकार के हाथ में ऐसी भी शक्ति न दी जाय कि अखबार की आजादी ही छिन जाय।

हमारे के दूसरे-दूसरे पूँजीवादी देशों की तरह भारत के भी प्रमुख अखबारों के मालिक चन्द पूँजीपति हैं। एक-एक पूँजीपति के दो-दो चार-चार अखबार हैं, अखबार क्या, अखबारों की पूरी चेन उनके हाथ में है। नतीजा यह होता है कि जिस बात को देश के सामने वे रखना चाहते हैं वे ही बातें अखबारों में छपती हैं। इस मानी में वे अखबार आमलोगों की राय जाहिर करने के माध्यम नहीं रह पाते, कुछ लोगों की राय जाहिर करने के हथकंडे बन जाते हैं।

ऐसा समझा जाता है कि यदि ऐसी कोई व्यवस्था की जा सके, जिससे अखबार की मालिकी चन्द लोगों के हाथ में सीमित रहने से रोका जाय तो अखबार में राय जाहिर करने की आजादी बनी रहेगी। इसी ख्याल से भारत सरकार एक ऐसा कानून बनाने की बात सोच रही है जिससे अखबारों की मालिकी कुछ हाथों में सिमटने से बच सके।

दूसरी ओर कुछ लोग यह आशंका व्यक्त करते हैं कि कहीं ऐसा न हो कि बड़े-बड़े पूँजीपतियों की मालिकी से निकाले जाने के क्रम में अखबार सरकार के चंगुल में पड़ जायँ। यदि ऐसा हुआ तो और बुरा होगा, लोगों की बोलने की आजादी कड़ाही से निकल कर चूल्हे में जा गिरेगी। सम्पादकीय लिखे जाने पर भी सरकार का अंकुश हरगिज न रहे। यदि प्रेस के सम्बन्ध में सरकार कोई बिल संसद में लावे भी तो यह सावधानी बरते कि उस पर लोकमत संग्रह करने के बाद ही उसे अन्तिम रूप दे।

—हेमनाथ सिंह

नरकटियागंज, चम्पारण में किसानों की दुविधा

ग्राम-स्वराज्य कार्यक्रम की प्रशंसा यहाँ के बड़े-बड़े किसान करते हैं। इस कार्यक्रम के संचालन हेतु श्री जयप्रकाश नारायण को धन्यवाद देते हैं, और विनोबाजी का आभार स्वीकार करते हैं। परन्तु बीघा-कट्ठा निकालने में तत्पर नहीं हैं। उनका कहना है कि हम इस काम को आगे बढ़कर करेंगे तो चारों तरफ से यहाँ के किसान हमारा विरोध करेंगे। सहयोग नहीं देंगे। कम जमीन वाले और गरीब बेजमीन वाले उन्हीं के वश में होंगे, चूँकि उनके पास ज्ञान नहीं है। बड़े का नहीं, छोटे का भी प्रश्न है। क्षेत्र के बाहर भी तो किसान हैं, वहाँ कुछ हो नहीं रहा है, उनसे जमीन की माँग नहीं की जा रही है। भूदान में जमीन देनेवालों की कितनी कदर बढ़ी है समाज में यह सामने है। बल्कि जिन काश्तकारों ने नहीं दी, वे चालाक कहलाये, यह तथ्य है। वे मुसहरी की चर्चा करते हुए पूछते हैं, 'वहाँ कितनी भूमि मिली और कितनी सामूहिकता का विकास हुआ है ?'

यहाँ की ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष ने अपनी कुल भूमि का बीसवाँ हिस्सा जमीन निकाल दिया है, और बाबू तथा बच्चे की गैरमजरुआ जमीन कुल पैंतीस एकड़ का वितरण ६. सात परिवारों में कर चुके हैं।

—उदितनारायण चौधरी

रायबरेली में ग्रामस्वराज्य अभियान

जिला सर्वोदय मण्डल रायबरेली के सहयोग से सितम्बर में सर्वोदय विद्यापीठ इण्टर कालेज, सलोन द्वारा ग्रामस्वराज्य-अभियान चलाया गया जिसका संचालन डा० दयानिधि पटनायक ने किया। इस अभियान में स्नातकोत्तर कक्षाओं के ४०५ छात्रों ने १०८ गाँवों की पदयात्रा की और विचार प्रचार किया। प्रिंसिपल श्री रामाश्रय मिश्र का सराहनीय योगदान रहा।

अक्टूबर में श्री गांधी विद्यालय बछरावाँ में ग्रामस्वराज्य अभियान हुआ। इस अभियान में ५०० छात्रों ने ७५ गाँवों की पदयात्रा की। १२५ लोगों ने समय दान दिया है। डा० पटनायक, प्रकाश भाई, सरजू प्रसाद बाजपेयी और श्री रामकिशोर चतुर्वेदी (प्रिंसिपल) ने छात्रों का मार्गदर्शन किया। —कपिल अवस्थी

क्रान्ति : प्रयोग और चिन्तन

एक परिशीलन

धीरेन्द्र भाई अक्सर कहा करते हैं कि वे 'शास्त्री' नही 'मिस्त्री' हैं। अर्थात् वे सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाले व्याख्याता नही, बल्कि उनको क्रियान्वित करने वाले कारीगर हैं। लेकिन जिस तरह क्रियाशून्य ज्ञान या सिद्धान्त केवल 'वाद' बन जाता है और उसमें से 'विवाद' के सिवाय कोई खास निष्पत्ति नही होती, उसी तरह क्रिया के पीछे अगर ज्ञान की रोशनी और उसकी प्रेरक-शक्ति न रहे तो वह क्रिया जड़ रूढ़ि बन जाती है।

इस किताब को पढ़ने वाले देखेंगे कि धीरेन्द्र भाई सिर्फ मिस्त्री नही है। भले ही वे किसी विश्वविद्यालय में शास्त्र पढ़कर 'शास्त्री' न बने हो, लेकिन उनकी हर छोटी-से-छोटी क्रिया के पीछे भी चिन्तन है। उनके हर कदम के पीछे कोई-न-कोई उद्देश्य और योजना है, कदम उठा चुकने और क्रिया कर लेने के बाद भी वे बड़ी बेरहमी के साथ उसको परखते रहते हैं, उसकी धज्जी-धज्जी अलग करके सामने रख देते हैं, ताकि उस रास्ते पर चलने वाले दूसरे लोग चाहे तो उससे फायदा उठा लें। वे न शुष्क पंडित हैं, और न जड़ मिस्त्री। वे एक वैज्ञानिक प्रयोगकार हैं जो क्रिया के आधार पर शास्त्र बनाते जाते हैं और शास्त्र की कसौटी पर क्रिया को कसते जाते हैं।

शास्त्र की शैली सूक्ष्म होती है। शास्त्री अपने चिन्तन का निचोड़ कम-से-कम शब्दों में सूत्र के रूप में रखने में धन्यता का अनुभव करता है। प्रयोगकार अपने प्रयोगों का वर्णन विस्तार से करता है। क्यों उसने ऐसा किया ? ऐसा करने के पीछे उसकी क्या दृष्टि थी ? ऐसा करने का नतीजा क्या निकला ? जिस उद्देश्य से ऐसा किया था, उसमें सफलता मिली या असफलता ? यह सब वह विस्तार से खोलकर रख देता है जिससे दूसरे सहयात्री फायदा उठा सकें। इस किताब को पढ़ते हुए शायद पाठक को कभी यह लगे कि हर बात इतनी तफसील से देने की क्या जरूरत थी, तो उसका औचित्य इसमें है कि यह एक प्रयोग की कहानी है।

समाज-शास्त्र के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी प्रयोग का यह वर्णन सचमुच कहानी की तरह रोचक है। पत्रों के रूप में लिखा हुआ होने से इसकी रोचकता और भी बढ़ गयी है, क्योंकि पत्रों में निकटता और तफसील भरपूर रहती है। जिस तरह भौतिक क्षेत्र में इंजीनियरिंग के किसी करिश्मे की कहानी दिलचस्प होती है उसी तरह सामाजिक इंजीनियरिंग का प्रयोग भी कम आकर्षक नही होता। परिस्थितियों के परिवर्तन का खेल, मनुष्यों की भावनाओं और आकांक्षाओं के बदलते हुए नजारे, और परिणामों की दृष्टि से आशा-निराशा के उतार-चढ़ाव तो इस पुस्तक में हैं ही, साथ ही धीरेन्द्र भाई ने एक वैज्ञानिक की तरह अपनी असफलताओं का चित्रण भी इसमें तटस्थ बुद्धि से किया है। यह पुस्तक पढ़ते हुए कभी-कभी पाठक को लग सकता है कि धीरेन्द्र भाई ने इस प्रयोग में जिन बातों को अपनी गलतियाँ माना है वह समझने के लिए महीनों प्रयोग करने की क्या आवश्यकता थी, वे तो शुरू से ही स्पष्ट होनी चाहिए थी। पर सामाजिक क्षेत्र में क्रान्तिकारी काम करने वाले जानते हैं कि प्रयोग के बाद जिन बातों की सफलता एक सामान्य मनुष्य भी देख सकता है वे प्रयोग के समय उतनी स्पष्ट नही होतीं। बुद्धि से किसी बात को समझ लेना आसान है लेकिन कार्यरूप में उसे परिणत करना, और वह भी सामाजिक क्षेत्र में, इतना आसान नहीं है। सामाजिक क्षेत्र के इंजीनियर को छोटी-छोटी बातों में भी बड़ी-बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है और कभी ऐसे निर्णय भी करने पड़ते हैं जो बाद में देखने या सुननेवाले को सहज ही गलत लगें। और इसीलिए वर्षों के प्रयोग के बाद भी धीरेन्द्र भाई जैसों के लिए भी कई बातों का छोर पाना सम्भव नही होता है।

जिस क्रान्तिकारी उद्देश्य को लेकर यह सामाजिक प्रयोग किया गया उसका सार धीरेन्द्र भाई ने अपनी भूमिका में खोलकर रख दिया है। मनुष्य अकेला अपना जीवन नही जी सकता है। वह सामाजिक प्राणी है, अर्थात् समाज में रहकर ही वह विकास कर सकता है और जीवन चला सकता है। समाज में रहते हुए मनुष्यों के परस्पर सम्बन्धों में संघर्ष, तज्जनित समस्याओं के समाधान और आपसी संघर्षों में न्याय देने के लिए मनुष्य ने राज-सत्ता का आविष्कार किया। राज-सत्ता लोगों से अपनी बात मनवा सके इसके लिए दंड-शक्ति उसके हाथ में दी गयी। यह दंड-शक्ति ही राज-सत्ता का पीठबल या उसकी 'सेंक्शन' है।

समाज की आन्तरिक शान्ति के लिए खड़ी की गयी यह दंड-शक्ति बाहरी आक्रमण से रक्षा के लिए कालान्तर में सैन्य-शक्ति के रूप में परिवर्तित हो गयी। सैन्य-शक्ति के बल पर धीरे-धीरे राज-सत्ता समाज पर हावी हो गयी। पिछले २०० वर्षों में विज्ञान के अभूतपूर्व विकास का उपयोग करके यह हिंसक-शक्ति इतनी प्रबल हो गयी है और विनाश के अस्त्र-शस्त्र इतने विकराल और शक्तिशाली हो गये हैं, कि आज के युग में युद्ध और हिंसक-शक्ति समस्याओं के समाधान या विकास के साधन न रहकर सर्वनाश के उपादान हो गये हैं। इसलिए समाज में दंडशक्ति का विकल्प खड़ा करना आवश्यक हो गया है।

पर दंड-शक्ति या हिंसक-शक्ति के अभाव में समाज में अन्तर्निहित संघर्षों का नियमन कौन करेगा, और शासनतंत्र किस शक्ति से चलेगा ? यही वास्तव में आज के युग की मुख्य चुनौती है। दंड-शक्ति और राज-सत्ता का आविष्कार

मनुष्य के विकास में मदद करने के लिए हुआ था, वे चीजें जीवन का आधार नहीं हैं। समाज जीवन का आवश्यक तत्त्व तो सहयोग और सहजीवन ही हो सकता है। स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व ही मनुष्य जीवन का लक्ष्य हो सकता है और इसीलिए धीरे-धीरे लोकतंत्र के विचार पर मनुष्य पहुँचा है। लोकतंत्र का आधार हिंसा-शक्ति कदापि नहीं हो सकती। समाज के सचालन के लिए सम्मति-शक्ति और आन्तरिक विग्रहों के समाधान के लिए सत्याग्रह-शक्ति—इनका विकास ही आज के युग की आवश्यकता है। राज सत्ता दबाव पर आधारित है और इसलिए वह सम्मति-शक्ति की विरोधी है। उसके स्थान पर लोक-शक्ति का विकास आज के युग की परम आवश्यकता हो गयी है।

सर्वोदय आन्दोलन और ग्रामस्वराज्य का कार्यक्रम इसी शक्ति को प्रकट करने का प्रयत्न कर रहा है। राज्य-शक्ति की स्वाभाविक परिणति केन्द्रीकरण की ओर होती है, जबकि लोक-शक्ति के विकास का मतलब ही सत्ता का विकेन्द्रीकरण है। धीरेन्द्रभाई के प्रयोग लोक-शक्ति के विकास के प्रयोग हैं। सर्वोदय कार्यकर्ताओं के लिए ही नहीं, सामान्य नागरिकों और समाज-शास्त्रियों के लिए भी उनकी यह पुस्तक उपयोगी होगी।*

—सिद्धराज ढड्ढा

*प्रकाशक : सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट, वाराणसी। पृष्ठ २८८, मूल्य रु० ६.००।

लखनऊ जिला सर्वोदय मण्डल का गठन

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ के लोकसेवकों की एक बैठक स्वामी कृष्णानन्द की अध्यक्षता में ७ अक्टूबर को जिला सर्वोदय मण्डल के गठन के लिए हुई जिसमें सर्वश्री रामनिहोर बाजपेयी—(अध्यक्ष) राम औतार पाल—(मंत्री) रामनरेश शास्त्री—सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि और महादेव कुशवाहा—(कोषाध्यक्ष), चुने गये।

—कपिल अवस्थी

उत्तर प्रदेश तरुण शान्तिसेना

उत्तर प्रदेश तरुण शान्तिसेना के प्रथम शिविर व सम्मेलन में जिस चार सूत्री कार्यक्रम को स्वीकार किया गया था उसको सफल करने हेतु विभिन्न स्थानों की सूचना मिली है। सारे प्रदेश में उत्साह का वातावरण व्याप्त है, चार सूत्री कार्यक्रम निम्न है :

१—१० नवम्बर से २५ नवम्बर तक सदस्यता पखवाड़ा मनाया जाय।

२—प्रत्येक जिले में स्थानीय इण्टर व डिग्री कालेजों के छात्रों तथा शिक्षकों का प्रतिनिधि-शिविर किया जाय जिसमें सर्वोदय आन्दोलन की भूमिका व संगठन-कार्य पर जोर दिया जाय।

३—साहित्य प्रचार के अन्तर्गत 'तरुणमन', 'नयी तालीम' व 'सर्वोदय' (भूदान यज्ञ) की ग्राहक संख्या बढ़ायी जाए तथा उपयोगी पुस्तकों की बिक्री हो।

४—बंगला देश के शरणार्थियों के लिए कपड़े एकत्र किये जायँ। ६ दिसम्बर से उत्तर प्रदेश में होकर जानेवाली 'विश्व विवेक जागरण पदयात्रा' टोली के लिए स्वागत-समिति का गठन किया जाय।

सारे प्रदेश में सदस्यता पखवाड़ा मनाने की तैयारी चल रही है। इटावा में जिला-स्तरीय तरुण शान्तिसेना तथा आचार्यकुल का सम्मेलन २३-२४ अक्टूबर को सम्पन्न हुआ। कानपुर में जिला स्तरीय तरुण शान्तिसेना का ३१ अक्टूबर से २ नवम्बर तक त्रिदिवसीय शिविर का आयोजन किया जा रहा है। मथुरा, फर्रुखाबाद, अलीगढ़, आगरा, मुरादाबाद, सहारनपुर आदि में निकट भविष्य में शिविर सम्मेलन होने की सूचना मिली है।

वाराणसी आदि कुछ जगहों से विस्थापितों के लिए कपड़े एकत्र होने की सूचना मिली है।

१० नवम्बर से २५ नवम्बर तक मनाया जानेवाला सदस्यता पखवाड़ा प्रदेशीय संगठन को विस्तृत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगा ऐसी आशा है।

—देवप्रिय

कार्यालय सचिव, उ० प्र० तरुण शान्तिसेना

उत्तराखण्ड में पुष्टि कार्य

उत्तर काशी (उत्तराखण्ड) से श्री सुरेन्द्र दत्त भट्ट ने समाचार भेजा है कि पुरोला विकास क्षेत्र के गाँवों में ग्रामदान पुष्टि कार्य चालू है। श्री शिवप्रसाद सकलानी घूम-घूम कर ग्रामस्वराज्य-सभाओं को सक्रिय कर रहे हैं। टोंस नदी उद्गम का यह क्षेत्र हिमालय का बहुत ही पिछड़ा हुआ एवं उपेक्षित क्षेत्र है।●

यूरोप में बांगलादेश प्रदर्शनी

ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध शान्तिवादी कैनन कालिन्स के निमंत्रण पर सर्वोदय कार्यकर्ता श्री सतीशकुमार और बहुतेरी-लेखक कमलेश्वर यूरोप गये हैं। वे अपने साथ बांगलादेश से सम्बन्धित अनेक फोटो, चित्र चार्ट्स आदि भी ले गये हैं, जिनकी तैयारी सर्व सेवा संघ के कलकत्ता कार्यालय में की गयी थी। इन चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन ट्रफालगर स्क्वायर में १३ से १८ सितम्बर तक किया गया। प्रतिदिन शाम को सभाओं का भी आयोजन किया गया, जिसमें कैनन कालिन्स, सतीशकुमार, कमलेश्वर, डान ग्रिम, मार्टिन एन्नी, डुवर्ड सेंट्रल आदि वक्ताओं ने बंगला देश में सैनिक-सत्ता को समाप्त करने की माँग की।

अब सतीशकुमार और कमलेश्वर बेल्जियम, हालैण्ड, डेनमार्क, स्वीडेन, जर्मनी, आस्ट्रिया, स्विट्जरलैंड, फ्रांस और इटली की दो महीने की यात्रा करेंगे और दिसम्बर में भारत लौट आने का कार्यक्रम है।

सर्व सेवा संघ और यूरोप के शान्तिवादियों के इस सम्मिलित प्रयत्न का उद्देश्य है—बंगला देश की यथार्थ-स्थिति से विश्व-जनमत को अवगत कराना और सैनिक कार्यवाही समाप्त करने के लिए पाकिस्तान-सरकार पर जोर डालना।●

उ० प्र० तरुण शान्तिसेना शिविर व सम्मेलन

उ० प्र० तरुण शान्ति सेना का पहला सम्मेलन बरेली में दिनांक २४ सितम्बर से ३० सितम्बर तक चला। कुल शिविरार्थी ९८ थे जो २५ जिलों तथा ७ विश्वविद्यालयों के ३० कालेजो का प्रतिनिधित्व करते थे। शिविरार्थी भाइयों की संख्या और गुणात्मकता के दूसरी ओर बौद्धिक दृष्टि से स्थिति असन्तोषजनक रही, क्योंकि आमंत्रित वक्ता शिविरावधि में उपस्थित नहीं हो सके। डा० रामजी सिंह भी अन्तिम दिन पहुँचे। इस प्रकार 'पीर, बावर्ची, भिश्ती, खर' सभी की भूमिका अमरनाथ भाई, विनय भाई और दीक्षित जी को निभानी पड़ी। इस दृष्टि से इस शिविर की प्रशंसा भी करनी पड़ेगी कि गणसेवकत्व का स्वरूप सामने आया—अस्पष्ट ही सही। एक और भी महत्वपूर्ण तथ्य उजागर हुआ कि अब आन्दोलन को इस माँग को समझ लेना चाहिए कि यह हरफन मौला खोजता है, विशेषज्ञ नहीं—हालांकि विशेषज्ञों से कोई बैर नहीं है।

शिविर जीवन की कई कमियों को गिना जा सकता है। पर मेरी दृष्टि में उनको दूर करने का सम्मिलित प्रयास ज्यादा महत्व रखता है। भिन्न-भिन्न जिलों से आया तरुण मानस, इतना समन्वयकारी और विचारशील होगा इसकी कल्पना दूर से नहीं की जा सकती है। इस दृष्टि से मथुरा से आये स्कूली बच्चों का दल विशेष उल्लेखनीय था और तरुणों पर वृद्ध दृष्टि का प्रभाव (और पकड़) कितना घातक होता है इसका उदाहरण आगरा के एक कालेज का दल था, जिसे बीच में ही जाना पड़ा।

श्रम की समुचित योजना नहीं रहने के कारण शिविरार्थियों में असन्तोष था और दिखावे के लिए कुछ करने को वे तैयार भी नहीं थे।

सांस्कृतिक कार्यक्रम, आज की छिछली मनोवृत्ति के द्योतक थे। पर अच्छे गीत, कविताएँ सराही गयीं और सिनेमा से अलग भी कुछ होना चाहिए, इसकी प्रतीति हुई। 'पहली रोटी' नाट्य संगीत का अभिनय प्रभावशाली रहा।

चर्चा के विषय थे—तरुण-शान्तिसेना तथा उसका संघटन, कार्यक्रम, तरुण-शान्तिसेना बनाम छात्रसंघ, छात्र-आंदोलन और इसकी दिशा, ग्रामस्वराज्य का दर्शन एवं उसका तंत्र तथा आत्मज्ञान-विज्ञान। प्रत्येक वर्ग के बाद उस विषय पर खुली प्रश्नोत्तरी के कारण बातें बहुत स्पष्ट होती रहीं। शिविर उद्घाटन के दिन लन्दन स्कूल आफ नानवायलेन्स के निदेशक रेवेरेन्ड कॉलिन्स हेजैट्स ने पश्चिम के विषय में छाये अनेक भ्रमों का निवारण किया। मशीनीकरण, हिंसा बनाम अहिंसा, अहिंसात्मक आन्दोलन की दिशा आदि कई विषयों की चर्चा करते हुए आपने कहा कि, 'अहिंसा कोई तकनीक नहीं है, सहज जीने का रास्ता है। पश्चिम का मशीनीकरण उसकी आत्मा को खो चुका है और भारत के लिए यह सावधान हो जाने की घड़ी है।'

२९ सितम्बर को कानपुर के श्री शिवसहाय मिश्र की अध्यक्षता में सम्मेलन शुरू हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन बिहार के तरुण-शान्तिसेना के कुमार प्रशान्त ने किया। छात्र-संघ, चुनाव आदि की चर्चा करते हुए आपने कहा कि, 'समय तेज गति से भाग रहा है। उसके साथ सन्तुलन बनाये रखने के लिए हमारी गति भी उसके अनुरूप होनी चाहिए, अन्यथा तरुण पीछे छूट जायेंगे। सरकारें स्वभाव से यथा-स्थितिवादी तथा चरित्र से पलायनवादी होती हैं। छात्र-संघों का वर्तमान ढांचा, इन राजन-संस्थाओं का ही छोटा रूप है। अत: तरुण समस्या की जड़ समझें, अन्यथा अन्याय के प्रतिकार की जगह वे अन्याय का सहकार करने लगेंगे।'

अवकाश प्राप्त जज श्री कामतानाथ गुप्ता ने जोश और होश के समन्वय पर जोर देते हुए कहा कि तरुण-शान्तिसेना की सफलता अनिवार्य है, क्योंकि इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। जानमाल की सुरक्षा केवल कानून और पुलिस से होगी, यह कोरा भ्रम है—वह कानून ही है, जो पाप कराता है। भारतीय संविधान को समाजवाद नहीं सरकारवाद का वाहक बताते हुए आपने इसकी व्यर्थता बतायी। साथ ही इसमें संशोधन के प्रयास का विरोध करते हुए आपने कहा कि यह सरकारवाद के प्रभाव का विस्तार किया जा रहा है। यह डेमोक्रेसी नहीं डेमोनक्रेसी है। सरकारी पंजे मजबूत हो रहे हैं। मनु ने व्यक्तिगत मिल्कियत को समाप्त कर व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पहचान की। मार्क्स ने जाने-अनजाने इसकी आधी बात पकड़ी। पर हमारे संविधान ने दुनिया भर की अक्ल बटोरी पर मनु की बात, हमारी संस्कृति में पनपी बात, पर ध्यान ही नहीं दिया। तरुण-शान्तिसेना इन मूल्यों की प्रतिस्थापना कर सकेगी तो उसकी सफलता असंदिग्ध है।

'बंगला देश : जनता बनाम सरकार' विषय पर बोलकर नारायण भाई शिविरार्थियों से तादात्म्य स्थापित कर चुके थे। आपने सम्मेलन में तरुण-शान्ति सैनिक की व्यक्तिगत और तरुण-शान्ति सेना की सामूहिक विशिष्टता की चर्चा विस्तार से की। व्यक्तिगत चित्तशुद्धि और सामाजिक क्रान्ति का विचार तरुण-शान्तिसेना के लिए एक है। यही अध्यात्म है और इसमें साधना, व्यक्तिगत होते हुए भी पारस्परिक होगी। इस साधना में तीन बाधक तत्व हैं—अहंकार, काम तथा पूर्वाग्रह। अहंकार का निराकरण प्रेम से होगा। प्रेम अर्थात् देना। जिस समाज में क्रान्ति करना चाहते हैं पहले उसका बनकर उसको दो। जितना दोगे उतनी चेतना जगेगी। काम के लिए संयम तथा पूर्वाग्रह के लिए करुणा की साधना पर बल देते हुए आपने कहा कि अपने मनुष्य का विस्तार करना है। इसे जितना विस्तृत कर सकें, उतनी

तरुण साधना होगी। जब आप कोई कार्यक्रम समाप्त करते हैं तो विचार कीजिए कि क्या आप में उपर्युक्त साधना की क्षमता बढ़ी, क्या त्रिगुण (सत्य, प्रेम करुणा) बढ़े, क्या त्रिदोष (अहंकार, काम, पूर्वाग्रह) कम हुए, अनुशासन (श्रम, सेवा, स्वाध्याय) बढ़ा ? यदि नहीं तो आप का कार्यक्रम, क्रान्ति का कार्यक्रम नहीं था। आप में श्रम का अहंकार नहीं होना चाहिए। श्रम की गुरुता और लघुता से दूर हमारा श्रम आनन्दकारी और उपासनामूलक होना चाहिए।

बाद के अपराह्न भाषण में श्री शिवसहाय मिश्र ने भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति का विवेचन करते हुए तरुण-शान्ति सेना से इसका वाहक बनने की अपेक्षा की। सम्मेलन का समापन बिहार के डा० रामजी सिंह ने किया, जिनके प्रवचन 'विज्ञान और आत्मज्ञान' ने एक दिन पूर्व शिविरार्थियों की चेतना को पूरी तरह झकझोर दिया था। व्यक्तिगत साधना और सामाजिक क्रान्ति के अटूट सम्बन्ध की विवेचना करते हुए डा० रामजी सिंह ने उन आधारों की व्याख्या की जिन पर सामाजिक क्रान्ति टिकेगी। नक्सलवादियों की वीरता की प्रशंसा करते हुए आपने कहा कि वे निराश, थके हुए लोग हैं। उनका साहस चुक गया है। विध्वंस का जन्म ही निराशा से होता है। युवक उनकी क्षमता से बहुत दूर है। तरुण-शान्तिसेना सामाजिक परिवर्तन की दीक्षा लेकर, युवक का प्रारम्भ करेगी। मनुष्य से मनुष्य के सम्बन्धों का अधिष्ठान सत्य, प्रेम, करुणा ही होगा और तरुण-शान्तिसेना का यह अनुशासन भी है मूल्य भी है। तरुण-शान्तिसैनिक उस मुक्ति का, व्यक्तिगत सफलता का कोई अर्थ नहीं मानेगा जो समूह की मुक्ति का कारण न बन सके।

सर्व सम्मति से लिये गए संकल्पों के साथ सम्मेलन समाप्त हुआ और प्रदेश भर में गये उत्साह से भरे तरुण शिविरार्थी—रोशनी नयी और आँखें भी नयी हैं। इनका समुचित नियोजन उत्तर प्रदेश में एक बड़ी ताकत बनकर उभर सकता है।

—कुमार प्रशांत

सर्वोदय-साहित्य-भण्डार का वार्षिकोत्सव

'किसी विचार का प्रचार करने में खतरा है। जिसका प्रचार करना पड़ता है, वह सौदे की वस्तु हो जाती है। सर्वोदय विचार नहीं है, उसे विचार नहीं होना चाहिए। सर्वोदय एक दर्शन है। दर्शन अलग चीज है और विचार बिलकुल अलग वस्तु।' ये हैं वे उद्गार जो सर्वोदय-दर्शन के सुप्रसिद्ध भाष्यकार आचार्य दादा धर्माधिकारी ने गत १० अक्टूबर को इन्दौर में प्रकट किये।

वे यहाँ स्थानीय विसर्जन आश्रम द्वारा संचालित सर्वोदय-साहित्य भण्डार के ११ वें वार्षिक स्थापना दिवस समारोह की अध्यक्षता करते हुए बोल रहे थे।

आगे उन्होंने कहा कि, 'दर्शन से मतलब है जीवन की तरफ देखने का एक दृष्टिकोण। सर्वोदय को हमें विचार-धारा बनने से बचाना है। इसलिए सर्वोदय-विचार का प्रचार नहीं, प्रकाशन होना चाहिए। विचार के प्रचार में विज्ञापनबाजी होती है।'

क्रान्ति के विविध पहलुओं का विवेचन करते हुए दादा धर्माधिकारी ने कहा कि 'आज का यह यक्ष-प्रश्न है कि मनुष्य मनुष्य के निकट कैसे आये ? स्वामित्व और सम्पत्ति मनुष्य को एक दूसरे से अलग करते हैं। इनके निरसन के बिना क्रान्ति संभव नहीं। गांधीजी ने कहा था कि मेरे लिए मनुष्य के नजदीक जाना ही ईश्वर के नजदीक जाना है। विनोबा जी इसे ही मुक्ति का मार्ग समझते हैं। मनुष्य को मनुष्य से मिलाना ही मूलभूत क्रान्ति है। इस क्रान्ति का दर्शन साहित्य की आँख से होता है। समाज को चाहिए कि वह साहित्य की आँख से भविष्य को देखे और वर्तमान में अपने कदम तेजी से बढ़ाये।'

इस अवसर पर मुख्य अतिथि वक्ता के रूप में बोलते हुए मध्यप्रदेश के शिक्षा मंत्री श्री जगदीश नारायण अवस्थी ने सुझाव दिया कि राज्य के सभी विश्व-विद्यालयों में 'गांधी चेयर' की स्थापना की जानी चाहिए।

समारोह के प्रारम्भ में मध्यप्रदेश दृष्टिहीन कल्याण संघ के बालकों ने सुमधुर कंठ से एक भजन प्रस्तुत किया। श्री दादाभाई नाईक ने अतिथियों का पुष्पाहार से स्वागत किया।

भण्डार के संचालक श्री जसवन्तराय भाईजी ने भण्डार का संक्षिप्त प्रगति-विवरण पढ़ा और श्री सतीश मेहता ने आगामी योजना रखी।

यह उल्लेखनीय है कि इस अवसर पर तीन व्यक्तियों को, (जिनमें एक विद्यार्थी, एक मजदूर और एक सस्था शामिल है) उनके द्वारा भण्डार से प्रतिमास नियमित साहित्य खरीदने पर 'विनोबा व्यक्तित्व और विचार' नामक पुस्तक भेंट-स्वरूप देकर उन्हें सम्मानित किया गया। सभा का संचालन श्री मानव मुनि ने किया। श्री बाबूभाई देसाई ने अन्त में सबके प्रति आभार प्रकट किया। (सरेश)

आन्ध्र प्रदेश में पुष्टि कार्य का प्रारम्भ

आन्ध्र प्रदेश के महबूब नगर के अचमपेट ब्लाक में पुष्टि का काम प्रारम्भ हुआ है। ५० गाँवों में ग्रामसभाओं का गठन हुआ है। ता० ९ एवं १० अक्तूबर को अचमपेट में महबूब नगर जिला सर्वोदय सम्मेलन हुआ जिसका उद्घाटन सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने किया। इस सम्मेलन में साल भर में पुष्टि सहित ग्रामदान का निश्चय किया गया। जिले के १६ प्रखंडों में से तीन प्रखण्डदान हो गये हैं। आगे आन्ध्र प्रदेश में ग्रामदान प्राप्ति एवं पुष्टि का काम करने का निश्चय किया गया। ●

भूदान-यज्ञ १-११-'७१ लाइसेन्स नं० ए १४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

उत्तर क्षेत्र के नशाबंदी सम्मेलन की माँग

उत्तरी क्षेत्र के नशाबंदी का काम करनेवाले कार्यकर्ताओं का १० तथा ११ सितम्बर १९७१ को दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ जिसमें तमिलनाडु सरकार की शराबबंदी खत्म करने की कड़ी आलोचना की गयी और प्रस्ताव पास किये गये।

सम्मेलन में तमिलनाडु की डी० एम० के० सरकार की शराबबंदी खत्म करने की कार्रवाई की निन्दा करते हुए कहा गया कि तमिलनाडु में २५ साल से नशाबंदी कानून लागू था, उसे रद्द करके राज्य सरकार ने केवल निहित स्वार्थियों का भला किया है और लाखों गरीबों और निम्न वर्ग के लोगों की खुशहाली पर प्रहार किया है। इस कार्रवाई में जनसाधारण का कोई भला न होगा, मजदूरों और गरीबों का आर्थिक शोषण बढ़ेगा, और जनता के सामाजिक, आर्थिक और नैतिक स्तर में जो उन्नति हुई थी, उसका पतन होगा। तमिलनाडु सरकार ने अपनी इस कार्रवाई से अन्नादुराई की आत्मा को दुःखी किया है, क्योंकि वह जनसाधारण के भले के लिए शराबबंदी को अनिवार्य मानते थे, और वह इस नीति पर सदा कायम रहे। सम्मेलन ने तमिलनाडु सरकार से यह अपील की, कि वह अपने इस गलत निर्णय को वापस ले।

सम्मेलन में तमिलनाडु के सामाजिक कार्यकर्ताओं की प्रशंसा की गयी, और सरकार की इस कार्रवाई के विरुद्ध उनके शान्तिमय सत्याग्रह करने के फैसले का समर्थन किया गया। सम्मेलन ने देशभर के सभी तबकों के सामाजिक कार्यकर्ताओं से नशाबन्दी के लिए आन्दोलन करने की अपील की।

शाहाबाद जिला सर्वोदय मण्डल की बैठक

शाहाबाद जिला सर्वोदय मण्डल की बैठक गत ६ अक्टूबर को चेनारी में हुई। तय किया गया कि २१ अक्टूबर से अधौरा और भगवानपुर प्रखण्डों में ग्रामदान पुष्टि अभियान सघन रूप से चलाया जाय।

भभुआ और सहसराम अनुमण्डलों में भूदान किसानों की बेदखली के निवारण के लिए भूदान किसान बेदखली के निवारण सम्मेलन करने का निश्चय किया गया।

—महेन्द्र कुमार सिन्हा,
मंत्री सर्वोदय मंडल

'साम्प्रदायिक समस्या' के अध्ययन में दिलचस्पी रखने वाले सम्पर्क करें—
कुशाल बजाज
अ० भा० शान्ति सेना मण्डल,
राजघाट, वाराणसी-१ (उ० प्र०)

जयप्रकाश-जयन्ती

मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय मण्डल के आह्वान पर गत विजयादशमी (दुर्गापूजा) को लक्ष्मीनारायण भवन, सर्वोदयग्राम (मुजफ्फरपुर) में जयप्रकाश जयन्ती समारोह मनाया गया। समारोह की अध्यक्षता श्री सोहनलाल गुप्त और उद्घाटन तिरहुत प्रमण्डल आयुक्त ने किया। मुसहरी प्रखण्ड के लगभग ९० ग्रामस्वराज्य सभाओं के प्रतिनिधियों ने इस समारोह में, भाग लिया। सभी ने जयप्रकाश बाबू और प्रभावती दीदी के दीर्घायु होने की कामना की।

सामूहिक प्रार्थना के बाद समारोह का विसर्जन हुआ। —रा० प्र० द्विवेदी

जिला सर्वोदय मण्डल मुजफ्फरपुर

● गत ११ अक्टूबर को गया नगर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन भवन, आजाद पार्क, में जयप्रकाशजी की ७० वीं वर्षगांठ के अवसर पर गया जिले के वयोवृद्ध नेता श्री यदुनन्दनशर्मा की अध्यक्षता में एक विचार गोष्ठी हुई।

गोष्ठी में लोगों ने जयप्रकाशजी के जीवन के इस पहलू को महत्वपूर्ण माना कि वे काल, दल और देश की सीमा से मुक्त होकर चिन्तन एवं मनन करते हैं और अपने विचार निर्भीकता से प्रगट करते हैं। इस कारण कुछ लोग कभी-कभी विरोधाभास के भ्रम में पड़ जाते हैं। पर ध्यान देने की बात यह है कि जयप्रकाशजी का चिन्तन मानव-मूल्यों एवं मानवहित का होते हुए भी राष्ट्रहित की उपेक्षा नहीं करता।

जयप्रकाशजी की ७० वीं वर्षगांठ के प्रतीक के तौर पर ७० दीप जलाकर लोगों ने सम्मान प्रकट किया और उनके दीर्घजीवन की कामना प्रगट की।

—शिवधारी सिंह
ग्रामनिर्माण मण्डल एवं ग्रा० समिति, गया

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु० ; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

क्रान्तिकारी जन-आन्दोलन के लिए सघन कार्य करने का आवाहन

—सर्व सेवा संघ के भोपाल अधिवेशन में सर्व-सम्मति से पारित ऐतिहासिक प्रस्ताव—

सारे देश में डेढ़ लाख से अधिक ग्रामदानों के संकल्प प्राप्त कर चुकने के बाद अब उन संकल्पों को कार्यान्वित करने का—यानी पुष्टि का—काम डेढ़-दो सालों से ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के अगले कदम के तौर पर हमारे सामने खड़ा है। इस काम को अत्यन्त त्वरा की दृष्टि से करने के लिए उसमें अपनी सारी शक्ति एकाग्रता तथा सातत्य के साथ लगाने के लिए जयप्रकाशजी का मुसहरी प्रखण्ड में जा कर बैठने से तथा विनोबाजी की प्रत्यक्ष प्रेरणा से सहरसा जिले में पुष्टि के काम को हाथ में लिया जाने से—सारे सर्वोदय जगत को प्रेरणा मिली है और फलस्वरूप, सारे देश में, प्रांत-प्रांत में, पुष्टि के कार्य में सैकड़ों सेवक लगन से जुट पड़े हैं।

अनुभव से पाया जाता है कि ग्रामदान संकल्प से कहीं अधिक पुष्टि का काम गाँव के सारे समाज को, उसकी सारी मान्यताओं को गहरे ढंग से छूता है, उन्हें झकझोर देता है। उसके सिलसिले में कई अधिक जटिल समस्याएँ हमारे सामने आती हैं। इसलिए पुष्टि का काम सेवकों के सारे प्रयत्न और लगन के बावजूद अपेक्षा से मन्द गति से आगे बढ़ रहा है।

पर यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि इस सिलसिले में हमें ग्रामसमाज का बहुत निकट का तथा गहरा दर्शन और उसकी अन्दरूनी प्रक्रियाओं का अधिक ज्ञान मिल रहा है, जनशक्ति के स्रोतों के अधिक निकट हम पहुँच रहे हैं, और इस तरह आन्दोलन को क्रान्तिकारी जन-आन्दोलन का रूप देने की सम्भावना अधिक नजदीक आ रही है।

यह स्पष्ट है कि ग्रामदान या पुष्टि का काम सिर्फ जमीन के बँटवारे का, ग्रामकोष स्थापित करने का तथा ग्रामसभा को औपचारिक ढंग से चालू करने का सवाल नहीं है, बल्कि गाँव की विभिन्न जमातों और वर्गों में परस्पर सम्बन्ध बदलने का, उसके दबे हुए वर्गों में निर्भयता और आत्मशक्ति जागृत करने का, सबमें सौमनस्य और एकता स्थापित करने का तथा उनमें अभिक्रम जागृत करने का काम इन कार्यक्रमों के जरिये हमें करना है। इन ध्येयों के बारे में कोई मतभेद न होते हुए काम करने की प्रणाली के बारे में अलग-अलग दृष्टिकोण हमारे सामने आये हैं। एक विचार यह है कि गैर-मालिक तथा छोटे मालिकों के मालकियत-विसर्जन और आपसी एकता-स्थापन करके बड़े मालिकों पर नैतिक असर डालना आवश्यक है तथा दूसरा विचार आया है कि इस आन्दोलन में पहल बड़े मालिकों के द्वारा प्रायश्चित के तौर पर होना चाहिए। दोनों विचार शायद एक दूसरे के पूरक हैं। और, हमें सब वर्ग तथा तबके के साथ सम्पर्क रखकर सबमें अभिक्रम जगाने का काम करना है। जनशक्ति के जागरण के लिए दान, संगठन तथा मौके पर प्रतिकार, इन तीनों की सम्मिलित या समन्वित रूप से आवश्यकता है। पर संघ यह भी महसूस करता है कि आज देश के विभिन्न भागों की विभिन्न-विभिन्न परिस्थिति को तथा इस विशाल काम के मुकाबिले में हमारे कुल अनुभव और जानकारी की अल्पता को देखते हुए भिन्न-भिन्न स्थान पर भिन्न-भिन्न ढंग से काम करने का अवसर है।

इसलिए संघ महसूस करता है कि सहरसा तथा मुसहरी के प्रयोगों को प्राथमिकता देते हुए, तथा उनमें राष्ट्रीय शक्ति लगाने के अलावा हर प्रांत में भी एक-दो स्थान पर पुष्टि का काम सघन रूप से चलना चाहिए। ये सारे प्रयत्न छिन्न-विछिन्न रूप से न चलकर उनमें परस्पर घनिष्ठ सम्पर्क बनाये रखना चाहिए, जिससे हरेक के अनुभव का लाभ सबको मिल सके और कुल मिलाकर एक राष्ट्रीय प्रयत्न के ही हिस्से वे बनें।

अनुभव से दीखता है कि जनशक्ति के उद्गम-स्रोत के तौर पर ग्रामस्वराज्य-सभा का बहुत बड़ा महत्व है। अत. उसे सक्रिय करने पर विशेष ध्यान दिया जाय।

शिक्षक, विद्यार्थी तथा अन्य नौजवानों की पराक्रम-शक्ति का आवाहन आन्दोलन का अभीष्ट है। अतः आचार्यकुल, तरुण-शान्तिसेना तथा ग्राम-शान्तिसेना के माध्यम से इन्हें बड़े पैमाने पर आन्दोलन में खींचा जाय तथा उनके वैचारिक तथा व्यावहारिक ज्ञान की वृद्धि के लिए तालीम की अच्छी और पर्याप्त व्यवस्था की जाय।

प्रखण्ड स्तर के संगठन

प्रखण्ड स्वराज्य-सभाओं का इस काम में एक महत्व की भूमिका है। इनके माध्यम से गाँवों के संघटनों को परस्पर सम्पर्क का बल मिलेगा तथा राष्ट्रीय स्तर के साथ सम्बन्ध व्यवस्थित रूप से स्थापित हो सकेगा। अतः प्रखण्ड स्वराज्य-सभाओं के संघटन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

संघ मानता है कि आज हम सहरसा तथा मुसहरी के प्रयत्नों को तथा देश के दूसरे भागों में चलनेवाले सघन प्रयत्नों को एक-डेढ़ साल में सफल कर सकेंगे तो आगे इस आन्दोलन के लिए जन-आन्दोलन का स्वरूप लेने का मार्ग शीघ्र ही खुल जायेगा।

भोपाल, ३१-१०-'७१

'टीअर्स ऑफ ज्वाय'

पिछले वार्षिक-सम्मेलन की समाप्ति पर सर्वोदय-आन्दोलन की एक प्रमुख प्रादेशिक पत्रिका के सम्पादक ने आपसी बातचीत में जब अपनी प्रतिक्रिया प्रश्न के रूप में व्यक्त की कि 'इस सम्मेलन की विशेष रिपोर्टिंग में क्या लिखा जाय ?' तो लगा था कि शायद यही सवाल मेरे सामने भी है। लेकिन भोपाल-अधिवेशन के अवसर पर सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने जब एक दिन भोजन करते समय सहज ही पूछा, 'राही, अधिवेशन का कार्यक्रम कैसा चल रहा है ?' तो उनके सुगम संयोजन के लिए बधाई देनी पड़ी। और, शायद मेरी इस भावना में अधिवेशन में भाग लेनेवाले अन्य साथी भी सहमत होंगे।

अधिवेशन से एक दिन पूर्व ग्रामदान-पुष्टि की गोष्ठी के आयोजन के पीछे पूरे अधिवेशन को आन्दोलनमय बनाये रखने की बात आयोजकों के मन में रही हो या न रही हो, उसका परिणाम यही होना चाहिए था और हुआ भी। वार्षिक की कुछ अघोषित मायूसी, और बहुत कोशिश करके भी तेजी से आगे न बढ़ पाने की विवशता के कारण पैदा हुई कुछ निराशा ने पीछे मुड़कर पुनरावलोकन की प्रेरणा दी थी, वैचारिक मंथन का दौर सर्वोदय-आन्दोलन में लगे सक्रिय साथियों के अन्दर में शुरू हो गया था, और ऐन मौके पर, जबकि पुष्टि-गोष्ठी में पेश की गयी प्रगति की जानकारियों के बावजूद एक प्रकार की भटकन, एक ठहराव, एक गतिहीनता का अनुभव हो रहा था, दादा धर्माधिकारी ने एक 'विचार-बम' का विस्फोट किया। और ऐसा लगा कि उसके धमाके से हम लोग एक झटके के साथ जग गये हैं, तन्द्रा की जगह एक नयी स्फूर्ति आ गयी है।

दादा के इस भाषण (देखें : पृष्ठ ६९) पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने कहा, 'पिछले बीस वर्षों में एक-से-एक भाषण हमने सुने हैं, लेकिन दादा का यह भाषण उन सब में विशिष्ट है और मैंने इतनी उत्तेजना महसूस की कि मेरी आंखों में आनन्दाश्रु (टीअर्स ऑफ ज्वाय) छलक आये।'

सुप्रसिद्ध दार्शनिक सार्त्र ने पिछले दिनों यह विचार व्यक्त किया है कि चिन्तक अलग, और कार्यवाहक अलग, यह स्थिति समाप्त करनी चाहिए। चिन्तक कार्यवाहक भी हो और कार्यवाहक चिन्तक भी बने, यह स्थिति अनवरत क्रान्ति के लिए अनिवार्य है। सार्त्र एक वामपंथी दार्शनिक माने जाते हैं, लेकिन किसी 'वाद' से बंधे नहीं हैं, इसीलिए वामपंथी होते हुए भी उन्होंने कम्युनिस्टों की 'थियोरेटिशियन' (सिद्धान्तवेत्ता) और 'एक्टिविस्ट' (कार्यवाहक) के अलग-अलग अस्तित्व को नकारते हुए इस नये प्रकार के क्रान्तिकारी व्यक्तित्व की कल्पना की है।

हम इस बात का गौरव कर सकते हैं कि सर्वोदय-क्रान्ति का दर्शन विनोबा ने परंधाम-आश्रम में रहकर विकसित किया हो, और फिर उस सिद्धान्तवाद के सहारे आन्दोलन चलाने की कोशिश की गयी हो, यह स्थिति इस आन्दोलन की कभी रही नहीं। विनोबा चिन्तक और सिद्धान्त-प्रणेता भी रहे और भूदान-ग्रामदान के सक्रिय कार्यवाहक और आत्यन्तिक साधक भी। दादा धर्माधिकारी भले ही उस रूप में अपने को कार्यवाहक मानने से इनकार करें, लेकिन हम जानते हैं कि शुरू से आज तक आन्दोलन के कार्य-क्षेत्र से वे अनुबन्धित रहे हैं। जे० पी० और धीरेन्द्र भाई सहित सर्वोदय-आन्दोलन में लगे सभी साथी इस नयी क्रान्ति के दर्शन और मार्ग-खोजन की प्रक्रिया में लगे हैं, और कम-बेसी अपना योगदान दे रहे हैं। इसलिए इस क्रान्ति के आरोहण में हर मोड़ पर हम अपने आपको, अपने आन्दोलन को, इसकी पूरी प्रक्रिया को जांचने-परखने चलें, यह अनिवार्य है। सत्यनिष्ठ होना इस क्रान्ति के वाहक की पहली कसौटी है, और इसीलिए सर्वोदय-क्रान्ति में लगे लोग सत्य को सत्य के रूप में ही स्वीकार करते हैं, अपनी विफलताओं पर उपलब्धियों का, अपनी कमजोरियों पर ताकत की घोषणाओं का आवरण डालकर नहीं। इसीलिए दादा ने जब कहा कि, 'आपकी बातों का मेरे चित्त पर ऐसा असर हुआ कि मेरा दिल कुछ बैठ गया' या जब जे० पी० ने कहा कि 'भूदान की उपलब्धियों में से अपेक्षित ताकत नहीं पैदा हो पायी, हमारी अपनी कमजोरियों के कारण, तो प्रेसवालों को भले सनसनीखेज कोई समाचार मिला हो 'सर्वोदय-भूदान के फेल होने का', लेकिन इस आत्मकथ्य से हमने तो अपने को खरात पर डालने की आवश्यकता का अनुभव किया।

स्पष्ट है कि सर्वोदय-आन्दोलन किसी पूर्वनिश्चित और निश्चित क्रान्ति-दर्शन तथा उसकी प्रक्रिया को व्यवहार में उतारने का प्रयत्न नहीं है बल्कि समाज की वस्तुस्थिति में से, व्यक्ति और उसके सम्बन्धों की आज जो हालत है, उसमें से क्रान्ति की प्रक्रिया शुरू करने की कोशिश है। पूर्वनिश्चित और निश्चित मूल्यों को कबूल कराने की कोशिश में जो क्रान्ति प्रकट होगी, वह मानवीय नहीं रह सकती, यह इतिहास-सिद्ध तथ्य है। इसीलिए समस्याग्रस्त मनुष्य और उसके सम्बन्धों में से क्रान्ति प्रकट करने की हमारी चेष्टा है, ताकि यह क्रान्ति मानवीय हो सके।

क्रान्ति के इस सर्वथा नवीन प्रयोग में कभी विचार की सूझ पहले होती है, और हम उसके अनुसार क्रियाशील होते हैं, और कभी समस्याओं के उलझाव में अपने आपको समाहित करने पर कोई विचार या सिद्धान्त सूझता है। इस प्रकार हम अहिंसक क्रान्ति का दर्शन और उसकी प्रक्रिया का विकास हो रहा है। ग्रामस्वराज्य की अब तक स्पष्ट हुई रूपरेखा का विकास इसी प्रक्रिया से हुआ है। जिसमें हम पूरे ग्राम-समाज को हितविरोधी की स्थायी धारणाओं के आधार पर टुकड़ों में नहीं बांटते, एक समग्र ग्रामहित की भावना और परिस्थिति में ग्राम-समाज को लाने का उपक्रम करते हैं, मनुष्यों को क्षुद्र सीमाओं से घेरने की

जगह एक विशाल मानव परिवार के नये आयाम में दाखिल करना चाहते हैं। लेकिन विभिन्न स्तरों पर जो रहे व्यक्ति, समुदाय इस भूमिका में कैसे आयें; यह जटिल प्रश्न है। लक्ष्य स्पष्ट है, और उस ओर बढ़ने की हमारी क्रिया उस लक्ष्य के अनुकूल होनी चाहिए, यानी 'साध्य के अनुकूल ही साधन भी होना चाहिए' यह गांधीजी का सूत्र भी याद है।

यद्यपि अब तक हमारे काम की जो पद्धति रही है, उससे असमाधान इस अधिवेशन में खुलकर व्यक्त हुआ, बावजूद इसके यह दावा किसी का नहीं था कि हमने पूरी ताकत लगाकर इसे आजमा लिया है। एक बहुत बड़ा सवाल अधिक तीव्रता के साथ पिछले अनुभवों के आधार पर सामने आया कि सदियों से जो लोग पीड़ित हैं, जिनके अन्दर अपने अस्तित्व का भी एहसास नहीं है, उन्हें क्या केवल विचार का शिक्षण देकर हम ग्रामहित की व्यापक मनोभूमिका में ला सकते हैं? क्या 'भूख' उसकी चेतना पर सर्वोपरि सत्य बनकर छायी नहीं रहती? और क्या जिनके कारण सदियों से शोषण-दमन होता रहा है, वे भी केवल विचार-शिक्षण से निम्नतम भूमिकावालों को समान भूमिका में स्वीकार करेंगे? विचार की शक्ति के बारे में कोई शंका नहीं, लेकिन इन दो छोरों की मनःस्थितियों में काम करने की प्रक्रिया क्या वही होगी, जो अपेक्षाकृत कुछ जागृत समाज में होगी? इसी एक बहुत बड़े प्रश्न-चिन्ह के करीब रुके हुए बहुत-से साथियों को उस समय एक समाधान दिखायी पड़ा, जब दादा धर्माधिकारी ने कहा कि 'हमें परिस्थिति में नैतिक दबाव पैदा करना होगा।' इसका स्पष्टीकरण करते हुए दादा ने कहा कि 'छोटे मालिक अपनी मालिकी का बँटवारा गैरमालिकों के साथ करें और इस प्रकार वे एक नैतिक शक्ति प्रकट कर भूमिहीनों के साथ संघटित होकर भूमिवानों पर परिस्थिति का दबाव डालें।'

इस प्रक्रिया में हमारी भूमिका पूर्व तैयारी करनेवाले क्रान्ति के शिक्षक की होगी, क्रान्ति के लिए क्रियाशीलता 'लोक' की होगी, क्योंकि वे अपने सम्बन्धों को बदलने के लिए सक्रिय प्रयत्न करेंगे। एक व्यापक मंथन समाज में शुरू होगा, जिस परिस्थिति की उपेक्षा कोई नहीं कर सकेगा। यही परिस्थिति का दबाव होगा; लेकिन जैसा कि ऊपर स्पष्ट है, नैतिक होगा। शायद हम अब तक इस प्रक्रिया में हिंसा की गन्ध महसूस करते रहे हैं, और इसीलिए इससे बचते रहे हैं। लेकिन सवाल यह है कि क्या बुभुक्षितों को पूर्ण अहिंसक मनोभूमिका में एकबारगी लाया जा सकेगा? क्या यह आवश्यक नहीं कि आज उनका असंतोष, जो तेजी से प्रतिशोध की भावना में बदलता जा रहा है, उसे विधायक दिशा देने के लिए, हिंसा के कुचक्र से उन्हें बचाने के लिए, उनके अन्दर अन्याय सहने से इनकार करने की शक्ति पैदा की जाय? शायद ऐसा नहीं किया गया तो निरंतर बढ़ती जा रही प्रतिशोध की ज्वाला सबको भस्म कर देगी।

पूरे देश में, तमिलनाडु में श्री जगन्नाथन् और गुजरात में श्री हरिवल्लभ परीख ने इस दिशा के प्रयोग किये हैं, और परिणाम उत्साहवर्धक हैं। यह ध्यान देने की बात है कि दोनों जगहों में कहीं भी हिंसा फूट पड़ी हो, ऐसा अनुभव नहीं आया है।

इसीलिए बेतिया सर्व सेवा संघ ने इस आशय का प्रस्ताव (देखें: पृष्ठ ६६) अधिवेशन की अन्तिम बैठक में पूर्ण सहमति और उत्फुल्लता के वातावरण में पारित किया। इस दिशा में हर प्रदेश में सातत्य और साधना के साथ संकल्पपूर्वक क्षेत्र चुनकर लग जाने का निवेदन सभी साथियों से संघ के अध्यक्ष ने किया।

अधिवेशन में बंगला देश, लोकनीति, नशाबंदी और अर्थनीति सम्बन्धी चार और प्रस्ताव भी पारित हुए, और सम्बन्धित विषयों पर सर्वोदय आन्दोलन का दृष्टिकोण स्पष्ट किया गया। प्रस्तावों पर अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करने में प्रतिनिधियों ने जो बौद्धिक सक्रियता प्रकट की, वह तो इस अधिवेशन की विशेषता ही मानी जायगी। 'मतभेदों' के बावजूद 'मनभेद' से दूर रहकर 'सर्वसम्मति' के विकास की यह जो एक स्वस्थ प्रक्रिया शुरू हुई है।

अधिवेशनों में हम प्रस्ताव पारित करते हैं जनता के समक्ष इस आन्दोलन का दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के लिए लेकिन हमारे प्रस्ताव अखबारों में महत्वपूर्ण स्थान नहीं पाते। क्योंकि अखबारवाले 'सत्ता' की शक्तियों को देश-युग-समग्र पाते हैं, या फिर किसी भी स्थापित सत्ता के विरुद्ध ध्वनित हो उठे 'भैरवनाद' की ओर उनका ध्यान जाता है। हम जिस 'लोक' की आराधना कर रहे हैं, उसकी 'सत्ता' है ही कहाँ? हम जिस 'शक्ति' की उपासना में लगे हैं वह अभी प्रकट कहाँ हुई है? इसलिए हमारी 'आवाज' की उपेक्षा अखबारवाले करते हैं, तो वह हमारी चिन्ता का विषय नहीं होना चाहिए।

इस अधिवेशन में एक नया प्राण-संचार हुआ। तरुणों ने भी समय-समय पर बेहिचक अपना मत प्रकट किया और पूरे अधिवेशन के माहौल में एक स्फूर्तिदायक चहल-पहल दिखायी पड़ी। अपने क्रान्तिकारी जीवन की इस मंजिल पर पहुँचकर, विनोबा के शब्दों में ७१ साल के जवान, धीरेन्द्र भाई ने सहरसा में निरन्तर घूमते रहने का, 'लोक-गंगा' में प्रवाहित होने का संकल्प किया है। कई अधिवेशनों के बाद उनकी उपस्थिति और 'करो या मरो' की इस बेला में क्रान्ति-शिशु के मनोरंजन के लिए सजाये गये गुड़िया-घरों को छोड़कर इस क्रान्ति के स्रोत में कूद पड़ने का उनका आवाहन हमारे अन्त में मंथन पैदा कर चुका है, इसमें कोई शक नहीं।

आज हम कालचक्र के जिस बिन्दु पर खड़े हैं, वहाँ सारी दुनिया खड़ी है, उसमें से ही 'करो या मरो' की चुनौती आ रही है। श्री वैद्यनाथबाबू जैसे बुजुर्ग ने अधिवेशन की समाप्ति पर भावपूर्ण शब्दों में कहा, 'इस अधिवेशन में भाग लेकर मैंने धन्यता का अनुभव किया है।' और इस बिन्दु पर, इस चुनौती के सन्दर्भ में हम क्रान्ति का नया सपना अपनी निगाहों में लिये अज्ञात सागर में कूद पड़ेंगे तो निश्चय ही हम सबका जीवन धन्य हो जायगा। इतिहास ने हमें यह अवसर प्रदान किया है, यह सोचकर सचमुच आँखों में आनन्दाश्रु छलक पड़ते हैं!

—रामे

सर्वोदय आन्दोलन ऐतिहासिक मोड़ पर

हिंसा और वर्ग-संघर्ष से भय खाना छोड़ें परिस्थिति में नैतिक दबाव पैदा करें

छोटे किसान और भूमिहीनों को संगठित करके क्रान्ति की ठोस बुनियाद बनाने के लिए दादा धर्माधिकारी का क्रान्तिकारी आह्वान

आपकी बातों का मेरे चित्त पर ऐसा असर हुआ कि मेरा दिल कुछ बैठ गया। आपने अपने विवरण में सब बातें कीं केवल जमीन को छोड़कर। हम सारे के सारे कार्यकर्ता, जिसमें मैं अपने को भी शामिल करता हूँ, जमीन की बात छोड़कर और सारी बातें करना चाहते हैं। मैं तो मानता हूँ कि पृथ्वी के दक्षिणी गोलार्द्ध में जमीन का मसला नहीं सुलझेगा तो सामाजिक क्रान्ति नहीं होगी। अमरीका, यूरोप, इधर चीन तक को भी छोड़ दें तो उसके दक्षिणी हिस्से में जमीन का ही असल मसला है। क्योंकि यह मुल्क कुल मिलाकर कृषि प्रधान है। यहाँ उत्तरी गोलार्द्ध की क्रान्ति का अनुकरण नहीं किया जा सकता। आज यहाँ सबने कहा है कि और सब कुछ तो हो सका, सिवाय जमीन के बँटवारे के। अब हम मिलने हो इसलिए हैं कि जमीन के प्रति मनुष्य का जो रुख है, इस देश में या इस देश जैसे अन्य देशों में, उसको हम बदलना चाहते हैं। मालिक और मजदूर का सम्बन्ध बदलना उत्तरी गोलार्द्ध की क्रान्ति है। लेकिन दक्षिणी गोलार्द्ध में जमीन के साथ मनुष्य का और उसके चलते मनुष्य के साथ मनुष्य का जैसा सम्बन्ध बना है उसको बदलने की क्रान्ति की आवश्यकता है। यह हमारी विशिष्ट चीज है। इस बुनियाद को लेकर जो काम हम कर सकेंगे, उसीसे कोई परिणाम निकल सकेगा।

प्रचलित हिंसा के प्रति संताप

इस संदर्भ में मैं आपसे यह निवेदन यह करना चाहता हूँ कि हम इतना अवश्य मन में रखें, कि किसी कारण के लिए मनुष्य मनुष्य को नहीं मारेगा। लेकिन मित्रो! अहिंसा को आप सिद्धान्त नहीं बनाइये। जिस मनुष्य को हम धरती पर रहने की जगह नहीं, जो नंगा है, भूखा है उससे आप अहिंसा की बात करें और उससे अपेक्षा रखें कि वह अहिंसक रहे, और समाज में जिसने उसके खून को चूसकर अपनी सम्पत्ति बनायी है उसकी जो प्रचलित हिंसा है, क्रूर हिंसा है, उसके प्रति आपके मन में संताप न हो, मैं क्रोध की बात नहीं करता, संताप कहता हूँ, तो मैं समझता हूँ कि इसमें से क्रान्ति नहीं होगी। क्रान्ति के लिए तेज की आवश्यकता होती है। करुणा के साथ तेज होना ही चाहिए। तभी क्रान्ति सम्भव है। तेजहीन करुणा निष्प्रभ होती है, उसका कुछ असर नहीं होता।

हमें गरीबों का पक्षपाती होना चाहिए

हम वर्ग-संघर्ष से डरते क्यों हैं? कैसा वर्ग? आज का अमीर कल गरीब होगा, आज का गरीब कल अमीर होगा। गरीब कोई फरिश्ता नहीं है। अमीर कोई शैतान नहीं है। गरीब और अमीर दोनों बीमार हैं। अमीर अपनी बीमारी मिटाना नहीं चाहता और गरीब अपनी बीमारी मिटाना चाहता है। दोनों में इतना ही फर्क है, इसलिए गरीब के साथ हमारा सहयोग स्वाभाविक है, क्योंकि वह अपनी बीमारी मिटाना चाहता है। हमें गरीब का पक्षपाती बनना चाहिए। गरीब के लिए पक्षपात करना गलत नहीं है। हम पक्षपात अवश्य करेंगे। हिंसा भले न करें। क्या कारण है कि गरीब हमको अपना पक्षपाती नहीं मानता? वह नक्सालवादी कम्युनिस्ट को अपना पक्षपाती मानता है, अपना खैरख्वाह मानता है। हमारे बारे में मानता है कि हम तटस्थ हैं। अब तटस्थता कोई उदासीनता नहीं है। मित्रो! उसमें न्याय-बुद्धि होती है। तटस्थता में न्याय का माप देना शामिल है। न्याय यह कहता है कि अन्याय, अत्याचार जिस पर होता है उसके साथ हमें होना चाहिए। यहाँ कहा गया कि लोग हमें देखकर भाग जाते हैं यह जमीनवाले भागे हैं। लेकिन मैं पूछता हूँ कि कौन भागता है? डरने लायक जिसके पास होता है, वह भागता है। आप अत्याचार नहीं करना चाहते फिर भी आपको परिस्थिति में दबाव पैदा करना होगा—एक नैतिक दबाव। नैतिक दबाव में आतंक नहीं है। लेकिन इस विचार से कि सम्पत्तिधारी भाग जायेगा उसके लिए हमारे मन में इतनी कोमल भावना हो, लेकिन जिसने सम्पत्ति का मुँह तक नहीं देखा, उसके लिए कोमल भावना क्यों न हो? गरीब के पास है ही क्या कि वह डरे? सम्पत्तिवान थोड़ा बहुत डरेगा। तो भी समझना चाहिए कि यह भय स्वस्थ भय है, हिंसक भय नहीं है। आज हरिवल्लभ कह रहा था कि कभी-कभी जनशक्ति का प्रदर्शन हम कर देते हैं। प्रदर्शन किसलिए? नैतिक दबाव के लिए।

आत्म-आलोचना की बेला

मित्रो ! आज समय आ गया है जबकि हमें इस पर गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिए। आज आत्म-आलोचना की बेला है। एक बात समझनी चाहिए कि सशस्त्र क्रान्तिकारी हमारा प्रतिपक्षी नहीं। गरीबी और शोषण हमारे असल प्रतिपक्षी हैं। यदि हम सशस्त्र क्रान्तिकारी को अपना प्रतिपक्षी मान लेंगे और उसका मुकाबिला करने में ही उलझ जायेंगे तो क्रान्ति को भूल जायेंगे। यहाँ कोई नक्सलाइट आया हो और उसने आपकी यह सारी चर्चा सुनी हो तो वह आपको कहेगा कि इतने प्रयत्न के बाद भी आप लोग बीघा-कट्ठा नहीं बंटवा सके, अब हमारे साथ आ जाओ ! आप लोग पूछते थे कि काम क्यों नहीं हो रहा है ? तो नक्सलवादी आपको बता देगा कि 'आप लोगों ने गलत रास्ता पकड़ा है। छोड़ो वह रास्ता, चलो हमारे साथ।' इसलिए अब गहराई के साथ विचार करने की आवश्यकता है।

हिंसा से भय करनेवाला अहिंसक नहीं

मेरे विचार में हमारे काम में दो कारणों से दोष आ गया है। हम दो चीजों से भय खाते हैं। पहली चीज हम हिंसा से डरते हैं। जो हिंसा से डरता है वह कभी अहिंसक नहीं हो सकता। दूसरी चीज हम वर्ग-संघर्ष से डर खा गये हैं। लेकिन मैं कहता हूँ कि इस हावगाबलिग को अपने चित्त में से निकाल दें। आज तो आप बंगला देश के सदर्भ में इसमें से निकल ही चुके हैं। युद्ध की बात इसी मंच से हो रही है। बंगला देश के प्रति तो आप के मन में इतनी करुणा है कि उसे आप ने आलमोस्ट (करीब-करीब) अहिंसा मान लिया है। और यहाँ यह बेचारा जरा आँख भी दिखा दे तब भी 'अब्रह्मण्यम् अब्रह्मण्यम्' करने लगते हैं। तो हमें समझ लेना होगा कि हमारा दुश्मन गरीबी है, मुहताजी है। नक्सलवादी हमारा दुश्मन तो क्या प्रतिपक्षी भी नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि हमारी वृत्ति से अमीर के चित्त में आतंक पैदा हो। लेकिन साथ ही उसके चित्त से किसी प्रकार का आश्वासन हो, यह भी मैं नहीं चाहता। नहीं तो उसमें से क्रान्ति नहीं पैदा होगी। आज जो बीसवा भाग जमीन बँट रही है, यह पहली किश्त है, शुरुआत है। आगे आपकी और जमीन बँटेगी। यह उनसे कहना चाहिए। इसमें हम आपका सहयोग चाहते हैं। लेकिन किसमें सहयोग ? आपके आत्म-श्राद्ध में ! आपलोग विचार प्रचार की आवश्यकता बता रहे थे। विचार प्रचार किस बात का ? इस विचार को ही आपको समझाना पड़ेगा। अगर आप उन लोगों का इतना लिहाज रखेंगे तो एक महान असत्य होगा। उन्हें साफ-साफ कहना चाहिए कि हम भूमि के स्वामित्व का निराकरण करना चाहते हैं। इसमें हम आपका सहयोग चाहते हैं। आप सहयोग करेंगे तो हम आपके सहकार से और नहीं तो प्रतिकार से भी हम यह करके रहेंगे। खुशामद से तो खुदा भी राजी नहीं होता। आज हम मालिक के पास जाते हैं तो यह बात नहीं कहते। मालिक से इधर-उधर की बातें तो करते हैं लेकिन भूमि के सवाल को नहीं छूते, नहीं छूना चाहते। महाराष्ट्र में एक कहावत है 'छाछ माँगने जाते हैं, बर्तन छिपाते हैं।' यह असत्य क्यों ? बहुत स्पष्ट शब्दों में आपको यह बातें साफ-साफ कहनी होंगी। फिर नक्सलवादियों को उत्तर देने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

और हमारा साहित्य-प्रचार ?

कान्ति शाह (गुजरात) और दूसरों ने जो और उद्योगों की बातें कहीं वह आज हमारे लिए अप्रस्तुत है। हम जैसे कृषि-प्रधान राष्ट्र में जमीन के सम्बन्ध को बदलना, यही हमारे लिए पहली और आखिरी क्रान्ति है। आखिर इतना लिहाज रखकर भी कितनी जमीन आप बँटवा सके ? तो, सत्य तो बोलें ! और नहीं तो कुछ साहित्य प्रचार वगैरह करते रहेंगे। और वह भी कैसा साहित्य प्रचार ? गीता-प्रवचन दस लाख बेच लिया। इसमें कौन-सी बड़ी बात की ! वैसी पुस्तकें हमको अंग्रेज लोग जेल में भी पढ़ने के लिए देते थे। आप तो कुरान का प्रचार कर लिया। किन्तु यह सब तो बिलकुल निरुपद्रवी साहित्य है। उसका प्रचार कितना भी कर दो तो भी क्या ? मैं पूछता हूँ कि आपका उपद्रवी साहित्य कितना जाता है ? यहाँ कहीं भाग (राधाकृष्ण बजाज) हो तो मुझे माफ कर दें ! गाँव में कोई जमीन का मालिक नहीं रहेगा, हमारा आन्दोलन यहाँ तक पहुँचा है, अब आगे यहाँ पहुँचेगा, आदि का साहित्य कितना खपता है ? वह तो सारा अध्यात्म है जिसका परलोक से सम्बन्ध है।

छीनने की बात नहीं, लेकिन संघर्ष करेंगे

अब एक आखिरी बात कहकर समाप्त करता हूँ। मनमोहन बाबू ने कहा था कि हम छीनने की बात नहीं कर रहे हैं। जमीन की मिल्कियत के हस्तांतरण की बात कर रहे हैं। मैं मानता हूँ कि छीनने की बात करेंगे तो जोश आयेगा। लेकिन हम छीनने की बात नहीं करेंगे, संघर्ष की करेंगे। और मेरा यह निवेदन है कि जमीन की मिल्कियत के हस्तांतरण के लिए गैर-जमीन वाले और छोटे मालिकों के संगठन की आवश्यकता है। हम उन दोनों को एक करेंगे और बड़े मालिक को 'आइसोलेट' करेंगे। छोटे मालिक की जमीन टैक्स लगाकर नहीं ली जा सकती और वह छीनी भी नहीं जा सकती। क्योंकि वे ज्यादा संख्या में हैं। कारखाने में मालिक थोड़े होते हैं और मजदूर ज्यादा। खेती का चित्र इससे बिलकुल उलटा है। वहाँ मालिक ज्यादा हैं और मजदूर थोड़े हैं। और मालिक भी छोटे-छोटे हैं। इसलिए छोटे-छोटे मालिकों को अपनी मालिकी मिटानी होगी और गैर-मालिकों के साथ बाँटनी होगी। यह दान है। इसमें से उनकी→

जे०पी० का उद्बोधन

असहयोग और सत्याग्रह से ही ग्रामसभाओं में जान आयेगी

—एस० जगन्नाथन्

भोपाल के इस सप-अधिवेशन के अवसर पर मेरे इस भाषण के संक्षिप्त तमिल भाषण को, देवनागरी लिपि में, अलग से छपा हुआ आप देखेंगे। पूज्य विनोबाजी मानते हैं कि देश की एकता के लिए सारी भाषाओं को नागरी लिपि में लिखना आवश्यक है। इस विशाल भारतवर्ष में, जहाँ भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलनेवाले करोड़ों लोग रहते हैं, वहाँ एक राष्ट्रभाषा का सृजन होना बहुत कठिन है। प्रान्तीयता, भाषा मोह, जाति-मोह इत्यादि भावनाओं के जोर पकड़ने के इन दिनों में, काफी लम्बे अर्से में ही एक राष्ट्रभाषा का सृजन होगा। एक राष्ट्रभाषा का सृजन होना तभी आसान होगा जब भिन्न-भिन्न भाषाओं को समझने के लिए एक ही लिपि हो। इन दिनों, जब कि भारतवर्ष में एक राष्ट्रभाषा के सृजन में बाधा पड़ी हुई है, विनोबाजी चाहते हैं कि एक लिपि का इस्तेमाल करें। यह उनके अहिंसा-सिद्धान्त के अनुरूप है जो कोम्य, सोम्यतर, सौम्यतम की सीख देता है। यूरोप के राष्ट्रों में 'रोमन' लिपि ने कई भाषाओं को जोड़ा। इसी तरह भारतवर्ष में, देवनागरी लिपि को मानने के लिए, सर्वोदय आन्दोलन के लोग मार्गदर्शन कर सकते हैं। मैं समझता हूँ कि इसका बहुत विरोध नहीं होगा। इसमें कम से-कम, दक्षिण से आनेवाले सर्वोदय कार्यकर्ताओं को हिन्दी भाषा सीखने में, तथा उत्तर के कार्यकर्ताओं को दक्षिण की किसी एक भाषा को सीखने में बड़ी मदद मिलेगी। देश भर में रहनेवाले सर्वोदय कार्यकर्ताओं को, यदि जनता का मार्गदर्शन करना हो तो विनोबाजी की इस योजना को सफल करना चाहिए।

नागरी लिपि और राष्ट्रीय एकता का सवाल :

हाल में मैंने पवनार में विनोबाजी से मुलाकात की और उन्हें तमिलनाडु का हाल बताया। तमिलनाडु में आजकल शासन करनेवाले द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम वालों का कहना है कि यदि प्रान्तीय स्वतन्त्रता की माँग जल्दी पूर्ण नहीं हुई तो देश में विघटनवाद जोर पकड़ेगा। वे ऐसा धमकाते भी हैं। हरेक कार्य में केन्द्रीय सरकार को दोष देना लगातार करता है। कोई भी कमी हो, केन्द्रीय शासन को दोषी ठहराया जाता है। इस तरह जनता के बीच घृणा की भावना उत्पन्न कर, मानो विघटनवाद का हाथ ऊँचा करते हैं। मैंने ये सारी बातें विनोबाजी को बतायी। सर्वोदय आन्दोलन को शासनमुक्त समाज-रचना

-शक्ति बढ़ेगी। यह है ग्रामदान। ग्रामदान की प्रक्रिया का असली रहस्य यह है। यह हमने अच्छी तरह नहीं समझा और शायद लोगों को भी नहीं समझाया। हमारी क्रान्ति का 'सेंट्रल फिगर' छोटा मालिक है। वह हमारी क्रान्ति की विभूति है। अब तक यह समझाने का काम हमने नहीं किया है। गैर-मालिक और छोटे मालिक जिस दिन एक हो जायेंगे तब उनको बड़े मालिक की खुशामद नहीं करनी पड़ेगी।

कुत्ता पूँछ को हिलाता है या पूँछ कुत्ते को ?

आज समाज में प्रतिष्ठा सत्ताधारी, सम्पत्तिधारी और शस्त्रधारी की है। हम उनकी प्रतिष्ठा का उपयोग करके ग्रामदान प्राप्त करते हैं। आप कहते हैं कि हम उनका सहयोग लेते हैं। मैं कहता हूँ आप सहयोग नहीं लेते, बल्कि उनका औजार बनते हैं। उन प्रतिष्ठित मूल्यों को आप सोचते हैं। तो, हम परिस्थिति का दबाव पैदा करना चाहते हैं, वह नैतिक दबाव है, क्योंकि वह त्याग का दबाव है। वह खुद अपनी सम्पत्ति का त्याग करने के लिए तैयार हुआ है, इस 'प्रेशर' को हम अवश्य खड़ा करना चाहते हैं।

आप देखेंगे कि इस देश में अब सारे क्रान्तिकारियों को कारखाना छोड़कर जमीन पर आना पड़ा है। पहले तो आपको कहा जाता था कि आपलोग नगरों को छूते नहीं, लेकिन आज वे सारे नगरों को छोड़कर देहात में आने लगे हैं। इसमें भी इस तथ्य का स्वीकार है कि यहाँ मुख्य समस्या जमीन की है।

आपलोगों ने एक कदम का साथ पकड़ लिया। दो ही मार्ग हैं। एक भीख का और दूसरा डाके का। वे डाका डाल कर अपना काम निभाते हैं, और आपने भीख का रास्ता अपनाया। हमें तो इन दोनों को छोड़ना है। तीसरा रास्ता गैर-मालिकों और छोटे मालिकों को मिलाकर 'प्रेशर' खड़ा करने का है। उन दोनों को एक करके नैतिक शक्ति पैदा करने का काम करना चाहिए। कोई "लॉबी" बनाने की बात कर रहा था। आपकी 'लॉबी' कौन-सी होगी ? कुत्ता पूँछ को हिलाता है या पूँछ कुत्ते को ? कहाँ तो आपको शक्ति पैदा करनी होगी ? और वह होगी कृषि के क्षेत्र में।

ग्रामदान पुष्टि गोष्ठी का समारोप भाषण

भोपाल, २३-१०-७१

विचारधारा के नाते विकेन्द्रित शासन-पद्धति का हम स्वागत करते हैं। गाँव के स्तर पर ग्रामस्वराज्य का लक्ष्य हमारे सामने है। वैसे ही केन्द्र तथा प्रदेश की मर्यादाओं को निर्धारित कर हमें कार्य करना चाहिए। गाँववाले यह महसूस करते हैं कि जैसे केन्द्र (दिल्ली) में अधिकतर अधिकार जमा हुआ है, वैसे ही प्रदेशों में भी अपरिमित सत्ता जमी हुई है। केन्द्र से प्रान्त को, तथा प्रान्त से गाँव को, बहुत जल्दी ही अधिकार चला जाना चाहिए। कुछ बचे-खुचे अधिकार केन्द्र और प्रदेश में हो सकते हैं। इसके बारे में ठीक-ठीक नीति निर्धारित करनी चाहिए। देश की समस्याओं को संकीर्ण दलीय दृष्टि से न देखकर, राष्ट्र-कल्याण की दृष्टि से जाँचना चाहिए।

तमिलनाडु में प्रान्तीय स्वतन्त्रता की माँग पर जोर देने के लिए पाकिस्तान की पूर्वी बंगाल की समस्या की ओर इशारा करते हैं। पूर्वी बंगाल के लोगों की मर्यादित स्वशासन की माँग की जब अवहेलना की गयी, तब वहाँ के लोगों की असहयोग-शक्ति अधिक मात्रा में प्रकट हुई। सैनिक शासन की क्रूरता तथा पशु-बल के कारण लाखों के बलि हो जाने के बाद वहाँ प्रदेश स्वायत्तता की माँग छूट गयी, परन्तु अलग राष्ट्र स्थापित होकर विघटनवाद की जीत साबित हुई—इसकी ओर भी इशारा करके प्रान्तीय स्वतन्त्रता की माँग पर अधिक जोर देते हैं। तमिलनाडु की इस हालत को विनोबाजी को जब बताया गया तो उन्होंने यह सलाह दी कि देश की एकता के लिए एक लिपि आवश्यक है। हमें इस पर ध्यान देना चाहिए। दक्षिणी प्रान्तों के सर्वोदय साहित्य तथा पत्र-पत्रिकाओं में कुछ खास विचार तथा समाचार नागरी लिपि में, और उसी तरह, उत्तर के प्रदेशों के हिन्दी साहित्य तथा पत्र-पत्रिकाओं में थोड़ा अंश दक्षिणी भाषाओं में अनुवादित नागरी लिपि में प्रकाशित करना चाहिए। मुख्य सर्वोदय साहित्य भी उसी तरह नागरी लिपि में प्रकाशित होना चाहिए।

राज्यों की सीमाएँ :

इसके अलावा सर्वोदय आन्दोलन को इस पर गौर करना चाहिए कि किसी राजनैतिक या दलीय दृष्टि से नहीं, बल्कि देश की भलाई को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों की मर्यादायें निर्धारित करें। मैं समझता हूँ अब वह समय आ गया है। केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों के अधिकार के सम्बन्ध में तमिलनाडु शासन ने राजमन्नार कमिटी नियुक्त की और उसकी रिपोर्ट भी प्रकाशित हुई है। केन्द्रीय सरकार ने इस रिपोर्ट की जाँच न कर, इस समस्या को स्थगित रखा है, ऐसा मालूम पड़ता है। फिर भी सर्वोदय आन्दोलन के राजनैतिक निपुणों को चाहिए कि वे राजमन्नार कमिटी रिपोर्ट तथा तत्सम्बन्धी अन्य विचारों की जाँच करें। केन्द्रीय सरकार से राज्यकीय सरकार को, राज्यकीय शासन से ग्रामस्वराज्य को, कितना ज्यादा अधिकार मिले और केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकार को कितना कम अधिकार हो—ये सारी बातें निर्धारित कर जनता के सामने रखें। इसे करने की जिम्मेदारी सर्वोदय आन्दोलन को लेनी चाहिए। मैं समझता हूँ कि यह बहुत आवश्यक है। इसमें देरी करना आपत्तिजनक है। अधिकारों को बाँटते समय देश की एकता हमारा लक्ष्य होना चाहिए। ग्रामस्वराज्य के मुताबिक इस विकेन्द्रीकरण की नीति निर्धारित करने का हक सर्वोदय वालों को ही है। इसमें श्री जयप्रकाशजी व अन्य सर्वोदयी नेताओं का मार्गदर्शन आवश्यक है ऐसा मैं मानता हूँ। मुझे आशा है कि यदि इस विषय पर भिन्न-भिन्न विचार इकट्ठा होंगे तो एक कार्य-पद्धति भी तैयार होगी।

बंगला देश

पूर्वी-बंगाल की स्वतन्त्रता की माँग को भारत, पाकिस्तान का विभाजन नहीं समझता। जनता की लोकतान्त्रिक जागृति का दमन कर, भयानक मिलिटरी शासन फासिज्म पद्धति का सहारा लेकर, आज पाकिस्तान पूरे संसार के धिक्कार का पात्र बना है। चाहे अमेरिका के कुछ राज्य, जिनका लक्ष्य व्यापारिक शोषण है, पाकिस्तान की इस चाल के पीछे ताल दे सकते हैं, परन्तु अब दुनिया की कोई भी शक्ति बंगला देश की इस माँग का न दमन कर सकती है, न इसे टाल सकती है। बंगला देश के लोगों की लोकतान्त्रिक माँग का समर्थन कर, उसके पक्ष में किसी की आवाज पहले पहल हमारे देश में उठी तो वह थी जयप्रकाशजी की। इसका हमें बड़ा गर्व है। तब से आज तक, बंगला-देश के स्वातन्त्र्य संग्राम का समर्थन कर, उसके पक्ष में दुनिया के लोगों के विचार एकत्र करने में सर्वोदय आन्दोलन सहायक बनकर रहा है। नासिक सम्मेलन में कुछ खास योजनाएँ बनीं, दुनिया के देशों में श्री जयप्रकाशजी का भ्रमण तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, इन दोनों से काफी फल मिला। गांधीजी के समय के बाद, इतने बड़े पैमाने में जनआन्दोलन के तौर पर अहिंसक लड़ाई, मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व में सफलता से हुई। लेकिन, हिटलर के शासन की क्रूरता से अधिक क्रूर पाकिस्तान के भयकर मिलिटरी शासन से लाखों लोगों को मौत के घाट उतारा और जनता की अहिंसक शक्ति को दुर्बल किया। मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व से वंचित जनसमुदाय ने भयकर अत्याचार को सहन कर असहनीय संकट झेले। फासिस्ट पशुबल से टक्कर लेने वाले और अहिंसक क्रान्ति का मार्गदर्शन करनेवाले नेता, पाकिस्तान के कारागृह में डाले गये।

विश्व-शान्तिसेना : विनोबा के सुझाव

गांधीजी ने हिटलर के एकाधिपत्य शासन को व यूरोप के राष्ट्रों को अहिंसा का मार्ग दिखाया।

विनोबाजी का महत्त्वपूर्ण सुझाव था कि सात लाख शान्ति-सैनिकों की एक शान्तिसेना यू० एन० ओ० में काम करनी चाहिए। यह सुझाव उन ऊँचे मालिकों तक शायद पहुँचा नहीं। यदि ऐसी एक फौज यू० एन० ओ० की तरफ से पूर्वी बंगाल

में काम करेगी तो संसार की अहिंसक शक्ति की अपार महिमा प्रकट होगी। आज की खास परिस्थिति में हम ऐसी हालत में पड़े हुए हैं कि भारत में अहिंसक कार्रवाई नहीं कर सकते। सर्वदेशीय राष्ट्रों की ओर से यू० एन० ओ० में ऐसी एक शान्तिसेना का आयोजन नामुमकिन होने पर भी भिन्न-भिन्न देशों की शान्ति-स्थापक संस्थाएं आम जनता की ओर से विश्व-शान्तिसेना कायम कर सकती हैं जो संसार के किसी कोने में अत्याचार देखते ही अहिंसक ढंग से शान्ति कार्य करने के लिए हमेशा तत्पर रहें। सर्वोदय आन्दोलनवाले हमलोगों का कर्तव्य है कि इस पर भी विचार-विमर्श करें।

अमेरिका की स्थिति बहुत विपरीत है। राष्ट्रपति निक्सन से बातचीत करने का फल जो भी हो, अपनी रक्त-शान्ति व युद्ध की तैयारी को थोड़ा भी ढीला न करने के दृढ़ निश्चय को चाउ-एन-लाइ द्वारा व्यक्त करने के बाद भी निक्सन चीन के नेताओं से संधि करने के लिए आतुर हैं। ये दोनों राष्ट्र ही वियतनाम के हत्याकांड के कारण हैं। अमेरिका का पूंजीवाद और चीन का साम्यवाद—ये दोनों युद्धशस्त्र के उत्पादन तथा युद्ध की तैयारी को छोड़नेवाले नहीं हैं। इन बड़े राष्ट्रों की स्थिति यदि नहीं बदलेगी तो इस दुनिया का नाश निश्चित है। अन्य देशों को चाहिए कि इन बड़ी सत्ताओं की युद्ध-भावना का खण्डन करें व स्वयं युद्ध-औजारों को बढ़ाने में न लगें। इस तरह अहिंसा की एक दूसरी शक्ति खड़ी करने में उन्हें लगना चाहिए। साहसपूर्वक निःशस्त्रीकरण के लिए तैयार हो जायें। विनोबाजी समय-समय पर जोर देते हैं। बड़ी सत्ताओं की युद्ध-भावना के खिलाफ व अन्य राष्ट्रों के निःशस्त्रीकरण आन्दोलन के नेतृत्व का भार क्या भारत ले सकता है? यह एक महत्त्वपूर्ण सवाल है। पाकिस्तान और चीन के भय के कारण भारत भी यथाशक्ति युद्धशस्त्र इकट्ठा करने में लगा हुआ है। यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। चीन व पाकिस्तान की गति जो भी हो, भारत निःशस्त्रीकरण के लिए तैयार हो। उसके लिए भारतवासियों की अहिंसक शक्ति बढ़नी चाहिए।

राष्ट्रीय अहिंसक शक्ति का विकास

राष्ट्र की आर्थिक व सामाजिक समता के लिए अहिंसा का सहारा लेना चाहिए। तभी इस देश में अहिंसा की शक्ति पैदा हो सकती है। पूर्वी राष्ट्रों में, खासकर जो कृषिकर राष्ट्र हैं, उनमें भूमि समस्या के मार्फत ही सामाजिक क्रान्ति हो सकती है। एशियाई राष्ट्रों में चीन इसका बहुत बड़ा सबूत है। यूरोप में रूस जैसे औद्योगिक राष्ट्र में मजदूर क्रान्ति हुई। लेकिन एशियाई राष्ट्रों की हालत भिन्न है। चीन ने हिंसा के तरीकों से बहुत बड़ी क्रान्ति की और अपने इस हिंसा या अत्याचार के सिद्धान्त को आज सारे संसार में फैलाने में लगा है। इस देश में जगह-जगह पर नक्सलवादियों के हिंसा-काण्ड चलने का यही कारण है। माओत्से-तुंग को अपना नेता घोषित कर धमकानेवाले लोग भी इस देश में रह रहे हैं। इसका एकमात्र इलाज केवल अहिंसक तरीकों की बुनियाद पर स्थिर भूक्रान्ति आन्दोलन को गति देना ही हो सकता है। तभी चीन के हिंसक मार्ग के खिलाफ, एक अहिंसक मार्ग हिन्दुस्तान संसार को दिखा सकेगा। हम भी पिछले बीस सालों से विनोबाजी के नेतृत्व में भूदान-ग्रामदान के द्वारा इस शोध में लगे हुए हैं। और एक हद तक सफल भी हुए हैं। लेकिन क्रान्तिकारी परिवर्तन की तरफ हम आगे नहीं बढ़े। इस देश के आधुनिक विचार के दलवाले भी जिन विचारों को खुल्लमखुल्ला व्यक्त नहीं करते, वैसे विचारों को, जैसे—'जमीन की निजी मालिकी दूर हो', 'जमीन का स्वामी मनुष्य नहीं' 'सबै भूमि गोपाल की'—हम सर्वोदय के लोग कहते आ रहे हैं। किन्तु किसी एक गाँव में भी ऐसा नमूना नहीं दिखा सके! क्या यह नामुमकिन है? एक विशाल क्षेत्र में इसे कार्यान्वित करके कब हम दिखा सकेंगे? इसे करने पर ही हम अपने सिद्धान्त के मुताबिक काम करनेवाले साबित होंगे।

आन्दोलन के साथ-साथ हमारे कार्यक्रम भी आगे बढ़े हैं। भूदान से ग्रामदान तक की उन्नति ठोस और स्थिर प्रगति है। यह आन्दोलन की स्वाभाविक तथा उन्नतिशील प्रगति है। यदि भूदान तक रुक गये होते तो ग्रामस्वराज्य की स्थापना को हम नहीं देख सके होते। हमने ग्रामदान के मार्फत, एक अपूर्व समाज व्यवस्था का दर्शन संसार के सम्मुख रखा। विनोबाजी के ज्ञान-भण्डार से तथा आत्मिक शोध से मिली यह अद्भुत देन है। ग्रामदान के बाद ग्रामसभा के द्वारा लोकशक्ति पैदा हो सकती है। लेकिन काफी संख्या में ग्रामदान के मिलने के बाद भी, उनके द्वारा लोकशक्ति प्रकट नहीं हुई। ग्रामदान के बाद जिस क्रान्ति की अपेक्षा की गयी, उसके न होने के कारण अब हम अन्धकार में टटोल रहे हैं, ऐसा मुझे लगता है। हमें अब तक प्रकाश नहीं मिला। बिहार प्रान्त के मुसहरी प्रखण्ड में वह प्रकाश दिखाई दिया। जयप्रकाशजी ने उस प्रकाश को उत्पन्न किया। किन्तु इधर जयप्रकाशजी को अपना ध्यान बंगला देश जैसी अन्य समस्याओं पर मोड़ना पड़ा। बिहार में सहरसा, राजस्थान में बीकानेर, महाराष्ट्र में ठाणा, तमिलनाडु में तंजावूर और अन्य जिलों में यह कार्य आरम्भ हुआ है। ग्रामस्वराज्य-सभा के द्वारा लोकशक्ति को जाग्रत कराने का उपाय हमें नहीं सूझ रहा है, इसके क्या कारण हैं यह हमें ढूंढ़ना चाहिए।

भू-समस्या हल करने के काम में जुटना ही होगा

भोपाल के इस अधिवेशन के समय पुष्टि-कार्य में लगे हुए कार्यकर्ताओं की अलग सभा जो हुई है उसका मैं स्वागत

करता हूं। ग्रामदान के बाद ग्राम-स्वराज्य की ओर आगे कैसे बढ़ें ?—विज्ञान की दृष्टि से, और व्यावहारिक तौर पर हमें योजनाएँ बनानी चाहिए। इतने दिन के पुष्टि-कार्य का अनुभव हमें क्या बताता है ? ग्रामसभा के संघटन के बाद बीसवाँ भाग का भूमि वितरण करा कर हमें रुक जाना नहीं चाहिए, बल्कि भूसमस्या को लेकर उसके हल के लिए काम करना आवश्यक है—ऐसा मैं समझता हूँ। कई ग्रामदानी क्षेत्रों में कृषि-आय बहुत कम है। इस कृषि-आय को बढ़ाने के लिए उचित कार्रवाई करनी चाहिए। बेदखली जैसे समाजविरोधी कार्य होने से रोकना चाहिए। 'टैनेन्सी एक्ट' पर देश भर में अमल नहीं हो रहा है। ग्रामसभाओं को चाहिए कि वे जल्दी-से-जल्दी ऐसे कदम उठायें ताकि जमीन सम्बन्धी खास कानून कार्यान्वित हों। मन्दिर, मठ तथा सरकारी 'पुरम्बोक' (गैर-मजरुआ) जमीन जो सामान्य तौर पर बड़े मिराजदारों के कब्जे में हैं, उन्हें उनके शोषण से मुक्त कराकर भूमिहीन कृषकों को दिलवाना चाहिए। जो स्वयं जमीन पर काम नहीं करते तथा जो भूस्वामी गैरहाजिर रहते हैं उनकी जमीन ग्राम-सभा ठेके में ले सकती है और आगे चल कर उचित मुआवजा देकर ग्रामसभा स्वयं उसे अपने अधिकार में ले सकती है। इसी तरह बागायत जमीन गरीब को मिले, ऐसी योजनाएँ तैयार होनी चाहिए। यदि ग्रामसभाएँ ऐसे कार्य में लग जायें तो गाँव के लोग जाग्रत होंगे एवं अहिंसा की शक्ति प्रकट होगी।

केन्द्रीय व प्रादेशिक सरकारों की योजनाओं के फलस्वरूप करोड़ों एकड़ जमीन कृषि के लायक तथा उर्वरा बनी है। बाँध और झील योजना के अन्दर लाखों एकड़ सूखी कृषि योग्य भूमि सिंचित हुई है। अधिक अन्न उपजाने के लिए करोड़ों रुपये खर्च कर वहाँ 'पैकेज योजना' काम करती है। लेकिन सिंचित जमीन के क्षेत्रों में ही विषमताएँ अधिक हैं—बंगाली राज करती है। उर्वरा जमीन के क्षेत्रों की जनता कंगाली में मर रही है। खासकर इन्हीं क्षेत्रों में राजनैतिक पक्षों के हिंसक आन्दोलन चल पाते हैं। सूखी जमीन के क्षेत्रों में बीसवाँ भाग किसी तरह मिल जाता है, पर सिंचित जमीन के क्षेत्रों में वह नहीं मिलता है। जहाँ शोषण अधिक मात्रा में है, जहाँ जमीन एकाध लोगों के पास केन्द्रित है, वहाँ सब जमीन का ग्रामदान में आना अत्यन्त कठिन है। तन्जावूर जिला इसका एक उदाहरण है। पिछले डेढ़ साल से ग्रामसभाएँ स्थापित कर कार्य करने पर भी अब तक कोई बीसवाँ भाग जमीन देने के लिए आगे नहीं आया। भूस्वामी व मजदूर के बीच मनमुटाव बढ़ता है। एक ओर जमीन का एकाध लोगों के पास केन्द्रित रहना और दूसरी ओर भूमिहीनों की समस्या बढ़ना, इस हालत में बीसवाँ भाग मिलने पर भी कितना फायदा हो सकता है ? हाथी की भूख कहाँ और मुरमुरा कहाँ ? इस बारे में श्री मनमोहन चौधरी का एक नोट उचित समय पर हमको मिला है। जब बीसवाँ भाग ही नहीं मिलता तो करें क्या ?

तंजावूर जिले में बीसवाँ भाग नहीं मिलने की इस स्थिति के बारे में जब विनोबाजी से पूछा गया, तो उन्होंने दसवाँ भाग माँगने की सलाह दी। यह विचित्र लग सकता है, परन्तु मैं ऐसा नहीं समझता। इसमें विनोबाजी की क्रान्तिकारी दृष्टि है। जमीन का बीसवाँ भाग ही नहीं, बल्कि समानता लाने के हिसाब से जितनी जमीन माँगी जायगी उतनी न मिलने पर हमारे सामने एक ही रास्ता खुला रहेगा—वह है असहयोग या सत्याग्रह का। उपर्युक्त भूमि समस्याओं को हल करने के कार्य में ग्रामसभा लगेगी तो उसमें जान आयेगी और जाग्रत होगी। लोकशक्ति की भी सिद्धि होगी, अहिंसा शक्ति प्रकट होगी। इसके बारे में खूब सोच विचार कर कार्य करने का समय अब पास आ गया है, ऐसा मैं समझता हूँ।

मद्य-निषेध

ग्रामदान 'प्राप्ति', 'पुष्टि' कार्यों में लगे रहने के दरम्यान कई तरह के सवाल उठ खड़े होते हैं। आम चुनाव रूपी तूफान में लोकशक्ति तितर-बितर हो जाती है, गाँव तितर-बितर हो जाता है। इसका इलाज है 'लोकनीति', जो सर्वोदय आन्दोलन का एक अंश है। लेकिन लोकनीति को कैसे ला सकते हैं ? कहाँ ? और कब ? ये सवाल हमारे सम्मुख उठते हैं। कई प्रान्तों में मद्यनिषेध रद्द हो गया। जनता नीचे की ओर खिंच गयी। भिन्न-भिन्न प्रादेशिक सरकारें ही इसका कारण हैं। कई तरह के बहाने किये और मद्यनिषेध पर किसी ने तीव्र रूप से अमल नहीं किया। जिस तमिलनाडु ने अधिक तीव्र रूप से अमल किया था उसने भी इसे छोड़ दिया। कई वर्षों के बाद आज तमिलनाडु का सामाजिक जीवन पीछे ढकेल दिया गया। आखिर मद्यनिषेध रद्द करने से गरीब जनता की ही बलि होती है। मद्यपान की आदत में पड़कर डूबे हुए आदिवासियों, हरिजन व पिछड़े हुए जनसमुदाय की तरक्की में बाधा पड़ती है। जब तक ये पीने की आदत में पड़े रहेंगे, तब तक इनकी उन्नति नामुमकिन है। जब तक मद्यनिषेध कानून पर पूर्ण रूप से अमल नहीं होता, तब तक ग्रामदान, खादी इत्यादि जो भी कार्यक्रम हों, फेल हो जायेंगे। इस जहर ने मानव-बुद्धि का नाश करके मनुष्य को पाताल में ढकेल दिया। मद्यनिषेध को फिर से अमल में लाने का जिम्मा सर्वोदय कार्यकर्ताओं का है। यह भी कब, कहाँ और कैसे करें, यह तय करना चाहिए।

लोकनीति

बंगला देश में लोकतान्त्रिक आन्दोलन ने भी हमारा ध्यान खींचा है।

'लोकनीति', 'मद्यनिषेध' जैसे राजनैतिक-सामाजिक कार्यक्रमों का लाभ लेने

द्वारा पूर्ण करना हो तो ग्रामस्वराज्य-सभा के अलावा कोई अन्य रास्ता नहीं दीखता। इतना काफी नहीं होगा कि एकाध देश-भक्त समाजसेवक इसके बारे में चिन्ता करें। राजनैतिक स्वतन्त्रता की लड़ाई में उच्च और मध्य वर्ग के लोगों ने अधिक संख्या में लगकर देश का नेतृत्व किया। लेकिन आज ऐसा जमाना आ गया है, जब समाज के नीचे के स्तर में रहनेवाले लोग सामाजिक क्रान्ति के लिए नेतृत्व करेंगे। अब परिश्रम करनेवाले लोग ही अग्रसर हों और नेतृत्व करें। जनता की अहिंसक क्रान्ति का संगठन है ग्रामस्वराज्य-सभा। प्रखण्ड के स्तर पर तथा जिला स्तर पर ग्रामसभाएँ संगठित करके वहाँ लोकनीति, मद्यनिषेध आदि कार्यक्रम को चलाना ही एक ठोस योजना मालूम होती है। ग्रामदानी ग्रामस्वराज्य-सभा 'मद्यनिषेध' को स्थिर करेगी। और 'मद्य-निषेध' और 'लोकनीति' जैसे कार्यक्रम ग्रामस्वराज्य-सभा को स्थिर करेंगे। इस-लिए मुझे लगता है कि इन योजनाओं को ग्रामदानी क्षेत्रों में चलाना अत्यावश्यक है। इनके द्वारा ही ग्रामस्वराज्य-सभाओं में तेजी आयेगी, जिससे लोकशक्ति प्रगट होगी। गोराजी ने लोकनीति के बारे में काफी तीव्र रूप से चिन्ता की है और उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनसे मेरी विनती है कि लोकनीति पर अमल करने के लिए जो बुनियादी इकाइयाँ हैं उन्हें स्थापित कर इस कार्य में अत्यधिक तीव्रता से लग जायें।

ग्रामस्वराज्य-सभा के संगठन के बाद 'सबको काम' 'सबको रोटी',—इस न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति स्वयं ग्राम-स्वराज्य-सभा करेगी। जब तक ग्राम-स्वराज्य-सभाएँ—इस जिम्मेदारी को नहीं उठायेंगी, तब तक करोड़ों रुपये खर्च कर चाहे जितनी पंचवर्षीय योजनाएँ बनायें, जनता को कुछ फायदा नहीं मिलेगा।

इस के बाद, 'ग्रामोद्योग' को ग्रामस्व-राज्य-सभाओं के द्वारा चलाने से गाँव में काम-धंधा तथा रोजगारी मिलेगी। ग्राम-भिमुख खादी या ग्रामस्वराज्य-अभिमुख खादी की योजना ग्रामदान से जोड़ने की आवश्यकता हम महसूस करते हैं। खाद्य उत्पादन तथा अन्य ग्राहक पदार्थ उद्योग ग्रामसभा की ओर से ही चलें। खादी इन सबका केन्द्र है। खादी आन्दोलन को चाहिए कि वह व्यापार की दृष्टि से हटकर ग्रामस्वराज्य-अभिमुख क्रान्तिकारी आन्दो-लन के रूप में शीघ्र बदले।

हमारे अपने बारे में दो शब्द

मुझे लगता है कि हमारी अपनी 'साधना-शून्यता' भी आन्दोलन की मन्द गति का मुख्य कारण है। सौभाग्य से हमें ऐसे नेता मिले हैं जो 'साधना' के शिखर हैं, यानी अपना पूरा जीवन जो 'साधना' ही में लगाकर आज भी सूक्ष्म साधना में लगे हुए हैं। हजारों वर्षों में कभी-कभी ही विनोबाजी के समान महा-पुरुष इस दुनिया को मिलते हैं। अद्भुत साधनाओं को पूर्ण करने के बाद उन्होंने जानबूझकर अपने को आन्दोलन के नेतृत्व से मुक्त कर लिया और आज एक दर्शक के नाते गौर से देख रहे हैं कि हम किस तरह काम कर रहे हैं। मैं समझता हूँ, शायद यह भी उनकी अपनी साधना का एक अंश है। वे निस्पृह हो, दूर रहकर फिर उसी समय आन्दोलन के ध्यान में ही निमग्न हैं। विनोबाजी ने आन्दोलन की उन्नति के लिए जानबूझकर जो इस साधना को अपनाया है, इसे न समझनेवाले कुछ लोग उन पर आरोप करते हैं कि विनोबा जी आन्दोलन से पीछे हट गये। लेकिन यह दोष देनेवालों की कमजोरी है।

हममें साधना नहीं है। हममें से कई अपने लिए घर-द्वार, जमीन-खेत रख रहे हैं। खेत में थोड़ा भी हम श्रम नहीं करते, फिर भी हममें से कई लोग अपनी निज की जमीन रखते हैं। क्या उन्हें समाज को दे देना नहीं चाहिए? वैसी 'साधना' हम सबकी होनी चाहिए। संस्था, आश्रम आदि के नाम हम जमीन रखते हैं और उसका फल भोगते हैं जिससे जनता का शोषण करते हैं। सर्वोदय आन्दोलन में लगे हुए हमलोगों को चाहिए कि हम जब तक जमीन पर परिश्रम नहीं करते तब तक जमीन की मालिकी को छोड़ देने की इस 'साधना' में शामिल हों।

इसके अलावा श्रम के रूप में हम कुछ नहीं करते। गांधीजी के दैनिक जीवन में कताई एक साधना के रूप में उनके आखिरी दम तक नियमित रूप से चलती थी। विनोबाजी ऐसे महापुरुष हैं जिन्होंने कई साल कताई की तथा खेत पर काम करके जीवन बिताया। इस जर्जर बुढ़ापे में भी सूक्ष्म योग के नाते रोज चार-पाँच घंटे कूड़े-कचरे साफ करने तथा घास-फूस निकालने का क्या अर्थ है? यह, उनके लिए ध्यानयोग और साधना है। हममें से कई लोग रोज आधे घन्टे की कताई-साधना में भी नहीं लगते। श्रम करने वालों से एक होने के लिए इनकार करते हैं। ये सब हमें कमजोर करते हैं।

आन्तरिक जीवन की साधना-पद्धतियों को भी हमलोग अपनाते नहीं। विनोबाजी ने हमें, रोज एक घण्टा, महीने में एक दिन और एक साल में एक हफ्ता एकान्त-वास करने का सूत्र दिया है। आन्तरिक अध्ययन व आत्म-शुद्धि के लिए, जीवन में हमें साधना को जगह देनी चाहिए। इसे ईश्वर-भक्ति या आस्तिकता मानकर अवहेलना न करें। हमारे मशहूर नास्तिक गोराजी भी साधना में ओत-प्रोत रहनेवाले हैं। वे भगवान को इनकार करते हुए, उसे बार-बार याद करते हैं। उनकी साधना के फलस्वरूप प्रकाशित होनेवाली है 'नास्तिक' नामक पत्रिका। उनकी निज की एक इंच भूमि भी नहीं है, न बैंक के खाते में एक पैसा है। एक छोटी बस्ती में ही वे अपने साधनामय जीवन व्यतीत करते हैं। विनोबाजी का बल केवल साधना का बल है। एकान्त-वास, उपवास और साधना हम सबको चाहिए। अपनी साधना के बल से ही आन्दोलन के लिए हम सुयोग्य पात्र बनेंगे। यह सब कोई उपदेश नहीं, बल्कि मेरी अपनी कमजोरी को, यहाँ इस सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में इकट्ठे हुए भाइयों के सामने विचारार्थ पेश करता हूँ। ●

ग्रामस्वराज्य की ओर द्रुत गति से बढ़ना है

नासिक-अधिवेशन के साढ़े पाँच माह के बाद हम सब भाई-बहन भोपाल में मिल रहे हैं। नासिक में ग्रामदान-पुष्टि-प्राप्ति, संघटन एवं बंगला देश, इन तीन विषयों पर हमने निर्णय लिये थे। इन निर्णयों को हमने इन दिनों में कहाँ तक कार्यान्वित किया? पुष्टि एवं प्राप्ति के द्वारा ग्रामस्वराज्य आंदोलन कितना आगे बढ़ा? जनशक्ति कितनी प्रकट हुई? संघटन की क्या हालत है? संघटन के प्राणस्वरूप कार्यकर्ताओं का अपना कितना विकास हुआ? बंगला देश का प्रश्न हल करने में सर्वोदय-जगत ने क्या रोल अदा किया? इन प्रश्नों के कौन से उत्तर हमने गत साढ़े पाँच माह में दिये?

पुष्टि :

प्रथम पुष्टि को ही लें। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष ने नासिक के अपने प्रास्ताविक भाषण में कहा था कि कम-से-कम एक सौ क्षेत्र देश भर में बनाकर उनमें जमकर बैठना चाहिए और जनशक्ति की खोज करनी चाहिए। इस दिशा में कुछ प्रगति हुई, यद्यपि वह पर्याप्त नहीं मानी जायेगी। बिहार में पुष्टि का काम इन दिनों कुछ आगे बढ़ा है। इस अवधि में संघ के अध्यक्ष बिहार, महाराष्ट्र, तमिलनाडु में और मंत्री बिहार, महाराष्ट्र एवं आंध्र में पुष्टि-कार्य को बल पहुँचाने के लिए घूमे।

सहरसा जिले में वहाँ चलनेवाले काम को मदद करने संघ के मंत्री तीसरी बार गये एवं भूमि-जयन्ती से चरखा-जयन्ती तक वहाँ चलाये जानेवाले अभियान के लिए देश भर के प्रमुख साथियों से वहाँ मदद देने के लिए निवेदन किया। देश भर के कई अनुभवी साथी गत साल भर में बीच-बीच में वहाँ जाते रहे हैं। पर ११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक के अभियान में कई चोटी के साथी वहाँ गये। संघ के अध्यक्ष भी वहाँ पाँच दिनों के लिए गये। बाढ़ के बावजूद जिले के चौबीस प्रखंडों में से बाईस प्रखंडों में पुष्टि का अभियान चला। स्थानीय राजनैतिक नेताओं एवं शिक्षकों का अच्छा सहयोग भी मिला। फलस्वरूप सहरसा के पुष्टि-अभियान में एक नये पर्व का प्रारम्भ हुआ है। बंगला देश के काम में श्री जयप्रकाशजी के लग जाने से उनकी अनुपस्थिति में भी मुसहरी में काम आगे बढ़ रहा है। पूर्णियाँ जिले में रूपौली के बाद भवानीपुर प्रखंड में पुष्टि का काम प्रारम्भ हुआ है। मुंगेर जिले में झाझा की प्रखंड-स्वराज्य-सभा देश की प्रथम प्रखंड-स्वराज्य-सभा है जो हर माह मिलती है और समस्याओं पर विचार करती है। अब वहाँ नजदीक के चकाई प्रखंड में पुष्टि-कार्य प्रारम्भ हुआ है। गया जिले में कौआकोल, दरभंगा जिले में बिरौल, चम्पारन जिले में नरकटियागंज, मुजफ्फरपुर जिले में वैशाली, मुंगेर जिले में चौथम, बेलदौर, भागलपुर जिले में नौगछिया, गोपालपुर, नाथनगर इत्यादि प्रखंडों में यही कम और यही अधिक पुष्टि का काम चल रहा है। तमिलनाडु के तंजावूर जिले के पूर्वी हिस्से में मठ-मन्दिर की जमीन के प्रश्न पर सफलता मिलने से अब पुष्टि का काम आसान होगा। वैसे तमिलनाडु के छः जिलों के चौदह प्रखंडों में बड़ा काम शुरू हुआ है। तमिलनाडु में जमीन-मालिकों का एवं गैरहाजिर मालिकों का सहयोग कैसे मिले, यह विचारणीय प्रश्न है।

राजस्थान में बीकानेर जिले में पुष्टि का काम थोड़ा आगे बढ़ा है। वहाँ अब ग्रामदान-कानून के नियमों का इन्तजार किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश में उत्तर काशी जिले में पुरौला प्रखंड में अच्छा से अच्छा काम वहाँ के साथियों ने गर्मी के दिनों में किया। बलिया, फर्रुखाबाद एवं आगरा जिलों में पुष्टि कार्य प्रारम्भ हुआ है। मध्य प्रदेश में टीकमगढ़ जिले में बलदेवगढ़ प्रखंड में प्राथमिक बाधाओं को पार किया गया है और इन्दौर जिले में सांवेर प्रखंड में काम का ठीक प्रारम्भ हुआ है। गुजरात में भरूच जिले के आमोद प्रखंड में गुजरात के साथी निष्ठा से काम में डटे हैं। महाराष्ट्र में अकोला जिले में अकोट, भण्डारा जिले में मोहाडी, थाना जिले में भिवंडी और कोल्हापुर एवं सांगली जिले में काम शुरू हुआ है। आंध्र में महबूबनगर जिले में आत्मकूर प्रखंड में पचास ग्रामसभाओं का गठन हुआ है।

सुदूर असम में तेजपुर, शिवसागर, लखीमपुर एवं कामरूप जिले में पुष्टि-कार्य प्रारम्भ हुआ है। यद्यपि यह गिनती एक सौ नहीं होगी फिर भी, करीब पचास प्रखंडों में कुछ वरिष्ठ साथी निष्ठा से जमकर बैठे हैं, यह प्रसन्नता की बात है। अधिक संख्या में साथी देश के अधिक प्रखंडों में बैठें और सातत्य में वृद्धि हो तो देश में साल भर में एक सौ प्रखंड जनशक्ति-निर्माण की दृष्टि से सघन क्षेत्र के रूप में विकसित हो सकते हैं। यह कैसे होगा?

पुष्टि-कार्य को करते-करते कई प्रश्न निर्माण हुए हैं। सही ग्रामसभा का गठन ठीक से हुआ है और वहाँ केवल ऊपर का वर्ग ही ग्रामसभा की कार्य-समिति में स्थान पा सका है। भूमिहीनों का, अन्य गरीबों का, पिछड़ी हुई जातियों का एवं स्त्रियों का प्रतिनिधित्व ग्रामसभा की कार्य-समिति में पर्याप्त मात्रा में कैसे होगा? ग्रामसभा की बैठकें नियमित हों और उनमें काफी लोग शरीक हों, यानी ग्रामसभा केवल कागज पर न रह जाय, यह कैसे हो? पाँच प्रतिशत जमीन का बँटवारा कैसे होगा? ज्यादातर गाँवों में एक-दो प्रतिशत जमीन भी नहीं बँटी है, यह आँकड़ों से दीखता है। भूमिहीनों को कम-से-कम आवश्यक जमीन दी जा रही है या प्रसाद-स्वरूप थोड़ी-सी जमीन देकर गाँव एवं कार्यकर्ता सन्तोष मान लेते हैं?

ग्रामस्वराज्य की प्राथमिक एवं सबसे महत्वपूर्ण इकाई ग्रामस्वराज्य-सभा स्वयं चालित कैसे होगी ? ऐसे कई महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होते हैं।

प्राप्ति :

असम को छोड़कर इस अवधि में संकलित ग्रामदान का काम कहीं नहीं हुआ। असम में दो सामूहिक पदयात्राएँ एवं चार संकलित ग्रामदान हुए। नवम्बर में आंध्र के जडचरला प्रखंड में प्राप्ति-पुष्टि की समन्वित पदयात्राओं का आयोजन किया गया है। कार्यकर्ताओं की शक्ति पुष्टि में लग जाने से अभी तक नयी प्राप्ति की ओर उनका ख्याल नहीं गया, यह कहा जा सकता है। लेकिन जहाँ पुष्टि का काम नहीं है वहाँ यह काम क्यों नहीं हुआ यह प्रश्न शेष रह जाता है।

पदयात्राएँ :

पुष्टि के लिए आवश्यक पदयात्राओं के अलावा कर्नाटक में कुट्टीजी के एवं सिद्धराम गुरुजी के नेतृत्व में दो अखंड पदयात्राएँ चल रही हैं। इनसे विचार-प्रचार एवं साहित्य-बिक्री का अच्छा काम हो रहा है। नासिक से पंढरपुर तक सर्व-धर्म-समभाव पदयात्रा महाराष्ट्र में निकाली गयी। भारत के पश्चिम प्रदेशों के लोगों में, खासकर बहनों में जागरण का अद्भुत काम करती हुई चार समर्थ बहनों की लोकयात्रा अबाध रूप से चल रही है।

संगठन :

इस कालखंड में कार्यकर्ताओं का ध्यान संगठन की ओर गया है यह प्रसन्नता की बात है। लोकसेवकों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। आज लोकसेवकों की संख्या ११६६३ है। ११६ जिला सर्वोदय मंडलों का गठन देश भर में हुआ है। बहुत कम जिलों में ही क्यों न हो, प्राथमिक सर्वोदय मंडल भी बने हैं। २०० जिलों के कार्यकर्ता बाबा के पास मासिक रिपोर्ट भी भेजने लगे हैं। इन रिपोर्टों से प्रतीत होता है कि ग्रामदान-प्राप्ति, पुष्टि, शान्तिसेना आदि सर्वोदय के बुनियादी कार्यक्रम ज्यादातर जिलों में न किये जाकर अन्य दूसरे कार्यक्रमों में कार्यकर्ता लगे हैं। यह भारी कमी कैसे दूर होगी ? संघ, प्रदेश सर्वोदय मण्डलों एवं प्रमुख कार्यकर्ताओं, इन सबके लिए यह चुनौती है।

शान्तिसेना :

तरुण शान्तिसेना बनायी जा रही है। तरुण शान्तिसेना बढ़ रही है। पुष्टि-कार्य शुरू हो जाने के कारण ग्राम-शान्तिसेना कागजी न रह जाय और इनकी शक्ति बढ़ाने के कार्यक्रम अपनाये जा रहे हैं, यह देखना निहायत जरूरी है। इस वर्ष पचीस-पचास शहरों में अगस्त के प्रारम्भ में 'शिक्षा में क्रान्ति दिन' तरुण शान्तिसेना ने मनाया। इससे एक नया आयाम सर्वोदय-आन्दोलन में दाखिल हुआ है। इस कार्यक्रम के 'फॉलो-अप' के रूप में नागपुर विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के दिन तरुण शान्तिसेना ने शिक्षा में क्रान्ति के लिए मौन प्रदर्शन किया। गुजरात, महाराष्ट्र, भागलपुर, कानपुर एवं देश के अन्य कई नगरों में तरुण शान्तिसेना द्वारा नियमित रूप से अध्ययन केन्द्र चल रहे हैं। इस वर्ष तरुण शान्तिसेना का अखिल भारतीय शिविर कलकत्ता एवं बनगाँव में हुआ और बंगला देश के शिविरार्थियों की सेवा करने में उन्होंने हाथ बँटाया। गरमी की छुट्टियों में कॉलेज के टेक्नीकल छात्रों के सेवा-शिविर आधे दरजन ग्रामदानी क्षेत्रों में चलाये गये। इस कार्यक्रम में व्यापक सम्भावनाएँ छिपी पड़ी हैं। एक साथ देनेवालों की नामावली इस वर्ष प्रकट हुई थी। इस अवधि में उसमें नया पानी दाखिल नहीं हुआ है। यह स्रोत निरन्तर बहते रहना चाहिए। दक्षिण में एवं पंजाब-हरियाणा में तरुण शान्तिसेना कैसे बढ़ेगी, यह भी एक प्रश्न है।

लोकनीति :

आगामी चुनावों के सन्दर्भ में हमारा क्या रोल हो, इस विषय में महाराष्ट्र, आंध्र, दिल्ली में विचारमंथन हुआ है।

आचार्यकुल :

आचार्यकुल का काम धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है। दक्षिण भारत में एवं उत्कल, प० बंगाल और असम में अभी इसने जड़ नहीं पकड़ी है। भारत के अन्य प्रदेशों में वह गति पकड़ रहा है। सितम्बर में पवनार-पवनार में हुई आचार्यकुल समिति की बैठक में शिक्षा का घोषणा-पत्र तय किया गया और आचार्यकुल का विधान बना।

प्रकाशन :

एक करोड़ रुपये के साहित्य की योजना का प्रारम्भ हुआ है। १ अगस्त को कुछ बड़े शहरों के खादी-भंडारों में योजना का उद्घाटन हुआ। अच्छे साहित्य के निर्माण के लिए प्रकाशन ने एक समिति बनायी है। आंध्र, कर्नाटक, गुजरात, उत्कल, पश्चिम बंगाल आदि प्रदेशों की भूदान-पत्रिकाओं ने विनोबाजी के परामर्श पर कुछ पृष्ठ नागरी लिपि में प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। इसमें राष्ट्रीय एकात्मता के बीज छिपे पड़े हैं।

नगर-कार्य .

नगर-समिति ने कार्य प्रारम्भ किया है। बीकानेर नगर में नगर-स्वराज्य के विचार-प्रचार के लिए दो सौ कॉर्नर सभाएँ हुईं। कानपुर में मजदूरों की स्थिति का सर्वेक्षण किया गया। नगरों में चार हजार सर्वोदय-प्रेमियों से सम्पर्क साधकर उनके पास 'सर्वोदय डाइजेस्ट' पहुँचाया गया।

संघ की जायदाद :

सर्व सेवा संघ ने सेवाग्राम में ६१ एकड़ भूमि का वितरण भूमिहीनों में करके एक बुनियादी काम, देरी से ही क्यों न हो, आरम्भ किया। इस दिशा में संघ को तथा देश भर की संस्थाओं को काफी आगे बढ़ना है। उत्पादन के साधन के विषय में दृष्टिकोण का मूलभूत परिवर्तन होना निहायत जरूरी है।

तंजावूर में वलीवलम् में श्रीमती कृष्णम्मल जगन्नाथन् के नेतृत्व में ग्रामीण बहनों को सत्याग्रह करना पड़ा। मठ के

बारे में और मंदिरों की जमीन के बारे में एक सर्वपक्षीय परिषद स्थानीय सर्वोदय मंडल ने की, और यह मामला न्यायालय में भी ले जाया गया। इसमें गरीब श्रमिकों को सफलता मिली। इलाके में पिछले बीस वर्षों से जायज अधिकारों की प्राप्ति के लिए हिंसात्मक मार्ग का अवलंबन दोनों पक्षों ने बार-बार किया और सफलता नहीं मिली थी। इस समय का सफल सत्याग्रह यह बताता है कि सब राजनीतिक पक्षों को इकट्ठा कर ग्रामीण नेतृत्व सर्वोदय खड़ा करे और आवश्यकता पड़े तो सत्याग्रह का भी अवलंबन किया जाय तो सरकार एवं न्यायालय का भी सहारा मिलता है और अन्याय-निराकरण हो जाता है। यही अनुभव गुजरात में अंकलेश्वर एवं कच्छ में खाडेक में आया। अंकलेश्वर के प्रश्न पर श्री हरिवल्लभ परीख के मार्गदर्शन में गत वर्ष सत्याग्रह हुआ था। इस वर्ष भी सत्याग्रह की तैयारियाँ थीं।

खाडेक में भी मजदूरों को निर्धारित मजदूरी न मिलने के कारण श्री मणिलाल सघवी के मार्गदर्शन में अनशन करना पड़ा था। गुजरात के राज्यपाल की सफल मध्यस्थता से इन दोनों प्रश्नों का सन्तोषजनक हल निकला है। इससे सिद्ध होता है कि सघटित शांतिमय उपाय अपनाये गये तो सरकार के प्रमुख, न्यायालय, राजनीतिक पक्ष, सबकी सहानुभूति सत्पक्ष को मिलती है और सत्याग्रह से इन सबका ध्यानाकर्षण होकर या कभी-कभी सत्याग्रह की नौबत न आते हुए भी अन्याय-निराकरण हो सकता है। ऐसे अन्याय जगह-जगह भारत भर में हो रहे हैं। स्थानीय सर्वोदय मंडल यदि अपना मुख्य काम करते हुए अन्यायों के निराकरण के लिए प्रयत्न करें तो देखते-देखते ग्रामसभाएँ सक्रिय हो सकती हैं।

खादी :

स्वामी आनंद ने 'भूमिपुत्र' में 'करण फेज' नाम का एक लेख खादी की आज की हालत पर लिखा है। विनोबाजी ने कुछ दिन पूर्व कहा कि वस्त्र-स्वावलंबन के लिए हर गाँव में बिजली से चलनेवाली छोटी पावर-मिल खड़ी हो तो वस्त्र-स्वावलंबन सुलभ होगा और बेकारी घटेगी। बाबा के इस सूचन से इस दिशा में खादी-जगत में नया चिंतन शुरू हुआ। तीन किलो वजन के एक अम्बर चरखे का नमूना बनाने में प्रयोग-समिति ने सफलता प्राप्त की है।

शराबबंदी :

तमिलनाडु में शराबबंदी उठ गयी है। उत्तर प्रदेश में भी उच्च न्यायालय के एक फैसले से शराबबंदी के बारे में उलटी गंगा बहने लगी है। श्री एस० आर० सुब्रह्मण्यम् ने तमिलनाडु में उपवास किया एवं अन्य रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने कुछ कदम उठाये। हरियाणा में श्री दादा गणेशीलाल ने सांकेतिक उपवास किया। गुजरात के श्री आत्माराम भाई भट्ट ने दिल्ली में २१ दिनों का उपवास किया। इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न की ओर देश का ख्याल कैसे जाय, यह एक प्रश्न है।

कार्यकर्ता :

महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश एवं गुजरात में नये लोगों के प्रशिक्षण-वर्ग चलाये गये। इनमें से नये कार्यकर्ता मिले। चल-प्रधालय का प्रारंभ कर एवं कुछ विषयों के गहरे अध्ययन की योजना बनाकर कार्यकर्ताओं का बौद्धिक-स्तर ऊँचा उठाने का प्रयत्न संघ कर रहा है।

बंगला देश :

देश के सामने इन दिनों यह सबसे प्रमुख प्रश्न रहा है। और इस प्रश्न के बारे में संघ ने निम्न काम किये हैं : विस्थापितों के शिविरों में सेवा-कार्य, काम करके सफाई-कार्य, करना जारी है। इसमें बंगाल के कार्यकर्ताओं का तो सबसे बड़ा हिस्सा है ही, उत्कल के एवं गुजरात के कार्यकर्ताओं ने सेवा का स्तुत्य काम किया। बरहामपुर से दिल्ली तक बंगला देश के नागरिकों की एक शांति-यात्रा पदयात्रा करते-करते जन-जागरण का काम कर रही है। श्री जयप्रकाशजी ने इसी प्रश्न को लेकर विश्वयात्रा की। बंगला देश के प्रश्न पर गांधी शांति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण के अनवरत प्रयत्न से नयी दिल्ली में अंतर्राष्ट्रीय परिषद हुई। हमारे शांतिसेना मंडल ने एवं गांधी शांति प्रतिष्ठान ने इन सब कामों में पहल की। बंगला देश का प्रश्न कैसे, कब सुलझेगा यह भविष्य के गर्भ में है। विनोबा जी ने इस विषय के सन्दर्भ में कहा कि 'यूनो को शांति-कार्य के लिए सशस्त्र सेना के बजाय नि:शस्त्र सेना रखनी चाहिए। यह सेना ६ लाख की रही तो इसमें से भारतीय १ लाख हों। यदि ऐसा हुआ तो इसमें मैं भी हिस्सा ले सकता हूँ।' इस अधिवेशन में इस पर विचार किया जाना चाहिए।

प्रमुख प्रश्न :

ग्रामदान-पुष्टि एवं प्राप्ति, संगठन, लोकनीति एवं बंगला देश, इस अधिवेशन के ये प्रमुख प्रश्न हैं। इन पर अच्छी तरह विचार करके काम को आगे बढ़ाना है, जिससे यह कार्यक्रम ग्रामस्वराज्य के ध्येय की ओर द्रुत गति से हमें ले जा सके। ●

बिहार में भूमि वितरण और कानूनी पुष्टि

बिहार में कुल प्राप्त २१, १७, ४६५ एकड़ भूदान की जमीन में ४, १८, २८५ एकड़ जमीन २, ५४, ४६२ भूमिहीनों के बीच बाँटी गयी। १, ६६, ५०० एकड़ जमीन बाँटना बाकी है। शेष जमीन जोतने लायक नहीं है। ११, ८१४ भूदान किसानों की लगानबन्दी हुई।

बिहार ग्रामदान कानून के मुताबिक ५१० गाँवों में ग्रामदान की पुष्टि हुई। ३०१ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनीं। मुसहरी प्रखंड, सहरसा और पूर्णिया जिले में पुष्टि का काम सघन रूप से अभियान के रूप में चल रहा है।

—श्याम प्रकाश सिंह
मन्त्री
बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी

ग्रामस्वराज्य की 'टेकनीक' सहरसा में विकसित करें

—विनोबा

हमारा देश भी बड़ा है, संख्या भी बड़ी है, समस्याएँ अनेक हैं। इसलिए अनेक विचार सामने आयेंगे, विचार के अनेक पहलू होंगे, एक मनुष्य एक पहलू पर जोर देगा, दूसरा दूसरे पहलू पर जोर देगा और दोनों में सन्धान होगा। लेकिन हम थोड़े लोग हैं, यानी संख्या में अल्प हैं, इसलिए हमने इन दिनों, जो भी आया, उसको एक ही बात कही कि तुम सहरसा जाओ।

अब सहरसा कोई छोटा क्षेत्र नहीं है। एक जिला है तो भी वहाँ १८-२० लाख लोग हैं और २३-२४ प्रखंड हैं। सब प्रकार की समस्याएँ वहाँ मौजूद हैं। जमीन का रकबा प्रति व्यक्ति ३०-३२ सेंट, यानी ३ मनुष्यों के पीछे एक एकड़ जमीन है। और हर साल कोशी की बाढ़ आती है, तो हजारों गाँव जलमय हो जाते हैं, इस साल तो और भी ज्यादा हुआ है। उसके कारण अनेक बीमारियाँ भी होती हैं। इण्डस्ट्री उद्योग कोई खास नहीं है। जो सबसे गरीब जिले हैं भारत में, उनमें इसकी गिनती होती है। उत्तर बिहार में सर्वत्र यही है, प्रति व्यक्ति ३०-३२ सेंट जमीन का रकबा है। लेकिन उसमें भी जो आसान जिला हमको दिखा, वह सहरसा है। इसलिए हमने सहरसा को चुना। दूसरे जिलों की मदद उसे सहज मिल सकती है, भागलपुर, पूर्णियाँ, दरभंगा, पटना ये सब जिले उसको चाहे जो मदद दे सकते हैं। इसलिए कठिन जिलों में जो आसान है, वह हमने लिया। जयप्रकाशजी ने क्या किया? कठिन जिलों में से कठिन जिला लिया। वह चुनकर लिया ऐसी बात नहीं। वहाँ एक घटना बनी, उस कारण प्रेरित होकर स्नेह के नाते उन्होंने वहाँ जोर लगाया केवल एक प्रखंड में। उसमें उनको कुछ यश तो मिलेगा, कुछ-न-कुछ काम बनेगा, तो कुल मिलाकर परिणाम यह निकलेगा कि जयप्रकाशजी जैसा मनुष्य वहाँ लगा है इतना ही समय जाता है, फिर भी परिणाम कुछ नहीं ऐसा असर जनमानस पर पड़ेगा। इसलिए हमने सोचा कि 'फ्राम सक्सेस टु सक्सेस' जाना चाहिए। इसलिए कठिन से कठिन क्षेत्र में जो आसान, और सबसे दुःखी और पुरानी परम्परा में बहुत अच्छा क्षेत्र लिया जाए, यह सोचते हुए सहरसा जिला लिया।

उस बात को अब लगभग एक साल हुआ है। उसका परिणाम क्या है, उसका चित्र वहाँ काम करनेवाले लोगों ने हमारे सामने रखा है। उसका मतलब होता है कि गाड़ी ने गति ली। मुकाम पर पहुँचने में जितना समय लगेगा, लगेगा। वह बात अलग है। लेकिन गाड़ी रुकी हुई थी, वह चलने लगी है। इस वास्ते उसे अब अपना भारत का क्षेत्र मानकर, वहाँ कान्सेन्ट्रेट करना चाहिए। जैसे फौज में करते हैं। जहाँ आवश्यकता होती है, जय की संभावना होती है, वहाँ सारी फौज भेज देते हैं। यह हमारे ध्यान में आया कि उस एरिया में बहुत सारी समस्याएँ पड़ी हैं। आपको प्रत्यक्ष क्षेत्र मिलेगा। उस समस्या को हाथ में लेने की प्रक्रिया आपको मिलेगी। खोज होगी। इस वास्ते अखिल भारत समस्या लेकर इन दिनों मैं सोचता नहीं हूँ। इसलिए एक नमूने का क्षेत्र हो जाता है, तो उसको व्यापक करना कठिन नहीं जाता। और फिर उसका एक शास्त्र बनेगा। ग्रामस्वराज्य की टेकनिक क्या है, वह हाथ में आयेगी। बजाय इसके कि भिन्न-भिन्न क्षेत्र में ताकत लगायें, उसका भी लाभ होता है, भिन्न-भिन्न अनुभव आते हैं, लेकिन हमारे कार्यकर्ता कम हैं, इसलिए हमको लगा कि इसमें सब ताकत लगानी चाहिए, एक बार इसको पूरा करना चाहिए। दूसरे क्षेत्रों की तरफ न देखना भी अच्छा रहेगा, यहाँ तक मेरा मन जाता है।

अखिल भारतीय सेवकत्व बने :

एक और बात सोचता हूँ। इन दिनों अखिल भारतीयता टूट रही है। अगर हम सोचें कि अखिल भारतीय कौन है, तो केन्द्रीय मंत्री और भिन्न-भिन्न पार्टी के नेता हैं, वे अखिल भारतीय माने जा सकते हैं। लेकिन वे भारत को जोड़नेवाले नहीं होते, तोड़नेवाले होते हैं। इस वास्ते जिस हेतु से हम अखिल भारत की कल्पना करते हैं, वह पूर्ण नहीं होती। इस वास्ते अब अखिल भारत सेवकत्व—नेतृत्व को तो हम मानते नहीं—बनना चाहिए। आज कौन सेवक हैं? ऐसे जय-प्रकाशजी हैं, दादा धर्माधिकारी हैं, ऐसे निकलेंगे कुछ। उनमें से कोई जागतिक भी है लेकिन वे सारे ६५ साल के ऊपर वाले वृद्ध पुरुष हैं। वह पर्याप्त नहीं। इसलिए जो नये लोग हैं उनकी अखिल भारतीयता सिद्ध होनी चाहिए। वह भी होगा अगर सब उस क्षेत्र में लग जाते हैं। मान लीजिए एक साल लग जाता है इस काम को, तो कोई हरज नहीं।

यह हमारे मन में मुख्य विचार चलता है। इन दिनों जो समस्या है राजनैतिक, वह तो अपनी जगह चलता रहेगी। उस प्रकार से कभी लोक-क्रान्ति हुई नहीं है। आज मुजीब के हाथ में भी सत्ता दी जाय, वह समस्या हल हुई मान लें, तो भी क्या होगा? वही होगा जो आज यहाँ होता है। लोग सोचेंगे कि हमारी समस्याएँ मुजीबुर्रह-मान हल करेंगे, जैसे यहाँ सोचते हैं कि इन्दिराजी हल करेंगी। उत्तर बिहार सबसे गरीब क्षेत्र है, उससे गरीब उत्तर बंगाल, उससे भी अधिक केरल और उससे भी ज्यादा बंगला देश है। वहाँ चार मनुष्यों के पीछे एक एकड़ जमीन है, जिसमें नदियाँ नाले हैं, बाढ़ आती रहती है। आँधी-तूफान होता रहता है, गोपित मुल्क है। ऐसी हालत में मुजीबुर्रहमान क्या करेगा? अमरीका को, भारत की याचना करता रहेगा। इस वास्ते यद्यपि उन्होंने राजनीति की दृष्टि

वे बहुत बड़ी चीज सिद्ध भी है; लोकनीति की दृष्टि से देखा जाये तो उसमें से खास कुछ निकलेगा नहीं। एक समय था, जब मैं उस पटना पर बहुत चिंतन करता था। आखिर मैंने देखा कि वह इंदिराजी के हाथ में है। वे कहती हैं कि योग्य समय पर मान्यता देंगे, नहीं देंगे ऐसा नहीं कहती हैं। योग्य समय कौन-सा? वह मैं कहूँ तो वह मेरा व्यक्तिगत विचार होगा। मेरे पास जानकारी कहाँ से आती है? एक तो अखबार से और कोई दूसरा व्यक्ति वहाँ जाकर आये, तो उससे। यह मेरी जानकारी के स्रोत हैं। उनके पास तो पूरी जानकारी रहती है। तो योग्य समय कौन-सा, यह वही तय कर सकती हैं। इस वास्ते जब आपने वोट देकर अपना भला-बुरा उनके हाथ में सौंपा है और नहीं देंगे मान्यता, ऐसा वे बोलती नहीं, उस हालत में इस समस्या का भार उन पर छोड़ना ही बेहतर है। यह मैंने इसलिए कहा कि उस पर मैं जो ध्यान करता था, इन दिनों कम किया है। वह क्यों किया, उसके कारण बताये। एक, वह लोकनीति का काम है नहीं। दो, वह सारा इन्दिरा जी के हाथ में है। लेकिन आप लोग वहाँ जाकर सेवा कार्य करते हैं, वह मैं पसंद करता हूँ क्योंकि उससे आप को सेवा-कार्य की शिक्षा मिलती है, लेकिन उससे समस्या का हल नहीं होता। हाँ, यह बात अलग है, जो मैंने कहा था कि ७ लाख की शान्तिसेना की जाये, यूनो शांतिसेना रखे और उसमें भारत का सातवाँ हिस्सा हो, ऐसा होता है और वह सेना वहाँ जायेगी और थमेगी, तो यह मैं समझ सकता हूँ। वह बहुत बड़ी चीज होती है। लेकिन केवल भारत की सेना मानेंगे और वह वहाँ जायेगी, तो कोई लाभ नहीं। इन्दिराजी उसे जाने की इजाजत देंगी, तो वह खुद उसमें 'इनवाल्व्ड' होगी और उस हालत में पाकिस्तान पर हमला किया ऐसा भी हो सकता है! अखिल जागतिक सेना वहाँ जा सकती है। लेकिन वह आगे की बात है। उससे अधिक और कुछ हम कर सकेंगे ऐसी स्थिति नहीं है। इसलिए बंगला देश पर ध्यान देना मैंने कम किया है। मेरा मुख्य ध्यान इन दिनों : एक—मुख्य सहरसा पर, दो—थोड़ा शान्तिसेना पर और तीन—भारत के लिए एक लिपि हो, इन पर है।

भार कम न पड़े

अन्यथा, पश्चात्ताप करने का मौका आयेगा

ग्रामदान आन्दोलन का अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। हमलोग जितना परिश्रम करते हैं, उस पर से फल को नापना चाहिए, तो ध्यान में आयेगा कि प्रयत्न की अपेक्षा बहुत ज्यादा फल हमें मिला है। इससे भी जल्दी काम पूरा हो, ऐसा चाहते हो, तो पूरा समय इस काम के लिए देना होगा, उसके लिए मर मिटना होगा। क्रान्तियाँ फुरसत से नहीं होतीं। 'हण्ड्रेड इयर्स वार' (सौ साल का युद्ध) प्रसिद्ध है इतिहास में। सौ साल तक लड़ाई चलती रही। एक के बाद एक पाँच पीढ़ियाँ हो गयीं एक लड़ाई के काल में। लेनिन ने क्रान्ति का काम शुरू किया १९१७ में। ५४ साल के बाद आज भी दुनिया में कहीं लेनिन की इच्छा के मुताबिक क्रान्ति हुई नहीं है। लेनिन का मानना था कि 'स्टेट विल विदर अवे' (स्टेट धीरे-धीरे खतम होगी) और शस्त्रास्त्र सामान्य जनता के हाथ में आना चाहिए। आज क्या रूस में, क्या चीन में, स्टेट पक्की हुई है और शस्त्रास्त्र सामान्य जनता के हाथ में नहीं, मिलिटरी के हाथ में हैं। क्रान्ति हुई नहीं। तो समझना चाहिए कि क्रान्ति का विचार चलता रहता है। मरण क्रान्ति है। मरण कितनी बार आयेगा? एक बार। तब तक उसकी ओर जाना है।

आज धीरेनभाई जैसा वृद्ध पुरुष पूरे उत्साह और स्फूर्ति से ग्रामदान पुष्टि के लिए सहरसा में डट कर बैठा है। धीरेन भाई ७१ साल के जवान हैं, जिन्होंने गांधीजी के आवाहन पर कॉलेज छोड़ दिया और आज ५० साल से उसी काम में लगे हैं। ऐसा व्यक्ति आप के पास सिर्फ पाँच साल की माँग कर रहा है। उन्होंने कहा कि स्वराज्य-प्राप्ति के लिए तो हमें ४० साल देने पड़े, लेकिन ग्राम—

सहरसा में काम पूरा होता है, तो एक टेक्नीक हाथ में आयेगी। मैं देखता हूँ कि लोगों की कमी नहीं है, टेक्नीक हाथ में नहीं आयी है। हमलोग बार-बार सोचते हैं कि यह आन्दोलन लोक-आन्दोलन कब होगा, उसका अर्थ इतना ही है कि हम उससे कब छूटेंगे, कब मुक्त होंगे? इसलिए हमको समझना चाहिए कि परमात्मा हमसे काम लेना चाहता है, वह हमें करना है। इस वास्ते छोटे भाई ने कहा है कि ब्रह्म विद्या के सिवा यह होगा नहीं। ब्रह्म विद्या मन्दिर जो हमने चलाया है वहाँ प्रयोग के तौर पर। लेकिन हमारे जितने कार्यकर्ता वहाँ जायेंगे, तो वे ब्रह्मविद्या-मन्दिर में लगे और अपने काम में लगे।

दूसरे प्रान्त के प्रमुख लोग, जो हिन्दी नहीं जानते हैं वे न जायें। जिनको कुछ थोड़ी हिन्दी आती है, वे जायें, तो हिन्दी सीखना भी आसान होगा। इसका मतलब यह नहीं कि प्रान्त का काम बंद पड़े। मान लें बीकानेर है—तो सिद्धराजजी सहरसा जायें। वहाँ जाकर समय देते हैं और वहाँ का पुष्टि काम पूरा होकर वापस आते हैं तो बीकानेर के काम में अधिक शक्ति मिलेगी। और मान लें वे वहाँ मर भी जायें तो बीकानेर में और अधिक शक्ति मिलेगी। और जब तक मुख्य मनुष्य हटता नहीं, तब तक दूसरे लोग जिम्मेवारी लेने के लिए आगे नहीं आते।

सर्व सेवा संघ के प्रमुख कार्यकर्ताओं के बीच। ब्रह्म विद्यामंदिर : (२१-१०-७१)

नया मोड़ : किधर ?

ता० २६ और २८ सितम्बर को विनोबाजी के साथ खादी के बारे में जो चर्चा हुई उसका नोट राधाकृष्ण बजाज ने कमंडल के समक्ष रखा। उस पर कमंडल (सर्व सेवा संघ के प्रमुख व्यक्तियों में विचार विनिमय होकर तय रहा कि श्री डॉ० रामचन्द्रन एक नोट बनाकर विनोबाजी के समक्ष रखें।

तदनुसार प्रारम्भ में रामचन्द्रनजी ने पावर द्वारा सूत उत्पादन तक कार्य किया जायगा तो कितनी पूँजी लगेगी, कितने लोगों को पूरा साल भर काम मिल सकता है और बननेवाला कपड़ा मिल की तुलना में कितना महँगा पड़ेगा, इसके कुछ आँकड़े निम्न प्रकार रखे

१. एक हजार जनसंख्या वाला (दो सौ परिवार) एक गाँव इस तरह तीन गाँवों को मिलाकर एक पावर यूनिट खड़ा किया जाय।

२. प्रति व्यक्ति २० मीटर कपड़े के हिसाब से प्रति गाँव २० हजार मीटर कपड़ा बनाया जायगा। यानी तीन गाँव के एक यूनिट में साठ हजार मीटर कपड़ा होगा।

३. साठ हजार मीटर कपड़े के लिए साठ से सत्तर हजार रुपये की पूँजी साधन सामग्री के लिए लगेगी।

४. साढ़े चार लाख गाँवों के लिए डेढ़ लाख पावर यूनिट खड़े करने होंगे, जिनमें नौ सौ करोड़ रुपयों की पूँजी लगेगी।

५. हर वर्ष नौ सौ करोड़ मीटर कपड़ा बनेगा। प्रति मीटर दाम रु० २.४० होगा। यानी दो हजार करोड़ रुपयों का कपड़ा बनेगा।

६ साल भर में ३०० दिन काम और तीन सौ अस्सी दिन का वेतन मानकर प्रति कतिन ३ रुपये, प्रति बुनकर ५ रुपये, अन्य कारीगर ४ रुपये और व्यवस्थापक ५ रुपये मजदूरी पड़ेगी।

७ एक यूनिट में तीस-पैंतीस व्यक्तियों को यानी प्रति गाँव दस-बारह व्यक्तियों को—काम मिलेगा। इस हिसाब से साढ़े चार लाख गाँवों में पचास लाख लोगों को साल भर काम मिल सकेगा।

८. यह कपड़ा मिल के कपड़े से दस प्रतिशत महँगा रहेगा।

९. आज खादी ग्रामोद्योगों में दस लाख लोगों को आंशिक समय काम मिल रहा है। पावर यूनिट योजना में पचास लाख लोगों को पूरा समय या एक करोड़ लोगों को आधा समय काम मिलेगा।

१० यदि नौ सौ करोड़ की साधन सामग्री हम ही तैयार करें तो दस लाख अधिक लोगों को काम मिलेगा।

उपर्युक्त योजना पर चर्चा के दरम्यान निम्न प्रश्नोत्तर हुए।

प्रश्न क्या पावर यूनिट से बननेवाले कपड़े को भी खादी कहा जायगा ?

विनोबा. यह खादी ही होगी। हरिद्वार में गया है, काशी में गया है, पटने में गया है, हर जगह उसका रूप भिन्न है, लेकिन नाम गंगा ही है। खादी का दावा यह है कि उसमें किसी का शोषण नहीं होता। गाँव अपने लिए पावर से कपड़े बनायेगा और स्वयं पहनेगा तो इसमें किसी का शोषण नहीं होगा, गाँववालों को अपने गाँव में काम मिलेगा, इसलिए इसे खादी ही कहना होगा।

प्रश्न. यह काम किसकी ओर से किया जायगा ? सरकार इसे स्वीकार नहीं करेगी तो क्या होगा ?

विनोबा सरकार नहीं करेगी तो हम करेंगे। जो गाँव संकल्प करेगा कि *हमारा कपड़ा हम ही तैयार करेंगे वहाँ* प्रारंभ किया जाय। यहाँ नजदीक ३ मील पर सुरगाँव है। उस गाँव का ग्रामदान हो गया है। वहाँ का कोई झगड़ा कोर्ट में नहीं जाता है। अदालत मुक्ति हो गयी है। वहाँ प्रयोग करके अनुभव लिया जाय। मैं यहीं हूँ तो मैं भी इसमें मदद दे सकता हूँ। अन्य कुछ स्थानों में भी किया जाय। प्रयोग सफल हुआ तो सारे गाँवों में फैल सकेगा।

अपने पास करीब तीस हजार खादी के कार्यकर्ता हैं और कुल छः हजार प्रखण्ड हैं। तो हर ब्लाक में पाँच कार्यकर्ता गाँवों की मदद में लग जाते हैं। ये लोग गाँवों के कार्यकर्ताओं को आवश्यक ट्रेनिंग दें लेकिन यह सारी योजना ग्रामसभा के संकल्प से और उसके आधार पर चलनी चाहिए। प्रारम्भ में भले हम संस्थावाले इसको चालू करने में पहल करें।

प्रश्न कतिन को प्रति दिन ३ रुपये मिले ऐसा यूनिट बनायेंगे तो पचास लाख लोगों को काम मिलेगा। लेकिन २ रुपये मिले, ऐसा यूनिट बनायेंगे तो अधिक लोगों को काम मिल सकता है।

विनोबा. आज की परिस्थिति देखते हुए २ रुपये रोज मिले और अधिक लोगों को काम मिले तो वह योजना पसंद है।

—डॉ० रामचन्द्रन्

—स्वराज्य काम ऐसा है कि अगर कार्यकर्ता पाँच साल जी-जान से उसमें लग जाते हैं, तो काम पूरा हो जायेगा। अब, अगर यह सुन कर हमारे साथियों को वहाँ जा कर पराक्रम करने की प्रेरणा हो, तो अच्छा ही है। अन्यथा बाद में पश्चात्ताप करने का मौका न आवे कि बुजुर्ग तो वहाँ काम करते मर गये—धीरेनभाई ७१ साल के हैं, कभी भी मर सकते हैं—और काम अधूरा रहा, धीरेनभाई के कहने के अनुसार हम वहाँ जाते तो काम पूरा हो जाता। काम तो होनेवाला ही है। लेकिन, "बेटर एण्ड फाउंड वान्टिंग" (तौला और भार की कमी निकली) ऐसा है। जो पहल करता है, वह भार खाता है। पहला जितना हो जाता है, तो फिर दूसरे को देर नहीं लगेगी।—विनोबा पवनार. सितम्बर १९७१

गुड़िया-घरों का मोह छोड़कर मैदान में कूद पड़ें

—सन् १९४२ की तरह आज 'करो या मरो' की चुनौती है—

सर्व सेवा संघ-अधिवेशन में श्री धीरेन्द्र भाई की क्रान्तिकारी अपील

पिछले दो-तीन सालों से मैंने भाषण करना बन्द कर दिया है कार्यकर्ताओं में। इसलिए कि अभी मेरे पास कोई ऐसी नयी बात कहने को नहीं है, जिसे मैं एक बार नहीं अनेक बार कह चुका होऊँ। लेकिन यहाँ आ गया। और पिछले दो दिनों में आप लोगों के दिमाग में हलचल मची है, यह देखा। दादा ने जो भाषण किया था, उससे उन्होंने अपने लिए ही मुसीबत नहीं पैदा की थी, मेरे लिए भी की थी। उस भाषण के बाद दूसरे दिन दिनभर लोगों ने उनसे सवाल पूछे और मेरे आते ही लोगों ने मेरा घेराव कर लिया कि यह क्या बात है? आप कुछ कहते हैं, दादा कुछ और कहते हैं! क्यों नहीं आप सब एक कमरे में बैठकर एक फार्मूला निकालिये जिस पर हम चलें।

हमें लीक छोड़कर चलना है

तो मित्रो! आप जो काम करने जा रहे हैं, उस क्रान्ति का जो मूल तत्व है, लक्ष्य है, उसकी भूमिका में हम सब मिलकर एक कमरे में बैठकर एक फार्मूला निकालें और आप उसकी तरफ जायें, तो इस क्रान्ति के लिए यह एक भयंकर अभिशाप होगा। वह सम्भव नहीं है, वांछनीय नहीं है। आखिर, हम कर क्या रहे हैं? हम किसी परम्परागत 'लीक' पर चलना नहीं चाहते, हम लीक छोड़कर चलना चाहते हैं। परम्परागत 'लीक' क्या है? समाज की समस्याओं का समाधान, समाज-परिवर्तन इत्यादि के लिए हिंसा की शक्ति और संघर्ष की पद्धति, यह 'लीक' है। आप उसको छोड़कर अहिंसा की शक्ति और सम्मति की पद्धति खोजना चाहते हैं। इसलिए चार-पाँच सालों से मैं कहता आ रहा हूँ, जब कभी लोग मुझसे कहते हैं कि आप मार्गदर्शन करें, तो मैं कहता हूँ कि हमको खुद ही मार्ग मालूम नहीं। हम क्या मार्गदर्शन करें? 'लीक' छोड़कर जो जायेगा, उसके लिए मार्गदर्शन करने वाला कोई नहीं होगा, वह चारों-दिशाओं की यात्रा होगी। इसलिए मैं एक शब्द का प्रयोग करता हूँ। हमारे लिए मार्गदर्शन की आवश्यकता नहीं है, हमारे लिए मार्ग-खोजन की बात है। 'मार्ग खोजन की प्रक्रिया में सब मिलकर कल्पना से एक 'लीक' खोज लें, और उस पर सबको चला दें तो आप सब जाकर गड्ढे में गिरेंगे।'

शास्त्री को 'दर्शन' होता है, मिस्त्री 'देखता' है

आज सुबह आपने एक 'शास्त्री' (दादा) को सुना, अब मिस्त्री को सुन रहे हैं। शास्त्री और मिस्त्री में फर्क यह होता है कि शास्त्री को 'दर्शन' होता है, मिस्त्री 'देखता' है। शास्त्रियों की भी बात को सुनना होगा, मिस्त्रियों की भी सुनना होगा, और सुनकर मार्गखोजन में लगना होगा। वह मित्र होगा, और विरोधी भी हो सकता है। इसलिए आप जो दो दिन से परेशान हो रहे हैं, मेहरबानी करके आप उसे मन से निकाल दीजिए। चूँकि यह चर्चा चली है, और कल हमारे एक साथी ने आकर कहा कि आपलोग कमरे में बैठकर क्या चर्चा करेंगे, यहाँ आकर करें तो हमारा शिक्षण होगा। इसीलिए आपके सामने ही हम चर्चा कर रहे हैं, यद्यपि आवश्यकता नहीं रही।

जैसा कि दादा ने कहा कि हमारे बीच भिन्नता जरूर कहीं-कहीं है, विरोध नहीं है। और मैं मानता हूँ कि बहुत कुछ भिन्नता नहीं है, उतनी ही भिन्नता है, कि मैं कहता हूँ कंस का राज, दादा कहते हैं कृष्ण के मामा का राज। और शायद वास्तविक भिन्नता भी कहीं हो, लेकिन कोई ऐसी बात नहीं है।

अहिंसा : सिद्धान्त नहीं, जीवन की प्रकृति बने

दादा ने कहा कि अहिंसा को हमें सिद्धान्त नहीं बनाना चाहिए। मैं भी मानता हूँ। अहिंसा को सिद्धान्त नहीं बनाने की जो चेतावनी दादा ने दी, उसे मैं अक्षरशः मानता हूँ। मैं मानता हूँ, अहिंसा सिद्धान्त नहीं होनी चाहिए, अहिंसा जीवन की प्रकृति होनी चाहिए। आपकी प्रकृति अहिंसक होगी तो आपकी दृष्टि और अभिव्यक्ति हर जगह अहिंसक होगी।

संघर्ष से भय नहीं, लेकिन योजना मिलान की

दूसरी बात उन्होंने कही कि संघर्ष से भय खाने की, घबड़ाने की जरूरत नहीं है। आपकी प्रकृति में अहिंसा आ गयी है तो किसी चीज से आपको भय खाने की जरूरत नहीं है। हमको संघर्ष का भय नहीं है। बंगला देश के लोग गोली चलाते हैं तो हम घबड़ाते नहीं हैं, उनका गौरव ही करते हैं। उस परिस्थिति में उनको ऐसा करना पड़ा। हमारे देश की जो परिस्थिति है, उसमें जो दबे हुए हैं, वे कुछ हिंसा कर भी डालें, हो सकता है कि जिस क्षेत्र में हम काम कर रहे हैं, और जिस विचार की चेतना पैदा कर रहे हैं, शिक्षण दे रहे हैं, उन्हें होश में ला रहे हैं, उसके परिणामस्वरूप या नाव खेने में हमारी किसी गड़बड़ी के कारण भी कुछ हिंसा हो जाय, उससे भी घबड़ाने की जरूरत नहीं है। लेकिन संघर्ष से हमको भय नहीं है, इसीलिए उसका संयोजन हम नहीं करने लगेंगे। हम

योजना संघर्ष की नहीं सोचेंगे। बंगला देश का, मुक्ति फौज का गौरव हम करते हैं, इसलिए हिन्दुस्तान में अहिंसा मानने वाले गांधी-विचार के नेतृत्व में योजना हिंसा की नहीं बनायेंगे। यद्यपि सन् १९४२ में कहीं-कहीं हिंसा हुई। लेकिन उसकी योजना गांधी-विचार माननेवालों ने नहीं बनायी। मरने से भय नहीं है, इसलिए योजना मरने की नहीं बनायेंगे, योजना तो जीने की ही बनायेंगे। योजना आपकी सम्मति की बनानी होगी, हाथ मिलाने की बनानी पड़ेगी, संघर्ष हुआ तो आपको घबड़ाने की जरूरत नहीं। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम संघर्ष से डर जायें। और चूंकि भय नहीं है, इसलिए योजना ही संघर्ष की बनाने लगें तो वही हुआ कि मृत्यु का भय नहीं है, इसलिए योजना ही मृत्यु की बनाने लगें। योजना जीने की बनानी होगी। अतएव कोई अन्तर हमारी और दादा की बातों में नहीं है।

हमारा 'अप्रोच' क्या होगा ?

फिर हमारा 'अप्रोच' क्या होगा, हमारी व्यूह-रचना क्या होगी ? हम समाज के हर समुदाय के जो लोग हैं, उनको अलग-अलग श्रेणियों में नहीं बाँटेंगे। यह 'भूमिहीन है, यह बड़ा मालिक है, यह छोटा मालिक है, यह कर्मचारी है, यह कंगाल है', इस तरह से मनुष्य समुदाय को हम नहीं बाँटेंगे। हम पूरे समाज को सामने रखकर शिक्षण का काम करेंगे। फिर जिसकी जिस प्रकार की मन स्थिति और परिस्थिति है, उसको ध्यान में रखते हुए हम मिल्कियत वगैरह से सम्बन्धित नये विचारों का शिक्षण करेंगे। क्योंकि हम मान्यता-परिवर्तन करना चाहते हैं और मान्यता सबकी एक ही है। 'हैव' और 'हैवनॉट' करके दो नहीं हैं, और यानी मिल्कियत के लिए लाठी चलाने में सबकी मान्यता एक है। हमने देखा है सड़क पर एक जगह बैठकर भीख माँगते हुए एक मनुष्य को। अगर वहाँ कोई दूसरा भिखारी आकर बैठ जाय तो लाठी लेकर उसका सिर फोड़ देगा। 'मिल्कियत' में उसका उतना ही 'वेस्टेड इन्टरेस्ट' (न्यस्त स्वार्थ) है, जितना किसी बड़े मालिक का। इसलिए जैसा कि दादा ने कहा कि वर्ग है ही नहीं, उससे मैं पूर्णतः सहमत हूँ। उन्होंने कहा कि आज अमीर गरीब हो सकता है और गरीब अमीर हो सकता है। मैं कहता हूँ कि हरेक के दिल में मिल्कियत की और उसके न्यस्त स्वार्थ की भावना समान है, सम्पत्ति किसी के पास ज्यादा है, किसी के पास कम है। समाज-व्यवस्था की जो पद्धति है, उसके कारण ऐसा हुआ है।

'रिअप्रोचमेंट'

इसलिए मैंने कहा है, और 'भूदान-यज्ञ' में हमारे मित्रों से हुई बहस भी आपने पढ़ी होगी। आज एक बड़ा फर्क हो गया है—समाज में शोषण है, अन्याय है, नहीं है ऐसा हम नहीं मानते, देखते हैं, इतना ही नहीं, लोग उसके प्रति जागरूक भी हैं—दबे हुए लोग यह अनुभव करते हैं कि हम शोषित हैं, पीड़ित हैं। और आज समाजवाद और सर्वोदय वगैरह-वगैरह के कारण तथा लोकतन्त्र आदि के विचार के प्रभाव से, जो ऊपरवाले हैं (और शोषण-अन्याय करते हैं कहना शायद गलत होगा) जिनके कारण शोषण और अन्याय होता है, वे भी अब चेत रहे हैं कि वे ऐसा करते हैं। उनके सामने आज वह स्थिति है कि—जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्ति। मोह है, ममता है इसलिए पूरे समाज के प्रति हमारा समग्र निवेदन होगा। यह पहली बात है, और इसमें हमारी जो दृष्टि होगी वह होगी, जिसको मैं 'रिअप्रोचमेंट' कहता हूँ। यह जो स्थिति हो गयी है, किसी समाज के दुर्जन की प्रेरणा से नहीं, समाज की व्यवस्था के कारण। जो गलत भावना है, विभ्रम है, उसको छोड़ने के लिए, जैसा कि विनोबा कहते हैं, सही दिशा में सोचने के लिए सहकार, हरेक के लिए आवश्यक है।

समाज ने दण्ड शक्ति को जो डायनेमिज्म बनायी है, वह आखिर क्यों बनायी है ? इसलिए बनायी है कि हर मनुष्य में संस्कृति और विकृति, ये दो तत्व हैं। जिसे गांधी कहते थे कि हरेक के दिल में देवासुर का युद्ध होता है। तो इस 'डायनेमिज्म' के अनुसार इन्सान का प्रयास रहा है कि वह जो विकृति है, वह जो असुर वृत्ति है, उसका नियमन हो, नियंत्रण हो, उसका कुछ निराकरण भी हो। यह सब दण्ड शक्ति द्वारा होता रहा। दूसरी ओर साधना, शिक्षण द्वारा सांस्कृतिक शक्तियों के विकास का प्रयास भी होता रहा। हम उस 'डायनेमिज्म' को छोड़ना चाहते हैं। क्योंकि वह विकृति की शक्ति है। छिटपुट विकृति को संघटित विकृति नियंत्रित करे, बस उसमें इतना ही है। हमारा प्रयास यह है कि विकृति शक्ति से विकृति शक्ति का निरसन या नियन्त्रण नहीं, संस्कृति शक्ति से उसका निरसन या नियंत्रण हो। यानी हमारी क्रान्ति सांस्कृतिक क्रान्ति है।

आज समाज में वर्ग नहीं हैं, लेकिन ऐसे तबके हैं जो शोषित और दलित हैं, अन्याय पीड़ित हैं। चाहे किसी की बदनीयती के कारण न हो, सामाजिक व्यवस्था के परिणाम से हो। हमारे दर्शन में कुछ हो, लेकिन हम देखते हैं कि विकृति तो प्राकृतिक है, वह दोनों में

सम्वेदना और अपील

अभी पिछले दिनों उड़ीसा में जो भयंकर तूफान के रूप में प्राकृतिक प्रकोप आया, उसमें २५ हजार के करीब लोग कालग्रस्त हुए और लाखों लोग इस समय असह्य, कष्ट की जिन्दगी बिता रहे हैं। सर्वोदय-परिवार इससे अत्यन्त दुखी है और पीड़ितों के लिए अपनी हार्दिक सम्वेदना व्यक्त करता है।

उड़ीसा में प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में पीड़ितों की सेवा के लिए एक गैर-सरकारी राहत समिति सर्वोदय नेता श्री मनमोहन चौधरी की अध्यक्षता में गठित हुई है। समिति ने देश-विदेश के समाज सेवी सज्जनों से उदारतापूर्वक राहत सामग्री और धन देने की अपील की है। सम्पर्क का पता :

उत्कल सर्वोदय मण्डल,
चांदिया साही, कटक–१

समान है—जिसके कारण होता है, और जिसका होता है—दोनों में। लेकिन जो पीड़ित है, उनमें उन तत्त्वों का दबाव हुआ है, जो प्राकृतिक नहीं है बल्कि सामाजिक है। उनका जो शोषण हुआ है, दमन हुआ है, इन क्रियाओं की प्रतिक्रिया में उनके अन्दर घृणा, द्वेष, क्रोध आदि विकसित हुआ है, जो स्वाभाविक नहीं है। यानी यहाँ यह 'डबल कोटिंग' है। जो स्वाभाविक है, सर्व सामान्य है, लेकिन विशिष्ट है, प्राकृतिक नहीं है, सामाजिक है। इसलिए हमारे द्वारा जो विवेक का उद्बोधन होता है, उसका असर पहले एक कोटिंगवाले पर होगा, दो कोटिंग वालों पर देर से प्रभाव पड़ेगा। शोषण-दमन की प्रतिक्रिया में यह दबाव हुआ है। अपने आप नहीं हुआ है, अन्त पूर्व नहीं है। अब, यह जो मध्यम श्रेणी के भूमिवान हैं, बड़े भूमिवान हैं, उन पर हमारे उद्बोधन का असर प्राथमिक होगा। फिर उनको पहले 'अप्रोच' करना होगा, जिसके कारण यह शोषण दमन इत्यादि-इत्यादि है। तथा जल्दी उन पर असर होगा। जब प्रतिकूल क्रिया की प्रतिकूल प्रतिक्रिया है तो फिर अनुकूल क्रिया की, अनुकूल प्रतिक्रिया होगी। फिर दोनों की ओर से 'इनवाल्वमेंट' की शुरुआत होगी। 'इनिशियेटिव एण्ड रेसपासिव इन्वाल्वमेंट!' (पहल और प्रति-उत्तरदायी आवेष्टन)। 'अप्रोचमेंट' की 'इनिशियेटिव' होगी एक तरफ से, दूसरी तरफ से 'इनवाल्वमेंट' होगा, दोनों मिलकर, आपके विचार की ओर अग्रसर होंगे। ऐसा मैंने देखा है। और जैसा जमीन पर से मैं देखता हूँ, वही कहता हूँ। शास्त्र में क्या है मुझे मालूम नहीं।

आन्दोलन की गतिविधि और व्यूह-रचना

अब आन्दोलन की गतिविधि और व्यूह-रचना के सम्बन्ध में अपना विचार रखना चाहता हूँ। १० साल हो गये, कुछ अधिक ही हो गये, भूदान आन्दोलन शुरू हुए, इस क्रान्ति का एक तरह से श्री गणेश हुए। मंजिलें होती हैं, हर क्रान्ति की, अहिंसक क्रान्ति की हर मंजिल कुछ स्तरों में पूरी होती है। शुरू में ही विनोबा ने बहुत साफ कहा था सम्पत्ति के विषय में, कि 'सबै भूमि गोपाल की' और जिसकी प्रेरणा से मंगरौठ का ग्रामदान हुआ, फिर भी विनोबा ने भूदान का कार्यक्रम चलाया। इस भूदान के साथ सम्पत्ति के सम्बन्ध में जो मान्यता है इस आन्दोलन की, वह नहीं थी, करुणा की बात थी, दिल पिघलाने की बात थी। *विनोबा ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि क्रान्ति के लिए यह मेरा 'फाउंडर' है, प्रवेश करने का यह कार्यक्रम है।*

अहिंसक क्रान्ति में प्रवेश जो होगा, वह सूक्ष्म होगा, स्थूल नहीं। क्योंकि *जब आप की शक्ति सम्पत्ति की शक्ति है, तो आज की मानसिक और सामाजिक परिस्थिति में कितनी सम्पत्ति प्राप्त हो सकती है,* क्रान्तिकारी को इसका 'एसेस' (अनुमान) करना पड़ेगा। प्राथमिक 'स्टेज' में उसको उसीके अनुसार पूँजी पिलानी होगी। *मैंने विनोबा की व्यूह-रचना को जिस रूप में समझा है,* उस रूप में रख रहा हूँ। भूदान की बात चली। ग्रामदान की भी बात साथ-साथ चलती रही। जितने ग्रामदान होते रहे, उन्हें हम करते-कराते रहे, लेकिन मुख्य रूप से वह भूदान का 'स्टेज' ही रहा। *आप कह सकते हैं कि '५६ तक यह चला।* उसके बाद हम आगे बढ़े और जो मूल विचार है उस पर आये। वैसे तो '५५-'५६ से ही उड़ीसा में ग्रामदान शुरू हो गया था, लेकिन 'एलवाल परिषद' के बाद उसी पर हमारा जोर रहा, उसी के लिए हमारी व्यूह-रचना केन्द्रित हुई। कुछ होता रहा। लेकिन हर 'स्टेज' के बाद थोड़ी-सी शिथिलता आती है, जिसे कहते हैं क्रान्ति की विल्डरनेस (वनवास) की स्थिति। वह आयी। फिर '६६ से दूसरी 'स्टेज' शुरू हुई। ग्रामदान, सुलभ ग्रामदान चलता रहा और '६९ तक हम, संकल्पित ग्रामदान जिसे कहते हैं, उस 'स्टेज' पर आये। इस पर कुछ शंका मन में हो रही है कि नयी इस हुई सुलभ ग्रामदान की, वह न होकर पहले वाले पूर्ण ग्रामदान पर रहते तो शायद हमारी क्रान्ति आगे बढ़ती। लेकिन मेरे मन में ऐसा कभी आया नहीं। क्योंकि पुराने जो ग्रामदान हुए थे, उनमें से कई ग्रामदानी गाँवों में मैंने प्रत्यक्ष रूप से काम किया था। आज जो ग्रामदान के संकल्प हुए हैं, जो घोषणाएँ हुई हैं, जिसे आप प्राप्ति कहते हैं, उसमें से कोई निष्पत्ति नहीं हुई है, जहाँ तक ग्रामस्वराज्य के अधिष्ठान का प्रश्न है। *लेकिन निश्चय रूप से लोगों के दिमाग में इस शब्द का अधिष्ठान हुआ है।* मैं घूमता रहता हूँ, और बार जानते हैं 'गप्प' मारता हूँ लोगों से, जो जिज्ञासा इस समय है—यह जो व्यापक ग्रामदान प्राप्ति हुई, कुछ ठीक, कुछ बोगस, *लेकिन कुल मिलाकर इस शब्द का अधिष्ठान हुआ,* उसके कारण—यह जिज्ञासा पहले से अधिक पैदा हुई है। और आमतौर से हम जो बातें करते हैं, जो पहले पूर्ण ग्रामदान या भूदान के जमाने में उसके लिए, इस विचार के लिए जिज्ञासा इतनी व्यापक नहीं थी, जितनी कि बिहार दान के बाद पैदा हुई है।

विचार धरती पर साकार कब होगा?

ऐसा लोग कहने लगे हैं कि भाई बात अच्छी है, ऐसा हो जाय तो ठीक है, वाञ्छनीय है। यह विचार है, यह भी मानने लगे हैं। लेकिन उसमें एक 'लेकिन' पड़ गया है। शंका हो गयी है। वह शंका क्या है? कि भाई यह विचार धरती पर उतर सकता है क्या? बात तो ठीक है। जिस तरह लोकमानस में परस्पर द्वेष और विद्वेष फैला हुआ है, आज समाज में जो उसकी पराकाष्ठा है, जिस प्रकार का भ्रष्टाचार है, भाई-भाई अलग हो रहे हैं, इत्यादि ऐसी मानसिक और सामाजिक परिस्थिति में इस विचार के धरती पर उतरने की सम्भावना है क्या? यह बहुत बड़ा प्रश्न लोकमानस में है। तो अब हमारे सामने चुनौती यह है कि इस प्रश्न का उत्तर हमें देना है। क्या यह विचार धरती पर उतर सकता है? यानी इस

विचार की सम्भावना हमको प्रकट करनी है। इस स्थिति पर हम आये हैं। अगर सम्भावना प्रकट नहीं हुई, तो हमारा विचार, लोक-सम्मति के बावजूद, आदर के बावजूद स्वीकार्य नहीं होगा। तब नियति जिस रास्ते पर चल रही है, वही जो गोरू वाला रास्ता है, हिंसा की शक्ति और संघर्ष की पद्धति का जो परम्परागत मार्ग है, मनुष्य उसी पर जायेगा, क्योंकि आज के जमाने में वह जहाँ अभी है, वहीं रहना नहीं चाहता। तो, आज बहुत सोच कर व्यूह-रचना करनी है, और सघन काम करके सम्भावना प्रकट करनी है।

यह चुनौती है हमारे लिए

मैं नहीं कहता हूँ कि नमूना पेश करना है। क्योंकि मैं मानता हूँ कि क्रान्ति को अगर कोई घटना नहीं मानकर आरोहण की प्रक्रिया मानते हैं, तो क्रान्ति का नमूना पेश नहीं किया जा सकता। ग्रामस्वराज्य के आरोहण की प्रक्रिया में जो सबसे आगे होगा, वही नमूना होगा। और विचार आगे बढ़ता जायगा, नमूना पीछे पड़ जायगा। इसलिए हमलोग —जैसे रहे हैं, विनोबा, जे० पी० कहते रहे हैं, कि इसमें 'नमूनावाद' की गुंजाइश नहीं है। हम न सहरसा में नमूना पेश कर सकते हैं, न मुसहरी में और न अन्य कहीं। लेकिन इस समय आज की मानसिक और चारित्रिक परिस्थिति में भी चूँकि परिस्थिति की जो उलझन है उसको सुलझाने का यही रास्ता है, इसलिए यह सम्भव है, ऐसी सम्भावना प्रकट करें। यह आज हमारे सामने चुनौती है।

क्षेत्र छोटा नहीं, कम-से-कम जिलास्तर का लें

लेकिन एक बात मैं मानता हूँ कि समाज की मान्यता को बदलने के लिए, मानसिक परिवर्तन के लिए छोटा क्षेत्र प्रभावशाली नहीं होगा। आज के जमाने में, जबकि दुनिया में कोलाहल पराकाष्ठा पर पहुँचा हुआ है, छोटे-छोटे क्षेत्र को लेकर हम-आप दुनिया का ध्यान नहीं खींच सकते। दुनिया को आकर्षित कर सकते हैं जयप्रकाश बाबू एक प्रखण्ड लेकर, लेकिन हम-आप ऐसा नहीं कर सकते। मकान की धरन बनाने के लिए कोई मोटी लकड़ी मिल जाय तो एक ही काफी होगी है, लेकिन कमजोर लकड़ियों का 'कैंचा' बनाना पड़ता है।

इसलिए हम और आप बड़े क्षेत्र में लगें। और हम इस क्रान्ति को भूगोल के पैमाने पर न सोचें, एक विचार के पैमाने पर सोचें। अखिल विश्व तक हम सोच नहीं सकते, शक्ति नहीं है, तो कम-से-कम एक आन्दोलन इस भारत में चलाना है, इस आयाम में सोचें। हमें हर प्रदेश में करना है, जगह-जगह छोटे-छोटे क्षेत्रों में करना है, ऐसा सोचेंगे तो सबका जोड़ अधिक होगा, लेकिन दुनिया का आकर्षण कम होगा। दिमाग पर प्रभाव डालने के लिए 'झटका' चाहिए। जब हम ग्रामदान प्राप्ति का काम जगह-जगह करते थे, तो उसका प्रभाव जनमानस पर उतना नहीं पड़ा था, जितना कि दरभंगा जिला-दान के बाद पड़ा।

एक बड़ा क्षेत्र आप लें, कहीं भी लें। एक पूरे प्रदेश को ले सकते तो बड़ी अच्छी बात होती, लेकिन शक्ति नहीं है। सारे भारत के कार्यकर्ताओं की कुल मिलीजुली शक्ति भी उतनी नहीं है, तो कम-से-कम जिला का क्षेत्र लिया जाय। इससे छोटा क्षेत्र नहीं लिया जाय। एक प्रदेश का एक जिला लें और प्रदेश के सब कार्यकर्ता उसमें लगें। बल्कि प्रदेश के भी नहीं देश के स्तर पर सोचा जाय। राष्ट्रीय मोर्चा अपने सहरसा को माना है, तो जितने कार्यकर्ताओं की वहाँ जरूरत है, वहाँ जायें, बाकी बचें तो बीकानेर या और कहीं वे जाकर लगें। लेकिन जितने क्षेत्र आप लें, उन्हें राष्ट्रीय मोर्चे के रूप में लें, स्थानीय मोर्चे के रूप में नहीं।

अहिंसा में सेनापति का आदेश नहीं, संकेत

इस समय दुनिया में हिंसा शक्ति का विस्फोट हो रहा है। सारी दुनिया एक ज्वालामुखी के ऊपर बैठी है। आज आवश्यकता है कि कुछ-न-कुछ आप सब मिलकर खड़ा करें। आप ने सहरसा, मुसहरी चुना है, तो उन्हें पूरा करने में सारी ताकत लगानी चाहिए। क्योंकि मैं मानता हूँ कि सहरसा की निष्पत्ति और 'सम्पूर्ण निराशा' दोनों में से किसी एक को चुनने की स्थिति में आप पहुँच गये हैं।

मैं मानता हूँ कि दो मित्रों के नाम हत्या की धमकी का पत्र आया था उस सिलसिले में जयप्रकाश बाबू मुसहरी में जाकर बैठ गये, यह एक प्रसंग मात्र है, मुख्य बात यह है कि वह जमाने की माँग थी। इसीलिए तुरत विनोबा ने सुशीला बहन जैसों को 'करो या मरो' के संदेश के साथ जयप्रकाश बाबू के पास भेज दिया। हिंसा में सेनापति आदेश देता है, अहिंसा में सेनापति संकेत करता है। हमारे सेनापति ने संकेत किया है कि आज करना क्या है।

'करो या मरो' का सवाल

कई नौजवान हमसे मिलते हैं, कई साथी मिलते हैं, कहते हैं कि हमको 'लीड' नहीं मिल रहा है। अजीब सवाल है। अब और कैसा 'लीड' चाहिए? क्या पकड़ कर, डण्डा मार कर कहेंगे कि चलो, तब 'लीड' होगा? जयप्रकाश बाबू जैसा मनुष्य वहाँ जाकर बैठे, विनोबा जैसे मनुष्य ने, जिनको १२ साल तक (ब्रह्म विद्या मंदिर से) कहीं हटने की इजाजत नहीं थी, उन्हें वहाँ भेज दिया, एक जगह राष्ट्रीय मोर्चा बनाने के लिए सहरसा बताया, तब और कैसा 'लीड' हो सकता है? तो, आज 'करो या मरो' का सवाल है। सर्वोदय-समाज में बहुत कार्यकर्ता हैं। और सब लोग किसी-न-किसी रचनात्मक प्रवृत्ति में लगे हुए हैं। खादी है, तेलघानी है, ग्रामयोग है, सब संस्थाओं में ये काम चलते हैं, और ये सब काम अपनी जगह महत्व के हैं, राष्ट्र के लिए उपयोगी भी हैं। लेकिन हर चीज का समय होता है। आजादी के

आन्दोलन में भी हमलोग रचनात्मक काम में लगे थे और आग्रहपूर्वक गांधीजी ने हमलोगों को राजनीतिक हलचलों से दूर रखा था कि तुम लोगों को यही काम करना है। मुझे याद है कि लाहौर कांग्रेस के समय, जबकि पूर्ण स्वतन्त्रता के एलान करने की बात थी, उस समय वे मेरठ आये थे। मैंने पूछा था कि 'बापू, अब हम लोगों को क्या करना है? हम लोगों को भी तो इसमें लग जाना होगा?' हँस दिये। बोले, 'तुम बेवकूफ हो। तुम्हारे ही सहारे हम स्वतन्त्रता घोषित करेंगे? तुम जो करते हो करो।' फिर भी जब 'करो या मरो' का सवाल आया, तो सारे रचनात्मक कार्यक्रमों को स्वाहा करके लगने की बात हुई। उससे काम बन्द नहीं हुआ। उसके बाद रचनात्मक कार्यक्रम बहुत बड़े पैमाने पर फैला। जब गांधीजी मना करते थे कि आन्दोलन में भाग मत लो, तो एक नेता ने पूछा कि 'बापू ये लोग है किसलिए?' तो उन्होंने कहा, 'दीज आर द सोल्जर्स इन द बैरेक्स' (ये छावनी के सैनिक हैं!) जब लड़ाई शुरू होगी तो 'बैरक' से निकलकर जायेंगे। तो आज जितनी रचनात्मक संस्थाएँ हैं, और जैसा कि करण भाई ने कहा कि हम सब एक हैं, जैसे उन दिनों में हम सब कांग्रेस में थे, 'सोल्जर्स इन द बैरक' के रूप में, वैसे आज भी हैं। तो, जिस तरह सन् '४२ में 'करो या मरो' के नारे पर सब लोग 'बैरक' से निकल पड़े थे, उसी तरह आज बैरक के 'सोल्जर्स' के निकल पड़ने की घड़ी आयी है।

अब हमलोग छोटी-छोटी प्रवृत्तियों में लगे रहेंगे और मूल क्रान्ति 'साइड बिजनेस' के रूप में करेंगे, यह नहीं चलेगा। आज की आवश्यकता है कि आप सब गम्भीरता से सोचें। विनोबा 'करो या मरो' कहते हैं, जयप्रकाश बाबू हड्डी गिराने को कहते हैं। हमारी आज संस्थाएँ जो हैं, धीरे-धीरे वे पुराने मूल्यों की ओर फिसलती जा रही हैं। वही सामन्तवादी, पूँजीवादी प्रथा, कुछ वी० आई० पी० (बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति) और कुछ वी० एल० डब्ल्यू० (ग्राम स्तर के सेवक)। हम भूल जाते हैं कि हमारी क्रान्ति समृद्धि को नहीं सम्बन्ध को है। मानव के सम्बन्ध को है। लेकिन हमारी कार्य पद्धति क्या है? मनुष्य के साथ 'डील' (व्यवहार) करेगा वी० एल० डब्ल्यू० और कागज के साथ 'डील' करेगा वी० आई० पी०! ऐसा नहीं चलेगा। हमारे श्रेष्ठतम वी० आई० पी० भी वी० एल० डब्ल्यू० बनकर गाँव में जा सकते हैं; और छोटे वी० आई० पी० कहते हैं कि हम नहीं जा सकते। एक विडम्बना है हमारे इस सर्वोदय-समाज की।

तो मैं आप से निवेदन करना चाहता हूँ, कि जो आज 'रूटिन' का काम है, विनोबा ने ताला लगाने की बात कही, मैं वह नहीं कहता हूँ, उसमें दोयम दर्जे के साथियों को लगाकर अव्वल दर्जे के साथियों को 'करो या मरो' के सवाल के साथ जुट जाना होगा। जिसे मेरे दादा ने लोकगंगा कहा, उस लोकगंगा की धारा में बहना होगा। तो आप सब जितने समर्थ साथी हैं, उनसे मेरा निवेदन है, कि आप अपने से छोटे साथियों को रूटिन कार्य में लगाकर निकल पड़ें। वे भी बनेंगे, आप भी बनेंगे और दुनिया भी बनेगी। आप निकल पड़ें। फिर कितना हुआ देखें। कितने जिले देशभर में ले सकते हैं यह देखें। तब काम होगा। नहीं तो निश्चित रूप से आप अपने को निराशा में डालेंगे और दुनिया को भी निराशा में डाल देंगे। फिर आप जो कर रहे हैं यह सब, वह भी नहीं चलेगा। मुख्य क्रान्ति की निष्पत्ति अगर नहीं हुई तो आप का यह सब नहीं चलेगा।

गुड़िया-घर का मोह छोड़ें और मैदान में कूद पड़ें

आज की क्रान्ति इन प्रवृत्तियों में से नहीं प्रकट हो सकती है। हर चीज की एक आयु होती है। छोटे बच्चों के समाधान के लिए एक गुड़िया-घर सजा दिया जाता है उसकी मस्ती और विकास के लिए। लेकिन वह बच्चा जब बड़ा हो जाता है, तो उसे उस गुड़िया-घर से समाधान नहीं मिल सकता। वह मैदान में, क्षेत्र में कूदता है। क्षेत्र का खेल खेलता है, गुड़िया का खेल छोड़ देता है। हम गांधी की प्रेरणा से समाज-क्रान्ति के काम में लगे और संस्थाओं में छोटे-छोटे गुड़िया-घर सजा लिये। लेकिन अब वह क्रान्ति शिशु नहीं है। ४०-५० साल पहले जिस क्रान्ति-शिशु के समाधान के लिए, विकास के लिए, हमने जो गुड़िया घर सजाये थे, आज की क्रान्ति को उसमें मस्ती और आकर्षण नहीं है, उसके मार्फत उसका विकास नहीं होने वाला है। मैदान में जाकर क्रान्ति का खेल खेलना होगा, गुड़िया-घरों को छोड़कर।

मित्रो! जो मैं मुख्य बात कहता था वह यह है कि आजादी के युद्ध के लिए '४२ में जो परिस्थिति थी, इस समाज-क्रान्ति के लिए आज वही स्थिति है—'करो या मरो' की। आप सब सोचें, और इस मोह को तोड़कर, इस रूटिन काम को नीचेवालों के हाथों में छोड़कर मैदान में कूदें। क्योंकि अब तो गाँवों में वी० आई० पी० को ही जाना होगा, नहीं तो हमने जो यही उद्‌बोधन की बात, विचार के उद्‌बोधन की बात, वह काम नहीं हो सकेगा। मुझे आशा है हमारे सब मित्र इस बात पर सोचेंगे, और मैं साल भर से कहने लगा हूँ कि कम-से-कम पाँच साल इस काम में देना होगा। विनोबा बहुत बड़ा महात्मा है, बहुत बड़ा आशावादी है, तो एक साल कहा है, लेकिन आप अगर डट जायेंगे और पाँच साल में सम्भावना प्रकट हो जायगी, तब भी आप दुनिया को बचा लेंगे, ऐसा मैं मानता हूँ। जय जगत्!

भोपाल : ३०-१०-'७१

ग्रामदान-पुष्टि की गोष्ठी

पुष्टि का अभाव : समस्याओं का दबाव

२७ अक्तूबर '७१ को भोपाल में सर्व-अधिवेशन से पूर्व पुष्टि-कार्य में लगे कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी श्री शिवानन्द भाई (तिमुलगला, मुंगेर, बिहार) की अध्यक्षता में हुई। इस गोष्ठी में देश के विभिन्न प्रदेशों से लगभग ८० लोगों ने भाग लिया। गोष्ठी में आठ प्रदेशों के लगभग ३० पुष्टि-क्षेत्रों में हो रहे पुष्टि-कार्य की जानकारी प्रस्तुत की गयी।

मुसहरी (मुजफ्फरपुर) प्रखण्ड की जानकारी पेश करते हुए श्री कामेश्वरबाबू ने बताया कि ग्रामदान-प्राप्ति में कच्चा-पन होने के कारण पुष्टि-कार्य के साथ प्राप्ति का कार्य करना पड़ता है। जमीन का विवरण प्राप्त करने के लिए ब्लाक के कार्यालय में भी दौड़ना पड़ता है। ब्लाक कार्यालय में भी कागज नहीं मिल पाता। लोगों का ध्यान विकास की तरफ है। सिंचाई, पंपसेट, कर्ज, रिलीफ कार्य किया गया है।

उसी क्षेत्र की पूरक जानकारी देते हुए श्री कैलाशबाबू ने पुष्टि-कार्य की कठिनाई की चर्चा करते हुए कहा कि महाजन और बड़े भूमि-मालिक अन्दर-अन्दर विरोध प्रकट करते हैं। नक्सलवादी घटनाएँ भी घटती रहती हैं। कानूनी पुष्टि की पेचदगी के कारण भी कार्यकर्ता अनावश्यक कार्य में फँसते हैं। ग्रामसभा की बैठकों में लोग आते नहीं। ग्रामसभा बाहरी शक्ति के मुताबिक सक्रिय तो होती है, लेकिन अपने गाँव की समस्या के लिए सक्रिय नहीं होती। ग्रामसभा में स्त्रियाँ नहीं आतीं। भूमिहीनता नहीं मिट रही है। मजदूर आकर्षित नहीं हो रहा है। हमारा आन्दोलन स्थानीय हो रहता है, व्यापक नहीं बन पाता। राजनीतिक दलों के योग के कारण प्रखण्डसभा के बनने में कठिनाई पैदा हो रही है।

सहरसा जिले का विवरण श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा ने पेश किया। उन्होंने बताया कि मुसहरी के कार्य में जो कठिनाई है वही कठिनाई सहरसा में भी है। उन्होंने कहा कि बुजुर्ग लोगों को साहस के साथ पुष्टि-कार्य में लगना चाहिए। छात्रों और शिक्षकों के संगठन की कोशिश तरुण-शान्तिसेना, ग्राम-शान्तिसेना, आचार्यकुल के माध्यम से की जा रही है। सहरसा जिले के शहरों और कस्बों में भी नगरस्वराज्य का कार्य किया जा रहा है। ६ छोटे-बड़े नगरों में नगरस्वराज्य समितियाँ बनायी गयी हैं, और ये समितियाँ अपने क्षेत्र में सक्रिय हैं। श्री कृष्णराज भाई ने बताया कि सहरसा में कार्य करते हुए यह अनुभव आया है कि हमने विचार-शिक्षण का जितना भी कार्य किया है वह अपर्याप्त है, विचार-शिक्षण को व्यापक करने की कोशिश की जानी चाहिए। ग्रामस्वराज्य आन्दोलन जन-आधारित हो, इसके लिए लोगों को सक्रिय करने की आवश्यकता है। आन्दोलन को जन-आधारित करने के लिए ग्रामसभाओं को सक्रिय करने की कोशिश की जा रही है। शिक्षक और तरुण इस आन्दोलन के प्रति आकर्षित हुए हैं। वहाँ का शिक्षा-विभाग भी अनुकूल हुआ है। एक चिन्ता यह अवश्य है कि यह आन्दोलन व्यापक कैसे हो।

रुपौली (पूर्णिया) का विवरण पेश करते हुए श्री सीताराम बाबू ने कहा कि हम अपनी शक्ति को देखे बिना ज्यादा बोझ उठा लेते हैं, और परिणाम होता है कि हम बोझ सँभाल नहीं पाते और उखड़ जाते हैं। अतः हमें अपनी शक्ति के अनुसार ही कार्यक्रम उठाना चाहिए। उन्होंने कहा कि कार्यकर्ता-प्रशिक्षण अति आवश्यक है। इसकी योजना बनायी जानी चाहिए।

भवानीपुर और रानीगंज (पूर्णिया) की रिपोर्ट पेश करते हुए श्री रामरूपलाल बाबू ने कहा कि ज्यादा भूमिवाले हमसे बचते रहते हैं, जिसके कारण उनसे बातचीत नहीं हो पाती। आचार्यकुल और शान्ति-सेना के माध्यम से तरुणों और शिक्षकों से सम्पर्क साधने की कोशिश शुरू हुई है।

झाझा (मुंगेर) प्रखण्ड की जानकारी देते हुए श्री शिवानन्द भाई ने बताया कि झाझा में प्रखण्डसभा का गठन २० दिसम्बर '७० को हुआ, जिसका उद्घाटन श्री जयप्रकाशजी ने किया था। इस प्रखण्डसभा का रजिस्ट्रेशन हो गया है और इसी प्रखण्डसभा के माध्यम से विकास तथा निर्माण-कार्य करने की योजना है। यह खुशी की बात है कि प्रखण्डसभा की बैठक समय से होती है और इसकी बैठक में दो-सौ से ढाई-सौ लोगों की उपस्थिति रहती है। हमारे मुखिया लोगों का प्रकट विरोध है। जगत-विभाग का अनुकूल रुख नहीं है जिसके कारण कठिनाई आती है।

गया जिले का विवरण श्री दिवाकर भाई ने सुनाया। उन्होंने कहा कि बाराचट्टी, शेरघाटी और कोआकोल—तीन प्रखण्डों में पुष्टि-कार्य हो रहा है। ग्रामसभा के पदाधिकारियों के चुनाव में मतभेद पैदा होता है। कोष का हिसाब ठीक ढंग से नहीं रखा जाता है, अतः पदाधिकारियों में मतभेद शुरू हो गया है। महाजन कर्ज देने में ग्रामदानी लोगों को फोड़ने का कार्य करता है। ग्रामसभाओं ने बेदखली के सवाल को अपने हाथ में लिया था।

सदनिया (दरभंगा) प्रखण्ड की रिपोर्ट पेश करते हुए श्री पलटन आजाद ने कहा कि कानूनी पुष्टि में कठिनाई आती है। इसका कोई विकल्प ढूँढ़ना चाहिए। सदनिया में नक्सलवादी सक्रिय हैं।

तजापुर का विवरण श्री एम० माणिक्यकम् ने पेश की। उन्होंने बताया कि वहाँ पर देवस्थानी, मन्दिर की जमीन की समस्या है। इस तरह की जमीन को भूमिहीनों में बाँटने की कोशिश की गयी। इसके लिए सत्याग्रह भी करना पड़ा। इस प्रकार की २१२ एकड़ जमीन १४० भूमिहीनों में बाँटी गयी। बोधा-नरटा

की जमीन नहीं बँटी है। तंजावुर में तीन ब्लाक में पुष्टि-कार्य हो रहा है।

मदुराई जिले में ४ ब्लाक में काम हो रहा है। श्री आर० वरदन ने बताया कि ग्रामसभा बनी हैं, लेकिन बीघा-कट्ठा की भूमि अभी तक बँट रही है। सुलभ-ग्रामदान-कानून नहीं बनने के कारण भी पुष्टि-कार्य में कठिनाई आती है।

तिरुनेलवेली के तीन प्रखण्डों में पुष्टि-कार्य हो रहा है। श्री बालकृष्ण ने बताया कि तिरुनेलवेली में भूमिसेना द्वारा सिंचाई के लिए कुँआ खुदाई का कार्य किया जा रहा है। कुछ महीने से यह कार्य बन्द है। ४ ग्रामसभाओं में अम्बर चरखा चलता है जिसके द्वारा ८० बहनों को पूर्ण धन्धा मिला है। तालुका मंडल को ४२ बोरा धान गाँवों से मिला है। एक महीने पर ग्रामसभा की बैठक होती है।

तमिलनाडु के पुष्टि-कार्य की कठिनाइयों का जिक्र करते हुए श्री जगन्नाथन् ने कहा कि ग्रामदान के पुराने ऐक्ट के कारण कानूनी पुष्टि नहीं होती। तमिलनाडु की भूमि मन्दिरों, बड़े जमींदारों के पास है, सरकारी जमीन भी जमींदारों के पास है। भूमिमालिकों का कम्यूनिस्टों से संघर्षात्मक विरोध है। बीघा-कट्ठा में भूमि नहीं मिल रही है। कम्यूनिस्ट भूमिहीनों को ग्रामसभा में शामिल होने से मना करते हैं। ६ तालुके में हिंसा बड़े पैमाने पर है। ग्रामसभा की बैठकों में इसकी चर्चा होती है। भूमि समस्या के हल के लिए सर्वदलीय लोगों को मिलाकर प्रयत्न किया गया। सत्याग्रह भी किये गये। बहनों ने सत्याग्रह में काम किया। ६ महीने और एक वर्ष का कार्यकर्ता-प्रशिक्षण होता है। एक ब्लाक में नवम्बर से कार्य शुरू होनेवाला है और जनवरी तक कार्य पूरा किया जायेगा। इस प्रयत्न से हिंसा में भी कमी आयेगी।'

उत्तर काशी (उत्तर प्रदेश) के पुरोला प्रखण्ड में पुष्टि-कार्य हो रहा है। वहाँ की जानकारी श्री सुरेन्द्रदत्त भट्ट ने दी। यहाँ पर भूमिहीनता का प्रश्न नहीं है। यहाँ तो समस्या है कि बीघा-कट्ठा की भूमि किसको दें। परन्तु भयंकर गरीबी है। अशिक्षा भी है। ग्रामसभाओं से सतत सम्पर्क की आवश्यकता है।

फर्रुखाबाद के काम की जानकारी श्री शेरसिंह भारतीय ने दी। उन्होंने कहा कि कार्यकर्ता के अभाव में पुष्टि-कार्य नहीं हो पाता। पुष्टि-कार्य शुरू करने की क्या क्रिया हो, यही हम तय नहीं कर पा रहे हैं।

बीकानेर की रिपोर्ट पेश करते हुए श्री बद्रीप्रसाद स्वामी ने बताया कि योग्य कार्यकर्ताओं का अभाव है। गाँव और ढाणी दूर-दूर होती है, इसलिए भी गाँव के लोगों से सम्पर्क करने में कठिनाई होती है। आर्थिक कठिनाई भी है और राजनीतिक नेताओं का विरोध है।

भड़ौच (गुजरात) का विवरण डा० श्री द्वारकादास ने प्रस्तुत किया उन्होंने कहा कि सातत्य में कमी नहीं आनी चाहिए। जिले से कम को कार्य का क्षेत्र न माना जाय, भले ही दो-तीन प्रखण्डों में काम हो।

बड़ोदा की रिपोर्ट श्री हरिवल्लभ भाई ने सुनायी। उन्होंने कहा कि १२७ गाँव महाजन के कर्ज से शीघ्र मुक्त होंगे। ग्रामस्वराज्य सोसायटी ने इसकी जिम्मेदारी ली है। ग्रामदानी गाँव के लोगों और युवकों के शिविर होते रहते हैं। उन्होंने कहा कि लोक-शक्ति के प्रदर्शन के लिए ५०० से १,००० तक की संख्या में लोगों की पदयात्रा का आयोजन एक वर्ष में दो-चार किया जाता है। पुष्टि-कार्य में हमें अनुभव आया है कि अगर ग्रामस्वराज्य का चित्र स्पष्ट हो तो ग्रामदान-प्राप्ति की प्रक्रिया में ही विकास का कार्य किया जा सकता है। हमारी आवाज गाँव के लोगों की आवाज कैसे बने, यह एक प्रश्न है जिस पर सोचना चाहिए।

मध्यप्रदेश के इन्दौर और टीकमगढ़ जिले में काम हो रहा है। श्री श्याम कुमार आजाद ने बताया कि इन्दौर के सांवेर तहसील में काम प्रारंभ किया है। ग्रामसभा के पदाधिकारियों के प्रशिक्षण-शिविर होते हैं। युवकों के शिविर और पदयात्राएँ भी हुई हैं। श्री चतुर्भुज पाठक ने टीकमगढ़ की रिपोर्ट में कहा कि शुरू में ग्रामदान के काम का विरोध हुआ था, परन्तु विरोध के कारण हमारी शक्ति बढ़ी है। अब अनुकूल भूमिका बनी है।

उड़ीसा की जानकारी श्री विश्वनाथ पटनायक ने दी। ८ जिले में कार्य हो रहा है। महाजन का विरोध है। ४४ ग्रामदान समितियाँ काम कर रही हैं। उनके पास अपनी पूँजी है।

महाराष्ट्र के ९ जिले में कार्य शुरू है। वहाँ राजनीतिक दलवाले ऊपर से अनुकूल दिखते हैं लेकिन अन्दर से प्रतिकूल हैं। ग्रामसभा की बैठकों में लोग कम आते हैं। —कृष्णकुमार

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे इस अंक का ४० पै०), विदेश में २२ रु०, या २० शिलिंग या ४ डालर। इस अंक का मूल्य ३० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

गर्भपात कानून : पुरुष प्रधान समाज की एक और ज्यादती

गर्भपात सम्बन्धी कानून को लेकर कुछ पत्र-पत्रिकाओं में चर्चाएँ चली हैं। जब २० सितम्बर के 'भूदान-यज्ञ' में सम्पादकीय और २५ अक्टूबर के अंक में श्री सिद्धराज ढड्ढा का लेख, उस विषय पर पढ़कर कुछ बातें मन में उभर आयीं।

जनता का कल्याण करनेवाली सरकार अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए जिस तरह लोगों को शराब पिलाकर उसका अकल्याण कर रही है। वैसे ही अब समाज-कल्याण के नाम पर वह गर्भपात को मान्यता देकर समाज में कई तरह की अनैतिकता, भ्रष्टाचार को भी परोक्षरूप से प्रोत्साहन देगी।

गर्भपात यानी एक जीवनधारी की जानबूझकर हत्या करना। भले ही एक की प्राणरक्षा के लिए दूसरे के प्राण लिये गये हों, लेकिन उससे वह हिंसा अहिंसा में परिवर्तित नहीं हो जायेगी, भले ही उसको क्षम्य मान लिया जाय। क्या अपने निजी स्वार्थवश, अपने सुख-चैन व भोगविलास के कारण एक जिन्दा रहने के अधिकारी बालक की हत्या करने वालों को भी हम क्षमा कर देंगे? करने वालों को क्या हम हत्यारे नहीं कहेंगे? कानून उनको हत्या करने की छूट देता है। लेकिन अगर ऐसा सम्भव होता कि वे जीवधारी भ्रूण अपने जिन्दा रहने के अधिकार की माँग कर सकते, तो कानून क्या करता और समाज क्या कहता?

एक सबसे अधिक चिंतनीय बात तो यह है कि हमारे समाज की नैतिकता इस हद तक गिर गयी है कि आसानी से सरकार ऐसे समाज-विरोधी कानून बना लेती है और कोई चूँ तक नहीं करता।

इस कानून की घोषणा होने पर कई स्त्री-हितैषी लोगों ने स्त्रियों को सावधान होने और अपने भविष्य के बारे में गम्भीरता के साथ सोचने की सलाह दी है, लेकिन मुझे यह सवाल परेशान कर रहा है कि हमारे समाज में ऐसी कितनी बहनें हैं, जो अपने सम्मानपूर्ण जीवन के बारे में, अपनी स्वतंत्रता के बारे व समाज में अपना दर्जा ऊँचा बनाने के सम्बन्ध में सोचती हैं?

परम्परा से यह चलता आ रहा है कि पुरुष समाज ने जो गुण-दुर्गुण स्त्री में आरोपित किये, जिस दर्जे की उसको माना, स्त्रियों ने भी अपने को वैसा ही मान लिया। स्त्री को भोग का साधन माना तो वह भोग का साधन चुपचाप बनी रही, उसको पुरुष ने अपने से हीन माना, अबला और अनुगामिनी कहा, स्त्री ने भी अपने बारे में वैसा ही सोचा-समझा। उसको बाजारू चीज, व्यापार चलाने की वस्तु व विज्ञापनों के लिए आकर्षक साधन के रूप में बाजारों में, दिवारों पर, चौराहों पर नंगा खड़ा कर दिया गया, वह इस पर भी चुप रही, इतना ही नहीं विज्ञापनों के पोस्टरों के अनुसार फैशन अपनाकर उसने वैसा ही रूप-रंग, वेशभूषा भी अपना लिया। शादी के बाजार में तो वह ऐसे खड़ी है कि उसको पसन्द करनेवालों को पुरस्कार भी दिया जाता है, इसलिए आमतौर पर लड़की माँ-बाप के लिए अभिशाप बन गयी है। या तो उसके लिए लड़का खरीदना पड़ता है, या वही लड़के के हाथ बेची जाती है।

इतना सब कुछ सहन करनेवाली स्त्री गर्भपात को मान्य करनेवाला कानून बन जाने से गर्भपात नहीं करायेगी या ऐसी परिस्थितियाँ पैदा ही नहीं होने देगी, ऐसी आशा किस आधार पर की जा सकती है? वह भोग का साधन बन कर गर्भपात कराती रहेगी, इसमें मुझे सन्देह नहीं है। ऐसी बात मैं इसलिए लिख रही हूँ कि ऐसा न लिखकर मैं स्त्रियों की कमजोरी पर परदा डालना नहीं चाहती। क्योंकि कमजोरी को दूर करने की सबसे पहली शर्त यह होती है कि कमजोरी दिखायी दे और महसूस होने लगे, मिटायी तो वह उसके बाद जायेगी न! और मैं समझती हूँ कि स्त्री की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि उसकी अपनी गुलामी गुलामी नहीं लगती, अपनी कमजोरी दिखायी नहीं देती और समाज ने उसको जैसा चाहा वैसा इस्तेमाल किया, लेकिन उसके लिए वह स्वयं जिम्मेदार है, दोषी है ऐसा उसने सोचा नहीं।

गर्भपात को मान्यता देनेवाला कानून फिर उसके लिए एक बहुत बड़ी चुनौती के रूप में उसके आत्मबल के समक्ष प्रस्तुत हुआ है। क्या उससे यह आशा रखें कि वह जगेगी, अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए सोचेगी, विद्रोह करेगी और अपनी स्वतन्त्रता व सम्मान के लिए जिन्दगी भर लड़ती रहेगी?

अभी तक मैंने जो बातें कहीं, वह तो एक पक्षीय रहीं, लेकिन सब लोगों ने अधूरी बात कहने की जो गलती की है उसको मैं भी क्यों दोहराऊँ? अलग-अलग लोगों ने स्त्रियों को सचेत होने की बात कही, वह तो ठीक ही है, लेकिन उनको पुरुषों के बारे में एक वाक्य भी कहने की जरूरत महसूस नहीं हुई क्या? क्या इसलिए कि पुरुष का व्यभिचार, दुराचार, भोगलिप्सा समाज-मान्य है? पुरुष के शील भंग होने का कोई सवाल ही नहीं उठता? उसके लिए गर्भपात कराने जैसी कोई परिस्थिति पैदा नहीं होती? इस सम्बन्ध में उसको कुछ भी सोचने की जरूरत नहीं है क्या? उसको अपने में किसी तरह के कोई परिवर्तन करने की जरूरत नहीं है? नैतिकता, पवित्रता, शालीनता और सदाचार आदि बातों का पालन केवल स्त्रियों के द्वारा होगा तो समाज स्वस्थ जीवन जी सकेगा? यह कहा जाता है कि स्त्रियाँ बहुत पिछड़ी हैं, उनको आगे आने की जरूरत है। ...

इन चार का क्या ?

श्रमिक, हरिजन, आदिवासी, स्त्री। स्वतंत्र भारत में इन चार की स्थिति अच्छी हो रही है या बिगड़ रही है, यह प्रश्न है। कुल मिलाकर इनकी संख्या ५५ करोड़ में ३५ करोड़ से कम नहीं है, यानी ६३ प्रतिशत से ऊपर! यह हमारे देश का 'कमजोर' कहा जानेवाला समुदाय है। लेकिन यही समुदाय है जिसमें समाज को धारण करने की शक्ति है, और यही समुदाय है जो अगर बिगड़ उठे तो समाज को तहस-नहस भी कर डालता है। श्रमिक और स्त्री, ये ही दो पैर हैं जिनपर सभ्यता खड़ी है।

श्रमिकों की बहुत बड़ी संख्या खेतिहर क्षेत्र में है। उनकी स्थिति दिनोंदिन बिगड़ती जा रही है। १९५० में एक खेतिहर मजदूर की सालाना आय ४४७ रुपये थी जो १९५६ में घटकर ४३७ रुपये हो गयी। इसी तरह साल में काम के दिन १९५० में २०० थे, जो १९५६ में १९७ रह गये। इसके उलटे कर्ज १९५० में १०५.६० था, जो १९५६ में बढ़कर १३८ रुपया हो गया। १९५० से १९५६ के बीच का यह प्रवाह देश के पैमाने पर, बावजूद हरित क्रान्ति के, आज भी निरन्तर जारी है।

हरित क्रान्ति ने उत्पादन को बढ़ाया है लेकिन उसने खेतिहर पूँजीवाद को भी बड़े पैमाने पर स्थापित किया है। इस उत्पादन से खेती की सम्भावनाएँ बहुत बढ़ गयी हैं, किन्तु उत्पादन की इस पद्धति में श्रमिक का क्या स्थान है, उसे समाज के साधनों के कारण बढ़े हुए उत्पादन का क्या भाग मिलेगा, उसकी समाज में हैसियत कितनी बदलेगी, आदि प्रश्न जहाँ-के-तहाँ बने रह गये। सिवाय इसके कि हरित क्रान्ति के कुछ खास क्षेत्रों में कुछ मजदूरों को अधिक काम मिलने लगा, और खेती के विशेष अवसरों पर अधिक मजदूरी भी मिलने लगी, खेतिहर क्षेत्र में न तो सामाजिक न्याय बढ़ा है और न बेरोजगारी घटी है। उलटे विज्ञान और पूँजी के मेल के कारण भारतीय खेती से खेतिहर मजदूर जिस तरह बहिष्कृत हो रहा है, वह समाजवाद तो कौन कहे प्रगतिशील पूँजीवाद भी नहीं है।

ऐसा लगता है जैसे पूरे देश में एक संगठित योजना-सी है कि खेती में मजदूर के पैर न जमने पायें, और उसे भूमि न मिलने पाये, वह कर्ज से छुटकारा न पाये, और समाज में उसकी सम्मानपूर्ण स्थिति न बनने पाये। उसकी मुहताजी और बेबसी बनी रहे। वह 'शूद्र' का शूद्र रहे, इससे अधिक कुछ न हो। ऐसी स्थिति हरगिज न आये कि पेट के लिए मेहनत बेचने से उसे मुक्ति मिले। २४ वर्षों में कानून उसे उस भूमि पर भी कब्जा नहीं दिला पाया है जिस पर उसकी झोपड़ी खड़ी है।

कहा जाता है कि अब मजदूरों-हरिजनों पर मार पहले के मुकाबिले कम पड़ती है। हो सकता है कि ऐसा हो। लेकिन १९६६, '६७, '६८ के तीन वर्षों में देशभर में ११०० हरिजनों की हत्या की खबर है। मध्यप्रदेश के ४०८ गाँवों का सर्वेक्षण हुआ तो पता चला कि १८२ गाँवों में हरिजनों को सार्वजनिक कुओं से पानी नहीं भरने दिया जाता, २०४ में उनके लिए मन्दिरों के दरवाजे बन्द हैं, सिर्फ ८२ गाँवों में नाई उनकी हजामत बनाते हैं, और ५३ में ही धोबी उनका कपड़ा धोते हैं। यहाँ तक कि २८३ गाँव ही ऐसे हैं जहाँ पंचायत में हरिजन पंचों को दूसरी जातियों के पंचों के साथ बैठने दिया जाता है। ये आँकड़े क्या बताते हैं? सच्चाई यह है कि हरिजनों और आदिवासियों के हितों को लेकर स्थिति इतनी खराब है कि अपनी १९६८-६९ की रपट में अनुसूचित जातियों और वन-जातियों के कमिश्नर ने यहाँ तक कह दिया है कि जब तक वे प्रत्यक्ष अहिंसक कारवाई का रास्ता नहीं अपनायेंगे, उनके अधिकारों की रक्षा कानून द्वारा नहीं होगी। होटल में सबको साथ चाय पीते देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि छुआछूत मिट गयी। स्वतंत्रता के बाद इन वर्गों के विरुद्ध अत्याचार पहले से अधिक संगठित हुआ है, सामाजिक और आर्थिक दबाव के साथ-साथ जबरदस्त राजनैतिक दीवारें खड़ी हुई हैं, अब गाँव-गाँव में सवर्ण, बैकवर्ड, हरिजन, और आदिवासी स्थायी मोर्चेबन्दी की स्थिति में रह रहे हैं। जगह-जगह शीत गृहयुद्ध का

भी ये बातें मान लें, लेकिन स्त्रियों के पिछड़े होने मात्र से ही पुरुष आगे बढ़े हुए हैं ऐसा मान लेना कहाँ तक सही है? जिस मामले को लेकर यहाँ चर्चा चलायी गयी है उसमें पुरुष स्त्री से जरा भी आगे नहीं है बल्कि मेरी दृष्टि से काफी पीछे है। इसलिए मुझे लगता है कि समाज को स्वस्थ और गतिमान बनाने के लिए दोनों को सबल और विवेकी बनने की आवश्यकता है।

स्त्री बचपन से लेकर बुढ़ापे तक दबी-दबी रहती है, सामाजिक रीति-रिवाज और मान्यताएँ उसको और असहाय बनाते हैं, जबकि पुरुषों को ऐसी प्रतिकूलता का सामना नहीं करना पड़ता। अतः स्त्रियों को आगे बढ़ने के लिए उनके साथ भी जरूरत पड़ती है। अभी वह अपने पैरों पर खड़ा रहने की स्थिति तक नहीं पहुँच सकी है।

गांधीजी ने यह बात बहुत अच्छी तरह समझ ली थी, और इसीलिए उन्होंने ऐसे कई कार्यक्रम बनाये जिनके माध्यम से स्त्री-शक्ति उभर कर सामने आयी, स्त्रियों को अपने आत्मविश्वास और आत्मबल की अनुभूति हुई। आज सर्वोदय आन्दोलन के पास क्या ऐसा कोई कार्यक्रम है जिसके माध्यम से वह इस उपेक्षित वर्ग को आगे बढ़ाने में सहायता कर सके? अगर ऐसा कोई कार्यक्रम वह बना सका है तो मैं समझूँगी कि आन्दोलन इस दिशा में कोई सक्रिय प्रयत्न भी कर रहा है। लेकिन अगर अभी तक कोई ऐसा स्त्रियों को आगे लानेवाला कार्यक्रम नहीं बनाया गया हो, तो क्या अब भी आन्दोलन यह महसूस करता है कि ऐसा प्रयत्न होना चाहिए?

वातावरण है। अन्याय पहले भी था लेकिन गाँव में सबके लिए मान्य स्थान था। अब वह बात नहीं है।

मजदूर, हरिजन और आदिवासी की तो यह दशा है, लेकिन स्त्री की? इस प्रश्न पर लोग प्रधानमंत्री को नमूने के तौर पर पेश कर देते हैं। अपवादों के गौरव से गौरवान्वित होते रहने का हमें अभ्यास-सा हो गया है। जरूर कानून में स्त्री को वोट का अधिकार है, राष्ट्रीय जीवन का हर दरवाजा उसके लिए खुला हुआ है, लेकिन कानून और संविधान का मुखौटा पहनकर हम असलीयत को कब तक छिपाते रहेंगे? घर-घर में स्त्री रोज का जो जीवन जी रही है वह दुःख की कहानी के सिवाय और कुछ नहीं है। उसका शरीर अपना नहीं! उसकी जीविका अपनी नहीं, उसका भविष्य अपना नहीं! ऐसा शून्य प्राणी भारतीय नारी है।

मजदूर, हरिजन, आदिवासी और स्त्री: ये चारों उदाहरण हैं इस बात के, कि किस तरह एक समाज-रचना और उसमें विकसित जीवन के संस्कार ऐसे जहरीले होते हैं कि करोड़ों मानवों को जीते-जी मृत बना देते हैं।

बेतहाशा बढ़ती हुई जनसंख्या, पौष्टिक भोजन का नितांत अभाव, और व्यापक बेरोजगारी, ये तीन समस्याएँ ऐसी हैं जिन्होंने भारत-जैसे विकासशील देश के बढ़ते पैरों को बेड़ी की तरह जकड़ रखा है। लेकिन इन तीनों समस्याओं की सबसे बड़ी मार मजदूर, हरिजन, आदिवासी और स्त्री को ही भोगनी पड़ रही है, क्योंकि वे समाज की सबसे निचली सीढ़ी पर हैं; क्योंकि समाज का भार वहन करते हुए भी वे हर सुविधा, साधन और सुअवसर से वंचित हैं। ऐसे बड़े भाग को वंचित रखते हुए विकास प्रच्छन्न विनाश नहीं तो और क्या होगा?

समाज की परम्परा ने तो आँखें मूँदी ही थीं, नये नेतृत्व ने भी इन प्रश्नों की ओर से आँख-कान दोनों बन्द कर लिये हैं। अगर ऐसा न होता तो कम-से-कम उन राज्यों में तो कुछ नयी बात दिखायी देती जहाँ नेतृत्व 'सवर्ण' नहीं है। दबे हुए और दुर्बल समुदायों में भी जो नया नेतृत्व उभरा है वह हू-ब-हू वैसा ही है जैसा दूसरा नेतृत्व है। 'छोटा' जब 'बड़ा' होता है तो 'छोटे' को 'छोटा' समझकर ही अपना बड़प्पन कायम रखता है। एक ओर शिक्षा ने मजदूर के बेटे को 'बाबू' बनाया, दूसरी ओर राजनीति ने उसे 'बड़ा' बनने का अवसर दिया। किसी ने न श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ायी, न श्रमिक की हैसियत। श्रमिक, हरिजन, आदिवासी और स्त्री की मानवता का तिरस्कार होता ही जा रहा है। इन चार के तिरस्कार के कारण भारत की पूरी संस्कृति का ह्रास हुआ, इनके तिरस्कार से अब सम्पूर्ण भारतीय जीवन खतरे में है।●

तरुण-शांतिसेना-शिविर-सम्मेलन सम्पन्न

अग्रवाल उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बेलागंज में गया जिले के १३ माध्यमिक विद्यालयों, ३ महाविद्यालयों के ५६ तरुण-शान्तिसैनिकों का त्रिदिवसीय प्रशिक्षण शिविर २ अक्टूबर को गांधी जयन्ती के अवसर पर बी० एन० कालेज पटना के प्राध्यापक डा० महेन्द्रनारायण कर्ण के उद्घाटन भाषण से प्रारम्भ हुआ। शिविर का संचालन अखिल भारतीय शान्ति सेना मण्डल के श्री अमरनाथजी ने किया और अध्यक्षता श्री नवलकिशोर सिंह, मंत्री, बिहार तरुण-शान्तिसेना समिति ने की।

शिविर में विशेषरूप से आज के अशान्त और विक्षोभपूर्ण वातावरण में शान्ति के तत्वों के संघटित प्रयास की टेक्नीक, समाज-परिवर्तन और शिक्षा में क्रान्ति की शान्तिपूर्ण पद्धति के विकास, बंगला देश के स्वातंत्र्य संग्राम की प्रेरणाएँ आदि विषयों पर शिविरार्थियों का मार्गदर्शन भागलपुर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डा० रामजी सिंह, बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के अध्यक्ष श्री बद्री नारायण सिंह, राजेन्द्र स्मारक ग्रामनिधि के मंत्री श्री प्रभुनाथ तिवारी आदि नेताओं ने किया।

जिले के माध्यमिक विद्यालय और महाविद्यालयों में तरुण-शान्तिसैनिकों की भर्ती, शान्ति केन्द्र की स्थापना, प्रशिक्षण और समाजसेवा की भावी योजना पर विचार किया गया और आगामी कार्यक्रम निर्धारित किये गये। कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए १५ सदस्यीय गया जिला तरुण-शान्तिसेना समिति का गठन भी इस अवसर पर किया गया, जिसके संयोजक श्री केशव मिश्र बनाये गये।

शिविर में बौद्धिक वर्ग के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के खेल, सामूहिक भोजन, समूह गान, योगासन, सामूहिक प्रार्थना और शान्ति-कूच ने विशेष रूप से लोगों का ध्यान आकृष्ट किया।

दिनांक ४ अक्टूबर को ३ बजे अपराह्न में गया जिला तरुण-शान्तिसेना का दीक्षान्त समारोह डा० रामजी सिंह की अध्यक्षता में हुआ, जिसका उद्घाटन 'शिक्षा में क्रान्ति योजना' के अखिल भारतीय संघटक श्री संतोषकुमार भारतीय ने किया।

सम्मेलन के विशेष अतिथि राष्ट्रकवि श्री रामधारी सिंह दिनकर ने देश की आंतरिक विक्षोभ आदि समस्याओं के समाधान के लिए शान्तिसेना के प्रयत्नों की अनिवार्यता पर बल देते हुए कहा कि 'युग की आकांक्षा के अनुरूप समाज को बदलने का काम नहीं हुआ, तो भय है कि विक्षुब्ध और अशान्ति पैदा करनेवालों के नेतृत्व में संघटित हिंसा देश का भविष्य भी कहीं ओझल न कर दें।' राष्ट्रकवि ने कविता पाठ से अपना भाषण समाप्त किया। बेलागंज उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के प्राचार्य श्री चन्द्रदेव सिंह ने प्रारम्भ में सम्मेलन के अतिथियों का हार्दिक स्वागत किया और अंत में गया जिला ग्राम-स्वराज्य समिति के मंत्री श्री केशव मिश्र ने धन्यवाद ज्ञापन किया। शिविर और सम्मेलन के एक-एक वक्त के भोजन और जलपान का प्रबन्ध अलग-अलग गाँववालों ने तत्परतापूर्वक प्रेम के साथ किया था।

अहिंसक क्रान्ति का संदर्भ : हिंसा का 'भय' और वर्ग-संघर्ष का 'हौवा'

—दादा धर्माधिकारी द्वारा भोपाल-अधिवेशन में एक विचारप्रेरक विश्लेषण—

आज कुछ बोलने का मेरा विचार तो नहीं था, लेकिन जैसा कि कल मैंने निवेदन किया था, जब यह देखा कि चर्चा कुछ बिखर रही है, तो मैंने सोचा कि कुछ सहायता मैं आप लोगों की करूँ। उसके बाद कई मित्र मुझसे मिलने आये और लगातार उन्होंने मुझसे प्रश्न पूछे। परिणाम यह हुआ कि सबेरे से रात तक मुझे एक ही चीज दोहरानी पड़ती थी। और मैं थक भी जाता था, पूरी बात किसी को सुना नहीं सकता था। मैंने सभापतिजी से निवेदन किया कि अच्छा यह हो कि ये जो प्रश्न मुझसे पूछे गये हैं, इनके विषय में मुझे जो कहना है मैं सबके लिए कह दूँ, तो छुटकारा मिल सके।

मुझे इस बात में बड़ी धन्यता का अनुभव होता है कि आपलोगों ने उस भाषण (८ नवम्बर '७१ के ; भूदान-यज्ञ के अंक का पृष्ठ ६९ देखें) की तरफ इतना ध्यान दिया। लेकिन कुछ आश्चर्य भी हुआ। लोगों ने मुझसे कहा कि बीस साल में ऐसी बात हमने कभी सुनी नहीं। और मैं तो शुरू से यही बात करता आया हूँ। जो बात उस दिन कही, वह बात आपको 'सर्वोदय-दर्शन'[1] में भी मिलेगी। मैंने कोई नयी बात नहीं कही। नयी बात मेरे पास है भी नहीं। मैं कोई कवि और तत्त्वज्ञानकार तो हूँ नहीं। जो कहना है वही कह सकता हूँ। उसके बाद कुछ लोगों के मन में यह सन्देह हुआ कि जो महानुभाव इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं उनकी बातों में और मेरी बातों में बहुत अन्तर है, बहुत बड़ा फर्क है, विरोध तो नहीं कहा, लेकिन भिन्नता है। तो इसमें भी मुझे कोई आपत्ति नहीं मालूम हुई कि उन महानुभावों से कुछ भिन्न बात मैं कहूँ, विरोधी बात कहनी हो तो विरोधी भी कहूँ। 'डिसेंट' के लिए, असहमति के लिए, विरोध के लिए आपकी इस जमात में पूरा पूरा अवकाश है। तो वह भी मैं कह तो सकता था, लेकिन मैंने समझने की कोशिश की। क्योंकि एक मेरे मन में संकोच भी था। मैं कोई काम प्रत्यक्ष करता नहीं हूँ, कोई अनुभव भी नहीं है काम का। और बैठे ठाले बातों का जमा-खर्च करता हूँ। तो क्या ऐसे मनुष्य को यह अधिकार है कि वह प्रत्यक्ष आन्दोलन के विषय में कुछ कहे? लेकिन आश्वासन मुझे सभापतिजी ने दिया। उन्होंने कहा कि हमारी तुमसे कोई अपेक्षा तो है ही नहीं, लेकिन तुम हमारे साथ बैठकर अगर सोचते हो और कोई बात तुम्हारे दिमाग में आती है तो हमारी सहायता ही होती है।

[1] प्रकाशक : सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

राजनीति की मुख्य धारा ?

इस आन्दोलन के मुख्य कर्णधार तो बाबा हैं, पूज्य विनोबा हैं। वही रहेंगे, वही रह सकते हैं। क्योंकि आन्दोलन के संचालन में केवल बुद्धि की आवश्यकता नहीं होती है, जिसे अंग्रेजी में करिश्मा (विभूति मत्त्व) कहते हैं, इस विभूति-मत्त्व की भी आवश्यकता होती है। स्वराज्य की स्थापना के बाद जितने सत्याग्रह हुए एक दिन में, उतने गांधी ने अपनी सारी उम्र में भी नहीं किये। लेकिन उनका असर कुछ नहीं हुआ। यह प्रश्न लोहिया ने पूछा था राजाजी से। और लोहिया, राजाजी, जयप्रकाश बाबू, दादा कृपलानी, इन सबको मैं विभूतियाँ मानता हूँ। लेकिन लोहिया, राजाजी वगैरह विभूतियाँ होते हुए भी तालाब में तैर कर रह गये। जयप्रकाश बाबू तालाब में से, डबरे में से निकलकर, गंगाजी के प्रवाह में आ गये। लोग कहते हैं कि राजनीति उन्होंने छोड़ दी है। मैं कहता हूँ कि राजनीति नहीं छोड़ दी है, राजनीति की मुख्य धारा में वे आ गये हैं।

मुख्य धारा से हम अलग हैं, हम पर एक आक्षेप हमेशा होता है। मुख्य धारा कौन-सी है? क्या मुख्य धारा सत्ता की राजनीति है, क्या मुख्य धारा चुनाव की राजनीति है, क्या मुख्य धारा संसदीय राजनीति है? या मुख्य धारा लोक-गंगा की है, जो गाँवों में रहती है? मुख्य धारा जहाँ 'सावरेन्टी' है, जहाँ सर्वोपरि सत्ता का अधिष्ठान है वह गाँव, मुख्य धारा वहाँ पर है। उस मुख्य धारा को जयप्रकाश बाबू ने अब अपना क्षेत्र माना है। उसमें अवगाहन करेंगे, उसमें डुबकी लगा देंगे, उसमें तैरेंगे, और जहाँ तक हो सके डूबने से बचेंगे। धीरेनदा हैं इस आन्दोलन में, जो मौलिक क्रान्तिकारी हैं। हमारी कुछ भावनाएँ, कुछ विचार, उधार के हैं। धीरेन्द्र भाई सीधे जमीन से प्रेरणा पाते हैं। वे इस मिट्टी के बने हुए हैं। हमारी मिट्टी में कुछ मिलावट है।

जब मुझसे कहा गया, तुम इन महानुभावों, श्रद्धास्पद महानुभावों के साथ बैठो, और अपनी बात उनसे कहो, तो मैं इसके लिए हमेशा ही तैयार रहता हूँ। मेरे स्वभाव में आग्रह नहीं है। और आग्रह हो ही किसलिए? है ही क्या जिसके लिए आग्रह रखूँ? कुछ काम ही नहीं करता हूँ तो आग्रह किसलिए रखूँ? इसलिए जब बंग साहब ने मुझे कहा कि ऐसी एक चर्चा क्यों न हो, तो मैंने समझा कि मैं बहुत गौरवान्वित हुआ हूँ। इन महानुभावों के साथ मैं बैठा और बहुत धन्यता के साथ मैं निवेदन करना चाहता हूँ, मुझे, जो कुछ मैंने कहा था, उसमें एक अक्षर का भी परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं मालूम होती। जो कुछ मैंने कहा था उसे साइक्लोस्टाइल करके वितरित किया गया है, और उसमें मेरा कितना है और लिखनेवालों का कितना है मुझे मालूम नहीं, मैंने पढ़ा नहीं है, लेकिन जो कुछ उन लोगों ने कहा, उस पर से कहा। जयप्रकाश बाबू ने तो सभा में ही कहा था कि उसका एक-एक वाक्य आपको चिंतनीय और मननीय मानना चाहिए।

बहुत महान हैं वे ! बड़ों का हृदय भी बड़ा होता है। वैद्यनाथ बाबू, धीरेनदा और जगन्नाथनजी, बग साहब, कृष्णराज, सिद्धराज भाई, रथी, महारथी, अतिरथी, मैं इन सबके साथ बैठा और मैंने कोशिश की कि मेरी स्लेट शुद्ध हो जाय। और आज मैं संतोष के साथ आपसे यह कह सकता हूँ, कि उन्होंने मुझे 'सर्टिफिकेट' दे दिया कि जो कहते हो, वह सही हो, और कहना चाहिए। कुछ भिन्नता है, विरोध कहीं नहीं। और मेरे कहने से तो आप कुछ करनेवाले हैं नहीं, करना तो उन्हीं को है। लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि हम जिस तरीके से काम करते हैं, वह तो हो ही सकता है, हो ही रहा है, लेकिन तुम जो कह रहे हो, उसका भी प्रयोग कोई करना चाहे तो कर सकता है, करना चाहिए।

सर्वसम्मति : रूढ़ सिद्धान्त नहीं

कल हमारा लोकनीति के विषय में भी कुछ परिसंवाद हुआ। उस वक्त एक बात मैं जो आपसे कहना चाहता था वह कहना भूल गया। वह है कि लोकनीति में एक और चीज आ जाती है—कानून के लिए 'सैंक्शन्स' पैदा करना। लोकनीति का अधिष्ठान क्या हो ? लोकराज्य का, लोकसत्ता का अधिष्ठान, 'सैंक्शन', क्या हो ? फौज हो, दण्ड-शक्ति हो या लोक-सम्मति हो, 'कन्सेन्ट' हो ? दण्ड-शक्ति से लोक सम्मति की तरफ अभियान का नाम लोकतन्त्र है। राज्यसत्ता का अधिष्ठान दण्ड-शक्ति नहीं होगी, लोगों की सम्मति होगी, लोक-सम्मति। इस लोक-सम्मति के बारे में कल एक बात हमसे कही गयी, जो चारूदा ने कही, और उनके जैसे अनुभवी, ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न अनुभवी व्यक्ति ने कही, 'आज की व्यवस्था में इक्यावन सौ के बराबर हो जाता है और उन्चास शून्य के बराबर हो जाता है।' इसलिए खोज यह है कि यह जो लोक-सम्मति होगी, वह सर्व-सम्मति होगी। लोक-सम्मति की अभिव्यक्ति सर्व-सम्मति से हो। मेरा निवेदन यह है कि लोकसम्मति को सर्वसम्मति की तरफ हम ले जा सकते हैं लेकिन सर्वसम्मति का आग्रह रखेंगे यानी सर्वसम्मति को अगर हम एक 'शिबोलिथ', शिबोलिथ से मेरा मतलब है रूढ़-सिद्धान्त, अपने गिरोह का, अपने समुदाय का नाम, चंदन काठी का बनायेंगे, इसे हम अपने आन्दोलन का या अपनी व्यवस्था का रूढ़-सिद्धान्त बनायेंगे, तो एक सौ के बराबर हो सकता है, और निन्यानबे शून्य के बराबर हो सकता है। निन्यानबे आदमी एक तरफ हैं, और एक ही आदमी अलग है, और वह कह रहा है कि मुझे यह स्वीकार नहीं है, तो निन्यानबे शून्य बन जायगा, एक ही सौ हो जायेगा। इसे 'वीटो' कहते हैं। तो इसका भी विचार करना होगा। मैं 'सैंक्शन्स' की बात कह रहा हूँ। दण्ड-शक्ति से लोकसम्मति की तरफ जाना है। और लोकसम्मति, सर्व-सम्मति हो, इसके लिए फिर सर्वानुमति की बात आयी। 'यूनेनिमिटी' नहीं, 'कंसेन्सस', सर्वानुमति शब्द की खोज हुई।

इसके लिए जो कम्यूनिटी बने, यानी जिस समाज की सम्मति की खोज है, उस समाज का नक्शा क्या हो ? वह समाज कैसे बने, यह हमारी दूसरी खोज है। कल एक मित्र ने मुझसे यह कहा कि तुम पूरा नक्शा बना दो। मैंने कहा कि यह तो मैं जरूर बना सकता हूँ, क्योंकि यह कल्पना की चीज है, बुद्धि की चीज है। ऐसी चीज है जिसे कोई भी मुंशी, मुहर्रिर बना सकता है। इसके लिए किसी क्रान्तिकारी की आवश्यकता नहीं है। नक्शे बनानेवाले क्रान्तिकारी नहीं होते। नक्शा विराट होता है। इसके कुछ आधारभूत सिद्धान्त हमको खोजने होते हैं और उनको लेकर चलना होता है।

अहिंसा : सिद्धान्त नहीं

मेरे भाषण के दो तरह के परिणाम हैं। एक में तो कुछ लोगों ने आकर, वे आप लोगों के साथी हैं कि नहीं, मैं नहीं जानता, बाहर के भी हो सकते हैं, मुझसे आकर कहा कि आप मार्के की बात कही, पते की बात कही। कौन-सी वह बात कही ? तो एक बात यह कही कि अहिंसा को सिद्धांत मत बनाओ। दूसरी बात यह कही कि 'वर्गसंघर्ष' के 'हौवे' से मत डरो। और तीसरी बात यह कही कि छोटे मालिक और गैर-मालिकों को संघटित करो।' तो मैंने उनसे पूछा कि इसमें मैंने ऐसी कौन-सी बात कह दी, जिससे आपको इतना संतोष हुआ ? वे कह साफ तो नहीं कह सकते थे, लेकिन उन्होंने जब से यह कहा कि 'अहिंसा का आग्रह तुम छोड़ दिया।' मैंने समझ लिया कि यहाँ कुछ ऐसी भी मनोवृत्ति है कि अगर अहिंसा को हम छोड़ सकें, तो भगवान से पिण्ड छूटे तो इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं। मित्रो मेरा निवेदन इतना है कि अगर निःशस्त्र प्रतिकार से सशस्त्र प्रतिकार को हम श्रेष्ठ मानते हैं, तो हमारे निःशस्त्र प्रतिकार में कभी भी प्राण नहीं आयेगा। उत्तम प्रतिकार जब सशस्त्र प्रतिकार है, तो हमारा दिमाग तो उसी की पूजा करेगा, और चाहेगा कि सशस्त्र प्रतिकार की क्षमता हमें प्राप्त हो। निःशस्त्र प्रतिकार उस तरफ जाने की पहली सीढ़ी है। उस सोपान की एक सीढ़ी है। निःशस्त्र प्रतिकार ही कार्यक्षम, परिणामक्षम है, यह अगर हमारे चित्त में हो तो हमको अपने से पूछना चाहिए, अपना हृदय टटोल लेना चाहिए।

मैंने यह कहा कि अहिंसा को आप सिद्धान्त न बनाइये। सिद्धान्त से मेरा मतलब है 'फेटिश'। 'फेटिश' यह निर्जीव देवता, जिसकी हम पूजा करते हैं, और पूजा के लिए बलिदान देते हैं। अहिंसा अगर हमारा देवता बन जायगी, हमारी देवी बन जायगी, तो मित्रो, हम मनुष्यों को बलि उसके चरणों में चढ़ायेंगे। इसलिए मैंने दूसरा वाक्य कहा। मुझे याद है, सारा भाषण तो मुझे याद नहीं है, लेकिन लोगों ने बार-बार सवाल पूछे थे, तो याद हो गया, तो मैंने दूसरा वाक्य कहा था कि किसी भी कारण से, किसी भी शर्त पर मनुष्य मनुष्य की हत्या नहीं करेगा। यह हमारी मर्यादा है, अहिंसा का सिद्धान्त नहीं। अहिंसा का सिद्धान्त

बौद्धों ने माना, जैनियों ने माना, ईसाइयों ने माना, सिद्धान्त रह गया, अहिंसा नहीं रही। 'वाद' ही 'वाद' हाथ लगा। इसलिए मैं दोहराता हूं, और जितनी शक्ति मेरे शब्दों में आ सकती है, उतनी शक्ति के साथ दोहराता हूं कि मेहरबानी करके आप अहिंसा को सिद्धान्त न बनाइये। मनुष्य मुक्त है, मनुष्यों को एक दूसरे के साथ रहना है, मनुष्यों को एक दूसरे के नजदीक आना है, मनुष्य मनुष्य की हत्या नहीं करेगा।

हमारा सारा आन्दोलन या हमारी सारी प्रवृत्तियाँ इस अधिष्ठान पर हैं। मैंने इसीलिए कल कहा था कि लोकतंत्र को हम मानते हैं। एक दूसरे के मत-परिवर्तन पर आधारित जो व्यवस्था है, उस व्यवस्था का नाम लोकतंत्र है। इसमें भिन्न मत का आदर है, भिन्न मत की प्रतिष्ठा है। हम एक दूसरे को समझायेंगे, 'कन्वर्ट' करेंगे, एक दूसरे का मत परिवर्तन करेंगे। मैं हृदय परिवर्तन नहीं कहता, मत-परिवर्तन कहता हूं। क्योंकि मत-परिवर्तन बुद्धि का विषय है। हृदय-परिवर्तन के लिए बुद्धि के अतिरिक्त दूसरी कुछ शक्तियों की आवश्यकता होती है। इसलिए मैंने मत-परिवर्तन कहा। लोकमत का राज्य ही लोकराज्य है। लोकमत की सत्ता लोकसत्ता है। मानसंख्या की नहीं, लोकमत की सत्ता। मत सदा परिवर्तनीय है। इसलिए मैं आप से यह कहना चाहता हूं कि लोकसत्ता में प्रधान जनता का है, उन्हें का नहीं, हाथ उठाने का है, चलाने का नहीं। यानी लोकतंत्र का अधिष्ठान दण्डशक्ति से भिन्न है। इसलिए उसे 'सिविल गवर्नमेंट' कहते हैं, सैनिक-सत्ता नहीं, लोकसत्ता, नागरिक-सत्ता।

सहनीय और क्षम्य हिंसा

यह चीज मैं आपके सामने रखना चाहता था, और इसको दोहराता हूं कि अहिंसा को सिद्धान्त नहीं बनायें, नहीं बनाना चाहिए। अहिंसा देवी नहीं है, जिसकी हम पूजा करेंगे, और उसकी बलि-वेदी पर मनुष्यों को बलि चढ़ायेंगे। आपको याद होगा, मैंने यह कहा था कि अगर बंगाल देश का आन्दोलन 'आलमोस्ट' अहिंसा है, तो ये जो हमारे गरीब भाई हैं; आप जानते हैं कि भूखे मनुष्य में सन्तुलन नहीं रह जाता, आप आते हैं दफ्तर से शाम को तो सबसे पहले भूख मिटनी चाहिए, सुबह खाना नहीं मिला, किसी से सीधे मुँह बात नहीं कर पाते, ऐसा मानस उस भूखे दरिद्री मनुष्य का अगर बन गया है, तो मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि उसकी हिंसा समर्थित नहीं है, उसकी हिंसा समाज-मान्य नहीं है, लेकिन उसकी हिंसा क्षम्य नहीं तो सहनीय अवश्य है। उसकी हिंसा सहनीय है, लेकिन क्या उस हिंसा से क्रान्ति हो सकती है? यह आगे का सवाल है। उधर भी आपका ध्यान मैंने दिलाया था।

पक्षपातक भय

हिंसा उसकी सहनीय है, और मैं तो क्षम्य भी मानता हूं। पुलिस और सेना के सिपाही की हिंसा की अपेक्षा इस दीन-दरिद्री भूखे मनुष्य की 'स्पान्टेनियस' (असंगठित) हिंसा है, इसलिए सहनीय है, क्षम्य भी है। सवाल यह है कि क्या इससे क्रान्ति हो सकती है? इसीलिए मैंने परसों आप से एक बात कही थी कि आप वर्ग-संघर्ष के हौवे को छोड़ दें। दो बातें कही थीं। एक तो यह कहा था कि लोग हमसे डरते हैं, इससे मन घबराइये। यह भय पक्षपातक है, स्वस्थ भय है कि ये लोग जमीन लेने आते हैं, सम्पत्ति मांगने आते हैं, और हमसे कुछ कराने के लिए आते हैं, इससे डरो। इस भय को मैं बुरा नहीं मानता। यह 'टेरर' नहीं है, आतंक नहीं है, आतंक क्रान्ति का दुश्मन है। लेकिन यह जो भय है, इस भय का निवारण हो सकता है। आतंक तो पैदा किया जाता है, भय हम पैदा नहीं करना चाहते। वह अनिवार्यतः पैदा होता है, तो वह स्वस्थ है। कम-से-कम यह तो मानते हैं कि आप ही ऐसे हैं जो आज की समाज-व्यवस्था का अन्त करना चाहते हैं। मैंने आप से कहा था कि इस देश में सबसे आवश्यक और सबसे महत्वपूर्ण जो काम है, वह आप कर रहे हैं। आप तो भले आदमी हैं ही। कुछ अपवादों को छोड़कर आपकी इस सारी जमात को मैं पवित्र जमात मानता हूं। लेकिन आपसे आपका काम अधिक पवित्र है। कुछ काम ऐसे होते हैं, कुछ मौके ऐसे होते हैं, जो छोटे आदमियों को बड़ा बना देते हैं। यह काम ऐसा ही है, जिसको आपने उठाया है। इस काम में आप क्या सोचते हैं कि, 'कहीं ऐसा न हो कि वर्ग-संघर्ष हो जाय!...वर्ग-संघर्ष हो जाय!' और इस हिचक के कारण एक रुकावट पैदा हो गयी है। तो मैंने आपसे निवेदन किया था कि वर्ग-संघर्ष हौवा नहीं है। हमारे बालकों को डराने के लिए जब हम हौवा खड़ा करते हैं या पक्षियों को डराने के लिए खेत में 'मनई' खड़ा करते हैं, तो कौओं को डराने के लिए यह जो मनई खड़ा किया जाता है, उसी की तरह है हमारे लिए यह वर्ग-संघर्ष। वर्ग-संघर्ष से हमको डरना नहीं है। अगर वर्ग है, और उनमें संघर्ष अनिवार्य है, तो वर्ग-संघर्ष से हिचकेंगे नहीं। अगर वर्ग-संघर्ष अनिवार्य है, तो वर्ग-संघर्ष ही होकर रहेगा, हम करें क्या? लेकिन एक बात इसके साथ मैंने कही थी कि वर्ग क्या है?

'वर्गभेद' की कल्पना और किसान-क्रान्ति

यह वर्ग शब्द मार्क्स का है। मनुष्य का इतिहास वर्ग-संघर्ष से शुरू होता है। तो वर्ग शब्द की मार्क्स की परिभाषा क्या है? जिनके पास सम्पत्ति है वे एक वर्ग के हैं, जिनके पास केवल श्रम है, सम्पत्ति नहीं है, वे दूसरे वर्ग के हैं। यह मार्क्स की वर्ग की परिभाषा है, बुर्जुआ, प्रोलिटेरियट की। बुर्जुआ वह, जिसके पास मालकियत है, मेहनत करता हो या न करता हो, प्रोलिटेरियट वह है जो मेहनत करता है, लेकिन मालिक नहीं है।

मैंने निवेदन किया था कि कृषि के क्षेत्र में ऐसा वर्गभेद है ही नहीं। मार्क्स ने जिस वर्गभेद की कल्पना की थी उस वर्गभेद को पहली चोट लगी, लेनिन की

क्रान्ति से जब किसान मजदूर के साथ क्रान्ति का अग्रदूत बना। नेतृत्व तो मजदूरों ने ही किया, लेकिन किसान उसके पीछे गया। लेकिन क्रान्ति के इतिहास में एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी परिवर्तन किसी ने किया तो वह माओ ने। पहली बार संसार के इतिहास में किसान की क्रान्ति हुई। और इसके लिए वह स्टालिन या लेनिन का शिष्य नहीं रहा। उसने कहा कि मैंने क्रान्ति की एक नयी प्रक्रिया की खोज की है—किसान की क्रान्ति की। तो वर्ग का जो स्वरूप है, वह कृषि के क्षेत्र में इस प्रकार का है. ज्यादा हैं छोटे मालिक; गैर-मालिक कम हैं, और बड़े मालिक सबसे कम हैं। दूसरी विशेषता है, किसान बिखरे हुए हैं, संघटित रूप से एक जगह किसान काम नहीं करते। तीसरी चीज यह है कि कारखाने का मजदूर मालिक का काम करता है और किसान अपना काम करता है। ये तीन विशेषताएँ कृषि के क्षेत्र में ऐसी हैं, जो कृषि के क्षेत्र की क्रान्ति की प्रक्रिया का स्वरूप बदलती हैं। इसलिए मैंने आपसे निवेदन किया था कि हमें वर्ग-संघर्ष से डरने की क्या जरूरत है? अगर वर्गों का स्वरूप कुछ अलग है कृषि के क्षेत्र में, तो वर्ग-संघर्ष होगा, क्यों नहीं होगा? और उससे हम हिचकेंगे क्यों? क्या आवश्यकता है? एक मर्यादा तो हमने मान ली है मनुष्य मनुष्य की हत्या नहीं करेगा। तो उसके बाद क्यों हिचकेंगे? परन्तु यह तो देखना होगा न, यह अध्ययन का विषय है, कि आखिर कृषि के क्षेत्र में वर्ग का स्वरूप क्या है? वह मैंने आपके सामने रखा। इस क्षेत्र में गैर-मालिक कम हैं, छोटे मालिक अधिक हैं, और बड़े मालिक मुट्ठी भर हैं।

अब मेरा निवेदन यह है कि ये जो मुट्ठी भर मालिक हैं, बड़े मालिक हैं, समाज में इनका प्रभाव है। यह प्रभाव मालकियत के आधार पर है। तो इसको हम कम करना चाहते हैं। व्यक्तियों के प्रभाव को नहीं, उस प्रभाव के आधार को। और जरा इसे स्पष्ट करें: पुलिस का प्रभाव मनुष्य के नाते नहीं, पुलिस के डण्डे के नाते है। वह जब वर्दी उतार देता है और डण्डा उसके हाथ में नहीं होता, तब जो उसका प्रभाव है, वह मनुष्य का प्रभाव है। हम मनुष्य की यानी निरुपाधिक मानव की प्रतिष्ठा समाज में स्थापित करना चाहते हैं। निरुपाधिक मानव—जिसके पास डण्डा नहीं, थैली नहीं, कुर्सी नहीं। ऐसा जो निरुपाधिक मानव है, इसके पास औजार ही औजार हैं कुछ साधनों के साथ। इस निरुपाधिक मानव की प्रतिष्ठा हमको समाज में कायम करनी है।

इसलिए इस क्रान्ति की प्रक्रिया में, हम सम्पत्ति और स्वामित्व के कारण समाज में जो प्रतिष्ठित है, उसका सहयोग लेंगे, उसकी सहायता मांगेंगे, लेकिन उसके वजन का उपयोग हम नहीं करेंगे। उसके वजन का उपयोग अगर हम करते हैं, तो आज की सामाजिक जो प्रतिष्ठाएँ हैं, उनको सींचते हैं। उनकी जड़ों को मजबूत करते हैं। अब इस फर्क को तो आप बहुत अच्छी तरह समझ लें। हम कमिश्नर, और मिनिस्टर, प्रेसिडेण्ट ऑफ इण्डिया, सबकी सहायता लेंगे, सबका सहयोग लेंगे, लेकिन कहीं ऐसा न हो कि हमारा सारा काम इनके वजन से ही रहा हो। तो जिन प्रतिष्ठाओं का हम अंत करना चाहते हैं, वही प्रतिष्ठाएँ मजबूत हो जाती हैं। मैंने मजाक में एक वाक्य कहा था कि कुत्ता दुम को हिलायेगा या दुम ही कुत्ते को हिलायेगी? तो आज की ये जो सामाजिक प्रतिष्ठाएँ हैं, वे सामाजिक प्रतिष्ठाएँ इस क्रान्ति की प्रक्रिया में क्षीण होनी चाहिए। हम बुद्धिमानों का भी सहयोग लेंगे, धनवानों का भी सहयोग लेंगे, हम मालिकों का भी सहयोग लेंगे, हम सत्ताधारियों का भी सहयोग लेंगे, लेकिन वह सहयोग होगा, आश्रय नहीं, सहारा नहीं। मित्रो, जो सहारा लेता है, वह शक्ति खोता है, जिसका सहारा लिया जाता है, वह शक्ति पाता है। हम पाकिस्तान के खिलाफ रूस का सहारा लेते हैं, तो ताकत रूस की बढ़ती है, अमेरिका का लेते हैं तो ताकत अमेरिका की बढ़ती है, अपनी नहीं।

समझौते की क्रान्ति

समझौते में डूब जाती है

हम किसको प्रतिष्ठित करना चाहते हैं? उसको प्रतिष्ठित करना है, जिसके पास सम्पत्ति नहीं, स्वामित्व नहीं। जो उत्पादक है। चीज बरतनेवाले को नहीं, खरीदनेवाले को नहीं, चीज बनानेवाले को। शायद आपको याद हो, एक बात मैं लगातार कहता आया हूँ, चीज बनानेवाले की प्रतिष्ठा बढ़ेगी, खरीदनेवाले की नहीं, और, छीननेवाले की भी नहीं। छीननेवाले की अगर प्रतिष्ठा बढ़ी तो दण्डशक्ति बढ़ेगी। दण्डशक्ति से मेरा मतलब 'पनिशमेन्ट' से नहीं, डण्डे से है। डण्डे की ताकत, डण्डे का रुतबा समाज में बढ़ेगा, अगर छीननेवाले की प्रतिष्ठा बढ़ी। भूमि हड़पो, भूमि छीनो; तो उसकी प्रतिष्ठा होगी जो भूमि छीन सकता है। हुआ क्या? पूँजीवाद में खरीदनेवाले की प्रतिष्ठा है, आपकी क्रान्ति में छीननेवाले की प्रतिष्ठा बढ़ी, चीज बनानेवाला तो हाथ मलता रह गया। यह क्रान्ति नहीं हुई। डण्डे की क्रान्ति क्रान्ति नहीं है। क्योंकि आज की समाज की रचना में एक मुख्य संस्था बाजार है। मन्दिर नहीं, मस्जिद नहीं, विश्वविद्यालय नहीं, विद्यालय नहीं, आपके आश्रम नहीं और आपकी दूसरी कोई पवित्र संस्था नहीं। आज की दुनिया की, आज की समाज-रचना की मुख्य संस्था बाजार है। जीवन के तौर-तरीके, तर्ज-फैशन सब बाजार से चलते हैं।

बाजार में तीन चीजें हैं, कोटियों में हैं—सौदा, सट्टा, सफेद; दूसरी—जुआ, ज्योतिष और चोरी। इन तीन की प्रतिष्ठा है आज के समाज में। लोगों ने मुझसे कई बार पूछा कि यह चोरबाजारी है, भ्रष्टाचार है, इसको हमको समाप्त करना है। आज मित्र आये थे कुछ, मैंने उनसे कहा कि समाज की बुनियाद अगर आप नहीं बदलना चाहते हैं, तो खूब चार

इसलिए, यह सौदा, सट्टा और मार्केट, जुआ, चोरी और चोरी की प्रतिष्ठा समाज में रहेगी, आपकी नहीं। और बाजार के मूल्यों को आपको स्वीकार करना पड़ेगा। हमारी खादी ने इसे स्वीकार कर ही लिया है, करण भाई क्षमा करें, हमने बाजार के मूल्यों को नहीं बदला, बाजार ने ही खादी को बदल दिया। हमारे साहित्य का भी हाल यही है। हम बाजार के मूल्यों को नहीं बदल रहे हैं, बाजार के सामने झुक रहे हैं। यह हो रहा है। इसे 'कम्प्रोमाइज्ड रिवोल्यूशन' कहते हैं, समझौते की क्रान्ति समझौते में डूब जाती है। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि आज की समाज-व्यवस्था के जो प्रतीक हैं, इनके रहते आप हजार कोशिश करेंगे भ्रष्टाचार को नष्ट करने के लिए, कभी नहीं होगा। आप को खादी बेचने के लिए सत्ताधारियों की शरण लेनी पड़ेगी, साहित्य बेचने के लिए लेनी पड़ेगी, मिल के मजदूरों में साहित्य बेचेंगे तो आपका दाम जब मिलमालिक देगा तब आप का साहित्य बिकेगा। यह सब हो रहा है। तो मैं आप से निवेदन यह कर रहा था कि बाजार के मूल्यों को बदलने का कहीं से आरम्भ करना होगा, और वह आरम्भ आप के ग्रामस्वराज्य में होगा। इन प्रतिष्ठाओं की तरफ आप का ध्यान दिला रहा हूँ।

सम्पत्तिवान् : अन्यायमूलक समाज-व्यवस्था का उपकरण

छोटा मालिक और गैर-मालिक तो आज अप्रतिष्ठित है, क्योंकि आज की व्यवस्था अन्यायमूलक है। दूसरी ओर धन और सम्पत्ति जिसके पास है, वह उस अन्याय का उपकरण है। उसे आप शैतान मत मानिये, वह राक्षस नहीं है, वह शैतान नहीं है। धीरेन्द्र भाई यहाँ बैठे हैं। बीकानेर के बारे में एक दफा इन्होंने यह लिखा था कि यह तो कंस का राज है। विनोबा से उन्होंने शिकायत की, 'यह धीरेन्द्र का भाषण, हमको क्या कहता है, मानो देता है।' तो विनोबा ने मुझसे पूछा कि तुम क्या कहोगे? धीरेन दा वहाँ बैठे ही हुए थे। मैंने कहा कि धीरेन्द्र मुँहफट आदमी हैं, भाषा नहीं जानते हैं, सीधी भाषा में कुछ कह देते हैं। कहना चाहिए कि 'कृष्ण के मामा का राज है।' अब यह केवल विनोद नहीं है। कंस की कोई जाति नहीं, कंस की बहन कृष्ण की माँ हो सकती है। हिरण्यकश्यप की भी कोई जाति नहीं, उसका पुत्र प्रह्लाद भगवान भक्त हो सकता है। अमीर शैतान नहीं है। हर गरीब अमीर बन सकता है, हर अमीर गरीब बन सकता है। यह बात मैंने उस दिन कही थी, उसी को साफ कर रहा हूँ।

तो, किस कारण अन्याय का वह उपकरण बन गया है? और अब उस उपकरण से हम कह रहे हैं कि इसको छोड़ दो। एक तरह की बीमारी है न। एक बीमारी है 'ओबेसिटी' की। इतना बीमार हो गया कि फूलकर कुप्पा हो गया, गुब्बारा हो गया; दूसरी तरफ एक बीमारी है, इतना दुबला हो गया कि लिफाफा बन गया। जो दुबला हो गया वह तो कहता है कि बीमारी से बचना चाहता हूँ, मुझे चाहिए कोई पौष्टिक औषधि। लेकिन जो गुब्बारा बन गया है, वह अपनी बीमारी छोड़ना ही नहीं चाहता। यह हमारी शिकायत है। अगर वह यह कहता है कि यह बीमारी मैं छोड़ना चाहता हूँ तो स्वागत है, आवश्यकता भी है। लेकिन यह समझकर कि बीमारी छोड़ रहा हूँ, मेहरबानी नहीं कर रहा हूँ। कोई पाप है, लेकिन कृपा नहीं है, दया नहीं है। वह अपनी बीमारी से बचना चाहता है तो उसे सब छोड़ना ही छोड़ना पड़ता है, लेकिन क्या करे? बीमारी अगर मोटापे की ही है तो उसे 'कूलन बाथ' ही लेना पड़ेगा। और उसकी बीमारी अगर दुबलापन की है तो उसे रबड़ी खिलायेंगे। कोई दूसरा उपाय नहीं है। नतीजा यह है कि गरीब अपनी गरीबी को बीमारी मानता है, लेकिन इससे छूटना चाहता है, अमीर अमीरी को बीमारी नहीं मानता और न ही उससे छूटना चाहता है। यह है आज की वस्तुस्थिति। इसमें जो अमीर कहता कि मैं भी अपनी बीमारी से छूटना चाहता हूँ, मैं आप से निवेदन करता हूँ कि आप उसकी पालकी अपने कंधे पर लेकर उसका जुलूस निकालिए। लेकिन वह अगर कहता है कि 'अब क्या करें, यों तो जाने ही वाली है जमीन, थोड़ी दे देता हूँ।' और फिर आपकी सर्वोदय की मण्डली में कुछ प्रतिष्ठा भी पा लेता है, तो क्रान्ति नहीं होगी, प्रचलित प्रतिष्ठाओं को बल मिलेगा।

इसीलिए मैंने आप से उसे 'आइसोलेट' करने की बात कही थी। उसे 'आइसोलेट' करने से मेरा मतलब यह नहीं था कि उसका बहिष्कार करेंगे। मैं यह कहता हूँ कि उसको आप समझाइये। चीज उसकी समझ में अगर नहीं आती है, तो उसका द्वेष नहीं, मत्सर भी नहीं। यह क्रान्ति मत्सर की क्रान्ति नहीं है, यह क्रान्ति द्वेष और ईर्ष्या की क्रान्ति नहीं है, यह क्रान्ति प्रतिक्रिया की भी क्रान्ति नहीं है। इसलिए, मैंने आप से निवेदन किया कि छोटे मालिक से आरम्भ कीजिए। और संगठन कैसे होगा छोटे मालिकों का? अपनी मालकियत को छोड़ने से। अब अपनी मालकियत को छोड़ने के आधार पर जहाँ संगठन होता है, तो यह बताइये कि उससे अधिक विधायक संगठन दुनिया में और कौन-सा होगा? यह अधिक-से-अधिक विधायक संगठन है। मैं जब यह कहता हूँ कि छोटा मालिक अपनी मालकियत को छोड़ दे, अपनी मेहनत को गैर मालिक की मेहनत के साथ मिला दे, ये दोनों जब एक हो जाते हैं, निजी मालकियत दोनों की नहीं है, तो इसमें कहाँ आप को विरोध दिखाई देता है? इसे मैंने कहा था कि 'लोकशक्ति का यह दबाव है, और नैतिक दबाव है।' यह दबाव इसीलिए है कि हम जिस तरह की सामाजिक व्यवस्था चाहते हैं, उस समाज व्यवस्था के लिए यह आवश्यक है।

आन्दोलन की प्रगति धीमी क्यों?

—जयप्रकाश नारायण

[भोपाल अधिवेशन में जे० पी० ने ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के संदर्भ में जो आत्म-निरीक्षण प्रस्तुत किया था, वह हम यहाँ मूलरूप में प्रकाशित कर रहे हैं। यह उनके पूरे भाषण का आन्दोलन सम्बन्धी अंश है। इसी भाषण के आधार पर प्रेसवालों ने यह समाचार प्रसारित किया था कि जे० पी० ने भूदान-ग्रामदान आन्दोलन को विफल घोषित कर दिया। वास्तव में उन्होंने जो कहा था, आप के सामने है। सर्वोदय आन्दोलन सत्य की बुनियाद पर ही टिक सकता है, इसलिए अगर हममें कहीं कमी है, तो उसको स्वीकार करना आन्दोलन के लिए हम हितकर मानते हैं—सं०]

कल दादा ने समारोप किया ग्राम-दान की चर्चा का। समारोप मुझे करना था, लेकिन मुझमें न उतनी गहराई है, न उतना ज्ञान है कि इतना सुन्दर समारोपीय भाषण मैं कर सकता। अच्छा हुआ कि मुझे मुख्यमंत्री के निमंत्रण पर आप से छुट्टी माँग कर उनके यहाँ उपस्थित होना पड़ा था। अच्छा ही हुआ। अत्यन्त ही सुन्दर वह भाषण है। और मुझे आशा है कि आप सब उनकी एक-एक पंक्ति को हृदयंगम करेंगे। ग्रामदान के प्रश्न पर 'फेस टू फेस' में, 'आमने-सामने' वाले अपने लेख में जो कुछ मैं लिख चुका हूँ, उसके कई विचार दादा के विचारों से मिलते-जुलते हैं। उसके आगे मेरा विचार अभी गया नहीं है, इसलिए कि उसके आगे मेरा अनुभव नहीं हुआ है।

नक्सालवाद से कोई क्रान्ति नहीं

इन दिनों नक्सालवाद की बड़ी चर्चा है। यहाँ भी उसकी चर्चा कई बार उठी। मैं भी मानता रहा कि ये लोग बड़े क्रान्तिकारी हैं, और उनके अन्दर बहुत ही तेजस्वी लोग हैं। कलकत्ता आदि विश्वविद्यालयों के फर्स्टक्लास फर्स्ट एम० ए० पास किये विद्यार्थी हैं, उनमें से कुछ पी० एच० डी० भी पास किये हुए विद्यार्थी हैं। लेकिन वह जो नक्सालवादियों का दल था, उसमें बड़ा भारी परिवर्तन हो चुका है। माओ का नाम लेते हैं, माओ हमारा नेता है ऐसा कहते हैं, लेकिन कोई माओवाद नहीं। व्यक्तिगत हत्या को सामाजिक क्रान्ति का आज तक किसी ने साधन नहीं माना है। आतंकवाद ही आज नक्सालवाद के रूप में प्रकट हो गया है। समाज में जो आज की स्थिति है, जो दारिद्र्य है, जो शोषण है, जो अन्याय है, जो उसके मूल कारण हैं, उनमें नक्सालवादी क्रान्ति कर सकेंगे, इसका मुझे कोई विश्वास नहीं। मैंने कई बार कहा है कि अगर मुझे इसवाद में और माओवाद में चुनाव करना पड़े, तो मैं अवश्य ही चुनाव करूँगा माओवाद का। आप माओ के वाक्य को लीजिये, और ऊपर दीजिये, नीचे लिख दीजिये महात्मा गांधी, तो आपको फर्क नहीं मालूम पड़ेगा कि ये गांधी के वाक्य हैं या माओ के वाक्य हैं। एक फ्रांसीसी मित्र ने मुझसे कहा कि माओ के बहुत से वाक्य ऐसे हैं, जिनके नीचे जीसस क्राइस्ट लिख दिया जाय, तो कोई फर्क नहीं मालूम पड़ेगा। आपको लगेगा कि वे जीसस क्राइस्ट के ही वाक्य हैं। हिंसा है, जो उन्होंने प्रयोग किये अपनी घनी आबादी के देश में, जिन उपायों से किये, उनमें से बहुत से उपाय मुझे मान्य नहीं होंगे, पर जो कुछ किया उसके पीछे एक सामाजिक क्रान्ति की दृष्टि रही है।

लेकिन मैं अपने मुसहरी प्रखण्ड में देखता हूँ कि नक्सालवादी हत्याएँ जो होती हैं, उनके पीछे क्रान्ति का विचार नहीं है, उनके पीछे गाँव के आपसी झगड़े हैं, पारिवारिक झगड़े हैं, मुकदमेबाजी के झगड़े हैं। नौजवान बहुत से हैं, बेकार हैं, आइ० ए०, बी० ए० पास करके, बी० एससी० करके बैठे हैं देहातों में, निठल्ले हैं, असंतुष्ट हैं, क्रान्तिकारी बन जाते हैं। कुछ बम बनाना सीख लेते हैं, कुछ पिस्तौल चलाना सीख लेते हैं, और इधर कुछ हत्या कर दी, उधर कुछ हत्या कर दी। आज मैं नक्सालवाद को आदर की दृष्टि से नहीं देखता। देहात अब उनका क्षेत्र नहीं रहा। छिटफुट कहीं-कहीं हलचल है। और शहरों में क्या करते हैं? नेताजी की मूर्तियाँ तोड़ेंगे, गांधीजी की तोड़ेंगे, पुस्तकालयों को जलायेंगे, विद्यालयों में जाकर हत्याएँ करेंगे। इससे कोई क्रान्ति होगी, ऐसा तो सम्भव है नहीं।

हमारी चारित्रिक निर्बलता के दुष्परिणाम

लेकिन एक बात आप से कहूँगा। मित्रो, हमारे आन्दोलन की प्रगति अधिक नहीं हो रही है, इसका एक कारण यह भी है—हमारे चारित्र्य की निर्बलता। यद्यपि हम सत्ता से दूर हैं, लेकिन हम देखते हैं बिहार में, छोटे-छोटे पदों के लिए, किसको दो सौ रुपये मिलते हैं, किसको सवा सौ रुपये मिलते हैं, ऐसी छोटी-छोटी बातों के लिए आपस में कितनी झगड़ा है, बल्कि गुटबन्दी है। इतना बड़ा काम, इतनी बड़ी क्रान्ति करने के लिए हम आगे बढ़े हैं, लेकिन हम उसके योग्य नहीं

जयप्रकाश नारायण हृदय की बात

कृषि क्रान्ति : जोर-जबरदस्ती से हो नहीं सकती

अंत में एक बात कहूँगा। अगर कोई मुझे यह समझा दे, कि कृषि के क्षेत्र में छोटी मालकियत का निराकरण जोर-जबरदस्ती और हिंसा से हो सकता है, तो मैं उसके पीछे जाने को तैयार हूँ। इसलिए मैंने उस दिन आपसे कहा था, कि उसका 'एक्सप्रोप्रिएशन' नहीं हो सकता। किसी ने आज तक नहीं किया। चीन ने नहीं, रूस ने नहीं, नक्सालवादी भी कर नहीं सके। एक नक्सालवादी से पूछा, 'बड़े मालिकों की मालकियत तुम छीन लोगे, छोटे मालिकों के साथ क्या करोगे?' तो उसने कहा कि 'उसको समझायेंगे।' वे तो सौ में से अस्सी हैं। गैर-मालिकों को छोड़ दीजिए, मालिकों में सौ में से अस्सी छोटे मालिक हैं। अस्सी को अगर तुम समझा लोगे तो बीस को समझाने की चिंता नहीं, वे अपने आप समझ जायेंगे। इसका मतलब यह है कि एक्सप्रोप्रिएशन (सम्पत्तिहरण), टैक्सेशन (लगानबंदी), कान्फिस्केशन (मुठभेड़), इन तीनों का प्रयोग छोटी मालकियत के क्षेत्र में नहीं हो सकता है। छोटी मालकियत के निराकरण की एकमात्र प्रक्रिया, चाहे विनोबा के जमाने में वह सफल हो, चाहे जयप्रकाशजी के जमाने में सफल हो, या चाहे हमारे किसी के सामने में सफल न हो, लेकिन कृषि क्रान्ति एक ही तरह से पूरी हो सकती है कि छोटा मालिक अपनी मालकियत का स्वेच्छा से विसर्जन कर दे। इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है।

यहाँ आकर माओ की क्रान्ति ठिठक गयी। माओ किसान की क्रान्ति का पैगम्बर है, इसलिए मैं उसके चरण छूने को तैयार हूँ, लेकिन उसकी क्रान्ति नष्ट हो गयी, बिगड़ गयी, क्योंकि उसने किसान को जवान (सैनिक) बना दिया। आखिर सभी जवान कभी-न-कभी किसान तो थे ही। आप किसान की क्रान्ति चाहते हैं या जवान बने हुए किसान की क्रान्ति चाहते हैं? अगर किसान जवान बन जायगा तो क्रान्ति जवान की होगी, किसान की नहीं। तो, यह एक कदम आगे है जो विनोबा रख रहा है, कि किसान किसान रहेगा और क्रान्ति करेगा। लेकिन विज्ञानियत में क्रान्ति, छोटे मालिकों की ही क्रान्ति हो सकती है। तो इसका अग्रदूत छोटा मालिक होगा।

दूसरा कोई रास्ता नहीं

मित्रो, क्रान्तिकारी के शब्दकोष में 'डिफीट' शब्द नहीं है, पराजय शब्द नहीं है। उसके शब्दकोष में भी नहीं है, और उसके हृदय में भी नहीं है। असफलताएँ हैं, और शायद असफलता का वरण जो कर सकते हैं, उनमें अधिक वीरता की आवश्यकता होती है। कल मैंने आपसे कहा था कि आप का सारा दर्द तो यही है कि हमें कोई नहीं पूछता? लेकिन दूसरे भी आगे जा सकते हैं। कोई नहीं पूछता, इतना ही नहीं होगा, शायद एक-दो लात भी ऊपर से मार दे। लेकिन 'कह रहीम प्रतिवाद क्यों, जो भृगु मारी लात!' किसान की क्रान्ति इस युग में, माओ की क्रान्ति और चीन की क्रान्ति के बाद, जो क्रान्ति होगी, मित्रो वह 'थैंकलेस' क्रान्ति होगी, इसमें आपको कोई धन्यवाद नहीं देगा। हो सकता है कि आपको कोसे खाने पड़ें। निवेदन इतना ही है, इस बात को अच्छी तरह समझ लीजिए, कि किसान की क्रान्ति का छोटे मालिक की मालकियत के विसर्जन के अलावा और कोई रास्ता नहीं; वैज्ञानिक भी नहीं, व्यावहारिक भी नहीं। कोई रास्ता नहीं हो सकता है इसके सिवाय। इसमें आप परामूत नहीं होंगे, असफल होंगे। आपकी असफलता दूषणभूत नहीं होगी, भूषणभूत होगी, चन्द्र के कलंक के समान।

सर्व सेवा संघ अधिवेशन,
भोपाल, ३०-१०-७१

गया जिला आचार्यकुल सम्मेलन

समाज परिवर्तन के परिवेश में अधिकारों के लिए नहीं, बल्कि अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक रहकर, गन्दी और दूषित राजनीति से भिन्न शिक्षा को सरकार से मुक्त कराकर उसे स्वायत्तता प्रदान करने का संकल्प ग्रहण करनेवाले शिक्षक संगठन आचार्यकुल के गया जिले के सदस्यों का प्रथम सम्मेलन उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बेलागंज में दिनांक ५ अक्टूबर को भागलपुर विश्वविद्यालय के प्राचार्य डा० रामजी सिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन राष्ट्रकवि श्री रामधारी सिंह दिनकर ने किया। श्री दिनकर ने अपने उद्घाटन भाषण में शिक्षा क्षेत्र में बढ़ी हुई गिरावट और शिक्षकों के कर्तव्य की चर्चा करते हुए कहा कि राजनीति के दाँव-पेंच से दूर रहकर अध्ययनशील, विनयी और सेवाभावी शिक्षक ही आज की परिस्थिति में परिवर्तन आचार्यकुल के मंच से ला सकते हैं। क्योंकि आचार्यकुल का संगठन ही शिक्षकों का ऐसा संगठन है जो शिक्षकों के कर्तव्य के प्रति उन्हें प्रेरित करता है। आचार्यकुल की प्रगति और उसके प्रेरणा-प्रद कार्यों के प्रति अपनी शुभकामनाएँ व्यक्त करते हुए श्री दिनकर ने उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना की और कहा कि आचार्य विनोबाजी के निर्देशन में संगठित आचार्यकुल अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल होगा।

सम्मेलन के पूर्व उक्त स्थान पर ही आयोजित आचार्यकुल सगोष्ठी श्री रामेश्वर प्रसाद सिंह, मंत्री, बिहार, की अध्यक्षता में हुई, जिसमें काफी विचार के बाद आचार्यकुल के सदस्य, उसके कार्य, कदम का निर्धारण और उससे सम्बन्धित अन्य समस्याओं पर विचार किया। साथ ही जिला आचार्यकुल समिति का गठन किया जिसके संयोजक श्री राजेन्द्र प्रसाद सिंह, प्राचार्य, राज्य उच्चतर माध्यमिक विद्यालय टिकारी, जिला-गया, बनाये गये।

आन्दोलन की प्रगति धीमी क्यों ?

—जयप्रकाश नारायण

[भोपाल अधिवेशन में जे० पी० ने ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के संदर्भ में जो आत्म-निरीक्षण प्रस्तुत किया था, वह हम यहाँ मूलरूप में प्रकाशित कर रहे हैं। यह उनके पूरे भाषण का आन्दोलन सम्बन्धी अंश है। इसी भाषण के आधार पर अखबारों ने यह समाचार प्रकाशित किया था कि जे० पी० ने भूदान-ग्रामदान आन्दोलन को विफल घोषित कर दिया। वास्तव में उन्होंने जो कहा था, आप के सामने है। सर्वोदय आन्दोलन सत्य की बुनियाद पर ही टिक सकता है, इसलिए अगर हममें कहीं कमी है, तो उसको स्वीकार करना आन्दोलन के लिए हम हितकर मानते हैं—सं०]

जयप्रकाश नारायण : हृदय की बात

बाबा ने समारोप किया ग्रामदान की चर्चा का। समारोप मुझे करना था, लेकिन मुझमें न उतनी गहराई है, न उतना ज्ञान है कि इतना सुन्दर समारोपीय भाषण मैं कर सकता। अच्छा हुआ कि मुझे मुख्यमंत्री के निमंत्रण पर आज से छुट्टी माँग कर उनके यहाँ उपस्थित होना पड़ा था। अच्छा ही हुआ। अत्यन्त ही सुन्दर वह भाषण है। और मुझे आशा है कि आप सब उनकी एक-एक पंक्ति को हृदयंगम करेंगे। ग्रामदान के प्रश्न पर 'फेस टू फेस' में, 'आमने-सामने' यानी अपने लेख में जो कुछ मैं लिख चुका हूँ, उसके कई विचार बाबा के विचारों से मिलते-जुलते हैं। उसके आगे मेरा विचार अभी गया नहीं है, इसलिए कि उसके आगे मेरा अनुभव नहीं हुआ है।

नक्सलवाद से कोई क्रान्ति नहीं

इन दिनों नक्सलवाद की बड़ी चर्चा है। यहाँ भी उसकी चर्चा कई बार उठी। मैं भी मानता रहा कि ये लोग बड़े क्रान्तिकारी हैं, और उनके अन्दर बहुत ही तेजस्वी लोग हैं। कलकत्ता आदि विश्वविद्यालयों के फर्स्टक्लास फर्स्ट एम० ए० पास किये विद्यार्थी हैं, उनमें से कुछ पी० एच० डी० भी पास किये हुए विद्यार्थी हैं। लेकिन वह जो नक्सलवादियों का दल था, उसमें बड़ा भारी परिवर्तन हो चुका है। माओ का नाम लेते हैं, माओ हमारा नेता है ऐसा कहते हैं, लेकिन कोई माओवाद नहीं। व्यक्तिगत हत्या को सामाजिक क्रान्ति का आज तक किसी ने साधन नहीं माना है। आतंकवाद ही आज नक्सलवाद के रूप में प्रकट हो गया है। समाज में जो आज की स्थिति है, जो दारिद्र्य है, जो शोषण है, जो अन्याय है, जो इसके मूल कारण हैं, उनमें नक्सलपंथवादी क्रान्ति कर सकेंगे, इसका मुझे कोई विश्वास नहीं। मैंने कई बार कहा है कि अगर मुझे गांधीवाद में और माओवाद में चुनाव करना पड़े, तो मैं अवश्य ही चुनाव करूँगा माओवाद का। आप माओ के वाक्य को लीजिये, और छाप दीजिये, नीचे लिख दीजिये महात्मा गांधी, तो आपको फर्क नहीं मालूम पड़ेगा कि ये गांधी के वाक्य हैं या माओ के वाक्य हैं। एक गांधीवादी मित्र ने मुझसे कहा कि माओ के बहुत से वाक्य ऐसे हैं, जिनके नीचे जीसस क्राइस्ट लिख दिया जाय, तो कोई फर्क नहीं मालूम पड़ेगा। आपको लगेगा कि ये जीसस क्राइस्ट के ही वाक्य हैं। हिंसा है, जो उन्होंने प्रयोग किये अपनी पूरी आजादी के देश में, जिन उपायों से किये, उनमें से बहुत से उपाय मुझे मान्य नहीं होंगे, पर जो कुछ किया उसके पीछे एक सामाजिक क्रान्ति की दृष्टि रही है।

लेकिन मैं अपने मुजफ्फरपुर प्रखण्ड में देखता हूँ कि नक्सलवादी हत्याएँ जो होती हैं, उनके पीछे क्रान्ति का विचार नहीं है, उनके पीछे गाँव के आपसी झगड़े हैं, पारिवारिक झगड़े हैं, मुकदमेबाजी के झगड़े हैं। नौजवान बहुत से हैं, बेकार हैं, आई० ए०, बी० ए० पास करके, बी० एससी० करके बैठे हैं देहातों में, निठल्ले हैं, असंतुष्ट हैं, क्रान्तिकारी बन जाते हैं। कुछ बम बनाना सीख लेते हैं, कुछ पिस्तौल चलाना सीख लेते हैं, और इधर कुछ हत्या कर दी, उधर कुछ हत्या कर दी। आज मैं नक्सलवाद को आदर की दृष्टि से नहीं देखता। देहात अब उनका क्षेत्र नहीं रहा। छिटपुट कहीं-कहीं हलचल है। और शहरों में क्या करते हैं? नेताजी की मूर्तियाँ तोड़ेंगे, गांधीजी की तोड़ेंगे, पुस्तकालयों को जलायेंगे, विद्यालयों में जाकर हत्याएँ करेंगे। इससे कोई क्रान्ति होगी, ऐसा तो सम्भव है नहीं।

हमारी चारित्रिक निर्बलता के दुष्परिणाम

लेकिन एक बात आप से कहूँगा। मित्रो, हमारे आन्दोलन की प्रगति अधिक नहीं हो रही है, इसका एक कारण यह भी है—हमारे चारित्र्य की निर्बलता। यद्यपि हम सत्ता से दूर हैं, लेकिन हम देखते हैं बिहार में, छोटे-छोटे पदों के लिए, जिसको दो सौ रुपये मिलते हैं, जिसको सवा सौ रुपये मिलते हैं, ऐसी छोटी-छोटी बातों के लिए आपस में कितना झगड़ा है, कितनी गुटबन्दी है। इतना बड़ा काम, इतनी बड़ी क्रान्ति लाने के लिए हम आगे बढ़े हैं, लेकिन हम उसके योग्य नहीं

है। हमारे बाद कोई पीढ़ी आयेगी, वह हमसे योग्य होगी, करेगी। हम में से विरले लोग होंगे जो इसके योग्य होंगे, सबकी बात मैं नहीं कह रहा हूँ, लेकिन अधिकांश हम आत्म-मथन तो करें! मैं जानता हूँ कि भूदान की जमीन कितने गलत ढंग से उन लोगों में बाँटी गयी है, जिनके पास पहले से जमीन थी। और बाँटनेवाले ने रुपया लिया। यह हुआ होता कि एक गांव में विनोबा गये, आप गये, हम गये, वहाँ जितनी जमीन मिली, वहीं पर बँटवारा उसका होता, ग्रामसभा द्वारा होता, और लाखों एकड़ बटोरने का, संख्या का मोह छोड़कर हम भूमिवानों से कहते कि आप जमीन दे रहे हैं तो अपने हाथों से भूमि का पट्टा लिखकर अपने गाँव के भूमिहीनों को दीजिए, अपने दस्तखत से दीजिए, सरकारी पट्टा बाद में उनको मिल जायगा, जो आज हम ग्रामदान में करते हैं, तो यह सब नहीं होता।

उसी तरह से पहले जो ग्रामदान था, इस कृषि-क्रान्ति का, इस भू-क्रान्ति का वह पूर्ण स्वरूप था। भूमि का विसर्जन ही नहीं था, बल्कि गाँवों में जमीन का बँटवारा था। समता की स्थापना थी। गणित की समता नहीं, बल्कि किसके परिवार में कितने व्यक्ति हैं, किसकी कितनी आवश्यकता है, उन आवश्यकताओं को देखकर के, अनुपात निकाल करके, कि वयस्कों को इतना, नाबालिगों को इतना, इस हिसाब से बँटवारे की शर्तें थीं। गाड़ी धीरे-धीरे चल रही थी। बाबा की नजरों में, और हम सबकी नजरों में व्यापकता का रूप था, विराट रूप, कि सामाजिक क्रान्ति होगी नहीं, जब तक उसमें व्यापकता नहीं आयेगी। एक कदम हम पीछे भी हटा लें, ग्राम-दान को सुलभ-ग्रामदान भी कर लें, जमीन का भले ही बराबर बँटवारा न हो, बीसवें हिस्से का ही दान हो जाय, स्वामित्व का विसर्जन हो जाय, सरकारी खाते में जमीन ग्रामसभा के नाम चढ़ जाय, लेकिन जमीन उसके कब्जे में रहे, बीसवां हिस्सा दे दे, पैदावार का कुछ हिस्सा दे दे; यह सुल-भता पैदा हुई, इस ख्याल से कि आन्दोलन व्यापक होगा। छोटा भी कदम हो और लाखों-करोड़ों लोग वही कदम उठायें, तभी समाज आगे बढ़ता है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

लेकिन जब पुष्टि का काल आया, तब हमारी परीक्षा हुई। राजगीर में जब बिहार दान की घोषणा हुई, जब कि १२ प्रखण्ड ५८७ प्रखण्डों में से बच गये थे, इनमें प्रखण्डदान नहीं हुआ था, उस समय बाबा ने कहा, कि ३ या ४ बरस में यह तूफान चला तो बिहारदान हुआ, अब 'अति तूफान' करो। बाबा ने कहा कि सन् '७२ तक तुम्हारा यहाँ कार्य पूरा नहीं हुआ और राजनीति पर तुम्हारा 'इम्पैक्ट' नहीं पड़ा, तो इतिहास में तुम्हारी कोई हस्ती नहीं रहेगी। अति तूफान की बात कही थी उन्होंने। लेकिन आप देखिये कि कितना काम हो पाया है। किसी क्षेत्र में दो गाँवों में ग्रामसभाएं बन पायी हैं, किसी में दस, किधर व्यापकता आयी है?

अनुभव भिन्न आया

मुझे याद पड़ता है कि काबूखेड़ में सम्मेलन हुआ था आदरणीय गोकुलभाई के नेतृत्व में, तो वहाँ मैंने कहा था कि 'जब आँधी आती है, तो उसमें धूल भी उड़ती है, और सूखी हुई गन्दगी भी उड़ती है, लेकिन हवा तो है! तूफान में मुख्य तो हवा ही है। जब बाढ़ आती है तो उसमें मिट्टी किनारे की गिरती है, पेड़ भी गिरते हैं, फिर भी तो बाढ़ पानी का ही रहता है। गांधीजी की क्रान्ति में भी तो हिंसाएँ हुईं, उस जमाने में भी तो कुछ लोगों ने बेईमानियाँ कीं, माफियाँ जेलों में जाकरके माँगी, तो क्रान्ति में ऐसा होता है।' हमारा यह ख्याल था कि नब्बे फीसदी काम सही हो रहा है, दस फीसदी काम गलत हो रहा है। लेकिन अनुभव दूसरा आया। तो मुझे आज लगता है कि सुलभ-ग्रामदान की तरफ हमने अपना कदम मोड़ा था, वह शायद गलत किया था।

आज जितने गाँव पुष्ट हुए हैं, उनमें क्रान्ति अधूरी रह गयी है। जितनी जमीन बीसवें हिस्से में बँटनी चाहिए, उतनी भी नहीं बँट पायी है। जितने पुष्ट गाँवों की आज संख्या है कुल अपने देश में, अगर मंगरोठ गाँव के ग्रामदान से आज तक हम सब लगे होते पूर्ण ग्रामदान के काम में, जो पूर्ण क्रान्ति थी, तो आज इन पुष्ट हुए गाँवों से कम ग्रामदान नहीं हुए होते, ज्यादा ही हुए होते और उनमें सम्पूर्ण क्रान्ति हुई होती। लेकिन अब कदम मोड़ तो सकते नहीं हैं। अब तो कदम उसी तरफ बढ़ाना है। आत्मनिरीक्षण हुआ है। बाबा ने आपको कुछ बताया भी है। कहा भी है कि पराजय से न डरो। पग खिसका लेते हो, इसका ध्यान करो। उनका, जो पीड़ित है, दलित है, प्रताड़ित है, उसीका न लेते हो। वर्ग-संघर्ष से क्यों घबराते हो। उन्होंने कहा कि छोटे किसानों को, मजदूरों को एक करने की कोशिश करो, उनकी सम्पूर्ण शक्ति होगी, तो नैतिक दबाव पड़ेगा उन बड़े भूमिमालिकों पर, जिनकी संख्या बहुत थोड़ी है।

सत्याग्रह के लिए प्रशस्त मार्ग

कम्युनिस्ट हैं, जिन्होंने कई बार छोटे किसानों और गरीब मजदूरों को मिलाने की कोशिश की, लेकिन सफलता उनको प्राप्त नहीं हुई। कुछ अजीब स्वामित्व का असर होता है। छोटा किसान भी अपने को बड़े किसानों का सजातीय मानता है। और एक ऐसी मनोभूमिका वहाँ विकसित हो जाती है कि बड़े किसान छोटे किसानों को बड़ी आसानी से अपनी तरफ कर लेते हैं। शायद हम अपने अहिंसक मार्ग से विवेक के मार्ग से प्रेम के मार्ग से, कटुता पैदा न करते हुए वह शक्ति पैदा कर सकें। अगर दोनों मिल जाते हैं, यानी के ९०-९५ प्रतिशत लोग, जो छोटे किसान और मजदूर हैं, तो १०-५ प्रतिशत लोग अलग नहीं रह सकते गाँव में। सत्याग्रह के लिए भी नया रास्ता, एक प्रशस्त मार्ग मिलेगा इसमें से।

कोराम : २८-१०-'७१

लम्बी छलांग के लिए सघन प्रयोग

—मनमोहन चौधरी

इस अधिवेशन में जोरदार मंथन चला, यह देखकर खुशी हो रही है। आन्दोलन २१ वर्ष का हुआ, यह मंथन परिपक्वता का प्रमाण है। भिन्न-भिन्न विचार व्यक्त हुए। विचार को परिपक्व बनाने की दिशा में यह अच्छा संकेत है। हमें जन-आन्दोलन करना है। इसलिए यहाँ जितने हैं उतने ही नहीं, बल्कि लाखों लोगों के विचार-स्रोत प्रवाहित होने चाहिए। इसका आरम्भ यहाँ हुआ, इससे आनन्द का अनुभव होता है।

जयप्रकाशजी के शब्द कड़े नहीं थे। मुलायम शब्दों में उन्होंने अपने हृदय की बात सबके सामने रख दी। बात थोड़ी चुभी, लेकिन उसकी आवश्यकता है। अखबार में वही समाचार छापे गये। व्यक्ति या आन्दोलन में जो दोष होते हैं छिपे नहीं रह सकते। कोई नेता स्पष्ट रूप से अगर उसे प्रकट करता है, तो इससे ताकत बढ़ती है। तदनुसार जे॰ पी॰ की बातों से लाभ ही होगा।

धीरेन भाई और दादा के विचार सामने आये। यह अच्छा हुआ। हमारी गति और दिशा की जितनी अधिक सफाई हो सकेगी, उतनी ही हमारी ताकत बढ़ेगी। समाज में दो वर्ग हैं : (१) पीड़ित वर्ग, (२) पीड़ा का कारण बननेवाला वर्ग। दूसरा वर्ग जिसके कारण पीड़ा फैलती है, उसमें अगर परिवर्तन होता है, तो पीड़ितों पर उसका असर अवश्य पड़ता है। जिसके हाथ से गलत काम होता है, वे स्वयं ही समझकर गलत कामों को छोड़ दें, तो यह बुनियादी परिवर्तन होगा। धीरेन भाई की बातों में यह सत्य निहित है।

दादा ने अच्छी तरह से समझाया कि यद्यपि समाज में विषमता है, दो वर्ग हैं। अगर कोई मेरा गला दबायेगा तो आप सब उसे समझायेंगे, यह तो ठीक है लेकिन इसमें मेरा भी कोई अभिक्रम होगा कि नहीं? गांधीजी के सत्याग्रह में यह तत्त्व था। गांधीजी के सत्याग्रह में संघर्ष है और 'रिकंसीलियेशन' (पुनर्मिलन) भी है। गांधी के बराबर दुनिया भर में शायद ही किसी ने संघर्ष किया होगा। वर्ग-संघर्ष में हिंसा या द्वेष हो ही, यह आवश्यक नहीं है। लोकशाही में प्रतिकार या विरोध करने के तरीके को विनोबा ने काफी बदल दिया।

गाँव के लोग काफी हद तक दबे हुए हैं। उनको सम्मान की भूख है। मानवीय गौरव बना रहे, इसलिए तो उन्हें जमीन, उद्योग आदि देना है। धीरेन भाई के विचार दादा के विचारों के पूरक हैं। भूमिवान पहल करें, वैसे ही भूमिहीन-गरीब लोगों की ओर से भी शुरुआत हो, यह आवश्यक है। उनकी मालिकी का, जो कुछ भी हो, उसमें से वे त्याग करें और अपना हिस्सा बाँटें, यह जरूरी है। ग्रामसभा को सक्रिय कैसे किया जाय, इसकी चर्चा चल रही है। बिहार, उड़ीसा का अनुभव बताता है कि बड़े गाँव के बड़े आदमी अपना रोब बनाये रखना चाहते हैं। गाँव के अर्थतंत्र पर अपना कब्जा जमाये रखना चाहते हैं। ग्रामसभा में भी बड़े लोगों का ही बोलबाला रहेगा, ऐसा गरीबों को लगता है। आन्दोलन का यह मार्मिक बिन्दु है। इसके लिए प्रतिकारात्मक कार्य करने होंगे। परस्पर का सम्पर्क करके उसका हल खोजना होगा। इसके लिए प्रयोग करने होंगे।

नैतिक दबाव या उपदेश से ग्रामसभा की एकता टिकायी नहीं जा सकती। सत्याग्रह की प्रक्रिया द्वारा दबे हुए लोगों को प्रकट करना होगा। ग्रामजनों को समस्या का भान कराना होगा। यह मर्म-स्थान की समस्या है। उसको हाथ में लेने से ग्रामसभा सक्रिय बनेगी।

मनमोहन चौधरी

किसी में कम और किसी में अधिक, लेकिन पराक्रम की वृत्ति हर गाँव में है। उसीसे बड़े बड़े परिवर्तन हो जाते हैं। यह शक्ति आन्दोलन को तेजस्वी बनायेगी। नवयुवक और शिक्षक आन्दोलन के प्रति आकर्षित हुए हैं। उनकी तालीम की योजना बनानी चाहिए। आन्दोलन की वैज्ञानिक दृष्टि का दर्शन उनको कराना चाहिए। जगतभर में जो उथल-पुथल हो रही है, उसका एक हिस्सा अपना आन्दोलन है। दुनिया का संदर्भ समझाने से यह दृष्टि विकसित होगी। और नवयुवक इस आन्दोलन की ओर आकृष्ट होंगे।

सहरसा में हिन्दुस्तान की ताकत लगे, ऐसा बाबा ने कहा। डा॰ जोशी ने भी यह बात कही। केवल सहरसा नहीं, अन्य प्रान्तों में भी क्षेत्र बनने चाहिए। देश के १५-२० क्षेत्रों में प्रयोगशाला के रूप में प्रयोग चलने चाहिए। विविध अनुभवों के आधार पर ही काम को व्यापक बना सकेंगे। बहुत बड़ा ढाँचा खड़ा करने की अपेक्षा दृष्टि साफ करने का काम करना चाहिए। पारम्परिक रास्ते को छोड़कर प्रयोगों के द्वारा आगे का मार्ग खोजेंगे, तो बहुत लम्बी छलांग भरने की ताकत भी उसीसे प्राप्त होगी।

गोपाल, ३०-१०-'७१

उपयुक्त समय पर हमें रोशनी मिली है

भोपाल-अधिवेशन में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् के समारोपीय उद्गार

अभी सहरसा में मैं गया था। वहां धीरेनभाई को देखकर एक नया दर्शन हुआ। धीरेनभाई ने घूमते ही रहने का संकल्प किया है। उन्हें देखकर महापर्व का जमाना याद आया। भीष्म की शरशय्या याद आयी। हमारे आंदोलन के लिए भीष्म की शरशय्या धीरेनभाई ग्रहण कर रहे हैं।

उनकी पुकार कल लगी। पता नहीं कितने लोग उसको सुने। बहुत कम लोग क्षेत्र-सन्यास की भूमिका में लगे हैं। धीरेन भाई के 'करो या मरो' के आह्वान पर हमें इस भूमिका में लगने को तैयार होना है।

सहरसा में कुछ लोग बैठे हैं। लेकिन हमें जितने सातत्य के साथ लगना चाहिए, उतने सातत्य के साथ हम नहीं लगे हैं। हम ही मंद हैं, इसलिए आंदोलन की गति मंद मालूम पड़ती है। मैं नम्रतापूर्वक यह निवेदन करना चाहता हूं कि धीरेनभाई की पुकार हम सुनें। चाहे मुसहरी, चाहे सहरसा, चाहे कोई क्षेत्र लेकर हम सातत्य और संकल्पपूर्वक बैठें। यह मेरी विनम्र अपील है।

सहरसा को राष्ट्रीय मोर्चा मानना चाहिए। सर्व सेवा संघ का, विनोबा का विचार है कि जितने लोग सहरसा में जा सकते हैं जायें। यह हमारा कर्त्तव्य है। सहरसा को सफल बनाना हमारा प्रथम कर्त्तव्य बन गया है।

इस अधिवेशन में दादा और धीरेनदा ने स्पष्ट रास्ता दिखाया। दोनों की बातों में कोई विरोध नहीं है। दोनों परस्पर पूरक हैं। अब तक आन्दोलन में जो कमियां रही हैं, उनकी ओर उन्होंने हमारा ध्यान खींचा है। मेरा आत्म-विश्वास उससे बढ़ा है।

हम भूमिहीनों के पास पहुंचे नहीं हैं। ग्रामसभा सक्रिय नहीं बनती है। ग्रामसभा क्यों सक्रिय नहीं बनती? इसका असली कारण दादा ने बताया है। कुछ लोगों को महसूस हुआ कि २० सालों में इतना अच्छा दादा का भाषण नहीं सुना। मुझे ऐसा लगता है कि उपयुक्त समय पर भगवान का यह निर्देश मिला है। जहां हम अटके हुए थे, उस जगह हमें रोशनी मिली है। मेरी तो आंखों में आनन्दाश्रु छलक पड़े। ऐसा लगा कि जनता के दिल में जो उत्कट आवश्यकता है उसको हमारे सामने दादा ने पेश कर दिया है। यह उन्हें कैसे सूझा? दादा प्रत्यक्ष काम में नहीं लगे फिर भी? तो मुझे स्मरण हुआ कि कृष्ण महाभारत में लड़ने नहीं थे इसलिए ठीक वक्त पर सही मार्गदर्शन कर सके।

धीरेनदा और दादा की बातें परस्पर विरोधी नहीं हैं और दोनों का अलग-अलग प्रयोग नहीं होना चाहिए। दोनों एक साथ होना चाहिए। दोनों तरह के 'प्रयोग' तो एक क्षेत्र में, एक ही समय, एक साथ काम होना चाहिए। ग्रामसभा सक्रिय हो सके इसके लिये यह जरूरी है।

हम क्षेत्र में सबके पास जायेंगे। भूदान के समय हम भूमिहीनों के पास भी पहुंच गये। यह सिलसिला हमें छोड़ना नहीं है। ग्रामदान में यह शामिल है। लेकिन ग्रामदान में उस पर जोर कम हुआ था, इसलिए गति धीमी पड़ी। दादा का ठीक समय पर संकेत मिला। हमें अब भूमिहीनों के पास भी जाना है, उनका पक्ष लेना है। तमिलनाडु में उसका प्रयोग हुआ। जनता की पदयात्राएं हुईं। सत्याग्रह हुए। इसके प्रभाव में दिल नहीं बदला, लेकिन तो भी 'थर्ड क्लास' का ही सही, सत्याग्रह हुआ और सफल हुआ। क्योंकि लोगों को जमीन मिली। और जमीनवालों ने एक नैतिक दबाव में आकर जमीन दी।

पहले हमें डर था कि नीचे के दबे हुए लोगों को जगाने से हिंसा उभरेगी। लेकिन दादा ने निर्णय कर दिया कि हम उससे डरें नहीं। धीरेनदा ने कहा कि डरो मत, लेकिन हिंसा पैदा नहीं करो। मुझे ऐसा लगता है कि पहले से ही जो द्वन्द्व है उसे निकालने का यह काम होगा। उसे मिटाने के लिए दबे हुए लोगों को जाग्रत करना जरूरी है, ऐसा मुझे लगता है।

सुलभ ग्रामदान

जे० पी० ने कुछ शंका प्रकट की। मेरे मन में भी ऐसा ही था। बाबा से कहा कि दूध में आपने पानी डाल दिया। यही भावना मेरे मन में थी। लेकिन मैं देखता हूं अनुभव से, कि भूदान से ग्राम-दान आया, उसके बाद सुलभ ग्रामदान आया। वही ठीक है। क्योंकि उसके मार्फत ग्रामदान में जनता को अधिक-से-अधिक शामिल करने के लिए, आंदोलन व्यापक करने के लिए ऐसा हमने किया। जनता के आंदोलन के बिना हम कुछ भी क्रान्ति नहीं कर सकते। इसलिए देश भर में ग्रामदान फैलना चाहिए। कम जमीन वालों, भूमिहीनों और कुछ बड़े लोगों का भी समर्थन हमको मिल जायगा। यह स्थिति देश भर में बननी चाहिए जिसमें से जो ग्रामसभा बने, वह जाग्रत होनी चाहिए। यह क्रान्ति की बुनियादी इकाई है। यह विचार क्रांतिकारी है। विनोबा ने यह 'मास्टर की' हमें दी है, ऐसा मुझे लगता है। ग्रामस्वराज्य के दर्शन के लिए हमें तैयार होना है। क्षेत्र को तैयार करना है। दुनिया को इतना मौलिक और आध्यात्मिक क्रान्ति का विचार अब तक नहीं मिला है।

हमें शान्ति, पुष्टि एवं शक्ति पाते रहना चाहिए। हमको जनता की ताकत मिलेगी तभी हम कोई काम कर सकेंगे। हम सब सातत्यपूर्वक, संकल्पपूर्वक इस काम में लग जायें, यह मेरा निवेदन है।

(भोपाल अधिवेशन के समारोप भाषण से)

२०-१०-'७१

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी समिति की बैठक

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी समिति की बैठक दो दिन (५-६ अक्टूबर को) इलाहाबाद में मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी की अध्यक्षता में हुई। इसमें प्रदेश के विभिन्न भागों से लगभग तीस प्रमुख कार्यकर्ता पधारे थे। उनके विश्राम व भोजन की व्यवस्था स्थानीय नगर सर्वोदय मण्डल ने की, जिसके लिए सर्वोदय प्रेमी नागरिकों से दान प्राप्त किया गया।

कार्यकारिणी समिति में जिन विषयों पर चर्चा हुई उनमें से मुख्य ये थे—ग्रामदान आन्दोलन को गति देना, गाँवों और शहरों में प्राथमिक सर्वोदय मण्डल और लोक-सेवक बनाना, शांतिसेना और तरुण-शान्तिसेना के कार्य को बढ़ावा देना, सर्वोदय-साहित्य का प्रचार करना और नशाबन्दी के लिए प्रयत्न करना।

सबकी राय रही कि ग्रामदान पुष्टि का जो काम फर्रुखाबाद जिले में शुरू हुआ है, उसे एक-एक प्रखण्ड लेकर पूरा किया जाय। प्रदेश के ३१ जिलों में सर्वोदय मण्डल काम कर रहे हैं, बाकी २१ जिलों में भी उनका संगठन किया जाय।

मंत्रीद्वय सुरेशराम, विजय बहादुर और रामबचन सिंह ने शान्तिसेना, तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल समितियों की प्रवृत्तियों की जानकारी दी, और आगे के काम की रूपरेखा प्रस्तुत की। प्रदेश में जगह जगह रैलियों और शिविर करने का निश्चय हुआ ताकि कार्यकर्ताओं का एक ठोस समुदाय तैयार हो सके।

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी समिति के सदस्यों ने प्रदेश सरकार की नशाबन्दी समिति बोर्ड में ढिलाई पर चिन्ता प्रकट की। उत्तराखण्ड के प्रसिद्ध सर्वोदय नेता श्री सुन्दर लाल बहुगुणा ने बताया कि पहाड़ी क्षेत्रों में अगर शराब की दुकानें फिर से खोल दी जायेंगी, तो बड़ा अनर्थ होगा। इससे वहाँ की जनता उसे सहन नहीं कर पायेगी और विरोध करेगी। समिति ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पास किया जिसमें प्रदेश सरकार से माँग की कि नशाबन्दी सम्बन्धी नया कानून विधान सभा में शीघ्रातिशीघ्र पारित कराये, ताकि सारे प्रदेश में नशाबन्दी लागू हो सके, विशेषकर सभी तीर्थ स्थानों में—प्रयाग, काशी मथुरा, अयोध्या और उत्तराखण्ड तथा टिहरी गढ़वाल में।

अगले प्रदेशीय सर्वोदय सम्मेलन के लिए, जो आगामी जनवरी में होगा, श्री ओम प्रकाश जी गौड़ द्वारा दिया गया मुरादाबाद जिले का निमन्त्रण स्वीकार किया गया।

—सुरेशराम

मुस्लिमों का धर्म

इस्माइल भाई नागोरी

पृष्ठ ४८ मूल्य ०-७५ पैसे

इस्लाम धर्म के बारे में अन्य धर्मावलम्बी जनता को मूलभूत जानकारी की दृष्टि से यह पुस्तक बड़ी ही उपयोगी है। इससे हम परस्पर निकट आयेंगे।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

शराबबन्दी के लिए श्री सुन्दर लाल बहुगुणा का अनिश्चित काल तक उपवास

पिछले डेढ़ वर्ष से लागू मद्यनिषेध को तोड़ने के विरोध में चमोली जिले के मुख्यालय गोपेश्वर में एक विशाल प्रदर्शन हुआ, जिसमें दूर-दूर के गाँवों से पैदल चलकर आनेवाले असंख्य पुरुष-महिलाओं ने माँग की कि उत्तराखण्ड में पूर्ण शराबबन्दी रहे। उत्तर प्रदेश सरकार इसमें आवश्यक संशोधन करे। जनता को रोजगार दिलाने के लिए स्थानीय वन-सम्पदा का कच्चा माल यहीं के उद्योगों को मिले तथा स्वतंत्रता के २४ वर्षों के बाद भी उपेक्षित हरिजनों के प्रति समाज ठीक न्याय करे।

टिहरी स्थित दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्दजी ने मद्यनिषेध आन्दोलन का श्रीगणेश करते हुए कहा कि, 'आत्मा की शक्ति का सामना कोई भौतिक वृत्ति वाली शक्ति नहीं कर सकती। हमारी इस संघटित शक्ति से असाध्य भी साध्य हो जायेगा। उत्तराखण्ड की जनता के नाम प्रसारित एक अपील में स्वामीजी ने कहा है कि 'शराब को प्रोत्साहन देना जघन्य अपराध है, यह आत्महत्या को प्रोत्साहित करने जैसा ही है।'

जुलूस की शक्ल में रवाना होने से पहले उपस्थित इस विशाल जनसमुदाय को स्वामी चिदानन्दजी के अलावा सुन्दरलाल बहुगुणा, उत्तराखण्ड सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री चंडीप्रसाद भट्ट, विधायक श्री इन्द्रमणी बडूनी आदि ने सम्बोधित किया।

सभा के बाद ढोल, नगाड़े, शंख, डमरू आदि बजाते हुए यह जुलूस टिहरी आया। प्रदर्शनकारियों ने जिलाधिकारी को एक ज्ञापन दिया जिसमें उत्तराखण्ड में पूर्ण नशाबन्दी की माँग के अतिरिक्त टिंचर-जिंजर और नशीली औषधियों की बिक्री पर 'ड्रग एक्ट' में संशोधित करके पाबन्दी लगाने पर भी बल दिया गया।

× × ×

'हिन्दुस्तान' दैनिक से प्राप्त समाचार के अनुसार उत्तराखण्ड के प्रमुख सर्वोदय सेवक श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने ८ नवम्बर से उत्तराखण्ड में पूर्ण शराबबन्दी के लिए अनिश्चित काल के लिए सरकारी देशी शराब की दुकान के सामने उपवास प्रारंभ कर दिया है।

पाकिस्तानी दूतावासों के सामने संसार भर में उपवास

'ऑपरेशन ओमेगा' २२ नवम्बर को संसार के सभी बड़े देशों की राजधानियों में पाकिस्तानी दूतावास के सामने दस-दिन के उपवास का कार्यक्रम बना रहा है।

साधारण नागरिकों द्वारा पाकिस्तानी दूतावासों के सामने किये जानेवाले ये उपवास दस दिन तक चलेंगे। उपवास करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति कम-से-कम २४ घण्टे तक उपवास पर बैठेगा।

उपवास करनेवालों की चार माँगें होंगी—(१) पूर्वी बंगाल से पश्चिम पाकिस्तान की सशस्त्र सेनाएँ हटाई जायें, (२) शेख मुजीबुर्रहमान को रिहा किया जाय, (३) पूर्व बंगाल के निर्वाचित प्रतिनिधियों को सत्ता सौंपने और इस समस्या को सुलझाने का अवसर दिया जाय, और (४) सभी सरकारें पाकिस्तान की सैनिक सरकार को आर्थिक राजनीतिक और सैनिक मदद देना बन्द करें। (सप्रेस)

गांधी : जैसा देखा-समझा विनोबा ने

पृष्ठ : २०० मूल्य अजिल्द ३-००
सजिल्द ५-००

बापू के विषय में पूज्यपाद विनोबा की वाणी में जो कुछ प्रकट हुआ है वह श्रद्धांजलि भी है, राष्ट्र की नीति के लिए दिशा-दर्शन भी है और गांधीजी को समग्र दृष्टि से समझने के लिए प्रेरक आधार भी है।

इस कृति के अनुशीलन और पठन-पाठन से आज की तरुण पीढ़ी को, जिसने गांधीजी का दर्शन नहीं किया है, अवश्य ही जीवन-उन्नायक प्रकाश मिलेगा।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

संशोधन भूदानयज्ञ ८ नवम्बर '७१ पृष्ठ ६८ की १४ वीं लाइन इस प्रकार पढ़ें. सर्वसम्मति के विकास की यह एक स्वस्थ प्रक्रिया शुरू हुई है।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, : अंक ८, सोमवार, २२ नवम्बर, '७१
पत्रिका विभाग, सर्व सेवा संघ,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा * फोन : ६४३९१
सम्पादक
राममूर्ति

अतिथि-सेवा !

कहा जाता है कि ६ लाख ([illegible]) की ६ दरवाजों वाली एक मर्सीडीज-बेन्ज कार भारत सरकार ने विदेशी अतिथियों के लिए खरीदी है। सोचने की बात है कि स्वतंत्रता के २४ वर्षों बाद अभी ही इतनी खर्चीली मोटर की जरूरत क्यों पड़ गयी ?

कुछ बरस हुए उत्तर वियतनाम के सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी राष्ट्रपति स्व० हो-चि-मिन्ह भारत आये थे। जब वह अपने हवाई जहाज से दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर उतरे तो खादी (अपने देश की) का पाजामा और कोट पहने हुए थे, और उनकी चप्पल पुराने टायर की बनी हुई थी। दूसरे दिन उन्हें नेहरूजी के साथ जलपान करना था। राष्ट्रपति-भवन से, जहाँ वह ठहरे हुए थे, नेहरूजी का निवास ४ फर्लांग (आधा मील) था। जब जाने का समय हुआ तो कई सरकारी मोटरें सामने आकर खड़ी हो गयीं। समय हो गया, देर होने लगी, लेकिन हो-चि-मिन्ह का कहीं पता नहीं। सुरक्षा पुलिस परेशान हुई कि क्या हो गया ! खोज करने पर मालूम हुआ कि हो-चि-मिन्ह सड़क के किनारे-किनारे नेहरूजी के निवास की ओर चले जा रहे हैं। लोग दौड़े और उनसे मोटर में बैठने को कहा गया। उन्होंने उत्तर दिया कि जरा-सी दूरी के लिए इतना खर्च करना उन्हें पसंद नहीं है। हो-चि-मिन्ह पैदल ही चले गये।

हिंसा और अहिंसावाद

पिछले दिनों वर्धा में कुछ तरुण-शान्ति सैनिकों का नाहक मिलन आयोजित हुआ था। यदि एक दूसरे को समझने और समझाने के लिए कोई मिलन हो तो वह व्यर्थ जा नहीं सकता, इसलिए वह नाहक-मिलन भी नाहक नहीं गया, अनेक उपयोगी निष्कर्ष निकले। पर मैं ध्यान इस बात की ओर खींचना चाहता हूँ कि हिंसा और अहिंसा के सवाल पर मतैक्य नहीं हो सका साथियों का।

कुछ साथियों ने हिंसा को दर किनार नहीं किया, इसके पीछे यह इच्छा नहीं हो सकती कि हिंसा पुनंप्रतिष्ठित हो बरन यह शंका होगी कि अहिंसा कहीं 'वाद' न बन जाय। यह बात बिलकुल सही है कि अहिंसा का विचार मान्य करनेवालों को इस बात के लिए सतत जागरूक रहना होगा कि अहिंसा का वाद अस्तित्व में न आये। वाद बनते ही अहिंसा पलायनवाद में परिणत हो जायगी जो हिंसा का ही एक रूप है। हिंसा और अहिंसावाद दोनों की जड़ें पलायनवाद में हैं। अत साथियों की भावना प्रशंसनीय है, अपेक्षित है। पर सवाल यह खड़ा होता है कि अहिंसा का वाद नहीं बने इसके लिए हिंसा के प्रयोग करने की आवश्यकता है क्या? मैं समझता हूँ ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि हम अहिंसा के प्रयोग करें। किसी विचार को वाद नहीं बनने दिया जाय इसके लिये यही आवश्यक है कि उस विचार का सतत विकास किया जाय और विचार के विकास के लिए विचार के प्रयोग आवश्यक हैं और सिर्फ प्रयोग आवश्यक है।

गांधी के पहले जीवन के सामाजिक आयामों में भी अहिंसा प्रयुक्त हो, इसका कोई भी उल्लेखनीय प्रयास नहीं हुआ था। बरन अब तक के हजारों वर्षों का इतिहास कहता है कि सामाजिक स्तर पर हमने हिंसा और सिर्फ हिंसा के प्रयोग किये हैं। कुछ अपवाद हो सकते हैं। परिणाम हमारे सामने है। हिंसा के शस्त्र और शास्त्र दोनों अत्यन्त विकसित हो चुके हैं। यह बात अलग है कि आज हिंसा का इतिहास कलंकित है और भविष्य गर्त चुका है। यह हिंसा के अविकसित स्वरूप का प्रमाण नहीं है बरन उसमें निहित प्रबल और स्पष्ट हो चुके अन्तर्विरोधों का परिणाम है। लेकिन इतने विकास के बाद भी आज कहीं भी हिंसा का वाद नहीं खड़ा हो सका है। इसका एक मात्र कारण है कि हिंसा के प्रयोग होते रहे हैं। हिंसा के प्रयोगों के कारण हिंसक वृत्ति निर्मित हो गयी है लेकिन हिंसा-वाद निर्मित नहीं हो सका है। अत यदि अहिंसा के भी सामाजिक प्रयोग हों तो निश्चय ही अहिंसक वृत्ति का निर्माण होगा परन्तु अहिंसावाद निर्मित न हो सकेगा, और यही हमारी आकांक्षा है। यदि हम अपने प्रयोगों में हिंसा के प्रयोग भी शामिल कर लें तो इससे उस हद तक हिंसा का ही विकास होगा। फिर हिंसा के प्रयोगों द्वारा अहिंसा के अधिष्ठान में मदद की भी अपेक्षा हम कैसे रख सकते हैं? नहीं रख सकते हैं। अत यह तर्क-संगत नहीं लगता कि अहिंसा को वाद बनने से बचाने के लिए हम हिंसा के प्रयोग भी करें। हाँ, अहिंसा के प्रयोग में गलतियाँ होंगी। हो सकता है हिमालय जैसी भूल हो और हिंसा हो जाय। लेकिन चूँकि यह हमारा प्रयोग होगा अत सदक बनकर हमारी गलतियाँ, गुणवर्द्धन करेंगी। हिमालय जैसी भूलें हिमालय सरीखी सीख बन जायेंगी। इसलिए गलतियों व हिंसा के भय से हमें प्रयोग ही नहीं छोड़ देने चाहिए। अर्थात् अहिंसा का विकास हो और इसका वाद नहीं बने इसके लिए हमें अहिंसा के ही प्रयोग करने होंगे। दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

अब और एक बात की ओर ध्यान खींचना चाहूँगा। किसी सिद्धान्त का प्रयोग हम पूरी सच्चाई के साथ, पूरे मन और प्राण से करें तभी हम उस सिद्धान्त का सही मूल्यांकन कर सकते हैं और वैसी लगन से प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि उस सिद्धान्त पर हमारी पूर्ण निष्ठा हो। यह बात भौतिक शास्त्र के साधारण प्रयोगों पर भी लागू होती है तो फिर हम जो जीवन के सम्पूर्ण आयामों में अहिंसा के प्रयोग करना चाहते हैं वह इस निष्ठा के बिना सम्भव कैसे होगा? लेकिन यहाँ भी यह अनिवार्य होगा कि हम अपनी निष्ठा को रूढ़ि नहीं बनने दें। इसके लिए हमें अपने प्रयोग और अपनी निष्ठा के प्रति भी हर क्षण जागरूक रहना पड़ेगा। हमारी निष्ठा कहीं अंधविश्वास न बन जाय, इसको सूक्ष्मता से परखते रहना होगा। अन्यथा हमारा प्रयोग, प्रामाणिकता खो देगा और हम प्रयोग की पात्रता खो देंगे। परन्तु यह बात भी स्पष्ट कर लेनी चाहिए कि निष्ठा के प्रति जागरण का अर्थ अनास्था नहीं है। हमें निष्ठा के प्रति जागृति चाहिए अनास्था नहीं। निष्ठा के प्रति जागृति उत्साह पैदा करती है तो अनास्था निराशा को जन्म देती है। प्रयोगी के लिये उत्साह अनिवार्य है, निराशा निषिद्ध। — शुभमूर्ति

पाठकों के नाम एक पत्र

आपको शायद मालूम होगा कि मैं पिछले दो-तीन सालों से नागरी लिपि और हिन्दी माध्यम से तमिल भाषा का प्रचार कर रहा हूँ। उसके लिए मैंने कुछ पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं।

१. तमिल-प्रवेश-नागरी लिपि।
२. तमिल-प्रवेश-तमिल लिपि।
३. तमिल लिपि का परिचय-चार्ट।

इनके द्वारा हिन्दी जाननेवाले तमिल भाषा को आसानी से सीख सकते हैं। हिन्दी शिक्षक परिवार नागर कोइल ने भी पुस्तिका भी प्रकाशित की है, जो आगे की पढ़ाई के लिए उपयोगी होगी। अगर कोई चाहें तो उक्त पुस्तकें मेरे पास से प्राप्त कर सकते हैं। —राजमारन्,
तमिल नागरी विभाग,
नयी तालीम विद्यापीठ पो० सेवाग्राम
वर्धा (महाराष्ट्र)

विवेक जगाने निकले

बंगला देश के चौबीस युवक कलकत्ता से दिल्ली तक की पदयात्रा पर निकले हैं। सब विद्यार्थी हैं। हिन्दू-मुसलमान साथ रहते हैं, साथ खाते-पीते हैं, सब एक दिल हैं। आजादी के दीवाने, जब ये बोलते हैं तो उनके एक-एक शब्द में जैसे देश-भक्ति की आग निकलती है, अपने देश की आजादी के लिए जिन्दगी के साथ खेलने की तमन्ना झलकती है।

पदयात्रियों की यह टोली ३० नवम्बर को दिल्ली पहुँचेगी। वहाँ पहुँचकर भारत सरकार से कहेगी: 'हमें मान्यता दो, हथियार दो।' जब ये पदयात्री यह माँग करेंगे तो वे जानते होंगे कि उनके साथ इस देश का हृदय है, और उनकी माँग इस देश की माँग है।

लेकिन, ये पदयात्री केवल माँग करने नहीं निकले हैं। ये इंसान और विश्व का विवेक जगाने निकले हैं। सहानुभूति इन्हें जितनी मिल सकती थी मिल चुकी है, अब इन्हें विवेक का बल चाहिए। विवेक का तकाजा है कि अब हम समझें कि बंगला देश का प्रश्न मात्र सहानुभूति के परे जा चुका है। बंगला देश आज उस दौर से गुजर रहा है जिससे भारत १९४२ में गुजरा था। 'जय बंगला' उसका नारा है, 'करेंगे या मरेंगे', उसका संकल्प। इस घोषणा के होते हुए। चर्चा चाहे जितनी हो, उसका क्या नतीजा होने वाला है? अंग्रेज और गांधी में चर्चा हो सकती थी, क्योंकि अंग्रेज कितना भी जालिम था उसका मानव मरा नहीं था, और गांधी तो महामानव था ही। लेकिन दानवता के प्रतिनिधि यहिया और मानवता के प्रतिनिधि मुजीब में क्या चर्चा होगी? उन्हें आमने सामने बिठा भी दिया जाय तो एक दूसरे से क्या कहेगा? एक दमन के सिवाय दूसरी भाषा नहीं जानता, दूसरा मुक्ति के सिवाय दूसरी भाषा नहीं समझता।

विवेक का दूसरा तकाजा यह है कि सहानुभूति का बोझ अब भारत की शक्ति के बाहर हो रहा है। एक करोड़ शरणार्थी, जिनकी संख्या थोड़े दिनों में दो करोड़ भी हो सकती है, अगर सम्मान के साथ अपने घर न लौटे तो भारत का पूर्वी अंचल अशान्ति और उपद्रव का क्षेत्र बन जायगा, और देखते-देखते एक दूसरा वियतनाम तैयार हो जायगा। जो यहियाशाही पूर्वी बंगाल से अल्पसंख्यकों को समाप्त कर चुकी है, धर्मनिरपेक्षता की शक्ति आवामी लीग को कुचल चुकी है, बंगला देश के चेतन तत्वों तथा आजादी के दीवाने लाखों युवकों-युवतियों को मौत के घाट उतार चुकी है, और आधी एक करोड़ जनसंख्या को भारत के मत्थे मढ़ चुकी है, उसे अब और क्या करना बाकी रह गया है? आक्रमण क्या तभी माना जायगा जब कलकत्ता और दिल्ली पर यहिया के बम गिरने लगें? खुल्लमखुल्ला आक्रमण होता तो भारत की स्थिति इतनी कठिन न होती। इस संकट से उबरने का उपाय चाहे जो हो, लेकिन इतना स्पष्ट है कि बंगला देश का संकट भारत का संकट बन चुका है। अन्तिम उपाय के सिवाय अब दूसरा उपाय नहीं। भले ही लड़ाई बंगला देश की मुक्तिवाहिनी लड़े, लेकिन भारत उसकी हार का जोखिम नहीं उठा सकता। आत्मरक्षा में भारत को महाभारत भी करना पड़े तो आपद्धर्म समझकर उसे यह स्थिति स्वीकार करनी पड़ेगी। दुनिया जानती है भारत युद्ध नहीं चाहता, लेकिन किसी स्वतंत्र देश को आत्महत्या करने के लिए राजी नहीं किया जा सकता। भारत के लिए भी, लगता है, 'करो या मरो' की ही घड़ी आ गयी है।

बंगला देश का संकट भारत का संकट है। लेकिन किसी कुविवेक से प्रभावित होकर भारत के कुछ और मुसलमान भाइयों ने मान रखा है कि यहिया का संकट इस्लाम का संकट है। झाझा (मुंगेर) के बंगला देश सम्मेलन में शाहनशाही के प्रोफेसर हफीज ने खुले शब्दों में कहा कि भारत के मुसलमानों का स्वार्थ इसी में है कि बंगला देश की विजय हो। बंगला देश की विजय धर्मनिरपेक्षता की विजय है। धर्मनिरपेक्षता में ही मुसलमानों की सुरक्षा है। उन्हीं की रक्षा नहीं, बल्कि भारत और पाकिस्तान दोनों के लिए धर्मनिरपेक्षता ही मानव संस्कृति की गारंटी है। इस सीधी बात को हमारे देशवासी, हिन्दू और मुसलमान दोनों, कब समझेंगे? अगर आज हमारे मुसलमान भाइयों में यह विवेक न जगा कि उनका अस्तित्व धर्मनिरपेक्ष भारत और धर्मनिरपेक्ष तथा स्वतंत्र बंगला देश की मैत्री में है, तो इतिहास यही कहेगा कि उन्होंने अपने गले पर अपने से छुरी चला ली। उनका यह समझना अविवेक की पराकाष्ठा है कि यहिया इस्लाम की रक्षा कर रहा है, या अमरीका और चीन के हाथों बिककर वह कोई स्थायी इस्लामी सत्ता कायम कर सकेगा। दरअसल वह शीघ्र इस्लाम और पाकिस्तान दोनों का सबसे बड़ा शत्रु सिद्ध होगा।

बंगला देश के जो २४ भाई यात्रा पर निकले हैं वे मानो यह कह रहे हैं कि किसी देश की स्वतंत्रता और उसकी जनता की स्वतंत्रता में कितना अन्तर है! स्वतंत्र पाकिस्तान में ७ करोड़ बंगाली जनता, जिसका बहुमत है, किस तरह गुलाम रह सकती है? लेकिन अभी पदयात्रियों का ध्यान, और शायद बंगला देश के नेतृत्व का ध्यान, इस बात की ओर नहीं गया है कि जनता की स्वतंत्रता इतने से ही नहीं है कि यहिया के खत्म होने पर चुनाव होने लगें, और सरकारें बनने-बिगड़ने लगें। यह गोरखधन्धा भारत में चौबीस वर्षों से हो रहा है। हाँ, भारत में विचार की जो स्वतंत्रता है उससे भी पाकिस्तान की फौजी तानाशाही ने वहाँ की जनता को वंचित कर रखा है। किन्तु जनता की वास्तविक स्वतंत्रता गाँवों की स्वतंत्रता पर निर्भर है। गांधी ने ग्रामस्वराज्य में राष्ट्रीय स्वतंत्रता की सार्थकता देखी थी। क्या बंगला देश का ध्यान गांधी की इस बात की ओर गया है? युद्ध के बीच भी युद्ध के बाद की बात सोचकर उसके लिए तैयार

सम्राट : राजनीति के मैदान में

पिछले दिनों सम्राटों के नाम अखबारों में नजर आये। जापान के सम्राट हीरोहीतो अपने देश के इतिहास में पहली बार बाहर निकले और यूरोप तथा अमेरिका के दौरे पर गये। दूसरे हैं ईरान के सम्राट् आर्यमेहर रजा शाह पहलवी, जिन्होंने ईरान में साम्राज्य की स्थापना के ढाई हजार साल की यादगार में १२ अक्टूबर से १८ अक्टूबर तक ढाई हजारवीं वर्षगांठ मनायी। और, तीसरे हैं इथोपिया के सम्राट हेलसिलासी, जिन्होंने चीन का दौरा किया।

जापान के सम्राट् हीरोहीतो का महत्त्व इससे जाहिर होता है कि वह अपने खानदान के १२४ वें सम्राट हैं। और जापान में जापान साम्राज्य का इतिहास २६० वर्ष पूर्व ईसा मसीह से माना जाता है। वहाँ सम्राटों को सूर्य देवता की सन्तान माना जाता है। और १९४७ तक जापान के सम्राट् को देवता माना जाता था।

द्वितीय विश्वयुद्ध ने उस पुराने राज को समाप्त कर दिया, परन्तु जापान बच गया। युद्ध के बाद उद्योग में जापान का उभरना आश्चर्यजनक माना जाता है। अफ्रीका और एशिया में उससे अधिक विकसित औद्योगिक देश दूसरा कोई नहीं है। और जापानी येन ने अमेरिकी डालर की हालत तबाह कर दी है। जापान, पश्चिमी जर्मनी की तरह विशाल आर्थिक ताकतवाला देश है।

जापान का कोई सम्राट कभी भी देश से बाहर नहीं गया था, परन्तु अब जब कि अमेरिका और चीन की मित्रता हो रही है, जिसकी शुरुआत अमेरिका ने जापान को सूचना दिये बिना की, यद्यपि जापान अमेरिका का सहयोगी है; तो जापान की स्थिति एशिया में खतरे में पड़ती जा रही है। इसलिए जापान के सम्राट को देश से बाहर निकलना पड़ा। और, वह यूरोप और अमेरिका के दौरे पर गये। द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच और खुसूसन पर्ल हारबर पर आक्रमण के कारण योरप और अमेरिका में जापान के सम्राट् के विरुद्ध एक दबा-दबा सा विरोध पाया जाता है। इस दौरे के बीच सम्राट् हीरोहीतो जहाँ-जहाँ भी गये, यह विरोध किसी-न-किसी रूप में प्रकट हुआ।

अमेरिका और जापान के मतभेद बहुत गहरे हैं और उनकी पृष्ठभूमि में चीन की समस्या है, इसीलिए अमेरिका की पत्र-पत्रिकाओं ने उनके इस दौरे को 'यूरोप में नये मित्र की खोज' कहा है।

सम्राट आर्यमेहर रजा शाह पहलवी के इस महोत्सव की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस पर १२॥ करोड़ डालर खर्च किया गया, और वह यादगार मनायी गयी कि अखिल-सेना की याद ताजी हो गयी।

ईरान के इस उत्सव के बीच डाक्टर मुहम्मद मुसद्दिक और डाक्टर फातमी का नाम एक बार भी नहीं लिया गया, परन्तु यह वास्तविकता है कि तेल की दौलत को ऐंग्लो-ईरानी आयल कम्पनी के चंगुल से निकालने और ईरान के हित में इस्तेमाल करने का सेहरा इनके सिर है। उन्हीं के प्रयत्न से तेल पर से विदेशी इजारादारी खत्म हो सकी।

ईरान केवल सम्राटों या तेल के सेठों का देश नहीं, ईरान ऊंची कालीन बनाने वालों का भी देश है, जिन्होंने सुन्दरता का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर कायम कर दिया है। यह रूमी, फिरदौसी, हाफिज, खैयाम, और सादी का देश भी है, जिन्होंने ईरान व अरब को ही नहीं, यूरोप को भी सभ्यता की रोशनी दी। ईरान उन सूफियों का भी देश है जिन्होंने मानवता को मानव से करीब लाने का काम मानव इतिहास में सबसे पहले शुरू किया।

आज जब ईरान की सरकार अपना ढाई हजारवीं सालगिरहोत्सव मना रही है, और संसार के राजनैतिक नक्शे पर नये मोहरे बिछा रही है, इस सांस्कृतिक तरीके को यह उपमहाद्वीप भुला नहीं सकता।

ईरानी साम्राज्य की स्थापना के ढाई हजार साल-महोत्सव और साईरस महान की याद सम्राट आर्यमेहर के मानस की ओर संकेत करता है। साइरस महान संसार का पहला सम्राट है जिसने मानव को बुनियादी अधिकार दिए थे।

सम्राट हेलसिलासी के चीन के दौरे का महत्त्व यह है कि चीन जाने पर माओत्से-तुंग से उनकी मुलाकात हुई और माओ के मरने के बारे में जो अफवाह फैल रही थी, खत्म हुई। उनका चीन का दौरा अफ्रीका के एक ऐसे सम्राट का दौरा है जो पारम्परिक तौर पर पश्चिमी देशों का साथी है। हेलसिलासी का दौरा जापान के सम्राट हीरोहीतो के यूरोप और अमेरिका के दौरे की तरह, चीन और पश्चिमी देशों के बढ़ते हुए सम्बन्ध और नये शक्ति-संतुलन की ओर संकेत करता है। हेलसिलासी अफ्रीका की राजनीति में बहुत महत्त्व रखते हैं। आज इसराइल और अरब देश दोनों ही उनकी खुशामद कर रहे हैं। अफ्रीका में वामपंथी सरकारों से भी उनका सम्बन्ध रहा है, यद्यपि वे उन्हें शक की निगाह से देखती रही हैं। ●

→रहना, सच्चे योद्धा का काम है। क्रान्ति तो उसके बिना अधूरी ही रह जाती है।

जब भारत का विभाजन हुआ तो गांधीजी ने कहा था कि 'देश के टुकड़े तो हो गये लेकिन दिल के टुकड़े न होने पायें।' दिल के भी टुकड़े हुए, और अच्छी तरह हुए। आज दिखायी देता है कि हमारे ये युवक पदयात्री हिन्दू-मुसलमान के, भारत और बंगला देश के टूटे दिलों को जोड़ रहे हैं। कोशिश की कोशिश है कि दिल किसी तरह टूटने न पायें। यह भी तो लड़ाई है। ऐसी लड़ाई में खतरों कि जितना खतरा है, फिर भी उससे कम नहीं है। ■

जनता और उसके सर्वसम्मत निर्वाचित नेताओं को सिवा पूर्ण स्वतंत्रता के और कोई विकल्प मंजूर नहीं होगा। इससे कम आधार पर कोई भी राजनैतिक हल शायद शुरू से ही सम्भव नहीं था और अब तो बिलकुल नहीं है, यह साबित हो चुका है। इस सिलसिले में संघ भारत सरकार के विदेश मंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने २९ अक्टूबर को नयी दिल्ली में जो बयान दिया, उसका स्वागत करता है। इस बयान में विदेश मंत्री ने इस बात से इनकार किया कि भारत बंगला देश की समस्या के हल के लिए पाकिस्तान के अन्तर्गत किसी राजनैतिक हल के बारे में सोच रहा है। स्वतंत्र बंगला देश के ध्येय का समर्थन करने के अपने निश्चय से सरकार पीछे नहीं हटी है।

संघ की यह दृढ़ मान्यता है कि अब भारत सरकार के लिए बंगला देश की स्वतंत्रता और उस देश की कानून-सम्मत सरकार को तुरन्त मान्यता न देने का कोई कारण नहीं है। बंगला देश के स्वातन्त्र्य संग्राम में जो सबसे महत्त्वपूर्ण मदद यह देश पहुँचा सकता है वह है अविलम्ब मान्यता, जो बहुत पहले ही दी जानी चाहिए थी। इस मान्यता से अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बंगला देश की समस्या के राजनैतिक हल की जो व्यर्थ एवं निरर्थक चर्चा चल रही है उसकी समाप्ति होगी, बंगला देश के लोगों का नैतिक बल ऊँचा उठेगा, उनकी सरकार को राजनैतिक प्रतिष्ठा मिलेगी। बंगला देश की आजादी से सहानुभूति रखनेवाले दूसरे मुल्कों से मान्यता प्राप्त करने में उस सरकार को आसानी होगी और बंगला देश के सर्वमान्य और लोकप्रिय नेता शेख मुजीबुर्रहमान की अविलम्ब रिहाई की माँग को बल मिलेगा।

संघ इस बात से अवगत है कि बंगला देश की सरकार को मान्यता देने से पाकिस्तान की सरकार से भारत का कूटनीतिक सम्बन्ध टूट सकता है। लेकिन यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि इन सम्बन्धों का टूटना पाकिस्तान की जनता के प्रति किसी प्रकार के वैमनस्य या दुश्मनी का द्योतक नहीं होगा, लेकिन उसका मतलब सिर्फ उस गैर जिम्मेदार सैनिक गुट का अस्वीकार होगा जो आज दुर्भाग्य से पाकिस्तान की सरकार पर हावी है और जो न केवल बंगला देश की न्यायोचित आकांक्षाओं को कुचलने की कोशिश कर रहा है बल्कि स्वयं अपने देश की जनता की छाती पर आततायी बनकर बैठा हुआ है।

संघ की यह दृढ़ मान्यता है कि राजनैतिक और सामाजिक समस्याओं का स्थायी हल अहिंसक तरीकों से ही सम्भव है। यह बात जग-जाहिर है कि बंगला देश के लोगों ने, और उनके नेताओं ने पाकिस्तान के साथ के अपने झगड़े को वैधानिक, शान्तिपूर्ण और जनतांत्रिक तरीके से हल करने की भरसक कोशिश की थी। लेकिन दुर्भाग्य से बंगला देश के स्वातन्त्र्य प्रेमियों को अचानक ऐसी परिस्थिति का सामना करना पड़ा जिसमें शान्तिमय प्रतिकार की उनकी क्षमता की मर्यादा आ गयी, ऐसा उन्हें लगा। बंगला देश के मुक्ति सैनिक जिस बहादुरी, हिम्मत और अदमनीय साहस के साथ पाकिस्तानी सैनिक गुट के कहीं अधिक शक्तिशाली, निर्दय और लगातार चलनेवाले जुल्म और हिंसा का मुकाबला करते रहे हैं, उसके लिए संघ अपनी हार्दिक प्रशंसा व्यक्त करता है। संघ की जानकारी में बंगला देश की मुक्ति वाहिनी को शस्त्रास्त्रों के अलावा रोजमर्रे के जीवन की आवश्यक सामग्री, जैसे अन्न, वस्त्र, दवा इत्यादि की भी आवश्यकता है। संघ भारत तथा भारत के बाहर के समस्त लोगों से मुक्ति वाहिनी को हर सम्भव मदद पहुँचाने की अपील करता है।

संघ को पूरा विश्वास है कि आज जो काले बादल बंगला देश पर मँडरा रहे हैं वे शीघ्र ही छिन्न-भिन्न होंगे और आजादी के सूरज की लालिमा उस की आलोकित करेगी। बंगला देश के स्वातन्त्र्य संग्राम की मदद में—जो मानवता की पुकार है और हमारा कर्तव्य भी है—अगर भारत देश और उसकी जनता को और भी संकट सहने पड़ें तो वह उन्हें सहर्ष झेलेंगे, ऐसा संघ को विश्वास है।

मतदाता-शिक्षण

१. शीघ्र ही देश में आम चुनाव होने जा रहे हैं। लोकतंत्र के जीवन में चुनाव का विशेष स्थान होता है। इस अवसर पर मतदाता नागरिक-शासन को प्रभावित कर सकता है। सही लोकतंत्र का अर्थ है कि वह लोक प्रधान हो तथा तंत्र उत्तरोत्तर क्षीण और लोक के अधीन होता जाय। इसके लिए जरूरी यह है कि लोकशक्ति का प्रभावी संगठन हो। लोक जितने अधिक प्रभावी होंगे, शासन भी उतना ही सुव्यवस्थित होगा। यह परिवर्तन चुनाव के माध्यम से सम्भव है। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि चुनाव को जिस प्रकार लड़ा जाता है और जिस प्रकार के तत्त्वों का चुनावों में उपयोग होता है उससे लोकजीवन नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। क्योंकि आज चुनावों में इस्तेमाल होनेवाले शस्त्र, धन, सत्ता तथा जाति आदि तत्त्व लोगों की शक्ति को क्षीण करने वाले तथा भ्रातृत्व व सद्भाव को बिगाड़ने वाले तत्त्व हैं। परिणामतः लोक की शक्ति कम और शासन की शक्ति मजबूत होती जा रही है। यह स्थिति लोकतंत्र के प्रेमियों के लिए चिन्ता का विषय बन गयी है जिसका मुकाबला करने के लिए हर सम्भव कदम उठाने चाहिए।

इस सम्बन्ध में सर्वोदय आन्दोलन ने बहुत दिनों से ग्रामस्वराज्य का वह तरीका रखा है जिसके अन्तर्गत एक ऐसा तंत्र विकसित होगा जिसमें लोग अपने मामलों में स्वतः सक्षम भी हो सकेंगे।

परन्तु जरूरी यह है कि इस मुकाम पर पहुँचने के प्रयास करते हुए हम आज के प्रतिनिधित्व लोकतंत्र में भी जो लोकाभिक्रम का क्षेत्र है उसे बढ़ाने का प्रयास करें। स्पष्ट है कि चुनावों में लोगों का अभिक्रम जितना अधिक होगा लोकतंत्र

मुलाकातें

अपनी कमजोरियों का स्वीकार हमारा आत्मबल बढ़ायेगा

—सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् से एक महत्त्वपूर्ण चर्चा—

अक्तूबर के अन्तिम दिनों में भोपाल में सर्व सेवा संघ का जो अर्द्ध-वार्षिक अधिवेशन हुआ, उसमें आन्दोलन से सम्बन्धित कई प्रश्नों के उत्तर मिले। लेकिन इन उत्तरों में से कुछ प्रश्न भी पैदा हुए हैं। इन प्रश्नों में से कुछ के उत्तर श्री जगन्नाथन् ने दिये हैं।

प्रश्न—आपकी राय में भोपाल-अधिवेशन का क्या सन्देश है ?

उत्तर—इस अधिवेशन में लोकनीति और ग्रामदान-पुष्टि-कार्य पर विशेष रूप से और सविस्तार चर्चा हुई। दूसरे विषय भी थे पर खास जोर इन्हीं दो पर था। अधिवेशन का वातावरण अनौपचारिक, सहज और स्नेहिल था। और जो भी बोलना चाहते थे, उन्हें समय देने की भरपूर कोशिश की गयी। इसीलिए कि सबको अभिव्यक्ति का मौका मिले, हमने अधिवेशन चार दिन का रखा था। लोकसेवकों ने विचार-विनिमय में बहुत रुचि ली और चार सौ से ज्यादा लोग आखिरी बैठक तक रहे। जयप्रकाशजी, दादा धर्माधिकारी और धीरेन दा पूरे समय नहीं रहे और न उन्होंने हर चर्चा में भाग लिया। फिर भी लोकसेवकों की रुचि बनी रही। प्रायः हर विषय पर लोग बोले और जिस सच्चाई और खुलेपन से बोले उससे हमें बड़ा सन्तोष हुआ। क्योंकि यह उनके लगाव, प्रतिबद्धता का उदाहरण है। बिना निराशा और कटुता के खुलकर जो चर्चा हुई और जिस भावना से लोगों ने उसमें भाग लिया—वह भावना ही सच पूछा जाये तो भोपाल अधिवेशन का सन्देश है।

आगामी आमचुनाव में मतदाता प्रशिक्षण का कार्यक्रम चलाने की आवश्यकता पर अधिवेशन में सर्वसम्मति रही। प्रो० गोरा और कुछ दूसरे भाइयों के विचार भिन्न थे पर उनकी भी बात प्रस्ताव में समाहित की गयी। हमारा विचार तो था कि इस बार पुष्टि क्षेत्रों की ग्रामसभाएँ जनता के उम्मीदवार खड़े करें। लेकिन लगता है कि अभी वह अवसर नहीं आया है। स्थिति की जरूरतों को देखते हुए ही मतदाता-शिक्षण का कार्यक्रम चलाना तय किया गया। अब शहरों में तो यह काम हम करेंगे ही, लेकिन पुष्टि के उन क्षेत्रों में विशेष रूप से करेंगे जहाँ हमें राजनीति की जगह लोकनीति को प्रस्थापित करना है। यह पुष्टि कार्य के अनिवार्य अंग के रूप में ही चलाया जायेगा।

फिर सवाल है सर्वोदय-घोषणापत्र तैयार करने का। अगर हम चाहते हैं कि ग्रामसभाएँ आगे पीछे जनता के उम्मीदवार खड़े करने की स्थिति में हों, तो हमें मतदाताओं को यह बताना जरूरी है कि हम क्या चाहते हैं। घोषणापत्र तैयार करने का काम श्री मनमोहन चौधरी को सौंपा गया है। श्री कुमारप्पा ने भी पहले एक घोषणापत्र तैयार किया था। लेकिन उसे अब समय के अनुसार बदलना होगा।

भोपाल अधिवेशन से एक और महत्त्व की बात यह निकली कि ग्रामसभा को पूरे राष्ट्रीय संघटन की प्राथमिक इकाई माना गया और उसे राष्ट्रीय जीवन में नया रोल दिया गया। जो समाज हम स्थापित करना चाहते हैं उसके लिए ग्रामसभाओं का इतना महत्त्वपूर्ण होना अनिवार्य है।

श्री जगन्नाथन्

प्रश्न—जे० पी० ने आन्दोलन और कार्यकर्ताओं के बारे में जो बातें कहीं उन्हें अखबारवालों ने संदर्भ से काटकर छापा। लेकिन जैसी वे छपी हैं उनसे क्या आपकी राय में कार्यकर्ताओं का मनोबल गिरेगा और आन्दोलन की 'इमेज' बिगड़ेगी ?

उत्तर—जैसा कि आपने कहा ही है जे० पी० की बातें संदर्भ से काट कर और तोड़-मरोड़कर अखबारों में छापी गयी हैं। ऐसा लगता है कि छिद्र ढूँढ़ने में प्रेसवालों को ज्यादा मजा आता है। वे यह तो छापते हैं कि जमीन बाँटने में कुछ लोगों ने कमीशन लिया और अपनी कमियों के कारण आन्दोलन सफल नहीं हो रहा है। लेकिन जब जे० पी० आन्दोलन और कार्यकर्ताओं की निष्ठा के बारे में कहते हैं तो वे छापते ही नहीं। अब इस वृत्ति का कोई इलाज नहीं। आखिर हमारा एक आन्दोलन चल रहा है। और गलतियाँ किस आन्दोलन में नहीं होतीं ? हमलोग इन गलतियों को छिपाते नहीं और सार्वजनिक रूप से स्वीकार करते हैं तो इसका मतलब यह कि हममें कुछ अन्दरूनी ताकत है और हम झूठ के बल पर जिन्दा नहीं हैं। आन्दोलन में ताकत है तो उसकी 'इमेज' बिगड़ेगी नहीं। और जहाँ तक कार्यकर्ताओं के मनोबल का सवाल है आपने देखा ही कि किस तरह वे आखिर तक रहे और

उसके उत्साह में कोई फर्क नहीं आया। बल्कि मेरा मानना है कि वे संगठित हो कर ही गये हैं।

प्रश्न—दादा धर्माधिकारी ने भोपाल में भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों का संगठन बनाने का आह्वान किया ताकि बड़े भूपतियों पर नैतिक दबाव डाला जा सके, जबकि धीरेन दा ने पुर जोर दिया कि बड़े मालिकों को समझाने-बुझाने और वर्ग भावना दूर रखने से ही क्रान्ति होगी। जे० पी० ने कहा कि सुलभ ग्रामदान अपनाना ही गलत था और पूरे आन्दोलन पर पुनर्विचार करना चाहिए। क्या आपको लगता है कि यह समुचित चिन्तन के अभाव का द्योतक है और इससे आन्दोलन कोई एक राह पर नहीं चल पायेगा?

उत्तर—मैं ऐसा नहीं सोचता। मैं मानता हूं कि दोनों ही दृष्टिकोण जरूरी हैं। दादा धर्माधिकारी काफी समय से हमसे कह रहे हैं कि जब तक हम भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों का संगठन नहीं बनायेंगे और सीधी अहिंसक कार्यवाही का मार्ग प्रशस्त नहीं करेंगे तब तक आन्दोलन और जोर नहीं पकड़ेगा। लेकिन हमलोग सारे समय उनकी इस सलाह की अवहेलना करते रहे। लेकिन मुझे तो अब बिलकुल लगता है कि इसके बिना काम चलेगा नहीं।

बाबा जब स्वयं आन्दोलन की दुखियारियों कर रहे थे तब बात अलग थी। बाबा अपनी यात्रा पर निकलते थे और उनकी तपस्या का इतना असर था कि सब लोग उनके पास आते थे। वे किसी भूमिवान के पास जाते नहीं थे—भूमिवान, छोटे भूमिवान, भूमिहीन, दस्तकार सभी उनके पास आते थे। कुछ हद तक ऐसा जे० पी० के साथ भी होता है। लेकिन जब हमारा साधारण कार्यकर्ता बड़े भूमिवान को समझाने जाता है तो वह नहीं सुनता। उसके पीछे जब भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों का नैतिक समर्थन होगा तो भूमिवान उसकी बात सुनेगा।

फिर इसके अलावा भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों की आबादी हमारी ग्रामीण आबादी की ८० प्रतिशत है। हमने इन लोगों को तो कम्युनिस्टों के लिए छोड़ दिया और बड़े भूपतियों को समझाते रहे। इसका जो नतीजा हुआ है—वह हमारे सामने है। ग्रामीण आबादी के इतने बड़े हिस्से को छोड़ कर हम शिकायत करते रहते हैं कि ग्रामसभाएं सक्रिय नहीं होतीं। अब ऐसी ग्रामसभाएं क्या सक्रिय होंगी जिनके मंत्री, अध्यक्ष जमींदार या बड़े भूपति हैं। ग्रामसभा के सक्रिय होने से इनको क्या लाभ-हानि है? ग्रामसभा की सक्रियता से आशा-आकांक्षाएं तो भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों की जुड़ी हुई हैं और हमलोगों ने उनकी कोई चिन्ता नहीं की।

लेकिन एक बात याद रखनी चाहिए कि इस दृष्टिकोण के स्वीकार का मतलब यह नहीं है कि हमने दूसरे दृष्टिकोण का निरस्त कर दिया है। नहीं, ऐसा बिलकुल नहीं है। मेरा विश्वास है कि इन दोनों तरीकों को एक ही जगह और एक ही समय जब हम लागू करेंगे तभी आन्दोलन सही गति पकड़ेगा। मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि एक जगह हम भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों का संगठन बना कर बड़े भूपति पर नैतिक दबाव डालें और दूसरी जगह भूपति को समझाने बुझाने का तरीका अपनायें। मैं यह भी नहीं मानता कि एक जगह पर हम पहले एक तरीका अपनायें और उसके विफल होने के बाद दूसरा। नहीं, ऐसा करने से भी काम नहीं चलेगा। जरूरत यह है कि दोनों तरीके एक साथ एक ही जगह अपनाये जायें।

इसके अलावा यह जरूरी है कि हमारा प्रयोग मास अपील हो। अब तक का हमारा सारा साहित्य पढ़े-लिखे और बुद्धिजीवी वर्ग का साहित्य रहा है। जनता के लिए हमारे पास क्या है? हमें ऐसा साहित्य चाहिए जो सरल हो, आकर्षक हो, लोकभाषा में लोक को बतलाता हो। फिर हमें किस्से, कहानियां, नाटक आदि भी तैयार करने चाहिए। इस तरह की लोक सांस्कृतिक प्रवृत्तियों में आये बिना हम लोक को कैसे 'इन्वाल्व' करेंगे। हम यह तो करते नहीं और अपना सारा ओरगनेजेशन में लगाये रहते हैं।

प्रश्न—बाबा ने कार्यकर्ताओं से आह्वान किया है कि वे सहरसा जायें और सहरसा को देश के सामने नमूने के रूप में पेश करें। जे० पी० ने भी कुछ इसी तरह के संकेत किये हैं। क्या आप सोचते हैं कि नमूनावाद के इतने खिलाफ होने के बाद आन्दोलन अब नमूने पर आयेगा?

उत्तर—मैं नहीं सोचता कि हम सहरसा को नमूना बनाने जा रहे हैं। हम कुछ क्षेत्रों का चुन रहे हैं और वहीं ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं क्योंकि कुछ तो हमारी सीमाएं हैं और कुछ वहां की परिस्थितियों में चुनौती है। हमारे पास इतने कार्यकर्ता तो हैं नहीं कि वे सघन पुष्टि-काम के लिए पूरे देश में बिखर जायें। जैसे कार्यकर्ता हमें इस कार्य के लिए चाहिए वैसे बहुत हैं नहीं। इसलिए हम पॉकेट्स चुनते हैं। फिर हम ऐसे पॉकेट्स भी चुनते हैं जहां चुनौती है।

मैं नहीं मानता कि जे० पी० मुसहरी में इसलिए गये कि वहां वे कोई नमूना खड़ा करना चाहते हैं। वे इसलिए गये कि मुसहरी में एक चुनौती थी और एक सच्चे योद्धा की तरह जे० पी० ने वह चुनौती स्वीकार की। मैं भी लखाबूर में जाकर बैठा तो इसलिए नहीं कि उसे नमूना बनाना चाहता हूं बल्कि इसलिए कि वहां भी हिंसा और आतंक की चुनौती है।

फिर आपको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि बाबा ने कहा कि हमें एक विजय से दूसरी विजय की ओर जाना चाहिए। जब वे एक विजय से दूसरी विजय की बात करते हैं तो नमूने की बात उठती ही नहीं। (समाप्त)

विनोबा-कथित इस्लाम के चौदह रत्न

(१) ईश्वर सगुण साकार।
(२) देवता निषेध।
(३) ईश्वर स्वतंत्रेच्छ
(४) तथापि कर्म विपाक स्वीकृत।
(५) मानव का दैवीकरण निषिद्ध।
(६) भक्ति श्रेष्ठतम कर्तव्य।
(७) सुरक्षा की हिंसा स्वीकृत, परन्तु अहिंसा श्रेयस्कर।
(८) ब्रह्मचर्य की अपेक्षा नहीं परन्तु उसके विषय में आदर।
(९) सन्यास के बारे में यही भूमिका।
(१०) नैतिक मूल्य विहित है।
(११) मरणोत्तर जीवन है।
(१२) पुनर्जन्म की परिकल्पना नहीं तथापि ऐसा नहीं कहा जा सकता कि उसका निषेध है।
(१३) अंतिम न्याय का दिन।
(१४) जातिभेद नहीं

उन्होंने इन दोनों बातों का जोरदार खंडन किया, जिसका असर कई कार्यकर्ताओं पर यह हुआ कि दादा वर्ग-संघर्ष और हिंसा को कुछ हदतक मान्यता दे रहे हैं। दूसरे दिन दादा ने स्वयं होकर यह तय किया कि वे संघ की बैठक में अपनी बात फिर से स्पष्ट करेंगे और तदनुसार तीसरे दिन संघ की बैठक में लगभग एक घंटे तक उनका भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने अहिंसक क्रान्ति के आयामों का मार्मिक विश्लेषण किया। दादा ने कहा—'हमारे आन्दोलन का केन्द्रबिन्दु मनुष्य है। मनुष्य मनुष्य की हत्या किसी भी कारण से नहीं करेगा यह हमारा बुनियादी और अपरिवर्तनीय संकल्प है। पर इसके अलावा कृपया अहिंसा को 'फेटिश' मत बनाइये। अमीरों को किसी प्रकार का भय उत्पन्न न हो इस ख्याल से गरीबों के पददलित और शोषित गरीबों को अगर आप के काम द्वारा मुक्ति का आश्वासन नहीं मिला तो आप की क्रान्ति किस काम की?' वर्ग-संघर्ष वाली बात को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि 'मार्क्स की वर्गों की कल्पना उद्योग के क्षेत्र को लेकर थी। कृषि के क्षेत्र में थोड़े से मालिक और अधिकतर सर्वहारा—ऐसे वर्ग हैं ही नहीं। इस क्षेत्र में छोटे मालिकों की संख्या ही ज्यादा है। अहिंसक क्रान्ति में हमें निरुपाधिक मानव की प्रतिष्ठा कायम करनी है। हमें मालिक की सहायता जरूर चाहिए पर मालिक मनुष्य की मालकियत के वजन की नहीं। मालकियत की प्रतिष्ठा जैसे आज के मूल्य क्षीण होने चाहिए। सहयोग हम सबका लेंगे लेकिन सहारा या आश्रय नहीं।'

उसके बाद की बैठक में फिर धीरेन्द्र भाई बोले। काफी अरसे से धीरेन्द्र भाई की तबीयत ठीक नहीं रहती है और वे आराम-कुर्सी पर लेटे हुए बोलते या बात करते हैं। संघ-अधिवेशन में भी उन्होंने इसी प्रकार अपना भाषण आराम-कुर्सी पर लेटे हुए दिया। संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् ने ठीक ही धीरेन्द्र भाई के लिए शर-शैय्या पर लेटे हुए भीष्म-पितामह के विशेषण का प्रयोग किया था। जो उस समय वहां हाजिर थे उनपर धीरेन्द्र भाई की क्रान्तिकारी वाणी और आन्दोलन की मौजूदा घड़ी में अन्य सब काम छोड़कर 'करो या मरो' की तैयारी से सहरसा के मैदान में कूद पड़ने के ओजस्वी आह्वान का असर हुए बिना नहीं रहा होगा। ७१ वर्ष के पार की जवानी की बुलन्द आवाज में धीरेन्द्र भाई ने उपस्थित समुदाय को सन् १९४२ की याद दिलायी और कहा कि वैसा ही समय आज ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में उपस्थित हुआ है। हमारा आन्दोलन २१ वर्ष का बालिग हो रहा है। आन्दोलन के दरमियान में हमने खादी आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के कामों से अपना गुड़िया-घर सजाया था। जवानी में इन गुड़ियों को छोड़कर हमें मैदान में उतरना होगा। एक बार अपनी सारी ताकत लगाकर हमने अगर ग्रामस्वराज्य सभाओं के जरिये लोकशक्ति को प्रकट नहीं किया तो मजबूर होकर लोग हिंसा की ओर मुड़ेंगे। हमारे विचार के बारे में अब लोगों को शंका नहीं है, शंका यह है कि वह जमीन पर उतर सकता है या नहीं। यह हमें सिद्ध करके बताना होगा। हमारे सामने यही चुनौती है।

अहिंसा और वर्ग-संघर्ष वाले दादा के प्रतिपादन से अपनी सहमति प्रगट करते हुए धीरेन्द्र भाई ने इन बातों को और भी स्पष्ट किया। उन्होंने कहा, 'अहिंसा हमारा सिद्धान्त न हो पर वह जीवन की प्रक्रिया बन जानी चाहिए। और जहां तक वर्ग-संघर्ष के भय का सवाल है, जिसने अहिंसा को आत्मसात् कर लिया है वह किसी चीज से भय नहीं खाता। अहिंसक व्यक्ति ही सच्चे मानों में निर्भय हो सकता है। लेकिन संघर्ष से हम भय न खायें इसका मतलब यह नहीं है कि संघर्ष की हम योजना बनायें। मृत्यु से हम भय न खायें, इसका मतलब यह थोड़े ही होता है कि मृत्यु की हम योजना बनायें। योजना तो हम जीने की ही करते हैं। मौत आये तब उसका सहर्ष स्वागत करने की तैयारी रहनी चाहिए। हम हिंसा की जगह अहिंसा की, और संघर्ष की जगह समर्पण की पद्धति विकसित करना चाहते हैं।'

इस प्रकार भोपाल का अधिवेशन बिना किसी पूर्व-योजना या अपेक्षा के काफी विचारोत्तेजक और प्रेरक बन गया। धीरेन भाई, जे० पी० और दादा के रूप में ग्रामस्वराज्य की अहिंसक क्रान्ति के ब्रह्मा-विष्णु-महेश की त्रिमूर्ति की उपस्थिति, और प्रत्यक्षतः उनके स्फूर्तिदायी उद्बोधन से अधिकांश कार्यकर्ता एक नया उत्साह और काम की निश्चित दिशा लेकर मध्यप्रदेश केन्द्र से फिर चारों ओर बिखर गये। ●

इलाहाबाद स्टेशन पर सर्वोदय-साहित्य-भण्डार

इलाहाबाद स्टेशन पर सर्वोदय-साहित्य-भण्डार के लिए रेलवे बोर्ड से अनुमति मिली है और २ नवम्बर '७१, गुरु नानक जयन्ती के दिन श्री चन्द्रशेखरजी ने एक ठेला लगाकर साहित्य-बिक्री का कार्य शुरू कर दिया है। लगभग दो सप्ताह में स्टाल बनकर तैयार हो जायेगा। ●

चीन संयुक्तराष्ट्रसंघ में

साम्यवादी चीन संयुक्त राष्ट्रसंघ का सदस्य घोषित किया गया है। उसको सदस्यता देने और ताइवान को निकालने का जेनरल एसेम्बली में ७६ देशों ने समर्थन किया और ३५ देशों ने विरोध किया तथा १७ देशों ने मतदान में भाग नहीं लिया।

जेनरल एसेम्बली के इस ऐतिहासिक फैसले ने २१ साल के विवाद को खतम किया, अमेरिका की 'दो चीन' की नीति का खोखलापन साबित किया, और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध और कूटनीति को एक नया और पेचीदा मोड़ दिया, जिसके परिणाम दूरगामी होंगे।

साम्यवादी चीन अब अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी में जायज और कानूनी प्रतिनिधि मान लिया गया है। ताइवान की हालत अब एक नाजायज बच्चे की सी है, जिसे कानूनी तौर पर कोई अधिकार नहीं। चीन केवल जनरल एसेम्बली का ही सदस्य नहीं बल्कि सुरक्षा परिषद के ५ स्थायी सदस्यों में से एक है।

इस ऐतिहासिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक घटना पर कुछ प्रमुख समाचार-पत्रों के विचार यहाँ में प्रस्तुत हैं :

'इंडियन एक्सप्रेस' लिखता है : राष्ट्रसंघ में चीन का प्रवेश एक क्रान्तिकारी कदम है, जिसका परिणाम चीन के प्रवेश के समर्थकों की समझ से कहीं ज्यादा दूरगामी होगा। यह एक सही फैसला है, जिसे बहुत पहले होना चाहिए था। एक ऐसे देश को अन्तर्राष्ट्रीय संगठन से बाहर रखना, जिसकी जनसंख्या संसार की कुल जनसंख्या का १।५ भाग है, गलत बात थी।

इसी समय विलियम का पीकिंग जाना दिलचस्प और महत्वपूर्ण है। जिस तरह चैम्बरलेन ने चेकोस्लोवाकिया को बेच दिया था ताकि संसार लोकतंत्र और शान्ति के लिए सुरक्षित हो सके। ऐसा मालूम होता है कि उसी तरह राष्ट्रपति निक्सन ने एक संकुचित उद्देश्य के लिए ताइवान को बेच दिया। वह चाहते हैं कि दूसरी बार राष्ट्रपति का पद उनके लिए सुरक्षित हो जाये। नीयत जो भी हो, राष्ट्रसंघ में चीन का प्रवेश ठीक ही है। फिर भी पेकिंग के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन में प्रवेश के अति दूरगामी परिणामों को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। जब जनवरी १९६५ में राष्ट्रपति सुकर्ण ने राष्ट्रसंघ से निकल जाने का एलान किया था, तो चीनी सरकार के एक वक्तव्य में इन्डोनेशिया की कार्रवाई को न्याय पर आधारित ठीक और शान्तिकारी कहा गया था। साम्यवादी चीन बराबर राष्ट्रसंघ पर अमेरिकी नियंत्रण की कड़ी आलोचना करता रहा है। चाऊ-एन-लाई ने कहा था, 'क्यों नहीं एक दूसरा क्रान्तिकारी राष्ट्रसंघ स्थापित किया जाये। चीन से यह कहना कि वह अमेरिका के साथ शान्तिपूर्वक रहे जबकि अमेरिका ने चीन के चारों ओर सैनिक गढ़ बना रखे हैं और फारमोसा के चीनी क्षेत्र पर कब्जा कर रखा है, असम्भव है।'

राष्ट्रपति निक्सन ने इसे सम्भव बना दिया है। चीन का प्रवेश राष्ट्रसंघ को एक क्रान्तिकारी रूप देगा। इस साल पहले पीकिंग ने राष्ट्रसंघ से कहा था, कि, 'वह अपने दोषों को ठीक करे, और अपना एक रेडिकल रि-आर्गेनाइजेशन (क्रान्तिकारी पुनर्गठन) कराये।' इस प्रस्ताव का बहुत सारे एफ्रो-एशियाई देशों ने स्वागत किया था।

चीन के प्रवेश से हो सकता है कि बहुत सारे यूरोपीय, अमेरिकी और एशियाई राजनैतिक नेताओं की नींद उड़ जाये। लेकिन राष्ट्रपति निक्सन ने माओ को यों ही नहीं चुना है। इसका सबसे बड़ा शिकार सोवियत रूस होगा।

टाइम्स ऑफ इंडिया ने लिखा है : चीन को प्रवेश देकर और ताइवान को निकाल कर यूनो ने न केवल पुरानी गलती को सुधार ली है बल्कि अपनी स्वतन्त्रता भी साबित की है। यह भी फैसला किया है कि वह अब अमेरिका के अभिरक्षण से बाहर है। जेनरल एसेम्बली का वोट अमेरिकी प्रशासन के लिए एक झिड़की है, जिसने आखिरी मिनट तक इस बात की कोशिश की कि ताइवान को निकलने से बचाया जाय। परन्तु यह आश्चर्यजनक नहीं होगा कि पुनः विचार पर राष्ट्रपति निक्सन स्वयं जो कुछ हुआ उस पर राहत महसूस करें। राष्ट्रसंघ के फैसले से पेकिंग की मित्रता प्राप्त करने में आसानी होगी।

राष्ट्रसंघ से ताइवान के निकाले जाने से अमेरिका, जापान और दूसरे कई देशों के लिए बड़ी समस्याएं पैदा हो जायेंगी। परन्तु बदली हुई परिस्थिति में जापान की सरकार से सम्बन्ध ठीक करने में, अमेरिका में निक्सन प्रशासन पर इस बात के लिए दबाव बढ़ता जायेगा कि एशिया में सैनिक कमिटमेन्ट कम से कम हो। यह नहीं कहा जा सकता कि पेकिंग अमेरिका से क्या-क्या रियायतें प्राप्त कर सकेगा, परन्तु यह स्पष्ट है कि एशिया में बदलते हुए शक्ति के ढांचे की मांग है कि अमेरिकी नीति जिन सिद्धान्तों पर है, उन पर पुनः विचार हो।

चीनी सरकार इस बात से वाकिफ नहीं है कि उसका प्रवेश राष्ट्रसंघ में ऐसे समय में हुआ है जब दुनिया संगठन कमजोर हो रहा है। एक के बाद दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय संकट में यह केवल खामोश तमाशाई बनकर रह गया है। यह वियत-नाम के सभी वर्षों के युद्ध में बर्बरता को रोकने के लिए कुछ न कर सका। और पूर्वी बंगाल में नरसंहार—जो सैनिक शासन द्वारा हो रहा है, जिसके कारण एक करोड़ लोग बेघर हो गये—के सामने में

मानव अधिकार के अपने सभी प्रस्तावों के बावजूद उसमें इतनी भी हिम्मत नहीं आ सकी कि वह 'सेन्सर' का एक शब्द भी बोले। चीन के प्रवेश से राष्ट्रसंघ का प्रतिनिधि चरित्र दृढ़ हो जायेगा परन्तु शान्ति स्थापित करने में वह इसे अधिक प्रभावशाली नहीं बना सकेगा। राष्ट्रसंघ के लिए सबसे बड़ी डरावनी बात यह है कि पिछले वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय तनाव घटाने के लिए जो कुछ भी हुआ है, वह सुरक्षा संगठन से बाहर की वार्ता का परिणाम है।

हिन्दुस्तान टाइम्स लिखता है : वास्तव में अलबानिया के चीन को लाने और ताइवान को निकालने के प्रस्ताव पर वोटिंग के फैसले से अमेरिका को बड़ा धक्का लगा है, और उसे दुःख हुआ है। अमेरिका जिन देशों पर निर्भर कर रहा था, वे उसकी इच्छा के अनुसार करने में अन्यमनस्क रहे। इस तरह अमेरिका की हार हुई है और पेकिंग के बैठने की जटिल समस्या का समाधान हो गया है।

राष्ट्रसंघ में शिरकत के लिए पेकिंग की शर्त थी कि ताइवान को निकाला जाय। यह हो गया। परन्तु ताइवान का प्रश्न अभी बाकी है। जब तक अमेरिकी सुरक्षा की सन्धि द्वारा इसकी सुरक्षा होती है, यह चीनी अमेरिकी सम्बन्ध में काँटे की तरह चुभता रहेगा और दक्षिण पूर्व में शान्ति भंग होने का खतरा बना रहेगा। राष्ट्रसंघ में पेकिंग की उपस्थिति—वीटो पावर के साथ—अमेरिका के सौदेबाजी वाले दिमाग पर दबाव डालेगी। सचाई यह है कि यद्यपि वाशिंगटन पेकिंग का प्रवेश चाहता था परन्तु उसे यह आशा न थी कि यह इतनी जल्दी हो जायेगा। मिस्टर विलियम रोजर्स ने कहा था कि ताइवान का निकाला जाना खतरनाक होगा। परन्तु वह यह अन्दाजा न लगा सके थे कि ताइवान वास्तव में निकाल फेंका जायेगा।

इकोनॉमिक टाइम्स लिखता है : चीन अपनी शर्तों पर अन्तर्राष्ट्रीय संघटन में आया है। अमेरिका को स्वयं ही उसकी कीमत ताइवान को निकाले जाने की शक्ल में अदा करनी पड़ी है। जबकि पेकिंग ने इस सफलता पर प्रतिक्रिया प्रकट करने में सुस्ती बरती है, राष्ट्रसंघ में अमेरिकी प्रतिनिधि जार्ज बुश ने उसे राष्ट्रसंघ के लिए रुसवाई की घड़ी कहा है। यह आशा रखनी चाहिए कि वाशिंगटन अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं में सतुलित वास्तविकता प्राप्त करेगा।

पेकिंग अन्तर्राष्ट्रीय संघ का फिर से संघटन चाहता है और सुरक्षा परिषद के एक स्थायी सदस्य की हैसियत से उस उद्देश्य के लिए अपने प्रभाव और शक्ति का प्रयोग करेगा। बिना पेकिंग के समर्थन के अब राष्ट्रसंघ कुछ भी नहीं कर सकता। राष्ट्रसंघ को, ताइवान के निकाल दिये जाने पर, अमेरिका के नेताओं द्वारा दी गयी आर्थिक सहायता कम करने की धमकी को भी बर्दाश्त करना है। अमेरिका अभी संघ के सालाना खर्च का एक तिहाई देता है जो सबसे बड़ा हिस्सा है। मालूम होता है कि संघ के सदस्यों ने अमेरिका की इस धमकी पर अधिक ध्यान नहीं दिया है। जबकि सब दिवालियापन के करीब है, या तो सदस्यों ने इसे धोखा समझा या यह सोचा कि अमेरिकी सहायता कम होने पर भी संघ चल सकता है। अगर अमेरिकियों ने वास्तव में ऐसा किया तो बहुत सारे सदस्य वहीं और जाना पसन्द करेंगे। ऐसे राज्यों की कमी नहीं है जो राष्ट्रसंघ को एक नया घर देना चाहेंगे।

हमलोगों (भारत) को चाहिए कि ऐसी सरकार से, जो संसार के मंच पर एक नाजुक समय में केन्द्रीय बिन्दु पर आ रही है, नजदीकी सम्पर्क रखें। ऐसा सम्पर्क केवल न्यूयार्क में दोनों स्थायी प्रतिनिधियों के बीच ही नहीं होना चाहिए, बल्कि बिना देर किये राजदूतों के द्वारा भी क्रमशः राजधानियों में होना चाहिए।

स्टेट्समैन ने लिखा है : राष्ट्रसंघ की जेनरल एसेम्बली का इजलास शुरू होने से पहले ही यह बात स्पष्ट हो चुकी कि अब पेकिंग सरकार को वह स्थान लेने के लिए कहा जायेगा, जिससे अब तक इनकार किया जाता रहा है। यह बात उसी समय स्पष्ट हो गयी थी जब राष्ट्रपति निक्सन ने अपने पहले के राष्ट्रपतियों की नीति में परिवर्तन किया। वह नीति राष्ट्रसंघ में चीन के प्रवेश को रोकने की थी। केवल यह तय होना बाकी था कि शर्तें क्या होंगी। अमेरिका का ताइवान से पिछला वादा ऐसा था कि राष्ट्रपति निक्सन मुश्किल से ही अलबानिया के प्रस्ताव के अनुसार ताइवान को निकाले जाने की बात पर राजी हो सकते। अमेरिकी प्रतिनिधि जार्ज बुश आखिर तक यह भविष्यवाणी कर रहे थे, कि ताइवान जेनरल एसेम्बली का सदस्य बना रहेगा, यद्यपि सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता उसे प्राप्त नहीं रहेगी। घटना ने कुछ और ही सिद्ध किया।

पेकिंग ने पहले ही कह दिया था कि अगर ताइवान न निकाला गया तो वह राष्ट्रसंघ में प्रवेश नहीं करेगा।

भारत ने अपना कूटनीतिक दाँव ठीक रूप से अदा किया है। उसे अब यह भी सोचना चाहिए कि क्या यह अच्छा अवसर नहीं है कि वह चीन से पूर्ण कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करे।

तमिलनाडु के मदुराई जिले में पुष्टि-कार्य

(प्रस्तुत रपट मदुराई जिले के प्रमुख कार्यकर्ता श्री र० वरदन से प्राप्त हुई है, जो उनके ही द्वारा हिन्दी में लिखी गयी थी। हम उसे मूल रूप में ही प्रकाशित कर रहे हैं। — सं०)

मदुराई जिले में १५ तहसील और ३४ प्रखण्ड हैं। कोडैकानाल, जो पहाड़ी प्रखण्ड है, उसके सिवाय अन्य ३३ प्रखण्डों का प्रखण्डदान घोषित किया गया है।

तमिलनाडु में १९५९ से भूदान कानून अमल में है, परन्तु अब तक सुलभ ग्रामदान का कानून नहीं बना है। इस वजह से, दान-प्रखण्डों को सरकार के कानून के मुताबिक घोषित करने में न केवल कठिनाई है, पर असम्भवता भी है।

मदुराई जिले में ९० हजारी ग्राम-सभाएँ तथा ३१० पंचायत ग्रामसभाएँ गठित की गयी हैं। सरकार के पुराने कानून के मुताबिक १६ गाँव ग्रामदान घोषित किये गये हैं। इसके अलावा ३० गाँवों में सरकार से स्वीकृत गाँधीय मदुराई कमिटियाँ सेवा कर रही हैं, और वहाँ विकास के कार्य अच्छी तरह चल रहे हैं।

सर्व सेवा संघ की इच्छा के अनुसार सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया कि कुछ प्रखण्डों में तीव्रता से पुष्टि-कार्य शुरू करें। उसके मुताबिक निम्न-लिखित बन्धुओं ने अपनी इच्छा के अनुसार एक-एक प्रखण्ड को अपना लिया

व्यक्ति	प्रखण्ड
श्री क० अरुणाचलम्	कल्लिकुडि
श्री अरविंदम्	मनाय
श्री वरदन्	सापटूर
श्री मुनियाण्डि	सेडपट्टि
श्री दुरैराजन्	कोट्टमचम

करीब डेढ़ एक साल से ये बन्धु अपने-अपने प्रखण्डों के लिए सारा समय दे रहे हैं। और, इन प्रखण्डों के सभी गाँवों को कानूनन ग्रामदान घोषित कराने की उनकी कोशिश रही है।

इन प्रखण्डों में पुष्टि-कार्य शुरू करने के पूर्व उन प्रखण्डों के अध्यक्ष, सभी पंचायत यूनियन के अध्यक्ष और अन्य प्रमुखों की गोष्ठियाँ बुलानी पड़ीं। ग्रामपंचायतों की सभा तथा गाँव के अधिकारियों की बैठक आदि आयोजित करनी पड़ी, उसके लिए छोटे-छोटे पत्रक, प्रश्नोत्तरी और अन्य साहित्य तैयार करने पड़े। और इस तरह इन प्रखण्डों में कार्य शुरू हुआ।

इस व्यवस्था के मुताबिक सेडपट्टि, कल्लुपट्टि, कल्लिकुडि— इन प्रखण्डों में गोष्ठियाँ हुईं। तिरुमंगलम् में, तहसील के स्तर में, गाँव के अधिकारियों को हस्ताक्षर समझाने के लिए जिले के प्रधान अफसरों से बातचीत हुई और उसके फलस्वरूप तहसीलदार आदि अफसरों ने एक दिन की इस गोष्ठी में भाग लिया। उन लोगों ने वादा किया है कि आन्दोलन के लिए अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करेंगे।

पिछले कुछ महीनों से होनेवाले इस कार्य के फलस्वरूप अब तक ४२ गाँव के लोगों से (दूसरी बार) हस्ताक्षर पाया है। सरकार के कानून के मुताबिक ठीक करके वे पत्र भूदान-बोर्ड को भेजे गये हैं।

भूदान बोर्ड के अफसर तथा इस कार्य में लगे हुए बन्धु महीने में एक बार मिलते हैं और इस कार्य में जो अनुभव मिलते हैं उन्हें वहाँ सुनाते हैं। इस कार्य को तीव्र करने की योजनाएँ बनाते हैं।

जब ग्रामसभा की बैठकें होती हैं तब बीसवाँ भाग अर्थात् भूमिहीनों में बाँटने की तथा ग्रामकोष इकट्ठा करने की आवश्यकता पर जोर दिया जाता है।

सुलभ ग्रामदान के कानून न बनने के कारण और स्वयं हम लोगों के बीच स्पष्टता न होने के कारण इस कार्य में अधिक तीव्रता नहीं आती। अब तक तमिलनाडु की सरकार हमारे आन्दोलन को नहीं समझ पायी है। हम उम्मीद करते हैं कि अगली भूदान-बोर्ड की बैठक में इस बारे में कुछ ठोस निर्णय करेंगे और इसमें जो कठिनाइयाँ अनुभव करते हैं वे दूर होकर, कार्य में वेग आने की सम्भावना है।

इस दिशा में कठिन परिश्रम करने वाले हम लोगों में त्याग की भावना ऊँची होनी चाहिए, ताकि हम दूसरों को अपनी ओर खींच सकें। परन्तु गत दस वर्षों का अनुभव ऐसा नहीं। आज की सामाजिक परिस्थिति की ओर ध्यान देने से हम देख पाते हैं कि मनुष्य की स्वार्थता अधिक बढ़ी है और आसपास के लोगों के बारे में चिन्ता कर उन्हें मदद करने की भावना रोज-ब-रोज घटती जा रही है। ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि पुष्टि-कार्य में लगे हुए कार्यकर्ता आज के दयनीय सामाजिक वातावरण में स्वयं डूबने से बचें, और अपने को योग्य सेवक बनाये रखें।

—र० वरदन

साहित्य-विक्रेता प्रशिक्षण-शिविर

खादी-भण्डारों में या साहित्य-भण्डारों के कार्यकर्ता साहित्य बिक्री करते तो हैं, लेकिन साहित्य बिक्री का तकनीकी अनुभव या ज्ञान न होने से अपेक्षित परिणाम नहीं निकलता। इसलिए सोचा गया है कि उनको ६-७ दिन का प्रशिक्षण दिया जाय। पहला शिविर ता० २१ से २६ सितम्बर तक विसर्जन आश्रम, इन्दौर में आयोजित किया गया है। इस शिविर में १० विद्यार्थियों को लिया जायगा। इस प्रकार हर महीने २ शिविर चलाये जायँ और कुल मिलाकर १० शिविर करें, ऐसी

श्री जयप्रकाश नारायण का स्वास्थ्य

गत १७ नवम्बर '७१ को आकाशवाणी से प्रसारित, श्री जयप्रकाश नारायण के अचानक गम्भीर रूप से अस्वस्थ होने के, समाचार को सुनकर हम सब चिंतित हो उठे थे। लेकिन ईश्वरकृपा से उनका स्वास्थ्य अब सामान्य हो गया है। चिन्ता की कोई बात नहीं है। डाक्टरों की सलाह के अनुसार वे इस समय सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर में पूर्ण विश्राम ले रहे हैं।

मुजफ्फरपुर से फोन पर श्री कैलाश प्रसाद शर्मा के साथ हुई बातचीत के अनुसार जे० पी० की कमर में पहले से दर्द था, थकावट भी महसूस कर रहे थे, लेकिन मुसहरी के अपने कार्यक्रमों में बराबर भाग ले रहे थे। १६ नवम्बर '७१ को शाम को दर्द बढ़ गया और बेचैनी महसूस हुई। डाक्टरों ने विश्राम की सलाह दी है। उनकी अस्वस्थता का समाचार सुनकर पटना से बिहार के राज्यपाल, मुख्यमंत्री, मुख्य सचिव और डाक्टरों का एक दल १७ नवम्बर '७१ की सुबह विमान से मुजफ्फरपुर पहुँचा। डाक्टरों ने जे० पी० को ३ दिनों तक पूर्ण विश्राम की सलाह दी। प्राप्त सूचनाओं के अनुसार जे० पी० न तो बेहोश हुए थे, और न ही उन्हें दिल का दौरा पड़ा था। अत्यधिक शारीरिक और मानसिक थकान ही उनकी अस्वस्थता का मुख्य कारण है।

—योजना है ताकि १०० कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण हो सके।

शिविर में भाग लेने वाले कार्यकर्ताओं के आने-जाने का खर्च उनकी संस्था वहन करेगी और शिविर में रहने खाने-प्रशिक्षण आदि का प्रबंध शिविर की ओर से रहेगा। इस शिविर के संचालक श्री जसवंतरायजी, गृहपति श्री पुजारी रायजी एवं गृहमाता रतलाम की श्री शुलीबाई रहेंगी। पहले शिविर का उद्घाटन श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त करेंगे।

खादी-संस्थाओं से एवं अन्य सर्वोदय साहित्य भंडारों से प्रार्थना है कि वे अपने कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण के लिए भेजकर इस योजना का लाभ उठायें। जो संस्थाएं कार्यकर्ता भेजना चाहती हैं वे अभी से कार्यकर्ताओं की संख्या, नाम आदि श्री जसवंतरायजी, सर्वोदय साहित्य भंडार, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर को भेजना दें और उसकी सूचना सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी को भी भेजें।

इतने बड़े-बड़े राज्य ?

क्या हम जानते हैं कि अगले तीस वर्षों में हमारे देश की जनसंख्या १ अरब हो जायगी ? और १९ में से ७ राज्यों की संख्या साढ़े सात करोड़ से लेकर पौने १७ करोड़ तक हो जायगी ? ये सात राज्य हैं : बिहार, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु। इतने बड़े-बड़े राज्यों का प्रशासन कैसे होगा ?

४ करोड़ के आसपास की जनसंख्या के राज्य प्रशासन की दृष्टि से अच्छे माने जाते हैं। लेकिन २ हजार ईस्वी के पहुँचते-पहुँचते केवल ६ राज्य ऐसे रहेंगे जिनकी जनसंख्या ४ करोड़ के लगभग रह जायगी। ये हैं : असम, हरियाणा, जम्मू और कश्मीर, केरल, उड़ीसा और पंजाब। गुजरात, राजस्थान और मैसूर की जनसंख्या लगभग ५ करोड़ होगी। अन्य सब राज्यों की साढ़े चार करोड़ होगी। बिहार की साढ़े दस करोड़ और उत्तर प्रदेश की १६ करोड़ ७४ लाख हो जायगी।

ऐसे बड़े राज्यों के विकास की योजना कैसे बनेगी ? बिहार और उत्तर प्रदेश को देखिए। आज भी ये दोनों राज्य प्रशासन की दृष्टि से बहुत पिछड़े हुए हैं, और इनके कई भाग अत्यन्त गरीबी में पिस रहे हैं। बम्बई निकाल लीजिए तो महाराष्ट्र में भी क्या रह जाता है सिवाय गरीबी और पिछड़ेपन के ? इसलिए आवश्यक है कि बड़े राज्य तोड़े जायें और उनके छोटे टुकड़े बनाये जायें।

वे राज्य जो, जैसे हैं, ठीक हैं

राज्य	जनसंख्या अनुमानित २००१ में	
असम	२ करोड़	७० लाख
हरियाणा	१ ,,	७२ ,,
गुजरात	४ ,,	६८ ,,
जम्मू-कश्मीर		८१ ,,
केरल	३ ,,	८४ ,,
मैसूर	५ ,,	३५ ,,
उड़ीसा	३ ,,	९८ ,,
राजस्थान	४ ,,	५८ ,,
पंजाब	१ ,,	७० ,,

वे राज्य, जिन्हें छोटा करना चाहिए

आन्ध्रप्रदेश	८ करोड़	१७ लाख
बिहार	१० ,,	५५ ,,
प० बंगाल	७ ,,	९३ ,,
मध्य प्रदेश	७ ,,	३५ ,,
महाराष्ट्र	८ ,,	९८ ,,
उत्तर प्रदेश	१६ ,,	७४ ,,
तमिलनाडु	७ ,,	६५ ,,

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

• बंगला देश के शरणार्थी : तानाशाही के शिकार

चीन अमेरिका में, इंग्लैण्ड योरप में

जब चीनी प्रतिनिधिमण्डल के ५३ सदस्य—नर और नारी, अमेरिका की 'महान जनता' के लिए 'गहरी मित्रता' लेकर न्यूयार्क पहुँचे, और रुजवेल्ट होटल पर कम्यूनिस्ट चीन का लाल झंडा फहरा दिया, तो शायद एक साधारण अमेरिकी निवासी को विश्वास नहीं हुआ कि यह क्या हो गया। उसे क्या मालूम कि इतने वर्षों से जिस चीन को उसने अपना शत्रु मान रखा था वह विजयी होकर अब उसके दरवाजे पर पहुँच गया है। चीनी प्रतिनिधियों ने रुजवेल्ट होटल के ३७ कमरे लगभग पौने तीन लाख रुपये माहवार किराये पर ले लिये हैं। वहीं उनका निवास और कार्यालय है, वहीं से वे 'साम्राज्यवादियों' और 'विस्तारवादियों' को कोसने संयुक्त राष्ट्र संघ की बैठकों में जाते हैं।

चीन ८० करोड़ का देश है, अमेरिका २२ करोड़ का। अमेरिका आज दुनिया का सबसे धनी, और सैनिक शक्ति में सबसे बलशाली देश है। दुनिया भर में उसका व्यापार है और सैनिक अड्डे हैं। चीन या अमेरिका का धन या सैनिक शक्ति में कोई मुकाबिला नहीं है। लेकिन आज रूस और अमेरिका के साथ उसका नाम लिया जाने लगा है। चीन ने यह महानता धीरे-धीरे विरोधों में अपने भरोसे पर प्राप्त की है। उसने दुनिया को विवश किया है कि उसे बड़ा माना जाय। उसने अपने देश के बाहर अपना कोई सैनिक अड्डा नहीं बनाया है, वह अपने आर्थिक विकास के लिए विदेशी सहायता नहीं लेता, और दुनिया में वहाँ रूस और अमेरिका के दोनों की तरह उसका 'प्रभुत्व-क्षेत्र' भी नहीं है। उसने ऐसी कोई घोषणा नहीं की है, फिर भी संयुक्त राष्ट्र संघ में 'तीसरी दुनिया' के जो सदस्य हैं, जिनकी संख्या टोटल की दो-तिहाई है, वे मानने लगे हैं कि चीन उनका अगुआ बनेगा। चीन पश्चिम के मुकाबिले पूरब की, गोरों के मुकाबिले कालों की, और साम्राज्यवादियों के मुकाबिले साम्राज्यवाद के विरोधियों की आवाज माना जाने लगा है। दुनिया अटकलें लगा रही है कि चीन संयुक्त राष्ट्र संघ में पहुँचा है तो विश्व-राजनीति में कौन-सा नया मोड़ आयेगा। राष्ट्र संघ की चर्चाओं में मोड़ जरूर आयेगा, लेकिन क्या इतना ही होकर रह जायगा ?

अमेरिका, रूस, जापान, साझा बाजार के योरोपीय देश, और चीन: ये मुहरें होंगी जिनसे अन्तर्राष्ट्रीय शतरंज खेला जायगा। रूस सोचेगा, अगर अमेरिका और चीन मिल गये तो क्या होगा ? अमेरिका सोचेगा, अगर रूस और चीन एक हो गये तो क्या होगा ? चीन सोचेगा, अगर अमेरिका और रूस जुड़ गये तो क्या होगा ? अमेरिका और चीन का आना-जाना देखकर जापान सहमा हुआ है। वह अमेरिका का आर्थिक प्रतिद्वन्द्वी है, और चीन का राजनैतिक। लेकिन उसे, आस्ट्रेलिया और फिलि-पाइन को शायद चीन से दोस्ती करनी ही पड़ेगी। पश्चिमी योरप के बड़े देश चीन जैसे बड़े बाजार को नहीं छोड़ सकते। किसी-न-किसी रूप में, लगता है, चीन की दोस्ती की सबको जरूरत है। क्या इसलिए कि पश्चिम के देश चीन को भारत को नहीं—एशिया की मुख्य शक्ति के रूप में देख रहे हैं ?

तेजी से बदलती हुई दुनिया में दो देश हैं जिनसे औरों से ज्यादा अपनी जगह तय कर लेनी है—योरप में इंग्लैण्ड, एशिया में भारत। इंग्लैण्ड ने तय कर लिया है कि वह पश्चिमी योरप की बिरादरी में रहेगा, अमेरिका का पिछलग्गू बनकर नहीं रहेगा। अमेरिका की प्रभुता किसी को स्वीकार नहीं है। अमेरिका अपनी स्थिति को समझ रहा है, तभी तो वह अपने में सिकुड़ना चा रहा है। रूस भी योरप से मिलजुल कर ही रहना चाहता है।

भारत क्या करेगा ? राजनैतिक शतरंज का खिलाड़ी बनेगा ? उसके सामने एक रास्ता कूटनीति, शस्त्रों की होड़ और बड़ी शक्तियों का पिछलग्गू बनने का है। दूसरा रास्ता अपनी भीतरी शक्तियों को विकसित करने और निर्भय, निर्वैर रहते हुए, पड़ोसियों से अच्छे सम्बन्ध रखने का है। भीतरी शक्तियों के विकास की पहली शर्त है कि देश का प्रशासन बदले, शिक्षा बदले, विकास की योजना बदले, ताकि हर व्यक्ति ५५ करोड़ के विशाल परिवार में सुख और सम्मान का अनुभव करे। यह शर्त पूरी नहीं हो रही है। भारत अगर अपनी शक्ति से यह परिवर्तन करले तो सहज ही वह एशिया और अफ्रीका की समस्त जनता के लिए नमूना और अगुआ बन जायगा। यही भारत का मिशन भी है। चीन अमेरिका में पहुँच जाय, इंग्लैण्ड योरप में मिल जाय, और भारत जहाँ-का-तहाँ रह जाय, यह सम्भव नहीं है।

युद्ध और क्रान्ति

एक समय था जब सीमित शस्त्र-शक्ति से भी बड़ा परिवर्तन लाया जा सकता था। लेकिन तब सरकारी सेना की शक्ति उतनी विकसित नहीं थी जितनी आज है।

पहले एक देश में कोई उथल-पुथल होती थी तो विदेशी शक्तियाँ प्रायः हस्तक्षेप नहीं करती थीं। क्रान्तिकारियों की सेना और सरकारी सेना, दोनों अक्सर मुकाबिले की होती थीं। क्रामवेल की सेना चार्ल्स प्रथम की सेना से कम अच्छी नहीं थी। फ्रांस की राज्यक्रान्ति में तो स्त्रियों ने बास्टील के किले को तोड़ दिया था। इसका अर्थ यह है कि क्रान्तिकारी केवल सीमित शस्त्रों से और बड़ी संख्या के बल पर सरकारी सेना को हरा देते थे। लेकिन १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब फ्रांस की शक्ति नेपोलियन के हाथ में गयी तो पासा पलटने लगा।

१९१७ की रूसी क्रान्ति में जार की सेना हार गयी थी जिसके कारण सेना में ग्लानि पैदा हुई, बगावत हुई। बालशेविक क्रान्तिकारियों ने इसका फायदा उठाया। सेना के एक भाग ने क्रान्तिकारियों का साथ दिया। उनके पक्ष में विचार की शक्ति थी, जनता का जबरदस्त समर्थन था। फिर भी १९१४ के पहले विश्व-युद्ध के समाप्त होते ही १८ देशों की सेनाओं ने रूस की क्रान्ति को कुचलने की असफल कोशिश की। रूस की क्रान्ति में प्रशिक्षित सेना का योगदान फ्रांसीसी क्रान्ति की अपेक्षा अधिक था। जिन नागरिकों ने क्रान्ति की ओर से युद्ध किया था उनसे भी बाद को हथियार रखवा लिये गये। जिन सोवियतों की मार्क्स और एंजिल्स ने १८७१ के पेरिस कम्यून के आधार पर इतनी महिमा गायी थी वे निहत्थे बना दिये गये, और सारी शक्ति एक सशस्त्र केन्द्रीय सत्ता के हाथ में चली गयी।

चीन की क्रान्ति में कम्यूनिस्ट और चिएंग की सेनाओं में युद्ध हुआ। चिएंग की सेनाएँ क्रमशः हारती चली गयीं। बेतहाशा बढ़े हुए मूल्यों के कारण जनता भी चिएंग से नाराज थी। अमेरिका की सरकार ने भी चिएंग की उतनी मदद नहीं की, जितनी की उसे जरूरत थी। फल यह हुआ कि कम्यूनिस्ट शस्त्र-शक्ति ने चिएंग की विरोधी शस्त्र-शक्ति पर विजय पायी। जो विजयी हुआ उसे सत्ता मिली—कम्यूनिस्ट सेना को।

भारत में गांधीजी ने अहिंसक असहयोग की पद्धति से काम लिया। १९२१ से १९४२ तक आन्दोलन होते ही रहे। इन आन्दोलनों की बदौलत भारतीयों को अहिंसक लड़ाई लड़ने की दीक्षा मिलती रही। भारत की अहिंसक लड़ाई के अनुकूल यह बात भी थी कि ब्रिटेन में राजनैतिक लोकतंत्र का विकास होता जा रहा था, इसलिए अंग्रेजी शासक उतने अमानुषिक नहीं हो सकते थे जितने स्पेनी, पुर्तगाली, डच या फ्रांसीसी शासक थे।

स्वतंत्रता के बाद से आज तक वह हवा कुछ-न-कुछ बनी हुई है। पिछले वर्षों में कई तरह के सत्याग्रह हो चुके हैं, यद्यपि उनसे देश में स्वतंत्रता के पहले जैसी हवा नहीं पैदा हो सकी। यह कहना कठिन है कि क्या कोई सरकार ऐसे सत्याग्रह को बर्दाश्त कर सकती है जिसका लक्ष्य राजनैतिक-आर्थिक ढांचे को पूरा-पूरा बदल देना हो?

बंगला देश की हलचल हमारी आंखों के सामने है। पूर्वी बंगाल के मुसलमानों ने पाकिस्तान के निर्माण में पंजाबियों की अपेक्षा ज्यादा भाग लिया था। जब बंगाल एक था तो वहाँ मुस्लिम लीग की सरकार थी, जब कि पंजाब में गैर-लीगी 'यूनियनिस्ट' सरकार थी। शेख मुजीबुर्रहमान स्वयं मुस्लिम लीग में थे, और सुहरावर्दी के प्रशंसक थे। १६ अगस्त १९४६ को कलकत्ता में 'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' सुहरावर्दी के ही संरक्षण में संघटित हुआ था। लेकिन जब विभाजन सामने आ गया तब सुहरावर्दी और कुछ दूसरे नेताओं ने 'संयुक्त स्वतंत्र बंगाल' की बात उठायी, लेकिन बात बहुत आगे बढ़ चुकी थी।

विभाजन हुआ। पाकिस्तान बना। लेकिन शीघ्र पाकिस्तान में 'पूर्वी पाकिस्तान' के प्रतिकूल हवा बहने लगी। आज वहाँ हिंसक 'धर्मयुद्ध' छिड़ा हुआ है। यह युद्ध अहिंसक असहयोग से शुरू हुआ था। अगर बंगला देश के लोग अपनी अहिंसक शक्ति से फौजी तानाशाही पर विजय पाते तो वे उस अहिंसक शक्ति से अपने देश में जो परिवर्तन चाहते, कर लेते। लेकिन अनेक परिस्थितियों के कारण बंगला देश की जनता को हिंसा अपनानी पड़ी। जो लोग आज स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे हैं वे स्वतंत्रता के बाद क्या करेंगे? वे चाहे स्वतंत्र बंगला देश की सेना में भर्ती होंगे, या उन्हें अपनी स्वतंत्र सरकार के सामने अपने अस्त्र-शस्त्र समर्पित करने पड़ेंगे। ऐसा ही पहले की सभी क्रान्तियों में हुआ है। इसका अर्थ यह है कि जनता जहाँ की तहाँ रह जायगी—शक्तिहीन, राज्य-शक्ति पर आश्रित। बंगला देश के स्वतंत्र होने पर भी वहाँ वही आर्थिक ढाँचा बना रहेगा जो आज है? आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था में कितना परिवर्तन होगा? ज्यादा-से-ज्यादा एक लोक-कल्याणकारी राज्य कायम होगा, संसदीय राजनीति और मिश्रित अर्थनीति चलेगी!

इतनी क्रान्तियों के बाद आज मनुष्यता के सामने एक संकट है। अब तक का अनुभव है कि सत्ता सैनिक-शक्ति के बिना मिलती नहीं, और सैनिक-शक्ति से प्राप्त सत्ता जनता की शक्ति विकसित होने देती नहीं। सरकार की शक्ति पेशेवर सेना तथा नये-नये अस्त्र-शस्त्रों के कारण दिनों-दिन बढ़ती जा रही है, यहाँ तक कि अब क्रान्ति—हिंसक या अहिंसक—करना भी कठिन होता जा रहा है।

—डा० टी० पी० सिंह

'प्वाइंट आव व्यू' दिल्ली, में प्रकाशित लेख के आधार पर

बंगला देश और भारत का भविष्य अभिन्न हो गया है

बंगला देश की पराजय भारत की पराजय होगी

—श्री जयप्रकाश नारायण की चेतावनी—

आप जानते हैं कि पिछले दिनों मुख्य काम मैंने बंगला देश का अपने हाथों में लिया। विदेश यात्रा भी की, और कई बार पश्चिम बंगाल गया। अगरतल्ला गया, और जगह गया। मुक्तिवाहिनी के कैम्पों में गया। उनके और दिल्ली के बीच में एक अनुबन्ध का काम किया। और आज भी करने का प्रयास कर रहा हूँ। अन्तर्राष्ट्रीय एक सम्मेलन भी हुआ। उसमें २१ देशों के प्रतिनिधि आये थे। मेरा बड़ा दुर्भाग्य हुआ कि किसी भ्रम के कारण अन्तिम समय कांग्रेस (सत्तारूढ़) का सहयोग उस सम्मेलन को नहीं मिला। उसका मुझे बहुत दुःख है। यद्यपि उस सम्मेलन की तैयारी-समिति में, कार्यकारी या पूर्व-तैयारी समिति कह लीजिये, उस समिति में सजीवैया महोदय के द्वारा नियुक्त श्रीमती पूरबी मुखर्जी, डा० शंकर दयाल शर्मा सदस्य थे। उनके अतिरिक्त कृष्णकान्त भी थे।

यह सम्मेलन अत्यन्त सफल रहा। उस विषय में इतना ही कहूँगा कि जो प्रतिनिधि आये थे, उनमें से अरब देशों के प्रतिनिधियों को छोड़कर शेष सभी बंगला देश के स्वातन्त्र्य के पूर्णतया से समर्थक थे। अरब देशों के जो प्रतिनिधि थे, वे अवश्य यहिया खान की हुकूमत की तरफ से हुए और हो रहे अन्याय, अत्याचार के निन्दक और विरोधी थे, परन्तु पाकिस्तान की एकता बनी रहे, इसके वे बड़े इच्छुक थे। अल्जीरिया से केवल एक और प्रतिनिधि थे मार्जोरिया के, जिन्होंने बहुत आग्रह से बंगला देश के स्वातन्त्र्य का समर्थन किया। और इस बात को स्पष्ट किया, कि नाइजीरिया राष्ट्र को बियाफ्रा के कारण जो खतरा पैदा हुआ था, उस बारे से, उस प्रश्न से बंगला देश का प्रश्न बिल्कुल भिन्न है। यह एक राष्ट्र के टूटने का प्रश्न नहीं है, बल्कि एक साम्राज्य के टूटने का प्रश्न है।

पश्चिम पाकिस्तान में और पूर्व पाकिस्तान में जो सम्बन्ध रहा, वह बिल्कुल वैसा ही रहा पिछले २४ वर्षों में, जैसा किसी साम्राज्यवादी देश का अपने किसी उपनिवेश के साथ रहता है।

मलेशिया के प्रतिनिधि मूल भारतीय ही थे। एक इसाई थे, दो हिन्दू थे। अपने देश के लोगों की तरफ से उन्होंने बंगला देश के स्वातन्त्र्य का पूर्ण समर्थन किया। और अपने देश लौटने के बाद वहाँ इसके लिए कार्य करने का भी उन्होंने तय किया। मलेशिया दुनिया का अब सबसे बड़ा मुस्लिम राष्ट्र बन गया है। अब इसलिए कहता हूँ कि पाकिस्तान तो टूट चुका है, इसके टूटने का अब नया कोई सवाल नहीं है। और यह भारत के किसी षड्यन्त्र ने नहीं किया है, बल्कि उसको तोड़ा है यहिया खान ने, और भुट्टो ने।

इस बात को दुनिया समझ तो गयी है, तो भी आज की दुनिया में, दुनिया के लोगों में, भले ही अच्छे बुरे का कुछ ख्याल हो, भले ही कुछ मानवता के मूल्य हों परन्तु वर्तमान युग का यह जो अभिशाप है, जिसको 'नेशन स्टेट' हम कहते हैं, कोई भी दुनिया का 'नेशन स्टेट' नहीं है, जिसका कोई मॉरल कांशस (नैतिक चेतना) हो। महात्मा जी बराबर यह कहते थे कि व्यक्ति की तो आत्मा होती है, लेकिन नेशन की, राष्ट्र की, स्टेट की कोई आत्मा नहीं होती। और इसका पूर्ण परिचय (यह कहते कहते जे० पी० कुछ क्षणों तक भावोद्रेक में बोल नहीं पाये थे।—सं०) अपनी विदेश यात्रा में मुझे मिला। भारत के 'नेशन स्टेट' को भी मैं इससे अलग नहीं करता हूँ।

बंगला देश का समर्थन मैं कर रहा हूँ। इसलिए कि एक व्यक्ति के नाते मुझ में आत्मा तो है, लेकिन इस नाते भी कि मैं समझता हूँ कि अपने राष्ट्र का हित और बंगला देश का हित इस प्रकार से एक दूसरे से मिल चुके हैं, कि बंगला देश की पराजय भारत की पराजय होगी, इसमें मुझे अब कोई संदेह नहीं है। प्रधान मंत्री ने लोकसभा में २४ मई को बहुत ही प्रभावशाली वक्तव्य दिया था। उसमें वर्णन किया था कि किस प्रकार हर राष्ट्र अपने राष्ट्रहित का ध्यान करता है। जिस प्रकार से पाकिस्तान का प्रयास हो रहा है कि वह अपनी समस्याओं को हल करे भारत की कीमत पर, और भारत की सरजमीन पर, हम इसे बरदाश्त नहीं कर सकते, इत्यादि-इत्यादि बातें उन्होंने कही थीं। और यहाँ तक कहा था कि यह जो दुनिया है आज की, अगर उसने अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया, तो प्रधान मंत्री की हैसियत से मैं एलान करती हूँ कि अपने देश की सुरक्षा के लिए और सामाजिक एवं आर्थिक जो हमारा स्वरूप है, उसकी रक्षा के लिए वे सब उपाय हम इस्तेमाल करेंगे, जो हम कर सकेंगे।

मैं समझता हूँ कि आज भी अपने देश के लोगों का ध्यान बंगला देश की तरफ अगर है तो परोपकार की दृष्टि से है। बंगला देश की मदद हम करते हैं, तो मानवता की दृष्टि से, भारत के लोगों की भावुकता से प्रभावित होकर करते हैं। हो हो सकता है, नागरिकों में भावुकता है, और दुनिया के नागरिकों में भी है। मैंने देखा, सब जगह देखा कि लोगों में बड़ी हमदर्दी है। यहाँ तक कि वहाँ की लोकसभाओं के, धारासभाओं के जो प्रतिनिधि हैं, राजनीति में होते हुए बहुत गहरी उनकी समझ है और बहुत गहरी उनकी सहानुभूति है। लेकिन इस बात को भारत के नागरिक अब नहीं समझ रहे हैं अच्छी तरह, कि बंगला देश के प्रश्न के साथ, उसके भविष्य के साथ भारत का प्रश्न, उसका भविष्य जुड़ गया है, अभिन्न→

•कल्याणकारी राज्य : किस कीमत पर ?

★ खादी के बारे में गम्भीरता से सोचने का समय

—सिद्धराज ढड्ढा

■ राजनैतिक नेता अक्सर सरकार के जरिये लोगों के कल्याण की बात किया करते हैं : भारत में भी पहले कल्याणकारी राज्य की ही बात कही जाती थी। समाजवाद का नारा तो कल्याणकारी राज्य की असफलताओं की जिम्मेदारी से बचने के लिए और लोगों को इस धोखे में डालने के लिए कि अब उन्हें दूसरी कोई और बेहतर चीज मिलेगी, लगाया जा रहा है। समाजवाद की बातों का थोथा-पन इसी बात से सिद्ध है कि समाजवाद का नाम लेनेवाले लोग बेशर्मी के साथ, एक या दूसरे बहाने से, अपनी सुख-सुविधाओं को और शान-शौकत को छोड़कर लोगों की गरीबी और तकलीफों में हिस्सा बटाने को तैयार नहीं हैं। राष्ट्रपति के लिए अभी हाल ही में लाखों रुपयों की लागत से जो शानदार मोटर गाड़ी विदेश से मँगाई गयी, यह इसका ताजा उदाहरण है।

कल्याणकारी राज्य के नाम पर लोगों को कुछ टुकड़े फेंक दिये जाते हैं। इन टुकड़ों की कीमत भी किस तरह लोगों को ही चुकानी पड़ती है इसका एक उदाहरण प्रसिद्ध अमेरिकन साप्ताहिक 'न्यूजवीक' के तारीख ११ अक्टूबर के अंक में प्रकाशित दक्षिण अमेरिका के उरुगुवे देश की परिस्थिति से मिलता है। पिछले ५० वर्षों से कल्याणकारी राज्य के नाम पर उरुगुवे के शासक अपने देश के नागरिकों को 'नि:शुल्क चिकित्सा, नि:शुल्क पढ़ाई और पूरे वेतन की पेन्शन' जैसी सुविधाएं देते रहे हैं। देश के २५ प्रतिशत लोग सरकारी नौकरों के रूप में सार्वजनिक खजाने से वेतन पा रहे हैं, और इसके अलावा १५ प्रतिशत लोग पेंशन! कोई भी मुल्क इस तरह की 'कल्याणकारी' व्यवस्था पर कब तक टिक सकता है? यह सारा लोक-कल्याण नोट छाप-छाप कर या दूसरे राष्ट्रों की गुलामी स्वीकार करके उनसे कर्ज लेकर सम्भव है। उरुगुवे की मुद्रा हर साल २० प्रतिशत के परिमाण में बढ़ती जा रही है। नतीजा यह हुआ है कि गरीब गरीब होते जा रहे हैं, कीमतें बढ़ती जा रही हैं, पैसेवाले लोग पैसे से सब चीजें खरीदकर उपभोग कर लेते हैं और देश का सारा आर्थिक जीवन अब रुंध गया है।

ऐसी परिस्थिति हिंसा और बगावत के लिए बहुत अनुकूल होती है। उरुगुवे में मध्यम वर्ग के बुद्धिजीवी लोग संघटित बगावत पर उतारू हो रहे हैं, बैंकों में डाका डालते हैं, जोर-जबरदस्ती से अपना काम चलाते हैं। सरकार के लिए उनकी कार्यवाहियों को रोकना उत्तरोत्तर असम्भव हो रहा है। पर उरुगुवे के राष्ट्रपति ने इन सब बातों की परवाह न करते हुए और परिस्थिति से कोई सबक न लेकर कुछ दिनों बाद होनेवाले चुनावों में लोगों के वोट प्राप्त करने की दृष्टि से अभी हाल ही में मजदूरों के वेतन में २७ प्रतिशत की वृद्धि की घोषणा की है। उरुगुवे के कानून के अनुसार चुनाव के वर्ष में सरकारी नौकरों को वेतन वृद्धि नहीं दी जा सकती, पर इसके लिए राष्ट्रपति ने दूसरा तरीका निकाल कर सरकारी नौकरों को खजाने से बिना ब्याज के कर्ज देने की व्यवस्था कर दी।

और यह नाटक उरुगुवे जैसे एक-आध देश में ही नहीं बल्कि लोक-कल्याण के नाम पर राजनैतिक नेता सब जगह चला रहे हैं। नतीजा यह हो रहा है कि हर देश में मुद्रा बढ़ती जा रही है और उसके साथ-साथ महँगाई। अमीर लोग या सत्ताधारी पैसे के सहारे अपना काम बना लेते हैं, बोझ सारा असंघटित जनता पर पड़ रहा है। लोग कब इस बात को समझेंगे कि राजनैतिक नेता उन्हें बेवकूफ बनाकर सिर्फ उनके वोट प्राप्त करने के लिए

→हो गया है। अगर वहाँ यहिया खान की विजय हो जाती है, तो इसमें तो कोई संदेह नहीं है कि बंगला देश के लोग लड़ते रहेंगे, जब तक कि वे स्वाधीन नहीं होंगे। यह जो स्वाधीनता की लड़ाई है, हम सब यहाँ बैठे हैं, जो नौजवान हैं, उनको छोड़कर, हम सब भारत की स्वाधीनता की लड़ाई के सिपाही रहे होंगे। हम जानते हैं कि यह ऐसी आग होती है, जो बुझती नहीं है। कितने वर्षों तक उनकी यह लड़ाई चलेगी, मैं नहीं जानता, लेकिन इतना जानता हूँ कि उस लड़ाई का नेतृत्व अवामी लीग और शेख मुजीब के हाथों में हर्गिज नहीं रहेगा। जब भारत से मदद नहीं मिलेगी, जब 'यूनाइटेड नेशन' कुछ कर नहीं सकेगा, तब क्या हाल होगा? कहाँ जायेंगे, किधर जायेंगे वे लोग? कहाँ से सहायता मिलेगी?

दक्षिण एशिया का भविष्य मैं इस संघर्ष में देखता हूं। मैं देखता हूं कि अगर बंगला देश की विजय हो गयी, तो विनोबा का स्वप्न, जवाहरलाल नेहरू का स्वप्न, डा० राम मनोहर लोहिया का स्वप्न, मेरा अपना स्वप्न साकार होगा। दक्षिण-पूर्व एशिया का एक महासंघ बन सकेगा। इस महा भूखण्ड के लिए दूसरा कोई चारा नहीं है। यह सारा इलाका जब तक एक दूसरे की मदद करके, एक साथ मिलजुल कर के आगे नहीं बढ़ेगा, तब तक हम दुनिया की बड़ी-बड़ी शक्तियों के मुहताज बने रहेंगे जैसा कि आज हम बने हुए हैं।

(भोपाल अधिवेशन में दिये गये भाषण से)
२८-१०-'७१

तरह-तरह के वादे करते हैं, नारे लगाते हैं और समाज को खतरनाक गर्त की ओर ढकेलते जाते हैं ?

\+ + +

★ गांधीजी ने खादी को पुनर्जीवित किया, उसे आधी शताब्दी पूरी हो रही है। आज के मशीनी और तकनीकी युग में गांधीजी ने जिस तरह हाथ से कते, हाथ से बुने कपड़े का देशव्यापी उद्योग फिर से खड़ा किया था, तथा उसे राष्ट्रीय मान्यता और आदर दिलाया था, वह एक करिश्मा ही था। गांधीजी ने खादी की कल्पना केवल गाँव-गाँव में उद्योग चलाने और लोगों को काम देने के रूप में ही नहीं की थी, हालांकि उसका यह पहलू महत्त्वपूर्ण है। उनकी दृष्टि में चर्खा केन्द्रीकरण और मशीनीकरण के आज के युग के अभिशाप के खिलाफ बगावत का प्रतीक था। बगावत की बात तो दूर रही, आज तो खादी उसी हस्ती की दासी या आश्रित बनी हुई है जिसके खिलाफ खड़े होने की कल्पना उसके लिए की गयी थी। खादी निस्तेज और निष्प्राण हो गयी है।

खादी को हमने ग्रामदान-आन्दोलन के त्रिविध कार्यक्रम का एक अंग माना है। पर उसमें हमारा मतलब 'ग्रामाभिमुख' खादी से है, यह स्पष्ट ध्यान में रहना चाहिए। आज खादी का जो काम चल रहा है वह ग्रामाभिमुख नहीं है। वह बाजारोन्मुख है। हमने आशा रखी थी कि खादी-संस्थाएँ ग्रामाभिमुख बनेंगी पर मौजूदा खादी-संस्थाएँ सरकारी पैसे के पाश में इतना उलझ गयी हैं कि उनसे ऐसी आशा करना उनके प्रति न्याय नहीं होगा। खादी ग्रामाभिमुख हो इसके लिए जैसा जयप्रकाशजी ने कहा है, यह भी जरूरी है कि गाँव खादी अभिमुख हों। यह ग्रामदान-पुष्टि के सिलसिले में ही सम्भव है। अब समय आया है कि हमें इस ओर गम्भीरता से ध्यान देना चाहिए।

लेकिन खादी का जो मौजूदा काम है उसके पीछे भी किसी-न-किसी रूप में सर्व सेवा संघ का नैतिक बल है, चाहे वह कितना भी अप्रत्यक्ष हो या क्षीण हुआ हो। इस समय खादी-प्रवृत्ति और खादी-संस्थाएँ एक अनिश्चित मोड़ पर खड़ी हैं। हो सकता है इनमें से बहुतों को सर्व सेवा संघ की सलाह या मार्ग-दर्शन की आवश्यकता न महसूस होती हो, पर दूसरी ओर कई खादी-संस्थाओं और कार्यकर्ताओं को यह असंतोष है कि सर्व सेवा संघ खादी-प्रवृत्ति के बारे में ध्यान नहीं देता। संघ की खादी समिति से यह अपेक्षा पूरी नहीं हो रही है, कारण इसके जो भी हों। यह आवश्यक लगता है कि संघ इस सारे विषय पर गम्भीरता से सोचकर आगे नीति स्पष्ट करे।

आजादी के कुछ ही समय बाद जब खादी के लिए सरकारी सहायता लेने और अखिल भारतीय खादी बोर्ड (जो अब 'कमीशन' है) की स्थापना की बात चली, तब भी कई खादी कार्यकर्ताओं को लगता था कि सरकार द्वारा खादी काम के लिए आसानी से धन मिलने लगेगा तो उससे खादी कार्यकर्ताओं का मानस बिगड़ेगा और खादी कार्य विकृत होगा। पर शायद खादी के विस्तार के लोभ में आकर, उस समय हमने यह दलील दी थी कि हमें सरकार के सहयोग या पैसे से डरना नहीं चाहिए, हम मजबूत होंगे तो उसका उपयोग करके काम को बढ़ा सकेंगे।

लेकिन हुआ वही जिसका डर था। हम कमजोर साबित हुए। खादी-संस्थाओं को जो लाखों रुपया मिला, उससे काम का विस्तार तो हुआ, लेकिन आसानी से प्राप्त होनेवाले पैसे के कारण जो दोष आ जाते हैं, वे उनमें भी आ गये। आज भी खादी-संस्थाओं के मारफत कई अच्छे काम हो रहे हैं जो दूसरे नहीं कर रहे हैं, परन्तु खादी से बापू ने या अन्य लोगों ने जो क्रान्तिकारी अपेक्षाएँ रखी थीं वे उससे पूरी नहीं हो रही हैं। मेरे जैसे व्यक्ति को, जो सन् १९५१-५२ के चर्खा संघ के निर्णय में शामिल था, आज प्रायश्चित्त की भावना मन में हो रही है। सरकारी सहायता लेने का हमारा निर्णय गलत साबित हुआ, ऐसा मुझे लगता है।

खादी-संस्थाओं के पीछे बापू ने प्रमाण-पत्र का एक विलक्षण नैतिक बल खड़ा किया था। वही खादी-संस्थाओं का पीठबल भी था और वही उनकी शुद्धता की गारंटी भी। पर हमें मंजूर करना चाहिए कि इस साधन का ठीक उपयोग करके हम खादी-संस्थाओं में घुसने वाली बुराइयों को रोक नहीं सके। आज बीसियों खादी-संस्थाएँ हैं जिनमें प्रमाण-पत्र की शर्तों के खिलाफ गलत काम हो रहे हैं, पर हम उन्हें नहीं रोक पाते। कहा जाता है कि अगर हम उन्हें रोकें, और प्रमाण-पत्र खारिज करें, या न दें, तो वे हाईकोर्ट में जा सकती हैं। एकाध मामले में यह भी प्रयोग करके देखा जाता तो अच्छा होता। बापू आजादी के पहले खादी के लिए तत्कालीन सर्वोच्च न्यायालय, प्रिवी कौंसिल तक गये थे और वहाँ से भी उन्होंने अपनी बात मनवायी थी। अच्छा होता हम भी इस मामले में नहीं हिचकते। न्यायालय का फैसला प्रमाण-पत्र समिति के खिलाफ जाता तो हम प्रतिष्ठा-पूर्वक ऐसे खादी काम को छोड़ देते।

आज तो कई खादी-संस्थाएँ प्रमाणित भी हैं और प्रमाण-पत्र की भावना, और शायद नियमों के भी खिलाफ काम करती हैं। स्वयं खादी कमीशन के उच्च-अधिकारियों ने यह डर व्यक्त किया है कि आज तो खादी-संस्थाओं को दी हुई राष्ट्रीय खजाने की दस बीस प्रतिशत रकम ही खतरे में है, एक-दो बरस बाद उसमें से अधिकांश खतरे में आ सकती है। इस विस्फोट का असर सर्व सेवा संघ पर भी होना स्वाभाविक है। वह उसे सहन कर सकेगा या नहीं यह गम्भीरता से सोचने का विषय है।

खादी के आज के काम को और आज की संस्थाओं को हम ग्रामाभिमुख बना सकें, यह सम्भव नहीं है। उपरोक्त विस्फोट को हम रोक सकें या मौजूदा खादी काम को बन्द करा सकें, यह भी→

बंगला देश और यूरोपीय नजर

यूरोपीय देशों के लोग अभी भी बंगला देश के सवाल को किसी अज्ञात प्रदेश का ऐसा सवाल मानते हैं, जिससे वे सीधे सम्बन्धित नहीं हैं। जबकि यह दुर्भाग्यपूर्ण बँटवारा, और भारतीय उप-महाद्वीप की ये समस्याएँ ब्रिटिश विरासत हैं, पर कुछ प्रबुद्ध शान्तिवादियों और कर्मठ कार्यकर्ताओं को छोड़कर आमलोगों की समझ को इस सवाल ने छुआ नहीं है। हाँ, अखबारों ने इस प्रश्न को काफी विस्तार और सातत्य के साथ प्रसारित किया है। पर धीरे-धीरे अखबारों के समाचार जानकारी और सूचना की दीवार को फाँद कर सही समझ और जागरुकता के आँगन तक पहुँचने में नाकामयाब साबित हो रहे हैं। इसलिए वियतनाम, बियाफा, अल्स्टर, मध्यपूर्व आदि अनेक संघर्षों की तरह यह भी एक संकट है, जो हिन्दू-मुसलमान के संदर्भ और चीन-अमेरिका के परिवेश में खो गया है। जो लोग दावा करते हैं कि उनका चुनाव-प्रणाली, प्रातिनिधिक जनतंत्र, संसदीय प्रजातंत्र आदि में विश्वास है, उनकी हिपोक्रेसी (ढोंग) स्पष्ट हो गयी है कि वास्तव में उनका दावा सतही है और उनका असली विश्वास अपने व्यावसायिक, सैनिक और सत्तामूलक स्वार्थों में ही है।

पर इसमें कोई संदेह नहीं कि कर्मठ और प्रबुद्ध शान्तिवादियों का एक छोटा समुदाय है, जो व्याकुल और चिंतित है, तथा कुछ करने के लिए छटपटा रहा है।

"सारिका" के संपादक और प्रसिद्ध कहानीकार-उपन्यासकार कमलेश्वर भी मेरे साथ यूरोप आये हैं और हम दोनों ने मिलकर अपने व्यक्तिगत स्तर पर पूरे यूरोप की यात्रा शुरू की है। इंग्लैण्ड से हमलोग बेल्जियम आये। ब्रुसेल्स में दो सभाएँ, तथा लियेज विश्वविद्यालय में एक बहुत बड़ी सभा हुई। जब इंग्लैंड में जागरुकता का और प्रतिबद्धता का अभाव था तो बेल्जियम से ज्यादा आशा करना बेमानी होता। पर हमें आश्चर्य हुआ कि सैकड़ों विद्यार्थियों ने हमारी सभाओं में भाग लिया और २२ नवम्बर से १० दिन का यूरोप में उपवास आयोजित करने का फैसला किया गया। यह उपवास पाकिस्तानी दूतावासों के सामने होगा और १० दिन तक चलेगा। फिर हम आम्स्टरडाम आये। २ दिन तक हमारी प्रदर्शनी एनोफ्रेंक हाउस में लगी रही, जिसे सैकड़ों लोगों ने देखा। अखबारों ने पूरे पृष्ठ में हमारे साथ के इंटरव्यू छापे। टेलिविजन ने प्रदर्शनी को प्रसारित किया। हॉलैंड के लगभग ७० प्रतिष्ठित लेखकों, संसद सदस्यों, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं और राजनीतिज्ञों ने मिलकर एक वक्तव्य प्रसारित किया जिसमें कहा गया कि, 'बंगला देश में जो कुछ हो रहा है, वह पाकिस्तान का अन्दरूनी मामला नहीं है और विश्व-समुदाय को इस मामले में दखल देने की जरूरत है।' वहाँ से हम कोपेन्हेगन आये, जहाँ सभी बड़े अखबारों ने इस विषय को उठाया और हमारी प्रेस कान्फ्रेन्स को अच्छा कवरेज मिला। फिर स्वीडन में भी उसी प्रकार अच्छी सभाएँ और गोष्ठियाँ हुईं।

हमें आशा नहीं थी कि बोन, (पश्चिमी जर्मनी) में हमें लोगों का इतना सहयोग मिलेगा। पर हमारी सभा में लगभग दो सौ आदमी थे, जिसे टेलिविजन-प्रधान देश में हमारे जैसे अप्रसिद्ध व्यक्तियों की सभा के लिए खासी अच्छी उपस्थिति माननी चाहिए। इन सभी देशों में २२ नवम्बर से उपवास का आयोजन किया गया। फिर अब हम वियना में हैं। संयोग से कल श्रीमती गांधी भी वहाँ थीं। उनकी सभा शाम को ६ बजे थी। फिर हमारी सभा ८ बजे अलबर्ट स्वाइत्जर हाउस में थी। यहाँ भी उपवास का आयोजन होगा। यहाँ से हम यूगोस्लाविया, स्विट्जरलैंड, फ्रांस और इटली जायेंगे।

बंगलादेश का आन्दोलन वामपथ या दक्षिणपथ के कोने में नहीं है। पश्चिम के राजनीतिज्ञों और लोगों को किसी भी आन्दोलन पर 'वाम' या 'दक्षिण' का लेबल लगाने की इतनी आदत हो चुकी है कि वे उस परिधि से बाहर निकल ही नहीं पाते। यदि यह आन्दोलन वियतनाम की तरह अपने राष्ट्रीय संदर्भों से हटकर वामपंथी हो जाता तो शायद चीन और रूस दौड़कर मदद में आते। यदि यह आन्दोलन ताइवान या ग्रीस की तरह कम्यूनिस्ट विरोध का मोर्चा होता, या चेकोस्लोवाकिया, हंगरी आदि की तरह साम्यवादी घेरे से स्वतंत्र होने जैसी कोई पृष्ठभूमि होती, तो शायद सारा पश्चिम चीख-चिल्लाकर बंगलादेश का पक्षधर बन जाता। पर सिर्फ मानवीय मुक्ति की प्रेरणा आज के राजनीति संकुल समाज में पर्याप्त नहीं है और इसलिए मानवीय-स्वातंत्र्य के आन्दोलन कुचले जाते देखकर भी किसी के कानों पर जूँ नहीं रेंगती। पर यूरोप का तरुण अभी भी हमारी आस्था को जगाता है। (श्री जयप्रकाश नारायण को लिखे गये एक पत्र से)

—सतीश कुमार

वियना : २६-१०-'७१

—असम्भव नहीं है। खादी-संस्थाओं का अपना एक निहित स्वार्थ खड़ा हो गया है। क्या अब वह समय नहीं आया है जब सर्व सेवा संघ को इस सारे काम के पीछे से अपना नैतिक बल (जो कुछ भी वह बचा है) हटा लेना चाहिए? कल शायद यह भी सम्भव न हो। सर्व सेवा संघ को अपना ध्यान और अपनी शक्ति ग्रामाभिमुख खादी के काम को खड़ा करने में ही लगानी चाहिए। ●

दरवाजे पर विश्वविद्यालय

(चीन का एक शिक्षण-प्रयोग)

१. माओ के मार्गदर्शन में किएंग्शी कम्यूनिस्ट श्रम-विश्वविद्यालय की स्थापना १९५८ में हुई थी। सांस्कृतिक क्रान्ति के दिनों में विश्वविद्यालय और अधिक पूर्ण और पुष्ट हुआ। इस समय उस विश्वविद्यालय और उसकी शाखाओं के १ लाख २० हजार स्नातक समाजवादी क्रान्ति और समाजवादी निर्माण के कार्य में लगे हुए हैं।

किएंग्शी का श्रम-विश्वविद्यालय शिक्षण की दुनिया में एक बिलकुल नये ढंग का प्रयोग है। तेरह वर्ष पहले उसने माओ के इन शिक्षण-सिद्धान्तों के आधार पर काम शुरू किया था,

(क) शिक्षण से जनता की राजनीति (प्रोलिटेरियन पालिटिक्स) को पोषण मिलना चाहिए।

(ख) शिक्षण का उत्पादक श्रम (प्रोडक्टिव लेबर) से समन्वय होना चाहिए।

(ग) श्रमिकों को कारीगर बनाना चाहिए।

इन सिद्धान्तों पर चलकर किएंग्शी ने शिक्षकों और विद्यार्थियों की कमाई से शिक्षा में स्वावलम्बन साधा है, और एक पूरी नयी पीढ़ी को शिक्षित किया है, जिसकी उंगलियों में उत्पादन का हुनर भी है और दिमाग में समाजवाद की ऊंची प्रेरणा भी।

२. विश्वविद्यालय और उसकी १३२ शाखाओं के ५० हजार विद्यार्थियों ने पिछले तेरह वर्षों में ३९० फार्म, २५० कारखाने, तथा कितनी ही वर्कशापें, पशुपालन और जंगल लगाने के केन्द्र स्थापित किये हैं। इन फार्मों और केन्द्रों के पास दस हजार एकड़ के लगभग धान के खेत, अमिश्रित खेती की भूमि, जंगल और बाग हैं।

३. विश्वविद्यालय के अध्यासक्रम में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा साथ-साथ दी जाती है, और उसका सीधा सम्बन्ध गांवों तथा क्षेत्र के कम्यून और उत्पादन-टोलियों के साथ है। शिक्षण-पद्धति के तीन मुख्य पहलू हैं। एक, वर्ग-संघर्ष (क्लास स्ट्रगिल), दो, उत्पादन के लिए प्रकृति से संघर्ष, तीन, वैज्ञानिक शोध और प्रयोग। क्षेत्र की आवश्यकता को देखते हुए खेती, जंगल, पशुपालन, हिसाब-किताब, स्वास्थ्य, आदि विषयों पर अधिक जोर दिया जाता है। सैद्धान्तिक शिक्षण (थ्योरेटिकल नालेज) को किसानों के अनुभवों और पद्धतियों तथा विज्ञान के नये शोधों और प्रयोगों के साथ जोड़ा जाता है। हमारे शिक्षण का मुख्य सिद्धान्त है कि 'काम करते जाओ, सीखते जाओ।' खेत, जंगल, पशु आदि सभी शिक्षण, शोध और उत्पादन के आधार हैं। शिक्षण, शोध और उत्पादन को सभी को मिलाकर शिक्षण-पद्धति पूरी होती है। शिक्षकों और विद्यार्थियों के सामने हर वक्त क्षेत्र का जीवन और वहां की प्रकृति रहती है। इसके कारण विद्यार्थियों को हर चीज का व्यावहारिक ज्ञान होता है, और उसे वे तुरन्त प्रत्यक्ष रूप से लागू कर पाते हैं।

४. इस शिक्षण पद्धति की बुनियादी विशेषता इस उदाहरण से स्पष्ट हो जायगी। मान लीजिए कि भूमि के शिक्षकों-विद्यार्थियों को किएंग्शी क्षेत्र की पहाड़ी लाल मिट्टी का अध्ययन करना है, तो वे सबसे पहले यह जानने की कोशिश करेंगे कि वहां के किसानों ने किन उपायों से अपनी मिट्टी को सुधारने के प्रयत्न किये हैं, और उन्हें क्या अनुभव आये हैं। इन अनुभवों को सामने रखकर वे शिक्षण, प्रयोग, और शोध के लिए सामग्री तैयार करेंगे। प्रयोग के बाद वे स्वयं सुधार की योजनाओं में स्थानीय लोगों के साथ शरीक होंगे। इस पद्धति से काम करके एक विभाग ने एक पहाड़ी की बंजर, लाल मिट्टी के ५० एकड़ में चाय और तेल के वृक्ष उगाये, जो काम पहले असम्भव समझा जाता था।

५. किएंग्शी विश्वविद्यालय के अनेक स्नातक क्षेत्र के जीवन में खप गये हैं। वे गांव-स्तर के कार्यकर्ता हैं, हिसाबी हैं, पशुपालक, और मिस्त्री आदि के काम कर रहे हैं। बहुत-से अपने कम्यून में या गांव के उत्पादन-ब्रिगेड में 'नंगे पांव चलनेवाले' डाक्टर हैं। वे सब मिलकर समाजवादी, ग्रामीण समाज-रचना का काम कर रहे हैं। समाज-निर्माण उनके जीवन का लक्ष्य बन गया है।

किएंग्शी विश्वविद्यालय के निर्माण में सरकार का बहुत कम खर्च हुआ है। चालू खर्च के लिए वह पूरा आत्म-निर्भर है। पिछले १०-१२ वर्षों में शिक्षकों और विद्यार्थियों ने मिलकर ५।। लाख वर्ग-मीटर फर्श की इमारतें बनायी हैं। एक तिहाई विभाग अपने लिए अनाज, तेल, मांस, सब्जी आदि स्वयं उगा लेते हैं।

विश्वविद्यालय अपने ही अन्दर में सीमित नहीं है। उसकी ओर से निकटवर्ती पहाड़ी क्षेत्रों के गरीब किसानों के लिए शाखाएं खुली हुई हैं। विद्यार्थियों में गांवों के युवक भी शामिल हैं। इन शाखाओं में किसानों के बच्चों को समाजवादी चेतना और संस्कृति का शिक्षण मिलता है। उसके अलावा किरसार किसानों और मजदूरों को भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद का शिक्षण मिलता है, इतना ही नहीं, उन्हें वैज्ञानिक और सांस्कृतिक बातें भी बतायी जाती हैं।

३० जुलाई १९६१ को माओ ने विश्वविद्यालय की इन शब्दों में प्रशंसा की, 'आप लोग आधा समय काम करते हैं, आधा समय पढ़ते हैं, और सरकार से एक पैसे की भी मांग नहीं करते। साथ ही आप देहातों में प्राथमिक और माध्यमिक स्कूल और कालेज भी चला रहे→

कच्छ के रण में

बनासकाँठा जिला का अन्तिम पड़ाव पीपराला से हम कच्छ की ओर बढ़े। चारों तरफ अंधेरा छाया हुआ था फिर भी हम तेज गति से चल रहे थे क्योंकि वह था राजमार्ग। महापुरुष माधव देव ने कहा है—

हरि भकित राजमार्ग, गुरपद-नख-चन्द्र प्रकाशित
श्रुति जननीर पद-पथ अनुसरि।
फुरो हुइया आमि आनन्दित स्खलन नाहिके कदाचित
महाजन सब जानिया निश्चय करि।

हर भक्ति के राजमार्ग पर गुरु-पद-नख-चन्द्र का प्रकाश पड़ रहा है और आगे-आगे श्रुति जननी चल रही है। ऐसे रास्ते पर तेज गति से भी कोई दौड़ेगा तो भी *स्खलन होगा नहीं।*

हमारे साथ में जो भाई चल रहे थे उन्होंने बताया कि कच्छ का रण शुरू हो गया। रास्ते के इस तरफ छोटा रण और दूसरी तरफ बड़ा रण, दृष्टि डाली तो देखा फैली हुई विशाल पृथ्वी और ऊपर मुक्त आकाश। दूर तक क्षितिज दिखायी दिया।

हर साल समुद्र का खारा पानी बरसात के मौसम में रण में घुस जाता है और छः सात महीनों में धीरे-धीरे सूख जाता है। नमकीन पानी से गीला वह भू-भाग सूख जाने के बाद सख्त बन जाता है। उस पर एक साथ एक ही कतार में तीस-चालीस गाड़ियाँ चल सकती हैं। इसी रण पर १९६५ में पाकिस्तान ने हमला किया था। यह रण तीस-चालीस मील से लेकर साठ सत्तर मील तक चौड़ा है। कच्छ जिले के उत्तर तरफ कच्छ का बड़ा रण और उस पार पश्चिमी पाकिस्तान, दक्षिण की तरफ छोटा रण और दक्षिण पश्चिम की ओर समुद्र है। पहली स्वागत सभा में ही एक प्रमुख सज्जन ने कहा, "हमारा कच्छ शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। आर्थिक दृष्टि से भी पिछड़ा हुआ है। ईश्वर की कृपा दृष्टि पर हमारी खेती निर्भर करती है। खास उद्योग-धन्धे भी नहीं हैं। यातायात की सुविधा अभी-अभी हुई है इत्यादि। आज हर जगह हर क्षेत्र को भौतिक दृष्टि से देखा जाता है, इसलिए लोग कहते हैं कि हम पिछड़े हुए हैं।

कच्छ जिले की २१ दिन की यात्रा में हमने महसूस किया कि शैक्षणिक, आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों को पिछड़े हुए नहीं कह सकते। क्योंकि उन्हें आध्यात्मिक बातें आसानी से समझ में आ जाती हैं। एक सभा में जब उन्हें पूछ रहे थे कि 'आप को राम चाहिए कि माया ?' अनपढ़ बहनों के मुँह से भी निकल पड़ा, 'माया किस काम की, हमें तो राम चाहिए।' 'माया की असारता मालूम है। वे जानती हैं कि माया न इस लोक में समाधान दे सकती है न उस लोक में। इसलिए राम चाहती हैं। राम मिलेगा तो माया अपने आप छूट जायेगी। 'राम' इहलोक-परलोक दोनों में काम आने वाले हैं।

उस दिन बहिनों की विशाल सभा हो रही थी। मुझे लगता है कि गाँव की करीब-करीब सभी बहिनें उसमें शामिल थीं, कोई सुनने की इच्छा से तो कोई देखने की इच्छा से। बनासकाँठा जिले के आखिर के कुछ गाँवों से बहन-भाइयों की पोशाकें बदल गयी। बहनों के शरीर पर रंग-बिरंगे कपड़े दीखने लगे। घूँघट भी *आ गया।* गहनों का तो कहना ही क्या! एक-एक कान में चार-पाँच छेद !! उसमें चाँदी-सोने के भारी गहनें, गला तो कुछ ना कुछ मणियों की माला से ढका हुआ। और हाथ में दो ढाई सेर वजन की हाथी दाँत की चूड़ियाँ, जो हाथों में चिपकी हुई होती हैं। उसके अलावा बाकी जितने अङ्ग शरीर के दिखाई देते हैं उन पर गुदाई करके काले रंग से उनकी डिजाइन करवा लेती हैं। नयी-नयी लड़कियाँ भी उस रूढ़ि के बन्धन में बँधती जा रही हैं। पुराने समय में लोग इधर-उधर ज्यादा नहीं जाते थे। अपने ही समाज में रहते थे। लेकिन आज आजीविका के लिए भी लोगों को दूर-दूर जाना पड़ता है। वहाँ का पहनावा अलग होने के कारण वहाँ के समाज में एकरूप होना बहनों को मुश्किल हो जाता है। गहने उतार सकती हैं, लेकिन शरीर का वह काला डिजाइन मिटाना, कान के बड़े-छेदों को मिटाना सम्भव नहीं है। बहनों को जब हम सम्बन्ध में समझाते हैं तो वे समझ जाती हैं। कभी-कभी नयी लड़कियाँ अपने कुछ आभूषण भी उतारने की हिम्मत करती हैं।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी हमारे देश की प्रधानमंत्री हैं। देश का कारोबार चलाती हैं। यह बात अनपढ़ बहनों को भी मालूम है। उससे बहनों के अन्दर जरा आत्म-विश्वास पैदा होता है। जिन्होंने आज तक अपने को हीन माना था, कमजोर माना था वे कहती हैं कि स्त्रियों की बुद्धि पुरुषों से कम नहीं है। स्त्रियाँ पुरुष से किसी तरह कम नहीं हैं। इसलिए एक बहन बोल उठी, 'वे (इन्दिरा गाँधी) पूर्व-जन्म का लेकर आयी हैं।'

कच्छ में प्रवेश के दिन उस सज्जन ने यह भी कहा था कि हमारे इस क्षेत्र

→हैं। वास्तव में ऐसा ही विश्वविद्यालय होना चाहिए।'

किफ़्यरो प्रान्त कुओमिनंग के जमाने में आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ था। यह इस विश्वविद्यालय की ही देन है कि वहाँ की जनता ने बिजली के स्टेशन खोल लिये हैं, भूमि-सुधार किया है, खेती के औजार बनाये हैं, नयी खेती-पद्धति का प्रचार किया है, और एक नयी पर्वतीय अर्थनीति का विकास किया है। वहाँ के लोग कहते हैं : 'विश्वविद्यालय हम में से हर एक के दरवाजे पर है।'

—राममूर्ति

की बहनें पिछड़ी हुई हैं। इसलिए ही समाज पिछड़ा हुआ है। इस सम्मेलन के जैसे जब हर पुरुष को यह बात समझ में आयेगी कि स्त्रियों के पिछड़ी हुई होने के कारण समाज रूपी गाड़ी आगे नहीं बढ़ती है तब पुरुष स्वयं ही स्त्रियों को अपनी सही साथी बनाने की कोशिश करेंगे। आज तो पुरुषों को स्त्रियों की शक्ति का भान नहीं है। इसलिए स्त्रियों को भोग या विरक्ति की वस्तु समझते हैं। बहनों को अपनी शक्ति की जानकारी देते-देते हम पुरुषों को समझाने की कोशिश करती हैं : 'स्त्रियों को आज तक समर्थ नहीं बनाया गया है। वे लाचारी की अवस्था में रखी गयी हैं। ऐसी स्त्रियाँ, जो पति पर जीवन का कुल भरोसा रखती हैं, उन्हें अगर मारा जाय, बात-बात में गालियाँ दी जायँ, तो उनकी आत्मा को कितना दुःख होगा? इससे आप को जो आध्यात्मिक दोष लगेगा वह तो है ही, अलावा बच्चों पर अच्छा असर नहीं पड़ेगा। सन्तों ने कहा है

नारी निन्दा मत करो, नारी नर की खान
नारी से नर ऊपजे, ध्रुव-प्रह्लाद समान।

स्त्रियों पर हाथ तो कभी न उठायें, गालियाँ भी न दी जायें और स्त्रियों के काम की कीमत समझें। जब समाज में स्त्रियों की इज्जत होगी तभी उनमें रही हुई सात्त्विक शक्ति काम करेगी।'

आदिपुर, गांधीधाम जैसे एक शहर और बाकी गाँवों में से हमारी यात्रा चली। कभी राजमार्ग तो कभी पगडंडी, कभी पहाड़, गोचर-जंगल, बाजरे के बीच में से चले। देवी बहन को एक दिन अचानक जब यात्रा में सांप ने काटा तब पता चला कि यहाँ काफी तादाद में साँप हैं। उसके बाद तो हमने कई बार जिन्दा साँप के दर्शन किये। ईश्वर की कृपा से देवी बहन ठीक हो गयीं।

हिमाचल प्रदेश, कश्मीर में बरफ के पहाड़ देखे थे। पंजाब के अन्तिम और राजस्थान के आरम्भ में कपास के पहाड़ और यहाँ देखने को मिले नमक के पहाड़। समुद्र से खारा पानी गाँव में आता है। फिर भी ग्रामनिवासी नमक के मालिक नहीं हैं। जिनके पास पूँजी है, वे नमक के मालिक हैं और मजदूर बनकर ग्रामीण लोग ही नमक बना देते हैं। पूरा गाँव एक हो जाय तो जो अभी मजदूर हैं वे ही नमक उद्योग के मालिक बन सकते हैं और सब लोगों को उसका फायदा मिल सकता है। विज्ञान का ज्यादा से ज्यादा फायदा लेना है, तो सामूहिक भावना को जगाना होगा।

कच्छ का अन्तिम पड़ाव था कंडला। समुद्र का किनारा। जहाजों का बंदर। विभिन्न प्रान्तों के लोग यहाँ रहते हैं। इसलिए सहज ही बच्चों को दो-चार भाषाएँ आ जाती हैं। ऐसे स्थानों से देश की भावनात्मक एकता सहज सध सकती है।

१४ अक्टूबर को यात्रा नहीं चली। रोज का कार्यक्रम बदल गया। दोपहर ढाई बजे कंडला पोर्ट से हमारी यात्रा शुरू हुई। पैदल नहीं चले, पर कुल यात्रा में हमारे साथ रहने वाले मणिभाई और अन्य स्नेही जन सागर के किनारे खड़े थे। कुछ ही क्षणों में वे आँखों से ओझल हो गये। और कच्छ की स्मृतियों सहित हमने सौराष्ट्र में प्रवेश किया।●

मरौना (सहरसा) में प्रखण्ड-स्वराज्य सभा का गठन

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् १० नवम्बर को मरौना प्रखण्ड की यात्रा के सिलसिले निर्मली पहुँचे। उसी दिन ३-३० बजे अपराह्न में निर्मली में आयोजित एक आमसभा में उन्होंने भाग लिया। उक्त अवसर पर वहाँ बिहार सरकार के भूतपूर्व मंत्री श्री सहदेव चौधरी, बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री श्री विद्यासागर जी, सुश्री निर्मला बहन, महेन्द्र भाई, सहरसा के जिलाधिकारी श्री गिलानी साहब, स्थानीय प्रखण्ड विकास पदाधिकारी के अलावा निर्मली नगर तथा मरौना प्रखण्ड के कई गण्यमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। मरौना प्रखण्ड में बनी सभी ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों के अलावा हजारों की संख्या में लोग बाजे-गाजे और सर्वोदय-उद्घोषों के साथ उक्त आयोजन में सम्मिलित होने आये थे।

श्री महेन्द्र भाई ने अतिथियों का परिचय उपस्थित लोगों से कराया। श्री जगन्नाथन् जी ने अपने भाषण में कहा कि मैं यहाँ के ग्रामस्वराज्य के कामों को देख कर प्रेरणा लेने आया हूँ कि यहाँ ग्राम-सभा किस तरह काम कर रही है और ग्रामस्वराज्य का स्वरूप किस प्रकार विक-सित और संघटित हो रहा है। सारे देश की नजर अभी यहाँ लगी हुई है। विनोबाजी का ध्यान भी बराबर यहाँ ही लगा रहता है। आप लोगों से मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। सभा की अध्यक्षता श्री लक्ष्मी भाई कर रहे थे, जो एक ग्राम-स्वराज्य सभा के मन्त्री भी हैं। अतिथियों का स्वागत निर्मली उच्च विद्यालय के प्रधान अध्यापक श्री रामजी यादव ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री कुरज बाबू ने किया। सभा में लगभग ३ हजार लोग उपस्थित थे।

इसी मौके पर प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य सभा का बाजाप्ता गठन हो गया जिसके अध्यक्ष श्री नारायण यादव तथा मंत्री लक्ष्मी प्रसाद यादव बनाये गये हैं। ज्ञातव्य है कि इससे पहले यहाँ एक तदर्थ प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन भी हुआ था।

मरौना प्रखण्ड में कुल १० पंचायतें हैं, जिनमें ३८ राजस्व गाँव तथा ७३ टोले हैं। राजस्व गाँवों तथा टोलों को मिलाकर अब तक कुल ९० ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बनायी गयी हैं। वहाँ कुल ६,२४२ परिवारों में ३६,३१४ जन-संख्या है जिनमें ५,५४८ परिवार (३,२२५ भूमिवान तथा २,३२३ भूमिहीन) और ३१,७९५ जनसंख्या ग्रामदान में शामिल हो चुकी है। अब तक ४६१ दाताओं द्वारा प्राप्त १८५ बी० ७ क० १० धुर जमीन ७८४ आदाताओं में बाँटी गयी है। ज्ञातव्य है कि यहाँ का ८५ बीघा १०० एकड़ के बराबर होता है। २९ ग्रामस्वराज्य सभाओं में ग्रामकोष जमा हो रहा है तथा पूरे प्रखण्ड में १,११८ शान्ति सैनिक बने हैं।●

टिहरी में शराबबन्दी आन्दोलन : जनशक्ति का जोर

मार्च १९७० में जनान्दोलन के फल-स्वरूप उत्तरप्रदेश के पर्वतीय जिलों में शराबबन्दी हुई थी जिससे वहाँ पर मोटर दुर्घटनाओं, पारस्परिक झगड़ों में कमी हुई थी और गरीबों को इससे प्रत्यक्ष लाभ भी हुआ था। गाँवों में शान्ति का वातावरण बनने लगा, माँ-बहिनों की इज्जत-आबरू सुरक्षित होने लगी। लेकिन दूसरी ओर शराब के व्यापारियों को बेहद नुकसान होने लगा। आज का शासनतंत्र जनता के स्वास्थ्य के बदले इस व्यापार से होनेवाले आर्थिक लाभ को ज्यादा महत्त्व देता है। क्योंकि इससे न केवल आबकारी के रूप में धन मिलता है बल्कि चुनावों के लिए मोटी रकम भी ऐसे ही तत्त्वों से मिला करती है। इस कदम से इन व्यापारियों का बौखलाना और फिर उन्हें कानूनी शरण का मिलना स्वाभाविक ही था। शराब के ठेकेदारों ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में कानून के ठेकेदारों के सामने अपनी फरियादें रखीं, वे सुनी गयीं और उन्हें विजय मिली। शराब की दूकानें गत १ नवम्बर से खोलने की छूट हो गयी। लेकिन इस निर्णय के साथ ही जनता ने इसके विरुद्ध आन्दोलन छेड़ने की भी घोषणा कर दी। शासन ने आन्दोलन को विमूढ़ करने के लिए प्रस्तावित १ तारीख को ८ तारीख तक के लिए स्थगित रखा। और जब दूकानें खुलीं तो देखते-देखते पियक्कड़ों की बन आयी। अलमस्त होकर विचरण करनेवाला जौनपुर क्षेत्र का एक लेखापाल शराब के नशे में पहाड़ से गिरकर मर गया और दूसरा लेखापाल (६००) रुपये जुए में हार कर नौकरी से निकाला गया, तीसरे शराबी ने बन्डस गाँव में अपनी पत्नी के सिर पर गरम दाल की पतीली फेंककर मारी और वह बेचारी अस्पताल में अन्तिम साँसें गिन रही है, चौथे शराबी ने थापी गाँव में अपनी पत्नी की नाक ही तोड़ डाली।

दृढ़ संकल्प

सामाजिक कार्यकर्ताओं को तो ऐसे परिणामों की आशंका पहले से ही थी, इसलिए उन्होंने आन्दोलन-सत्याग्रह, आरम्भ कर दिया। इसमें महिलाओं ने आशातीत सहयोग देना शुरू किया क्योंकि शराबियों के *अधिकांश शिकार बेचारी* उनकी पत्नियाँ ही होती हैं। पिछले आन्दोलन में इन्होंने बड़ी हिम्मत और निर्भयता के साथ शराबबन्दी कराने में सफलता पायी थी, अब फिर उन्हें शोषण का शिकार होना पड़े, यह अब गँवारा न था। पहली नवम्बर को टिहरी बन्द रखा गया। प्रतिज्ञापत्र भरे गये—' मैं ईश्वर को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि *कभी शराब नहीं पीऊँगा*, न शराब रखूँगा, न बेचूँगा और न बनाऊँगा। दूसरे लोगों से भी शराब छुड़ाने का प्रयास करूँगा।'' वचन लेने के लिए गढ़वाल की पुरानी पद्धति अपनायी गयी—हाथ में रखे गये लोटे के नमक को पवित्र जल में छोड़ते हुए यह कहना—'यदि मैं अपनी प्रतिज्ञा से टलूँगा तो ईश्वर मुझे इसी नमक की तरह गला देवे।'

टिहरी जिले के पाँचों स्थान (मुनि की रेती, नरेन्द्रनगर, टिहरी, कीर्तिनगर और घनसाली) जो शराबबन्दी निषेधाज्ञा से प्रभावित होने वाले थे, सामूहिक रूप से विरोध के लिए उठ खड़े हुए। चमोली जिले के मुख्यालय गोपेश्वर में विशाल प्रदर्शन हुआ। १२ नवम्बर को टिहरी नगर की सड़कों में महिलाओं का जलूस घूमने लगा, गेहूँ की कटाई को अधूरा छोड़कर किसान और उनकी महिलाएँ १४ नवम्बर के विशाल प्रदर्शन में सम्मि-लित हो गयीं। सत्याग्रह में भरती होने के लिए होड़ लग गयी। पिछले आन्दोलन में जेल का अनुभव प्राप्त ११ वर्षीय बालक सोम सिंह पुन: सबसे उठा और उसका साथ दिया एक ६८ वर्षीय वृद्ध व्यक्ति ने।

श्री बहुगुणा का उपवास

आन्दोलन के सामूहिकीकरण में एक केन्द्रीय बिन्दु बने उत्तराखण्ड के प्रमुख सर्वोदय सेवक श्री सुन्दरलाल बहुगुणा और उनका उपवास। सहानुभूति में टिहरी जिले के चारों प्रखण्डों की महिलाएँ ढोल और नगाड़े के बीच जोशीले स्वरों में हुंकारने लगीं, 'सरकार तुरन्त नशाबन्दी के लिए आदेश जारी करे अन्यथा जिले की सारी महिलाओं के उपवास का निकट भविष्य में सामना करे। अब पुराने विनाशकारी कृत्यों की ओर नहीं लौटेंगे।' अदूर की वीर माताओं को आतंकित करने के लिए हथकड़ियाँ लेकर पुलिस घूमने लगी और कहने लगी कि 'अब तो हाईकोर्ट का फैसला है। जो इस बार गिरफ्तार होगा, उसे जीवन भर जेल में रहना होगा।' कुछ भोले पतियों से कहलाया गया कि तुम दंगा-फसाद में सहयोग दोगी तो घर वापस नहीं आने दिया जायेगा। फिर भी १४ नवम्बर के इस जलूस में महिलाओं के हृदय की प्रबल भक्ति-भावना ने भय पर विजय पायी क्योंकि इस आन्दोलन का श्रीगणेश करते हुए ऋषिकेश स्थित शिवानन्द आश्रम के पू० स्वामी और दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्द ने उनका आह्वान करते हुए यह सुझाया था कि—'आत्मा की शक्ति का सामना कोई भौतिक वृत्ति वाली शक्ति नहीं कर सकती। हमारी संगठित शक्ति से असाध्य भी साध्य हो जायेगा। शराब को प्रोत्साहन देना जघन्य अपराध है, *यह आत्महत्या को प्रोत्साहित करने जैसा* ही है।'

उपवास पर बैठने से पूर्व श्री बहुगुणा ने अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा कि मेरा उपवास उत्तराखण्ड में शराब-बन्दी के संकल्प की पुष्टि के लिए शक्ति प्राप्त करने के लिए है और यह शक्ति वही है जिसके बल पर सन् १९६५ से आज तक शराबबन्दी के आन्दोलन चले हैं। मैं उसी का उपासक हूँ। पिछले तीन माह से इस आन्दोलन के लिए उसी को जगाने का प्रयास करता रहा हूँ। परन्तु→

आन्दोलन के समाचार

श्री बहुगुणा का उपवास टूटा

११ नवम्बर '७१ को टिहरी से श्री चण्डी प्रसाद द्वारा प्रेषित तार के अनुसार १२ दिनों के उपवास के बावजूद श्री सुन्दरलाल बहुगुणा स्वस्थ और प्रसन्न थे। उनका वजन ११ पौण्ड घट गया था। वे सिर्फ नमक-जल ले रहे थे। श्री बहुगुणा के उपवास से व्यापक लोक-जागृति पैदा हुई है।

२१ नवम्बर '७१ को टिहरी से ही श्री सुरेश राम भाई द्वारा प्रेषित एक तार के अनुसार २० नवम्बर '७१ को उत्तरकाशी, चमोली, टिहरी जिलों से आये दस हजार से अधिक संख्या में नर-नारियों की एक विशाल सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें नशाबन्दी के लिए संकल्प लिया गया और लोगों ने सत्याग्रह में भाग लेने के लिए अपने नाम दर्ज कराये। श्री सुन्दर लाल बहुगुणा ने २० नवम्बर '७१ को ही आचार्य विनोबा की अपील और उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री के आश्वासन पर अपना उपवास तोड़ा।

आज तो लोगों में भय और आतंक का जो वातावरण बनाया गया है पहले उसको समाप्त करना आवश्यक है। शराबबन्दी के समर्थक जरा निर्भय होकर बाहर तो निकलें और यह प्रगट करें कि लोकतन्त्र में कानून का आधार जनता की इच्छा होगी, पुलिस का डंडा नहीं।

राज्य सरकार का हलफनामा

उत्तर प्रदेश की सरकार की हलफनामे की विडम्बना भी देखिये। उच्च न्यायालय में उसने अपने हलफनामे में कहा है कि पहाड़ों में शराबबन्दी सफल नहीं है। हम क्रमशः शराबबन्दी की नीति पर आगे बढ़ रहे हैं और यह काम सरकार ने संविधान के निर्देशक सिद्धान्तों की धारा ४७ के अन्तर्गत किया है। कुछ मित्रों ने इसके बचाव में कहा है कि यह तो अपने पक्ष को अदालत में मजबूत करने के लिए कहा गया होगा। यदि वास्तविकता इससे भिन्न है तो कल्पना नहीं की जा सकती कि कोई सरकार अपने राज्य के सर्वोच्च न्याय के मंच को भी धोखा दे सकती है और यह हलफनामा सही था तो सरकार के पास शराबबन्दी को समाप्त करने का कोई नैतिक अधिकार नहीं है।

आन्दोलन के परिणाम अच्छे ही निकल रहे हैं। १२ नवम्बर को टिहरी के सुपरिन्टेन्डेन्ट श्री सज्जन सिंह ने श्री हरीश रौतिलाय के प्रार्थनापत्र पर टिहरी नगर की कोतुल बजार की दूकान को वहाँ से हटवाने का आदेश दे दिया, शराब के व्यापारियों ने जनान्दोलन से बचने के लिए पुराने स्वीकृत स्थान के बजाय मोटर स्टैन्ड और गुरुद्वारे के पास दूकान खोलने की मंजूरी ले ली थी। पुराने स्थान पर दूकान खोलने की उन्हें हिम्मत नहीं हो रही है क्योंकि अट्टूर की महिलाओं ने इसको न खुलने देने के लिए कमर कस ली है। शराब के व्यापारी निषेधाज्ञा तामील करने से बचने के लिए छिप गये और १३ तारीख को प्रातः टिहरी छोड़ कर भाग गये। निषेधाज्ञा केवल दूकान पर चिपकी हुई दीखती है। बाल्दीयार और चमोली में स्थान न मिलने के कारण हाईकोर्ट का आदेश धरा ही रह गया, दूकानें नहीं खुल पायी हैं। (सर्वेश)

संकलनकर्ता : ओमप्रकाश अग्रवाल

सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुर दास बंग का उत्तर प्रदेश में कार्यक्रम

तिथि	स्थान
१ दिसम्बर, २ दिसम्बर	आगरा
३ दिसम्बर	सहारनपुर
४ दिसम्बर	मुरादाबाद
५ दिसम्बर	बरेली
६ दिसम्बर	लखनऊ
७ दिसम्बर	कानपुर
८ दिसम्बर	इलाहाबाद
९ दिसम्बर	बलिया
१० दिसम्बर	वाराणसी

बिहार में ग्रामदानी गाँवों की कानूनी पुष्टि

बिहार में जुलाई '७१ तक कानूनी रूप से पुष्टि का जो कार्य हुआ है, उसकी जानकारी देते हुए बिहार भूदान यज्ञ कमिटी ने लिखा है कि राज्य के समस्तीपुर, मधुबनी, दरभंगा सदर, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, सहारसा, पटना एवं गया (बोधगया) से ही पुष्टि सम्बन्धी कागज मुख्य रूप से पुष्टि के लिए प्राप्त हुए हैं। जुलाई '७१ तक इन स्थानों के कुल १४९८ गाँवों से कुल ७६,७८० समर्पण-पत्र (२५,६३९ भूमिवान और ५१,१४१ भूमिहीन) कार्यालय में दाखिल हुए। १८०४ गाँवों और ६९,२२६ समर्पण-पत्रों (३०,५२७ भूमिवानों और ३८,६९९ भूमिहीनों) पर नोटिस जारी की गयी, जिनमें १,३३१ गाँवों और ६३,०५३ समर्पण-पत्रों (२६,९४६ भूमिवान और ३६,१०७ भूमिहीन) की पुष्टि किया गया। १,२९५ समर्पण-पत्रों को रद्द किया गया और ४,८७८ समर्पण-पत्र विचाराधीन हैं। ७६१ गाँवों का प्रपत्र ८ तैयार करने का प्रयास किया गया, जिसमें ५३९ गाँवों का प्रकाशन हुआ। धारा ६ के अधीन ५४६ गाँवों की शर्तें पूरी हुईं और ५१० गाँवों का ग्रामदान घोषित किया गया। सरकार द्वारा ३०१ ग्रामसभा की स्थापना की गयी तथा ४६ ग्रामसभाओं में पुष्टि पदाधिकारी द्वारा चुनाव कराया गया।

इसके अलावा बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के अनुसार राज्य के विभिन्न जिलों में अब तक कुल २५०८ ग्राम चनाऊ ग्रामसभाएँ गठित की गयी हैं, तथा २४४८ ग्रामसभाओं में ८७५ बी० ७ क० २ धूर तथा ३६१ एकड़ २८ डिसमिल जमीन, जो बीघा-कट्ठा में प्राप्त हुई, वितरित की गयी है।

गोपाल-अधिवेशन में पारित

आन्दोलन सम्बन्धी प्रस्ताव का समर्थन

समतामूलक समाज-रचना के लिए भोपाल-अधिवेशन ने सर्वोदय आन्दोलन में करुणा के साथ प्रतिकार की प्रक्रिया अपनाने का जो ऐतिहासिक निर्णय लिया, उस पर सहचिन्तन करने के लिए गत २१ नवम्बर, '७१ रविवार को गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र-कानपुर में एक विचार-गोष्ठी का आयोजन नगर सर्वोदय मण्डल तथा केन्द्र के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया। विनय भाई ने गोष्ठी की प्रस्तावना रखी और दयाल भाई ने विषय प्रवेश किया। श्री ब्रजविहारी मेहरोत्रा, श्री रामदुलारे त्रिवेदी, श्री कृपाशंकर श्रीवास्तव, श्री धीरेन्द्रनाथ पाण्डेय और श्री कृष्णकुमार त्रिपाठी ने भी अपने विचार रखे। सर्वोदय विचारक डा० सोमनाथ शुक्ल ने सत्ता के आधार पर समाज-परिवर्तन करने वाले समाजवादी आन्दोलन की विफलता का उल्लेख करते हुए सर्वोदय-आन्दोलन की उपलब्धि के प्रति विश्वास व्यक्त किया और सहकार तथा प्रतिकार की प्रक्रियाओं को गंगा-जमुना की भाँति मिलकर चलने में आन्दोलन के विकास के प्रति आशाएँ व्यक्त कीं।

वयोवृद्ध चिन्तक श्री नर्मदा प्रसाद अवस्थी ने आचार्य दादा धर्माधिकारी द्वारा व्यक्त सत्याग्रह की प्रक्रिया की पुष्टि की और भूमिहीन मजदूरों एवं छोटे भूमि मालिकों को संघटित करने के लिए एक सघन क्षेत्र चुनने पर बल दिया। जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री लाभचन्द वर्मा और मंत्री श्री सूर्यप्रसाद द्विवेदी ने इस प्रकार के प्रयोग की भूमिका बनाना स्वीकार किया।

अन्त में विश्वविख्यात विचारक एवं लोकनेता श्री जयप्रकाश बाबू के स्वास्थ्य-लाभ एवं दीर्घायु की कामना और प्रदेश के निष्ठावान सर्वोदय सेवक श्री सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा गत ८ नवम्बर से टिहरी में मद्यनिषेध के लिए किये जा रहे उपवास के प्रति संवेदना एवं सहमति व्यक्त करते हुए प्रस्ताव पारित किये गये।

—विजय बहादुर सिंह

ग्राम-शान्तिसेना शिविर

जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समिति, रायपुर (म० प्र०) की ओर से दशरथपुर में ता० १०-१०-७१ से १३-१०-७१ तक एक त्रिदिवसीय ग्राम-शान्तिसेना शिविर सम्पन्न हुआ।

शिविर में विविध कार्यक्रमों के द्वारा ग्रामस्वराज्य प्राप्ति के काम पर जोर दिया गया तथा इन कार्यक्रमों में बहनों को भी शामिल करने की कोशिश करनी चाहिए, ऐसा महसूस किया गया। ग्राम-शान्तिसैनिक ग्रामसेवक की भूमिका में काम करें, इस बात को श्री नन्द कुमार ने स्पष्ट किया। श्री रामगोपाल दीक्षित ने कहा कि ग्राम-शान्तिसैनिक में वीरता, निर्वैरता, निष्पक्षता, अनुशासन व भाईचारे की भावना का होना आवश्यक है। ग्रामदान का आन्दोलन भाईचारे को बढ़ाने का आन्दोलन है।

शिविरार्थियों ने अलग-अलग टोलियों में बैठकर गाँवों की समस्याओं के बारे में चर्चाएँ कीं और मुख्य २४ समस्याओं की सूची बनाकर श्री दीक्षित के सामने पेश किया। उन्होंने समस्याओं के हल सुझाते हुए कहा कि सामाजिक, आर्थिक असमानताओं को मिटा कर ही इन समस्याओं को हल किया जा सकता है। ग्रामदान-आन्दोलन जड़मूल से क्रान्ति करने का, इन समस्याओं का हल ढूँढ़ने का बुनियादी आन्दोलन है।

इसके बाद गाँव-गाँव में ग्राम-शान्ति सेना का संघटन बनाने के लिए विचार किया। ●

पड़रौना में तरुण-शान्तिसेना शिविर

देवरिया जिले के पड़रौना कस्बे में गत २३-२४ अक्टूबर '७१ को स्थानीय तरुण-शान्तिसेनाकेन्द्र के तत्त्वावधान में यहाँ के डिग्री कालेज में एक द्विदिवसीय शिविर जिले के तरुण-शान्तिसैनिकों और आचार्यकुल के सदस्यों का सम्मिलित रूप से सम्पन्न हुआ। पड़रौना की तरुण-शान्तिसेना तरुणों की एक ऐसी सक्रिय इकाई है जिसमें आचार्यकुल का भी सक्रिय सहयोग है। पिछले दिनों दोनों संघटनों के सम्मिलित प्रयत्न से नशाबन्दी-आन्दोलन किया गया और २ अक्टूबर '७१ को शराब की दूकान पर धरना और २४ घंटे का उपवास भी किया गया।

इस शिविर के लिए तरुणों ने कस्बे में और कस्बे के बाहर आसपास के गाँवों में भी जाकर पैसे और अन्न का संग्रह किया था। शिविर का उद्घाटन भागलपुर विश्वविद्यालय के दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक डा० रामजी सिंह के ओजस्वी भाषण से हुआ और समावर्तन श्री गुब्बाराव ने किया। शिविर में ८ विद्यालयों के छात्र और १४ विद्यालयों के शिक्षकों ने भाग लिया। श्री अमरनाथ भाई, प्रशिक्षक, शान्तिसेना द्वारा शिविर का संचालन हुआ। शिविर में सर्वश्री विनय अवस्थी और रामचन्द्र राही ने आचार्यकुल और तरुण-शान्तिसेना की, सामाजिक क्रान्ति के संदर्भ में, महत्त्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट करते हुए चर्चा के मुद्दे प्रस्तुत किये। श्री संतोष भारतीय ने तरुण-शान्तिसेना के संघटनात्मक पहलू पर प्रकाश डाला। द्विदिवसीय शिविर मुख्य रूप से आचार्यकुल और तरुण-शान्तिसेना की क्रान्तिकारी दिशा को स्पष्ट करने में सफल रहा। जिसमें डा० रामजी सिंह के विचारोत्तेजक भाषणों का महत्त्वपूर्ण योगदान मिला। 'देवरिया जिले के आचार्यकुल के संयोजक श्री रामबचन सिंह ने इस आयोजन के लिए काफी परिश्रम किया। स्थानीय महाविद्यालय के छात्राध्यापकों ने प्राध्यापक श्री परशुराम के नेतृत्व में प्रमुख भूमिका निभायी। ●

पत्र संचयन

[देश भर में सर्वोदय-आन्दोलन का काम कर रहे कार्यकर्ता अपने काम की जानकारी विनोबाजी को भेजते रहते हैं। हमारी कोशिश होगी कि इस स्तम्भ में पत्रों में लिखी खास जानकारियों का संचयन 'भूदान-यज्ञ' के पाठकों को भविष्य में देते रहें।]

जिला बुलन्दशहर (उ० प्र०)—श्री नरेन्द्र भाई अपने चार वरिष्ठ उत्साही व कर्मठ साथियों के साथ ग्रामस्वराज्य के कार्य में लगे हैं। उन्होंने जिले के १४ प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य समितियों के गठन का कार्य शुरू किया है। इस काम में जिला सर्वोदय मण्डल सक्रिय है, और श्री गांधी आश्रम के भी कई कार्यकर्ता योगदान दे रहे हैं।

डांग (गुजरात)—जिला नशाबन्दी नियोजन व स्वराज्य आश्रम के श्री घेनु-भाई जिले के ३३ गाँवों में घूमे और ३० सभाओं में नशाबन्दी, चरखा कताई व अन्य रचनात्मक के बारे में विचार-प्रचार किये। १८४ भाई-बहनों ने नशाबन्दी का संकल्प किया।

पूरे गुजरात में २ अक्तूबर तक नशाबन्दी सप्ताह मनाया जाता है। तदनुसार जिला बनासकांठा में भी इस दिशा में प्रयत्न किये गये, जिसमें कान्तिलाल पटवारी ने सहयोग दिया। उनका विश्वास है कि नशाबन्दी, खादी, नयी तालीम आदि सभी रचनात्मक कार्य ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की बुनियाद पर ही पनप सकते हैं, और विकसित हो सकते हैं। उनका कहना है कि रचनात्मक कार्य में लगे सभी कार्यकर्ता अभी इन दूरगामी विचार को समझ नहीं सके हैं। गुजरात के राज्यपाल ने राज्य खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के द्वारा अक्षर रोज-गार अधिकार योजना (राइट आफ वर्क प्रोग्राम) को गुजरात के ६ जिलों में चालू करवाया है। बनासकांठा जिले के अन्दर, श्री सरभगुर में इसका कार्यारम्भ हुआ है। श्री कान्तिभाई इस योजना का उपयोग ग्रामदानी गाँवों की आवश्यकता को क्रियान्वित करने में हो, इसके लिए प्रयत्न-शील हैं।

बोरियावी—खेड़ा जिला सर्वोदय लिखते हैं कि वे बोरियावी गाँव की ग्राम-सभा का गठन करने के लिए प्रयत्नशील हैं। इस निमित्त एक प्राथमिक सभा का आयोजन श्री दिलखुश भाई की अध्यक्षता में हुआ था। इसके अलावा १०० नये सर्वोदय पात्र रखे गये। अब कुल मिलाकर ५०० पात्र हो गये हैं। ११७ भूमिपुत्र के नये ग्राहक बनाये और ४४ रुपये को साहित्य की बिक्री हुई। कुल १८ गाँवों की यात्रा हुई।

साबरकांठा—जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री वल्लभ भाई दोशी के लिखे अनुसार विनोबा जयन्ती के उपलक्ष्य में ११ सितम्बर से १७ सितम्बर तक सर्वोदय-पात्र रखने का अभियान चलाया गया। जिसमें १०० पात्रों की स्थापना हो सकी। दो गाँवों में ग्रामसभा का गठन किया गया और साबरकांठा जिला नयी तालीम संघ की स्थापना भी की गयी।

भोपाल तरुण-शान्तिसेना

गत माह के अन्त में भोपाल में आयोजित सर्व सेवा संघ के छमाही अधिवेशन में स्थानीय तरुण शान्ति सैनिकों ने अपनी सेवाएँ अर्पित कर अधिवेशन को सफल बनाने में अपना योगदान दिया।

भोपाल तरुण-शान्तिसेना के संयोजक श्री कैलाश श्रीवास्तव के अनुसार अधिवेशन की समाप्ति के दिन प्रदेश भर से आये तरुण-शान्ति सैनिकों का एक अल्प-कालीन शिविर भी हुआ, जिसमें श्री धीरेन्द्र मजूमदार के क्रान्तिकारी विचार सुनने का मौका तरुणों को प्राप्त हुआ।

इस कार्यक्रम में भाग लेने से तरुणों में रचनात्मक दृष्टिकोण एवं सामुदायिकता का विकास तथा सहजीवन का अभ्यास हुआ है। ●

हमारे नवीन प्रकाशन

		रु० पै०
१—क्रान्ति : प्रयोग और चिन्तन	धीरेन्द्र मजूमदार	६-००
२—आँखों देखा हाल : ग्रामदानी गाँवों की कथा	संकलन	१-५०
३—लोकनीति (नवसम्पादित)	विनोबा	२-००
४—माता कस्तूरबा	बनुभाई जोशी	१-२५
५—मुस्लिमों का धर्म	इस्माइलभाई नागोरी	०-३५
६—सर्वोदय समाज-रचना की दिशा में	धीरेन्द्र मजूमदार	०-४०
७—ग्रामस्वराज्य क्यों ?	,,	०-४०
८—ग्रामस्वराज्य की दिशा में	,,	०-५०
९—योग	राधाकृष्ण नेवटिया	४-००

नवम्बर '७१ तक प्रकाशित होनेवाली पुस्तकें

१—अहिंसा का एकाकी पथिक	सोमदत्त पुरोहित	२-००
२—स्त्री शक्ति (संशोधित०)	विनोबा	१-५०
३—शिक्षा में क्रान्ति और आचार्यकुल	धीरेन्द्र भाई	०-४०
४—प्राणायाम	राधाकृष्ण नेवटिया	१-००
५—ऋषि विनोबा	श्रीमन्नारायण	
	पुस्तकालय संस्करण	१०-००
	साधारण संस्करण	७-००
६—हृदय रोग	डा० शरण प्रसाद	२-००
७—नीति निर्झर	प्रकाश	२-००
८—हृदय रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	डा० शरण प्रसाद	

भूदान-यज्ञ २९-११-'७१ लाइसेंस नं० ए १२ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. २२४

हम आखिरी दम तक बंगला देश की पूर्ण स्वाधीनता के लिए लड़ते रहेंगे

'बंगला देश विश्व विवेक जागरण' पदयात्रियों के उद्गार

पटना : २५ नवम्बर '७१ को बिहार की राजधानी पटना में बंगला देश से दिल्ली तक विश्वविवेक को जागृत करने के लिए पदयात्रा कर रहे बंगला देश के ३८ तरुणों का हार्दिक स्वागत किया गया। बंगला देश के इन तरुण छात्रों की यह पदयात्रा अ० भा० शांतिसेना मण्डल द्वारा आयोजित की गयी है।

पदयात्रियों ने पटना स्थित बिहार राष्ट्रीय कालेज की छात्रसभा तथा यहाँ के छात्रसंघ द्वारा आयोजित किये गये अभिनन्दन समारोह एवं गांधी मैदान की विशाल सार्वजनिक सभा में भारत द्वारा बंगला देश को प्राप्त सहानुभूति, समर्थन और सहयोग के लिए आभारपूर्वक भारतवासियों को स्वर्दसिंचित सलाम करते हुए अपना संकल्प दोहराया कि हम बंगला देश की पूर्ण स्वाधीनता के लिए आखिरी दम तक लड़ते रहेंगे।

पदयात्रियों के एक प्रवक्ता के अनुसार ये पदयात्री ३० जनवरी '७१ को दिल्ली पहुँच कर महात्मा गांधी की समाधि पर श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद दुनिया के दूतावासों के माध्यम से अपना संदेश उनके देशों तक पहुँचायेंगे। उक्त प्रवक्ता के अनुसार इस्लाम को माननेवाले राष्ट्रों से उनका कहना है कि इस्लाम शब्द ही शान्ति का प्रतीक है; जो कोई भी लाखों बेगुनाहों निःशस्त्र असहाय बच्चों-बूढ़ों का कत्ल करके रक्त का दरिया बहाये, वह इस्लाम को हर्गिज नहीं मानता, वह काफिर है, और ऐसे लोगों का समर्थन देनेवाले राष्ट्र क्या इस्लाम और पवित्र कुरान के आदेशों को भूल नहीं गये हैं? लोकतांत्रिक समाज का ढिंढोरा पीटनेवाले देशों से इनका कहना है कि दुनिया के लोकतांत्रिक इतिहास में आज तक किसी दल को ९८·८% जनमत नहीं प्राप्त हुआ है, जो शेख मुजीब को और उनकी अवामी लीग को प्राप्त हुआ। बावजूद इसके इन को समर्थन न दे कर खुद तानाशाह बनकर जनता की छाती पर शस्त्रबल से आसीन यहिया को समर्थन देना और बंगला देश की साढ़े सात करोड़ जनता के दमन-चक्र में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष मदद करना कहाँ का लोकतंत्र है? और वे शोषणमुक्त दुनिया के लिये क्रान्ति का उद्घोष करनेवाले देशों से कहना चाहते हैं कि प० पाकिस्तान द्वारा पिछले २४ वर्षों से हो रहे भयंकर आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक शोषण से दुखित के इस संघर्ष को समर्थन देने के बजाय शोषकों को दमन के लिये शस्त्र और प्रशिक्षण देना कहाँ की क्रान्तिकारिता है?

पदयात्रियों का कहना है वे इन प्रश्नों पर दुनिया का विवेक जागृत करना चाहते हैं, ताकि विश्व के राष्ट्रनायक अपने संकुचित न्यस्त स्वार्थों से ऊपर उठकर विवेक से काम लें।

विश्व विवेक जागरण के लिए बंगला देश के पदयात्री : बंगला देश से दिल्ली

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : १०, सोमवार, ६ दिसम्बर, '७१
पत्रिका विभाग, सर्व सेवा संघ,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा * फोन : ५४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ का मुख-पत्र

'मेरे जीवन के अब ७० साल पूरे हो चुके हैं। भारत की परम्परा है जीवन के अन्तिम दिन गंगा तट पर बिताने की। मैं अब लोक-गंगा के तट पर रहूँगा। —धीरेन्द्र भाई

आज धीरेन्द्र भाई जैसा वृद्ध पुरुष पूरे उत्साह और स्फूर्ति से ग्रामदान-पुष्टि के लिए सहरसा में डटा है। धीरेन्द्र भाई ७१ साल के जवान हैं, जिन्होंने गांधीजी के आवाहन पर कॉलेज छोड़ दिया और आज ५० साल से उसी काम में लगे हैं। ऐसा व्यक्ति आप से ५ साल की माँग कर रहा है।

...अगर हमारे साथियों को वहाँ जाकर पराक्रम करने की प्रेरणा हो तो अच्छा है। अन्यथा बाद में पश्चाताप करने का मौका न आवे।

विनोबा

क्या गरीब अमीरी को भी बीमारी मानता है ?

भोपाल-अधिवेशन में दादा धर्माधिकारी के भाषण पर खूब चर्चाएँ हुईं और आन्दोलन की नयी दिशा का आधार भी यह भाषण बना, ऐसा 'भूदान-यज्ञ' पढ़ने से लगा। दादा का दूसरा भाषण, जो पहले ही स्पष्ट करने की दृष्टि से दिया गया, 'भूदान यज्ञ' के १५ नवम्बर के अंक में पढ़कर कुछ शंकाएँ हुईं, जिनको विचारार्थ प्रस्तुत कर रही हूँ।

दादा ने गरीब और अमीर की मनोवृत्ति का विश्लेषण करते और दोनों में भेद बताते हुए कहा है कि गरीब अपनी बीमारी छोड़ना चाहता है और इसलिए हम उनका साथ दें, लेकिन अमीर अपनी अमीरी को बीमारी नहीं मानता है, और न ही उससे छूटना चाहता है। अगर कोई अमीर उससे मुक्त होना चाहता है, तो हम उसका सम्मान करें, स्वागत करें, साथ दें, आदि बातें उन्होंने कहीं।

अब मेरे मन में सवाल यह उठता है कि अमीर तो अपनी अमीरी को बीमारी नहीं मानता है, लेकिन गरीब भी अमीरी को बीमारी मानता है क्या ? गरीब अपनी बीमारी से छूटना अवश्य चाहता है। और यह बात साफ है कि आज के समाज में उसकी प्रतिष्ठा नहीं है। लेकिन प्रतिष्ठा है उस अमीरी की जिसको 'हम' भले ही बीमारी मानें, लेकिन गरीब उसे बीमारी नहीं मानता। बल्कि उस प्रतिष्ठा को प्राप्त करना चाहता है। अगर वह अमीरी को बीमारी नहीं मानता है, तो वह उस प्रतिष्ठा को प्राप्त करना चाहेगा ही, यह स्वाभाविक है।

दूसरी बात यह है कि जब तक अमीर यह नहीं समझेगा उसके पास जो अधिक रोटी है, वह भूखों की रोटी है और 'मुझे गरीबों के हिस्से की रोटी उन्हें दे देनी चाहिए' यह मान्यता उसकी नहीं बनेगी, तब तक भूखों को रोटी कैसे मिल सकेगी ? गरीब को तो रोटी चाहिए ही। लेकिन उसके चाहने भर से तो उसे रोटी नहीं मिल रही है। तब हमारा पहला कर्तव्य यह हो जाता है कि जिसके पास उस भूखे की रोटी पड़ी है, उसको हम यह महसूस करायें। गरीब भी जब तक यह महसूस नहीं करेगा कि मेरी रोटी अमीर के पास पड़ी है, तब तक वह साधिकार स्वाभिमान के साथ रोटी की मांग नहीं कर सकेगा, वह हमेशा कृपाभिलाषी, अहसानमंद बना रहेगा। और अमीर भी उसे दान देगा, दया करेगा।

इसलिए जब तक दोनों की चेतना इस दिशा में जागृत नहीं होगी, और दोनों इस भूमिका पर आकर कुछ करने को तैयार नहीं होते, तब तक दोनों की बीमारी नहीं मिटेगी। कोई मूल्य परिवर्तन नहीं होगा। इसलिए जब हम भूमिहीन और छोटे मालिकों का संगठन करने की बात सोचते हैं तो हमें मूल्य परिवर्तन की दिशा में उनको ले जाते हुए उनके सामने यह बात साफ करनी होगी कि वे गरीबी मिटाने चले हैं लेकिन अमीरी पाने के लिए नहीं। हम न गरीबी चाहते हैं, न अमीरी। अमीरी और गरीबी दोनों ही सामाजिक मर्ज हैं। यह हमारी भूमिका उनके मनमें स्पष्ट हो जायेगी, तभी हमारा कार्य क्रान्ति की बुनियाद डालने वाला बनेगा, ऐसा मुझे लग रहा है। ●

पत्र संचयन

जालंधर से दयाविधिजी लिखते हैं कि उन्होंने सितम्बर में ४ प्रान्तों की यात्रा की, राजस्थान, उ० प्र०, हरियाना और पंजाब।

उन्होंने अपनी यात्रा के दौरान नगरों और कस्बों में सभाएँ कीं तथा ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार का प्रचार किया। उन्होंने प्राध्यापकों व विद्यार्थियों के साथ सम्पर्क करके सर्वोदय आन्दोलन का विचार समझाया तथा ग्रामस्वराज्य का विचार विद्यार्थियों के जरिये गांव गांव में फैले इसके लिए प्रेरणा दी। करीब ४०० विद्यार्थी इस अभियान में भाग लिये।

लोक-सम्पर्क से उनको महसूस हुआ कि चारों तरफ राजनैतिक होड़, स्वार्थ, हिंसा आदि के बावजूद सामान्य जनता महसूस करती है कि प्रेम और सेवा के जरिये ही समस्या का सही हल निकलेगा।

जिला संबलपुर से श्री मदनमोहन साहु सर्वोदय के काम की जानकारी देते हुए लिखते हैं कि इस जिले में इस साल के प्रारम्भ से सर्वोदय कार्य जो कि एक तरह से ठप्प हो गया था, उसे संघटित करने की कोशिश की जा रही है। २७ लोकसेवक बनाये गये हैं और ग्रामसभाओं को सक्रिय बनाने व ग्रामकोष एकत्रित करने की तैयारी चल रही है। इस जिले का सबसे बड़ा गांव पाणीमोरा जिसको एक जागृत गांव की संज्ञा श्री धीरेन्द्र भाई ने दी। अब वहां पुष्टि-काम तीव्रगति से चल रहा है। गत जनवरी से अब तक १४ बार ग्रामसभाओं की बैठकें हुईं। ग्रामकोष में करीब ३० हजार रुपये जमा हुए थे जिसमें से १५ हजार कर्ज के तौर पर गांव में दिया गया। खेती में विकास करने की दृष्टि से यहां कृषिकेन्द्र चलाने का निर्णय किया गया है। पाणिमोरा, पदमपुर और पाथिकमाल में खादी काम को नये सिरे से शुरू किया गया है। पदमपुर केन्द्र में कृषि-कार्य को काफी सफलता मिली है। कृषि काम के जरिये लोक निर्माण का काम करने का लक्ष्य बनाया है। कृषि से खादी ग्रामोद्योगों को भी बल मिलेगा ऐसी उनकी उम्मीद है।

पाथिकमाल के निकट नरसिंहनाथ में करीब दस एकड़ जमीन लेकर कृषि-गोपालन तालीम के लिए एक केन्द्र का प्रारम्भ कर दिया है।

हिंसा का शिक्षण

इधर एक हफ्ते के अन्दर जो खबरें अखबारों में आयी हैं उनमें से कुछ ये हैं :

(१) राजस्थान विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों द्वारा उपद्रव, तोड़फोड़।

(२) पटना विश्वविद्यालय की सिंडिकेट की बैठक में दर्शन-विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष पर राजनीति-विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष द्वारा आक्रमण और प्रहार। वह मरहम-पट्टी के लिए मेडिकल कालेज भेजे गये।

(३) बनारस विश्वविद्यालय के कानून के विद्यार्थियों द्वारा वाइसचान्सलर के कार्यालय पर आक्रमण और तोड़फोड़।

(४) पूर्णिया जिले के एक गांव में भूमि के मालिकों द्वारा लगभग बीस बटाईदारों का सहार। कुछ को खेत पर ही मालिकों के गुर्गों ने गोली मार दी और शेष को घरों में बन्द कर जिन्दा जला दिया गया।

इन चार में से तीन का सम्बन्ध शिक्षा की उच्चतम संस्थाओं से है, और एक का भूमि की व्यवस्था से।

पटना विश्वविद्यालय के दो 'विद्वानों' के बीच हुई घटना का पता जब विद्यार्थियों को लगा तो कुछ ने कहा : 'जब हमारे प्रोफेसरों का यह हाल है तो हमसे क्या उम्मीद की जाती है ?'

ये घटनाएँ प्रमाण हैं इस बात का कि देश के जीवन के हर अंग में गहरी हिंसा प्रवेश कर चुकी है। हमारा देश में अहिंसावादी नहीं है। हमें ये घटनाएं बता रही हैं कि शासन, समाज-व्यवस्था, शिक्षा, आदि सब का आधार हिंसा हो रहा गयी है। क्या शासक, और क्या शिक्षक, सेठ, या भूस्वामी, लगता है इनमें से कोई सुनेगा नहीं जब तक ये डर और दबाव न हो। जनता भी समझ गयी है कि ये 'शिक्षित' लोग सिर तोड़ने के सिवाय दूसरी कोई भाषा समझते ही नहीं। एक ओर मर्यादित हिंसा है, दूसरी ओर अमर्यादित हिंसा – समाज दोनों के बीच पिस रहा है।

क्या कारण है कि राजस्थान विश्वविद्यालय में उपद्रव होने के बाद १२ घंटे भी नहीं बीते कि परीक्षा-पद्धति में परिवर्तन हो गया ? यही परिवर्तन पहले क्यों नहीं हुआ ? यह हर आदमी जान गया है कि विद्यालय अब शिक्षा के आलय नहीं रह गये हैं। बल्कि उनमें शिक्षा का नाश हो रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि शिक्षा में ऊपर से नीचे तक जहर घुस गया है। जो विद्यालय ऐसे शिक्षकों से भर गये हों जो विद्वान कम किन्तु विद्याचोर हैं, जहां सारी शिक्षा मात्र परीक्षा रह गयी हो, और परीक्षा भी सिर्फ डिग्री और नौकरी के लिए हो, और जो राजनैतिक नेताओं की 'जमींदारी' बन गये हों, ऐसे स्थानों को विद्यालय कहना शब्द का दुरुपयोग करना है।

ये विद्यालय हमारे युवकों और युवतियों को हिंसा का सुव्यवस्थित शिक्षण दे रहे हैं। यही शिक्षण सरकार जनता को दे रही है। इसलिए शिक्षकों और शासकों को शिकायत नहीं होनी चाहिए अगर उनकी सीख का प्रयोग उन्हीं के ऊपर हो।

देश के निर्माण में दो काम ऐसे हैं जो मुश्किल नहीं हैं। एक, शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन, दूसरा, किसान को ऐसा भूमि-पत्र दे देना जिसमें लिखा हो कि उसके पास कितनी भूमि आती है। कितनी बटाई की है, और वह भूमि गांव के नक्शे में कहां है। कानूनों के द्वारा किसानों की भूमि पक्की कागज पर हो जानी चाहिए थी। लेकिन यह सब कुछ नहीं हुआ। स्वराज्य के पच्चीस वर्षों में भूमि की व्यवस्था में इतना ही सुधार हुआ है कि पुराने जमींदार गये, और नये किलेबन्द 'सरकारी-किसान' आ गये। गरीब के लिए क्या परिवर्तन हुआ ?

अगर शिक्षण और भूमि की व्यवस्था में परिवर्तन कठिन नहीं है तो परिवर्तन होता क्यों नहीं ? होता इसलिए नहीं क्योंकि देश ऐसे नेतृत्व के हाथ में पड़ गया है जो संकीर्ण है, स्वार्थी है, सत्ता का प्यासा निरंकुश और निर्मम है। इस नेतृत्व ने आज की व्यवस्था में अपनी जड़ें मजबूत कर ली हैं। ज्ञान के नाम में शिक्षक और विज्ञान के नाम में बड़ा किसान, क्या ये दोनों सत्ताधारियों के एजेन्ट बन गये हैं ? सत्ताधारी नहीं चाहते कि कोई ऐसा परिवर्तन हो जिससे उनकी मजबूत जड़ें हिल जायें। उनके मन में यह भ्रम मानो जीवन-दर्शन बनकर घर कर गया है कि अगर सत्ता उनके हाथ में रहे तो देश का भला ही भला है।

कठिनाई यह है कि जनता, और युवक भी, कुछ इसी प्रकार के भ्रम में हैं। युवक परिवर्तन नहीं 'सिलेक्शन' का भूखा है, जनता सुविधा चाहती है लेकिन परिवर्तन से भागती है। शायद परिवर्तन का कोई स्पष्ट चित्र उनके सामने अभी तक आया भी नहीं है। हिंसा की छिटपुट घटनाओं में उसे बदले का सुख मिलता है। कुछ गुस्सा उतर जाता है। लेकिन वह यह नहीं समझ रही है कि छोटी-छोटी हिंसाएं ही जुड़कर महाहिंसा को जन्म देती हैं। हिंसा से सरकार-परिवर्तन हो सकता है, जो वोट से भी हो सकता है। किन्तु हिंसा से समाज-परिवर्तन कैसे होगा ? समर्थ सरकार सुविधाओं का निर्माण कर सकती है। मुक्ति की परिस्थिति नहीं बना सकती। मुक्ति जनता की अपनी ही शक्ति में है।

फैलती हुई संगठित और असंगठित हिंसा का एक ही उत्तर है—अहिंसक क्रान्ति का संगठन। अहिंसक क्रान्ति के दो पहलू हैं—शिक्षा में क्रान्ति और भूमि व्यवस्था में क्रान्ति। इन दो क्षेत्रों में परिवर्तन आते ही उस लोकशक्ति का उदय होगा जो क्रान्ति को पूरा करेगी, एक नया समाज बना देगी, सरकार को दलों से और जनता के दैनंदिन जीवन को सरकार से मुक्त करेगी। हमारे लिए क्रान्ति और अहिंसा वस्तुतः पर्यायवाची बन गये हैं।

जनशक्ति संघटित हुई तो बड़े-से-बड़े सवाल हल होंगे

—सुन्दरलाल बहुगुणा

[उत्तराखण्ड के पाँच हिस्सों में पिछले डेढ़ साल से चल रही नशाबन्दी को इलाहाबाद हाई कोर्ट के निर्णय के अनुसार अवैध करार कर दिये जाने पर ८ नवम्बर से शराब की दूकानें पुनः खुल गयी हैं। इसका जनता ने भारी विरोध किया। श्री सुन्दरलाल बहुगुणा उपवास पर बैठ गये। २० नवम्बर को टिहरी में दस हजार की एक आम सभा में जनता ने पूर्ण नशाबन्दी में अपनी आस्था प्रकट करते हुए श्री बहुगुणा से उपवास समाप्त करने का अनुरोध किया। हम यहाँ उस सभा में श्री बहुगुणा द्वारा उपवास तोड़े जाने के पहले दिये गये भाषण का प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

आप सब जानते हैं कि मैंने जो उपवास किया वह विशुद्ध कर्तव्य-भावना से किया था। उन्हें लेकर कुछ लोगों में गलतफहमी रही है। वे इसे भूख हड़ताल मान बैठे हैं। उपवास और भूख हड़ताल में फर्क है। भूख हड़ताल किसी के प्रति विरोध की भावना रखने पर की जाती है जबकि उपवास का अर्थ होता है, भगवान की शरण में जाना, उनके पास रहने की कोशिश करना। मैं नशाबन्दी के लिए पिछले महीनों में कई जगह गया। किसी ने सुना नहीं। हाईकोर्ट में, राजमन्दिर में, सब जगह असफल हुआ। तब फिर अन्तिम कदम मैंने भगवान की शरण ही समझा। इस उपवास का स्रोत क्या था? अमर शहीद श्री सुमन से आज से ३६ साल पहले मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं चाँदी में नहीं बिकूँगा, लँगोटी पहननेवाले करोड़ों की हालत सुधारने में लगूँगा। तब स्वराज्य नहीं था। आज वह है लेकिन इन लँगोटीवालों का उसमें कहाँ स्थान है। उनके लिए कहाँ स्वराज्य है? स्वराज्य होगा तो दिल्ली में, लखनऊ में होगा, कुछेक खाते-पीते घरों के लिए स्वराज्य होगा। २४ साल हो गए, पहाड़ के गाँव-गाँव, घर-घर में न खाने-पीने का पूरा इन्तजाम है, न पूरा बिस्तरा बिछाने-ओढ़ने को है। हाँ, वहाँ टिहरी में केवल एक स्थान है जहाँ इन बुनियादी चीजों का पूरा इन्तजाम है, वह स्थान कौन-सा है? वह है टिहरी का जेल।

ऐसी हालत है हमारे देश की, और मेरे ३० साल के सार्वजनिक जीवन का निचोड़ यह है कि जब तक पहाड़ों से शराब नहीं खत्म होगी, तब तक सबसे पिछड़े, अविकसित इलाके में खुशहाली आ ही नहीं सकती। यहाँ के सामाजिक कार्यकर्ता और पढ़े-लिखे नवजवान गिने-चुने ही हैं जो इससे दूर हैं। जब मैंने उपवास शुरू किया तो ठेकेदार महोदय ने मुझसे पूछा कि, 'यह सब किसके लिए कर रहे हो, मेरी लिस्ट में तो केवल ९ नाम ऐसे लोगों के हैं जो इस शहर में शराब नहीं पीते।' मैं खुद इस चीज को काफी हद तक पहचानता हूँ। राजनैतिक दलों में मेरे ऐसे मित्रों की संख्या बहुत ही कम है जो शराब से दूर हैं।

हमारी उन्नति के लिए कितनी सरकारी, सहकारी संस्थाएँ बनीं लेकिन उनमें काम करनेवालों को इस शराब ने चौपट कर दिया। वे जिस काम को करना चाहते थे वह भी चौपट हो गया। इसीलिए मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि खुशहाली की पहली माँग नशाबन्दी की है।

यहाँ सरकारी आँकड़ों के हिसाब से शराब की खपत पिछले १६ वर्षों में ६० गुना अधिक बढ़ी। यह खपत भारत के किसी भी हिस्से से ज्यादा है।

जब मैं इस काम के लिए घूमता था तब गाँव-गाँव में मैंने माताओं को रोते पाया। शराब ने उनके परिवारों को तहस-नहस कर दिया है। मेरी माँ अनपढ़ थी, लेकिन बहुत भक्त थी। वह एकादशी के दिन ही गंगा में स्नान करते-करते इस लोक को छोड़ गयी। मुझे उनके ऋण से उऋण होना है। कैसे मैं लाखों माँ के आँसुओं को पोछूँ? यदि उस ऋण को नहीं चुका पाता तो यह जीवन निरर्थक है। मैं अपनी माँ की छाया में ज्यादा नहीं रहा, १७ बरस का था कि वह चली गयी। तब मैं उनकी छाया आप सब माताओं में पाता हूँ। आप इतनी संख्या में इस आन्दोलन में आयीं, जबकि आपको पति ने रोका, पुलिस ने धमकाया, लेकिन आपने मुझे कृतार्थ किया। आपने एक बेटे की वेदना को समझ लिया है, इसीलिए मुझे विश्वास होता है कि यह आन्दोलन केवल टिहरी-गढ़वाल के लिए नहीं, उत्तराखण्ड मात्र के लिए नहीं, वह तो पूरे भारत के सभी खण्डों के लिए है। तो भी उत्तराखण्ड की जिम्मेवारी कुछ ज्यादा है। पूरे भारत के जन मानस में यह जगह बैठी है। बिहार, कर्नाटक, तमिलनाडु, उड़ीसा, मध्यप्रदेश—देश की सभी दिशाओं से लाखों गरीब आदमी एक-एक पैसा बचाकर गंगोत्री के दर्शन के लिए आते हैं। गंगोत्री का एक आदमी भी जब वहाँ जाता है तो श्रद्धा से वे उसके चरणों में झुक जाते हैं। फिर हम ऐसे करोड़ों लोगों की भावना के साथ विश्वासघात करें?

विनोबाजी आज सूक्ष्म में प्रवेश कर चुके हैं, लेकिन उनकी इजाजत थी इस काम को करने की। आज से छह बरस पहले उन्होंने मुझे बगोरी (जिला टिहरी) में इसकी इजाजत दी थी, लेकिन कहा था कि अकेले मत करना, जनता के साथ ही करना।

आप इस घटना का अविश्वास भी मान सकते हैं लेकिन मुझे लगभग ९ महीने पहले सपने में शहीद श्री सुमन ने इस काम को आगे बढ़ाने की याद दिलायी थी। उन्हें मैं कैसे भूल सकता हूँ, भले ही वह सपना आयी हो, उनकी मूर्ति पर इस समय भी मेरी माला चढ़ी है। मुझे उनके स्वप्न बेचैन करते हैं।

आप सब भगवान के भक्त हैं। दीया बत्ती चढ़ाते हैं, कीर्तन करते हैं। सब ठीक है लेकिन यदि इस भक्ति को कर्म से नहीं जोड़ा तो वह बेकार है। जनता भगवान है। मैं जनता की भक्ति करता, उसकी सेवा करना चाहता हूँ। उसीसे मुझे नशाबन्दी के काम को चलाने की शक्ति मिलेगी। जब जनशक्ति संगठित हो गयी तो शराब-ठेकेदार का सवाल तो छोड़ ही दें, बड़े-बड़े सवालों का हल निकलने लगता है। इसलिए इतने वर्षों से मैं इस जनता की पूजा करता रहा हूँ। जनता की शक्ति बढ़े ? सीधे बड़े सवालों पर क्यों न ध्यान दें ? नहीं, इससे सफलता नहीं मिलेगी। आपने देखा होगा कि बच्चों को गणित जब पढ़ाया जाता है तो पहले जोड़-घटाव-गुणा आदि से पढ़ते-पढ़ते फिर उन टेढ़े प्रश्नों पर आते हैं जो सबसे कठिन दिखते हैं। लेकिन यदि बच्चा जोड़-घटाव में ठीक बढ़ता रहे तो वह उस टेढ़ी-सी दिखनेवाली उस भिन्न को बहुत आसानी से हल कर लेता है। तो हमारी जितनी भी टेढ़ी भिन्नें हैं, सामाजिक टेढ़ी भिन्नें, वे इस जनता से ही हल होंगी।

जनशक्ति संगठित हो रही है। इतनी बड़ी संख्या में ये माताएं-बहनें, हमारे भाई बहुत दूर-दूर से चलकर यहाँ आये हैं। बार एसोसियेशन, शिक्षक संघ, मोटर चालक संघ, उत्तराखण्ड मोटर मजदूर संघ, पटवारी संघ आदि ने इसके समर्थन में प्रस्ताव भेजे हैं। मुख्यमन्त्री का भी पत्र आया है, उसमें उनकी मजबूरी झलकती है। मैंने उनको उत्तर दिया कि कृपया ठोस कार्यक्रम बताएँ।

लेकिन मुझे यह कहना है कि यदि आप सचमुच नशाबन्दी के लिए आये हैं तो आप कुछ ठोस कदम उठाएँ। मैं मर रहा हूँ, ऐसा मानकर इतनी बड़ी संख्या में एकत्र हुए हों तो यह ठीक नहीं। श्मशान-यात्रा जीवन का एक बड़ा उत्सव होता है। लेकिन मुझे ऐसा विश्वास है कि मेरी श्मशान-यात्रा में इतने लोग न आते, नहीं शामिल होते जो मुझे चाहते थे—मेरे नजदीक थे। लेकिन आज जो आप सब उपस्थित हैं वे, ऐसा लगता है कि मुझे नहीं चाहते, शराबबन्दी को चाहते हैं, उसे क्रियान्वित देखना चाहते हैं।

आप अपने साथ ग्राम देवताओं को लेकर आये हैं। वे क्या कहेंगे यदि देवभूमि में शराब बहती रही तो। आप संकल्प करें कि जब तक उत्तराखण्ड में शराब नहीं खत्म कर लें, तब तक चैन नहीं लेंगे। आप अकेले नहीं हैं। आपके साथ सैकड़ों छात्र हैं, पटवारी हैं, शिक्षक हैं, मजदूर हैं, चालक हैं। उन सबकी संख्या लगातार बढ़े इसके लिए मजबूत संगठन चाहिए। गाँव-गाँव में मद्यनिषेध समिति बने और आन्दोलन का खर्च हर परिवार से प्राप्त एक मुट्ठी अनाज के कोष से चले। जहाँ दूकानें खुलें, वहाँ पिकेटिंग करें। आप सब यदि मुझे चाहते हैं, मेरे प्राणों को बचाना चाहते हैं तो इन कामों को उठाएँ। लेकिन काम का तरीका हमारा प्रेम, शान्ति और अहिंसा का होगा। आप की शक्ति अनन्त है। आप धार्मिक उत्सवों पर रात जागरण का व्रत लेती हैं तो पिकेटिंग को भी वैसा ही मानिये। जो हाथ आज आप मेरे लिए जोड़ रहे हैं उससे कभी भी शराब की बोतल न पकड़ना!

कुछ लोगों ने कहा कि हम ठेकेदारों को उजाड़ देंगे, शराब की दूकानों में आग लगा देंगे, यह बिलकुल नहीं हो। हमारे हाथ केवल नमस्कार के लिए उठें, मारने के लिए कदापि नहीं। मेरी निष्ठा अहिंसा है। मेरे रहते किसी को कुछ हुआ, तोड़-फोड़ हुई तो मेरी पहली आहुति होगी।

हम पुलिस के खिलाफ भी नहीं होंगे। आखिर क्यों हों, वे भी हमारे भाई हैं। मेरे पिता भी एक पुलिस के अधिकारी थे।

हमें मित्रता का दायरा लगातार बढ़ाना है। हमने ठेकेदारों से भी मिलने की कोशिश की। उनसे कहा कि वे अपने लायसेंस लौटा दें। भगवान उन्हें सद्-बुद्धि दें।

उत्तराखण्ड से यह अद्भुत काम शुरू होता था। आप सबकी जिम्मेदारी है अब इसे चलाने की। अब यह मेरा अहंकार होगा यदि मैं यह मानकर चलूँ कि इस काम के लिए केवल मैं ही हूँ। उत्तराखण्ड से नशाबन्दी का संदेश पूरे देश में फैले। (सप्रेम)

सेवाग्राम में अखिल भारत नयी तालीम सम्मेलन

सर्व-सेवा-संघ की नयी-तालीम-समिति के तत्वावधान में अखिल भारत नयी तालीम सम्मेलन, वर्धा, महाराष्ट्र में १६, १७ दिसम्बर, १९७१ को सम्पन्न होगा। बुनियादी शिक्षण संस्थाओं के शिक्षक, सर्वोदय कार्यकर्ता जो रचनात्मक काम तथा ग्रामदानी क्षेत्रों में शिक्षण का काम कर रहे हैं, शिक्षक और अन्य व्यक्ति जो गांधीजी द्वारा चलाये गये शैक्षणिक समस्याओं के हल में अभिरुचि रखते हैं उन सबको इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया है।

सम्मेलन में निम्नलिखित विषयों पर विशेष चर्चा होगी। 'शिक्षा के वर्तमान संकट : वर्तमान समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए शिक्षा में क्रान्ति की आवश्यकता' 'नयी तालीम के क्षेत्र में गैर-सरकारी संस्थाओं के अभिक्रम व उनकी समस्याएं' 'ग्रामदानी क्षेत्रों में शिक्षण की योजना।' चर्चा की फलश्रुति के तौर पर सम्मेलन देश की शिक्षण नीति पर लोगों के विचारार्थ अपना निवेदन देश के सामने रखेगा।

केन्द्र और राज्यों के शिक्षा विभागों को अपने-अपने प्रतिनिधियों को 'निरीक्षक' के तौर पर सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया है। कुछ प्रमुख शिक्षा शास्त्रियों को भी चर्चा में भाग लेने के लिए बुलाया गया है। (सप्रेस)

आश्रमों के उद्देश्य

[दिनांक १३, १४ व १५ नवम्बर, १९७१ को वि-सर्जन आश्रम, इन्दौर के कुछ कार्यकर्ता पू० विनोबाजी से पवनार (वर्धा) *स्थित उनके परमधाम आश्रम में मिले* और वि-सर्जन आश्रम के सन्दर्भ में कार्य और उद्देश्य पर उनसे चर्चा की। इस अवसर पर दिनांक १३ नवम्बर को सायं प्रार्थना से पूर्व विनोबा ने जो उद्गार प्रकट किए वे यहाँ प्रस्तुत हैं। —सम्पादक]

बाबा के द्वारा जो कुछ काम हुए उनका मूल्य आगे के जमाने में क्या होगा कहना मुश्किल है। वैसे तो सृष्टि के विशाल कार्य में मनुष्य द्वारा जो काम बनता है उसमें कुछ खास मूल्य है नहीं। वह तो बाबा के मन में साफ है।

जो काम हुए उनमें एक है आश्रमों की स्थापना। छः जगह भारत भर में छः आश्रमों की स्थापना की। जानते हुए भी कि ऐसे कई आश्रम भारत में आज हैं—अनेक कामों के लिए प्रवृत्तियाँ चलती हैं। खादी-आश्रम है, गांधी-आश्रम है, हरिजन-आश्रम है, इत्यादि इत्यादि। तो इनके रहते जो छः आश्रमों की, जो नये स्थापित किये गए, उनकी जरूरत ही क्या थी? लेकिन बाबा को यह महसूस हुआ कि ये जो पुराने आश्रम हैं वे चिरकालिक मूल्य बहुत रखते नहीं।

(१) अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह इत्यादि जो जीवन के आधार भूत व्रत हैं, उनका निष्ठापूर्वक पालन हो।

(२) श्रम को टाल करके जो भी किया जायेगा, वह आगे के जमाने के लिए निकम्मा है। इस वास्ते श्रमनिष्ठा होनी चाहिए। केवल श्रम नहीं, *श्रमनिष्ठा।*

(३) भगवान की भक्ति हो। रुटीन प्रार्थना चलती है वैसी नहीं। "सबमें रम रहिया प्रभु एकै, पेखी पेखी नानक बिग-साई"—सर्वत्र प्रभु विराजमान है, उसका निरन्तर भान यह है भक्ति। उसके लिए है—आरती, प्रार्थना, भजन, संगीत। यह साधना है, परन्तु मुख्य है भान। जो लोग निरन्तर एक साथ रहते हैं उनको एक-दूसरों की छोटी-छोटी चीजें हमेशा दीखती रहती हैं। इस वास्ते यह सारे परमात्मा के स्वरूप सामने खड़े हैं, यह भावना उनकी क्षीण होने का सम्भव रहता है। परन्तु अगर भक्ति हृदय में भरी हो और सब साधक ईश्वरद्रष्टा होते हैं—"मझो ये आतिर्वं। मण भेटो कोणी" मेरी आर्ति वाले लोग मुझे मिलें। "आवड्या हरि अन्तरा पासुनी" जिनको भगवान हृदय से प्यारे हैं, उनकी संगति में नित्य आनन्द भक्ति बढ़नी रहनी चाहिए।

फिर स्वाध्याय। आत्मस्वरूप क्या है? यह पहचानने के लिए सत्पुरुषों की वाणी इत्यादि का अध्ययन, 'केवल' ग्रंथ अध्ययन के लिए नहीं, 'स्व' के अध्ययन के लिए।

ये दो-चार चीजें हैं उनके बल से आश्रमों को स्थायी मूल्य प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार आश्रम-स्थापना का हमने उपक्रम किया तो (तब) हमारे सामने शंकराचार्य थे। उन्होंने भारत के चार कोने में चार आश्रम स्थापित किये और एक-एक शिष्य वहाँ रख दिये। अब १२०० साल हुए, वे सब आश्रम चल रहे हैं। कमजोर हुए हैं, फिर भी चलते हैं। आज भी लोगों के लिए काफी आस्था के स्थान वे हैं। सामने तो वह चित्र था। लेकिन वह पुराना जमाना था। अब यह नया जमाना आया है। इस जमाने में विज्ञान की गति बहुत तीव्र है। मनुष्यों के विचारों में पहले सौ सालों में जितना परिवर्तन हो सकता था, उतना आज दस साल में होता है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी, पुरत-दर-पुश्त एकदम विचार में बहुत अन्तर हो जाता है। ऐसी हालत में जो जमाना आगे बढ़ रहा है, उसके अनुरूप आश्रम का जो नित्य नया उज्ज्वल स्वरूप लोगों को दीख पड़े, तब इन आश्रमों की शोभा है। जो आश्रम स्थापित हुए उन सबमें यह चीज जो मैंने अभी रखी, वह साधारण है, कामन है।

इसके अलावा हरेक आश्रम का अलग-अलग कार्य है। उसके विषय में उन-उन आश्रमों की स्थापना हुई तब बाबा ने कहा था।

बाबा के मन में कई दफा विचार आता है कि आज ये आश्रम अपने उद्देश्यों के लिए बहुत योग्य साबित न होते हों तो क्या उनको बन्द न करना ठीक रहेगा? ऐसा विचार मन में आता है। परन्तु फिर भी बाबा मन से काम लेता है। यूँ सोचकर कि जिन उद्देश्यों को लेकर आश्रमों की स्थापना की गयी, वे उद्देश्य आज के जमाने के लिए और आगे के जमाने के लिए भी बहुत लाभदायी हैं तो उन उद्देश्यों से प्रेरित होकर हमसे बढ़कर अधिक योग्यतावाले लोग आगे आयेंगे। मैंने बहुत दफा कहा है, पुराना वाक्य है।

पुत्रात् इच्छेत् पराजयम्।
शिष्यात् इच्छेत् पराजयम्।

गुरु चाहता है कि उसका शिष्य उसका पराजय करे। बाप चाहता है कि पुत्र उसका पराजय करे। अगर ऐसा नहीं हुआ तो बाप ने जन्म दिया पुत्र को वह व्यर्थ गया। अगर वह आगे बढ़ते हैं तो समाज की प्रगति के लिए गृहस्थाश्रम उपयुक्त हुआ। लेकिन अगली पीढ़ी जो पैदा होती है, पुत्रों की पीढ़ी वह अगर कमजोर होती है तो गृहस्थाश्रम का उद्देश्य ही क्षीण हुआ। ऐसे ही गुरु-शिष्य के बारे में है। गुरु के बाद उसका शिष्य सवाई निकलना चाहिए। ऐसी अपेक्षा गुरु करता है। फिर बाबा यह अपेक्षा करता है कि बाबा की प्रतिभा, चिन्तन-शक्ति या भक्ति है उससे बहुत चिन्तन-शक्तिवाले, प्रतिभावान, भक्ति वाले निकलेंगे और वे इन आश्रमों का उपयोग करेंगे। और ये आश्रम ऐसे नहीं होंगे कि किसी को मिनिस्टर और प्रेसिडेंट होंगे। ऐसी आशा रख करके ये आश्रम शुरू किये।

संस्कृत में कहावत है उसका कहा है "आरम्भो हि कार्याणां। काम शुरू न

खादी : किस मोड़ पर ?

—श्री धीरेन्द्र भाई से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—

प्रश्न : विनोबाजी ने कताई सहित खादी की समस्त क्रियाओं में 'पावर' का उपयोग करने की जो इजाजत दी है, उसके बारे में आपकी राय क्या है ? 'पावर' की मर्यादा क्या होगी ?

उत्तर : विनोबाजी ने कताई सहित खादी की प्रक्रिया में पावर का उपयोग करने की जो इजाजत दी है, उसे मैं आवश्यक मानता हूँ। आज पावर सर्वव्यापी हो गया है। अतः स्वभावतः मनुष्य अब हाथ से काम नहीं करना चाहेगा। लेकिन समाज-व्यवस्था में पावर के इस्तेमाल के विषय में विवेक रखना होगा। पावर का इस्तेमाल घर-घर हो, यह इष्ट है, लेकिन उसका इस्तेमाल दूसरे के शोषण के लिए हो चाहे व्यक्तिगत हो, समूहगत या राष्ट्रगत हो, हर्गिज नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : अगर पावर का कता सूत और पावरलूम पर बना कपड़ा खादी में बैठ जाता है तो फिर मिल के कपड़े के उपयोग में क्या हर्ज है ?

उत्तर : खादी उद्योग के रूप में नहीं चल सकेगी। अगर उद्योग के रूप में चलाना चाहेंगे तो आपके प्रश्न के सन्दर्भ में कहना होगा कि पावर के चर्खे और पावर के लूम से बनी खादी में और मिल के कपड़े में कोई फर्क नहीं रह जायगा, क्योंकि उसमें खादी के मूल विचार की रक्षा नहीं होगी। उद्योग बाजार के कानून से चलेगा और बाजार में सिद्धान्त और भावना का स्थान नहीं होता है। लेकिन अपने कपड़े के लिए पावर से सूत काता जाता है और करघे पर बुनवा लिया जाता है तो वह खादी होगी। मिल के कपड़े से भिन्न होगी। उसमें बाजार नहीं रहेगा इसलिए शोषण नहीं होगा।

प्रश्न : एक या दो तकुवे के चरखे से तो खादी महँगी पड़ेगी। गाँववाले खरीदेंगे नहीं। इससे ज्यादा अधिक तकुवे का चरखा चले तो खादी सस्ती होगी और ग्रामस्वावलम्बन आसान होगा।

उत्तर : मैंने अभी कहा है कि खादी बाजार से बाहर की चीज है। वह घरेलू चीज है। मेरी निश्चित राय है कि चरखा अपने मूल मंत्र को छोड़कर नहीं चल सकता है। वह मूल मंत्र है 'चरखा अहिंसा का प्रतीक है।' इसी मंत्र के अनुसंधान में तकनीक की बातें सोचनी होंगी। इसका भी संकेत खुद गांधीजी ने कर दिया है। 'जो काते सो पहने और जो पहने वह अवश्य काते।' इसका अर्थ यह हुआ कि चरखा परिवार-उद्योग की चीज है। परिवार को छोड़ कर अहिंसक समाज नहीं बन सकता, क्योंकि अहिंसा की शक्ति से ही परिवार चल सकता है। सहकारी समाज भी पूर्ण अहिंसक समाज नहीं बन सकता। क्योंकि सहकारी समाज में सहकार वैधानिक होता है और परिवार का सहकार भावना प्रेरित तथा स्वयंस्फूर्त होता है। गांधीजी ने कहा था कि 'अहिंसक समाज का रचना सामुद्रिक वर्तुलों (ओशनिक सर्किल) में होना चाहिए। इन वर्तुलों का केन्द्र बिन्दु परिवार ही हो सकता है। क्योंकि उसकी परिभाषित और सुस्पष्टिक संस्था होता है। जिस हद तक समाज को पारिवारिक भूमिका में विकसित किया जा सकेगा, उसी हद तक अहिंसक समाज वास्तविक होगा। इसलिए विनोबाजी कहते हैं कि ग्राम-परिवार बनने से ही ग्रामस्वराज्य होगा।

परिवार भी सहज तथा स्वाभाविक तब होगा जब उसका वातावरण आनन्ददायक क्रियाशीलता से गूँजता रहेगा। परिवार के आँगन से कुल उद्योग निकाल लेने से वहाँ उपयोगी तथा आनन्ददायक क्रियाशीलता की गूँज समाप्त हो जायगी। फिर वहाँ जो उबानेवाला वातावरण पैदा होगा, उसमें से विकार पैदा होंगे और पारस्परिक स्नेह का ह्रास होगा। जब बुनियाद में अहिंसा का या स्नेह का वातावरण नहीं रहेगा, तो समाज का विकास नहीं हो सकेगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि हर घर में ऐसा उद्योग हो जिसमें घर के लोग व्यस्त रहें, लेकिन उस व्यस्तता में आनन्द और आराम भी मिलता रहे यानी गृह-उद्योग के औजार वैसे बनाने होंगे। आमतौर चाहे जो करें, लेकिन दो उद्योगों को परिवार के लिए छोड़ दें जिनके माध्यम से परिवार का वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक विकास हो। वे दो उद्योग हैं चूल्हा और चरखा। मेरा मन तीसरे उद्योग 'चक्की' को भी इसमें जोड़ने का है और उसमें भी वैज्ञानिक खोज होनी चाहिए। लेकिन फिलहाल मैं उसका आग्रह नहीं रखता।

विज्ञान तकनीक का विकास करते हुए और साथ साथ हाथ को खाली करते हुए 'आटोमेशन' से आगे बढ़कर 'साइबरनेशन' तक पहुँच गया है। जिसके फलस्वरूप विशेषज्ञों का कहना है कि अमेरिका में कुल उद्योगों के लिए ३०० आदमी लगेंगे। फिर आज के युग में ज्यादा रूप से समता का नारा लग रहा है। तब ३०० आदमी भी क्या काम करें ? साम्य की माँग है कि हर आदमी काम करे या कोई न करे। कोई काम न करे यह सम्भव नहीं है। क्योंकि उत्पादन तो चाहिए ही। इसलिए ऐसी युक्ति निकालनी चाहिए कि सब काम करें। लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि विज्ञान के युग में उबानेवाला काम कोई नहीं करेगा, भले ही भूखा मर जाय। इसलिए ऐसे औजारों का

—चरखा यह अहल नम्बर एक, सर्वोत्तम असल। लेकिन अब नम्बर एक गयी, क्योंकि आश्रमों का आरम्भ कर दिया। जो शुरू किया है उसको परिपूर्ण करना, यह अब नम्बर दो है। तो कम-से-कम दो नम्बर अब तो होनी चाहिए।

जैसा विसर्जन आश्रमवालों ने सोचा होगा, अगर यह लगे कि जिन उद्देश्यों से स्थापित किया है, उनकी पूर्ति इन आश्रमों से बहुत कम है तो उनको समाप्त कर दो (सर्वेत)

पवनार, १३ नवम्बर, १९७१

प्रकार करना होगा, जिससे निम्न सिद्धान्त चरितार्थ हो :

हर हाथ को काम
हर तन को आराम
हर मन को आनन्द

एक तकुवे के चरखे के छोर को पकड़ कर ही इस सिद्धान्त को चरितार्थ किया जा सकता है।

विज्ञान के इस युग में हर मनुष्य को जन्म से वैज्ञानिक दृष्टि और चरित्र निर्माण का अवसर मिलना ही चाहिए, नहीं तो आज की नौकरशाही के साथ-साथ विशेषज्ञ-तंत्र जुड़ जायगा, इसलिए भी घरेलू उद्योग की आवश्यकता है।

उपरोक्त सिद्धान्त के अनुसार मैं मानता हूँ कि चरखा चाहे पावर से चले, लेकिन एक तकुवे का चरखा ही चलाना चाहिए। हर घर में एक तकुवे का चरखा चलने पर भी जितना कपड़ा चाहिए उससे अधिक ही सूत कत जायगा। खाना बनाने के सरंजाम के विकास के साथ-साथ ऐसी परिस्थिति निर्माण होगी, जिससे खाना बनाने के साथ बगल के टेबुल पर बिजली चालित एक तकुवे के चरखे पर ध्यान देना कतई कठिन नहीं होगा।

प्रश्न : पावर की इजाजत दी जायगी तो चालू कातनेवाली कत्तिनों का क्या होगा ?

उत्तर : एक बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि चरखे को मजदूरी, रोजगार या उद्योग की दृष्टि से नहीं चलाना चाहिए। अगर चलाने की कोशिश करेंगे तो भी नहीं चलेगा। क्योंकि वैसी स्थिति में आप चाहे जितनी हिकमत लगाइये उसका कपड़ा बाजार की स्पर्धा में टिक नहीं सकेगा। केवल बेकारी-निवारण की दृष्टि से भी दूसरे कामों के मुकाबिले चरखा शायद ही टिक सके।

अनुभव के आधार पर मैं कहना चाहता हूँ कि खेती, गोपालन के प्रश्न को अलग रखकर बेकारी की समस्या हल नहीं की जा सकती। रासायनिक खाद और यांत्रिक खेती से हरित क्रान्ति होती रहे और चरखे से बेकारी की समस्या हल हो, यह असम्भव है। चरखे को छोड़कर बाकी ग्रामोद्योग और खेती में श्रम की प्रक्रिया को बढ़ाकर हरित क्रान्ति के प्रयास से ही बेकारी की समस्या हल हो सकती है। दूसरा कोई तरीका नहीं है, ऐसा मैं मानता हूँ। अगर आप लोग सोचते हैं कि केवल ग्रामोद्योग से ही बेकारी की समस्या हल कर लेंगे, तो यह अत्यन्त भ्रामक ख्याल है।

प्रश्न : आज तक का अनुभव यह है कि पूनी अच्छी होने से ही सूत और खादी अच्छी होती है। मिल का प्लांट ब्लाक स्तर पर लगाया जाय तो कैसा रहेगा ?

उत्तर : पूनी के लिए मिल का प्लांट ब्लाक स्तर पर लगाओगे, तो जिला या प्रान्त स्तर पर क्यों न लगाओ, इसका उत्तर नहीं दिया जा सकता। स्वराज्य यानी ग्रामस्वराज्य की भूमिका में ग्राम स्तर के प्लांट के लिए तर्क शुद्ध उत्तर है, जो ब्लाक स्तर के लिए नहीं है। मैं मानता हूँ कि अगर कताई उद्योग को आनन्ददायी बनाना है तो पूनी सर्वोत्तम होनी चाहिए। जिसका आदर्श विनाकोत की मसलिन कताई की पूनी हो सकती है। अगर आपका विज्ञान उस स्तर की पूनी बनाने के लिए ग्राम स्तर का प्लांट नहीं बना सका है, तो फिलहाल ग्रामाभिमुख दृष्टि रखकर सधिकाल के लिए ब्लाक स्तर का प्लांट बना सकते हैं। लेकिन जल्दी वह प्लांट ग्राम स्तर का बन जाय, इसका भगीरथ प्रयास करने की जरूरत है, नहीं तो आप खादी के विचार की भूमिका में पिछड़ जायेंगे। आज जहाँ है वहाँ रहना कठिन है। आगे बढ़ना होगा या पीछे हटना होगा।

प्रश्न : भविष्य में खादी का जो कार्य चलेगा वह वर्तमान खादी-संस्थाओं या ग्रामसभाओं के मार्फत चलेगा या और किसी तरीके से चलेगा ?

उत्तर : भविष्य में खादी ग्रामस्वराज्य सभाओं के द्वारा ही चलेगी। किसी संस्था द्वारा चलेगी तो वह घूम-फिर कर बाजार के जाल में फँस जायगी। यहाँ एक महत्वपूर्ण मुद्दे की ओर ध्यान देना चाहिए। इस युग में कोई भी चीज तभी चलेगी जब उसके लिए सरकारी-संकल्प या लोक-संकल्प होगा। तभी प्रतिद्वन्दी का बहिष्कार होगा। केवल संस्था-संकल्प या जमात-संकल्प से कोई चीज चल नहीं सकती। इसीलिए ग्रामाभिमुख खादी नहीं चलेगी। खादी अभिमुख ग्राम बनाने का प्रयास करना होगा। खादी जड़ है और ग्राम चेतन है। ग्राम ही खादी की तरफ जा सकता है।

प्रश्न आज की खादी संस्थाओं और आज की खादी का भविष्य क्या होगा ?

उत्तर अब तक मैंने जो कहा है उससे स्पष्ट हो गया होगा कि आज की खादी संस्थाओं का और आज की खादी का भविष्य शून्य है।

प्रश्न : आपने हर घर में कताई की बात कही है। यह अगर होता है तो बुनाई सब्सीडी का वास्तविक स्वावलम्बन के लिए उपयोग हो सकता है। इस विषय में आप क्या सोचते हैं ?

उत्तर . चरखा अगर अहिंसा का प्रतीक है और स्वराज्य का साधन है तो बुनाई सब्सीडी ग्रामस्वराज्य की तरफ से मिलनी चाहिए, न कि सरकार की तरफ से। यानी गाँव में कुम्हार, नाई आदि की सेवा की तरह ही बुनाई की सेवा का नियमन करना होगा। तब तक कुछ अवधि के लिए सरकारी सब्सीडी के बारे में सोच सकते हैं। जब तक ग्राम-समाज को सब्सीडी मुक्ति के लिए जागरूक नहीं बनायेंगे, तब तक यह सब्सीडी खादी को मारनेवाली प्रभावकारी साधन ही बनी रहेगी। (श्री राधाकृष्ण बजाज के साथ हुए प्रश्नोत्तर)

एक तुलनात्मक अध्ययन

सर्वोदय का क्रान्ति-दर्शन और पश्चिम का अराजकतावाद

—ज्यॉफ्रे आस्टरगार्ड तथा मेलविल करेल

यद्यपि सर्वोदय और अराजकतावाद में बहुत समानता है, फिर भी फर्क बहुत है। सर्वोदय आन्दोलन को समझने के लिए दोनों के अन्तर को समझना अधिक महत्वपूर्ण है। अराजकतावाद के बड़े विचारकों में केवल टाल्सटाय की अराजकता का आधार धार्मिक था। पश्चिमी अराजकतावादियों में, बहुसंख्यक ने, बाकुनिन की तरह, भगवान और राज्य को एक साथ जोड़ दिया है। और इसी कारण वे दोनों को मानने से इनकार करते हैं। पश्चिम में नास्तिकता और अराजकतावाद एक दूसरे का पर्याय है। सर्वोदय का अराजकतावाद बुनियादी तौर पर धार्मिक है, भगवान में दृढ़ विश्वास और आत्मा के महत्व पर आग्रह, अधिकतर सर्वोदयियों (सभी के नहीं) के दर्शन की बुनियाद है। उनके धार्मिक दृष्टिकोण की सार्वभौमिकता एक महत्वपूर्ण बात है। गांधी और विनोबा हिन्दू हैं, परन्तु वे हिन्दू धर्म के लिए कोई विशेष स्थान का दावा नहीं करते। वे मानते हैं कि सभी धर्म भगवान को पाने के विभिन्न रास्ते हैं। गांधी के अनुसार एक सच्चा नास्तिक भी एक धार्मिक व्यक्ति हो सकता है। अगर वह नास्तिक सदाचार के व्यवस्थित और नैतिक सत्ता में विश्वास रखता है, तो भगवान को न मानने के बावजूद उसमें धर्म के तत्व हैं। गांधी के नजदीक सत्य ही भगवान है, यह भगवान की सबसे पूर्ण परिभाषा है। स्पष्ट तौर से सर्वोदयियों के लिए, धर्म का महत्व एक निरपेक्ष नैतिक व्यवस्था में है।

निष्क्रिय प्रतिरोध और सत्याग्रह

भगवान में विश्वास और नैतिकता सम्बन्धित हो जाते हैं। नैतिक निषेधाज्ञा निरपेक्ष बन जाती है। नैतिक निरपेक्षता यह बताती है कि पश्चिमी अराजकतावादियों (जैसे—गॉडविन और क्रोपाटकिन) से, जिन्होंने अपने नैतिक सिद्धान्तों को प्रकृति और सुविधावाद का आधार दिया है, सर्वोदयवालों का कितना अन्तर है। नैतिकता के सम्बन्ध में विभिन्न दृष्टिकोणों का परिणाम सर्वोदय के केन्द्रीय नैतिक सिद्धान्त-अहिंसा में स्पष्ट तौर से दिखाई देता है।

सर्वोदयवालों के लिए अहिंसा वाद-विवाद का प्रश्न नहीं है, बल्कि वह है कि या तो इसे स्वीकृत किया जाय या छोड़ दिया जाय। उनके अनुसार इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस सिलसिले में यह महत्व की बात है कि गांधी की नजर में निष्क्रिय प्रतिरोध और सत्याग्रह में अन्तर है। निष्क्रिय प्रतिरोध वह तरकीब है, जो उन लोगों के द्वारा प्रयोग किया जाता है जो विशेष परिस्थिति में हिंसा के प्रयोग को उचित मानते हैं। निष्क्रिय प्रतिरोध के प्रयोग का आधार यह है कि प्रतिरोध करनेवाला के पास प्रतिरोध का कोई और साधन है जो उतना ही प्रभावशाली है। इस प्रकार की अहिंसा को गांधी कमजोरों की अहिंसा मानते हैं। सत्याग्रह मजबूत लोगों की अहिंसा है, जिसे इसलिए अपनाया जाता है कि यही केवल नैतिक तौर पर सही कार्रवाई लगती है। इसका प्रयोग उस समय भी होगा, जबकि प्रतिरोध करनेवालों के पास उससे अच्छी शारीरिक शक्ति भी है। आज कुछ ही पश्चिमी अराजकतावादी अहिंसा को केवल नैतिक निषेधाज्ञा मानेंगे। यद्यपि बहुत सारे आक्रमणात्मक हिंसा को सुरक्षा की हिंसा से तुच्छ मानने के लिए तैयार होंगे। बहुत सारे शान्ति में विश्वास रखनेवाले अराजकतावादी यह भी कहेंगे कि किसी भी परिस्थिति में हिंसा का प्रयोग उचित नहीं होगा।

अहिंसा कट्टरता के साथ नहीं

सर्वोदय के लोग अहिंसा को पूर्णतः मानते हैं, परन्तु कट्टरता के साथ नहीं। उसमें पश्चिम के लोगों को असामंजस्य नजर आता है। कट्टरता की कमी का कारण गांधीजी का अन्तिम सच्चाई पर आग्रह, अपूर्ण मानकर चलना है जो मानव को अपरिचित है। एक मनुष्य कितना ही अच्छा क्यों न हो, वह केवल सापेक्षिक सत्य तक ही पहुँच सकता है। चूंकि अहिंसा सत्य का रास्ता है, इसलिए कोई भी मनुष्य पूर्णतः अहिंसा प्राप्त नहीं कर सकता है। मनुष्य आमतौर से अहिंसक होता है, आदर्श केवल मृत्यु के बाद ही प्राप्त होता है। इसीलिए बहुत सारे सर्वोदयी, १९६२ के चीन-भारत युद्ध के जमाने में यह मानते थे कि गांधी और विनोबा के प्रयत्नों के बावजूद, भारत के लोग इतने मजबूत नहीं थे कि अहिंसा अपनायें। और चूंकि सही अहिंसा दिलेरी का सिद्धान्त है, और कायरता की अहिंसा से हिंसा अच्छी है, इसलिए सैनिक प्रतिरोध भी ठीक है, परन्तु सर्वोदयी इसमें स्वयं भाग नहीं ले सकते।

इस विचार के कारण पश्चिमी अराजकतावाद और सर्वोदय में और भेद बढ़ जाता है। अराजकतावाद यह मानता है कि लोगों के लिए यह सम्भव है कि एक व्यवस्थित जीवन बिना राज्य के बितायें। परन्तु अभी उनके लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है। बाकुनिन के स्वतः प्रेरित क्रान्ति के दृष्टिकोण के अनुसार, जनता दृढ़ क्रान्तिकारियों से प्रेरणा पाकर, जल्दी ही उठेगी, और सदा के लिए राज्य की बनावटी जंजीर तोड़ फेंकेगी। सर्वोदयी अराजकता के उद्देश्य को इसी प्रकार देखते हैं, जिस प्रकार गॉडविन देखता था, अर्थात् ऐसी कोई चीज मनुष्य उसी समय प्राप्त कर सकेगा, जब वह पूर्ण हो जायेगा। यह परिस्थिति जिसे पश्चिम में 'दार्शनिक अराजकतावाद' कहते हैं, यह बताती है कि सरकार की संस्था के सम्बन्ध में सर्वोदय में स्पष्ट असामंजस्य, क्या है। जब तक सारे लोग, या उनका एक बड़ा भाग, सरकार निरपेक्ष-समाज के

लिए अनुकूल नहीं है, उस समय तक सरकार रहेगी।

राज्यमुक्ति की ओर

इस परिस्थिति में समझदारी की बात यह है कि जो सरकार सबसे अच्छी हो, समाज जिसके योग्य हो, उसे स्वीकार किया जाय। सर्वोदय के लिए वह लोकतांत्रिक सरकार ही है—अपने सभी दोषों के बावजूद। विनोबा ने राजनीतिक विकास की तीन स्पष्ट मंजिलों की बात की है: पहली, एक स्वतंत्र केन्द्रीय सरकार; दूसरी, विकेन्द्रित आत्मशासित राज्य, और तीसरी, पूर्णतः अराजकता, या सभी प्रकार की सरकारों से मुक्ति। राजनैतिक स्वतंत्रता का मिलना इस सिलसिले में भारत के लिए पहली मंजिल थी, पंचायतीराज का आना दूसरी मंजिल। सर्वोदय का राजनैतिक प्रस्ताव, जिसमें दल-निरपेक्ष लोकतंत्र सम्मिलित है, दूसरी मंजिल को विकास देनेवाले तत्व समझे जाते हैं। सर्वोदय के विचार से राज्य-निरपेक्ष समाज, उतनी ही उन्नति करेगा, जितनी लोगों में आत्मनिर्भरता आयेगी और आत्मशासित संस्थाएं बनेंगी। इस विकेन्द्रित तरह के राज्य पर केन्द्र द्वारा कोई प्रत्यक्ष आक्रमण नहीं होगा। यद्यपि ये विकेन्द्रित आत्मशासित राज्य पूर्ण अराजकता की ओर बढ़ते रहेंगे।

यह विचार अराजकतावाद और मार्क्सवाद से भिन्न है। मार्क्सवादियों की तरह, अराजकतावादियों की तरह नहीं, सर्वोदय मानता है कि एक खास परिस्थिति में राज्य शून्य हो जायेगा। परन्तु अराजकतावादियों की तरह, और मार्क्सवादियों की तरह नहीं, वे यह मानते हैं कि संघटित और अन्तिम हिंसा की संस्था से मुक्ति पाने के लिए अभी कार्रवाई करनी चाहिए।

यह स्पष्ट है कि अनैतिक साधनों से कोई नैतिक उद्देश्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। कर्म के इस दर्शन को एक राज्य-निरपेक्ष समाज का अन्तिम उद्देश्य बनाने से यह स्पष्ट है कि साधन और उद्देश्य के मिश्रण का अर्थ है कि परिवर्तन का कोई संधिकाल नहीं है, या फिर हर काल संधिकाल है। एक गांधीवादी इन सिद्धान्तों के द्वारा काम करता है, और अपना उद्देश्य—सत्य और अहिंसा—साधन और उद्देश्य दोनों रूप में प्राप्त करता है।

सोरेल और बर्न्सटाइन की तरह उसके लिए "आन्दोलन ही सब कुछ है, उद्देश्य कुछ भी नहीं है।" यह कहा जा सकता है कि सर्वोदय 'यूटोपिया'—दूर-भविष्य में प्राप्त होनेवाली चीज नहीं है, यह वह चीज है जो मनुष्य यहीं और अभी प्राप्त कर सकता है। महत्वपूर्ण बात यूटोपिया पर पहुंचना नहीं है, बल्कि उस दिशा में जाने का प्रयास करना है, और यह केवल उन लोगों के द्वारा किया जा सकता है जो सच्चाई, प्यार और करुणा से काम लें। यह कहा जा सकता है कि ऐसा यूटोपिया उद्देश्य नहीं है। यह मूल्यों को आकार और ठोस रूप देने के बारे में सोचने का आसान तरीका है, भविष्य के लक्ष्य के लिए नहीं, बल्कि अभी के लक्ष्य के लिए मार्गदर्शक है।

केवल प्रतिरोध से संतोष नहीं

सर्वोदय और अराजकतावाद में एक और भी अन्तर है। यह कहना गलत होगा कि पश्चिमी अराजकतावादियों को रचनात्मक कार्यों से कोई दिलचस्पी नहीं थी। अराजकतावादियों द्वारा 'कोआपरेटिव' और 'समुदाय' बनाने की बार-बार कोशिशें हुई हैं, और अराजकतावादी सिंडिकलिस्ट यह मानते थे कि मजदूरों की ट्रेड यूनियन बनाकर वे नये समाज का संघटन कर रहे हैं। परन्तु मुख्य तौर से पश्चिमी अराजकतावादी बाकुनिन का यह कहना मानते रहे हैं कि 'ध्वंस करना ही एक प्रकार की रचना है।' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में अराजकतावाद प्रतिरोध का आन्दोलन मालूम होता है, पूरे समाज और आधुनिक औद्योगिक समाज के राजनैतिक बनावट के विरुद्ध प्रतिरोध का। जबकि सर्वोदय का काम करने वालों को कभी भी केवल प्रतिरोध से सन्तोष नहीं हुआ है। रचनात्मक कार्यक्रम पर उनका सदा जोर रहा है। गांधी के रचनात्मक कार्यक्रम में, स्वावलम्बन पर जो जोर है वह सर्वोदय और अराजकतावाद के दूसरे अन्तर को बताता है। यद्यपि पश्चिम का अराजकतावाद त्याग और तपस्या प्रधान रहा है, और जीवन को सरल और सादा बनाने का प्रयास रहा है, परन्तु भारतीय अराजकता में त्याग का पक्ष उससे बहुत आगे का है। सर्वोदयी अराजकतावादी का त्यागी और तपस्वी रूप गांधी के उन मूल्यों से स्पष्ट होता है, जो उन्होंने आत्मशोधन के लिए अपनाये थे: सत्य और अहिंसा के अतिरिक्त वे मूल्य हैं ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अपरिग्रह, अस्तेय, अभय, अभेद, उत्पादक-श्रम (जीविका प्राप्त करने लायक), सर्व धर्म समभाव और स्वदेशी। पश्चिमी अराजकतावाद की जो विशेषता है—मुख्य तौर से सेक्स सम्बन्धी स्वतंत्रता पर जोर, उसका भारतीय अराजकतावाद में एक अंश भी नहीं है। सर्वोदय, और पश्चिमी अराजकतावाद की व्यूह रचना में भी बड़ा अन्तर है।

सर्वोदयी क्रान्ति के मूल्यों को 'पुन-मूल्यांकन का तत्व मानते हैं' जो क्रान्ति का पहला कदम है। बुद्धि और विवेक को अपील करके व्यक्ति को बदलना जो नये मूल्य चुने गये हैं, उनका समाज की समस्याओं से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है, जैसे कि भूमिहीन मजदूर की समस्या के हल के लिए प्रयत्नशील होने से मौलिक सामाजिक परिवर्तन होगा। यह क्रान्ति उन व्यक्तियों के द्वारा होती है जो नये सामाजिक मूल्यों के अनुसार जीवन बिताते हैं। ग्रामदान इसका एक उदाहरण है। इसलिए कुछ लोगों ने इसे एक आदमी की क्रान्ति भी कहा है। चूंकि नये मूल्यों के अनुसार जीवन बिताना कठिन है, इसलिए एक कार्यक्रम बनाया जाता है, ताकि साधारण आदमी नये समाज की ओर आसानी से बढ़ सके। धीरे-धीरे सहकारी प्रयोगों से, लोग बड़ी संस्थाएं और नया सामाजिक जीवन बनाते हैं। यह दृष्टिकोण सामाजिक

परिवर्तन का दृष्टिकोण है, केवल व्यक्ति के परिवर्तन का नहीं। यह समाज को उग्रवादी तरीकों से नहीं बदलता। सर्वोदय में विश्वास रखनेवाले सामाजिक रचना बदलने से अधिक मनुष्य के परिवर्तन पर इसलिए जोर देते हैं कि उनका विश्वास है कि व्यक्ति ही क्रान्ति करता है। जिस सामाजिक रचना की आवश्यकता है, उसे केवल वही लोग प्राप्त कर सकते हैं, जो नैतिक तौर पर विकसित हैं। वे मानते हैं कि अगर नये विचार को अनुकूल परिस्थिति नहीं मिलती है, तो वह संकीर्ण दायरे में कैद रहता है। व्यक्ति को नये मूल्यों में, परिवर्तित करने के लिए, सर्वोदय आन्दोलन सभी स्त्री-पुरुषों से अपील करता है।

सबसे बड़ी विशेषता

सर्वोदय की क्रान्ति की कार्य पद्धति में किसी खास वर्ग से अपील नहीं की जाती और यह इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। जबकि पश्चिमी अराजकतावाद का विकास एक संगठित सामाजिक आन्दोलन के रूप में क्रान्तिकारी की मार्क्सवादी रणनीति के आधार पर हुआ। बाकुनिन, क्रोपाटकिन और सिंडिकलिस्टों का अराजकतावाद मार्क्सवाद से पथभ्रष्ट हुआ था। पूँजीवादी समाज के विश्लेषण में अराजकतावाद और मार्क्सवाद में बहुत समानता है। सर्वोदय में वर्ग से अपील या वर्ग संघर्ष नहीं है क्योंकि यह मानता है कि किसी भी व्यक्ति या समूह का वास्तविक हित सारे मनुष्यों से कभी भी टकराता नहीं है। इस लिहाज से सर्वोदय-आन्दोलन ब्रिटेन के 'यूटोपियन समाजवाद' से मिलता-जुलता है। सर्वोदय, ओवेनिज्म की तरह, अपने आपको संसार व्यापी आन्दोलन मानता है।

अपने कार्यक्षेत्र में यह विशेष सामाजिक 'भूखों, नंगों, दीनों' की विषमता मिटाना चाहता है परन्तु इसकी पूरी मानवता से दिलचस्पी है। सर्वोदय समाज उस समय साकार होगा जबकि सभी लोग इस दर्शन को अपने दैनिक जीवन में जीयेंगे। इस अहिंसक क्रान्ति का मापदण्ड यह होगा कि जिस हद तक सर्वोदय एक अलग आन्दोलन नहीं रहता और अपने आपको इस तरह मिटा देता है कि 'आन्दोलन' और 'समाज' में कोई अन्तर न रहे। (सर्वोदय आन्दोलन पर लिखे गये बहुचर्चित ग्रंथ 'दी जेंटिल अनार्किस्ट्स' से)

—अनुवादक: सैयद मुस्तफा कमाल

विनोबा निवास से

ज्ञानी अपने को गुलामी से मुक्त करें

—विनोबा

शाम का समय है। चिराग नहीं है, फिर भी काले बादल मंडराते हैं, अकस्मात आंधी शुरू होती है। जामुन, अमरूद, पपीता, नारियल, सारे वृक्ष जोर से झूमने लग जाते हैं। पत्ते भी उड़ने लगते हैं और शुरू होती है वर्षा। भोजन-गृह से बहनें दौड़ती-भीगती कमरे की ओर जाती हैं। खाट पर बैठे, खिड़की से बाहर का यह दृश्य बाबा एकटक देखते हैं। सफाई के लिए तो जा नहीं सकते हैं, इसलिए बैठे हैं। धीमी आवाज में बोलना शुरू करते हैं, "अब मैं कर्तव्यहीन रहा था।" और उँगलियों पर गिनना भी शुरू होता है "भूत-विस्मरण, प्रेमस्मरण, मधुरभाषण, गुणोच्चारणम्" ये चार हो गये। यह पूर्ण साधना है। अगर पांचवां जोड़ना हो तो जोड़ सकते हैं, विश्वपूजनम्। बाबा के दोनों हाथ जुड़ जाते हैं, नमस्कार के लिए। मानो सामने विश्वरूप विश्वात्मा खड़ा हो। खामोशी छा जाती है। वर्षा के पानी के छींटे अन्दर आते हैं। धीरे-धीरे बाबा का कमरा भर जाता है। प्रार्थना होती है। दिन समाप्त होता है।

ब्रह्म विद्या के सूत्र

दूसरे दिन सुबह का दूसरा प्रातराश खतम होते ही बाबा कलम मांगते हैं। इन दिनों बाबा अपने पास खाट पर न कलम रखते हैं, न कोई नोटबुक, जिसमें आगन्तुक को कुछ कहना हो तो लिख सकें। ऐसी नोटबुक भी हट गयी है। जरूरत पड़ने पर किसी की कलम ले लेते हैं। वैसे ही कलम मांगी और उनके पास जो "गुटका" (गीताई, विष्णुसहस्रनाम तथा अभंग आदि, इकट्ठा बांधी हुई किताब) रहता है, उसमें प्रथम पृष्ठ पर लिखा —

काल—जारणम्, स्नेह—साधनम्
कटुक—वर्जनम्, गुण-निवेदनम्

बस इतना ही लिखकर उन्होंने गुटका बाजू में रख दिया। रात के चिंतन से शायद कल शाम के उन शब्दों का यह नया संस्करण सूझा हो। दो दिन बाद शाम की प्रार्थना के पहले इसी का जिक्र हुआ।

'स भूत स च भव्य जिज्ञासापित-पुरित जारयिष्ठा'—भूत के लिए आसक्ति होती है, भव्य यानी भविष्य के लिए जिज्ञासा होती है। मथुरा जायेंगे, मिठाई खायेंगे, आगरा जायेंगे, ताज देखेंगे। क्या करेंगे इसके बारे में जिज्ञासा। इसका नाम है आगे क्या करेंगे इसके बारे में जिज्ञासा। दोनों की जारयिष्ठा, यानी दोनों का जारण करो। इसलिए हमने कहा कालजारणम्।

स्नेह साधनम्—हमारी शक्ति है स्नेह। सामने दुश्मन खड़ा है। तो हमें क्या करना चाहिए? लव दाय एनिमी (दुश्मन पर प्यार करो)। सामने पड़ोसी खड़ा है, तो क्या करना चाहिए? लव दाय नेबर (पड़ोसी पर प्यार करो)। मान लीजिए, अपने परिवार का ही व्यक्ति सामने खड़ा है, तो हमें क्या करना चाहिए? लव वन अनदर (एक दूसरे पर प्यार करो)। तीनों हालत में प्रेम के सिवाय कुछ करना ही नहीं। शत्रु हो, पड़ोसी हो, स्नेही, साथी हो, एक ही स्नेह साधनम्।

कटुकवर्जनम् यानी पुरानी बातें भूल जाना कठिन है। दादा, परदादा से

यानी वंशपरम्परा से कुछ चीजें याद रखी जाती हैं। कठिन तो है। किन्तु कठिन काम के लिए ही हमारा जन्म है। कालजारणम् की आज्ञा उपनिषद् की है और स्नेहसाधनम् की आज्ञा ईसा की है। कटुक वर्जनम् की आज्ञा कबीर की है। गुणनिवेदनम् की आज्ञा माधवदेव की है। माधवदेव ने लिखा है कि 'उत्तमोत्तमे अल्पगुणक करय विस्तार।' जो उत्तमोत्तम पुरुष होता है वह थोड़े से गुण को बड़ा कर देता है। यह चार साधना है। अगर यह सध जाये तो ब्रह्मविद्या सध जायेगी। ब्रह्मविद्या मन्दिर के लिए हमने यह सूत्र बनाया। इससे सामूहिक साधना सधेगी।

घट घट में साईं रमता,
कटुक वचन मत बोल।

सामूहिक समाधि

बाबा मन्दिर में बैठे-बैठे गा रहे थे। कबीर के दो चार भजन बाबा को प्रिय हैं, उनमें से यह एक है। उस दिन बाबा बहुत गम्भीर थे। बाद में उन्होंने कहा 'मीठे वचन तो बड़े-बड़े मुत्सद्दी भी बोलते हैं। वे मीठा-मीठा बोलेंगे, हँसेंगे और दूसरी तरफ लड़ाई की तैयारी करेंगे। इसलिए कटुवचन नहीं बोलना चाहिए, यह कहने के लिए कबीर की जरूरत नहीं। वह तो मुत्सद्दी भी कहते हैं। लेकिन कबीर कहता है वह इसलिए कि घट-घट में है साईं रमता। हम मन्दिर में भगवान की पूजा आरती तो करते हैं और साक्षात् जो भगवन्मूर्ति सामने खड़ी है उसका अपमान करते हैं। हम किसी से बात कर रहे हैं तो भगवान से ही बात कर रहे हैं ऐसा समझकर बात करनी चाहिए। अब कटुक वचन की व्याख्या कौन सी? सामनेवाले को क्या लगा, उस पर से कटुता की परीक्षा होगी। अगर उसका हृदय दुखा तो समझना चाहिए कि हमारा वचन कटु था। कटु न बोलना इतना ही काफी नहीं। किसी के लिए चित्त में भी कटुता नहीं आनी चाहिए। इसका ख्याल किया करो, लिख कर रखो कि जिस दिन हमारे चित्त में दूसरे के लिए कटुता आयी। चित्त में किसी के लिए भी कटुता नहीं आयी, ऐसा होगा तब सामूहिक समाधि सधेगी।'

फिर गुनगुनाने लगे—दिन-दिन बढ़त सवी। साधो सहज समाध भलो!

'आपकी फोटो खींचता हूँ, ठहरिए!' रास्तापथ पर टहलनेवाले बाबा को आज्ञा देनेवाली वह बालमूर्ति है गुजरात के भरत की, जो अपने पिता जगदीश भाई शाह के साथ सप्ताह भर यहाँ रहा था। उसकी मीठी आज्ञा का पालन करते बाबा खड़े हो जाते हैं। नन्हे भरत का कैमरा है इसबगोल का कागज का खाली डिब्बा। उसमें एक छेद है, उसमें से अपनी आँख लगाकर उसने न जाने बाबा की कितनी तस्वीरें खींची। कभी तो सफाई करते-करते भी वह बाबा को बीच में रोककर तस्वीर उतारता था।

एक दोपहर करीब तीन बजे वर्धा के कुछ प्राध्यापक आये थे। प्राध्यापक थे तो क्या हुआ? आश्रम के अहाते में अमरूद अभी-अभी पक रहे हैं। अमरूद देखकर खाने की इच्छा न होना एक विशेष ही बात मानी जायेगी, तो उनमें से शायद दो-तीन प्राध्यापक महाशयों ने अमरूद तोड़कर खाना आरम्भ किया। कान्हभाई ने देखा तो प्राध्यापक महाशयों को समझाने की कोशिश की, 'भाई इस तरह अमरूद तोड़कर खाना, बिना इजाजत के भला कहाँ तक उचित होगा?' उस पर थोड़ी बहस हुई। थोड़ी देर बाद सारे प्राध्यापक बाबा के सामने अर्ध-गोलाकार में बेलवृक्ष के नीचे बैठ गये। उनके साथ उनके प्रश्नों की चर्चा बाबा ने की। आखिर में बाबा के पास चिट्ठी गयी। उससे बाबा को मालूम हुआ कि प्राध्यापक महाशयों ने अमरूद खाये। बड़ी उत्सुकता से सबके कान ऊँचे हो गये कि बाबा अब क्या कहते हैं। बाबा, 'अमरूद तोड़े तो कोई हर्ज नहीं। उनको तोड़ने का अधिकार है ही। जब पेड़ों को पानी देने का मौका आयेगा, तब हम उनको बुलायेंगे। अमरूद, बेर, ये सब के लिए हैं। किसी की मिल्कियत नहीं उन पर। बचपन में हम भी पेड़ पर चढ़कर अमरूद खाते थे। एक बार पेड़ों के मालिक ने हमें पकड़ा और लाठी से पीटा। हमने तय किया था कि हमने अमरूद तो खाया ही है, उसके बदले में यह लाठी है। तो यह लाठी भी मीठी ही है।' सारी महफिल हँस पड़ी।

भगवान का भजन नहीं, काम

हाल ही में नागपुर में ईसाइयों की अंतर्राष्ट्रीय मिशनरी कान्फ्रेन्स हुई थी। उसमें आये हुए कई विदेशी भाई बाबा से मिलने आये थे।

"आपका हमारे लिए क्या संदेश है?"

"ईसा की सिखावन का अनुसरण करें?"

"भारत में हम मिशनरियों से आप क्या अपेक्षा करते हैं?"

"गरीबों की सेवा करें। आपकी सेवा ही आपका संदेश फैलायेगी। ईसा ने तो कहा है कि जो लोग 'हे भगवान, हे भगवान' कहते हैं, वे मेरे नहीं हैं, बल्कि जो भगवान का काम करते हैं वे मेरे लोग हैं। ईसा ने यह भी कहा था कि आय हव अदर मनशन्स आलसो। (मेरे और मकान भी हैं)। अदर मनशन्स कौन सी है? हिन्दू, बौद्ध, इस्लाम, ये उनकी अदर मनशन्स हैं। ईसाई लोग यह समझते नहीं हैं। रोमन कथलिक तथा प्रोटेस्टेंट लोग एक साथ प्रार्थना नहीं कर सकते। मुझे बताया गया कि अब उन लोगों ने एक दिन निश्चित किया है, जिस दिन वे एक साथ प्रार्थना करते हैं। इसलिए अब आप सब के साथ यानी ईसाइयों में भी एक साथ, तथा हिन्दू, बौद्ध, इस्लाम के लोगों के साथ भी प्रार्थना कीजिए। इकट्ठा प्रार्थना के लिए उत्तम प्रार्थना है मौन प्रार्थना। तो आप 'अदर मनशन्स' को भी शिक्षा दीजिए और खुद अपने अदर मनशन्स की भी। सब जमातों के गरीबों की सेवा करना तथा सब के साथ मिलकर प्रार्थना करना ये दो बातें आप कीजियेगा।"

बिके हुए वैज्ञानिक : परिणाम विनाशक

खानदेश के श्री भगवान दादाजी धाराजी के अनुयायी ने १४ साल की उम्र

में १९४२ के आन्दोलन में पुलिस की मार खायी। लाठी चार्ज हुआ था। आपकी कमर पर लाठी पड़ी। हड्डियाँ ढीली हो गयीं। उससे दोनों पाँवों को नुकसान हुआ। तुरन्त इलाज हो नहीं सका था, क्योंकि उसी अवस्था में एक साल जेल में रहना हुआ था। पर अवस्था कायम की हो गयी। आप दो-चार दिन यहाँ बिताने आये थे। उनके कुछ प्रश्नों में एक था—आज अध्यात्म तथा विज्ञान के बीच दरार हुई है। दोनों अलग पड़ गये हैं। क्या किया जाये ?

बाबा, "इसका कारण यह है कि वैज्ञानिक दिमाग वाले हैं। और उन्होंने उनका दिमाग सरकार को बेचा है। फिर सरकार उन्हें जैसी खोज करने को कहती वैसी खोज वे लोग करते हैं। सरकार हुक्म देती है कि हमें ऐसा बम बना दीजिए ताकि हम यहीं बैठे बैठे कलकत्ते गिरा दें उसे यहीं भी भेज सकेंगे। फिर वे बम बनाते हैं, सर्वनाश की तैयारी कर देते हैं। उसके बदले में उन्हें क्या मिलता है ? तुम्हारे या इनाम। इसके अलावा उद्देश्य के लिए उन्होंने अपना ज्ञान बेचा है। यह जो दुनिया भर की खोजों ने अपने सिर पर उठा रखी है, उसे फेंक देना होगा। स्वतंत्र रहकर वैज्ञानिकों ने काम किया होता तो विज्ञान तथा आत्मज्ञान की दरार नहीं होती। विज्ञान-शक्ति स्वतंत्र होगी, तो वह अध्यात्म के साथ एकत्र होकर समाज को आगे ले जायेगी। इसलिए बाबा ने आखिरी बार लिया आचार्यकुल का—तटस्थ बुद्धि रखनेवाले, जनशक्ति में विश्वास रखनेवाले ज्ञानी विद्वान सरकार से मुक्त होकर अपना काम स्वतंत्रता से करें और सद्बुद्धि से समाज का मार्गदर्शन करें। अध्यात्म तथा विज्ञान मिलकर दुनिया का उद्धार होगा। अध्यात्म के द्वारा जनशक्ति, कर्मशक्ति, और आचार्यकुल के द्वारा शान्तिसेना, वैज्ञानिकों की सार्वभौम सत्ता निर्माण कर सकेंगे।"

त्रिस्थली

इन दिनों सुशीला नय्यर अधिक समय सेवाग्राम में रहती हैं। मेडिकल कालेज (सेवाग्राम) के सिलसिले में या किसी और प्रश्न को लेकर वह कभी-कभी बाबा के पास आती रहती हैं। ऐसा ही कुछ प्रश्न था। विष्णुसहस्रनाम का पाठ पूरा होने पर वे पहुँची थीं। उनका परिचय पाकर बाबा बोले

"बापू के जमाने में सेवाग्राम से सारे भारत को प्रेरणा मिलती थी। इसलिए बाबा का सुझाव है कि सेवाग्राम का आश्रम तथा आसपास को सम्पूर्ण शान्तिसेना का मुख्य स्थान हो। पुराने जमाने में त्रिस्थली यात्रा होती थी, काशी, प्रयाग, गया। आज के जमाने में त्रिस्थली यात्रा है सेवाग्राम, गोपुरी, पवनार। सेवाग्राम है काशी, यह स्थान शान्तिसेना का हो। गोपुरी है गया, वह ग्रामदान का स्थान हो और यह पवनार है प्रयाग, यहाँ दो नदियों का संगम है, तो यह ब्रह्मविद्या का बने। 'काशी' में बैठनेवालों को एक बात याद रखनी चाहिए, काशी मुक्ति दायक है। बीच में ही 'काशी' छोड़कर जायेंगे तो मुक्ति मिलेगी नहीं।"

सुशीला बहन, "हमें तो मुक्ति की आशा भी नहीं, आकांक्षा भी नहीं।"

बाबा, "वो वह पर भागना चाहती है।"

सुशीला बहन हँसते-हँसते लिखने लगीं, "फिर से इस दुनिया में आयेंगे तो आप जैसे सन्तों का दर्शन और सेवा का मौका मिलेगा। क्या यह मुक्ति से ज्यादा नहीं है ?"

बाबा, "अच्छी बात है। कहकर मुस्कुराने लगे,

'हरिना जन तो मुक्ति न मांगे।'"

दक्षिण-दिशा के पाहुने के जगत। तमिलनाडु के छात्र। उनका एक यात्री-समाज है। गाँवों की छुट्टियों में पदयात्रा करते हैं। इस साल मदुरै से कन्याकुमारी तक गये थे। अब निकले हैं गांधीजी जहाँ-जहाँ रहे थे उन स्थानों का दर्शन करने। सेवाग्राम आये थे। बाबा के सामने बैठ गये। उन पर नजर घुमाते हुए बाबा ने कहा, "मरने के बाद गांधीजी जहाँ पहुँचे हैं, वहाँ भी आपको पहुँचना चाहिए।" उनको बड़ा मजा आया सुनकर। फिर चला बाबा का तमिल। बाबा तमिल के ग्रंथों से एक-एक वचन बोलने लगे। छात्रों के चेहरों पर आश्चर्य तथा आनन्द चमकने लगा। उत्तर भारत का व्यक्ति और तमिल का इतना ज्ञान। तमिलनाडु के प्रसिद्ध कवि भारतियार का एक वचन है

मात् अरिद भाषैहळिले

तमिल मॉलिपोल् इनिदावदेंगुम् काणोम्

जितनी भाषाएँ हैं जितनी भाषाएँ मैं जानता हूँ, उन सब में तमिल बहुत मीठी है। बाबा ने कहा, "मैंने इसमें एक जगह फर्क किया है तमिलमोलि की जगह तायमॉलि रखा है। तायमॉलि का अर्थ है मातृभाषा।

छात्र खुश होकर लौटे।

बाबा के सुझाव पर कौशल भाई बालकों को भजन सिखाते हैं। हाथ में करताल लेकर रोज शाम की प्रार्थना से पहले दोनों को ज्ञानदेव महाराज का भजन 'आजि सोनियाचा दिनु' गाने को कहा। करताल लाये गये। हमभाई भी साथ हो लिये। दोनों गाने लगे—

आजि सोनियाचा दिनु

अमृताचे वर्षे घनु

वरषा सत उमाळनु

प्रकटला आत्माराम्

बाबा ने अर्थ समझाया, "यह सारा सत समाज इकट्ठा हुआ है। इसलिए आज का सुवर्णदिन है। मूल जिसे मन मूलों—मन के मूल में, अन्तरतर में दृढ़-मजबूत ईंट है। उस पर वनमाली विराजमान है। पंढरपुर के देवता—विठोबा ईंट पर खड़े हैं। ज्ञानदेव कहते हैं वह ईंट अन्दर की है।

पंढरपुर के विठोबा का एक नाम है पांडुरंग, एक नाम है विट्ठल। लेकिन उसका मूल नाम है केशव। इसलिए नाम

पुष्टि के सघन क्षेत्र में

बीकानेर के पुष्टि-काम का अनुभव

—सिद्धराज ढड्ढा

बीकानेर जिले में ग्रामदान आन्दोलन का प्रारम्भिक दौर पूरा हो चुका है। जिले के अधिकांश गाँवों में ग्रामदान का संकल्प हुआ, फिर गाँवों का मोटे रूप में सर्वे हुआ, अधिकांश ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के निर्विरोध चुनाव हुए और कई गाँवों में ग्राम-शान्तिसैनिक बने व ग्रामकोष का आरम्भ हुआ। इस बीच सरकार की ओर से गाँवों में जमीनों के 'अलाटमेंट' का काम चला, उसमें भी हमलोगों ने सक्रिय हिस्सा लिया। गाँव-गाँव में पहुँच कर कार्यकर्ताओं ने भूमिहीनों के प्रार्थना-पत्र भराये, उन्हें अधिकारियों के पास दाखिल किया, फिर अलाटमेंट के समय हाजिर रहकर उस काम में योग दिया।

इस प्रकार ग्रामदान के विचार और कार्यक्रम से जिले में लोगों का व्यापक सम्पर्क आया है। ग्रामदान के विचार से लोग अपरिचित नहीं रहे हैं। अब उन विचारों को अमल में लाने का 'स्टेज' आया है। इस बीच राजस्थान में नया ग्रामदान कानून भी बन गया है। पुष्टि-काम के लिए यह अनुकूलता निर्माण हुई है। अब कानून के अन्तर्गत ग्रामदानी गाँव को मान्यता दिलाने का काम भी सामने है। अभी २० गाँवों को चुनकर उनमें हम लोगों ने कानूनी मान्यता के लिए फार्म भराने का काम प्रयोग के तौर पर किया था। अब तक के काम से नीचे लिखे अनुभव आये हैं।

१—ग्रामदान का विचार मोटे तौर पर लोगों को पसन्द आता है, लेकिन ५ प्रतिशत जमीन भूमिहीनों के लिए निकालने और ग्रामकोष में अनाज आदि देने की बात लोगों के गले में अटकती है। पिछले २०-२५ वर्षों में सारा वातावरण और वृत्ति 'लेने' की—स्वार्थ की—बनी है, अब 'देने' की यह बात लोगों को अच्छी नहीं लगती।

२—देने की ये बातें क्यों जरूरी हैं, ग्रामदान की शर्तों के पीछे क्या दृष्टि है, यह गाँववालों को अच्छी तरह समझा सकनेवाले कार्यकर्ता का हर टोली में होना जरूरी है। कानूनी मान्यता के फार्म भराने के लिए उसी तरह विचार समझाने की जरूरत है जिस तरह संकल्प-पत्र भराते समय, बल्कि उससे अधिक ही। भूमिहीनों को जमीन देना अन्ततोगत्वा अपने स्वार्थ की बात है और इसी तरह ग्रामकोष में देने की बात भी, यह लोगों को समझाने के साथ-साथ सुन्दर बात लोगों में करुणा जागृत करने की है। इसके लिए खुद कार्यकर्ता द्वारा करुणा-प्रेरित त्याग और सेवा का उदाहरण पेश करना जरूरी है, केवल बौद्धिक रूप से समझाने से यह काम नहीं हो सकता।

३—ग्रामदान का विचार समझ लेने और उसके विरुद्ध मन में प्रतिरोध न रहने के बाद भी उसके अनुसार कदम बढ़ाने की क्षमता लोगों में नहीं है। इसके लिए बराबर लोगों के बीच रहकर उन्हें सहारा देने की जरूरत है।

४—गाँव के लोग अक्सर उस गाँव के या क्षेत्र के प्रमुख व्यक्ति से पूछे बिना या उसकी इजाजत के बिना हस्ताक्षर करने से इनकार करते हैं। ये प्रमुख व्यक्ति पंच, सरपंच, प्रधान या पार्टियों के ये लोग होते हैं, जिन्होंने विभिन्न तरीकों से लोगों को अपने चंगुल में कर रखा है। लोग या तो इनके साथ अपने स्वार्थ और लालच के कारण बंधे हुए हैं या नुकसान पहुँचाने की इनकी ताकत के कारण इनसे डरे हुए हैं, और इसलिए इनकी मर्जी के खिलाफ कुछ भी कर सकने की हिम्मत उनमें नहीं है।

सामान्य किस्म के भ्रष्टाचार और टेन्डरबाजी के जरिये तो ये नेता लोग ताकतवर बन ही गये हैं, पर इसके अलावा भी इन लोगों ने ऐसा आतंक जमा रखा है और ऐसे हथकंडे फैला रखे हैं जिनसे लोग इनके जाल में जकड़े हुए हैं। इसके उदाहरण गाँव-गाँव में मिलते हैं। सारा वातावरण इतना दूषित है कि कोई अच्छी चीज पनपने में काफी दिक्कत है।

एक सरपंच ने किसी चुनाव में सत्ताधारी गुट का साथ नहीं दिया। कुछ दिन बाद उसका बाप मर गया और उसने मृत्युभोज आयोजित किया। विरोधी गुट वाले ऐन भोजन के समय मजिस्ट्रेट को ले आये और इस कानून पर एक हजार रुपया जुर्माना करा दिया। मुकदमा अब तक वह सरपंच उनके साथ है और जुर्माना माफ कराने की कोशिश कर रही है। एक अन्य गाँव में कुछ हरिजनों ने इसी तरह सत्ताधारी नेता महोदय को नाराज कर

देव हमेशा केशव का नाम लेते हैं।

नामयाचें प्रेम केशव [illegible] जाणे

केशवाचें राहणें नाम्यापाशीं

नामदेव का प्रेम केशव ही जानता है, केशव को हमेशा नामदेव के पास रहना है।

केशव तो नामा। नामा तो केशव

केशव ही नामदेव है और नामदेव है केशव। हम रोज विष्णुसहस्रनाम के अंत में गाते हैं :

आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरं

सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति

आकाश से गिरा पानी जैसे सागर के पास ही जाता है, वैसे ही सब देवों को किया नमस्कार केशव के पास ही जाता है। केशव! इसमें तीन अक्षर हैं। 'क' का अर्थ है, ब्रह्मदेव, ब्रह्मा। 'ईश' यानी महेश। और 'व' यानी विष्णु। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों केशव नाम में एकत्र हुए हैं। (मराठी से)

—कुसुम

दिया। इन्हीं नेता महोदय के कहने से करीब १०-१२ बरस पहले गाँव के अन्य लोगों के साथ-साथ इन हरिजन-परिवारों ने भी घर, मवेशी आदि के लिए कुछ बाड़े बना लिए थे। वर्षों बाद अब इन १५-२० परिवारों को तहसील से नोटिसें मिली हैं कि उन्होंने सरकारी जमीन पर नाजायज कब्जा कर रखा है, अतः उन पर कार्यवाही क्यों न की जाय? इन्हीं की तरह उस गाँव में अन्य कई परिवारों द्वारा भी इस तरह का कब्जा किया हुआ है लेकिन उनको कोई नोटिस नहीं मिली। अगर तो-फरवा ये लोग पेरवी से बच जायें तो भी २-३ बार तहसील-केन्द्र तक जाने की परेशानी और खर्च तो होगा ही। एक गाँव में पटवारी ने सरकारी आदेश के अनुसार लोगों से लोन की वसूली शुरू की। जितने परिवार स्थानीय नेताजी के पक्ष के थे, उनकी वसूली नेताजी ने रुकवा दी। इस तरह उनको सरक्षण मिल गया, हालांकि बाद में उन लोगों को ब्याज और देना पड़ा।

इस प्रकार गाँव-गाँव में भय और लालच का वातावरण बना हुआ है। विचार से लोगों को कितना भी समझाया जाय, जब तक वे इस प्रकार के आतंक और लालच में फँसे हुए हैं, तब तक वे ग्रामदान की नयी व्यवस्था में शामिल होने की हिम्मत कैसे करेंगे? अतः यह आवश्यक लगता है कि अब इस प्रकार के छोटे-छोटे अन्याय के मामलों को हाथ में लिया जाय। तभी गाँव के लोगों में चेतना आयेगी और वे आगे बढ़ने की हिम्मत करेंगे।

उपरोक्त सभी दृष्टियों से अब यह जरूरी है कि समय-समय पर गाँवों में टोलियाँ भेजकर काम कराने के बजाय गाँवों के बीच में सक्षम कार्यकर्ता बैठें और सेवा कार्यों तथा अन्याय के प्रतिकार आदि के जरिये लोगों का विश्वास संपादन करके उन्हें आगे बढ़ाने में मदद करें। ●

बीकानेर में आगे के काम के बारे में सुझाव

१—जिले की चारों तहसीलों में कम-से-कम एक-एक केन्द्र कायम किया जाय, जिस पर दो या तीन सक्षम कार्यकर्ता रहें।

२—चारों तहसीलों के लिए चार कार्यकर्ता सूझबूझ, क्षमता, निष्ठा और अधिकतम वाले चाहिए। आवश्यकतानुसार प्रान्त के अन्य हिस्सों से या प्रान्त के बाहर से भी अनुभवी कार्यकर्ता लिये जायँ।

३—तहसील केन्द्रों के काम

(१) तहसील के गाँवों से सम्पर्क रखना।

(२) उनके अन्याय-अभियोग व समस्याओं में मार्ग-दर्शन और मदद करना।

(३) क्षेत्र के अनुकूल गाँवों में ग्राम-स्वराज्य सभाओं को सक्रिय करना।

(४) गाँव के झगड़े गाँव में ही निपटें, इसकी प्रेरणा देना तथा इसके लिए ग्राम स्वराज्य सभाओं को सक्रिय करना।

(५) समय-समय पर ग्राम-शान्ति-सैनिकों तथा ग्राम-कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण शिविर आयोजित करना।

(६) कानूनी पुष्टि के कार्य कराने के लिए क्षेत्र के गाँवों को प्रेरित करना।

४—जिला-केन्द्र पर एक कार्यकर्ता प्रचार-प्रकाशन के लिए, एक कानूनी पुष्टि सम्बन्धी कार्यवाही में मदद करने के लिए तथा एक दफ्तर की काम सम्हालने के लिए—इस प्रकार तीन और ग्रामदान कार्यकर्ता चाहिए। जिला कार्यालय में एक सहायक भी चाहिए।

५—ग्रामदान कानून के अन्तर्गत नियम आदि फाइनल हो जाने पर लूणकरणसर तहसील में कानूनी मान्यता का काम हाथ में लिया जाय। इस काम के लिए जिले के बाहर से भी योग्य कार्यकर्ताओं को प्रान्तीय समिति के जरिये निमन्त्रित किया जाय। सरकारी कर्मचारियों की मीटिंगें, ट्रेनिंग की तरह आदि पूर्व तैयारी भी जाय।

६—इस बीच नाना तहसील के २० गाँवों की कानूनी मान्यता का बचा हुआ काम भी पूरा कर लिया जाय। ●

लोक-यात्रा के लिए विनोबाजी का संदेश

धीरेन्द्र ने मद्रास में ग्रामस्वराज्य के लिए लोक-यात्रा के निमित्त घूमते रहने का निश्चय किया। यह सुनकर मुझे स्मरण हुआ, तुलसीदासजी का। गोसाईंजी कहते हैं —

तुलसी तज नीर-तीर
सुमिरत रघुवीर
विचरत मनि देहि

मुझे विश्वास है, इस क्रान्तिकारी कदम का अर्थ हमारे कार्यकर्ता समझ जायेंगे, और धीरेन्द्र के साथ क्रान्ति-कार्य में एकाग्र हो कर जुट जायेंगे।

विनोबा का जय जगत्
ब्रह्म विद्यामन्दिर, पवनार
६-११-१९७१

पोप अशांत क्षेत्रों का दौरा करें

विश्व शान्ति पदयात्री श्री रामचन्द्र पुरोहित इस हफ्ते इटली के लगभग एक माह की पदयात्रा समाप्त कर स्विट्जरलैण्ड में प्रवेश करने जा रहे हैं।

मिलान से लौटते हुए श्री पुरोहित ने वेटिकन में पोप के दर्शन किये, लगभग दस मिनट की इस वार्ता के दौरान श्री पुरोहित ने पोप से प्रार्थना की कि वे अपने नैतिक दबाव का प्रयोग कर बंगला देश, अरब-इजराइल सीमा, वियतनाम जैसे अशान्त क्षेत्रों का दौरा कर वहाँ शान्ति-स्थापना के लिए आशा मार्ग दर्शन प्रदान करें।

श्री पुरोहित स्विट्जरलैण्ड से अमेरिका जायेंगे जहाँ वे संयुक्त राष्ट्र संघ से अनुरोध करेंगे कि मानव जाति को मानवीय व भावनात्मक मूल्यों पर जिन्दा रहने का पूरा अधिकार है, विश्व के सभी देश इस बुनियादी अधिकार का पूरा आदर करें।

श्री पुरोहित पिछली जुलाई में नयी दिल्ली से शान्ति प्रचार के लिए विश्व यात्रा पर रवाना हुए थे। इस पाँच महीने की अवधि में वे अब तक अफगानिस्तान ईरान, सीरिया, लेबनान व इटली की यात्रा कर चुके हैं। (सप्रेस)

भूदान-यज्ञ ६-१२-'७१ लाइसेन्स नं० ए १७ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १७४

श्री धीरेन्द्र भाई की लोकयात्रा का शुभारम्भ

ग्रामस्वराज्य का अखिल भारतीय प्रयोग सहरसा जिले में पिछले एक साल से हो रहा है। इस कार्य का मार्गदर्शन पूज्य बापू के सहयोगी और देश के प्रख्यात सर्वोदय विचारक वयोवृद्ध, तपस्वी श्रद्धेय धीरेन्द्र मजूमदार कर रहे हैं। उन्होंने अब यह निश्चय किया है कि सहरसा में ग्रामस्वराज्य की स्थापना होने या उनकी जीवन-यात्रा के अन्त तक वे सहरसा जिले में लोक-गंगा के तट पर घूमते रह कर ग्रामस्वराज्य के लिए जन-जागरण का काम करते रहेंगे। उनकी उम्र ७१ वर्ष की है, किन्तु यह 'वृद्ध युवक' आज भी क्रान्ति देवी की अर्चना में रत है।

धीरेन् दादा की यह लोकयात्रा स्वर्गीय देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसादजी की जयन्ती ३ दिसम्बर से सहरसा के सिंहेश्वर प्रखण्ड में आरम्भ हो रही है।

प्रखण्ड-ग्रामस्वराज्य समिति, सिंहेश्वर

सहरसा के चौसा प्रखण्ड में भूमिवितरण

५५ दाताओं से प्राप्त ३२ बी० १४ क० १५ धूर भूमि ७६ आदाताओं के बीच बाँटी गयी है। मसदुमपुर और कलासन में ७ बी० १० क० भूदान की जमीन भी ११ आदाताओं में बँटी है, जो दो दाताओं से प्राप्त हुई थी। ग्रामस्वराज्य पदयात्रा के क्रम में १८ दाताओं से प्राप्त भूदान की ३७ बीघा जमीन ७८ आदाताओं के बीच बाँट गयी। इसके अलावा प्रखण्ड में अब तक १६ ग्रामस्वराज्य-सभाएँ तथा ४ ग्राम-समितियाँ गठित हुईं। गाँववार वितरित जमीन का आँकड़ा दाताओं और आदाताओं के साथ इस प्रकार है :

गाँव	जमीन का रकबा बी० क० धूर	दाता	आदाता
१—कलासन	३—१२—४	९	५
२—मिहा टोला	०—०८—०	४	३
३—फुलपुर	३—०२—१६	५	८
४—अजगैवा	०—१६—००	७	९
५—भवनपुरा वासा	०—०३—१०	२	२
६—लौआदिया वासा	१०—१७—००	३	१८
७—दुर्गापुर (बढ़ौना)	१—११—१०	३	३
८—गोसाइरू गाँव	३—१२—१५	८	१३
९—उमरेल	१—१५—००	१	३
१०—पुरैनी	१—००—००	३	४
११—देवीदास टोला	०—०६—००	२	१
१२—विरौरी	१०—१०—००	८	७
योग	३२—१४—१५	५५	७६
भूदान की जमीन			
१—मसदुमपुर	५—००—००	१	७
२—कलासन	२—१०—००	१	४
३—लौआलगान	३७—००—००	१८	७८
कुल योग	७७—०४—१५	७५	१६५

जातिवाद ईश्वर के अस्वीकारण को सूचित करता है, क्योंकि अगर वह सबका पिता नहीं है तो ईश्वर हो ही नहीं सकता। —फादर दुरैन दोमर

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ११, सोमवार, १३ दिसम्बर, '७१
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा • फोन ६४३९१
सम्पादक
राममूर्ति

भूदान-यज्ञ

बंगला देश को हमारी हार्दिक शुभकामनाएँ

आज संसद में प्रधान मंत्री की यह घोषणा सुनकर कि भारत सरकार ने बंगला देश की गणतांत्रिक सरकार को औपचारिक मान्यता दे दी है, अपने आनन्दाश्रुओं को रोकना मेरे लिए कठिन हो रहा है। यह सचमुच एक ऐतिहासिक घटना है जो केवल भारतीय उपमहाद्वीप में नहीं, पूरे दक्षिण एशिया में परिवर्तन ला देगी। मैं प्रधान मंत्री को तथा उनके सहयोगियों को हार्दिक बधाई देता हूँ, तथा बंगला देश के कार्यवाहक राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री एवं अन्य सदस्यों को भी अपनी बधाई और हार्दिक शुभेच्छाएँ भेजता हूँ। साथ ही मैं यह कामना करता हूँ कि उनके स्वातंत्र्य संघर्ष का अंत शीघ्र पूर्ण विजय में हो। मैं यह भी आशा करता हूँ कि अब विश्व के दूसरे देश भारत के उदाहरण का अनुसरण करेंगे और नवोदित प्रभुसत्तासम्पन्न बंगला देश तथा उसकी गण सरकार को इसी प्रकार मान्यता प्रदान करेंगे।

जय बांगला !

जयप्रकाश नारायण

पटना, ६ दिसम्बर, '७१

आपातकालीन परिस्थिति और शान्तिसेना

अखिल भारत शान्ति सेना मण्डल का यह मत है कि तारीख ३ दिसम्बर की मध्य रात्रि से जो युद्ध छिड़ा वह उस दिन नहीं, बल्कि २५ मार्च की मध्यरात्रि से ही आरम्भ हो गया था, जब पाकिस्तानी जंगीशाही ने निहत्थे बंगलादेश-वासियों पर अचानक हमला किया था। उस दिन के बाद भारत की भूमि पर शरणार्थियों का जो आगमन शुरू हुआ वह पाकिस्तान द्वारा भारत की अर्थव्यवस्था एवं समाजव्यवस्था पर हमला ही था।

भारत की सरकार ने आठ महीनों तक यह प्रतीक्षा की कि विश्व का विवेक जगे और इस समस्या के मूल को ही समाप्त करने के लिये पाकिस्तान सरकार को बाध्य करे। किन्तु, हालांकि जगत् के कई देशों ने शरणार्थियों के बारे में सहानुभूति दिखलायी, लेकिन किसी ने समस्या को सुलझाने का कोई उचित उपाय नहीं किया। अतः जो युद्ध पाकिस्तानी तानाशाही का वहाँ की बहुसंख्यक जनता के खिलाफ था वह अब समूचे भारतीय उप महाद्वीप का युद्ध बन गया है।

अब सभी समझदार लोगों की कोशिश यह होनी चाहिए कि यह युद्ध समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया का या पूरे विश्व का युद्ध न बन जाय।

इस आपातकालीन परिस्थिति में जनता के कुछ विशेष कर्तव्यों को पूरा कराने में सहायता देना शांतिसेना का विशेष दायित्व होगा। इस स्थिति में जनता का प्रथम कर्तव्य है, राष्ट्र का नैतिक धैर्य बनाये रखना। उसके लिए यह जरूरी है कि राष्ट्र की एकता बनी रहे, कोई काम भय या आतंक से न किया जाय और साधारण जनता अपना मानसिक संतुलन न खोये। इन तीनों कामों में शांतिसैनिक जनता के सहायक बन सकते हैं।

इस प्रसंग पर किसी भी घटना को किसी प्रकार का संकीर्ण या साम्प्रदायिक स्वरूप न दिया जाय। और साम्प्रदायिक तनाव न बढ़े तथा राष्ट्र की एकता और सुदृढ़ बने, इसके लिए शांतिसेना विशेष प्रयत्न करेगी। हम यह मानने को तैयार नहीं हैं कि भारत का कोई समूह-विशेष पाकिस्तान की सरकार का समर्थक है। इसलिए युद्ध को किसी समूह-विशेष के खिलाफ लोगों का मन उकसाने का बहाना नहीं बनाना चाहिए।

आपातकालीन परिस्थिति का लाभ उठाकर कुछ लोग तरह-तरह की अफवाहें फैलाते हैं। अफवाहें संदेह से पैदा होती हैं, भय से बढ़ती हैं, और आतंक से विनाशकारी बन जाती हैं। शांतिसैनिकों को अफवाहों को फैलने से रोकने के लिए सक्रिय बनना चाहिए।

युद्ध की परिस्थिति में सामान्य व्यवहार की वस्तुओं के कम हो जाने या उनके दाम बढ़ जाने की सम्भावना होती है। शांतिसैनिकों को चाहिए कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में इन दोनों बातों को होने से रोकें। इसके लिए शांति सैनिक प्रमुख नागरिकों से मिलकर आयोजन करें। वे व्यापारियों से मिलकर इस राष्ट्रीय कार्य में सहायता प्राप्त करें। शांति-सैनिक, विशेष कर तरुण-शांतिसैनिक, आवश्यकता पड़ने पर मूल्यवृद्धि, मुनाफाखोरी तथा जमाखोरी को रोकने के लिए चौकसीदल गठित करें तथा दूकानों पर पिकेटिंग भी कर सकते हैं।

शांति-केन्द्रों में नागरिक सुरक्षा के वर्ग चलने चाहिए और जनता को नागरिक सुरक्षा के सामान्य नियम समझाने में शांति-केन्द्रों को विशेष रूप से सहायक बनना चाहिए। युद्धकालीन परिस्थिति के प्रचार में सत्य पहला शिकार बनता है और सत्कारिता लुप्त हो जाती है। शांतिसैनिकों को चाहिए कि अपने रहन-सहन में, बोलने-चालने तथा लिखने और प्रचार करने में वे सत्य और सत्कारिता को कभी भंग न होने दें।

इस युद्ध से जिन लोगों की जान और माल का नुकसान होगा, उनके लिए हमारी सहानुभूति है। यह युद्ध पाकिस्तान की जनता के खिलाफ नहीं है। युद्ध से भारत और पाकिस्तान दोनों की गरीब जनता पर भारी आर्थिक बोझ पड़ेगा। उनके लिए हमारी सहानुभूति है। यह मानना भी गलत होगा कि इस युद्ध को पाकिस्तान की जनता का समर्थन प्राप्त है। हर हालत में पाकिस्तान की जनता के बारे में भारत में कटुता और घृणा नहीं फैलनी चाहिए। हमारा विश्वास है कि इस युद्ध से पाकिस्तान की सरकार को भले ही आठ महीनों से बंगला देश की समस्या को हल न कर पाने की बदनामी से बचने का बहाना मिला हो, पर पाकिस्तान की साधारण जनता को तो उससे हर प्रकार नुकसान ही नुकसान होगा।

शांतिसेना मण्डल आशा करता है कि यह युद्ध शीघ्रातिशीघ्र समाप्त हो, बंगला देश स्वतंत्र राज्य के नाते जगत में भी मान्य हो, भारत में आये शरणार्थी सुखपूर्वक स्वदेश लौट जायें, पश्चिम पाकिस्तान में जंगीशाही का स्थान जनतंत्रात्मक शासन ले और भारत तथा पाकिस्तान दोनों के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण बनें।

जयप्रकाशनारायण
अध्यक्ष

नारायण देसाई
मंत्री

५ दिसम्बर, १९७१

अखिल भारत शांति सेना मण्डल, राजघाट, वाराणसी–१

कुछ और भी

सर्वोदय में पूरी निष्ठा रखनेवाले एक मित्र ने प्रश्न उठाया है "युद्ध छिड़ गया है। देश अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा है। क्या हमलोग इस वक्त भी ग्रामदान की ही बात करते रहेंगे, या कुछ और भी करेंगे ?"

हम स्वतंत्र हैं, और स्वतंत्र रहेंगे इसमें दो राय की गुंजाइश नहीं है। अगर भारत की सरकार ने विस्तारवादी नीति चलायी होती और नाहक किसी देश पर आक्रमण किया होता तो बात दूसरी होती और हम जो अहिंसा में विश्वास रखनेवाले लोग हैं, घोषणा करते कि ऐसे युद्ध का समर्थन हम नहीं कर सकते। लेकिन बात इससे बहुत भिन्न है। हम जानते हैं कि भारत ने पिछले महीनों में कितने धैर्य से काम लिया है। बार-बार उसने दुनिया की अन्तरात्मा को पुकारा है। पाकिस्तान की सैनिक सरकार ने बंगला देश में नर-संहार किया है। अब उसने भारत पर आक्रमण किया है। उसके जवाब में भारत अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सेना का इस्तेमाल करने पर विवश हुआ है। सैनिक शक्ति का प्रयोग कर सरकार अपने कर्तव्य का पालन कर रही है। अगर वह ऐसा न करती तो अपने धर्म से च्युत होती। हमने शुरू से बंगला देश के संग्राम का समर्थन किया है क्योंकि वह मुक्ति का संग्राम है। यह संग्राम वहाँ की जनता पर याहियाशाही ने थोपा है। ऐसी स्थिति में भारत सरकार ने उस वक्त शस्त्र उठाया है, जब शस्त्र उठाने के सिवाय उसके सामने दूसरा कोई विकल्प नहीं रह गया था।

देश के लिए ऐसे संकट के समय कोई सैनिक हो या नागरिक, हर एक की यही कामना है कि हमारे देश की स्वतंत्रता सुरक्षित रहे, और वह शक्तिशाली हो। आक्रामक वह कभी न हो, लेकिन आक्रमण होने पर आत्म-समर्पण वह कभी न करे। इसके लिए हमें क्या करना चाहिए, यह सबके सोचने की बात है।

आज से चौदह साल पहले १९५७ में विनोबाजी ने येलवाल में घोषणा की थी कि ग्रामदान प्रतिरक्षा का उपाय (डिफेन्स मेजर) है। हमने हमेशा माना है कि देश को स्थायी रूप से शक्तिशाली बनाने के लिए उसके साढ़े पाँच लाख गाँवों को शक्तिशाली होना आवश्यक है। भारत-जैसा देश, जो अपने लाखों गाँवों में बसता है, केवल अपनी सेना के बल पर, चाहे वह कितनी भी अच्छी और आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित क्यों न हो, शक्तिशाली नहीं हो सकता। शक्ति उसके नागरिकों में होनी चाहिए, उसके हर गाँव और नगर में होनी चाहिए। यह शक्ति यों ही नहीं आती। इसके लिए कुछ और भी करना पड़ता है। ग्रामदान वही 'कुछ और' है। गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य-सभा के संगठित और सक्रिय हो जाने पर तथा राष्ट्रीय स्तर पर एक विशाल शान्तिसेना के बन जाने पर शस्त्रधारी सेना की आवश्यकता रह जायगी या नहीं, यह आगे सोचने का विषय होगा। किन्तु वह आज नहीं भविष्य की बात है। आज देश की सरकार है, देश की सेना है, उसका कर्तव्य है देश की रक्षा करना।

युद्ध की इस स्थिति में हम देख रहे हैं कि हमारे गाँव और शहर अपनी शक्ति से रक्षा या निर्माण के लिए वस्तुतः कुछ नहीं कर रहे हैं। वे सरकार की ही ओर देखते रहते हैं। यह शक्ति का लक्षण नहीं, शक्ति न होने का लक्षण है। युद्ध की इस नाजुक स्थिति में भी नहीं है वह ताकत जो गाँव-गाँव, शहर-शहर में शांति बनाये रखे, पंचमांगी कार्यवाइयाँ रोके, समाज-विरोधी कार्य न होने दे, साम्प्रदायिक उद्‌भावना न उठने दे, राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा तथा दूसरे आवश्यक काम करे। अगर ग्रामदान के बाद ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बन गयी होतीं और ग्राम-शान्तिसेना की टुकड़ियाँ गठित हो गयी होतीं तो आज हर गाँव 'डिफेंस का किला' होता, और गाँव के लोग अपने जिले की रक्षा के लिए तत्पर होते। तब सरकार का बोझ कितना हल्का होता, और नागरिकों की संयुक्त शक्ति स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उपलब्ध होती। लेकिन स्थिति यह है कि स्वतंत्रता की रक्षा का पूरा भार सरकार और उसकी सेना पर ही है।

प्रश्न पूछनेवाले मित्र, तथा उनकी तरह दूसरे मित्रों, को समझना चाहिए कि देश के लिए ग्रामदान से बढ़कर कुछ और नहीं है। इस संकट के समय भी तो हम यह समझें, और समझकर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के काम को दूने उत्साह से पूरा करें। संकट की मात्रा की गुंजाइश नहीं है।

स्वतंत्रता पर प्रहार क्यों ?

संसद ने इधर संविधान के कई संशोधन पास किये हैं। इन संशोधनों का सरकार की ओर से तो खूब जिम्मेदारी के साथ स्वागत हुआ ही है, लोकसभा में इसे बहुत बड़ा बहुमत मिला है, और बाहर जनता में भी उत्साह के साथ स्वागत हुआ है। क्यों ? इसलिए कि सार्वजनिक हित में सरकार जो सम्पत्ति अपने हाथ में लेगी और उसके बदले में जो रकम देगी उसके सम्बन्ध में कोई सुनवाई किसी न्यायालय में नहीं हो सकेगी। यह ठीक है कि हमारे देश में जो सम्पत्ति है उसका बड़ा भाग थोड़े से हाथों में केन्द्रित है। यह स्थिति मिटनी चाहिए और सम्पत्ति बँटनी चाहिए। समता की दिशा में कितना भी छोटा कदम उठाया जाय वह सही है और उसका समर्थन होना चाहिए, लेकिन यह बात सोचने की है कि सम्पत्तिवालों के हाथ से सम्पत्ति निकल कर सरकार के हाथ में जब पहुँच जाय तो वहाँ तक समता आयेगी। एक समय था राष्ट्रीकरण का जादू था। लेकिन अनेक देशों के अनुभव से अब यह बात साफ हो गयी है कि राष्ट्रीकरण सरकारीकरण होकर रह जाता है, और सत्ता हो या सम्पत्ति इनमें से किसी का सरकार के हाथों→

में केन्द्रित हो जाना कम घातक नहीं है। सम्पत्तिवालों का मुकाबिला करने के अनेक उपाय हैं जैसे कानून, टैक्स, लोकशक्ति आदि, किन्तु जिस सरकार के हाथ में देश की राजनैतिक और आर्थिक शक्तियाँ केन्द्रित हैं, और जिसकी मर्जी को जनता पर लादने के लिए एक सुसज्जित सेना तैयार खड़ी है उसका मुकाबिला दिनोंदिन कठिन होता जा रहा है। बंगला देश की मिसाल आँखों के सामने है। इसलिए उचित यह है कि सम्पत्ति सीधे जनता के हाथ में जाय, न मालिक के हाथ रहे न सरकार के। पूँजीवाद का विकल्प सरकारवाद—सैनिकवादी सरकारवाद—के सिवाय दूसरा है ही नहीं, यह स्थिति जनता को हर्गिज मान्य नहीं होनी चाहिए।

इसके अलावा एक दूसरा प्रश्न भी है। क्या कारण है कि संविधान की सम्पत्ति की धारा में संशोधन लाने के लिए अधिकार के साथ-साथ सरकार ने उन धाराओं पर भी अधिकार हाथ में ले लिया है जिनमें देश की जनता को लिखने, बोलने, संगठन करने आदि के 'नागरिक अधिकारों, की गारंटी दी गयी है। क्या समता के नाम में नागरिक स्वतंत्रता को घटाना आवश्यक है। क्यों, किसलिए, आवश्यक है ?

विचार की स्वतंत्रता के बिना लोकतंत्र कैसे जिन्दा रहेगा ? मनुष्य की सबसे अनमोल सम्पत्ति है विचार। क्या सरकार चाहती है कि यह 'सम्पत्ति' भी उसी के हाथ में रहनी चाहिए ? जो सरकार विचार आदि की नागरिक स्वतंत्रताओं पर रोक लगाने की बात सोचती है उसकी नीयत पर भरोसा नहीं किया जा सकता। शुबहा होता है कि गरीबी और विषमता से पीड़ित जनता को समता का भुलावा देकर सरकार धीरे-धीरे उसकी स्वतंत्रता को, जिसकी गारंटी संविधान ने दी थी, छीन लेना चाहती है। यह लोकतंत्र पर प्रहार है। हम सचेत हो जायँ।

हमें समता और स्वतंत्रता दोनों चाहिए। दोनों का साथ रहना सम्भव है, बल्कि एक के बिना दूसरे का कोई खास महत्त्व नहीं है। जनता को जानना चाहिए कि उसके नाम में सरकार क्या कह रही है।

संविधान का २५ वाँ संशोधन : एक प्रतिगामी कदम

"चिकित्सकों ने मुझे तब तक कोई गम्भीर व्यक्तिगत या सार्वजनिक कार्य करने से रोका है, जब तक अपनी हाल की अस्वस्थता के बाद मैं पूर्ण आरोग्य लाभ न कर लूँ। परन्तु इस समय जब कि संविधान का २५ वाँ संशोधन जो इतने गम्भीर महत्त्व का है, संसद के सामने विचारार्थ उपस्थित है, मैं यदि हस्तक्षेप न करूँ और प्रधान मंत्री से तथा उनकी सरकार से निम्नलिखित अपील करते हुए उन्हें आवश्यक चेतावनी न दूँ तो अपने नागरिक कर्तव्य से मैं च्युत होऊँगा।

"सम्पत्ति अधिकार को सीमित या समाप्त करने की कोशिश करनेवाले २५ वें संशोधन की चाहे जो भी विशेषताएँ हों, नागरिकों के भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, संगठन या संघ बनाने की स्वतंत्रता, भारत के समस्त क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने तथा देश के किसी भाग में रहने और बसने की स्वतंत्रता के जो मौलिक अधिकार हैं, उन्हें किसी भी रूप में खंडित करने के प्रयास को मैं एक प्रतिगामी और अधिनायकवादी कदम मानता हूँ। समाज के कल्याण और हित के नाम पर राज्य द्वारा अधिकाधिक सत्ता का अधिग्रहण हमेशा प्रगतिशील तथा वामपंथवादी कदम ही होगा, यह आवश्यक नहीं है। इसके विपरीत, यह बिलकुल दक्षिणपंथवादी और प्रतिगामी कदम भी हो सकता है। अन्यथा, लोकतंत्र और अधिनायकतंत्र का भेद ही समाप्त हो जायेगा और सर्वसत्तावादी व्यवस्था ही सर्वाधिक प्रगतिशील व्यवस्था बन जायगी। लगता है, प्रधान मंत्री और उनके सहयोगी, संविधान के जन्मदाताओं द्वारा, जिनमें पंडित जवाहरलाल नेहरू भी शामिल हैं, सुस्पष्ट रूप से प्रतिष्ठित लोकतंत्र की बुनियादों को मिटाने पर तुले हुए हैं। केन्द्रीय विधि मंत्री के वक्तव्य और उससे भी अधिक श्री मोहन कुमार मंगलम् द्वारा इस विषय में प्रकट किये गये विचार, प्रतिक्रियावादी हैं, और लोकतांत्रिक समाजवाद के बजाय अधिनायकवाद के संकेतक हैं। नागरिकों के मौलिक अधिकार २५ वें संशोधन द्वारा राज्यीय नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अधीन किये जा रहे हैं, इस बात से लगता है विधि मंत्री को गर्व का अनुभव होता है। यह तो गर्व के बदले लज्जा का विषय होना चाहिए कि भाषण, संगठन तथा विचरण की मौलिक स्वतंत्रताएँ भी, समाजवादी नीति की आवश्यकताओं के बहाने, राज्य की स्वेच्छाचारिता के अधीन की जा रही हैं। संसद में सरकार द्वारा दिये गये इस मौखिक आश्वासन का कानून में कोई मूल्य नहीं है कि प्रस्तावित संशोधन से हमारे मौलिक अधिकार प्रभावित नहीं होंगे। अतः मैं प्रधान मंत्री से तथा उनके सहयोगियों से अपील करता हूँ कि वे थोड़ा ठहर कर सोचें और लोकतंत्र के उन मौलिक आधारों को रोशनी में जो समय के अनुसार धसते नहीं, बल्कि शाश्वत बने रहते हैं, इस प्रश्न पर पुनर्विचार करें।

प्रधान मंत्री को लोकसभा में दो तिहाई बहुमत प्राप्त है, इस बात से उन पर यह विशेष दायित्व आता है कि वे जनता द्वारा दिये गये अधिकार का दुरुपयोग न करें। उनको तथा उनकी सरकार को इस प्रश्न पर भी पुनर्विचार करना चाहिए कि किस हद तक सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय, लोकतंत्र की आवश्यकताओं के अनुकूल, राज्यीय नीति के निर्देशक सिद्धान्तों को क्रियान्वित करने की दृष्टि से बनाये गये कानूनों के वैधानिक औचित्य पर निर्णय देने के अधिकार से वंचित किये जा सकते हैं।"

पटना, १ दिसम्बर '७१

—जयप्रकाश नारायण

धर्म-निरपेक्ष एकीकरण

—हमीद दलवई

[देश पर संकट है। हमें हर हालत में एक रहना है, क्योंकि हम एक देश के वासी हैं। हमें सचेष्ट रहना है कि इस एकता में कोई आंच न आने पाये। प्रस्तुत है, हमारी एकता को पुष्ट करने वाला एक विश्लेषण। सं०]

धर्म-निरपेक्षता का अर्थ है कि राज-नैतिक और सामाजिक जीवन में सम्प्रदाय और धर्म पर आधारित चिंतन पर से कोई निर्णय न लिया जाए। सभी राज-नैतिक और सामाजिक कार्यकलापों में जब धर्म-निरपेक्ष रहें, मनुष्य और समाज के आधुनिक विचारों में यह बात शामिल है। धर्म को एकदम समाप्त कर देने का हमारा कोई आग्रह नहीं है। यह धर्म को व्यक्तिगत विश्वास की चीज मानता है। आधुनिक धर्म-निरपेक्ष समाज जिन नैतिक मूल्यों पर आधारित है वे धर्म-निरपेक्ष नैतिक मूल्य हैं। वे बुद्धि-मूलक हैं, उन्हें तर्क से समझा जा सकता है। मूलभूत मानवीय अधिकारों से आज जो बातें समझी जाती हैं धर्म में यह कल्पना मौजूद हो भी सकती है, न भी हो सकती है। समाज में कौन-कौन बातें अच्छी हैं, कौन-कौन बुरी इसका निर्णय करने के लिए आधुनिक व्यक्ति किसी भी धर्म पर निर्भर नहीं होता। हम लोगों ने सरकार को जिस रूप में, यानी गणतंत्र के रूप में, स्वीकार किया है, उसमें हमारा धर्मातीत विवेक अन्तर्निहित है। गण-तांत्रिक व्यवहारशास्त्र उदार होता है, इसलिए वह धर्म-आग्रह-बुद्धि से मुक्त होता है। अतः किसी भी गणतंत्र के लिए यह आवश्यक है कि वह धर्म-निरपेक्ष हो जाये। गणतंत्र होने की यह शर्त है कि किसी भी 'धार्मिक विश्वास' से वह बंधा न रहे। गणतांत्रिक समाज में सभी सम्प्रदायों और व्यक्तियों को मूलभूत नैतिक मूल्यों के अनुसार बरतना पड़ता है।

कई बार ऐसा देखा गया है कि सम्प्रदायों के धार्मिक आधार पर बने सामाजिक स्वरूप में और मानवीय अधि-कारों में अनिवार्य टकराव खड़ा हो जाता है। इस आधुनिक गणतंत्र में माननेवाले लोगों के लिए, ऐसी हालत में एकमात्र रास्ता यह बच जाता है कि जिन धार्मिक बातों के कारण गणतंत्र में बाधा पैदा होती है, उनको समाप्त कर डालें। मुसलमानों को अल्पसंख्यक और हिन्दुओं को बहुसंख्यक सम्प्रदाय कहना ही धर्म-अनिर-पेक्षता का द्योतक है। फिर भी सभी राज-नैतिक दल इस तरह के 'बंटवारे' को उचित मानते से दीख पड़ते हैं। धर्म-निर-पेक्ष समाज में व्यक्तियों के बीच जो फर्क होगा वह वर्ग के आधार पर होगा, धर्म के आधार पर नहीं। उदाहरण के लिए, "मजदूरों का नेता" धर्म-निरपेक्ष ध्रुवी-करण हुआ, परन्तु "हिन्दुओं का नेता" 'मुसलमानों का नेता' इस तरह का ध्रुवी-करण धर्म निरपेक्ष नहीं हुआ।

लक्ष्य अभी भी अप्राप्त

भारत में धर्म-निरपेक्षता का सिद्धान्त संविधान में शामिल कर लिया गया है। परन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करना अभी बाकी है। इसने अब तक हमारे सामाजिक जीवन में प्रवेश नहीं पाया है। यहां तक कि इसमें भी अभी संदेह है कि समाज ने इस लक्ष्य को स्वीकार किया है अथवा नहीं। हिन्दुओं में एक जोरदार धार्मिक कट्टरतावादी पुनर्जागरण का आन्दोलन चल रहा है। उदारचेताओं का एक छोटा-सा सम्प्रदाय इससे लड़ रहा है। दूसरी ओर, भारतीय मुसलमानों में गणतांत्रिक उदारता की ओर ले जानेवाला ऐसा कोई समुदाय नहीं है। भारतीय उदारवादी, उनकी संख्या चाहे कितनी भी छोटी क्यों न हो, जब तक सभी सम्प्रदायों से नहीं आते और धर्म-निरपेक्षता के आधार पर एक मंच पर एकत्र नहीं होते तब तक सम्प्रदाय-वादियों के विरुद्ध वे नहीं टिक सकेंगे। हिन्दू उदारवादी सम्प्रदायवादी और कट्टर-वादी हिन्दुओं के समक्ष हार जायेंगे। मुसलमानों को यदि धर्म-निरपेक्ष और गठित भारतीय समाज के ताने-बाने में शामिल करना है तो उसकी पूर्व शर्त यह है कि मुसलमानों में उदारवाद के विचारों के अनुसार बरतनेवाले लोगों का एक ऐसा समूह निकलना चाहिए जो सम्प्रदाय-वादी कठमुल्ला और समाज पर बराबर प्रहार कर सके।

किसी भी समाज में उदार विचार-वाले व्यक्तियों का आविर्भाव एक लम्बी सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक प्रक्रिया से गुजर कर ही होता है। आज जो हिन्दुओं में उदार विचारों के पोषक प्रभावशाली बुद्धिजीवी हैं उसका कारण यह है कि हिन्दू धर्म में धर्म-ग्रन्थ के आग्रह से मुक्त विचारों का समन्वय हुआ है और विरोधी विचार का प्रकट किया जाना भी सहा है। आधुनिक भारतीय उदारवादी परम्परा राजा राममोहन राय से आरम्भ होती है। वह हिन्दू समाज के थे। नेहरू जैसे धर्म-निरपेक्ष उदारवादी (हिन्दू उदारवाद से भिन्न) व्यक्तियों के प्रभाव से पोषण पाता हुआ यह समाज आज की स्थिति में आया है।

हिन्दू उदारवादियों ने हिन्दू धर्म के रूढ़िवादी विचारों पर बराबर प्रहार किया है। एक के बाद एक उन लोगों ने धार्मिक आचार-विचार का समालोचनात्मक मूल्यांकन किया है। इस बुनियाद पर वे समाज का मार्गदर्शन करते रहे हैं। इससे कुल मिलाकर एक हद तक हिन्दू समाज को ही लाभ हुआ है। मेरा कथन यह नहीं है कि हिन्दू समाज ने उदारवादी गणतांत्रिक नैतिक मूल्यों को ग्रहण कर लिया है और तदनुरूप किसी भी मानी में संतोषजनक हद तक उसने अपने को आधुनिक बना लिया है। उसने ऐसा नहीं किया है। परन्तु उदारवाद की यह जो निरन्तर परम्परा चल रही है उस कारण भारत में हिन्दू समाज मुस्लिम समाज से अधिक अच्छी सांस्कृतिक स्थिति में है।

मुस्लिम पिछड़ापन

भारत के मुसलमानों में उदारवृत्तिवाले ज्ञानियों की कमी क्यों है ? इस प्रश्न के उत्तर के अनेक पहलू हैं। एक बात निर्विवाद है। मुसलमानों के पिछड़ेपन की जड़ है मुसलमानों के दिमाग की बनावट।

भारत के मुसलमानों का विश्वास है कि उनका सम्प्रदाय अपने आप में पूर्ण समाज है तथा भारत के अन्य सम्प्रदायों से ऊँचा है। ऐसा मानने के अनेक आधारों में एक यह धारणा है कि इस्लाम धर्म में पूर्ण समाज निर्माण की माक्री (दूरदर्शिता) है, इसलिए इसे अब और अधिक आगे ही बढ़कर कुछ सोचने की आवश्यकता नहीं। यह विचार विवादास्पद है। एक उदाहरण लीजिए—मनुष्यों के अधिकार की जो हमारी आधुनिक धारणाएँ हैं "इस्लामिक परसनल लॉ" (व्यक्तिगत सम्पत्ति उत्तराधिकार, विवाह आदि से सम्बंधित मुसलमानों के कानून) उससे विपरीत दिशा में है। इसमें निहित विरोधाभास स्पष्ट है, कहने की आवश्यकता नहीं कि उसे हटाते जाना ही है।

समस्याओं को उलझानेवाली दूसरी बात यह है कि भारतीय मुसलमानों को अल्पसंख्यक होना बुरा लगता है। वे अपने धर्म का पूरे देश में प्रचार करने का स्वप्न देखते हैं। ऐसा यदि नहीं हो सका, तो कम-से-कम भारत पर शासन करने का वे स्वप्न देखते हैं। वे इस भ्रम के शिकार हैं कि किसी समय उनकी बड़ी रौबदाब थी। उनके मन पर यह शक्ति भी बैठी हुई है कि उनको सताया जा रहा है। भारत के उर्दू अखबारों से, जमायत-ऐ-इस्लामी और मुस्लिम मजलिस-ऐ-मुशावरात के नेताओं के वक्तव्यों से मैं इसके अनेक उदाहरण दे सकता हूँ। देश का जब बँटवारा नहीं हुआ था उस समय भारत के मुसलमान जिस राजनीति में थे, उसमें ऐसे विचारों की जड़ है, ऐसा देखा जा सकता है। उस समय मुसलमानों का यह मानना था कि राज्य के भीतर वे अपने आप में एक राज्य हैं। उसी तरह भारतीय समाज में रहकर भी वे अपने आपको एक अलग समाज माने हुए थे। साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का उनका सवाल इसी विश्वास पर आधारित है। गणतांत्रिक समाज की कल्पना के यह विपरीत है। आज उनका विश्वास है कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय के साथ वे समानान्तर रूप से रहेंगे। उनके सम्प्रदाय को पूर्ण स्वायत्तता रहेगी। उनके "परसन लॉ" में कोई तब्दीली न आने पावे इसके लिए उनकी चिन्ता, किसी भी तब्दीली के उनके विरोध की जड़ में यही बात है। गर्भ-निरोध (परिवार नियोजन) का वे जो विरोध करते हैं उनके पीछे उनके मन का यह भूत है कि उनकी संख्या यदि बढ़ेगी तो वे राजनीति में प्रभावकारी हो सकेंगे। यह तो वही पुराना खतरनाक रूप है जिससे पाकिस्तान की माँग पैदा हुई थी और पाकिस्तान बना था।

मुसलमानों का नेतृत्व आज मूलतः सम्प्रदायवादी है। चागला जैसे अपवाद-स्वरूप उदार मुसलमानों का भारतीय मुस्लिम समाज में कोई स्थान नहीं है। भारत के मुसलमानों को आज जिस बात की आवश्यकता है वह यह है कि उनके बीच ऐसे लोग हों जो उदारता के विचारों पर दृढ़ता से जमे रहें और आधुनिक उदार विचारवाले अन्य व्यक्तियों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर मुसलमान और हिन्दू दोनों ही सम्प्रदायवादियों के विरोध में मोर्चा ले सकें। मुसलमानों में उदार विचारवाले बुद्धिवादी वर्ग का यदि अभ्युदय नहीं होगा तो भारतीय मुसलमान सम्प्रदायवादी, सुधार-विरोधी, मध्ययुगीन विचार धाराओं और परम्पराओं से जुड़े रहेंगे और फल यह होगा कि सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से वे मिट जायेंगे।

एक दूसरी बुरी सम्भावना यह है कि हिन्दुओं में कट्टरता को पुनर्जीवित करने का जो आंदोलन चला है वह उदारवादी हिन्दू विचारों पर हावी होकर उन्हें समाप्त कर दे। उदारवादी हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के समर्थन से मजबूत होंगे और किसी भी तरह के प्रतिक्रियावाद का मुकाबिला कर सकेंगे। मुसलमानों का विश्वास प्राप्त कर सकें, ऐसे नेताओं को भारतीय मुसलमानों में से ही आगे आना पड़ेगा। इनका पहला काम यह होगा कि मुसलमानों के मन पर सम्प्रदायवादियों की जो जड़ जमी हुई है उसे वे उखाड़ फेंकें। जमायत-ऐ-इस्लामी, मुस्लिम मजलिस-ऐ-मुशावरात और तामिर-ऐ-मिल्लत जैसी संस्थाओं के प्रभाव को समाप्त करना पड़ेगा। तथाकथित राष्ट्रवादी मुसलमानों का, जो मूलतः सम्प्रदायवादी हैं, पर्दाफाश करना पड़ेगा। धर्म के नाम पर राष्ट्र-विरोधी विचारों को फैलानेवाले उलेमाओं का प्रचार बंद करना पड़ेगा। मुसलमानों में सम्प्रदायवाद का जहर फैलानेवाले उर्दू, अंग्रेजी या अन्य अखबारों के मुँह पर ताले जड़ने पड़ेंगे। संक्षेप में यह कहें कि सम्प्रदायवादियों के व्यापक प्रभाव के विरोध में डटकर मोर्चा लेना पड़ेगा।

आज भारत में कुछ ऐसे मुसलमान हैं जो उदारवादी भारतीय जागृत समाज के विचारों को पसन्द करते हैं। परन्तु उनके आधुनिक विचारों पर उनके सम्प्रदायवालों की जो प्रतिक्रिया है वे उनसे डरते हैं। ऐसे लोग सिर्फ निराले ही नहीं हैं, बल्कि वे भारतीय मुसलमानों की प्रगति के रोड़े भी हैं। वे या तो नैतिक रूप से भीरु हैं या एक बड़ी सामाजिक समस्या की ओर से उदासीन हैं। यह सामाजिक समस्या भारत के भविष्य की रक्षा की समस्या है। उसको अब दो में एक बात चुननी है। वे यदि भारतीय मुसलमानों का उदारवादी बौद्धिक नेतृत्व देने में चूकते हैं तो नयी पीढ़ी को इस काम को अंजाम देने का जिम्मा अपने पर लेना होगा।

प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि मुसलमानी सम्प्रदायवाद हिन्दू सम्प्रदायवाद की प्रतिक्रिया है, यह सच नहीं है। भारत में आज जिन दो दलों की टक्कर

३० जनवरी शान्ति दिवस के रूप में मनायें

हर साल राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की पुण्य तिथि ३० जनवरी हम शान्ति-दिवस के रूप में मनाते आ रहे हैं। इस वर्ष जब देश पर युद्ध का संकट छाया हुआ है तब यह दिवस विशेष महत्व का है। ऐसी परिस्थिति में हम सब गांधीजी के विचारों में माननेवालों पर यह विशेष जिम्मेदारी आ जाती है कि युद्ध का सरकार तो अपने ढंग से मुकाबिला करेगी मगर हमको भी युद्ध का शान्तिपूर्वक मुकाबिला करने के लिए तैयारी करनी चाहिए। जनता में युद्ध से घबड़ाहट या उग्रता उन्माद तथा प्रतिपक्षी देश की जनता के प्रति कटुता की भावना न आ जाने पाए इसका तो हमें विशेष ध्यान रखना ही चाहिए। देश में भी ऐसी समस्याएँ, जिसके लिए गांधीजी ने अपना बलिदान दिया और उनकी जो प्रिय कार्य थे ऐसी साम्प्रदायिक समस्या, छुआछूत, शराबबंदी, एकता के कार्यों पर जनता को जागृत करना चाहिए क्योंकि ये समस्याएँ फिर से देश की दीवारों में दरार डाल रही हैं।

इस वर्ष शान्ति-दिवस के लिए कुछ कार्यक्रम आपको सुझा रहे हैं :—

१. सेवा तथा सम्पर्क के कार्य

२. मौन शान्ति जुलूस

३. प्रार्थना सभा

४. शान्ति बिल्लों की बिक्री।

सेवा तथा सम्पर्क के कार्य में सवेरे एक घंटा सामूहिक सफाई का कार्यक्रम तथा दिन में अपने अनुकूल समय में विविध जातियों, सम्प्रदायों से सम्पर्क तथा शान्ति दिवस बिल्लों की बिक्री करें।

मौन शान्ति जुलूस : इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए। ३० जनवरी के पहले शान्ति सैनिकों तथा शान्ति प्रेमी लोगों को जनता में जाकर गांधीजी के विविध विचार, युद्ध का कैसे प्रतिकार किया जाय, कटुता का उन्माद न फैले और अपने-अपने स्थान पर कैसे शान्ति रखें तथा युद्ध के समय क्या करें आदि समझाएँ और विविध लोगों को ३० जनवरी के दिन शान्ति जुलूस में आने के लिए निमन्त्रित करें।

शान्ति जुलूस मौन हो तो उत्तम होगा। जुलूस दो या तीन की कतार में शान्तिबद्ध बिलकुल निस्तब्ध हो। शान्ति सैनिक इस जुलूस में अपना गणवेश (सफेद कपड़े, सिर पर केशरी साफा तथा बायें हाथ की बांह पर केशरी पट्टा लगा हुआ हो, जिस पर शान्ति सैनिक लिखा हुआ हो।) पहनकर शामिल हों तथा शान्ति प्रेमी और सहयोगी लोग भी सफेद वस्त्रों में शामिल हों तो अच्छा होगा। जुलूस में गाने, सूत्र, बातचीत बिलकुल नहीं करनी चाहिए। अपने विचार बताने के लिए कुछ शान्ति सैनिक तथा शान्ति प्रेमी लोग हाथ में घोषणापत्र उठाकर चलें। इन घोषणापत्रों के लिए कुछ सूत्र सत्याग्रह पत्रिका में दे रहे हैं। यह मौन शान्ति जुलूस जन-जगत के चौक से आरम्भ हो और इसी चौक से समाप्त हो।

प्रार्थना सभा : मौन जुलूस नगर या गांव के प्रमुख स्थानों से गुजर कर एक जगह पर प्रार्थना सभा के रूप में बदल जाय। जहाँ तक सम्भव हो यह प्रार्थना सभा एक घंटे से अधिक समय की न हो। सभा में पहले शान्तिसेना की सर्वधर्म प्रार्थना या मौन प्रार्थना की जाय, उसके बाद शान्ति सैनिक, शान्ति प्रेमी तथा स्थानीय प्रमुख लोगों के व्याख्यान हों। व्याख्यानों में शान्तिसेना के महत्व, युद्ध का प्रतिकार, युद्ध के समय जनता का क्या फर्ज है और अपने देश के मूल लोकशाही, सेक्युलरिज्म, शराबबन्दी, राष्ट्रीय एकता, जनशक्ति, ग्रामदान के महत्व तथा जातिवाद और छुआछूत पर विचार प्रकट करें तथा लोगों को शान्तिसेना का संगठन करने के लिए आवाहन करें।

शान्ति बिल्ले हर साल के मुताबिक इस साल भी हमारे पास छपे हुए तैयार हैं। बिल्ले दस पैसे में आप शान्तिसेना के प्रचारार्थ या सहायतार्थ बेच सकेंगे। हम आपको ६ रुपये में एक सौ बिल्ला बगैर पिन के देंगे। इससे तीन या चार पैसे आपको अपने कार्य के लिए मिल सकेंगे। शान्ति बिल्लों की पूरी रकम अग्रिम भेजनी अथवा वी० पी० द्वारा मँगाने पर भेजे जायेंगे। इन बिल्लों पर तारीख नहीं लिखी हुई है। इसलिए इन्हें आप ३० जनवरी के बाद भी बेच सकेंगे। बिल्लों के लिए आर्डर या अग्रिम रकम हमारे पास आने से तुरन्त आपको बिल्ले भेज जायेंगे। बिल्ले बेचने से आपको अधिक जनसम्पर्क होगा जिससे आप जनता को गांधीजी, शान्तिसेना तथा आज की परिस्थिति के बारे में अपने विचार समझा सकेंगे।

कृपाकर ३० जनवरी शान्ति-दिवस आपके स्थान पर किस तरह मनाया गया, इसकी सूचना ३१ जनवरी को लिखकर हमें भेजने का कष्ट करें।

जय जगत्

शान्तिसेना मण्डल
राजघाट, वाराणसी–१,

सस्नेह
नारायण देसाई
मंत्री

→कराने के लिए उनके संदेश पहुँचायें। समारोह में ९ गांवों से प्राप्त तीन बीघा साढ़े आठ कट्ठा जमीन का वितरण तेरह भूमिहीन परिवारों के बीच हुआ।

पुलिस अधिकारी की शान्ति-सेना के कार्य में दिलचस्पी

मुजफ्फरपुर जिला के अतिरिक्त आरक्षी अधीक्षक (ए० एस० पी०) श्री महेशचन्द्र मिश्र एक पुलिस अधिकारी ही नहीं हैं, एक निष्ठावान शान्ति सैनिक भी हैं। जिनकी सर्वोदय के कार्यक्रम में गहरी अभिरुचि है। उनका कहना है "हम (पुलिस के) लोग बन्दूक में ही विश्वास रखनेवाले हैं, किन्तु स्थिर शान्ति की स्थापना बन्दूक से नहीं होगा शान्ति-सैनिकों की द्वारा, सेवा परायणता और बलिदान की भावना से होगा।

टैक्स वसूली की ढिलाई

बंगला देश से आये शरणार्थियों का बोझ अब भारत सरकार ने छोटी औकाद के लोगों के कन्धे पर भी प्रत्यक्ष रूप से डाला है। साल भर में सरकार उस मद में ६०० से ७०० करोड़ रुपये तक खर्च करेगी। जब लोकसभा अभी बैठी नहीं थी तब सरकार ने तीन नये कर लगाने के लिए तीन अध्यादेश जारी किये। वे हैं: डाक टिकट में ५ पैसे (रिफ्यूजी रिलीफ टिकट) की, रेल किराये में ५ प्रतिशत की वृद्धि तथा हवाई जहाज के किराये में, देश के भीतर की यात्रा में ५ प्रतिशत की वृद्धि।

जब लोकसभा की बैठक हुई तब गत २२ नवम्बर को सरकार ने उन अध्यादेशों को लोकसभा की स्वीकृति के लिए पेश किया। विरोधी दल के सदस्यों ने इस पर जो टीकाएँ की, उनमें एक यह है कि जब लोकसभा की बैठक बहुत ही शीघ्र होनेवाली थी, तब अध्यादेश द्वारा कर लगाना उचित नहीं था। दूसरी टीका यह थी कि वसूली की ढिलाई के कारण एक तरफ टैक्स के बकाये की रकम बढ़ती चली जा रही है। और दूसरी तरफ नये नये कर लगाये जा रहे हैं। तीसरी टीका यह थी कि उन अध्यादेशों को जारी करने के पहले राज्यपालों और मुख्य-मन्त्रियों की बैठक में बंगला देश के शरणार्थियों के लिए अतिरिक्त साधन जुटाने के प्रश्न पर जो चर्चा हुई थी, वह लोकसभा की सम्मति का स्थान नहीं ले सकती।

इन टीकाओं के जवाब में सरकारी पक्ष ने परिस्थिति की गम्भीरता का सहारा लिया। बात जो हो, पर वसूली की ढिलाई के कारण टैक्स के बकाये की रकम जो दिन-रात बढ़ती जा रही है उसका एक उदाहरण यह है :

वर्ष	बकाये की रकम
१९५९-६० तक	६२ करोड़
१९६०-'६१-से '६७-'६८ तक	२६३ ,,
१९६८-'६९	१४६ ,,
१९६९-'७०	२६९ ,,
कुल	८४० ,,

१९६१ में और बाद के वर्षों में इनकम टैक्स ऐक्ट में संशोधन कर इनकम टैक्स ऑफिसरों को यथेष्ट पावर दिया गया है जिनका वे इनकम टैक्स और बकाये की रकम की वसूली में उपयोग कर सकते हैं। परन्तु ऊपर के आँकड़े से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वसूली में ढिलाई किस हद तक बढ़ती जा रही है।

टैक्स की रकम के इस तरह के बकाये का असर टैक्स देनेवालों और टैक्स वसूलनेवालों की नैतिकता को किस तरह प्रभावित करती है, यह स्पष्ट है। परन्तु इसके आर्थिक पहलू भी हैं। कर के बकाये की रकम का स्थान लेने को जब नये कर लगाये जाते हैं तब इसका अर्थ यह हुआ कि कर का बोझ उन लोगों के सिर पर से हट जाता है, जिन पर रकम बाकी है और उनके सिर जा बैठता है जिनको नया टैक्स देना है। दूसरी ओर टैक्स की हालत अच्छी होती जाती है और टैक्स देनेवाले की उसकी तुलना में खराब। जो लोग अपनी वफादारी एवं ईमानदारी का पालन करते हैं उन पर टैक्स का बोझ अधिक पड़ता है।

फिर टैक्स वसूलनेवाले अफसर की ढिलाई स्वयं उनकी कमाई का एक साधन बन जाती है। उसे खिला-पिला कर टैक्स टालनेवाले बची रकम का प्रयोग अपनी सम्पन्नता बढ़ाने में करते हैं।

अभी हाल में टैक्स के बकाये के जो आँकड़े प्रकाशित हुए हैं उनके द्वारा सिनेमा जगत में कमाई करनेवालों पर सहज ही ध्यान खिंच जाता है। देश भर के करीब १५० फिल्मीसितारों और कारिंदों पर करीब २ करोड़ रुपये टैक्स के बाकी पड़े हैं। कुछ के बकाये की रकम आगे दी गयी है।

नाम	बाकी रकम
एम० जी० रामचन्द्रन्	१४ लाख ९९ हजार
नसीर खाँ सरवर खाँ	११ ,, ४५ ,,
राजकपूर	९ ,, ३४ ,,
किशोर कुमार	८ ,, २६ ,,
एम० आर० राधा	७ ,, ७७ ,,
दिलीप कुमार	६ ,, ६८ ,,
वी० सी० गणेशन्	६ ,, ६४ ,,
८. जॉनी वाकर	६ ,, ५२ ,,
९. बी० आर० पन्तुलु	६ ,, ४० ,,
एन० एन० सिप्पी	४ ,, ९५ ,,
प्रदीप कुमार	४ ,, ५५ ,,
ई० वी० सरोजा	४ ,, ४८ ,,
महमूद मुमताज अली	३ ,, ८२ ,,
सायरा बानू	३ ,, २९ ,,
राजकुमार कोहली	३ ,, २७ ,,

इस तरह ३० सितम्बर, ७१ तक (आन्ध्र और पश्चिमी बंगाल के सिनेमा अभिनेताओं को छोड़) १४४ अभिनेताओं पर १ करोड़ ८९ लाख ८० हजार रुपये बाकी थे।

कन्ट्रोलर एण्ड ऑडिटर जेनरल ऑफ इण्डिया द्वारा प्रकाशित सबसे हाल की रिपोर्ट में यह बताया गया है कि टैक्स के ६८३ करोड़ रुपये के बकाये में ५ लाख रुपये से अधिक आमदनीवाले १५०० व्यक्तियों पर ४०० करोड़ रुपये बाकी हैं। ये आँकड़े इस बात के प्रत्यक्ष गवाह हैं कि वसूली की ढिलाई किस हद तक है।

दूसरी ओर यदि आपने पोस्ट-कार्ड के अलावा कोई भी पत्र किसी को लिखा कि आप को टैक्स देना पड़ा।

शान्ति-दिवस बिल्ला

शान्ति-दिवस तथा गांधी स्मृति के लिए शान्ति-दिवस बिल्ले तैयार किये गये हैं। प्रति बिल्ले की कीमत दस पैसा है। २०० से ज्यादा मँगानेवाले को डेमरेज के बिना ६ पैसे प्रति बिल्ले की दर से प्राप्त हो सकेगा। बिल्ले ३० जनवरी के बाद भी बेचे जा सकते हैं।

रकम अग्रिम भेजें या वी० पी० से मँगायें।

अ० भा० शान्ति सेना मंडल,

राजघाट, वाराणसी-१ (उत्तरप्रदेश)

लोक गंगा के तट पर पहला पड़ाव :

सन् १९६० के अप्रैल माह की ६ तारीख की याद लिए मैं सिंहेश्वर (सहरसा) पहुँच रहा हूँ क्रान्ति को जीने वाले साथर क्रान्तिकारी श्री धीरेन्द्र भाई की लोकयात्रा के शुभारम्भ की रिपोर्टिंग करने। ६ अप्रैल '७० की याद इसलिए ताजी हो उठी है कि उस दिन ग्रामोन्मेष से बलिया (पूर्णिया जिले का वह गांव, जहाँ श्री धीरेन्द्र भाई सर्व सेवा संघ के निर्णयानुसार जनाधार का प्रयोग करने गये थे।) तक की उनकी यात्रा का महाराष्ट्र एक्सप्रेस में साथी था। सम्पादकों की जिम्मेदारियों से पूर्णतः मुक्त हो कर एक निरपवादित शायर की भूमिका में गांव में बैठने वे जा रहे थे। मुझे याद आती है बरौनी स्टेशन की वह बात जब मैंने उनके लिए पहले दर्जे का टिकट खरीदने का आग्रह किया तो वे तीसरे दर्जे के डिब्बे में ऊपर सामान रखनेवाली पटरी पर बिस्तर लगाने का आदेश देते हुए बोले थे, "मैं अब जनता का आदमी हूँ, उनकी तरह ही यात्रा मुझे करनी है।' मनसोगुर में भोजन की समुचित व्यवस्था नहीं हो पाने पर दो-तीन चोनियाँ (बहुत छोटे आकार के) खा कर आदाब किया था, कि 'हो गया जी, पेट तो भर गया।' और बलिया गांव में पहुँचने पर हुई स्वागत सभा में उन्होंने कहा था, 'आज से मैं आप के ग्रामपरिवार का एक सदस्य हूँ।' यह भी उनके साथ की अन्तरंगता की पहली संध्या।

और आज लोकशक्ति के जागरण हेतु लोकशिक्षण यात्रा करते-करते लोकगंगा में समाहित हो जाने की इस यात्रा की पहली संध्या को भी मैं उनकी बैलगाड़ी की बगल में चल रहा हूँ। बिहार के मुख्य मंत्री का मोटर गाड़ियों वाला काफिला दूसरे रास्ते चला गया है, और उसके द्वारा उड़ायी गयी धूल पीछे छूट रही है। जन-क्रान्तिकारियों के जत्थे पूरी ताकत लगा कर ग्रामस्वराज्य का उद्घोष कर रहे हैं। बैलगाड़ी के साथवाले जत्थे की आवाज गूँज रही है, धीरेनदादा अमर रहें। सिंहेश्वर बाजार के लोग उत्सुक निगाहों से जुलूस को निहार रहे हैं सड़क के दोनों किनारे खड़े-खड़े। छोटे-छोटे धूल धूसरित बालकों की टोलियाँ दौड़-दौड़ कर बैलगाड़ी के आगे-पीछे से अन्दर झांकने की कोशिश कर रही हैं। एक टोली में आपस में बात हो रही है, "हे हो, गांधीजी के देख ला।" मुझे ३-४ साल पहले की बात याद आती है। बिहार के ही एक आदिवासी ग्रामीण ने बड़े ही आत्म-विश्वास के साथ बताया था कि "गांधीजी को हमने देखा है, वे हमारे गांव में आये थे। जमीन की बात कहते थे।' और तब समझ में आया कि विनोबा को इसने गांधी के रूप में देखा था। आज ये बालक भी धीरेन्द्र भाई को गांधी के रूप में देख रहे हैं। गांधी एक विचार क्रान्ति का कभी खत्म न होनेवाला सिलसिला है। गांधी भला कभी खत्म होगा? प्रस्तर-प्रतिमाओं में गांधी को अमर रखने और उन प्रतिमाओं को तोड़ कर गांधी को खत्म करने की कोशिश करनेवाले कितने भोले, नासमझ और नादान लगते हैं उस लड़के के एक वाक्य के समक्ष—हे हो, गांधी जी के देख ला।

जुलूस सिंहेश्वर बाजार से आगे सुखासन गांव की ओर बढ़ रहा है। इस यात्रा का पहला पड़ाव है सुखासन में। मेरी बगल में एक वृद्ध सज्जन घुटने तक धोती पहने, तन पर एक छोटी-सी चादर डाले थोड़ी झुकी कमर पर हाथ रखे पूरी स्फूर्ति और गति के साथ आगे बढ़ रहे हैं। उनके कन्धे में लटक रहा थैला खादी-युग की याद दिला रहा है। मैं अनुमान कर रहा हूँ कि शायद इनके मन में भी खादी-युग की याद ताजी हो आयी होगी। उनके निर्वासन की चमकदार झुर्रियाँ विश्वास दिला रहे हैं कि वे निश्चय ही स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी रहे हैं, शायद एक मूक सेनानी।

बाजार के पक्के और ऊँचे मकान पीछे छूट रहे हैं और झोंपड़ियों का सिलसिला शुरू हो रहा है। जिन्हें देखते ही कुछ पहले पूर्व कहे गये पुराने क्रान्तिकारी जे० पी० के साथी पं० रामानन्दन मिश्र के वाक्य कानों में पुनः गूँज उठते हैं, "बम फेंकना हिंसा है लेकिन गरीबों की झोंपड़ियों के बीच कुतुबमिनार की ऊँचाई के महल बनाना उससे भी बड़ी हिंसा है। ये महल आमन्त्रित करते हैं कि 'ऐ बमवाले आओ और हमें नष्ट करो।' हजारों-हजार भूमिहीनों की बस्तियों में हजार-हजार बीघा भूमि को मिल्कियत रखना हिंसा है और यह स्थिति नहीं बदली तो गांव की धरती खून से लाल होनेवाली है। आप सर्वोदय की अहिंसा की गाय की पूँछ पकड़ कर वैतरणी पार करना चाहते हैं तो आप भारी भ्रम में हैं। आप ग्रामदान के पत्र को जिस पर आपने हस्ताक्षर किया है घुड़वाते हैं तो आप समझ लें कि जिस रजिस्टर में आपकी मिल्कियत दर्ज है उसे भी दियासलाई लगाकर फूँकने के लिए वाई आने ही वाला है।'

कदम आगे बढ़ रहे हैं लेकिन पं० रामानन्दन मिश्र की बातों की याद के साथ ही सिंहेश्वर का पूरा दिन आँखों के सामने आ जाता है। सुबह ही प्रखंड के विद्यालयों से आये शिक्षकों की आचार्यकुल-गोष्ठी श्री बैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अध्यक्षता में आयोजित हुई है और पंडित रामानन्दन मिश्र ने शिक्षकों के सामने कुछ बुनियादी सवाल पेश किये हैं। सबसे बड़ा सवाल इस युग का वे पेश करते हैं आज हर जगह एक बिखराव है, यह कैसे रुके? आचार्य शक्ति आज कहाँ सो रही है? धीरेन्द्र भाई से जब शिक्षकों के मार्गदर्शन की बात कही जाती है तो वे कहते हैं, "यह जमाना मार्गदर्शन का है ही नहीं, सारे मार्ग मिट गये हैं। अब तो मार्ग खोजने की बेला आ गयी है। हम

सब मिलकर मार्ग खोजें। इस युग में एक जबर्दस्त चेतना आयी है और चेतना में से एक स्वाभिमान प्रकट होता है। अवचेतना में स्वाभिमान नहीं होता। आज पुराने जमाने का समाज नहीं चल पायेगा और न पुरानी शक्ति से चल पायेगा। दण्ड-शक्ति विफल हो चुकी है। इसलिए शक्ति की खोज करनी है। दण्डशक्ति का साधन बन्दूक और साधक सैनिक है। सम्मति शक्ति का साधन विचार और साधक आचार्य है। श्री वैधनाथ बाबू इस बात के लिए आचार्यों का आभार मानते हैं कि उन्होंने ऐसे व्यक्ति को अपनी सभा का अध्यक्ष बनाकर उसे सम्मानित किया जिसका सम्बन्ध विद्यालय से बहुत बचपन में ही छूट गया था। कार्यक्रमों का सिल-सिला लगातार चल रहा है। बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा हो रही है बिहार के मुख्यमंत्री की। भाई लखन और किशोर स्कूलों से आये तरुण-शान्तिसैनिकों की रैली आयोजित करना चाहते हैं। उसकी तैयारी में व्यस्त है। मंच पर उनके गीत आदि के कार्यक्रम चल रहे हैं। इसी बीच मुख्यमंत्री भी पधारते हैं और मंच पर भीड़ मच जाती है। उनका कार्यक्रम रोक दिया जाता है। उत्साही तरुण की उमंग को रोकना आक्रोश पैदा करता ही है। लखन कुछ नाराज हो जाता है। लेकिन भीड़ बढ़ती जा रही है और सभा का माहौल जमता जा रहा है।

आखिर, धीरेन भाई की लोकयात्रा का उद्घाटन कार्यक्रम भी शुरू होता है। स्वागत करते हैं इस प्रखण्ड के बुजुर्ग श्री कार्तिक बाबू। सहरसा के काम की रिपोर्ट ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री राजा बाबू पेश करते हैं और धीरेन भाई के अजीज दोस्त छबना बाबू उनका परिचय कराने के लिए खड़े होते हैं। कहते हैं "काम में तो धीरेन भाई आगे बढ़ा ही है उम्र में मुझसे छोटा होने पर भी बड़ा ही दिखता है।" "जो कार्यक्रम वे करने जा रहे हैं वैसा उदाहरण शायद ही किसी ने पेश किया हो। हम आशा करते हैं कि वे काफी दिनों तक जनता की सेवा करते रहेंगे।" और अब पंडित रामानन्दन मिश्र यात्रा का औपचारिक उद्घाटन करते हुए कहते हैं, "मेरे जीवन के श्रेष्ठ भाई धीरेन भाई, एक बड़ा निर्णय लिया है कि वे जीवन का निर्वाण लोक-गंगा में प्रवाहित होते देखना चाहते हैं। मैं चाहता हूँ कि इस जीवन गंगा के किनारे उनका जीवन पूर्ण हो और वे समाज को, जनता को जो देना चाहते हैं वह दे जायें।" "आज दुनिया विनाश नहीं तो अर्द्धविनाश के द्वार पर खड़ी है। महाभारत के बाद यह विनाश का सवाल पुनः उठा है। शक्तियों की खोज में लगा हुआ मानव छोटी-छोटी शक्तियों के इर्दगिर्द भटक रहा है 'मैं' का राक्षस सबको जला रहा है। ऐसी हालत में सामूहिक समाज के निर्माण की ओर दुनिया बढ़ना चाहती है। व्यक्ति और समाज के सम्बन्धों का संतुलन रखते हुए ग्रामस्वराज्य ऐसे ही सामूहिक समाज के निर्माण के लिए है।

और अब धीरेन्द्र भाई स्वयं बोल रहे हैं, "मेरे मित्रो, लोग पूछते हैं कि यह आपने लोक गंगा क्या निकाली है। आप जानते हैं कि लोकतंत्र में लोक मुख्य है और तंत्र उसका औजार है लेकिन आज आप देखते हैं कि तंत्र का जाल इतना फैला है कि लोक नदारद हो गया है। लोक की सत्ता दिखाई नहीं देती। आज हालत यह है कि सेवापतियों के बोझ से सेव्य दब कर मर रहा है। लेकिन फिर भी वह सेवा-पतियों का पैर छूता है और उसे अपना उद्धारक मानता है। जनता के भीतर की यह मान्यता टूटनी ही चाहिए। समाज लोक शक्ति से चले, सेवक की शक्ति से नहीं। आज वही शक्ति जगानी है। लोक-रूपी हनुमान को कोई चाहिए जो उसकी शक्ति को याद दिलाये। किसी भी तंत्र के पीछे चलकर लोक का उद्धार नहीं होगा। आप अपने 'मैं' के दायरे में सिकुड़े हुए उस 'मैं' को 'हम' में विलीन करने के लिए आप से निवेदन करने आपके पास आ रहा हूँ।" इस आयोजन की अध्यक्षता कर रहे मुख्यमंत्री श्री भोला पासवान शास्त्री काव्यात्मक शैली में भक्ति से बढ़ कर यात्रा का महत्व बताते हैं और यह कहते हैं कि "जीवन यात्रा का रस धीरेन भाई को लग गया है।"

सामने भीड़ इकट्ठी है। उद्घोष हो रहे हैं। सुखासन आ गया है। एक विद्यालय के बड़े मैदान में तम्बू के नीचे बड़ा-सा मंच बना है। खुले आकाश के नीचे लोग बैठे हैं। लोकयात्रा की यह पहली ग्रामसभा है। मंच पर धीरेन्द्र भाई के साथ ही मुख्यमंत्रीजी भी पहुँचते हैं। भीड़ धीरेन दादा और मुख्यमंत्री के जय जयकार करती है। और सभा की कार्रवाही शुरू होती है। एक के बाद एक गाँव के हर वाक् चतुर व्यक्ति मुख्यमंत्रीजी के सामने कुछ अर्ज करने के लिए आतुर हैं। सबसे पहले एक नम्बर अपनी दीनहीन स्थिति और असहायावस्था का वर्णन करते हुए मुख्यमंत्रीजी से उद्धार की माँग करते हैं। मांग पत्र जो वास्तव में मांग पत्र है और स्वयं लोकशक्ति के लिए अपमान पत्र है, एक के बाद एक लगातार क्षेत्र और गाँव की दिशाएँ, जिनमें पक्की सड़क का अभाव प्रमुख है, गिनायी जाती है और मुख्यमंत्री की चन्द्र-सूर्य सी तेजस्विता का बखान करते हुए उनसे माँग-पूर्ति का आग्रह किया जा रहा है। गाँव के मुखियाजी की अपनी मैथिली और हिन्दी की मिली-जुली बोली में उन माँगों को जोरदार ढंग से पेश करते हैं और उम्मीद करते हैं कि जब मुख्यमंत्रीजी स्वयं राम के रूप में शबरी के घर पधारे हैं तो उद्धार होने में अब कोई शक नहीं है। और इस माहौल में लोक शक्ति के आराधक धीरेन्द्र भाई से दो शब्द कहने के लिए निवेदन किया जाता है। वे कहते हैं "एक अजीब तमाशा देख रहा हूँ। जिस लोक शक्ति का बखान कर राजनेता अपनी सत्ता सम्भाल रहे हैं या उसकी दौड़ में लगे हुए हैं वही लोक शक्ति अपने को दीनहीन असहाय घोषित कर रही है।" धीरेन भाई के दो शब्द पूरे होते हैं और दो-एक सज्जनों के द्वारा पुनः वही बातें दुहराई जाती हैं। अब मुख्यमंत्रीजी करीब ४५ मिनट तक आश्वासनों से भरा

श्री जयप्रकाश नारायण एक साल के अवकाश पर

अपनी सत्तरहवीं जन्म तिथि के अवसर पर (११ अक्टूबर '७१) श्री जयप्रकाश नारायण ने अगले अक्टूबर '७२ से एक साल के लिए सार्वजनिक काम से अवकाश लेने का निर्णय लिया है। इसकी जानकारी उन्होंने सभी मित्रों को एवं सम्बन्धित व्यक्तियों को एक पत्र के द्वारा दी है। पत्र निम्न प्रकार है

आज ११ अक्टूबर १९७१ को मेरे जीवन के ६९ वर्ष पूरे हुए। यदि मैं जीवित रहा तो ११ अक्टूबर १९७२ को मेरे ७० वर्ष पूरे हो जायेंगे।

यह पत्र इसलिए लिख रहा हूँ कि अपने एक व्यक्तिगत निर्णय की सूचना आपको दे दूँ। प्रभावतीजी की पूरी सहमति से मैंने यह निर्णय लिया है कि ११ अक्टूबर १९७२ से लेकर ११ अक्टूबर १९७३ तक, पूरे एक वर्ष के लिए, मैं हर प्रकार के सार्वजनिक कार्य से अवकाश ले लूँगा, सभी संस्थाओं की सदस्यता या पदों से इस्तीफा दे दूँगा। इस प्रकार इस पत्र द्वारा एक वर्ष की नोटिस दे रहा हूँ। मैं आशा करता हूँ कि वे सभी संस्थाएँ जिनसे मेरा सम्बन्ध रहा है इस एक वर्ष की नोटिस का लाभ उठाकर अपने कार्य-संचालन के लिए इस वर्ष में मेरे स्थान पर अन्य उचित प्रबन्ध कर लेंगी।

अपने अवकाश के एक वर्ष में मैं क्या करूँगा नहीं जानता। इतना जानता हूँ कि पूरे १२ महीने छुट्टी पर रहूँगा, आराम करूँगा और स्वास्थ्य सुधार जहाँ रहना या जो करना चाहूँगा वह करूँगा। न किसी सार्वजनिक सभा में जाऊँगा, न किसी विचार-गोष्ठी आदि में, न किसी संस्था की औपचारिक अथवा अनौपचारिक बैठकों में जाऊँगा। मित्र स्वीकृति लेकर मिल सकेंगे। परन्तु उनसे किसी भी सार्वजनिक विषय अथवा संस्थागत प्रश्न पर न चर्चा करूँगा, न कोई परामर्श दूँगा। कार्यक्षेत्र से स्वयं दूर रहकर निर्देश, परामर्श आदि देना अनुचित होगा।

मेरे इस निश्चय को कोई भी महत्त्व देना ठीक नहीं होगा। मेरे लिए यह न किसी-विशेष आध्यात्मिक साधना, न किसी चिंतन मनन का ही अवसर होगा। यह तो एक सीधी सादी छुट्टी का वर्ष होगा मेरे लिए। हाँ, यदि अन्तःप्रेरणा हुई तो इस अवकाश काल में कुछ लिखूँगा और इच्छा हुई तो अध्ययन भी करूँगा। परन्तु इस निर्णय के पीछे ऐसा कोई योग पूर्ण निश्चित उद्देश्य नहीं है।

एक ही ऐसी परिस्थिति की कल्पना इस समय कर सकता हूँ जिसमें इस निर्णय को तोड़ने पर बाध्य हो सकता हूँ। वह है राष्ट्रीय महासंकट की स्थिति, यानी ऐसी कोई स्थिति जो मुझको राष्ट्रीय महासंकट-सी प्रतीत हो, न कि कोई भी नेशनल इमरजेन्सी जो भारत सरकार घोषित कर दे।

एक वर्ष के अवकाश काल के बाद क्या करूँगा यह इस समय नहीं जानता। इतना जानता हूँ कि जब तक शरीर और दिमाग काम देगा देश और दुनिया की सेवा करता रहूँगा। यह भी जानता हूँ कि उस समय की मेरी कार्य पद्धति, वर्तमान पद्धति से बहुत भिन्न होगी, क्योंकि आज का इस अनावश्यक रूप से समय और शक्ति दोनों का ही अपव्यय करता है। बाकी ईश्वर की इच्छा पर है।

जयप्रकाश नारायण

है उनमें एक ओर है सब तरह के सुधार विरोध, रूढ़िवादिता, साम्प्रदायिकता और बहुसंख्यक तथा दूसरी ओर है उदारतावादी राजनीतिक बहुसंख्यकों को मौका परस्त होते हैं। वे इस बात की सावधानी रखते हैं कि सम्प्रदायवाद और बहुसंख्यक से टक्कर हो, कभी लिए बना न उतारें। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि सभी उदार दृष्टिवाले बुद्धिवादी इस बात पर सहमत हों कि सभी तरह के सम्प्रदायवाद से मोर्चा लेने के लिए वे एक गैर-राजनीतिक आंदोलन चलायें। यदि ऐसा नहीं किया गया तो नतीजा यह होगा कि भारत से उदारतावाद और धर्मनिरपेक्ष समाप्त हो जायगा। सामने बेहद बड़ा खतरा है। तरस इस बात पर आती है कि इस परिस्थिति को समझनेवाले लोगों की संख्या अत्यन्त अल्प है। उससे भी अधिक दुर्भाग्य की बात यह है कि समस्या का सही स्वरूप क्या है, इसकी जानकारी भी उन्हें बहुत कम है।

अनुवादक : हेमनाथ सिंह

महबूब नगर जिले में ४६ गाँव ग्रामदान घोषित

४६४ एकड़ भूमि का तुरंत वितरण

सर्व सेवा संघ कार्यालय द्वारा प्रसारित एक जानकारी के अनुसार आन्ध्र-प्रदेश के महबूबनगर जिले में जडचरला प्रखंड में १५ से २४ नवम्बर तक आयोजित ग्रामदान प्राप्ति एवं पुष्टि पदयात्राओं के परिणाम स्वरूप ९२ गाँवों में से ७७ गाँवों में ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाया गया, जिनमें से ४६ गाँव ग्रामदान घोषित हुए। इनमें से ३३ गाँवों में से ४२ दाताओं से ७८९ एकड़ भूमि (यह उल्लेखनीय है कि इसमें से ४६७ एकड़ भूमि सात्विक बटाईदारों की है) मिली। प्राप्त भूमि में से २९४ एकड़ भूमि तुरन्त वितरित कर दी गयी। ३९ गाँवों में ग्राम-शान्तिसेना का गठन किया गया।

उक्त प्रथम प्रयोग की सफलता से कार्यकर्ताओं के उत्साह की लहर दौड़ गयी और एक वर्ष में ऐसी समन्वित पदयात्राओं का आयोजन कर सारा जिला ग्रामदान को पुष्टि के साथ लाने का निश्चय किया गया।

उक्त शिविर एवं पदयात्राओं में आंध्र में ५० कार्यकर्ताओं के अलावा सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग, श्रीमती सुमन बंग एवं महाराष्ट्र के अन्य तीन कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। सार्वजनिक सभा में उद्बोधन के लिए आंध्र के उपमुख्यमंत्री श्री रेड्डी एवं वनमंत्री श्री महेन्द्रनाथ भी आए थे। (संकेत)

प्रखण्डस्वराज्य-सभा की बैठक में

श्री जयप्रकाश नारायण

मुसहरी प्रखंड में कुल १२१ गाँव में से ७७ राजस्व मौजे में तथा २१ टोले में ग्रामसभा का गठन हो चुका है। सभी ग्रामसभाओं ने प्रखण्डस्वराज्य-सभाओं के लिए अपनी ग्रामसभाओं से दो-दो प्रतिनिधियों का चुनाव कर लिया है। उन प्रतिनिधियों की बैठक १४ नवम्बर को लक्ष्मीनारायण स्मारक सदन, सर्वोदयग्राम में एक बजे दिन में बुलायी गयी थी। बैठक में १४२ प्रतिनिधिगण उपस्थित हुए। दर्शक दीर्घा भी खचाखच भरा था। बैठक में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, प्रभावती बहन, ध्वजा प्रसाद साहु, रमापति चौधरी, अध्यक्ष बिहार राज्य खादी ग्रामोद्योग बोर्ड, जगलाल ठाकुर, मंत्री बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, बद्री नारायण सिंह, अध्यक्ष बिहार भूदान यज्ञ कमिटी, कामेश्वर ठाकुर, अध्यक्ष मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय मंडल एवं अन्य गण्यमान्य आमन्त्रित व्यक्ति भी उपस्थित थे। ज्ञातव्य है कि २७ जुलाई को प्रखण्डसभा के पदाधिकारियों एवं कार्य समिति के चुनाव के लिए एक बैठक बुलायी गयी थी। किन्तु सर्वसम्मत न हो सकने के कारण चुनाव हो नहीं सका था। इस बीच कुछ और भी ग्रामसभाएँ गठित हुईं। और प्रतिनिधियों की संख्या भी बढ़ गयी। इस तरह कुछ नये प्रतिनिधि आ गये। ११ बजे दिन से ही प्रतिनिधिगण एकत्रित होने लगे तथा आपस में चर्चा भी शुरू हो गयी। एक बजे दिन में प्रतिनिधियों ने अपनी बैठक श्री देवेन्द्र पाठक की अध्यक्षता में विधिवत शुरू की। प्रारम्भ में श्री कैलाश बाबू ने संक्षेप में किन्तु स्पष्टता से प्रखंडसभा के दायित्व एवं पदाधिकारियों के चुनाव की पद्धति पर प्रकाश डाला। तत्पश्चात् प्रतिनिधियों ने आपस में परामर्श प्रारम्भ किया। विभिन्न पहलुओं से प्रतिनिधिगण सर्वसम्मत चुनाव के सम्बन्ध में चर्चा करते रहे। विभिन्न पदों के लिए कई नाम आये। कभी-कभी लगता था कि सर्वसम्मत चुनाव अब सम्भव हो जा रहा है। लेकिन अन्ततः कोई निर्णायक बिन्दु पर वे लोग नहीं पहुँच सके। और इस बार भी पदाधिकारियों का चुनाव सम्पन्न नहीं हो सका।

जब मैं जे० पी० ने प्रतिनिधि सभा को सम्बोधित करते हुए कहा 'प्रतिनिधियों की प्रखण्डस्वराज्य-सभा बन गयी है, लेकिन पदाधिकारी का चुनाव न हो सका।' जब वे मुसहरी प्रखंड में आये, तो बाबा ने कहा था कि जे० पी० चट्टान पर गये हैं। सचमुच मुसहरी चट्टान साबित हो रहा है। "जब तक प्रखंड-स्वराज्य-सभा की कार्यसमिति का सर्वसम्मत चुनाव नहीं होता है, तब तक श्री कामेश्वर बाबू, श्री कैलाश बाबू प्रखंड-स्वराज्य-सभा की बैठकों को बुलाते रहेंगे और हरेक बैठकों में उस बैठक का सभापति चुनकर कार्यवाही होती रहेगी। अब पदाधिकारियों के लिए आगे का काम रोका नहीं जायेगा। जब प्रतिनिधि सभा अपनी कार्यसमिति का गठन करने की स्थिति में होगी तो फिर आगे का काम सम्हालेगी।

"आम लोगों में यह धारणा है कि प्रखण्डसभा का पदाधिकारी होने पर बहुत सारे अधिकार मिल जायेंगे, हुकूमत चलेगी, परम्परा के अनुसार योजनाओं के खर्चों में मनमानी करेंगे। यह सोचना एकदम गलत है। वस्तुतः यह तो नेतागिरी का नहीं, सेवागिरी का क्षेत्र होगा। सेवारत भाव से आनेवाला ही इस जवाबदेही को सम्भाल सकेगा। सेवा का क्षेत्र विशाल है, पदाधिकारी तो मात्र नाम के होंगे। निर्णय तो प्रतिनिधि सभा ही करेगी। पदाधिकारी निर्णयों को कार्यान्वित करेंगे। मुख्य रूप से सारा काम तो ग्रामसभा को ही करना है।"

उन्होंने मुसहरी प्रखंड में अब तक हुए ग्रामस्वराज्य के कार्यों के प्रति सतोष व्यक्त किया। लेकिन इस बीच हुई इस प्रखंड की दुखद घटनाओं के प्रति चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने कहा, "जबतक ग्रामस्वराज्य की बुनियाद सुदृढ़ नहीं होगी तबतक ऐसी अप्रिय घटनाओं को पूर्णतः रोकने का दूसरा कोई हल नहीं है।"

ग्रामसभाओं की गतिविधियों की चर्चा करते हुए जे० पी० ने आगे कहा कि एक ओर जहाँ सक्षम ग्रामसभाएँ अपने विकास पथ पर अग्रसर हो रही हैं—वहीं दूसरी ओर कुछ ग्रामसभाओं को कमजोर करने का भी दुष्प्रयास किया जा रहा है। मजदूर प्रधान मुकुन्दपुर गाँव में ग्रामसभा बन चुकी है। लेकिन बगल के गाँव के कुछ रूढ़िवादी समर्थ लोग तरह-तरह से उन्हें सता रहे हैं। मुकदमों में फँसाकर उन्हें तबाह करने का प्रयास कर रहे हैं। यह ठीक नहीं है। सक्रिय ग्रामसभाओं को ऐसे मसलों पर सोचना चाहिए और मिलकर ऐसे लोगों को समझाना चाहिए। ग्रामदान में शामिल भूमिवानों का बीघा-कट्ठा निकालने के लिए एक ग्रामसभा (मिठनपुरवाला) के द्वारा उठाये गये कदम की सराहना करते हुए जे० पी० ने कहा, "भूमिवानों को अपना बीघा-कट्ठा शीघ्र ही बाँट देना चाहिए। यद्यपि इससे समस्या का पूरा निदान नहीं होता, लेकिन उस दिशा में शुभारम्भ तो माना ही जायगा।" ज्ञातव्य है कि ग्रामसभा ने अपनी बैठक में निर्णय लिया है कि गाँव के भूमिवानों से आग्रह किया जाय कि वे अपना बीघा-कट्ठा ३० दिसम्बर तक भूमिहीनों में वितरित कर दें, अन्यथा उसके बाद सोच-विचार कर असहकार का कोई कदम उठाना आवश्यक हो जायगा। पता चला है कि भूमिवानों ने बीघा-कट्ठा वितरण कर देने का आश्वासन दिया है। इस प्रकार ग्रामसभाएँ संगठित होकर सोचेंगी तो

मसलों का निदान मिल सकता है। सरकारी रिलीफ कार्यों में कुछ ग्रामसभाओं ने जो तत्परता दिखलायी उसकी प्रशंसा करते हुए जे० पी० ने कहा कि इस प्रकार ग्रामसभाएँ मनों स्थानीय सरकारी, गैर-सरकारी साधन-स्रोतों के विनियोग पर चौकसी रख सकती हैं। चुनाव के समय वह धींगा तथा जबर्दस्ती मतदान, विभिन्न दलों द्वारा गाँव में भेद बुद्धि पैदा करने की मलिन साजिशों के प्रति भी चुस्त रह ही सकती है।

सभा के अन्त में सभापतिजी ने प्रतिनिधियों को धन्यवाद दिया और मुकुन्दपुर ग्रामसभा की समस्या को अपने कुछ सहयोगियों के साथ आकर देखने तथा निपटाने का संकल्प व्यक्त किया।

विदित है कि इस बार जे० पी० ने स्पष्ट शब्दों में यह निर्देश दिया था कि किसी राजनैतिक दल का सदस्य ग्रामसभा का पदाधिकारी न हो। यदि किसी ऐसे व्यक्ति पर सर्वसम्मति होती है तो उनको अपने दल से त्यागपत्र दे देना होगा। इसका सभी प्रतिनिधियों ने स्वागत किया।

मुसहरी प्रखंड के शिक्षकों के एक दल को अध्ययन हेतु गांधी विद्यापीठ, वेड़छी भेजने की तैयारी

गांधी विद्यापीठ वेड़छी, जिला-सूरत (गुजरात) के आचार्य श्री ज्योति भाई देसाई ने दो माह मुसहरी प्रखंड में रहकर, वहाँ के विद्यालयों तथा शिक्षा-क्रम का अध्ययन किया तथा किस तरह शिक्षा को लोकोपयोगी बनाया जा सकता है इस सम्बंध में शिक्षकों, तरुण-शान्तिसैनिकों एवं ग्रामसभाओं के मित्रों से मिलकर चर्चा की। उनकी योजना थी कि उनके विद्यालय के ४० प्रशिक्षणार्थी इस प्रखंड में दो माह रहकर इस दिशा में स्थानीय मित्रों की सहायता करेंगे। किन्तु आकस्मिक बरसात एवं बाढ़ के कारण काम की अनुकूलता नहीं देखकर यह कार्यक्रम रद्द कर दिया गया था। अब भी ज्योति भाई के सुझाव पर इस प्रखंड के २८ शिक्षक, शिक्षिकाएँ एवं ग्रामसभाओं के ५ ऐसे प्रतिनिधि, जिनको शिक्षण कार्य में रुचि है, गांधी विद्यापीठ वेड़छी में ही १५ दिनों की अध्ययन यात्रा पर जा रहे हैं। ताकि वहाँ से लौटकर विद्यालयों में उस आधार पर योजना बनाकर काम प्रारम्भ कर सकें। इस अध्ययन-यात्रा में भाग लेने वाले शिक्षकों को सम्बोधित करते हुए बिहार शिक्षक संघ के अध्यक्ष श्री ब्रजनन्दन शर्मा ने कहा कि 'आज जब चारों ओर अंधकार ही अंधकार है, श्री जयप्रकाश नारायण एक ज्योति जला रहे हैं। एक समय था जब हमारे लाखों नौजवान जयप्रकाश के आह्वान पर अपना सब कुछ छोड़कर समाजवाद की स्थापना के लिए आगे आये थे। और उसी का फल है कि आज देश में समाजवाद का मार्ग साफ होता जा रहा है। आज जब शिक्षकों का उन्होंने आह्वान किया है तो हम उन्हें आश्वासन देते हैं कि हम एक लाख बाहर हजार शिक्षक उनकी भावनाओं के साथ हैं। जब तक शिक्षण को राजनीति के चंगुल से मुक्त नहीं किया जायेगा, तब तक न तो शिक्षकों का कल्याण होगा और न समाज का। उन्होंने इस काम में बिहार शिक्षक संघ की ओर से सभी सम्भव सहयोग करने का आश्वासन दिया। शिक्षकों के मार्ग-व्यय के मद में प्रखंड शिक्षक संघ ने १०१।०० रुपये, जिला शिक्षक संघ के मंत्री श्री महेन्द्र शाही ने १५१।०० रुपये तथा राज्य शिक्षक संघ की ओर से श्री शर्मा ने १२१।०० रुपये सहायता के रूप में देने की घोषणा की। जे० पी० ने शिक्षक संघ के सहयोग की सराहना की और कहा कि "जब तक शिक्षण में बुनियादी सुधार नहीं होगा, तब तक आज की हिंसा का मसला हल होने को नहीं, और कहा कि इसी दिशा में यह एक छोटा-सा प्रयास मात्र है।"

ग्रामसभाओं का गठन

सोनबरसा पुर—धीरे-धीरे एक-एक गाँव में ग्रामसभाएँ बनती रही हैं। जो जमीन कभी कठिन थी आज सुगम हो गयी है। श्री किशोरी भाई एवं उनके अन्य साथियों के प्रयास से भीखनपुर के सारे ग्रामीण हरिजन-परिजन, छोटे-बड़े सभी ने एक स्थान पर एकत्र होकर ग्रामसभा का गठन किया और सर्वसम्मति से कार्यसमिति के पदाधिकारियों तथा सदस्यों का चुनाव किया, जो इस प्रकार है, सर्वश्री रामसुन्दर प्रसाद—अध्यक्ष, चक्रधर प्रसाद—मंत्री, राम अनूप साह—कोषाध्यक्ष तथा अन्य १२ सदस्य। सभा के अन्त में कार्यसमिति के एक सदस्य ने हमेशा के लिए मद्यपान छोड़ देने का संकल्प लिया।

डोमपुर . वह भी एक दिन था जब गाँववालों ने कहा था—"हमने तो ग्रामदान नहीं करने का संकल्प कर लिया है। आप जाइए यहाँ ग्रामदान कोई नहीं करेगा," देखते-देखते संकल्प ने दूसरा विकल्प ढूँढ़ लिया और एक-एक कर ग्रामदान में शामिल होने लगे तथा १२ नवम्बर को वह दिन भी आया जब पूरे गाँव के लोगों ने एक साथ बैठकर ग्रामसभा बना लिया। जिसमें सर्वसम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारियों सहित १७ सदस्यों की कार्यसमिति का गठन हुआ। सर्वश्री सर्वेश्वर राय—अध्यक्ष, केदार महथा-उपाध्यक्ष, शिवजी ठाकुर-मंत्री, राधे ठाकुर-सहमंत्री और प्रहलाद ठाकुर-कोषाध्यक्ष एवं १२ अन्य सदस्य।

इस ग्रामसभा के गठन का श्रेय सर्वश्री किशोरी रमण भाई, अविनाशचन्द्रजी तथा श्रीकान्तजी को ही है।

भगवानपुर—दिनांक ११।११।७१ को भगवानपुर ग्रामसभा का गठन हो गया है जिसके पदाधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये। सर्वश्री दशरथ राय—अध्यक्ष, रामसेवक राय-मंत्री, मोतीलाल पासवान-कोषाध्यक्ष, एवं आठ कार्यसमिति के सदस्य। यहाँ के गठन का श्रेय श्री प्रह्लाद सिंह एवं सहयोगियों को है।

मणिका विशुनपुर चाँद—ग्रामदान के काम के लिए मुसहरी प्रखंड के अद्भुवित एवं कठिन गाँवों में मणिका विशुनपुर चाँद एक ऐसा गाँव है जहाँ जे० पी० का कैम्प अपेक्षाकृत अधिक दिनों तक रहा। यहाँ

के सम्पन्न भूमिवान ग्रामदान की बात सुनना तक नहीं चाहते थे। और अन्ततः एक सभा में जे० पी० को कहना भी पड़ा था कि मणिका में "हमारी दाल नहीं गली" और कार्यकर्ताओं ने कहा कि इस गाँव को ग्रामस्वराज्य के लिए राजी करने से उस चाँद पर चढ़ना आसान है। निश्चय ही समय की मर्यादा को देखते हुए जितने समर्थ और जागरूक लोग उस गाँव में हैं, उनलोगों से ग्रामस्वराज्य की बुनियाद डालने में इतने अपराजित विलम्ब की अपेक्षा हम सर्वोदय कार्यकर्ता कतई नहीं कर रहे थे। हमारे कैम्प के सक्षम और वरिष्ठ साथी सदैव ही वहाँ के सभी परिवारों से घनिष्ठ सम्पर्क बनाये रखे। फलश्रुति की आकांक्षा से नहीं, वरन् अपना कर्त्तव्य निभाने के ख्याल से ही। पंडित रामनन्दन मिश्र जैसे प्रभृति विद्वान् क्रान्तिकारी के व्याख्यान यहाँ हो चुके थे। बीच बीच में हस्ताक्षर भी प्राप्त होते जा रहे थे किन्तु बड़ी मन्दगति से गाँव में आपसी चर्चा अनेकों बार होती रही। इस बीच बगल के कई गाँवों में ग्रामसभाएँ गठित हुईं और महत्वपूर्ण समस्याओं के निराकरण ग्रामसभाओं के माध्यम से होने लगे। फिर चाँद भी अपने को इस सौम्य सत्याग्रह के सामने रोक नहीं सका और ग्रामस्वराज्य की धरती पर आखिर उतर ही आया।

विगत ७ नवम्बर की शाम, जबकि ग्रामसभा की सभी शर्तें पूरी हो चुकी थीं, गाँव के सभी लोग इकट्ठे हुए। सबके मन में उत्साह। देर आये दुरुस्त आये। और मन में लगन यह कि जितना विलम्ब हुआ, उस कमी को शीघ्र पूरा करेंगे। सभा की कार्यवाही श्री श्यामकिशोर प्रसाद सिंह के सभापतित्व में शुरू हुई। सर्वसम्मति से ग्रामसभा के लिए निम्न पदाधिकारियों का चुनाव हुआ। सर्वश्री बाँके बिहारी सिंह-अध्यक्ष, केदार राय-उपाध्यक्ष, कैलाश प्रसाद सिंह-मंत्री, पंडित जयकान्त पाठक-सहमंत्री, श्यामकिशोर सिंह-कोषाध्यक्ष। इसके अतिरिक्त कार्यकारिणी के आठ सदस्य मनोनीत किये गये। इस ग्रामसभा के गठन में मणिका कैम्प के कर्मठ साथी श्री हितेश्वर झा एवं उनके सहयोगियों का कठिन प्रयास उल्लेखनीय है। इसी ग्रामसभा की ओर से आयोजित ग्रामसभा में १६ नवम्बर को भाषण देकर लौटने पर जे० पी० अस्वस्थ हो गये।

जे० पी० ने अपने छोटे से निवेदन में उस सभा को सम्बोधित करते हुए ग्रामसभा के गठन पर प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने कहा कि ग्रामसभा जब तक सक्रिय न होगी, हमारे अभियान की निष्पत्ति दीख नहीं पड़ेगी। आज ग्रामपंचायतों के अधिकारियों को लगता है कि ग्रामसभा उन्हें निष्प्रभ कर देगी। अतः ग्रामसभाओं के बढ़ते हुए प्रभावों के प्रति वे आशंकित हैं। ग्रामसभाओं को मान्यता देने में उन्हें अपने अस्तित्व पर खतरा नजर आता है। लेकिन बात ऐसी है नहीं। आखिर इन्हीं ग्रामसभाओं के सदस्यों ने तो उन्हें मुखिया या सरपंच बनाया है। मुखिया और सरपंच इनसे बाहर के तो नहीं हैं। यदि प्रत्येक गाँव अपने मसलों और विकास कार्यों पर स्वतः चिन्तन-क्रिया आरम्भ करे तो यह और शुभ माना जाना चाहिए। अन्ततः सबको संगठनात्मक और सहकारी दृष्टिकोण से सोचना चाहिए तथा विकास की दिशा में ही सहचिन्तन किया जाय—विघटन की दिशा में नहीं।

समारोह में ही दो भूमिधारियों ने एक बीघा दस कट्ठा जमीन ७ भूमिहीन परिवारों में अपना बीघा कट्ठा निकाल कर वितरण की घोषणा की, जिसमें ग्रामसभा के अध्यक्ष भी शामिल हैं।

जमालाबाद में समारोह

दिनांक १५-११-७१ को जमालाबाद आश्रम टोला, बसवा टोला एवं गांधी टोला तीनों का संयुक्त समारोह संध्या ५ बजे प्रारम्भ हुआ। उक्त तीनों टोलों में ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। इस समारोह में जे० पी० के अतिरिक्त श्री कैलाश प्रसाद शर्मा, श्री बद्री नारायण सिंह, श्री कन्हैया शरण सम्पादक 'हिन्दी साप्ताहिक आदर्श', श्री निर्मलचन्द्र सिंह एवं अन्य प्रमुख सहयोगी भी उपस्थित थे।

सभा की कार्यवाही जमालाबाद पंचायत के मुखिया एवं यहाँ के ग्रामस्वराज्य अभियान के सक्रिय सहयोगी श्री सैयद वसी अहमद की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुई। शान्ति सैनिक श्री उमाकान्त ठाकुर एवं किशोरी रमण भाई ने अपने शान्ति प्रिय संगीत एवं उद्घोषों से उपस्थित जनसमुदाय में नवस्फुरण का संचार कर दिया। कैम्प के श्री अविनाश भाई ने ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों का जे० पी० से परिचय कराया। श्री कन्हैया शरण ने, जो जमालाबाद की समस्याओं के काफी निकट रहे हैं, कहा कि आज सारे गाँव को एक साथ बैठा हुआ देखकर मुझे अति प्रसन्नता है। याद आता है पिछले वर्ष का समय जबकि गाँव में कितना तीव्र तनाव था। दर्जनों लोग जेल के अन्दर डाले गये थे। लोग आमने-सामने नहीं हो पाते थे। गलत मुकदमों की भरमार थी। गाँव पुलिस से तबाही का अखाड़ा बना था। आज जबकि जे० पी० का अभियान इस प्रखण्ड में आरम्भ हुआ, वातावरण में जैसे स्वाभाविक तब्दीलियाँ आने लगीं। लोगों का मानस संघर्ष से सहयोग की ओर उन्मुख होने लगा। ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का समग्र रूप ग्रामसभाओं में दीखने लगा। यहाँ तक कि पुलिस-अदालत मुक्ति का विचार लोगों ने हृदयंगम किया। और आपसी सद्भावना के द्वारा गाँव के सारे मुकदमों और झगड़ों का निपटारा होने की घोषणा सुनकर हम सबों को असीम खुशी तो है ही, साथ ही अन्य गाँव भी इस दिशा में प्रेरित होंगे—ऐसी शुभ कामना है।

इधर लगातार की व्यस्त यात्राओं के कारण जे० पी० काफी थकान का अनुभव करते थे। अतएव थोड़े में अपना उद्बोधन व्यक्त करते हुए ग्रामसभाओं की जवाबदेहियों का निर्देश किया। सभाओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि प्रखंड में जो शेष गाँव हैं जहाँ ग्रामसभाएँ नहीं बनी हैं, वहाँ शीघ्र ग्रामसभा गठन

वर्तमान राष्ट्रीय संकट की परिस्थिति में राष्ट्र के नाम श्री जयप्रकाश नारायण का

संदेश

मुझे विश्वास है कि सारा राष्ट्र आज प्रधान मंत्री और उनकी सरकार के पीछे है और इस समय कोई भी राजनीतिक दल या नेता दलीय दृष्टिकोण से कुछ नहीं करेंगे या कहेंगे। राष्ट्र का हित किसी भी दल के हित से बहुत बड़ा है। अब भी रचनात्मक आलोचना के लिए जगह रहेगी, लेकिन दलीय प्रवृत्ति का वर्गगत, सम्प्रदायगत या संकीर्ण भावना के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। जैसा कि प्रधान मंत्री ने कहा है, "हर व्यक्ति को अपने कर्त्तव्य-स्थल पर, चाहे वह खेत में हो, कारखाने में हो, स्कूल-कालेज या दफ्तर में हो, अडिग रहना चाहिए और समर्पण तथा आत्म-बलिदान की भावना से अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए।"

पटना, ४ दिसम्बर '७१

मंत्री का पत्र

प्रिय बंधु,

जनवरी १ से नया वर्ष शुरू होगा। दिनांक ३१-१२-७१ को १९७१ में बने हुए लोकसेवकों की अवधि समाप्त हो जायगी। १ जनवरी १९७२ से नये लोकसेवक बनाना है। यह काम आगामी दो-तीन महीनों में आप तत्परता से करेंगे ही, जिससे कि वे सब अप्रैल में होनेवाले संघ-अधिवेशन में भाग ले सकें। सर्व सेवा संघ के सदस्यों को लागू होनेवाला निम्न नियम लोकसेवकों के लिए भी अपेक्षित है।

१—आदतन खादीधारी हो, अर्थात् खुद के या घर के कते सूतकी या प्रमाणित खादी पहनता हो।

२—जो लोकसेवक की निष्ठाएं पूरी न कर सकें उन्हें आप सर्वोदय-मित्र बनावें। सर्वोदय मित्र व्यापक रूप से बनाये जा सकें, इसलिए उसका वार्षिक शुल्क रु० ३-६५ से अब १ रुपया मात्र कर दिया गया है। लोकसेवकों का शुल्क पूर्ववत् रु० ३-६५ ही है।

३—सर्वोदय-पात्र रखनेवाले को तथा आचार्यकुल का शुल्क देनेवाले व्यक्ति को लोकसेवकों की निष्ठा मंजूर हो, तो उसे लोकसेवक बनने के लिए शुल्क दुबारा देने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

४—दिनांक १२-७-७१ को निकाले हुए परिपत्र में लिखित सर्वोदय मंडलों के संघटन सम्बंधी नियमों का आप ख्याल रखेंगे ही। यह परिपत्र आपको जुलाई में भेजा गया था।

५—भोपाल की प्रबंध समिति ने सोचा था कि हर प्रदेश सर्वोदय मंडल, मतदाता-शिक्षण के काम को अंजाम देने के लिए थोड़े से व्यक्तियों की एक समिति बनाये। वैसे ही दिनांक १-११-७१ को भोपाल में हुई प्रदेश सर्वोदय मंडलों के अध्यक्ष एवं मंत्रियों की बैठक में भी इस समिति के गठन के बारे में बातें हुई थी। इस काम को सुचारु रूप से चलाने के लिए एक व्यक्ति कि जिसे प्रदेश में यह काम सौंपा जाय। यह प्रदेश सर्वोदय मंडलों ने किया ही होगा। आप इस बारे में क्या करने जा रहे हैं यह लिखिएगा।

विनीत

—ठाकुरदास बंग

मंत्री

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : १२, सोमवार, २० दिसम्बर, '७१
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा ; फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक साप्ताहिक

हम बंगला देश की जनता की विजय का अभिनन्दन करते हैं। मुक्तिवाहिनी के जवानों और लड़कों की बहादुरी एवं देशभक्ति का जयजयकार करते हैं। भारतीय जनता उन वीरों के प्रति अनुगृहित रहेगी, जिन्होंने जीवन का बलिदान दिया है।

" हमारे उद्देश्य सीमित थे, बंगला देश की साहसी जनता और मुक्तिवाहिनी को अपनी भूमि से आतंक और अत्याचार दूर करने में मदद करना और साथ ही अपने देश पर आक्रमण को रोकना। ...समय आ गया है जब हम सब मिलकर 'सोनार बांगला' के मंगलमय भविष्य की कामना कर सकते हैं। हमारी सद्भावनाएँ उनके साथ हैं।

विजय केवल उनकी नहीं है, मानवीय भावना का सम्मान करनेवाले सभी राष्ट्र यह मानेंगे कि यह इनसान की आजादी की खोज में एक नयी मंजिल है।

१६ दिसम्बर १९७१

—श्रीमती इन्दिरा गांधी

सर्वोदय आन्दोलन और स्त्री-शक्ति का उदय

१५ नवम्बर '७१ के 'भूदान-यज्ञ' में 'गर्भपात कानून : पुरुष प्रधान समाज की एक और ज्यादती' शीर्षक पत्र पढ़ा। इराजी को साधुवाद कि उन्होंने नारी-समाज के सम्मुख विचारणीय तथ्य रखे हैं। भौतिकवादी सभ्य-समाज में नारी अपनी अविज्ञता से ही भोग का साधन बनती जा रही है। स्त्री-शक्ति के जागरण का काम ऐसा कोई भी आन्दोलन नहीं कर सकता, जिसकी जड़ भौतिकता में हो।

उत्तराखण्ड में पूर्ण नशाबन्दी के लिए जो आन्दोलन हो रहा है, उसमें स्त्री-शक्ति के उदय का सम्पूर्ण स्वरूप दिखाई दे सकता है। टिहरी नगर के सम्रान्त परिवारों की महिलाएँ सत्याग्रह करने के कारण इस समय कारागार में सहर्ष यातनाएँ सहन कर रही हैं। गाँव की स्त्रियों में कितनी जागृति आयी है इसका ज्ञान तो उन लोगों को ही हुआ होगा, जिन्होंने १४ और २० नवम्बर को टिहरी नगर में विशाल जन-प्रदर्शन को देखा होगा। १४ नवम्बर की विशाल सार्वजनिक सभा की अध्यक्षता गाँव की एक साधारण महिला—हेमा बहन ने की। अध्यक्ष-पद से बोलते हुए उनके ये शब्द स्त्री-शक्ति के उदय के परिचायक ही हैं—'भाइयो और बहनो ! मैं बिलकुल ही अनपढ़ हूँ। साधारण औरत हूँ—जंगल में घास काटनेवाली और गोबर ढोनेवाली। मेरा पति भी अनपढ़ और हल चलानेवाला आदमी है। मेरा बहनों से निवेदन है कि अब वे रण-चण्डी का रूप धारण कर दारू के राक्षस का नाश करने के लिए तैयार हो जायँ।' पू० सुन्दरलालजी की ६० वर्षीया वृद्धा सास सत्याग्रही महिलाओं में अग्रणी थीं। टिहरी से देहरादून जेल में सत्याग्रहियों को ले जाने-वाली पी० ए० सी० की गाड़ी में उनका हाथ कट गया। खून की बूँदों को देखकर मैंने कहा—'माताजी ! खून की बूँदें व्यर्थ नहीं जायेंगी, तो उन्होंने तीन बार 'चिर-जीव रहो' कहा। टिहरी नगर की श्रीमती सुशीला मैरोला तो अपने छोटे-छोटे बच्चों को, पति को सौंपकर आन्दोलन में कूद पड़ी। टिहरी से लगभग एक सौ मील दूर चमोली से ५० से अधिक महिलाएँ २० नवम्बर के प्रदर्शन में सम्मिलित होने के लिए आयी। इनमें से कइयों ने अपने आपको गिरफ्तारी के लिए पेश किया। गिरफ्तार महिलाओं में एक तो अपने दो छोटे-छोटे बच्चों के साथ ही जेल की सीखचों में बंद हैं।

इसकी सफलता, स्त्री-शक्ति-जागरण की सफलता है। साथ ही मद्यनिषेध अथवा पूर्ण नशाबन्दी-कार्यक्रम, देश भर की महिलाओं के लिए रचनात्मक कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम के द्वारा ही तथाकथित सभ्य समाज के अनैतिक आचरणों से, नारी की पवित्र आत्मा को विकृत होने से बचाया जा सकता है। तभी चिर-पुरातन और नवीन संस्कृति को विकृत होने से बचाया जा सकता है।

—घूमसिंह नेगी

श्री जयप्रकाशजी का वक्तव्य

पाकिस्तान द्वारा युद्ध-विराम मान लेने पर श्री जयप्रकाश जी ने पटना से जो वक्तव्य दिया है उसमें पाकिस्तान द्वारा भारत के एक-तरफा युद्ध रोको प्रस्ताव को मान लेने का स्वागत किया है, और आशा व्यक्त की है कि इससे भारत-पाकिस्तान के सम्बन्धों में एक नया अध्याय जुड़ेगा। उन्होंने इस्लामाबाद से आग्रह किया है कि 'जेहाद' का मध्ययुगीन नारा और धर्म का इस खतरनाक ढंग से शोषण हमेशा के लिए छोड़ दे, तथा जम्मू-कश्मीर पर लालचभरी निगाहों से देखना बन्द करे। उन्होंने आशा प्रकट की है कि पश्चिमी पाकिस्तान की जनता अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को सामने लायेगी, सैनिक-शासन को उखाड़ फेंकेगी, और एक ऐसी लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम करेगी जिसमें पाकिस्तान के सभी लोग स्वतन्त्रता की हवा में साँस ले सकें। जयप्रकाशजी ने इस बात पर जोर दिया है कि पश्चिमी पाकिस्तान ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक दृष्टि से भारतीय उप-महाद्वीप का अंग है, और उसका भाग्य इस उप-महाद्वीप के निवासियों के साथ जुड़ा हुआ है। पश्चिमी पाकिस्तान की जनता अपने सच्चे हितों को समझे। प्रधानमंत्री ने आश्वासन दे दिया है कि भारत के मन में पश्चिमी पाकिस्तान की जनता के लिए सद्भावना के सिवाय दूसरा कुछ नहीं है। हम सब लोग महसूस करें कि दुनिया की बड़ी शक्तियों ने हमें सहायता परोपकार की भावना से नहीं बल्कि अपने राष्ट्रीय और जागतिक स्वार्थों को सामने की दृष्टि से दी है। अब समय आ गया है कि हम किसी के हाथ की कठपुतली न बनें और अपने पैरों पर खड़े हों। हम आशा करें कि सत्य के इस क्षण में पश्चिमी पाकिस्तान की जनता समझेगी कि उसके वास्तविक हित क्या हैं और किस अच्छे से-अच्छे ढंग से वे साध सकते हैं।

श्रीमती गांधी के सम्बन्ध में जयप्रकाशजी ने कहा है : पहिले बंगलादेश के बारे में मैंने जो कुछ कहा है उसे वापस न लेते हुए मैं स्वतंत्रता के बाद देश के इस सबसे विकट संकट में प्रधानमंत्री के नेतृत्व की भरे दिल से प्रशंसा करता हूँ। मैं पश्चिमी मोर्चे पर एक-तरफा युद्ध-विराम की घोषणा के निर्णय को ऊँची-से-ऊँची बुद्धिमत्ता का कदम मानता हूँ। उन्होंने राष्ट्रपति निक्सन को जो पत्र लिखा है वह, मेरा विश्वास है, इतिहास के सबसे महान और मार्मिक पत्रों में स्थान पायेगा।

(अगले अंक में श्रीमती इन्दिरा गांधी का पत्र पढ़ें)

सम्पादकीय

ये काले, पीले, लोग

संयुक्त-राष्ट्र-सभा में बंगला देश के प्रश्न पर जो 'युद्ध रोको' प्रस्ताव पेश हुआ था उसके पक्ष में मत देनेवाले, देशों में ज्यादा-तर वे देश हैं जिनमें काले या पीले लोग रहते हैं। अफ्रिका के काले नीग्रो देश, मध्य पूर्व के करीब मुस्लिम देश, और एशिया के चीन, जापान, जैसे पीले लोगों के देश—लगभग इन सबका समर्थन इस प्रस्ताव को मिला। अमेरिका का गोरा देश इसकी अगुआई कर रहा था। फ्रान्स और ब्रिटेन अलग थे, रूस भारत के साथ था। भारत का विरोध करनेवाले ये काले-पीले सभी देश धार्मिक हैं जो किसी-न-किसी रूप में ईश्वर में विश्वास रखनेवाले हैं। भारत का साथ रूस तथा पूर्वी यूरोप के उन देशों ने दिया जिन्होंने धर्म और ईश्वर को अस्वीकार कर रखा है, जो नास्तिक हैं। ऐसा कैसे हुआ कि काले-पीले रंग और आस्तिकता का मेल मिल गया? नास्तिक तो चीन भी है, लेकिन उसकी नास्तिकता अभी बहुत गहरी नहीं गयी है, और नास्तिक होते हुए भी चीन पीला तो है! जापान आस्तिक है, पीला है, और चीन तथा अमेरिका, दोनों से डरा, डरा हुआ है। दक्षिण अमेरिका, अफ्रिका और मध्य पूर्व के मुस्लिम देश 'डालर बादशाह' अमेरिका की जेब में हैं। और तो और, बौद्ध धर्मावलम्बी भारत का पड़ोसी श्री लंका भी नहीं समझ रहा है कि उसका स्थान कहाँ है।

काले, पीले, देशों ने गोरों के हाथों अवश्य जुल्म सहा है फिर भी उन्होंने बंगला देश की पीड़ा नहीं समझी। उन्होंने खुद अपनी स्वाधीनता के लिए कितना खून बहाया है फिर भी बंगला देश की कुर्बानियों की कद्र नहीं की। वे अपने धर्म में रोज ईश्वर का नाम लेते हैं फिर भी उन्होंने ईश्वर के बन्दों की आवाज नहीं पहचानी। क्यों? ऐसा क्यों हुआ कि संयुक्त राष्ट्र में १३१ में १०४ वोट उस प्रस्ताव के पक्ष में गये जिसमें मनुष्यता, स्वतंत्रता और लोकतंत्र का नाम भी न था, और जिसमें यह जानने तक की कोशिश न की कि बंगला देश और भारत ने अग्नि-परीक्षा से गुजरना क्यों स्वीकार किया है।

क्या हमारे काले, पीले, भाई नहीं जानते थे कि बंगला देश की लड़ाई किसलिए है? क्या उन्हें नहीं मालूम था कि ९ महीनों से गरीब भारत अपनी भूमि पर लाखों-लाख शरणार्थियों का बोझ उठाता आ रहा है और उन सारे खतरों को झेलता आ रहा है जो इतने शरणार्थियों के आने से उसकी सुरक्षा और व्यवस्था के लिए पैदा हो गये हैं? क्या उन्होंने श्री जयप्रकाशनारायण जैसे सम्मानित नेता और भारत के प्रधानमंत्री को देश-देश घूमकर विवेक और सहानुभूति का अनुरोध करते नहीं देखा था? क्या शान्ति और पड़ोसीपन का कोई उपाय था जिसे भारत ने रखा था? क्या कोई देश अपनी शान्ति और स्वतंत्र निष्ठा का भारत से अधिक प्रमाण दे सकता था? लेकिन इसमें क्या हुआ? किसने भारत की बात सुनी? किसने जुल्म के खिलाफ आवाज उठायी? अब तक कहाँ था संयुक्त राष्ट्रसंघ, उसकी सुरक्षा परिषद, और विश्व की अन्तरात्मा? भारत ने देख लिया कि दुनिया न्याय की पुकार नहीं, शस्त्र की झनकार समझती है। क्या कालों और पीलों ने भी शस्त्र का ही शास्त्र पढ़ने का निर्णय कर लिया है?

आज जब लड़ाई छिड़ गयी तो 'युद्ध रोको' की रट लगायी जा रही है। युद्ध रोको के साथ-साथ 'अन्याय रोको' की भी रट क्यों नहीं लगायी जाती? क्या इसलिए कि शान्ति की आड़ में अन्याय को बनाये रखना है? अमेरिका के साथ जितने काले-पीले देश १०४ की सूची में हैं वे सब प्रायः वे ही हैं जिनकी सरकारों ने जन-जीवन शून्य बना रखा है। अफ्रीका के स्वतंत्र देशों की तो यूरोप के गोरे और साम्राज्यवादियों ने रचना ही इस तरह कर दी है कि लगभग हर देश में विभिन्न कबीलों के बीच गृहयुद्ध की स्थिति है। इसलिए हर अफ्रिकी काली सरकार स्वायत्तता और स्वतंत्रता के नाम से भय खाती है। युगाण्डा, केनिया, सूडान, नाइजीरिया, इथियोपिया, सुमालिया (जिसने प्रस्ताव पेश किया था), जैम्बिया आदि सबका यही हाल है। वे नहीं चाहते कि दुनिया के किसी देश में जनता की ओर से मुक्ति की उस तरह की माँग हो जिस तरह की बंगला देश में हुई। सबके दिमाग में बियाफ्रा नाच रहा है। यही हाल सारे मुसलमान देशों का है, जिनमें बादशाहों या फौजी तानाशाहों की हुकूमतें हैं। यही कारण है कि वे सब एक दूसरे के साथ हैं। जिन देशों ने प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया या तटस्थ रहे, उनके यहाँ किसी क्षेत्र या समूह के अलग होने की अलग समस्या नहीं है। अमेरिका निरंकुश, जालिम, सरकारों को बनाये रखने में दुनिया में सिरमौर है। भारत का विरोध करने में चीन के सत्ताधारी तो अपनी नाक तक कटा सकते हैं, और जापान दुनिया में तीसरे नम्बर का औद्योगिक देश होते हुए भी बेचारा बना हुआ है।

कुछ भी हो, एशिया और अफ्रिका के देशों ने संयुक्त-राष्ट्र-संघ में बंगला देश और भारत पाक युद्ध के प्रश्न पर जिस निकम्मे-पन का परिचय दिया है उससे यह साफ पता चलता है कि सचमुच उनका कोई 'स्व' नहीं है। इतना ही नहीं, जिन देशों में सैनिक-वादी राजनैतिक संगठन हैं, वे छोटे हों या बड़े, उन्हें सत्ता, कूटनीति, शक्ति-सन्तुलन आदि के सिवाय दूसरी कोई भाषा समझ में नहीं आती। वे नाम में स्वतंत्र भले ही हों, उनके दिमाग की गुलामी उसी तरह बनी हुई है जैसी उस वक्त थी जब वे उपनिवेश थे। स्वतंत्र होने पर भी जनता की वास्तविक स्वतंत्रता अभी बहुत, बहुत दूर है। जनता तो जानती भी नहीं कि उसके नाम में क्या हो रहा है। बंगला देश का मुक्ति-संग्राम या भारत का उसके साथ जुड़ना दुनिया के सत्ताधारियों के लिए एक डरावना सपना और अप्रत्याशित घटना है। न जाने अभी कितनी गुलामी काली, पीली, जनता को भोगनी है—अपने सत्ताधारियों की, और दूसरे सत्तावादियों की। ●

अहिंसक क्रान्ति के पाँच चरण

—धीरेन्द्र मजूमदार

मैंने इस क्रान्ति के पांच 'स्टेज' माना है : डिक्लरेशन, डिमान्स्ट्रेशन, मोबिलाइजेशन, आर्गनाइजेशन इम्प्लीमेण्टेशन।

अब तक दो प्रदेश में तथा कुल मिलाकर डेढ़ लाख गांवों में जो ग्रामदान-संकल्प की घोषणा हुई है, उसे मैं डिक्लरेशन यानी घोषणा कहता हूं। इस घोषणा द्वारा देश और दुनिया में ग्रामदान तथा ग्रामस्वराज्य शब्द का अधिष्ठान हुआ है। दुनिया में शब्द सब दूर फैला है। वर्तमान समस्या के समाधान में हमारे विचार का आकर्षण हुआ है। लेकिन शंका है कि यह विचार जमीन पर उतर सकेगा क्या? लोगों को शंका है कि आज एकान्तिक स्वार्थ-सिद्धि तथा उसके लिए संघर्ष का जो वातावरण बना हुआ है उसमें क्या सम्मति से पुष्टि की शर्त पूरी हो सकेगी? इसलिए अब हमको दूसरे स्टेज पर काम करना है अर्थात् कार्यकर्ता-शक्ति से ही सही। इस बात का प्रदर्शन करना है कि आज के दूषित वातावरण में भी सम्मति-शक्ति द्वारा समस्या का हल सम्भव है, बल्कि दूषित वातावरण के कारण ही यह सम्भव है। यह काम हम चार प्रखण्ड में कर रहे हैं। हम मानते हैं कि चार प्रखण्ड में जो सम्भावनाएँ प्रकट हो रही हैं उसके फलस्वरूप पूरे जिले में अनुकूलता पैदा हो रही है, इसलिए दूसरे स्टेज को थोड़ा आगे बढ़ाकर इस समय पदयात्रा तथा गोष्ठी और शिविर द्वारा तीसरे स्टेज यानी जनता को इस काम के लिए मोबिलाइज करने के स्टेज को हम हाथ में ले रहे हैं। इस स्टेज को धैर्य के साथ पूरा करना है, चाहे इस बीच निष्पत्ति कुछ न निकले। यद्यपि थोड़ी-थोड़ी निष्पत्ति तो निकलेगी ही, इसमें शंका नहीं। लेकिन मोबिलाइजेशन ठीक-ठीक होता रहे और निष्पत्ति न भी निकले, तब भी अपने को पूरा धैर्य रखना होगा। इसी स्टेज में निष्पत्ति निकलने के साथ-साथ प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य-सभा तथा प्रखण्डस्वराज्य-सभा का संगठन भी शुरू हो जायेगा। तब चौथे स्टेज यानी संगठन के स्टेज पर अपनी सारी शक्ति केन्द्रित करनी होगी। अपनी इस शक्ति का अर्थ अब तक की प्रक्रिया द्वारा उभरी हुई नागरिक-शक्ति है। संगठन पूरा होने पर सारी शक्ति इम्प्लीमेण्टेशन पर लगेगी। इसका मतलब यह नहीं है कि उसके पहले इम्प्लीमेण्टेशन होगा ही नहीं।

इम्प्लीमेण्टेशन तो अभी से हो रहा है। और हर स्टेज पर उसका परिणाम बढ़ता ही जायेगा। लेकिन इस बीच का इम्प्लीमेण्टेशन इंसीडेण्टल होगा, फुटकर रूप में होगा। व्यापक रूप से संगठित नहीं होगा। वह तो पूरा-पूरा पांचवें स्टेज पर ही होगा। इतना पूरा करने में तीन या चार साल लग सकते हैं। पहले हुआ तो भगवत् कृपा।

बीसवां हिस्सा जमीन के वितरण के बारे में कहा जाता है कि एक बीघा या आधा बीघा एक आदमी को देना चाहिए। जमीन-वितरण के इस कार्यक्रम पर और गहराई से सोचने की जरूरत है। वस्तुत: बीसवां हिस्सा जमीन बांटी जा रही है। वह समृद्धि बनाने के लिए नहीं, बल्कि सम्बन्ध बनाने के लिए—ऐसा समझकर चलना होगा। यह तो हजारों वर्षों से भूमिहीनों को वंचित रखने का प्रायश्चित माना है। यह तो ग्राम-परिवार बनाने के लिए ग्राममाता की प्रतिमा पर पुष्पांजलि का प्रतीक है। इसलिए हमारी दृष्टि इस समय यह नहीं है कि एक व्यक्ति को कितनी जमीन मिली, बल्कि यह है कि कितने लोगों को मिली। आन्दोलन की प्रक्रिया में कोई छूट जाये यह हम नहीं चाहते। क्योंकि जो छूट जायेंगे वे ग्रामपरिवार से अलग रहेंगे।

इस देश में जहां ७५ प्रतिशत लोग स्थायी रूप से अभावग्रस्त हैं, वहां समृद्धि-निर्माण का काम अत्यन्त आवश्यक है। लेकिन हम मानते हैं कि ग्रामसमाज के सदस्यों के बीच आज के सम्बन्ध बने रहने पर चाहे जितना विकास का काम किया जाय समृद्धि नहीं आ सकेगी। इसलिए हम चाहते हैं कि जितनी भी जमीन निकलती है वह अधिक-से-अधिक लोगों में बंटे ताकि हजारों वर्षों से दलित तथा शोषित वर्ग के साथ शोषक वर्ग के नजदीक आने के सम्बन्ध-निर्माण का शुभारम्भ हो। जब समाज के परस्पर सम्बन्ध के आधार पर ग्रामसभा के रूप में सामुदायिक तत्त्व की स्थापना होगी तब वे सब मिलकर समृद्धि-निर्माण का उपाय सोचेंगे और हम सोचने में मदद करना हमारा काम होगा। तब जमीन के समानीकरण करने की बात भी उठेगी। इसी सम्बन्ध-निर्माण करने के लिए हम ग्रामसभा के लिए पहला काम मजदूरी बढ़ाने का नहीं उठाकर अदालत-मुक्ति का काम उठा रहे हैं। क्योंकि सम्बन्ध-निर्माण केवल मजदूर और मालिक के बीच में नहीं करना है बल्कि मालिक-मालिक और मजदूर-मजदूर के बिगड़े हुए सम्बन्ध भी सुधारना है।

सम्बन्धों के आधार पर ग्रामसभा के सामने अनेक समस्याओं के साथ मजदूरी की समस्या भी आयेगी और तब उन्हें इस समस्या का हल सोचना पड़ेगा। यह सही है कि वहीं सामाजिक न्याय नहीं है और उसकी स्थापना होनी है लेकिन किसी बाहरी प्रेरणा से उसका आरोपण नहीं हो सकता। उसे समाज की अन्तरप्रेरणा से अंकुरित होने देना है। आरोपण-पद्धति से अनुष्ठित न्याय अधिक दिन तक स्थायी नहीं रह सकेगा या उसको स्थायित्व देने के लिए किसी बाहरी शक्ति को स्थायी बनाना होगा तब फिर स्वराज्य नहीं होगा। समाज को राज्य के नीचे ही रहना होगा।

इसलिए मैंने इम्प्लीमेण्टेशन को

हेदी वकारो : प्रतिकार की सीमाएँ

—सतीश कुमार

[यह एक अध्यापिका है। लेकिन व्याख्यान नहीं है। वह विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका थी। लेकिन शान्ति-आन्दोलन में अपना सर्वस्व चिन्तन समर्पित करने के लिए उसने अध्यापन छोड़ दिया। वह एक कर्मठ कार्यकर्ता है। लेकिन इसकी गिनती शान्ति-आन्दोलन के नेताओं में नहीं गिनी जाती। वह 'फेलोशिप ऑफ रीकन्सीलिएशन' नामक शान्ति संस्था की मंत्री है। लेकिन सभी ऐसी संस्थाओं के साथ मिलकर काम करती है जिनका अहिंसक साधनों में विश्वास है। उसके पति को इन 'शान्ति-आन्दोलनों' में विश्वास नहीं है। लेकिन वे कभी बाधक नहीं बनते। वह अपने परिवार के दायित्वों के प्रति जिम्मेदार है। लेकिन परिवार और सामाजिक कार्य के बीच उसने समुचित सन्तुलन साध लिया है। इटली में इस तरह की एक समर्पित और सक्रिय शान्तिवादी महिला है—हेदी वकारो। सतीश कुमार ने अपने इटली प्रवास में हेदी के साथ मुलाकात 'भूदान यज्ञ' के लिए विशेष रूप से की। रोम से भेजी हुई उनकी 'बातचीत' प्रस्तुत है। —सम्पादक]

सतीश कुमार : यूरोप का 'पैसिफिस्ट' आन्दोलन युद्ध के नकार और शस्त्रों के प्रतिकार की सीमाओं में ही ज्यादातर जकड़ा रहा। क्या आप बतायेंगी कि इटली के शान्ति-आन्दोलन के क्या समाचार हैं?

हेदी वकारो : मुसोलिनी के फासिस्ट-शासन-काल में हमारे यहाँ का शान्ति-आन्दोलन बहुत ही सीमित और कमजोर था। लेकिन युद्ध के बाद तीन स्तरों पर शान्ति-आन्दोलन चला—विचार, प्रतिकार और परिवर्तन। प्रोफेसर आल्दो कापितीनी को विचार के स्तर पर आन्दोलन की बुनियादें मजबूत करने का श्रेय है। उन्होंने सबसे पहले सन् १९६१ में लगभग १२ हजार लोगों को पेरूजिया नगर में एकत्र किया और २० मील की एक प्रतिकारात्मक शान्ति-यात्रा का आयोजन करके इटली के शान्तिवादियों को अपनी शक्ति का बोध कराया। फिर उन्होंने अहिंसा के व्यावहारिक और सक्रिय पहलुओं की व्याख्या करनेवाली अनेक पुस्तकें लिखीं। 'टैकनीके देला नोनवियोलेंजा' नाम की उनकी पुस्तक इटालियन शान्ति-आन्दोलन का घोषणा-पत्र जैसी साबित हुई।

सतीश कुमार : उनकी पुस्तकें अहिंसा के प्रतिकारात्मक पक्ष को उजागर करनेवाली थीं या अन्य पक्षों का भी उनमें समावेश था?

हेदी वकारो : प्रोफेसर कापितीनी मूलतः एक शिक्षा-शास्त्री थे। साथ ही वे एक सुलझे हुए विचारक भी थे। उन्होंने टॉल्सटाय तथा गांधी जैसे अनेक अहिंसावादियों को सूक्ष्मता से हृदयंगम किया था। इसलिए वे मात्र प्रतिकारात्मक पक्ष तक आकर रुक नहीं सकते थे। शिक्षा-व्यवस्था, समाजनीति, अर्थनीति, राजनीति आदि पहलुओं पर उन्होंने अहिंसक समाज-रचना के सन्दर्भ में पर्याप्त प्रकाश डाला। लेकिन उन्होंने सोचा कि एक बार १५ हजार लोगों को एकत्र कर लेने और कुछ किताबें लिख देने मात्र से आन्दोलन खड़ा नहीं होगा। इसलिए उन्होंने सन् १९६३ में "मूविमेंटो नोनवियोलेंटो पेर ला पाचे" (शान्ति के लिए अहिंसक आन्दोलन) नाम से एक संगठन बनाया और पियेत्रो पिन्ना नाम के एक तरुण, किन्तु धीर एवं कर्मठ साथी को उन्होंने इस संगठन का मंत्री बनाया। इस तरह एक बुजुर्ग प्रोफेसर और तरुण विचारक ने मिलकर अहिंसक आन्दोलन को नये सिरे से संगठित किया। और एक विचार-पूर्ण मासिक-पत्रिका "एजियोने नोन वियोलेंटा" नाम से भी प्रारम्भ की जो आज भी नियमित रूप से प्रकाशित होती है और जो हमारे समाज की समस्याओं का गम्भीर, तर्कपूर्ण एवं अहिंसात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करती है।

सतीश कुमार : क्या यह आन्दोलन इटली में व्यापक रूप से फैला है? कभी-कभी संस्था बनाकर आदमी सन्तुष्ट हो जाता है। संस्था को मजबूत बनाने के लिए दफ्तर, पैसा, संस्था को चलानेवाली कार्यकारिणी आदि का बोझ इतना बढ़ जाता है कि जिस काम के लिए संस्था बनायी, वह काम पीछे ही छूट जाता है।

हेदी वकारो : संस्थाबद्धता के जो दोष हैं, वे आये बिना नहीं रहते। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि प्रोफेसर कापितीनी के पिछले वर्ष स्वर्गवास हो जाने के बाद संस्थाबद्धता और भी अधिक बढ़ गयी है और दुर्भाग्य से विभिन्न संस्थाओं के बीच आपसी सहयोग के स्थान पर प्रतियोगिता का वातावरण बनता दिखाई देता है। यद्यपि इस आन्दोलन के केन्द्र वेनिस, फ्लोरेंस, नेपल्स, मिलान और ट्यूरिन जैसे नगरों में हैं, पर सक्रिय कार्यकर्ताओं की संख्या पिछले आठ वर्षों के निरन्तर काम के बावजूद १०० से अधिक नहीं है। अन्य संस्थाओं में लगे हुए शान्तिवादियों और अहिंसावादियों के साथ

→आखिरी स्टेज में रखा है ताकि विचार-विमर्श तथा दूसरी प्रक्रिया से समाज के विवेक का उद्बोधन कर नागरिक के अन्दर समस्या के समाधान की भावना विकसित हो सके। इस बीच जो कुछ इन्वेस्टिगेशन हो जायेगा उससे भूमि-वितरण की व्यावहारिकता प्रकट जरूर होगी लेकिन शान्ति की असली दिशा नहीं निकलेगी। असली निष्पत्ति तब आयेगी जब एक के बाद स्टेज के माध्यम से हम जन-भावना को उद्बुद्ध कर सकें।

कहा गया है कि ग्रामसभा में छोटे किसान व भूमिहीन मजदूर मनुष्य के पक्षधर हों। इसका प्रयास करना चाहिए। यह दृष्टि भी सही नहीं है। इसको अपने मन से ही छोड़ दें तथा आर्थिक भेद-भेद को मिटाना ही देना चाहिए। इस भूत को जितना याद करोगे उतना ही वह सिर पर चढ़ेगा। इसलिए ग्रामसभा बनाते समय ऐसा वातावरण निर्माण करना चाहिए जिसमें लोगों के सामने हर आदमी मनुष्य के नाते उपस्थित हो, भेद का स्मरण न हो। (क्रमशः)

मिलकर काम करने में शायद पियेत्रो पिन्ना सकुचाते हैं। अभी २७-२८ नवम्बर को उन्होंने अहिंसा-आन्दोलन के सन्दर्भ में सम्मेलन किया, पर उसमें अन्य संस्थाओं के लोगों को नहीं बुलाया गया। लेकिन विभिन्न नगरों में काम करनेवाले कार्यकर्ता और उनके केन्द्र इस दोष से मुक्त हैं।

सतीश कुमार : वैचारिक स्तर पर जो आन्दोलन चलता है, वह ज्यादा गहराई में नहीं जा सकता, जबतक कि उन विचारों को समाज के सन्दर्भ में संगति न दी जाय और समस्याओं के सन्दर्भ में परखा न जाय।

हेदी बकारो : इस तथ्य को इटली के अहिंसावादी नेता डेनिलो डोलची ने खूब गहराई से समझा है। वे प्रदर्शन-मूलक प्रतिकार और निष्क्रिय विचार-प्रचार में विश्वास नहीं करते। तुम जानते हो कि दक्षिण इटली और सिसली द्वीप दुनिया के किसी भी गरीब देश की भांति ही गरीब, अविकसित और उपेक्षित हैं। डेनिलो डोलची ने सिसली में अपना केन्द्र बनाकर रचनात्मक और निर्माणात्मक योजनाएँ हाथ में ली हैं। वर्तमान पूंजीवादी समाज-व्यवस्था को बदले बिना न तो युद्ध समाप्त होंगे और न शान्ति स्थापित होगी। युद्ध का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। हमारे पूंजीवादी समाज की प्रतियोगितामूलक व्यवस्था की एक स्वाभाविक परिणति है युद्ध। इसलिए डोलची समाजवादी, सहकारी और अहिंसक समाज का विकल्प ढूंढ़ने में लगे हुए हैं। उनके प्रयोग रचनात्मक और विकासोन्मुख हैं। वे इसी को समाज-क्रान्ति की सही प्रक्रिया मानते हैं। जब उनके प्रयोगों के लिए वर्तमान समाज-व्यवस्था और कानून-व्यवस्था बाधाएँ पैदा करती हैं, तब वे प्रतिकार का हथियार हाथ में लेते हैं और कानून के साथ असहयोग करके अहिंसक शक्ति के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

सतीश कुमार : ऐसा लगता है कि पियेत्रो पिन्ना का विचारात्मक आन्दोलन और डेनिलो डोलची का रचनात्मक आन्दोलन एक दूसरे के पूरक हो सकते हैं।

हेदी बकारो : हो सकते हैं। होने भी चाहिए। अगर हो सकें तो इटली के *शान्ति-आन्दोलन में नया जीवन आ* जायेगा। पर दुर्भाग्य से दोनों के बीच कोई सहयोग नहीं है। अगर दोनों सहयोग से काम कर सकें तो वैचारिक आन्दोलन को सिसली की कर्मभूमि और प्रयोग-भूमि मिल जायेगी और सिसली के रचनात्मक काम को विचार-सम्पन्न और अहिंसा-प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं की सेना मिल जायेगी। खास तौर से डेनिलो डोलची ने सिसली की विश्व-विश्रुत अंडरग्राउंड अपराध-संगठन-माफिया के खिलाफ जो जेहाद छेड़ा है, उसके लिए पूरे देश में तपे हुए तरुण कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। पर डोलची अपने व्यक्तित्व से स्वयं ही इतने मोहित हैं कि वे छोटे और सामान्य कार्यकर्ताओं का सहयोग हासिल करने में असमर्थ हो जाते हैं। वे एक प्रखर, बुद्धिमान और कर्मठ नेता हैं। उनके काम का महत्त्व हम सब पहचानते हैं। परन्तु उनके चिड़चिड़े स्वभाव के साथ मेल बैठा पाना बहुत ही कठिन कार्य है। जो भी उनके केन्द्र में उनके साथ काम करता है, वह दो-तीन साल से अधिक उनके साथ नहीं रह पाता।

सतीश कुमार : माफिया का अपराध आन्दोलन तो इटली के जीवन और यहां की समाज एवं राज-व्यवस्था का एक अभिन्न अंग-सा बन गया है। माफिया के खिलाफ खड़े हो सकना खतरे से भी खाली नहीं है। डोलची के लिए यह माफिया-विरोधी आन्दोलन तो बहुत कठिन कार्य होगा।

हेदी बकारो : माफिया के खिलाफ जो भी खड़ा हुआ, उसे अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। *डोलची की अदम्य-शक्ति ही उन्हें अब तक बचाये हुए है।* लेकिन माफिया के संगठन को समाप्त करने या कमजोर करने में अभी तक डोलची को सफलता प्राप्त नहीं हुई है। हां, उन्होंने देश के सामने एक नैतिक चुनौती पेश की है। माफिया हमारे देश के जीवन में और उच्च वर्ग में जिस तरह पैठा हुआ है, उसका पर्दा उघाड़ने में डोलची को अवश्य सफलता प्राप्त हुई है। यह सफलता भी कोई कम बात नहीं। माफिया के खिलाफ बोलने का नैतिक साहस ही अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। एक ओर डोलची ने दमित, उपेक्षित और गरीब जन की बन्द जबान को वाणी दी तो दूसरी ओर उच्च वर्ग की आंतरिक खोखलाहट को भी उघाड़ा। पर दुर्भाग्य से उनके पीछे जन-आन्दोलन खड़ा नहीं हो पाया है। उनको न तो समाजवादियों का समर्थन है और न उग्रवादी युवा-समाज का। यही हमारे आन्दोलन की सबसे बड़ी कमजोरी है कि हम जन-समुदाय को *अपने कार्यक्रमों के प्रति* आकृष्ट नहीं कर सके हैं। अभी भी शान्ति अहिंसा और समतावादी समाज-रचना की बातें चंद आदर्शवादियों के दिमाग की 'बहक' ही मानी जाती है।

सतीश कुमार : शायद इसीलिए जुलूसों, प्रदर्शनों, धरनों आदि के द्वारा सेना का जो विरोध शान्तिवादियों द्वारा किया जाता है, उसके प्रति भी लोगों का *अब कोई आकर्षण नहीं रह गया है। युद्ध* के नकार मात्र से शान्ति स्थापित नहीं होगी, ऐसा लोगों को लगता है। चंद लोगों के सेना में भरती न होने और जेल जाने से आखिर क्या अंतर पड़ता है, इस तर्क का भी तो शान्ति-आन्दोलन को सामना करना पड़ता होगा।

हेदी बकारो : प्रतिकारात्मक कार्रवाई ही सब कुछ है, ऐसा हमारा भी मानना नहीं है। प्रतिकारात्मक आन्दोलन की सीमाओं को हम जानते हैं। इसीलिए अॅल्डेगर कापितीनी और डेनिलो डोलची के काम का बहुत महत्त्व है। पर प्रतिकार *भी आन्दोलन की तेजस्विता, दृढ़ता और* प्रखरता के लिए आवश्यक है। बिना प्रतिकार के चलनेवाला विचार बौद्धिक व्यायाम हो जाता है और बिना प्रतिकार के रचनात्मक कार्य भी एकांगी सेवा-कार्य या मिशनरी-कार्य बन जाता है। अतः

किसी भी आन्दोलन को तीनों स्तरों पर एक साथ संगठित करने की आवश्यकता है। भारत के गांधीवादी मित्रों ने यूरोप के पेसिफिस्ट आन्दोलन को मात्र नकारात्मक कहकर उसे सही रूप में, सही परिप्रेक्ष्य में न समझने की भूल की है। यूरोप के सन्दर्भ में सेना में भरती होने से इनकार करना बहुत ही मुश्किल है। क्योंकि सेना हमारे समाज और राज्य की रीढ़ है। दो महायुद्धों का अनुभव और यूरोप के हर नागरिक को सैनिक बना देने का अनिवार्य सिलसिला यूरोप का अपना विशिष्ट सन्दर्भ है। अब इस औद्योगीकरण को बचाने के लिए तो शस्त्रों का उत्पादन और सेना का संगठन और भी अधिक अनिवार्य हो गया है। सेना में भरती होने का अर्थ है इस औद्योगीकरण और पूँजीवाद को बढ़ावा देना। इसलिए भारत के गांधीवादी या ग्रामदान आन्दोलन की तरह हम सेना की उपेक्षा करके कोई आन्दोलन चला ही नहीं सकते।

सतीश कुमार इस बातचीत को समाप्त करने के पहले हेदी, क्या तुम यह बताओगी कि तुमने शान्ति-आन्दोलन में कब और कैसे प्रवेश किया?

हेदी बताती यह एक बड़ी रहस्यात्मक कहानी है। सन् १९६२ की बात है। एक दिन मैंने अपने मन में एक विचित्र बेचैनी महसूस की। मैंने एक दुःस्वप्न-सा अनुभव किया कि यह सारी धरती प्रलय के कगार पर खड़ी है। घर पर मैं अकेली थी और छोटे बच्चे थे। दिन भर न मैं खा सकी और न सो सकी। शाम को मेरे पति जब घर लौटे तो उन्होंने समाचार दिया कि अणु-अस्त्रों से भरे हुए रूसी जहाजों को अमेरिका ने क्यूबा के रास्ते पर रोक दिया। यदि रूस ने जहाज वापस न लिये होते तो आज रूस और अमेरिका के बीच युद्ध छिड़ सकता था, जो अणुयुद्ध के रूप में परिणत होता। दिन भर की मेरी बेचैनी का यह रहस्यात्मक कारण मेरे सामने प्रकट हुआ और उसी दिन मैंने निर्णय किया कि अब मैं अपनी पूरी शक्ति के साथ युद्ध और शस्त्र-प्रतियोगिता के खिलाफ काम करूँगी। वैसे अहिंसक-समाज के विचारों की प्रथम दीक्षा आस्ट्रिया के अहिंसक क्रान्तिकारी जीन गोस से मुझे मिली। जीन गोस शान्ति के सिपाहियों और मजदूरों के बीच भी काम करते हैं और अक्सर आस्ट्रिया से बाहर जाते हैं। पूँजीवादी सुधार की शोषण-प्रधान अर्थव्यवस्था के खिलाफ काम करने में और यूरोप के युद्ध-विरोधी आन्दोलन को समाज-परिवर्तन का आन्दोलन बनाने की कोशिश में जीन गोस और उनकी पत्नी हिल्डगार्ड गोस का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने सिद्धान्तवादी अहिंसकों और रूढ़िवादी शान्तिप्रेमियों को कई बार झकझोरा है और आज दुनिया जिस तरह से अमीर और गरीब देशों में बँटी हुई है उसके खतरे की ओर हमें सचेत किया है। यदि अगला विश्वयुद्ध हुआ तो वह निश्चित रूप से अमीर और गरीब देशों के बीच होगा और दुनिया अगर इसी तरह बँटी रही तो विश्वयुद्ध को शायद टाला भी नहीं जा सकेगा। ●

अज्ञात भाषा के प्रदेश में दस दिन

—सुमन बंग

'सन्तोषम्, अभ्यंतरम् लेदु' (मुझे कोई हर्ज नहीं, सन्तोष है) घर में से मधुर स्वर सुनाई दिया। एक छोटे-से गाँव के श्री वीरप्पाराव पटवारी हैं। कुल छह सौ एकड़ भूमि के मालिक हैं। पहले भूदान में तीस एकड़ भूमि उन्होंने दी थी। फिर से हमने भूमि माँगी, क्योंकि गाँव में काफी भूमिहीन हैं। उन्होंने २० एकड़ भूमि दान में दी। सर्वोदय की कार्य-पद्धति से और विचारों से वे बहुत प्रभावित हुए। सीलिंग आदि भूमि-सम्बन्धी कानूनों से वे परेशान थे। कुछ चर्चा के बाद कहने लगे कि आप मेरे साथ हैदराबाद चलिए। मेरी बहन वहाँ रहती है। सीलिंग में जमीन न जाय, इसलिए मैंने उसके नाम से १८५ एकड़ भूमि कर दी है। उसकी सम्मति लेकर मैं यह आपको भूदान में देना चाहता हूँ। उनके साथ हम उनकी बहन श्रीमती ओडन के घर गये। संकोचवश वह बाहर नहीं आयी। तेलुगू में बाहर से ही उसे समझाया गया। इसके अनुसार में उस बहन ने अपने कमरे के अन्दर से ही उपरोक्त सम्मति दी। 'तथास्तु' कहकर वह दान हमने स्वीकृत किया।

सर्व सेवा संघ के ग्रामदान के अधिवेशन से आन्दोलन ने नया मोड़ लिया। प्राप्ति-पुष्टि की समन्वित पद्धति स्वीकार की गयी। पर देश भर में कहीं कुछ काम बना नहीं हो पाया और ग्रामदान आन्दोलन पिछले साल भर से ठिठक-सा गया। भूमि का बँटवारा प्राप्ति के साथ करना कार्यकर्ताओं को बहुत भारी पड़ रहा था। आन्दोलन की राह खोजने की दृष्टि से आन्ध्र प्रदेश के महबूबनगर जिले में उप्पुनुतला प्रखण्ड में तारीख १५ से २५ नवम्बर तक पदयात्रा का आयोजन किया गया। इस प्रखण्ड में इसके पहले एक भी ग्रामदान नहीं मिला था, न उसका प्रयत्न ही हुआ था। कोरी पाटी थी। १५ से १७ नवम्बर तक पहले कार्यकर्ताओं का शिविर हुआ। उसमें प्रखण्ड में रहनेवाले प्रमुख तथा उत्साही, सर्वोदय के प्रति सहानुभूति रखनेवाले भी कुछ नागरिक आये थे। तीन दिन जमकर चर्चा हुई और प्राप्ति-पुष्टि कैसे साथ में करें इसकी सफाई हुई। शिविर के दस दिन पहले जिला सर्वोदय मण्डल के तीन कार्यकर्ता पूर्व तैयारी करने घूमे थे। उस बीच ग्रामदान प्राप्ति का कुछ अधूरा प्रयत्न भी हुआ था। आन्ध्र प्रदेश के प्रमुख पचीस साथी और महबूब नगर जिले के १०-१५ कार्यकर्ता मदद के लिए आये थे। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुर दास बंग के साथ महाराष्ट्र के सर्वश्री मदनलाल [illegible], [illegible] राउत, शिवरतन [illegible]

और मैं थी। सर्वोदय का काम कुछ कमजोर ही हुआ था। अतः मन में डर लग रहा था। शिविर के पहले दिन जडचरला शहर में आम सभा की गयी। आंध्र प्रदेश के उपमुख्यमंत्री और इसी जिले के लोकप्रिय हरिजन राज्यमंत्री श्री महेन्द्रनाथ, इन दोनों ने ग्रामदान के समर्थन में महती सभा में भाषण किया। उसका बहुत अच्छा असर लोगों पर पड़ा। गाँव-गाँव के हरिजन इन्हें देवता की तरह मानते हैं।

१८ तारीख की सुबह १७ टोलियाँ चल पड़ीं। जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष सर्वश्री सुरभि शेष शर्मा, बग और मैं, तीनों एक टोली में थे। दो-ढाई मील चलकर आलूर नाम के एक छोटे-से गाँव में हम आये। गाँव एकदम साफ-सुथरा था। हरदम के मुताबिक गाँव के प्रवेश-द्वार पर नाक बन्द नहीं करनी पड़ी। इस क्षेत्र के ज्यादातर गाँव ऐसे ही स्वच्छ पाये गये। आलूर में एक-दो किसान थे छोड़कर बाकी सब छोटे-छोटे किसान हैं। पू० विनोबाजी की पदयात्रा के समय यहाँ के बड़े भूमि मालिक श्री व्यंकटराव ने १३० एकड़ जमीन भूमिदान में दी थी। श्री व्यंकटराव के पूर्वज महाराष्ट्र के रहनेवाले थे, लेकिन घर में कोई भी मराठी जानता नहीं है। सब लोग बढ़िया तेलुगू बोलते हैं। तेलंगाना में जगह-जगह महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण मिले जो पूरे तेलगू हो गये हैं। पेशवाओं के जमाने में कभी ये लोग यहाँ आये थे। श्री व्यंकटराव ने जो जमीन भूदान में दी थी उसका बँटवारा हो चुका है। इस गाँव में कुल ३४ मातादाता हैं। सब ग्रामवासियों ने ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये थे और अपनी बीसवाँ हिस्सा भूमि भी भूमिहीनों में बाँट दी थी। कुल १५० एकड़ भूदान यहाँ मिला था। परन्तु अभी भी चार भूमिहीन यहाँ शेष थे। इसलिए हमने श्री व्यंकटराव से कहा कि गाँव के लोगों से और बीस एकड़ भूमि प्राप्त करेंगे, जिससे गाँव में कोई भी परिवार भूमिहीन नहीं बचेगा। आपने तो पहले ही छठे हिस्से से भी ज्यादा भूमि दे दी है। वह बँट भी चुकी है। आज हम उसकी फसल भी अपनी आँखों से देख आये हैं। अतः आपको धन्यवाद। पर चलिये, औरों से माँगेंगे। नौजवान श्री व्यंकटराव ने तुरन्त जवाब दिया—"नहीं, आप औरों के पास भूमि नहीं माँगियेगा। गाँव में सब लोग छोटे-छोटे गरीब किसान हैं। इस वर्ष सम्पूर्ण आंध्र में अकाल भी है। मैं ही आपको और १५ एकड़ जमीन देता हूँ।" हमने कहा, "आपकी उदारता के लिए धन्यवाद। लेकिन औरों को भी कुछ-न-कुछ भूमि तो देनी ही चाहिए। उसके बिना ग्रामदान कैसे पूरा होगा?" हम उनके साथ गाँव में घूमे और उनसे चर्चा होकर तय हुआ कि चन्दा करके अगले साल गाँव की ओर से ग्रामवासी पाँच एकड़ भूमि खरीदकर देंगे। इस गाँव में ग्रामसभा का संगठन हुआ।

तीन दिनों में हम चार गाँव घूमे। सब गाँवों में कहीं कम कहीं ज्यादा भूमि मिली और उसी समय कुछ भूमि का बँटवारा भी हुआ। ग्रामसभा, ग्रामशान्ति-सेना का हर गाँव में संगठन खड़ा किया गया। सभा में लोग खूब आते थे। घर-घर से बहनें भी आती थीं, गोद में नन्हें-नन्हें बच्चे, बदन पर ओढ़ने के लिए कुछ नहीं, फिर भी वे आकाश के नीचे घण्टों ठण्डी में बैठती थीं और बड़े ध्यान से शान्तिपूर्वक सब बातें सुनती थीं। स्त्रियों में उत्तर हिन्दुस्तान की अपेक्षा स्वतन्त्रता-जागृति ज्यादा दिखाई दी। सभा में बहनें बिलकुल सामने आकर बैठती थीं और पीछे भाई लोग।

भूमिहीनों में भूमि की भूख भयंकर है। हम लोग पदयात्रा से गाँव में पहुँचने के बाद गाँववालों से थोड़ी बात करते थे और बाद में घर-घर जाकर उनका सुख-दुख पूछते थे। लोगों में इतना उत्साह और हमारे बारे में इतनी उत्सुकता थी कि सौ-सौ लोग (स्त्रियाँ, पुरुष, बच्चे) हमारे साथ-साथ चलते थे। दिन भर हमें घेरे रहते थे। भाषा हम जानते नहीं थे। दुभाषिये के जरिये और नये सीखे हुए टूटे-फूटे तेलुगू शब्दों में काम चलाना पड़ता था। अतः न हम उनसे खुलकर बात कर सकते थे न वे हमसे। घर-घर में हमने देखा भीषण दारिद्र्य और भयानक बेकारी। अकाल के कारण अभी से गरीब लोग आम्बील पर अपना गुजारा कर रहे हैं। हाथ पर हाथ धरे बैठे सैकड़ों लोग काम के अभाव में खाली बैठे हैं। सब ओर से एक ही पुकार 'हमें काम चाहिए, जमीन चाहिए।' पर कौन सुनेगा इनकी पुकार! क्या प्लानिंग कमीशन को फुर्सत है इनकी ओर देखने की, जिन्होंने अपने कान बन्द कर दिये हैं? क्या उनके कानों में गरीबों का यह करुण रुदन पहुँच सकेगा? मालूम नहीं, स्वराज्य के पच्चीस सालों में तो अभी तक नहीं पहुँचा है। नहीं तो क्या बेकारी को बढ़ानेवाली योजनाएँ और आज का शिक्षण चलता रहता?

'हम सबको भूमि चाहिए। आप ज्यादा नहीं दे सकते तो एक-एक एकड़ दीजिये। जीवन के लिए कुछ तो साधन दीजिये।' कुर्तुपुल्ली गाँव के भूमिहीन कह रहे थे। २२ एकड़ भूमि यहाँ मिली। रात की सभा में उसका बँटवारा हो रहा था। इतनी सी भूमि के लिए गाँव के चालीस भूमिहीनों ने अपने नाम दिये। सात परिवारों के लिए ही पर्याप्त भूमि मिली थी। हरदम की तरह अन्त्योदय की बात भाई सुरभिजी ने रखी और बाकी लोग अपना नाम वापस लें ऐसी अपील की। उसके जवाब में भूमिहीन बोल रहे थे। रात की सभा में काफी समझाने पर भी वे नहीं माने। अतः दूसरे दिन सुबह हमें रुकना पड़ा। फिर बैठे, फिर समझाया। काफी समझाने के बाद उन्होंने अपने में से जो ज्यादा गरीब थे, जिनका परिवार बड़ा था ऐसे दस नाम दिये और विधिवत् उन्हें भूमि दी गयी।

हमारे यहाँ साधारणतः एक परिवार में पाँच लोग के हिसाब से हम जनसंख्या

अन्दाज करते हैं। पर यहाँ वह हिसाब काम नहीं देता। यहाँ प्रति परिवार १०-१२ व्यक्ति पकड़ने पड़ते हैं। उसके दो मुख्य कारण हैं—संयुक्त परिवार और अधिक बच्चे—परिवार-नियोजन शायद यहाँ नहीं पहुँचा है।

इसके बाद दूसरी टोलियों से सम्पर्क करके उनकी कठिनाइयाँ दूर करने का प्रयत्न करने की दृष्टि से हम चार दिन जीप से घूमे। सिर्फ आठ टोलियों के साथ सम्पर्क हो पाया। ज्यादातर टोलियों में पाया गया कि कार्यकर्ता भूमि माँगने की हिम्मत नहीं कर रहे हैं। अन्त उन्हें साथ लेकर कुछ दाताओं से भूमि प्राप्त की गयी। जिन-जिन से माँगा, सबने दिया, किसी ने कम, किसी ने ज्यादा। एक ने भी ना नहीं कहा। यह देखकर कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ा। वे बाद में पहले से भूमि माँगने लगे और उन्हें भूमि मिली भी। सत्रह-अठारह टोलियों में से जिन भी टोलियों ने भूमि माँगी थी, उन सबको भूमि मिली।

श्री नरसिंगराव रेड्डी पुनरकारल्ली के बड़े जमींदार हैं। वे खुद विधायक हैं और बढ़िया खेती करते हैं। इस क्षेत्र में इनकी खेती सर्वोत्कृष्ट मानी जाती है। अपना गाँव आदर्श बने, वहाँ ग्रामस्वराज्य हो अतः शिविर में ही अपने गाँव आने का निमंत्रण उन्होंने हमें दिया था। रात में आम सभा हुई। भूदान में ६ एकड़ भूमि इसके पहले वे दे चुके थे। गाँव में भूमिहीन होने से हमने उनसे फिर से भूमि माँगी। उन्होंने कहा, 'अच्छी बात है। मेरे पास १२५ एकड़ भूमि है। ग्रामदान के लिए बीसवाँ हिस्सा देना जरूरी है तो मैं सात-आठ एकड़ देने के लिए तैयार हूँ।' हमने कहा, 'आठ नहीं, दस एकड़ दीजिये जिससे हम दो भूमिहीनों के परिवारों में बाँट सकेंगे।' एक क्षण भी न सोचते हुए 'तथास्तु' कहकर उन्होंने अपनी सम्मति प्रदान की और छोटे भाई के नाम पर की १२५ एकड़ भूमि में से भी और जमीन दी। ग्रामसभा का गठन हुआ।

इस क्षेत्र में हमने पाया कि यहाँ के समाज में छूत-अछूत का भाव बहुत ज्यादा है। हमारी टोली में एक स्थानीय हरिजन बन्धु थे। हमारे साथ भोजन करने के लिए उन्हें हमने कितना आग्रह किया पर वे नहीं माने। उन्होंने हमारे साथ बैठकर न कभी भोजन किया, न पर-मालिक ने उन्हें साथ बैठने को ही कहा। हर गाँव में काफी हरिजन परिवार रहते हैं। वे बहुत गरीब होते हैं। उनका असन्तोष कम करने के लिए गाँवों में गाँव की ओर से ही कुछ भूमि उन्हें सामूहिक रूप से जोतने के लिए दी जाती है। वे लोग फसल आपस में बाँट लेते हैं।—सरेश

सोनार बांगला

क्षेत्रफल, जनसंख्या और साधन-सामग्री

१. क्षेत्रफल, जनसंख्या

स्वतंत्र बंगला देश का क्षेत्रफल १,४६,३१८ वर्ग किलोमीटर है। पश्चिमी पाकिस्तान की अपेक्षा क्षेत्रफल में कम होते हुए भी इसकी जनसंख्या अधिक है। पश्चिमी पाकिस्तान का क्षेत्रफल ७,१४,६३२ वर्ग किलोमीटर है।

सन् १९६१ की जनगणना में (पूर्वी पाकिस्तान) स्वतंत्र बंगला देश की जनसंख्या ५ करोड़ ० लाख ४० हजार २२५ थी, जब कि पश्चिमी पाकिस्तान की जनसंख्या ४ करोड़ २८ लाख ८० हजार २७८ थी। आज स्वतंत्र बंगला देश की जनसंख्या साढ़े सात (७½) करोड़ है।

२. प्रशासकीय भाग

प्रशासकीय दृष्टि से इसको चार डिवीजनों में बाँटा गया है, जिसमें १७ जिले हैं।

१—ढाका डिवीजन—ढाका, मैमनसिंह, फरीदपुर

२—चटगाँव डिवीजन :—चटगाँव, कोमिल्ला, नोआखाली, रांगामाटी, सिल्हट

३—राजशाही डिवीजन :—राजशाही, दीनाजपुर, बोगरा, सैदपुर, रंगपुर, पबना

४—खुलना डिवीजन :—जैसोर, खुलना, बारिसाल, बकरगंज

ढाका प्रमुख शहर है, साथ ही राजधानी है। इसकी जनसंख्या २० लाख है।

आर्थिक आधार

स्वतंत्र बंगला देश आर्थिक दृष्टि से म्यपूर्ण है। स्वतंत्र बंगला देश के अनुमानित बजट में राष्ट्रीय आय १५३ करोड़ ३४ लाख रु० तथा खर्च १५२ करोड़, ७२ लाख रुपये दिखाया गया है, जब कि पिछली सन् ६९-७० की बजट-रिपोर्ट में १८ करोड़ ६२ लाख रुपये की बचत दिखायी गयी है।

यह देश कृषि-प्रधान होने के कारण ८२ प्रतिशत जनता खेती पर ही आधारित है। चावल उसका मुख्य खाद्यान्न है। चावल का वार्षिक उत्पादन १ करोड़ टन है। इसके अतिरिक्त अन्य फसलों का उत्पादन निम्न अनुसार है : उख (गन्ने) का वार्षिक उत्पादन ७६ लाख टन, गेहूँ ८५ हजार टन, दालें ४१ हजार टन और चाय का उत्पादन २९ हजार टन है। मछली का अनुमानित वार्षिक उत्पादन लगभग ६५ हजार मैट्रिक टन है। ६ हजार ५ सौ मन शहद का उत्पादन होता है।

विश्व के सम्पूर्ण जूट-उत्पादन का ८२ प्रतिशत भाग इस देश का है। सन् १९६१ में लगभग २४ लाख एकड़ में पटसन उगाया जाता था और इसका उत्पादन १२ लाख २३ हजार टन था।

वनों में इमारती लकड़ी का उत्पादन प्रधान है। प्रतिवर्ष १ करोड़ ५० लाख घनफुट इमारती लकड़ी तैयार की जाती है। चिटागांग में तेल की खानें हैं। १,०९८ औद्योगिक प्रतिष्ठानों, २२ कपड़ों की मिलों, ७ चीनी के कारखानों, १८ दियासलाई के कारखानों, ७ शीशे के कारखानों, १७८ हौजरी की फैक्टरियों, →

बंगला देश खोकर पाकिस्तान क्या खोयेगा ?

बंगला देश एक वास्तविकता हो गया। इसके बन जाने से पाकिस्तान का आर्थिक आधार बहुत कमजोर हो जावेगा। हो सकता है पाकिस्तान अब एक अत्यन्त गरीब देश हो जाय।

बंगला देश से पाकिस्तान को हर साल १२५ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा मिलती थी, जो पाकिस्तान के पूरे निर्यात का ४८ प्रतिशत है। पाकिस्तान का पूरा राष्ट्रीय उत्पादन ७,७२२ करोड़ रुपये (१९७०–७१) है। जिसमें ४,३९५ करोड़ रुपये अर्थात् ५७ प्रतिशत बंगला देश का हिस्सा है। बंगला देश के स्वतन्त्र होने से पाकिस्तान अपनी वार्षिक आमदनी (राजस्व) ३६८ करोड़ रुपये के घाटे में रहेगा। यह आमदनी उसे चुंगी, केन्द्रीय आबकारी, आयकर, नगरपालिकाकर, बिक्रीकर, कृषि और सम्पत्तिकर के रूप में बंगला देश से हासिल होती थी।

पाकिस्तान ने बंगला देश खोकर आन्तरिक व्यापार में साढ़े सात करोड़ बंगालियों की मंडी खोयी है जहाँ से उसे २५८ करोड़ रुपये प्राप्त होते थे। यह प्राप्ति पाकिस्तान को बंगला देश में पश्चिमी पाकिस्तान की तैयार की हुई चीजों को बेचकर होती थी। पाकिस्तान बंगला देश में मशीनें, दवाइयाँ, हाथ की बनी हुई चीजें, कागज, सीमेंट, कच्ची रूई, तम्बाकू और सूती कपड़े बेचता था जिससे १६६ करोड़ रुपये की आमदनी होती थी। और, वह बंगला देश से चाय, जूट के सामान, चमड़ा और कागज लिया करता था जिसकी कीमत ५२ करोड़ रुपये होती थी। इस आन्तरिक व्यापार की स्थिति ऐसी हो गयी थी कि बंगला देश पाकिस्तान की उपनिवेशिक मंडी बन गया था। इस तरह पाकिस्तान और बंगाल के बाजार पर पंजाबी पूँजीवादियों का कब्जा था।

इन सब घाटों के कारण पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था कमजोर हो जायगी। अभी भी बंगला देश से ८ महीने की लड़ाई के कारण पाकिस्तान को हर माह ४५ करोड़ रुपये का घाटा हुआ है।

पाकिस्तान का औद्योगिक उत्पादन बहुत नीचे गिर गया है। चीजों की कीमतें बढ़ रही हैं। निर्यात संकुचित होकर रह गया है। इसके कारण पाकिस्तान की सुरक्षित मुद्रा, जो एक साल पहले ३२ करोड़ ५० लाख डालर थी, अब घटकर २ करोड़ १५ लाख डालर हो गयी है।

ऐसा अन्दाज होता है कि पाकिस्तान को अब तक जो घाटा हो चुका है और बंगला देश निकल जाने से अब जो घाटा होगा उसके कारण वह अपनी सैनिक मशीन को सम्भाल नहीं सकेगा, जिस पर ३४० करोड़ रुपये सालाना खर्च है। उसे सम्भालने के लिए पाकिस्तान को अपनी आमदनी का ७० प्रतिशत खर्च करना होगा। जिसका अर्थ यह है कि उसे अपनी सभी विकास-योजनाएँ बन्द करनी होंगी। इसका प्रभाव यह पड़ेगा कि पाकिस्तान की जनसंख्या और अर्थ-व्यवस्था के बीच एक बड़ी खाई पड़ जायगी, और पाकिस्तान को अनिश्चित काल तक अपने दोस्तों के दान पर निर्भर रहना होगा। कोई दोस्त दान यों ही नहीं देता।

(८-१२-'७१ 'इकॉनॉमिक टाइम्स' से)

—२९ जूट मिलें, २८ अल्मूनियम की मिलें, १ कागज का कारखाना, १ सीमेंट फैक्टरी, एक खाद कारखाना, एक पोत प्रांगण के साथ यह स्वयं पूर्ण देश है। इतना सब है, लेकिन गरीबी और विषमता भी भयंकर है जिसका मुकाबिला स्वतंत्र बंगला देश की जनता और सरकार को अब करना पड़ेगा। ●

२५वाँ संशोधन और मूल नागरिक अधिकार

भारतीय संविधान के २५ वें संशोधन का निम्नलिखित प्रभाव होगा —

१—केन्द्रीय संसद या राज्यसभा में पास किये हुए कानूनों पर, जो संविधान के निर्देशक तत्वों (डाइरेक्टिव प्रिंसिपुल्स) को कार्यान्वित करने के लिए होंगे, न्यायालयों (उच्च-उच्चतम) को विचार करने और फैसला करने का अधिकार नहीं रहेगा अर्थात् उन कानूनों को न्यायालयों में चुनौती नहीं दी जा सकती, भले ही वे बुनियादी अधिकारों (जो धारा १४, १९, ३१ में दिये गये हैं) के विरुद्ध हों।

२—मुआवजा (कम्पेन्सेशन) के बदले रकम (एमाउन्ट) का शब्द व्यवहार में लाया जायगा, अर्थात् मुआवजे का प्रश्न न्यायालय के विचार के अधिकार से बाहर होगा।

३—धारा १९ (१-एफ) का प्रभाव उस कानून पर नहीं पड़ेगा जो संशोधित धारा से प्रभावित है।

४—बुनियादी अधिकार, विशेष तौर पर सम्पत्ति रखने का अधिकार, निर्देशक तत्वों के कार्यान्वित होने के रास्ते में रुकावट न बनें, यही पच्चीसवें संशोधन का उद्देश्य है, और सरकार यह चाहती है कि न्यायालय उन सम्पत्तियों के सम्बन्ध में, जो सार्वजनिक कामों के लिए ली जायें मुआवजे के चक्कर में न पड़े।

२५ वें संशोधन का जिन धाराओं पर असर पड़ेगा वे १४, १९ और ३१ हैं। १९ वीं धारा तो बहुत महत्व की है क्योंकि उसमें निम्नलिखित अधिकार दिये गये हैं, जैसे विचारों को प्रगट करने की स्वतन्त्रता, शांतिपूर्ण ढंग से और बिना शस्त्र के एकत्रित होने का अधिकार; संगठन बनाने का अधिकार; भारत के किसी भी हिस्से में स्वतन्त्रतापूर्वक आने-जाने का अधिकार; भारत के किसी भी हिस्से में रहने-बसने का अधिकार; सम्पत्ति प्राप्त करने, रखने और बेचने का अधिकार; कोई भी पेशा, धन्धा, व्यापार करने का अधिकार। •

मरौना में नयी सम्भावनाएँ

विनोबाजी के नाम श्री जगन्नाथन्‌जी का पत्र

सहरसा जिले के मरौना प्रखण्ड में १० दिन रहके घूमना मिला। मरौना में ग्रामदान-पुष्टि में अच्छी प्रगति हुई है और अगले कदम के लायक वातावरण बना है। १० दिन में १६ गाँवों में गया था। एक गाँव छोड़कर बाकी सभी गाँवों में ग्रामसभाएँ स्थापित हुई हैं। बीघा-कट्ठा सबको देना चाहिए, ऐसा विचार सामान्यतया सभी गाँवों में फैला है। २-३ बीघा के छोटे किसान भी बीघा-कट्ठा प्रसन्नता से दिये हुए हैं। १६ गाँवों में से ५०॥ बीघा जमीन २१५ भूमिहीनों को दी गयी है। उसी गाँव में पहले से भूदान में प्राप्त १५२ बीघा जमीन १६३ भूमिहीनों को बाँटी गयी है। इस तरह मरौना प्रखण्ड में करीब २०० गाँवों में भूदान की और बीघा-कट्ठा की जमीन सैकड़ों भूमिहीनों में वितरित हुई है। छोटे-बड़े किसान, सबने भूमि दी है। महेन्द्र-भाई जैसे सातत्यवान कार्यकर्ता के साथ जनता का आंतरिक सहकार इस सफलता का मुख्य कारण है। बिहार में सहरसा जिले में अधिक गरीबी है। लेकिन जनता सरल व उदार मनोवृत्ति की है। देने के मनोभाववाले बिहार में, खासकर सहरसा जिले में, हैं। पुष्टि-काम के लिए आपने सहरसा क्यों चुना, यह अभी महसूस करता हूँ। नेपाल की सीमा पर, सरकारी योजना से उपेक्षित सहरसा का आपने ठीक ही चुनाव किया है। 'सर्वोदय' से पुष्टि का प्रारम्भ किया है। सुलभ ग्रामदान से आगे का पुष्टि-आन्दोलन सहरसा जिले में सुलभ है, यह सिद्ध हुआ है। १६ गाँवों में १८०० लोगों ने यानी करीब ८० लोगों ने बीघा-कट्ठा दिया है। अभी तक जिन्होंने बीघा-कट्ठा नहीं दिया है उन लोगों को भी खुद होकर देने का वातावरण मरौना में बना है।

कोसी नदी के प्रवाह का अच्छी उपजाऊ मिट्टी यहाँ की है। लेकिन बाढ़ में इसकी फसल बरबाद होती रहती है। घर भी पानी में डूब जाते हैं। इस नैसर्गिक प्रकोप को भी शान्त-चित्त से सहते रहने की इन लोगों को आदत हो गयी है। भूमिवानों द्वारा निकाली हुई बीघा-कट्ठा की बहुत सारी जमीन को कोशी नदी ले लेती है। वैसे किनारे की जमीन देने की मनोवृत्ति आम है, पर अब उसके बदले में दूसरी जमीन देने की भी मनोवृत्ति पनप रही है।

ग्रामसभा के द्वारा भूमिहीन वर्ग में अच्छी जागृति आयी है। ग्रामदान-आन्दोलन में उनका विश्वास भजन, गान आदि के रूप में व्यक्त हुआ है। आन्दोलन के प्रार्थना-गीत वे उत्साह से गाते हैं। आन्दोलन के नये-नये नारे भी जनता ने निर्माण किये हैं। ये सब आन्दोलन के अच्छे लक्षण हैं। कई ग्रामसभा में अध्यक्ष, मंत्री पद की जिम्मेदारी अवामों ने उठायी है। ये सब अपने ग्रामदान-आन्दोलन के भविष्य के शुभ लक्षण हैं, ऐसा महसूस कर मैं उत्साहित हूँ। १० दिन की यात्रा में ग्रामदान-आन्दोलन से आकर्षित करीब १०० नवजवानों से मिलने का मौका मिला। प्रखण्ड में और ज्यादा नवजवान होंगे, ऐसा लगता है।

सुलभ ग्रामदान के अनुसार (१) ग्रामसभा-गठन (२) बीघा-कट्ठा भूमि-वितरण, (३) ग्रामसभा को भूस्वामित्व का सम्पूर्ण समर्पण, (४) ग्रामकोष-संग्रह की योजना—मरौना प्रखण्ड में शुरू हो जाने के बाद आगे की आवश्यक योजना की राह वे देख रहे हैं। ग्रामसभा को और दृढ़ होना है। बीघा-कट्ठा की जमीन और निकालनी है। मेरी यात्रा के १६ गाँवों में से १ गाँवों में ही ग्रामकोष इकट्ठा हुआ है। अन्य ग्रामसभाएँ जनवरी की फसल-कटनी में ग्रामकोष जमा कर लेने की कोशिश में हैं। एक-दो माह में पुष्टि के अगले कदम के लिए मरौना प्रखण्ड तैयार हो जायगा। अपनी वृद्धावस्था में भी लोक-सेवा करनेवाले 'भीष्म पितामह' धीरेन् दा का मार्गदर्शन सहरसावासियों के लिए प्राप्त हुआ है, यह भगवान की कृपा ही है। ३ दिसम्बर से जनता उनकी पदयात्रा का कार्यक्रम स्वीकार कर चलायेगी। (यात्रा चल रही है) इससे आम जनता को अच्छा शिक्षण मिलेगा। इसके साथ आगे (१) ग्राम-सभाध्यक्ष, मंत्री, (२) शान्ति सैनिक, (३) शिक्षक-विद्यार्थी, आदि के शिविर चलाये जायेंगे, जिनके कारण हर गाँव में ग्राम-स्वराज्य के शिल्पकार तैयार हो जायेंगे। १-२ माह में ऐसे शिविरों का मरौना प्रखण्ड में सिलसिला प्रारम्भ हो जायगा, ऐसा विश्वास है। खादी-निधि जैसी संस्थाएँ इस जिम्मेदारी को उठायेंगी, ऐसी अपेक्षा रखी गयी है।

शिविर के साथ ग्रामसभा द्वारा खेती का विकास, गोपालन, ग्रामोद्योग आदि की शुरुआत होनी चाहिए। यहाँ आज भी खेती विज्ञान के अभाव से पिछड़ी हुई, पुरानी पद्धति से चल रही है। खेती की कुछ छोटी-मोटी वैज्ञानिक पद्धतियों को भी अपना लेने से तिगुना उत्पादन हो सकता है। मरौना प्रखण्ड में भैंस-पालन है। दूध का मक्खन निकालकर बाहर भेजा जाता है। जूट भी बाहर भेजा जाता है। व्यापार में भोली जनता का बहुत ही शोषण किया जाता है। ग्रामसभा द्वारा जनता जागृत होकर एक होगी, तब इस तरह का शोषण रोक सकते हैं। गाँवों की जनता के पास पर्याप्त जमीन नहीं है। हर गाँव में ३० प्रतिशत जमीन शहर में रहनेवाले या कहीं बाहर के मालिक की है। इन जमीनों में काश्तकार ठे-दारों को कानून के अनुसार उत्पादन का हिस्सा नहीं मिलता है। इन सब प्रश्नों को हल करने के लिए मरौना प्रखण्ड में वातावरण और जनशक्ति का निर्माण हो रहा है। सहरसा जिले में मरौना मार्गदर्शक, प्रगतिशील प्रखण्ड दिखाई देता है। सहरसा भारत को रास्ता बतायेगा।

—एस० जगन्नाथन्

दिनांक २२-११-'७१

(मूल तमिल से। अनुवादक : विवेकानन्द)

११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक सहरसा में हुई ग्रामस्वराज्य-पुष्टि-पदयात्रा-अभियान की उपलब्धियाँ

क्र० सं०	प्रखंड का नाम	पड़ाव संख्या	ग्राम सभा	सदस्य ग्रा.स.	घोषित भूमि बीघा	घोषित भूमि कट्ठा	घोषित भूमि धूर	वितरित भूमि बीघा	वितरित भूमि कट्ठा	वितरित भूमि धूर	दाता संख्या	आदाता संख्या	साहित्य बिक्री रु०	साहित्य बिक्री पै०	पत्रिका ग्राहक	सर्वोदय मित्र	सर्वोदय सहयोगी	शा.सै. की सं.	आ.कु. सद सं.	समा० समि०	
१	सिमरी बख्तियारपुर	१६	—	१	—	—	—	—	—	—	—	—	३	००	—	—	—	५	३	१	
२	मधेपुरा	४२	—	१९	७५	—	—	—	—	—	२९	—	१३१	००	७	—	—	—	—	—	
३	कहरा	९	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	५	५०	—	—	—	—	—	—	
४	सिंहेश्वर	२१	—	१६	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	९	—	—	—	—	
५	सौर	२८	—	५	—	—	—	६	४	१०	१७	२५	६५	००	—	—	—	१७५	—	—	
६	मुरलीगंज	२२	—	९	३६	१४	६	—	—	—	७५	—	२५	००	५	—	—	१२	२	९	
७	मुरोल	२२	—	१७	३	५	—	१७	१२	८	५६	८४	२९	५०	७	१०	२	३७	—	—	
८	नवहट्टा	२१	—	६	—	—	—	—	—	—	—	—	१	००	२	—	—	७९	४	—	
९	बसन्तपुर	१७	—	७	—	—	—	—	—	—	—	—	७०	००	१६	—	१	—	—	—	
१०	पिपरा	२१	—	१	—	—	—	—	—	—	—	—	७५	४९	—	—	—	—	—	—	
११	राघोपुर	२४	—	१९	१०	१३	—	—	—	—	२१	—	२५६	२६	—	—	—	११८	—	—	
१२	किशनपुर	१५	—	७	—	—	—	—	—	—	—	—	१४	१०	१	—	२	—	३	—	
१३	आलमनगर	२१	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	१५	००	४	१	५	७	—	—	
१४	महिषी	२८	—	११	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	३०	—	२	
१५	छातापुर	३६	—	११	१५०	—	—	१०	६	०	२२	२७	५५	००	११	—	—	१८७	—	—	
१६	निर्मली(पूर्व)	१३	३	२	१०	—	—	६	१९	१९	१६	१६	११	६५	—	—	—	३१	—	—	
१७	विरौल	२१	५	५	—	—	—	—	—	—	१	—	९३	००	—	—	—	१५	—	—	
१८	चौसा	१६	१	२	११२	—	—	३७	—	—	१८	७८	१५५	००	६	७	—	—	—	—	वितरित भूमि भूदान की है
१९	किशुनगंज	३०	—	८	१	१२	—	—	—	—	—	—	२६५	००	७	—	१	२०	—	—	
२०	त्रिवेणीगंज	२४	—	१५	—	—	—	—	—	—	—	—	९५	००	२	—	—	—	—	—	
२१	सोनवर्षा	७	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	१	—	—	—	—	—	
२२	निर्मली(प०)	१०	—	२	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	
२३	मरौना																				रिपोर्ट अप्राप्त
	जोड़ —	४४०	९	१९५	३९९	४	६	७३	१९	१७	२४५	२३०	१३३४	४०	६९	२७	१२	७१५	१२	१२	

नोट :—ग्रा० स० = ग्रामसभा, शा० सै० = शान्ति सैनिक, आ० कु० = आचार्य कुल, सद० सं० = सदस्य संख्या, समा० समि० = समाधान समिति।

कानपुर नगर के दैनिक मजदूरों का सर्वेक्षण

गत मार्च के अन्तिम सप्ताह में सर्व सेवा संघ के निर्णयानुसार नगर सर्वोदय मण्डल का गठन हुआ। १९ मई को उ० प्र० सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी तथा मंत्री भाई महावीर सिद्धुजी की उपस्थिति में मण्डल की कार्यकारिणी की बैठक हुई जिसमें अन्त्योदय के विचार से कानपुर नगर के दैनिक मजदूरों की समस्याओं के हल का काम उठाने का निश्चय किया गया। इस हेतु एक मजदूर-समिति का चयन किया गया। समिति ने सर्वप्रथम मजदूरों की वास्तविक दशा का परिचय पाने के लिए मजदूरों का सर्वेक्षण-कार्य किया। समिति के संयोजक ने सर्वप्रथम नगर के विभिन्न चौराहों, अड्डों पर खड़े होनेवाले मजदूर भाइयों से व्यक्तिगत सम्पर्क कर साधारण सर्वेक्षण विवरण समिति के सदस्यों के समक्ष रखा। सर्वेक्षण-कार्य जून के प्रथम सप्ताह से नियमित रूप से शुरू किया गया। प्रत्येक मजदूर से सम्बन्धित जानकारी को सर्वेक्षण-फार्मों पर लिपिबद्ध किया। सर्वेक्षण का कार्य १५ अगस्त से बन्द कर दिया गया। दो माह पन्द्रह दिनों की इस सर्वेक्षण-अवधि में समिति के सदस्यों एवं अन्य सर्वोदय कार्यकर्ताओं का लगभग डेढ़ हजार मजदूरों से सम्पर्क हुआ जिसमें ४२५ मजदूरों का पूर्ण विवरण सर्वेक्षण-फार्म द्वारा लिपिबद्ध किया गया।

मजदूरों से सम्पर्क तथा सर्वेक्षण का कार्य मुख्यतः घण्टाघर चौराहा, सीसामऊ बाजार, नवाबगंज, हूलागंज, ग्वालटोली के मजदूर अड्डों पर किया गया।

सीसामऊ बाजार के मजदूर-अड्डे को मुख्य केन्द्र मान कर सबसे अधिक सक्रियता बरती गयी है। अनेक सभाएँ, बैठकें आयोजित करके मजदूरों में जागृति लाकर संगठित करने का प्रयास किया गया। परिणामस्वरूप एक मजदूर भाई ने शिक्षण में क्रान्ति-दिवस पर लखनऊ जाकर जुलूस में भाग लिया। एक मजदूर ने संयोजक का भार लेकर उक्त अड्डे पर मजदूरों की समस्याओं का हल खोजने हेतु रुचि ली। १५ अगस्त को झण्डारोहण-समारोह मजदूर भाइयों ने स्वयं मनाया। यह उल्लेखनीय है कि इस अवसर पर कई मजदूर भाई अपने काम को छोड़कर समारोह में सम्मिलित हुए और उन्होंने सभा में अपने विचार रखे।

सर्वेक्षण के दौरान जिन मजदूर भाइयों से सम्पर्क हुआ उनमें से कुछेक ने बड़ा ही रोचक उत्तर दिये जिसे यहाँ लिखना अनुचित न होगा। फुटपाथ पर सोनेवाले एक मजदूर भाई से जब उनके रात गुजारने के बारे में जानकारी माँगी गयी तो उत्तर मिला, "धरती सेज आसमान ओढ़न"। एक मजदूर भाई से जब पूछा गया कि शहर में मजदूरी क्यों करने आये हो तो उत्तर मिला कि "गाँव अच्छा नहीं लगता था—शहर घूमने के शौक में आये थे। अब जेब में पैसे नहीं रहे तो चौराहे पर मजदूरी के लिए खड़ा होना पड़ा।" एक भाई से जब मजदूरों की दयनीय दशा पर सहानुभूति प्रकट की गयी तो उसका कहना था, "बाबूजी, हमसे कहीं अच्छे तो बंगला देश के शरणार्थी हैं जिनके खाने-रहने की सरकार को कम-से-कम चिन्ता तो है, हमारी ओर तो न कोई देखनेवाला है और न कोई सुननेवाला है।" एक मजदूर से जब शहर आने का कारण पूछा गया तो उत्तर मिला, "मुझे तो शहर में लाया गया है" और स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि "मुझे डकैती के केस में पुलिस कानपुर लायी थी, अब जब मुकदमे की पेशी होती है तब मुकदमे का खर्च निकालने के लिए काम की तलाश में चौराहे पर आ जाता हूँ।" एक मजदूर से जब समाज द्वारा मजदूरों के शोषण की चर्चा की गयी तो जवाब मिला, "अरे, साहब आज तो मजदूर ही मजदूर का शोषण कर रहा है। समाज की तो बात दूर जाने में होशियार मजदूर काम का ठेका ले लेते हैं और मजदूर भाइयों से काम लेकर मजदूरी का सही बँटवारा नहीं करते।'

सामान्यतया कानपुर नगर में नित्य लगभग पाँच हजार दैनिक मजदूर काम की तलाश में रहते हैं, जो नगर के विभिन्न मजदूर अड्डों से अपने को सम्बद्ध रखते हैं। यह संख्या मौसम के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। जिन महीनों में गाँवों में काम नहीं होता है उन महीनों में संख्या दुगुनी से भी अधिक हो जाती है तथा जिन दिनों में गाँवों में काम होता है, यह संख्या घट जाती है। नगर के विभिन्न औद्योगिक प्रतिष्ठानों के खुलने व बन्द होने से भी इस संख्या पर प्रभाव पड़ता है। मजदूर अपने को एक ही अड्डे से बाँधकर नहीं रखते हैं। वे प्रायः नगर के विभिन्न मजदूर अड्डों पर काम की तलाश में घूमा करते हैं।

कुल ४२५ दैनिक मजदूरों का सम्पूर्ण विवरण सर्वेक्षण-पत्रों पर अंकित किया गया जिसके आधार पर निम्नलिखित जानकारी मिली —

१ औसत दैनिक मजदूरी

मजदूर ३.०७ पैसे, राजगीर ७.१२ पैसे

२. माह में औसत काम मिलने के दिन

माह में मजदूर को औसतन १४½ दिन काम मिलता है। अर्थात् १५½ दिन मजदूर को काम नहीं मिलता है।

५७.७१% मजदूर किराया न देनेवाले तथा फुटपाथ पर शरण लेनेवाले होते हैं।

४२.२९% मजदूर किराये के मकानों में रहते हैं।

२१.८८% मजदूर होटल के फुटपाथ पर खाना खाते हैं। शेष ७८.१२% भोजन स्वयं बनाते हैं या परिवार के साथ भोजन लेते हैं। ६७.१८% मजदूर

विवाहित हैं। ३२.६६% मजदूर अविवाहित हैं। अधिकांश मनुष्य शहर में अकेले ही रहते हैं।

३. शहर मे मजदूरी करनेवालों ने मजदूरी करने के निम्न कारण बताये—

(क) भूमिहीनता या अपर्याप्त भूमि गरीबी अथवा उद्योगों का यकायक ठप्प हो जाना। — ९४%
घरेलू झगड़ों के कारण ३.५०%
प्राकृतिक प्रकोप १.२५%
घर से चोरी से भागे हुए १.२५%

(ख) २३ १२% किसी-न-किसी प्रकार के उद्योग-धन्धे का ज्ञान रखते हैं, यथा सायकिल-मरम्मत, पेन्टर, हलवाई ड्राइवरी, अम्बर चर्खा, चमड़े का काम, रफू का काम।

(ग) २५.३१% जमानत पर रोजगार करने के लिए काम चाहते हैं। शेष ४.६९% नौकरी चाहते हैं।

(घ) ५४.५८% मजदूर भूमिहीन हैं अर्थात् मजदूरी से ही जीवन-यापन करते हैं।

(ङ) ६६.८२% मजदूर शिक्षित हैं (इनमें साक्षर भी शामिल हैं।)

२७ ४१% मजदूर प्राइमरी तक शिक्षा प्राप्त हैं।

२५.४१% मजदूर जूनियर हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त हैं।

७.२९% मजदूर जूनियर हाई स्कूल से अधिक, परन्तु हाई स्कूल से कम शिक्षा प्राप्त हैं।

५.८८%मजदूर हाई स्कूल से ऊपर तक शिक्षा प्राप्त हैं।

००.९५% मजदूर इन्टरमीडिएट तक शिक्षा प्राप्त हैं। शेष ३३.१८% मजदूर अपढ़ हैं।

४. शहर में मजदूरी के लिए रहने की अवधि

(क) ४२.८८ प्रतिशत मजदूर शहर में एक साल से अधिक समय से मजदूरी करते हैं।

(ख) ३७. ५ प्रतिशत मजदूर शहर में एक माह में मजदूरी के लिए हैं।

(ग) शेष २०.६२ प्रतिशत मजदूर शहर में दो माह से ९ माह तक मजदूरी करते हैं।

(घ) २२ प्रतिशत मजदूरों ने अपने को शहर में थोड़े दिन का मेहमान बताया।

उपरोक्त आंकड़ों से यही निष्कर्ष निकला कि केवल ४२ प्रतिशत मजदूर स्थायी रूप से शहर में मजदूरी पर गुजारा करते हैं, शेष ५८ प्रतिशत मजदूर अस्थायी हैं जो कुछ समय तक ही नगर में मजदूरी हेतु रहेंगे। अतः मजदूरों का एक बड़ा भाग स्थिर नहीं रहता है।

५. भिन्न-भिन्न आयु के मजदूरों का भाग इस प्रकार है :

१० से १५ वर्ष तक की आयु के मजदूर ४.२%

१६ से २० वर्ष तक की आयु के मजदूर २४ २५%

२१ से २५ वर्ष तक की आयु के मजदूर ३२'२५%

२६ से ३०	,,	१९'५%
३१ से ४०	,,	१३'४%
४१ से ५०	,,	५'२%
५१ से ६०	,,	००'०७%
६१ से ७०	,,	× ×
७० से ऊपर	,,	०० ५%

६ भिन्न जिलो, प्रदेशों से कानपुर मे मजदूरी के लिए आनेवाले मजदूरों का प्रतिनिधित्व इस प्रकार है —

उ० प्र० के कुल ३१ जिलों के मजदूर कानपुर में मिले।

(क) १९'५% मजदूर कानपुर जिले के हैं।
१०'००% मजदूर उन्नाव जिले के हैं।
७'५% मजदूर रायबरेली जिले के हैं।
६'५% मजदूर फतेहपुर जिले के हैं।
५'००% मजदूर इलाहाबाद जिले के हैं।
३'७५% मजदूर प्रतापगढ़ जिले के हैं।
१'८५% मजदूर हरदोई जिले के हैं।
१'२५% मजदूर लखनऊ जिले के हैं।

(ख) गोरखपुर देवरिया
आजमगढ़ बस्ती
गोन्डा बहराइच
फैजाबाद सुल्तानपुर } ३६'७०%

बाराबंकी वाराणसी
गाजीपुर बलिया
मिर्जापुर जौनपुर } ३७.७०%

(ग) जालौन—हमीरपुर
बांदा—अलीगढ़
इटावा—आगरा
फर्रुखाबाद—सीतापुर
मैनपुरी } ३'५%

(घ) अन्य प्रदेशों से आनेवाले मजदूर
बिहार
मध्य प्रदेश
दिल्ली
आन्ध्र प्रदेश
नेपाल } ४'२० प्रतिशत

७. कुछ विशिष्ट जानकारी

(क) एक से अधिक मजदूरों ने बताया कि उन्हें सब दिन काम मिल जाता है।

(ख) बहुत से मजदूरों को रात्रि-कालीन विश्राम की सुविधा दूकानों, मकानों, बंगलों में चौकीदारी (सुरक्षा) की दृष्टि से मिल जाती है।

(ग) साहित्य के पढ़ने में रुचि पायी गयी। बहुत से मजदूर भूदान की पत्रिका पढ़ने को इच्छुक हैं।

८. मजदूरों की समस्याएँ

(क) नगर के विभिन्न मजदूर अड्डों में से किसी पर भी मजदूरों के खड़े होने के लिए स्थान नियत नहीं है जहाँ शीत, ताप, वर्षा से उनकी रक्षा हो सके।

(ख) रात्रिकालीन विश्राम हेतु रैन-बसेरा का प्रबन्ध नहीं। सस्ते भोजनालय की भी कोई व्यवस्था नहीं है।

(ग) काम न मिलने के दिन कम-से-कम जीवनयापन अथवा राशन की व्यवस्था न होना।

(घ) काम लेकर मजदूरी न देने-वालों से सुरक्षा की व्यवस्था।

(ङ) चिकित्सा की सुविधा नहीं। काम करते समय दुर्घटना का शिकार हो जाने पर कोई सहायता की व्यवस्था नहीं।

(च) मनोरंजन की कोई सुविधा नहीं है।

(छ) बचत के पैसे जमा करने की व्यवस्था का अभाव।

—रवीन्द्र सिंह चौहान

पिछले एक वर्ष में श्री दाताराम मक्कड़ द्वारा साहित्य-प्रचार तथा सर्वोदय कार्य का प्रशंसनीय प्रयास

पुस्तक-बिक्री	११,३०८-६७
गांधी डायरी-बिक्री	६३६-५०
दैनंदिनी-बिक्री	१,६६९-१०
शान्ति-बैज-बिक्री	६०३-२०
पत्रिकाओं की बिक्री	४१३-९५

ग्राहक बनाये ११६

गैत्री के	५६
भूदान-यज्ञ : हिन्दी	५४
पीपुल्स ऐक्शन	४
भूमिपुत्र	५

जनसम्पर्क से आय

सर्वोदय पात्र से निजी तथा बाहर से	३८-३९
सम्पत्तिदान निजी	२०६-५०

शरणार्थियों के लिए चन्दा करके दिया

गांधी पीस फाउन्डेशन को	१,३२९-००
पारसचन्द्र भंडारी को	२,०५७-००

उल्लेखनीय है कि श्री दातारामजी वृद्धावस्था में भी सर्वोदय की निष्ठा से विचार-प्रचार का कार्य पैदल घूम-घूमकर निरन्तर करते रहते हैं। अकेले एक व्यक्ति का यह प्रयास अद्भुत तथा प्रेरक है।

भूलसुधार

१. 'भूदानयज्ञ' के अंक ११, १३ दिसम्बर '७१ में पृष्ठ १६० पर 'प्रखण्ड स्वराज्य सभा की बैठक में श्री जयप्रकाश नारायण' पढ़ें। श्री जयप्रकाश नारायण छोटे टाइप में होने से लेखक के नाम का भ्रम होता है।

२. उसी अंक में अन्तिम पृष्ठ पर मंत्री के पत्र में ऊपर से चौथी पंक्ति में १ जनवरी १९७३ के बदले १ जनवरी १९७२ पढ़ें। भूल के लिए क्षमा।

दैनन्दिनी १९७२

प्लास्टिक के चित्ताकर्षक आवरण के अन्दर प्रकाशित यह डायरी बड़ा ही उपयोगी है।

साइज ५" × ७॥" मूल्य रु० ४-०० प्रति
साइज ५॥" × ९" मूल्य रु० ५-०० प्रति
५० प्रतियाँ मँगवाने पर स्टेशन पहुँच।
१ प्रति के लिए डाकव्यय रु० २-२० अलग।
स्टाक समाप्ति पर है। शीघ्र मँगायें।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी—१

बंगला देश
विश्व विवेक-जागरण-पदयात्रा

पदयात्रा १३ दिसम्बर को वाराणसी में समाप्त हुई। यहाँ से दिल्ली के लिए सवारी द्वारा यात्रा प्रारम्भ हुई। उस दिन सुबह लगभग १० बजे पदयात्री टोली मुगलसराय से ९ मील चलकर राजघाट (वाराणसी) में सर्व सेवा संघ के केन्द्र में पहुँची जहाँ उसका सार्वजनिक स्वागत हुआ। तीसरे पहर २ बजे टाउनहाल के मैदान में सार्वजनिक सभा हुई। उसके बाद ४ बजे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में सभा हुई। दिन भर का कार्यक्रम ७ बजे सर्व सेवा संघ, प्रकाशन के हॉल में 'माटीर-दाम' नाटक के उत्तम अभिनय से समाप्त हुआ।

नगर की विभिन्न संस्थाओं ने पदयात्रियों का स्वागत किया। जानकारी मिली है कि लखनऊ पहुँचकर यात्रा स्थगित कर दी गयी और यात्री अपने देश वापस चले गये।

इस अंक में

→की आवाज' पत्रिका मँगाने का निर्णय किया है।' 'भूदान तहरीक, ग्रामसभा की ओर से मँगाया जाता है, और उसका नियमित वाचन होता।

सिंचाई एवं पेय जल हेतु चापाकल की आपूर्ति

बिहार रिलीफ कमिटी शाखा कार्यालय दरौली द्वारा ग्रामीणों को सिंचाई एवं पेय जल के लिए चापाकल उपलब्ध कराने का कार्य श्री अनिरुद्ध प्रसाद सिंह, प्रभारी एवं श्री गंगा प्रसाद सिंह अभिदर्शक, बिहार रिलीफ कमिटी के मार्गदर्शन में किया जा रहा है। बिहार सरकार कृषि-विभाग की ओर से दरौली प्रखण्ड को लघु सिंचाई योजना-अन्तर्गत सिंचाई के लिए एक हजार तथा पेयजल के लिए तीन सौ आठ चापाकलों की स्वीकृति मिली है। प्राप्त जानकारी के अनुसार ग्रामसभा के माध्यम से सिंचाई के लिए ३५० लघु कृषकों तथा पेयजल के लिए ८० व्यक्तियों के अब तक आवेदन पत्र प्राप्त हुए हैं। इनमें से नवम्बर '७१ तक छानबीन करके ५२ चापाकल हरिजन, आदिवासी परिवारों को मुफ्त तथा अन्य जाति के लोगों को ५० प्रतिशत कीमत लेकर दिये जा चुके हैं। शेष चापाकलों की आपूर्ति शीघ्र करने की व्यवस्था की जा रही है।

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : १३, सोमवार, २७ सितम्बर, '७१
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सत्याग्रही की गिरफ्तारी

['टिहरी के प्रमुख नवजवान सर्वोदय कार्यकर्ता भवानी भाई ने सुन्दरलालजी को जेल में से जो पत्र लिखा था वह भेज रही हूँ। उचित समझें तो प्रकाशित करें'—सुमन संघ]

पू० मंत्री जी,

सादर प्रणाम,

मुख्य मंत्री एक ओर पत्र भेजते हैं कि जन-आन्दोलन बनाओ मैं साथ हूँ, और दूसरी ओर जन आन्दोलन बनाने वालों को जेल के अन्दर ठूंसा जा रहा है। सरकार की ओर से आन्दोलन को दफनाने की योजना है।

'मेरी हर आन्दोलन में शान्ति सैनिक की भूमिका रही है। हजारों की संख्या में आये हुए लोगों को व्यवस्थित और कन्ट्रोल करता रहा, हमेशा ठेकेदार और शराबियों को उत्तेजित भीड़ से यह कह कर बचाता रहा कि हमारी लड़ाई सिर्फ शराब से है। जिस भीड़ को सरकार की पुलिस लाठी और अश्रुगैस से शान्त नहीं कर सकती ऐसी भीड़ को नियंत्रण करने में सफलता प्राप्त करता रहा। परन्तु जब मुझ जैसे व्यक्ति पर भी चंद ठेकेदारों के हाथ बिका हुआ टिहरी का प्रशासन शान्ति-भंग का आरोप लगा सकता है तो ऐसे प्रशासन और ऐसी सरकार का तनिक भी भरोसा नहीं रखना चाहिए। खैर। मुझे किसी तरह से लाया गया। क्या आरोप लगाया गया इसकी चिन्ता नहीं। चिन्ता तो इस बात की है कि हम भले ही चिल्लाते रहें कि देश में शान्ति स्थापित हो, लोग हिंसा पर उतारू न हों परन्तु आज की व्यवस्था ही ऐसी है जो लोगों को हिंसा के लिए मजबूर कर रही है। मुझे याद है कोटद्वार के आन्दोलन की। हमारी माताएँ-बहनें भक्ति-भाव से भजन-कीर्तन तथा रामायण का पाठ कर रही थीं। हाथ जोड़कर अपने गरीब शराबी भाइयों से निवेदन कर रही थीं कि आज के पैसे बचाकर घर में सब्जी व कपड़ा ले जाओ। दूसरी ओर शराब के ठेकेदार गुण्डों को तैयार करके ऊधम मचाने के लिए भेज रहे थे। इस शान्तिमय आन्दोलन के सूचनार्थ कई तार व पत्र भेजे गये, परन्तु सरकार की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला। जब चन्द ठेकेदार यह कहते हैं कि हमें शान्ति भंग का खतरा है तो तुरन्त ६०-७० पी० ए०सी० के ऐसे जवानों को भेजा जाता है जिनके सिर पर लोहे के टोप, हाथ में डंडे होते हैं, मानो चीन व पाकिस्तान का आक्रमण हो गया हो। ठीक ३ बजे शराब की दुकान पर आकर मानसिंह भाई को एक किनारे करके गांधी की सरकार की पुलिस गांधी के चित्र को डंडे से तोड़कर फेंक देती है और शराब की पेटियों को दुकान के अन्दर रखती है। इतना ही नहीं, दोपहर को सत्याग्रही भाई-बहनों को धक्के-मुक्के मारकर ले जाया जाता है। ऐसी परिस्थिति में भले हम शान्ति-शान्ति चिल्लाते रहें पर उस वक्त ८० वर्ष का बूढ़ा भी उत्तेजित होकर डण्डा टूटने लगा था। अब बताइये तरुणों को इस व्यवस्था में कैसी शान्ति का पाठ पढ़ाया जाय? जो विद्यार्थी शान्तिपूर्वक गाते और बोलते थे वे उस समय शराब की दुकान पर आग लगाने के लिए तैयार हो गये थे। जिन उग्रवादी नेताओं को हम लोगों ने गांधीजी के अहिंसा के ध्वज के नीचे लाने में सफलता प्राप्त की थी उस समय विद्यार्थियों के बीच तोड़-फोड़ कराने पर उतारू हो गये थे। मैं ही जानता हूँ कि किस तरह मैंने सब उत्तेजित लोगों को शान्त किया। मैं गिरफ्तारी से पूर्व आपको प्रणाम करने के लिए आना चाहता था परन्तु इजाजत नहीं मिली, सुमन चौक से ही दारोगाजी मुझे थाने ले गये। मुझे वहाँ पर बैठा देखकर कुछ मित्र इकट्ठे हो गये। जब मेरे हाथ में हथकड़ी डाली गयी तो मेरे आस-पास खड़े होनेवाले मित्र अपने रोष को ओंठ दबाकर रोक रहे थे।

९ बजे गिरफ्तार व्यक्ति को ३ बजे तक एस० डी० एम० की प्रतीक्षा करनी पड़ी तब तक मैं अकेला ही एस० डी० एम० के कमरे में बैठा रहा। मुझे ऐसा लग रहा था कि टिहरी का प्रशासन ही कचहरी छोड़कर चला गया। एस० डी० एम० जब कचहरी में आया तो मुझसे बात करने की हिम्मत न पड़ी। सीधे पुलिस के हाथ में कागज पकड़ा कर जेल में ले जाने का इशारा किया। पुलिस ने जेल कर्मचारियों के पास सौंपकर विदा ली। नाम दर्ज कराने के बाद मैं तुरन्त सुमनजी की मूर्ति पर फूल चढ़ाने गया। मुझे ऐसा लगा कि सुमनजी की मूर्ति जोर से हँस पड़ी हो और यह कह रही हो कि क्या तुम्हारी हथकड़ियों का वजन मेरी बेड़ियों से अधिक है? जेल के कमरे के अन्दर लिखा था 'खतरनाक', उसी कमरे में मुझे भी ठूँसा गया है। कमरे में कुछ फौजदारी करनेवाले और कुछ डकैती तथा पागलपनवाले थे। शायद मुझे भी उसी श्रेणी का कैदी माना गया होगा। कमरे में सब लोग खूब शोर गुल मचा रहे थे। साथ-ही साथ भांग व बीड़ी का भी खूब जोर चल रहा था।

अब मैं न हथकड़ियों से डरता हूँ और न लोगों से। बापू ने हर व्यक्ति को निर्भय बनाया। जब मेरे ऊपर हथकड़ी डाली गयी तो मैं अकेला पुलिस के साथ बड़ी मस्ती के साथ जेल में गया। दो दिन तक गिर काफी भारी रहा और अब इनके होने के बाद यहाँ के कैदियों का मद्यनिषेध के लिए प्रशिक्षण कर रहा हूँ। मुझे आशा है कि यहाँ से बाहर निकलने पर कई कैदी मद्यनिषेध के लिए कार्य करेंगे।

आपका

भवानी दत्त

इन्द्रासन

अमेरिका ने भारत को मिलनेवाली 'एड' में कटौती की है। अच्छा हुआ। उसने हमें याद दिला दी कि घर की सूखी रोटी किसी बाहरी की कृपा से मिली हुई कचौड़ी से अच्छी होती है। गुलामी के दिनों में इंग्लैंड हमारा 'माई-बाप' बना हुआ था। लेकिन जब हम उससे स्वतन्त्र हुए तो न जाने क्या सोचकर हमने अमेरिका को अपना सेठ और गुरु, दोनों बना लिया। हम हर चीज के लिए अमेरिका के पास पहुँचने लगे। हमने उससे अपनी योजनाओं के लिए बुद्धि माँगी, उद्योगों के लिए पूँजी माँगी, सेना के लिए शस्त्र माँगे, शोध-संस्थानों के लिए सहायता माँगी, अपने युवकों-युवतियों के लिए कुत्सित किताबें और चित्र माँगे, यहाँ तक कि खाने-पीने और रहन-सहन के तौर-तरीके भी माँगे। हमारी किसी माँग को अमेरिका ने अस्वीकार नहीं किया। उसने अपना पिटारा खोला और हमने अपने घर का दरवाजा। उसके पास जितना कूड़ा-करकट था सब उसने हमारे आँगन में डाल दिया।

आज जब भारत अग्नि-परीक्षा से गुजर रहा है तो अमेरिका के शासक हमें मजबूर कर रहे हैं कि हम उनकी सही, सच्ची, शक्ल देखें। इसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं। इंग्लैंड और फ्रांस की तरह अमेरिका का कभी कोई साम्राज्य नहीं था, किन्तु अमेरिका का मन सदा साम्राज्यवादी ही रहा। 'डालर-किंग' अमेरिका ने दुनिया को बाजार से अधिक कभी कुछ नहीं समझा। और, पिछले महायुद्ध में जब से उसके हाथ अणु-शक्ति आयी, जिसको बदौलत वह चन्द्रलोक तक पहुँच गया, वह अपने को अपनी ही एक नयी सृष्टि का स्वामी मानने लगा है। इतनी प्रभुता में भी वह मद न हो तो क्या हो!

अमेरिका की नयी सृष्टि में आदर का स्थान दुनिया की उन सरकारों को है जो सड़ी-गली हैं, निरंकुश हैं, और जनता के मानवीय अधिकारों को कुचलनेवाली हैं। क्या दक्षिण अमेरिका, क्या अफ्रिका, और क्या एशिया, जहाँ भी भ्रष्ट और जालिम सरकार है उसको अमेरिका का समर्थन है। ऐसी हर सरकार पर दुनिया भर में फैले अमेरिकी खुफिया विभाग (सी० आई० ए०) का कब्जा है। तुर्की, ईरान, पाकिस्तान, वियतनाम, थाइलैंड आदि सब में एक से-एक बढ़कर फौजी तानाशाह मौजूद हैं जो अमेरिकी इन्द्रासन के चारों ओर बैठनेवाले मुकुटधारी गण हैं। उन्हीं में से एक जनरल यहिया खाँ हैं जिनको इस वक्त लाख मान-जान हो रहे हैं। पाकिस्तान में फौजी तानाशाही का इतने वर्षों तक बना रहना, उसका बराबर भारत-विरोधी रुख रखना, पिछले महीनों बंगला देश में नर-संहार करना, और अंत में भारत के विरुद्ध युद्ध छेड़ देना, यह सब इसलिए हुआ है कि अमेरिका ने उसे भरपूर 'एड' दी है, लड़ाई के हथियार दिये हैं, और बराबर यही कोशिश की है कि यहिया की तानाशाही बनी रहे। दुनिया को कम्यूनिज्म से बचाने के नारे की आड़ में अमेरिका ने अपनी अपार धन-शक्ति और शस्त्र-शक्ति का इस्तेमाल दुनिया भर में शोषणवादी बाजार, दमनकारी शासन, और भोगवादी संस्कृति को बढ़ावा देने में किया है। जो अमेरिका ऐसा है उसका संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रबल बहुमत है, क्योंकि अनेक देशों को उसने अपनी 'एड' से खरीद रखा है। उसके नेतृत्व में जिस संयुक्त राष्ट्र संघ ने युद्ध रोकने के लिए भारत पर इतना दबाव डाला उसने बंगला देश में नर-संहार को रोकने तथा मानव-अधिकारों की रक्षा के लिए उँगली तक नहीं उठायी। क्या राष्ट्र संघ जालिम शासकों के साम्राज्यों की रक्षा के लिए बना था, मानव-अधिकारों की रक्षा के लिए नहीं?

भारत के आत्म-सम्मान और राष्ट्रीय हित को अमेरिका ने जो ठेस पहुँचायी है वह वरदान सिद्ध हो सकती है, बशर्ते हम चेत जायें। स्वाधीनता के बाद हम जिस नकली बड़प्पन और बिल्कुल छिछली आधुनिकता के मोह में पड़कर अमेरिका के दरबार में पहुँच गये, उसे छोड़ना पड़ेगा। राष्ट्रीय जीवन में स्वदेशी के जिस मन्त्र को हमने भुला दिया है उसे फिर याद करना पड़ेगा। स्वदेशी के बिना स्वाभिमान संभव नहीं है। जिस पश्चिमी 'लोकतन्त्र' के नमूने पर हमने अपना राजनैतिक संगठन किया, जिस विदेशी, मुख्य रूप से अमेरिकी, पैसे के बल पर हमने आर्थिक विकास के लिए विशालकाय केन्द्रित उद्योगवाद का रास्ता पकड़ा, यहाँ तक कि अपने लाखों गाँवों के विकास के लिए अमेरिकी सलाह से सामुदायिक विकास की जो योजना चलायी, उन सब पर नये सिरे से विचार करना होगा। देश के अनेक शिक्षण, शोध, प्रकाशन और प्रचार के संस्थान जो अमेरिका के पैसे से चल रहे हैं उनके बारे में निर्णय लेना होगा। हम दुनिया के ज्ञान-विज्ञान के लिए अपना दिमाग हर वक्त जरूर खुला रखें और उसके शुभ तत्वों को दिल खोलकर स्वीकार भी करें, लेकिन जो तत्व हमें अपने ही देश में परदेशी बना दें उन्हें कठोरतापूर्वक छोड़ने के निर्णय को हम अब टाल नहीं सकते। स्वदेशी की सुगम, स्वाभाविक, राह छोड़ने के दुष्परिणाम हम बहुत भोग चुके।

अब तक जो कुछ हुआ उसके लिए हम दोषी किसे ठहरायें—अपने को या अमेरिका को? अगर हम स्वयं दोषी हैं तो हमें अपने दोष दूर करने में देर नहीं करनी चाहिए। हम अपने 'स्व' को अब भी पहचानें, और राष्ट्रीय जीवन के हर क्षेत्र में विवेकपूर्वक स्वदेशी के सिद्धान्त को लागू करें। स्वदेशी-संकीर्णता का नाम नहीं, उत्कृष्ट मानवता और वैज्ञानिकता का नाम है। स्वदेशी चाहने या न चाहने का प्रश्न नहीं, राष्ट्र के अस्तित्व और स्वस्थ विकास का प्रश्न है।

बंगला देश और हम

बंगला देश मुक्त हुआ। भारत को सन्तोष है कि उसने अपना कर्तव्य पूरा किया। बंगला देश कृतज्ञ है कि भारत की शक्ति मिल जाने से उसे मुक्ति मिली। मुक्ति के आनन्द में दोनों शरीक हैं, क्योंकि मुक्ति की प्राप्ति के लिए दोनों ने साथ खून बहाया था। शायद ही कोई दो राष्ट्र कभी इतने निकट रहे हों जितने भारत और बंगला देश आज हैं।

लेकिन दुनिया दोनों को देखेगी। वह देखेगी कि जो साथ मर सकते थे क्या वे साथ रह भी सकते हैं! क्रान्तियों और मुक्ति-संग्रामों के इतिहास में ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं जिनमें क्रान्तिकारी और मुक्ति के सैनिक जान हथेली पर रखकर साथ लड़े, साथ विजयी हुए, लेकिन विजय के बाद हाथ से हाथ मिलाकर बहुत दिन तक साथ-साथ चल नहीं सके। भारत और बंगला देश को नयी राह पर चलना है, और दुनिया को नयी राह दिखानी है।

भारत को यह बात माननी पड़ेगी कि स्वतंत्रता के बाद, नेहरू जैसे महान व्यक्ति के रहते, पड़ोसी देशों के साथ वह सम्बन्ध नहीं बन सका जिसको इतिहास ने अतीत में बनाया था, और जिसे नये जमाने में बनना चाहिए था। इसमें शक नहीं कि हमसे भूल हुई। हमने बहुत ज्यादा निगाह पश्चिम के देशों की ओर रखी। आश्चर्य नहीं, पड़ोसियों को लगा कि उनके साथ गरीब रिश्तेदारों जैसा बर्ताव हो रहा है, शायद हुआ भी। अब जरूरत है कि पुरानी भूल सुधारी जाय।

बंगला देश को मुक्ति इतनी जल्दी भारत की शस्त्र-शक्ति से मिली है—अमेरिका और चीन के विरोध के बावजूद मिली है। इस विषय पर भारत को गर्व होना स्वाभाविक है। लेकिन यह अनुभूति हमारे दिलों में अहंकार भी भर सकती है। अहंकार के प्रभाव में हमारे शासकों का विवेक कुंठित हो सकता है। कई जगह यह आवाज उठने भी लगी है कि एशिया में चीन अकेला 'सुपर-पावर' होना चाहता था, किन्तु अब भारत भी दौड़ में आ गया है। अगर हम सतर्क न रहे, तो सुपर-पावर-मनोवृत्ति की छाया हमारे और बंगला देश के, तथा हमारे और दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के, साथ नये सम्बन्धों पर भी पड़ सकती है। अगर हमारी ऐंठ और अहंकार की हल्की भी झलक दिखायी देगी तो मित्रता चाहे जितनी गाढ़ी हो क्षोभ और सन्देह पैदा हुए बिना नहीं रहेगा। क्षोभ और सन्देह की भूमिका में समता और सहकार के सम्बन्ध नहीं विकसित हो सकते। अगर ऐसा हुआ तो कितना बड़ा दुर्भाग्य होगा?

अगर इससे बचना है तो बचने का उपाय सोचना चाहिए। दुनिया के रवैये को देखते हुए यह निश्चित-सा लगता है कि बड़े देश थोड़े ही दिनों में अपनी-अपनी बड़ी थैली लेकर बंगला देश की ओर दौड़ेंगे। 'एड' और 'ट्रेड' के प्रलोभन चारों ओर से दिये जायेंगे। विकास के लिए पूंजी का भूखा देश, विशेष रूप से जब वह याहियाशाही की प्रलय-लीला का शिकार हो चुका है, प्रलोभनों में पड़ने से कैसे बचेगा? विदेशी पूंजी, तकनीक, और तरह-तरह के सहयोगों का प्रलोभन गरीब देशों को कहाँ पहुंचाता है, यह हम सब जानते हैं। यह बंगला देश के नेतृत्व का कर्तव्य होगा कि वह विदेशी सहायता और सहकार को विवेकपूर्वक स्वीकार करते हुए स्वदेशी के मंत्र को फिर एक बार याद करे जिसका पहला उच्चारण सन् १९०५ में बंगाल में ही हुआ था।

भारत बंगला देश के साथ किस चीज का लेन-देन करेगा, और किस स्तर पर करेगा? बंगला देश सरकार की माँग पर भारत सरकार ने प्रशासक दिये हैं। किसलिए? वहाँ के लोगों को सुझाव और सलाह देने के लिए या प्रशासन चलाने के लिए? निश्चित ही बंगला देश में प्रशासन चलाना भारत का काम नहीं है। कदापि हमारा यह काम नहीं है कि हम सरदार बनकर बंगला देश पर अपनी बात या अपने आदमी थोपें, उसका संविधान या विकास-योजना बनायें, और आग्रह रखें कि वह हमारी बात माने। वास्तव में भारत और बंगला देश का सम्बन्ध जितना ही अधिक गैर-सरकारी स्तर पर सांस्कृतिक और व्यापारिक होगा मित्रता उतनी ही टिकाऊ होगी और सन्देह से परे रहेगी।

बंगला देश को अपना देश नीचे से ऊपर तक नये सिरे से बनाना है। उसे नया प्रशासन गठित करना है, लोकतंत्र के लिए नयी पद्धति ढूंढनी है, अपने गांवों और नगरों के लिए विकास-नीति तय करनी है, और शिक्षा को उत्पादक और सर्जनात्मक बनाना है। इन सभी क्षेत्रों में उसके सामने भारत की २४ वर्षों की सफलताएं और विफलताएं दोनों हैं। उनको सामने रखकर गरीबी और विषमता से मुक्त होने के उपाय ढूंढने होंगे, एकता कायम रखनी होगी, संगठन के नये स्वरूप विकसित करने होंगे। बंगाल में मौलिक प्रतिभा की कमी नहीं है। जन-जन की प्रतिभा को, और विशाल जनता की श्रमशक्ति को, व्यापक राष्ट्रीय पुरुषार्थ के साथ जोड़ना नये नेतृत्व का काम होगा। यही उसकी कसौटी भी होगी।

बंगला देश को अब शान्ति की शक्ति चाहिए। नये समाज की नयी रचना शान्ति की ही शक्ति से हो सकती है। युद्ध से जितना होना था हो चुका। शान्ति की शक्ति की खोज में भारत उसका साथी होगा। विकेन्द्रीकरण तथा गांव और नगर की स्वायत्तता और स्वाश्रयिता का विचार उसी खोज के साथ जुड़ा हुआ है। भारत में गांधी ने जीवन भर शान्ति की शक्ति की ही खोज की। बंगला देश में शेख मुजीबुर्रहमान ने भी स्वतंत्रता के लिए अपनी ओर से शान्तिपूर्ण प्रतिकार से ही शुरू किया था। जिस देश ने एकता और समर्पण की इतनी उत्कृष्ट मिसाल पेश की है उसके लिए शान्ति को समाज-निर्माण के साथ जोड़ देना कठिन नहीं होगा।●

सर्वोदय नेता : उसका स्वरूप

—ज्यॉफ्रे ऑस्टरगार्ड

१. 'सामान्य सर्वोदय नेता', वे १,००० लोकसेवक हैं, जो अप्रैल १९६५ में सर्व सेवा संघ के संगठन के सर्वाधिकार थे। लोकसेवक की उपाधि लेकर उसने अपने-आपको लोक का वह सेवक बना दिया है, जिसका गांधीजी की अन्तिम इच्छा और वसीयत में उल्लेख है। उसका अपना काम जिले का प्रतिनिधित्व करना है। इस पद के लिए, जिस जिले में वह काम करता है उसके लोकसेवकों द्वारा सर्वसम्मति से चुना जाता है।

२. यद्यपि वह गांधीजी की तरह नैतिक समानता में विश्वास रखता है फिर भी वह यह जानता है कि उसके बहुत सारे साथी उसी की तरह पुरुष हैं। लेकिन उनमें से हरेक ने विनोबा की तरह ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा नहीं कर रखी है। इस माने में वह और उसके साथी अन्य भारतीय पुरुषों से अलग नहीं हैं। उनमें से अधिकतर विवाहित हैं और उनके बच्चे हैं, जो अब जवान हो चुके हैं। वह स्वयं ४० साल से ऊपर का है। इसका अर्थ यह है कि वह अब आन्दोलन में पिछले बीस वर्षों की अपनी सेवा पर नजर डाल सकता है। उसने २० वर्ष की उम्र में आन्दोलन में कदम रखा, स्कूल या कालेज छोड़ने के तुरन्त बाद जब गांधीजी जिन्दा थे और विनोबा ने भूदान आन्दोलन नहीं चलाया था।

३. अपने बचपन को याद करते हुए, वह अपना गांव याद करता है, जिसमें वह पैदा हुआ और पाला गया, जो भारत के ५,५०,००० गांवों में से एक है, जिसमें उसके देश के हर १० में से ८ आदमी रहते हैं। वह वास्तव में गांधीजी के सपनों के गांव से, जो नये भारत की स्वतंत्र बुनियादी इकाई है, कोसों दूर है। परन्तु वह गांधीजी के 'गांव एक गणतंत्र' के स्वप्न को समझ सकता है। वास्तव में गांव, 'थोड़े से धनी' और बहुत सारे गरीबों में बंटा हुआ है। जाति-पांति और पुरानी की भरमार है। परन्तु उस पद की उसका विश्वास है कि उनमें सही अर्थ में समुदाय बन जाने की शक्ति है, अगर केवल गांववालों को समझाया जाय कि वह एक संयुक्त परिवार के सदस्य हैं। उसे स्वयं संयुक्त परिवार में पाला गया था और इसलिए वह एक ऐसे स्वाभाविक सहकारी समूह के मूल्य को समझता है। वह पूछता है कि हमारे कुटुम्ब के प्रति जो हमारा कर्तव्य है, उसका क्षेत्र सारे गांव और सारे संसार के नर-नारियों तक क्यों न विस्तृत किया जाय, परन्तु ऐसा करने के लिए बहुत सारे परिवर्तन करने होंगे। यह परिवर्तन व्यक्ति के दिल और दिमाग में और साथ-ही-साथ सामाजिक बनावट में करने होंगे। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक समानता की बुनियाद पर ही सही समुदाय बन सकता है। और इसका अर्थ है कि जाति, वर्ग और मिल्कियत का पुराना विचार छोड़ा जाय। उसे इसका बहुत ख्याल है, क्योंकि वह इसकी बुराइयों को जानता है। अगर वह पैदाइशी ब्राह्मण नहीं तो कायस्थ या वैश्य अवश्य है, जिसे जनेऊ पहनने का अधिकार है। उसका पिता एक कृषक था, परन्तु गरीब किसान या भूमिहीन मजदूर नहीं। उसका सम्बन्ध खेती करनेवाले ऊपरी वर्ग से है, जिनके पास २० एकड़ तक खेती की जमीन होती है, अर्थात् उसका पिता मध्यम वर्ग का था। यह स्थान बेटे को भी बाप ने दिया था, परन्तु वह बाप की तरह खेती के काम में नहीं लगा। उसे उसके पिता की तुलना में अच्छी शिक्षा मिली, उसने हाई स्कूल किया, उसके बाद उसने पढ़ाई का पेशा अपनाया, वहां वह ज्यादा देर नहीं टिका और फिर आन्दोलन में पूर्ण जोर से लग गया।

वह जाति और वर्ग को महत्त्व नहीं देता। वह जातिहीन और वर्गहीन समाज का समर्थक है। परन्तु वह जानता है कि दूसरे उसे मध्यम वर्ग का कहेंगे। उसके पास घर है, कुछ मिल्कियत है, जिसका कुछ भाग उसने भूदान में दिया है। उसकी माहवार घरेलू आय २०० रु० से कम है। अगर उससे पूछा जाता है कि उसका किस वर्ग से सम्बन्ध है तो वह मध्यम या निम्न मध्यम वर्ग कहता है। वह यह नहीं महसूस करता है कि अपने पिता की तुलना में वह 'समाज में नीचे चला आया है।' उसे समाज में अपने स्थान का पूरा अन्दाज है, और अगर उसे कभी यह महसूस होता है कि वह नीचे स्तर पर आ गया है तो वह अपने आपको याद दिलाता है कि उसने जान-बूझकर गरीबी का जीवन अपनाया है।

४. धर्म के लिहाज से वह हिन्दू है। परन्तु अपने बचपन के वातावरण को याद करते हुए वह इसे कट्टर नहीं कहता है। उसके माता पिता हिन्दुत्व के आधुनिक और उदार पहलू को मानते थे। और इसी कारण उसे अपने धार्मिक विचारों को गांधी के गैर-साम्प्रदायिक विचारों से मिलाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। गांधीजी सभी धर्मों को, और वास्तविकता को भी, भगवान, सत्य और अन्तिम वास्तविकता तक पहुंचने का रास्ता मानते थे। वह गांधी के इस विश्वास को स्वीकार करता है कि भगवान मनुष्य की सेवा में है। इसलिए अब वह अपने धर्म को मानवता कहता है। यद्यपि वह विनोबा की इस बात का समर्थक है कि (पुराने अर्थ में) धर्म का जमाना खत्म हो गया है, अब विज्ञान के साथ और अध्यात्म की आवश्यकता है।

आन्दोलन में आने के बाद उसने महसूस किया कि आन्दोलन उसके आदर्शों को व्यावहारिक जीवन में लाने की आशा रखता है। उसे पता चला कि वह गांधी की तरह जो प्रचार करता है, उसे जीये। जब सर्व सेवा संघ ने लोकसेवक का प्रतिज्ञा-पत्र जारी किया तो उसने उसे तुरन्त स्वीकार किया। और इसलिए सन् १९५७ में विनोबा के शान्तिसेना के बनाने के एलान पर वह शान्ति सैनिक बना।

५. आन्दोलन के एक सदस्य के नाते वह यह महसूस करता है कि वह सत्य, प्रेम, करुणा का सेवक है। वह मानता है कि काम कठिन है, और प्राप्ति कम तथा अनिश्चित, परन्तु वह कोई साधारण काम नहीं करता है। सेवक और साथी होने की इच्छा कठिनाइयों को हल्का कर देती है। सबसे बढ़कर इसकी प्रसन्नता होती है कि भारत के नये संत का साथ प्राप्त है। विनोबा एक संत हैं, बड़े गुणों का व्यक्ति, गांधी का सही उत्तराधिकारी, इस बात का उसे पूर्ण विश्वास है। अगर ऐसा न होता तो वह लोगों के दिलों में कैसे परिवर्तन ला सकता था, वह कैसे लाखों भूमिहीन किसानों को इस बात के लिए तैयार कर सकता था कि वे रामराज्य के लिए पहला कदम उठायें। यह आन्दोलन उससे बहुत कुछ मांग करता है, परन्तु यह उसके जीवन के हर अंग को अपने घेरे में नहीं लिये हुए है। यह स्वतंत्र लोगों का आन्दोलन है। वह अपनी स्वतंत्रता को दूसरे संगठनों की कार्रवाई में शिरकत करने में प्रयोग करता है। दूसरे संगठन का अर्थ, किसी भी प्रकार का संगठन नहीं है। लोकसेवक बनते समय उसने दल और सत्ता की राजनीति में भाग न लेने का फैसला किया था। जब गांधी जिन्दा थे, तो वह कांग्रेस का सदस्य था। परन्तु गांधी की मृत्यु के बाद उसने राजनीति से सम्बन्धित विचार पर फिर से सोचा और कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया। उसने सन् १९५२ के चुनाव में कांग्रेस को वोट दिया, परन्तु उसके बाद फिर किसी चुनाव में वोट नहीं दिया। वह अब दल-निरपेक्ष राजनीति के सिद्धान्त, जो राज्यनिरपेक्ष समाज की ओर एक कदम है, को मानता है, जिसे विनोबा और जयप्रकाश ने स्थापित किया है। कांग्रेस के दोषों के बावजूद उसे कांग्रेस से सहानुभूति है। सर्वोदय आदर्शों के प्रति यह दल बहुत सहानुभूति रखता है। इन आदर्शों के सबसे बड़े विरोधी हैं कम्यूनिस्ट—जो वर्ग-संघर्ष और हिंसक क्रान्ति में विश्वास रखते हैं, और हिन्दू साम्प्रदायिक दल—जैसे जनसंघ है।

यद्यपि वह दल-निरपेक्ष लोकतंत्र के सिद्धान्त को माननेवाला है, परन्तु वह पूर्णतः तथा स्पष्ट नहीं है कि इस सिद्धान्त का अर्थ क्या है। एक ओर वह यह मानने के लिए तैयार नहीं है कि जन-मानस में कांग्रेस और सर्वोदय आन्दोलन एक ही है, दूसरी ओर वह यह मानता है कि कांग्रेस सत्ताधारी दल है, और अभी भी गांधी के विचारों की उन्नति के लिए आधे दिल से ही सही—कुछ कर रही है। आन्दोलन को कांग्रेस की राज्य-सरकारों के सहयोग की आवश्यकता है ताकि ग्रामदान का कानून बन सके और गांव के विकास के लिए कोष मिल सके। फिर उसे यह भी विश्वास है कि आन्दोलन सर्वोदय समाज की ओर तेजी से बढ़ेगा, अगर सरकार पंचायती राज्य के कार्यक्रम पर ध्यान दे। हमारी सरकार देश की सेना को भी मजबूत कर रही है। वह यह स्वीकार करता है कि यह गांधीवादी आदर्श के विरुद्ध है। उसके कुछ साथी इस विषय पर सरकार के विरुद्ध असहयोग का आन्दोलन चलाना चाहते हैं परन्तु उसे विश्वास है कि यह गलत कदम होगा, उस समय तक के लिए जबतक कि आन्दोलन सैनिक रक्षा का अहिंसक विकल्प न दे सके। इस पर पश्चिमी देशों के शान्तिवादी मित्र यह कह सकते हैं कि उसमें राष्ट्रीयता की भावना मजबूत है। परन्तु वह उनका यह उत्तर देगा कि राष्ट्रीयता और दूसरे राष्ट्रों के सम्मान में कोई टकराव नहीं है।

६. जब उससे सर्वोदय आन्दोलन के उद्देश्य पूछे जाते हैं तो वह सामाजिक उद्देश्यों पर जोर देता है। वह इसके आर्थिक उद्देश्य, राजनैतिक उद्देश्य, राज्यनिरपेक्ष समाज का अराजकतावादी विचार, आध्यात्मिक उद्देश्य, अहिंसा के प्रति श्रद्धा आदि का उल्लेख नहीं करेगा। ये सब उसके लिए महत्व तो रखते हैं, परन्तु जिस बात से वह अधिक प्रभावित होता है वह सामाजिक व्यवस्था का दर्शन है जिसमें जाति और वर्ग-भेद खत्म हो जाता है। सामाजिक समानता आती है, और मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण नहीं होता है। वह जानता है कि इस दर्शन में बहुत से समाजवादी भी उसके साथी हैं, परन्तु वह जानता है कि सर्वोदय के मार्ग से ही इसे कार्यान्वित किया जा सकता है।

सर्वोदय का रास्ता सत्ता की राजनीति का रास्ता नहीं है। यह प्रेम द्वारा वयस्कों में परिवर्तन लाने का रास्ता है। यह सरल रास्ता नहीं है, परन्तु आन्दोलन ने एक ऐसे कार्यक्रम को विकसित किया है, जिसके द्वारा यह सम्भव है। इस कार्यक्रम की मुख्य बात ग्रामदान, खादी और दूसरे ग्रामीण उद्योगों की उन्नति और शान्तिसेना बनाना है। शान्तिसेना को वह एक अहिंसक पुलिस मानता है। वह इस बात से सहमत नहीं है कि अगर चीन फिर से भारत की उत्तरी सीमा पर आक्रमण करे तो अहिंसक प्रतिरोध के लिए वहां शान्तिसेना भेजी जाय।

ग्रामदान के बारे में भी वह कुछ अस्पष्ट है। उसने सुलभ ग्रामदान को स्वीकार किया है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वह निजी मिल्कियत के रखने का समर्थक है। सुलभ ग्रामदान के द्वारा ग्रामदान के विचार को फैलाना आसान रहेगा, और इसलिए इसका स्वागत करना चाहिए। परन्तु वह इससे सहमत है कि आन्दोलन को ग्रामदानी गांव के विकास पर जोर देना चाहिए। केवल ग्रामदान का 'घोषणा पत्र' प्राप्त करने से अधिक अच्छा हो अगर आन्दोलन दोनों काम कर सके।

विनोबा स्वयं ग्रामदान के विचार के फैलाने को पसन्द करते हैं और विकास का काम गांववालों और सरकार की 'कम्युनिटी डेवलपमेन्ट' की संस्थाओं पर छोड़ देना चाहते हैं। विनोबा इस विषय पर सही हो सकते हैं, परन्तु उसे आश्चर्य है

कि क्या केवल ग्रामदान के विचार फैलाने पर जोर देना टैक्टिस के दृष्टिकोण से ठीक है। गाँववालों के सामने बहुत सारी समस्याएँ हैं, जैसे महँगाई, इत्यादि। उसे विश्वास है कि जनता को जगाने के लिए आन्दोलन को इन समस्याओं को उठाना चाहिए।

उसका विचार है कि आन्दोलन ने अब तक वह नहीं प्राप्त किया है जिसका भूदान के आरम्भ के जमाने में वादा किया गया था। भूमिहीन किसानों की समस्या अब तक बाकी है। परन्तु उसे विश्वास है कि आन्दोलन ने बहुत कुछ प्राप्त किया है, जिसका सबूत भूदान और ग्रामदान का आँकड़ा है। इसके अतिरिक्त आन्दोलन ने भारत के सामाजिक वातावरण को बदलने और सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं का शान्तिपूर्ण समाधान खोजने में बड़ा रोल अदा किया है।

७, वह यह तुरन्त स्वीकार करता है कि आन्दोलन के आगे बढ़ने में बहुत सारी रुकावटें हैं। उसका कहना है कि कठिनाइयाँ बाहरी कम भीतरी अधिक हैं। बाहरी रुकावटें सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ हैं जिनमें आन्दोलन चल रहा है, जैसे जातिप्रथा, साम्प्रदायिकता, अशिक्षा इत्यादि। भीतरी रुकावटों में आन्दोलन के कार्यकर्ताओं की कमी, तथा आदर्शवाद और समर्पण की कमी भी है। यह आलोचना कुछ बड़े नेताओं पर भी सही उतरती है। उसी समय वह यह भी कह सकता है कि आन्दोलन बहुत आदर्शवादी है, साधारण लोगों की इसकी माँग बहुत है। इससे अधिक महत्त्वपूर्ण रुकावटें आन्दोलन के संगठन के दोष हैं जैसे कमजोर सहकार, कार्यकर्ताओं और परिवारों को गुजर-बसर के लिए पैसों की कमी, और कार्यकर्ताओं की अपर्याप्त ट्रेनिंग। उसका यह भी विचार है कि यद्यपि हमारे कार्यकर्ताओं में समर्पण है, परन्तु उनमें अपने काम को प्रभावशाली ढंग से करने की ट्रेनिंग की कमी है। यह उसके सभी साथी मानते हैं। सर्व सेवा संघ की कार्यशीलता के बारे में उसके साथी कम ही सहमत हैं। परन्तु एक स्पष्ट बहुमत इस बात पर सहमत है कि केन्द्रीय संगठन की आवश्यकता है। उनका कहना है कि नियम के अनुसार सभी कार्यकर्ता नीति का निश्चय करने में भाग ले सकते हैं, परन्तु व्यवहार में थोड़े-से लोग ही निश्चय करते हैं।

८. भविष्य में आन्दोलन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए वह क्या करेगा इस बारे में वह कोई ऐसी व्यावहारिक सलाह नहीं देता जो कि कार्यान्वित नहीं की जा रही है, या तुरन्त कार्यान्वित नहीं की जायेगी। वह आन्दोलन के कार्यक्रम और नीति में उन्नति लाने की बात करता है, जैसे कोष इकट्ठा करना, संगठन में परिवर्तन लाना, प्रचार बढ़ाना और उसे अधिक प्रभावशाली बनाना। जब उससे पूछा गया कि आन्दोलन की कुछ रवैये—जैसे धूम्रपान और मद्य के विरोध में परिवर्तन लाया जाय ताकि नवजवान लोग आकर्षित हो सकें तो उसने कहा कि नहीं। उसका विचार है कि आत्मानुशासन और संयम आवश्यक गुण हैं जो हरएक को अपने में पैदा करना चाहिए। उसका विचार है कि आज की टैक्टिस में परिवर्तन न लाया जाय, और सरकार और जमींदारों के विरुद्ध प्रतिकारात्मक सत्याग्रह न किये जायें। परन्तु जब उसे अंग्रेजी राज के विरुद्ध गांधी के अभियान की याद दिलायी जाती है तो वह इस बात से सहमत हो जाता है कि अगर अभी नहीं तो आगे चलकर प्रतिकारात्मक आग्रह उपयोगी हो सकता है।

उसे विनोबा के विधायक सत्याग्रह के विश्लेषण से पूरी तरह समाधान नहीं है। वह आन्दोलन के भविष्य से काफी आशा रखता है। वह विनोबा के रायपुर सम्मेलन सन् १९६३ के भाषण का जिक्र करते हुए कहता है कि व्यक्तियों और राष्ट्रों की तरह आन्दोलन में भी उतार-चढ़ाव होते हैं। वह विनोबा की इस बात से सहमत है कि आन्दोलन के उतार का जमाना खत्म हो गया और अब चढ़ाव का जमाना आ रहा है।

९. जब उससे यह पूछा गया कि विनोबा के बाद इस आन्दोलन का क्या होगा? यह उसी तरह का प्रश्न है जैसा पश्चिमी देशों के लोग यह पूछा करते थे कि नेहरू के बाद कौन होगा। विनोबा के बाद कौन? उत्तर स्पष्ट है। जयप्रकाश नारायण—पहले जीवनदानी।

हम लोगों का पार्श्वचित्र खत्म हो गया। अब हम अपने कलम को रखते हैं। क्या हमने सर्वोदय नेता का सही चित्र खींचा है? क्या वह इसमें अपने आपको पहचान सकेंगे या वे बड़ी नम्रता से कह देंगे कि पश्चिमी कलम और पश्चिमी चश्मे के द्वारा उनका चित्र बिगाड़ दिया गया है?

यह विनम्र आराजकतावादी क्या करेंगे, जो यह जानते हैं कि हम लोगों की उनके साथ सहानुभूति है, अगर हम यह सन्देह प्रकट करें कि वे एक असम्भव काम में लगे हुए हैं और वे और उनका आन्दोलन सत्तावाद के दलदल में फँस कर रह जायेगा।

क्या वे हमें गांधी का यह विश्वास याद दिलायेंगे कि हमारा काम असम्भव को सम्भव बनाना है? प्रकृति ने जो दीवारें खड़ी की हैं उन्हें फाँद जाना है। क्या वे गीता का यह श्लोक दोहरायेंगे?

"जो अच्छा काम करता है उसे दुख नहीं होता।"

—'दी जेन्टिल अनार्किस्ट्स' के अन्तिम अध्याय के आधार पर प्रस्तुत। प्रस्तुतकर्ता : मुस्तफा कमाल

भारत में गरीबी—१

[गरीबी, बेरोजगारी, विषमता और शोषण के प्रश्न देश के चिन्तन के अंग बन गये हैं। लेकिन हम इन प्रश्नों के सही स्वरूप को नहीं जानते। अभी तक हल के सही रास्ते भी नहीं सूझ रहे हैं। हाल में दो बड़े अर्थशास्त्रियों, श्री वी० एम० दांडेकर और श्री नीलकंठरथ, ने गरीबी का सुव्यवस्थित अध्ययन किया है जो अंग्रेजी में 'पावर्टी इन इण्डिया' के नाम से प्रस्तुत हुआ है। हम उनके अध्ययन के आधार पर यह लेखमाला अपने पाठकों के लिए प्रकाशित कर रहे हैं। अध्ययन १९६०-६१ से शुरू होता है।—स०]

१. १९६० के १ अक्तूबर को भारत की जनसंख्या ४३.४ करोड़ थी, और राष्ट्र की आय १३.३०८ करोड़ रुपये। इस प्रकार प्रति व्यक्ति आय ३०६.७ रुपये थी। लेकिन देश की पूंजी और सरकारी खर्च को निकाल कर प्रति व्यक्ति घरेलू खर्च (कन्ज्यूमर एक्सपेन्डिचर) के लिए केवल २७६.३ रुपये ही उपलब्ध थे। यानी ७५.७ पैसे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति।

२. १९६०-६१ में ४३.४ करोड़ की कुल जनसंख्या में ३५.६ करोड़ देहात में रहते थे, और ७.८ करोड़ शहर में। देहात में रहनेवाले प्रति व्यक्ति का वार्षिक घरेलू खर्च २६१.२ रुपये था, जब कि शहर में रहनेवाले का ३५९.२ रुपये, यानी ग्रामीण से ३७.७ प्रतिशत अधिक। लेकिन शहर में गांव की अपेक्षा साधन-सुविधाएं महंगी होती हैं।

यद्यपि १९६०-'६१ में प्रति ग्रामीण व्यक्ति खर्च २६१.२ रु० था। फिर भी ६३.२६ प्रतिशत लोग इस सीमा के नीचे थे, और शहरी लोगों में ६४.५१ प्रतिशत लोग ३५९.२ रु० की सीमा के नीचे थे।

३. १९६०-'६१ में देहात के ६.३८ प्रतिशत बिलकुल नीचे के लोगों का खर्च ८ रु० प्रतिमास यानी २७ पैसे प्रतिदिन था। दूसरे ११.९५ प्रतिशत लोग ऐसे थे जिनका खर्च ११ रु० प्रति मास, यानी ३७ पैसे प्रतिदिन था। तीसरे ९.८८ प्रतिशत का मासिक खर्च १३ रु० और दैनिक ४३ पैसे था। अन्त में चौथे ९.८२ प्रतिशत १५ रु० मासिक और ५० पैसे प्रतिदिन की श्रेणी में थे। इन चारों श्रेणियों को मिलाकर लगभग ४० प्रतिशत (ठीक-ठीक ३८०३) ग्रामीण जनता ऐसी थी जो ५० पैसे रोज से भी कम में गुजर करती थी।

शहरों का हाल गांवों से अच्छा नहीं था। शहरी जीवन महंगा होता है, इसलिए ५० प्रतिशत लोग इस न्यूनतम स्तर से नीचे थे।

नीचे के टेबुल से यही बात आंकड़ों में प्रकट होगी :

इन आंकड़ों को देखकर लोगों को विश्वास नहीं होता कि गाँवों के ४० प्रतिशत और शहरों के ५० प्रतिशत लोग कैसे जिन्दा रहते हैं! कितनी भयकर गरीबी है ?

४. हम जरा हिसाब लगायें और देखें कि जो भी कमाई है वह खर्च होती किन चीजों पर है। गरीब लोगों को अपनी कमाई का बहुत बड़ा भाग भोजन पर खर्च करना पड़ता है जिसका नतीजा यह होता है कि दूसरी चीजों के लिए बहुत कम बचता है।

१९६०-'६१ में स्थिति यह थी कि ग्रामीण जनता के सबसे नीचे के ६.३८ प्रतिशत लोगों तथा शहर के २.१५ प्रतिशत लोगों का प्रति व्यक्ति मासिक खर्च ८ रु० से भी कम था—साल में ७१.३ रु० देहात में, ७७.६ रु० शहर में। इस अत्यन्त छोटी आमदनी का ९० प्रतिशत से अधिक भोजन और ईंधन में खर्च हो जाता था—देहात में ६४.४२ प्रतिशत

१९६०-६१ में उपभोग के खर्च (कन्ज्यूमर एक्सपेंडिचर) के आधार पर जनता का वर्गीकरण

प्रतिमाह प्रति व्यक्ति खर्च	ग्रामीण		शहरी	
	औसत वार्षिक प्रति व्यक्ति खर्च	कुल जन-संख्या का प्रतिशत	औसत प्रति व्यक्ति वार्षिक खर्च	कुल जन-संख्या का प्रतिशत
०—८ र. की श्रेणी	९९.३ रु०	६.३८	७७.६ रु०	२.१५
८—११	११६.६	११.९५	११८.३	५ ४९
११—१३	१४७.२	९.८८	१४५.०	७ १९
१३—१५	१७०.८	९ ८२	१६९.७	६.८६
१५—१८	२००.०	१३.४९	२०१.२	१०.७१
१८—२१	२३७.३	११.४४	२३५.७	११.४०
२१—२४	२७३.४	९.०३	२७१.७	९.६८
२४—२८	३१३.०	७.७२	३१५.४	११.०१
२८—३४	३७५.१	७.६६	३७१.६	९.३८
३४—४३	४६०.८	५.९३	४६४.०	९.६१
४३—५५	५८३.४	३.१२	५९२.३	७.०४
५५ और ऊपर	१,००५.१	३.२८	१,०३२.५	९.४०
सभी श्रेणियाँ	२६१.२	१००.०	३५९.२	१००.००

दुनिया में शान्ति-आन्दोलन की गतिविधि

अमेरिकी युद्ध के प्रतिरोधियों को शरणार्थी का दर्जा दिया जाय

वार रेसिस्टर्स इन्टरनेशनल ने आन्दोलन चलाया है कि अमेरिका के जो सिपाही युद्ध में शरीक न होने के लिए वियतनाम युद्ध से अलग हो गये हैं उन्हें शरणार्थी का दर्जा दिया जाय। संसार के दो सौ से अधिक नेताओं ने सभी सरकारों से अपील की है कि उन्हें शरण दी जाय, और उनकी सहायता की जाय। अपील में कहा गया है हम सब सभी सरकारों से अपील करते हैं कि अमेरिकी सशस्त्र सेना के युद्ध-त्याग करनेवाले सिपाहियों को शरण दी जाय। सभी देशों के लोगों को अपनी सरकारों पर दबाव डालना चाहिए कि ऐसे लोगों को शरण दें। इस अपील पर निम्नलिखित लोगों के हस्ताक्षर हैं : सर माइकेल टिपेट, फिलिप नोएल बेकर, आल्फ्रेड कास्लर, मेकिस थ्यूडराकिस, जयप्रकाश नारायण, नॉरमन मेलर, आरनल्ड वेस्कर निफर्लिन, मार्टिन ने मुलर।

स्थानीय लोक अभिक्रम का एक उदाहरण

हम लोग सामान्य लोगों के साथ नीचे से काम करने की आवश्यकता पर बातें करते हैं। यह भी कहते हैं कि शान्ति का आन्दोलन वास्तविकता से दूर और हवाई हो गया है। यह सच है, और बहुत ज्यादा बातें करने से बहुत सारे स्थानीय कार्य जो शान्ति-आन्दोलन के बीजों पर उगते हैं, हमारी आँखों से ओझल रह जाते हैं। जिस तरह हमारे देश में जो होता है उनमें से कुछ बातों को हम जानते हैं या उनके बारे में पढ़ सकते हैं। परन्तु और दूसरे देशों में होनेवाली बातों का हमें पता नहीं होता।

विन्सेंजो रिनिडेली दक्षिणी इटली के एक स्कूल के अध्यापक हैं। वह समझते हैं कि समाज के लिए कुछ आवश्यक काम करने के लिए बड़े दिमाग और पूंजी की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए कुछ वर्ष पहले उन्होंने अपने क्षेत्र में 'एक आदमी की क्रान्ति' शुरू की। शुरू में उनका मजाक उड़ाया गया, फिर धमकी दी गयी और अब कुछ लोग उनसे घृणा करते हैं, और कुछ उन्हें पसन्द करते हैं। उन्होंने गाँव के प्रतिरोध को संगठित किया और गाँव में जानेवाली एक सड़क के लिए जिसकी योजना बहुत दिनों से खटाई में पड़ी हुई थी, कागजों से जंग की। उसके बाद उन्होंने वर्तमान शिक्षा-पद्धति पर चोट पहुँचायी, क्योंकि यह शिक्षा पद्धति अमीर लोगों और समाज के मौजूदा ढाँचे का लाभ पहुँचाती है, साधारण स्कूल के कामों पर पानी फेर देती है। और उनमें पढ़नेवाले बच्चों का भी सत्यानाश हो जाता है। उन्होंने एक पूरे दिन के स्कूल की योजना चलायी। शिक्षामंत्री ने उसे स्वीकृति दी, परन्तु स्थानीय स्कूल के लोगों ने इसका कड़ा विरोध किया। इस तरह विन्सेंजो रिनिडेली अपना काम कर रहे हैं, परन्तु सेवामुक्त भी किया जा सकता है। उनकी इसके लिए तैयारी भी है। पिछली गर्मी में उन्होंने इटली के शान्ति आन्दोलन के सहयोग से एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्य शिविर संगठित किया। उसका उद्देश्य था कि सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा की परिस्थिति के सम्बन्ध में मेस्की में रहनेवाले एक हजार परिवारों की स्थिति जानी जाय। इस अध्ययन से यह पता चला कि सभी प्रकार के अन्याय और शोषण हो रहे हैं। स्थानीय लोगों को यह महसूस हो रहा है कि वे अपनी समस्याओं को हल करना चाहते हैं तो उन्हें संगठित होना होगा और खुद आगे बढ़कर युद्ध करना होगा। वे विभिन्न प्रकार से सक्रिय हो रहे हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे जाग गये हैं और उनमें सामाजिक और राजनैतिक चेतना आ रही है। विभिन्न प्रकार के केन्द्र स्थापित किये गये हैं। एक पुस्तकालय भी स्थापित हुआ है। यहाँ लोग सीखते हैं, सूचनाएँ पाते हैं, नये विचारों पर विचार करते हैं, और सबसे बढ़कर बात यह है कि एक ठोस कार्यक्रम के लिए तैयारी करते हैं। दिलचस्प बात यह है कि उनके सभी कार्य एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, पिछले कामों के अनुभव पर आधारित हैं, और उन्होंने यह सीखा है कि मामूली प्रकार की घटनाएँ भी उन्हें नयी बातें सिखा सकती हैं।

उन्हें यह विश्वास है कि अपनी मदद आप ही करनी है। परन्तु उन्हें बाहर की मदद की भी अपेक्षा है। ताकि वे नयी चीजें जान सकें और उनका उत्साह बढ़ा रहे। एक महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि विन्सेंजो इन कामों को संगठित रूप में कर रहे हैं जिनका चरित्र राजनैतिक

→भोजन पर, और १८-२४ प्रतिशत ईंधन और रोशनी पर। लगभग यही हाल शहरों में भी था। यह थी हमारे गाँव के लोगों की जिन्दगी! इनमें कुछ ऊपर के लोगों को भी ७५ से ८० फीसदी कमाई केवल भोजन में ही लगा देनी पड़ती थी। इतना खर्च करने पर भी लगभग एक-तिहाई ग्रामीण जनता को कैलरी के हिसाब से जीवन को बचाये रखने लायक भोजन नहीं मिलता था। शहरों में यह स्थिति लगभग ५० प्रतिशत लोगों की थी क्योंकि उन्हें मकान आदि पर ज्यादा खर्च कर देना पड़ता था।

विभिन्न राज्यों में यह स्थिति भिन्न थी। केरल में ९०-७५ प्रतिशत ग्रामीण लोगों की भोजन में न्यूनतम कैलरी-आवश्यकता नहीं पूरी होती थी। १९६०-'६१ में पूरे देश की ग्रामीण जनता का ३८ प्रतिशत इस श्रेणी में था, और शहरी जनता का ५४ प्रतिशत। दोनों को मिलाकर १७-१८ करोड़ जनता ऐसी थी जिसे जिंदे लायक भी भोजन नहीं मिलता था।

—प्रस्तुतकर्ता रामपूर्ति

(क्रमशः)

और सामाजिक है और उद्देश्य शान्ति स्थापित करना और युद्ध एवं सैनिकशाही का प्रतिरोध है।

दक्षिण वियतनाम के विद्यार्थियों का वक्तव्य

'शान्ति और राष्ट्रीय स्वतंत्रता की भावना से प्रेरित होकर हम दक्षिण वियतनाम के विद्यार्थी निम्नलिखित वक्तव्य जारी कर रहे हैं। यह वक्तव्य उन प्रस्तावों के सम्बन्ध में है जिन्हें १ जुलाई १९७१ को दक्षिण वियतनाम की पेरिस में शान्ति के लिए अस्थायी क्रान्तिकारी गणतांत्रिक सरकार ने प्रस्तुत किया था।

यह प्रस्ताव वियतनाम के युद्ध के हल के लिए पेश किये जानेवाले सभी प्रस्तावों से अधिक प्रगतिशील है। इसमें शान्ति की खोज के लिए एक अनिवार्य आधार मिलता है, वह यह है कि अमेरिका अपने आक्रमण को खतम करे और वियतनाम के लोग अपनी समस्याओं को स्वयं हल करें।

पहला मुद्दा वियतनामियों की माँग के अनुसार है कि विदेशियों से वियतनाम मुक्त हो। इसमें वियतनाम और संसार के लोगों के लिए प्रेम और शान्ति का संदेश है।

दूसरे मुद्दे में दक्षिणी वियतनाम के विभिन्न गुटों का अमेरिका द्वारा समर्थन और हस्तक्षेप खत्म करने के लिए कहा गया है। विभिन्न राजनैतिक, धार्मिक, और सामाजिक तत्त्वों को मिलाकर सैगोंव में एक नयी सरकार बनाने पर जोर दिया गया है। इन तत्त्वों का स्वतंत्रता, गुटनिरपेक्षता, लोकतंत्र और शान्ति में विश्वास अनिवार्य है ताकि युद्ध को खत्म करने की बात आगे बढ़े और नयी स्वतंत्र व्यवस्था स्थापित हो जिससे वियतनाम के लोगों की आकांक्षा पूरी हो।

तीसरा मुद्दा यह है कि वियतनाम के दल, राष्ट्रीय एकता के आधार पर, दक्षिणी वियतनाम की सैनिक समस्या को हल करें। यह नागरिकों के कत्लेआम को रोकने के लिए बहुत जरूरी है। चौथे मुद्दे का उद्देश्य है दक्षिणी और उत्तरी वियतनाम के बीच मित्रता शान्तिमय ढंग से स्थापित करना और वियतनाम के झगड़े को सुलझाने के लिए १९५४ में की जानेवाली जेनेवा-सन्धि के आधार पर कोशिश करना।

५-६-७ वें मुद्दे वास्तव में, दक्षिणी वियतनाम की विदेश नीति जो शान्ति और निरपेक्षता पर आधारित है—के पाँच सिद्धान्त हैं। साथ-ही-साथ उनमें यह कहा गया है कि अमेरिका युद्ध से होनेवाली बरबादियों को पूरा करे और उसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय गारंटी दी जाय।

उपर्युक्त बातों के आधार पर हम लोग यह घोषित करते हैं कि : १–निक्सन-सरकार वियतनामी जनता के सही उद्देश्यों को स्वीकार करे और अपना आक्रमण तुरन्त समाप्त कर ७ सूत्रीय योजना स्वीकार करे।

२—राष्ट्रपति थ्यू को चाहिए कि वह अपनी जनता और राष्ट्र के हित में अपनी गद्दी छोड़ दें, जो कि स्वतंत्रता की प्राप्ति में एक रुकावट है।

३—हम लोगों ने प्रतिज्ञा की है कि एक स्वतंत्र, संगठित शान्तिप्रिय और सम्पन्न वियतनाम के लिए संघर्ष जारी रखेंगे।'

अमेरिकी कैदियों के सम्बन्धियों के पत्र

दक्षिण वियतनाम के युद्ध बन्दियों के सम्बन्धियों ने वियतनाम में कैद अमेरिकी बन्दियों के सम्बन्धियों के नाम एक पत्र लिखा है। यह पत्र अमेरिकी विद्यार्थियों के प्रतिनिधि मंडल को दिया गया, जिसका नेतृत्व हारवर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर जार्ज वाल्ड कर रहे थे।

पत्र में वियतनामियों और अमेरिकी परिवारों के दुखों पर सहानुभूति प्रकट की गयी है। इसमें उन सभी अत्याचारों का उल्लेख मिलता है जो वियतनाम के लोगों पर अमेरिका ने किया है। पत्र में कहा गया है :

''उत्तरी वियतनाम पर को आनेवाली बमबारी से गाँव, घर, स्कूल, गिरजाघर, कारखाने, पुल, इत्यादि बरबाद हुए। वियतनाम के लोग १० साल से जो खून-पसीना एक करके रचना कर रहे थे वह भी नष्ट हो गयी। स्कूल के लड़के और लड़कियाँ स्कूलों में नपाम बमों से झुलस कर रह गये, बुड्ढों को टोपी हुई हालत में टुकड़े कर दिये गये। जवान मर्द-औरतों को जब कि वे खलिहानों और मकानों में काम कर रहे थे खतम कर दिया गया। अमेरिकी सैनिक-नीति बनानेवालों के उद्देश्य—सभी को जला दो, नष्ट कर दो, मार डालो—के अनुसार अमेरिकी वायुसेना के अफसरों ने वियतनामियों को दो पैरों का जानवर समझकर बरबाद कर दिया। 'दो ईंटें तक एक साथ न रह सकें' की नीति बरती गयी।

'अगर आपको वियतनाम आने का अवसर मिले, और आप वहाँ उन चीजों को देख सकें जो वहाँ नष्ट कर दी गयी हैं (जैसे अस्पताल, अनाथालय और जेल आदि) तो आप अमेरिका की सरकार के प्रति वियतनाम के लोगों के घृणा को समझ सकेंगे और साथ-ही-साथ आप यह भी समझ सकेंगे कि क्यों उत्तरी वियतनाम के लोगों ने आपके वायुयानों पर गोली चलायी और अमेरिकी वायुयानों के चालकों को, जो आपके भाई और बेटे हैं, कैद किया।'

'दक्षिण वियतनाम में १३-१४ साल के बच्चे और बच्चियाँ, ६० साल से ऊपर के बुड्ढे, और जवान पुरुष एवं नारियाँ गिरफ्तार किये जा रहे हैं, पीटे जा रहे हैं, कैद किये जा रहे हैं। क्योंकि वे देश-भक्ति और अपने देशवासियों के प्रेम से विवश होकर शान्ति, और अपनी किस्मत अपने हाथों लेने के लिए और अमेरिकी सेना को निकालने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वियतनाम के कैदी जैसे बाघ कैदखानों में रखे जाते हैं जिनमें न पर्याप्त खाना होता है, न दवा, न रोशनी, न हवा और

न दंडक से बचने के लिए कपड़े। उनपर विभिन्न प्रकार के अत्याचार किये जाते हैं। वियतनाम के बंदी जो हमारे पति, बेटे, छोटे और बड़े भाई हैं, उनपर हर प्रकार का अत्याचार किया जा रहा है। अमेरिकी सरकार की आज्ञा अनुसार उन्हें हर चीज से वंचित कर दिया गया है। उन्हें बुरी तरह पीटा जाता है, उनके हाथ तोड़ दिये जाते हैं, उनकी आँखें निकाल ली जाती हैं, उनके पैर काट डाले जाते हैं। वियतनाम की महिला कैदियों पर भी सभी प्रकार के कष्ट अत्याचार किये जाते हैं। अमेरिकी सलाहकार इन सब बातों को जानते हैं और इन कुकृत्यों में शरीक भी हैं।'

'हजारों लोग जो हमारे बेटे, पति, छोटे और बड़े भाई हैं, उन्हें वर्षों से कैद किया गया है। उनसे न कोई मिल सकता है न वे पत्र-व्यवहार कर सकते हैं। उनकी मौत की भी सूचना हमें नहीं दी जाती। उत्तरी वियतनाम से हमें कुछ विश्वसनीय पत्रिकाओं जैसे 'लेमाण्ड', 'पेरिस मैच' इत्यादि के द्वारा यह मालूम होता है कि अमेरिकी वायुयान के चालकों के साथ वियतनाम के कैदियों की तुलना में अच्छा व्यवहार किया जाता है।

वियतनाम की महिलाओं की राय में दोनों तरफ के लोग अपने परिवारों से तभी मिल सकेंगे जबकि अमेरिकी फौज वियतनाम से निकल जाय। उन्होंने अमेरिकी महिलाओं से भी कहा है कि वे राष्ट्रपति निक्सन पर जोर डालें कि अमेरिकी फौज वियतनाम से हट जाय। उनका यह भी कहना है कि अमेरिकी कैदियों की पत्नियों का अपने पतियों को छुड़ाने की कोशिश में पेरिस जाना अनुचित है, क्योंकि दोनों तरफ से लोगों के साथ अच्छे व्यवहार के लिए अनिवार्य है कि अमेरिकी आक्रमण खत्म हो।'

यह पत्र इन पंक्तियों से खत्म होता है :

'प्रिय मित्रो, आपके विवेक, शान्ति, प्रेम, स्वतंत्रता और न्याय के कारण हम लोग आपको यह पत्र भेज रहे हैं और आपसे यह अनुरोध करते हैं कि आप हमारा साथ दें ताकि राष्ट्रपति निक्सन को अमेरिकी सरकार अपनी सेना को निकाल ले, युद्ध का खात्मा हो और अमेरिकी युवक अपने परिवारों से मिल सकें। हमारे दोनों देशों में शान्ति स्थापित हो और अमेरिकी एवं वियतनामी कैदी अपने परिवारों से मिल सकें।

—आपके स्नेही,

दक्षिण वियतनाम के बन्दियों के सम्बन्धी

दिल्ली से वाशिंगटन तक शान्तियात्रा

मध्य यूरोप की यात्रा करने के बाद रामसहाय पुरोहित सितम्बर के मध्य में इटली पहुँचे। उत्तरी इटली में ७ इटैलियन उनकी यात्रा में शरीक हुए।

धीरेन्द्र दा की लोक-गंगा-यात्रा

'मैं लोक-गंगा के किनारे घूम-घूमकर लोक-शक्ति को जगाने जा रहा हूँ।' ३ दिसम्बर १९७१, जय जगत्, ग्राम-स्वराज्य, व विश्व-शान्ति के गगन-स्पर्शी नारों व गीतों तथा धूल के गुबार के बीच टायर पहियों की एक बैलगाड़ी खरामा-खरामा, हिलती डोलती, आगे बढ़ती चली जा रही है। कौन है इन बैलगाड़ी में? 'लोग आखिरी वक्त गंगा-यात्रा करते हैं न। मैं लोक-गंगा यात्रा करूँगा। मेरे लिए लोक ही गंगा है'—यह संकल्प है।

लोग पूछते हैं, यह लोक गंगा क्या? धीरेन् दा सिहेश्वर उच्च विद्यालय के प्रांगण में आयोजित अपने विदाई-समारोह में हजारों लोगों के बीच, उनके मन का यह सवाल खुद उठाते हैं, और मुकदमा की तरह खुद ही समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। लोगतंत्र का मुकुट मणि है लोक, तंत्र है उसके हाथ का औजार, लेकिन आज दुनिया में तंत्र ही तंत्र दिखता है, लोक नदारद है, यानी गंगा कहीं दीखती नहीं। इसलिए लोक तक पहुँचने की जरूरत है।'

'आप करेंगे क्या घूम-घूमकर, लोग पूछते हैं। बच्चों की एक कहानी है। दो बिल्ली रोटी ले आयी कहीं से। उसे बाँटने में दोनों झगड़ पड़ीं। तब एक बंदर आया रोटी बाँटने और कुल रोटी वही खा गया। इसी तरह लोगों ने रोटी पैदा की और झगड़ने लगे बाँटने में। गये प्रजापति के पास। प्रजापति ने बंदर भेज दिया, जिसका नाम हुआ नृपति। धीरे-धीरे नृपति का बोझ 'लोक' पर बढ़ने लगा, तब आये नृपति। बोझा इतना बढ़ा कि बिल्ली (लोक) त्राहि-त्राहि करने लगी, तब लोक ने नृपति को हटा दिया। पर बिल्ली का 'मैंयाद' तो गया नहीं था, इसलिए नृपति के बदले पूंजीपति आ गया। अब नारा हुआ पूंजीपति को हटाने का। पूंजीपति की जगह आ गये सेवापति। और इन सेवापतियों के महाजाल में पूरा समाज फँस गया। टोटल पैरालाइज्ड हो गया। लोक की संस्थाओं के तंत्र में लोक गुम हो गया। सेवक के बोझ के नीचे दबकर सेव्य मर रहा है फिर भी सेव्य सेवक का पैर छूता है।'

'आज जनता अपनी शक्ति को नहीं पहचानती। हम लोगों से कहते हैं : अपना काम आप करो, तो कहते हैं, एक कार्यकर्ता भेजो। इतने दिनों के सेवकों से पेट नहीं भरा, तो अब सर्टिफाइड मार्का सेवक चाहिए। लोकशक्ति से समाज को चलना चाहिए, सेवक-शक्ति से नहीं। इसलिए कोई सेवा नहीं करें, लोक को लोकशक्ति की पहचान करायें। मैं लोक-गंगा के किनारे घूम-घूमकर लोक-शक्ति को जगाने जा रहा हूँ।'

ग्राम स्वराज्य त्याग की नहीं, बहुत स्वार्थ की बात है, लोक के स्वार्थ की रक्षा करने के लिए है। ग्राम-स्वराज्य तरह-तरह के पतियों से बचाने का मार्ग है। ग्राम-स्वराज्य में लोक का किसी भी सरकारी सेवा या धर्मडंड के नीचे चलकर उद्धार नहीं होगा। उसे अपना उद्धार, अपना रास्ता आप करना होगा।'

प्रस्तुतकर्ता : वेदेन्द्र

श्रीमती इन्दिरा गांधी का निक्सन को पत्र

यदि विश्व के देश विशेषकर अमेरिका ने बंगबंधु शेख मुजीबुर्रहमान को रिहाई के लिए अपनी शक्ति, प्रभाव और अधिकार का उपयोग किया होता तो भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध बचाया जा सकता था।

यदि विश्व के देश गम्भीरता से बंगला देश में उत्पन्न जागृति की स्थिति का इन नौ महीनों में सच्चाई से अध्ययन कर लिए होते तो यह भयानक लड़ाई जो पाकिस्तान द्वारा हम पर लादी गयी है न हुई होती।

जिन हालतों में मैंने अपनी पिछली यात्रा की थी, उस समय भी बड़े राष्ट्रों द्वारा उनकी पुकार गौर से नहीं सुनी गयी थी।

यदि उस समय तक भी शेख मुजीबुर्रहमान को रिहा कर दिया गया होता तो युद्ध की यह भयानक स्थिति रोकी जा सकती थी। परन्तु उस समय हमको यही दिलासा दिलाया गया कि शीघ्र ही नागरिक प्रशासन कायम किया जा रहा है और यह किस प्रकार का नागरिक प्रशासन था, इसे सभी जानते हैं। पाकिस्तान द्वारा एक झूठ-मूठ चुनाव की रूप-रेखा दी गयी जो पूरी न हो सकी। कितने आश्चर्य की बात है कि दुनिया के किसी कोने से शेख मुजीबुर्रहमान को सम्पर्क में लाने के लिए किसी ने मुँह से एक शब्द भी नहीं निकाला। हमने उस समय अमेरिकी सरकार का ध्यान इस ओर भी दिलाया था, परन्तु हमसे यही कहा गया कि राष्ट्रपति यहिया खाँ के शासन को खतरा पहुँचेगा। परन्तु उस समय अमेरिका के दिल में इस बात का आभास हो गया था कि पूर्वी पाकिस्तान को प्रजातान्त्रिक ढाँचे की सरकार नहीं दी जा रही है क्योंकि उससे यहिया खाँ को कुछ मुसीबतों का सामना करना पड़ सकता था।

क्या शेख मुजीबुर्रहमान (एक आदमी) को छोड़ने की तुलना में पूरी लड़ाई करना वाजिब था?

हम इतने बड़े आघात को और भी बरदाश्त कर सकते थे जो कि हम पिछले नौ महीनों से संयम के साथ झेलते आ रहे थे, यदि हम पर यह युद्ध एकाएक न थोपा गया होता। पाकिस्तान द्वारा अचानक अमृतसर, पठानकोट, श्रीनगर, अवन्तीपुर, उत्तरलाई, जोधपुर, अम्बाला और आगरा हवाई अड्डों पर अचानक बम वर्षा की गयी। उस समय मैं और हमारे रक्षामंत्री राजधानी के बाहर थे। परन्तु यह सब कुछ होने के बावजूद हम यह स्पष्ट तौर पर कह देना चाहते हैं कि भारत की पश्चिमी पाकिस्तान तथा पूर्वी पाकिस्तान के क्षेत्र में, जो कि अब बंगला देश माना गया है, किसी भी तरह से कोई क्षेत्र अधिकार में लेने की कोई इच्छा नहीं है।

पाकिस्तान का रवैया

पर क्या पाकिस्तान पिछले २४ सालों से निरर्थक और निरन्तर कश्मीर-सम्बन्धी विवादों को छोड़ देगा? क्या पाकिस्तानी भारत के विरुद्ध घृणा फैलाने और लगातार दुश्मनी का रवैया अपनाये रहने की मनोवृत्ति छोड़ने के लिए तैयार है? पिछले २४ वर्षों में मेरे पिताजी ने और मैंने न जाने कितनी बार पाकिस्तान से अनाक्रमण-सन्धि कराने को कहा। इस बात का इतिहास साक्षी है कि जब भी इस तरह का प्रस्ताव किया गया पाकिस्तान ने इसे तुरन्त अस्वीकार कर दिया।

झूठे आरोप

हमें इस प्रकार के आरोपों और प्रचार से बहुत ठेस लगी है कि भारत ने ही संकट पैदा किया और भारत ने ही समस्या हल करने के रास्ते में बाधा डाली। मैं नहीं जानती कि इन सब झूठी बातों के लिए कौन जिम्मेदार है। मैंने अपनी अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रिया और बेल्जियम यात्रा के दौरान, सार्वजनिक रूप से और इन देशों के नेताओं के साथ बातचीत में इसी बात पर जोर दिया था कि राजनीतिक समाधान तुरन्त आवश्यक है। हमने नौ महीने तक इसकी प्रतीक्षा की। जब डाक्टर किसिंगर अगस्त १९७१ में भारत पधारे तब भी मैंने उनसे जोर देकर कहा कि जल्द ही राजनीतिक समाधान करने की बड़ी आवश्यकता है। किन्तु हमें आज तक ऐसे किसी समाधान की रूपरेखा भी नहीं दी गयी जिसमें तथ्यों पर ध्यान दिया गया होता।

मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि आप कम-से-कम मुझे यह बतायें कि हमने कहाँ गलती की है जिससे आपके प्रतिनिधि या प्रवक्ता हमारे प्रति ऐसी कठोर भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। मैं आप से यह अनुरोध इसलिए कर रही हूँ क्योंकि आप मानव-सम्बन्धों को बहुत अच्छी तरह समझते हैं और अमेरिका के राष्ट्रपति के नाते महान अमेरिकी जनता की इच्छा-शक्ति, आदर्श और आशाओं के प्रतीक हैं।

मैं यह पत्र बहुत ही खेद के साथ उस समय लिख रही हूँ जब भारत और अमेरिका के सम्बन्ध कटु हो गये हैं, लेकिन मैं सब पूर्वाग्रह और आवेश छोड़कर बहुत ही शान्त होकर एक बार पुनः यह स्पष्ट करने के लिए लिख रही हूँ कि यह दुःखद प्रकरण कैसे प्रारम्भ हुआ।

नयी दिल्ली, १५ दिसम्बर १९७१

तरुण शान्ति सैनिक की चिन्ता

यह लड़ाई बहुत आयाम लेकर आयी है। इन अर्थों में यदि इस देश के नागरिक इस युद्ध की महत्ता न समझ सकें और 'शत्रु की हार में खुशी' मनाते रहें तो शान्ति सैनिक एक स्वर्णिम अवसर खो देगा। बंगला देश से लेकर आज तक विकसित होती हुई स्थिति, और उस संदर्भ में उद्घाटित होते हुए सत्य, नागरिकों के बीच प्रतिष्ठित हो जायें तो एक प्रकार जनशक्ति खड़ी हो सकेगी।

मुहल्ले-मुहल्ले में, विद्यालय-विद्यालय में, चौराहे-चौराहे पर सभाएँ, गोष्ठियाँ करना, पर्चे चिपकाना, पर्चे बाँटना, अवसर आते ही अफवाहों का दूने स्तर में विरोध करना, आज शान्ति-सेना की जिम्मेवारी है और हमें इसे वहन करना ही चाहिए।

—कुमार प्रशान्त

विनोबा निवास से

ग्यारह बजे का समय है। विष्णुसहस्रनाम का पाठ कर बहनें भोजन के लिए गयी हैं। बाबा विष्णुसहस्रनाम की विचार में मग्न, खाट पर लेटे हैं। इतने में एक घंटा बजता है। फिर एक आवाज "हम अन्दर आ सकती हैं?" अब इतना सारा समूह अन्दर कैसे समायेगा? इस वक्त बाबा बोलते तो नहीं। लेकिन लड़कियाँ खिड़की में से झांकने लगती हैं। समूह की मुखिया दीखनेवाली बहन मजीजी के स्वर में कहती हैं, "हमने पहले चिट्ठी लिखी थी।" अब बाबा को भला चिट्ठी का ख्याल कैसे रहेगा? खैर। कुछ क्षणों में सारा समूह जैसे-तैसे बाबा के सामने बैठ जाता है। ये हैं हिंगणे घाट कालेज की विद्यार्थिनियाँ।

प्रश्न का परचा बाबा के सामने आता है। "जवानों को भूदान जैसे देशव्यापी आन्दोलन का आकर्षण क्यों नहीं है? समाज में जो भ्रष्ट प्रवृत्त है, तो हम सत्य को आचरण में कैसे लाएँ? जवान आलस्य और विलास की ओर क्यों मुड़ते हैं?" पढ़कर बाबा परचा खाट में रख देते हैं।

"तुम लोगों की हमारी गीताई मिली है?" लड़कियों में आपस में कानाफूसी होती है। संकोच के मारे एकदम बोलती नहीं। फिर धीरे से इक्की-दुक्की कहती है कि "जी हाँ हमने देखी है।"

"गीताई की आठ लाख प्रतियाँ बिक गयी हैं। कौन-सी किताब लोगों में इतनी पहुँच पायी है? फिर भी तुममें से इक्की-दुक्की लड़कियाँ ही जानती हैं। कालेज में बहुत अधकार होता है। इसलिए बाबा ने कालेज छोड़ दिया था। तुम क्या पढ़ती हो?"

"अंग्रेजी, अर्थशास्त्र....।"

"महाराष्ट्र की लड़कियाँ अंग्रेजी सीखती हैं। लन्दन की लड़कियाँ मराठी सीखती होंगी क्या? वे तो ज्ञानेश्वरी नहीं पढ़ती होंगी? और हम शेक्सपियर पढ़ें, यह निरी मूर्खता है। तुममें बहुत सारी लड़कियाँ माँ बनेंगी। जो माँ गीता नहीं जानती है, वह बेटे को क्या सिखायेगी, खाक?

"मराठी विषय में ज्ञानेश्वरी का एक अध्याय बी० ए० की कक्षा के लिए है।" प्रोफेसर साहब बचाव करने के लिए आगे बढ़ती हैं।

"हमारे विश्वविद्यालयों को ज्ञानदेव की बिलकुल परवाह नहीं है। लेकिन करें क्या! ज्ञानदेव साहित्यिक भी हैं। साहित्य के लिए ज्ञानेश्वरी की नौ हजार ओवियों (श्लोक का एक प्रकार) में से दो-सौ, ढाई-सौ ओवियाँ परीक्षा के लिए रखनी पड़ती हैं। जो अगर कोई उनका नहीं करते हैं उनकी ज्ञानेश्वरी पढ़कर। कितनी दुर्दशा है यह शिक्षा की!"

बाबा गम्भीर हो जाते हैं। खामोश बैठे हैं। एक किशोरी कहती है, "हम इतिहास भी पढ़ती हैं।"

"इतिहास यानी क्या? कौन जन्मा और कौन मरा, यही न? शाहजहाँ, बाबर, हुमायूँ औरंगजेब ऐसी एक फेहरिस्त? हमें हमारा पीछा है। बाबर और हम क्यों डरें? उनको क्या मानो? हाँ! नागोबाराज के महापुरुष, बुद्ध, महावीर, नानक, कबीर, इनकी जानकारी जरूर होनी चाहिए। उनसे जीवन बनेगा। संस्कृत पढ़ती हो कि नहीं?"

इतने सारे समूह में एक ही लड़की खड़ी होती है।

"संस्कृत में क्या पढ़ती हो?"

"शाकुन्तल, रघुवंश।"

"यानी नाटक। नाटक के लिए संस्कृत पढ़ता है क्या? संस्कृत तो ज्ञान होता, इसलिए पढ़ना चाहिए। सत्य वद। धर्म चर। सत्यात् न प्रमदितव्यम्। धर्मात् न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। इस तरह संस्कृत पढ़ना होना चाहिए। नाटक तो विलासयोगी है। आसन-प्राणायाम सीखती हो क्या?"

"जी नहीं।"

"मैंने तो सुना था कि इन दिनों कालेजों में आसन-प्राणायाम सिखाते हैं।"

"विश्वविद्यालय की योजना तो है, पर होता नहीं।" प्रोफेसर महाशय जवाब देती हैं।

"शिक्षा में स्वभाषा उत्तम सिखानी चाहिए। हिन्दी उत्तम आनी चाहिए। शिक्षा में गणित, विज्ञान, अध्यात्म, ये चीजें हों तो इन बच्चियों पर कुछ संस्कार होंगे। भक्ति, ज्ञान, कर्म, तीनों का समन्वय शिक्षा में होना चाहिए।"

बाबा कमरा समाप्त कर घूमने के लिए बाहर निकलते हैं। लड़कियों का समूह साहित्य खरीदने जाता है। थोड़ी देर बाद गीताई, गीता-प्रवचन, मानवीय विनिरा, स्त्री-शक्ति इत्यादि किताबें बाबा के सामने हस्ताक्षर के लिए आती हैं।

X X X

स्वामी शिवानन्द के शिष्य स्वामी विष्णुदेवानन्द कनाडा में योग तथा वेदान्त का अध्यापन करते हैं। उनके तीन आश्रम हैं और १० केन्द्र हैं, जहाँ वे योग और वेदान्त सिखाते हैं। अभी वे शान्ति-अभियान के लिए भारत आये हैं। अपने हवाई जहाज से ऐसी जगह जाते हैं, जहाँ तनाव है और वहाँ शान्ति के पत्रक तथा फूलों की वर्षा करके आते हैं। १४ तारीख को बाबा से मिलने आये थे। तब उन्होंने बताया कि लाहौर में उनसे पूछा गया कि "क्या आप विनोबा के चेले हैं?"

बाबा—"उनको लगा होगा कि यह शख्स विनोबा के जैसा ही पागल दीखता है। आज दुनिया में शान्ति की बात करना ही पागलपन है। आप शान्ति के लिए फूल बरसाते हैं, तो लोग आपको 'फूल' (मूर्ख) समझते होंगे।"

स्वामी जी—"हम दिल्ली में शान्ति की रैली करने जा रहे हैं। आप शरीर से दिल्ली में रहिए और मन से यहाँ।"

प्रो० ठाकुरदास बंग तथा सुमन बंग उत्तर प्रदेश में

प्रो० ठाकुरदास बंग व श्रीमती सुमन बंग का १ दिसम्बर को अपरान्ह दिल्ली मद्रास जनता गाड़ी से राजामंडी आगरा स्टेशन पर उतरने पर नगर के प्रमुख सर्वोदय एवं रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने स्वागत किया।

रात्रि में नगर के प्रमुख उद्योगपति जी० ओ० इण्डस्ट्रीज के संचालक श्रीकृष्ण-प्रसाद भार्गव के निवासस्थान पर ट्रस्टी-शिप पर चर्चा करते हुए प्रो० बंग ने कहा, 'इस कार्य के लिए कुछ उद्योगपतियों को जोखिम उठाकर आगे आना होगा।

दूसरे दिन प्रात प्रो० प्रयाग चन्द्र अग्रवाल के निवास पर सहचिंतन में शरीक हुए तथा जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री गोपाल नारायण शिरोमणि के निवास पर आगरा मण्डल के क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए बंग साहब ने कहा कि प्रदेश में संगठन अच्छा खड़ा हुआ है। अब कार्य की दृष्टि से कार्यकर्ताओं को आगे आना होगा। ग्रामदान-पुष्टि-कार्य में अपने को लगाना होगा। इस बैठक में ७ जिलों के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया था। स्वामी कृष्णानन्दजी ने अध्यक्षता की। महावीर भाई ने क्षेत्र की जानकारी दी। इस अव-सर पर श्री कपिल भाई भी उपस्थित थे।

बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय में समाज-परिवर्तन की भूमिका में दहेज के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए श्रीमती सुमन बंग ने युवतियों का आह्वान किया। उन्होंने आगरा नगर की प्रमुख-महिला-संस्था वनिता-विकास में भी भाषण दिया।

आगरा कालेज के भौतिक विज्ञान परिषद का उद्घाटन करते हुए प्रो० बंग ने कहा कि "मानव विज्ञान से ऊँचा है। मानव के विज्ञान को ही विकसित करके हम अहिंसक समाज की स्थापना कर सकते हैं।"

सायंकाल गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र पर 'वर्तमान परिस्थिति और सर्वोदय विचार विषय पर उन्होंने विचार व्यक्त किये। रात्रि ताज गाड़ी से चलकर दिल्ली पहुँचे, वहाँ से चलकर प्रात: सहारनपुर।

३ दिसम्बर को प्रात ९ बजे सहारन-पुर जेल से टिहरी के आये हुए नशाबन्दी के सत्याग्रहियों से भेंट की। उस दिन सत्याग्रही भाई रिहा होनेवाले थे। प्रो० बंग ने सत्याग्रहियों (भाई-बहनों) को सम्बोधित करते हुए उनके अदम्य साहस और उत्साह के लिए बधाई दी।

गांधी आश्रम पर दोपहर क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं के बीच बोलते हुए प्रो० बंग ने कहा कि "कार्यकर्ताओं में आपस में प्रेम और सौहार्द अधिक-से-अधिक स्थापित होना चाहिए। इस सभा में मेरठ क्षेत्र के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया था। प्रारम्भ में श्री बलराम भाई ने स्वागत किया। श्री प्रकाश भाई ने क्षेत्र की जानकारी दी।

भा त पर पाकिस्तान द्वारा अचानक हवाई आक्रमण हो जाने के कारण स्थानीय आम सभा नहीं हो सकी, ब्लैक आउट हो गया था।

४ दिसम्बर को सुबह श्री कपिल भाई के साथ प्रो० बंग ऋषिकेश होते हुए टिहरी पहुँचे, जहाँ नशाबन्दी आन्दोलन चल रहा था। प्रो० बंग की प्रतीक्षा यह निर्णय करने के लिए हो रही थी कि आपरिस्थिति में नशाबन्दी सत्याग्रह चलाना चाहिए या नहीं। सभी कार्यकर्ताओं ने पिकेटिंग का रूप बदलने, तथा सत्याग्रह वापस लेने का निश्चय किया।

५ दिसम्बर को प्रात टिहरी जेल में जाकर प्रो० बंग ने कैदी सत्याग्रहियों से भेंट की। दोपहर टिहरी में अमर शहीद श्री सुमन पार्क में आमसभा में शराबबन्दी आन्दोलन के स्वरूप के परिवर्तन पर सभा हुई जिसका समापन प्रो० बंग ने किया। श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने पूरी जानकारी दी। इस अवसर पर श्री कपिल भाई ने भी आशीर्वाद दिया।

६ दिसम्बर को प्रात. बरेली सेन्ट्रल जेल के जेलर श्री बहुगीनदार सिंह से प्रो० बंग ने भेंट की तथा फांसी दिये जानेवाले बन्दियों से भेंट की। वहाँ के जेलर ने प्रो० बंग का स्वागत किया तथा अपनी निरीक्षण पुस्तिका में नोट लिख-वाया। बहुगीनदार सिंह ने कहा, 'मैं बाबा के चरणों में सब कुछ समर्पित कर चुका हूँ।

दोपहर बरेली कालेज में छात्रों को सम्बोधित करते हुए प्रो० बंग ने कहा कि "जो एकता इस समय हुई है उसे कायम रखना हमारी इस नयी पीढ़ी का काम है। शाम को नगर के कार्यकर्ताओं से भेंट की।

७ दिसम्बर को लखनऊ में स्वामी कृष्णानन्द, श्री अर्जुन भाई, श्रीराम भाई आदि अनेक कार्यकर्ताओं से वर्तमान युद्ध और हमारा कर्तव्य विषय पर चर्चा हुई।

अचानक प्रो० बंग को उनके पिताजी की बीमारी का तार मिला। अतः वह आगे के सारे कार्यक्रमों को रद्द करके वर्धा रवाना हो गये। —कृष्णचन्द्र सहाय

बाबा—"मैं उलटा कहूँगा। शरीर से यहाँ रहूँगा, मन से वहाँ।"

स्वामीजी बहुत आग्रह करने लगे। बाबा ने कहा—"आज विज्ञान का जमाना है। इधर उधर जाना पुरानी बात हो गयी। आज एक जगह बैठकर मैं अभि-ध्यान से सबके साथ सम्पर्क रखता हूँ। टेलीविजन के जमाने में इधर उधर जाने की जरूरत ही क्या?"

स्वामीजी—"अमेरिका के लोग अब पीछे जा रहे हैं। टेलीविजन की संस्कृति से ऊब गये हैं, पुरानी चीज चाहते हैं।"

बाबा—"पुरानी चीज चाहते हैं तो पदयात्रा करें।"

इस पर सब हँस पड़े।

"दूसरे देशों के लिए अपना सन्देश दीजिए।"

बाबा ने झट एक कागज पर लिखा—"विश्वशान्ति के लिए बाबा की शुभ-कामना। सत्य, प्रेम, करुणा। यही विश्व-शान्ति के लिए उपाय है।" —कुसुम

(मैत्री से साभार)

खादी-संस्थाओं से अपील

खादी की संस्थाएँ सर्वोदय-साहित्य का विशेष रूप से प्रचार करें, ऐसा निर्णय अप्रैल १९७१ के प्रारम्भ में सेवाग्राम में लिया गया था। उसके बाद खादी-संस्थाओं की सम्मति से तय हुआ था कि १ अगस्त १९७१ से सारे खादी-केन्द्रों में खादी-खरीददारों को खादी के परिमाण में सर्वोदय साहित्य ५० प्रतिशत रियायत पर दिया जाय। कुछ प्रान्तों ने यह अवधि २ अक्तूबर तक बढ़ा दी थी। वह अवधि भी बीत गयी है। २ अक्तूबर ७१ के बाद रिबेट की बिक्री शुरू हुई, खादी की बिक्री बढ़ी एवं खादी और साहित्य दोनों साथ-साथ देना कठिन पड़ने लगा, इसलिए [illegible] खादी-भवन ने तय किया कि गांधी-जयन्ती में खादी रिबेटवालों को रिबेट की अवधि के बाद साहित्य पर रियायती दे दी जायगी। यह तरीका अच्छा है।

कुछ लोगों की शिकायतें हैं कि उन्हें उत्पादकों से १०॥ प्रतिशत कमीशन नहीं मिलता है। यह शिकायत बहुत सही नहीं है। आखिर उत्पादक संस्थाएँ भी खादी का दाम बढ़ाकर ही तो साढ़े दस प्रतिशत कमीशन देंगी। हर बड़ा खादी-भण्डार बहुत से माल पर दाम बढ़ाता ही है—खासकर रेडीमेड व अन्य अच्छे सस्ते माल पर। बहुत से भण्डार बड़ी-बड़ी उत्पादक संस्थाओं के ही हैं। खादी के दाम यथासम्भव न बढ़ाकर कमीशन कम देने की नीति स्पष्ट करती है और इसलिए इस योजना को तुरन्त लागू करना चाहिए। साथ ही सभी खादी संस्थाओं को इस बात को भुलाना नहीं चाहिए कि हर भण्डार में नया-से-नया साहित्य रहना चाहिए और वह ग्राहक को निर्धारित परिमाण में ५० प्रतिशत कमीशन पर मिलना चाहिए, इसकी व्यवस्था में किसी प्रकार का विलम्ब न हो।

खादी-भण्डारों में किस साहित्य पर रियायत दी जाय, इस बारे में कुछ शंकाएँ उठी थीं। सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति ने निर्णय कर दिया है कि सर्वोदय साहित्य-योजना की परिचय पुस्तिका में जो स्वीकृत साहित्य माना गया है, उस पर रियायत दी जाय।

विक्रेताओं का अनुभव है कि साहित्य का प्रवाह अविरल गति से बहता रहना चाहिए। नया साहित्य आता है तो उसके साथ पुराना साहित्य भी निकलता रहता है। नये साहित्य के सम्बन्ध में सर्व सेवा संघ प्रकाशन ने 'नमूना योजना' शुरू की है, उससे प्रत्येक भण्डार को नया प्रकाशन तत्काल मिलता रहेगा। सभी खादी-संस्थाएँ इस योजना की ग्राहक बन जायें तो सर्वोदय-साहित्य के प्रचार-प्रसार में निश्चय ही प्रगति होगी।

देश की सभी खादी-संस्थाओं से हमारी अपील है कि सर्वोदय-साहित्य के लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसे सफल बनायें।

(उ० न० ढेबर)	(एस० जगन्नाथन्)	(विचित्रनारायण शर्मा)
अध्यक्ष	अध्यक्ष	अध्यक्ष
खादी-ग्रामोद्योग कमीशन	सर्व सेवा संघ	खादी-ग्रा० प्रमाणपत्र समिति

बंगला देश पदयात्री

२८ नवम्बर ७१ को बंगला देश पदयात्रियों का स्वागत शाहाबाद जिले के कोदलवर पड़ाव पर ५ हजार नागरिकों द्वारा किया गया।

सभी पक्ष के नेता तथा विधानसभा के सदस्यों ने मिलकर स्वागत किया। शाहाबाद में २८ नवम्बर से ९ दिसम्बर तक इन पदयात्रियों की यात्रा चली। सभी पड़ावों पर हजारों नागरिकों ने उनका अभिनन्दन किया। कोदलवर पड़ाव पर बिहार सरकार के उद्योग मंत्री श्री विपिन बिहारी सिंह ने उनका हार्दिक अभिनन्दन किया।

रामगढ़ पड़ाव पर ७४ कम्बल और २०१ रु० पदयात्री भाइयों को दिये गये। ६ दिसम्बर को जब पदयात्री भाई कुदरा पड़ाव पर पहुँचे उसी दिन भारत सरकार ने बंगला देश को मान्यता दी, यह खबर पाकर बंगला देश के हमारे पदयात्री भाई खुशी के मारे नाच उठे। खुशी में एक भाई बेहोश हो गया।

अन्तिम पड़ाव ९ दिसम्बर को कर्मनाशा में रहा, जो बिहार का भी अन्तिम पड़ाव रहा। बिहार की ओर से हमारे बिहार शान्तिसेना मण्डल के सहायक संयोजक श्री [illegible] भाई ने बिहार शान्ति-सेना मण्डल की ओर से हार्दिक अभिनन्दन किया और भावभरी विदाई दी। साथ-साथ बंगला देश के पदयात्री भाइयों के लिए ३८ कम्बल और ३८ चादरें बिहार शान्ति सेना की ओर से भेंट किये। कर्मनाशा नदी के उस पार उत्तर प्रदेश के हजारों नागरिक पदयात्री भाइयों को अभिनन्दन के साथ अपने प्रदेश में ले गये।

—महेन्द्र कुमार

पुस्तक-परिचय

भगवद्गीता का सरल विवेचन
गीता तत्त्वबोध

श्री बालकोबाजी भावे ने जिज्ञासुजनों के सामर्थ्य गीता पर अत्यन्त सरल भाषा में सारगर्भित विवेचन लिखा है। इसमें सरल भाषा में सरल अन्वय के साथ विषय को स्पष्ट किया है।

यह सम्पूर्ण ग्रन्थ दो खण्डों में प्रकाशित होगा। पहले खण्ड में ८ अध्याय रहेंगे, दूसरे खण्ड में १० अध्याय।

ग्रन्थ का आकार डबलक्राउन अठपेजी यानी (७॥" X १०") रहेगा। कपड़े की पक्की जिल्द, टाइप १४ पा० मोटी।

सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य रु० ६०-००

३० जनवरी १९७२ तक अग्रिम मूल्य भेजनेवालों को घर बैठे रु० ५०-०० में यह ग्रन्थ उपलब्ध होगा।

प्रथम खण्ड मार्च १९७२ तक
दूसरा खण्ड अगस्त १९७२ तक प्रकाशित होगा।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी

दंगा में शान्ति-कार्य

सिवनी (म० प्र०) में २४।११।७१ को हुए साम्प्रदायिक दंगे की सही जानकारी प्राप्त करने के लिए जिला सर्वोदय मण्डल ने कुछ प्रयास किये। लोगों के घर-घर जाकर सही कारणों का पता लगाने की कोशिश की। उनकी रिपोर्ट के अनुसार दोनों पक्षों ने (हिन्दू-मुसलमान) आवेश में आकर ही साधारण बात को झगड़े का रूप दिया और पुलिस की लापरवाही के कारण दंगा बहुत बढ़ गया। दोनों पक्षों को जनहानि व सम्पत्ति का नुकसान उठाना पड़ा है।

सर्वोदय के कार्यकर्ताओं ने दंगे से प्रभावित प्रत्येक परिवार से सहानुभूति व्यक्त करने हेतु भेंट की और इस तरह की हिंसा की व्यर्थता समझाने की कोशिश की। सरकार द्वारा इस घटना से प्रभावित लोगों को मुआवजा के रूप में आर्थिक सहायता दी जा रही है।

कार्यकर्ता सम्मेलन

दुर्ग (म० प्र०) जिला सर्वोदय कार्यकर्ताओं का १६ और १७ नवम्बर का दो दिन का सम्मेलन राजनांदगाँव में सम्पन्न हुआ जिसमें ५० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। इसी सम्मेलन में 'राजनांदगाँव प्राथमिक सर्वोदय मण्डल' का उद्घाटन श्री नरेन्द्र दुबे ने किया तथा शान्तिसेना समिति के संयोजक श्री पन्नालाल साव और आचार्यकुल के संयोजक श्री मन्नूराम गुप्त सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए। सम्मेलन में ग्राम एवं नगर स्वराज्य-आन्दोलन को गति प्रदान करने हेतु कुछ योजनाएँ बनी। जिले भर में १००० लोकसेवक बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। सन् '७२ में आनेवाले चुनाव में मतदाता शिक्षण का कार्यक्रम हाथ में लेने का तय किया गया। जिला शान्तिसेना समिति व आचार्यकुल का गठन भी इसी सम्मेलन में हुआ। इस तरह जिला सर्वोदय कार्यकर्ता सम्मेलन सोत्साह सम्पन्न हुआ।

भूदान-वितरण

म० प्र० : भूदान यज्ञ बोर्ड द्वारा मुरैना जिले की श्योपुर तहसील में १ नवम्बर से ३० नवम्बर तक भूमि वितरण का कार्यक्रम हुआ। इसमें ७९ गाँवों के १३१५ भूमिहीनों में कुल १३०६२ बीघा भूमि का वितरण किया गया। इसमें कुल २१५ हरिजन परिवार, ६९२ आदिवासी परिवार एवं ३७१ सवर्ण परिवार हैं। उक्त भूमि का वितरण भूदान-यज्ञ बोर्ड के विभिन्न जिलों से आये हुए ८ कार्यकर्ताओं द्वारा किया गया। आगामी भूमि वितरण का आयोजन मुरैना जिले की विजयपुर तहसील में १० जनवरी से २५ जनवरी '७१ तक होनेवाला है।

युवजन विकास शिविर

तेनाली (आंध्र प्रदेश) सर्वोदय सेवा संघ, गुंटूर जिला सर्वोदय मण्डल व विजयवाड़ा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के सम्मिलित सहयोग से मोपरु (आंध्र) गाँव में ता० १२-११-७१ से १४-११-७१ तक का त्रिदिवसीय ग्रामीण युवजन विकास शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर का उद्घाटन करते हुए श्री गोराजी ने युवजनों को अन्याय व अनुचित सरकारी कार्रवाइयों के लिए सत्याग्रह करने की अपील की। उन्होंने प्रजा के प्रतिनिधियों के द्वारा उनके अधिकारों के दुरुपयोग को रोकने के लिए सत्याग्रह का मार्ग अपनाने की जरूरत पर जोर दिया। गुंटूर जिला सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री ब्रह्मानन्दजी ने ग्रामीण धन्धे तथा युवक-युवतियों की आजीविका की व्यवस्था के सम्बन्ध में अपने विचार शिविरार्थियों के सामने रखे। इसके अतिरिक्त ग्रामीणों को स्पर्श करनेवाले विषयों पर भी वक्तव्य दिये गये जैसे कि 'कृषि एवं पशुपालन', ग्रामसफाई व सामाजिक स्वास्थ्य, ग्रामीण युवक तथा सामाजिक विकास। भाषण, चर्चा, प्रार्थना आदि के अलावा ग्रामसफाई, सूत्रयज्ञ जैसे कार्यक्रम भी शिविर में रखे गये। ग्राम-सेना के लिए पाँच प्रौढ़ों व पाँच तरुणों का एक दल भी बनाया गया। शिविरार्थियों व ग्रामीणों पर इस शिविर का अच्छा प्रभाव पड़ा है, ऐसा शिविर संचालकों ने महसूस किया।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १९, अंक : १४, सोमवार, जनवरी ३, '७२
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

भूदानमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक साप्ताहिक

तंत्रमुक्ति और शासनमुक्ति

हमारे आन्दोलन में दो बातें बराबर कही गयी हैं। एक है, शोषणहीन समाज और दूसरा शासनमुक्त समाज। ये दो बातें समाज के विषय में कही गयी हैं। अपने विषय में कहा गया है कि हमारा कार्यकर्ता निधि-मुक्त होगा, तंत्र-मुक्त होगा, ये हमारी प्रतिज्ञाएँ हैं। मुझे कुछ ऐसा मालूम होता है कि हम इनकी तरफ से बराबर लापरवाह रहे हैं। हमने इनका विचार अभी तक नहीं किया है।

संक्षेप में, तंत्र-मुक्ति की दिशा में जाने के लिए इतनी चीजें हैं :

१. मनुष्य के लिए नियम का विधान होगा, नियम के लिए मनुष्य का नहीं। यह कब होगा, जब मनुष्यों में अनुशासन नहीं, स्वयं शासन होगा, जिसे आप संयम कहते हैं। लेकिन यह पुराना संयम नहीं है। हमारे ब्रह्मचर्य में हमसे किसी को और किसी का हमसे भय नहीं होगा, अपनी पत्नी से नहीं और पत्नी को हमसे नहीं। अनुशासन जिस संस्था में अधिक होता है मनुष्यता उसमें कम होती है। मनुष्य की कदर न हो, तो संविधान और नियम मनुष्यों को अलग कर देते हैं।

२. काम का सम्बन्ध दाम के साथ अगर होगा, तो जिसको अधिक दाम मिलेगा, उसकी प्रतिष्ठा होगी। तब आप पूँजीवादी मूल्यों को प्रतिष्ठा देंगे। हमारी संस्थाओं में पूँजीवादी मूल्यों को कम-से-कम प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए।

३. परस्पर विश्वास जितना अधिक होगा, नियंत्रण-निरीक्षण उतना कम होगा; इसकी आवश्यकता उतनी कम होगी। हम परस्पर विश्वास की बुनियाद क्या होगी ? इसका आरम्भ विश्वास से करें, अविश्वास से नहीं।

४. पदलिप्सा नहीं, बल्कि एक-दूसरे को पद देना चाहिए। अधिकार की अपेक्षा दायित्व का भाव अधिक होना चाहिए।

५. सदस्यता की तरफ से मनुष्यता की तरफ जाना चाहिए। मित्रता मनुष्यता है, सदस्यता औपचारिकता है। सदस्यता में से सांस्कृतिकता का विकास नहीं होता। सदस्यता शरीरजन्य है, क्योंकि संस्था में आत्मा नहीं होती। मित्रता मनुष्यों का सम्बन्ध है, इसलिए उसमें पवित्रता होती है।

६. हम लोकाश्रित नहीं रहेंगे, क्योंकि लोगों का रुख देखकर काम करना पड़ेगा। हम लोगों का नहीं, लोकात्मा का रुख देखेंगे।

—दादा धर्माधिकारी

बंगला देश में ग्रामस्वराज्य

१९४७ में जब भारत आजाद हुआ था तब देश के करीब-करीब हर गांव में स्वराज्य-प्राप्ति के कारण जो नया उत्साह था, लोगों के मन में नये राष्ट्र को बनाने की जो तमन्ना थी, उसे यदि सही दिशा दी गयी होती तो उस समय जमीन की मालकियत मिटायी जा सकती थी, हरेक जोतनेवाले को जमीन दी जा सकती थी और ग्रामस्वराज्य का वह चित्र खड़ा किया जा सकता था जिसके लिए आज चेष्टा की जा रही है। इस तरह ग्रामस्वराज्य-सभा में हर व्यक्ति अपनी आजादी और जिम्मेदारी महसूस करता और अहिंसक समाज-रचना की नींव डाली जाती जिसमें व्यक्ति से लेकर विश्व तक की आजादी समुद्री वर्तुलों (ओसनिक सर्किल्स) की तरह एक दूसरे की सहायक और उन्नायक होती। सर्वोदय समाज के निर्माण का आरम्भ हो गया होता, परन्तु सरकार की ताकत से समाज को बदलने के गलत गणित के कारण इस देश के अगुआ कल्याणकारी राज्य के दलदल में फंस गये। एक ही झटके में पश्चिमी देशों की कतार में जा बैठने की चकाचौंध में वे उनके आगे हाथ पसारते रह गये। कल्याणकारी (वेलफेयर) राज्य से सामाजिक सम्बन्धों को बदलने की बात तो दूर रही, गरीब और अमीर को मानो हालत में पहले की बनिस्बत और अधिक दूरी बढ़ी। गरीब असहाय और निराश होते गये। राज्य का सहारा पाकर अमीरों की सम्पत्ति भी बढ़ी और शोषण करने की उनकी ताकत भी। ये बातें अब काफी पुरानी हो गयी हैं। अपने को गद्दी पर बनाये रखने के लिए राजनैतिक नेता एक के बाद दूसरे मोहक नारे देते रहे हैं, आज भी दे रहे हैं। समाजवाद का नाम ले लेकर राज्य की ताकत बढ़ाते जा रहे हैं जिसमें फौज का सहारा प्रधान और जनता का विश्वास गौण होता है। जनता भी अपनी शक्ति नहीं बना पाती और एक बेबसी से राजनैतिक नेताओं का मुँह ताकती रहती है। समय बीतता जाता है। उसकी समस्या सुलझाने के बदले और भी उलझती जाती है और वह निराशा और हिम्मतपस्ती (फ्रस्ट्रेशन) में हिंसा के पुराने हथियारों की चपेट में या छिटपुट हिंसा के माध्यम से अपनी मुक्ति की कल्पना करती है। सही समय पर सही दिशा में कदम उठाने के अभाव में, लोकशक्ति को जगा पाने में भारत में हम सफल नहीं हो पा रहे हैं।

बंगला देश के निर्माण का समर्थन भारत में सर्वोदय आन्दोलन में लगे हम लोग पहले दिन से ही कर रहे हैं। फौजी शक्ति से नागरिक शक्ति अधिक मजबूत हो यह हमारी तमन्ना है। भारत में उसी चित्र को खड़ा करने के लिए भूदान-ग्रामदान का कार्यक्रम हमने हाथ में लिया है।

बंगला देश ने यद्यपि लोकतंत्र और धर्म-निरपेक्षता की घोषणा की है तथापि दल-निरपेक्ष सरकार और सरकार-निरपेक्ष ग्रामस्वराज्य का लक्ष्य उसके सामने अभी साफ नहीं है। सर्वोदय समाज की यानी ग्रामस्वराज्य की स्थापना न तो मात्र भूदान ग्रामदान आन्दोलन का मुहताज हो सकती है और न मात्र भारत तक ही इसका प्रयोग-क्षेत्र सीमित हो सकता है। ग्रामस्वराज्य का स्वरूप खड़ा करने के लिए बंगला देश उतना ही मौजूं क्षेत्र है जितना सघन ग्रामदानवाला क्षेत्र बिहार अथवा अन्य कोई क्षेत्र। बिहार के एक जिले अथवा कई अन्य प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य के लिए जो चेष्टाएं की जा रही हैं वे अवश्य की जायें, पर भारत के सर्वोदय कार्यकर्ताओं को यह भी सोचना चाहिए कि जहां लोहा गरम है उसे ठंडा हो जाने दें पहले उस पर ताकत लगा कर उसे अपेक्षित आकार दिया जाय। मेरा सुझाव यह है कि सर्व सेवा संघ को ग्रामस्वराज्य के विचार को मूर्तरूप देने के लिए बंगला देश को भी अपना क्षेत्र माने।

जब अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में काम करने की नीति सर्व सेवा संघ स्वीकार करेगा तो विभिन्न कार्यक्रमों के स्वरूप स्थिर होंगे। कार्यकर्ता और खर्च के बारे में भी अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर सोचा जा सकता है।

विश्व-शान्तिसेना का संगठन, संसार के सब देशों में अहिंसक समाज-रचना की चेष्टा करनेवाली संस्थाओं की शक्ति को एकत्र कर सचालित करने का काम आदि इसीका अंग होगा। —हेमनाथ सिंह

खादी की दुर्गति

खादी के परिमाण में वृद्धि के साथ साथ उसकी आत्मा का उसी अनुपात से नाश होता जा रहा है। खादी के उत्पादन के बारे में जो रिपोर्ट आपको मिलती है उसकी एक तिहाई वास्तविक खादी का उत्पादन शायद होता होगा।

भूदान-यज्ञ के १ १२-७१ के अंक में प्रकाशित श्री नवरंग प्रसाद जायसवाल के खादी की अर्द्ध शताब्दी लेख में बताया गया है कि १९५३-५४ में ग्रामराज्य की खादी ९०% थी, १९६५-६६ को वह ४% को आ गयी और १९६८-६९ को वह ३.२ को उतर आयी। अतः आपके "अ.गे, और आगे" को प्रगति न कह कर दुर्गति ही मानना चाहिए।

खादी में जो भ्रष्टाचार चल रहा है उसकी जांच हो तथा खादी की गति को फिर और मोड़ना चाहिए यह सोचा जाय। पर्यावरण के अधिकारियों के सामने यह एक चुनौती आ खड़ी है।

इसी संदर्भ में भूदानयज्ञ ता० ६-१२-७१ के अंक में प्रकाशित श्री धीरेन भाई के जवाब का मैं पूरा समर्थन करता हूँ। कृषि-संगठन के साथ साथ आधुनिक-तम एक तकुआ चरखा ग्रामस्वावलम्बन तथा ग्रामस्वराज की दृष्टि से चलना चाहिए। खादी को टिकना है तो आत्मा के साथ तथा शुद्ध रूप से रहे।

—मदन मोहन साहु

बंगला देश की आजादी : भारत का कर्तव्य

—विनोबा

हिन्दुस्तान में 'डेमोक्रेसी' है। पाकिस्तान जब से बना है तब से आजतक वहाँ डेमोक्रेसी नहीं बनी। लोगों को दबाव में रखने का ही बना है। केवल बंगला देश को दबाया है ऐसी बात नहीं, सिंध, बलूचिस्तान, पख्तूनिस्तान तीनों को दबाया पंजाबी लोगों ने। उर्दू भाषा सब पर लादनी चाही, ऐसा सम्भव अब दीखता नहीं। लोग वहाँ के अच्छे हैं लेकिन नेताओं के अधीन हैं। याहिया खाँ हैं, भुट्टो हैं। अब यह भुट्टो काठियावाड़ी हैं, उनका दिमाग भी राजनीतिक है। बंगला देश को छोड़ने के लिए अगर ये लोग तैयार हो जाते हैं तो बहुत बड़ी बात मानी जायेगी। तब पिछले ९-१० महीनों में जो हुआ वह सब गलत हुआ ऐसा उनको कबूल करना होगा। इतना कबूल करने के लिए वे युधिष्ठिर तो हैं नहीं, इसलिए जहाँ तक बाबा को सिच्यूएशन का आब्जेक्टिव दर्शन है वहाँ तक बाबा का मानना है कि एक उत्तम लड़ाई होनी चाहिए।

इन्दिराजी का धैर्य

इन्दिराजी ने हद दर्जे का धैर्य दिखाया। जयप्रकाशजी भी कहते थे और बाबा की भी राय थी—याहिया ने बीच में जो वक्तव्य दिया था शायद जून में, मार्च में हमला शुरू हुई उसके दो-तीन महीने बाद, उससे स्पष्ट हुवा था कि वह बंगला देश में डेमोक्रेसी पनपने नहीं देगा। इस वक्तव्य के बाद मेरी राय हुई कि बंगला देश को मान्यता देनी चाहिए और मान्यता देने का मतलब सैनिक मदद देनी चाहिए। जयप्रकाशजी तो ऐसा पहले से ही कहते थे। लेकिन मुझ से पूछा गया था इस विषय में तो मैंने कहा था कि मेरी जो जानकारी है वह अखबारों से और नम्बर दो, हमारे कुछ लोग वहाँ जाकर वापस आते हैं उनसे मिलती है, वह है। नम्बर तीन, हमारा एक दर्शन है विश्व का। इन तीन आधारों पर हमारा विचार बनता है, परन्तु इन्दिराजी को ऐसी कई खबरें मिलती होंगी जो हमको नहीं मिलती। इसलिए वह जो करें ठीक होगा। हमको जो दीखता है वैसा मत हम प्रकट करते हैं जिससे भारत के लोगों को मत बनाने में मदद हो और इन्दिराजी को निर्णय लेने में मदद मिले। आखिर निर्णय तो उन्हें ही करना है।

इन्दिराजी ने चार-पाँच देशों में जाकर समझाया। हद दर्जे का धैर्य उन्होंने दिखलाया। इसके बाद भी उन्होंने देखा कि उनकी फौजें बिलकुल सामने आ गयी हैं और हवाई जहाज के हमले शुरू हुए हैं तब उन्होंने तय किया कि अब लड़ाई शुरू हो। यह मैं नहीं कह सकता कि प्रथम हमला किसने किया। यह प्वाइन्ट तो लड़ाई में हमेशा वादग्रस्त रहता है। दस माह का उसका इतिहास दिखाता है और याहिया ने कहा भी कि दस दिन के अन्दर मैं फान्टियर पर होऊँगा, इसका मतलब है कि उसके विचार में जरूर था कि आक्रमण करना चाहिए। फिर भी इन्दिराजी ने धैर्य दिखाया।

लड़ाई अपना मुख्य उद्देश्य पूरा होने तक जारी रहनी चाहिए और वह उद्देश्य पूर्ण होने के बाद ही शान्ति से बंगला देश बनाना चाहिए। और उससे हमारे सम्बन्ध अच्छे बनें। इसी प्रकार फ्रान्टियर, बलूचिस्तान, सिंध में हमारे जैसे भाषायी प्रान्त बनें—भले ही वे पाकिस्तान के अन्दर हों और जैसे हमको आजादी मिली वैसी उनको भी मिलनी चाहिए।

बंगला देश में ग्रामस्वराज्य

जाहिर है कि बंगला देश आजाद होगा और वहाँ लोकशाही आयेगी लेकिन वह देश बहुत दुखी और दरिद्री है, इसलिए वहाँ की जनता सरकार पर निर्भर रहेगी और फिर इस देश से, उस देश से मदद मांगेगा जैसा भारत में बीस साल से चल रहा है। इसलिए जनता का वहाँ अपना कोई राज्य नहीं होगा। इसे मैं लोकनीति कहता हूँ। इसलिए मेरी राय में उनको भी वहाँ ग्रामदानमूलक ग्रामस्वराज्य की स्थापना करनी चाहिए। तो हमारी ओर से उनको क्या मदद हो सकती है? यही कि हम अपने देश में यह करके दिखायें तो उनको उत्तम-से-उत्तम मदद हम अहिंसा को माननेवाले लोगों ने की ऐसा बंगला देश का इतिहास कहेगा।

युद्ध और अहिंसावादी

'पीसन्यूज' में हम पर टीका आयी है। गांधीजी होते तो आज जो लड़ाई शुरू हुई है पाकिस्तान-हिन्दुस्तान के बीच, उसे क्या वे आशीर्वाद देते, जैसा कि उनके अनुयायी जयप्रकाश और विनोबा देते हैं? और फिर इसका उत्तर लिखा है—जहाँ तक हम समझते हैं नहीं देते। लेकिन वह जानता नहीं है 'पीसन्यूज' वाला कि जब हमला हो रहा था कश्मीर पर पाकिस्तान की ओर से तब जवाहरलालजी ने गांधीजी से राय ली थी।

→सम्पूर्ण लोकतन्त्र में जब तक गांवों और शहरों की स्वायत्तता की गारंटी न हो, तब वह निहित स्वार्थों (वेस्टेड इंटरेस्ट्स) का आपसी लेन-देन (एडजस्टमेंट) होकर रह जाता है, और जनता निर्माण की प्रक्रियाओं से अलग छूटी रह जाती है। जनता का छूट जाना किसी देश को, विशेष रूप से भारत और बंगला देश जैसे विकासशील देशों को, शान्ति और सुव्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा है। ये दोनों देश सोचें कि वे क्या करेंगे जिससे उनके लोकतन्त्र में लोक को प्रधानता मिले, तन्त्र हावी न होने पाये।

भारत और बंगला देश, दोनों देश संकट और सम्भावनाओं के बीच एक पतली रेखा पर खड़े हैं। स्वतंत्रता से एक ओर सर्जनात्मक राष्ट्रीयता का रास्ता खुलता है, और दूसरी ओर संकीर्णतावादी राष्ट्रवाद का। मानवता की जिस शक्ति से इन देशों ने अब तक के संकट का मुकाबिला किया है, उसी से वे भविष्य की सम्भावनाओं को भी प्रकट करेंगे, यह कामना है। ●

गांधीजी ने उत्तर दिया था कि जिस हालत में तुम हो उस हालत में वहाँ आर्मी भेजनी चाहिए।

संहार के बिना शान्ति हो सकती है अगर यू० एन० ओ० की तरफ से निःशस्त्रीकरण का प्रस्ताव पेश किया जाय और सब मुख्य-मुख्य राष्ट्र इसे मानें। नम्बर दो—यू० एन० ओ० ने एक शान्तिसेना खड़ी की है शस्त्र-युक्त। इसके बदले में एक सच्ची शान्ति सेना—शस्त्र मुक्त—खड़ी करे। ये दो बातें वह करेगा तो ही संहार के बिना शान्ति हो सकती है और यह जो हमने जयजगत कहा है उसके बिना शान्ति नहीं होगी।

भारत के प्रति आशा

भारत-पाक सम्बन्धों में सुधार की उतावली नहीं कर सकते। प्रथम तो भारत को यह लड़ाई जीतनी चाहिए। नम्बर दो—लड़ाई पूर्णरूप से जीतने के बाद बंगला देश को सचमुच आजादी देनी चाहिए। क्योंकि दुनिया के देशों को शक हो सकता है कि भारत उसे अपने कब्जे में रखेगा या दोनों बंगालों को एक करके रखेगा। सरकार ने जाहिर किया है कि हमारा ऐसा उद्देश्य नहीं है। जब भारत ने उसे सचमुच पूरी आजादी दी है, पड़ोसी के सम्बन्ध रखे हैं और सेना पूरी हटा ली है, ऐसा दर्शन होगा दुनिया को तब भारत के शब्द पर दुनिया को इत्मीनान होगा। आज दुनिया भारत के शब्द को अविश्वास की दृष्टि से देखेगी। दोनों सरकारों ने कहा है कि वे सेक्युलर स्टेट रहेंगे और बंगला देश में गणतन्त्र, समाजवाद, सर्व-धर्म समता—इस आधार पर वह खड़ा होगा, ऐसा जाहिर हुआ है।

अगर भारत के मन में जीत का कांटा नहीं रहेगा तो पाकिस्तान के मन में हार का कांटा नहीं होगा। क्योंकि विजय का उन्माद हो सकता है। हमको मुख्य करना यही है—ग्रामस्वराज्य की सिद्धि। इससे बंगला देश की हम उत्तम सेवा कर सकेंगे। साथ-साथ यह भी देखना होगा कि भारत में हिन्दू-मुस्लिम झगड़े …

जो हो, युद्ध अनिवार्य है, लेकिन युद्धोन्माद नहीं होना चाहिए। इसलिए हर सिपाही के पास गीता-प्रवचन होना चाहिए। निर्वैर लड़ना है, वैर नहीं करना है। लड़ना अनिवार्य हो तो लड़ना लेकिन वैर-भाव नहीं रखना—यह गीता की जो शिक्षा है, कभी लड़ना नहीं चाहिए इस सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक कठिन है। शस्त्र से लड़ना भी और वैर-भाव नहीं रखना, यह सबसे कठिन है।

अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध और अहिंसक प्रतिकार

मेरे पास एक और बात सामने आती है। जब अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध होता है आज के जमाने में, और ऊपर से बम बरसाते हैं दस-बीस जगहों पर, तो ऐसे समयों में क्या अहिंसक प्रतिकार हो सकता है? इसका कोई उत्तर मेरे पास नहीं है सिवाय इसके कि लाखों लोग फाका करके मर जाएँ, लेकिन यह व्यवहार्य दीखता नहीं। क्योंकि अहिंसा के लिए लाखों लोग फाका करके मर जायें, ऐसी ताकत हो तो उनकी सरकार भी अहिंसक होगी, लड़ेगी नहीं। गांधीजी ने भी क्या किया, असह-योग सिद्ध किया लेकिन अहिंसा नहीं सिद्ध की। इसके बारे में हम उनको दोष नहीं दे सकते। यह अभी खोज का विषय है।

ग्रामस्वराज्य अगर सफल हुआ, पाँच लाख गाँवों में ग्रामसभा बनी और ग्रामीण जनता की ओर से लोग चुने गये और जैसा मैं बार-बार कहता हूँ, उस प्रकार दल-मुक्त सरकार और सरकार मुक्त जनता हुई तो लोकमत से यूनीलेटरली हम आर्मी डिसबैण्ड कर सकते हैं और इसका असर दुनिया पर पड़ेगा।

फिर एक बात हमको और करनी होगी—साइन्स एण्ड स्पिरिचुएलिटी का मेल होना चाहिए। आज साइन्टिस्ट सारे सरकार के हाथ में हैं और सरकार जिस किसी काम की खोज में पैसा देती है वे वही खोज करते हैं। तो आज साइन्टिस्ट सियासत का गुलाम बन गया है। इसके बजाय साइन्टिस्ट यह करें कि हम अहिंसा के अनुकूल ही खोज करेंगे, भले हमें सरकार से एक कौड़ी न मिले। यानी उनकी आध्यात्मिक शक्ति प्रकट होगी तो दुनिया का रूप ही बदल जायेगा। (प्रवेश)
(११ दिसम्बर, '७१)

सर्व सेवा संघ का वक्तव्य

बंगला देश की जनता और सरकार का अभिनन्दन

सर्व सेवा संघ ने भारत सरकार द्वारा बंगला देश की स्वतन्त्र सरकार को मान्यता दिये जाने पर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की है और बंगला देश की जनता और सरकार का अभिनन्दन किया है।

संघ द्वारा प्रसारित एक प्रति में इस बात पर खेद प्रकट किया गया है कि "विश्व के अनेक देशों के प्रबुद्ध लोगों का समर्थन बंगला देश को प्राप्त है लेकिन कई देशों की सरकारों ने वहाँ की मुख्य समस्या के प्रति अपनी आँखें बन्द कर लेना ही ठीक समझा है। दुनिया के बड़े लोकतन्त्रों में से एक अमेरिका की सरकार … प्रकार की नैतिक और आर्थिक मदद देती रही है। दुनिया के लोकतन्त्र की आलोचना के बावजूद ऐसी सहायता का दिया जाना अमेरिका सरकार की नवसाम्राज्यवादी नीति को जाहिर करता है। सैनिक तानाशाही सरकारों के साथ अमेरिका का यह गठबन्धन विकासशील देशों की जनता के लिए बड़ा खतरा है।

"यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है, विश्व की महाशक्ति बनने की महत्वाकांक्षा में चीन भी शोषण-मुक्ति, जन-क्रान्ति, मानवता आदि के सारे ध्येय और सिद्धान्तों को ताक में रखकर सैनिक तानाशाही का समर्थन कर रहा है।

बंगला देश : समस्या और निदान

—इन्द्रनारायण तिवारी

दर्द और आनन्द के दो किनारे पर खड़ा इस नवोदित गण-प्रजातन्त्री बंगला देश का अभिनन्दन है। कष्टों की गलियों में बंगवासियों का कारवाँ कितने मुक्त ढंग से बढ़ता आ रहा है। वे अपने-अपने वीरान घरों को लौट रहे हैं। मानव इतिहास में सामूहिक मुक्ति का ऐसा आनन्द देखने को नहीं मिला था। फिर दर्दों के कारवाँ का उदाहरण इतिहास में नहीं मिलता। लाखों मृत्यु के घाट उतारे गये। लाखों बिना अन्न-पानी के मर गये हैं। अब पूर्व बंगवासियों की अनुभूतियों पर वर्तमान की दिक्कतों पर आधारित एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण करना है जो न केवल साढ़े सात करोड़ बंगवासियों को स्वच्छन्द जीवन प्रदान करे प्रत्युत सम्पूर्ण एशिया और विश्व के लिए एक उदाहरण बन जाय।

शान्ति की बेचैनी

अनन्त भारतीय जवान और मुक्ति-वाहिनी ने आत्म बलिदान देकर शान्ति को प्राप्त किया। लेकिन शान्ति की बेचैनी कितनी घनीभूत है। सैनिक कत्लेआम को, बरबादी को, कष्टों की बौछार को सभी याद करते होंगे। लेकिन एक प्रश्न हर मन-मन्दिर को व्यथित करता होगा। एक ही दीपशिखा की ओर १५ करोड़ आँखें लगी हैं। एक ही दीपपुञ्ज की खोज हो रही है। वे हैं बंगबन्धु। यह खोज है एक सच्चे दीनबन्धु की।

बंगबन्धु को बिना छुड़ाये सच्ची शान्ति इस क्षेत्र में स्थापित नहीं की जा सकती है। उनके छुड़ाने के लिए अमेरिका के राष्ट्रपति, जो बड़ी लम्बी-लम्बी बातें करते हैं, उनसे रावलपिंडी के नये शासक पर दबाव डालने को कहा जाय। फिर पाकिस्तानी नागरिक प्रशासक, गवर्नर और सेना के जवानों को तब तक न छोड़ा जाय जब तक शेख मुजीबुर्रहमान को मुक्त न करा लिया जाय। फिर पाकिस्तान की जिस भूमि पर भारतीय सेना का कब्जा है वह उसे तब तक न दिया जाय जब तक बंगबन्धु जेल से बाहर नहीं आ जाते हैं। यह युद्ध अपने में एक अनोखा है, अतः जेनेवा समझौता तक ही हम सीमित नहीं रहें, हमें तो उसकी कमियों को भी दूर करना है। बंगबन्धु को छुड़ाने के लिए अगर जेनेवा समझौता की 'शान्ति सुरक्षा' धारा को एक नया अर्थ दे सकें तो हम अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति सुरक्षा के ज्ञान-कोष में बंगला देश और भारतवासियों की एक बहुत बड़ी देन होगी।

बंगबन्धु की अनुपस्थिति में भी जो सरकार बनेगी वह अच्छी होगी यह भरोसा तो है लेकिन उनके रहने पर एक ऐसे जीवन-रचना का सवरण हो सकता है जो "सत्यमेव जयते" के मन्त्रों से अभिमन्त्रित होता और वे अपनी तपस्या एवं त्याग के ऊपर एक जन-राजनीति की रचना करते, जबकि सम्पूर्ण बंगला देश इस क्रान्ति के बाद एक नयी स्लेट मात्र है।

इरादे की घोषणा और प्राप्ति की तृष्णा

बरबस मन में अनेक भाव-तरंगें उठती हैं। कहाँ तक यह नैतिक होगा कि हम भारतीय उनके बारे में सोचें जब वे स्वयं अपने सुकर्मों से दूसरों को सोचने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। फिर भी मात्र आत्म-सन्तोष के लिए कुछ लिखना है।

इरादे की घोषणा हो चुकी है। अब ६ सूत्रों को यहाँ कहने की जरूरत नहीं है। लेकिन जिन उद्देश्यों के लिए ६ सूत्रों की लड़ाई लड़ी गयी, उसका विस्मरण तो नहीं किया जा सकता। सरकार प्रजातान्त्रिक हो। कुल १६२ राष्ट्रीय संसद और ३१३ राज्य एसेम्बली के सदस्यों का चुनाव गत दिसम्बर में हो चुका है। उनमें से बहुतों को पाकसेना मृत्यु के घाट उतार चुकी है। कुछ खोये हैं। अब एक नये संविधान-सभा का गठन हो और बंगला देश के एकात्मक या संघात्मक संविधान का निर्माण हो। मूल सिद्धान्तों को संविधान में इस समय नहीं भुलाया जाय तो बंगबन्धु के ६ सूत्री कार्यक्रम का वह अभिन्न अंग है। पहली बात यह कि हर बंगवासी को जनमत का अधिकार मिले। सरकार की प्रणाली संसदीय हो और संसद सार्वभौम हो। फिर सरकार संसद के प्रति उत्तरदायी हो और हो सके तो बंगला देश की सरकार भी संघात्मक हो।

मूक पीड़ितों का कारवाँ

साथ-साथ कुछ समस्याएँ ऐसी हैं जिनके ऊपर शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है। १ करोड़ शरणार्थियों को बसाने का काम बड़ी मुस्तैदी के साथ होना चाहिए। सबकी जान-माल की सुरक्षा होनी चाहिए। इतना ही नहीं तूफान-पीड़ित क्षेत्रों में भी राहत-कार्य का चलना अत्यन्त आवश्यक है। फिर हजारों पाकिस्तानी सैनिकों के लिए भी एक तरह से राहत का कार्य तब तक करना होगा जब तक वे अपने देश को लौट नहीं जाते।

एजेण्डा पर क्या है ?

बंगला देश की सामाजिक एवं आर्थिक पुनर्रचना किस प्रकार की होगी इसके बारे में कुछ कह सकना कठिन है। इतना कहा जा सकता है कि १९५४ के २१ सूत्रीय कार्यक्रम और १९६९ के ११ सूत्रीय कार्यक्रम को भुलाया नहीं जा सकता। कुछ क्रान्तिकारी कार्यक्रम के बारे में जान लेना यहाँ उचित होगा। बिना मुआवजे के जमीन को राज्य के द्वारा प्राप्ति और भूमिहीनों में उसका वितरण होना आवश्यक है। छोटे किसानों की ओर ध्यान जाना अत्यन्त आवश्यक है। इतना ही नहीं, सम्पूर्ण बंगला देश में सिंचाई का प्रबन्ध इस प्रकार हो कि भोजन की कमी न रहे। बड़े-बड़े उद्योगों के साथ जूट-व्यापार

का समाजीकरण होना अत्यन्त आवश्यक है। फिर शिक्षा, सहकारिता और अन्य क्षेत्रों में भी सुधार लाने की आवश्यकता है। प्रशासन पर खर्च अत्यन्त कम होना आवश्यक है। इसके साथ-साथ ऊँचे और बहुत कम वेतन पानेवालों के बीच की खाइयों को समाप्त करना जरूरी है। १९५४ की घोषणा में तो यहाँ तक कहा गया था कि एक मंत्री मात्र १०० रु० में अपना जीवन-यापन करेगा। इस तरह के अनेक मुद्दे बंगला देश के विभिन्न राजनैतिक दलों ने वर्षों से अपने कार्यक्रम में रखे हैं। प्रश्न इन कार्यक्रमों की घोषणा का नहीं, वास्तविक परिस्थिति में उनको कार्यरूप देने का है। शोषण की विभीषिका से निकला हुआ बंगला देश अब एक क्षण के लिए भी विलम्ब नहीं कर सकता। अपने मात्र अस्तित्व के लिए वहाँ की सरकार को भूमिहीनों, छोटे किसानों, खेतिहर मजदूरों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के मजदूरों की दशा को शीघ्र ही ठीक करना होगा।

जनाधारित प्रशासन

बेशक बंगला देश में प्रशासकों की कमी होगी। उसकी पूर्ति कई तरीकों से हो सकती है। पूरे बंगाली ऑफिसर जो पाकिस्तान सिविल सर्विस में थे उन्हें एकत्रित किया जाय। फिर योग्य राजकीय सर्विस के ऑफिसरों को तरक्की देकर जगहों की पूर्ति की जाय। इसके अलावा स्कूल, कालेज, और राज्य प्रशासन के अन्य विभागों के प्रशासकों की पूर्ति की जा सकती है। कुछ भारतीय प्रशासक भी प्रारम्भ में अपनी सेवा अर्पित करने गये हैं। उन्हें अवश्य यह याद रहे कि वे वहाँ शासन नहीं सेवा करने गये हैं और फिर जितना शीघ्र हो वे लौट आने का प्रयत्न करें। इतना ही नहीं उन्हें अपने भारतीय प्रशासन सेवा की अकड़ को छोड़कर एक क्रान्तिकारी समाज की मनोभावना का आदर करते हुए नये परिवर्तन की घड़ी में अफसरशाही से दूर रहना होगा। अच्छा तो यह होगा कि अधिक-से-अधिक योग्य ऑफिसर जनता की सेवा के लिए बंगला देश के प्रखण्डों में जायँ न कि सचिवालय में अपने ज्ञान-गगरी की होली खेलते रहें। इस अनुभूति से भारत के प्रशासकीय प्रक्रिया को एक नयी अनुभूति प्राप्त होगी।

विश्वनीडम् की मात्र इकाई

बंगला देश की मान्यता से यह एक 'विश्वनीडम्" की सफल इकाई हो पायेगा। मान्यता-प्राप्ति की सभी योग्यताएँ इसके पास हैं। सम्पूर्ण बंगदेश पर नयी सरकार का आधिपत्य है। एक स्थायी प्रशासन-प्रणाली कायम हो रही है। सम्पूर्ण जनमत का समर्थन प्राप्त है। नयी सरकार का जन्म एक सर्वमान्य क्रान्तिकारी प्रक्रिया में हो चुका है। फिर नयी सरकार अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध "ट्रीटी" के सहारे कर चुकी है। भारत और भूटान की मान्यता भी प्राप्त हो चुकी है। इतना ही नहीं विश्व के १३५ राज्यों में ११ बड़े महत्त्वपूर्ण साम्यवादी और प्रजातन्त्री राज्यों का समर्थन भी प्राप्त कर चुका है। बहुत उम्मीद है कि जिन देशों ने महासभा में अपना मत जाहिर नहीं किया या मतदान में भाग नहीं लिया है, उनसे भी नवोदित बंगला देश को मान्यता मिल जाय। किसी भी स्थिति में मान्यता देकर विश्व समुदाय स्वयं कृतार्थ होगा, क्योंकि नये बंगला देश के उद्भव में विश्व पुनर्रचना के बीज भी निहित हैं।

चन्द शक्ति या जनशक्ति

बरबस बंगवासी 'सोनार बांगला' का 'सच्चा' रूप रखने के लिए जनशक्ति को प्रश्रय दें, न कि 'चन्द शक्ति' को। जो जनता १९४८ से आज तक भाषायी क्रान्ति, शोषण के विरुद्ध क्रान्ति करती रही उस जन-भावना का आदर बराबर होना चाहिए। जो जनता १९६९ की क्रान्ति के बाद अयूबशाही को समाप्त कर सकी, जिस जनसमूह को एक करोड़ की संख्या में शरणार्थी के रूप में दर्द की घाटियों में महीनों बिताना पड़ा, जिस मानव समूह में से लाखों नर-नारी एवं बच्चों की हत्या कर दी गयी—उस जनजीवन की नवरचना में वहाँ की चन्द शक्ति अपना आधिपत्य न जमाये नहीं तो फिर क्रान्ति की ज्वाला भड़क सकती है। शेख मुजीब के जन-आन्दोलन को जिस छात्रवर्ग, मजदूर वर्ग और जनता ने सामूहिक रूप से सफल बनाने का प्रयत्न किया वह फिर एक बार एकत्रित जनशक्ति का प्रदर्शन नव आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर कर पायेगा।

जुटकर टूटे, टूटकर जुटे

लगता है इस भारत-महासागर तीर पर सदियों से जो अनेक अतिथि कारवाँ आते रहे हैं वही टूट-टूटकर सटते जायेंगे और नवमानव जाति का निर्माण होता रहेगा। भारत महाद्वीप में पचाने की क्षमता एक अजीब शक्ति है। मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, जो भी आये अपने बन गये, जो अपने नहीं बने उन्हें अपार कष्ट होता रहा। फिर अखण्ड भारत बराबर टूटता रहा, कई बार बिखरा और फिर संगठित हो गया। भारत नीति में जब-जब "सत्यमेव जयते" की सीमा का उल्लंघन करता है, टूटता है और उपहार में मिलता है विघटन और आत्मसमर्पण। जब-जब यह "असतो मा सद्गमय" की परम्परा पर चलता है तो भारत भौतिक दृष्टि से सोने की चिड़िया बन जाता है और नैतिक एवं सांस्कृतिक जीवन की उड़ान मारता है।

हाल ही में पाकिस्तान बना और फिर बंग देश का नवागमन। इस तरह टूटकर जुटने और जुटकर टूटने की परम्परा में हम सबको निराशा-मुक्त होकर भारत जैसे महाद्वीप सागर तीर पर "वीर भोग्या और समाज भोग्या वसुंधरा" के आधार पर अपने-अपने जीवन को सुख और दुख, शान्ति और अशान्ति के तरंगों में बराबर तरंगित करते रहना है। ●

विकास और भ्रान्ति का एक नमूना

—सिद्धराज ढड्ढा

पटना के अंग्रेजी दैनिक 'इण्डियन नेशन' के २२ नवम्बर १९७१ के अंक में एक समाचार छपा था कि दरभंगा जिले के सम्पूर्ण मधुबनी सब-डिवीजन में दंड-विधान की धारा १४४ लागू कर दी गयी है। दरभंगा बिहार का ही नहीं देश का सबसे बड़ा जिला है। उसकी आबादी करीब ५० लाख है। जिले में तीन सब-डिवीजन या अनुमंडल हैं जिनमें से मधुबनी एक है। इस अनुमंडल की आबादी २० लाख के आसपास है।

सैकड़ों वर्ग मील और लाखों की आबादीवाले समूचे क्षेत्र में धारा १४४ लागू होने का कारण कोई दंगा या विद्रोह नहीं है, लेकिन यह बताया गया है कि अगहनी धान (चावल) की फसल पकने पर गाँव-गाँव में बड़े पैमाने पर फसल लूटे जाने का खतरा पैदा हो गया है। मधुबनी के अनुमंडलीय अधिकारी (एस० डी० ओ०) के अनुसार कई गाँवों में फसल लूटे जाने की वारदातें शुरू भी हो गयी हैं और पुलिस की सामान्य कार्रवाई से लूट-पाट को बढ़ने से रोकना असम्भव है। मधुबनी अनुमंडल में १८ थाने हैं जिनमें हर एक में केवल ९ पुलिस के जवान तैनात हैं।

संयोग से अखबार के इसी अंक में इसी पृष्ठ पर २१ नवम्बर को गुजरात राज्य के धरोई नामक स्थान पर साबरमती नदी के बाँध की आधारशिला रखते हुए भारत की प्रधानमंत्री की यह गर्वोक्ति मोटे अक्षरों में छपी है कि इस वर्ष की फसल पिछले सब सालों की अपेक्षा अच्छी हुई है और "हमारे पास देश के तमाम लोगों को खिलाने के लिए भरपूर अनाज है, इतना ही नहीं, इसके अलावा हमारे भण्डार भी भरे हुए हैं।"

एक तरफ सबकी भूख बुझाने के लिए भरपूर फसल और भरे हुए अन्न-भण्डार, तथा दूसरी ओर गाँव-गाँव में फसल लूटे जाने के डर से हजारों गाँवों के पूरे क्षेत्र में धारा १४४, यह कैसी विडम्बना और कैसी विसंगति? देश में खूब 'विकास' हुआ है, जगह-जगह बाँध बँधे हैं, कारखाने लगे हैं, खेती में भी अब तो 'हरित क्रान्ति' हो गयी है और पैदावार खूब बढ़ रही है। विकास हमारा नया देवता ही बन गया है। स्वर्गीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भाखरा बाँध को देश का नया तीर्थ-स्थान बताया था। उनकी सुपुत्री, वर्तमान प्रधानमंत्री भी प्रसन्न हैं कि देश में अनाज खूब पैदा हुआ है, और 'भण्डार भरपूर' है। लेकिन दूसरी ओर गाँव-गाँव में आतंक और कर्फ्यू, लाठी और गोली। इसका क्या कारण है?

आये दिन पण्डित लोग, देश के अर्थशास्त्री, राजनेता और धनपति, सब यही कहते हैं कि उत्पादन बढ़ाओ, उसीसे सब समस्याएँ हल हो जायेंगी। हमारे जैसे लोग अगर यह कहते हैं कि भाई, उत्पादन तो जरूर बढ़ाओ, लेकिन अब बड़ी-बड़ी पंचवर्षीय योजनाएँ सफल होने में, फसल बढ़ाने में, और कारखाने में माल तैयार होकर लोगों तक पहुँचाने में जो समय लगेगा उस बीच अपनी रोटी में से थोड़ा-सा हिस्सा भूखे मुँह तक क्यों नहीं पहुँचाते वरना इसी बीच वह भूखा मर जायगा, तो जवाब मिलता है कि ये 'कैसे दकियानूसी लोग हैं जो गरीबी बाँटने की और खाते-पीते को भी गरीब बनाने की बात करते हैं? दुनिया में भाई-भाई में भी प्रेम नहीं है और ये लोग गरीब को कुछ देने की बात करते हैं? यह कोरा आदर्शवाद है। इस गरीब देश में वास्तव में अमीर है ही कौन?' कहते हैं, देश एक है। देश के लिए सबको कुर्बानी करनी चाहिए। और फिर गरीब को मरने से बचाने के लिए अपने पास से कुछ बाँटने की बात को अव्यवहार्य बताकर टाल देते हैं! व्यवहारवाद तथा समझदारी का नमूना तो यह है कि एक तरफ प्रधानमंत्री भण्डार भर जाने से अपनी योजनाओं की सफलता पर गर्व कर रही हैं, और उसी दिन भूखों की लूट-पाट के डर से सैकड़ों-हजारों गाँवों में धारा १४४ लगानी पड़ती है, घुड़सवार, पुलिस और बन्दूकधारी सिपाही तैनात करने पड़ते हैं।

और ऐसी कार्रवाही भी तो सरकार पर्याप्त रूप से नहीं कर सकती। इसी खबर में आगे बताया गया है कि कुछ दिन पहले प्रदेश के राज्यमंत्री (गृहमंत्री) ने सब सम्भावित अराजकता और लूट-पाट रोकने के लिए देहात में निरोधक कार्रवाई तथा घुड़सवार पुलिस तैनात करने का तय किया तो भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी ने इसका घोर विरोध किया। और चूँकि बिहार विधानसभा में सरकार से बाहर जो दल हैं उनमें कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थिति निर्णायक (बैलेंसिंग) है इसलिए सरकार उनके विरोध की उपेक्षा नहीं कर सकी और सुरक्षा की वह योजना छोड़ देनी पड़ी। स्पष्ट है कि आज की राजनीति के चलते जनता की सुरक्षा भी सम्भव नहीं है।

कुछ ज्यादा समझदार लोग कहते हैं कि ये भूखे और गरीब बड़े कृतघ्न हैं। जो हो रहा है उससे उनको सन्तोष ही नहीं होता। अपनी आकांक्षाएँ बढ़ाते जाते हैं। इतना ही नहीं ये कमबख्त बच्चे भी पैदा करते जाते हैं, और फिर कहते हैं कि गरीबी नहीं मिटती। लेकिन इन बुद्धिमान लोगों की समझ में यह नहीं आता कि वे खुद ही अपनी ऐश-आराम और विलास की जिन्दगी से, बड़े-बड़े बंगलों और शानदार मोटरों के अकारण उपयोग से, अपने बेटे-बेटियों की शादी में लाख-लाख आदमियों को दावत करने से, गरीबों की आकांक्षाओं और लिप्साओं को बढ़ाते हैं। उनके ध्यान में

यह वैज्ञानिक तथ्य भी नहीं आता कि आबादी बढ़ने का एक बड़ा कारण गरीबी और बेकारी भी है, क्योंकि मनुष्य का काम छिन जाने से उसकी स्वाभाविक सृजनात्मक शक्ति एक ही तरफ मुड़ती है। ये समझदार लोग अपने खुद के स्वार्थ, अपनी शोषणवृत्ति के कारण ही आम जनता के हाथ से उद्योग-धन्धे छीन-कर उन्हें बेकार और गरीब बना रहे हैं। इन बढ़ती जाती जनसंख्या के लिए वे स्वयं भी बहुत हद तक जिम्मेदार हैं। असन्तोष और ईर्ष्या तब बढ़ती है जब गरीब देखता है कि दो हाथ होते हुए भी उसे काम नहीं मिलता और भण्डार भरे रहने पर भी उसे रोटी नहीं मिलती तथा दूसरी तरफ समाजवाद की बात करने-वाले, लोक-कल्याण और जनहित की दुहाई देनेवाले, अपने ऐशोआराम और सुख-सुविधाओं को छोड़ने या अपनी रोटी में से कुछ हिस्सा बंटाने को तैयार नहीं हैं।

विकास और प्रगति के झूठे नारों से, उत्पादन बढ़ाकर समस्याओं का हल करने के पीछे पड़ियवाद से दूर अपने ऐशो-आराम को न छोड़कर लोगों को सतोष का पाठ पढ़ाने, अपनी नीतियों की असफलता को तथा शोषण की अपनी जिन्दगी को ढकने के लिए जनसंख्या-बढ़ोतरी का बहाना बनाने से और समाजवाद तथा लोक-कल्याण के नाम पर केवल अपनी सत्ता-शक्ति बढ़ाने वाले की मक्कारी से ऊपर उठकर क्या हम वस्तु-स्थिति पर ध्यान देंगे? विज्ञान और जन-जागरण के इस युग में लाठी, गोली और धारा १४४ कब तक हमारी रक्षा करेगी?

[नोट:—यह लेख पाकिस्तान के आक्रमण के पहले लिखा गया था। पर इसमें जिन बुनियादी विषमताओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है, वे कायम हैं, चाहे इस वक्त वे राष्ट्रवाद की उमड़ती हुई भावनाओं के नीचे दब गयी हों—लेखक]

गरीब : वे कौन हैं?

५—इतनी कठोर गरीबी में जीने-वाले ये गरीब कौन हैं, और इनकी गरीबी के कारण क्या हैं?

एक बात साफ दिखाई देती है कि अधिक आश्रितों का होना और गरीबी का सीधा सम्बन्ध है। ग्रामीण जनता में १० प्रतिशत का जो सबसे निचला भाग है उसमें एक औसत परिवार में ५.८७ व्यक्ति हैं। जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं यह संख्या कम होती जाती है यहां तक कि सबसे ऊपर के १० प्रतिशत परिवार ३.७८ व्यक्तियों के ही हैं। शहरों में सबसे गरीब १० प्रतिशत परिवारों में ६.०९ व्यक्ति हैं, और ऊपर के सबसे धनी परि-वारों में २.२५ सदस्य। महत्त्व इसका नहीं है कि परिवार कितना बड़ा है, बल्कि इस बात का है कि कमानेवाले और उनके आश्रित कितने हैं, और कुल कमाई कितनी है।

६—गांवों में गरीबी का एक बहुत बड़ा कारण है भूमि का न होना। गांव में भूमिहीन सबसे गरीब होता है क्योंकि अपनी मेहनत के सिवाय उसके पास जीने का दूसरा सहारा नहीं है।

१९५६-'५७ में ग्रामीण परिवारों के २५ प्रतिशत खेतिहर मजदूरों के थे। १९६३-'६४ में यह संख्या घटकर २० प्रतिशत हो गयी, लेकिन ५ प्रतिशत गैर-खेतिहर-मजदूर-परिवार बताये गये। मजदूर-परिवारों में ६० प्रतिशत के पास भूमि बिलकुल नहीं थी, और वे खालिस श्रम-जीवी थे। शेष ४० प्रतिशत के पास भूमि के अपने छोटे-छोटे टुकड़े थे, फिर भी मुख्य आमदनी मजदूरी की ही थी। मजदूरों में तीन-चौथाई आकस्मिक (कैजुअल) मजदूर थे, जो काम मिलने पर काम करते थे नहीं तो बेकार रहते थे। एक-चौथाई स्थायी मजदूर थे जो किसी मालिक के साथ जुड़े हुए थे। उनके पास साल भर का काम था। उन्हें चाहे मालिक ने भूमि दी थी, या वे कर्ज की अदायगी में मालिक का काम करने के लिए विवश थे।

नीचे के टेबुल में विभिन्न राज्यों में ग्रामीण मजदूर-परिवारों का बंटवारा दिखाया गया है।

राज्य (१)	१९६३-'६४ ग्रामीण श्रमिक परिवार (कुल ग्रामीण परिवारों का प्रतिशत): जिनके पास कुछ भूमि है (२)	बिलकुल भूमिहीन (३)	जोड़ (४)
१. जम्मू-कश्मीर	१.२५	१.२५	२.५०
२. केन्द्र-शासित क्षेत्र	३.२०	४.३५	७.५५
३. राजस्थान	५.३८	६.४०	११.७८
४. उत्तर प्रदेश	७.७०	७.५०	१५.२०
५. पंजाब-हरियाणा	२.३८	११.४५	१५.८३
६. असम	६.७४	९.१८	१५.९२
७. गुजरात	२.४६	१७.३३	१९.७९
८. मध्यप्रदेश	१०.७६	११.८४	२२.६०
९. मैसूर	७.४३	१६.१३	२३.५६
१०. उड़ीसा	१२.६०	१७.१५	२९

११. महाराष्ट्र	८.६७	२१.३३	३०.००
१२. बिहार	१५.९४	१६.९४	३२.८८
१३. प० बंगाल	१२.८७	२०.९५	३३.८२
१४. आन्ध्र प्रदेश	१०.०५	२४.६९	३४.७४
१५. तमिलनाडु	१०.३३	२५.९८	३६.३१
१६. केरल	२४.८३	११.८७	३६.७०
१७. भारत	९ ९९	१५.५४	२५ ५३
(खेतिहर भारत मजदूर परिवार)	८.१२	१२ ७९	२० ९१

ऊपर के चार्ट से स्पष्ट है कि खेतिहर-मजदूरों की संख्या सबसे अधिक दक्षिण में केरल, तमिलनाडु और आन्ध्र में है—एक-तिहाई से अधिक—और उत्तर में प० बंगाल, बिहार, और उड़ीसा में है—एक तिहाई। महाराष्ट्र में खेतिहर मजदूर ३० प्रतिशत हैं।

नीचे के टेबुल से भारत के विभिन्न भागों में खेतिहर मजदूरों की आर्थिक स्थिति का अनुमान होता है। ये आँकड़े १९५६-'५ के हैं.

सालाना प्रति व्यक्ति उपभोक्ता खर्च (रुपये में)	उत्तर भारत	पूर्व भारत	दक्षिण भारत	पश्चिमी भारत	मध्य भारत	उत्तर पश्चिम भारत	पूरा भारत
१०० रु० तक	२७.७७	२२.६४	२९.९६	२३.९८	३७.१३	११.१२	२५.८८
१०१ से १५०	३३ ९२	२८.९२	२९.४१	३४ ०७	३५.२२	२५ ००	३१.०५
१५१ से २००	१९ २५	२१.६९	२०.२३	१९ १९	१४.३४	२२ ५३	१९ ९६
२०० से ऊपर	१९ ०६	२६ ७७	२०.४०	२२.९६	१५ ०१	४१.३२	२३.११

हमने माना है कि ग्रामीण जीवन में १५ रु० प्रति व्यक्ति प्रति माह, या १८० रु० प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष, की आय न्यूनतम होनी चाहिए। १९५६-'५७ के मूल्यों पर यह रकम १५० रु० होती है। इसके अनुसार ५७ प्रतिशत खेतिहर मजदूर इस रेखा के नीचे थे। भारत के मध्य क्षेत्र में यह प्रतिशत ६८.७ है। उत्तर एवं दक्षिण भारत में ६० प्रतिशत है। यह भी है कि गाँवों में जो परिवार प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष १०० रु० की सीमा के नीचे रहते हैं उनमें ४० प्रतिशत खेतिहर मजदूरों के परिवार हैं। दक्षिण भारत में ऐसे परिवारों का प्रतिशत ५० से अधिक है।

७—ग्रामीण गरीबों में लगभग आधे खेतिहर मजदूर हैं, और आधे छोटे खेतिहर। १९५५-'५६ में प्रति व्यक्ति प्रति माह आमदनी के अनुसार छोटे खेतिहरों का विभाजन इस प्रकार है .

१९५५-'५६

छोटे खेतिहर प्रति व्यक्ति प्रति माह उपभोक्ता खर्च के अनुसार

कितना खेत : (एकड़ में)	प्रति व्यक्ति प्रति माह उपभोक्ता खर्च (रुपये में)				
	०—८	८—११	११—१३	१३—१५	१६ और ऊपर
०.०१—०.४९	२५.९७	३६.१३	१५.२५.	४.६९	१७.९६
०.५०—०.९९	२१.३५	३८ ०९	१४.८२	८'५१	१७.२३
१.००—१.४९	२१.८४	३५.२२	१७.७९	५.२०	१९ ८५
१.५०—२.४९	१७.८१	३३.१५	१६.६३	१०.१०	२२.३१
२.५०—३.४९	१५.९२	.३३.२४	१४.२४	९.९०	२६.७०
३.५०—४.९९	११.१५	२६.९२	१९.७०	११.७४	३०.४९

०.५ एकड़ तक खेत रखनेवालों की स्थिति वस्तुतः वैसी ही है जैसी भूमिहीन की। जैसे-जैसे ऊपर जाते हैं स्थिति कुछ-कुछ अच्छी होती दिखाई देती है। लेकिन ५ एकड़ के नीचवाले भी—यानी ६० प्रतिशत—१३.०० प्रति व्यक्ति प्रति माह से नीचे ही रहते हैं।

यह स्पष्ट है कि गाँव में ५ एकड़ भूमिवाले भी घोर गरीबी की जिन्दगी बिता रहे हैं। उस श्रेणी में गाँव के दस्तकार भी शामिल हैं। शहरों में जो गरीब दिखाई देते हैं वे अक्सर गाँव के ही गरीब हैं जो रोटी की तलाश में शहरों में पहुँच गये हैं। ●

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन

बिहार का प्रथम ग्रामस्वराज्य सम्मेलन २४, २५ फरवरी १९७२ को होना निश्चित हुआ है। यह सम्मेलन मुजफ्फरपुर जिले के वैशाली प्रखण्ड के सिहमा गाँव में सम्पन्न होगा। सम्मेलन की तैयारी प्रारम्भ हो गयी है। इस सम्मेलन में बिहार की ग्रामस्वराज्य-सभाओं के अध्यक्षों, मंत्रियों या प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया जायगा। बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन स्वागत समिति की ओर से निमंत्रण भेजा जायेगा। सिहमा पहुँचने के लिए मुजफ्फरपुर-सोनपुर रेलवे लाइन के गुरौल स्टेशन पर उतरना होगा। सिहमा गाँव की दूरी स्टेशन से ३ मील है।

सम्मेलन में शामिल होनेवाले सदस्यों को ५ रु० सदस्यता शुल्क देना होगा। सभी ग्रामस्वराज्य-सभाएँ अपने प्रतिनिधि सम्मेलन में अवश्य भेजें। पत्र-व्यवहार का पता—मंत्री, बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन स्वागत समिति, सिहमा, पो० गुरौल, जिला मुजफ्फरपुर।

युवा-आन्दोलन

युवजन सदा सामाजिक सुधार, परिवर्तन और क्रान्ति के संघर्ष में आगे आगे रहे हैं। रूस में बोल्शेविक दल के उभरने के बहुत पहले वहां के युवकों ने जार के शासन को समाप्त करने के लिए मैदान साफ कर दिया था। जिसकी शुरूआत १८६० में सेन्ट पीटर्स बर्ग के निहिलिस्ट आन्दोलन से हुई थी। तुर्की का उस्मानी साम्राज्य, जिसके आखिरी खलीफा सुल्तान अब्दुल हमीद थे, न उलटता अगर वहाँ के युवजनों ने मुक्ति का वह आन्दोलन नहीं आरम्भ किया होता, जिसे इतिहास में 'यंग तुर्क' आन्दोलन कहते हैं। इसी प्रकार इन्डोनेशिया में डा० सुकार्णो की सत्ता को खत्म करने में भी वहां के युवकों का ही हाथ था।

आज बंगला देश एक वास्तविकता है। बंगला देश का यह उदय मानव अधिकार, लोकतन्त्र और धर्मनिरपेक्षता के आदर्शों की जड़ें गहरी करेगा, और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को एक नयी दिशा देगा, जिसका आधार राष्ट्रीय हित से अधिक मानव हित होगा। बंगला देश के आन्दोलन की शुरूआत भी कुछ युवकों ने ही की थी। अगर २४ मार्च १९४८ को ढाका विश्वविद्यालय के समारोह में कुछ युवकों ने कायदेआज़म मुहम्मद अली जिन्ना के सामने प्रदर्शन करने की हिम्मत न की होती, अगर २ फरवरी १९५४ को रफीउद्दीन, सलाम, बरकत और २२ दूसरे युवक बंगाली अपनी भाषा और अपनी संस्कृति के साथ होनेवाले अन्याय का विरोध करते हुए शहीद न हुए होते, तो आज शायद बंगला देश न बना होता।

वे अमेरिका के युवक ही थे, जिन्होंने पहले पहल राष्ट्रीय हित को भुलाकर, मानव हित को सामने रखते हुए, वियतनाम में होनेवाले युद्ध का विरोध किया है, जिसके फलस्वरूप अमेरिका का जनमत वियतनाम में युद्ध का ऐसा विरोधी हुआ कि अमेरिकी सरकार को आज वियतनाम से अपने सैनिकों को वापस बुलाना पड़ रहा है। आशा है कि चेकोस्लोवाक विद्यार्थियों का विरलनामी अग्नि में अपने आप को जलाकर भस्म करना एक दिन रंग लायेगा और चेकोस्लोवाकिया से रूसी नियन्त्रण खत्म होगा। भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम में भी युवकों की बहुत बड़ी भूमिका रही है।

पेरिस से सैन्फ्रान्सिसको, न्यूयार्क से टोकियो, बर्लिन से ब्यूनैस आयर्स और रोम से रिओडिजनारियो तक हर जगह युवकों का आन्दोलन चल रहा है। कहीं यह आन्दोलन सीधे सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था से टक्कर ले रहा है और कहीं शिक्षालयों में मौजूदा शिक्षा-पद्धति का विरोध कर रहा है।

अमेरिका का युवा-आन्दोलन वियतनाम के युद्ध, शिक्षा, नौकरी और सरकारी स्थानों पर गोरे-काले के भेद के विरोध में चल रहा है। आज अमेरिकी समाज में हब्शियों को जो अधिकार मिले हैं, उनमें अमेरिका के युवक-आन्दोलन का बड़ा हाथ रहा है। पूर्वी यूरोपीय देशों में युवक-आन्दोलन विदेशी शासन के विरुद्ध है। दूसरे शब्दों में उन देशों का आन्दोलन राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता के लिए एक संघर्ष है। भारत में यह आन्दोलन नौकरी, भाषा और आर्थिक समानता के लिए है। कुछ प्रान्तों में राजनैतिक उद्देश्यों के लिए, जिसमें केन्द्र और राज्य (प्रान्त) के अधिकार भी मुख्य हैं। भारत के विश्वविद्यालयों में यह आन्दोलन शिक्षा की पद्धति और उसकी व्यवस्था के विरुद्ध है। कभी लड़के इसलिए प्रदर्शन करते हैं कि किसी कुलपति को हटा दिया जाय, कभी इसलिए हंगामा होता है कि जितनी सुविधाएँ उन्हें प्राप्त होनी चाहिए थीं, प्राप्त नहीं हैं। और कभी मुफ्त भरती के लिए वे शोर करते हैं।

ब्रिटेन के विश्वविद्यालयों में और फ्रान्स के शिक्षालयों में इसलिए आन्दोलन होता है कि शिक्षा की व्यवस्था में लड़कों को बराबर का प्रतिनिधित्व दिया जाय, व्यवस्था में उनकी सलाह ली जाय और समाज में जो सुविधाएँ प्राप्त हैं, वही सुविधाएँ उन्हें शिक्षालयों के अन्दर दी जायें।

हारवर्ड, लंदन, बर्लिन, और बनारस के युवक-आन्दोलनों को देखने से यह पता लगता है कि वे ऐसी शिक्षा से सन्तुष्ट नहीं हैं जो सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की वास्तविकताओं और आवश्यकताओं से अलग अलग है। वे ऐसी शिक्षा चाहते हैं जो सामाजिक उत्तरदायित्व को निबाहने और सांस्कृतिक विकास में ठोस मदद दे सके। वे नये विचार, नये मूल्य, और पढ़ाई के, रहन सहन के, और नौकरी के नये तरीकों की खोज में हैं। यह कहना गलत न होगा कि शिक्षालय विचार के संघर्ष-केन्द्र हैं। वे चाहते हैं कि विज्ञान और शिल्प विज्ञान के मूल्यों के अनुसार आज की शिक्षा हो। वे यह महसूस करते हैं कि विश्वविद्यालयों की व्यवस्था में जो लोग हैं, क्या परिवर्तन लाया जाय इसके वास्तविक स्वरूप से अपरिचित हैं। इसलिए वे चाहते हैं कि वहाँ की व्यवस्था में उन्हें बराबर का प्रतिनिधित्व दिया जाय। व्यवस्था के सिलसिले में जो फैसले किये जाते हैं उन फैसलों पर युवकों का प्रत्यक्ष प्रभाव हो। और इसके लिए उन्हें विश्वविद्यालय की सिनेट, कौंसिल, एकेडेमिक बोर्ड, और समितियों में बराबर का प्रतिनिधित्व दिया जाय। ये लोग उन लोगों के सामने उत्तरदायी होंगे जिनका ये प्रतिनिधित्व करेंगे। इनका प्रतिनिधित्व बिलकुल लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों पर हो। यह सच है कि इन्हें व्यवस्था की पद्धति का पूरा अनुभव नहीं है, परन्तु इन्हें इस बात का अनुभव जरूर है कि जिन्हें शिक्षा दी जाती है वे क्या चाहते हैं, क्या सोचते हैं, और उनकी क्या इच्छा है।

यह बात अक्सर कही जाती है कि युवकों के आन्दोलन का चरित्र ध्वंसात्मक, उग्रवादी, असम्बद्ध, और राजनैतिक है।

है बात सही है, परन्तु इसका कारण यह है कि उनका वातावरण राजनैतिक है, और वह एक राजनैतिक वातावरण में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं, एक ऐसा वातावरण जहाँ नेतृत्व वादे तो बहुत कुछ करता है, परन्तु उनपर अमल बहुत कम ही करता है और जहाँ समस्याओं के वास्तविक हल के लिए किसी ठोस तरके के बजाय नारों का प्रयोग होता है।

युवकों के आन्दोलन से शिकायत रखने वालों को यह समझना चाहिए कि शिक्षालय कोई बाजार नहीं है जहाँ केवल दूसरे की कीमत पर लाभ उठाने की कोशिश की जाय।

कौनवेन्ट्रि, तारिक अली, ए० ई० सोलोमन के नेतृत्व में चलनेवाले आन्दोलन यह बताते हैं कि युवकों को इसका विश्वास है कि समाज रोगी है और वे अपने विश्वविद्यालयों में उसी रोगी समाज का प्रतिबिम्ब पाते हैं। इसलिए चाहते हैं कि या तो उन्हें नष्ट कर दें या उन्हें सामाजिक क्रान्तियों के केन्द्रों में बदल दें। वे समाज और उसके मूल्यों को स्वीकार नहीं करते। उनका आन्दोलन ऐसे समाज और ऐसे मूल्यों के आगे एक प्रश्न चिह्न है। वे सच्चाई की ठोस बुनियादों पर एक नयी दुनिया बसाना चाहते हैं। आनेवाले कल की बुनियाद की वे आज शुरूआत करना चाहते हैं। वे काम करने के नये तरीके निकालने के इच्छुक हैं। ५-६ हजार साल का लिखित इतिहास यह बताता है कि यह इच्छा और यह बेचैनी ही सच्ची प्रगति को जन्म देती है। आज का युवक-आन्दोलन एक नयी उभरने वाली दुनिया के लिए संघर्ष है। युवक अर्थहीन मूल्यों, निरर्थक रीति-रिवाजों, दकियानूसी परम्पराओं को मिटा देना चाहते हैं और नयी बुनियादों पर एक नया समाज बनाना चाहते हैं—एक ऐसा समाज जो सभी के प्रति न्याय और असली सहानुभूति रखता हो। इन युवकों को, अपनी भावनाओं और इच्छाओं का, जिनके कारण उनके आन्दोलन होते हैं, पूरा-पूरा पता है, और उनमें आत्म-विश्वास भी है।

सच्चाई यह है कि युवकों के द्वारा आज विश्वविद्यालयों में आधुनिक युग की सभी समस्याओं पर विचार किया जा रहा है—खुले तौर से और खुले दिमाग से। अगर कोई कमी रह जाती है तो इसका कारण है कि कुछ दूसरे लोगों में उनको सहन करने की शक्ति नहीं है। युवक अपनी राय देना चाहते हैं और मानी हुई राय को चेतावनी। आज की दुनिया में जो अन्याय होते हैं, वे उन्हें बहुत गहराई से महसूस करते हैं और जब वे यह देखते हैं कि दूसरे लोग उन समस्याओं के हल के लिए तैयार नहीं हैं, तो अपने आप को मजबूर पाकर आन्दोलन करते हैं।

उनका आन्दोलन और तीव्र होता है जब युवकों को यह पता लगता है कि उनके आन्दोलन की दूसरों पर प्रतिक्रिया तो होती है, परन्तु वे गम्भीरतापूर्वक और समझदारी से समस्याओं पर गौर करने के लिए तैयार नहीं हैं। युवकों के आन्दोलन की आलोचना करने के बदले यह ज्यादा अच्छा होगा कि उन्हें अपना जीवन बिताने के लिए अधिक-से-अधिक स्वतंत्रता दी जाय। 'पिताजी' किस्म के लोग उन पर अपनी छाया डालने की कोशिश न करें। युवकों को स्वयं जिस प्रकार का समाज और जैसी संस्था चाहिए इसका पूरा-पूरा एहसास है। इसका अर्थ यह नहीं है कि समाज की शान्ति को भंग होने दिया जाय।

युवकों के आन्दोलन का कारण यह है कि वे सामाजिक समस्याओं से परिचित हैं। अपने अधिकार और उत्तरदायित्व समझते हैं, परन्तु समाज ने कोई ऐसा तरीका नहीं विकसित किया है जिससे उन समस्याओं का रचनात्मक समाधान हो सके। यही कारण है कि वे अक्सर तोड़-फोड़ की कार्रवाई करते हैं, और समाज के विरुद्ध अपना विद्रोह प्रकट करते हैं।

—मुस्तफा कमाल

विनोबा निवास से

भाऊ (पानसे) की बेटी रेखा का विवाह अभी हुआ। विवाह के दूसरे दिन भाऊ रेखा तथा उसके पति अशोक कुछ अन्य मेहमानों के साथ पधारे। भरत राम मन्दिर में सुबह ९-३० बजे सब इकट्ठा बैठे।

भाऊ बाबा के पास बारह साल की उम्र में आये थे। तब से लगातार बाबा के काम में रहे। बाबा की विशेष प्रीति भाऊ पर है।

बाबा ने मंगलं भगवान विष्णु का श्लोक प्रारम्भ किया और उनकी आँखें छलछलायीं। मंगल भगवान विष्णु। मंगल गरुडध्वज. इस मंगल वचन से प्रारम्भ कर बाबा ने कहा, मैं गृहस्थाश्रम को बहुत पवित्र मानता हूँ। हम सब अभी भगवान राम के मन्दिर में बैठे हैं। भाऊ के जीवन में राम की भक्ति है। उसी वातावरण में यह बेटी पली है। उसका कल विवाह हुआ। उस निमित्त से मैं उसे और उसके पतिदेव को गीता-प्रवचन की एक-एक प्रति दे रहा हूँ। उस पर एक वाक्य मैंने लिख रखा है, वह मैं पढ़कर सुनाता हूँ।

"सत्य + संयम + सेवाभाव = गृहस्थाश्रम
बाबा के आशीर्वाद"

× × ×

"आत्मा इस शरीर में आने से पहले कहाँ थी ?" एक भाई का प्रश्न।

"यह आकाश है। यह मकान बनने के पहले आकाश कहाँ था ? यहीं था। मकान बनने के बाद भी यहीं है। मकान गिर जायेगा, तब भी यहीं होगा। वैसे ही आत्मा है और वह तो आकाश से भी अधिक व्यापक है और सूक्ष्म है। वह अपना स्थान छोड़ता नहीं। शरीर आते हैं और जाते हैं। कैसे ? बादल आये और बादल गये। आकाश कायम है।" बाबा का जवाब।

बाबा इन दिनों अपनी कुटी के पास टहलते हैं। दिनभर में तीन बार मिलकर डेढ़ घंटे में तीन मील घूमना होता है। स्वास्थ्य ठीक है। —कुसुम

२६ जनवरी, गणतंत्र-दिवस ग्रामस्वराज्य-सभाएँ कैसे मनायें ?

१—जमालाबाद (मुजफ्फरपुर) में २३, २४ दिसम्बर को बिहार के पुष्टि-क्षेत्रों में लगे हुए साथियों की जो त्रैमासिक गोष्ठी हुई थी उसने भी वैद्यनाथबाबू के सुझाव पर और प्रश्नों के साथ-साथ २६ जनवरी के गणतंत्र-दिवस को ग्रामदानी गाँवों में ग्रामस्वराज्य की भूमिका में मनाने के प्रश्न पर विचार किया। तय हुआ कि ग्रामस्वराज्य सभाएँ गणतंत्र-दिवस का समारोह जहाँतक सम्भव हो पूरी तैयारी के साथ मनायें। पूरे समारोह का एक मुख्य कार्य यह हो कि उस दिन "ग्रामस्वराज्य का संकल्प" जो यहाँ दिया जा रहा है, पढ़ा और दोहराया जाय। इस संकल्प-पत्र की प्रतियाँ हर क्षेत्र अपने लिए छपवा ले।

२—उस दिन के लिए जो कुछ और बातें तय हुईं वे सुझाव के रूप में यहाँ दी जा रही हैं। ग्रामस्वराज्य-सभाएँ अपनी सुविधा और परिस्थिति के अनुसार इसमें जोड़-घटाव कर सकती हैं।

(क) सुबह प्रभात-फेरी, (ख) झंडे का अभिवादन, (ग) अभिवादन के समय "ग्रामस्वराज्य के संकल्प" को अध्यक्ष या अन्य कोई व्यक्ति पढ़े और साथ-साथ ग्रामस्वराज्य-सभा के सब सदस्य, बच्चे आदि, उसे दोहराते जायें, (घ) प्रदर्शनी, बच्चों के खेल, कताई-प्रतियोगिता मिठाई-वितरण आदि। अच्छी खेती या कुशल पशुपालन जैसे उत्पादक कार्यों के लिए पुरस्कार भी दिये जा सकते हैं। (ङ) रात को नाटक, कवि-सम्मेलन आदि।

विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखा जाय कि उस दिन ये कार्य भी किये जायें, जैसे बीघा-कट्ठा-वितरण, ग्रामकोष की शुरुआत, पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना आदि।

३—समारोह में महिलाएँ शरीक हों। इस काम में महिला-शिक्षकों की सहायता ली जाय। पूरे समारोह में ग्रामस्वराज्य-सभाएँ स्थानीय विद्यालय, आचार्यकुल, तथा शान्तिसेना आदि को शरीक करें। इस अवसर पर ग्रामस्वराज्य के लिए अनुकूल भावना बनाने का सुव्यवस्थित प्रयत्न होना चाहिए।

संकल्प

"आज गणतंत्र-दिवस के अवसर पर हम गर्व के साथ अनुभव करते हैं कि हम एक स्वतंत्र देश के नागरिक हैं, तथा हमें अपने संविधान में बोलने, लिखने, कमाने-खाने, संगठन बनाने और अपना धर्म मानने के वे सब अधिकार प्राप्त हैं जो हमारे सम्मान और विकास के लिए आवश्यक हैं। आज के दिन हम अपने पड़ोसी बंगलादेश के, उसके फौजी तानाशाही से मुक्ति पाने पर, प्रसन्नता प्रकट करते हैं, और भारत के साथ स्वतंत्रता की बिरादरी में उसका स्वागत करते हैं।

हम मानते हैं कि स्वतंत्रता के पिछले चौबीस वर्षों में हमारे देश में निर्माण के अनेक काम हुए हैं जिनका लाभ हमें मिल रहा है, विशेष रूप से खेती में जो सुधार हुए हैं उनसे भविष्य के लिए हमें बहुत आशा होती है।

लेकिन इतना होते हुए भी अभी कई बातें हैं जो दुख देनेवाली हैं, और जो हमारे देश और समाज को कमजोर कर रही हैं। आज भी हमारे गाँवों में ऐसे लोगों की संख्या बहुत बड़ी है जो घोर अभाव का जीवन बिता रहे हैं, और जो अनेक रूपों में अज्ञान और अन्याय के शिकार बने हुए हैं। गरीबी, बेरोजगारी, विषमता, बीमारी, तथा आपस के तनाव और दुराव, आदि के कारण जीवन की चिंताएँ घटने की जगह बढ़ दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं, और ऐसा लगता है जैसे हम दमन और शोषण के नये बन्धनों में फँसते जा रहे हैं। क्या बाजार और क्या सरकार, हर जगह हम अपने को असहाय पा रहे हैं। हमारे गाँव आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से टूटते दिखाई दे रहे हैं।

इसका कारण क्या है? हमारा मानना है कि स्वतंत्रता प्राप्त होने पर देश की व्यवस्था में जो बुनियादी परिवर्तन होना चाहिए था वह नहीं हुआ। हमारा राजनैतिक संगठन, प्रशासन की पद्धति, विकास की नीति-रीति, न्याय, और शिक्षा ऐसी चीजें हैं जिनमें अब जड़-मूल से परिवर्तन होना आवश्यक है।

पिछले कुछ वर्षों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन ने हमारे सामने भाईचारे के नये समाज का एक स्पष्ट और व्यावहारिक चित्र प्रस्तुत किया है। वह चित्र यह है कि हमारा गाँव एक संगठित इकाई हो, जिसकी व्यवस्था हम अपने निर्णय से करें, जिसका विकास हमारी अपनी योजना के अनुसार हो, जिसमें पड़ोसी होने के नाते सारे भेदभाव भुलाकर हम एक दूसरे के सुख-दुख में शरीक हों, तथा जिसमें हर एक का सम्मान और जीविका सुरक्षित रहे, कोई किसी का मुहताज न हो, और कोई किसी के साथ अनीति या अन्याय न करे। गांधीजी ने जिस स्वदेशी और गाँव के स्वराज्य की बात कही थी उसकी पूरी झलक हमें इस चित्र में दिखाई देती है। हम मानते हैं कि अगर हमारे लाखों गाँव ग्रामस्वराज्य की योजना के अनुसार स्वायत्त और स्वावलम्बी होंगे तो व्यापक लोक-शक्ति प्रकट होगी और देश आज से कहीं अधिक शक्तिशाली होगा।

इस विश्वास के साथ आज के दिन हम संकल्प करते हैं कि ग्रामदान की घोषणा कर चुकने के बाद अब हम संगठित होकर अपने गाँव में ग्रामस्वराज्य की स्थापना की दिशा में दृढ़ता के साथ आगे बढ़ेंगे। हमें अपने गाँव और देश की स्वतंत्रता के लिए जो त्याग करना पड़ेगा हम सहर्ष करेंगे। ईश्वर हमें शक्ति दे कि हम अपना संकल्प पूरा कर सकें।"

बिहार सर्वोदय संघ के निर्णय

दिनांक २५ से २७ नवम्बर तक बिहार सर्वोदय संघ की एक बैठक सर्वोदय प्रकाशन समिति, पटना में हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री ध्वजाप्रसाद साहु ने की।

बैठक में बिहार के प्रायः सभी जिलों के प्रतिनिधियों तथा सर्वोदय सेवकों ने भाग लिया। तीन दिनों तक संघ ने मुक्त और शान्त वातावरण में आन्दोलन की कार्यपद्धति और कार्यक्रम तथा नये संगठन के स्वरूप पर चर्चा की। लोक-सेवकत्व के सम्बन्ध में विचार हुआ। अन्त में निम्नलिखित आन्दोलन सम्बन्धी निर्णयों पर सबने अपनी स्वीकृति प्रकट की।

१ – राष्ट्रीय मोर्चा सर्व सेवा संघ के निर्णयानुसार ग्रामदान-पुष्टि का राष्ट्रीय प्रयोग क्षेत्र सहरसा में कार्य करने के लिए बिहार के विभिन्न जिलों के ६ वरिष्ठ कार्यकर्ताओं से एक वर्ष का समय देने के लिए निवेदन किया गया। तदनुसार श्री ब्रजमोहन शर्मा ने अपना नाम सहरसा के लिए प्रस्तुत किया। दरभंगा जिले के एक कार्यकर्ता श्री मोहन झा ने भी अपना नाम पेश किया।

२—जिला-स्तरीय सघनक्षेत्र — पुनः अनुरोध किया गया कि जो लोग सहरसा के लिए अपना समय नहीं दे रहे हैं, वे अपने ही जिले के किसी प्रखण्ड में, सघन रूप से कार्य करने का निर्णय करें। तदनुसार निम्नलिखित प्रखण्डों में कार्य करने का जिम्मा निम्नलिखित व्यक्तियों ने लिया।

जिला	प्रखण्ड	कार्यकर्ता
सारण	जलालपुर	श्री दीनेश चन्द्र
दरभंगा	बिस्फी	श्री मदन झा
सिंहभूमि	मझगाँव	श्री रघुनाथदेवम
भागलपुर	गोपालपुर	श्री नागेश्वर सेन
भागलपुर	नाथनगर	श्री भाई गोखले
मुजफ्फरपुर	मुसहरी	श्री कैलाश प्रसाद शर्मा
मुजफ्फरपुर		श्री शिवनन्दनजी
"	वैशाली	श्री लक्ष्मणदेव सिंह
गया	बाराचट्टी	श्री केशव मिश्र
धनबाद	चन्दनक्यारी	श्री लक्ष्मीकान्त

ग्रामस्वराज्य के काम की प्रगति

बिहार में सहरसा, मुसहरी, रूपौली और झाझा के ग्रामस्वराज्य कार्य के बारे में देश के लोगों को पता है ही या फिर सर्वोदय पत्र-पत्रिकाओं से उन्हें इन स्थानों की जानकारी मिलती ही रहती है। छिटपुट रूप में बिहार के अन्य स्थानों में भी ग्रामस्वराज्य के काम स्थानीय कार्यकर्ताओं के प्रयास से चल रहा है। मुजफ्फरपुर से प्राप्त सूचनानुसार वहाँ के ६ प्रखंडों मुसहरी, सकरा, मुरौल, वैशाली बैरगनिया और पारूघाट में कुल मिलाकर ७१ गाँवों के कागजात पुष्टि के लिए दाखिल किया गया है, जिसमें ६६ गाँवों की पुष्टि विधिवत् हो गयी है। ३२ ग्रामदानी गाँवों और २ ग्रामसभाओं का गजट भी हो गया है। १४८ कामचलाऊ ग्रामसभाओं का गठन भी हुआ है।

अभी मुख्य रूप से मुसहरी प्रखंड में ही काम चल रहा है। इस क्षेत्र में आन्दोलन का दूसरा दौर इसी महीने से शुरू होनेवाला है। मात्र दस कार्यकर्ता वहाँ काम करते रहेंगे। प्रखंड में बनी ग्रामसभाओं से कार्यकर्ता निकाल कर वहाँ के काम को आगे बढ़ाने की योजना है।

बिहार सर्वोदय संघ की बैठक में जिले के कार्यकर्ताओं ने निम्नलिखित कार्यों को करने के अपने निश्चय की घोषणा की।

(क) जिले के ४० प्रखंडों में से १२ प्रखंडों में सघन रूप से सम्पुष्टि-कार्य के लिए भरपूर प्रयास किया जाय। इसकी पूर्व तैयारी भी शुरू हो गयी है।

(ख) फरवरी ७२ में जिले के सर्वोदय प्रेमियों का एक सम्मेलन किया जाय, जिसमें दाता-आदाताओं को भी विशेष रूप से आमंत्रित करने का प्रयास किया जा रहा है।

(ग) पच्चीस हजार रुपये का सर्वोदय-साहित्य-बिक्री करने का प्रयास।

(घ) जिले में ५ हजार सर्वोदय सहयोगी बनाये जायँ। अब तक ४ सौ सहयोगी बनाये जा चुके हैं। ३१४ लोकसेवक अभी जिले में हैं। २०० और बनाने का प्रयास किया जाय।

इसके अलावा पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने, तरुण-शान्तिसेना एवं आचार्यकुल के संगठन का भी प्रयास हो।

भागलपुर नाथनगर में खास कर अशान्त क्षेत्रों में शान्ति समिति का गठन हुआ है और उसकी कई बैठकें भी हो गयी हैं। ग्रामसभा के गठन के लिए गोपालपुर, बिहपुर तथा नाथनगर में प्रयास प्रारम्भ हो चुका है। इस सिलसिले में कई बैठकें भी गाँव-गाँव में हुई हैं। कुछ प्रखंडों में काम चलाने के लिए सर्व प्रखंड स्वराज्यसमितियों का भी गठन हो चुका है।

जिले के पास साधन की कमी है। पुष्टि-कार्य के महत्व को देखते हुए जितनी संख्या में और जिस प्रकार के कार्यकर्ताओं की जरूरत है, उसका नितान्त अभाव है। फिर भी जिला ग्रामस्वराज्य समिति ने निर्णय लिया है कि प्रखंड को शक्ति प्रखंड का साधन और प्रखंड का कार्यक्रम निश्चित कर अर्थ और कार्यकर्ताओं की शक्ति एकत्रित करने का प्रयास किया जाय। इस दिशा में प्रयास भी चल रहा है जो भी सीमित शक्ति अभी जिले के पास है, वह अशान्त क्षेत्रों में शान्ति-व्यवस्था में ही लग रही है। गोपालपुर के सधुआचापर और बिहपुर के विक्रमपुर पंचायतों में ग्रामसभा के गठन की तैयारी के अवसर पर सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुर दास बंग ने आकर कार्यकर्ताओं को उनके कार्यों की पद्धति पर तथा लोकशक्ति को जागृत करनेवाले उनके तरीकों पर उन्हें काफी उत्साहित किया। उन्होंने आशा व्यक्त की थी कि इसी तरह से जनता इस आन्दोलन को अपने ऊपर उठा सकती

है। उपरोक्त स्थानों में ग्रामसभा गठित होने के पूर्व ही बाढ़ का इतना भयंकर आक्रमण हुआ कि वहाँ इस काम को छोड़ कर तुरन्त रिलीफ के काम को शुरू करना पड़ा। पुनः वहाँ ग्रामस्वराज्य के काम को आरम्भ करने का प्रयास शुरू हो गया है।

पटना : इस जिले में अब तक कुल ४९ बाबकलाऊ ग्रामसभाएँ गठित की गयी हैं। दो गाँव अभिपुष्ट हुए हैं। शान्ति-सैनिकों तथा तरुण शान्ति-सैनिकों की संख्या क्रमशः २८ और २५ है। आचार्यकुल के सदस्यों की संख्या भी २८ है। ५७५ रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका है। जिले में १६८ सर्वोदय मित्र हैं। अब तक हुई प्रखण्ड के पीपीटाड़ा गाँव में बीघा-कट्ठा में प्राप्त ७ बीघा जमीन का वितरण हुआ है। जिले के प्रायः सभी कार्यकर्ता सहरसा के मधेपुर क्षेत्र में गत साल से ही लगे हुए हैं। इसलिए अभी यहाँ का काम बन्द है। इधर जिले के अधिक समय देनेवाले सर्वोदय सेवकों ने जिले के काम को आगे बढ़ाने का निश्चय किया है।

सारण जिले में सघन-रूप से काम करने की दृष्टि से माँझी, भोरे एवं जलालपुर प्रखण्डों को चुना गया है। अब तक माँझी में ८५, भोरे में २ और जलालपुर में एक ग्रामसभाएँ बनायी जा चुकी हैं। ३ गाँवों में भूमि-वितरण का भी काम हुआ है।

जिला शान्ति सेना समिति की ओर से ३५० शान्ति सैनिक बनाये गये हैं। कुल १० उच्च एवं उच्चतर विद्यालयों में तरुण-शान्तिसेना का संगठन किया गया है। जिले की ओर से जलालपुर में तूफानी ढंग से काम करने का अभी-अभी निश्चय किया गया है। इस प्रखण्ड में बिहार रिलीफ कमिटी की ओर से सघन सिंचाई-योजना का कार्य चल रहा है जिसमें श्री विजय कुमारजी का विशेष सहयोग मिल रहा है। श्री विश्वेश्वर प्रसाद के मार्ग-दर्शन में आचार्यकुल का काम भी शुरू किया गया है।

चम्पारण : चम्पारण में अब तक कुल २७ ग्रामसभाओं तथा १७४ ग्राम-समितियों का गठन हो चुका है। एक ग्रामसभा के ग्रामकोष में ३४ मन अनाज जमा हुआ है। अन्य ग्रामसभाओं ने शीघ्र ही अपने यहाँ भी ग्रामकोष इकट्ठा करने का संकल्प किया है। ६० आदाताओं के बीच ३५ एकड़ भूमि का वितरण भी हुआ है। सात गाँवों में ग्राम-शान्तिसेना का संगठन हुआ है तथा शान्तिसेना के कुल २३ सदस्य बने हैं। २७५ रुपये के साहित्य की बिक्री हुई है।

सनकौपुर इस अनुमण्डल में अक्तूबर ७१ से अब तक १० गाँवों की पुष्टि हुई और कुल १७ गाँवों का सर्वे हुआ है। १० ग्रामसभाओं का गठन भी किया गया है। इस क्षेत्र में अब भूदान तथा ग्रामदान में मिली जमीन का सघन रूप से वितरण करने तथा बिहार गजट में प्रकाशित गाँवों में ग्रामसभा का गठन करने की योजना बनी है।

भवानीपुर में पुष्टि-अभियान

भवानीपुर प्रखण्ड (पूर्णिया) में पिछले पाँच माह से ग्रामदान-पुष्टि-अभियान चल रहा है। प्राप्त जानकारी के अनुसार अब तक (१) सोनडीहा (२) सोनडीहा धुनकुबा टोला (३) सोनडीहा बोवाही टोला (४) नवगछिया पासवान टोला (५) भडसार मुसहरी (६) भडसार लामो-हम्मद टोला। (७) भवानीपुर मखुआ टोला (८) कुशहा (९) तेलियारी मेही-नगर (१०) तेलियारी धागर टोला (११) सुरैती धागर टोला और (१२) कुशहा मिलीक गाँवों में जमीन एवं जनसंख्या की सर्वे पूरी करके ग्रामसभाओं का गठन किया जा चुका है। इसके अति-रिक्त ६ गाँवों की परिवार सूची तैयार कर ली गयी है। १० राजस्व गाँवों के २१ सण्ड खतियान की नकल हो चुकी है, तथा ३ गाँवों के २१ दाताओं से बीघा-कट्ठा में प्राप्त २३२ कट्ठा जमीन २७ आदाताओं के बीच वितरित की गयी है। ५ महीने की अवधि में ३ सेमिनार और ८ पाक्षिक एवं मासिक बैठकें भी हुयी हैं।

रानीगंज में बीघा-कट्ठा वितरण

११ नवम्बर को रानीगंज प्रखण्ड (पूर्णिया) के १ बेलौना २ नहरार ३ पटित टोला स्थित ५८ दाताओं से १७-४० एकड़ जमीन प्राप्त कर ५१ आदाताओं में समभा-गाह वितरित की गयी। यह समारोह सर्वोदय नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के सम्मान में आयोजित हुआ था। सम्पुष्टि अभियान के टोली नायक श्री भृगुनाथ मिश्री तथा रानीगंज प्रखण्ड के क्षेत्रीय संगठक श्री दीनानाथ शास्त्री के लम्बे प्रयास के बाद यह कार्य सम्पन्न हुआ। रानीगंज प्रखण्ड में उक्त समारोह का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है।

विनोबाजी की नवसंपादित दो कृतियाँ

लोकनीति

'लोकनीति' विनोबाजी की एक खास देन है। राजनीति को शुद्ध करके अहिंसक लोकशक्ति की प्रतिष्ठापना की दृष्टि से लोकनीति पुस्तक महत्वपूर्ण है। इस पुस्तक के अब तक अनेक संस्करण हो चुके हैं। लेकिन इस संस्करण को नये सिरे से, नये प्रकरणों में विभाजित करके संपादित किया है और अब यह एक परिपूर्ण पुस्तक के रूप में मानते हैं।

राजनीति में दिलचस्पी रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को तथा भारत के नव-निर्माण का सपना देखनेवाले को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।

पृष्ठ १४४, मूल्य रु० २.००

स्त्री-शक्ति

विनोबाजी के दिल में स्त्री-जाति के प्रति अत्यन्त श्रद्धा है और उनकी आकांक्षा है कि स्त्रियों में से शंकराचार्य जैसी प्रखर ज्ञान-वैराग्य-सम्पन्न बहनें निकलें ताकि वे समाज का मार्गदर्शन कर सकें। स्त्रियों में शील और शालीनता होती है और वे ही मानव की प्रथम आचार्या हैं।

इस पुस्तक के अब तक आठ संस्करण हो चुके हैं। लेकिन इस संस्करण का संपादन कुमारी निर्मला बहन ने नये सिरे से किया है। घर-घर में इस कृति का पठन होना चाहिए।

मूल्य १.५०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी

(पृष्ठ २०५ से आगे)

मुस्लिम राष्ट्रों की भूमिका भी विचित्र रही है। इस्लामी राष्ट्र तो दूर रहे, बंगला देश के करोड़ मुसलमानों पर हुए अकथनीय अत्याचारों के खिलाफ भी उन्होंने आवाज उठाने की परवाह नहीं की है।

"यह आशा थी कि संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व में मानवता के बुनियादी अधिकारों का संरक्षक बनेगा, लेकिन मानवता के मूलभूत अधिकारों के राष्ट्रसंघ द्वारा स्वीकृत चार्टर (घोषणा-पत्र) का सतत उल्लंघन होते रहने पर भी उसने कोई कार्रवाई नहीं की। ऐसा प्रतीत होता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ सत्ता की राजनीति का अखाड़ा बन गया है और इस कारण मानवता के प्रति अपना कर्तव्य निभाने में असमर्थ हो रहा है।

"बंगला देश के मुक्ति-संग्राम का समर्थन करने के कारण आज भारत पर जो संकट आया है उसका सामना सारे भारतवासियों को एकता और हिम्मत के साथ करना चाहिए।

"संघ मानता है कि ऐसी कठिन परिस्थिति और संकट की बेला में यह जनशक्ति जाग्रत और संगठित करने का अवसर है जिससे जनता गाँव-गाँव में, शहरों के मोहल्ले और बस्तियों में अपने संगठित प्रयासों से युद्ध के कारण पैदा होनेवाली समस्याओं, जैसे व्यवहार की वस्तुओं का अभाव, मूल्यवृद्धि, मुनाफाखोरी आदि का प्रतिकार किया जा सके। आन्तरिक शान्ति और सुरक्षा कायम रहना भी आवश्यक है।

"हमारा ध्येय यह भी होना चाहिए कि पाकिस्तान की जनता को पूर्ण लोकतांत्रिक तथा नागरिक अधिकार मिले और मुट्ठी भर स्वार्थी तथा सत्ताभिलाषी लोगों के दबाव और शोषण से उनको मुक्ति मिले। इसलिए पाकिस्तान की जनता के प्रति भारत में कटुता और घृणा नहीं फैलनी चाहिए तथा युद्ध और विजय के उन्माद में हमें अपनी मानवता और उदारता को संकुचित नहीं होने देना चाहिए। वस्तुतः युद्ध एक अस्थायी घटना है और इसलिए युद्धोत्तर परिणाम जीवन के चिरन्तन तत्त्वों के विरुद्ध न जाय, इसके बारे में भी हमें सावधान रहना चाहिए।

"बंगला देश स्वतंत्र राष्ट्र के नाते जगत भर में मान्य हो। भारत में आये शरणार्थी सम्मानपूर्वक स्वदेश लौट जायँ। पश्चिम पाकिस्तान में सैनिकशाही का स्थान जनतंत्रात्मक शासन ले और भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण बनें।"

ग्रामसभाएँ क्या करें ?

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का ग्रामसभाओं के लिए सुझाव

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने सहरसा के मरौना प्रखंड का गत १० से १९ नवम्बर तक की यात्रा की तथा वे ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों से मिले। वहाँ के काम को देखकर आपने संतोष प्रकट किया। आपने २१ नवम्बर को कार्यकर्ताओं की बैठक में ग्रामसभाओं के कार्यों की चर्चा करते हुए सुझाव दिया कि ग्रामसभाओं के पास अभी जो कई प्रकार के रजिस्टर रखे जाते हैं, उनकी कोई खास आवश्यकता नहीं है। निम्नलिखित पाँच तरह के रजिस्टर ही आवश्यक हैं। १—गाँव में कुल कितनी जमीन है, बाहरवालों की जमीन इस गाँव में कितनी है, उनमें कितने ग्रामदान में शामिल हुए हैं, कितने नहीं आदि बातों की जानकारी देनेवाला यानी जमीन सम्बन्धी रजिस्टर (२) ग्रामसभा की कार्रवाई सम्बन्धी रजिस्टर (३) जिन झगड़ों का फैसला ग्रामसभा में होता है, उस सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखनेवाला रजिस्टर (४) शान्ति सैनिकों की सूची रखनेवाला रजिस्टर (५) ग्रामकोष का व्यवस्थित हिसाब रखनेवाला रजिस्टर।

आपने आगे सुझाया कि ग्रामसभाओं को खेती के तरीकों में सुधार लाने तथा वैज्ञानिक तरीकों से खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा अपने आन्दोलन की ओर से कोई कृषि की पूरी जानकारी रखनेवाला विशेषज्ञ कार्यकर्ता कुछ दिनों के लिए वहाँ रखे जायँ। ग्रामसभाओं को गाँव की सफाई, मधुमक्खी-पालन, छोटे-मोटे ग्रामीण कुटीर उद्योगों के बारे में भी उन्हें सोचना चाहिए।

गाँव के तरुणों का, कार्यकर्ताओं का अल्पकालीन प्रशिक्षण-शिविर किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण-शिविर जगह-जगह अस्थायी तौर पर हो तथा किसी भी जगह स्थायी केन्द्र जैसा या प्रशिक्षण विद्यालय जैसा न हो। ये शिविर एक-एक या दो-दो दिनों के लिए ही चलें।

विक्रम साराभाई न रहे

रेडियो सूचनानुसार परमाणु शक्ति आयोग के अध्यक्ष श्री विक्रम साराभाई का ३० दिसम्बर को प्रातः हृदयगति रुक जाने से त्रिवेन्द्रम के एक होटल में देहान्त हो गया।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

"हम स्वतंत्रता के लिए दस लाख व्यक्तियों की आहुति दे सकते हैं।"

—शेख मुजीबुर्रहमान

दस लाख, बीस लाख, तीस लाख —
कितनों ने आहुति दी है,
अभी कौन जाने ?
बंगला देश की स्वतंत्रता
आहुति की एक अमर कहानी है,
और मुजीब उसके अमर रचयिता।
मुजीब ने तानाशाही के हाथों से
जिन मानवीय मूल्यों को छीनकर
मनुष्य को वापस दिये हैं
वे एक नये एशिया और विश्व की
रचना करेंगे।
बन्दी रहकर भी जिसने
हार नहीं माना
उस मुजीब का
हजार बार स्वागत !

कुछ स्पष्टीकरण

प्रिय सम्पादकजी,

भोपाल अधिवेशन में मैंने जो भाषण दिये, सुनता हूँ कि उनके विषय में 'भूदान यज्ञ' में काफी चर्चा होती रही है। भोपाल के बाद मैं अधिकतर एक स्थान से दूसरे स्थान का प्रवास करता रहा, इसलिए सारे अंक देख नहीं पाया। फिर भी जितना कुछ पढ़ा और सुना उसपर से प्रतीत होता है, कि कुछ लोगों के मन में कुछ प्रश्न उठे हैं। इसलिए थोड़ा-सा स्पष्टीकरण संक्षेप में कर रहा हूँ :

१—पहली बात, मैंने भोपाल में कोई नयी चीज नहीं कही। शुरू से लगातार मैं यही कहता आया हूँ। परन्तु, शायद भोपाल से पहले उसकी स्वीकृति के लिए परिस्थिति में आकांक्षा उत्पन्न नहीं हुई थी।

२—मैंने हमेशा यह माना है कि गरीबी और अमीरी दोनों बीमारियाँ हैं। वे स्वस्थ मानव का स्वभाव नहीं है। गरीब अपनी बीमारी से परेशान है। वह जल्द-से-जल्द उससे छुटकारा पाना चाहता है। छुटकारे के लिए आमूल समाज-परिवर्तन अनिवार्य है। इसलिए समाज-परिवर्तन में उसका अभिक्रम और पुरुषार्थ अधिक सुलभ है, उसी प्रकार उसका सहयोग भी। प्रश्न इतना ही है कि यह पुरुषार्थ किस प्रकार का हो? उत्तर यह है कि हमारे उद्देश्य के अनुरूप हो। उद्देश्य है, मनुष्य को मनुष्य से मिलाना। इसलिए समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में मानव-हत्या का हर परिस्थिति में निषेध है।

३—अमीरी का अधिष्ठान ही समाज सम्मत और निष्ठानिष्ठ संगठित-शस्त्र-शक्ति और दण्ड-शक्ति है। इसके अतिरिक्त अमीरी की प्राप्ति और संरक्षण के लिए अनवरत हिंसा होती ही रहती है। जो शोषित, प्रपीड़ित और परिवंचित है, अतएव जो संगठित हिंसा का सदियों से शिकार रहा है, उसकी असंगठित और अनियतकालिक हिंसा का प्रतिकार यदि हम शान्ति के नाम पर करते हैं, और उसे अहिंसा के पाठ सिखाते हैं, तो हम अनजाने वर्तमान समाज के पक्षपाती सिद्ध होते हैं।

४—तो फिर क्या हो? हमारा उद्देश्य तो मनुष्यों को एक-दूसरे के नज़दीक लाना है। इसलिए हम गरीब को ऐसा रास्ता बतलायेंगे, जिसमें वीरता के लिए निरन्तर अवकाश हो और समाज-परिवर्तन की अमोघ क्षमता हो। यह रास्ता है सामूहिक, नैतिक दबाव का। छोटे मालिकों के पास जो सम्पत्ति है, वह बड़ी मिल्कियत का आधार है। उसके विसर्जन के लिए हम उन्हें प्रेरित करेंगे। उस हेतु आवश्यक संगठन की दिशा सूचित करेंगे। आन्दोलन प्रतिहरण का नहीं, विसर्जन का होगा, और आवश्यकतानुसार शान्तिमय प्रखर प्रतिकार का भी होगा।

५—अमीरी भी बीमारी है। अमीर को हम उसकी बीमारी का होश दिलाने की कोशिश करेंगे। अमीरों में से जो व्यक्ति इस बात को समझकर समाज-परिवर्तन में योगदान करेंगे उनका हम स्वागत और सत्कार भी करेंगे। अन्य अमीर व्यक्तियों में सहयोग की प्रेरणा जागृत करने के लिए सतत सचेष्ट रहेंगे। लेकिन, यदि मोहवश, या बुद्धिभ्रम के कारण वे अपनी बीमारी को ही अपने जीवन का वैभव मानेंगे तो उस व्याधि और उपाधि से उन्हें मुक्त कराने का निरन्तर हम प्रयत्न करेंगे। इस प्रक्रिया में उन्हें क्षोभ और दुःख हो सकता है, उसे हम अपने लिए एक अनिवार्य आपत्ति मानेंगे।

६—हर गरीब अमीरी का उम्मीदवार है। और अमीरी भी अपने में तो बीमारी है। मतलब, एक तरह से गरीब भी अमीर की तरह समान मनोविकार से ग्रस्त है। 'ऐसी स्थिति में हम गरीब के पक्षपाती कैसे हो सकते हैं?' प्रश्न विचारणीय है। गरीब अमीरी का उम्मीदवार नहीं है, सुख का अभ्यर्थी है। गरीबी और अमीरी सापेक्ष है। सुख भी दुःख का प्रतियोग नहीं होना चाहिए। सुख है स्वस्थ जीवन का आस्वाद। आरोग्य रोग का प्रतियोगी नहीं है। आरोग्य स्वस्थ जीवन का स्वरूपलक्षण है। उसी प्रकार सुख है। अमीरी की आकांक्षा आज गरीब में पायी जाती है। यह वस्तुस्थिति है। लेकिन यह आकांक्षा संस्कारजन्य है। प्रचलित अर्थ-व्यवस्था का वह असर है। स्वस्थ आकांक्षा है, आनन्दमय जीवन की और सम्यक उपभोग की। हमारा प्रयत्न होगा, कि दूषित आकांक्षा का लोप हो और स्वस्थ आकांक्षा जागृत हो।

७—अस्पृश्यता-निवारण के लिए सवर्णों के प्रायश्चित्त-स्वरूप अभिक्रम की आवश्यकता है। उसी प्रकार अमीरों और मालिकों में भी सम्पत्ति और स्वामित्व-विसर्जन-स्वरूप अभिक्रम की भी आवश्यकता है। लेकिन सवाल यह है, कि क्या समाज-परिवर्तन में गरीब की भूमिका भावरूप, विधायक और सक्रिय पुरुषार्थ की नहीं होगी? और, यदि नहीं होगी तो समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में से उसके चारित्र्य का विकास कैसे होगा? उसके लिए तो वह समाज-परिवर्तन स्वायत्त और स्वपराक्रमार्जित नहीं होगा, दूसरों के पराक्रमों से उपलब्ध दानस्वरूप होगा। क्रान्ति के पश्चात् जो समाज स्थापित होगा, उसकी भूमिका गौण रह जायेगी। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में गरीब के पराक्रम के लिए असीम अवसर रहे।

ये कुछ आवश्यक बातें हैं, जिनका स्पष्टीकरण जरूरी मालूम हुआ। उनके अलावा और भी बहुत-सी बातें हैं, लेकिन वे गौण हैं। इन मुख्य बातों पर यदि हम गम्भीरतापूर्वक विचार करें, तो तफसील के सवाल अपने-आप हल हो जायेंगे।

मैंने कहा तो, कि संक्षेप में स्पष्टीकरण करूँगा। अगर कुछ विस्तार हो गया हो तो क्षमाप्रार्थी हूँ।

उत्क्रोशीवन, पूना
२७-१२-'७१

स्नेहांकित
दादा धर्माधिकारी

सम्पादकीय

मन की गाँठ खोलें

हमारे 'शिविर' होते हैं तो दिनचर्या पहले से बन जाती है। जगना, सुबह टहलना, शौचादि से निवृत्त होना, प्रभात फेरी करना, श्रमदान, जलपान, स्वाध्याय, भोजन, विश्राम, ग्रामसम्पर्क, घूमना, भोजन, विचार दूर करना और सो जाना—यही रूटीन रहती है जो शिविरार्थी को शिविर में आते ही बता दी जाती है। ७-१० दिन इसी रूटीन से वह गुजरता है। निश्चित अवधि के बाद शिविर पूरा होता है, कोई विशिष्ट व्यक्ति समावर्तन कर देता है, लोग अपने-अपने घर वापस जाते हैं।

क्या 'शिविर' के संयोजक कभी सोचते हैं कि जो आये थे क्या लेकर गये? क्या वे एक दूसरे के पहले से अधिक नजदीक आये, मन की गाँठें खुलीं, भाईचारा बना, क्रान्ति के मूल्यों में निष्ठा जगी, क्रान्ति के प्रति समर्पण बढ़ा, किसी समस्या का अध्ययन हुआ, निर्माण का कोई काम पूरा हुआ? आखिर, क्या हुआ? सोचना चाहिए कि शिविर, गोष्ठी, सभा या सम्मेलन बुलाने का प्रयोजन क्या था, और वह कहाँ तक पूरा हुआ। यह मान लेना कि लोग इकट्ठा होंगे तो कुछ तो होगा ही गलत है। अक्सर ऐसा होता है कि प्रयोजन स्पष्ट, और पद्धति सही न होने के कारण बात जितनी बननी है उससे कहीं ज्यादा बिगड़ जाती है।

चर्चाएँ, गोष्ठी, शिविर, सभा, सम्मेलन आदि सब शिक्षण की प्रक्रियाएँ हैं। शिक्षण की प्रक्रिया जितनी ही सहज होगी उतनी ही अधिक गहरी होगी, टिकाऊ होगी। शिक्षण की सहज प्रक्रिया वह होती है जिसमें सब साझेदार होते हैं, वह प्रक्रिया सहज नहीं होती जिसमें एक पक्ष दूसरे पक्ष पर ज्ञान की वर्षा करता है और वह भक्ति-भाव से उस भार को ग्रहण करता है। इसलिए आयोजन की पूरी तैयारी में प्रयोजन विचार करने के साथ-साथ कई ऐसी बातों पर ध्यान देना आवश्यक होता है जो उस प्रयोजन की सिद्धि में सहायक होती हैं।

श्रम-शिविर सफल मान लिया जाता है अगर पचास फुट लम्बा बाँध बन गया। स्वाध्याय-शिविर सफल हो गया अगर भूमि समस्या की मोटी जानकारी हो गयी। इस तरह के प्रयोगों के लिए भी आयोजन होते हैं, और होने चाहिए, लेकिन हम लोग आन्दोलन के साथियों के जो शिविर करते हैं उनसे कुछ अधिक अपेक्षा रखनी चाहिए। शिविरार्थियों की अहिंसक क्रान्ति की शैक्षणिक प्रक्रियाओं में पैठ हो, उन्हें अपने समर्पण की परख हो, और उनमें आपसी भाईचारा बढ़े, ये कुछ ऐसी निष्पत्तियाँ हैं जो हर ऐसे शिविर से अपेक्षित हैं।

गत ३ से १० दिसम्बर तक मुजफ्फरपुर जिले के सखरा आश्रम पर बिहार तरुण-शान्तिसेना का एक शिविर हुआ। पहले चार दिन नये और पुराने शिविरार्थियों को मिलाकर कार्यक्रम चला; उसके बाद नये चले गये, पुराने रह गये। शिविर का बंधा हुआ कार्यक्रम ढीला हो गया, वातावरण की कृत्रिमता दूर हो गयी। सबेरे लोग जाड़े की ठंड में आग के पास बैठकर अपनी बात कहने लगे, और दूसरे भी सुनने लगे। चर्चाएँ खूब भी हुईं किन्तु बोझिल नहीं लगीं, आलोचनाएँ हुईं किन्तु प्रहार नहीं हुआ, एक का दूसरे के दिल और दिमाग में प्रवेश हुआ, किन्तु मोनोपोली (कन्फॉर्मिटी) नहीं आया। मन की कितनी ही गाँठें खुलीं, सहकार की योजनाएँ बनीं, काम की समस्याएँ-सम्भावनाएँ समझी गयीं, और क्रान्ति में अपना योग तय किया गया। शिविर की समाप्ति पर हर एक ने महसूस किया कि पहले दिन हमारा जो कद था अन्तिम दिन उससे ऊँचा हो गया।

हमारे आन्दोलन की अनेक समस्याएँ हैं। हमें कितनी ही प्रतिकूलताओं में काम करना पड़ रहा है। लेकिन एक बहुत बड़ा संकट भीतरी है वह है आपस के सम्बन्धों का। व्यक्ति बनाम संस्था, नागरिक सहयोगी बनाम संस्थागत कार्यकर्ता, कार्यकर्ता बनाम कार्यकर्ता—सम्बन्धों की यह विचित्र समस्या है जो हल नहीं हो पा रही है। हर जगह मन की कुछ ऐसी गाँठें हैं जो खुल नहीं रही हैं, और जिनके खुले बिना काम भी बढ़ नहीं रहा है। हर एक महसूस कर रहा है कि यह संकट है, लेकिन कोई बता नहीं पा रहा है कि उपाय क्या है।

स्नेह-सम्बन्धों की भूख है। उसकी चर्चा भी बहुत होती है। लेकिन स्नेह-सम्बन्धों के पहले की भी कुछ सीढ़ियाँ हैं जिनकी ओर ध्यान नहीं जा रहा है। पहली सीढ़ी है सख्य सम्बन्धों की और दूसरी है सहकारी सम्बन्धों की। पहली और दूसरी सीढ़ियों को पार किये बिना तीसरी सीढ़ी पर पहुँचने की कोशिश उतनी ही कमजोर है जितनी कमजोर कोशिश है बौद्धिक हुए बिना आध्यात्मिक होने की।

हर स्तर पर सम्बन्धों का संकट है। मन की गाँठें खुलें तो संकट के हल का रास्ता खुले। •

भूदान-यज्ञ : सोमवार, १० जनवरी, '७२

श्रद्धाञ्जलि

मानवरत्न विक्रमभाई

डॉ० विक्रम साराभाई के अवसान से जगत ने एक बहुत बड़ा शांतिप्रेमी और भारत ने एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक गँवाया है, किन्तु मेरे जैसे अनेक ने तो अपना अनन्य मित्र खोया है।

जगत के इने-गिने कॉस्मिक-रे तथा आणविक वैज्ञानिकों में जिसका स्थान था उसे अहंकार का स्पर्श भी नहीं हुआ था। इसीलिए तो वे इतने प्यार से हिलमिल सकते थे। सादगी उनके पूरे रहन-सहन में झलकती थी। उनको अपना मानने में किसी को संकोच नहीं होता था।

वैज्ञानिक तो बहुत सारे होते हैं। लेकिन इनके मन में विज्ञान मानव के लिए था, मानव विज्ञान के लिए नहीं। एक दिन मुझे कहने लगे, "कोई ऐसा कार्यकर्ता दिलाओ, जो बिहार में हमारे आणविक केन्द्र में काम कर सके। वहाँ आदिवासी रहते हैं। उनके बीच ये उच्चतम ज्ञानवाले वैज्ञानिक जाकर रहेंगे। आदिवासियों का विचार मानवों के नाते कर सके ऐसा कार्यकर्ता चाहिए।"

अहमदाबाद के दंगे के समय कहा, "तुम्हारी समस्या क्या है?" मैंने कहा, "इस समय तो पैसे की जरूरत है।" उनसे कभी पैसे मांगे नहीं थे। हमारा सम्बन्ध उस प्रकार का नहीं था। उन्होंने कहा, "दिल्ली जा रहा हूँ, इन्दिराजी से कहूँगा। वे कुछ पैसे भेज देंगी।" मैंने कहा, "दिल्ली के पैसे मुझे नहीं चाहिए। अहमदाबाद का पाप धोने के लिए अहमदाबाद के पैसे चाहिए।"

साराभाई परिवार से फौरन १५,००० रु० मिल गये।

आखिरी बार भेंट हुई तब कह रहे थे, "अभी एक ही विचार दिमाग में चल रहा है। देश के प्रमुख वैज्ञानिकों का दिमाग देश की बेरोजगारी की समस्या को सुलझाने में लगना चाहिए। बुनियादी समस्या यही है।"

व्यवस्था-शक्ति उनका आनुवंशिक गुण था। इसी के कारण डॉ० भाभा ने जो बनाया उसे डॉ० साराभाई सुचारु रूप से चलनेवाला कर गये। अहमदाबाद की अनेक संस्थाएँ इसी व्यवस्था-शक्ति के कारण बनीं और पनपीं।

विक्रमभाई शांतिप्रेमी थे लेकिन शांतिवादी नहीं थे। हमारी पहली भेंट के समय उन्होंने एक वाक्य से अपनी भूमिका स्पष्ट कर दी थी, "मुझे लाइनस पोलिंग मत बनाओ।" मैं तुरन्त इसे मान गया। उन्होंने भी मेरे मान जाने की कद्र की। विज्ञान को सर्वजनसुलभ बनाने की उनकी एक खास तमन्ना थी। इसीलिए सेटेलाइट टेलिविजन द्वारा ज्ञान के पूरे क्षेत्र को भारत के किसानों के लिए खोल देने का वे स्वप्न देखते थे। गुजरात के छात्रों को विज्ञान उपलब्ध कराने के लिए वे एक विशेष योजना भी शुरू कर चुके थे। एक बार मैंने कहा, "हमारे प्रशिक्षकों को अणुशक्ति के बारे में कुछ सिखाओ।" वे हाँ कहते थे लेकिन कोई मौका नहीं मिलता था। एक दिन फोन आया : "फलां तारीख को अपने प्रशिक्षकों को लेकर बम्बई पहुँचो।" बम्बई पहुँचकर देखता हूँ कि वर्ग क्या, गोष्ठी थी। उन्होंने कहा "सिखाना एक पक्ष से नहीं होता। तुम लोग भी सीखोगे, हम लोग भी सीखेंगे। गोष्ठी का विषय है 'परमाणु-शक्ति के सामाजिक पहलू।' और सब विषयों पर चर्चा का आरम्भ हमारे वैज्ञानिक करेंगे। 'परमाणु-शक्ति और प्रतिरक्षा का प्रश्न' इस विषय का आरम्भ तुम्हें करना होगा।"

और हम लोगों की क्या गुस्ताखी थी। देश के प्रमुख वैज्ञानिकों के साथ शान्तिसेना के प्रशिक्षक और कुछ तरुण-शांतिसैनिक भी बैठ गये गोष्ठी में। और जब अपनी बारी आयी तब मैंने भी कुछ बकवास कर ही डाली। जब प्रश्नों के तीर हम पर छूटे, तब मेरा अभेद्य कवच बन कर खड़े हो गये विक्रमभाई।

विक्रमभाई अपने पीछे वृद्धा माता सरला बहन, पत्नी मृणालिनी बहन, संतान कार्तिकेय, मल्लिका, कार्तिकेय की बहू और छोटे पोते को छोड़ गये हैं। परिवार के सदस्य के नाते वे एक अत्यन्त प्रेमी पुत्र, पति व पिता थे। मृणालिनी बहन अपने में ही विश्वविख्यात कलाकार हैं। कार्तिकेय और मल्लिका की प्रतिभा भी अपने माता-पिता से सवाई ही है। परिवार के दुःख में आज लाखों लोग शामिल हैं। कौन करोड़ाधिपति का लड़का व्यवसाय को स्वेच्छा से छोड़कर वैज्ञानिक बनता है? कौन वैज्ञानिक इतना सामाजिक होता है? और कौन सामाजिक इतना मानवीय होता है? डॉ० विक्रम साराभाई के निधन से संसार ने अपना एक मानवरत्न खोया है।

—नारायण देसाई

से निराशा के शिकार थे। दोनों क्षेत्रों में साम्राज्यवाद का आकर्षण बढ़ा था। पीकिंग की सत्ता की राजनीति और वैचारिक इमानदारी की कमी ने चीनियों के सही रूप को दुनिया के सामने पेश कर दिया है। अब निराशा के बहुत सारे कारण नाटकीय तौर पर खतम हो गये हैं। बदली हुई परिस्थिति रचनात्मक प्रयास के लिए *अवसर दे रही है।*

सोवियत रूस ने बंगला देश की समस्या पर भारत का समर्थन किया है; क्योंकि रूस समस्याओं से परिचित है। रूस के इस व्यवहार ने हम दोनों देशों के बीच मित्रता के बन्धन को मजबूत किया है। भारत और बंगला देश का हित एक ही है, यद्यपि बंगला देश एक स्वाधीन और स्वतंत्र देश है और हमेशा स्वाधीन रहेगा। पिछले महीनों की कुर्बानियाँ इन देशों की मित्रता को और मजबूत करेंगी। अच्छा होगा कि सिंचाई, कृषि, बिजली और बाढ़ के सिलसिले में जो योजना बनायी जाय, उसमें इस बात का पूरा ध्यान रहे कि पूरा पूर्वी क्षेत्र एक ही है। हो सकता है कि बंगला देश अपने यहाँ विकास का स्तर नीचा होने के कारण भारत के साथ एक परस्पर मंडी स्वीकार न करे। परन्तु जब कि दोनों देशों को अपने आर्थिक भविष्य को बनाना है तो तारीफ टैक्स के शब्दों में बात करना ठीक नहीं होगा। इस क्षेत्र में यातायात के साधनों का बढ़ाना अच्छा होगा। यद्यपि पुनर्वास का काम तात्कालिक महत्व का है परन्तु निर्माण के काम को भी स्थगित नहीं किया जा सकता।

खुली सीमाएँ

यह आशा की जाती है कि दोनों की सीमाएँ हमेशा खुली रहेंगी। दोनों देशों के बीच आर्थिक सहयोग होगा। बंगला देश के लोगों की पुकार पर भारत दौड़ गया। दोनों देशों के बीच आर्थिक सहयोग के लिए ऐसी ही भावनाओं की आवश्यकता होगी। खुली सीमाएँ और आर्थिक सहयोग दोनों देशों की उन्नति में भागीदारी का एक नया नमूना प्रस्तुत करेंगे।

बंगला देश के लोगों ने स्वाधीनता के लिए जो संघर्ष किया, इतिहास में उसका उदाहरण नहीं मिलता। *और इस बात* का भी उदाहरण नहीं मिलता कि पड़ोस का एक मित्र देश उसकी सहायता के लिए सहर्ष तैयार हो गया। किसी भी देश के एक भाग ने स्वतंत्रता इतनी सफलता से प्राप्त नहीं की है। परन्तु इसमें सबसे अधिक प्रशंसा की बात यह है कि बंगला देश एक धर्मप्रधान देश से एक धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक देश बना। यह इतिहास की एक अनोखी घड़ी है।

ये विशेषताएँ दोनों देशों के बीच खुली सीमा और आर्थिक सहयोग की सम्भावनाओं को रोशन करती हैं। इस अवसर से लाभ उठाने के लिए उसी विवेक *और हिम्मत की आवश्यकता होगी, जिसका* प्रदर्शन पिछले दिनों हमारे लोगों ने किया। भविष्य की जो भी सफलताएँ और निराशाएँ हों—वास्तविकता यह है कि हमारे इतिहास में एक नया मोड़ आया है। बंगला देश पश्चिमी पाकिस्तान की गुलामी से आजाद हो गया है। अब उसे अपने स्वप्न, आर्थिक विकास और स्वाधीनता की पूर्ति के लिए परिश्रम करना चाहिए। इस स्वप्न में हम दोनों राष्ट्रों के बीच दोस्ती के लिए भी स्थान है।

('हिन्दुस्तान स्टैंडर्ड' १५ दिसम्बर १९७१ से)

<u>*एक ऐतिहासिक पत्र*</u>

निक्सन के नाम आन्द्रेमालरू का पत्र

फ्रांस के प्रसिद्ध विचारक और नीतिज्ञ आन्द्रेमालरू ने फ्रांस की प्रसिद्ध पत्रिका 'लाफिगारो' में राष्ट्रपति निक्सन के नाम अपना खुला पत्र प्रकाशित किया है। यह पत्र बंगला देश के सन्दर्भ में है। एक क्रान्तिकारी, और उपनिवेशविरोधी संग्रामों के एक बड़े सिपाही के दिल की आवाज है।

पत्र निम्नलिखित है :

"मेरे राष्ट्रपति, बंगाल के करोड़ों शरणार्थी अपने घर आ रहे हैं, आप भारत के नाम अपना एक पत्र लिख चुके होंगे (आपकी एजेन्सियों के अनुसार) जिसमें आपने यह याद दिलाया है कि संसार का सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका पाकिस्तान के साथ एक संधि से बंधा है। और, उन्हीं एजेन्सियों की रिपोर्ट है कि अमेरिकी बेड़ा बंगाल की खाड़ी की ओर बढ़ रहा है।"

"अगर आप को मार्शल यहिया खाँ से इतनी सहानुभूति है तो फिर आपने उनको पहले ही परामर्श क्यों नहीं दिया? मैं आप के देश के बारे में जानता हूँ। आपके यहाँ के लोग चुनाव जीतनेवाले तथा हारनेवालों को भी जेल में देखना पसन्द नहीं करते हैं। वे यह भी पसन्द नहीं करते हैं कि उनके साथी एक गरीब पड़ोसी देश में एक करोड़ शरणार्थियों को ढकेल दे। दान से कोई अन्तर नहीं पड़ता। आप लाखों की भी दान दे सकते हैं।"

यद्यपि आपका वायुयान कलकत्ता पर मँडरा रहा है, लेकिन अमेरिका कभी भी मरते हुए लोगों के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार नहीं होगा। जब कि संसार में आपकी सबसे शक्तिशाली सेना वियतनाम में निराश्रित किसानों को पराजित न कर सकी, तो क्या आप यह समझते हैं कि इस्लामाबाद की सेना एक ऐसे देश पर *कब्जा कर लेगी जो इसके ठिकानों से* बारह सौ मील दूर है और जहाँ स्वतन्त्रता-संग्राम के शोले भड़क रहे हैं?

आपको पता होगा कि भारत के इस युद्ध में शिरकत से पहले हम में से बहुत से लोगों ने बंगाल की स्वतंत्रता के लिए शस्त्र उठाने का इरादा किया था। वैसे मैं आप को याद दिला दूँ कि अपने आठ हवाई अड्डों पर बमबारी के बाद भारत युद्ध में शरीक हुआ है। डेढ़ सौ सीनियर पदाधिकारी हमारे साथ बंगला देश की स्वतंत्रता संग्राम लड़ने के लिए तैयार थे और साल भर में ही हमारी संख्या एक हजार हो जाती। हम लोग १५ नवम्बर को निकलनेवाले थे, परन्तु उसके बाद हम→

लोगों को कोई सूचना नहीं मिली। मैं समझता हूँ कि हमारी वहाँ आवश्यकता नहीं रही। हम लोग ऐसे भोले नहीं हैं कि विदेशियों के एक दस्ते को लाखों सेना से अधिक मजबूत समझें, परन्तु जब तक पाकिस्तान ने भारत को युद्ध में नहीं ढकेला था, उस समय तक हम लोगों की सहायता का कुछ अर्थ था, क्योंकि हमारे सिवाय उनकी सहायता के लिए और कौन तैयार था?

मेरे साथी यह नहीं समझ पाते कि पूर्वी बंगाल के साथ न्याय का व्यवहार क्यों नहीं किया जाता है। आप शान्ति की बात करते हैं। मुझे कहने दीजिये कि अभी समय है। आपके इस युद्ध में शामिल होने के पहले चीन और रूस इसमें शामिल हो गये तो क्या होगा?

बंगाल में चुनाव हुए थे। पाकिस्तान को अपनी जीत की आशा थी। परन्तु वह हार गया और उसके विरोधियों को १६९ में १६७ स्थान मिले। जिस पर उन्होंने विरोधी नेता शेख मुजीबुर्रहमान को जेल भेज दिया, जबकि उन्होंने अहिंसक तौर पर अपने घर पर यह प्रतीक्षा की कि पाकिस्तानी सिपाही आकर उन्हें गिरफ्तार कर लें। और इस तरह उन्होंने उन्हें सौजन्य की पद्धति सिखायी। क्या यह उचित ही बात नहीं है कि अमेरिकी राष्ट्रपति के पद के लिए चुनाव जीतनेवाले उम्मीदवार को उसके विरोधी जेल में बन्द कर दें? आप उस प्रकार का खेल खेलते रहें, और अगर मैं गलत नहीं हूँ तो अभी भी आप वही तमाशा देख रहे हैं। यह बड़े धैर्य की बात थी। धैर्य की इन्तिहा थी कि एक करोड़ भूखे, निराश और फटेहाल शरणार्थी निकाले जा रहे थे।

पाकिस्तानी विरोधी नेताओं का कत्लेआम करते रहे। वहाँ आतंक पैदा हुआ और पूर्वी बंगाल के हिन्दू भागने लगे जिनमें मुसलमानों की एक बड़ी संख्या भी शामिल थी।

आपने कहना शुरू किया कि 'यह युद्ध है', यद्यपि वह तब तक युद्ध नहीं था। वास्तविकता यह है कि भारत में एक करोड़ शरणार्थी आ गये थे जब कि पाकिस्तान ने भारत के एक भी मुस्लिम शरणार्थी को स्वीकार नहीं किया था, कश्मीर के शरणार्थी को भी नहीं।

मेरे राष्ट्रपति, मैं यह देखना पसन्द करूँगा कि हर अमेरिकी आपसे पूछे कि "हम किस चीज के लिए लड़ें?" अगर पूर्वी बंगाल में सब कुछ ठीक-ठाक था तो फिर किस आतंक के कारण इतनी संख्या में शरणार्थी भारत में आ गये? और, शेख मुजीब कोई हिन्दुस्तानी जेल में नहीं पड़े हैं। क्या अच्छा होता अगर आप अपने साथी को उन्हें मुक्ति देने के लिए कहते?

आपकी जनरल डिगाल से जो बात हुई थी उसे आप याद करें। आप ठीक उसी समय सत्ता में आये थे और आपने अमेरिकी राजनीति पर उनसे बातें की थीं। मैंने बाद में कहा था कि "अमेरिका संसार का पहला सबसे शक्तिशाली देश है, जिसने बड़ा होना नहीं चाहा, लेकिन बड़ा बना। सिकन्दर ने बड़ा बनना चाहा था, सीजर ने सीजर बनने के लिए प्रयत्न किया था, आपने कभी संसार का स्वामी *बनना नहीं चाहा, परन्तु आप बेखबरी* में संसार के स्वामी बन बैठे हैं।

बंगाल की खाड़ी में कुछ हवाई जहाज भेज देना, जब कि सहायता का भाव सामने न है, कोई नीति नहीं है। आप चीन से बात करने जा रहे हैं, जिससे अमेरिका ने बीस साल तक कोई सम्बन्ध नहीं रखा है—संसार के सबसे धनी देश की सबसे गरीब देश से बातचीत।

क्या आप स्वतंत्र बंगाल के लिए भी प्रतीक्षा नहीं कर सकते, ताकि आपको याद आ जाय कि स्वतंत्रता की घोषणा करनेवाला देश एक गरीब राष्ट्र को, जो अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहा है, कुचल नहीं सकता? मैं यह नहीं विश्वास कर सकता हूँ कि आप की प्रसिद्ध स्वतंत्रता की मूर्ति बड़ी प्रसन्नता के साथ टेलीविजन पर इस दृश्य को देखती है—शरणार्थियों का दृश्य, जो कभी यह याद करेंगे कि स्वतंत्रता क्या है। मैं आज जो कह रहा हूँ, वह मैं नहीं कह रहा हूँ, वह आप कह रहे हैं।

—आन्द्रे मालरो [illegible]

('इण्डियन एक्सप्रेस' २५ दिसम्बर १९७१ से)

भूमि की वापसी

गरीब आदिवासियों की जमीन जो गैर कानूनी ढंग से बड़े जमींदारों या साहूकारों के कब्जे में चली गयी है, वह वापस मूल मालिकों को मिल सके जिसके लिए शासन की ओर से एक ऋण-निवारण-मंडल की स्थापना करने की सूचना महाराष्ट्र ग्रामदान बोर्ड के अध्यक्ष, तथा नियोजन मंडल के भूतपूर्व सदस्य श्री आर० के० पाटील ने की है।

शहादा (धुलिया) गाँव के भील आदिवासियों की करीब दो सौ एकड़ जमीन इस गाँव के बड़े ६ जमींदारों के कब्जे में जा चुकी है। प्रयत्न करने से जिनकी भूमि है उन्हें लौटायी जा सकती है।

सारे प्रदेश की दृष्टि से प्रस्तुत काम इतना व्यापक व कठिन है कि केवल स्वयंसेवी संस्था के बूते का नहीं है। इसके *लिए वैधानिक व्यवस्था होनी चाहिए जिसके* लिए श्री पाटील ने उपरोक्त ऋण निवारण मंडल की स्थापना का सुझाव प्रस्तुत किया है।

पास के एक देहात जिले में ऐसा एक अनुभव आया है कि सर्वोदयी नेता श्री गोविंदराव शिंदे की आवाज पर ६ आदिवासियों की १८ एकड़ जमीन जो बड़े जमींदारों के कब्जे में थी, सभा में ही वापस दे दी गयी। इस घटना का असर सर्वत्र बहुत अच्छा हुआ। इस प्रकार यदि गाँव-गाँव सम्बन्धित लोगों से बातचीत की जाय तो परिणाम अच्छे आ सकते हैं।

प्रस्तुत सवाल पर सारे समाज का तथा शासन का भी ध्यान केन्द्रित हो सके इसके लिए ता० ३० जनवरी को महात्मा गांधीजी के निर्वाण दिवस के निमित्त एक विशाल सभा एवं मूक जुलूस का संयोजन भी किया गया है।

एक सुझाव

बंगला देश का नया सन्दर्भ और अल्पसंख्यकों की समस्याएँ

—मुस्तफा कमाल

बंगला देश एक स्वतन्त्र राष्ट्र की हैसियत से स्थापित हो चुका है। आशा की जाती है कि संसार के दूसरे राष्ट्र और राष्ट्रसंघ उसे शीघ्र ही मान्यता दे देंगे। अगर देर भी हुई तो इतनी होगी, जितनी चीन को मान्यता मिलने में हुई थी। बंगला देश के निर्माण में भी भारत को बहुत कुछ करना है। अगर भारत ने खतरा मोल लेकर बंगला देश के 'कॉज' के लिए युद्ध न किया होता तो न मालूम और कितना रक्तपात वहाँ होता।

भारत ने बंगला देश की स्वतन्त्रता के लिए जो युद्ध किया उसका चरित्र अहिंसा से करीब मानना चाहिए। क्योंकि यह युद्ध रक्तपात, बर्बरता, धर्म का राजनीतिकरण, आर्थिक शोषण, मूल संस्कृति को नष्ट कर ऊपर से एक दूसरी संस्कृति लादने की कोशिश, मानवाधिकारों और लोकतन्त्रात्मक आकांक्षाओं के अपमान के विरुद्ध था। इस युद्ध के चरित्र को क्रान्तिकारी, नैतिक और मानवीय कहा जा सकता है। इतिहास में यह पहला युद्ध था, जो धर्म की बुनियाद पर साम्राज्य स्थापित करने के विरुद्ध लड़ा गया।

इससे भारत का सम्मान बहुत बढ़ा है और यह एक मध्य शक्ति से बड़ी सामरिक शक्ति बन गया है। बल्कि यह कहना भी ठीक ही होगा कि वह बिना परमाणु शक्ति बनाये एक 'सुपर पावर' बन गया है, जिसके पास धर्म निरपेक्षता, लोकतंत्र, और समाजवाद के हथियार हैं। संसार इस बात को अच्छी तरह समझ गया है कि भारत ने शक्ति-सन्तुलन या उपनिवेशवादी शक्ति बनने के लिए युद्ध नहीं किया था। भारत की प्रधानमंत्री ने पिछले दिनों बार-बार यह स्पष्ट किया है कि महाशक्तियों और शक्ति-सन्तुलन की बात अब गयी-गुजरी हो चुकी है और भारत की वैसी कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं है। लेकिन इस बार की बड़ी उम्मीद है कि एशिया और अफ्रीका के छोटे-छोटे देश, जो शोषण और उपनिवेशवाद के विरुद्ध जंग कर रहे हैं, अब आपस में संगठित होंगे और परस्पर पूरक बनकर अपना विकास करेंगे।

यह तो हुआ सरकार का काम, लेकिन भारत को आगे बढ़ाने का उत्तरदायित्व यहाँ के हर नागरिक पर है जो थोड़ा-बहुत सामाजिक और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व के प्रति चेतन है। भारत उसी समय आगे बढ़ सकेगा जब यहाँ के समाज में जो गाँठें पड़ गयी हैं सुलझायी जायें। इसके लिए सबसे बड़ी जरूरत यह है कि यहाँ के अल्पसंख्यकों—विशेष तौर से मुसलमानों की समस्या का उसी तरह हल करने की कोशिश की जाय जैसे महात्मा गांधी ने की थी। यह एक महत्त्वपूर्ण काम है; क्योंकि स्वतन्त्रता-संग्राम में मुसलमानों की बहुसंख्या शरीक नहीं थी, और स्वतन्त्रता के बाद मुसलमान राष्ट्रीय आकांक्षाओं से अपना नाता न जोड़ सके। अगर यह परिस्थिति ज्यों की त्यों रही तो एक समय आयेगा जब अपने पिछड़ेपन के कारण मुसलमान राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था पर एक बोझ बन जायेंगे, या उनके अन्दर असामाजिक तत्त्व बढ़ेंगे और इस तरह समाज की शान्ति और स्थिरता के लिए एक बड़ी समस्या खड़ी हो जायेगी। (यह बात याद रखने की है कि नक्सलवादी आन्दोलन को जो कार्यकर्ता मिले, उनमें *मुसलमानों की संख्या उनकी संख्या* के अनुपात से अधिक थी। हरिजनों, आदिवासियों और दूसरी पिछड़ी जातियों के साथ मिलकर वे एक सिरदर्द तो हो ही सकते हैं ?

प्रश्न यह है कि क्या किया जाय ? उत्तर है, उनको शिक्षा दी जाय, उन्हें यह बताया जाय कि धर्म में अब इतनी शक्ति नहीं रह गयी है कि वह विभिन्न समुदायों, राष्ट्रों, और सामाजिक-सांस्कृतिक गुटों को एक साथ बाँधकर रख सके। इसलिए अब "उम्मते दीन" की बुनियाद पर इस्लामी साम्राज्य के स्वप्न को छोड़कर उन्हें वास्तविकताओं से करीब होना चाहिए। बंगला देश की घटना यह बताती है कि यह युद्ध स्वाधीनता का है जो महात्मा गांधी के ग्राम-गणतन्त्र का पहला कदम है। हमें इस तरह का वातावरण बनाना होगा कि मुसलमानों के अन्दर देश और समाज के प्रति लगाव और भागीदारी की भावना बढ़ सके।

इसके लिए इस बात की कोशिश करनी होगी कि हमारी धर्म-निरपेक्षता विधायक हो। अर्थात् सामाजिक समारोहों में कोई भी ऐसी रस्म की जाय जिसका किसी धर्म से सम्बन्ध हो। इतिहास को तोड़-मरोड़ कर पेश करने का जो प्रयास देश में चल रहा है उसे रोकना होगा। राष्ट्रीय जीवन में जो मुसलमानों का योगदान रहा, उससे इन्कार नहीं करना चाहिए। (भारत में कुछ ऐसे इतिहास के *विशेषज्ञ पैदा हो गये हैं जिनका एकमात्र* उद्देश्य है कि मुसलमानों के योगदान से इन्कार करो। कोई कहता है कि कुतुब*मीनार अमुक राजपूत राजा ने बनवाया* था। कोई दावा करता है कि लालकिला और ताजमहल के बनवानेवाले अमुक *हिन्दू राजा थे।)*

अक्सर लोग भारतीयकरण की बात करते हैं। समझ में यह बात नहीं आती कि भारतीयकरण का अर्थ क्या है ? इसलिए कि भारत हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, और दूसरे बड़े धर्मों का संगम रहा है। *यहाँ की संस्कृति में ईरानी, अरबी, तुर्की* अंग्रेजी प्रभाव मिलजुलकर एक हो गये हैं। अब जो कुछ भी नजर आता है वह भारतीय है। इसलिए भारतीयकरण के नाम पर हिन्दूकरण का नारा बहुत ही घातक सिद्ध हो सकता है।

जमलाबाद पुष्टि-गोष्ठी

बिहार में पुष्टि-कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी का सिलसिला जून '७१ से शुरू हुआ। अब तक तीन गोष्ठियाँ हो चुकी हैं। तीसरी गोष्ठी २३-२४ दिसम्बर '७१ को मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी प्रखण्ड में जमलाबाद आश्रम में हुई। इस गोष्ठी में सकरा, मुरौल, वैशाली, मुसहरी (मुजफ्फरपुर), सहरसा, बिरौल (दरभंगा); झाझा (मुंगेर), रुपौली, भवानीपुर, रानीगंज (पूर्णिया), के कुल २७ मित्रों ने भाग लिया। पुष्टि के काम में लगे कुछ साथियों को यह महसूस हुआ कि वे काम तो करते हैं, लेकिन काम के दरम्यान जो अनुभव और अनुभूति होती है उसकी चर्चा नहीं हो नहीं पाती। अनेक समस्याएँ खड़ी होती हैं जिनका हल कहीं सूझता है, कहीं नहीं सूझता है। अतः यह महसूस हुआ कि सभी क्षेत्रों के साथी दो-तीन महीने पर एक जगह बैठें और चर्चा करें। इस गोष्ठी में वे ही मित्र बुलाये जाते हैं जिनका पुष्टि-कार्य से संबंध सम्बन्ध है और अपने अपने क्षेत्र में प्रत्यक्ष जुट रहे हैं। २०-२५ से ज्यादा संख्या भी न हो इसका ध्यान रखा जाता है ताकि आमने-सामने चर्चा हो सके। और, इसीलिए पुष्टि-कार्य में उठे प्रश्नों को ही सामने रखकर चर्चा के मुद्दे निर्धारित किये जाते हैं।

गोष्ठी के प्रारम्भ में अपने-अपने क्षेत्रों के अनुभव सुनाये गये। सहरसा जिला का कार्य-विवरण श्री महेन्द्र नारायणजी ने प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि सहरसा जिले के तीनों अनुमंडलों में काम करने की योजना बनी, शुरू में इसकी कोशिश भी हुई, परन्तु साधन और कार्यकर्ता के अभाव में पूरे जिले में कार्य का संयोजन नहीं हो पाया। अब जिले के केवल चार प्रखण्डों में ही काम को सीमित किया गया है। उन्होंने महसूस किया कि स्थानीय नेतृत्व नहीं पैदा हो रहा है अतः कहीं-न-कहीं हमारे संयोजन में कमी है। कार्यकर्ता कार्य पर इतना हावी हो जाता है कि लोक को आगे आने का अवसर नहीं रह जाता। एक कमी की ओर उन्होंने इशारा किया कि किसी क्षेत्र में जब हमारा आन्दोलन बढ़ता नजर आता है तो हम शिथिल हो जाते हैं, अथवा अपना काम समेट लेते हैं। सहरसा के संयोजन में इस तरह का दोष रहा है। सातत्य की कमी रही है। श्री महेन्द्र नारायणजी मानते हैं कि जो मालिक ग्रामदान की बात नहीं मानते या बीघा-कट्ठा नहीं निकालते उनके लिए मशाल-जुलूस निकाला जाना चाहिए—इसमें वे सभी लोग (धनी-गरीब) शामिल होंगे जो ग्रामदान में शरीक हैं।

मरौना प्रखण्ड में अब तक एडहॉक प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा काम कर रही थी, परन्तु अब नियमित प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा का गठन हो गया है। सदस्यों का चुनाव सर्वसम्मति से हुआ और कार्यकारिणी में १३ सदस्य हैं। वह मानते हैं कि मरौना प्रखण्ड में पुष्टि-कार्य के लिए अब कार्यकर्ता की आवश्यकता नहीं है। अब आवश्यकता है ऐसे कार्यकर्ता की जो पदाधिकारियों के प्रशिक्षण का कार्य कर सकें। पदाधिकारी प्रशिक्षित होंगे तो वे ही पुष्टि का कार्य कर सकेंगे।

श्री भृगुनाथ सिंह पूर्णिया जिले के रानीगंज प्रखण्ड में कार्य कर रहे हैं। उन्होंने बताया कि वहाँ पर टोलों की अलग ग्रामसभाएँ बनायी गयी थीं। अब उन्हें मिलाने की कोशिश की जा रही है, परन्तु टोलेवाले अपनी अनिच्छा जाहिर कर रहे हैं। वह मानते हैं कि सक्षम कार्यकर्ता हो तो काम आगे बढ़ेगा।

श्री चन्देश्वर राय रुपौली में कार्य कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि इस प्रखण्ड में ६ कार्यकर्ता काम करते हैं। अब कुछ नयी समस्याएँ उभरकर सामने आयी हैं। सभी ग्रामसभाओं में प्रतिनिधियों का चुनाव हो रहा है।

भवानीपुर प्रखण्ड के श्री महेन्द्र प्रसाद सिंह ने बताया कि कार्यकर्ता का अभाव है।

श्री कामेश्वर प्रसाद ठाकुर ने बताया कि मुसहरी में स्थानीय अभिक्रम को जगाने का प्रयास किया जा रहा है। शिक्षा में सुधार की दिशा में भी प्रयत्न हो रहा है। श्री ज्योतिभाई देसाई प्रयास कर रहे हैं कि ग्रामस्वराज्य-सभा और गाँव के विद्यालय के सहयोग से शिक्षा में सुधार कितना सम्भव है। मुसहरी प्रखण्ड के २२ शिक्षक व ग्रामसभा के ६ अन्य पदाधिकारी वेड़छी (गुजरात) १५ दिन के शिविर में गये हुए हैं। इस प्रखण्ड में ग्रामकोष बहुत कम निकल रहा है, बाहरी मदद की आकांक्षा ज्यादा है। ३० जनवरी से ६ फरवरी तक एक पदयात्रा का आयोजन किया गया है।

श्री रामलखन मिश्र सकरा, मुरौल प्रखण्ड में कार्य कर रहे हैं। उन्होंने दोनों प्रखण्डों को अपना क्षेत्र माना है।

वैशाली प्रखण्ड में श्री लखनदेवजी काम करते हैं। उन्होंने बताया कि वहाँ १० कार्यकर्ता लगनेवाले हैं। अभी केवल दो लगे हैं।

बिरौल प्रखण्ड को सहरसा के साथ जोड़ा गया था, परन्तु सुश्री सुशीला बहन की वहाँ से चले जाने के बाद वहाँ के काम की जिम्मेदारी श्री देवानन्दजी सम्भाल रहे हैं। सुश्री सुशीला बहन ने यहाँ का काम जहाँ छोड़ा है उसके आगे काम बढ़ा नहीं है। दरभंगा जिले के कार्यकर्ताओं की बैठक में यह तय करेंगे कि आगे काम को कैसे बढ़ाया जाय।

श्री कामेश्वर बहुगुणा ने आचार्यकुल के काम का अनुभव सुनाया। अभी तक सहरसा में आचार्यकुल की जितनी समितियाँ बनी हैं वे सब कागज पर हैं। वे पुष्टि के प्रत्यक्ष कार्य में नहीं लगी हैं।

श्री शिवानन्द झा ने झाझा प्रखण्ड का अनुभव सुनाते हुए बताया कि २० दिसम्बर '७१ को झाझा प्रखण्ड के प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा का चुनाव-

कराया जाय। प्रारम्भ में ग्रामसभा थोड़ी-सी खादी—एक-एक, दो-दो माह गुण्डियों से लेकर रख लेगी और उसका दाम गुण्डियों में निश्चित कर देगी। हर कातनेवाला या कातनेवाली अपनी आवश्यकता और इच्छानुसार जितना और जिस किस्म का कपड़ा लेना चाहेंगे लेते जायेंगे। अब उस सूत को ग्रामसभा, संस्था की तकनीकी सहायता से अपने गाँव में बुनवा लेगी और वह कपड़ा फिर गाँववाले सूत देकर ले लेंगे।

यदि किसी के घर में कपास आवश्यकता से अधिक होगी तो ग्रामसभा उससे खरीदकर अपने पास रख लेगी। इस ढंग से हर ग्राम को कपास अवश्य ही मिल जायेगा। इसी ढंग से गाँव की पाठशाला जब तालीम को (बुनियादी महत्त्व देकर) ऐसा स्वरूप शिक्षा देगी तो ग्रामवासी जिस ढंग से चाहेंगे अपना विकास स्वयं करते चले जायेंगे। इस ढंग से ही खादी बाजार से बाहर की चीज रह सकेगी, और ग्रामवासी पैसे के चक्र से मुक्त हो सकेंगे। इस प्रक्रिया को और आगे बढ़ाया जायेगा कि ग्राम में जो कुछ भी कोई उत्पन्न करेगा उसका दाम गुण्डियों में आँक कर ग्रामसभा ले लेगी और जो कुछ वह व्यक्ति लेना चाहेगा, वह सब उन गुण्डियों के आधार पर (ग्रामसभा के पास जो कुछ होगा) ले लेगा। इस प्रकार ग्रामोद्योग ग्राम में ही विकसित हो जायेंगे। किसी ग्रामवासी को अपनी उत्पत्ति को बाजार में न ले जाकर शोषण का कारण बनना पड़ेगा। जो सामान ग्रामसभा के पास बचेगा, वह स्वयं उसके निकास का प्रबन्ध करेगी। आज तो केवल यही एक ढंग है जिससे ग्रामस्वराज्य में सहायता मिलती है। विनोबाजी ने जो पावर की मान्यता दी है, उसकी आवश्यकता सम्भवतः आज से ५० वर्ष बाद पड़ेगी।

प्रश्न—अगर पावर का कता सूत और पावरलूम पर बना कपड़ा खादी में बैठ सकता है तो फिर मिल के कपड़े के उपयोग में क्या हर्ज है?

उत्तर—आज न पावर विकेन्द्रित है और न ही ५०-१०० वर्ष तक उसके विकेन्द्रित होने की सम्भावना है। इसके अतिरिक्त हमारा मस्तिष्क भी तालीम की दृष्टि से इतना विकसित नहीं हुआ, इसलिए ५० वर्ष बाद की बात को आज सोचना अनावश्यक एवं अवाञ्छनीय है। अभी तो मैंने पहले प्रश्न के उत्तर में जो कहा है, उसी को क्रियात्मक रूप से करना है।

प्रश्न—एक या दो तकुए के अम्बर से तो खादी महँगी पड़ेगी। गाँववाले खरीदेंगे नहीं। इसकी अपेक्षा अधिक तकुवे का चरखा चले तो खादी सस्ती होगी और ग्रामस्वावलम्बन आसान होगा?

उत्तर—एक या दो तकुवे का वहाँ सवाल ही नहीं उठता होगा। पहले तो हमें गाँववालों को पारम्परिक चरखे (यरवदा चक्र) में ही पारंगत करना होगा। चरखा, उसका सामान (तकुआ, चक्र आदि), पूनी या आवश्यकता की अन्य वस्तुएँ इन्हें सूत की गुण्डी के बदले से ही मिलनी चाहिए। ये सब सामग्री उन्हें खादी के उपयोग के बदले में ही मिलेगी। इसमें सस्ते महँगे का सवाल न उठकर मुफ्त ही होगा और यहाँ स्मरण रहे कि कताई के कार्य में हमें ज्यादा बच्चों और बूढ़ों को ही लगाना होगा, जो अधिक जोर का काम नहीं कर सकते। वयस्कों को अपने-अपने ग्रामोद्योगों में ही लगे रहना है।

प्रश्न—पावर की इजाजत दी जायेगी तो चालू कातनेवाली बहिनों का क्या होगा?

उत्तर—मजदूरी करनेवाली दलित जो हमने आज बनायी है, वह गांधीजी के सिद्धान्त के बिल्कुल विपरीत है। चरखा मजदूरी के लिए नहीं, स्वावलम्बन के लिए है। काते सो पहने, पहने सो काते। इसलिए बहिन के सस्ती होने का सवाल ही नहीं पैदा होता। संस्थाओं को मजदूरी पर सूत कताना अभी से बन्द कर देना चाहिए, और उन्हें सूत के बदले में पूनी, चरखे का सामान, कपड़ा, साबुन, तेल आदि ग्रामोद्योगों की चीजें ही मिलनी चाहिए। जो कपड़ा वहाँ से बच जाय, वही शहरों में बिकना चाहिए। बिकनेवाले कपड़े को प्रश्रय नहीं मिलना चाहिए। शहरों में बिक्री-केन्द्र कम करके पूंजी और कार्यकर्ता, दोनों का मुँह गांव की ओर मोड़ना होगा।

प्रश्न—आज तक का अनुभव यह है कि पूनी अच्छी होने से ही सूत और खादी अच्छी होती है। मिल का प्लाण्ट ब्लाक स्तर पर लगाया जाय तो कैसा रहेगा?

उत्तर—इस प्रश्न से आपका अभिप्राय अम्बर चरखे के लिए अच्छी पूनियों से है। जैसा कि पहले मैं स्पष्ट कर चुका हूँ कि कपास चुनकर हाथ की ओटनी से ओट कर जब हाथ धुनाई से गाँव में ही पूनियाँ बनेंगी तो उससे सूत अच्छा ही आयेगा। खराब सूत का तो प्रश्न ही नहीं उठता। जब तक हमारा जन सामान्य इतनी वैज्ञानिक प्रगति न कर ले, तब तक, प्लाण्ट की बात सोचना असामयिक होगा।

प्रश्न—आपने हर घर में कताई की बात कही है। यह अगर होना है तो बुनाई-मजदूरी का वास्तविक स्वावलम्बन के लिए उपयोग हो सकता है। इस विषय में आप क्या सोचते हैं?

उत्तर—जो कुछ मैंने ऊपर कहा है, इससे कताई हर घर में ही नहीं, हर व्यक्ति अपने खाली समय में करेगा, और उसका प्रबन्ध ग्रामसभा करेगी। व्यक्ति का सम्बन्ध सरकार के साथ न होकर, ग्रामसभा के साथ जुड़ेगा। व्यवस्था के खर्च इस खादी पर नहीं पड़ेंगे, अतः मजदूरी न मिलने पर भी कोई अन्तर न पड़ेगा। कातनेवालों को तो कपड़ा मुफ्त ही मिलेगा। इससे बढ़कर कातनेवाले को मजदूरी क्या होगी कि उसे कपड़ा मुफ्त मिले।

—प्रस्तुतकर्ता : डा० शोभा मिश्रा

७—शहरी गरीब

जनसंख्या की श्रेणी	१९६०-६१ में प्रति व्यक्ति उपभोक्ता खर्च	१९६७-६८ में प्रति व्यक्ति उपभोक्ता खर्च
०— ५	९६.२ रु०	७८.२ रु०
५—१०	१२९.७ ,,	११२.४ ,,
१०—२०	१५६.१ ,,	१४५.७ ,,
२०—३०	१९१.० ,,	१८३.३ ,,
३०—४०	२२३.८ ,,	२२०.१ ,,
४०—५०	२५६.६ ,,	२५९.५ ,,
५०—६०	२९५.८ ,,	३०४.४ ,,
६०—७०	३४२.५ ,,	३५८.९ ,,
७०—८०	४२१.३ ,,	४४१.६ ,,
८०—९०	७५३.५ ,,	७८०.२ ,,
९०—९५	७५३.४ ,,	६८९.८ ,,
९५—१००	१२६८.८ ,,	१३३०.० ,,
कुल	३५६.४	३६४.९

इन आंकड़ों से जाहिर होता है कि शहरी जनता के निचले ४० प्रतिशत भाग ने पिछले दस वर्षों के विकास से कोई लाभ नहीं उठाया है। इसके विपरीत उनका प्रति व्यक्ति उपभोग घटा है, सबसे नीचे के १०% का तो बहुत ज्यादा घटा है। मध्यम वर्ग का उपभोग बढ़ा है, विशेष रूप से ऊपर के १० प्रतिशत का बहुत ज्यादा बढ़ा है।

८. विषमता में वृद्धि

इसमें जरा भी शक नहीं है कि समाज के सभी भागों को विकास से समान लाभ नहीं पहुँचा है। ज्यादातर लाभ ऊपर के ४० प्रतिशत लोगों को ही मिला है। मध्यम, निम्न-मध्यम गरीब वर्गों को बहुत थोड़ा लाभ पहुँचा है, जब कि सबसे निचले ५ प्रतिशत लोगों का घट गया है। देहातों से शहरों की स्थिति ज्यादा गम्भीर है। उनमें ४० प्रतिशत जनता, यानी निम्न-मध्यम, और गरीब वर्गों का उपभोग घटा है, और सबसे नीचे के १० प्रतिशत का उपभोग १५ से २० प्रतिशत तक घट गया है। ऐसी स्थिति में विषमता बराबर बढ़ती ही गयी है।

९. शहरों में बढ़ती हुई गरीबी

पहले कहा जा चुका है कि १९६०-६१ में शहर में प्रति व्यक्ति उपभोग देहात के प्रति व्यक्ति उपभोग से ३७.७% अधिक था। १९६७-६८ में यह घटकर ३५.९% हो गया। प्रश्न यह है कि शहर और देहात के बीच की यह विषमता घटी कैसे? क्या शहरी धनी और देहाती धनी में विषमता घटी या शहरी गरीब और देहाती गरीब में घटी? आंकड़ों की तुलना करने पर मालूम होता है कि कि १९६०-'६१ में शहरी और देहात के उच्च-मध्यम और धनी, वर्गों में जो अन्तर था वह १९६७-'६८ में भी करीब-करीब वही रहा, वृद्धि हुई लेकिन मामूली। लेकिन मध्यम, निम्न मध्यम और गरीब वर्गों की स्थिति बिलकुल भिन्न थी। शहरों के इन वर्गों की स्थिति देहात के उन्हीं वर्गों की स्थिति से खराब रही है। शहर और देहात के निम्न-मध्यम और गरीब वर्ग एक दूसरे के करीब पहुँचते गये हैं।

हमने पहले देखा है कि देहात के सबसे नीचे के १०% १९६०-'६१ में जहाँ थे वहीं १९६७-'६८ में भी रह गये। शहर के सबसे नीचे के १०% लोग दस वर्षों में देहात के सबसे नीचे के १०% के बिलकुल करीब पहुँच गये, यानी उनका अन्तर २७'२ से घटकर ४'५ रह गया। यह कहा जा सकता है कि १९६७-'६८ में शहर के सबसे गरीब १०% लोग देहात के सबसे गरीब १०% लोगों से अधिक गरीब थे। इसका एक बड़ा कारण यह रहा है कि देहातों से लोग रोजी की तलाश में शहरों में जाते रहे हैं, और जो कुछ भी मजदूरी मिल गयी उसे स्वीकार करके वहां रहते रहे हैं।

१०. पिछले दस वर्षों के इस विवरण से हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं :

- देश के औसत व्यक्ति का उपभोक्ता खर्च १।२ प्रतिशत से भी कम बढ़ा है।
- यह मामूली वृद्धि भी सभी वर्गों तक नहीं पहुँची है।
- देहात के सबसे नीचे के २० प्रतिशत लोगों की हालत जहाँ की तहाँ रह गयी है।
- शहर के सबसे नीचे के २० प्रतिशत लोगों की स्थिति नीचे गिरी है। उसके ऊपर के २० प्रतिशत की जहाँ थी वहाँ ही रह गयी है।
- जीविका की तलाश में देहातों से लोग बराबर शहरों में जाते रहे हैं, और वहाँ सड़कों के किनारों और बस्तियों में बेहद गरीबी की जिन्दगी बिताते रहे हैं।
- इस स्थिति में गरीब का असंतोष बढ़ता रहा है, और गरीबी दूर न होने के कारण देश में हताशा बढ़ती रही है। देश के जीवन का यह पहलू अत्यन्त चिन्ताजनक होता जा रहा है।

—प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

मरौना प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा की बैठक

मरौना (सहरसा) प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा की कार्य-समिति के सदस्यों की बैठक गत ९-१० दिसम्बर को निर्मली में हुई। समिति के कुल ३१ सदस्यों में से २४ उपस्थित थे। बैठक की अध्यक्षता श्री नारायण प्रसाद यादव ने की। सर्व-सम्मति से निम्नलिखित निर्णय लिये गये :

(१) जिन गांवों में अब तक ग्रामसभा नहीं बनी है, वहाँ ग्रामसभा का शीघ्र गठन करवाना। इसके लिए तीन टोलियाँ बनाकर उन्हें जिम्मेदारी सौंपी गयी।

(२) ग्रामकोष के प्रश्न पर विस्तार से चर्चा हुई। तय हुआ कि तीन व्यक्तियों की एक समिति प्रखण्ड के जिन गांवों में ग्रामकोष जमा हुआ है, वहाँ घूमकर जानकारी प्राप्त करे, कठिनाइयों के बारे में सुझाव दे तथा परिस्थिति की पूरी रिपोर्ट प्रखण्ड-सभा को दे।

(३) बीघा-कट्ठा—तय हुआ कि कार्य-समिति के सभी सदस्य अगली बैठक के पहले अपना बीघा-कट्ठा निकालकर बांट दें। ग्रामसभा के पदाधिकारियों से भी ऐसा करने की प्रार्थना की जाय। प्रखण्ड-सभा के अध्यक्ष और मंत्री के साथ कुछ लोगों की एक उपसमिति बनायी गयी जो बीघा-कट्ठा निकालने के काम में घूमेगी।

(४) प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य सभा का कार्यालय निर्मली में रहेगा।

(५) पाँच गांवों के कागज पुष्टि के लिए तैयार हैं। शेष गांवों के कागजात तैयार करने के लिए जिला ग्रामस्वराज्य-अभियान समिति की ओर से २ कार्यकर्ता दिये जा रहे हैं।

(६) तय हुआ कि भूदान कमिटी से प्रखण्ड में अब तक वितरित जमीन का गांववार ब्योरा प्राप्त किया जाय। वितरण में जो गलतियाँ हुई हों या अन्य उलझनें पैदा हुई हों, उनका यथासम्भव ग्रामसभा की मदद से निपटाने का प्रयास किया जाय।

(७) प्रखण्ड में विकास की दृष्टि से एक प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य विकास समिति का भी गठन किया गया। आगे यह संस्था रजिस्टर्ड करायी जायेगी। प्रखण्ड के ग्रामदानी गांवों के समग्र विकास की योजना ग्रामसभा बनायेगी और प्रखण्ड विकास समिति उसमें आवश्यक सहयोग करेगी।

(८) प्रखण्ड में गठित ९२ ग्राम-सभाओं के पदाधिकारियों यानी अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष एवं शान्तिसेना-नायक, इन सबका दो दिवसीय शिविर चलाने का भी निर्णय किया गया। ५ जनवरी से २६ जनवरी तक प्रखण्ड के सारे पदाधिकारियों का प्रशिक्षण १० शिविरों में सम्पन्न करने की बात सोची गयी है।

(९) प्रखण्ड के आचार्यों तथा उनके आचार्यकुल संगठन का ग्रामस्वराज्य के काम में सहयोग मिले, इसकी योजना बनायी गयी है।

(१०) प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा की कार्यसमिति की बैठक हर महीने होगी।

मैसूर में सर्वोदय-कार्य

कर्नाटक के बल्लारी जिले में गत ५ जुलाई '७१ से ५ दिसम्बर '७१ तक श्री सिद्धराज गुरुजी के मार्गदर्शन में सतत पदयात्रा चली, इस पदयात्रा के अंत में बल्लारी जिले का हूवलेट में बल्लारी जिला सर्वोदय सम्मेलन सम्पन्न हुआ। पदयात्रियों ने इस जिले के डी० डी० पी० प्रेसिडेन्ट, बी० डी० ओ०, ऑफिसर, ग्रामसेवक, पंचायत सेक्रेटरी, शाला-शिक्षक, विद्यार्थी और अन्य रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने इस कार्यक्रम में सक्रिय भाग लेकर अपनी-अपनी सहानुभूति प्रकट की।

सम्मेलन के पहले दिन श्री शेदुर्गीकर जी (महाराष्ट्र) अध्यक्षता में ता० ३ दिसम्बर ७१ [illegible] शिविर सम्पन्न हुआ, उसमें ५० शिविरार्थियों ने भाग लिया। इस शिविर में नीचे लिखे विषयों पर चर्चा हुई—

(१) सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने कर्नाटक में प्राप्ति-पुष्टि पदयात्रा चलाने के बारे में कर्नाटक कार्यकर्ताओं को लिखे पत्र पर।

(२) पदयात्रा की समस्याएँ।

(३) बल्लारी जिला सर्वोदय समिति का अगला कदम।

पंचायत	वितरित भूमि बी० क० धूर	दाता	आदाता	ग्रामकोष जमा करनेवाले गांवों	शान्ति सैनिक
मरौना	४०-०५-१७	१५६	२००	४	१७१
हहरी	४०-१४-०६	१८४	१९०	६	१६१
मगासिहौल	२३-०३-१७	६५	९३	३	८६
कोलवाहा	१०-०६-११	२८	४१	२	३०
बेलही	५-११-०१	१९	२२	२	५२
कुम्हरिया	८-१६-१०	३६	२५	२	१०५
मरौना बेला	५-१०-००	४४	३२	०	५६
बहहरावनहापट्टी	१६-१०-००	४५	६१	२	१७५
जोगहा	१५-००-००	५०	३४	३	१८५
सरस्वतिया	१०-०९-०८	३४	४६	३	९८
	१८१-०७-१०	६६	७४४	२७	१,११९

नोट : ८५ बीघा १०० एकड़ के बराबर होता है।

झाझा प्रखण्डस्वराज्य-सभा का वार्षिक सम्मेलन

बिहार के मुंगेर जिले के झाझा प्रखण्ड में ग्रामदानी गाँवों को लेकर बनी पहली प्रखण्डग्रामस्वराज्य-सभा का पहला वार्षिक सम्मेलन गत २० दिसम्बर को झाझा में हुआ। सम्मेलन में भाग लेनेवाले करीब ८० गाँवों के ३०० प्रतिनिधियों ने प्रखण्ड में अभाव, अज्ञान व अन्याय दूर करने की दिशा में गत वर्ष किये गये कार्यों का मूल्यांकन करते हुए सन् '७२ की योजना पर विचार किया। प्रखण्डग्रामस्वराज्य-सभा ने फैसला किया है कि प्रति बालिग एक रुपया एकत्र कर सन् '७२ के अन्त तक पचास हजार रुपया से प्रखण्ड-कोष स्थापित करेगा। अभी तक इस कोष के लिए चार हजार रुपया जमा हो चुका है। प्रखण्ड शान्ति-सेना के लिए पाँच सौ ऐसे शान्ति सैनिकों का चयन आरम्भ हो गया है जो प्रखण्ड-सभा के निर्देश पर पूरे प्रखण्ड में कहीं भी जाकर अपने कर्तव्य निभा सकें।

झाझा प्रखण्डग्रामस्वराज्य-सभा का गत २० दिसम्बर '७० को श्री जयप्रकाशजी द्वारा उद्घाटन हुआ था। तब से प्रखण्ड-स्तर पर चलनेवाली योजनाएँ ग्रामसभाओं के माध्यम से ही लागू की जाती हैं। सभाओं के फैसले सर्वसम्मति से होते हैं। प्रखण्डग्रामस्वराज्य-सभा बनने के बाद प्रखण्ड में कृषि और सिंचाई की योजनाएँ बड़े पैमाने पर क्रियान्वित की गयी हैं। ग्रामदानी गाँवों में सिंचाई और पेय जल के कुएँ, आहर (छोटे-छोटे बाँध) आदि का निर्माण सरकारी व गैर सरकारी स्वयंसेवी संस्थाओं के सहयोग से हुआ है। बिना लाभ-हानि के चारा बिक्री केन्द्र, खाद व बीज के डिपो भी ग्रामदानी गाँवों में खोले जा रहे हैं। प्रखण्ड में चलनेवाले सभी निर्माण कार्य ठेकेदारों के माध्यम से न होकर ग्रामसभाओं के हाथ से होते हैं, जिनमें पूरे गाँव के बालिग व मजदूरी श्रमदान करते हैं। निर्माण-काल में तकनीकी पक्ष को देखरेख बिहार के अवकाश-प्राप्त चीफ इंजीनियर श्री अघोरी परमेश्वर प्रसाद करते हैं।

प्रखण्डग्रामस्वराज्य-सभा के नव निर्वाचित पदाधिकारियों के नाम इस प्रकार हैं : अध्यक्ष—श्री गोपाल चरण सिंह, मंत्री—श्री इशहाक खाँ व कोषाध्यक्ष—श्री महावीर। इनके अतिरिक्त प्रखण्ड-कार्य-समिति के लिए १९ गाँवों से २१ लोगों का चयन सर्वसम्मति से हुआ है।

झाझा प्रखण्ड में कुल राजस्व-ग्रामों की संख्या १८० है। इनमें से १६१ का ग्रामदान हो चुका है। १२६ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं तथा ८९ गाँवों में बीघा-कट्ठा का वितरण हो चुका है। झाझा का प्रखण्डदान ४ मार्च १९६८ को विनोबाजी को खादीग्राम, मुंगेर में समर्पित किया गया था। (सप्रेस)

---

(४) गोपाल अ... अशन का प्रभाव।

(५) कन्नड भू...-पत्रिका देवनागरी लिपि के बारे में।

(६) श्री भोसलेजी का सहरसा अनुभव।

(७) बंगला देश की परिस्थिति के बारे में।

(८) लोक-नीति।

ऊपर लिखे हुए नं० १ और ८ के सम्बन्ध में श्री शेंडुर्णीकरजी ने शिविरार्थियों को अच्छी तरह समझा दिया। इस शिविर में बल्लारी जिले के १६ कार्यकर्ताओं की एक एडहॉक कमिटी बन गयी।

ता० ४ दिसम्बर '७१ को जिला सर्वोदय सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में करीब १५० प्रतिनिधि कर्नाटक से आये थे। श्री शेंडुर्णीकरजी, श्री मल्लिकार्जुन गौड़, श्री अनंत होदीके साहार का सर्वोदय-विचार पर प्रवचन हुआ। इसके अलावा श्री वेंकोबा राव, श्री सिद्धराम गुरुजी, श्री महादेव गुरगोड, श्री वसंत कुमार, श्री सवणूर इत्यादि प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित थे।

बल्लारी जिला पदयात्रा-फलश्रुति

धारवाड जिला पदयात्रा समाप्त करके ५ जुलाई '७१ से श्री सिद्धराम गुरुजी के मार्गदर्शन में बल्लारी जिले में पदयात्रा शुरू हुई। फलस्वरूप ७०८५.९० का सर्वोदय साहित्य बिक्री हुई, १३२४ भूदान-पत्रिका ग्राहक, १४४ सर्वोदय मित्र, १ लोकसेवक और ३ एकड़ जमीन भूदान में मिली। इन पदयात्रियों को श्री गंगाधर न्यामती, सदाशिवराव भोसले, श्री नारायण पवार, श्रीमती चन्नम्मा हल्लीकेरी, श्री भूमा काशा, और श्री महादेव गुरगोड आदि लोगों ने बीच-बीच में आकर अच्छा सहयोग दिया।

—संगाप्पा नायक

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।

एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : १६, सोमवार, १७ जनवरी, '७२
सर्व सेवा संघ, प्रकाशन विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ

[illegible]

उदयेर पथे सुनी कार वाणी भय नाई, ओरे भय नाई।
निःशेषे प्राण जे करिबे दान क्षय नाई, तार क्षय नाई।

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

मुसहरी प्रखण्ड की ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों को

जयप्रकाशजी का सन्देश

खेद है कि अभी तक मेरा स्वास्थ्य इस लायक नहीं है कि मैं आपके बीच आ सकूँ। फिर भी दो शब्द आपसे कहना चाहता हूँ।

प्रखण्ड-सभा के प्रतिनिधियों की दो बैठकें पहिले हो चुकी हैं। मुझे इस बात का बड़ा दुख है कि दोनों बैठकों में पदाधिकारियों के सम्बन्ध में आप लोगों के बीच सहमति नहीं हो सकी। मनुष्य की जो आदतें पड़ जाती हैं, उनको सुधारना हमारे लिए बड़ा कठिन होता है। पदों के बारे में लोग यह सोचते हैं कि उन्हें प्राप्त करके कोई व्यक्तिगत लाभ उठा सकेंगे। या तो उनका नाम होगा, अथवा उनको कुछ रुपया मिलेगा या उनके द्वारा वे कुछ अर्थ-प्राप्ति कर सकेंगे। इन्हीं कारणों से पदों की लोलुपता से हमारा छुटकारा नहीं होता। सर्वोदय विचार के अनुसार पदों का केवल एक महत्त्व है कि उनके द्वारा समाज की सेवा की जा सकती है। इस भावना से यदि हम पदाधिकारियों का चुनाव करें तो आपस में कोई होड़ या प्रतिस्पर्द्धा करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

मैंने मुसहरी में यह भी देखा है कि जो लोग पहिले से नेता बने चले आ रहे हैं और जिन्होंने सर्वोदय-कार्य में कोई विशेष दिलचस्पी भी नहीं दिखाई है, वे किसी-न-किसी पद के लिए आतुर हो जाते हैं। इस भावना से जो पदाधिकारी चुने जायँगे, वे कभी भी निस्पृह भाव से सेवा नहीं कर सकेंगे। मैं समझता हूँ कि सर्वोदय दर्शन को अच्छी तरह ग्रहण करने में अभी आप लोगों को काफी समय लगेगा। राजनीति का प्रभाव और राजनीतिक दावपेंच के कारण ही हमारे काम में बाधा पड़ सकती है। यद्यपि आप जानते हैं कि हम किसी भी राजनीतिक दल के विरुद्ध काम नहीं कर रहे हैं, बल्कि सबका सहयोग ही चाहते हैं। परन्तु हम यह अवश्य चाहते हैं कि ग्रामसभाओं के काम में तथा प्रखण्ड प्रतिनिधि-सभा के काम में पार्टियाँ हस्तक्षेप न करें। हमारा यह कार्य पार्टियों से परे है और प्रत्यक्ष जनता से उसका सम्बन्ध है। इसलिए राजनीति की जगह पर हम लोकनीति शब्द का प्रयोग करते हैं। लोकनीति के लिए आवश्यक है कि सभी फैसले एक राय या आम राय से किये जायँ, जिसमें किसी भी दल, जाति अथवा वर्ग आदि का प्रभाव इन पर न पड़े। अभी तक जितनी भी चुनी हुई संस्थाएँ—ग्राम-पंचायत से लेकर लोकसभा तक—बनी हैं, वे सभी दलों के हाथों में कठपुतलियों की तरह हैं। हम इस परम्परा को दूर करना चाहते हैं और निर्दलीय लोकनीति की स्थापना करना चाहते हैं।

परन्तु अनुभव से यह स्पष्ट हो जाता है कि अभी आपलोगों की तैयारी इस प्रकार से एक राय होकर जनहित के लिए काम करने की नहीं हुई है। इसलिए मेरा निवेदन है कि *अभी आप* पदाधिकारियों का, यानी अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष आदि का चुनाव न करें। केवल एक कार्यसमिति चुन लें। कार्यसमिति के कितने सदस्य होने चाहिए, यह आप स्वयं निश्चय करें, और समिति का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रखें कि प्रखण्ड के हर क्षेत्र का इसमें प्रतिनिधित्व हो सके तथा भूमिहीनों का और गरीब किसानों का इसमें अधिक स्थान हो, क्योंकि प्रखण्ड में उनकी ही संख्या सर्वाधिक है। इस प्रकार जब आप कार्यसमिति चुन लें, तब कार्यसमिति की बैठक प्रतिमाह या प्रति दो माह पर बुलायें और हर बैठक के लिए एक अध्यक्ष चुन लें। दूसरी बैठक में दूसरा अध्यक्ष चुनें। समिति की कार्यवाही अच्छी तरह से लिखी और रखी जा सके, इसके लिए अगर आप सर्वसम्मति से किसी व्यक्ति को चुन सकें तो अच्छा होगा। जब तक यह सम्भव न हो, तब तक सर्वोदय के प्रमुख कार्यकर्ताओं में से किसी को यह भार दें। मैं आशा करता हूँ कि इस बार की बैठक में आप कार्यसमिति का गठन सर्वसम्मति से अवश्य कर लेंगे।

इस अवसर पर एक और बात आपसे कहना चाहता हूँ। अब तक बहुत-सी ग्रामसभाएँ प्रखण्ड में बन चुकी हैं। परन्तु उनमें शायद एक-दो को छोड़कर और *कोई ग्रामसभा नहीं होगी,* जिसमें ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य की सभी शर्तें—जैसे बीघा-कट्ठा निकालना-बाँटना, ग्रामकोष संग्रह करना, ग्राम-विकास के लिए योजना तैयार करना आदि—पूरी *हुई होंगी।* विकास से मेरा मतलब केवल आर्थिक नहीं है। सबसे आवश्यक तो नैतिक विकास है। यानी, किस प्रकार से गाँव के झगड़े खत्म हों, गाँव में परस्पर सहयोग हो, गाँव के सुखी परिवार गरीबों पर कुछ ध्यान रखें और उन्हें भी ऊपर उठाने का कुछ प्रयत्न करें, यह आवश्यक है। *आपका यह भी* कर्तव्य है कि जहाँ *ग्रामसभा नहीं बनी है,* वहाँ ग्रामसभा का गठन करायें और उसके बाद फिर ग्राम-दान *की सभी शर्तें वहाँ पूरी* *कराने का* प्रयत्न करें। आपके प्रखण्ड में अब भी कई गाँव हैं, जहाँ मजदूरी बहुत कम दी जाती है। ग्रामसभा में बैठकर उचित मजदूरी *तय करनी चाहिए।* आप तो जानते होंगे कि महात्मा गांधीजी का बराबर यह कहना था कि सर्वोदय का प्रारम्भ अन्त्योदय से ही होता है। अगर आप इस बुनियादी *सिद्धान्त को ध्यान में नहीं रखेंगे तो* ग्रामसभा, प्रखण्ड-सभा आदि सबका वही हाल होगा जो बाकी चुनी हुई संस्थाओं का हो रहा है।

मैं और भी बहुत-सी बातें आपसे कहना चाहता हूँ। परन्तु इस समय इतना ही काफी है। यह भगवान की मर्जी पर है कि मैं फिर कब मुसहरी आ सकूँगा, यद्यपि मेरे हृदय की लालसा तो यही है जल्द से-जल्द वहाँ आऊँ।

हार्दिक शुभकामनाओं के साथ,

आपका सस्नेह,

२१-१२-'७१ —जयप्रकाश नारायण

'जनता को सत्ता'

समाजवादी दल ने अपने चुनाव-घोषणा-पत्र में 'जनता को सत्ता' (पावर टु पीपुल) की बात कही है। अपने जमाने में लेनिन ने 'सोवियट को सत्ता' (पावर टु सोवियट्स) की बात कही थी। इस वक्त अपने देश में विनोबा और जयप्रकाश के नेतृत्व में पूरा सर्वोदय आन्दोलन 'गांवों को सत्ता' (जिसमें नगर शामिल हैं) की मांग कर रहा है। इस दृष्टि से देखा जाय तो विशुद्ध समाजवाद, साम्यवाद, और सर्वोदय की, जहाँ तक सत्ता का सम्बन्ध है, एक ही दिशा दिखाई देती है कि सत्ता जनता के हाथ में रहनी चाहिए।

हमारे देश में लोकतन्त्र है लेकिन सत्ता किसके हाथ में है? लोकतंत्र का दावा है कि वह सत्ता जनता के प्रतिनिधियों के हाथों में सौंपता है। तो, क्या समाजवादी दल 'जनता को सत्ता' की बात कहकर जनता और जनता के प्रतिनिधियों में अन्तर समझता है? अगर अन्तर है, तो क्या है, और उसे वह किस तरह दूर करना चाहता है?

जिस जनता को सत्ता देने की बात है वह कौन है? वर्ण-धर्म को माननेवाला 'द्विज' के आगे नहीं जाता। वर्ण-धर्म में शूद्र को समाज में स्थान है लेकिन संस्कृति में नहीं, और सत्ता में तो बिलकुल नहीं। साम्यवाद ने 'द्विजों' को यानी साधनों के स्वामियों को, वर्ग-शत्रु कहकर संहार का पात्र बनाया और सिर्फ सर्वहारा को जनता माना। लोकतान्त्रिक समाजवादी संहार नहीं करना चाहता लेकिन आर्थिक आधार पर धनी और मजदूरों के भेद को मन से स्वीकार भी हो जाता। इसलिए शान्तिपूर्ण वर्ग संघर्ष की बात कहता है। इससे भिन्न सर्वोदय 'सर्व' की बात कहता है। वह आर्थिक या किसी दूसरे भेद के कारण मनुष्य को द्विज, हरिजन, या संहार का विषय नहीं मानता। वह 'सब की सत्ता' की मांग करता है, वर्ग-सत्ता, अल्प-सत्ता या दल-सत्ता की नहीं। क्या समाजवाद की 'जनता की सत्ता' का वही अर्थ है जो सर्वोदय की 'सर्व की सत्ता' का है? अगर प्रतिनिधियों की सत्ता ही जनता की सत्ता हो तो समाजवादी मांग में नयापन क्या है? यह शंका इसलिए उठती है क्योंकि राजनैतिक दल मान लेते हैं कि अगर सत्ता उनके हाथ में चली जाय तो जैसे जनता की सत्ता कायम हो गयी। लेकिन लगता है कि भारत के कुछ समाजवादी अब इससे आगे बढ़ कर भी सोचना चाहते हैं।

आज के लोकतन्त्र में वस्तुतः निहित स्वार्थों का आपसी लेन-देन ही दिखाई देता है। शासकों और प्रतिनिधियों के हित जनता के हितों से अलग हो जाते हैं। मतदाता ऐसे ही लोगों के हाथों में सत्ता देने के लिए रास्ता बनाता है, मतदान से स्वयं मतदाताओं के हाथ में सत्ता नहीं आती। प्रचलित लोकतन्त्र की पद्धति और व्यवस्था में इस स्थिति को बदलने का कोई उपाय नहीं है। हाँ, असफल लोकतन्त्र के गर्भ से फासिस्टवादी या साम्यवादी तानाशाही का जन्म हो सकता है।

सत्ता का प्राण है निर्णय। जिसके हाथ में निर्णय होता है उसकी सत्ता चलती है। अगर जनता को सत्ता सौंपनी हो तो उसे निर्णय का अधिकार मिलना चाहिए। निर्णयविहीन सत्ता का प्रयोग सरकार के पंचायती राज से भिन्न नहीं हो सकता।

अगर पंचायती राज से आगे बढ़ने की बात हो तो वह संगठन कहाँ है जिसके माध्यम से जनता अपनी सत्ता का प्रयोग करेगी? और, जन-जीवन का कौन-सा क्षेत्र प्रत्यक्ष जनता की सत्ता का क्षेत्र माना जायगा?

जनता की सत्ता की चार सीढ़ियाँ हैं। पहली सीढ़ी है राष्ट्र की स्वतन्त्रता। वह सीढ़ी बन चुकी है। बंगला देश में अब बनी है। दूसरी सीढ़ी है क्षेत्र की स्वायत्तता। भारत के संविधान में राज्यों को काफी स्वायत्तता प्राप्त है, फिर भी वह गुण और मात्रा दोनों दृष्टियों से अपर्याप्त है। इसके अलावा केन्द्रित आयोजन ने क्षेत्रीय स्वायत्तता को काफी हद तक खंडित कर दिया है। राज्यों के निर्माण में भी गम्भीर दोष हैं।

राष्ट्र और राज्यों के बाद की सीढ़ी पर देश के लाखों गांव और शहर हैं जिनमें जनता रहती है, और जहाँ उसका दैनन्दिन जीवन बीतता है। ऐसी हालत में 'जनता की सत्ता' तभी सार्थक होगी जब सत्ता इन लाखों गांवों और शहरों में पहुँचेगी, और दैनन्दिन जीवन सरकार के हस्तक्षेप से मुक्त होकर जनता के प्रत्यक्ष निर्णय क्षेत्र के अन्तर्गत आ जायगा। प्रश्न है कि क्या हमारे समाजवादी साथी लाखों गांवों और शहरों को संगठित करने तथा उन्हें विकास और व्यवस्था की इकाइयाँ मानने को तैयार हैं—राजनैतिक दृष्टि से स्वायत्त, आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी। अगर ऐसी इकाइयाँ बन जायँ तो भारत इन इकाइयों का महासंघ होगा, मात्र राज्यों का संघ नहीं रह जायगा। क्या समाजवादी साथी इस प्रकार की विकेन्द्रित जनता की सत्ता के लिए तैयार हैं?

चौथी और अन्तिम सीढ़ी पर स्वयं व्यक्ति है। उसकी महत्ता मान्य होनी चाहिए। उसकी महत्ता इसमें है कि जिस तरह जाति, धर्म, लिंग आदि के भेदभावों से व्यक्ति को मुक्त करने की बात मान्य हुई है उसी तरह उसे वर्ग और बहुमत-अल्पमत के भेदों से भी मुक्त करने की बात मान्य होनी चाहिए। ये सारे भेद हिंसा को जन्म देते हैं। जहाँ हिंसा होगी वहाँ व्यक्ति व्यक्ति होकर कैसे रहेगा?

अब यह प्रश्न उठता है कि क्या 'जनता की सत्ता' आज की व्यवस्था में सम्भव है? यदि नहीं तो 'जनता की सत्ता' में विश्वास रखनेवाले सब समाजवादियों को सत्ता की होड़ छोड़कर व्यवस्था-परिवर्तन की बात सबसे पहिले सोचनी चाहिए। सर्वोदय

भूदान-यज्ञ : सोमवार, १७ जनवरी, '७२

वैज्ञानिक दृष्टि से नहीं किया गया है। लेकिन क्या-क्या होना आया है इसका, मनुष्य की योजना का यह इतिहास है—टूल मेकिंग का, जिसने उपकरण तैयार किया उस मनुष्य का। फिर क्या हुआ? अब मैं उसी का शब्द ले रहा हूँ—'मैन ऐम्प्लिफाइड'। विशद हुआ। यानी इस बात की खोज हुई कि उसकी इन्द्रियों की और उसके अवयवों की शक्ति कितनी बढ़ सकती है, कितनी विस्तृत हो सकती है। फिर 'मैन आगमेंटेड'। यह खोज हुई कि उसमें किस हद तक वृद्धि लायी जा सकती है, पूर्ति की जा सकती है। मुक्के से नारियल टूट नहीं सकता, हथौड़ा आया होगा। पेड़ पर हाथ पहुँच नहीं सकता, गुलेल आयी होगी। वह हिसाब करता होगा तो यंत्र को भी हिसाब कर सकना चाहिए। वह यदि निरीक्षण करता होगा तो वह निरीक्षण यंत्र से भी हो सकना चाहिए। मनुष्य के मन और मस्तिष्क के कई कामों में उसका अनुकरण हुआ। यंत्र मनुष्य का अनुकरण करने लगे। 'मैन मिमिक्ड'—हुआ। इसे आजकल सायबरनेटिक्स कहा जाता है। इसके बाद 'मैन ट्रान्सप्लान्टेड'। उसका स्थानान्तरण हुआ। यानी धान के पौधे की तरह उसे एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाकर बसाया गया। यानी मनुष्य की भूमिका बदली। उत्पादक के रूप में उसकी जो भूमिका थी वह धीरे-धीरे बदली। 'मैन ट्रान्सप्लांटेड'। वह ट्रान्सप्लांट हुआ। और अब आगे में क्या होना चाहिए? तो वह कहता है 'मैन माडिफाइड'। मनुष्य का जीवन नियमित नहीं, नियमित होना चाहिए। यंत्रों से, नियमित उपकरणों से नियमित जीवन होना चाहिए। इसका कारण क्या है? उसने इसका उद्देश बताया है—'हेल्दी पार्टनरशिप बिटवीन मैन एण्ड मशीन'। हमें क्या करना है? मनुष्य और यंत्र में निर्विरोध भागीदारी कायम करनी है। फिर यंत्रों की मर्यादा क्या होगी? 'मैन मेकर्ड'। यह तो हुआ ही। कम्प्यूटर आया। इस कम्प्यूटर के लिए उसने बड़ा मजेदार शब्द प्रयोग किया है—अत्यंत वेगवान् बेवकूफ। यानी इस कम्प्यूटर में स्पीड है, वेग है, लेकिन अक्ल नहीं है। अक्ल का अर्थ क्या? जो अस्पष्ट बातें हैं, जीवन के जो क्षेत्र मनुष्य की समझ में पूरी तौर पर नहीं आये हैं उन्हें समझ लेने की शक्ति कम्प्यूटर में नहीं है। अनएक्सप्लोरटेड एण्ड अनप्रेडिक्टबल—जिनके बारे में तर्क नहीं किया जा सकता या जिनकी अपेक्षा नहीं की जा सकती—ऐसी कोई बात उसमें नहीं आ सकती। एक व्यवस्थित कार्यक्रम के अनुसार ही वह कम्प्यूटर चल सकता है। दूसरी एक महत्त्वपूर्ण न्यूनता उसने बतायी है। वह अधिक महत्त्व की है। सम्भव है कम्प्यूटर कल यह सब करने लगे। लेकिन एक काम वह कभी नहीं कर सकता। जीने की आकांक्षा जिजीविषा कभी कम्प्यूटर में नहीं आ सकती। यह मनुष्य की विशेषता है। आज का मनोविज्ञान यानी फ्रायड, युंग, एडलर के बाद का मनोविज्ञान—इस मनोविज्ञान में यांत्रिक क्रिया है। आज पश्चिम में यंत्रों का जो निरंकुश विकास हो रहा है उससे मनुष्य के मन का ह्रास हो रहा है, वहाँ हर एक को मानसोपचार करवा लेना पड़ता है। ऐसी स्थिति है। इसलिए अब इस यंत्रयुग का जो मनुष्य होगा, उसका मन इस कम्प्यूटर से परे होना चाहिए। यानी मन के परेवाला मन होना चाहिए। यह नया अध्यात्म जे० कृष्णमूर्ति कहने लगे हैं। कृष्णमूर्ति हैं, अपने यहाँ विमला ठकार हैं, आचार्य रजनीश हैं। ये कुछ व्यक्ति हैं। यह समझ लेने की आवश्यकता है कि 'मैन-मशीन रिलेशनशिप' में मनुष्य कहाँ तक आ पहुँचा है। ●

भूदान-यज्ञ। सोमवार, १७ जनवरी, '७२

प्रधानमंत्री और स्वदेशी

प्रधानमंत्री इन दिनों बराबर आर्थिक स्वावलम्बन की बात कह रही हैं। बंगला देश के प्रश्न पर अमेरिका ने जो रुख लिया है उससे मालूम हो गया कि विदेशी पैसे का क्या नतीजा होता है। आज अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की जो स्थिति है उसमें पैसा पैसा नहीं रह जाता, बल्कि कमजोर और गरीब को दबाने का साधन बन जाता है। इसलिए स्पष्ट है कि अगर भारत को अपने स्वत्व और सम्मान की रक्षा करनी है तो स्वावलम्बन की नीति कठोरतापूर्वक अपनानी ही पड़ेगी।

स्वावलम्बन को आर्थिक क्षेत्र तक सीमित रखना न सम्भव है, न उचित। स्वावलम्बन तभी सधेगा जब भारत स्वदेशी का मन सीखेगा। प्रधानमंत्री ने कहा भी है कि हमें अपनी समस्याओं का समाधान अपने ढंग से निकालना चाहिए। इसका यह अर्थ है कि हमारा दिमाग स्वदेशी होना चाहिए। अभी हमारे दिमाग में अंग्रेजियत और अमेरिकीपन बुरी तरह घुसा हुआ है, जिसका दृश्य बड़े शहरों में तो भरपूर दिखाई देता ही है, लेकिन जिससे गाँव भी नहीं बच पा रहे हैं। हमारे विद्वान और विशेषज्ञ तो सामान्य लोगों से भी ज्यादा विदेशीपन के गुलाम दिखाई देते हैं।

कोई देश दिमाग से गुलाम रहकर केवल कार्यक्रम के रूप में स्वदेशी को नहीं अपना सकता। स्वदेशी के लिए स्वदेशी दिमाग चाहिए। ऐसा दिमाग देश की परम्परा, परिस्थिति, और प्रतिभा के अनुबन्ध में सोचने और काम करने से बनता है, अन्धा बनकर दूसरों की नकल करते रहने से नहीं।

स्वदेशी प्रतिभा के विकास के लिए अनुकूल वृत्ति चाहिए, वातावरण चाहिए, व्यवस्था और कार्यक्रम चाहिए। ऐसा तभी हो सकता है जब राष्ट्र के स्तर पर स्वदेशी का अभियान हो, और हर जगह स्वदेशी प्रतिभा के विकास के लिए अवसर का निर्माण किया जाय। इस दृष्टि से राष्ट्र का पूरा जीवन स्वदेशी का प्रयोग-क्षेत्र बन जाना चाहिए। प्रधानमंत्री पहले कई बार कह चुकी हैं कि भारत स्वतंत्र तो हुआ, लेकिन न प्रशासन बदला, और न शिक्षा। समय आ गया है कि इन सबको सामने रखकर पूरी राष्ट्रीय रीति-नीति पर नये सिरे से विचार किया जाय। स्वभावत प्रधान मंत्री से ही अपेक्षा है कि वह पहल करें।

बंगला देश : आर्थिक चुनौती

—सुमर कौल

यह अच्छी बात है कि बंगला देश के पदाधिकारियों और नेताओं ने आर्थिक निर्माण की समस्याओं पर ध्यान दिया है। शान्ति और विकास की समस्याएँ बहुत है और युद्ध एवं राजनैतिक मुक्ति से शायद बड़ी हैं। स्वतन्त्रता के बाद बंगला देश के लोगों को अब आर्थिक समस्याओं का सामना करना है। देश को करोड़ो नागरिकों को फिर से बसाना है। उन्हें घर और नौकरी देनी है। उसे अपनी टूटी हुई यातायात को बनाना है, और नागरिक व्यवस्था को फिर से स्थापित करना है। दूसरे शब्दों में राष्ट्रीय जीवन को युद्ध से शान्ति की अवस्था में लाना है, और आर्थिक स्वतन्त्रता एवं विकास की दिशा में चलना है।

सहायता,

यह काम कठिन है। बंगला देश के गृहमंत्री ए० एच० एम० कमरुज्जमा का अन्दाज है कि उजड़े हुए लोगों को बसाने और आर्थिक दुरुस्ती में २,००० करोड़ रुपये लगेंगे। यह बड़ी रकम बंगला देश की अभी की हैसियत से बाहर है।

भारत ने स्वतंत्रता पाने में सहायता दी है और आगे हर सम्भव सहायता देता रहेगा। प्रधान मंत्री ने यह बात योजना आयोग से कह भी दी है कि वह चौथी योजना पर पुन. विचार करते समय इस बात को याद रखे।

यह सहायता आर्थिक, भौतिक साधनों और टेक्नीकल परामर्शों के रूप में होगी। इस देश ने इसी तरह की सहायता दूसरे कई देशों की की है।

बंगला देश में समस्या केवल २५ मार्च के पहले की स्थिति में आना नहीं है। अगर बंगला देश यहीं तक अपने को सीमित करता है तो वह विकास के रास्ते को बन्द कर देगा। युद्ध से टूटे-फूटे देश के विकास के उच्च स्तर प्राप्त करने के बहुत सारे उदाहरण इतिहास में मिलते हैं। दोनों जर्मनी इसके उदाहरण हैं कि किस तरह एक टूटी हुई अर्थ-व्यवस्था का पुनः निर्माण हो सकता है। बंगला देश के निर्माण का अर्थ केवल पुनर्वास नहीं है। इसका अर्थ है—पुनर्वास, सुधार, विकास। प्रसन्नता की बात है कि बंगला देश, मानवीय और भौतिक साधनों से माला-माल है। इसका क्षेत्रफल १,४३,००० वर्ग किलोमीटर है।

यह संसार का आठवाँ सबसे घनी जनसंख्यावाला देश है। यह चावल में, जो वहाँ का मुख्य खाना है, आत्म-निर्भर, है। जंगल और नदियोंवाले साधन बहुत सारे हैं। यह चाय, कागज (लिखने के और न्यूजप्रिंट) पैदा करनेवाले बड़े क्षेत्रों में से एक है। इसका सबसे बड़ा धन जूट का उद्योग है।

पूर्व बंगाल की मुक्ति से पहले पाकिस्तान जूट और जूट के माल का सबसे बड़ा व्यापारी था, और इसका ९० प्रतिशत पूर्वी क्षेत्र से ही आता था। जूट से कमाई जानेवाली विदेशी मुद्रा और मुनाफा की बड़ी रकम पश्चिमी पाकिस्तान के थोड़े-से पूँजीपतियों के हाथ में जाती थी, और वे उससे बंगला देश में नहीं, पश्चिमी पाकिस्तान में उद्योग स्थापित करते थे। इस तरह पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान में जो सम्बन्ध स्थापित हुआ, वह औपनिवेशिक था। परिणाम यह हुआ कि बंगला देश एक कृषिप्रधान देश रहा और इसे सभी औद्योगिक और रोजमर्रा की चीजें पश्चिमी पाकिस्तान से लेनी होती थीं। इसी परिस्थिति को बुनियादी तौर से बदलना है। बंगला देश की सरकार ने अर्थ-व्यवस्था की योजना विकास के द्वारा एक समाजवादी समाज स्थापित करने की प्रतिज्ञा की है। सभी बड़े उद्योग, विदेशी व्यापार और बैंक-व्यवस्था पब्लिक सेक्टर में होगी। शोषण और एकाधिकार के लिए कोई स्थान नहीं होगा। छोटे और घरेलू उद्योगों में व्यक्तिगत उद्योग को प्रोत्साहन दिया जायेगा। कृषि-सुधार भी किये जायेंगे। इस सुधार का आधार होगा, 'भूमि जोतनेवाले की मिल्कियत'।

साधन

ये सारे सुधार आवश्यक हैं। परन्तु केवल सुधार से परिणाम नहीं मिलेगा। देश के पास इन योजनाओं की पूर्ति के लिए साधन भी होने चाहिए। जर्मनी और दूसरे देशों में यह समस्या बड़े पैमाने पर विदेशी सहायता से हल हुई। भारत आवश्यक सहायता देगा। कर्ज के अतिरिक्त यह देश आधुनिक औद्योगिक मशीनें और शिल्प विज्ञान के जानकार भी दे सकता है। परन्तु भारत की आर्थिक स्थिति बहुत मजबूत नहीं है, और यह आशा रखना गलत होगा कि यह देश बंगला देश का पूरा बोझ बर्दाश्त करेगा। इसको समझकर ही बंगला देश के नेताओं ने दूसरे मित्र देशों से विकास-प्रधान सहायता की अपील की है।

विदेशी सहायता की अपनी समस्याएँ होती हैं। जैसा कि भारत को पता है और बंगला देश को जानना चाहिए कि बिना शर्तों के सहायता नहीं मिलती। और देश की स्वतन्त्रता की कीमत पर सहायता पाने से सहायता न लेना अच्छा है। कुछ ऐसे देश अवश्य होंगे जो बंगला देश को बिना शर्त सहायता देंगे। परन्तु ढाका को सहायता से अधिक व्यापार पर ध्यान देना चाहिए। यह केवल जूट और जूट के बने हुए माल बेचकर ही १४० करोड़ रुपये कमा सकता है। चाय से मिलने वाली विदेशी मुद्रा इसके अतिरिक्त होगी। यह कागज, न्यूजप्रिंट और मछली का भी बाहर के देशों से व्यापार कर सकता है। धीरे-धीरे कृषि और उद्योग के विकसित होने के बाद बंगला देश कुछ और दूसरी चीजें भी बाहर के देशों में बेचकर काफी विदेशी मुद्रा कमा सकता है और उससे बाहर के देशों से मशीनें और दूसरी चीजें खरीद सकता है। भौगोलिक और दोनों देशों की आवश्यकताओं एवं अर्थ-→

जय बंगला ! जय नव-सन्देश !!

भारत की पूर्वी सीमा पर बंगला देश का जन्म अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। पाकिस्तान के औपनिवेशिक तरीके के शोषण से सर्वथा मुक्त होकर बंगला-जनता की भावना को नया उज्ज्वल मूर्त आकार मिला है।

पाकिस्तान की स्थापना मजहबी बहुमत के नाम पर एक धर्म का वोट पड़वानेवाले और इस्लामी मजहब तक की बुनियादी बातों से खिलवाड़ करनेवाले राष्ट्र के रूप में हुई थी।

बंगला देश के जन्म ने इस प्रकार पाकिस्तान की नींव पर ही प्रहार किया है।

साथ ही इस नवोदित राष्ट्र ने साबित कर दिया है कि लोकमत को दबाने और लोक-स्वातंत्र्य का गला घोटने के तानाशाही तरीके पूरी तरह नाकामयाब होते तथा अपने मुंह के बल गिरकर होते हैं। अमन-ही-अमन राष्ट्र अपनी ताकत सम्पूर्ण, उत्साह और हुनर से पाकिस्तान के हाथों को मुंह की खाने से नहीं बचा सके।

बंगला देश के राष्ट्रपिता शेख मुजीबुर्रहमान कुछ रोज पूर्व पाकिस्तान के शिकंजे में थे। आज वे स्वाधीन बंगला देश के राष्ट्रपति हैं। उनके प्रत्यक्ष और परोक्ष नेतृत्व ने मुक्तिवाहिनी के माध्यम से नवयुग के इतिहास में एक नयी स्वर्णिम कहानी अंकित कर दी है।

भारत ने इस बाढ़ में एक सच्चे पड़ोसी का धर्म निभाया है। पहिले लग-भग एक करोड़ तक पहुंचे शरणार्थियों को खुले दिल से आश्रय दिया। बाद में पाकिस्तान की आक्रामक कार्रवाई से मजबूर हो, सैन्य सहायता देने और सीधे युद्ध में उतरने का रास्ता भारत को अपनाना पड़ा।

कहना नहीं होगा कि बंगला देश की स्वतंत्रता की सिद्धि के बाद तुरंत स्वतः युद्धबन्दी की घोषणा करके भारत ने अपनी शान्ति नीयत और अपने मर्यादित किन्तु मजबूर इरादों का अनोखा उदाहरण तथा प्रत्यक्ष प्रमाण भी पेश कर दिया।

भारत की इस बेजोड़ सहनशीलता और आश्चर्य कुरबानी का श्रेय देश की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के दूरदर्शी सुदृढ़ नेतृत्व, राष्ट्र की जनता के एकता भरे त्यागपूर्ण सहयोग और भारतीय सेना के अद्भुत शौर्य व पराक्रम को देना होगा।

कोरिया, वियतनाम आदि की तुलना में बंगला देश के इस दुख भरे किन्तु गौरवपूर्ण घटना-चक्र ने दुनिया के छोटे-बड़े राष्ट्रों के मुखौटे उखाड़ फेंके हैं और उनकी कथनी व करनी के अन्तर का पर्दाफाश कर दिया है।

मानवीय मूल्यों की स्थापना और रक्षा, शोषण और जुल्म से संरक्षण, समानता और लोकतंत्र की भावना को मजबूत करने व बढ़ावा देने, वगैरह के बड़े बड़े राष्ट्रों के दावे भी बिलकुल खोखले-से साबित हो गये।

मानव-समाज विकास और प्रगति की जिस मंजिल पर पहुंचा है वहां आज भी यह फैसला करना मुश्किल है कि न्याय क्या है और न्यायोचित पक्ष में कौन है। न्याय के पक्ष में जो राष्ट्र साथ दिखता है उसके बारे में भी सही-सही यह कौन बता सकता है कि वह सद्भाव और शुद्ध मानव-सेवा तथा लोकतंत्र आदि उच्च उद्देश्यों से प्रेरित होकर उस पक्ष में है अथवा अपने स्वार्थों की पूर्ति व शक्ति-सन्तुलन वगैरह के लिए वह छल कर रहा है।

धार्मिक और अन्य किसी भी प्रकार की संकीर्णता से बढ़कर खतरा आज के जमाने की राजनीतिक और राष्ट्र मात्र दृष्टि की संकीर्णता ने ले लिया है। धर्म और मजहब मेल कराने या नजदीक लानेवाले नहीं रहे, यह आज के मौजूदा पाकिस्तान, एक तरह के पूर्वी पाकिस्तान, किन्तु आज के स्वतंत्र बंगला देश और अनेक मुस्लिम राष्ट्रों के हाल के बरताव-सम्बन्धों ने जाहिर कर दिया है।

फिर अमेरिका जैसे साम्राज्य की एक बड़ी बरतनेवाले देश में भी जन-भावना, और जनता का प्रतिनिधित्व करने की दावेदार वहां की सरकार, बिलकुल अलग पटरियों पर चल रही

—व्यवस्था के दृष्टिकोण से भारत बंगला देश का सबसे बड़ा साझीदार होगा। बहुत सारे औद्योगिक और रोज के इस्तेमाल की चीजों का दोनों देश व्यापार कर सकते हैं। दोनों देशों के प्रतिनिधि एक व्यापार संधि के लिए बातचीत कर रहे हैं। सम्भवतः यह व्यापार त्रि-स्तर के ढांचे के अन्तर्गत होगा। पहला होगा रोज के काम में आनेवाली चीजों का व्यापार, दूसरा, बड़े पैमाने पर सीमित आयातों का व्यापार, और तीसरा होगा दोनों देशों के आर्थिक नियमों के अनुसार निर्धारित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।

यह अनुमान लगाया गया है कि दोनों देशों के बीच व्यापार से कई सौ करोड़ का लाभ होगा, और यह समय के साथ बढ़ेगा। दोनों जगहों की अर्थ-व्यवस्था को देखते हुए इस तरह की भी सम्भावना मालूम होती है कि आगे चलकर 'कस्टम यूनियन' बनाया जाएगा। यह अब भी होगा बंगला देश के कहने पर होगा। यह यूनियन क्षेत्र के दूसरे देशों को शामिल करने के लिए बढ़ाया भी जा सकता है। परन्तु यह बहुत आगे की सम्भावनाएँ हैं। बंगला देश को पहले अपने तात्कालिक समस्याओं को सुलझाना है। उन्नति और विकास का रास्ता कठिन और लम्बा होता है। जिस उत्साह के साथ बंगला देश के लोगों ने अपनी स्वतंत्रता के लिए प्रयास किया उससे यह आशा की जाती है कि वे आर्थिक चुनौती का भी डटकर सामना करेंगे। भारत ने उन्हें स्वतंत्रता प्राप्त करने में मदद दी है, और वे उसमें आत्म-निर्भर और विकसित देश बनने में भी सहायता ले सकते हैं।

(२९-१२-'७१ 'हिन्दुस्तान टाइम्स' से)

है, चल रही है, यह वियतनाम के बाद अभी बंगला देश के प्रसंग में भी जाहिर हो गया है। दूसरे देशों में यह स्थिति कम या अधिक, चल रही है। इसके प्रमाण, गैर सरकारी स्तर पर श्री जयप्रकाश नारायण ने और सरकारी स्तर पर श्रीमती इन्दिरा गांधी ने पश्चिमी बंगाल की वास्तविक समस्या से विभिन्न देशों की जनता व सरकारों को परिचित कर उनका न्यायोचित समर्थन, सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से जो दौरा किया, और उसके अनुभव समाचार-पत्र-पत्रिकाओं में दिये, उस सबसे सहज मिल रहे हैं।

आज जरूरत है कि बंगला देश, शेष पाकिस्तान, भारत, इस उपमहाद्वीप के राष्ट्र मुख्यतः और दुनिया के दूसरे भी राष्ट्र, एक नये मौलिक दृष्टिकोण से सोचना आरम्भ करें। मानव-समाज धर्म, राजनीति, राष्ट्र, जाति, वगैरह की सीमाओं से खण्डित नहीं किया जाना चाहिए। क्षेत्र-क्षेत्र की व्यवस्था, जनसेवा, वगैरह में लगे व्यक्ति या दल जनता के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में कार्य करनेवाले होने चाहिए। विभिन्न देशों के मानव-समुदाय एक दूसरे के नजदीक आयें, एक दूसरे के हितों के पूरक हों, इस रूप में जनता के चिन्तन, उनके मनोबल और उसकी सामूहिक शक्ति का विकास व कल्याणकारी उपयोग होना चाहिए।

भारत तो चाहता ही है, पाकिस्तान को भी चाहिए और उसके लिए यह ही हितकर होगा, कि दोनों देश एक-दूसरे के नजदीक आयें। सच्चे अर्थ में धर्म-राज्य बनने के लिए भी पाकिस्तान को अपनी संकीर्ण धार्मिक कट्टरता से छुटकारा पाना चाहिए। कश्मीर के मसले को हल करने में एक वास्तविकता-परक और रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। बंगला देश के अस्तित्व को मंजूर कर, उसे पहले जैसा अपना अंग बनाने की आम-कहानी छोड़ अपना मित्र-राष्ट्र बनाने की पाकिस्तान को कोशिश करना चाहिए। भारत, पाकिस्तान, बंगला देश, लंका आदि का छोटा राष्ट्र-संघ भी बन सकता है, जो सबके हितों का रक्षक और पोषक हो सकता है।

चीन, अमेरिका, रूस वगैरह भी, एशिया महाद्वीप में व अन्यत्र अफ्रीका वगैरह में, इस तरह व्यापक मानव-समाज के हित में सोचेंगे, अपनी राष्ट्रनीति वैसी बनायेंगे और उस प्रकार काम करेंगे तब ही वास्तविक विश्व-शान्ति हो सकेगी और तब, ऐसे राष्ट्रों का संयुक्त राष्ट्र संघ सचमुच अपने उद्देश्यों की पूर्ति में, बिना अस्त्र-शस्त्र-सज्जा के भी सक्षम, समर्थ और सफल हो सकेगा।

वस्तुतः बंगला देश के सन्दर्भ में जो घटना-चक्र चला उसने विश्व-मानव के सामने कई परस्पर विरोधी दिखनेवाली स्थापनाएं प्रस्तुत कर दी और कई पेचीदा प्रश्न उभार कर खड़े कर दिये हैं।

बंगला देश की स्वतन्त्रता पर उसे बधाई देने और भारत अपने कर्तव्य-पालन में सफल हुआ उसके लिए गौरव अनुभव करने व उसकी प्रशंसा करने के समय नयी बन रही परिस्थितियों और नये उभर रहे प्रश्नों से भारत, बंगला देश आदि सभी नये-पुराने राष्ट्रों को सावधान होना चाहिए।

इस भूमिका से हमें कहना है कि

जय बंगला ! जय भारत !!

जय पाक ! दुश्मनी खत्म !!

—पूर्णचन्द्र जैन

जयपुर,
२४।१२।७१

मुसहरी प्रखण्ड में आगे के कार्यक्रम

दिनांक ३० दिसम्बर ७१ को मुसहरी प्रखण्ड की ग्रामस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधियों की एक बैठक सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर में की गयी। निश्चय हुआ कि मुसहरी प्रखण्ड के जिन गांवों में ग्राम-स्वराज्य-सभा का गठन नहीं हुआ है उनमें ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन किया जाय। शेष कार्य को पूरा करने की जिम्मेदारी प्रखण्ड प्रतिनिधि सभा के १६ सदस्यों ने ली है। पुष्टि-कार्य को पूरा करने के लिए प्रतिनिधियों की एक दूसरी समिति बना ली गयी है।

अभी तक मुसहरी में प्रखण्ड सभा के पदाधिकारियों का चुनाव नहीं हो सका है। एक पंचायत से १ प्रतिनिधि लेकर कार्य-समिति का गठन कर लिया गया है। यही कार्य-समिति अभी बिना पदाधिकारियों के कार्य करेगी।

२६ जनवरी को गणतन्त्र-दिवस के अवसर पर ग्रामसभाओं में ग्रामस्वराज्य के विभिन्न कार्य किये जायेंगे जैसे बीघा-कट्ठा बांटना, ग्रामकोष-संग्रह, मजदूरी-वृद्धि, ग्राम-सफाई आदि।

३० जनवरी से ५ फरवरी तक एक सप्ताह की ग्रामस्वराज्य पदयात्रा का आयोजन किया गया है। इस पदयात्रा में आचार्य राममूर्तिजी बराबर रहेंगे। ●

डकैत डकैती छोड़ना चाहते हैं

चम्बल घाटी के कुछ डाकू दलों ने गांधी सेवाश्रम को ऐसे संकेत दिये हैं कि वे डकैती छोड़कर साधारण नागरिकों का जीवन बिताना चाहते हैं। सम्भावना है कि इनमें से कुछ दल आगामी महीनों में आत्मसमर्पण कर देंगे।

ओरा में कुष्ठों के लिए केन्द्र चलानेवाले श्री कुम्हारप्पा ने उज्जैन की एक मुलाकात में बताया कि पिछले कुछ महीनों से गांधी-कार्य में लगे लोगों ने चम्बल घाटी में ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास किया है कि डकैती में लगे लोग अपने कार्य पर पुनर्विचार करें। मध्य प्रदेश और केन्द्र की सरकार से भी इस सम्बन्ध में बातचीत की गयी है। सरकारों का रुख रचनात्मक है और इससे सम्भावना है कि आत्मसमर्पण करनेवाले डाकू दलों के मामलों पर वे मानवीय दृष्टि से विचार करेंगी। श्री जयप्रकाश नारायण ने इन चर्चाओं के आधार पर डाकू-दलों से अपील की थी कि वे आत्मसमर्पण करके देश के निर्माण में योगदान दें। डकैतों को मुख्य की जमीन पर बसाये जाने की योजना है। (एजेंसी) ●

आगे के दस वर्ष

अब तक हमने देखा कि १९६०-६१ से १९६८-६९ तक हमारी क्या स्थिति रही। अब देखना है कि आगे के वर्षों में हम क्या कर सकेंगे।

चौथी पंचवर्षीय योजना ने १९६९-७० से १९७३-७४ तक के लिए लक्ष्य तय किये हैं। उसमें योजना यह है कि १९६८-६९ से १९८०-८१ तक के बारह वर्षों में राष्ट्रीय आय दुगुनी की जाय। बारह वर्षों में देश की जनसंख्या में ३१ प्रतिशत की वृद्धि होगी, इस हिसाब से केवल राष्ट्रीय आय के दुगुनी होने पर प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय ५३ प्रतिशत बढ़ेगी और प्रति व्यक्ति उपभोग ४२ प्रतिशत।

जाहिर है कि पिछले आठ वर्षों में जो वृद्धि हुई उससे कहीं अधिक वृद्धि अगले बारह वर्षों में होनी चाहिए। पिछले आठ वर्षों में वृद्धि प्रति वर्ष ३ प्रतिशत से कुछ कम हुई। इस गति से राष्ट्रीय आय को दुगुनी करने के लिए पूरे २० वर्ष चाहिए। इसलिए या तो समय बढ़े, या वृद्धि बढ़े।

योजना-आयोग ने हिसाब लगाया है कि १९६९-७० से १९७३-७४ तक वृद्धि ५.५ प्रतिशत प्रति वर्ष होगी, उसके बाद ६.२ प्रतिशत प्रति वर्ष होगी, यानी १२ वर्षों में दुगुनी हो जायगी। इस गति का आधार खेती में हरित क्रान्ति, उद्योगों की क्षमता का पूर्ण विकास, निर्यात, और चौथी योजना में नयी पूँजी का इन्वेस्टमेन्ट है। सोचा गया है कि एक ओर खेती, उद्योग और व्यापार में विकास होगा, और दूसरी ओर जनसंख्या में ह्रास होगा। इस समय जनसंख्या २.५ प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ रही है, यह चौथी पंचवर्षीय योजना के अंत तक घटकर २.४ प्रतिशत हो जायगी, और उसके बाद १९८०-८१ में १.७ प्रतिशत रह जायगी। जनसंख्या का घटना एक योग है, लेकिन जहाँ तक घटने का सम्बन्ध है, राष्ट्रीय आय का दुगुनी होना उससे ज्यादा जरूरी है।

आर्थिक विकास

आर्थिक विकास इस बात पर निर्भर है कि विशुद्ध निजी खर्च (नेट डोमेस्टिक एक्सपेंडिचर) का क्या भाग विशुद्ध पूँजी (नेट डोमेस्टिक कैपिटल फॉर्मेशन) के रूप में काम आता है। विकास में दूसरी बात यह है कि 'कैपिटल-आउटपुट-रेशियो' क्या है, यानी राष्ट्रीय आय में कितनी वृद्धि के लिए कितनी अतिरिक्त पूँजी लगेगी।

१९६०-६१ से १९६८-६९ के बीच के नौ वर्षों में विशुद्ध निजी खर्च का १० से १३ प्रतिशत विशुद्ध निजी पूँजी के रूप में काम आया। १९६८-६९ में यह प्रतिशत १०.१ था। योजना आयोग का मानना है कि यह प्रतिशत १९७३-७४ में १३.१, १९७८-७९ में १५.२ और १९८०-८१ में १६.० होगा। ऐसा होना उचित है। लेकिन यह बहुत कुछ इस पर निर्भर है कि कहाँ तक सरकार देश के साधनों को उगाह पाती है। इसका यह अर्थ है कि अब से राष्ट्रीय आय में जो वृद्धि हो उसका २० प्रतिशत से अधिक पूँजी-निर्माण में लगे, न कि निजी या सरकारी उपभोग में खर्च हो जाय। ऐसा होना असम्भव तो नहीं है, लेकिन आसान भी नहीं है।

अभी तक का अनुभव यह है कि जितनी पूँजी लगी है उतना उत्पादन नहीं हुआ है। कारण है कार्यक्षमता का अभाव और भ्रष्टाचार। पिछले दस वर्षों में जो भी पूँजी देश में लगी है उसमें बरबादी बहुत हुई है। निजी और सरकारी दोनों उद्योगों में बरबादी हुई है। और यह भी है कि जितनी रकम को हम लागत की पूँजी (इन्वेस्टमेंट) मान लेते हैं उसका काफी अंश उपभोग में खर्च हो जाता है। अगर हम लागत-लाभ का मेल मिलाना चाहते हैं तो राजनैतिक और प्रशासनिक व्यवस्था में काफी चुस्ती और सुधार लाना पड़ेगा। लेकिन क्या निकट भविष्य में ऐसा हो सकेगा?

गरीब के लिए आशा!

पूँजी और विकास आदि की चर्चा करते समय यह प्रश्न सबसे पहिले उठता है कि गरीब का क्या होगा? बढ़े हुए उत्पादन में उसे क्या हिस्सा मिलेगा?

स्वयं योजना आयोग ने गरीबों के बारे में यह राय प्रकट की है:

"समाज के सबसे नीचे के दस प्रतिशत लोग वे हैं जो बेकार हैं, विकलांग हैं, पेंशनयाफ्ता हैं, तथा ऐसे लोग हैं जो सामान्य आर्थिक जीवन के प्रवाह में नहीं हैं। उनके जीवन-स्तर में वृद्धि देश के आर्थिक विकास से नहीं हो सकती, उनकी राहत के लिए विशेष तौर पर ही कुछ करना पड़ेगा। इन १० को छोड़कर शेष ९० प्रतिशत को उत्पादन और रोजगार में वृद्धि से लाभ पहुँच सकता है। उपभोग में जो विषमता १९६७-६८ में थी अगर वही रह जाय तो चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त में (१९६८-६९ के मूल्यों पर) दूसरे १० प्रतिशत लोगों का प्रति व्यक्ति उपभोग का स्तर ३२० रु० प्रति वर्ष या लगभग २७ रु० प्रति माह हो जायगा। १९६०-६१ के मूल्यों पर यह १५ रु० प्रति माह के बराबर होगा। यह २० रु० प्रति माह से काफी कम होगा जो न्यूनतम अपेक्षित स्तर माना गया था।"

इसका अर्थ यह है कि नीचे से दूसरे दस प्रतिशत लोग (१०-२० के बीच) १९८०-८१ में १५ रु० प्रति माह के (१९६०-६१ के मूल्यों पर) हकदार होंगे। २० रु० प्रति माह के लिए प्रति व्यक्ति उपभोग में ११ प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि आवश्यक होगी। योजना आयोग के हिसाब के अनुसार अगर राष्ट्रीय आय ६.२ प्रतिशत बढ़े, और जनसंख्या १.७ प्रतिशत ही रहे तो प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उपभोग ४.२ प्रतिशत बढ़ेगा। इस प्रकार १९८०-८१ के ९½ साल बाद यानी सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त में, दूसरे १० प्रतिशत गरीब लोग न्यूनतम उपभोग के स्तर पर पहुँचेंगे। सबसे नीचे के १० प्रतिशत को तो योजना→

ग्रामस्वराज्य-समाओं के पदाधिकारी : उनका शिक्षण-प्रशिक्षण

(१) भूमिका

१—ग्रामस्वराज्य-सभाओं के पदाधिकारियों के शिक्षण-प्रशिक्षण में दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। वे हैं :

(क) उनके चिंतन का धरातल ऊँचा उठे। उनमें ग्रामनिष्ठा जगे। गाँव को एक नया, निष्पक्ष, प्रगतिशील नेतृत्व मिले।

(ख) नये उत्तरदायित्व की दृष्टि से उनकी व्यावहारिक क्षमता बढ़े।

२—इन लक्ष्यों की सिद्धि के लिए आपसी चर्चा, संगोष्ठी, सभा, सम्मेलन आदि का माध्यम उचित होगा। लेकिन शैली चाहे जो हो, पद्धति समस्यामूलक चतन की ही होनी चाहिए। समस्याएँ ऐसी ली जायँ जो गाँव या क्षेत्र में उनकी प्रत्यक्ष अनुभूति या देश-विदेश की प्रचलित जानकारी, से जुड़ी हुई हो।

(२) तात्विक चिन्तन (प्रश्नों के माध्यम से)

३—क्या गाँव के सभी लोग सुखी हो सकते हैं ?

विज्ञान की सम्भावनाएँ, लोकतंत्र के अवसर। साधनों का संयोजन—सामूहिक हित में सबका हित !

'शूद्र' का बहिष्कार क्यों ? 'शत्रु' का संहार क्यों ?

सबको ईमान की रोटी, इज्जत की जिन्दगी। ऐसा नहीं होगा तो तनाव, टकराव।

४—क्या समता सम्भव है ?

वोट का सबको समान अधिकार, देश के सब नागरिक।

रोटी-बेटी का व्यवहार अलग-अलग हो सकता है, लेकिन छुआछूत या दुराव क्यों ?

सबके साथ सभ्य सम्बन्ध रहें—किसी के साथ दुर्व्यवहार न हो।

कुएँ, मन्दिर आदि की सार्वजनिक सुविधाएं सबके लिए खुली रहें।

गाँव में एक जगह जन्म हुआ है, भगवान ने पड़ोसी बना दिया है, तो पड़ोसीपन क्यों न रहे ?

५—क्या गाँव एक इकाई माना जा सकता है ?

(क) गाँव में सभी तरह के लोग हैं—धनी, गरीब, हिन्दू, मुसलमान, विभिन्न जातियों के लोग। लेकिन सब खेत और खेती से जुड़े हुए हैं—मालिक का खेत, मजदूर की मेहनत। एक खेत का मालिक है, दूसरा मेहनत का मालिक। खेती के लिए खेत और मेहनत दोनों का होना अनिवार्य—फिर शत्रुता क्यों ? क्या समझौता, साझेदारी, सम्भव नहीं ?

(ख) गाँव के बारे में सर्वोदय तथा राजनैतिक दलों और सरकार के विचारों में अंतर।

सर्वोदय गाँव को एक 'इकाई' मानता है जिसे स्वायत्त, स्वाश्रयी होना चाहिए। देश भर में गाँवों और शहरों की ऐसी लाखों स्वायत्त, स्वाश्रयी इकाइयाँ हों जिनका महासंघ भारत हो।

राजनैतिक दल गाँव को मात्र गाँव मानते हैं जो अपना कच्चा माल शहर के हाथ बेचता है, और शहर का तैयार माल खरीदता है, जहाँ के लोग गँवार और गरीब हैं, और जिन्हें सभ्य कहलाने के लिए शहरी तौर-तरीकों को अपनाना चाहिए। नेताओं की नजर में गाँव के लोग सिर्फ 'वोटर' हैं और व्यापारियों की नजर में 'कस्टमर'।

गाँव का विकास सब चाहते हैं लेकिन इकाई के रूप में नहीं।

गाँव मात्र घरों का समूह नहीं है, एक 'इकाई' है जिसका घुला-मिला जीवन है।

६—गाँव का स्वराज्य (ग्रामस्वराज्य) कैसा होगा ? उसके लक्षण क्या हैं ?

ग्रामस्वराज्य के ६ तत्व हैं :

(१) स्वायत्त ग्रामस्वराज्य-सभा

(क) अपना निर्णय—सर्व सम्मति, सर्वानुमति।

अपनी व्यवस्था—ग्रामस्वराज्य-सभा, ग्राम-शान्तिसेना। अपना न्याय, अपनी शिक्षा। अपनी विकास-योजना।

सरकार की सहायता हो, हस्तक्षेप नहीं।

(ख) ग्रामस्वराज्य-सभा, प्रखंड-स्वराज्य-सभा, जिला-स्वराज्य-सभा, राज्य-स्वराज्य-सभा, राष्ट्र-स्वराज्य-सभा : सब स्वायत्त—सबके क्षेत्र, सबके कर्तव्य अलग-अलग।

(२) दलमुक्त ग्रामप्रतिनिधित्व

→आयोग ने विकास-धारा के बाहर ही मान रखा है।

लेकिन पिछले दस वर्षों में जो अनुभव आया है उसके आधार पर यह मानना कठिन है कि गरीबों के लिए योजना-आयोग की इतनी योजना भी पूरी होगी। अनुभव (ट्रेन्ड पर्सपेक्टिव) के अनुसार १९८०-८१ में प्रति व्यक्ति उपभोग ५३२.६ रु० ही होना चाहिए, न कि आयोग के अनुमान के अनुसार ९९२.९ रु० (१९६८-६९ के मूल्यों पर) १९६८-६९ में जो विषमता थी उसके आधार पर दूसरे १० प्रतिशत गरीबों का प्रति व्यक्ति उपभोग प्रति वर्ष २५० रु० या २१ रु० प्रति माह होगा। १९६०-६१ के मूल्यों पर यह १२ रु० से भी कम होगा। अगर १९६०-६१ के मूल्यों पर १२ रु० को बढ़ाकर २० रु० करना हो तो प्रति व्यक्ति उपभोग में ७० प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी। राष्ट्रीय आय ३.७५ प्रतिशत बढ़े, और जनसंख्या १.७ प्रतिशत ही रहे तो प्रति व्यक्ति उपभोग २ प्रतिशत बढ़ेगा। इस आधार पर १९८०-८१ के २५ साल बाद यानी २००५ ई० में दूसरे १० प्रतिशत गरीब लोग न्यूनतम उपभोग के पात्र हो सकेंगे। यह सुदूर से भी दूर के भविष्य की योजना है !

प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

सरकार में स्वायत्त ग्राम और नगर इकाइयों का प्रतिनिधित्व कैसे ?

ग्रामस्वराज्य-सभा-प्रतिनिधि-निर्वाचन मंडल की योजना।

दल-प्रतिनिधित्व के दोष—आज सत्ता किसके हाथ में : दलों के या जनता के ?

दैनंदिन जीवन में लोकतंत्र होना चाहिए। सरकार की शक्ति में वृद्धि से लोक-शक्ति का ह्रास—पाकिस्तान का उदाहरण।

(३) ग्रामाभिमुख अर्थनीति

(क) आज की शहरी अर्थनीति—गाँव का सस्ता कच्चा माल, शहर का महँगा तैयार माल—मूल्यों के द्वारा शोषण। सरकारी योजनाओं में शहरों के साथ पक्षपात।

(ख) विकास के लिए ग्राम-योजना :

भूमि का ग्रामस्वामित्व—न परिवार का स्वामित्व, न सरकार का—खेती का हक सुरक्षित। खेती, उद्योग, व्यापार का संगठन और विकास।

अतिरिक्त उत्पादन की बिक्री।

आयात-निर्यात पर नियंत्रण।

मुनाफा, किराया, सूद, मजदूरी की सीमा।

ग्रामकोष—पूँजी—ऋण।

आर्थिक प्रवृत्तियों में गाँव का क्षेत्र, परिवार का क्षेत्र—दोनों में समन्वय।

अंतिम व्यक्ति विकास का मापदंड।

(४) पुलिस - अदालत - निरपेक्ष - व्यवस्था :

(क) ग्राम-शान्तिसेना—अपराधों की रोकथाम—शिक्षण—दंड और दबाव की सीमा।

(ख) आपसी न्याय—पंच-न्याय—कानून से अधिक समाधान पर जोर।

विशेष स्थितियों में ही सरकार का हस्तक्षेप।

पंचायत स्वतंत्र, शिक्षा स्वतंत्र – ये दोनों सरकार के दायरे से बाहर रहनी चाहिए। न्याय-विभाग की तरह स्वतंत्र हो – सरकार आर्थिक सहायता दे लेकिन नियंत्रण स्वतंत्र हो। विद्यालयों की स्वायत्त व्यवस्था—शिक्षक, शिक्षार्थी, अभिभावक की सम्मिलित समिति हो।

डिग्री-नौकरी का सम्बन्ध न हो।

शिक्षा उत्पादक हो,—सब विद्यार्थियों के लिए समान विद्यालय हो।

गाँवों में घण्टे भर का विद्यालय—जीवन-शिक्षा।

(६) सर्व-धर्म-समभाव

सब धर्मों के प्रति समान आदर।

राज्य का धर्म से मतलब नहीं। पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता, लेकिन सार्वजनिक अनैतिकता नहीं।

प्यार—वृद्धि।

मनुष्य का महत्त्व—हर मनुष्य ईश्वर का अंश।

(७) देश स्वतंत्र तो गाँव परतंत्र क्यों ?

(क) सरकार की विकास योजनाएँ—उनके दोष—ऊपर के लोगों को ही लाभ। स्वतंत्रता के बाद का नेतृत्व—उसकी सीमाएँ। गाँव शक्तिहीन—उनका संगठित अस्तित्व नहीं।

(ख) ग्रामस्वराज्य में भारत स्वायत्त, सहकारी, स्वाश्रयी इकाइयों का महासंघ। केन्द्रीकरण—विकेन्द्रीकरण। समाजवाद—साम्यवाद – लोक कल्याणवाद (सरकारवाद)—सर्वोदय। सर्वोदय का स्वामित्व और प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में नया विचार।

८—कुछ प्रचलित प्रश्न :

(१) गरीबी, बेरोजगारी, शोषण, विषमता।

(२) भूमि का प्रश्न—उचित हल।

(३) जातिवाद, वर्णवाद, सम्प्रदायवाद।

(४) देश की एकता।

(५) भ्रष्टाचार।

(६) शिक्षा।

(७) बढ़ती हिंसा।

(३) व्यावहारिक

९—पद किसलिए ? शासन के लिए ? या, व्यवस्था और सेवा के लिए ?

१०—पदाधिकारियों के कृत्य और कर्तव्य :

क. (१) अध्यक्ष—

ग्रामनिष्ठा का प्रतीक। परस्पर विश्वास पैदा करना—निष्पक्ष व्यवहार। सर्वसम्मति। न्याय। ग्रामकोष-संग्रह में सहायता—हिसाब-किताब आदि।

(२) मंत्री—

बैठक, कार्यवाही, रजिस्टर।

(३) कोषाध्यक्ष—

कोष-संग्रह, हिसाब-किताब, आडिट।

(४) ग्राम-शान्तिसेना का नायक

(क) संगठन—प्रशिक्षण-शिविर।

हर सैनिक को कोई उत्पादक हुनर। गाँव के विकास में योगदान। गरीबों, असहायों की सेवा। सैनिकों में भाईचारा, असहकार। आकस्मिक संकट में राहत-कार्य।

(ख) ग्राम-शान्तिसेना की टोलियाँ-

बाल-टोली, तरुण-टोली, प्रौढ़-टोली, वृद्ध-टोली, नारी-टोली। सबके अलग-अलग कार्यक्षेत्र।

(ग) नारी-टोली द्वारा स्त्रियों को ग्रामस्वराज्य सभा की बैठकों में शरीक करना—घर के आँगन में नयी हवा।

ख. ग्रामदान को पक्का करना—शर्तों की पूर्ति—कानून-दुरुस्ती।

ग. विकास

(१) भूमिहीन

बीघा-कट्ठा—वास की भूमि—सरकारी भूमि।

सही मजदूरी—अच्छा अनाज।

पुलिस—मालिक—महाजन के दमन से रक्षा।

बँटाईदार की बेदखली से रक्षा।

(२) खेती की उन्नति—

नये यंत्र सामूहिक। अतिरिक्त उत्पादन में श्रमिक को मजदूरी के अतिरिक्त निश्चित भाग।

(३) उद्योग—

खेती के पूरक उद्योग, स्वतंत्र उद्योग। वस्त्र स्वावलम्बन।

(४) ऋण—

आसान व्यवस्था। उचित सूद, पूँजी सुरक्षित।

(५) सहायता के सरकारी, अर्द्ध-

जमालाबाद पुष्टि-गोष्ठी–२

(गतांक से आगे)

ग्रामस्वराज्य-सभा सक्रिय कैसे हो ? दादा धर्माधिकारी व श्री धीरेनभाई की थीसिस

इन दोनों विषयों को एक साथ लिया गया, क्योंकि यह माना गया कि इन दोनों का परस्पर सम्बन्ध है।

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा कि खादीग्राम में ग्रामस्वराज्य-सभाओं के कुछ पदाधिकारियों की जो गोष्ठी नवम्बर में हुई थी उसमें पदाधिकारियों ने दो प्रकार की समस्याएँ व्यक्त की थी। एक बात उन्होंने बतायी कि उन्हें समय का अभाव रहता है और दूसरी बात यह कि वे प्रचलित मूल्यों को चुनौती नहीं दे सकते जितनी हम अपेक्षा रखते हैं।

आचार्यजी यह महसूस करते हैं कि बिहार में ग्रामस्वराज्य-सभाओं से तीन-चार सौ समर्पित लोगों का एक 'केडर' बनना चाहिए। इसके लिए शिक्षण की एक प्रक्रिया निकाली जाय। इस प्रकार के 'केडर' के अलावा ग्रामस्वराज्य-सभा के पदाधिकारी होंगे। लोक-सेवक भी अलग होंगे।

श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने कहा कि अभी 'केडर' बनने की स्थिति नहीं है। अतः अभी जितने कार्यकर्ता हैं उन्हीं को सामने रखकर काम का संयोजन हो। जब 'केडर' बनने की स्थिति बनेगी तब 'केडर' बनेगा।

श्री लक्ष्मणदेवजी ने कहा कि कार्यकर्ता के अभाव में काम रुकता है। उन्होंने कार्यकर्ता में वैचारिक अस्पष्टता का भी उल्लेख किया। कार्यकर्ता अध्ययन नहीं करते।

श्री देवानन्दजी ने कार्यकर्ता के अध्ययन व चिंतन पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि अन्य विचारों का भी अध्ययन किया जाय।

श्री रामेश्वर ठाकुर मुसहरी प्रखण्ड के एक कर्मठ कार्यकर्ता हैं, उन्होंने कहा कि दादा धर्माधिकारी ने भोपाल अधिवेशन में जो बातें कही हैं उन्हें हम प्रत्यक्ष क्षेत्र में देखते हैं। बड़े मालिक ग्रामदान में शरीक नहीं होते। अतः छोटे मालिकों और गैर मालिकों को संगठित कर बड़े मालिकों पर नैतिक दबाव डाला जाय। उन्होंने कहा कि क्षेत्र से जब हमारा सम्पर्क टूट जाता है तो काम में व्यवधान आता है। एक बात की ओर और ध्यान दिया जाना चाहिए कि गाँवों में हम नेता न बनें।

चर्चा के दरम्यान प्रतिकार और सत्याग्रह की बात उठी। कई गाँवों में इसकी भूमिका तैयार हुई है। इस पर चर्चा करते हुए श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने कहा कि भूमिवान हो या भूमिहीन वह अपना हिस्सा (बीघा कट्ठा और ग्रामकोष) ग्रामस्वराज्य-सभा को देकर सत्याग्रही की पात्रता हासिल करे।

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा कि बड़े मालिकों के मुकाबिले छोटे मालिक और गैर मालिक को संगठित करने की बात लेकर गाँव में जायेंगे तो हम छोटे मालिक और गैर मालिक को ही क्रान्ति का अग्रदूत मानेंगे। आज हम क्या मानते हैं ? हम यह मानते हैं कि एक ग्रामदान में शामिल है और दूसरा नहीं शामिल है। ग्रामदान में शामिल होनेवाला भूमिवान भी हो सकता है और भूमिहीन भी। ग्रामदान में भूमिहीन और छोटे मालिक भी नहीं शामिल होते हैं। अतः हम मनाव, प्रभाव या दबाव का माध्यम केवल ग्रामस्वराज्य-सभा को मानेंगे, ग्रामस्वराज्य-सभा के अलावा अन्य संगठन को नहीं।

प्रश्न यह उठाया गया कि सत्याग्रह किसके खिलाफ होगा ? जो ग्रामदान में शामिल नहीं हैं उनको शामिल करने के लिए सत्याग्रह होगा अथवा अन्याय, शोषण और दमन के खिलाफ होगा ? इस पर लोगों की राय बनी कि सत्याग्रह शोषण, अन्याय और दमन के खिलाफ ही होगा—ग्रामदान में शरीक करने के लिए नहीं।

एक प्रश्न यह भी उठा कि जिन लोगों ने ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर किया है वे अपना बीघा-कट्ठा क्यों नहीं निकालते ? इनके खिलाफ सत्याग्रह किया जा सकता है ?

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा कि बाह्य सत्ता से लड़ने और अपनी व्यवस्था से लड़ने की प्रक्रिया में अन्तर होगा। ग्रामस्वराज्य-सभा में सद्व्यवहार-शक्ति का ही उदय हो—प्रतिकार का अवसर कभी-कभी ही आना चाहिए।

गाँवों में किस प्रकार के कार्यक्रम ग्रामस्वराज्य-सभाएँ उठायें, इस प्रश्न पर चर्चा हुई। निम्नलिखित प्रश्नों का उठाया जाय, ऐसी आम राय बनी।

→सरकारी, गैर-सरकारी स्रोत। सहायता कैसे प्राप्त करें ?

घ—न्याय।

आपसी समझौता—पंच-फैसला। अदालत-मुक्ति। मान्य अनीति का निराकरण—मजदूर की मेहनत, स्त्री का शील, अनाथ, वृद्ध और बालक का संरक्षण, मालिक, महाजन को अभय।

ङ—शिक्षण।

(१) घंटे भर का विद्यालय—सर्वोदय के मूल्य।

(२) गाँव की एकता—गाँव एक परिवार।

(३) स्वास्थ्य, सफाई।

(४) सामूहिक पर्व, उत्सव।

च—ग्रामदान ऐक्ट

ग्रामस्वराज्य-सभा—ग्राम पंचायत।

११—प्रश्नोत्तर।

चर्चा में आधा समय प्रश्नोत्तर के लिए रखना चाहिए। चर्चाओं का मानक बनाकर माइक्रोस्टाइल प्रतियाँ बाँटी जा सकें तो बहुत अच्छा होगा। —राममूर्ति

१—अन्याय के प्रश्न
२—सामूहिक हितवाले प्रश्न
३—मजदूरों के प्रश्न
४—दान का चर्चा
५—ऋण-मुक्ति

श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने कहा कि पुष्टि के कार्य में जितने कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी उतने हों कार्यकर्ता पुष्टि के बाद के कार्य के लिए भी चाहिए, केवल उनका रोल बदल जायेगा। उन्होंने प्रखण्ड स्तर पर कार्य के संयोजन की दृष्टि से कहा कि ५-६ ग्रामस्वराज्य-सभाओं की मिली जुली क्षेत्रीय स्तर पर २-३ घण्टे के लिए बैठक होनी चाहिए। सभी अपनी-अपनी ग्रामस्वराज्य-सभा की रिपोर्ट पेश करेंगे। इसमें उनका परस्पर प्रशिक्षण होगा। इस प्रकार की बैठक में कार्यकर्ता को शरीक होना चाहिए। बैठक में स्थानीय समस्याओं की चर्चा हो और उनके हल का सक्रिय प्रयास किया जाय। उन्होंने मुसहरी के सन्दर्भ में तीन समस्याओं की तरफ ध्यान आकृष्ट किया १ मजदूरों का प्रश्न, २ पदाधिकारियों को उनके समय के लिए पारिश्रमिक और ३. युवकों की बेकारी। मजदूरों के प्रश्नों पर उनकी राय थी कि उनके प्रश्न ग्रामस्वराज्य-सभाएँ काफी हद तक दूर कर सकती हैं। पदाधिकारियों को पारिश्रमिक देने की परम्परा न डालने पर ही उनका जोर था। युवकों की बेकारी का कोई हल निकट भविष्य में नहीं दिखता।

आचार्य राममूर्तिजी ने कहा कि मजदूरी के प्रश्न पर चार काम करने हैं—१. मजदूरी में जो अनाज दिया जाता है वह खाने लायक हो, २. जितनी मजदूरी अनाज में दी जाती है उसकी सही तौल हो, ३. मजदूरी बढ़ायी जाय और ४. ज्यादा कमाई में मजदूर को हिस्सा मिले।

श्री विद्यानन्दजी ने कहा कि सामाजिक प्रश्नों की अवहेलना नहीं होनी चाहिए।

श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने कहा कि मजदूरी के प्रश्न को गाँववाले ही उठायें, हम अपनी ओर से नहीं उठायें, अन्तोदय की बात हम जरूर सोचें।

ग्रामस्वराज्य-सभा के पदाधिकारियों के प्रशिक्षण की आवश्यकता सबने महसूस की। प्रशिक्षण की दृष्टि से निम्नलिखित कार्यक्रम सोचा गया १. पदाधिकारियों का संयोजन, २ कई ग्रामस्वराज्य-सभाओं की मिलीजुली बैठक, ३. क्षेत्रीय शिविर, जो दो-तीन दिन का हो। हिसाब-किताब और ग्रामनेतृत्व की दृष्टि से प्रशिक्षण का अभ्यास-क्रम बनना चाहिए।

कार्यकर्ता-प्रशिक्षण की भी आवश्यकता महसूस की गयी परन्तु इस सम्बन्ध में ज्यादा चर्चा नहीं हुई। कार्यकर्ता-प्रशिक्षण के लिए इस प्रकार की गोष्ठी को उपयोगी माना गया। अब जो अगली बैठक होगी उसमें कार्यकर्ता-प्रशिक्षण की योजना की गयी है। अगली बैठक एक सप्ताह के लिए सहरसा जिले के महीने में की जायेगी। पहले १ दिन बैठक होगी, फिर ४ दिन सभी लोग क्षेत्र में प्रत्यक्ष कार्य करेंगे और समस्याओं का अध्ययन करेंगे। इसके बाद फिर २ दिन बैठक करके उन समस्याओं पर चर्चा की जायेगी।

नये प्रखण्डों में कार्य-पद्धति क्या हो ?

आज जितने प्रखण्डों में पुष्टि-कार्य हो रहा है उनके अलावा जिन नये प्रखण्डों में काम शुरू हो उनमें अपने पिछले अनुभवों के आधार पर किस पद्धति से काम किया जाय ? एक सुझाव यह था कि गाँव में पहले ग्रामस्वराज्य-सभा बन जाय और उस सभा को ग्रामदान के पुष्टि-कार्य के लिए तैयार किया जाय। महीने में इस पद्धति से काम हुआ था और अब पड़ोसी प्रखण्ड निर्मली में भी शुरू किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में यह कहा गया कि ग्रामदान की घोषणा के पहिले ग्रामस्वराज्य-सभा न बने, बल्कि ग्रामस्वराज्य समिति बनानी चाहिए।

पूर्णिया जिले में पहले ग्रामदान के घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर कराते हैं, इसके बाद परिवारों की सूची बनायी जाती है। जब ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति हो जाती है तब गाँव में एक समारोह करते हैं और ग्रामस्वराज्य-सभा का संगठन होता है।

कई अन्य क्षेत्रों में बीघा-कट्ठा बाँटने के बाद ही ग्रामस्वराज्य-सभा बनाते हैं।

इस विषय पर सबकी आम राय थी कि किसी ऐसी प्रामाणिक पद्धति की खोज नहीं हुई है जिसे सब जगह लागू की जाय। अनेक पद्धतियों से कार्य हो रहा है और अभी वैसे ही काम होना चाहिए।

चुनाव के समय पुष्टि के सघन क्षेत्रों में क्या किया जाय ?

विधान सभा का चुनाव शीघ्र होनेवाला है। पुष्टि के सघन क्षेत्रों में चुनाव के अवसर पर क्या करना चाहिए ? इस विषय पर चर्चा हुई। चूँकि अभी ग्रामस्वराज्य-सभाओं के उम्मीदवार खड़े करने की स्थिति नहीं बनी है, इसलिए उम्मीदवार खड़े करने की बात नहीं सोचनी है। निम्नलिखित कार्यक्रम किये जायें ऐसी सबकी राय थी।

१ मतदाता के लिए आचार-संहिता तैयार हो।

२ उम्मीदवारों का भी आचार-संहिता बने और इसकी चर्चा छपाकर वितरण करना चाहिए।

३. ग्रामस्वराज्य-सभाओं के लोग बोगस वोट न दें।

४ शान्तिपूर्ण मतदान हो इसका प्रयास किया जाय।

५. धमकी देकर किसी मतदाता को मतदान से न रोका जाय।

६. मुर्दों के नाम पर वोट न पड़े।

७ जहाँ सम्भव हो, सर्वदलीय मंच का आयोजन हो।

८. लोकनीति का विचार स्पष्ट किया जाय।

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन

खादीग्राम (मुंगेर) में ग्रामस्वराज्य-सभाओं के पदाधिकारियों की बैठक हुई थी। उसमें यह निश्चय किया गया था कि राज्य-स्तर का ग्रामस्वराज्य सम्मेलन किया जाना चाहिए। मुजफ्फरपुर के लोगों ने सम्मेलन करने की अपनी तैयारी बतायी थी। इस गोष्ठी में चर्चा करके

क्षेत्रीय ग्रामस्वराज्य-गोष्ठी

मुसहरी प्रखण्ड के जमालाबाद एवं भीखनपुर पंचायत का क्षेत्र ग्रामदान एवं ग्रामस्वराज्य-सभा के गठन की दृष्टि से बड़ा कठिन माना जाता था। जगह-जगह पर विरोध था। कोई बात भी सुनने को तैयार न था। समय बदल गया तो सारा वातावरण बदल गया। अब तक भीखनपुर एवं जमालाबाद दो पंचायतों में छः ग्रामसभाएँ बन गयी हैं। जैसे देर तक सोया आदमी समय पर दफ्तर पहुँचने के लिए जल्दी-जल्दी तैयार होता है इन ग्रामसभाओं की हालत भी वैसी ही है। पहले की बनी ग्रामसभाओं से भी आगे मार जाना चाहती हैं। इसका जितना श्रेय ग्रामसभा के उत्साही सदस्यों का है उससे कम श्रेय जमालाबाद कैम्प के कार्यकर्ता श्री अविनाशचन्द्र का नहीं है। ग्रामस्वराज्य की दिशा में इन गाँवों को आगे लाने का श्री अविनाशचन्द्र का प्रयत्न सराहनीय है।

२१ दिसम्बर '७१ को जमालाबाद आश्रम में बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी एवं जमालाबाद आश्रम के संचालक श्री बद्री नारायण सिंह, बिहार स्टेट गांधी स्मारक निधि के मंत्री श्री कैलाश प्रसाद शर्मा की उपस्थिति में भीखनपुर, द्रोणपुर, बघनगर, जमालाबाद गाछी टोला, जमालाबाद बसन्त टोला और जमालाबाद आश्रम टोला की ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों की सम्मिलित बैठक हुई, जिसमें बीघा-कट्ठा निकालने, ग्रामकोष संग्रह करने, उचित मजदूरी देने तथा ग्रामसभा की बैठक को नियमित करने पर विचार किया गया।

(जयप्रकाश शिविर समाचार से)

→निश्चय किया गया कि २४ और २५ फरवरी '७२ को वैशाली प्रखण्ड के सिंहमा गाँव में यह सम्मेलन किया जाय। इस सम्मेलन का नाम रखा गया—प्रथम बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन। प्रश्न उठा कि सम्मेलन का निमंत्रण किसकी ओर से भेजा जाय। अभी बिहार स्तर की कोई एजेंसी नहीं है इसलिए निश्चय हुआ कि इस सम्मेलन की जो स्वागत समिति होगी उसकी तरफ से निमंत्रण भेजा जाय।

ग्रामस्वराज्य-सभाएँ गणतंत्र दिवस कैसे मनाएँ ?

इस सम्बन्ध में जो कुछ निर्णय हुआ, उसके लिए ३ जनवरी, '७२ के 'भूदानयज्ञ' में पृष्ठ २१३ देखें।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं के संचालन के लिए बाइलॉज

एक ड्राफ्ट तैयार हुआ है। उसका कुछ अंश श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने पढ़ा और उसपर चर्चा की गयी। मुख्य बात यह स्वीकार की गयी कि ग्रामस्वराज्य-सभाओं के संचालन के लिए कानून का उतना ही सहारा लिया जाय, जितने के लिए कानून अत्यन्त आवश्यक हो। इस सम्बन्ध में तय हुआ कि श्री कैलाश प्रसाद शर्मा और श्री बद्री नारायण सिंह इसको सामने रखकर एक दूसरा ड्राफ्ट तैयार करें।

इस गोष्ठी का दो दिन में कुल ५ बैठकें हुईं। आतिथ्य जमालाबाद आश्रम ने किया। कार्यकर्ता एक नयी ताजगी लेकर वापस गये। —कृष्ण कुमार

साथियों के पत्रों से

[सर्वोदय आन्दोलन में लगे कार्यकर्ता साथी अपने काम की जानकारी समय समय पर विनोबाजी को तथा सर्व सेवा संघ को पत्रों द्वारा भेजते रहते हैं। उन्हीं पत्रों के कुछ अंश पाठकों के उपयोग के लिए हम यथासंभव यहाँ देते रहने का प्रयत्न करेंगे। सं०]

(१) गया (बिहार)

हमारे जिले में अभी तक २१० गाँव में ग्रामसभाओं का गठन हुआ है और थोड़ी जमीन का बीघा-कट्ठा निकाल कर वितरण हो चुका है। जिले के दो भागों में ही अपनी शक्ति लगी है। काम कठिन है। ग्रामदान के बाद ग्रामसभा का गठन, बीघा-कट्ठा वितरण ये सब प्रक्रियाएँ होने के बाद भी ऐसा नहीं लगता कि गाँव में कुछ परिवर्तन हुआ हो, ग्राम-शक्ति का अंकुर फूटा हो, निम्न वर्ग के लोगों की स्थिति में परिवर्तन आया हो। जब हमारा सम्पर्क रहता है तब तक कुछ छिटपुट काम चलते हैं, उसके बाद ग्रामसभाओं की पूर्व स्थिति हो जाती है। इस प्रकार जो हमारा कार्यक्रम समाज-परिवर्तन की दिशा में चल रहा है, उसका कहीं प्रत्यक्ष नमूना नहीं दिखाई देता। भूमिहीनों को जमीन मिले, यही मूल प्रश्न है। भूमिहीन लोग इसके लिए काफी व्यग्र हैं। इस प्रकार की स्थिति का लाभ नक्सलपंथियों को सहज मिलता है। भूदान-प्राप्ति से वितरण तक जो जमीन भूमिहीनों को मिली वह एक काम हुआ है जो कुछ प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। हम ऐसे ही ६० गाँवों में ग्रामसभाओं का निर्माण करके अन्त्योदय की दृष्टि से ग्राम-विकास का काम कर रहे हैं। इस प्रकार के काम से लगता है कि उनका कुछ मनोबल बढ़ा है, आर्थिक स्थिति में अन्तर आया है, सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए भाव जाग्रत हुआ है। समाज-शिक्षण के भी काम विभिन्न गाँवों में आरम्भ हुए हैं जिससे शोषण बहुत हद तक कम हुआ है।

लगातार रहने पर कुछ निष्पत्ति निकलेगी। ये सारे काम होते हुए भी हमें अपने में समाधान इसलिए नहीं है कि इस काम में लगे कार्यकर्ता एक दूसरे के निकट नहीं हैं, मनोबल की कमी है। मनोमालिन्य और अनुशासनहीनता के कारण हम अधिक सक्षम नहीं हो पाते। मेरे मानस पर तो बहुत अधिक असर है कि ऐसी स्थिति में हम कब तक इस काम में लगे रहेंगे? आगे के दायित्व तो हमारे देश के सामने आते हैं। कुछ-कुछ पढ़े-लिखे लोग आते हैं। [illegible] साधना का उपहास है। वस्तुस्थिति कुछ और ही है।

जिन दो क्षेत्रों में ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है उनमें ग्रामसभाओं का आयोजन हुआ। ग्रामसभाओं को सुसंगठित किया गया। ग्रामसभाओं की समस्याओं पर चर्चा हुई। कई गाँवों में पुनर्गठन हुआ। ग्रामकोष का हिसाब-किताब व विनियोग का लेखा-जोखा लिया गया। इन ग्रामसभाओं में भूदान-किसान अधिक संख्या में आये। दाखिल-खारिज के विषय में विशेष समस्याएँ आयीं जिनका समाधान ए० डी० एम० साहब के साथ किया गया। इस प्रकार की दस ग्रामसभाएँ हुईं।

बाराचट्टी क्षेत्र में पुष्टि-कार्य को आरम्भ करने की दृष्टि से बैठक हुई जिसमें दो पंचायतें चुनी गयीं। इस क्षेत्र में ११ गाँवों का पुष्टि-कार्य सम्पन्न किया जा चुका है।

—दिवाकर

(२) मुजफ्फरनगर (उ० प्र०)

शामली ब्लाक के प्रधानों, प्रमुख तथा कुछ साथियों की, ब्लाक के ही कार्यालय में एक गोष्ठी की गयी। गोष्ठी में ग्राम-स्वराज्य का विचार समझाया और साथ-साथ यह भी समझाने की कोशिश की कि आनेवाले ग्रामसभा के चुनाव को पार्टीबाजी से अपने-अपने गाँव को बचाओ और सर्वसम्मति से अपने गाँव को प्रधान बनाने की कोशिश करो। आज की ग्राम-व्यवस्था तथा चुनाव की पद्धति पार्टीबाजी से ग्रस्त है। सब लोगों ने विचार पसन्द किया।

हमारे जिले के सर्वोदय मण्डल में सभी साथी गाँव के निवासी हैं। हमारे विचार-प्रचार का गाँव के लोगों में, ग्रामस्वराज्य का समझाना एवं मान्य [illegible] है। इसे आज [illegible] गाँव के कुछ समझदार लोग पसन्द भी करते हैं। जिले के सभी गाँवों में इस विचार को सभा, गोष्ठियों आदि के द्वारा समझाना चालू रहा हमारा कार्यक्रम है। ग्रामस्वराज्य के विचार को गाँव की भाषा में विस्तार से समझाने के लिए छोटी-छोटी गाथाओं में किताबें भी लिखी हैं। ये भी लोगों को [illegible] हैं।

भरतसिंह

(३) सिवनी (मध्य प्रदेश)

सिवनी (म० प्र०) जिले में अच्छा काम चल रहा है। भूदान में प्राप्त ४ हजार एकड़ भूमि पूरी वितरित हो चुकी है और भूदानधारी बराबर १०-१२ साल से खेती कर रहे हैं। जिले के कुछ ग्रामदानी गाँवों में पुष्टि का काम धीरे-धीरे स्थानीय सहयोग से प्रारम्भ हो गया है। श्रमिकों में [illegible] मजदूर वर्ग अपना-अपना निर्दलीय संगठन बनाकर सर्वोदय-विचार से काम कर रहे हैं और गाँवों में उनकी प्रतिष्ठा बनी है।

इस प्रकार आज के वातावरण में सिवनी में सर्वोदय का काम अच्छा चल रहा है और लोगों का सहयोग भी मिल रहा है।

म० प्र० भूदान-यज्ञ बोर्ड का संयुक्त सचिव होने के नाते जमीनों का वितरण का काम मेरे जिम्मे है। महाकोशल क्षेत्र की ८० प्रतिशत जमीनों का वितरण हो चुका है। शेष का वितरण-कार्य चालू है। मध्य भारत क्षेत्र की बहुत-सी जमीन का वितरण करना है, वह भी भिण्ड, मुरैना, शिवपुरी जिले की। —सत्यनारायण शर्मा

दवाओं में अमेरिकी लूट !

जितनी दवाएँ (ड्रग) बनती है उनमें से मुश्किल से ३ प्रतिशत सरकार की ओर से (पब्लिक सेक्टर में) बनती हैं, शेष सब बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ (निजी सेक्टर में) बनाती हैं।

ऐसी सब देशी कम्पनियाँ विदेशी कम्पनियों के साथ मिलकर काम करती हैं, और उनका विदेशी माल भी बेचती हैं। विदेशी कम्पनियों में अमेरिकी कम्पनियाँ बेहिसाब मुनाफाखोरी करती हैं। इतना ही नहीं बल्कि उन्हीं दवाओं को यूरोप में वे जिस भाव पर बेचती हैं, उससे तीन गुना से लेकर एक सौ चौदह गुना तक अधिक मूल्य पर भारत तथा दूसरे विकासशील देशों के हाथ बेचती हैं। नीचे के आँकड़े देखिए :

फर्म	दवा का नाम	मात्रा	भारत में मूल्य	यूरोप में मूल्य
१. सिनेमिड	टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड	१ किलो	२३० डालर	२४ डालर
२. फीजर	रोडोमाइसिन	,,	२५० ,,	२४ ,,
३. मर्क	निर्वेंजोमाइसलो पटांड्राइलीन पाइपरडीन	,,	१,०६० ,,	२० डालर ५० सेन्ट

इसी तरह की दूसरी अनेक मिसालें हैं। सोचिए, हम लोग विदेशी दवाओं के लिए देश का कितना धन बाहर भेज रहे हैं। इसपर भी हमें सही हालत में दवाएँ नहीं मिलतीं। अमेरिका की सिनेट में इस चोरी का पता चला कि कई दवाएँ, जिनकी बिक्री अमेरिका में वर्जित है, क्योंकि वे निकम्मी साबित हो चुकी हैं, भारत और इस तरह के दूसरे देशों में भेज दी जाती हैं। ४ जनवरी १९७० को सिनेमिड कम्पनी ने घटिया की एक दवा एक भारतीय कम्पनी को ७ हजार ९ सौ ६० डालर प्रति किलो में बेची, जब कि बिलकुल उसी तरह की दवा का दाम यूरोप में मात्र ५ सौ ५० डालर था। अमेरिका के डा० चार्ल्स एडवर्ड्स वा', जो वहाँ के फूड और ड्रग कमिश्नर हैं, कहना है कि १९३८ से १९६२ तक जो हजारों दवाएँ बाजार में बिकी हैं, उनमें उन गुणों के होने का कोई प्रमाण नहीं था जिनके लिए ग्राहकों ने दाम दिया और दवाएँ खरीदीं !

कहाँ हैं हमारे देश के कानून और वे क्या कर रहे हैं? ●

कार्यकर्ता-प्रशिक्षण-शिविर

दुर्ग (म० प्र०) जिला सर्वोदय कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण-शिविर २५ और २६ दिसम्बर '७१ को प्रथम ग्रामदानी गाँव लाटाबोड़ में सम्पन्न हुआ। शिविर में दोनों दिन ४५ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

शिविर का आयोजन उपरोक्त समिति की ओर से हुआ था, जिसका उद्घाटन और समारोप श्री हरीप्रेमजी बघेल जिला रायपुर ने किया। इस शिविर में खास लाटाबोड़ और अंतराफ के कार्यकर्ता ही अधिक थे। अतः पुष्टि के कार्य को प्राथमिकता देने का लक्ष्य रखकर ही सारी कार्रवाई हुई।

तरुण-शान्तिसेना शिविर,

भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर और गुना (म० प्र०) जिलों के ६० तरुण-शांति-सैनिकों का द्विदिवसीय शिविर दिनांक २७ और २८ दिसम्बर, '७१ को शिक्षा महाविद्यालय, ग्वालियर के प्रांगण में सम्पन्न हुआ। शिविर का संचालन अ० भा० शान्तिसेना मंडल के क्षेत्रीय संयोजक श्री रामगोपाल दीक्षित ने किया। चर्चाओं में मुख्य रूप से तरुण-शांतिसेना के संगठन और उसके व्यापक प्रसार के व्यावहारिक पहलुओं पर चर्चा हुई। अलग-अलग जिलेवार भी गोष्ठियाँ आयोजित हुईं। प्रातः व्यायाम और योगासन का भी अभ्यास कराया गया।

बौद्धिक वर्गों में आज की जागतिक परिस्थिति में शान्ति की आवश्यकता और सर्वोदय-विचार की चर्चा मुख्य रूप से की गयी। इसी अवसर पर चौदह नये तरुण-शान्तिसैनिक बने।

भूल-सुधार

'भूदान-यज्ञ' अंक १५, १० जनवरी '७२ में पृष्ठ २२४ पर पाँचवीं लाइन "अगर देर भी हुई तो इतनी नहीं होगी," पढ़ें। उसी पेज के कालम तीन की अठारहवीं वाक्य इस प्रकार पढ़ें, "अर्थात् सामाजिक समारोहों में कोई भी ऐसी रस्म न की जाय जिसका किसी धर्म से सम्बन्ध हो।"

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज, १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक १७, सोमवार, २४ जनवरी, '७२
सर्व सेवा संघ प्रकाशन विभाग,
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१
सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

हमें गरीबी से युद्ध करना है

भारत, पाकिस्तान और बंगला देश की शान्ति-समस्या

सम्पादकजी,

यह सब जानते हुए भी कि यहिया खाँ और उनकी सेना ने घोर अत्याचार किया तथा विश्व के अच्छे-से-अच्छे बंगालियों को मौत के घाट उतारा। सोचना यह है कि क्या राजनीति का यह प्रथम उदाहरण है, अथवा यह केवल इतिहास की पुनरावृत्ति है। यदि हम प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास का अध्ययन करें तो हमको यह पता चलेगा कि ग्रीक और रोम की अनेक लड़ाइयों में ऐसा ही हुआ। रोमन साम्राज्य तो इन्हीं अत्याचारों की एक कहानी है। आज भी अपने प्रभाव और विश्व की राजनीति में स्थान बनाये रखने तथा स्वतंत्रता को कायम रखने के लिए वियतनाम में जो कुछ हो रहा है वह भी एक स्पष्ट उदाहरण है कि राजनीति में कुछ भी हो सकता है। दुनिया खण्डों में बँटी हुई है। खंड के प्रखंड भी हो सकते हैं। अतः राज्यों की अथवा शासकों और राजनीतिज्ञों की यह लिप्सा कि हमारा अखण्ड राज्य जनता का हनन करके बना रहे सम्भव नहीं है। फिर भी यह सब हुआ है और अभी भी जारी है। इसे एक-न-एक दिन समाप्त होना है और सद्भावना के आधार पर ही राजनीति को चलाना है। तभी विश्व में सुख और शान्ति कायम रह सकती है। सद्भावना के लिए कुछ भूल जाने और कुछ याद रखने की आवश्यकता होती है। मानवीय पहलू याद करने लायक होते हैं। अमानवीय भूल जाने लायक होते हैं। यही बात बंगला देश, पाकिस्तान और भारत के बारे में भी करनी होगी। क्योंकि जो कुछ हुआ है वह नया नहीं है। लेकिन हमको नयी दुनिया का निर्माण करना है तथा संसार में पूर्व घोषित बन्धुत्व, स्वतंत्रता और समानता स्थापित हो सके एवं सुख और शान्ति के मार्ग पर विश्व आगे बढ़ सके, इसके लिए आज भारत, बंगला देश तथा पाकिस्तान में जो कुछ हुआ उसे भूल जाना होगा। आगे के लिए मिलकर एक स्थान पर बैठकर नये सिरे से सोचना होगा, जिससे विश्व का एक नया मार्ग मिल सके। तदनुसार यहिया खाँ को और उनके अत्याचारों को भूल जाना ही श्रेयस्कर है। उनको भी स्वतंत्र करना होगा। यहिया खाँ को जेल के शिकंजों में बन्द रखना गलत होगा। आज बंगला देश स्वतंत्र है। बंगबन्धु से बहुत-सी आशाएँ हैं। अमेरिका के स्वातंत्र्य संग्राम के बाद जब भीतरी युद्ध हुआ और उत्तरी अमेरिका जीत गया तो अब्राहम लिंकन ने विरोधियों को क्षमा करना अपना कर्तव्य समझा। दक्षिणी अमेरिका पराजित हुआ और उसे संयुक्त राज्य-अमेरिका के साथ रहना पड़ा, कारण मालूम ही है। दक्षिणी अमेरिका का हब्शियों को गुलाम बनाये रखने की अत्याचारी भावना के सामने और अब्राहम लिंकन का गुलामी समाप्त करने का हर निश्चय ऐसा था जिसमें दक्षिणी अमेरिका को पराजित होना ही था। उसी प्रकार बंगबन्धु का बंगालियों को गुलामी से मुक्त करने तथा पश्चिमी पाकिस्तान के अत्याचार को समाप्त करने का हर निश्चय ऐसा था जिसमें यहिया खाँ और इनकी सेना का पराजित होना तथा बंगला देश का स्वतंत्र होना अनिवार्य था। बंगला देश स्वतंत्र हुआ और आज वह एक प्रभुसत्ता सम्पन्न देश है। संसार ने तथा पाकिस्तान ने इसको समझ लिया है। लेकिन बंगला देश तथा भारत और पाकिस्तान को सुख और शान्ति तथा विश्व को नया मार्गदर्शन देने के लिए यह आवश्यक है कि हम अतीत को भूल जायँ और सुनहरे भविष्य में प्रवेश करने के लिए सद्भावनापूर्ण वातावरण में बैठकर समस्याओं को हल करें।

जय बांगला, जय भारत, जय पाकिस्तान, जय जगत्।

—शिवमूर्ति

जनता की ओर से धन्यवाद : सरकार की ओर से शराब के ठेकों की नीलामी

टिहरी, १५ जनवरी। उत्तराखण्ड में पूर्ण मद्यनिषेध की माँग को लेकर चलाये गये जन-आन्दोलन के फलस्वरूप उ० प्र० के राज्यपाल द्वारा शराबबन्दी के लिए अध्यादेश जारी करने और उसके पश्चात् विधानसभा द्वारा सर्वसम्मति से विधेयक पास हो जाने पर यहाँ की जनता व्यग्रता से शराब की दूकानों के बन्द होने की प्रतीक्षा कर रही थी, और इसके लिए स्थान-स्थान से बधाइयों के तार भेजे गये थे, परन्तु सरकार ने इन जिलों में अगले वर्ष (१९७२-७३) के लिए भी शराब के ठेकों की नीलामी के आदेश भेज दिये हैं। टिहरी जिले की ठेकों की नीलामी ८ और ९ फरवरी को नरेन्द्र नगर में करने का जिलाधिकारी को आदेश दिया गया है।

दूसरी ओर सत्याग्रहियों की ओर से जिलाधिकारियों के माध्यम शराब की दूकानों पर मुद्धकाल में स्थगित पिकेटिंग को पुनः प्रारम्भ करने की सूचना सरकार को भेजी गयी है और मद्य-निषेध के सम्बन्ध में शराब की मौजूदा दूकानों को बन्द कर अपनी नीति को स्पष्ट करने की माँग की गयी है। नये कानून के अनुसार राज्य सरकार को कभी भी किसी भी स्थान में शराब के व्यापारियों को बिना कोई मुआवजा दिये शराबबन्दी करने का व्यापक अधिकार मिल चुका है।

—सुन्दरलाल

एक साथी की समस्या : प्रतिकार की नीति-रीति

अपने एक साथी ने पूछा है कि प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के बन जाने और सक्रिय होने की कोशिश करने से कई तत्त्वों का विरोध प्रकट होने लगा है। जो अनीति और अन्याय करते थे वे अब नये नारों की आड़ लेकर और लोकहित की बातें कहकर विरोधी रुख अपनाने लगे हैं। मुख्य रूप से कठिनाई चार लोगों से दिखाई देती है। एक, सरकारी अधिकारी-कर्मचारी, दो, राजनैतिक नेता-कार्यकर्ता, तीन, पंचायतों के मुखिया-सरपंच, चार, मालिक-महाजन। मालिक-महाजन का स्थान चौथा है क्योंकि उनके पास कोई नारा नहीं है, अगर है तो जोर-जबरदस्ती है जो जानी-पहचानी हुई चीज है। वे सरकारी अधिकारी की तरह न कानून-व्यवस्था का नारा लगा सकते हैं, न नेता की तरह लोकतंत्र और न मुखिया की तरह ग्रामसुधारी का। प्रखण्ड स्वराज्य-सभा को इन तत्त्वों का मुकाबिला करना है, और हर अनीति का प्रतिकार करना है। समस्या यह है कि ऐसी परिस्थिति में प्रतिकार की क्या नीति अपनायी जाय ?

इतनी बात स्पष्ट है कि अनीति और अन्याय को बर्दाश्त कर लेने का नाम अहिंसा नहीं है। लेकिन यह बात भी उतनी ही स्पष्ट होनी चाहिए कि प्रतिकार का स्थान अहिंसा में औषधि का है, जबकि हिंसा में उसका वह नित्य का भोजन है। इसलिए दोनों की रीति-नीति में बुनियादी अन्तर है।

अहिंसा का सिपाही प्रेम के हथियार से लड़ता है। लोकतंत्र की भूमिका में उसका विश्वास सबसे अधिक विचार की शक्ति में होता है। इसलिए अन्त तक वह यही कोशिश करता है कि आमने-सामने हटने की नौबत न आये, और अनुनय मनाने, समझाने-बुझाने, से दूर हो जाय। वह सहकार का प्रयत्न करता है, मगर प्रतिकार से घबड़ाता नहीं।

तो, प्रतिकार की क्या नीति अपनायी जाय ? इस सम्बन्ध में कुछ बातों का ध्यान रखना अच्छा होगा। वे ये हैं

(१) प्रतिकार का निर्णय स्वयं प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा करे। आवश्यक तैयारी भी वही करे। कार्यकर्ता अपने हाथ में निर्णय कभी न ले।

(२) हर तत्त्व के साथ प्रतिकार की एक ही नीति नहीं अपनायी जा सकती। मालिक-महाजन कितने भी बुरे हों, वे पड़ोसी हैं, और आगे भी पड़ोसी रहेंगे। ग्रामस्वामित्व के अन्तर्गत उनका 'हक' लिया जाने की पूरी योजना है। ग्रामस्वामित्व के साथ ग्रामस्वराज्य-सभा की स्थापना सामन्तवाद का अंतिम उत्तर है। इसलिए तात्कालिक अनीति का प्रतिकार जहाँ तक सम्भव हो प्रेमाक्रमण द्वारा होना चाहिए। बुराई के साथ प्रत्यक्ष असहयोग उसके बाद का कदम है पड़ोसी के विरुद्ध सामाजिक बहिष्कार आदि का प्रयोग अनुचित भी है, अनावश्यक भी।

(३) सरकारी कर्मचारियों द्वारा जो अनीति होती है वह देशद्रोह के बराबर है। इसलिए उनकी गैर कानूनी कार्रवाइयों को पहले ऊपर के अधिकारियों के ध्यान में लाना चाहिए, और यदि वे न्याय न कर सकें तो गलत आदेशों की खुलकर अवज्ञा करनी चाहिए। अवज्ञा के लिए जो दंड भोगना पड़े उसके लिए तैयार रहना चाहिए।

(४) मुखियों-सरपंचों की अनीति का उत्तर जनता की विधायक सहकार-शक्ति है। अगर ग्रामस्वराज्य-सभा को अपने सदस्यों की निष्ठा प्राप्त है तो सभा को मुखिया-सरपंच की छोटी रेखा के ऊपर बड़ी रेखा खींचते जाना चाहिए। ग्रामस्वराज्य-सभा को यह आग्रह रखना चाहिए कि काम वह होगा जिसका निर्णय गाँव के लोग सभा में बैठकर सामूहिक रूप से करेंगे।

(५) राजनैतिक नेता-कार्यकर्ता का उत्तर विचार की शक्ति से ही दिया जा सकता है। अगर लोग दलमुक्त लोक-शक्ति का विचार समझ और मान लेंगे तो अपने-आप दलों की बात अनसुनी करते जायेंगे।

लेकिन यह बात जोरदार ढंग से जनता के सामने रखनी चाहिए कि ग्रामस्वराज्य-सभाओं में, या प्रखण्डस्वराज्य-सभा में, पदाधिकारी ऐसे लोग ही हों जो किसी दल में सक्रिय न हों। राजनीति का दलीय मंच और ग्रामस्वराज्य-सभा का निर्दलीय मंच इस तरह के दो मंचों पर कोई आदमी एक साथ सक्रिय नहीं हो सकता।

ये कुछ ऐसी मोटी बातें हैं जिनका ख्याल रखने से निर्णय करने में सुविधा होगी। लेकिन अन्याय से असहमति, उसकी अस्वीकृति, उससे असहयोग, और उसकी अवज्ञा, हर नागरिक का जन्मसिद्ध अधिकार है। समय, परिस्थिति और पात्र देखकर पद्धति में भेद हो सकता है।

बंगला देश का इन्द्रधनुष

इस बीसवीं शताब्दी में भी पूरे डेढ़ हजार साल लगे भारतीय भूभाग के हिन्दुओं और मुसलमानों को यह देखने और समझने में कि यह जरूरी नहीं है कि हिन्दू मुसलमान का या मुसलमान हिन्दू का दुश्मन हो। हिन्दू भी हिन्दू का दुश्मन हो सकता है, और मुसलमान भी मुसलमान का। जमाने के साथ-साथ दुश्मन भी बदलते हैं, और दुश्मन के साथ-साथ दुश्मनी के तौर-तरीके भी।

अंग्रेजों ने अपने राज में मुसलमानों के दिल में यह बात कूट-कूटकर भर दी कि उनके सबसे बड़े दुश्मन हिन्दू हैं, और हिन्दुओं को सिखा दिया कि उनके सबसे बड़े दुश्मन मुसलमान हैं। दोनों का दुश्मन 'शैतानी अंग्रेजी राज' है, यह बात सिखाने

में कांग्रेस और गांधीजी को कितने बरस लग गये, फिर भी यह घोल कितने लोगों के गले के नीचे कितनी उतरी ?

यह सही है कि अंग्रेजी राज में पहले भी भारत के जाति-प्रधान समाज में हिन्दू और मुसलमान कभी चीनी और पानी की तरह पूरे-पूरे घुले-मिले नहीं, वे हमेशा तेल और पानी की तरह रहे। वे एक-दूसरे के पास आये, कई बातों में बहुत पास आये, लेकिन 'एक' नहीं हो सके। कभी एक ने दूसरे का सफाया कर डालने की बात तो सोची ही नहीं। दोनों का सह-अस्तित्व बराबर बना रहा। लड़ाइयाँ अनेक हुईं लेकिन कभी ऐसा नहीं हुआ कि किसी लड़ाई में एक ओर सिर्फ हिन्दू रहे हों, और दूसरी ओर सिर्फ मुसलमान। यह आविष्कार अंग्रेज शासकों के दिमाग का था जिसने धर्म को राजनीति का मोर्चा बना दिया, जिसने हिन्दू को हिन्दू और मुसलमान को मुसलमान बनाकर, दोनों में किसी को भी भारतीय नहीं रहने दिया। भारतीयता की लड़ाई गांधीजी को अंग्रेजों से भी लड़नी पड़ी, और हिन्दुओं-मुसलमानों से भी। वह परदेसियों से जीते लेकिन घरवालों से नहीं जीत सके, और लड़ते-लड़ते समाप्त हो गये।

हिन्दू और मुसलमान, दोनों को बंगाली बनाने का विलक्षण काम बंगला देश के 'मुजीब भाई' ने कर दिखाया। ऐसा नहीं है कि अब बंगला देश में आपस की दुश्मनियाँ नहीं होंगी, या हिंसाएँ और हत्याएँ नहीं होंगी, लेकिन जरूर अब हर हिन्दू को हर मुसलमान और हर मुसलमान को हर हिन्दू हमेशा दुश्मन नहीं दिखाई देगा। साम्प्रदायिक धर्म पुराना पड़ गया, साम्प्रदायिक राजनीति के पाठ और गुरु दोनों समाप्त हो गये।

बंगला देश के मुक्ति-संग्राम ने एक साथ कितनी ही चीजों पर चोट की है : मुसलमान के काफिर और हिन्दू के म्लेच्छ पर, संस्कृति के मुकाबिले धर्म की प्रभुता पर, क्षेत्रीय स्वायत्तता के मुकाबिले नव-उपनिवेशवाद पर, तथा नागरिक के मुकाबिले सैनिक की सत्ता पर। पुराने ढाँचे की दीवाल ढह गयी !

भारत के हिन्दू और मुसलमान बंगला देश के आकाश में उगे हुए इन्द्रधनुष को किन आँखों से देख रहे हैं ? क्या उसी अंग्रेजी राज की दी हुई आँखों से ? या, अब नये जमाने की नयी आँखों से ?

भारत के मुसलमानों को अब समझना चाहिए कि पाकिस्तान तो टूटा लेकिन इस्लाम बच गया। हिन्दुओं को समझना चाहिए कि राष्ट्रवाद गया लेकिन राष्ट्रीयता बच गयी। बंगला देश की विजय भारतीय राष्ट्रवाद (जो हिन्दू सम्प्रदायवाद का दूसरा रूप बनता जा रहा था) की नहीं, भारतीय राष्ट्रीयता की विजय है। राष्ट्रीयता पड़ोसी को गले लगाती है, राष्ट्रवाद गला घोंटता है। अपने लम्बे इतिहास में भारत राष्ट्रवादी कभी रहा ही नहीं, इसलिए उसकी राष्ट्रीयता में, जिसका उत्तराधिकारी आज का बंगला देश उतना ही है जितना आज का भारत, संस्कृति की प्रधानता है। संस्कृति के दरवाजे सबके लिए खुले रहते हैं।

अगर भारत में रहकर हम बंगला देश के इन्द्रधनुष को नयी आँखों से देखते हों तो अब मुसलमान को साम्प्रदायवादी, और हिन्दू को जातिवादी नहीं रहना चाहिए। जैसे बंगला देश में हिन्दू और मुसलमान, अपने हिन्दू-धर्म और इस्लाम को कायम रखते हुए भी, बंगाली बन गये, उसी तरह भारत में हिन्दू-मुसलमान दोनों भारतीय बन सकते हैं, बन जाना चाहिए। सह-अस्तित्व समय की माँग है, समन्वित अस्तित्व भविष्य की आशा है। बंगला देश ने धर्म के नाम में जान लेने और जान देने, दोनों को निरर्थक बना दिया है। हम पिछले ७१ वर्षों में काफी जानें ले और दे चुके, अब उसकी निरर्थकता समझें। ●

दुनिया एक विश्व की ओर जा रही है सर्वनाश की ओर नहीं

—विनोबा

(दिनांक २१-१२-'७१ को परन्धाम आश्रम, पवनार (वर्धा) में श्री विनोबा द्वारा बिहार के कार्यकर्ताओं को दिये गये प्रश्न के उत्तर)

प्रश्न —कुछ लोगों का कहना है कि भारत की रूस के साथ जो संधि हुई है, उससे भारत रूस के पंजे में फँस जायेगा और इन्दिराजी भारत को कम्यूनिज्म की ओर ले जा रही हैं। आपकी क्या राय है ?

उत्तर —यह डर मुझे नहीं है। भारत की रूस के साथ हुई संधि के कारण भारत रूस के पंजे में आयेगा, या इन्दिराजी उसको कम्यूनिज्म की तरफ ले जायेंगी ऐसा मैं समझता नहीं। वह भारत की संस्कृति का आदर करती हैं। "गुम-द्रुम इमे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ", ऐसा गीता का आधार लेकर वह बोली है। वह भारतीय संस्कृति से काफी शिक्षित है। वह रवीन्द्रनाथ के शान्ति-निकेतन में और पूना में पढ़ी हैं। इन दो जगहों में उनका आध्यात्मिक विचारों से सम्पर्क हुआ है। इसलिए मैं नहीं मानता कि वह कम्युनिज्म लाना चाहेगी। यह ठीक है कि कम्यूनिस्ट उनका 'एडवान्टेज' (गैरफायदा) करने की कोशिश करेंगे। यह तो हर एक पार्टी का रवैया है। हर पार्टी जितना हो सकता है लाभ उठाने की कोशिश करती है।

विज्ञान बढ़ रहा है। वैज्ञानिक वेपन्स (शोषण शस्त्र) तक पहुँच गया है। वह मनुष्य के दिमाग पर कन्ट्रोल (काबू) रखेगा। मुझे उसमें बड़ी आशा है। छोटे-छोटे शस्त्र जो होते हैं, वे अहिंसा के खिलाफ हैं। लेकिन वेपन्स अहिंसा के अनुकूल है, नजदीक है। वे आपके सामने चैलेंज (चुनौती) रखते हैं—टोटल डिस्ट्रक्शन (सर्वनाश) या अहिंसा। इसलिए मुझे भय नहीं कि चीन, रूस, अमेरिका जैसे बड़े राष्ट्र आणविक युद्ध में कूद पड़ेंगे। छोटी-छोटी लड़ाइयाँ चलती रहेंगी उसमें बैलेंसिंग (सन्तुलन) की कोशिश करते रहेंगे। अभी इंग्लैंडवालों ने कहा है कि बंगला देश की सरकार का बंगला देश पर पूरा काबू होगा, तब हम उसको मान्यता देंगे। मान्यता नहीं देंगे, ऐसा नहीं कहा। अमेरिका ने अभी 'आफर' किया (तैयारी दिखायी) है कि हम बंगला देश को 'ह्युमनिटेरियन' (मानवता की) मदद दे सकते हैं। तो शुरू होगा धीरे-धीरे। दुनिया 'वननेस' (एक विश्व) की ओर जा रही है, सर्वनाश की ओर नहीं। इसलिए रूस से जो संधि हुई, उससे मुझे भय नहीं। जब वह हुई उसी वक्त मैंने जाहिर किया था कि बहुत अच्छा काम हुआ। राजाजी ने भी उसको अच्छा माना। हम उस संधि के कारण उनकी जेब में चले जाते हैं, तो बेवकूफ साबित होंगे। और, इतना बेवकूफ इन्दिराजी नहीं हैं। उन्होंने तो बहुत कुशलतापूर्वक काम किया है, वह है एकदम एकतर्फा 'सीज फायर' (युद्ध-विराम)। एकदम दुनिया खुश हो गयी। लोगों को लगता था कि अब वह एकदम कश्मीर वगैरह की तरफ हमला करेगा। लेकिन हमने जो उद्देश्य जाहिर किया था वह था, बंगला देश को मुक्त करना और विस्थापितों की समस्या का हल करना, और कुछ नहीं था। इसलिए वह पूरा होते ही, तुरन्त 'सीज फायर' कर दिया। बंगला देश को स्वतन्त्र कर दिया, यह जितनी बड़ी कमाई है, उससे भी बड़ी कमाई है 'सीज फायर'।

बंगला देश स्वतन्त्र हुआ, फिर भी परतंत्र है। क्योंकि जनता सरकार पर ही आधारित है। जनता की शक्ति बने, इस वास्ते हम यहाँ जो काम कर रहे हैं, वह अत्यन्त जरूरी है। परन्तु अगर हम ही वह पूरा नहीं कर सके, तो हम उस देश की क्या मदद कर सकेंगे ?

प्रश्न हम गाँवों में काम करते हैं, अखबार, रेडियो आदि से सम्पर्क नहीं रखते। उसकी खास जरूरत महसूस नहीं होती। क्या यह ठीक है ?

उत्तर अखबार, रेडियो आदि से सम्पर्क न रखते हुए अपने काम में तन्मय हो जाना, अच्छा ही है। फिर भी जो परिस्थिति है, उससे बिलकुल ही सम्पर्क न रहा तो लोगों से बातचीत करने में, ग्रामदान-विचार समझाने में मदद नहीं होगी। परिस्थिति के साथ, हम अपना विचार समझाते हैं, तो उसका प्रभाव भी लोकमानस पर अच्छा पड़ता है। अगर लोकमानस की जानकारी नहीं रही, तो उतने असरकारक नहीं होंगे। बंगला देश स्वतन्त्र हुआ, फिर भी परतन्त्र है, क्योंकि जनता सरकार पर ही आधारित है। जनता की शक्ति बने इस वास्ते हम नहीं कर सके, तो हम उस देश की क्या मदद कर सकेंगे ? इस तरह से बंगला देश के प्रश्न के साथ विचार पेश करेंगे, तो लोगों को समझाने में मदद होती है। इसलिए परिस्थिति और लोकमानस से सम्पर्क रखना जरूरी है।

कार्यकर्ताओं के लिए सूचना

रचनात्मक कार्यकर्ता परिचय-पुस्तिका मार्च '७२ तक प्रकाशित हो जायगी। अब तक १३०० कार्यकर्ताओं का परिचय एकत्रित हुआ है। जिन कार्यकर्ताओं ने अभी तक परिचय न भेजा हो वे कृपया शीघ्र भेजवा दें।

कार्यकर्ता से अपेक्षित जानकारी—

नाम, पता, जन्म तिथि, मातृभाषा, ज्ञान और कार्य के अनुभव।

जिन्होंने अब तक फोटो नहीं भेजा है, वे अपना अद्यतन फोटो यथाशीघ्र भेजवा दें।

व्यवस्थापक

समन्वय विभाग, गांधी स्मारक निधि

राजघाट, नयी दिल्ली—१

दक्षिण पूर्व एशियाई देशों का दृष्टिकोण

भारत-पाक-युद्ध के सम्बन्ध में दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के दृष्टिकोण के अध्ययन से यह पता चलता है कि भारत की उस क्षेत्र में क्या प्रतिष्ठा है। बहुत सारे देशों में दोनों देशों के लिए सहानुभूति व्यक्त हुई। जब पाकिस्तान द्वारा भारत के हवाई अड्डों पर बमबारी की जा रही थी तो बहुत सारी राजधानियों में इस बात की चिंता व्यक्त की जा रही थी कि कहीं अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध न हो जाय। आरम्भ में यह बात समझी जा रही थी कि एक भारी-भरकम दानव का युद्ध एक दृढ़ निश्चयवाले शत्रु से हो रहा था, सरकारें कोई स्पष्ट आलोचना करने से घबरा रही थीं। यह भी माना जाता था कि भारत की सेना कोई खास प्रभाव नहीं डाल सकेगी, परन्तु यह विचार जल्दी ही बदलने लगा। इस्लामाबाद के प्रचार से भारतीय सेना की विजय पर परदा न पड़ सका। उसी समय कुछ सरकारों ने उपमहाद्वीप में शान्ति-स्थापना की बात शुरू की। कम-से-कम दो राज्यों के अध्यक्षों ने श्रीमती गांधी और यहिया खाँ से युद्ध-विराम के लिए अपील की। परन्तु युद्ध-विराम की अपील के साथ ही भारत और पाकिस्तान, दोनों देशों से मित्रता की बात की गयी थी। यह वास्तविकता बिलकुल भुला दी गयी कि युद्ध का उत्तर-दायित्व पाकिस्तान पर था। कुछ देशों में दोनों को बराबर रखने की कोशिश की गयी थी। बंगला देश की जनता पर पाकिस्तानी सेना ने जो अत्याचार किये थे उनको कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया गया था। मलेशिया के लोगों में भारत के प्रति सहानुभूति थी परन्तु नयी दिल्ली की सरकार उससे लाभ न उठा सकी। मलेशिया में भारतीय कूटनीति की असमर्थता इस बात से व्यक्त होती है कि बंगला देश की परिस्थिति के सम्बन्ध में श्रीमती गांधी ने मलेशिया के प्रधानमंत्री तुन अब्दुल रज्जाक को जो पत्र लिखा था उसका उत्तर दो महीना बीत जाने के बाद अब तक नहीं आया है।

मलेशिया का दृष्टिकोण

मलेशिया की सरकार अपने सभी पड़ोसियों से अधिक यह बात कहती रही कि युद्ध बन्द किया जाय। यह बात दोनों देशों से कही गयी। मानवीय मूल्यों के आधार पर तुन अब्दुल रज्जाक ने दो औपचारिक अपीलें कीं। इस बात पर जोर दिया गया था कि मलेशिया तटस्थ है परन्तु वह चाहता है कि जल्दी शान्ति स्थापित हो। परन्तु यह बात स्पष्ट है कि मलेशिया की सरकार पाकिस्तान को रुष्ट करना नहीं चाहती थी और दिल्ली के रुष्ट होने का उसे कोई ध्यान न था। क्वालालमपुर में जो नया वातावरण बना है, जिसमें इस्लाम पर जोर दिया जाता है, इस नाते पाकिस्तान के लिए मलेशिया सरकार की सहानुभूति समझी जा सकती है। परन्तु भारतीय दृष्टिकोण से यह बात दुख की है। दूसरा देश जिसने कि एक संकुचित विचार कायम किया था इण्डोनेशिया था। यहाँ भी धार्मिक विचारों ने राजनैतिक कारणों को पीछे ढकेल दिया। संसार का सबसे बड़ा मुस्लिम देश होने के नाते इण्डोनेशिया की सहानुभूति इस्लामाबाद के साथ थी। यद्यपि राष्ट्रपति सुहर्तो ने यह स्पष्ट कर दिया था कि उनकी सरकार युद्ध के लिए किसी को दोषी नहीं ठहरायेगी और तटस्थ रहेगी। युद्ध के बीच इण्डोनेशिया ने बीच-बचाव करने के लिए कहा था परन्तु इसका कोई परि-णाम नहीं आया। फिर भी वहाँ सरकार की यह इच्छा थी कि दोनों लड़नेवाले देशों से सम्बन्ध बना रहे। पाकिस्तानी राजदूत को जकार्ता में जितनी सहानुभूति प्राप्त हुई उतनी भारतीय राजदूत को नहीं। इसका कारण यह नहीं था कि भारत का राजदूत अपने देश की परि-स्थिति को प्रभावशाली रूप में व्यक्त करने में असमर्थ रहा था। बल्कि इसका कारण जकार्ता और नयी दिल्ली के बीच पिछले कुछ वर्षों के बीच मतभेद था। भारत ने कम्बोडिया के सम्बन्ध में होनेवाले जकार्ता सम्मेलन में शरीक होने से इनकार कर दिया था। सम्मेलन बुलानेवाला देश होने के नाते इण्डोनेशिया यह बात भूला नहीं था। सम्मेलन की असफलता का कारण भारत का उस सम्मेलन में शरीक न होना कहा जाता है। भारत-पाक-युद्ध में इण्डोनेशिया का दृष्टिकोण और व्यवहार को सुकर्णो के बाद के युग में दक्षिण पूर्व एशिया में अन्तर्राष्ट्रीय बीच-बचाव करनेवाले देश होने की कोशिश को नयी दिल्ली ने समर्थन नहीं किया था। दक्षिण पूर्व एशिया में एक बड़े और दमदार देश होने के नाते इण्डो-नेशिया इस मैदान में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका रखना चाहता है। वह मानता है कि वह नयी दिल्ली के प्रभाव-क्षेत्र से बाहर दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्रों में जकार्ता की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। और, वह यह भी अपेक्षा रखता है कि नयी दिल्ली उसकी इस भूमिका को स्वीकार करे।

थाइलैण्ड की प्रतिक्रिया

यद्यपि पाकिस्तान सीटो सन्धि का एक सदस्य है फिर भी वहाँ की सरकार तटस्थ रही। युद्ध छिड़ने के बाद 'बैंकाक पोस्ट' में केवल पाकिस्तान का दृष्टिकोण प्रकाशित हुआ और पाकिस्तानी राष्ट्रपति यहिया खाँ के प्रतिनिधि के नाते विशेष दूत बैंकाक गये। नेशनल एक्जीक्यूटिव कौंसिल ने सभी पत्रिकाओं को यह निर्देश दिया कि वे युद्ध की केवल सूचनाएँ छापा करें, कोई सम्पादकीय आलोचना नहीं।

थाइलैण्ड की तटस्थता का कारण यह नहीं था कि उसने परिस्थिति को समझ लिया था। बैंकाक में यह समझा जाता था कि भारत पश्चिमी पाकिस्तान पर कब्जा कर लेगा। युद्ध की तेजी बढ़ रही थी और भारत के उद्देश्यों को बैंकाक पूरे तौर से नहीं समझ पा रहा था। परन्तु थाइलैण्ड के लोग एक धार्मिक

आत्मनिर्भरता किसकी ? कैसे ?

—एस० एस० अय्यर

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने राजनैतिक और सैनिक एक महान विजय के साथ यह कहना शुरू किया है कि इस विजय के बाद हमें आराम से बैठना नहीं है, बल्कि हमारे ऊपर जो उत्तरदायित्व आया है उसके निर्वाह के लिए कटिबद्ध होना है, और कठिन-से-कठिन परिस्थिति के मुकाबिले के लिए तैयार रहना है। राजनैतिक और सैनिक विजय को कायम रखने के लिए अनिवार्य है कि भारत आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बने और देश की गरीबी दूर हो। संकट की घड़ी में जिस प्रकार देश एकजुट होकर खड़ा हो गया उसी तरह श्रीमती इन्दिरा गांधी मानती हैं कि गरीबी हमारे लिए एक संकट है और इस संकट से उबरने के लिए पूरे देश को एकजुट होकर खड़ा हो जाना चाहिए और इसी कारण वर्तमान मानस का उपयोग करने के लिए उन्होंने युद्ध की भाषा में ही देश की जनता से अपील की कि यह समय आराम का नहीं है बल्कि हमें गरीबी से युद्ध करने का है। उन्होंने आत्मनिर्भरता पर बल देते हुए कहा कि उत्पादन बढ़ाने की ओर पूरा ध्यान देना होगा और उसी से गरीबी दूर होगी।

श्रीमती इन्दिरा गांधी की इस अपील के सन्दर्भ में गांधी विद्या संस्थान के प्रोफेसर श्री एस० एस० अय्यर से एक साक्षात्कार में कुछ प्रश्न पूछे गये जिन्हें हम 'भूदान-यज्ञ' के पाठकों के लिए गणतंत्र दिवस के अवसर पर विशेष रूप से यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

प्रश्न :—प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की यह घोषणा कि भारत ने एक युद्ध में विजय हासिल की है अब इसे दूसरा युद्ध ओढ़ना है यानी गरीबी से युद्ध करना है, यह केवल एक नारा है अथवा सचमुच गरीबी दूर करने का प्रयास आरम्भ हुआ है ?

उत्तर :—आत्मनिर्भरता और गरीबी दूर करने के लिए जिस प्रकार के संयोजन की और जैसी तैयारी की जरूरत होती है वैसा संयोजन अथवा तैयारी दिखाई नहीं पड़ती है। इसलिए प्रधानमंत्री की यह सद्भावनापूर्ण, नेकनीयत घोषणा के प्रति मन में शंका पैदा होती है और ऐसा मालूम पड़ता है कि उनकी यह घोषणा मात्र नारा होकर रह जायेगी। मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ इसके कुछ कारण हैं। देश और दुनिया की आज जो परिस्थिति है उसका अच्छी प्रकार से अध्ययन हुआ हो ऐसा नहीं दीखता। एक तरफ आत्मनिर्भरता की बात कही जा रही है और दूसरी तरह इण्टरनेशनल डेवलपमेण्ट एसोसिएशन से ७।। करोड़ डालर का कर्ज लिया जा रहा, है और वह भी किस कार्य के लिए ? रेलवे के साधन और लघु सिंचाई के लिए। इस देश में रेलवे का जितना विकास हुआ है उसको देखते हुए विदेशी सहायता की आवश्यकता नहीं है। उसी प्रकार लघु सिंचाई के लिए तो एक पैसे की भी आवश्यकता नहीं है।

दूसरा उदाहरण देखा जाय। अपने देश के विभिन्न हिस्सों में जैसे तंजावूर, बिजनौर, और पूर्णिया में भूमि के सवाल पर हिंसक घटनाएं हुईं, हत्याएं की गयी ये सब अगतक्षारी आन्दोलन के प्रतीक हैं। दुनिया में जो जमींदार देश हैं उनके खिलाफ जिस प्रकार लड़ाई चल रही है उसी प्रकार अपने देश के अन्दर भी जो जमींदार हैं उनके खिलाफ लड़ाई हो रही है। जबतक यह अन्दरूनी लड़ाई समाप्त नहीं होगी तब तक आत्मनिर्भरता की कोई भूमिका नहीं बनेगी।

मैं आपके सामने एक-एक उदाहरण रखकर स्पष्ट करना चाहता हूँ कि आत्मनिर्भरता केवल नारा कैसे है। अब आप तीसरा उदाहरण देखिए। अमेरिका में १०० परिवारों के पास अमेरिका की कम्पनियों में केवल .०५ प्रतिशत है परन्तु इन १०० परिवारों का वहाँ की सम्पत्ति के ५८ प्रतिशत पर कब्जा है। उसी प्रकार इस देश में भी ७५ परिवार ऐसे हैं जिनका यहाँ के व्यवसाय पर कब्जा है। अब भारत के इन ७५ परिवारों का किसी-न-किसी रूप में अमेरिका के इन १०० परिवारों से साठ-गाँठ है, इनका मिला-जुला हित है।

चौथा उदाहरण लीजिए। यह कहा जाता है कि अपने देश में साधन का अभाव है। अगर ऐसी बात है तो क्यों हम अपने साधनों का अफ्रीका, यूरोप और एशिया के देशों में उपयोग करने की अनुमति देते हैं ? भारत सरकार की ओर से निजी मालों को इन देशों में ४७ कम्पनियों को खोलने की अनुमति दी गयी है।

पाँचवाँ उदाहरण १९६१ से १९६५ तक १४६ करोड़ रु० लाभ के रूप में और १५ करोड़ रु० सूद के रूप में भारत से विदेशी कम्पनियाँ अपने देश ले गयीं।

अब ये कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो हमें आत्मनिर्भरता जैसे प्रश्न पर सोचते समय सामने खड़े हो जाते हैं। अतः हमारा मानना है कि पहला कदम यह होना चाहिए कि आर्थिक नीति स्वदेशी हो, अपने देश की वस्तुस्थिति पर आधारित हो और यहाँ की विचार-धारा के अनुकूल हो। अभी तक इसका हमें कोई सबूत नहीं मिला है कि ऐसा कुछ सोचा जा रहा है। बेरोजगारी-जैसे अहम सवाल को इस देश ने उपेक्षा की दृष्टि से देखा है और अभी इसको मुख्य समस्या माना जा रहा हो और यह माना जा रहा हो कि इस समस्या के समाधान से ही देश की प्रगति हो सकती है, ऐसा कोई लक्षण नहीं दीखता। इस प्रकार की बात सरकार की तरफ से अभी तक नहीं कही गयी है।

भारत सरकार के १९६७ के आँकड़े के मुताबिक हमारे देश में ५ करोड़ एकड़ भूमि खेती के लायक परती पड़ी हुई है। इस भूमि को उपजाऊ बनाकर भूमिहीनों

सर्वोदय क्रान्ति में निष्ठा रखनेवाले वृद्धजन लोकगंगा की उपासना में लगें

—लोकगंगा के तट से श्री धीरेन्द्र मजूमदार का एक पत्र श्री कृष्णराज मेहता के नाम—

पूज्य धीरेन्दा,

आपकी लोक-गंगा-यात्रा चलते करीब एक माह हो रहा है। इससे कई मित्रों का ध्यान आकर्षित हुआ है, कुछ वृद्धों को भी प्रेरणा हो रही है, परन्तु वे जानना चाहते हैं कि यात्रा में आपका आहार-विहार तथा आरोग्य कैसा रहा। "लोक-गंगा-यात्रा में लोक-दर्शन, लोक-श्रवण, लोक-हृदय के क्या अनुभव आये ?"

सहरसा, १-१-'७२ —कृष्णराज

× × ×

प्रिय कृष्णराज,

तुम्हारा एक जनवरी का पत्र मिला। एक माह की यात्रा सकुशल पूरी हुई और ईश्वर की कृपा से स्वस्थ रहा हूँ। वैसे पहले पड़ाव पर (सुखासन में) शाम को देर तक चारों तरफ से खुले शामियाने में रहने से सर्दी-खाँसी काफी हो गयी थी, लेकिन यह शिकायत कोई नयी नहीं है। यह तो तुम सभी जानते हो कि थोड़ी ठंढ हवा से मेरी सर्दी, खाँसी उभर आती है। एक सप्ताह तक खाँसी रही, फिर चली गयी। खाँसी की दवा मैं हमेशा साथ रखता हूँ। फिर एक बार साइकिल के कैरियर पर तीन मील तक जाना पड़ा था, जिससे कमर का दर्द बढ़ गया था। लोगों ने सवा मील कहा था, सवा मील होता तो नहीं बढ़ता। इससे यह अनुभव आया कि इस प्रक्रिया से अब चल नहीं सकता हूँ। पहले काफी चला जाता था। अब बैलगाड़ी पर पुआल तथा सभी साथियों के बिस्तरों का तह लगाकर लेटने की सुविधा कर लेता हूँ। उससे जर्किंग नहीं होती है। कुल मिलाकर मेरा स्वास्थ्य सहरसा से अच्छा ही है।

मैं मानता हूँ, हम सब जिस काम में लगे हैं, वह भगवत्-योजना है। वह जिससे जो काम लेता है, उसके अनुसार उसे ठीक भी रखता है। इसलिए तुम लोगों को विशेष चिन्ता करने की जरूरत नहीं। वैसे हर पड़ाव पर भिन्न-भिन्न अनुभव आते हैं। कहीं रहने और खाने-पीने की सुविधा रहती है, कहीं असुविधा। ऐसा हमेशा ही रहेगा। आखिर गंगा-तट पर पिच रोड बना नहीं रहता है। कहीं ऊँचा, कहीं नीचा, और कहीं कदा की गन्दगी रहती है। गंगा की उपासना के लिए जो कोई भी उसके तट पर चलना चाहेगा उसे इस प्रकार की स्थितियों को पार करना होगा। लोक-गंगा भी उससे भिन्न नहीं है, बल्कि, शायद, उससे ज्यादा उबड़-खाबड़ है। इस उपासना की यही विशेषता है कि जहाँ वह गंगा स्थिर रहती है, वहाँ यह गंगा हिलती-डोलती भी है। इसलिए अनुभव की विचित्रता अधिक है।

मैंने कोई भावावेश में अचानक यह निर्णय नहीं लिया है, बल्कि विचार-पूर्वक, अधिक दिन के चिंतन के फलस्वरूप इस निर्णय पर पहुँचा हूँ। यद्यपि मैं इस देश की पुरानी चीजों को बहुत मानता नहीं हूँ, फिर भी प्राचीन काल की आश्रम-व्यवस्था अत्यन्त वैज्ञानिक है, ऐसा मानता हूँ। ता गृहस्थ आश्रम के बाद वानप्रस्थ और वानप्रस्थ के बाद सन्यास की भूमिका में परिव्राजक के रूप में लोक-गंगा में विचरण, व्यक्ति और समाज, दोनों के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभकारी है। इसके बिना समाज बिलकुल जड़ हो जायगा, उसकी कोई प्रगति नहीं होगी। मेरे लिए भिन्न-भिन्न संस्था ही गृहस्थी रही है। साठ साल की उम्र होने पर विचारपूर्वक मैंने संस्थाओं से मुक्त होकर एक विशिष्ट प्रकार के स्वावलम्बी लोकसेवक के मार्ग खोजने में लगा था, जिसे मैं वानप्रस्थ जीवन कहता रहा हूँ। कुछ साल बाद, सत्तर साल पूरा होते ही, मैंने लोक-गंगा-यात्रा की बात सोच ली थी और जून'७० के अन्तिम सप्ताह में, जब राजा बाबू (पं० राजेन्द्र मिश्र) के घर पर गया था तो उन्हें अपने इस निर्णय की सूचना दी थी। जुलाई में हठात् दुर्घटना हो गयी, और फिर मैं बीमार पड़कर इलाज के लिए अहमदाबाद चला गया। दिसम्बर में अहमदाबाद से लौटते ही अपने सेनापति विनोबा से सहरसा का संकेत मिला, और साथ ही निर्मला तथा विद्यासागर की ओर से सहरसा में बैठकर मार्गदर्शन करने का आग्रह देखा तो मैंने एक साल के लिए यात्रा स्थगित कर दी। सालभर में तुमलोगों को जितना मुझसे मिलना था, मिल चुका था, ऐसा अनुभव करने लगा और १० सितम्बर '७१ को यानी ७१ साल आयु पूरी होते ही मैंने अंतिम रूप से यह निर्णय लेकर तुम लोगों को सूचना दे दी थी।

मैं मानता हूँ कि सार्वजनिक सेवकों को आश्रम-व्यवस्था के इस आवश्यक पहलू की प्रतिष्ठा कड़ाई से स्वीकार करनी चाहिए। खास तौर से हमारी क्रान्ति के सन्दर्भ में, वह और आवश्यक है। क्रान्ति का लक्ष्य विचार, मूल्य तथा पद्धति-परिवर्तन होता है। हम जिन मूल्यों तथा पद्धतियों को बदलना चाहते हैं, उन्हें प्रागैतिहासिक काल से मनुष्य प्रतिष्ठापूर्वक मानता आया है, और आज भी मानता है। आज के मनुष्य में असंतोष है, बदल की चाह है, छटपटाहट है, लेकिन यह चाह मूल्य और पद्धति बदलने की नहीं, बल्कि शासक बदलने की है। अतएव क्रान्ति के इस आन्दोलन में जहाँ पर आवश्यक है कि हम क्रान्ति के कार्यक्रम चलाने के साथ-साथ विचारों का अधिष्ठान जन-मानस में करते रहें, खास तौर पर तब, जब हम मानते हैं कि यह क्रान्ति जमात या नेता द्वारा नहीं, जनता द्वारा होनी है तब, देश की बेहोश जनता जगे, इसके लिए विचार का प्रकाशन तथा लोक-शक्ति की आराधना के लिए लोक-गंगा की उपासना आवश्यक

जो कठिनाइयाँ हैं, वे वैसी ही हैं जैसी कुआँ खोदने में तीन-चार फुट के बाद कुछ पानी दिखाई देता है। वह पानी ऊपरी सतह का होता है जो छोड़ देने पर तुरन्त सूख जाता है। इसे खोदते रहना है, और यह खुदाई यहाँ की जनशक्ति से करनी है। मैंने, जल्दी पुष्टि हो, इसलिए कहा कि वैसा हो जाने से क्रान्ति की सम्भावना प्रकट होगी तथा जनमानस के अविश्वास में कमी आयेगी, जिसमें क्रान्ति की उद्बोधन-प्रक्रिया सरल होगी।

तुमने मेरा आहार-विहार तथा दिनचर्या का विवरण पूछा है। मुझको एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव पर पहुँचने में बारह से एक बज जाता है। उसके बाद थोड़ा आराम करके गाँव से जो दो-चार मित्र आते हैं उनसे विचार-चर्चा होती है। फिर दूसरे दिन सुबह नाश्ता करके लोक-भजन की प्रदक्षिणा और लोक-दर्शन करने निकलता हूँ। गाँव के किसी युवक से कहता हूँ, 'तुम मेरा पण्डा बनकर लोक-दर्शन कराओ।' दरवाजे-दरवाजे जाता हूँ। उनके यहाँ अपनी कुर्सी पर बैठता हूँ और कहता हूँ, 'मैं सबका दर्शन करने आया हूँ'। वहाँ आस-पास के घरों के लोग भी जुट जाते हैं। वे जब हकबकाकर पूछते हैं, 'हमारा दर्शन कैसा?' तो मैं उन्हें समझाता हूँ, 'दर्शन तो आपका ही करना है। राजतन्त्र में राजा का दर्शन किया जाता है, तो लोकतन्त्र में लोक का ही दर्शन किया जायगा न?' इसी सन्दर्भ में अपना विचार समझाता हूँ। उन्हें समझाता हूँ, कि 'जब तक आप अपने नौकरों को अपने से बड़ा मानेंगे, उन्हें सलाम करते रहेंगे और अपने को हीन मानेंगे तब तक आपका शोषण और दमन दिन-ब-दिन बढ़ता ही रहेगा। इसीलिए मैंने लोक-दर्शन और लोक-उपासना का सिलसिला शुरू किया है।' मैं देखता हूँ, मेरे इस विचार से उनका चेहरा खिल जाता है। एक किसान ने तो यहाँ तक कहा, 'इतने दिन के बाद कम से-कम देश के एक नेता हमसे कुछ आशा किये बिना ही हमारा दर्शन करने आया है।' मैंने उससे कहा, 'अब सिलसिला शुरू हो रहा है, आगे शक्ति होगी तो कुल नेता इसी तरह आयेंगे।' मैं मानता हूँ कि हमें इस दृष्टि से लोक-शक्ति की आराधना करनी होगी। फिर अपराह्न में आमसभा होती है, जहाँ विस्तार से ग्रामस्वराज्य के विचार समझाता हूँ। मैं उन्हें स्पष्ट रूप से कहता हूँ कि विनोबा का यह आह्वान त्याग का नहीं बल्कि स्वार्थ का है।

जहाँ तक मेरे खान-पान व दूसरी दिनचर्या का प्रश्न है, वह उसी तरह से नियमित चलता है, जैसे सहरसा में चलता था। बैलगाड़ी की प्राप्ति में अनियमितता के कारण दोपहर के भोजन में अत्यधिक विलम्ब होता था, कभी-कभी दो-ढाई बज जाते थे। पिछले पड़ाव से खाना बनाकर साथ रख लेता हूँ और समय हो जाने पर बैलगाड़ी में ही खा लेता हूँ। इस तरह उस समस्या का हल पा लिया है। मैं मानता हूँ कि धीरे-धीरे परिस्थिति के अनुसार 'एडजस्ट' करने पर जीवनक्रम सामान्य रुटीन के अन्दर ढाला जा सकेगा। राजबाबू, किशनजी तथा दूसरे साथियों को प्रणाम और सबको आशीर्वाद।

सस्नेह तुम्हारा,
धीरेनभाई

विदेश-यात्रा में प्रयास और अनुभव

—आर० आर० दिवाकर

१. मैं दिल्ली से ३१ अक्तूबर को सुबह रवाना हुआ और लन्दन के रास्ते न्यूयार्क पहली नवम्बर को आधी रात के समय पहुँचा तथा १७ दिसम्बर को भारत वापस आया। इस तरह मैं ४७ दिनों तक बाहर रहा, और इस बीच बारह देशों में गया।

विदेश जाने का बुनियादी उद्देश्य न्यूयार्क में होनेवाले शान्ति के सम्बन्ध में धर्म पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन था। अक्तूबर १९७० में यह सम्मेलन क्योटो (जापान) में हुआ था, यह सम्मेलन उसी की एक कड़ी था। मैं एक उपाध्यक्ष और बोर्ड ऑव डायरेक्टर्स का सदस्य हूँ।

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान का अध्यक्ष होने के नाते मैं भारत की बहुत-से रचनात्मक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों से जुड़ा हुआ हूँ। मैंने सोचा, इसी अवसर पर कुछ और स्थानों पर हो लूँ। उद्देश्य था कि पुराने सम्पर्कों को नया किया जाय और प्रसिद्ध व्यक्तियों एवं शान्ति-आन्दोलन से जुड़े लोगों और संस्थाओं से नया सम्पर्क स्थापित किया जाय।

विदेश और शिक्षा मंत्रालय की सहायता से विदेश में भारतीय दूतावासों को खबर दी गयी। प्रधानमंत्री और विदेशमंत्री से भी सलाह ली गयी।

२. मैंने जिन मुद्दों पर बातें कीं वे निम्नलिखित हैं

(१) शान्ति, विश्व-शान्ति और शान्ति-संस्थाएँ।

(२) गांधीवादी विचारधारा से दिलचस्पी रखनेवाले व्यक्ति और संस्थाएँ।

(३) महात्मा फिल्म।

(४) श्री अरविन्द की शताब्दी १५ अगस्त '७२।

(५) योग की संस्थाएँ और अध्ययन।

(६) प्रसिद्ध पत्रकारों और सम्पादकों से मुलाकात।

(७) सांस्कृतिक अध्ययन, विशेष तौर पर तुलनात्मक अध्ययन।

(८) विदेशों में भारतीय।

(९) सांस्कृतिक फिल्म–जीवनी तथा अन्य।

(१०) बंगला देश।

३. सभी विषयों पर हमारा अनुभव निम्नलिखित है :

(१) अहिंसा, शान्ति-प्रयास, धर्म और शान्ति, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, बिना युद्ध का संसार और बिना युद्ध के झगड़ों का निपटारा आदि के सन्दर्भ में मैंने कई व्यक्तियों और गुटों से मुलाकात की। शान्ति के सिलसिले में अलग-अलग लोगों और गुटों के अलग-अलग विचार हैं।

सभी 'न्याय के साथ शान्ति' में विश्वास रखते हैं। बहुतों का यह ख्याल है कि अभी की स्थिति में धार्मिक संस्थाओं का निहित स्वार्थ है और उन्हें आगे ले जाने का प्रयास बेकार है। आमतौर से लोग सोचते हैं कि इतनी शान्ति-संस्थाओं के प्रयत्नों के बावजूद कुछ प्रगति नहीं हुई है। मैं समझता हूँ यह विश्वास की बात है। जो लोग विश्वास रखते हैं, उन्हें रचनात्मक तौर से चिंतन करना चाहिए और अहिंसा द्वारा शान्ति स्थापित करने का विकल्प खोजना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर लीग ऑव नेशन्स, संयुक्त राष्ट्र संघ इत्यादि के प्रयास हुए हैं। संयुक्त राष्ट्र की दक्षिणी अफ्रीका को जानेवाले हथियार पर पाबन्दी लगाना अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में गांधीजी के अनुसार बुराई से असहयोग की तरह है। परन्तु राष्ट्रीय स्तर पर राज्य नहीं, केवल जनता ही अहिंसा का संगठन कर सकती है।

(२) बातचीत का विषय कुछ भी हो लोगों और गुटों ने मुझसे बंगला देश की समस्या पर जानकारी लेनी चाही। ३१ नवम्बर को जब मैंने भारत छोड़ा था, युद्ध का इतना खतरा नहीं था। जब इन्दिराजी बड़ी शक्तियों से बिलकुल निराश हो गयीं तो युद्ध अनिवार्य हो गया। बड़ी शक्तियों ने यहिया खाँ को पत्र लिखने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं किया। उन्होंने कोई खास सहायता भी नहीं की। शरणार्थियों के लिए जितनी सहायता की आवश्यकता थी उसकी केवल एक चौथाई सहायता मिली। मैंने लोगों को बताया कि बंगला देश की समस्या कैसे उत्पन्न हुई। बंगला देश की समस्या बंगला भाषा को दबाने और आर्थिक शोषण का परिणाम है। अगर कोई शरणार्थी सीमा पार नहीं आता तो भारत को कोई फिक्र नहीं होती। परन्तु १ करोड़ हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और बौद्ध भारत में आ गये, जिनकी वापसी की कोई आशा नहीं थी। कुछ लोगों का अब तक पाकिस्तान से सहानुभूति है, क्योंकि भारत एक बड़ा देश है। संसार को हमने सही परिस्थिति शुरू से ही नहीं बतायी है। बहुत कम लोगों को पता है कि भारत में हर दस में एक व्यक्ति मुसलमान है और पूर्व पाकिस्तान, पाकिस्तान का बहुसंख्यक राज्य था। मैंने लोगों को यह भी बताया कि गांधी शताब्दी के बीच गांधीवादी कार्यकर्ताओं ने पाकिस्तान-हिन्दुस्तान के लोगों से मिलने की राह ढूँढने की बहुत कोशिश की परन्तु पाकिस्तानी सरकार ने कोई उत्तर नहीं दिया।

(३) बहुत सारे छोटे देशों का विकास और प्रगति देखकर मैं चकित रह गया। ये देश दक्षिणी कोरिया, थाइलैण्ड, तैवान, मलेशिया, इत्यादि हैं। ये देश सड़कों, इमारतों, उद्योगों, सफाई, रेडियो, मोटरों, टेलीविजन तथा प्रगति और चुस्ती में यूरोपीय देशों के बराबर हैं, और भारत की तुलना में बहुत आगे हैं। सारा भ्रम तो यूरोपीय देश मालूम होता है। इसराईल भी एक नमूना है।

जैसे कि गैलब्रेथ ने कहा है, 'अविकसित देशों को जल्दी ही, बिना विकसित देशों के दोषों को दुहराये हुए विकसित देश बन जाना चाहिए।' सायप्रस और इसराईल में लाइट कल्बों को सराहा नहीं

जाता है। यूरोपीय देशों में यद्यपि महिलाओं की मुक्ति के आन्दोलन हैं, परन्तु उन्हें नीचा समझा जाता है और उनके साथ खिलौनों की तरह खेला जाता है। यह अध्ययन का विषय है कि ये देश जो पिछड़े हुए और पूर्वी कहलाते थे कैसे और क्यों इतनी तरक्की कर गये कि वे आधुनिक समझे जाते हैं। क्यों भारत के नगरों में प्रगति, आधुनिक जीवन की आसानियाँ, और आधुनिक सुविधाएँ पर्याप्त नहीं हैं। भारत में पत्र-पत्रिकाएँ कम पढ़ी जाती हैं। मैं इसकी अच्छाई-बुराई पर प्रकाश नहीं डाल रहा हूँ। भारत में जीवन का स्तर अभी बहुत नीचा है।

इसराइल में कृषि और उद्योग के विकास के अतिरिक्त कुछ और प्रयोग किये गये हैं, जो नमूने हैं। वहाँ के लोग कीबुत्स में रहते हैं। यह रहने का एक सामूहिक ढंग है। इसमें १०० परिवार भी हो सकते हैं। मैंने १२० परिवारों का एक किबुत्स देखा। सभी परिवारों के बच्चे और बच्चियाँ साथ रहते हैं। उम्र के लिहाज से उन्हें कोठरियाँ दी हुई हैं। उन्हें बाल अवस्था से हाई स्कूल तक शिक्षा दी जाती है। बच्चे शाम को अपने माता-पिता से मिलने जाते हैं। अनुशासन कायम रखा जाता है। संगीत, कला, और शिल्प की रुचि को प्रोत्साहन दिया जाता है। किबुत्स के द्वारा स्थापित किये हुए खेतों, छोटे उद्योगों और दूध के कारखानों में वे काम करते हैं। काम लोकतन्त्रात्मक ढंग से होता है, और खाना सामूहिक तौर पर खाया जाता है। लड़के और लड़कियों में भाई-बहन-जैसा सम्बन्ध होता है।

कृषि, दूध के कारखाने और मुर्गी के फार्म, सभी हर तरह से वैज्ञानिक ढंग पर कायम किये गये हैं। यह आश्रम-जीवन की याद दिलाता है। परन्तु यहाँ एक पूरा समुदाय है, जिसकी भूमि और परिश्रम सामूहिक है।

युद्ध का वातावरण होते हुए वहाँ जीवन प्रगतिशील है। वहाँ की अरब आबादी भी खुश है। सीमा पर से लगभग ४०,००० अरब सीमा पार से काम के लिए आते हैं, और फिर वापस चले जाते हैं।

(४) मैं जिन देशों में गया वहाँ भारतवासियों में से कई से बातें हुईं। दूतावास के लोगों से भी बातें हुईं। मैंने भारतीयों के बीच तीन बार भाषण दिये, विद्यार्थियों के बीच पेरिस, रोम, और काहिरा में, काहिरा में भारत-पाक-युद्ध छिड़ने के बाद। हमारे देशवासी बड़े शर्मीले होते हैं, और भारत के बड़प्पन से परिचित नहीं हैं। यह जरूरी है कि भारत के लोग अपनी संस्कृति, इतिहास और परम्पराओं को अपनी आँखों से देखें, बाहरवालों की दृष्टि से नहीं।

(५) इण्डोलॉजी, संस्कृति और प्रसार के विचार में भारत के योगदान के विषय पर लोगों से बातें हुईं। मैंने राय दी कि इण्डोलॉजी का अध्ययन केवल संस्कृत, पाली, अर्द्धमागधी तक ही सीमित न रखा जाय, बल्कि दूसरी भारतीय भाषाओं में भी पढ़ी जाये, क्योंकि आधुनिक भारतीय भाषाओं का भी संस्कृति की प्रगति में बड़ा योगदान है। मेरी बर्लिन, वेनिस और दूसरे दो-तीन स्थानों पर इण्डोलॉजिस्ट से मुलाकात हुई, जिनसे मैंने ऋग्वेद के मंत्रों के नये पहलुओं पर बातें कीं, जिनका दर्शन मोर्ग (मैसूर राज्य) के देवरतजी को हुआ है और जिसका उल्लेख 'मन्त्रोदर्शन' में है। वे यह बात सुनकर बहुत चकित हुए।

(६) स्पेन के शहर बैलेडी मनोरका में महर्षि महेश योगी ५००-६०० अमेरिकी भक्तों के साथ ठहरे हुए थे, जो 'ट्रैन्सेन्डेंटल मेडीटेशन' का अभ्यास कर रहे थे। महेश योगी की 'स्टूडेन्ट्स इन्टरनेशनल मेडीटेशन सोसाइटी' चलती है। ४० देशों से अधिक में इसके केन्द्र हैं। स्वयं अमेरिका में कई केन्द्र हैं। उनका हेडक्वार्टर कलीफोर्निया में है।

(७) मैं महात्मा किम के सम्बन्ध में कुछ नहीं कर पाया।

(८) अरविन्द शताब्दी के सिलसिले में सरकार ने स्वयं दूतावासों को लिख भेजा है। और लन्दन में एक कमिटी भी बनी है, श्री अप्पा पंत जिसके अध्यक्ष हैं।

(९) मैं श्री क्रिस्टोफर हिल्सके योग इन्स्टीट्यूट भी गया। उनकी पत्नी और उनके लड़के जॉन से भेंट हुई।

बर्लिन में श्री ब्रह्मानन्द चौधरी योग की शिक्षा दे रहे हैं—आसन और नियम दोनों।

पश्चिम के कुछ क्षेत्रों में चर्च और इसाई धर्म के लोग योग को हिन्दुत्व से जोड़ते हैं। महेश योगी इस दृष्टिकोण का खण्डन करते हैं। ●

मध्य प्रदेश ग्रामदान-अभियान

मध्य प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार आगामी १ से १० फरवरी तक उज्जैन जिले के प्रखण्ड में ग्रामदान-प्राप्ति-पुष्टि अभियान आयोजित किया गया है जिसके अन्तर्गत कार्यकर्तागण गाँव-गाँव पदयात्राओं द्वारा ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचायेंगे। इस निमित्त शुरू में होनेवाले प्रशिक्षण-शिविर में मार्गदर्शन एवं पदयात्राओं में भाग लेने के लिए सर्व सेवा संघ के मंत्री प्रो० ठाकुरदास बंग, उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुमन बंग और महाराष्ट्र के दस कार्यकर्ताओं की एक टोली भी आ रही है।

सागर

सागर जिला सर्वोदय मण्डल द्वारा तात्कालीन परिस्थिति में नगर के कुछ मुहल्लों में प्रार्थना-सभाएँ की गयी। साप्ताहिक स्वाध्याय गोष्ठी का क्रम चला। जिसे अब पुनः प्रारम्भ किया जा रहा है। आगामी महीनों में जिले में १०० लोकसेवक और ५०० सर्वोदय मित्र बनाना, जिले के प्रत्येक विकास खण्ड और मुख्य ग्रामों में सर्वोदय मण्डल की शाखाएँ स्थापित करना, सर्वोदय साहित्य की बिक्री, सर्वोदय-पत्रों के ग्राहक बनाना, सर्वोदय पात्र रखवाना और २००० हजार की राशि दानस्वरूप एकत्र करने का लक्ष्य पूरा करना है। ●

दुनिया के शान्ति-समाचार

उत्तरी आयरलैण्ड

डब्लू० आर० आई० ने उत्तरी आयरलैण्ड में होनेवाले अत्याचार और रक्तपात के विरुद्ध एक आन्दोलन चलाया है। अमेरिका, कनाडा और यूरोप के दूसरे देशों में पर्चे भेजे गये हैं जो स्थानीय गुटों और व्यक्तियों द्वारा ब्रिटेन के सिपाहियों और नागरिकों में बाँटे जायेंगे।

डब्लू० आर० आई० ने अपने पर्चे में कहा है कि (१) सभी राजनैतिक कैदियों को रिहा किया जाय। (२) सभी ब्रिटिश सेना वापस बुलायी जाय। (३) सभी राष्ट्रों के आत्मनिर्णय का अधिकार स्वीकार किया जाय।

स्पेन

१३ दिसम्बर को पेपे बेनटा को दुबारा गिरफ्तार कर लिया गया है। यह गिरफ्तारी वैलेन्शिया में हुई। अपने घर से गिरफ्तार होने पर वे पहले फौजी छावनी में ले जाये गये और जेल में चार दिन रहे। वे दो नवम्बर को जेल से छूटे थे। जब वे वैलेन्शिया में अपने घर पहुँचे तो उन्हें सैनिक-भर्ती के लिए आदेश मिला, जिसे मानने से उन्होंने इनकार कर दिया।

डब्लू० आर० आई० पेपे की ओर से कोशिश करना चाहता है और जो लोग युद्ध में जाने से इनकार करते हैं उनके लिए एक न्याय पर आधारित कानून का इच्छुक है।

इसराइल

जोरा न्यूमैन को सेना में भर्ती होने का आदेश न मानने पर १८ नवम्बर को जेल भेज दिया गया। वे लम्बे समय तक जेल रहेंगे। इसराइल में और तीन लोगों ने भी ऐसा ही किया है। डब्लू० आर० आई० चाहता है कि इसराइल के ऐसे लोगों का समर्थन किया जाय

(१) जोरा न्यूमैन के समर्थन में पत्र लिखे जायें। (२) उनकी रिहाई के लिए एक दरख्वास्त की जाय। दरख्वास्त में इस बात का भी उल्लेख हो कि नैतिक और राजनैतिक कारणों के आधार पर लोगों को युद्ध में शरीक होने से इनकार का अधिकार दिया जाय।

वियतनाम

उत्तरी वियतनाम में अमेरिकनों ने दुबारा बमबारी शुरू कर दी है। वहाँ से सेना वापस बुला लेने की घोषणा के बाद ऐसा मालूम होता है कि राष्ट्रपति निक्सन की सरकार युद्ध को फैलाना चाहती है। उनलोगों को, जो निक्सन से कुछ आशा रखते थे, अब यह समझना चाहिए कि यह कार्रवाई दक्षिण पूर्व एशिया में अमेरिकी हित को सुरक्षित रखने की कोशिश है। इसलिए वियतनाम के युद्ध का विरोध करने का प्रयास अभी जारी रहना चाहिए।

उत्तरी वियतनाम की विद्यार्थी यूनियन की विदेश सम्बन्ध समिति ने एक पत्रिका प्रकाशित की है जिसका नाम है वियतनाम के विद्यार्थी आन्दोलन की सूचनाएँ। इसमें इस बात पर भी जोर दिया गया है कि अमेरिकी और वियतनामी विद्यार्थी युद्ध का विरोध करें। इसमें अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण और विद्यार्थियों पर राजनैतिक अत्याचार का विरोध करने को भी कहा गया है।

स्विट्जरलैण्ड

इटली यात्रा के बाद श्री रामब्रह्म पुरोहित ४ दिसम्बर को स्विट्जरलैण्ड पहुँचे। उन्होंने वहाँ कई सभाओं में भाषण दिये और बंगला देश के सम्बन्ध में होनेवाली वार्ता में शरीक हुए। वह वहाँ के विदेश मंत्री से भी मिले और उनसे यह कहा कि उनका देश एक तटस्थ देश है। उसे चाहिए कि वह एटमिक निःशस्त्रीकरण जैसा साहसिक कदम उठावे।

रोम की यात्रा में उन्होंने पोप पॉल से भी भेंट की थी। उनसे रामब्रह्म पुरोहित ने कहा था कि वह एक बड़े धर्म नेता होने के नाते वियतनाम और बंगला देश जैसे क्षेत्रों में युद्ध बन्द होने और शान्ति-स्थापना के लिए दबाव डालें। रामब्रह्म पुरोहित ने उन्हें यह बताया कि अगर वह इस काम का बेड़ा उठायेंगे तो बहुत सारे शान्ति-कार्यकर्ता उनका साथ देंगे। पोप ने उन्हें यह उत्तर दिया कि उनके हृदय में गांधी और अहिंसा के लिए बड़ी प्रशंसा है, परन्तु कुछ कारणों से वह उन क्षेत्रों में नहीं जा सकते। वह शान्ति के लिए प्रार्थना करेंगे। रामब्रह्म पुरोहित ने ४८ घण्टे का उपवास किया और भगवान से प्रार्थना की कि वह पोप को ऐसा काम करने के लिए तैयार करें।

परमाणु शस्त्र-सम्बन्धी सम्मेलन

लन्दन में २६-२७-२८ नवम्बर को एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ। यह सम्मेलन परमाणु शस्त्र से उत्पन्न खतरे के सम्बन्ध में था। १८ देशों के तीन सौ लोग इसमें शरीक हुए। संसार में सम्पूर्ण निःशस्त्रीकरण और अणुशक्ति के शान्तिमय और उत्पादक प्रयोग से सम्बन्धित प्रस्ताव पास किये गये।

दक्षिणी अफ्रीका

दक्षिणी अफ्रीका में मेवाराम गोविन्द गिरफ्तार कर लिये गये। उनकी आयु ३१ साल की है। वह नाटाल इण्डियन कांग्रेस के आन्दोलन को फिर से शुरू करना चाह रहे थे। अफ्रीका के न्यायमंत्री ने कहा है कि उन्हें नजरबन्द रखा जायगा और उनपर से पाबन्दी नहीं हटायी जायगी। इसका अर्थ यह होता है कि नाटाल इण्डियन कांग्रेस से उसका नेता छीन लिया गया है।

ईरान

ईरान के राजनैतिक कैदियों की ओर से एमिन्स्टी इण्टरनेशनल ने एक आन्दोलन चलाया है। यद्यपि ईरान में अपनी राय व्यक्त करने, राजनैतिक कार्य करने, और सभाएँ करने का अधिकार है परन्तु वास्तविकता यह है कि किसी भी प्रकार का राजनैतिक विरोध सख्ती से दबा दिया जाता है और लोग भयभीत रहते हैं।→

सर्वोदय साहित्य-प्रचार हेतु प्रशिक्षण-शिविर

आज की परिस्थिति में सर्वोदय विचार-प्रचार की विशेष आवश्यकता है तथा इस हेतु साहित्य-प्रचार में गति लाना आवश्यक है, यह प्रायः महसूस किया जाता है। परन्तु साहित्य-प्रचार भी एक कला है और शास्त्र भी, अतः कार्यकर्ताओं को इसका विधिवत् शिक्षण हो तो वे अपने सीमित समय, शक्ति और परिस्थिति में भी काफी अच्छा और व्यापक प्रचार कर सकते हैं। इस दृष्टि से श्री राधाकृष्ण बजाज, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ प्रकाशन के विशेष आग्रह पर अभी हाल में दो प्रशिक्षण शिविर सर्वोदय साहित्य भण्डार के माध्यम से विसर्जन आश्रम इन्दौर में हुए।

प्रथम शिविर का शुभारम्भ १६ दिसम्बर को हुआ। शिविर का उद्घाटन पालियाग्राम में म० प्र० सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री महेन्द्रकुमार की अध्यक्षता में श्री दादाभाई नाईक ने इन शब्दों के साथ किया, 'युग-परिवर्तन अवश्यम्भावी है'। गाँव-गाँव में विचार-प्रचार होगा तभी सच्चा ग्राम-संगठन और ग्रामस्वराज्य स्थापित होगा, जिसकी बुनियाद पर गांधीजी की कल्पना का रामराज्य बन सकता है।

१७ को दोदिवसीय बौद्धिक शिविर का समापन श्री कृष्णन् साहब, कलेक्टर महोदय, इन्दौर ने इन शब्दों के साथ किया कि—"ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य जनता का अभिक्रम जागृत करना है। लोग स्वयं अपनी समस्याओं को समझें और मिल-जुलकर उन्हें प्रेमपूर्वक हल करें, यही सच्चे लोकतंत्र का उद्देश्य है। इस दृष्टि से शासन यथाशक्ति पूरी मदद करेगा।"

शिविर में म० प्र० के विभिन्न जिलों की ग्रामस्वराज्य समिति के १३ कार्यकर्ता और सागर पुष्टि-क्षेत्र के ७ कार्यकर्ता तथा अन्य ५ स्वतंत्र साहित्य प्रेमी, इस प्रकार कुल २५ व्यक्ति शामिल हुए।

२१ दिसम्बर को दूसरे शिविर का (जो पूर्व निश्चयानुसार और मूल योजनानुसार वास्तव में पहला शिविर होना था) भी आरम्भ हुआ। इस दूसरे शिविर में कुल १० विद्यार्थी शामिल हुए जिनमें एक म० प्र० के बाहर (उदयपुर) के और शेष अपने प्रदेश में से ५ खादी संस्थाओं के और ४ स्वतंत्र साहित्य-प्रेमी कार्यकर्तागण थे। इनमें से एक बहन भी थी।

इस आयोजन के मुख्य अतिथि श्री चन्दन सिंहजी भरकतिया ने सर्वोदय साहित्य के तात्कालिक और व्यापक अर्थ को समझाया, साथ ही साहित्य-प्रचार, कार्यकर्ताओं के स्वावलम्बन एवं जीवन-यापन पर जोर दिया।

साहित्य-बिक्री तथा उसके प्रदर्शन, हिसाब किताब, पत्र-व्यवहार आदि के प्रत्यक्ष शिक्षण की दृष्टि से २२ से २५ दिसम्बर तक दोपहर बाद ६ बजे तक प्रशिक्षणार्थी सर्वोदय साहित्य भण्डार पर रहे। —जसवंत भाई

→गैरकानूनी सैनिक अदालतें उन्हें सजा देती हैं।

स्वतंत्र बंगला देश

संसार के शान्तिमय लोगों की ओर से डब्लू० आर० आई० ने निम्नलिखित माँगें की हैं। ये माँगें सभी बड़ी शक्तियों से हैं।

१—पाकिस्तान बंगला देश को स्वतंत्र राष्ट्र की हैसियत से मान्यता दे। ऐसा करके पाकिस्तान अपनी एक बड़ी गलती को सुधार सकता है।

२—संसार के सभी देश बंगला देश की स्वतंत्रता को स्वीकार कर लें।

३—भारत और पाकिस्तान दोनों सैनिक कार्यवाही बन्द करें और अपनी सेनाएँ अपने-अपने क्षेत्र में वापस बुला लें और बंगला देश में अपने लोगों को अपनी इच्छानुसार सरकार और व्यवस्था स्थापित करने दें।

४—बंगला देश के लोग सैनिकवाद को अस्वीकार कर दें और अपनी पूरी शक्ति देश-निर्माण में लगा दें।

सभी शान्ति-आन्दोलनों से यह अपील की जाती है कि वे भारत-पाक उपमहाद्वीप में शान्ति और न्याय के लिए कोशिश करें।

रोडेशिया

वार रेजिस्टर इन्टरनेशनल ग्रेट ब्रिटेन की जनता से यह अपील करता है कि ग्रेट ब्रिटेन और रोडेशिया की सरकारों के बीच जो समझौता हुआ है उसे रद्द कर दे और सही समझौता करके वहाँ की समस्या का हल ढूँढ़े। अर्थात वे रोडेशिया में बहुसंख्यक के शासन के लिए आन्दोलन चलायें।

—डब्लू० आर० आई० न्यूजलेटर, ३१ दिसम्बर १९७१ से

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

जोते उसकी जमीन

—महात्मा गांधी

यदि भारतीय समाज को शान्तिपूर्ण मार्ग पर सच्ची प्रगति करनी है, तो धनिक वर्ग को निश्चित रूप से स्वीकार कर लेना होगा कि किसान के भीतर भी वैसी ही आत्मा है जैसी उनके भीतर है और अपनी दौलत के कारण वे गरीबों से श्रेष्ठ नहीं हैं। जैसा जापान के उमरावों ने किया, उसी तरह उन्हें भी अपने-आपको संरक्षक मानना चाहिए। उनके पास जो धन है उसे यह समझकर रखना चाहिए कि उसका उपयोग उन्हें अपने संरक्षित किसानों की भलाई के लिए करना है। उस हालत में वे अपने परिश्रम के कमीशन के रूप में वाजिब रकम से ज्यादा नहीं लेंगे। इस समय धनिक वर्ग के सर्वथा अनावश्यक दिखावे और फिजूल-खर्ची में तथा जिन किसानों के बीच में वे रहते हैं उनके गन्दगी भरे वातावरण और कुचल डालनेवाले दारिद्र्य में कोई अनुपात नहीं है। इसलिए एक आदर्श जमीदार किसानों का बहुत कुछ बोझा, जो वे अभी उठा रहे हैं, एकदम घटा देगा। वह किसानों के गहरे सम्पर्क में आयेगा और उनकी आवश्यकताओं को जानकर उस निराशा के स्थान पर, जो उनके प्राणों को सुखाये डाल रही है, उनमें आशा का संचार करेगा। वह किसानों में फैले सफाई और तन्दुरुस्ती के नियमों के अज्ञान को दर्शक की तरह देखता नहीं रहेगा, बल्कि इस अज्ञान को दूर करेगा। किसानों के जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए वह स्वयं अपने को दरिद्र बना लेगा। वह अपने किसानों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करेगा और ऐसे स्कूल खोलेगा, जिनमें किसानों के बच्चों के साथ-साथ अपने खुद के बच्चों को भी पढ़ायेगा। वह गांव के कुंओं और तालाब को साफ करायेगा। वह किसानों को अपनी सड़कें और अपने पाखाने खुद आवश्यक परिश्रम करके साफ करना सिखायेगा। वह किसानों के लिए अपने बाग-बगीचे निःसंकोच भाव से खोल देगा, ताकि वे स्वतंत्रता से उनका उपयोग कर सकें। जो गैर-जरूरी इमारतें वह अपनी मौज के लिए रखता है, उनका उपयोग अस्पताल, स्कूल या ऐसी ही अन्य बातों के लिए करेगा।

यदि पूंजीपति वर्ग काल का संकेत समझकर सम्पत्ति के बारे में अपने इस विचार को बदल डाले कि उस पर उनका ईश्वर-प्रदत्त अधिकार है, तो जो सात लाख घूरे आज गांव कहलाते हैं उन्हें आनन-फानन में शान्ति, स्वास्थ्य और सुख के धाम बनाया जा सकता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि पूंजीपति जापान के उमरावों का अनुसरण करें तो वे सच-मुच कुछ खोयेंगे नहीं और सब कुछ पायेंगे। केवल दो मार्ग हैं जिनमें से उन्हें अपना चुनाव कर लेना है। एक तो यह कि पूंजीपति अपना अतिरिक्त संग्रह स्वेच्छा से छोड़ दें और उसके परिणाम-स्वरूप सबको वास्तविक सुख प्राप्त हो जाय। दूसरा यह कि अगर पूंजीपति समय रहते न चेतें तो करोड़ों जाग्रत किन्तु अज्ञान और भूखे लोग देश में ऐसी गड़बड़ी मचा दें, जिसे एक बलशाली हुकूमत की फौजी ताकत भी नहीं रोक सकती। मैंने यह आशा रखी है कि भारतवर्ष इस विपत्ति से बचने में सफल रहेगा। उत्तर प्रदेश के कुछ नौजवान तालुकेदारों से मेरा जो घनिष्ट सम्पर्क हुआ है उससे मेरी यह आशा बलवती बनी है।

(यंग इंडिया ५-१२-'२९)

मैं जमीदारों और दूसरे पूंजीपतियों का अहिंसा के द्वारा हृदय-परिवर्तन करना चाहता हूं और इसलिए वर्ग-युद्ध की अनिवार्यता को मैं स्वीकार नहीं करता। कम-से-कम संघर्ष का रास्ता लेना मेरे अहिंसा के प्रयोग का एक जरूरी हिस्सा है। जमीन पर मेहनत करनेवाले किसान और मजदूर ज्यों ही अपनी ताकत पहचान लेंगे, त्यों ही जमीदारी की बुराई का बुरापन दूर हो जायगा। अगर वे लोग यह कह दें कि उन्हें सभ्य जीवन की आवश्यकता के अनुसार बच्चों के भोजन, वस्त्र और शिक्षण आदि के लिए जब तक काफी मजदूरी नहीं दी जायगी, तब तक वे जमीन को जोतेंगे-बोयेंगे ही नहीं, तो जमीदार बेचारे, कर ही क्या सकते हैं? सच तो यह है कि मेहनत करनेवाला जो कुछ पैदा करता है उसका वही मालिक है। अगर मेहनत करनेवाले बुद्धिपूर्वक एक हो जायं तो वे एक ऐसी ताकत बन जायेंगे जिसका मुकाबिला कोई नहीं कर सकता और इसीलिए मैं वर्ग-युद्ध की कोई जरूरत नहीं देखता। यदि मैं उसे अनिवार्य मानता होता तो उसका प्रचार करने में और लोगों को उसकी तालीम देने में मुझे कोई संकोच नहीं होता। (हरिजन, ५-१२-'३६)

किसानों का—वे भूमिहीन मजदूर हों या मेहनत करनेवाले जमीन-मालिक हों—स्थान पहला है। उनके परिश्रम से ही पृथ्वी उपजाऊ और समृद्ध हुई है और इसलिए सच कहा जाय तो जमीन उनकी ही है या होनी चाहिए, जमीन से दूर रहनेवाले जमीदारों की नहीं। लेकिन अहिंसक पद्धति में मजदूर या किसान इन जमीदारों से उनकी जमीन बलपूर्वक नहीं छीन सकता। उसे इस तरह काम करना चाहिए कि उसका शोषण करना जमीदार के लिए असम्भव हो जाय। किसानों में आपस में घनिष्ठ सहकार होना नितान्त आवश्यक है। इस हेतु की पूर्ति के लिए जहां वैसी समितियां न हों वहां वे बनायी जानी चाहिए। किसान ज्यादातर अपढ़ हैं। स्कूल जाने की उम्रवालों को और बालिगों को शिक्षा दी जानी चाहिए। भूमिहीन खेतिहर मजदूरों की मजदूरी इस हद तक बढ़ायी जानी चाहिए कि वे निश्चित रूप से सभ्य जीवन बिता सकें। यानी उन्हें सन्तुलित भोजन और आरोग्य की दृष्टि से जैसे चाहिए वैसे घर और कपड़े मिल सकें।

(दि बाम्बे क्रॉनिकल, २८-१०-'४४)

सम्पादकीय

गांधी हमारे करीब

कई लोग कहने लगे हैं कि आज का भारत गांधी से बहुत आगे बढ़ गया है। अब उनके नाम की रट लगाते रहने से क्या लाभ? बहुत अच्छी बात है अगर सचमुच ऐसा हो। गांधी पैदा ही हुए थे भारत को, और भारत के द्वारा दुनिया को, आगे बढ़ाने के लिए।

इधर कुछ दिनों से प्रधानमंत्री गांधीजी का नाम लेकर देश को स्वदेशी की याद दिला रही हैं। कवि दिनकर ने कहा है कि बंगला देश में असली विजय तो गांधीजी की हुई है।

बात सही है कि जिन्ना जीते-जी जीते थे, और गांधी मरने के तेईस वर्ष बाद जीते। और महापुरुष अपनी जिन्दगी में जीतता है? अगर जिन्दगी में जीत जाय तो वह महापुरुष कैसा? अपने जीवन में उसे सजा भोगनी पड़ती है इस बात की कि वह अपने समय की दुनिया से आगे क्यों बढ़ गया? लेकिन जब वह मर चुकता है, दुनिया की भाषा में शहीद हो जाता है तो समय पाकर लोग समझने लगते हैं कि जो मूलभूत प्रश्न वह छोड़ गया वे सचमुच उनके प्रश्न हैं। लेकिन उन प्रश्नों के उत्तर कौन दे? उत्तर की खोज शुरू होती है तो प्रश्न उठानेवाले की याद आती है।

गांधी जो प्रश्न छोड़कर गये हैं वे, जैसे-जैसे समय बीत रहा है, भारत के करोड़ों लोगों के प्रश्न बनते जा रहे हैं। भारत ही नहीं दुनिया के प्रश्न बनते जा रहे हैं।

गांधी ने कहा था—विदेशी शासन का अन्त होना काफी नहीं, स्वतंत्रता जन-जन तक पहुँचनी चाहिए। स्वतंत्रता स्वराज्य में चरितार्थ होनी चाहिए।

गांधी ने कहा था—बाहर की समृद्धि काफी नहीं है। मनुष्य के भीतर की कमानियत दूर होनी चाहिए।

गांधी ने "मास्टर मैन" की बात नहीं की। गांधी ने "इनर मैन" की भी बात कही थी। "मास्टर मैन" समाज का मरण है, "इनर मैन" अहिंसा का स्रोत है।

आज के युग में अन्तिम व्यक्ति को छोड़कर समाज कहाँ जायगा, और भीतर का खोखलापन लेकर मनुष्य विज्ञान और लोकतंत्र की चुनौतियों का मुकाबिला कैसे करेगा?

पाकिस्तान की तानाशाही ने स्वतंत्रता को बंगाली तक नहीं पहुँचने दिया। भारत की विकास-योजनाएँ, "अन्तिम व्यक्ति" तक नहीं पहुँच रही हैं और बालिग वोट के स्वतंत्रता सामान्य जन के जीवन में वास्तविकता नहीं बन पा रही है।

क्या गांधी के जाने के इतने वर्षों बाद यह पूछना गलत होगा कि क्या हम सत्य को पहचाने, और अहिंसा की तलाश किये बिना दुनिया जी सकेगी? क्या कोई एक देश भी आगे बढ़ सकेगा? क्या भारत अपना कोई भी सवाल हल कर सकेगा?

गांधी ने राज्य की जिस हिंसा की चेतावनी दी थी क्या उसका प्रमाण वियतनाम और बंगला देश के बाद ढूँढ़ना बाकी है? अति-समृद्धि में भी मनुष्य भीतर से कितना कंगाल और हिंसा का कितना गुलाम रह सकता है, इसका उदाहरण सारी आधुनिक सभ्यता है जिसमें पूँजीवाद और साम्यवाद समान रूप से शामिल हैं। अति-शक्ति और अति-समृद्धि, क्या दोनों सभ्यता के अभिशाप नहीं बन गये हैं?

मनुष्य को नया जीवन चाहिए, समाज को नयी रचना चाहिए, मूल्यों को नया परिवेश चाहिए। है कोई गांधी के सिवाय जो मनुष्य को इस विविध खोज में साफ, सही रास्ता बता सके? किसके पास नया "ब्लू प्रिंट" है?

जब तक मनुष्य को उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं मिलेगा वह मुड़-मुड़कर गांधी को देखता रहेगा। समय गांधी को भटकते मानव के करीब ला रहा है।

नया नेतृत्व

जिन थोड़े क्षेत्रों में पुष्टि का सघन काम हो रहा है, और ग्रामस्वराज्य-सभाओं के आधार पर प्रखण्ड-स्वराज्य-सभाएँ गठित की जा रही हैं उनमें एक नया नेतृत्व सामने आ रहा है। यह छोटी बात नहीं है कि जो छोटे लोग अब तक राजनैतिक दलों और सरकार के पंचायती राज के पत्थर के नीचे दबे पड़े थे वे अब उठ रहे हैं। इन 'छोटे' लोगों को 'बड़ी' बातें करते देखकर अपने आन्दोलन के वे आयाम प्रत्यक्ष प्रकट होने लगते हैं जिन्हें इसके पहले कल्पना से पकड़ने के लिए काफी कोशिश करनी पड़ती थी। अपनी ग्रामस्वराज्य-सभा या प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा में जब चमार-मुसहर से लेकर ब्राह्मण-राजपूत तक, या निपट निरक्षर से लेकर बी० ए०-एम० ए० तक, लोग साथ बैठते हैं और गाँव के प्रश्नों पर अपने-अपने मन की बात निडर होकर कहते हैं तो लगता है कि 'पंच परमेश्वर' शायद कोरी कल्पना नहीं रही होगी। भविष्य के लिए आशा पैदा होती है कि जातियों तथा वर्गों से टूटे हुए हमारे समाज में भी एक ऐसा मंच बन सकता है जहाँ सब साथ बैठ सकते हैं, और जहाँ गरीब सबकी पहली चिन्ता का विषय बन सकता है। यह मंच है ग्राम-स्वराज्य-सभा और प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा का—यद्यपि अभी इनकी अवस्था प्रारंभिक है।

लेकिन यह मान लेना भूल है कि इतने से ही ग्रामस्वराज्य की मूल भावनाओं का प्रतिनिधित्व होने लगा है। ज्यादा-से-ज्यादा इतना ही माना जा सकता है कि इन नये लोगों ने ग्राम-स्वराज्य का नारा सुना है, और इनके हृदय में उस नारे से कुछ लहरें उठी हैं। लेकिन इनके दिमाग अभी उन ६ बातों से दूर हैं जिन्हें हम 'ग्रामस्वराज्य के सत्व' कहते हैं। शायद उन्हें सही ढंग से वे बातें अभी तक बतायी भी नहीं गयी हैं। उनके दिल का दरवाजा अभी इस बात के लिए नहीं खुला है कि ग्रामस्वराज्य में मजदूर मेहनत की बदौलत उत्पादन में साझेदार भी हो सकता है,

भूमि भले ही उसको न हो। उसी तरह सरकार भी आज की तरह नं० १ शक्ति न रहकर लोकशक्ति के मुकाबिले नं० २ शक्ति हो जायगी। ये बातें अभी उनकी कल्पना के बाहर हैं। वे ग्राम-विकास को ही ग्रामस्वराज्य मान बैठते हैं।

बावजूद इन कमियों के यह भरोसा किया जा सकता है कि शिक्षण-द्वारा इस नेतृत्व को आगे बढ़ाया जा सकता है, और इस नये नेतृत्व के भीतर से इससे अधिक प्रगतिशील और नये नेतृत्व के निकलने के लिए भूमिका बनायी जा सकती है। लेकिन ऐसा तब होगा जब उन्हें नयी तालीम दी जायगी—नित्य नयी तालीम। नित्य नयी तालीम ही संस्कार की रूढ़ियों को दूर कर सकती है और दिमाग की गाँठों को खोल सकती है।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं तथा प्रखण्ड-स्वराज्य-सभाओं के पदाधिकारियों के रूप में प्रकट होनेवाले नये नेतृत्व के लिए नयी तालीम की योजना बनाने के पहिले हमारे सामने उसका रोल स्पष्ट हो जाना चाहिए। पदाधिकारियों के ६ रोल हो सकते हैं:

(१) ग्रामदान को पक्का करना।

(२) गाँव में एकता और सहकार-वृत्ति का विकास।

(३) एक इकाई के रूप में गाँव का स्वायत्त संगठन, सामूहिक निर्णय।

(४) गाँव को ग्रामस्वराज्य के आरोहण में नेतृत्व प्रदान करना।

(५) गाँव का समग्र—आर्थिक, सांस्कृतिक—विकास।

(६) आगे सरकार में दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व के लिए भूमिका बनाना।

ये रोल मुख्य हैं। इन्हें सामने रखकर ही शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए तात्त्विक और व्यावहारिक अभ्यासक्रम बनाने चाहिए, और शिविर, गोष्ठी, आदि के माध्यम पूरे किये जाने चाहिए। सुझाव के रूप में अभ्यासक्रम की एक योजना 'भूदान-यज्ञ'—जनवरी के अंक में प्रस्तुत की गयी है। स्थानीय परिस्थिति के अनुसार, या विभिन्न बौद्धिक स्तर के लोगों की दृष्टि से संशोधन हो सकते हैं, लेकिन ग्रामस्वराज्य के मूल तत्वों को मजबूत, और विकास की दिशा, हर एक के सामने स्पष्ट होनी चाहिए।

नये क्षितिज पर नयी लाली

वियतनाम और बंगला देश के दो ऐसे उदाहरण हैं जो सिद्ध करते हैं कि अगर बड़ी हिंसा और लोकशक्ति में मुकाबिला हो तो विजय लोकशक्ति की ही होगी। अगर पहले की तरह आज भी बड़ी हिंसा का जीतना निश्चित होता तो निक्सन वियतनाम में और यहिया बंगला देश में विजयी हो गये होते। सैनिक-शक्ति में क्या तुलना थी वियतकांग की अमेरिका से, और मुक्तिवाहिनी की यहिया की फौजों से? फिर भी वियतकांग और मुक्तिवाहिनी ने अपनी निहत्थी जनता के साथ मिलकर जिस 'नैतिक शक्ति' का परिचय दिया है वह इस युग का चमत्कार है, और मात्र हिंसा की शक्ति से कहीं बड़ी है।

लोकशक्ति सिर्फ लोक-मत नहीं है। वह स्वयं प्रत्यक्ष, प्रचण्ड, शक्ति है। वह अपने मनोबल और सीमित सैनिक-शक्ति के सहारे बड़ी हिंसा के सामने घुटने टेकने से इनकार कर सकती है। छोटे देश की संगठित लोकशक्ति अपने से कहीं बड़ी हिंसा-शक्ति के सामने चुनौती बनकर प्रस्तुत हुई है। यह एक ऐसी वास्तविकता है जो आगे के युग में राजनैतिक और सामाजिक जीवन को नया मोड़ देगी।

अगर लोकशक्ति इस तरह पूरे समाज के पैमाने पर संगठित हो सकती है तो उसके विकास के लिए तत्काल एक बहुत बड़ा क्षेत्र खुला हुआ है। वह है देश का भीतरी जीवन, जो पुलिस के हाथों में पड़ा है। लोकशक्ति उसे पुलिस के हाथों से निकाल कर अपने हाथों में ले सकती है। पुलिस का स्थान शान्ति-सैनिक तुरन्त ले सकते हैं। पुलिस अनावश्यक है। कोई कारण नहीं कि हर गाँव, नगर, स्कूल और कारखाना अपनी भीतरी शान्ति अपने बल पर कायम न रख सकें। पुलिस स्वयं अशान्ति और अव्यवस्था का एक बड़ा कारण है।

जो देश अपना सामान्य जीवन पुलिस के बिना चला लेने का सफल प्रयोग कर लेगा वह सैनिक-शक्ति के बिना अपनी प्रतिरक्षा का प्रयोग भी कर सकेगा। उसके एकतरफा कार्य (यूनिलेटरल ऐक्शन) से नया अन्तर्राष्ट्रीय जीवन प्रकट होगा।

निक्सन ने अमेरिकी कांग्रेस के सामने कहा है कि बड़ी सैनिक तैयारी शान्ति की शत्रु नहीं, उसकी संरक्षिका है। कैसे? निक्सन के मन में अमेरिका की प्रभुता है। लेकिन हम यह देख रहे हैं कि बड़ी शक्तियाँ जितनी ही ज्यादा सैनिक तैयारी करती जा रही हैं महायुद्ध से वे उतनी ही अधिक भयभीत होती जा रही हैं। शक्ति-सन्तुलन का काँटा उन्हें अक्सर चुभ रहा है। उनका मनोबल टूटता जा रहा है। इतना ही नहीं, बड़ी सेनाएँ अपनी नैतिक शक्ति खोती जा रही हैं। वियतनाम में अमेरिकी और बंगला देश में पाकिस्तानी फौजों की सैनिक-सुलभ वीरता कहाँ चली गयी? युद्ध के नाम में नृशंसता का परिचय देकर वे किस शान्ति का संरक्षण करेंगी?

अमेरिका और चीन दाँत पीसकर रह गये, लेकिन यहिया और यहियाशाही को नहीं बचा सके। बंगला देश मुक्त होकर रहा। क्या इस घटना में कोई संकेत नहीं है? इस घटना में आनेवाली दुनिया के लिए एक बड़ा संकेत छिपा हुआ है। वह यह है कि कल की दुनिया लोकशक्ति की है। इस संकेत को समझकर अगर छोटे देश अपनी भीतरी व्यवस्था में पुलिस से मुक्त हों, दैनन्दिन जीवन को छोटी इकाइयों में विकेन्द्रित करें, राष्ट्रवाद का अहंकार छोड़कर क्षेत्रीय महासंघ बनायें, आपसी साझा बाजार कायम करें, और बड़े देशों का भय और अन्धानुकरण छोड़ दें, तो कोई कारण नहीं कि उन्हें विवशता का जीवन जीना पड़े। मुख्य प्रश्न है छोटे देशों के भीतरी गृहयुद्ध और पड़ोसी के साथ युद्ध के अन्त का। छोटे देश बड़े देशों के हाथ अपनी आजादी गिरवी रखकर न जीयें। वे देख लें नये युग के नये क्षितिज पर लोकशक्ति की नयी लाली फैल रही है। ●

आत्मनिर्भरता तथा गरीबी की समस्या

—तारकेश्वर प्रसाद सिंह

गत वर्ष संसदीय चुनाव के समय सत्तारूढ़ कांग्रेस ने यह घोषणा की थी कि वह सत्ता में पुनः आने पर गरीबी दूर करने का प्रयत्न करेगी। चुनाव के बाद शीघ्र ही बंगला देश की समस्या उभरकर सामने आयी। भारत पर युद्ध थोपा गया और भारत ने बंगला देश को मुक्त कराने में सफलता पायी। इस युद्ध के दरम्यान संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने भारत को आर्थिक सहायता देना बन्द कर दिया। बहुत से पूंजीपति देश संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पिछलग्गू हैं। यह डर है कि वे भी भारत की आर्थिक सहायता की रकम में कटौती कर दें। इस कारण भारत सरकार यह कह रही है कि आर्थिक निर्भरता प्राप्त करना आवश्यक है। इस प्रकार अब भारत के लिए गरीबी दूर करना तथा आत्मनिर्भरता दो प्रधान लक्ष्य हो गये हैं।

पूंजी तथा उत्पादन

आज दुनिया में उत्पादन बढ़ाना लक्ष्य हो गया है। सभी देशों में उत्पादन के समय ही लाभ के रूप में या करके रूप में या दोनों रूप में अतिरिक्त धन पूंजीपति या सरकार प्राप्त करती है। पूंजीवादी देशों में पूंजीपति तथा सरकार और साम्यवादी देशों में सरकार यह अतिरिक्त धन प्राप्त करती है। यह अतिरिक्त धन का किस प्रकार से उपयोग किया जाए, इसका निर्णय कुछ मुट्ठी भर लोगों के हाथों में होता है। पूंजीवादी देशों में निर्णय पूंजीपतियों, राजनीतिक पार्टी के ऊंचे अधिकारियों तथा ऊंचे सरकारी कर्मचारियों तक सीमित रहता है। साम्यवादी देशों में पूंजीपति के अलावा और लोग भी निर्णय में भाग लेते हैं। साम्यवादी देशों में निजी पूंजी की व्यवस्था समाप्तप्राय-सी है। पर उन देशों में निर्णय की व्यवस्था बहुत ही केन्द्रित है। चूंकि भारत में निजी सम्पत्ति तथा निजी पूंजी रखने की छूट है अतः यह एक पूंजीवादी देश है। हां, यहां पर राज्य की पूंजी निजी पूंजी के अनुपात में दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, पर जनता जहां की वहां है।

आज दुनिया के हर देश तथा हर व्यवस्था में पूंजी को अधिक-से-अधिक महत्त्व दिया जा रहा है। उत्पादन के और साधन गौण माने जाते हैं। यही बात अपने देश में भी लागू होती है। अभी तक यहां यह समझा जाता रहा है कि देश में उत्पादन बढ़ाने के लिए अधिक पूंजी की आवश्यकता है। देश में पूंजी का निर्माण पर्याप्त मात्रा में नहीं हो सकता। इस कारण विदेशी पूंजी प्राप्त करना आवश्यक है। विदेशी पूंजी प्राप्त होने पर विदेशी मशीन तथा अन्य उपकरण खरीदने में आसानी होगी। अपना निर्यात इतना अधिक नहीं है कि उससे उत्पादन बढ़ाने के पर्याप्त सामानों का आयात किया जा सके।

प्रायः आर्थिक और राजनीतिक सत्ता एक दूसरे के पूरक होते हैं। जिस व्यक्ति या वर्ग या देश के हाथ में आर्थिक अधिकार होते हैं उसके अधिकार में राजनीतिक सत्ता भी होती है। सहायता देनेवाले देश, विशेषकर बड़े देश किसी-न-किसी प्रकार का राजनीतिक दबाव भी डालते हैं। बंगला देश की समस्या को लेकर यह बात स्पष्ट हो गयी है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने भारत पर दबाव डालने का प्रयत्न किया तथा आज भी उस दिशा में प्रयत्नशील है। यदि हम चाहते हैं कि भारत राजनीतिक दृष्टि से सार्वभौम सत्ता-प्राप्त देश रहे तो आर्थिक-दृष्टिकोण से हमें आत्मनिर्भर होना पड़ेगा।

विदेशी सहायता

अभी तक भारतवर्ष को जो विदेशी सहायता मिली है उससे कई कारणों से हमें उतना लाभ नहीं हुआ है जितना उतनी धनराशि से सम्भव था। इसके कई कारण रहे हैं। (१) सहायता देनेवाले देश मदद की रकम से अपना ही माल बेचना चाहते हैं और माल का मनमाना मूल्य वसूल करते हैं। उन्हें चाहिए था कि वे विदेशी मुद्रा उपलब्ध कराते और इस बात की छूट देते कि हम अपनी सुविधा से सस्ते बाजार से सामान खरीद सकें। (२) सूद की दर बहुत ऊंचा रखते हैं। यदि अन्तर्राष्ट्रीय होड़ में सूद की दर कम रखते हैं तो अपनी वस्तुओं की कीमत बढ़ा देते हैं। (३) सहायता देनेवाले देश अपने देश का निर्यात, जो सहायता की रकम से खरीदी जाती है, सहायता प्राप्त करनेवाले देश को अपने ही जहाज में भेजते हैं। एक तो जहाज की दरें ऊंची करके लेते हैं, दूसरे सहायता की रकम से या अर्जित विदेशी मुद्रा से सहायता प्राप्त करनेवाले देश को जहाज-भाड़ा देना पड़ता है। यदि अपने पास जहाज हो और उनमें सामानों का आयात हो तो सहायता की रकम या अर्जित विदेशी मुद्रा बचे, जिससे विकास की सामग्री खरीदी जाए। (४) सहायता देनेवाले देश सहायता देते समय यह भी शर्त लगा देते हैं कि सहायता लेनेवाले देश को सहायता देनेवाले देश से अमुक-अमुक सामान तय किये हुए अनुपात में खरीदना तथा आयात करना पड़ेगा। ये अन्य सामान सहायता प्राप्त करनेवाले देश के विकास में सहायक नहीं होते हैं। (५) सहायता प्राप्त करनेवाले देश को सहायता देनेवाले देशों के बहुत से विशेषज्ञों को एक नियत अवधि के लिए अपने यहां नियुक्त करने के लिए कर्ज तथा सहायता की शर्त में शामिल करते हैं। इन विशेषज्ञों को बड़ी ऊंची रकम वेतन के रूप में देनी पड़ती है। ये विशेषज्ञ इस रकम का बड़ा भाग अपनी मातृभूमि को भेजते हैं। बहुत बार तो ऐसा होता है कि ऐसे विशेषज्ञ पर्याप्त संख्या में भारत में पाये जाते हैं, और विदेशी विशेषज्ञों की आवश्यकता नहीं रहती। भारतीय विशेषज्ञ बराबर कोटि के होकर भी कम वेतन पाते हैं। इससे

बढ़ती विषमता

१. योजना आयोग ने मान लिया है कि १९६७-६८ में जितनी विषमता थी उतनी ही आगे बनी रहेगी। हमने पहिले देखा है कि पिछले दशक में विकास का अधिक लाभ धनियों को और कम लाभ गरीबों को मिला है। सरकारी आँकड़ों के अनुसार १९६८-६९, यानी चौथी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में प्रति व्यक्ति उपभोक्ता-खर्च ४८८.४ रु० था। १९६०-६१ से १९६७-६८ के सात वर्षों में देहाती क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति उपभोक्ता-खर्च ३.८ प्रतिशत बढ़ा। इसमें, उच्च-मध्यम और धनी वर्गों के, जो देहाती जनता के ४० प्रतिशत हैं, उपभोक्ता खर्च में ४.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई, जब कि सबसे गरीब ५ प्रतिशत का उपभोक्ता-खर्च १.१ प्रतिशत घट गया। सबसे नीचे के ५ प्रतिशत से ऊपर के ५ प्रतिशत का सिर्फ १.६ प्रतिशत बढ़ा, और उनसे भी ऊपर के १० प्रतिशत का १.९ प्रतिशत। जैसे-जैसे हम ऊपर उठते जाते हैं यह वृद्धि भी अधिक होती जाती है, यहाँ तक कि उच्च-मध्यम-वर्गों के उपभोक्ता खर्च में ४.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई। अनुमान के अनुसार यह स्थिति १९८०-८१ में भी रहेगी।

२. शहरों की स्थिति इससे भी ज्यादा खराब रही। उनमें ऊपर के ४० प्रतिशत लोगों का उपभोग ४.८ प्रतिशत बढ़ा, जब कि सबसे नीचे के ४० प्रतिशत का गिर गया, यहाँ तक कि सबसे गरीब १० प्रतिशत का १५ से २० प्रतिशत तक गिरा।

३. आशा की जाती है कि १९६८-६९ में ग्रामीण क्षेत्रों में जो प्रति व्यक्ति उपभोग ४५६.६ रु० था वह १९८०-८१ में ६४४.१ रु० हो जायगा, यानी ४१.१ प्रतिशत बढ़ेगा। शहरी क्षेत्रों में यह वृद्धि ६२१.० (१९६८-६९) से ८६५.७ रु० (१९८०-८१) हो जायगी, यानी ३९.४ प्रतिशत अधिक होगी। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में अलग-अलग समुदायों के लिए यह वृद्धि अलग-अलग होगी, सबके लिए समान नहीं होगी।

देहात में ऊपर के ४० प्रतिशत का उपभोग ४७.८ प्रतिशत बढ़ेगा, और शहरों के उसी कोटि के ४० प्रतिशत लोगों का ५३.० प्रतिशत बढ़ेगा। दूसरी ओर देहात के सबसे गरीब ५ प्रतिशत का उपभोग ९.५ प्रतिशत घटेगा, जब कि शहरों के सबसे गरीब ५ प्रतिशत का १३.५ प्रतिशत घटेगा। नीचे के ५ प्रतिशत के ऊपर के ४० प्रतिशत लोगों का देहात में १५.५ प्रतिशत से २६.२ प्रतिशत बढ़ेगा, जब कि शहर में सिर्फ ५ प्रतिशत ही बढ़ेगा। इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि १९८०-८१ में विषमता १९६८-६९ की अपेक्षा अधिक हो जायगी।

अगर हम बिलकुल नीचे के १० प्रतिशत को छोड़कर उनके ऊपर के १० प्रतिशत पर ध्यान दें तो देहात में उनमें प्रति व्यक्ति का उपभोग १९८०-८१ में सिर्फ २२५.० रु० होगा, और शहर में २२८.७ रु०। १९६८-६९ में शहर के ऊपर के ५ प्रतिशत लोगों का उपभोग नीचे के १० प्रतिशत से ऊपर के दूसरे १० प्रतिशत के उपभोग का ९.१ गुना था, १९८०-८१ में यह बढ़कर १३.४ गुना हो जायगा।

४. योजना-आयोग मानता है कि १९६०-६१ के मूल्यों पर प्रति व्यक्ति कम-से-कम २० रु० प्रति माह उपभोग आवश्यक है। देहात और शहर में थोड़ा अन्तर स्वाभाविक है। १९६८-६९ के मूल्यों पर देहात के लिए प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष आय ३२४ रु० होनी चाहिए, और शहर के लिए ४८६ रु०। अगर आर्थिक विकास योजना-आयोग की आशा के अनुसार हो तो भी १९८०-८१ में देहात में जो लोग नीचे से २०-३० प्रतिशत की श्रेणी में हैं उनकी प्रति व्यक्ति वार्षिक आय ३१७.७ होगी, और ३०-४० प्रतिशत की श्रेणी के लोगों की २८२.९। इस प्रकार १९८०-८१ में देहात में लगभग ३० प्रतिशत लोग ३२४.०० के न्यूनतम स्तर के नीचे रहेंगे, जब कि १९६८-६९ में यह प्रतिशत ४० था।

शहरों में १९६८-६९ में ५० प्रतिशत लोग ४८६ रु० के न्यूनतम स्तर के नीचे थे १९८०-८१ में ५० की जगह ४० प्रतिशत लोग निम्नतम स्तर के नीचे रह जायेंगे।

अगर योजना के सभी लक्ष्य पूरे हो जायें तो १९८०-८१ में गरीबों की यही स्थिति रहेगी, किन्तु पिछले दस वर्षों का अनुभव बताता है कि जो सोचा गया वह पूरा नहीं हुआ। आगे खाई और भी अधिक चौड़ी होती दिखाई देती है। इसका अर्थ यह है कि गरीबों की स्थिति में सुधार नाम मात्र का ही हो सकेगा।

५. अगर पंचवर्षीय योजनाएँ अपना लक्ष्य पूरा करती जायें तो १९८०-८१ में ग्रामीण उपभोग प्रति व्यक्ति १९६८-६९ के ४५६.६ रु० से बढ़कर ४९५.७ रु० हो जायगा। इसका अर्थ यह है कि पूरे १२ वर्षों में वृद्धि केवल ८.६ प्रतिशत होगी। शहरों में यह वृद्धि १९६८-६९ के ६२१.०० प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष से बढ़कर ६६४.४ रु० होगी, जो १२ वर्षों में ७.० प्रतिशत होगी। मध्यम और नीचे के लोगों की स्थिति में सुधार इससे भी कम होगा। देहात में नीचे के ५ प्रतिशत लोगों को छोड़कर (नीचे से ही) ४० प्रतिशत लोगों का उपभोग ३.५ से ५.८ प्रतिशत के बीच बढ़ेगा, जब कि शहरों में नीचे के ४० प्रतिशत लोगों का ३.७ से ६.९ प्रतिशत घट जायगा। इस प्रकार देहात में ३५ प्रतिशत से अधिक और शहर में ५० प्रतिशत से कुछ ही कम लोग वांछित न्यूनतम उपभोग से नीचे रह जायेंगे।

शहरों में तो १९६८-६९ की अपेक्षा १९८०-८१ में न्यूनतम स्तर से नीचे रहनेवालों की संख्या बढ़ जायगी। स्पष्ट है कि गरीबी बढ़ेगी। हर व्यक्ति को न्यूनतम आय की गारन्टी हो, यह दिन १९८०-८१ के बाद भी कब आयेगा, कहा नहीं जा सकता। —प्रस्तुतकर्ता : रामकृष्ण

सर्वोदय की क्रान्ति निखरती नहीं !

—कार्यकर्ता की चिन्ता श्री धीरेन्द्र मजूमदार का चिन्तन—

प्रश्न : विनोबा, दादा द्वय (श्री दादा धर्माधिकारी तथा श्री धीरेन्द्र मजूमदार), जे० पी० आदि आदि के रहते भी क्रान्ति क्यों नहीं निखर रही है ? ये तो सभी युग-पुरुष हैं—आचरण बहुत पावन है, आदर्श बहुत ऊँचे हैं और सातत्य भी है। क्या हमारी व्यूह-रचना में तो गड़बड़ न हुई ? क्या हमने आरम्भ से ही तो गलती नहीं की ? क्या 'सत्याग्रह' में 'अन्याय का प्रतिकार' बिलकुल भुलाकर केवल 'भूदान-ग्रामदान' आन्दोलन में नहीं पड़े रहे ?

उत्तर : इस प्रकार की शंका इसलिए उठती है, कि हम अपनी क्रान्ति के सन्दर्भ में दो प्रश्नों पर सही विचार नहीं करते हैं। पहला, यह कि हमारी क्रान्ति का लक्ष्य 'अन्याय का प्रतिकार' नहीं है, बल्कि समाज के जिन प्रचलित मूल्यों, पद्धतियों या मान्यताओं के कारण अन्याय पलता है उनका निराकरण तथा नये मूल्यों, पद्धतियों या मान्यताओं की स्थापना है। दूसरा, यह कि यद्यपि काल प्रगतिशील है, लोक रक्षणशील होता है। लोक बदलना तब तक नहीं चाहता है, जब तक वह केवल वांछनीय नहीं, बल्कि जिन्दा रहने के लिए अनिवार्य भी है, ऐसा महसूस नहीं करता है।

अन्याय के प्रश्न पर यह भी समझना होगा कि ऐसी कोई सूची नहीं है, जिससे कहा जा सके कि समाज के अमुक-अमुक लोग अन्यायी हैं और अमुक-अमुक पीड़ित। अगर आप गहराई से अध्ययन करेंगे, तो करीब-करीब हर मनुष्य किसी बिन्दु पर अन्यायी है, तो किसी दूसरी बिन्दु पर अन्याय-पीड़ित भी है। इसी तरह वह शोषक तथा शोषित भी है। इसलिए अन्याय का या शोषण का प्रतिकार या प्रतिरोध करकर कोई चीज नहीं हो सकती है। इसका निराकरण ही हो सकता है। समाज के सर्वव्यापी अन्याय और शोषण का निराकरण तब तक असम्भव है, जब तक उसकी जननी, पद्धति और प्रथा के बदले नयी पद्धति या प्रथा का अधिष्ठान नहीं होता है। हमारी क्रान्ति का लक्ष्य नहीं बदला है, इसलिए वह क्रान्ति सम्पूर्ण रचनात्मक है, प्रतिकारात्मक नहीं। रचनात्मक प्रक्रिया की दुहरी व्यूह-रचना होती है—पहला अभियानात्मक, दूसरा संगठनात्मक। ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन में अब दोनों प्रक्रियाओं का समावेश हो रहा है।

अभी सर्वसामाजिक मनःस्थिति यह नहीं रही है कि प्रचलित पद्धति गलत है, बल्कि मान्यता यह है कि प्रचलित पद्धति ही सम्पूर्ण समाधानकारक है, और जिस बदल की बात विनोबा कह रहा है, वह आदर्श होने पर भी गगन-विहार है, व्यवहार्य नहीं। समाज में असन्तोष है, पर वह पद्धति के कारण नहीं, बल्कि उसके संचालक के विरोध में है। वे मानते हैं, उन्हें बदल दिया जाय, तो सब ठीक हो जायगा और इसीलिए प्रतिकार की चाह है। यह चाह, गांधीजी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता का जब संग्राम चला था, उसकी सफलता के कारण भी है। लेकिन वह आन्दोलन क्रान्ति नहीं, युद्ध था, यह हम भूल जाते हैं। उसका लक्ष्य, मूल्य या पद्धति बदलने का नहीं, संचालक बदलने का था। संचालक बदलने का आन्दोलन युद्ध होता है, क्रान्ति नहीं। समझना चाहिए कि क्रान्ति की व्यूह-रचना से युद्ध की व्यूह रचना भिन्न होती है। उस समय (या किसी भी समय) सामान्य जन गुलामी के मूल्य अथवा पद्धति को समाज के लिए कल्याणकारी नहीं मानता था। गुलामी असह्यनीय है, और वह मजबूरी का तत्त्व है। यह एहसास मनुष्यमात्र के लिए स्वाभाविक है। १८८५ से १९४२ तक आपने जिस प्रकार के चार मनुष्य के नाम गिना दिये हैं, उनसे कहीं श्रेष्ठ सैकड़ों महापुरुष जनता की गुलामी हटाने के आन्दोलन के लिए उद्बोधित करते रहे, तब कहीं रक्षणशील जनमानस को आलोड़ित किया जा सका था। उसी आलोड़न का दर्शन आप जनता की मान्यता के अनुसार 'कल्याणकारी पद्धति' के परिवर्तन के लिए करना चाहते हैं, सो भी बीस साल की अल्पावधि के अन्दर, यह अपेक्षा ही असम्भव लगता है।

दूसरी बात यह है कि क्रान्ति निखर रही है या नहीं इसकी समीक्षा आप युद्ध की भूमिका में करना चाहते हैं। युद्ध की प्रगति प्रत्यक्ष होती है और क्रान्ति की अप्रत्यक्ष। आप अगर वर्तमान आन्दोलन का अध्ययन करेंगे, तो आपको प्रत्यक्ष अनुभव होगा कि जहाँ शुरू में लोग इसे सामान्य भूमि-सुधार की दृष्टि से देखते थे, वहीं अब व्यापक पैमाने पर वह एक समाज-क्रान्ति का आन्दोलन है, ऐसा अनुभव कर रहे हैं। भूदान के बाद जिस समय आपने अपनी गतिविधि को ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम में केन्द्रित करना शुरू किया था, उस समय व्यापक रूप से मित्रों की यह शिकायत रही है कि विनोबा ने एक काम पूरा किये बिना ही दूसरा उठा लिया है, यद्यपि विनोबा ने शुरू से ही भूदान को क्रान्ति के प्राथमिक 'दस्तक' की संज्ञा दे दी थी। तो यह आन्दोलन सुधार-कार्य नहीं, क्रान्ति कार्य है, इतना ही समझाने में १९५६ से १९६६ तक लग गया। फिर आज के जमाने के व्यापक प्रचार और व्यापक प्रतिष्ठित संगठनों के अन्दर इस आन्दोलन ने अगर इस दिशा की ओर जनता का ध्यान खींचने भर आकृष्ट-मात्र ही कर लिया है, तो "क्रान्ति निखर नहीं रही है, यह शंका क्यों हो रही है ?"

मानना चाहिए कि आज

जैसे हजार बरस की गुलामी और शोषण के फलस्वरूप बेहोश जनता द्वारा पद्धति-परिवर्तन का निर्णय तथा पुरुषार्थ करना कोई आसान काम नहीं, जब कि मामूली विदेशी गुलामी को हटाने में सैकड़ों महापुरुषों को हड्डी गलाने की आवश्यकता हुई थी, तो प्रागैतिहासिक काल से प्रचलित मान्यता के अनुसार कल्याणकारी पद्धति को विनाशकारी समझकर, इसी बेहोश जनता द्वारा उसको पलटने का पुरुषार्थ सिखाने के लिए कितने हजार संकलित तथा समर्पित महानुभावों को हड्डी गलानी होगी, इसकी कल्पना कर लीजिए। अतएव आप जैसे तरुण मित्रों से मेरा निवेदन है, आप इस प्रकार की छिछली भूमिका पर सोचना छोड़ दें, और क्रान्ति की गहराई में पैठने का प्रयास करें।

सत्याग्रह

आपने "सत्याग्रह" का भी प्रश्न उठाया है, इसलिए सत्याग्रह को भी समझ लेना चाहिए। सत्याग्रह की प्रथम शर्त यह है कि जिस सत्य का आप आग्रह करना चाहते हैं, वह सत्य सापेक्ष है। वस्तुस्थिति यह है कि सार्वजनिक पैमाने पर समाज का कोई अंश अन्याय-मुक्त नहीं है, इसलिए अन्याय के विरोध में सार्वजनिक पैमाने पर सत्याग्रह नहीं हो सकता है। क्रान्ति के लिए सत्याग्रह कोई साधारण टेकनीक नहीं हो सकता, युद्ध में उसका प्रयोग हो सकता है। सत्याग्रह का प्रयोग स्थानीय तथा व्यक्तिगत भूमिका में ही हो सकता है। स्थानीय व्यक्तिगत भूमिका में, अमुक प्रसंग में कुछ विशिष्ट अन्याय का प्रतिकार सम्भव है। यह जो सोचा जाता है, सत्याग्रह से समाज का विचार निरसन सार्वजनिक पैमाने पर हो सकता है, भूल है। इसीलिए गांधीजी व्यक्तिगत सत्याग्रह पर बहुत जोर देते थे। उन्होंने राष्ट्रीय पैमाने पर जो प्रयोग किया था उसे उन्होंने "सिविल नाफरमानी" की संज्ञा दी थी। उन्होंने सत्याग्रह का उपयोग हमेशा स्थानीय तथा प्रासंगिक प्रश्न पर ही किया था, जैसे बारदोली-सत्याग्रह। अगर कुछ प्रश्नों पर सत्याग्रह का व्यापक प्रयोग हुआ भी था तो वह युद्ध विदेशी सत्ता के स्थान पर स्वदेशी सत्ता की स्थापना के युद्ध की भूमिका में ही था। अगर क्रान्ति का अर्थ मूल्य परिवर्तन है, मान्यता-परिवर्तन है, और चूंकि मूल्य की स्वीकृति तथा मान्यता सार्वजनिक होती है, इसलिए क्रान्ति शिक्षण-प्रक्रिया से ही सम्भव है, किसी प्रकार की प्रतिकारात्मक पद्धति से नहीं।

आप अन्याय का निराकरण करना चाहते हैं, शासन तथा शोषण-मुक्ति चाहते हैं, मिल्कियत की भावना हटाना चाहते हैं। आपको समझना चाहिए कि शासन की माँग सार्वजनिक है, मिल्कियत की भावना सार्वजनिक है और अन्याय तथा शोषण शासन तथा मिल्कियत की भावना का परिणाम-मात्र है। अनादिकाल से मनुष्य शासन की आराधना तथा पूजा करता रहा है, और सर्वोपरि धनाढ्य व्यक्ति से लेकर 'फुटपाथ' पर बैठ कर भीख माँगनेवाले में भी मिल्कियत की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। 'फुटपाथ' पर बैठे हुए भिखारियों के लिए, जहाँ पर वह बैठता है, वह स्थान उतने ही महत्व का है, जितना बिड़ला के लिए उसकी सारी सम्पत्ति। उस भिखारी के स्थान पर अगर कोई दूसरा भिखारी बैठ जाये, तो उसी प्रकार की फौजदारी हो जायेगी, जिस तरह किसी जमीन-मालिक की जमीन पर दूसरे व्यक्ति द्वारा हल चलाने से हो जाती है। फिर, कौन किसके साथ "सत्याग्रह" करेगा? यही कारण है, विनोबा कहते हैं, अहिंसा में 'रेसिस्टेंस' (प्रतिकार) नहीं होता, 'असिस्टेंस' (सहकार) होता है, और आज हमारे किसी मित्र को बताने की जरूरत नहीं है कि क्रान्ति अहिंसा से ही हो सकती है।

(३० दिसम्बर, १९७१)

क्या भारत को अणुबम बनाना उचित है?

—स्व० डा० विक्रम साराभाई

दिनांक ३० दिसम्बर, १९७१ को देश के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक और अणुशक्ति-आयोग के अध्यक्ष डा० विक्रम साराभाई का अचानक हृदय गति रुक जाने से देहान्त हो गया और इस प्रकार विज्ञान-जगत का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र सदैव के लिए विलुप्त हो गया। स्व० डा० विक्रम साराभाई वैज्ञानिक होने के साथ ही एक विचारक भी थे। यह लेख १ जून १९६६ को बम्बई में एक पत्रकार-सम्मेलन में व्यक्त किये गये उनके विचारों पर आधारित है। देश की वर्तमान परिस्थिति के सन्दर्भ में उनके ये विचार दिशाबोधक हैं जबकि आज अणुबम बनाने की माँग भारत-सरकार से की जा रही है।

पत्रकार : अणुबम के बारे में आपके क्या विचार हैं?

डा० साराभाई : यदि मैं आपके इस प्रश्न का उत्तर ऐसी प्रस्तावना के साथ दूं जो सीधा उत्तर न हो, तो बुरा मत मानिए। मेरा ख्याल है कि हम पहले अपने-आप से यह पूछें कि हमें अणुबम चाहिए किसलिए? एक बात तो स्पष्ट है कि यह एक ऐसा लक्ष्य प्राप्त करने का साधन-मात्र है जो हमारा नहीं हो सकता। अणुबम ने हिरोशिमा तथा नागासाकी में जो भयंकर नुकसान किया उससे सभी लोग भयभीत हो उठे। मैं नहीं समझता कि लोग ऐसी भयंकर चीज के साथ जीना पसन्द करेंगे। किन्तु यह सच है कि हम सबको अपनी सुरक्षा की चिन्ता होती है। मुझे लगता है कि प्रत्येक मनुष्य को तथा राष्ट्र को अपनी सुरक्षा की चिन्ता करनी ही चाहिए। हमें यह देखना चाहिए कि किसी राष्ट्र की स्वतंत्रता तथा उसकी सभ्यता का अतिक्रमण न हो। पर यहाँ मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि जिस प्रकार हमारी सुरक्षा को बाहर के आक्रमण से खतरा है और वैसे उसे भीतर से भी हो सकता है। मुझे लगता है कि यदि हम देश की आर्थिक

विकास को गति कायम न रख सके तो बहुत ही गम्भीर कठिनाइयों का अनुभव करेंगे और भारत की एकता नष्ट होगी। इसलिए जब हम सुरक्षा की बात करते हैं तो हमें देश के बाहर तथा भीतर के आक्रमणों का विचार करना चाहिए। यह भी सोचना चाहिए कि हम देश के विकास तथा सैनिक सुरक्षा के बीच कैसे सन्तुलन रख सकते है, राष्ट्रीय विकास तथा सुरक्षा के लिए हम कहाँ तक विदेशी सहायता पर निर्भर रह सकते हैं। यही कठिन प्रश्न आज हमारे सामने है। समस्या यह है कि देश के साधनस्रोत का उत्पादन तथा समाज-कल्याण के लिए प्रयोग करें या सैनिक-सुरक्षा के लिए।

जो लोग सैनिक-नीति से परिचित है वे यह जानते हैं कि कागज का शेर हमारी रक्षा नहीं कर सकता। इसका यह मतलब हुआ कि हम अपनी सैनिक-शक्ति के बारे में किसी को टग नहीं सकते। यदि हम यह चाहते हैं कि हम अपनी रक्षा अणुबम द्वारा कर सकें जैसे कि रूस तथा अमेरिका कर सकते हैं, तथा शत्रु हमारे अस्त्रों के कारण हम पर आक्रमण न करें, तो यह केवल एक बम-विस्फोट से नहीं होगा। इसके लिए सम्पूर्ण सुरक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए जिसमें प्रक्षेपास्त्र, दूर तक जानेवाले क्षेपणीय अस्त्र होने चाहिए। इसके लिए रडार आवश्यक होगा। विशेष प्रकार के धातु तथा वैद्युदणु सम्बन्धी (इलेक्ट्रोनिक्स) उद्योग का विकास करना होगा तथा औद्योगिक समाज की नींव रखनी होगी। यह सब हम कैसे कर सकते हैं? ऐसी बात तो नहीं है कि वैज्ञानिक एक नमूना आपके सामने रख दें, और फिर तुरन्त ही हमें आणविक सुरक्षा मिल जाय। उसके लिए तो देश की समूची सम्पत्ति लगानी होगी और बहुत से धन की जरूरत होगी। इसलिए जब सोचते हैं कि हमें बम बनाना है तो उसमें व्यय का प्रश्न उचित नहीं है। इसका सम्बन्ध तो अधिक महत्वपूर्ण बातों से है। आप मुझसे यह पूछ सकते हैं कि दो गज कपड़े की क्या कीमत होगी? किन्तु दो गज कपड़ा तब तक नहीं बन सकता जब तक आपके पास उसके बनाने के लिए करघा, मिल अथवा कोई अन्य साधन न हो। उसी प्रकार यदि हम अपनी रक्षा अमेरिका तथा रूस की भाँति परमाणु अस्त्रों से करना चाहते हैं तो उसके लिए कितना व्यय होगा, यह आप जानते ही हैं। वे अपना पैसा समुद्र में तो फेंक नहीं रहे हैं। उसे सैनिक-व्यवस्था पर ही खर्च कर रहे हैं। उनका व्यय शतश अरबों में हो रहा है। मुझे लगता है कि हम कितना धन लगा सकते हैं, यह सोचकर ही इस पर विचार करें। मैं प्रधानमंत्री से पूर्णतया सहमत हूँ कि केवल बम-विस्फोट से हमारी सुरक्षा बढ़ नहीं सकती।

प्रश्न मान लीजिए भारत सरकार अपना विचार बदल दे तो बम बनाने में हमें कितना समय लगेगा?

उत्तर यह तो सरकार इसमें कितना प्रयास करने को तैयार है इस पर निर्भर करता है। यदि मैं आपको एक मकान बनाने को कहता हूँ और आप उसे बनाने के लिए दस राजगीर लगाते हैं, तो आपका मकान चन्द दिनों में तैयार हो सकता है, किन्तु यदि आप केवल एक हो राजगीर काम पर रखते हैं तो उसमें अधिक दिन लगेंगे। यह तो हमारे राष्ट्रीय साधन स्रोत पर निर्भर करता है। कितना प्रयास आप करना चाहते हैं, उसपर निर्भर करता है। इसी प्रश्न का दूसरा उत्तर यह है कि भारत के वैज्ञानिक तथा औद्योगिक संसार के उच्च कोटि के वैज्ञानिकों में से हैं और यदि उन्हें सुविधा तथा मौका दिया जाय तो वे सब कुछ कर लेंगे।

प्रश्न : प्रक्षेपास्त्र (मिसाइल) व्यवस्था स्थापित करने में कितना समय लगेगा और कितना व्यय होगा?

उत्तर : प्रक्षेपास्त्र (मिसाइल) व्यवस्थापित करने के लिए? आज की परिस्थिति में हम ऐसा कर हो नहीं सकते। हमारे पास अभी औद्योगिक नींव नहीं है। इसका इस बात को अच्छी तरह समझ लीजिए। मैं नमूने के तौर पर प्रक्षेपास्त्र (मिसाइल)-व्यवस्था नहीं कहता। मैं अमेरिका-जैसी व्यवस्था की बात कह रहा हूँ। इसकी कल्पना तो कीजिए। इसके लिए पूर्व-सुनिश्चित करने की व्यवस्था होगी। एक उच्च कोटि की औद्योगिक नींव भी आवश्यक है। मुझे लगता है हमें एक-एक कदम जाना होगा। और, हम एक-एक ही कदम जा सकते हैं। हमारे चाहने-न-चाहने का इसमें कोई प्रश्न ही नहीं। हमारी बुनियादी अर्थ-व्यवस्था का विकास करने के लिए हमें विद्युदणु (इलेक्ट्रोनिक्स) सम्बन्धी तथा मिश्र धातु के उद्योगों को बढ़ाना होगा। यह हम तब तक नहीं कर सकते जब तक हमारे पास बढ़िया कृषि-व्यवस्था न हो। और, जब तक हमारा कुल राष्ट्रीय उत्पादन नहीं बढ़ता, तब तक हम कुछ भी कर नहीं सकते।

पत्रकार क्या हम नमूने के तौर पर ऐसा कर सकते हैं?

डा० साराभाई नमूने के तौर पर हम अवश्य ही बना सकते हैं। पर मैं तो उसे खिलौना ही कहूँगा।

पत्रकार आप नमूने के पक्ष में नहीं हैं?

डा० साराभाई नमूने के पक्ष में नहीं हूँ। मैंने ऐसा नहीं कहा। किन्तु अब आप वैज्ञानिक निर्णय नहीं पूछ रहे है। यह राजनीतिक निर्णय पर आधारित है, क्योंकि जैसा कि मैंने पहले ही कहा है भारत सरकार इसमें कहाँ तक शक्ति लगाना चाहती है, इसपर निर्भर करता है।

फिर उसी बात पर जोर देने के लिए मैं प्रश्न को दोहरा रहा हूँ। मैंने इसी परिकल्पना से आरम्भ किया था कि आपका प्रश्न भारत की सुरक्षा से सम्बन्ध रखता था। जो लोग भारत की सुरक्षा की चिन्ता करते हैं उनसे यह कहना चाहता हूँ कि उनकी सुरक्षा जैसे बाहरी आक्रमण से करनी है वैसे ही अन्दर से भी करनी है। और हमें इन दोनों के बारे

में सोचना चाहिए। इसके लिए हमें आर्थिक विकास तथा सैनिक तैयारी में सन्तुलन लाना होगा। यह सही सन्तुलन ढूँढ निकालना ही हमारी आज की सबसे बड़ी समस्या है। एटम बम से हमारी सुरक्षा नहीं हो सकती। यदि आप अमेरिका तथा रूस की तरह सुरक्षा चाहते हैं तो उसका मतलब और ही होता है और उसकी कीमत भी आप जानते हैं।

क्या आप अमेरिका की सैनिक-सुरक्षा का व्यय जानते हैं? यदि हम चीन अथवा अन्य किसी बड़े राष्ट्र के समान अपनी रक्षा-व्यवस्था चाहते हैं तो हमें उससे अधिक की ही व्यवस्था करनी होगी। हमें भी अस्त्र रखने के लिए जमीन के नीचे पक्के स्थान बनाने होंगे। और भी बहुत कुछ करना होगा।

पत्रकार : क्या आप चीन की बराबरी करने को तैयार हैं?

डा० साराभाई : जहाँ तक मैं मानता हूँ उसके विद्युदणु (इलेक्ट्रोनिक्स) सम्बन्धी उद्योग ने काफी प्रगति की है। और आधुनिक विज्ञान तथा उद्योगविद्या की प्रगति इसी पर निर्भर करती है। इसीसे विचारक तथा नियन्त्रण यन्त्र बनते हैं। मार्गदर्शक यन्त्र आदि भी बन सकते हैं। हाल ही में हमारी विद्युदणु-सम्बन्धी समिति की रिपोर्ट छपी है। इसके अनुसार यह उद्योग अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। फिर भी मैं यह नहीं कहता कि इसके कारण हम बम नहीं बना सकते। मैं तो केवल यह कहना चाहता हूँ कि हमें उच्च वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ इंजिनियरी उद्योग-धंधों का भी विकास करना होगा। इसीसे हमारी आर्थिक उन्नति होगी और हमारा लाभ होगा। यदि उत्तम कोटि का विद्युदणु-सम्बन्धी उद्योग हो तो हमारा बहुत ही लाभ हो सकता है। इससे हम पूँजी-उत्पादन करने में समर्थ होंगे। इसका उपयोग हम अधिक धान उपजाने में कर सकते हैं, पशु-पालन तथा खनिजों की खोज करने में कर सकते हैं। यह तो हुआ हमारा इस उद्योग द्वारा होनेवाला हानि का लाभ, और भविष्य में हम इससे अपनी सुरक्षा का प्रश्न भी हल कर सकते हैं। आप किसी उद्योग का विकास करना चाहें या नहीं, यह तो बाद की बात है, किन्तु यदि आप बुद्धिमान हैं तो आप ऐसे उद्योग चुनेंगे जिससे आपको शत्रु का प्रतिरोध करने की शक्ति मिल सके।

पत्रकार : क्या हम परमाणु बम बना सकते हैं?

डा० साराभाई : यह भी इसी बात पर निर्भर करता है कि हम इसमें कहाँ तक शक्ति लगा सकते हैं। इसमें राजनीतिक निर्णय की आवश्यकता है और सामाजिक निर्णय की भी। यदि आप परमाणु सुरक्षा की बात सोच रहे हैं तो मैं आपको स्पष्ट ही बता दूँ कि इसमें लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक है। और इसके लिए आपको ४००-५०० करोड़ डालर खर्च करने को तैयार होना चाहिए। लेकिन वह दूसरी बात है।

पत्रकार : पगवाश आन्दोलन के बारे में आपका क्या ख्याल है?

डा० साराभाई : मैं सामूहिक सुरक्षा के पक्ष में हूँ। शान्ति के कार्य करने के लिए हमें हर प्रकार से प्रयत्न करना चाहिए। यदि मुझे यह लगता है कि किसी एक कार्य में संसार का भला हो सकता है तो मैं उसका समर्थन अवश्य करूँगा। मैं किसी भी बात को एकदम अच्छा अथवा एकदम बुरा नहीं समझता। किन्तु मैं उसके पक्ष विपक्ष में, सन्तुलन में विश्वास करता हूँ। मेरा यह विश्वास है कि आणविक युद्ध मनुष्य के अस्तित्व को ही खतरा रहा है। यदि विश्वयुद्ध के रूप में आणविक युद्ध हो जाय तो यह संसार का सबसे भयंकर कार्य होगा। मैं यह किसी हिचकिचाहट से कहता हूँ, और यह कोई नयी बात नहीं है। ऐसे कई लोगों ने कहा है। इसीलिए हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि संसार ऐसे रास्ते न जाय जहाँ हमारा अस्तित्व ही खतरे में रहे।

पत्रकार : यदि भारत बम बनाने का निश्चय कर ले तो क्या वह तुरन्त ही अपनी औद्योगिक क्षमता बना नहीं सकता?

डा० साराभाई : हम उसे बनाने के लिए कितने आतुर हैं, इसपर निर्भर करता है। यदि आप यह तय करें कि सभी विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों का एक गुट बनाकर उसे विद्युदणु-सम्बन्धी उद्योग का विकास करने में लगा दें तो यह बड़ी अच्छी बात होगी। किन्तु मैं यह मानता हूँ कि किसी भी उद्योग का विकास हमारे आर्थिक लाभ के लिए होना चाहिए। केवल बम बनाने के लिए नहीं। यदि हम स्टील, विद्युदणु, मिश्रधातु, विशेष प्रकार के धातु और खाद जैसी उपयोगी वस्तुओं पर ध्यान दें तो हमारी सैनिक शक्ति बढ़ेगी और हमारे देश का रूप ही बदल जायगा।

पत्रकार : परमाणु-डर के बारे में आपका क्या ख्याल है?

डा० साराभाई : यदि आप वर्षा में जा रहे हैं और आपके हाथ में छाता है तो आप में आत्मविश्वास होगा। यदि आपका लड़का आपके सिर पर छाता पकड़ रहा है तो आपके आत्मविश्वास की मात्रा कुछ कम होगी क्योंकि हो सकता है आँधी आते ही आपका लड़का छाता लेकर भाग जाय। यदि आपका नौकर आपके सिर पर छाता पकड़ रहा है तो मुमकिन है कि वह छाता आपके सिर पर रखने की बजाय अपने सिर की ही रक्षा करेगा। इसी प्रकार परमाणु-डर का प्रश्न उतना सरल नहीं है। इसमें विश्वास तथा भरोसे का प्रश्न है। आपके सिर पर छाता पकड़नेवाले का आप कहाँ तक विश्वास करते हैं, यही मुख्य प्रश्न है। और जैसा कि मैं समझता हूँ यह विश्वास किसी लिखित संधि पर निर्भर नहीं करता, बल्कि उस राष्ट्र का आप की सुरक्षा में क्या स्वार्थ है, इस पर आधारित है। मैं परमाणु-डर के विरुद्ध नहीं हूँ। मैं तो केवल यही कहता →

भूदान-यज्ञ ३१-१-७२ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३६४

नशाबन्दी के लिए संशोधित कानून

इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा उ० प्र० आबकारी कानून की धारा २० (ए) को अवैध करार दिये जाने और तत्पश्चात् उत्तराखण्ड में नशाबन्दी समाप्त किये जाने पर उत्तराखण्ड में नवम्बर के प्रथम सप्ताह में शराब की दूकानें खुलीं, उन पर पिकेटिंग हुआ। राज्य सरकार ने मद्यनिषेध लागू करने के लिए २७ दिसम्बर '७१ को एक अध्यादेश निकाला जो ६ जनवरी '७२ को उ० प्र० विधानसभा में पारित किया गया। इस विधेयक की विशेषता यह थी कि यह सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया, परन्तु इसके पश्चात् भी पौड़ी और टिहरी गढ़वाल में शराबबन्दी लागू करने के लिए आदेश नहीं हुए हैं। नये अधिनियम की मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

१—उ० प्र० के इक्साइज एक्ट १९१० में संविधान के अनुच्छेद ४७ में राज्य की नीति के निर्देशक तत्त्वों के अनुसरण में मद्यनिषेध के प्रसार तथा प्रवर्तन को सुकर बनाने के लिए यह अधिनियम बनाया गया है।

२—आबकारी कानून की धारा २० (४) तथा धारा २० ए और २० बी, जिन्हें हाइकोर्ट ने अवैध करार दिया था, निकाल दी जायें।

३—मूल अधिनियम में मद्यनिषेध के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध शीर्षक एक नया अध्याय ६-क जोड़ा गया है, अब राज्य सरकार उ० प्र० या उसके किसी भाग में अथवा वहाँ से किसी मादक वस्तु के आयात या निर्यात को निषिद्ध कर सकती है या किसी मादक वस्तु के परिवहन को निषिद्ध कर सकती है।

४—मादक वस्तु को निषिद्ध करने की शक्ति का प्रयोग राज्य में मद्यनिषेध के क्रमिक प्रसार करने की नीति के अनुसरण में किया जा सकता है और निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर विभिन्न क्षेत्रों का चयन किया जा सकता है।

(क) तीर्थ-स्थान, शिक्षा-केन्द्र या औद्योगिक क्षेत्र के रूप में किसी क्षेत्र की विशेषता।

(ख) स्थानीय निवासियों की सामान्य आर्थिक स्थिति, जिसके अन्तर्गत उनके आहार, पुष्टि-तत्त्व और जीवन-स्तर भी है।

(ग) स्थानीय जनमत।

(घ) कोई अन्य सुसंगत तत्त्व जो राज्य सरकार की राय में लोकहित में सारवान हो।

५—इस कानून के अन्तर्गत किसी क्षेत्र में मद्यनिषेध लागू करने पर लाइसेंस देनेवाला प्राधिकारी, लाइसेंस को, जहाँ तक उसका सम्बन्ध मद्य-निषेध क्षेत्र से है, बिना नोटिस तुरन्त निरस्त (रद्द) कर सकता है। यदि ठेकेदार ने पहले से लाइसेंस फीस पेशगी जमा कर दी हो तो शेष लाइसेन्स फीस उसके ऊपर सरकार की बकाया कम कर लौटा दी जायेगी। लाइसेन्स-धारी सरकार से लाइसेन्स रद्द करने पर मुआवजा नहीं माँग सकता।

इस प्रकार इस दलील में कोई सार नहीं है कि मार्च के अन्त तक मौजूदा शराब के ठेके चलने दिये जायँ। अप्रत्यक्ष रूप से इसका अर्थ जनता को तबाह करना और शराब के समर्थकों की शक्ति बढ़ाकर शराबबन्दी के लिए जटिल समस्याएँ पैदा करना होगा।—सुन्दरलाल बहुगुणा

नोआखाली में गांधीवादियों की हत्या

इन्दौर, १३ जनवरी। सर्वोदय प्रेस सर्विस के कलकत्ता केन्द्र को यह सखेद जानकारी मिली है कि हाल ही में हुए भारत-पाक-युद्ध के दौरान बंगला देश स्थित नोआखाली आश्रम के श्री मदनमोहन चट्टोपाध्याय और श्री देवेन्द्रनारायण घोष की पाक सैनिकों द्वारा हत्या कर दी गयी है। दोनों वरिष्ठ और निष्ठावान गांधीवादी सेवक सन् १९४६-४७ के दौरान दंगों के समय महात्मा गांधी के शान्ति मिशन के साथी थे और उसके बाद से वहीं अन्त तक अवर्णनीय मुसीबतों और खतरों का सामना करते हुए डटे रहे। २५ मार्च, १९७१ को पूर्व बंगाल में पाकिस्तानी आक्रमणों द्वारा मृत्यु की धमकी देने के बावजूद भी इन लोगों ने अपने स्थान से हटने से इनकार कर दिया था। लगभग सात दिन पूर्व बंगाल के कई ग्रामीणों के साथ ही इन लोगों को भी मौत के घाट उतार दिया गया।

दक्षिण निवासी गांधीजी के एक अन्य सहयोगी श्री सत्यनारायण का भी कुछ पता नहीं है। ये भाई भी गांधीजी के मिशन के अनुयायी थे और जिन्होंने नोआखाली में ही रहकर अपना सेवा-कार्य जारी रखा था।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

कर्नाटक में ग्रामदान : कुछ अनोखे अनुभव

विनोबाजी के आवाहन पर जिन दो विधायकों ने इस्तीफा दिया था उनमें से एक हैं श्री सदाशिवराव भोसले। कर्नाटक में श्री सदाशिवराव भोसले के बारे में सर्वत्र सद्भावना दिखाई दी। महाजन-घराने में जन्म हुआ है पर वृत्ति में जरा भी महाजनी की झलक नहीं है। उनकी सेवा और त्याग के कारण ही दिनांक ९ से १७ जनवरी तक बेलगाँव जिले में शान्ति-पुष्टि का जो अभियान चला उसमें २८ ग्रामदान मिले। इनमें से २० गाँवों में ग्रामसभाएँ बनीं। कुल ६५ एकड़ भूमि बीसवें हिस्से के तौर पर मिली। बेलगाँव जिले के इस क्षेत्र में भूमि की कीमत ४ हजार से लेकर १५-२० हजार रुपये एकड़ है। अत छोटा-सा दिलनेवाला जमीन का टुकड़ा छोड़ना भी किसान के लिए भारी था। किसान काफी प्रगतिशील हैं। अत अच्छी फसल होती है। पदयात्रा में करीब २५-३० लोग पाँच टोलियों में घूमे। पर १० एकड़ के ऊपर का मालिक शायद ही किसी को मिला हो। ज्यादातर आधे से पाँच एकड़ तक के किसान पाये गये। अत: गाँवों में भूमिहीनों की संख्या बहुत कम है। बेलगाँव से करीब १० मील की दूरी का यह २१ गाँवों का क्षेत्र अभियान के लिए चुना गया था। शहर पास में होने से काफी जागृति इन देहातों में पायी गयी। कुछ गाँवों में शराब काफी चलती है। आश्चर्य की बात है कि शहर के पास होते हुए भी गाँवों में राजकीय दलबन्दी या गुटबन्दी करीब-करीब नहीं के बराबर है। अत. गाँवों में झगड़े कम हैं।

बेलगाँव शहर के कारखानों में गाँव-गाँव से काफी किसान मजदूरी के लिए जाते हैं। अलमगे हजार-बारह सौ बस्ती का छोटा-सा गाँव। पर करीब ५०० स्त्री, पुरुष और बच्चे बेलगाँव शहर में हर रोज काम करने के लिए जाते हैं। ८ से १२ साल के छोटे-छोटे बच्चे भी रखवाली का काम करते हैं। और रात में ३ बजे पैदल घर लौटते हैं। सिवाय कृषि के अन्य कोई भी धन्धा गाँवों में बचा नहीं है। गाँवों की श्रम-शक्ति के साथ-साथ गाँव का सम्पूर्ण दूध भी चाय के लिए शहर में चला जाता है। अत' बच्चों के लिए गाँव में दूध, छाछ कुछ भी नहीं बचता। इस तरह से अगल-बगल के देहातों का शोषण करके शहर दिन-दूनी-रात-चौगुनी गति से बढ़ता चला जा रहा है। शहर पास में होने से शिक्षण का प्रतिशत भी काफी ऊँचा है। हर देहात में १० से १५ तरुण मिलते हैं जो या तो मैट्रिक पास हैं और खाली घर बैठे हैं या कालेज में पढ़ रहे हैं।

काफी अनुभवी वयोवृद्ध लोगों ने हमें सलाह दी कि हम गोडवाड में सभा न करें, क्योंकि लोग बहुत शराब पीते हैं। वे सभा में आकर ऊधम मचायेंगे। वहाँ के नौजवानों के लिए तो यह एक आवाहन था। कडोली (सदाशिवराव का गाँव) में से ६ तरुण-शान्तिसैनिक आये, जिनमें दो लड़कियाँ भी थीं। आते ही गाँव के नौजवानों को उन्होंने संगठित किया और जुट गये सभा की तैयारी में। नौजवान जो काम उठा लेते हैं भला वह काम पूरा हुए बिना रह सकता है! गाँव की बहनें, नौजवान, बच्चे, सब सभा में आये और अच्छी सभा हुई। दूसरे दिन ये सब जवान जुट गये प्राप्ति के काम में और गाँव सकल्पित ग्रामदान हुआ। इस बिखरी युवा-शक्ति को संगठित करके योग्य मार्गदर्शन मिले तो देश का कायापलट बहुत थोड़े समय में हो सकता है। बिना मार्गदर्शन के आज युवक-वर्ग भटक रहा है। आज की शिक्षण-संस्थाओं में उनका मन नहीं लगता। पदयात्रा में ये जवान कितनी जिज्ञासा से इस विषय में मुझसे चर्चा करते थे। १६ साल की उस नन्दिनी ने (सदाशिवराव की इकलौती लाड़ली लड़की) आज की शिक्षा के विरुद्ध बगावत की और कालेज-

---

→यदि आप सुरक्षा ढूँढ रहे हैं तो सचमुच की सुरक्षा की तलाश करें। ऐसी सुरक्षा, जिससे आप रात में शान्तिपूर्वक सो सकें। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ जो लोग अणुबम के पक्ष में शायद असुरक्षित महसूस कर रहे हों। यदि हम कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करें जिससे अमेरिका-जैसे राष्ट्र हमें भी अपनी आणविक सुरक्षा का आश्वासन दे सके तो यह उपयोगी सिद्ध हो सकता है। फिर भी यह इस बात पर निर्भर करता है कि कौन हमें सुरक्षा दे रहा है और कैसे दे रहा है।

पत्रकार : हमारे आत्मविश्वास का क्या होगा ?

डा० साराभाई : आत्मविश्वास का प्रश्न बहुत ही अच्छा है। मुझे लगता है कि प्रत्येक राष्ट्र को स्वाभिमानी होना चाहिए और अपना सिर ऊँचा रखना चाहिए। मैं इसे बहुत जरूरी समझता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि हमारे लोगों में यह धारणा फैली हुई है कि हमारे पड़ोसी हमसे आगे बढ़ गये हैं। पर मैं यह मानता हूँ कि हमें ठोस प्रगति करनी चाहिए, ऐसी प्रगति जिससे सारे देश का कल्याण हो। बम-जैसी निरर्थक चीज हमें नहीं चाहिए। हमारी प्रगति सच्चाई पर आधारित होनी चाहिए, केवल दिखावे के लिए नहीं। यदि आप देश में आत्म-विश्वास की भावना चाहते हैं तो वह दिखावटी प्रगति पर अधिक दिनों नहीं टिक सकती। विज्ञान तथा उद्योगविद्या केवल आणविक क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि देश के विकास के लिए कई क्षेत्रों में उन्नति कर सकते हैं।

हम चाहे वैज्ञानिक हों या नहीं, हमें इस कार्य में जुट जाना चाहिए। इस प्रकार हम बाहर के आक्रमण से तथा भीतरी तनावों से अपनी सुरक्षा कर सकते हैं। यही इस कहानी का मूल तत्त्व है। ●

छोड़कर योग्य शिक्षा की खोज में निकल पड़ी। वह भोला-भाला, श्रद्धावान शिवाजी रोज यही सोचते हैं कि क्या इस शिक्षा से मेरा और देश का भला होगा? विमाया आदि उनके साथी रात के बारह-बारह बजे तक इसी की चर्चा करते थे। बड़े बेचैन थे।

महाराष्ट्र के जलगांव जिले की पदयात्रा से महाराष्ट्र के हम ६ साथी यहाँ मदद के लिए आये थे। यहाँ हमने पाया कि बीसवाँ हिस्सा भूमि देने की बात सुनते ही किसान के मन में घबड़ाहट पैदा होती थी। यहाँ हमने बेश बहुत कम पाया। बहुतों ने बेहद स्नेह दिया। इन्दिराजी के प्रधानमंत्री बनने के बाद, जो भी अच्छे-बुरे काम हुए हैं, उनके बारे में मतभेद हो सकता है, परन्तु उनके प्रधानमंत्री बनने के कारण देशभर की स्त्रियों में बेहद जागृति आयी है, कुछ स्वाभिमान उनमें जागृत हुआ है। इसकी प्रतीति सभाओं में बड़ी संख्या में स्त्रियों की उपस्थिति से होती थी। कहीं-कहीं तो पुरुषों से भी ज्यादा संख्या में बहनें सभा में आती थीं और बड़े ध्यान से सुनती थीं।

कडोली की ग्रामसभा बनी और भूमि का बँटवारा हो रहा था। सिर पर पल्ला लिये एक बहन आयी और हमें कब भूमि मिलेगी, पूछने लगी। ग्रामदान संकल्प-पत्र पर अगले गाँव के ग्रामवासियों से दस्तखत लेने का काम चल रहा था। एक बहन ने दरवाजे में से ही हमें पुकारा, हमें बैठने के लिए कहा और कहा कि हमारे पास इंच भर भी जमीन नहीं है। भूमि का बँटवारा करते समय हमारा भी ख्याल रखना, यह जताने लगी। क्या बहनें और क्या भूमिहीन धीरे-धीरे आवाज उठाने लगे हैं, खुलेआम भूमि की माँग करने लगे हैं, यह खुशी की बात है।

गाँव के बड़े-बड़े जमीदार, नौकरी-धन्धा या बच्चों के शिक्षण के लिए बेलगांव शहर में आकर बसे हैं। दो दिन उनसे भूमि माँगने का कार्यक्रम रखा था। सदाशिवराव के पिताजी साथ थे। उच्च रक्तचाप से वे बीमार थे। मना करने पर भी साथ चले। 'यह पवित्र काम है। मदद करनी ही चाहिए। बीमार पड़े तो भी हर्ज नहीं।' कहकर सुबह से शाम तक काम में जुटे रहे। जिन-जिन के पास गये सबने बीसवाँ हिस्सा भूमि देने की बात स्वीकार की। कई जमीदारों ने कहा—'कौन-सी भूमि देनी है, कितनी देनी है, आप ही तय करके घोषणा कर दीजिए हमारी ओर से।' कितना विश्वास था उनका सदाशिवराव के पिताजी के प्रति! सदाशिवराव इस बात का ध्यान रखते थे कि केवल रद्द जमीन न मिले, बल्कि छोटे-बड़े सभी किसानों से वे सिंचाई की जमीन का भी बीसवाँ हिस्सा माँगते थे। जिन जमीदारों की एक से अधिक ग्रामदानी गाँवों में जमीन थी उनसे उस गाँव की जमीन का बीसवाँ हिस्सा लिया। ऐसे भी बहादुर जमींदार मिले जिन्होंने अपनी ५० साल की जिन्दगी में अभी तक अपनी जमीन के दर्शन तक नहीं किये थे। कई ऐसे थे जिन्हें यह पता नहीं था कि उनकी किस गाँव में कितनी और कैसी भूमि है। ऐसे हैं हमारे यहाँ के ये बड़े किसान।

इस विचार के प्रति लोगों में काफी आकर्षण पाया गया। अतः इस पदयात्रा को कुछ अंश में लोकयात्रा का स्वरूप प्राप्त हो गया था। एक गाँव के कुछ लोग दूसरे गाँव में आते थे हमारे साथ, और ग्रामदान करने के लिए लोगों को समझाते थे।

आन्ध्र की तरह ही यहाँ भी कुटुम्ब में काफी सदस्य होते हैं। एक ही मकान में कहीं कहीं ११ चूल्हे भी पाये गये। मनुष्य और जानवर का भेद यहाँ समाप्त-सा है। जिस घर में आदमी रहते हैं वहीं जानवर भी रखे जाते हैं। कैसी भीषण जिन्दगी होगी वह, आप कल्पना कर सकते हैं। इस बार सघन काम करना था अतः जान बूझ कर कम गाँव लिये गये थे। श्री सदाशिवराव तथा श्री ठाकुरदास बंग की एक हमदर्द टोली थी। श्री जोग से हर रोज हर टोली के साथ सम्पर्क करती थी और कहीं गाड़ी अटकी हो तो निकालने में फौरन मदद देती थी। श्री सदाशिवराव ने यद्यपि पिछले १० से १५ सालों तक इस क्षेत्र में काम नहीं किया था, लोगों से सम्पर्क टूटा हुआ था, फिर भी उन्होंने भूतकाल में जो काम और सेवा इस क्षेत्र की की थी वह लोग भूले नहीं थे। जन-आधारित उनका जीवन होने से लोगों के वे श्रद्धापात्र थे। अनेक अन्यायों का संगठित प्रतिकार उन्होंने किया था, उसे लोग भूले नहीं थे। बल्कि उनके जाते ही गाँव में आशा का संचार होता था कि अब आ गया हमारा त्राता। सेवा, त्याग, निष्ठा-मय उनका जीवन होने से लोगों का उन पर पूरा-पूरा भरोसा है। अतः जहाँ-जहाँ वे पहुँचते काम फतह होना ही था। इस पदयात्रा में जगह-जगह शान्तिकेन्द्र बनाये गये और ग्राम-शान्तिसैनिक भी।

आन्ध्र से श्री सुरभि शर्मा अपने साथी श्री परशुराम के साथ आये थे। सुरभिजी के कृतित्व से, आत्मविश्वास से और कार्यकुशलता से सब लोग बड़े ही प्रभावित हुए। महाराष्ट्र के ७८ साल के चिरतरुण काका सेन्डूणीकरजी भी आये थे। कर्नाटक के करीब १० श्रद्धावान साथी थे।

समारोप के अन्तिम दिन के कार्यक्रम के लिए गाँव गाँव से करीब ५०० पुरुष और २०० बहनें आयी थीं। इन गाँवों में आगे का कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए क्षेत्रीय ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया गया। अगले ५ सालों में इसी क्षेत्र में सघन रूप से काम करने का अपना संकल्प श्री सोंसलेजी ने घोषित किया। *देश में सर्वोदय के काम की दृष्टि* से जो इने गिने सघन क्षेत्र हैं उनमें यह क्षेत्र काफी आगे बढ़ सकता है और बहुत अच्छा काम यहाँ हो सकता है। एकाग्रता से इसी क्षेत्र में बैठने के सोंसलेजी के इस निर्णय से यह सम्भावना अधिक बलवत्तर हुई है।

—

साथियों के पत्रों से

[ग्रामस्वराज्य के कार्य में जुटे कार्यकर्ता साथियों ने विनोबाजी को जो पत्र लिखे थे उन पत्रों के कुछ चुने हुए अंश हम यहां दे रहे हैं। यह क्रम बराबर जारी रहे ऐसी कोशिश है। सं०]

ग्रामदान-कार्य की कठिनाई

सर्व सेवा संघ के भोपाल अधिवेशन से नये सिरे से काम शुरू होगा ऐसा मैंने माना था। चिंतन-मनन के अलावा कार्यकर्ता कुछ भी कर नहीं पा रहे हैं ऐसा महसूस हो रहा है। गोपुरी, वर्धा में पूज्य धीरेन्द्र भाई के साथ मिलकर चर्चा करने के लिए मैंने अपने सब कार्यकर्ताओं को भेजा। कुछ ज्ञान और स्फूर्ति मिली। लेकिन पुष्टि-कार्य में जो पुष्ट पत्थर लगा है उसे फोड़ना आसान नहीं है। जिस गांव में कार्यकर्ताओं को लगातार भिड़े रहने के लिए भेजा जाता था वहां से वे निराश होकर ही लौटे। गांववाले अब जवाब देने लग गये हैं कि फिलहाल ग्रामसभा नहीं बन सकती। लोग सुनना या चर्चा करना नहीं चाहते, टालते हैं। कुछ कारण भी मिल जाता है जैसे अभी धान कटाई और चुनना चल रहा है। बडेगांव में जहां अच्छी एकता थी वहां आबादी की जमीन के बँटवारे को लेकर दो दल बन गये हैं। उसी को पहिले सुलझाने का काम मैंने उठाया है। यह निपटने के बाद ही ग्रामदान प्रतिज्ञा-पत्रों पर हस्ताक्षर शुरू करा सकूंगा। सिरसोली गांव में भी ग्राम-पंचायत के चुनाव को लेकर एक साल से दलबन्दी हो गयी है। इसमें से आसानी से कोई रास्ता नहीं निकल रहा है।

सघन क्षेत्र ब्लाक का तो विचार ही छोड़ दिया है। कुछ इने-गिने सम्पर्क और प्रभाव के गांवों में शुरुआत हो जाय तभी आत्मविश्वास जगेगा और काम व्यापक हो सकेगा।

सरकारी नौकरशाही के भ्रष्टाचार से इतने असंतुष्ट और ऊबे हुए रहकर भी ग्रामीण जनता क्यों गांव का कार्यभार हाथ में लेने की, ग्रामस्वराज्य की बात समझती नहीं है? शासन का पंजा उनके दैनिक आर्थिक व्यवहार में बहुत अन्दर तक घुस गया है। उससे छुटकारा पाने की इच्छा है, पर शक्ति और संगठन के अभाव में वैसा दबा हुआ जीवन ही लाचारी से पसन्द करना पड़ता है। स्वतंत्र जन-शक्ति से ग्रामदान-पुष्टि की हमारी बात हवा में हो रही है। एकदम शासकीय आधार छोड़ देना नहीं चाहिए लेकिन कानूनी पुष्टि के लिए अधिकारियों के पास लाचारी में बार-बार जाना भी अखरता है। इसमें से रास्ता निकालना है।

—प्रभाकर बापट, भण्डारा जिला सर्वोदय मण्डल सेवाश्रम, २ दिसम्बर, १९७१

खादी की नयी दिशा

खादी-कार्य में नयी दिशा में सोचने का उपक्रम शुरू हुआ है। आपकी श्री राधाकृष्ण बजाज तथा श्री लेलेजी से हुई बातचीत के आधार पर भोपाल में भी चर्चा हुई, दिल्ली में भी। श्री वी० रामचन्द्रन् का नोट भी विचारार्थ दिल्ली में प्रस्तुत हुआ। आदरणीय जयप्रकाशजी इस सभा में नहीं आ सके, लेकिन श्री ढेबर भाई, श्री विचित्र भाई व श्री बग साहब तथा अन्य २०-२५ मित्र उपस्थित थे। इस सभा में बिजली से कताई-बुनाई करवाने पर चर्चा हुई। निर्णय यह रहा कि इस पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए और यदि सरकार स्वीकार करती है कि विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के अनुसार वस्त्र-उत्पादन करना है व मिलों में मोटे वस्त्र का उत्पादन बहुत कम है, यदि सरकार खादी-संस्थाओं से उस मोटे वस्त्र का उत्पादन करने के लिए कहे, तो खादी-संस्थाओं को भी अपना पूरा योगदान देना है। साथ ही जहां-जहां ग्रामदानी गांवों में ग्राम-संकल्प हो जाय, वहां-वहां प्राथमिकता देकर इसे लागू करना है। श्री ढेबर भाई सरकार से इस विषय में बात करेंगे।

—सोमभाई, खादी आश्रम, पानीपत, करनाल, १०-१२-'७१

ग्रामस्वराज्य के लिए लोकशिक्षण

जिला बुलन्दशहर और श्रावस्ती आश्रम के दो स्थान उत्तर प्रदेश के दो कोनों पर हैं: एक उत्तर पश्चिम में हरियाणा-दिल्ली की सीमा से लगा हुआ है और दूसरा दक्षिण पूरब में नेपाल की सीमा से लगा है। दोनों जगह की परिस्थिति के हिसाब से वहां के कामों की दिशा कुछ स्पष्ट हुई ऐसा लगता है। बुलन्दशहर जिले में ग्रामस्वराज्य के लिए व्यापक लोक-शिक्षण द्वारा ग्राम-संस्थाओं का संगठन करने की योजना है, तथा श्रावस्ती में पहले से बनी रचनात्मक संस्था को ग्राम-संस्था में विलीन करके ग्राम-संस्था के संगठन की पद्धति और प्रक्रिया की खोज करनी है। श्रावस्ती प्रयोगशाला है, बुलन्दशहर मोर्चा है। मोर्चे पर काम के सहयोगी के रूप में एक युवक साथी श्री हरिद्वार भाई इस महीने साथ में आये हैं। वे श्रमाधार, जनाधार आदि के प्रयोगों में प्रथम श्रेणी के कार्यकर्ता रहे हैं। ये मित्र बुलन्दशहर के १४ ब्लाकों में घूमकर ग्रामस्वराज्य समितियों का संगठन करने का प्रयत्न कर रहे हैं। ग्रामस्वराज्य समितियों को समर्थ बनाने के लिए हर ब्लाक में शिविरों की योजना बनायी है। इन शिविरों में ग्रामस्वराज्य समिति के साथी अपने क्षेत्र की समस्याओं पर गहराई से चिन्तन करेंगे और उसके निराकरण के लिए बेकारी, गरीबी, अन्याय, झगड़े, शोषण और शराब आदि व्यसनों से मुक्ति की योजना बनायेंगे। दिसम्बर माह में सम्पर्क का कार्य जोरों से चले ऐसी योजना बनायी है।

श्रावस्ती में स्थानीय साथियों को तैयार करने की दृष्टि से चुनाव कर लिया है। परिवार-विद्यालय के रूप में इनका शिक्षण हो ऐसी योजना बनायी है। इसका रूप धीरे-धीरे विकसित होगा ऐसा सोचते हैं।

—नरेन्द्र, बुलन्दशहर (उ०प्र०) १८-१२-७१

आन्दोलन के समाचार

गोपालगंज अनुमण्डलीय भूदान किसान-सम्मेलन

दिनांक २८ दिसम्बर को बंकिया मुबेपुर के आर माध्यमिक विद्यालय के प्रांगण में गोपालगंज (सारण, बिहार) अनुमण्डलीय भूदान किसान-सम्मेलन श्री विश्वनाथ गुप्त की अध्यक्षता में तीन बजे दिन में प्रारम्भ हुआ। स्वागत भाषण के बाद विश्वनाथ शर्मा, मंत्री, सारण जिला सर्वोदय मण्डल ने सम्मेलन के उद्देश्य पर प्रकाश डाला।

सम्मेलन में भूदान किसानों के बेदखली, दाखिल-खारिज एवं अन्य कठिनाइयों को दूर करने के लिए एक संगठन बनाने का निश्चय किया गया। भूदान कमिटी के अध्यक्ष महोदय ने पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन देते हुए यह घोषित किया कि किन्हीं कारणों से अगर गलत वितरण हुआ होगा तो जाँच के बाद उसे रद्द कराने की कार्रवाई भी की जायगी। अनुमण्डल के १० प्रखण्डों में ८ प्रखण्ड के भूदान किसान सम्मेलन में शामिल हुए थे। —विश्वनाथ शर्मा

ग्रामस्वराज्य समिति का गठन

दिनांक ८ जनवरी को सारण जिला ग्रामस्वराज्य समिति का चुनाव जिला भूदानयज्ञ कार्यालय छपरा में हुआ, जिसमें सर्वसम्मति से प्रो०—बच्चू पांडेय को अध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

महाराष्ट्र

दिसम्बर के अन्त में महाराष्ट्र के धनगांव जिले के जामनेर प्रखण्ड में कार्यकर्ताओं ने ६ टोलियों में पदयात्राएँ कीं। फलस्वरूप १९ गाँवों में ग्रामदान का संकल्प किया गया। इनमें से १२ गाँवों में ग्रामसभा का गठन हुआ। इन गाँवों में ५० एकड़ जमीन प्राप्त हुई जिसमें से २८ एकड़ का बँटवारा भी हुआ। १२ गाँवों में शान्तिसेना का गठन हुआ।

आन्ध्र

जनवरी के प्रथम सप्ताह में आन्ध्र के महबूब नगर जिले के चिंजनापल्ली प्रखण्ड में १२ टोलियों ने पदयात्राएँ कीं। फलस्वरूप ४५ गाँवों ने ग्रामदान का संकल्प किया। इन सभी गाँवों में ग्रामसभा का गठन हो गया। इन ४५ गाँवों में ११७ ग्राम-शान्तिसैनिक बनाये गये। १४० एकड़ जमीन का ग्रामदान की शर्त के तौर पर वितरण हुआ।

श्री चारू चौधरी छूटे

लगभग नौ बरस तक पाकिस्तानी जेल में बन्द रहने के पश्चात पूर्व बंगाल (अब बंगला देश) के सुप्रसिद्ध गांधीवादी नेता श्री चारू भूषण चौधरी ढाका सेन्ट्रल जेल से मुक्त कर दिये गये हैं। पाकिस्तानी सेनाओं द्वारा ढाका में आत्म-समर्पण के तुरन्त बाद मुक्तिवाहिनी ने श्री चौधरी को जेल से छुड़वा दिया। श्री चौधरी ढाका स्थित रामकृष्ण मिशन में ठहरे हैं जिसके माध्यम से वे रचनात्मक प्रवृत्तियाँ शुरू करना चाहते हैं।

लगभग १०-११ वर्ष पहले पूर्व बंगाल में आचार्य विनोबा भावे की पदयात्रा एवं भूदान आन्दोलन की सफलता का श्रेय भी श्री चौधरी द्वारा किये गये निःस्वार्थ एवं उत्साहपूर्ण प्रयत्न है।

बंगला देश के पुनर्निर्माण में ओमेगा

२० जनवरी 'ऑपरेशन 'ओमेगा' बंगला देश पुनर्निर्माण में सहायता करने के लिए नयी दिल्ली में योजनाएँ बना रहा है।

लन्दन स्थित संस्था 'ऑपरेशन ओमेगा' के सदस्य गये साल अगस्त के महीने में बंगला देश, जो उस समय पूर्वी पाकिस्तान था, की सीमा को अहिंसक ढंग से तोड़कर अन्दर गये थे और शरणार्थ-ग्रस्त लोगों के बीच राहत बाँटी थी। ऐसा करने पर पाकिस्तान की सेना ने उनके लगभग एक दर्जन सदस्यों को गिरफ्तार किया था। ओमेगा के दो सदस्यों मलेन कानेंट और गार्डेन को तो जैसोर छावनी के जेल से भारतीय फौज ने छुड़ाया था।

ओमेगा के सदस्यों ने इस दौरान जो अनुभव प्राप्त किया है उसके आधार पर वे बंगला देश के पुनर्निर्माण की योजनाएँ बना रहे हैं। सम्भावना है, इस कार्य में ब्रिटेन की कुछ बड़ी संस्थाएँ भी ओमेगा की मदद करेंगी। ओमेगा के नेता श्री रोजर मूडी स्थिति का अध्ययन करने के लिए कलकत्ता आये हुए हैं।

भूदान-यज्ञ ३१-१-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

नशाबन्दी के लिए संशोधित कानून

इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा उ० प्र० आबकारी कानून की धारा २० (ए) को अवैध करार दिये जाने और तत्पश्चात् उत्तराखण्ड में नशाबन्दी समाप्त किये जाने पर उत्तराखण्ड में नवम्बर के प्रथम सप्ताह में शराब की दुकानें खुलीं, उन पर पिकेटिंग हुआ। राज्य सरकार ने मद्यनिषेध लागू करने के लिए २७ दिसम्बर '७१ को एक अध्यादेश निकाला जो ६ जनवरी '७२ को उ० प्र० विधानसभा में पारित किया गया। इस विधेयक की विशेषता यह थी कि यह सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया, परन्तु इसके पश्चात् भी पौड़ी और टिहरी गढ़वाल में शराबबन्दी लागू करने के लिए आदेश नहीं हुए हैं। नये अधिनियम की मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

१—उ० प्र० के एक्साइज एक्ट १९१० में संविधान के अनुच्छेद ४७ में राज्य की नीति के निर्देशक तत्वों के अनुसरण में मद्यनिषेध के प्रसार तथा प्रवर्तन को सुकर बनाने के लिए यह अधिनियम बनाया गया है।

२—आबकारी कानून की धारा २० (४) तथा धारा २० ए और २० बी, जिन्हें हाइकोर्ट ने अवैध करार दिया था, निकाल दी जायें।

३—मूल अधिनियम में मद्यनिषेध के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध शीर्षक एक नया अध्याय ६-क जोड़ा गया है, अब राज्य सरकार उ० प्र० या उसके किसी भाग में अथवा वहाँ से किसी मादक वस्तु के आयात या निर्यात को निषिद्ध कर सकती है या किसी मादक वस्तु के परिवहन को निषिद्ध कर सकती है।

४—मादक वस्तु को निषिद्ध करने की शक्ति का प्रयोग राज्य में मद्यनिषेध के क्रमिक प्रसार करने की नीति के अनुसरण में किया जा सकता है और निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर विभिन्न क्षेत्रों का चयन किया जा सकता है।

(क) तीर्थ-स्थान, विद्या-केन्द्र या औद्योगिक क्षेत्र के रूप में किसी क्षेत्र की विशेषता।

(ख) स्थानीय निवासियों की सामान्य आर्थिक स्थिति, जिसके अन्तर्गत उनके आहार, पुष्टि-तत्व और जीवन-स्तर भी है।

(ग) स्थानीय जनमत।

(घ) कोई अन्य सुसंगत तथ्य जो राज्य सरकार की राय में लोकहित में सारवान हो।

५—इस कानून के अन्तर्गत किसी क्षेत्र में मद्यनिषेध लागू करने पर लाइसेंस देनेवाला प्राधिकारी, लाइसेंस को, जहाँ तक उसका सम्बन्ध मद्य-निषेध क्षेत्र से है, बिना नोटिस तुरन्त निरस्त (रद्द) कर सकता है। यदि ठेकेदार ने पहले से लाइसेंस फीस पेशगी जमा कर दी हो तो शेष लाइसेन्स फीस उसके ऊपर सरकार की बकाया कम कर लौटा दी जायेगी। लाइसेन्स-धारी सरकार से लाइसेन्स रद्द करने पर मुआवजा नहीं माँग सकता।

इस प्रकार इस दलील में कोई सार नहीं है कि मार्च के अन्त तक मौजूदा शराब के ठेके चलने दिये जायें। अप्रत्यक्ष रूप से इसका अर्थ जनता को तबाह करना और शराब के समर्थकों की शक्ति बढ़ाकर शराबबन्दी के लिए जटिल समस्याएँ पैदा करना होगा।—सुन्दरलाल बहुगुणा

नोआखाली में गांधीवादियों की हत्या

इन्दौर, १३ जनवरी। सर्वोदय प्रेस सर्विस के कलकत्ता केन्द्र को यह खेद जनक जानकारी मिली है कि हाल ही में हुए भारत-पाक-युद्ध के दौरान बंगला देश स्थित नोआखाली आश्रम के श्री मदनमोहन चट्टोपाध्याय और श्री देवेन्द्रनारायण की बर्बर पाक सैनिकों द्वारा हत्या कर दी गयी है। दोनों वरिष्ठ और निष्ठावान गांधीवादी सेवक सन् १९४६-४७ के दौरान दंगों के समय महात्मा गांधी के शान्ति मिशन के साथी थे और उसके बाद से वहाँ अन्त तक अकथनीय मुसीबतों और खतरों का सामना करते हुए डटे रहे। २५ मार्च, १९७१ को पूर्व बंगाल में पाकिस्तानी आक्रमणों द्वारा मृत्यु की धमकी देने के बावजूद भी इन लोगों ने अपने स्थान से हटने से इनकार कर दिया था। लगभग सात दूसरे पूर्व अन्य नई ग्रामीणों के साथ ही इन लोगों को भी मौत के घाट उतार दिया गया।

दक्षिण निवासी गांधीजी के एक अन्य सहयोगी श्री सत्यनारायण का भी कुछ पता नहीं है। ये भाई भी गांधीजी के मिशन के अनुयायी थे और जिन्होंने नोआखाली में ही रहकर अपना सेवा-कार्य जारी रखा था।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

बंगला देश का पुनर्निर्माण : जन-अभिक्रम

चौदह दिन के घनघोर युद्ध में करोड़ों रुपये और लाखों व्यक्तियों के अनमोल जीवन के मूल्य पर बंगला देश आजाद हुआ, फिर भी साढ़े सात करोड़ जनता की मुक्ति के लिए यह कोई बहुत बड़ी कीमत नहीं कही जा सकती। आज परिस्थिति यह है कि बंगला देश मुक्त है और वहाँ की जनता उन्मुक्त। एक ओर वे लोग खड़े हैं जिन्होंने बंगला देशवासियों पर सितम ढाये हैं, क्रूर-से-क्रूर अत्याचार, जो हो सकते हैं सब किये। दूसरी ओर जनता खड़ी है, जिसने आजादी के लिए हर तरह के जुल्म बर्दाश्त किये, और बीच में खड़ी है मुक्तिदाता के रूप में भारतीय सेना, जिसका प्रयास यह है कि बदले की भावना से पागल जनता कहीं उन लोगों को पीस न डाले जो आजादी में बाधक ही नहीं बल्कि जुल्मियों के साथी रहे हैं। अब प्रश्न यह है कि अहिंसा और जय जगत् का नारा लगानेवाले सर्वोदयी विचार-धारा के लोग, बंगला देश की जनता को प्रतिहिंसा से बचाने के लिए कोई लोक-शिक्षण की प्रक्रिया चलायेंगे या नहीं? पाकिस्तानी सेना ने बंगला देश में जो जुल्म किये, बलात्कार किये, हत्याएँ कीं, लूट-पाट की उन सबके आकलन के लिए वहाँ की सरकार ने एक जाँच-आयोग नियुक्त किया है। वह अपना रपट प्रस्तुत करेगी तभी सही स्थिति ज्ञात हो पायेगी।

आर्थिक पुनर्व्यवस्था के लिए भारत सरकार तथा बंगला देश के लोग सक्रिय हैं। सम्भव है दुनिया के अन्य देश भी उसमें पर्याप्त सहायता दें। वह सब काम तो होगा ही, उसे करने के लिए सरकार है और वह करेगी। इसके साथ ही प्रश्न उठता है कि क्या गांधी विचार-धारा के माननेवाले लोग वहाँ के आर्थिक ढाँचे का ऐसा स्वरूप खड़ा कर सकने का प्रयास कर सकते हैं जिसकी कल्पना गांधीजी ने की थी और वह भारत में साकार न हो सका?

बंगला देश का संविधान बनाने की बात हो रही है। क्या यह वह अवसर नहीं है जब उन्हें यह सुझाव सर्वोदय की ओर से दिया जाय कि बंगला देश की सरकार में मुख्य शक्ति का अधिष्ठान गाँव हो?

सबसे बड़ी बात तो यह है कि धीरे-धीरे नवनिर्माण होगा, चीजें बनेंगी। उसके लिए धन और विशेषज्ञों की मदद भी बाहर से मिलेगी। पर एक बात जो छूट रही है, सम्भवतः भविष्य में भी छूट जाय, जिसकी ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। वह है उन टूटे परिवारों एवं तोड़े गये समाज को पुनः सुसगठित करने का काम। वह कौन करे? वैसे तो इन सारे कामों में स्थानीय जन-शक्ति जितनी ही सक्रिय होगी देश उतना ही शक्तिशाली बनेगा। जैसा कि इन दिनों बार-बार यह महसूस किया जा रहा है कि पाकिस्तान को कमजोर बनानेवाली वहाँ की निरन्तर बनी रहनेवाली सैनिकशाही ही है। जिस प्रकार किसी भी देश की शक्ति वहाँ के सैनिकों की भर्ती एवं शस्त्रास्त्रों के संग्रह मात्र से ही नहीं, बल्कि उस देश की जनता की निरन्तर बढ़ती हुई समृद्धि से ही सम्भव हो सकती है। उसी प्रकार मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि कौन-सा देश कितना आगे बढ़ा है, इसका अन्दाजा इस बात से नहीं लगाया जा सकता कि वहाँ की सरकार ने कितना काम किया, बल्कि इस बात से लगाया जाना चाहिए कि उसके निर्माण में जन-अभिक्रम कितना आगे आया है।

इसके बाद भी बंगला देश के लिए यह कहा जा सकता है कि उस देश के निर्माण के लिए हर प्रकार की सहायता चाहिए। इसके लिए मैं अपने को विश्व-नागरिक माननेवाले समस्त सर्वोदयी विचारकों से कहना चाहता हूँ कि प्रति-हिंसा की ज्वाला में धधक रहे बंगाली बन्धुओं के हृदय की शीतलता का संचार करें। टूटी-फूटी उनकी अर्थ, व्यवस्था को समुचित दिशा देने के लिए उनके घर-घर को धर्मशाला बना दें उनको ऐसा एक संविधान बनाने में मदद दें, जिससे वहाँ का प्रत्येक नागरिक यह महसूस करे कि अपने देश को संचालित करनेवाला वह स्वयं है।

उनकी सामाजिक और पारिवारिक संगठन ऐसा बने जिसमें आपसी भाईचारा तथा धर्मनिरपेक्षता की जो ज्योति मुजीब ने जलायी वह बुझने न पाये।

अन्त में मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि हमें नहीं भूलना चाहिए कि पूर्व बंगाल २४ वर्षों तक जलता रहा, उसी के पड़ोस में पश्चिम बंगाल को भी जलाने की साजिश नक्सलपंथियों द्वारा चल रही है। इसी ज्वाला में से यदि शान्ति का स्वरूप निखारा जा सके तो वह दुनिया के लिए एक बहुत बड़ी देन होगी। देर होने से वैसा ही पश्चाताप हाथ लगेगा जैसे २४ वर्षों की आजादी के बाद अब भारत के कर्णधारों को महसूस हो रहा है कि भारत पश्चिमी अनुकरण के स्थान पर यदि गांधी के रास्ते पर चला होता तो अधिक कल्याण होता।

खादीग्राम (मुंगेर) —कमलाकांत

२०-१-'७२

फुलिया भगत--हरियाणा में १३ वर्षों के उनके कार्य का लेखा-जोखा

	दिसम्बर '७१	१९७१ में	पिछले १३ साल में
साहित्य बेचा	२२७)६५	१९८०.८५	१४,२८०.५४
पदयात्रा	७५ मील	१३२२ मील	१८,२६२ मील
प्रचार	४० गाँवों में	३५३ गाँवों में	४,८०९ गाँवों में

ए० बी० सी० त्रिकोण : सम्भावनाएँ

—देवेन्द्र कुमार गुप्ता

अफगानिस्तान, बरमा और सीलोन के त्रिकोण को विनोबाजी ने उनके प्रथम अक्षर के आधार पर ए० बी० सी० त्रिकोण का नाम दिया है। भारतीय भूखण्ड में यह सारा क्षेत्र आता है और इनमें परस्पर सौहार्द का भाव होना आवश्यक है। इसलिए अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भारत, बंगला देश, नेपाल, भूटान, सिक्किम, बरमा और श्रीलंका के स्वतंत्र राष्ट्रों को चाहिए कि वे अपना एक महासंघ बनायें जिसमें अपनी-अपनी राष्ट्रीय स्वायत्तता को कायम रखते हुए वे परस्पर सौहार्द से रहे। सारे संसार के नक्शे को आप देख जाइये तो आपको इस प्रदेश जैसा कमजोर हिस्सा नहीं मिलेगा। इसमें दुनिया की ३५० करोड़ आबादी का पाँचवाँ हिस्सा वास करता है (अफगानिस्तान १.७५ करोड़, बंगला देश ७.५० करोड़, श्रीलंका १.२५ करोड़, भारत ५५ करोड़, नेपाल १ करोड़ और पाकिस्तान ५ करोड़)। चीन की कुल आबादी भी लगभग इतनी ही है (लगभग ७५ करोड़), परन्तु वह एक व्यवस्था के अंतर्गत है। यहाँ भी यदि सभी राष्ट्र मिलकर कोशिश नहीं करेंगे तो दुनिया की दरिद्रतम बस्ती की आज की हालत से आगे निकलने का रास्ता नहीं रहेगा। दुनिया के गरीब देशों की प्रति व्यक्ति औसत आमदनी १५०० रु० प्रतिवर्ष कूती जाती है जबकि इस क्षेत्र की ५०० रु० आती है। शायद दुनिया के ऐसे लोग जो साल में १५ दिन या अधिक, एक समय ही भोजन कर पाते हैं उनमें से तीन चौथाई इसी क्षेत्र में बसते हैं। इस परिस्थिति को सुधारने में सभी राष्ट्रों को मिलकर सोचना होगा।

इसके लिए यानी गरीब की भलाई के लिए बहुत जरूरी है कि इन राष्ट्रों में परस्पर एक-दूसरे से लड़ने में खर्च होनेवाला व्यय अविलम्ब बंद किया जाय। किसी अमेरिकी अखबार ने भारत-पाक-युद्ध का एक कार्टून बनाया था। उसमें दो मरीज अस्पताल में लेटे हैं। उनकी कमजोर बाहों में रक्त दिया जा रहा है कि वे जिंदा रह सकें, फिर भी वे दूसरे हाथ से एक-दूसरे पर तलवार का वार करने का प्रयास कर रहे हैं। यह स्थिति भयावह और दयनीय है। इसमें भी विश्व के मजबूत राष्ट्र अपना उल्लू सीधा करने की सोचें और दो के संघर्ष में से अपना राजनैतिक या आर्थिक लाभ लेने के मसूबे बाँधें तो अमानवीय कार्य ही माना जाना चाहिए। पिछली १४ दिनों की लड़ाई में ही दोनों देशों ने ढाई-तीन सौ करोड़ रुपये की हानि उठायी। अपनी राष्ट्रीय आय का बड़ा भाग दोनों ही देश युद्ध की तैयारी में लगाते हैं। पश्चिम जर्मनी और जापान की पिछले दो दशकों की आर्थिक तरक्की का बड़ा कारण उनका निःशस्त्रीकरण है। वहाँ इन फौज पर राष्ट्रों को पैसा नहीं लगाना पड़ा। इस भूखण्ड के इन गरीब राष्ट्रों के लिए भी यह सम्भव है कि वे अपना बहुत-सा अतिरिक्त व्यय कम कर लें। यदि उनका महासंघ (कन्फेडरेशन), जो, आवश्यक हो तो एक संयुक्त सेना रखे और परस्पर के मत-विरोधों के लिए सेना के उपयोग का प्रश्न सदा के लिए समाप्त कर दें। सचमुच तो विश्व-संदर्भ में ऐसा प्रयोग कहीं-न-कहीं होना ही चाहिए अन्यथा विज्ञान का संहारक उपयोग जैसे-जैसे बढ़ता जायेगा राष्ट्रीय तनाव से युद्ध मानव जाति के जानलेवा साबित होने-ही वाले है।

ये सारे देश परस्पर सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक तंतुओं से जुड़े हुए है और इनमें राजनैतिक रूप से मित्र बनने में कोई कठिनाई नहीं आनी चाहिए। जो कठिनाइयाँ हैं उनको समाप्त करने का पूरा प्रयास करना होगा।

ए० बी० सी० के राष्ट्र :

१—अपनी अपनी स्वतंत्र राज्य-व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करेंगे। अपने अंतरंग मामलों में कोई किसी का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करेगा।

२—वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में ये सारे राष्ट्र एकजुट होकर काम करेंगे। इनके महासंघ की संयुक्त नीति के आधार पर ही विश्व के अन्य राष्ट्रों के प्रति अपनी नीति तय करेंगे। अर्थात् संसार की आँखों में ये एक स्वतंत्र विश्वस्त इकाई के रूप में ही दिखाई देंगे।

३—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध में अपनी सामूहिक नीति रखेंगे जिससे परस्पर एक-दूसरे से स्पर्धा की सम्भावना न रहे और सहकार के आधार पर औद्योगीकृत राष्ट्रों के साथ व्यवहार में टिक सकें।

४—नागरिकों का परस्पर किसी

→अपने को भूल जाने के लिए। मालूम नहीं इससे किसकी कितनी भूख मिटती होगी।

एक इनसान दूसरे इनसान से इतना ऊब गया है, एक पड़ोसी अपने पड़ोसी से इतना अलग हो गया है, कि वह अनजान भगवान को पाने के लिए बेचैन हो उठा है। तमाम दुनिया में एक प्रकार की मानसिक-आध्यात्मिक रिक्तता (मेंटल-स्पिरिचुअल वेकुअम) है। शायद इसी में से कहीं 'लैंगिक मुक्ति' (इरोटिक फ्रीडम) शुरू हुई है, तो कहीं एक-के-बाद दूसरे भगवान का जन्म हो रहा है; और कहीं हिंसा और मार-काट का ही बोलबाला है। कुछ भी हो, भारत के 'आध्यात्मिक' माल का व्यापार इस वक्त चमक उठा है। आज के बाजार में अन्य चीजों की तरह 'अध्यात्म' भी बिकाऊ माल हो गया है। यह है महिमा बाजारू सभ्यता की!

हजारों वर्षों तक हमने एक ही भगवान का नाम लेना सीखा। शायद अब विज्ञान के राकेटों की तरह इनसान के भक्तों को भी 'भगवानों' से सावधान रहना पड़ेगा।

●

भी देश में आने-जाने में रोक-टोक नहीं रहेगी। अर्थात् पासपोर्ट, वीसा के बगैर, जैसे आज नेपाल-भारत के बीच होता है, आवागमन मुक्त होगा। तथापि जमीन-जायदाद खरीदने तथा व्यापार करने के बारे में स्थानीय देश अपना नियम लागू कर सकेगा तथा करेंसी भी अलग-अलग रहेगी, जिससे एक देश की कमाई बिना सरकार की आज्ञा के दूसरे देश में नहीं जा सकेगी।

५—परस्पर शान्ति की संधियों से बँधे रहेंगे तथा बाह्य आक्रमण से मुकाबिला करने के लिए एक संयुक्त सुरक्षा-व्यवस्था रखेंगे जिसका किसी भी स्थिति में अन्तर्गत मामलों में उपयोग नहीं किया जायेगा (अच्छा तो होगा कि एकतरफा ये राष्ट्र निःशस्त्रीकरण को मान्य करें)।

६—परस्पर किसी भी विवाद को हल करने का इनका एक ट्रिब्यूनल होगा जिसका निर्णय मान्य करना अनिवार्य होगा।

सवाल यह है कि कितनी भी अच्छी व्यवस्था क्यों न हो पर क्या उपरोक्त हवाई महलों को बनाने के लिए कोई आधार भी है? नीचे के समाचार इस दिशा में अनुकूलता के लिए आशा बँधाते हैं-

ढाका : १४-१-'७२ को बगला देश के प्रधानमंत्री मुजीब कहते हैं—

"उनका देश निष्पक्षता, शान्तिमयिता, सहकारिता और मैत्री के आधार पर अपनी वैदेशिक नीति निर्धारित करेगा और पूर्व के स्विटजरलैंड की तरह रहना चाहेगा। उन्होंने एक पत्र-प्रतिनिधि के उत्तर में कहा कि यदि भुट्टो ठीक रास्ते पर रहेंगे तो भारत-पाक और बगला देश के सब मतभेदों को समाप्त करने का रास्ता निकाला जा सकता है।"

लन्दन : १४-१-'७२ अमेरिका, इंगलैंड की ओर से बगला देश समस्या के हल के रूप में सुझाये गये भारत पाक-बगला देश महासंघ (कन्फेडरेशन) के विचार को बलूचिस्तान के नेता सरदार अताउल्ला खाँ मेंगाल (राष्ट्रीय अवामी पार्टी के नेता तथा पाकिस्तान राष्ट्रीय सभा के सदस्य) ने दोहराया है। कराची में उन्होंने कहा कि इन तीनों स्वतंत्र राष्ट्रों का कन्फेडरेशन बनाये बिना इनका उद्धार सम्भव नहीं है।"

नयी दिल्ली : १४-१-'७२ "राष्ट्रपति भुट्टो ने पाकिस्तान रेडियो से अपने बयान में कहा कि 'इस भूखण्ड के महासंघ बनाने के सम्बन्ध में जो लोग बात करते हैं वे उनकी कठिनाई को नहीं समझ रहे हैं। महासंघ बनाना आसान काम नहीं है। हम भी भारत के एक अंग थे और यदि हम महासंघ के सिद्धान्त को कबूल करते हैं तो पहला मुल्क जिससे हम सम्बन्ध जोड़ सकते हैं वह भारत ही है। परन्तु उसमें कई कठिनाइयाँ हैं।"

इस प्रकार विनोबाजी का जो त्रिकोण का विचार है उसके सम्बन्ध में सम्भावनाएँ खोजी जा सकती हैं? ऐसा आभास उपरोक्त सन्दर्भों से होता है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि अशासकीय स्तर पर इसके प्रयास किये जायें और सुविज्ञजनों का विचार इस सम्बन्ध में प्राप्त करके एक योग्य वातावरण बनाया जाय तथा प्रथमतः अपने देश में इसकी अनुकूलता पैदा की जानी चाहिए। दूसरे सम्बन्धित देशों के विद्वज्जनों के बीच इस सम्बन्ध की गोष्ठी का आयोजन करना चाहिए। शायद अफगानिस्तान इसके लिए योग्य स्थान सिद्ध होगा।

कोई भी नया विचार समय अवश्य लेता है, परन्तु यदि उसमें सत्यांश का बीज है तो उसे जड़ पकड़ने देर नहीं लगती। त्रिकोण के विचार में सत्यांश है और उसके इस विचार के उगने के लिए योग्य भूमिका बन रही है। अतएव इस ओर प्रयास किया जाना चाहिए। ●

पाकिस्तान के २२ परिवार

निश्चित रूप से तो यह नहीं कहा जा सकता कि उन लोगों ने अपने पास कितना धन इकट्ठा कर रखा है, परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि उन लोगों का पाकिस्तान की अर्थनीति पर गहरा असर है। इसीलिए पत्रकारों ने उन्हें 'पाकिस्तान के बाईस परिवार' नाम दिया है।

१९४७ के बँटवारे के समय से ही उन २२ परिवारों ने बड़े पैमाने पर ऐसे उद्योगों की स्थापना कर ली है जो वहाँ के लाखों व्यक्तियों को रोजगार देते हैं तथा जो स्टील से लिपिस्टिक तक कई प्रकार के हैं। युद्ध के पूर्व तक इन २२ परिवारों के पास पाकिस्तान के उद्योग का ६६ प्रतिशत, बैंक-बीमा का ८० प्रतिशत था तथा बड़े पैमाने पर देश की कृषि-योग्य अच्छी भूमि थी। ऐसी स्थिति में जब पूर्व पाकिस्तान से पश्चिम पाकिस्तान का सम्बन्ध टूट गया तो उनमें से कुछ की स्थिति कमजोर हो गयी, लेकिन यह कहा जाता है कि इनमें से अधिकांश ने अपनी पूँजी बचा रखी है।

उन्होंने इतनी दौलत कैसे इकट्ठा की यह एक विकासशील देश के अनियंत्रित पूँजीवाद की मिसाल है। इनमें से अधिकतर १९४७ में कलकत्ता और बम्बई से आये और अपने साथ तकनीकी ज्ञान भी लाये। ये ऐसे समय आये जब पाकिस्तान में सत्ता अच्छी तरह संगठित नहीं हुई थी। धीरे-धीरे इन लोगों ने सम्पूर्ण पाकिस्तान की अर्थ-व्यवस्था पर प्रभुत्व जमा लिया। उन्होंने बीमा, बैंक आदि मूल उद्योगों की स्थापना अपनी पत्नियों, नजदीक के सम्बन्धियों तथा मित्रों के साथ की। यहाँ तक कि सैनिकों ने भी, जो सरकार का संचालन करते थे पूर्व पाकिस्तान का उपयोग एक उपनिवेश के रूप में किया, जहाँ वे सस्ती दर पर कच्चे माल की खरीद तथा महँगी दर पर तैयार माल की बिक्री करते थे। इस तरह सारा लाभ प० पाकिस्तान को चला जाता था .

उन लोगों में आदमजी और दाऊदजी का स्थान सर्वोपरि है। आदमजी के पास बैंकिंग, बीमा, रुई, जूट, और कागज कुल→

के ड्राइवर हो, होटल के बेयरा हो, वे हिंसा से तंग आ गये हैं इसलिए अहिंसा की चर्चा उनको रुचिकर लगी। गांधी-पद्धति के प्रति उनमें आकर्षण देखा।

प्रश्न—गांधीजी ने एक समाज-जीवन-दर्शन प्रस्तुत किया है तथा सामाजिक परिवर्तन का एक नया आयाम प्रकट किया है, उनके इस क्रान्तिकारी रूप को मान्यता पश्चिमी जगत को है अथवा नहीं ?

उत्तर—मैंने पश्चिम में जो कुछ भी देखा, समझा उस पर मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि वहाँ के लोग गांधी के आदर्शों को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं। अब यह गांधी का आदर्श उन्होंने कहाँ से लिया, पता नहीं। इतना अवश्य मालूम होता है कि उनके अपने जीवन की वास्तविकता में से यह चीज निकल रही है।

आप 'फोर्थ वर्ल्ड' की ही बात लीजिए। 'फोर्थ वर्ल्ड मूवमेंट' वालों का कहना है कि निर्णय करने के क्षेत्र को छोटा किया जाय। फ्रांस के युवा-आन्दोलन की माँग है कि आज की औद्योगिक पद्धति नहीं चाहिए, यंत्र का प्रभुत्व (मशीन डॉमिनेशन) नहीं चाहिए। वे संगठन मुक्त समाज (नान आर्गनाइजेशनल सोसायटी) की बात कहते हैं जिसे सर्वोदय भी मानता है।

चेकोस्लोवाकिया को ही लिया जाय। वह बिना हथियार का ही लड़ा। उसने गांधी का नाम नहीं लिया, परन्तु काम वही हुआ जो गांधी करते थे। उन्होंने उसके लिए गांधी का साहित्य नहीं पढ़ा था।

सीजर चवेज १९६९ में मुझे मिले थे। वे मेक्सिको में अंगूर की खेती करने वालों के बीच में काम करते थे। वहाँ के मजदूरों को मजदूरी कम दी जाती थी। वे चाहते थे कि उनकी मजदूरी बढ़ायी जाय। इसके लिए उन्होंने मजदूरों से काम बन्द कर देने की बात कही। दूसरी जगह से मजदूर लाकर अंगूर पैदा करने का काम जारी ही रहा तो उन्होंने 'अंगूर मत खाइये' आन्दोलन चलाया। पूरे देश में यह आन्दोलन फैला। उन्हें जनता का सहकार प्राप्त हुआ।

जब मैं उनसे मिला तो उन्होंने ४० दिनों का अपना उपवास अभी-अभी ही समाप्त किया था जिसे उन्होंने अधिकारियों के व्यवहार के प्रतिकार में किया था। उनके पास मैंने देखा कि गांधीजी की एक छोटी तस्वीर रखी हुई है। उनकी शिकायत थी, उन्हें अहिंसक संघर्ष की पद्धति का कोई साहित्य नहीं प्राप्त है। उन्होंने ऐसे साहित्य की माँग की। वह भी गांधीजी की तरह एकला चलो में विश्वास रखते हैं।

मेक्सिको सिटी में अहिंसा की एक कमेटी है जो क्रमिक परिवर्तन की कोशिश में है, जिसे गांधीजी भी चाहते थे। परन्तु इन लोगों के साथ हमारा किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं आया, हम कुछ नहीं कर सके। कुछ न कर सकने के भी कई कारण हैं। एक कारण तो यह है कि जिन मूल्यों को हम स्थापना करना चाहते हैं वह हम नहीं कर सके। इसके अभाव में हम नेतृत्व क्या कर सकते थे, या मार्गदर्शन क्या कर सकते थे ? दूसरी बात यह थी कि हमने अपने यहाँ कोई बौद्धिक आधार (इन्टेलेक्चुअल बेस) नहीं बनाया जो गांधी के विचारों को उनलोगों तक पहुँचा सके।

जहाँ तक गांधीजी के जीवन-दर्शन का प्रश्न है, वह भी पश्चिमी समाज में दिखाई देता है। अमेरिका में लोग सादगी की ओर बढ़ रहे हैं। अच्छी पोशाक का बहिष्कार करते हैं। जूता नहीं पहनते हैं। कास्मेटिक का बहिष्कार करते हैं। साधारण जीवन-स्तर की ओर वे बढ़ रहे हैं, और ऐसा बड़े पैमाने पर हो रहा है। लेकिन वे लोग गांधीजी को नहीं जानते।

प्रश्न : क्या आप यह मानते हैं कि गांधीजी के अनुयायियों ने गांधीमार्ग की अवहेलना की है और उसके कारण भी गांधी की कल्पना का चित्र धूमिल हुआ है ? सर्वोदय का विश्वव्यापी चित्र क्यों नहीं प्रस्तुत होता ?

उत्तर : पश्चिम में गांधी-विचार को लोग पढ़ें, समझें, जानें, इसकी जिम्मेवारी हमारी है। परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता कि वहाँ गांधी के आदर्शों के अनुसार जो कुछ भी हो रहा है उसके साथ गांधी का नाम जोड़ा ही जाय। गांधी-विचार को लोग पढ़ें, इससे उनको मदद मिलेगी। इस भावना से ही उन तक गांधी-साहित्य को पहुँचाने का कार्य होना चाहिए। इसके लिए गांधी साहित्य का पुनर्संपादन आवश्यक होगा।

अभी आपको मैंने बताया कि जिन मूल्यों को हम अपने समाज में अधिष्ठित करना चाहते हैं उन्हें पहले अपने यहाँ करने की चेष्टा करें, तो लोगों को ज्यादा मार्गदर्शन प्राप्त होगा। यह आवश्यक है। परन्तु इसके साथ ही सर्वोदय आन्दोलन को जागतिक बनाना होगा और, यह तब सम्भव होगा जब इसको यथार्थ आधार प्राप्त होगा। हमारे यहाँ आन्दोलन का यथार्थ है दारिद्र्य, परन्तु उनके यहाँ दारिद्र्य यथार्थ आधार नहीं होगा। उनका यथार्थ कुछ दूसरा होगा। वे समस्याओं के सन्दर्भ में सीखेंगे। भारतवर्ष में सर्वोदय को सफलता प्राप्त हो या असफलता दोनों ही स्थितियों में उन्हें सीखने को मिलेगा।

भारतवर्ष में दार्शनिक (फिलॉसफिकल) पक्ष पर ज्यादा जोर दिया जाता है और यहाँ दर्शन काफी स्पष्ट है परन्तु पश्चिम में ठीक इसके विपरीत है। वे लोग पद्धति (मेथड) पर ज्यादा जोर देते हैं। इस स्थिति में यहाँ उनसे पद्धति ली जा सकती है और वे यहाँ से दर्शन ले सकते हैं।

एक बात और है जिसकी ओर सर्वोदय को ध्यान देना चाहिए। सर्वोदय आन्दोलन अपना जो चित्र (इमेज) पेश करता है उसमें श्रद्धा-तत्त्व का आधिक्य होता है, भक्ति-भाव की गन्ध आती है। इसके कारण जिन लोगों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक है वे लोग इस ओर आकृष्ट नहीं हो पाते हैं। अब इसमें वैज्ञानिकता आये इसकी कोशिश होनी चाहिए।

प्रस्तुतकर्ता : दीनबन्धु

भारत में अमेरिकी कुचालें

अमेरिका भारत को आर्थिक शिकंजों में तो बाधता ही रहा है, उसने यहाँ के बुद्धिजीवियों और राजनैतिकों को भी फँसाने की कम कोशिश नहीं की है। उसने हर क्षेत्र में अपने 'यजमान' बनाने की कोशिश की है—पंजाब के बड़े कियान, केरल के सांस्कृतिक केन्द्र, उत्तर-पूर्व के नगा-विद्रोही, और मध्य प्रदेश के सामंतवादी, सभी में उसने अपना जाल फैलाया है। अमेरिकी प्रेरणा और पैसे से कई मोर्चे और संगठन बनते हैं। भारतीय उद्योगपतियों के द्वारा जिनके सहयोग से कुछ बड़े उद्योग चलाये गये हैं, राजनैतिक और प्रशासनिक क्षेत्रों में 'बड़ों' तक पहुँच प्राप्त की जाती है। 'पीस कोर' के नाम से भेदियों का जाल बिछाया जाता है।

हमारे विश्वविद्यालय अमेरिकी कुचाल के मुख्य अड्डे हैं। 'रिसर्च' के नाम से लोगों को खरीदा जाता है, और उनके द्वारा अमेरिका के अनुकूल विचारों का प्रचार होता है।

पिछले साल २५ मार्च को जब पाकिस्तानी सेना ने बंगला देश में प्रहार शुरू किया उसके बाद पंजाब में अमेरिकी रिसर्च-स्कालरों की संख्या अचानक बढ़ गयी। किसलिए? 'सिक्खिस्तान' और एक विशिष्ट धार्मिक समुदाय के रूप में सिक्खों की समस्याओं के सम्बन्ध में तथ्य इकट्ठा करने के लिए! यह रिसर्च, एक तरीका था सिक्खों के मन को भारत से अलग करने का। यह एक नमूना है पाकिस्तान-अमेरिका की भारत के विरुद्ध मिली-जुली कुचाल का।

किस तरह विश्व बैंक अमेरिका का पैसा देहिहर क्षेत्र में पूँजीवाद को मजबूत करने के लिए इस्तेमाल होता है, इसका एक ताजा उदाहरण है। पिछले साल विश्व बैंक ने पंजाब को लगभग ३० करोड़ रुपये का कर्ज दिया। यह पैसा ट्रैक्टर और दूसरे यंत्र मँगाने के लिए था। इसी तरह हरियाणा को भी ६ हजार ट्रैक्टर और दूसरे बड़े यंत्र खरीदने के लिए पैसा मिला। इस पैसे से मँगाये गये ट्रैक्टरों का मूल्य प्रति ट्रैक्टर ४० हजार रुपया था, जब कि देशी ट्रैक्टर २० हजार में मिलते हैं। विश्व बैंक ने शर्त रखी थी कि ट्रैक्टर उन्हीं किसानों को मिलने चाहिए जो आर्थिक दृष्टि से पुष्ट हों। और ट्रैक्टर पश्चिमी देशों से ही मँगाये जायेंगे।

पंजाब और हरियाणा के विश्व विद्यालयों के रिसर्च स्कालर ऊँची शिक्षा के लिए तथा बड़े शासक स्पेशल ट्रेनिंग के लिए अमेरिका भेजे जाते हैं। ये लोग लौटकर इस देश में अमेरिकी संस्कृति, साहित्य और विज्ञान पर गोष्ठियाँ करते रहते हैं।

शिक्षण के ३ क्षेत्रीय संस्थानों में से एक चंडीगढ़ में है। अभी हाल तक ये संस्थान एक 'अमेरिकी डाइरेक्टर' के संचालन में चलते थे। एक संस्थान के डाइरेक्टर की नियुक्ति की स्वीकृति तो दिल्ली स्थित अमेरिकी दूतावास से लेनी पड़ी।

पिछले साल पंजाब में एक संगठन बना। उसका नाम था 'पंजाब फ्रेन्ड्स ऑफ दी यू० एस० ए०'। इस संगठन का उद्देश्य था: पंजाबी लोगों को अमरीकी जीवन-पद्धति अपनाने के लिए तैयार करना।

असम में भी अमेरिकी सूत्र सक्रिय रहे हैं। वहाँ एक 'वर्ल्ड यूनिवर्सिटी सर्विस' है। यह संगठन विश्वविद्यालयों के तेज विद्यार्थियों से सम्पर्क रखता है, और छात्र-संगठनों में भी घुसपैठ करता है।

इसी तरह मेघालय में एम० आर० ए० है, जिसका प्रभाव मंत्रियों और नेताओं पर भी है।

यह बात जाहिर हो चुकी है कि पूरे उत्तर पूर्वी अंचल में अमेरिकी भेदिया-संगठन (सी० आई० ए०) अनेक रूपों में सक्रिय रहा है। नगा-विद्रोहियों को उसके द्वारा अस्त्र-शस्त्र भी मिलते रहे हैं।

केवल दक्षिण भारत में ६० कम्पनियाँ हैं जो भारतीय-अमेरिकी उद्योग-पतियों के सहयोग से चलती हैं। इनमें से कई का 'मनापलीज कमीशन' की रिपोर्ट में उल्लेख है। तमिलनाडु की डी० एम० के० सरकार ने अमेरिकी पूँजी का स्वागत करने में बड़ी तत्परता दिखायी है, और अमेरिकी उद्योगपतियों को मुनाफे और संरक्षण का हर सम्भव आश्वासन दिया है।

केरल में भी अमेरिकी सूत्र कम सक्रिय नहीं हैं। वेलनयानी एग्रीकल्चर कालेज के ४९ अध्यापकों में से एक-चौथाई अमेरिका में प्रशिक्षित हैं। केरल विश्वविद्यालय के सभी विभागों के अध्यक्ष अमेरिका-ट्रेण्ड हैं। इन लोगों को अच्छी जगहें प्राप्त करने में अमेरिकी स्रोतों से बड़ी मदद मिलती है।

बंगाल के हिन्दी, उर्दू, बंगला अखबारों में युनाइटेड स्टेट्स इन्फर्मेशन सर्विस द्वारा प्रचारित सामग्री खूब छपती है।

अमेरिकी फिल्में अपराध-वृत्ति फैलाने में बड़ा काम करती हैं। उनमें क्रूरता और हिंसा भरपूर रहती है जिसका देखने-वालों के मन पर गहरा असर होता है। इसी तरह अमेरिका से एक-से-एक अश्लील पत्रिकाएँ आती हैं जिन्हें हमारे युवक-युवतियाँ चाव से पढ़ती हैं।

१९६४ में बंगाल के शिक्षित लोगों के बीच कुछ पुस्तिकाओं का प्रचार हुआ। ये पुस्तिकाएँ पश्चिमी बर्लिन में छपी हुई थीं। उनमें कुछ नक्शे छपे थे जिनमें 'पूर्वी भारत का संयुक्त राष्ट्र' दिखाया गया था। उसमें थे बंगाल, पूर्वी पाकिस्तान (अब बंगला देश), असम, मनीपुर, *त्रिपुरा, नेफा, नगालैण्ड, भूटान, सिक्किम।* ढाका में 'संयुक्त बंगाल आन्दोलन' शुरू कराने की कोशिश अमेरिकी सूत्रों द्वारा की गयी थी, लेकिन वह चल नहीं सकी।

राजनैतिक क्षेत्र में अमेरिकी भेदिए, *अति-दक्षिणपंथी और अति-वामपंथी,* दोनों तरह के तत्वों को पकड़ने की कोशिश करते हैं।

राष्ट्र के जीवन का कोई पहलू नहीं जिसमें घुसपैठ की कोशिश नहीं होती। ●

भूदान यज्ञ : दिनांक ७ फरवरी, '७१ के अंक का परिशिष्ट

सर्व सेवा संघ

अंक २, फरवरी, '७१

ग्रामस्वराज-कोष

पूज्य विनोबाजी की ७५वीं जन्म जयन्ती के अवसर पर देश भर में जो ग्रामस्वराज-कोष एकत्र हुआ था उसके प्रदेशवार आंकड़े नीचे प्रकाशित किये जा रहे हैं। कोष का लक्ष्य १ करोड़ रुपये का था और गत वर्ष जनवरी तक संग्रह के जो अनुमान प्रदेशों से मिले थे, उनके अनुसार कुल संग्रह ८० लाख से ऊपर हो जाने का जाहिर किया गया था। पर बाद में जो हिसाब मिले उनके अनुसार कुछ प्रदेशों का वास्तविक संग्रह अनुमान से कम हुआ है। फिर भी यह संतोष की बात है कि पू० विनोबाजी के ७५वें जन्मदिन के उपलक्ष्य में संग्रहीत यह कोष ७५ लाख रुपये से ऊपर पहुँच गया।

इस कोष का उपयोग विनोबाजी की सम्मति के अनुसार ग्रामदान आन्दोलन के लिए ही रहा है। भूदान-ग्रामदान का यह आन्दोलन पिछले २० वर्षों से चल रहा है। इस आन्दोलन के जरिये देशभर में करीब १५ लाख एकड़ जमीन पुराने मालिकों के पास से निकलकर ६ लाख गरीब परिवारों में बँट चुकी है। डेढ़ लाख से ऊपर गाँवों में ग्रामदान के संकल्प हुए जिससे देश में ग्रामस्वराज्य के लिए एक वातावरण बना है। अब ग्रामदान के बाद का काम हो रहा है और सैकड़ों गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं, तथा काम कर रही हैं। पूरा समय देनेवाले सैकड़ों कार्यकर्ता इस काम में लगे हैं तथा अन्य हजारों आंशिक समय दे रहे हैं।

इतने बड़े आन्दोलन में स्वाभाविक ही हर बरस विभिन्न प्रदेशों में मिलाकर लाखों रुपया खर्च होता रहा है, जो जगह-जगह जनता से संग्रह किया जाता रहा है। ग्रामस्वराज्य-कोष, देश भर में एक साथ योजनाबद्ध संग्रह करने का पहला प्रयास था। पूज्य विनोबाजी ने इसी शर्त पर इस संग्रह की इजाजत दी थी कि यह कोष स्थायीनिधि के रूप में न रहे बल्कि आन्दोलन के लिए उसका खर्च होता जाय। आन्दोलन के लिए जिस परिमाण में खर्च होता रहा है उसपर से ऐसा अनुमान था कि तीन-चार बरस में कोष समाप्त हो जायगा।

गत अप्रैल १९७० से जब कोष का संग्रह शुरू हुआ, आन्दोलन का खर्च जगह-जगह इसमें से होता रहा है। हर प्रदेश में जो संग्रह हुआ है उसका दस प्रतिशत आन्दोलन के केन्द्रीय खर्च के लिए सर्व सेवा संघ को दिया गया है, शेष ९० प्रतिशत प्रदेश में ही खर्च हो रहा है। सिवाय बंबई, दिल्ली, कलकत्ता में हुए संग्रह के, जिसका ५० प्रतिशत केन्द्रीय कोष में लिया गया है।

इस संचयन के जरिये समय-समय पर ग्रामस्वराज-कोष के उपयोग की जानकारी जनता को, खासतौर से प्रमुख दाताओं को, देते रहने की कोशिश रहेगी, जिससे उनको यह मालूम होता रहे कि उनके दान का उपयोग किस प्रकार हो रहा है।

—सिद्धराज ढड्ढा

ग्रामस्वराज-कोष

प्रदेशवार संग्रह

ता० ३१-१२-७१

क्र० सं०	प्रदेश		कुल संग्रह
१.	आसाम	...	२,१०,०००.००
२.	बंगाल (कलकत्ता)	...	३ ०८,३१२.८०
३.	बंगाल (अन्य)	...	१४,९९२.५०
४.	बिहार	...	४,००,०००.००
५.	उत्तर प्रदेश	...	४ ४८,६८७.३२
६.	हिमाचल प्रदेश	...	१५,००५.००
७.	कश्मीर	...	३०२.५६
८.	पंजाब	...	८४,००० ००
९.	हरियाणा	..	६२,४८१.००
१०.	राजस्थान	...	४,२० ७१९.८४
११.	गुजरात	...	८,५०,०००.००
१२.	महाराष्ट्र	...	१२,००,००० ००
१३.	बम्बई शहर	...	९,५७,५८० ००
१४.	मध्य प्रदेश	...	९,६०,००० ००
१५.	उड़ीसा	...	८२,०००.००
१६.	आन्ध्र	..	३,७९,५५७.५८
१७.	मैसूर	...	५,५८,३१०.००
१८.	केरल	...	४१,४१९.१५
१९.	तमिलना	...	२,०२,४२१.४२
२०.	दिल्ली	...	१,४०,९४३.१५
२१.	गोआ	...	३४,४९८ ७०
२२.	नागालैंड	...	१,२२,१३१.९६
२३.	केन्द्रीय ग्रह	...	९६,४०६.२१
			जोड़ . ७५,१९,७४०.१९

संविधान का २५वाँ संशोधन

एक प्रतिगामी कदम

साम्पत्तिक अधिकार को सीमित या समाप्त करने की कोशिश करनेवाले २५वें संशोधन की चाहे जो भी विशेषताएँ हों नागरिकों के भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, संगठन या संघ बनाने की स्वतंत्रता, भारत के समस्त क्षेत्र में स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण करने तथा देश के किसी भाग में रहने और बसने की स्वतन्त्रता के जो मौलिक अधिकार हैं, उन्हें किसी भी रूप में सीमित करने के प्रयास को मैं एक प्रतिगामी और अधिनायकवादी कदम मानता हूँ। समाज के कल्याण और हित के नाम पर राज्य द्वारा अधिकाधिक सत्ता का अधिग्रहण हमेशा प्रगतिशील तथा वामपंथवादी कदम ही होगा, यह आवश्यक नहीं है। इसके विपरीत, यह बिलकुल दक्षिण-पंथवादी और प्रतिगामी कदम भी हो सकता है। अन्यथा, लोकतन्त्र और अधिनायकतंत्र का भेद ही समाप्त हो जायेगा और सर्व सत्तावादी व्यवस्था ही सर्वाधिक प्रगतिशील व्यवस्था बन जायगी। लगता है प्रधानमंत्री और उनके सहयोगी, संविधान के जन्मदाताओं द्वारा, जिनमें पंडित जवाहरलाल नेहरू भी शामिल हैं, सुस्पष्ट रूप से प्रतिष्ठित लोकतन्त्र की बुनियादों को मिटाने पर तुले हुए हैं। केन्द्रीय विधिमंत्री के वक्तव्य और उनसे भी अधिक श्री मोहन कुमार मंगलम् द्वारा इस विषय में प्रकट किये गये विचार, प्रतिक्रियावादी हैं, और लोकतान्त्रिक समाजवाद के बजाय अधिनायकवाद के संकेतक हैं। नागरिकों के मौलिक अधिकार २५वें संशोधन द्वारा राजकीय नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अधीन किये जा रहे हैं, इस बात से लगता है कि विधिमंत्री को गर्व का अनुभव होता है। यह तो गर्व के बदले लज्जा का विषय होना चाहिए कि भाषण, संगठन, तथा विचरण की मौलिक स्वतन्त्रताएँ भी, समाजवादी नीति की आवश्यकताओं के बहाने, राज्य की स्वेच्छाचारिता के अधीन की जा रही हैं। संसद में सरकार द्वारा दिये गये इस मौखिक आश्वासन का कानून में कोई मूल्य नहीं है कि प्रस्तावित संशोधन से हमारे मौलिक अधिकार प्रभावित नहीं होंगे। अंत में प्रधानमंत्री से तथा उनके सहयोगियों से अपील करता हूँ कि वे थोड़ा ठहरकर सोचें और लोकतंत्र के उन मौलिक आधारों की रोशनी में, जो समय के अनुसार बदलते नहीं, बल्कि शाश्वत बने रहते हैं, इस प्रश्न पर पुनर्विचार करें।

प्रधानमंत्री को लोकसभा में दो तिहाई बहुमत प्राप्त है, इस बात से उन पर यह विशेष दायित्व आता है कि वे जनता द्वारा दिये गये अधिकार का दुरुपयोग न करें। उनको तथा उनकी सरकार को इस प्रश्न पर भी पुनर्विचार करना चाहिए कि किस हद तक सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय, लोकतंत्र की आवश्यकताओं के अनुकूल, राजकीय नीति के निदेशक सिद्धान्तों को क्रियान्वित करने की दृष्टि से बनाये गये कानूनों के वैधानिक औचित्य पर निर्णय देने के अधिकार से वंचित किये जा सकते हैं।

पटना, १ दिसम्बर '७१।

—जयप्रकाश नारायण

भोपाल में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

गत २८, २९, ३०, ३१ अक्तूबर, '७१ को भोपाल में सर्वोदय आन्दोलन में सक्रिय रूप से कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं का छमाही अधिवेशन महत्वपूर्ण उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुआ। सर्व सेवा संघ द्वारा इस प्रकार का अधिवेशन साल में दो बार बुलाया जाता है, और देश भर के कार्यकर्ता साथी एकत्र होकर पिछले काम की प्रगति का लेखा-जोखा और समीक्षा करते हैं और आगे के काम की योजना बनाते हैं। आमतौर पर यह अधिवेशन ३ दिनों का होता है, लेकिन इस साल चार दिनों का हुआ और इसमें करीब ५ सौ कार्यकर्ताओं ने आखिरी समय तक सक्रिय रूप से भाग लिया। इस अधिवेशन में सर्वोदय-आन्दोलन की भरपूर समीक्षा हुई और कार्यकर्ताओं में गहरा आत्मचिन्तन चला। सत्य और अहिंसा के मूल्यों पर आधारित आन्दोलन में इस प्रकार की समीक्षा और आत्मचिन्तन का बहुत महत्व होता है, क्योंकि इससे आन्दोलन की नैतिक शक्ति पुष्ट होती है।

इस अधिवेशन में पाँच महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये, जिन्हें हम इस अधिवेशन के सहचिन्तन का सार—तत्व कह सकते हैं।

ग्रामस्वराज्य आन्दोलन : सम्बन्धित प्रस्ताव में यह कहा गया है कि सारे देश में डेढ़ लाख से भी अधिक ग्रामदानों के संकल्प हो चुकने के बाद अब अगले कदम के तौर पर उन संकल्पों को कार्यान्वित कराने में लगना है। और यह काम सारी शक्ति समेटकर एकाग्रता एवं सातत्य के साथ लगने पर ही पूरा हो सकेगा। अधिवेशन की ओर से देश भर के कार्यकर्ताओं को इसमें जुट जाने का आह्वान किया गया।

प्रस्ताव में कहा गया कि हमें सब वर्गों तथा उनके साथ सम्पर्क रखकर सबमें अभिक्रम जगाने का काम करना है। जन-शक्ति के जागरण के लिए दान, संगठन तथा मौके पर प्रतिकार, इन तीनों को सम्मिलित या समन्वित रूप से आवश्यकता है। इस बात पर प्रस्ताव में जोर दिया गया कि सहरसा और मुसहरी के राष्ट्रीय मोर्चे में मुख्य शक्ति लगायी जाय, लेकिन साथ-साथ अन्य प्रदेशों में भी ग्रामस्वराज्य के सघन क्षेत्र बनाये जायँ, ताकि ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन शीघ्र जन-आन्दोलन बन सके।

देश की अर्थनीति पर अपना विचार व्यक्त करते हुए एक अन्य प्रस्ताव में सर्व सेवा संघ ने, आर्थिक दृष्टि से सार्वजनिक क्षेत्र में पैदा हुए गतिरोध के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए शासन द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र में लिये गये उद्योगों का उचित दिशा में विकास हो, इस बात पर जोर दिया। उद्योगों में सर्वसत्ता का केन्द्रीकरण सरकारी अधिकारियों के हाथों में हो रहा है और श्रमिकों में अशान्ति बढ़ रही है। व्यवस्थापक और श्रमिक दोनों वर्गों में गैर जिम्मेदारी की भावना बढ़ रही है। यह स्थिति तुरन्त समाप्त करने के लिए व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन पर जोर दिया गया।

प्रस्ताव में इस बात पर भी चिन्ता व्यक्त की गयी कि खानगी उद्योगों के क्षेत्र में एक निराशा का वातावरण बना है। निजी स्वार्थ के आगे जनहित के प्रति उदासीनता है। इस बात की आवश्यकता महसूस की गयी है कि सरकार द्वारा व्यक्तिगत अभिक्रम को लोकहित में लगाने के लिए योग्य वातावरण बनाया जाना चाहिए, साथ ही व्यक्तिगत क्षेत्र में ट्रस्टीशिप की भावना पनपे, ऐसी परिस्थिति बनायी जाय। समता लाने की दिशा में योजनाओं की विफलता का उल्लेख करते हुए नीचे से विकास की प्रक्रिया शुरू करने पर भी जोर दिया गया।

एक अन्य प्रस्ताव द्वारा बंगला देश के मुक्ति-संघर्ष का समर्थन करते हुए प० पाकिस्तानी सैनिक तानाशाहों की बर्बरता की निन्दा की गयी और बंगला देश के मुक्ति-सैनिकों की बहादुरी और अदम्य साहस के लिए हार्दिक प्रशंसा व्यक्त की गयी। भारत तथा विश्व के सभी देशों से मुक्तिवाहिनी को हर सम्भव मदद देने की अपील करते हुए सर्व सेवा संघ ने आशा व्यक्त की कि शीघ्र ही बंगला देश मुक्त होगा।

अब जल्दी ही देश में आम चुनाव होंगे, इसलिए लोकतांत्रिक समाज-व्यवस्था में मतदान के महत्व को स्वीकार करते हुए, मतदाता-शिक्षण की आवश्यकता महसूस की गयी। मतदाता शिक्षण-विषयक प्रस्ताव में लगातार लोकतांत्रिक मूल्यों के ह्रास और चुनाव में अनैतिक आचरणों की बढ़ोतरी पर चिन्ता व्यक्त करते हुए सर्व सेवा संघ ने मतदाताओं से अपील की कि वे अपने मत की महत्ता एवं पवित्रता को पहचानें और हर हालत में भय, बलप्रयोग, चरित्रहनन, जाति व प्रलोभनों के प्रभाव से मुक्त रहें। संघ ने राजनैतिक दलों और नेताओं को चेतावनी दी कि अगर इस प्रकार की कार्रवाइयों को तत्काल बन्द नहीं किया गया तो न केवल भारतीय लोकतन्त्र एक मजाक बनकर रह जायगा, बल्कि राष्ट्र का नैतिक स्वरूप भी नष्ट हो जायगा।

सर्व सेवा संघ ने भारत के सभी लोकतन्त्र प्रेमियों और सर्वोदय कार्यकर्ताओं से अपील की कि वे मतदाता-शिक्षण के काम की महत्ता समझें और अपनी जिम्मेदारी मानकर इस काम को उठा लें।

कुछ प्रदेशों में शराबबन्दी हटाये जाने पर असन्तोष प्रकट करते हुए एक प्रस्ताव में उन प्रदेशों की जनता से अपील की गयी कि इस प्रकार की कार्रवाई को रोकने के लिए वह आवश्यक और मजबूत कदम उठाये। ●

आन्दोलन की गतिविधियाँ

महबूबनगर जिले में ४६ ग्रामदान, ५९४ एकड़ भूमि का तुरन्त वितरण : आन्ध्र प्रदेश के महबूबनगर जिले में जड्चरला प्रखण्ड में १५ से २४ नवम्बर '७१ तक आयोजित ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि पदयात्राओं के परिणामस्वरूप ९२ गाँवों में से ७७ गाँवों में ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाया गया, जिनमें से ४६ गांव ग्रामदान घोषित हुए। इनमें से ३३ गाँवों में से ४२ दाताओं से ७८९ एकड़ भूमि (यह उल्लेखनीय है कि इसमें से ४६७ एकड़ भूमि सरक्षित बटाईदारों की है) मिली। प्राप्त भूमि में से ५९४ एकड़ भूमि तुरन्त वितरित कर दी गयी। २९ गाँवों में ग्राम-शान्तिसेना का गठन किया गया।

पदयात्राओं में आन्ध्र के ५० कार्यकर्ताओं के अलावा सर्व सेवा सघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बग, श्रीमती सुमन बग एवं महाराष्ट्र के अन्य तीन कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

मरौना (सहरसा) में प्रखण्ड स्वराज्य-सभा का गठन : सर्व सेवा सघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् १० नवम्बर को मरौना प्रखण्ड की यात्रा के सिलसिले में निर्मली पहुँचे। उसी दिन ३-३० बजे अपराह्न में निर्मली में आयोजित एक आमसभा में उन्होंने भाग लिया। मरौना प्रखण्ड में बनी सभी ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों के अलावा हजारों की सख्या में लोग बाजे-गाजे और सर्वोदय उद्घोषों के साथ उक्त आयोजन में सम्मिलित होने आये थे।

इस मौके पर प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा का बाजाप्ता गठन हो गया जिसके अध्यक्ष श्री नारायण यादव तथा मंत्री लक्ष्मीप्रसाद यादव बनाये गये हैं। ज्ञातव्य है कि इससे पहले वहाँ एक तदर्थ प्रखण्ड-स्वराज्य समिति का गठन भी हुआ था।

मरौना प्रखण्ड में कुल १० पंचायतें हैं, जिनमें ३८ राजस्व गाँव तथा ७३ टोले हैं। राजस्व गाँवों तथा टोलों को मिलाकर अब तक कुल ९० ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बनायी गयी हैं। वहाँ कुल ६,३४२ परिवारों में ३६,३१४ जनसख्या है, जिनमें ५,५४८ परिवार (३,२२५ भूमिवान तथा २,३२३ भूमिहीन) और ३१,७९५ जनसंख्या ग्रामदान में शामिल हो चुकी है। अब तक ४६१ दाताओं द्वारा प्राप्त १८५ बीघा ७ कट्ठा १० धूर जमीन ७४४ आदाताओं में बाँटी गयी है। ज्ञातव्य है कि यहाँ का ८५ बीघा १०० एकड़ के बराबर होता है। २९ ग्रामस्वराज्य-सभाओं में ग्रामकोष जमा हो रहा है तथा पूरे प्रखण्ड में १,११८ शान्ति-सैनिक बने हैं।

सहरसा में अखिल भारतीय सेवकों की पदयात्रा गत ११ सितम्बर '७१ (विनोबा जयन्ती) से २ अक्टूबर '७१ (गांधी जयन्ती) तक सहरसा के ग्राम-स्वराज्य-अभियान में और गति लाने की दृष्टि से कुल २३ प्रखण्डों में से २१ प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य पदयात्राओं का आयोजन किया गया, जिनमें महाराष्ट्र, बम्बई, पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश, मैसूर, मध्य प्रदेश और बिहार के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

यह महत्त्वपूर्ण बात थी कि आधा सहरसा जिला बाढ़ के कारण जलमग्न था, अति और असामयिक वृष्टि के कारण जिले में अकाल की स्थिति थी, फिर भी जिले के लोगों ने इस कार्यक्रम में उत्साह से योगदान किया और लोगों में अपनी समस्याओं को सामूहिक शक्ति से हल करने के ग्रामस्वराज्य के बुनियादी विचार के प्रति एक व्यापक आकर्षण पैदा हुआ।

लोकगंगा के तट पर : सर्वोदय परिवार के सम्मानित बुजुर्ग और सुप्रसिद्ध सर्वोदय क्रान्तिदर्शी श्री धीरेन्द्र भाई पिछले १ साल से सहरसा में रहकर पूरे आन्दोलन का मार्गदर्शन कर रहे थे। इस साल १ दिसम्बर '७१ से उन्होंने अपने जीवन के आखिरी क्षण तक सहरसा के गाँवों में घूमते हुए लोक-क्रान्ति का अलख जगाने का सकल्प किया। इसे उन्होंने अपने जीवन के सन्यास आश्रम में गंगा नदी के तट की जगह लोकगंगा की मध्यधारा में विचरण की सज्ञा दी है, और सकल्पानुसार उनकी लोकयात्रा चल रही है।

बिहार में भूमि-वितरण और कानूनी पुष्टि अब तक बिहार में कुल प्राप्त २१,१७,४६५ एकड़ भूदान की जमीन में से ४,१८,२८५ एकड़ जमीन २,५४,४९२ भूमिहीनों के बीच बाँटी गयी है। ३,६९०-५०० एकड़ जमीन बाँटना बाकी है। शेष जमीन जोतने लायक नहीं है। ११,८१४ भूदान किसानों की लगानबन्दी हुई।

बिहार ग्रामदान कानून के मुताबिक ५१० गाँवों के ग्रामदान की पुष्टि हुई। ३०१ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं। मुसहरी प्रखण्ड, सहरसा और पूर्णिया जिले में पुष्टि का काम समानरूप से अभियान के रूप में चल रहा है।

इसके अलावा राज्य के विभिन्न जिलों में अब तक कुल २५०८ काम-चलाऊ ग्रामसभाएँ गठित की गयी हैं, तथा २४४८ आदाताओं में ८७५ बीघा ७ कट्ठा २ धूर तथा ३६१ एकड़ २८ डिसमिल जमीन, जो बीघा-कट्ठा में प्राप्त हुई, वितरित की गयी है।

नगर स्वराज्य की दिशा में : बीकानेर में जिले के गाँवों में ग्रामस्वराज्य का सघन काम पिछले डेढ़-दो वर्षों से चल रहा है। उसकी जानकारी शहर के लोगों को देने के साथ-साथ शहर में भी उसी प्रकार मुहल्ला सभाओं के गठन के जरिये 'नगर-स्वराज्य' के कार्यक्रम का सुझाव लोगों के सामने रखा गया। बीकानेर शहर में करीब २०० 'नुक्कड़-सभाएँ' की गयीं। नगरस्वराज्य की योजना छपवाकर वितरित की गयी तथा स्कूलों, कालेजों व्यापारियों, रोटरी क्लब आदि विभिन्न वर्गों में मीटिंग तथा आमसभाएँ की गयीं। बीकानेर शहर में अच्छा वातावरण

बना और नगर स्वराज्य के काम को आगे बढ़ाने के लिए एक समिति का निर्माण हुआ।

गुजरात में ग्रामस्वराज्य का सघन क्षेत्र : गुजरात के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने इस साल भड़ूच जिले में अपनी सामूहिक शक्ति लगाकर ग्रामस्वराज्य का सघन काम करने की योजना बनायी है। इस कार्य में शिक्षकों, विद्यार्थियों का सहयोग प्राप्त करने के प्रयत्न शुरू हो गये हैं। १५ अगस्त, '७२ तक १००० ग्रामसभाएँ संगठित कर लेने की योजना बनी है।

अक्लेश्वर सत्याग्रह : समाधानकारक निर्णय : अक्लेश्वर (गुजरात) के आदिवासियों की जमीन को, जिस पर २२ परिवार यानी २०० व्यक्तियों का जीवन निर्भर है, एक बड़े भूमिपति के कब्जे से छुड़ाने के लिए गत १८-४-७० को श्री हरिवल्लभ भाई परीख के मार्गदर्शन व सहकार से आदिवासियों ने जो सत्याग्रह शुरू किया था उसका कोई आशाजनक परिणाम नहीं आने पर, यानी सरकार द्वारा आदिवासियों को जमीन देने के लिए कोई सफल कार्रवाई नहीं की जाने पर, फिर ११ सितम्बर (विनोबा जयन्ती) से २ अक्तूबर (गांधी जयन्ती) तक बड़े पैमाने पर सत्याग्रह करने का उन्होंने फैसला किया था। लेकिन इसके पूर्व ही झगड़े का समाधानपूर्वक निपटारा हो गया।

सामूहिक शक्ति से अहिंसक तौर पर कौड़ की जमीन के झगड़े का निपटारा हो सकता है, यह इसका एक सुन्दर उदाहरण है।

केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की बैठक : ११-१२ सितम्बर '७१ को ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार में, केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की तीसरी बैठक आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति श्री शीतल प्रसादजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इन दो दिनों में हुई चारों बैठकों में विनोबाजी का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। शुभारम्भ और समापन बाबा के प्रवचनों से हुआ।

इन बैठकों में समिति ने आचार्यकुल की शिक्षा-नीति पर एक सुस्पष्ट रूपरेखा को अंतिम रूप दिया। इसका ड्राफ्ट उ० प्र० की आचार्यकुल समिति द्वारा नियुक्त एक उपसमिति ने तैयार किया था। विनोबाजी ने इस मसविदे को अपना पूर्ण समर्थन दिया, और इस पर संतोष व्यक्त किया। इसके पूर्व आचार्यकुल के विधान पर चर्चा हुई थी, और एक ठोस संगठन के लिए तैयार किये गये इस विधान को भी आखिरी रूप दिया गया।

उक्त विधान के अनुसार आचार्यकुल को व्यापक और ठोस बुनियादी आधारों पर संगठित करने के लिए मौजूदा समिति का कार्यकाल ३ साल के लिए बढ़ाया गया। श्री सिद्धराज ढड्ढा, सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और मंत्री को भी पदेन सदस्य बनाया गया। समिति के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने समिति के आग्रह पर इसका संयोजक बने रहना स्वीकार किया। यह अपेक्षा व्यक्त की गयी कि ३ साल में आचार्यकुल का प्राथमिक इकाई से लेकर राष्ट्रीय इकाई तक विधिवत संगठन हो जायेगा।

उत्तराखण्ड में नशाबन्दी आन्दोलन की सफलता : दो वर्ष पूर्व शराबबन्दी आन्दोलन के फलस्वरूप उत्तराखण्ड के ४ शहरों को छोड़कर, आठों जिलों के शेष भाग में प्रदेश सरकार ने नशाबन्दी की घोषणा की थी, जिसे उच्च न्यायालय ने वैधानिक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण समझ कर शराब की दुकानें टिहरी तथा पौड़ी में खोलने के आदेश दे दिये थे। फलस्वरूप उक्त क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर आन्दोलन तथा ८ नवम्बर से २० नवम्बर तक उत्तराखण्ड के प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा उपवास भी हुआ।

फलस्वरूप उत्तर प्रदेश के राज्यपाल डा० बी० गोपाल रेड्डी ने गत २७ दिसम्बर को एक अध्यादेश जारी करके उत्तर प्रदेश आबकारी एक्ट की धारा २१ में आवश्यक संशोधन करके उत्तराखण्ड के पौड़ी तथा टिहरी गढ़वाल जिलों में पुनः नशाबन्दी लागू कर दी है।

चम्बल घाटी में शान्तिकार्य : चम्बल घाटी शान्ति समिति के मंत्री श्री महावीर भाई बागियों से सम्पर्क करके उन्हें समाज के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। श्री जयप्रकाश नारायण ने बागियों से अपील की है कि वे लूट-पाट का रास्ता छोड़ दें। अब तक किये गये सम्पर्क के आधार पर यह आशा बँधी है कि कई प्रमुख बागी निकट भविष्य में आत्मसमर्पण करेंगे।

स्मरणीय है कि सन् १९६० में जब कि २० बागियों ने विनोबा के समक्ष आत्मसमर्पण किया था, तभी से वहाँ शान्ति कार्य चल रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन

देश की रचनात्मक और सेवा-संस्थाओं के सहयोग से गत १८, १९, २० सितम्बर '७१ को दिल्ली में श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बंगला देश के समर्थन में विश्व जनमत जागृत करने के लिए आयोजित हुआ, जिसमें २४ देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन की समाप्ति पर एक सर्वसम्मत संस्तुति में कहा गया कि बंगला देश एक प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्र के लिए आवश्यक सभी शर्तें पूरी करता है। दुनिया के सभी मुल्कों से इस सम्मेलन ने अपील की कि वे पश्चिम पाकिस्तान को हर प्रकार की सामरिक और आर्थिक मदद देना बन्द करें और बंगला देश का हर प्रकार की सहायता दें ताकि बंगला देश की साढ़े सात करोड़ जनता प० पाकिस्तान की सैनिक तानाशाही के जुल्म से मुक्त हो सके।

ज्ञातव्य है कि इस सम्मेलन के आयोजन के लिए जो तैयारी समिति गठित हुई थी, उसके अध्यक्ष भी श्री जयप्रकाश नारायण थे।

सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य अभियान

(दिसम्बर '७१ से फरवरी '७२ तक की कार्य-योजना)

ग्रामदान पुष्टि-कार्य के राष्ट्रीय प्रयोग क्षेत्र 'सहरसा' के २५ प्रखण्ड हैं। इनमें सहरसा जिले के २३, और पड़ोसी जिले पूर्णिया और दरभंगा के क्रमशः रूपौली और बिरौल प्रखण्ड शामिल माने गये हैं।

सहरसा जिले के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में ग्रामदान-पुष्टि का काम जिस तरह विकसित हुआ है, उसे ध्यान में रखते हुए आगे के काम को तीन हिस्सों में बाँटकर सोचा गया है :

(१) अग्रिम क्षेत्र—मरौना प्रखण्ड।

(२) सघन कार्य-क्षेत्र—महिषी, चौसा, रूपौली और बिरौल प्रखण्ड।

(३) अभियान-क्षेत्र—शेष २० प्रखण्ड।

मरौना का अग्रिम क्षेत्र : मरौना प्रखण्ड में पुष्टि-कार्य का पहला चरण करीब-करीब पूरा हुआ है। कुल १०४ गाँवों में से ९२ गाँवों में ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। *अधिकांश गाँवों में बीघा-कट्ठा* निकाला गया है और बँट रहा है। प्रखण्ड-स्तर पर प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन भी हो चुका है। एक तरह से यह प्रखण्ड हमारे सारे काम का अग्रिम क्षेत्र या 'स्पियर हेड' है। अगले तीन महीने में इस प्रखण्ड में नीचे लिखे अनुसार काम करने का सोचा गया है :

१—ग्रामदान को कानूनी मान्यता दिलाने के लिए कागजात तैयार करके पेश करना।

२—यथासम्भव ग्रामसभाओं को सक्रिय करके उनके जरिये बीघा-कट्ठा का वितरण, ग्रामकोष की स्थापना, झगड़ों का गाँव में ही निपटारा, भूदान वितरण में अनियमितता, बेदखली, बासगीत के पर्चे, गाँव के अपाहिजों और गरीबों के बारे में चिंतन और मदद आदि काम हाथ में लेना और इस प्रकार गाँव में लोक-चेतना और लोक-अभिक्रम जागृत करना तथा लोक-संगठन को मजबूत बनाना।

३—प्रखण्ड की सभी ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के प्रशिक्षण का पहला दौर पूरा करना। इसके लिए प्रखण्ड को १०-१२ क्षेत्रों में बाँटकर दस-दस गाँवों के पदाधिकारियों के डेढ़ या दो दिन के शिविर अनुकूल केन्द्रों में आयोजित किये जायेंगे। फरवरी के अन्त तक प्रशिक्षण का यह पहला दौर समाप्त हो जायेगा। इसके बाद हर २-३ सप्ताह में एक-एक दिन के 'रिफ्रेशर शिविरों' की व्यवस्था की जायगी।

४—आर्थिक सर्वे तथा नियोजन, अनुकूल गाँवों में, जहाँ ग्रामसभाएँ सक्रिय हों अन्त्योदय की दृष्टि से उद्योग, विकास-निर्माण आदि के काम की शुरुआत की जाय।

सघन कार्य-क्षेत्र : मरौना के अलावा महिषी और चौसा प्रखण्ड में भी काम काफी आगे बढ़ा है। इन क्षेत्रों में ग्राम-सभाएँ बनाने का और बीघा-कट्ठा निकालने का काम चल रहा है। महिषी और चौसा के अलावा रूपौली में भी सघन काम चल रहा है।

अभियान-क्षेत्र : जिले के शेष २० प्रखण्डों में सभा-सम्मेलन, गोष्ठी, पद-यात्राओं आदि के जरिये स्थानीय अभिक्रम जाग्रत करने का सिलसिला जारी है। स्थानीय शक्ति के आधार पर इन प्रखण्डों में पहुँचा जाय तथा ग्रामस्वराज्य के आगे का काम हो, ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है।

कुछ प्रदेशों के सर्वोदय मण्डलों ने एक-एक प्रखण्ड में सघन काम करने के लिए अपने कार्यकर्ता साथियों को भेजने का निश्चय किया है। कुछ लोग आकर काम कर भी रहे हैं।

प्रखण्ड स्वराज्य सभा का वार्षिक सम्मेलन

झाझा प्रखण्ड (जिला मुंगेर, बिहार) में छोटे-बड़े कुल गाँवों की संख्या १८० है। इनमें से १६१ का ग्रामदान हो चुका है। १२६ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं तथा ८९ गाँवों में बीघा-कट्ठा का वितरण हो चुका है। झाझा का प्रखण्डदान ४ मार्च १९६८ को विनोबाजी को खादीग्राम, मुंगेर में समर्पित किया गया था। इस प्रखण्ड में गठित ग्रामसभाओं की प्रखण्ड-स्तरीय स्वराज्य-सभा का गत २० दिसम्बर १९७० को श्री जयप्रकाशजी द्वारा उद्घाटन हुआ था। तब से प्रखण्ड-स्तर पर चलनेवाली योजनाएँ ग्रामसभाओं के माध्यम से ही लागू की जाती हैं। सभाओं के फैसले सर्वसम्मति से होते हैं। प्रखण्ड-सभा बनने के बाद प्रखण्ड में कृषि और सिंचाई-विस्तार की योजनाएँ बड़े पैमाने पर क्रियान्वित की गयी हैं। ग्रामदानी गाँवों में सिंचाई और पेय जल के कुँए, आहर (छोटे-छोटे बाँध) आदि का निर्माण सरकारी व गैर-सरकारी स्वयंसेवी संस्थाओं के सहयोग से हुआ है। बिना लाभ-हानि के चारा बिक्री केन्द्र, खाद व बीज के डिपो भी ग्रामदानी गाँवों में खोले जा रहे हैं। प्रखण्ड में चलनेवाले सभी *निर्माण-कार्य ठेकेदारों के माध्यम से न* होकर ग्रामसभाओं के हाथ से होते हैं, जिनमें पूरे गाँव के बालिग मजदूरी या श्रमदान करते हैं।

इस प्रखण्ड स्वराज्य-सभा का पहला वार्षिक सम्मेलन गत २० दिसम्बर को झाझा में हुआ। सम्मेलन में भाग लेनेवाले करीब ८० गाँवों के ३०० प्रतिनिधियों ने प्रखण्ड में अभाव, अज्ञान व अन्याय दूर करने की दिशा में गत वर्ष किये गये कार्यों का मूल्यांकन करते हुए सन् '७२ की योजना पर विचार किया। प्रखण्ड-सभा ने फैसला किया है कि वह प्रति बालिग एक रुपया एकत्र कर सन् '७२ तक पचास हजार रुपए से प्रखण्ड-कोष स्थापित करेगी। अभी तक इस कोष के लिए चार हजार रुपए जमा हो चुके हैं। प्रखण्ड-शान्तिसेना के लिए पाँच सौ ऐसे शान्ति सैनिकों का चयन आरम्भ हो गया है जो प्रखण्ड-सभा के निर्देश पर पूरे प्रखण्ड में कहीं भी जाकर अपने कर्तव्य निभा सकें।

बंगला देश के स्वातंत्र्य संघर्ष में योगदान

बंगला देश की सीमा पर राहत कार्य :

सर्व सेवा संघ के तत्त्वावधान और अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के निर्देशन में गांधी-विचार से प्रेरित संगठनों द्वारा मिल-जुल कर बंगला देश से आये शरणार्थियों में राहत-कार्य किया गया। २३ शरणार्थी शिविरों में, जिनमें करीब ३,००,००० शरणार्थी थे, प्रत्यक्ष राहत-कार्य किया गया। करीब १५ लाख अन्य शरणार्थियों को, उनके बीच काम कर रहे संगठनों के माध्यम से मदद पहुँचायी गयी।

मुख्य रूप से हमारे स्वयंसेवकों ने सफाई (टट्टी घर बनाना, साफ करना, शवों को दफन करना, सोप गड्ढे बनाना तथा आम सफाई करना), स्वास्थ्य (रोगी को दवा देना, सुश्रूषा करना, अस्पताल से बाहर आने पर रोगी की देखरेख करना); बच्चों, माताओं, बूढ़ों, बीमारों को दूध बाँटना, कपड़े व कम्बल बाँटना; शिक्षण (पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक तथा प्रौढ़) का काम किया गया। शरणार्थियों में से योग्य लोगों को इन कार्यों का प्रशिक्षण भी दिया गया।

विश्व-विवेक जागरण पदयात्रा :

अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के तत्त्वावधान में बंगला देश के १३ जिलों के ३८ तरुण छात्रों-अध्यापकों की एक विश्व-विवेक जागरण पदयात्रा सन् १५ अक्तूबर ७१ को बंगला देश की सीमा पर स्थित बरहामपुर से शुरू हुई। पदयात्रियों २ नवम्बर '७१ को बिहार में प्रवेश किया और १० दिसम्बर '७१ को उत्तर-प्रदेश में। पदयात्रियों की माँगें थीं, (१) पाकिस्तान सरकार शीघ्र बंगला देश छोड़े, (२) विश्व की शक्तियाँ पाकिस्तान को दी जानेवाली हर सहायता बन्द करें।

बंगाल, बिहार में इस पदयात्रा के कारण साधारण लोगों तक, गाँव-नगर के अनपढ़ लोगों तक बंगला देश के संघर्ष की जानकारी पहुँची और बंगला देश के साथ उस क्षेत्र की जनता का हार्दिक सम्बन्ध बना। पदयात्री दिल्ली पहुँचकर बंगला देश की सहायता के लिए भारत सरकार के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही दुनिया के अन्य राष्ट्रों के दूतावासों से अपील करनेवाले थे कि वे लोकतन्त्र, समाजवाद और मानवीय अधिकारों की रक्षा के संघर्ष में बंगला देश की सहायता करें। लेकिन बंगला देश की स्वाधीनता के बाद पदयात्री अपने स्वतन्त्र राष्ट्र में अपना दायित्व निभाने के लिए आतुर हो उठे थे, इसलिए यह कार्यक्रम १८ दिसम्बर को उत्तर प्रदेश की राजधानी में अपूर्व उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ।

यूरोप में बंगला देश प्रदर्शनी :

ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध शान्तिवादी डेनन बर्लिन के निमन्त्रण पर सर्वोदय कार्यकर्ता श्री सतीशकुमार और महानी लेखक कमलेश्वर यूरोप गये हैं। वे अपने साथ बंगला देश से सम्बन्धित अनेक फोटो, चित्र चार्ट, आदि भी ले गये हैं, जिनकी तैयारी सर्व सेवा संघ के तत्त्वावधान में की गयी थी। इन चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन ट्रफालगर स्क्वायर में १३ से १८ सितम्बर तक किया गया। प्रतिदिन शाम को व्याख्यानों का भी आयोजन किया गया, जिसमें वक्ताओं ने बंगला देश में सैनिक सत्ता को समाप्त करने की माँग की।

बेल्जियम, हालैण्ड, डेनमार्क, स्वीडेन, जर्मनी, आस्ट्रिया, स्विट्जरलैण्ड, फ्रांस और इटली में भी प्रदर्शनी और व्याख्यान के कार्यक्रम इसी प्रकार सम्पन्न हुए।

सर्व सेवा संघ और यूरोप के शान्तिवादियों के इस सम्मिलित प्रयत्न का उद्देश्य था—बंगला देश की यथार्थ स्थिति से विश्व-जनमत को अवगत कराना और सैनिक कार्यवाही समाप्त करने के लिए पाकिस्तान सरकार पर जोर डालना।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की शान्तिसेना

जहाँ 'वर्ल्ड वार' होती है वहाँ 'इंटरनेशनल' क्षेत्र में अहिंसा क्या कर सकती है, इसकी कोई मिसाल दुनिया के इतिहास में अभी नहीं है। मैंने कई दफा कहा, और जयप्रकाशजी ने भी महसूस किया कि यूनो आर्मी रखता है, यह गलत है। अगर उसे आर्मी रखनी ही थी तो अमेरिका और रूस से ज्यादा आर्मी रखता। वह सम्भव था नहीं। इसका मतलब थोड़ी-सी आर्मी रखकर नाक कटवाकर अपशकुन किया। इसलिए यूनो को शान्ति सेना रखनी चाहिए थी। भारत में ५५ करोड़ लोग हैं। दुनिया की आबादी का १/६ हिस्सा है। यूनो ६०-७० लाख की शान्तिसेना रखे तो भारत एक लाख शान्ति-सैनिक दे। फिर इस शान्तिसेना को दूसरे देश में भेज सकते हैं। जो देश उस शान्ति-सेना को कबूल नहीं करेगा, वह दुनिया की सहानुभूति खोयेगा। अब 'वार' के सिलसिले में क्या कर सकते हैं? इसका यही उत्तर है कि ऐसी विश्व शान्तिसेना हो और वह यूनो की तरफ से ही हो। यूनो उसे अलग-अलग देशों में भेजे।

शान्तिसेना होगी तो कोई भी देश 'ना' नहीं कहेगा, 'हाँ' कहेगा। अगर 'ना' भी कहता तो भी शान्तिसेना उस देश में जाती, मारी जाती तो हर्ज नहीं।

यूनो के सामने यह रखा जाये और वह अगर इनकार करे तो किस कारण से इनकार करेगा? कहेगा – (१) व्यवहार्य नहीं है, (२) इष्ट नहीं है। व्यवहार्य नहीं है कहेगा तो उससे कह सकते हैं कि भारत एक लाख शान्तिसैनिक देगा। अनिष्ट है कहेगा, तो उसे पूछा जाय कि इससे कैसे अनिष्ट होगा? क्या इससे यूनो की ताकत कम होगी? इस तरह उसके साथ बातचीत की जाये।

अगर वह दोनों का उत्तर नहीं देता है और शान्तिसेना खड़ी नहीं करता है, तब आप स्वतन्त्र ताकत खड़ी कर सकते हैं। फिर यूनो खत्म ही होगा। उसका कोई उपयोग नहीं होगा।

ब्रह्मविद्या मंदिर :
पवनार, २१ अगस्त '७१

—विनोबा

सर्व सेवा संघ द्वारा प्रकाशित

प्रधान कार्यालय : गोपुरी, वर्धा, महाराष्ट्र

रुपौली की पंचवर्षीय योजना

अन्तिम व्यक्ति : विकास की कसौटी

ग्रामस्वराज्य की दिशा में बढ़ने का दृढ़ संकल्प

१—गत १६, १७ जनवरी को रुपौली (पूर्णिया) में प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य-सभा के प्रतिनिधियों की एक गोष्ठी रुपौली की पंचवर्षीय योजना पर विचार करने के लिए हुई।

गोष्ठी की अध्यक्षता श्री सिद्धराजजी ने की। गोष्ठी के मुख्य अतिथि आचार्य राममूर्तिजी ने उद्घाटन करते हुए कहा कि स्वराज्य की चार सीढ़ियाँ हैं—(१) राज्य की स्वतंत्रता, (२) क्षेत्रों की स्वायत्तता, (३) गाँव की स्वाश्रयिता, (४) व्यक्ति की स्वाधीनता। बंगला देश अभी दूसरी सीढ़ी पर है और हमारा आन्दोलन तीसरी सीढ़ी पर। दो शक्तियाँ स्वराज्य के नीचे उतरने में बाधक हैं—सरकार और बाजार। हमारी योजना का उद्देश्य है इन शक्तियों पर विजय पाना, तभी स्वराज्य अन्तिम व्यक्ति तक पहुँच सकेगा और उसे ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मयस्सर होगी।

इसके बाद योजना पर विचार करने के लिए गोष्ठी चार भागों में बँट गयी।

२—दूसरे दिन गोष्ठी में योजना पर विचार करने के पहले श्री सिद्धराजजी ने मुख्यतः पाँच बातें बतायीं—

(१) योजना ऐसी बने जिससे समाज का गुणात्मक विकास हो।

(२) योजना का प्रारम्भ गाँव से हो तथा मुख्य शक्ति भी गाँव ही हो। उत्पादन की योजना गाँव में बने।

(३) प्रखण्ड-स्तर पर चार काम हों—(क) आयोजन की प्रेरणा, (ख) दिशा-निर्देश, (ग) ग्राम-पदाधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था, (घ) विकसित औजार-केन्द्र, एवं उपभोक्ता-भण्डार की स्थापना तथा आयात-निर्यात की व्यवस्था।

(४) योजना कम अवधिवाली हो।

(५) योजना का मूल तत्त्व अन्तिम व्यक्ति और वर्ग का विकास हो। गाँव के साधन के आधार पर योजना बने। ग्रामकोष को सक्रिय बनाया जाय। योजना की दृष्टि समग्र हो—नये बीजों, नयी खादों के प्रयोग में संयम और सन्तुलन बरता जाय। योजना सिर्फ भौतिक विकास की नहीं, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास की भी बने।

योजना के प्रथम वर्ष की अवधि में उन्होंने तीन काम करने के लिए बताया—अंतिम परिवार की व्यवस्था, ग्रामकोष की स्थापना, और सफाई से खाद की योजना।

शाम की सामूहिक चर्चा में निम्नलिखित निर्णय लिये गये—

१. शिक्षा और स्वास्थ्य

(क) लोक-शिक्षक द्वारा सर्वोदय के अनुकूल मानस का निर्माण।

(ख) सम्पूर्ण समाज विद्यालय माना जाय। स्थापित विद्यालय लोक-शिक्षण के अंग हों।

(ग) ग्राम-स्तर पर ग्राम-क्लब और शान्तिसेना की स्थापना। साक्षरता-अभियान तथा प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार। सर्वोदय मित्र तथा लोकसेवक बनाना।

(घ) प्रखण्ड-स्तर पर उच्च विद्यालयों को १० प्रतिशत अनुदान प्रखण्ड-सभा द्वारा। आचार्यकुल का संगठन।

२. गो-संवर्धन

(क) प्रत्येक ग्रामस्वराज्य-सभा की अपनी योजना।

(ख) बाँस का चापाकल।

(ग) बाँस बोरिंग।

(घ) भूमि का समतलीकरण।

(ङ) प्रत्येक गाँव में पम्पिंग सेट।

३. उद्योग

(क) कम-से-कम पूँजीवाले उद्योग की स्थापना।

(ख) बढ़ती हुई आबादी को रोजगार।

(ग) उद्योगों से रोजगार।

(घ) लघु उद्योगों की स्थापना—मछली, मधु, अनाज, प्रशोधन इत्यादि।

(च) वस्त्रोद्योग के लिए चरखे तथा रुई की आपूर्ति की व्यवस्था।

(छ) तेल-घानी उद्योग का विकास।

(ज) प्रखण्ड-स्तर पर एक प्रशिक्षण-केन्द्र की स्थापना।

४. अर्थ-व्यवस्था

(क) १ लाख के एक कोष की स्थापना हो। हिस्सा २५ प्रतिशत प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा का, ७५ प्रतिशत ग्राम-स्वराज्य-सभा का रहे। पूरी पूँजी प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा की रहे तथा लाभ दोनों को मिले।

(ख) श्रमिकों के लिए श्रम-बैंक की स्थापना हो।

(ग) सम्पन्न लोग गाँव में अन्न-भण्डार की स्थापना करें।

१८ जनवरी को ३ बजे दिन में प्रखण्ड स्वराज्य-सभा का खुला अधिवेशन शुरू हुआ। सम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य श्री राममूर्तिजी थे। मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए राज्यपाल महोदय (बिहार) ने कहा—"क्रान्ति के तीन मार्ग हैं—हिंसा, कानून, और सर्वोदय। सर्वोदय जनता के ज्यादा अनुकूल है लेकिन सरकार का भी कुछ फर्ज होता है जिसे पूरा करना है।"

इसके बाद सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया जिसका मुख्य अंश इस प्रकार है—"अब तक योजना सरकार द्वारा बनायी जाती रही है तथा जनता से सहयोग की अपेक्षा रही है जबकि होना यह चाहिए कि योजना जनता बनाये और सहयोग सरकार करे।…गाँव के सर्वांगीण विकास के लिए (प्रखण्ड की जनता के प्रतिनिधियों द्वारा) एक पंचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार किया गया है जिसमें जीवन-मूल्य-परिवर्तन के कार्यक्रम सम्मिलित हैं।…रुपौली प्रखण्ड का द्वितीय प्रखण्ड →

धनी कितने धनी, गरीब कितने गरीब !

१. यह साफ दिखाई देता है कि पंचवर्षीय योजनाओं का जिस तरह विकास हो रहा उसके अनुसार १९८०-८१ में शहरी जनता के सबसे निचले १० प्रतिशत का जीवनस्तर ग्रामीण जनता के सबसे निचले १० प्रतिशत के जीवन-स्तर से अधिक नीचा होगा। यों शहरों की आधी जनता का वही हाल रहेगा जो उसी श्रेणी की देहाती जनता का, लेकिन शहर की परिस्थिति में उसका जीवन देहाती जनता की अपेक्षा अधिक कठिन होगा।

२. इस स्थिति के पीछे एक धारा है जो हमारे विकास का एक मुख्य पहलू है, और जिसकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिए। वह यह है कि गाँवों में जो भी विकास होता है वह उच्च-मध्यम वर्ग तथा धनी लोगों के हाथों में पड़ जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि देहात के निम्न-मध्यम-वर्गीय और गरीब लोगों को जीविका की तलाश में शहरों में आना पड़ता है। वहाँ उन्हें गन्दी बस्तियों में और सड़कों के किनारे रहना पड़ता है, जब कि उनकी आँखों के सामने भड़कीले महल दिखाई देते रहते हैं। सरकारी विशेषज्ञ कहते हैं कि राष्ट्रीय आय के विकास-रेट में वृद्धि होनी चाहिए। अगर वृद्धि सम्भव भी हो तो विषमता की इस विषम स्थिति में सुधार कैसे होगा?

३. यह सही है कि जब आर्थिक विकास होता है तो उसका कुछ-न-कुछ स्पर्श सभी वर्गों को होता है, सिवाय सबसे नीचे के १० प्रतिशत उन कंगालों के जिन्हें योजना आयोग ने छोड़ ही दिया है। यह भी सही है कि विकास का रेट राष्ट्र की दृष्टि से बढ़ना रहना चाहिए। लेकिन गरीब के लिए न्यायपूर्ण वितरण का अधिक महत्त्व है, क्योंकि अगर न्यायपूर्ण वितरण के लिए स्पष्ट नीति और योजना नहीं होगी तो विकास का लाभ धनियों को ही मिलता रहेगा।

ऐसी स्थिति में स्वभावतः गरीब पूछेंगे 'धनी और अधिक कितने धनी हो जायेंगे कि हमारी गरीबी दूर होना शुरू होगी?' माना गया है कि ग्रामीण गरीब को १९६०-६१ के मूल्यों पर प्रति व्यक्ति १८०.०० प्रति वर्ष मिलना चाहिए। १९६८-६९ के मूल्यों पर यह रकम ३२४.२० होती है। प्रश्न है कि गरीब को प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष ३२४ रु० कब मिलेगा? ये गरीब सबसे नीचे के १० प्रतिशत के अन्दर हैं।

१९६८-६९ में इस श्रेणी में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष आय २१५.०० थी। इसमें ५० प्रतिशत वृद्धि हो तो ३२४.०० पूरा हो। लेकिन केवल वृद्धि से क्या होगा जब कि उसका उचित वितरण न हो?

गरीब के २१५.०० के ३२४.०० की सीमा पर पहुँचने का अर्थ यह होगा कि गाँवों का औसत उपभोक्ता-व्यय १०५६.७ रु० हो जायगा, जबकि यह १९६८-६९ में सिर्फ ४५६ ६ रु० था। जब गाँव का औसत उपभोक्ता-व्यय १०५६.७ रु० होगा तो शहर का १४७३.४ रु० होगा। औसत इतना तब होगा जब ग्रामीण समुदाय के ऊपरी ४० प्रतिशत लोगों का उपभोक्ता-व्यय २.५५५ गुना और शहर के ऊपरी ४० प्रतिशत का २.७७८ गुना बढ़ चुका रहेगा।

४. ऐसी वृद्धि कितने वर्षों में होगी? अगर राष्ट्र की आय में वृद्धि ६.२ प्रतिशत हो, और जनसंख्या में घटती १.७ प्रतिशत हो तो प्रति व्यक्ति उपभोग ४.५ प्रतिशत बढ़ेगा। इस तरह १९९२-'९३ में गाँव के (नीचे से) दूसरे १० प्रतिशत लोग ३२४.०० प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष (१९६८-'६९ के मूल्यों पर) पायेंगे। इससे बड़ी आशा पंच-वर्षीय योजना नहीं दे सकती।

लेकिन विकास का जो वास्तविक रुख है—योजना का अनुमान नहीं—उसके अनुसार उपभोग २.२ प्रतिशत प्रति वर्ष से अधिक नहीं बढ़ेगा, और तब ३२४.०० की सीमा सही २०१५ ई० में पहुँची जा सकेगी। लगता है यह दूसरा ही चित्र अधिक सही होगा।

५. योजना आयोग के आँकड़ों में कल्पना अधिक, वास्तविकता कम है। उसने बढ़ती हुई विषमता, तथा गाँवों से लोगों के निकल कर शहरों में जीविका के लिए जाने जैसे गम्भीर प्रश्नों पर ध्यान नहीं दिया है। योजना आयोग ने मान लिया है कि आगे भी विषमता उतनी रहेगी जितनी अभी तक रही है। इसलिए उसकी चिंता छोड़कर केवल विकास-रेट (ग्रोथ रेट) की चिन्ता करनी चाहिए।

लेकिन जो योजना एक न्यूनतम स्तर हर नागरिक को देना चाहती है वह केवल विकास की दर से कैसे संतोष मान सकती है? अगर न्यायपूर्ण बँटवारे पर ध्यान न दिया गया तो विकास का फल धनियों की जेब में जायगा, और नीचे के लोगों को ऊपर उठने का कभी मौका ही नहीं मिलेगा। तब बढ़ती हुई विषमता स्वयं अर्थनीति की जड़ें खोद डालेगी। अगर अभी से रोकथाम न की गयी तो अब से १९८० तक यह भयंकर क्रम अबाध गति से चलता रहेगा।

—प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

→स्वराज्य सम्मेलन इस योजना को सर्व-सम्मति से स्वीकार करता है।"

१८ तारीख की शाम को ग्रामस्वराज्य-सभा के प्रतिनिधियों ने प्रखण्डस्वराज्य-सभा के पदाधिकारियों का चुनाव किया। प्रखण्डस्वराज्य-सभा के लिए अध्यक्ष डा० श्री रामलगन ईश्वर, उपाध्यक्ष—लाला श्री रघुनन्दन सहाय, मंत्री—श्री कमलेश जी तथा अन्य १० पदाधिकारी भी चुने गये। कार्यालय का काम शुरू करने के लिए तय हुआ कि हर प्रतिनिधि अपनी ओर से पाँच रुपया दे। तीस रुपये फौरन जमा हो गये, और काम शुरू हो गया।

—मनोज

बंगला देश के शरणार्थी और शहादा के आदिवासी

एक संव्याप्त दृष्टि

९ दिसम्बर को बंगाल से लौटा, और १ जनवरी, '७२ को धुले जिला (महाराष्ट्र) के शहादा तालुका में आया, और "ग्रामस्वराज्य समिति" ऑफिस में ठहरा था। अनेक आदिवासी यहाँ आकर अपनी कठिनाइयाँ बता रहे थे और मैं सुन रहा था। उसी समय डाक से "साप्ताहिक माणूस" मराठी पत्रिका आयी। हमारे एक सर्वोदयी मित्र ने एक आदिवासी भाई से मुलाकात की थी, उसका वर्णन उन्होंने उस पत्रिका में निम्नानुसार दिया था।

"मधुरे. देश में काफी विकास हुआ—इस तरह की भाषा नेता लोग बोलते हैं। क्या आप को उसका कुछ फायदा नहीं मिला ?"

आदिवासी — विकास ! साहब वह तो साहूकार का लड़का है और शहर में रहता है, वह क्यों हमको मिलेगा ?

यह संवाद पढ़कर मैं जो समझता था, वह समझ गया और मन में एक ही विचार आता रहा, कब देहात में जाऊँ, और यह सारी घटना मैं अपनी आँखों से देखूँ।

आखिर, ४ जनवरी को आमलाड क्षेत्र में पहुँचा। लोग हमारे इर्द-गिर्द एकत्र हुए और अपनी कठिनाइयों को सुना रहे थे। मैं एक-एक की मुश्किलें सुनकर दुखी हो रहा था। बंगाल के निर्वासितों को देखने और उनके हाल सुनने के बाद जो दुख हुआ, वही मैं आज भी अनुभव कर रहा था और वैसा ही हाल यहाँ के आदिवासियों का है।

बंगला देश की बेकारी और शहादा की बेकारी

बंगाल में जो शरणार्थी आये थे, उन लोगों की जो बेकारी थी, जो कुण्ठन थी, वह अलग प्रकार की थी, और यहाँ की जो बेकारी है वह अलग प्रकार की है। उनका समय, हाथ, पाँव खाली थे, लेकिन पेट भरा हुआ था। यहाँ की जो बेकारी है, वह ऐसी है कि समय भी खाली, हाथ-पाँव भी खाली और पेट भी खाली। बंगला देश के शरणार्थियों को सरकार ने सहायता की थी। उनके रहने के लिए अच्छी व्यवस्था की थी लेकिन शहादा का क्या हाल है ? कौन देखता है ?

मैंने जब यह देखा तब मेरे सामने वह १९५१ की तेलंगाना की कम्यूनिस्टों के रक्त-रंजित क्रान्ति की तस्वीरें आँखों के सामने आने लगी। वहाँ के जमींदारों ने, माडवलदारों ने हरिजनों के प्रति जैसा बर्ताव रखा, जिस तरह से सरकारी नौकरों ने उनको छेड़ा था, उसी तरह आज यहाँ के जमींदार और माडवलदार, पैसे के बलपर सरकारी नौकरों को अपने रखवाले बनाकर, बंगला देश में पाकिस्तानी मिलिटरी का-सा बर्ताव करते हैं, जिस तरह के अशोभनीय अत्याचार वहाँ के बहनों के प्रति हुए उसी प्रकार के अमानवीय जुल्म यहाँ के आदिवासी के प्रति हो रहा है। यहाँ के जमींदार माडवलदार और सरकारी नौकर, इन सबका एक मेल हुआ-जैसा है। इन लोगों की ओर से गरीबों को सताया जाता है। उनमें से एक-दो घटनाएँ पाठकों के सामने मिसाल के तौर पर रखता हूँ।

अभी-अभी की बात है, नवगांव नामक गाँव में हिरागोवा भिल्ल रहता है। उसने कुछ साल पहिले सरकार से कुछ रुपया कर्ज लिया था। उसने वह पूरा चुका दिया, और सारे पावती उसके पास है। फिर भी पिछले साल उसकी जमीन पर जब्ती लायी गयी और तहसीलदार की नोटिस आयी। यह मामला कम्यूनिस्ट नेताओं को मालूम हुई। वे सारे कागजात लेकर कलक्टर के पास गये और उनसे मिलकर उस खेत पर "स्टे" लाये। जमीन का नीलाम नहीं हुआ। जमीन बच गयी। लेकिन १३ दिसम्बर, '७१ को क्या हुआ ? उसी खेत का नीलाम हुआ। ६ एकड़ भूमि का, जिसमें अभी ज्वार की फसल खड़ी है, (१,५०० २,००० रुपये की फसल वहाँ होगी) केवल ४,८०० रुपये में नीलाम हुई और एक जमीन-मालिक ने उसे खरीदा। उस किसान ने बड़ी आशाएँ व मेहनत की थी। इस साल फसल अच्छी है, अतः दिल से खुश था। लेकिन उसकी सब आशाएँ निराशा में विलीन हुईं, बेचारा रो रहा है।

दूसरी घटना पाटिलवाड़ी की है। सुना है वहाँ के जमींदार हर साल गरीबों को अनाज बाँटते हैं। उसी तरह इस साल भी उन्होंने लोगों को बुलाया, अनाज बाँटा गया। लोग अपनी अपनी ज्वार लेकर जा रहे थे। बीच में थोड़ी ही दूरी पर तहसावरुर नामक गाँव है। लोग वहाँ से आ रहे थे। जमींदारों ने अनाज लेकर आनेवाले इन आदिवासियों को रोका और उन पर झूठा इल्जाम लगाया कि ये लोग हमारे धान्य के कोठार लूटने आये हैं। इन्होंने हमारे कोठार लूटे हैं, ऐसा झूठा इल्जाम उनपर लगाया और पुलिस में रिपोर्ट की। साथ ही वहाँ गोली-बार भी हुआ जिसमें एक आदिवासी की मृत्यु हो गयी। इन चालीस-पचास आदमियों को गिरफ्तार कर लिया गया और जेल में रखा गया। अभी जमानत पर छोड़ा है, ऐसा सुनता हूँ।

सरकारी कानून से उन बेचारे गरीब आदिवासियों की जमीन, खड़ी फसल के साथ नीलाम हुई। नीलाम होते समय जमीन का मालिक हाजिर नहीं था और खरीददार भी बाहर गाँव का है। क्या कानून से यह सब है ? क्या बाहर गाँव का आदमी जमीन खरीद सकता है ? क्या उस खेत के मालिक के गैरहाजिर रहते हुए उसकी जमीन का

नीलाम किया जा सकता है ? हाँ, कानून से यह सब होना चाहिए तो फिर सरकार का कानून क्या करता है ? इस अन्याय के प्रति शासकों ने क्या निर्णय लिया है ? क्या निर्णय लेंगे ? क्या कभी शासकों ने जाकर उन भूखे आदिवासियों से मुलाकात की है, जो सप्ताह में २-३ दिन भूखे रहते हैं ? बन्दूक की गोली से और वह भी जमीदार की बंदूक की गोली से जिसकी मृत्यु हुई, क्या उसका पता जल्द नहीं लगना चाहिए ? लेकिन पैसे के बल पर जहाँ इनसान अपनी इनसानियत बेचता है, वहाँ कानून भी बेचा जाता है और सरकार भी।

जब आदमी भोजन के लिए बैठता है तो कुत्ता भी अगर पास में बैठ जाय तो इनसान के दिल में करुणा जाग उठती है, और उसको वह अपनी थाली में से एक रोटी दे देता है। लेकिन वही इनसान एक भूखे इनसान की थाली में से रोटी छीन लेता है।

हम जानते हैं, आज की अहिंसा-शक्ति कितनी बलवान है। प्रत्येक व्यक्ति अहिंसा से अलग हुआ है। अहिंसा पर कोई विश्वास नहीं करता। १९५१ में तेलगाना में हिंसा हुई। पूज्य विनोबाजी वहाँ गये, और जमीन-मालिकों से प्रेम से जमीन की माँग की और मिली भी। क्यों मिली ? हिंसा के प्रति जमीन मालिकों का तिरस्कार था, वह हिंसा नहीं चाहते थे। और, इसलिए कम्यूनिस्टों को प्रेम से समझाने से उन्होंने भी अपने हथियार छोड़ दिये। क्या उनके मन में अहिंसा जाग्रत हुई थी ? नहीं। कम्यूनिस्ट क्या कहने लगे—"विनोबाजी ने प्रेम से, अहिंसा से हमारी क्रान्ति को दबा दिया। लेकिन अहिंसावालों का काम जहाँ का तहाँ रुका है। अभी हम नहीं रुकेंगे। हमने काफी राह देख ली है। अब हम हाथ में शस्त्र लेंगे और इन अत्याचारियों को खतम करके रहेंगे। इन पैसेवालों को खतम करेंगे।" ऐसा कहनेका मौका आज उनको—हिंसावादी लोगों को—फिर से मिल रहा है।

इस बात को अपनी सरकार और जनता दोनों को विचार करने की आवश्यकता है, नहीं तो यहाँ नक्सलाइट की पैदाइश होगी। यहाँ का भूखा आदमी मन में सोचता है—'मैं भूखा रह-कर मरनेवाला हूँ ही, फिर ऐसे मरने के बदले कुछ करके ही क्यों न मरूँ'। हमें जल्द ही इस बात को ध्यान में लेना चाहिए। नहीं तो आगे खतरा निश्चित है।

सर्वोदय कार्यकर्ता इसका हल करने के लिए कुछ प्रयत्न कर रहे हैं। गाँवों

विचार-शिक्षण : प्रेषण की पद्धति

— एक सराहनीय व अनुकरणीय प्रयास—

आत्मनिंदा हीनता उत्पन्न करती है, आत्मविवेचन से अपनी आस्थाएँ दृढ़ होती हैं। हम काम में लगे साथी त्रिविध कार्य-क्रम में प्रायः आत्मनिंदा या हीनता की चर्चा करते हैं। लोग नहीं सुनते हैं, तरुणों को आकर्षित करने का कोई कार्यक्रम नहीं है, समाज की चेतना हमसे नहीं जगती है आदि-आदि हमारे स्व-निर्मित भूत हैं जो हर घड़ी हमारे साथ लगे रहते हैं। ऐसी मनःस्थिति में किये कार्य से कैसे फल की आशा करते हैं ?

आत्मविवेचन करें तो स्थिति बहुत कुछ स्पष्ट समझ में आती है। हम क्या करना चाहते हैं, कैसे करना चाहते हैं ये सभी विचारणीय मुद्दे हैं। और फिर यह कि हमारे हथियार क्या हैं ? समाज में प्रचलित रास्ता या विजय के सभी साधनों को हम अस्वीकृत करते हैं। यहाँ तक तो ठीक, पर इसके आगे ? हमारा हथियार—विचार-प्रेषण की क्षमता—निहायत अनि-योजित और भोथरी है। पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या उँगलियों से आगे बढ़ेगी ? पुस्तकों की बिक्री का भी यही हाल है। बड़ी कुशलता से स्थापित की गयी जिस सामाजिक व्यवस्था का विकल्प हम प्रस्तुत करते हैं, वह अपने सही रूप में जनता के सामने आ नहीं पा रहा है। आज भी सर्वोदय यानी प्रार्थना, पूजा और थोड़ा गरीब, हरिजन का काम। यह प्रतिछवि है हमारी।

आज सबसे बड़ा सवाल यह है कि विचार के क्रान्तिकारी तत्त्वों को किस प्रकार जनता के सामने प्रस्तुत करें कि वह उसका ध्यान केन्द्रित कर ले।

१९ जनवरी को मुजफ्फरपुर शहर में तरुण-शान्तिसेना ने एक चित्र-प्रदर्शनी आयोजित की। सहरसा में चल रही धीरेन्द्रदा की लोक-यात्रा के साथ-साथ प्रदर्शनी के रूप में चलने के लिए चौबीस चित्रों की एक शृंखला तैयार की गयी है। दस पैसे प्रवेश शुल्क के साथ प्रदर्शनी शुरू हुई। बहुत कम प्रचार और एक हद तक अव्यवस्थित प्रदर्शनी में दर्शकों की उपस्थिति बहुत संतोषजनक रही। समय-समय पर प्रकाशित पर्चों का, जिन्हें हमने अब तक मुफ्त बाँटा था, एक प्रयोग के सेट बनाकर बिक्री के लिए रखा। चित्रों के साथ चल-चलकर दर्शकों को समझाने का लाभ भी हुआ और समय-समय पर विशेष उत्सुक दर्शकों से बातचीत भी हुई। कई युवकों ने तरुण-शान्तिसेना के आगामी कार्यक्रमों की पूछताछ की और कई ने अपना पता आदि दिया।

प्रदर्शनी के अंत में एक टेबुल पर प्रतिक्रिया लिखने के लिए कुछ पन्ने रख दिये गये थे। उनमें से कुछ प्रतिक्रियाएँ यहाँ उद्धृत की जा रही हैं—

"देश की वर्तमान परिस्थिति को तरुण-शान्तिसेना ने चित्र-रूप से प्रदर्शित किया है, वह सराहनीय है। मेरी आस्था है

का दर्द हो रहा है और जमीन-मालिकों को भी समझाया जा रहा है। अभी यहाँ सर्वश्री गोविन्दराव शिंदे, मोरेश्वर बडल-कोंडावार, देवराम अभुरे, मनटकर और स्थानीय कार्यकर्ता श्री अमरसिंह गुरुवजी, रुनझा भाई पवार, अमरसिंह पाड्वी आदि लोग इस काम में जुटे हैं। जल्द ही इसका हल होकर और सारे गाँव में ग्राम-सभा गठित होकर, गाँव में प्रेम-भाव का निर्माण हो। यहाँ भगवान से प्रार्थना है।

—मोरेश्वर बडलकोंडावार

साथियों के पत्रों से

सहरसा में कार्य-संयोजन

सहरसा क्षेत्र में अब तक जहाँ जितना काम हुआ है उसके अनुसार आगे के तीन स्तर माने हैं। पहला मधेपुरा प्रखण्ड, जहाँ काम काफी आगे बढ़ चुका है। यह इस प्रदेश का अधिम क्षेत्र या 'स्टीयर हेड' है। इस पूरे प्रखण्ड में गहराई से योजनापूर्वक काम करना होगा।

दूसरे स्तर में महिषी, घोघा, सरोली और त्रिवेल, ये चार प्रखण्ड माने हैं। इन प्रखण्डों में भी काफी काम हुआ है। इनमें आगे भी सघन काम करना होगा। तीसरे स्तर में क्षेत्र के शेष २० प्रखण्ड आते हैं। इन प्रखण्डों में काम की मुख्य दिशा व्यापक विचार-प्रचार और लोक-सम्पर्क के द्वारा स्थानीय शक्ति को जागृत करने की रहेगी, ताकि वे स्वयं फिर काम को आगे बढ़ायें। पूरे २५ प्रखण्डों में बाहर की ताकत से काम हो सके यह सम्भव नहीं है। कुछ प्रान्तों से समर्थ कार्यकर्ताओं की टोलियाँ आयें तो वे इन प्रखण्डों में से एक-एक प्रखण्ड की जिम्मेदारी ले लें ऐसा सोचा है। लेकिन अभी तक जो चित्र सामने है उसके अनुसार अन्य प्रदेशों की शक्ति से अधिक-से-अधिक शायद २-३ प्रखण्ड ही और लिये जा सकेंगे।

यह तो काम का सामान्य विभाग हुई। अगले तीन महीनों के लिए जो कार्यक्रम सोचा है वह इस प्रकार है—मधेपुरा प्रखण्ड में बचे हुए गाँवों में ग्रामसभाओं का निर्माण, अधिक-से-अधिक बीघा-कट्ठा-वितरण कराने की कोशिश, कानूनी पुष्टि के लिए कागजात तैयार करके पेश करना, दो-दो दिन शिविरों के जरिये प्रखण्ड के सब ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के प्रशिक्षण का प्रारम्भ तथा इन गाँवों में जहाँ सम्भव हो वहाँ ग्रामसभाओं के जरिये आर्थिक विकास के कामों की शुरुआत। महिषी, घोघा, सरोली और त्रिवेल, इन चारों प्रखण्डों में ग्रामसभाओं के निर्माण और बीघा-कट्ठा-वितरण का काम पूरा करने के साथ-साथ प्रशिक्षण आदि का काम भी यथासम्भव हाथ में लिया जाय।

शेष २० प्रखण्डों समेत पूरे जिले में वातावरण बनाने तथा स्थानीय शक्ति जागृत करने के लिए दो काम सोचे हैं। दिसम्बर के मध्य से २० जनवरी तक के समय में जिले के करीब-करीब सभी प्रखण्डों में दो-दो दिन के सम्पर्क-शिविर लिये जायेंगे। इन शिविरों में प्रखण्ड के खास-खास लोगों को एक जगह आमन्त्रित करके उनके साथ दो दिन के सहजीवन तथा विचार-विनिमय का कार्यक्रम सोचा है ताकि आगे के काम के लिए हर प्रखण्ड में कुछ लोग आगे आयें। जहाँ-जहाँ ऐसी स्थानीय शक्ति उभरकर आये वहाँ उनकी तदर्थ समितियाँ गठित करके उनके जरिये आगे का काम हो, ऐसी कोशिश की जाय।

व्यापक विचार-प्रचार की दृष्टि से दूसरा काम यह सोचा है कि सिंहेश्वर में शिवरात्रि पर जो बड़ा मेला लगनेवाला है उसमें सफाई, सुरक्षा आदि सेवाकार्यों के जरिये सिंहेश्वर मेले का यथासम्भव अच्छी दिशा में संस्कार करने की कोशिश की जाय।

पिछले दिनों जयप्रकाशजी से सहरसा के काम के बारे में जब कृष्णराजजी की बात हुई तो उन्होंने तीन सूचनाएँ दी थीं। पहली तो यह कि जो कुछ काम हो रहा है उसकी कागजी कार्रवाई में पूरी 'एफीशिएन्सी' रहे, यानी संयोजन, प्रचार आदि काम कुशलतापूर्वक हो। दूसरा जोर उनका ग्रामीण कार्यकर्ताओं, शान्तिसैनिकों और ग्रामसभा-पदाधिकारियों आदि को प्रशिक्षित करने पर था। तीसरा सुझाव यह था कि जहाँ-जहाँ सम्भव हो उन गाँवों में आर्थिक विकास पर ध्यान दिया

—कि इसी प्रकार के प्रदर्शनों का आयोजन कर, समाज में क्रान्ति लायी जा सकती है और तभी इस देश के लोगों का शुद्धिकरण हो सकता है। —जगदीश शर्मा, सिकन्दरपुर, मुजफ्फरपुर।

'इस प्रदर्शनी को देखकर मुझे तरुण-शान्तिसेना के उद्देश्यों का पता चला। इस आन्दोलन का उद्देश्य वास्तव में महान् है। इस प्रदर्शनी को देखने के बाद मुझे भी शान्ति सैनिक बनने की प्रेरणा मिली। इसके लिए मैं संस्था की आगामी बैठक में सम्मिलित होऊँगा।' —रामचन्द्र सर्राफ, मगन भवन, मुजफ्फरपुर।

"इस प्रदर्शनी को देखने के बाद मैं विनोबा भावे के विचार से सहमत हो गया हूँ। —कपिकुमार सिंह, चन्द्रमउमर, मुजफ्फरपुर।

"प्रदर्शनी देखकर बहुत ही अच्छा लगा। अगर हमारे गाँव में इसे ठीक ढंग से प्रदर्शित किया जाय तो गांधीजी, विनोबा, और श्री जयप्रकाश की इच्छा की पूर्ति होगी। गाँव का विकास तो निःसन्देह होगा। —हरेन्द्र कुमार ठाकुर

"वास्तव में तरुण-शान्तिसेना की प्रदर्शनी मानव के लिए एक आदर्श का सन्देश है। इसे हम कार्यरूप में लें तो इससे अच्छा सन्देश मुझे किसी राजनीतिक दल में नहीं मिल सकता है। इसे तो मार्ग-प्रदर्शक कहा जाये तो गलत नहीं होगा। भारत के हर नगर में हर महीने ऐसी प्रदर्शनी की आवश्यकता है।—ए० के० वर्मा, वकील वाजिक, मुजफ्फरपुर।"

ये कुछ उदाहरण हैं जिन्हें मैंने उन पत्रों से आगाम उतार दिया है। कुछ आलोचनाएँ भी हैं, कुछ सुझाव-भी हैं, पर सभी दर्शकों की पैनी एक विचारशील दृष्टि का प्रमाण देते हैं। चित्रों की ऐसी सरल शृंखला बनायी जाये, व्यवस्थित प्रदर्शनी की जाये, तो जनता के मनोभाव इस ओर आसानी से मोड़े जा सकते हैं।

इस आन्दोलन को नयी ताकत और नये संस्कार की जरूरत है। इस दृष्टि से अपने विचार पहुँचाने के माध्यम को सरल बनाना और विशाल से विशालतर बनाने की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

—कुमार प्रशान्त

जाय। मैं यहाँ आने से पहले जे० पी० से मिलकर आया। उन्हें सहरसा के काम की योजना की जानकारी दी। उन्होंने २-३ बार यह उद्गार प्रकट किया कि अभी तो केवल मरोना के एक प्रखण्ड में कुछ उल्लेखनीय काम हुआ है। इस गति से काम होगा तो पूरे जिले का काम कितने समय में होगा। उनके मन में यह त्वरा दिखी कि काम जल्दी होना चाहिए, पर वे यह भी महसूस करते हैं कि अब काम गहराई में जाने का है, ऊपर ही ऊपर करने से नहीं होगा।

मरोना में ग्राम-पदाधिकारियों के प्रशिक्षण का जो काम हाथ में लिया जा रहा है उसके निश्चित पाठ्यक्रम तैयार कराने और योग्य प्रशिक्षक जुटाने का सवाल है।

१४-१२-७१ —सिद्धराज ढड्ढा

उड़ीसा में ग्रामदान-कार्य

हम लोगों का नैतिक बल धीरे-धीरे घट जाने का एक कारण यह है कि ग्रामदान संकल्प, वितरण तथा पुष्टि-काम ठीक ढंग से नहीं हुए। यह सूचना मैं दस साल से देते आ रहा हूँ।

दूसरी वजह है खादी के काम में अनैतिकता। इस अनैतिक कार्य के आश्रय लेकर कार्यकर्ताओं का गुजारा होने के कारण सर्वोदय के प्रति लोगों की आस्था कम होती जा रही है।

तीसरी वजह उड़ीसा के अनुभव पर से लिख रहा हूँ। यह है—सरकार से ग्रामदानी गाँवों को मिली रकम का दुरुपयोग। यह तीन प्रकार से हुआ: १—गाँवों के विशिष्ट लोगों से, २—कई मामलों में स्थानीय कार्यकर्ता तथा गाँव के दो-चार व्यक्ति। ३—सबसे रोष की बात—कोरापुट के अन्न आदिवासी क्षेत्र में—वहाँ के नेता या नेतृत्व स्थानीय व्यक्तियों के द्वारा।

इन सारी घटनाओं से सरलता के प्रमाण की जरूरत हो नहीं। ऐसी दुर्नीतियों को हटाने तथा चालू रखने के लिए ही काम का मोर्चा-निर्माण कर रहा है। इसका अवसान न हो तो सर्वोदय का आगे बढ़ना सम्भव नहीं है।

उड़ीसा में बाढ़, वात्या (आँधी), अकाल एक-के-पीछे-एक हमेशा लगा रहता है। मुख्यतया हमारी शक्ति इनके पीछे ही अपव्यय होती रहती है। पिछले सात-आठ सालों से रिलीफ काम में हमने जितनी ताकत लगायी है, ग्राम-पुष्टि में उसे लगाये होते तो हमारे आन्दोलन को समाधान मिलता।

नवम्बर माह में वात्या (आँधी) वाले इलाके में मैंने थोड़ा काम किया। इस जिले के सर्वोदय मण्डल की १५-११-७१ की बैठक में तय हुआ है कि इस जिले के ग्रामदान-काम को ठीक ढंग से चालू किया जाय। अब आगे खादी को बन्द करने, स्थानीय संस्थाओं को काम के हस्तान्तरण के लिए प्रवर्तक संस्थाओं से अनुरोध कर प्रस्ताव किये गये हैं। लेकिन जो लोग खादी की गादी से सुविधा और लाभ उठाते हैं—वे लोग बाधा डालने की कोशिश कर रहे हैं।

कृषि, गोपालन, ग्रामोद्योग को आधार मानकर एक स्वावलम्बी लोक सेवा केन्द्र की स्थापना की और काम आगे बढ़ रहा है। यह केन्द्र पादरमान, निरट नालिहशाय स्थान पर है। भूमि करीब दस एकड़ है। केन्द्र का नाम 'निसर्ग निवास' रखा गया है। इसकी देखभाल श्री मनमोहन साहू कर रहे हैं।

—मदनमोहन साहू सम्बलपुर।
८-१२-७१

सहकारी-सप्ताह

इस माह डांग में 'सहकार सप्ताह' मनाया, जिसमें डांग की विविध सहकारी मण्डलियों से सम्पर्क हुआ। डांग की सहकारी मण्डलियों की संख्या करीब ८० की होगी है। उन सब मण्डलियों के कार्यकर्ताओं से मिलने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ। मैंने अपनी बातचीत में कहा "यह अच्छा होगा, लेकिन जहाँ तक हम सर्वोदय विचार-धारा की ओर प्रयाण न करें, वहाँ तक प्रगति नहीं होगी। सर्वोदय विचारधारा के बिना ये प्रवृत्तियाँ ऐसी रहेंगी, जैसी नमक के बिना खाने की कोई भी चीज। सहकारी प्रवृत्ति खादी, चरखा, वस्त्र स्वावलम्बन जैसी सर्वोदय प्रवृत्ति के बिना अधूरा ही रहेगी। डांग में चार जगह सांस्कृतिक सम्मेलन शिक्षा विभाग की ओर से हुए। इन चारों सम्मेलनों में ४१ प्राथमिक शालाओं के २०००-२२०० बालक, २००० बालिकाओं और करीब ५० शिक्षक-शिक्षिकाओं से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। इन सम्मेलनों में पू० बापू की, पू० विनोबाजी की बातें मैंने की। शालाओं में सर्वोदय पात्र, कताई, और शान्तिसेना के बारे में क्या-क्या करना चाहिए, उसके बारे में भी बातचीत होती रही।

इस माह में मैंने डांग के ३५ गाँवों में ग्रामसभाओं का आयोजन किया।

इस माह में ३२४ भाइयों और ६२ बहनों ने, कुल मिलाकर ३८६ भाई-बहनों ने शराब से मुक्ति पायी, यानी शराब से मुक्त होने का उन्होंने संकल्प किया।

—घेलु भाई नायक, डांग, ४-१२-७१

दो तकुए का चरखा

हमारे यहाँ एक सज्जन ने बिजली से दो तकुए के चरखे पर प्रयोग किया है। साधारण घर की जो बिजली होती है उसीसे यह उस चरखे को चलाते हैं और उनका कहना है कि ५-६ रु० की रोज कताई कर लेते हैं। इस प्रकार के चरखे के प्रयोग की बाबा ने अनुमति दे दी है।

—गो० ना० शिरोमणि

आगरा, १७-१२-७१

पुष्टि का राष्ट्रीय मोर्चा सहरसा

बिहार के सर्वोदय सेवकों का एक माह (१८ मार्च से १८ अप्रैल) का सामूहिक अभियान

राज्य की सभी रचनात्मक संस्थाओं तथा सर्वोदय संगठनों के सेवकों तथा पदाधिकारियों से समय देने की अपील

बिहार सर्वोदय संघ के निर्णयानुसार बिहार राज्य सर्व ग्रामस्वराज्य समिति के दस सदस्यों की टोली विगत १३ से २१ दिसम्बर तक ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार में पूज्य बाबा की सन्निधि में रही। इस अवधि में बिहार के सर्वोदय आन्दोलन की गतिविधि के सम्बन्ध में बाबा से विस्तृत चर्चा हुई। चर्चाओं के दौरान आन्दोलन को गतिशील करने की दृष्टि से बाबा ने बिहार के सर्वोदय सेवकों को दो कार्यक्रम सुझाया।

(क) एक माह में राष्ट्रीय मोर्चा सहरसा की पुष्टि सम्पन्न करें। दो कार्यकर्ताओं की टोली तीन दिनों में एक गाँव की पुष्टि करने का प्रयास करे तो एक माह में एक टोली १० गाँव की पुष्टि सम्पन्न कर सकती है। पुष्टि का राष्ट्रीय मोर्चा सहरसा जिला में, पूर्णिया का रुपौली और दरभंगा का बिरौल प्रखण्ड सम्मिलित कर, २१ प्रखण्ड होते हैं। हर प्रखण्ड में औसत सौ गाँव मानें तो कुल २५०० गाँव होते। यदि बिहार के ५०० सर्वोदय सेवक उपर्युक्त रीति से एक माह का समय वहाँ दें तो सहरसा का पुष्टि-कार्य सम्पन्न हो सकता है।

(ख) एक ही दिन सहरसा के सभी गाँवों में डंके की चोट पर भू-वितरण का धार्मिक समारोह आयोजित करें।

हम सबों के लिए हार्दिक प्रसन्नता की बात है कि बिहार राज्य सर्व ग्राम-स्वराज्य समिति ने विगत २०-२१ जनवरी की पटना बैठक में बहुत ही उत्साह एवं सौहार्दपूर्ण भावना से उपर्युक्त दोनों कार्यक्रमों को एकत्रित सम्पन्न करने का सर्वसम्मत निर्णय लिया है। आगामी १८ अप्रैल के प्रसिद्ध भू-क्रान्ति दिवस के अवसर पर राष्ट्रीय प्रयोग क्षेत्र के सभी गाँवों में भू-वितरण का धार्मिक समारोह सम्पन्न करना तय हुआ है। साथ ही इसके पूर्व एक माह—१८ मार्च से १७ अप्रैल तक सहरसा के पच्चीसों प्रखण्डों में पुष्टि-कार्य सम्पन्न करने के लिए सारे राज्य की कार्यकर्ता-शक्ति सहरसा में केन्द्रित करने का निश्चय किया गया है। बैठक में उपस्थित प्रायः हम सभी सदस्यों ने अपना एक माह का समय इस अभियान में लगाने का संकल्प लिया है। साथ ही राज्य की सभी रचनात्मक संस्थाओं और सर्वोदयी संगठनों के सेवकों एवं पदाधिकारियों से, इस महत्त्वपूर्ण अभियान को सफल बनाने के लिए, एक माह का समय देने की हमारी हार्दिक अपील है।

आशा है ईश्वर की कृपा तथा आप सभी के श्रद्धापूर्ण सक्रिय सहयोग से यह अभियान राज्य में सब की अपेक्षा को पूरी करने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त कर सकेगा।

निवेदक

श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, गोपालजी झा शास्त्री, रमापति चौधरी, लक्ष्मी नारायण राय, भाई गोखले, श्याम बहादुर सिंह, कमल नारायण साहू, केशव मिश्र, ब्रजमोहन शर्मा, जयलोक ठाकुर, बद्रीनारायण सिंह, शिवशंकर प्रसाद, शिवानन्द झा, वजीर खाँ आलम, राजेन्द्र मिश्र, हृदयनारायण चौधरी, विद्यासागर, महावीर झा, श्याम प्रकाश सिंह, नवलकिशोर सिंह, सर्व नारायण दास, कपिलदेव कुमार, रामेश्वर, कैलाश प्रसाद शर्मा, कामेश्वर ठाकुर, दिनेश चन्द्र, शुकदेव सिंह, उदित नारायण चौधरी,

---

चूहे का साल

चीनी बारह-बारह साल का एक चक्र मानते हैं। उस चक्र में यह 'चूहे का साल' (इयर ऑफ दी रैट) है। यह साल बहुत बुरा माना जाता है—दगा-फरेब का, बेवफाई और मक्कारी का। चूहे के साल में लड़कियाँ शादी नहीं करना चाहतीं। सोचती हैं इस साल में मिला पति बेवफा और दगाबाज निकलेगा। लेकिन सौदागरों के कामों के लिए यह साल बहुत अच्छा माना जाता है।

वैसे ही चूहे के साल के पहले महीने में—जो फरवरी में शुरू होता है—निक्सन और चीनियों की मुलाकात हो रही है।

भूदान-यज्ञ ७-२-'७२ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

आन्दोलन के समाचार

तरुण-शान्तिसेना शिविर सम्पन्न

जिला ग्रामस्वराज्य समिति रीवां के तत्त्वावधान में २९-३० दिसम्बर '७१ को दो दिवसीय रीवां सम्भागीय तरुण-शान्तिसेना शिविर सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। शिविर में सम्भाग के ६ जिलों के—रीवां से २०, सीधी से ५, छतरपुर से ४, टीकमगढ़ से ६, शहडोल से १ तथा अन्य २०—कुल ६८ शिविरार्थियों ने भाग लिया।

शिविर में रीवां सम्भाग के जिलों से आये शिविरार्थियों ने जिला-स्तर पर अपनी-अपनी गोष्ठी की। वर्ष १९७२ के लिए अपने-अपने जिलों के लिए कार्यक्रम निर्धारित किये।

जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति, टीकमगढ़

घनघोर वर्षा में भी मध्य प्रदेश गांधी स्मारक निधि के शान्तिदूत और जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समितियों के कार्यकर्ता प्रदेश गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष दादा श्री काशिनाथ त्रिवेदी व शान्ति-सेना मण्डल के संयोजक श्री चतुर्भुज पाठक के मार्गदर्शन में बल्देवगढ़ विकास खण्ड में पूर्ण मनोयोग से ग्रामदान-पुष्टि-अभियान में जूझते रहे। इसी दरम्यान ग्रामस्वराज्य-स्थापना के मोर्चे पर ही, ग्राम बल्देवगढ़ में, बुन्देलखण्ड के महान त्यागी, तपस्वी, कर्मठ, स्वतन्त्रता-संग्राम के वीर सेनानी, टीकमगढ़ निवासी श्री बाबू लेम नारायणजी खरे का बलिदान हो गया और रह गई कहने-सुनने को उनकी ऐतिहासिक स्मृति।

ग्रामस्वराज्य शिविर

दिनांक १६-१-७२ को रामीसर (नोखा) गांव में नोखा तहसील के अवशिष्ट गांवों में ग्रामसभाओं की कानूनी पुष्टि के लिए शिविर किया गया। इस ब्लाक में कानूनी पुष्टि का अभियान पहले से ही शुरू किया गया है। गत दो वर्षों से जिले में ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य का काम चालू है। राजस्थान सरकार की ओर से ग्रामदान एक्ट तथा उसके नियम पारित होकर राजपत्रित हो चुके हैं। इसी आधार पर जिले के अवशिष्ट गांवों में से २४ गांवों में तत्काल कानूनी मान्यता के फार्म सघनरूप से भराने का काम हाथ में लेने का निश्चय किया गया।

शिविर में उपस्थिति लगभग ५०० की थी। शिविर जनाधारित था। गांव के सरपंच श्री रामनालजी एवं स्थानीय जनता का सक्रिय सहयोग प्रशसनीय था।

—आचार्य चन्द्र मौलि०

'मातृदिवस'

कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट की अध्यक्षा श्रीमती प्रेमलीला वि० ठाकरसी ने देशवासियों और रचनात्मक संस्थाओं से २२ फरवरी को कस्तूरबा की स्मृति में "मातृदिवस" मनाने की अपील की है।

मातृदिवस मनाने के लिए निम्न कार्यक्रम सुझाये हैं। सभा-जुलूस आदि आयोजित कर "माता" के गौरवमय पद की प्रतिष्ठा जगायी जाय। परिसम्वाद एवं अध्ययन-गोष्ठियों में शान्ति और शील-रक्षा, कस्तूरबा-जैसी करुणामूर्ति माताओं के त्याग और बलिदान का विवेचन; समाज में मातृभावना से कार्यरत विशिष्ट समाज-सेवियों के जीवन का यशोगान; समाचार-पत्रों और लेखों के माध्यम से "मातृदिवस" के महत्त्व पर प्रकाश।

अपील में यह भी कहा गया है कि 'मां' प्रेम, धैर्य, त्याग और शान्ति की प्रतिमा है। अपने इस उच्चतम गौरव शिखर पर पहुंचने के लिए स्त्रियों को सादे और आदर्श जीवन की साधना करनी होगी। इस दिवस पर स्कूल एवं कालेजों के छात्र-छात्राओं को सादे तथा उच्च विचारवाले जीवन की विशेष प्रेरणा दी जाय और उस दिन माताएं घर के रोजमर्रा के कार्य-भार से मुक्त की जायं।

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

राष्ट्रीय एकता व राजनीति

बंगला देश के उदय के रूप में लोकतंत्र और मानवता को एक ऐतिहासिक विजय-प्राप्त होने से हमारा आनन्दित होना स्वाभाविक है। इस मुक्ति-अभियान के समय भारतीय जनता में राष्ट्रीय एकात्मकता और देश-प्रेम की अत्यन्त उत्कट भावना का दर्शन हुआ। किन्तु अब इस विजय को अपनी-अपनी राजनैतिक पूंजी बनाने का प्रयास शुरू हो गया है। देश के लगभग आधे भाग में विधानसभाओं के चुनाव होने जा रहे हैं। लोकतंत्र में चुनाव लोक-शिक्षण के बाद होने चाहिए, किन्तु हमने जिस मत्सरमूलक सत्तावादी दलगत राजनीति को अपनाया है उसमें चुनाव जीतने के जोश में मानवीय एवं लोकतान्त्रिक मूल्यों पर निर्मम प्रहार होता है। ऐसी स्थिति में देश के प्रत्येक विचारशील नागरिक को चिन्ता का विषय यह होना चाहिए कि संकट-काल में बनी राष्ट्रीय एकता को कैसे अक्षुण्ण रखा जाय।

बंगला देश ने मिस्टर जिन्ना के द्विराष्ट्रीय सिद्धान्त को कब्र में गहरे दफना दिया है, उसने धर्मनिरपेक्षता का आदर्श स्वीकार किया है। अब हम अकेले नहीं रहे, हमारा दायित्व बढ़ गया है। चुनाव-अभियान में जब हम इनसान-इनसान के बीच भेद-भाव बढ़ाने में लगे रहेंगे तो साम्प्रदायिक विद्वेष भी बढ़ेगा ही, इसका हमारे नये पड़ोसी पर क्या प्रभाव पड़ेगा? क्या इससे धर्मनिरपेक्षता के प्रति उसकी नयी-नयी आस्था को धक्का नहीं लगेगा? क्या लोकतंत्र के इस प्रचलित रूप में निहित इन खतरों को अनिवार्य मानकर लोकतंत्र के प्रति उसका उत्साह मन्द नहीं पड़ेगा?

ऐसी स्थिति न आने पाये, इसके लिए भारत के प्रत्येक नागरिक को अपने आदर्शों को कमजोर करनेवालों से उतना ही सतर्क रहना होगा जितना सावधान हम अपने आदर्शों के लिए हुए युद्धकाल में अपने शत्रुओं से रहे थे। साथ ही हमारे विचारशील नागरिकों को वर्तमान राष्ट्रीय दलगत राजनीति और केन्द्रित प्रातिनिधिक लोकतंत्र के स्थान पर एक नयी दल-मुक्त लोकनीति एवं विकेन्द्रित योगदानात्मक लोकतन्त्र के विकास की दिशा प्रशस्त करने का वैचारिक अभियान चलाना होगा।

विश्व प्रसिद्ध विद्वान एम० एन० राय के शब्दों में "जनतंत्र का भविष्य राजनीतिक लोगों पर ही छोड़कर नहीं रहा जा सकता जो आज राजनीति के क्षेत्रों से बाहर हैं, या जिन्हें राजनीति से बाहर रहने की दृष्टि और हिम्मत प्राप्त है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता से प्रेरित ऐसे नागरिकों की निष्ठा, लगन और साहस पर ही लोकतंत्र का भविष्य अवलम्बित है।"

—विनय भाई

प्रथम बिहार ग्रामस्वराज्य-सम्मेलन

अपार हर्ष के साथ सूचित किया जा रहा है कि बिहार के ग्रामदानी गांवों की ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों का प्रथम सम्मेलन सिंहमा (वैशाली) मुजफ्फरपुर में दिनांक २४ एवं २५ फरवरी १९७२ को आयोजित किया गया है। इस सम्मेलन में बिहार के कोने-कोने से डेढ़ हजार प्रतिनिधियों के भाग लेने की आशा है। उसी अवसर पर दिनांक २६ फरवरी '७२ को मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय सम्मेलन का भी आयोजन किया गया है। सम्मेलन में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, काका कालेलकर, एस० जगन्नाथन, निर्मला देशपाण्डेय, आचार्य राममूर्ति, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी आदि महान सर्वोदयी नेताओं को आमन्त्रित किया गया है।

सम्मेलन में उपस्थित प्रतिनिधिगण ग्रामस्वराज्य के व्यावहारिक पहलू पर चर्चा करेंगे तथा बिहार के ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को जोरदार बनाने के कार्यक्रम पर भी विचार-विमर्श करेंगे। बिहार की सभी ग्रामसभाओं से अनुरोध है कि वे अपना प्रतिनिधि सम्मेलन में भेजकर सम्मेलन को सफल बनायें।

आवश्यक सूचनाएँ

(१) सम्मेलन-स्थल सिंहमा-वैशाली प्रखण्ड के पूर्वी छोर पर मुजफ्फरपुर हाजीपुर रोड (बाया मीना लालगंज) पर स्थित गांव है।

(२) सिंहमा पहुँचने की सुविधाएँ : गोरौल स्टेशन पर उतर कर रिक्शा या टमटम से सिंहमा जाया जा सकता है। गोरौल स्टेशन मुजफ्फरपुर-हाजीपुर रेल-लाइन पर है। गोरौल स्टेशन से सिंहमा की दूरी चार मील है। मुजफ्फरपुर, हाजीपुर रोड पर राज्य ट्रान्सपोर्ट की बसें चलती हैं जिससे गोरौल बस स्टैण्ड पर उतरकर रिक्शा या टमटम से सिंहमा जाया जा सकता है। बस स्टैण्ड से सिंहमा दो मील की दूरी पर है।

सम्मेलन के अवसर पर गोरौल बस स्टैण्ड एवं गोरौल स्टेशन पर स्वागत समिति की ओर से प्रतिनिधियों को सम्मेलन स्थल पर पहुँचाने की व्यवस्था रहेगी।

(३) सम्मेलन में प्रत्येक ग्रामसभा से अधिक-से-अधिक दो प्रतिनिधि भाग ले सकेंगे। भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों की सूची ग्रामसभा की ओर से या उस क्षेत्र के जिला सर्वोदय मण्डल या जिला ग्राम-स्वराज्य-समिति की ओर से स्वागत समिति के दफ्तर में सम्मेलन की तिथि से पहले आ जानी चाहिए। सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधि के लिए पाँच रुपया प्रतिनिधि-शुल्क जमा करना आवश्यक होगा।

(४) सम्मेलन में प्रतिनिधियों के लिए स्वागत समिति की ओर से निःशुल्क आवास एवं भोजन की व्यवस्था की गयी है।

(५) फरवरी में जाड़ा रहेगा इसलिए प्रतिनिधिगण ओढ़ना एवं बिछावन साथ लाना न भूलेंगे।

—कैलाश प्रसाद शर्मा
स्वागताध्यक्ष
स्वागत समिति

मार्च का अनुभव

ज्यों-ज्यों मार्च के चुनाव नजदीक आ रहे हैं अपने कुछ साथियों की ओर से, तथा पुष्टि के सघन क्षेत्रों के कुछ नागरिक मित्रों की ओर से भी, यह प्रश्न पूछा जाने लगा है कि क्या इस चुनाव में भी 'सर्वोदय की ओर से' कुछ उम्मीदवार नहीं खड़े किये जायेंगे ?

प्रश्न नया नहीं है, और हर चुनाव में पूछा जाता रहा है। इस प्रश्न में वह अंश है जो आज की चुनाव-पद्धति से दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। साथ ही किसी को इसमें ऐसी झलक भी मिल सकती है कि सर्वोदय के शुभचिंतक चाहते हैं कि उसे भी सत्ता की होड़ में शरीक होना चाहिए।

सर्वोदय के सारे चिन्तन में सर्वोदय के उम्मीदवार की कल्पना नहीं है। कल्पना है दल के उम्मीदवार के स्थान पर जनता के उम्मीदवार की। लेकिन यह प्रश्न उन प्रश्नों में है जो दिमाग में चिपके ही रहते हैं। दिमाग से सत्ता निकलती नहीं।

पुष्टि में लगे हुए साथी जानते हैं कि अभी कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जो इतना संगठित हो कि अपनी ओर से सर्वसम्मत उम्मीदवार खड़ा कर सके। अगर कोई क्षेत्र तैयार होता भी तो सोचने की बात होती कि क्या एक-दो क्षेत्रों में इस तरह का प्रयोग करना आन्दोलन की दृष्टि से उचित होगा ? इस प्रश्न पर भिन्न रायें हो सकती हैं। तत्काल निर्णय का प्रश्न नहीं है।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं की ओर से उम्मीदवार खड़ा करने या चुनाव जीतने का प्रश्न नहीं है, प्रश्न है चुनाव की पद्धति को लोकतांत्रिक बनाये रखने का। जिस तरह राजनैतिक दलों के लिए चुनाव आवश्यक है उसी तरह लोक शक्ति के प्रकट होने के लिए भी चुनाव-पद्धति का शुद्ध रहना आवश्यक है। भ्रष्ट चुनाव-पद्धति में लोक-शक्ति का पनपना कठिन होगा; उलटे भ्रष्ट चुनाव-पद्धति लोक-शक्ति के विकास के लिए खतरा सिद्ध होगी। शुद्ध चुनाव लोकतंत्र का प्राण है। लोकतंत्र से अलग लोकशक्ति का अस्तित्व नहीं है।

भ्रष्ट चुनावों के रूप में हमारे लोकतंत्र के लिए गम्भीर खतरा पैदा हो चुका है। ऐसा कहनेवालों की संख्या कम नहीं है जो लोकतंत्र को खुल्लमखुल्ला पैसातंत्र, डंडातंत्र, बोतलतंत्र कहने लगे हैं। अभी दरभंगा के हाल के चुनाव ने इन तीन तंत्रों का दिल खोलकर इस्तेमाल तो किया ही, एक चौथा तंत्र भी जोड़ दिया—जीपतंत्र। ये सब तंत्र अपनी जगह भयंकर तो हैं ही, लेकिन इनसे बढ़कर भयंकर एक दूसरा तंत्र है—बोगसतंत्र जिसमें वोटर गायब रहता है और वोट पड़ जाते हैं। एक वोटर सैकड़ों वोट डाल देता है। इन तंत्रों के सम्मिलित प्रहार के सामने लोकतंत्र कैसे टिकेगा और, इस तरह के लोकतंत्र में लोक-शक्ति का जन्म तो दूर, क्या लोक-कल्याण भी सम्भव होगा ?

इसलिए सर्वोदय के लिए फिलहाल यह चिन्ता सबसे बड़ी है कि चुनाव की प्रक्रियाएँ अधिक-से-अधिक शुद्ध बनी रहें। मुक्त और शुद्ध चुनाव सभ्य, प्रगतिशील, समाज के लिए यों भी आवश्यक है।

तो, मार्च के चुनाव में हम अपनी सीमित शक्ति से क्या कर सकते हैं ?

पुष्टि के सघन क्षेत्रों में हमारी ग्रामस्वराज्य-सभाएँ हैं। कुछ क्षेत्रों में प्रखण्डस्वराज्य-सभाएँ भी बन गयी हैं। उनके पदाधिकारी और कार्यसमिति के सदस्य अपने क्षेत्र में प्रभाव रखते हैं। चुनाव-जैसे महत्त्वपूर्ण अवसर पर उन्हें पूरे तौर पर सक्रिय होना चाहिए। जिस तरह और जिस प्रयोजन के लिए उनका गठन हुआ है उस दृष्टि से चुनाव के सन्दर्भ में उनके ये कर्तव्य हो सकते हैं (१) चुनाव की आँधी में ग्रामस्वराज्य-सभा तथा प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा की एकता को टूटने न देना, (२) तत्परतापूर्वक यह देखना कि गाँव का हर मतदाता निडर होकर जिसे चाहे वोट दे सके, किसी को डंडे से डराया न जाय, या पैसे से खरीदा न जाय, (३) बोगस मतदान न हो, (४) मतदान-केन्द्र पर किसी प्रकार की अशान्ति न हो।

गाँव की एकता ग्रामस्वराज्य-सभा, तथा प्रखण्डस्वराज्य-सभा की सबसे पहली चिन्ता होनी चाहिए। चुनाव के समय जिस तरह कन्वेसिंग होती है वह मतभेद पैदा करती है। ये मतभेद गाँव में स्थायी दुश्मनी के कारण बनते हैं। दल के नाम में दोस्त-दुश्मन बनाना, और जाति के नाम में वोट माँगना, विरोधी उम्मीदवार पर व्यक्तिगत प्रहार करना आदि ऐसी चीजें हैं जिनसे गाँव को बचाने की कोशिश करनी चाहिए। ग्रामस्वराज्य-सभा अपनी बैठक करे और तय करे कि वह गलत ढंग से कन्वेसिंग नहीं होने देगी। वह ऐसा कोई काम नहीं होने देगी जिससे गाँव की एकता पर आँच आये। गाँव की एकता और चुनाव की शुद्धता की जिम्मेदारी में ग्राम-शान्तिसेना का पूरा इस्तेमाल होना चाहिए।

इस सम्बन्ध में प्रखण्डस्वराज्य-सभा की भी विशेष जिम्मेदारी है। उसे चाहिए कि ग्रामस्वराज्य-सभाओं को बताये कि उन्हें क्या करना, और क्या नहीं करना, चाहिए। उसे अपनी ओर से पर्चे आदि निकालने चाहिए, सभाएँ करनी चाहिए। इसके अलावा उसे अपनी ओर से पूरे ब्लाक में दो-चार जगह लोक-मंच संगठित करना चाहिए जहाँ विभिन्न उम्मीदवार एक साथ आयें और एक मंच से अपने विचार जनता के सामने रखें। संयुक्त लोक-मंच के कार्यक्रम का लोकमानस पर बहुत अच्छा प्रभाव होता है, उस ओर हमारा ध्यान विशेष रूप से जाना चाहिए।

चुनाव हमें ऐसा अवसर देता है जब हम लोकनीति बनाम राजनीति का विचार जनता के सामने रख सकते हैं। हमें रखना भी चाहिए। सत्ता और सम्पत्ति के बारे में सदियों-सदियों से लोकमानस जिस तरह बना हुआ है उसे बदलना लोकशिक्षण का मुख्य काम है। इस दृष्टि से हर अवसर का हमें लाभ उठाना चाहिए। मार्च का चुनाव एक बड़ा अवसर है।

ग्रामदानी क्षेत्रों के लिए आर्थिक योजना

—सिद्धराज ढड्ढा

(ता० १७ जनवरी को पूर्णिया जिले के रुपौली प्रखंड की ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों की योजना-गोष्ठी में दिये गये अध्यक्षीय भाषण के आधार पर। सं०)

मेरी निश्चित राय है कि योजना की इकाई गाँव होना चाहिए, प्रखण्ड नहीं। प्रखण्ड-स्तर पर भी काम हो लेकिन खासकर उत्पादन की योजना का प्रारम्भ गाँव से ही होना चाहिए। हम प्रखण्ड को ही इकाई मानकर सारी योजना सोचेंगे तो पुराना ही तौर-तरीका चलेगा, हमारे आयोजन में और आज के सरकारी आयोजन में कोई मौलिक भेद नहीं होगा। हमारी सारी क्रान्ति का मूल औजार गाँव की ग्रामसभा है। ग्रामसभा, यानी गाँव के सब लोगों की संगठित इकाई। हम चाहते हैं कि विकास में लोगों का सक्रिय हाथ हो। अगर प्रखण्ड-स्तर पर हम कुछ आँकड़े तैयार कर लेंगे तो यह कैसे होगा! वह तो प्रचलित योजनाओं से कोई भिन्न चीज नहीं होगी। इसलिए मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि उत्पादन की योजना ग्रामसभा में बननी चाहिए। ग्रामसभा में गाँव के सब लोग बैठें और देखें कि वहाँ की क्या आवश्यकता सर्वप्रथम है, अन्न की, वस्त्र की, या और किसी चीज की? ग्रामसभा में चर्चा करके अन्त्योदय के आधार पर योजना बनायेंगे तो अच्छा होगा। अगर आपकी चिन्ता गाँव के लोगों का सक्रिय सहयोग लेने की हो तो योजना की शुरुआत *गाँव से कीजिए।*

प्रखण्ड-स्तर पर भी कुछ काम करने होंगे। इस सम्बन्ध में मेरे नीचे लिखे सुझाव हैं :

(१) आयोजन की प्रेरणा प्रखण्ड से दें। यह प्रेरणा सभा-सम्मेलन तथा गोष्ठियों आदि से दी जा सकती है। यह प्रखण्ड-सभा का काम है।

(२) प्रखण्ड-सभा को जो दूसरा काम करना चाहिए वह है दिशा-दर्शन का, अर्थात् इस बारे में मार्गदर्शन करने का कि आर्थिक विकास के मूल तत्त्व क्या होंगे। आजकल विकास के नाम पर बहुत-सी ऐसी बातें हो रही हैं जो तात्कालिक दृष्टि से भले ही लाभदायी हों, पर कुछ घातक भी हैं। उदाहरण के लिए रासायनिक खादों का उपयोग। विकास की दिशा के सम्बन्ध में कुछ बुनियादी बातें प्रखण्ड-स्तर पर तय करनी चाहिए, क्योंकि गाँव-गाँव में इस काम के लिए आवश्यक पढ़े-लिखे बौद्धिक लोगों का सहयोग मिलना सम्भव नहीं होगा।

(३) तीसरा काम जो प्रखण्ड-सभा को करना चाहिए वह है प्रशिक्षण का। सर्वे और योजना आदि करने के तथा समय-समय पर गाँव के नौजवानों को उद्योगों आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था प्रखण्ड-सभा को करनी चाहिए।

(४) चौथा काम प्रखण्ड-स्तर पर 'सर्विसिंग' का होगा। गाँव-गाँव में खेती और उद्योगों के लिए तरह-तरह की मशीनें उपयोग में आयेंगी। इनके सम्बन्ध में कुछ सर्विसिंग के काम प्रखण्ड-सभा को हाथ में लेने होंगे। गाँवों में उपयोग के लिए जो बाहर का माल आयात होता है, अगर प्रखण्ड-स्तर पर उसके आयात का आयोजन किया जाय तो वह लाभदायी होगा। इस काम के लिए प्रखण्ड-स्तर पर उपभोक्ता भण्डार खोला जा सकता है। इस प्रकार के सेवाकार्य प्रखण्ड-स्तर पर करना चाहिए।

योजना के बारे में एक बात मुझे यह कहनी है कि हमें ५-५ साल की योजना की चिन्ता में नहीं पड़ना चाहिए। एक-एक वर्ष की योजना बनायेंगे तो ज्यादा व्यावहारिक और वास्तविक होगा, वरना हमारी योजना भी सरकारी योजना की तरह आँकड़ों की योजना रह जायगी।

योजना के बारे में दो-तीन बातें और हमारे सामने स्पष्ट होनी चाहिए। हमारी सारी योजनाओं का केन्द्रबिन्दु अन्तिम व्यक्ति होना चाहिए। गाँव की योजना का मापदण्ड होना चाहिए—गाँव का सबसे गरीब व्यक्ति या परिवार। माला में डोरे की तरह अन्त्योदय हमारी सारी योजना का आधार और उसकी कसौटी होनी चाहिए। ग्रामसभा का पहला काम यह होना चाहिए कि गाँव में जो भूखे, नंगे हों उनके बारे में सोचे। उनकी सहायता उसका प्रथम कर्तव्य होना चाहिए। आर्थिक साधन गाँव में खड़े करने के लिए ग्रामसभा क्या कर सकती है, उसके बारे में भी सोचना चाहिए। ग्रामकोष इस सम्बन्ध में बहुत उपयोगी है। योजना का आरम्भ अपने साधनों के आधार पर करना ठीक होगा, इसके बाद बाहर से जो मिले वह पच सकेगा।

हमारी जो योजना हो वह समग्र दृष्टि से हो, केवल तात्कालिक लाभ के लिए नहीं। उदाहरण के लिए सुधरे कहे जानेवाले बीज और रासायनिक खाद। आजकल रासायनिक खादों का और इन बीजों का बहुत प्रचार हो रहा है। हमें योजना बनाते समय उनके लाभ-हानि आदि सबको ध्यान में रखना चाहिए। गाँव में हम गोबर की खाद को काम में नहीं लाते बल्कि उसे बरबाद करते हैं। सजीव खाद गाँव में हो सकती है। हम बाहर से लाने से मुक्त हो सकते हैं। दूसरों के अनुभव से लाभ उठायेंगे तो अच्छा होगा।

आखिरी बात यह कि हमें केवल भौतिक विकास की बात नहीं सोचनी चाहिए। अगर भौतिक विकास का ही लक्ष्य रखेंगे तो नतीजा बहुत खतरनाक आ सकता है। उसका कुछ नमूना आज हम देख रहे हैं। अतः भौतिक के साथ नैतिक, आध्यात्मिक आदि सब बातें ध्यान में रखनी चाहिए, तभी यह सर्वोदय की योजना होगी। ●

सर्व की क्रान्ति सर्व के द्वारा होगी

—धीरेन्द्र मजूमदार

"लोक-उपासना द्वारा लोक-चेतना को जगाना" धीरेनदा का यही मत है, और इसीलिए हर गाँव में वे लोक-प्रद-क्षिणा भी अवश्य करते हैं। कहते हैं,—"देखो! लोक ही मेरा देवता है। गंगा-सेवन करने काशी जाते हैं, तो विश्वनाथ की प्रदक्षिणा करते हैं न? तो मैं भी अपने उपास्य की परिक्रमा करता हूँ—मेरे लिए लोक ही विश्वनाथ है। हृदय से प्यार निकलने लगता है और उनकी यह भावना देखकर अनायास श्रद्धा से माथा झुक जाता है। कितने लोग हैं, जिनमें लोक के प्रति यह भक्ति का भाव है, जो मुल्क के प्रति इतने सचेतन हैं? अगर हम-लोगों से किसी प्रकार की गलती होती है, तो उनकी मीठी झिड़क के जो बोल होते हैं, उसका एक टुकड़ा यह अवश्य होता है "तभी तो इस देश की यह हालत है।" बात-बात में कहेंगे, "अरे! यह देश किसी तरह जिन्दा है, यही भगवान की बड़ी कृपा है।" अतएव दादा की कामना है: "उन्हीं की तरह हजारों लोग लोक-यात्रा करें, हजारों लोग लोक-भारती में जमें तथा ग्रामगुरुकुल व ग्रामस्वराज्य के लिए मिट्टी तैयार करें।" गांधी कहते थे भारत के सात लाख गाँवों में सात लाख मजबूत कार्य-कर्ता चाहिए। दादा सुनाते हैं, पर उन्हें 'कार्यकर्ता' शब्द से बड़ा परहेज है। वे इसे भी शोषण का ही प्रतीक मानते हैं, इसी-लिए इसके बदले जो प्रतीक देते हैं, वह है "जिन्दा शहीद"। परन्तु दिक्कत यही है कि ऐसे जिन्दा शहीद अभी हमारे पास बहुत कम हैं। देखो! आशा आखिर-कार नौजवानों की ही है, कारण उन्हीं के माथे सारा बोझ पड़नेवाला है, इसलिए ज्यादा-से ज्यादा नौजवानों को इस आन्दो-लन में लाना होगा, तब बात बनेगी।

प्रश्न : सर्वोदय का शाब्दिक अर्थ क्या है? —स्कूली छात्र पूछता है।

दादा —"सर्व" माने सब और 'उदय' माने विकास; सबका विकास कैसे होगा?

"सबको बराबर करना होगा।" —एक छात्र,

"तो क्या करोगे, सबको लाइन में खड़ा करके बराबर का दाम देकर काट दोगे? तो क्या करोगे? वह देखो (स्कूल के मैदान की तरफ इशारा करते हुए) मैदान में वह पगडंडी है न? सब जगह घास है, वहाँ क्यों नहीं है? क्योंकि उसे कुचला जाता है। अब वहाँ भी घास जमाने के लिए, उस पगडंडी को बन्द करने के लिए, क्या करोगे? दो रास्ते हैं। या तो साइन बोर्ड लगा दो कि इस रास्ते से कोई न चले, या काँटा रूंध दो दोनों ओर। साइन बोर्ड लगा दो, और लोग बात समझ लें, तो पगडंडी बन्द हो सकती है न? और काँटा लगा दोगे, तो क्या होगा? दूसरी पगडंडी बन जायेगी, उसे बन्द करोगे, तो तीसरी निकल आयेगी, तो गांधी साइन बोर्ड लगाने के लिए कहता है। इसीसे सबका विकास होगा।

"एक बात ठीक से समझ लो," 'सर्वोदय' का अर्थ है 'सर्व' के द्वारा सर्वोदय। अतएव इसे कोई दल या जमात नहीं समझना चाहिए। अब अलग-अलग गुट या दल नहीं रह सकते। प्राचीन भारत में छोटे-छोटे, अलग-अलग गण-राज्य थे। लिच्छवियों का, मागधों का, आदि-आदि। अब विज्ञान ने दुनिया का भूगोल बहुत छोटा कर दिया है। इसीलिए विनोबा समूह की, 'सर्व' की बात करता है, गुट की नहीं, इसीलिए हमारे साथ 'सर्व' है। हमारे लिए कोई पार्टी, कोई दल, मत, सिद्धांत, धर्म नहीं। हमारे लिए सब आदमी हैं, और बराबर हैं…।

"क्रान्ति के लिए सबसे बड़ा खतरा क्रान्तिकारी है। क्रान्ति उनके लिए सिद्धि स्वार्थ हो जाती है—आज देश में जितनी पार्टियाँ हैं सभी क्रान्ति करनेवाली हैं, पर आपस में लड़ती हैं। सेवा करना सभी चाहते हैं न? फिर सब मिलकर क्यों नहीं करते सेवा? इसीलिए विनोबा कहता है कि क्रान्ति को हमेशा क्रान्तिकारी से आगे रहना होगा। और स्थायी क्रान्ति लोक द्वारा होगी। अगर क्रान्तिकारी पार्टी द्वारा क्रान्ति होगी, तो वह पार्टी ही क्रान्ति पर हावी, हो जायेगी। जैसा कि आजतक दुनिया में होता आया है। रूस में क्रान्ति हुई न? जमीन भी बँटी, सब हुआ, पर क्रान्तिकारियों की जमात ने आक्टोपस की तरह जो जकड़ा लोक को, तो आज भी वहाँ के लोग कसमसाकर रह जाते हैं…।

"अतएव यह दिमाग में साफ कर लेना होगा कि—'ग्रामस्वराज्य' और 'सर्वोदय' सर्वोदयवालों द्वारा नहीं होगा, सर्व द्वारा होगा। अगर सर्वोदय-वालों द्वारा होगा, तो वह सर्वोदय मार्का ग्रामस्वराज्य होगा। इसीलिए विनोबा सबको इस काम में जोतता है। मंत्रियों को, अफसरों को, पार्टीवालों को, क्योंकि पहले वह लोक है, उसके बाद ही और कुछ"। तो अब समझ गये न सर्वोदय का शाब्दिक अर्थ?" (और, खिलखिलाना)

जब लोग-बाग चले गये, और दादा अन्दर जाकर कमरे में लेट गये, लेटे-लेटे हमलोगों से कहा 'देखो! क्रांति के सबसे बड़े दुश्मन क्रान्तिकारी होते हैं, इस बात को तुम लोगों को भी ठीक से समझ लेना चाहिए। तुम लोगों का भी दिमाग इस ओर से साफ नहीं है। यह विनोबा का प्रमुख विचार 'मास्टर-पीस आइडिया' है, जो उसने इतिहास के अनुभवों से प्राप्त किया है।

"तो हमें क्या तरीका अपनाना चाहिए?" किशोर ने पूछा। "यही, धीरे-धीरे कार्यकर्ता-वापसी। अभी तो तुम लोगों को काम करना ही होगा। पर धीरे-धीरे उनके (लोक के) ऊपर पूरा भार सौंपकर तुम्हें निकल जाना होगा, या फिर नागरिक बनकर रहना होगा।

औद्योगीकरण की प्रगति का दुष्प्रभाव

—मनुभाई मेहता

[इस वर्ष स्टाकहोम में "वर्ल्ड पोल्युशन कान्फ्रेन्स" होने जा रही है। 'पोल्युशन' का मतलब है, हमारे वातावरण, हमारे जलस्रोत और हमारी हवा आदि पर औद्योगीकरण आदि के कारण होनेवाला दुष्प्रभाव। क्या यह दुष्प्रभाव मनुष्य-जाति के लिए भारी संकट उत्पन्न कर रहा है? श्री मनुभाई ने अपने लेख में इसकी भयंकरता की चर्चा की है और प्रश्न उठाया है कि मनुष्य इससे कैसे अपने आपको बचायेगा।—सं०]

माना जाता है कि अब किसी आदमी को कैंसर की बीमारी हो जाती है तो उसके दिन गिने जाने लगते हैं, उसका शरीर अन्दर से खोखला होने लगता है और अन्त में इस तरह खोखला *बना शरीर मृत्यु की शरण लेता है।* यह मान्यता एक बड़ी हद तक सच भी है और इसी कारण किसी विघातक आविष्कार को आलंकारिक भाषा में 'कैन्सर' कहा जाता है।

हाल ही पश्चिम के देशों में शुरू हुए एक विवाद में 'प्रगति' को भी कैन्सर की उपाधि दी गयी है। 'लन्दन टाइम्स' के सम्पादक के नाम लिखे अपने एक पत्र में एक सुप्रसिद्ध प्रोफेसर ने अनुनय-विनयपूर्वक कहा है कि प्रगति के रूप में प्रकट होनेवाले इस कैन्सर का कोई उपाय किया जाना चाहिए। पत्र-लेखक की माँग है कि "स्टॉप दिस कैन्सर ऑव प्रोग्रेस" अर्थात् 'प्रगति के इस कैन्सर को रोको'। इस पत्र के सिलसिले में सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ यहूदी मेन्यूहिन और फिलिप टायनबी द्वारा लिखे गये पत्रों में इस अपील का समर्थन किया गया है। काल की भी कैसी बलिहारी है! उसने मनुष्य-*जाति* को इस *बात* के लिए *सावधान* करना शुरू किया है कि प्रगति, निस्सीम और निरंकुश प्रगति, कितनी खतरनाक होती है।

मनुष्य के लिए आवश्यक ऊर्जा—विद्युत शक्ति—आदि के लिए ईंधन के रूप में जो कुछ जलाया जाता है, उससे वातावरण दूषित बनता है और फलस्वरूप मनुष्य-जाति के लिए प्रतिपल संकट बढ़ता ही रहता है। मनुष्य ने यातायात के लिए पेट्रोल और डीजल जैसे ईंधन का उपयोग करनेवाले जो वाहन बनाये हैं, उन्हें तो आज के वैज्ञानिक बड़े-से-बड़े 'अपराधी' की श्रेणी में रखने लगे हैं। और, अमेरिका-जैसे देशों में तो अब इस प्रकार के वाहनों से निकलनेवाली जली हुई जहरीली हवाओं के निस्तार के लिए विशिष्ट व्यवस्था सोची जाने लगी है। अब यह चीज तो वहाँ स्पष्ट हो ही चुकी है कि इस प्रकार के वाहनों की संख्या को निरंकुश रीति से बढ़ने नहीं दिया जा सकता। अतएव 'फलाँ देश में हर दो आदमी पीछे एक मोटर है' यह कह कर उस देश की प्रगति की जो प्रशंसा अब तक की जाती थी, उसे अब बन्द करना होगा और प्रगति के मूल्यांकनों को बदलना होगा। यहूदी मेन्यूहिन तो कहते हैं कि अब हमें सूर्य की शक्ति पर ही निर्भर रहने की कला सीखनी होगी; यद्यपि वैज्ञानिक उनकी इस बात से सहमत नहीं है। उन्हें तो अभी 'थर्मोन्युक्लियर' की अर्थात् हाइड्रोजन बम की शक्ति को अपनी मुट्ठी में लाना है। इसलिए इस विषय की अपनी खोज को वे सहज ही छोड़ना पसन्द नहीं करेंगे।

फिलिप टायनबी ने तो एक बिलकुल नया सुझाव भी दिया है। जिस तरह आज कल हफ्ते में एक दिन उपवास रखकर इस प्रकार बचे अन्न को भूखों तक पहुँचाने का आन्दोलन प्रसंगोपात्त चलाया जाता है, उसी तरह यदि कोई हफ्ते में एक दिन मोटर अथवा रेडियो-जैसे साधनों का उपयोग न करने का आन्दोलन शुरू करे, तो श्री टायनबी उसमें जुड़ने को तैयार हैं।

आज की परिस्थिति के दो मूलभूत प्रश्न हैं। अर्वाचीन संस्कृति जिसे ऊँचा जीवन-स्तर मानती है; उसे प्राप्त करने के लिए अधिक-से-अधिक साधनों का उत्पादन करना और उसको बढ़ाते रहना चाहिए अथवा जीवन का स्तर ही ऊपर उठे, इसके लिए कोई प्रयत्न किया जाय? मनुष्य-जाति इस प्रश्न का उत्तर किस तरह देती है, उसी पर मनुष्य का भविष्य निर्भर करेगा।

'यूनेस्को' के असिस्टेंट डाइरेक्टर जनरल फॉर साइन्स प्रोफेसर आद्रियानो बुजाटी ट्रावर्सो ने इस प्रश्न की चर्चा एक नयी ही दृष्टि से की है। श्री ट्रावर्सो एक विश्वविख्यात जीव-विज्ञान-शास्त्री

→ तुम कहीं नहीं होगे, इसी क्रान्ति के होने में भी।' "और दादा आवेश से उठ बैठते हैं। फिर दुहराते हैं, "यह विनोबा का एकदम नया चिंतन है। इसीलिए वह सर्व सेवा संघ को विघटित करने की बात कहता है—"संघ समाप्त हो जाय, और सर्व सेवा रह जाय, यानी तंत्र खत्म हो जाय, और लोक रहे।

प्रश्न :—ग्रामस्वराज्य का भी तो कोई तंत्र होगा न?

दादा :— व्यवस्था-तंत्र माला के डोरे-जैसा होगा, और उस डोरे के दो सिरे होंगे—ग्रामस्वराज्य, तथा विश्व-स्वराज्य। माला के सभी फूल अलग-अलग होते हैं, पर माला बनाने के लिए एक डोरा चाहिए कि नहीं? उसी तरह समन्वय (को-आर्डिनेशन) के लिए एक व्यवस्था होगी, पर अदृश्य होगी, जैसे माला में डोरा छिपा होता है।

समाज किसी की तंत्र के नीचे न रहे, तो उसका सही विकास होगा। अगर केन्द्र का शासन रहेगा, तो केन्द्र के कमजोर होते ही समाज कमजोर हो जायगा, जैसा आज हो रहा है। अतएव तंत्र तो रहेगा, पर परतंत्र नहीं, स्वतंत्र रहेगा। 'स्व' हुआ प्रथम पुरुष और द्वितीय पुरुष; 'पर' हुआ अन्य पुरुष। इसलिए स्वतंत्र हो लोक का तंत्र, न कि परतंत्र।

—प्रस्तुतकर्ता : देवेन्द्र

(आप्टीमाजिस्ट) भी हैं। उनका कहना है कि पिछले ४०० वर्षों से मनुष्य-जाति इसी विचार से अपने सब काम चलाती आ रही है कि उसकी प्रगति की कोई सीमा है ही नहीं। लेकिन अब हमें पता चलने लगा है कि यह विचार गलत है। हमारी पृथ्वी निस्सीम नहीं है, सीमित है, अतएव इस पृथ्वी पर रहनेवाले हमारे जैसे लोगों की प्रगति भी सीमित ही रहेगी। हमारे साधन सीमित हैं, इसलिए हमें अपनी प्रगति की भी सीमा निश्चित कर लेनी चाहिए। हमने अपनी जनसंख्या को बढ़ाने की दिशा में जो प्रगति की है, उसके सामने सबसे पहले पूर्णविराम खड़ा कर देना चाहिए। प्रोफेसर सुजाटो ट्रावर्सी तो मानते हैं कि यदि इस दुनिया के हर आदमी को सुख-चैन से रहना हो, तो दुनिया की जनसंख्या ७० करोड़ से अधिक नहीं होनी चाहिए। आज दुनिया में इससे पाँचगुना लोग रह रहे हैं। यदि लोगों की यह संख्या इसी तरह बढ़ती रही, तो क्या होगा, कहना कठिन है। प्रोफेसर ट्रावर्सी ने इस बात की भी चर्चा की है कि दुनिया के कुछ वैज्ञानिकों ने इस सिलसिले में जो भविष्यवाणी की है, उसके अनुसार सारी दुनिया में ऐसी कोई महामारी फैल सकती है, जिसे सम्हालना किसी के बस का न रहे और फलस्वरूप लोगों की गिनती में कमी आये।

प्रोफेसर ओपनहाइमर ने एक जगह कहा है कि जब विज्ञान ने अणुबम को जन्म लेते देखा, तो उसके साथ ही उसने आगे एक महापाप के भी दर्शन किये। प्रोफेसर ओपनहाइमर ने तो केवल एक अणुबम को ध्यान में रखकर यह बात कही थी, लेकिन आज तो जगह-जगह और मानव-जीवन के अनेकानेक क्षेत्रों में विज्ञान के छोटे-बड़े पाप दिखाई पड़ने लगे हैं। जिस कागज पर यह लेख छपा है, उस कागज का उत्पादन भी आज नहीं, तो अगले कुछ सालों के बाद, पाप माना जाने लगेगा, क्योंकि कागज के उत्पादन के कारण हमारी इस दुनिया के जलस्रोत बहुत ही दूषित होते रहते हैं। यदि उन्हें दूषित होने से रोकना हो, तो या तो हमें कागज का उत्पादन अवश्य सीमित कर देना होगा अथवा उत्पादन की कोई नयी पद्धति खोज निकालनी होगी।

विश्व-स्वास्थ्य संगठन ने तो इस बात की भविष्यवाणी की है कि उद्योगों के लिए खर्च होनेवाले मीठे पानी की मात्रा हर साल बराबर बढ़ती ही चली जा रही है। अतएव यह हो सकता है कि अगले पन्द्रह वर्षों के अन्दर सारी दुनिया में मीठे पानी का अकाल ही पैदा हो जाय। औद्योगिक प्रगति के लिए इतनी भारी कीमत चुकाना इष्ट है या नहीं, क्या इसका विचार हमें नहीं करना चाहिए?

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में "कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धः" कह कर भयंकरता का जो अन्दाज दिया था, उस तरह की भयंकरता मनुष्य-जाति को चारों ओर से घेरते जा रही है क्या? ऊपर की सारी बातों के सन्दर्भ में यह सवाल खड़ा होता ही है। ●

परिचर्चा

शान्ति सेनाकी कार्यक्रम-गोष्ठी : कार्य-विवरण

अ० भा० शान्तिसेना मंडल के तत्वावधान में गत १२, १३, १४ जनवरी १९७२ को वाराणसी में शान्तिसेना के सभी अंगों की कार्यक्रम-गोष्ठी आयोजित हुई। ऐसी अपेक्षा की गयी थी कि सभी प्रदेशों की शान्तिसेना समितियों के संयोजक इस गोष्ठी में भाग लेंगे परन्तु उपस्थिति अपेक्षा के अनुरूप नहीं रही। निम्नलिखित व्यक्ति गोष्ठी में उपस्थित थे सर्वश्री द्वारिका बरुआ, एम० एन० सुब्बाराव, विनय अवस्थी, दिनेश मुखर्जी, किशोर देशपांडे, सतोष भारतीय, हरनारायण भाई, विकास भाई, अशोक भार्गव, रामचन्द्र राही, नचिकेता देसाई, गंगाप्रसाद अग्रवाल, अहद फातमी, अमरनाथ भाई, अशोक बंग, कुमार प्रशान्त, श्यामबहादुर 'नम्र', उत्तरा देसाई, वा० ना० भिवले, मुस्तफा कमाल, नारायण देसाई।

तीन दिनों तक शान्तिसेना के कार्यक्रम सम्बन्धी लगभग सभी पहलुओं पर जो चर्चाएँ हुईं, उनका सार प्रस्तुत है

बैठक के प्रारम्भ में विभिन्न प्रदेशों से आये हुए प्रतिनिधियों ने शान्तिसेना की गतिविधियों की जानकारी दी।

महाराष्ट्र

अशोक बंग ने महाराष्ट्र तरुण-शान्तिसेना की रपट प्रस्तुत की। १९७१ के पूर्व प्रदेश में कुल ६ केन्द्र थे। १९७१ में प्रदेश के १३ जिलों में २५ केन्द्र बने हैं, जिनमें ८ सक्रिय हैं और १७ प्राथमिक स्थिति में हैं। इस समय पूरा समय देनेवाले ६ तरुण प्रदेश में काम कर रहे हैं।

प्रदेश में करीब २५-३० स्थानीय, ५ जिला स्तरीय और १ प्रादेशिक-स्तर का शिविर आयोजित किया गया।

प्रदेश में तरुण-शान्तिसेना द्वारा कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम किये गये। जिनमें उल्लेखनीय है—शिक्षा में क्रान्ति आन्दोलन, तरुणों के लिए २ पुस्तकों का प्रकाशन, नागपुर में दीक्षान्त समारोह के अवसर पर शिक्षा में क्रान्ति के लिए मौन प्रदर्शन। इनके अतिरिक्त बंगला देश शरणार्थी शिविर में सहायतार्थ साथी गये। सहरसा के ग्रामस्वराज्य मोर्चे पर भी एक बहन गयी है।

इसके बाद शिक्षा में क्रान्ति के आयोजन की महाराष्ट्र की रपट किशोर देशपांडे ने प्रस्तुत की। उन्होंने बताया कि ८ अगस्त को बम्बई में एक जुलूस आयोजित किया गया। करीब २००, २५० व्यक्ति जुलूस में सम्मिलित हुए।

इसके अतिरिक्त कई शिविरों का आयोजन किया गया, जिनमें शिक्षा में क्रान्ति की चर्चा का प्रमुख विषय बनाया गया। इस कार्यक्रम के दौरान कई नये सदस्य बने तथा पश्चिम महाराष्ट्र में तरुण-शान्तिसेना के केन्द्रों में वृद्धि हुई।

श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल ने महाराष्ट्र के ग्राम-शान्तिसेना का विवरण देते हुए

बताया कि प्रान्तीय-स्तर पर एक समिति ग्राम-शान्तिसेना का कार्यभार सम्भालती है। इस समिति की ओर से जिलों में शिविर चलाये जाते हैं। अब तक ६ शिविर हुए हैं। जिनमें चार अकोला में हुए। इन शिविरों की अवधि तीन दिन थी। अब तक अकोला में २५ व अन्य जिलों में लगभग २५ केन्द्रों की स्थापना हो चुकी है। परभणी में एक दिनवाले तीन शिविर चलाये गये, जिनसे केन्द्र की स्थापना में मदद मिली। महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल व जिला सर्वोदय मण्डल इस कार्य का आर्थिक भार वहन करते हैं।

ग्राम-शान्तिसेना के कुछ सदस्यों को प्रशिक्षण के लिए सहरसा भेजा गया है। जिला कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का प्रबन्ध करने का विचार भी किया गया।

बंगाल

बंगला देश से शरणार्थियों के आने के कारण शरणार्थी शिविरों में काम हुआ। इन कार्यों में तरुण-शान्तिसेना भी सम्मिलित थी। ६ अगस्त को हिरोशिमा दिवस मनाया गया था। अक्तूबर से बंगला देश पर जन-जागरण के लिए जो पदयात्रा प्रारम्भ हुई उसमें कार्य करते रहे। यह रपट देते हुए दिनेश भाई ने बताया कि प्रान्त में तरुण-शान्तिसेना का संगठन करने व अप्रैल, मई '७२ में प्रान्तीय सम्मेलन करने की योजना है।

बिहार

बिहार प्रदेश तरुण-शान्तिसेना की गतिविधियों की जानकारी देते हुए कुमार प्रशान्त ने बताया कि पटना, गया, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, भागलपुर, मुंगेर, रांची में समितियाँ गठित की गयी हैं। मुसहरी, वैशाली, सहरसा, पूर्णिया एवं गया में तरुण-शान्तिसेना ने उल्लेखनीय योगदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में किया है, जिससे उसकी अपनी शक्ति मजबूत हुई है। अकेले सहरसा में ६५ शिक्षण संस्थाओं से सम्पर्क किया गया। ३०० शान्ति सैनिक बनाये गये, १० प्रखण्डों में शान्तिसेना समितियों का भी गठन हो गया है।

९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति के लिए पटना और सहरसा में प्रदर्शन हुए। जून १९७१ में भागलपुर जिले का त्रिदिवसीय शिविर हुआ। इसी प्रकार सितम्बर में सहरसा में, अक्तूबर में गया में, और पूर्णिया में शिविर हुए। दिसम्बर १९७१ के अन्त में मुजफ्फरपुर के एक गाँव में काम के साथ अध्ययन (वर्क कम स्टडी) का आयोजन किया गया।

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश की रपट देते हुए श्री विजय भाई ने बताया कि जुलाई में उन्होंने 'शिक्षा में क्रान्ति' के लिए पूर्व तैयारियाँ कीं। अगस्त में ७-८ जिलों में अच्छे कार्यक्रम आयोजित किये गये। राजधानी लखनऊ में आकर्षक प्रदर्शन किया गया। दशहरे की छुट्टियों में एक प्रादेशिक सम्मेलन बरेली में आयोजित किया गया। भोपाल अधिवेशन के बाद मथुरा, आगरा में छात्रों से सम्पर्क किया गया। एक शिविर देवरिया में आयोजित किया गया। १७ जिलों में तरुण-शान्तिसेना के संयोजक हैं। १०-१२ सक्रिय केन्द्र हैं। पूर्वी क्षेत्र में आचार्यकुल व तरुण-शान्तिसेना का कार्य साथ-साथ चलता है। बंगला देश के विश्व विवेक जागरण पदयात्रियों के लिए एक माह तक कार्य किया।

राजस्थान

श्री भगवान बजाज और अशोक भार्गव ने राजस्थान का विवरण देते हुए बताया कि प्रतापगढ़ (चित्तौड़गढ़) में एक केन्द्र चलता है। सात-आठ सदस्य हैं, जो काम उन लोगों को सूझता है, करते रहते हैं, जैसे गरीब छात्रों को पुस्तक आदि की सहायता। शिक्षा में क्रान्ति के अवसर पर कुछ कार्यक्रम किया। हिरोशिमा दिवस पर सेमिनार आयोजित किया। अभी बंगला देश के शरणार्थियों के लिए वस्त्र एकत्रित कर रहे थे।

जोधपुर में तरुण-शान्तिसेना के नाम से काम चलता है, भावुकजी के निर्देशन में। विद्यार्थियों पर भावुकजी का अच्छा प्रभाव है। परन्तु कोई तरुण-शान्तिसेना के औपचारिक सदस्य वहाँ नहीं है।

उदयपुर में कुछ औपचारिक सदस्य हैं, परन्तु काम-काज नहीं होता। कलकत्ता शिविर के बाद वहाँ सदस्य बने हैं।

गुजरात

भगवान बजाज ने बताया कि वहाँ सतत रूप से तरुण-शान्तिसेना का कार्य करनेवाला कोई व्यक्ति नहीं है। मदा बहन शहर में ही कार्य करती है। सदस्य भी बहुत अधिक नहीं हैं। वहाँ के कार्यकर्ता छात्रों को सीधे भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में खींचने का प्रयास करते हैं, इसलिए छात्र अधिक टिकते नहीं हैं।

तरुण-शान्तिसेना के कुछ अन्य केन्द्र जहाँ श्री मुरारावजी गये थे, की रपट देते हुए उन्होंने बताया कि विदर्भ में अच्छा वातावरण बन रहा है। गोरखपुर व देवरिया में कुछ प्राध्यापक अच्छी रुचि लेते हैं। चम्बलघाटी में भी तरुणों के कुछ दिलचस्प शिविर हुए हैं। देश में कुछ स्थानों पर विशेष ध्यान देकर पाकेट्स बनाना चाहिए।

केरल में तरुण-शान्तिसेना का प्रथम प्रान्तीय शिविर की योजना बन रही है।

शरणार्थी शिविर में काम

जलपाईगुड़ी के शरणार्थी शिविर में काम करने गये हुए तरुण-शान्ति-सैनिकों में से उपस्थित किशोर देशपांडे ने बताया कि वहाँ २० मित्रों ने लगभग सवा महीने तक कार्य किया, जिनमें ७ विद्यार्थी लोकभारती, सनोसरा (गुजरात) से आये थे। मुख्य काम आक्सफेम से प्राप्त सामग्री के वितरण व सफाई का था। साथ ही युवकों का संगठन करने की ओर भी ध्यान दिया गया।

असम

श्री द्वारिका बरुवा ने बताया कि शिक्षा में क्रान्ति की अच्छी प्रतिक्रिया हुई है। शरणार्थी शिविरों में दो स्थानों पर शान्ति-सैनिक भेजे गये। ग्राम-शान्तिसेना के ६ शिविर करनेका विचार है। ●

भारत में गरीबी—७

तुल्य वितरण [इक्विटेबुल डिस्ट्रीब्यूशन]

वितरण उत्पादित सामग्री का या उत्पादन के साधनों का ?

१. इसमें कोई सन्देह नहीं, जहाँ तक गरीबी का प्रश्न है भविष्य आशा से भरा हुआ नहीं है। पहली बात यह है कि अब तक आर्थिक विकास की गति बहुत धीमी रही है। दूसरे, जो भी विकास हुआ है उसका फल धनी और उच्च-मध्यमवर्गीय लोगों को ही मिला है, निम्न-मध्यम वर्ग के लोग और गरीब अछूते रह गये हैं। अगर विकास की यही गति रही तो अगले दस वर्षों में भी क्या होगा ? क्या देश के हर नागरिक को न्यूनतम आय भी प्राप्त हो सकेगी ? इसलिए जरूरत इस बात की है कि विकास की गति तेज की जाय। साथ ही यह भी हो कि धन का तुल्य वितरण हो। इसके लिए ठोस योजनाएं बनानी पड़ेंगी, यों ही वितरण नहीं हो जायगा।

२. अब तक हमने वितरण के प्रश्न पर उपभोक्ता खर्च या वैयक्तिक आय (पर्सनल इनकम) की दृष्टि से विचार किया है। हमें यह समझना चाहिए कि वैयक्तिक आय की विषमता की जड़ में उत्पादन के साधनों के वितरण की विषमता है। इस विषमता को दूर करने का कम्यूनिस्ट तरीका यह है कि उत्पादन के सभी साधनों को सरकार के हाथों में सौंप दिया जाय और केवल उत्पादित सामग्रियों का सामाजिक दृष्टि से न्यायपूर्ण वितरण किया जाय। अगर यह रास्ता छोड़ना है—भारत सरकार ने इसे छोड़ ही दिया है—तो दूसरा रास्ता यही है कि स्वयं उत्पादन के साधनों का वितरण किया जाय।

३. भूमि भारत में उत्पादन का एक मुख्य साधन है। गाँवों में अधिकांश गरीबों के पास भूमि बिलकुल नहीं, या बहुत थोड़ी है। थोड़ी-सी भूमि लेकर उन्हें और उनके परिवार को पूरा काम नहीं मिलता। खेती पर निर्भर करनेवाली आबादी के बहुत बड़े हिस्से की गरीबी का बुनियादी कारण इस तरह की बेरोजगारी या अर्द्ध-बेरोजगारी है। इसका एक उपाय यह है कि उपलब्ध भूमि का वितरण किया जाय ताकि भूमि पर जीनेवाले लोग अपनी भूमि पर काम कर सकें। इस सम्बन्ध में तीन प्रश्न उठते हैं। एक, क्या इतनी भूमि है कि हर एक को पर्याप्त भूमि मिल सके कि वह उस पर कमाई करके न्यूनतम उचित कमाई कर सके ? दो, क्या निजी स्वामित्व के चलते ऐसे उपाय पर अमल करना सम्भव है ? तीन, अगर भूमि का वितरण हो भी सके तो, क्या खेती का प्रगतिशील विकास हो सकेगा, या कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि खेती का पूरा विकास ही मन्द पड़ जाय ? भूमि के पूरे प्रश्न पर इन प्रश्नों के सन्दर्भ में विचार करना चाहिए।

भूमि के अतिरिक्त उत्पादन के दूसरे साधन औद्योगिक क्षेत्र में हैं। जैसे-जैसे यांत्रिकी का विकास होता है मनुष्य के श्रम की उत्पादकता बढ़ती जाती है। लेकिन यांत्रिकी के माध्यम से श्रमिक को काम देने में पूँजी की जरूरत होती है। पूँजी के बिना उसकी उत्पादकता नहीं बढ़ सकती। इसलिए ऐसी अर्थनीति में जिसमें पूँजी कम है, ऊँची किस्म की औद्योगिक यांत्रिकी में थोड़े ही श्रमिकों को काम दिया जा सकता है। जो समस्या भूमि के कम होने के कारण पैदा होती है वही पूँजी के कम होने के कारण भी पैदा होती है। लेकिन भूमि का पुनर्वितरण तो किसी तरह सम्भव भी है, औद्योगिक पूँजी का वितरण कैसे सम्भव है ? किसी औद्योगिक यंत्र से सीमित संख्या में ही लोग काम कर सकते हैं, उससे ज्यादा कैसे करेंगे ?

इस कारण औद्योगिक क्षेत्र में इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है कि ऐसी यांत्रिकी अपनायी जाय जिसमें प्रति श्रमिक कम पूँजी लगे ताकि थोड़ी पूँजी में ज्यादा श्रमिकों को काम मिल सके। ऐसी यांत्रिकी श्रम-केन्द्रित (लेबर इन्टेन्सिव टेक्नालोजी) ही होगी। इस तरह थोड़ी पूँजी ज्यादा लोगों में वितरित की जा सकती है। इस सम्बन्ध में भी भूमि की तरह, तीन प्रश्न पैदा होते हैं। एक, क्या इस तरह की यांत्रिकी से, जो श्रम-केन्द्रित है, और जिसमें श्रम की उत्पादकता भी कम है, श्रमिक को न्यूनतम उचित कमाई हो सकती है ? दो, क्या निजी उद्योगों की प्रतियोगिता की अर्थनीति में इस तरह का उपाय सम्भव है ? तीन, अगर औद्योगिक क्षेत्र में इस प्रकार की यांत्रिकी ज्यादा दिनों तक रखी जाय तो क्या आर्थिक प्रगति हो सकेगी, या वह मंद पड़ जायगी ?

४. अगर उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व रहे तो उत्पादित सामग्री का वितरण कैसे होगा ? हम आगे देखेंगे कि भूमि या दूसरे साधनों का वितरण कर देने से बेरोजगारी या गरीबी का सवाल नहीं हल किया जा सकता। इसका एक कारण यह है कि भूमि भी कम है और पूँजी भी, जिसके कारण एक सीमा के आगे लोगों को साधन नहीं दिये जा सकते। दूसरे, निजी स्वामित्व के होते हुए इस तरह साधनों का वितरण व्यावहारिक नहीं है। तीसरे, इसके कारण कुछ दिनों बाद प्रगति मंद पड़ जायगी। ऐसी स्थिति में यदि हम एक ओर सरकार-स्वामित्व तथा दूसरी ओर साधनों के वितरण, दोनों को अस्वीकार करते हैं तो तीसरी स्थिति एक ही बच जाती है वह यह है कि हम साधनों का निजी स्वामित्व स्वीकार करें, तथा उत्पादन के साधनों का असमान वितरण भी स्वीकार करें। तब तुल्य वितरण का प्रश्न इसी रूप में प्रस्तुत होता है कि उत्पादित सामग्री को हम श्रम, पूँजी, और साहस (इन्टरप्रेन्योरशिप) के बीच वितरित करें।

साम्यवादियों की यह माँग कि वितरण आवश्यकता के आधार पर हो पूरा नहीं किया जा सकता। दूसरा कोई कारण →

हो या न हो, इतना कारण तो है ही कि सबकी जरूरत पूरी करने भर को राष्ट्र का उत्पादन नहीं है। साथ ही वितरण ऐसा होना चाहिए कि अधिक उत्पादन के लिए प्रेरणा बनी रहे। इसलिए वितरण श्रम या कुल उत्पादन में योगदान के आधार पर ही हो सकता है, जरूरत के आधार पर नहीं। उत्पादन हमेशा संयुक्त पुरुषार्थ का परिणाम है, इसलिए यह तय करना कठिन है कि श्रम, पूँजी और साहस में किसका कितना योगदान है। तात्विक दृष्टि से इसका निर्णय होना कठिन है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से जिसकी सौदा करने की शक्ति अधिक होती है वह अधिक हिस्सा प्राप्त कर लेता है। यह शक्ति गरीबों में कम होती है, इसलिए भूख के भय के कारण जो कुछ मिलता है उसे वे स्वीकार कर लेते हैं। इस कठिनाई को सोचकर खेती में भी विनिमय 'बेजेज बैंट' पास किये गये हैं। यह औद्योगिक क्षेत्र की नकल है, और कुछ नहीं। संगठित उद्योगों में श्रमिकों की 'सौदा करने की शक्ति' अधिक है, खेती के क्षेत्र में नहीं है। जहाँ काम इतना कम हो वहाँ न्यूनतम मजदूरी का कोई अर्थ नहीं है। जबतक 'काम का अधिकार' (राइट टु वर्क), स्वीकार न किया जाय, न्यूनतम उचित कमाई का कोई अर्थ नहीं है। यह हो सकता है कि 'काम का अधिकार' मान लिया जाय तो साधनों के निजी स्वामित्व और उनके समान वितरण की समस्या हल हुई मानी जा सकती है। लेकिन समस्या यह है कि 'काम का अधिकार' कैसे स्वीकार हो। पहली कठिनाई यह है कि क्या सबके लिए काम है? काम हो भी तो इतने बड़े पैमाने पर उसका संगठन कैसे होगा? तीसरे, अगर संगठन भी हो जाय तो काम के लिए खर्च कहाँ से आयेगा?

अंत में, वितरण के क्षेत्र में तीन बिन्दु हैं जिन पर नीति निर्धारित करने की जरूरत है। एक, भूमि का पुनर्वितरण, दो, श्रम-केन्द्रित यांत्रिकी, तीन, काम का अधिकार। इन पर आर्थिक विकास और तुल्य-वितरण के सन्दर्भ में विचार होना चाहिए। प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

जब वह नहीं मिलते!

—कयूम असर

मैं और वह पाँचवें वर्ग से सातवें वर्ग तक स्कूल में साथ रहे। हमारी दोस्ती का रिश्ता इस बीच काफी मजबूत हुआ। मिडिल बोर्ड की परीक्षा पास होने के बाद मेरा नाम शहर के हाईस्कूल में लिखा दिया गया, और गाँव से मेरा धीरे-धीरे सम्बन्ध खतम होने लगा। उससे मेरी मुलाकात शायद ही कभी होती। शिक्षा खतम होने के बाद मैंने नौकरी कर ली। और, फिर ऐसा हुआ कि पुराने साथियों की जगह नये दोस्तों ने ले ली। मेरी पोस्टिंग भी अपने जिले के बाहर हुई। इसलिए बचपन से मिलनेवाले लोगों से मुलाकात का सिलसिला बाकी नहीं रह सका। उनमें से अक्सर की यादें भूल गयीं। इधर २५ वर्षों से अपने शहर में हूँ। शुरू की जिन्दगी के बहुत से साथी-संगी भी यहाँ मौजूद हैं। उनसे मिलकर बड़ा मजा आता है, लेकिन वह एक व्यक्ति एक बार मिला भी तो खुला नहीं।

हम राह चलते अक्सर सड़क पर टकराते हैं। और मैंने हर बार बढ़कर सलाम करने की कोशिश भी की है लेकिन वह अपनी गाड़ी की स्टेयरिंग सम्भाले, साफ कतराकर मुझसे निकल जाता है। वह हमेशा इसी तरह गुजर गया है, जैसे मुझे देखा ही नहीं या मैं कोई इनसान हीं नहीं, जिससे कभी उसकी जान-पहचान रही हो।

वह हमसे दूर-दूर क्यों रहता है? मेरी चाहत का उसे अन्दाजा है। मेरी लपक का उसे एहसास है। फिर भी उसकी उदासीनता का भेद क्या है?

मैं भेद को अच्छी तरह जानता हूँ। मेरी उससे सहानुभूति है। मैं उसके दिल से वह बात जो गलत घर कर चुकी है कैसे निकालूँ, यह प्रश्न मेरे दिल में बराबर उठता है।

मेरी उससे जान-पहचान नहीं थी। ५वें वर्ग में मेरा प्रवेश हुआ। अभी कुछ दिन ही बीते होंगे कि एक दिन टिफिन में क्लास खाली हुआ। लड़के खेल-कूद और खाने में लगे हुए थे। उस समय तक मेरी जान-पहचान बढ़ी नहीं थी। अकेलापन का एहसास था। मैं सबों से अलग-अलग था। टिफिन की बोरियत खत्म करने के लिए मैंने भी हलवाई से नाश्ते का सामान खरीदा और मुझे क्लास से अच्छी नाश्ता करने की कोई दूसरी जगह नजर नहीं आयी, इसलिए उल्टे पैरों क्लास में वापस आ गया और अभी बेंच पर बैठा ही था कि कोहराम मच गया। इसी बेंच के दूसरे सिरे पर वह बैठा नाश्ता कर रहा था। खाने का सामान घर से लाया होगा। वह उसे खा रहा था। इस हालत में म्लेच्छ 'मियाँ' ने बेंच छू दिया और उसे छूत लग गयी। हंगामा सुनकर हेडमास्टर साहब तेज-तेज कदमों से चलकर हमारे क्लास में आ गये। डाँटकर पूछा, क्या बात है? उसने हेडमास्टर साहब से मेरी शिकायत की कि 'मियाँ' ने उसके खाने का सामान नष्ट कर दिया है।

हेडमास्टर साहब ने पूछनेवाली नजरों से मेरी तरफ देखा मैं चुप खड़ा था। मेरे पास जवाब नहीं था। लेकिन वह बात को तह तक पहुँच गये। उन्होंने उसकी ठोकाई कर दी। हेडमास्टर साहब के हाथ की बेंत से उसका शरीर लोहू-लुहान हो गया।

इस घटना के कुछ दिनों बाद से दोस्ती की शुरुआत हुई। उसके बाद पूरे तीन साल हम एक-दूसरे के साथ रहे और कभी भी किसी बात पर हमारे बीच अनबन नहीं हुई। वह हमारे पड़ोसी गाँव का रहनेवाला था। खानदानी राजपूत, अच्छे भले लोग हैं। लेकिन माली हालत अच्छी नहीं है। उसकी शिक्षा मिडिल स्कूल के बाद जारी नहीं रह सकी थी। उसने मोटर ड्राइविंग सीख ली और उसे शहर की नगरपालिका में नौकरी मिल गयी। ●

तरुण-शान्तिसेना प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

साधना केन्द्र, राजघाट, वाराणसी में तरुण-शान्तिसेना प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर का उद्देश्य था शान्तिसेना के संगठन के लिए प्रशिक्षक चुनना तथा उन्हें प्राथमिक प्रशिक्षण देना।

उपरोक्त उद्देश्य को मद्देनजर रखते हुए खासतौर से बिहार के चुने हुए दस साथियों के लिए इस शिविर का आयोजन हुआ। इस शिविर में शामिल होने के लिए अन्य प्रांतों की शान्तिसेना समितियों को भी लिखा गया। इन सबको मिलाकर शिविर में बिहार के ७ जिलों से १२ शिविरार्थी आये—असम से २, और मध्य प्रदेश से २, इस प्रकार कुल १६ शिविरार्थी आये थे।

अभ्यासक्रम

शिविर के अभ्यासक्रम को तीन भागों में बाँटा गया था -

१. बौद्धिक २. क्रियात्मक ३. विशेष

बौद्धिक वर्गों में मुख्य रूप से निम्न विषयों पर व्याख्यान हुए - (१) सम्पूर्ण सर्वोदय विचार, (२) अहिंसा-मीमांसा, (३) अणु-विज्ञान, (४) शान्तिसेना, (५) विश्व-शान्ति-आन्दोलन, (६) युवा-विद्रोह, (७) साम्प्रदायिक समस्या, (८) भारत-पाक-संघर्ष, (९) राष्ट्रीय एकता, (१०) शिविर-संचालन, (११) हिसाब-किताब रखना।

क्रियात्मक : इसमें मुख्य रूप से निम्न चीजों की जानकारी दी गयी - १. कवायद का पूरा ज्ञान, २. सीटियों का संकेत, ३. योगासन, ४. खेलकूद, ५. सामूहिक गीत, ६. प्रत्यक्ष शिविर-संचालन,

विशेष : इसमें खासतौर से निम्न बातें उल्लेखनीय हैं -

सामूहिक अध्ययन : हिन्द स्वराज्य पुस्तक को स्वाध्याय के लिए चुना गया था। एक दिन के अंतर पर पौन घंटे का पठन होता रहा।

ईशोपनिषद् का वर्ग : ईशोपनिषद् का वर्ग पाठ्यक्रम में पहले नहीं था। बाद में इसको शामिल किया गया। प्रतिदिन पौन घंटे के इस वर्ग को श्री नारायण भाई ने उपदेश-पद्धति को छोड़कर जिस वर्ग-पद्धति से समझाया वह अधिक उपयोगी और ग्रहण करने के लिए आसान रहा।

लेखमाला : पाठ्यक्रम में दिये गये अलग-अलग विषयों पर अपनी-अपनी रुचि के अनुसार विषय चुनकर उस पर लेख लिखने को कहा गया। उन्हीं विषयों पर क्लास नोट भी तैयार कर क्लास लिया जाय, यह विचार भी हुआ। यह प्रक्रिया इस शिविर के लिए नयी थी। इससे लोगों में अध्ययन करने की प्रेरणा हुई। करीब-करीब सबने लेख लिखे, क्लास-नोट तैयार किये।

शिविर-पत्रिका : हस्तलिखित दो पत्रिकाएँ निकाली गयीं। इसमें मुख्य रूप से शिविरार्थियों के ही लेख रहे। इसके सम्पादन तथा कला में श्री ललित "कुमुद" ने सराहनीय कार्य किया।

शिविरार्थियों द्वारा वर्ग : यह शिविरार्थियों के लिए बहुत आकर्षण तथा दिलचस्पी का विषय रहा है। जिन-जिन विषयों के लेख उन लोगों ने तैयार किये थे, उसी के आधार पर प्रत्येक दिन अलग-अलग शिविरार्थी वर्ग लिया करते थे।

इनमें आठ लोगों ने विभिन्न विषयों पर क्लास लिये। अन्त में समयाभाव के कारण बाकी लोगों को मौका नहीं मिल पाया। क्लास के बाद १५-२० मिनट में चर्चा होती थी, इससे वक्ता को अपनी कमी को दूर करने का अवसर मिल जाता था।

रंजन कार्यक्रम : एक दिन के अन्तर से पौन घंटे का रंजन कार्यक्रम रखा गया था। गाना, चुटकुले, कहानी आदि ही मुख्य कार्यक्रम रहे। एक दिन सामूहिक रूप से एक एकांकी नाटक "मरे हुए हम" खेला गया।

शिविर संचालन : शिविर का सारा कार्यक्रम शिविरार्थी ही चलाते रहे। सुबह रौल-कॉल से लेकर दीप-शमन तक उन्हीं लोगों ने अपनी जिम्मेवारी मानी।

समूह जीवन में आपसी सहयोग खूब देखा गया। कुल लोगों को तीन टोलियों में बाँटा गया था। टोलियों को काम एक बार बाँटा गया, उसके बाद वे स्वयं अपना काम समझकर बिना किसी के इन्तजार किये, समय के अनुसार काम में लग जाते थे। भोजन परोसना आदि भी सुव्यवस्थित ढंग से चला।

शिविर का उद्घाटन और समावर्तन

इन दोनों कार्यक्रमों में अभी तक की परम्परा को छोड़कर सीधे-सादे ढंग से करने का निश्चय किया गया। उद्घाटन तथा समापन श्री नारायण भाई ने क्रमशः दिनांक १-१-'७२ और २६-१-'७२ को सम्पन्न किया।

—सत्यनारायण

राजा और नवाब की विदाई

सन् इकहत्तर के अंत के साथ भारत से सामंतशाही भी विदा हो गयी। नवाब, राजा और महाराजा कहलानेवाला समुदाय आम आदमी के दर्जे पर आ गया और भारतीय समाज की एक जबरदस्त विषमता खतम हो गयी।

यह नवाब और राजा लोग ब्रिटिश साम्राज्य की देन थे। उनमें से कुछ अपने को कहीं ज्यादा पुराना बताते थे और उन्होंने यह मनसूबा बांध रखा था कि अंग्रेजी राज के जाने के बाद हम खुद-मुख्तयार हो जायेंगे। एकाध ने तो भारत के आजाद होते वक्त थोड़ा हठ भी दिखाया कि हम किसी और की सत्ता नहीं मानेंगे। मगर कौन नहीं जानता कि यह सारी रियासतें अंग्रेजी शासकों के इशारे पर चलती थीं और उसके सामने उनका कोई अस्तित्व ही नहीं था, सिर्फ उतना और उस हद तक जहाँ तक ब्रिटिश सम्राट् की खुशी हो। इतिहास गवाह है कि नवाबों या राजाओं ने जरा सर उठाया अंग्रेजों ने कुचल कर रख दिया और उस डर से बाकी सबके सब चुपचाप दब कर रहने लगे। इसलिए भारत के स्वतंत्र होने पर इनको अलग मानने का कोई सवाल नहीं उठता था। निजाम हैदराबाद ने कुछ तेवर दिखाये तो वहाँ डेढ़ दिन की पुलिस-कार्रवाई से उनके होश ठिकाने आ गये। इस प्रकार सारी रियासतें देश का अंग बन गयीं और भारत का राजनैतिक नक्शा एक समान हो गया—जिसका श्रेय स्वर्गीय सरदार वल्लभ भाई पटेल को है। भारत को एक सूत्र में बांधने के लिए पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी ऋणी रहेगी।

मगर नम्रतावश नवाबों-राजाओं को कुछ अधिकार दिये गये :

(१) उनको हर साल भारतीय खजाने से कुछ पेन्शन मिला करेगी जिससे वे अपनी गुजर कर सकें।

(२) उनको नवाब, राजा या महाराजा कहा जायेगा। और नाम के पहले "हिज हाईनेस" लिखा जायेगा।

(३) उनको बन्दूकों से सलामी दी जायेगी और जिनकी सलामी दस बन्दूकों से ज्यादा हो, उनको कुछ और सुविधाएं।

(४) उनको, उनके परिवारों को और उनके पशुओं को इलाज व दवा मुफ्त।

(५) उनकी कोठियों पर हथियार बन्द पहरेदार और अपनी रियासतों से बाहर जाने पर अंग-रक्षक मिलेंगे।

(६) आर्म्स एक्ट (हथियार रखने की पाबन्दी) वाले कानून से उन्हें छूट थी।

(७) उनकी मोटरों और अन्य गाड़ियों पर कोई टैक्स नहीं।

(८) उनको मिलनेवाली पेंशन, भत्तों या अन्य चीजों पर कोई टैक्स नहीं। उनके मकानों या जायदाद पर नगर-पालिका का टैक्स नहीं।

(९) उनकी वर्षगांठ के अवसर पर उनकी रियासतों में स्कूल, दफ्तर आदि बन्द रहते हैं।

(१०) विदेश से वे जो चाहें चीजें अपने काम के लिए मँगायें, कोई ड्यूटी या रोक नहीं।

(११) उनके खिलाफ अदालत में कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता।

इन अधिकारों से स्पष्ट है कि राजा-नवाब लोग देश के नागरिक होते हुए भी एक विशिष्टता का भोग करते थे, जो भारतीय संविधान की आत्मा के विरुद्ध है। जब सब जन एक समान हैं, सबको एक ही वोट है—तो कुछ को खास हक या सुविधाएं क्यों मिलें? उनको दी जानेवाली पेंशन पर भी बड़ी आपत्ति थी। ३१ दिसम्बर १९७१ को २७८ राजाओं-नवाबों को कुल मिलाकर हर साल चार करोड़ अस्सी लाख रुपये दिये जाते थे। इनमें शिखर पर थे निजाम हैदराबाद और महाराजा मैसूर जो बीस-बीस लाख से ऊपर पाते थे और सबसे कम मिलता था सोलह रुपये महीना—कटोदिया के नवाब को। स्वराज्य से लेकर अब तक उन्हें एक अरब दो करोड़ रुपये पेन्शन के रूप में दिये जा चुके हैं।

कोई हो राजा, कोई हो प्रजा, कोई नवाब, कोई भिखमंगा—यह विषमता आधुनिक युग में सहन नहीं की जा सकती। जनतंत्र में आज सबके साथ एक-सा व्यवहार होना चाहिए। यही कारण है कि कांग्रेस पार्टी ने (विभाजन के पहलेवाली कांग्रेस ने) अपने दस कार्यक्रम में राजाओं के अधिकार खत्म करने का भी एक कार्यक्रम रखा था। तदनुसार हमारी यशस्वी प्रधानमंत्री ने उस दिशा में कदम बढ़ाया और १८ मई १९७० को लोकसभा में इस सम्बन्ध में बिल पेश किया गया। वहाँ ३३९ ने उसके पक्ष में वोट दिये, १५४ ने विपक्ष में। मगर राज्यसभा में इस बिल को अभीष्ट दो-तिहाई बहुमत मिलने में एक से कुछ कम वोट की कमी रह गयी और बिल गिर गया। इस वास्ते नयी लोकसभा में संविधान (२६ वें संशोधन) बिल के रूप में पुनः लाया गया। २ दिसम्बर १९७१ को वहाँ यह पास हो गया और ९ दिसम्बर को राज्य-सभा में। और २८ दिसम्बर को इस विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली।

अपने इस विधेयक द्वारा भारत सरकार ने महात्मा गांधी के पचपन साल पुराने स्वप्न को साकार किया है। सन् १९१६ में जब महामना मालवीयजी ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की तो उसके उद्घाटन के लिए बापूजी को बुलाया जो सत्याग्रह द्वारा गोराशाही से विजय प्राप्त कर उन्हीं दिनों दक्षिण-अफ्रीका से लौटे थे। उस सभा में भारत के अनेक राजा-महाराजा मौजूद थे जो तरह-तरह के हीरे-मोती पहने हुए थे। भारत की गरीबी मानो उस जवाहरात से और भी उभर उठी थी। बापूजी की आत्मा बिलख उठी और उन्होंने इन शासकों से कहा—"जाइये और अपने

राजस्थान में पुष्टि-कार्य की योजना

प्रदेश के अनेक प्रखण्डों एवं क्षेत्रों में हजारों ग्रामदान संकल्प हुए हैं। राजस्थान सरकार ने अपनी इच्छानुसार ग्रामदान एक्ट एवं उसके नियम भी पारित कर दिये हैं, परन्तु पुष्टि-कार्य व्यापक पैमाने पर प्रारम्भ नहीं हो रहा है। कई कारणों से संस्थाओं व साथियों की हिम्मत नहीं हो रही है। उनके प्रमुख कारण हैं-

१—निष्ठावान कार्यकर्ताओं का अभाव।

२—आर्थिक समस्या।

३—जनता की तरफ से उत्साह का अभाव।

४—कार्य की रूपरेखा की अस्पष्टता।

कार्यक्रम की स्पष्ट रूपरेखा के आधार पर अगर अपने क्षेत्रों में कदम उठाये गये तो अवश्य ही सब समस्याएँ हल होती जायेंगी। जहाँ जितने साथी और साधन सहज रूप से प्राप्त हो सकें उनके मुताबिक ही सीमित क्षेत्र लेकर प्रथम प्रयोग प्रारम्भ करना चाहिए। कम-से-कम, एक निष्ठावान साथी चाहे तो एक पंचायत-क्षेत्र लेकर भी पुष्टि-कार्य का प्रथम प्रयोग कर सकता है। फिर ज्यों-ज्यों शक्ति, साधन एवं साथी जुड़ते जायें, त्यों-त्यों क्षेत्र को बढ़ाते जायें। इस प्रकार एक साथ अनेक जगह कार्यारम्भ होकर वह व्यापक व विस्तार रूप धारण कर सकेगा।

जहाँ तक पुष्टि-कार्य के प्रयोग की रूपरेखा का प्रश्न है अब तक के अनुभव के आधार पर निम्न कदम एक के बाद एक उठाना परमावश्यक है। इसमें भी आगे नये-नये क्षेत्र में प्रयोग व अनुभव के आधार पर परिवर्तन किया जा सकेगा। मामूली पुष्टि-कार्य के लिए ३ प्रमुख स्टेज हैं। १—पूर्व तैयारी, २—कार्यकर्ता प्रशिक्षण, ३—प्रयोग।

पूर्व तैयारी

१—सर्वप्रथम अनुकूल वातावरण बनाने के लिए क्षेत्र के सम्बन्धित अधिकारी वर्ग खासतौर पर राजस्व अधिकारीगणों से सम्पर्क कर सहयोग के लिए निवेदन करना।

२—सरपंच, पटवारीगण, पंच-सरपंच, राजनैतिक कार्यकर्ता, ग्रामसेवक, शिक्षक बन्धुओं की विचार-सभाएं कर सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना।

३—इस कार्य के प्रमुख सहयोगी सहित सभी टोलियों के शिविर समाप्त होते ही सम्पर्क करना प्रारम्भ करें। यह टोली जहाँ पुष्टि-कार्य शुरू न हुआ हो, शुरू करवाये तथा जहाँ कहीं कठिनाई पैदा हो उसे दूर करने में मदद करे।

४—पुष्टि-टोलियां एक गाँव का कार्य पूरा होने पर ही वापस अपने कार्यालय पर लौटें।

५—एक पुष्टि-प्रयोग के समाप्त होने के बाद कार्यकर्ताओं की एक सामूहिक बैठक में उनके अनुभव, कठिनाइयों व सुझावों पर चर्चा करके आगे के पुष्टि-प्रयोग के कार्यकर्ताओं में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करना चाहिए।

६—पुष्टि-प्रयोग में जो जो सक्रिय साथी मिलते जायें उन्हें आगे के प्रयोग में शामिल किया जाय।—श्री प्रकाश स्वामी

साथियों के पत्रों से

जुलाई १९७१ से ही मैं साल में ३-४ महीने खेती में और ८-९ महीने सर्वोदय में दे रहा हूँ। खर्चा पूरा अपने घर से ही ले रहा हूँ। अगस्त-सितम्बर-अक्तूबर का समय सादाबाद तहसील में स्कूलों के सम्पर्क में लगाया। आचार्यकुल एवं तरुण-शान्तिसेना की चर्चा की। मैत्री, भूदान-यज्ञ, नयी तालीम, गाँव की आवाज के २० ग्राहक बनाये, २०० रु० की साहित्य-बिक्री हुई। नवम्बर खेती में दिया। १८ दिसम्बर तक कुछ रोगियों की व्यवस्था एवं मथुरा नगर में अधिक समय कालेजों में आचार्यकुल एवं तरुण-शान्तिसेना की चर्चा में दिया। १९ दिसम्बर से १९ जनवरी तक अपने गाँव में ही लोक शक्ति जगाने में दिया। आगे भी समय अपने गाँव में ही, जो १० हजार की आबादी का है तथा कुछ और गाँवों को मिलाकर २० हजार की आबादी का सघन क्षेत्र मानकर दूंगा। तहसील १४ ब्लाक-स्तर तक व्यापक क्षेत्र रहेगा। श्री बयन्ती प्रसादजी संयोजक सर्वोदय आश्रम छाराशाह ने २ दिन गाँव में १० बजे से ४ बजे तक दिया।

१ भूदान-यज्ञ, २ मैत्री, ३ गाँव की आवाज, १ नयी तालीम के ग्राहक बने। २० रु० की साहित्य-बिक्री हुई। इसी अनुभव से ३० जनवरी से १२ फरवरी तक तहसील पदयात्रा तय की है। प्रति पड़ाव पर ७ घण्टे पत्रिकाओं, साहित्य, सर्वोदय मित्र, लोक-सेवक एवं शान्तिसैनिक बनाने में दिये जायेंगे। ६ महीने में रु० ४९.९० की साहित्य-बिक्री हुई। ४ बीघा जमीन परवालों ने एक भूमिहीन (जाट) को प्रदान की। वह तो बहुत दिनों से रहा था किन्तु इस बार बात उनकी समझ में आयी। श्री विनय भाई का गाँव के इन्टर कालेज में तरुण-शान्तिसेना पर प्रवचन कराया। यहाँ के प्रधानाचार्य एवं अध्यापकों को प्रसन्नता हुई है। कालेज के मैनेजर श्री विनोद कुमार से एक मुकदमा, जो वर्षों से दो भाइयों में चल रहा था, तय किया।

—रामलाल शर्मा, मथुरा

—वेतन लेकर देश-सेवा में लग जाइये।" पंडित नेहरू ने इस ऐतिहासिक प्रवचन का उल्लेख करते हुए लिखा है कि सब राजे उठकर तो चले गये लेकिन जेवर किसी ने नहीं बेचे और न कोई देश-सेवा में लगा। उल्टे, वह अंग्रेजी साम्राज्यशाही के साथी बन गये जिन्हें उखाड़ देने के लिए राष्ट्रपिता ने ८ अगस्त १९४२ के अपने क्रान्तिकारी प्रवचन में आह्वान किया।

स्वराज्य के बाद भी यह समुदाय अलग-थलग रहा और विशेषाधिकारों से जनता का शोषण करता रहा। इसकी समाप्ति पहली जनवरी १९७२ के मंगल प्रभात को हुई और भारत के राजों-महाराजों-नवाबों की चार सदी के इरादे में फिर गयी। जनता जनार्दन को शत-शत प्रणाम।

—सुरेशराम

शान्ति दिवस के समाचार

कानपुर में दिनकर

(३० जनवरी '७२ को सर्वोदय मण्डल, इनसानी बिरादरी तथा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र कानपुर द्वारा आयोजित प्रार्थना-सभा में हिन्दी साहित्यकार श्री दिनकर के व्यक्त विचारों का सार)

"गांधी के दो रूप थे। एक उनका राष्ट्र-उद्धारक का, दूसरा विश्व-उद्धारक का। स्वार्थवश हमारे राष्ट्र ने उनके पहले रूप को ही स्वीकार किया और उन्हें राष्ट्रपिता मानकर उनके राष्ट्र-उद्धारक रूप की तो महिमा बढ़ाई किन्तु उनके विश्व-उद्धारक रूप को भुला दिया।

अन्य महापुरुषों की भांति गांधीजी के बाद उनके अनुयायियों में भी कई मत चल पड़े। कुछ लोगों ने माना कि गांधी ने कहा था कि राज्य चलाओ, दूसरों ने माना कि उन्होंने कहा कि चरखा चलाओ। दूसरे मतवालों में कुछ ऐसे रूढ़िवादी रहे जिन्होंने विनोबा द्वारा अम्बर चर्खे में बिजली के उपयोग को भी अनुचित माना। गांधीजी में बुद्धि की अपेक्षा सम्बुद्धि अधिक थी। गांधीजी की विशेषता थी कि वे निर्णय पर पहले पहुँचते थे, दलीलों पर बाद में विचार करते थे। वे जिद्दी नहीं, समझौतावादी थे, अनेकान्तवादी थे।

गांधीजी का मूल्य राष्ट्र के स्तर पर चाहे कम रहा हो पर विश्व के स्तर पर गांधी का सत्य सिद्ध हो रहा है। जैसे-जैसे सुख बढ़ता जाता है परेशानियां भी बढ़ती जा रही हैं। टालस्टाय, थोरो, इलियट और गांधी ने सभ्यता के शिखर पर ले जानेवाले विज्ञान से उत्पन्न खतरे का जो आभास कराया था, उसे समझने में समय लगेगा। गांधी विज्ञान के विरोधी नहीं थे। उनका कहना तो केवल यह था कि किसी भी रास्ते पर चलने में मात्र साधनों की वेगशीलता ही नहीं, लक्ष्य को भी दृष्टि में रखना होगा।

भारत-विभाजन के समय देश के अखाड़े में जिन्ना की जीत हुई और गांधी हारे। किन्तु काल के चौड़े अखाड़े में, बंगला देश की मुक्ति और द्विराष्ट्रवाद के सिद्धान्त की समाप्ति में, गांधीजी की विजय हुई। आगे बराबर जिन्ना हारता जायगा, और गांधी जीतता जायगा। सर्वनाश की घड़ी में गांधी का ही सितारा चमकेगा।"

मथुरा

३० जनवरी राष्ट्रपिता गांधीजी की २४वीं पुण्यतिथि का कार्यक्रम शहीद-दिवस के रूप में मनाया गया। प्रात ६ बजे से प्रभात फेरी निकाली गयी, सफाई, सूत्र-यज्ञ, प्रार्थना तथा ११ बजे दो मिनट मौन रखकर शहीदों को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी।

रोहतक (हरियाणा)

३०-१-७२ को जिला सर्वोदय मण्डल की एक बैठक हुई जिसमें १५ लोकसेवक उपस्थित थे।

नये वर्ष के लिए सभा ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारियों का चुनाव किया। अध्यक्ष—श्री वियासागरजी, मन्त्री—चन्द्रप्रकाशजी, प्रचार मन्त्री—श्री रविदत्त तूफानी। सर्व सेवा संघ प्रतिनिधि—स्वामी मुरतानन्दजी तथा कोषाध्यक्ष—श्री विद्यासागरजी ही रहेंगे।

सात व्यक्तियों द्वारा इस अवसर पर २१.५० रुपये का सम्पत्तिदान मिला।

रतलाम

ग्रामदानी गांव विरमावल जि० रतलाम में ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री तुलसी रामजी पटेल, की अध्यक्षता में गांधी-पुण्य-तिथि के दिन प्रार्थना-सभा का आयोजन किया गया जिसमें सामूहिक सर्वधर्म प्रार्थना तथा राष्ट्रपिता को मौन श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी।

जोधपुर

स्थानीय गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के तत्वावधान में बापू बलिदान दिवस के अवसर पर शहर के भीतर और बाहर शान्तिकूच का आयोजन किया गया, जिसमें कई राजनैतिक पार्टियों तथा छात्र-संगठनों के करीब तीन सौ लोग सम्मिलित हुए। शान्ति-यात्री अपने हाथों में तख्तियां लिये थे, उन पर लोकतंत्र की सफलता के लिए शान्तिमय आचरण, राष्ट्रीय एकता के लिए जातीय व सांप्रदायिक सद्भाव, स्थायी शान्ति के लिए शोषण व असमानता की समाप्ति, विश्व-शान्ति व विश्व-बन्धुत्व आदि विचारों के समर्थन में सूक्तियाँ अंकित थी। शान्ति-कूच के समापन पर सामूहिक सर्वधर्म प्रार्थना-सभा आयोजित की गयी।

दुर्ग

दुर्ग (म० प्र०) के सर्वोदय कार्य-कर्ताओं का दिनांक २९-३० जनवरी '७२ को गुरुर ब्लाक के पेंवरी ग्राम में सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें ४० कार्य-कर्ताओं के अलावा ४०० लोगों ने भी भाग लिया।

सम्मेलन के प्रथम दिन ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए ग्रामदान का विचार लोगों को समझाया गया तथा प्रार्थना के साथ अन्तिम कार्रवाई समाप्त हुई।

दि० ३० को पू० बापू की पुण्य-तिथि के दिन प्रातः शान्ति जुलूस, सामूहिक प्रार्थना, ग्राम-सफाई का कार्यक्रम हुआ। ११ बजे पू० गांधीजी को मौन प्रार्थना द्वारा श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी और जनता को सर्वोदय मण्डल द्वारा चल रहे शान्ति के कार्यों की जानकारी दी गयी।

जमशेदपुर

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र में सिंह-भूम जिला सर्वोदय मंडल एवं गांधी शान्ति प्रतिष्ठान की ओर से गत ३० जनवरी को निर्माण दिवस के सिलसिले में एक सभा आयोजित की गयी। श्री चौधरी की अध्यक्षता में एक आम सभा हुई, जिसमें लोगों ने गांधीजी के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। इस अवसर पर सूत्र-यज्ञ तथा मौन प्रार्थना भी की गयी।

असम

रामपुर आंचलिक ग्रामदान संघ ने शान्ति दिवस रंगिया, और कुमारीकटा में मनाया। प्रभात फेरी और प्रार्थना के समय सूत्र-यज्ञ और कताई-प्रतियोगिता का कार्यक्रम रखा गया।

डोलकुची, देवनकुची, मारगमारा और मान्दुलीपारा में पुराने अम्बर चरखे तथा नये माडल चरखे पर कताई-प्रतियोगिता की गयी। इनमें प्रथम और द्वितीय स्थान प्राप्त करनेवालों की अंतिम प्रतियोगिता रंगिया महात्मा गांधी मण्डप में हुई।

ग्रामदान संघ के सम्पादक श्री देवेश्वर डेका ने अधिक कताई करनेवालों को प्रमाण-पत्र तथा अन्य पुरस्कार दिया।

अन्त में महात्मा गांधी की मूर्ति पर सूताजंलि अर्पित की गयी और प्रार्थना के बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ।

दिल्ली

दिल्ली में ३० जनवरी को बापू निर्वाण दिवस श्रद्धापूर्वक मनाया गया। राजघाट समाधि पर प्रातः साढ़े सात बजे से १० बजे तक सर्वधर्म प्रार्थना तथा गीता-पाठ हुआ। प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी भी इस अवसर पर उपस्थित थीं। ११ बजे राष्ट्रपति श्री गिरि ने समाधि पर माल्यार्पण किया और शहीदों की स्मृति में दो मिनट का मौन रखा गया।

अपराह्न ३ बजे एक शान्ति-मार्च का आयोजन राजघाट अहिंसा विद्यालय की ओर से किया गया। (चित्र मुख पृष्ठ पर) शान्ति-मार्च में दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं के साथ ही दिल्ली के नागरिकों व कुछ विदेशी मित्रों ने भी भाग लिया। शान्ति-मार्च पुरानी दिल्ली-स्थित टाउनहाल से चलकर नगर के विभिन्न मार्गों से होता हुआ राजघाट पहुँचा, जहाँ पहुँचकर भाग लेनेवालों ने सामूहिक रूप से एक प्रतिज्ञा दोहरायी। प्रस्तुत चित्र इसी अवसर का है।●

राजघाट अहिंसा विद्यालय का वार्षिकोत्सव

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान द्वारा संचालित अहिंसा विद्यालय का वार्षिकोत्सव २९ जनवरी १९७२ को एक सादे समारोह में सम्पन्न हुआ। विश्वविद्यालय और स्कूलों के छात्रों तक गांधी विचार पहुँचाने व उन्हें देश की रचनात्मक प्रवृत्तियों से जोड़कर, उनकी जिम्मेदारी का सही भान कराने के लिए स्थापित किया गया यह अहिंसा विद्यालय इस एक वर्ष की अल्पावधि में पर्याप्त लोकप्रियता हासिल कर चुका है।

वार्षिकोत्सव में विश्वविद्यालय के शिक्षक, छात्र-छात्राएँ व विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता उपस्थित थे। मुख्य अतिथि श्री डॉ० एस० कोठारी ने अहिंसा विचार की वैज्ञानिक व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया कि मानव इतिहास दरअसल प्रेम व सहयोग का इतिहास है। बीच-बीच में उठनेवाली घृणा और उससे पैदा हुए युद्ध इस मूलधारा से हटे हुए उदाहरण ही हैं। उन्होंने दिल्ली के छात्रों को सुझाव दिया कि वे अपने इलाके की गन्दी बस्तियों में काम करना शुरू करें और इस तरह अन्त्योदय के काम में अपना मूल्यवान योगदान दें।

उत्सव में छात्र-छात्राओं ने अहिंसा विद्यालय से जुड़ने के बाद अपने अनुभवों को बताया। लगभग सभी ने स्वीकार किया कि जिन समस्याओं के प्रति वे स्वयं को बिलकुल भी जिम्मेदार महसूस नहीं करते थे आज विद्यालय से जुड़ने के बाद उन्हीं समस्याओं के समाधान में लगना चाहते हैं।

अहिंसा विद्यालय ने इस एक वर्ष की अवधि में अनेक सप्ताहान्त विचार शिविर के अलावा बंगला देश शरणार्थियों के बीच एक राहत शिविर का भी आयोजन किया।

अहिंसा विद्यालय के निदेशक श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त ने विद्यालय के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा कि आणविक शस्त्रों की तरफ तेजी से दौड़ रही दुनिया में आज गांधी विचार अपरिहार्य है। गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण ने महानगरीय सभ्यता के बीच ऐसे विद्यालय की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि रचनात्मक कार्यों में लगे लोगों को इसकी तरफ पर्याप्त समय व ध्यान देना चाहिए।

पर्वतीय अंचल में डाक्टरों का दल

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के तत्त्वावधान में गठित स्वयंसेवी कार्य विभाग उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र पुरोला विकास खण्ड में डाक्टरों का एक दल भेजनेवाला है।

उत्तरकाशी जिले का यह पुरोला विकास खण्ड यमुना और टोंस नदियों की घाटियों में स्थित है। उसके १९२ गांवों में से १४१ गांवों का ग्रामदान हो चुका है। बहुपति प्रथावाले इस क्षेत्र में यौन रोगों का बाहुल्य है। लगभग दो वर्ष पूर्व श्री जयप्रकाश नारायण ने उस क्षेत्र की यात्रा के बाद इस समस्या के प्रति समाज-सेवी संस्थाओं का ध्यान आकर्षित किया था।

नवगठित स्वयंसेवी कार्य विभाग की इस योजना के अनुसार इस वर्ष की गर्मी की छुट्टियों में डाक्टरी के १० छात्र व दो डाक्टरों का एक दल इस क्षेत्र में इस रोग से लड़ने का प्रयत्न करेगा। इलाज में प्रयुक्त होनेवाली दवाइयों की व्यवस्था अन्य समाजसेवी संस्थाओं की मदद से की जा रही है।

ग्रामसेवा मण्डल कोट

ग्रामसेवा मण्डल, कोट जिला अम्बाला (हरियाणा) ने निम्न प्रकार सहायता कार्य किया।

१—बंगला देश शरणार्थियों की सहायता के तौर पर कपड़े व रेडीमेड, कलकत्ता भेजे गये, मूल्य ४५९ रुपये।

२ भारत सैनिकों के लिए ऊनी स्वेटर २१२ रु० का।

३—भारत रक्षाकोष में मदद दिया गया रु १०१।

इस प्रकार कुल ८७२.०० रु०।

भूदान-यज्ञ १४-२-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

मुसहरी की पदयात्रा—(१)

—एक गाँव की ग्रामस्वराज्य-सभा ने पड़ोसी गाँव में आग लगने पर उसे ५६ रुपये की सहायता दी।

—एक ग्रामस्वराज्य-सभा ने अपने गाँव में जुआ बन्द कर दिया।

—एक छोटा गाँव संगठित होकर बाहरी दमन का मुकाबिला कर रहा है।

—एक ग्रामस्वराज्य-सभा ने पिछले कुछ महीनों में तीन बार निष्क्रिय पदाधिकारियों को बदला।

—एक ग्रामस्वराज्य-सभा की नियमित बैठक हर पूर्णिमा को होती है। उसने दस साल से चल रहे मुकदमे को आपसी चर्चा से हल कर डाला है।

—एक सभा ने वस्त्र-स्वावलम्बन और उपभोक्ता भण्डार की माँग की है।

—एक सभा ने शान्ति-केन्द्र बनाया है।

—एक सभा में मालिकों और मजदूरों में विवाद था। श्रम अधिकारी के सामने दरख्वास्त गयी। लेकिन दोनों ने मिलकर काम के घण्टे और मजदूरी तय कर ली।

—एक गाँव में शिकायत हुई कि डीलर मिट्टी का तेल ठीक-ठीक नहीं दे रहा है। ग्रामस्वराज्य-सभा की बैठक हुई। सभा की ओर से एक कार्ड छपवाया और बाँटा गया ताकि पता चल सके कि किसको कितना तेल मिला। कार्ड का नमूना निम्न प्रकार है :

कार्ड नं० ३६९

किरासन तेल

डीलर का नाम—फकीरा साह

ग्रामसभा सुस्ता, मुजफ्फरपुर

नाम ···· · ···

ग्राम ···········पो० ·····

अध्यक्ष

—एक ग्रामस्वराज्य-सभा बेरोजगारों को रोजगार देने की योजना बनाना चाहती है। सवाल बहुत टेढ़ा है। सोच नहीं पा रही है कि वह क्या करे, कैसे शुरू करे?

—मार्च में चुनाव है। मुसहरी की प्रखण्ड स्वराज्य-सभा की कार्य-समिति ने चुनाव के लिए एक कार्य-योजना बनायी है जो छापकर गाँव-गाँव की ग्रामस्वराज्य-सभाओं में भेजी जा रही है। स्वयं प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा अपने क्षेत्र में सभी उम्मीदवारों को संयुक्त मंच के लिए आमंत्रित करेगी, जहाँ एक साथ आकर वे जनता को समझायेंगे कि विधानसभा में जाकर क्या करेंगे। गाँवों की ग्रामस्वराज्य-सभाएँ अपने-अपने क्षेत्र में ग्राम-शान्तिसेना की मदद से यह देखेंगी कि लोग निडर होकर मतदान कर सकें। चुनाव की कन्वेंसिंग आदि में कोई ऐसा काम न हो जिससे गाँव की एकता टूटे और लोग जाति या दल के नाम पर एक-दूसरे के दुश्मन न बन जायें।

ये कुछ उदाहरण हैं—करुणा के, सहकार के। करुणा और सहकार के स्रोत लगभग सूख गये हैं। उन्हें फिर खोलना ग्रामदान का पहला काम है। इस भूमिका के बन जाने के बाद दूसरे काम आसान हो जाते हैं।

लेकिन भावना ही सब कुछ नहीं है। समाज-परिवर्तन एक अत्यन्त कठिन और पेचीदी प्रक्रिया है। —राममूर्ति

अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन

सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने सूचित किया है कि अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन आगामी २८ से ३० अप्रैल १९७२ को नूरमहल (जिला-जालंधर), पंजाब में होगा। इसके पूर्व २५, २६, २७ अप्रैल को उसी स्थान पर सर्व सेवा संघ का वार्षिक अधिवेशन भी आयोजित किया गया है।

जयप्रकाशजी का स्वास्थ्य

एक प्राप्त जानकारी के अनुसार श्री जयप्रकाशजी की कमजोरी दूर नहीं हो रही है। इण्डियन स्कूल ऑव ट्रापिकल मेडिसिन के चिकित्सकों ने उनकी रिपोर्ट देखी है। १४ फरवरी को वह हवाई जहाज से विस्तृत जाँच के लिए पटना से दिल्ली जा रहे हैं।

श्रीमती पूरबाई का देहान्त

ता० २९-१२-'७१ को कलकत्ते में श्रीमती पूरबाई का देहान्त हो गया। उनकी उम्र करीब सौ साल थी।

पू० बापूजी के आदेशानुसार उन्होंने गुजरात से आकर निःस्पृह भाव से उड़ीसा की सेवा की। हम सर्वोदय परिवार की ओर से उन्हें श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग,
राजघाट, वाराणसी-
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४२
सम्पादक
राममूर्ति
सर्वोदय
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
भूदान-यज्ञ

बापू के कदमों पर

१९३० के सत्याग्रह के समय बापू को कराड़ी नामक स्थान पर सरकार ने गिरफ्तार कर लिया, उसके बाद बा ने भरसक बापू का काम हाथ में ले लिया। वे गाँव-गाँव घूमने लगी। लेकिन काम के बोझ और दौड़धूप के कारण उनकी तबीयत बिगड़ गयी। इसलिए बा-श्री नरहरि परीख की पुत्री श्री वनमालाबहन के साथ मरोली आश्रम में आराम करने के लिए चली गयी।

एक दिन सुबह ही प्रार्थना करने के बाद सब लोग नाश्ता करने बैठे थे। इतने में डाकिया आकर तार दे गया। तार में लिखा था ?

"हमें कस्तूरबा के साथ की जरूरत है।"

बा तार के भीतर के गहरे अर्थ को समझ गयीं और नाश्ता छोड़कर जल्दी-जल्दी जाने की तैयारी करने लगीं।

तार बोरसद गाँव से आया था। वहाँ किसानों को जमीन-महसूल न भरने की सलाह देनेवाली कुछ बहनों पर सरकार ने लाठी चलायी थी। इससे सारे गाँव में हाहाकार मच गया था। अनेक बहनें घायल होकर अस्पताल में पड़ी थीं। इन्हीं बहनों ने बा को तार करके बुलाया था, ताकि बा गाँववालों को हिम्मत बँधा सकें। बा की इस उतावली को देखकर वनमालाबहन घबरा उठीं। बोरसद जाने से बा की तबीयत ज्यादा बिगड़ जायगी, ऐसी चिन्ता के कारण उन्होंने बा से कहा : "बा, आप यह क्या करती हैं ? आप में ताकत है वहाँ जाने की ? शरीर में खून की एक बूँद भी तो नहीं रही है। इसलिए न डाक्टरों ने आपको आराम लेने की सलाह दी है ? आपके बदले में बोरसद जाती हूँ। भगवान के नाम पर आप यहीं रहें।" किन्तु कम्बल और दूसरी जरूरी चीजें झोले में रखते हुए बा ने कहा : "पुलिस की लाठियाँ बहादुरी से झेलनेवाली बहनों के पास मुझे पहुँचना ही चाहिए। बापू होते तो इस समय वे बहनों के पास खड़े होते। लेकिन वे तो जेल में बन्द हैं।" इतना कहकर बा बोरसद की गाड़ी पकड़ने के लिए तेजी से स्टेशन की ओर चल पड़ीं।

बोरसद पहुँचकर बा ने अस्पताल में घायल बहनों को हिम्मत बँधाई और ग्रामवासियों से मिलकर गाँव पर छाये हुए डर और घबराहट को भी दूर किया। अपनी कमजोर तबीयत की रत्ती-भर परवाह न करके वे सुबह से शाम तक खड़े पाँव काम करने लगीं। इससे

माता कस्तूरबा

उनकी तबीयत और बिगड़ गयी। नड़ियाद से डाक्टर आये। उन्होंने आराम करने पर खूब जोर दिया और बा को चेताया। "बा, आप हमारा कहना न मानेंगी तो आपकी तबीयत ज्यादा बिगड़ेगी और उसका परिणाम बुरा होगा।"

डाक्टरों की बात सुनकर बा ने कहा, 'लेकिन मुझे तो ऐसा बिलकुल नहीं लगता। मैं सिर्फ बापू के कदमों पर ही चल रही हूँ। बापू की अनुपस्थिति में मुझे काम करने का यह अवसर मिला है। आराम करना तो मेरे लिए असम्भव है।"

डाक्टर बेचारे क्या करते ? निराश होकर लौट गये। बा अपने काम में जुट गयीं।

बापू की इच्छा ही बा की इच्छा

१९४२ की नवीं अगस्त को बड़े सबेरे ही अचानक बापू को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस अधिकारी आ धमके। वे बापू को, महादेव भाई को और मीराबहन को पकड़ने के लिए आये थे। लेकिन उन्होंने कहा कि कस्तूरबा आना चाहें तो वे भी गांधीजी के साथ आ सकती हैं।

बा की ओर देखकर बापू ने कहा : "तू न रह सके तो चल। लेकिन मैं तो यही चाहता हूँ कि मेरे साथ चलने की अपेक्षा तू बाहर रहकर मेरा काम कर।"

इतना कहना बा के लिए पर्याप्त था। उन्होंने बिना किसी विवाद के बापू का काम करने का निश्चय कर लिया। ●

प्रस्तुत अंक

इस अंक में हम कस्तूरबा को स्मरण कर रहे हैं। लेकिन उनके निमित्त से हम स्त्री-पुरुष-सम्बन्धों की पूरी समस्या की ओर अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। यह समस्या मालिक-मजदूर की समस्या से कम जरूरी और जटिल नहीं है। हम चाहे या न चाहे परिवार में और समाज में, हममें से हर एक के जीवन में, यह समस्या सामने खड़ी है, और उसे छोड़कर आगे बढ़ना कठिन है। कस्तूरबा और गांधीजी ने अपने ढंग से अपने लिए यह समस्या हल कर ली थी। हम अपने लिए, और अपने समाज के लिए, कैसे हल करेंगे ? समस्या की प्रतीति हो जाय और दिमाग चलने लगे तो समाधान की शुरुआत हो जायगी। इसी आशा में कुछ सामग्री यहाँ प्रस्तुत है।

सम्पादकीय

पुरुष और स्त्री : समता और साझेदारी

"यदि पुरुष मनुष्य है, तो स्त्रियाँ भी मनुष्य ही हैं।" यह वाक्य एक विदेशी महिला का है, जिसे एक सुप्रसिद्ध ब्रिटिश साप्ताहिक ने बीते वर्ष की चुनी हुई उक्तियों में स्थान दिया है।

क्या खास बात है इस सीधे-सादे वाक्य में ? शायद यही कि इसमें आज के स्त्री-आन्दोलन की सम्पूर्ण प्रेरणा समायी हुई है। स्त्री स्त्री होने के नाते अब अपनी हीनता स्वीकार करने को तैयार नहीं है। वह पूछती है कि अगर पुरुष मनुष्य है तो क्या स्त्री, मात्र स्त्री होने के कारण कम मनुष्य है ? शरीर की रचना के भेद को वह समता में बाधक नहीं मानती।

जो स्त्रियाँ सहज भाव से ये बातें कह रही हैं क्या वे नहीं जानतीं कि वे पुरुषों से सचमुच एक लम्बे अतीत को भूल जाने को कह रही हैं ? हजारों वर्षों में जो सभ्यता बनी है उसे अस्वीकार करने को कह रही हैं ? जिन मूल्यों और परम्पराओं को हमने पूर्वजों से विरासत में पाया है उन्होंने हमें यही सिखाया है कि पुरुष—पुरुष है और स्त्री—स्त्री। स्त्री पत्नी है, माँ है, देवी है, सब कुछ है, पर उसका सब कुछ पुरुष है। आँगन में स्त्री गृहस्वामिनी भले ही हो, किन्तु पुरुष आँगन और स्त्री दोनों का स्वामी है।

भारत की आँखों से देखने पर लगता है कि पश्चिम की दुनिया बदल गयी है, और वहाँ की स्त्री का स्त्रीत्व उसके मनुष्य होने में बाधक नहीं है। उसे प्रेम की छूट है; विवाह करने, न करने, और करके भी तोड़ने की छूट है, उसकी अपनी कमाई है और उसका अपना वोट है। लगता है कि वह पुरुष है, लेकिन क्या सचमुच ?

भारत में वोट तो है, लेकिन वोट की उसे प्रतीति नहीं है। कानून में तलाक की छूट और पिता की सम्पत्ति में हिस्सा है, किन्तु समाज में मान्य नहीं है। और ये सब छूटें निरर्थक हो जाती हैं जब स्त्री देखती है कि न उसका अपने प्रेम पर अधिकार है, और न उसकी अपनी स्वतंत्र जीविका है। 'दान' में किसी अपरिचित को दी जानेवाली कन्या और रोटी के लिए पति पर आश्रित पत्नी - इसकी भी कोई स्वतन्त्र सत्ता हो सकती है ?

कुछ भी हो भारत में स्त्री मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री हो सकती है जिसकी पश्चिम के किसी देश में आज भी कल्पना नहीं की जा सकती। दुनिया में इस वक्त तीन स्त्री प्रधानमंत्री हैं, तीनों एशिया में हैं। पश्चिम के पुरुषों को यह भरोसा नहीं है कि स्त्री देश को भी सम्भाल सकती है। स्त्री की योग्यता और सामर्थ्य के बारे में शंका किसी-न-किसी रूप में हर जगह मौजूद है—पूँजीवादी देशों में साम्यवादी देशों से अधिक।

भारत ही नहीं, दुनिया के अनेक देशों में जीवन के विविध क्षेत्रों में स्त्री ने अपनी श्रेष्ठता का परिचय दिया है, और पुरुष ने उसे स्वीकार भी किया है, किन्तु सामान्य दृष्टि सदा से यही रही है कि स्त्री पुरुष के सुख और सेवा के लिए है। उसे स्त्री और माँ बनना है, इसी में उसके जीवन की सार्थकता है। 'चिल्ड्रेन' और 'किचेन' उसके विशिष्ट क्षेत्र हैं। पुरुष उसे खिलाता है, सजाता है, अपने सुख और समाधान के लिए वह उसका 'स्वामी' है। स्त्री उसकी है, अपनी नहीं।

स्त्री उसकी नहीं, अपनी है—इसी की आज की दुनिया में स्त्री की ओर से माँग है।

स्त्री 'अपनी' है, यानी क्या है ? वह अपनी होकर क्या करना चाहती है ? क्या उसके पास जीवन की कोई 'डिजाइन' है जो पुरुषों की दी हुई डिजाइन से भिन्न हो और जिसमें स्त्री अपनी होकर जी सके ? अगर पुरुष को रिझाना और उसके हाथ का खिलौना बना रहना ही स्त्री के जीवन की प्रेरणा है, और आगे भी यही प्रेरणा बनी रहनेवाली हो, तो स्त्री की समता और स्वतन्त्रता का अर्थ क्या होगा ? फिर उसके व्यक्तित्व का क्या स्वरूप होगा ?

विज्ञान के यन्त्र स्त्री को 'किचेन' से मुक्त कर सकते हैं, कृत्रिम साधन उसे 'चिल्ड्रेन' से भी मुक्त कर सकते हैं, काम की योजनाएँ उसे स्वतन्त्र जीविका दे सकती हैं, और कानून उसे नागरिक अधिकार दे सकता है, लेकिन उसे भोग की वस्तु बनी रहने की लिप्सा से दूसरा कौन मुक्त कर सकता है ? अगर स्त्री स्वयं अपने व्यक्तित्व को नहीं पहचानती है तो उसकी स्वायत्तता और उसके आत्म-निर्णय के अधिकार का आधार क्या होगा ? वह पुरुष से भिन्न अपना मार्ग अपने हाथों में कैसे ले सकेगी ?

दुनिया की अनेक शक्तियों में स्त्री भी एक शक्ति है—अत्यन्त प्रबल शक्ति। इसमें सन्देह नहीं कि श्रम-शक्ति की तरह स्त्री-शक्ति का भी अथाह दमन और शोषण हुआ है। इसलिए उचित है कि लिंग के कारण होनेवाले पुरुष-स्त्री के भेद का अन्त हो। लेकिन आधुनिक स्त्री का प्रतिकार स्त्री-पुरुष समस्या का अन्तिम समाधान नहीं है। दोनों के बीच सहकार की जरूरत है—जीवन की सुखद साझेदारी के लिए। शायद प्रकृति की योजना में पुरुष को स्त्री की और स्त्री को पुरुष की जरूरत है। उसमें मित्रता, सेक्स सम्बन्ध, विवाह, संतति, सभी के लिए स्थान है। पारम्परिक विवाह हो या आधुनिक मुक्त प्रेम, या चाहे और कुछ हो, जिन प्रथाओं और पद्धतियों द्वारा स्त्री-पुरुष ने एक दूसरे को आज तक स्वीकार किया है, वे ढीली पड़ चुकी हैं। उनके स्थान पर नये चिन्तन और नयी व्यवस्था की जरूरत है। साझेदारी और पारस्परिकता के सन्दर्भ में प्रकृति के प्रयोजनों का क्या नया स्वरूप होगा, और किस प्रकार जीवन में उनकी सिद्धि होगी, इस प्रश्न पर उन पुरुषों को विचार करना है जो पुरुष होने का अहंकार छोड़ चुके हैं, और उन सब स्त्रियों को करना है जो स्त्री होने की हीनता छोड़ चुकी हैं। साझेदारी में से समता सामाजिक बनती है, नहीं तो वह विद्रोह का नारा मात्र बनकर रह जाती है, विधायक नहीं हो पाती। ■

स्त्रियों की सर्वोच्चता स्वीकार की जाय

"स्त्री कौन है, इसका किसी ने विचार किया है ? वह साक्षात् देवी है। अर्थात् वह त्याग की मूर्ति है। स्त्रियों में ऐसी अद्‌भुत शक्ति है कि अगर वे काम करने का निश्चय कर लें और उसे लगन से करें, तो वे किसी पहाड़ को भी हिला देने की ताकत रखती हैं। इतनी शक्ति उनमें भरी है। स्त्रियाँ पुरुषों की गुलाम-दासियाँ नहीं हैं, परन्तु उनकी अर्धांगिनियाँ, सहधर्मिणियाँ हैं। इसलिए पुरुषों को चाहिए कि वे स्त्रियों को अपनी मित्र समझें। स्त्री को अबला कहकर हम उस देवी का अपमान करते हैं।

"...हमारे पूर्वजों ने धार्मिक विधि के साथ देवियों की सेवा और पूजा करने की जो प्रथा हमारे दैनिक जीवन में दाखिल की है, उसके मूल में यही रहस्य भरा है कि स्त्रियों को समाज में ऊँचा स्थान दिया जाय। स्त्रियों का आत्मत्याग तो देखो। अपने बालक को पाल-पोसकर बड़ा करने के लिए कोई स्त्री कितनी मुसीबतें उठाती है। नैतिक साहस में तो स्त्रियाँ पुरुषों से अनेक प्रकार से आगे बढ़ जाती हैं। स्त्री अहिंसा, धैर्य, सहनशीलता *और धर्म की साक्षात् मूर्ति है। लेकिन आज क्या स्थिति है ?* आज तो हम ऐसी देवियों की हत्या करते हैं, ऐसी देवियों की लाज लूटते हैं। यह सब कौन से धर्मशास्त्र में लिखा है, यह तो कोई मुझे बताओ ? लेकिन याद रखना कि जिस घर में, जिस समाज में और जिस देश में स्त्रियों का सम्मान नहीं होगा, वह घर, वह समाज और वह देश निश्चित रूप से नष्ट हो जायगा।"

"सफर में स्त्रियों की सभाएँ तो होती ही हैं। इसलिए नित नये अनुभव मिलते ही रहते हैं। यह देखता हूँ कि स्वराज्य की कुंजी स्त्रियों के पास है, परन्तु उन्हें जाग्रत कौन करे ? अशक्त स्त्रियाँ निरुद्यमी हैं, उन्हें कौन उद्यमी बनाये ? माताएँ बचपन से ही अपने बालकों को बिगाड़ती हैं, उन्हें कौन रोके ? बालकों को गहनों और अनेक प्रकार के कपड़ों से लाद देती हैं, छोटी-छोटी बालिकाओं को ब्याह देती हैं, बालिकाएँ बड़ों को ब्याह दी जाती हैं। स्त्रियों के गहने देखकर तो मैं हैरान हो जाता हूँ। उन्हें कौन समझाये कि गहनों में सौन्दर्य नहीं, सौन्दर्य तो हृदय में है ? ऐसी तो कई बातें मैं लिख सकता हूँ, मगर उसका उपाय क्या ? उपाय तो स्त्रियों में से कोई द्रौपदी जैसी उग्र तेजवाली निकल पड़े तभी हो।" (मार्च १९, '२२)

"स्त्री पुरुष की सहचरी है। उसकी मानसिक शक्तियाँ पुरुष से जरा भी कम नहीं हैं। उसे पुरुष के हरएक काम में हाथ बटाने का हक है और आजादी का उसे उतना ही अधिकार है, जितना पुरुष को। अपने क्षेत्र में उसकी सर्वोच्चता उसी प्रकार स्वीकार की जानी चाहिए, जिस प्रकार पुरुष की उसके क्षेत्र में।"

"स्त्री और पुरुष का दरजा समान है, पर वे एक नहीं हैं। वे ऐसी अनुपम जोड़ी हैं, जिसमें प्रत्येक दूसरे का पूरक है। वे एक दूसरे के लिए आश्रयरूप हैं—यहाँ तक कि एक के बिना दूसरे की हस्ती की कल्पना ही नहीं की जा सकती। इन तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस बात में दोनों में से एक का भी दरजा घटेगा, उससे दोनों की बराबर बरबादी होगी।"

"मेरा आदर्श यह है कि पुरुष पुरुष रहते हुए स्त्री बने और स्त्री स्त्री रहते हुए पुरुष बने। पुरुष के स्त्री बनने के अर्थ है कि वह स्त्री की नम्रता व विवेक सीखे और स्त्री के पुरुष बनने का मतलब यह है कि वह अपनी भीरुता छोड़कर हिम्मतवाली और बहादुर बन जाय।"

"स्त्रियों का उद्धार स्त्रियाँ ही कर सकती हैं। इसके लिए तपस्या की जरूरत है। यह बात सच है कि पुरुषों से स्त्रियों में ज्यादा तपस्या है मगर तपस्या ज्ञानपूर्वक होनी चाहिए। ...स्त्री की कोई भी रक्षा करनेवाला नहीं है। वह खुद ही अपनी रक्षा कर सकती है।"

"यह प्रश्न कई बार पूछा जाता है कि स्त्रियाँ अपने सतीत्व की रक्षा कैसे करें। और स्त्रियों को यह भी सुझाया जाता है कि वे खंजर रखें। अगर स्त्रियाँ खंजर रखने लगेंगी, तो वह खंजर उन्हीं के विरुद्ध काम आयेगा। खंजर काम में लेने के लिए तो बहुत कठोरता चाहिए। खंजर इस्तेमाल करने के लिए हमें सारा सामाजिक जीवन बदलना चाहिए। जिस आदमी ने कभी खून न देखा हो, खून निकाला न हो, वह खंजर इस्तेमाल नहीं कर सकता। खंजर काम में लेने के लिए शिकार करना चाहिए, बकरे ही काटने चाहिए। किसी के शरीर में खंजर भोंकने के लिए हृदय को इतना कठोर बनाना चाहिए।

इसलिए स्त्रियों को खंजर इस्तेमाल करना सिखाने के बजाय यह शिक्षा देना चाहिए कि तुम्हें डर किसका है ? तुम पर सदा ही ईश्वर का हाथ है। अगर हम सचमुच दिल से मानते हों कि ईश्वर है, तो हमें डर किसका रहे ? कैसा ही दुष्ट मनुष्य तुम पर हमला करने आये, तुम रामनाम लेना। बहुत से दुष्ट मनुष्य तो इस प्रकार से ही भाग जायेंगे। मगर कदाचित् ऐसा न भी हो *तो क्या ? उस समय हमें मर मिटना चाहिए।* बच्चा मरने को पड़ा हो, तो हम अन्त तक उसके पीछे मर मिटते हैं न ? और, खूब सेवा करने पर भी बच्चा गोद में मर जाय, तो माता को सन्तोष रहता है कि मुझसे जितना हो सका किया। प्राण देने की पूरी तैयारी रखना ही हमारा धर्म है। कितना ही दुष्ट मनुष्य हो, यदि हम मर मिटें लेकिन उसके अत्याचार के वश न हों, तो फिर वह दुष्ट मनुष्य भी क्या कर सकता है ? अनुभव तो यह है कि मरने को पूरी तैयारीवाले पवित्र मनुष्य के सामने कैसा भी दुष्ट मनुष्य हो अपनी दुष्टता छोड़ देता है। सत्याग्रह से दोहरा लाभ होता है। जो आदमी सत्याग्रह करता है, उसका तो भला होता ही है, मगर जिसके प्रति सत्याग्रह किया जाता है, उसका भी उससे भला होता है।" —महात्मा गांधी

नारी की दासता

—महादेवी वर्मा

स्त्री जिस प्रकार अपने हृदय को चूर-चूरकर पत्थर की देव-प्रतिमा बन सकती है यह देखना है तो हिन्दू गृहस्थ की दुधमुंही बालिका से करुणामयी युवती में परिवर्तित होती हुई विधवा को देखना चाहिए जो किसी अज्ञात व्यक्ति के लिए अपने हृदय को हृदय के समान ही प्रिय इच्छाएँ कुचल-कुचल कर निर्मूल कर देती है। सतीत्व और संयम के नाम पर अपने शरीर और मन को अमानुषिक यातनाओं के सहने का अभ्यस्त बना लेती है और इस पर भी दूसरों के अविश्वास के भय से आँखों में दो बूँद जल भी इच्छानुसार नहीं आने दे सकती है। अर्द्धांगिनी की विडम्बना का भार लिये सीता-सावित्री के अलौकिक तथा पवित्र आदर्श का भार अपने जीर्ण-शीर्ण स्त्रीत्व पर किसी प्रकार सम्भालकर क्रीत दासी के समान अपने मद्यप, दुराचारी तथा पशु से भी निकृष्ट स्वामी की परिचर्या में लगी हुई और उसके दुर्व्यवहार को सहकर भी देवताओं से जन्म-जन्मान्तर में उसी का साथ पाने का वरदान माँगनेवाली पत्नी को देखकर कौन आश्चर्य-अभिभूत न हो उठेगा? पिता के इंगित मात्र से अपने जीवन-प्रभात में देखे रंगीन स्वप्नों की विस्मृति से लेकर बिना एक दीर्घ निश्वास लिये अयोग्य से अयोग्य पुरुष का अनुगमन करने को प्रस्तुत पुत्री को देखकर किसका हृदय न भर आयेगा? पिता की अट्टालिका और वैभव से वंचित दरिद्र भगिनी को ऐश्वर्य का उपभोग करनेवाले भाई की कलाई पर सरल भाव से रक्षा-बन्धन बाँधते देख कौन विश्वास कर सकेगा कि ईर्ष्या भी मनुष्य का स्वाभाविक विकार है, और अनेक वाङ्मयहीन निर्जीव से पुत्रों, अनादर और उपेक्षा से आहत हृदय से उनके सुख के प्रयत्न में लगी हुई माता को देख कौन 'सर्वत्र दुर्गासा न भवति' कहनेवाले को स्त्री-स्वभाव के गम्भीर 'हृदय का अन्वेषक' न मान लेगा? परन्तु इतनी अधिक सहनशक्ति, ऐसा अप्रतिम त्याग और ऐसा अलौकिक साहस देखकर भी देखनेवाले के हृदय में यह प्रश्न उठे बिना नहीं रहता कि क्या ये विभूतियाँ उचित हैं? यदि सजीवता न हो, विवेक के चिह्न न हों तो इन गुणों का मूल्य ही क्या है?…

हिन्दू समाज ने उसे अपनी प्राचीन गौरवगाथा का प्रदर्शन-मात्र बनाकर रख छोड़ा है। और, वह भी मूक निरीह भाव से उसका वहन करती जा रही है। शताब्दियों पर शताब्दियाँ बीतती चली जा रही हैं, समय की लहरों में परिवर्तन पर परिवर्तन बहते आ रहे हैं, परिस्थितियाँ बदल रही हैं, परन्तु समाज केवल स्त्री को, जिसे उसने दासता के अतिरिक्त और कुछ देना नहीं सीखा, प्रलय की उथल-पुथल में भी शिला के समान स्थिर देखना चाहता है। ऐसी स्थिरता मृत्यु का श्रृंगार हो सकती है, जीवन का नहीं।…

समाज में उपार्जन का उत्तरदायित्व मिल जाने से पुरुष, एक प्रकार से पूँजीपतित्व को प्राप्त हो ही गया था, अधिक शक्ति होने के कारण अधिकार मिलना भी सहज प्राप्य हो गया। इसके अतिरिक्त शास्त्र तथा अन्य सामाजिक नियमों का निर्माता होने के कारण वह अपने आपको अधिक-से-अधिक स्वच्छन्द और स्त्री को कठिन से-कठिन बन्धन में रखने में समर्थ हो सका।

धीरे-धीरे अर्जन-अर्जन, स्त्री को बाँध रखने का सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक उपकरणों से बना हुआ पाश इतना पूर्ण और इतना सफलतापूर्वक सक्रिय हो उठा कि उसमें बँधकर स्त्री केवल सफल दासी के रूप में ही निखरने लगी थी।…प्रत्येक बालिका उत्पन्न होने के साथ ही अपने आपको ऐसे पराये घर की वस्तु मानने और बनने लगती है जिसमें न जाने की इच्छा करना भी उसके लिए पाप है। विवाह के व्यवसाय में उसकी स्थिति वास्तव बंधे हुए ढेले के समान है जो तुला को दोनों ओर समान रूप से गुरु कर देता है, कुछ उसके मानसिक विकास के लिए नहीं। उसकी योग्यता, उसकी भक्ति, पति के प्रदर्शन तथा गर्व की वस्तु है। 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' तक पहुँचाने का साधन नहीं, उसके कोमलता, करुणा, आज्ञाकारिता, पतिव्रता आदि गुण उस पुरुष को इच्छानुकूल बनाने के लिए आवश्यक हैं, संसार पर कल्याण-वर्षा के लिए नहीं। न स्त्री को अपने जीवन का कोई लक्ष्य बनाने का अधिकार है और न समाज द्वारा निर्धारित विधान के विरुद्ध कुछ कहने का। उसका जीवन पुरुष के मनोरंजन तथा उसकी वंशवृद्धि के लिए इस प्रकार चिर-निवेदित हो चुका है कि उसकी सम्मति पूछने की आवश्यकता भी किसी ने महसूस नहीं किया। वातावरण भी धीरे-धीरे उसे ऐसे ही मूक आज्ञा-पालन के लिए प्रस्तुत करता है। गृहिणी का कर्तव्य कम महत्त्वपूर्ण नहीं यदि वह साधिकार स्वेच्छा से स्वीकृत हो। जिस गृह को बचपन से उसका सत्य बनाकर आता है यदि उस पर उसे अन्न-वस्त्र पाने के अतिरिक्त कोई और भी अधिकार होता तथा जिस पुरुष के लिए उसका जीवन एकान्त रूप से निवेदित है, यदि उसके जीवन पर उसका भी कोई स्वत्व होता तो यह दासता स्पृहणीय मधुरता बन जाती। परन्तु जिस गृह के द्वार पर वो बिना गृहपति की आज्ञा पैर नहीं रख सकती, जिस पुरुष के घोर-से-घोर अन्याय, नीच-से-नीच आचरण के विरोध में दो शब्द कहना भी उसके लिए अपराध हो जाता है, उस गृह को बन्दी-गृह और पुरुष को कारारक्षक के अतिरिक्त वह और क्या समझे?

('जीने की कला' निबन्ध से)

स्त्रियों का मिशन : शान्ति-रक्षा, शील-रक्षा

—विनोबा

अभी की जो समाज-रचना है वह सर्वनाश की रचना है और उसे पुरुषों ने अपनी बुद्धि से बनायी है। पुरुष आज तक भय पर ही सारी रचना करते आये हैं, अभय पर नहीं। समाज-व्यवस्था के लिए पुरुषों ने मर्यादा बनायी और स्वयं ही तोड़ भी डाली। सारी दुनिया को आग लगाना वे जानते हैं। इसी कारण दो महायुद्ध हो चुके हैं और अब तीसरे का भय छाया हुआ है। इस स्थिति को सुधारने के लिए स्त्रियों को आगे आना चाहिए और समाज के रक्षण और नियंत्रण के अधिकार अपने हाथ में लेने चाहिए तभी सर्वोदय होगा। ऐसे सर्वोदय में स्त्रियों का स्थान होगा और वह पुरुषों के स्थान से अधिक होगा।

जब तक देश का संरक्षण सैन्य-शक्ति से होता है, अहिंसा से नहीं होता, तब तक पुरुषों का दर्जा ऊंचा ही रहनेवाला है। पुरुष उजड्ड होता है। स्त्रियों की शरीर-रचना ऐसी होती है कि उन्हें गर्भ-धारण करना पड़ता है, इसलिए स्वभावतः उनके लिए हिंसा कठिन है। अगर रक्षण का साधन हिंसा ही रहेगी तो पुरुष-प्रधान जीवन रहेगा ही। इसलिए मेरी मांग है कि समाज का संरक्षण अहिंसा-पद्धति से ही करने की शक्ति होनी चाहिए।

निर्भयता बन्दूक में नहीं

एक जमाना था जब यह माना गया था कि स्त्रियों का क्षेत्र घर है। आज भी वह घर उनके हाथ में रहेगा ही। परन्तु इन पच्चीस सालों के अन्दर पुरुषों ने दुनिया का इस तरह बन्दोबस्त किया है कि आज दुनिया बिलकुल हैरान, बेजार हो गयी है। स्त्री-पुरुष समानता के नाम पर ये लोग स्त्रियों के हाथ में भी बन्दूक देना चाहते हैं और स्त्रियों की पल्टनें खड़ी करना चाहते हैं, बजाय इसके कि स्त्रियों के हाथ में वह अंकुश आये जिससे कि वे पुरुषों को ऐसे कामों से परावृत्त कर सकें और अपने मातृत्व की शक्ति जीवन में ला सकें। दुनिया में यह निर्भयता के स्थान से चलता है और स्त्रियां भी समझती हैं कि शायद हमारे हाथ में बन्दूक आ जाय तो हम निर्भय बनेंगी। लेकिन निर्भयता का बन्दूक के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

हजार पिता से एक माता श्रेष्ठ

स्त्रियां स्वयं की समता की बात में फंसेंगी तो भयंकर होगा। स्त्री पुरुष की बराबरी में है, इससे ज्यादा अपमानजनक उक्ति दूसरी क्या हो सकती है। आज तो पश्चिम में स्त्रियों की पल्टनें भी होती हैं और स्त्रियां हाथ में बन्दूक लेकर कवायद भी करती हैं। परन्तु ऐसे भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। मनु की यह बात याद रखनी चाहिए कि एक हजार पिता से एक माता का गौरव अधिक है। अभी तो पुरुषों ने स्त्रियों को अत्याचार का साधन बना रखा है। मातृत्व का रूपान्तर व्यभिचार में हुआ है। हिंसा और व्यभिचार का मुकाबिला करने के लिए स्त्रियों को आगे आना चाहिए। मातृत्व ब्रह्मचर्य में होता है। इसलिए ब्रह्मचर्य की शक्ति का विकास स्त्रियों को करना चाहिए। तभी मातृत्व की गौरवता सिद्ध होगी और समाज की रक्षा होगी।

अगर मैं स्त्री होता, तो न जाने कितनी बगावत करता। मैं तो चाहता हूं कि स्त्रियों की तरफ से बगावत हो। लेकिन बगावत तो वह स्त्री करेगी, जो वैराग्य की मूर्ति होगी। वैराग्य-वृत्ति प्रकट होगी, तभी तो मातृत्व भी सिद्ध होगा। स्त्रियां स्वतन्त्रता चाहती हैं, तो उन्हें वासना के बहाव में बहना नहीं चाहिए।

स्त्रियों का अपना ढंग : करुणा

आज तक स्त्रियों को सार्वजनिक काम में खींचने की कोशिश हुई है, लेकिन वह पुरुषों के ढंग से काम करने की हुई, स्त्रियों के ढंग से नहीं। उनसे कहा गया कि चुनाव में आओ, सेना में आओ, राइट-लेफ्ट करो, सामने उड़नेवाला पक्षी दिखे तो उसे निशाना बनाकर अपनी कुशलता दिखाओ, जो मिलिटरी मैन की कुशलता मानी जाती है। मैं सोचता हूं कि पुरुषों के साथ स्त्रियां भी बन्दूक तानने का अभ्यास करें, इसमें पुरुषों की बराबरी करें तथा इस तरह खुद को समाज-कार्य में अग्रसर मानें तो वह कभी भी अग्रसर नहीं हो सकती। इससे वे 'पुच्छसर' ही होंगी, क्योंकि हिंसा के मार्ग में स्त्रियों के लिए पचासों बाधाएं उपस्थित होती हैं, जो पुरुषों के लिए नहीं होतीं। हिंसा-मार्ग में पुरुष आगे आ सकते हैं। लेकिन अहिंसा-मार्ग में स्त्रियां पुरुषों की बराबरी कर सकती हैं और आगे भी जा सकती हैं। इसलिए यह जरूरी है स्त्रियां आगे आयें और अपने ढंग से आगे आयें। स्त्रियों का ढंग है करुणा का ढंग।

अहिंसा स्त्री-शक्ति को जगाती है

गांधीजी की विशेषता यह थी कि उन्होंने स्त्री-शक्ति को जगाया। वे स्त्री-शक्ति को इसलिए जगा सके कि उनका कार्य अहिंसा का था। समाज में जब-तक सारा आधार हिंसा पर रहेगा तब-तक स्त्रियों का स्थान गौण रहेगा। एक झांसी-वाली रानी निकली थी। परन्तु वैसी ज्यादा नहीं निकलीं। अगर हमने यह माना कि हिंसा-शक्ति से समाज का बचाव होना चाहिए तो उस कार्य में पुरुषों का ही मुख्य स्थान रहेगा, स्त्रियों का गौण स्थान रहेगा। अहिंसा में स्त्रियों का बहुत ज्यादा प्रवेश है। गांधीजी ने सारे सामाजिक क्षेत्र में अहिंसा को मान्य किया। इसीलिए वे स्त्री-शक्ति को जगा सके। इसी तरह ग्रामदान में भी स्त्रियां बहुत काम कर सकती हैं। हमने बिहार में इसका अनुभव किया। पुरुष कार्यकर्ता

घर के अन्दर नहीं जा सकता, बाहर ही रहता है। इसलिए उसका कुल विचार बाहर ही रह जाता है। परन्तु वहाँ पर बहनों ने बहुत काम किया क्योंकि वे घर के अन्दर पहुँचती थीं।

करुणा का राज्य स्थापित करें

मैं चाहता हूँ कि भारत की स्त्रियाँ अपनी शक्ति का भान रखकर सामने आयें। इसके बाद स्त्रियों के हाथ में समाज का अंकुश आनेवाला है। इसके लिए स्त्रियों को तैयार होना पड़ेगा। स्त्रियाँ शान्ति-कार्य उठा लेंगी तो दुनिया बदल जायेगी और आज देश के और दुनिया के सामने जो मसले उपस्थित हैं उनसे मुक्ति होगी। पुरुषों से यह सब होनेवाला नहीं है। उनका दिमाग ठिकाने पर नहीं है। उन्हें कुछ सूझता नहीं है, सूझता है तो यही कि सेना बढ़ाओ। इस तरह इस विज्ञान-युग में जब कि पुरुषों की बुद्धि स्तम्भित हो गयी है उस समय अगर स्त्रियाँ काम में आती हैं और अपने दैवी गुणों के साथ, सहनशीलता के साथ, मातृ-शक्ति के साथ, सामने आती हैं तो करुणा का राज्य स्थापित कर सकती हैं।

शान्ति कायम करने के लिए मर मिटें

अब बहनों को थोड़ा बाहर निकलकर काम करना होगा। गाँव में झगड़ा होता है तो बाहर निकलकर कौन झगड़ता है? पुरुष। लेकिन अब बहनों में यह शक्ति और हिम्मत जगनी चाहिए कि जहाँ सुना कि झगड़ा हो रहा है वहाँ फौरन पहुँच जायें और बीच में पड़कर कहें कि हम तुम्हें झगड़ने नहीं देंगी। झगड़ा शान्त कराने में बहनें घायल भी हो जायें तो भी उसकी परवाह नहीं करनी है। मर-मिटने का मौका आये तो तैयार रहना होगा तभी बहनें अपना कर्तव्य पूरा कर सकती हैं। यह सब हिम्मत से होगा।

शान्तिसेना में सब बहनें समर्थ

एक जमाना था "जब खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी।" कहा जाता था। लेकिन रचनात्मक में तो एकाध बहनें ही जुट सकती हैं। मगर शान्तिसेना में हर बहन काम कर सकती है। इसमें करना ही क्या है? सिर्फ शान्ति से रहना है। गुस्सा करना हो तो भी कुछ करना पड़ता है—आँख फाड़नी पड़ती है—लेकिन यहाँ कुछ करना ही नहीं है। शान्ति से खड़ा रहना है। सभी बहनों का उपयोग शान्तिसेना में हो सकता है। लश्कर खड़ा करना हो तो बहनों का क्या उपयोग हो सकता है? उनके हृदय में दया-भाव होता है इसलिए वे सोचेंगी कि बेरहमी से कत्ल करने में हमारा क्या काम है? लेकिन शान्ति-सेना में बहनों का उपयोग भाइयों से ज्यादा हो सकता है।

वामपक्षी बनें

हमारे समाज की रचना पहले से ही ऐसी बनी है कि बाईं ओर स्त्रियाँ और दाहिनी ओर पुरुष रहते थे, आज हमारे समाज की स्थिति उल्टी हो गयी है। स्त्रियाँ पिछड़ गयी हैं और पुरुष आगे बढ़ गये हैं। अब पूछिये तो अब स्त्रियों को समाज को अपने हाथ में लेना चाहिए। उन्हें वामपक्षी होना चाहिए, और समाज को आगे ले जाना चाहिए।

सर्वोदय-पात्र में स्त्री-शक्ति लगे

अब जब मेरे सामने यह प्रश्न आया कि आखिर समाज-क्रान्ति को कौन साकार करेगा? तब मुझे यही मालूम पड़ा कि पुरुषों से दो कदम आगे बढ़कर स्त्रियाँ ही यह काम करें। स्त्रियों को यह काम किस तरह सौंपा जाय यही मैं सोच रहा था। मैं इसके लिए अहिंसक युक्ति की खोज में था—समाज पर कुछ-किंचित् आक्रमण न होकर अहिंसा से ही सारा काम हो जाय, यही सोचता था। अहिंसा को विकसित करना हो तो स्त्रियों को ही अवसर देना चाहिए, ऐसा लगता था। आखिर लोक-सम्मति दिखानेवाला सर्वोदय-पात्र मुझे सूझ पड़ा। तब ध्यान में आया कि स्त्री-शक्ति इसमें लगायी जा सकती है। पुरुषों के दिमाग में तो राजनीति के पत्थर भरे हैं, उन्हें निकाले बगैर काम नहीं हो सकता। इसलिए स्त्रियों को ही इस काम में आगे आना चाहिए। उनके मस्तिष्क में राज-नीति न होने के कारण उस समाज में कभी फूट नहीं पड़ सकती। उनमें धर्म-बुद्धि बनी हुई है। लोकमान्य तिलक सदा कहा करते थे कि हिन्दुस्तान में अगर किसी ने धर्म को बनाये रखा है तो स्त्रियों ने ही। ये दो अच्छी बातें स्त्रियों में होने के कारण वे ही यह काम करने योग्य हैं। इसलिए अगर इस काम में उनकी शक्ति का दान मिला तो बहुत बड़ी क्रान्ति हो सकती है।

अहल्या जागे

मानव के शरीर में तमोगुण होने के कारण बीच-बीच में उसे चालना या प्रेरणा देना जरूरी हो जाता है। आज तमोगुण से पत्थर बनी हुई कितनी अहल्याएँ समाज में पड़ी हैं। उन्हें एक बार प्रेरणाएँ दी जायें तो वे तत्काल उठकर काम में जुट जायेंगी। घड़ी को चौबीस घंटे में एक बार चाबी देनी पड़ती है। इसलिए बीच-बीच में उन्हें प्रेरणा देनी ही पड़ेगी। फिर भी स्त्रियों के हाथ में समाज सुरक्षित ही रहेगा। एक बार हाथ में लिया हुआ अच्छा काम वे छोड़ती ही नहीं। पुरुष अवश्य छोड़ देते हैं।

शान्ति की मूर्ति

यह सच है कि शान्ति की मूर्ति गढ़ी नहीं जा सकती, पर मान लें कि उसे गढ़ना ही है, तो वह स्त्री की मूर्ति ही हो

---

[1] मैं देहात की स्त्री को शहर की स्त्रियों की तुलना में ज्यादा स्वतन्त्र समझता हूँ। वे अपने दुष्प्रवृत्त पति के मुँह पर तमाचा मार देती हैं, ऐसा भी उदाहरण मैंने देखा है। पढ़ी-लिखी स्त्री का नहीं, निरक्षर का। पढ़ी-लिखी स्त्रियों को तो मैं अधिक दबी पाता हूँ। इसलिए नहीं कि वे पढ़ी-लिखी होती हैं, बल्कि वे आरामतलब होती हैं।

सकती है। काम, क्रोध, मद, मत्सर आदि विकार जैसे पुरुषों में होते हैं, वैसे ही स्त्रियों में भी हो सकते हैं। ममता, प्रेम आदि गुण स्त्रियों में हैं और पुरुषों में भी। इन बातों में कोई एक दूसरे से नीचा-ऊँचा हो, ऐसी बात नहीं। फिर भी शान्ति की मूर्ति स्त्री हो सकती है, क्योंकि वह मातृस्थान है। वह सारे समाज की तारिणी शक्ति है। जो तारिणी शक्ति होगी, वही शान्ति की मूर्ति हो सकती है।

शील मिटे तो देश मिटेगा

मैं चाहता हूँ कि सारे भारत की स्त्रियों को शान्ति-रक्षा और शील-रक्षा का काम करना चाहिए। इस समय भारत में चरित्र-भ्रंश का कितना आयोजन हो रहा है। उसका विरोध और प्रतिकार अगर बहनें नहीं करेंगी, तो फिर परमेश्वर ही भारत को बचाये, यही कहने की नौबत आयेगी। आज शहरों की दशा बड़ी खतरनाक है। पढ़ी-लिखी लड़कियाँ जहाँ रास्तों पर चलती हैं तो लड़के उनके पीछे लगते हैं, यह क्या बात है? यह जो शील-भ्रंश हो रहा है जिसमें गृहस्थाश्रम की प्रतिष्ठा ही गिर रही है, उसका विरोध करने के लिए बहनों को सामने आना चाहिए। माताओं को समझना चाहिए कि अगर देश का आधार शील पर नहीं रहा, तो देश टिक नहीं सकता। ●

सौदेबाजी

—शान्तिबाला

हैदराबाद से तीन लड़कियों को दिल्ली जाना है। फर्स्ट क्लास में यात्रा कर रही हैं। आपस में बातचीत कर रही हैं। अनेक प्रसंगों में एक प्रसंग का यहाँ देना प्रासंगिक मालूम होता है।

"जानती हो, प्रेमा एम० ए० है, पर इण्टर-फेल लड़के से विवाह कर रही है।"

"क्यों?"

"व्यापारी है, खूब कमाता है।"

"और इसका पूरा शास्त्र है, मेरे सामने भी एक प्रसंग ऐसा आया था, तब लड़की से बात करने पर उसने बताया कि—'एम० ए० हूँ, पी० एच० डी० भी हूँ, यह सही है। लेकिन अब इसी स्तर के लड़के से शादी करने का मतलब है कि घर-खर्च चलाने के लिए मुझे भी स्कूल की नौकरी करनी पड़ेगी, अर्थात् बनियों की खुशामद करनी पड़ेगी। उससे अच्छा है व्यापारी पति को ही स्वीकार करना।"

"बनियों की खुशामद?"

"अरे हाँ, बनियों की खुशामद। स्कूलों की मैनेजिंग कमिटी में और कौन होते हैं? क्या पढ़े-लिखे लोग होते हैं?"

यह है आधुनिक परिस्थिति, आधुनिक शिक्षा, और आधुनिक मानस का सजीव चित्र।

स्त्री-पुरुष सहजीवन के लिए स्वीकृत है विवाह का आवरण। उसके लिए शरीर, बुद्धि, मन के अनुबन्ध से भिन्न, प्राथमिकता है पैसे के अनुबन्ध की। दाम्पत्य की नींव मिलता नहीं, सौदेबाजी है। पति पत्नी के बीच भी सौदे की बुनियाद पर क्या प्रेम, विश्वास, और सम्पूर्णता की अपेक्षा रखी जा सकती है? व्यापार का सौदा राजनीति में आया, शिक्षा में आया, धर्म में आया और अब विवाह के माध्यम से परिवार में भी आ गया।

सौदेबाजी के चौराहे पर खड़ा व्यक्ति किंकर्तव्यविमूढ़ है। प्यार की भूख, सहयोग की तलाश और विश्वास की चाह उसे ले भागी सौदे के बाजार में। जाने-पहचाने सब दरवाजों को खटखटाकर निराश इनसान के अन्दर एक संकल्प उदित होता है—"अनजाने पथ पर भटकने का और इच्छित प्राप्त करने का।" आज उसकी अंतरात्मा से आवाज आ रही है,—जितना कुछ परिचित है, वह बधित है, सीमित है और जो असीम है—सुन्दर है, वह अन-पहचाना है। तो नयी राह, नयी दिशा, नयी शक्ति, और नयी चेतना के लिए अनजानी राह का राही बनने की हिम्मत करनेवाला ही मानवीय मूल्य पा सकेगा—प्रेम, विश्वास और मुक्ति पा सकेगा।

असीम के, मुक्ति के अनन्त पथ पर चलने के लिए हमें अपने को हल्का करना होगा। फिर वह बोझ चाहे धन-वैभव का हो, चाहे ज्ञान के भंडार का हो, चाहे मान-सम्मान का हो, और चाहे मान्यताओं, परम्पराओं का हो, सबसे मुक्त होकर ही मुक्ति-पथ पर प्रयाण सम्भव है।

पंजाब में ग्रामदान पुष्टि-अभियान

प्राप्त जानकारी के अनुसार ता० २१ से २८ जनवरी तक अबोहर (जिला—फिरोजपुर) पंजाब में आयोजित ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि अभियान के अन्तर्गत कार्यकर्ताओं की ९ टोलियों ने ४० गाँवों में ग्रामस्वराज का संदेश पहुँचाया। फलस्वरूप ७ गाँव ग्रामदान घोषित हुए और २१ एकड़ का भूदान भी मिला एवं ४० गाँवों में ग्रामसभाओं का गठन किया गया।

इस अभियान में पंजाब के स्थानीय कार्यकर्ताओं के अलावा दिल्ली के २ और महाराष्ट्र के ६ कार्यकर्ता भी शामिल थे।

स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में स्त्री की भूमिका

—दादा धर्माधिकारी

स्त्री-स्त्री की मैत्री

स्त्री को स्त्री से मोह या भय भले ही न हो, परन्तु क्या स्त्री को स्त्री से प्रेम होता है? क्या एक स्त्री दूसरी स्त्री के शरीर को प्रिय और पवित्र मानती है? अक्सर यह देखा गया है कि हमारे यहाँ परम्परा से अधिकांश स्त्रियाँ अपने और अन्य स्त्रियों के शरीर को भी अपवित्र मानती हैं। अपने शरीर की अपेक्षा वे पुरुष के शरीर को श्रेष्ठ मानती हैं। स्त्री-स्त्री शरीर को निकृष्ट मानती हैं। परिणाम यह है कि स्त्रियों में परस्पर मित्रता की भावना पुरुषों की अपेक्षा कम है। एक पुरुष अपने सारे परिवार को छोड़कर अपने मित्र के लिए जान दे देगा। बाइबिल में कहा है "इससे ज्यादा मुहब्बत एक शख्स में दूसरे के लिए क्या हो सकती है कि वह दोस्त के लिए अपनी जान कुर्बान कर दे।" स्त्री अपने पति के प्राणों के लिए अपने प्राण न्योछावर कर देगी, पुत्र के लिए भी अपने प्राणों को उत्सर्ग कर देगी। कभी-कभी पिता, भाई, बहन या कन्या के लिए भी अपनी बलि दे देगी। परन्तु एक स्त्री अपने सारे परिवार को छोड़कर एक सखी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे रही हो, ऐसी मिसाल इतिहास में शायद ही एकाध हो। इतिहास में कृष्ण और अर्जुन की दोस्ती प्रसिद्ध है। यही कारण है कि स्त्रियों की संस्थाओं में जान कम होती है। कुटुम्ब से बाहर किसी अन्य संस्था में वे अपनी जान डाल नहीं पातीं। लड़कियों में दोस्ती बढ़नी चाहिए, उनमें आपस में इतनी दोस्ती होनी चाहिए कि वे एक दूसरी के लिए जान भी दे सकें। डाह, ईर्ष्या, मत्सर पुरुषों में कम नहीं हैं। पुरुषों ने एक स्त्री के लिए दूसरे को मारा है, फिर भी गिरधर कविराय कहते हैं: "कौरव पाण्डव वंश को कियो द्रौपदी नाश।" राम-रावण का युद्ध सीता के निमित्त हुआ। दोष सीता पर लगाया गया। होमर ने अपने महाकाव्य इलियड में हेलन नाम की एक सुन्दर युवती को ही युद्ध निमित्त बताया है। एक पुरुष दूसरे पुरुष को मार डालता है, फिर भी पुरुषों का मत्सर प्रसिद्ध नहीं है। सह-पत्नियों का या सहप्रेमियों का मत्सर प्रसिद्ध नहीं है, प्रसिद्ध तो है, 'सौतिया डाह'। हमें इन परम्पराओं को बदलना चाहिए। स्त्रियों में सख्य और सौहार्द कायम करना चाहिए।

× × ×

स्त्री-पुरुष मैत्री

हम यह चाहते हैं कि स्त्री-पुरुषों में मैत्री का सम्बन्ध स्थापित हो। शायद सदियों बाद संसार में गांधी ही ऐसा व्यक्ति हुआ जिसने अपने निजी जीवन में दोनों प्रकार के प्रयोग किये। उसने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि स्त्री और पुरुष दोनों एक-दूसरे के साथ सख्य की तुल्य भूमिका पर रह सकते हैं। यदि सामाजिक क्षेत्र में इस तथ्य को स्वीकार करने से आप कतराते हैं तो स्त्री का मानवत्व क्षीण और हीन हो जाता है। अर्थात् गांधी ने नैसर्गिक सम्बन्ध को बहुत माना। केवल प्राकृतिक सम्बन्ध तो पशुओं में होता है। स्त्री के मातृत्व की उपासना समाज में हो सकती है, उसका भगिनीत्व भी पवित्र अर्थात् भद्र है, लेकिन मित्रता के सम्बन्ध इन दोनों की अपेक्षा कहीं अधिक शुद्ध मंगलमय हैं। समाज में स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में अस्पृश्यता की जो भावना हमारे परम्परागत नीति-शास्त्र में प्रशस्त मानी थी उसका निवारण करने का नैतिक साहस गांधी ने बताया।

× × ×

सहजीवन में एक दूसरे के साथ रहने की चाह है, केवल मन से दूसरे के निकट रहने में हमें संतोष नहीं रहता। हम शरीर की निकटता भी चाहते हैं। सपत्ति में जीवन का आनन्द है और सुगन्ध भी। बगीचे में जो फूल खिलते हैं उनमें से हरेक की अपनी एक खुशबू होती है। उसी तरह जीवन में हमारे आसपास रहने वाले लोगों की भी एक गन्ध होती है। कभी वह अच्छी होती है कभी बुरी। लेकिन जहाँ सुगन्ध होती है, हम वहीं पसन्द करते हैं। इस सहजीवन में स्त्रियों की एक विशेष सुगन्ध होती है। माता के नाते, बहन के नाते, पुत्री के नाते, पत्नी के नाते और मित्र के नाते, वातावरण में स्त्री एक सुगन्ध फैलाती है। पुरुष के सान्निध्य में एक सौरभ होता है, इसलिए पुरुषों को पुरुषों के साथ, स्त्रियों को स्त्रियों के साथ और दोनों को एक-दूसरे के साथ रहने की उत्कंठा या गहरी इच्छा रहती है।

× × ×

शरीर विषय नहीं

कम्युनिस्टों का एक सूत्र है, जितने विवाह होंगे, वह सब प्रेम के आधार पर ही होने चाहिए, उनमें दूसरा कुछ हेतु या उद्देश्य नहीं होगा। आर्थिक या संरक्षण हेतु से विवाह-सम्बन्ध नहीं होने चाहिए। हमें इस विचार का स्वागत और स्वीकार करना चाहिए। परन्तु इससे एक कदम आगे बढ़ना होगा। समाजवादी क्रान्तिकारक इतना तो अवश्य मानते हैं कि स्त्री का शरीर प्रदर्शन या विक्रय का विषय नहीं होना चाहिए। स्त्री-देह बेची नहीं जानी चाहिए और न पुरुषों को लुभाने-ललचाने के लिए सजायी जानी चाहिए। वे यह भी मानते हैं कि एक पुरुष का शरीर दूसरे पुरुष के लिए, और एक स्त्री का शरीर दूसरी स्त्री के लिए विषय नहीं होना चाहिए। परन्तु अब यह मानने की आवश्यकता है कि पुरुष स्त्री के शरीर को विषय न माने। जब तक पुरुष स्त्री के शरीर को विषय मानेगा और स्त्री भी अपने शरीर को विषय मानेगी तब तक वह समान भूमिका पर नहीं आ सकेगी। आज स्त्री अपने शरीर को अपना धन और पुरुष का विषय मानती है। इसलिए पुरुष गुण-धन, विद्या-धन, यशोधन है, परन्तु स्त्री रूप-धन, शरीर-धन है। रूप से मतलब ही शरीर। सोचने की बात है

कि अपने स्पष्ट मानने से अधिक अधम शारीरिकता और कौन-सी हो सकती है।

स्त्री की प्रतिक्रिया

"…पुरुषों ने जब कहा कि स्त्री का शरीर गर्भधारण के लिए बना है, इसलिए वह स्वतन्त्रता की पात्र नहीं है। परन्तु असल में होना यह चाहिए था कि स्त्री मानव को जन्म देती है; इसलिए उसकी समाज में अधिक प्रतिष्ठा होनी चाहिए। यह उसका दोष नहीं, गुण है, यह त्रुटि नहीं, विशेषता है। एक नये मानव को संसार में लाने का और उसकी परवरिश करने का जिम्मा स्त्री लेती है। शायद ईश्वर और प्रकृति इतना विश्वास पुरुष का नहीं कर सकी, इसलिए उसने स्त्री को यह कार्य सौंपकर अपना विश्वास प्रकट किया। इसीलिए शायद उसने पुरुष के शरीर में इतना सत्व नहीं रहने दिया कि उसके दूध से नवजात मानव को पोषण मिले।

परन्तु जो होना चाहिए था, उसके विपरीत ही हुआ। मातृत्व के कारण स्त्री की मानवता ऊर्जित होने के बदले गौण मानी गयी। स्वाभिमानी स्त्रियों पर इसकी भयानक प्रतिक्रिया हुई। उसने कहा : ठीक है, अगर मातृत्व ही हमारी परवशता का आधार है, तो हम मातृत्व से इस्तीफा देने को तैयार हैं। तुमको अगर सन्तान की जरूरत नहीं है, तो हम भी अपनी आकांक्षा को तिलांजलि दे देंगी। जो उत्पादन करता है, उसकी तुम्हारे समाज में प्रतिष्ठा है।

"…तुम कहते हो कि समाज में सत्ता उत्पादकों की होगी। परन्तु जो नवीन मानवीय प्राणी को जन्म देती है, एक तरह से मौलिक उत्पादन करती है. उसका अधिकार तुम्हें मंजूर नहीं, तो यह लो, मातृत्व से त्याग-पत्र दे दिया।

यह भयानक प्रतिक्रिया हुई। उत्पादन और उपार्जन के क्षेत्र में स्त्रियों ने पुरुषों की प्रतियोगिता शुरू कर दी। शारीरिक शक्ति के क्षेत्र में भी उसने प्रतिस्पर्धा आरम्भ कर दी। जो-जो काम पुरुष कर सकता है, उसको स्त्री भी करने लगी। आर्थिक क्षेत्र में उसने पुरुष की बराबरी करना शुरू किया।

× × ×

पुरुष को नकली स्त्री नहीं बनना है, और स्त्री को पुरुष की प्रतिलिपि नहीं बनना है। वह कोई पुरुष की सेकंडहैंड कापी नहीं है। नकली पुरुष और नकली स्त्रियाँ तो नाटकों में होती हैं। स्त्री में जब स्त्री के गुणों का विकास होता है, तब पुरुष के संयोग से उसका व्यक्तित्व सम्पन्न होता है। पुरुष में जब पुरुष के गुणों का विकास होता है, तब स्त्री के गुणों के संयोग से उसका व्यक्तित्व सम्पन्न होता है। यह संयुक्त विभूति न तो अर्द्धनारीश्वर है, और न अर्द्धनरेश्वर है। वह सम्पूर्ण नारीनरेश्वर है।

× × ×

स्त्री का पराक्रम

एक पुरुष को दूसरे पुरुष से भय होता है, एक स्त्री को दूसरी स्त्री से भय होता है, परन्तु प्रत्येक स्त्री को प्रत्येक पुरुष से जो भय होता है, वह स्त्री-जीवन की असली व्याधि है। इसके उपाय दो हैं। एक तो यह कि स्त्री अपनी मर्यादा के लिए अपने प्राण देने के लिए तत्पर रहे और दूसरी यह कि बलात्कार से क्षत होने पर वह अपने को दुष्ट और भ्रष्ट न माने। ऐसी परिस्थिति में जो सन्तान होगी, वह भी धर्म की ही सन्तान मानी जायगी, हराम की नहीं। इससे कुलीनता का और रक्त का अभिमान नष्ट हो जायगा। समाज में सारे बालक और बालिकाएँ कुलीन ही होंगी। स्त्री के उत्थान में मूल पराक्रम स्त्री का होगा। समाज में किसी नये विचार का प्रादुर्भाव होता है, तो उसका जनक कोई समूह या संगठन नहीं होता, व्यक्ति ही होता है। … …आदर्शनिष्ठ पराक्रमी स्त्रियों की आज आवश्यकता है। …केवल अविवाहित रह जाने से स्त्री में शक्ति नहीं आती। उसमें आत्मनिर्भरता आनी चाहिए। ऐसी स्त्रियाँ कौन होंगी? वे होंगी, जो स्त्री-पुरुष भावना से ऊपर उठ गयी हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि वे स्त्री भी नहीं होंगी और पुरुष भी नहीं होंगी, तृतीय प्रकृति होंगी। बल्कि इसका अर्थ यह है कि वे स्त्री और पुरुष दोनों होंगी। जिन महापुरुषों ने स्त्री के उत्थान का प्रयत्न किया, वे स्त्रियों की भूमिका के साथ समरस हो गये थे। विशुद्ध मानवता की भूमिका पर आरूढ़ हो गये थे। वे पुरुष भी थे और स्त्री भी थे।

× × ×

जहाँ-जहाँ स्त्रियाँ समाज-सेवा करती हैं, वहाँ हर क्षेत्र में उनका यह प्रखर होना चाहिए कि स्त्रियों की परम्परागत भावना का अन्त हो। जो स्त्रियाँ समाज-सेवा करती हैं, उनकी सेवा का मुख्य उद्देश्य *समाज-परिवर्तन होना* चाहिए। यहाँ समाज-परिवर्तन से मतलब है—स्त्रियों की भूमिका में क्रान्ति। इस मूलभूत क्रान्ति का यह सिद्धान्त होगा कि मासिक पत्र-पत्रिकाएँ, विज्ञापन और मनोरंजन के कार्यक्रमों में कहीं भी स्त्री का रूप और शरीर, प्रदर्शन का विषय नहीं होगा।

मुजफ्फरपुर

विश्व शान्ति दिवस के उपलक्ष्य में मुजफ्फरपुर की तरुण-शान्तिसेना की ओर से २९ और ३० जनवरी को एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

प्रथम दिन, राज्य-शक्ति और हिंसा-शक्ति के मुकाबिले नागरिक शक्ति के उदय को नयी सामाजिक संरचना के लिए आवश्यक समझते हुए २९ जनवरी को एक अन्तर स्कूल वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया। विषय था 'क्या वर्तमान लोकतांत्रिक पद्धति में सरकार जनता का सही प्रतिनिधित्व करती है?' जितने भी प्रतियोगियों ने भाग लिया उनमें सबसे अच्छे तीन को पुरस्कृत करने के साथ-साथ अन्य सभी प्रतियोगियों को भी पुरस्कृत किया गया।

प्रमुख अतिथि आचार्य राममूर्तिजी थे जिन्होंने विद्यार्थियों को वर्तमान की दृष्टि में रख कर चिन्तन करने की प्रेरणा दी।●

शारीरिकता से प्रेम तक

—जैनेन्द्र कुमार

पुरुष में नारी-शरीर के प्रति आकर्षण है, तो नारी के पास शरीर ही वह पूँजी बनाता है जिससे जीने की सुख-सुविधा के साधन, उपकरण प्राप्त और एकत्र किये जा सकें। इसलिए औरों के साथ वह भी बाजार में प्रस्तुत है कि बोली लगे और वह अपने शरीर और सुन्दरता का मूल्य पाये।

स्त्री की ओर से इसका कोई जोरदार प्रतिवाद नहीं आ रहा है। बल्कि अपनी और भोग की स्वतन्त्रता के नाम पर वह स्वेच्छा से इसमें सहयोगिनी बनी दिखती है। इसको विडम्बना कहते भी झिझक होती है। क्योंकि स्त्री इसमें स्वाद पा रही लगती है। स्त्री पुरुष के बीच के आकर्षण को विधाता की ओर से प्राप्त मानव-जाति की मैं सबसे बड़ी सम्पदा मानता हूँ। मानव जाति ही क्यों कहिये? सच-राचर जगत में उस आकर्षण-शक्ति की ही महासत्ता है। उस सम्पदा को हम चाहें तो बखेर सकते हैं, लपेट डाल सकते हैं, और चाहें तो उसी में से भव्य सौन्दर्य और सौभाग्य का निर्माण कर सकते हैं। मुझे नहीं लगता कि हम अपने सब ज्ञान-विज्ञान और विद्या-बुद्धि विवेक के रहते उस सम्पदा का सदुपयोग कर पा रहे हैं। उसके साथ न्याय नहीं हो पा रहा है, उसका महा-अपव्यय ही हमसे हो रहा है। जिस आर्थिक चक्रव्यूह की हमने अपने चारों ओर रचना कर ली है वह स्वार्थ की लिप्सा में से उपजा है। लिप्सा में एक दूसरे का उपयोग है, उपभोग है, परस्पर की पूर्ति और धन्यता नहीं है। इस नर-नारी के परस्पर आकर्षण की ही पहली किरण है जिसकी स्वानुभूति हमें श्रद्धा और भक्ति के माधुर्य के रूप में होती है। दाम्पत्य का वही पहला और अनिवार्य आस्वाद है। उससे विहीन और विरत करके स्वार्थपरता के आग्रह में हमने स्त्री-पुरुष को मानो निरे नर मादा के रूप तक ला दिया है। जिस पर हम गर्व रखते हैं कि भावुकता से ऊपर उठकर हम वैज्ञानिक बनाये हैं। दोनों की शारीरिकता को प्रकृत रूप में स्वीकार और अंगीकार का हमने एक दावा और दम्भ ही रच डाला है। ऐसे नग्नवाद तक आने में हम कुछ कृतार्थता मानते हैं। बुद्धि का यह निरा औद्धत्य है और चिन्मूल्यता की अपेक्षा में यह नितान्त अवैज्ञानिक है। मैं समझता हूँ कि इस आकर्षण का आधार लेकर हमने जो अपनी पारिवारिकता और सामाजिकता का निर्माण किया है सो यह मानवीय सभ्यता के विकास का निदर्शक ही है। उस सभ्यता और संस्कृति के विकास की दिशा यही हो सकती है कि परिवार दृढ़ और प्रेम विकसनशील हो। प्रेम की इस निरन्तर विकसन-शीलता के आधार पर परिवार अपने में न्यस्त स्वार्थ अथवा बन्दघर न रह जायेगा, वरन् उसका विस्तार निरन्तर विश्वबन्धुत्व की ओर होता जायेगा। मैं मानता हूँ कि प्रेम के बजाय काम को मौलिक मान लेने के कारण परिवार की संस्था स्वार्थ-सम्पत्तिमूलक बनी है और प्रशस्त सामाजिकता के विकास में उसने विघ्नबाधा का रूप ले लिया है। यदि प्रेम की मौलिकता को हम पहचान सकेंगे तो विवाह और परिवार की रूढ़-बद्धता और घेराबन्दी टूट जायेगी और स्त्री-पुरुष के बीच नाना वर्जनाओं के कारण जो उच्छृंखलता फूटती दिखती है, वह भी अनावश्यक हो जावेगी। मुझे लगता है कि विकारों और वर्जनाओं का सीधा सम्बन्ध हमारी अर्थव्यवस्था की विषमता से है। और फिर उसका सम्बन्ध उस राज सत्ता और व्यवस्था से हो जाता है जिसकी छाप लेकर कागजी नोट के अन्दर जबर्दस्त परचेजिंग पावर जा बैठती है। शायद प्रश्न के हल के लिए इस समूचे ढाँचे को ही उसकी तमाम कील-चूल के समेत फिर से जाँच-पड़ताल करके एकदम नया रूप देना होगा।

× × ×

प्रेम (जैसा पहले कहा) वियोग और विरह में भी संयोग की सृष्टि कर लेता है। वह वस्तु और व्यक्ति-निर्भर न होने के कारण समस्या उत्पन्न नहीं करता है। बल्कि नाना आसक्तियों और ईर्ष्याओं के निमित्त से जो दुर्घटनाएँ हुआ करती हैं उन सबका उपचार इस निर्वैयक्तिक प्रेम में से खोजा और पाया जा सकता है। काम का लक्षण इससे उलटा है। कामना में वस्तु अथवा व्यक्ति को हम हस्तगत करके हम अपने अधिकार में रख लेना चाहते हैं। काम इस प्रकार की संकीर्णता से मुक्त नहीं है। उसमें स्वनिष्ठि होती ही है। प्रेम द्वारा उस काम की संकीर्णता में उदात्तता का प्रवेश होता है। काम वहाँ निषिद्ध नहीं होता है बल्कि उर्वरक होता है। यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि काम के स्पर्श से प्रेम सृजनशील बन

[शेष पृष्ठ ३२६ पर]

स्त्री-पुरुष के मध्य (इस) शुद्ध प्रेम के सञ्चरण की साधना अथवा सिद्धि असम्भवप्राय जैसी लगती है। इसीलिए शुद्ध प्रेम के विश्वासी-जनों ने ब्रह्मचर्य की कल्पना को परस्पर अस्पृश्यता की सीमा तक खींच डाला। इसको मैं अपचार ही मानता हूँ। एक दूसरे से बचकर किसी की मुक्ति नहीं है। वह बचना सम्भव भी नहीं है। वैसी कोशिश इसलिए एक प्रकार की हठवादिता है। पुरुष पौरुष के बल पर कभी अपने अधूरेपन से मुक्ति नहीं पा सकता, न स्त्री अपने स्त्रीत्व में रम-बँध कर पुरुष को अपने लिए अनावश्यक बना सकती है।

स्त्री की माँग : आधुनिक दृष्टिकोण

स्त्री की कठिनाई

स्त्री को वोट का अधिकार है जो समता का प्रतीक है, लेकिन जो स्त्री आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर निर्भर है उसे वोट समता नहीं दिला सकता। ज्योंही उसे स्वतंत्र जीविका प्राप्त हो जाती है उसका दुनिया के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और बीच में पुरुष की जरूरत नहीं रह जाती।

लेकिन वोट और जीविका को मिलाकर भी स्त्री के लिए दुनिया बुनियाद से नहीं बदलेगी। दुनिया फिर भी पुरुषों की ही रहेगी, क्योंकि घर की सारी जिम्मेदारियाँ स्त्री के ही मत्थे रहेंगी, और उनमें पुरुष का सहयोग नहीं मिलेगा। स्वतंत्र वोट और स्वतंत्र जीविका होने पर भी उसका शोषण होता रहेगा। संमित कमाई के शोषण से बचने के लिए स्त्री को एक विशेषाधिकारप्राप्त समुदाय (प्रिविलेज्ड कास्ट) में शरीक होना पड़ता है, और उसका मूल्य है शरीर का समर्पण। समाज की रचना ऐसी है कि स्त्री होते हुए सुखी जीवन बिताने के लिए उसे पुरुष को खुश करना ही पड़ता है। स्त्री को जीवन का सन्दर्भ चाहिए जो उसे नहीं मिलता। आज समाज में स्त्रीत्व की जो कल्पना है उसे वह छोड़े कैसे? स्त्रीत्व के साथ लैंगिक मूल्य (सेक्सुअल वैल्यूज) जुड़े हुए हैं जो पुरुषों के समाज ने बनाये हैं। स्त्री को अपने हर काम में—पहनावे में भी—पुरुष का ध्यान रखना पड़ता है। पुरुष का ध्यान रखनेवाली कोई-न-कोई स्त्री मिल ही जाती है, लेकिन स्त्री को अपना और पुरुष का दोनों का ध्यान रखना पड़ता है। शृंगार स्त्री के व्यक्तित्व का अंग माना जाता है, पुरुष के लिए वह आवश्यक नहीं। शृंगार में दोहरा संतोष है—अपना और पुरुष का। आज की स्त्री एक साथ पुरुष और स्त्री दोनों की तरह रहना चाहती है, और इस कोशिश में अपने लिए दोहरी थकान पैदा कर लेती है। पुरुष को स्त्री की अधीनता चाहिए उसकी बौद्धिकता नहीं। अगर पुरुष 'गुलाम' स्त्री के लिए जितना प्रेम दिखाता है उतना ही 'समान' स्त्री के लिए भी दिखाने लगे तो स्त्री की अनेक समस्याएँ यों ही हल हो जायँ। परम्परा ने स्त्री को अधीनता सिखायी है, आधुनिकता उसे स्वतंत्रता सिखा रही है। कितनी अधीनता, कितनी स्वतंत्रता स्त्री इसी उधेड़-बुन में पड़ी रहती है।

स्त्री का एक कृत्य ऐसा है जो उसकी स्वतंत्रता में बहुत अधिक बाधक है—मातृत्व। आधुनिक साधनों से मातृत्व अस्वीकार किया जा सकता है, किंतु अस्वीकृति और स्वीकृति दोनों के अवसर का निर्णय पुरुष करता है, स्त्री नहीं।

स्त्री की स्वतंत्रता के विरुद्ध समाज का सम्पूर्ण वातावरण है। समाज को उसकी योग्यता में भरोसा नहीं होता। इस प्रभाव में वह अपना आत्म-विश्वास खो बैठती है। इसलिए वह पुरुष का संरक्षण प्राप्त करने के लिए विवश हो जाती है।

मुक्ति की दिशा

बावजूद इन सीमाओं के स्त्री के लिए रास्ते खुलते जा रहे हैं। वह समझती जा रही है कि वह कितनी अधीन है; अधीन बना दी गयी है। यह प्रतीति मुक्ति की दिशा में बहुत बड़ा कदम है। वास्तव में मुक्त स्त्री के उदय की परिस्थिति बन रही है।

अब हमें स्त्री को उसके शरीर के लिए नहीं, उसके व्यक्तित्व के लिए स्वीकार करना सीखना पड़ेगा। कई लोग कहेंगे यह सम्भव नहीं है। लेकिन यह भी सही है कि पुरुष न स्त्री से सन्तुष्ट है, और न स्त्री पुरुष से। इस असंतोष का कारण पुरुष या स्त्री की शरीर-रचना में नहीं है। इसका कारण है पुरुष का अहंकार, और स्त्री की अधीनता। पुरुष समता को स्वीकार नहीं करता इसलिए स्त्री आक्रामक बन जाती है। वह पुरुष बनना चाहती है। वह दुनिया को अपनी सफलता का *प्रमाण देना चाहती है*, और इसमें वह पुरुष का समर्थन भी प्राप्त करना चाहती है—फिर अपना शरीर देकर। वह अपना पुराना जादू भी रखना चाहती है और नये अधिकार भी प्राप्त करना चाहती है।

पुरुष और स्त्री का झगड़ा चलता रहेगा जब तक दोनों एक दूसरे को समानता के स्तर पर स्वीकार नहीं करेंगे। यह होगा नहीं जब तक पारम्परिक अर्थ में स्त्री के स्त्रीत्व को बनाये रखने की कोशिश होगी। आज तो स्थिति ऐसी है कि पुरुष ने स्त्री को और स्त्री ने पुरुष को शिकार बना रखा है। दोनों अपने दुखों के लिए दूसरे को दोषी ठहरा रहे हैं। अगर पुरुष स्त्री को मुक्त हो जाने दे तो वह स्वयं जीवन की बहुत-सी मानसिक और दूसरी गुत्थियों से मुक्त हो जाय। घर और संतति के प्रलोभनों में फँसाकर उसका स्त्रीत्व कायम रखने की कोशिश न की जाय। पुरुष की ओर से यह कहा जाना कि स्त्री अधीन रहना ही चाहती है अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है।

कई लोग कहते हैं कि पुरुष और स्त्री की असमानता में ही समानता है। क्या ऐसा है? ऐसा कहकर पुरुष अपनी प्रभुता और स्त्री अपनी कायरता को छिपाना चाहती है। पुरुष ने स्त्री की बहुत महिमा गायी है। इससे वह धोखे में पड़ जाती है। वास्तविकता यह है कि पुरुष के लिए स्त्री 'खेल' है, जब कि स्त्री ने पुरुष को अपने *जीवन का ध्येय* माना है। इसलिए दोनों में ईमानदारी के साथ लेन-देन नहीं हो सका है। पुरुष ने जिसे प्रेम कहा है उसमें भी स्वामित्व की भावना बहुत रही है।

लेकिन आज की स्थिति के लिए किसी को दोषी ठहराने से क्या लाभ होगा? सदियों-सदियों में पुरुष अति-पुरुष बन गया है, और स्त्री अति-स्त्री बन गयी है। इसमें यदि किसी का दोष है तो उस सम्पूर्ण परिस्थिति का जिसमें व्यक्ति बना-बिगड़ा है।

नारी का मुक्ति-आन्दोलन

—सुश्री शैलजा आचार्य

[सुश्री शैलजाजी से नारी के मुक्ति-आन्दोलन सम्बन्धी कुछ प्रश्न पूछे गये थे, जिनका लिखित उत्तर निम्न प्रकार है। आप गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी में शोध-कार्य करती हैं। सं०]

प्रश्न : पश्चिम में मुक्ति चाहनेवाली नारी किन बन्धनों से मुक्त होना चाहती है ?

उत्तर : गत एक साल के अन्दर नारी-मुक्ति आन्दोलन के समर्थन में तीन किताबें प्रकाशित हुई हैं जिन्होंने इंग्लैण्ड और अमेरिका में खलबली मचा दी है। जर्मेन ग्रीयर की "दि फिमेल युनेक" और इवा फिग्स की 'पैट्रियन्स एटिट्यूड्स' ने इस आन्दोलन से सम्बन्धित बहुत-सी समस्याओं का विश्लेषण किया है और सुझाव भी दिये हैं। तीसरी पुस्तक 'सेक्सुअल पालिटिक्स' केटी मिलेट द्वारा लिखी गयी है। मिलेट इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद से इस आन्दोलन की माओ त्से तुंग मानी जाती है। सिमन दी बिवो की 'दी सेकेण्ड सेक्स' के क्रम में यह पुस्तक लिखी गयी है। सिमन ने औरतों के हो रहे शोषण का बहुत ही सूक्ष्म विश्लेषण किया है। वह कहती है कि इतिहास के विकास के हरेक चरण में शोषण होता आया है। अर्थात् यह शोषण इतना पूर्ण रहा कि स्त्री का स्वतन्त्र व्यक्तित्व ही समाप्त हो गया और आज पुरुष की नजर में वही औरत है, वही उसका असली रूप हो गया है। एक घोषणा (मैनिफेस्टो) के रूप में 'सेकेण्ड सेक्स' ने फेमिनिस्ट मूवमेंट (नारी-आन्दोलन) को बहुत बल दिया है। लेकिन उसमें वस्तुपरक (ऑब्जेक्टिव) और क्रमिक विश्लेषण का अभाव है।

केटी मिलेट के 'सेक्सुअल पालिटिक्स' ने इस आन्दोलन को सैद्धान्तिक आधार देने की चेष्टा की है, भले ही इसमें उनको बहुत सफलता नहीं मिली हो। उन्होंने इस आन्दोलन को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया है और इतिहास की यौन सम्बन्धों (सेक्सुअल) की व्याख्या प्रस्तुत की है। उनका कहना है कि समाज की सभी बुनियादी संस्थाएँ पुरुष द्वारा नारी के शोषण करने के माध्यम हैं। केटी मिलेट का कहना है कि सभी समस्याओं के मूल में पैतृक सत्तात्मक समाज है। इस समाज में औरत मात्र भोग (सेक्स) का प्रतीक हो गयी है। केटी मिलेट औरत की कीमत और दर्जा (स्टेटस) का पुनर्मूल्यांकन चाहती है, अर्थात् उसका कहना है कि लिंग (सेक्स) के आधार पर जो दर्जा और कीमत परिभाषित है उसका खात्मा हो।

पहले चरण में नारी-मुक्ति आन्दोलन का ध्यान मताधिकार, समान वेतन, नौकरी में समुचित स्थान इत्यादि तक ही सीमित था। दूसरे चरण में इन सबसे आगे उसने कुछ बुनियादी परिवर्तन की माँग की है। औरतों की आर्थिक स्वतन्त्रता और बच्चों की सामूहिक देखभाल का व्यवसायीकरण पैतृक सत्तात्मक, परिवार की बुनियाद और आर्थिक आधार को कमजोर कर देगा।

इस प्रकार केटी मिलेट समाज में 'यौन-क्रान्ति' की आवश्यकता महसूस करती है। विवाह का स्थान ऐच्छिक संघ (वालेंटरी असोसिएशन) हो जिससे नैतिकता के दोहरे मापदण्ड का अन्त हो जाय। केटी मिलेट कहती है कि 'सेक्स इज स्टेटस कैटेगरी विद पॉलिटिकल इम्प्ली-केशन्स', अर्थात् केटी मिलेट ने मनुष्य जाति के सभी इतिहास (कलास हिस्ट्री) को इतिहास का यौन-सिद्धान्त (सेक्स थियरी आव हिस्ट्री) कहा है। उसका कहना है कि औरतों के शोषण से व्यक्तिगत सम्पत्ति का जन्म हुआ है और औरतों का शोषण ही मूल में है और सब तरह के वर्गीय शोषण के। वह कहती है कि पुरुषों द्वारा औरतों के शोषण के अन्त से ही सब तरह के शोषण का अन्त होगा। इस तरह मिलेट का कहना है कि जिस तरह जातियों के बीच का संघर्ष राजनैतिक है उसी तरह औरत और मर्द के बीच के संघर्ष का आधार राजनैतिक है।

अर्थात् मेरे कहने का तात्पर्य है कि पश्चिम में बन्धन से मुक्ति चाहनेवाली नारी पुरुषों से समान वेतन, बच्चों की देखभाल के लिए 'डे केयर सेंटर्स' की स्थापना; बच्चों की सम्भाल के लिए 'इनक्रेसर टैक्स' की कटौती, गृहिणी के अपने घर के कामों के लिए वेतन या 'मिस' और 'मिसेज' के भेद का अन्त इत्यादि से सन्तुष्ट होगी लेकिन वह कुछ आधारभूत परिवर्तन भी चाहती है। परन्तु इस परिवर्तन का रूप क्या हो, इसमें वह कुछ स्पष्ट नहीं लगती, हालांकि केटी मिलेट, जर्मेन ग्रीयर अपने विचारों में मार्क्सवादी सोचती हैं। स्त्री की मुक्ति के लिए पूँजीवादी व्यवस्था को खत्म

→मुक्त स्त्री पुरुष से सम्बन्ध रखेगी लेकिन यह नहीं मानेगी कि वह पुरुष के लिए ही बनी हुई है। पुरुष और स्त्री दोनों मनुष्य के नाते समान और स्वतन्त्र होंगे तो एक दूसरे के अधिक निकट होंगे। उनमें पारस्परिकता होगी। जब आधे मानव-समाज की गुलामी समाप्त होगी और उसके साथ-साथ ढोंग की संस्कृति भी समाप्त होगी तो मानव की विविधता का सही अर्थ और महत्त्व प्रकट होगा। मार्क्स ने कहा है : "मानवों का सीधा, स्वाभाविक, अनिवार्य सम्बन्ध वही है जो पुरुष और स्त्री के बीच प्रकट होता है। उसी सम्बन्ध से पता चलता है कि मानव का आचरण कितना मानवीय हुआ है।" स्त्री और पुरुष में भेद है, लेकिन उन भेदों में ही उनकी वास्तविक पारस्परिकता की कुंजी है।

(सिमन द बिवो की 'दी सेकेण्ड सेक्स के आधार पर।)

करता है—यह वे स्पष्ट नहीं करती।

प्रश्न : कुछ बन्धन ऐसे हैं जो प्रकृति-प्रदत्त हैं उनके बारे में वहाँ की नारी क्या मानती है?

उत्तर : हमारे समाज ने औरतों की कुछ बुनियादी शारीरिक हीनता मान ली है। और इस तरह उसने औरतों की सामाजिक कीमत को निश्चित कर दिया है। इसलिए 'विमेन लिबरेशन' वालों का नारा है कि भिन्न होते हुए भी वे समान हैं। लेकिन वे यह नहीं मानतीं कि आज के जो मूल्य माने जाते हैं उनके पीछे केवल शरीर-रचना का फर्क ही है। आज का मूल्य तो पुरुष-शासित समाज का दिया हुआ है और इसमें औरतों को हीन मान लिया गया है। जो काम पुरुष करते हैं वे ही ओहदेवाले होते हैं। फ्रायड के स्त्री-विरोधी सिद्धान्त ने शरीर (बायलॉजी) के नाम पर औरतों का बहुत शोषण किया है।

केटी मिलेट और ग्रीयर इत्यादि कुछ और आगे बढ़ती हैं और कहती हैं कि नारी पुरुष से किसी प्रकार भी हीन अथवा भिन्न न होकर बिलकुल बराबर है। 'औरतों में माँ बनने की जन्मजात प्रवृत्ति होती है और यह प्राप्त न होने पर उनमें विकृति आती है' इस प्रकार औरतों का जिस तरह शोषण हुआ है उसके विरोध में वे हैं। उनका कहना है कि इजराइली कम्यून के फार्मों पर जहाँ औरतें मर्दों के साथ खेती और सैनिक-सेवा के काम करती हैं और बच्चों को कम्यून के शिशुगृह में छोड़ देती हैं, उनमें किसी भी प्रकार की असन्तुष्टि नहीं दीखती।

इस प्रकार उनका मानना है कि लिंग के आधार पर जो कीमत और दर्जा का बँटवारा हुआ है वह खत्म हो।

प्रश्न : भारतीय सांस्कृतिक परिस्थिति में आज स्त्री-पुरुष का क्या सम्बन्ध होना चाहिए? क्या पाश्चात्य संस्कृति की नकल से नये सम्बन्ध की सम्भावना है या भारत में अपने अनुरूप कुछ नया सन्दर्भ पेश करना होगा? वह सन्दर्भ क्या हो सकता है?

उत्तर : आधुनिक नारी विवाह के विकल्प की खोज में है चाहे वह पश्चिम की हो या हिन्दुस्तान की। यह ठीक है कि हिन्दुस्तान में बहुत ही ज्यादा दम्भ है। यहाँ बाहर से आधुनिक दीखनेवाली नारी अन्दर से अत्यन्त परम्परागत होती है। वह केवल दर्जा को ऊँचा उठानेवाले प्रतीक भर के लिए पोशाक में आधुनिक बन जाती है। वह सुरक्षा खोजती है। उसमें नये सम्बन्धों, जिनका परम्परागत आधार नहीं है, को जीने का नैतिक बल नहीं है। विवाह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें एक लड़की को अपने घर से उखड़कर दूसरे घर में जाना पड़ता है। उसका सामाजिक परिवेश बदल जाता है। इसलिए इस सम्बन्ध में बराबरी का दर्जा कभी प्राप्त नहीं हो सकता। विवाह के आर्थिक आधार खत्म हो रहे हैं, लेकिन इससे नारी का शोषण समाप्त नहीं हो रहा है। कोई भी संवेदनशील और सचेत लड़की वर्तमान वैवाहिक रूप को स्वीकार नहीं कर सकती। जिस सम्बन्ध में औरत अपने को मनुष्य नहीं, मात्र औरत समझने को मजबूर होती है, जिस समाज में उसको दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया गया है, और जिस सम्बन्ध में उसका सम्पूर्ण समर्पण हो जाता है, उस सम्बन्ध के विरुद्ध उसको तोड़ने में कोई कैसा भी रास्ता अपनाये, मैं उसका पूर्ण समर्थन करूँगी।

प्रश्न यह है कि इसका विकल्प क्या हो? पुरुष-स्त्री का सम्बन्ध कैसा हो? मेरे विचार से आदर्श सम्बन्ध वह होगा जिसमें पुरुष-स्त्री साथी की तरह रहेंगे, स्वेच्छा से एक-दूसरे को स्नेह देंगे। इस तरह का सम्बन्ध नाजुक होता है। वह या तो टूट जाता है या नहीं तो पति-पत्नी में परिणत हो जाता है। इस तरह के सम्बन्ध को सचेत रहकर कायम रखना पड़ता है। इसी प्रकार के सम्बन्ध में मात्र औरत अपना आत्म-सम्मान, अपना व्यक्तित्व कायम रख सकती है। लेकिन औरतों में सुरक्षा की भूख इतनी तीव्र है कि इस तरह के सम्बन्ध को निभाना बहुत मुश्किल हो जाता है। जब तक ढाँचे में परिवर्तन नहीं होगा अर्थात् जब तक सामाजिक सुरक्षा नहीं प्राप्त होगी, इस तरह का सम्बन्ध समाज में मान्य नहीं होगा। जब तक स्त्री पुरुष के माध्यम से जीती है, अपने को वह कभी पूर्ण महसूस नहीं करेगी। अतः इस पुरुष-प्रधान समाज को तोड़ना होगा, पर समय तो लगेगा ही।

मुझे तो लगता है कि सचेत नारी सब जगह एक-सी है। उसकी समस्याएँ एक-सी हैं। वह जहाँ भी हो बन्धन-मुक्ति चाहती है। बन्धन के रूप अलग हैं, विद्रोह का माध्यम अलग है पर स्वतन्त्रता और समानता की भूख एक ही है। भारतीय सांस्कृतिक परिस्थिति इससे बिलकुल अलग नहीं है। यह भी पितृ-सत्तात्मक समाज है और मूलतः समस्याएँ एक-सी ही हैं। ●

(पृष्ठ ३२३ का शेष)

जाता है। प्रेम निष्क्रिय और निश्चेष्ट हो जायेगा अगर उसे अमूर्त सत्य से ही जोड़ेंगे और मूर्त व्यक्ति से तोड़ लेंगे। मनुष्य को लाँघकर जो प्रेम ईश्वर की ओर उठता है वह निष्काम होता हो कि न होता हो, अवश्य निस्तेज और निश्चेष्ट अवश्य हो जाता है। प्रेम सार्थक सचेष्ट और सक्षम वही होगा जिसमें परस्परता का स्वीकार और सत्कार होगा और उस अर्थ में जो व्यक्तिपरकता से टूटने का आग्रह न होगा। इस परस्परता और व्यक्तिपरकता में अगर काम की विद्यमानता भी देख लें तो मुझे आपत्ति नहीं होगी। ●

श्री राधाकृष्ण अमेरिका में

अमेरिकन फ्रेंड्स सर्विस कमिटी के निमन्त्रण पर गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण दो माह की अमेरिका-यात्रा पर जा रहे हैं। वहाँ २१ फरवरी से २० अप्रैल तक वे अपने व्यस्त कार्यक्रम में विभिन्न स्थानों पर सर्वोदय, समाज, अहिंसा आदि विषयों पर भाषण देंगे और वहाँ के कार्यकर्ता विभिन्न शान्ति दलों से चर्चा करेंगे। ●

राष्ट्र-संघ में नये महासचिव

नये साल के साथ संयुक्त राष्ट्र-संघ में भी बड़ा परिवर्तन हुआ। पुराने महासचिव यू थान्ट की जगह नये महासचिव डा० कुर्त वाल्डहाइम ने वहाँ का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। दुनिया में यह सबसे ज्यादा वेतनवाला और आकर्षक स्थान है—बासठ हजार डालर सालाना, या लगभग साढ़े अड़तीस हजार रुपये मासिक, जो सब टैक्सों से मुक्त है। महासचिव डाग हैमरशोल्ड की एक विमान-दुर्घटना में १९६१ में मृत्यु होने के बाद से श्री यू थान्ट इस पद को सुशोभित कर रहे थे। श्री यू थान्ट बर्मावासी हैं और बौद्ध-मत के अनुयायी हैं। उन्होंने बड़ी सौम्यता और सौजन्य से अपने कर्तव्य का पालन किया। लेकिन राष्ट्र-संघ अगर प्रभावशाली नहीं बन सका और गत दिसम्बर के भारत-पाक-संघर्ष को रोक नहीं सका (जिसकी आग गत मार्च-अप्रैल से सुलग रही थी) तो इसके लिए यू थान्ट नहीं, बल्कि राष्ट्र-संघ का संगठन और उसकी विभिन्न कार्य-प्रणाली दोषी ठहराये जायेंगे।

संयुक्त राष्ट्र-संघ की अनेक मुसीबतों में से एक है उसका कर्जदार होना। उसे सदस्य-राष्ट्रों से १,७६७ लाख डालर मिलना है जो वे दे नहीं रहे हैं। इसकी ४०० लाख डालर की चालू पूंजी खत्म हो चुकी है और यू थान्ट के शब्दों में "इस साल के घाटे और डांवा-डोल के कारण राष्ट्र-संघ को गुजर किसी तरह चल रही है।"

संयुक्त राष्ट्र-संघ के १३२ सदस्य हैं जो स्वतन्त्र, और सर्वाधिकार प्राप्त राष्ट्र हैं। उनकी अलग-अलग शासन-पद्धतियाँ हैं, अलग आदर्श और लक्ष्य हैं। फिर हर एक के अपने-अपने खतरे हैं और अपने महत्व या सम्मान का भान है। इतने बड़े कुनबे को एक सूत्र में बांधे रखना कोई आसान काम नहीं है। यू थान्ट को श्रेय देना होगा कि पिछले दस साल में जो एक से-एक बढ़कर संकट आये, उनके कारण यह कुनबा टूट नहीं गया बल्कि बना रहा। अब नये महासचिव का काम है कि इस संघ को शक्तिशाली और प्राणवान रूप दें। उन्होंने कहा भी है कि इसे कमजोर न समझा जाय और अपने दायित्व को मैं खूब जानता हूँ। जिस निष्ठा और तन्मयता से डा० वाल्डहाइम अपने काम पर लगे हैं उस पर हम उनका अभिनन्दन करते हैं और उनकी सफलता की कामना करते हैं।

बंगला देश और ब्रिटेन

पिछले बारह-तेरह महीनों में और विशेषकर गत सात-आठ हफ्ते में इतिहास जितनी तेजी से दौड़ा है, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। अभूतपूर्व घटनाओं का—पाकिस्तानी जहाजों द्वारा भारत की पश्चिमी सरहद पर अनेक हवाई अड्डों पर गोलाबारी, भारत का करारा जवाब, भारत सरकार द्वारा बंगला देश को मान्यता देना, बंगला देश में घमासान टक्कर और मोर्चाबन्दी, संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में रूस द्वारा वीटो का तीन बार उपयोग, अमेरिकी जहाजी बेड़े का बंगाल की खाड़ी के लिए चल पड़ना, पाकिस्तानी सेना का ढाका में हथियार डालना और लगभग नब्बे हजार सैनिकों द्वारा आत्म समर्पण, पश्चिमी क्षेत्र में भारत सरकार का युद्ध-बन्दी ऐलान, पाकिस्तान का उसे स्वीकार करना, जनरल यहिया खाँ का पाकिस्तान के राष्ट्रपति और मार्शल लॉ नायक के पद से हटना, उनकी जगह बैरिस्टर भुट्टो द्वारा शपथ-ग्रहण, शेख मुजीब की रिहाई उनका ढाका पहुँचकर बंगला देश का प्रधानमंत्री पद स्वीकार करना, बंगला देश को विभिन्न राष्ट्रों से मान्यता मिलना, आदि का ऐसा अनोखा तांता लगा कि सभी हैरान रह गये। इतिहास तो रोज बना ही करता है, लेकिन यह इतिहास ऐसे शानदार ढंग से बना कि भूगोल भी बदल गया। इसका श्रेय जहाँ एक तरफ शेख मुजीबुर्रहमान के तप और संकल्प को और उनकी मुक्तिवाहिनी की दृढ़ता और कुर्बानी को है, वहाँ दूसरी तरफ भारत की सेना के जवानों और अफसरों की बहादुरी और रण-कुशलता को है और साथ ही भारत की यशस्वी प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के और निष्ठापूर्ण विवेकयुक्त नेतृत्व को है।

यही कारण है कि जिस ब्रिटेन की सरकार ने १९४७ में भारत-भूमि के दो टुकड़े कर पाकिस्तान बनाया था, उसी ब्रिटेन के विदेश मंत्री ने शुक्रवार, ४ फरवरी १९७२ को ब्रिटिश पार्लियामेंट में ऐलान कर बंगला देश को मान्यता प्रदान कर दी और "पूर्वी पाकिस्तान" की समाप्ति के अध्याय पर मुहर लगा दी।

भारत देश के बँटवारे का दुःखद नाटक ब्रिटिश सरकार की तरफ से सम्पन्न किया था तत्कालीन वायसराय लार्ड माउन्टबैटन ने। सौभाग्य से वे अभी जीवित हैं। (इस नाटक के अन्य चार पात्र—दो भारतवासी, पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल, दो पाकिस्तानी, कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना और नवाबजादा लियाकत अली खाँ, परलोक सिधार चुके हैं।) उन्होंने गत १० जनवरी को लन्दन में कहा कि हुकूमत के स्थानान्तरण का काम मुझे सुपुर्द किया गया था। मैंने बहुत चाहा कि हिन्दुस्तान एक बना रहे और उसे सारे अधिकार दे दूं। लेकिन मुस्लिम लीग के मिस्टर जिन्ना नहीं माने। तब मेरे पास दो ही रास्ते थे—हिन्दुस्तान एक बना रहे और ब्रिटिश हुकूमत भी बरकरार रहे या हिन्दुस्तान के दो टुकड़े कर दिये जायें और ब्रिटिश हुकूमत हट जाय। बहुत दुःख के साथ मुझे दूसरा रास्ता अख्तियार करना पड़ा।

आन्दोलन के समाचार

अबोहर में ग्रामदान अभियान

फिरोजपुर जिला के अबोहर ब्लाक में एक सप्त दिवसीय ग्रामदान अभियान चलाया गया। अभियान प्रारम्भ करने के पूर्व डेढ़ दिनों का एक शिविर चलाया गया जिसमें श्री ठाकुरदास बंग तथा श्रीमती सुमन बंग ने भाग लिया।

शिविर के बाद ४० कार्यकर्ताओं को दस टोलियों में बाँटकर क्षेत्र में काम करने के लिए भेजा गया। बंग साहब तथा कुछ अन्य लोग समय समय पर कार्यकर्ताओं से सम्पर्क स्थापित कर कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ाते रहे।

अभियान की अवधि में कुल सात गांवों के ग्रामदान हुए तथा कई गांवों में ग्रामकोष की भी स्थापना की गयी। राजावाली गाँव के दो किसान श्री रामचन्द्रजी और श्री रामनारायणजी ने १ बीघा २६ कनाल जमीन बीसवां हिस्से के रूप में दो भूमिहीनों को प्रदान किया।

शाहाबाद में ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन

जिला शाहाबाद (बिहार) प्रखण्ड अधौरा से श्री किशोर सिंह लिखते हैं कि फरवरी १९७२ के प्रथम सप्ताह में देकानिया, सरदनार और बन्धा गांवों में सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन हुआ।

मुरैना में भूमि का वितरण

मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड ने भूमि-वितरण कार्यक्रम के अन्तर्गत १५ जनवरी से ३१ जनवरी '७२ तक विजयपुर तहसील के ५१ गांवों के १०६२ परिवारों में ६३५० बीघा भूदान-भूमि तथा पक्के पट्टों का वितरण किया।

मानव-अधिकार का संरक्षण

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित दो दिवसीय सेमीनार में यह सिफारिश की गयी है कि यूनेस्को के चार्टर के अनुसार एक ऐसा गैर-सरकारी जन-संगठन बनाया जाय जो संसार में मानव-अधिकारों के संरक्षक के रूप में काम करे।

बंगला देश के अहिंसक आन्दोलन का अध्ययन

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान की अध्ययन शोध परिषद ने तय किया है कि १ से २५ मार्च १९७१ तक जो अहिंसक असहयोग आन्दोलन चला था उसका सविस्तार अध्ययन किया जाय।

रीवाँ में शान्तिदिवस

रीवां में ३० जनवरी को जिला सर्वोदय मण्डल और गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में बापू निर्वाण दिवस मनाया गया।

सुबह साढ़े ५ बजे प्रभात फेरी तथा दिन के १ बजे एक मौन जुलूस का आयोजन किया गया। जुलूस में ८० नागरिक शामिल थे। जुलूस बाद में चलकर एक सभा के रूप में विसर्जित हुआ।

→लार्ड माउन्टबेटन ने आगे चलकर कहा कि "इसका अफसोस मुझे हमेशा ही रहा और इस समय तो वह बहुत ही ज्यादा सता रहा है।"

इस प्रकार ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि ने अपने शासन की भूल स्वीकार कर ली। और, इसके पचीस रोज बाद ब्रिटिश सरकार ने बंगला देश को मान्यता दे दी। रूस पहले ही (२४ जनवरी को) मान्यता दे चुका है: अमेरिका की समझ का कोई ठिकाना नहीं क्योंकि उसने जब चीन जैसे प्रजातंत्र को मान्यता देने के पहले बीस बरस गंवा दिये, (उस चीन को जिसके तट को उसके तट से प्रशान्त महासागर सदा से जोड़ता चला आया है) तो बंगला देश के लिए जितना समय निकाल दे थोड़ा है।

बंगला देश ने ब्रिटेन की मान्यता का विशेष स्वागत किया है और राष्ट्रमंडल (कामनवेल्थ) में शामिल होने की भी इच्छा प्रकट की है। वह दिन भी दूर नहीं, जब सारे संयुक्त राष्ट्र में भी उसे अभीष्ट स्थान मिलेगा।

—सुरेशराम

भूल-सुधार

'भूदानयज्ञ' के अंक २०, १४ फरवरी '७२ में सम्पादकीय का शीर्षक 'मार्च के चुनाव' पढ़ें। भूल के लिए क्षमा करें। सं०

इस अंक में

आवरण परिचय

तीन प्रधानमंत्री

श्रीमती भंडारनायके :	श्रीलंका
श्रीमती गोल्डा मेयर	इजराइल
श्रीमती इन्दिरा गांधी :	भारत

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : २२, सोमवार, २८ फरवरी, '७२
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग
राजघाट, वाराणसी
तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१
सम्पादक : राममूर्ति
सर्वोदय
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
भूदान-यज्ञ
भूदान-यज्ञ मूलक, ग्रामोद्योग प्रधान, अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक
गरीबी हटाओ
- नई कांग्रेस
गरीबी खत्म करो
कांग्रेस (संगठन)
गरीबी मिटाओ
- जन संघ
गरीबी नष्ट करो
गरीबी से छुटकारा पाओ
आपने किस पार्टी की गरीबी मिटाने का तय किया है?

चाहिए लचीला दिमाग

संसार के देश बंगला देश को धीरे-धीरे स्वीकारते जा रहे हैं और मान्यता दे रहे हैं। दूसरी ओर पाकिस्तान, उन सभी देशों से अपने राजनैतिक सम्बन्ध तोड़ रहा है जो बंगला देश को मान्यता दे रहे हैं। ब्रिटेन और आस्ट्रेलिया की मान्यता ३१ जनवरी को मिली और पाकिस्तान ने राष्ट्रकुल से अपना २४ वर्ष पुराना सम्बन्ध तोड़ लिया। यह सब हो रहा है पर ध्यान देने की बात यह है कि राष्ट्रपति भुट्टो के तेवर बड़ी समझदारी का आभास दे रहे हैं। सम्बन्ध तोड़ने की कार्रवाई, उस राजनैतिक लाचारी का एक हिस्सा है, जो बंगला देश को पाकिस्तान की मान्यता मिलने से पहले करनी पड़ी है। पर भुट्टो साहब के सारे वक्तव्य, प्रतिक्रियाएँ उन्हें अपने पूर्ववर्ती साथियों से ज्यादा कुशल साबित करती हैं। भारत आने की उत्सुकता दिखाकर उन्होंने इस महादेश के लिए एक अपूर्व सम्भावना को जन्म दिया है।

भारत और बंगला देश के राजनीतिक नेता भी अब तक सूझ-बूझ का परिचय दे रहे हैं। एशिया की इस परिस्थिति से विश्व राजनीति में दो देशों के चेहरे पर हवाई उड़ रही है—अमेरिका और चीन। निक्सन की करामाती पीकिंग-यात्रा अब फीकी-फीकी लग रही है और स्वयं अमेरिकी प्रेसों में उसके बारे में निराशाजनक टिप्पणियाँ आयी हैं। वैसे निक्सन की पीकिंग-यात्रा एक राजनीतिक रोमांस ही है और परस्पर विरोधी राजनीतिक हितों के कारण निक्सन, माओ, साथ-साथ चाय आदि पीने से ज्यादा कुछ नहीं कर सकेंगे।

नागरिक-शक्ति या लोकनीति का अब तक कोई प्रत्यक्ष उदाहरण सामने नहीं आया, हमें विनयशील राजनीति के विकास को शुभ मानना चाहिए। यदि इन्दिरा-मुजीब-भुट्टो का कोई त्रिभुज विकसित होता है तो विनोबा का अ ब स सूत्र व्यावहारिक सिद्ध होगा। यदि लचीले दिमाग से आनेवाली परिस्थितियों पर इन तीनों देशों ने विचार किया तो, विश्व-राजनीति के सत्ता-सन्तुलन का आधार, संस्था और शक्ति के बदले सहयोग हो जायेगा। इन तीनों देशों के विशेष और सामान्य सामाजिक और राजनीतिक हित भी आश्चर्यजनक रूप से समान हैं।

अतः यहिया खाँ के या भुट्टो के पूर्व करतबों के लिए उन्मादित होकर पाकिस्तान की भर्त्सना छोड़कर हमें सहयोग की सम्भावनाएँ पैदा करनी चाहिए।

१४-२-'७२ —कुम

श्री जयप्रकाशजी का अवकाश : स्पष्टीकरण

सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने, विभिन्न समाचारपत्रों में प्रकाशित तथा आकाशवाणी से प्रसारित इस भ्रामक संवाद पर आज यहाँ स्पष्टीकरण किया कि उन्होंने सार्वजनिक जीवन से अवकाश ग्रहण करने तथा अपने स्वास्थ्य-सुधार हेतु कम-से-कम एक वर्ष तक विश्राम करने का निश्चय किया है।

समाचारपत्रों को दिये गये एक वक्तव्य में जयप्रकाशजी ने यह स्पष्ट किया कि "सार्वजनिक जीवन से अवकाश लेने की मेरी कोई इच्छा अभी नहीं है। इच्छा तो यही है कि जब मेरे चिकित्सक अनुमति दें कि मैं अपने सामान्य काम-काज में लग जाऊँ!

जयप्रकाशजी ने अपने उस पुराने परिपत्र का, जिसे उन्होंने गत ११ अक्तूबर '७१ को अपनी जन्मतिथि के अवसर पर सभी मित्रों और सहयोगियों को भेजा था, उल्लेख करते हुए बताया कि मैंने अपनी अगली जन्मतिथि (११ अक्तूबर '७२) से पूरे एक वर्ष तक छुट्टी पर रहने का जो निश्चय किया था, उसका मेरी हाल की अस्वस्थता से कोई सम्बन्ध नहीं है, और न इस निश्चय के पीछे सार्वजनिक जीवन से सदा के लिए *विदा लेने की कोई मंशा है। यह तो* अपनी आगामी जन्मतिथि से एक वर्ष तक सार्वजनिक कार्यों से अस्थायी अवकाश *या विश्राम लेने का निश्चय है। इस* अवकाश-काल में मैं किसी सार्वजनिक *सभा में, किसी विचार-गोष्ठी में नहीं* जाऊँगा, और न किसी संस्था की औपचारिक अथवा अनौपचारिक बैठकों में भाग लूँगा। अपने कहा कि "जिस किसी संस्था से मैं अभी सम्बन्धित हूँ, उससे सम्बन्ध विच्छेद भी कर लूँगा। हाँ, यदि अन्तःप्रेरणा हुई तो इस अवकाश-काल में कुछ लिखूँगा और उसे प्रकाशित भी करूँगा।

जयप्रकाशजी ने यह आश्वासन दिया कि जब कोई राष्ट्रीय महासंकट की स्थिति पैदा होगी, तो मैं अपने इस निर्णय को तोड़ने के लिए बाध्य हो सकता हूँ। परन्तु जब मुझे प्रतीत होगा कि महासंकट की स्थिति है, तभी ऐसा करूँगा, न कि भारत सरकार द्वारा आपातकालीन स्थिति की घोषणा मात्र पर।

जयप्रकाशजी ने बताया कि मेरा यह अवकाश-काल ११ अक्तूबर '७३ को समाप्त होगा, जब मैं अपने सार्वजनिक काम पर लौट आऊँगा और तत्पश्चात् अपने देश एवं विश्व की सेवा में पुनः लग जाऊँगा। परन्तु उन्होंने यह स्पष्ट किया कि "मेरी भावी कार्य-पद्धति वर्तमान पद्धति से मूलतः भिन्न होगी, *क्योंकि आज के ढंग से अनावश्यक रूप से* समय और शारीरिक एवं मानसिक शक्ति, दोनों का अपव्यय होता है।

पटना, १५ फरवरी, '७२ —सच्चिदानन्द

प्रश्न है लोकतंत्र का

पंचायत से लेकर पार्लियामेंट तक के हमारे जो चुनाव होते हैं उनके एक नहीं अनेक दोष गिनाये जा सकते हैं। ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है जो दावे के साथ यह कहते हैं कि अगर चुनाव इसी तरह भ्रष्ट होते चले गये तो वे स्वयं लोकतंत्र को खा जायेंगे। उनका कहना गलत नहीं है। अगर प्रतिनिधियों की अच्छाई पर लोकतंत्र की अच्छाई निर्भर है, तो भ्रष्ट तरीकों से अच्छे प्रतिनिधि कैसे चुने जा सकते हैं?

जिस पद्धति में पचीस-तीस प्रतिशत वोटों पर सरकारें बनें बिगड़ें, जिसमें वोटरों का वोट लेने के लिए उनकी संकीर्णताओं को उभाड़ने के चाहे जितने अनुचित तरीकों का इस्तेमाल हो, जो राजनीति को एक व्यवसाय और राजनैतिक नेताओं का एक विशिष्ट समुदाय बना दे, जिसमें चुनाव के बाद भी विधान-सभाओं और संसद के सदस्यों को अनेक प्रकार के प्रलोभनों में फँसाकर अपने पक्ष में रखने की कोशिश बराबर जारी रहे, जिसमें सरकार के लोग प्रशासन को अपने-अपने सगे-सम्बन्धियों और अपने दल के लिए प्रयोग करें, उस पद्धति में लोकतंत्र का खोखला हो जाना अनिवार्य है। भारत का लोकतंत्र फिर भी बचा है, और देश की प्रतिभा और परम्परा से अधिक संविधान के बल पर टिका हुआ है। चुनाव के असह्य भ्रष्टाचार को बर्दाश्त करने की शक्ति हमारे लोकतंत्र में नहीं है।

ये दोष न होते फिर भी यह कहना कठिन होता कि लोकतंत्र की जो पद्धति हमने अपनायी है वह हमारे देश के लिए सही है। हमें यह भरोसा नहीं होता कि इस पद्धति से राष्ट्र की एकता और जनता की नैतिक शक्ति का विकास होगा। यह भी मानना कठिन है कि राजनीति और प्रशासन के मौजूदा तंत्र से देश के विकास की चुनौती का सफलतापूर्वक मुकाबिला किया जा सकता है।

इस पद्धति में पूँजीवाद को खत्म करने की शक्ति नहीं है, इससे समाजवाद नहीं आ सकता। इसमें समाज-परिवर्तन की सम्भावना नहीं है। इसमें यों ही सरकारों का बनना-बिगड़ना होता रहेगा, और विभिन्न दलों के नाम में निहित स्वार्थों का आपसी लेन-देन चलता रहेगा। लोक-कल्याण के नाम में सरकार का शोर भले ही बढ़ता जाय, लेकिन कल्याण की पहुँच नीचे के आदमी तक नहीं होगी।

इतना सब होते हुए भी हम इस लोकतंत्र को तानाशाही से अच्छा समझते हैं। इसके हजार अवगुणों से बड़ा एक गुण है, वह है बालिग मताधिकार। बालिग मताधिकार नागरिक के हाथ में एक कवच है जिससे वह निरंकुश शासन से अपने अधिकारों की रक्षा करता है। यह ऐसा 'अस्त्र' है जिसने बंगला देश को अस्तित्व दिया, जिसके कारण उसे प्रतिकार की शक्ति मिली, जिसे लेकर वह दुनिया के सामने खड़ा हो सका। बालिग मताधिकार में नागरिक की मान्यता है। इसमें हिंसा से मुक्त जन-क्रान्ति सम्भव है। बालिग मताधिकार को कायम रखते हुए ही लोकतंत्र के 'लोक' को सुदृढ़ और विकसित किया जा सकता है। जिस दिन बालिग मताधिकार से सरकार का बनना-बदलना बन्द हो जायगा उस दिन नागरिक की सत्ता समाप्त हो जायगी, और समाज में निरंकुश तानाशाही का अँधेरा छा जायगा। इसलिए हम मानते हैं कि मुक्त और निष्पक्ष मतदान लोकतंत्र का प्राण है, और हर स्थिति में उसकी रक्षा होनी चाहिए।

मुक्त और निष्पक्ष चुनाव के लोकतंत्र को जीवित रखना है। उसे जीवित रखते हुए उसकी शक्ति का विकास करना है। लोकतंत्र के सामने देश की रक्षा और जन-जन की आकांक्षाओं की जो कठिन चुनौती है उसकी पूर्ति मात्र 'प्रतिनिधि' चुनकर नहीं की जा सकती। उसकी पूर्ति उन बालिग नागरिकों की शक्ति से ही हो सकती है जिनके वोट पर लोकतंत्र का ढाँचा खड़ा है। इसलिए लोकतंत्र को प्रतिनिधि तंत्र से आगे बढ़ना है। उसे प्रत्यक्ष लोकशक्ति का आधार ढूँढना है। लोकतंत्र का भविष्य लोकशक्ति की खोज में है।

लोकशक्ति मात्र लोकमत नहीं है। शक्ति का स्रोत निर्णय में है। निर्णय कहाँ होता है, कौन करता है, यह प्रश्न है। लोक-जीवन की सारी इकाइयाँ, जिनमें गाँव, नगर, कारखाना और विद्यालय मुख्य हैं, लोकतंत्र की इकाइयाँ बन सकती हैं। वे स्वायत्त और स्वाश्रयी हो सकती हैं। वे अपना भीतरी जीवन अपने निर्णय से चला सकती हैं, और बालिग मताधिकार का प्रत्यक्ष प्रयोग कर सकती हैं। सरकारों में इनके ही प्रतिनिधि जा सकते हैं। देश ऐसी स्वायत्त सहकारी इकाइयों का महासंघ बन सकता है और सरकार उन्हें जोड़नेवाली पूरक शक्ति।

ऐसा लोकतंत्र जो लोकशक्ति के आधार पर खड़ा हो विकास की चुनौती का मुकाबिला कर सकता है। उसी के द्वारा अंत में नागरिक की सत्ता भी कायम रह सकती है। ऐसा ही लोकतंत्र इस बड़े प्रश्न को हल कर सकता है कि ५५ करोड़ नागरिकों के महादेश में हर नागरिक का सुख और शान्ति कैसे प्राप्त हो सकती है, और वह दैनंदिन लोकतंत्र में साझेदार कैसे हो सकता है। इसलिए हमारे सामने प्रश्न मात्र चुनाव का नहीं है, प्रश्न है लोकतंत्र और उसके भविष्य का। ●

मुलाकात

अमेरिकी और भारतीय समाज में हिंसा

—डा० विश्वबन्धु चटर्जी

समाज-विकास के लम्बे इतिहास में हिंसा-शक्ति की बहुत बड़ी भूमिका रही है। महात्मा बुद्ध ने २।। हजार वर्ष पहले अहिंसा-विचार का समाज में प्रसार करके अहिंसा की आकांक्षा तो पैदा कर दी फिर भी अहिंसा शक्ति के रूप में आजतक अधिष्ठित न हो पायी। भारतवर्ष की हजारों वर्षों की एक सांस्कृतिक परम्परा रही है और अहिंसा-दर्शन को देश ने स्वीकार किया है, फिर भी समाज-जीवन में वह चरितार्थ न हो पायी है। जब कभी भी हिंसा का मार्ग समाज-परिवर्तन के लिए अपनाया गया है तब समाज अवश्य आगे बढ़ा है, परन्तु जब समाज-जीवन के आन्तरिक मामलों में हिंसा होने लगती है तब समाज जंगली सभ्यता की ओर अग्रसर होता है। आज दुनिया में हिंसा-अहिंसा का द्वन्द्व जारी है और आदमी हिंसा से निकलकर अहिंसक समाज की ओर बढ़ने के लिए छटपटा रहा है। गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी के प्रो० डा० विश्वबन्धु चटर्जी से हुई मुलाकात में इसी विषय पर विवेचन किया गया है।

प्रश्न : अमेरिकी समाज काफी समृद्ध और सम्पन्न है फिर भी वहाँ हिंसा बढ़ रही है जब कि भारत में गरीबी के कारण ऐसा हो रहा है। इसके मनोवैज्ञानिक कारण क्या हैं ?

उत्तर : ऐसा मैं नहीं मानता कि भारतवर्ष में गरीबी के कारण हिंसा बढ़ रही है। हिंसा के बढ़ने के विभिन्न कारण हैं। इनमें सबसे बड़ा कारण है—सामाजिक परिस्थिति। पहले हम अमेरिका को देखें। अमेरिकी समाज की दो-ढाई सौ साल की ही परम्परा है। उसको कोई परम्परागत बुनियाद नहीं प्राप्त हुई जैसे कि भारतवर्ष को प्राप्त है या एशिया के देशों को प्राप्त है। अमेरिकी समाज-जीवन की यात्रा खोज की, शोध की यात्रा कही जा सकती है।

अब हम पहले कुछ मनोवैज्ञानिक तथ्यों को समझ लें तब उस समाज को समझने में आसानी होगी। मनुष्य हो या जानवर इनकी कुछ बुनियादी प्रेरणाएँ होती हैं जैसे आक्रामक (एग्रेसिव), विध्वंसक (डिस्ट्रक्टिव), प्रतिद्वन्द्वी (कम्पीटीटिव), सहकारी (को-आपरेटिव), क्रियात्मक (क्रियेटिव), प्रेम (लव) आदि। इन प्रेरणाओं में जो मारने-पीटने, नष्ट करने की प्रेरणाएँ हैं इनको क्रियात्मक दिशा दी जाती है और प्रेम करने, प्यार करने की प्रेरणा को विकसित किया जाता है। यह काम अमेरिका में शुरू ही नहीं हुआ। १७वीं शताब्दी में अमेरिकी समाज विकासोन्मुख हुआ और इसके हाथ विज्ञान की ऐसी शक्ति प्राप्त हुई कि यह समाज १९वीं शताब्दी में ही समृद्ध हो गया। थोड़े श्रम से ही आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने लगा, और समय की बचत होने लगी। रूस में ऐसा न हो सका। उसको अमेरिका से १०० साल ज्यादा लगे। इसका कारण यह था कि अमेरिका में लोग कम थे, उनमें खोज की, शोध की, वृद्धि थी; वे अगुआ (पायनियर) थे। परन्तु इनके सामने उत्पादन बढ़ाने और उपभोग करने के सिवाय कोई अन्य लक्ष्य नहीं था। उनके पास जो शक्ति थी, समय था, उनके इस्तेमाल का कोई अवसर नहीं था। कोई गरीब नहीं तो सेवा किसकी करें, प्यार किसको करें ? अतः खाली शक्ति का व्यय विध्वंस में हुआ।

आप देखेंगे कि जिनके पूर्व जीवन में अभाव रहा हो उनमें बाद में समृद्धि हो आने पर भी अभाववाले जीवन के स्मरण मात्र से भय पैदा होता है। अतः वे समृद्धि को मजबूती से पकड़े रहते हैं। अमेरिकी समाज के बारे में वैसा ही हुआ। वे गरीब थे और दो सौ सालों में ही दुनिया में सबसे ज्यादा समृद्ध हो गये।

उनके यहाँ अपने स्रोतों के सही इस्तेमाल की शिक्षा नहीं दी गयी। उनमें सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आदर नहीं, श्रद्धा नहीं, जीवन में कोई ऊँचा आदर्श नहीं, और न ही उनको इस जीवन में इन चीजों की शिक्षा ही दी जाती है। अगर उनको शिक्षा दी जाती हो, प्रोत्साहन दिया जाता हो, तो वह प्रतिद्वन्द्विता का, एक-दूसरे से आगे बढ़ जाने का, होड़ में विजय प्राप्त करने का। उनके यहाँ कहा जाता है, 'झोपड़ी से ही आगे बढ़ो राष्ट्रपति हो सकते हो'। इसके लिए जो भी करना आवश्यक हो वह सब कुछ किया जा सकता है। इसको बुरा नहीं माना जाता। बच्चा कहीं से पिटकर आये तो कहा जाता है, 'पीटकर आओ तो प्यार करूँगा'। इस प्रकार उनकी संस्कृति आक्रामक है, व्यक्तिवादी है। उनके यहाँ पारिवारिक भावना का कोई संस्कार नहीं है, जैसा कि भारतवर्ष में है। १३-१४ साल के बच्चे को परिवार से अलग होकर स्वावलम्बी जीवन बिताने की शिक्षा दी जाती है। सिखाया जाता है, 'दूसरे पर निर्भर न रहो।' इस प्रकार के शिक्षण से उनमें व्यक्तिवादी दृष्टिकोण का प्रश्रय होता है और समूह-भावना, समुदाय-भावना का विकास नहीं होता, इसकी चेतना ही नहीं पैदा होती। उनका सिद्धान्त कि 'अन्याय का बदला अन्याय से लो' से उन्होंने एक जाति को ही समाप्त कर दिया।

अब उनके खेल को ही देखा जाय। वे शरीर बलवाले खेलों को ही ज्यादा पसन्द करते हैं। उनके कोई खेल ऐसे नहीं हैं जिनमें लालित्य हो, कला हो, युक्तिप्रवीणता हो, सौन्दर्य हो। उनका 'बेसबॉल' इसका उदाहरण है। 'बेसबॉल' उनका प्रिय खेल है। उनके गीतों में भी प्रेम का स्थान नहीं है, बल्कि विजय पाने, छीनने, मारनेवाले प्रसंग ही अधिक मिलते

है। अपने यहाँ प्रेमी या प्रेमिका निराश होंगे तो वे निराशा के गीत पसन्द करेंगे, गायेंगे, लिखेंगे, परन्तु वे निराशा में एक दूसरे को शूट कर देते हैं।

अमेरिकी समाज में औरतों की भूमिका (रोल) को समझना चाहिए। वहाँ नारी में नारित्व से ज्यादा पौरुष का स्थान है—उसमें इस बात का अहंकार है कि वह पुरुष से किसी भी अर्थ में कम नहीं है, परन्तु इसके बुरे परिणामों को उसे भुगतना पड़ता है। स्त्री की जो कोमलता होती है, सुकुमारता होती है, उनका उनके जीवन में अभाव रहता है। उनके यहाँ काम (सेक्स) का प्राधान्य है। स्वीडेन और डेनमार्क में भी काम (सेक्स) का प्राधान्य है। परन्तु सबसे ज्यादा अमेरिकी समाज में है। काम (सेक्स) के आनन्द में जहाँ बाधा आयी कि आक्रमण (एग्रेशन) हुआ। अब इस वास्तविकता को वहाँ की स्त्री समझने लगी है कि नारी की सुरक्षा उसके नारित्व में है न कि पुरुष के समानान्तर खड़े होने में। इसीमें से हिप्पी आन्दोलन का जन्म हुआ है।

आपने देखा कि अमेरिका अतिरिक्त उत्पादन करता है और उसके कारण वह समाज कहाँ पहुँच गया। अब आप दूसरी ओर देखिए भारतवर्ष में—यहाँ कठोर-से-कठोर श्रम करने के बाद भी उतना नहीं प्राप्त होता जितने से श्रमिक की बुनियादी आवश्यकताओं की भी पूर्ति हो सके, यानी पेट पालने की चीज भी नहीं मिल पाती। फिर भी यहाँ क्या होता है? कम-से-कम में काम चला लेने की, बर्दाश्त करने की, आदमी कोशिश करता है; क्योंकि सहनशीलता की यहाँ एक परम्परा रही है। जब सहनशीलता की क्षमता समाप्त हो जाती है, कोई चीज बर्दाश्त से बाहर हो जाती है तब आदमी देखता है कि कोई दूसरा उपाय नहीं है और वह हिंसा के मार्ग को अपनाता है, अर्थात् एक सहज (इन्स्टेंक्टिव) हिंसा को अपनाता है। जैसे बिल्ली को लीजिए, वह भी जब आक्रमण करने पर उतारू होती है? जब उसको आक्रमण के सिवाय कोई दूसरा उपाय नहीं दीखता। इसका एक ताजा उदाहरण बंगला देश का है। बंगला देश में २५ मार्च तक शान्तिमय मार्ग से आन्दोलन करने की कोशिश की गयी, परन्तु अन्त में मजबूर होकर उन्हें हिंसा के मार्ग को अपनाना पड़ा। हमारे यहाँ भी वैसा ही होता है। पश्चिम बंगाल का नक्सलवाद इसी परिस्थिति में से पैदा हुआ है। नक्सलवादी लोग मजदूर वर्ग के नहीं हैं बल्कि पढ़े-लिखे, बुद्धिवाले लोग हैं। उन्होंने यह देख लिया कि सिवाय हिंसा के अन्य कोई मार्ग है नहीं जिससे गरीबी दूर हो तथा एक नया जीवन-दर्शन स्थापित हो। और इसीलिए वर्तमान प्रचलित समाज को निष्ठुर ढंग से तोड़ने का वे प्रयास कर रहे हैं।

प्रश्न : क्या आप यह मानेंगे कि अति समृद्धि या अति गरीबी में हिंसा बढ़ेगी ही अथवा गरीबी और अमीरी की विषमता में हिंसा का होना अनिवार्य ही है?

उत्तर : अमेरिका का उदाहरण लीजिए—अमेरिका में समृद्धि है परन्तु समानता नहीं है। वहाँ कोई भूखा नहीं रहता फिर भी उनके यहाँ सौ-गुना विषमता तो है ही। अतः इस विषमता में हिंसा होगी। लेकिन गरीबी में इससे ज्यादा हिंसा होगी। विषमता जितनी ज्यादा होगी हिंसा उतनी ही ज्यादा होगी, और अनिवार्य रूप से होगी। रूस में सामाजिक हिंसा कम है, उससे भी कम चीन में है। इसका कारण यह है कि रूस और चीन में विषमता कम है। बल्कि रूस में २०-२५ गुना विषमता है, पर चीन में तो ४-५ गुना ही है। रूस और चीन में सामाजिक सुरक्षा ज्यादा है। सबसे ज्यादा, अगर, कहीं विषमता है तो वह भारतवर्ष में है। यहाँ दो-सौ-तीन-सौ गुना विषमता है। इस परिस्थिति को सामने रखकर सोचा जाय तो यह स्पष्ट दिख देगा कि गरीबी के कारण हिंसा नहीं बढ़ रही है बल्कि बढ़ती विषमता के कारण ऐसा हो रहा है, जो होना अनिवार्य है। उससे बचा नहीं जा सकता।

प्रश्न : क्या अमेरिकी समाज में हिंसा से मुक्त होने का कोई प्रयत्न प्रारम्भ हुआ है? जब कोई व्यक्ति या समाज हिंसा से जर्जर हो चुकेगा उसमें शीघ्र अहिंसक समाज की ओर अग्रसर होने की कोई सम्भावना शेष रह जाती है?

उत्तर : हाँ, अब वे वास्तविकता को पहचानने लगे हैं। स्वयं स्वयंभू की उनकी जो भावना थी वह मिट रही है। अमेरिकी समाज ने कभी यह मानने की भूल नहीं की कि वह संस्कृति में आगे है। वह विज्ञान में, समृद्धि में अपने को आगे मानता रहा है, परन्तु अब इसे भी वह नहीं मानता। अब वहाँ के लोग सहकार, प्रेम व शान्ति की बात समझ रहे हैं। दूसरे देश को जानने की जिज्ञासा बढ़ रही है। दूसरी जाति की सेवा करने की भावना पनप रही है। सामाजिक चेतना बढ़ रही है। नीग्रो के प्रति अन्याय को वे अन्याय मानने लगे हैं। जब मैं १९५७ में अमेरिका गया था उस समय कोरिया से वेटरन (युद्ध के सिपाही) लौटे थे। तब कोरिया-युद्ध को कोई अनुचित नहीं मानता था, बल्कि एक आम भावना यह थी कि चीन व रूस को खत्म कर देना चाहिए। वे मानते थे कि साम्यवाद को दुनिया से समाप्त कर देना उनका अधिकार है, कर्तव्य है। परन्तु १० साल बाद क्या हुआ? वे वास्तविकता को समझने लगे। उस समय वहाँ युद्ध के पक्ष में बोलना फैशन माना जाता था, लेकिन अब युद्ध के खिलाफ बोलना फैशन हो गया है। अब रूस से अमेरिका या अमेरिका से रूस में ज्यादातर आने-जाते हैं। अमेरिका चीन में हारा, वियतनाम में हारा, अभी बंगला देश में भी उसकी हार ही हुई। अतः अब उसमें विनय का आना स्वाभाविक है।

परन्तु अमेरिकी सरकार के प्रयत्नों को थोड़ा और गहराई से समझा जाय। सरकार पर पेंटागन, जो उनका सैन्य प्रतिष्ठान है, का प्रभाव है। और पेंटागन

(शेष पृष्ठ ३३८ पर)

जमीन का सवाल

१. हमारे देश में अधिकांश लोगों की जीविका का आधार जमीन है, इसलिए पहली पंचवर्षीय योजना के समय से ही यह बात कही जाती रही है कि सीलिंग लगायी जाय, और इस तरह जो जमीन निकले उसे भूमिहीन या कम भूमिवालों में बाँटा जाय। लेकिन अभी तक इस दिशा में कुछ खास हुआ नहीं। फिर भी कई सुधार हुए हैं, जैसे बिचौलियों (इन्टर-मीडियरीज) की समाप्ति, लगान का नियमन और बेदखली की रोक। खेती की उपज बढ़ाने की दृष्टि से भी कई योजनाएँ अमल में लायी गयी हैं।

२. यों तो सरकार और प्रत्यक्ष खेती करनेवाले किसान (ऐक्चुअल कल्टिवेटर) के बीच बिचौलिये अंग्रेजों के पहिले भी थे, लेकिन शुरू के अंग्रेज शासकों ने बिचौलियों को व्यापक और संगठित कर दिया। १८वीं और १९वीं शताब्दियों में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जो क्षेत्र जीते उनमें लगान की वसूली के लिए बिचौलियों की जरूरत पड़ी, क्योंकि उस वक्त भूमि का लगान सरकारी आय का मुख्य स्रोत थी। इस कारण दो मुख्य व्यवस्थाओं का विकास किया गया। एक थी जमीदारी (या जागीरदारी)। इसमें जमींदार के साथ लगान के लिए कम्पनी का ठेका हो जाता था। जमींदार खेती करनेवाले किसानों से लगान वसूल करके सरकार को देते थे। कहीं-कहीं जमींदारों के साथ बन्दोबस्त स्थायी था और उन्हें हमेशा एक निश्चित रकम देनी पड़ती थी, और कुछ क्षेत्रों में वह समय-समय पर बदलती रहती थी। दोनों व्यवस्थाओं में सरकार का सीधा सम्बन्ध 'खेती के किसानों' से न होकर इन 'लगान के किसानों' (रेवेन्यू फारमर्स) से था। जो वास्तविक किसान थे उनके कोई अधिकार स्पष्ट नहीं किये गये, और वे कालक्रम से जमींदारों की रैयत बन गये।

इस प्रकार की व्यवस्था मुख्य रूप से आज के असम, प० बंगाल, बिहार, उ० प्र०, उड़ीसा तथा आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु के बड़े भाग में की गयी। इसी तरह की व्यवस्था मध्य प्रदेश तथा कुछ भारतीय रियासतों जैसे हैदराबाद, मध्य भारतीय रियासतें, तथा राजस्थान में भी थी। अलग-अलग क्षेत्रों में इन भूमि-व्यवस्थाओं के अलग-अलग नाम थे, और उनमें कुछ भेद भी थे, किंतु मूलत वे समान थीं।

रैयत यानी वास्तविक किसान के स्पष्ट अधिकार न होने के कारण दो प्रश्न पैदा हुए—एक यह कि जमीन पर उनके अधिकार की अवधि क्या होगी, दो यह कि उन्हें जमींदार को लगान कितनी देनी पड़ेगी। इन प्रश्नों का कोई स्पष्ट उत्तर नहीं था। परिणाम यह हुआ कि बेदखली सामान्य हो गयी, लगान जितनी लो जा सके ली जाने लगी, और बेगार की प्रथा भी चल पड़ी। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए समय-समय पर कानून भी बने जिनसे १९४० तक ऐसी स्थिति बन गयी कि जमींदार का दर्जा लगान वसूल करनेवाले का ही माना जाने लगा, जो सचमुच वे थे।

कानून किसान की रक्षा के लिए बने लेकिन उनका पूरा संरक्षण हुआ नहीं। ऐसा भी हुआ कि कई किसान स्वयं बिचौलिये बन गये और अपनी जमीन लगान पर उठाने लगे। इस तरह जमींदारों के नीचे 'जमींदार' बन गये और अपने ऊपर के जमींदार को निश्चित रकम चुकाने लगे। परिणाम यह हुआ कि सरकार और नीचे के वास्तविक खेतिहर के बीच 'मालिकों' की कई तहें बन गयीं, जिनमें से हर एक का किसान की दी हुई लगान में हिस्सा होने लगा।

३. स्वाभाविक था कि जब स्वतंत्रता मिली तो सबसे पहिले ध्यान बिचौलियों की प्रथा का अन्त करने की ओर गया। १९४७ से १९५४ के बीच अधिकांश राज्यों में जमींदारी अन्त करने के कानून बन गये, और लगभग २ करोड़ किसानों का सीधे-सीधे सरकार के साथ सम्बन्ध हो गया। लेकिन कुछ राज्यों में बिचौलिये किसी-न-किसी रूप में अब भी मौजूद हैं।

जमींदारी का अन्त अपने में कोई भूमि-वितरण का कार्यक्रम नहीं था। उससे इतना ही हुआ कि सदियों से चले आये हुए सामन्तवादी ढाँचे को जोरदार धक्का लगा, और किसानों की कई प्रकार की अनीति और अन्याय से बचत हो गयी। कई राज्यों ने यह भी तय किया कि पहले के जमींदारों के पास अधिक-से-अधिक कितनी भूमि रहेगी, जिसका फल यह हुआ कि सरकार के हाथ में काफी जमीन आ गयी। इस भूमि के अलावा सरकार के पास अपनी भूमि भी थी। दोनों भूमिहीनों में बाँटी गयी।

लेकिन जमीन का वितरण संतोषजनक नहीं हुआ। जो भूमि दी गयी वह सब खेती के लिए तैयार नहीं थी। उसके लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबन्ध नहीं किया गया। कई जगह भूमिहीनों की सहकारी समितियाँ बनायी गयीं, लेकिन वे यों ही छोड़ दी गयीं, उनकी कठिनाइयाँ हल नहीं की गयीं। इसलिए यह कहना कठिन है कि कितने भूमिहीन नयी खेती से अपनी जीविका निकाल सके।

४. जमींदारी के अन्त के बाद जमींदारी के क्षेत्र उन्हीं क्षेत्रों-जैसे हो गये जहाँ सरकार और किसान के बीच सीधा सम्बन्ध था, यानी रैयतवारी प्रथा थी। लेकिन एक बहुत बड़ी कमी रह गयी। किसान (टेनेन्ट) के अंतर्गत वे खेतिहर नहीं जोड़े गये जो बँटाई पर खेती करते थे जैसे प० बंगाल के बरगादार, उड़ीसा के भागचासी, बिहार के बँटाईदार, असम के अधियार, और उ० प्र० के साझीदार। ऐसे बटाईदार कालक्रम में रैयतवारी इलाकों में भी पैदा हो गये थे। ये सब कानून से अछूते रह गये। पूरे देश में इस बड़े समुदाय की लगान और बेदखली

की समस्या ज्यों-की-त्यों रह गयी।

कानून का पहला काम है इन 'किसानों' को मनमानी बेदखली से बचाना और उनकी लगान स्थिर करना। १९४८ के बम्बई टेनेन्सी ऐक्ट ने यह काम बहुत कुछ किया है। लेकिन कुछ मिलाकर जमीन की माँग इतनी अधिक रही और बँटाईदार की स्थिति इतनी कमजोर थी कि मालिक-बँटाईदार के सम्बन्ध न्यायपूर्ण नहीं हो पाये। ऐसी स्थिति में बम्बई में १९५६ में एक कानून बना जिसके अनुसार वास्तविक किसान को ही मालिक बना दिया गया, और 'टेनेन्सी' का अन्त कर दिया गया। इस कानून पर अमल करना पहिले के कानून के मुकाबिले सरल हो गया।

कई राज्यों में किसान के संरक्षण के कानून बने, यद्यपि पूरे तौर पर सन्तोष-जनक कहीं नहीं। बिहार में तो बँटाईदार अरक्षित ही रह गया क्योंकि उसके और मालिक के बीच बँटाई का समझौता जबानी था जिस पर कानून चुप रह गया। उ० प्र० के कानून ने बीच के 'जमींदार' को तो खत्म किया लेकिन बँटाईदारी कायम रखी, और बँटाईदार को अरक्षित छोड़ दिया।

प० बंगाल में कई कानून बने। १९७० के कानून से स्थिति यह है कि अगर मालिक खेती के खर्च में शरीक नहीं होता है तो वह कुल उपज के ½ भाग का ही हकदार होगा, लेकिन उसे बँटाई-दार से भूमि लेने का अधिकार है बशर्ते उसकी कुल भूमि ७॥ एकड़ से अधिक न हो और बँटाईदार (बरगादार) के पास उसकी अपनी खेती के लिए २ एकड़ भूमि रह जाय। केरल में भी मालकियत खेति-हर रैयत (कल्टिवेटिंग टेनेन्ट) को दे दी गयी है, और मालिक द्वारा भूमि वापस लेने का अधिकार सीमित कर दिया गया है।

आंध्र में (हैदराबाद को छोड़कर) १९५६ में एक कानून पास हुआ जिससे रैयत टेनेन्ट को तीन साल के लिए बेदखली से रक्षा की गयी। यह अवधि समय-समय पर बढ़ायी गयी है लेकिन स्थायी कानून नहीं बना है।

तमिलनाडु का भी यही हाल है। १९५६ में एक अन्तरिम कानून बना था जिससे रैयत को १ साल की सुरक्षा मिली। तब से इस कानून की अवधि बढ़ती रही है, लेकिन स्थायी कानून अभी तक नहीं बना है।

मैसूर और उड़ीसा में भी १९६५ में कानून पास हुए लेकिन मालिकों को जमीन वापस लेने का अधिकार है। उनकी ओर से हजारों दर्खास्तें पड़ चुकी हैं। उनके निर्णय के बाद ही रैयतों के अपनी भूमि पर अधिकार के प्रश्न का निर्णय होगा।

इस विवरण से स्पष्ट है कि कुछ राज्यों को छोड़कर देश में इस अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न की उपेक्षा हुई है। कारण एक ही है—राजनीति, जो समय रहते कदम नहीं उठाने देती।

प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

विश्व मुद्रा-कोष और तीसरी दुनिया

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष (इन्टरनेशनल मोनेटरी फण्ड) में विकसित पूँजीवादी देशों का प्रभुत्व है, जिनकी सदस्यता तो एक चौथाई है, परन्तु कोटा का ३।४ भाग और पूरे वोट का दो-तिहाई उनके हाथों में है। यद्यपि यह एक विश्व-व्यापी और अराजनैतिक संस्था है परन्तु बहुत सारे समाजवादी देश अपनी आर्थिक नीति के साथ इसकी सदस्यता का मेल नहीं पाते। उन्होंने देखा है कि 'अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष' के लोगों ने घाना, इण्डोनेशिया, ब्राजिल आदि देशों में क्या किया है।

बहुत कम लोग जानते हैं कि अ० मुद्रा-कोष का आर्थिक दृष्टि से कमजोर देशों पर क्या प्रभाव पड़ता है। मुद्रा-नीति की बारीकियों को समझनेवाले भी कम हैं, उसके राजनैतिक पहलुओं की ओर ध्यान तो और भी कम जाता है। अगर हम समझ जायें कि दुनिया की पूँजीवादी व्यवस्था में अ० मुद्रा-कोष का क्या रोल है तो हम जान जायेंगे कि सामाजिक क्रान्तियों का भविष्य क्या है, और क्यों तीसरी दुनिया में लोकतन्त्र विफल हो रहा है।

अ० मुद्रा-कोष संसार की सबसे शक्तिशाली अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है—एक प्रकार की विश्व-सरकार है। जिन साधनों पर इसका नियंत्रण है और कर्ज एवं उधार लेनेवाले राष्ट्रों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप की इसे जो शक्ति प्राप्त हो गयी है उसकी राष्ट्रसंघ के लोग केवल कल्पना कर सकते हैं। सिर्फ अमेरिकी सैन्य प्रतिष्ठान इसकी बराबरी कर सकता है। साम्राज्यवाद की सेवा में दोनों परस्पर पूरक हैं। अ० मुद्रा-कोष के अनुशासन ने प्रत्यक्ष सैनिक हस्त-क्षेप की आवश्यकता अक्सर खत्म कर दी है। बिना हस्तक्षेप के अ० मुद्रा-कोष के कारण कर्ज लेनेवाले देशों में विदेशी पूँजी के अनुकूल स्थिति बनी रहती है।

अ० मुद्रा-कोष एक सम्पूर्ण व्यवस्था का अंग है। यह मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय महाजन है। इसके पास लगभग २३ अरब रुपये की पूँजी है। इसका इतना दबदबा है कि किसी देश का कोई विदेशी सहायता या कर्ज मिलना हो नहीं अगर वह अ० मुद्रा-कोष की 'सलाह' मानने से इनकार करता है। पूँजीवादी सरकारों और बाजारों ने इसे ऐसी शक्ति दे रखी है।

अविकसित विकासशील देशों पर इसे उनकी आर्थिक कमजोरी और विदेशी मुद्रा की कठिनाइयों के कारण अधिकार प्राप्त है। विदेशी मुद्रा का अभाव गरीब देशों को मनचाहा विकास करने और उससे सम्बन्धित संस्थाओं के पास कर्ज चुकाने और इन कठिनाइयों को दूर करने के साधन हैं। परन्तु ये कर्ज इसी शर्त पर देते हैं कि कर्ज लेनेवाले देश बढ़ती हुई मुद्रा-स्फीति को काबू में रखने के लिए कोई स्थिर कार्यक्रम चलाते हैं या नहीं। अ० मुद्रा-कोष का दावा है कि बढ़ती हुई मुद्रा-स्फीति ही आयात-निर्यात के सन्तुलन

(बैलेंस ऑफ पेमेन्ट्स) की कठिनाइयों के लिए उत्तरदायी है। इसलिए वे ऐसे कार्यक्रम कार्यान्वित करते हैं जिनमें तीन निम्नलिखित तत्त्व हों :

१—बढ़ती हुई मुद्रा-स्फीति के विरुद्ध घरेलू नीति, जिसमें सरकारी खर्च और बैंकों से दिये जानेवाले ऋण में कमी भी शामिल है। इसके कारण सरकारों को लोक-कल्याण के कार्यों में कटौती करनी पड़ती है, आर्थिक मन्दी होती है, बेरोजगारी बढ़ती है।

२—डालर की तुलना में सिक्के की कीमत में कमी, और विदेशी मुद्रा के खर्च पर प्रत्यक्ष नियंत्रण में कमी।

३—विदेशी पूंजी लगाने का प्रोत्साहन ऐसी नीति के द्वारा जिसमें हड़ताल विरोधी कानून और टैक्स में छूट से लेकर मुनाफा भेजने तक की गारन्टी दी जाय।

अ० मुद्रा-कोष का कहना है कि उसका उद्देश्य दूरगामी अदायगी के सन्तुलन की स्थिरता है (लांग टर्म बैलेन्स ऑव् पेमेण्ट स्टैबिलिटी), परन्तु उसका वास्तविक प्रभाव यह हुआ है कि पारम्परिक निर्यात में दूसरों पर निर्भरता बढ़ी है, जो कि अस्थिरता का वास्तविक कारण है। अगर सरकार इन नीतियों को अ० मुद्रा-कोष के कहने पर कार्यान्वित करती है तो इससे अर्थ-व्यवस्था या परिस्थिति सुधरती नहीं है, सिर्फ तात्कालिक मुद्रा की कठिनाइयों में थोड़ी देर के लिए राहत मिल जाती है। यह राहत नये कर्जों की शक्ल में, या पुराने कर्जों की अदायगी में थोड़ी सुविधा या उपयोग के सामानों के आयात के रूप में मिलती है। १९६५ के सैनिक विद्रोह के बाद का इण्डोनेशिया इस बात का उदाहरण है। विद्रोह के बाद उसे कर्ज इतना बड़ा मिला कि कुछ दिन बाद उसकी अदायगी में उसे दिवालिया हो जाना पड़ेगा। शायद ये कर्ज कुर्द को काबू में रखने में सहायक होंगे।

अगर सरकारें आई. एम. एफ. की बातें मानने से इनकार कर देती हैं तो इसे कर्ज प्राप्त करने में भारी कठिनाइयों का सामना करना होगा और उसे पूंजीवादी संसार में कहीं कर्ज नहीं मिलेगा और उस देश की कठिनाइयों का कारण उसकी 'सोशलिस्ट' नीतियों को बताया जायेगा। इस तरह कर्ज लेनेवाले देश, अपने महाजन देशों से बंधे रहते हैं, और वे अपनी इच्छानुसार कोई भी कदम नहीं उठा सकते। लेकिन ये कर्ज ऐसे हैं जो कर्ज लेनेवाले को महाजन के साथ हमेशा बांधे रहेंगे। इस स्थिति को 'कर्ज की अन्तर्राष्ट्रीय गुलामी' (इन्टरनेशनल डेट स्लेवरी) कहना सर्वथा उचित है। कोष के द्वारा लागू किये जानेवाले कार्यक्रमों में सोशलिस्ट नीति का कोई अंश नहीं होता। कोष के नियमों और कार्यों के कारण घरेलू सरकार द्वारा नियन्त्रित उद्योग खत्म हो जाते हैं। विदेशी फर्मों को इनसे बड़ा लाभ होता है। मानवीय दृष्टि से कोष के कार्यक्रम बड़े महंगे पड़ते हैं। कोष का अनिवार्य परिणाम यह होता है कि देश का विकास विदेशी पूंजी के मुनाफे के साथ जुड़ जाता है। विदेशी पूंजी को मुनाफा चाहिए और सूद के साथ पूंजी की अदायगी भी। उदाहरण के लिए, इण्डोनेशिया में बहुत सारे घरेलू उद्योग बन्द होने के लिए मजबूर कर दिये गये।

कोष के कार्यक्रमों का शिकार होनेवाला दूसरा देश फिलीपीन है। आई. एम. एफ. के कार्यक्रमों का किसी देश की आर्थिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ता है यह अर्जेन्टाइना के १९५९-६२ के प्रकाशित अध्ययन से देखा जा सकता है। इन कार्यक्रमों के कारण इन ५ वर्षों में प्रति व्यक्ति उपभोग (परकैपिटा कन्जम्पशन) में २० प्रतिशत कमी आयी। व्यापार और अदायगी का सन्तुलन बिगड़ गया। खराब आर्थिक स्थिति और राजनैतिक असन्तोष के कारण देश से पूंजी निकल गयी। बढ़ती हुई महंगाई पर काबू न पाया जा सका। इन ५ वर्षों में जीविका का खर्च (*कॉस्ट ऑफ लिविंग*) ४०० *प्रतिशत* बढ़ गया। किसी भी ५ साल के बीच ऐसा कभी नहीं हुआ था।

कोष के कार्यक्रम के बहुत से तत्त्व एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। कोष के चार्टर ने इसे इस बात का अधिकार नहीं दिया है कि यह कर्ज लेनेवाले देशों की आन्तरिक नीति पर नियन्त्रण रखे। हस्तक्षेप का अधिकार बाद में मिला जब कि लैटिन अमेरिकन देशों ने फण्ड से कर्ज लेना शुरू किया और इसे इस तर्क के साथ सही माना गया कि अदायगी के सन्तुलन की समस्याओं पर बढ़ती हुई महंगाई के सामने काबू नहीं पाया जा सकता। अदायगी-घाटों (पेमेण्ट डेफिसिट्स) पर काबू पाने का दूसरा रास्ता भी है, जो समाजवादी देशों ने अपनाया है, अर्थात् विनिमय-नियंत्रण (एक्सचेंज कन्ट्रोल) लागू करना।

यह स्पष्ट है कि कोष आर्थिक तौर पर कमजोर देशों के सम्बन्ध में बड़ा राजनैतिक रोल अदा करता है। कोष तटस्थ देशों में बड़ी ही भयानक राजनीति चलाता है। सामाजिक क्रान्ति कुचल *जाती है और लोकतंत्र मर जाता है।*

विदेशी मुद्रा के संकट के कारण १९५७ में भारत की सरकार इसके लिए मजबूर हो गयी कि अचानक अपने राष्ट्रीय और सामाजिक कल्याण की नीति को छोड़ दे ताकि विदेशी मुद्रा की राहत प्राप्त की जा सके। यही कहानी बहुत बार दुहराई गयी है। तटस्थ देशों में लोकतन्त्र की असफलता से अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ब्राजिल के लोकतंत्र का गला १९६४ में सैनिक विद्रोह ने घोंट दिया। ब्राजिल के लोकतन्त्र को दो बातों का सामना करना था। आर्थिक विकास के लिए जनता की मांग और विदेशी कर्जों का दबाव और आई. एम. एफ. द्वारा एक प्रभावशाली स्थिरता रखनेवाले कार्यक्रम की मांग। इससे निपटने के दो रास्ते थे। एक यह कि स्थिरता का प्रयास छोड़ दिया जाय जो जनवादी राजनैतिक हल की दिशा में था अर्थात् एकतरफा कार्रवाई करके विदेशी कर्ज वापस देने से इनकार कर→

तीर्थ-स्वरूप तात्यासाहब सरवटे

—निर्मला देशपाण्डे

[गत २६ जनवरी, ७२ को इन्दौर नगर के वयोवृद्ध लोकप्रिय राजनीतिक नेता, साहित्यकार, शिक्षाशास्त्री एवं समाजसेवक, भू० पू० संसदसदस्य, पद्मभूषण श्री वि० सी० सरवटे दिवंगत हो गये। उन्हें हार्दिक श्रद्धाञ्जलि। उनके बारे में यहां सर्वोदय सेविका सुश्री निर्मला देशपाण्डे द्वारा लिखित संस्मरण प्रस्तुत है। सं०]

उत्तरायण के शुक्ल पक्ष की एकादशी और २६ जनवरी—तीर्थस्वरूप तात्या के पवित्र जीवन की यह पवित्रतम पूर्णाहुति है। सचमुच, हम कैसे कितने धन्य! ऐसी पवित्र आत्मा का हमने निकट से दर्शन पाया! ऐसी पवित्र आत्मा का हमें सहवास मिला, आशीर्वाद मिला।

गत दस बारह साल के मधुर संस्मरण। कालिन्दी (स्व० तात्या की सबसे छोटी पुत्री) विनोबाजी के पास गयी और मैं उनके पास से इन्दौर आयी। एक अद्भुत संयोग। तब से तीर्थस्वरूप तात्या ने मुझे कालिन्दी की जगह माना और भरपूर वात्सल्य की जो वृष्टि की, उससे मुझे सतत शान्ति तुष्टि-पुष्टि मिलती रही। आरम्भ के कुछ सालों में मैं अनेक बार कस्तूरबाग्राम आयी थी और हर बार हमने "घर बैठे गंगा आयी" महसूस किया था। आदर्श, सच्चे गुरु में ज्ञान और प्रेम का संयोग होता है, वैसा ही उनमें था। कितनी सहजता से वे हमें ज्ञान दे जाते थे। स्वातन्त्र्य-संग्राम का जिन्दा इतिहास सामने खड़ा हो जाता था। संविधान परिषद के अनेक अनुभव सुनने को मिलते थे। बापू जैसे महात्मा से लेकर सामान्य कार्यकर्ताओं तक के मार्ग-दर्शन उनकी बातों से ही आते थे। और इसी के साथ नित्य आध्यात्मिक चर्चा होती थी। उनकी संगति एक पुनीत पर्व के समान अनुभव होती थी।

उनका जीवन था सतत जलनेवाला नन्दादीप। प्रकाश देना ही मानो उनका जीवन-कार्य था। दीर्घायु अनेक के लिए अभिशाप साबित होती है परन्तु उनके बारे में तो वह वरदान सिद्ध हुई। अतीतकाल की स्मृतियों को स्वच्छ बनाते हुए, नवकाल के नये व्यक्तियों को आगे बढ़ाने के लिए वे बल देते रहते थे। भारतीय संस्कृति की परम्परा का सार इसी चीज में समाहित है। इसमें नये-पुराने का संघर्ष नहीं रहता, बल्कि पुरानों के कन्धों पर बैठ कर नये लोग दूर का दर्शन कर लेते हैं, और प्रगति-पथ पर आगे बढ़ते हैं। इसी कारण समाज अखण्ड विकासशील बनता है। भावी पीढ़ियों को, पिछली पीढ़ियों का आधार मिलता है, उनसे स्पर्धा नहीं। कौटुम्बिक (पारिवारिक) तथा सामाजिक जीवन में

उन्होंने जो आदर्श प्रस्थापित किया उसका अनुसरण होगा तो जीवन कितना सुखमय और शान्तिमय बनेगा।

तीर्थस्वरूप तात्या मानो आस्तिकता की उपासना का मूर्तिमंत प्रतीक। सर्वत्र मांगल्य ढूंढ़ना और जहां कहीं उसका दर्शन होते ही उसका गुणगान करते रहना उनका स्वभाव ही हो गया था। इसलिए उनके विचार में, प्रवृत्ति में और वाणी में निरन्तर मांगल्य ही दृष्टिगोचर होता रहता था। उनके मुंह से मैंने कभी कटु शब्द सुना नहीं।

जराजर्जर जीर्ण शरीर, कमजोर दृष्टि, त्रासदायक बीमारियां इन सबके साथ उनकी ज्ञान-साधना अखण्ड चल रही थी, उसमें कभी खण्ड पड़ा नहीं। प्राचीन ऋषि की तरह वे अन्तिम समय तक अध्ययन करते रहे। ज्ञानसाधना की ऐसी उत्कट परम्परा कुछ थोड़े लोगों की भी हो, तो देश के उत्थान की शुरुआत होगी।

बड़ी-बड़ी बातें करनेवालों पर भी जीवन में कसौटी के समय कभी पीछे हटने का प्रसंग आता है। दुनिया को अध्यात्म का उपदेश देनेवालों की अपना लड़का संन्यासी बने, तो सहज सहन नहीं होता। तीर्थस्वरूप तात्या के जीवन की ऊंची उड़ान तो यही है कि उन्होंने कालिन्दी को विनोबा के पास जाने के लिए खुशी से इजाजत ही नहीं दी, प्रोत्साहन दिया। कालिन्दी ने लिखा यह निराला मार्ग उन्हें सुखकर महसूस हुआ, इसी में उनकी आध्यात्मिकता का सारा सार है। इस निराले मार्ग पर चलनेवालों का उन्हें कितना कौतुक था। "तुम जैसी लड़कियां धन्य ..." कह कर कितनी ही बार उनकी आंखें भर आती थीं। उनके उन आंसुओं में से मधुरता से झरनेवाला आशीर्वाद मेरे लिए सबसे मूल्यवान वस्तु थी।

आदर्श गृहस्थाश्रम का सारतत्त्व है "गृहाद् गृहेद् परायणम्"। तीर्थस्वरूप तात्या को यह सारतत्त्व प्राप्त हो इसलिए उसे ग्रहण करने की शक्ति परमेश्वर उनके परिवारजनों को दे, ईश्वर-चरणों में यही प्रार्थना।

—पत्र : सोमवार, २८ फर

—दिया जाए, और जेलों में सड़ रहे विदेशी ऐसे पक्ष कर लिये जायें। राष्ट्रपति गोलार्ट ने जब इस दिशा में बढ़ना चाहा तो सेना ने अमेरिका की स्वीकृति से सरकार उनसे छीन ली और अपनी सरकार बनायी।

यह पद्धति अर्जेन्टाइना में भी दोहरायी गयी। १९६६ में अर्जेन्टाइना के सैनिक विद्रोह की घटनाओं को देखने से स्पष्ट पता चलता है। आम जनता की इच्छा और प्रिय नेताओं की उम्मीदों को सौंपने से रोकने के लिए सैनिक दमन अनिवार्य समझा गया है। हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान में जो कुछ हो रहा है और जिस तरह लोकतन्त्र दिनोंदिन क्षीण हो रहा है। उसकी जड़ भी विश्व-मुद्रा-कोष के आर्थिक दबाव में ही है।

इसमें संदेह नहीं कि विश्वकोष का इस्तेमाल सामाजिक क्रान्ति और लोकतन्त्र को कमजोर करने में हो रहा है। अगर आज कोई दुनिया का इतिहास लिखता हो तो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष को अलग रखकर नहीं लिखा जा सकता।

—जोरिस वेदा, 'मंथली रिव्यू', सित०'७१

(पृष्ठ ३१२ का शेष)

पर जिन लोगों का प्रभुत्व है वे आक्रामक मानस (हॉक मेण्टालिटी) के है। केनेडी के समय इसमें कमी आयी थी, लेकिन जानसन के आने के बाद इसमें पुनः वृद्धि हो गयी और आज निक्सन के समय यह चरम सीमा पर है। इसके प्रधान अभिनेता किसिंगर और काह्न हैं। किसिंगर, हरमन काह्न, ग्लेन स्नाइडर, नॉर, वोलस्टेटर, मोर्गेन स्टर्न, ये लोग एक सिद्धान्त को आगे बढ़ा रहे हैं जिसे 'न्यूक्लियर डेटेरन्स थियरी' कहते हैं, यानी अणुबम गिराने की ऐसी व्यवस्था हो ताकि अगर कोई देश अमेरिका के आक्रमण करने के पहले अमेरिका पर आक्रमण कर दे और २-३ करोड़ लोग मार दिये जायं तो भी जवाबी आक्रमण के लिए हमारे पास ऐसी क्षमता शेष रहनी चाहिए जिससे हम उनके ३-४ करोड़ लोगों को मार सकें और उनकी आक्रमण करने की शक्ति खत्म कर दें ताकि वह दुबारा आक्रमण करने की स्थिति में न रह जाय और अमेरिका की विजय हासिल हो। यह उनका तर्कशास्त्र (लॉजिक) है। कहने का मतलब यह कि उनके लिए दो-चार करोड़ लोगों का मरना-मारना कोई बड़ी बात नहीं है, जिनमें सैनिक की संख्या बहुत ही कम होगी।

पिछले दस वर्षों में उनके विरोध में एक समूह बना है जिसका कहना है कि उनका यह गणित गलत है। इन विरोधी लोगों के कुछ नाम ये हैं केनेथ बोल्डिंग, अनातोल रापोपोर्ट, विजन्सि राइट (अभी-अभी मरे है), कार्ल डायच। ये लोग शान्तिमय पद्धति से युद्ध का विरोध करते हैं और यह मानते हैं कि अहिंसा भी आयुध के समान या उससे भी अधिक शक्तिशाली उपाय है जिससे समस्या का समाधान किया जा सकता है। अत, यहाँ पर अहिंसक मूल्य की कुछ झलक प्राप्त होती है। हम यह नहीं कहेंगे कि अहिंसक समाज बन जायगा, परन्तु उस तरफ कदम उठा है ऐसा तो हम मान ही सकते हैं।

प्रश्न : अमेरिकी-समाज को जिस स्थान पर जाकर ठिठक जाना पड़ा है और सोचने के लिए वह विवश हुआ है उस स्थिति में उसे भारतवर्ष से क्या सीखना चाहिए और भारतवर्ष को उससे क्या ग्रहण करना चाहिए ?

उत्तर : अमेरिका में लोग भारतवर्ष के बारे में जानने लगे हैं। जानने की जिज्ञासा उनके मन में पैदा हुई है, जो पहले नहीं थी। वे भारत की संस्कृति से प्रभावित होते हैं। भारतवर्ष के जो छात्र अमेरिका जाते हैं—उनसे वे प्रभावित होते हैं जबकि वे यह देखते हैं कि विज्ञान जैसे विषयों में भारतीय छात्र तेज हैं। दोनों देशों के लोगों के परस्पर के सम्पर्क का मौका जितना ज्यादा आयेगा आदान-प्रदान उतना ही अधिक होगा। इससे उनमें जो अहंकार का भाव है वह समाप्त होगा और भारत की संस्कृति से वे सीखेंगे।

आज भारत और अमेरिकी सरकारों के बीच जो तनाव पैदा हुआ है वह तात्कालिक है। दोनों देशों के नागरिकों के बीच तनाव नहीं है। बहुत ज्यादा दिनों तक दोनों देश अलग कैसे रहेंगे जबकि दोनों का विश्वास लोकतन्त्र में है? अमेरिकी जनता सरकार पर दबाव डाल सकती है, सरकार को बदल सकती है ताकि दोनों देशों का तनाव खत्म हो। भारत और पाकिस्तानी जनता के बीच भी तनाव उतना नहीं था, वह दूर किया जा सकता था, परन्तु यहाँ की सरकार ने इसे कम करने के बजाय बढ़ाया ही। सरकारों की इसमें बहुत बड़ी भूमिका होती है। अगर सरकारें कोशिश करें तो एक देश के नागरिकों का अन्य देश के नागरिकों के बीच अच्छा सम्बन्ध स्थापित हो सकता है।

अमेरिकी समाज जल्दबाजी में बहुत है। वह बहुत ही तेज गति से दौड़ लगा रहा है। उसके पास इतना अवकाश नहीं है कि चर्च में भी इत्मिनान के साथ आ सके। चर्च में मोटर से ही आता है और मोटर से बिना उतरे ही प्रार्थना करके वापस हो जाता है। विज्ञान में चूंकि ज्यादा तरक्की है अत. जो काम मनुष्य को करना चाहिए वे सब मशीनों द्वारा होते है। इसके कारण आदमी और आदमी का सम्पर्क कम होता है। इसका नतीजा यह हुआ कि वहाँ के आदमी में कोमल भावनाओं का विकास नहीं हो पाया। परन्तु अब उनका अन्य देशों की ओर देखने का रुख हुआ है। एक विद्रोह हो रहा है, प्रचलित समाज से। उसी में से हिप्पी आन्दोलन तथा हरेकृष्ण आन्दोलन का जन्म हुआ है। कला, प्रेम, करुणा, आदर, श्रद्धा के प्रति उनमें चेतना पैदा हो रही है। भारतीय संगीत के प्रति उनमें रुचि पैदा हुई है। अहिंसा को वे विकल्प मानने लगे हैं। आप देखिए—इन हरे कृष्णवालों को। इनको कोई मारे-पीटे भी तो वे क्रोधित नहीं होते।

अब यह सवाल बहुत ही दिलचस्प है कि भारतवर्ष अमेरिका से क्या सीखे ? हम अपने देश को न रूस बना सकते हैं, और न अमेरिका। हम बनायेंगे तो भारतवर्ष ही बनायेंगे। भारतवर्ष ने हजारों वर्षों में कुछ मूल्यों को विकसित किया है। उन मूल्यों को छोड़ना नहीं चाहिए। हम अपने मूल्यों को छोड़कर उनके प्रतिद्वन्द्विता-मूलक मूल्यों को लेंगे तो कहीं जायेंगे! भारतवर्ष में आधुनिकता के कारण पारिवारिक भावना नष्ट होती जा रही है, जो एक अच्छी भावना है। संयुक्त परिवार में सुरक्षा की जो गारंटी है वह व्यक्तिवादी समाज में नहीं है।

विज्ञान को स्वीकार करने का मतलब यह तो नहीं होना चाहिए कि हम अपनी परम्परागत उदात्त मूल्यों को भूल जायं। कला, अध्यात्म, धर्म, दर्शन आदि में जहाँ हम पहुँचे हैं उनमें हमारा एक महान अनुभव है। अगर हमने गीता, कुरान को खोया तो हम बहुत बड़ी चीज खो देंगे। चीन भी विज्ञान में प्राप्त अपने मूल्यों को नहीं छोड़ता। भौतिक समृद्धि प्राप्त करने की जो तेज होड़ लगी है वह हमारे लिए उचित नहीं है। इससे तो नाशोन्मुख संस्कृति का विकास होगा। 'उत्पादन करो,→

चुनाव और मेरी चिन्ता

—काका कालेलकर

आखिरकार "भारत-भाग्य-विधाता चुनाव" का महीना आ गया। सारे देश में कितनी दौड़धूप चलती होगी। मनुष्यों को और मोटर जैसे वाहनों को एक क्षण का भी आराम मिलना मुश्किल। चन्द लोगों के लिए तो यह महीना 'किस्मत की कसौटी' का है। उन सबके दिमाग तेजी से चलते होंगे। उनसे भी अधिक तेजी चलती होगी अखबारवालों के मस्तिष्क में। लेकिन मैं तो कशमकश में पड़ा हूँ। देश की स्थिति और देश की प्रगति के विषय में मैं हमेशा जाग्रत रहा हूँ। इसीलिए चिन्तित भी हूँ।

'आज देश के लोगों का ध्यान किन बातों पर है? राजनीति में अनेकानेक पक्षों का ढेर लग गया है। उनके अन्दर दिन-रात बेहूदी खींचातानी चलती है। प्रजा के प्रतिनिधियों में मनमाना पक्षांतर करने का नया सिलसिला शुरू हुआ है और चुनाव का 'जंग' खड़ा होने पर 'लड़ाई की तैयारियाँ' चलती हैं। लोगों को, और उनके अखबारों को, दूसरा कुछ सूझता ही नहीं।

कहा जाता है कि चुनाव-जंग के द्वारा मतदाताओं को और समस्त जनता को बड़ी कीमती राजनैतिक शिक्षा मिलती है। ब्रिटेन जैसे परिपक्व राजनैतिक बुद्धि के राष्ट्र में यह बात सही है। लेकिन हमारे यहाँ की जनता का प्रजा-जीवन हम जानते हैं। चन्द नेताओं के महत्व के भाषण और लेखों के बावजूद, कहना पड़ता है कि चुनाव के कारण जनता को शिक्षा नहीं किन्तु कुशिक्षा ही मिल रही है। जनता को 'शिक्षा' देने-वाले स्वयं उम्मीदवारों में परिपक्व राजनैतिक शिक्षा की मात्रा कितनी है? और जिनके पास परिपक्व बुद्धि और अनुभव है उनकी बातें भी आज कौन सुन रहा है? देश का वायुमंडल शुद्ध रखने का और "बिगड़ा हुआ सुधारने का" प्रयत्न कहीं भी दीख नहीं पड़ता। ऐसी हालत में उत्साह नहीं बल्कि चिन्ता ही मन को घेर रही है।

स्वराज्य-प्राप्ति के दिनों में हम लोग आपस में मतभेद होते हुए भी मिलकर काम करते थे। व्यक्तिगत दुश्मनी भूलकर स्वराज्य के हेतु सहयोग करने के लिए तैयार हो जाते थे। उसकी जगह आज हम क्या देखते हैं? जिन्होंने सारी जिन्दगी मिलकर काम किया, वे भी अलग-अलग होकर एक दूसरे का विरोध भी कर रहे हैं और निन्दा भी कर रहे हैं। स्वराज्य पाने के प्रयत्न का सतयुग स्वराज्य मिलते ही खत्म हुआ। और अब "सत्ता और सम्पत्ति" के लोभ में अन्तर्कलह का कलयुग मानो स्थापित हो चुका है।

लोग मेरी सलाह पूछते हैं। सलाह देने से जब मैं इनकार करता हूँ तब लोग कहते हैं "अच्छा, सलाह न दीजिये। लेकिन आप स्वयं अपना मत किसे देंगे इतना तो कहिये। आप किस पक्ष को अथवा किस व्यक्ति को चाहते हैं?

मैं कहता हूँ मुझे तो सबके सब पक्ष अच्छे लगते हैं। सबके सब उम्मीदवार मेरे मन में अच्छे हैं। और सबको तो मैं मत दे नहीं सकता इसलिए किसी को भी अपना मत नहीं देने में ही मैं सबका भला देखता हूँ।

मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि आगामी चुनाव के द्वारा [illegible] (आदिम जाति) गिरिजन अथवा भूमिजन और समस्त राष्ट्र के स्त्री जन आदि उपेक्षित वर्गों की उन्नति को मदद मिले। और जहाँ तक हो सके इन्हीं को प्रोत्साहन दिया जाय। 'राजनैतिक और सांस्कृतिक चरित्र के विकास के अभाव में हमारी एकता और स्वतंत्रता खतरे में आयी है', इस प्रधान बात को सारा राष्ट्र अच्छी तरह से समझ ले और राजनैतिक जीवन की शुद्धि के लिए सब लोग प्रयत्नवान बनें। ●

—खपत करो, खपत करो उत्पादन करो' का एक सिलसिला आरम्भ हो जायगा। हमारे यहाँ तो सादा और त्यागमय जीवन का विकास हुआ है उसी का पोषण होना चाहिए। अमेरिका का अन्धानुकरण समृद्धि तो उपलब्ध करा देगा, परन्तु जीवन के आन्तरिक स्रोत को सुखा देगा। हमारे जीवन में आत्मचिंतन, आत्म-विकास अन्तरमुखता की जो प्रधानता है वह आवश्यक है। इससे विमुख होना गलत साबित होगा। अतः हमें विकास और समृद्धि के साथ ही आध्यात्मिक तत्त्वों के साथ जुड़े रहने का निश्चय मिलना चाहिए।

एक बात पर और ध्यान देना चाहिए जिसके कारण औद्योगिक देशों को बुरे परिणाम भुगतने पड़ रहे हैं। कारखानों और मोटरों के धुँआ से शुद्ध हवा और कारखानों के गन्दे पानी से शुद्ध पानी का मिलना कठिन हो रहा है और अब इसके विरोध में उन देशों में आवाज उठने लगी है। सड़कों पर दुर्घटनाएँ बढ़ गयी हैं। अतः कहीं ऐसा न हो कि हम भी उसी स्थान पर पहुँच जायें। विज्ञापनबाजी अमेरिका में बहुत है, यूरोप में भी है और अब भारत में भी रेडियो से विज्ञापन करने की भी छूट दी गयी है। विज्ञापन के द्वारा मनुष्य को उपभोग की ओर उन्मुख होने की शिक्षा मिलती है। अतः विज्ञापनबाजी से भारत-वर्ष को बचाना चाहिए।

प्रस्तुतकर्ता : दीनबन्धु

चुनाव और हम

१. हमारी चिंता का विषय लोकतंत्र है न कि किसी पार्टी या उम्मीदवार की हार-जीत। इसलिए हम प्रयत्न करेंगे, जहाँ भी कर सकेंगे, कि चुनाव मुक्त और निष्पक्ष हों।

२. पुष्टि के सघन क्षेत्रों में तथा हमारे केन्द्रों और संस्थाओं के प्रभाव-क्षेत्रों में विशेष रूप से हम अपनी बात मतदाताओं के सामने प्रस्तुत करें।

३. पुष्टि के सघन क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य-सभाएँ और प्रखण्ड-स्वराज्य-सभाएँ अपनी ग्राम-शान्तिसेना और तरुण-शान्तिसेना के साथ विशेष रूप से सामने आयें। वे ये काम कर सकती हैं :

(क) मतदाताओं को पर्चे, पोस्टर, गोष्ठी, सभा द्वारा बतायें कि उनके वोट का क्या मूल्य है, लोकतंत्र को बनाये रखना क्यों उनका कर्तव्य है, और किसी भी उम्मीदवार को गुप्त मतदान का उनका अधिकार है। इसलिए वे पैसे के लोभ या डंडे के भय से वोट न दें।

(ख) वे देखें कि उनके गाँव या प्रखण्ड में किसी वोटर पर अनुचित दबाव न डाला जाय, और न तो बोगस वोट डलवाया जाय। मतदान में बच्चों का इस्तेमाल प्रचार या बोगस वोट के लिए न हो।

(ग) मतदान के अवसर पर शान्तिसेना के सैनिक मतदान केन्द्र पर रहें। वे गाँव से दबे हुए, डरे हुए वोटरों को वोट के लिए अपने साथ ला सकते हैं। हमारा काम है कि अनीति के विरुद्ध आवाज उठायें और उसे रोकने का हर सम्भव अहिंसक उपाय करें।

(घ) संयुक्त मंच गठित हो जहाँ आकर सब उम्मीदवार एक साथ अपनी अपनी बात मतदाताओं को समझायें।

४. जहाँ ग्राम या प्रखण्ड-स्वराज्य-सभाएँ नहीं बनी हैं वहाँ तदर्थ समितियाँ बनायी जा सकती हैं और वालंटियर भर्ती किये जा सकते हैं। जिन ग्रामीण क्षेत्रों में हमारा विकास का काम होता है और जहाँ शहरों या देहातों में हमारे शान्ति-केन्द्र या गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान के केन्द्र हैं उनमें यह पद्धति अपनायी जा सकती है।

५. कुछ क्षेत्र स्थायी मतदाता-शिक्षण के लिए चुने जाने चाहिए।

६. जिन मित्रों को रुचि हो वे अपने सीमित क्षेत्र में चुनाव का अध्ययन करें और एक संक्षिप्त विवरण 'सर्वोदय-भूदान-यज्ञ' में भेजें। अध्ययन के मुद्दे ये हो सकते हैं :

(क) प्रचार के प्रकार—लिखित, मौखिक; मनाने, दबाने, लुभाने के उपाय।

(ख) वोट के दिन—
मतदान केन्द्र का दृश्य
सवारियों का इस्तेमाल, वोटरों को रोकना।

(ग) विद्यार्थियों, बच्चों का इस्तेमाल।

(घ) वोटरों की चुनाव में रुचि।

(ङ) अन्य कोई उल्लेखनीय बात।

७. इस अवसर पर राजनीति बनाम लोकनीति की बात भी मतदाताओं को समझायी जा सकती है।

भारत—बंगलादेश—पाकिस्तान

भुट्टो की कुछ समस्याएँ

भुट्टो की कुछ समस्याएं ये हैं : (क) पश्चिमी पाकिस्तान में लोकतांत्रिक राजनीति का न होना जिसके कारण किसी बुनियादी सुधार के लिए आवश्यक लोकमत बनाना कठिन होगा; (ख) उनका अपना दल, (ग) पाकिस्तानी सेना। जब तक पाकिस्तान की राजनीति नहीं बदलती वहाँ कोई गहरे परिवर्तन नहीं हो सकेंगे।

लेकिन नयी लोकतांत्रिक राजनीति के विकास के रास्ते में गम्भीर अड़चनें हैं। भुट्टो स्वयं अधिकारवादी व्यवस्था (अथारिटेरियन सिस्टम) के अध्यक्ष बने हुए हैं। उसके स्थान पर उन्हें लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित करनी है। कैसे करेंगे? नया संविधान कैसे बनेगा? विभिन्न राज्य अपने-अपने अधिकारों की माँग कर रहे हैं। उनको मानते हुए पाकिस्तान में किस तरह का संघ बन सकेगा? इसके अलावा पाकिस्तान की जनता को अब तक अध्यक्षीय शासन (प्रेसिडेंशल सिस्टम) का ही अभ्यास हुआ है। क्या वह अपने मन को लोकतांत्रिक पद्धति के अनुकूल बना सकेगी? भुट्टो का अपना स्वभाव भी अध्यक्ष होने का है, न कि प्रधानमंत्री होने का। और, पाकिस्तान में अध्यक्ष बराबर तानाशाह रहा है।

दूसरा प्रश्न है सेना और सरकार के सिविल अधिकारियों के बीच का सम्बन्ध। यह सही है कि भुट्टो ने कुछ सैनिक अधिकारियों को मिलाकर कुछ को हटाया है। लेकिन लोकतांत्रिक पद्धति में तो पूरी सेना को बैरकों में बन्द करना पड़ेगा। क्या भुट्टो के प्रिय-पात्र जेन० गुलहसन, एयर मार्शल रहीम खाँ, या जेन० टिक्का खाँ राजनीति को छोड़कर मात्र सैनिक बनना स्वीकार करेंगे? उनके राजनीति में रहते हुए लोकतंत्र कैसे चलेगा?

तीसरी समस्या है पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति। अपना देश का बाजार हाथ से निकल चुका है। अब पश्चिमी→

मुसहरी की पदयात्रा–२

ग्रामस्वराज्य-सभाएं : सक्रिय और निष्क्रिय

ग्रामस्वराज्य-सभाओं की कुल संख्या १०० से ऊपर है, लेकिन यह कहना कठिन है कि सभी सभाएँ ठोस हैं। निष्क्रिय सभाओं से सक्रिय सभाओं की संख्या काफी कम है। अभी ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है, किन्तु हमारी प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए कि सक्रिय सभाओं की संख्या बढ़ती चले। यह प्रक्रिया अभी नहीं चल रही है। और, यदि सभाएँ सही अर्थ में सक्रिय हों तो भले ही उनकी संख्या सौ में पच्चीस हो, चिन्ता की बात नहीं है। हमें यह मानकर चलना चाहिए कि अपनी अन्दर की शक्ति से चलनेवाली सभाएँ अभी कुछ दिनों तक सौ में २५ से अधिक नहीं होंगी।

आज जो भी सक्रियता दिखायी देती है वह मुख्य रूप से दो चीजों को लेकर है। एक है खेती-सिंचाई आदि की सुविधाओं का आकर्षण और दूसरी है गाँव के झगड़ों को तय करने की कोशिश। ये दोनों चीजें हमारे लिए महत्व की हैं क्योंकि हमारी क्रान्ति मूलतः रचनात्मक है, इसलिए उसमें अभाव, अज्ञान, और अन्याय के तीनों मोर्चों पर एक साथ अभियान चलाने की गुंजाइश ही नहीं, जरूरत भी है। प्रश्न है कि हम कार्यों का क्रम क्या रखें और उनके लिए माध्यम क्या तैयार करें। किस क्रम से, और किस माध्यम द्वारा कार्य हो रहा है, इसका ग्रामस्वराज्य की व्यूह-रचना की दृष्टि से बहुत अधिक महत्व है। अगर ग्रामस्वराज्य का चित्र मन में हो और उसकी दिशा स्पष्ट हो तो सेवा या कल्याण के सामान्य कार्य भी क्रान्तिकारी बनाये जा सकते हैं। गाँवों से लौटने पर, लोगों की बातें सुनकर, उनकी गतिविधि देखकर, किसी के मन में यह सवाल बना रह जा सकता है कि गाँव पीछे कम-से-कम दो-चार आदमियों के दिमाग में ग्रामस्वराज्य का चित्र और अधिक स्पष्ट होना चाहिए था। कुछ लोगों के मन में इतना भी 'कमिटमेन्ट' न हो तो नया नेतृत्व कैसे बनेगा? ग्रामस्वराज्य की गाड़ी का इंजन कैसे तैयार होगा?

जो सभाएँ बनी हैं उनमें कई ऐसी हैं जिनके मंत्री युवक हैं। विद्यार्थी भी हैं। उनमें उत्साह है, चलाना है। लेकिन अभी उनको क्रान्ति के तत्त्वज्ञान और 'डाइनेमिक्स' में दीक्षा लेना बाकी है। अभी इतना ही है कि वे गाँव के लिए 'अच्छा काम' कर रहे हैं। लेकिन यह भी कोई कम बात नहीं है कि वे गाँव—और गाँव में भी गरीब को—सामने रखकर सोचने लगे हैं। यह नयी चेतना मुख्य रूप से १६ साल से ३५ साल तक के युवकों में दिखाई देती है। उन्हें ज्यादा शिक्षित-प्रशिक्षित करने और एक सूत्र में बाँधने की जरूरत है। ऐसा ग्राम-शान्तिसेना के माध्यम से ही किया जा सकता है। यद्यपि कुछ गाँवों में तरुण-शान्तिसैनिक बने हुए हैं, फिर भी तरुण-शान्तिसेना और ग्राम-शान्तिसेना की दृष्टि से अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

युवकों के अलावा नये नेतृत्व के दूसरे स्रोत हैं ग्रामस्वराज्य-सभाओं के पदाधिकारी—अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष, और शान्तिसेना के नायक। पदाधिकारी और ग्राम-शान्तिसेना को मिलाकर नया नेतृत्व बनता है। यह देखकर खुशी हुई कि कुछ सीनियर लोग नेकनीयती के साथ ग्रामस्वराज्य-सभा के काम में दिलचस्पी ले रहे हैं। उनका आशीर्वाद मिल रहा है, यह बहुत है। वृद्ध के आशीर्वाद और युवक के पुरुषार्थ के मिलने में ग्रामस्वराज्य-सभा की सफलता की कुंजी है।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं की शक्ति ग्रामवासियों की निष्ठा प्राप्त करने में है। स्पष्ट है कि इस प्रयत्न में उनके सामने चार कठिनाइयाँ हैं : (१) मालिकों के आपसी झगड़े, (२) मजदूरों का अविश्वास (३) सरकारी रुकावटें, (४) गाँव के लगभग सभी चेतन व्यक्तियों का किसी-न-किसी राजनैतिक दल से लगाव। सार्वजनिक कार्यों के प्रति अरुचि और सामान्य प्रमाद आदि मनोवैज्ञानिक तथ्यों को अलग हल करना पड़ेगा। लेकिन ये चार बातें ऐसी हैं जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। मालिकों के आपसी झगड़े, जिनमें वे गाँव के दूसरे लोगों को भी लपेट लेते हैं, आपसी ढंग से हल करने पड़ेंगे। ऐसा कुछ सभाओं में हुआ भी है। मजदूरों और भूमिहीनों का विश्वास प्राप्त करना आसान नहीं→

—पाकिस्तान को अर्थनीति को अपने पैरों पर खड़ा होना होगा। इस नीति में विदेशी सहायता का क्या रोल होगा? यह सहायता किन-किन देशों से आयेगी? क्या विदेशी सहायता आर्थिक सुधारों के मार्ग में बाधक नहीं होगी? सच बात तो यह है कि इन कठिनाइयों का मुकाबिला वही सरकार कर सकती है जो सीधे-सीधे जनता से शक्ति प्राप्त करती हो।

अन्त में पाकिस्तान के सम्बन्ध में दो बातें सामने आती हैं। या तो पाकिस्तान अभी कुछ दिनों तक अस्त-व्यस्त रहेगा, या भुट्टो पाकिस्तान में स्थिरता लाने में सफल होंगे। लेकिन यह ऐसा तभी कर सकते हैं जब वह स्वयं भारत के विरुद्ध आग उगलना छोड़ दें, और देशवासियों से भी छोड़ने को कहें, और पूरी शक्ति भीतरी स्थिति को सुधारने में लगायें।

भारत के हित में यही है कि पाकिस्तान स्थिर हो, लोकतान्त्रिक, शक्तिशाली और विदेशी शक्तियों के दबाव से मुक्त हो। इसलिए हमें अपनी ओर से भुट्टो और पाकिस्तान की जनता को आश्वस्त कर देना चाहिए कि हम उनका भला चाहते हैं। साथ ही हमें इस बात के लिए भी तैयार रहना पड़ेगा कि पाकिस्तान हमारे लिए चिन्ता के अवसर पैदा करता रहेगा।

—प्रो० गिरिधर गुप्त,
'सोमवार', फरवरी '७२

है। उनका विश्वास प्राप्त तभी हो सकेगा जब हम भूमिहीनता, मजदूरी, बँटाईदारी, कम सूद पर ऋण आदि प्रश्नों पर गम्भीरतापूर्वक विचार शुरू करेंगे, और ग्रामस्वराज्य-सभा की बैठकों में गरीबों की कठिनाइयों को सुलझाने की कोशिश करेंगे।

यह बात माननी पड़ेगी कि ग्रामसभाओं का जितना ध्यान बीघा-कट्ठा भूमि प्राप्त करने की ओर जाना चाहिए था उतना नहीं गया है, बल्कि यह मानना पड़ेगा कि इस प्रश्न की उपेक्षा हुई है। बावजूद इसके कि कुछ जमीन बीघा-कट्ठा में प्राप्त हुई है और बँटी है, शायद हमारे ग्रामीण सहयोगियों के मन से यह बात निकलती नहीं कि जमीन कौन देगा? यह बात भी है कि कई ग्राम और प्रखण्ड-सभाओं के मुख्य लोगों ने भी अभी तक अपना बीघा-कट्ठा नहीं निकाला है, या निकालना चाहते नहीं हैं, इसलिए जान-बूझ कर जमीन के प्रश्न को नहीं उठाते, और यह भी चाहते हैं कि दूसरे भी न उठायें। ऐसी स्थिति में अगर गाँव के गरीबों को लगे कि उन बातों को जिनसे उनका सीधा सम्बन्ध है, टाला जा रहा है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ग्रामपंचायतों का प्रश्न टेढ़ा भी है, और किसी अर्थ में टेढ़ा नहीं भी है। यह सही है कि पंचायतों के कुछ मुखिया, पंच-सरपंच आदि नयी ग्राम-सभा को अपना प्रतिद्वंद्वी मानने लगे हैं। वे सोचते हैं कि ग्रामस्वराज्य-सभाएँ मजबूत हो जायेंगी तो सत्ता उनके हाथों से निकल कर जनता के हाथों में चली जायगी। इतना ही नहीं, वे देखते हैं कि ग्रामस्वराज्य-सभा मालिकों और महाजनों के लिए, जो वे स्वयं होते हैं, एक नया अंकुश बन सकती है। दोनों दृष्टियों से कभी-कभी दुराव भी होता है। उन्हें ग्रामस्वराज्य-सभा के प्रति शंका होती है, लेकिन हमें ऐसी स्थिति को सामान्य मानना चाहिए। हर समाज में स्थिर हितों और पुराने संस्कारों के कारण परिवर्तन की प्रक्रिया में ऐसी रुकावटें आती हैं। यह समाज का 'नारमल रेजिस्टेंस' है। हमें धैर्य के साथ अपना काम करते जाना चाहिए। 'सर्व' से भय या अरुचि चाहे जितनी हो, उससे अलग रहने का साहस बहुत कम लोगों में होता है। पंचायतों के कुछ लोगों के विरोध से जन-जन को स्पर्श करनेवाले किसी आन्दोलन का कुछ बिगड़ने का खतरा नहीं है।

यही बात राजनैतिक कार्यकर्ताओं के बारे में भी है। पहले वे सिद्धान्त का नाम लेकर ग्रामस्वराज्य को अव्यावहारिक बताते हैं, फिर कानून की दुहाई देते हैं, लेकिन जब देखते हैं कि काम गाँव का है और गाँव खुद आगे बढ़ रहा है तो ये गाँव के साथ हो जाते हैं। गाँव में रहने और गाँव का जीवन बितानेवाले कार्यकर्ता का रस 'नेता-टाइप' कार्यकर्ताओं के रस से भिन्न होता है। स्थानीय 'नेताओं' को अपने प्रभाव और प्रभुत्व की अधिक चिन्ता होती है, गाँव के काम की कम।

लेकिन स्थिति ऐसी है कि गाँव के अधिकांश चेतन व्यक्ति किसी-न-किसी राजनैतिक दल से जुड़े हुए हैं। इसका उनके काम और विचार पर प्रभाव पड़ता है।

इसका क्या उपाय है? यह स्पष्ट है कि दलबन्दी और ग्रामस्वराज्य-सभा का मेल नहीं है। लेकिन कोई सभा, गाँव की हो या ब्लाक की, अपनी सदस्यता के लिए दल-मुक्ति की शर्त नहीं बना सकती। इसे हर एक को खुले दिल से स्वीकार करना पड़ेगा। लेकिन वह यह जरूर कह सकती है कि उसका कोई पदाधिकारी ऐसा न हो जिसने ग्रामदान की शर्तें न पूरी की हों, तथा जो किसी दल का सक्रिय सदस्य हो क्योंकि वह सबके साथ जिसमें दूसरे दल के लोग भी होंगे, निष्पक्ष व्यवहार नहीं कर सकता, लोगों को उसकी निष्पक्षता में विश्वास नहीं होगा। दूसरी बात यह कही जा सकती है कि गाँव का काम सर्वसम्मति से होगा—किसी विशेष स्थिति में सर्वानुमति से भी—इसीलिए गाँव में दलबन्दी का काम नहीं है। अगर गाँव के लोग दलबन्दी से अलग रहेंगे तो गाँव में रहनेवाली पार्टियों के कार्यकर्ताओं की निष्ठा बदलेगी; उनमें भी दलनिष्ठा के स्थान पर ग्रामनिष्ठा आयेगी। कम-से-कम इतना अवश्य होगा कि सक्रिय लोग अपनी 'राजनीति' को गाँव के बाहर रखेंगे, और गाँव में ग्रामस्वराज्य-सभा का निर्णय मानेंगे। हर हालत में ग्रामस्वराज्य के कार्यकर्ताओं और सहयोगियों को बार-बार गाँव की बात सामने रखनी होगी। उन्हें स्वयं इस बात का ध्यान रखना होगा कि वे किसी व्यक्ति, जाति या दल आदि के विरोधी न बनें। उनके आचरण से गाँव का वातावरण बदलेगा। ग्रामस्वराज्य में जरूरत पड़ने पर अनीति और अन्याय का प्रतिकार किया जा सकता है, लेकिन उसमें स्थायी रूप से विरोध या संघर्ष की नीति अपनाने की गुंजाइश नहीं है।

मुसहरी में, तथा दूसरी जगहों में भी ग्रामस्वराज्य-सभाओं की निष्क्रियता के कई कारण हैं। प्रमाद, अनास्था आदि सामान्य कारण हैं जो हर जगह हैं। उसके अलावा ये कारण भी हैं. (क) कार्यकर्ता का गाँव से सतत सम्पर्क न रहना; (ख) अगुआ व्यक्तियों की किसी अपेक्षा, मुख्य रूप से विकास-सम्बन्धी, का पूरा न होना, (ग) कार्यकर्ता की क्षमता या निष्पक्षता में भरोसा न होना; (घ) पदाधिकारियों का ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर करने के बाद भी भीतर-भीतर उसके कार्यक्रम में अरुचि, (ङ) पदाधिकारियों के मन में बीघा-कट्ठा देने की तैयारी न होना, जिसके कारण वे नहीं चाहते कि ग्रामस्वराज्य-सभा सक्रिय हो, (च) मुकदमेबाजी के कारण गुटबंदी, (छ) राजनैतिक दलबंदी के कारण सर्वमान्य निर्णय और नेतृत्व का अभाव। (ज) गाँव की बदलना का पूरे साल कार्यक्रम का न होना।

अगर ग्रामस्वराज्य-सभाओं के पक्ष

आन्दोलन के समाचार

भू-मुक्ति-आन्दोलन

गत सप्ताह सहारा में विशाल भूमि-मुक्ति सम्मेलन हुआ।

सात हजार से अधिक आदिवासियों ने इस सम्मेलन में हिस्सा लिया। सभी राजनैतिक दलों का समर्थन इस सम्मेलन को मिला, यह इसकी विशेषता मानी जाती है।

यहाँ के आदिवासियों की हजारों एकड़ जमीन जमींदार वर्ग ने गैर-कानूनी ढंग से अपने कब्जे में कर रखी है।

जिले में खेतिहर मजदूरों में अधिक आदिवासी होने के कारण व वर्षों से बड़े जमींदारों द्वारा शोषित व पीड़ित होने के कारण उनकी अस्मिता अब जाग उठी दिखाई देती है।

सम्मेलन ने शासन से यह भी अनुरोध किया है कि १५ अगस्त '४७ के बाद जिन आदिवासियों की जमीनें साहूकारों के पास चली गयी हैं, वह आदिवासियों को वापस मिलनी चाहिए।

आगरा में ग्रामदान पदयात्रा

उ० प्र० सर्वोदय मंडल के निश्चयानुसार आगामी २ मार्च से ११ मार्च '७२ ई० तक आगरा जिले में ग्रामदान-पदयात्रा का आयोजन किया गया है।

इस पदयात्रा में भाग लेने के लिए सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री० ठाकुरदास बंग, उ० प्र० सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्द तथा उ० प्र० के प्रमुख सर्वोदयी नेता श्री कपिल भाई ने २ मार्च से ११ मार्च तक के लिए अपनी स्वीकृति प्रदान की है।

डाकू सरदार माधोसिंह आत्म-समर्पण के लिए तत्पर

चम्बलघाटी शांति समिति के एक वरिष्ठ सदस्य श्री हेमदेव शर्मा ने एक भेंट में चम्बल क्षेत्र के दुर्दान्त दस्यु माधोसिंह के एक कथित पत्र का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है।

'हमलोगों ने जयप्रकाश नारायणजी की अपील पढ़ी है। हमें खुशी है कि जयप्रकाश नारायणजी ने यह काम उठाया है और तीनों प्रदेशों की सरकारों की सहानुभूति उन्हें प्राप्त है।

'हम, जो डाकू या समाज-विरोधी तत्त्व कहे जानेवाले लोग हैं, वे परिस्थिति के दबाव के कारण बने हैं। हम भी कभी शांतिप्रिय नागरिक थे और आज भी शांतिपूर्वक जीवन जीना चाहते हैं। देश की हर मुसीबत का असर हम पर भी होता है, लेकिन समाज और सरकार की ओर से हमारे लिए सभी रास्ते बन्द होने के कारण हम मन मसोस कर रह जाते हैं।

'जयप्रकाश नारायणजी की अपील पर मैं और मेरे साथी तथा कई गैंग के लोग आत्मसमर्पण के लिए तैयार हैं।

'हमें विश्वास है कि समाज और सरकार हमारे बारे में नये ढंग से सोचेगी और समाज में शांति बनाये रखने तथा हम बागियों को नया जीवन जीने देने के लिए जयप्रकाश नारायणजी द्वारा चलाये गये अभियान में पूरा-पूरा सहयोग करेगी।'

यह स्मरणीय है कि चम्बल घाटी क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों से शांतिसैनिक डाकुओं के आत्मसमर्पण के लिए प्रयास कर रहे हैं। इस मुहिम में उन्हें केन्द्रीय एवं राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश सरकारों का भी सहयोग प्राप्त है। (सर्वेस)

खादी ग्रामोद्योग संगठक अभ्यासक्रम

खादी ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी), श्रीगांधी आश्रम, सेवापुरी का ११ माह का खादी ग्रामोद्योग संगठक अभ्यास क्रम का प्रशिक्षण १ मई '७२ से प्रारम्भ होने जा रहा है। प्रशिक्षार्थियों की न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता हाई स्कूल या उसके समकक्ष होनी चाहिए। चुने हुए प्रशिक्षार्थियों को ६०) मासिक छात्रवृत्ति दी जायेगी। आवेदनपत्र ३० मार्च '७२ तक संचालक, खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, श्रीगांधी आश्रम सेवापुरी (वाराणसी) के पास पहुँच जाना चाहिए।

चर्मोद्योग प्रशिक्षण

श्रीगांधी आश्रम, सेवापुरी, वाराणसी का १ वर्षीय चर्मोद्योग प्रशिक्षण आगामी १ अप्रैल '७२ से शुरू हो रहा है। शैक्षणिक योग्यता आठवाँ पास, पेशेवर व्यक्तियों की योग्यता में छूट दी जा सकती है। प्रशिक्षण-काल में ६०) मासिक छात्रवृत्ति मिलेगी। सफल प्रशिक्षणार्थी को आने-जाने का मार्ग-व्यय भी दिया जायेगा। आवेदन पत्र १५ मार्च '७२ तक आ जाना चाहिए।

व्यवस्थापक

श्रीगांधी आश्रम

सेवापुरी, वाराणसी

—मैं मानता नहीं कि कभी जल्दी ही प्रखंड-स्वराज्य-सभा के गठन में कठिनाइयाँ पैदा होंगी। शुरूआत में ग्रामस्वराज्य-सभा के पदाधिकारियों का सर्वसम्मत चुनाव अभी तक नहीं हो सका है। ग्रामस्वराज्य-सभाओं के गठन में सर्वानुमति की कमी रही है।

हमें हर ग्रामस्वराज्य-सभा की निष्क्रियता के कारणों की अलग-अलग खोज करनी चाहिए। किसी एक कारण से सभी सभाएँ शिथिल नहीं बनती या रहतीं। शिथिल होकर भी यह सम्भव है कि वे सही दिशा में प्रगति न करें, इसलिए सक्रियता के साथ-साथ दिशा भी सही रहनी चाहिए।

इस सम्बन्ध में नेतृत्व-प्रशिक्षण (लीडरशिप ट्रेनिंग), और कार्यकर्ता-शक्ति के निर्माण (कैडर-फार्मेशन) का अत्यधिक महत्त्व है। अब पुष्टि के सभी सदन दोनों को इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए।

—राममूर्ति

भूदान-तहरीक

उर्दू पाक्षिक

सालाना चंदा : चार रुपये

पत्रिका विभाग

सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ २८-२-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

सहरसा का अभियान : बाबा का सन्देश

ग्रामस्वराज्य समिति की एक बैठक में बिहार के कार्यकर्ताओं ने उत्साह-पूर्वक सर्व-सम्मति से निर्णय लिया है कि ता० १८ मार्च से १८ अप्रैल तक पूरे सहरसा जिले में सघन कार्य और ता० १८ अप्रैल को गाँव-गाँव में भूमि-वितरण समारोह किया जाय। इसके लिए प्रदेश के कार्यकर्ताओं को तथा अन्य प्रदेशवालों को भी निमन्त्रित किया जा रहा है। ये ५०० कार्यकर्ता ता० १८ मार्च को सहरसा में एकत्र हों, वहाँ उनका दो दिन का शिविर हो तथा फिर वे जिले के हर प्रखण्ड में महीने भर के लिए फैल जायँ। जिला ग्रामस्वराज्य अभियान समिति ने इस निर्णय का हार्दिक स्वागत किया। चर्चा के दौरान सुश्री सुशीला बहन ने कहा कि धार्मिक समारोह की तरह मनाने की बात है तो इस समारोह के लिए जनता की श्रद्धा आकर्षित होनी चाहिए। यज्ञ आदि के अनुष्ठान के लिए जनता की श्रद्धा होती है तो कितना बड़ा आयोजन खड़ा हो जाता है। ईश्वराधार वृत्ति के बिना जब परिवार या संस्था के आधार से सुरक्षा का घेरा खड़ा किया जाता है, तो आयोजन को धार्मिक स्वरूप नहीं प्राप्त होता। त्याग व पावित्र्य की प्रेरणा जितनी तीव्र होगी, उतना उसका तेज प्रकट होगा। इसलिए इस समारोह में शामिल होनेवाले लोग एक माह के लिए स्वतः प्रेरणा से अपना समय देकर इस यज्ञ-कार्य में शामिल हों, यह ज्यादा अच्छा होगा। सबने इस दृष्टि को मान्य किया और तय किया कि इस कार्य को सफल करने के लिए अभी से योजना-पूर्वक तैयारी शुरू कर दी जाय। इसकी तफसील तय करने के लिए अध्यक्ष श्री राजेन्द्र मिश्र, मंत्री श्री महेन्द्र नारायण, सुश्री निर्मला बहन, सुश्री सुशीला बहन, श्री विद्यासागर भाई, श्री बृजमोहन शर्मा, श्री कृष्णराज मेहता, श्री सिद्धराज ढड्ढा, श्री कामेश्वर बहुगुणा तथा श्री तपेश्वर भाई की उपसमिति बनायी गयी है। •

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

सर्व सेवा संघ का छःमाही अधिवेशन ता० २५ अप्रैल '७२ को दोपहर के २ बजे से नकोदर, जिला जालंधर (पंजाब) में होगा। अधिवेशन ता० २५, २६, २७ एवं २८ को सबेरे १२ बजे जारी रहेगा। सब लोकसेवकों की उपस्थिति प्रार्थनीय है।

इस अधिवेशन में निम्न विषय रहेंगे :

१—दिवंगतों को श्रद्धाञ्जलि

२—पिछली बैठक की कार्यवाही की स्वीकृति

३—मंत्री की रिपोर्ट (१२ अक्तूबर '७१ से अप्रैल '७२)

४—सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का निर्वाचन

५—देश की परिस्थिति एवं ग्राम-स्वराज्य

६—मतदाता-शिक्षण

७—लोक-सेवकों की एवं सर्वोदय मण्डलों की सक्रियता कैसे बढ़े ?

८—तरुण-शांतिसेना एवं ग्राम-शांतिसेना

९—खादी

१०—अध्यक्षकी अनुमतिसे अन्य विषय

संघ के आगामी अधिवेशन की विषय-सूची ऊपर दी हुई है। सर्वोदय मण्डलों से प्रार्थना है कि वे प्राथमिक, जिला एवं प्रदेश सर्वोदय मण्डलों की बैठक बुलाकर इस पर चर्चा करें और निष्कर्ष भेजें। अन्य कोई विषय संघ-अधिवेशन में लेना हो तो वे भी १० अप्रैल तक सुझाने की कृपा करें।

मंत्री, सर्व सेवा संघ

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष १८ अंक २३, सोमवार, ६ मार्च

सर्व सेवा संघ प्रकाशन विभाग,

राजघाट, वाराणसी-१

तार : सर्वसेवा • फोन : ६४३९१

सम्पादक

राममूर्ति

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ

भूदानमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

चुनाव का रंग

चोला जनता का हुआ इस चुनाव में रंग।
नेताओं का इस तरह बदल गया है ढंग।
बदल गया है ढंग मान अपना घर छोड़ें।
होकर के अति नम्र हाथ जनता से जोड़ें।
कहै नम्र कविराय बाद में देंगे धोखा।
भले रंग इस समय रहे जनता का चोला।

जनता का कुछ इस तरह हो जायेगा हाल।
बीत जायगा जब यहाँ इस चुनाव का काल।
इस चुनाव का काल कि जब नेता आयेंगे।
कर जोड़ी जनता को छोड़ चले जायेंगे।
कहैं नम्र कविराय, कि सब चेते क्या बनता।
नेता खायें माल, मरेगी भूखी जनता

ग्रामस्वराज्य की पहली जिम्मेदारी : शिक्षा में क्रान्ति

प्रिय कृष्णराज,

पिछले पत्र में मैंने लिखा था कि मेरी यात्रा अगर उन प्रखण्डों में हो, जहाँ पुष्टि-कार्य का एक चरण पूरा हुआ है। मैं कहा करता हूँ कि पुष्टि के बाद सृष्टि के लिए मार्ग खोजने का चिन्तन अभी से होना चाहिए। मेरी यात्रा मरौना प्रखण्ड में अगर रखते हो तो प्रत्यक्ष परिस्थिति के सन्दर्भ में विचार करना आसान होगा।

पुष्टि का काम पूरा हुआ, तब समझना चाहिए जब ग्रामसभा अपने आप कुछ काम करने लग जाय। कुल जमीन का बीघा-कट्ठा बँट जाय तथा भूमिहीनों का कब्जा हो जाय, जितने कामतदार मरौना प्रखण्ड में रहते हैं, वे भी समर्पण-पत्र भरकर उन-उन ग्रामसभाओं के सदस्य बन जायँ, अदालत-मुक्ति हो जाय और कानूनी पुष्टि हो जाय। इतना काम अभी सघन रूप में चलाने की जरूरत है।

उसके बाद पुष्टि के काम का मतलब है ग्रामस्वराज्य की स्थापना। इस बिन्दु पर बड़ा प्रश्न यह है कि ग्रामस्वराज्य का कार्य और भूमिका क्या होगी? क्या पुष्टि के उपरोक्त काम पूरा होने के बाद प्रखण्ड बना रहेगा और सरकार के दूसरे-दूसरे विकास के विभाग बने रहेंगे? अभी से सोचना होगा कि कौन-कौन विभाग सरकार-निरपेक्ष ग्रामस्वराज्य की जिम्मेदारी में आयेंगे? मैं चाहता हूँ कि ग्रामसभा के सदस्यों के साथ इन प्रश्नों की चर्चा करें।

मैं मानता हूँ कि ग्रामस्वराज्य की पहली जिम्मेदारी शिक्षा में क्रान्ति करने की है। १९३७ में जब कांग्रेस की मिनिस्ट्री हुई थी तो गांधीजी ने देश के नेताओं को सलाह दी थी कि उनको सबसे पहला काम शिक्षा में क्रान्ति करना है, क्योंकि जब तक मनुष्य का निर्माण नहीं होता है तब तक राष्ट्र-निर्माण सम्भव नहीं है।

अभी मुसहरी प्रखण्ड में काफी संख्या में ग्रामसभा के बनने ही जयप्रकाश बाबू ने नयी शिक्षा की दिशा में प्रयोग करने को कहा क्योंकि वे भी मानते हैं कि किसी प्रकार के स्वराज्य को अगर संगठित करना है तो सबसे पहले सही शिक्षा की व्यवस्था करनी है। मुसहरी में ये प्रयोग सणोसरा के ज्योतिभाई कर रहे हैं। वे सरकारी स्कूलों के सुधार की दिशा में सोच रहे हैं। तुम लोगों को भी मरौना प्रखण्ड में शिक्षा का प्रकार क्या होगा, उस पर ध्यान देना चाहिए। मुसहरी के प्रयोग के अनुभव से यहाँ का भी काम चलाना होगा ताकि तत्काल कुछ बदल हो सके। लेकिन साथ-साथ आगे बढ़कर और गहराई का प्रयोग भी हाथ में लेना चाहिए।

१९३७ में बापू ने स्कूली शिक्षा में सुधार की बात की थी और उसी दिशा में मुसहरी एवं मरौना का प्रयोग होना चाहिए। मैं मानता हूँ कि ज्योतिभाई के मार्गदर्शन में यह काम हो सकेगा। लेकिन १९४५ में गांधीजी ने जो समग्र नयी तालीम की बात कही थी, वह बहुत महत्त्व की है। उन्होंने कहा था कि शिक्षा की अवधि गर्भ से मृत्यु तक है। शिक्षा-शाला पूरा समाज है। उस समय हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, रिपोर्ट छापने के सिवाय और कुछ न कर सका। बापू के 'केबिनेट मिशन' में फँस जाने के कारण तथा साम्प्रदायिक दंगे के मुकाबिले के कारण तालीमी संघ को उनका मार्गदर्शन नहीं मिल सका।

१९५६ में आर्यनायकम् विनोबाजी के साथ तमिलनाडु में पदयात्रा में रहे। उनसे प्रेरणा लेकर १९५७ में हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की दिल्ली की बैठक में उन्होंने समग्र नयी तालीम का प्रस्ताव स्वीकार कराया। उस प्रस्ताव को पेश करते समय नायकम्जी ने जो वक्तव्य दिया था वह बहुत ही महत्त्व का था।

प्रस्ताव और नायकम्जी के वक्तव्य को पढ़कर मुझको बहुत ही उत्साह हुआ था और मैंने उनसे तुरत सम्पर्क कर सुझाव रखा था कि वे और आशा दीदी किसी ग्रामदानी गाँव में बैठकर इसका प्रयोग करें। मैंने भी इसमें पूरा सहयोग करने का वादा किया था। उसी उत्साह में मैंने 'समग्र नयी तालीम' पुस्तक भी लिख डाली थी।

वे इसकी तैयारी कर रहे थे, इसी बीच तालीमी संघ के विलीनीकरण के प्रश्न को लेकर उन लोगों के दिल कुछ टूट गये और इस प्रकार के नये काम के लिए उत्साह नहीं रह गया। फिर सेवाग्राम को लेकर उनके मन में निराशा रही और समग्र नयी तालीम का प्रश्न हमेशा के लिए पीछे पड़ गया।

फिर पिछले साल सहरसा के काम के सिलसिले में मैंने समग्र नयी तालीम के प्रयोग के लिए ग्राम-गुरुकुल की योजना रखी थी। मैं मानता हूँ कि अब उस दिशा में कुछ काम करने का प्रयास करना चाहिए। मेरी यात्रा की अवधि में अगर कुछ निकल आवे तो उत्तम होगा। इसके सिवाय ग्रामस्वराज्य टिकेगा नहीं। मैं मानता हूँ कि अहिंसक समाज-रचना के लिए गांधीजी ने जितनी परिकल्पनाएँ की हैं, उनमें समग्र नयी तालीम का विचार श्रेष्ठ है। उन्होंने भी एक बार कहा था कि नयी तालीम उनकी सर्वश्रेष्ठ देन है।

भोपाल में तुमने पाटकर को इस योजना के बारे में कहा था। उसने भी इसके लिए उत्साह जाहिर किया था। क्या वह इस यात्रा में साथ रह सकता है? मैं तो दो दिन का पड़ाव समाप्त कर आगे बढ़ूँगा। अगर वह साथ रहे तो लगातार चर्चा से कुछ योजना बन सकती है और जितने गाँव में इसकी सम्भावना मालूम हो, उन गाँवों में मेरी यात्रा के बाद पाटकर गहराई से अध्ययन करके कोई गाँव निकालने का प्रयत्न कर सकता है। फिर वह खुद ही दो-एक साथी के साथ इस प्रयोग में लग सकता है।

सोनवरसा, सहरसा (बिहार)
१६-१-७२

सस्नेह,
धीरेनभाई

सम्पादकीय

मतदाता क्या करे ?

चुनाव लड़नेवाले राजनैतिक दल हर चुनाव में नया घोषणा-पत्र क्यों निकालते हैं ? क्या वे यह चाहते हैं कि पिछले घोषणा-पत्रों को सामने रखकर मतदाता उनके काम को परखें और नये चुनाव में वोट दें ? या, यह कि पुरानी बातें भूल जायें और सिर्फ नये वादों से खुश होकर उन्हें सरकार में भेजें ? हो सकता है वे यह चाहते हों कि मतदाता घोषणा-पत्रों को देखें ही न, और सिर्फ कुछ तात्कालिक बातों से प्रभावित होकर वोट दे दें।

दिखाई यह दे रहा है कि घोषणा-पत्र का महत्त्व सामान्य तौर पर न मतदाता के लिए रह गया है, और न उम्मीदवार के लिए। मालूम नहीं स्वयं दलों के लिए कुछ रह गया है या नहीं। लेकिन राजनीति का जो रवैया है, और चुनाव जीतने के लिए जो सारी कोशिशें की जाती हैं उनमें घोषणा-पत्रों का क्या स्थान है, इसका पता ढूँढ़ने से भी नहीं चलता। अभी कुछ दिन हुए दरभंगा में संसद का चुनाव हुआ। दो मुख्य दलों में भिड़ंत थी। उनके दो बड़े उम्मीदवार थे। साधनों की कमी नहीं थी। बातें और वादे का ढेर था। पैसे भी कितने लगे, गिनना मुश्किल था। चुनाव के अखाड़े में वे सारे काम किये गये, वे सारे दाँव लगाये गये, जिनकी कानून में मनाही है। इसी चुनाव में नहीं, हर चुनाव में हर उम्मीदवार ने यही कहा है : 'हमारी पार्टी जीतेगी तो सबसे पहले शुद्ध सच्चा प्रशासन कायम करेगी।' यह वादा हर एक ने हमेशा किया है। चुनाव में कुछ भी उठा न रखनेवाले लोग वादा करते हैं कि जीतने पर साफ सुथरा प्रशासन कायम करेंगे। कितनी विचित्र बात है यह लेकिन उम्मीदवार बराबर कहते रहे हैं, और मतदाता सुनते रहे हैं, और दोनों देखते जा रहे हैं कि चुनाव और प्रशासन दोनों की क्या गति वे अपनी करनी से बना रहे हैं।

इस वक्त धुआँधार चुनाव की सरगर्मी है। हर जगह दो बातें सुनाई दे रही हैं। एक ओर से कहा जा रहा है 'देखो, हम दिल्ली में थे तो हमने अपना देश की लड़ाई जीती। हम राज्यों में हो जायेंगे तो गरीबी की लड़ाई भी जीतेंगे।' दूसरी ओर से कहा जा रहा है, 'अपना देश की लड़ाई सबने मिलकर जीती है। इसकी शाबाशी किसी एक को क्यों दी जाय ? गरीबी की लड़ाई दिल्ली में नहीं, पटना और लखनऊ में लड़ी जायेगी जिसे इनसे ज्यादा अच्छी तरह हम लड़ सकते हैं। हमें सरकार में भेजकर देखो।'

भारत के गरीब ने बारी-बारी सबको देखा है। वह अपनी गरीबी को अच्छी तरह समझता है। अगर वह नहीं समझ पा रहा है तो गरीबी के खिलाफ इतने वर्षों से होनेवाली इस लड़ाई को जिसे नेता राजधानियों में लड़ रहे हैं गरीबी से लड़ने-लड़ते देश का शायद ही कोई दल बचा हो जो 'समाजवादी' न हो गया हो। गरीब सोचता है कि गरीबी की लड़ाई का नाम क्यों न बदल दिया गया ? फिर सोचता है कि यह भी नये जमाने की एक नयी चीज होगी। इसके गुण का अभी उसे पता नहीं है। इतना वह जरूर देख रहा है कि गरीबी की लड़ाई ऐसी है जिसमें जीत तो समाजवाद की होती है लेकिन हार गरीबी की नहीं होती। किसी भी दल की सरकार हो एक के बाद दूसरे कानून बनते हैं। हर कानून के पास होने पर यही कहा जाता है कि यह समाजवाद की जीत है। इस तरह की जीत देश भर में समाजवाद की होती जा रही है, लेकिन गरीबी गरीब को नहीं छोड़ती। उसका बेरोजगारी का सवाल हल नहीं होता। उसकी मेहनत की कीमत नहीं बढ़ती। छोटे आदमी को पूँजी नहीं मिलती। नीचे के किसान के खेत में हरित क्रान्ति नहीं पहुँचती। वह अदालत में जाता है तो न्याय को, और विद्यालय में लड़के को भरती कराता है तो शिक्षा को, उसे पैसा देकर ही खरीदना पड़ता है। फिर भी कैसा न्याय मिलता है और कैसी शिक्षा मिलती है ? वह देखता है कि नहीं बचता उसका ईमान, नहीं रहती उसकी इज्जत, और नहीं मिलती उसको रोटी।

ऐसे समाजवाद को मतदाता क्या समझे ? नेता के लिए समाजवाद का अर्थ है चुनाव में जीत। लेकिन मतदाता के लिए ? चुनाव के घोषणा-पत्रों में और नेताओं के भाषणों में समाजवाद ही समाजवाद है, लेकिन मतदाता और उसके चारों ओर के जीवन में ? वह समाजवाद को कहाँ ढूँढ़े ? यह एक ऐसा शब्द है जो बरसात के जुगनू की तरह चुनाव में चारों ओर चमकने लगता है, लेकिन चुनाव खतम होते ही न जाने कहाँ गायब हो जाता है।

ऐसी स्थिति में यह मानना कठिन है कि चुनाव के घोषणा-पत्रों का कोई महत्त्व रह गया है—मतदाताओं के लिए या उम्मीदवारों के लिए। फिर क्या आश्चर्य कि मतदाता घोषणा-पत्रों को न देखकर दूसरी चीजों को देखे जो नहीं देखनी चाहिए, और जैसे-तैसे वोट देकर अपनी जान छुड़ाये। और अब तो कई जगह ऐसा हो गया है कि मतदाता मतदान नहीं करता और मतदान हो जाता है। वह इसकी चिंता क्यों करे ?

अगर चुनाव में से घोषणा-पत्र निकल जायें तो चुनाव की राजनीति में क्या बचता है ? सिर्फ जीत और हार, सत्ता और अधिकार। इसके सिवाय और क्या ? फिर राजनीति में कोई चीज गुणात्मक नहीं रह जाती—न विचार, न दिशा, न लक्ष्य। तब राजनीति एक व्यवसाय बन जाती है। वोट विश्वास का प्रतीक नहीं रह जाता, मात्र कागज का टुकड़ा रह जाता है। मतदाता मत भले ही देता रहे, किन्तु अपने मन को इस सारी प्रक्रिया से अलग कर लेता है, वह मान लेता है कि यह खेल कुछ खास तरह के लोगों का है। ऐसी राजनीति में गति या शक्ति नहीं रह जाती, वह कोई परिवर्तन नहीं ला सकती। वह निहित स्वार्थों का साधन बन जाती है। करोड़ों लोग उससे अछूते रह जाते हैं। निस्संदेह ऐसी राजनीति देश के जीवन को कमजोर→

कैरीअर बनाम मिशन

—काका कालेलकर

(एक)

जब भारत में अंग्रेजों का राज था तब सरकारी नौकरी करना लाभदायक भले ही हो प्रतिष्ठा की बात नहीं थी। कोई आदमी कोई खानगी नौकरी करे तो उसमें कोई दोष नहीं था लेकिन प्रतिष्ठा भी नहीं थी। प्रतिष्ठा थी केवल विदेशी राज का विरोध करके स्वराज्य-प्राप्ति के लिए कुछ-न-कुछ करते रहने की। सामान्य जनता कहती थी कि स्वराज्य-प्राप्ति के लिए त्याग करना, जनता की निस्वार्थ सेवा करना, और जान खतरे में डालना, यही थी राष्ट्र-सेवा। बाकी की सब प्रवृत्तियां या तो राष्ट्रद्रोही होती थीं या हीनताद्योतक।

स्वराज्य होने के बाद सरकार ही राष्ट्रीय बन गयी और स्वराज्य के बड़े-बड़े नेता सरकार को चलानेवाले मंत्री आदि बन गये, तबसे सरकारी नौकरी भी राष्ट्र-सेवा बन गयी है। प्रजा-सत्ता का राज्य समाजवाद में माननेवाला है यानी प्रजा-सेवा के अधिक-से-अधिक काम सरकार द्वारा करने की नीति मान्य हुई है। ऐसी हालत में सरकार चलानेवाले लोग राष्ट्र के नेता माने जाते हैं। सरकारी नौकर राष्ट्र-सेवक हैं। तब त्यागपूर्वक समाज-सेवा करनेवाले लोगों की कोई आवश्यकता ही नहीं रही। जन-सेवा के सब-के-सब काम करने का आग्रह अब सरकार रखती है और हर एक क्षेत्र का राष्ट्रीयकरण यानी सरकारीकरण पसन्द होने लगा है, तब सच्चे राष्ट्र-सेवकों के लिए सेवा का एक ही मार्ग रह जाता है, वह है सरकारी नौकरी।

पुरानी राष्ट्रीय शालाएं और राष्ट्रीय विद्यापीठें अब सरकार मान्य हाई स्कूल, कालेज व युनिवर्सिटियां बन गयीं। उन्हें सरकारी ग्राण्ट भी मिलने लगी। तब वहां के अध्यापकों को कम तनख्वाह लेने का कोई कारण न रहा। सरकारी ग्राण्ट लेने पर सरकारी नियम और नीति मान्य करनी ही पड़ती है। स्वतन्त्र प्रयोग करनेवाली संस्थाएं अब पहले के जैसी नहीं रहीं। इसलिए त्याग और बलिदान का न कारण रहा, न वातावरण। राष्ट्रीय सरकार का विरोध करनेवाले लोग विपक्ष के नेता बने। उनकी संस्थाएँ, चलती रहती हैं लेकिन उनकी कोई खास प्रतिष्ठा नहीं है।

ऐसी हालत में जो थोड़े लोग राष्ट्रीय सरकार के प्रति आदर रखते हुए उससे अलिप्त रहते हैं और गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम को स्वतन्त्र रूप से चलाते हैं उनको जनता की तरफ से कभी मदद मिलती है, कभी नाम मात्र मिलती है। जनता कहती है कि "अगर आप राष्ट्र-सेवा करते हैं तो सरकार से आपको मदद मिलनी चाहिए अथवा गांधीजी के नाम जिनको जनता ने दस-बारह करोड़ रुपये दिये उस गांधी-स्मारक-निधि से आपको पैसे मिलने चाहिए। अगर दोनों से नहीं मिलते अथवा दोनों से आप नहीं लेते तो उसका कारण आप ही जानें। हमें उसमें दिलचस्पी नहीं है।" समग्र सार्वजनिक जीवन में आइन्दा ऐसा ही वायुमण्डल रहनेवाला है। व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य का विरोध कोई नहीं करेगा। लेकिन व्यक्तिगत सेवा के लिए कोई अनुकूलता भी नहीं रहेगी।

(दो)

एक दिन एक लड़की ने आकर मुझसे पूछा, "मैं किसी कालेज में पढ़ाती भी हूँ और पी० एच० डी० की तैयारी भी करती हूँ। उपाधि मिलने के बाद क्या करना चाहिए सो अभी तक मैंने सोचा नहीं है। आपसे सलाह और दिशा-दर्शन की अपेक्षा रखकर आयी हूँ। आपको सारे देश की अनेक संस्थाओं का परिचय है। किन-किन क्षेत्रों के द्वारा राष्ट्र की ठोस सेवा हो सकती है सो भी आप जानते हैं और आपके पास आने का विशेष कारण भी है।

जब औरों के पास जाते हैं तो उनको जो प्रिय क्षेत्र है उसी क्षेत्र में खींचने का वे प्रयत्न करते हैं। वे तटस्थ सलाहकार नहीं होते, अपने-अपने क्षेत्र के एजेण्ट होते हैं, उसी की बातें करते हैं। आप तटस्थ हैं। विद्यार्थी की योग्यता, उसके विशेष गुण, उसकी मर्यादाएँ, उसकी अभिरुचि यह सब देखकर आप सलाह देते हैं और राष्ट्रीय उत्थान के, सामाजिक उत्कर्ष के, सब क्षेत्रों के बारे में आपको एक-सी दिलचस्पी है। इसलिए आशा रहती है कि हमारी योग्यता, परिस्थिति और अभिरुचि का ख्याल रखकर और जनता की विशेष आवश्यकता का हिसाब रखकर भी आप सलाह देंगे।"

मैंने कहा कि बात सही है। मेरा किसी एक ही क्षेत्र के प्रति पक्षपात नहीं है। लेकिन मैं थोड़े से परिचय से या एक-दो मुलाकातों में किसी की योग्यता या अभिरुचि तय नहीं कर पाता। विशेष परिचय के बाद ही मैं विद्यार्थी को पहचान सकता हूँ। मेरी दूसरी कठिनाई यह है कि हालांकि मैं देश में जगह-जगह जाता

→बनाती है। उसके हाथ में देश का भविष्य सुरक्षित नहीं है।

देश के हर राज्य में एक ही दल का शासन हो तो स्थिरता रहेगी और देश आगे बढ़ेगा। ऐसा कहना और मानना बहुदलीय लोकतन्त्र का उपहास है; खतरनाक तो है ही। दूसरी ओर किसी भी दल द्वारा प्रचलित पद्धति का कोई गुणात्मक विकल्प न प्रस्तुत कर सकना एक ऐसी दुर्बलता है जो सिद्ध करती है कि देश का जीवन कैसे दलदल में पड़ गया है।

जो कुछ हो रहा है सब मतदाता के नाम से। बेचारा मतदाता क्या करे? वह जिस चीज का शिकार है उसमें स्वयं शरीक है! ●

हूँ, अनेक लोगों से और संस्थाओं से मेरा परिचय है, तो भी मैं अब दिन-पर-दिन बेकनम्बर होता जा रहा हूँ। जो आदमी तटस्थ है, जनता भी उसके प्रति तटस्थ होती है। इसलिए मेरी जानकारी अब पहले से बहुत कम है। तो भी मैं कुछ-न-कुछ दिशा दर्शन कर सकूँगा सही।

इतना कहने के बाद मैंने देश की बदली हुई परिस्थिति का थोड़ा-सा वर्णन किया जो इस लेख के पहले हिस्से में मैंने दिया है और बाद में कहा —

आज भी राष्ट्र में काम करनेवाले लोगों के मैं दो विभाग करता हूँ। (१) अपने जीवन के लिए कोई एक मिशन का (समाज-हित के किसी क्षेत्र में सेवा करने का) व्रत जिन्होंने लिया है। (२) और वैसे लोग जिनको कोई अच्छे क्षेत्र में काम करके धन, प्रतिष्ठा और तरक्की पाने की उम्मीद है जिसको मैं कारकीर्दी (कैरीअर) कहता हूँ।

अब इन दोनों में कैरीअरवालों को मैं न अप्रतिष्ठित मानता हूँ, न कम समाज-सेवक। समाज का नुकसान करनेवाला क्षेत्र पसन्द करनेवाले धन के लालची लोग मेरे पास आते ही नहीं। जो आते हैं वे धन,-प्रतिष्ठा और तरक्की चाहते हैं सही, किसी खास क्षेत्र का उनका आग्रह भी नहीं रहता, लेकिन समाज की जिसमें सेवा होती हो, अपेक्षा नहीं, ऐसे ही क्षेत्र को वे पसन्द करते हैं, लेकिन नजर रहती है कैरीअर पर। ऐसे लोगों को मैं सलाह तो देता हूँ, दो-चार क्षेत्रों की सिफारिश भी करता हूँ, और कहता हूँ अब इस सलाह को ध्यान में रखकर अपना कैरीअर ढूँढ़ लीजिए। क्षेत्र अथवा संस्था पसन्द करने के बाद मेरी सिफारिश की आवश्यकता हो तो वैसा सिफारिशी-पत्र मैं लिख भी दूँगा क्योंकि मैं तुम्हें अच्छी तरह से पहचान सका हूँ। और सिफारिशी-पत्र देने में तुम्हारे लाभ का विचार नहीं करूँगा। तुम्हारे जैसे की सेवा से संस्था का और जनता का भी लाभ है। दोनों दृष्टियों से सोचकर मैं सिफारिश करता हूँ। इसलिए मेरे सिफारिशी-पत्र की थोड़ी कीमत भी रहती है।

अब मेरे पास जो लोग मिशन की दृष्टि से आते हैं उनसे मैं कहता हूँ कि आप त्यागमय दीक्षित जीवन व्यतीत करना चाहते हैं उसकी मेरे पास विशेष कदर है। हरएक जिन्दे आदमी के लिए खाने-पीने का, कपड़े-बिस्तर का, रहने का और थोड़े सफर का प्रबन्ध होना ही चाहिए। भूखे रहकर भगवान की भक्ति भी नहीं होती। लेकिन आप तनख्वाह, तरक्की और निवृत्ति-वेतन का ध्यान नहीं करेंगे। सारा चिन्तन और सारी साधना सेवा के लिए और समाज के उत्थान के लिए ही होगी। त्यागी दीक्षित जीवन को अधिक-से-अधिक स्वतंत्रता होनी चाहिए। आपको ऐसी ही संस्था में काम करना चाहिए कि जहाँ पर सरकारी नियमों की जड़ता अधिक न हो, साम्प्रदायिक, रूढ़िवादी, दकियानूसी पुराने नेताओं का राज्य न हो अथवा परदेश के दाताओं का अपने आग्रह का बोझ न हो। स्वतन्त्र भारत में भी नये-नये प्रयोग करने की आजादी और अनुकूलता आसानी से मिलनेवाली नहीं है। त्यागी, संयमी और मितव्ययी लोग ही क्रान्तिकारी प्रगतियाँ अमल में ला सकते हैं। अगर आप इस तरह के आत्म-समर्पण करनेवाले मिशनरी हैं तो आपके योग्य वायुमण्डल मैं दिखा सकता हूँ। सम्भव है कि आप थोड़े अनुभव के बाद अपनी ही एक स्वतन्त्र संस्था और स्वतन्त्र सेवा-क्षेत्र खड़ा करेंगे और उसके लिए उपयोगी साथियों को भी ढूँढ़ लेंगे।

अधिकांश युवक और युवतियाँ कैरीअर के क्षेत्र में जाकर ही सेवा कर सकेंगी। उनकी प्रतिष्ठा कम नहीं करनी है। राष्ट्र का बहुत-सा काम उन्हीं के द्वारा होगा। लेकिन प्रगति और क्रान्ति के लिए तो दूसरे ही ढंग के जिम्मेवार, कष्टसहिष्णु और आत्मवशी-प्रेमी ही चाहिए।

यह हो सकता है कि मनुष्य प्रारम्भ में कैरीअर के ख्याल से प्रेरित हो, आगे जाकर उसमें मिशन की भावना दृढ़ होती जायेगी। ऐसी ही परिस्थिति का ध्यान करके विलायत के एक शिक्षामंत्री ने कहा था :—

राष्ट्रीय जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों की आमदनी एक-सी नहीं होती। कोर्टों में वकालत करनेवाले और उद्योग-हुनर तथा तिजारत करनेवाले सबसे अधिक कमा सकते हैं। इतना प्रलोभन शिक्षा के क्षेत्र में हम नहीं दे सकते। परिणाम यह होता है कि प्रथम कोटि के विद्वान और कार्यकुशल लोग शिक्षा के क्षेत्र में आते ही नहीं। और इस क्षेत्र में अगर दोयम कोटि के लोग भर गये तो राष्ट्र के लिए ऐसी स्थिति खतरनाक है।

इसका इलाज हमने ढूँढ़ निकाला है। हमारे शिक्षा क्षेत्र में नौकरी ढूँढ़ने जो आते हैं उनको प्रारम्भ में अच्छी तनख्वाह देने का हमने तय किया है। इस तरह होशियार-से-होशियार लोगों को हम शिक्षा के काम में खींच सकते हैं। एक दफा शिक्षा द्वारा सेवा करने का काम उन्होंने ले लिया तो उस काम की प्रतिष्ठा उनके ध्यान में बैठ जाती है। फिर इस कैरीयर में ज्यादा तनख्वाह और तरक्की न मिली तो भी उसे छोड़ने का और क्षेत्र बदलने का उनका जी भी नहीं होता। आये थे कैरीअर ढूँढ़ने और रह गये मिशनरी बनकर। ऐसा ही हर जगह पाया जाता है।

जो हो, स्वराज्य होने के बाद राष्ट्र-सेवा की, राष्ट्रीय प्रगति की और आवश्यक क्रान्ति की दृष्टि से गहराई से सोचने के दिन आ गये हैं। कोई भी समाज क्रान्तिकारी मिशनरियों के बिना प्राणवान नहीं बन सकता। त्याग और बलिदान की जगह ले सके ऐसा कोई जीवन-तत्त्व है नहीं। ●

हरित क्रान्ति

१. भूमि-सुधार के सम्बन्ध में तीसरी पंचवर्षीय योजना में लिखा गया है : "भूमि-सुधार की ओर प्रशासन ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है। नीचे के अधिकारियों ने कानून की उपेक्षा होने दी है। कानून पर अमल के लिए, ग्रामीण जनता का सहयोग भी प्राप्त नहीं किया गया है।" यह सही है कि भूमि-सुधार के लिए ग्रामीणों का सहयोग आसानी से नहीं मिल सकता, क्योंकि गांव में अधिकांश लोग भूमि के मालिक हैं—बड़े या छोटे। उनके मन में भूमि-स्वामित्व की जो कल्पना है उससे भूमि के किसी नये कानून का मेल नहीं बैठता, क्योंकि उसका उनके हितों पर प्रभाव पड़ता है।

यह भी हुआ है कि सुधारों को लागू करने के लिए रेवेन्यू-विभाग को मजबूत करना चाहिए था जो नहीं किया गया। जमींदारी क्षेत्रों में तो रेवेन्यू-विभाग और भी ज्यादा कमजोर साबित हुआ। फिर भी अगर कोशिश की जाती तो कानून किश्तों में लागू किये जा सकते थे। पहले बाहर के मालिकों के सम्बन्ध में कार्रवाई की जाती फिर सीलिंग से ऊपर भूमि रखनेवालों के सम्बन्ध में। इस तरह का कार्यक्रम बनाया जा सकता था, लेकिन नहीं बनाया गया।

यह बात भी ध्यान में रखने की है कि भूमि की इतनी अधिक मांग है, भूख है, कि किसी नये कानून को लोग चलने नहीं देते। कोई भी सुधार निरर्थक है जब तक बेदखली न रुके और लगान स्थिर न हो। भूमि का बाजार ऐसा है कि उसमें उसके मूल्य को कन्ट्रोल करना अत्यंत कठिन है। इसलिए जमीन को उठाने (टेनेंसी) की प्रथा को पूरे तौर पर समाप्त कर देना सबसे अच्छा है। बम्बई के अनुभव से इस विचार की पुष्टि होती है।

२. भूमि के स्वामित्व अथवा खेती की भूमि के वितरण का प्रश्न दूसरा है। टेनेंसी में सुधार का इतना ही लक्ष्य है कि खेतिहर जिस जमीन को जोतता-बोता है उसकी उपज में उसे अधिक हिस्सा मिले, तथा वह बेदखल न किया जाय ताकि उसके मन में अच्छी खेती करने की प्रेरणा बनी रहे। अगर खेतिहर को ही उसकी जोत की भूमि का स्वामी बना दिया जाय तो मालिक की भूमि अपने-आप बंट जाती है। लेकिन इस सम्बन्ध में दो स्थितियां पैदा होती हैं। एक ओर जब खेतिहर को ही स्वामित्व दे दिया जाता है तो पहले के मालिकों को मुआवजा देना पड़ता है। दूसरी ओर अगर मालिकों को विशेष स्थिति में निजी खेती के लिए जमीन वापस लेने की छूट दी जाय तो छोटे और नये खेतिहर बेदखल हो जाते हैं। 'टेनेंसी' को खत्म करने का यही लक्ष्य है कि जो खेतिहर है वही स्वामी हो।

टेनेंसी पर रोक लगाने से भूमि-स्वामित्व की परम्परागत कल्पना बहुत कुछ बदल जाती है। लेकिन साथ ही भूमि को बन्धक रखने पर भी रोक लगनी चाहिए क्योंकि अक्सर टेनेंसी बन्धक के रूप में छिपी रहती है। लेकिन ऐसे किसी कानून पर अमल आसान नहीं है क्योंकि जमीन की मांग बहुत अधिक है। ज्यों ही टेनेंसी और बन्धक को कानून से रोकने की कोशिश होती है वे भेष बदल कर दूसरे रूप में प्रकट हो जाते हैं। टेनेण्ट फार्म का नौकर बन जाता है, और बन्धक का रूप किसी प्रकार की खरीद का हो जाता है।

३. तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में एक विशेष बात हुई। खेती की नयी सम्भावनाएं देखकर खेत के मालिकों को खुद खेती करने की लालच हुई। भारतीय खेती के इतिहास में शायद पहली बार यह सम्भव हुआ कि भूमि-स्वामी अपनी खेती खुद करे, उत्पादन बढ़ाये और साथ ही मजदूर शोषण से भी बचे। इसका हमारे प्रशासकों और योजनाकारों पर यह असर हुआ कि 'उत्पादन-वृद्धि पहले' की व्यापक नीति बन गयी, और वितरण का न्याय (डिस्ट्रीब्यूटिव जस्टिस) पीछे पड़ गया। अब न्याय का प्रश्न फिर सामने आया है।

४. विषमता और नयी तकनीक

हरित क्रान्ति के सन्दर्भ में तीन प्रश्न मुख्य रूप से उभरकर सामने आये हैं। एक, क्या खेती में तकनीकी प्रगति खेती की आमदनी के वितरण में विषमता बढ़ायेगी या घटायेगी? दो, क्या उसके कारण यह होगा कि जीविका के लिए आज जितनी न्यूनतम भूमि आवश्यक है उससे कम की आवश्यकता हो? तीन, क्या नयी तकनीक से खेती में रोजगार की सम्भावना बढ़ेगी ताकि भूमिहीन को भले ही भूमि न मिले किन्तु उसे खेती में पर्याप्त काम मिल जाय?

खेती की आमदनी में विषमता का मुख्य कारण है खेत की विषमता। ज्यादा खेत होगा और उसमें खेती होगी तो आमदनी अधिक होगी ही। यह विषमता कैसे दूर होगी? तकनीकी प्रगति से इतना हुआ है कि सिंचाई हो तो उपज बहुत बढ़ जाती है। सिंचित और असिंचित भूमि की उपज में बहुत फर्क पड़ गया है। पानी और खाद के मिल जाने से छोटी जोत में सघन खेती और श्रम का सदुपयोग अधिक सम्भव हुआ है। छोटी जोत में परिवार अपनी मेहनत से खेती कर लेता है जब कि बड़ी जोतवालों को मजदूर लगाना पड़ता है जिसमें काफी खर्च होता है।

५. इस प्रसंग में कुछ बातें हैं जो बड़े महत्व की हैं। एक यह है कि सिंचित और असिंचित खेतों में बहुत अधिक अन्तर पड़ गया है। इस विषमता का समाज के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है।→

अहिंसा की उलझन : बंगला देश की देन

—देवेन्द्र कुमार गुप्त

युद्ध हुआ और साढ़े सात करोड़ की आबादी का दुनिया का आठवां मुल्क आजाद हो गया। युद्ध में कोई दस-बीस हजार लोगों की जानें गयीं और करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हो गयी। सैकड़ों बने-बनाये घर उजड़ गये। सवाल दिल में बराबर उठते हैं कि क्या इस प्रकार के युद्धों को बन्द करने का कोई रास्ता है या नहीं? शान्तिवादी होने के नाते युद्ध में तो हम सहयोगी नहीं हो सकते पर उचित, अनुचित का निर्णय कर सकते हैं क्या? आत्यन्तिक युद्ध-विरोधी भूमिकावाले शान्तिवादी किसी भी हालत में किसी भी युद्ध को उचित नहीं मानेंगे। परन्तु जैसा कि पूर्व में इंगित किया गया है प्राप्त परिस्थिति में अन्याय के प्रतिकार के लिए न्यूनतम हिंसा का क्या रास्ता हो सकता है, इस दृष्टि से जब विचार करते हैं तो जिन दो इकाइयों के बीच परस्पर विरोध है उनकी परिस्थितियाँ देख-समझकर ही हिंसा-अहिंसा का विवेचन सम्भव है। पर एक बात को स्वीकार करके ही चलना होगा कि जिन दो इकाइयों के परस्पर विरोध की स्थिति में हिंसा का प्रस्फुटन होता है उस हिंसा की मात्रा और स्वरूप का अनुपात और गुण अनुरूप होगा उस व्याप्त हिंसा के जो उन इकाइयों के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, गठन में व्याप्त है। इसलिए यदि अहिंसा का विकास उस इकाई के गठन में नहीं है अथवा जितना है उतनी ही उसके प्रतिकार की परिस्थिति में कम अहिंसा व ज्यादा हिंसा पैदा करेगी। और ऐसा करना स्वधर्म ही होगा। इस प्रतिकार की हिंसा का दुःख भी नहीं होना चाहिए। दुःख अगर हो तो समाज में व्याप्त उस मूल हिंसा के प्रति हो जो ऐसे अवसरों पर प्रकट होती है। इतना तो तय है कि एक जीवित समाज में प्रतिकार करने की प्रक्रिया का होना आवश्यक है। यह प्रतिकार जितना अहिंसक होगा, समाज भी उसी हद तक अहिंसक होगा। शान्ति में विश्वास रखनेवालों के नाते अन्याय के प्रतिकार के हिंसक तत्त्व में चाहे हम भाग न लें, पर प्रतिकार को हम उचित मानते हैं, उसके प्रति हमारा नैतिक समर्थन भी है।

गांधी-विचार युद्ध-विरोधी 'पैसिफिस्ट' से थोड़ा भिन्न है। अन्याय के प्रतिकार में आनाकानी नहीं की जा सकती है। उस प्रतिकार का स्वरूप जितना अहिंसक बन सकता है उतना होना चाहिए पर उससे मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। इसके तीन प्रकार हो सकते हैं

१—यदि मजबूर बनाया जानेवाला हिम्मत से अपनी जान देकर भी अत्याचारी का मुकाबिला करता है पर उसे हानि नहीं पहुँचाता तो वह महावीर है और अहिंसा की विजय अवश्य होगी, भले ही उस स्थिति की हमारी समझ आज स्पष्ट नहीं है।

२—वह जटायु की भाँति रावण का प्रतिकार अपने चोंच पंजों से करे यह जानते हुए भी कि शस्त्रास्त्रों के सामने वह कभी टिक नहीं सकता पर उसका अपनी जानभर प्रतिकार करना धर्म है। यह अहिंसा का ही स्वरूप है, अपनी आत्माहुति सत्य-रक्षा के लिए।

३—और आगे चलकर युद्ध का भी स्वरूप हो सकता है जिसमें दण्ड-शक्ति का जैसे अत्याचार-शमन में राष्ट्र के अन्दर उपयोग होता है, वैसे ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उपयोग हो। यह भी हिंसा का कदम न मानकर दण्ड का माना जा सकता है।

तीनों ही स्थितियाँ अत्याचार के प्रतिकार की हैं और हिंसा से भिन्न हैं। इनमें से कौन-सी सीढ़ी पर कोई इकाई बरतेगी यह उसके अन्तर-गठन पर निर्भर है। पर यदि उस कार्य की दिशा सत्य की ओर है और उसमें सम्भव अहिंसा की झलक है तो अवश्य ही वह हमारे लिए मान्य कदम होना चाहिए। यद्यपि व्यक्तिगत रूप से हमारा सक्रिय सहयोग तो स्वभाव, धर्म के अनुसार सम्पूर्ण अहिंसा की ओर होगा। बंगला देश की मुक्ति ने इस उलझन को सुलझाया है, ऐसा लगता है। ●

→सिंचाई के साधन बनते तो हैं समाज के खर्च से, लेकिन उसका लाभ मिलता है कुछ थोड़े लोगों को। नयी तकनीक के कारण खेती का उत्पादन उन लोगों के हाथ में चला गया है जिनके पास सिंचित भूमि है। देश उनको नाराज नहीं कर सकता।

नयी तकनीक के कारण लोग खेती में पूँजी लगाने लगे हैं। स्वभावतः पूँजी लगानेवाला भरपूर मुनाफा कमाना चाहता है। मुनाफे की लालच में वह लागत तो लगाता ही है, अधिक-से-अधिक भूमि भी अपने कब्जे में करने की कोशिश करता है। सीलिंग का इस प्रक्रिया पर खास असर नहीं पड़ता, क्योंकि सीलिंग की सीमा के भीतर भी खेती के फार्मों के विस्तार की काफी गुंजाइश है। इस तरह बिलकुल छोटी जोतों के समाप्त होने का रास्ता खुल गया है। और भी, यंत्र और साधनों के रूप में पूँजी का संग्रह हो रहा है। नयी खेती में मजदूरों की जरूरत है, उन पर खर्च होता है, और व्यवस्था की समस्याएँ भी खड़ी होती हैं। मजदूरों की समस्याओं से बचने के लिए बड़े खेतिहर किसान आगे मशीनों का इस्तेमाल करेंगे। नयी तकनीक में बड़े फार्म और मशीनीकरण अनिवार्य-से हैं। उसमें विषमता की भूमिका पलती है।

इतना ही नहीं, भूमि के निजी स्वामित्व के ढाँचे में खेती का विकास पूँजीवादी ढंग का ही सम्भव है। इससे उत्पादन जरूर बढ़ेगा, लेकिन उत्पादन के साधन थोड़े हाथों में केन्द्रित होते चले जायेंगे। प्रस्तुतकर्ता : राममूर्ति

प्रत्यक्ष अहिंसक कार्रवाई के आयाम

—डा० विश्वबन्धु चटर्जी

गांधीजी के समय में सत्याग्रह का क्षेत्र कुछ कार्यों तक ही सीमित था। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण प्रयोग किसी नैतिक उद्देश्य के लिए अहिंसक मार्ग से जनता के प्रतिकार को व्यक्त करना था। विदेशी गुलामी के प्रति इसके द्वारा भारतीयों में जागरण आया, और यह हर प्रकार की हिंसा को खत्म करने का माध्यम बना। इससे सत्याग्रह का महत्त्व केवल भारत के लिए नहीं बल्कि दूसरे देशों के लिए भी बढ़ गया।

स्वतंत्रता के बाद देश में सत्याग्रह के क्षेत्र में काफी विकास हुआ है। बहुत सारे लोगों के गुट अपनी शिकायतों का हल सत्याग्रह द्वारा प्राप्त करते हैं। बहुत सारे प्रकार के प्रतिकारात्मक प्रदर्शन, दबाव डालने की तकनीक, प्रत्यक्षीकरण, इत्यादि जब तक अपने अन्दर अहिंसा के कुछ तत्त्व रखते हैं वे सत्याग्रह कहलायेंगे। सबसे अधिक प्रत्यक्ष कार्रवाई 'घेराव' के भी बारे में यह दावा किया जाता है कि यह सत्याग्रह के अन्दर है।

यह प्रश्न बार-बार उठाया जाता है कि एक लोकतन्त्रात्मक ढांचे में सत्याग्रह का क्या स्थान है? एक लोकतंत्रात्मक संसदीय प्रणाली में, सबको अपनी शिकायतें दूर करने के लिए संवैधानिक तरीके प्राप्त हैं। ऐसी परिस्थिति में सत्याग्रह का क्या तुक हो सकता है, क्योंकि सत्याग्रह का कोई कानूनी आधार तो है नहीं। इस प्रकार सदा इस बात का खतरा बना रहता है कि सत्याग्रह को कितना भी अहिंसक रखने की कोशिश की जाय, परन्तु आशा के विरुद्ध वह किसी भी कारण से हिंसक रूप धारण कर सकता है। इसलिए इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि सत्याग्रह पर पुनः विचार किया जाय। यह विचार व्यावहारिक आधार पर भी हो।

तमिलनाडु के मदुराई जिले के तिलम-पट्टी में सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने एक शान्तिमय सत्याग्रह किया था। यह गांववालों के साथ मिलकर किया गया था। सत्याग्रह का उद्देश्य था गांव के भूमिहीनों में मन्दिर की जमीन का दान और बँटवारा। यह जमीन एक सम्पन्न व्यक्ति को पट्टा (लीज) पर दी जाती थी, जबकि एक नये कानून के अनुसार यह जमीन भूमिहीनों को मिलनी चाहिए थी। श्री नागेश्वर प्रसाद, जिन्होंने इस सत्याग्रह का अध्ययन किया, लिखते हैं कि 'सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने भूमिहीनों के इस प्रश्न को लिया, और प्रत्यक्षीकरण, वार्ता, अनुरोध के सभी गांधीवादी तरीकों का प्रयोग किया। परन्तु सरकार सुनी नहीं और उन्हें प्रत्यक्ष अहिंसक कार्रवाई का सहारा लेना पड़ा। उन्हें ऐसा इसलिए करना पड़ा कि यह स्पष्ट हो गया कि सरकार या पट्टा लेनेवाले उनकी मांग को स्वीकार करने के लिए तैयार न थे।" तिलमपट्टी में सत्याग्रहियों को सीमित सफलता प्राप्त हुई। भूमिहीनों को कुछ जमीन प्रायः पट्टे के तौर पर दे दी गयी। दूसरा उदाहरण असम का है। वहाँ अगर करीब १२००० एकड़ का सरकारी चारागाह है। यह असम में कामरूप जिले के उत्तर में भूटान की सीमा पर है। पूर्व बंगाल के शरणार्थियों और दूसरे लोगों ने इस जमीन पर कब्जा कर रखा है, और उसे कृषि-कार्यों के प्रयोग में लाते हैं। सरकार उन्हें बार-बार निकालती रही और वे आकर जमते रहे। परन्तु १९६७-६८ में इसका मुकाबिला किया गया। यह गांधीवादी पद्धति से हुआ। बहुत तनाव के बाद, जो हिंसा का रूप भी धारण कर सकता था, निकाल-बाहर करने का काम रुका और, सरकार को यह मानना पड़ा कि उस जगह पर जिन लोगों ने जमीन पर कब्जा कर रखा है, उन्हें बसा दिया जाय।

स्वतंत्रता के बाद के सत्याग्रहों का बुनियादी सबक यह है कि धीरे चलनेवाले सरकारी यंत्र को सत्याग्रह के माध्यम से तेजी और गति दी जाय। परन्तु यह कुछ बुनियादी सिद्धान्तों के आधार पर हो। इनमें से एक पूर्ण अहिंसा है, दूसरा समझौते के दरवाजे को खुला रखना है, उस समय तक जब तक कि बुनियादी मूल्यों के लिए लड़ाई की जा रही है, उनका विरोध न होता हो। तीसरा है कि सत्याग्रह करनेवालों का उचित प्रशिक्षण हो ताकि वे प्रत्यक्ष अहिंसक कार्रवाइयों में निपुण हो सकें।

एक सामाजिक वैज्ञानिक जेने शार्प ने अहिंसा की किस्मों का उल्लेख किया है। उनके अनुसार अहिंसा ९ प्रकार की होती है।

१—अ-प्रतिकार (नान रेसिसटेंस)

२—वास्तविक मेल (एक्चुअल रीकंसिलिएशन)

३—नैतिक प्रतिकार (मोरल रेसिसटेंस)

४—विशिष्ट अहिंसा (सेलेक्टिव नान वायलेंस)

५—'पैसिव' प्रतिकार (पैसिव रेसिसटेंस)

६—शान्तिपूर्ण प्रतिकार (पीसफुल रेसिसटेंस)

७—अहिंसक प्रत्यक्ष कार्रवाई (नानवायलेण्ट डिरेक्ट ऐक्शन)

८—सत्याग्रह

९—अहिंसक क्रान्ति (नानवायलेण्ट रिवोल्यूशन)

ये किस्में बदलती रहती हैं। ये विशेषताएँ निम्नलिखित भागों में बाँटी जाती हैं।

१—अपने और समाज के प्रति रवैया, २—बुराई के प्रति रवैया, ३—हिंसा और अहिंसा के प्रति रवैया, ४—दुश्मन के प्रति रवैया, ५—दृष्टिकोण का कार्यान्वित होना, ६—सामाजिक परिवर्तन की पद्धति।

ये कुछ उदाहरण हैं जिनके द्वारा सदियों से जानी-बूझी चीजों का विश्लेषण किया जा सकता है। यह आशा की जाती है कि आज के पीड़ित संसार में अहिंसा का मूल्य इन खोजों से सिद्ध होगा। ●

सवाल विज्ञान का, जवाब गांधी का

—निर्मला देशपाण्डे

औद्योगिक सभ्यता का भविष्य

"पिट्सबर्ग की भट्टियाँ ठंडी हो गयीं। डिट्रोइट के कारखाने बन्द हो गये, भयंकर बीमारी के बाद बचे हुए चंद मजबूर मानव कुछ बची-खुची जमीन पर, केवल जीने भर के लिए अनाज पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं। लन्दन के सरकारी कार्यालयों में अँधेरा है, जहाज मौन बैठे हैं, यूक्रेन के खेतों में तेल के अभाव में बेकार पड़े ट्रैक्टर पर जंग चढ़ रहा है। राईन, नील और पीत नदियों का पानी विषैला हो गया है।"

क्या कोई विलक्षण परी-कथा कही जा रही है? जी नहीं। 'अनियंत्रित विकास' की ओर दौड़नेवाली आज की तकनीकी सभ्यता का यह कल का चित्र है, जो दुनिया के विख्यात अर्थशास्त्रियों ने खींचा है। 'क्लब ऑफ रोम' की ओर से, 'विकास की सीमाएँ' (दी लिमिट्स टु ग्रोथ) इस विषय पर आयोजित अध्ययन की रिपोर्ट का यह निचोड़ है। इस अध्ययन में विख्यात अर्थशास्त्री, उद्योगपति, वैज्ञानिक आदि ने हिस्सा लिया था। अमेरिका की लोकप्रिय पत्रिका 'टाइम' के दो जनवरी के अंक में प्रकाशित लेख में कहा है प्रो० फॉरेस्टर ने एक ऐसा कम्प्यूटर बनाया, जिसके द्वारा आज की सबसे बड़ी समस्या—दूषित हुए पानी—का ठीक से अध्ययन हो सके। उसी के आधार पर एक युवा वैज्ञानिक मिडोज तथा उनके साथियों ने मेगाकम्प्यूटर बनाया और उसके सामने सवाल रखे। आज की रफ्तार से आगे बढ़नेवाली इस औद्योगिक सभ्यता का भविष्य क्या है? जन-संख्या और औद्योगीकरण कहाँ तक बढ़ सकते हैं? उत्तर मिला कि इस पृथ्वी के भीतर युग-युग के संचित, तेल, कोयला लकड़ी जैसी चीजों का जो तेजी से इस्तेमाल चल रहा है, उसके कारण वे चीजें शीघ्र ही समाप्त हो जायेंगी और उसी के साथ इस तकनीकी सभ्यता का अन्त हो जायेगा।

औद्योगीकरण की रफ्तार बढ़ती चली जा रही है और वह बढ़ती जायेगी। आज के अविकसित भी विकास की इस दौड़ में शामिल हो रहे हैं। नतीजा क्या होगा? पेट्रोल, कोयला, लकड़ी आदि की अधिकाधिक आवश्यकता पड़ेगी। इस धरती पर उन सब चीजों का संचय तो सीमित ही है। मानव की असीम तृष्णा उस सीमित संचय को शीघ्र ही समाप्त कर देगी। फिर क्या होगा? कम्प्यूटर कहता है कि सन् २०२० के करीब औद्योगिक सभ्यता का पतन तेजी से आरम्भ होगा। कारखाने बन्द पड़ जायेंगे, पैदावार घटती जायेगी। आरोग्य सेवा (हेल्थ सर्विसेज) घटती जायेगी, जनसंख्या भी घटती जायेगी।

कम्प्यूटर के सामने दूसरा सवाल रखा गया। क्या शक्ति के दूसरे स्रोत नहीं ढूँढ़े जा सकेंगे? समुद्र के भीतर शक्ति के स्रोत ढूँढ़ने की कोशिश चल ही रही है। लेकिन जवाब मिला कि औद्योगिक सभ्यता के दूषण (पोल्यूशन) के कारण वातावरण इतना विषैला बनता जायेगा कि आकाश, नदियाँ, समुद्र, धरती, सब इसके शिकार बनेंगे। अनेक सम्भावनाओं को रखा गया, मार्ग ढूँढ़े गये लेकिन कम्प्यूटर ने एक ही जवाब दिया—"इस औद्योगिक सभ्यता का पतन अटल है।"

औद्योगिक सभ्यता का विकल्प

अब क्या किया जाये? दुनिया-भर के वैज्ञानिक, विचारक, विद्वान खोज रहे हैं इस जटिल समस्या के उत्तर को। सबके ध्यान में आ रहा है कि हमें बदलना होगा, अपनी आज की जीवन-पद्धति को बदलना होगा। हम बदलेंगे तो बचेंगे। अनियंत्रित विकास, जीवन-स्तर को बढ़ाते चले जाना, अधिकाधिक उत्पादन, अधिकाधिक भौतिक समृद्धिवाली आज की जीवन-पद्धति अब नहीं चलेगी। इस औद्योगिक सभ्यता की बुनियाद में गलती है। इसमें आमूल परिवर्तन करना होगा।

मिडोज़ टीम ने सुझाव पेश किये हैं कि जनसंख्या-वृद्धि को रोकना होगा, कारखानों की वृद्धि को रोकना होगा। लोगों को अपने विचार बदलने होंगे। अधिकाधिक भौतिक वस्तुओं की जगह दूसरी अभौतिक चीजों की चाह विकसित करनी होगी। कम और अधिक टिकने-वाली वस्तुओं का इस्तेमाल करना चाहिए। इससे नुकसान के बजाय लाभ ही होगा। शास्त्र, कला, आदि का खूब विकास होगा। जीवन अधिक अच्छा बनता जायगा।

कोई महात्मा नहीं, बल्कि कम्प्यूटर जैसी मशीन कह रही है कि इस धरती पर सब चीजों की एक सीमा है, इसलिए मानव को अपनी वासना को भी नियन्त्रित करना चाहिए। अनियन्त्रित वासना सर्वनाश को आमन्त्रित करेगी।

मशीन याद दिला रही है महात्मा की। महात्मा ने भी तो यही कहा था! बहुत पहले कहा था। इस शताब्दी के आरम्भ में ही गांधीजी ने हमें आगाह किया था और दूसरी जीवन-पद्धति, स्वस्थ, सुन्दर, सन्तुलित जीवन-पद्धति का चित्र भी प्रस्तुत किया था। 'अनियन्त्रित विकास' नहीं, बल्कि नियन्त्रित विकास, मानव-केन्द्रित विकास की ओर उन्होंने हमारा ध्यान खींचा था। भौतिक और अभौतिक के सन्तुलन का मार्ग दिखाया था। 'भूखे का भगवान रोटी है' कहकर जहाँ उन्होंने हमें भौतिक विकास की आवश्यकता और दिशा बतायी थी वहीं, 'नॉट बाइ ब्रेड अलोन', मानव केवल रोटी पर जीता नहीं, जैसे ईसा के वचन का भी स्मरण दिलाया था। किन्तु विज्ञान के अधूरे ज्ञान से उन्मत्त बना हुआ हम शिक्षितों का मानस मानता रहा कि 'गांधी तो पुराने (आउट ऑफ डेट) हो गये हैं। इस यन्त्र-युग में उनका चर्खा किस काम का?'

अब विकसित विज्ञान कह रहा है→

कटुता कैसे मिटे ?

(डा० फरीदी का वक्तव्य)

बंगला देश एक स्वतंत्र राज्य की हैसियत से जल्दी ही संसार के राष्ट्रों में अपनी जायज जगह प्राप्त कर लेगा। यह इतिहास के लेखकों का काम है कि वे बतायें कि इस नये राष्ट्र के जन्म में भारत का कितना हिस्सा रहा है और बंगला देश की स्थानीय जनता का कितना रहा। कुछ महीने पहले तक कोई भी उन परिस्थितियों की भविष्यवाणी नहीं कर सकता था जिनके परिणाम-स्वरूप बंगला देश का जन्म हुआ। अब यह सब इतिहास है।

यह भी एक वास्तविकता है, जिसको पाकिस्तान के राष्ट्रपति जुल्फीकार अली भुट्टो ने भी स्वीकार किया है, कि भारत ने १४ दिनों के अन्दर पाकिस्तान को एक बड़ी शिकस्त दी। जीत की इस घड़ी में अब हम लोगों को उदारता दिखानी चाहिए और कटुता के इस अध्याय को खत्म करना चाहिए।

जिस व्यवस्थित और अच्छी पद्धति से भारत ने बंगला देश के लाखों शरणार्थियों की समस्या को सुलझाया है, उसे संसार के शरणार्थियों के बसाने से सम्बन्धित इतिहास में एक महत्व का स्थान दिया जायेगा।

अब समय आ गया है कि पूरी प्रचलित परिस्थिति का मूल्यांकन किया जाय और उसी के अनुसार भविष्य का कार्यक्रम बनाया जाय।

गलत प्रचार रोका जाय

सबसे पहले मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि भारत, पाकिस्तान और बंगला देश को अब शान्ति और मित्रता के साथ रहना चाहिए। तीनों देशों की अर्थ-व्यवस्था को पिछले दिनों बड़ा धक्का पहुँचा है और शान्ति की स्थापना में जितनी देर होगी, उन्हें पुनः उठ खड़ा होना उतना कठिन होगा। इसलिए सबसे पहला काम यह होना चाहिए कि वैसे सभी प्रचार बन्द किये जायँ जिनसे उनके बीच दूरी बढ़ती है।

जो आदमी आकाशवाणी को सुना करता है और पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ा करता है, वह महसूस करता है कि पाकिस्तान की दुर्घटना का इल्जाम इस्लाम पर लगाया जा रहा है, पाकिस्तान की सैनिकशाही पर नहीं। ऐसा लगता है कि भारतीय सूचना की संस्थाएँ, सारे संसार के मुसलमानों के विरुद्ध, जिसमें भारत के भी मुसलमान शामिल हैं, एक अभियान चला रही हैं और उनकी धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचा रही हैं। भारतीय समाचार-पत्र केवल सूचनाएँ छापने के बदले, सूचना में सम्वाददाता का दृष्टिकोण देकर उसे साम्प्रदायिक रंग दे देते हैं। युद्ध के दौरान तोड़-फोड़ की सूचनाएँ देने का कुछ अर्थ हो सकता है, परन्तु अब आत्म-समर्पण के दो महीने बाद उनका कोई अर्थ नहीं रह जाता। हाँ, इनसे कटुता बढ़ती है और सुधार में देर होती है। मैं सम्बन्धित पदाधिकारियों से अनुरोध करूँगा कि वे इस सम्बन्ध में कुछ करें।

दूसरे यह कि हमारे नेताओं का बार-बार यह कहना कि बंगला देश के बनने से दो राष्ट्र का सिद्धान्त गलत सिद्ध हुआ है बेतुकी-सी बात है। कांग्रेस ही ने जिन्ना के दो राष्ट्र के सिद्धान्त को माना था। मैंने सदा यह माना है कि हिन्दुस्तान एक बहु-राष्ट्रीय देश है और मुझे यह कहते प्रसन्नता हो रही है कि देश इसे धीरे-धीरे स्वीकार कर रहा है। यह एक अकाट्य तथ्य है कि सभी मुसलमान न एक राष्ट्र के हैं और न हो सकते हैं। वे संसार के बहुत सारे हिस्सों में रहते हैं और जहाँ वे रहते हैं वह भाग उस देश का ही होता है।

बंगला देश में हमारी जो जीत हुई है, उसका दो राष्ट्र के सिद्धान्त, धर्म-निरपेक्षता या लोकतंत्र से कोई सम्बन्ध नहीं है।

वास्तविकता यह है कि पूर्वी पाकिस्तान का पश्चिमी पाकिस्तान (बिहारी और सब) द्वारा आर्थिक शोषण हो रहा था, इसके साथ ही इस्लामाबाद का भ्रष्ट सैनिक शासन था और एक असमर्थ, अयोग्य और अक्षम स्थानीय नौकरशाही थी जिसने श्री मुजीबुर्रहमान को स्वतंत्रता-संग्राम के लिए वाजिब बल दिया और भारत को एक सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ कि बागियों को पश्चिमी पाकिस्तान से अलग होने में सहायता दी

→कि गांधी बीते हुए युग का नहीं, बल्कि आनेवाले युग का मानव है। इकालाजी के अध्ययन में प्राप्त तथ्य, निरंतर गांधी की आवश्यकता बता रहे हैं। अनियंत्रित विकासशाली इस औद्योगिक सभ्यता का अंत अटल है। इसलिए नयी राह ढूँढनी होगी। वह राह होगी विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था तथा राजव्यवस्था की। 'उत्पादन के लिए उत्पादन' नहीं, मानव के लिए उत्पादन, जिसका दूसरा नाम है स्वदेशी, स्वाश्रयिता, स्वावलम्बन। बहुत प्रसन्नता की बात है कि प्रधानमंत्री इन्दिराजी ने स्वदेशी और स्वाश्रयिता का नारा बुलन्द किया है। कभी-कभी संकट भी वरदान बन जाता है। विदेशी सहायता का आधार ढूँढना हमारे लिए अभिशाप नहीं वरन् वरदान बन जायेगा, अगर हम सूझ-बूझ से काम लेंगे। परिस्थिति के कारण पैदा हुई इस समस्या पर हम गहराई से चिन्तन कर, नये प्रयोग करना प्रारम्भ करेंगे तो इकालाजिस्ट्स द्वारा प्रस्तुत समस्या का उत्तर पेश कर सकेंगे। ग्रामस्वराज्य आन्दोलन इसी दिशा में एक नम्र प्रयास है। क्या गांधी का भारत, पतन की ओर जानेवाली इस औद्योगिक सभ्यता का कोई दूसरा पर्याय (अल्टरनेटिव) प्रस्तुत नहीं करेगा ? ●

ाय। अतः हमारे नेताओं को बेतुकी बातें नहीं कहनी चाहिए। इससे हमारा दृष्टि-कोण मजबूत नहीं होता।

९-बंगाली मुसलमान

हर प्रयास इस बात का हो रहा है कि २०-२५ साल गैर-बंगाली मुसलमानों के दुख को यहां उन्हें हथियार-बन्दराज पर दिया जाता था, कम करके पेश किया जाय। हमें उनकी दयनीय स्थिति की खबर उन लोगों से मिली है जो बंगालियों के अत्याचार की भयंकरता को देखकर भारत आये हैं। इस तरह एक नयी शरणार्थी-समस्या और पैदा कर दी गयी है। मैं मानवता और करुणा के नाते केवल शेख मुजीब से ही नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास, शरणार्थियों के लिए यू० एन० ओ० के कमिश्नर और प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से अपील करता हूं कि वे उनकी सुरक्षा और आर्थिक प्रश्न पर ध्यान दें।

शेख मुजीब का यह वक्तव्य कि वे सभी लोग जो बंगला देश में हैं उन्हें बंगाली भाषा और संस्कृति को अपनाना होगा, अपने देश के प्रतिक्रियावादियों को एक छड़ी देती है जिससे वे हमें मारें। भारत ने भारतीय नस्ल के बहुत सारे नागरिकों को जो लंका, बर्मा, मलाया, अफ्रीका और दूसरे देशों में सैकड़ों साल पहले चले गये थे वापस ले लिया है, बिहारी तो केवल २५ साल पहले बंगला देश गये थे। उन्हें वापस बुलाने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए, क्योंकि भारत के गांव में उनके सम्बन्धी हैं, जो उनकी सहायता करेंगे।

इसके अतिरिक्त, अगर बिहारियों पर बंगालियों के अत्याचार की खबरें गलत हैं, तो उन लोगों को एक अवसर मिलना चाहिए जो स्वयं देखकर अपनी तसल्ली करना चाहते हैं।

शेख मुजीब जिस अंतर्राष्ट्रीय कमीशन की बात कर रहे हैं, अगर वह नियुक्त हो तो उसे इस बात को भी शामिल करना चाहिए कि बंगला देश में बिहारियों पर बंगालियों के क्या अत्या-चार हुये।

शीघ्र ही इस उप-महाद्वीप के तीनों देशों में सम्बन्ध सुधारने के लिए कदम उठाया जाय। मेरी राय है कि भारत के मुसलमानों का एक प्रतिनिधि-मण्डल जल्दी ही भुट्टो और मुजीब तथा उनकी विधान-सभा के सदस्यों से बात करने के लिए भेजा जाय और इस बात की कोशिश की जाय कि तीनों देश एक दूसरे के नजदीक आयें। अगर इस कदम का देश के आन्तरिक और विदेश नीति पर प्रभाव न पड़े तो हम लोगों को भुट्टो और मुजीब से मिलकर बातें करने दी जायें।

महासंघ का प्रश्न

स्थायी शान्ति की स्थापना के लिए आवश्यक है कि इस उप-महाद्वीप के तीनों राज्यों की सभी बड़ी समस्याएं हल कर ली जायें। यातायात, व्यापार और यात्रा करने की सुविधाएं जल्द दी जायें। तीनों देशों के महासंघ बनने की बात कुछ नेताओं ने की है और यह प्रस्ताव मैंने १९६५ में पेश किया था। कश्मीर के प्रश्न को भी हल किये बिना नहीं छोड़ना चाहिए। भारत, पाकिस्तान, बंगला देश के महा-संघ में कश्मीर को भी सम्मिलित किया जाय। इस इकाई के लिए संयुक्त सुरक्षा-सन्धि और एक दूसरे पर आक्रमण न करने की सन्धि की शर्त होनी चाहिए।

अगर उपर्युक्त दो चार मुद्दे अपनाये गये तो संसार के इस भाग में स्थायी शान्ति कायम होगी। यह हमें रूस, चीन और अमेरिका की सत्ता की राजनीति से भी बचायेगा। मैंने १९६२ में 'हिमालयी कॉमन मार्केट' की बात की थी, जिसमें नेपाल, बर्मा, अफगानिस्तान, लंका और भारतीय उपमहाद्वीप को शामिल करने की बात थी। यह योजना भी बाद में ली जा सकती है।—'रेडियंस' (६ फरवरी '७२) से

"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक का प्रकाशन-वक्तव्य

[समाचार-पत्र पञ्जीकरण अधिनियम (फार्म नं० ४, नियम ८) के अनुसार हर एक पत्रिका के प्रकाशक को निम्न जानकारी प्रस्तुत करने के साथ साथ अपनी पत्रिका में भी यह प्रकाशित करना होता है। तदनुसार यह प्रतिलिपि यहाँ दी जा रही है। —सं०]

(१) प्रकाशन का स्थान	वाराणसी
(२) प्रकाशन का समय	सप्ताह में एक बार
(३) मुद्रक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी-१
(४) प्रकाशक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक,
(५) सम्पादक का नाम	राममूर्ति
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक राजघाट, वाराणसी-१
(६) समाचार-पत्र के संचालकों का नाम-पता	सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) (सन् १८६० के सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट २१ के अनुसार रजिस्टर्ड सार्वजनिक संस्था) रजिस्टर्ड नं० १२

मैं, श्रीकृष्णदत्त भट्ट, यह स्वीकार करता हूं कि मेरी जानकारी के अनुसार उपर्युक्त विवरण सही है।

वाराणसी, २९-२-'७२

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट,
प्रकाशक

अज्ञात भाषा के प्रदेश में दस दिन

[सर्व सेवा संघ के मंत्री प्रो० ठाकुरदास बंग और श्रीमती सुमन बंग ने आन्ध्र में पदयात्रा की थी। उस पदयात्रा के अनुभवों और अनुभूतियों को जोड़कर श्रीमती सुमन बंग ने एक प्रेरणादायी चित्र खड़ा कर दिया है। इसका एक अंश २० दिसम्बर '७१ के अंक में प्रकाशित हुआ था। उसका दूसरा और अन्तिम अंश हम इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं।—सं०]

श्री मोहन भाई रेड्डी इस साल लोकसभा के लिए खड़े थे। हम जीप से जा रहे थे, वे सड़क पर दिखाई पड़े। सुरभिजी ने फौरन जीप रोककर उन्हें बैठाया और बात की। बहुत बड़े जमींदार हैं वे। पाँच मिनट उन्हें समझाने के बाद उन्होंने ७० एकड़ भूमि दान में लिख दी। कहीं जाने की जल्दी थी अतः क्षमा माँगी और अपने गाँव आने का निमन्त्रण दिया एवं कुछ और जमीन देने का आश्वासन देकर चल दिये। एक चमत्कार-सा लगा हमें।

अकाल की भीषण छाया इस क्षेत्र पर फैली हुई है, पर पदयात्रा में एक भी टोली को भूखे रहना नहीं पड़ा। सबको भोजन मिला। यह प्रेम और सहानुभूति का ही सूचक था। यहाँ के मुसलमानों को देहाती आदमी तुर्क कहता है और उर्दू को तुर्की। 'तुम उर्दू जानते हो क्या?' इसका जवाब बच्चे देते थे—'नाको तुर्की राद्दू'। महाराष्ट्र और कर्नाटक से यह क्षेत्र लगा होने से काफी लोग टूटी-फूटी मराठी और कन्नड़ जानते हैं। पाठशाला में हिन्दी और अंग्रेजी अनिवार्य है। अतः विद्यार्थी बहुभाषी हैं। अनायास वे तेलगू, अंग्रेजी, हिन्दी, कन्नड़, मराठी आदि भाषाएँ सीख लेते हैं। बचपन में बोलचाल में इतनी भाषाएँ सीखने का काम खेल-खेल में हो जाता है, कुछ भी मेहनत उन्हें नहीं करनी पड़ती। इसलिए मुझे लगा कि भाषावार प्रान्त-रचना करने से अनायास मिलनेवाले इस लाभ से हम वंचित होते हैं और संकुचित भी।

श्री व्यंकटराव के यहाँ हम खाना खाने गये। एक जमाने में गाँव के बड़े जमींदार थे वे। चार हजार एकड़ भूमि थी। गाँव के पटवारी तो थे ही। यहाँ एक विशेष बात देखने को मिली कि पटवारी का अधिकार विरासत में मिलता है और इसलिए उसकी बदली नहीं होती। ज्यादातर पटवारी बड़े-बड़े जमींदार हैं। आज श्री व्यंकटराव के पास ४० एकड़ भूमि है। दो लड़के हैं। पहले २००-४०० एकड़ जमीन थी तब एक बार २० एकड़ और बाद में फिर से १५ एकड़, इस तरह अभी तक कुल ३५ एकड़ भूदान में वे दे चुके थे। ग्रामदान की बात चली तो हमने उनसे फिर (तीसरी बार) २० वाँ हिस्सा भूमि माँगी। उन्होंने बिना आग्रह के यह बात मान ली। वे पढ़ा-लिखा समझदार आदमी हैं। घर में दो ग्रेजुएट लड़के हैं। क्यों बार-बार जमीन दान में देते हैं। मेरी समझ में न आया। कारण जानने की उत्सुकतावश मैंने उन्हें और उनके दोनों लड़कों को बुलाया और पूछ ही लिया—'आप हमारे माँगने पर बारबार क्यों भूमि दान में देते हैं?' जवाब मिला—'आप अपने लिए थोड़े ही भूमि माँगते हैं। हमारे गाँव के गरीबों के लिए माँगते हैं। गरीब की मदद करना हमारा धर्म है। दान माँगने पर किसी को ना नहीं कहना यह हमारी संस्कृति है।' फिर दीवार पर टंगे भगवान व्यंकटेश्वर के चित्र को दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहने लगे—'आदमी क्या साथ ले जाता है, पाप या पुण्य? दान देने से पुण्य मिलता है आत्मा को शान्ति मिलती है।' मैंने उन नौजवान शिक्षित लड़कों से पूछा, 'आप इसके लिए क्यों राजी हो गये?' फौरन जवाब मिला। 'जमाने की माँग है।' हमारी संस्कृति की गहराई व्यंकटराव के बोलने से पता चली और आज के युग का विचार नौजवानों से।

इस क्षेत्र में जगह-जगह पाया कि बड़े-बड़े जमींदार शहरों में रहते हैं और देहात में उनके आलीशान मकान खाली पड़े हैं। यहाँ के टेनेंसी एक्ट और सीलिंग के कानून के कारण जमींदार परेशान हैं। कानून से बचने का बहुत प्रयत्न किया, पर अब देख रहे हैं कि रोज-रोज भूमि सम्बन्धी नये-नये प्रगतिशील कानून बनते जा रहे हैं और उनसे बचना कठिन है। यह भी एक कारण है कि कुछ लोगों ने हमें दान दिया। मतलब, परिस्थिति अनुकूल हो और वातावरण तैयार किया जाय तो काफी प्रभाव पड़ सकता है।

इस पदयात्रा में प्रखण्ड के कुल ९२ गाँवों में से ७७ गाँवों में कार्यकर्ता पहुँचे। उनमें से ४६ गाँव ग्रामदान हुए, २१ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनीं, ३३ गाँवों में कुल ७८९ एकड़ (४६७ एकड़ प्रोटेक्टेड टेनेंसी जमीन और १२२ एकड़ स्वामित्व एवं कब्जे की भूमि) भूमि ४२ दाताओं से दान में मिली। इसमें से ५९४ एकड़ भूमि (४३३ एकड़ टेनेंसी लैण्ड और १६१ एकड़ स्वामित्व व कब्जे की भूमि) का दस गाँवों में बँटवारा भी हो गया। १९ गाँवों में ग्राम-शान्ति-सेना का संगठन हुआ। किसी भी गाँव में ग्रामदान के विचार की या भूमि-वितरण के काम में विशेष पार्श्वभूमि माननी होगी। इस जिले में पू० विनोबाजी की तेलंगना पदयात्रा में पचास हजार एकड़ भूमि भूदान में मिली थी। पर ग्रामदान का काम यहाँ कुछ भी नहीं हुआ था। अब ऐसे विचार का भी यहाँ हार्दिक स्वागत हुआ। बड़े-बड़े जमींदार अपना खुद का दान देकर औरों के पास हमें ले जाते थे और भूमि माँगते थे। एक गाँव से दूसरे गाँव साथ ले जाते थे। अधिक दिलचस्पी से यहाँ काम किया जाय तो इस आन्दोलन को जन-आन्दोलन बनने की सम्भावनाएँ यहाँ हैं। कुछ दाता तो इतने प्रभावित और उत्साहित हो जाते थे कि कहते थे—'ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर किये, भूमि दी, अब हम आपके कार्यकर्ता बन गये हैं। कहिये, हम आपके साथ चलते हैं।' सभा में उपस्थित, जिन

यह हमारे साथ घूमना, वक्त में जमीन देना, इन सब बातों से सिद्ध होता है कि सर्वोदय से आम जनता को कितनी आशा है। पच्चीस साल में राजनीय पक्षों का बर्ताव जनता ने देखा। अब उसका भ्रम-निवारण हुआ। और इस विचार के प्रति वह आकृष्ट हुई है। अब हमारी कसौटी की वेला है। देखें कितने खरे हम उतरते हैं। इस पर इस देश की गरीब जनता का भविष्य अवलम्बित है।

राजनीतिक दृष्टि से आसाम में एक खास अनुकूलता है कि यहाँ ३-४ मंत्री सर्वोदय के विचार को मानते हैं, श्रद्धा रखते हैं। अब यदि ठीक से संचालन हुआ तो जनता और सरकार दोनों की काफी तैयारी होने से काम काफी आसानी से आगे बढ़ सकता है।

यहाँ की जनता एक बड़ी खतरनाक बीमारी से पीड़ित है। केवल सुना ही था लेकिन शराब का भयंकर प्रत्यक्ष दर्शन इस पदयात्रा में ही हुआ। हर रोज सैकड़ों बोतलें शराब यूरोप देशों से भर-भर कर देहातों में जाती हैं। गाँव में पहुँचते ही देहाती हमें घेर लेते हैं। क्या पुरुष, क्या स्त्रियाँ, क्या बूढ़े, क्या नौजवान, सब शराब पीते हैं, रोज पीते हैं। बहुत स्त्रियाँ शराब पीती हैं ऐसा सुना था, पर यहाँ तो बच्चों को पीते देखा। मैंने पूछा, 'पेट में खाने के लिए कुछ नहीं, फिर भी शराब क्यों पीते हो और इतना पैसा बरबाद करते हो?'

'अम्मा! हम आदत से लाचार हैं। पर आप लोग शराब हमारे देहात में क्यों आने देते हो? सामने दिखने पर हमसे रहा नहीं जाता है। आप इसे बन्द कीजिए। फिर हम नहीं पियेंगे।' मुझे जवाब मिला। मैं क्या जवाब देती? बस उन्हें कहती—"पियो! तुम्हारे लिए दवाखाने खोलने, तुम्हारे बच्चों को पढ़ाने के लिए सरकार को पैसा चाहिए, इसी-लिए तुम्हारे पास यह अमृत (?) भेजा जा रहा है।" बस मैं यह कहती कि "तुम्हारी भूख का दर्द करोड़ों का दुःख भुलाने के लिए यह दवा तुम्हें पिलायी जा रही है?" क्या परिणाम निकल सकता है इसका? निःसत्व, तेजोहीन, लाचार प्रजा को देख-कर जो दुःख हुआ उसका वर्णन शब्दों में नहीं लिख सकती।

२५ तारीख को इस पदयात्रा का समारोप हुआ। कार्यकर्ता खुश थे। साई हुई चीज बरसों बाद मिली ऐसा कुछ लग रहा था। उत्साह उमड़ रहा था उनके चेहरे से, हर शब्द में। सैकड़ों देहाती आये थे। अनेक दाता ग्राम शान्ति-सैनिक, नयी सर्वोदय प्रामसभाओं के पदा-धिकारी दूर-दूर से आये थे। जनता की आशा-आकांक्षाओं को मूर्तरूप देना, उनकी शक्ति को सुचारु रूप से संगठित करना, उन्हें काम में सतत जुटे रहने की प्रेरणा देना हमारा काम है। एक सप्ताह कार्य-कर्ता इसी क्षेत्र में घूमनेवाले हैं और अधूरा काम पूरा करनेवाले हैं। पदयात्रा की फल-निष्पत्ति से प्रसन्न होकर आसाम के साथियों ने एक साल में प्राप्ति-पुष्टि के साथ महकुमावार जिलादान करने की घोषणा की है और काम में जुट गये हैं। इस पदयात्रा की फलश्रुति का काफी श्रेय जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्र देव शर्मा को और उनके साथियों को देना होगा।

यह तो एक चमत्कार हुआ है। इसका मतलब फसल तैयार है काटनेवाला ही चाहिए। "भूदान की मुख्य शक्ति विश्वास है। नम्रता के साथ हम जायँ, लोग देते हैं। जमीन का बँटवारा उसी समय किया। अच्छा हुआ। माँ के पास बच्चा जिस विश्वास के साथ जाता है उस विश्वास से हम जनता के पास जायें तो वह बराबर देती है।" विनोबाजी ने पदयात्रा का सारा वृत्तान्त सुनने पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की।

इस तरह उत्तर लखीमपुर की इस पदयात्रा से कार्यकर्ताओं में फिर से आशा का और उत्साह का संचार हुआ। उसके कारण आन्दोलन को नई स्फूर्ति एवं आशा हुई। —श्रीमती कुसुम बहन

खादी-खरीददारों को

सर्वोदय-साहित्य पर आधी छूट

सर्वोदय साहित्य-प्रसार-योजना के अन्तर्गत खादी-भंडारों पर खादी-खरीदनेवालों को सर्वोदय साहित्य आधे मूल्य पर उपलब्ध होता है।

अपनी रुचि की पुस्तकें चुनकर अपने पुस्तकालय को समृद्ध बनाइये।

अखिल भारत सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी की ओर से प्रसारित।

आत्म-निर्भरता—मंत्र या केवल नारा ?

सन् १९५१ के नवम्बर में जब आचार्य विनोबाजी योजना-आयोग (प्लानिंग कमीशन) से मिले थे तो उन्होंने आत्म-निर्भरता की आवश्यकता पर बल दिया था, विशेष कर अनाज की। लेकिन उस समय दिल्ली के नक्कारखाने में सेवाग्राम की तूती की आवाज कौन सुनता ? उल्टे खिल्ली उड़ायी गयी कि जब दुनिया एकता की तरफ जा रही है, यह बाबा संकुचित दिमाग से सोचता और स्वावलम्बन की बात कहता है; दुनिया एक है, हम क्यों न लोहा बाहर भेजकर अनाज का आयात करें ? पिछले बीस बरस की करुण कहानी से पता चल गया कि कौन सही था—विनोबा या प्लानिंग कमीशन। खैर, देर आये दुरुस्त आये।

मगर हमें यह देख कर बड़ा दुख है कि आत्म-निर्भरता एक नारा बन कर रह गया है और उसे एक मंत्र के तौर पर नहीं अपनाया जा रहा है। उधर प्रधानमंत्री के एक वाक्य के मनमानी अर्थ लगाये जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि "यद्यपि हमको मिलनेवाली ऐसी मैत्रीपूर्ण सहायता से हम इनकार नहीं करेंगे जिससे हम अपनी अर्थनीति के संकटपूर्ण क्षेत्रों को सबल बना सकें, हम अपने आर्थिक कार्यक्रमों का नया नक्शा ऐसा बनायेंगे और अपने भौतिक व बौद्धिक साधनों का संगठन इस तरह करेंगे कि बिना विदेशी सहायता के काम चला सकें।" इसके दोनों मतलब लगाये जा सकते हैं—यह कि सहायता न लेकर आत्म-निर्भरता का रास्ता पकड़ना चाहिए और यह भी कि बाहर से जो मदद आये उसको सावधानी के साथ स्वीकार कर लेने में संकोच नहीं होना चाहिए।

हमारे सहायताकांक्षी मित्रों को प्रधानमंत्री के इस कथन से पूरा सहारा मिल गया है। ऊपर से वे यह भी दलील देते हैं कि भारत को आज विदेशों का कर्ज चुकाने के लिए हर साल लगभग साढ़े चार सौ करोड़ रुपये की जरूरत है। इसके लिए भी बाहर की मदद जरूरी बतायी जाती है फिर उनका आग्रह है कि बाहर से सहायता का यानी माल का आना रुक जायेगा तो देश के अन्दर उत्पादन में बाधा पड़ेगी और परिणामस्वरूप हमारे आयात पर असर पड़ेगा और हम दुनिया के बाजार में टिक नहीं सकेंगे।

अब क्या कहा जाय इस तर्क को। जिस देश में अस्सी फीसदी लोग एक रुपये रोज से कम पर गुजर करते हों, स्पष्ट है कि बाहरी मदद से उसे कोई लाभ नहीं होगा। लाभ होता है शेष बीस प्रतिशत को, या उसमें भी ऊपर के पांच या सात प्रतिशत को जो सत्ता, व्यापार या नौकरी में हैं और वैभव व विलास की सारी सामग्री जिनके पास है। इनके पास अखबार व प्रचार के अन्य साधन हैं। इनके पास वोट भी है जिनकी बदौलत ये सरकार पर भी अपना असर रखते हैं। सेना के अधिकांश उच्चाधिकारी भी इसी समुदाय से आते हैं। लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि हमारे ये श्रीमान् भारत के दारिद्र्य का शोषण करने में नहीं चूकते। वर्ना स्वराज्य के बाद देश में विषमता इतनी ज्यादा तीव्र न हो जाती। क्या खेती के क्षेत्र में और क्या उद्योग में, दोनों में ही असमानताएँ बढ़ी हैं। विशेष दयनीय स्थिति है भूमिहीन परिवारों की जिनकी संख्या दो करोड़ के लगभग है और जो इस भारत रूपी ताजमहल के आधार हैं। विदेशी मदद से उनको कोई फायदा नहीं पहुंचा है, उल्टे नुकसान ही हुआ है।

अगर अब भी इन भूमिहीन बन्धुओं की उपेक्षा की गयी और भूमिसुधार में उनके साथ मनमानी किया गया तो देश की आर्थिक स्थिति कहीं ज्यादा विकराल रूप ले लेगी। समय आ गया है उनकी ओर ध्यान देने का और उनकी दशा को सुधारने का। इसके लिए विदेशी सहायता की कदापि आवश्यकता नहीं है और उसे लेना बन्द करना जरूरी है।

स्वराज्य में अमीरों का हित सधता रहा और गरीबों के साथ लापरवाही बरती गयी। दूसरे शब्दों में अन्त्योदय की तरफ ध्यान नहीं दिया गया और श्रीमानोदय का सिलसिला चला। विदेशी मदद ने इसमें और चार चांद लगा दिये और श्रीमानों के ऐजेण्ड्स बढ़ते चले गये। अब यह प्रक्रिया बन्द होनी चाहिए और अन्त्योदय में लगना चाहिए। वह तभी होगा जब युद्ध-स्तर पर उसकी तरफ हम अपनी शक्ति केन्द्रित करेंगे और बाहर की मदद के भुलावे में नहीं पड़ेंगे।

हाल ही में विश्व बैंक के अध्यक्ष भारत आये थे। उनके आगे जो याचना की गयी, उससे हमें बहुत तकलीफ पहुँची। इसी तरह हम जापान और अन्य राष्ट्रों के आगे फिर से हाथ फैलाने लग गये हैं। यह सब बहुत गलत है और बन्द हो जाना चाहिए। भारत की सुरक्षा और विकास, दोनों की मांग है कि देश आत्म-निर्भर हो और विदेशी सहायता लेना बन्द कर दे। आत्म-निर्भरता एक नारा मात्र नहीं हमारे जन जीवन का पक्का मंत्र बन जाना चाहिए। —सुरेशराम

ग्रामदान प्राप्ति पुष्टि अभियान

इन्दौर, १२ फरवरी। प्राप्त जानकारी के अनुसार उज्जैन जिले की तराना तहसील में १ से १० फरवरी तक सघन ग्रामदान-प्राप्ति-पुष्टि-अभियान के अन्तर्गत गांधी-निधि एवं जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समितियों के २५ कार्यकर्ताओं ने १० टोलियों में विभाजित होकर ३० गांवों में ग्रामस्वराज का सन्देश पहुँचाया।

१ व २ फरवरी को सर्व सेवा संघ के मंत्री प्रो० ठाकुरदास बंग के मार्गदर्शन में क्षेत्र के ग्रामपंचायत सचिवों एवं पटवारियों का प्रशिक्षण-शिविर हुआ।

अभियान का आयोजन क्षेत्रीय संगठक श्री रामचन्द्र भार्गव के नेतृत्व में उज्जैन जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समिति जिला एवं प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया था।

आन्दोलन के समाचार

सर्वोदय पक्ष में पदयात्रा एवं मेला

सुरगीत

१२ फरवरी को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के श्राद्ध दिवस के उपलक्ष में बड़हाली के पास राजघाट में एक दिन का सर्वोदय मेला सम्पन्न हुआ। इस वर्ष यह पचीसवाँ मेला होने से, मेले की रजत जयन्ती भी मनायी गयी। गुजरात के प्रसिद्ध कवि एव लेखक श्री विमललाल भाई भट्ट उपस्थित थे और गांधीजी के जीवन से उनके द्वारा सुनाये गये संस्मरण ज्ञान-वर्धक एवं प्रेरक रहे।

प्रति वर्ष बापू-पुण्य तिथि ३० जनवरी से पदयात्रा निकलती है। इस वर्ष यह पदयात्रा सरगोन-नगर से आरम्भ हुई और मार्ग में २० से भी अधिक गाँवों में सर्वोदय, ग्रामस्वराज्य एवं वर्तमान चुनावों के सन्दर्भ में मतदाताओं के कर्तव्यों के सम्बन्ध में विचार-प्रचार का कार्य किया गया। जिला में अहिंसक क्रान्ति के लिए आचार्य कुल की स्थापना का विचार भी शिक्षक-समूहों के समक्ष रखा गया। —रामचोपाल

जयप्रकाशनगर

१२ फरवरी को श्री जयप्रकाश नारायण की जन्मभूमि जयप्रकाशनगर में सप्तोमाला सर्वोदय मेला सम्पन्न हुआ। पिछले वर्षों की अपेक्षा इस वर्ष मेले की यह विशेषता थी कि इसका आयोजन किया सर्वोदय मण्डल ने किया और मेला सम्बन्धी व्यय का अधिकांश भाग जिले की जनता ने वहन किया था।

इस अवसर पर तरुण-शान्तिसेना का एक त्रिदिवसीय शिविर भी आयोजित किया गया।

अन्य सामान्य कार्यक्रम—सूत्रांजलि, चरखा दगल एवं श्रमदान—भी हुए। विजेताओं को पुरस्कार दिया गया।

आगरा

बापू निर्वाण दिवस ३० जनवरी ७२ को गांधी स्मारक यमुना पन्नो-पार आगरा में नगर-स्वराज्य-आन्दोलन के शिक्षण के लिए एक दिन का शिविर रखा गया जिसमें ४० भाई-बहिनों ने भाग लिया।

शिविर में मुख्य रूप से स्वामी कृष्ण-स्वरूपजी, डा० दयानिधि पटनायक, श्री प्रकाश भाई का मार्ग-दर्शन मिला।

नगर स्वराज्य की दृष्टि से काम करने के लिए शहर के विभिन्न १४ क्षेत्रों में काम करने के लिए साथियों ने जिम्मेदारी उठायी।

सेठवाड़ा

दिनांक ३० जनवरी को बापू-पुण्य तिथि के अवसर पर जिला सर्वोदय मण्डल, सेठवाड़ा की तरफ से श्री रामजी सिंह की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया गया।

सभा में अन्य कार्यक्रमों के अलावा २८ ६७ ६० का साहित्य बिका एवं तीन 'भूदानयज्ञ', एक 'भदान तहरीक', एक नयीतालीम, के ग्राहक बनाये गये। २२२ फुटकर 'भूदान यज्ञ' के अंकों की बिक्री की गयी। —शिवनारायण शास्त्री

बाँसवाड़ा

जिला सर्वोदय मण्डल, परतापुर द्वारा दिनांक ३० जनवरी से १२ फरवरी तक एक पदयात्रा का आयोजन किया गया। पदयात्रा में राजस्थान हरिजन सेवक संघ, जयपुर, पंचायत समिति, घाटोल एवं पंचायत समिति, गढ़ी के साथियों ने भाग लिया।

पदयात्रा के दरम्यान २० गाँवों में विचार-प्रचार का काम हुआ। २८.७२ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। एक ग्राम-दानी गाँव ने एक साल की योजना-अवधि में प्रत्येक १४४ रुपये एवं २२७ सूत की गुण्डियाँ दान-स्वरूप समर्पित किया।

उदयपुर

उदयपुर शान्ति सेना केन्द्र का विचार शिविर दिनांक १२ व १३ फरवरी को विद्याभवन बुनियादी मदरसा, रामगिरि के देहाती प्राकृतिक परिवेश में सम्पन्न हुआ। जिले के शांति सैनिक भी इसमें आमंत्रित थे। उपस्थिति १० की थी जिसमें २ उदयपुर के बाहर के थे।

शिविर का उद्देश्य था—केन्द्रों को कैसे गतिशील किया जाय व कैसे उनका विस्तार किया जाय।

मिर्जापुर

दिनांक ३० जनवरी से १४ फरवरी तक गांधीघाट, चचुरा पर शान्ति-दिवस मनाया गया। बैठक में लोकसेवक, शान्ति-सैनिक, सर्वोदय-मित्र बनाने तथा साहित्य बिक्री की दृष्टि से जिले की चारों तहसील का कार्यक्रम बना। यात्रा कार्यक्रम में पूरे समय तक श्री कृष्ण प्रसाद चतुर्वेदी अध्यक्ष, जिला सर्वोदय मण्डल तथा श्री हरिश्चन्द्र त्रिपाठी, मंत्री ने समय दिया। इसके अलावा दुद्धी क्षेत्र लोक सेवक मण्डल की गोष्ठी गोविन्दपुर में हुई तथा उन सब ने अपना-अपना कार्य का नवीनी-करण किया। यात्रा का अनुभव यह रहा कि सर्वोदय विचार की मान्यता होते हुए भी उसमें विचार-पूर्वक लगनेवाले स्वतंत्र जनशक्ति खड़ी करने हेतु अथक-श्रम की आवश्यकता है तथा जितने भी रचनात्मक काम में लगनेवाले कार्यकर्ता हैं उनको भी लोक-सेवक बनकर इसमें लगने की आवश्यकता है।

भूमिहीनों को भूमि

इन्दौर, १२ फरवरी। जानकारी मिली है कि मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड द्वारा आयोजित भूदान भूमि वितरण के कार्यक्रम के अन्तर्गत १५ जनवरी से ३१ जनवरी, '७२ तक भूदान बोर्ड के आठ कार्यकर्ताओं द्वारा मुरैना जिले की विजयपुर तहसील के ४३ ग्रामों के १०६६ परिवारों को ६३१० बीघा भूदान-भूमि का वितरण किया गया तथा पक्के पट्टों का समारोह वितरण हुआ। आदाताओं में ६१२ सवर्ण, ३१० आदिवासी एव २३९ हरिजन परिवार सम्मिलित हैं।

भूदान-यज्ञ ६-३-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

ग्रामदानोत्तर पुष्टि-कार्य

श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के मार्गदर्शन में पूर्णिया जिले के रुपौली प्रखण्ड में ग्रामदानोत्तर पुष्टि-कार्य का सघन-अभियान चलाया जा रहा है। जानकारी मिली है कि १४ सूत्रीय कार्यक्रम के आधार पर रुपौली प्रखण्ड के ६९ ग्रामसभाई क्षेत्रों में भ्रमणशील कार्यकर्ता-टोलियों को आशातीत सफलता मिली है।

उपलब्धियाँ

१—प्रखण्ड स्वराज्य सभा के चुनाव के लिए विभिन्न ग्रामसभाओं से ९८ प्रतिनिधियों का चुनाव सम्पन्न कराया गया।

२—पेयजल के लिए १९९ स्थान का निरीक्षण तथा ट्यूबवेल की स्वीकृति प्रदान की गयी।

३—कुल ५३६ शान्ति सैनिकों में से ७७ को प्रशिक्षण दिया गया।

४—टीकापट्टी गाँव में पाँच दाताओं से प्राप्त ३·१५ एकड़ भूमि ७ आदाताओं में ससमारोह वितरित की गयी।

५—२२ ग्रामसभाओं में १६६०·७८ रुपये जमा हैं। शेष ४७ ग्रामसभाओं ने रबी-फसल से जमा करने का निश्चय जाहिर किया है।

६—यात्रावधि में कुल ६९ ग्रामसभाओं में ४५ भूदान यज्ञ, ३१ गाँव की आवाज, १० मैत्री, २ ग्रामोदय कुल ८८ ग्राहक बनाये गये।

७—खादी तथा साहित्य-बिक्री: टोली को यात्रावधि में ५२४·४३ रुपये की खादी तथा २४०·८२ रुपये का सर्वोदय साहित्य बिका।

मातृदिवस

माता कस्तूरबा गांधी की २९वीं पुण्यतिथि राजभवन में २२ फरवरी को सायंकाल ५ बजे श्रीमती लक्ष्मी कान्तम्मा रेड्डी (उत्तर प्रदेश के राज्यपाल की धर्मपत्नी) की अध्यक्षता में 'मातृदिवस' के रूप में मनायी गयी। कार्यक्रम का आयोजन गांधी शान्ति प्रतिष्ठान और गांधी जन्म शताब्दी महिला समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया।

डा० कंचनलता सब्बरवाल ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि नारी के जीवन की सार्थकता माँ बनने में नहीं, माँ का दिल रखने में है। आपने बा के जीवन को मातृत्व का सर्वोत्कृष्ट आदर्श बताते हुए कहा कि अब वह समय आ गया है जब कि पुरुष का अहंकार और स्त्री की अधीनता मिटनी चाहिए।

इस समारोह में श्रीमती चन्द्रा गोयल, श्रीमती मालती कुमार, श्रीमती पंवार तथा श्री रामप्रवेश शास्त्री ने भी "महिलाओं की आर्थिक स्थिति और हस्तकला" विषय पर विचार व्यक्त किया।

नेफा में शान्ति-दिवस

गत दिनांक ३० जनवरी को खोंसा शान्ति केन्द्र में "शान्ति दिवस" मनाया गया। शान्ति दिवस के लिए सरकारी-गैर-सरकारी आदमियों से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई। अन्य कार्यक्रमों में सफाई, शारीरिक श्रम, मौन प्रार्थना, शान्ति सभा आदि का आयोजन किया गया था।

भूदान किसान सम्मेलन

दरभंगा जिला सर्वोदय मण्डल के तत्त्वावधान में प्रखण्ड मधेपुर तथा अन्धराठाढ़ी के ग्राम रतवारी में, लदनियाँ प्रखण्ड के ग्राम लाखेडीह में भूदान-किसान का सम्मेलन क्रमशः ६, ७, ८ एवं ९ फरवरी को विधिवत सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में हजारों भूदान-किसान उपस्थित हुए।

बिहार भूदान यज्ञ कमिटी के मंत्री श्री श्याम प्रकाश सिंह ने भूदान-किसानों को सम्बोधित करते हुए आश्वासन दिया कि उनकी हर समस्याओं का निदान किया जायगा। बेदखली निवारणार्थ भूदान किसानों को सम्मिलित अहिंसक शक्ति का प्रयोग करने हेतु उनका आह्वान किया।

भूल-सुधार

'भूदानयज्ञ' १४ फरवरी ७२ के अंक में पृष्ठ ३०९ कालम तीन अनुच्छेद २ की दसवीं पंक्ति में कोष्ठक में जाट के स्थान पर जाटव होना चाहिए। सं०

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

उड़ीसा में ग्रामदान-कार्य

महाशय,

तारीख ७ फरवरी '७२ के 'भूदान-यज्ञ' में 'उड़ीसा में ग्रामदान-कार्य' शीर्षक एक लेख पढ़ने को मिला, जिसका स्पष्टीकरण और प्रतिवाद बहुत जरूरी है।

१९५५ के अन्त तक उड़ीसा में ८०० ग्रामदान हुआ था। स्वाभाविक ढंग से वह संख्या १९६२ तक दुगुनी हो गयी। तब सुलभ-ग्रामदान का विचार आया और १९६३ में विनोबाजी की दूसरी उत्कल-यात्रा में फिर से नया जोश दिखाई पड़ा। तूफान-आन्दोलन के पहले के ग्रामदानों की संख्या लगभग चार हजार थी। लेकिन तूफान-आन्दोलन में १९६५ से १९६९ तक यह संख्या १२००० हो गयी। यह संख्या उड़ीसा के कुल गांव की एक चौथाई है। इस प्रान्त में कुल ३४६ प्रखण्डों में से ७६ ब्लाक प्रखण्डदान में और १३ जिलों में से २ जिला जिलादान हो गया है। यह सारा संकल्पित ग्रामदान है। इसमें से अब तक ३२६५ गांवों की जमीन बँट चुकी है और ९३१ ग्रामदानी गांवों को सरकारी मान्यता मिल चुकी है। इतने बड़े पैमाने पर इस आन्दोलन के परिसर के बढ़ने के बाद जिस समुदाय ने हमारे विचार और कार्यक्रम को श्रद्धा से अपने हाथ में लिया उसको हर कदम पर रोकना, नियंत्रण करना, न हमारा काम है और न हम कर सकते हैं। उनके पास नया-नया विचार पहुँचाना, उनको आर्थिक सहायता पहुँचाना ग्रामस्वराज्य के पथ पर चलने के लिए उनको बढ़ावा देना यह हमारा काम था, आज भी है। ३८ प्रखण्डों में ग्रामदान-सभ रजिस्टर्ड हुआ है। वे सारे सभ अपने-अपने क्षेत्र में निर्माण के काम में लगे हैं। इन सारे संघों को खादी मण्डल, ग्रामस्वराज्य सभ वगैरह संस्थाएं खादी ग्रामोद्योग के काम में अपनी सहायता दे रही हैं। ये १२००० गांवों में अपने आन्दोलन, और कार्यक्रम प्रसारित करने के लिए प्रचार पत्र, फोल्डर खासकर "सर्वोदय" पत्रिका के जरिये कोशिश चल रही है।

इन ग्रामदानी गांवों के लिए सर्व सेवा संघ के जरिये "वार आन वान्ट" वगैरह संस्था से १९५८ तक कुछ रकम की सहायता मिली थी। १९५९ से उड़ीसा राज्य सरकार भूदान समिति के जरिये आर्थिक सहायता लगातार देती आयी है, यद्यपि इस रकम का परिमाण ४-५ साल से लगातार घटता आया है। अबतक कुल ३० लाख की रकम भूदान तथा ग्रामदानी गांव के लोगों को मिल चुकी है। कहीं भूमि-सुधार, कहीं खाद और बीज का संग्रह, कहीं बैल जोड़ी के लिए, और अन्यत्र कुआं, बांध, नहर के लिए भी इसका उपयोग हुआ है। ग्रामदानी सभ को ही हम इनका रक्षक मानते हैं। वैसे तो ग्रामसभा इनमें से अधिकतर गांव में बन चुकी है।

इन सारे कामों को नजर में रखते हुए कहीं कुछ भी कमी नहीं है, यह कहना ठीक नहीं होगा, लेकिन जो कुछ हुआ है, और हो रहा है, उसमें हमारे प्रान्त में यहाँ के जनसाधारण में एक नयी आशा, शक्ति जागृत हुई है, इसमें कोई शंका नहीं है। ऐसी स्थिति में इस आन्दोलन को निन्दित करने से क्या लाभ होगा? कहीं किसी गांव में अगर कुछ कमी है तो उसको कैसे रोका जाय और कहीं इसका कुछ प्रतिकार हुआ हो तो इसका नमूना देने से आन्दोलन और हमारे काम को गति मिल सकती है। हमारी राज्य सरकार की ओर से १९६९ में इस आन्दोलन को निन्दित करने के लिए एक प्रयास हुआ था। परन्तु कुछ ही दिन के बाद उन्हें वास्तविक स्थिति का पता चला, जिसके फलस्वरूप उन्होंने जो आर्थिक सहायता देना बन्द कर दिया था, वह देना फिर से मंजूर किया तथा सरकार की ओर से जो जाँच कमिटी बनी थी उसकी सिफारिश से ग्रामदान कानून पास हो गया है। कोरापुट के ग्रामदानी गांव में सरकारी रकम के दुरुपयोग के बारे में उस समय काफी चर्चा हो चुकी है। आज तो कोरापुट की पटांगी, नवरंगपुर, रायगड, नारायणपाटणा वगैरह अंचल में जो रचनात्मक काम चल रहा है, कृषि, गोपालन, खादी, ग्रामोद्योग आदि काम को वहाँ की ग्रामीण जनता जिस प्रकार चला रही है, इसका उदाहरण मिलना मुश्किल है। वहाँ की जनशक्ति उठ खड़ी हो गयी है, अब साहूकार या सरकार कोई भी उसे नहीं दबा सकता। उस क्षेत्र में स्थायी अकाल, भुखमरी का चित्र १९५०-५१ में जिसने देखा था, उसके लिए आज का कोरापुट अजीब-सा लगेगा।

इसलिए इस प्रकार दोष लादने की कोशिश करके या अस्पष्ट शब्दों से गलतफहमी पैदा करने का समय नहीं रहा है।

अगर हम अपने को इस आन्दोलन के सेवक मानते हैं तो कहीं कुछ कमी दीख पड़े तो वहाँ पहुँच कर उसका सुधार करना हमारा कर्तव्य है। अगर अबतक हम यही सोचते हैं कि यह आन्दोलन हमारे हाथ की कठपुतली है तो ठीक नहीं होगा। यह आन्दोलन किस उपाय से जल्द-से-जल्द जनता की स्वत स्फूर्त कार्यक्रम बनेगा, यही हमारी कोशिश होनी चाहिए। —विनोद महंती

प्राकृतिक चिकित्सा सम्मेलन

आगामी १९ व २० मार्च को छतरपुर में मध्यप्रदेश गांधी स्मारक निधि के तत्त्वावधान में प्रादेशिक प्राकृतिक चिकित्सा सम्मेलन श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त की अध्यक्षता में आयोजित किया गया है। सम्मेलन में प्रान्त के प्राकृतिक चिकित्सक एवं प्राकृतिक का उपचार प्रेमीगण भाग लेंगे। सम्मेलन १९ मार्च को छतरपुर में अपराह्न ३ बजे से गांधी स्मारक भवन में होगा।●

खुलकर चर्चा, मिलकर निर्णय

हम दस-पाँच लोग मिलकर बैठते हैं, चर्चा करते हैं और किसी निर्णय पर पहुँचने की कोशिश करते हैं। भावना यह रहती है कि जो निर्णय सबकी राय से होगा उसे सब अपना मानेंगे, और उस पर अमल करने में सबको उत्साह होगा। कोई यह नहीं सोचेगा कि उसके ऊपर कोई बात थोपी जा रही है।

आजतक हमारा समाज पिता, पति, मालिक गुरु और शासक के आदेश पर, चलता आया है। पिता ने पुत्र पर, पति ने पत्नी पर, मालिक ने मजदूर पर, गुरु ने शिष्य पर, शासक ने जनता पर हुकूमत की है। ऐसे समाज में हमारे संस्कार विकसित हुए हैं। हमें यही अच्छा लगता है कि निर्णय का बोझ हमारे सिर न रहे, लेकिन मर्जी हमारी ही चले। अब जमाना बदल रहा है। लोकतंत्र में हम रोज समानता और सामूहिक निर्णय की बातें सुनते हैं। लेकिन सदियों के संस्कार के कारण हमारे मन में तरह-तरह की गाँठें बनी हुई हैं जो दिल और दिमाग को समय के साथ चलने नहीं देती।

हमारी बात दूसरे मान क्यों नहीं लेते? जो हमसे उमर में या पद में छोटे हैं वे क्यों हमसे जबान लड़ाते हैं? वह पढ़ा-लिखा नहीं है क्या राय देगा? अक्सर हमारे सोचने-समझने का यह ढंग रहता है। हम इस आयु के हैं, हमारा यह पद है, हम शिक्षित हैं, ऊँची जाति के हैं, आदि बातें हर वक्त दिमाग में घुसी रहती हैं। नतीजा यह होता है कि चार-छह लोग खुलकर, आमने-सामने बैठकर, कोई चर्चा नहीं कर पाते, और जब किसी के दबाव से कोई निर्णय हो जाता है तो बाद को भुनभुनाते रहते हैं। न खुलकर बात होती है, न खुलकर काम होता है उल्टे मन में खिचियाहट बनी रहती है।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं और प्रखण्डस्वराज्य-सभाओं की बैठकों में भी यही होता है। खुलकर चर्चा बहुत कम होती है। लोग मन में कुछ रखकर बोलते हैं, इसलिए उत्साह के साथ किसी निर्णय को स्वीकार भी नहीं करते।

सह-चिन्तन और सामूहिक निर्णय भी शिक्षण का विषय है। लेकिन अकेले शिक्षण से भी काम नहीं चलेगा। समाज का वातावरण बदलना चाहिए। वातावरण बदलने का अर्थ है कि लोगों के रोजमर्रा के जीवन में आपसी सम्बन्ध बदलने चाहिए। यहीं सम्पत्ति और उसके स्वामित्व का प्रश्न आ जाता है। मनुष्य जिन सम्बन्धों के बीच रहकर अपनी जीविका कमाता है उनका उसके सोचने पर गहरा असर होता है इसलिए जीविका का सन्दर्भ बदलना जरूरी है।

लेकिन परिवर्तन के लिए बैठे रहना सम्भव नहीं है। जो व्यक्ति इन बातों को समझते हैं उन्हें जोखिम उठाकर भी नये तौर-तरीके लोगों के सामने रखने पड़ेंगे। धरती पर परिवर्तन हो इसके लिये जरूरी है कि लोग पहले परिवर्तन को दिमाग से स्वीकार करें। यह स्वीकृति शिक्षण से होती है।

पुलिस पहरे पर

हमारे देश में जो अनेक दृश्य मन में क्रोध और क्षोभ पैदा करते हैं उनमें से एक मुख्य दृश्य है सड़क के किनारे पुलिस के सिपाहियों का खड़ा रहना, सिर्फ इसलिए कि कोई 'मिनिस्टर साहब' या 'गवर्नर साहब' उधर से गुजरनेवाले हैं। इन सिपाहियों के इस तरह खड़े रहने का मिनिस्टर साहब की सुरक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है। अगर सम्बन्ध है तो इस चीज से कि सत्ता का रोब और दबदबा जाहिर हो और यह दिखाई दे कि मिनिस्टर साहब वैभव की कितनी ऊँची सीढ़ी पर हैं।

सिपाहियों की पीठ पर अपनी सत्ता का बोझ लादनेवाले ये जितने मिनिस्टर हैं वे सब समाजवादी हैं। समाजवाद हर एक का अपना अलग है, लेकिन सामन्तवाद के प्रदर्शन में सब सहमत और समान हैं। पार्टी कोई हो, मिनिस्टर यही चाहता है कि उसकी मोटर सिपाहियों की कतार के बीच से गुजरे, जब वह पहुँचे तो विद्यार्थी-शिक्षक जय बोलने के लिए मौजूद हों, कलक्टर-कप्तान 'अटेंशन' में मिलें, और लौन्चाव पुलिस दरोगा-ठीकेदार पीछे-पीछे चलें। पहिले के सामन्तवादी राजाओं की तरह इन राजनैतिक सामन्तवादियों की एक जाति ही अलग बन गयी है। इनके घोड़े अलग-अलग हैं लेकिन हैं सब घोड़सवार।

पुलिस जनता के टैक्स पर पलती है। समाज में कानून के आधार पर शान्ति और व्यवस्था कायम रखना उसका पहला काम है। उस काम से हटाकर पुलिस को खुशामद में सड़क पर खड़ा करना एक अपराध है जिसे ऐसे लोग कर रहे हैं जिनके हाथों में जनता ने अपना वोट और नोट दोनों देकर सत्ता सौंपी है। ऐसे अपराधियों का यह अपराध और भी ज्यादा असह्य है। ●

लोक-शिक्षण : आधार, प्रक्रिया और कार्यक्रम

प्रिय कृष्णराज,

तुम्हारा ५ ता० का पत्र मिला। तुमने पहले अध्याय में मेरे अनुभव के बारे में पूछा है। वैसे लोकगंगा-यात्रा में अनेक अनुभव आते हैं। इसका जिक्र मैंने पिछले पत्र में किया है। कहीं स्वागत, कहीं उपेक्षा और कहीं विरोध भी रहा। लेकिन कुल मिलाकर मेरा अनुभव अच्छा ही रहा। मुख्य बात यह है कि तुम लोगों को ऐसा सोचना नहीं चाहिए कि जन-अभिक्रम के लिए मैदान तैयार हो गया है। अभी बहुत बड़ी मंजिल तय करना है।

मैंने कहा था कि १९७१ में हमने प्रदर्शन (डिमान्स्ट्रेशन) का काम किया अर्थात् हमने अपने कार्यकर्ता के सहारे यह सम्भावना प्रकट कर दी कि जनता सम्मिलित रूप से यह स्वीकार कर सकती है कि उसे ग्रामस्वराज्य चाहिए, और उसके लिए *ग्रामदान आन्दोलन की जो शर्त है* उसका पालन वे कर सकते हैं। इसका प्रदर्शन मरौना में काफी हद तक और महिषी एवं चौगा में कुछ हद तक हमने कर लिया है। अब हमें जन-शक्ति को संयोजित (मोबिलाइज) करना है। जब हम कहते हैं कि हमको जनता को संयोजित करना है तो इसका अर्थ हमें अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि आज समाज की मनःस्थिति क्या है? हजारों वरसों से समाज ने यह माना नहीं है कि उसकी समस्या के समाधान की जिम्मेदारी उसकी ही है, और न अब तक के समाज-शास्त्रियों ने यह बात उन्हें समझायी है। जनता को हजारों वरसों से इसी मान्यता का अभ्यास रहा है कि उसके लिए सोचनेवाले कोई राजा, कोई गुरु, कोई पुरोहित या कोई नेता हैं। वे जो सोचेंगे उसके अनुसार अमल करनेवाले कोई राज-संस्था, सेवा-संस्था, कल्याण-संस्था या धर्म-संस्था है। यानी कोई काम जनता के प्रथम पुरुष और द्वितीय पुरुष के बीच में नहीं करता है। वह किसी तृतीय पुरुष द्वारा ही सम्पन्न होगा। इसी मनःस्थिति को विनोबाजी 'देइज्म' कहते हैं।

जन-सहकार की चेतना नहीं

प्राचीनकाल से ऐसा माना गया कि यह जिम्मेवारी संस्थाओं की ही है। आधुनिक काल में जबसे लोकतंत्र तथा कल्याणकारी राज्यवाद का विचार विकसित हुआ है तबसे राजकीय तथा दूसरी संस्थाओं की ओर से यह आवाहन होता रहा है कि संस्थाओं के काम में जन-सहकार हो। जन-सहकार का यह विचार कई देशों में कुछ सफल भी हुआ है। यद्यपि इस देश में उसकी कोई चेतना का विकास नहीं हुआ है। इस चेतना का विकास न होने का एक महत्त्वपूर्ण कारण है। इंग्लैंड वगैरह देशों में जिस समय लोकतंत्र का विचार फैल रहा था और लोग राजतंत्र से मुक्ति का संघर्ष कर रहे थे, उस समय हमारे देश में सामन्तवादी राजतंत्र प्रचलित था। पश्चिम के लोकतंत्र की हवा इस देश में पहुँचने से पहले ही मुल्क विदेशी राज्य का गुलाम बनाया गया। यद्यपि पठान और मुगलों के राज में लोकतंत्र नहीं था तब भी उन विदेशियों के इस देश में बस कर रह जाने के कारण यहाँ की राजनीतिक पद्धति का स्वरूप वही रहा जो प्राचीनकाल में था। अर्थात् प्राचीनकाल में जैसे मूल-जनता यानी ग्रामवासी उसी प्रकार स्वतंत्र थे जैसे प्राचीनकाल में राजतंत्र था।

लेकिन अंग्रेजी राज के गुलामी के दिनों में अंग्रेज का अन्तिम लक्ष्य हुकूमत करना नहीं था, मुल्क का शोषण करना था। इसीलिए उन्होंने ग्रामीण स्वतंत्रता को तोड़कर गाँव को भी केन्द्रीय राज्य में समा लिया, और कल्याणकारी राज्यवाद के नाम से जनता को अपनी समस्या के लिए चिन्तन तथा अभिक्रम के अवसर से मुक्त कर दिया; क्योंकि ऐसा किये बिना पूरे समाज का शोषण सम्भव नहीं था। अर्थात् जैसे विनोबा कहते हैं कि पठान और मुगलों के राज में देश गुलाम और गाँव आजाद था, अंग्रेजी राज में देश के साथ गाँव भी गुलाम हो गया। गुलाम का स्वधर्म समाज के लिए न सोचना ही होता है। इस प्रक्रिया से जनता और अधिक बेहोश हो गयी।

इस प्रकार अंग्रेजी राज में पूरी जनता का शोषण दिन-ब-दिन पराकाष्ठा पर पहुँचता गया और इस कारण देश में आजादी का आन्दोलन हुआ। लेकिन जिस तरह यूरोप के आन्दोलन की प्रेरणा लोकतंत्र था, इस देश में वह नहीं था। यहाँ के आन्दोलन की प्रेरणा गुलामी-मुक्ति की थी।

यद्यपि हमारे देश के नेता पश्चिम के लोकतांत्रिक विचार से प्रभावित थे फिर भी आन्दोलन के लिए उन्हें गुलामी-मुक्ति की ही दिशा में लोक-शिक्षण करना पड़ा। लोकतंत्र के विचार को समझाने का अवसर उस समय नहीं था। देश के आजाद होने पर नेताओं के विचार के अनुसार इस देश में लोकतंत्र की स्थापना तो हो गयी लेकिन लोकतांत्रिक विचार के शिक्षण के अभाव में लोकतंत्र का लोक अपने को पुरानी प्रजा की हैसियत के रूप में ही देखता रहा।

लोक-शिक्षण के तीन चरण

अतएव इस देश का लोक पाश्चात्य लोकतांत्रिक समाज के लोक जैसा सहकार की भूमिका तक भी नहीं पहुँच सका। ऐसी परिस्थिति में तुम लोग अपने आन्दोलन से लोक-सहकार की भूमिका से आगे बढ़कर समाज को लोक की जिम्मेदारी, लोक का अभिक्रम तथा लोक-शक्ति के सहारे समाज का कामकाज चलता रहे ऐसा चाहते हो। अतः खूब गहराई से सोचना होगा कि हमें अपने आन्दोलन के लक्ष्य की भूमिका में कितनी सीढ़ियाँ पार करनी है? यानी आज जो 'देइज्म' की सिरव्यापी मान्यता है उसमें भी लोक-सहकार की थोड़ी मान्यता का विकास हुआ है, पहले उस भूमिका पर जनता को

प्रखण्ड-ग्रामस्वराज्य-समिति की वही दुर्दशा होगी जो पिछले दिनों ग्रामोदय-सहकार-समिति की हुई है। तपस्वियों की तपस्या भंग करने का सबसे प्रभावशाली साधन इन्द्रपुरी की अप्सराएं होती हैं। फिर ग्रामसभा तथा प्रखण्डसभा के सदस्यों की तपस्या का शुभारम्भ तो अभी हुआ ही नहीं है। अभी से इन्द्रपुरी की अप्सराओं को बुलाने का विचार खतरनाक है। अतएव जिस गाँव में वस्त्र-स्वावलम्बन का संकल्प हो वहाँ सीधे सहायता की जाय, यही इष्ट होगा। इस सहायता में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऐसी सहायता पैसे की मजूरी में न होकर सर्विस देने के रूप में हो। फिर जब ग्रामकोष की व्यवस्था के अभ्यास द्वारा ग्रामसभा के सार्वजनिक कोष सम्हालने का विवेक उद्बोधित हो तब धीरे-धीरे सरकारी प्रत्यक्ष मदद मिले। ग्रामसभा को ऐसे विचारों की प्रेरणा देनी चाहिए। स्थानीय सरकारी-सहायता भी ग्रामसभा सीधे ले, हमारे या प्रखण्ड-सभा के मार्फत नहीं। दूसरी बात यह है कि पहले खेती पर ध्यान देना चाहिए उसके बाद उद्योग पर।

शिक्षण

दूसरा कार्यक्रम शिक्षण का होना चाहिए। प्रखण्डसभा तथा ग्रामसभा के सदस्यों को पूछना चाहिए कि क्या वे ग्रामस्वराज्य में हिन्द स्वराज्य के नेताओं की गलती करेंगे? हिन्द-स्वराज्य के नेताओं ने आजाद-भारत में भी अंग्रेजों द्वारा प्रतिपादित गुलामी-मूलक शिक्षा-पद्धति को ही अपना लिया। क्या ग्राम-स्वराज्य भी उसी पद्धति को अपनायेगा या ग्रामीण-गणराज्य को परिपुष्ट करने के उद्देश्य से अपनी शिक्षा-नीति निर्धारित करेगा? गांधीजी ने ग्रामीण-गणराज्य को ही स्वराज्य माना था और उसे परिपुष्ट करने के लिए समग्र नयी तालीम की पूरी कल्पना बनायी थी। तालीम की इस आवश्यकता की पूर्ति में विनोबाजी ने ग्राम-विश्वविद्यालय की बात कही है जिसे मैंने 'ग्रामगुरुकुल' की संज्ञा दी है। भविष्य में मैं मुख्य रूप से अपनी यात्रा के दरम्यान इसी का छोर खोजने का प्रयास करना चाहता हूँ। इसके लिए मैं स्वतंत्र *चिन्तन में न लगकर ग्रामवासियों को ही* चिन्तन में लगाना चाहता हूँ ताकि उनके चिन्तन के माध्यम से ही मेरा चिन्तन चल सके। इसके बिना ग्रामस्वराज्य की कल्पना साकार नहीं होगी।

शासन-मुक्ति

पुष्टि के बाद तीसरा कार्यक्रम शासन-मुक्ति का मार्ग खोजने की प्रक्रिया होगी। अब तक मैंने जितना सोचा है उसमें सामुदायिक-विकास-ब्लाक के विघटन का रास्ता निकालना पहला काम होगा। इसकी माँग अगर हम जन-मानस में पैदा कर लें तो शासन की चट्टान पर एक निश्चित चोट पहुँचा सकेंगे। अदालत-मुक्ति तथा विकासतन्त्र-मुक्ति के छोर से सरकार-मुक्त गाँव के लक्ष्य की ओर बढ़ा जा सकता है ऐसा मैं मानता हूँ। मेरी *यात्रा में ग्रामसभा के सदस्यों से इस प्रश्न* पर चर्चा करने का विचार है।

ग्राम-शान्तिसेना

चौथा मार्ग जो मैं ढूंढ़ना चाहता हूँ वह ग्राम-शान्तिसेना का स्थायी फंक्शन क्या होगा उसके लिए है। अब तक हमने जो काम किया है वह शान्तिसेना का शब्द-संचार मात्र है। मैं मानता हूँ कि शान्तिसेना का मुख्य काम अदालत-मुक्ति को सफल बनाने का होना चाहिए। इस स्थायी काम के साथ-साथ प्रसंगवश जो तात्कालिक काम सामने आयेगा वह शान्तिसेना करे। इसका मतलब यह नहीं है कि शान्तिसेना समाधान-समिति का काम करे। वह काम तो ग्रामस्वराज्य-सभा का ही है। शान्तिसेना का काम होगा ग्रामसभा के सदस्यों को अदालत में जाने से रोकने का प्रयास। मैं शान्तिसेना को अपनी क्रान्ति के लिए सबसे अधिक प्रभावशाली साधन मानता हूँ, लेकिन अभी तक हमारा ध्यान उस दिशा में नहीं गया है, क्योंकि अभी तक हमने ग्रामीण समाज के अन्तस्थल तक पहुँचकर इस काम को किया नहीं है। अब तक हमने ऊपर-ऊपर देश के नौजवानों को आकर्षित मात्र करने का प्रयास किया है। लेकिन ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में हमको बहुत ज्यादा गहराई में सोचना तथा अभ्यास करना होगा।

आचार्यकुल

हमें पाँचवी खोज आचार्यकुल के लिए करनी है। अब तक हमने इस काम के लिए भी शब्द-संचार ही किया है और इसके लिए शिक्षा-विभाग के सहारे स्कूलों के शिक्षकों से परिचय मात्र किया है। इस परिचय का छोर पकड़कर शिक्षकों से तथा दूसरे *शिक्षा-प्रेमी नागरिकों से* आचार्यकुल के ऐसे सदस्य ढूँढने होंगे जो अपनी जिम्मेदारी तथा अभिक्रम से अपने कुल को आगे बढ़ायें। ऐसे शिक्षकों द्वारा रात्रि-पाठशाला का संगठन होना चाहिए। इसकी दिशा और योजना क्या होगी? पुष्टि-काल के लिए अभी से इसकी खोज आवश्यक है।

मरौना प्रखण्ड में मेरी यात्रा का कार्यक्रम निम्नलिखित हो सके तो अच्छा होगा:

१—मौसम के अनुसार सुबह जितने जल्दी एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव को निकल सकें उतना ही मेरे स्वास्थ्य के लिए सुविधाजनक होगा। धूप लगने से मेरे सिर में दर्द हो जाता है इसका ध्यान रखना चाहिए।

२—पड़ाव पर पहुँचकर पहले ही दिन शाम को तीन बजे ग्रामसभा का आयोजन किया जाय। पहले ही दिन पूरा विचार सुनने के बाद ही रात को और सुबह गाँव के लोग मुझसे ब्योरेवार चर्चा कर सकेंगे। दूसरे दिन सुबह शान्तिसेना के सैनिकों का एक वर्ग (क्लास) लिया जाय और शाम को ग्रामसभा के सदस्यों के साथ कार्यक्रमों पर गोष्ठी रखी जाय। अगर सम्भव हो तो ऐसी तीन बैठकें रखी जा सकती हैं। पहले दिन रात को, दूसरे दिन दोपहर के बाद और रात को।→

बंगला देश के गैर-बंगाली क्या करें ?

—महद फातमी

बंगला देश से जो खबरें मिल रही हैं, उनसे वहाँ की गैर-बंगाली आबादी की परेशानी का पता लगता है। आज वहाँ उनका सहारा केवल भारतीय सेना है और वे यह सोच-सोचकर परेशान होते हैं कि हिन्दुस्तानी सेना के वापस चले जाने के बाद मालूम नहीं उनका क्या अन्जाम होगा। देशी और विदेशी जरियों से इस बात का पता लगता है कि वे लोग दोबारा हिन्दुस्तान वापस आना चाहते हैं। इतिहास के इस दर्दनाक मजाक पर दिल खून के आँसू रो रहा है। पच्चीस साल पहले जुनून के हाथों अक्ल और तर्क की हार हुई थी। उसके बाद हिन्दुस्तान में मुसलमानों की बस्तियाँ वीरान हुईं, गाँव उजड़े, परिवार टूटे, दिलों में दाग और दिमागों में दरारें पड़ीं। हमारे रिश्तेदार, हमारे सहपाठी, हमें काफिरों के बीच मरने के लिए छोड़कर अल्लाह की बस्ती की तरफ चल पड़े—इस यकीन के साथ कि अपने स्वप्न की धरती पर वे सुख की नींद सो सकेंगे, और चैन की बाँसुरी बजायेंगे। लेकिन २४ वर्षों में ही फूलों का वह सेज काँटों के बिस्तर में बदल गया। उनकी वह दुनिया ही बदल गयी और अब जब वे अपनी गर्दन ऊँची करके हम पर नजर डालते हैं तो देखते हैं कि यहाँ के मुसलमान काफिरों के बीच केवल जिन्दा ही नहीं हैं, बल्कि उनकी सख्या भी बढ़ी है। ये उन मुसलमानों से अच्छे हैं जो शरणार्थी बनकर पाकिस्तान गये थे और २४ साल बीत जाने के बाद आज भी शरणार्थी ही हैं। जब वे गर्दन झुकाकर अल्लाह की बस्ती में अपने आपको देखते हैं तो हिन्दुस्तान की हिन्दू फौज को अपना अकेला रक्षक पाते हैं।

एक हिन्दुस्तानी की हैसियत से इस बात पर दिल बल्लियों उछलता है। परन्तु दूसरी ओर, बंगला देश के बिहारी भाइयों की वर्तमान मनोदशा का जायजा लेते हैं तो यह महसूस करके दिल बैठता है कि इन्होंने अनुभव से कोई सबक नहीं सीखा। मानसिक दृष्टि से वे आज भी उसी स्थान पर हैं जहाँ वे पच्चीस साल पहले थे। आखिर क्या बात है कि बंगला देश के प्रधानमंत्री के विश्वास दिलाने के बावजूद भी कि बेकसूर गैर-बंगाली नागरिकों की जान, माल और इज्जत की हिफाजत की जायेगी और बावजूद कि यू० एन० ओ० के प्रतिनिधि ने ढाका की गैर-बंगाली आबादीवाले इलाकों का अकेले दौरा करने के बाद इस बात का समर्थन किया है कि उन लोगों को जान का कोई बड़ा खतरा नहीं है। फिर भी वहाँ के गैर बंगाली खतरा महसूस करते हैं और उनका विश्वास केवल सेना पर है। यह उसी मनोवृत्ति की देन है जिसने इन्हें हिन्दुस्तान छोड़ देने का रास्ता दिखलाया था।

सवाल यह है कि असल ताकत जनता है या सेना ? दुर्भाग्य से बहुत से लोग सेना की शक्ति को ही असली शक्ति मानते हैं। लोकतन्त्रात्मक जीवन बिताना भी एक कला है, जिसके सीखने की आवश्यकता अल्पसंख्यकों को है। लेकिन सर सैयद और उनके बाद सर इकबाल की शायराना कल्पना के कन्धों पर उड़ान भरनेवाले नेतृत्व ने, जिसका सिलसिला जिन्ना साहब से शुरू होकर मौदूदी साहब तक पहुँचता है, मुस्लिम अल्पसंख्यक को जीने की इस कला से वंचित रखा। भारत में जिन्ना साहब की कायदे आजम माननेवालों का भरोसा अंग्रेज शासन और उसकी सेना पर था। जब अंग्रेजों का पतन हुआ तो उन मुसलमानों का वह सहारा टूट गया और उन्होंने पाकिस्तान जाकर अपना भाग्य पश्चिमी पाकिस्तान की सत्ता और पंजाबी सेना को सौंप दिया। आज बंगला देश का बिहारी डरता है। किससे डरता है ? किससे सहमता है ? बंगाली से क्यों डरता है ? इसलिए कि २४ साल साथ रहने के बाद भी वह बंगालियों से, जो उस देश के वासी और बहुसंख्यक हैं, घुल-मिल नहीं सका। उसने अपनी शक्ति सेना से कर्ज ली। वह सेना अब वहाँ रही नहीं तो एक दूसरी विदेशी सेना में वह सुरक्षा महसूस करता है। उसका विश्वास केवल सेना पर है—वह सेना ब्रिटेन की हो, पाकिस्तान की हो, या हिन्दुस्तान की हो। बहरहाल सेना होनी चाहिए। सेना से परे किसी दूसरी शक्ति पर, जनता की शक्ति पर, इसकी नजर जमती नहीं।

आवश्यकता है कि भी [illegible] हिन्दुस्तान में पार्टियों और इदारों के पदाधिकारी से सीखना चाहिए। [illegible] होकर अपनी [illegible] को [illegible], बहुसंख्यक के साथ

→ ३—पड़ाव पर मेरा ठहराव दो दिन का होना चाहिए, लेकिन ग्रामसभा की माँग पर यह अवधि बढ़ायी जा सकती है।

४—दो या उससे अधिक दिन रहने की अवधि में पूरे समय शान्तिसेना के शिविर लगाये जायँ जिसके लिए एक कार्यक्रम बना लें तो अच्छा होगा। मेरे साथ एक कार्यकर्ता, जो शिविर चला सके, होना चाहिए। हमारे साथी और उसी क्षेत्र के शान्तिसेना-नायक एक दिन पहले पड़ाव पर जाकर मेरी व्यवस्था तथा शान्तिसेना शिविरार्थियों का संगठन करें। मैं जिस दिन अगले पड़ाव पर पहुँचूँगा उसी दिन सबेरे शिविर का कार्यक्रम शुरू किया जाय, जिसमें प्रभातफेरी और दूसरे कार्यक्रम रहें। शान्तिसेना के शिविरार्थी सुबह प्रभातफेरी के साथ शाम की सभा का एलान करते जायँ तो अच्छा होगा।

११-२-७२ सस्नेह, तुम्हारा,

पड़ाव : सिंहेश्वर धीरेनभाई

सहरसा (बिहार)

और प्रतिष्ठित जीवन बिताने की व्यवस्था उन्होंने सरकार के सामने पेश की है। बंगला देश के गैर-बंगाली लोगों के लिए हिन्दुस्तान के विभिन्न मुस्लिम कोनों से अब तक जो प्रस्ताव आये हैं उनमें दो मुख्य प्रस्ताव हैं। एक प्रस्ताव है कि उन लोगों को हिन्दुस्तान वापस ले ले। दिल तो हमारा भी यही चाहता है कि इन सब लोगों को हिन्दुस्तान में, जो उनका असल वतन था, वापस बुला लिया जाय। हमें यह भी मालूम है कि वे लोग यहाँ आने के बाद राज्य के इतने बड़े वफादार होंगे कि उनकी वफादारी की मिसाल दी जायेगी। लेकिन राज्यों के कारोबार में दिल से नहीं दिमाग से काम लेना पड़ता है और दिमाग यह कहता है कि हिन्दुस्तान ऐसा नहीं कर सकेगा। क्योंकि उसका यह कदम शेख मुजीबुर्रहमान पर अविश्वास होगा। दूसरे इसलिए कि उनके आने के बाद हिन्दुस्तान में कई तरह की पेचीदगियाँ पैदा हो जायेंगी। यह तो हो सकता है और शायद होगा भी कि बंगला देश के गैर-बंगालियों की कठिनाइयों को दूर करने की कोशिश से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ दोस्ताना सलाह हिन्दुस्तान की सरकार और बंगला देश की सरकार को दें।

दूसरा प्रस्ताव यह है कि इन लोगों को पाकिस्तान भेज दिया जाय। शेख इसके लिए तैयार हैं। बंगला देश बहुत खुश होगा, अगर उसकी धरती बिहारियों से पाक हो जाये। लेकिन इस प्रस्ताव में स्वयं गैर-बंगालियों के लिए बड़े खतरे हैं। सबसे पहले उनको अपनी नागरिकता का एलान करना पड़ेगा। अगर उन्होंने अपने को पाकिस्तानी नागरिक घोषित किया और पाकिस्तान ने उन्हें कबूल करने से इनकार कर दिया तो उनका जीवन वैसा ही भयानक हो जायेगा जैसा भयानक जीवन केनया में बसनेवाले उन हिन्दुस्तानियों और पाकिस्तानियों का बन गया, जिन्होंने केनया की नागरिकता न स्वीकार करके ब्रिटेन का नागरिक बनना पसन्द किया था। जिस तरह पाकिस्तान से शेख मुजीब ने यह माँग की है कि वह पाकिस्तान में रहनेवाले बंगला देश के चार लाख नागरिकों को उनके वतन वापस कर दे, उस तरह की कोई माँग भुट्टो साहब ने अभी तक बंगला देश की सरकार से नहीं की है। और कठिनाइयों के अलावा भुट्टो साहब के लिए एक कठिनाई यह भी है कि बंगला देश को एक स्वतंत्र देश स्वीकार किये बिना वे अपने नागरिकों की वापसी की माँग नहीं कर सकते। शेख मुजीब यह स्वीकार करते हैं कि पाकिस्तान एक स्वतंत्र राज्य है। इसलिए उन्होंने वहाँ की सरकार से अपने नागरिक वापस कर देने की माँग की है। भुट्टो साहब की परिस्थिति शेख से भिन्न है। वह अभी भी बंगला देश को पूर्व पाकिस्तान समझते हैं।

बंगला देश के गैर-बंगाली मुसलमानों के पाकिस्तान चले जाने का कोई रास्ता निकल भी आया तो पाकिस्तान में कराची के अलावा कोई और ऐसा स्थान नहीं है जहाँ वे जा सकें। और कराची में अभी से यह शोर है कि सिन्ध को 'महाजिरिस्तान' (शरणार्थियों का गढ़) नहीं बनने देंगे। बंगला देश के बन जाने के बाद पाकिस्तान की आमदनी घट गयी है, जिसके परिणाम में वहाँ महँगाई आसमान को छू रही है और बेरोजगारी बढ़ रही है। ऐसे पाकिस्तान में इन नये शरणार्थियों का जीवन कष्ट-साध्य बन जायेगा।

वास्तव में बंगला देश की स्वतंत्रता, युद्ध में पाकिस्तान की हार, और भारत की जीत, के बाद ये तीनों पड़ोसी देशों को जिन समस्याओं का सामना करना है जिनमें बंगला देश के गैर-बंगाली मुसलमानों का प्रश्न भी शामिल है उनका सबसे अच्छा हल है कि ये तीनों देश एक सघ बनाकर अपनी समस्याओं को सहयोग से हल करें। इस रास्ते में अभी पाकिस्तान रुकावट है। लेकिन हमें विश्वास है कि जल्दी या देर, यह ख्याल पाकिस्तान में जोर पकड़ेगा और वहाँ की सरकार इस दिशा में सोचेगी।

बंगला देश और पाकिस्तान की परिस्थिति के तुलनात्मक अध्ययन के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि पाकिस्तान जाने के बजाय बंगला देश में ही रहकर परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाना 'बिहारी' मुसलमानों के लिए अधिक अच्छा होगा। उनके विरुद्ध आज वहाँ जो वातावरण है, उसका हमें एहसास है। हम यह भी जानते हैं कि उन्हें हर स्तर पर कठिनाइयों का सामना करना होगा। परन्तु इसके बावजूद हम समझते हैं कि उन्हें बंगला देश में ही रहकर परिस्थिति को अच्छा बनाने की कोशिश करनी चाहिए। काम कठिन जरूर है लेकिन असम्भव नहीं। समय के साथ परिस्थिति बदलेगी, आज की परिस्थिति सदा नहीं रहेगी, परिस्थिति जरूर अच्छी होगी।
वाराणसी, १ फरवरी '७२

बंगबन्धु मुजीब को गांधी-साहित्य भेंट

कलकत्ता स्थित गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री क्षितीशराय चौधरी ने शेख मुजीबुर्रहमान को गांधी-साहित्य के एक संग्रह का बंगला अनुवाद भेंट किया है। बंगबन्धु ने इच्छा व्यक्त की है कि उनके निजी पुस्तकालय में इस संग्रह की छः जिल्दों के अतिरिक्त सम्पूर्ण गांधी-साहित्य होना चाहिए।

बंगबन्धु ने सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण को शीघ्र ही ढाका आमंत्रित करने की इच्छा व्यक्त की है।

सर्वोदय सम्मेलन की तारीखों में परिवर्तन

अप्रैल माह में पंजाब के जालंधर जिले में होने जा रहे २० वें अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन की तारीखों में परिवर्तन हुआ है और सम्मेलन १९, २०, २१ मई को उसी स्थान पर होगा। इसके पहले अधिवेशन भी होगा।

कटुता सही दृष्टिकोण से दूर होगी

—भगवान बजाज

[६ मार्च के 'भूदान यज्ञ' में डा० फरीदी का एक वक्तव्य हमने इसलिए प्रकाशित किया कि पाठकों को कुछ भिन्न दृष्टिकोणों की भी जानकारी हो। उसकी प्रतिक्रिया में यह एक दूसरा दृष्टिकोण हम प्रकाशित कर रहे हैं। अन्य पाठक भी, इससे कोई भिन्न विचार हो तो लिखकर भेजने की कृपा करें। सं०]

भारत-पाक युद्ध के बाद कटुता मिटाने पर डाक्टर फरीदी साहब ने एक वक्तव्य ('रेडियन्स' ६ फरवरी १९७२ —'भूदान-यज्ञ' ६ मार्च १९७२) दिया है उनकी चन्द बातों पर सही नजरिये से गौर करेंगे तो आगम की दूरी साफ-साफ दिखाई देगी। कटुता एकतरफी बात करने, दूसरों पर इल्जाम लगाने या गलत बातें करने से दूर नहीं होगी। मगर परिस्थिति का सही जायजा लेने, साफ-साफ सच्चाई से बात करने तथा जोड़ने के कार्य करने से होगी।

भारत ने जीत के समय एकतरफा युद्ध-विराम करके बहुत बड़ा कदम उठाया है। पाकिस्तान की तरफ से भारत पर कई आक्रमण हुए हैं। फिर भी भारत के किसी समर्थ नेता ने पाकिस्तान को नेस्त-नाबूद करने का इरादा तक नहीं किया। आकाशवाणी ने या अखबारों ने तथा नेताओं ने सदा पाकिस्तान के फौजी टोले की बात की है और जुल्म का सारा इल्जाम फौजी टोले पर ही लगाया है, न कि इस्लाम पर। भारत ने कभी भी किसी देश के मुसलमानों के विरोध में कोई बात नहीं कही है, मगर हर समय अरबों का समर्थन किया है। मलेशिया देशों, इण्डोनेशिया, अफगानिस्तान आदि अनेक देशों से हमारा अच्छा सम्बन्ध है। मुस्लिम देशों की कान्फरेंसों में भारत सरकार के प्रतिनिधि भी जाते रहते हैं। युद्ध के समय तोड़फोड़ की जो कार्रवाईयाँ होती हैं और जिनसे होती हैं उनका नाम लेकर कहा जाता है। मगर जब से युद्ध बन्द हुआ है तब से तोड़फोड़ के समाचार नहीं आ रहे हैं। मगर समझ में नहीं आता कि डाक्टर साहब कैसे मानते हैं कि अभी भी तोड़फोड़ की बातें कही जा रही हैं। डाक्टर साहब युद्ध के समय या तनाव बढ़ रहा था तब, अर्थ-व्यवस्था बिगड़ने, खून-खराबा होने की कुछ भी फिक्र न की। मगर अब शान्ति-मैत्री की चाह जगी है और वे अर्थ व्यवस्था की दुहाई दे रहे हैं।

डाक्टर साहब मानते हैं कि बंगला देश के निर्माण से दो राष्ट्र का सिद्धान्त नहीं टूटा है, उसका धर्म-निरपेक्षता तथा लोकतंत्र से कुछ मतलब नहीं है। उनकी मान्यता है कि भारत एक बहु-राष्ट्रीय देश है। यह भी बहुत खतरनाक है। बंगला देश में हमारी जीत नहीं हुई है। मुक्ति-फौज और हमारी मिली-जुली जीत हुई है और इस जीत से पहले ही हमने बंगला देश को मान्यता दे दी थी। अब भारत के नेता तथा बंगला देश के नेता बार-बार कह रहे हैं कि हमारे मूल्य एक हैं, बंगला देश की सरकार ने अपने देश को इस्लामिक स्टेट घोषित नहीं किया, मगर लोकतंत्र, धर्म-निरपेक्षता तथा समाजवाद को कबूल किया। एक मुस्लिम बहुमत देश ने घोषणा की कि हमारा राज्य धर्म-निरपेक्ष होगा, यह एक बहुत बड़ी चीज हुई है। भारत का बँटवारा, अंग्रेजों की कूटनीति, जिन्ना के साथ मुस्लिम लीग की जिद और कांग्रेस की जल्दीबाजी के कारण हुआ था। यदि डाक्टर साहब को अपने पुराने नजरिये के सामने साकार होने की प्रसन्नता हो रही है तो वह भूल में हैं। मेरा खयाल है कि ऐसे विचार करने से कटुता कम न होगी मगर और बढ़ेगी।

बंगला देश के गैर-बंगालियों के दुःख को नजरअन्दाज करने का इल्जाम डाक्टर साहब लगाते हैं। यह साफ जाहिर है कि बंगला देश के बिहारी मुसलमान भारत के नागरिक नहीं हैं जो हम उनकी भारतीय जैसी फिक्र करें या उन्हें यहाँ बुलायें। जिस तरह अन्य भारतीय लोग विभिन्न देशों में गये हैं उसी तरह ये लोग वहाँ गये हैं। ये अपने लिए अलग देश पाकिस्तान की माँग करके, हमसे बँटवारा करके गये हैं और उन्होंने जो वहाँ साम्प्रदायिक कार्य किये हैं उन सबको अगर नजर में रखें तो उनको वापस बुलाने का प्रश्न ही नहीं उठता। मगर मानवता के नाते हम बंगला देश की सरकार को उनके रक्षण के बारे में कह सकते हैं। खुद शेख मुजीब ने भी उनके रक्षण की बात कही है। यदि इन गैर-बंगालियों का इतिहास भूल जायें और मानवता की बात करें तो यहाँ से मात्र मुसलमानों का प्रतिनिधि-मण्डल भुट्टो या मुजीब से क्यों मिलने जाना चाहिए? इसलिए कि गैर-बंगाली, भुट्टो और मुजीब मुसलमान हैं? अगर यह दृष्टिकोण हो तो इस देश के मुसलमानों का अन्य देश के मुसलमानों से क्या सम्बन्ध है? हमें ऐसे साम्प्रदायिक नजरिये से किसी भी प्रतिनिधि मण्डल की माँग का समर्थन नहीं करना चाहिए। भुट्टो से मिलने का तो कोई प्रश्न ही नहीं है। मगर बंगला देश को जिस तरह हमने सहानुभूति और समर्थन दिया है उसको ख्याल में रखकर यहाँ से धर्म-निरपेक्षता के विचार माननेवालों का प्रतिनिधिमण्डल बंगला देश की जनता तथा सरकार से मिलने और समझाने के लिए भेजा जा सकता है।

महायुद्ध की बाद इस उप-महाद्वीप के तीन राज्यों में सही तौर दोस्ती होनी चाहिए। और इसका आरम्भ यातायात, व्यापार या यात्रा से नहीं हो सकेगा। जब तक एक दूसरे के प्रति विश्वास, सहानुभूति नहीं बढ़ेगी तब तक ऐसा कदम उठाने का साहस किसी भी देश की सरकार या जनता को नहीं होगा। पाकि- →

दानापुर

ग्रामदान के बाद क्या हो रहा है ?

—सिद्धराज ढड्ढा

हम ५-६ लोग उस दिन सहरसा जिले के सुदूर गाँव में ग्रामीण कार्यकर्ताओं तथा सहयोगियों के शिविर के लिए जा रहे थे। कोसी नदी की चार-पाँच धाराओं को पार करते हुए रेलवे स्टेशन से १० मील पैदल जाना था। इस जिले के प्रमुख सर्वोदय-सेवक महेन्द्रभाई ने रास्ता बताने तथा हमारा सामान उठाकर साथ चलने के लिए चार साथियों को स्टेशन पर भेज दिया था। स्टेशन और कस्बे से कुछ दूर निकल जाने पर मैंने अपने साथ चल रहे नौजवान से सहज बातचीत शुरू की। एक कन्धे से अपनी खुद की पोटली और दूसरे से मेरा बैग लटकाये हुए वह साथ चल रहा था। कोई २०-२२ बरस की उम्र होगी। हम शिविर के लिए जहाँ जा रहे थे उसके पड़ोस में ही ग्रामदानी गाँव दानापुर का रहनेवाला वह भाई था। मैंने जब उसका परिचय पूछा तो सहजता से उसने कहा, "मैं गाँव का शिक्षामंत्री हूँ।" इस जवाब में न तो बनावट थी न अहंकार की बू, वस्तुस्थिति का परिचय-मात्र था। रास्ते में करीब घण्टे-डेढ़-घण्टे में उस भाई से दानापुर के बारे में तरह-तरह की जानकारी और सवाल पूछता रहा। और मुझे आश्चर्य हुआ कि इस बीच एक बार भी वह नौजवान न तो कभी जवाब के लिए ठिठका न ऐसा कोई जवाब दिया जो पिछली बातों से असंगत हो। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि दानापुर गाँव के इस शिक्षामंत्री, जगदीश की तुलना हमारे बहुत से राज्यों के शिक्षामंत्री अपने विषय और कार्यक्षेत्र के बारे में न तो उतने जानकार होते हैं, न इतने आत्मविश्वास और समझ-बूझ से जवाब दे सकनेवाले, चालाक या होशियार भले ही वे ज्यादा हों। ऐसी नयी पीढ़ी अगर गाँव-गाँव में खड़ी हो तो यह भरोसा होता है कि हमारे देश का भविष्य उज्ज्वल है और जनतंत्र सुरक्षित।

दानापुर की जो जानकारी मुझे जगदीश से मिली वह भी जहाँ एक ओर हमारे देश के हजारों-लाखों गाँवों की करुण कहानी का प्रतीक है वहाँ दूसरी ओर उनके भविष्य के लिए आशा की किरण भी। दानापुर में ९२ परिवार हैं। गाँव की कुल करीब ४०० बीघा भूमि में से सिर्फ १०० बीघा या एक चौथाई, गाँव के इन परिवारों के पास है, शेष तीन चौथाई जमीन बाहर के केवल चार 'मालिकों'—अनुपस्थित भूमिवानों (एब्सेन्टी लैण्डलार्ड्स)—के पास है, एक के पास १०० बीघा, दूसरे के पास ८५, तीसरे के पास ७५ और चौथे के पास ३५ बीघा। ये ९२ परिवार पहले सभी भूमिहीन थे, आज सब भूमिवान हैं। गाँव में कोई भूमिहीन नहीं है। ५ बीघा से ज्यादा जमीन किसी परिवार के पास नहीं है, कम-से-कम चार कट्ठा है। यह कमीबेशी भी इसलिए है कि आज से पन्द्रह-सोलह बरस पहले यह एक सौ बीघा जमीन जब भूदान में मिली थी उन दिनों कोसी की बाढ़ से यह इलाका ग्रस्त था, जमीन लेनेवाले लोग नहीं थे। जो दस-बारह परिवार भूमिहीनों के थे उन्हीं में वह जमीन बाँट दी गयी। लेकिन यह भी एक मार्के की बात है कि बाद में जब और परिवार यहाँ बसने के लिए आये तो सबने बैठकर फिर से जमीन का बँटवारा कर लिया। पहले जिन्हें ज्यादा मिली थी वह उन्होंने खुशी से छोड़ दी। उसके बाद जब इस गाँव का ग्रामदान हुआ तो फिर लोगों ने बीघा-कट्ठा निकाला तथा कुछ और परिवारों को वह जमीन दी गयी। मैंने जगदीश से पूछा कि इस तरह और भी परिवार आते जायेंगे तो आगे क्या होगा? इस भाई ने एक क्षण रुके बिना जवाब दिया कि नहीं, अब नये परिवार ग्रामसभा की इजाजत से ही बस सकते हैं।

गाँव के लोग कामतदारों की जमीन बँटाई पर लेते हैं। पैदावार का आधा भाग मालिक ले जाता है जबकि मालिक के लिए एक-तिहाई का कानून बरसों से बना हुआ है। जब कामतदारों से बँटाई का अपना हिस्सा घटाने की बात हुई तो तुरन्त उन्होंने कहा कि आप लोग जमीन छोड़ दीजिये, दूसरे लेनेवाले हैं। सत्ता से या कानून से सब कुछ कर देने की बात कितनी थोथी है, यह जाहिर है। मजदूरों को संगठित करके कामतदारों को मजबूर करने की बात भी देहात के सन्दर्भ में मुश्किल है, क्योंकि गाँव-गाँव में बिखरे हुए मजदूरों में आपस में ही बँटाई के लिए होड़ लगा देना और उनमें फूट डालना आसान है। इस प्रश्न का कारगर हल यही है कि गाँव की ग्रामसभा में इसकी खुलकर चर्चा हो और दोनों पक्षों

→स्तान में अभी जो घटनाएँ हो रही हैं उससे भी दूरी दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। फिर भी सबसे पहला कदम उठाना होगा युद्ध न करने की सन्धि करने का, जिसका प्रस्ताव कई वर्ष पहले भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने रखा था और अब भी प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इस प्रस्ताव को दोहराया है। यदि ऐसी सन्धि हो जाती है तो उसके बाद जैसे-जैसे सम्बन्ध सुधरते जायेंगे, परस्पर विश्वास बढ़ता जायगा, हम एक दूसरे के निकट आते जायेंगे। डाक्टर साहब ए० बी० सी० ट्रेंगल के कुछ देशों के कामन मार्केट की बात करते हैं। मगर हम तो इससे भी आगे बढ़कर इन देशों के महासंघ की बात करते हैं।

कटुता एकतरफी प्रयास करने से दूर नहीं होगी, मगर दोनों तरफ से परस्पर सच्चाई, मैत्री और विश्वास से चलेंगे तभी दूर होगी। ●

की सहमति से फैसला हो, चाहे वह आधा-आधा हो, दो-तिहाई, एक-तिहाई हो या तीन-चौथाई, एक-चौथाई।

दानापुर में ग्रामकोष भी चार बरस से चल रहा है। इस सिलसिले में भी गाँववालों ने बहुत समझदारी से काम लिया है। शुरू में सब लोग ग्राम-कोष निकालने पर राजी नहीं हुए तो जो तैयार थे उन्हीं से शुरूआत कर दी गयी। जगदीश ने बताया कि आज गांव के सब परिवार ग्रामकोष में अपना हिस्सा दे रहे हैं। अभी ग्रामकोष में तीन साल में १०८ मन अन्न व १००० रु० इकट्ठा हुआ है, श्रमदान की मजदूरी का मिला है जिसका उपयोग सामूहिक कामों में किया गया है। ग्रामकोष में से गरीबों को खाने के लिए अनाज दिया जाता है। वह आठ पसेरी का नौ पसेरी यानी मन पीछे पाँच सेर ब्याज ज्यादा लिया जाता है। जगदीश भाई ने बताया कि ग्रामकोष से दिया गया कर्ज बराबर वापस लौटा दिया जाता है।

दानापुर की ग्रामसभा नियमित मिलती है या नहीं और कभी सर्वसम्मति न हो तो क्या किया जाता है—यह पूछने पर जगदीश भाई ने बताया कि सभा की मीटिंग हर महीने नियमित होती है और बीच में पन्द्रह दिन पर 'कैबिनेट' की मीटिंग। कैबिनेट या कार्य-समिति में ११ सदस्य हैं जिनमें विभाग बंटे हुए हैं। एक बार ग्रामसभा में मजदूरों की ओर से ग्रामकोष में क्या दिया जाय इस विषय पर मजदूरों की सहमति नहीं हुई तो ग्रामसभा ने उस विषय को अगली मीटिंग के लिए स्थगित कर दिया और इस बीच मजदूरों से चर्चा करके सर्वसम्मत सुझाव तैयार कर लिया जो अगली मीटिंग में सबकी एक राय से स्वीकृत हुआ। बिना किसी सरकारी मदद के लोगों ने अपनी स्वैच्छिक मेहनत से सड़कें बनायी हैं, (हमारे तीन दिनों के शिविर के दौरान ही हमारे देखते-देखते सामूहिक श्रमदान

[शेष पृष्ठ ३०६ पर]

हत्या की कीमत

पिछले सात बरस से अमेरिका ने वियतनाम में तबाही मचा रखी है। रात-दिन वहाँ गोले बरस रहे हैं और बेगुनाह लोग मारे जा रहे हैं। अमेरिका के प्रसिद्ध अखबार "वाशिंगटन पोस्ट" ने बताया है कि एक वियतनामी को मारने का खर्च दस हजार डालर (७५ हजार रुपये) बैठता है।

वहाँ का एक दूसरा लोकप्रिय अखबार है 'न्यूयार्क टाइम्स" उसका कहना है—

दूसरे महायुद्ध में अमेरिका ने कुल मिलाकर २० लाख टन बम बरसाये।

कोरिया की लड़ाई में अमेरिका ने दस लाख टन बम बरसाये।

लेकिन इण्डोचीन की लड़ाई में अमेरिका अब तक बारह लाख टन बम बरसा चुका है।

इसके साथ अगर अमेरिकी थल-सेना और जल-सेना द्वारा खर्च की गयी बारूद को भी शामिल कर दें, तो कुल तादाद तेरह लाख टन तक पहुँच जाती है।

डालर में हिसाब यह है कि १९७०-७१ में ८,००१ लाख डालर बमबारी में खर्च किये गये। और १९७१-७२ में १५,६६० लाख डालर खर्च का अन्दाज किया जाता है। आगे के लिए इसमें और भी वृद्धि करने का बजट राष्ट्रपति निक्सन ने अपनी कांग्रेस के आगे पेश कर दिया है।

अमेरिकी सरकारी दोनों के अनुसार, अमेरिकी सरकार ने इण्डोचीन के युद्ध पर १९६५ में १००० लाख डालर खर्च किये, १९६६ में यह तादाद साठ गुनी हो गयी—६०,००० लाख डालर। और उसके बाद १९६७ से १९७१ तक, चार साल में ९,८१,००० लाख डालर खर्च किये गये।

एक अमेरिकी रिपोर्ट में बताया गया है कि अमेरिका अब तक वियतनाम में तबाही पर बीस हजार करोड़ डालर खर्च कर चुका है। हमारे सिक्के में यह डेढ़ लाख करोड़ रुपये हुए।

अमेरिका ने जो यह पैसा हत्या-कार्य में लगाया है उससे सारी दुनिया को एक साल तक मजे में खिलाया जा सकता था। प्रकृति एक दिन अमेरिका से हत्या की इस भयानक कीमत की वसूली अवश्य करेगी।

कन्वोकेशन खत्म

पाँच साल हुए जब प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी रुड़की विश्वविद्यालय के छात्रों के आगे दीक्षान्त भाषण देने खड़ी हुईं तो आवाज आयी—"हमें भाषण नहीं, नौकरी चाहिए", और सब उठकर चले गये।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पाँच साल से कन्वोकेशन नहीं हुआ। वहाँ के छात्र-छात्राओं को पता ही नहीं कि कन्वोकेशन किस चिड़िया का नाम है। अन्य विश्वविद्यालयों में भी दीक्षान्त समारोह की गति-विधि बड़ी डाँवाडोल रहती है। उनका पुराना वैभव खत्म हो गया।

कन्वोकेशनों पर उपद्रव प्रायः हो जाते थे। इसके लिए छात्रों को दोष देना गलत होगा, यह बहुत कुछ निर्भर करता है उप-कुलपति की कार्य-कुशलता पर।

जो भी हो, केरल विश्वविद्यालय ने निर्णय किया कि आगे से कन्वोकेशन करेंगे ही नहीं। डिग्रियाँ डाक से भेज दी जाया करेंगी। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। शायद अन्य विश्वविद्यालय भी केरल की नकल करेंगे जैसे केरल सरकार ने जब लाटरी शुरू की तो बाद में और सरकारें भी देखा-देखी करने लगीं। तो मानना होगा कि सन् १९७१ के साथ कन्वोकेशन का जमाना भी खत्म हुआ।

—दादू

उड़ीसा-सर्वोदय सम्मेलन : कार्यक्रम, संयोजन

उड़ीसा का प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन ११, १२, १३ और १४ फरवरी '७२ को सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ और आगे के कार्य की योजना बनायी गयी।

प्रस्ताव

"उड़ीसा में पिछला प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन १९६९ में हुआ था। इन वर्षों में अपने देश में कई परिवर्तन हुए हैं। इस बीच लोकसभा तथा विधानसभा के चुनाव हुए हैं। संविधान में कुछ प्रगतिशील परिवर्तन हुए हैं। अपने पड़ोसी बंगला देश में स्वतंत्रता का आन्दोलन यशस्वी हुआ है। उस लड़ाई में भारत की भूमिका ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने देश के सम्मान को ऊँचा चढ़ाया है तथा देश के अन्दर एकता बढ़ायी है, और उपनिवेशवाद के खिलाफ मानस बनने के साथ-साथ दूसरी ओर समाजवाद ने आत्मविश्वास जाग्रत किया है। देश में एक तरफ साम्राज्यवाद या साम्यवाद का विचार लोगों में समर्थन प्राप्त कर रहा है।

"इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए यह सम्मेलन मानता है कि बुनियादी सामाजिक क्रान्ति जनता की संगठित शक्ति से ही सम्भव होगी, सरकारी प्रयत्न इसमें मददगार हो सकता है पर उसका स्थान नहीं ले सकता। इसलिए इस बदली हुई परिस्थिति में सर्वोदय आन्दोलन को अधिक शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है और, पिछली घटनाओं से उसे आगे बढ़ाने के लिए अधिक प्रेरणा मिल रही है। सर्वोदय के संगठन की ओर से ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के जरिये जनता में सचेतनता, एकता तथा संगठन को जो बढ़ावा मिला है उसके परिणाम से देश में वर्गहीन तथा शोषणमुक्त समाज की स्थापना शान्तिपूर्ण लोकतान्त्रिक ढंग से करने का मार्ग प्रशस्त हुआ है। आज की स्थिति में इस गतिशील आन्दोलन को अधिक मजबूत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम गरीब जनता की समस्याओं से अपना सम्बन्ध जोड़ें। इससे आगे चलकर अवहेलित तथा शोषित जनता ही इस आन्दोलन का नेतृत्व कर सकेगी।

"भारत के दो राज्यों में राज्यदान हुआ है तथा हमारे प्रान्त के करीब एक चौथाई गाँव ग्रामदान में आये हैं। पर उन गाँवों की जनता ने अब तक इस आन्दोलन का नेतृत्व करने की ताकत प्राप्त नहीं की है। उन गाँवों में अब तक जनशक्ति जागृत नहीं हुई है। यह आन्दोलन तभी सफल होगा जब इन गाँवों की जनता अपने गाँवों में सर्वांगीण परिवर्तन ला सकेगी और इस तरह ग्रामस्वराज्य की नींव डाल सकेगी।

"उड़ीसा में हमने राज्यदान का संकल्प किया था। वह अब तक पूरा नहीं हुआ है। सम्मेलन मानता है कि नीचे लिखे कार्यक्रम को अगर हम निष्ठा के साथ कार्यान्वित करेंगे तो राज्यदान के संकल्प को पूरा करने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ सकेंगे।

"यह सम्मेलन महसूस करता है कि भारत की जनता की आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक मुक्ति के लिए यह आन्दोलन विश्वव्यापी मानव-मुक्ति आन्दोलन का एक हिस्सा है। इस ध्येय को माननेवाले सारे सेवक तथा समर्थक इस आन्दोलन की सफलता के लिए अपनी लड़ाई सतत जारी रखेंगे। उड़ीसा की जनता से यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि देश के इस महत्त्वपूर्ण घड़ी में हार्दिक सहायता तथा सहानुभूति इसको दें तथा इसे अपना मानकर इसे जन-आन्दोलन बना दें।"

कार्यक्रम

आन्दोलन की सफलता कार्यकर्ता-जमात, साहित्य-प्रचार, शिविर-पदयात्रा तथा संगठन पर निर्भर है। कार्यकर्ताओं की जमात बढ़ाने के लिए नीचे लिखे कार्यक्रम हाथ में लिये जायें। पाँच साल में हर प्रखण्डदान क्षेत्र से कम-से-कम पचास-पचास प्रशिक्षित कार्यकर्ता तैयार करने का ध्येय रखा जाय। इनमें से दस अव्वल दर्जे के तथा चालीस सामान्य कोटि की योग्यता रखनेवाले हों।

ग्रामनेता तथा क्रान्तिकारी कार्यकर्ता, इन दो प्रकार के कार्यकर्ताओं के लिए तालीम की व्यवस्था करनी होगी। बिना प्रशिक्षण के अपने क्षेत्र में काम करेंगे। तकनीकी तथा व्यावहारिक दोनों प्रकार की तालीम दी जायेगी। खेती, गोपालन, खादी ग्रामोद्योग, ग्रामसभा तथा ग्रामकोष की व्यवस्था, प्रौढ़-शिक्षण, साक्षरता, इस प्रकार की व्यावहारिक तालीम होगी।

१—सर्वोदय आन्दोलन के सन्दर्भ में क्रान्तियों का इतिहास,

२—समाजविज्ञान, अर्थशास्त्र, लोकनीति,

३—प्रार्थना, शिविर-संचालन,

४—शान्तिसेना की तालीम,

५—प्रदर्शन, आमसभा, जुलूस आदि का संचालन।

ये कार्यकर्ता की तालीम के पाठ्यक्रम होंगे। पहले साल १५० कार्यकर्ताओं को तालीम देने का लक्ष्य रखा जाय। तालीम की अवधि ६ माह से एक साल तक की होगी। इसके लिए दो मुख्य स्थान गोपालबाड़ी तथा नरसिंहनाथ होंगे।

साहित्य : अपनी पत्रिका हरेक ग्रामदानी गाँव में पहुँचे यह ध्येय रखा जाय। इस साल १२०० गाँवों में ग्राहक बनाये जायें।

संगठन : प्रखण्डदान क्षेत्रों में कार्यकर्ता-समूह के साथ-साथ प्राथमिक सर्वोदय मण्डल भी स्थापित किये जायें। सर्वोदय मण्डलों की जिम्मेदारी संयोजक-मण्डली सम्भाले। प्रान्तीय कार्यालय को अधिक कार्यक्षम किया जाय।

सरकार के साथ सम्बन्ध

सर्वोदय आन्दोलन उसकी अपने आधार पर खड़े रहकर सरकार के जनहित कार्यों के साथ सहकार करेगा तथा जनहित विरोधी कार्यों का विरोध करेगा।

ग्रामदान-प्राप्ति . ग्रामदान-प्राप्ति करके उसमें तुरन्त जमीन का बँटवारा करने का नया प्रयत्न जगह-जगह शुरू हुआ है तथा सफल हुआ है। यह प्रयत्न अपने प्रान्त में सघन काम के लिए चुने गये क्षेत्रों में तथा अनुकूल परिस्थितिवाले दूसरे क्षेत्रों में चलाया जाय।

अर्थ-संग्रह

ग्रामदानी गाँवों को इस आन्दोलन का मुख्य आधार मानकर यह प्रयत्न हो कि हर गाँव से माहवार एक रुपया आन्दोलन के लिए मिले। पाँच साल के अन्दर इस प्रकार का संगठन खड़ा किया जाय। इस साल १२०० गाँवों से इस प्रकार की वसूली शुरू की जाय। शहरों से, विद्यार्थियों, मजदूरों, तथा आम जनता से अर्थ-संग्रह का प्रयत्न आज जैसा चलता रहे।

ग्रामदानी गाँवों का विकास

प्रान्त में तीन प्रकार के ग्रामदान हैं १—सकल्पित ग्रामदान, २—वितरित ग्रामदान, ३—मान्यता-प्राप्त ग्रामदान। वितरित ग्रामदान तथा मान्यता-प्राप्त गाँवों के लिए नीचे लिखे अनुसार पाँच साल के संगठन का कार्यक्रम लिया जाय—

१—ग्रामसभाओं को सक्रिय बनाना।

२—ग्राम-शान्तिसेना खड़ा करना।

३—गाँव के झगड़े गाँव में निपटाये जायें।

४—गाँव के शोषण का अन्त करना।

५—भूमिहीन प्राप्त जमीन से बेदखल न हो ऐसी परिस्थिति पैदा करना।

६—ग्रामकोष को व्यवस्थित व मजबूत बनाना।

७—गाँव में सरकारी जमीन हो तो उसे भूमिहीनों में बाँटना या ग्रामकोष के लिए उसकी सामूहिक खेती करना।

८—गाँव में सामूहिक श्रमदान का नियमित कार्यक्रम चलाना।

९—नशाबन्दी तथा सफाई का प्रचार संगठन करना।

१०—अन्त्योदय की दृष्टि से योजना बनाना।

११—खादी ग्रामोद्योग तथा खेती व पशुपालन का विकास करना।

संकल्पित ग्रामदान में पहले पुष्टि का काम पूरा करके फिर ऊपर लिखे अनुसार कार्यक्रम लिया जाय।

—मनमोहन चौधरी

ग्रामस्वराज्य सम्मेलन के लिए श्री जयप्रकाशजी का सन्देश

आगामी २४-२५ फरवरी को प्रथम बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन का आयोजन मिहमा (वैशाली) में हो रहा है और उसमें बिहार के कोने-कोने से ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि भाग लेनेवाले हैं, यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई। मुझे खेद है कि मैं अपनी अस्वस्थता के कारण इस सुअवसर पर उपस्थित नहीं हो सकूँगा।

अपने ढंग का यह पहला सम्मेलन है जिसमें गाँवों के लोग स्वयं अपनी समस्याओं पर चर्चा करेंगे और उसका हल ढूँढ़ेंगे। अभी तक गाँव के भाग्य का निर्णय दिल्ली और पटने में होता रहा है। यह सम्मेलन गाँव के अभिक्रम से गाँव के सवालों को हल करने की दिशा में एक नया कदम और ग्रामस्वराज्य के निर्माण की ओर, एक नयी शुरुआत है।

दुनिया के सबसे प्राचीन लोकतंत्र की भूमि वैशाली के अंचल में एक ऐसे सम्मेलन का आयोजन ऐतिहासिक संयोग है। हमारे देश में अभी जो लोकतंत्र प्रचलित है, वह उलटे पिरामिड के समान है। उसको पलट कर चौड़े आधार पर उसे प्रतिष्ठित करने की दिशा में एक विनम्र प्रयास इस सम्मेलन के द्वारा हो रहा है।

इस सम्मेलन की सफलता की कसौटी यह होगी कि जिन ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि यहाँ इकट्ठे हो रहे हैं, वे सक्रिय बनें और अपने गाँव की समस्याओं को हल करने के लिए कुछ ठोस कदम उठायें। मिसाल के लिए,—गाँव के मजदूरों के लिए समुचित मजदूरी की व्यवस्था, विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति को बासगीत का पर्चा दिलाना, भूमिहीनों के लिए बीघा-कट्ठा भूमि का वितरण, गाँव के सामूहिक विकास के लिए ग्रामकोष का गठन तथा गाँव के बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा का प्रबन्ध, यह पंचविध कार्यक्रम है जिसकी पूर्ति करना हर ग्रामसभा का प्रारम्भिक कर्तव्य होना चाहिए।

यह जाहिर है कि ग्रामस्वराज्य का संचालन गाँव की बुद्धि से ही होगा। जब तक बाहर के कार्यकर्ताओं की आवश्यकता बनी रहेगी, तब तक ग्रामसभाएँ ग्रामस्वराज्य की बुनियाद नहीं बन सकतीं; इसलिए गाँव में गाँव के नेतृत्व का विकास हो, यह ग्रामसभाओं की सफलता की एक महत्त्वपूर्ण कसौटी है।

यह सम्मेलन एक ऐसे अवसर पर हो रहा है जब विधानसभा का चुनाव सामने है। मौजूदा दलीय लोकतंत्र और उस पर आधारित चुनाव गाँव की एकता का सबसे बड़ा शत्रु है। इस चुनाव के मुकाबिले गाँव को एक रखने का दायित्व ग्रामसभा का है। मुझे आशा और विश्वास है कि ग्रामसभाएँ इस चुनौती के मुकाबिले खड़ी रहकर ग्रामस्वराज्य का झण्डा बुलन्द करने में समर्थ होंगी।

इन शब्दों के साथ मैं सम्मेलन के अवसर पर एकत्र हो रहे ग्राम-प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करता हूँ और उन्हें अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

जय हिन्द ! जय जगत !!

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन

२४, २५ फरवरी को मुजफ्फरपुर जिले के वैशाली प्रखण्ड के सिंहमा गाँव में बिहार राज्य का प्रथम ग्रामस्वराज्य सम्मेलन सम्पन्न हुआ। ग्रामस्वराज्य-सभाओं के पदाधिकारियों एवं सदस्यों की एक बैठक खादीग्राम में हुई थी जिसमें चर्चा करके निर्णय हुआ था कि राज्य-स्तर का एक सम्मेलन किया जाना चाहिए जिसमें राज्य भर की ग्रामस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधि भाग लें। इस सम्मेलन के आयोजन की जिम्मेदारी स्वेच्छा से वैशाली प्रखण्ड के लोगों ने लेने की तैयारी बतायी और उसी निश्चयानुसार यह सम्मेलन एक ग्रामदानी गाँव में ही रखा गया जहाँ ग्रामसभा बनी हुई है। वैशाली की भूमि गणतन्त्र की भूमि रही है, इसलिए यह ठीक भी था कि ग्रामस्वराज्य का प्रथम सम्मेलन वहाँ ही हो। बीच में गणतन्त्र की परम्परा जो लुप्त हुई थी उसे पुनः जीवित करने का एक प्रयास-मात्र शुरू हुआ इस सम्मेलन के आयोजन से।

अब तक कार्यकर्ताओं के शिविर होते रहे हैं, गोष्ठियाँ होती हैं, सम्मेलन होते हैं। उनमें कार्यकर्ता ग्रामस्वराज्य के लिए संकल्प करते हैं, कार्यक्रम बनाते हैं और चर्चा करते हैं कि यह ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन उनके द्वारा चलना चाहिए जिनको इसकी आवश्यकता है यानी जनता के द्वारा चले। और फिर-फिर शिविर-सम्मेलनों में यह बात दोहरायी जाती है। परन्तु इस सम्मेलन में यह बात नहीं दोहरायी गयी। यह सम्मेलन उनका हो या जिनको ग्रामस्वराज्य की आवश्यकता है। कोशिश की गयी थी कि यह सम्मेलन उनका ही रहे और वे ही आपस में ज्यादा-से-ज्यादा चर्चा करें—अपनी समस्याओं के हल ढूँढें। हालांकि इस सम्मेलन में कार्यकर्ताओं की संख्या ७६ थी जो प्रदेश के ११ जिलों से आये थे एवं विशेष प्रतिनिधि का बिल्ला लगाये हुए थे। सम्मेलन की अध्यक्षता भी कोई ग्रामीण नहीं कर रहा था बल्कि आचार्य राममूर्तिजी कर रहे थे और उद्घाटन भी किया सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने। दादा धर्माधिकारीजी ने मुख्य अतिथि के नाते सम्मेलन का सम्बोधन किया जो सर्वथा उचित भी था क्योंकि दादा की भूमिका कार्यकर्ता की नहीं नागरिक की ही है। मंच पर एक भी ग्रामीण प्रतिनिधि नहीं था, शायद संयोजनकर्ताओं के ध्यान में यह बात आयी नहीं। हाँ, इतना जरूर था कि कार्यकर्ता की मुख्य भूमिका श्रोता की थी, और उन्होंने उदारतापूर्वक चर्चा करने का मौका ग्रामीण प्रतिनिधियों को दिया।

अनेक लोग यह जानने के लिए उत्सुक जान पड़े कि प्रतिनिधियों की संख्या कितनी है। ज्यादा प्रतिनिधियों के आने की अपेक्षा अवश्य थी, परन्तु ७ जिलों से ७५ प्रतिनिधि आये। एक मित्र ने कहा कि कार्यकर्ता ही ज्यादा नजर आते हैं तो दूसरे ने कहा कि यह तो नहीं कहा जायेगा कि सर्वोदय के सम्मेलनों में नये चेहरे नहीं दिखाई पड़ते। ये जो ७५ लोग गाँवों से आये वे तो नये ही हैं। उनमें से तो अनेक ऐसे हैं जिन्होंने प्रखण्ड के बाहर अपना कदम ही नहीं रखा है।

श्री जगन्नाथन्‌जी ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि गाँवों में एकता के लिए जातिवाद और पार्टीबाजी को समाप्त करना आवश्यक है। भूमि के प्रश्न की चर्चा करते हुए आपने कहा कि सर्वोदय के कार्यकर्ताओं के पास जो भी थोड़ी-बहुत जमीन है उसे वे छोड़ने के लिए

मंच पर—बायें से दायें दादा धर्माधिकारी, श्री ध्वजाप्रसाद साहू, श्री कपिलभाई, श्री जगन्नाथन्‌जी,—सामने प्रतिनिधि एवं श्रोता।

तैयार नहीं हैं क्योंकि वे खेती नहीं करते। अगर वे खेती नहीं करते तो जमीन रखने का उनका हक नहीं है। ग्रामस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधियों से आपने कहा कि ग्रामस्वराज्य का ध्येय तो बहुत ऊँचा है लेकिन गाँवों की दैनन्दिन समस्याओं के हल का प्रयास करना चाहिए। इस सम्मेलन से उन्होंने यह अपेक्षा की कि यह सम्मेलन ग्रामस्वराज्य का मार्ग ढूँढने का प्रयास करेगा।

दादा ने अपने उद्बोधन भाषण में ग्रामस्वराज्य के मूल्यों का विस्तार से विवेचन किया। उन्होंने बताया कि उन मूल्यों की स्थापना के लिए ग्रामस्वराज्य-सभाओं को यत्न करना चाहिए। उन्होंने अपने दूसरे दिन के भाषण में भी ग्रामस्वराज्य-सभा के कार्यों की विशद चर्चा की। (दादा के भाषण अगले अंक में पढ़ें)।

प्रतिनिधियों ने ५ गोष्ठियों में बँटकर ग्रामदान-पुष्टि, -विकास, ग्रामस्वराज्य-सभा के कार्य, लोकनीति और चुनाव पर चर्चा की। चर्चा में प्रतिनिधि मुखर दिखे, मौन नहीं। सम्मेलन का जो वातावरण था उसमें उन्होंने महसूस किया कि ग्रामस्वराज्य उनकी आवश्यकता है और उसके लिए उन्हें चिन्ता करनी है, विचार करना है। और, यही एहसास इस सम्मेलन की बड़ी उपलब्धि मानी जानी चाहिए न कि कोई प्रस्ताव और कार्यक्रम।

ग्रामस्वराज्य के अनेक पहलुओं पर चर्चा हुई परन्तु इस सम्मेलन में ग्रामस्वराज्य-सभाओं में स्त्रियों की भूमिका पर भी जोरदार चर्चा हुई और यहाँ तक लोगों ने चर्चा की कि ग्रामस्वराज्य-सभाओं में स्त्रियों का प्रतिनिधित्व होना ही चाहिए।

इस सम्मेलन की उपलब्धि अगर एक वाक्य में कहनी हो तो यही कहेंगे कि इससे जहाँ ग्रामीण प्रतिनिधियों ने बहुत कुछ सीखा और आशा तथा उत्साह प्राप्त किया वहाँ छोटे बड़े कार्यकर्ता भी समृद्ध हुए। और, प्रस्ताव तथा कार्यक्रम के अभाव में सब कुछ ले गये जो उनके आगे के पथ का पाथेय होगा।

—कुमारी चन्द्रमा

आन्दोलन के समाचार

संस्थाओं के कार्यकर्ता सहरसा जायें

१८ मार्च से १८ अप्रैल तक बिहार के सहरसा जिले में चलनेवाले सघन अभियान के सन्दर्भ में गांधी स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त ने निधि की गाखाओं और उससे सम्बद्ध अन्य रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का आह्वान करते हुए कहा है कि वे अपने नित्य के कामों से कम-से-कम एक माह के लिए मुक्त होकर सहरसा सघन अभियान में शामिल हों। इन कार्यकर्ताओं के नाम लिखे गये एक पत्र में श्री गुप्त ने कहा है कि रचनात्मक कार्य के विकास की राष्ट्रीय प्रयोगशाला सहरसा है, उसकी सफलता ही देश की रचनात्मक संस्थाओं की सफलता होगी।

सागर में मातृदिवस

२२ फरवरी मातृ-दिवस पर नगर के चुने हुए साथियों के एक अन्तरंग गुट द्वारा सर्वोदय समाज के निर्माण की दिशा में मजबूत नींव डालनेवाले रचनात्मक कार्य के रूप में और पूज्य माता कस्तूरबा, गांधीजी की पुण्य स्मृति में सागर (म० प्र०) में एक सर्वोदय बाल निकुंज (बाल संस्कार-केन्द्र) की स्थापना का संकल्प लिया गया। स्थान के लिए जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समिति नगर में एक उपयुक्त भूमि का प्लाट प्राप्त करने का प्रयत्न कर रही है, जहाँ सर्वोदय की मुख्य प्रवृत्तियों को सक्रिय रूप देनेवाला एक केन्द्र बनाया जायगा।

जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति के तत्वावधान में ३० जनवरी शान्ति-दिवस और १२ फरवरी श्राद्ध-दिवस के आयोजन भी यथा-अवसर किये गये। २६ जनवरी गणतंत्र दिवस पर ग्रामस्वराज्य का संकल्प प्रकाशित कर जिले के प्रायः सभी गाँवों तक ग्रामसेवकों के माध्यम से प्रसारित किया गया।

मातृदिवस

उदयपुर, दि० २२ फरवरी १९७२ को कस्तूरबा पुण्य-तिथि के अवसर पर लोकसेवकों की बैठक में उदयपुर (राजस्थान) जिला सर्वोदय मण्डल का विधिवत् गठन किया गया। जिला सर्वोदय एवं सर्व सेवा संघ के लिए प्रतिनिधि के रूप में श्री दीनदयाल दशोत्तर को तथा समग्र सेवा संघ के प्रतिनिधि के रूप में श्री राधाकृष्ण शर्मा को चुना गया।

श्री छगनलाल आर्य ने 'वैष्णव जन' भजन प्रस्तुत किया। श्रीमती सुशीला दशोत्तर ने मातृदिवस कार्यक्रम के महत्त्व पर प्रकाश डाला।

बिहार सरकार द्वारा पूर्णिया जिला बँटाईदारी विवाद समझौता समिति का गठन

सरकारी आँकड़ों के अनुसार पूर्णिया जिले में ३४ हजार टाइटिलसूट के मुकदमें चिरकाल से कोर्ट में लम्बित हैं। ये मुकदमें सम्बन्धित व्यक्तियों एवं राजस्व पदाधिकारियों के लिए एक परेशानी और मुसीबतभरी समस्या थी। अब राज्य-सरकार ने गैर-सरकारी तौर पर उक्त समिति का गठन किया। समिति के अध्यक्ष सर्वोदय नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी मनोनीत किये गये हैं। आपसी सद्भावना और समझौते से समिति जो भी फैसला करेगी सरकार को मान्य होगा।

सुठौना ग्रामस्वराज्य समिति

सुठौना प्रखण्ड नेपाल सीमा पर दरभंगा-जिलान्तर्गत उत्तरी छोर पर अवस्थित है। सुठौना में प्रखण्ड-ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हो चुका है। २९ ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। तीन पंचायतों में पुष्टि का भी काम हो चुका है। १९ ग्रामसभाओं में बीस-बीस युवक शान्तिसैनिक के रूप में काम कर रहे हैं। ग्रामकोष में गाँव-गाँव से दस्ता बना है तथा हर ग्रामीण गाँव के विकास में तथा निरीह छात्र एवं गाँववालों को सहायता पहुँचाने का काम करते हैं। बीघा-कट्ठा-

भूदान-यज्ञ १२-३-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

अभियान मार्च ७२ के बाद चालू होनेवाला है। भूदान की जमीन करीब १५० एकड़ वितरित हो चुकी है। बिना जमीनवालों को ब्लॉक के माध्यम से पर्चा मिल गया है।

सभी उम्मीदवारों का एक मंच से भाषण

अजमेर (राजस्थान) जिला सर्वोदय मण्डल द्वारा सावर में आयोजित एक सर्वदलीय मंच का आयोजन दिनांक २१-२-७२ को किया गया।

सभा-मंच से क्षेत्र के विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के उम्मीदवारों ने अपना-अपना विचार व्यक्त किया।

सर्वोदय पक्ष पदयात्रा

कुर्शाडा, मथुरा में सर्वोदय पक्ष के अवसर पर आयोजित एक पदयात्रा में अन्य कार्यक्रमों के अलावा ४०० रु० की साहित्य-बिक्री हुई, ७७ 'भूदानयज्ञ' तथा ४ 'गाँव की आवाज' के ग्राहक बनाये गये। पदयात्रा के दरम्यान तरुण-शान्तिसेना तथा आचार्यकुल के सम्बन्ध में शिक्षण-संस्थाओं से चर्चा की गयी।

सर्वोदय मेला

जिला सहारनपुर, हरद्वार में १२ फरवरी को एक सर्वोदय मेला का आयोजन किया गया। क्षेत्र से आये बहुत-से साथियों ने बापू को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की।

राँची जिला सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन

१५ फरवरी को राँची (बिहार) में श्री ध्वजाप्रसाद साहू की अध्यक्षता में जिले में कार्य कर रहे सर्वोदय साथियों की एक सभा की गयी। श्री कृष्णानन्दन गिरि को सर्वसम्मति से जिले का संयोजक नियुक्त किया गया।

ध्यान-शिविर

तारीख २७-३-७२ से ५-४-७२ तक श्री सत्यनारायण गोयन्दकाजी 'सेवाग्राम' में ध्यान-शिविर लेंगे। जिन-जिन भाई-बहनों को शिविर में भाग लेने की इच्छा हो, वे कृपाकर सम्पर्क स्थापित करें।

मंत्री, महारोगी सेवा समिति दत्तपुर,
कुष्ठधाम, पो० नालवाड़ी
जि० वर्धा, महाराष्ट्र

पुष्टि-अभियान-पदयात्रा

३० जनवरी को गांधी आश्रम (जलालपुर, छपरा, बिहार) पर सघन पुष्टि-अभियान-पदयात्रा का शुभारम्भ बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के मंत्री श्री श्यामप्रकाश सिंह ने किया। ८ पंचायतों के १६ पड़ावों पर पुष्टि-अभियान की सभाएँ हुईं।

[पृष्ठ ३७० का शेष]

से गाँव के एक टोले से दूसरे को जोड़ने के लिए करीब एक फर्लांग लम्बी, छह फीट ऊँची और १२ फीट चौड़ी सड़क अस्तित्व में आ गयी) लोगों ने अपनी जमीन में से दूसरों को हिस्सा देकर गाँव में बसाया और भूमिहीनता मिटायी। जगदीश ने बताया कि दानापुर गाँव के लोगों में भी कई बातों में मतभेद होता रहता है, पर वे लोग आपस में चर्चा करके ऐसे सब मामलों का हल निकाल लेते हैं।

ग्रामदान के बाद पिछले तीन-चार बरसों में दानापुर में जो कुछ हुआ है उसे ऊपर-ऊपर से देखा जाय तो उसमें कोई असाधारण बात शायद नहीं मालूम होगी। विकास के नाम पर आजादी के बाद इन २५ बरसों में अरबों रुपया देश के गाँवों में खर्च हुआ है, और कुछ स्कूल के काम भी हुए हैं, लेकिन देखने की दृष्टि अगर विकृत न हो गयी हो तो देश के उन लाखों गाँवों और दानापुर जैसे गाँवों का अन्तर स्पष्ट मालूम हो जायगा।

ग्रामदान के बाद क्या हो सकता है उसका एक नमूना दानापुर है और दानापुर अकेला नहीं है। ग्रामदान के विचार को अपनाकर देश में भिन्न-भिन्न जगह सैकड़ों गाँवों में इस तरह एक नया जीवन आरम्भ हुआ है और वह भी किसी कानून के दबाव से या डण्डे के भय से नहीं, बल्कि लोगों की अपनी खुद की प्रेरणा और इच्छा से। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २८ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : २५

२० मार्च, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

मतदाता !

भाई,
समय है, मैं बहुत ही बड़ा हूँ
मैं मतदाता हूँ।
यह सुहावना मौसम
वोट गिरने तक मुझे मुबारक है
फिर बात बदल जायेगी।
यह जो रौनक है, अभी मेरी है
फिर अगले पाँच बरस के लिए
खटिया खड़ी हो जायेगी।
वे होंगे नेता, मैं रहूँगा जनता
वे होंगे शासक, मैं रहूँगा शोषित
उनके लिए सस्ता शासन
मेरे लिए महँगा राशन
मैं तो फटेहाल हूँ, सिर भी नंगा है
सर तो उनका है, रंग बिरंगी टोपियाँ हैं
राजनीति है, कोई मजाक नहीं
कुछ तिरछी, कुछ तिरपट गोटियाँ हैं !
खेल हो जायेगा खतम चुनाव का
उठ जायेगा बाजार
नागरिक के भाव का।

दरअसल, बड़ा होकर भी मैं
छोटा रह जाता हूँ।
खरा होकर भी खोटा रह जाता हूँ।
निर्वाचित होकर भी
रहता हूँ घटिया
मेरे लिए तो बातें ही बातें हैं
बढ़िया-से-बढ़िया !

मैं नहीं समझ पाता,
यह कैसा जनतंत्र है ?
यहाँ जन से बड़ा तन्त्र है
नेताओं के पास जाने कौन सा मंत्र है !
कि वे होते हैं महाजन
हम रहते हैं केवल, जन।
वे करते हैं, मटरगश्ती
हमारी क्या हस्ती ?
बस, करो हरि-भजन
मेरे मन, मेरे जन, मेरे जन-गण-मन !

जन-प्रतिनिधि
जन से बड़ा नहीं होगा।
होगा वह जन-सेवक,
जन जो खायेगा
जन जो पहिनेगा
जन जो भोगेगा
उससे अधिक नहीं पायेगा वह
जन की समृद्धि के लिए
जो स्वयं होगा रिक्त
जन की पीड़ा से, करुणा से सिक्त
तो जन होगा बड़ा
और जनादेश पाकर, वह होगा खड़ा
तो मैं होऊँगा लघु
वह होगा लघुत्तर
वह होगा महत्
मैं होऊँगा महत्तर !

—प्रभु

एक

रोजगार सबसे पहिले

अनुमान है कि १९५० में १० लाख बेरोजगार थे। १९७० में उनकी संख्या १ करोड़ ४० लाख हो गयी। अगले दस वर्षों में ९ करोड़ नये लोग रोजगार के बाजार में आ जायेंगे। उनका जन्म हो चुका है, वे तैयार हो रहे हैं। इनके मुकाबिले अगले दस वर्षों में लगभग पौने तीन करोड़ मजदूरों से अधिक नहीं मरेंगे या काम से हटेंगे। इसलिए १९८० तक लगभग ६ करोड़ ३० लाख नये श्रमिक तैयार हो चुके रहेंगे, जबकि उस वक्त तक ४ करोड़ से अधिक के लिए रोजगार की गुन्जाइश नहीं निकलेगी। इस प्रकार १९८० में २ करोड़ ७० लाख लोग बेरोजगार रहेंगे, यानी कुल श्रमिकों का १४ प्रतिशत। इसका यह अर्थ है कि आगे के दस वर्षों में ६ हजार बेरोजगार प्रतिदिन जुड़ते जायेंगे। कितनी भयंकर है यह कल्पना भी ?

जो आदमी बेरोजगार है और जिसकी जीविका का कोई साधन नहीं है, अथवा काम में तो है लेकिन गुजर भर के लिए भी कमा नहीं पाता उसे ऐसे समाज के लिए क्या सहानुभूति होगी जो उसकी नजर में इतना अन्यायी, भ्रष्ट, और दो-मुँही है। बेरोजगारी हो, अर्द्धबेरोजगारी हो, या ऐसा रोजगार, जिससे पूरी 'कमाई' न हो, ये सब मिलकर हमारे देश की बुनियादों को तोड़ रहे हैं। समाज तेजी के साथ महाप्रपात की ओर बढ़ रहा है। इसलिए ऐसे समय किसी नीति या कार्यक्रम के सही होने की एक ही कसौटी है—उससे रोजगार बढ़ेगा या नहीं। अगर बढ़ेगा तो उसे स्वीकार करना चाहिए; यदि नहीं तो अस्वीकार।

—बी० के० नेहरू, 'फ्रीडम फर्स्ट' से

दो

ग्रैजुएट बेरोजगार

कला के ग्रैजुएटों में बेरोजगारी सबसे अधिक है। उनमें भी स्त्रियों की पुरुष ग्रैजुएटों से अधिक। ज्यादातर थर्ड डिविजनवाले बेरोजगार हैं। जिन्हें रोज-गार मिला भी है उनमें भी ऐसे कम हैं जिन्हें ट्रेनिंग या रुचि के अनुरूप काम मिला हो। एक सर्वेक्षण करने पर मालूम हुआ कि ४३·६ प्रतिशत कॉमर्स के ग्रैजुएट क्लर्क थे।

सरकार एक ग्रैजुएट पर लगभग २७००.०० रु० खर्च करती है। सरकार के खर्च को छोड़कर माता-पिता का बहुत अधिक खर्च होता है।

बेरोजगारी का मुख्य कारण है कि हमारी विकास-नीति दोषपूर्ण है। शिक्षा स्वयं इतनी निकम्मी है कि ग्रैजुएटों को काम लायक बनाती नहीं। शिक्षण और विकास के समन्वय में ही बेरोजगारी का उत्तर है।

दिसम्बर '७१ —'खादी-ग्रामोद्योग'

सात दिन !

'सात दिन, जिन्होंने दुनिया बदल दी' : इन शब्दों में राष्ट्रपति निक्सन ने अपनी चीन-यात्रा पर गर्व प्रकट किया है।

बरसों पहिले १९१७ की रूसी क्रान्ति पर एक लेखक ने एक किताब लिखी। उसने क्रान्ति के मुख्य दस दिन की घटनाओं का वर्णन किया, और पुस्तक का नाम रखा : 'दस दिन, जिन्होंने दुनिया को हिला दिया।'

रूस की क्रान्ति ने दुनिया को कितनी गहराई से हिलाया, यह दुनिया ने पिछले ५४ वर्षों में अच्छी तरह देख लिया है। रूस की क्रान्ति न हुई होती तो साम्यवाद बीसवीं शताब्दी की इतनी जबरदस्त शक्ति न बना होता। न होता आज का रूस, और न होता माओ का चीन। १९४९ से आज तक अमेरिकी सरकार ने जिस चीन की उपेक्षा की, जिसे स्वतंत्र दुनिया का शत्रु बताया, जिसे कुछ दिन पहिले तक हठपूर्वक संयुक्त-राष्ट्र-संघ से अलग रखा, उसी चीन से मित्रता की मीठी बातें करते निक्सन खुद चीन गये। चीन की यात्रा कर निक्सन ने साम्यवाद की वास्तविकता स्वीकार की। निक्सन को बुलाकर चीन ने भी अमेरिका की वास्तविकता स्वीकार की। यह एक नया प्रयोग है शत्रुओं के बीच समझौते द्वारा सह-अस्तित्व का। हो सकता है इसकी प्रेरणा एक ओर इस भय में हो कि हमारे विरुद्ध साम्यवादी चीन और रूस कहीं मिल न जायँ, क्योंकि दुनिया के अमेरिका-रूस-चीन के त्रिभुज में दो भुजाएँ साम्यवादी हैं। दूसरी ओर यह भय हो सकता है कि रूस और अमेरिका मिल जायँ और हमें अकेला न छोड़ दें, क्योंकि सह-अस्तित्व पहिले उन्हीं दोनों ने शुरू किया था। इसी के कारण चीन रूस को 'संशोधनवादी' कहकर लांछित करता रहा है। निक्सन गरमी में रूस भी जायेंगे। बेकार है यह कहना कि निक्सन शान्ति की यात्रा पर चीन गये थे। अगर उन्हें शान्ति की चिन्ता होती तो उसका प्रमाण वियतनाम और बंगला देश में मिला होता। वह गये थे मित्र की तलाश में—अपने देश के किसी सम्भव शत्रु के खिलाफ।

क्या परिवर्तन किये हैं निक्सन-माओ-मिलन के इन सात दिनों ने ? क्या एक परिवर्तन यह है कि मतवाद (आइडियालोजी) के आधार पर अब आगे पूँजीवाद और साम्यवाद शत्रु नहीं रहेंगे ? क्या दुनिया में मतभेदों के सह-अस्तित्व का जमाना सचमुच शुरू होगा ? या, क्या ऐसा होगा कि अमेरिका और चीन बीच की दीवारें फाँदकर एक-दूसरे से मिलेंगे, पिंगपांग और टेबुल-टेनिस खेलेंगे, और खुशी-खुशी व्यापार का लेन-देन करेंगे, और जब जी चाहेगा तो एक-दूसरे को गाली भी दे लेंगे ? आखिर, यह मेल-मिलाप किसलिए हो रहा है ? क्या इसलिए हो रहा है कि पूँजीवाद अब उपनिवेशवादी नहीं रहेगा, साम्यवाद विश्ववादी होना छोड़ देगा, और दोनों राष्ट्रवादी बन जायेंगे और पुरानी कैंचुल छोड़कर नये ढंग से शक्ति-सन्तुलन का खेल खेलेंगे और दुनिया को अपने-अपने प्रभाव-क्षेत्रों में बाँट लेंगे ? क्या अमेरिका चाहता है कि चीन रूस के विरुद्ध एशिया में अमेरिका को बर्दाश्त करे जैसे अमेरिका चीन को विश्व-मंच पर बर्दाश्त कर रहा है ? अमेरिका एशिया का मैदान भारत और बंगला देश को मिलाकर रूस के लिए खुला नहीं छोड़ना चाहता।

हिन्द-महासागर बड़ी नाविक शक्तियों का क्रीड़ा-क्षेत्र बनता जायगा। वियतनाम में अमेरिकी संहार-लीला चलती रहेगी। अमेरिका पाकिस्तान को अस्त्र-शस्त्र देता रहेगा। चीन कश्मीरियों के आत्म-निर्णय का नारा बुलन्द करता रहेगा और बंगलादेश को गद्दार कहता रहेगा। अमेरिका और चीन दोनों कोई-न-कोई बहाना लेकर दक्षिण एशिया में घुसपैठ करते रहेंगे। दोनों दक्षिणी और दक्षिण-पूर्वी एशिया में भाग्य-निर्णायक बने रहना चाहते हैं। यह कितनी मजे की बात है कि अमेरिका और चीन में हर चीज पर मतभेद है सिवाय बंगला देश और कश्मीर के। यह फलश्रुति है इन सात दिनों की। अमेरिका और चीन का सारा व्यापार अगर निक्सन-माओ-मिलन के बाद भी उसी तरह चलता रहेगा जिस तरह पहिले चलता था तो वह परिवर्तन कौन-सा है जिसका श्रेय निक्सन लेना चाहते हैं ? क्या यही परिवर्तन होगा कि लैवार किसी दिन चीन के पेट में चला जायगा, तथा किसिंगर और उन-जैसे कुछ अमेरिकियों का चीन आना-जाना शुरू हो जायगा ? अगर इतना ही परिवर्तन होगा तो दुनिया अपनी आँखों देखेगी कि अमेरिका और चीन दोनों घोर सत्तावादी हैं, और वे कब क्या करेंगे इसका कोई भरोसा नहीं। क्या वियतनाम और पाकिस्तान में मुँह की खाकर अमेरिका चीन का दामन पकड़कर एशिया में बना रहना चाहता है ? और, चीन अमेरिकी दोस्ती की आड़ से दुनिया को बताना चाहता है कि वह अब भी सताये हुए लोगों के मुक्ति-संग्रामों का समर्थक है ? कौन इनकी ढोंगभरी बातों पर विश्वास करेगा ?

न रूस के चौवन साल पहिले के दस दिन और न अमेरिका-चीन के ये सात दिन ! उन दस दिनों ने क्रान्ति का नाम लेनेवाले एक नृशंस सत्तावाद को जन्म दिया, अब ये सात दिन शान्ति के नाम में एक नये प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी सत्तावाद को जन्म दे रहे हैं। बोतलें जरूर बदलेंगी लेकिन शराब वही रहेगी। जब तक दुनिया सत्ताधारियों के हाथ में रहेगी वही होता रहेगा जो आज हो रहा है। राष्ट्रवादी शक्तियों के सन्तुलन-असन्तुलन का खेल होता रहेगा।

लेकिन जहाँ एक ओर यह नाटक रचा जा रहा है, वहीं

दूसरी ओर कहीं-कहीं प्रकाश की रेखाएँ भी प्रकट हो रही हैं। बंगला देश के प्रश्न पर दुनिया की जनता अपनी ही सरकारों से अलग नजर आयी। यह कौतुक था। किसी देश की सेना अपनी ही जनता के लिए कितना बड़ा खतरा बन सकती है इसका अन्तिम प्रमाण पाकिस्तान ने दे दिया। लोकतंत्र होशियार हो जाय! एक बड़ा देश अपने को किस तरह धर्म-युद्ध में झोंक सकता है यह साहस भारत ने कर दिखाया। बिलकुल नयी बात थी! इतिहास जनता की ओर मुड़ रहा है। मनुष्य मूल्यों का महत्त्व समझ रहा है। नयी दुनिया—एक दुनिया—गर्भ में आ चुकी है। लेकिन जन्म उसका उस दिन होगा जिस दिन जनता शस्त्र-शक्ति की गुलामी छोड़कर अपनी नैतिक शक्ति के भरोसे सामने आयेगी। आज वह अतीत और भविष्य के बीच के धुँधलेपन में पड़ी हुई है।

कहीं-कहीं कुछ नया होना शुरू भी हो गया है। दक्षिण एशिया में भारत-बंगला देश नयी प्रेरणाओं से प्रभावित हो रहे हैं। उधर पश्चिमी यूरोप में एकता के नये प्रयत्न चल रहे हैं। अब यह मानने का कोई कारण नहीं है कि दुनिया को बदलने की शक्ति अमेरिका, रूस, या चीन में रह गयी है। निक्सन के चीनी सौदे का खरीददार कौन है?

केप्चर कर लो!

'इस बार हारूँ या जीतूँ अब आगे से चुनाव में नहीं खड़ा होऊँगा।'

ये शब्द हैं एक नेता के जो अपने दल के जिला-अध्यक्ष हैं, और इस बार विधानसभा के लिए उम्मीदवार थे। कोई भी चुनाव हो, वह लड़ने से छोड़ते नहीं, और यों भी हर वक्त लड़ने के 'मूड' में रहते हैं। यह मानते ही हैं कि राजनीति में गाली और लड़ाई के सिवाय दूसरा है क्या! इसलिए उस दिन जब मैंने उनके मुँह से यह बात सुनी तो आश्चर्य हुआ! पहलवान को अखाड़े से वैराग्य!

मैंने पूछा, "ऐसा क्यों कह रहे हैं? चुनाव तो आप लोगों का भोजन है! क्या भोजन छोड़ दीजिएगा?"

वह बोले, "चुनाव हो तब तो लड़ा जाय! चुनाव कहाँ है?"

"क्यों क्या बात है?" मैंने पूछा।

"आप ही पूछिए, सुबह से इस बूथ पर कितने वोटर आये हैं। इस वक्त भी देखिए सन्नाटा है। लेकिन वोट लगभग सब पड़ चुके हैं।"

"क्यों, ऐसा कैसे हुआ?"

"बिलकुल आसान बात है। दस आदमी लाठी, गड़ाँसा, लेकर आ गये, बैलट पेपर ले लिये, सबके वोट डाल दिये। किस्सा खतम। यही है मतदान! क्या करेगा कोई कन्वेसिंग करके जब वोटर वोट डालने ही नहीं पायेंगे?"

मतदाताविहीन मतदान का लोकतंत्र के इतिहास में यह अभिनव प्रयोग है। पिछले चुनाव में 'बूथ कैप्चर' करने की पद्धति की लगभग शुरूआत थी। ख्याल था कि इस बार शायद कुछ सुधार हो। हमने बंगला देश में धर्म की लड़ाई लड़ी थी, इसलिए उम्मीद होती थी कि उसका हम लोगों पर भी कुछ असर पड़ेगा! लेकिन नहीं। हालत—कम-से-कम बिहार में—इस बार पिछले चुनाव से ज्यादा खराब रही। जिसका कोई सार्वजनिक जीवन नहीं, वह भी कुछ बूथों पर कब्जा कर चुनाव जीत जाने की उम्मीद में खड़ा हो गया। एक-एक क्षेत्र में सैकड़ों पेशेवर गुण्डे जो अस्त्र-शस्त्र से लैस होकर सत्ता की सट्टेबाजी कर रहे हैं, बाहर से बुलाये गये। किस लिए? सिर्फ इसलिए कि वोटर को बूथ पर जाने ही मत दो। यह काम जबरदस्त लोगों ने ज्यादा जमकर किया है—ऐसे लोगों ने जो मिनिस्टर रह चुके हैं, या जो जीतने पर मिनिस्टर हो सकते हैं, और जो चुनाव के लिए पैसा जुटा सकते हैं, गुण्डे बुला सकते हैं, जो सत्ता के लिए सब कुछ कर सकते हैं। गुण्डे बूथ कैप्चर करें, नेता सरकार कैप्चर करें, व्यापारी बाजार कैप्चर करें, और सिर्फ ७५ उद्योगपति देश के सारे उद्योगों को कैप्चर कर लें! सोचे जनता कि उसके लिए कैप्चर करने को क्या बचेगा? चिन्ता यही है कि अधिकांश लोग सोचते नहीं, और जो सोचते हैं वे असहाय हैं।

प्रिजाइडिंग अफसर, दलों के एजेण्ट, हथियारबन्द सिपाही, गश्त लगानेवाले अधिकारी, सब खड़े-खड़े तमाशा देखते रहते हैं। कोई कुछ बोलता नहीं। किसी को क्या पड़ी है कि बोले? वोटर को क्या पड़ी है, कोई जीते! अफसर को सिर्फ इतनी चिन्ता है कि सब काम 'शान्तिपूर्वक' हो जाय। वह शान्ति का पुजारी है, शुद्धता का संरक्षक नहीं। नेता इतना ही सोचता है कि उसे जीतना है। वह लोकतंत्र के पचड़े में नहीं पड़ता, उसे सरकार बनानी है, जनता की 'सेवा' करनी है, देश को शक्तिशाली बनाना है। वह जल्दी में है, इसलिए कुछ सोच नहीं सकता। ऐसा प्राणी है वह! देखते ही बनता है कि किस आसानी से वह अपने इर्द-गिर्द ठीकेवालों को, मोटरवालों को, डण्डेवालों को इकट्ठा कर लेता है। इतने समर्पित भक्त किस दूसरे को मिलते होंगे? शिक्षक और विद्यार्थी भी खरीद लिये जाते हैं।

जिस प्रक्रिया से देश की सबसे बड़ी संगठित शक्ति, सरकार, बनती है उसका वास्तविकता चुनाव ही है। बेकार है यह शिकायत करना कि चुनावों में जातिवाद होता है। जब लोकतंत्र दलवाद के हाथों में रहेगा, राजनीति सत्तावादियों के हाथों में रहेगी, तो चुनाव किस तरह के हाथों में रहेंगे? चुनाव के हथकण्डे में सब दल समान हैं; गुण की दृष्टि से कोई भिन्न नहीं है।

सैनिक की शक्ति से भारत ने बंगला देश में पाकिस्तान का मुकाबिला किया, और विजय पायी। प्रधानमंत्री कहती हैं—हम पर अमेरिका और चीन की कुदृष्टि है। उनका मुकाबिला करने के लिए जनता की शक्ति चाहिए। कैसे मिलेगी वह शक्ति? इन्हीं चुनावों से? और किस जनता की? इन्हीं मुट्ठीभर लोगों की? प्रधानमंत्री चाहती हैं कि गरीबी से लड़ने के लिए→

बंगला देश के बाद : कुछ प्रश्न

—प्रो० सुगत दासगुप्त

नये प्रश्न

बंगला देश ने दुनिया के सामने कुछ नये प्रश्न प्रस्तुत कर दिये हैं। हम समझते थे कि 'सेकुलरिज्म' लोकतंत्र और प्रभुसत्ता (सावरेण्टी) के अर्थ हमेशा के लिए तय हो गये हैं, लेकिन बंगला देश की घटनाओं से अब हम प्रचलित परिभाषाएँ बदलने को विवश हो रहे हैं।

बंगला देश में जो कुछ हुआ है उससे भारत और दुनिया, दोनों बहुत कुछ सीख सकते हैं। दुनिया के लिए पहला प्रश्न तय करने का है कि राष्ट्रीय प्रभुसत्ता (नेशनल सावरेण्टी) पर कोई अंकुश रहेगा या नहीं—विश्व के जनमत का या मानवता का? क्या अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध हमेशा सरकारों के ही बीच रहेंगे, जनता-जनता के बीच नहीं होंगे? क्या एक देश और उस देश की सरकार एक ही है? क्या सरकार और जनता के बीच यही सम्बन्ध रहेगा कि जनता को सरकार की बात माननी ही है?

बंगला देश की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया है कि लोकतांत्रिक देशों में भी जनता का अपनी ही सरकारों पर कितना कम असर है। अगर ऐसा न होता तो अपने जनमत के प्रभाव में सरकारें बंगला देश को कब की मान्यता दे चुकी होतीं, और वह नृशंस अत्याचार का शिकार होने से बच जाता। लेकिन अपने जनमत की अवहेलना कर हर सरकार राष्ट्रीय प्रभुसत्ता की दुहाई देती खड़ी तमाशा देखती रही। इतना ही नहीं जब पाकिस्तान का भारत पर आक्रमण हुआ और भारत बंगला देश की मुक्ति के लिए आगे बढ़ा तो दुनिया की ७५ 'सरकारों' ने भारत की निन्दा की।

इस प्रकार बंगला देश ने दुनिया के सामने यह नया प्रश्न पैदा कर दिया है कि राष्ट्रीय प्रभुसत्ता का अर्थ क्या है, किसी देश में नागरिक को अपनी सरकार से भिन्न राय रखने का कहाँ तक अधिकार है, और सामान्यतः सरकार और नागरिक में क्या सम्बन्ध रहना चाहिए, विशेषरूप से लोकतंत्र में। इसके अलावा सेना का प्रश्न है। सेना का क्या रोल माना जाना चाहिए, और उस पर किसका कण्ट्रोल रहना चाहिए। अनेक देशों में सेना ने जनता और उसके प्रतिनिधियों को कुचल कर सारी सत्ता अपने हाथ में कर ली है और दुनिया की सारी सरकारें देखती रह गयी हैं। हर देश की जनता और सरकार अपनी ही सेना की कृपा पर है। सेना के हाथ में नित्य नये अस्त्र-शस्त्र जा रहे हैं, और नागरिक वस्तुतः असहाय होता जा रहा है। ऐसी स्थिति में किसी देश के लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा खतरा उसकी अपनी सेना ही बन गयी है।

इसका एक उपाय यह बताया गया है कि स्थायी सेना घटायी जाय और हर नागरिक को सैनिक शिक्षा दी जाय ताकि नागरिक-शक्ति सैनिक-शक्ति के मुकाबिले में कमजोर न पड़े। लेकिन क्या यह समाधान सही और पर्याप्त है?

ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर दुनिया को ढूँढना ही है।

भारत के लिए

बंगला देश ने भारत के लिए जो प्रश्न प्रस्तुत किये हैं उनमें पहला है धर्मनिरपेक्षता का। हमें सोचना है कि धर्मनिरपेक्षता का सही अर्थ क्या है और राजनीति में उस पर अमल कैसे होगा। दूसरा प्रश्न है कि देश का आर्थिक विकास कैसे हो, और प्रचलित विकास-पद्धति में क्या सुधार किये जायँ कि वह भारत जैसे देश के, जिसमें कई 'संस्कृतियाँ' हैं, अनुकूल हो सके।

१—बंगला देश में धर्मनिरपेक्षता की जो शक्ति प्रकट हुई वैसी भारत में अभी तक नहीं प्रकट हो सकी है। बंगला देश की धर्मनिरपेक्षता में तीन मुख्य तत्त्व रहे हैं—सांस्कृतिक, राजनैतिक, और आर्थिक, जो साथ-साथ काम करते रहे हैं। सांस्कृतिक पक्ष में राजाराम मोहन राय से लेकर रवीन्द्रनाथ टैगोर तक एक अखण्ड धारा काम करती रही है। बंगला देश में सांस्कृतिक जागरण ने जन-जन को स्पर्श किया, भारत में वह कुछ ही लोगों तक पहुँच कर रह गया। वहाँ के युवक धार्मिक कट्टरता से बच गये। वहाँ जागरण का शुभ मानवीय प्रभाव महलों तक

→पूरे देश में एक तरह की सरकारें हों—उनके दल की जो दिल्ली के कदम में कदम मिलाकर चल सकें। दल चाहे जो हो, लेकिन 'धूम ब्रैण्ड' से चुनाव जीतनेवाले सत्ताधारी कभी 'गरीबी हटाओ' अभियान में आगे बढ़ेंगे, क्या यह आशा की जा सकती है? भ्रष्ट मतदान से उभरनेवाला नेतृत्व भी भ्रष्ट होता है—दमन और शोषण का प्यासा, या बिलकुल निकम्मा! अगर किया जा सके तो वह भी मतदाता-विहीन मतदान की तरह एक दूसरा नया प्रयोग होगा। सोचना चाहिए कि कौन भ्रम में है—प्रधानमंत्री या जनता? या, दोनों?

सब कुछ होते हुए भी यह देखने में आता है कि सामान्य नागरिक और मतदाता दुरुस्त है। उसे समझाइए, समझता है। उसे बताइए, मानता है। लेकिन उसे बहकाइए तो बहक भी जाता है। बहकानेवाले अधिक हैं। जिन्हें उसने बुद्धि में, धन में, धर्म में, शक्ति और अधिकार में, पहुँच और प्रभाव में, अपने से बड़ा माना था वे सब बहकानेवाले हो गये हैं। इनसे बचने का उसके पास एक उपाय है। वह अपने को अलग कर लेता है। इस मनोवैज्ञानिक कवच का अभ्यास भारत के नागरिक ने सदियों-सदियों में किया है। कागज गिनकर वोट के आँकड़े चाहे जो बताये जायँ, मतदाता का दिल मतदान में नहीं है। मतदान में 'मत' पहले से कम रह गया था फिर भी 'दान' होता था, अब 'दाता' भी न रह जाय तो 'दान' क्या होगा? मतदाता-विहीन मतदान का प्रयोग लोकतंत्र की हत्या का प्रयोग होगा।●

बंगला देश के बाद भारत और पूरे उप-महाद्वीप के राजनैतिक पुनर्गठन की जरूरत है। सबसे पहिले संविधान का प्रश्न है। लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि नागरिकों का, निर्णय की प्रक्रिया (डिसीजन-मेकिंग) पर सीधा नियंत्रण हो। निर्णय की प्रक्रिया में हर नागरिक और सांस्कृतिक इकाई का, चाहे वह कितनी भी छोटी हो, सीधा स्थान होना चाहिए ताकि जो भी निर्णय हो वह कुछ लोगों का न होकर सबका हो।

भारत में बराबर यह माँग हो रही है कि राज्यों को अधिक अधिकार दिये जायँ। लेकिन राष्ट्रीय नेताओं के हाथ से अधिकार निकलकर राज्यों के नेताओं के हाथों में चले जायँ तो इतने से ही विकेन्द्रीकरण नहीं हो जाता। जरूरत ऐसी व्यवस्था की है जिसमें विकेन्द्रीकरण नीचे के समुदायों तक पहुँचे। विकेन्द्रित व्यवस्था में अधिक-से-अधिक अधिकार नीचे की इकाइयों में होते हैं, और ऊपर की हर इकाई शक्ति (सैंक्शन) अपने ठीक नीचे की इकाई से प्राप्त करती है। ऐसी व्यवस्था में देश का हर कोना, हर समुदाय, निर्णय की व्यापक प्रक्रिया में शरीक हो जाता है।

पूर्वांचल में जो नये राज्य बने हैं उनसे पता चलता है कि हमारी राजनैतिक व्यवस्था में इस प्रकार के सुधार की गुंजाइश है। लेकिन सुधार करने के लिए माँग और आन्दोलन की प्रतीक्षा नहीं होनी चाहिए। आवश्यक सुधार पहले से कर दिये जायँ ताकि नाहक क्षोभ न पैदा हो।

देश में समय-समय पर सुधार सुझाये गये हैं उनमें से मुख्य ये हैं :

(१) राज्य नये सिरे से बनाये जायँ। ये छोटे हों। संख्या लगभग ५५ तक हो सकती है। (२) एक भाषा-भाषी लोग एक से अधिक राज्यों में रहें। (३) संसद के दो सदन हों। राज्यसभा में हर राज्य के बराबर वोट हों। (४) गाँव, ब्लाक और जिला-स्तर पर भी प्रशासन की सीढ़ियाँ हों। (५) अन्तरराज्य-कौंसिल बनायी जाय।

इस तरह सरकार की पाँच सीढ़ियाँ हो जायेंगी—गाँव, ब्लाक, जिला, राज्य और केन्द्र। इन पाँचों को सामने रखकर प्रशासन के विषय (सब्जेक्ट) तय किये जायँ। विषयों की दो सूचियाँ हों। एक सूची के विषयों के सम्बन्ध में निर्णय साधारण बहुमत से लिये जा सकें, और दूसरी सूची ऐसे विषयों की हो जिनके सम्बन्ध में निर्णय 'कान्सेन्सस' से हो। राष्ट्रभाषा, अल्पसंख्यकों और विभिन्न जातियों के हित आदि विषय, दूसरी सूची के लायक हैं।

इस समय दुनिया में हर जगह विभिन्न सांस्कृतिक समुदायों की ओर से स्वायत्तता तथा राजनैतिक-आर्थिक अधिकारों की माँग हो रही है। गाँव, कारखाना, विश्वविद्यालय आदि हर जगह लोग निर्णय में शरीक होने के लिए अधीर हो रहे हैं। कोई दबना नहीं चाहता। इस नयी चेतना को राजनैतिक व्यवस्था में पूर्ण करना चाहिए। इस दिशा में हम ढिलाई दिखायेंगे तो विस्फोट होंगे।

उप-महाद्वीप

प्रश्न है पूरे उप-महाद्वीप का क्या स्वरूप होगा? मुजीब ने 'तीनों की संधि' की बात कही है। भुट्टो ने भी महासंघ की बात कही है। जवाहरलाल, जयप्रकाश और राममनोहर लोहिया ने बहुत पहिले से इसकी कल्पना की थी।

जाहिर है कि ऐसी व्यवस्था बनाने में कुछ समय लगेगा। तीनों देशों को तैयार होना होगा कि वे अपने भेद-भाव दूर कर दें और आपस में ऐसी व्यवस्था बनायें कि बाहरी 'महाशक्तियाँ' भारतीय उप-महाद्वीप में पैर न जमा सकें। ऐसा हो जाय तो सेना पर खर्च बहुत घट जायगा। इतना हो जाय तो आगे यह कोशिश करनी होगी कि हिन्द महासागर अणुशक्ति से मुक्त क्षेत्र घोषित किया जाय।

जिस आर्थिक और राजनैतिक रचना की यहाँ चर्चा की गयी है वह बहुत आसानी से भारत में की जा सकती है। वह हमारी राष्ट्रीय प्रतिभा के अनुकूल है। अगर भारत आगे बढ़े तो बंगला देश और पाकिस्तान भी इस रचना को स्वीकार कर सकते हैं। भारत को आगे बढ़कर दिखाना है कि विशिष्ट जन की शक्ति से अलग सामान्यजन की शक्ति से भी एक नयी रचना की जा सकती है। *यह प्रयोग नया होगा,* लेकिन रास्ता दिखानेवाला होगा।

भारत-पाकिस्तान-बंगला देश मिलकर 'विश्वास का त्रिभुज' बना सकते हैं। दुनिया में अमेरिका-रूस-चीन ने आतंक का त्रिभुज बना रखा है। एक बार बन गया तो समय पाकर विश्वास का त्रिभुज बड़ा होगा। विनोबा ने ए० बी० सी० कहा है। उनकी कल्पना में अफगानिस्तान, बर्मा, सीलोन का त्रिभुज है। जिस दिन यह त्रिभुज बनेगा उस दिन हिंसा की जगह शान्ति की एक नयी रचना का उदय होगा। ●

ग्राम-गुरुकुल : आचार्यकुल का भावी कार्यक्रम

—धीरेन्द्र मजूमदार

ग्रामस्वराज्य के राष्ट्रीय मोर्चे के दो प्रखण्डो, रुपौली (पूर्णिया) और मरौना (सहरसा), में पुष्टि का प्रथम चरण पूरा हो गया है। अर्थात् इन प्रखण्डों की जनता में विचार का इतना उद्बोधन हो गया है कि वह अब ग्रामस्वराज्य की सृष्टि की बात सोच सके। अत यह आवश्यक है कि अब ग्रामस्वराज्य की सृष्टि की योजना बनाकर उसके लिए आवश्यक पूर्व तैयारी करना आरम्भ कर दें। यह बात हमें स्पष्ट रूप से समझ लेनी होगी कि आरम्भ से ही ग्रामसभा के मानस में आर्थिक विकास की बात प्राथमिकता लिये हुए है। अतः यह आवश्यक है कि इस सवाल पर सर्वोदय कार्यकर्ताओं, ग्रामसभा के लोगों और आचार्यकुल के सदस्यों का दिमाग तथा दृष्टि स्पष्ट होनी चाहिए। हम आशा करते हैं कि ये सब लोग विकास के सवाल पर प्रचलित राष्ट्रीय नेतृत्व की गलतियाँ नहीं दुहरायेंगे।

सन् १९३७ में अंग्रेजी राज के अन्तर्गत ही पहली कांग्रेसी सरकारें बनी तभी से गांधीजी ने इस बात पर जोर देना आरम्भ कर दिया था कि आजाद भारत में गुलाम भारत की शिक्षा-पद्धति के बदले स्वराज्यी भारत की पोषक शिक्षा की स्थापना करनी चाहिए। उसके लिए उन्होंने शिक्षा में क्रान्ति का, नयी तालीम *का विचार दिया। उनके विचार में* किसी राष्ट्र का भौतिक विकास उसके नागरिक विकास के बिना सम्भव नही है। इसलिए वे राष्ट्र की शिक्षा को राष्ट्र के भौतिक विकास का कारण बनाना चाहते थे। वे कहते थे कि राष्ट्र या गाँव का विकास कोई अलग प्रवृत्ति नहीं है वरन् वह शिक्षा का परिणाम है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने आवश्यक सामग्री के उत्पादन, सामाजिक तथा प्राकृतिक परिवेश के माध्यम से शिक्षा-पद्धति को विकसित करने की बात कही। किन्तु यह हमारे देश का दुर्भाग्य था कि आजादी के तत्काल बाद ही गांधीजी की मृत्यु हो गयी और उनके बाद राष्ट्र के नेताओं ने उनकी बात को एकदम छोड़कर अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति को ज्यों-का-त्यों देश में रहने दिया। इस पद्धति में राष्ट्र का विकास और शिक्षा अलग-अलग पड गये हैं और अब विकास तथा शिक्षा की पुरानी अंग्रेजी पद्धति पर चलते चलते असफल होने पर हमारे शासक कभी-कभी कहते सुने जाते हैं कि हमने गांधीजी की बात न मानकर गलती की है। स्वयं श्री जवाहरलालजी ने यह बात अनेक बार कही थी। इस हालत में आज जब गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य यानी ग्राम-गणतन्त्रों की स्थापना का सपना साकार होने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं तब ग्रामस्वराज्य के नेतृत्व को सोचना होगा कि वह राष्ट्रीय नेतृत्व के इस दुर्भाग्यपूर्ण अनुभव से लाभ उठायेगा या फिर से वही गलती करेगा जिसके कारण आज हमारा राष्ट्र पछता रहा है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ग्रामस्वराज्य के नेताओं को देश के पुराने अनुभव से लाभ उठाकर गांधीजी के सुझाये मार्ग से ग्राम-विकास का मार्ग खोजना होगा। तभी वास्तविक ग्रामस्वराज्य और विकास हो सकेगा। १९३७ में गांधीजी ने पाठ-*शालाओं में उद्योग आधारित कर शिक्षा* में सामाजिक और प्राकृतिक परिवेश दाखिल करने की योजना पेश की थी। इस प्रकार से उन्होंने शिक्षा को स्कूल की चहारदीवारी से बाहर निकालने की ओर संकेत किया था। किन्तु जब १९४५ में जैसे ही पूर्ण स्वराज की सम्भावना प्रकट होने लगी तभी उन्होंने बुनियादी शिक्षा के सेवकों से कहा था, 'मैं अब आप को छोटे समुन्दर से महासागर में ले जाना चाहता हूँ। अब तालीम की अवधि गर्भ से लेकर मृत्युपर्यन्त होगी और सारा समाज ही उसकी शाला बनेगा।'

अत. अब ग्रामसभा को और आचार्यकुल के लोगों को मिलकर सोचना होगा कि उन्हें अपनी समस्त शिक्षणशाला और पद्धति को नया रूप देकर गाँव के समस्त कार्यक्रम को शिक्षा का माध्यम बनाना होगा। इन सबका एक निश्चित कार्यक्रम विकसित करना होगा। इससे स्पष्ट है कि तब नयी शिक्षा को नीचे दर्जे से आरम्भ करना होगा अर्थात् गाँव की नयी तालीम के लिए पहले मिडिल स्कूलों का संयोजन करना व्यावहारिक होगा। चूँकि यह शिक्षा का कोई पूर्व निर्दिष्ट और निश्चित रूप अभी नही है अत. इसे एक दिशा-*निर्देश के रूप में मानकर चलना होगा।* अभी हमें यह मानकर चलना होगा कि अभी गाँव के सारे कार्यक्रम को हम शिक्षा के समवाय के रूप में अभ्यास में नहीं ला सकते हैं। इसलिए आरम्भ में बच्चों को गाँव के सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम के अभ्यास के साथ-साथ पुस्तकीय शिक्षण भी देना होगा और क्रमश. समवाय-पद्धति की प्रणाली विकसित करनी होगी। आज इस काम का एक अच्छा प्रयोग मध्य प्रदेश में हमारे मित्र श्री गंगाधरजी पाटनकर कई सालों से कर रहे हैं। यह उनकी एकान्त साधना का फल है और मैं मानता हूँ कि हम जिस शिक्षा का जन्म होते देखना चाहते हैं श्री पाटनकरजी के यहाँ उसका काफी सफल रूप विकसित हुआ है। मेरी राय *में सहरसा मोर्चे की शिक्षण-योजना तथा* उसके माध्यम से विकास-योजना का कार्यक्रम भाई श्री पाटनकरजी की सलाह से चले तो अच्छा होगा।

गांधीजी की समग्र नयी तालीम की योजना को साकार रूप देने के लिए हमें दो तरह के प्रयोग करने चाहिए :

१—एक तो प्रचलित विद्यालयों में से कुछ को, जहाँ उसके लिए शिक्षकों की अनुकूलता हो, इस नयी योजना में परिणत करना होगा।

२—दूसरे कुछ ग्रामसभा-क्षेत्रों में सरकार की सहायता तथा मान्यता के बिना इस नयी योजना के अनुसार कुछ नये प्रयोग-केन्द्र कायम किये जायँ जहाँ पर छात्रों को प्रमाण-पत्र ग्रामस्वराज्य-सभा या प्रखण्डस्वराज्य-सभा की ओर से दिये जायँ और उनमें से जो छात्र पुरानी पद्धति से परीक्षा देना चाहें उन्हें इस मॉडल विद्यालय के शिक्षक सहायता करें।

इन प्रयोग-केन्द्रों में यह बात मुख्य हो कि विद्यालय और शिक्षक सारे ग्राम-समाज को ही शिष्य के रूप में मान्य करें। इस केन्द्र के माध्यम से ग्राम-विकास की सभी और शिक्षण-कार्य भी हो। गाँव के कामकाजी किसान, मजदूर तथा अन्य लोग इसके छात्र होंगे जो शिक्षकों और अन्य छात्रों के साथ मिलकर अपना और गाँव का काम करेंगे। केन्द्र के व्यय के लिए समूची जिम्मेदारी ग्रामसभा की हो। भाई पाटनकरजी ने इसकी व्यावहारिक योजना बनायी है।

अब यह आवश्यक है कि इस तरह के दोनों प्रयोगों के लिए कुछ कार्यकर्ताओं और वर्तमान में शिक्षा का काम कर रहे शिक्षकों की एक टोली कुछ दिन तक श्री पाटनकरजी के साथ रहकर अनुभव करे। कार्यकर्ताओं को चूँकि अपना सारा जीवन इस काम में लगाना होगा अतः उनका प्रशिक्षण अधिक समय का होगा और जो शिक्षक अपने विद्यालय में आकर कुछ इस तरह का सुधार करना चाहेंगे उनका शिक्षण कुछ कम समय का हो सकता है। हम सोचते हैं कि कार्यकर्ताओं में से कुछ तो अपने केन्द्रों पर बैठकर अपने प्रयोग में लगे रहेंगे और कुछ चुने हुए उन विद्यालयों में जिनके शिक्षक अपने विद्यालयों में इस नयी शिक्षा के अनुरूप सुधार करने के विचार से पाटनकरजी के यहाँ से शिक्षण लेकर आये हैं, जाकर उन विद्यालयों का मार्गदर्शन करेंगे। इन दोनों प्रकार के कार्यकर्ता समयानुसार आपस में काम बदल भी सकते हैं। केन्द्र संचालकों को कृषि का तज्ञ स्नातक होना आवश्यक होगा अन्यथा वे गाँव के कुछ काम नहीं कर सकेंगे।

हम सरकारी स्तर पर इन नये प्रयोग में भरपूर सहयोग की अपेक्षा करते हैं। शिक्षा-विभाग अपने कुछ शिक्षकों को इसके लिए तैयार करे जो कम-से-कम एक माह का इस तरह का प्रशिक्षण लेने को तैयार हों और जो फिर अपने विद्यालय को इस आधार पर कुछ सुधारना चाहते हों। आचार्यकुल के सदस्यों को इसके लिए आगे आना चाहिए। इस प्रकार के प्रशिक्षण के लिए वैडूच जाने के लिए शिक्षकों को विभागीय सुविधा हो। यानी उन्हें वहाँ विभागीय स्तर पर (ऑन डेपुटेशन) भेजा जाये और उन्हें प्रशिक्षण काल के लिए सवेतन अवकाश मिले तथा आने-जाने का मार्ग-व्यय भी सरकार की ओर से दिया जाय। वहाँ से वापस आने पर इन विद्यालयों को एक मॉडल विद्यालय बनाने में हर सम्भव सरकारी सुविधा और सहायता उन्हें दी जाय। आचार्यकुल और शिक्षा-विभाग मिलकर समय-समय पर इन प्रयोगों की समीक्षा करते रहें और समयानुकूल परिवर्तन करते रहें। किन्तु यह ध्यान रखा जाय कि इससे शिक्षकों तथा विद्यालयों के काम में अनावश्यक अड़चन पैदा न हो। ●

ग्रामस्वराज्य में शिक्षा

—श्री गंगाधर पाटनकर

१—वर्तमान शिक्षा-पद्धति बहुत ही व्यय, अपर्याप्त और समस्यामूलक है। भारत में शिक्षा नौकरी के लिए दी जा रही है जिसके परिणामस्वरूप देश में बेकारी की भयंकर समस्या दानव बन कर राष्ट्र के सामने खड़ी है।

२—शिक्षा से राष्ट्रीय समस्याएँ हल होनी चाहिए और मानव-जीवन सुखी, समृद्ध और तेजस्वी बनना चाहिए। शोषण-मुक्त, शासन-मुक्त अहिंसक समाज के लिए प्रत्येक गाँव में गर्भ से लेकर मृत्यु तक की शिक्षण-योजना आवश्यक है। ऐसी शिक्षा की कल्पना गांधीजी ने देश के लिए की थी। इसमें समूचा गाँव ही विद्यालय बनता है। शिक्षा स्वावलम्बी और शासन-मुक्त हो, अध्यात्म और विज्ञान से भरी हो। विनोबा इसे ग्राम-विश्वविद्यालय कहते हैं, श्री धीरेन्द्र भाई इसे ग्राम-गुरुकुल कहते हैं।

३—आरम्भ जिन गाँवों में पुष्टि हो चुकी हो, ग्रामसभा गठित हो गयी हो तथा यह अनुभव करती हो कि नये जीवन और नये समाज के लिए नयी शिक्षा आवश्यक है, वहाँ ग्रामसभा का ऐसा प्रस्ताव होना चाहिए और एक शिक्षा-समिति का गठन होना चाहिए जिसमें प्रमुख व प्रभावी सदस्यों के साथ अध्यापक और शान्तिसैनिक प्रतिनिधि रहें। वही लोग शिक्षा-नीति बनायें और उसके आधार पर पाठ्यक्रम की रूपरेखा तय करें।

४—वातावरण की तैयारी मन शुद्धि, वायुशुद्धि, प्रभातफेरी, प्रार्थना और स्वाध्याय, ग्राम-सफाई और कम्पोस्ट तथा घर-घर में शौचालय बनाने से काम आरम्भ हो। इन सारे कार्यक्रमों में शिक्षक, छात्र और गाँव के नागरिक, सभी भाग लेंगे। क्षेत्र के आचार्यकुल और ग्राम-गुरुकुल के सदस्य तो इसमें अवश्य ही भाग लें।

५—पूर्वतैयारी प्रेम, आनन्द, उत्साह, सौन्दर्य का वातावरण बने और शरीरश्रम के प्रति अगाध श्रद्धा पैदा हो इसके लिए गाँव के जिम्मेदार और प्रतिष्ठित लोगों को कुछ शरीरश्रम का काम करना होगा। अतः वे सभी इस प्रकार के कामों में भाग लेंगे।

रोज लगभग ३ घण्टा काम और ३ घण्टा पढ़ाई का समय माने तो प्रातः साढ़े से ग्यारह और दोपहर बाद दो से पाँच का समय-क्रम रखना ठीक होगा। प्रधान शिक्षक कृषि-विज्ञान का स्नातक हो तो उत्तम होगा। विद्यालय की गोष्ठी→

नयी खेती में नया पूँजीवाद

यह सही है कि अगर छोटे किसान के हाथ पानी आ जाय तो वह अपनी स्थिति काफी सुधार सकता है। ३-४ एकड़ भूमि के किसान के लिए सिर्फ एक कुएँ का सवाल है, बशर्ते उसकी भूमि इकट्ठा हो। भूमि और पानी के साथ-साथ पूंजी का भी सवाल है। नयी खेती इतनी खर्चीली है कि इसमें ऋण के बिना कोई छोटा किसान आगे नहीं बढ़ सकता।

हमारे देश में अधिकांश किसान अनार्थिक जोतवाले हैं। उनके लिए ऋण क्या करेगा, और नया विज्ञान क्या करेगा? चौथी पंचवर्षीय योजना ने माना है कि अनार्थिक जोतवाले किसान वस्तुत: भूमिहीनों की कोटि में हैं। यह डर है कि अगर हमारी खेती का विकास पूंजीवादी ढंग से ही होता गया, जैसा आज हो रहा है, तो कुछ ही दिनों में ये भूमिहीनों की श्रेणी के किसान भूमि का अपना छोटा टुकड़ा भी खो देंगे और पूर्णतः भूमिहीन हो जायेंगे।

नयी खेती सघन खेती है। उसमें भूमि और मनुष्य-शक्ति दोनों का सघन इस्तेमाल होता है। साथ ही यह भी होता है कि उसमें यंत्रों का इस्तेमाल क्रमश: बढ़ता जाता है और मनुष्य-शक्ति का इस्तेमाल घटता जाता है। अब तक का अनुभव, दूसरे देशों में और इस देश में भी यही है कि अन्त में खेती में तकनीकी विकास के कारण रोजगार घटेगा, बढ़ेगा नहीं। परिवार का काम बढ़ेगा, जिन मजदूरों को काम मिलेगा उनकी मजदूरी भी बढ़ेगी, लेकिन खेती में काम न पानेवालों की संख्या भी बढ़ेगी। यह अनिवार्य परिणाम है भूमि के निजी स्वामित्व के साथ चलनेवाली पूंजीवादी खेती का। इसलिए हमें समझ लेना चाहिए कि एक ओर हम सामन्तवादी ढांचे को तोड़कर विषमता को मिटाना चाहते हैं तो दूसरी ओर पूंजीवादी शक्तियों को छूट देकर नयी विषमता पैदा कर रहे हैं। यहीं यह प्रश्न पैदा होता है कि क्या भूमि पर सीलिंग लगानी चाहिए और सीलिंग के ऊपर की भूमि भूमिहीनों और छोटे किसानों में बाँट देनी चाहिए?

सीलिंग की मांग के दो मुख्य कारण हैं। एक तो हमारे खेतिहर देश में भूमि पर दबाव यों ही बहुत है, दूसरे जो भूमि है उसका वितरण बहुत असमान है। १९६०-६१ में स्थिति यह थी कि देश में लगभग ३६ प्र० श० ग्रामीणों के पास या तो अपनी खेती बिलकुल नहीं थी या ½ एकड़ से कम की खेती थी। ५८ प्र० श० परिवार भूमिहीन और २·५ एकड़ से कम जमीनवाले थे। इन ५८ प्र०श० परिवारों के पास देश की खेती की भूमि का मात्र ७ प्र० श० था। दूसरी ओर लगभग २ प्र० श० परिवारों के पास ३० एकड़ से अधिक भूमि थी, जो कुल भूमि का २३ प्र० श० था।

यह पूरे देश का चित्र है। अलग-अलग राज्यों का चित्र समान नहीं है। १९६०-६१ में केरल में ५४ प्र० श० ग्रामीण परिवार भूमिहीन थे या उनके पास आधा एकड़ से कम भूमि थी। ८५ प्र०श० परिवार भूमिहीन और २·५ एकड़ से नीचे थे। उनके पास टोटल भूमि का ३१ प्र०श० भूमि थी। दूसरी ओर ०·७२ प्र० श०—(१ प्र० श० भी नहीं) परिवारों के पास १५ एकड़ या इससे अधिक भूमि थी, जो कुल भूमि का १५ प्र० श० थी। केवल १ प्र० श० परिवारों के पास १२·५ एकड़ या अधिक भूमि थी। जो उनके पास टोटल भूमि का १८ प्र० श० भूमि थी। लगभग यही हाल तमिलनाडु का भी था।

पंजाब-हरियाणा की यह स्थिति थी। ४५ प्र० श० से अधिक ग्रामीण परिवार भूमिहीन और ½ एकड़ से कम भूमिवाले थे। ५७ प्र० श० लोग भूमिहीन या २½ एकड़ की सीमा के नीचे थे, लेकिन उनके पास कुल भूमि का केवल पौने तीन प्र० श० ही था। केवल ४ प्र० श० परिवारों के पास २५ एकड़ या उससे अधिक भूमि थी। उनके पास कुल भूमि का २७ प्र० श० भूमि थी।

बिहार में कुल लगभग ८५ लाख खेतिहर परिवार हैं जिनमें लगभग २२ लाख की अपनी कोई खेती नहीं है। १४ लाख ½ एकड़ से नीचे हैं। ११ लाख एक एकड़ से नीचे हैं, और २० लाख २½ एकड़ से नीचे। १५ एकड़ से ऊपर

→जमीन हो जहाँ प्रायोगिक खेती होगी। बाकी सामान्यतः सभी किसानों के खेतों में वैज्ञानिक खेती बालक-बालिकाएँ करेंगी। शिक्षक इन कामों में अगुआ होंगे और अपने काम के द्वारा अधिक सिखायेंगे। वे शासकीय लोगों का भी अधिक सहयोग प्राप्त करेंगे। साधन, औजार आदि ग्रामकोष और अन्य स्रोतों से प्राप्त करने होंगे।

बच्चे जो विषय लेंगे और जो जो कार्य करेंगे वे तुरन्त घर-गाँव में रोजाना के व्यवहार में लायेंगे। इस प्रकार से एक नये समाज की नींवें डाली जायेंगी। इससे आशा की जाती है कि पुराने समाज में भी नये मूल्य दाखिल होंगे।

खेती, गोपालन, कताई-बुनाई, तेल-घानी, साबुन-उद्योग, मकान, मार्ग-निर्माण आदि के साथ-साथ और उसके माध्यम से भाषा, गणित, विज्ञान आदि का गहरा और व्यापक दोनों प्रकार का ज्ञान बालक को दिया जा सकेगा। यह अत्यन्त सरल और व्यावहारिक है। मानव-जीवन के विकास और उन्नति की सभी प्रवृत्तियाँ शिक्षाक्रम में आनी चाहिए। गांधीजी ने कहा था कि सच्ची शिक्षा राष्ट्र की सभी समस्याओं का समाधान और संकटों का मुकाबिला करना सिखाती है।

जागृत ग्रामसभाओं के साथ आचार्य-कुल और शान्तिसेना मिलकर गाँव-गाँव में ऐसे ग्राम-विश्वविद्यालय अथवा ग्राम-गुरुकुलों की बुनियादें डालें, इसका यही उपयुक्त अवसर है।●

और २० एकड़ से नीचेवाले परिवारों की संख्या १ लाख से कुछ ऊपर है।

उत्तर प्रदेश में कुल लगभग १ करोड़ ३४ लाख खेतिहर परिवार हैं जिनमें लगभग २१ लाख की अपनी खेती नहीं है। ८ लाख आधा एकड़ से कम हैं। इतने ही १ एकड़ से नीचे हैं, और लगभग २० लाख २½ एकड़ से नीचे। १५ से ३० एकड़ के बीच लगभग २½ लाख परिवार हैं।

"पूरे देश में विषमता का यही हाल है। भूमि का बड़ा भाग थोड़े लोगों के हाथ में है, और अधिकांश खेतिहर परिवारों के पास छोटे टुकड़े हैं, या वे भूमिहीन हैं। ये भूमिहीन और अनार्थिक जोतवाले ही हमारे खेतिहर ढांचे की मुख्य समस्या हैं। ऐसे लोगों के लिए पूरा काम नहीं है। इनकी खेती का क्या विकास होगा? जनसंख्या बढ़ती जायगी और इनकी खेती जहाँ-की-तहाँ रह जायगी।

इस समस्या के समाधान की दिशा क्या है? एक उपाय यह है कि भूमि का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय और खेती सामूहिक हो। लेकिन हमारे देश में यह सम्भव नहीं है। न सरकार वैसी है, न किसान इसके लिए तैयार हो सकता है। दूसरा उपाय यह है कि सीलिंग लगाकर भूमि निकाली जाय और जो भूमि निकले उसे अनार्थिक जोतवालों को या भूमिहीनों को या सहकारी खेती के लिए दी जाय। लेकिन योजना-आयोग ने इस उपाय को भी व्यावहारिक नहीं माना है। इसमें कई बातें हैं। इतनी कठोर सीलिंग और भूमि का वितरण राजनैतिक दृष्टि से बहुत मुश्किल है। इसके अलावा जो भूमि निकलेगी वह गाँव भर में टुकड़ों में बँटी होगी जिसके कारण न सामूहिक खेती सम्भव होगी, न सरकार द्वारा प्रबन्ध ही हो सकेगा।

योजना-आयोग ने 'सहकारी ग्रामीण व्यवस्था' की बात कही है। उसने माना है कि कृषि और व्यवस्था की दृष्टि से

(शेष पृष्ठ १५१ पर)

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन : कुछ निष्कर्ष

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन की रिपोर्ट पिछले अंक में दी गयी थी। जैसा कि रिपोर्ट में लिखा गया था कि ४ टोलियों में बँटकर प्रतिनिधियों ने विभिन्न विषयों पर चर्चा की, उस चर्चा को टोलियों एवं विषयों के अनुसार हम यहाँ दे रहे हैं।

पहली गोष्ठी

ग्रामदान-पुष्टि

१. जो ग्रामदान में नहीं शरीक हैं उन्हें शरीक करने के उपाय

(क) जो परिवार अभी ग्रामदान से बाहर हैं उन्हें शरीक करने के लिए जिला और राज्य-स्तर के कुछ खास लोगों के प्रभाव का उपयोग किया जाय।

(ख) जो लोग शरीक हैं वे अपना बीघा-कट्ठा और ग्रामकोष का हिस्सा फौरन निकाल दें। उनके ऐसा करने का अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

(ग) जो शरीक हैं वे दस्तखत करके, जो नहीं शरीक हैं उनसे अनुरोध करें और उनके ऊपर प्रेम और सत्ता दोनों का दबाव डालें।

गोष्ठी ने यह भी सुझाया था कि न शरीक होनेवालों का सामाजिक बहिष्कार किया जाय तथा मजदूर उनके साथ असहयोग भी करें। इन दोनों सुझावों को खुले अधिवेशन ने अस्वीकार कर दिया। उसकी राय हुई कि ऐसा करने से कटुता बढ़ेगी और गाँव की एकता टूटेगी।

२. बीघा-कट्ठा-वितरण :

दाता जो भूमि बीघा-कट्ठा में दें, उसका वितरण ग्रामस्वराज्य-सभा में हो। लेकिन अगर दाता किसी खास भूमिहीन को अपनी भूमि देना चाहता हो तो सभा उसकी इच्छा का ध्यान रखे।

३. कानूनी-पुष्टि :

इसके लिए कागज तैयार करने की जिम्मेदारी ग्रामस्वराज्य-सभा की है।

४. ग्रामस्वराज्य-सभा के पदाधिकारियों को ग्रामदान के अधिनियम तथा विनियम आदि की पूरी जानकारी दी जाय।

दूसरी गोष्ठी

ग्रामस्वराज्य-सभा : संगठन और कर्तव्य

१. गठन

ग्रामदान के बाद गाँव की जिस बैठक में ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन हो उसमें ग्रामदान में शामिल परिवारों में से कम-से-कम तीन-चौथाई परिवारों में से अधिक नहीं तो एक व्यक्ति को अवश्य आना चाहिए। कोशिश की जाय कि इस बैठक में अधिक-से-अधिक स्त्रियाँ शरीक हों। लेकिन अगर पहले दिन इतनी उपस्थिति न हो तो दूसरे दिन ५० प्रतिशत उपस्थिति से सभा बना ली जाय।

२. पदाधिकारी

(क) पदाधिकारियों का चुनाव सर्वसम्मति से ही हो। जो व्यक्ति शामिल नहीं हैं उन्हें भी चुना जा सकता है, लेकिन वे पद लेने के पहले शामिल हो जायँ।

(ख) जो राजनीति में सक्रिय हैं उन्हें लेकर सम्मेलन में मतभेद रहा। एक राय थी कि अगर सभा चाहे तो उन्हें भी सर्वसम्मति से चुन सकती है। इस पर भरोसा किया जाय कि वे गाँव में सभा की मर्यादा को मानेंगे और ऐसा कोई काम नहीं करेंगे जिससे गाँव की एकता टूटे। लेकिन दूसरी राय यह थी कि चुने जाने के बाद ऐसे लोग पहले अपने दल से इस्तीफा दे दें तभी उन्हें पद की जिम्मेदारी सौंपी जाय। अन्त में सबकी राय रही कि इस प्रश्न को हर ग्रामस्वराज्य-सभा अपने ढंग से हल करे जैसा कि अभी हो रहा है। एक साल के अनुभव के बाद अगले सम्मेलन में इस प्रश्न पर विचार किया जायगा।

डेढ़ लाख तक पहुँच गयी है और वहाँ के एक हजार ग्रेजुएटों में आदर्शवादी युवक दो-चार भी नहीं निकलेंगे। पर धीरेनभाई निराश नहीं, वे अपना काम करते ही जाते हैं।

उन्होंने एक वैचारिक बिरादरी का समर्थन किया है, जहाँ सहचिन्तन, सह-अध्ययन तथा सहशिक्षण से कार्यकर्ता विचार-परिवर्तन करते रहें। सर्व सेवा संघ ने कुछ प्रयोग इस दिशा में किये भी थे, जिनके प्रकाशित विवरण बड़े प्रेरक तथा उत्साहप्रद सिद्ध हुए। धीरेनभाई का यह ग्रंथ भी सर्व सेवा संघ ने ही छापा है। हर देश की स्थिति भिन्न है और बकौल धीरेनभाई किसी रेडीमेड फारमूला—या निश्चित नुस्खे का निर्यात किसी दूसरे मुल्क को नहीं किया जा सकता। फिर भी हमें दूसरे देशों की अनुभूतियों को जान लेने की जरूरत है। उदाहरण के लिए प्रत्येक सर्वोदयी कार्यकर्ता को अमेरिका के महान् कार्यकर्ता विलियम लायड गैरीसन के जीवन तथा कार्य की जानकारी होनी ही चाहिए। गैरीसन ने सन् १८३८ में यानी बापू के जन्म के भी ३१ वर्ष पहले नॉन रेसिस्टेण्ट (अहिंसात्मक प्रतिरोध) नामक पत्र निकाला था। सार्वजनिक रूप से अहिंसा का प्रयोग आधुनिक युग में शायद सर्व प्रथम उन्होंने किया था। टाल्सटाय ने भी उनको अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की थी। टाल्सटाय ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया था कि उनसे पचास वर्ष पहले गैरीसन ने अहिंसा का समर्थन किया था और बापू भी उनके प्रशंसक थे। मि० वेंडलवैक द्वारा प्रदत्त चार जिल्दों की गैरीसन-जीवनी उनके पास थी और उन्होंने वे जिल्दें मुझे भिजवायी भी थीं।

अहिंसात्मक प्रतिरोध के जो-जो भी प्रयोग विदेशों में हो रहे हों या हुए हों उनका ब्यौरा हमारे पास होना ही चाहिए। यह भी सम्भव है कि जिन बातों को हम लोग यहाँ सफलतापूर्वक न कर सकें, हमारे विदेशी भाई उन्हें कर दिखायें। स्व० लुई फिशर ने इस ओर अपने एक लेख में इशारा किया था। महात्माओं तथा ऋषियों को उत्पन्न करने का ठीका केवल भारत ने ही नहीं ले रखा है।

अमेरिका में बोरसोदी नामक एक चिन्तक ने विकेन्द्रीकरण पर जो महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान किये हैं उनकी जानकारी हिन्दी भाषा-भाषियों में बहुत कम लोगों को होगी। गुजरात के वर्तमान राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायणजी ने हमें २३ वर्ष पूर्व बोरसोदी के ग्रन्थों के नाम तथा पते भेजे थे और श्री रविशंकर रावल (गुजराती कलाकार) ने हमें बतलाया था कि बोरसोदी ने कुछ दिन पटेल विश्वविद्यालय में काम भी किया था और उनका एक ग्रन्थ भी वहाँ से प्रकाशित हुआ था।

क्रान्ति : प्रयोग और चिंतन

लेखक—धीरेन्द्र मजूमदार
प्रकाशक, सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१
मूल्य छह रुपये।

आचार्य विनोबाजी की यह शिकायत सच है कि हमारे कार्यकर्ता स्वाध्याय की ओर विशेष ध्यान नहीं देते। आचार्य विनोबाजी तथा श्री धीरेनभाई के प्रयोगों को मजाक में नहीं उड़ाया जा सकता। हमारे देश में सस्ती आलोचना (चीप क्रिटीसिज्म) की एक बदआदत पड़ गयी है। पर इसके मानी ये नहीं हैं कि हम लोग सही और ईमानदारी से की हुई आलोचना को तिलाञ्जलि दे दें।

इस ग्रन्थ को अभी हमने यत्र-तत्र ही पढ़ा है और फिलहाल अपने प्रारम्भिक विचार ही हम दे सकते हैं।

हमारा यह ख्याल है कि धीरेनभाई सूत्रों को इतना तानते हैं कि उनके टूट जाने का खतरा रहता है। तंत्र, निधि तथा संगठन से सर्वथा मुक्ति मिलना पूर्ण सदाचारी के समान एक लक्ष्य ही रह सकता है, जिसकी प्राप्ति सम्भव नहीं।

हमें यह शक है कि अपने साथी कार्यकर्ताओं से धीरेनभाई जरूरत से ज्यादा उम्मीद रखते हैं। कार्यकर्ता आखिर हाड़-मांस के जीव हैं और उनकी कुछ आवश्यकताएँ भी हैं जिनकी पूर्ति होनी ही चाहिए।

एक बात हम न भूलें। रूस में टु द पेपुल (जनता की ओर) नामक जो आन्दोलन हुआ था उसकी परिणति खूनी क्रान्ति में हुई। यदि अहिंसात्मक प्रयोग करनेवाले युवक नाकामयाब हुए तो वे हिंसा का आश्रय लेने को मजबूर हो जायेंगे, पर इसकी जिम्मेदारी धीरेनभाई तथा उनके साथी संगियों पर न होकर जनता तथा सरकारों पर ही होगी।

वर्तमान अनाचारों तथा भ्रष्टाचारों को देखकर अनेक व्यक्ति इस नतीजे पर पहुँच चुके हैं कि साम्यवाद से ही उनका निराकरण हो सकता है। मैं भी ईमानदारी के साथ यह स्वीकार कर लेना चाहता हूँ कि मैं भी दो वर्ष पहले इसी परिणाम पर पहुँचा था। हिंसा-अहिंसा, केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण के शुष्क वाद-विवादों का युग कभी का बीत चुका है पर प्रयोगों का युग निरन्तर चलता ही रहेगा। इस दृष्टि से श्रद्धेय धीरेनभाई का ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

सुप्रसिद्ध फिल्म एक्टर श्री पृथ्वीराज कपूर ने सन् १९५२ में हमें एक कविता सुनायी थी : "मेरी जिन्दगी एक मुसलसिल सफर है जो मंजिल पै पहुँचे तो मंजिल बढ़ा दी।" श्री धीरेनभाई भी उसी प्रकार के निरन्तर यात्री हैं और देश के अग्रगण्य चिन्तकों में उनकी पोजीशन काफी ऊँची है।

(पृष्ठ ३०९ का शेष)

एक इकाई हो। दूसरी बात यह है कि जिसकी भूमि हो उसे उसके भाग के अलावा स्वामित्व के आधार पर एक रकम (ओनरशिप डिविडेण्ड) मिले। योजना-आयोग ने आखिर यही आशा रखी है कि 'सहकारी ग्रामीण व्यवस्था' की पद्धति का विकास होगा जिसके अन्तर्गत भूमिहीन मजदूरों की हालत सुधरेगी और उन्हें ज्यादा रोजगार मिलेगा। लेकिन इस दिशा में आज तक कोई काम नहीं हुआ है। यह भी स्पष्ट नहीं होता कि इस 'सहकारी ग्रामीण व्यवस्था' और सामूहिक खेती में कैसा और कितना अन्तर है। देखने में दोनों में बहुत समानता है। कुछ भी हो गाँव के लिए आयोग के सामने इससे भिन्न दूसरी कोई योजना नहीं रही है। उसने सलाह दी है कि यह योजना उसी गाँव में लागू की जाय जिसमें कम-से-कम २/३ भू-स्वामी या उनके किसान (टेनेण्ट) तैयार हों बशर्ते उनके पास गाँव में जोत की भूमि का आधा हो। आयोग ने इस तरह का कानून बनाने की भी सलाह दी है। जब तक ऐसा न हो तब तक के लिए आयोग की सलाह है कि गाँव की खेती के दो भाग किये जायें। एक निजी रजिस्टर्ड फार्मों का, और दूसरा रजिस्टर्ड सेविंग्ज सहकारी समितियों का। एक निर्धारित सीमा के ऊपर की जोत का रूप 'रजिस्टर्ड फार्म' का हो और जो जोतें निर्धारित सीमा के नीचे हों उनको लेकर 'कोऑपरेटिव फार्म' संगठित किये जायें। आयोग की दृष्टि में खेती के सहायक उद्योग के रूप में संगठित करने का इससे बढ़कर दूसरा उपाय नहीं है।

यह योजना है जिसे आयोग ने गाँवों के पुनर्गठन के लिए देश के सामने प्रस्तुत किया है। लेकिन इस दिशा में अभी तक एक कदम भी नहीं उठा है।

अनुवादक : रामसूर्ति

<u>शान्ति-समाचार</u>

ग्रेट ब्रिटेन फ्रेण्ड्स का वक्तव्य

बहुत सारे अमेरिकन सिपाही वियतनाम के युद्ध के बाद इस फैसले पर पहुँचे हैं कि वे अब युद्ध में भाग नहीं ले सकते। इनमें से कुछ ने सेना छोड़ने का निश्चय किया है और इसके कारण उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयों को सहन करेंगे। इनमें से कुछ पनाह लेने ब्रिटेन आ गये हैं। ऐसा निश्चय लेने के विभिन्न कारण हो सकते हैं, परन्तु युद्ध के स्वरूप पर दुख, अन्धाधुन्ध हत्याएँ, वियतनामी जीवन और संस्कृति को भ्रष्ट करने में अमेरिकी सेना का हाथ और वियतनाम में अमेरिकी कार्रवाई के राजनैतिक तर्क पर अविश्वास इत्यादि मुख्य कारण हैं।

अगर अवसर दिया गया तो ये लोग ब्रिटिश-समाज में एक अच्छा और लाभदायक योग प्रदान कर सकेंगे। परन्तु ब्रिटेन में उन्हें यह अवसर नहीं दिया जाता। नाटो संधि के विजिटिंग फोर्सेज एक्ट के अनुसार युद्ध छोड़कर भागनेवालों को ब्रिटिश पुलिस गिरफ्तार करके उन्हें अमेरिकी सेना के हवाले कर सकती है।

ब्रिटेन में फ्रेण्ड्स का ख्याल है कि उन्हें यहाँ शरण देने से इनकार न किया जाय। भूतकाल में उस देश ने बहुत सारे लोगों को शरण दिया है। इसे यही परम्परा कायम रखनी चाहिए। इसलिए हम सरकार से यह अपील करते हैं कि युद्ध के इन भगोड़ों को शरण दी जाय ताकि वे राजनैतिक पीड़ा से बच सकें। नाटो-संधि के एस. ओ. एफ. ए. एग्रीमेंट और विजिटिंग फोर्सेज एक्ट में तुरन्त संशोधन किया जाय।

लन्दन के गैरेजेज डिपार्टमेंट स्टोर के प्रदर्शनी हॉल में १२ जनवरी से ९ फरवरी तक प्रदर्शनी हुई। प्रदर्शनी का विषय था 'परिवर्तन की आवाजें'। यह प्रदर्शनी कमेटी फॉर एक्शन ग्रुप, कश्मिरान एक्शन, फेलोशिप ऑफ रिकन्सिलिएशन, इण्टरनेशनल वॉलण्टियर सर्विस, पीस प्लेज यूनियन की ओर से लगायी गयी।

फ्रान्स

दस शान्तिवादी जिनमें से १२ मील दूर मोण्ट वर्दन की अणुशक्ति के हेडक्वार्टर में घुस गये। यह हेडक्वार्टर अभी बन रहा है। वहाँ पर जब सुबह में काम शुरू हुआ तो ये लोग मजदूर और कारीगर बनकर अन्दर चले गये। उनके पास टेपरिकार्डर और कैमरा था। वे पहले कॉरपोरेशन रूम में गये फिर कम्प्यूटर रूम में जहाँ उन्होंने एक बड़ा झण्डा फहरा दिया, जिस पर लिखा था 'हथियार बेचे न जायें, अणुशक्ति के हेडक्वार्टर न बनाये जायें।'

कुछ देर बाद वे दसों व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये।

उत्तरी आयरलैण्ड

उत्तरी आयरलैण्ड में ब्रिटिश सैनिकों के बीच पर्चे बाँटने का काम जारी है। २९ जनवरी को १२ लोगों ने बेलफास्ट में सैनिकों के बीच पर्चा बाँटने का काम किया। जिन सैनिकों से भेंट हुई उनमें से अधिकतर उत्तरी आयरलैण्ड में रहना नहीं चाहते थे। अर्थात् सैनिक महारानी की सेना का भाग रहना नहीं चाहते थे। जिन सैनिकों में पर्चियाँ बाँटी गयीं उनसे सार्थक बातें भी हुईं। जिन सैनिकों से हमने भेंट की, उनमें से एक पर्चा के सन्देश से पूरी तरह सहमत था। बातचीत के बीच सैनिक अनुशासन और देशों के सम्बन्ध में भयानक बातें कही गयीं। हमारी कार्रवाइयों की आलोचना भी हुई, परन्तु अधिकतर लोगों की सहानुभूति हमारे साथ थी। साथ-ही-साथ परिस्थिति के प्रति लोगों की निराशा हो रही थी। भारी संख्या कम होने के कारण हम केवल उत्तरी आयरलैण्ड के २०-३० हजार लोगों तक पहुँच सके।

—'डब्लू॰ आर॰ आई॰,
न्यूजलेटर, फरवरी ४, '७२ से

भूदान-यज्ञ २०-३-'७२ लाइसेन्स नं० प ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

आन्दोलन के समाचार

झाझा प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा की बैठक

४ मार्च को झाझा में झाझा प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा की त्रैमासिक बैठक हुई। सभा में चुनाव, चन्दे-वसूली, आफिस-सञ्चालन और संगठन को मजबूत बनाने पर विचार किया गया, तथा यह भी तय किया गया कि १४ मई के आस-पास *एक ग्रामस्वराज्य सम्मेलन किया जाय।*

रोहतक में ग्रामस्वराज्य सम्मेलन

२७ फरवरी को रोहतक जिला (पंजाब) के कासण्डी ग्राम में एक ग्राम-स्वराज्य सम्मेलन किया गया। इसकी पूरी व्यवस्था कासण्डी ग्रामसभा के हाथों में थी। सम्मेलन में यह संकल्प किया गया कि अपनी तहसील के सभी गाँवों में ग्रामसभा का गठन किया जायगा।

बिरौल में पुष्टि-कार्य

बिरौल, दरभंगा (बिहार) से श्री देवानन्द मिश्र लिखते हैं कि बिरौल प्रखण्ड में ५२ ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। २६ गाँव के कागज पुष्टि हेतु दाखिल हो गये हैं। तीन गाँवों का गजट हो चुका है एवं *प्रखण्ड-ग्रामस्वराज्य समिति का भी* गठन हो चुका है।

समस्तीपुर में पुष्टि-कार्य

समस्तीपुर अनुमण्डलीय ग्रामस्वराज्य समिति, वैनी, दरभंगा से श्री बशीर खाँ आलम लिखते हैं कि पूरे अनुमण्डल में ६९ गाँवों की पुष्टि का गजट हो चुका है। उनमें से इक्कीस गाँवों में कानूनी ग्रामसभा बन चुकी है। १२ गाँवों में २५ बीघा १२ कट्ठा २ धुर जमीन का वितरण हो चुका है। यहाँ चल रहे सुधारत कैम्प में जाकर भूदान में मिली जमीन का खाता खोला जा चुका है।

२,१०२-२५ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। १० प्रखण्डों में तरुण-शान्तिसेना का शिविर किया गया।

पूर्णिया-पदयात्रा

३० जनवरी '७२ को पूर्णिया जिले में एक पदयात्रा हुई जो बलिया गाँव से प्रारम्भ होकर कुरसैला में समाप्त हुई। *पदयात्रा की अवधि में दो नये ग्रामसभाओं* का गठन हुआ। १९ एकड़ जमीन भूमिहीनों में वितरित की गयी। भूदान-यज्ञ के ३ और गाँव की आवाज के ८ ग्राहक बनाये गये और ५० गुण्डी सूत सूताञ्जलि में प्राप्त हुई।

तेरहवाँ अखिल भारत तरुण-शान्ति-सेना शिविर तथा तृतीय सम्मेलन

तरुण-शान्तिसेना का तेरहवाँ अखिल भारतीय शिविर ग्रीष्मकालीन छुट्टियों में १६ मई से २७ मई तक मैसूर राज्य में कङोली नामक स्थान पर आयोजित किया गया है। उसी स्थान पर दिनांक २८, २९ और ३० मई को तरुण-शान्तिसेना का तृतीय राष्ट्रीय सम्मेलन भी सम्पन्न होगा।

शिविर के लिए *आवेदन-पत्र* छप गये हैं, जो निम्न पते पर माँग करने से इच्छुक लोगों को भेजे जायँगे। आवेदन-पत्र भरकर कार्यालय में भेजने की अन्तिम तिथि है ३० मार्च १९७२। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

संचालक, अ० भा० तरुण-शान्तिसेना शिविर
राजघाट, वाराणसी-१ (उत्तर प्रदेश)

श्री जयप्रकाशजी का स्वास्थ्य

प्राप्त जानकारी के अनुसार श्री जयप्रकाशजी के स्वास्थ्य की जाँच करने के बाद दिल्ली के इण्डियन स्कूल ऑफ ट्रापिकल मेडिसिन के चिकित्सकों ने बताया है कि अब कोई चिन्ता की बात नहीं है, और वे अपने कार्य में लग सकते हैं। श्री जयप्रकाशजी स्वस्थ अनुभव करने लगे हैं और तेजी के साथ एक घण्टा टहलते भी हैं।

वर्ष : १८ अंक : २५

सोमवार, २० मार्च, १९७२

सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

★

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
भूदान-यज्ञ
वर्ष : १८, अंक : २६; २७ मार्च, १९७२

वाराणसी नगर सर्वोदय-मण्डल के कार्य

(फरवरी १९७१ से जनवरी १९७२)

२० फरवरी १९७१ को सर्वोदय विचारक आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में वाराणसी नगर के लोकसेवकों की एक बैठक गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के कार्यालय में रखी गयी थी और सर्वसम्मति से श्री श्यामबहादुर 'नम्र' की अध्यक्षता में नगर-सर्वोदय-मण्डल का गठन हुआ था। नगर में कुल ७३ लोकसेवकों ने लोकसेवक निष्ठा-पत्र भरा था।

मतदाता-शिक्षण

नगर-सर्वोदय-मण्डल ने वाराणसी मतदाता-शिक्षण का संगठित प्रयास किया। २१ फरवरी '७१ को टाउनहॉल में एक सर्व-दलीय-मंच का आयोजन हुआ जिसमें ८ उम्मीदवारों ने अपनी चुनाव-नीतियों का स्पष्टीकरण किया।

मतदाता-शिक्षण सम्बन्धी ३४ हजार पर्चे छपाकर पूरे शहर में वितरित किये गये। ६ दिन नगर में बैनर और प्लेकार्ड के साथ मौन जुलूस निकाले गये।

साम्प्रदायिक सद्भाव

नगर में होली और मुहर्रम के समय साम्प्रदायिक तनाव के अवसर पर दोनों सम्प्रदायों के बीच सद्भावना का वातावरण बनाने का कार्य मण्डल ने किया।

बंगला देश के मुक्ति-संघर्ष में सहयोग

बंगला देश के स्वाधीनता-संग्राम के समर्थन में २८ मार्च '७१ को बेनियाबाग के मैदान में सर्वोदय विचारक आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक सर्वदलीय आमसभा में एक प्रस्ताव में बंगला देश में नरसंहार बन्द करने तथा बंगला देश को मान्यता देने की मांग की गयी थी। बंगला देश के पक्ष में जन-भावना जागृत करने तथा उसके तथ्यों की सही जानकारी जन-जन तक पहुँचाने की दृष्टि से नगर-सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री श्यामबहादुर 'नम्र' द्वारा लिखित एक लघु पुस्तिका 'बंगला देश का संघर्ष' का प्रकाशन मण्डल की ओर से किया गया। पुस्तक तथा सहायता कोष बिल्ले की बिक्री से १,३८२.२२ रु० प्राप्त हुए और इसमें से १०६२.२२ रु० बंगला देश की मदद के लिए सर्व सेवा संघ को बंगला देश सहायता समिति के कार्य-हेतु अ० भा० शान्तिसेना मण्डल को दिया गया। उत्तर प्रदेश नागरिक परिषद ने इस पुस्तिका के ५ हजार प्रतियाँ उर्दू भाषा में प्रकाशित कीं तथा हिन्दी संस्करण की दस-दस प्रतियाँ प्रत्येक जिले में जिलाधीशों के पास भिजवायीं। बाद में नगर की बंगला देश-सहायता-समिति ने भी इसका संशोधित संस्करण प्रकाशित किया।

बंगला देश के शरणार्थियों के लिए वस्त्र-संग्रह करने की बात तय की गयी। वस्त्र-संग्रह के कार्य के लिए नागरिकों की एक समिति बंगला देश-सहायता-समिति के नाम से श्री रोहित मेहता की अध्यक्षता में बनी। श्री बंशीधर श्रीवास्तव समिति मंत्री मनोनीत किये गये। इस समिति ने लगभग १५,००० रु० मूल्य के वस्त्र व बर्तन आदि एकत्रित किये।

अखिल भारत शान्तिसेना मण्डल के तत्त्वावधान में आयोजित बंगला देश दिल्ली विश्व-विवेक जागरण पदयात्रा टोली के स्वागत के लिए मण्डल ने नगर-बंगला देश-सहायता-समिति के साथ एक स्वागत समिति वाराणसी के सभी राजनैतिक, *सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिष्ठानों* के सहयोग से बनायी थी।

११ दिसम्बर को *पदयात्रा टोली* का साधना केन्द्र, राजघाट में स्वागत हुआ और २ बजे टाउनहॉल के मैदान में विराट सभा आयोजित की गयी।

राष्ट्रीय मोर्चा सहरसा

सर्व सेवा संघ की मांग तथा विनोबा के निर्देश के अनुसार श्री अलस-भाई उस क्षेत्र में अपना सम्पूर्ण समय देकर काम कर रहे हैं। नगर सर्वोदय मण्डल ने श्री अलसभाई को १० रु० मासिक निर्वाह-व्यय के रूप में देने का निर्णय किया है।

बेहड़ा काण्ड

बेहड़ा में हरिजनों पर हुए अत्याचारों की खबर पाकर मण्डल के अध्यक्ष *'श्री श्यामबहादुर नम्र'* और मंत्री श्री मोहनलाल शास्त्री (अध्यक्ष, जिला हरिजन सेवक संघ) ने उत्तर प्रदेश हरिजन सेवक संघ के मंत्री श्री पालीवाल के साथ घटना स्थल पर जाकर स्थिति का निरीक्षण किया और लगभग ५०० रु० के वस्त्र इकट्ठे करके जिला हरिजन सेवक संघ के तत्त्वावधान में पीड़ित हरिजनों में बाँटे गये।

नगर सर्वोदय मण्डल के तत्त्वावधान में सभी गांधीवादी संस्थाओं के सहयोग से ३० जनवरी को शान्ति-दिवस के मौके पर बेनियाबाग के मैदान में गांधी चबूतरे के पास एक प्रार्थना-सभा का आयोजन हुआ, जिसमें नागरिकों ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

१२ फरवरी को रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से एक सभा का आयोजन किया गया जिसमें श्री बी० पी० कोइराला, निर्मला देशपाण्डे और श्री राममूर्तिजी विशेष रूप से शामिल हुए।

—मंत्री

आवश्यक सूचना

ग्रामदान-पुष्टि का पूरे देश में जहाँ भी काम हो रहा हो उसकी जानकारी उस क्षेत्र से सम्बन्धित व्यक्ति १० अप्रैल तक अ० भा० ग्रामस्वराज्य समिति, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१ के पते से भेजने की कृपा करें। सम्मेलन के अवसर पर इस समिति की ओर से एक रिपोर्ट तैयार करनी है, जिसके लिए पुष्टि-कार्य की जानकारी अनिवार्य है। पुष्टि-कार्य में क्या हो रहा है, कितना काम हुआ, क्या दिक्कतें आ रही हैं, और अपना कुछ सुझाव, लिखें।

—राममूर्ति

समाज-सेवक की भूमिका

—विनोबा

दुर्जन कौन : सज्जन कौन ?

प्रश्न : ग्रामसभा गाँव की जमीन का संरक्षण करेगी और इस प्रकार गाँव सुरक्षित रहेगा, हमारा यह कहना गाँववाले समझ सकते हैं और मान भी लेते हैं, लेकिन ग्रामीणों को शोषण करनेवाली संस्थाओं के साथ लड़ने में हम ग्रामीणों के सहायक नहीं बनते, उनकी यह शिकायत रहती है।

उत्तर : शोषण करनेवाली संस्थाएँ यानी कौन-सी संस्थाएँ ?

प्रश्न : व्यापारी, सरकार, राजनैतिक पक्ष, सेवा-संस्थाएँ।

उत्तर : व्यापारियों के साथ झगड़ने से कोई लाभ होगा नहीं। क्योंकि व्यापारी कर्जा वगैरह देते हैं, सरकार से वह मिलना सम्भव नहीं, इसलिए व्यापारियों से झगड़ने से कोई लाभ होनेवाला नहीं है। व्यापारियों से सहयोग करना चाहिए। आप समझते हैं कि व्यापारी लुटेरे हैं। लेकिन लुटेरे लोग सभी जगहों पर होते हैं, सर्वोदय में भी हो सकते हैं। सज्जन लोग जैसे और जगहों पर होते हैं, वैसे व्यापारियों में भी होते हैं। अगर हम प्रतिशत निकालें कि कुल व्यापारी कितने हैं और उनमें कितने प्रतिशत सज्जन हैं, वकील कुल कितने हैं और उनमें कितने प्रतिशत सज्जन हैं; डाक्टर, सरकारी नौकर कुल कितने और उनमें सज्जन कितने; सामान्य जनता कुल कितनी और उसमें कितने प्रतिशत सज्जन हैं, तो पता चलेगा कि जितने प्रमाण में सज्जन और जगहों पर हैं, उससे कम व्यापारियों में नहीं हैं। सामान्यतया माना जाता है कि सरकारी नौकर यानी घूस लेनेवाले; लेकिन घूस देनेवाले भी उतने ही गुनहगार हैं। इसलिए घूस देनेवालों के विरोध में खड़े रहेंगे, तो घूस लेनेवाले भी खतम हो जायेंगे। हर राजकीय पक्ष में सज्जन होते हैं। सज्जन सर्वत्र हैं, और किसी भी सज्जन का सहकार हम लेते हैं। अगर कोई दुर्जन माना जाता है, लेकिन हमारे विचार को मानता है, तो उसका भी सहकार हम लेंगे। शराब पीता है, लेकिन भूदान देता है, तो हम भूदान लेंगे। किसी भी मनुष्य पर दुर्जन का लेबुल (मार्का) हम चिपकायेंगे नहीं। कार्यकर्ताओं की संस्थाएँ तो आत्महत्या के लिए होती हैं। कोई भी कार्यकर्ता अपनी संस्था खड़ी करे और आत्महत्या कर ले, वे टिकनेवाली नहीं हैं।

प्रश्न : हम कार्यकर्ताओं की आस्था ग्रामीण जनता को आधार देनेवाली है यह अभी भी सिद्ध नहीं होता। इसलिए हमारा कहना वे समझते हैं, उन्हें वह जँचता भी है, लेकिन उससे उनकी मायूसी नहीं जाती।

उत्तर : कार्यकर्ताओं में दोष हों, तो उसका निराकरण होना चाहिए। अपने दोष कायम रखते हुए हमारे विचार का प्रचार हो, ऐसा हम मानेंगे तो वह शक्य नहीं। इसलिए प्रथम अपनी चित्तशुद्धि करेंगे, तभी विचार का प्रचार होगा।

हम किसके विरोधी ?

प्रश्न : हमारे आन्दोलन की यह कसौटी का समय है, क्योंकि लोकतंत्र का पार्लियामेंटरी (संसदीय) आधार अब टिकनेवाला नहीं है। ग्रामसभा का आधार ही लोकतंत्र को तारेगा। इसलिए किसी भी संसदीय कार्यक्रम में आस्था न रखते हुए ग्रामसभा का आधार ही हमें प्रस्तुत करना चाहिए। इसलिए हम संसदीय पद्धति के विरोध में हैं, जनता को इसका भान हमें कराना होगा।

उत्तर : राजनैतिक कार्यक्रमों में हमारी आस्था नहीं, लेकिन हम उसका विरोध नहीं करते हैं। हम जाहिर करते हैं कि जो राजनैतिक पक्षों के सदस्य हैं, उनमें कैसे-कैसे गुण होने चाहिए। यह समझने की बात है। हमारी जो शक्ति है, वह अहिंसा है और उसको हमने तीसरी शक्ति नाम दिया है जो हिंसा-शक्ति के विरोधी लेकिन दण्ड-शक्ति से भिन्न है। दण्ड-शक्ति के विरोधी नहीं, क्योंकि दण्ड-शक्ति मनुष्य के विकास का एक बहुत बड़ा कदम है। दण्ड-शक्ति में, जो संसद में होती है, एक बहुत बड़ा गुण है और उस गुण के कारण हम उसके विरोधी नहीं हैं; हम उससे भिन्न जरूर हैं क्योंकि हम एडवांस (आगे) हैं। कौन-सा गुण है वह ? वह मानती है कि हर मनुष्य सज्जन है, किसी पर चोरी या कत्ल का आक्षेप लगाया जाय, तो जिसने आक्षेप लगाया, उस पर सबूत पेश करने की जिम्मेदारी है, जिस पर आक्षेप लगाया गया है उस पर नहीं। (शो कॉज नोटिस के केसेस को छोड़ दें।) क्योंकि कानून ने मान लिया है कि सब सज्जन हैं, किसी की दुर्जनता किसी को सिद्ध करनी है, तो करे। कुछ कानून मनुस्मृति में मिलते हैं, कुछ बाइबिल—ओल्ड टेस्टामेंट में मिलते हैं। दोनों के साथ आज के कानून की तुलना करेंगे तो ध्यान में आयेगा कि आज का कानून बहुत एडवांस है। इसलिए हम दण्ड-शक्ति के विरोधी नहीं, लेकिन उससे एडवांस हैं इसलिए उससे भिन्न हैं।

प्रश्न : ग्रामसभा का ग्रामदान से संसदीय पद्धति के बारे में ही हमारी आस्था प्रकट होती हो, तो मैं समझता हूँ कि हमारे आन्दोलन की कुछ भी निष्पत्ति निकलेगी नहीं। मेरी यह पक्की धारणा बन गयी है।

उत्तर : मैंने अभी जो मुद्दा कहा वह ध्यान में लेना चाहिए कि संसदीय पद्धति अन्यों से श्रेष्ठ है और वह हमारे अधिक नजदीक है। ऐसी स्थिति में उसका विरोध करना यानी जो नजदीक है, उसको दूर करने जैसा ही होगा। हम पार्लियामेण्टरी पद्धति के विरोधी नहीं, हम फासिज्म के विरोधी हैं, हम कम्यु-

(शेष पृष्ठ ४०० पर)

मानव-विकास और क्रान्ति का अहिंसक स्वरूप

—डा० दौलतसिंह कोठारी

(विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष, देश के प्रसिद्ध वैज्ञानिक, शिक्षाविद् और मनीषी डा० दौलतसिंह कोठारी द्वारा दिल्ली के राजघाट अहिंसक विद्यालय के वार्षिक सम्मेलन के अवसर पर विद्यार्थियों के बीच दिये गये भाषण के आधार पर —सं०)

मानव का इतिहास अहिंसा का इतिहास है। भारत का इतिहास भी अशोक, नानक, अकबर, कबीर आदि को मानता है जिन्होंने अहिंसा को बढ़ावा दिया। सच्चा इतिहास—मानव-विकास—अहिंसा से ही सम्भव है। विज्ञान की 'इवो-ल्यूशन' की दृष्टि से यह खोज हुई है कि नर्व्स, जिससे मानव मस्तिष्क बना, उसके 'कार्टेक्स' का विकास २० लाख वर्ष पहले हुआ था और चूंकि मनुष्य का अस्तित्व बिना सहकार के सम्भव नहीं था इसलिए सहकार के कारण ही मस्तिष्क का विकास हुआ। इस मस्तिष्क-शक्ति के पैगाम ने ही आगे चलकर हिंसा को भी अनुदित किया—यह दूसरी बात है।

मानव में जो हिंसा दीखती है उसमें मनुष्य मनुष्य को भी मार डालता है। यह दूसरे किसी प्राणियों में नहीं दीखता। भेड़िया भेड़िये पर हमला करेगा पर मारने की हालत आने पर उसकी आन्तरिक सांकेतिक प्रवृत्ति (पशु मस्तिष्क के अध्ययन से पता चलता है कि उसमें एक प्राकृतिक अवरोधक होता है) अहिंसा का प्रदर्शन करने लगती है और हमला बन्द हो जाता है। स्वयंभू, शान्तिप्रियता सभी जानवरों में है। किन्तु केवल चूहे और मनुष्य जाति में यह नहीं दिखाई देती। अप्राकृतिक ऊपरी दबाव के बगैर चरागाह जातियों में कठोर हिंसा नहीं उभरती। शायद मनुष्य में भी यह स्वाभाविक अवरोध सचेत रहा होगा, किन्तु हम मनुष्यों में विद्यमान स्वाभाविक अनुभूति अब बड़े संहारक अस्त्रों के कारण समाप्त हो गयी है। ये अस्त्र, दीर्घगामी होने के कारण मारने और मरनेवालों के बीच का फासला काफी बढ़ा देते हैं जिससे आन्तरिक स्वाभाविक (बुद्धि) अवरोध को मौका ही नहीं मिल पाता।

इसलिए अब आवश्यकता इस बात की पैदा हुई है कि जिस अनुपात में संहारक अस्त्रों की गति और दूरी से मार की शक्ति बढ़ी है उसी अनुपात में मानव मानस पर स्नेह और परस्पर सहानुभूति के भाव को भी विकसित किया जाय जिससे मारक शक्ति की रोक पैदा हो सके अन्यथा मानव अपने को ही समाप्त कर लेगा। यही आज की सबसे बड़ी चुनौती है।

यदि किसी विचार को अमल का मौका नहीं दिया जाता तो वह अप्रकट रह जाता है। इसी तरह अहिंसा का विचार भी 'पोथी का बैंगन' न रह जाय इसके लिए आज के नौजवान को अहिंसा-शक्ति का प्रत्यक्ष अनुभव लेनेवाले कार्यक्रम मिलने चाहिए, तभी उस शक्ति का विकास उसमें होगा। नयी पीढ़ी के दिल में देश की सेवा की तमन्ना है, पर उसे जानकारी नहीं है कि हमारे देश में दुखी और गरीब की हालत क्या है। भारत में, गांवों में ८० फीसदी आबादी जिस हालत में है उसके बारे में शहरवाले को बहुत कम जानकारी है। असली ग्रामीण भारत और शहरी जीवन के बीच खाई बढ़ती जा रही है। एक मौलिक अन्तर आपको शहरवाले और गांववाले के मनोविज्ञान में भी नजर आयेगा। गांववाला आमने-सामने सबके साथ रहता है। उसमें पारस्परिकता का मौका अधिक होने से व्यवहार में छिपाव का परदा नहीं रहता, शहरी जीवन में आदमी अपने दिल की बात दूसरे से कहते झिझकता है। इस झिझक को निकाल कर शहर के व्यक्ति को भावना को काम में लाने का मौका दें, यह जरूरी है। गांव और शहर के बीच की खाई भी इसी से कम होगी।

इसी के लिए शहर के नौजवानों को पहले तो अपने ही शहर में गरीब बस्तियों में जाने और काम करने का मौका देना चाहिए। लोगों के जीवन-सम्पर्क में वे आयें, अपने से भिन्न स्तरवाले समाज के साथ दिल जोड़ सकें—अपनी बात कहें, उनकी सुनें यही— एक बड़ा काम है। जहां दुःख है, बीमारी है, अज्ञान है, उसको समझना और उसके प्रति सहानुभूति एवं मैत्री का भाव प्रकट करना यही, अपने में बहुत बड़ा कदम है। एक अकेला विद्यार्थी शायद डर जायेगा, पर दो-तीन साथ मिलकर दस-पन्द्रह घरों के सम्पर्क का क्रम चला सकते हैं। इससे उनके अपने अनुभव और अनुभूति के क्षेत्र में भी संवर्धन होगा और समाज में उपेक्षित घटक को भी सान्त्वना और स्नेह प्राप्त होगा तथा कुल मिलाकर अहिंसा या करुणा का वातावरण बनने में सहायता मिलेगी। युवक यदि इस काम में लगेंगे तो उनके हृदय को विकसित होने का मौका मिलेगा। वे जिन परिवारों के साथ मैत्री रखेंगे उनके दुख-सुख में भागीदार बनें, इतना काफी है। इसी में से समाज के परिवर्तन के बीज भी निकलेंगे।

गांधीजी को क्रान्तिकारी की संज्ञा क्यों दी जाती है ? एक रास्ता क्रान्ति का माओ ने दिया है—गुरिल्ला युद्ध का, जिसको अपनाकर उत्तर वियतनाम-सा छोटा देश भी संसार की सबसे बड़ी ताकत अमेरिका के साथ टक्कर ले रहा है, दूसरा रास्ता क्रान्ति का है गांधी का। भारत ने यह दूसरा रास्ता पसन्द किया। हमें उन पर गर्व है क्योंकि वे ही एकमात्र ऐसे मानव हमारे सामने हैं जिन्होंने कहा कि हे भगवन्, यदि मुझे दूसरा जन्म देना

हो तो मुझे सबसे गरीब और समाज में लांछित-पीड़ित के परिवार में भेजना जिससे मुझे उसकी सेवा का शुभवसर प्राप्त हो सके और मैं उसके आंसू पोछ सकूं। यह महानता और कही हमने नही देखी। वह दुख से दूर भागने की कोशिश में नहीं रहे। मोक्ष की भी मांग उन्होंने इसीलिए नही की। दुःख को दूर करने का बड़ा से बड़ा अवसर उन्होने मांगा क्योंकि इसी में उनको महान ईश्वरीय शक्ति के दर्शन होते थे। अहिंसा की शक्ति इसी में से उन्हें मिली। स्वभाव से, गरीब के तन और मन से एकाकार होने में उन्हें आत्मिक आनन्द की अनुभूति होती थी। इसमें कोई दिखावा या दुख-सहन की बात उनमें थी ही नहीं। चर्चिल ने जब उनके बारे में फब्ती कसी कि यह नंगा फकीर एक लँगोटी लगाये कैसे विश्व के सबसे बड़े शाहंशाह से मिलने जा सकता है तो गांधीजी ने जवाब में कहा कि इस सादी पोशाक के अलावा और कोई भी कपड़ा मेरे ऊपर बेतुका दीखेगा क्योंकि मैं अपने देश के गरीबों का प्रतिनिधि होने का दिली दावा करता हूँ। उनकी इस सादगी की सच्चाई के आगे शाहंशाह की शान-शक्ति कांप जाती थी, यह हमने अपनी आँखों से देखा।

लेकिन उसी क्रान्तिकारी महापुरुष के नाम पर बाद में लोगों ने एक परदा-सा डाल दिया है। एक विद्रूप स्वरूप का गांधी हमारे सामने पेश किया जाता है। ऐसा कुछ है। इसलिए हमें दूसरों के बताये पर नहीं, खुद ढूँढ़कर गांधी को पहचानना होगा। नयी पीढ़ी को गांधीजी की फिर से खोज करनी होगी, उनके अपने विचारों और आचारों को समझकर, पहचानकर। वह कहते थे कि मैं बादशाहों से डरता नहीं, पर एक चींटी पर पाँव पड़ जाय तो काँप जाता हूँ। यह वीरता और करुणा का समन्वय जिस गांधी में था उसकी खोज नौजवान जब करेंगे तब मानव विकास के क्रम में वे सही दिशा में योगदान दे सकेंगे। ●

सीलिंग का सवाल

१. बीस बरस पहले पहली पंचवर्षीय योजना में सीलिंग का सिद्धान्त मान्य हुआ था। लेकिन इसलिए नही कि भूमिहीनों को भूमि मिलनी चाहिए बल्कि इसलिए कि सिद्धान्ततः किसी व्यक्ति के पास एक सीमा से अधिक भूमि नही रहनी चाहिए।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में विषमता की ओर ध्यान दिया गया, और कहा गया कि विषमता आर्थिक विकास में बाधक होती है, इसलिए भूमि के मामले में विषमता को घटाना चाहिए। विषमता का घटना ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी अर्थनीति के विकास के लिए आवश्यक है।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में यही बात दोहरायी गयी और भूमि में विषमता घटाने पर जोर दिया गया, यद्यपि दूसरी योजना की तरह तीसरी में भी कहा गया कि सीलिंग से भूमिहीनों के लिए कोई खास जमीन नही निकलनेवाली है।

यह स्पष्ट है कि सीलिंग के प्रश्न पर योजना आयोग के दिमाग में न दृढ़ता थी और न प्रयोजन ही स्पष्ट था। इसलिए कोई आश्चर्य नही कि सरकारों ने भी सीलिंग के कानूनों को कभी दृढ़तापूर्वक नही लागू किया। भूमिवानों ने भी कभी सीलिंग का डटकर विरोध नही किया। वे जानते थे कि कानून से कैसे बचा जाता है।

२. सबसे पहिले जम्मू-कश्मीर राज्य में सीलिंग का कानून बना—१९४८ में। २२.७५ एकड़ की सीलिंग लगायी गयी और दृढ़तापूर्वक लागू की गयी।

आन्ध्र में १९६१ में सीलिंग कानून पास हुआ। भूमि की किस्म के अनुसार भूमिवानों को २७ से ३२४ एकड़ भूमि रखने की छूट दी गयी। ५ सदस्यों से अधिक के परिवार में प्रति अतिरिक्त व्यक्ति ६ से २७ एकड़ अतिरिक्त भूमि रह सकती थी। यह कानून १९६४ में लागू हुआ, लेकिन लागू होने के बाद ६ वर्षों में मात्र १९१ एकड़ भूमि निकाली जा सकी।

तमिलनाडु में १९६१ में भूमि-सुधार कानून पास हुआ। सीलिंग ३० स्टैण्डर्ड एकड़ (सामान्य एकड़ २४ से १२०) रखी गयी। ५ से अधिक के परिवार के लिए अधिकतम सीमा ६० स्टैण्डर्ड एकड़ की थी। इसके अलावा पत्नी के लिए १० एकड़ 'स्त्री-धन' के रूप में छूट दी गयी।

बिहार में १९६१ के सीलिंग एक्ट के अनुसार सीलिंग की सीमा भूमि की किस्म और परिवारों में सदस्यों की संख्या के अनुसार २० से ६० एकड़ के बीच रखी गयी। लेकिन उत्तराधिकारियों को भूमि हस्तान्तरित करने की इतनी छूट रखी गयी कि आजतक एक एकड़ भी जमीन नही निकल सकी है। कुल ४८ हजार सामान्य और २१ हजार विशेष नोटिसें दी गयी हैं। १० हजार प्राप्त ब्योरे देखे जा रहे हैं, किन्तु भूमि हाथ नहीं आती।

राजस्थान के १९६० के कानून ने सीलिंग २२ से ३३६ एकड़ के बीच रखी, लेकिन यदि परिवार में ५ से अधिक व्यक्ति हों तो यह सीमा दूनी हो जायगी। १९६९ में एक संशोधन द्वारा पुत्र, पुत्री या किसी खेतिहर के पक्ष में किये गये हस्तांतरण कानूनी करार दे दिये गये जिसका परिणाम यह हुआ कि एक एकड़ भी भूमि नहीं निकल सकी।

मध्य प्रदेश में १९६२ के कानून के अनुसार २५ से ७५ एकड़ तक की सीलिंग रखी गयी। सीलिंग व्यक्ति के लिए थी, परिवार के लिए नहीं। अभी तक कुल ११ हजार एकड़ भूमि बाँटी गयी है।

उत्तर प्रदेश में १९६० के कानून के अनुसार सीलिंग ४० से ८० एकड़ तक है, लेकिन अगर परिवार में ५ से अधिक व्यक्ति हैं तो प्रति व्यक्ति ८ एकड़ की छूट है। अब तक लगभग २ लाख एकड़

भूमि प्राप्त हुई है।

महाराष्ट्र में १९६१ के कानून में १८ से १२४ एकड़ तक की सीलिंग है। ५ से अधिक के परिवार के लिए इससे दुगुनी सीमा है। यहाँ सीलिंग व्यक्ति के लिए है परिवार के लिए नहीं। अब तक १ लाख २३ हजार एकड़ भूमि प्राप्त हुई है।

गुजरात में १९ से १३२ एकड़ की सीलिंग परिवार के लिए है जिसमें पति, पत्नी और नाबालिग बच्चे शामिल हैं। अभी तक २५ हजार का वितरण हुआ है।

मैसूर में सीलिंग २७ से २१६ एकड़ तक है। ५ से अधिक के परिवार के लिए दूनी सीमा है।

उड़ीसा में कानून १९६५ में बना, जिसमें प्रति व्यक्ति के लिए सीलिंग २० से ८० एकड़ है, लेकिन कानून अभी तक लागू नहीं किया जा सका है।

चौथी पंचवर्षीय योजना के समय स्थिति यह थी, जैसा कि आयोग ने माना है, कि सीलिंग के कानून हर राज्य में मौजूद हैं लेकिन उन पर अमल सन्तोषजनक ढंग से नहीं हुआ है। देश-भर में सिर्फ लगभग ६½ लाख हेक्टर पर सरकार का कब्जा हो सका है। आन्ध्र प्रदेश में सरकार इसलिए कब्जा नहीं कर पा रही है क्योंकि मुआवजा देने के लिए उसके पास पैसा नहीं है। बंगाल और गुजरात में मुकदमेबाजी के कारण काम रुका हुआ है। जो भूमि सरकार के हाथ आयी भी है उसके वितरण में तत्परता नहीं है। कुल पौने २ लाख हेक्टर से अधिक भूमि का वितरण नहीं हो सका है। पिछले दिनों सीलिंग के सम्बन्ध में कुछ तेजी दिखायी गयी है। केरल और तमिलनाडु में सीलिंग घटायी भी गयी है। केरल में प्रति व्यक्ति ५ से ७·५ एकड़ की गयी है, २ से ५ तक के परिवार के लिए १२ से १५ एकड़; ५ से अधिक के परिवार के लिए १५ से २० एकड़, संस्थाओं के लिए १२ से १५ एकड़। तमिलनाडु में सीलिंग १० से १५ स्टैण्डर्ड एकड़ (सामान्य १२ से ६० एकड़ तक) प्रति परिवार कर दी गयी है।

३. सीलिंग घटाने से कितनी भूमि निकलेगी?

देश में जनसंख्या का वितरण ऐसा है कि भिन्न-भिन्न राज्यों में प्रति ग्रामीण परिवार भूमि में बहुत अधिक विषमता है। जनसंख्या के घनत्व की दृष्टि से कुल राज्य दो श्रेणियों में रखे जा सकते हैं। पहली श्रेणी में ये राज्य हैं—केरल, तमिलनाडु, असम, प० बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, और केन्द्र-प्रशासित राज्य। दूसरी श्रेणी में ये हैं—आन्ध्र प्रदेश, मैसूर, पंजाब, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान।

प्रश्न यह है कि प्रति ग्रामीण परिवार को कितनी भूमि मिलनी चाहिए? एक सुझाव यह है कि केरल, तमिलनाडु, असम और प० बंगाल में प्रति परिवार आधा एकड़ भूमि होनी चाहिए। इतनी भूमि अधिक नहीं है, लेकिन इन क्षेत्रों में ४० से ५५ प्रतिशत परिवार भूमिहीन हैं, या ½ एकड़ से भी कम भूमि रखते हैं। अगर प्रति परिवार ½ एकड़ भूमि भी देनी हो तो केरल और असम में ७·५ एकड़ की सीलिंग लगानी होगी, तथा तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल में १० एकड़ की। इस दृष्टि से अभी इन राज्यों में जो सीलिंग लगायी गयी है वह भी ऊँची है।

बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और पंजाब में प्रति परिवार १ एकड़ मिलना चाहिए। उससे अधिक सम्भव नहीं दिखाई देता। इन राज्यों में ३५ से ५० प्रतिशत भूमिहीन हैं। १ एकड़ देने के लिए भी बिहार में सीलिंग १२·५ एकड़ की, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश में १५ एकड़ की और पंजाब में २५ एकड़ की लगानी होगी। इतना होने पर भी इन राज्यों में ३५ से ५० प्रतिशत परिवारों को १ एकड़ से अधिक भूमि नहीं मिलेगी।

स्थिति यह है कि भूमिहीनों को भूमि देने के बाद छोटे खेतिहरों को लाभकर जोत के लिए भूमि बिलकुल नहीं बचती। नतीजा यह होगा कि जो जोतें अनार्थिक हैं वे जैसी-की-तैसी रह जायँगी। भूमिहीनों को दी गयी जोतें, और छोटे खेतिहरों की पहले से मौजूद जोतें, दोनों को मिलाकर अनार्थिक जोतों की देश में भरमार हो जायगी। यह गणना भी १९६०-६१ के आधार पर की गयी है। तब से जनसंख्या बढ़ी है, और जोतों में बँटवारे भी हुए होंगे। कुल मिलाकर १९७०-७१ में स्थिति और बिगड़ी होगी।

कुछ लोगों का सुझाव है कि भूमिहीन और अत्यन्त छोटे खेतिहरों को छोड़ देना चाहिए, और भूमि उन्हीं को देनी चाहिए जिनकी जोत, थोड़ी भूमि और दे देने से, आर्थिक हो जायगी। अगर ऐसा करना हो तो सीलिंग के साथ-साथ फ्लोरिंग की कल्पना भी करनी पड़ेगी। लेकिन जब हम फ्लोरिंग का हिसाब लगाते हैं तो पाते हैं कि ५० से ७५ प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास बिलकुल भूमि नहीं है, या इतनी फ्लोरिंग से कम है।

—प्रस्तुतकर्ता राममूर्ति

(पृष्ठ ३९६ का शेष)

निज्म (साम्यवाद) के विरोधी हैं। ये सारे हमारे विरोधी हैं, लेकिन पार्लियामेण्टरी पद्धति हमारे नजदीक है, क्योंकि वह लोगों ने बनायी है। नजदीकवालों का विरोध नहीं करना चाहिए, उससे तो जो हमारे नजदीक है, वही दूर हो जायगा। नजदीकवालों का विरोध तो तत्त्वज्ञानी करते हैं। तत्त्वज्ञान में क्या होता है? जो ज्यादा-से-ज्यादा नजदीक हैं, उनका ज्यादा-से-ज्यादा खण्डन किया जाता है, दूरवालों का इतना नहीं। शंकराचार्य ने नास्तिकों का इतना खण्डन नहीं किया, लेकिन नजदीक जो थे सांख्य वगैरह उनका खण्डन किया। क्योंकि जो नजदीक होता है, उसके और अपने विचार में एकाध रेखा का ही फरक होता है, तो चित्त में भ्रम होने की सम्भावना होती है, इसलिए तत्त्वज्ञान के क्षेत्र में जो नजदीक होता है, उसका प्रथम खण्डन करना पड़ता है। जहाँ बहुत ज्यादा विरोध होता है, वहाँ तो विचारों में फरक स्पष्ट ही होता है। इसलिए शंकराचार्य ने नजदीकवालों का ज्यादा-से-ज्यादा खण्डन किया। लेकिन सामाजिक कार्य में उलटा है। वहाँ नजदीकवालों का विरोध करेंगे, तो हम उनको दूर करेंगे। ज्ञानदेव, तुकाराम या दूसरे सन्त सामान्यतया किसी का विरोध नहीं करते। तुकाराम कहते हैं, जेजे बोला, तेते साजे या विट्ठला। विट्ठल द्वैत है या अद्वैत है, विश्व में भरा हुआ है या विश्व से अलग है, निर्गुण है या सगुण है, दण्ड देनेवाला है या दण्ड न देनेवाला है, कुछ भी कहो, जो भी कहोगे, वह सब भगवान को शोभा देता है। ये सन्तों का तरीका था। यानी किसी से हमारा विरोध नहीं यह वृत्ति समाज-सेवक की होनी चाहिए। यह फरक है तत्त्वज्ञानी और समाज-सेवक में। आप तय करें कि आप कौन हैं, तत्त्वज्ञानी या समाज-सेवक। [२९-२-७२ को हुए श्री बाबूराव चन्दावार के साथ प्रश्नोत्तर]

—'मैत्री' से साभार

बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन : कुछ निष्कर्ष—२

तीसरी गोष्ठी

चुनाव

१—राजनीति :

दलगत राजनीति की गाँव के जीवन में कोई उपयोगिता नहीं है। लेकिन जब तक दल रहेंगे उनके आदमी गाँवों में भी रहेंगे। किन्तु जब राजनैतिक दल का कोई आदमी सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य-सभा का सदस्य चुन लिया जायगा तो निश्चित है कि वह दल की अपेक्षा गाँव से अधिक प्रभावित होगा। गाँव में काम करने के लिए उसे दल को भुलाना ही पड़ेगा।

२—(क) गाँव की एकता। ग्रामस्वराज्यसभा का यह कर्तव्य है कि वह चुनाव के कारण गाँव की एकता न टूटने दे। वह राजनैतिक दलों से आग्रह करे कि वे इकट्ठा आकर गाँववालों को अपनी बात समझायें, अन्दर-अन्दर मतभेद न पैदा करें। इस दृष्टि से लोकमंच बहुत उपयोगी होगा।

(ख) ग्रामस्वराज्यसभा सर्व-सम्मति से किसी एक योग्य उम्मीदवार का समर्थन भी कर सकती है।

३—मतदान : मतदान शुद्ध और निष्पक्ष हो इसकी चिन्ता हर ग्रामस्वराज्य-सभा को रखनी होगी। सभा भरे हुए या बाहर रहनेवाले वोटरों की सूची तैयार करे और पहले से प्रेजाइडिंग अफसर को दे दे। सभा बोगस वोट को रोके और देखे कि किसी वोटर को डराकर, धमकाकर, या लालच देकर वोट देने या न देने के लिए विवश न किया जाय।

४—लोक-उम्मीदवार :

आगे के चुनावों में लोक-उम्मीदवार भी खड़े किये जायें।

५—स्वायत्तता का अभ्यास : इसके लिए सरकार पर दबाव डाला जाय कि जो ग्रामस्वराज्य-सभा महीने में एक बार ग्रामसभा, दो बार कार्य-समिति की बैठक करती हो, जिसमें नियमित ग्राम-कोष इकट्ठा होता हो, सभी निर्णय सर्व-सम्मत होते हों उस सभा को राजस्व, प्रशासन, विकास तथा न्याय सम्बन्धी उचित अधिकार दिये जायें।

चौथी गोष्ठी

ग्रामस्वराज्य आन्दोलन

१. आन्दोलन को गति देने की दृष्टि से ये कदम उठाये जायें :

(क) हर जिले में ग्रामस्वराज्य-समिति गठित की जाय।

(ख) राज्य में भी ग्रामस्वराज्य समिति गठित हो। साथ ही वैचारिक भूमिका की पुष्टि की दृष्टि से राज्य-सर्वोदय-मण्डल भी रहना चाहिए।

(ग) प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के गठन के बाद प्रखण्ड में ग्रामस्वराज्य के सारे कार्य उसी के द्वारा होने चाहिए। अगर पहिले से वहाँ कोई रचनात्मक संस्था काम करती हो तो उसे अपना काम प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा को सौंप देना चाहिए।

(घ) प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के गठन में निर्धारित पद्धति का ध्यान रखना अनिवार्य है। जो काम किया जाय पक्का किया जाय; कच्चा काम उचित नहीं है।

प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा तथा उसकी कार्य-समिति की बैठकों में ऐसे तरुणों, शिक्षकों, महिलाओं या तकनीकी जानकारों को आमंत्रित करना चाहिए जिनका परामर्श उपयोगी हो।

२. कोष :

प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के काम के लिए ग्रामस्वराज्य-सभाएँ अपने कोष से १ प्रतिशत दें ताकि वह अपनी जिम्मेदारी निभा सके।

३. लोकसेवक :

गाँव तथा प्रखण्ड स्तर पर ऐसे लोगों का रहना आवश्यक है जो किसी प्रकार के पद से अलग रहकर काम कर सकें। जगह-जगह ऐसे लोक-सेवकों की इकाइयाँ बननी चाहिए।

४. शिक्षण-प्रशिक्षण :

(क) सभाओं के पदाधिकारियों तथा ग्रामशान्तिसेना के सदस्यों के शिक्षण-

प्रशिक्षण की तत्काल आवश्यकता है। इसके लिए हर स्तर पर शिविर आयोजित किये जायँ।

(ख) कार्यकर्ताओं को साल में एक महीना आध्यात्मिक चिन्तन-मनन में लगाना चाहिए।

पाँचवीं गोष्ठी

विकास और शोषण-मुक्ति

१. आरम्भ :

बीघा-कट्ठा के वितरण, ग्रामकोष की शुरुआत और ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन हो जाने पर विकास का काम शुरू हो जाना चाहिए।

२. दिशा :

समता और सम्मानपूर्ण आत्म-निर्भरता के लिए व्यक्ति, परिवार और गाँव सहकारी पुरुषार्थ करें। विकास ऐसा हो कि हमारी संस्कृति का सत्व प्रकट हो।

३. शर्तें :

(क) गाँव की सम्पूर्ण मनुष्य-शक्ति, पशु-शक्ति तथा अन्य साधनों का समन्वित उपयोग।

(ख) भूमि की चकबन्दी।

(ग) नशाबन्दी।

४. शोषण-मुक्ति :

(क) सबको 'वास' की भूमि हो।

(ख) खेती के लिए बीघा-कट्ठा, सरकारी भूमि, तथा सीलिंग से निकली भूमि का वितरण हो।

(ग) बँटाईदार को कानून के अनुसार हिस्सा प्राप्त हो।

(घ) मजदूर को न्यायसंगत मजदूरी मिले।

(ङ) कर्ज के लिए ग्रामकोष का संग्रह हो।

(च) सूद की उचित दर के लिए ग्रामस्वराज्य-सभा और महाजनों के बीच समझौता हो।

(छ) गाँव में 'गाँव का भण्डार' हो। इसके द्वारा क्रय-विक्रय, आयात-निर्यात आदि किया जाय। इसी तरह पञ्चायत, प्रखण्ड, जिला एवं राज्यस्तरों पर भी भण्डारों और दूकानों का संगठन हो।

(ज) ग्रामोद्योगों और बड़े उद्योगों के उत्पादन-क्षेत्र अलग-अलग हों।

५. समता :

(क) विकास की वर्तमान पद्धति से साधनवालों को ही लाभ हुआ है। उसे छोड़कर स्वाश्रयी नियोजन की पद्धति अपनानी होगी। हर परिवार को पूरा रोजगार मिले, यह व्यवस्था करनी होगी। इस दृष्टि से तकनीक और पूँजी मिलनी चाहिए। विकास की सारी योजना में पहला स्थान गरीब का होना चाहिए।

(ख) उन्नत यन्त्रों का स्वामित्व ग्राम-स्वराज्य-सभा प्रखण्डस्वराज्य-सभा आदि का होना चाहिए। सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि गाँव-गाँव को ये उन्नत साधन मिल सकें।

(ग) विकास-योजना में क्षेत्रीय विषमता को दूर करने का भी प्रयत्न हो।

(घ) वस्त्र के लिए खादी का विकास हो। इसके लिए मिल-वस्त्र पर अंकुश लगाना होगा। अतिरिक्त टैक्स लगाने की भी जरूरत हो सकती है। उन्नत चर्खे के लिए सरकार को पूँजी देनी चाहिए।

(ङ) गाँव को विकास की इकाई माना जाय। कोशिश हो कि हर परिवार की आर्थिक स्थिति घाटे से निकलकर बचत की हो जाय। इसके लिए सरकार के क्षेत्र बढ़ाने होंगे।

६. पूँजी-निर्माण :

(क) ग्रामकोष में मनसेरा जमा हो।

(ख) बेरोजगारों को काम देकर उनकी मजदूरी का एक अंश ग्रामकोष में रखा जाय।

(ग) लोग थोड़ी-थोड़ी बचत करें।

(घ) बची हुई श्रमशक्ति को स्थूल पूँजी-निर्माण—जैसे कुँआ, आहर, तालाब आदि में लगाया जाय।

(ङ) महाजनों से उचित सूद पर कर्ज लिया जाय। इसी तरह सरकार, बैंक आदि से भी कर्ज लिया जाय। श्रम से पूँजी बनायी जाय और नकद पूँजी भी इकट्ठी की जाय।

७. शिक्षा :

(क) गाँव-स्वावलम्बन के लिए उत्पादकतालीम की दिशा में पहल करें।

(ख) गाँव में तरुणों के लिए 'घण्टे' भर का विद्यालय चलाया जाय।

(ग) ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में विकास के लिए ग्रामस्वराज्य-सभाओं का प्रशिक्षण हो। इस दृष्टि से शिविर किये जायँ।

८. सरकार

हम अपने ऊपर भरोसा करें, सहायता सरकार से भी लें। जैसे-जैसे ग्रामस्वराज्य-सभाएँ सक्रिय होती जायँगी पंचायतों के काम घटते जायँगे।

जंगली क्षेत्रों में सभाएँ जंगलों की रक्षा की भी जिम्मेदारी ले सकती हैं।

इसी तरह कर्मचारी और पटवारी आदि की ज्यादतियों का प्रतिकार करना होगा।

ग्रामसभा को दलगत राजनीति और जातिवाद से भी अपने गाँव की रक्षा करनी होगी नहीं तो गाँव संगठित होकर अपनी समस्याओं को नहीं सुलझा सकेगा।

९. विकास के संगठन।

(क) ग्रामस्वराज्य-सभाओं और प्रखण्डस्वराज्य-सभाओं का संगठन आवश्यक है। उनके अन्तर्गत विभिन्न समितियाँ बनायी जा सकती हैं, जैसे पूँजी-निर्माण, कृषि, उद्योग, शोषण-मुक्ति, स्वास्थ्य, शिक्षा, नशाबन्दी, न्याय आदि के लिए।

(ख) ग्रामस्वराज्य की दृष्टि से खादी-ग्रामोद्योग की संस्थाओं का प्रखण्ड-स्तर पर फौरन विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।

(ग) ग्रामदानी गाँवों के आर्थिक एवं तकनीकी विकास के लिए 'ग्रामस्वराज्य-विकास-निगम' जैसी संस्था का संगठन किया जाय। ●

अहिंसक क्रान्ति के मोर्चे से

परम पूज्य बाबा,

सादर प्रणाम! महिषी (सहरसा, बिहार) गाँव में प्रथम प्रयास ग्रामसभा को सक्रिय बनाने का रहा। रामशाला पर सत्संग के जरिये जो लोग नजदीक आते गये, उनके माध्यम से ग्रामसभा का काम चला। ग्रामसभा के जरिये बीघा-कट्ठा के हिसाब से जमीन वितरित हुई।

मैं भूमिहीनों के टोले में घूमते, सम्पर्क करते हुए उनको ग्रामसभा के साथ जोड़ने के प्रयत्न में लगी थी।

इन गरीबों के बीच सहजभाव से फूस की झोपड़ी रहने को मिली। खाना पकाने के लिए ईंधन जंगल से खोजकर लाना, मिट्टी के बर्तन में खाना पकाना, सूती कपड़ों में जाड़ा काटना, भुने या भिगोये चूड़े, अंकुरित मूँग की दाल, और गुड़ के आधार से शरीर-निर्वाह करना, इसका अभ्यास हुआ। मैंने और लक्ष्मी ने मिलकर मजदूरी से अनाज प्राप्त करने का प्रयास किया, लेकिन मजदूरी का काम भी आसानी से मिलता नहीं था, तो ये लोग ही प्रेम से हमारे लिए अनाज जुटा देते थे।

झोपड़ी हमारी खुली रहती थी। कितना भी प्रयत्न करें, हमारे शरीर के लिए उनकी अपेक्षा कुछ अधिक वस्त्र, कुछ अधिक सामान लिखने-पढ़ने का रहता ही है। लेकिन अभी तक कोई छोटी चीज भी चोरी नहीं गयी थी। हमारी झोपड़ी की चीजों की हिफाजत में लोग अपनी जिम्मेदारी मानते थे। मैं निश्चिन्त थी। लेकिन एक दिन लक्ष्मी की गरम शाल, जो झोपड़ी में रस्सी पर लटकी थी, दिखाई नहीं दी। खबर गाँव में फैल गयी। हम दोनों ने अपने सामान की गिनती की, परिग्रह कम करने की गुञ्जाइश उसमें थी नहीं। खाना-पीना तो हमारी झोपड़ी में विशेष कुछ रहता नहीं था, कहीं से कुछ विशेष आया तो प्रसाद-रूप में बच्चों को बाँट देते थे। पहनने के कपड़े हमारे पास अत्यन्त अनिवार्य जरूरत के गिने हुए थे। ये लोग जिन मैले-फटे चिथड़ों से किसी प्रकार तन ढकते थे, ठण्डी के दिनों में जो कष्ट महसूस करते थे, उनके लिए हमारे सूती कपड़े भी आकर्षण का विषय था। टोले के लोग चोरी करने की शंका हमारी घरवाली स्त्री और उसकी लड़की पर भी करते थे। मुझे दुःख होता था कि इन लोगों को कलंक लग रहा है। कृष्णराजजी की सलाह थी कि उस टोले से निवास हटाने से ही उससे स्वतन्त्र सम्बन्ध के लिए दिशा मिलेगी। मैं जाने लगी तो कुछ महिलाएँ आकर बड़ी गम्भीर मुद्रा में कहने लगी, "दीदी की शाल चल गेल, ऊब कर जाई छतिन।" बात मेरे दिल को स्पर्श कर गयी। जिस घर में रही, उसके प्रति कुछ दूरी-भाव निर्माण कर जा रही हूँ ऐसा लगा और एक प्रेरणा आयी कि दो दिन पहले काशी से बैटीना नाम की जर्मन बहन की तरफ से एक खादी की साड़ी आयी है व ब्लाउज भी सौदामिनी बहन का भेजा हुआ रखा है। वह कपड़ा अपनी घरवाली स्त्री को देने का विचार आया। उसे मैंने स्नान कर आने को कहा। वह आयी, विष्णु-सहस्रनाम के पाठ का समय हो गया था। पाठ के बाद वह कपड़ा उसे पहनाया। बच्चों के-से चाव से उसने वह पहना। प्रसन्न हुई। उसके हाथ से सर्वोदय-पात्र रखवा कर लड़की के हाथ से मुट्ठीभर अनाज डलवाया।

महिषी जैसे जटिल गाँव में बड़े भूमिवानों से ग्रामकोष प्राप्त करना भी बड़ा प्रश्न था। लेकिन भक्ति की भूमिका से सहज सयोग जुटता रहा। ९ ता० को ग्रामसमिति की बैठक राजाबाबू की उपस्थिति में हुई, दुबारा १६ ता० को ग्रामसमिति की बैठक में गाँव के धनी-मानी मुख्य लोग एकत्रित हुए थे। ग्राम-कोष इकट्ठा होने के लिए सर्वसम्मति से प्रस्ताव हुआ। मन में सेर के हिसाब से ग्रामकोष देने के लिए उपस्थित लोगों ने घोषणा की। वसन्तपंचमी के दिन रामशाला पर सुबह की प्रार्थना के बाद एक छोटे-से जुलूस में चनम्मा के भजन-कीर्तन के साथ कोषाध्यक्ष के घर अनाज पहुँचाया गया। सब लोग अपनी-अपनी टोकरियाँ सिर पर ढोकर कोषाध्यक्ष के यहाँ भजन-कीर्तन के साथ पहुँचे। हृदय-नारायण ने संकल्प लिया है, रोज रजिस्टर देख लेने का। जिस दिन किसी का ग्राम-कोष जमा होता है, उसी दिन भोजन करते हैं, नहीं तो उपवास। अब तक २० मन के करीब अनाज इकट्ठा हो चुका है।

लक्ष्मी ने २०० सर्वोदय-पात्र रख-वाये थे, वे चालू रखने के लिए व नये सर्वोदय-पात्र रखवाने के लिए एक-एक नवयुवक श्रद्धा से १५-२० घरों की जिम्मेदारी ले रहा है। लक्ष्मी-चनम्मा घर-घर की महिलाओं से सम्पर्क सत्संग के माध्यम से कर रही हैं। ऐसी सब भक्त-मण्डली इकट्ठी होने से महिषी में हमारे निवास ने आश्रम का रूप ले लिया है।

श्री नीलकण्ठ स्वामी (कर्नाटक) अपने प्रखण्ड के काम में सातत्यपूर्वक लगे रहे। महिषी के काम में भी आवश्यकता-नुसार मदद पहुँचाते रहे। लेकिन बाकी खण्डों में कार्यकर्ता नियुक्त हो नहीं पाये, जो हुए भी वे सातत्य से रहे नहीं। श्री नारायण भाई (कर्नाटक के सेवक) के क्षेत्र में लगभग सब गाँवों में ग्राम-समितियों का गठन हो गया है। वे ९ ता० को अपनी अवधि पूरी होने पर कर्नाटक वापस गये। इस क्षेत्र की जिम्मे-दारी अब म० प्र० के पुजारी रायजी को दी है।

स्वामीजी के क्षेत्र में तीन पंचायतों में २० गाँव हैं। सब गाँवों में ग्रामसमितियों का गठन हो गया। उनके जरिये समर्पण-पत्र भी लगभग भरा लिये गये, कहीं-कहीं ग्रामकोष भी शुरू हुआ है। सम्पर्क-यात्रा के दौरान तथा श्री कृष्णराजभाई स्वामीजी के क्षेत्र के सारा गाँव में निम-→

आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों में जागृति

प्रशान्त महासागर के दक्षिण में और अपने भारतीय महासागर के पूर्व की ओर आस्ट्रेलेशिया नामक महाद्वीप है जिसमें आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड दो देश शामिल हैं। इनमें आस्ट्रेलिया बड़ा है और उसकी आबादी लगभग सवा करोड़ है। यहाँ ज्यादातर गोरे लोग हैं जो इंग्लैण्ड तथा यूरोप के अन्य भागों से जाकर वहाँ बस गये हैं।

सन् १७७१ में एक अंग्रेज, कैप्टन कुक ने इस देश का पता चलाया और तब से गोरों ने वहाँ बसना शुरू कर दिया। वहाँ के मूल निवासियों को सताने, दबाने, मार डालने का मार्ग गोरों ने अपनाया जिससे वे अन्दर जंगलों और वीरान इलाकों में जाकर रहने लगे। इनकी तादाद लगभग डेढ़ लाख है। यह ज्यादातर काले रंग के होते हैं और नीग्रो-जैसी आकृति होती है। कहा जाता है कि लगभग पच्चीस हजार बरस पहले, इनके पुरखे दक्षिणी-पूर्वी एशिया से खुश्की के रास्ते से वहाँ पहुँचे। बाद में जब बर्फ-युग आया तो इस भूखण्ड का बहुत-सा हिस्सा पानी में आ गया और आस्ट्रेलिया एशिया से अलग हो गया।

इधर कुछ अर्से से इन मूल निवासियों में राजनैतिक जागृति पैदा हुई है। अक्तूबर के महीने में इनका एक जुलूस ब्रिसबेन नामक नगरी में निकला। उसमें सौ लोग थे जिनमें सत्तर काले थे। उनकी माँग थी कि हमारी जमीनें हमको वापस दो। आस्ट्रेलिया के गोरे कहा करते हैं कि मूल निवासी आस्ट्रेलिया की जमीन के हैं, लेकिन जमीन उनकी नहीं है। इसपर मूल निवासियों का रुष्ट होना स्वाभाविक है और उन्होंने 'ब्लैक पैंथर पार्टी' (काली चीता पार्टी) बनायी है जिसके सात नेता हैं। उनका प्रमुख है एक २५ वर्षीय युवक, डेनिस वाकर।

हाल ही में इन मूल-निवासियों ने एक ऐलान किया कि हमारी माँगें पूरी करो नहीं तो हमने एक 'मृत्यु-सूची' बनायी है और उस पर जिन-जिन के नाम हैं उनको खतम कर देंगे। इन नामों में दो हैं—श्री पीटर हाउसन जो आस्ट्रेलिया सरकार के मंत्री हैं और मूल-निवासियों का विभाग देखते है, और श्री नेविल बन्नेर जो आस्ट्रेलियन पार्लियामेण्ट के प्रथम मूल-निवासी सदस्य हैं। लेकिन व्यवहार से वह गोरों के रंग में रंग गये हैं और अपने समाज में बहुत अप्रिय हो चुके हैं।

आस्ट्रेलिया में काली शक्ति धीरे-धीरे जोर पकड़ रही है। उसकी माँग बराबर के हक और समानता की है। सिडनी, मेलबोर्न, ब्रिस्बेन और एडिलेड जैसे बड़े नगरों में वे अपने प्रदर्शन कर चुके हैं और अपने आन्दोलन को गतिमान कर रहे हैं।

आस्ट्रेलिया में तो इतनी ज्यादा जमीन है कि जापान और भारत से भी जाकर लोग करोड़ों की तादाद में वहाँ बस सकते हैं। ऐसी हालत में वहीं के मूल-निवासियों को उनके अधिकारों से वंचित रखना शोभाजनक नहीं है। आस्ट्रेलिया सरकार का कर्तव्य है कि उनकी माँगों को स्वीकार करे और उन्हें फूलने-फलने का पूरा मौका दे। भारत सरकार को भी चाहिए कि राष्ट्र-मण्डल (कॉमन वेल्थ) की बैठक में इस सवाल को उठाये और आस्ट्रेलिया से अपील करे कि न्याय की आवाज को ठुकराना नहीं है।

अमेरिका में शराब से हानि

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सरकार ने हाल में एक रिपोर्ट प्रकाशित की है जिसमें बताया है कि शराब से वहाँ बड़ी जबरदस्त हानि हो रही है। वहाँ के लगभग एक करोड़ लोगों पर उसका भयानक असर है और हर साल पन्द्रह सौ करोड़ डालर (लगभग ग्यारह हजार करोड़ रुपये) इसमें नष्ट हो जाते हैं।

रिपोर्ट का कहना है कि यह "सब में ज्यादा दुःखान्त, निर्वीर्यकारी और महँगी बीमारी" है जिससे राष्ट्र को नुकसान पहुँच रहा है। परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से करोड़ों लोगों मर्दों, औरतों और बच्चों के जीवन को यह बिगाड़ रही है। अमेरिका की आबादी लगभग बीस करोड़ है जिनमें दस करोड़ शराब पीनेवाले हैं। अगर बच्चों को छोड़ दें तो इसका अर्थ यह निकलता है कि बालिग उमर के सभी लोग और कम-से-कम सारे पुरुष तो जरूर ही इसका शौक करते हैं। इनमें भी ९६ लाख ऐसे हैं जो शराब के एकदम मरीज हो गये हैं। शराब के नशे की वजह से हर साल २८००० मौतें मोटर-दुर्घटनाओं से हो जाती हैं।

अमेरिका में शराब की इस बढ़ती हुई विनाश-लीला से भारत सरकार और प्रादेशिक सरकारों को भी सबक लेना चाहिए।

—बाबू

—मिल थे। सब गाँवों की ग्रामसमितियों के पदाधिकारी व ग्रामीण जनता एकत्रित थी। जनता इस विचार के लिए श्रद्धा-पूर्वक आकृष्ट है इसका दर्शन हुआ। सभा के बाद ग्रामसमितियों के पदाधिकारियों व गाँवों के नवयुवकों ने योजना बनायी कि सब मिलकर फरवरी माह के भीतर इस क्षेत्र का पुष्टि-कार्य पूरा करेंगे। इस क्षेत्र के काम को पूरा करने के लिए सहयोग में कलशभाई (उ० प्र०) अनंग विजयजी (बंगाल), प्रमोद उपाध्याय (म० प्र०) रहे। इस खण्ड के जैसे अन्य खण्डों में भी स्वामीजी की तरह कोई वात्सल्य से काम करनेवाला होता तो महिषी प्रखण्ड का पुष्टि-कार्य प्राय समाप्त होता।

महिषी, ३०-१-७२ आपकी

'मैत्री' से साभार सुशीला

पाठक-लेखक-प्रकाशक

विभिन्न राष्ट्रों के बीच सद्भावना बढ़ाने के अपने उद्देश्य के अनुसार 'यूनेस्को' (संयुक्त राष्ट्र संघ का शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन) ने १९७२ के वर्ष को 'अन्तरराष्ट्रीय पुस्तक-वर्ष' के रूप में मनाने का निश्चय किया है। इस प्रयोजन से उसने सदस्य राष्ट्रों से अपील की कि वे उपयुक्त कार्यक्रमों के साथ यह वर्ष मनायें, ताकि ऐसा वातावरण बन सके कि ज्यादा-से-ज्यादा पुस्तकें खरीदने, पढ़ने, लिखने, अनूदित करने और प्रकाशित करने में लोगों की दिलचस्पी बढ़े। पुस्तकों की अपनी निराली दुनिया है, जो आज के इस सिमटते विश्व में हर तरह से समृद्ध, सहृदयता और रंगीनी बिखेर सकती है।

'अन्तरराष्ट्रीय पुस्तक-वर्ष' के सिलसिले में नयी दिल्ली में आयोजित 'विश्व-पुस्तक-मेला' अन्तरराष्ट्रीय महत्त्व का इस किस्म का पहला बड़ा आयोजन है। शिक्षा एवं समाज-कल्याण मंत्रालय के तत्वावधान में 'नेशनल बुक ट्रस्ट' (भारत) ने 'फेडरेशन ऑफ पब्लिशर्स एण्ड बुक-सेलर्स असोसिएशंस' के सहयोग से इस पुस्तक-मेले का आयोजन किया है।

आज संसार में पढ़ने की सामग्री की बहुत जरूरत है। विश्व की आबादी के बहुत सारे हिस्से के लिए यह कहा जा सकता है कि वह पुस्तकों के अकाल से पीड़ित है। एक ओर तो पुस्तकों के वितरण और उत्पादन में हुई तकनीकी क्रान्ति से यह सम्भव हो गया है कि अपेक्षया कम खर्च में अच्छे किस्म की अधिकाधिक पुस्तकें बाजार में लायी जा सकें और दूसरी ओर विकासशील देश पुस्तकों की कमी से परेशान हैं, शिक्षा के अवसर बढ़ने के साथ-साथ यह कमी और तीव्र होती जा रही है।

प्रश्न है कि पुस्तकों का प्रकाशन तो खूब फले-फूले, परन्तु अच्छी और उपयोगी पुस्तकें पाठकों तक कैसे पहुँचायी जायँ? सबसे अधिक विकसित देशों में भी, जो लोग पढ़ना जानते हैं, उनका बहुत बड़ा हिस्सा कभी पुस्तकें नहीं पढ़ता या बहुत ही कम पढ़ता है।

नीदरलैण्ड में, जहाँ पढ़ाई बड़ी व्यापक है, १९६० में एक सर्वेक्षण किया गया था। उससे पता चला कि जिन व्यक्तियों से भेंट की गयी, उनमें से ४० प्रतिशत ने यह कहा कि 'हमें पढ़ना अच्छा नहीं लगता'। इटली में ४०० व्यक्तियों से भेंट की गयी, उनमें से १६० न पढ़नेवाले थे। उनमें से ३१ ने तो यह कहा कि हमें पढ़ने में कभी भी दिलचस्पी नहीं थी, पर १२९ ने यह कहा कि हमारी पढ़ने की आदत छूट गयी है। यह ऐसी समस्या है कि जो वयस्क जीवन में ही पैदा होती है—खास तौर से युवा वयस्कों में—न पढ़ने से इनकी पढ़ाई भूल जाने की सबसे अधिक सम्भावना है।

स्कूली-शिक्षा जितनी कम मिली होती है, उतनी ही जल्दी यह अभ्यास छूटता है। सभी जगह विद्यार्थी प्रायः सबसे परिश्रमी पाठक होते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं कि एक बार उनकी पढ़ाई पूरी हो जाने पर भी अन्त में उनके अ-पाठक हो जाने का कोई खतरा नहीं। ऐसे संकेत भी मिलते हैं कि उच्चपदस्थ लोग, जो विश्वविद्यालयों के स्नातक भी हैं, मध्यम दर्जे के कर्मचारियों से कम पढ़े हैं।

सर्वेक्षणों में जिन व्यक्तियों से भेंट की गयी, वे आमतौर से स्वीकार करते हैं कि पढ़ना 'अच्छी बात' है। पढ़ने से 'लाभ' है, पढ़ना 'जरूरी' है, पर वे अपने-आपको इस आधार पर अपवाद मानते हैं, कभी वे अपने को दोषी भी ठहराते हैं—कि हमारे पास समय नहीं, हमें दूसरे काम करने होते हैं, या हम दूसरे कामों को महत्त्व देते हैं। आज यह बात बड़ी मुश्किल से ही कहता है कि पढ़ना 'औरतों के लिए ठीक' है। पर अब भी यह भावना बड़ी व्यापक है कि पढ़ना 'दूसरे लोगों के लिए अच्छा' है, और इसमें व्यञ्जना यह होती है कि खास तौर से उन लोगों के लिए यह अच्छा है जिनके पास कोई और इससे अच्छा काम करने के लिए नहीं है।

यहाँ हमने पाठकों की कुछ कठिनाइयाँ पेश की हैं। अब हम लेखकों की कठिनाइयों को समझें।

महादेवी वर्मा साहसिक कवयित्री हैं। वह मानती हैं कि 'प्रकाशक तो लेखक का उपयोग रेशम के कीड़ों की तरह करना चाहता है। बस, रेशम निकाल लो और उस कीड़े को मार डालो। वह व्यापार करता ही है केवल छलने के लिए या ठगने के लिए।......यह जो आजकल प्रकाशकों का अनुबन्ध-तन्त्र है इसमें तो लेखक बिक जाता है। लेखक को इसके खिलाफ आवाज उठानी चाहिए।'

सुमित्रानन्दन पन्त का कहना है कि 'बड़ी ही खराब स्थिति है भाई। मैं प्रकाशक होता तो क्या करता कुछ कह नहीं सकता। लेकिन वैसे देखो तो इससे बढ़कर अन्याय कुछ हो नहीं सकता कि बेचारे गरीब असहाय लेखक की मजबूरी का प्रकाशक इस तरह लाभ उठाये।... प्रकाशक तरह-तरह के संकलन करा लेता है और उससे गैर-मामूली लाभ उठाने की कोशिश करता है। फिर झगड़े उठाता है और उससे मानसिक तनाव बढ़ता है।'' ...लेखक और प्रकाशक के नये रिश्ते बनने चाहिए जिसका मूल आधार सदाशयता हो।'

जैनेन्द्र कुमार मानते हैं कि 'लेखक के साथ एक याचना-वृत्ति जुड़ी रहती है।

वह वणिक-वृत्ति से नहीं चल सकता। लाभ की वृत्ति व्यापारी के पास रहे, वही ठीक। लेखक को तो लाभ की बात सोचनी भी नहीं चाहिए। लेखक को धोखा खाने के लिए तैयार रहना चाहिए।...... लोकमत के जरिये लेखक वहाँ पहुँच जाय जहाँ सब लोग उसके बारे में ठीक से जानें-समझें।'

अब जरा प्रकाशक को समझिए।

दिनेशचन्द्र नये उभरते प्रकाशक हैं। उनके अनुसार 'एकाएक पैसे और यश की लालच तमाम तरह के गलत काम करवा रही है। लेखक और प्रकाशक के बीच जो भी समझौता होता है उसे पवित्र मानकर उसका यदि पालन किया जाय तो झंझट ही किस बात की? ·· एक लेखक को प्रतिष्ठित कराने में प्रकाशक को कितनी भाग-दौड़ या आर्थिक झंझटें उठानी पड़ती है, उसकी किताब लगवाने में कितना खर्च आता है, या कितनी बेइज्जती सहनी पड़ती है, इसका कोई भी अनुमान लगाये बिना लेखक अपनी पुस्तक उठाकर झट से दूसरे को सौंप देना चाहता है और यदि इस पर प्रकाशक कुछ नानुच करे तो वही बुरा बनता है। एक ही पुस्तक से सम्मानित नाटककार तीन किताबें बनाते हैं और उसे तेरह जगह संकलन में देते हैं।'——

अब ये कुछ ऐसी कठिनाइयाँ है जिनका सामना इस पुस्तक वर्ष में करना चाहिए। लेखक अच्छी पुस्तक तैयार करे, प्रकाशक उसको सुन्दर रूप दे और वह पुस्तक पाठक तक पहुँचा देने की व्यवस्था करे। आज तो कोई बड़ा लेखक है, उसका खूब नाम है तो उसकी पुस्तकों की कीमत भी नाम के अनुसार ही बढ़ा दी जाती है और फिर सामान्य पाठक जो पुस्तक खरीदना भी चाहता, नहीं खरीद पाता। जब १८ मार्च को दिल्ली में राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि ने १० दिवसीय विश्व पुस्तक-मेले का उद्घाटन किया तो उन्होंने यह बात कही कि श्रेष्ठ पुस्तकें कम कीमत पर पाठकों को उपलब्ध हो सकें इसका उपाय किया जाना चाहिए।

भारत जैसे देश में पहला काम तो यह करना होगा कि लोगों में पढ़ने की आदत पैदा हो और, यह आदत तब पैदा होगी जब लोगों में नयी चीज सीखने, जानने की जिज्ञासा बढ़ेगी। जो सामाजिक कार्यकर्ता समाज में काम करते हैं उनका सम्पर्क जनता से है। वे जनता में पढ़ने की रुचि पैदा करें और उन तक उनके लायक पुस्तकों और पत्रिकाओं को पहुँचाने का वे प्रयत्न करें। दूसरा काम यह करना होगा कि जीवन की वास्तविकता से साहित्य को दूर न किया जाय, बल्कि उसके नजदीक लाया जाय। आज इसका ताल-मेल बैठता नजर नहीं आ रहा है। आशा है इस वर्ष पाठक, प्रकाशक और लेखक चिन्तन करेंगे और सभी एक-दूसरे के लिए सहायक बनने का प्रयत्न करेंगे। ●

तवा ठण्डा नहीं होने देंगे

'हमारे गाँव के प्रधानजी ने एक लाख रुपये का मकान बनवाया है। यह मकान मजदूरों के खून से बना है। बिना गरीबों का खून चूसे कोई भी आदमी धीमान नहीं बन सकता।' गुलाबचन्द का छोटा-सा किसान लाखन बोल रहा था, 'मुझे आपका विचार बहुत अच्छा लगा। मेरे पास सत्रह बिस्वा (⅞ बीघा) जमीन है, उससे मेरा भी तो काम नहीं चलता। मैं बूढ़ा भी हो गया हूँ। आप मेरी यह सम्पूर्ण भूमि लिख लीजिए और किसी गरीब बाल-बच्चेवाले भूमिहीन को दे दीजिए, देवीराम चमार कह रहा था। दुनिया जिन्हें अज्ञानी कहती है उनके मुँह से ऐसी-ऐसी ज्ञान की और भावना की बातें सुनने को मिलती हैं कि कितनों का बखान किया जाय!

उत्तर प्रदेश के आगरा जिले के जगनेर प्रखण्ड में ता० ३ से ११ मार्च तक पुष्टि-अभियान चला। १९६७ में जगनेर का प्रखण्डदान हुआ था। उसके बाद वहाँ कोई कार्यकर्ता नहीं जा पाया। पुष्टि का कोई अनुभव न होने से पूर्व-तैयारी भी नहीं हो पायी थी। उत्तर प्रदेश के सारे प्रमुख कार्यकर्ता इस अभियान में आयें, पुष्टि का अनुभव लें और अपने-अपने क्षेत्रों में इसी तरह का अभियान चलायें, ऐसी योजना बनी और प्रयत्न भी हुआ था। पर उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी के प्रयत्न के बावजूद भी मुश्किल से १०-१५ कार्यकर्ता उत्तर प्रदेश के ५-७ जिलों से आये थे।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष दो दिन के लिए आये थे, परन्तु स्वास्थ्य खराब हो जाने से वे घूम नहीं सके। गांधी स्मारक-निधि के मंत्री श्री देवेन्द्रभाई गुप्त के चार दिन के लिए आये थे। गुजरात सर्वोदय मण्डल के मंत्री कान्तिभाई शाह, आन्ध्र प्रदेश-सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री चारी और उनके दो साथी, पंजाब से श्री यशपाल मित्तल, ठाकुरदास बंग आदि बाहर से आये थे। कुल ३०-३५ कार्यकर्ता ६ टोलियों में २७ गाँवों में घूमे। इस अभियान की फलश्रुति निम्न प्रकार रही :

प्राप्त भूमि—५८ एकड़, वितरित भूमि ४६ एकड़, दाता ४१, आदाता ३४, ग्रामसभा ८, ग्राम शान्ति, सेवा-केन्द्र ७।

यहाँ की भूमि मध्यम दर्जे की है। हर गाँव में ठाकुर, ब्राह्मण, बनिये आदि जातियों में आपस में बहुत झगड़े होने से ग्रामसभा का बनाना बहुत कठिन काम था। गाँवों में बड़े-बड़े जमींदार गरीबों को बहुत तंग करते हैं। छोटी-सी बात पर भी उनका खून कर देते हैं। शासन, पुलिस में इनकी चलती है। अतः एक नहीं अनेक खून करने पर भी सरकार इनका बाल बांका नहीं कर सकती। सम्पत्ति के बल पर समाज में इनका स्थान भी जैसा-का-तैसा बना रहता है। मूर्ख प्रजा इन्हें ही अपना प्रतिनिधि चुनती है, पदाधिकारी बनाती है। इस क्षेत्र में चक्की तथा मकान में लगनेवाले पत्थर की खदानें हैं। अतः बेकारी की समस्या नहीं है पर शोषण बहुत होता है।

स्त्रियों की हालत गुलामों से बदतर है। उन्हें देखकर विश्वास नहीं होता कि हम २०वीं सदी में हैं। घूंघट तथा अज्ञान ने जमकर उनपर कब्जा किया हुआ है। लोग बहुत स्नेहशील हैं। इतनी अच्छी बातें तो हमसे अब तक किसी ने नहीं कहीं—'आप हमारे गाँव से जाइये नहीं।' स्त्रियों की सभा के बाद बहनें कहती और पकड़कर आग्रह से, प्यार से, बैठने के लिए मजबूर करती थीं।

अभियान के बाद आगे का काम चलाने के लिए स्थानीय उत्साही लोगों की 'जगनेर प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति' बनायी गयी और पूरा समय देनेवाले एक कार्यकर्ता की इस काम के लिए नियुक्ति भी की गयी। इस अभियान के कारण भूदान के जमाने की तरह अनुकूल हवा बनी। तपा हुआ तवा ठण्डा न हो अतः जगनेर प्रखण्ड से लगे हुए खैरागढ़ प्रखण्ड में ता० ३० अप्रैल से ९ मई तक पुष्टि-अभियान लेने का निर्णय हुआ। इस तरह जल्द-से-जल्द आगरा जिले की पुष्टि करने का प्रयत्न जिला सर्वोदय मण्डल करेगा। जगनेर के स्थानीय कार्यकर्ताओं ने आश्वासन दिया कि वे यहाँ का बचा हुआ पुष्टि का काम पूरा करेंगे और इस प्रकार तवा ठण्डा नहीं होने देंगे।

—सुमन बंग

मतदाता-शिक्षण

जमशेदपुर

जमशेदपुर, १० मार्च। सिंहभूम जिला सर्वोदय मण्डल द्वारा पिछले दिनों विधानसभा के आम चुनाव के अवसर पर मतदाता-शिक्षण का कार्य हुआ। मण्डल के मंत्री श्री आरिफ गद्दी, श्री रुद्रभानजी, और श्री अब्दुलमन्नान साहब ने घूम-घूमकर नगर एवं नगर के आस-पास के देहाती क्षेत्रों में सम्पर्क किया। मतदान के अवसर पर पोलिंग बूथों पर घूम-घूमकर शान्ति बनाये रखने तथा बोगस वोट न पड़े, इसकी निगरानी की गयी।

यहाँ दो दिनों का चुनाव बिल्कुल शान्तिमय ढंग से सम्पन्न हुआ।

बालाघाट

जिला सर्वोदय मण्डल बालाघाट (म० प्र०) के अध्यक्ष ने सूचित किया है कि लांजी निर्वाचन क्षेत्र में ग्राम भानेगांव तथा वारासिवनी निर्वाचन-क्षेत्र के ग्राम-मुरझड़ फार्म में संयुक्त मंच का आयोजन किया गया।

दोनों संयुक्त मंच के आयोजन में कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार नहीं आये, जबकि स्वतन्त्र व विरोधी दलों के उम्मीदवारों ने भाग लेकर अपने-अपने कार्यक्रमों की जानकारी लोगों के सामने रखी। कांग्रेस के उम्मीदवारों की अनुपस्थिति के कारण लोगों को आश्चर्य हुआ।

हिसार

हिसार में सर्वोदय-विचार काफी दिनों से प्रचारित होता चला आ रहा है, इसमें भी वर्ष '६८ से, जब से गांधी अध्ययन केन्द्र हिसार के तत्वावधान में नियमित रूप से रविवासरीय सभाओं का आयोजन शुरू हुआ है, सर्वोदय विचार का प्रवेश नगर के बुद्धिजीवी वर्ग में हुआ। तीन वर्ष के इस नियमित कार्यक्रम का यह परिणाम हुआ कि नगर के जागरूक नागरिकों के दिल में सर्वोदय विचार के प्रति आकर्षण और चिन्तन के पश्चात् इस विचार के प्रति सक्रियता के साथ सहयोगी बनने की भावना पैदा हुई।

नगर के जागरूक नागरिकों ने यहां वोटर्स कौंसिल की स्थापना की है। वोटर्स कौंसिल की ओर से मर्यादाएं उम्मीदवारों तथा मतदाताओं के लिए तय की गयी हैं। मतदाता-शिक्षण की दृष्टि से पहली बार हिसार नगर में एक मौन जुलूस ६ मार्च को निकाला गया।

हिसार जिला सर्वोदय मण्डल (हरियाणा) के तत्वावधान में १ मार्च को एमनाबाद, ४ मार्च को तोशाम, तथा ८ मार्च को भिवानी में सर्वोदय के चुनाव-अभियान को लेकर सार्वजनिक सभाओं का आयोजन किया गया, जिनमें सर्वश्री दादा गणेशीलाल, जगनारायण वर्मा, हरलाल साहू तथा बन्सीलाल ने अपने विचार दिये। इसके साथ ही उम्मीदवारों तथा मतदाताओं की सेवा में प्रकाशित मर्यादाएँ एवं कसौटियों के लिए विज्ञापन का सारे जिलेभर में प्रचारण हुआ।

लोकयात्री दल महाराष्ट्र में

अखिल भारत महिला लोकयात्री दल आगामी २१ मार्च को गुजरात प्रदेश की अपनी यात्रा समाप्त कर सम्पोल नामक गाँव से महाराष्ट्र में प्रवेश करेगा। एक जानकारी के अनुसार महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल द्वारा लोकयात्री दल के स्वागत एवं यात्रा के पड़ावों आदि की व्यवस्था की तैयारी प्रारम्भ कर दी गयी है।

आचार्य विनोबा भावे की प्रेरणा से भारत में स्त्री-शक्तिजागरण के उद्देश्य से लगभग चार वर्ष पूर्व कस्तूरबा ग्राम (इन्दौर) से उक्त महिला लोक-यात्रा का शुभारम्भ हुआ था।

मध्यप्रदेश में १, ९०, ४७१ एकड़ भूदान-भूमि ५२, २२२ भूमिहीनों में वितरित

भोपाल, ११ मार्च। मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ-बोर्ड द्वारा प्रदेश में भूदान-आन्दोलन के अन्तर्गत प्राप्त ४०९,९२७ एकड़ भूमि में से अब तक १,९०,४७१ एकड़ भूमि ४३ में से ४० जिलों के ५२, २२२ भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा चुकी है। सर्वाधिक भूदान-भूमि ४१, २८८ एकड़ १०,१९३ भूमिहीनों में मुरैना जिले में वितरित हुई है। सीहोर, रायसेन और बस्तर ऐसे जिले हैं जहां अब तक कोई भूदान-भूमि वितरित नहीं हो सकी है।

अन्तर-प्रदेशीय तरुण-शान्ति-सेना-शिविर-शृंखला

महाराष्ट्र की तरुण-शान्तिसेना ने इस वर्ष ग्रीष्मकालीन अवकाश में नव-युवकों के लिए अन्तर-प्रदेशीय तरुण-शान्तिसेना शिविर-शृंखला का अभिनव आयोजन किया है। ये शिविर नागपुर में ४ से ११ मई, शहादा (धुलिया) में ४ से ११ जून, तथा कोल्हापुर में १६ से २२ जून, १९७२ को होंगे। इन शिविरों में मुख्यतः महाराष्ट्र, मैसूर, आन्ध्र, मध्य-प्रदेश और गुजरात के नवयुवक-युवतियाँ भाग लेंगी। ये युवक देश की सामयिक समस्याओं के निराकरण में युवकों के योगदान के अलावा १९७२ में मनाये जानेवाले स्वतन्त्रता के रौप्यमहोत्सव की योजना पर भी विचार करेंगे। विशेष जानकारी एवं सम्पर्क के लिए संयोजक तरुण-शान्तिसेना-शिविर, पो० गोपुरी (वर्धा) महाराष्ट्र को लिखा जा सकता है।

संयोजक-मण्डल का गठन

कटक, ११ मार्च। उत्कल प्रदेश सर्वोदय मण्डल ने कार्यकारिणी के रूप में एक संयोजक-मण्डल का गठन किया है। मण्डल में अध्यक्ष और मंत्री कोई नहीं है। समूचे उत्कल को चार क्षेत्रों में विभाजित किया गया है और प्रत्येक क्षेत्र की जिम्मेदारी क्रमशः श्री कृष्णासिंह, नरहरि स्वाइन, और प्रशान्तकुमार मोहन्ती को सौंपा गया है। श्री विनोद मोहन्ती कार्यालय संयोजक मनोनीत हुए हैं।

पदयात्रा

सारण जिला (बिहार) के जलाल-पुर प्रखण्ड से श्री दिनेशचन्द्रजी ने समाचार भेजा है कि जलालपुर की १८ पंचायतों में १२५ मील की पदयात्रा के दरम्यान ३३ पड़ावों पर सार्वजनिक सभाएं हुई। इस प्रखण्ड में ग्रामदान-पुष्टि-कार्य की कोशिश की जा रही है।

फुलिया भगत

हरियाणा से फुलिया भगत लिखते हैं—मैंने ४ अप्रैल १९५९ से अब तक १८२७३ मील की पैदल यात्रा की और १४२८० रु० ३४ पैसे का साहित्य बेचा है। ४८०९ गांवों और स्कूलों में सर्वोदय का सन्देश पहुंचाया है।

यह सब काम बाबा के आशीर्वाद से ही हुआ है, मेरे अन्दर कोई ऐसी ताकत नहीं थी। अब मैं मुण्डेता ग्राम, जो कि पंजाब में सबसे पहला ग्राम-दान था वहाँ अपनी भक्ति और शक्ति लगाऊँगा।

मुंगेर

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की पुण्य-तिथि की स्मृति में जिला सर्वोदय मण्डल, मुंगेर तथा अखिल भारतीय तरुण-शान्ति-सेना, मुंगेर के संयुक्त तत्वावधान में शान्ति दिवस मनाया गया। प्रभातफेरी, सामूहिक सफाई, सामूहिक कताई तथा सर्वधर्म प्रार्थना के साथ परमपूज्य बापू को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी।

भूदान-यज्ञ २७-३-'७२ लाइसेन्स नं० प ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३६४

शान्ति-समाचार

अमेरिका

वियतनाम युद्ध और अमेरिकी शान्ति आन्दोलन के सम्बन्ध में इंग्लैण्ड और अमेरिका में बहुत सारी रिपोर्ट छपी है।

२१ जनवरी को लन्दन के गार्जियन ने, फादर फिलिप बेरीगान और दूसरे ७ लोगों पर जो राष्ट्रपति के सलाहकार डा० हेनरी किसिंगर को अपहरण करने और वाशिंगटन की सरकारी इमारत को गर्मी पहुँचाने की व्यवस्था खत्म करने के सिलसिले में मुकदमा चलाया जा रहा है, उस पर कड़ी आलोचना की। गार्जियन ने लिखा है कि 'राष्ट्रपति निक्सन अमेरिकन शान्ति-आन्दोलन को खामोश करने में सफल हो गये हैं।

२५ जनवरी को 'लन्दन टाइम्स' ने यह सूचना दी कि फादर फिलिप बेरीगान ने अपने समर्थकों को सन्देश भेजा है, जिसमें लिखा है कि 'हमारे लिए चिन्तित होने के बदले, हमारे मुकदमे से आन्दोलन को नया जीवन मिलना चाहिए।'

राष्ट्रपति निक्सन को डर है कि शान्ति-आन्दोलन अमेरिका के भीतर और बाहर फिर जीवित हो उठेगा। यह सूचना पेरिस के इण्टरनेशनल हेराल्ड 'ट्रिब्यून' से मिला है। २६ के 'ट्रिब्युन' ने यह पता दिया कि अमेरिकी सरकार ने फ्रांसीसी सरकार से यह अनुरोध किया कि वर्सेलीज में ११ से १३ फरवरी तक युद्ध के विरोध में वर्ल्ड एसेम्बली बैठनेवाली है, उस पर रोक लगायी जाय। फ्रान्सीसी सरकार ने यह स्वीकार नहीं किया।

अमेरिका में एक कमिटी बनी है। यह कमिटी स्वयं रिटायर होनेवाले 'वार वेटरन' की, जो अपने घर वापस आना चाहते हैं, सहायता करेगी। इस कमिटी का नाम 'सेफ रिटर्न' है।

उत्तरी आयरलैण्ड में अत्याचार के विरुद्ध अमेरिका में प्रदर्शन

डब्ल्यू० आर० आई० के समर्थन से अमेरिका में वार रेजिस्टर्स लीग ने कैथोलिक पीस फेलोशिप की सहायता से, २६ जनवरी को न्यूयार्क सिटी के बी० ओ० ए० सी० कार्यालय में पिकेटिंग की। कार्यालय में प्लेकार्ड्स लगे हुए थे जिन पर लिखा था, 'उत्तरी आयरलैण्ड से ब्रिटिश सेना निकालो', 'उत्तरी आयरलैण्ड में अत्याचार और रक्तपात खत्म हो' इत्यादि।

पुरोहित फ्रांस में

स्विटजरलैण्ड में यात्रा उत्साहवर्द्धक रही। यहाँ बर्न पार्लियामेण्ट के सामने प्रदर्शन का कार्यक्रम रहा। करीब १०० भाई-बहनों ने इसमें भाग लिया। ३५ कि० मी० की पदयात्रा में ३५-४० भाई-बहन शामिल हुए। स्विस में लूजान, जिनेवा, बर्न, विएल, और ज्यूरिख में ग्रुप-बैठकें हुईं। लूजान और विएल में टी० वी० इण्टरव्यू तथा उक्त शहरों में प्रेस कान्फेंस हुई। फ्रांस का कार्यक्रम अपने ढंग का रहा। यहाँ पीस ग्रुप सक्रिय नहीं है, लेकिन स्थानीय सहयोग अच्छा मिला। फ्रांस के पहले पड़ाव स्ट्रासबुर्ग, जहाँ यूरोपियन कौन्सिल का मुख्य दफ्तर है, वहाँ आमसभा का कार्यक्रम रहा और कौन्सिल के अध्यक्ष ने चर्चा के लिए आमन्त्रित किया। ६ भाई-बहन यात्रा के लिए वहाँ से पेरिस तक थी, ५०० किलोमीटर से अधिक यात्रा में पैदल साथ रहे। फ्रांस में ५ बार टेलीवीजन इण्टरव्यू और दो बार रेडियो इण्टरव्यू तथा प्रेस-वालों से इण्टरव्यू हुआ। यात्रा अच्छी रही।

—रामसहाय पुरोहित

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

★

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे : श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

भूदान यज्ञ
भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक
सर्वोदय
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

मेरे लालों की समाधि पर

—बेगम सूफ़िया कमाल

कट गयी पूस की रात शीत-जर्जर
झर रही ओस, मेरे लालों की समाधि पर।

माँओ की आँखों, बहनों की आँखों, बहुओं की आँखो के तारे
अपनी धरती के लिए प्राण उन्होंने वारे,
नौ मास कट गये—ताजे खून से सिंची माटी इस देश की
उर्वर हो, आयी है ले
मौसमी फूल, गंध धान की, मीठी सुनहली धूप बांगला देश में
मेरे बच्चे उसी आवेश में
सो गये हैं, अहा थककर। सोयें, तोड़ूँगी नही नींद उनकी

इसी माटी को चूमकर
चूमा तुम्हें ओ मेरे दुलारो!
घास पर फिराने से हाथ
लगता है मानो अकस्मात्
हाथ को पकड़कर तुमलोग कर रहे हो बात!

मुस्कराते हुए-से हजार-हजार मुख -
"स्वाधीन किया है बांगला देश को, हो नहीं रहा है माँ तुम्हे गर्वित सुख ?"
ओ सिंह सपूतो। ओ रे प्यारो। बांगला माँ का आसन
किया तुम्हीं ने आज विश्व में उसका स्थापन
हृदय रक्त मानिक से सज्जित कर लाल-लाल।

युग युगान्त तक महाकाल
खड़ा-खड़ा देखेगा सादर, महाविश्व का यह विस्मय—
मेरे लालो! तुम मृत्युंजय।

रचनाकाल : १७-१२-'७१ —अनुवादक विष्णुकांत शास्त्री

[बांगला देश की प्रख्यात कवयित्री बेगम सूफ़िया कमाल की एक रचना, जो पाकिस्तानी फौजों के आत्मसमर्पण के एक दिन बाद लिखी गयी थी। हम इसे 'धर्मयुग' से साभार उद्धृत कर रहे हैं।]

'कटुता कैसे मिटे ?'

डा० फरीदी के वक्तव्य की समीक्षा

'भूदान-यज्ञ' के ६ मार्च सन् १९७२ के अंक में इस्लामी बिरादरी (मुस्लिम मजलिस) के संस्थापक व नेता डाक्टर फरीदी का 'रेडिएंस' अखबार से उद्धृत किया हुआ वक्तव्य छपा है।

इससे पहिले अखबारों में मुस्लिम मजलिस का वह प्रस्ताव भी छपा था जिसमें यह मांग की गयी थी कि मुसलमान विषयक कानून केवल वही लोग बनावें जिन्हें शरीअत आदि का ज्ञान हो। उनकी ये बातें उस मनोवृत्ति को दिखाती हैं जिनके द्वारा मुसलमानों में अलगाव का प्रचार करके उन्हें अन्य देशवासियों के साथ घुल-मिल कर रहने से रोका जाता है।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि कटुता पैदा करने व फैलानेवाले कारणों में यह एक प्रमुख कारण है।

डाक्टर फरीदी का कहना है कि 'यह इतिहास के लेखकों का काम है कि वे बतावें कि इस नये राष्ट्र के जन्म में भारत का कितना हिस्सा रहा है और बांगला देश की स्थानीय जनता का कितना रहा।' जाहिर है कि इतिहासकारों के नाम से डाक्टर फरीदी का इशारा यह है कि बांगला देश की आजादी, वहां के रहनेवालों की स्वतंत्रता की भूख, उनकी जद्दोजहद व असीम त्याग एवं बलिदान का फल नहीं है बल्कि भारत की दिग्विजय की लालसा का परिणाम है।

बंगालियों के असीम त्याग व बलिदान को नजरअन्दाज करके स्वतन्त्रता के लिए जद्दोजहद करनेवाले भारत की स्वतन्त्रता-संग्राम में बांगला देशवासियों की मदद को भारत की दिग्विजय समझना बिलकुल गलत है।

डाक्टर साहब ने श्री भुट्टो के हवाले से यह स्वीकार करते हुए कि भारत ने पाकिस्तान को शिकस्त दी है भारत से यह अपील की है कि वह पाकिस्तान के प्रति उदारता दिखाये।

हमें नहीं मालूम कि डाक्टर साहब का इशारा किस बात में उदारता दिखाने की तरफ है, किन्तु भुट्टो साहब ने उदारता की मांग इस माने में की है कि भारत तुरन्त बिना शर्त युद्धबन्दियों को छोड़ दे।

इन्साफ का तकाजा तो यह है कि पाकिस्तान व उसके हमदर्दों की ओर से यह मांग तब की जाये जब पाकिस्तान पैवस्त हथियार व फौज के बल से जीते हुए कश्मीर के इलाके को खाली करके भारत से न लड़ने की सन्धि पर हस्ताक्षर करने को प्रस्तुत हो जाये।

जो भी हो, यह तो मूर्खता की पराकाष्ठा होगी कि पाकिस्तान तो हमेशा लड़ाई की बात करे, लड़ाई की तैयारी के लिए विदेशों से हथियार प्राप्त करने की कोशिश में लगा रहे और भारत उदारता दिखाते हुए अपने विरुद्ध लड़ने के लिए एक लाख युद्धबन्दियों को बिना शर्त छोड़ दे।

किन्तु यदि उनका अभिप्राय यह है कि विभिन्न धर्मवालों के भारत में बसने के कारण भारत बहुराष्ट्रीय देश है तो क्या हम यह समझें कि डाक्टर साहब की राय में हिन्दू सम्प्रदायवादी सही कहते हैं कि यहां के मुसलमानों की राष्ट्रीयता भारतीय नहीं है ? जाहिर है कि ये दोनों विचार-धाराएं वास्तव में एक ही विचार-धारा के दो रूप हैं। सही बात यह है कि राष्ट्रीयता धर्म के आधार पर नहीं बनती।

बांगला देशवासियों तथा उनके मददगार भारतीयों को द्विराष्ट्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध धर्म-निरपेक्षता के सिद्धान्त ने ही सहयोग व मित्रता के सूत्र में बांधा और देश के लड़नेवालों में वह शक्ति व सहयोग प्रदान किया, जिससे बांगला देशवासियों का देश-प्रेम व कुर्बानी स्वतन्त्र बांगला देश के रूप में इतनी सुगमता व शीघ्रता से सफल हुई।

भारत, बांगला देश व पाकिस्तान का महासंघ—

इस प्रस्तावित महासंघ में डाक्टर फरीदी कश्मीर को भी शामिल करना चाहते हैं। न जाने किस युक्ति के आधार पर डाक्टर साहब ने भारतीय प्रान्त कश्मीर को महासंघ में शामिल होने की बात कही। कश्मीर के दो-तिहाई से अधिक सदस्य हाल के चुनाव में इस ऐलानिया नारे पर चुने गये हैं कि वे भारत के साथ रहना चाहते हैं। किन्तु पख्तूनिस्तान, बलुचिस्तान आदि के महासंघ में शामिल करने की बात नहीं कही, जहां के चुने हुए सदस्य ऐलानिया स्वायत्तता की मांग कर रहे हैं।

कहना न होगा कि इस तरह पाकिस्तान के सुर में सुर मिलाकर बोलने से न कोई समस्या सुलझेगी न कटुता घटेगी। बल्कि इसी रवैये के मातहत पाकिस्तान ने भारत पर तीन लड़ाइयां थोपी हैं।

जाहिर है कि डाक्टर फरीदी का विश्लेषण गलत है और उनके सुझावों को मानने से कटुता घटनी तो दूर रही, उल्टी बढ़ेगी।

अन्त में हम डाक्टर फरीदी और उन जैसे विचारवालों से एक प्रार्थना करना चाहेंगे। उन्होंने भारतीय मुसलमानों का काफी नुकसान कर दिया। अब वह उनपर रहम करें, उन्हें अलगाव का पाठ पढ़ाना बन्द करें जिसमें कि वे अन्य भारतीयों के साथ भारत-भूमि की धूलि में अधिकारपूर्ण तरीके पर खेलें। इस प्रकार तरक्की के रास्ते पर अग्रसर होकर अपनी रक्षा या समृद्धि के लिए किसी सरकार के मुहताज न रहें बल्कि स्वेच्छा से भारतीय नागरिक के कर्तव्यों का पालन करें और अधिकारपूर्ण तरीके पर अन्य भारतीयों के साथ मिलकर भारतीय सुविधाओं का उपयोग करें और इस प्रकार भारत की हिन्दू-मुस्लिम कटुता को निर्मूल करने में योग दें।

मुरादाबाद (उ० प्र०) —जीवाराम

मिट्टी का तेल

स्टेशन पर गाड़ी पहुँची, खड़ी हुई। अखबारवाला जोर-जोर से चिल्लाने लगा 'मिट्टी का तेल महँगा हो गया'। खिड़की के पास बैठा एक अधेड़ ग्रामीण गाजर खा रहा था। बोला, 'पहले बता देते तो गाजर का पैसा तेल के लिए बचा लेता। गाजर बिना तो चल भी जायगा, लेकिन रात को घर में एक ढिबरी बिना कैसे चलेगा?'

घर-गृहस्थी के सामान्य लोग बजट की बारीकियों को नहीं समझते। वे एक ही भाषा समझते हैं—जेब। हर चीज को तौलने की उनके पास एक ही तराजू होती है—अपनी जेब। यहीं नहीं, तमाम दुनिया में यही हाल है। विदेशों में भी गृहिणियाँ देश के बजट को अपनी चाय और चीनी की ही नजर से देखती हैं। घर का खर्च न बढ़े तो बजट अच्छा, अगर बढ़ जाय तो बजट बुरा, बजट बनानेवाली सरकार बुरी, सरकार जिस पार्टी की है वह पार्टी बुरी।

विशेषज्ञों का कहना है कि इस साल वित्तमंत्री के लिए बजट बनाने का काम बेहद मुश्किल था। बांगला देश के शरणार्थी, बांगला देश की लड़ाई, बांगला देश की सहायता, सेना का बढ़ता हुआ खर्च, पंचवर्षीय योजना, नये राज्य, भारी-भरकम सरकार, गरीबी हटाओ के विशेष कार्यक्रम आदि सभी खर्च एक साथ आ गये। आमदनी बढ़ी नहीं, खर्च बेतहाशा बढ़ गया। घाटे का बजट बनाना पड़ा जिसे पूरा करने के लिए कर्ज लेना पड़ेगा। विदेशी मदद माँगनी पड़ेगी, नोटें छापनी होंगी। दूसरा उपाय क्या है?

बजट और बन्दूक, ये दो जबरदस्त शक्तियाँ सरकार के हाथ में होती हैं। बन्दूक सामने से वार करती है, लेकिन बजट की शक्ति अन्दर-अन्दर काम करती है। देश एक शरीर है जिसकी रग-रग में खून पहुँचाने का काम बजट करता है। सुरक्षा, भोजन, वस्त्र, शिक्षा, स्वास्थ्य, कोई चीज ऐसी नहीं है जो बजट के प्रभाव से बाहर हो; यहाँ तक कि बजट में सरकार विकास और टैक्स की जो नीति अपनाती है उससे देश का भविष्य तो स्थिर होता ही है, जनता का चरित्र भी बनता-बिगड़ता है। कोटा, परमिट, कण्ट्रोल, लाइसेन्स, आदि के नैतिक परिणामों की छान-बीन की जाय तो पता चलेगा कि सरकारी रीति-नीति ने बाजार और समाज के नैतिक मूल्यों को कहाँ-से-कहाँ तक पहुँचा दिया है। यह कौन नहीं जानता कि चोरबाजार उतना ही जबरदस्त हो गया है जितना खुला बाजार है? एक ओर सरकार अपने अधिकार बढ़ाती है तो दूसरी ओर लोग उससे बचने के उपाय निकालते हैं। कानून बनानेवाले विशेषज्ञ, और उनसे बचने के उपाय निकालनेवाले 'विशेषज्ञ'!

कई जानकार लोगों ने सरकार की पीठ ठोंकी है कि इतनी कठिनाइयों के होते हुए भी उसने अपनी योजना पर होनेवाला खर्च नहीं घटाया है। सरकार के विभाग और सरकार की योजना, इनमें से किसी का खर्च घटा नहीं है, बढ़ा है। बढ़ना जरूरी था या नहीं, इसपर मतभेद हो सकता है, लेकिन क्या इसपर भी मतभेद है कि गरीबी मिटनी चाहिए, विषमता घटनी चाहिए और हर नागरिक को ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिलनी चाहिए? लेकिन ये काम हो नहीं पाते। न हो पाने का सबसे बड़ा कारण यह है कि सरकार स्वयं जिन निहित स्वार्थों को बनाती है, या जिन्हें वह दूर नहीं कर पाती, वे सरकार और समाज दोनों पर हावी रहते हैं। जिस राजनीति से सरकार का जन्म होता है वह बहुत बड़े अंश में चोरबाजारी के पैसे से चलती है!

सरकार कल्याण चाहती है, न्याय चाहती है, लेकिन उसी सरकार से निहित स्वार्थों को पोषण और संरक्षण भी मिलता है! कितना बड़ा विरोधाभास है यह! सामान्य मनुष्य के लिए भगवान माया, सरकार माया, बाजार माया! इस माया के बीच रहकर वह सोचे कि कितना गाजर खायेगा और कितना मिट्टी का तेल जलायेगा! ●

अव्यक्त ईश्वर को नमस्कार

—विनोबा

सुशीला नैयर : बाबा, सब देवों को किया गया नमस्कार केशव को पहुँचता है, तो क्या हम व्यक्त ईश्वर को मानते हैं ? यदि वह अव्यक्त है, तो नमस्कार किसे करते हैं ? यदि हम भी वही हैं तो क्या हम अपने आपको नमस्कार करते हैं ?

बाबा : आपही गावे, आप ही बजावे, आप ही नाचे,

कहत नामदेउ तू मेरा ठाकुर !

सब यही करता है और फिर भी नामदेउ कहता है 'तू मेरा ठाकुर ?' जैसे समुद्र में तरंग उठती है, गिरती है वैसे परमात्मा में हम सब तरंग हैं। बाबा उठा, ८० साल तक ऊपर उठा—वह तरंग ऊपर उठी और फिर नीचे गिर गयी। दूसरा कोई १०० साल तक ऊपर उठा और नीचे गिरा। कोई संकल्प छोटा, कोई बड़ा। सब उठ कर नीचे गिरते हैं, एक ही समुद्र में। उसी में (समुद्र में) यह भजन, कीर्तन, प्रार्थना करते हैं। नमस्कार करते हैं। हम क्या करते हैं ? हम अपने को ही खिलाते हैं और फिर हम ही डाक्टर के पास जाते हैं और हम ही कहते हैं कि हम बीमार हैं। डाक्टर जितना हमारी बीमारी से अलग है, उतने ही हम भी उस बीमारी से अलग हैं। वैसे परसे से हम अलग हैं—उसे दुरुस्त करने हम ही भेजते हैं। और है सब हम ही हम।

सुशीला नैयर : तो नमस्कार किसे करते हैं ?

बाबा : एकनाथ महाराज ने उपमा दी है—"उजवे हातींचें पदार्थों। डावे हातो देता कोण घेता कोण देता। तैसी एकात्मता सर्वांभूतीं।" हमने आपको दिया तो क्या ? एक हाथ ने दूसरे हाथ को दिया।

सुशीला नैयर : लेकिन उसमें एक तरफ आप जैसे अध्यात्म के पर्वत, दूसरी तरफ हमारे जैसे मामूली लोग, फर्क तो है। देनेवाले आप, लेनेवाले हम।

बाबा : (हँसते हुए) हमने जो दिया वह अगर आपने लिया तो आप हमारे जैसे हो गये। लेनेवाला वैसा हो जाता है।

सुशीला नैयर : इतनी जल्दी कहाँ होता है ?

बाबा : ज्ञानी को जो हासिल होता है वह श्रद्धावाले को भी हासिल होता है। उसके लिए ज्ञानदेव महाराज ने उपमा दी। एक आदमी पंढरपुर जा रहा था। उसके पीछे-पीछे एक अन्धा भी चलने लगा। तो आँखवालों के साथ अन्धा भी पंढरपुर पहुँच गया।

'गरीबी हटाओ' के लिए क्या करें ?

सुशील नैयर : देहली में ८-९ अप्रैल को गोष्ठी हो रही है, "गरीबी हटाओ" इस विषय पर। आपका क्या विचार है ?

बाबा : गरीबी हटाने के लिए नम्बर एक चाहिए ब्रह्मचर्य; नम्बर दो, श्रमनिष्ठा; नम्बर तीन, दानम्; नम्बर चार, शिक्षा में सुधार। सब लोग निश्चय करें—बड़े भी—कि कम-से-कम एक घण्टा श्रम किये बिना खाना नहीं। सफाई का काम करें, झाड़ू लगाने का। ऐसा होगा तो भारत में एकदम फरक पड़ेगा। इसका नाम है श्रमनिष्ठा। ब्रह्मचर्य के बिना चलेगा नहीं। बिहार में हमने भूदान-आन्दोलन चलाया। ५ लाख एकड़ जमीन बँटी। आधा-आधा एकड़ प्रति व्यक्ति। उनकी आबादी १० साल में बढ़ जायेगी। तो यह जमीन कम पड़ेगी। इसलिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है। फिर श्रमनिष्ठा हो। अमीर श्रम नहीं करेंगे तो गरीबों को ही श्रम करना पड़ेगा। तो वे श्रम टालते हैं। अमीर अगर श्रम करेंगे तो उनकी बुद्धि भी श्रम के साथ आयेगी। तो अच्छा होगा। जिस दिन खाया उस दिन दान देना चाहिए। जैसे भोगधारा सतत चलती है, वैसे दानधारा सतत चलनी चाहिए।

बंगाल की यात्रा में एक दिन रास्ते में देखा, कुछ मजदूर काम कर रहे हैं। तो मैंने भी यात्रा रोककर उनके साथ कुछ देर काम किया। एक मजदूर ने अपने लड़के को मेरे सामने खड़ा किया और कहा, "अपना पेट काटकर मैंने इसे खिलाया, तालीम दी; लेकिन इसे नौकरी नहीं मिली। यही काम उसे करना पड़ता है। तालीम मिली तो क्या लाभ हुआ ? तात्पर्य, नौकरी सब चाहते हैं, वह नहीं मिल सकती। इस वास्ते शरीर-परिश्रम की निष्ठा आवश्यक है। सकेत के तौर पर हर व्यक्ति श्रम करे। बीच के जमाने में जो सन्त हो गये, उन्होंने शरीर-परिश्रम किया। कोई सन्त शरीर-परिश्रम के बिना नहीं रहा। कबीर बुनता था, गोरा कुम्हार मटके बनाता था। नामदेव दर्जी था।

वकील, डाक्टर, सब के लिए यह लागू है। धर्मोऽयं सार्ववर्णिकः। यह धर्म सब वर्णों को लागू है। श्रमनिष्ठा एक धर्म है। किसान खेती करता है, लेकिन उसे भी कहूँगा कि तुम एक घण्टा सफाई करो। जैसे गांधीजी ने सबको चरखा कातने के लिए कहा था—वैसा ही यह शरीर-परिश्रम का कार्य भी है।

(सुश्री सुशीला नैयर तथा सुश्री मणि-बाला दीदी की विनोबाजी से हुई चर्चा)

सूक्ष्म प्रवेश की फलश्रुति

श्रीमन्जी : आप के सूक्ष्म प्रवेश की फलश्रुति क्या ?

बाबा : "फलश्रुति यही है कि दिन-ब-दिन बाबा का आलस बढ़ रहा है। वैसे बाबा पहले से आलसी ही है। लोग कहते हैं कि बाबा ब्रह्मचारी है।

लेकिन वे कारण नहीं जानते हैं। कारण यही है कि बाबा आलसी है। झूठ बोलने के लिए षड्यंत्र करना पड़ता है। किसी को पीटना हो तो हाथ उठाना पड़ता है। आलसी होना कितना सरल है, कुछ भी नहीं करना।

धीमन्जी : देश की वर्तमान स्थिति के बारे में आप क्या सोचते हैं?

बाबा : अभी तो हमने इस विषय पर विचार करना बन्द किया है। वह सौंप दिया है भगवान पर। लेकिन इतना है कि अखबार पढ़ना बन्द नहीं किया, इसलिए कहाँ-कहाँ क्या-क्या चला है, उसकी थोड़ी जानकारी रहती है। मुख्य सवाल है लोक-शक्ति बनाने का। कहावत प्रसिद्ध है, "दैट गवर्नमेंट इज द बेस्ट व्हिच गवर्न्स द लीस्ट" (वह सरकार उत्तम, जो कम-से-कम हुकूमत चलाती है।) १२-२-७२

आन्दोलन का भविष्य

रामचन्द्र राही : आपने कई बार जाहिर किया है कि विनोबा अब नहीं है। उसके बाद आन्दोलन की स्थिति क्या होगी, यह आप देखना चाहते हैं। दो-ढाई सालों से आप अपने को करीब-करीब उस स्थिति में रख भी रहे हैं। इन दिनों के आप के सूक्ष्म दर्शन से आन्दोलन का भविष्य आपको कैसा प्रतीत होता है?

बाबा : "आन्दोलन का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है। इसलिए नहीं कि सब कार्यकर्ता गुणवान हैं, और निर्दोष हैं—उनमें तो जो गुण हो सकते हैं, वे हैं और दोष भी जो हो सकते हैं वे हैं—इसका भविष्य इसलिए उज्ज्वल है कि भारत को इसके बिना चारा नहीं है। भारत को इसकी अत्यन्त जरूरत है। इसलिए हमारे हाथ से यह काम नहीं होगा तो दूसरों के हाथ से होगा, लेकिन होगा जरूर।"

ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार, वर्धा

ग्रामस्वराज्य में मनुष्य की प्रतिष्ठा हो

—दादा धर्माधिकारी

[प्रथम बिहार ग्रामस्वराज्य सम्मेलन में दादा धर्माधिकारी ने सम्मेलन के दूसरे दिन सम्मेलन की चर्चा सुनने के बाद १५-२-७२ को जो भाषण किया था उसे हम यहाँ दे रहे हैं। दादा ने इस भाषण में ग्रामस्वराज्य का पंचशील बताया है जिसे एक-एक ग्रामस्वराज्य सभा में लागू करना चाहिए और ग्रामस्वराज्य सभाओं की बैठक में इस पर चर्चा करनी चाहिए, चिन्तन करना चाहिए। सं०]

जोर नियम पर नहीं, मनुष्य पर

मेरा निवेदन आपसे यह है कि हमेशा नक्शा काम नहीं देता। जिसे 'ब्लू प्रिंट' कहते हैं यह सारी योजना पूरी बना ली जाय तो होता यह है कि योजना एक तरफ रह जाती है और जीवन दूसरी तरफ को जाता है। पहले तय कर लीजिए कि हमको पहुँचना कहाँ है। आँख को इतनी शक्ति होनी चाहिए कि वह क्षितिज को चीरकर भी देख सके, और कदमों में जितनी ताकत हो उतना हम चलें। उस तरफ को हम चलेंगे जिस तरफ को हमें जाना है। कहीं ऐसा न हो कि संविधान के नियम ज्यादा कड़े हो जायँ। ग्रामसभा में इतना नियम नहीं माना जाना चाहिए जितना ईश्वर। ग्रामसभा एक मत से कोई गलत निर्णय करे, और वह निर्णय अगर जीवन के खिलाफ है, यदि उसमें जीवन का विकास नहीं होता है—जीवन के विकास से मतलब है मनुष्य का मनुष्य के साथ रहना—इस मार्ग को कोई ग्रामसभा सर्वसम्मति से भी तोड़ती है, तो वह सभा की सर्वसत्ता कहलाती है, वह हुक्मशाही कहलाती है। राजनैतिक पार्टी का भी कोई व्यक्ति सर्वसम्मति से चुन लिया जाता है तो वह है पदाधिकारी। यह आप निर्णय कीजिए, आपका यह अधिकार है। लेकिन सर्वसम्मति से कोई ऐसा व्यक्ति चुन लिया जाता है जो अस्पृश्यता को मानता है, फिर क्या होगा? इसे आपको सोचना है। सर्वसम्मति से कोई ऐसा व्यक्ति चुन लिया जाता है जो अपनी स्त्री को पीटता है, तो फिर क्या? मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध में जहाँ पर बाधा पहुँचती है, रुकावट पहुँचती है वहाँ ग्रामसभा को विवेक करना होगा।

आप ग्रामसभा में स्त्रियों की उपस्थिति पाँच प्रतिशत रखें, एक प्रतिशत रखें, या शून्य प्रतिशत रखें, यह आपकी परिस्थिति पर निर्भर है। लेकिन गाँव में स्त्री की उतनी ही इज्जत है जितनी पुरुष की है। यह तो संकल्प आपको करना होगा, यह मानना होगा कि स्त्री की भूमिका गौण नहीं होती। गाँव में स्त्री पर्दे में नहीं रहेगी। गाँव में स्त्री किसी प्रथा से अगर अपमानित होती है तो ऐसी प्रथा गाँव में नहीं चलनी चाहिए। ऐसे संस्कारों का और प्रथाओं का अन्त होना चाहिए। एक गाँव में मैं गया था। एक आदमी पर चोरी के अपराध का आरोप लगा था। ग्रामसभा ने यह तय किया कि जूते में पानी डालकर उसको पिलाया जाय। यह दण्ड देना नहीं हुआ, यह तो मनुष्य का अपमान हुआ। अपराधी को आप दण्डित कर सकते हैं, अपमानित नहीं कर सकते। यह आपको सीखना होगा। ये कुछ मर्यादाएँ हैं चारित्र्य की, जिसमें मनुष्य मनुष्य के साथ रह सकता है।

इन मर्यादाओं पर आप सोचिए। आपकी सभाओं में जोर नियम पर नहीं, मनुष्य पर होगा। मनुष्य मुख्य होगा, नियम गौण। और कौन-सा मनुष्य? जो अन्तिम है, जो आखिरी है। उसका पक्षपात हमारे मन में होना चाहिए। आखिरी मनुष्य का पक्षपाती भगवान है, वह दीनबन्धु है। आखिरी मनुष्य का पक्षपात कोई पक्षपात नहीं। इस मर्यादा को हमने

मान लिया। अछूत ब्राह्मण की बराबरी पर आये। स्त्री पुरुष की बराबरी पर आये और आज जो दरिद्र है, दीन है परिखण्डित है वह जो सबसे धनवान है उसकी बराबरी पर आये। आदर हमारा सबके लिए है, प्रेम सबके लिए है, लेकिन पक्षपात उसके लिए है जो आज तक अन्याय सहता रहा है। इससे हमको हिचकना नहीं चाहिए।

आन्दोलन जड़ क्यों नहीं पकड़ता ?

दूसरे आचार्यजी (राममूर्ति जी) कहते थे कि करें क्या ? किस तरह हो ? यह आन्दोलन जड़ पकड़ क्यों नहीं रहा है ? यह जड़ इसलिए नहीं पकड़ रहा है कि यह कहता है कि मनुष्य मात्र हमारे लिए समान है। मनुष्य मात्र हमारे लिए समान है, यह जितना सही है उतना ही यह भी होना चाहिए कि इन मनुष्यों में जो अब तक मनुष्य नहीं बन पाया है उसके लिए पक्षपात हो। मनुष्यों के समाज में उसे कहीं स्थान ही नहीं।

सर्वसम्मति में विवेक

सर्वसम्मति का अर्थ संख्या का दबाव नहीं मत का दबाव। मत और संख्या में फर्क है। मत होता है हृदय में, बुद्धि और दिमाग में, संख्या होती है हाथ में। *सर्वसम्मति का मतलब यह नहीं है कि* मुट्ठी-भर आदमियों को वीटो का अधिकार दिया जाय। एक आदमी बिगाड़ सकता है किसी कारण से और कोई कारण न हो तो संस्कारवश। अगर ग्रामसभा में बैठकर कोई कहे कि अछूतों को मन्दिरों में आने देंगे तो नरक में जायेंगे। तो क्या आप उसको वीटो का अधिकार देंगे ? *सारा का सारा गाँव एक बात* कह रहा है और एक आदमी नहीं कह रहा है। इसको सोचना होगा। इसमें से रास्ता खोजेंगे। रास्ता बना-बनाया नहीं है मित्रो, आप ऐसे बियाबान में, ऐसे जंगल में कदम रख रहे हैं जहाँ पगडण्डियाँ नहीं हैं।

नया इतिहास कौन बनायेगा ?

आज तक इतिहास बनाया किसी राजा ने, किसी वीर पुरुष ने, किसी सेना ने, किसी अवतार ने, किसी सन्त ने, किसी महात्मा ने, लेकिन अब इतिहास बनायेगा कौन ? जिसके हाथ में कुदाली है, कुल्हाड़ी है, वह इतिहास बनायेगा। अब तलवार से इतिहास नहीं लिखा जायेगा। वह इतिहास बनाने का गौरव जिसे है उसके लिए कोई रास्ता नहीं है। नया रास्ता आपको बनाना होगा। इसलिए मैंने आपसे कहा कि आपके सामने जो क्षितिज है, दिशा है उसमें आप रास्ता बनाइये। रास्ता बनाने की जितनी ताकत आपमें होगी, आपके कदमों में जितनी ताकत होगी उतना आप आगे चलते जायेंगे।

ग्रामस्वराज्य का पंचशील

आप देखिये न, कितने क्रान्तिकारी हुए हैं *जिन्होंने नक्शे बनाये ?* मार्क्स ने तो कोई नक्शा बनाया नहीं। लेनिन ने बनाया, माओ ने बनाया, टीटो ने बनाया। नक्शा एक बना, जीवन दूसरी तरफ गया। इतना ही हमको देखना है कि इनसान इनसान के नजदीक आये। आज इनसान इनसान के नजदीक नहीं है। इसके अभाव में ग्रामसभाओं में इसका एक पंचशील होगा, मैंने इसे इसका पंचांग कहा है। पहली चीज, ईमान *होना चाहिए—प्रामाणिकता।* ईमान का मतलब, आपके बारे में लोग यह कह सकते हैं कि आप बेवकूफ हैं लेकिन लोग यह कभी नहीं कहेंगे कि आप बेईमान हैं। किसी ने कहा था न कि अगर हम अपनी सारी शर्तें पूरी करेंगे तो उसमें से एक नैतिक दबाव पैदा होगा। लेकिन नैतिक दबाव पैदा करने के लिए शर्तें पूरी करेंगे तो कोई दबाव पैदा नहीं होगा। जो आप करते हैं, वह दबाव पैदा करने के लिए नहीं। अपनी परछाईं के सिर पर जो पैर रखना चाहता है, छाया आगे-आगे जाती है, वह पीछे-पीछे जाता है। जो मुँह फेर लेता है, परछाईं उसका पीछा करती है। प्रभाव के पीछे जो दौड़ेगा, परछाईं की तरह प्रभाव आगे-आगे भागेगा, प्रभाव की तरफ से जो मुँह फेर लेगा, प्रभाव उसके पीछे-पीछे आयेगा। तो चारित्र्य अगर दबाव के लिए है, दबाव रह जाता है, उसमें से चारित्र्य निकल जाता है, उसमें किसी प्रकार की सात्त्विकता नहीं रहती। इसलिए दबाव होता है तो ईमान का।

आपकी ग्रामसभा में पहली चीज यह हो कि आपकी ग्रामसभा में जितने मेहनत करनेवाले हैं वे *सब-के-सब अपना काम* ईमान से करें—कम-से-कम ग्रामसभा के पदाधिकारी और सदस्य। आज तो उल्टा है न ? आदमी जितने ऊँचे पद पर होगा, वह उतना कम काम करेगा, वह *आराम उतना ही ज्यादा करेगा।* आज ऐसा है न ? अब इसको उलटना है। जो जितने ऊँचे पद पर होगा वह उतने आराम कम करेगा, काम ज्यादा करेगा, दाम बिलकुल नहीं लेगा। यह व्यस्त *प्रमाण हो गया। इसके अनुपात को बदल* देना होगा। इस अनुपात को कौन बदलेगा ? एक बार मजदूरों से मैंने कहा था कि आपका यूनियन तब तक सफल नहीं होगा, जब तक यूनियन यह नहीं *कर सके कि जो मजदूर अपना काम* ईमान से नहीं करता है, उसको वह हटा दे। किसी मजदूर के यूनियन में यह ताकत नहीं है। आपका पदाधिकारी चाहे पार्टी का हो, या न हो, लेकिन उसमें ईमान होना चाहिए। अगर वह पार्टी का है और ईमानदार है तो वह वहाँ पार्टी की बात नहीं लायेगा। उस मर्यादा का पालन करेगा। अगर ईमान नहीं है तो प्रकट रूप से नहीं, गुप्त रूप से, अन्दर-अन्दर पार्टी का प्रवेश आपकी सभा में किये बिना नहीं रहेगा। इसे हमको समझना है। क्या इसका भी नियम बनाया जा सकता है ? इसका कोई शास्त्र बनाया जा सकता है ? हम तो जीवन में से अपने आप वहाँ तक पहुँचेंगे।

दूसरी चीज अनुशासन-रहित संयम। *काबू अनुशासन का नहीं, संयम का।* नियम से नहीं संयम से हम अपने

आपको काबू में करेंगे। आप ग्रामस्वराज्य की बात कर रहे हैं न! तो राज्य की भी हुकूमत नहीं, ग्राम की भी हुकूमत नहीं, ग्राम का स्वयंशासन। जो सदस्य हैं वे भी स्वयशासित होंगे। आप यह न समझिये कि मैं यह अध्यात्म की, नीति की या कोई ऊँची बात कर रहा हूँ, बल्कि कोई संगठन इसके बिना चल नहीं सकता। तो अपने आप पर जब्त करने की ताकत होनी चाहिए। एक सदस्य में यह अनुशासन है, यह संयम है।

तीसरा निर्वैरता। आप असहयोग करिये, मौका आने पर और कोई कड़ा कदम उठाना हो तो उठाइये, लेकिन आपका जो प्रतिपक्षी है, उसके मन में एक बात होनी चाहिए। यह आदमी सब कुछ कर सकता है, डरा नहीं सकता। यह निर्वैरता है। जहाँ वीरता होती है वहाँ निर्वैरता होती है। महाराष्ट्र में बहुत बड़ा एक समाचार पत्र चलता है। बहुत दिन हुए, उसने तिलक और गांधी की तुलना की। उसने कहा, प्रतिपक्षी तिलक से डरता है, गांधी से डरता नहीं है। कल वायसराय पर अगर मुसीबत आ जाय, तो वह गांधी की गोद में सिर रखकर बेखटके सो सकता है। इसलिए गांधी तिलक से बड़ा देश-भक्त है। अब यह तिलक का वर्णन उसके भक्त का दिया हुआ है, लेकिन इसमें तिलक की निन्दा थी। वायसराय यह जानता था कि यह आदमी जान की बाजी लगाकर भी वायसराय के नाते मुझे यहाँ नहीं रहने देगा। लेकिन यह भी जानता था कि उसकी गोद में सिर रखकर सो जाऊँगा तो पहले उसकी जान जायेगी, बाद में मेरी जान जायेगी। यह प्रतिपक्षी में विश्वास है। प्रतिपक्षी के मन में हमारी सच्चाई का विश्वास होना चाहिए।

आपके काम में जितनी पोल होगी, उतना खोखला काम होगा। तो, दोस्तो, ऐसी सभाओं में जहाँ आप बैठते हैं, बढ़ा-चढ़ाकर ही कहना है तो अपनी कमियों को बढ़ा-चढ़ाकर कहिए, जो आप नहीं कर पाये उसको बढ़ा-चढ़ाकर और बढ़ा-चढ़ाकर उसको नहीं कहिए, जो आप थोड़ा कर पाये हैं। बाहर की सभाओं में कोई कहता है कि यह ग्लास आधा खाली है तो आप कहिए आधा भरा है। यह आप बाहर की सभाओं में कह सकते हैं, उसमें भी झूठ नहीं। इसमें से निर्वैरता पैदा होती है, और इस निर्वैरता में से प्रतिकार की शक्ति आयेगी।

चौथी चीज, निराकरण। हम गाँव में आतंक नहीं पैदा होने देंगे। ग्रामसभा का आतंक नहीं, ग्रामसभा का आदर, लेहाज। अगर ग्राम की जनता आतंकित हो जायेगी, तो आतंकित जनता कोई काम नहीं करेगी। अगर वह डर जायेगी तो जिसे हम दहशत कहते हैं, इसमें से क्रान्ति नहीं पैदा होगी। और इसलिए हजार लोग डर जायें, ये नक्सलवादी क्रान्ति नहीं कर सकते। ये डरा सकते हैं, बदल नहीं सकते। जो डर जाता है, वह कभी बदलता नहीं। वह बदल ही नहीं सकता। उसमें बदलने की शक्ति ही नहीं रह जाती। वह डरा ही रह जाता है इसलिए गाँव में हमारा आतंक नहीं।

और, पाँचवीं चीज पारस्परिकता। पारस्परिकता से मतलब एक-दूसरे का भरोसा। महाराष्ट्र में बेलगाँव में एक परिषद हुई। उसमें लाठी चल गयी आपस में। झूठ का बाजार गर्म हो गया। गांधीजी ने कहा कि तुम अहिंसा की बात करते हो और यह झूठ का प्रहार कर रहे हो। तो उन्होंने जवाब दिया कि हमारा सत्य और अहिंसा तो अंग्रेजों के लिए है, एक दूसरे के लिए नहीं। एक दूसरे के लिए तो हम झूठ और घूसे का प्रयोग कर सकते हैं। इसलिए इसे मैं कह रहा हूँ कि ग्रामसभा के सदस्यों का एक दूसरे पर भरोसा होना चाहिए। परस्पर प्रामाण्य। ग्रामसभा का सदस्य प्रामाद कर सकता है, लेकिन प्रताड़ना नहीं। प्रामाद से मतलब गलती, प्रताड़ना से मतलब धोखाधड़ी। तो यह चीज ग्राम-

स में है . म प ।

कह रहा हूँ, पंचशील कहता हूँ।

ग्रामवाद नहीं, विश्वनिष्ठा

इसके बाद विश्वनिष्ठा। अब केवल जय जगत से काम नहीं चलेगा। विश्व-निष्ठा, मानव-निष्ठा। इसका मतलब यह कि यह प्रकृति, निसर्ग इसके साथ हमारा सम्बन्ध क्या होगा? हाथी, घोड़ा, बैल मनुष्य के जीवन में शामिल हो गये हैं लेकिन दूसरे भी जंगली जानवर, सृष्टि और दूसरे भी मनुष्य समुदाय, इनके साथ हमारा रुख क्या होगा? सृष्टि के साथ सहयोग का होगा, दूसरे प्राणियों के साथ मित्रता का। मनुष्य सैलानियों की तरफ से रुख बदलेगा तो इसका संयोजन पर बहुत गहरा परिणाम होगा।

ग्रामस्वराज्य का मतलब ग्रामवाद नहीं है, बाहर का गाँव भी हमारा ही है। पड़ोस का गाँव जगत की सगुण मूर्ति है जैसे पड़ोस का देश विश्व की सगुण मूर्ति है। उसी तरह पड़ोस के जितने गाँव होंगे, वे सब हमारे लिए जगत के सगुणरूप हैं। जय जगत का दर्शन कहाँ करेंगे? उन पड़ोस के गाँवों में करेंगे। तो गाँव में जो पारस्परिकता है इसका विकास अगर आपने नहीं किया तो जय जगत केवल मंत्र रह जायेगा और केवल ग्रामस्वराज्य हमारे पास रह जायेगा। और ग्रामस्वराज्य में जो पैदा होंगे वे बौने होंगे। गाँव के नाप के अगर बौने आदमी पैदा होंगे तो यह सारा भारतवर्ष बौनों का बन जायगा। यह शुद्ध क्षुद्रवाद है। यह ग्रामवाद नहीं आना चाहिए। और यह तब नहीं आयेगा जब यह मानेंगे कि सामुदायिक मालकियत भी नहीं, राज्य-स्वामित्व भी नहीं, लोक-स्वामित्व। और लोक अखण्ड है। लोक की कोई सीमा नहीं है, वह ईश्वर के समान व्यापक है। उसका स्वामित्व अगर हम मान लेते हैं तो एक नया सामुदायिक सम्पत्तिवाद लोगों में नहीं आयेगी।

महावीर की अहिंसा

—यशपाल जैन

महावीर का दृष्टिकोण रचनात्मक था। वह बड़ी लकीर खींचकर पास की लकीर को छोटा सिद्ध करने के पक्षपाती थे। उन्होंने किसी भी मान्यता का खण्डन नहीं किया; न किसी को तर्क द्वारा परास्त करने का प्रयत्न किया। उन्होंने जीवन के सही मूल्यों की प्रस्थापना की। युग-प्रवाह के विरुद्ध तैरना सुगम नहीं होता। भयंकर हिंसा के बीच महावीर ने घोष किया, "अहिंसा परमो धर्मः" (अहिंसा परम् धर्म है)। वस्तुतः यह बुनियादी बात थी, क्योंकि जो व्यक्ति हिंसा करता है, बहुत-सी व्याधियों का शिकार बन जाता है। उसमें असत्याचरण, असंयम, कायरता, द्वेष, और न जाने क्या-क्या दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए उन्होंने सबसे अधिक बल अहिंसा पर दिया। उन्होंने कहा, "अहिंसा से ही मनुष्य सुखी हो सकता है, संसार में शान्ति बनी रह सकती है।"

अहिंसा शूरों का अस्त्र

लेकिन उन्होंने स्पष्ट कहा कि अहिंसा वीरों का अस्त्र है। कमजोर या कायर उसका उपयोग नहीं कर सकते। जिसमें मारने की सामर्थ्य है, फिर भी नहीं मारता, वह व्यक्ति अहिंसक है। जिसमें शक्ति नहीं, उसका न मारने की बात कहना अहिंसा का परिहास करना है। अतः यह कहना असत्य है कि महावीर ने शस्त्रों के बल को आत्मिक बल के समक्ष हेय बताकर राष्ट्र की वीरता को क्षीण कर दिया, समाज को निर्वीर्य बना दिया। महावीर की अहिंसा अत्यन्त तेजस्वी अहिंसा थी। वह उस प्रकाश-पुंज के समान थी, जिसके आगे हिंसा का अन्धकार एक क्षण टिक नहीं सकता था। जिसका अन्तःकरण निर्मल हो, जो सत्य का पुजारी हो, अपरिग्रही हो, सबको प्रेम करता हो, सबको समान समझता हो, सामर्थ्यवान हो, निर्भीक हो, वही अहिंसा के अमोघ अस्त्र का प्रयोग कर सकता है। आज अहिंसा की शक्ति इतनी मन्द पड़ रही है, उसका मुख्य कारण यही है कि हम अहिंसा की तेजस्विता को भूल गये हैं और झूठी विनम्रता को अहिंसा मान बैठे हैं। अहिंसा पर चलना तलवार की धार पर चलने के समान है।

जीओ, जीने दो

अहिंसा के मूल मंत्र के साथ महावीर ने एक सनातन आदर्श और जोड़ा 'जीओ और जीने दो'। जिस प्रकार तुम जीने की और सुखी रहने की आकांक्षा रखते हो, उसी प्रकार दूसरा भी जीने और सुखी रहने की आकांक्षा रखता है। इसलिए यदि तुम जीना चाहते हो तो दूसरे को भी जीने का अवसर दो। समाज की स्वार्थपरायणता पर इससे बढ़कर चोट और क्या हो सकती है। 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत'। जिस प्रकार का आचरण तुम अपने प्रति किया जाना पसन्द नहीं करोगे, वैसा आचरण दूसरों के प्रति मत करो।

महावीर की अहिंसा की परिभाषा थी 'अपनी कषायों को जीतना, अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना और किसी भी वस्तु में आसक्ति न रखना। यह राजमार्ग कायरों का नहीं, वीरों का ही हो सकता है।—वि०नि०वि० सेवा, इन्दौर।

मानवता की विजय-यात्रा

—प्रो॰ विश्वबन्धु चटर्जी

चौदह दिनों के कठिन संघर्ष के बाद बांगला देश स्वतंत्र हुआ है। मगर ऐसा होने के पूर्व लगभग ३० लाख निरीह व्यक्तियों की, जिसमें बच्चे, बूढ़े, जवान, स्त्रियाँ तक शामिल हैं, जिनका मुख्य अपराध यह था कि उन्होंने बांगला देश अभ्युदय का समर्थन किया था, की हत्या की गयी। ऐसा क्रूर हत्याकाण्ड इतिहास में कभी नहीं हुआ था। अपनी जान बचाने के लिए १ करोड़ व्यक्ति घर और जायदाद छोड़कर शरणार्थी के रूप में पड़ोसी देशों में जा बसे।

इसी तरह की दूसरी घटना वियतनाम में घटी। करोड़ों टन के अत्यधिक मारक क्षमतावाले बम एवं शस्त्रों का उपयोग वियतनाम की सदाबहार भूमि पर किया गया, जिसके परिणाम स्वरूप देश का अधिकांश भाग वीरान हो गया और अगले दशाब्दियों तक वहाँ पर घास का एक तिनका तक के उगने की सम्भावना नहीं रही।

मारने की यह प्रवृत्ति दक्षिणी वियतनामी सरकार के सहायक अमेरिकी सैनिकों का नित्य का कार्यक्रम बन गया है। उदाहरणार्थ माइलाई हत्याकाण्ड, जहाँ पर सैकड़ों औरतें, बच्चे, बूढ़े, जवान व्यक्तियों की हत्या एक खेल के रूप में की गयी। जब हत्यारा कैले और मेदीना अदालत द्वारा दोषी पाये गये तब निक्सन ने उसे मुक्त कर दिया। कुछ वर्षों में माईलाई जैसी अनेक घटनाएँ घटती रही हैं, जो अप्रकाशित ही हैं।

अच्छे हथियार, साधन, सैन्यतंत्र के समर्थन और अद्यतन सैन्य स्रोतों के बावजूद आक्रामक अमेरिकी सेना को वियतनाम में शर्मनाक हार खानी पड़ी है। वे न सिर्फ उत्तर वियतनामी सरकार, जिसे उसकी जनता का पूरा समर्थन प्राप्त है, की लड़ने की भावना को कुचलने में ही असफल रहे, बल्कि सैनिक, सैन्य साधन और आर्थिक दृष्टि से भी अमेरिकियों को काफी नुकसान उठाना पड़ा। वे जानते हैं कि वे किसी तरह वियतनाम में जीत नहीं सकते। इसलिए अपनी सेना को वियतनाम से वापस ले रहे हैं, परन्तु पूर्णतः पीछे हटने से पहले वे निर्दयता करने पर उतारू हैं। इसी तरह निर्दयतापूर्ण अत्याचार की एक घटना समर्पण के ठीक पूर्व बांगला देश में भी दिखाई पड़ी। पाक सैनिकों ने व्यवस्थित ढंग से बांगला देश के चुने हुए २८० बुद्धिजीवियों की हत्या कर डाली।

वर्तमान दशाब्दी में इस तरह की घटनाएँ प्रायः तानाशाहों द्वारा कराया जाना सामान्य बात हो गयी है। मानवता के विरुद्ध निर्दयतापूर्ण अपराधों पर विचार करते हुए कोई भी व्यक्ति अपने मन पर जबरदस्त आघात का अनुभव करता है।

लेकिन परिस्थिति इतनी निराशापूर्ण नहीं है जैसा कि देखने में आता है। भौतिकवादी विश्व का हृदयहीन तर्क और चुनौती को स्वीकार करने के लिए मानवता की भावना को न रोकी जा सकनेवाली यात्रा के चिह्न यत्र-तत्र देखने को मिल जाते हैं।

उदाहरणार्थ बांगला देश को लें। वहाँ पर ६ अविस्मरणीय घटनाएँ घटीं, जिन्होंने अपने विरोधियों को अभिभूत कर लिया तथा राजनीतिक पर्यवेक्षकों को गलत साबित कर दिया, और घोर निराशावादियों और छिद्रान्वेषियों को भी सकस्त कर डाला।

(अ) बंगबन्धु का सकुशल सम्मान बांगला देश में लौटना।

(आ) पाकिस्तानी सेना ने नौ महीने की अवधि में प्रतिदिन १०,००० व्यक्ति की हत्या की थी। यह सम्भव भी था, क्योंकि रजाकार, अलबदर, और पाक सेना के सहायक शान्ति समितियों ने सेना की खुलकर सहायता की। राजनैतिज्ञों का अनुमान था कि बंगाली शासन में आयेंगे तो प्रायः उसी तरह की घटनाएँ घटेंगी जैसा कि युद्ध के दरम्यान घटीं, परन्तु शान्तिप्रिय, सुसंस्कृत बंगाली जनता ने वैसा नहीं किया।

(इ) एक करोड़ के लगभग बांगला देश से भागे शरणार्थी स्थान की खोज में भारत आये और पीछे वापस गये। कुछ विशेषज्ञों का कथन था कि ये शरणार्थी हमेशा के लिए भारत में आये हैं और वे कभी भी बांगला देश लौट नहीं सकेंगे।

(ई) बहुत-से लोग मुजीब नगर में गठित बांगला देश की अन्तरिम सरकार की खिल्ली उड़ाते थे लेकिन वे खिल्लियाँ जहाँ की तहाँ रह गयीं जब मुक्तिवाहिनी सफल हो गयी। यह माना जाता कि मुक्तिवाहिनी कल्पना की चीज है, वह उस समय गलत साबित हो गया जब मुक्तिवाहिनी के जवानों ने शेख मुजीब के चरणों पर अपने शस्त्र समर्पित किये। युवक युवतियों लड़के लड़कियों ने मातृभूमि की मुक्ति के लिए शस्त्र-ग्रहण किया था, यह जानते हुए कि वे सब अपने से श्रेष्ठ दुश्मनों का सामना कर रहे थे। लेकिन एक चीज मुक्तिवाहिनी के पास थी जो इन पाक सेनाओं के पास नहीं थी। वह थी देशभक्ति, जिसने वहाँ के लोगों को अपना आत्म-बलिदान करने तक के लिए प्रेरित किया था। यह एक तथ्य था जो मुक्तिवाहिनी की सफलता में सहायक सिद्ध हुई।

(उ) कुछ राजनैतिक पर्यवेक्षकों का खयाल था कि अपने दुश्मनों को भगाने के बाद मुक्तिवाहिनी, जो प्रशिक्षित है, शस्त्रों से सुसज्जित है, कभी अपनी सुविधाओं को नहीं छोड़ना चाहेंगे। वे सभी बांगला देश को नक्सलवादी बना सकते हैं। लेकिन पर्यवेक्षकों की ये बातें भी गलत सिद्ध हुईं जब शेख मुजीब के समक्ष मुक्तिवाहिनी ने शस्त्र-समर्पण किया।

(ऊ) पर्यवेक्षक बांगला देश में भारतीय सैनिकों की उपस्थिति से चिन्तित

मौलाना भासानी से एक मुलाकात

[श्री धर्मवीर भारती ने ढाका के एक अस्पताल में मौलाना भासानी से मुलाकात की थी। हम यहाँ उस मुलाकात का एक अंश प्रस्तुत कर रहे हैं। सं०]

"…… हिन्दू-मुसलमान की लड़ाई बेकार की बात है, हँसी की बात है। असली लड़ाई तो गरीबी के साथ है। पार्टीशन के पहले बंगाल में ३०-४० आदमियों का ज्वाइण्ट परिवार होता था, सब्जी, मछली, दूध सब घर का। अब दस आदमियों में एक मछली खरीद पाता है।

" ·· हमने चाऊ एन लाई से भी कहा था कि पहले एशिया-अफ्रीका में इत्तेहाद होने दो, लेकिन उनकी फारेन पालिसी हमारे समझ में नहीं आयी। वह कहता है उसकी आफिशियल पालिसी ऑप्रेस्ड (अत्याचार पीड़ित) लोगों के साथ है, लेकिन बांगला देश में उसने अत्याचारी का साथ दिया। ११ मार्च '७१ को मेरे साथ चीनियों के आदमी ने बात की। कहने लगा 'मुजीब सोशलिस्ट नहीं, आप उसका साथ क्यों देते हैं' तो मैंने कहा, 'तो क्या पाकिस्तानी का साथ दूँ? यहिया खाँ का साथ दूँ? १४ साल पहले हमने रिपोर्ट दिया उसे पाकिस्तान ने मंजूर नहीं किया। वे लोग कहते थे कि मौलाना भासानी हिन्दुस्तान का एजेण्ट है, यह 'नैप' तो नेहरू का दल है। इस्कन्दर मिर्जा साहब ने धमकाया कि भासानी अगर यूरोप अमरीका की ओर से भी आयेगा तो हम गोली चलायेंगे। ठीक, हमने कहा, हम हिन्दुस्तान जाते हैं। चले गये। फिर इस्कन्दर मिर्जा ने आदमी भेजा। हम लौटे आये, १९५० में हमने अवामी लीग कायम की। उसके २१ सूत्र थे। लेकिन २१ सूत्र से मुजीब के ६ सूत्र बेहतर थे, लेकिन वो भी काफी नहीं। पूर्ण स्वाधीनता ही मात्र समाधान …… तो हुआ फिर। ……

" · ···(पर) सियासी आजादी ही कोई चीज नहीं होती, आर्थिक और समाजी स्वाधीनता से ही सियासी आजादी की कामयाबी है। समता बहुत जरूरी है। और हमारा पूर्वी बंगाल का मानुष तो बहुत गरीब है। उसके परिवार का परिवेश तो ऐसा है कि उसको नमक तक नहीं मिलता। सूखा भात, सूखा माछ खाये तो नमक नहीं। अब वह गरीबी तो दूर करना है। भारत भी गरीब है, सारा एशिया, अफ्रीका गरीब है।

"और हमारा तो अब विचार यह है कि भारत, बांगला देश, चीन, पाकिस्तान सब में नान-एग्रेशन पैक्ट होना चाहिए। तब सब लोग गरीबी से युद्ध करें। समग्र एशिया अफ्रीका को लेकर जाति संघ बनाना चाहिए। भाई, हम एशिया-अफ्रीका का मानुष गरीब हैं। हमारा यूरोप अमेरिका से क्या मतलब। अरे भाई, यह तो धनी देश है। उनके पास हमारा हित कहाँ? तुमने बंगला की उक्ति सुना है—मदेर दोकाने दूध को पावा जाये? (शराब की दूकान में दूध कैसे पा सकते हैं।)

"हमारे पास तो रूस के भी लोग आकर मिलते हैं। हमने उनसे कहा कि भाई, अब तुम भी धनी हो, तुम्हारा हमसे क्या मेल होगा। तुम्हारा मानुष चन्द्र पर जाता है। हमारा मानुष कीचड़-पानी में नाव खेता है। सच्ची बात यह है कि अमेरिका हो कि यूरोप हो, कि रूस हो, सब एशिया-अफ्रीका का मार्केट का लोभी है। लेकिन एशिया-अफ्रीका को चाहिए कि आपस में सहयोग करें, ताकि एशिया-अफ्रीका का पैसा एशिया-अफ्रीका में रहे। अब देखो, कैसा पागल था पाकिस्तान; पोलैण्ड से कोयला मंगाता था जब कि यहाँ हिन्दुस्तान में कोयला था। क्यों भाई, हिन्दुस्तान से कोयला क्यों नहीं लेता?

"अब भारत-बांगला मैत्री तो खूबोई चलेगा। बराबर चलना चाहिए। हमारा तो विचार है कि एक-दो साल में चीन भी भारत से मैत्री कर लेगा। भारत से मैत्री में ही बांगला देश का लाभ है, भारत का भी लाभ है। अब देखो, भारत में कितना फ्लड आता है बांगला देश के सहयोग से आपका फ्लड कण्ट्रोल ठीक रहेगा। जो नदी भारत में बहती है, उसका मुहाना बांगला देश में है। अब हमारी यमुना नदी जो असम में ब्रह्मपुत्रा है, जो कई सौ साल पहले ४७ फीट ५ इंच गहरी थी। अब धूलामाटी जम-जम कर उसकी गहराई ३ फीट—कहीं-कहीं ढाई फीट रह गयी है, तो फिर सब पानी उत्तर में फ्लड करता है। यहाँ सब मिट्टी साफ हो जाये, नदी गहरी हो जाये तो उधर पानी रुके नहीं।

"लेकिन अमेरिका लड़ाई कराता है। ६५ का पाक-भारत-युद्ध भी अमेरिका ने ही लड़ा था। हम १९५७ में नेहरूजी के मेहमान थे। हमने तब भी कहा था कि पाक-अमेरिका ट्रीटी को हम मरते दम तक नहीं मानेंगे, बगदाद पैक्ट, सीटो, सेण्टो किसी को नहीं। वियतनाम पर बमबारी के समय भारत न इधर था न उधर, तब हमने भारत का भी प्रचुर आलोचना की थी।' —ध० वी० भा०

('धर्मयुग' से साभार)

→थे। परन्तु उनकी यह चिन्ता दूर हो गयी जब भारतीय फौज बांगला देश से वापस हो गयी।

फिलहाल पर्यवेक्षकों की जमात कुछ वहमों को तैयार करने में व्यस्त है। बांगला देश में बिहारियों की असुरक्षा, बांगला देश के मंत्रियों की विलासप्रियता, बांगला देश में अल्पसंख्यक हिन्दुओं की असुरक्षा, मुजीब मंत्रिमण्डल में हिन्दू मंत्रियों की अनुपस्थिति (एक को छोड़ कर) आदि, लेकिन इससे बांगला देश और भारत को परेशानी का अनुभव नहीं करना चाहिए। नौ महीने के अन्धकार के बाद अत्याचार, शोषण और क्रूरतापूर्ण व्यवहार के बावजूद मनुष्य ने अपनी विजय-यात्रा की शुरूआत की है।●

'धार्मिक रचनात्मक'

—कयूम प्रसर

अभी कुछ दिनों की बात है अपने देश में भारतीयकरण का आन्दोलन चलाया गया था। वैसे यह विचार बहुत मासूम नजर आ रहा था। परन्तु इस विचार के पीछे जो तथ्य था उसमें बड़ी बदनीयती थी। यही कारण है कि देशभर के लोगों ने इस विचार की बड़ी निन्दा की और यह आन्दोलन दबकर रह गया।

अंग्रेजी साम्राज्य ने अपने शासन काल में हिन्दू-मुस्लिम झगड़े को खूब-खूब हवा दी। हिन्दुत्व की बात करनेवाले अंग्रेजों के साये में सदा फलते-फूलते रहे। इसी तरह मुसलमानिस्तान का स्वप्न देखनेवाले दिल्ली के लाल किले पर सब्ज-हेलाली-परचम (मुसलमानों का झण्डा) का अंग्रेजों के आशीर्वाद से देखते रहे। हिन्दी और उर्दू का झगड़ा अंग्रेजों ने खड़ा किया। इसी तरह की और भी बातें, हिन्दुओं और मुसलमानों के अन्दर फसाद की आग भड़काने के लिए अंग्रेजों ने शुरू करायी। अंग्रेजों की पत्रिका में हिन्दुस्तान को गुलाम बनाये रखने के लिए यह सब बारूद थे, जिनका इस्तेमाल अंग्रेज बड़ी होशियारी से करते रहे।

हिन्दू महासभा और मुस्लिम लीग हिन्दुस्तान में अंग्रेजी राज्य में अपनी भलाई देखते थे। यही कारण था कि देश के अन्दर स्वतंत्रता के आन्दोलन की ये पार्टियाँ विरोध करती रहीं और इसे दबाने में उन्होंने हमेशा अंग्रेजों का हाथ बँटाया। यह बात भी देखने में आयी थी कि रायबहादुर और खानबहादुर सामाजिक मामलों में एक-दूसरे के खून के प्यासे रहे और अवसर पाने पर एक-दूसरे का खून बहाना भूलते नहीं थे। लेकिन यही रायबहादुर और खानबहादुर अंग्रेजों की गुलामी में गहरे साथी बने रहे। अविभाजित भारत में हिन्दुओं और मुसलमानों में यह पारस्परिक मूल्य बहुत ही साफ नजर आता है।

अविभाजित हिन्दुस्तान में हिन्दू और मुसलमान बराबर यही कहते सुने गये कि अंग्रेज 'लड़ाओ और शासन करो' की नीति पर चलता है। यह बात बिलकुल सही थी। यह बात जानकर भी हम हिन्दुस्तानी अंग्रेजों के फरेब में रहे। यहाँ तक कि देश के दो टुकड़े हो गये। अखण्ड भारत और पाकिस्तान जिन्दाबाद के नारे रंग लाकर रहे।

अंग्रेज अपना बोरिया-बिस्तर-समेट कर सात समुन्दर पार चला गया। फिर भी हमारे आपसी झगड़े खत्म नहीं हुए। धर्म के नाम पर आये दिन दंगे हो रहे हैं। जात-पांत रंग और नस्ल की लड़ाई अब भी जारी है। भाषा और क्षेत्र का झगड़ा पहले से ज्यादा तेज हो गया है। स्वतंत्रता मिलने के बाद देश के विभिन्न स्थानों पर भयंकर दंगे हुए। गांधीजी की शहादत ने पूरे देश को झिंझोड़ दिया था। थोड़ी देर के लिए इस हालत में एक बार ठहराव आया था। लेकिन वह कायम नहीं रह सका। ऐसी उम्मीद थी कि नयी नस्ल अपने पुरखों की गलत बातों को नहीं अपनायेगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अब हमें कौन लड़ा रहा है और क्या हम उन्हें जानते हैं? यह बात १९४९ की है। गया से पटना जानेवाली पैसेन्जर गाड़ी पौ फटने से पहले गया स्टेशन से रवाना हुई। रुकती-थमती रेलगाड़ी तरेगना स्टेशन पर पहुँची। वहाँ बीस-पच्चीस आदमियों की भीड़ से निकल कर एक अधेड़ उम्र का आदमी 'सेकेण्ड क्लास' के डिब्बे में सवार हुआ। उसके साथ एक ११-१२ साल का लड़का भी था। बाकी लोग प्लेटफार्म पर ही रह गये। गाड़ी स्टेशन से रवाना हुई। अधेड़ उम्रवाले आदमी ने डिब्बे में बैठे हुए लोगों की ओर देखा और अपनी तरफ किसी का भी ध्यान नहीं पाकर वह चुपचाप एक सीट पर बैठ गया। लेकिन उसकी तबीयत शान्त बैठनेवाली नहीं मालूम होती थी। दूसरे ही क्षण उसने बात शुरू करने के लिए उचित अवसर खोज लिया। उसने अपने बगल में बैठे हुए लड़के को हुक्म दिया। "खिड़की बन्द कर दो, ठंडी हवा आ रही है।"

लड़के ने तुरन्त कहा—"पिताजी फिर आपने उर्दू शब्द का प्रयोग किया" और यह कहते हुए उसने खिड़की बन्द कर दी।

अधेड़ उम्र का आदमी बोला—"क्षमा करना मेरे पुत्र, क्षमा करना, शीतल वायु आ रही है। मुझसे भूल हो गयी।"

यह कहते हुए उसने डिब्बे में बैठे हुए लोगों की ओर देखा और फिर कहा—'देखा, मेरा पुत्र मेरी भूल पर टोकता है।' लेकिन इसका यह तीर भी निशाने पर नहीं बैठा। किसी ने भी उस पर ध्यान नहीं दिया।

यह ड्रामा शुरू ही हुआ था कि अगला स्टेशन आ गया और दो टिकट चेकर एक ही साथ डिब्बे में आ गये। डिब्बा छोटा था और उसमें सिर्फ ६-७ आदमी थे। उन्होंने हर एक के टिकट की जाँच की और उल्टे पैरों निकलना ही चाहते थे कि अधेड़ उम्रवाला आदमी बड़बड़ाया—"मैं केवल देखकर बता सकता हूँ कि आर्य-रक्त किस-किस के शरीर में है।"

यह बात सुनते ही दोनों टिकट चेकरों के बढ़ते हुए कदम रुक गये और वे डिब्बे में ही रह गये। ट्रेन चल पड़ी। उन दोनों ने उस अधेड़ उम्रवाले आदमी को 'महाराज' कहा और उससे पूछा कि उन दोनों के बारे में उनकी क्या राय है। महाराज का तीर इस बार ठीक निशाने पर बैठा था। वह भला कैसे चूकते। उन्होंने दोनों टिकट चेकरों को खुश कर दिया कि उन दोनों के शरीर में शुद्ध आर्य-रक्त दौड़ रहा है। दोनों में से एक तो साफ आदिवासी मालूम होता था।

इस अधेड़ उम्रवाले आदमी की उल्टी दिशावाली सीट पर बैठा मैं यह तमाशा

(शेष पृष्ठ ४२३ पर)

जद्दाह का इस्लामी सम्मेलन

मार्च के पहले हफ्ते में सऊदी अरब के प्रसिद्ध नगर जद्दाह में इस्लामी हुकूमतों के विदेशमंत्रियों का तीसरा सम्मेलन हुआ। इसमें ३१ देशों से १५१ प्रतिनिधियों ने भाग लिया और सब में ज्यादा संख्या, १२ पाकिस्तान से आनेवालों की थी। आश्चर्य है कि भारत और बांगला देश को कोई निमंत्रण नहीं दिया गया था यद्यपि "बांगला देश की समस्या हल करने का प्रश्न" विशेष रूप से इसके सामने था।

इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पास किया गया जिसमें "पाकिस्तान को एकात्मता, स्वाधीनता, प्रभुत्व को पूर्ण समर्थन" दिया गया और यह भी तय पाया कि छः देशों का एक प्रतिनिधि-मण्डल इस्लामाबाद और ढाका, दोनों जगह जाये और पाकिस्तान के राष्ट्रपति भुट्टो और बांगला देश के प्रधानमंत्री शेख मुजीब की मुलाकात कराने की कोशिश करे। ट्यूनीशिया ने सुझाव दिया कि यह मण्डल भारत से भी सम्पर्क स्थापित करे। लेकिन मिस्र के एक प्रतिनिधि ने इस पर आपत्ति की और कहा कि ऐसा करने पर "पाकिस्तान की आबरू" को चोट पहुँचेगी। कैसी छुई-मुई है पाकिस्तान की आबरू और क्या अजीब है उसके बारे में मिस्र की कल्पना कि नयी दिल्ली की छूत से ही वह कुम्हला जायेगी। इससे भी ज्यादा ताज्जुब की बात यह है कि बांगला देश में जब पाकिस्तान के जल्लाद सिपाहियों ने लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया तो इस्लामी देशों को जरा भी फिकर नहीं पैदा हुई, और अब उन्हें पाकिस्तान की एकता बचाने का ख्याल सता रहा है। और शेख मुजीब या बांगला देश के किसी भी प्रतिनिधि को अपने भरोसे में लिये बिना बांगला देश पर फैसला कर देने की उनकी कोशिश उनकी सियासी मासूमियत का सबूत है। इस डेलीगेशन के छः मेम्बरों में से पाँच ऐसे देशों के हैं जिन्होंने बांगला देश को मान्यता तक नहीं दी है। ताजी खबर है कि बांगला देश ने एलान कर दिया है कि जो देश हम को नहीं मानते हैं उनके नुमाइन्दों को हम ढाका नहीं आने देंगे। बांगला देश सरकार के इस निर्णय से कौन असहमत होगा?

चार और सवाल इस कॉन्फ्रेंस के सामने पेश हुए—इसराइल के खिलाफ अरब राज्यों और फिलिस्तीन के गुरिल्लों की मदद देना, एक इस्लामी चार्टर (राज-पत्र) तैयार करना, एक इस्लामी बैंक खोलना और एक इस्लामी समाचार एजेन्सी चालू करना। इनमें से पहले के बारे में खूब चर्चा हुई और जरूरी प्रस्ताव भी पास हो गया। उसमें कुछ कठिनाई नहीं थी क्योंकि इसराइल को धिक्कारने और अमेरिका को चेतावनी देने के अलावा उसमें ज्यादा कुछ करना नहीं था। इसी तरह समाचार एजेन्सी खोलने पर भी सब राजी हो गये।

लेकिन दो मसलों पर गाड़ी अटक गयी—चार्टर और बैंक। चार्टर की बहस के दौरान कुछ देशों ने विरोध में मत दिया और आग्रह किया कि उनकी राय को दर्ज किया जाय। बैंक के बारे में कोई साफ तस्वीर सामने न होने से उसे एक कमिटी को सुपुर्द कर दिया।

इस्लामी चार्टर बने या न बने और बैंक खुले या न खुले, हमें दुःख उनके पीछे जो नजरिया है उस पर है। आज जब विज्ञान सारे संसार को एक कुनबे का रूप दे रहा है वहाँ इस्लाम, ईसाई, हिन्दू, बौद्ध आदि के कठघरे खड़े करना जमाने के प्रवाह के खिलाफ जाना है और ज्यादती भी है। इसमें साम्प्रदायिकता की जो विशिष्ट गन्ध है वह बहुत घातक सिद्ध होगी और विशेषकर इस्लाम के तथा-कथित भक्तों के लिए, क्योंकि यह भेद-भाव गैर-इस्लामी है। कुरान में पैगम्बर साहब खुद फरमाते हैं कि सिरजनहार "रब-उल-आलमीन" है न कि "रब-उल-मुस्लिमीन।" इस्लामी देशों का या इस्लाम के पैरोकारों का कौन ऐसा सवाल है जो सभी देशों या अन्य धर्मावलम्बियों से सम्बन्धित न हो? और कौन ऐसा हित है जो केवल मुस्लिम बन्धुओं के अनुकूल है और दूसरों के प्रतिकूल हो? इस्लामी कॉन्फ्रेन्स का सारा दृष्टिकोण धर्मान्धता और विवेकशून्यता का द्योतक है। आज जरूरत इस्लामी कॉन्फ्रेन्स, मण्डलों या जमायत की नहीं बल्कि आलमी बिरादरी और इनसानी भाईचारे की है।

नये चुनाव की चुनौती

इन विधानसभाओं के चुनाव में जबरदस्त सफलता के बाद कांग्रेस पर यह जिम्मेदारी आ जाती है कि वह जनता के अरमानों को पूरा करे और उनसे उसने जो वादे किये हैं उन्हें अच्छी तरह निभाये। इनमें सबसे प्रमुख है गरीबी मिटाना। परन्तु हमें डर है कि शासन की जो रूढ़िगत प्रणाली है और उसका जो परम्परागत चिन्तन है उसके रहते न गरीबी मिटेगी, न समाजवाद आयेगा। हाल ही में तीन ब्रिटिश कम्पनियों को देश में उत्पादन करने के लिए जो सुविधाएँ प्रदान की गयी हैं उनको देखकर यह शंका और भी बढ़ जाती है। फिर भी हमारी सिफारिश है कि निम्न तीन कदम उठाये जायें तो अपने गन्तव्य की ओर देश तेजी से प्रगति कर सकेगा। वे ये हैं :

(क) जमीन की खरीद-बिक्री एकदम बन्द करा दी जाय और जिस गाँव में जो जमीन है उसका उपयोग वहाँ की ग्राम-सभा के निर्णय के अनुसार वहाँ के निवासी करें।

(ख) सौ रुपये का नोट अमान्य घोषित कर दिया जाय।

(ग) कोई भी कमरा या मकान वातानुकूलित न रहने दिया जाय और बिजली के मामूली पंखे से सन्तोष किया जाय।

—दादा

पुष्टि-अभियान

एक महीने के अभियान के लिए सहरसा समेत बिहार के विभिन्न जिलों और देश के अन्य प्रदेशों से आये हुये कार्यकर्ताओं तथा ग्रामसभा-पदाधिकारियों का प्रारम्भिक शिविर ता० १८-१९ मार्च को सहरसा जिला स्कूल के प्रांगण में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। आरम्भ में सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य अभियान समिति के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र मिश्र ने आगत व्यक्तियों का स्वागत किया।

शिविर में उपस्थित लोगों को अभियान की पृष्ठभूमि, उद्देश्य, कार्यक्रम और योजना की विस्तृत जानकारी दी गयी। टोलियों को काम से सम्बन्धित फार्म, प्रचार-साहित्य तथा बिक्री के लिए पुस्तकों के सेट आदि सामग्री ता० १९ को रात तक वितरित कर दी गयी और ता० २० को सवेरे तक अधिकांश टोलियाँ अपने-अपने प्रखण्ड के लिए स्थानीय प्रभारियों के साथ रवाना हो गयीं।

३५० से अधिक कार्यकर्ता अभियान में लगे हैं। इनमें से ११३ देश के अन्य प्रदेशों से आये हैं और करीब २५० बिहार से। बिहार में करीब एक सौ व्यक्ति सहरसा जिले के हैं जिन्होंने अपने-अपने प्रखण्डों में पूरा महीना भर इस काम में लगाने का निश्चय किया है। अभियान में लगे हुए साथियों की प्रदेशवार संख्या इस प्रकार है।—

प्रदेश	संख्या
१—आसाम	१
२—प० बंगाल	२
३—दिल्ली	२
४—हरियाणा	१
५—राजस्थान	४
६—गुजरात	१२
७—मध्य प्रदेश	२८
८—उत्तर प्रदेश	१७
९—महाराष्ट्र (बम्बई रहित)	१५
१०—बम्बई शहर	७
११—मैसूर	२
१२—बिहार	२५०
कुल	३६३

बिहार के साथियों में सहरसा के अलावा मुख्य रूप से पूर्णिया, दरभंगा, पटना, मुंगेर, सथालपरगना, मुजफ्फरपुर और गया के हैं, शेष जिलों से एक-एक, दो-दो आये हैं। वैसे बिहार के कुल १७ जिलों में से कम-ज्यादा १४ जिलों के लोग अभियान में लगे हैं। बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, बिहार भूदान यज्ञ कमिटी तथा कई जिलों की विभिन्न संस्थाओं ने भी अपनी ओर से कार्यकर्ता भेजे हैं।

सहरसा जिले के २३ प्रखण्ड, पड़ोस के पूर्णिया के २ और दरभंगा के एक, इस तरह कुल २६ प्रखण्डों की ५२० पंचायतों में काम शुरू हुआ है। हर तीन पंचायतों के पीछे दो कार्यकर्ताओं की एक टोली काम कर रही है। एक टोली के क्षेत्र में करीब १० से १५ छोटे-बड़े गाँव पड़ते हैं। *ता० १८ अप्रैल तक के एक माह में* ये टोलियाँ अपने क्षेत्र के सब गाँवों में पदयात्रा करेंगी। हर प्रखण्ड में एक स्थानीय और एक बाहर के उनके सहायक, इस प्रकार दो *लोगों की एक टोली* सतत् घूमकर गाँवों में काम कर रही टोलियों की मदद करती रहेगी। इसके अलावा २६ प्रखण्डों के पूरे अभियान-क्षेत्र को ५ *क्षेत्रों में बाँटा गया है जिनमें क्षेत्रीय टोलियाँ सारे काम का समन्वय करेंगी* तथा चालना देती रहेंगी।

अभियान की अवधि में गाँव-गाँव में भूमिहीनों के लिए जमीन प्राप्त करके उसका वितरण करना, ग्रामसभाएँ गठित करना, ग्रामकोष शुरू कराना, गाँव अदालत-मुक्त हों इसकी कोशिश करना आदि काम किये जायेंगे और १८ अप्रैल के दिन हर गाँव में ग्रामस्वराज्य का संकल्प लिया जायगा और जमीन का बँटवारा होगा।

अहिंसा की शक्ति कैसे पनपेगी

● अहिंसा का अर्थ ही अनुशासन है, स्वयं प्रेरणा से अनुशासन। हिंसा में अनुशासन लादा जाता है।

● अहिंसा हुक्म लाद नहीं सकती, विचार समझा सकती है और सामनेवाले को उसको मानने या न मानने की पूरी आजादी देती है।

● जब तक अहिंसा किसी एक बिन्दु पर बहुविध दिमाग से, लेकिन एक हृदय से सम्मिलित शक्ति लगाने की ताकत नहीं दिखाती, तब तक वह पनप नहीं सकती।

● स्वेच्छा भी हो और आज्ञापालन भी, ऐसा कठिन काम हमें सफलतापूर्वक करना है। "यथेच्छसि तथा कुरु"।

—विनोबा

१८ अप्रैल का कार्यक्रम

सवेरे ६ बजे से दिन के दो बजे तक

(१) सवेरे गाँव में प्रभातफेरी।

(२) सफाई तथा श्रम-यज्ञ।

(३) गीता, रामायण, कुरान, बाईबिल आदि के पाठ।

(४) भिन्न-भिन्न धर्मों के भजन, कीर्तन आदि।

दिन के दो बजे से ग्रामसभा में :

सब धर्मों की प्रार्थना, गाँव के काम की जानकारी।

बीघा-कट्ठा वितरण, ग्रामकोष में दान।

भाषण और सामूहिक संकल्प, प्रसाद वितरण।

—सर्वेश्वर
(सहमंत्री, अभियान समिति)

चम्बलघाटी शान्ति-मिशन के कार्य में गति

नयी दिल्ली १८ मार्च। मध्य प्रदेश सरकार के सहयोगी और उत्साह-वर्धक रवैये से चम्बलघाटी शान्ति-मिशन के कार्य में गति आयी है और सम्भावना है कि अप्रैल के मध्य तक समर्पण के लिए तैयार बागियों की संख्या डेढ़ सौ तक पहुंच जायेगी।

चार दलों के लगभग सौ बागी पहले ही श्री जयप्रकाश नारायण को आत्म-समर्पण की सूचना दे चुके हैं। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द सेठी हाल में ही यहां श्री जयप्रकाश नारायण से मिले। पता चला है कि वार्ता बहुत उत्साहवर्धक रही। मध्य प्रदेश, उत्तर-प्रदेश और राजस्थान के मुख्यमंत्रियों और पुलिस महानिरीक्षकों की एक बैठक इस समस्या पर विशेष रूप से चर्चा करने के लिए अप्रैल के पहले सप्ताह में केन्द्रीय गृह-मंत्रालय के तत्त्वावधान में होगी।

चम्बलघाटी शान्ति-मिशन ने अपना कैम्प कार्यालय निवनवास, थाना पहाड़गढ़ जिला मुरैना में खोला है। सर्वश्री महावीर सिंह, हेमदेव शर्मा, तहसीलदार सिंह और पण्डित लोकमन बागियों से सम्पर्क कर रहे हैं।

मंत्रियों, अधिकारियों के साथ रचनात्मक कार्यकर्ताओं की बैठक

इन्दौर, २४ मार्च। ज्ञात हुआ है कि केन्द्रीय गांधी-निधि भारत सरकार के मंत्रियों और अधिकारियों के साथ प्रान्तीय निधियों और प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं के पदाधिकारियों की एक बैठक मध्य मई में आयोजित कर रही है।

बैठक का उद्देश्य सरकार के लोक-कल्याणकारी कार्यक्रमों और गांधी निधि के अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में समन्वय करना और एक दूसरे का दृष्टिकोण समझना है।

उत्तर प्रदेश मद्य-निषेध सम्मेलन

उत्तर प्रदेश मद्य-निषेध सम्मेलन ८ और ९ अप्रैल को होना निश्चित था। लेकिन प्रतिनिधियों की सुविधा की दृष्टि से इसे बढ़ाकर ११, १२ अप्रैल १९७२ रखा गया है।

प्रतिनिधियों से अनुरोध है कि ११ अप्रैल को दोपहर तक वे अवश्य ही लखनऊ पहुंच जायें। पूर्ण जानकारी के के अभाव में निश्चय ही हम सभी मद्य-निषेध के शुभचिन्तकों तथा कार्यकर्ताओं से सम्पर्क नहीं कर पा रहे हैं। इस लिए कृपापूर्वक आप यह कष्ट भी उठायें कि अपने जनपद के ऐसे सभी लोगों को सम्मेलन में पधारने के लिए हमारी ओर से तथा अपनी ओर से आमन्त्रित करें।

सम्भव है ११, १२ अप्रैल के अति-रिक्त भावी कार्यक्रम की दृष्टि से कुछ लोगों को १३ तारीख को भी रुकना पड़े।

स्वागत समिति,
उत्तर प्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन

सम्पर्क स्थापित करने का पता :
गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र
१४५ कैण्ट रोड, लखनऊ
फोन नं० २५४१७
तार :—सत्याग्रह

शिविर प्रतिवेदन, भोपाल

मालवीय नगर भोपाल से श्री कैलाश श्रीवास्तव ने सूचित किया है कि म० प्र० गांधी स्मारक निधि एवं मध्य प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संयुक्त तत्त्वावधान में १९ फरवरी से २९ फरवरी '७२ तक विसर्जन आश्रम इन्दौर में श्री चतुर्भुज पाठक के संयोजकत्व में भोपाल तरुण-शान्तिसेना शिविर का आयोजन किया गया। इस ११ दिवसीय शिविर का कार्यक्रम बहुत ही असरदायी एवं प्रभा-वोत्पादक रहा।

तरुण-शान्तिसेना शिविर, उदयपुर

दिनांक ११, १२ मार्च को उदयपुर से ७ मील दूर मदार ग्राम में दो दिव-सीय एक शिविर श्री दीनदयाल दधीत्तर के मार्गदर्शन में आयोजित किया गया। शिविर का उद्देश्य तरुणों की तात्कालिक समस्याओं पर विचार करना था।

अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन

प्राप्त सूचना के अनुसार अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन नकोदर, जिला जालंधर (पंजाब) में दिनांक १९ मई से २१ मई तक निश्चित हुआ है। इसके पूर्व दिनांक १६, १७, १८ मई को सर्व सेवा संघ का छमाही अधिवेशन भी होगा।

संघ-अधिवेशन में चर्चा के विषय निम्न होंगे—

दिवंगतों को श्रद्धाञ्जलि, पिछली बैठक की कार्यवाही की स्वीकृति, मंत्री की रिपोर्ट (१५ अक्टूबर '७१ से अप्रैल '७२ तक), सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का निर्वाचन, देश की परिस्थिति एवं ग्राम-स्वराज्य-मतदाता-शिक्षण, लोक-सेवकों की एवं सर्वोदय मण्डलों की सक्रियता कैसे बढ़े ? तरुण-शान्तिसेना एवं ग्राम-शान्तिसेना, खादी, अध्यक्ष की अनुमति से अन्य विषय।

नकोदर पहुंचने के लिए दिल्ली, पानीपत, करनाल की ओर से आनेवाले यात्रियों को लुधियाना से ट्रेन बदलनी पड़ेगी। लुधियाना से चलनेवाली गाड़ी जो लोहियाखास जाती है, रास्ते में नकोदर जंक्शन स्टेशन आता है। लुधियाना से चार ट्रेनें चलती हैं। लुधियाना से बस की भी अच्छी सुविधा है। कुछ सरकारी रूटों की बसें भी इस रास्ते से गुजरती हैं।

तरुण-शान्तिसेना शिविर

बलिया जिला आचार्यकुल के तत्त्वावधान में आयोजित वादिलपुर इण्टर कालेज के छात्रों का शिविर गत २७ फरवरी को सम्पन्न हुआ। शिविर का आयोजन विद्यार्थियों से तरुण-शान्तिसेना का परिचय कराने, उनमें आत्मानुशासन एवं जिज्ञासा जागृत करने तथा सामूहिक जीवन की झांकी देने के उद्देश्य से स्थानीय आचार्यकुल की सहायता से लोकाधार पर किया गया। शिविर-व्यय स्थानीय जनता, विद्यार्थियों एवं शिक्षकों ने वहन किया।

शिविर का उद्घाटन २६ फरवरी को प्रात सन्त साहित्य के मर्मज्ञ श्री परशुराम चतुर्वेदी ने किया।

अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के प्रशिक्षक सत्यनारायण भाई के संचालन में शिविर दो दिनों तक सोत्साह चला। शिविर का समावर्तन जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री पंचदेव तिवारी ने किया।

बलिया (उ० प्र०) —शिवकुमार

बस्ती आचार्यकुल सम्मेलन

६-७ मार्च को बस्ती में आचार्यकुल का जो सम्मेलन हुआ वह उत्तर-प्रदेश में अपने ढंग का निराला था। पहली बार प्राथमिक और जूनियर हाई स्कूल के अध्यापकों ने गोष्ठी में एकत्र होकर आचार्यकुल पर चर्चा की और अपनी संस्थाओं में आचार्यकुल की स्थापना का निश्चय किया। इसके पहले उत्तर प्रदेश में प्राथमिक स्कूलों में आचार्यकुल की स्थापना नहीं हुई थी। बस्ती के इस सम्मेलन के साथ उत्तर प्रदेश के आचार्यकुल आन्दोलन में एक नया अध्याय जुड़ा है।

सम्मेलन का उद्घाटन केन्द्रीय आचार्यकुल के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव और समापन गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, दिल्ली के श्री एस० एन० सुब्बाराव ने किया। इस गोष्ठी के संयोजन का पूरा प्रबन्ध उप-जिला विद्यालय निरीक्षक श्री जंगबहादुर सिंह ने किया था। गोष्ठी को गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री राम विहारण सिंह का आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ।

—रामवचन सिंह

ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि-पदयात्रा

उड़ीसा की पदयात्राएं ता० १४ से २२ तक ढेंकानाल जिले के गोंदिया प्रखण्ड में ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि-पदयात्राएं हुईं। ८७ गांवों में ग्रामस्वराज्य समझानेवाली सभाएं की गयीं जिनमें से ४५ गांव पूर्णरूप से (एवं २९ अपूर्ण) संकलित ग्रामदान हुए। ३० गांवों में ग्रामसभाएं बनीं। १९७ दाताओं से ग्रामदान में वितरण योग्य १११ एकड़ जमीन मिली और इसमें से १८७ आदाताओं को ८१ एकड़ जमीन वितरित की गयी। ३० गांवों में ग्राम-शान्तिसेना बनी। आगे का काम चालू रखने के लिए प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति बनायी गयी। इस यात्रा में सम्मिलित होने के लिए आन्ध्र से श्री सुरभी शर्मा, पंजाब से श्री यशपाल मित्तल, एवं महाराष्ट्र से श्री ठाकुरदास बंग, श्री नन्दलाल कावरा, श्री आचार्य, एवं श्रीमती सुमन बंग ने उड़ीसा प्रदेश के ५० कार्यकर्ता सहित हिस्सा लिया।

खादी-प्रशिक्षण विद्यालय

राजस्थान खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, शिवदासपुरा में १ मई १९७२ से ऊनी-खादी-प्रशिक्षण अभ्यास क्रम का प्रथम सत्र प्रारम्भ हो रहा है। सत्र की अवधि ११ माह की रखी गयी है। उक्त पाठ्यक्रमान्तर्गत विभिन्न किस्मों की ऊन से विभिन्न प्रकार के चरखों व करघों पर विभिन्न अंकों के सूत की कताई, बुनाई, ऊन के बाजार' तथा तत्सम्बन्धी प्रासंगिक विषयों की जानकारी के अतिरिक्त खादी केन्द्रों की व्यवस्था, संगठन, हिसाब-किताब, खादी तथा सर्वोदय आन्दोलन एवं उनका अर्थशास्त्र तथा देश की विकास योजनाओं सम्बन्धी सैद्धान्तिक विषयों के शिक्षण की व्यवस्था है।

प्रशिक्षार्थियों की शैक्षणिक योग्यता मैट्रिक या उसके समकक्ष अपेक्षित है। प्रशिक्षण काल में ६० रु० मासिक छात्रवृत्ति दी जायगी तथा विद्यालय आने व वापस अपने क्षेत्र में जाने का मार्ग-व्यय विद्यालय के नियमानुसार देने का प्रावधान है। संस्थाओं से निवेदन है कि वे एक मई '७२ से प्रारम्भ होनेवाले ऊनी खादी प्रशिक्षण अभ्यास क्रम में कार्यकर्ता भेजवायें।

—शीतलाप्रसाद सिंह
आचार्य

(पृष्ठ ४१९ का शेष)

बड़ी दिलचस्पी से देख रहा था और स्वाभाविक तौर पर मैं यह पता चलाना चाहता था कि यह महाराज कौन है। मुझे यह अन्दाजा हो गया था कि ये दोनों टिकट चेकर उनकी असलियत जानते हैं। उनमें से एक से, जो सर झुकाये खड़ा था, मैंने पूछा तो उसने झुककर अपना मुँह मेरे कान के पास लाकर, बहुत धीरे से कहा—'धार्मिक रचनात्मक है !'

यह उत्तर सुनकर मैं नहीं समझ पाया लेकिन उत्तर की सादगी और उसकी मासूमियत ने मुझे और प्रश्न पूछने की इजाजत नहीं दी।

गाड़ी चल रही थी। पटना जंक्शन करीब आ चुका था और मेरा दिमाग मंजिल से बहुत दूर क्षितिज के पार झांकने में व्यस्त हो गया था। ●

भूदान-यज्ञ १-४-'७२ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाने का निश्चय

मध्य प्रदेश सर्वोदय सम्मेलन का निर्णय

गत १४-१५-१६ मार्च को सिवनी में गांधीजी की अंग्रेज शिष्या सुश्री सरला बहन की अध्यक्षता में सम्पन्न १२वें मध्य प्रदेश सर्वोदय सम्मेलन में गांधी शताब्दी के दौरान ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में "मध्य प्रदेश-दान" के संकल्प को दुहराते हुए इस वर्ष स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती के निमित्त प्रदेश के लगभग ६७,००० गाँवों में ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाने का निश्चय किया गया है। इसके लिए राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक स्तर पर कार्यक्रम बनाने एवं संचालन के लिए समितियों के गठन का भी सुझाव दिया गया है।

सम्मेलन द्वारा सर्वसम्मति से स्वीकृत एवं प्रसारित निवेदन में देश और प्रदेश की राजनीतिक स्थिति पर विचार करते हुए प्रदेश में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के अपने संकल्पित काम को "प्रदेशदान" के सन्दर्भ में गतिमान करने के लिए जिलों के गाँवों में व्यापक लोक-सम्पर्क, आम लोगों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के लिए अनुकूल भावना जगाने की दृष्टि से पदयात्राओं, शिविरों, गोष्ठियों, प्रशिक्षण और सम्मेलनों के माध्यम से सतत विचार-प्रचार करने की आवश्यकता पर बल दिया है। इसके अलावा ग्रामदानी जिलों में पुष्टि-केन्द्र खड़ा करने, योजनापूर्वक भूदान-भूमि भूमिहीनों में वितरित करने एवं शान्तिसेना के माध्यम से ग्राम-समाज में ग्रामस्वराज्य के विविध कार्यक्रमों के लिए मानसिक अभिमुखता और अनुकूलता के लिए यत्न करने का कार्यक्रम प्रस्तावित है। शिक्षा में क्रान्ति, ग्रामाभिमुख खादी और मद्य-निषेध की दृष्टि से ग्रामदानी क्षेत्रों में लोक-शिक्षण का काम सतत चले और इन कामों के बारे में शासन की नीति और दृष्टि बदलने का सुझाव है।

मध्य प्रदेश की समस्त रचनात्मक संस्थाओं के मिले-जुले प्रयत्नों और सामूहिक पुरुषार्थ से उक्त सारे काम एक निश्चित अवधि में जन-शक्ति द्वारा जोर पकड़ सकें, इसके लिए समन्वय और सहयोग के लिए आह्वान किया गया है।

नयी कार्यकारिणी

उक्त सम्मेलन के अवसर पर प्रदेश सर्वोदय मण्डल की नयी कार्यकारिणी का गठन श्री काशिनाथ त्रिवेदी की अध्यक्षता में हुआ। इन्द्रलाल मिश्र, रीवा (मन्त्री) तथा श्रीमती सरस्वती दुबे, रायपुर और सत्यनारायण शर्मा, सिवनी (सहमंत्री) हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा-सम्मेलन

इन्दौर, २४ मार्च। मध्य प्रदेश गांधी स्मारक निधि के तत्वावधान में गत १९-२० मार्च को गांधी भवन, छतरपुर में आयोजित प्रादेशिक प्राकृतिक चिकित्सा सम्मेलन सम्पन्न हो गया। सम्मेलन की अध्यक्षता केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त ने की और उद्घाटन केन्द्रीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद के उपाध्यक्ष श्री प्रभाकर ने किया। इस सम्मेलन में प्रदेश के विभिन्न जिलों में से करीब २५ से अधिक चिकित्सकों एवं प्राकृतिक उपचार प्रेमियों ने भाग लिया।

सम्मेलन ने सर्वसम्मति से पारित एक प्रस्ताव द्वारा राज्य सरकार को प्राकृतिक चिकित्सा के पद्धति को मान्यता देने और उसे मध्य प्रदेश आयुर्वेदिक, यूनानी और प्राकृतिक चिकित्सा बोर्ड में शामिल करने के लिए धन्यवाद दिया।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

★

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
वर्ष : १८, अंक : २८;
१७ अप्रैल, १९७२

सोखोदेवरा सर्वोदय आश्रम के कुछ कार्य

'फ्रीडम फॉर हंगर कम्पेन सोसाइटी' की आर्थिक सहायता से ग्राम-निर्माण मण्डल सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा द्वारा कृषक प्रशिक्षण-योजना का संचालन गत अप्रैल १९७१ से कर रहा है।

कृषि प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत नवादा अनुमण्डल के चार प्रखण्डों (नवादा, अकबरपुर, गोविन्दपुर और पकरीबरावाँ) के २१ गाँवों के किसान प्रशिक्षण में सम्मिलित किये गये हैं। इन प्रखण्डों के अतिरिक्त कौआकोल प्रखण्ड में स्थित आश्रम के पाँच किसानों को भी सम्मिलित किया गया है। उन्नत बीज, खाद और पौधा-संरक्षक दवाओं के अतिरिक्त प्रशिक्षार्थी किसानों को कृषि की नवीनतम जानकारी प्रदान कर उन्हीं के खेतों में धान, गेहूँ और सब्जी की उन्नत ढंग से खेती करने का प्रत्यक्षण कराया गया जिसमें उन्हें तथा किसानों को अपनी आँखों से देखकर यह विश्वास हो कि आधुनिक कृषि की जानकारी प्राप्त कर निश्चय ही उत्पादन में तीव्रता से वृद्धि लायी जा सकती है। प्रत्यक्षण एवं प्रशिक्षण का प्रभाव इसी तथ्य से जाना जा सकता है कि जहाँ किसान धान की उपज मुश्किल से १० मन लेते थे वहाँ उनकी उपज ३० मन आसानी से हुई। गेहूँ और सब्जी के प्रत्यक्षण का प्रभाव भी किसानों पर अच्छा रहा है।

कृषि की नवीनतम जानकारी का प्रसार किसानों में व्यापक रूप से हो, इसके लिए प्रशिक्षण-योजना के अन्तर्गत अन्य कार्यक्रम भी रखे गये। २९, ३० और ३१ जनवरी १९७२ को नवादा में आयोजित किसान मेले में किसानों को कृषि-प्रगति की झाँकी एवं कृषि के आधुनिक यंत्रों के प्रदर्शन को देखने का अवसर मिला। मेले में शाक्-सब्जी-प्रतियोगिता भी रखी गयी जिसमें किसानों ने बड़ी दिलचस्पी से भाग लिया। प्रतियोगिता में विजयी किसानों को पारितोषिक भी दिये गये।

शिक्षा में प्रवास का महत्त्व समझते हुए प्रशिक्षणार्थी किसानों के लिए एक संक्षिप्त अध्ययन प्रवास की भी व्यवस्था की गयी। राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय द्वारा ढोली में आयोजित किसान मेला तथा पटना स्थित कृषि अनुसन्धान केन्द्र एवं पौधा-संरक्षण-केन्द्र के भ्रमण से ९ कृषकों को कृषि-सम्बन्धी बहुत-सी बातों की जानकारी प्राप्त करने का सुअवसर मिला।

प्रशिक्षणार्थी कृषकों तथा उनके प्रत्यक्षण द्वारा प्रभावित अन्य किसानों में उन्नत ढंग से खेती करने की अभिरुचि अत्यन्त सराहनीय है। उन्होंने आपस में मिलकर आधुनिक खेती के प्रसार के लिए चर्चा मण्डलों का भी निर्माण किया है जहाँ वे खेती की विभिन्न समस्याओं पर चर्चा करते हैं और उनके समाधान के लिए उन्नत बीज, खाद, दवा के अतिरिक्त कृषि यंत्रों के उपयोग की सुविधा प्राप्त कराने की भी माँग करते हैं। कृषि-प्रशिक्षण-कार्यक्रम का प्रभाव क्षेत्र के किसानों पर बड़ा उत्साहवर्द्धक है।

प्रशिक्षण एवं निर्माण-कार्य

'ऑक्सफेम' नामक इंग्लैण्ड की एक संस्था ग्राम निर्माण मण्डल को कौआकोल प्रखण्ड के गरीब किन्तु प्रगतिशील किसानों को आर्थिक तथा सामाजिक दशा सुधारने एवं संगठित रूप से उन्हें काम करने में आर्थिक मदद कर रही है। इस मदद में किसानों ने जो कार्य २४ विभिन्न गाँवों में किये हैं उनसे कूप-आहर, बाँध-निर्माण, सामूहिक खेती आदि उल्लेखनीय हैं।

सोखोदेवरा आश्रम में कृषि-प्रशिक्षण-कार्यक्रम द्वारा गाँवों के किसानों में बचत करने एवं कर्ज वापसी की प्रवृत्ति भी हो रही है।

लघु सिंचाई के लिए नालियाँ

आज जब कृषक नलकूप द्वारा पानी से लैस होता जा रहा है वहाँ उसके समक्ष समस्या है कि उपलब्ध पानी का पूर्ण उपयोग कैसे हो। क्योंकि कच्ची नाली से पानी ले जाने में पानी जमीन में सोखने, वाष्पीकरण आदि के द्वारा लगभग उसका ½ भाग बरबाद हो जाता है। इसे रोकने के लिए मिट्टी से निर्मित नालियाँ वरदान के रूप में सामने आयी हैं। आज सारे भारत में इनका उपयोग लघु सिंचाई में किया जा रहा है। सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा द्वारा अभी तक कौआकोल अंचल में ३१ हजार फुट से भी अधिक मिट्टी की नालियाँ बनायी जा चुकी हैं। इससे २१५ एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है तथा इसके प्रयोग से लगभग १० एकड़ कृषि-योग्य भूमि बचायी गयी है।

पुष्टि-कार्य

गया जिलान्तर्गत कौआकोल प्रखण्ड में अब तक १२ गाँवों में ग्रामदान-पुष्टि-कार्य सम्पन्न किया जा चुका है।

उपर्युक्त १२ गाँवों में से ११ गाँवों की पुष्टि-सम्बन्धी समाचार बिहार गजट के साधारण अंक सं० पटना ६६४ दिनांक ७ दिसम्बर १९७१ में प्रकाशित हो चुका है।

शिक्षा में अभिनव प्रयोग

ग्रामीण पुनर्निर्माण के सन्दर्भ में जीवनोपयोगी शिक्षा के माध्यम से परिवर्तन लाने के लिए कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है।

खादी ग्रामोद्योग विद्यालय

सोखोदेवरा आश्रम स्थित खादी ग्रामोद्योग विद्यालय में गत २० दिसम्बर से १६ अप्रशिक्षित परन्तु अनुभवी ग्राम-सहायकों का पाँच माह का तथा गत २० जनवरी से २६ खादी ग्रामोद्योग संगठकों का ग्यारह माह का अभ्यास-क्रम चल रहा है।

(शेष पृष्ठ ४३८ पर)

काली सारी नगरी !

हिन्दू मानते हैं कि जो बाहरी दुनिया आँखों से दिखाई देती है वह माया है; यथार्थ वह है जो दिखाई नहीं देता। इस अर्थ में हमारा खुला बाजार माया है; यथार्थ है काला बाजार जो गुप्त है। सरकार द्वारा नियुक्त वांचू समिति ने अनुमान लगाया है कि काले बाजार में लगभग ७० अरब रुपया है। इस ७० अरब की ही वह शक्ति है जिसे लेकर बाजार सरकार के मुकाबले तनकर खड़ा है। इसी से वह मूल्यों को अपनी मुट्ठी में रखता है, सरकार के कानूनों की परवाह नहीं करता, टैक्स नहीं देता और जो चाहता है वही करता है। सोने तथा अन्य चीजों की तस्करी में यह काला बाजार खूब तो फायदा उठाता ही है, इसके अलावा न जाने कितनी पूंजी विदेश भेज देता है। एक ओर देश दूसरे देशों से पूंजी माँगता है, दूसरी ओर काला बाजार पूंजी बाहर भेजता है !

ऐसा नहीं है कि सरकार को काले बाजार का पता नहीं है। पता है, लेकिन वह कुछ कर नहीं पा रही है। कहा जाता है कि अधिकांश काला रुपया दस और पाँच रुपये के नोटों में है। इन नोटों को सरकार क्या करे? बड़े नोट बाजार से उठा लिये जा सकते हैं, लेकिन ये छोटे नोट कैसे उठाये जायँ? उपाय दूसरे भी हैं, लेकिन सरकार उन्हें कर नहीं पाती। कारण यह है कि ऊपर से देखने पर सरकार और बाजार दो अलग, कभी-कभी परस्पर विरोधी, शक्तियाँ दिखाई देती हैं, और लगता है कि सरकार जब चाहे बाजार पर हावी हो सकती है, लेकिन सच्चाई दूसरी है। बाजार के हाथ में ऐसी शक्ति है जो सरकार के किले में सुरंग बना देती है। 'काली' नोटें जैसे दूसरा माल खरीदती हैं, उसी तरह सरकार के छोटे-बड़े अधिकारियों को भी खरीद लेती हैं। कितने हैं जो इस तरह बिकने को तैयार न हों ?

अधिकारियों को ही नहीं, अब तो काला बाजार पूरी राजनीति को मुट्ठी में करता जा रहा है। जो पैसा माल की मनचाही खरीद-बिक्री करता है, और तस्करी का सारा कारोबार चलाता है, वही चुनाव में हार-जीत का फैसला करता है। इतना बेशुमार रुपया कहाँ से आता है जो चुनाव में पानी की तरह बहता है ? एक-एक चुनाव-क्षेत्र में दर्जनों मोटरें और जीपें कैसे दौड़ती हैं ? किस पैसे से लोगों का मुँह बन्द किया जाता है ?

राजनीति में देशी-विदेशी दोनों जगह का काला पैसा घुसा हुआ है। पसीने की कमाई से राजनीति नहीं चलती, और न पसीने की कमाईवाले के लिए राजनीति में जगह होती है।

काला बाजार और काली राजनीति : इन दोनों में किसने किसको पहिले काला किया ? सत्ताधारी के हाथ में कोटा-परमिट-लाइसेन्स है, व्यापारी के हाथ में थैली है। दोनों का लेन-देन दूसरे महायुद्ध के समय बड़े पैमाने पर शुरू हुआ जब कण्ट्रोल लगाये गये। उस वक्त जो गठबन्धन हुआ वह मजबूत होता गया; बढ़ते-बढ़ते आज उसने पूरी सरकार को और पूरे समाज को अपनी मुट्ठी में कर लिया है। लगता है जैसे सारी नगरी काली हो गयी हो !

राजधानियों में जो हो रहा है वह तो हो ही रहा है, गाँव में भी हम जहाँ चाहें त्रिभुज की तीनों भुजाएँ देख सकते हैं। सत्ताधारी, व्यापारी, अधिकारी—इनकी सम्मिलित शक्ति से काला बाजार चल रहा है, और इन्हीं से राजनीति चल रही है। नैतिकता की दीवाल ये तोड़ चुके हैं, मनुष्य के मन से भगवान का भय निकल चुका है, प्रशासन का सिर्फ ढाँचा खड़ा है। अब ये तीनों इस षड्यंत्र में लगे हुए हैं कि लोकतंत्र में संख्या की जो शक्ति है वह भी टूट जाय। मतदान-केन्द्र पर जबरदस्ती कब्जा करना उसी दिशा में एक संगठित प्रयत्न है।

माया के पर्दे के फटे बिना मुक्ति नहीं। लेकिन माया का पर्दा फटेगा कैसे ? ज्ञान के सिवाय दूसरी कोई शक्ति नहीं जिससे मनुष्य माया पर पार पा सके। इसीलिए क्रान्तियाँ पहिले दिमाग में शुरू होती हैं जो प्रचलित व्यवस्था की माया को परख लेती हैं। हमारे दिमाग में यह परख अभी पूरी नहीं हुई है। हमारे मन से माया निकली नहीं है। इसीलिए हम काले बाजार और काली राजनीति के काले कारनामे देखते हुए भी असहाय बने बैठे हुए हैं। लेकिन खुलेंगे दिमाग और बढ़ेंगे कदम !

धोती : तेरे कितने काम ?

धोती कितने काम आती है ? धोती पहनने के काम आती है, यह सबको मालूम है, लेकिन उस दिन उस युवक से इसका एक नया काम मालूम हुआ।

शाम को अँधेरा हो चुका था। वह आया और चुपके से दरवाजे पर खड़ा हो गया। मैंने पूछा, 'कहो, कुछ कहना है ?' बोला, 'कहना बहुत कुछ है, आप सुनेंगे ? मैं उन्हीं मालिक का पहरेदार हूँ जो आज की सभा के सभापति थे।' मैंने फिर कहा, 'कहो क्या कहना है ?' कहने लगा, 'देखिए, मैं जवान हूँ, काम मिले तो अच्छी तरह कर सकता हूँ। घर में सात आदमी मेरे आसरे हैं। मेरे पास दो धोतियाँ थीं। दस दिन हुए मेरी बहन ससुराल जा रही थी। एक धोती बेचकर मैंने जाते समय अपनी बहन को तीन रुपये दिये। अब यही एक धोती बची हुई है। इसी को पहन कर नहाता हूँ। आधे हिस्से को निचोड़कर सुखा लेता हूँ; फिर उसे लपेटकर भीगे हिस्से को सुखाता हूँ। रात को आधी से लाज ढके रहता हूँ, आधी को चादर की तरह ओढ़ लेता हूँ। कभी-कभी बड़े बच्चे को गोद से चिपकाकर उसे भी ओढ़ा लेता हूँ। सोचता हूँ इस तरह यह धोती कितने दिन चलेगी, और जब फटेगी, तो क्या करूँगा ? नयी के लिए पैसा कहाँ से लाऊँगा ?'

→

सहरसा-मोर्चा गणराज्यों की स्थापना का प्रयास है

• धीरेन्द्र मजूमदार

[१९ मार्च '७२ को सहरसा में ग्रामस्वराज्य-अभियान के प्रारम्भिक शिविर में दिये गये भाषण से। सं०]

आपके दर्शन से मुझे दोहरी खुशी है। पहली खुशी इस बात की है कि मैं लोक-गंगा का दर्शन करके आ रहा हूँ और यहाँ लोक-समुन्दर का दर्शन कर रहा हूँ। सारे देश के लोग यहाँ एक साथ मिले हैं। दूसरी खुशी इस बात की है कि गांधी-युग में यह पहला अवसर आया है जब हिन्दुस्तान के इतने गांधीजन गांवों में जाकर काम करने के लिए इकट्ठा हुए हो। सम्मेलन, अधिवेशन आदि अनुष्ठानों में लोग इकट्ठा होते हैं, लेकिन जब से मैं इसमें शामिल हुआ हूँ तब से, पिछले इक्यावन सालों में, यह कभी नहीं देखा कि गांवों में जाकर काम करने के लिए इतने गांधीजन एक जगह एक साथ जुटे हों। इसलिए मैं इस अभियान को बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ।

जो प्रयास हम कर रहे हैं वह पर्याप्त कतई नहीं है। लेकिन महत्व इस बात का है कि सात लाख गांवों में सात लाख गणराज्यों का गांधीजी का जो सपना था उसके लिए हम साथ मिलकर कोशिश कर रहे हैं।

ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति के आधार

मैंने भोपाल में कहा था कि 'सहरसा या निराशा'। क्यों कहा था? आज उस बात को मैं कुछ साफ करना चाहता हूँ। मेरा मानना है कि सहरसा में गांधी जीयेगा या मरेगा। गांधी-भक्त इसको नोट कर लें। मैं जानता हूँ कि सारी दुनिया गांधी को पूजती है। लेकिन यह गांधी की किस बात की पूजा करती है? गांधी वीर पुरुष था, गांधी महापुरुष था, गांधी युग-पुरुष था। भारत के बाहर की सारी दुनिया वीर पुरुष गांधी की पूजा करती है। भारत के लोग महापुरुष गांधी को पूजा करते हैं। लेकिन युगपुरुष गांधी की पूजा आज कोई नहीं करता है।

वीरपुरुष जहाँ कहीं कुछ देखेगा, अन्याय देखेगा, अत्याचार देखेगा, शोषण देखेगा, दमन देखेगा, उनका डटकर मुकाबला करेगा। गांधी यह करता था। लेकिन क्या गांधी से पहले वीरपुरुषों का जन्म नहीं हुआ था? क्या आज भी ऐसे लोग नहीं हैं दुनिया में? गांधी ने इतना ही न कहा था कि भाई, बन्दूक लेकर मुकाबला नहीं करना है, शान्तिमय प्रतिरोध करना है। जिस युग में दुनिया निःशस्त्रीकरण की बात कर रही है, उस युग में अगर गांधी ने निःशस्त्र प्रतिरोध की बात बतायी तो यह कौन-सी बड़ी बात की? तो केवल शान्तिमय प्रतिरोध के सहारे गांधी जिन्दा नहीं रह सकता।

हमारे देश के लोग महापुरुष गांधी की पूजा करते हैं। गांधी-शताब्दी में जो भाषण हुए, उन्हें मैं पढ़ता था, सुनता था—गांधी कोढ़ियों की सेवा करता था, गांधी की कथनी और करनी एक-सी थी, गांधी बच्चों को प्यार करता था, गांधी ऐसा करता था, वैसा करता था, ऐसा आदर्श पुरुष था—भाई, हर महापुरुष ऐसा करता था। इसमें गांधी की कोई विशेषता नहीं रही। महापुरुषों को छोड़िये, बहुत-से गृहस्थ भी ऐसा करते हैं। लेकिन भारत गांधी को इसी चीज के लिए पूजता है।

लेकिन गांधी युग-पुरुष है। सनातन काल से, इतिहास की प्रारम्भिक अवस्था से समाज भय के जरिये चलता आ रहा है। मनुष्य ठीक रास्ते पर रहा है मरण के भय से, यमराज और पृथ्वीराज के भय से। पृथ्वीराज समाज को सन्तुलित रखेगा यह सर्वमान्य विचार रहा है। पूरे विश्व की मान्यता इसकी रही है। गांधी पहला आदमी था जिसने कहा, सर्वत्र भय-वर्जनम्। भय का स्थान समाज में नहीं रहेगा अर्थात् अहिंसक समाज बनेगा।

विनोबा ने सहरसा का उद्घोष गांधी के इसी विचार को लेकर किया है। इसीलिए मैंने कहा कि यहाँ गांधी मरेगा या जीयेगा। सरकार मुक्त गांव और बाजार-मुक्त जनता यह उसका नारा है। हमारे बहुत-से नौजवान कहते हैं कि विनोबा सत्याग्रह नहीं करता है। उसकी व्यूह-रचना में यह त्रुटि है। चारों तरफ अन्याय हो रहा है। अन्याय का प्रतिरोध क्या चीज है? भ्रष्टाचार का प्रतिरोध क्या चीज है, शोषण और दमन का प्रतिरोध क्या चीज है? यह समझना चाहिए। दबाव से, दमन से समाज चले, सरकार और बाजार की मुट्ठी में समाज रहे, समाज की चालक-शक्ति भय रहे और उसके परिणामस्वरूप जगह-जगह अन्याय होता रहे, शोषण होता रहे, दमन होता रहे, और उसका मुकाबला किया जाय। तो परिणाम क्या होगा? किसी ने किसी की जमीन छीन ली है, किसी ने किसी को धोखा दिया है और हम खड़े हो गये अन्याय का प्रतिकार करने के लिए। अब प्रश्न उठता है कि समाज का जो

→कहते-कहते उस २६-२७ साल के युवक का गला रुंध गया। ग्लानि और क्षोभ का पुतला बना वह थोड़ी देर निश्चेष्ट खड़ा रहा। उसे और क्या कहना था, और मुझे क्या सुनना था? अगर कान हों तो दुःख की अनगिनत कहानियाँ बिना कहे सुनी जा सकती हैं। मैंने यह तो देखा था कि धोती पहनी जाती है, ओढ़ी जाती है, बिछा भी ली जाती है, लेकिन यह नहीं सुना था कि बहन की बिदाई में बेची भी जाती है। बेबसी चीजों से कितने नये-नये काम ले लेती है! ●

होता है, चालक-शक्ति है, यंत्र है, वह अगर वही है, जो आज तक रहा, तो क्या होगा ? हम जगह-जगह प्रतिरोध करते रहेंगे और ऐसा ही समाज अनन्त काल तक चलता रहेगा। प्रतिकार की यह आवश्यकता कभी समाप्त नहीं होनेवाली है।

अब यह मोटी बात समझ लें कि यहाँ आप शासन-मुक्त समाज का प्रयोग करने निकले हैं। सम्मति को समाज की शासक-शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करने निकले हैं। गाँव को बाजार से बाहर निकालने के लिए निकले हैं। सारी दुनिया में यह सिद्धान्त सर्वमान्य है कि अर्थ-नीति बाजार के नियमों से चलेगी और सामाजिक व्यवस्था सरकार के कानून से चलेगी। इसको आप बदलना चाहते हैं। इसीको क्रान्ति कहते हैं। आज क्रान्ति की बात तो बहुत होती है। उत्क्रान्ति हो जाय तो वह हरित क्रान्ति है और कल यदि विष रोक हो जाय तो वह ब्लैक (श्याम) क्रान्ति हो जायेगी। गांधी की अहिंसा 'अहिंसा परमो धर्म' की अहिंसा नहीं है। समाज अहिंसा से चले यह गांधी की अहिंसा है। दुनिया में आज तक इसको किसी ने नहीं स्वीकार किया है। गांधी के बड़े-बड़े साथियों ने भी नहीं स्वीकार किया है। उल्टे शिकायत है कि विनोबा सरकार में क्यों नहीं जाता है।

क्रान्ति का अर्थ : मान्यता-परिवर्तन

जो गांधी की क्रान्ति है वह क्या है ? एक जमाना था जब सामाजिक न्याय सर्वमान्य चीज नहीं थी। गुलाम रखना, धार्मिक लोगों के लिए भी कोई बुरी बात नहीं थी। मछली खानेवाले अच्छे-से-अच्छे धार्मिक आदमी भी जैसे साग-सब्जी काटते हैं वैसे मछली काटते हैं, खाते हैं। उसे वे हिंसा नहीं मानते। उनके लिए वह सामान्य निरामिष है। वैसे ही एक जमाना था, जब गुलाम रखना, शूद्रों को पैरों तले दबाये रखना, समाज में सामान्य बात थी। जिन्हें लोग धर्म-पुरुष कहते थे, महापुरुष कहते थे, वे भी ऐसा करते थे। उनको यह अखरता नहीं था। उस समय यदि किसी ने सामाजिक न्याय का नारा उठाया, उसका आन्दोलन चलाया तो मैं उसे क्रान्ति कहूँगा। आज के समाज में सामाजिक न्याय सामान्य मान्यता हो गयी है। शोषण नहीं करना चाहिए, दमन नहीं करना चाहिए, चोरी करना पाप है, यह सब मानते हैं। ऐसी हालत में अन्याय का प्रतिकार कोई मान्यता-परिवर्तन का काम नहीं है। जिसके बारे में समाज को होश नहीं है, उसके बारे में यदि आप आवाज उठाते हैं, तो आप क्रान्ति करते हैं। लेकिन जो बात समाज में मान्य होने पर भी जहाँ-तहाँ उसपर अमल नहीं हो रहा है, उसे करना कोई क्रान्ति नहीं है।

आज सारे विश्व की मान्यता है कि समाज चलेगा सरकार के जरिये और जन-जीवन या आर्थिक जीवन चलेगा बाजार के जरिये। बाजार का शोषण और सरकार का दमन यह अच्छी चीज न होने पर भी अनिवार्य बुराई है। यह जरूरी है, इसके बिना चलेगा नहीं। यह मान्यता केवल हमारे देश में नहीं सारी दुनिया में है। इसलिए शोषण और दमन के प्रतिकार के लिए, सारी दुनिया में प्रतिदिन एक लाख सत्याग्रह होते रहें, तो भी गांधी नहीं जीयेगा, यह मैं आपसे कहना चाहता हूँ। लेकिन दुनिया के छोटे-से कोने में भी जन-जीवन को सरकार और बाजार से मुक्त होने की सम्भावना भी यदि प्रकट हो जाय तो गांधी जिन्दा रहेगा, क्रान्ति होगी। यह दूसरी बात मैं कहना चाहता था।

क्रान्ति का आधार : आत्म-शुद्धि और तपस्या

यहाँ कुछ सर्वोदय मण्डलों के सेवक आये हैं, कुछ रचनात्मक संस्थाओं के सेवक आये हैं, कुछ स्वतन्त्र सर्वोदय-सेवक भी आये हैं और सब उत्साह से आये हैं, यह बड़ी खुशी की बात है। राजनीतिक स्वतन्त्रता के आन्दोलन के जमाने में भी गांधी ने एक चीज कही थी। उन्होंने कहा था कि यह आन्दोलन आत्मशुद्धि का आन्दोलन है और उसका मार्ग बताया था—तपस्या। आपलोग जब गाँवों में जायेंगे, तब गाँववालों के सामने आप क्या पेश करना चाहते हैं, कौन-सी प्रतिमा पेश करना चाहते हैं, यह आपको सोचना है। लोग आपकी ओर किस दृष्टि से देखेंगे ? ये भूमि-समस्या को हल करने के लिए आये हैं, बीघा-कट्ठा बाँटने के लिए आये हैं, या जन-जीवन को हिलाने के लिए आये हैं ? किसलिए आये हैं ? अगर गांधी को बचाना है आपको, तो क्रान्ति आत्म-शुद्धि के जरिये, आत्म-कष्ट के जरिये करना होगा। मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है इस बात में कि आप कितना बीघा-कट्ठा बाँटेंगे। अगर आप एक महीने की अपनी कृति से, अपने दृष्टिकोण से, अपने रंग-ढंग से, जन-जीवन में यह विश्वास पैदा कर सकें कि यह गांधी का आन्दोलन है, आत्म शुद्धि और आत्म-कष्ट का आन्दोलन है, तो आप किला फतह करके लौटेंगे, यह मैं आपसे कहता हूँ।

रचनात्मक कार्यकर्ता पाँच वर्ष का समय दें

चौथी बात मैं आपको और आपके मार्फत देशभर के रचनात्मक संस्थाओं और सर्वोदय मण्डलों को बताना चाहता हूँ कि देशभर में जो काम चल रहा है, वह साल भर के लिए अगर बन्द कर दिया जाय और सब सहरसा में आ जायें, तो एक राईभर, एक दानभर भी नहीं बिगड़ेगा। रचनात्मक संस्थाएँ अभी कर क्या रही हैं ? कहीं एक-दो घानी चला रही हैं, कहीं दो-चार हजार चरखा चला रही हैं, कहीं नयी-तालीम-शाला चला रही हैं और ऐसा ही कुछ और कर रही हैं। सारे देश के सर्वोदय कार्यकर्ताओं को, जो रचनात्मक काम कर रहे हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि एक ही जिले में अगर गांधी का ग्रामस्वराज्य हो जाय तो हिंदुस्तान भर में कुल रचनात्मक प्रवृत्ति जितनी चलती है उससे दस गुना अधिक→

दैवी संस्कृति में अपरिग्रह

● काका कालेलकर

आश्रम के ग्यारह व्रतों में अपरिग्रह का स्थान सर्वोपरि है। हम देखते हैं कि इसका पालन करना आसान नहीं है। महर्षि पतञ्जलि के योग-सूत्र में अष्टांग योग का प्रारम्भ ही यम-नियमों से होता है। उसमें अपरिग्रह आता है। बाद के लोगों ने पाँच यमों के दस यम बना दिये, लेकिन अपरिग्रह का नाम हटा दिया। उसकी जगह कहीं-कहीं आता है 'अकल्कता,' सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय। ये व्रत चाहे जितने कठिन हों, दृढ़ निश्चय रहा तो उनका पालन असंभव नहीं।

लेकिन 'परिग्रह' एक ऐसी बला है कि उससे छूटना आसान नहीं है। गांधीजी कहते थे – हमारा शरीर भी एक तरह का परिग्रह ही है। जितनी भी बलाएँ चिपकती हैं, सब को हम परिग्रह कह सकते हैं। संस्कृत में परिग्रह का एक अर्थ है पत्नी। शाकुन्तल में राजा दुष्यन्त आश्रम-कन्या शकुन्तला की सखियों को आश्वासन दिलाते कहता है, 'मैं राजा हूँ। मेरे अन्तःपुर में परिग्रह बहुत है। लेकिन मेरे कुल की प्रतिष्ठा दो ही परिग्रह पर अवलम्बित रहेगी। एक है यह समुद्र-वलयांकिता पृथ्वी, और दूसरी होगी तुम्हारी यह सखी।'

परिग्रह चोरी है

आज की दुनिया को हम देखें और उसके मानस को नापें, तो हम समझ सकते हैं कि सारी दुनिया अपना परिग्रह बढ़ाने की ही कोशिश में है। धन-सम्पत्ति, साधन-सम्पत्ति सब कुछ परिग्रह ही है। जिस राष्ट्र के पास परिग्रह ज्यादा है वही राष्ट्र दुनिया में श्रेष्ठ गिना जाता है। समाज में जिसके पास साधन-सम्पत्ति अधिक है वही, समाज का नेता या प्रभु बनता है। मनुष्य की और समाज की जीवन-सिद्धि और उसका सामर्थ्य परिग्रह की विशालता के ऊपर ही अवलम्बित है। ऐसे परिग्रह को अंग्रेजी में 'रिसोर्सेज' कहते हैं। तब अपरिग्रह का महत्त्व क्या है? (जिन लोगों ने पाँच, छः या दस यमों में अपरिग्रह की जगह अकल्कता को स्थान दिया, उन्होंने देखा होगा कि परिग्रह तो बाधक नहीं है। किसी चीज के हम 'मालिक' हैं, ऐसे भाव के कारण ही हम बन्धन या कमजोरी में आ जाते हैं। 'अकल्कता का अर्थ होता है 'ईमानदारी', उसमें सब कुछ आ जाता है।)

समाज में जब हम अमर्याद धन अपना बनाकर रखते हैं, तब हम समाज का द्रोह करते हैं; और अपनी आत्मोन्नति भी खतरे में डालते हैं। कुदरत ने जो भी चीजें बनायी हैं, सबके लिए हैं। हवा के बिना हम जी नहीं सकते। अत्यन्त जरूरी वस्तुओं में प्रथम स्थान हवा को ही देना पड़ेगा। पीने का पानी और खाने का अन्न हवा के बाद आता है। इस हवा का मालिक कौन है? नदी का पानी भी सबका है। इस पर मालिकी हक किसी का भी नहीं। जिस किसी को पानी पीना है, नदी के पास जाकर पी सकता है। नदी के किनारे अगर आप की खेती है तो चाहे जितना पानी आप नदी से माँग सकते हैं, लेकिन आप नदी के मालिक नहीं हैं।

गांधीजी ने जब अपरिग्रह को आश्रम के व्रतों में स्थान दिया तब हमें समझाया, 'हम किसी भी चीज के मालिक नहीं हैं। मालिक समाज है। समाज की अनुमति से ही हम चीजों का उपयोग कर सकते हैं।'

'जो लोग मुझे दान देते हैं उसका मैं मालिक नहीं बनता। मैं तो केवल ट्रस्टी बनता हूँ। दान लोग देते हैं मुझे; लेकिन लेता हूँ मैं आश्रम के नाम से। हमारा आश्रम समाज का ही प्रतिनिधि है।'

'किसी भी सम्पत्ति के या साधनों के हम मालिक न बन बैठें, तो अपरिग्रह व्रत का पालन हुआ। समाज के लिए, समाज की सेवा के लिए, सारी निधि है। हम उसके केवल ट्रस्टी (निधिप) हैं। इतना समझने से हमारे अपरिग्रह-व्रत का पालन हुआ।'

इसके बाद आता है 'अस्तेय व्रत' समाज ने जो धन हमें ट्रस्टी के तौर पर दिया उसमें से अपनी आजीविका के लिए हम अन्न-वस्त्र आदि ले सकते हैं। लेकिन अगर हम हद से ज्यादा लें तो वह सामाजिक धन की चोरी हुई। उससे अस्तेय-व्रत का भंग हुआ, ऐसा समझना चाहिए।

→रचनात्मक प्रवृत्ति एक ज़िले में खड़ी हो जायेगी। आप करके देखिये। आप अत्यन्त भ्रम में पड़े हुए हैं कि हम गांधी की सेवा कर रहे हैं। इसलिए मैंने देश-भर के कार्यकर्ताओं से पाँच साल की माँग की थी। अन्य कार्य पाँच साल के लिए यदि बन्द हो जायँ तो बालभर का हर्ज नहीं होगा। अगर यह सफल हो जाय तो फिर देखेंगे। कोई नहीं मानता था कि सत्याग्रह में भी कुछ शक्ति है। जिस दिन बारडोली का सत्याग्रह सफल हुआ उस दिन सारे देश में आग लग गयी। नवसत-बाड़ी में उनलोगों के सब प्रमुख नेता बैठे रहे तेरह-तेरह, चौदह-चौदह साल। जिस दिन वह प्रयोग कुछ सफल हुआ, सारे देश में आग लग गयी। शान्ति ऐसे, 'बाई दी वे' नहीं होती। सर्वोदय-समाज का यह 'साइड बिज़िनेस' हो गया है। हरेक के पास कुछ-न-कुछ है जो उसका 'मेन बिजिनेस' है। चलो, एक महीना इस काम में भी दे दो, यह मनोवृत्ति है। सारे सर्वोदय-समाज के लिए सहरसा का राष्ट्रीय मोर्चा सर्व सेवा संघ का काम है।

आशा है आपलोग, जो यहाँ अभियान के लिए आये हैं, अपना पाँच साल यहाँ के कार्य के लिए देंगे। ●

परिग्रह में मनुष्य कहाँ पहुँचा ?

अब सवाल उठता है कि कुदरत की सारी चीजें समस्त जगत की हैं। मनुष्य-समाज क्यों माने कि वे केवल मनुष्य की ही हैं? जहाँ जंगल में फलों के पेड़ हैं वहाँ फल खाने का अधिकार सबसे पहले पक्षियों को है, उसके बाद मनुष्यों को। लेकिन मनुष्य ने माना कि जो भी चीजें हम जबरदस्ती अपने हाथ में ले सकते हैं वे सब हमारी हुईं; पशु-पक्षी, मछलियाँ, कीड़े-मकोड़े आदि प्राणियों को, और जीवों को, इस सृष्टि पर कोई अधिकार है नहीं। जहाँ मनुष्य नहीं पहुँचा वहाँ तक ही ये सब प्राणी कुदरत के नियम के अनुसार जी सकते हैं।

'जबरदस्तों का राज्य' और 'अधिकार का सिद्धान्त' सिंह, बाघ और हाथी में थोड़ा कुछ पाया जाता है। एक जंगल में दो या अधिक शेर या बाघ रह नहीं सकते। यह जंगल मेरा है, इस बात को लेकर उनमें झगड़ा हो ही जाता है। हाथी अपने जंगल पर अपना अधिकार मानते हैं या नहीं सो हम नहीं जानते, किन्तु कहते हैं कि एक-एक हाथी का अपनी-अपनी अनेक हथिनियों पर अधिकार चलता है। एक हाथी अगर मारा गया अथवा पराजित हुआ तो दूसरा हाथी हारे हुए की हथिनियों का स्वामी बन जाता है। वे सब परिग्रह बनने के लिए ही मानो पैदा हुए हैं। अधिकार का अन्तिम आधार शारीरिक बल ही माना जाता है।

सारे यूरोप की सब गोरी जातियों का एक तरह से एका बना। उन्होंने यूरोप की भूमि और वहाँ की पार्थिव शक्तियों को अपना परिग्रह माना। औरों को वहाँ आने नहीं दिया। भूमि पर अधिकार पाने के बाद उन्होंने सोचा कि हमारे हृदय पर एक ही धर्म का अधिकार चले तब तो हमारा बल विजयी होगा। इसलिए उन्होंने सारे यूरोप के लिए ईसाई धर्म पसन्द किया और दक्षिण यूरोप में स्पेन तक फैले हुए इस्लाम को जोरों से हटा दिया। हम जानते नहीं कि हमारे धर्म हमारे परिग्रह हैं या हम उस धर्म के परिग्रह हैं? लेकिन इस वक्त हम भौतिक चीजों को ही और भौतिक शक्ति को ही परिग्रह के रूप में सोच रहे हैं।

अब अगर सारा यूरोप-खण्ड गोरों का परिग्रह बन गया तो सारा अफ्रीका-खण्ड वहाँ के काले लोगों का परिग्रह मानना चाहिए। लेकिन अफ्रीका की अन्यान्य जातियों में अफ्रीका-व्यापी एकता नहीं थी। वे अपनी-अपनी भूमि के टुकड़े को भी अपना परिग्रह मानने को सीखे नहीं थे। इसलिए गोरों ने वहाँ जाकर धीरे-धीरे अपनी शक्ति, अपनी संस्कृति का परिचय कराया। और सिद्ध किया कि जिनके शरीर में बल है, दिमाग में संगठन करने की बुद्धि है उनके लिए परिग्रह एक बड़ी शक्ति है।

आज अमेरिका के पास विस्तीर्ण भूमि है। भूमि के पेट में खनिज द्रव्य हैं नदियों के प्रवाह में सामर्थ्य है। यह सारा वहाँ जाकर बसे हुए गोरों के लिए बहुत ही कीमती परिग्रह साबित हुआ। अमेरिका के असली वतनी रेड इण्डियन लोगों को वहाँ की भूमि को अपना परिग्रह बनाने का काम नहीं सूझा। इसमें उन्होंने क्या पाया?

अब हम 'अध्यात्म-मूलक समाज विज्ञान' की बात सोचते हैं और अपरिग्रहव्रत की उपयोगिता अथवा आवश्यकता पर विचार करते हैं तब किसी भी निर्णय पर नहीं आ सकते।

दो संस्कृतियाँ

दुनिया में दो संस्कृतियाँ हैं। दैवी और आसुरी। (गीता ने 'संस्कृति' को ही 'सम्पत्' कहा है। यह शब्द अपरिग्रह-व्रत को कहाँ तक पसन्द होगा? किसी ने अभी तक सोचा नहीं है।) दैवी और आसुरी संस्कृतियों में कौन-सी श्रेष्ठ है, यह सवाल पूछने के पहले कौन-सी जीने के लिए समर्थ है, यह सवाल पूछना होगा। और "दैव-आसुर संग्राम में 'दैव' की ही अन्तिम विजय है।" यह प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा सिद्ध करना होगा।

जागतिक-संस्कृति के सामने सबसे बड़ा सवाल यही है कि दो में से कौन-सी विजयी हो सकती है? परिग्रही या अपरिग्रही? इस विराट् सवाल को पूरे तौर पर समझकर इसे हल करने की हिम्मत समस्त मानवजाति में एक ही व्यक्ति ने दिखायी, वह थे महात्मा गांधी, 'सत्य और अहिंसा के बल पर, सत्याग्रह के रास्ते, दैवी संस्कृति विजयी हो सकती है।' यह उनका सिद्धान्त इतिहास के फलक पर सिद्ध करने का प्रयोग उन्होंने प्रथम छोटे पैमाने पर अफ्रीका में और बाद में भारत में करके दिखाया और मानव जाति के मर्म-हृदय में आशा उत्पन्न की, कि 'सत्याग्रह के रास्ते दैवी-संस्कृति विजयी होकर अपना श्रेष्ठत्व सिद्ध करेगी'।

इसीलिए मैं कहता हूँ कि पूर्ण अहिंसा पर विश्वास रखकर उसमें रहा हुआ क्षात्र-तेज प्रकट करनेवाले गांधी ही भगवान महावीर स्वामी के एकमात्र उत्तराधिकारी हैं। (स्वयं निःशस्त्र होकर, भारतीय युद्ध में शरीक होनेवाले भगवान श्रीकृष्ण के भी उत्तराधिकारी गांधीजी को ही समझना चाहिए।)

आज तक अपरिग्रह-व्रत का विवेचन व्यक्तिगत मोक्ष की दृष्टि से ही किया गया है। अब तो हमारी सारी भूमिका ही बदल गयी है। 'हम समस्त मानव-जाति को अपने साथ एकरूप मानने जा रहे हैं। मुक्ति व्यक्तिगत नहीं किन्तु सामुदायिक मुक्ति का आदर्श स्वीकार कर हमने सूत्र चलाया है 'मुक्ति यानी सर्वमुक्ति'।

व्यक्तिगत मुक्ति के उपासकों ने अपरिग्रह-व्रत चलाकर सारा परिग्रह समाज के हाथ में सौंप दिया और अपने को ट्रस्टी यानी 'निधिप' बना दिया। उनका रास्ता आसान था। अब जब हम समस्त मानवजाति को धीरे-धीरे क्रमशः एक हृदय, एक-प्राण, एक-समाज, बनाने का आदर्श मान्य करते हैं तो क्या हम सारे समाज को, समस्त मानव-

[शेष पृष्ठ ४२० पर]

विश्वधारा और भारत

● रामनन्दन मिश्र

प्रत्येक जीवन की एक जीवन-धारा होती है। टेढ़े-मेढ़े, उल्टे सीधे, आवसंमान घटना-क्रमों से गुजरता हुआ जीवन, जीवन की मुख्य धारा के आसपास रहने की चेष्टा करता है। इसी तरह प्रत्येक देश की अपनी जीवन-धारा होती है, जिसे हम इतिहास कहते हैं। राजाओं और मन्त्रियों का आना-जाना, युद्ध तथा सन्धियों जैसी विशेष घटनाएं स्वयम् में बहुत महत्व नहीं रखती। इनका महत्व है मुख्य जीवन-धारा के अनुकूल या प्रतिकूल होने में। अनादिकाल से भारत की जीवन-धारा के दो ही प्रधान बिन्दु रहे हैं—*जीवन का आध्यात्मिक आधार* और इस महान देश की एकता।

भारतमाता ने प्रत्येक युग में अपने सुपुत्रों से आध्यात्मिक जीवन की स्थापना और इस महान देश की एकता की याचना की है। बुद्धदेव, अशोक, स्कन्द-गुप्त, हर्षवर्धन, अकबर, गांधी, सबसे भारत ने इन्हीं दो प्रधान लक्ष्य-पूर्तियों की कामना की थी। स्कन्दगुप्त को आज भारत का इतिहास भूल गया है लेकिन इतस्तत-बिखरे हुए यादगारों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उस समय के भारत ने कितनी आशा-भरी आँखों से स्कन्दगुप्त को देखा था। लौहित नदी के किनारे, नेफा के महान युद्ध में, इस युवक-सम्राट ने जिस महान वीरता का परिचय दिया था, एक शिलालेख ने उसकी अमिट यादगार रख छोड़ी है।

इस महान देश को एकता के सूत्र में बाँधना बराबर ही असाध्य साधन रहा है, फिर भी इस महान आशा की दीप-शिखा कभी बुझी नहीं। भाषा, धर्म और राजनीति के नाम पर देश बार-बार टूटा है और बार-बार महापुरुषों ने इसे एकता के सूत्र में बाँधा है।

सामान्य संस्कृति और भाषा का निर्माण हो

भाषा की विभिन्नताओं के बीच, इस देश के महापुरुषों ने एक सामान्य भाषा के निर्माण की चेष्टा की है। प्राचीन काल में आचार्यों ने शास्त्रों और संस्कृत भाषा के द्वारा देश-व्यापी सामान्य संस्कृति की आधार-शिला रखी थी। मुगल बादशाहों के जमाने में फौजी छावनियों की आवश्यकता ने हिन्दी-उर्दू को जन्म दिया। आज नये सिरे से, सारे देश को एक सामान्य भाषा और एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करना है।

इसी तरह विभिन्न धर्मों का प्रश्न भी आज देश में जटिल हो रहा है। सैकड़ों सम्प्रदाय देश में बन गये हैं और इन विभिन्नताओं के बीच सहज सुसंस्कृत *सद्भावना तथा प्रेमपूर्ण जीवन-यापन* असम्भव हो उठा है। इन विभिन्नताओं के कठोर कगारों के बीच मानव-जीवन-धारा कुण्ठित हो रही है। क्या इन सबको मिटाकर धर्म-निरपेक्ष (सेकुलर) समाज बनाना छोड़, और कोई रास्ता भारत के सामने नहीं रह गया? इस देश के आध्यात्मिक, धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक नेताओं के सामने युग का यह महान चैलेंज (चुनौती) है। इसका उत्तर *देना ही इस युग के नेतृत्व का महान कार्य* है। सब धर्मों को मिटाकर धर्म-निरपेक्षता के आधार पर क्या स्वस्थ समाज का निर्माण सम्भव है?

इस सन्दर्भ में इस दृष्टिकोण को भी याद रखना होगा कि यह प्रश्न सारे विश्व का है। सारे विश्व को धर्म की आवश्यकता है; प्रश्न है—"सम्प्रदाय-विहीन मानव-धर्म (रेलिजन ऑफ मैन) क्या विश्व को दिया जा सकता है?" *इस दृष्टि से देखें, तो पिछले हजार वर्षों* में, भारत ने विश्व के सारे धर्मों का अत्यन्त निकट से परिचय प्राप्त किया है। बुद्ध धर्म जन्मा, फला, फूला इसी देश में; इस्लाम भारत के गाँव-गाँव में फैल गया, क्रिश्चियन धर्म के साथ हमारा निकट का परिचय हुआ; जैन, पारसी, सिख, सभी हमारे देश में फल-फूल रहे हैं। आज इनके चलते भयंकर उलझनें भी पैदा हो गयी हैं। सामान्य दृष्टि से देखने से भारत का, इतनी तरह के सम्प्रदायों का म्युजियम बन जाना, एक अभिशाप-सा लगता है। क्या इसे हम वरदान में बदल सकते हैं? भारत के युग-स्रष्टा का यह *महान कार्य होगा।*

इस अभिशाप-सी दीखनेवाली परि-स्थिति के नीचे एक महान अन्तर्धारा बह रही है। जिस भाग्य-विधाता ने तरह-तरह के रंग-बिरंगे सम्प्रदायों की सृष्टि कर पिछले पाँच-छौ वर्षों से भारत के महान संकट, अपमान, गुलामी, शोषण और पीड़न में रखा है, उस नियति का, इसके पीछे एक वरद भी इंगित है। *लगता है भाग्य-विधाता ने भारत को* मारकर, पीटकर, यातना देकर, विश्व-धर्म की आधार-शिला होने के लिए उसे *तैयार किया है।* इस युग का देवता केवल हिन्दुओं का, या मुसलमानों का, या ईसाईयों का ही देवता बनकर नहीं रह सकता, वह होगा "जगन्नाथ (लॉर्ड ऑव दी युनिवर्स)" और स्थापना होगी मानव धर्म की, जिसके आधार-स्तम्भ होंगे—अध्यात्म, प्रेम, करुणा और *विज्ञान। यही विश्व के विभिन्न सम्प्रदायों* का मौलिक लघुतम समापवर्त्य है। वर्त-मान परिस्थिति से घबराकर हम भारत के इस महान गौरवमय स्थान को भूल न जायें। आज जरूरत है ऐसी धार्मिकता की, जो सारे सम्प्रदायों को एक सूत्र में बाँधे। जैसे राष्ट्रीय सार्वभौमिकता (सावरेण्टी) *का युग समाप्त हो गया, वैसे ही,* साम्प्र-दायिक सार्वभौमिकता का युग भी समाप्ति की ओर जा रहा है। एक सुसज्जित *उपवन में जैसे विभिन्न तरह के फूलों का* स्थान है, वैसे ही मानव धर्म में विभिन्न

प्रकार की उपासनाओं और पद्धतियों का स्थान है।

आवश्यकता है विश्वराज्य की

इसी तरह राजनीतिक क्षेत्र में एक सच्चे विश्व-राज्य की आवश्यकता पैदा हो गयी है। विभिन्न तरह के सामाजिक प्रयोगों में भी मानव-जाति छटपटाती रही है। अब समय आ गया है कि पिछले प्रयोगों के आधार पर, कुछ सामान्य इकाइयों को हम ढूँढें और उन्हें खुशी से स्वीकार करें। इस दृष्टि से आज ऐसी दो ही इकाइयाँ हैं, जिनके ऊपर सारे विश्व को इकट्ठा किया जा सकता है—सामूहिक जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता। समय रहते, यदि विश्व के कर्णधारों ने इन्हें स्वीकार नहीं किया तो रक्त की धारा से विश्व प्लावित होगा और आधुनिक सभ्यता का बड़ा अंश ध्वस्त होकर बिखर जायगा।

यहाँ यह याद रहे कि सामूहिक जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता में एक तरह का विरोधाभास है—विरोध नहीं, विरोध का आभास-मात्र है। लेकिन यह भी सत्य है कि विरोधाभास अनादिकाल से दुर्दमनीय रहा है और रहेगा। सामूहिक जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के विरोधाभास को अध्यात्म और प्रेम ही मिटा सकते हैं। इन दोनों के महान सम्मेलन का पौरोहित्य, सामाजिक जीवन में ब्रह्म-भाव की स्थापना को छोड़कर, और किसी उपाय से सम्भव नहीं है।

सामूहिक जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आवश्यकता और सच्चे धर्म की प्रेरणा को रूस, अमेरिका, चीन, जापान, भारत, अरबदेश, समय रहते स्वीकार कर लें, तो आज भी विनाश के पथ से विश्व को वापस मोड़ा जा सकता है। क्या विश्व के कर्णधार इस महान चुनौती को स्वीकार करेंगे ?

उपर्युक्त विश्व-व्यापी मानवीय दृष्टिकोण को सामने रखकर ही हम भारत की समस्याओं का स्वस्थ निराकरण निकाल सकते हैं। अभी जो कुछ बंगदेश में हुआ, उसे पाकिस्तान का विघटन कहना, इतिहास का निरादर करना है। हमने शुरू में ही कहा है कि इतिहास की धारा अपने प्रवाह-क्रम को छोड़कर टेढ़ी-मेढ़ी, उल्टी-पुल्टी भी चलती है। गंगा की धारा उत्तर से दक्षिण-पूर्व की ओर जाती हुई बीच-बीच में उत्तर और पश्चिम को भी बह लेती है। इसी तरह एक दिन देश और विदेश के नासमझ नेताओं ने स्वार्थान्ध होकर, अथवा घबराकर भारतवर्ष को टुकड़ों में बाँट दिया था। हजारों नदी, संगीत-भावनाएँ और संस्कृति जिस बंगदेश को एकता के सूत्र में बाँधे हुए हैं, उसे राजनीतिक नेताओं ने स्वार्थान्ध होकर, दो टुकड़ों में तोड़ दिया था। भूगोल और मानवता के साथ एक महान अत्याचार की सृष्टि हुई। चौबीस वर्षों के बाद, भूगोल और मानवता ने, इस उल्टे प्रवाह को अब फिर सीधा कर दिया है। प्रश्न है आगे क्या ?

पाकिस्तान, भारत, बांगला देश का महासंघ

इस महान भूखण्ड के निवासियों को विश्व के इस सन्दर्भ में यदि अपनी जिम्मेदारियाँ पूरी करनी है और उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करना है, तो उनके सामने एक ही रास्ता है—नये सिरे से एकता की डोरी में फिर से सबको बाँधना, जिसका गान विश्वकवि रवीन्द्रनाथ पहले ही कर गये हैं।

हे मोर चित्त, पुण्य—तीर्थे, जागो रे धीरे—
एइ भारतेर महा—मानवेर सागर—तीरे।
हेथाय दाँड़ाये दु बाहु बाड़ाये नमि नर—देवतारे,
उदार छन्दे परमानन्दे वन्दन करि तारे॥
ध्यान—गम्भीर एइ ये भूधर, नदी—जपमाला—धृत प्रान्तर,
हेथाय नित्य हेरो पवित्र धरित्रीरे,
एइ भारतेर महा—मानवेर सागर—तीरे॥
केह नाहि जाने कार आह्वाने कत मानुषेर धारा
दुर्वार स्रोते एल कोथा होते—समुद्रे होलो हारा।
हेथाय आर्य, हेथा अनार्य, हेथाय द्राविड़, चीन—
शक—हूण—दल, पाठान—मोगल, एक देहे होलो लीन।
पश्चिमे आजि खुलियाछे द्वार, सेथा होते सबे आने उपहार,
दिबे आर निबे मिलाबे मिलिबे याबे ना फिरे,
एइ भारतेर महा—मानवेर सागर, तीरे॥
सेइ हो मानले हेरो आजि ज्वले दुखेर रक्तशिखा,
हबे ता सहिते मर्मे दहिते आछे से भाग्ये लिखा
ए दुखवहन करो मोर मन, शोनो रे एकेर डाक्।
यत लाज—भय करो करो जय, अपमान दूरे याक्।
दु:सह व्यथा होये अवसान जन्म लभिबे की विशाल प्राण।
पोहाय रजनी, जागिछे जननी विपुल नीड़े,
एइ भारतेर महा—मानवेर सागर—तीरे।
ऐसो हे आर्य, ऐसो अनार्य, हिन्दू—मुसलमान।
ऐसो ऐसो आज तुमि इंराज, ऐसो ऐसो खृस्टान।
ऐसो ब्राह्मण, शुचि करि, मन धरो हात सबाकार,
ऐसो हे पतित, होक् अपनीत सब अपमान—भार।
मार अभिषेके ऐसो ऐसो त्वरा,
मंगल घट हय निबे भरा
सबार परशे पवित्र—करा तीर्थ—नीरे।
आजि भारतेर महा—मानवेर सागर—तीरे।

अब केवल गंगा और कावेरी की ही एकता की नहीं, बल्कि ब्रह्मपुत्र और पंचनदों की एकता की भी जरूरत आ गयी है। फिर से नेपाल, बर्मा, लंका और अफगानिस्तान को एकता की डोरी से, भारत-भूखण्ड के साथ बँधना होगा। लेकिन आज की हालत में यह बन्धन मीरा की भाषा में कच्चे धागे का ही हो सकता है। याद रहे, लोहे की जंजीरों की अपेक्षा कच्चे धागे का बन्धन अधिक स्थायी होता है। इसीलिए मीरा ने प्रेम के बन्धन को कच्चे धागे का बन्धन कहा है। लोहे की जंजीरों के बन्धन की रक्षा की जिम्मेदारी लोहे की जंजीरों पर ही रहती है। दोनों पक्षों में उसे तोड़ने की कशमकश रहती है। जंजीरों में जबतक ताकत रहेगी बन्धन रहेगा, अन्यथा टूटकर बिखर जायगा। दूसरी ओर कच्चा धागा अपना जोर नहीं रखता, उसके निर्वाह की जिम्मेदारी दोनों पक्षों की सहज सहनशीलता और आपसी स्नेह पर निर्भर करती है। इसीलिए वस्तुत वह बन्धन ही नहीं है, और उसी कारण कच्चे धागे का बन्धन ज्यादा स्थायी होता है।

परन्तु इस दिशा का व्यावहारिक प्रथम चरण, जिसे इन आनेवाले महीनों में पूरा करना है, वह है भारत, पाकिस्तान और बंगदेश का संघ (कांफेडरेशन)। यही एक रास्ता है जिससे पाकिस्तान, भारतवर्ष और बंगदेश, विश्व में अपना सर ऊँचा कर खड़े रह सकेंगे और अन्तरराष्ट्रीय षड्‌यंत्रों का शिकार होने से अपने को बचा सकेंगे। अन्यथा चीन, रूस और अमेरिका के षड्‌यंत्रों से यह महान भूखण्ड जलता रहेगा और पीड़ित मानवता की कराहों से यहाँ का मानव-समाज, पता नहीं, कितने दिनों तक उद्वेलित और अशान्त बना रहेगा।

नम्र निवेदन

मेरी क्षीण पुकार शायद इस भूखण्ड के कर्णधारों के पास नहीं पहुँचे। इसलिए अन्त में पूज्य विनोबा भावे, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, जयप्रकाश नारायण, शेख अब्दुल्ला, श्रीमती इंदिरा गांधी, बंगबन्धु शेख मुजीबुर्रहमान और पाकिस्तान के राष्ट्रपति जुल्फिकार अली भुट्टो से नम्र निवेदन है कि इस दिशा में वे जो भी उचित समझें, शीघ्रातिशीघ्र करें। ●

आर्थिक परिस्थिति और गाँव में पूँजी-निर्माण

● डा० अवध प्रसाद

भारत में परम्परागत ग्राम-व्यवस्था का जो स्वरूप सामने है उस पर से कुछ बातें साफ तौर पर दिखाई पड़ती हैं। गाँव मे जीवन का जो ढग है उसमें सामन्तवादी मानस का आभास सहज ही दिखाई देता है। गाँव का आर्थिक जीवन जिस गति एव जिस रूप में चलता है वह वैज्ञानिक, आर्थिक विकास की परम्परा से काफी दूर है। कृषि-प्रधान इस देश की अधिकांश ग्रामीण आबादी कृषि पर निर्भर रहती रही है। उनका यह विश्वास रहा है कि कृषि ही जीविका का सर्व-प्रमुख धन्धा है। कृषि के अतिरिक्त जीविका के अन्य जो साधन विकसित हुए वे भी कृषि के इर्द-गिर्द घूमते रहे। कालान्तर में तो कृषि के सहायक धन्धे भी कतिपय कारणों से समाप्त होने लगे। पर कृषि के प्रति अतिमोह कायम रहा। यह मोह स्वाभाविक भी था—वैसे कृषि जीवन का आधार है भी। परन्तु ग्रामीण जीवन की बदलती परिस्थितियाँ एव अद्यतन आर्थिक विकास की दौड में जीविका के अन्य स्रोतों की तलाश अनिवार्य हो गयी है। भारतीय नियोजन ने अपने ढग से इन स्रोतों की तलाश की, परन्तु उसका लाभ भारतीय गाँवों को न मिल सका, ग्रामीण जीविका के स्रोतों का विकास न हो सका। हाँ, एक सीमित ग्राम-समुदाय के पास पैसा आया, उत्पादन भी बढ़ा, परन्तु सामान्य गाँव की स्थिति आज भी दयनीय है।

गरीबी का चित्रण यदि किया जाय तो अविश्वसनीय तथ्य सामने आते हैं। आज भी भारत के गाँव इतने गरीब हैं जिस पर भारत के अर्थशास्त्री विश्वास नहीं करते हैं। यहाँ हम इतना ही कहना चाहेंगे कि आज भी गाँव का बहुत बड़ा समुदाय एक दिन मे उतने पैसे में जीविका चलाता है जितने में हम सामान्य दूकान में एक चाय की चुस्की ले लेते हैं। दिन भर की कमाई दो रुपये में परिवार के छोटे-बड़े ७-८ सदस्यों का पेट भरनेवाले परिवार जहाँ चाहें वहाँ मिल सकते हैं। फिलहाल हम यहाँ गरीबी का चित्रण नहीं करेंगे। 'भूदान-यज्ञ' के पाठक 'भारत में गरीबी' लेख-माला से इस बारे में विस्तृत जानकारी ले सकते हैं।

अर्थशास्त्री का चौखटा : गरीबी के चेहरे

गाँव के ऊपर के गिने-चुने लोगों को छोड़ दें तो प्राय सबकी आर्थिक स्थिति ऐसी रहती है जिसमें बचत करना कठिन होता है। फिर इतनी बचत, जिसे आर्थिक विकास के लिए पूँजी-निर्माण की संज्ञा दी जाय, नहीं होती है। अद्यतन आर्थिक विकास की जो रूप-रेखा अर्थशास्त्री प्रस्तुत करते हैं उसमें तो शायद ही कोई ग्रामीण परिवार फिट हो सके। सामान्य किसान तो इस श्रेणी में नहीं ही आता है। सरकारी नियोजन के गाँव के उच्चवर्ग को कृषि-विकास के लिए पूँजी मुहैया किया है और इस वर्ग ने इसका लाभ भी उठाया है, सरकारी आँकड़ों के अनुसार उत्पादन बढ़ा है, ग्रामीणों के पास पूँजी आयी है। एक हद तक इसे सही माना जा सकता है। पर जो पूँजी उनके पास आयी है उसका विनियोग किस रूप में होता है यह भी विचारणीय है। जिनकी आय बढ़ी है उनका विनियोग का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ

है। जिनकी आय बढ़ी है उनकी पूँजी मोटे तौर पर इन मदों में विनियोजित की जाती है :

(१) शादी एवं अन्य सामाजिक कार्यों में, (२) मकान निर्माण तथा अन्य सुविधाएँ, (३) मुकदमेबाजी, (४) राजनीतिक गुटबन्दी, (५) आर्थिक विकास, और (६) शिक्षा।

उक्त मदों से इस बात की पुष्टि होती है कि आय का बड़ा भाग सामाजिक कार्यों में व्यय किया जाता है। आर्थिक विकास का स्थान क्रमशः पांचवां है। बिहार में दहेज-प्रथा ने ग्रामीण आर्थिक जीवन को खोखला बनाने में काफी मदद की है। स्थिति यह है :

(क) गांव के एक खास वर्ग की आय बढ़ी है तथा उसमें पूंजी-निर्माण की क्षमता आयी है।

(ख) परन्तु उनका विनियोग का जो ढंग है उसमें उत्पादक कार्यों में विनियोग बहुत कम हो पाता है।

(ग) आज की जो सामाजिक आर्थिक-व्यवस्था है उसमें गिने-चुने लोगों का ही आर्थिक विकास हो पाता है। शेष समुदाय अपनी पुरानी स्थिति में ही रह जाता है।

(घ) यदि सामान्य जन की आय बढ़ती भी है तो वह समाज की कड़ी परम्पराओं के घेरे से अलग नहीं हो पाता है और उसकी बचत अनुत्पादक कार्यों में खर्च हो जाती है।

(च) सामान्य किसान, मजदूर, घरेलू धन्धे में लगे लोग, नौकरीवाले, इस स्थिति में नहीं हैं कि बचत कर सकें। उनके पास पूंजी इतनी कम है कि कोई भी धन्धा चलाने में असमर्थ हैं। यदि कोई इस ओर प्रयास भी करता है तो आज की प्रतियोगिता में टिक नहीं पाता है। स्थिति यह हो जाती है कि या तो मूल पूंजी भी समाप्त होने लगती है या उतना ही कमा पाता है जिससे दोनों वक्त पेट में कुछ डाल सके। इस स्थिति में वैज्ञानिक आर्थिक नियोजन की बात बेमानी हो जाती है।

इस स्थिति में गांव के आर्थिक विकास को दिशा देनी है। हमारे एक प्रमुख राष्ट्र-निर्माता ने गांवों को घूर का ढेर कहा था और उन्होंने यह भी कल्पना की थी कि हम भारत के गांवों को इंग्लैण्ड के गांव बनायेंगे। पर वे भारत के गांव को इंग्लैण्ड के गांव नहीं बना सके, यहां तक कि गांव से घूर के ढेर भी न हटा सके और न ही उस घूर के ढेर को कम्पोस्ट बनाकर उपयोगी ही बना सके। राजनीतिक स्वार्थ पर आधारित 'गरीबी हटाओ' के नारे से यदि कोई गरीबी हटाने की कल्पना करता हो तो यह उसकी भूल होगी।

गांव मे पूंजी का प्रश्न

प्रश्न यह उठता है कि आखिर इस समस्या का क्या समाधान है? गांव की गिरी आर्थिक स्थिति तथा परम्परागत सामाजिक कुरीतियां एक वास्तविकता हैं। इस वास्तविकता को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। गांव के आर्थिक विकास के लिए पूंजी-निर्माण के ऐसे स्रोत विकसित करने होंगे जिनका उपयोग उत्पादन-कार्यों में किया जा सके। जैसा कि हमने ऊपर कहा कि गांव के लोग एकाकी स्तर पर पूंजी-निर्माण करने की उतनी क्षमता नहीं रखते हैं जिससे कोई धन्धा चल सके या जिस धन्धे में हैं उसको आधुनिक रूप दिया जा सके। पूंजी-निर्माण के उनके स्रोत भी काफी सीमित हैं। आज जो आर्थिक स्थिति है उसे देखते हुए गांव के लोगों के पास नगद पूंजी कम है श्रम अधिक। हम मान सकते हैं कि उनके पास दो स्रोत हैं। (१) बचत से प्राप्त नगद पूंजी (२) अपनी श्रम-शक्ति। आवश्यकता इस बात की है कि इन दोनों स्रोतों का उपयोग ग्रामस्तर पर किया जाय। एकाकी स्तर पर श्रम-शक्ति का उपयोग सम्भव नहीं। बेकार श्रम का उपयोग तभी हो सकता है जब पेट में कुछ जाय। अर्थात् यदि ग्रामस्तर पर इतनी पूंजी जमा हो कि श्रमिक को उसके श्रम के बदले आवश्यक भोज्य पदार्थ दिया जा सके। और, तभी श्रम के रूप में पर्याप्त पूंजी प्राप्त हो सकती है। अब तक हम गांव की श्रम-शक्ति के उपयोग की व्यवस्थित योजना नहीं बना सके हैं।

ग्रामदानी गांव में ग्रामकोष

ग्रामदान में ग्रामकोष की योजना है। ग्रामकोष में नगद (पैसा और अन्न) पूंजी के साथ-साथ श्रम को भी जोड़ना चाहिए। जहां ग्रामदान का सघन कार्य चल रहा है वहां ग्रामकोष भी जमा हो रहा है। कुछ गांवों ने श्रम का हिसाब भी रखा है। आवश्यकता यह है कि ग्रामकोष में जो भी नगद पूंजी जमा हो उसके विनियोग का ग्रामस्तरीय योजना बने और उसे किसी-न-किसी प्रकार श्रम के साथ जोड़ा जाय। ग्रामकोष के विनियोग के सम्बन्ध में यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि उसका विनियोग उत्पादन-कार्यों में हो। अब तक ग्रामकोष की रकम मुख्यतः इन मदों में व्यय होती रही है (१) जरूरतमन्द को खाने के लिए कर्ज या सहायता, (२) कृषि-कार्य के लिए सहायता, (३) ग्रामसभा-स्टेशनरी, (४) स्कूल सड़क का निर्माण और (५) दवा एवं अन्य प्रकार की मदद। स्थिति यह है कि जिस ग्रामसभा में जैसा नेतृत्व है वहां का ग्रामकोष उसी रूप में विनियोजित किया जाता है। अभी यह स्थिति नहीं आयी है जिसमें ग्राम-स्तर पर श्रम एवं ग्रामकोष की पूंजी का उपयोग किया जा सके।

विद्वान अर्थशास्त्री यह समझते हैं कि गांव भूखा-नंगा है, उसके पास बचत की शक्ति नहीं है। अर्थात् गरीब गांव के लोग पूंजी-निर्माण की क्षमता नहीं रखते हैं। फिर यदि वे कुछ बचत कर भी लें तो उससे क्या होगा? उतनी रकम से आधुनिक आर्थिक विकास की कल्पना तक नहीं की जा सकती है। परन्तु यह उनकी भूल है। गांव की स्थिति यह है कि बूंद-बूंद से सागर भरता है। हम यहां

[शेष पृष्ठ ४३८ पर]

श्रम प्रधान : टेक्नालॉजी

१. गाँव के दस्तकारों को यांत्रिकी के विकास ने समाप्त कर दिया। वे बेकार हो गये। उन्हें दूसरा कोई रोजगार नहीं मिल सका। उनकी बेरोजगारी के लिए आधुनिक उद्योग को जिम्मेदार मानकर तीन प्रकार के उपाय सुझाये जाते हैं; (क) पारम्परिक उद्योग में जितना रोजगार बचा है उसे आधुनिक उद्योग के आक्रमण से बचाना; (ख) आधुनिक उद्योग जितना बढ़ चुका है उसे उसके आगे न बढ़ने देना, तथा भविष्य के विस्तार को पारम्परिक उद्योग के लिए सुरक्षित रखना; (ग) पारम्परिक उद्योग का विस्तार करना और रोजगार बढ़ाना, भले ही उत्पादन आज के ही स्तर पर बना रहे।

२. गाँव के उद्योग और छोटे उद्योग

इन दोनों में भेद है। पारम्परिक तकनीक को इस्तेमाल करनेवाला उद्योग गाँव का कहा जाता है। इसकी तकनीक आधुनिक उद्योग की तुलना में बहुत अधिक श्रम-प्रधान है; साथ ही उसमें पूँजी भी कम लगती है। यही कारण है कि ग्रामोद्योग में प्रति उत्पादक उत्पादन कम होता है। और इसी कारण उसमें अधिक लोगों के काम करने की गुंजाइश रहती है। लेकिन यह कहना हमेशा सही नहीं है कि उत्पादन की प्रति इकाई (यूनिट ऑव आउटपुट) ग्रामोद्योग में आधुनिक उद्योग की अपेक्षा पूँजी कम लगती है। पूँजी कम नहीं लगती, श्रम अधिक लगता है। हाँ, पूँजी प्रति व्यक्ति कम लगती है।

दूसरी श्रेणी है 'आधुनिक छोटे उद्योगों' की। ऐसा उद्योग आधुनिक होते हुए भी आकार में छोटा होता है। यांत्रिकी में आधुनिक छोटा उद्योग बड़े उद्योग से मिलता-जुलता है, और दोनों साथ-साथ चल सकते हैं। इस तरह के छोटे उद्योग में बड़े उद्योग के मुकाबले रोजगार देने की क्षमता अधिक नहीं होती। इसकी विशेषता यह है कि इसमें मजदूरी के लिए रोजगार (वेज इम्प्लायमेण्ट) के लिए तो कम किन्तु अपने-आप रोजगार (सेल्फ-इम्प्लायमेण्ट) की गुंजाइश अधिक है। छोटे आधुनिक उद्योगों के आधार पर उद्योगों का विकेन्द्रित ढाँचा भी विकसित किया जा सकता है। यह उनके पक्ष में बहुत बड़ी बात है।

३. रोजगार की दृष्टि से ग्रामोद्योगों का प्रश्न मुख्य है। ग्रामोद्योग भी दो प्रकार के हैं—एक उद्योग वे हैं, जिनमें सामान्य उपभोग के सामान बनते हैं और दूसरे वे हैं जिनमें धनियों की विशिष्ट रुचि की चीजें बनती हैं। इनमें कारीगर की कला उत्कृष्ट होती है। ऐसी कला आधुनिक उद्योग की प्रतिद्वन्द्विता में भी नहीं मरती। हाँ, गरीब विकासशील देशों में उनकी माँग कम होती है। ज्यादातर कला की ये चीजें निर्यात पर जीवित रहती हैं।

प्रश्न ऐसे ग्रामोद्योगों का है जो सामान्य उपभोग के सामान बनाते हैं, ज्यादा रोजगार देने की क्षमता रखते हैं, और उन्हें ही आधुनिक उद्योग की ज्यादा चोट भी सहनी पड़ती है।

४. पहली पंचवर्षीय योजना ने रोजगार की दृष्टि से ग्रामोद्योगों का महत्त्व स्वीकार किया था। योजना ने कहा था कि ग्रामोद्योग स्थानीय कच्चे माल का पक्का माल स्थानीय बाजार के लिए सीधे-सादे औजारों से तैयार करते हैं। उनका विकास स्थानीय माँग और आपसी विनिमय (म्युचुअल एक्सचेंज) के ही आधार पर हो सकता है, जैसा कि उस समय होता था, जब गाँव स्वावलम्बी थे, और उनका काम परस्परावलम्बन से चलता था।

ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देने की दृष्टि से उन्हें आधुनिक उद्योगों के साथ लेकर समान-उत्पादन कार्यक्रम (कामन प्रोडक्शन प्रोग्राम) की बात कही जाती है। इस सम्बन्ध में ये सुझाव दिये जाते हैं : (क) दोनों के क्षेत्र अलग और सुरक्षित कर दिये जायँ; (ख) बड़े उद्योगों का विस्तार न किया जाय; (ग) बड़े उद्योगों पर 'सेस' लगाया जाय : (घ) कच्चा माल देने की व्यवस्था की जाय; (ङ) रिसर्च, ट्रेनिंग आदि की योजना हो।

इन बातों को ध्यान में रखकर स्वतंत्रता के बाद कई कदम उठाये गये। १९५० में कपड़े की कुछ किस्में हाथ-करघे उद्योग के लिए सुरक्षित की गयीं। १९५२ में मिलों से कहा गया कि कुछ किस्में वे पिछले साल के उत्पादन के ६०% से अधिक न बनायें। मिल के कपड़े पर 'सेस' लगाया गया और उसमें से खादी और करघा उद्योगों को मदद की गयी।

ग्रामीण चमड़ा-उद्योग के संरक्षण के लिए मिल चमड़ा उद्योग के विस्तार पर रोक लगायी गयी। इसी तरह धानी और धान कुटाई के पुराने, अक्षम यंत्रों को बदलने की योजना बनायी गयी। पुराने उद्योगों को सहायता दी गयी और कुछ नये उद्योग जैसे हाथ-कागज, अखाद्य तेल का साबुन, दियासलाई, आदि शुरू कराये गये।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में ग्रामोद्योगों को ज्यादा अनुकूल स्थान दिया गया। यह कहा गया कि सामान्य उपयोग के सामान ज्यादा-से-ज्यादा घरेलू और हाथ के उद्योगों के लिए छोड़े जायँ और उनके द्वारा उत्पादन खूब बढ़ाया जाय। ऐसा करने से बड़े उद्योगों के लिए पूँजी बचेगी और मुद्रा स्फीति भी नहीं होगी। साथ ही उनमें ज्यादा लोगों को रोजगार भी मिलेगा। इन उद्देश्यों की सिद्धि के लिए घरेलू उद्योगों को मिल-उद्योगों की प्रतियोगिता से बचाया जाय।

इस नीति के अनुसार सरकार ने १९५६-'५७ में खादी और ग्रामोद्योग कमीशन की स्थापना की।●

ग्रामस्वराज्य के मोर्चे से

[सहरसा जिले के ग्रामस्वराज्य अभियान में देश भर के कार्यकर्ता जुटे हुए हैं। 'भूदान-यज्ञ' के सम्पादक आचार्य राममूर्तिजी भी एक प्रखण्ड के पुष्टि कार्य में शरीक हैं। मोर्चे पर से भेजी गयी उनकी डायरी पाठकों के लिए प्रस्तुत है।]

२४ मार्च

यत्र त्रिभुज!

जहाँ जाइए इस त्रिभुज का दर्शन होता है। बड़ा मालिक, बड़ा व्यापारी, बड़ा नेता ये हैं त्रिभुज की तीन भुजाएँ। मालिक, व्यापारी और नेता, तीनों महाजनी करते हैं। बड़ा मालिक पंचायत का मुखिया है; वही ब्लाक पंचायत समिति का प्रमुख और जिला पंचायत समिति का अध्यक्ष भी है। वही एम० एल० ए० और एम० पी० भी है। सत्ता की हर सीढ़ी पर वही है, और वही 'गरीबी हटाओ' का नारा भी लगाता है। ये सब बड़े मालिक बड़े नेताओं से जुड़े हुए हैं। नेता के पीछे-पीछे व्यापारी चलता है—कोटा, परमिट, लाइसेन्स के लिए।

हर जगह जनता त्रिभुज की भुजाओं में जकड़ी हुई है। इतनी जबरदस्त जकड़ है कि उसकी साँस बन्द है! मालिकी, राजनीति, और व्यवसाय के इस गठबन्धन के टूटे बिना समाज के विकास की क्या दिशा निकलेगी? मुक्ति कैसे मिलेगी?

२५ मार्च

सभा में लगभग ५ सौ लोग बैठे हुए हैं। मैं कहता हूँ "जिनके पास दो कट्ठे या उससे कम जमीन है वे हाथ उठायें।" कुछ क्षण के लिए सन्नाटा। कौन हाथ उठाये कौन न उठाये। धीरे-धीरे हाथ उठने लगे। सभापतिजी कहते हैं 'क्या हाथ उठवाते हैं, ऐसे लोग ९० फीसदी होंगे।' सचमुच, लगभग पचास को छोड़कर बाकी सबके हाथ उठ गये।

इस भूमिहीनता की कल्पना बिना देखे किसी को नहीं हो सकती। कहाँ इतनी संख्या में भूमिहीन और कहाँ हमारा बीघा-कट्ठा, और वह भी कितनी मुश्किल से मिल रहा है, और मिलता भी है तो कितने लोगों से?

२६ मार्च

'मेरा जूता कौन उठायेगा?'

बहुत बड़े मालिक हैं। कई सौ बीघे भूमि है, लाखों रुपये की महाजनी चलती है जो एक साल में एक मन का दो मन और फिर उसी दो मन का तीन मन बना देती है। कहते हैं 'यह बताइए कि अगर मैं अपने मजदूर को जमीन दे दूँ तो मेरा जूता कौन उठायेगा?'

यह है सामन्तवाद-पूँजीवाद, जो मानता ही नहीं कि गरीब भी आदमी होता है। यह नमूना है उस चरित्र का जो सामन्तवादी-पूँजीवादी समाज-व्यवस्था में विकसित होता है। ऐसे सज्जन को कैसे समझाया जाय?

२७ मार्च

'तुम्हें जमीन जोतनी पड़ेगी'

बैलगाड़ी में हम लोगों का सामान लदा हुआ है। हम लोग कोसी की एक छोटी नहर के किनारे-किनारे अगले पड़ाव पर जा रहे हैं। रास्ते में गाड़ीवान कहता है "हाकिम (मजदूर अपने मालिक को इसी नाम से पुकारता है), मैं अपने मालिक की जमीन बँटाई पर जोतता था। जमीन अच्छी नहीं थी, उपज कम होती थी। इस साल मैंने कहा कि अच्छी जमीन दीजिए, नहीं तो मैं दूसरे मालिक की जमीन जोतूँगा। उनको यह बात बुरी लगी। परसों शाम को मेरे घर आये, और मेरे दोनों बैल खोल ले गये। धमकी देते गये 'देखता हूँ तुम मेरी जमीन कैसे नहीं जोतते!'

इस क्षेत्र में सारी जमीन मुट्ठी भर मालिकों के हाथ में है। हर गाँव में दो सौ-चार सौ बीघे के मालिक हैं। बाकी सब मजदूर हैं, या मजदूरी के साथ-साथ थोड़ी जमीन मालिकों से लेकर बँटाई पर जोतते हैं। अपना बीज, खाद, पानी सब लगाते हैं, और फसल होने पर आधा अनाज मालिक को दे देते हैं। इसके ऊपर मालिक मन में ढाई सेर और ले लेता है—नौकरों का खर्च! खेती की यह विलक्षण पद्धति है जिसमें भू-स्वामी को अपना एक पैसा नहीं लगाना पड़ता। मेहनत, पूँजी सब बँटाईदार की होती है। मालिक को मुनाफा-ही-मुनाफा होता है। इसीलिए तो वह चाहता है कि अधिक-से-अधिक लोग भूमिहीन बने रहें ताकि उसे मजदूर और बँटाईदार मिलते रहें। ऐसी स्थिति में फँसे रहेंगे मजदूरी और कैसे मिटेगी भूमिहीनता, और मालिक क्यों चलने देगा ग्रामसभा? ●

→ [पृष्ठ ४३१ का शेष]

जाति को अपरिग्रह व्रत की दीक्षा दे सकते हैं? किस अर्थ में? सो भी सोचना चाहिए।

भौतिक प्रगति का आदर्श छोड़ें

इसके लिए हमें आज सारे जगत में सर्वमान्य हुआ भौतिक प्रगति का आदर्श छोड़ देना पड़ेगा। और दैवी-संस्कृति के अनुसार कितना परिग्रह जरूरी है सो भी तय करना पड़ेगा। और उस सारी नयी समाज-व्यवस्था के स्वरूप को सोचकर वह आदर्श समाज के सामने रखना होगा। व्यक्तिगत मोक्ष की साधना आसान थी। सर्व-मुक्ति की साधना विशाल होगी, अत्यन्त सात्विक होगी। 'साम्यवाद' से कहीं अधिक तेजस्वी होगी। उसका चिन्तन और आवाहन करने के दिन आये हैं। ●

(पृष्ठ ४३५ का शेष)

ज्यादा आँकड़ा नहीं प्रस्तुत करना चाहेंगे। भारत के बिखरे गाँवों में ग्रामकोष का प्रारम्भ करना अपने आप में एक समस्या है, पर कुछ क्षेत्रों में इसकी शुरुआत हुई है। मुंगेर जिले में झाझा प्रखण्ड के ८९ गाँवों ने पिछले डेढ़-दो वर्षों से ग्रामकोष का प्रारम्भ किया है। इस अल्प अवधि में उन गाँवों ने कुल २१०००) रु० की रकम जमा कर ली है तथा ४०००) रु० प्रखण्ड-कोष में जमा किया है। करोड़ों की योजना में यह रकम नाम मात्र की लग सकती है, पर करोड़ों की यह योजना किस अंश में गाँव तक पहुँच पाती है इसका भी ध्यान हमें रखना चाहिए। प्रखण्ड कार्यालय से गाँव को कितना मिल पाता है! इस सन्दर्भ में ग्राम-कोष की यह रकम एक बड़ी उपलब्धि है। इस रकम का उपयोग ग्रामीण श्रम-शक्ति के साथ नियोजित ढग से किया जा सकता है। गाँव के भूखे-नंगे लोग यदि इतनी रकम जमा करते हैं और अपनी श्रम शक्ति प्रस्तुत करते हैं तो आर्थिक विकास को एक नयी दिशा मिल सकती है।

अन्त में मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि ग्रामकोष का प्रारम्भ एक शुभ लक्षण है। इसे अवैज्ञानिक या अव्यावहारिक कह-कर छोड़ा नहीं जा सकता है। आव-श्यकता है, इसके नियोजन एवं मार्गदर्शन की, ताकि इसे सही दिशा मिल सके। ●

(पृष्ठ ४२६ का शेष)

भूदान-भूमि की बेदखली

गत दो माह से कोआकोल प्रखण्ड में सर्वे का काम सरकार की ओर से चल रहा है। कुछ स्थिर स्वार्थी भूतपूर्व जमींदारों के कारिन्दों से भूदान से पूर्व की तिथि में कागज बनवाकर या भूदान भूमि को पट्टा कागज के बल पर भूदान-भूमि से भूदान किसानों को वंचित करना चाहते हैं। भूदान किसानों को बेदखली से बचाने के लिए आश्रम के कार्यकर्ता सक्रिय हैं।

(सोखोदेवरा आश्रम के बुलेटिन से)

नयी पुस्तकें

ब्लडप्रेशर की प्राकृतिक चिकित्सा

लेखक—धर्मचन्द सरावगी

प्राकृतिक चिकित्सा के प्रेमी, प्रयोगकर्ता तथा अनेक पुस्तकों के रचयिता श्री धर्मचन्दजी ने इस पुस्तक में ब्लडप्रेशर या रक्तचाप का विशद विवेचन किया है। ब्लडप्रेशर का रोग फैशन में भी शुमार होने लगा है। लेखक ने बताया है कि यह रोग नहीं, बल्कि किसी दूसरे रोग का लक्षण है।

मूल्य : रु० १-५०

चर्मरोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

लेखक—धर्मचन्द सरावगी

इस पुस्तक में चर्मरोगों की प्राकृतिक चिकित्सा के उपाय बताये गये हैं। चर्मरोग अनेक प्रकार के होते हैं। तरह-तरह की दवाइयों, मलहमों, गोलियों में अपार धन खर्च करके हम प्रायः विष ही खाते रहते हैं और दवाओं के गुलाम बन जाते हैं।

मूल्य रु० १-५०

पिंगलिंग

बहुचर्चित तथा बहुप्रशंसित इस उपन्यास का नया संस्करण प्रकाशित हो रहा है। इस संस्करण में विज्ञ लेखिका ने आवश्यक संशोधन सम्पादन करके उसे ताजगी से भर दिया है।

विनोबा के विचारों को हृदयंगम करने की दृष्टि से एक सरस कृति।

मूल्य रु० ३-००

माटी की माँग

(प्रेस में)

यह आक्षेप है कि भूदान में विनोबा को लोगों ने नदी, पहाड़-जंगल दे दिये, उन्हें ठग लिया। यह एक वास्तविकता भी है, लेकिन आंशिक! सच्चाई जानने के लिए किसी एक अंश को आधार बनाना अनुचित है।

तो भी, क्या नदी, पहाड़, जंगल के दान की कोई महत्ता नहीं है? इस पुस्तिका को पढ़कर शायद आप खुद ही कह सकेंगे कि इन्सान की हिम्मत और विज्ञान की तरकीब के मेल से इस दान का महत्व बढ़ जाता है। खास कर विदेशी कर्ज लिये बिना।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी—१

आन्दोलन के समाचार

दो सौ से भी अधिक डाकू आत्म-समर्पण के लिए तैयार

नयी दिल्ली ३० मार्च। चम्बल घाटी शान्ति-मिशन के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने श्री जयप्रकाश नारायण को सूचित किया है कि वे सभी मुख्य डाकू-दलों से सम्पर्क कर उन्हें आत्म-समर्पण के लिए तैयार कर चुके हैं।

माधो सिंह, कल्याण सिंह, जगजीत सिंह व हरविलास के दलों के अलावा जो पहिले से ही आत्म-समर्पण के लिए तैयार हो चुके थे, अब पाँच अन्य दलों ने भी श्री जयप्रकाश नारायण के सामने हथियार डालकर अपने को कानून के सामने उपस्थित करने का फैसला ले लिया है। ये नये दल मोहर सिंह, सरूप सिंह, काली चरण, पचम सिंह व तिलक सिंह के हैं। इनमें मोहर सिंह का दल सबसे बड़ा है तथा स्वयं मोहर सिंह पर दो लाख रु० का इनाम है।

दस्युराज मानसिंह के लड़के तहसील-दार सिंह व पंडित लोकमन जो कभी लुक्का नाम से जाने जाते थे, अन्य भूत-पूर्व डाकुओं, जिनमें तेजसिंह व दारेलाल प्रमुख हैं, के सहयोग से बीहड़ और जंगल के विभिन्न डाकू-दलों से सम्पर्क करने में व्यस्त हैं। इस काम में श्री महावीर सिंह व श्री हेमदेव शर्मा उनका नेतृत्व कर रहे हैं। इन दोनों कार्यकर्ताओं ने आज से १२ बरस पहले भी विनोबा के साथ इसी काम को किया था।

श्री जयप्रकाश नारायण को भेजे गये एक पत्र में भूतपूर्व डाकुओं ने अपने पिछले जीवन के अनुभव के आधार पर यह लिखा है कि डाकू बनना जितना आसान होता है उतना ही मुश्किल है उस धन्धे को छोड़ पाना। जिन्होंने जंगल व बीहड़ में वर्षों गुजार दिये हैं उन्हें यह बिलकुल विश्वास नहीं होता कि वे फिर कभी आम लोगों की तरह शान्तिपूर्वक जीवन बिता सकेंगे। डाकुओं को सेना या पुलिस से डर नहीं लगता, मौत का उन्हें क्या भय, वह तो उनके सामने हर क्षण रहती ही है। हम उन्हें यह विश्वास दिलाने में लगे हैं कि यदि वे आत्म-समर्पण कर दें तो वे भी अपने पापों का प्रायश्चित्त करने के बाद स्वतन्त्र जीवन बिता सकेंगे। आत्म-समर्पण के लिए विभिन्न डाकू-दलों से सम्पर्क कर समझाने-बुझाने का काम प्रगति पर है।

लेकिन इसके लिए अभी कुछ और वक्त लगेगा। इस समस्या को सुलझाने के लिए समाज सैकड़ों वर्षों से ताकत का इस्तेमाल कर चुका है लेकिन उसमें सफलता नहीं मिली है। क्या हम इस नये तरीके को कुछ और समय नहीं दे सकते?

चम्बल घाटी शान्ति-मिशन ने भी श्री जयप्रकाश नारायण से प्रार्थना की है कि वे मिशन की ओर से तीनों सरकारों को विशेषकर मध्य-प्रदेश सरकार व श्री सेठी को धन्यवाद ज्ञापित करें। मिशन को विश्वास है कि यदि इसी तरह कुछ और समय तक सरकारों का रचनात्मक सहयोग मिलता रहा तो वे श्री जयप्रकाश नारायण के सामने चम्बल घाटी के सभी प्रमुख डाकू-दलों का समर्पण करवाने में सफल हो सकेंगे। श्री जयप्रकाशजी ११ अप्रैल को ग्वालियर पहुँच रहे हैं। वे वहाँ पाँच दिन तक रहेंगे।

राघोपुर (सहरसा)

सहरसा जिले के राघोपुर प्रखण्ड में २२ मार्च से ३० मार्च तक पदयात्रा की गयी। इस पदयात्रा में आचार्य राममूर्ति-जी भी शामिल थे। पदयात्रा सिमराही बाजार से प्रारम्भ होकर गनपतगंज में समाप्त हुई। कुल दस पड़ाव हुए। प्रतिदिन की सभा में उपस्थिति १०० से लेकर ५०० तक रही।

२२ मार्च को रामविशनपुर की सभा में तीन भूमिवानों ने बीघा-कट्ठा देने की घोषणा की, तथा ११० भूमिहीनों से व्यक्तिगत समर्पण-पत्र भरवाये गये। कटजाइन पड़ाव पर शिक्षकों और व्यापारियों की एक सभा हुई, जिसमें सबने इस काम में सहयोग देने की घोषणा की। गनपतगंज पड़ाव पर भूदान किसानों की सभा का आयोजन किया गया जिसमें उन लोगों के संगठन की बात सोची गयी। प्रायः हर पड़ाव पर शिक्षकों व व्यापारियों की भी गोष्ठी होती रही। १६ अप्रैल को प्रखण्डभर के शिक्षकों व व्यापारियों की एक गोष्ठी आयोजित करने का सोचा गया है।

इस अवधि में ६३·५० रु० की साहित्य-बिक्री हुई।

आगे आठ टोलियाँ प्रखण्ड भर में घूमकर काम करती रहेंगी। शिक्षकों से सहयोग प्राप्त करने के लिए श्री इन्द्र-लालजी (म० प्र० सर्वोदय मण्डल के मंत्री) इस क्षेत्र के स्कूल इंस्पेक्टर के साथ दौरा करेंगे। १९ अप्रैल को भूमिहीनों और भूमिवानों की एक विशाल रैली का आयोजन प्रखण्ड-स्तर पर सिमराही में करने का सोचा गया है।●

साथियों के पत्रों से

मधेपुरा

दरभंगा जिलान्तर्गत मधेपुरा प्रखण्ड का मैं एक सर्वोदय कार्यकर्ता हूँ। पिछले १५ वर्षों से आपके आन्दोलन में सातत्य-पूर्वक काम करता आ रहा हूँ। इस प्रखण्ड में अभी तक १३५ ग्रामसभाएँ बनी हैं जिनमें ३ गाँवों का गजट हो चुका है। लगभग २५ गाँवों का कागज अभी तैयार कर कन्फरमेशन के लिए मधुबनी भेजा गया है। बीघा-कट्ठा में अभी तक २५ बीघा १३ कट्ठा १५ धूर जमीन बाँटी गयी है। ३ गाँवों में ग्रामकोष इकट्ठा हुआ है। अन्य गाँवों में प्रयास हो रहा है। १९२ भूदान किसानों को अपने प्रमाण-पत्र के मुताबिक कब्जा दिलायी गयी, एवं प्रखण्ड के अन्य गाँवों की बेदखली-समस्या के समाधान के लिए प्रयास किया जा रहा है।

१९-१-७२ —इसमाइल मनसूरी

कुरसंडा

कुरसंडा मथुरा से श्री रामनाथ भाई बाबा के नाम पत्र लिखते हैं कि २० फरवरी से २६ फरवरी तक डा० दया निधि पटनायक के साथ फिरोजाबाद एवं आगरा के उनके कार्यक्रमों में अपने शिक्षण की दृष्टि से रहे सर्वोदय कार्यकर्ताओं के लिए उनके द्वारा अच्छा अविरोधी वातावरण बन जाता है, ऐसा मुझे अनुभव आया। २७ ता० को जगनेर ब्लाक में प्रो० बंग साहब की पदयात्रा की पूर्व तैयारी में गया। १ मार्च से ११ मार्च तक पदयात्रा में रहा। पदयात्रा से कार्यकर्ताओं का मनोबल ऊँचा हुआ, कुछ नये कार्यकर्ता मिले। स्थानीय सहयोगी मिलने पर बीसवाँ हिस्सा जमीन भी प्राप्त हुई। १२ मार्च को श्री नरेन्द्र भाई के शराबबन्दी कार्यक्रम में अन्तिम दिन पहुँचा।

वहाँ से लौटते ही अपने जिले में प्रबल अन्तःप्रेरणा से शराबबन्दी के कार्य में लग गया हूँ। मुख्यमंत्री आबकारी मंत्री, एम० एल० ए० 'ज' एवं जिलाधीश को अप्रैल १९७२ से प्रथम कदम के तौर पर मथुरा जिले के तीर्थ स्थानों से ठेके समाप्त करने का ज्ञापन दे दिया है। इन दिनों में ४८'३३ पैसे की साहित्य-बिक्री हुई, २ नयी तालीम, ३ गाँव की आवाज, १ भूदानयज्ञ, १ तरुणमन के ग्राहक बने। सर्वोदय आश्रम साहाबाद द्वारा १५ रु० की साहित्य-बिक्री एवं ४ भूदान यज्ञ के ग्राहक बनाये गये।

गोण्डा

दिनांक २०-२-७२ को जिला सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी ने अपनी बैठक में सर्वसम्मति से निश्चय किया कि अपने सर्वोदय परिवार में अब अपने नामों के साथ जाति व वर्ग-भेद-सूचक शब्दों का प्रयोग नहीं करेंगे। — रामलालभाई

पुस्तक-परिचय

सरहदी गांधी

सस्ता साहित्य द्वारा प्रकाशित 'सरहदी गांधी' पुस्तक खान अब्दुल गफ्फार खाँ की जीवनी पर पूरा प्रकाश डालती है। देश को आजाद कराने में संघर्षरत सरहदी गांधी आजादी के बाद भी संघर्ष ही कर रहे हैं।

इस पुस्तक के लेखक श्री प्यारेलाल की सधी हुई लेखनी से यह पुस्तक काफी रुचिकर बन पायी है। पढ़ने के लिए एक बार पुस्तक उठायेंगे तो बिना पूरा समाप्त किये छोड़ने की इच्छा नहीं होगी।

गांधी की अन्तिम जेल यात्रा

दूसरी पुस्तक है सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन की 'गांधी की अन्तिम जेल यात्रा'। लेखक हैं—श्री राजेन्द्र माथुर। यह एक नवोदित लेखक हैं। लेखन शैली अच्छी है। शब्द कठिन नहीं, सरल हैं—पढ़ने में सुगम।

लेखक आपको मुहम्मद साहब तथा इस्लाम के इतिहास का सरसरी निगाह से दर्शन कराता हुआ आपको अंग्रेजी शासन के भारत के मनःस्थिति का दर्शन कराता है। इसमें आपको गांधीजी के जीवन का मार्मिक चित्र का दर्शन होगा। जहाँ गांधीजी कहते हैं : "मुझे विश्वास था कि एक बार भी महादेव मेरी ओर देख लेगा तो उठकर खड़ा हो जायेगा। एक बार आँख खुली भी तो वह घबराई थी और देख नहीं रही थी।"

इसमें डा० सुशीला नैयर के आगा खाँ महल के संस्मरण, इण्डियन एक्सप्रेस के उद्धरण एवं डा० मदनगोपाल भण्डारी की भेंट आदि की अनेक रचनाएँ पर आयी हैं।

पत्र-व्यवहार का पता :

सर्व सेवा संघ, पत्रिका विभाग

राजघाट वाराणसी-१

तार सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक

रामसूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : २९ १७ अप्रैल, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ

[illegible]

सीमाप्रान्त में चुने हुए प्रतिनिधियों ने राज्य सरकार बना ली है और पिण्डी से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है।

दल-मुक्त चुनाव : एक अनुभव

पूज्य बाबा !

विधानसभाओं के चुनाव के दौरान मैंने आडम्बरहीन और दल-मुक्त लोकतंत्र की बात आन्ध्र प्रदेश में कही थी और इसी आधार पर उम्मीदवारों से निम्नलिखित बातों की अपेक्षा रखी थी।

१—भारतीय संविधान की धारा ४०-४१ पर जिसमें स्वायत्तशासी इकाई के आधार पर ग्रामपंचायतों के संगठन तथा उसके अधिकारों के बारे में कहा गया है, जोर देना।

२—लोकतंत्र की दलीय पद्धति की परम्परा से सम्बन्ध-विच्छेद और सच्चा जन-प्रतिनिधि के बारे में विचार।

३—वेतनमान और भत्ता राष्ट्रीय आय के प्रति व्यक्ति औसत आय से अधिक न हो (फिलहाल १५० रु० वेतन, और १० रु० प्रतिदिन भत्ता)

४—केवल इतना ही न हो कि वे उपर्युक्त सिद्धान्तों को व्यवहार में लायें बल्कि दूसरों से मनवाने के लिए सत्याग्रह भी करें।

हमलोग आडम्बरहीन दल-मुक्त लोकतंत्र के लिए एक जन-आन्दोलन की बात सोच रहे हैं। यदि जनता इसमें लगे तो उसका इससे शिक्षण होगा और वह मतदाता मण्डल बनायेगी तथा गाँवों में पुष्टि-कार्य का संयोजन करेगी। रास्ते भिन्न हैं मगर लक्ष्य एक ही है। इस योजना की घोषणा करने पर ८ उम्मीदवारों ने (लवणम् सहित) अपने आपको इसके लिए तैयार बताया।

लवणम् ने चुनाव-प्रचार के लिए निम्नलिखित पद्धति निश्चित की थी।

कुडप्पा जिले में दो, गुन्टूर जिले में तीन, कृष्णा जिले में एक और नालगोण्डा जिले में दो, कुल आठ।

१—चुनाव में ७५० रुपये (२५० रुपये जमानत सहित) से अधिक खर्च न हो।

२—आठों प्रत्याशियों के चुनाव-चिन्ह एक न रहे। सामान्यतः चुनाव-चिन्ह से अलगाव की भावना परिलक्षित होती है और किसी भी तरह जीत जाने की तमन्ना जाग्रत होती है।

३—एक दूसरे प्रत्याशी की आलोचना न की जाय सिर्फ आडम्बरहीन दल-मुक्त लोकतंत्र (आ० द० लो०) तथा चुनाव के बाद होनेवाले सत्याग्रह के बारे में समझाया जाय।

४—चुनावों में चुनाव-एजेण्ट न हों। सरकार का कर्तव्य है कि वह स्वतन्त्र और शुद्ध चुनाव कराये।

५—चुनाव में जनता से ७५० रुपये प्राप्त किये जायें। किसी भी व्यक्ति से १० रुपये से अधिक न लिया जाय तथा निजी पैसे इस्तेमाल न किया जाय।

६—पदयात्रा, साईकिल या बस यात्रा द्वारा प्रचार होना चाहिए, मोटर, कार का उपयोग न किया जाय।

७—चुनाव-क्षेत्र में सर्वदलीय मंच का आयोजन हो।

८—प्रत्याशी वोट के लिए निवेदन न करें। जनता को लोकतंत्र के विचार को समझने तथा समझाने का मौका दें।

इन तीन सप्ताहों में मैंने चुनाव-प्रचार की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। मैं केवल चार क्षेत्रों में घूम सका। उन आठों प्रत्याशियों में से सिर्फ एक प्रत्याशी नालगोण्डा क्षेत्र से जीता। उसका अपने क्षेत्र में काफी प्रभाव है।

समाचार पत्रों ने इसे दल-मुक्त प्रत्याशी नाम दिया है।

जहाँ स्वतन्त्र प्रत्याशियों ने चुनाव में राजनैतिक पार्टियों का सहयोग किया वहाँ इन उम्मीदवारों ने दलीय पद्धति का विरोध किया।

विजयवाड़ा में जूनियर चैम्बर द्वारा एक सर्वदलीय मंच का आयोजन किया गया। १४ में से ६ प्रत्याशियों ने इसमें भाग लिया।

मेरा यह अनुभव रहा कि मतदाता-प्रशिक्षण का कार्य काफी असरदायी रहा। १९७१ के संसदीय चुनाव की अपेक्षा इस बार हम लोग अधिक व्यापक प्रचार कर सके। उस बार सिर्फ वैचारिक घोषणा न करके नमूने के तौर पर प्रत्याशियों को भी खड़ा किया गया।

लवणम् को छोड़कर बाकी सातों प्रत्याशी सर्वोदयी नहीं थे। अगर सर्वोदय कार्यकर्ता सहयोग करते तो हमलोग आसानी से अधिक सफलता प्राप्त कर सकते थे।

मैं आप से अनुरोध करता हूँ कि कृपया आ० द० लो० को सर्वोदय का एक अंग मानने के प्रस्ताव पर विचार करें। मैंने अपना अनुभव आपके सामने रखा है जिसे इस चुनाव-काल में प्राप्त किया है। इसे अधिक कार्यक्षम बनाने के लिए आप इसमें कुछ और जोड़ सकते हैं अथवा सुधार सकते हैं।

ग्रामदान-पुष्टि और दल-मुक्ति दोनों एक दूसरे के सहायक हैं प्रतिद्वन्द्वी नहीं।

आपकी सदिच्छा ऐसे आदमियों को मैदान में आने के लिए प्रेरित करेगी जो इन नये अनुभवों से लाभ उठाना चाहेंगे। मैं विश्वास करता हूँ कि मैंने भूदान में एक नया आयाम जोड़ा है और पुष्टि के सिलसिले में इसे विकसित किया है तथा आ० द० लो० इसी दिशा में एक प्रयास है।

—गोरा

२४-३-'७२ (विनोबाजी को लिखा पत्र)

शिक्षा का लक्ष्य : अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय

● रामनन्दन मिश्र

देश का यह दुर्भाग्य है कि आज तरह तरह के आर्थिक और राजनैतिक कार्यक्रमों की चर्चा तो चल रही है; परन्तु देश के कुमारों को स्वस्थ शिक्षा देने की ओर राजनैतिक नेताओं का ध्यान नहीं है। समाज का वातावरण, राजनैतिक नेताओं द्वारा अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए शिक्षा-संस्थाओं का उपयोग और शिक्षक तथा शिक्षा-अधिकारियों की कुर्सियों ने इस देश की शिक्षा-संस्थाओं को भयंकर दुरवस्था में पहुँचा दिया है। शिक्षा-संस्थाओं की चक्की में पीसकर जिस तरह के नौजवान तैयार हो रहे हैं, उनसे किसी तरह के स्वस्थ समाज के निर्माण की आशा नहीं की जा सकती है। एक अमेरिकन विद्यार्थी से यह प्रश्न पूछा गया कि इतनी साधन-सम्पन्नता होते हुए भी अमेरिका के नौजवानों की मनोभावना विशृंखलित क्यों है ? तब उस युवक ने अत्यन्त मार्मिक उत्तर दिया—"विज्ञान ने हवाई जहाज पर उड़ना और चन्द्रमा को छूना तो सिखाया, पर उसने रहना और जीना नहीं सिखाया।" मुख्य बात तो यह है कि "मनुष्य बनाना' शिक्षा-संस्थाओं का सबसे प्रधान ध्येय होना चाहिए, इसका कोई चिन्ह शिक्षा-संस्थाओं में रहा नहीं। उदाहरण-स्वरूप, दो प्रश्न मैं शिक्षा-प्रेमियों के सामने विचारार्थ रखना चाहता हूँ .

१—मानव-जाति पर जो संकट है, उसके मूल में सबसे बड़ी कठिनाई आज क्या है ?

इस प्रश्न पर विचार करें तो स्पष्ट रूप से समझ में आयेगा कि व्यक्तिवादी भावनाओं का सीमा-विहीन जागरण समाज-निर्माताओं के सभी प्रयत्नों को विफल कर रहा है। मानव के अन्तर में रहनेवाली पशुता उद्दाम वेग से जग पड़ी है, भोग-लिप्सा की तृप्ति के लिए जो कुछ सत्य है, सुन्दर है, कल्याणकारी है, उन सबको अपने पैरों के नीचे रौंदकर वह क्षणिक सुख-भोग की तृप्ति चाहती है। दूसरों को पीछे छोड़कर या उन्हें आघात पहुँचाकर भी हर व्यक्ति आगे बढ़ना चाहता है। इस तरह की अनैतिक प्रतिस्पर्द्धा में जो शामिल नहीं हो सका, उसे जीवन की साधारण आवश्यकताओं से भी वंचित रहना पड़ता है। परिणाम-स्वरूप समाज में यह मान्यता दृढ़ हो गयी है कि आदर्शों की चर्चा व्याख्यान वगैरह के लिए अच्छी है, परन्तु व्यवहार में येन केन प्रकारेण सफलता प्राप्त करनी ही चाहिए, अथवा जैसे भी बने धन-संग्रह और प्रतिष्ठा प्राप्त करनी चाहिए। ऐसी भावनाओं के मूल में है मानस के साथ लगा हुआ "विशेष व्यक्तित्व' का आधार। इस "मैं" के स्थान पर "हम" का जन्म नहीं हुआ, तो सामाजिक जीवन कलुषित और निरर्थक हो जायेगा। इसकी स्थापना तभी सम्भव है, जब सिद्धान्त, व्यवहार और अनुभूति, तीनों स्तर पर व्यक्तिविशेष चेतना का सामूहिक चेतना से सम्बन्ध जोड़ा जाय। इसी को आध्यात्मिक परिभाषा में जीवभाव के स्थान पर ब्रह्मभाव की स्थापना कहते हैं।

२—शिक्षक वर्ग विद्यार्थियों में शिक्षा-कार्य के प्रति श्रद्धा और प्रेम क्यों पैदा नहीं कर पाता है ?

शिक्षा प्रदान करने का काम इतना महान और पवित्र है कि किसी भी स्वस्थ समाज में उसके लिए सहज आकर्षण रहना चाहिए। परन्तु आज किसी विद्यार्थी से यह पूछिए कि वह आगे चलकर क्या होना चाहता है, तो वह कहेगा, —डाक्टर, इंजीनियर, मिनिस्टर, या व्यवसायी। शायद ही कोई विद्यार्थी खुशी से किसी स्कूल का अध्यापक होना चाहेगा। डा० होना क्यों चाहेगा ? उसको मरीजों की सेवा करने में रुचि नहीं है, उसकी रुचि मरीजों के पास से रुपया ऐंठने में है। इंजीनियर का दिल का शौक अच्छे पुल, मकान या नहर बनाने में नहीं है, बल्कि रुपया कमाने में है। ऐसा क्यों हो रहा है ?

स्पष्ट है, व्यक्ति की भावना समाज-कल्याण के साथ जुड़ी हुई नहीं है। इस मनोदशा को यदि हम नहीं बदल पाये, तो किसी तरह से स्वस्थ समाज का निर्माण असम्भव हो जायेगा। अफसोस है कि आज भारतवर्ष के नेता धर्मनिरपेक्षता जैसे अशोभनीय शब्दों के प्रयोग पर तुले हुए हैं। धर्म सृष्टि के साथ सहज रूप से जुड़ा हुआ है। आग का धर्म है गरमी देना। जिस दिन आग अपने धर्म को छोड़ देगी, उस दिन सृष्टि का ध्वंस हो जायेगा। पृथ्वी का धर्म है अपनी धुरी पर नाचते हुए, सूर्य की परिक्रमा करना। इसमें तिल मात्र का अन्तर पड़ा, तो पृथ्वी का सर्वनाश हो जायेगा। मनुष्य का धर्म है प्रेम और श्रम करना। जिस दिन मानव-जाति से प्रेम का भाव मिट जायेगा और श्रम से अरुचि पैदा हो जायेगी, उस दिन मानव-जाति जीवित नहीं रह सकेगी।

दुर्भाग्यवश धार्मिक सम्प्रदायों का व्यवहार इतना अनैतिक हो रहा है कि मानव समाज का मन सहज ही उनसे विमुख हो रहा है। छूरा भोंकना, घर को आग लगाना, स्त्रियों और बच्चों पर अत्याचार करना, ऐसे जघन्य अपराध भी धर्म के नाम पर किये जा रहे हैं। दूसरी ओर दबे हुए युवकों की साहसिकता उन्हें छूरा भोंकना, बम फोड़ना, घरों को आग लगाना, गांधीजी जैसे महापुरुष के चित्र जलाना आदि कुत्सित कार्यों की ओर ले जा रही है। फिर भी यह याद रखना चाहिए कि जीवन में धार्मिकता की नितान्त आवश्यकता है। धार्मिकता का अर्थ है, एक ओर प्रकृति और समाज के नियमों को स्वीकार कर सांसारिक जीवन को मर्यादित भाव से चलाना, दूसरी ओर व्यक्तिगत चेतना का विश्व-चेतना से सम्बन्ध जोड़ना—अर्थात् विज्ञान और अध्यात्म का सच्चा मिलन मानव जीवन में लाना। यह महान कार्य शिक्षा (लर्निंग) द्वारा ही सम्भव है। ●

जय जगत से छोटा विचार पुराना पड़ा

• विनोबा

मातृस्थान

आप समझ नहीं सकते कि पंजाब पर मेरा कितना प्यार है। आप पंजाब में रहते हैं, इसलिए आपका प्यार उस कोटि का नहीं है, जिस कोटि का मेरा प्यार है, क्योंकि आपकी संयोग-भक्ति चलती है, मेरी वियोग भक्ति चलती है। संयोग में जितना प्यार होता है, उससे ज्यादा प्यार वियोग में होता है। जो बच्चा माँ से बिछुड़ा है, माँ उसकी ज्यादा फिक्र करती है, बनिस्बत माँ से जुड़े हुए बच्चे के। मैं पंजाब से दूर था, लेकिन कई बरस पहले मैंने नक्शे में व्यास और सतलज के संगम स्थान को देख लिया था, जिसका जिक्र ऋग्वेद के एक सूक्त में आता है, जो दस हजार साल पहले का है। विश्वामित्र भारतीयों को लेकर नदी पार करना चाहते हैं। नदी में बाढ़ आयी है, इसलिए विश्वामित्र नदी से प्रार्थना करते हैं, हे मेरी माँ, तू मेरे लिए रुक जा और मुझे रास्ता दे। फिर नदी जवाब देती है, जैसे माँ बच्चे के लिए झुक जाती है, या जैसे कन्या पिता की सेवा के लिए झुक जाती है, वैसे मैं तेरे लिए झुक जाती हूँ।

नि ते नसै पीप्यानेव योषा।

मर्यायेव कन्या शश्वचै ते

यों कहकर नदी झुक गयी और विश्वामित्र नदी पार करके चले गये।

जब से मैंने यह सूक्त पढ़ा, तब से मेरे मन में बात आयी कि इतना पुराना स्थान हिन्दुस्तान में दूसरा कोई नहीं हो सकता। काशी और कुरुक्षेत्र भी पुराने स्थान हैं लेकिन उनका जिक्र उपनिषदों में आता है, वेदों में नहीं। पंजाब में इस स्थान का जिक्र वेदों में आता है। इसलिए पंजाब को मैंने मातृस्थान माना है। मेरा इस मातृभूमि पर कितना प्यार है, इसका कइयों को पता नहीं। बचपन से मेरा इसके साथ सम्बन्ध है, क्योंकि मेरा वेद का अध्ययन बचपन से सतत चलता आया है।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

ऋग्वेद का प्रसिद्ध वचन है, *कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। इसका दुहरा अर्थ होता है।* एक अर्थ तो यह होता है कि विश्व को हम आर्य बनायें, *अपनी संस्कृति को पूरे* विश्व का प्रतिनिधि बनायें और दुनिया भर के *अच्छे विचार* हम अपनी संस्कृति में, सभ्यता में ले लें। दूसरा अर्थ यह होता है कि हमारी सभ्यता के अच्छे विचार दुनिया को दें। इन दिनों विज्ञान खूब बढ़ा है, देश-देश के बीच दीवारें नहीं रह सकती हैं, विचार इधर से उधर, और उधर से इधर आने-जाने में रुकावट नहीं हो सकती। इसलिए भारत के बाहर के विचार भारत में लाकर भारत को विश्वमय बनाना चाहिए। उसी तरह यहाँ के अच्छे विचार विश्व में भेजकर विश्व को भारतमय बना दें। इसका अर्थ यह भी है कि *बाहर के बुरे विचार यहाँ न आने दें* और यहाँ के बुरे विचार बाहर न जाने दें।

षष्ठ श्रेणी

अभी मार्टिन लूथर किंग की पत्नी ने बाबा को दान भेजा। उनको बाबा की याद क्यों आयी? क्योंकि वे जानती हैं कि यह शख्स जो बात कहता है, वह दुनिया को बचानेवाली है। हमारी कोई सुनेगा नहीं तो हमारा नुकसान नहीं। हम सुनाने का कर्तव्य करके चले गये ऐसा होगा। दूसरी बात हमारी नहीं सुनते हैं तो हम उस श्रेणी में आ जाते हैं, जिस श्रेणी में भगवान व्यास आते हैं। उन्होंने महाभारत के अन्त में लिखा है:

ऊर्ध्वबाहुः विरौमि एषः

न च कश्चित् शृणोति मे

मैं हाथ उठा-उठा कर चिल्ला रहा हूँ, लेकिन कोई मेरी सुनता नहीं। गांधीजी का भी आखिर यही हुआ। प्यारेलाल ने 'लास्ट फेज' में इसका अच्छा वर्णन किया है। इसलिए हमारी कोई सुनेगा नहीं, तो *उसमें हमारा कोई नुकसान नहीं।*

पचास साल के बाद

तुम सोचते हो, पचास साल के बाद क्या होगा? मूर्खों को यह ख्याल नहीं है कि पचास साल के बाद तो आदमी मंगल पर पहुँचेगा और वहाँ के प्राणी यहाँ आयेंगे। उनसे हमारा मुकाबला होगा। भगवान की सृष्टि अनन्त है, तो इन्द्रियाँ भी सीमित नहीं हो सकती। हम पाँच इन्द्रियवाले हैं। मंगल पर छः इन्द्रियवाले प्राणी भी हो सकते हैं। किसी ने कहा मंगलवाले हमको सन्देश क्यों नहीं भेजते? हम चीटियों को कहाँ सन्देश देते हैं? हमारा सन्देश चींटी नहीं समझेगी। वैसे *मंगलवालों का सन्देश पृथ्वीवाले नहीं* समझेंगे। छठी इन्द्रिय का हमें अन्दाज है नहीं। *तात्पर्य यह है कि विज्ञान का वेग* बढ़ा है इसलिए विज्ञान के सामने राजनीति *की कुछ नहीं चलेगी।* इसके आगे *'जय जगत' ही टिकेगा।* वेद में कहा है *विश्व-मानुष।* उस जमाने से ऋषियों के चिन्तन (दर्शन) में यह बात थी। संस्कृत में वसुधैव कुटुम्बकम् कहते हैं। इसमें जो 'क' है वह महत्त्व का है। मंगल वगैरह ग्रहों के साथ सम्बन्ध आने के बाद वसुधा छोटी ही हो जायेगी। इसलिए पचास साल के बाद तो बाबा की ही चलेगी, इसमें कोई शक नहीं।

चार पायें

बांगला देश ने एलान किया है कि हम चार बातें मानेंगे। नेशनलिज्म (राष्ट्रवाद), डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) सोशलिज्म (समाजवाद), सेक्यूलरिज्म (धर्मनिरपेक्षता)। अब इसके आगे छोटे राष्ट्र की दृष्टि से सोचने से चलने वाला है नहीं। १५-१६ साल पहले मैंने कहा था, लेट ए० बी० सी० बी ए ट्रैंगल—(मान लें कि ए० बी० सी० एक त्रिकोण

है)। अफगानिस्तान, बर्मा, और सिलोन, इन तीनों के बीच के सारे देशों को एक करो, महासंघ बनाओ, तब शक्ति बनेगी। इस दिशा में प्रयत्न आगे बढ़ने चाहिए। नेशनलिज्म से किसी को फायदा नहीं। व्यापक सोचेंगे, तो सबको लाभ होगा। बाकी तीन मुद्दों के बारे में हम चर्चा करते हैं। समाज में कोई भी धर्म नहीं चलेगा, तो हम महामूर्ख साबित होंगे, इसलिए सेक्युलरिज्म यानी सर्व-धर्म-समन्वय, ऐसा अर्थ करना होगा। लोकतंत्र 'ऊपर से नीचेवाला नहीं', नीचे से ऊपर विकसित होनेवाला चाहिए। और समाजवाद यानी क्या? स्टेट कैपिटलिज्म (राज्य का पूँजीवाद) नहीं। समाजवाद यानी १०० प्रतिशत प्राइवेट सेक्टर (निजी विभाग) + १०० प्रतिशत पब्लिक सेक्टर (सरकारी विभाग) = १००। लेकिन यह गणित लोगों के ध्यान में आता नहीं। इसका क्या मतलब है? मतलब यह है कि प्राइवेट सेक्टर ही पब्लिक सेक्टर होगा। सारे व्यापारी पब्लिक सेक्टर के हित में काम करेंगे और दोनों सेक्टरों को विकसित करेंगे।

संगठन और अनुशासन

अहिंसा में होना यह चाहिए कि हर एक को पूरी आजादी है, फिर भी सबके सब अपनी इच्छा से सब नियमों का पालन करते हैं। मिलिटरी में तो नियमों का पालन लाजमी होता है। कैथोलिकों (ईसाइयों) में तीन नियम होते हैं— चैस्टिटी (ब्रह्मचर्य), वालण्टरी पावर्टी (ऐच्छिक दारिद्र्य) और ओबीडियन्स (आज्ञापालन), पहले दो नियम तो मुझे मंजूर हैं, लेकिन तीसरे 'ओबीडिएन्स के बदले फुल फ्रीडम (पूर्ण मुक्तता) होना चाहिए। अपेक्षा है नियम के उत्तम पालन की, लेकिन हमारी तरफ से पूर्ण मुक्तता होनी चाहिए। पूर्ण स्वतंत्रता होते हुए भी सहजता से नियम पालन हो। बताया जाये कि फलाने-फलाने नियम हैं और उनका पालन मुक्त-रूपेण हो, हम किसी प्रकार की डिसिप्लिनरी ऐक्शन (अनुशासन

[शेष पृष्ठ ४५५ पर] →

अमेरिकी युवकों की खोज

• नारायण देसाई

सभ्यता के रंगमंच पर अमेरिका का प्रवेश अभी हाल ही में हुआ है। वह नयी दुनिया है। इसीलिए सभ्यता की घुड़दौड़ में उसका थोड़ा अवसर आगे रहता है। बीसवीं शताब्दी का कोई एक प्रधान लक्षण हो तो वह है त्वरित परि-वर्तन। अमेरिका का भी यही प्रधान लक्षण है।

अमेरिका में आनेवाले लोग लहरों की तरह आते गये। उनमें पराक्रम करने का उत्साह था, नये-नये क्षेत्रों की दिग्वि-जय करने की उमंग थी, जिसे बाधा माना उसे नष्ट करने की क्रूरता थी। पूर्वी किनारे से बढ़ती हुई इन लहरों ने धीरे-धीरे सारे अमेरिका को वश में कर लिया। भौगोलिक सीमाएं समाप्त हुईं तो और सीमाएँ जीतना शुरू किया— आर्थिक सीमाएँ, वैज्ञानिक सीमाएँ, राज-नैतिक सीमाएँ। 'फ्रण्टीयर्स' शब्द अमेरि-कन लोग इसी अर्थ में इस्तेमाल करते हैं और फ्रण्टीयर्स पर रहना गर्व का विषय मानते हैं।

आज के युग की विज्ञान की दौड़ का असर कहीं सबसे अधिक हुआ है, तो वह अमेरिका ही में। विज्ञान नित्य नयी परिस्थिति पैदा करता है और उस परिस्थिति का मुकाबला करने का प्रयास करता है अमेरिकन आदमी। इस मुकाबले में जिसने अपनी जान की बाजी लगा दी है वह है अमेरिकन तरुण। वैसे तो देश ही तरुण है। उस तरुण देश के तरुण लोग आज के सब्जीसार काल के नवदर्शन का अभिवादन करने के लिए उत्सुक हैं।

मैं कुल छः सप्ताह अमेरिका में रहा। प्राय एक महीना मैं तरुणों के बीच ही हैवरफर्ड कालेज में रहा। बाकी दो सप्ताह जहाँ कहीं गया अकसर तरुणों से घिरा रहा। वहाँ के तरुणों की जो छाप मेरे मन पर पड़ी उसका कुछ अवलोकन कर लूँ।

अमेरिकी तरुण

दुनिया के हर देश की तरह यहाँ भी तरुणों में दो भेद तो हैं ही : 'ऐक्टिव फ्यू' और 'इनैक्टिव मेनी'—कर्मठ कुछ और अकर्मी अधिक। लेकिन मुझे अक्सर मिलने-जुलने का मौका मिला 'ऐक्टिव फ्यू' के साथ, इसीलिए जो छाप पड़ी है वह भी उन्हीं के विषय में अधिक गहरी है। हाँ, यह भी साथ ही साथ कहना होगा कि यहाँ फ्यू भी और देशों की तुलना में अधिक ही हैं।

सबसे पहली छाप पड़ती है उनके बराबरी के भाव की। आपस में बराबरी, शिक्षकों से बराबरी, बड़े बुजुर्गों से बरा-बरी, अपरिचितों से बराबरी। इस बराबरी में अविनय नहीं मालूम होता। कहीं-कहीं अति है, कहीं लापरवाही है, लेकिन मुख्यत बराबरी है। हरेक से 'हाई' कहकर अभिवादन में वह प्रकट होती है। अध्यापकों के साथ की बहसों में वह प्रकट होती है। स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों में वह प्रकट होती है। हाँ, इस बराबरी के सम्बन्ध के बावजूद भी वहाँ एक जबरदस्त होड़ भी चलती है। समय के खिलाफ होड़, एक दूसरे को पीछे रखकर खुद फ्रण्टीयर्स पर रहने की होड़। अमेरिकी जीवन की यह एक लाक्षणिकता ही मानी जायगी कि वहाँ बराबरी और होड़ के दो प्रवाह साथ-साथ बहते हैं।

दूसरी छाप पड़ती है जिज्ञासा की। तरुणों में तरह-तरह के विषय जानने की उत्सुकता होती है, उस उत्सुकता को पूरा करने के लिए काफी परिश्रम करने की भी तैयारी होती है। यह जिज्ञासा बाल्यवत् जिज्ञासा से आरम्भ होती है और गहरे शोध तक पहुँच जाती है। और इसीलिए कभी-कभी तो वे लोग इतनी जानकारी रखते हैं, जितनी

कि उस विषय के विशेषज्ञ लोगों के पास मुश्किल से हों।

तीसरी छाप पड़ती है बगावत की वृत्ति की। ये लोग पुराना बदलना चाहते हैं, नया लाना चाहते हैं। क्या बदलना चाहते हैं, यह तो [वे खुद जानते हैं; लेकिन अक्सर वे यह नहीं जानते कि वे क्या लाना चाहते हैं। बगावत करने के उनके तरीके भी अजीबोगरीब होते हैं। अकसर उन तरीकों में भी पुराने मूल्यों को स्वीकार न करने का आग्रह रहता है, लेकिन नये मूल्यों की स्थापना का उतना आग्रह नहीं रहता।

और, एक छाप यह पड़ती है कि वे किसी खोज में लगे हैं। उसे आर्य-जीवन का रहस्य कहिये, उसका अर्थ, उद्देश्य या दिशा कहिये—लेकिन वे कुछ खोजना चाहते हैं। इस खोज के लिए वे अपने जीवन में परिवर्तन करने के लिए भी तैयार हो जाते हैं।

केण्डी पटर करीब १८-१९ साल की होगी। लेकिन, बड़े-बूढ़ों, सबसे समानता से मिलती है। बड़ी सहजता से लोगों से लिपट जाती है। लेकिन काम करने में धुन की पक्की है। और जब वह किसी विषय को पकड़ती है तो उसके बारे में सारी जानकारी लिये बिना नहीं रुकती। जीवन दूसरों के लिए कैसे उपयोगी हो, यह उसका मूल प्रश्न है। इसके लिए वह तरह-तरह के काम आजमाकर देखती है। जब तक उसे पूरा समाधान नहीं होगा तब तक शायद इसी प्रकार वह आजमाती ही रहेगी।

टोमकोइरा हाथ से काम करना सीखना चाहता है। थोड़े ही दिनों में उसने मुझसे चर्खा चलाना सीख लिया है। उसे अलग-अलग लोगों के पास जाकर उनसे जीवन सम्बन्धी प्रश्नों को समझने में भी दिलचस्पी है। वह है तो पश्चिमी किनारे का छात्र, लेकिन कुछ दिनों के लिए पूर्वी किनारे आया है और यहाँ की तरह-तरह की शान्ति-प्रवृत्तियों में शामिल हो जाता है। चेहरे पर हमेशा हास्य है। कोई आदमी अपरिचित मालूम नहीं होता उसको।

वह लड़का जिसका मैं नाम भी नहीं पूछ पाया अभी हाईस्कूल पूरा करके आया है। कालेज-शिक्षा लेने का इरादा तो जरूर है, लेकिन माँ-बाप के पैसे से नहीं। मेस में काम करके पैसे कमा लेगा, फिर कालेज जायगा। एक दिन नाश्ते के समय मेरे पास बैठा था। युद्ध विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में विकासशील देशों के सम्बन्ध में हमारा जो प्रस्ताव था उसी के बारे में गहराई से चर्चा करता रहा।

हिप्पियों की बगावत

आटलाण्टा का हिप्पी मुहल्ला, यानी वह मुहल्ला जिसमें कई हिप्पी रहते हैं, जहाँ जाना 'सभ्य' लोग नापसन्द करते हैं। हाँ, कुछ सभ्य लोग मौज देखने के लिए वहाँ जरूर आ धमकते हैं। हिप्पियों की मदद करनेवाले एक दूकानदार की दूकान में किसी सभ्यता के संरक्षक ने बम विस्फोट कर दिया था। दूकान जल गयी थी। हिप्पी लोग एक सभा कर रहे थे, आगे के बारे में विचार करने के लिए। उनके चेहरे पर दुख था, क्रोध नहीं। लेकिन जीवन तो वे इसी प्रकार का जीयेंगे। मियाँ-बीबी और एक बच्चा गोद में है। बच्चे को सम्हालने का अनुभव नहीं है शायद, इस परिवार को। लेकिन उसकी परवाह नहीं। बच्चा परिस्थिति से सीखेगा। अपने शरीर पर अपना पूरा सामान तथा बच्चे को ढोकर स्थान-परिवर्तन कर रहे थे। हिप्पी लोग अपनी गैरकानूनी पत्रिका चलाते हैं। सड़कों के बीच खड़े रहकर आने जानेवाले लोगों को वे पत्रिका की प्रतियाँ बेचते हैं। 'बर्ड' नाम की इस पत्रिका की आजकल १६००० प्रतियाँ हाथोंहाथ बिकती हैं। किसी भी कालेज की हस्तलिखित पत्रिका-जैसे उसके रूप-रंग हैं। इन प्रतियों में अवैध करार देने लायक मुझे तो कुछ दीखता नहीं है; इससे कहीं अधिक गन्दी पत्रिकाएँ तो अमेरिका के आम 'स्टाल्स' में बिकती हैं। हिप्पियों पर एक आक्षेप है कि वे गांजा, चरस या उसी प्रकार के मादक द्रव्य सेवन करने के लिए ही हिप्पी बनते हैं। लेकिन यह कहना इतना ही सत्य है जितना यह कहना कि लोग मांस का सेवन करने के लिए ही विश्वनाथजी की नगरी काशी में जाते हैं। हाँ, यह सही है कि कई हिप्पी लोग जीवन के उद्देश्य को ढूँढ़ने का शार्टकट खोजने के लिए, या नया अनुभव लेने के लिए शौक से किसी-न-किसी रसायन का सेवन करते हैं। किन्तु इस प्रकार के 'ड्रग' तो हजारों ऐसे लोग भी लेते हैं जो हर हालत में हिप्पी नहीं हैं। मेरुआना के सेवन का प्रतिबन्ध हो जाने के कारण अधिक खतरनाक द्रव्यों का उपयोग शुरू हुआ है, ऐसा भी मैंने सुना। यह भी सही है कि कुछ लोग तो इस प्रकार का सेवन करने के लिए हिप्पी बन जाते हैं, उससे भी अधिक सही है कि कुछ द्रव्यों के व्यापार के लिए हिप्पियों का आंचल ओढ़ लेते हैं। इनसे पैसे लूट लेने के लिए भी कई बार अमेरिकन सभ्य समाज के लोग इन्हें मारते-पीटते या हत्या कर देते हैं। लेकिन मूल में हिप्पी सम्प्रदाय एक किस्म की बगावत है—मौजूदा समाज के खिलाफ बगावत। इसीसे उनकी वेशभूषा ऐसी बनी है। इनमें से कुछ लोगों ने तो अपनी सम्पत्ति समाज के लिए समर्पित कर रखी है। कुछ नये अनुभवों की खोज में देश-विदेश भटकते हैं। यह सही है कि इनमें से बहुत कम को अपना उद्देश्य मालूम हो सकता है। लेकिन वे ईमानदारी से इस बात को स्वीकार भी तो करते हैं। हममें से कितने लोगों को अपना उद्देश्य मालूम है, और हममें से कितने लोग अपनी उद्देश्य-शून्यता को ईमानदारी से कबूल करते हैं?

समाज के चालू मूल्यों का विरोध करने का एक प्रतीक जिस प्रकार बाल बढ़ाना या उन्हें अस्तव्यस्त रखना है, उसी प्रकार सभा-व्यवस्था के सामान्य नियमों को न मानना दूसरा प्रतीक है। मैंने ऐसी सभाएँ देखी हैं, जिनमें कोई अध्यक्ष न हो, जिनमें बैठनेवालों से अधिक

लोग लेटे हुए हों, जिनमें पुरुष और स्त्री वक्ता के सामने एक-दूसरे की गोद में बैठे हों या एक-दूसरे को चूम रहे हों, जिसमें कोई प्रस्ताव न होता हो, जिसमें भाषण के साथ-साथ खाना-पीना और फूंकना चलता हो। लेकिन यह स्वीकार करना होगा कि इन अराजकतावादी समाजों में चर्चाएं अच्छी ही चल रही थीं।

स्त्री-पुरुष सम्बन्ध

हमारा एक मित्र रास फ्लेनेगन वर्तमान समाज से इतना ऊब गया कि उसने जितना सम्भव हो कानून को तोड़ते जाने का निर्णय किया। इसलिए सड़क पर मोटर चलाते हुए यातायात के नियमों का उलंघन करके उसने अपना कानून भंग शुरू किया। छः महीनों तक उसका यह पागलपन टिका। उसमें न जाने कितनी बार जेल हो आया, न जाने कितनी बार जुर्माना भरा। पर अब वह इस अवस्था से बाहर निकल आया है, और अमेरिका के विभिन्न समाजों के सम्बन्ध सुधारने के लिए शिक्षा के प्रयोग कर रहा है।

आमतौर पर नये आनेवाले लोगों को, अमेरिका में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में इस पीढ़ी में जो अन्तर आया है, वह समझ में नहीं आयेगा। जो सुधारवादी नहीं है वे भी अपनी लड़कियां यदि १४-१५ साल की उम्र में लड़कों के साथ डेटिंग नहीं करतीं तो चिंतित हो जाते हैं। वे लड़कियों को शादी से पूर्व गर्भाधान से बचाने के लिए किशोरावस्था से ही उन्हें गर्भनिरोधक गोलियां देने लगते हैं। सुधारक नयी पीढ़ी जो कुछ भी करती है, छिपाकर नहीं करती, खुल्लमखुल्ला करती है। इसमें भी नाना प्रकार के प्रयोग आते हैं। मैं इन प्रयोगों को बहुत नजदीक से नहीं देख पाया। लेकिन लोगों से उसके बारे में कभी चर्चा अवश्य की। पश्चिमी किनारे पर एक जगह कहीं सामूहिक जीवन का प्रयोग चलता है। उस समूह में सब पुरुष सभी स्त्रियों के और सभी

(शेष पृष्ठ ४५५ पर)

परमाणु-आयुध और मानवीय संकट

● सन्तोष भारतीय

मौत का सबसे बड़ा सौदागर आज के विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका है। दुनिया में शायद ही कोई धन्धा इतना बड़ा और लाभदायक हो जितना शस्त्रास्त्र बेचना। दूसरे विश्व-युद्ध के बाद अमेरिका लगभग २० लाख राइफलें, १ लाख सब-मशीनगन, एक लाख लड़ाकू एवं बमवर्षक हवाई जहाज, २० हजार टैंक, ३० हजार मिसाइलें तथा २५०० पनडुब्बियां बेच चुका है।

रूस और अमेरिका शस्त्र बेचकर या शस्त्र जमाकर अपने आपको अप्रभावित आक्रमण की आशंका के लिए भरसक तैयार करते जा रहे हैं। जनवरी १९७१ में राष्ट्रपति निक्सन द्वारा अमेरिकी सिनेट के सम्मुख प्रस्तुत सुरक्षा-सम्बन्धी व्यय ७७.१ अरब डालर (५८१२५ करोड़ रुपये) के बराबर था। कुछ वर्षों में यह १०० अरब डालर हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। शस्त्रों की बढ़ती जा रही लागत से भी अधिक खतरनाक उनकी विनाश का ताण्डव नृत्य उपस्थित कर सकने की क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि होते चले जाना है।

जीवन समाप्त करना, महंगा तो होता जा रहा है, किन्तु उसी अनुपात में आसान भी बनता जा रहा है। युद्ध तो हमेशा हुए हैं। मानव इतिहास ही युद्धों का इतिहास है। बर्बरता के कभी न टूटनेवाले निर्मम सिलसिलों की क्रूर कहानी है। लेकिन पुराने युद्धों में एक सैनिक आमने-सामने की लड़ाई में एक बार में एक से अधिक आदमी को नहीं मार सकता था। फिर तोपों का जमाना आया जो एक साथ बीसों लोगों को यम-लोक भेजने लगीं। और हमारा युग हाइड्रोजन बम, जहरीली गैस तथा रासायनिक और जैविक युद्ध के नवीनतम तरीकों को जन्म दे रहा है। आज केवल एक व्यक्ति का निर्णय भरे-पूरे शहरों को भूमिसात् कर सकता है। एक ऐसी शृंखला आरम्भ कर सकता है जो सृष्टि से जीवन का नामोनिशान मिटा सकती है। मारने की क्षमता में भी "अति की अवस्था" आ चुकी है। रूस और अमेरिका अपने परमाणु-आयुधों से एक दूसरे को कई बार नष्ट कर सकते हैं। मिसाइल, एण्टीमिसाइल, एण्टी एण्टी मिसाइल, एण्टी एण्टी एण्टी मिसाइल, मौत का निमित्त बनने और विनाश का कुकर्म करने में एक दूसरे से बढ़चढ़कर कमाल दिखाने के लिए ईजाद की जा रही है।

एक अनुमान के अनुसार १९७५ तक अमेरिका के वर्तमान ४६०० आणविक प्रहार कर सकनेवाले केन्द्रों की संख्या ११००० हो जायगी। रूस के पास ऐसे २००० केन्द्र हैं। लेकिन संख्या की बजाय गुणात्मक श्रेष्ठता दोनों देशों के बीच होड़ बरकरार रखे हुए है।

अगर परमाणु युद्ध हुआ

परमाणु युद्ध क्या कभी होगा? और यदि दुर्भाग्य ने मानवता से पूरा बदला लेने की ठान ली तब उसके फलस्वरूप होनेवाले विनाश का कुछ अनुमान भी लगाया जा सकता है। विनाश का परिणाम सचमुच रोंगटे खड़े कर देता है। अमेरिका के रक्षा-विभाग द्वारा लगाये गये एक अनुमान के अनुसार यदि अमेरिका के ५० बड़े शहरों पर हाइड्रोजन बमों या अन्य परमाणु आयुधों से प्रहार किया गया तो लगभग ८ करोड़ ६० लाख लोग, कुल जनसंख्या का ४२ प्रतिशत, तुरन्त मर जायेंगे। अमेरिका की कुल औद्योगिक क्षमता का लगभग ५५ प्रतिशत एकदम नष्ट हो जायगा। अगर रूस पर इसी तरह प्रहार किया गया तो ४ करोड़ ६० लाख लोग, कुल जनसंख्या का २० प्रतिशत, तुरन्त प्राण खो बैठेंगे और उसकी

औद्योगिक क्षमता का ४० प्रतिशत नष्ट हो जायगा।

यदि इस युद्ध में विश्व के कई अन्य देश भी सम्मिलित हुए, जैसा कि अवश्यम्भावी है, तो क्या होगा? अगर युद्ध एशिया या अन्य घनी आबादीवाली जगहों पर छिड़ा तो विनाश कहाँ जाकर दम लेगा? वर्तमान में परमाणु-शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों के पास जितनी मात्रा में है उससे इस पृथ्वी पर सभ्यता और जीवन को चौदह बार नष्ट किया जा सकता है। लेकिन परमाणु आयुधों का भण्डार बढ़ाते चले जाने का पागलपन बरकरार है। मनोवैज्ञानिक भय महाशक्तियों को चैन नहीं लेने दे रहा है। सब अपनी क्षमता के बारे में अविश्वस्त से दिखाई देते हैं। गुणात्मक दृष्टि से रूस द्वारा परमाणु शक्ति में की गयी वृद्धि अमेरिका को खाये जा रही है।

जब क्यूबा का संकट अपने चरमोत्कर्ष पर था तब राष्ट्रपति कैनेडी ने सोवियत संघ को अन्तिम चेतावनी देते हुए कहा था—'क्यूबा से निकल जाओ, वरना''' तब का रूस आज का रूस नहीं था। इसलिए कुछ भयभीत अवश्य हो गया। लेकिन तभी एक रूसी राजनयिक यह कहते सुना गया था—'यह अन्तिम अवसर होगा जब तुम अमेरिकी हमारे साथ ऐसा कर सकोगे।' और आज रूस के शस्त्रागार में २५ मैगाटन क्षमतावाली ३०० एस० एस० १ मिसाइलें मौजूद हैं जो अमेरिका ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व पर प्रहार कर सकती हैं। इस मौत की होड़ की दम्भ की कोई नन्ही-सी चिनगारी भी वास्तविकता में परिणत कर सकती है और मानवता का सबसे बड़ा अहित मनुष्य द्वारा ही हो सकता है।

लगता है मारने की क्षमता में अति भी पर्याप्त नहीं है। विश्व को ५० बार नष्ट करना भी कम है। तभी तो विश्व के अधिकांश राष्ट्र अपने शस्त्रागारों में नये-नये हथियार जमा करते जा रहे हैं। इस विश्व के ३ अरब ६० करोड़ लोगों में से प्रत्येक के लिए लगभग १० टन विस्फोटक मौत की अमानत बनकर प्रतीक्षा कर रहे हैं। परमाणु हथियारों का परिमाण ५०,००० मेगाटन से भी अधिक जा पहुँचा है। इस विस्फोटक क्षमता से हर स्त्री-पुरुष एवं बच्चे को एक नहीं चौदह बार मारा जा सकता है। एक वैज्ञानिक डा० पालिंग का तो यह अनुमान है कि परमाणु अस्त्रों के वर्तमान स्तर से प्रत्येक व्यक्ति को १५० बार मारा जा सकता है। लेकिन मारने की इस गति का अर्थ क्या है? क्या किसी को एक बार से अधिक भी मारा जा सकता है?

क्यू में लगे राष्ट्र

पाँच परमाणु-शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों के अलावा सात अन्य राष्ट्र—कनाडा, भारत, इसराइल, जापान, स्वीडेन, स्विटजरलैण्ड, तथा प० जर्मनी बहुत ही कम समय में परमाणु आयुध तैयार कर सकते हैं। भारत के लिए चीन के परमाणु-शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र बन जाने तथा पाकिस्तान द्वारा ब्लैकमेल करने की सम्भावनाओं के कारण परमाणु हथियार तैयार करना अनिवार्य बन गया है। शान्तिवादी शक्तियाँ कब तक इस माँग का मुकाबला करेंगी कहा नहीं जा सकता। वर्तमान सरकारी नीति को देश की सुरक्षा की दृष्टि से कुछ ही समय में बदलना होगा। क्योंकि लाठी से बन्दूकवाले का मुकाबिला नहीं किया जा सकता। या तो विश्व के सभी परमाणु-शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों को अपने-अपने आयुधों को नष्ट करने या उनका शान्ति-कालीन उपयोग करने का कोई मार्ग ढूँढ निकालने के लिए एकमत होना चाहिए, अन्यथा अपनी रक्षा-व्यवस्था मजबूत करने के उद्देश्य से परमाणु-शक्ति-सम्पन्न बननेवाले राष्ट्रों की संख्या बढ़ना अवश्यम्भावी है। १९८० तक आज के अणुशक्तिहीन राष्ट्रों के पास इतना प्लूटोनियम उपलब्ध होने लगेगा कि वे प्रति सप्ताह १०० अणुबम बनाने की स्थिति में पहुँच पायेंगे।

सृष्टि का विनाश करने पर आमादा इस पीढ़ी के कुछ सिरफिरे लोगों के लिए परमाणु हथियार तो कई तरीकों में से केवल एक है। अगर एक जीवित तत्व बोट्यूलिन्स को समुद्र तथा नदियों में मिला दिया जाय तो सारी मानवता केवल ६ घण्टों में नष्ट हो सकती है। अगर जहरीले रसायनों का छिड़काव करने के लिए केवल १० वायुयानों का प्रयोग किया जाय तो अमेरिका की कुल आबादी का ३० प्रतिशत को नष्ट किया जा सकता है।

विनाश के विभिन्न उपकरणों से दबा हुआ विश्व कराह रहा है। मानवता आज जितनी असहाय और निरुपाय है उतनी कभी न थी। कौन कह सकता है, मौत का यह ज्वालामुखी कब और कहाँ फट पड़े और हजारों-लाखों वर्षों से सजाई-सँवारी और तराशी गयी मानव सभ्यता पलक गिरते अतीत का अध्याय बनकर रह जाय!

यदि विश्व को परमाणु युद्ध के सर्वनाश से बचाना है तो शीघ्र ही कुछ करने की आवश्यकता है। मदान्ध राजनीतिज्ञ विज्ञान के आज्ञाकारी अश्व पर सवार होकर अमन और खुशहाली को उसकी टापों तले रौंद रहे हैं। इसका तब तक कोई निदान नहीं है, जब तक सभी परमाणु-शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र सद्बुद्धि से प्रेरित होकर अणु आयुधों को नष्ट करने का निष्ठापूर्वक वचन न ले लें। लेकिन सद्बुद्धि का वह नौ मन तेल कभी जुट पायेगा और प्रगति एवं शान्ति की राधा कभी मुक्त नृत्य कर पायेगी, इसमें न केवल सन्देह है अपितु अविश्वास की ही पूरी सम्भावना है। ●

हुए बगैर रहेगा नहीं। दारिद्रयग्रस्त लोग यदि चीन के आकर्षण-कक्षा में आ जायेंगे तो दोष इन अनजान गढ़वालियों का मानना चाहिए या सरकारी अदूरदर्शी दृष्टि था ?

इसलिए सबसे पहले शराब का जी-जान से विरोध करने और कानून के लिए सत्याग्रह करने के लिए सर्वोदय के लोग १९६७ से उत्तराखण्ड में अलग-अलग जगहों पर आगे बढ़ने लगे। स्त्रियों और विद्यार्थियों की मदद से उन्होंने कई जगहों की शराब की दूकानें बन्द करायीं। १९७० में बड़े पैमाने पर टिहरी और आसपास के शहरों में मोर्चा, सत्याग्रह आदि के जरिये, कारागृह में सजा भुगतकर सात जिलों में से पाँच जिलों में शराबबन्दी लागू करवायी। स्त्रियों में नया जागरण आया। तरुणों में उत्साह आया। सामान्य लोग एक होकर, शान्तिपूर्ण रीति से सरकार का रुख सही राह पर ला सकते हैं इसका एक नया विश्वास लोगों में आया। दुर्घटनाओं की संख्या घट गयी। गरीब मनुष्यों के पास कुछ पैसे जमा होने लगे। लेकिन यह भी मान लेना होगा कि टिहरी जैसे शहर में टिंचर-जिंजर और आयुर्वेदिक दवा के नाम पर 'सुरा' बढ़ते दामों पर बेची जाने लगी। शहर के लोग शराबबन्दी को विफलता अपने प्रयत्नों से साबित करने लगे और देहातों में कुछ ने कच्ची-शराब का ग्रामोद्योग भी शुरू किया। इन आघातों का दर्द बढ़ानेवाला फैसला इलाहाबाद हाईकोर्ट ने १९७१ के शुरू में दिया और शराबबन्दी कानून को अवैध घोषित कर दिया। यह कानून मानव के मूलभूत अधिकारों पर आक्रमण घोषित हुआ।

श्री सुन्दरलाल बहुगुणा ने लोक-जागृति और निर्भयता के आवाहन के लिए अनिश्चित काल तक उपवास का निर्णय लिया। उनके दिल की वेदना और प्रार्थना उपवास के रूप में प्रकट हुई। ८ नवम्बर '७१ को। टिहरी के मोटर अड्डे के नजदीक शराब की दूकान के सामने एक कोने में यह जागरण-यज्ञ शुरू हुआ और पहाड़ में जागृति की लहर दौड़ गयी। सैकड़ों स्त्री-पुरुष टिहरी के आस-पास से, उत्तर काशी से, चमोली की तरफ से जत्थों में टिहरी आने लगे। 'पहाड़ के लोगों टिहरी चलो'—यह उनका नारा था। सबमें उत्साह संचार करने लगा। १४ दिनों के उपवास के बाद सुन्दरलालजी ने नींबू, शहद और पानी लिया।

अब लोक-जागृति का कार्य जोरों से चलाना होगा। इसके बारे में दो मत तो हो ही नहीं सकते। कानून की यशस्विता के बारे में सशंक होने के कारण और उपवास के प्रयोजन के बारे में सचेत रहने के कारण मैंने सुन्दरलालजी को इनके बारे में पूछा था। उनका जवाब सबको सोचने के लिए मजबूर करेगा। "शराब केवल कानून से बन्द नहीं होगी यह सही है। शिक्षण के माध्यम से ही शराब की प्रतिष्ठा जन-जीवन में से हटती चली जायेगी। लोगों को निर्भयता का उदाहरण देखने को मिले, लोकसत्ता में सत्याग्रह का यानी जिम्मेदारी से और शान्ति से विरोध करने का—महत्त्व लोगों के मन में पैठे इसलिए आन्दोलन का और उपवास का मार्ग अपनाने की प्रेरणा हुई। यहाँ जो यश मिला उससे बाकी प्रान्तों में भी समाज-सेवकों को बल मिलेगा, यह उम्मीद है। तमिलनाडु और महाराष्ट्र में यह हो सकता है। स्त्री-जागृति का कार्य तो यहाँ अनायास ही हो सका। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन को इस यश से काफी मदद मिलेगी, यह जाहिर है।

"जनता के कल्याण के लिए न्यायोचित माँगें अहिंसक आन्दोलनों की मार्फत अब तक आजादी के बाद शायद ही पेश की गयीं। आचार्य विनोबा के आन्दोलन का अपवाद छोड़ दें तो किसी राजनैतिक दल ने यह हिम्मत की नहीं। सब तरफ हिंसा का आधार लेकर, जन-जीवन को आन्दोलित करके ही सरकार का ध्यान अन्याय की तरफ खींचा जाता है। अब पहाड़ों में लोग शिक्षित होने लगे हैं। जंगल के जड़ी-बूटियों के ठेकेदार जनता की धार्मिक भावना का लाभ उठानेवाले, उनको ठगनेवाले शोषक, अब अप्रिय होने लगे हैं।

श्री सुन्दरलाल बहुगुणा : उपवास काल में क्रियाशील

स्वतंत्र राज्य की माँग, युनिवर्सिटी की माँग आज शिक्षितों में जड़ पकड़ने लगी है। इन न्यायपूर्ण माँगों का रूप आपस के झगड़ों में, हिंसक आन्दोलनों में बदल न जाय इसके लिए कौन-सा राजनैतिक दल या सामाजिक संस्था प्रयत्नशील है? पहाड़ों में तरुण नक्सलवादी वृत्ति के शिकार होने लगे तो आश्चर्य कौन सा? इन सबके सामने अहिंसक, शक्तिशाली लेकिन शान्तिपूर्ण तरीका, पेश करना आवश्यक था। इसलिए यह आन्दोलन और उपवास शुरू करना पड़ा। जान की बाजी लगाकर इस आन्दोलन को शान्तिमय रखा गया। हिमालय की शान्ति और तपस्या, परम्परा तथा संस्कृति, इनके योग्य यहाँ का आन्दोलन हो इसलिए यह प्रयास था।

उत्तराखण्ड के लिए ही नहीं, सारे भारत के लिए ही सुन्दरलालजी के विचार और कृति महत्त्वपूर्ण हैं। सब विचारकों को, समाज-सेवकों को, वे उद्बोधनकारक साबित होंगे। सर्वोदय के लोग अपनी तरफ से जन-जागृति और शिक्षण का कार्य ग्राम-स्वराज्य और स्वावलम्बन की दिशाओं में करते रहेंगे, लेकिन उनकी मदद सारे विचारक और नेता भी करेंगे तो एक नयी राह खुल जायेगी।●

ग्रामस्वराज्य के मोर्चे से

३० मार्च

मित्रों से चर्चा हुई। जो उपस्थित थे उनमें से एक के गाँव का कुछ दिन हुए ग्रामदान हुआ। वह उत्साह और आत्म-विश्वास के साथ बोल रहे थे। अन्य लोगों के मुँह से यही निकल रहा था: 'क्या होगा, कैसे होगा?'

कोई आदमी प्रचलित प्रवाह से अलग रहकर अपनी निष्ठाओं में कितना अडिग रह सकता है इसका एक नमूना आज देखने को मिला। कितने पिता हैं जो अपने इलेक्ट्रिकल इंजिनियर लड़के को छोड़ देने की सलाह देंगे सिर्फ इसलिए कि उसके अफसर उससे घूस माँगते थे, और उसके मातहत उससे घूस लेने की छूट चाहते थे? लेकिन ईमानदारी के लिए भी कुछ आर्थिक आधार तो चाहिए! जिसके पेट का भी ठिकाना न हो वह ईमानदारी बेईमानी के बीच की रेखा कैसे पहचानेगा?

३१ मार्च

बड़े मालिक हमारी सभाओं में क्यों नहीं आते? शायद उनके मन में यह भय रहता है कि ग्रामदान की सभा में जायेंगे तो जमीन देनी पड़ेगी। जो मालिक सरकार की आँखों में धूल झोंककर सैकड़ों बीघे भूमि का मालिक बना हुआ है वह ग्रामदान शब्द से डरता है। वस्तुतः वे कहीं अधिक विचार का भय होता है। एक बड़े मालिक ने मुझसे साफ-साफ कहा: 'आप ग्रामदान का नाम लेते हैं तो दिल पर छुरी चल जाती है।' यह हालत तब है जब हम छुरी पर कार्य-कर्ता 'बीघे में कट्ठा, दान दो कट्ठा' कहते रह रहे हैं। 'बीघे में कट्ठा, भोग हो दस कट्ठा' की आवाज जब लाखों कण्ठ से एक साथ निकलेगी तब क्या हाल होगा? अब समय आ गया है कि 'भोग हो दस कट्ठा' का प्रयोग किया जाय।

१ अप्रैल

दो मुखिया सभा में साथ बैठे थे। सभा समाप्त होने पर, जो युवक था, वह तरह-तरह के सवाल प्रस्तुत करता रहा। जो वृद्ध था वह कह रहा था 'यह काम तो होना ही चाहिए।' युवक सत्ता की सीढ़ियों पर चढ़ने को लालायित है, वृद्ध ने दुनिया देखी है, और वह वास्तविकता को समझता है।

२ अप्रैल

यह बैरेज की 'कालोनी' है। सर-कारी कर्मचारी तो रहते ही हैं, बहुत-से लोग दूसरे जिलों से आकर बस गये हैं, दूसरे राज्यों के भी कुछ लोग हैं। जहाँ कहीं नहर, बाँध, या बैरेज से नयी जमीन निकलती है वहाँ जगह-जगह से आये हुए लोगों के इसी तरह के उपनिवेश बस गये हैं। जिसके हाथ जितनी जमीन लगी, खरीदकर या लाठी के बल पर, उसने उतनी जमीन पर कब्जा कर रखा है। खेती, व्यापार, सूदखोरी, यही धन्धा इन जगहों में चलता है। बाहर से आये हुए लोगों को स्थानीय जीवन में बहुत कम रुचि होती है; उनकी मुख्य चिन्ता यह रहती है कि कमाकर जितना ज्यादा घर पर भेजा जाय। इसलिए वे बच्चों के लिए स्कूल की बातें करते हैं, सफाई, रोशनी, शान्ति और सुव्यवस्था के लिए चिन्ता प्रकट करते हैं, लेकिन ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की बातें उन्हें नहीं सूझीं।

३ अप्रैल

'कामत' यानी 'ऐबसेण्टी लैण्डला-र्डिज्म'। जमीन का मालिक रहता कहीं है और खेती कहीं करता है। इस तरह की कामत खेती जितनी अधिक है, और एक-एक मालिक के पास कितनी-कितनी जमीन है, इसका पता यहीं आने से चलता है। कामतदार को अपनी खेती से मतलब रहता है, उस गाँव से उसे मतलब कम रहता है जिसमें उसकी खेती होती है, लेकिन उसे यह भय तो रहता ही है कि अनाज ले जाते समय हजार भरवरमरी निगाहें उसे देखती हैं। आमतौर पर कामतदारों का आकर्षण ग्रामदान या बीघा-कट्ठा की ओर नहीं है। लेकिन 'कामत' यहाँ की भूमि व्यवस्था की एक मुख्य चीज है।

४ अप्रैल

साथियों के प्रयास से गाँव का बरसों पुराना झगड़ा तय हुआ। जो कल तक एक दूसरे के दुश्मन थे वे आज गले मिले, साथ खाना खाया, आँखों से आँसू बहाये। तय हुआ कि सब मिलकर बीघा-कट्ठा निकालेंगे, बाँटेंगे, गाँव में ग्रामदान की व्यवस्था लागू करेंगे। शाम को सभा हुई। मुखियाजी सभापति थे। मेरा भाषण हुआ। लेकिन भूमि वितरण एक बार, दो बार, तीन बार कहा गया। क्यों कोई सामने आये? किसी एक व्यक्ति ने भी अपने बीघे-कट्ठे की घोषणा नहीं की। वे युवक भी आगे नहीं बढ़े जो कहते थे, 'हम यह करेंगे, हम वह करेंगे।' क्या करते बेचारे, बड़े-बूढ़ों ने कान ऐंठ दिया होगा। झगड़ा भी गाँव के बड़े लोगों के बीच था। झगड़ा तय हुआ तो वे बरबादी से बचे, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं होता कि उन्हें भूमिहीनों के प्रति रुख बदल देना चाहिए और उनके लिए बीघा-कट्ठा भूमि निकालनी चाहिए। मालिक आपस में लड़ें या मेल से रहें, लेकिन भूमिहीन को तो भूमिहीन ही रहना चाहिए; यह उनका दर्शन है। इसी दर्शन से खेती चलती है, कैसे बदले यह दर्शन?

५ अप्रैल

दरवाजे पर हाथी है, जीप है, ट्रैक्टर है, कमरे में बाघ और हिरन की खालें बिछी हुई हैं, और बन्दूक खोल-कर रखा हुआ है। लड़का कालेज में→

चम्बल की घाटी : समस्या के मूलभूत कारण

• प्रो० गुरुशरण

क्षेत्र की स्थिति

चम्बल नदी विन्ध्याचल की शृंखलाओं से चलकर उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में यमुना नदी में आकर मिलती है। इसका पानी शीशे की तरह साफ होने के साथ-साथ वैसा ही पैना भी है। ६० से ९० हाथ तक नीचे गहराई पर यहाँ के कुँओं में पानी पाया जाता है जो खनिज पदार्थ युक्त होने से बलवर्द्धक है। इसके पानी ने किनारे की आठ हजार से अधिक वर्ग-मील भूमि को काटकर बेहड़ में परिवर्तित कर दिया है जो ऊबड़-खाबड़ ऊँचे टीले जैसे दिखते हैं वैसे ही जमीन के नीचे भी कई फुट तक है। यह जमीन सतत कटती ही जा रही है और कृषि योग्य भूमि को निरन्तर बेहड़ बनाती जा रही है। यह नदी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान, तीन राज्यों की सीमा को छूती हुई बहती है जिसके फलस्वरूप मथुरा, मैनपुरी, एटा, आगरा, इटावा, हमीरपुर, उरइ, झाँसी, ललितपुर उत्तर प्रदेश में और भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर, दतिया, शिवपुरी, गुना, छतरपुर, टीकमगढ़ मध्य प्रदेश में तथा धौलपुर (भरतपुर) सवाई माधोपुर आदि जिले राजस्थान के इस समस्या से पीड़ित हैं। इन सब जिलों की जनसंख्या लगभग सवा करोड़ मानी जाती है। यातायात और आवागमन के साधनों का नितान्त अभाव है। नदियों पर पुल नहीं, सड़कें नहीं, आठ-आठ मील तक बच्चों के पढ़ने के लिए प्राइमरी स्कूल तक नहीं। उद्योग-धन्धों का नितान्त अभाव। बड़े या छोटे कोई उद्योग इस क्षेत्र में नहीं हैं। बस दो ही मुख्य काम हैं—सेना में भर्ती होना या फिर बेहड़ हांग में जाकर बागी हो जाना। औसत भूमि प्रति व्यक्ति ५ बिस्वा भी नहीं आती और जनसंख्या अन्य क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक तीव्र गति से बढ़ रही है। चम्बल का तटीय क्षेत्र जिस तरह बेहड़ों का है उसी तरह ललितपुर, चमोली, शिवपुरी, श्योपुर आदि का बयाबान पहाड़ी जंगल डाग कहलाता है। मीलों तक ठूँठ ही ठूँठ, पानी का कहीं ठिकाना नहीं। खैर, बेरिया, रेमझा, होम्स, हिंगोट आदि के छोटे-छोटे पेड़ पाये जाते हैं। यह भूमि कंकरीली तथा पथरीली होने से कृषि योग्य नहीं है। कहीं-कहीं थोड़ी-थोड़ी जमीन साफ करके लोग खेती की व्यवस्था करते भी हैं तो उस फसल को जंगली जानवर नहीं बचने देते। पत्थरों की बाड़ बनानी पड़ती है जिसे इस क्षेत्र में कोटरा कहा जाता है। हाँ, एक बात अवश्य है कि घर में चाहे खाने का न हो पर बन्दूक जरूर पायी जाती है। कुछ के बाकायदा लाइसेन्स भी हैं और शेष फौजी सम्बन्धियों द्वारा प्रदत्त हैं या फिर पता *नहीं कहाँ से प्राप्त कर ली गयी हैं।* डेढ़ हजार रुपये की बन्दूक खरीदने की इस क्षेत्र में शौक है पर उतनी कीमत के पशु खरीदकर खेती करने या दूध-घी का व्यवसाय करने में अपेक्षाकृत कम रुचि है।

क्षेत्र के लोग

यहाँ के लोगों पर क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति का पूरा असर पाया जाता है। *उनकी मनोवृत्ति कठोर और हर समय* मूंछ पर हाथ बना रहता है। निकृष्ट प्रकार का जातिवाद प्रचलित है। ऊँची जातियों के लोग खेती करने में अपनी हीनता अनुभव करते हैं। जनरल टाड की पुस्तक में यहाँ के लोगों का वर्णन है कि यह क्षेत्र एक ओर तो तत्कालीन मुस्लिम शासकों की सीमा से लगा हुआ उनकी चिन्ता का कारण रहा और बाद में ब्रिटिश इण्डिया से लगा होने के कारण उत्पाती लोगों के छिपने का स्थान बना रहा। इनको प्रामाणिक रूप से पिण्डारियों, लुटेरों और ठगों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, पर इतना अवश्य है कि अप-राध करके इस क्षेत्र में छिपे रहने की बहुत सुविधाएँ हैं। इस क्षेत्र में आज भी गढ़ी (छोटे किले) और उनके निकट गड़ी हुई तोपें पायी जाती हैं। अभी भी बड़े-बड़े गोले पड़े हुए हैं। गूजर, परमार, बुन्देल, जाट और राजपूत प्रमुख लड़ाकू जातियों के रूप में आपस में लड़-लड़कर राज्य बनाते-बिगाड़ते रहे। गाँव गाँव की चौपाल पर आल्हा-ऊदल के गीत गाये जाते रहे —

→पड़ता है। लेकिन घर के मालिक, जो गाँव के मुखिया हैं : 'कहने लगे, मैं तो भूमिहीन हूँ, मैं क्या दे सकता हूँ?' विलक्षण है यह भूमिहीनता जिसमें इतना वैभव है! मैंने पूछा : 'क्या आप सचमुच भूमिहीन हैं?' बोले : 'मेरे पास सिर्फ दस बीघा है। लड़के के पास, उसकी माँ, बहन आदि सबके पास अपनी-अपनी अलग जमीन है। वे ही उसके मालिक हैं।

यह व्यवस्था सीलिंग के नये कानून से बचने के लिए की गयी है। कितना बढ़िया भूमि-वितरण किया गया है! सरकार डाल डाल, मालिक पात पात। अगर कोई मालिक बीघा-कट्ठा देने के लिए राजी भी होता है तो कहता है : 'मेरे जिम्मे जितनी जमीन है उसका बीघा-कट्ठा ले लीजिये।' परिवार में भूमि है २ सौ बीघा और बीघा-कट्ठा मिल रहा है १० बीघे पर! कैसे समझाया जाय लड़के को, उसकी बहन और उसकी माँ को? ये सब ग्रामदान की पहुँच के बाहर हो गये हैं।

कानून न खुद जमीन निकाल पा रहा है और न ग्रामदान को निकालने दे रहा है। इस नयी परिस्थिति में हमें नये ढंग से सोचना पड़ेगा। भूमि के प्रश्न पर हमें अपना स्टैण्ड तय कर लेना चाहिए। 'गरीबी हटाओ' के लिए बनाया जानेवाला कानून बड़े मालिकों का संरक्षक बन गया है। —राममूर्ति

बड़े लड़ैया महुवे बारे
छपक छपक बाजे तलवार

जिस तरह ढाक में हूँठ की जड़ें गहरी है उसी तरह यहाँ के निवासियों के मन में बैर-विरोध की भावनाएँ पीढ़ी दर पीढ़ी तक चलती ही रहती हैं। वीरता का बाहुल्य अज्ञान के कारण क्रूरता में परिवर्तित हो रहा है। यदि इनकी वीरता का सदुपयोग किया जा सके तो ऐसे बहादुर अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इनके मन में बदला लेने की भावना इनको क्रूर बनाये हुए है। कहा करते हैं—

जाके बैरी सुख से जीवे
ताके जीवन को धिक्कार

यहाँ के लोगों में सभी प्रकार की जातियों के लोग पाये जाते हैं और वर्तमान समय में हर जाति के डाकू भी हैं, क्योंकि जिस जाति में नहीं थे उनकी शान घटने न पाये इसलिए उन छोटी-छोटी नीच मानी जाने वाली जातियों में भी आज डाकू हैं। एक विशेषता अवश्य है कि एक गाँव में किसी एक जाति के लोग अधिक रहते हैं और वे अल्पसंख्यक दूसरी जाति के लोगों को अपने जूते के तले दबाकर रखना चाहते हैं—

सवाई माधोपुर व करौली में धाकरे, परिहार और जाधव, आगरा के बाह क्षेत्र में भदौरिया व राठौर, भरतपुर धौलपुर में जाट व गूजर, बूँदी कोटा में बुन्देला व धाकरे, मुरैना तवरघार में सिकरवार, गुर्जर, तोमर जाधव, भिण्ड भदावर में कुशवाहा और भदौरिया, इटावा मैनपुरी में चौहान, भदौरिया व राठौर, दतिया में बुन्देला; ग्वालियर में गुर्जर, अहीर।

उपरोक्त जातियाँ हुकूमत करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानती हैं, पर स्वतंत्रोपरान्त भारत में स्थिति बदली है और बनिया, चमार, कोली, काछी, धोबी, धानुक, खटीक, गड़रिया आदि सभी अन्य जातियों में भी अधिकार-भावना दिनोंदिन बढ़ी है। चुनावों के समय यह रूप उभरकर स्पष्ट हो उठता है। विशेषकर ब्राह्मणों की टक्कर रहती है।

डाकू क्यों बनते हैं?

डाकू बनने के प्रधान कारण हैं कृषि-भूमि तथा उद्योगों का अभाव, दूसरे यहाँ के बेहड़ और ढंग में छिपने की सुविधा; तीसरे पचास हजार बन्दूकों का होना। मामूली-सी बात पर भी बन्दूकें तन जाती हैं। एक मरा तो दूसरा बागी बन जाता है, चौथे विशिष्ट पुलिस के हर समय पड़े रहने से भय और आतंक का वातावरण, पाँचवें जाति-व्यवस्था, छठे राजनैतिक दलगत शोषण व पार्टीबन्दी, सातवें आये दिन जमीन के झगड़े, आठवें पुलिस को उत्पीड़न, नवें शिक्षा का अभाव, दसवें यातायात और आवागमन के साधनों का न होना; ग्यारहवें धीरे-धीरे डाकूगीरी का एक सुसंगठित व्यावसायिक रूप ले लेना, जिसके साथ अनेक सफेदपोश लोगों के स्वार्थ जुड़े रहते हैं। ऐसे कुछ कारण हैं जिन्होंने इस समस्या को जटिल से जटिलतर बना दिया है। समय रहते इसका सही निदान नहीं हुआ तो इसके जटिलतम होते जाने की सम्भावनाएँ बढ़ती ही जा रही हैं। सभी दृष्टियों से इसकी जड़ें खोदी जायें और परस्पर प्रेम, निर्भयता और निर्वैरता का वातावरण बने। यहाँ के बेहड़ों के बीच के नालों को रोककर जगह-जगह बाँध बाँधे जाने के कारण यह कृषि की अपार भूमि कृषि योग्य बनकर इस क्षेत्र के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। कृषि के साथ-साथ कृषि से सम्बन्धित तथा अन्य उद्योगों की व्यवस्था भी यहाँ की बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए अत्यन्त आवश्यक है जिससे यह नरक स्वर्ग में बदल सकता है। प्रसिद्ध विचारक गारफील्ड का कथन है—"संसार की कोई भी चीज तभी बदलती है जब कोई बदलने वाला हो।"

डाकुओं का आत्मसमर्पण

विनोबाजी को पहले पत्र लिखा था तहसीलदार सिंह ने नैनी सेन्ट्रल जेल से कि फाँसी लगने के पहले आपके दर्शन करना चाहता हूँ। विनोबाजी की यात्रा उन दिनों कश्मीर में चल रही थी। वे यात्रा छोड़कर तो आ नहीं सकते थे। उन्होंने भेजा था मेजर जनरल यदुनाथ सिंह को जो चम्बल क्षेत्र के ही मूल निवासी थे और तत्कालीन राष्ट्रपति के सैनिक सचिव थे। उनके प्रयत्नों से तहसीलदार सिंह की फाँसी की सजा आजन्म कारावास में बदल गयी। दस्युराज मानसिंह ने अपने इस आखिरी बेटे को बचाने के लिए क्या कुछ नहीं किया? गवाहों को नेस्तनाबूद कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय तक मुकदमा लड़ा। पानी की तरह पैसा बहाया और इस धुन में एक

तहसीलदार सिंह (बायें) और लोकमन : डाकू-समस्या पर चर्चा करते हुए

साल के भीतर ही पुलिस मुठभेड़ के शिकार हुए। बदले से नहीं बल्कि मानवीय करुणा के प्रभाव से १२ फरवरी, '७२ को तहसीलदार सिंह को बरेली जेल से आजीवन कारावास की सजा पूरी होने पर मुक्त कर दिया गया।

तहसीलदार सिंह और लोकमन उर्फ लुक्का सहपाठी थे एवं गहरे दोस्त थे। यह दोस्ती ही लोकमन को मानसिंह गैंग में ले गयी थी जबकि उसके काका को पुलिस के सिपाहियों ने नदी में डुबो-डुबो कर मार दिया था। लोकमन पर तहसीलदार सिंह का बहुत असर था और अब रूपा के मारे जाने पर लोकमन ही गैंग-लीडर था। अतः तहसीलदारसिंह की चिट्ठी और मेजर जनरल यदुनाथसिंह के सतत् सम्पर्क से १९ मई, १९६० को विनोबाजी की पद-यात्रा के कदौरा पड़ाव पर लोकमन ने अपने साथियों सहित आत्म-समर्पण कर दिया।

लोकमन तथा उनके साथियों पर मुकदमे चले और सभी अपनी सजाएँ काट कर जब सभ्य नागरिक का जीवन बिताने लगे तो माधोसिंह के मन में भी आत्म-समर्पण का विचार आया और उसने समाचारपत्रों के माध्यम से पहले तो शासन से अपील की कि उसे क्षमादान देकर पाकिस्तान की सीमा पर हो रहे युद्ध में भेज दिया जाय। पर वह सब एक मजाक माना जाता रहा। उसने विनोबाजी को पत्र लिखा। कुछ उत्तर न पाकर अपने दो व्यक्तियों को परधाम आश्रम, पवनार, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) भेजा, जहाँ आजकल विनोबाजी रहकर अपनी सूक्ष्म साधना कर रहे हैं। विनोबाजी ने अपनी असमर्थता बताते हुए कहा कि श्री जयप्रकाश नारायण से बात करो। उन दिनों वे वहीं थे। अतः माधोसिंह के दोनों दूतों ने श्री जयप्रकाश नारायण के समक्ष अपनी प्रार्थना रखी। उनका स्पष्ट उत्तर था कि आप लोग विनोबाजी से मिलने आये हो, मुझसे बात करनी हो तो सोखोदेवरा जिला गया (बिहार) में आओ। उनका सोचना था कि यदि कुछ तथ्य होगा तो देखा जायगा।

ये दोनों दूत एक दिन सोखोदेवरा भी पहुँच गये। तब श्री जयप्रकाश नारायणजी द्रवित हो उठे और उन्होंने उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के मुख्य मन्त्रियों से वार्ता करने का वचन दिया। तीनों मुख्यमन्त्रियों को पत्र लिखे गये। श्री कमलापति त्रिपाठी मुख्यमन्त्री उत्तर-प्रदेश ने बहुत उत्साह दिखाया और हर तरह की मदद करने का पूरा पूरा आश्वासन दिया।

सर्व सेवा संघ के भोपाल अधिवेशन के समय तय हुआ कि कुछ कार्यकर्ता डाकुओं से सम्पर्क का काम उठायें। श्री महावीर सिंह, श्री हेमदेव शर्मा और श्री चरन सिंह और श्री रामगोपाल दीक्षित को यह जिम्मेदारी सौंपी गयी। राजस्थान के मुख्यमंत्री को पत्र लिखा गया। श्री जयप्रकाश नारायण ने चम्बल घाटी के समस्त बागियों के नाम एक अपील प्रसारित की।

दिल्ली में चर्चाएँ हुईं। श्री कृष्णचन्द्र पंत राज्य-गृहमन्त्री ने बहुत दिलचस्पी प्रकट की। गृहसचिव श्री गोविन्द नारायण की अनुकूलता रही। २ अप्रैल, '७२ को दिल्ली में तीनों मुख्यमन्त्रियों को अन्तिम चर्चा के लिए आमन्त्रित किया गया। इसमें मध्य प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री प्रकाशचन्द्र सेठी, राजस्थान के मुख्यमन्त्री श्री बरकतउल्ला खाँ और उत्तर प्रदेश के प्रतिनिधि के रूप में उप-गृहमन्त्री श्री रामकृष्ण द्विवेदी ने भाग लिया और चर्चाएँ अनुकूल रहीं।

सर्वोदय कार्यकर्ताओं को मध्य प्रदेश इन्सपेक्टर जनरल पुलिस के हस्ताक्षरों के परिचय पत्र दिये गये और उन्होंने भूतपूर्व बागी लोकमन, तहसीलदार सिंह, तेजसिंह और हरेलाल को साथ लेकर चम्बल के बेहड़-बेहड़ में फैले गिरोहों से सम्पर्क किया। उनके रिश्तेदारों से उन पर जोर डलवाया और सम्भावना धीरे-धीरे बढ़ती ही गयी। ऐसा लगने लगा कि १२ साल के एक युग के बाद फिर प्रकाश की किरण फूटनेवाली है।

सम्पर्क का काम बहुत जटिल था। डाकुओं को खबर भेजने के बाद जब वे बुलायें तभी उनसे शुरू शुरू में मिला जा सकता था। सबसे बड़ा सवाल विश्वास उत्पन्न करने का था। धीरे-धीरे विश्वास बढ़ता गया। तहसीलसिंह लोकमन का डाकू-जीवन का शिष्य रहा था। वह मोहर सिंह को तैयार करने में माध्यम बना। मोहरसिंह अकेले का गैंग तीन टुकड़ियों में विभक्त है। सभी स्वतंत्र रूप से काम करती हैं और नाम मोहर सिंह का लेती हैं। इनकी संख्या १०० से अधिक है। मोहर सिंह का तैयार हो जाना अभियान की एक बड़ी सफलता कही जा सकती है। अब आठ बड़े बड़े दलों के लगभग २५० डाकुओं के आत्म-समर्पण की सम्भावना है।

आत्म-समर्पणकारियों का कहना है कि उन्हें फाँसी न दी जाय। यदि न्यायालय से फाँसी की सजा सुनायी जाय तो राष्ट्रपति उन्हें तहसीलदार सिंह की तरह बदला हुआ जीवन जीने की सहूलियत प्रदान करें। इनके मुकदमें एक जगह चलें। इनके आत्म-समर्पण के बाद इनके परिवारवालों को न सताया जाय।

उनको अपने जीवन की राह बदलने के ऐसे अवसर पर समाज की ओर से भी क्षमादान जरूरी है। जन-जन के सामूहिक क्षमादान से ही यह नया रास्ता आगे बढ़ सकता है।

× × ×

चम्बल घाटी शान्ति मिशन के ग्वालियर कैम्प की सूचना के अनुसार पगारा डैम के जौरा स्थित सिंचाई डाक बंगला में डाकू श्री मोहर सिंह ने अपने ५० साथियों के साथ तथा डाकू श्री माधो सिंह ने अपने २० साथियों के साथ श्री जयप्रकाश नारायण के समक्ष आत्म-समर्पण की घोषणा की है।●

जीवन का यथार्थ

राजनैतिक दृष्टि से दुनिया के नक्शे पर तेजी से बदल हो रहे हैं। अमेरिका का राष्ट्रपति चीन जाकर बरसों पुरानी गाँठ खोलता है, रूस का परराष्ट्रमंत्री जापान जाकर बातचीत चलाता है, फ्रान्स का प्रधानमंत्री ब्रिटेन जाकर व्यापारिक सूत्र खोलता है, पाकिस्तान का राष्ट्रपति रूस जाकर गुत्थी सुलझाने की कोशिश करता है, जार्डन का राजा अमेरिका जाकर विश्वास दिलाने की कोशिश करता है, रोडेशिया का दौरा कर ब्रिटिश कमीशन लन्दन वापस जाता है, चिली के राष्ट्रपति को हटाने का प्रयास विफल होता है, आदि-आदि। लेकिन ये सारी घटनाएँ आम आदमी को छूती तक नहीं। क्योंकि बुनियादी रूप से ये राजनैतिक प्रणालियाँ जन-साधारण के जीवन से दूर रहा करती हैं।

दूसरी झाँकी हमें आगरा जिले के फतेहपुर ब्लाक के बराई गाँव में मिली। आगरा के सुप्रसिद्ध वकील, श्री गोपाल नारायण शिरोमणि और सर्व सेवा संघ के प्रधान मंत्री श्री ठाकुरदास बंग के साथ हम वहाँ शाम को पहुँचे। पता चला कि सरपंच दो दिन बाहर रहकर आज तीसरे पहर ही आये हैं। खबर लगाते ही वह मिलने आ गये। लगभग तीस साल का एक उत्साही युवक। बंग साहब ने ग्रामदान की बातें बतायीं और बीसवें हिस्से की माँग की।

"तुम्हारे पास कितनी जमीन है ?" वकील साहब ने पूछा।

"२० बीघा।"

"तो सवा बीघा बाट दीजिये—" बंग साहब ने कहा।

"जो कहियेगा देंगे।"

"दीजिये और साथ ही किसी भूमि-हीन दाता को बुलाइये जिसे यह दे दीजिये ताकि वह उसे हासिल ले।"

बंग साहब की यह बात सुनकर दाता बद्रीप्रसाद ने कहा—"तो सवा बीघा क्या दें, दो बीघा १० बिस्वे का हमारा एक पूरा 'प्लाट' है वह ले लीजिये।"

बहुत सुन्दर, यह तो दसवाँ हिस्सा हो गया, बहुत धन्यवाद आपका। और देंगे किसे ?"

"गाँव का ही एक भूमिहीन परिवार है, वह आदमी तो मर गया है, उसकी विधवा पत्नी व छोटे छोटे बच्चे हैं, उन्हें देना ठीक रहेगा।"

"हमें मंजूर है—वकील शिरोमणिजी ने कहा।" जमीन बँट गयी।

सारी राजनीति एक तरफ और यह वास्तविकता दूसरी तरफ। यही है जीवन का यथार्थ !

—दादा

(पृष्ठ ४४६ का शेष)

रूप) नहीं लेंगे। सोलह आना पालन किया तो सोलह आना सफलता मिली। और बारह आना पालन किया तो बारह आना सफलता मिली। किसी ने पूरा पालन किया, तो वह विशेषता मानी जायेगी। नहीं किया, तो उसे अप्रामाणिक नहीं किया जायेगा। इसमें विकास के लिए गुंजाइश रहती है और ऐच्छिक होने से हार्दिक पालन भी होता है। क्योंकि छूट है। लाजमी हो तो विकास के लिए मौका नहीं रहेगा। गांधीजी का वाक्य लोग बहुत दफा कहते हैं कि 'ऑर्गेनाइजेशन इज द टेस्ट ऑफ नानवायलेंस (संगठन अहिंसा की कसौटी है)।' मैंने इसका अर्थ यह किया है कि अहिंसा में सख्ती नहीं होती है, इसलिए उसमें कमाण्डरी ऑर्गेनाइजेशन (फौजी संगठन) होती नहीं, फिर भी नियमों का पूर्ण पालन होता है। सेना में १०० से ९० सैनिक आगे बढ़े और १० पीछे हटे तो उनकी गरदन को मारेगी और शान्तिसेना में १०० में से ९० सैनिक आगे बढ़े तो उनका गौरव बढ़ाया होगा, लेकिन जो पीछे हटे हैं, उनकी निन्दा नहीं की जायेगी। क्यों ? क्योंकि छूट है। यह है 'टेस्ट ऑफ नान-वायलेंस।' (पंजाब के कार्यकर्ताओं के साथ हुई चर्चा)

(पृष्ठ ४४७ का शेष)

स्त्रियाँ सभी पुरुषों की। विचार इसके पीछे यह है कि स्त्री कोई सम्पत्ति नहीं है। वह सहनागरिक है। उस पर विवाह-व्यवस्था के द्वारा स्वामित्व का बोझ क्यों लादा जाय ? जिस मित्र ने मुझे यह बताया वह स्वयं जवान लड़का था। मैंने उससे पूछा "तुम इस प्रकार के समूह-जीवन में रहना पसन्द करोगे ?" उसने कहा "सिद्धान्ततः तो मुझे इसमें कोई बुराई नहीं लगती, लेकिन मैं शायद उसमें रह नहीं पाऊँगा।"

"क्यों ?"

"मुझे डर है कि मेरी पत्नी दूसरे के पास सोती है इस बात के विचार से मेरे मन में काफी हिंसा आ जायेगी।"

मुक्त सेक्स का विचार एक प्रकार से मुक्त व्यापार जितना ही प्रतिस्पर्धा-वादी और हिंसा पैदा करनेवाला है, इस चीज का ज्ञान भी अब उन जवानों को कमशः हो रहा है।

मैं सोचता था, हमारे इतिहास में इस प्रकार के नमूने क्या बिलकुल नहीं हैं ? हमारे यहाँ क्या वर्णाति नहीं है ? हमारे यहाँ क्या कोणार्क और खजुराहो नहीं हैं ? हाँ, बाद के काल में हमने उसे कभी अध्यात्म के नाम से, कभी नीति के नाम से छिपाने का प्रयत्न किया। कभी इन्हें रूपक समझकर भक्ति रस से भिगोने का प्रयत्न किया। लेकिन क्या हजारों वर्षों के अनुभव के बाद हमारे समाज ने भी सेक्स के सम्बन्ध में अपने प्रश्नों का हल ढूँढ लिया है ? अभी दोनों ही समाज स्त्री पुरुष के स्वस्थ सम्बन्धों के प्रश्न को हल नहीं कर पाये हैं। एक ओर जहाँ दमन है, वहाँ विकृतियाँ भी हैं, दूसरी ओर स्वस्थ सम्बन्धों के नाम से अनियन्त्रित स्वेच्छाचार है। मनुष्य जाति को शायद ठोकरें खाकर, गिरकर, पड़के जाकर ही सीखने की कला हासिल है।

तीसरा अ० भा० तरुण-शान्तिसेना सम्मेलन

क्या आपको वर्तमान समाज-व्यवस्था से संतोष है? क्या शिक्षा-पद्धति का वर्तमान ढर्रा आपको मंजूर है? क्या भारत की वर्तमान आर्थिक परिस्थिति संतोषप्रद लगती है? अगर आप तीनों का उत्तर नकारात्मक देते हैं तो!

क्या आप इन्हें परिवर्तित करने की तीव्र चाह रखते हैं?

क्या आप अपने पौरुष को इस महद् कार्य करने की चुनौती दे सकते हैं?

अगर इन दोनों प्रश्नों का जवाब हां में मिलता है तो आपको आप ही जैसे जोशीले नवजवानों का बुलावा है, २८, २९ और ३० मई को बेलगांव के अपने सम्मेलन में। उबलते खून को विधायक रास्ते की तलाश है। चर्चा होगी, बहस होगी, विचारों का आदान-प्रदान होगा। शायद मिल जाये हमें कोई राह, जिस पर चल सकेंगे हम आप कदम मिलाते हुए। मंजिल की धुन में शायद दीवानों को आगत का साथ मिल जाये। सम्मेलन का उद्घाटन और अध्यक्षता भी हमउमर के तरुणों द्वारा होगी, महान क्रान्तिकारी द्रष्टा दादा धर्माधिकारी और महान समाजवादी चिंतक श्री अच्युत पटवर्धन भी सम्मेलन को सम्बोधित करेंगे।

चर्चा से कुछ विधायक निष्कर्ष निकल सकें इस दृष्टि से विषय भी रखा गया है। हमने अपनी आजादी के इन २५ सालों में राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और शैक्षणिक क्षेत्र में क्या खोया क्या पाया, और क्या करें?

प्रवेश शुल्क २ रुपये

जिसे आप मनीआर्डर, डाक टिकट के जरिये तरुण-शान्तिसेना, राजघाट, वाराणसी—१ उत्तर प्रदेश के पते पर भेजकर अनुमति-पत्र और रेलवे कन्सेशन प्राप्त कर सकते हैं।

निवास

निवास की व्यवस्था हम निःशुल्क करेंगे।

भोजन

२८, २९, ३० मई के भोजन के लिए आपको केवल १० रुपये देने होंगे, सम्मेलन स्थान के पास ही देखने लायक जगह है—गोवा, जोग फाल्स आदि।

—अशोक भ.गंध

विनोबाजी की सलाह

नेपाल के सर्वोदय प्रेमी, वर्षों से रचनात्मक कार्य में लगे हुए प्रमुख समाजसेवी वयोवृद्ध श्री तुलसी मेहेरजी को बातचीत में श्री विनोबाजी ने संकेत किया है कि उनको (श्री तुलसी मेहेरजी को) उमर के ७५ साल पूरे हो रहे हैं। इसलिए उनको जिम्मेवारी के सब कामों से मुक्ति पाकर २ अक्तूबर १९७२ के दिन, जो गांधीजी का जन्म दिन है, सेवाग्राम आश्रम में निवासी बनना है। ज्ञात हुआ है कि श्री तुलसी मेहेरजी ने यह सुदेश मान्य किया है।

—पूर्णचन्द्र जैन

डाकुओं का आत्म-समर्पण

ग्वालियर, ५ अप्रैल १९७२। चम्बल घाटी शान्ति मिशन के ग्वालियर स्थित कैम्प कार्यालय ने सूचित किया है कि डाकू माखन सिंह गैंग ने सभी अपहृत व्यक्तियों को बिना कोई धन लिए छोड़ दिया और वह आत्म-समर्पण के लिए अपनी पूर्ण तैयारी कर चुका है।

आत्म-समर्पण का स्थान पगारा डैम के बजाय जौरा स्थित सिंचाई डाक बंगला है।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ३०

२४ अप्रैल, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

अगले महीने निक्सन मास्को जाने की तैयारी कर रहे हैं

ग्रामस्वराज्य के मोर्चे से

६ अप्रैल

कोई बी० डी० ओ० अगर चाहे तो सचमुच 'भूदान डेवलप्मेण्ट अफसर' हो सकता है, उसका उदाहरण आज देखने को मिला। दिन-रात एक ही बात का चिन्तन, और उसीकी रट—हमारे ब्लाक के गांव-गांव में जमीन कैसे बँटेगी। बी० डी० ओ० और स्कूलों के इन्सपेक्टर ने मिलकर मुखियों और शिक्षकों की पूरी शक्ति इस काम में लगा रखी है। कई भूमिवानों को भी प्रेरित किया है। कुल मिलाकर अच्छा वातावरण बनाया है। एक समाजवादी मुखिया ने अपने गांव का ग्रामदान करा लिया है।

७ अप्रैल

बड़े लोगों का गांव; बड़े भूमिवान, बड़े राजनैतिक नेता, सरकार के मिनिस्टर, सरकारी ठीकेदार, बिलकुल माडर्न बिल्डिंगें और सजावट, बिजली, टेलिफोन पुलिस-चौकी, पिच-रोड, ट्रैक्टर, ट्रक, जीप, मोटरें, और गलियों के अलग-अलग नाम—ये सब चीजें इकट्ठा देखनी हों तो यहाँ देखिये। दो गलियों के नाम मैंने देखे, ब्राह्मण-मार्ग, हरिजन-मार्ग। पुराना वर्णवाद, मध्ययुग का सामन्तवाद, आधुनिक पूँजीवाद, और अप-टू-डेट सरकारवाद—सबका समन्वय! ये सब शक्तियाँ मिलकर परिवर्तन की शक्तियों के सामने दीवाल बनकर खड़ी हैं। उनके कब्जे में भूमि है, व्यापार है, स्कूल, कोआपरेटिव-पंचायत है, पुलिस और न्यायालय है, कानून है, मिनिस्ट्री है, और अब वूथ कैप्चर द्वारा लोकतंत्र है। सोचना चाहिए कि हमारी क्रान्ति किस रास्ते से किनके समर्थन और पराक्रम से, आगे बढ़ेगी। क्या केवल विचार-प्रचार काफी होगा? विचार एक चीज है, और सामाजिक शक्ति के रूप में विचार बिलकुल दूसरी। हम अपने विचार को सामाजिक शक्ति अभी तक नहीं बना सके हैं।

८ अप्रैल

कहा जाता है कि भूमिवान को मोह है इसलिए वह स्वामित्व नहीं छोड़ता, बीघा-कट्ठा नहीं देता। भूमिवान को भूमि का, धनवान को धन का, सत्तावान को सत्ता का, बलवान को बल का, विद्वान को विद्या का, साधक को अपनी साधना का, और सेवावाले को अपनी सेवा का—किसको अपनी चीज का मोह नहीं है? जिस चीज के बल पर समाज में उसका स्थान है, सुख-सुविधा है, प्रतिष्ठा है, उसका उसे मोह है, और उसे वह नहीं छोड़ना चाहता। अगर किसी को अपनी चीज का मोह नहीं है तो मजदूर को अपनी मेहनत का। उसे छोड़ने को वह हरदम तैयार है क्योंकि उससे उसे मिलता क्या है? मोह यों ही नहीं है; इसका जबरदस्त आर्थिक-सामाजिक आधार है।

दो सौ, तीन सौ, चार सौ, पाँच सौ बीघे भूमि रखनेवाला भूमिवान खुद खेती नहीं करता; या, करता है तो थोड़े हिस्से पर, बाकी पर बँटाई कराता है और बँटाईदार से आधी उपज ले लेता है। मजदूर या बँटाईदार मालिक की जमीन पर मजदूरी या बँटाई करता है, उससे कर्ज में अन्न लेकर कमाई की कमी पूरी करता है, और जो कुछ कमाता है उसी मालिक को दुगुना और तिगुना वापस कर देता है। इसलिए भूमि से कमाई का सारा लाभ मालिक का होता है। यह बिहार की भूमि-व्यवस्था है, और इसीके आधार पर यहाँ खेती की पद्धति विकसित हुई है। इसमें घाटे का जोखिम है ही नहीं, क्योंकि इन्वेस्टमेण्ट (लागत) एक कौड़ी का नहीं है, हर तरफ से फायदा ही फायदा है। ऐसी व्यवस्था को भूमिवान क्यों बदले? जो भूमि उसे इतना लाभ देती है, इतने बँटाईदारों और मजदूरों को सेवा देती है, सत्ता और सम्पत्ति के दरवाजे खोलती है, उसे वह क्यों छोड़े?

इस क्षेत्र के गांवों में ५० से ६५ प्रतिशत तक भूमिहीन (मजदूर और बँटाईदार) हैं। वे हमारे आन्दोलन की मुख्य धारा से अलग हैं। हमने उन्हें उससे जोड़ने की कोशिश कब की? सद्भावना भले ही हमें 'बड़ों' से मिल जाय, लेकिन क्या क्रान्ति की शक्ति भी हमें बड़ों से ही मिलेगी? शक्ति के इस छूटे हुए स्रोत को हम कब पहचानेंगे?

९ अप्रैल

बड़े भूमिवान के लड़के, एक शिक्षक, और मठ के एक महंथ टोली बनाकर बीघा-कट्ठा के लिए घूम रहे हैं। कार्यकर्ता अच्छा हो तो अनुकूल व्यक्तियों को ढूंढ़ निकालता है। फिर भी भूमिवान युवक बहुत कम सामने आते हैं। युवकों की भावना क्यों नहीं उभड़ती? वे 'स्टेटस-को' से इस बुरी तरह क्यों चिपके रहते हैं? कारण साफ है। भूमि और खेती की जो प्रचलित व्यवस्था है उसमें निकम्मा बना रहना और दूसरों की कमाई खाते रहना, फायदे का सौदा है। व्यवस्था बदलने पर युवक को पराक्रम करना पड़ेगा। 'इण्टरप्राइज' में घाटे का 'रिस्क' रहता ही है। तो वह जोखिम क्यों उठाये? बिहार की मौजूदा भूमि-व्यवस्था ने जो कार्नवालिस के १७९३ के इस्तमरारी बन्दोबस्त से शुरू हुई थी इसी तरह का चरित्र विकसित किया है। और, अंग्रेजी जमाने की शिक्षा ने, जो आज तक चालू है, इस निकम्मेपन पर संस्कृति और सभ्यता का रंग चढ़ा दिया है। ये बेचारे युवक दया के पात्र हैं। वे नहीं सोचते—उन्हें बताता भी कौन है?—कि जिस पिता के पास ३ सौ बीघे जमीन है उसके आठ लड़कों में प्रति

(शेष पृष्ठ ४६८ पर)

गाँव का नया पूँजीवाद

अगर प्राचीन वर्णवाद, मध्ययुगीन सामन्तवाद, आधुनिक पाश्चात्यवाद, अप-टू-डेट सरकारवाद और सामाजिक फासिस्टवाद को एक साथ देखना हो तो देश के कुछ भागों में, और बिहार में भी, उसका विकसित रूप देखा जा सकता है। भूमि का मालिक है; उसके पास ४-५ सौ बीघे भूमि है, पूरे गाँव में झोपड़ियों के बीच में उसका अकेला पक्का अमेरिकी ढंग का मकान है, दरवाजे पर हाथी है, ट्रैक्टर है, जीप है, फूस के बने एक अच्छे झोपड़े में गाँव के जन-सेवक और प्राइमरी स्कूल के शिक्षक रहते हैं क्योंकि मालिक ग्रामपंचायत का मुखिया भी है, वह हाईस्कूल की प्रबन्ध-समिति का मंत्री है इसलिए शाम को हेडमास्टर साहब और कुछ शिक्षक भी दरवाजे पर दिखाई देते हैं, पुरोहित मन्दिर में सुबह की पूजा के बाद सबसे पहिले 'मालिक' को तिलक लगा जाते हैं, पुलिस का सिपाही हफ्ते में एक बार सलामी बजा जाता है और थाना या ब्लाक से बराबर उनका आना-जाना है, उनके अधिकांश खेतों में बँटाई से खेती होती है जिसमें उन्हें एक पैसे की पूँजी नहीं लगानी पड़ती लेकिन बँटाईदार अच्छी फसल बाँटकर दे जाता है। सिर्फ इसलिए कि खेत उनका है, क्योंकि उसके बँटाईदार को वह जब चाहे बेदखल कर सकते हैं, क्योंकि उसके पास कोई सबूत नहीं है जिसके बल पर वह अदालत से न्याय पा सके, और हाकिम भी तो आखिर मालिक ही होता है। मालिक की अपनी खेती ट्रैक्टर से होती है, सरकारी नहर उसके खेतों से होकर गुजरती है क्योंकि वह सरकार की 'हरित क्रान्ति' का अगुआ माना गया है, उसके मजदूर उसकी भूमि पर बसे हुए अर्द्ध-गुलाम हैं, उनकी मजदूरी का जमीन की बाकी उपज से कोई सम्बन्ध नहीं है, मजदूरी बस इतनी मिलती है कि वे किसी तरह जिन्दा रहें और काम करने को विवश रहें, वे बराबर मालिक के कर्ज में अन्न लेकर पेट पालते हैं, और मजदूरी या बँटाई से होनेवाली पूरी कमाई सूद-दर-सूद के साथ मालिक को लौटाते रहते हैं, उन्हें कभी यह सोचने का मौका नहीं मिलता कि उन्होंने कुछ कमाया है और उनके घर में ४-६ रुपये जमा हैं जिन्हें वे या उनके बच्चे अपनी खुशी से खर्च कर सकते हैं।

मालिक केवल भूमि का मालिक नहीं है, वह भी है, बाजार के व्यापारियों से उसका सम्बन्ध है, बैंक से लेन-देन है। बेटी के ब्याह में वह पचीस हजार तिलक में देता है; बेटे को मेडिकल कालेज में पढ़ाता है, घर में उसकी स्त्री की सेवा के लिए दाइयाँ हैं, नौकर हैं, लेकिन उसकी दुनिया आँगन के बाहर नहीं है, पति की वासना-तृप्ति और बच्चों के सिवाय उसने कभी दूसरा कोई जीवन जाना ही नहीं। मालिक को क्षेत्र के एम० एल० ए० से घनिष्ट मित्रता है, दोनों विचार से 'समाजवादी' हैं, चुनाव में वह अपने नेता मित्र की हर तरह की सहायता करता है, पैसा देता है, प्रचार करता है, और वोट के दिन गुण्डागिरी में निपुण उसके 'पहलवान' लाठियाँ लेकर सुबह से बूथ पर बैठ जाते हैं ताकि बेभरोसे के मतदाताओं के कारण समाजवाद के लिए कोई खतरा न पैदा होने पाये और लोकतंत्र भी निरक्षरों और गरीबों से सुरक्षित रहे। मालिक का मित्र भी अकृतज्ञ नहीं होता, वह उसका एहसान ठीके दिलवाकर, कानून के चोरदरवाजे बनाकर और पटना में मिनिस्टरों तक पहुँच कराकर चुकाता है। मालिक और नेता की मित्रता गहरी होती है। दोनों के मेल से सत्ता और सम्पत्ति की सीढ़ियाँ बनती हैं जिनपर चढ़कर दोनों ऊपर पहुँचते हैं। ऐसा लगता है जैसे सरकार मालिकों की है, उनके द्वारा बनती है, उनके लिए चलती है।

सरकार, समाज, और इन भूस्वामियों के इस मेल को क्या कहें? पूँजीवाद? आधुनिक पूँजीपति तो बड़ा उद्यमशील होता है। लेकिन ये 'पूँजीपति' तो न उद्यमशील हैं, और न प्रगतिशील। ये सामन्तवादी संस्कारों, पूँजीवादी आकांक्षाओं और समाजवादी नारों के विलक्षण मिश्रण हैं। विज्ञान और लोकतंत्र के युग में ये विचित्र लगते हैं, लेकिन हावी हैं हर चीज पर। ये प्रतीक हैं एक ढाँचे के जो जर्जर तो हो चुका है लेकिन अभी टूट नहीं रहा है। हमारी राजनीति और निकम्मे कानूनों ने उसे नये जीवन का अमर दान दिया है, और सरकार की विकास-योजनाओं ने भरपूर पोषण।

यह निश्चित है कि यह ढाँचा अकेले कानून की शक्ति से नहीं टूटेगा, यद्यपि कानून की शक्ति आवश्यक होगी। हिंसा पुराने ढाँचे को तोड़ तो सकती है, लेकिन वह आज सम्भव भी नहीं है, और उसकी सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वह औषधि बनकर आती है और भोजन बनकर रह जाती है। उसे जब नया शिकार नहीं मिलता तो शिकारी को ही खा जाती है।

यह सामन्तवादी ग्रामीण पूँजीवाद लोक-शक्ति के अभिक्रम और कानून के समर्थन से टूटेगा। नयी भूमि-व्यवस्था के प्रश्न पर लोक-शक्ति और सरकार-शक्ति का मेल परिस्थिति की माँग है। लेकिन यह मेल कब, कैसे हो, यह प्रश्न है।●

भूदानयज्ञ : सोमवार, २४ अप्रैल

मनुष्य अपने आपको खोजे

● दादा धर्माधिकारी

कुछ दिन पहले एक मित्र ने पूछा कि तुम बेचैन क्यों हो ? सच कहूँ मुझे ऐसा मालूम होता है कि भगवान खो गया है और इनसान खो गया है, इसलिए मैं व्यथित हूँ। 'कौन खो गया है ?' 'तो मैं ही खो गया हूँ।' 'अपने को क्यों खोजते नहीं ?' 'आँख खो गयी है'। चश्मे ही चश्मे हैं। इसलिए अपने को खोज नहीं पाता।' कभी मार्क्स का, कभी गांधी का, तो कभी और किसी महान व्यक्ति का, चश्मा उधार लिया, चश्मों का बाजार गर्म है। आँख को कोई साबित नहीं रहने देता। साबित आँख से समस्या को देखने की आवश्यकता है, उसके विषय में पहले से अपनी भूमिका और मन्तव्य बनाकर नहीं। मनुष्य खो गया है तो पहले मनुष्य को अपने में ही खोजना होगा—'सेल्फ डिस्कवरी', अपने आपकी खोज। अब मनुष्य के लिए इस क्षण की अनिवार्य आवश्यकता हो गयी है। मनुष्य अगर आज यह नहीं करेगा तो उसके सामने एक बड़ा प्राथमिक प्रश्न है—अस्तित्व का प्रश्न।

दृष्टि की दृष्टि

हम बांगला देश को सर्वोदय की दृष्टि से नहीं सोचेंगे। मित्रो, दृष्टि जब संगठित होती है तब दृष्टि दृष्टि नहीं रहती है। अगर सर्वोदय की दृष्टि है तो सर्वोदय ही है, फिर दृष्टि नहीं। विशेषण अधिक महत्त्व का होता है। हमारे पास दृष्टि हो, सर्वोदय नहीं। और, मैं कहता हूँ कि इस सारी समस्या की तरफ अगर आप सर्वोदय की भूमिका से देखेंगे तो आत्म-ग्लानि होगी। अपने विषय में तुच्छता की भावना पैदा होगी, क्योंकि आप जो इस देश में अहिंसा के और अहिंसक प्रतिकार के ठीकेदार समझे जाते हैं, उस अहिंसा का तो कोई चमत्कार जाने दीजिये उसमें कोई ऐसा प्रयोग जो अपने आपको सन्तोष दे सके वह दिखाई नहीं देता। इसलिए मैं कहता हूँ कि विश्व की तरफ आप जरूर देखें, विश्व के सन्दर्भ में अवश्य देखें, लेकिन अपने सन्दर्भ में, मानवता के सन्दर्भ में, विचार करें। अपने साथ अगर रह सकता हूँ, अपने को प्यार अगर कर सकता हूँ तो मेरे सामने समस्या का रूप कुछ अलग होता है। मैं स्वार्थी हूँ, अहम-धारी हूँ, देहात्मधारी तो हूँ ही लेकिन अपने को प्यार नहीं कर सकता। एक बात है कि जो अपने को प्यार कर सकता है उसका कोई प्रतिस्पर्द्धी, प्रतिपक्षी नहीं। इस सारी समस्या को समझने की कोशिश करें।

हमको अहिंसा से ज्यादा मानव-मुक्ति प्रिय है। लेकिन क्या अहिंसा और मानवीय-मुक्ति दो परस्पर विरोधी प्रमेय हैं ? पुराने दार्शनिकों ने, आध्यात्मिक पुरुषों ने यह सर्वश किया है। अहिंसा का विरोध सत्य के संरक्षण के लिए, अहिंसा की बलि। पहले तो सिद्धान्त मान लिये, सद्गुण मान लिये, सहनीय सत्य मान लिये और फिर उनको एक दूसरे के मुकाबले में खड़े किये। अगर सद्गुणों में मुकाबला है तो वे सद्गुण नहीं, अगर सिद्धान्त में स्पर्द्धा है तो वह सिद्धान्त नहीं। मेरा निवेदन यह है कि हमारे लिए मनुष्य सिद्ध है और इस दुर्घटना में मनुष्य ने मनुष्य का संहार किया। इस दुर्घटना में मनुष्य ने मनुष्य पर अत्याचार किया। अब इसे आप गांधी की भूमिका से, भारत-पाकिस्तान की भूमिका से न सोचें, 'ग्लोबल विलेज' की दृष्टि से भी न सोचें। विश्व एक ग्राम हो गया लेकिन क्या मनुष्य के सम्बन्ध में कोई गुणात्मक परिवर्तन हुआ है ? मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध में निरुपाधिक सम्बन्ध का नाम ही जीवन है। मैं जिस भूमिका से जीवन जीता हूँ मेरे लिए बस इतना मर्यादित अध्यात्म प्रत्ययजन्य है। क्या हम इस मुकाम तक पहुँच सके हैं कि किसी भी कारण के लिए मनुष्य मनुष्य की हत्या नहीं करेगा ? अहिंसा के सिद्धान्त को मैं नहीं जानता। मैं इतना ही जानता हूँ कि मनुष्य मनुष्य के साथ नहीं रह सकता तो मनुष्य जी नहीं सकता है। सम्बन्ध ही मनुष्य में जीवन का प्रकट सत्य है। सत्य प्रत्यक्ष जीवन में सम्बन्ध के रूप में साकार होता है। दूसरा कोई आविष्कार जीवन का नहीं है जिसे आप आध्यात्मिक मानवीय जीवन कहें। तो हमारे लिए आज अपने भीतर यह सोचने का मौका है कि क्या हममें यह प्रत्यय-जन्य निष्ठा है ? मेरा मतलब यह है कि वह प्रत्ययजन्य हो, केवल वैज्ञानिक नहीं। बौद्धिक निष्ठा में शक्ति है, अपार सामर्थ्य है, बौद्धिक निष्ठा मनुष्य को विनयशील और नम्र बनाती है, अनाग्रही बनाती है, लेकिन अगर यह प्रत्यय की वस्तु है कि मनुष्य का पारस्परिक सम्बन्ध ही उसके सत्य का आविष्कार है, प्रत्यक्ष जीवन में, तो उससे कम-से-कम संकल्प तो अनुगत होना ही चाहिए !

अहिंसा का आक्रोश

दुनिया में प्रतिहिंसा की प्रतिष्ठा है। प्रतिहिंसा की शान है। केवल उन लोगों के मन में नहीं जो शस्त्र और युद्ध को जीवन का अनिवार्य अंग मानते हैं बल्कि उनके मन में जो अहिंसा को मानते हैं। उन्होंने अपने-आपको अहिंसा को समर्पित किया है, लेकिन किस रूप में ? आक्रोश कार्य रूप में। अहिंसा भी आक्रोश है। आक्रोश इसलिए कि चित्त में आक्रोश है और जब अपने आपको सिद्धान्त को पूरी तरह समर्पित किया है तो उसमें दो चीजें रहती हैं। एक अतः प्रेरणा, जिसे वह गलती से भगवत्-प्रेरणा कहता है। यह भगवत्-प्रेरणा दोनों को होती है—यहूदी और मुजीब, दोनों को। जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः जानामि अधर्मं न च मे निवृत्तिः। केनापि देवेन हृदिस्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि

तथा करोमि। यह दुर्योधन भी कहेगा और युधिष्ठिर, धर्मराज भी कहेगा। लेकिन जो आदमी सही बात कहता है, वह कहेगा, मेरा यह तीक्ष्ण खड्ग ही मेरी अन्तरात्मा है। यही मेरी विवेक-बुद्धि है। कहीं-कहीं अन्तरात्मा काम रखना देती है। कहीं हमारे साथ ऐसा तो नहीं हो रहा है? केवल इतना कहने से काम नहीं चलेगा कि हम असफल हुए। असफलता में शर्म नहीं। असफलता में शान और बड़ा गौरव भी हो सकता है। मैं यह आत्म-सन्तोष के लिए नहीं कहता। इसलिए कि सफलता और असफलता का विचार छोड़ें। इसमें अपनी भूमिका का विचार मुख्य है।

अहिंसक की मनोभूमिका

चेकोस्लोवाकिया और रशिया, पोलैण्ड और रशिया, बांगला देश और पाकिस्तान इन दोनों में से एक की हिंसा को हमने समर्थनीय नहीं, क्षम्य अवश्य माना है। गांधी ने भी माना था, हमने भी माना। शायद यहीं तक हम अपने आपको और लोगों को समझा सकते हैं। लेकिन मैं अपने से इसके आगे भी एक बात पूछता हूं। दक्षिण अफ्रीका में घोड़े की बग्गी पर से गांधी को खींचकर उतारा गया। फर्स्टक्लास के डिब्बे में से उनका सामान फेंका गया, जबर्दस्ती उतारा गया। थोड़ी देर के लिए कल्पना कीजिये कि गांधी उस वक्त इतनी शक्ति रखता कि गोरे आदमी को खींचकर दो तमाचे लगा देता, गोरे को सामान के साथ गिरा देता तो आपने और हमने तालियां बजायी होतीं! इसका स्रोत एक ही है। यूनेस्को के प्रस्तावना (प्रिएम्बल) में लिखा है कि युद्ध का आरम्भ मनुष्य के मन में होता है और वहीं से उसका अंत करना पड़ेगा। नये परिवर्तन की अब घड़ी आ गयी है। तो इससे पहले आपसे कह रहा था कि अपने को सोचो। आज इस मंच पर बैठकर प्रांजलता से आपसे कह सकता हूं कि गांधी ऐसा करता तो मेरे मन में उसकी कद्र बढ़ होती। एक भाई का नाम लिखना, जिसने गोरों पर हाथ उठाया। यह भावना है दलित मानव की। आज सारे के सारे वामपंथी इनके पीछे हैं। इससे ऊपर उठने के लिए क्या करना होगा? यह सोचने की आवश्यकता है। यह प्रतिक्रिया है। प्रतिक्रिया हमेशा प्रतिगामी होती है। उसमें से कभी प्रगति नहीं होती। लेकिन यह प्रतिक्रिया है। यह प्रतिक्रिया क्यों है? मनुष्य के मन में शस्त्र का भय है। काले मनुष्य के मन में गोरे आदमी के शस्त्र का भय है, अविकसित देश के नागरिक के चित्त में अणुबम का भय है। मुझसे विनोबाजी ने कहा, 'यह प्रहार है हिंसा नहीं।' तो मैंने कहा, 'क्षमा कीजिये यह शब्द-छल है।' यह प्रहार भी नहीं है, हिंसा भी नहीं है। यह संगठित आतंक है और संगठित आतंक का मुकाबला क्या क्रान्तिकारी हिंसा से हो सकता है? यह आज की जागतिक समस्या है।

आज मनुष्य-मनुष्य से आतंकित है। सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि नित्य नये-नये आयुधों की खोज मनुष्यों को मारने के लिए हो रही है। शस्त्र के भय में से शस्त्र की आकांक्षा उत्पन्न होती है और आज हमारा देश शस्त्रशाली बना है। १९०५ में जापान ने रूस को हराया। एक चैतन्य की लहर सारे एशिया में दौड़ गयी। क्यों? यूरोप के एक गोरे राष्ट्र को एशिया के एक सांवले, पीले राष्ट्र ने हरा दिया, परास्त कर दिया। अब आप अपनी तरफ देखिये। १९६२ में आपकी जो मनोवृत्ति थी और आज आपकी जो मनोवृत्ति है उसकी तुलना करें। १९६२ में आपको चीन के सामने से हटना पड़ा। सारे देश में मायूसी छा गयी। आज आपने बड़ी भारी सेना को हरा दिया, परास्त किया। अब मायूसी की लहर नहीं है। मैं मानता हूं कि आप जो यहां बैठे हैं उनके मन में विजय का उन्माद नहीं लेकिन उसका आनन्द अवश्य है। '६२ और ७१-७२ की घटना में अन्तर है। उसको हमारे अपने भीतर समझने की आवश्यकता है। इसलिए शुरू में ही निवेदन किया कि इस सारी घटना को जागतिक परिस्थिति के सन्दर्भ में नहीं, मानवीय परिस्थिति के सन्दर्भ में सोचें। मानवीय परिस्थिति यानी अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध नहीं, मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध की दृष्टि से सोचें।

अहिंसा का ठीकेदार कोई नहीं

मेहरबानी कीजिये और इस जमात को अहिंसा का ठीकेदार मत समझिए—अपने आपको भी नहीं और इस जमात को भी नहीं। अहिंसा जिस दिन ठीकेदारों के हाथ में चली जायेगी, उस दिन सत्यानाश हो जायगा। क्या अहिंसा और मानवता का कोई ठीकेदार हो सकता है? उसका कोई संगठन, सम्प्रदाय हो सकता है? हमारा सबसे बड़ा दोष रहा है कि अगर दुनिया ने धारणा बना ली है कि हिंसा होती है तो सबसे अधिक चिन्ता हमें हो।

स्त्री की भूमिका

दुनिया में मानवता की तरफ कदम बढ़ाने के सारे प्रयास इसलिए अधूरे रहे कि उनमें स्त्री की भूमिका गौण रही और जहां-जहां गौण नहीं रही, प्रधान रही वहां स्त्री ने पुरुष का अनुकरण किया। स्त्री की भूमिका गौण है इसका सबसे बड़ा सबूत है। इस बांगला देश की समस्या के साथ-साथ हमारे देश में एक करोड़ निर्वासित आये। उनमें ऐसी हजारों स्त्रियां थीं जो गर्भवती थीं। मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध में स्त्री एक समस्या है। अगर सत्ता और सम्पत्ति के लिए युद्ध हुए तो स्त्री के लिए भी युद्ध हुए। इसका संरक्षण एक समस्या है। यह भी एक पहलू है। इसका क्रान्ति के सन्दर्भ में आपको गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा। दंगा और युद्ध की परिस्थिति में स्त्री नाजुक समस्या बन गयी है। १७७६ की अमेरिका की क्रान्ति, १९४९ की माओ की क्रान्ति और उसके बाद की कड़ुवाहट, होचीमिन्ह की क्रान्ति सब सारी-की-सारी क्रान्तियां अधूरी रह गयीं। मैंने जागतिक समस्या के कुछ आधारभूत पहलू जो समस्या के स्रोत हैं उनका कुछ उल्लेख किया है।

(बड़ौदा में कार्यकर्ताओं के समक्ष दिये गये भाषण से—फरवरी '७२)

ग्रामस्वराज्य के बीज की सुरक्षा हो

● रामनन्दन मिश्र

[साधना केन्द्र, वाराणसी में अभी हाल में ही श्री रामनन्दन मिश्रजी आये थे। उन्होंने यहाँ के कार्यकर्ताओं के समक्ष अपना चिन्तन और चिन्ता व्यक्त की। यहाँ हम उनके भाषण का वह अंश प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें उन्होंने ग्रामस्वराज्य के कार्य में लगे लोगों के लिए कहा है। आशा है, कार्यकर्ता इस दृष्टि से चिन्तन करेंगे। सं०]

हमारा अगला कदम

ग्रामस्वराज्य की सारी योजना इस बात पर आश्रित है कि गाँव के लोग सामूहिक रूप से सोचें कि उनके गाँव का भला कैसे होगा। और यह जो सामूहिक चेतना जागृत होगी उससे गाँव में शक्ति पैदा होगी और उससे एक नया नेतृत्व का निर्माण होगा। इसके लिए आवश्यक है कि हर आदमी सोचे कि अपने गाँव को कैसे बनाना है ? और, सोचने का आधार ग्रामस्वराज्य की योजना है। लेकिन आज की आबोहवा में बह रहा है व्यक्तिवाद। हर व्यक्ति सोचना चाहता है कि मेरा भला कैसे होगा, चाहे गाँव का भला आगे हो, पीछे हो, कोई हर्ज नहीं। समाज के अन्दर व्यक्तिगत महत्त्व इतना ज्यादा आ गया है कि समूह को देखना ही नहीं चाहता। व्यक्तिवाद की इस आग में सामूहिक चेतना का आधार झुलस रहा है। और जब सामूहिक चेतना का आधार नहीं है तो ग्रामस्वराज्य उसमें से नहीं निकलेगा। आज यही मुख्य कारण है इसीलिए मैं कहता हूँ कि तरुण-शान्तिसेना का यही काम होना चाहिए कि वह गाँव-गाँव में सांस्कृतिक भावना जगाये। इसके लिए अगर सांस्कृतिक क्रान्ति नहीं पैदा की जाय तो फिर आधार नहीं बनता।

आपके ग्रामदान के आँकड़े सुनता हूँ। ये आँकड़े मुझे अपील नहीं करते। क्योंकि आँकड़ों से कुछ होना नहीं दीखता। क्योंकि मैं जानता हूँ कि व्यक्तिवाद की जो आग जल रही है उसमें समूहवाद की चेतना लुप्त होनेवाली है। लेकिन अब यह दूसरा प्रश्न होता है कि उस काम को करना चाहिए कि नहीं ? मैंने यह कहा कि यह काम आप करते ही जाइये। क्यों ? मैं यह बात क्यों कहता हूँ ? इसलिए कि यह भी मैं देख रहा हूँ कि व्यक्तिवाद की चेतना इस प्रचण्ड ज्वाला के साथ विश्व में जल रही है, इसकी ज्वाला इतनी तीव्र है कि वह जला-कर समाज को राख कर देगी और समाज को ध्वंस के दरवाजे पर पहुँचा देगी। यह जो तीव्र आग व्यक्तिवाद की जली है इसमें कोई समाज नहीं बन सकता—न साम्यवाद बन सकता है, न समाजवाद बन सकता है, न पूँजीवाद बन सकता है, न गांधीवाद बन सकता है। कोई भी वाद नहीं बन सकता। क्योंकि समाजवाद का आधार ही इस बात पर है कि जहाँ व्यक्तिवाद हो वहाँ समाजवाद के लिए जगह नहीं।

समाज एक सर्वनाश के दरवाजे पर खड़ा हो गया है। शायद उस समय इसका होश हो, जिस समय सारी दुनिया सर्व-नाश में झाँकी जा रही हो, शिव के वक्षस्थल पर पैर रखती हुई काली ने जीभ निकाली है। शायद उसका भाव यही है कि हाय हमने क्या किया ! एका-एक जब उसको होश आता है, तो देखती है कि अरे मैंने तो अपने पैरों से जो सत्य, शिव, सुन्दर था, उसको रौंद दिया। मैं शिव की छाती पर खड़ी हूँ। जब होश आया तो देखती है कि क्या हुआ ? वह जिह्वा निकाल लेती है; हाय, यह क्या हुआ ! और, तब यात्रा-बिन्दु आता है। और वह जो समय है दूर नहीं है। आज तो नहीं लेकिन इस दिशा की तरफ इतिहास की धारा जा रही है। लेकिन उस बिन्दु पर पहुँचने के पहले सम्भव है कि बड़े पैमाने पर विनाश का चित्र हम लोगों के सामने आये। पूरा तो नाश नहीं होगा, बाकी कुछ रहेगा ही। आज नेताओं को होश नहीं है, विश्व को सर्वनाश के द्वार पर ले जायेंगे ही। बिना पहुँचे लौटने की कोई आशा नहीं है। और लौटने के पहले विश्व का काफी बड़ा हिस्सा खत्म हो जायेगा। वह दिन भी बहुत दूर नहीं दीखता। मुझे लग रहा है कि सब जलकर एक बार फिर निर्माण होगा। यह प्रश्न है कि जो आग जल पड़ी है वह जला तो देगी लेकिन इसमें क्या बीज भी जलकर राख हो जायेगा ? क्या बीज भी नहीं बचेगा ? अगर बीज को भी बचा पाये तो जब समाज की हवा उल्टी दिशा में जायगी तो इन बीजों को आश्रय करके फिर नयी कोपलें पनप जायेंगी। अब जिसको आप करने के लिए छटपटा रहे हैं, वह भी सारे बिहार और हिन्दुस्तान को छोड़कर सहरसा में, उसके लिए जगह-जगह नौजवान खुद ही खड़े हो जायेंगे और ग्रामस्वराज्य हो जायगा। अगर दस आदमी भी बिहार में बच जायेंगे तो उनके इशारे पर ग्रामस्वराज्य होगा। लेकिन आज कुछ नहीं हो सकता। आज इतना ही प्रश्न है कि क्या इन बीजों को भी नष्ट होने से बचा सकेंगे ? और आज जो सहरसा में काम करते हैं उसका महत्त्व यही है कि इस तीक्ष्ण ज्वाला के बीच खड़े होकर, अपने जीवन की बाजी लगाकर, उस दीपशिखा को धीमी गति से भी जलाये रखने की कोशिश है। इससे अधिक की आशा हम आज नहीं करते।

काम में ही आनन्द की अनुभूति

मैं इसको अच्छी चीज मानता हूँ। मुझे इसके लिए दिल में कोई दुख नहीं है। मुझे अफसोस यही है कि जो इसमें काम करनेवाले हैं उनके दिलों में शान्ति क्यों नहीं ? हाल ही में जयप्रकाशजी मुजफ्फरपुर में बीमार पड़े थे। मैं और मेरी स्त्री, दोनों मिलने गये। मैंने देखा, वे बहुत उदास हैं। मैंने कहा कि हम तो देखने आये हैं, लेकिन हमें किसी बात की

चिन्ता नहीं लगती। तो प्रभा (श्रीमती प्रभावतीजी) ने मुझे बताया कि जे० पी० ११ अक्तूबर से रिटायर कर रहे हैं। लेकिन मुझे ग्यारह-बारह कुछ समझ में नहीं आता। अगर चिन्ता है और डाक्टर कहता है तो १ जनवरी से ही चले जाओ, छोड़ो। हमने कहा' 'देखिए जयप्रकाशजी यह ११ अक्तूबर से कुछ नहीं होगा। प्रश्न है कि आपके हृदय में शान्ति क्यों नहीं है? मन में आनन्द क्यों नहीं है? इस बात का अफसोस मुझे है। हमने उनसे कहा कि देखिए हर आदमी के मन में इच्छा रहती है कि जीवन में कुछ करें। आपने इस जीवन को मानव-समाज की सेवा में लगा दिया है। आपने अपने जीवन को, शरीर को, प्राण को, खपा-गलाकर मानव-सेवा में लगा दिया है। आपने निश्चय किया कि जीवन को समाज की सेवा में लगाना है, और आपने उसे समाज की सेवा में लगा दिया। अब उसका आनन्द क्यों नहीं?' उनकी बगल में कुछ लोग बैठे थे मुँह लटकाए हुए। मैंने कहा कि ये चारों तरफ जो लोग बैठे हैं सब मुँह लटकाए, यह क्यों? अपना भी मूड खराब होता है, आपका भी मूड खराब करते हैं। 'खादी-ग्रामोद्योग सब नहीं चलता।' क्या फालतू बात है। आपको विश्वास नहीं है, इसको छोड़ दो, बस बनाओ, और विश्वास है तो आनन्द से रहो। आज इस काम को कर रहे हो तो विश्वास और आनन्द के साथ करो। अगर आनन्द नहीं मिलता तो छोड़ दो। कोई बाँधकर रखता है? मुँह क्यों लटकाये रहते हो? हमने कहा कि जब आप अमेरिका से आये थे और मैं कालेज छोड़कर आया था और हम दोनों आजादी की लड़ाई में उतर पड़े थे। उस वक्त भी क्या आशा थी कि देश आजाद होगा—अपनी जिन्दगी में? आप उस दिन की याद कीजिये, उस समय हम लोगों को उम्मीद नहीं थी कि हमलोग आजादी देख पायेंगे। यह सब तो कभी कल्पना में भी नहीं था कि एसेम्बली के मेम्बर बनेंगे, पार्लियामेण्ट के मेम्बर बनेंगे। हमलोगों की कल्पना थी कि हमलोग इसमें जान देनेवाले हैं।

हमने कहा, 'जयप्रकाशजी मुझे बताइए कि उस समय कितना आनन्द था। किस मस्ती में घूमते थे?' तो जयप्रकाशजी ने कहा, 'हाँजी, वह ठीक कहते हो।' मैंने कहा, 'आज क्या कारण है? आपने तो पूरे जीवन का बलिदान कर दिया, कोई चीज बाकी नहीं रही, फिर आनन्द क्यों नहीं? और यह आनन्द जब तक उचित (रेस्टोर) नहीं होगा, कितना भी आराम कीजिये, कुछ होनेवाला नहीं।' कभी कहते हैं कि देश का क्या हो रहा है? कभी कहते हैं कुछ बिगड़ रहा है। आप इसको खत्म कीजिये। उन्होंने कहा, 'तुम्हारा मतलब है काम में आनन्द।' मैंने कहा—'हाँ काम में ही यह आनन्द। क्यों खो दिया? जब तक आनन्द का अनुभव नहीं होगा काम ठीक भी नहीं होगा।'

नये समाज के निर्माण के आधार

राजनैतिक पार्टियों के पास तो आधार नहीं रह गया है। वह समाप्त हो चुका। धार्मिक संस्थाओं के पास कुछ रहा नहीं। इनसे मुझे आशा भी नहीं। दिल में ऐसी आशा थी कि आप के पास से कुछ निकले, लेकिन मैं पूरे तौर पर आप की हालत से सन्तुष्ट नहीं हूँ, क्योंकि मुझे लगता है कि आप में भी लोग धीरे-धीरे विश्वास खोने लगे हैं। लेकिन फिर भी मुझे लगता है कि अगर बिहार में ५० भी निकल गये तो मैं समझूँगा कि उनके हाथों से कुछ होगा। क्योंकि आप कई चीजों में उलझ गये हैं। आप को सिर्फ तीन 'प्वाइन्ट' बता दूँगा। प्रत्येक जीवन के तीन बिन्दु होते हैं (१) व्यक्ति (२) समाज (३) भगवान।

(१) व्यक्ति का अपने जीवन की आवश्यकता होती है, उसको कोई काट नहीं सकता। और मैं कोई साधु भी नहीं हूँ। मेरी स्त्री है, बच्चे भी हैं—इसलिए मैं जानता हूँ कि व्यक्ति के जीवन की जो आवश्यकता है वह तो है ही उसकी आवश्यकता की पूर्ति के लिए कुछ करना भी पड़ता है। प्रश्न इतना ही उठता है कि व्यक्तिगत जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही जीवन को मिटा देंगे या और भी कुछ सोचेंगे? मुझे अफसोस है कि कम-से-कम खादी-ग्रामोद्योग संघ जैसी संस्थाओं में, जो सर्वोदयवादी कहलाते हैं अधिकतर व्यक्तिगत प्रश्नों में उलझ गये हैं। धर्म-अधर्म दोनों की सीमा को पारकर वे व्यक्तिगत प्रश्नों को सुलझाना चाहते हैं। सीमा को छोड़कर आगे बढ़ गये हैं। अर्थात् व्यक्तिगत प्रश्नों में इतना अधिक उलझ गये हैं कि वही सब कुछ हो गया है। याद रखिये कि व्यक्तिगत प्रश्न का महत्त्व बहुत बड़ा है लेकिन वही सब कुछ नहीं है। जिस दिन व्यक्तिगत प्रश्न ही सब कुछ हो जायगा उस दिन मनुष्य पशु हो जायगा और उस पशु से और काम तो लिया जा सकता है, सर्वोदय-समाज बनाने का काम नहीं लिया जा सकता।

(२) दूसरा मुद्दा आता है समाज। जिस समाज में आप रहते हैं उसके लिए भी कुछ करना। आप दस आना दीजिए व्यक्तिगत प्रश्नों को, चार ही आना समाज को द दीजिए लेकिन कुछ थोड़ा-सा दीजिये। जिसका पन्द्रह आना व्यक्तिगत प्रश्नों में जाता है उसको कहूँगा कि १ पैसा भी समाज को दो। सिर्फ व्यक्तिगत प्रश्नों में ही न उलझ। पर इससे भी काम नहीं चलेगा।

(३) आपको तीसरा मुद्दा भी पकड़ना पड़ेगा, अगर आप सर्वोदय-समाज बनाना चाहते हैं। और, वह है अध्यात्म। तीनों का समुचित समन्वय। इन तीनों का समन्वय होना चाहिए और यह समन्वय समुचित होना चाहिए। हम आपको नीचे से ऊपर ले गये—व्यक्तिगत, सामाजिक और आध्यात्मिक। अब ऊपर से नीचे आइये जैसा कि गांधीजी ने कहा है: 'मेरे जीवन का तो मुख्य लक्ष्य है भगवान को पाना। उन्होंने कहा कि मेरा मुख्य लक्ष्य है भगवान को पाना और भगवान को पाने के लिए आजादी की लड़ाई लड़ूँगा एवं भगवान के पाने के

(शेष पृष्ठ ४६८ पर)

दृष्टिकोणों का दृष्टिकोण

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

दिल्ली गया था। गयी दिल्ली में एक विशाल प्रदर्शनी हो रही थी। मैं भी उसे देखने चला, तो सवारी मिली तांगा। तांगेवाला एक पुराना खानदानी आदमी था—दिल्ली के ईंट-ईंट से परिचित। मुझे रास्ते की चीजों का हाल-चाल बताता तांगा हांक रहा था।

बातों बातों में बोला "बाबूजी घूमने का मज़ा इन कम्बख्त मोटरों, मोटर-रिक्शाओं और बसों ने खो दिया। लाख सवारियां हों पर घूमने का मज़ा तांगे में है कि धीरे-धीरे चले जा रहे हैं, यह देखा—वह देखा। घर पहुँचे तो लगा कि दुनिया देख आये। अब मोटर में क्या है? जा रहे हैं दौड़े हुए कि जैसे बाढ़ में बहे जा रहे हों, न किसी बिल्डिंग की कारीगरी दिखाई दे, न साइनबोर्डों के नाम पढ़े जायें। अब भला कोई पूछे इनसे कि अरे भाई सैर के लिए निकले हो तो सैर की तरह सैर करो, कुछ लुत्फ लो। यह क्या कि जा रहे हों लुढ़के-पुढ़के, जैसे आंधी से पत्ते।

तांगेवाले की भाषा तो लच्छेदार थी ही, कहने का ढंग भी रंगीला था। सोचा—"यह आदमी तो विश्व की सवारी-परिषद में भारत का प्रतिनिधि होने लायक है।"

प्रदर्शनी देखकर लौटा तो मिली टैक्सी। सरदारजी ड्राइवर ही नहीं स्वयं मालिक भी थे—पुराने खानदानी मोटर-वाले। मन में आया, इनकी राय भी मालूम की जाय। जरा घुमाकर कहा—"जाते समय तो सरदारजी हम तांगे में गये थे—टैक्सी कोई मिली ही नहीं।"

बस बात चल पड़ी और सरदारजी जिस चौराहे पर आये वह यह था—"बाबूजी, यों बैठ जाओ चाहे तांगे में और चाहे डोली में, पर शाही सवारी तो मोटर ही है। आंधी आये या लू चले और चाहे बारिश सौ बार अपनी ऐसी-तैसी कर लें, बस बैठे जा रहे हैं, जैसे माँ की गोद हो कि न धचक, न दचक। चले जाओ बैठे हुए, जैसे साहब का ड्राइंग रूम ही उड़ा जा रहा हो। यह बात और किस सवारी में मिल सकती है बाबूजी?"

मैंने सोचा: तांगेवाले की बात सुनी थी, मोटरवाले की भी सुन ली। दोनों की बहस आमने-सामने हमारी पार्लियामेण्ट में हो, तो बहुत से गमसुम सदस्य भौंचक देखें, पर प्रश्न तो यह है कि दोनों की भाषा पर नम्बर देने के लिए निर्णायक मुझे बना दिया जाये तो मैं किसे प्रथम और किसे द्वितीय कहूँगा?

दिल्ली से घर आते समय रेल में एक भले यात्री का साथ रहा। बातों-बातों में तांगे-मोटर का यह दृष्टिकोण भेद उन्हें सुनाया तो खूब हँसे और बोले "दृष्टिकोण के सम्बन्ध में एक संस्मरण मेरा भी है। दिल्ली से अम्बाला जाते समय पिछली बार पैसेंजर गाड़ी में बैठना पड़ा तो बहुत अखरा कि एक सौ कुछ मील के सफर के ८-९ घण्टे लग गये पर अम्बाला से मैं अपने गाँव गया तो सुना कि एक बुढ़िया दूसरी बुढ़िया से कह रही थी—"अबकी बार बहन—रेल में मैंने यह नया जुल्म देखा कि मेल गाड़ी में बैठने को टैम तो कम मिलता है पर किराया देना पड़ता है ज्यादा।" सुनकर मुझे हँसी आयी कि बुढ़िया का गणित एकदम ठीक है कि "जितनी देर बैठाओ, उतना पैसा लो, यह क्या कि बैठाते हो पैसेंजर से कम समय और किराया लेते हो अधिक।"

सोचा: "दृष्टिकोण तर्कों की रचना में कितना चतुर होता है?"

मेरे नगर में पहले बहुत तांगे थे पर विभाजन के बाद साइकिल एवं रिक्शों का ऐसा जोर बंधा कि तांगे उंगलियों पर गिने रह गये। उस दिन शहर से लौटते हुए देर हो गयी तो तांगे में बैठ गया। तांगेवाला अपना पुराना दोस्त, बातें चल निकलीं—"कहो भैया, कैसी गुजर रही है? अब तो मुल्क आजाद है—पहले की तरह कोई पुलिस-वुलिसवाला तो तंग नहीं करता?"

"बाबू – पुलिस वुलिसवाला तो कोई तंग नहीं करता, बड़े दारोगाजी भी बैठते हैं, तो पूरे पैसे देते हैं, पर बाबूजी इन रिक्शों ने आजादी का मजा बिगाड़ दिया।"

"रिक्शेवालों ने आजादी का मज़ा बिगाड़ दिया? क्या मतलब तुम्हारी बात का?" आश्चर्य से मैंने पूछा तो बोला वह—"जवाहरलाल ने अंग्रेजों को तो हिन्दुस्तान से भगा दिया पर ये रिक्शे उनसे नहीं भगाये गये।"

"हाँ, रिक्शों से तांगों को बहुत नुकसान हुआ है भैया।" मैंने उसे हमदर्दी दी तो उलटकर बोला, "ना बाबूजी यह बात नहीं है, बात यह है कि ये रिक्शे बहुत मनहूस हैं।"

"कैसे?"

"बाबूजी, तांगे में घोड़ा जुड़ता है, तांगेवाला है, घासवाला है, नालबन्दवाला है, लुहार-बढ़ई हैं, मालिश करनेवाला है और इनके बीबी-बच्चे हैं, घोड़े की कमाई में इन सबका साझा है, सबको रोटी मिलती है—रिक्शे में यह बात कहाँ है?"

घर आ गया था, मैं उतर गया, बात यहीं रह गयी, पर रिक्शे के सम्बन्ध में तांगे का दृष्टिकोण मुझे मिल चुका था। तीन-चार दिन बाद मैं फिर शहर गया तो रिक्शे में था। मुझे तांगेवाले की बात याद आयी तो सोचा तांगे के सम्बन्ध में रिक्शेवाले की राय मालूम हो तो तस्वीर पूरी हो जाय।

कहा—"सुना है भैया शहर में फिर तांगों की तादाद बढ़नेवाली है?" बोला—"बाबूजी, सरकार मालिक है, चाहे जो करे, पर अकल की बात तो यह है कि जितने तांगे हैं उन्हें भी बन्द कर दिया जाए।"

"क्यों भैया ?"

"बाबूजी, तांगा नरक की जड़ है। आप अपने घर के बाहर का फर्श जीभ से चाटकर शीशे-सा चमका दो पर दस मिनट भी साफ नहीं रह सकता। तांगा आकर खड़ा हुआ कि घोड़े ने पेशाब किया। अब उसके पास तो बदबू के मारे अपने तिमंजिले पर भी नहीं बैठ सकते।"

जरा चुप रहकर वह बोला—"बाबूजी, तांगे का नरक इन भंगियों से पूछो। सुबह ही सुबह बेचारे सड़क साफ करते हैं। कमर टूट जाती है—और हाथ ऐंठ जाते हैं, पर वे झाड़ू लगाकर सीधे भी नहीं हो पाते कि तांगे का घोड़ा फुदक-फुदक लीद करता चला जाता है और सारी सड़क ऐसी हो जाती है जैसे कोढ़ी के हाथ-पैर। अब बताओ तांगा नरक की जड़ है या नहीं ?"

सुनकर सोचा—"तांगेवाला हाईकोर्ट तक पहुंचा, तो रिक्शेवाला सुप्रीमकोर्ट तक और दोनों इतने बड़े वकील हैं कि सैकड़ों एल० एल० बी० खड़े उनका मुंह ताका करें।"

हंसी आयी, तो चिन्तन की बेल में कोंपल भी फूटी। आखिर क्या बात हुई यह ? बात हुई दृष्टिकोण की। हम जीवन में बहुत कुछ देखते हैं पर देखने का ही कोई विशेष महत्त्व नहीं है। बम्बई मेल में बैठकर हम दिल्ली से बम्बई जाते हैं तो रास्ते में क्या नहीं देखते, पर क्या देखते हैं ? देखने का महत्त्व तब है जब देखते समय हमारी खोपड़ी पर जड़ी-चमकती दो आंखों के साथ दिल की गुदड़ी में छिपी ज्ञान की आंख भी खुली हो, पर इससे भी बड़ा महत्त्व है दृष्टिकोण का—'ऐंगिल ऑव विज़न' का, इसका कि किसने किस चीज को किस नजर से देखा।

दिल्ली का तांगेवाला और टैक्सी-वाला, रेल में मिले बन्धु के गांव की बुढ़िया, मेरे नगर का तांगेवाला और यह रिक्शा मास्टर—सब अपनी-अपनी जगह खड़े ताजमहल की तस्वीर खींच रहे हैं। सबकी तस्वीर अलग है, हालांकि ताजमहल एक है। क्यों ? क्योंकि सबका दृष्टिकोण एक नहीं।

संसार में दृष्टिकोण के भेद से मत-भेद जन्म लेता है, मतभेद को महत्त्व देने से मतभेद बन जाता है। तब उपजता है क्रोध, तब उपजती है हिंसा, तब उमड़ती है प्रतिहिंसा और ठन जाते हैं युद्ध—विनाश के खेल।

फिर उपाय क्या है ? क्या यह कि सबको एक ही जगह खड़ा कर दिया जाये कि सब एक ही जगह से तस्वीर उतारें, सबकी तस्वीर एक ही हो, मतभेद की सम्भावना ही समाप्त हो जाय ?

हां, यही उपाय है, पर प्रश्न है कि इस उपाय का उपाय क्या है ? सबको एक ही जगह कैसे खड़ा किया जाय ? सबका दृष्टिकोण एक ही कैसे बनाया जाय ?

एक उपाय है अस्त्र का, एक उपाय है विचार का। अस्त्र है राजनीति का साधन, विचार है धर्म का साधन, पर क्या दोनों में से किसी एक को सफलता मिल सकती है ? अतीत और वर्तमान में हिरण्यकशिपु और कंस एवं हिटलर तथा स्तालिन राजनीति के अग्रदूत थे, तो अतीत और वर्तमान में वे धर्म के अग्रदूत, जिन्होंने ईसा को शूली पर टांगा, ब्रूनो को जिन्दा जलाया, दयानन्द को कांच पिलाया और गांधी के सीने में गोलियां मारी, पर क्या उन्हें सफलता मिली ?

इतिहास साक्षी है दोनों असफल रहे और विज्ञान साक्षी है दोनों सदा असफल रहेंगे। क्यों ? क्योंकि प्रकृति त्रिगुणात्मयी है, उसका स्वभाव है विविधता। हर आदमी का चेहरा अलग है, आवाज़ अलग है, रुचि अलग है। इस स्थिति में सब के दृष्टिकोण की एकता कैसे सम्भव है ? फिर विज्ञान और कला का विश्वव्यापी विकास इस अनेकता के कारण ही तो हुआ है। अनेकता न हो, तो यह संसार कहां रहे ?

इस बात का क्या अर्थ ? क्या यह कि दृष्टिकोण की विविधता सदा रहेगी और उससे मतभेद, मनभेद, क्रोध, हिंसा, प्रतिहिंसा और युद्ध होते रहेंगे ? यदि हां तो क्या विश्वशान्ति की चिर भावना एक ख्याली पुलाव ही है ?

यह क्या बात हुई ? और क्या कहा इस बात ने ? यह बात हुई दृष्टिकोण की और इसने इस प्रश्न का उत्तर दिया कि दृष्टिकोण की विविधता सदा रहेगी और यह असम्भव है कि सबका दृष्टिकोण एक हो, इस स्थिति में समन्वय यह है कि हम अपने दृष्टिकोण से देखें, उससे बनी राय को पूरा महत्त्व दें, पर दूसरों के दृष्टिकोण की उपेक्षा न करें। और उनपर अपनी राय न लादें।

दूसरे की राय सुनकर भी सम्भव है मुझे मेरी राय ही ठीक जंचे और मैं उस पर दृढ़ रहूं, पर तब भी मैं यह क्यों न मानूं कि दूसरे के लिए उसकी राय भी उतना ही ठीक है।

फिर यह भी तो सम्भव है कि स्थान और परिस्थिति के भेद से अपनी-अपनी जगह दोनों ही बातें ठीक हों। मैं अपने पिता का पुत्र हूं यह ठीक ही है, पर मैं पुत्र ही तो नहीं हूं, अपने पुत्र का पिता भी तो हूं। रहमान मेरे पास अपनी परेशानी में आया, मैंने उसे १० रुपये दिये। सबसे कहता है। उनका हाथ बड़ा मुलायम है, पर जयगोपाल आया तो मुझे परिस्थितिवश इनकार करना पड़ा। सबसे कहता है— उनका हाथ बड़ा सख्त है। अब कौन गलत है और कौन सही ?

तो हम अपनी राय पर दृढ़ रहे, पर दूसरे की राय पर अपनी राय न चढ़ायें, उसे नगण्य न मानें। इससे मतभेद के आगे एक दीवार खिंच जाती है और मतभेद, क्रोध, हिंसा, प्रतिहिंसा एवं युद्ध नहीं हो पाते। यह भी एक दृष्टि-कोण ही है, पर यह समन्वय का अनेका-न्तवादी दृष्टिकोण है—दृष्टिकोणों का दृष्टिकोण, भारत के ज्ञानकोष को भगवान महावीर का प्रेमोपहार।

—दि० नि० दि० सेवा, इन्दौर

डाकुओं का आत्म-समर्पण : एक अवलोकन

● नारायण देसाई

मुझे ११ अप्रैल से १६ अप्रैल तक श्री जयप्रकाशजी के साथ चम्बल घाटी क्षेत्र में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और मैं बागियों के आत्म-समर्पण का साक्षी बन सका। आपको आत्म-समर्पण की बात बताने के पहले मैं चाहूँगा कि १९६० में विनोबाजी के समक्ष डाकुओं के हुए आत्म-समर्पण और इस बार के आत्म-समर्पण की एक तुलनात्मक समीक्षा कर लूँ।

१. १९६० में २० डाकुओं ने आत्म-समर्पण किया था जब कि इस बार १६२ ने किया।

२. उस घटना के पीछे आध्यात्मिक प्रेरणा काम कर रही थी जबकि इस बार सामाजिक, राजनैतिक और नैतिक प्रेरणा काम कर रही थी।

३. वह घटना अनियोजित थी। इस बार का पूरा समर्पण पूरी तरह से नियोजित था। सर्वोदय कार्यकर्ता श्री महावीर सिंह और श्री हेमदेव शर्मा ने तहसीलदार सिंह और पंडित लोकमन के साथ बागियों से सम्पर्क स्थापित किया और स्वयं जे० पी० केन्द्रीय गृह-मन्त्रालय, तथा सम्बन्धित मुख्यमन्त्रियों से बातचीत व पत्र-व्यवहार किया और प्रधानमंत्री से भी मिले।

४. १९६० में डाकुओं के आत्म-समर्पण के समय पुलिस का खुला विरोध था जबकि इस बार सरकार व पुलिस का समर्थन प्राप्त था।

५. उस समय डाकुओं से सम्पर्क करना कठिन काम था। इस बार का काम आसान हो गया था। दो सफेद रंग की जीपें, जिनपर 'चम्बल घाटी शान्ति मिशन' लिखा हुआ था, सम्पर्क के लिए थीं। इस जीप से कोई भी कहीं जा सकता था और डाकुओं से बात कर सकता था।

माधो सिंह ने समर्पण के पहले अपनी ५ शर्तें रखी थीं। मुख्य शर्त थी कि किसी को फांसी न दी जाय। जयप्रकाशजी इसे मानते थे कि जब समर्पण करेंगे तो उन्हें फांसी क्यों देनी चाहिए? इस सम्बन्ध में गृह-मन्त्रालय से बातचीत हुई है कि किसी भी आत्म-समर्पणकारी डाकू को फांसी नहीं दी जाय। दूसरी शर्त यह थी कि तीनों प्रान्तों—राजस्थान, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश—के संयुक्त न्यायालय की व्यवस्था हो। तीसरी शर्त थी कि ६ महीने में सभी केस पेश कर दिये जायें और दो-तीन साल में मुकदमे का फैसला हो जाय। चौथी शर्त थी, जेल में उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाय। पाँचवीं शर्त थी कि उन्हें बेड़ियाँ न पहनायी जायें। सरकार ने भी अपनी ओर से कुछ शर्तें रखी थीं—इन डाकुओं को बहुत बड़ा 'हीरो' नहीं बनाना चाहिए। उन लोगों को माला नहीं पहनानी चाहिए। उनकी आमसभा नहीं की जानी चाहिए तथा उनकी प्रशंसा नहीं छपनी चाहिए। फोटो नहीं लिये जाने चाहिए। इस विषय पर खींचातानी चल रही थी। जयप्रकाशजी को ये सारी बातें पसन्द नहीं थीं। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री पी० सी० सेठी चाहते थे कि समर्पण की रस्म किसी बन्द कमरे में हो। श्री जयप्रकाशजी ने इसे स्वीकार नहीं किया। फिर सरकार ने कहा कि आमसभा हो मगर पगारा डैम पर हो, जौरा में न हो। उनको भय था कि जौरा में ज्यादा लोग आ जायेंगे। मगर उनकी यह बात भी कबूल नहीं हुई और जौरा में ही सभा करने की बात काफी वाद-विवाद के बाद तय हो पायी।

पहले दिन समर्पण-समारोह में श्री सेठी भी उपस्थित हुए। उन्हें समर्पण का कार्यक्रम इतना अच्छा लगा कि दूसरे दिन के समारोह में वह अपनी पत्नी के साथ उपस्थित हुए और बाद में तो श्री सेठी ने प्रेस-कांफ्रेंस भी की। फोटो लेने की इजाजत नहीं थी, पर शुरू से आखिर तक फोटो लिये गये। टेपरेकर्ड भी हुए। अनेक बागियों की मुलाकातें भी पत्रकारों ने लीं।

जो कुछ भी हुआ, उसमें जयप्रकाशजी की भावना यही थी कि इसमें मेरा श्रेय कुछ भी नहीं है। यह सब ईश्वर की कृपा है और मैं अपने आपको इसके योग्य बिलकुल नहीं पाता हूँ। इस भावना को वह अपने व्याख्यान में बराबर दुहराते रहे।

मोहर सिंह सबसे बड़ा डाकू माना जाता है। सबसे पहले वह पगारा डैम पर जे० पी० से मिलने आया। अनेक सरकारी पक्ष के लोग मोहर सिंह के आत्म-समर्पण करने में सन्देह प्रकट कर रहे थे। स्वयं श्री सेठी को भी विश्वास नहीं हो पा रहा था। परन्तु जब उसने शस्त्र रख दिया और आत्म-समर्पण कर दिया तो कबूल करने के सिवाय दूसरा कुछ बचा ही क्या? मोहर सिंह काफी लम्बा-चौड़ा डीलडौल का, बड़ी बड़ी *मूछोंवाला आदमी*, सचमुच डाकुओं के बारे में जैसा सुना जाता है। जब वह प्रत्यक्ष उपस्थित हुआ तो उसके जितना लम्बा डाकुओं में केवल एक ही था। मोहर सिंह पर १७९ हत्या के केस हैं और भी बहुत प्रकार के आक्षेप उसपर लगाये गये हैं। वह देखने में बिलकुल बाल-स्वभाव का लगा। लिखना-पढ़ना बिलकुल नहीं और बोलता भी बहुत ही कम था। वह आकर जयप्रकाशजी के सामने बैठ गया। जयप्रकाशजी ने उससे कहा कि, 'फांसी नहीं देने की बात मैंने मान ली है और मुझे इस सरकार से आश्वासन भी मिल गया है। लेकिन अगर आपमें से किसी एक को भी फांसी मिली तो आपमें से एक की जान मेरी जान के बराबर होगी और मैं अनशन करके मरूँगा, मगर मैं फांसी को बर्दाश्त नहीं करूँगा, जयप्रकाशजी की इस बात से हम स्तब्ध रह गये। मोहर सिंह पर

श्री माधो सिंह जे० पी० द्वारा की गयी अपील को पढ़ते हुए

इस बात का बिजली का-सा असर हुआ। वह बाँध पर से उछलते हुए, चिल्लाते हुए कहा कि बाबूजी (जे० पी०) ने कहा है कि उनकी जान मेरी जान के बराबर है··· हमारी जान उनकी जान के बराबर है ·· नाचता-नाचता डैम के नीचे, जहाँ वह रहता था, चला गया। वहाँ पर सबसे कहा कि बाबूजी ने कह दिया है कि हमारी जान उनकी जान के बराबर है। अब क्या रहा! फिर तो जो भी अखबार-वाला जाता था और पूछता था कि आप क्या करेंगे तो उसका एक ही उत्तर था, बाबूजी (जयप्रकाशजी) जो कहेंगे करूँगा। अगर बाबूजी नहीं बतायेंगे तो नहीं करूँगा।

मोहर सिंह और माधो सिंह का व्यक्तित्व एक दूसरे से काफी भिन्न है। माधो सिंह बड़ा खतरनाक, सोचनेवाला, समझनेवाला और हर आदमी से हर ढंग से बात करनेवाला।

मोहर सिंह समर्पण के लिए ९ तारीख से ही आकर बैठा था। उससे कोई पूछता, क्यों भाई, इतना पहले से क्यों आ गये ? तो कहता कि सबसे पहले मेरा समर्पण होगा। माधो सिंह ने एक महीना पहले ही कह रखा था कि सबसे पहले समर्पण मोहर सिंह का ही होगा, मेरा नहीं। वह मानता था कि मोहर सिंह बड़ा है और उसीको पहला अवसर मिलना चाहिए।

१३ तारीख को रात को सरूप सिंह आया। सरूप सिंह और मोहर सिंह ने पगड़ी बदली थी और इस प्रकार दोनों में भाई से भी ज्यादा दोस्ती थी। सरूप सिंह ने कहा कि तुम पहले समर्पण कैसे करोगे ? दोनों हाथ में हाथ मिलाकर समर्पण करेंगे। यह बात मोहर सिंह ने मान ली। पर सरूप सिंह ने कहा कि मगर मैं तो समर्पण करने आया नहीं हूँ, केवल जे० पी० से बात करने आया हूँ। मुझे तो अपने रिश्तेदारों से मिलना बाकी ही है। इसलिए तुम कल समर्पण मत करो। अब यह एक पेच आ गया। अब क्या हो ? समर्पण पहले करना, यह भी मन ही करता है। एक बाधा आयी। सरूप सिंह को उनके सम्बन्धियों से मिलाने के लिए तत्काल जोर की व्यवस्था हुई और वह सबसे भेंट करके १४ तारीख को हाजिर हो गया। दोनों ने एक दूसरे का हाथ पकड़कर आत्म-समर्पण किया।

एक घटना हुई। उन लोगों के आपसी बैर भी हैं और वह बैर सरकार ने हथियार देकर प्रति-डाकू पैदा किया है। वैसे लोगों से भी ये लोग मिले। बाद में इन्होंने माँग की कि इनके दुश्मनों से जेल में मुलाकात करायी जाय। वे लोग उनसे अपनी भूलों के लिए क्षमा माँग लेंगे। अगर माफी देंगे तो समस्या हल हो जायेगी। डाकू लोग मानते हैं कि अगर उनकी यह दुश्मनी नहीं मिटी तो वे लोग उनके परि-वार को परेशान करेंगे।

समर्पण के बाद पाँच कार्यकर्ताओं को जेल में भेजा गया और एक-एक से मिल-कर व्यक्तिगत माँगों की सूची बनायी। वह सूची जयप्रकाशजी को दे दी गयी है।

श्री महावीर सिंह माधो सिंह के सम्बन्धी हैं और स्थानीय बोली बोलते हैं, इसलिए डाकुओं को समझाने में आसानी होती है—खास तौर से मोहर सिंह को। एक उदाहरण — बम्बई की सुश्री मनोरमा बहन की इच्छा थी कि बागियों को राखी बाँधी जाय। जे० पी० की सूत की गुण्डियाँ मिलीं थीं उसकी राखियाँ बनायी गयीं। अब यह समस्या पैदा हुई कि अगर बागियों को राखी बाँधी जायेगी तो उनके पास जो कुछ भी है वह सब लुटा देंगे। सौ-सौ का नोट देना उनका रिवाज था। मोहर सिंह को कोई राखी बाँधे और वह सौ रुपये से कम दे, यह उसकी शान के खिलाफ था। श्री महा-वीर भाई ने समाधान निकाला और उसे समझाया कि 'यह राखी क्यों बाँध जा रही है, परिवार में शामिल करने के लिए। उसने कहा, 'ठीक बात है'। 'तो अपने परिवार में सबसे बड़ा कौन है ?' 'बाबूजी'। 'बाबूजी ने कहा है कि हमारे लड़कों को हमारी लड़कियाँ राखी बाँधेंगी और परिवार की ओर से बाबूजी लड़कियों

को एक-एक रुपया देंगे। आप लड़कों को कुछ नहीं बोलना है।' मोहर सिंह ने कहा, 'बाबूजी ने कहा है तो ठीक है।' इतना समझाने में दो घण्टे लगे।

समर्पण के चार समारोह हुए। पहला समारोह पगारा डैम पर हुआ। इस समारोह को जे० पी० ने ज्यादा महत्त्व दिया। इसमें शस्त्र-समर्पण तो नहीं हुआ, लेकिन प्रभावतीजी ने तिलक लगाया और जे०पी० इनसे एक-एक करके गले मिले। बागियों ने जूते उतार-उतारकर दोनों के पैर छूये। इससे लोग गद्गद् हो गये।

जौरा में दूसरा समारोह हुआ। जौरा एक बड़ा गाँव है। वहाँ सुब्बारावजी का आश्रम है। काफी ऊँचा मंच बना था। शामियाना लगा था। काफी बड़ा घेरा बनाया गया था ताकि दूर-दूर से लोग देख सकें। श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि सारा समर्पण गांधी और विनोबा के चित्र के सामने हो, और वही हुआ।

श्री सेठी इस समारोह में आये थे। वह खुद ही माधो सिंह से मिले। माधो सिंह ने उनसे हाथ मिलाया और बोला, 'साहब, अगर आप का सहयोग न मिलता तो यह काम न होता।' सेठी ने कहा कि 'नहीं, नहीं, यह सब आपके ही सहयोग से हो पाया है।' उसने सेठी से कहा कि अगर आप एक महीना और समय दे दीजिए तो सभी का समर्पण हो जायगा। श्री सेठी ने कहा, 'एक महीना तो नहीं, लेकिन १५ दिन का समय देंगे।'

समर्पण के दूसरे दौर में हुआ यह कि समर्पण का समय था तीन बजे, बागियों के आने में देर हुई। पुलिस के लोगों ने कहना शुरू किया कि साहब! समर्पण—अर्पण होगा नहीं, सर्वोदयवाले बड़े भोले लोग हैं, इनको सब अच्छा ही अच्छा दीखता है। इस बातचीत को दो मिनट भी नहीं हुए कि वे लोग आ गये। शस्त्रों के ढेर हो गये। कई प्रकार की बन्दूकें—लाइट मशीनगन, स्टेनगन, टेलिस्कोपिक राइफल आदि। शस्त्र बहुत ही कीमती हैं।

दो समारोह खुले तौर पर हुए। पर इसके बाद कुछ लोग आये और कहने लगे, "हम तो समर्पण करने आये हैं।" फिर जे० पी० जहाँ ठहरे थे वहाँ ही समारोह हुआ और समर्पण हुआ। लोगों का कहना था कि एक आदमी नहीं आया। अगर वह नहीं आयेगा तो वही गड़बड़ करेगा, परन्तु वह भी अन्तिम दिन ग्वालियर में आया—नाथूसिंह। उसने कहा, 'मैं भी पहुँच गया।' किसी ने कहा, 'आपकी तो लम्बी दाढ़ी थी।' उसने कहा, 'क्या था वह जाने दीजिए, आज जो है वह आपके सामने है।'

अब 'चम्बल घाटी शान्ति मिशन' वहाँ काम करेगा, जिसकी अध्यक्षता जयप्रकाशजी ने स्वीकार की है और देवेन्द्र भाई तथा स्वामी कृष्णानन्दजी उपाध्यक्ष बने हैं। श्री महावीर सिंह और हेमदेव शर्मा मंत्री हैं। अनेक उप-समितियाँ भी बनी हैं।

एक बात और, बुन्देलखण्ड के डाकुओं ने भी इस तरह की तैयारी बतायी है। उनलोगों की माँग है कि अगर तहसीलदार सिंह आयें तो वे भी आत्म-समर्पण करेंगे।

(पृष्ठ ४५८ का शेष)

लड़का सैंतीस बीघा रह जायगा; पोतों में और कम हो जायगी। उस वक्त वे अपने इस चरित्र को लेकर दुनिया में कैसे खड़े होंगे?

१० अप्रैल

शिक्षकों की सभा हुई। जब बीघे-कट्ठे की बात कही गयी तो एक पंडितजी उठकर खड़े हुए, और बोले, 'बीघे-कट्ठे की बात बड़े लोगों से कहनी चाहिए।' मैंने कहा; 'यह आन्दोलन बड़े लोगों के पीछे दौड़ने का नहीं है। यह छोटों को बड़ा मानता है।' उनकी आँखें चमक उठीं। उन्होंने कहा, 'मेरे पास कुल दस कट्ठे भूमि है। उसमें से १।२ कट्ठा का दान स्वीकार किया जाय।'

(पृष्ठ ४६३ का शेष)

लिए लड़ाई लड़ते हुए दोनों शाम के खाने का भी इन्तजाम करूँगा। भगवान को पाना है उसके लिए आजादी की लड़ाई लड़नी है और इसके साथ-साथ व्यक्तिगत जीवन का भी प्रबन्ध करना है। विश्व में गांधी ही एकमात्र व्यक्ति थे जिन्होंने कहा कि भगवान को पाने के लिए आजादी की लड़ाई लड़ता हूँ। उन्होंने यह भी कहा—'अगर मुझे विश्वास हो जाय कि आजादी की लड़ाई लड़ने से भगवान नहीं मिले तो मैं आजादी की लड़ाई छोड़ दूंगा, पर भगवान को नहीं छोड़ूंगा।' यह दृष्टिकोण आपका समाप्त हो गया, और पूरा दृष्टिकोण हो गया समाज का परिवर्तन। यह एक बहुत भयंकर चीज आपके समाज में हो गयी। यह ज्यादातर लोगों की है। अगर अध्यात्म का आधार नहीं रहा तो सर्वोदय-समाज खड़ा नहीं रह सकेगा। यह भी मैं आपसे स्पष्ट कह देता हूं। जब यह तीनों धारा बन जायगी भगवान, समाज और व्यक्ति—तब एक सन्तुलित जीवन का प्रारम्भ होगा। आप इनमें से किसको क्या प्रतिशत दीजियेगा यह आप सोचिये। आप व्यक्तिगत जीवन को साठ प्रतिशत भी दे दीजिये, समाज-सेवा को तीस प्रतिशत दीजिये और भगवान को १० प्रतिशत दीजिये, जो भी सोचिये। अगर अध्यात्म का आधार नहीं बनेगा तो बीज रूप से टिके रहने की शक्ति नहीं रह पायेगी। अगर अपने काम के द्वारा अपने अन्तर्मन में आज उसको स्थापित कर सके तो ठीक। अगर ऐसा नहीं कर सकें तो जो आग जल रही है उसमें इनके बहुत-से टुकड़े भी जल जायेंगे। बचा सकिये तो ठीक। यह आखिरी फैसला आपको करना है। क्योंकि अब भी समय है, १९७२ के बाद सम्भव नहीं। यह सब जो आपके सामने दिखाई पड़ रहे हैं उसका कोई महत्त्व नहीं है। हमारी तो यही समझता है कि आग के भीतर किसी तरह तो जले पर बीज बचा रह जाय। तब सर्वोदय-समाज बचा रह जायगा।

अमेरिका वीएतनाम में कसौटी पर

ऐसा लगता है कि अमेरिका ने वीएतनाम में जितना खून और पैसे दिये, उससे परिस्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। वीएतनाम के युद्ध को जो लोग ('न्यूज वीक' के अनुसार) देखते रहे हैं, उनका कहना है कि पिछले सप्ताह की यह लड़ाई वैसी ही भयंकर थी जैसी १९६५ की थी। युद्ध के तरीके में कोई अन्तर नहीं था। यह युद्ध द्वितीय विश्वयुद्ध की तरह का था, जिसमें रूस के बने दूर तक मार करनेवाले हथियार प्रयोग में लाये गये। उत्तरी प्रान्तों को भूकम्प में छोड़कर कम्यूनिस्टों ने सैगान से बहुत नजदीक एक दूसरा मोर्चा खोल दिया। इस युद्ध से बदहवास होकर दक्षिण वीएतनाम के राष्ट्रपति थियू ने अपनी सभी बची हुई सेना को, यहां तक कि राष्ट्रपति के महल की हिफाजत करनेवाले दस्ते को भी, युद्ध में झोंक दिया।

कम्यूनिस्टों के इस युद्ध का मुकाबला करने के लिए निक्सन ने वायुयानों और पानी के जहाजों के बड़े-बड़े दस्ते वीएतनाम की सहायता के लिए भेजे। इन दस्तों में बी—५२ बमवर्षक जहाज और ५ एयर क्राफ्ट कैरियर भी हैं। अमेरिका की इस सहायता ने वीएतनाम का खोखलापन साबित कर दिया और यह प्रकट कर दिया कि अमेरिका किस गहरे हद तक वीएतनाम में उलझा हुआ था। इन घटनाओं की पृष्ठभूमि में निक्सन का यह दावा कि वीएतनाम १९७२ में एक समस्या नहीं रहेगा, बिलकुल खोखला मालूम होता है।

राष्ट्रपति निक्सन जब लड़खड़ाते वीएतनाम को गिरने से बचाने की कोशिश कर रहे थे, तो उन्हें अमेरिका में दूसरी समस्या का सामना करना था, अर्थात् उस मनोविज्ञान का, जो १९६८ में यहां पर फैली हुई थी। राष्ट्रपति निक्सन इसको ठंडा करने की कोशिश करते रहे।

इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि इण्डोचीन की परिस्थिति गम्भीर थी, और बात वीएतनाम की सीमा से आगे जा चुकी थी। रूसी हथियारों द्वारा प्राप्त की हुई इस जीत के बाद क्या निक्सन मास्को के शिखर सम्मेलन में राजनैतिक तौर पर आगे बढ़ सकेंगे?

यद्यपि अमेरिकी प्रवक्ता ने यह दावा किया है कि वे कम्यूनिस्ट आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहे थे और उसके लिए तैयार थे, परन्तु यह सही है कि अमेरिकी अचानक पकड़े गये, यद्यपि पिछले कुछ महीनों में उत्तरी वीएतनाम के दक्षिणी भाग में दो हवाई अड्डे बनाये गये। अमेरिकी जासूसी विभाग ने यह भी बता दिया था कि नये साम (सर्फेस टू एयर मिसाइल) फिट किये गये थे और दर्जनों भारी मशीन डी० एम० जेड० में लगायी गयी थीं। हनोई की प्रसिद्ध पत्रिका में एक निबन्ध भी छपा था जिसमें यह कहा गया था कि अमेरिका और थियू सरकार को निकालने के लिए बड़े पैमाने पर युद्ध छेड़ना चाहिए। फिर एक सैनिक प्रतिनिधि मण्डल, जिनमें युद्ध के बड़े विशेषज्ञ भी थे, आक्रमण शुरू होने के चार दिन पहले आया था। फिर भी पेंटागान और अमेरिकी सैनिक कमांडरों ने हर चीज के बारे में गलत अन्दाज लगाया—समय का, कम्यूनिस्ट आक्रमण की शक्ति का, और दक्षिण वीएतनाम की अपनी सीमाओं को बचाने का।

कम्यूनिस्ट आक्रमण भयंकर था।

पहले कुछ दिनों तक तो अमेरिकी जवाब कार्रवाई न कर सके क्योंकि मौसम उनके विरुद्ध था, परन्तु उसके बावजूद भी निक्सन ने अमेरिकी स्थल सेना को युद्ध में झोंकने से इनकार कर दिया। एक अमेरिकी पदाधिकारी ने कहा कि अमेरिकी स्थल सेना का प्रश्न ही नहीं उठता। चूंकि राष्ट्रपति निक्सन तय कर चुके थे कि स्थल युद्ध को पूरे तौर से वीएतनामियों के हवाले कर देंगे, इसलिए पिछले सप्ताह भी उन्होंने वीएतनाम में अमेरिकी सेना की संख्या में कटौती की। जब बादल छटा तो अमेरिकी पाइलटों ने कम्यूनिस्ट ठिकानों पर भारी बमबारी की—दिनभर में ५०० बार तक। इन्होंने डी० एम० जेड० के उत्तर और दक्षिण दोनों ओर बमबारी की, खासकर उत्तरी वीएतनाम पर जबरदस्त बमबारी हुई। उत्तरी वीएतनाम के अच्छी हवाई सुरक्षा-पद्धति के कारण अमेरिकनों को भारी क्षति हुई। उत्तरी वीएतनाम में दो हवाई जहाज और छः हेलीकोप्टर मार गिराये गये तथा २३ अमेरिकी अब तक नहीं मिल सके हैं।

जब अमेरिकी अपनी वायुसेना की पूरी शक्ति उत्तर में लगा रहे थे तो कम्यूनिस्टों ने दक्षिण में युद्ध बढ़ाया। यह हनोई की रणनीति की सबसे बड़ी विशेषता है जिसे जनरल ग्याप ने अमेरिकनों को निकाल बाहर करने के लिए बनाया था। फिर उसी सप्ताह में उन्होंने दूसरा बड़ा आक्रमण सैगान के नजदीक के प्रान्त बिन्हलाग पर किया। कम्बोडिया की तरफ से रूट १३, जो दक्षिण वीएतनाम की राजधानी की ओर आता है, पर छा गये। इसमें उन्होंने तोपों का प्रयोग किया और मशीनगनों से गोलियां बरसायीं। भयंकर युद्ध के बाद उन्होंने लाकनिन्ह पर कब्जा कर लिया। फिर राष्ट्रीय राजधानी एनलाक पर कब्जा कर लिया। कम्यूनिस्टों का आक्रमण यहीं तक सीमित नहीं रहा। मीकांग डेल्टा में दर्जनों आक्रमण बाहरी और सैनिक अड्डों पर किये गये, जिसमें सोक्ट्राक और वीन्हलाग भी शामिल हैं। मध्य ऊँचाइयों में, जहां उत्तर वीएतनामियों ने काफी तैयारी कर रखी है, डाकन्टो पर खतरा बढ़ने लगा।

पिछले सप्ताह वाशिंगटन में यह बात चल रही थी कि आक्रमण के लिए उत्तरी

वीएतनामियों ने यह समय क्यों चुना ? एक दृष्टिकोण यह है कि कम्यूनिस्टों ने यह तय किया था कि जब अमेरिकी स्थल सेना बहुत कम संख्या में रह जाये तो बड़े पैमाने पर युद्ध किया जाय। इस फैसले के अनुसार उत्तरी वीएतनामियों ने अपनी पूरी शक्ति से आक्रमण किया। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि हनोई के फैसले से ज्यादा रूस और चीन के सहयोग का परिणाम था, जो निक्सन से सौदा करना चाहते थे।

जिस तरह वीएतनामियों के समय का चुनाव वाद-विवाद का विषय बना हुआ है उसी तरह उनके उद्देश्य के बारे में बहुत सारी बातें कही जाती हैं। उनके कुछ उद्देश्य तो स्पष्ट हैं, जैसे एक, कुछ प्रान्तों पर कब्जा करना, यह दिखाने के लिए कि सैनिक पहल इण्डोचीन के हाथ में है। दो, दक्षिण वीएतनाम के लोगों की हिम्मत तोड़ देना, यह दिखाकर कि सैगान की सरकार उनको बचा नहीं सकती। तीन, इस भ्रम को खतम करना कि निक्सन की वीएतनामीकरण की नीति का प्रभाव पड़ रहा है। विशेष तौर से हू की पुरानी राजधानी पर कब्जा करके के लिए अमेरिकियों को नये कम्यूनिस्ट आक्रमण का खतरा है।

अमेरिका के सेक्रेटरी ऑव स्टेट, जार्ज डब्लू॰ बाल का कहना है कि कुछ मुख्य नगरों पर कम्यूनिस्ट कब्जे का कुछ गहरा अर्थ है। "मैं समझता हूँ कि अगर वह क्वांग ट्री हू पर कब्जा कर लेते हैं तो वहाँ वे जल्दी ही एक प्राविज़नल सरकार कायम कर देंगे, जिसे बहुत सारे देश जल्दी ही स्वीकार कर लेंगे।"

कुछ अमेरिकियों का खयाल यह है कि एक दो नगरों पर कब्जा करके वे शान्ति-वार्ता आरम्भ करेंगे और उनकी कोशिश होगी कि वे वाशिंगटन और सैगान से-अधिक-से अधिक छूट और रियायत मिल सके। उनका उद्देश्य मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालकर सौदेबाजी करना है।

हनोई का दूसरा उद्देश्य है दक्षिण वीएतनाम के नेताओं को डराना और थियू को गिराना। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। अगर बहुत दिनों तक यह स्थिति चालू रही तो राष्ट्रपति थियू अपने को विचित्र परिस्थिति में पायेंगे।

राष्ट्रपति निक्सन की भी कुछ ऐसी ही स्थिति है। अभी अमेरिका में कोई खास प्रतिक्रिया इसलिए नहीं हुई है कि बहुत से अमेरिकन मारे नहीं गये हैं। परन्तु निक्सन अच्छी तरह जानते हैं कि दक्षिण वीएतनाम किसी भी समय हनोई के दबाव के तले कुचल सकता है और जब ऐसा होने लगेगा तो निक्सन के सामने कुछ ही विकल्प बाकी रह जायेंगे और उनमें से कोई आकर्षण के योग्य नहीं है—

१—अमेरिकी स्थल सेना का प्रयोग ऐसा करना राष्ट्रपति निक्सन के लिए राजनैतिक आत्महत्या होगी। अमेरिकी सिनेटरों ने यह कहा है कि वे इसका कड़ा विरोध करेंगे और अमेरिकी व्यवस्था की ओर से उत्तर में यह भी कहा गया है कि राष्ट्रपति निक्सन कभी भी अमेरिकी सैनिकों को वीएतनाम नहीं भेजेंगे।

२—पेरिस में शान्ति-वार्ता आरम्भ करना : ऐसा करना इस बात को स्वीकार करना होगा कि कम्यूनिस्टों का आक्रमण सफल रहा है। और ऐसी वार्ता में हनोई की जीत के कारण अमेरिकी कमजोर पड़ेंगे। सुरक्षा मंत्री मेलविन लेयर्ड ने कहा है कि जब तक शान्तिवार्ता की पहल हनोई नहीं करता, अमेरिका वार्ता शुरू नहीं करेगा।

३—बमबारी जारी रखना : अमेरिकी व्यवस्था ने इस ओर इशारा किया है कि उस समय तक उत्तरी वीएतनाम पर बमबारी की जाती रहेगी जब तक कम्यूनिस्ट सेना दक्षिण वीएतनाम पर आक्रमण जारी रखती है। परन्तु इस नीति में कुछ खतरे हैं। बमबारी से समस्या हल नहीं होगी। सिनेटर मैन्सफील्ड ने कहा है कि इस तरह हम अधिक-

से-अधिक वायुयानों को बरबाद करेंगे, अमेरिकियों को कैदी बनवायेंगे और वार्ता नहीं हो सकेगी। हवाई युद्ध के सभी दोषों के बावजूद यही एक रास्ता है जिस पर निक्सन डटे रहेंगे, क्योंकि उनके सामने कोई दूसरा रास्ता नहीं है। वह तीन साल पहले यह कहकर राष्ट्रपति बने थे कि उनके पास एक ऐसी योजना है जिसके द्वारा अमेरिकी दक्षिण पूर्व एशिया के युद्ध से मुक्ति प्राप्त कर सकेंगे, और ऐसा करने में न उनकी प्रतिष्ठा पर आँच आयेगी और न उनके मित्र उनसे अलग होंगे। अमेरिकी सेना की संख्या कम करने में उन्हें बड़ी सफलता प्राप्त हुई है। उन्हें दक्षिणी वीएतनाम की सेना में विश्वास भी है। साथ ही साथ वीएतनामीकरण के कार्यक्रम पर भी उन्हें भरोसा है। पिछले सप्ताह यह बात स्पष्ट हो गयी कि कम्यूनिस्ट वीएतनामीकरण की नीति को जाँच रहे हैं और इस प्रकार से श्री निक्सन की जाँच हो रही है।●

आन्दोलन के समाचार

गोकुल भाई भट्ट की सरकार से अपील

१९६८ में नशाबन्दी के लिए राजस्थान में सरकार के विरुद्ध बड़े पैमाने पर सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने आन्दोलन किया। इससे प्रभावित होकर सरकार ने घोषणा की थी कि सरकार द्वारा १ अप्रैल १९७२ को शराबबन्दी की घोषणाकर दी जायगी। परन्तु समय आने पर सरकार अपने वायदे से मुकर गयी।

इससे वहाँ के कार्यकर्ताओं में बड़ी बेचैनी फैली। संस्थाओं में सरकार की नीति की आलोचना-प्रत्यालोचना हुई। बात यहाँ तक पहुँच गयी कि कई कार्यकर्ताओं ने आमरण अनशन की बात कही।

श्री गोकुल भाई के मन में जो आग जल रही थी वह असहनीय थी। उन्होंने कार्यकर्ताओं को सान्त्वना देते हुए कहा कि अगर ८ मई तक सरकार नशाबन्दी के बारे में कोई निर्णायक कदम नहीं उठाये तो वे अपना आमरण अनशन प्रारम्भ कर देंगे।

सर्वोदय मण्डल दिल्ली प्रदेश : वार्षिक रिपोर्ट

पदयात्रा

दिल्ली नगर तथा उसके आसपास १४ व्यक्तियों ने सर्वोदय मण्डल दिल्ली प्रदेश के तत्वावधान में २८ दिनों की एक पदयात्रा का आयोजन किया, जिसमें १५ हाईस्कूलों तथा ५ कालेजों से सम्पर्क स्थापित किया गया। पदयात्रा के दौरान १८ सार्वजनिक सभाएँ, ७ धार्मिक संस्थाओं से सम्पर्क, १२ युवक गोष्ठियों के द्वारा विचार-प्रचार का काम किया गया।

इस अवधि में १० लोक सेवक, एवं ६० सर्वोदय मित्र बने। ७५० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई और ५००० हजार रुपये ग्रामस्वराज्य कोष में जमा हुए।

चुनाव

मध्यावधि तथा नगरनिगम के चुनाव के वक्त सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने कई जगह सर्वदलीय मच का आयोजन किया, तथा मतदान केन्द्रों पर गलत काम को रोकने के लिए कार्यकर्ताओं की ड्यूटी बाँटी गयी।

आचार्यकुल

नगर के विभिन्न कालेजों में १२ गोष्ठियाँ की गयीं। विश्वविद्यालय में आचार्यकुल का सम्मेलन किया गया एव आचार्यकुल समिति का गठन हुआ। १० शिक्षण संस्थाओं के ४१ सदस्य बने।

तरुण-शान्तिसेना

शिक्षण-संस्थाओं में तरुण-शान्तिसेना के प्रचार के लिए १६ सभाओं का आयोजन किया गया। तरुण-शान्तिसेना का गठन एव तरुण-शान्तिसेना समिति की दो बैठकें भी हुईं।

ग्रामदान-अभियान

दिल्ली प्रदेश सर्वोदय मण्डल के दो लोक सेवकों ने पंजाब के अबोहर ब्लाक में होनेवाले ग्रामदान-अभियान में भाग लिया। —बसन्त व्यास

आदिवासियों की समस्या के अध्ययन हेतु समिति का गठन

पिछले ६ महीने से धुले जिले के आदिवासी लोगों की जमीनों का गलत तरीके से हस्तांतरण, उनके ऊपर लदे हुए कर्ज के बोझ, बेकारी और मजदूरी की दर में कमी, आदि प्रश्नों को लेकर आन्दोलन चल रहा है। मतदान के अवसर पर मतपेटिका में भी कितने ऐसे बहिष्कार के पत्र इस क्षेत्र में डाले गये हैं। सर्वपक्षीय मैत्रे के अवसर पर उसके द्वारा इस प्रश्न के समाधान की आवश्यकता और उचित तरीके से हल ढूँढ़ निकालने के लिए सरकार व समाज के अन्य लोगों के समक्ष इस समस्या को लाने का प्रयास किया गया।

इस समस्या का अध्ययन कर उसके सम्बन्ध में जो कुछ भी जानकारी प्राप्त हो, और जो उचित हो वह सरकार व समाज के वरिष्ठ लोगों के सम्मुख रखी जाय तथा उसके समाधान के पक्ष भी उनके ध्यान में लाये जायँ। इस दृष्टि से महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल ने निम्न व्यक्तियों की एक समिति बनायी है जो इस सम्बन्ध में उनकी समस्या का अध्ययन कर अपनी रिपोर्ट पेश करेगी।

(१) श्री एस० एम० जोशी (पुना) (२) श्री रा० कृ० पाटील (नागपुर) (३) श्री नाना साहेब देवरे (धुले) (४) श्री बा० न० राजहंस (५) श्री गोविंदराव शिंदे (रत्नागिरी)। श्री गोविंदराव शिंदे इस समिति के अध्यक्ष रहेंगे।

—वसंत बोंबटकर

तरुण-शान्तिसेना शिविर की तिथि में परिवर्तन

भारतीय तरुण-शान्तिसेना महाराष्ट्र की ओर से आयोजित ग्रीष्मकालीन शिविर व आवेदन पत्र स्वीकार करने की तारीखों में परिवर्तन किया गया है। अब शिविर निम्न तारीखों में होगा।

(१) नागपुर शिविर, ४ मई से १२ मई '७२

(२) कोल्हापुर शिविर १ जून से ७ जून '७२

(३) शहादा शिविर १० जून से १९ जून '७२

नागपुर में होनेवाले शिविर के लिए आवेदन पत्र देने की अन्तिम तिथि समाप्त हो चुकी है।

कोल्हापुर व शहादा शिविर हेतु २५ अप्रैल तक आवेदन पत्र स्वीकार किये जायेंगे। शिविर के पाठ्यक्रम आदि पहले की भाँति ही रहेंगे।

अधिक जानकारी के लिए निम्न पते पर सम्पर्क करें :

पता—संयोजक, तरुण-शान्तिसेना, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)

भूदान-यज्ञ २४-४-'७२ लाइसेन्स नं० प ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल.१२४

पूरे उत्तर प्रदेश में नशाबन्दी लागू की जाय

लखनऊ, १३-४-७२। उत्तर प्रदेश मद्य-निषेध परिषद का द्विदिवसीय सम्मेलन कल समाप्त हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षता श्री अक्षय कुमार करण ने की और उद्घाटन डा० सुशीला नैयर ने।

प्रदेश के विभिन्न जिलों से आये हुये प्रतिनिधियों ने मुख्य रूप से उत्तराखण्ड में पूर्ण नशाबन्दी, अवैध शराब पर पूर्ण नियंत्रण, तीर्थ स्थानों में शराबबन्दी, लोकतंत्र में मद्य-निषेध, महिलाओं का योगदान, शराबबन्दी में कानून की स्थिति आदि विषयों पर खुलकर चर्चा की गयी। सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित कर उत्तर प्रदेश सरकार के पास भेजा है। प्रस्ताव के कुछ मुख्य मुद्दे निम्न प्रकार हैं।

"यह सम्मेलन सरकार से विशेष आग्रह करता है कि शराब की ठीकेदारी बन्द करके जब तक पूर्ण नशाबन्दी कार्यान्वित नहीं हो जाती तब तक उत्पादन तथा बिक्री का काम स्वयं सरकार करे।

"यद्यपि टिहरी और गढ़वाल में सरकार ने पूर्ण नशाबन्दी घोषित की है लेकिन इस कानून के पारित होने के बाद भी इन जिलों में विदेशी शराब की दूकानें खोली गयी हैं। यह सम्मेलन इसके ऊपर खेद प्रकट करता है और सरकार से अनुरोध करता है कि विदेशी शराब की दूकानों को बन्द करे।

"यह सम्मेलन नशाबन्दी कानून को पूर्ण रूप से प्रदेश में क्रमश: लागू करने का जोरदार ढंग से निवेदन करता है। तत्काल धार्मिक नगरों और तीर्थ स्थानों पर पूर्ण नशाबन्दी लागू की जाय।

"उत्तराखण्ड के जिन पाँच जिलों में नशाबन्दी थी उनमें पुनः पूर्ण नशाबन्दी के लिए यह सम्मेलन निवेदन करता है और निम्नांकित कदम उठाने की सरकार से सिफारिश करता है :

१—उन जिलों में ऐसे उच्चाधिकारी भेजे जायें जिनका पूर्ण नशाबन्दी में विश्वास हो तथा अपने व्यक्तिगत जीवन से जनजीवन को प्रभावित कर सकें।

२—इन जिलों में न केवल शराब की दूकानें बन्द की जायें बल्कि पूर्ण मद्य-निषेध लागू हो।

३—सिविलसर्जन के सर्टिफिकेट पर ६० वर्ष से ऊपर की आयुवाले एवं जरूरतमन्दों को ही पीने के लिए परमिट दिये जायें और परमिटवालों को सरकारी स्टोर से ही शराब दिलायी जाय।

"सरकार सभी जिलों में व्यापक लोक शिक्षण-कार्य की दृष्टि से नशाबन्दी लोक-कार्य-क्षेत्रों की स्थापना करे और गैरसरकारी मद्य-निषेध समितियों के द्वारा इसे सम्पन्न करे।

यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि शराब के विज्ञापन पर अविलम्ब प्रतिबन्ध लगाये और मद्य-निषेध के साथ-साथ शराब की लोकप्रियता के लिए प्रचार जैसी विसंगति को समाप्त करे।

जिला बुलन्द शहर के मित्रों ने १ अप्रैल, १९७२ से शराबबन्दी के लिए आन्दोलन शुरू किया है। यह सम्मेलन उसका समर्थन करता है।

जिला मथुरा, जो कि एक तीर्थस्थान है वहाँ के मित्र शराबबन्दी आन्दोलन शुरू करने जा रहे हैं—उनका भी यह सम्मेलन समर्थन करता है।

—कपिल अवस्थी

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

★

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०, या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ३१ ... मई, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

बागियों का आत्म-समर्पण : जयप्रकाश जी के उद्गार

इस समय एक अद्भुत घटना हुई है जिससे मेरा दिल-भरा हुआ है, कण्ठ भी अवरुद्ध हो रहा है, फिर भी दो शब्द इस मौके पर आपसे कहना आवश्यक मानता हूँ।

मैं अपनी छोटी बुद्धि से सोचता रहा हूँ कि यह इतनी बड़ी घटना कैसे घट रही है? ६ महीने पहले पटना में माधो सिंह मुझसे मिले थे। उन्होंने कहा कि इस काम को आप उठायें तो दस-बीस-पचास की बात नहीं सभी बागियों का आत्म-समर्पण हो जायेगा और चम्बल घाटी का यह अभिशाप बराबर के लिए समाप्त हो जायेगा। मुझे विश्वास नहीं जम रहा था, पर उन्होंने आग्रह किया और विनोबाजी की भी इच्छा थी, इसलिए इस काम के लिए मैं राजी हो गया।

इस काम में जब मैं सरकार के लोगों से बातें की तो किसी को मेरी बातों पर विश्वास नहीं हुआ, पर आज वह सब हुआ। जो कुछ भी हुआ वह ईश्वर की लीला है। हमारे साथियों, पंडित लोकमन और तहसीलदार सिंह ने काफी परिश्रम किया। आप लोगों के हृदय कैसे बदले, मालूम नहीं। कोई भी इनसान दिल से न बुरा होता है और न अच्छा होता है। सबमें अच्छाई और बुराई होती ही है। जो सन्त है उसके अन्दर भी बुराई का अवशेष बचा रहता है। इस तरह सब में परमात्मा है, ईश्वर है, यह अनुभव से सिद्ध है। जैसा बाबा ने कहा है कि हमारे बागी भाई गलत पटरी पर चले गये हैं, इनमें से कोई गलत नहीं हैं, इनकी पटरी ही गलत है। इसको बदल देना है। अब बदल देने का सामर्थ्य किसमें है? भगवान में है, ईश्वर में है। वह आपके और हमारे हृदय में बैठा हुआ है। हमारे जैसे लोग, हमारे मित्र लोग तो निमित्त मात्र हैं—जैसे भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा था—तू निमित्त मात्र है। ये सब तो मर चुके हैं। वैसे ही हम सब निमित्त मात्र हैं लेकिन काम तो वही करा रहा है। अगर यह परमात्मा की इच्छा है तो मैं समझता हूँ कि इस सारे इलाके का कल्याण होनेवाला है। शायद एक नया इतिहास बननेवाला है और आप सब इतिहास बनानेवाले हैं।

.. मैं आपके समक्ष वचनबद्ध हूँ कि जो भी हमारी शक्ति है, हमारे मित्रों की शक्ति है, वह सब आपकी सेवा में है। आपने हमारे सामने आत्म-समर्पण किया है। मैंने बागी नेताओं से बातें की, मुझे ऐसा लगा कि वे बिलकुल सरल हैं, बालक के समान हैं।

अब हमारे कन्धों पर एक बोझ पड़ गया है, आपके आत्म-समर्पण का। हम तो दबे जा रहे हैं। उसको हम उठा सकेंगे या नहीं? हम क्या उठायेंगे? भगवान की मदद होगी, और वह मदद करेगा। अगर वह चाहता है कि वह हो और उसने हमें निमित्त बनाया है तो हम सब लोगों को वह शक्ति देगा।

(पृष्ठ ४७५ पर)

युद्ध से उत्पन्न मानवीय समस्या

सम्पादक जी !

बाड़मेर सेक्टर से सिन्ध का जो इलाका हमारी फौजों ने जीता है उसके करीब एक लाख लोगों की समस्या हमारे देश के सामने है। ये लोग आज बिलकुल दुविधा का जीवनबसर कर रहे हैं। उनका जीवन अस्त-व्यस्त हो रहा है या हो गया है। इस पर सरकार या जनता ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया तो हमारा देश मानवीय मूल्योंवाला नहीं कहला सकेगा। इन एक लाख लोगों की सुरक्षा, खेती, स्वास्थ्य, रोजगार, जीवन तथा निवास की बहुत बड़ी समस्या है। उस इलाके से मुसलमान तो पाकिस्तान चले गये या भगाये गये, मगर हिन्दू जिसमें अधिकतर अनुसूचित जातियों के लोग—राजपूत, माहेश्वरी, ब्राह्मण हैं, वे रह गये हैं तथा बाड़मेर जिले में चले आये हैं। अपने इलाके में जो लोग चले आये हैं कम-से-कम उनकी संख्या ५० हजार होगी। ये लोग अधिकतर रेती के टीलों पर मामूली सहारा बनाकर रह रहे हैं। मात्र कुछ ही लोग जो अनुसूचित जाति के नहीं हैं वे शहरों में रहते हैं। इन सबों का जीवन अनिश्चित है। इनमें अधिकतर लोग के पास धन नहीं है, जो बैठे-बैठे जीवन की जरूरत पूरी कर सकें। न इनको नौकरी मिलती है और न बच्चों को पढ़ाने के लिए स्कूलों में दाखिला मिलता है, न सिर छिपाने के लिए छप्पर है। उनका कुछ सामान इधर है तो कुछ उधर। सरकारी सहायता तो अभी तक आरम्भ ही नहीं हुई है। अगर वह होगी भी तो सरकार के पास इतनी मशीनरी नहीं है। यह सहायता चली तो वह भी कब तक चलेगी ?

हमारे देश की जनता ने जितनी अधिक सहानुभूति बांगला देश के शरणार्थियों के प्रति दिखायी उतनी ही कम सहानुभूति इस जीते हुए इलाके के लोगों के साथ है। पहले तो सरकार ने इन लोगों को आने दिया और अपने जैसा माना। मगर अब कहा जाता है कि ये लोग विदेशी हैं और अपने इलाके में वापस चले जायें। ये विदेशी कैसे हैं ? ये जंग से पीड़ित और देश के बंटवारे के शिकार, हमारे ही देश की जनता हैं। सरकार ने पाकिस्तान से आनेवाले हिन्दुओं को १९७१ तक जो सहूलियतें तथा मान्यताएँ दी हैं वे इनके लिए बन्द हैं। इन लोगों ने पाकिस्तान में असम्मानवाला, असुरक्षित, कष्टभरा जीवन सहा है। १९६५ के युद्ध के बाद जो लोग यहाँ से वहाँ चले गये उनमें इनकी जमीन, मकान, आदि पर जबर्दस्ती कब्जे का जो व्यवहार हुआ है या अभी पाकिस्तान के सरहदी इलाके से जो समाचार आ रहे हैं, तथा बांगला देश में पाकिस्तानी फौज ने जो युद्ध किया उससे इन्हें पाकिस्तान में अपने जीवन का अस्तित्व खतरे में दीखता है। ये लोग हर हालत में वापस जाना नहीं चाहते। क्योंकि वे जानते हैं कि एक दिन यह इलाका पाकिस्तान को दे दिया जायगा, इसलिए ये लोग यहाँ रहकर नागरिक अधिकारों की माँग कर रहे हैं। इससे उन्हें इस देश में सब सहूलियतें मिल जायेंगी।

ये लोग बहादुर और स्वाभिमानी हैं। हमारी फौज इनकी मदद के सिवाय किसी भी हालत में सिन्ध का इतना बड़ा इलाका अपने कब्जे में नहीं कर सकती थी। इनकी निष्ठा तथा देश-भक्ति किसी भी तरह हमसे कम नहीं है। ऐसे बहादुर लोग हमारी सीमा पर रहेंगे तो हमारे राष्ट्र की सीमाएँ सुरक्षित रहेंगी। ये लोग मानते हैं कि स्थानीय, व्यक्तिगत, राजनैतिक और साम्प्रदायिक दृष्टि से तथा सरकार की ढुलमुल नीति की वजह से इन्हें नागरिक अधिकार नहीं दिया जाता। ऐसे बहादुर लोग जिसने युद्ध के समय हमसे कन्धे-से-कन्धा मिलाकर मदद की, उनके जीवन में संकट पैदा करना या खिलवाड़ करना हमारी शान में नहीं होगी। यदि उस समस्या पर हमारी सरकार तथा देश ने ध्यान नहीं दिया तो हम दोहरी नीतिवाले कहलायेंगे तथा इन लोगों की तरफ से अगर आन्दोलन चला, जिसकी तैयारियाँ चल रही हैं, तो समस्या गम्भीर हो जायगी।

इस जीते हुए इलाके में बचे लोगों के भी जीवन की बहुत समस्याएँ हैं। पाकिस्तानी फौज हटी पर सारा रिकार्ड चल गया, जिससे जमीन आदि की कुछ जानकारी नहीं मिल रही है। इससे बड़ी दिक्कतें आ रही हैं। यहाँ भी लोगों के व्यापार, खेती, मजदूरी, नौकरी, करेन्सी आदि की बहुत बड़ी दिक्कतें हैं, इस पर भी ध्यान देना चाहिए।

इस इलाके के लोगों को भारत में बसाना होगा, या जीते हुए इलाके को अपने सीमा-चिह्नों के अन्दर मिलाना होगा। जीते हुए इलाके को अपने में मिलाना हर हालत में सम्भव नहीं है। बांगला देश में किया गया नरसंहार अभी तक हम भूले नहीं हैं। इसलिए इन लोगों को जबर्दस्ती वापस पाकिस्तान भेजना उचित नहीं है। क्योंकि यह देश के किये गये बंटवारे से सम्बन्धित युद्ध से उत्पन्न एक मानवीय समस्या है। इसलिए हम देश की किसी अन्य समस्या पर जितना ध्यान देते हैं उतना ध्यान हमें इस समस्या पर भी देना होगा। —भगवान बजाज

पन्द्रह शताब्दियाँ

बात अटपट भी हो लेकिन सही है कि एक गाँव पन्द्रह शताब्दियों का जीवन एक साथ जी सकता है। और, ऐसे गाँव भी हैं जिनका आज का जीवन देखकर कहा जा सकता है कि इनके लिए शताब्दियाँ जैसे बीतीं ही नहीं। वे पन्द्रह सौ वर्ष पहिले जहाँ थे वहीं आज भी हैं। दोनों तरह के गाँव हर राज्य, हर जिले, में मौजूद हैं।

उत्तर बिहार का एक गाँव है। कई दृष्टियों से बहुत खास गाँव है। इस गाँव में पन्द्रह शताब्दियों के बीच हुए विकास के चिन्ह साथ-साथ देखे जा सकते हैं। प्राचीन वर्णवाद देखना हो तो गाँव के दो रास्तों पर टगी प्लेटें देख लीजिए जिनपर लिखा हुआ है : 'ब्राह्मण टोला मार्ग' 'हरिजन टोला मार्ग'। मध्ययुग का सामन्तवाद देखना हो तो देखिए मालिकों को जिनके पास सैकड़ों बीघे भूमि है और देखिए उनके मजदूरों, नौकरों, दासों और बंटाईदारों को जो अपने स्वामियों की सेवा में आज भी अर्द्ध-गुलामी की जिन्दगी बिता रहे हैं। इस मध्ययुगीन सामन्तवाद के ढाँचे पर आये आधुनिक पूँजीवाद को देख लीजिए। एक दर्जन दूकानें, लाखों की पूँजी, उनसे होनेवाला कारोबार, तथा सूद और मुनाफे से बढ़नेवाली दौलत। यह औद्योगिक पूँजीवाद नहीं है जो उत्पादन बढ़ाता है, बल्कि विशुद्ध पूँजी का विस्तार है जो शोषण करता है और बैठे बैठे घर को कमाई से भर देता है। इसके बाद देखिए स्वतंत्रता के बाद का, समकालीन सरकारवाद जो 'कल्याण-वाद', के रूप में प्रकट हुआ है। पुलिस की चौकी, टेलीफोन, सहकारी समिति, अस्पताल, परिवार नियोजन केन्द्र, खादी भण्डार, हरित क्रान्ति का खाद-बीज-गोदाम आदि सब सरकारी कल्याणवाद के प्रसाद हैं जो पैसे की प्रतिष्ठा, पहुँच और प्रभाव से प्राप्त हुए हैं। गाँव के कई लोगों ने सरकार में ऊँचे स्थान प्राप्त कर लिये हैं। कोई एम॰ एल॰ ए॰ है, कोई राज्य सरकार का मिनिस्टर है, तो कोई दिल्ली सरकार का मिनिस्टर है। ये सब अप-टू-डेट समाजवाद के प्रतिनिधि हैं क्योंकि सब ने अधिकार के किले में समाजवाद का ही नारा लगाकर प्रवेश किया है। इनका समाजवाद इस बात का प्रमाण है कि इस नये जमाने में अमीर को गरीब की कितनी चिन्ता है, और वैभव किस तरह त्याग का प्रतीक बन गया है। यह हमारे देश की राजनीति का कौतुक है कि उसने हमारे अमीरों को समाजवादी बना दिया। कितना बड़ा हृदय-परिवर्तन हुआ है! अब किस दल का कौन नेता है जो समाजवादी न हो?

अगर किसी सामाजिक इतिहासकार को भारतीय गाँवों का पिछले डेढ़ हजार वर्षों का इतिहास लिखना हो तो वर्णवाद से लेकर समाजवाद तक उसे इस गाँव में एक सीधी रेखा दिखायी देगी जिसके सहारे वह एक के बाद दूसरी शताब्दी को आसानी से चित्रित कर सकता है। सत्ता और सम्पत्ति का ऐसा संगम उसे और कहाँ मिलेगा? इस संगम पर समाज की क्षीण धारा अब नहीं रह गयी है, वह कब की लुप्त हो चुकी है। लेकिन पण्डे उसका नाम लेते हैं, और त्रिवेणी का महात्म्य बताकर यजमानों से दक्षिणा लेते हैं। सत्ता, सम्पत्ति, और समाजवाद की त्रिवेणी पर जनता श्रद्धापूर्वक अपने वोटों की भेंट चढ़ाती जा रही है।

हम कहते हैं कि हमें इन गाँवों को बदलना है। कैसे? मसालवादी संहार से बदलना चाहता है। साम्यवादी प्रहार करता है। सरकार अपने समाजवाद का सहारा लेती है। सर्वोदय का रास्ता सत्याग्रह का है—सही विचार का प्रचार, बुराई से असहकार, अनीति का प्रतिकार। सत्याग्रह की इतनी सम्पूर्ण शक्ति जनता की ही हो सकती है, किसी संस्था, दल या सरकार की नहीं। जनता की संगठित शक्ति के सिवाय दूसरी कोई शक्ति नहीं है जो पन्द्रह शताब्दियों को एक साथ मिटाकर नयी शताब्दी का शुभारम्भ कर सके। यह शक्ति कब आयेगी, कैसे आयेगी? ●

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

... आपसे भी हमारी कुछ अपेक्षा है, आशा और उम्मीद है इसीलिए मैंने आपको अपने परिवार में दाखिल किया है। इस परिवार के सबसे बुजुर्ग विनोबाजी हैं। गांधी परिवार के जो लोग यहाँ उपस्थित हैं उन्होंने मुझे इस पद पर बिठाया है—परिवार के मुखिया के आसन पर। उस हैसियत से मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आपने जो प्रतिज्ञा की है उसको आप भूलेंगे नहीं। जिस रास्ते को आज आपने पकड़ा है उसे छोड़ेंगे नहीं।

आप जेल में पढ़ना-लिखना सीखिये। जो पढ़ा-लिखा मिले उससे आप मदद लें। जहाँ भी आप रहें भजन करें, कीर्तन करें, प्रार्थना करें। जेल के नियमों के मातहत सोने के पहले कीर्तन कर लिया करें। उससे हृदय के ऊपर असर होता है। आपका जेल में इतना विकास हो सके कि जब आप जेल से बाहर आयें तब समाज की सेवा कर सकें।

मैं समझता हूँ कि दुनिया के इतिहास में इस प्रकार का कोई उदाहरण नहीं है। अगर सरकारवालों ने हमारी बात सुनी और मौका दिया, तो बड़े-बड़े नेता लोग तो आ ही गये बाकी लोग अपने-आप ही आ जायेंगे।

(१४ अप्रैल को पगारा डेम पर डाकुओं के आत्म-समर्पण के पहले श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा दिये गये भाषण से)

आर्थिक और सामाजिक भेदों को मिटायें

■ काका कालेलकर

देश का धन बढ़ा तो उसका लाभ देश के सब लोगों को कमोबेश मिलेगा ही। अच्छे रास्ते हुए, संक्रामक रोग कम हुए, हर जगह स्वच्छ पानी पूरा-पूरा मिलने लगा तो ऐसा लाभ पक्षपात रहित सबको मिलता है। यह मिलना ही चाहिए। लेकिन इतने भर से आज के समाज को सन्तोष नहीं होता, न होना चाहिए। आज का युग कहता है कि देश की सम्पत्ति का लाभ सबको एक-सा मिलना चाहिए। एक-सा मिले यह तो आदर्श है ही लेकिन यह आसान नहीं है। इसलिए आज की दुनिया कहती है कि धनी और गरीब की आमदनी में एक से बीस के अनुपात से अधिक फर्क नहीं होना चाहिए। यानी अगर किसी गरीब मजदूर को दिन का एक रुपया तनख्वाह या मजदूरी मिलती है तो बड़े-बड़े जमींदारों को, कल-कारखानों के मालिकों को, प्रोफेसरों को, विज्ञापन के विज्ञ लोगों को और स्वराज्य सरकार के मिनिस्टरों को भी कुल मिलाकर दैनिक २० रुपये से अधिक तनख्वाह नहीं मिलनी चाहिए। इससे उल्टा अगर राष्ट्रपति को महीने के बीस हजार रुपये मिलते हों तो मामूली मजदूर को महीने के एक हजार रुपये मिलने चाहिए। यह हो गया गरीबी हटाने का और समानता स्थापित करने का इलाज। आजकल मजदूरों की आमदनी बढ़ाने की ओर उद्योगपतियों की आमदनी घटाने की बातें सर्वत्र होती हैं। लेकिन राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल हमारे लोक-नियुक्त मिनिस्टरों की तनख्वाहें मजदूरों की मजदूरी से बीस गुने से अधिक न हों, ऐसा आन्दोलन कहीं भी हमने देखा या सुना नहीं है। "मैं तो अपनी आमदनी अधिक भी कम नहीं करूँगा, ऐसा कहनेवालों की गरीब-भक्ति किसी के मन में आदर उत्पन्न नहीं कर सकेगी।"

"गरीबों को और मजदूरों को आज जो मिलता है उससे थोड़ा अधिक मिले, सबको सार्वत्रिक शिक्षा मिले और कोई भी बेकार न रहे" यह आदर्श अच्छा है। लेकिन इससे किसी को सन्तोष नहीं मिलेगा। गरीब लोग, अनपढ़ लोग, लाचार और दुर्दैवी लोग दबे हुए रहते हैं। उनमें स्वाभिमान नहीं रहता। भिक्षा माँगने की नौबत उन पर आती है। इस स्थिति को दूर करना चाहिए। समाज के वे आश्रित नहीं, किन्तु समाज के ये घटक हैं, राज्य चलाने का अधिकार उनका है। कोई उनको खरीद नहीं सकता, खरीद नहीं सकता, इतना स्वाभिमान और उनका चारित्र्यबल उनमें आ जाय, इसके लिए जरूरी सामाजिक प्रतिष्ठा भी उनको मिलनी चाहिए। यह सब तब हो सकता है जब राष्ट्र का चारित्र्य ऊँचा होता है और राष्ट्र के नेता सादगी से रहने के आदी होते हैं। निचले लोगों की आमदनी और प्रतिष्ठा बढ़े और ऊपर के लोगों की आमदनी और प्रतिष्ठा कम हो जाय, वे कमोबेश श्रमजीवी बनें और सादगी से रहें तब राष्ट्र की उन्नति होगी।

गरीब और धनी लोगों के बीच का आर्थिक अन्तर कम हो, इसके प्रयत्न दोनों सिरे से होने ही चाहिए। लेकिन इसके लिए अत्यन्त जरूरी है—सामाजिक क्रांति। कोई भी जाति दूसरी जाति से कम या ज्यादा प्रतिष्ठित न मानी जाय। एक धर्मसमाज दूसरे धर्मसमाज से श्रेष्ठ होने का दावा न करे। राज्यकर्ता, मंत्री और अफसर सामान्य नागरिकों से अपने को श्रेष्ठ न मानें, और अधिकारी लोगों की खुशामद करने का (लोभी और गरजमन्द लोगों का) रिवाज समाज में निंद्य माना जाय, तभी जाकर देश में शान्ति का, प्रसन्नता का और स्वाभिमान का वायुमण्डल स्थापित होगा। छोटे-बड़े सरकारी कर्मचारी लोग राज्यकर्ता मिनिस्टरों की इज्जत बढ़ाने की हर तरह की कोशिश करते रहते हैं। इसमें उनकी दो दृष्टियाँ रहती हैं। (१) मिनिस्टरों को खुश करना, जिससे वे "सरकारी नौकरों की कर्तव्य-निष्ठा और कुशलता अच्छी है या नहीं इसकी चौकी न करें। और (२) जनता पर भी प्रभाव पहले के जैसा कायम रहे।

दुख के साथ कहना पड़ता है कि हमारा सारा समाज उच्च-नीच के भेद-भाव का इतना आदी बन गया है कि जिस तरह घर के गुरुओं की और बूढ़ों की (चरणस्पर्श आदि से) पूजा होती है वैसी ही पूजा की अपेक्षा (१) धर्मसंस्था के आचार्य (२) राज्यसंस्था के अमलदार और मंत्री तथा (३) कल-कारखानों के व्यवस्थापक और मालिक करते ही रहते हैं। यह रिवाज हमारी संस्कृति का एक अंग ही हो गया है। इसके पीछे सब तरह की असमानताएँ (उच्च-नीच-भावना) छिप जाती हैं और न्यायदान का आदर्श ढीला हो जाता है।

बड़ों को आदर दिखाने के लिए हाथ जुड़ें, सिर जरा-सा झुक जाय, यहाँ तक तो ठीक है। किन्तु अपनी नम्रता और कृतज्ञता का प्रदर्शन करने के लिए कमर को झुकाना और चरणस्पर्श करना, या जमीन पर साष्टांग नमस्कार करना, यह सारा प्रकार चाहे जितना पुराना, समाज-मान्य और धर्ममान्य क्यों न हो, इस रिवाज को अप्रतिष्ठित बनाकर छोड़ ही देना चाहिए। इस युग के लिए ये रिवाज बिल्कुल काम के नहीं हैं। ब्राह्मण को देवता कहना, उसका चरणस्पर्श करना, उन्हें कुछ देकर उसे दक्षिणा कहना, यह सारा रिवाज आज के समाज को बिल्कुल अमान्य होना चाहिए। बच्चों में बड़ों के प्रति आदर दिखाने की संस्कारिता और नम्रता होनी ही चाहिए। लेकिन उसके लिए कमर झुकाना, अपना सिर बड़ों के पाँव पर रखना आदि अतिरेकी रिवाज उन्हें नहीं सिखाने चाहिए। ●

सहरसा अभियान : विभिन्न दृष्टिकोण

सहरसा ग्रामस्वराज्य अभियान को समाप्त करके वापस होते हुए अनेक लोग वाराणसी में ठहरे थे, इनमें से ५ लोगों से हमने अभियान की फलश्रुति तथा उनके दृष्टिकोण जानने की दृष्टि से बातचीत की। हमें उनसे जो कुछ भी जानकारी प्राप्त हुई वह पाठकों के सामने हम प्रस्तुत कर रहे हैं। इसमें आप देखेंगे कि कोई क्रमिक जानकारी आपको नहीं मिलेगी, परन्तु एक चित्र तो ध्यान में आ ही जायेगा।

१—एक महीने के अभियान में लगभग १२०० बीघा भूमि बँटी।

२—बिहार सर्वोदय संघ ने ४ व्यक्तियों की एक समिति गठित की है जो ग्रामस्वराज्य समिति के संविधान, पुनर्गठन, पदाधिकारियों के चुनाव आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेगी। समिति के भूतपूर्व मंत्री श्री विद्यासागरजी ने तत्‌-मुक्त होकर सेवा करने का निर्णय लिया। समिति के सदस्य हैं—सर्वश्री वैद्यनाथ बाबू, गोपाल बाबू, ध्वजा बाबू, और विद्यासागरजी।

श्रीमती कुसुम बंग : मैं पूरे अभियान की जानकारी नहीं दे सकूँगी। एक पंचायत (रामपुर) के दो गाँवों में काम किया। इन गाँवों में भूदान की जमीन खूब मिली हुई है, परन्तु बँटी नहीं है। २० वर्ष पूर्व दान में प्राप्त भूमि अभी तक नहीं बँटी इसलिए लोगों को शिकायत थी कि भूदान की जमीन बाँटी नहीं गयी, जिसका परिणाम आन्दोलन पर बुरा हुआ। मैंने जिन दो गाँवों में काम किया उनमें ४० दाताओं से प्राप्त बीघा-कट्ठा की १२ बीघे जमीन ९२ आदाताओं में बाँटी गयी। पूरे प्रखण्ड में १४० बीघे जमीन बँटी। ५०० बीघे, १००० बीघे जमीन रखनेवाले लोगों ने कहा कि भूदान की जमीन आप लोगों ने ली थी लेकिन उसका बँटवारा करने की शक्ति आप लोगों में नहीं है। आप लोग भूदान की जमीन बाँटिए। १००० बीघेवाले ने तो १९ बीघे जमीन बाँटी थी।

सभाओं में बहनें नहीं आतीं। मजदूर लोग सभाओं में ज्यादा आते हैं। एक मजदूर ने कहा, "आप जा रही हैं, हमें जमीन तो मिली नहीं।" एक बहन ने तो कहा, 'बहनजी! हमें तो खराब जमीन मिली है, हम उसमें कैसे खेती करेंगे? अच्छी जमीन दिला दीजिए न।" और कहकर रोने लगी।

मैंने देश के अन्य भागों में भी देखा है, उस अनुभव के आधार पर कहूँगी कि यहाँ की जनता श्रद्धालु है, अन्य जगहों की तरह कठोरता इनमें नहीं है। और साथ ही इनमें वचन निभाने की शक्ति ज्यादा है। मुझे तो एक भी दाता ऐसा नहीं मिला जो अपने भूदान के संकल्प से मुकर जाय। पुराने संकल्प पर टिके रहना, उसका पालन करना, एक विलक्षण बात है। पहले यह बात समझ में नहीं आती थी कि सहरसा पर इतना जोर क्यों देना चाहिए, मगर यहाँ के लोगों में ये जो मानवीय गुण हैं उनके कारण लगता है कि सहरसा का चुनाव ठीक ही हुआ है, और यहाँ के काम को पूरा करना चाहिए। श्री धीरेन्द्र भाई ने तो अपनी बात दुहरायी कि देश के अच्छे समर्थ लोगों को यहाँ ५ वर्ष का समय देना चाहिए।

इस क्षेत्र में भयंकर विषमता है। गाँवों में ७५ प्रतिशत मजदूर और २५ प्रतिशत मालिक हैं। शोषण हद से ज्यादा है और बेकारी भी खूब है।

श्री ठाकुरदास बंग : उत्तर बिहार की जनता सरल हृदय की है। खादी का खूब व्यापक प्रचार हुआ है। विनोबाजी के लिए लोगों के मन में श्रद्धा है। धर्म और अध्यात्म के बारे में भी श्रद्धा है। इस वजह से अन्य भागों के बनिस्बत यहाँ काम करना कम कठिन है। जमीन के लिए मन में मोह तो है, परन्तु अन्य भागों की तुलना में कम।

यहाँ कार्यकर्ता कम हैं—नहीं के बराबर ही कह सकते हैं। परन्तु इस अभियान से यह सम्भावना प्रकट हुई कि जनता में से कार्यकर्ता मिल सकते हैं। इसमें समय लगेगा, उनके प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना होगा।

अभी सहरसा में तवा गरम है, उसको ठण्डा नहीं होने देना चाहिए। कुछ सघन क्षेत्र लिये जायँ और जिले के शेष भाग में हवा अनुकूल बनाने का काम हो।

जमीन के नये प्रश्न खड़े हुए हैं। इन्दिराजी के प्रयास में और हमारी प्रक्रिया में क्या तालमेल होगा? सम्भवतः हम 'संघ अधिवेशन' में भूमि के सवाल पर चर्चा करेंगे।

श्री ग० उ० पाटनकर : काम की पद्धति बदलनी चाहिए। काफी अच्छी तैयारी थी लेकिन स्थानिक लोगों के कारण और संयोजन में कमी के कारण आज जितना काम हुआ उससे ५ गुना ज्यादा निष्पत्ति निकल सकती थी। इस अभियान का जो अच्छा परिणाम नजर आया वह यह कि लोक-शक्ति का जहाँ-तहाँ दर्शन होने लगा है। मैं तो, धुरगी-गंज प्रखण्ड में था। वहाँ ५ शक्तियों का अच्छा सहकार प्राप्त हुआ—मुखिया, अध्यापक, नवयुवक, विद्यालय और शासन ये पाँचों शक्तियाँ मानती हैं कि ग्राम-स्वराज्य अच्छी चीज है और इसके लिए प्रयास करना चाहिए।

मैं तो गाँव को शिक्षा की दृष्टि से भी सोचता रहा। मैंने देखा कि शिक्षक और अन्य विचारवान लोग आज की प्रचलित शिक्षा को न केवल निरर्थक मानते हैं, बल्कि हानिकारक भी मानते हैं। सब सही शिक्षा शुरू करने को उत्सुक हैं। अगर तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल को ग्रामस्वराज्य की स्थापना में लगा सकें तो न केवल पुष्टि का काम आसान होगा, बल्कि ग्राम-समाज में नयी शिक्षा—ग्रामस्वराज्य की

शिक्षा की शुरुआत हो सकेगी। जाहिर है कि सही शिक्षा के बिना ग्रामस्वराज्य का काम नहीं हो सकता।

सदियों से मानव समाज गुलामी और मुँहताजी की आदत से जकड़ा रहा है। अतः अभी तो उसमें ग्रामस्वराज्य की प्रचण्ड आकांक्षा को पैदा करना होगा, उसको जगाना होगा। जगह-जगह लोग आदर्श गाँव की माँग करते हैं ताकि वे प्रेरित और उत्साहित हो सकें। यह माँग उचित भले ही न हो फिर भी आवश्यक लगती है। इसलिए नमूना बनाने का प्रयत्न शुरू होना चाहिए, भले ही हम यह न करें, पर गाँव के लोग तो कर ही सकते हैं।

आगे मैं अपना पूरा समय तो सहरसा में नहीं दूँगा लेकिन करजगाँव (वैनूल) के शिक्षण-कार्य के साथ सहरसा के कार्य का अनुबन्ध साधने का प्रयास अवश्य करूँगा।

प्रो० गोरे : सहरसा का कार्य अच्छे ढंग से हो रहा है। मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ। जो कुछ भी यहाँ हो रहा है उसमें फर्क करने की आवश्यकता मैं महसूस नहीं करता, लेकिन मैं एक चीज उसमें जोड़ देना चाहता हूँ। उसमें राजनीति को जोड़ा जाय। जब मैं राजनीति कहता हूँ तो मेरा मतलब दलगत राजनीति से नहीं है। सरकार अच्छी बने, हम-मुफ्त बने, इसकी हम कोशिश करें। यह इसलिए कहता हूँ कि जब हम सरकार का इस्तेमाल करते हैं, सरकार की आवश्यकता मानते हैं, तो हमारा कर्तव्य है कि वह सरकार अच्छी बने।

श्री धीरेन्द्र भाई की इस बात से मैं सहमत हूँ कि भूमि-वितरण हमारा लक्ष्य नहीं है, लक्ष्य तो ग्रामस्वराज्य की स्थापना है। भूमि-वितरण तो प्राथमिक चीज है।

सुश्री निर्मला देशपाण्डे : विभिन्न क्षेत्रों में लोगों को विभिन्न अनुभव आये हैं—यह स्वाभाविक है, परन्तु आमतौर पर कार्यकर्ताओं का तथा जनता का उत्साह बढ़ा है, उनमें विश्वास जगा है। अभियान के अन्तिम ४-५ दिनों में तो काम काफी अच्छी गति से होने लगा था और कुछ लोग चाहते थे कि अभियान की थोड़ी अवधि बढ़ा दी जाय। २५-३० साथी यहीं के काम के लिए अभी रुक गये हैं। आगे काम का क्या स्वरूप हो इसके लिए हम कुछ लोग पवनार में बाबा के साथ बैठकर चर्चा करके निश्चय करेंगे।

इस अभियान में हमने माना था कि १००० बीघे से ५००० बीघे तक जमीन बँटेगी। १२०० बीघा जमीन बँट सकी। इसमें भूदान की भूमि भी शामिल है। हम यह मानते हैं कि यदि पूर्व तैयारी अच्छी हुई होती तो ३ से ५ गुना अधिक परिणाम अवश्य आता। चुनाव के कारण भी बाधा आयी। शक्ति की कमी नहीं थी, बल्कि मालूम चाहिए कि काफी अच्छी शक्ति इसमें लगी थी। बिहार के बाहर के प्रदेशों से काफी अच्छे लोग आये थे। सहरसा की जो भौगोलिक परिस्थिति है उसमें आवागमन की बहुत असुविधा है। अपने पास वाहन के नाम पर एक जीप थी, जिसे अभियान के लिए महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल ने दी है।

१८ अप्रैल को ३५० गाँवों में सभाएँ हुईं। कई क्षेत्रों से मेरे पहले विवरण नहीं प्राप्त हो सका था। 'फॉलोअप' के लिए तीन व्यक्तियों की एक समिति बनी है जिसका काम है—बँटी हुई जमीन पर कब्जा दिलाना। अभी तक तो सारा काम एक प्रकार से केन्द्रित ढंग से होता रहा है लेकिन अब काम को विकेन्द्रित करने की योजना बन रही है। सभी प्रखण्डों में सर्वोदय प्रखण्ड समितियाँ बनी हैं और इन्हीं समितियों के माध्यम से आगे के कार्य होंगे। इन समितियों में काफी नवयुवक आये हैं।

महिषी प्रखण्ड में ४७ बीघे जमीन बँटी, परन्तु कोशिश की गयी कि सभी गाँवों में जमीन बँटे। सभी गाँवों में कुल-मिलाकर काम अच्छा हुआ। इस प्रखण्ड की सर्वोदय समिति बनी है वह काफी अच्छी है। इस समिति ने प्रखण्ड के बचे हुए गाँवों में पुष्टि-कार्य पूरा करने का निश्चय किया है। हम यह कहते हैं कि महिषी प्रखण्ड का प्रथम चरण पूरा हुआ। इस प्रखण्ड में आध्यात्मिक असर भी हुआ है। कई लोगों ने राजनीतिक पार्टी से अलग होने का विचार किया है।

जिन प्रखण्डों में बराबर काम होता रहा है, उनमें तो अभियान के दौरान काम हुआ ही, परन्तु उन प्रखण्डों में भी अच्छा काम हुआ जहाँ इसी अभियान में नये सिरे से काम आरम्भ हुआ। वैसे सभी प्रखण्डों में आचार्यकुल और तरुण-शान्ति-सेना की एक-एक इकाई तो बनी ही थी।

जिले के शिक्षकों ने योजना बनायी है कि वे विद्यालयों में क्या करेंगे, गाँवों में क्या करेंगे और जिले में क्या करेंगे।

इस अभियान के सिलसिले में जो नये युवक आये, उन्होंने बहुत अच्छा काम किया। कुछ जगहों में महिलाएँ भी आयीं और गाँवों में घूमकर अच्छा काम किया। सहरसा शहर में भी सभाओं का अच्छा काम हुआ।

इस अभियान का एक बड़ा लाभ अखिल भारतीयता के विकास की दृष्टि से हुआ है।

श्री कृष्णराज मेहता : २६ अप्रैल को आचार्यकुल की एक बैठक सहरसा में हुई। शिक्षा, समाज और जीवन में क्रान्ति की दृष्टि से आचार्यकुल ने अपने लिए सर्वसम्मति से एक आचार-संहिता तैयार किया जिसका वे पालन करेंगे। जिला में क्रान्ति की दृष्टि से तीन कार्यक्रम लिये जायेंगे। (१) शिक्षक अपने-अपने क्षेत्रों में १ घण्टा की पाठशाला चलायेंगे जिनमें स्कूल न जानेवाले बच्चे या प्रौढ़ भी आयेंगे। (२) अपने-अपने विद्यालय को आदर्श विद्यालय बनाने की कोशिश करेंगे। शिक्षकों ने इस प्रकार के प्रयोग करने का निश्चय किया है। (३) समाज क्रान्ति की दृष्टि से तीन प्रखण्डों में सघन कार्य करने के लिए शिक्षकों ने अपना निश्चय बताया। ये तीन प्रखण्ड हैं—(१) मधेपुरा (२) सहरसा (३)

महीने। जून में संयोजन की दृष्टि से शिक्षकों का ३-४ दिन का एक शिविर होगा।

जिला अभियान समिति ने निश्चय किया है : (१) अभियान के निरीक्षण, उपलब्धि और सम्भावनाओं की दृष्टि से एक रिपोर्ट तैयार की जाए जो सर्वोदय-सम्मेलन के पहले प्रकाशित हो।

योजना की दृष्टि से निम्न प्रकार से सोचा गया : (१) बंटी जमीन पर कब्जा, कन्फरमेशन और प्रमाण-पत्र देना। उसके लिए तीन व्यक्तियों की एक समिति बनी है। (२) अभियान के सिल-सिले में जो नये व्यक्ति निकले हैं उनसे सम्पर्क साधना और उनके नेतृत्व तथा पहल के विकास का प्रयास करना। (३) जहाँ-जहाँ सघन क्षेत्र की सम्भावना प्रकट हुई है उनको आधार मानकर प्रखण्ड के काम का संयोजन करना। १३-१४ प्रखण्डों में इसकी सम्भावना प्रकट हुई है। सारा संयोजन त्रिविध दिशा में जाने का होगा—व्यक्ति और सर्व दोनों दृष्टियों से। पाँच व्यक्तियों की एक टोली जिले भर घूमकर सम्पर्क और संयोजन का काम करेगी। (४) अभियान में जो वातावरण बना है वह ठण्डा न पड़े, और वह बना रहे इसका प्रयास किया जायेगा।

यह तो काम की दृष्टि से जो कुछ भी मोटे तौर पर सोचा गया है वह मैंने बताया। मेरा जो अनुभव आया उसे भी थोड़े में मैं बता दूं। (१) समूह में काम करते हुए व्यक्ति को अपने आपको कसौटी पर कसने का अवसर प्राप्त हुआ—किसमें कितनी सरलता है, एकाग्रता है, सातत्य है और कर्मठता है। (२) जनता में सर्वोदय की बिरादरी बनी। यह तो नहीं कहा जा सकता कि अमुक जमात हमारे साथ है या अमुक जमात हमारे साथ नहीं है, परन्तु हरेक जमात में से लोग आते हैं और यदा-कदा उनका काफी सहयोग प्राप्त हुआ है। ग्रामीणों व नागरिकों की क्षमता का हमें दर्शन हुआ। काफी

(शेष पृष्ठ ४८६ पर)

भारत के मुसलमान और राष्ट्रीयता

● प्रो० तलत कमाल

भारतवर्ष में हिन्दू और मुसलमान दोनों सैकड़ों वर्षों से साथ-साथ रहते आये हैं। इनमें आपस में सत्ता की लड़ाई भी होती रही है। दोनों अपने अस्तित्व की रक्षा करने की कोशिश करते रहे हैं। बराबर इनमें लड़ाई होती रही है और इसीलिए भयंकर से भयंकर साम्प्रदायिक हिंसा में से देश को गुजरना पड़ा। इतना ही नहीं बल्कि गांधी जैसे व्यक्ति को भी इसी आग में समाप्त होना पड़ा। परन्तु एक ऐसा क्षण आया जब मुसलमानों ने यह महसूस किया कि वे हिन्दुओं के साथ सम्मानपूर्वक नहीं रह सकते या हिन्दू-बहुल समाज में वे समाप्त हो जायेंगे, तो उसने अलग एक मुस्लिम राष्ट्र की मांग की। और उसको प्राप्त करने में उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई। परन्तु एक से दो हुए इन राष्ट्रों में कभी शान्ति नहीं हुई। बल्कि दोनों देशों में साम्प्रदायिकता को बढ़ावा प्राप्त हुआ। साम्प्रदायिक झगड़े के अलावा क्षेत्रीयवाद ने जोर पकड़ा। प० पाकिस्तान एवं पूर्वी पाकिस्तान साथ न रह सके।

बांगला देश के अस्तित्व में आने के बाद भारतवर्ष में साम्प्रदायिकता ने कुछ नया रूप अख्तियार किया। यह प्रश्न जोरों से उठा कि भारत में रहनेवाले मुसलमान कभी भी भारत के होकर नहीं रहे, उनमें भारतीयता नहीं है, राष्ट्रीयता का अभाव है। कौन निश्चय करे कि कौन भारतीय है और कौन अभारतीय है? क्या पहचान है उसकी? कैसे एक-एक को हम अराष्ट्रीय घोषित करेंगे? प्रो० तलत कमाल काशी विद्यापीठ संस्थान में समाजशास्त्र का शोधकार्य करते हैं। उनका इस विषय पर काफी गहरा अध्ययन है और उनकी अपनी एक दृष्टि भी है। हमने उनसे कुछ प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये हैं जिन्हें हम यहाँ पेश कर रहे हैं।

प्रश्न भारत के मुसलमान में राष्ट्रीयता का अभाव है; इस बात में कोई तथ्य है या यों ही यह बात कही जाती है? मुसलमान राष्ट्रीय जीवन से इतना कटा हुआ क्यों दीखता है?

उत्तर आपके प्रश्न का उत्तर देने से पहले मुझे यह बताना आवश्यक है कि राष्ट्रीयता है क्या चीज? राष्ट्रीयता अपने आप में कोई स्वतंत्र तत्त्व नहीं है। यह परस्पर सापेक्ष तत्त्व है। राष्ट्रीयता मूलतः हमेशा से बहुसंख्यक लोगों की संस्कृति, इतिहास, धर्म और दर्शन से प्रभावित होती रहती है, चाहे किसी देश का उदाहरण लें। आपको पता चलेगा कि अल्पसंख्यकों का राष्ट्रीयता पर कम असर पड़ता है। ईरान में शिया मत के माननेवाले ज्यादा हैं और सुन्नी मतवाले अल्पसंख्यक। अतः वहाँ की राष्ट्रीयता शिया से प्रभावित है। तुर्की अपने को धर्म-निरपेक्ष राज्य कहता है परन्तु वहाँ की राष्ट्रीयता इस्लाम से अधिक प्रभावित है। इसी तरह भारत में भी हिन्दू बहुसंख्यक हैं। यहाँ की राष्ट्रीयता पर हिन्दुओं का अधिक प्रभाव है। यहाँ की संस्कृति पर हिन्दुओं के इतिहास का असर है, संस्कृति का असर है, एवं सामाजिक नियमों का असर है। मगर यहीं पर एक मूल प्रश्न भी उठता है। वह यह है कि राष्ट्रीयता की मुख्यधारा आखिर किसको कहेंगे। राष्ट्रीय मुख्यधारा अगर हिन्दू मत से प्रभावित है तो देखना होगा कि इस मत के पीछे कितना धर्म, संस्कृति और इतिहास का प्रभाव ऐसा है जिस पर हिन्दू धर्म की छाप पड़ी हो। यहीं पर यह बात भी कह देनी है कि बहुसंख्यक हिन्दू हैं मगर राष्ट्रीय धारा अनेक दूसरी चीजों से भी प्रभावित है। मुख्यतः आधुनिकीकरण और दूसरे धर्म-निरपेक्ष राजनैतिक आदान-प्रदान का प्रभाव भी है।

यहीं पर हमें यह जानना चाहिए कि अल्पसंख्यक का रोल क्या होगा ? एक तो यह है कि बहुसंख्यक की धारा में वह शामिल हो जाय। दूसरा यह है कि वह एक रचनात्मक रोल अदा करे जो राष्ट्रीयता की मूल धारा है। वह राजनीति, आधुनिकता और दूसरे अन्य विचारों के आदान-प्रदान का एक परिणाम हो। इसके लिए बहुसंख्यकों की उदारता और अल्पसंख्यकों के विचारों को लेकर चलने की गुंजाइश पैदा करने की जरूरत है। अगर यह नहीं होता तो राष्ट्रीय जीवन में मूल धारा वह होगी जो केवल बहुसंख्यक की होगी। इस प्रकार से बहुसंख्यक का सिद्धान्त शिक्षण (मेजॉरिटी इनडॉक्ट्रीनेशन) उसका उद्देश्य हो जाता है और यहीं से संस्कृति, दर्शन और राजनीति में खिंचाव महसूस होने लगता है। अल्पसंख्यक अपना दायरा बनाने लगते हैं और उनके 'आइडेण्टीटी सिम्बुल्स' के प्रति उनका मोह बढ़ जाता है। इस तरह राष्ट्रीय जीवन में केवल धार्मिक स्तर पर ही नहीं, बल्कि अन्य दूसरे स्तर पर भी एक असन्तुलन पैदा हो जाता है जो धर्म-निरपेक्ष असन्तुलन भी है और यहीं से राष्ट्रीयता में दरार पड़ने लगती है। यह सामाजिक और राजनैतिक प्रक्रिया में ऐसे अनेक दायरे बनने लगते हैं और राष्ट्रीयता में दरार पड़ने लगती है।

इस सन्दर्भ में एक बात और विचारणीय है—राष्ट्रीय जीवन जिस धुरी पर चक्कर काटता है, उसके चक्कर में बहुसंख्यकों के अनेक प्रकार के रंग और विचार आते-जाते रहते हैं और उसमें उनकी साम्प्रदायिकता के छपने की गुंजाइश भी उतनी ही अधिक होती है। मगर अल्पसंख्यकों के रंग और विचार जब उस चक्कर पर आते हैं तो वे बेमेल दीखते हैं और उनकी साम्प्रदायिकता जल्द पकड़ में आ जाती है और दूर से भी दीख पड़ती है।

व्यक्ति और समाज चाहे किसी भी धर्म का हो उसकी विशेषता यह है कि वह अपने पूर्वजों के इतिहास, धर्म और संस्कृति का प्रसार करना चाहता है। उसे लगता है कि हम जहाँ हैं, जिस धर्म को मानते हैं, वह सबसे अच्छा है। अतः उसका संरक्षण करना वह अपना कर्तव्य मानता है। इसके लिए वह अपने सर्वस्व की भी बलि देने को तैयार हो जाता है। किसी भी देश में अल्पसंख्यक अपने पूर्वजों के सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा करना चाहता है। बहुसंख्यक ऐसा करने देने में बाधा डालता रहता है अथवा अल्पसंख्यक को इसका डर बना रहता है। बहुसंख्यक कहता है कि तुम जहाँ हो, जिस देश में रह रहे हो, वहाँ की राष्ट्रीयता को मानते क्यों नहीं ? ऐसे देशों में जहाँ हिन्दू अल्पसंख्या में हैं वे भी इसी कारण राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से कटे दीखते हैं।

यही अल्पसंख्यक जब बहुसंख्यक बन जाता है तो जिस देश में वह रहता है उसकी संस्कृति के प्राचीनतम धरोहरों को अपना कहने लगता है। नसर मिस्र की परम्पराओं को, नील घाटी की सभ्यता को, अपना मानता है। सुकर्णो हिन्देशिया के प्राचीन सांस्कृतिक धरोहरों, पौराणिक गाथाओं को राष्ट्रीय जीवन का अंग मानता है। पाकिस्तानी मोहनजोदड़ो और हड़प्पा को अपना मान लेने की आवश्यकता को ज्यादा-से-ज्यादा महसूस करता है, इस तरह हम देखते हैं कि राष्ट्रीयता की मुख्य धारा हमेशा बहुसंख्यक से प्रभावित होती है।

यह तो विवेचन का एक अंग हुआ। दूसरा अंग यह है कि बहुसंख्यकों के मन में एक भ्रम रहता है कि अल्पसंख्यक कुछ करते नहीं ! वे सब कुछ करते हैं, अपने सर्वस्व की बलि भी देते हैं, लेकिन उसकी एक मर्यादा है। अगर आप प्रतिशत देखेंगे तो हिन्दुस्तान में हिन्दुओं की अपेक्षा मुस्लिम भी कम राष्ट्रीय नहीं रहे हैं। अगर हिन्दुओं की राष्ट्रीय भावना में कमी आयी है तो मुस्लिमों में भी आयी है। दोनों के चिन्तन में धर्म और क्षेत्र की भावना का विकास हुआ है। दोनों में साम्प्रदायिक भावनाएँ विकसित हुई हैं।

मुस्लिमों के राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से कटा होने का एक कारण और भी है—वह है अंग्रेजों की राजनीति। हम देखते हैं कि स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में एक दशाब्दी में हिन्दू और मुसलमान अलग दीखते हैं तो दूसरे दशाब्दी में दोनों जुड़े दीखते हैं। १९०५ में लार्ड कर्जन ने बंगाल का बँटवारा किया। यह कहकर कि इसमें मुस्लिमों का हित है। उस समय हिन्दू-मुस्लिम हित की दृष्टि से दोनों अलग थे, १९०६ में मुस्लिम प्रतिनिधि मण्डल अलग चुनाव के लिए शिमला में लार्ड मिन्टो से मिला। १९०६ में ही ढाका में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। १९१०-११ में दोनों में तनाव हुआ। १९११ में दिल्ली में दरबार हुआ और उसी दरबार में १९०५ में बंगाल का बँटवारा समाप्त किया गया। १९१२-१३ में दोनों को एक दूसरे के नजदीक लाने की कोशिश हुई। १९१४ में मुस्लिम लीग ने 'लोकल सेल्फ गवर्नमेण्ट' की माँग की। १९१६ में दोनों का कांग्रेस और मुस्लिम लीग का सम्मेलन एक साथ हुआ, लखनऊ पैक्ट उसी का एक परिणाम था। १९१८ में खिलाफत हुआ, खिलाफत की राजनीति में दोनों साथ थे। बाद में वातावरण अच्छा बना। गांधीजी ने दोनों धाराओं को मिलाया। १९२०-२१ में असहयोग आन्दोलन में दोनों साथ थे। तुर्की में कमाल अतातुर्क ने खिलाफत की संस्था को समाप्त कर दिया। उसके बाद १९२४ में तनाव फिर से बढ़ने लगा और लखनऊ समझौता को दुहराने की माँग की गयी। १९४० में एक अलग राष्ट्र का प्रस्ताव सामने आया। १९४७ में अलग हो गये। मैंने यह एक इतिहास आपके सामने पेश किया ताकि जो बात मैं कहना चाहता हूँ वह इस ऐतिहासिक सन्दर्भ में ज्यादा स्पष्ट हो सके।

विभाजन के बाद अल्पसंख्यकों के मन में सुरक्षा की चिन्ता घर कर गयी। उन्हें फिक्र है कि यहाँ उनकी संस्कृति

नष्ट न हो जाय; क्योंकि वे जानते हैं कि हम अल्पसंख्यकों की ही तरह बहुसंख्यकों को भी अपने विचार, दर्शन, धर्म और संस्कृति प्रिय हैं। बहुसंख्यकों के प्रिय तत्त्व और अल्पसंख्यकों के प्रिय तत्त्वों में अगर अस्तित्व का झगड़ा हुआ तो उसमें अल्पसंख्यकों का प्रिय तत्त्व गौण हो जायेगा। इसलिए उनके सामने पहला प्रश्न अपने सांस्कृतिक अस्तित्व की रक्षा का हो जाता है और तब आप उन्हें राष्ट्रीय जीवन से कटे हुए देखते हैं।

प्रश्न : मुसलमान अपनी सुरक्षा राजनीति में खोजता है और समाज से कटा हुआ है। राजनैतिक सुरक्षा स्थायी सुरक्षा की गारण्टी कैसे प्रदान करेगी?

उत्तर : केवल मुसलमान ही राजनीति में सुरक्षा की तलाश करता है ऐसी बात नहीं है। हिन्दू और मुसलमान दोनों का विश्वास सरकार और राजनीति में है। बहुसंख्यक हिन्दू क्रान्ति और सुधार तथा अन्य प्रकार के सामाजिक कार्य करने का साधन राजनीति और सरकार को मानते आये हैं। सर्वोदयवालों को छोड़कर कितनी राजनीतिक पार्टियाँ, धार्मिक और सामाजिक संस्थाएँ हैं जिनका समाज में विश्वास है और सरकार में विश्वास नहीं रखते? तो फिर मुसलमानों से यह अपेक्षा कैसे करते हैं कि वे सरकार में विश्वास न करें, सरकार से अपेक्षा न करें? जब बहुसंख्यक उसकी सुरक्षा की गारण्टी नहीं दे सकते तो वह सरकार में अपनी सुरक्षा ढूँढेगा ही।

१८८५ से लेकर १९४७ तक सत्ता की ही लड़ाई लड़ी गयी है, मुस्लिम लीग भी सत्ता के लिए ही लड़ी, फिर हम यह कैसे मानेंगे कि कोई सत्ता से अलग रहे? वैसे आप देखिये, बँटवारा के बाद मुस्लिम उम्मीदवारों की संख्या बढ़ी है, भले ही वे चुने नहीं गये। मुझे तो ऐसा लगता है कि इस तरह के प्रश्नों का कोई ठोस आधार नहीं होता, बल्कि एक धारणा बना ली जाती है और उसी धारणा को तथ्य मान लिया जाता है। धारणा एक होती है और तथ्य दूसरी ही बात कहता है। मुझे ऐसा लगता है कि अल्पसंख्यकों के बारे में भी कुछ ऐसी ही धारणाएँ काम कर रही हैं।

प्रश्न : क्या कारण है कि भारत में अन्य धर्मावलम्बियों के साथ साम्प्रदायिक तनाव नहीं होता, परन्तु हिन्दू-मुसलमान आपस में भिड़ते रहते हैं? बांगला देश की आजादी के बाद साम्प्रदायिक तनाव के स्थायी या अस्थायी कारणों में कोई फर्क आया है?

उत्तर : आप जिन अन्य धर्मावलम्बियों की बात कर रहे हैं तो शायद उससे आपका मतलब पारसी और ईसाई से है। ये लोग कितने हैं? मुश्किल से १ प्रतिशत। परन्तु मुसलमान तो दूसरे स्थान पर आता है न! इसलिए सत्ता की लड़ाई अगर किसी के साथ है तो वह मुसलमानों से ही। और, ये मुसलमान तो कभी शासक भी रह चुके हैं। इसलिए भी सत्ता का मोह इनमें ज्यादा हो सकता है।

व्यक्ति के मन में स्थित संघर्ष की भूमिका हर युग में किसी न-किसी रूप में समाज में उपस्थित रहती है। जहाँ अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक का सवाल नहीं है, और साम्प्रदायिकता की भावना नहीं है वहाँ पर क्षेत्रवाद जोर पकड़ता है। बांगला देश के मामले में भी वही हुआ, जो बगदाद और सीरिया में हुआ था। मुहम्मद साहब की मृत्यु के थोड़े ही दिनों के बाद हजरत अली खलीफा हुए तो सीरिया अलग हो गया। मुझे ऐसा लगता है कि जो इतिहास बगदाद की हार के पीछे था उसी प्रकार भी ढाका में उत्पन्न हुआ और बहुत तरह से दोनों की हारों में समानता दीखती है। व्यक्ति के मन के अन्दर के संघर्ष की मनोवृत्ति किसी-न-किसी रूप में प्रकट होगी ही—चाहे क्षेत्रीयवाद के रूप में, चाहे सम्प्रदायवाद के रूप में या गरीब अमीर के झगड़े के रूप में।

बांगला देश की मुक्ति से तनाव में कुछ कमी आयी है परन्तु वर्षों से चली आ रही तनावपूर्ण मन स्थिति एक दिन में समाप्त होगी नहीं, धीरे-धीरे समाप्त होती है। यह साम्प्रदायिकता के कम होने की भी प्रक्रिया है और इतिहास भी। यह एक लम्बी प्रक्रिया है। ■

अम्बर और उसकी खादी

१—खादी और ग्रामोद्योग कमीशन १९५६-'५७ में स्थापित हो चुका था। अम्बर चर्खे का विकास भी पहली ही पंचवर्षीय योजना के दौरान हुआ था, और जहाँ तक नयी टेक्नीक का सम्बन्ध है अम्बर चर्खा ही वह यंत्र था जिसके आधार पर खादी ग्रामोद्योग कमीशन को खादी का विकास करना था। दूसरी पंचवर्षीय योजना में २५ लाख अम्बर चर्खों के वितरण का प्रस्ताव रखा गया जो १५ करोड़ गज खादी-उत्पादन के लिए पर्याप्त थे। २५ लाख अम्बर चर्खों का मूल्य उस समय ३२०५ करोड़ रुपये होते थे। अगर इतने गज कपड़े के लिए मिलों की मशीनरी का विस्तार करना होता तो इससे कुछ बहुत ज्यादा पूँजी की जरूरत न होती। लेकिन बहुत बड़ा अन्तर इस बात में था कि इतनी पूँजी से मिल उद्योग में जितने अतिरिक्त आदमियों को रोजगार मिलता उससे २०-२५ गुना अधिक आदमियों को खादी-उद्योग में मिलता। हाँ, मजदूरी एक कत्तिन को १२ आना ही रोज मिलती, जब कि मिल में उसे लगभग ३ रुपये मिलते। इस १२ आने में उसकी वास्तविक कमाई (½ पौंड सूत का मूल्य) २० पैसे ही थी, शेष 'सब्सिडी' थी। इस प्रकार दूसरी पंचवर्षीय योजना में कपड़े का सारा अतिरिक्त उत्पादन खादी के लिए सुरक्षित रखने पर ३६ लाख कत्तिनों के लिए रोजगार की योजना बनायी गयी। अम्बर-कार्यक्रम की सम्पूर्ण व्यवस्था नये सिरे से करनी थी—यंत्र का उत्पादन, प्रशिक्षण आदि। इसके लिए बहुत सक्षम संगठन की जरूरत थी।

२—१९५६ में एक पाइलट प्रोजेक्ट पर काम शुरू किया गया। उसका एक कमिटी द्वारा मूल्यांकन हुआ। पता यह चला कि प्रति कत्तिन उत्पादन प्रस्तावित उत्पादन का तीन-चौथाई ही था। फिर भी कमिटी ने सिफारिश की कि अम्बर-कार्यक्रम का विस्तार किया जाय। चर्खों के उत्पादन के बारे में कमिटी की स्पष्ट राय थी कि उत्पादन बिलकुल विकेन्द्रित आधार पर किया जाय, केवल कुछ चुने केन्द्रों में नहीं। लेकिन कमीशन की राय थी कि शुरू में विकेन्द्रित उत्पादन सम्भव नहीं है। १९५६-५७ के लिए सरकार ने ७५ हजार अम्बर-सेटों के उत्पादन की स्वीकृति दी, लेकिन केवल २ करोड़ गज खादी का उत्पादन अम्बर के लिए सुरक्षित किया गया जब कि शुरू में १५ करोड़ गज की बात सोची गयी थी। इतना उत्पादन भी कमीशन के लिए भारी पड़ा, और १९५७ में कमीशन ने ५ लाख अम्बर और ६० लाख गज खादी की योजना रखी। इसका यह अर्थ था कि जहाँ शुरू में एक अम्बर सेट से पूरे साल में ६ सौ गज खादी के लिए पर्याप्त सूत की कताई की कल्पना थी, इस संशोधित कार्यक्रम में एक सेट से मात्र १२० गज के लायक सूत-कताई की बात कही गयी। इसका कारण यह था कि एक अम्बर साल के ३०० दिन प्रतिदिन ८ घण्टे नहीं चल सका, केवल २०० दिन ४ घण्टे प्रतिदिन ही चल सका। इसके लिए तकनीक और संगठन की कई कमियाँ थीं। १९६० में जाँच से मालूम हुआ कि लगभग ४० प्रतिशत अम्बर बैठे हुए हैं, और उत्पादन प्रति अम्बर ६० गज खादी के सूत से भी कम है। इसका अर्थ यह हुआ कि अम्बर-कार्यक्रम मिल की तुलना में दस गुना अधिक पूँजी-निष्ठ (कैपिटल इन्टेन्सिव) साबित हुआ।

३—रोजगार की दृष्टि से भी अम्बर कुछ खास सफल नहीं हो सका। १९६० में जाँच से पता चला कि २,८३,६३३ कत्तिनों को प्रशिक्षण दिया गया, जब कि केवल २,४५,०१५ को अम्बर दिये गये। जो दिये गये उनमें भी ४० प्रतिशत पड़े रहे, और बाकी से भी पूरा काम नहीं लिया गया।

४—एक कठिनाई और थी। जो सूत काता गया उसका क्या हो? हाथ करघेवाले मिल का सूत इस्तेमाल करते थे। करघे में अम्बर का सूत लगाने की कोशिश की गयी, फिर भी अम्बर का सूत इकट्ठा होने लगा। सूत ही नहीं, जो खादी बनी वह भी इकट्ठा होने लगी। सब्सिडी, रिबेट, तथा दूसरे प्रकार की सहायता के बावजूद स्टाक का निकालना एक समस्या हो गयी। परिणाम यह हुआ कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक अम्बर के लिए उत्साह बहुत कम हो गया।

५—इस स्थिति के मुख्यतः दो कारण थे। एक, संगठन की कमजोरी; दूसरा, कत्तिन को बहुत कम मजदूरी का मिलना। फिर भी तीसरी पंचवर्षीय योजना की राय रही कि खादी के क्षेत्र में पारम्परिक चर्खा और अम्बर दोनों रहने दिये जायँ। इस दृष्टि से जो ३५ लाख अम्बर बँट चुके हैं उनमें २५ लाख का पूरा इस्तेमाल हो, तथा ३ लाख अतिरिक्त चर्खे ग्राम-इकाइयों में बाँटे जायँ। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ५ लाख अम्बर देने की बात थी, तृतीय में ३ लाख की ही रह गयी। खादी-स्टाक के बारे में तृतीय पंचवर्षीय योजना ने कहा कि खादी शहरों के लिए कम, स्थानीय खपत के लिए ज्यादा पैदा की जाय। इसीलिए ३ लाख अतिरिक्त अम्बर को ३ हजार ग्राम-इकाइयों में ही देने को कहा गया। इसमें दृष्टि यह थी कि धीरे-धीरे स्थानीय वस्त्र-स्वावलम्बन के लक्ष्य तक पहुँचा जाय।

६—इन बातों को सामने रखकर कमीशन ने २५ लाख अम्बर में ६ तकुए लगाना शुरू किया। जुलाई १९६४ के अन्त तक ५०,३६३ अम्बर का नवीनीकरण किया गया और १९,१७७ में ६ तकुए लगाये गये। इसी तरह तीसरी योजना में तीन लाख नये अम्बर की जगह

डाकुओं के गिरोह में सात दिन

● गोपालदत्त भट्ट

२ अप्रैल की दोपहर को अचानक श्री काशिनाथ त्रिवेदी चम्बल घाटी शान्ति मिशन का सन्देशा लेकर आये—"श्री जयप्रकाश नारायण के समक्ष मुरैना में १२ अप्रैल से १६ अप्रैल तक चम्बल घाटी के दस्यु आत्म-समर्पण करेंगे। अतः डाकुओं से सम्पर्क करने तथा उन्हें *आत्म-समर्पण के लिए तैयार* करने के लिए आपकी आवश्यकता है।" अस्तु, ३ अप्रैल को एक दरी, एक चादर, एक जोड़ वस्त्र तथा बांस की एक टोकरी लेकर चल पड़ा मुरैना को। ४ अप्रैल को दोपहर में माधो सेवा आश्रम, जौरा पहुँचा। वहाँ जाकर मालूम हुआ कि कार्यकर्ताओं की दो टोलियाँ दस्युराज, मोहर सिंह तथा माधो सिंह के गिरोहों की तरफ जा चुकी हैं। मुझसे डाकू माखन सिंह के गिरोह में जाने को कहा गया। मेरे साथ रायपुर के श्री दुबेजी तथा कानपुर के एक वकील श्री चौहान भी चलने को तैयार हो गये। हमारे साथ गाँव का एक भाई तथा एक जीप कर दी गयी। कुछ लोगों ने कहा, "माखन सिंह बड़ा कठोर और निर्दयी है, विशेष पढ़ा-लिखा नहीं है, कुछ भी समझाओ, समझता नहीं है, गोली से ही बात करता है।" थोड़ा भय भी लगा। फिर सोचा, एक भले काम के लिए जा रहा हूँ, ऐसी-वैसी कुछ बात हो भी जायेगी तो भी सन्तोष ही होगा। तुलसीदासजी की यह चौपाई याद हो आयी "परहित लागि तजहिं जे देही, सतत संतप्रशंसहि तेही" और जीप सड़क पर दौड़ने लगी।

जहाँ हमें पहुँचना था, वह स्थान जौरा से पश्चिम की तरफ ३६ मील है। मुरैना का यह पश्चिमी छोर राजस्थान के भरतपुर और सवाई माधोपुर जिले से लगा है। सबलगढ़ नामक कस्बे तक डामर की सड़क है वहाँ से एक ८ मील थोड़ा पहाड़ है जिसको चीरती हुई कच्ची सड़क जाती है। पहाड़ी पर झाड़ियाँ और छोटे-छोटे वृक्ष थे। पूरा पहाड़ सन्नाटे में डूबा हुआ था, ज्योंही जीप पहाड़ी के दूसरी छोर पर पहुँची तो नीचे बामसौली की सुरम्य घाटी दिखाई दी। जीप रोककर थोड़ी देर *हम उस घाटी के सौन्दर्य को आँखों से* पीते रहे। नीचे उतरकर जीप मुख्य सड़क छोड़कर बैलगाड़ी के रास्ते पर मुड़ी। रास्ता बड़ा खराब था, ड्राईवर बड़ी सावधानी से कार्य कर रहा था, फिर भी एक जगह पर जीप उलटते-उलटते बची। यहीं पर एक छोटा-सा गाँव है निठार। इसी गाँव के किनारे जंगल में डाकू माखन सिंह का गिरोह हमारा इन्तजार कर रहा था। वहाँ एक छोटा-सा कुँआ था, दो-तीन नीम के वृक्ष थे। उन वृक्षों के नीचे पच्चीस डाकुओं का यह गिरोह सावधान होकर आराम कर रहा था। जीप की घरघराहट सुनकर आधे डकैत बन्दूकें उठा-उठाकर खड़े हो गये। मैंने ड्राइवर से कहकर जीप रुकवाई और नीचे उतर पड़ा, तथा डकैतों को इशारा किया—एक लड़का दौड़कर हमारी तरफ *आया*, फिर हमारे समाचार लेकर वापस गिरोह में गया। वहाँ से हमें आने का इशारा किया और हमारी जीप कुएँ के पास जा खड़ी हुई। जीप से उतरते ही हमने सबको राम-राम की। बन्दूकें पकड़े गले में कारतूसों का पट्टा पहने डरावने चेहरों पर करारी मूँछें और रक्ताभ आँखों से झाँकती कठोरता और कुटिलता, क्षण भर के लिए शरीर सिहर उठा। मन ही मन भगवान का स्मरण करके हम आगे बढ़े। तीन-चार लोगों से हाथ मिलाया, गिरोह के सरदार (मुखिया) ने आकर हाथ मिलाया और हमें बैठने को हवा भरी गद्दी दी। ४० वर्षीय यह दस्यु नेता माखन सिंह, साढ़े छः फीट ऊँचा-तगड़ा जवान है। रोबदार चेहरे पर लम्बी, ऐंठी हुई घनी मूँछें, लाली भरी आँखों में क्रूरता और अविश्वास (उस वक्त पुलिस अफसर की-सी खाकी ड्रेस, हाथ में स्वचालित राइफल। अँगुलियों में सोने के छल्ले, हाथों में सोने की घड़ी और गले में सोने की ७ जंजीरों वाली माला।

बैठते ही उसने व्यंग्य भरी वाणी में कहा: "क्यों नेताजी मरवाने आये हो मुझे, धोखा देकर मरवाओगे, तुम्हारे *बड़े नेता परसों कह गये थे कि अब यहाँ* पुलिस नहीं आयेगी, किन्तु दो दिन पहले गाँव के ८ लोगों को पुलिस पकड़कर ले गयी है।" बात यह थी कि चम्बल घाटी शान्ति मिशन ने भोपाल और ग्वालियर के पुलिस अधिकारियों से कहकर इन डाकूग्रस्त क्षेत्रों को १५ अप्रैल तक शान्ति क्षेत्र घोषित करवा दिया था, ताकि डाकुओं से हम सम्पर्क कर सकें, इसकी खबर डाकुओं को भी दी गयी थी। इसके बावजूद जब पुलिस ने कार्यवाही की तो माखन सिंह को अविश्वास हो गया। मैंने उससे कहा कि शायद थानेवालों को हमारे आने की सूचना नहीं मिली होगी। हम उन लोगों को थाने से छुड़ा लायेंगे, हम पर विश्वास करो प्यारे भाई। हम तो तुम्हें बचाने आये हैं। तुम्हारे पास बन्दूकें हैं, सारा इलाका तुम्हारे नाम से थरथराता है, किन्तु हम बिना डर के, बिना हथियार के केवल मुहब्बत से भरा हृदय लेकर तुम्हारे पास सगे-सम्बन्धी की तरह आये हैं, क्या यह सब तुम्हारे विश्वास के लिए पर्याप्त नहीं है? और वह डाकू सरदार मुस्करा पड़ा, और बोला "आप कहाँ रहेंगे?" मैंने कहा, "हम तो तुम्हारे मेहमान हैं जहाँ रखो वहीं रह लेंगे।" उसने कहा, "गाँव में चलो।" बस हमारे साथ डाकुओं का पूरा दल निठार गाँव में आ पहुँचा। एक जगह दो छोटे-छोटे मकान थे नीम की घनी छाया थी, वहाँ डेरा डाल दिया। चारपाइयों की कतारें गाँववालों ने खड़ी कर दीं। रात को मैंने देखा २५ डाकुओं...

ने लगभग ८ चूल्हे जला रखे हैं। माखन सिंह ने बताया कि अलग-अलग जाति के लोग हैं, इसलिए अलग-अलग खाना बनाते हैं। कदम-से-कदम और कन्धे-से-कन्धा मिलाकर मौत से जूझनेवाले डाकू भी जात-पाँत की खाइयों को नहीं पाट सके। मुझे लगता है कि जात-पाँत के ताने-बाने से बुना गया समाजरूपी यह कपड़ा समाज के लिए कफन बन जायेगा।

दूसरे दिन वकील साहब को मैंने रामपुर पुलिस चौकी भेजा। वे उन लोगों को छुड़ा लाये। बस, फिर डाकू सरदार को हम पर पूरा विश्वास हो गया। वह अपनी ग्वालियरी बोली में हमसे दिन भर बात करता रहा। श्री जे० पी० के बारे में, अपने कर्मों के बारे में, प्रश्न करता रहा। हम लोग उसके प्रश्नों का समाधान करते रहे। उसके साथ नहाने जाते, खाना खाते, गाना गाते और एक ही दिन में खबर आग की तरह चारों ओर फैल गयी कि माखन सिंह का गिरोह निटार में डेरा डाले पड़ा है तथा उसने आत्म-समर्पण की तैयारी कर ली है। फिर क्या था डाकुओं को देखने लोग आने लगे झुण्ड के झुण्ड। वर्षों से भयभीत जन-जीवन निर्भय होकर सामान्य हो गया। लोगों ने चैन की साँस ली। अनेक भावुक लोग तो आकर हमारे पाँव छूते और कहते, "आप ने हमारा उद्धार कर दिया।" एक दिन एक मिडिल स्कूल के बच्चे डाकू गिरोह को देखने आये। माखन सिंह ने उनसे पूछा : "क्यों आये हो ?" बच्चों ने कहा, "आपको देखने आये हैं।" दस्यु नायक ने कहा, "मैं तो १८ वर्षों से तुम्हें पकड़ने के लिए ढूँढ़ रहा था, तब तो तुम मुझे मिले नहीं, और वह जोर से हँस पड़ा" उसने बीस रुपये बच्चों को मिठाई खाने को दिया।

माखन सिंह ने जिन बच्चों को पकड़ रखा था उन्हें बिना पैसा लिये छोड़ दिया। हथियार सौंपने की पूरी तैयारी कर ली। उसमें आत्म-विश्वास पैदा हुआ, अपने पापों के लिए पछतावा पैदा हुआ। एक बार मैंने उससे पूछा, "क्यों ठाकुर ! शहर गये कितने दिन हो गये हैं ?" वह बोला, "हो गये हैं १८ वर्ष। "हमहि तो बिजुरिया से डर लागे" (मुझे तो बिजली से डर लगता है) मैंने कहा, "पर अब तो जेल में बिजली के पास ही जाना है।" फिर उसने कहा, "अब कोउ डरना है, कहो तो त्यारे संगे अबहि जीप में बैठकर मुरैना तक चला चलूं।" हम लोगों ने डाकुओं के परिवारों को भी वहीं बुला लिया था। माखन सिंह ने मुझे बताया कि हम अपने डाकू-जीवन में पहली बार अपने परिवारों से इतनी आजादी से मिल रहे हैं, और पहली बार दिन में गाँवों में घूम रहे हैं। माखन सिंह की पत्नी से मैंने पूछा "अभी तो ये खूब पैसा लाते हैं, अब तो गरीबी का जीवन शुरू होगा।" उसने हाथ जोड़ कर कहा, "मैं भूखी रह लूंगी, फूल की माला पहनकर रह लूंगी, बस ये घर आ जायें।" माखन सिंह की ९ वर्ष की लड़की ने कहा "कछु दुकान-उकान या मजूरी-खेती कर लेंगी घरें आ जाओ।" एक दिन माखन सिंह से मैंने पूछा "तुम तो बहादुरी का जीवन जी रहे हो। अब तो छूटने के बाद किसान और मजदूरों की तरह जीना होगा।" उसने कहा, "बहादुरी नहीं वह तो कायरों का जीवन है। हम जंगल-जंगल भागते फिरते हैं। कभी-कभी तो पकी हुई रोटियाँ छोड़कर भागना पड़ता है। हाँ, बांगला देश या काश्मीर में लड़ते हुए मारा जाता तो बहादुरी होती।" एक डाकू में भी इतना राष्ट्रप्रेम देखकर मेरा हृदय गद्-गद् हो गया। मन ही मन मैंने कहा, "ऐ भारत जननी। एक गिरे-से-गिरे आदमी के मन में तेरे लिए इतना प्यार और आदर है तुझे कोई गुलाम नहीं बना सकता है!"

ये लोग डाकू क्यों बने ?

(१) माखन सिंह जौरा के पास एक गाँव का रहनेवाला है। उस गाँव के कलालों ने इनके पानी पीने का रास्ता बन्द कर दिया। इनके बड़े भाई देवी सिंह पर गोली भी चलायी। गुस्से में आकर दोनों भाइयों ने लाठी से दो लोगों को मार डाला और दस्युराज लाखन सिंह के गिरोह में शामिल हो गये। देवी सिंह पुलिस के हाथों मारा गया। लाखन के मारे जाने पर स्वतंत्र गिरोह बनाकर काम करने लगा। इन लोगों को डाकू बने १८ वर्ष हो गये हैं।

(२) इसी गिरोह में बूटा नाम का १६ वर्ष का किशोर भी डाकू था, उसकी जमीन गाँव के एक आदमी ने दबा ली और मारने भी आया। कहीं से न्याय नहीं मिला। अन्त में बदले की भावना लेकर वह डाकू बन गया।

(३) सरदार विश्वम्भर सिंह ने बताया कि माँ-बाप पाकिस्तान में मारे गये। बचपन एक सन्यासी के साथ घूमने में बीता। सन्यासी की मृत्यु के बाद, किसी की मवेशी चरागे, हल जोता, मगर लोगों ने न तो भर पेट खाना दिया और न मजूरी ही दी। बाद में ग्वालियर में खरीद की मशीन पर काम किया। ७०० रुपये कमाकर अपनी कोठरी में रखा था कि एक दिन चोरों ने कोठरी तोड़कर रुपये चुरा लिये। तब लगा कि ईमान और पसीने की कोई कद्र संसार में नहीं है। इसलिए यह रास्ता पकड़ा।

(४) जगन रावत ने बताया कि संसार में उसका कोई नहीं है और वह रो पड़ा। जेल से छूटकर कहाँ जाऊँगा ?

(५) एक दो लोग ऐसे भी थे, जो गरीबी के कारण डाकू बने और कुछ पुलिस की ज्यादती के कारण भी। पुत्ता धोबी नाम का निशानेबाज डकैत भी इसी दल में था। एक रमानाथ नामक डकैत ने शराब के नशे में हमारी तरफ भी बन्दूक तान ली थी, किन्तु दूसरे डकैत ने राइफल छीन ली। दूसरे दिन उसने माफी माँगी।

मैं १० अप्रैल तक इस गिरोह में रहा। १४ अप्रैल को माखन सिंह ने अपने साथियों सहित श्री जयप्रकाश नारायण के चरणों में हथियार सौंप दिया। ●

ग्रामस्वराज्य के मोर्चे से

११ अप्रैल

पहुँचते ही कहा गया कि अँधेरा होते-होते गाँव में किवाड़ बन्द हो जाते हैं, इसलिए सभा उसके पहिले कर ली जाय। पूछने पर मालूम हुआ कि दस दिन पहिले गाँव में डाका पड़ा था। एक धनी सेठ लूट लिया गया। तब से आतंक छाया हुआ है।

सभा जल्दी-जल्दी कर ली गयी। सभा के बाद एक गरीब मजदूर आया और कहने लगा: 'मैंने बाँस-फूस इकट्ठा कर लिया है, लेकिन घर नहीं बना पा रहा हूँ।' मैंने पूछा, 'क्यों?' बोला: 'मालिक कहते हैं कि जाओ, दूसरी जगह रहो। यहाँ घर नहीं बनाने देंगे।' मैंने फिर पूछा: 'उस जगह कितने दिन से रहते हो?' उसने कहा: 'मालिक लगभग अठारह साल से।'

१८ साल के बाद बेचारा भूमिहीन भगाया जा रहा है। कितनी सरकारें आयीं और गयीं लेकिन उसे एक झोपड़ी तक के लिए भूमि का एक टुकड़ा न मिला। आज की व्यवस्था में न धनी की सुरक्षा है, न गरीब का पुरसान, फिर भी उसे बदलने की दिशा में कदम नहीं उठता। परिचित बुराई अपरिचित अच्छाई से अच्छी होती है।

१२ अप्रैल

गाँव में शिक्षकों की एक बड़ी संख्या है। बच्चों के द्वारा घर-घर से उनका सम्पर्क रहता है। लेकिन कठिनाई यह है कि गाँव के शिक्षकों का व्यक्तित्व नहीं रह गया है सिवाय किसी मेस में उनके जो अपने घर से आते-जाते हैं। जो किसी बड़े मालिक के दरवाजे पर रहते हैं, उसके बच्चों को पढ़ाते हैं, और उसके यहाँ खाना खाते हैं वे दौलत के शिकार हो गये हैं। ऐसे शिक्षक आर्थिक दृष्टि से इस तरह बँधे रहते हैं कि अपने निर्णय से वे कुछ कर नहीं पाते। उनके मन में हर वक्त मालिक की मर्जी का भय बना रहता है। फिर भी हर जगह में कुछ ऐसे ग्रामीण शिक्षक होते ही हैं जो भावनाशील होते हैं, और सेवा-कार्यों में रुचि रखते हैं।

१३ अप्रैल

एक ग्रामीण सज्जन ने इस बात पर बड़ी नाराजगी प्रकट की कि गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश आदि के बाहरी कार्यकर्ता बिहार में आकर क्यों काम कर रहे हैं? क्या उनके राज्य में काम पूरा हो गया है! मैंने बहुत समझाया लेकिन वह यही दोहराते रहे कि बिहारवालों को दुर्दम समझकर हर नयी दवा पहिले उन्हें ही खिलायी जाती है!

लेकिन इसके पीछे बात दूसरी है। जमीन के प्रश्न पर भूमिवान छुईमुई जैसा हो गया है। वह चाहता नहीं कि इस सवाल को उठाया जाय। इसकी सारी जिम्मेदारी सरकार पर है। उसने पचीस वर्षों से केवल पैबन्द लगाने की कोशिश की है। अगर खूब सोच-विचार कर गाँवों की कोई सम्पूर्ण व्यवस्था प्रस्तुत की गयी होती तो अब तक लोगों ने उसमें अपना स्थान बना लिया होता, लेकिन वह नहीं हुआ। उसके स्थान पर आज एक, कल दूसरा, कानून बनता रहा जिसमें से कोई भी पूरा-पूरा लागू नहीं हुआ। कानून निकम्मा साबित हुआ, और सुधार नाहक बदनाम हुआ। अब समय है कि मजदूर, बँटाईदार, मालिक तीनों को सामने रखकर भूमि की सम्पूर्ण व्यवस्था सोची जाय, और नयी भूमि-व्यवस्था के आधार पर ही नयी ग्राम-व्यवस्था प्रस्तुत की जाय। जब तक भूमि की व्यवस्था नहीं बदलेगी तब तक गाँव की व्यवस्था कैसे बदलेगी?

१४ अप्रैल

रास्ते में देखा आम के एक बाग में लगभग सभी पेड़ सूख रहे हैं। कुतूहल हुआ कि क्यों ऐसा हो रहा है। पड़ाव पर पहुँचकर पूछा तो लोगों ने बताया कि कोसी के पानी के कारण। चर्चा हुई तो लोगों ने कोसी की नहरों के कारण होनेवाले ये नुकसान गिनाये: नीचे की जमीन में दलदल, खेतों में बालू, पशुओं और वृक्षों का ह्रास, घूसखोरी और भ्रष्टाचार। अन्तिम चीज को छोड़ भी दें, तो बाकी चीजों का सीधा सम्बन्ध कोसी के पानी से है। मुश्किल यह है कि हमारी सभी योजनाएँ इतनी एकांगी होती हैं कि कोई सोचता नहीं, या प्रयोग करके देखता नहीं कि किस चीज का किन-किन चीजों पर क्या असर होगा। सिंचाईवालों को क्या पड़ी है कि वे खेती के बारे में या खेतों को दलदल होने से बचाने के लिए 'ड्रेनेज' के बारे में सोचें? इसी तरह कोई यह कभी नहीं सोचता कि किस विकास-योजना का प्रभाव के स्वास्थ्य और सम्बन्धों आदि पर क्या प्रभाव पड़ेगा और उससे क्या समस्याएँ पैदा होंगी एवं पहिले से उनका क्या समाधान ढूँढ़ना चाहिए। सारा काम अन्धाधुन्ध होता है।

१५ अप्रैल

एक धर्म-कर्म में पक्के, धनवान, बूढ़े सज्जन ने आज बहुत सिर खाने की कोशिश की, लेकिन मैंने केवल सिर हिलाकर और उनकी कोई बात काटने की कोशिश न कर जान बचायी। वह बराबर यही समझाने की कोशिश करते रहे कि गरीब कर्म-फल से गरीब है, और अमीर अपने कर्म-फल से अमीर है। समता की बात करना ईश्वर के विधान में अकारण हस्तक्षेप है। अपनी बात को पुष्ट करने के लिए वह बार-बार वेद, शास्त्र एवं भागवत का नाम लेते थे, और हर बात को अकाट्य मानते थे।

ऐसे लोगों से तर्क नहीं किया जा सकता, क्योंकि उनकी दृष्टि में धर्म बुद्धि से समझने की चीज है ही नहीं। मजेदार बात तो यह है कि गरीब के प्रश्न पर धर्मात्मा और धनवान दोनों एक हो जाते हैं, धर्म और लक्ष्मी की भाषा एक हो जाती है।

१६ अप्रैल

आज एक बूढ़े, वाचाल, भूमिहीन और एक प्रौढ़ भूमिवान में मजेदार सम्वाद हुआ। हम लोग भूमिवान सज्जन को समझा रहे थे कि पहिले की भूदान की भूमि दूर के गाँव में है, वह उस गाँव के भूमिहीनों में बँटेगी, अब वह थोड़ी भूमि अपने गाँव में भी दें। हमलोगों की बात सुनकर भूमिहीन बोला: "हाँ, मालिक, यही दीजिए। उतनी दूर जमीन में हमलोगों को क्या मिलेगा?" मालिक ने उत्तर दिया: "नहीं, जमीन लेनी हो तो वहीं लो और चाहो तो वहीं जाकर बस जाओ। अब मैं यहाँ जमीन नहीं दूँगा।" इस पर भूमिहीन ने कहा: "जिस गाँव में हमलोग पैदा हुए, जहाँ जनम-करम हुआ, जहाँ जिन्दगी भर आप का जूता उठाया, वहाँ से आप इस बुढ़ापे में जाने को कह रहे हैं। भूमि चाहे मत दीजिए लेकिन इस समाज से मत निकालिए।"

भूमिवान प्रायः नहीं चाहते कि उनके गाँव के मजदूरों को भूमि मिले। मजदूर की विवशता ही मालिक का ट्रम्प है। मालिक भूमि और मजदूर की मेहनत, दोनों पर आधिपत्य रखना चाहते हैं। मैं देखता हूँ कि मालिकों के मन में मजदूरों के लिए जितना अविश्वास है उतना अविश्वास मजदूरों के मन में मालिकों के लिए नहीं है। मालिक थोड़ी भी सद्भावना दिखावें तो मजदूर उनके साथ रहेंगे।

१७ अप्रैल

सरकार ने भूमिहीनों को 'वास' की जमीन का पर्चा दिया है जिसके अनुसार उन्हें कट्ठा-दो कट्ठा वह जमीन दी गयी है जिस पर उनकी झोपड़ी खड़ी है। कई गाँवों में यह सुनने को मिला कि मालिकों ने इन पर्चों को ले लिया है—कहीं धमकाकर, कहीं देखने के बहाने, कहीं रुपया-दो रुपया देकर। गाँव में गरीब इतना असुरक्षित है कि समझ में नहीं आता उसे न्याय कैसे दिलाया जाय। इस पर भी यह देखकर आश्चर्य होता है कि ऊँची जाति का गरीब अपनी जाति के बड़े मालिक की ओर से नीची जाति के गरीबों के विरुद्ध बहुत करता है। बीघे-दो बीघेवाला सौ-दो सौ बीघेवाला का सिपाही बना हुआ है।

१८ अप्रैल

मुझे सहसा अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ जब मैंने आज एक *गाँव के भूमि-वितरण-समारोह में* मुखियाजी को खड़ेकर भूमिहीनों से यह कहते सुना "तुम लोग चाहते हो कि सबको भूमि मिले। हम भी चाहते हैं कि हमारे गाँव में कोई भूमिहीन न रह जाय। लेकिन अब हम लोगों के माँगने से भूमि नहीं मिलेगी। तुम्हें उठना होगा। हम आगे चलेंगे तुम पीछे-पीछे चलने को तैयार हो जाओ।" वहाँ बैठे हुए दो शिक्षकों ने इसका समर्थन किया। मजदूरों ने कहा, "आप रहेंगे तो हम तैयार हैं।"

एक दूसरे गाँव में ४ सौ बीघे भूमि रखनेवाले मुखियाजी ने प्रमाण-पत्र बँट जाने के बाद भूमिहीनों को सम्बोधित करते हुए कहा, "तुम्हें मालिकों से प्रेमपूर्वक, कर जोड़कर, भूमि माँगनी होगी।"

सचमुच अब माँगनेवाले बदलने चाहिए, बढ़ने चाहिए। मुट्ठी भर माँगनेवाले कितनी भूमि माँगेंगे और कब तक? ●

(पृष्ठ ४७८ का शेष)

संख्या में वे अभियान में शामिल हुए। कल्पनातीत और जिले में अपना असर रखनेवाले लगभग ४० लोग मिले। जिनका ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन में सक्रिय सहयोग प्राप्त होगा। भूदान की जमीन नहीं बँटी यह जो अविश्वास लोगों के मन में जम चुका था वह इस अभियान में समाप्त हुआ, क्योंकि लोगों ने देखा कि 'हाँ, जमीन बँट सकती है और शीघ्र बँट सकती है।

साहित्य-बिक्री का प्रयास हुआ। मधेपुरा, मुरलीगंज, सिंहेश्वर, छातापुर और सलखुआ प्रखण्डों में हर पंचायत ने २५-२५ रु० का साहित्य सेट लिया है। भी अगर अन्य प्रखण्डों में भी कोशिश हुई होती तो उनमें भी साहित्य की बिक्री होती। पत्रिकाओं के भी ग्राहक बनाये गये हैं।

अन्त में, मैं तो यही कहूँगा कि मैं तो आशावादी हूँ, और अच्छे पहलू को देखना पसन्द करता हूँ। ●

(पृष्ठ ४८२ का शेष)

सिर्फ १३,५३४ बाँटे जा सके। कमीशन की ओर से कारण यह बताया गया कि अम्बर के नये माडल की खोज हो रही है।

७—जून १९६६ में सरकार ने खादी-ग्रामोद्योग की जाँच के लिए एक कमिटी नियुक्त की। कमिटी ने राय दी कि खादी ग्रामोद्योग के पूरे प्रश्न पर नये सिरे से चिन्तन होना चाहिए। उसने तीन मुख्य मुद्दे रखे: (१) यंत्र में इतना सुधार हो कि उद्योग आर्थिक हो सके, जिसका अर्थ यह हो कि कारीगर की कम-से-कम उतनी कमाई हो जितनी क्षेत्र में उसी स्तर के अन्य कारीगरों की होती है; (२) यांत्रिक सुधार के कारण पुराने कारीगर बेरोजगार न होने पायें, (३) पुराने यंत्रों से काम करनेवालों को बाहरी सहायता देकर प्रोत्साहित न किया जाय। खादी के सम्बन्ध में कमिटी की स्पष्ट राय थी कि खादी-उत्पादन इस तरह संगठित किया जाय कि भविष्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सब्सिडी कम-से-कम रह जाय। पुरानी खादी में भले ही पुरानी सब्सिडी रहने दी जाय, लेकिन 'न्यू माडल चर्खे' की खादी व्यापारिक हो जिसमें ग्राण्ट और सब्सिडी न्यूनतम हो। ●

ढेंकानाल (उड़ीसा) में पुष्टि कार्य-विवरण

उत्कल प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री विनोद महन्ती के सूचनानुसार हाल ही में एक व्यापक और सघन ग्रामदान पुष्टि अभियान चलाया गया था।

इस अभियान में उत्कल प्रदेश के ५२ कार्यकर्ता तथा अन्य प्रदेशों के ५ कार्यकर्ता थे। इन लोगों ने ९४ गाँवों से सम्पर्क स्थापित किया। इसमें से ६० गाँवों का ग्रामदान हो चुका है तथा २६ गाँवों में ग्रामदान का आंशिक काम हुआ है। २३ गाँवों में ग्रामसभा का गठन हो चुका है। १८६ दाताओं द्वारा १०३ एकड़ जमीन प्राप्त हुई, जो १७६ भूमिहीनों में बाँटी गयी, ९१ शान्ति सैनिक बने, २८ शान्ति केन्द्रों की स्थापना हुई है, ४० रु० की साहित्य-बिक्री हुई तथा सर्वोदय पत्रिका के पाँच ग्राहक बने हैं।

इसी अवधि में कोंदिया प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन भी हो गया है। समिति ने चार संयोजकों का चुनाव किया है तथा कार्यसमिति के ११ सदस्य भी चुने गये हैं। चारों संयोजकों के नाम हैं :—(१) श्री रमानन्द बेहरा (२) राधानाथ सामल (३) श्रीधर साहू (४) केशव चन्द्र प्रधान।

शराबबन्दी के जन-जागरण का कार्यक्रम

जयपुर जिला सर्वोदय मण्डल ने राजस्थान में पूर्ण शराबबन्दी के लिए जन-जागरण हेतु नगर में प्रभातफेरियों का सिलसिला आरम्भ कर दिया है। १८ अप्रैल को किशोर निवास से जो प्रभातफेरी निकली वह त्रिपोलिया बाजार, चौड़ा रास्ता, घीवालों का रास्ता, हल्दियों का रास्ता, चौपड़ों का रास्ता, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, खूंटेटों के भैरो का रास्ता होती हुई जौहरी बाजार घूमकर चौपड़ पर समाप्त हुई।

स्वयंसेवकों के हाथ में प्लेकार्ड्स थे, जिनपर शराबबन्दी सम्बन्धी वाक्य लिखे हुए थे और लोग जोर-जोर से नारे लगाते हुए लोगों का ध्यान राज्य सरकार के वचन भंग की ओर आकर्षित कर रहे थे। प्रत्येक चौराहे पर प्रभातफेरी की ओर लॉ कालेज के प्राध्यापक श्री नेतीराम शर्मा ने प्रभातफेरी के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए राज्य सरकार के वचन भंग के कारण प्रान्त के बुजुर्ग सर्वोदयी नेता श्री गोकुलभाई भट्ट को, जिन्हें अपने आमरण अनशन की घोषणा करनी पड़ी है, उसकी जानकारी दी तथा लोगों से इस आन्दोलन में पूरा सहयोग देने की अपील की है।

जब प्रभातफेरी रेगरों की कोठी पहुँची तो वहाँ स्थानीय लोगों ने उनके पास की दुकान को हटवाने की व शराबबन्दी आन्दोलन में अपना पूरा सहयोग देने की इच्छा व्यक्त की। प्रभातफेरी १९ अप्रैल को चांदपोल विश्वेश्वरजी में हुई।

फर्रुखाबाद की वार्षिक रिपोर्ट

अप्रैल '७१ में जिला सर्वोदय मण्डल का गठन हुआ।

ग्राम गणेशपुर सरकारी ग्रामपंचायतों को ग्रामस्वराज्य समिति में बदल दिया गया और उसी के द्वारा ग्रामस्वराज्य का काम किया जाता है, जैसे घरों में धर्म घट रखे गये, स्ट्रीट लाइट लगायी गयी, कन्या जूनियर हाई स्कूल की स्थापना की गयी और उसकी ईमारत का निर्माण किया गया। गाँव के तीन झगड़ों का फैसला गाँव में ही कर लिया गया।

अध्यक्ष जिला सर्वोदय मण्डल फर्रुखाबाद ने अपने गाँव गणेशपुर में अपनी जमीन का बसवाँ हिस्सा वितरण कर दिया। गाँव के अन्य लोग भी इसके लिए तैयार हैं। कार्यकर्ताओं के सघन सम्पर्क के कारण वातावरण में अनुकूल हवा बनी है।

१२८, शान्तिसैनिक ३०, लोकसेवक तथा ८ सर्वोदय मित्र बने हैं। नगरों और गाँवों में गोष्ठियों का आयोजन किया जा रहा है। १२४ रु० की साहित्य-बिक्री हुई तथा ३३ सर्वोदय-पत्रिकाओं के ग्राहक बने हैं।

इस जिले में उत्तर प्रदेश के सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री स्वामी कृष्णानन्द तथा हरि प्रसाद वैद्य ने एक सप्ताह तक पुष्टि-अभियान में दौरा किया।

फर्रुखाबाद नगर स्वराज्य समिति ने निम्नलिखित कार्य किया है—८ मुहल्लों में समितियों का निर्माण, १२ आचार्यकुल के सदस्य, ६० तरुण-शान्तिसैनिक, ८ सर्वोदय मित्र बनाये तथा १ शिविर और २० गोष्ठियाँ हुईं।

—भैरव सिंह भारतीय

पुरोला विकास क्षेत्र में ग्रामदान पुष्टि-कार्य

माह सितम्बर १९७१ तक इस प्रखण्ड के कुल १६० गाँवों में से १५१ गाँवों में ग्रामदान-पुष्टि का प्रारम्भिक कार्य पूरा हुआ था।

इन १५१ गाँवों में ग्रामस्वराज्य सभाएँ ग्रामवासियों ने सर्वसम्मति से बनायी हैं। ग्रामकोष एकत्रित करके उसकी शुरुआत की है। भूमिहीनों के लिए भूमि दी है। इसमें ३ एकड़ जमीन मिली है जो भूमिहीनों में तत्काल बाँटी गयी है। प्रत्येक ग्रामस्वराज्य-सभा ने जमीन की व्यक्तिगत मिल्कियत के स्थान पर ग्राम-समाज की सामूहिक मिल्कियत की घोषणा की।

ग्रामदान एक्ट उत्तर प्रदेश में न बना हुआ होने के कारण उपरोक्त पुष्टि-कार्य की सरकारी स्तर पर आगे की कार्यवाही नहीं हो पा रही है।

माह फरवरी से हमने ग्रामस्वराज्य-सभाओं को उनकी कार्यवाही व हिसाब लिखित रखने के लिए स्टेशनरी देना प्रारम्भ किया है। ४६ ग्रामस्वराज्य-सभाओं को बैठकें कीं और उन्हें स्टेशनरी दी। साथ-साथ शराब-मुक्ति का प्रचार भी हुआ।

भूदान-यज्ञ १-५-'७२ लाइसेन्स नं० ए १४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल.१२४

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

बातचीत

अधूरा वादा....

जब मौका लगता है किसी से कुछ प्रश्न पूछकर उसे कुरेदने की कोशिश करता हूँ। वैसे लोग समय और सम्पन्नता (या पेट के लिए!) की आपाधापी में इतने कुरेदे जा चुके हैं कि बहुत कुछ कहने को नहीं रहता।

मुख्यतः इस क्रम से प्रश्न पूछता हूँ : नाम, काम, किसी राजनैतिक दल से विशेष लगाव है ? गांधी, विनोबा, जयप्रकाश, सर्वोदय का नाम सुना है ? गांधी के *विषय में कुछ कहेंगे ? सर्वोदय आन्दोलन के विषय में आपकी क्या राय है ?*

यद्यपि सिर्फ 'उनकी' गलत-सही बातें सुनते जाना और लिखते जाना अपने आप में खासा कठिन कार्य है, पर बातचीत के क्रम को बहस में बदलना गलत होगा।

इतना ही भर रेखांकन हो सके इस बातचीत से कि हम और हमारा आन्दोलन जन-मानस के आकर्षण का या जिज्ञासा का विषय कहाँ तक बना तो काफी होगा।

किशोर नारकर (टेलिफोन ऑपरेटर)

'जनसंघ में विशेष रुचि है। लगता है कि उसकी नीतियों से ही देश का कल्याण होगा।'

'कौन-सी नीति से आपको ऐसा लगता है ?'—मैंने पूछा।

'भारतीयकरण ! मुसलमान खाते हैं यहाँ का और सोचते हैं दूसरे का। सबका भारतीयकरण जरूरी है।' वे उत्साहित होकर बोलते हैं।

'सबका, अर्थात् सब मुसलमानों का ?' मैं बीच में पूछ देता हूँ।

'हाँ साहब, सब मुसलमानों का !' —फिर वे अपने प्रभाव से ही अकचका जाते हैं और सफाई पेश करने लगते हैं।

गांधी, विनोबा, जयप्रकाश तथा सर्वोदय चारों नाम सुरेशजी ने सुन रखे थे। सर्वोदय के विषय में कुछ खास जानते नहीं। अतः राय नहीं बतायी। गांधीजी के विषय में बोले : 'जब तक गांधीजी थे तब तक उनकी नीतियाँ अच्छी थीं। पर अब जमाना बदल गया है। कोई किसी की नहीं सोचता। अतः गांधीजी के रास्ते से भी कुछ नहीं होगा।' फिर स्वयं ही बोले, 'यदि लोग उनके रास्ते पर चलें तो सबका भला जरूर होगा। पर उनके रास्ते पर कोई चलेगा ही नहीं। गांधीजी की कांग्रेस पार्टी को देखो। 'स्मगलिंग' करवाता है, दारू का व्यापार करता है, चुनाव में बोगस वोटिंग करवाता है और दुनिया को कहता है कि गांधीजी के रास्ते पर चलो।'

'गांधीजी यह सारा करने को कहते थे क्या ?' मैंने पूछा।

'नहीं !' सपाक से उत्तर मिला।

'फिर आप इस कांग्रेस को गांधी की कांग्रेस क्यों कहते हैं ?' मैं हँसकर पूछता हूँ।

वे कुछ क्षण मेरा चेहरा देखते हैं, फिर हँस पड़ते हैं, 'आप जोरूर कहते हो।'

मैं अपनी कॉपी बन्द कर देता हूँ और राजनैतिक दल, भारतीयकरण, गांधीजी, बदलता हुआ जमाना, सब पर विस्तार से बातें करता हूँ। तीन पृष्ठों पर रेखाचित्र बनाये हैं मैंने उनसे बातचीत के दौरान। बीच-बीच में आ रहे टेलीफोनों के बावजूद वे उन रेखाचित्रों से बड़े प्रभावित मालूम हुए।

'हमको ऐसा कोई किताब दो, हम पढ़ेंगे।' वे अपनी महाराष्ट्रीयन हिन्दी में बोलते हैं और मैं देने का वादा कर चल देता हूँ। वादा अधूरा है; चूँकि मेरे पास पुस्तकें नहीं हैं।

—कुमार प्रशान्त

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० ५० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। कृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ३२ ८ मई, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

विनोबाजी का सन्देश

अभी हमने क्षेत्र-संन्यास का ढोंग शुरू किया है। ढोंग इसलिए कि यह कब तक चलेगा, मालूम नहीं। इसलिए हम बागियों से मिलने आ नहीं सकेंगे। दूसरी बात वे सब पढ़ सकते होंगे तो उनको हमारी पुस्तक 'गीता-प्रवचन' दी जाय। उसकी कीमत दो-ढाई रुपये होगी। उसके लिए करीब पाँच सौ रुपये खर्च होंगे, उतना करना। तहसीलदार सिंह भी यहाँ आनेवाले हैं। शायद इस समर्पण के बाद आयेंगे।

मेरा ख्याल है, बागी जीवन-परिवर्तन करना चाहते हैं। लेकिन आज लोकतंत्र की सरकार है। अशोक की सरकार होती तो उनको छोड़ देती। बुद्ध के समय अंगुलिमाल ने समर्पण किया था, तो उसे सजा नहीं हुई थी। अब इन पर केस चलेगा, सजा भी होगी। हम उम्मीद करते हैं कि मौत की सजा नहीं होगी। अगर कानूनन होगी तो भी ऊपरवाले क्षमा करेंगे। उनमें (बागियों में) परिवर्तन तो है ही। पहले जिन्होंने समर्पण किया वे खेती वगैरह करते हैं, थोड़ी सेवा भी करते हैं तो इनको भी थोड़ी जमीन मिल सकती है।

बागी माधोसिंह द्वारा पश्चात्ताप

जौरा (मुरैना) में १६ अप्रैल को गांधीजी की प्रतिमा के सामने अपने शस्त्र समर्पित करने के पूर्व बागी नेता माधोसिंह ने उपस्थित जन-समुदाय से अपने द्वारा की गयी गलतियों के लिए क्षमा-याचना करते हुए कहा। "भाइयो और बहनो, यह मेरा बहुत बड़ा भाग्य है कि आज आप लोगों के बीच मुझे अपनी गलती की माफी माँगने का मौका मिला है।

चम्बल घाटी के हम निवासी, जिसके नाम से दुनिया को दुख हो रहा था आज अपने आपको समाज की सेवा के लिए समर्पित करते हैं। बाबा विनोबा और बाबू जयप्रकाशजी के आशीर्वाद से हम अपनी नयी जिन्दगी शुरू कर रहे हैं। हमसे बहुत-सी गलतियाँ हुई हैं, उनके लिए हमें दिल से पश्चात्ताप है। हमारी वजह से जिन्हें भी दुख, तकलीफ हुई है उनसे हम माफी माँगते हैं। भगवान से हमारी यही विनती है कि वह हमें सच्ची राह पर चलने की ताकत दे और इस जीवन में समाज के लायक बनाये।

एक निर्भीक व्यक्तित्व : श्री कमलनयन बजाज

● जमनालाल जैन

श्री कमलनयन बजाज अब इस दुनिया में नहीं रहे। उनका देहांत अपने घर और क्षेत्र से दूर ऐसी जगह में हुआ जिसकी कल्पना तक नहीं थी। भगवान की अथवा नियति की लीला अद्भुत अपार है। राजभवन की विशालता और सर्वसाधन सुलभता में भी आदमी कितना एकाकी, निरीह और बेबस हो जाता है! आदमी सोचता है, चाहता है, और तदनुसार सारे साधन जुटाता है कि ऐसा कर लूंगा तो ऐसा हो जायगा। लेकिन सब ठाठ पड़ा रह जाता है और बनजारा हाट छोड़कर चल देता है। शरीर के भीतर की आत्मा एक प्रकार से परदेशी ही होती है। वह सांझ-सवेरा कुछ नहीं देखती और अपने पथ पर चल देती है। श्री कमलनयन बजाज के साथ भी नियति ने यही खेल खेला। न बम्बई, न वर्धा, न परिवार, न पुत्र, न माता, न किसी से कुछ कहना-सुनना, न मन की बात कह सकना और अहमदाबाद के राजभवन में, सोते-सोते कमरे में चुपचाप चिर निद्रा में लीन हो जाना—आह, आदमी की कितनी बेबसी है! लेकिन ऐसी मौत बड़े भाग्यशालियों को ही मिलती है जो चुपचाप किसी से सेवा लिए बगैर, शरीर की व्यथाएं बिना सेले क्षण मात्र में कूच कर जाते हैं।

कमलनयनजी बजाज परिवार के प्रमुख और वरिष्ठ व्यक्ति थे। सेठ जमनालालजी बजाज के ज्येष्ठ पुत्र थे। जमनालालजी के पुत्र होने के नाते कमलनयनजी को बापू और विनोबाजी का सान्निध्य सहज ही मिला। उनके पास सीखने का लाभ मिला और राष्ट्र की सेवा करने का पाठ मिला। यह सब कुछ होते हुए भी कमलनयनजी का निराला था। इस व्यक्तित्व की पहचान या प्रमुखता के लिए किसी विशेषण या सम्बन्ध जोड़ने की आवश्यकता नहीं है।

श्री कमलनयनजी बचपन से अक्खड़ स्वभाव के रहे हैं। जो बात उनको नहीं जंचती थी, वह करते नहीं थे और स्पष्ट कह देते थे। इस स्वभाव के कारण जमनालालजी एक प्रकार से चिंतित रहते थे और शायद मान लिया था कि यह लड़का वैसा नहीं है जैसा मैं चाहता हूं। फिर भी जमनालालजी ने

श्री कमलनयन बजाज

सदैव कमलनयनजी के व्यक्तित्व का कभी अपमान नहीं होने दिया और मनोबल बढ़ाने का ही ध्यान रखा। कमलनयनजी ने स्वयं लिखा है कि 'मेरा स्वभाव बचपन से ही निडरता और स्पष्टवादिता, यहाँ तक कि अक्खड़पन का रहा है।' व्यक्तित्व जैसा और जितना होते हुए भी एकदम निराला, किसी के दबाव या प्रभाव में न आनेवाला, स्वतंत्र रहा है।

स्वतंत्र व्यक्तित्व की यह विशेषता होती है कि वह अपने द्वारा बनायी लीक पर ही विकसित होता है। वह बनी-बनायी लीक पर नहीं चलता। कुछ लोग अपने आदर्शों और सिद्धान्तों के दबाव से अभिभूत होकर चाहते हैं कि उनकी सन्तान का जीवन-ढांचा ऐसा-वैसा बने। बोलने-चालने, उठने-बैठने, खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने आदि सब क्रियाओं में एक बने-बनाये या अपनी कल्पना के आदर्श का नक्शा खींच लेते हैं और समझते हैं कि बस यही जीवन-विकास का पथ है। ऐसे लोगों की सन्तान ऊपर से भले ही साधु स्वभाव की लगे, लेकिन अन्ततः वह डरपोक, असत्यवादी और प्रतिक्रियावादी ही साबित होती है। यह सौभाग्य की बात रही कि कमलनयनजी के स्वभाव को अमुक एक ढांचे में ढालने का प्रयास किसी ने भी नहीं किया—उनको स्वतंत्र विकास का ही अवसर दिया गया। जमनालालजी, बापू और विनोबाजी तीनों मनुष्य-स्वभाव के पारखी थे। कमलनयनजी के व्यक्तित्व को इन गुरुजनों ने चमकाया ही।

कमलनयनजी धनी बाप के बेटे तो थे ही, पर शायद यह कहना ठीक नहीं होगा, क्योंकि धन तो उन्होंने अपने पुरुषार्थ से बहुत अधिक पैदा किया और उनका स्थान देश के प्रमुख उद्योगपतियों में माना जाता है। असल में कहना यह चाहिए कि कमलनयनजी उस बाप के बेटे थे जो सादगी और गरीबी को पसन्द करते थे और सेवा ही जिनका व्रत था। उन्होंने अपने बेटे को ऊंचे-ऊंचे कालेज की शिक्षा न दिलाकर विनोबा जैसा सन्त के सान्निध्य में भेजा जहाँ इस भावी धनी को आश्रम-प्रांगण में सब तरह के छोटे-बड़े काम करने पड़ते थे और वह भी खुशी से करता था। इन सबका असर था ही और इसी ने कमलनयनजी को झूठे अहंकार या मद से दूर रखा।

गांधीजी की रचनात्मक प्रवृत्तियों से तथा गांधी-परवर्ती सर्वोदय आन्दोलन से बजाज-परिवार का प्रारम्भ से ही निकट का सम्बन्ध रहा है। कमलनयनजी भी

(शेष पृष्ठ ५०१ पर)

सीलिंग-भूमि-गाँव

सीलिंग लगाना आसान है लेकिन लागू करना मुश्किल है। मुश्किल ही नहीं, मालिकों, नेताओं और हाकिमों का जो दिमाग है उसे देखते हुए लगभग असम्भव लगता है। सरकारें चाहे अपने को जितनी लोकप्रिय और समाजवादी समझें, समाज की शक्ति उनके साथ नहीं है। इस कमजोरी के कारण वे खुद उतनी दूर नहीं जा सकतीं, और समाज को अपने साथ नहीं ले जा सकतीं, जहाँ पहुँचना भूमि की नयी व्यवस्था के लिए आवश्यक है। कौन सरकार है जो सीलिंग लगाने के साथ-साथ फ्लोरिंग भी लगा सके? कहाँ है वह सरकार जो सीलिंग का कानून बनाने के साथ-साथ उत्तराधिकार के कानून में भी इतना बुनियादी संशोधन कर दे कि सरकार और भूमिवान में 'तू डाल-डाल हम पात-पात' का खेल समाप्त हो जाय और भूमिहीनों के लिए कागज की जगह धरती पर भी कुछ भूमि निकल आये? बिहार में भूमिवानों के बोगस बन्दोबस्त को रोकने के लिए सरकार आज तक क्या कर सकी है? जो किसान ट्रैक्टर से खेती करता है और हर एक जानता है कि उसके घर में ४-सौ बीघे की उपज आती है वह कहता है: 'मैं लगभग भूमिहीन हूँ।' कानून जिस कागज को सच मानता है वह उस कागज के बल पर कानून की आँख में धूल झोंकता रहता है। भूमि का मालिक अब सिर्फ भूमि का मालिक नहीं रह गया है, वह पूँजी और वोट का भी मालिक हो गया है। उसके मुकाबले सरकार बेबस है, या यों समझिए कि उसमें और नेताओं में ऐसी मिलीभगत है कि नीचे से ऊपर तक पूरा सरकारी तंत्र उसके हाथों का खिलौना बन गया है।

अभी हाल में भूमिसुधार कमिश्नर ने मुख्यमंत्रियों की बैठक में जो नोट पेश किया उसमें कहा गया कि सीलिंग लगाना 'भूमिहीन मजदूरों की आर्थिक और सामाजिक हैसियत को ऊँची उठाने के लिए जरूरी है।' ठीक है, जरूरी है, लेकिन सीलिंग से कितनी भूमि निकालकर सरकार कितने भूमिहीनों को देना चाहती है? आँकड़े बताते हैं कि अगर भूमिहीनों तथा १/२ एकड़ से कम भूमिवाले परिवारों को आधे से एक एकड़ तक भूमि देना हो तो केरल में ७.५ एकड़, तमिलनाडु और बंगाल में १० एकड़, बिहार में १२.५ एकड़ और उत्तर प्रदेश में १५ एकड़ की सीलिंग लगानी पड़ेगी। क्या सरकार इसके लिए तैयार है? क्या उसने समाज को बुनियादी परिवर्तन के लिए तैयार किया है? सरकार की १८ एकड़ की सीमा आश्रितों के कारण शायद ३६ एकड़ तक पहुँच जायगी, तब भूमिहीनों के लिए कितनी भूमि निकलेगी? और, जो भूमि निकलेगी भी वह रद्दी होगी और जहाँ-तहाँ फैली हुई होगी। उसे लेकर भूमिहीन कब तक हाथ मारेंगे?

कुछ भी हो, सीलिंग जरूरी है। अगर देश में भूमिहीन न होते फिर भी यह जरूरी होता कि सीलिंग लगायी जाय क्योंकि उत्पादन का यह बुनियादी साधन किसी एक परिवार के पास कितना रहेगा यह तो तय होना ही चाहिए। लेकिन आज की स्थिति में यह मान लेना कि सीलिंग से देश के अधिकांश भाग में भूमिहीन और लगभग भूमिहीन जनता का सवाल हल हो जायगा गलत है। भूमि की सीलिंग हो, फ्लोरिंग हो, चकबन्दी हो और अब आगे टुकड़े न हों, कामयदारी (ऐबसेण्टी जमींदारी) समाप्त हो; पानी हो, पूँजी हो, महाजन और व्यापारी की गुलामी न हो, सहकार का वातावरण हो; खरीद-बिक्री पर अंकुश हो, गाँव अपनी पूरी भूमि के आधार पर योजना बनाने की स्थिति में हो, बेदखली न हो, नयी खेती में न्यूनतम मजदूरी तय हो और बाजार में खेती के अनुकूल भाव हो; गाँव का विकास खेतो-औद्योगिक (ऐग्रो इण्डस्ट्रियल) हो जिससे शिक्षण अनुबंधित हो। अंत में, कठोर संतति-नियमन हो। इतना सब हो तब कहीं गाँव का सवाल हल होने के रास्ते पर आयेगा।

प्रश्न मात्र सीलिंग का नहीं है, भूमि और खेती की नयी व्यवस्था का है। इससे भी आगे जाकर प्रश्न नयी भूमि-व्यवस्था के आधार पर नयी ग्राम-व्यवस्था का है क्योंकि जब तक गाँव में आपसी सम्बन्ध नहीं बदलेंगे तब तक कानून की सूई लेकर हिंसक हाथों से पैबन्द लगाने की कोशिश करने से काम नहीं चलेगा।

गाँव के प्रश्नों का उत्तर स्वदेशी, स्वाश्रय, और स्वायत्तता की त्रयी में है। देश का वातावरण इसके अनुकूल है। सर्वोदय आन्दोलन ने कई भागों में परिवर्तन के लिए लोक-मानस तैयार किया है। अब जरूरत इस बात की है कि दोनों की सम्मिलित शक्ति से भूमि के प्रश्न को एक देश-व्यापी अहिंसक जन-आन्दोलन का रूप दिया जाय, तथा नयी भूमि-व्यवस्था के आधार पर नयी ग्राम-व्यवस्था की सम्पूर्ण योजना प्रस्तुत की जाय।

स्वदेशी, स्वाश्रय और स्वायत्तता को मिलाकर ग्रामस्वराज्य बनता है। स्वदेशी और स्वाश्रय स्वायत्तता के बिना सम्भव नहीं है। जो सरकार गाँव के लिए स्वदेशी और स्वाश्रय की बात कहती है वह ग्राम-स्वायत्तता से कब तक अलग रहेगी? और, अगर यह त्रयी मान्य हो तो ग्रामस्वराज्य से परहेज क्यों? प्रश्न स्पष्ट है; उसका स्पष्ट उत्तर स्वीकार कर लेने का साहस चाहिए। ●

क्रान्ति के लिए एकाग्रता चाहिए, निष्ठा चाहिए और····

• धीरेन्द्र मजूमदार

सभी महारथी एक महीने का अनुभव करके यहाँ आये हैं। अभी जितने लोग मिले उनसे मैंने बात की तो एक बात मुझे दिखाई दी कि हमारे कार्यकर्ताओं में आत्म-विश्वास बढ़ा है। इसे मैं बड़ी निष्पत्ति मानता हूँ।

क्रान्ति यानी क्या ?

पहले तो हमको साफ-साफ समझ लेना चाहिए कि हम क्रान्ति की बात करते हैं—क्रान्ति का मतलब है प्रचलित मूल्यों और मान्यताओं को बदलने की बात। हमारा लक्ष्य ग्रामस्वराज्य है। सरकार द्वारा समाज चलेगा और बाजार द्वारा आर्थिक ढाँचा चलेगा, इस विचार को आप बदलना चाहते हैं। आप कहते हैं कि सरकार और बाजार के मातहत जन-जीवन नहीं रहेगा और समाज के साथ जन-जीवन जुड़ेगा। सरकारवाद और राज्यवाद को आप समाप्त करना चाहते हैं, पूँजीवाद को समाप्त करना चाहते हैं, और समाजवाद कायम करना चाहते हैं। नित्यजीवन समाज के आधार पर और नैमित्तिक जीवन सरकार के आधार पर यह जो तरीका चलता था, नित्यजीवन अपने स्वावलम्बन के आधार पर और नैमित्तिक जीवन बाजार के आधार पर चलता था, उसके बदले सरकार और बाजार ने मिलकर जन-जीवन से समाज को बेदखल करके अपने को अधिष्ठित कर लिया है, उसे आप उलटना चाहते हैं। यह अपने आपमें बहुत कठिन काम है, क्योंकि मान्य विचारों को आप बदलना चाहते हैं। आपका उद्देश्य क्या है ? समस्या को हल करना तो गौण उद्देश्य है। पहली बात यह है कि आप उद्देश्य को न बिगाड़ें। दुई के अत्याचारों से मुक्ति के आधार पर संगठन हुआ, तो लोकतंत्र की क्रान्ति की क्या दशा हुई यह आपने देखा। ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति के लिए आप यदि भूमि-समस्या के आधार पर गरीबों को संगठित करेंगे तो वही दुर्दशा होगी जो फ्रान्स और रूस की क्रान्ति की हुई है। भिन्न उद्देश्य पर जन-संगठन करने में जो खतरा है उसका आप इतिहास से सबक लीजिए। यह मैं आपको कह देना चाहता हूँ। गरीबों का संगठन आप कीजिये। मैं भी गरीबों से कहता हूँ कि आपको उठना होगा; लेकिन उनका संगठन आप ग्रामस्वराज्य को लेकर कीजिए, भूमि-प्राप्ति को लेकर नहीं।

मैंने कहा था कि वीर गांधी और क्रान्तिकारी गांधी में फरक है। अन्याय के प्रतिकार का विचार एक मान्य विचार था, उसकी एक नयी पद्धति गांधी ने बतायी। उसकी सम्भावना प्रकट करने की बात भी गांधी खुद कर गया। समाज में वह बात सर्वमान्य हुई। मार्टिन लूथर किंग जैसे लोग भी उस सम्भावना को प्रकट करते रहे हैं। गांधी ने यह सम्भावना प्रकट करने की बात विनोबा पर नहीं छोड़ी है। लेकिन सात लाख गणराज्यों की स्थापना, अहिंसक समाज में राज्य-सत्ता का लोप, चरखे द्वारा जीवन से बाजार को दूर हटाना, इसकी सम्भावना को गांधी अपने जीवन में प्रकट नहीं कर सका। इसके प्रकटीकरण की जिम्मेवारी विनोबा और आप लोगों ने उठायी है। इसलिए मैंने कहा था कि सहरसा में गांधी जीयेगा या मरेगा। एक भाई ने मुझसे कहा, 'गांधी कभी मर सकता है ?' मित्रो ! गांधी मर नहीं सकता इस विश्वास की कमी मुझमें नहीं है। गांधी मर नहीं सकता लेकिन दब सकता है, शताब्दियों तक दबकर रह सकता है। बाद में अनुकूल परिस्थिति आने पर वह उठ सकता है यह हमारा विश्वास है। उस क्रान्तिकारी गांधी को जिलाने का काम आपने उठाया है विनोबा के नेतृत्व में। जिसे आपको जिलाना है वह आपके कन्धे पर बैठा हुआ है। जो काम आप कर रहे हैं, उसमें आप सफल नहीं हुए तो वह डूबनेवाला ही है।

व्यूह-रचना का आधार : वैयक्तिक नेतृत्व का विसर्जन और जन-नेतृत्व का विकास

दूसरी बात है हमारी व्यूह-रचना के सम्बन्ध में। मैंने एक बात कही थी कि अब तक शब्द-संचार का काम हुआ, रही बात अर्थ-संचार की। आज के इस अभियान में अर्थ-संचार का काम हुआ। विचार केवल प्रचार से आगे नहीं बढ़ता, शिक्षण से आगे नहीं बढ़ता उसके लिए ठोस और स्थायी कार्यक्रम चाहिए। प्रायः मैं साथियों से कहा करता हूँ कि तुम लोगों ने नया धर्म चलाया है 'एडहाकिज्म' (तात्कालिकवाद)। आप लोगों का तात्कालिक चिन्तन चलता है, इतना कर लो, आगे देखा जायेगा। सहरसा में हवा बनाने की बात सब लोग करते हैं। यह बात विचार-प्रचार से बनती है, विचार-शिक्षण से नहीं। विचार शिक्षण के लिए, यह जो चल रहा है, उतने से काम नहीं चलेगा। हम सुना करते थे कि शिवजी की बारात लगती है यह विनोबा की बारात है। कभी-कभी यह ठीक भी लगती है। शादी की बारात होती है, तो सब लोग मिलते हैं, यहाँ सब ठीक है। यह सब तो हुआ लेकिन हमेशा यह मान्य रहा है कि राज्य-संस्था द्वारा समाज चलेगा। जनता को हमेशा यही सिखाया गया है। आज भी एक भाई ने कहा कि सर्वोदय के नेता जब भी आये, तब हमारा यह कर्तव्य हो जाता है, कि उनसे सहयोग करें। ऋषि-मुनियों ने और हमने जनता को हमेशा यही कर्तव्य सिखाया कि आपका सहकार होना चाहिए, आपकी रिस्पौन्स (प्रतिक्रिया) होनी चाहिए। शासकीय अथवा गैर-शासकीय संस्था को जनता की सक्रिय रिस्पौन्स (प्रतिक्रिया) मिली तो हम कहते हैं कि समाज चेतन हुआ। जनता से अपेक्षा की जाती है, सहकारी शक्ति की। लेकिन हम चाहते हैं कि जिम्मेवारी

है ? अंग्रेजों का शासन समाप्त होना चाहिए यह मान्य विचार था गांधी के जमाने में। अहिंसा की शक्ति को प्रतिष्ठित किया गांधी ने। गांधी ने उस समय रामराज्य का नारा लगाया होता तो कितने देशवासी उनके साथ होते ? कितने लोग रामराज्य की स्थापना के लिए तैयार होते ? शासन-संस्था का अंत करने के लिए कितने लोग निकलते ? लेकिन अंग्रेजी राज्य का अंत करने के लिए निकले। एक प्रत्यक्षीकरण हुआ, एक मार्गदर्शन हुआ। साम्राज्यवाद का मुकाबला किया—जिसकी एक सार्वत्रिक आकांक्षा थी। सार्वत्रिक आकांक्षा के छोर को पकड़कर उन्होंने एक नयी सामाजिक शक्ति प्रस्तुत की। आज यह बात मान्य है कि भूमि-समस्या का हल करने की आकांक्षा सार्वत्रिक है। मजदूर, बँटाईदार, मालिक सभी चाहते हैं कि इस समस्या का हल हो। इस छोर को पकड़कर हम अहिंसा का अगला इतिहास लिखना चाहते हैं। मैं इतना जरूर कहना चाहता हूँ कि आज देश भूमि-समस्या को अहिंसा के द्वारा हल नहीं करता है तो यह देश कानून के हाथ में या कत्ल के हाथ में चला जायगा। कानून का मतलब होता है सर्वाधिकारवाद, और कत्ल का अर्थ क्या होता है मालूम नहीं। कानून और कत्ल से इस देश को मुक्त रखना हो, तो करुणा की पद्धति से, सर्वोदय की पद्धति से, भूमि-समस्या का समाधान सर्वोदय आन्दोलन के द्वारा इस देश के समक्ष प्रस्तुत होना चाहिए। समस्या हमारे और आपके लिए इन्तजार नहीं करती रहेगी। बच्चे जवान हो गये, जवान बूढ़े हो गये, बूढ़े मौत के करीब पहुँच गये। हम इसके आगे भी प्रतीक्षा कर सकते हैं। हम अपनी आत्यंतिक साधना कर सकते हैं। हजार वर्षों का कार्यक्रम बना सकते हैं। यह अधिकार इतिहास ने हमको दिया है, लेकिन समस्या यह अधिकार नहीं देती। इक्कीस वर्षों तक हमने अपने आन्दोलन को

(शेष अन्तिम पृष्ठ पर)

शहरी सम्पत्ति की सीमा

● गौरीशंकर दुबे

भारतीय संविधान के राज्य नीति निर्देशक सिद्धान्त में इसका स्पष्ट उल्लेख है कि राज्य राष्ट्र के भौतिक साधनों के वितरण का प्रयास सामान्य हित में करेगा। सामान्य हित के लिए आर्थिक सत्ता के केन्द्रीकरण को रोकने का प्रयास होगा। इसी लक्ष्य को दृष्टि में रखकर दिसम्बर १९५४ में सरकार ने समाजवादी समाज की रचना की घोषणा की और निजी लाभ के स्थान पर सार्वजनिक लाभ को महत्ता प्रदान की। सन् १९५६ में औद्योगिक नीति के प्रस्ताव में भी धन के वितरण में समानता लाने का उल्लेख किया गया। विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण कुछ विशिष्ट लोगों के हाथों में है। इस घातक प्रवृत्ति को रोकने के लिए न केवल घोषणा हुई बल्कि उसके नियंत्रण के लिए कदम उठाये गये। लघु और सार्वजनिक उद्योगों की स्थापना के साथ प्रगतिशील कर-प्रणाली का प्राविधान हुआ। लेकिन करावंचन, धनसंचय, अवैध व्यापार और कालाधन की प्रवृत्ति ने केन्द्रीकरण की ओर अधिक प्रबल बनाया। महालनवीस समिति और एकाधिकार आयोग, दोनों के प्रतिवेदनों में आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण और असमानता परिलक्षित हुई है।

आर्थिक केन्द्रीकरण और असमानता की खाईं इतनी अधिक चौड़ी हुई है कि शीर्षस्थ १० प्रतिशत शहरी परिवारों की आय ४.२४ प्रतिशत और सबसे निम्न श्रेणी के दस प्रतिशत परिवारों की सम्पूर्ण आय केवल १.३ प्रतिशत है। उत्तरी क्षेत्र में गरीबी से नीचे के स्तर की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है। यह सन् १९५३-५४ में ६९.९६ प्रतिशत थी और १९५६-५७ और १९६१-६२ में क्रमशः बढ़कर ७०.१४ और ७०.९९ प्रतिशत हो गयी। यह शहरी आय की असमानता में वृद्धि को प्रमाणित करता है।

आय के वितरण में ग्रामीण क्षेत्र में शहरी क्षेत्र की अपेक्षा कम असमानता है। ग्रामीण क्षेत्र में कुल ७९ प्रतिशत और नगर में २१ प्रतिशत परिवार हैं। फिर भी ग्रामीण क्षेत्र के कुल परिवारों के पास कुल व्यक्तिगत आय का ७१ प्रतिशत तक ही सीमित है, जबकि नगर क्षेत्र का २९ प्रतिशत अंश है।

शहरी क्षेत्र में 'उच्च आय' वर्ग के ११ प्रतिशत शहरी परिवारों के पास कुल व्यक्तिगत आय ३९ प्रतिशत है जबकि ग्रामीण क्षेत्र में 'उच्च आय' वर्ग में केवल तीन प्रतिशत परिवार आते हैं और इन परिवारों के पास २२ प्रतिशत व्यक्तिगत आय इस क्षेत्र की है। शहरी क्षेत्र में न केवल 'उच्च आय' वर्ग के अधिक परिवार हैं, बल्कि ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा शहरी क्षेत्र में 'उच्च आय' और 'निम्न आय' दोनों वर्गों के परिवारों की प्रति परिवार औसत आय अधिक है।

इस बढ़ती हुई असमानता को दूर करने के लिए शहरी सम्पत्ति के सीमांकन का प्रश्न एक सर्वमान्य सिद्धान्त बन चुका है, जिसे न केवल आम जनता और सभी राजनीतिक पक्षों का समर्थन प्राप्त है, बल्कि देश के मान्य अर्थ एवं समाजशास्त्री विद्वानों ने असमानता दूर करने के लिए शहरी सम्पत्ति के सीमांकन के प्रश्न को अनिवार्य एवं आवश्यक कदम माना है। इस सम्बन्ध में शहरी आय की असमानता को कम करने के लिए आवश्यक प्राविधान है, लेकिन उन सभी सम्बलों का प्रभाव अभी तक नगण्य रहा है। इस प्रकार देश में बढ़ती हुई असमानता के भयंकर परिणाम को परिलक्षित होते देख शहरी सम्पत्ति की अधिकतम सीमा का

प्रश्न भी उभर कर सामने आया, जो सर्वमान्य हो गया। इस निबन्ध में नगर की सम्पत्ति क्या है? उसकी सीमा क्या हो उसका उपयोग किस प्रकार किया जाय? इसका प्रभाव अन्य क्षेत्रों पर क्या पड़ता है? आदि विषयों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

नगरों में विभिन्न प्रकार की चल और अचल सम्पत्ति के अतिरिक्त छोटे-बड़े उद्योग-धन्धे, व्यापारिक फार्म, धर्मादा संस्थाएं और न्यास आदि पाये जाते हैं, जो निजी और सार्वजनिक दोनों प्रकार के होते हैं। यह भी सम्भव है कि किसी-किसी व्यक्ति या परिवार के पास एक से अधिक विभिन्न प्रकार की सम्पत्तियाँ हों। इन सभी प्रकार की सम्पत्तियों का समावेश सम्पत्ति सीमा के अन्तर्गत करना है।

भूमि प्रायः अधिकांश नगरों में शहर के अन्दर या बाहर जो नगरपालिका क्षेत्र के अन्तर्गत आती है, बहुत-सी परती भूमि, जिसमें आवासीय भवन के अतिरिक्त नागरिकों के कल्याण के लिए तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं के लिए भी भवन आदि का निर्माण हो सकता है, कुछ हाथों में केन्द्रित है। इसके अतिरिक्त कुछ गरीब परिवारों के पास भी एक-दो बिस्वा जमीन होती है, लेकिन धनाभाव के कारण उस भूमि का विकास करने में वे अपने को सर्वथा असमर्थ पाते हैं। यह तो हुई स्पष्ट दीखनेवाली जमीन, जो विकास के अभाव में उपेक्षित पड़ी हुई है। लेकिन इसके अतिरिक्त विकसित भूमि कुछ विशिष्ट लोगों के बड़े बड़े भवनों या राजमहलों के साथ संलग्न है। ऐसी भूमि का उपयोग यद्यपि बाग के रूप में होता है, लेकिन जिस देश में लाखों-करोड़ों लोग आवासहीन हों, वहाँ इन बागों का इस रूप में प्रयोग करना कहाँ तक समाजवाद के अनुरूप और वांछनीय है। इस प्रकार नगर क्षेत्र में तीन प्रकार की भूमि उपलब्ध है। इसमें कुछ भूमि विकसित क्षेत्र में है, तो कुछ भूमि अविकसित क्षेत्र में। अविकसित क्षेत्र की भूमि नीची-ऊँची होने के साथ साथ पानी और गन्दगियों से ढँकी रहती है और इस प्रकार की भूमि का वर्तमान उपयोग नगण्य-सा है। इस प्रकार नगर की भूमि-धारिता को लेकर इसे दो हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है। वह छोटी भूमि, जो गरीबों के पास है और बड़ी परती या बाग की भूमि, जो बड़े पूँजीपतियों या सामन्तों के हाथों में है। ये व्यापारी या सामन्त इस प्रकार की भूमि से नाजायज फायदा उठाना चाहते हैं या सामन्ती-प्रथा के प्रतीकस्वरूप अपने पास बनाये रखना चाहते हैं।

भवन : आजादी के बाद नये और पुराने नगरों में एक तरफ तो अट्टालिकाओं के स्वरूप के बड़े-बड़े भवन खड़े हो रहे हैं तो दूसरी तरफ गन्दी बस्तियों, झुग्गी-झोंपड़ियों का भी विस्तार उसी गति से हो रहा है। नगरों में गरीब बस्ती बढ़ने के साथ-साथ इसकी दशा भी शोचनीय अवस्था में पहुँच गयी है। आज बड़े-बड़े व्यापारिक एवं औद्योगिक महानगरों में ही नहीं, बल्कि छोटे-छोटे नगरों में भी इस समस्या ने विकराल स्वरूप धारण कर लिया है और आवासहीन इनसान सड़क की पटरियों पर सोने के लिए मजबूर हो गया है। आकाश चूमती हुई बड़ी-बड़ी इमारतों के निरंतर खड़ी होने से लगता ही नहीं कि देश का कोई नागरिक आवासहीन है और यह भी कोई समस्या है, लेकिन इस चकाचौंध के पीछे कुछ मुट्ठी भर लोगों का तादात्म्य स्थापित है। बाकी इनसान तो आवास के लिए ठोकरें ही खा रहा है। अगर नगर के आवासीय गृह कुछ वैभवशाली हाथों में केन्द्रित हैं, तो कुछ ऐसे गरीबों के हाथों में हैं जो रोजी के अभाव में किरायेदार नागरिकों के साथ अपनी मुसीबत का दिन काट रहे हैं। कुछ नये और पुराने आवासगृहों में मकान-मालिक स्वयं रहता है। आवासीय मकानों में कुछ ऐसे भी हैं जो कई खण्डों में विभक्त होते हैं और ऐसे मकानों में कई परिवार अलग-अलग रहते हैं या रह सकते हैं। कुछ ऐसे भी आवासीय भवन हैं, जिनमें शुद्ध रूप से किरायेदार ही रहते हैं।

व्यापारिक फर्म नगरों में आये दिन निजी एवं सार्वजनिक व्यापारिक फर्मों की स्थापना हो रही है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में एकाधिकारी फर्मों—टाटा, डनलप, बिरला, मफतलाल, सेन्चुरी, डी० सी० एम०, सिंहानियाँ, सिन्धिया, आदि के पचहत्तर परिवारों की तरफ से पूरे देश में उप-नगरों से लेकर महानगरों तक के प्रमुख बाजारों में जाल बिछ गया है। ये परिवार तथा उनके समुदाय उत्पादन से लेकर फुटकर वितरण तक की सारी प्रक्रियाओं में संलग्न हो गये हैं। ऐसी एकाधिकारी फर्मों के अतिरिक्त भी अन्य प्रकार की फर्में प्रायः सभी नगरों में फैली हैं। इन बड़ी फर्मों में मालिक स्वयं व्यवस्थापक अथवा प्रबन्ध-मण्डल का निदेशक होता है और इन फर्मों को कर्मचारियों के माध्यम से चलाया जाता है। इन फर्मों के अतिरिक्त छोटी-छोटी फर्में भी होती हैं, जिन्हें परिवार के लोग स्वयं मिलकर चलाते हैं। इस प्रकार से फर्में तीन प्रकार की हैं एकाधिकारी, बड़ी और छोटी।

उद्योग : सभी नगरों में प्रायः छोटे-बड़े विभिन्न प्रकार के उद्योग खड़े हैं। ये उद्योग, बड़े, मध्यम और छोटे आकार के हैं। कुछ उद्योग कारखाना-नियम से बंधे हैं, तो कुछ कारखाना नियम की परिधि से बाहर हैं। इसलिए इस प्रकार के कारखाने कुछ राहत पाने के अधिकारी तो होते ही हैं, अनियमितता बरतने के भी हकदार हो जाते हैं।

व्यापारिक फर्मों और इन उद्योगों में जो चोरी होती है, यह तो सर्वविदित है, लेकिन इन संस्थाओं को चलाने के लिए कुछ कर्मचारी भी रखे जाते हैं। उनके साथ मालिक का व्यवहार अमानुषिकतापूर्ण और तानाशाही से भरा होता है। उनका

में केवल शोषण होता है, बल्कि न तो उनकी सेवाओं में स्थिरता है और न वेतन-स्तरीकरण, महँगाई-भत्ते से तो वे लोग बिलकुल मुक्त ही हैं। बढ़ोत्तरी वेतन भी मालिक की मर्जी पर निर्भर करता है। न केवल उनकी सेवाओं के साथ मनमानी की जाती है, बल्कि वेतन, कार्य के घण्टे सभी में मालिक की मनमानी चलती है।

धर्मादा संस्थाएँ : नगरों में कई प्रकार की धर्मादा संस्थाएँ होती हैं। एक वह जो किसी खास मजहब या सम्प्रदाय के हित-साधन के लिए स्थापित हैं, दूसरे निजी एवं सार्वजनिक कल्याण और हित-साधन के लिए। इस प्रकार की अधिकांश संस्थाएँ लक्ष्यहीन होकर कुछ निहित स्वार्थों की पूर्ति करने में कार्यरत हैं। इन धर्मादा संस्थाओं में से कुछ एक के पास अतुल सम्पत्ति होती है और कहीं-कहीं तो इन धर्मादा संस्थाओं के पास अचल सम्पत्ति के रूप में बहुत से आवासी भवन भी होते हैं और भूमि भी होती है।

कृषि जोत : आजादी के बाद एक तरफ तो नवीन नगरों को बसाया गया और दूसरी तरफ पुराने नगरों का विस्तार भी हुआ। नवीन नगरों की स्थापना तथा क्षेत्र-वृद्धि, दोनों प्रकार से विकसित ग्रामीण क्षेत्र भी नगर के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिये गये हैं, लेकिन इस प्रकार के कृषि-क्षेत्र, जो नगर की सीमा में हैं, अलग जोतवाले हैं।

काला धन : नगरों में ही प्रायः बड़े-बड़े धन्नासेठ पाये जाते हैं और इनमें करापवंचन की प्रवृत्ति इस हद तक पनपी है कि इन लोगों के पास काला धन के रूप में अपार सम्पत्ति हो गयी है। ऐसे काले धन का प्रयोग तस्कर व्यापार से लेकर बड़े-बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों एवं भवनों के निर्माण में होने लगा है। इस धन से न केवल संचयकर्ता प्रभावित हैं, बल्कि देश की पूरी अर्थ-व्यवस्था प्रभावित है और इसके द्वारा उनका बाजार पर तो नियंत्रण होता ही है, भ्रष्टाचार

(शेष पृष्ठ ५०३ पर)

वर्तमान मुस्लिम-मानस और हमारा कर्तव्य

● मुस्तफा कमाल

[प्रस्तुत लेख में लेखक ने आज की वर्तमान समस्याओं के सन्दर्भ में सर्वोदय-जमात को सक्रिय बनाने की सलाह दी है। इन्होंने कुछ ठोस कार्यक्रम भी सुझाये हैं। आप सर्वोदय आन्दोलन के एक कार्यकर्ता हैं अत. आपकी इच्छा है कि इस पर कार्यकर्ता साथी संघ-अधिवेशन में चर्चा करें। सं०]

बांगला देश के बनने से मुसलमानों के मानस में एक बड़ा परिवर्तन आया है। वे वास्तविकता के करीब आये हैं और यह महसूस करने लगे हैं कि उनके नेताओं ने उन्हें पिछले २५ साल में कभी भी सही रास्ता नहीं दिखाया।

मुसलमान आमतौर से यह कहते हुए सुने जाते हैं कि 'धर्म के नशे में जीवन के वास्तविक और बुनियादी तत्त्वों से आँखें बन्द नहीं की जा सकती।' 'इस्लामी भाईचारा' केवल खोखला नारा है। यह एक कल्पना है। रोजमर्रा की जिन्दगी में इसका अनुभव नहीं होता। 'इस्लामी भाईचारा' अगर होता तो बांगला देश में आज जो गैर-बंगालियों की दुर्दशा हो रही है वह नहीं होती और बंगालियों के साथ भी जो कुछ पाकिस्तानियों ने किया वह नहीं होता। पाकिस्तान के बनने से बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, अर्थात् उत्तरी भारत के मुसलमान तबाह हो गये, और वे कहीं के नहीं रहे। आज उर्दू भाषा का पाकिस्तान में कोई भविष्य नहीं है और भारत में भी उसका कोई स्थान नहीं है परन्तु पाकिस्तान में उसके लिए केवल नफरत ही नफरत है। फैज अहमद फैज और हफीज जालंधरी जैसे उर्दू के शायर भी पंजाबी भाषा का झण्डा उठाये हुए हैं। सिन्ध के लोग यह हंगामा कर रहे हैं कि सिन्ध की भाषा केवल सिन्धी हो। वे उर्दू को करांची से भी देश-निकाला देना चाहते हैं। यह बड़ी अफसोसजनक बात है। पाकिस्तान में उर्दू संस्कृति पनप नहीं सकेगी। भारत में हम अल्पसंख्यक हैं—एक बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक। पाकिस्तान में भी हम अल्पसंख्यक हैं—एक छोटे सांस्कृतिक अल्पसंख्यक। अगर भारत में साम्प्रदायिक दंगे बन्द हो जायें तो यहाँ के मुसलमान करांची और बांगला देश के बिहारी मुसलमानों से ज्यादा अच्छे रह सकेंगे। 'वहदतुल मुस्लेमीन, के नाम पर समानता और भाईचारा का दृश्य केवल मस्जिदों में ही देखा जा सकता है, वास्तविक जीवन में नहीं।

पाकिस्तान के प्रति उनके दिल में एक विचित्र भाव पाया जाता है। एक मुस्लिम राष्ट्र के नाते उनका उससे एक भावनात्मक सम्बन्ध तो दिखाई पड़ता है परन्तु उस देश से उन लोगों को नफरत भी कोई कम नहीं है क्योंकि बांगला देश के गैर-बंगालियों के लिए पाकिस्तान में कोई स्थान नहीं है और वे लोग उन्हें स्वीकार करने के लिए भी तैयार नहीं हैं। सिन्ध के मूल निवासी गैर-सिन्धी मुसलमानों (जो अधिकतर बिहार व उत्तर प्रदेश के हैं) के विरुद्ध वातावरण बनाये हुए हैं और शायद उनका वही हश्र होनेवाला है जो बांगला देश में गैर-बंगालियों का हो रहा है।

सभी मुसलमान इन तीखी वास्तविकताओं को महसूस करते हैं और इस ओर मुस्लिम दलों का ध्यान भी आकर्षित हुआ है। वे इस बात की पूरी कोशिश कर रहे हैं कि मुसलमानों का ध्यान दूसरी ओर मोड़ा जाय, उनका अपना नेतृत्व बना रहे, मुसलमान अन्धकार की ओर बढ़ते रहें, और मुस्लिम दल उनके नाम पर सौदेबाजी करते रहें।

कम्यूनिस्टों की यह कोशिश है कि वे मुसलमानों में लोकप्रिय बन सकें और मुसलमानों की नजर में वे उनके हमदर्द बनने की कोशिश में हैं। जनसंघ ने एक

दूसरी ही नीति अपनायी है। यह ऐसी बातों को हवा देने की कोशिश करता है जो करीब-करीब असम्भव है। जैसे यह कहना कि बांगला देश के २५ लाख बिहारी मुसलमानों को हिन्दुस्तान बुला लिया जाय और उन्हें यहाँ की नागरिकता प्रदान की जाय। पिछले चुनाव में साम्प्रदायिक मुसलमानों के साथ मिलकर जनसंघ ने यह नारा लगाया और इससे कई स्थानों में फायदा भी हुआ। दूसरी ओर जनसंघ की यह भी कोशिश है कि मुस्लिम लीग और जमायते इस्लामी जैसे साम्प्रदायिक दलों के सम्पर्क में आया जाय और गठबन्धन कायम किया जाय। अगर जनसंघ की चाल कामयाब रहती है तो मुसलमान राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में आने के बदले और दूर चले जायेंगे और, हिन्दुस्तान का समाज जनसंघ और मुस्लिम लीग के प्रभाव-क्षेत्र में बँट जायगा।

यह समय बहुत महत्त्वपूर्ण है। बहुत दिनों के बाद एक अवसर आया है कि हिन्दू और मुसलमान आपस में घुल-मिल सकें और हिन्दुस्तान में एक धर्म-निरपेक्ष समाज बना सकें। मुसलमान अपने अनुभव की रोशनी में कुछ सीख रहे हैं। अगर हम उन्हें यह समझा पायेंगे कि भारत के राष्ट्रीय जीवन में बिना हिस्सा लिये और मुख्य धारा में आये बिना मुसलमान अपनी वास्तविक समस्याओं को हल नहीं कर सकते। मुस्लिम जमायतें उन्हें अन्धकार की ओर ले जा रही है। साम्प्रदायिक राजनीति का जमाना लद चुका है और धर्म-निरपेक्ष राजनीति में ही मुसलमानों का भला है। जनसंघ ने बिहार के चुनाव में जो रोल अदा किया वह मुसलमानों के लिए नुकसानदेह है, उन्हें सतर्क रहना चाहिए, उससे उनकी परिस्थिति बिगड़ेगी, बनेगी नहीं। मुसलमानों की अधिकतर समस्याएँ देश की समस्याएँ हैं और उसके अतिरिक्त जो जायज और वास्तविक हैं उनका एहसास गैर-मुस्लिमों को भी है। मुस्लिम जमायतों के अलावा भी बहुत सारे लोगों को मुसलमानों से सहानुभूति है और वह उनकी समस्याओं को हल करने के लिए चिंतित है, परन्तु ताली एक हाथ से तो नहीं बजती। अच्छा है कि मुसलमान अपने अधिकार को समझते हैं परन्तु यह भी आवश्यक है कि वे अपने कर्तव्यों को भी समझें। भारत के विकास में मुसलमानों का जो पिछले हजार सालों में योगदान रहा है उससे किसी को इनकार नहीं है, परन्तु आज के अविकसित भारत के मुसलमानों को भी बहुत कुछ करना है। मुसलमानों के लिए यह अच्छा है कि वे राजनैतिक दलों के मुँह ताकने और राजसत्ता की खुशामद करने के बदले भारत के आम नागरिकों के दिलों में अपनी जगह बनायें। भारत एक लोकतन्त्र और धर्म-निरपेक्ष देश है। इसे ऐसा ही रहना है। यहाँ नयी परिस्थितियाँ और नयी सम्भावनाएँ उत्पन्न हो रही हैं। ऐसे समय में मुसलमानों का रोल क्या होना चाहिए, मुसलमानों के लिए यह एक विचार करने का विषय है। मुसलमानों का रोल जितना वास्तविक, समझदारी पर आधारित, और गतिशील होगा, मुसलमानों के लिए उतना ही प्रतिष्ठित स्थान भारत के समाज में बनेगा। इस तरह भारत में एक सांस्कृतिक क्रान्ति होगी जिसमें इस्लाम या ईसाई मत का प्रभाव भी उतना ही होगा जितना कि हिन्दू प्रभाव।

ऐसे समय में गांधीवादियों और हम सर्वोदय में विश्वास रखनेवालों का भी कुछ कर्तव्य हो जाता है, वरना अगर मुस्लिम जमायतें मुसलमानों को यही समझाती रहीं कि मुसलमान भारत में असुरक्षित हैं, उनके परम्परागत मूल्यों, रीति-रिवाजों को खतरा है इसलिए उनकी संस्कृति और उनका व्यक्तित्व कायम नहीं रह सकेगा तो राष्ट्रीय हित की दृष्टि से अच्छा नहीं होगा। राजनैतिक दल जिस प्रकार से उन्हें २५ वर्षों से गुमराह करते चले आये हैं और आगे भी करते रहे तो साम्प्रदायिक समस्या का हल नहीं निकल सकेगा। मुसलमानों में हमें कुछ काम करना चाहिए। क्या काम किया जाय यह एक गम्भीर विषय है और इस पर सोचने की जरूरत है।

इसलिए भारतीय स्तर पर गांधीवादी मूल्यों और सर्वोदय विचार में विश्वास रखनेवालों की एक नीति-निर्धारण समिति बनायी जाय। इस समिति के सदस्यों के लिए यह जरूरी है कि वे मुस्लिम मानस को समझते हों, उनकी समस्याओं से परिचित हों, उनके बीच हर प्रान्त में क्या चल रहा है यह जानते हों, और उन्हें मुसलमानों के बीच काम करने का कुछ प्रत्यक्ष अनुभव भी हो। इस समिति की अनिवार्य तौर से हर महीने एक बैठक हो और वह अपने अनुभव की रोशनी में अपनी योजना बनाये तथा उत्पन्न होनेवाली समस्याओं को सामने रखते हुए मुसलमानों में *काम करने की व्यूह-रचना (स्ट्रैटजी)* तैयार करे।

वैसे काम शुरू करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाये जा सकते हैं

१—मुसलमानों के बीच प्रत्यक्ष जाकर उनसे सम्पर्क किया जाय और सम्पर्क के लिए मुस्लिम जमायतों का मुँह न ताका जाय।

२—उनकी समस्याओं का अध्ययन किया जाय। जो वास्तविक हैं उनका समर्थन किया जाय और जो अनुचित हों उनका विरोध किया जाय। इस सिलसिले में एक बात ध्यान रखने की है कि हमारा विरोध तीव्र न हो और अधिक अच्छा होगा कि हम उन मुसलमानों का समर्थन करें जो प्रगतिशील मूल्यों को मुसलमानों में लाना चाहते हैं। (मुस्लिम पर्सनल लॉ के विषय पर मुसलमानों के बीच राष्ट्रीय स्तर पर एक वाद-विवाद चल रहा है। हर नगर के मुसलमान दो गुटों में बँटे हुए हैं। एक मुस्लिम पर्सनल लॉ के समर्थन में है दूसरा यह कहता है कि उसमें परिवर्तन लाया जाय। जो लोग परिवर्तन की बात करते हैं वे कमजोर हैं। स्पष्ट है कि ऐसे लोगों को हमें मदद करनी है और उन्हें नैतिक समर्थन देना है।)

३—उत्तरी भारत के लगभग हर शहर में मुसलमानों के दो-तीन मदरसे, स्कूल और कम-से-कम एक कालेज है। इनमें शान्तिसेना का 'सेल' बनाया जाय और उनके अध्यापकों में आचार्यकुल का परिचय दिया जाय। (गांधीवादी विचार धारा, सर्वोदय और इस्लाम में दो-चार मूल्य परस्पर एक है—(क) अहिंसा (ख) आर्थिक न्याय (ग) सामाजिक समानता (घ) अन्तर्राष्ट्रीय भाईचारा। इसलिए आशा है कि मुसलमान इस विचार को अपनायेंगे।)

४—भारत में जो दंगे होते हैं उनकी रिपोर्ट तथा आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक दृष्टिकोण से विश्लेषण छपवाकर मुसलमानों के बीच बाँटा जाय।

५—'भूदान तहरीक' में मुस्लिम सम्बन्धित समस्याओं पर जितने सम्पादकीय अब तक लिखे जा चुके हैं उन्हें एक पुस्तक की शक्ल दी जाय और उन्हें भी मुसलमानों में बँटवाया जाय।

६—संसार के दूसरे देशों में, जहाँ अल्पसंख्यकों की समस्याएँ हैं जैसे—कनाडा, साइप्रस, अमेरिका, इराक, सूडान, चीन, और रूस—उनका इस विषय पर अध्ययन करके सर्वोदय कार्यकर्ताओं में बँटवाया जाय, ताकि वे लोग इस विषय पर अपने यहाँ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से काम कर सकें।

७—गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्रों और सर्वोदय मण्डलों द्वारा हर नगर में मुसलमानों की वर्तमान समस्याओं पर गोष्ठी की जाय और उनका निष्कर्ष लोगों में वितरित किया जाय।

८—मुसलमान मुहल्लों में शान्ति केन्द्र खोले जायँ और वहाँ स्वाध्याय-केन्द्र चलाया जाय।

९—नगरों में मुसलमानों के मुहल्लों में सामाजिक कार्यों के प्रोजेक्ट बनाने की कोशिश की जाय।

१०—सर्वोदय कार्यकर्ता जहाँ कहीं भी भाषण दें वहाँ अल्पसंख्यकों की समस्याओं पर सर्वोदय का विचार जरूर स्पष्ट करें। ●

डायरी के पन्ने

तमिलनाडु की यात्रा से

मैं तंजावूर से एक दिन के लिए मदुरै गया। सोचा था कि संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथनजी से भेंट होगी, मगर वह दौरे पर थे। वहाँ सबसे पहिले मुलाकात श्री पी० एस० लोकनाथन् से हुई। पिछले चौदह-पन्द्रह बरसों से वे उत्साहपूर्वक आन्दोलन में लगे हैं। आजकल लोकनाथन्जी दो काम पर विशेष ध्यान दे रहे हैं—रामनाड जिले के सेवापूरगांव में जो सत्तर एकड़ का है और मदुरै जिले में अधापट्टी, जो तैंतीस एकड़ का है। इसके अलावा दूसरा काम सर्वोदय साहित्य की बिक्री भी उनके जिम्मे है। एक बुक स्टॉल नगर में है और दूसरा मदुरै स्टेशन पर। वहाँ लगभग पाँच हजार रुपये महीने की साहित्य-बिक्री हो जाती है।

तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल के प्राणवान मंत्री श्री के० एम० नटराजन् दौरे से उस दिन शाम को मदुरै लौटे। वह तमिल के अच्छे लेखक और वक्ता हैं, लेकिन आन्दोलन के काम में व्यस्त रहने के कारण लिखने-पढ़ने की फुरसत नहीं मिलती। तमिलनाडु का ग्रामदान तो हो चुका है अब ग्रामस्वराज्य की स्थापना कैसे हो, यही उनकी चिन्ता और कोशिश है।

तमिलनाडु का सबसे प्रमुख गांधी संग्रहालय मदुरै में है। उसका संचालन प्रदेश गांधी निधि करती है। उसके अध्यक्ष हैं श्री के० अरुणाचलम्जी, जिन्होंने सर्वोदय के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया है और देश के इने-गिने रचनात्मक सेवकों में से एक हैं। पहले वे ही निधि के मंत्री थे लेकिन अब यह दायित्व उन्होंने एक तरुण कार्यकर्ता श्री एम० विश्वनाथन् पर सौंपा है। वे तीन साल से यह काम कुशलतापूर्वक कर रहे हैं। उन्होंने बताया कि तमिल भाषा में बापू की रचनाओं-भाषणों के सोलह खण्ड निधि ने प्रकाशित किये हैं, सम्भवतः इण्डेक्स है। एक पुस्तक है—गांधी और तमिलनाडु, जिसमें बापू के तमिल भाषा-भाषी साथियों से सम्पर्क की पूरी कहानी है। इसका श्रीगणेश दक्षिणी अफ्रीका से होता है, जैसा 'आत्म-कथा' में बापू ने उल्लेख किया है। एक अद्भुत प्रकाशन कहानियों का है—वे कथाएँ, जिनका झुकाव व प्रेरणा का स्रोत गांधी विचार है। यह पुस्तक खूब बिकी है।

मदुरै में गांधी परिवार के सबसे प्रमुख हैं श्री एन० एम० आर० सुब्रह्मण्यम् जो 'अय्या' के प्यार भरे नाम से पुकारे जाते हैं। पन्द्रह-सोलह वर्ष बाद उनसे मिलकर बहुत आनन्द हुआ। अवस्था ६५ वर्ष की है। शरीर भी थोड़ा क्षीण है, लेकिन उत्साह व निष्ठा में तरुणों को मात करनेवाले। तमिलनाडु गांधी निधि के सर्वप्रथम अध्यक्ष वही थे और आज भी अनेकों संस्थाएँ चलाते हैं। थोड़े दिन हुए एक मात्र सन्तान उनकी पुत्री का देहान्त हो गया जिससे उनको बड़ा आघात पहुँचा। इधर हाल में उनके बड़े भाई भी गुजर गये जिससे उद्योग व व्यापार देखने का बोझ भी उनपर आ पड़ा। लेकिन सर्वोदय आन्दोलन और उसकी सारी प्रवृत्तियों को उनका उत्साह-भरा वर्दिश और सहायता मिलती रहती है।

पूछने पर उन्होंने बताया कि इन्हें एक फिकर सताती रहती है। वह तमिलनाडु के लिए ही नहीं, सारे देश के लिए है कि गांधी-विचार और क्यों नहीं पकड़ता और आन्दोलन का प्रत्यक्ष असर राजनीति आदि पर क्यों नहीं पड़ता? मैंने कहा कि बिहार या सहरसा में कुछ काम हो जाय तो एक नक्शा सामने आयेगा और इसके बाद असर हो सकेगा, लेकिन उनकी शंका बनी रही।

तंजावूर से लौटते हुए एक दिन मद्रास

रहा। आपश्री के रिजर्वेशन टिकट की व्यवस्था नगर के पुराने सेवक श्री पंड्याजी ने कर दी। वह कई बार अन्ना को देखने तजावूर आये थे। बड़े सरल हृदय और सेवापरायण व्यक्ति हैं। सन् १९४८ से लेकर १९५६ तक मद्रास नगर की सर्वोदय प्रवृत्तियों में भाग लेते थे। उसके बाद उदास हो गये। मैंने पूछा, 'क्यों ?' तो कुछ न बोले। फिर कहा : "जब मैंने देखा कि अन्य पार्टियों की तरह नेतागिरी अपने समुदाय में भी है तो फिर दूर रहना ही अच्छा समझा। हाँ, जिनसे व्यक्तिगत सम्पर्क है, उनसे है।"

सर्वोदय-आन्दोलन की दृष्टि से मद्रास नगर में इन दिनों एक अद्भुत काम हो रहा है—सर्वोदय-पात्र का। इसका संचालन श्री एम० आर० सुब्रह्मण्यम्‌जी कर रहे हैं जो अहिंसा के तपोनिष्ठ सैनिक हैं। पांडिचेरी के रहनेवाले अविवाहित, स्वराज्य-आन्दोलन के सिपाही, वह तन-मन से सर्वोदय में लगे हैं। हाल में ही मद्य-निषेध हेतु उन्होंने मद्रास से कन्याकुमारी तक पदयात्रा की। आज भी जिले-जिले में पदयात्राएँ चल रही हैं।

हाँ, मद्रास नगर में इस समय लगभग दस हजार घरों में सर्वोदय-पात्र चल रहे हैं। दस बहनें इस काम में निष्ठापूर्वक लगी हैं। उनसे मिलकर बड़ा आनन्द हुआ। डॉ० एम० के० की नगरी में उनका वात्सल्यपूर्वक लगे रहना बहुत सराहनीय है। अक्सर घरों की माताएँ उनसे यही पूछती हैं—"सर्वोदय का विचार इतना अच्छा है लेकिन आपका यह काम फैलता क्यों नहीं ? देश की बिगड़ी दशा को आप नहीं सुधारेंगे तो और कौन कहाँ से आयेगा ?"

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान का एक अच्छा केन्द्र मद्रास नगर में चलता है। संचालक हैं श्री ए० कन्दस्वामी। इन दिनों पैंतीस बहनों का वर्ग रोज चला रहे हैं। वे सब मैट्रिक पास हैं और उनमें कुछ तो कालेज के विद्यार्थी भी हैं। एक दिन मैं भी शरीक हुआ। देश की गति-विधि पर उनसे चर्चा की और फिर पूछा, 'देश की सब लड़कियाँ आपकी तरह क्यों नहीं पढ़ पातीं ?' 'उनको खाना ही नसीब नहीं होता।'

'खाना कहाँ से मिलता है ?'

'खेत से।'

'खेत किसके पास है ?'

'चन्द सम्पन्न लोगों के पास, जो अपने को मालिक कहते हैं।'

'लेकिन मालिक है कौन ?'

'ईश्वर।'

'तो खेतों का क्या करना चाहिए ?'

'मुफ्त बाँट देना चाहिए। जमीन मुफ्त हो।'

'और आज के मालिकों के पास जो पट्टे हैं उनका क्या हो ?'

'वे पट्टे उन्हें खुशी से जला देना चाहिए।'

इन बालिकाओं के मुख से युग की इस माँग को सुनकर कौन गद्‌गद् नहीं होगा !

—दादू

सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य अभियान

दि० १८ मार्च से १८ अप्रैल १९७२

उपलब्धियाँ—एक

प्रखण्ड	सम्पर्क ग्राम-संख्या	ग्रामसभा	१८ अप्रैल समारोह	ग्रामसभा गठन	साहित्य प्रचार	कार्यकर्ता संख्या
१. कहरा	३४	१५	१	२	४२-००	११
२. गोहट्टा	२०	२०	४	२	६५-००	५
३. महिषी	१००	६०	६	५	२७-२५	१५
४. सौरबाजार (पूरब)	६५	५१	१२	७	४०-००	९
(पश्चिम)	१३०	३०	४५	४५	३९-००	९
५. सोनवरसा	३१	१३	८	७	४५-२०	९
६. सिमरी बख्तियारपुर	४८	५	२	३	१२५-५०	११
७. सत्तखुआ	१२२	४०	११	२५	२७९-२३	१०
८. सुपौल	५३	४४	२२	८	७८-२५	१०
९. पीपरा	९५	९५	—	१९	५५-००	८
१०. निर्मली	५८	५४	३८	२०	५१-७५	६
११. त्रिवेणीगंज	२०	१२	—	६	४७-५०	९
१२. किशनपुर	१११	९०	४१	२५	१२०-९५	१०
१३. मरौना	८३	५०	४२	—	३७-५०	५
१४. बसंतपुर	५७	५२	—	१३	३४-२५	१२
१५. राघोपुर	६१	५९	१७	७५	११९-७	१४
१६. छातापुर	६१	७५	१५	२२	१७४-१५	१२
१७. मधेपुरा	९९	३९	५	१	६८३-५०	१४
१८. मुरलीगंज	६०	३०	४	—	६०-२५	१२
१९. कुमारखण्ड	५१	५१	—	२	१६८-५९	६
२०. सिंहेश्वर	१००	७०	३०	—	२००-००	१६
२१. किशनगंज	८१	६८	१९	१४	३५१-००	१२
२२. आलमनगर	३१	१४	—	३	१०१-७०	८
२३. चौसा	१८	६	१५	३	४५-२०	१०
२४. रुपौली (पूर्णिया)	४८	२६	२९	५	५६-०१	१२
२५. बिरौल (दरभंगा)	३०	२१	२	१	१५-२५	६
२६. भवानीपुर (पूर्णिया)	२५	१०	५	७	६२-५०	१२
	१६६०	११००	३८३	२५०	३१४९-२८	२७३

उपलब्धियाँ-दो

प्रखण्ड	वितरण ग्राम संख्या	पुरानी भूदान की जमीन बँटी बी०क०धू०	बी० क० बी० क० धू०	नयी प्राप्त वितरण भूमि	दाता अवितरित संख्या	आदाता संख्या
१. कहरा	१२	६३-१४-११	—	—	१२५	१८४
२ नोहट्टा	६	४८-१३-०६	११-१०-००	९-५-१८	१८४	२२४
३. महिषी	१८	—	४१-१३-१०	—	१४८	२३०
४. सौर बाजार (पूरब)	१५	२-०६-००	२९-११-१५	५१-००-००	२९	१४४
(पश्चिम)	७	—	२६-१०-००	—	३३	७१
५. सोनबरसा	१	१-१९-००	२२-०१-१५	—	२७	६६
६. सिमरी बख्तियारपुर	४	—	१४-०५-००	८-०८-००	११	४०
७. सनखुआ	६	—	४५-००-०३$\frac{3}{4}$	२-००-००	५५	८५
८. सुरील	२२	१०-११-०१	१४-१५-२$\frac{1}{2}$	२-१०-००	५७	९५
९. पीपरा	१	४-१०-१२	—	—	८	१०
१०. निर्मली	७	—	१६-१८-००	२६-०८-१७	४२	२१
११. त्रिवेणीगंज	७	६९-१७-$\frac{1}{2}$	—	३४-००-००	८२	१६१
१२. किशनपुर	१०	—	५०-०५-१८$\frac{1}{2}$	२२-१९-१३	१६४	१२९
१३. मरौना	—	—	—	—	—	—
१४. राघोपुर	१५	४१-१८-१८	४०-१५-१६$\frac{3}{4}$	५-००-३$\frac{3}{4}$	८६	११२
१५. बसन्तपुर	५	—	१३-०८-००	२५-१४-००	१७	२१
१६. छातापुर	२५	८२-१०-०६	१३४-१८-१८$\frac{3}{4}$	१२८-१०-१३$\frac{3}{4}$	२५२	३६०
१७. मधेपुरा	२५	१८-००-१४	४७-०३-११$\frac{3}{4}$	१८-०८-००	१०४	२१९
१८. मुरलीगंज	१२	—	१४३-७-६$\frac{1}{2}$	—	१८७	२८७
१९. कुमारखण्ड	२	—	१८-१७-१०	—	४०	५१
२०. सिंहेश्वर	१७	१००-००-००	२५-००-००	४८-००-००	७७	१२०
२१. किशनगंज	११	६-१५-१५	७६-१८-१९	४३-००-००	१५३	१८५
२२. आलमनगर	११	०-०२-२०	१६-०५-१५	४-००-००	१८	५१
२३. चौसा	५	४२-६-०५	२-१०-०२	३-००-००	२१	१२२
२४. कसौरी (पूर्णिया)	९	—	१४-१०-००	२१-०९-००	३७	३८
२५. बिरोल (दरभंगा)	११	४३-१६-११	२८-१७-१४	—	६२	१९९
२६. भवानीपुर (पूर्णिया)	४	—	८०-७-००	—	१८	३०
	२७५	५४०-०१-१९$\frac{1}{2}$	८४३-११-१७$\frac{1}{2}$	४४९-१४-५	२०३७	३२५६

कुल वितरित भूमि १८८३१-१७

ग्रामस्वराज्य के मोर्चे से

१९ अप्रैल

ब्लाक की हर पंचायत से लोग आये हैं। भूमिहीन के लिए सर्वोदय, ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य, विनोबा, सबका एक ही अर्थ है—भूमि। कोई भी नारा लगाइए, कोई भी बात कहिए, वह भूमि के सिवाय दूसरा कुछ नहीं समझता। जिस आदमी की झोपड़ी भी अपनी जमीन पर न हो, वह समझता है कि भूमि का ही दूसरा नाम भगवान है।

तीन हजार से अधिक की सभा में मौजूद कुछ मालिक हैं जिन्होंने भूमि का दान दिया है, कुछ भूमिहीन हैं जिन्हें दान की भूमि मिली है और कुछ भूमिहीन हैं जो भूमि चाहते हैं। दाता-आदाता-जनता की यह सभा है। मैं पूछता हूँ : "जिन लोगों के पास भूमि बिलकुल नहीं है, या दो कट्ठा से कम है, वे हाथ उठायें।" कितना गिना जाय, हाथ ही हाथ उठ गये हैं। यही हाल गाँवों में भी है। इने-गिने लोग भूमिवान हैं, बाकी सब भूमिहीन हैं जो मजदूरी करते हैं। मजदूरी और बँटाई दोनों करते हैं, या सिर्फ बँटाई करते हैं।

ऐसे लोगों के लिए भूमि ही सबसे बड़ी वास्तविकता है, बड़े-से-बड़े भूमिवान के लिए भी भूमि ही सबसे बड़ी वास्तविकता है। इसलिए गाँवों के हृदय में भूमि का ही छोर पकड़कर प्रवेश किया जा सकता है, दूसरा कोई छोर पकड़कर नहीं। दूसरा छोर है भी नहीं। सबसे पहिले यह होना चाहिए कि 'गाँव में सबको भूमि हो'। इसके बाद ही यह हो सकता है कि गाँव की भूमि गाँव की हो। पहिले भूदान, तब ग्रामदान, दोनों को मिलाकर ग्रामस्वराज्य की शुरुआत। ग्रामदान के बीघा-कट्ठा से भूमिहीनता मिटनी चाहिए।

आज की सभा में प्रखण्ड स्तर की एक तदर्थ समिति बनी जो प्रखण्ड भर में आगे ग्रामस्वराज्य का काम करेगी। हर पंचायत से पाँच-पाँच लोगों ने नाम दिये। कुल १२० नाम लिखे गये। ये लोग अपनी-अपनी पंचायत में और लोगों को मिलाकर तदर्थ पंचायत कमिटी बनायेंगे। हर पंचायत कमिटी की बैठक पूर्णिमा को हुआ करेगी। पूर्णिमा के ४ दिन बाद पंचमी को तदर्थ ब्लाक कमिटी की बैठक होगी जिसमें कुछ पंचायत कमिटियों के संयोजक भी शरीक होंगे। ये सब लगभग पौने दो सौ लोग ब्लाक में ग्रामस्वराज्य का काम करेंगे। अभी ग्रामस्वराज्य की तीन बातों पर सबसे अधिक ध्यान देना है। हर गाँव में स्वराज्य, हर भूमिहीन को भूमि, हर नागरिक को वोट। 'बूथ कैप्चरिंग' के कारण गरीब के लिए वोट का महत्व भूमि से कम नहीं है। भूमि न होने से जीविका जाती है, लेकिन यदि वोट न देने दिया जाय तब तो व्यावहारिक नागरिकता ही समाप्त हो जाती है।

२० अप्रैल

सहरसा में सब कार्यकर्ता इकट्ठा हुए हैं। एक महीने का अभियान समाप्त हो गया। जिले भर में १२०० बीघे जमीन बँटी। साथियों में उत्साह है। मध्य प्रदेश के साथियों ने रायपुर ब्लाक में आगे काम करने का निर्णय किया है। गुजरात के साथियों ने सिंहेश्वर ब्लाक लिया है।

सहरसा आन्दोलन का मोर्चा बन गया है। ऐसी स्थिति बननी चाहिए फिर हर राज्य में एक मोर्चा बने, लेकिन

(शेष पृष्ठ अन्तिम पर)

बातचीत

'मैं क्रान्तिकारी नहीं हूँ'

'आपका नाम ?'

'नीरेन बोस।'

'आप क्या करते हैं ?'

'जी ? ' फ्री लान्स जर्नलिस्ट हूँ।'

'किसी राजनीतिक दल-विशेष में आपकी अधिक रुचि है ?' 'राजनीति में तो है। पर किसी दल-विशेष में नहीं।...'

'जी हाँ, गांधी, विनोबा, जयप्रकाश और सर्वोदय चारों नाम सुने हैं।'

सर्वोदय के विषय में आप कुछ कहेंगे ?'

'सर्वोदय की फिलॉसफी बेसिकली ठीक है। थिंकिंग बहुत अच्छी है। पर आदर्शवाद इतना है कि शुरू से अन्त तक अव्यावहारिक हो जाता है।...जैसे साम्यवादी विचारधारा है न कि सच्चाई से पूरी-पूरी समाज में उतर जाये तो धर्म की तरह अच्छी चीज है, पर व्यवहार में वैसा हो नहीं पाता है। सर्वोदय व्यावहारिक दृष्टि से इससे भी अधिक अव्यावहारिक है।'

मैं व्यावहारिकता के विषय में कुछ कहना चाहता हूँ, तो वे बीच में ही बात काट देते हैं।

'देखिये, कुछ नतीजे अवश्य पॉजिटिव निकले हैं पर इसे सक्सेस नहीं मान सकते। बड़े क्षेत्र में यह प्रैक्टिकेबुल है ही नहीं।...'समाज के उपयोग की भी नहीं है।'

क्या आपने इसकी सफलता-असफलता की जानकारी के लिए कुछ विशेष प्रयास किया है ? इसके दर्शन की कोई पुस्तकें पढ़ी हैं ?

'जी नहीं, कोई किताब वगैरह या विशेष अध्ययन मैंने नहीं किया। न्यूज पेपरों से सामान्य जानकारी पायी है। आखिर इतने दिनों से चल रहा है, क्या सफलता पायी है ?'

'गांधी को आप एक सामाजिक क्रान्तिकारी की दृष्टि से क्या पाते हैं ?

वे कुछ क्षण चुप रहते हैं। फिर बोलने हैं :

'देखिए, मैं न तो उन्हें महात्मा मानता हूँ और न गांधीजी कहना चाहता हूँ। न 'महात्मा' और न 'जी'। एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ भर थे वे—लेशमात्र भी विशेषता नहीं थी।''' ऐतिहासिक शक्तियों के प्रवाह से उनको सफलता सिद्ध हुई।'

'क्या कोई ऐसा भी महान् व्यक्ति है जिसने बिना ऐतिहासिक शक्तियों की सहायता के सफलता प्राप्त की हो ?'

'लेनिन।'''वैसे सहायता तो परिस्थितियों की मिलती है सबों को। पर लेनिन सचमुच महान् था। उसने जो कहा करके दिखाया।'''गांधी दिखावटी महात्मा थे। अपना महात्मापना बनाये रखने का ढोंग करते थे। हरिपुरा, त्रिपुरी कांग्रेस में सुभाषचन्द्र बोस के साथ जो हुआ वह गांधी की नीचता थी ? कोई सच्चा व्यक्ति वैसा करेगा ? एक अदूरदर्शी राजनीतिज्ञ थे गांधी, अधिक-से-अधिक दस वर्षों तक जिसकी दृष्टि जा सकती हो। आज गांधी के रास्ते पर चलकर इस देश की क्या हालत हुई है ? विनेज इकॉनामी जो थी गांधी की, शहद वगैरह बनाना, खादी, सब अमीरों की चीज हो गयी।'

'चूँकि गांधी के कायदे पर चली ?'''' मैंने बीच में ही पूछ लिया। 'जी हाँ।' पहली बार थोड़ा संक्षिप्त उत्तर देकर वे चुप हुये।

'क्या आज की परिस्थिति में आप किसी परिवर्तन की अपेक्षा करते हैं ?'

'जरूर। हर आदमी की खुशहाली हो ऐसा परिवर्तन तो होना ही चाहिए। पर मैं इसके लिए सड़क पर नारे लगाने नहीं निकल सकता।'

'आप जिस परिवर्तन की अपेक्षा करते हैं, उस सन्दर्भ में आपकी भूमिका क्या होगी ?'

'मैंने कहा न ! मैं सड़कों पर नहीं निकल सकता।'' मैं क्रान्तिकारी नहीं हूँ।'''किसी दूसरे का दुरा न करूँ इसका प्रयास करता हूँ।'

बातचीत के कई अंश मैंने छोड़ दिये हैं। चूँकि वे मुझे बहुत ज्यादा व्यर्थ लगे। इनमें से कई धारणा ही उस दृष्टिकोण का परिणाम हैं जिनमें दृष्टि छोटी और कोण बहुत बड़े हो गये हैं। पर आन्दोलन के प्रति जो शंकाएँ हैं वे सामान्यत सबों के मन में मैं पा रहा हूँ जहाँ हमने ग्रामस्वराज्य की रण-स्थली बनायी है, वहाँ इसका उत्तर देना ही होगा।

— कु० प्र०

(पृष्ठ ४९० का शेष)

सर्वोदय-प्रवृत्तियों में बराबर दिलचस्पी लेते रहे हैं। सर्वोदय-आन्दोलन में लगे हजारों व्यक्ति की भले ही यह अपेक्षा और भावना रही हो कि कमलनयनजी चाहे तो बहुत सारी मदद कर सकते हैं और बाबा की बात वे कभी टालेंगे नहीं। लेकिन मुझे नहीं लगता कि बाबा ने कभी इन पर किसी प्रकार का दबाव डाला हो और कमलनयनजी ने भी विनोबा-भक्ति में आँख बन्द करके आन्दोलन की मदद की हो। उन्होंने वही किया जो उनके विवेक ने कहा।

धन-सम्पदा से प्राप्त होनेवाली सुख-सुविधाओं को कमलनयनजी ने जानबूझकर ठुकरा नहीं दिया था। लेकिन स्वभाव उनका ऐसा था कि वे धन-सम्पदा के भार को लेकर दबे नहीं रह सकते थे— अपने सहज सुख और आनन्द को छोड़ नहीं सकते थे और यही उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है। वे बराबर समझाते रहे हैं कि धन व्यक्ति के लिए है, व्यक्ति धन के लिए नहीं है।

बापू को जमनालालजी के जाने का दुःख उठाना पड़ा था और विनोबाजी के सामने ही उनका एक मस्त, अलमस्त, अक्खड़ शिष्य उठ गया। ऐसे अवसर पर उस वृद्धा माँ को कैसे सान्त्वना दी जाय जिसका सौभाग्य—सिन्दूर तीस वर्ष पहले पुँछ गया और अब बेटा भी छिन गया। माना कि वह बेटा साठ वर्ष का था और इसने अपने क्षेत्र में अनेक सफलताएँ प्राप्त की हैं, बेटे-बेटियों से भरापूरा परिवार है, भाई-बन्द हैं, लेकिन माँ की गोद तो माँ की गोद ही होती है। बड़े-से-बड़ा बेटा भी माँ की गोद में सिर रखकर आराम-आनन्द पाता है और माँ की आँखें भी उसे देखकर असीम सुख का अनुभव करती हैं।

सर्वोदय के प्रति निष्ठावान एक ऐसा समर्थ सम्पन्न व्यक्ति हमारे बीच से उठ गया है जिसने जीवन के मूल्य को समझा था और देश की आत्मा को समझा था। इनके उठ जाने से सर्वोदय-आन्दोलन एक प्रकार से समर्थ सहारे से वंचित हो गया है। लेकिन इसी स्थिति में से, सम्भव है कोई तेजस्विता प्रकट हो।

दिवंगत आत्मा को शान्ति प्राप्त हो, यही हम सबकी प्रार्थना है। ●

(पृष्ठ ४९६ का शेष)

को भी प्रश्रय मिलता है। नगर में बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ उसी धन से निर्मित होती हैं।

अन्य इसके अन्तर्गत आभूषण, अशर्फीमा, बचत और जमा आदि कई प्रकार की सम्पत्ति आती है। इनमें से आभूषण ही एक ऐसी सम्पत्ति है, जिसका शत-प्रतिशत पता लगा पाना सम्भव नहीं है। यद्यपि कुछ बड़े परिवारों का अधिकांश आभूषण बैंकलॉकर में रहता है।

उपर्युक्त प्रकार की सम्पत्तियों का अलग-अलग स्वरूप है और उसका अलग-अलग भाव भी है, लेकिन ये सारी सम्पत्तियाँ मिलकर देश में तबाही, भ्रष्टाचार को प्रश्रय देती हैं। जिन धनों का उपयोग देश के उत्पादन को बढ़ाने में होना चाहिए उसका उपयोग बड़ी-बड़ी अट्टालिकाओं को खड़ा करने, अपसंचय को प्रश्रय देने, कृषि-क्षेत्र के उत्पादनों के मूल्यों को नियन्त्रित करने और अवैध व्यापार को बढ़ाने में प्रयुक्त होता है। इस सम्पत्ति की गतिशीलता बढ़ाने तथा उसके समुचित उपयोग के लिए कुछ सुझाव हैं। (शेष अगले अंक में पढ़ें)

भूदान-यज्ञ ८-५-'७२ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल.१२४

आन्दोलन के समाचार

महामंत्री की सरकार से अपील

विषैली शराब के कारण दिल्ली में हुई मौतों से उत्पन्न स्थिति और जनता की प्रतिक्रिया को दृष्टि में रखते हुए अखिल भारतीय नशाबन्दी परिषद के महामंत्री श्री रूपनारायण ने एक वक्तव्य द्वारा सरकार से अनुरोध किया है कि इस तरह की घटनाओं को रोकने का उपाय नशाबन्दी-नीति का दृढ़तापूर्वक पालन और मिथिल अल्कोहल के वितरण एवं बिक्री पर प्रभावशाली नियंत्रण है। परन्तु जब तक सारे देश में पूर्ण नशाबन्दी लागू करने के सम्बन्ध में किसी समयबद्ध कार्यक्रम का कार्यान्वयन होता तब तक सरकार शराब के सम्पूर्ण व्यापार का राष्ट्रीयकरण करे तथा शराब के निर्माण, बिक्री और आयात को अपने हाथों में ले ताकि इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो।

उ० प्र० सर्वोदय मण्डल

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी ने गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र आगरा के संचालक श्री कृष्णचन्द्र सहाय को उ० प्र० सर्वोदय मण्डल का कार्यवाहक मंत्री नियुक्त किया है। यह पद श्री महावीर भाई के त्याग-पत्र दे देने के कारण रिक्त हुआ था। श्री महावीर भाई ने चम्बलघाटी शान्ति मिशन के मंत्री नियुक्त होने पर इस पद से त्यागपत्र दिया है।

ग्रामस्वराज्य-अभियान

शाहाबाद से श्री किशोरी रमणजी लिखते हैं कि अब तक १६ गाँवों में ग्राम-सभा का गठन हो गया है। धीरे-धीरे सभी गाँवों में ग्रामकोष जमा किया जा रहा है। हर ग्रामसभा की नियमित मासिक बैठकें हुआ करती हैं। ग्रामसभा के लोग अपनी बैठकों में सामूहिक निर्णय सर्वसम्मति से लिया करते हैं।

भूल-सुधार

'भूदान-यज्ञ' के अंक ३० दिनांक २४ अप्रैल '७२ के पृष्ठ ४१७ पर कालम तीन, पैरा तीन की पहली पंक्ति में उल्लेख आया है —'श्री महावीर सिंह माधो सिंह के सम्बन्धी हैं' ऐसी बात नहीं है। श्री महावीर सिंह का माधो सिंह से पहला परिचय अक्टूबर में पटना में हुआ। सं०

(पृष्ठ ५०२ का शेष)

सहरसा हर राज्य का मोर्चा हो। बंग साहब ने ठीक कहा कि सहरसा सबका मोर्चा है।

२१ अप्रैल [illegible] चले गये। कुछ चुने हुए लोग आगे के काम के बारे में विनोबाजी से चर्चा करने पवनार जा रहे हैं। बिहार के 'सर्वोदय संघ' ने ४ व्यक्तियों की एक समिति चुनी गयी है जो राज्य स्तर की ग्रामस्वराज्य समिति नये सिरे से गठित कर दे। इसकी बड़ी जरूरत थी। कोई एक ऐसा मंच नहीं रह गया था जहाँ सहरसा के साथ-साथ पूरे बिहार को सामने रखकर सोचा जा सके।

—राममूर्ति

(पृष्ठ ४९४ का शेष)

मूल्यों के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया। ग्रामदान एक मूल्य, ग्रामस्वराज्य एक मूल्य, स्वामित्व-विसर्जन एक मूल्य, और भी मूल्यों के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया। अब समय आया है कि समस्या सर्वमान्य हुई है और समाज पुकार रहा है। इस समस्या का समाधान हमें सर्वोदय की पद्धति से मिलना चाहिए। आज यह वक्त है कि इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करने के लिए हम विचार करें।

(२०-४-७२ को ग्रामस्वराज्य अभियान की समाप्ति पर आचार्य राममूर्ति द्वारा दिये गये भाषण से)।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सहरसा-अभियान : कुछ सुझाव

[सहरसा ग्रामस्वराज्य-अभियान में जुटे लोगों के अनेक अनुभव आये हैं। हमने पिछले अंकों में कुछ वरिष्ठ साथियों के अनुभव और चिन्तन दिये थे। यहाँ एक कार्यकर्ता साथी का अनुभव, उसके सुझावों के साथ पेश कर रहे हैं। अन्य साथी भी अपने अनुभव भेजेंगे ऐसी आशा है। सं०]

१८ मार्च से १८ अप्रैल, १९७२ तक सहरसा जिले के ग्रामस्वराज्य महायज्ञ में सक्रिय सहयोग के दौरान जो अनुभव प्राप्त हुए हैं उन्हें मैं यहाँ विनम्रता के साथ व्यक्त करता हूँ।

पहला अनुभव यह हुआ कि हमारा अनाधारित रहना मैथिली कहावत 'विकट पाहुन' के रूप में सिद्ध हुआ, क्योंकि शोषक सम्पन्न जन, जिनसे हम सर्वप्रथम सम्पर्क करते थे, मजबूरी की हालत में हमारे भोजनादि की व्यवस्था करते, और अन्त्यजन जिनसे हमारा कोई सम्पर्क नहीं होता, चाहने पर भी हमारी व्यवस्था नहीं कर सकते थे। इसलिए मुझे गांधीजी की यह कल्पना बड़ी अधिक उचित और व्यावहारिक लगती है कि एक लोक-सेवक एक ग्राम या ग्राम-समूह में कुछ काल तक समग्र ग्राम-सेवा करे और ग्रामीण जनता से एकात्म होने की साधना करे।

दूसरा, वर्तमान अभियान की तरह पहले भी ऐसे अभियान चलाये गये हैं जिनमें स्थानीय इकाई व प्रान्तीय कार्यकर्ताओं से तिगुने-चौगुने अन्य प्रान्तीय कार्यकर्ता शामिल हुए, परन्तु ऊपर से निर्धारित लक्ष्य को जल्दी-से-जल्दी प्राप्त करने के मोह के कारण इनमें न केवल संख्यात्मक उपलब्धि का आकर्षण रहा, बल्कि थोड़ी-बहुत गुणात्मक उपलब्धि को सुरक्षित रखना और 'फॉलो अप' करना नितान्त आवश्यक माना गया। उदाहरणार्थ, उचितानुचित, भूसंकल्पों; विशेषकर दरभंगा महाराज के दान के प्रति हमारी बेरुखी के फलस्वरूप कई कानूनी पेचीदगियाँ उत्पन्न हो गयी हैं जो हमारे इस अभियान में विकट बाधाएँ सिद्ध हुईं। अधिकांश भूस्वामियों को यह कहने का अवसर मिला—"पहले उस भूमि की तो व्यवस्था कर लीजिए जो इतनी सारी दान में आप ले चुके हैं।" भले ही हमें टालने के लिए यह तर्क उपस्थित किया जा रहा है, परन्तु इस कटु सत्य से कौन इनकार कर सकता है? हम लोगों ने जब कभी व्यवस्थापकों से पुराने संकल्पों की सूची माँगी तो कहा गया, "आप यह मानकर चलिए कि मानो पहले कुछ काम हुआ ही नहीं। नयी स्लेट से शुरू कीजियेगा।" इससे पुराने कार्यकर्ताओं का हर नये अभियान में विश्वास चुकता जा रहा है। वर्तमान अभियान में इतनी बड़ी संख्या में विशेषकर स्थानीय पुराने कार्यकर्ताओं का 'रणछोड़' बनना क्या यही सिद्ध नहीं करता?

तीसरा, मैंने यह पाया कि अभी तक भूदान-ग्रामदान की तकनीक में भूमिहीन जनता मात्र परमुखापेक्षी बनी रही है। इस कारण संगठन (अलग से नहीं, ग्रामसभा के अन्तर्गत ही) का वह नैतिक पीठबल तैयार नहीं हुआ जो उनकी समस्याओं के समाधान के प्रयास द्वारा ही संगठित किया जा सकता है। बँटाई, बासगीत तथा अन्यान्य समस्याओं के प्रति हम उदासीन रहे हैं। बँटाई का कानूनी अनुपात आज ३० : १० है। पर वास्तव में गैर-कानूनी अनुपात २० : २० है। इतना ही नहीं, अगर मान लिया जाय कि एक बीघा में १० मन अनाज हुआ तो बँटाईदार के हिस्से सिपाही, खलिहान, निकौनी तथा बीज के लिए ऋण का पौन देढ़ा, सिंचाई आदि का खर्च निकाल कर कुल १ मन १८ सेर अनाज उसके पास बच जाता है। कई बार तो उसके पास एक दाना भी नहीं बचता, उल्टा ऋण थोप दिया जाता है। ऐसे अन्यायों के विरुद्ध अहिंसक प्रतिरोध द्वारा हमने अभी तक ग्रामीण जनता के ८०-९० प्रतिशत भूमिहीनों तथा छोटे किसानों का विश्वास जीतने की चेष्टा नहीं की, जबकि हम जानते हैं कि यही लोग ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की रीढ़ की हड्डी हैं। मुझे लगता है कि अब हमारा नारा होना चाहिए—सबै भूमि गोपाल की, या फिर है हलवाहा की।

और, प्रायः सभी युवक हमें चेतावनी देते हुए सुनायी दे रहे हैं—"आपके माँगने से भू-क्रान्ति कभी नहीं आयेगी। वह तो रक्त-रंजित होगी, या फिर प्रगतिशील इन्दिरा के 'सीलिंग' द्वारा सम्पन्न होगी।" सारे सर्वोदय समाज को यह चुनौती है।

चौथे, मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि हमारे सम्पूर्ण ग्रामदान आन्दोलन में ग्रामस्वावलम्बन के निमित्त कोई भी रचनात्मक कार्य दिखायी नहीं दिया। चरखा तो सिरे से गायब है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि ग्रामस्वराज्य के लिए स्वग्रामी भावना उतनी ही अनिवार्य है जितनी कि हिन्द स्वराज्य के लिए स्वदेशी भावना थी।

पाँचवें, मैंने देखा कि हम गाँव में मालकियत-विसर्जन की बात करते हैं, परन्तु केन्द्रीय सरकार में मालकियत के केन्द्रीकरण के प्रति हम नितान्त उदासीन हैं। कितना अन्तर्विरोध है?

मुझे लग रहा है कि केन्द्रीय सरकारी व्यवस्था के संगठित शोषण की हिंसा के प्रति हमारी उदासीनता के परिणामस्वरूप ही सर्वोदय समाज आज राजनीति-निरपेक्ष व्यवहार कर रहा है। नतीजे के तौर पर ग्रामदानी बिहार में 'कुप कण्ट्रोल' का भ्रष्टाचार पनपने दिया गया और हम राष्ट्र-जीवन की मुख्य धारा से आज अलग-अलग पड़ गये हैं।

संक्षेप में, मुझे तीव्रता से यह अनुभूति हो रही है कि ग्रामस्वराज्य को

(शेष पृष्ठ ५११ पर)

भूदान से ग्रामस्वराज्य : इक्कीस वर्ष

इक्कीस वर्ष कम नहीं होते। और, इस जमाने के इक्कीस वर्ष! दुनिया की बात जाने भी दें तो केवल भारत में पिछले इक्कीस वर्षों में जो परिवर्तन हुए हैं वे मध्य युग की कई शताब्दियों में नहीं हुए। भले ही हमारे सपनों का भारत अभी दूर हो, किन्तु इस लम्बी अवधि में भारत बदला नहीं है, यह हम नहीं कह सकते। हमारा बालिग मताधिकार बालिग हो गया, लेकिन साथ ही यह भी सिद्ध हो गया कि बालिग मताधिकार लोकतंत्र के लिए काफी नहीं है। बांगला देश ने तो यह भी सिद्ध कर दिया कि देश की स्वतंत्रता और जनता की स्वतंत्रता एक नहीं है। स्वतंत्रता और लोकतंत्र की कल्पना में जनता की स्वतंत्रता और बालिग मताधिकार से आगे बढ़े हुए लोकतंत्र के नये तत्व इन्हीं इक्कीस वर्षों में जुड़े हैं! इन्हीं इक्कीस वर्षों में दुनिया ने यह भी देखा है कि आज की दुनिया का सबसे 'सभ्य' और समृद्ध देश कितना अन्यायी और अत्याचारी हो सकता है, और जब दुनिया की सरकारें शक्ति-सन्तुलन को ही अपना धर्म मानती हैं, तो भारत बावजूद सारी अपूर्णताओं और अभावों के विशुद्ध धर्म-युद्ध लड़ सकता है, और विजय पा सकता है 'दो राष्ट्रों' के उस जहरीले सिद्धान्त पर जिसने भारत की स्वतंत्रता को खण्डित किया था। भारत में इन इक्कीस वर्षों में आकांक्षाओं की जबरदस्त क्रान्ति हुई है; आस्थाएँ भी बदली हैं। पूँजीवादी-सामन्तवादी भारत ने दिखा दिया कि वह समाजवाद से विमुख नहीं है। हजारों गाँवों ने यह भी बता दिया कि वे स्वामित्व-विसर्जन को भी स्वीकार कर सकते हैं। हमारा किसान हमेशा से दकियानूस कहा जाता था किन्तु 'हरित क्रान्ति' ने इतना तो सिद्ध कर ही दिया कि सुख और समृद्धि देनेवाले विज्ञान के ऐसे कोई साधन या उपाय नहीं हैं जो उसे अस्वीकार हो। वह जमाने के साथ चलने को तैयार है। अक्सर, मनुष्य होने के नाते वह सुख, सुविधा और सुरक्षा चाहता है। सदियों-सदियों से भारत के सामान्य जन ने एक सहज बुद्धि (कामन सेन्स)—विशिष्ट जन की विशिष्ट बुद्धि नहीं—विकसित की है जो भारत की सबसे बड़ी पूँजी है।

इन इक्कीस वर्षों में हमने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन द्वारा स्वतन्त्र भारत के विकास में शोषण तथा हिंसा से मुक्ति के नये आयाम जोड़ने की कोशिश की। गांधी ने हमें स्वराज दिया था। उसे हमने ग्रामस्वराज्य में विकसित किया और गांधी-विचार का वह स्वरूप प्रस्तुत किया जिसे देश ने अब तक जाना नहीं था, पहचाना नहीं था।

गांधी ने प्रतिकार की शक्ति विकसित की थी। हमने विचार की शक्ति का प्रयोग किया। हमने माना कि हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया में मनुष्य को सही विचार का उपहार मिल जाय तो वह बदल सकता है; बुराई के साथ जिस असहकार और अनीति के प्रतिकार का प्रयोग गांधी ने इतने बड़े पैमाने पर किया था, वह लोकतंत्र की भूमिका में उस तरह आवश्यक नहीं है। वास्तव में उसकी आवश्यकता न हो, इसी में सौम्य, सौम्यतर अहिंसा की श्रेष्ठता है।

हृदय-परिवर्तन की इस नयी पद्धति और प्रक्रिया का प्रयोग हमने २१ वर्षों तक किया है। सद्विचार का उपहार स्वयं विनोबा ने हजारों हजार गाँवों में पैदल जाकर दिया है। उनके अनेक साथियों-सिपाहियों ने दिया है। लोक-शिक्षण का ऐसा विलक्षण अभ्यास क्या पहिले कभी किसी ने किया होगा? इसमें सन्देह नहीं कि भारतीय मानस को हमारे आन्दोलन के कारण चिंतन की नयी धारा और सामाजिक क्रान्ति की नयी भूमिका मिली है।

लेकिन एक बात है। इक्कीस वर्षों के बाद आज भी हम दृढ़ता के साथ यह नहीं कह सकते कि समाज-परिवर्तन की कुंजी हमारे हाथ आ गयी है। जिस लोक-शक्ति को हम परिवर्तन की कुंजी मानते आये हैं वह अभी भी दिखायी नहीं दे रही है। हमारा उपास्य 'लोक' हमारी क्रियाओं को कुतूहल के साथ देखता है, सहानुभूति प्रकट करता है, लेकिन करीब नहीं आता; अलग खड़ा रहता है। लोक को, लोक के लिए, लोक द्वारा, क्रान्ति अभी वास्तविक नहीं हो पा रही है। वास्तविक कैसे होगी जब 'लोक' ही अलग है?

गांधी ने स्वराज्य का नमक ढूँढ़ लिया था। कहीं ऐसा तो नहीं है कि हमारे हाथ ग्रामस्वराज्य का नमक ही अभी तक नहीं लगा है? शायद!

तो, क्या इस बात की जरूरत नहीं है कि इस बार पंजाब में हम अपने आन्दोलन के पूरे इक्कीस वर्षों पर गहराई से नजर डालें; यों ही मिलकर, कुछ कहकर, कुछ सुनकर, न उठ जायें? हमें देखना है कि बीते इक्कीस वर्षों में हमने अहिंसा की कितनी शक्ति विकसित की है? प्रतिकार की शक्ति उसमें है यह गांधी ने सिद्ध कर दिया था, लेकिन क्या हम यह सिद्ध कर सके हैं कि उसमें समाज-परिवर्तन की शक्ति भी है?

पंजाब सिपाहियों का देश है। सिपाही बात का भात नहीं पकाता। ●

प्रश्नोत्तर

• विनोबा

प्रश्न : अच्छा जीवन किसे कहते हैं ? अच्छा जीवन जीने के लिए कौन सा दर्शन सहायक होगा ? हमारे तरुण अच्छे और सम्पूर्ण मानव हों इसलिए शिक्षा किन आदर्शों को कार्यान्वित करे ?

उत्तर : आपके प्रश्न का उत्तर तीन शब्दों में देता हूँ। समाज की बुनियाद और शिक्षा की बुनियाद दोनों सत्य, प्रेम और करुणा के आधार पर होनी चाहिए। करुणा का मतलब दुखियों की मदद करना, उनके दुख से दुखी होना। प्रेम का मतलब, दूसरों के सुख से सुखी होना। सत्य, यानी जो चीज जिस वक्त हमें जैसी सूझती है उस समय उसी तरह प्रकट करना। अपना विचार अगर बदला तो बदलने के लिए तैयार रहना।

प्रश्न : बहुत से भारतीयों का जीवन नियति पर आधारित रहता है। जीवन में जो भी अच्छी-बुरी बातें आती हैं, उनका भी अर्थ इसी तरह आसानी से लगा लेते हैं; सही स्थिति क्या होनी चाहिए ?

उत्तर : जीवन में पहले से तय कोई चीज नहीं, सिवाय कि आपकी आयु-मर्यादा। यह निश्चित है कि जिस पूर्वकर्म के कारण हमने जन्म लिया है, उसकी समाप्ति निश्चित समय पर होगी। प्रारब्ध-क्षय उसी को कहते हैं। कितना जीना यह अपने हाथ में नहीं है, लेकिन कैसा जीना यह अपने हाथ में है। आयु में वृद्धि करना भी शक्य है, व्यक्तिगत नहीं, सामाजिक। समाज की आयु बढ़ायी जा सकती है, व्यक्ति की नहीं, इतना निश्चित है। बाकी का मनुष्य-जीवन में कुछ भी निश्चित है, ऐसा धर्मशास्त्रकारों ने माना नहीं।

प्रश्न : राजनीतिज्ञों में मूल्य और संगति दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है, कई प्रकारों में विकसित देश और भारत में जो अन्तर पड़ गया है वह १९४७ से बहुत ही ज्यादा है। क्या यह जल्दी निकल जानेवाली एक दशामात्र है ?

उत्तर : राजनीति में जो काम करते हैं वे बदमाश हैं, ऐसा मेरा अनुभव नहीं है। वे बहुत अच्छे लोग हैं। दुखियों के लिए दयाभाव रखनेवाले हैं, शुद्ध जीवन जीनेवाले भी हैं। उनके बीच कुछ खराब लोग भी हैं। लेकिन दुनिया में ऐसी कोई जमात नहीं, न व्यापारियों की, न राजनीति की, न सर्वोदय की, जिसमें खराब लोग नहीं हैं। लेकिन कुल मिलाकर देखा जाय तो हिन्दुस्तान में जो राजनीतिज्ञ काम करते हैं वे अच्छे हैं, ऐसी मुझ पर छाप है।

मुख्य गलती यह है कि जो सेवा होती है वह केवल सत्ता के जरिये होती है, ऐसा उनका विश्वास हो गया है। वह गलत है। इसके कारण उनकी शक्ति नीचे के लोगों के पास नहीं पहुँच सकती। लोक-हृदय से उनका सम्पर्क नहीं होता सत्ता के जरिये सेवा होती है, यह मैं भी मानता हूँ। लेकिन सत्ता के द्वारा ही सेवा होती है यह मैं नहीं मानता—जो मुख्य सेवा है—लोगों को अपने पाँव पर खड़े करने की वह सत्ता के द्वारा नहीं होती।

प्रश्न : ईसाई जगत में एक प्रतिशत लोग भी चर्च में नहीं जाते हैं। क्योंकि गिरजाघरों के जो लोग हैं वे वही उन्नीसवीं सदी के दावे किया करते हैं, जिनसे ईसाई लोग ऊब गये हैं। आज के बौद्धिक वर्ग को तथा विज्ञान-युग के लोगों को जँचे ऐसा कोई भी धर्म उनका रूप और भाषा न दिये जाने के कारण यह सारा हुआ है। क्या भारत में भी यही स्थिति होगी ?

उत्तर : हिन्दू धर्म किसी गिरजाघर पर, किसी मन्दिर, मस्जिद, संस्था, मठ, आश्रम या सम्प्रदाय पर निर्भर नहीं है। ईसाई तथा इस्लाम वगैरह धर्म अभी जवान हैं, जबकि वैदिक विचारों की परम्परा दस हजार साल की है। संकुचित श्रद्धा में, संस्था में जकड़े रहने से क्या नुकसान होता है यह हिन्दू धर्म जानता है, वह सर्वसम्प्रदाय-मुक्त है।

प्रश्न : कम या ज्यादा मात्रा में अल्पसंख्यक लोग जहाँ भी हों—सम्पन्न राष्ट्र में भी वे वहाँ एक सामाजिक समस्या बन जाते हैं और सरलता से जल्दी प्रगति होने में रोड़े बनते हैं। भारत में तो बड़े-बड़े अल्पसंख्यक गुटों को, नीति के तौर पर ही अलग-अलग क्षेत्रों में सम्मान कर रखा जाता है। राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में उन्हें प्रविष्ट कराने का कोई प्रयत्न नहीं होता। क्या हम सही रास्ते पर हैं ?

उत्तर : कठिन इसलिए है कि हिन्दुस्तान एक खण्डप्राय देश है। ५५ करोड़ लोग और १४-१५ भाषाएँ। यूरोप में एक-एक भाषा का एक-एक देश है। एक देश से दूसरे देश जाने के लिए पासपोर्ट, वीसा की जरूरत होती है। आज वे कामन मार्केट बनाने की कोशिश कर रहे हैं। हमारा एक बड़ा कुनबा है। बड़े कुनबे की समस्याएँ भी अनेक होती हैं। इसलिए सब जमातों को एक ही राष्ट्रीय प्रवाह में ले जाना थोड़ा कठिन होता है। परन्तु इसकी आवश्यकता निःसंशय है। अगर सब लोग प्रयत्न करेंगे तो होगा, क्योंकि भारतीय संस्कृति इसके अनुकूल है। ('मैत्री' से साभार)

श्री मरहोला, (हिमाचल प्रदेश) के पास २२-१-७२।

भूमि का बँटवारा

● सुरेशराम

समय आ गया है कि अपने इस अन्नदाता किसान की व्यथा को हम समझें और उसको दूर करने की सच्ची कोशिश करें। देश की आबादी का एक हिस्सा शहरों में रहता है और चार हिस्सा देहातों में। अस्सी प्रतिशत लोग खेती करते हैं या उस पर आधारित हैं। लेकिन गाँव में रहनेवाले लगभग सवा आठ करोड़ परिवारों में लगभग सवा करोड़ के पास दस एकड़ से ज्यादा भूमि है और बाकी सात करोड़ में से एक करोड़ के पास पाँच से दस एकड़ तक भूमि है। डेढ़ करोड़ एक एकड़ से ज्यादा और पाँच एकड़ से कम भूमि रखते हैं। दो करोड़ एक एकड़ से कमवाले हैं, और ढाई करोड़ एकदम भूमिहीन हैं। जाहिर है कि आधे से ज्यादा काश्तकारों के पास या तो जमीन है ही नहीं या है तो एक एकड़ से कम है। इनका काम दूसरों के खेतों में मेहनत-मजदूरी करके किसी तरह गुजर चलाना है। भर पेट भोजन नाम की चीज इन्होंने पीढ़ी दर पीढ़ी से नहीं जानी।

घटती हुई विषमता

स्वराज्य के बाद जो नियोजन चला उससे ज्यादातर कमाई बड़े किसानों की ही हुई। इसका स्पष्ट दर्शन नीचे की तालिका से मिलता है :

कृषि आय में वृद्धि : औसत प्रति परिवार (रुपयों में)

क्रम कौन	योजना पहली	दूसरी	तीसरी	१९६६-६७	१९६७-६८	प्रतिशत
१—छोटे किसान (पाँच एकड़ से कम)	५१६	४४०	४१०	५५४	६८४	३१.५
२—मध्यम किसान (पाँच से दस एकड़)	१२९२	११०३	११२६	११९४	१७१३	३२.६
३—बड़े काश्तकार (दस से पचास एकड़)	२१२९	३१३३	४२४१	५४६०	६७११	२१०.२
४—श्रीमान काश्तकार (पचास एकड़ से ऊपर)	७१७६	१०४८५	१४६३९	१८२५०	२२७३८	२१६.९

इससे पता चलता है कि जहाँ छोटे किसान की आमदनी में ३१.५ प्रतिशत वृद्धि हुई वहाँ श्रीमानों की आमदनी सातगुनी, २१६.९ प्रतिशत बढ़ गयी। परिणामस्वरूप देहातों में विषमता ने उग्र रूप लिया है और गरीब व अमीर के बीच की खाई और भी ज्यादा चौड़ी हो गयी है।

भूमिहीन और अल्प भूमिवान अपने पैरों पर खड़े होने के बजाय बाजार के और भी आश्रित हो गये हैं। खेती में अग्रणी आन्ध्र और महाराष्ट्र प्रदेशों के अन्दर स्थिति इस प्रकार है :

क्रम वर्ग	आन्ध्र प्रदेश में			महाराष्ट्र में		
	तीस दिन में प्रति व्यक्ति खर्च अनाज (सेर)	बाजार से लेना	बाजार पर प्रतिशत आधार	तीस दिन में प्रति व्यक्ति खर्च अनाज (सेर)	बाजार से लेना	बाजार पर प्रतिशत आधार
१—बड़े काश्तकार	१९.०	६.६	३४.७	१७.६	६.१	३४.४
२—अल्प भूमिवान	१८.७	११.८	६३.१	१७.६	१००	५७.५
३—भूमिहीन	१८.०	१७.९	९९.४	१६.६	१६.२	९७.६

जब हमारे लाखों-करोड़ों किसान भाई-बहन अपने पेट के दाने-दाने के लिए बाजार पर ९९.४ या ९७.६ प्रतिशत आश्रित रहेंगे और उधर अनाज के दाम बढ़ेंगे तो उनकी तबाही का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

खुशी की बात है कि पिछले पाँच वर्षों में देश में अनाज की पैदावार बढ़ी है और भारत स्वावलम्बी हुआ है। जिसे कहते हैं "हरित क्रान्ति" वह सम्पन्न हुई है। मगर किस कीमत पर? उस क्रान्ति का लाभ कौन उठा रहे हैं? थोड़े से बड़े श्रीमान काश्तकार जो जमीन और अन्य साधनों से मालामाल हैं। एक तरफ 'हरित क्रान्ति' हो रही है तो दूसरी तरफ भूमि का सवाल भयंकर रूप ले रहा है। जो खुद मेहनत करते हैं उनके पास जमीन नहीं और जिनके पास जमीन है वे मेहनत करना कसरते-शान समझते हैं। इस सबका नतीजा यह है कि करोड़ों भूमिहीनों और भूमिवान किसानों की दशा बिगड़ती जा रही है और भारत देश रूपी भवन की बुनियाद कमजोर पड़ रही है।

महान चेतावनी

इसलिए देश की सुरक्षा और विकास, दोनों की माँग है, कि किसान को, गये-बीते, पीड़ित-शोषित, भूमिहीन किसान को ऊपर उठाया जाय और भूमि-सुधार निष्ठापूर्वक और अविलम्ब किये जायँ। गुलाबी योजनाओं द्वारा किसान को आगे के लिए आश्वासन देने से कोई लाभ नहीं। उद्धार में उधारी नहीं चल सकती, उद्धार नगद और अभी होना चाहिए। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रोफेसर गुन्नार मिडर्ल ने चेतावनीपूर्ण शब्दों में कहा है—"भूमि-सुधारों पर फिर से विचार किया जाना चाहिए और गम्भीरतापूर्वक उसको अमल में लाना चाहिए। मनुष्य और भूमि के बीच का सम्बन्ध बदलने के →

खादी का अन्तर्द्वन्द्व

१. दिसम्बर १९६८ में खादी कमीशन ने नये माडल के चरखे से सूत-उत्पादन की लागत की जांच के लिए एक कमिटी बैठायी। कमिटी ने १२ तकुए के चरखे में बुनाई के पहले की प्रक्रियाओं तथा करघे में कई सुधार सुझाये और कुछ प्रक्रियाओं में बिजली लगाने की बात कही। सुधारों का लक्ष्य यह था कि खादी की कीमत घटती जाय। लेकिन कई कठिनाइयाँ पैदा हो गयीं। एक तो यह कि पारम्परिक खादी का मूल्य ८० पैसा प्रति वर्गमीटर बुनाई-सब्सिडी देकर ४.०४ रु० से घटाकर ०३.२४ रु० करनी पड़ी। फिर भी स्टाक जमा होता गया जिसके कारण उत्पादन घटाना पड़ा। नये माडल चरखे की खादी का मूल्य पारम्परिक खादी के मूल्य से सिर्फ ५ प्रतिशत कम रहा। यह अन्तर इतना कम था कि नयी खादी की बिक्री का प्रश्न भी बना ही रहा, और यह स्पष्ट हो गया कि वह भी सब्सिडी के बिना नहीं बिक सकेगी। इसलिए कमीशन ने मान्य किया कि नयी खादी को भी प्रति वर्ग मीटर ५० नये पैसे की सब्सिडी देनी चाहिए।

लेकिन दूसरा प्रश्न यह पैदा हुआ कि पारम्परिक और नयी खादी की प्रतियोगिता में पारम्परिक खादी को क्षति पहुँचेगी। इतने पर भी यह दिखायी देने लगा कि पुरानी खादी भले ही समाप्त हो जाय लेकिन खादी की टोटल बिक्री बढ़ेगी नहीं, और खादी में रोजगार तेजी के साथ घट जायगा। पारम्परिक चरखे में लगी हुई कत्तिनों में से लगभग ८०-९० प्रतिशत बेकार हो जायेंगी। इसी तरह बुनकरों में से लगभग २५ से ४० प्रतिशत ही रोजगार में रह जायेंगे, बाकी बेरोजगार हो जायेंगे। 'न्यू माडल चरखा विशेषज्ञ समिति' को इन सब परिणामों की जानकारी थी, और उसने चेतावनी भी दी थी। बिना सब्सिडी के नहीं चल सकती थी, तो स्पष्ट है कि पुरानी कत्तिनों की रक्षा और नये चरखे-करघे का यांत्रिक विकास साथ-साथ सम्भव नहीं है। इस दृष्टि से खादी के सामने भी वही प्रश्न है जो विकासशील अर्थनीति के दूसरे क्षेत्रों में पैदा हो गया है।

२. पिछले कुछ वर्षों में खादी कमीशन पुरानी खादी और नयी खादी, तथा पुराने चरखे-अम्बर-न्यू माडल, के अन्तर्द्वन्द्व का शिकार रहा है। पुरानी तकनीक और उससे मिलनेवाले रोजगार को कायम रखते हुए नयी तकनीक को थोड़ा-थोड़ा स्वीकार करना व्यावहारिक नहीं है। नयी तकनीक का एक तर्क है; उसके अनुसार अगर हम एक तकनीक को स्वीकार करेंगे तो उसके तर्क को भी स्वीकार करना पड़ेगा। इस सन्दर्भ में 'अन्तरिम तकनीक' (इण्टरमीडियट टेकनालॉजी) का प्रश्न पैदा हुआ है। इस विचार में आग्रह यह है कि तकनीक भी आगे बढ़े और रोजगार भी। इन दोनों चीजों का मेल मिलाया जाए।

टेक्नालॉजी के विकास में श्रम की उत्पादनशीलता (प्रोडक्टिविटी ऑव लेबर) भी बढ़नी चाहिए, यह अनिवार्य तत्व है। उसे छोड़कर हम आर्थिक विकास की कल्पना नहीं कर सकते। इसलिए टेकनालॉजी श्रम को अधिकाधिक उत्पादनशील बनाने की दिशा में बढ़ेगी।

हमारे देश में ऐसे लोगों की संख्या अत्यधिक है जिनके पास 'पूँजी' और उत्पादन के साधन नहीं हैं। यह स्थिति हमारी गरीबी की जड़ में है। इसलिए मुख्य समस्या यह है कि क्या ये साधनहीन लोग उत्पादक बनाये जा सकते हैं ताकि वे राष्ट्र की दौलत बढ़ायें और उसके एक भाग के अधिकारी बनें ?

→लिए ठोस नीतियों का योगदान होना जरूरी है ताकि मनुष्य को ज्यादा काम करने और प्रभावशाली ढंग से काम करने के लिए सम्भावनाएँ और उत्साह पैदा हों। बिना भूमि-सुधार के "हरित क्रान्ति" से ग्रामीण क्षेत्र में विषमता ज्यादा बढ़ ही सकती है।"

भूमि-सुधार के लिए प्रदेशों में कुछ कदम जरूर उठाये गये हैं, मगर उनका अभीष्ट परिणाम नहीं निकला। जमींदारी गयी और कामदारी आ गयी। सहकारी खेती के नाम पर बड़े किसानों द्वारा सहकारी शुरू हो गयी कुल मिलाकर गरीबों का शोषण और दमन। थोड़े से श्रीमान काश्तकारों को छोड़कर अल्प भूमिवालों और भूमिहीनों की मुसीबत घटने के बजाय बढ़ ही रही है। ●

काम और दाम का अधिकार

निजी स्वामित्व (प्राइवेट ओनरशिप) के प्रचलित ढाँचे को कायम रखते हुए रोजगार और धन्धे के दो ही रास्ते हैं : (क) उत्पादन के साधनों का न्यायपूर्ण बँटवारा हो; (ख) साधनों का नहीं, उनसे होनेवाली कमाई का न्यायपूर्ण बँटवारा हो। अगर पहला रास्ता मान्य हो तो खेती की भूमि उन सभी लोगों में बाँटनी होगी जो उस पर आश्रित हैं। दूसरे ऐसी तकनीक (टेक्नालॉजी) अपनानी होगी जो नयी हो और साथ-साथ रोजगार को बढ़ा सके। हमारे देश में भूमि के वितरण की चर्चा पहली पंचवर्षीय योजना से है, लेकिन उसकी क्या सीमाएँ हैं इसे हम पहले देख चुके हैं। भूमि के बँटवारे के साथ खेती की पद्धति का प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। खेती की पद्धति ऐसी होनी ही चाहिए जो किसान के विवेकपूर्ण इस्तेमाल को सम्भव बना सके। एक बात हम पहली ही पंचवर्षीय योजना से कहते आये हैं कि तकनीक उपयुक्त होनी चाहिए ताकि हमारे पारम्परिक उद्योग बने रहें; तकनीक ऐसी न हो जो उन उद्योगों को समाप्त कर दे। अभी तक का जो अनुभव

है उसमें यह शक्य नहीं हुआ है। हम अपने पारम्परिक घरेलू और ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा नहीं दे सके हैं। बढ़ती हुई टेक्नालॉजी उन्हें समाप्त करती चली जा रही है। ऐसी हालत में हमारे सामने दूसरा ही विकल्प रह जाता है कि उत्पादन के साधनों के वितरण का आग्रह न रखा जाय, बल्कि उन साधनों से होनेवाली कमाई के उचित वितरण पर जोर दिया जाय। इसका यह अर्थ है कि जिनके पास साधन नहीं हैं और जो मजदूरी पर निर्भर करते हैं उन्हें निर्धारित न्यूनतम मजदूरी पर रोजगार की गारण्टी दी जाय।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में यह बात साफ-साफ कही गयी थी कि जो भी काम करना चाहेगा उसे उचित काम मिलेगा (गैनफुल इम्प्लायमेण्ट फॉर एवरी वन टु सीक्स वर्क)। इसके लिए बड़े पैमाने पर 'रूरल वर्क्स' की कल्पना की गयी, और श्रमिकों की सहकारी-समितियों की बात कही गयी। ऐसा लगा जैसे योजनाकारों के मन में कोई देशव्यापी विकास-सेवा बनाने की बात थी। दूसरी योजना में अधिक चर्चा पारम्परिक उद्योगों में 'सेल्फ-इम्प्लायमेण्ट' की थी, जब कि तीसरी योजना में 'वेज इम्प्लायमेण्ट' की हुई। इस दृष्टि से तुरन्त ३४ पाइलट प्रोजेक्ट शुरू किये गये और कहा गया कि तीसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में २५ लाख लोगों को रूरल वर्क्स में लगाया जा सकेगा। इसके लिए डेढ़ अरब रुपया भी रखा गया। लेकिन कुछ ऐसा हुआ कि सिर्फ १९ करोड़ रुपये खर्च किये जा सके। तीसरी योजना के अन्तिम वर्ष में सिर्फ ८ करोड़ खर्च हुआ, और ४ लाख लोगों को साल में १०० दिन के हिसाब से काम मिला।

चौथी पंचवर्षीय योजना में इस काम के लिए २५ करोड़ रुपया रखा गया, और नीति यही रही कि अधिक-से-अधिक गांवों में निर्माण की छोटी-छोटी योजनाएँ ली जायें। इस तरह की एक बृहद् योजना महाराष्ट्र सरकार ने १९६९ में 'पाइलट इम्प्लायमेण्ट गारण्टी स्कीम' के नाम से ५ ब्लाकों में शुरू की। लक्ष्य यह था कि खेतिहर मजदूरों को, जब उन्हें खेती में काम न हो, 'रूरल वर्क्स' और कताई में काम दिया जाय, तथा ग्रामपंचायतें काम की योजना बनाने और उसे लागू करने में आगे रहें। इसी तरह की योजना गुजरात में 'राइट टु वर्क स्कीम' के नाम से बनी है।

चौथी पंचवर्षीय योजना में देश के विभिन्न भागों में ४० प्रोजेक्ट लेने की बात थी जिनमें अत्यन्त छोटे किसानों, जो वस्तुतः भूमिहीनों की कोटि में हैं, मजदूरों, भूमिहीनों, ग्रामीण दस्तकारों को धन्धा और रोजगार देने की योजना थी। लेकिन पूरी योजना बाजार-आधारित थी ताकि मुर्गीपालन और डेयरी जैसे धन्धे भी चल सकें तथा मार्केटिंग और प्रशोधन उद्योगों को बढ़ावा मिल सके, विशेष रूप से ऐसे उद्योगों को जो सहकारी समितियों द्वारा चलाये जा सकें। यह मानना कठिन है कि कहाँ तक बाजार को सामने रखकर रोजगार दिया जा सकता है, लेकिन इसे छोड़ भी दें तो चौथी पंचवर्षीय योजना में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे यह मालूम हो कि सरकार ऐसे हर आदमी को काम देने के लिए तैयार है जो काम करना चाहे। रूरल डेवलपमेण्ट की प्रवृत्तियों से जितना लाभ जितने लोगों को मिल सकेगा, मिलेगा। लेकिन चौथी पंचवर्षीय योजना में रोजगार के लिए कोई विशेष कार्यक्रम चलाने की जरूरत छोड़ दी गयी है। सिर्फ देश के विकास-कार्य को तेजी के साथ आगे बढ़ाना काफी है, ऐसा माना गया है। साथ ही यह भी मान लिया गया है कि देश में कितनी बेरोजगारी और अर्ध-बेरोजगारी है यह जान सकना भी कठिन है। —राममूर्ति

(पृष्ठ ५०६ का शेष)

स्थापना भू-स्वामियों से बीघा में कट्ठा मांगने मात्र से नहीं हो सकेगी, बल्कि ग्रामसभा के नेतृत्व में केन्द्रीय-प्रान्तीय सरकारी व्यवस्था में बाहरी शोषण तथा गाँव के अन्दर भूस्वामियों के शोषण के विरुद्ध अहिंसक संघर्ष अर्थात् नैतिक दबाव (जिसमें अन्तिम हथियार असहयोग तथा सत्याग्रह का शामिल है) द्वारा ही सम्भव हो सकती है। इसी प्रणाली द्वारा समूचे ग्राम की एकता भी कायम की जा सकती है जिसे सरकारी पंचायत ने अस्तव्यस्त कर रखा है।

मुझे गत फरवरी के महीने में सिंहेश्वर, मरौना तथा महिषी प्रखण्डों में अपनी यात्रा और वर्तमान अभियान के दौरान यह विश्वास हो चला है कि बाहरी कार्यकर्ताओं द्वारा बीघा-कट्ठा दान के आधार (७५ प्रतिशत परिवार तथा ५० प्रतिशत भूमि-दान) पर कानूनी ग्रामसभा के निर्माण में सदियाँ लग जायेंगी और फिर भी ग्रामस्वराज्य की स्थापना एक सुहाना सपना ही बना रहेगा। सीमान्त गांधी बादशाह खाँ ग्राम-दान के बारे में वैसा ही उद्गार व्यक्त कर चुके हैं। कानूनी ग्रामसभा का वही दृश्य होगा जो कानूनी पंचायतीराज का हो रहा है। हम सभी जानते ही हैं कि बिहार के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री विनोदानन्द झा द्वारा बीघा-कट्ठा को कानूनी रूप देने का क्या परिणाम निकला। वही नतीजा कानूनी ग्रामसभा से निकलेगा। हमें कानूनी चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि सर्वसम्मत ग्रामसभा द्वारा ग्रामीण जनता का अभिक्रम जगाना होगा। वही ग्रामसभा चाहे तो बीघा में कट्ठा निकाले, ४ बीघे में एक कट्ठा निकाले, या फिर किसी अन्य ढंग से ग्राम का शोषण क्षीण करे। हमें अपनी ओर से ग्रामसभा पर कोई शर्तें थोपनी नहीं चाहिए। अभी तक हम ग्रामवासियों पर अपनी शर्तें ही थोपते आये हैं जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीण जनता विशेषकर 'अन्त्यजन' का अभिक्रम नहीं जगा। अब हमें सर्वानुमति से ग्रामसभा के निर्माण में ग्रामीण जनता की सहायता करनी चाहिए। ऐसी ग्रामसभा ही ग्रामस्वराज्य का निर्माण कर सकती है। —जगतराम साहनी

शहरी सम्पत्ति की सीमा : २

● गौरीशंकर दुबे

१—सर्वप्रथम, नगर में पायी जानेवाली समस्त प्रकार की भूमि में से केवल गरीबों की भूमि को छोड़कर सामन्तों और व्यापारियों जैसे निहित स्वार्थवालों के हाथ से निकालकर, जनहित में तुरन्त वितरित कर देना है। उनके हाथों से ऐसी भूमि निकालते समय यह अवश्य ध्यान देना है कि यदि वे आवासहीन हैं तो उनके आवासगृह के लिए परिवार के सदस्यों के मुताबिक लगभग २ से २½ बिस्वा तक की जमीन की एक निश्चित इकाई छोड़ देनी है। बाकी भूमि को ऐसे आवासहीन गरीब वर्ग में वितरित करना है, जो आयकर देने की सीमा से बाहर हैं। इस प्राथमिकता के आधार पर भूमि-वितरण से एक निश्चित अवधि में आवासहीन के लिए आवास के एक लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है।

२—परिवार को इकाई मानकर उसकी आवश्यकतानुसार आवास के अतिरिक्त सभी प्रकार के आवसीयगृहों को उसमें निवास करनेवाले नागरिकों को उचित मुआवजा देने का प्राविधान करते समय यह भी विधान हो कि उसमें जो सर्वाधिक गरीब किरायेदार हों, उसे मकान आवंटित करने में प्राथमिकता दी जाय। वितरण के समय यह भी ध्यान रखना है कि उस व्यक्ति के पास नगर में कोई अपनी भूमि या भवन न हो। इस प्रकार के प्राविधान से आवास-समस्या का एक स्थायी हल निकल सकने की सम्भावना प्रकट होती है।

३—प्राय. सभी बड़े नगरों में कुछ एकाधिकारी परिवारों के व्यापारिक फर्म और उद्योग होते हैं। इस प्रकार के फर्मों और उद्योगों के लिए एक राष्ट्रीय नीति अपनानी होगी तथा ऐसे संस्थानों का राष्ट्रीयकरण करके सामाजीकरण कर देना है। लेकिन इस प्रकार के संस्थानों की कार्यशील पूँजी तीन लाख से पाँच लाख के बीच में है तो उसका केवल सामाजीकरण करना है और उसके श्रमिकों को उस फर्म या उद्योग का अंशधारी बना देना है। यदि फर्म या उद्योग तीन लाख से कम का हो और यदि उसमें श्रमिक कार्यरत हो तो ऐसे श्रमिकों की नियुक्ति, वेतन-स्तर, कार्यावधि, महँगाई भत्ता, भविष्य-निधि, बीमा और अवकाश की व्यवस्था के अतिरिक्त अन्य प्रकार की आवश्यक एवं कल्याणकारी सुविधाओं का प्राविधान कर, तुरन्त लागू करने का विकल्प हो। उनके कार्य के घण्टे, जो फर्म खुलने से लेकर बन्द होने तक हैं, उसे कम कर अन्य सेवाओं के बराबर किया जाय या उनके अतिरिक्त कार्य-घण्टे के बदले, अतिरिक्त भत्ता दिया जाय। कर्मचारियों की सेवा-पुस्तिका हो, जिसमें उनकी सेवाओं का स्पष्ट उल्लेख हो। उनका वेतन-स्तर महँगाई-स्तर को ध्यान में रखकर निश्चित किया जाय तथा महँगाई बढ़ने के साथ-साथ मूल्य-सूचकांक के अनुसार उनके महँगाई भत्ते में वृद्धि का नियमित प्राविधान हो।

४—धर्मार्थ संस्थाओं के लिए भवन और भूमि की एक निश्चित इकाई उसके कार्य-क्षेत्र और प्रकृति को देखते हुए, उनके दैनिक उपयोग के लिए जो आवश्यक हो, को छोड़कर अन्य को हस्तांतरित कर देना है। नगर में कुछ निजी न्यास भी होते हैं, जिन पर न्यासी का अधिकार होता है और यह भी सम्भव है कि यदि न्यास के पास अधिक भवन हैं तो न्यासी के अतिरिक्त उन भवनों पर दूसरे लोगों का अधिकार होता है जो उसमें रहते हैं, लेकिन न्यासी ही सारी सम्पत्ति की देख-भाल करता है। इस प्रकार के न्यास, जिसके अन्तर्गत कई मकान होते हैं, न्यासी जिस मकान में स्वयं रहता है, उसको छोड़कर, बाकी अन्य मकानों को जो उसमें रहते हैं, को हस्तांतरित करने का प्राविधान करना है। यदि इस प्रकार के न्यास का कोई सामाजिक महत्त्व न हो तो न्यासी की राय से न्यास को समाप्त करने का प्राविधान होना आवश्यक है।

५—नगर क्षेत्र के अन्तर्गत आनेवाले अन्य कृषि-स्रोतों को उन्हीं के हाथों में तब तक बने रहने देना है, जब तक भूमि कृषि-कार्यों में प्रयुक्त हो रही हो। लेकिन ज्योंही उसका उपयोग अन्य कामों में होना प्रारम्भ हो जाय, त्योंही उसे अपने हाथ में ले लेना है।

६—पड़ोसी देश लंका में काला धन निकालने के लिए एक सफल प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार का प्रयोग अपने देश में भी काले धन को बाहर लाने के लिए हो। तभी हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ कर, बाजार के स्थिर और अवैध व्यापार को नियन्त्रित कर सकते हैं। इस पर नियन्त्रण हो जाने से कुछ हद तक सम्पत्ति के केन्द्रीकरण को समाप्त करने में भी सहायता मिल सकती है और राष्ट्र के उत्थान के लिए अतुल सम्पत्ति की सम्भावना भी प्रकट हो सकती है।

७—आभूषणों का एक निश्चित सीमांकन करके अतिरिक्त पर टैक्स का प्राविधान कर दिया जाय। आभूषणों के अतिरिक्त अन्य सम्पदा का पता आसानी से लगाया जा सकता है और इस प्रकार की सारी सम्पत्ति का उपयोग करने से ही देश की सम्पदा को बढ़ाया जा सकता है।

शहरी सम्पत्ति से देश की पूरी अर्थ-व्यवस्था तो प्रभावित है ही, लेकिन इसका प्रत्यक्ष प्रभाव कृषि-जगत पर भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। थोक मूल्य सूचकांक को देखने से ज्ञात होता है कि सन् १९६७-६८ में खाद्यान्नों का भारांक सबसे ऊँचा २२८.४ रहा और उसके बाद क्रमश: भारांक गिरता ही गया। लेकिन औद्योगिक उत्पादनों का भारांक बराबर

बढ़ता हुआ पाया गया है। जबकि कृषि-क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन निदेश (इन्पुट) का महत्त्व बढ़ता ही जा रहा है और उस पर होनेवाले व्यय की धनराशि में भी बराबर वृद्धि हो रही है फिर भी उत्पादन-मूल्यों में गिरावट आ रही है। इस क्षेत्र में जनवरी १९७० से दिसम्बर १९७० के मूल्य-सूचकांक से प्रकट होता है कि खाद्यान्नों के मूल्य-सूचकांक में भारी उच्चयन हुआ है और विभिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन-अवधि में मूल्य गिर गया है और उत्पादन के पूर्व के माहों में उसका मूल्य बहुत ऊँचा हो गया है।‡ इस उच्चयन से उत्पादक किसान तो उसके पूरे लाभ से वंचित होते हैं, उपभोक्ता भी प्रभावित होता है और इन सभी उच्चयन के पीछे शहरी सम्पत्ति का हाथ है, जो अपसंचय को प्रश्रय देती है और किसानों को उसके लाभ से विमुख करती है।

नगर में रहनेवाले नागरिकों में से अधिकांश ऐसे भी पाये जायेंगे जिनके पास एक से अधिक प्रकार की सम्पत्ति है। ऐसी अवस्था में, ऐसे परिवारों की सभी सम्पत्तियों का मूल्यांकन कर परिवार को इकाई मानकर सभी प्रकार की सम्पत्ति की सीमा नियत करने का प्राविधान करना होगा, तभी इसमें एकरूपता आ सकती है और समानता स्थापित हो सकती है। यह भी प्रश्न उठ सकता है कि बड़े और छोटे शहरों में सम्पत्ति की सीमा का सम्बन्ध क्या हो ? ऐसी दशा में कानून में उस प्रकार के लोच का प्राविधान हो।

शहरी सम्पत्ति की सीमा क्या हो ? यह विवाद का विषय है और हो भी सकता है। यद्यपि असमानता का स्थायी हल मानवकृत सम्पत्ति के अधिकार के उन्मूलन में निहित है, लेकिन वर्तमान परिवेश में न तो जनता ही इसके लिए तैयार है और न आज की सरकार ही। इसीलिए इसके सीमांकन का प्रश्न उठता है। लेकिन शहरी सम्पत्ति के सीमांकन कानून का प्राविधान होने पर भी नौकर-शाही के मिलकर अनेकों बचाव के उपायों को भी इजारेदारी शुरू हो जायेगी और सीमांकन की पवित्रता को समाप्त कर देगी। उसका अन्तिम और पूर्ण एक मात्र उपाय यही है कि संविधान से मानव-कृत सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त कर रहन-सहन के स्तर का एक निम्नतम आधार बनाकर, कार्य की अनिवार्यता का प्राविधान संविधान में कर दिया जाय। इस प्रकार सम्पत्ति के रहते जितनी भी बुराइयाँ हैं, सब एकबारगी समाप्त हो जायेंगी। आखिर सम्पत्ति के अधिकार से तात्पर्य तो यही है कि वर्तमान और भविष्य की सुविधाओं की गारण्टी। यदि राज्य की तरफ से इस तरह की गारण्टी मिल जाय तो लोग सम्पत्ति ही रखना क्यों पसन्द करेंगे ?

जोत-भूमि-सीमा के नवीनतम विधानों को लें, जो पश्चिमी बंगाल और केरल के लिए बना है, तो लगता है कि भूमि की जोत-सीमा जो निश्चित की गयी है, उसका मूल्य किसी भी हालत में दो लाख रुपये से अधिक नहीं है। ऐसी दशा में शहरी सम्पत्ति की सीमा भी किसी भी हालत में उससे अधिक नहीं हो सकती और न अधिक होने का कोई औचित्य ही है। उस सीमा के सम्बन्ध में पिछले संसद के अधिवेशन में चर्चा हुई थी, जिसमें सम्पत्ति की सीमा तीन लाख से पाँच लाख के बीच में उभरकर प्रकट हुई थी, लेकिन उस समय के परिवेश में और वर्तमान परिवेश में बहुत अन्तर आ गया है तथा इस बदले हुए परिवेश में सभी शहरी सम्पत्ति जो एक परिवार के पास है, किसी भी हालत में दो लाख से अधिक रखने का औचित्य नहीं है। इस सीमा द्वारा ग्रामीण एवं शहरी दोनों समाज में समानता और एकरूपता कायम की जा सकती है।

पूरे देश में यदि सभी प्रकार की सम्पत्तियों का सीमांकन निश्चित कर, उसके लिए कानून का आवश्यक प्राविधान कर, अतिरिक्त सम्पत्ति को अधिकार में कर लिया जाता है, तब न एक वर्ग की पूँजी दूसरे वर्ग को प्रभावित कर पायेगी और न एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में विनियोजित और नियंत्रित करने का भय रहेगा। क्योंकि ऐसी दशा में जो पूँजी देश में होगी, उसका उद्देश्य अधिक लाभ कमाने का न होकर स्वस्थ समाज के निर्माण का होगा। सीमा बाँधने के बाद अतिरिक्त सम्पत्ति देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में लगेगी, न कि उसको वितरित कर दिया जायेगा। यह ठीक है कि कुछ सम्पत्ति का स्वरूप ऐसा है जिसके व्यापक उपयोग के लिए तुरन्त वितरण करना आवश्यक होगा, लेकिन कुछ ऐसी भी सम्पत्ति है, जिसका उपयोग राष्ट्रीय उत्पादन के बढ़ाने में किया जा सकता है।

कुछ लोगों की धारणा है कि शहरी सम्पत्ति के सीमांकन से न केवल लोगों का जीवन-स्तर निम्न होगा, बल्कि विदेशों की तुलना में यहाँ का जीवन-स्तर बहुत गिर जायेगा। लेकिन यह भ्रम मात्र है। अतिरिक्त सम्पत्ति को लेने से न तो जीवन-स्तर निम्न होगा और न विदेशों की तुलना में निम्न-स्तर। नैतिक स्तर तो बहुत ही निम्न है, क्योंकि ऐसे लोग अवैधानिक और अनैतिक धन्धे से ही अपनी सम्पत्ति को बढ़ाने के लिए चल पड़े हैं, उसके बन्द हो जाने की पूरी सम्भावना प्रकट होती है। उससे न केवल उनका भला होगा, बल्कि पूरे समाज का भला होगा और अवैधानिक एवं अनैतिक धन्धों को बढ़ाने के लिए जो राज्य की तरफ से प्रयत्न चल रहे हैं, उसमें खर्च होनेवाली धनराशि को देश के अन्य कार्यों में लगाया जा सकता है तथा जो सम्पत्ति मिलेगी उससे पूरे देश का स्तर बढ़ेगा और जब पूरे देश का स्तर ऊँचा उठेगा तो उनका भी स्तर ऊँचा होगा। सीमांकन के बाद देश को एक एकमुश्त अतिरिक्त पूँजी आर्थिक विकास के लिए उपलब्ध हो जायेगी और इस पूँजी के बिना अवरुद्ध विकास को करना सम्भव न होगा।

(समाप्त)

---

‡ रिजर्व बैंक ऑव इण्डिया बुलेटिन, १९७१ जनवरी, फरवरी, मार्च, अप्रैल, मई, जून, पृष्ठ १४१, २९५, ५०३, ६५५, ७८१ और ९४३।

विश्व-नागरिक : सरला बहन

सुश्री सरला बहन

[सर्वोदय समाज सम्मेलन का उद्घाटन सुश्री सरला बहन करेंगी, इस अवसर पर उनका जीवन-परिचय हम यहाँ दे रहे हैं। सं०]

'यह सारा विश्व हमारा परिवार है', इस विचार ने संसार के महापुरुषों को हमेशा से प्रेरणा दी है। किन्तु इसे अपने जीवन में विरले मनुष्य ही उतार पाये हैं। श्रद्धेय सरला बहन उनमें से एक हैं। असल में राष्ट्र-धर्म, जाति आदि का हमारे जीवन में जब तक असर रहेगा तब तक हम विश्व परिवार की बात केवल कह सकते हैं, उसपर अमल नहीं कर सकते। ऐसा करने के लिए अत्यन्त ऊँचे साहस और तप की आवश्यकता होती है। सरला बहन का जन्म ५ अप्रैल १९०० को इंग्लैण्ड में हुआ था। उनके पिता जन्म से स्विस थे, किन्तु वे इंग्लैण्ड में रहते थे और जब १९१४ का प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ा तो कल तक के घनिष्ठ मित्र और रिश्तेदार जर्मनी और ब्रिटेन केवल शासकीय घोषणाओं के कारण रातों-रात दुश्मन बन गये। सरला बहन के पिताजी को केवल जर्मन पूर्वजों से पैदा होने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया और परिवार के अन्य लोगों को समाज की उपेक्षा और तिरस्कार का शिकार होना पड़ा। ऐसी ही घटनाएँ आज भी संसार में होती रहती हैं, किन्तु क्या यह सभ्यता है? ऐसा क्यों होना चाहिए? मनुष्य इस प्रकार से शासकों के हाथ की कठपुतली है कि वे उसे जब चाहें मित्र या शत्रु बना दें? ये विचार सरला बहन के मन को उनके बचपन के दिनों से, जब उनकी आयु १३ साल की थी, उद्वेलित किये रहते थे। और यह संयोग ही था कि गांधीजी को इन्हीं विचारों के कारण शासकों का कोपभाजन बनना पड़ा था। उनका नाम सुदूर इंग्लैण्ड तक भी पहुँच चुका था और सरला बहन के मन में उनसे मिलने और उनके साथ काम करने की बात सहज ही पैदा हुई थी।

वे ३२ साल की उम्र में सन् १९३२ में भारत चली आयीं। तब से भारत ही उनका घर है और उन्होंने भारत की जो सेवा की है वह भारत में जन्मे उत्तम-से-उत्तम देशभक्त के लिए भी दुर्लभ है। सरला बहन की संगति से भारत का जीवन समृद्ध और सभ्य हुआ है और असल में संसार में भावी समाज को बनानेवाले लोगों में से, जिन्होंने भारत को अपनी प्रयोग-भूमि बनाया, सरला बहन उनमें से एक हैं और इससे भारत का गौरव बढ़ा है। आज सरला बहन हमारे सर्वोदय परिवार के लिए 'माँ' के समान हैं जिसके कारण हमारा यह परिवार निश्चय ही सम्पन्न हुआ है।

सरला बहन मूलतः शिक्षिका हैं और भारत में आकर उदयपुर में उन्होंने एक शिक्षिका के रूप में ही काम आरम्भ किया। किन्तु उन्हें शीघ्र ही अनुभव हो गया कि जिस प्रकार की शिक्षा की वे कल्पना करती हैं उसके लिए उन्हें स्वयं ही काम करना होगा। इस बीच वे गांधीजी से मिल तो नहीं सकीं किन्तु उनकी गतिविधियों को और भी अधिक निकट से देखने समझने लगीं और अन्त में सन् १९३५ में वे सेवाग्राम आ गयीं। वहाँ वे गांधीजी द्वारा स्थापित 'महिला आश्रम' के काम के साथ जुड़ गयीं और सन् १९३७ में, जब गांधीजी ने नयी तालीम का विचार और योजना देश को दी, तब से वे आर्यनायकम् दम्पती के साथ उस काम में लग गयीं। यह उनके अनुकूल काम था और १९४१ तक, जब कि स्वतन्त्रता आन्दोलन की अनिवार्यताओं ने गांधीजी समेत सभी कार्यकर्ताओं को एक बार पुनः ब्रिटिश सरकार के साथ सीधे आमने-सामने की स्थिति में नहीं डाल दिया, वे इसी काम में लगी रहीं। सन् १९४१ में वे आचार्य कृपलानी के आमन्त्रण पर, जो गांधी-आश्रमों के माध्यम से काम कर रहे थे, वे चनौदा (अल्मोड़ा) आ गयीं। वहाँ भी वे शीघ्र ही स्वतन्त्रता-संग्राम में कूद गयीं। सन् १९४२ में वे अल्मोड़ा की सबसे खतरनाक व्यक्ति के नाते ब्रिटिश जेल भेजी गयीं। उनका अपराध यह था कि वे स्वतन्त्रता के लिए लड़नेवाले लोगों और उनके परिवारों की सहायता करती थीं। बाद को सन् १९४६ में उन्होंने 'कौसानी' में, जहाँ गांधीजी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अनासक्तियोग' की भूमिका लिखी थी, महिलाओं की शिक्षा और सुधार के लिए 'लक्ष्मी आश्रम' की स्थापना की और लगभग २२ साल तक मध्य हिमालय क्षेत्र में क्रान्ति और रचनात्मक कार्य की साकार प्रतिमा के रूप में काम करती रहीं। श्री धीरेन्द्र भाई के शब्दों में 'भारत के प्राचीन ऋषि तप के लिए हिमालय जाते थे किन्तु सरला बहन का यह तप मनुष्य-प्राप्ति के लिए था।'

आज मध्य हिमालय क्षेत्र में सर्वोदय विचार और कार्य के नाम से जो कुछ भी है उसके पीछे किसी न किसी रूप में

सरला बहन की प्रेरणा रही है। उनकी सैकड़ों शिष्याएँ आज पहाड़ के गाँव-गाँव में फैली हैं और समाज-सेवा का अच्छा काम कर रही हैं। स्त्री-जागरण का जितना महत्त्वपूर्ण काम सरला बहन ने किया है उसका सही आकलन अभी आनेवाले सालों में ही होगा और लोग तब अनुभव करेंगे कि उनके कारण ही पहाड़ी क्षेत्रों में कैसा अद्भुत काम हो सका है। खेती, पशु-पालन और जंगल के सभी कामों में वे अपनी छात्राओं के साथ काम करती थीं एवं अपनी पीठ पर अपना बिस्तर और अन्य छोटा-मोटा सामान लेकर पहाड़ पर के गाँव-गाँव में वे घूमी हैं। पिछले समयों में पहाड़ों में शराबबन्दी के आन्दोलन में महिलाओं की भारी तपस्या ही काम कर रही थी। उन्होंने अपनी छात्राओं को और उनके माध्यम से समाज को सेवा, तप, निर्भीकता, पवित्रता और ब्रह्मचर्य का जो पाठ सिखाया है वह अपने आपमें बेजोड़ है।

जब विनोबा का भूदान-ग्रामदान आन्दोलन शुरू हुआ तो सरला बहन अपने कमजोर स्वास्थ्य के बावजूद उसमें लग गयी और उनके ही कारण से वहाँ पर ग्रामस्वराज्य का काम आरम्भ हो सका है। आज भी वे देश के अनेक भागों में घूम-घूमकर ग्रामस्वराज्य की अलख जगा रही हैं और अपनी ७२ साल की उम्र में भी उनका वही कठोर तप चालू है। मुझे सरला बहन के साथ सालों तक निकट से काम करने का अवसर रहा है और मैं उनके इस कठोर तप का साक्षी हूँ। मुझे उनका एक बार का वह कथन बार-बार स्मरण हो जाता है जब हम दोनों सन् १९५९ में देवप्रयाग से लगभग ६ मील ऊँचाई पर 'महड़' नामक गाँव में भूदान यात्रा पर जा रहे थे, संयोग से उस दिन प्रातःकाल का नाश्ता नहीं मिला था और वे गर्मियों के दिन थे। दिन के लगभग ११ बजे की कड़ी धूप, प्यास और थकान के कारण हमलोग एक पेड़ की छाया में सुस्ताने के लिए बैठ गये। थोड़ी देर में सरला बहन बोलीं : 'कामेश्वर भाई, इस देश का उद्धार कैसे होगा ?' मेरे प्रश्न करने पर फिर बोलीं—'मेरी उम्र के व्यक्ति को यहाँ आज इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है और इस देश का नौजवान क्या कर रहा है ? क्या मेरी उम्र अब इस तरह का कष्ट उठाने लायक है ?' उस समय उनकी उम्र ५५-५६ साल की थी और आज तो वे ७२ साल की उम्र में भी उसी तरह के कष्ट उठा रही हैं, उनका यह तप सो आज भी जारी है किसी व्यक्तिगत साधना या प्राप्ति के लिए नहीं, बल्कि मनुष्य के संस्कार के लिए, समाज के सुधार के लिए। सरला बहन की वह आवाज आज भी कानों में गूँजती है और मन में रह रहकर सवाल उठता है कि सचमुच हमारे देश का नौजवान कहाँ है ? वह तो लगता है 'कैरिज्म' में फँस गया है और बिना रास्ता चले ही मंजिल पर पहुँच जाना चाहता है। क्या इससे बड़ा संकट किसी देश पर आ सकता है ?

सरला बहन प्रचार से हमेशा दूर रही हैं और असल में उन्हें अपने बारे में किसी तरह की प्रशंसात्मक चर्चा पसन्द नहीं है। उन्होंने स्वयं कहा है, 'आज कल हर एक आदमी समझता है कि दुनिया को सुधारने का वही काम महत्त्वपूर्ण है जो वह कर रहा है। वह मानता है कि उसके कहे पर चलने से ही समस्याएँ सुलझ सकती हैं, अन्यथा नहीं। लेकिन यह भी मैं देख रही हूँ कि इस मनोवृत्ति के कारण अहंताओं का संघर्ष बढ़ रहा है और सृजन-शक्ति नष्ट हो रही है, बल्कि किया-कराया सब नष्ट हो रहा है।' इस प्रकार वे जानबूझ कर मौन साधना में रह रही हैं। किन्तु समाज को इस प्रकाश से लाभ लेना चाहिए। यह सन्तोष की बात है कि नकोदर में होनेवाले सर्वोदय सम्मेलन का उद्घाटन सरला बहन करेंगी। अतः यह स्वाभाविक ही है कि इस वक्त हम सरला बहन के गुणों का स्मरण करें।

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

बुलन्दशहर में शराबबन्दी का प्रयास

बुलन्दशहर जिले में जन-जागृति और लोक-अभिक्रम जगाने की दृष्टि से शराबबन्दी आन्दोलन को माध्यम माना है। इस समस्या पर सब पार्टी तथा सभी धार्मिक और सामाजिक संगठन एकमत हैं।

नवम्बर १९७१ से मार्च १९७२ तक जिले में सघन व्यापक जन-सम्पर्क करके जन-संगठन किया गया। १ अप्रैल १९७२ से शराब के ठेकों, दूकानों के सामने सत्याग्रह की घोषणा की गयी। १ अप्रैल को शराब की ६ दूकानों पर धरना दिया गया। गुलावटी में हवन-कीर्तन और नमाज के वातावरण में नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने शराब पीनेवालों को समझाया तथा उनको पीने से रोका। भवनबहादुरनगर में शराबबन्दी के लिए १ अप्रैल को बाजार तथा अन्य कामों की पूरी हड़ताल रखकर शराब की दूकानों के सामने हवन, भजन व आमसभा के शुभ वातावरण से धरना दिया गया। स्याना में शराब की दूकान के सामने 'पिकेटिंग' किया गया। बुलन्दशहर में शराब के ठीके पर पीनेवालों को रोका गया तो ठीकेदारों ने सत्याग्रहियों के साथ झगड़ा किया जिससे वातावरण काफी गरम हो गया और पुलिस घटना-स्थल पर आ गयी। शिकारपुर में कीर्तन, प्रार्थना और जुलूस के साथ दूकान के सामने धरना दिया गया। शराबी गुण्डों ने कुछ उपद्रव किये। लेकिन स्थानीय व्यक्तियों के सामने उनकी कुछ भी न चली।

२ अप्रैल से शिकारपुर तथा बुलन्दशहर में शराबबन्दी सत्याग्रह बराबर चालू है। सभी धर्मों और राजनैतिक पार्टियों के प्रतिनिधियों को लेकर एक समिति बनी है जिसके अध्यक्ष महाशय शिवलाल तथा मंत्री डा० हरिद्वार पाण्डेय हैं। शहर में तीन शराब की दूकानें हैं। इस समय छापामार-पद्धति से तीनों दूकानों पर पिकेटिंग चल रही है। कब, किस समय, कहाँ, कितनी देर के लिए सत्याग्रही पहुँच जायेंगे यह पहले से किसी को पता नहीं रहता है। अतः शराब के ठीकेदारों की बिक्री गैर-कानूनी ढंग से जितनी होती थी वह एकदम रुक गयी है।

शराब पीनेवालों की संख्या भी घट रही है और न पीने का संकल्प लोग तेजी से ले रहे हैं। शहर से स्वयं प्रेरणा लेकर नौजवान तथा महिलाओं का आना शुरू हो रहा है। सरकारी कर्मचारियों को भी सोचना पड़ रहा है।

इस बीच शराब के ठीकेदारों ने सत्याग्रहियों को काफी परेशान किया। बाहर से किराये के गुण्डे बुलाकर गाली-गलौज तो साधारण बात थी। उन्होंने तीन बार सत्याग्रहियों के साथ मार-पीट भी कर डाली। ऐसे अवसरों पर एस० पी० तथा सिटी मजिस्ट्रेट आदि ने गुण्डों के खिलाफ काफी कड़ी कार्रवाई की है। शहर के नागरिकों की कई बैठकें हुई हैं। शराबबन्दी सत्याग्रह के पक्ष में शहर के नागरिकों ने १६ अप्रैल को एक जुलूस भी निकाला। मुहल्लों में प्रभातफेरियाँ, गोष्ठियाँ बराबर हो रही हैं।

हर संगठन ने अपने कार्यकर्ताओं को लेकर शराब की दूकानों पर सत्याग्रह का कार्य शुरू किया है। बुराई के खिलाफ खड़े होने की हिम्मत जनता में बढ़ रही है। नये-नये युवक सामने आ रहे हैं।

अब २८ अप्रैल को शराब के सरकारी गोदाम के सामने (वकील, व्यापारी, शिक्षक, नागरिक तथा सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक संगठनों के व्यक्तियों ने) शराब के खिलाफ प्रदर्शन करने का तय किया है।

इस प्रकार धीरे-धीरे दृढ़तापूर्वक नागरिक बुराइयों के खिलाफ तथा अच्छाइयों की स्थापना करने के लिए आगे आ रहे हैं।

शराबबन्दी का यह आन्दोलन मुख्य रूप से नागरिक-शक्ति को खड़ा करने का है। मनभेदों के रहते हुए भी एकमन से समाज-हित की दृष्टि से सोचने और करने की परेड चल रही है, ऐसा हम मानते हैं।

आज के युग की सबसे बड़ी समस्या मतभेदों की नहीं, मनभेदों की है। हमारे सारे कार्यक्रमों का लक्ष्य-बिन्दु सामाजिक मन-निर्माण करने का है। सामाजिक मन-निर्माण करने के लिए बुराइयों से लड़ने की परेड स्थानीय परिस्थितियों के हिसाब से सतत होते रहने से सामाजिक मन बनेगा तथा व्यक्तियों का मनोबल ऊँचा उठेगा। ऊँचे मनोबलवाला व्यक्ति सभी समस्याओं के सामने दृढ़ता से खड़ा रहकर उनका हल निकाल ही लेगा। अतः हमारा हर कदम : →
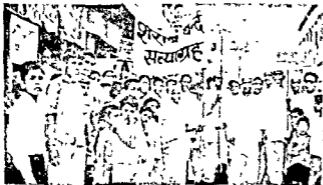
बुलन्दशहर : शराबबन्दी का जुलूस

उत्तर प्रदेश में तरुण-शान्तिसेना के छः माह

अगस्त में 'शिक्षण में क्रान्ति अभियान' के सफल संयोजन के बाद सितम्बर में प्रादेशिक तरुण-शान्तिसेना शिविर एवं सम्मेलन के आयोजन में हमारी शक्ति लगी। सम्मेलन में प्रादेशिक तरुण-शान्तिसेना की एक तदर्थ समिति गठित की गयी। श्री विनयभाई इसके अध्यक्ष तथा संतोष भारतीय संयोजक बनाये गये। बिहार और बांगला देश के कार्यक्रमों में लग जाने के कारण संतोष भारतीय प्रदेश के संगठन में समय नहीं दे सके। हमारे दूसरे पूरा समय देनेवाले तरुण श्री सुरेश कुमार ने भी बांगला देश के विस्थापित शिविरों में बड़ी लगन और निष्ठा से काम किया। विनय भाई ने श्री शिव सहाय मिश्र और श्री देवप्रिय के सहयोग से प्रदेश के कार्यालय का संचालन करते हुए प्रदेश के तरुण-शान्तिसैनिकों से सम्पर्क रखा और अनेक जिलों में प्रवास कार्यक्रम के द्वारा नये केन्द्रों की स्थापना करने तथा पुराने केन्द्रों से सम्पर्क करके उन्हें सक्रिय बनाने का प्रयास किया। पश्चिमी जिले के एक दौरे में उन्हें श्री अमरनाथ भाई का भी साथ मिला। पूर्वी क्षेत्र में आचार्यकुल के श्री रामवचन सिंह का सहयोग उल्लेखनीय है।

इस समय प्रदेश के २७ जिलों में कुल ३६२ सदस्य हैं, १७ जिलों में संयोजकों का मनोनयन या सर्वसम्मत निर्वाचन हो चुका है। अधिकांश सदस्य छात्र और छात्राएँ अधिकतर केन्द्र शिक्षण-संस्थाओं में हैं, देवरिया, कानपुर, फर्रुखाबाद, अलीगढ़, आगरा, इलाहाबाद, बलिया और मथुरा आदि जिले विशेष सक्रिय रहे।

प्रदेश के तरुण-शान्तिसैनिकों ने बांगला देश के समर्थन और सहायता में विशेष रुचि और सक्रियता का परिचय दिया। प्रदेश में बांगला देश के तरुणों की विश्व-विवेक जागरण यात्रा का संयोजन प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल के द्वारा उ० प्र० तरुण-शांतिसेना के सक्रिय सहयोग से किया गया, वाराणसी, इलाहाबाद और कानपुर के तरुणों ने यात्रा कार्यक्रम के प्रचार और संयोजन में उत्साहपूर्वक योग दिया। अनेक स्थानों पर तरुणों ने बांगला देश की सहायतार्थ अर्थ व वस्त्र का संग्रह किया। धर्म समाज डिग्री कालेज, अलीगढ़ की तरुण-शान्तिसेना ने ३ हजार वस्त्र-संग्रह करके उन्हें विस्थापित शिविरों में पहुँचाने में बड़े उत्साह का परिचय दिया। अनेक केन्द्रों ने नागरिक सुरक्षा और शान्ति तथा सद्भावना कायम करने के कार्यक्रमों में भाग लिया।

श्री उदित नारायण डिग्री कालेज, पडरौना (देवरिया) के तरुण-शान्तिसैनिकों ने भूमिहीन हरिजनों के प्रति भूमिवानों के अन्याय के अहिंसक प्रतिकार का सफल आन्दोलन चलाया तो काशी और कानपुर के तरुणों ने शैक्षणिक अशान्ति में शान्ति व सद्भावना लाने का प्रयास किया। बड़ी विशाल डिग्री कालेज फर्रुखाबाद के तरुण शान्तिसैनिक भाई-बहनों ने वहाँ का वातावरण शान्ति, सद्भावनापूर्ण बनाये रखने में सराहनीय योग दिया। कानपुर के तरुण शान्तिसैनिकों ने गंगा मेले में सेवा-शिविर लगाकर तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कर अपनी सक्रियता का परिचय दिया और कानपुर में अशोभनीय सिने पोस्टरों के निराकरण की दिशा में भी तरुण जागरूक रहे।

—विनय भाई

→ १—व्यक्ति के मनोबल को ऊँचा उठायेगा।

२—मतभेदों की सामान्य कमजोरी से ऊपर उठकर सामाजिक मन का निर्माण करेगा।

३—अच्छाई की स्थापना के साथ-साथ बुराइयों का उन्मूलन करेगा।

४—बुराई के खिलाफ तथा अच्छाई की स्थापना के लिए सीधी कार्रवाई का कदम होगा।

५—सत्याग्रह की सतत चलनेवाली नीति की स्थापना करेगा। —नरेन्द्र

नगर स्वराज्य समिति का गठन

वाराणसी नगर सर्वोदय मण्डल के तत्त्वावधान में नगर स्वराज्य के लिए गठित मुहल्ला-समितियों के संयोजकों की एक बैठक सर्वोदय मण्डल के कार्यालय में दिनांक ६ मई को साढ़े पाँच बजे सायं वाराणसी नगर स्वराज्य समिति बनाने के लिए मण्डल के अध्यक्ष श्री श्याम बहादुर 'नम्र' की अध्यक्षता में हुई। प्रारम्भ में मण्डल के मंत्री श्री मोहनलाल शास्त्री ने उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के निर्देशानुसार नगर स्वराज्य के लिए गठित मुहल्ला समितियों का विवरण सुनाया मुहल्ला समिति के संयोजकों ने यह निश्चय किया कि निम्नलिखित काम करने के लिए प्रो० राधेश्याम शर्मा की अध्यक्षता में नगर स्वराज्य की एक तदर्थ समिति बना ली जाय

(१) गठित मुहल्ला समितियों के कार्य को व्यवस्थित करना।

(२) नयी मुहल्ला समितियाँ बनाना।

(३) नगर स्वराज्य समिति का विधान तैयार करना।

इस समिति में नगर सर्वोदय मण्डल के पदाधिकारियों को मिलाकर सर्वश्री काशीनाथ सिंह, एम० के० देवधर, योगेन्द्र सिंह, नन्दू, प्रेमचन्द गुप्ता, गौर गोपाल बनर्जी, राजसिंह, डाक्टर रिपुदमन सिंह, रोहित मेहता, यशोधर श्रीवास्तव और काशीनाथ को सदस्य मनोनीत किया गया।

—मोहनलाल शास्त्री

आन्दोलन के समाचार

नशाबन्दी समिति के शिष्ट मण्डल की प्रधानमंत्री से भेंट

अ० भा० नशाबन्दी समिति के शिष्ट मण्डल ने दिल्ली में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से भेंट कर उनसे राजस्थान में शराबबन्दी किये जाने की मांग की है। शिष्ट मण्डल ने प्रधानमंत्री को पिछले आन्दोलन के फलस्वरूप राज्य सरकार द्वारा अप्रैल '७२ से मद्य-निषेध करने के वायदे से अवगत कराया। प्रधानमंत्री ने उचित कार्रवाई का विश्वास दिलाया है।

शिष्ट मण्डल में संसद सदस्य डा० जीवराज मेहता, डा० सुशीला नायर, जस्टिस् टेकचन्द तथा गोकुलभाई आदि थे।

नशाबन्दी समिति के प्रतिनिधि ने राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री बरकतुल्ला खां से भी भेंट की और उनसे राजस्थान सरकार की मद्य-नीति पर पुनर्विचार की मांग की। मुख्यमंत्री ने इस सिलसिले में सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण से भी विचार-विमर्श किया।

अ० भा० शान्तिसेना मण्डल ने ग्राम-स्वराज्य सप्ताह का कार्यक्रम मनाने की योजना बनायी थी। तिथियां अपनी अनुकूलता के अनुसार तय करने के लिए कहा गया था। उस कार्यक्रम के अनुसार मैसूर प्रदेश के बेलगांव जिले में तथा महाराष्ट्र के चन्द्रपुर और परभणी जिले में सप्ताह मनाये गये। अनुभव उत्साह-वर्द्धक रहा।

१—यह कार्यक्रम मुख्यतः स्थानीय कार्यकर्ताओं के बल पर अमल में आया।

२—गांव-गांव में ग्रामशान्तिसेना खड़ी हुई। छोटे-छोटे स्थानीय कार्यकर्ता सक्रिय हुए।

३—ग्रामसभा बनाना, ग्रामकोष जमा करना आदि कामों को गति मिली। इस तरह से ग्रामदान-पुष्टि के कार्य में बल मिल रहा है।

४— एक दिन के शिविरों का सिलसिला गांवों में अव्याहत चलाने का कार्यक्रम रहा।

कुल मिलाकर सप्ताह मनाने के कार्यक्रम से कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ा है। मैसूर प्रदेश में शान्तिसेना संगठन प्रदेश स्तर पर खड़ा होने की संभावना बढ़ी है। सामूहिक पदयात्रा के तंत्र को विकल्प देने की सम्भावना इस कार्यक्रम में नजर आ रही है। महाराष्ट्र में अधिक जिलों ने इस कार्यक्रम को उठाने का कार्यक्रम बनाया है। मैसूर प्रदेश अभी बेलगांव जिले तक ही इस प्रयोग को चलाना चाहता है। देश के अन्य प्रदेशों में भी *इस प्रयोग को चलाने की बात सोची* जा रही है।

रतलाम में मित्र-मिलन

रतलाम (मध्य प्रदेश) से श्री मानव मुनि लिखते हैं कि रतलाम सर्व सेवा संघ के तत्वावधान में जिले के रचनात्मक कार्यकर्ताओं के मित्र-मिलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन की अध्यक्षता श्री चन्दन सिंह भरतिया ने की तथा श्री बनवारी लाल चौधरी सम्मेलन के प्रमुख अतिथि रहे। सम्मेलन में तीन सौ कार्यकर्ता उपस्थित थे। इसके अलावा ग्रामदानी गांवों के १०० भाई-बहन भी सम्मिलित थे।

इस अवसर पर ग्रामदानी गांव रूपखेड़ा के लोगों ने प्रतिज्ञा की कि वहां का प्रत्येक परिवार एक-एक आदिवासी परिवारों को गोद लेगा तथा उसकी आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लिए हर सम्भव प्रयत्न करेगा।

मध्य प्रदेश में भूमि-वितरण

मध्य प्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड के मंत्री की सूचना के अनुसार मध्य प्रदेश के कुल ४३ जिलों में मार्च '७२ तक १,९३०८९०३६ एकड़ भूमि ५३०४१ परिवारों में वितरित की जा चुकी है।

जनवरी '७२ से मार्च '७२ तक २९१५-०० एकड़ भूमि का वितरण ८१९ परिवारों में किया गया है। जिसमें से १७४ हरिजन परिवारों को ५८१ एकड़, १९७ आदिवासी परिवारों को ९४५ एकड़, ४०३ सवर्ण परिवारों को १२१८ एकड़, तथा ४५ पिछड़ी जाति के परिवारों को १७१ एकड़ जमीन दी गयी है।

लोकसेवक के अनुभव

हमने दिनांक २०-५-७२ से ग्रामस्वराज्य समिति महायज्ञ अभियान कार्यक्रम सौर प्रखण्ड (पश्चिम) के १४ पंचायतों में संचालित किया। निस्सन्देह कार्यक्रम बड़ा विलक्षण था। उसके कार्यान्वयन हेतु ११ पंचायतों में ग्रामस्तरीय तथा पंचायतस्तरीय *समिति का गठन करने के साथ-साथ* १८ अप्रैल के कार्यक्रम आयोजन का संयोजन का संकल्प कराया। इस क्षेत्र में लोगों को खड़ा करके उनके द्वारा सभी कार्यक्रम चलाये जायें, इसका प्रयत्न रहा। पुनः जाकर काम करने में सुविधा हो यही मेरी दृष्टि रही। इस अवधि में काम करते वक्त कुछ अनुभव हुए उसका विवरण नीचे दे रहा हूं।

(१) ग्रामस्वराज के विचार को हर गांवों में समर्थन मिला। विचार मस्तिष्क को छू गया है ऐसा लगा। हृदय में बैठे और हाथ द्वारा प्रकट हो यह कराना हमारा काम है। यह काम तैयारी का है, निरन्तर करते रहने का है, विचार-शिक्षण का है। मैं मानता हूं कि आज जहां हम पहुंचे हैं घर-घर सन्देश पहुंचाया है। लेकिन यह अगर तैयारी तैयारी तक ही रही तो ३० दिनों की निरन्तर दौड़-धूप, हवा आदि की फिक्र छोड़कर काम करनेवाले को चोट पहुंचना स्वाभाविक है।

—उदित नारायण

अकोढ़ी के लोगों की भीष्म प्रतिज्ञा

श्री विनोद शंकर पाण्डेय, मंत्री ग्रामस्वराज्य समिति अकोढ़ी मिरजापुर *से लिखते हैं कि २७ अप्रैल, '७२ सर्वोदय* ग्राम स्वराज समिति अकोढ़ी की कार्यकारिणी ने अपनी बैठक में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया है कि अपने सर्वोदय *परिवार में अब अपने नामों के साथ* जाति व वर्णभेदसूचक शब्दों का व्यवहार नहीं करेंगे।

भूदान-यज्ञ १५-५-७२ लाइसेंस नं० प ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

आचार्य राममूर्तिजी

सर्वोदय समाज सम्मेलन के मनोनीत अध्यक्ष

१—जन्म : २२ जनवरी १९१३

२—शिक्षा : वाराणसी, इलाहाबाद, लखनऊ

३—सरकारी नौकरी : शिक्षा विभाग १३ साल

४—१० मई १९५४ से पूज्य धीरेन भाई के साथ श्रम भारती, खादीग्राम में।

५—१९५७ में पदयात्रा

तब से ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में कार्य

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट वाराणसी-१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

आवश्यक सूचना

अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन होने के कारण दिनांक २२ मई '७२ का अंक प्रकाशित न होकर दिनांक २९ मई का अंक प्रकाशित होगा। —सं०

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ३४-३५ २९ मई, १९७२

भूदान मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक साप्ताहिक

उपवास नहीं, प्रायश्चित

● गोकुल भाई भट्ट

मैंने संकल्प किया था कि ८ मई से शराबबन्दी कराने के लिए आमरण अनशन करूँगा, लेकिन श्री जयप्रकाश नारायण ने इस पर विशेष मंत्रणा के लिए एक हफ्ते की रोक लगा दी। आन्दोलन के एक विनम्र सैनिक होने के नाते मुझे अपने उस नेता का आदेश तो मानना ही था और यह तो कुछ समय के लिए ही है और मैंने सोचा कि मंत्रणा में बाधा न पहुँचे, बस इतना ही उद्देश्य था, इसलिए एक हफ्ते के लिए मैंने अपना संकल्प मुल्तवी कर दिया।

राज्य में शराबबन्दी के बारे में सन् १९६६ से कार्य शुरू किया गया था और उस समय यह सरकारी नीति निर्धारित की गयी थी कि सन् १९७२ की पहली अप्रैल से सारे राज्य में शराबबन्दी लागू हो जायेगी। मुझे उस समय मंत्रिमण्डल के साथियों ने, मुख्यमंत्री ने, विश्वास दिलाया था। पर २८ मार्च को कुछ लोगों के कहने से, आर्थिक कारणों को लेकर राजस्थान सरकार पहली अप्रैल से शराबबन्दी के लिए दिये गये वचन से मुकर गयी है। आर्थिक कठिनाई तो उस समय भी थी जब शराबबन्दी के लिए एलान किया था, अब कोई नया आर्थिक संकट तो आ नहीं गया है।

राजस्थान में कार्यकर्ता कम हैं, लेकिन हमारे सामने एक चुनौती आयी है। क्या करना है? रोक दिया है, तो ठीक है—ऐसे हम माननेवाले नहीं हैं। गाँवों से आवाज आ रही है कि आपने जो रोक लगायी है, वचन भंग किया है, हम उसका विरोध और करते हैं। पंचायतें भी ऐसा कर रही हैं। विधानसभा में भी हलचल है।

उन लोगों ने यह प्रण किया है—"शराब बन्द करायेंगे, चाहे मर मिट जायँ। अब गाँव-गाँव में लोक-मानस बनाने का कार्य चल रहा है। जहाँ-जहाँ शराब की दूकानें होंगी पिकेटिंग करेंगे—यह आवाज बुलन्द हो रही है गाँवों में। इसमें भगवान मदद करेगा, कोई शंका नहीं है। मेरे लिए तो यह एक प्रायश्चित है, किसी तरह का आन्दोलन नहीं।

मेरे संकल्प के पीछे भूख-हड़ताल या अनशन का उद्देश्य नहीं है। मेरे चले जाने के बाद इसे और कोई न करे। शराबबन्दी के द्वारा लोक-मानस हमको बदलना है। यद्यपि ग्राम-स्वराज्य एक बुनियादी बात है, फिर भी इस चुनौती का सामना करने के लिए इसे भी रोकना होगा। नामर्द बनकर नहीं रहना चाहता, अगर काम नहीं कर सका तो दुनिया से चले जाना है।

[नयी दिल्ली राजघाट में ११ मई से १३ मई तक हुए गांधी रचनात्मक संस्था सम्मेलन के पहले दिन श्री गोकुल भाई भट्ट द्वारा दिये गये भाषण से।]

ग्रामदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का नया मोड़

संघ अधिवेशन का प्रस्ताव

हमारा आन्दोलन जन-आन्दोलन कैसे बने, यह चिन्ता सदा से रही है। किन्तु अब हम आन्दोलन के विकास-क्रम में ऐसे बिन्दु पर पहुँच गये हैं जहाँ प्राप्ति और पुष्टि दोनों में, प्रगति के लिए केवल कार्यकर्ता-शक्ति नितान्त अपर्याप्त सिद्ध हो रही है। हमने माना है कि लोक-शक्ति से ही इस आन्दोलन को वह जीवनी-शक्ति मिल सकती है जिसके बिना हमारे क्रान्तिकारी लक्ष्यों की सिद्धि सम्भव नहीं है। आन्दोलन के इस संकट को महसूस करते हुए सर्व सेवा संघ ने अपने मकोदर के अधिवेशन में इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया और वह इस नतीजे पर पहुँचा कि देश भर में आन्दोलन में लगे हुए सभी साथियों का ध्यान इसकी ओर तत्काल जाना चाहिए और इसे हल करने के लिए अलग-अलग क्षेत्रों की परिस्थिति के अनुसार लोक-शक्ति संगठित करने के प्रयोग करने चाहिए।

ग्रामदान-पुष्टि के कार्य में गाँव की भूमिहीनता मिटाने का एक मुख्य प्रश्न है। तात्कालिक उपाय के रूप में हमने बीघा-कट्ठा की बात कही है, किन्तु हमारा प्रयत्न होना चाहिए कि गाँव की कुल भूमि का कम-से-कम बीसवाँ भाग भूमिहीनों के हाथ में आये। इसके अलावा गाँव में भूमि के जो बाहर के मालिक (एब्सेण्टी लैण्डलार्ड) हैं उनकी भूमि भी ग्रामदान की शर्तों के अनुसार ग्रामसभा के माध्यम से, गाँववालों के उपयोग के लिए उपलब्ध हो।

प्राप्ति तथा पुष्टि की सम्पूर्ण प्रक्रिया में अधिक-से-अधिक संख्या में स्थानीय जनता का अभिक्रम और पुरुषार्थ जगाने की दृष्टि से यह जरूरी है कि जमीन माँगने में भूमिवान-भूमिहीन सभी शरीक हों। वे पहले स्वयं दाता बनें, और दाता बनकर दूसरों को दान के लिए सामूहिक तौर पर प्रेरित और प्रभावित करें। यह निश्चित है कि बड़ी संख्या में भूमिवान-भूमिहीन दाताओं के इकट्ठा आगे बढ़ने का गहरा प्रभाव होगा, साथ ही, सामान्य जनता निर्भय होगी, और उसका मनोबल भी ऊँचा उठेगा। व्यापक वातावरण बनाने में लोक पदयात्राएँ पहले उपयोगी सिद्ध हुई हैं वे अब भी प्रभावकारी सिद्ध हो सकती हैं। इसलिए प्राप्ति और पुष्टि के विभिन्न क्षेत्रों में लोक-पदयात्राएँ संगठित होनी चाहिए।

लोक-शक्ति के संगठन में एक बात का ध्यान हमेशा रखना है। वह है अहिंसा। हम मानते हैं कि अहिंसा की शक्ति ही समाज की वास्तविक शक्ति है। हमें अहिंसा की शक्ति का विकास और उसकी मर्यादाओं का पालन करते हुए आगे बढ़ना है। इसलिए स्वभावत. हम ऐसा कोई काम नहीं कर सकते, कोई बात नहीं कह सकते, यहाँ तक कि कोई नारा भी नहीं लगा सकते, जिससे नाहक वर्गगत अथवा अन्य कोई तनाव या दुराव पैदा हो। अहिंसा के लिए प्रेम और परस्पर विश्वास का वातावरण आवश्यक है। उदाहरण के लिए हम यह कह सकते हैं कि भूमि माँगनेवाला समूह भूमिवानों के समक्ष ऐसे गीतों, नारों और भजन-कीर्तन आदि के साथ प्रस्तुत हो सकता है जिससे मालिकों के हृदय में कटुता के स्थान पर मानवीय सद्‌विवेक का उदय हो।

विचार-शक्ति और हृदय-परिवर्तन हमारे आन्दोलन का ध्येय रहा है। उसे हमें कायम रखना है। पिछले अनेक वर्षों में हमने सद्‌विचार का उपहार जन-जन तक पहुँचाने की कोशिश की है और इसके शुभ परिणाम भी हुए हैं। असहकार और प्रतिकार भी अहिंसक प्रक्रिया के मान्य अंग हैं। परिस्थिति की माँग होने पर अहिंसा की प्रक्रियाओं के अन्तर्गत उनका प्रयोग अनिवार्य भी हो सकता है। हमें हर सन्दर्भ में अपनी बुद्धि से सही कदम का निर्णय करना पड़ेगा।

सर्व सेवा संघ अपेक्षा करता है कि *ग्रामदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में लगे* हुए सभी साथी इस प्रस्ताव की भूमिका में, अपने-अपने क्षेत्र में आन्दोलन को शक्तिशाली बनाने के प्रयत्न और प्रयोग में अविलम्ब लग जायेंगे।

श्री गोकुल भाई भट्ट का आमरण अनशन

प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल राजस्थान समग्र सेवा संघ के कार्यालय किशोर निवास में सामूहिक प्रार्थना और भजन आदि के पवित्र वातावरण में ७४ वर्षीय सर्वोदय नेता श्री गोकुलभाई भट्ट ने शराबबन्दी के लिए अपना आमरण *अनशन १६ मई को जयपुर में प्रातः ७* बजे से प्रारम्भ किया। इस अवसर पर काफी संख्या में सर्वोदयी कार्यकर्ता तथा शराबबन्दी प्रेमी भाई-बहन उपस्थित थे।

प्रार्थना सभा को सम्बोधित करते हुए श्री भट्ट ने कहा कि गांधी शताब्दी वर्ष में शराबबन्दी नहीं हो सकी लेकिन यह वर्ष आजादी की रजत जयन्ती है, अतः हमें गांधीजी का नाम लेने के साथ उनके कार्यों को भी गति देनी होगी। मद्य-निषेध का कार्यक्रम समाजवाद तथा 'गरीबी हटाओ' का अभियान है। आपने शराब को सब बुराइयों की जड़ बताया।

इस अवसर पर राजस्थान शिक्षक संघ के अध्यक्ष श्री विशन सिंह शेखावत ने शराबबन्दी आन्दोलन में शिक्षक समाज के सहयोग का विश्वास दिलाया। बाबा बलवन्त सिंह ने कहा कि गोकुलभाई का उपवास कार्यकर्ताओं की जड़ता को दूर करेगा।

× × ×

अनशन समाप्त

प्राप्त समाचार के अनुसार श्री गोकुल भाई ने २७ मई को अपना अनशन समाप्त किया।

पुराने अध्यक्ष, नये अध्यक्ष

एक अध्यक्ष की विदाई और दूसरे का स्वागत। तिरुपति में श्री जगन्नाथनजी ने बड़े मनाव के बाद अध्यक्ष होना स्वीकार किया था; उतने ही मनाव के बाद इस बार श्री सिद्धराजजी ने स्वीकार किया। यह हमारी पद्धति की खूबी है कि इसमें कोई किसी पद के लिए उम्मीदवार नहीं होता, मनाव करके ही किसी साथी को किसी पद के लिए राजी करना पड़ता है। इस कारण चुनाव में से प्रतिद्वन्द्विता निकल जाती है, और वातावरण में मिठास बनी रहती है।

जब भाई जगन्नाथनजी तीन साल पहिले संघ के अध्यक्ष हुए थे तो वह मोर्चे के सिपाही थे। अध्यक्षता के तीन वर्षों में भी वह सिपाही ही बने रहे। अध्यक्षता भी करते रहे, साथ-साथ तंजौर की लड़ाई भी लड़ते रहे। कार्य छोड़कर कार्यालय में बैठना उन्हें कभी पसन्द नहीं आया। स्वभाव से वह कागज के आदमी नहीं, कुदाल के आदमी हैं। उन्हें गरीबों के बीच काम करना पसन्द आता है। यह सिपाहीगिरी अपने समय में उन्होंने और मंत्री भाई बंगसाहब ने मिलकर अच्छी तरह कायम रखी।

श्री ढड्ढाजी ने नयी अध्यक्षता के साथ सहरसा जोड़ा है। उनके लिए यह नहीं कहा जा सकता कि वह कागज के आदमी नहीं हैं। कागज के काम में वह निपुण हैं, लेकिन उनकी क्रान्ति-निष्ठा उन्हें क्षेत्र से कभी अलग नहीं होने देती।

हमारे मंत्री भाई श्री बंगसाहब जैसे पहले अध्यक्ष के विश्वासपात्र थे उसी तरह नये अध्यक्ष के भी हैं।

अपने अध्यक्ष चुने जाने के थोड़ी ही देर बाद श्री ढड्ढाजी ने घोषणा की कि श्री बंगसाहब मंत्री बने रहेंगे। बंगसाहब दूसरी बार मंत्री नहीं होना चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि कार्यालय से मुक्त होकर पूरा समय क्षेत्र के ही काम में लगायें। इसलिए ढड्ढाजी ने जल्दी की और बंगसाहब को अलग होने से रोक लिया। बंगसाहब सच्चे अर्थ में पुराने और नये अध्यक्षों के बीच की कड़ी हैं।

सर्व सेवा संघ में यह परिपाटी पुष्ट हो गयी है कि प्रत्यक्ष कार्य से अलग मात्र पद का महत्व नहीं है। क्षेत्र के प्रत्यक्ष कार्य और कार्यालय की व्यवस्था के मेल में ही हमारी सफलता है। कुछ इसी तरह की बात का ध्यान रखकर नकोदर में प्रबन्ध समिति ने तय किया कि उसका हर सदस्य एक खास क्षेत्र में आन्दोलन के पूरे कार्यक्रम के लिए जिम्मेदार हो। वह उस क्षेत्र और प्रबन्ध समिति के बीच कड़ी का काम करे। प्रबन्ध समिति के ऊपर जिस क्रान्ति की जिम्मेदारी है उसकी दृष्टि से यह आवश्यक है कि क्रान्ति के क्षेत्रों से उसका जीवन्त सम्बन्ध हो।

क्रान्ति के हित में सर्व सेवा संघ को अपनी स्वतंत्र अखिल भारतीय *कार्यकर्ता-शक्ति तैयार करनी चाहिए।* उसके पास पचीस 'सिपाही' ऐसे होने चाहिए जो देश भर में कभी किसी भी मोर्चे पर लग सकें। इसी तरह कार्यकर्ता-शक्ति राज्य, जिले, प्रखण्ड और उससे नीचे के स्तर तक संगठित करने की जरूरत है। इसके बिना संघ आन्दोलन को शायद पर्याप्त प्रत्यक्ष नेतृत्व नहीं दे सकेगा।

हम हृदय से पुराने अध्यक्ष के, उनकी सेवा के लिए कृतज्ञ हैं। हम हृदय से नये अध्यक्ष के साथ हैं और उन्हें अपने सहयोग का आश्वासन देते हैं। पद सेवा का एक अवसर है, हम उस अवसर की पूरी सफलता चाहते हैं। ●

श्री सिद्धराज ढड्ढा
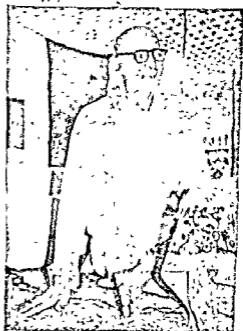
नये अध्यक्ष को माल्यार्पण और दो शब्द

प्रबन्ध समिति की बैठक में किसी ने कहा था कि गरीबी और फकीरी जब आमने-सामने होती है तो गरीबी ज्यादा *अखरती है। क्या इसका कोई रास्ता है? चीनवालों ने एक* रास्ता निकाला है, नाम दिया है—आसकेट। आसकेट यानी वह सादगी, वह सादगी जिसमें आभा हो, आलोक हो। वह विशेषता श्री सिद्धराज भाई में है।

आप लोगों की तरफ से मैं इनका स्वागत करता हूँ और प्रतीक रूप में यह माला उनको अर्पण करता हूँ।

—दादा धर्माधिकारी

समग्र मनुष्य के निर्माण से ही अहिंसक समाज-रचना सम्भव

२० वें सर्वोदय सम्मेलन में सुश्री सरला बहन का उद्घाटन भाषण

मित्रो,

जमाना स्थावर नहीं, जंगम और गतिशील है, इसलिए मैं जो आज (६ मई) को लिख रही हूँ, १९ मई को ठीक वही बात कहूँगी—ऐसा दावा नहीं कर सकती—लेकिन मित्रों के सन्तोष के लिए जो कुछ अभी मन में है, लिख रही हूँ।

मैं जो कुछ कहूँगी, शिक्षिका की भूमिका से ही कहूँगी। आप मुझसे किसी उच्चस्तरीय पेचीदा राजशास्त्र या अर्थ-शास्त्र की बात सुनने की उम्मीद न करें। मेरा सोचना अभी तक गांधीजी के सोचने की दिशा में चल रहा है।

सर्वोदय समाज बालिग हुआ

इस वर्ष हमारा सर्वोदय समाज इक्कीसवें सम्मेलन में प्रवेश कर रहा है यानी अब हमारा संगठन बाल्यावस्था को पार करके बालिग मानने लायक हो रहा है। इस दृष्टि से यह सम्मेलन महत्वपूर्ण है और हमें गहराई से आत्म-परीक्षण करने की चुनौती दे रहा है। यह सबके लिए एक चुनौती है कि हम कहाँ तक सब समस्याओं पर गम्भीरता से विचार करते हैं। मेरी नम्र राय में, कुछ बातों में हम अभी तक कुछ हल्के दृष्टिकोण से देखते रहे हैं। हमें मानना पड़ेगा कि अभी तक हम आम समाज में बहुत गहराई से नहीं जा पाये हैं। जिन मान्यताओं और शक्तियों को हम समाज में देखना चाहते हैं, क्या वे खुद हममें हैं? क्या गांधीजी के सरल जीवन और उच्च विचार की मान्यताएँ अब तक हममें कायम हैं? या क्या हम समाज के वर्तमान मूल्यों के साथ कुछ समझौता करने लगे हैं? गांधीजी के क्रान्तिकारी मूल्य समाज के सामने स्पष्ट दिखाई देने पर भी उनकी व्यापक प्रेम-भावना की वजह से एक ज्वलन्त प्रश्न को हल करने के लिए समाज उन मूल्यों की ओर बढ़ने की कोशिश करता था, उन मूल्यों का आदर करता था। यदि हम ज्वलन्त प्रश्न उठा नहीं पाते और समाज से हम अलग नहीं हैं—यह दिखाने के लिए हम क्रान्तिकारी मूल्यों में ढिलाई करेंगे, तो हम समाज में घुल तो सकेंगे, लेकिन हम अपने व्यक्तित्व को खोयेंगे और क्रान्ति की ओर नहीं बढ़ पायेंगे, ऐसा मेरा नम्र निवेदन है। कभी-कभी मुझे लगता है कि दकियानूस माने जाने के डर से हम हीनता की ग्रन्थि से अपना औचित्य (जस्टीफिकेशन) साबित करने की कोशिश तो नहीं करते हैं? समझौते से सुधार भले ही हो, लेकिन क्रान्ति नहीं हो सकती है।

अहिंसक समाज-रचना की दृष्टि से सर्वसम्मति एक मुख्य सिद्धान्त है। ग्रामस्वराज्य की संरचना में भी यह एक स्तम्भ है। लेकिन बहुधा अनुभव होता है कि अभी तक अपने समाज में हम बहुत दूर तक उस ओर नहीं बढ़ पाये हैं। राय को टटोलने (टेकिंग दी फीलिंग) के बदले, नम्रता के बदले उग्रता का प्रदर्शन होता है। क्या यह पद-लोलुपता तथा दल-भावना का प्रतीक नहीं है? क्या कभी-कभी ऐसा अनुभव नहीं होता कि सर्वसम्मति की खोज में अल्पमत की तानाशाही हो जाती है? सर्वसम्मति अवश्य ही अहिंसा की ओर एक कदम हो सकता है। इससे यदि सही अहिंसक-शक्ति प्रकट हो पाती तो यह अवश्य हमारे समाज के विकास में एक बड़ा कदम बनी हो सकता है। लेकिन यह प्रक्रिया पेचीदी और कठिन भी सिद्ध हो सकती है।

हमारी भारतीय संस्कृति में बारह वर्ष का एक युग माना जाता है। उसमें मनुष्य के शरीर के हर एक कोष का नवीनीकरण होता है। हमारे सर्वोदय समाज ने लगभग दो ऐसे युग पार किये हैं। क्या हमें अनुभव होता है कि उचित संख्या में जवानों को आगे बढ़ कर नयी जिम्मेवारियों को उठाने का मौका मिल रहा है? या क्या हम पदों पर इन पुराने निरपरिवर्तित चेहरों की पुनरावृत्ति ही देखते हैं? हम कहाँ तक जवानों के जोश और बुजुर्गों के होश का मेल साध पा रहे हैं? यह मैं आलोचना के तौर पर नहीं बल्कि प्रश्न के तौर पर सोच रही हूँ। कभी-कभी ऐसा अनुभव होता है कि भले ही हम गैरहाजिर जागीरदारी (एब्सेंटी लैण्डलॉर्डिज्म) को खतम करना चाहते हैं—लेकिन हम गैरहाजिर व्यवस्थावाद को ही आगे बढ़ा रहे हैं। उसमें केन्द्रीकरण का भी आभास होता है। यदि हमारा समाज अब सयाना होने जा रहा है तो ये सब ऐसे प्रश्न हैं, जिन पर गम्भीरता से सोचने की आवश्यकता महसूस होती है।

बुद्धिवाद का दुष्परिणाम

आजकल दुनिया के सोचने का तरीका तेजी से बुद्धिवाद की ओर बढ़ रहा है। उसका नतीजा टुकड़ीकरण (फ्रैगमेण्टेशन) और मायूसी (फ्रस्ट्रेशन) हो रहा है। जीवन में समग्रता नहीं रही, मनुष्य का दिमाग तेज हो रहा है। हृदय की भावनाएँ सुप्त हो रही हैं। मनुष्य बुद्धिवादियों की योज-नाओं में फिट होने के लिए एक पुर्जा मात्र रह गया है। इसलिए असन्तोष और असन्तुलन के रूप में सारी दुनिया में मानसिक सन्तुलन बहुत तेजी से फैल रहा है। दुनिया में यह टुकड़ीकरण व्यक्तिगत स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक, एक बड़े हद तक, सब मानवीय असन्तुलनों का कारण है। अहिंसक समाज-रचना में सबसे बड़ी आवश्यकता समग्र मनुष्य के निर्माण की ओर बढ़ना है और यह विकेन्द्रित समाज में ही सम्भव हो सकता है।

दुनिया के सामने मुख्य समस्या गरीबी और अमीरी की है। यह गरीबी सिर्फ भौतिक ही नहीं मानसिक भी है। यह भी समग्रता का सवाल है। इसके साथ केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण का भी सवाल है। ये भी सब शिक्षा की ही समस्याएँ हैं। दिन-पर-दिन यह अनुभव बढ़ रहा है कि शिक्षण सरकार के नियन्त्रण से स्वतन्त्र रहना चाहिए। सरकार एक यंत्र बन जाती है। यंत्र से समग्र मानव का निर्माण नहीं हो सकता है। अहिंसक समाज-रचना के लिए समग्र मानव की आवश्यकता है।

अहिंसा की उपलब्धियाँ

अहिंसा की दिशा की ओर बढ़ने के दो-तीन उदाहरण इस वर्ष मिले हैं। बांगला देश की स्वतन्त्रता के संघर्ष से साबित हुआ है कि अब लोग सच्चाई के लिए, यानी अपनी स्वतन्त्रता के लिए मरमिटने को तैयार रहते हैं, वे हर कीमत चुकाने को तैयार रहते हैं। तब अन्त में क्रूर-से क्रूर सशस्त्र जालिम को झुकना ही पड़ता है। उस अद्भुत महनशक्ति की वजह से, अन्त में हिंसा के उपयोग से ही विजय हो पायी थी। लेकिन यह सारी अमानवीय घटना साबित करती है कि सरकार से नियंत्रित शिक्षा, विशेषकर जब वह धर्मान्धता से जुड़ी रहती है, कितनी खतरनाक होती है।

उत्तराखण्ड के नशाबन्दी आन्दोलन से एक बार और सशक्त स्त्री-शक्ति का प्रभाव प्रकट हुआ। जब उच्चन्यायालय ने सरकार को दुबारा शराब की दूकानें खोलने पर मजबूर किया, तो जनता के सक्रिय शान्तिमय आह्वान पर राज्यपाल को कानून बदलने के लिए अध्यादेश निकालना पड़ा और बाद में विधान-सभा को सर्वसम्मति से राज्यपाल के अध्यादेश को कानून के रूप में मान्य करना पड़ा। जिस रोज सुन्दरलालजी का उपवास छूटा, उसी रोज को विशाल शान्तिमय-जन प्रदर्शन को देखकर श्री सुरेशराम भाई ने कहा, सारे भारत में कोई सर्वोदय नेता (मैं उनके शब्दार्थ का उपयोग कर रही हूँ, मेरे विचार में ये दो शब्द परस्पर विरोधी होते हैं) इतनी विशाल सभा नहीं बुला सकता है। यह 'नेता' की बात नहीं थी, बल्कि एक ज्वलन्त सांस्कृतिक प्रश्न को हाथ में लेने का परिणाम था। सांस्कृतिक और नैतिक प्रश्नों पर जन-शक्ति में स्त्री-शक्ति भी अपने-आप प्रकट होती है।

चम्बल का चमत्कार

तीसरा सवाल चम्बल घाटी का है। मैं इस समस्या की ओर आपका ध्यान आकर्षित करने में काफी समय इसलिए देना चाहती हूँ क्योंकि कई प्रकार से उसमें अहिंसा की शक्ति प्रकट होती है। इस वर्ष हमारा समाज बालिग हो रहा है। और इस वर्ष एक अहिंसक कार्यक्रम परिपक्वता की ओर बढ़ रहा है। मैं इस बात को एक महत्त्वपूर्ण संयोग मानती हूँ। यदि हम उसे पूरी तरह समझेंगे तो भविष्य के काम के लिए एक व्यापक मार्ग के खुलने की सम्भावना दिखती है। इसलिए मैं इसमें ज्यादा समय लेने के लिए आपसे *क्षमा नहीं माँगूँगी।*

ढाई सौ से ज्यादा अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित डाकुओं के आत्म-समर्पण की घटना ने भारत को ही नहीं, बल्कि दुनिया को भी झकझोर दिया है। शायद दुनिया के इतिहास में यह प्रथम बार एक ऐसी घटना घटी है। समस्याओं के अहिंसक हल के लिए इस घटना का इतना महत्त्व है, जितनी कि अहिंसा के मार्ग से, चरखे के द्वारा भारत को स्वतन्त्रता पाने का था। इससे एक नये युग के जन्म की सम्भावना प्रकट होती है। चम्बल घाटी के इलाके में भी सर्वोदय को मिली लोकप्रियता साबित करती है कि जब हम एक ज्वलन्त प्रश्न उठा पाते हैं तो वास्तव में जनता हमारे कार्य और सिद्धान्त की आवश्यकता समझकर हमारा समर्थन करती है।

इस घटना को परिपक्व होने में एक पूरा युग, बारह वर्ष बीत गये हैं। जिस प्रकार जब हम दूध में दही डालते हैं तो सारे दूध को दही बनाने में कीटाणु धीरे-धीरे फैलते हैं और बढ़ते हैं, तथा अन्त में सारा दूध दही बन जाता है—इस अहिंसक प्रक्रिया में भी ऐसा ही हुआ। इस घटना का एक बड़ा महत्त्व यह रहा कि समस्या को हल करने की प्रेरणा खुद बागियों से ही मिली है। मुख्य काम भी उन्होंने ही किया है। हमारे साथियों का कार्य पूरक साबित हुआ है। यह काम सेवक का ही रहा, प्रणेता का नहीं।

९०० वर्ष पुरानी समस्या

चम्बल घाटी में बागियों की समस्या कोई नयी नहीं है—यह कम-से-कम ९०० साल पुरानी है। इस घाटी के मुख्य लोग राजस्थान के ही तेजस्वी राजपूत हैं। उनमें नम्रता और प्रेमभाव के साथ, अन्याय सहन न कर सकने की वृत्ति है और छेड़े जाने पर उनका मिजाज बड़ा तेज हो जाता है। वहाँ के छोटे-मोटे महाराजाओं के युद्धों में ये भाड़े के सिपाही के तौर पर नहीं, अन्याय का विरोध करने की वृत्ति से भाग लेते थे। बीहड़ों की वजह से छापामार युद्ध (गुरिल्ला युद्ध) बहुत आसान था और छापामार युद्ध की परिणति डकैती में होने में कोई देर तो नहीं लगती है। दमन और पुलिस के द्वारा, न मुगल शासन और न ब्रिटिश शासन उस समस्या का हल कर पाया था। स्वराज्य के बाद सशस्त्र पुलिस के द्वारा उसका दमन करने का प्रयास हुआ लेकिन व्यापक भ्रष्टाचार की वजह से सुधरने के बदले यह परिस्थिति तेजी से बिगड़ती चली गयी। न बागियों में, न पुलिस में, न जनता में, मानवीय जीवन की कोई कीमत रह गयी है। इस इलाके में एक कहावत है, "जाके बैरी सुख से सोवें, ताके जीवन को धिक्कार।" साधारण मनुष्य जिस प्रकार एक मक्खी को या मच्छर को मारता है, अपने दुश्मन को मारने में इधर के लोगों को इससे ज्यादा ग्लानि नहीं होती है।

एक बागी भाई ने कहा—"जब सेठ और पुलिस का विवाह होता है, तब उसकी सन्तान डाकू होती है।" यह बात एकदम सही लगती है। समस्या की जड़ उसी में है ही, लेकिन बाद में परिस्थिति को कायम रखने में पुलिस और बागियों का भी विवाह होता है। समस्या के दमन के लिए इस समय तीन जिलों में (ग्वालियर, मुरैना और भिण्ड) ५५,००० पुलिस तैनात है और अपने दुश्मनों से अपना संरक्षण करने की दृष्टि से एक लाख बन्दूकों के लाइसेन्स जनता में फैले हुए हैं। इसके फलस्वरूप चारों ओर दमन और आतंक का वातावरण फैला है। बनिया-वर्ग और बड़ी जमीनों के मालिक गरीबों पर हर प्रकार का अन्याय करके पुलिस और अदालत से संरक्षण पाते हैं। असहाय होकर गरीब बन्दूक से अपने बैरी का फैसला करके जंगल भाग जाता है। दूसरी ओर, जो ताकतवर वर्ग है पुलिस के द्वारा वह अपने बैरी पर झूठा आरोप लगाकर, उसे भी पुलिस के डर से फरार होने पर मजबूर करता है। फिर अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए बागी लोग खुद ऊपर से नीचे के स्तर तक पुलिस से मिलकर अपने लिए आधुनिक शस्त्रों की व्यवस्था करते हैं और अपने बचाव की व्यवस्था करते हैं। इस इलाके में कहते हैं—पुलिस अधिकारियों के कुछ स्थानों की कीमत अब हजारों का नहीं लाखों का सौदा बन रहा है और कुछ ऐसे भी अधिकारी हैं जो इस प्रकार बीस वर्ष तक एक ही स्थान पर तैनात रह पाये हैं।

गांधीजी धनिकों का धन मांगकर राष्ट्रीय कार्यों में उसका उपयोग करते थे। बागी धनिकों का धन लूटकर अपना फायदा तो जरूर करते हैं लेकिन गरीबों की काफी सेवा भी करते हैं। इसलिए ये लोकप्रिय हैं। जनता उन्हें पुलिस से हजार-गुना अच्छा मानती है। इसलिए यह समस्या लगातार बढ़ती रही और ज्यादा-से-ज्यादा खतरनाक होती गयी है।

विनोबा का आह्वान

मानसिंह इस युग के डाकुओं के सब से बड़े और लोकप्रिय मुखिया रहे हैं। अन्याय और अत्याचार से बिलकुल लाचार होकर, जब उन्हें और कोई मार्ग सामने न दीखा, तब एक-दो जेल-यात्रा के अन्त में वे बागी बने। वे सरकार के लिए सबसे खूंखार व जनता में न्यायाधीश और गरीबों के सेवक की तरह पेश आते थे। उनके साथ उनके एक पुत्र की मृत्यु हुई और दूसरा पुत्र तहसीलदार सिंह, घायल होकर गिरफ्तार हुआ। उन्हें मौत की सजा मिली (जो बाद को आजीवन कारावास में परिणत हुई) जेल की तन्हाई से उन्होंने विनोबाजी का आह्वान किया कि हिंसा के द्वारा इस समस्या का हल हो नहीं सकता है। उसका हल करना आवश्यक है। बाबा अपने ही ढंग से इस समस्या को उठायें। किस प्रकार चम्बल-निवासी स्वर्गीय मेजर जनरल यदुनाथ सिंहजी ने विनोबाजी के सहारे से यह काम उठाया था और किस प्रकार विनोबाजी की एक माह की पदयात्रा के दरम्यान लोकमन के नेतृत्व में मानसिंह के गिरोह के बीस बचे हुए बागियों ने आत्म-समर्पण किया, यह इतिहास किसी सर्वोदय के कार्यकर्ता से छिपा हुआ नहीं है। लेकिन शायद कम लोग समझ सकते हैं कि उस काम में कितने साहस और सहनशक्ति का प्रदर्शन हुआ था। एक तरफ सशस्त्र पुलिस दूसरी तरफ सशस्त्र बागी—दोनों को इस प्रथा को कायम रखने में अत्यन्त दिलचस्पी और उनके बीच में, कभी साईकिल पर, कभी पैदल, मई, जून की गरमी में उन भयंकर बीहड़ों में घूमते हुए जनरल साहब के साथ मुट्ठी भर कार्यकर्ता, जिनके शस्त्र मात्र सत्य, प्रेम और करुणा थे। बाबा का आह्वान था कि मुझे ऐसे कार्यकर्ता चाहिए जिन्हें आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता का सतत् भान हो और जिनमें बागियों पर प्रेम करते हुए, उनकी गलतियों का स्पष्ट खण्डन करने की हिम्मत हो। वे थोड़े से लोग दिन-रात सिर पर कफन बाँधकर घूमते रहे, तब बाबा के प्रेम और अहिंसा के सन्देश से बागी प्रभावित हो सके। लेकिन उस अथक परिश्रम से जनरल साहब को अपने प्राणों का बलिदान देना पड़ा। सरकार से भी अपेक्षित सहानुभूति और सहयोग नहीं मिल पाया था।

समर्पण के बाद

समर्पण के बाद जेल में बागियों का मनोबल कायम रखना, पैरवी की व्यवस्था तथा परिवारों की सार-सम्भाल का कार्य बराबर चलता रहा। बच्चों के शिक्षण के लिए एक छात्रावास की स्थापना हुई। दुश्मनों के साथ समझौता करने का कार्यक्रम भी चला। कुछ लोग जल्दी छूट गये। कुछ को लम्बी सजाएँ हुई, लेकिन धीरे-धीरे सब घर आये। जिनके घर में खेती थी, उन्हें अपने खेतों को आबाद करने के साथ-साथ वातावरण बनाने के लिए साधन मिले। जिनके पास खेती नहीं थी, उन्हें भूदान की जमीन पर बसाया गया था। इस सारे काम में 'वार ऑन वान्ट' संस्था से भी काफी मदद मिली थी। अब सब अपने पसीने की कमाई का अन्न खाने लगे हैं और एक साधारण अच्छे नागरिक का जीवन बिता रहे हैं। लेकिन ये पुराने बागी सिर्फ सज्जन नागरिक की भूमिका में रहने से सन्तुष्ट नहीं हैं। ये चाहते हैं कि चम्बल घाटी से बागियों का अभिशाप और यह आतंक का वातावरण हमेशा के लिए दूर हो और सब बागियों को जीवन-परिवर्तन का वह मौका मिले, जो उन्हें मिला है। तात्कालिक सरकार की उदासीनता की वजह से १९६० ई० में सिर्फ एक छोटा काम हो पाया था, लेकिन वह जामन के रूप में काम करता रहा। बीच-बीच में म० प्र० सर्वोदय मण्डल ने भी ग्रामदान-अभियानों का आयोजन किया। धीरे-धीरे सारे बागियों के समाज में जीवन-परिवर्तन की आकांक्षा जगने लगी। विशेषकर पण्डित लोकमन (लुक्का) का नया सन्त का स्वरूप देखकर सारा समाज अत्यन्त प्रभावित हुआ।

(अगले अंक में समाप्त)

सावधानीपूर्ण कुछ चेतावनियाँ

दादा धर्माधिकारी का संघ अधिवेशन का समापन भाषण

आप लोगों को बधाई देना चाहता हूँ कि मैं जिसलिए यहाँ आया था, कुछ सुनने, कुछ सीखने, उसमें मुझे बहुत लाभ हुआ। बहुत जिम्मेदारी के साथ, बहुत व्यवस्थित भाषण यहाँ पर हुए, और उनमें से मुझे बहुत कुछ सीखने के लिए मिला। यह नरेन्द्र भाई बहुत व्यवस्थित भाषण करता है और अपनी बात कहता है। जो अपनी बात कहता है उसका महत्व है और जो सबकी बात कहता है उसका उतना महत्व सभा में नहीं होता। यह बाबूराव चन्दावार है, इसे मैंने नॉन कन्फरमिस्ट कहा। जो कन्फरमिस्ट है वह विचार नहीं करता। दूसरों के विचार के अनुसार विचार करता है; उसका अपना कुछ कहना नहीं होता है। अगर इन लोगों की बिरादरी बढ़े, तो इसमें से विचार का विनिमय होगा। एक विचार और भिन्न विचार दोनों आयेंगे। इसमें से विचार की प्रगति होगी, विकास होगा। इन लोगों को मैं बधाई देता हूँ।

मेरा नाम पूज्य बाबा, जयप्रकाश बाबू, धीरेन्द्रदा, शंकररावजी के साथ लिया गया। मित्रो! मैं यह विनय के कारण नहीं कह रहा हूँ, इन लोगों के पैरों के पास बैठने की भी मेरी योग्यता नहीं है। फिर भी यहाँ आकर मैं इसलिए बात करता हूँ कि आप मुझे 'इलेक्ट्रिक ब्रेन' या 'कम्प्यूटर' समझिये। जो देखता हूँ वह कहना चाहिए, जो करता हूँ वह नहीं। आँखें देखती हैं, हाथ करता है। आँख जितना देखती है उतना ही देखना चाहिए। जितना देखनी है उससे मनुष्य हमेशा कुछ कम करेगा। जितना करता है उतना ही देखेगा तो गड्ढे में गिरेगा। यह मैं कृतिवादियों से कह देना चाहता हूँ। कृतिवाद भी एक वाद है और कर्म करने में जड़ है। वह मनुष्य को जड़ बनाता है। कर्म से अनुभव होता है, ज्ञान का विकास कभी नहीं होता, आज तक नहीं हुआ। लम्बी जीभ का आदमी हूँ, बोलता रहता हूँ, बोलता रहा तो बोलता ही रहूँगा। इसलिए थोड़े में आप लोगों के सामने एक-एक चीज रखनेवाला हूँ।

बाबा का नेतृत्व

मैंने यह कहा था और दुबारा कह हूँ कि सामुदायिक संगठित पुरुषार्थ के लिए नेतृत्व की आवश्यकता होती है। और इस नेतृत्व के लिए मैं विनोबा को सबसे अधिक उपयुक्त इसलिए मानता हूँ कि वहाँ पर नेतृत्व है लेकिन हुकूमत नहीं है। वंग ने एक बार कहा था कालड़ी में या कहीं पदयात्रा में कि हमारा नेतृत्व असफल हुआ है। बाबा ने जवाब दिया—यह तो बड़े आनन्द की बात है कि मेरी असफलता आप लोगों की सफलता होनी चाहिए। यह आकांक्षा एक नेता की है। मैं समझता हूँ कि इतिहास में ऐसा नेता अद्वितीय है। आपकी या मेरी यही शिकायतें हैं न कि वह नेतृत्व नहीं दे रहा है? इसमें हमको आनन्द मानना चाहिए। लेकिन फिर भी जब मैं कहता हूँ कि आवश्यकता है, तो इसलिए कि यह एक 'कलेक्टिव आर्गनाइजेशन' है। प्रत्यक्ष कार्रवाई की बात आप लोगों ने की। मैं समझता हूँ कि गोकुल भाई भट्ट ने अनायास एक अवसर उपस्थित कर दिया है। हमारा मुख्य आन्दोलन तो भूमि का आन्दोलन है। हमारी मुख्य समस्या भूमि की समस्या है और मुझे पूरा विश्वास है कि भूमि की समस्या से हमारे देश की जनता और किसानों को जितना उत्साह दिया जा सकता है उतना किसी अन्य समस्या से नहीं। भूमि की समस्या हमारी मुख्य समस्या है एक चीज। दूसरी चीज, अब संसार में कहीं भी कोई क्रान्ति शस्त्र या हिंसा से नहीं हो सकती है। यह भी एक वैज्ञानिक सत्य है। यह सिद्धान्त नहीं है। मैंने भोपाल में भी कहा था कि अहिंसा सिद्धान्त नहीं, बल्कि युग की व्यावहारिक आवश्यकता है। इसलिए अहिंसा को सिद्धान्त, देवता वगैरह कुछ नहीं मानें। ये दो चीजें हैं। तीसरी चीज, कि हमें समाज की बुनियादें बदलनी हैं। बुनियाद बदलने से मेरा मतलब है कि मनुष्य और मनुष्य के बीच आज जो सम्बन्ध हैं वे सम्बन्ध आनेवाले जमाने में नहीं रहने चाहिए, हरगिज नहीं रहने चाहिए। मालिक-मजदूर नहीं, अमीर-गरीब नहीं, पण्डित-मूरख नहीं, ब्राह्मण-भंगी नहीं।

शरायबन्दी सत्याग्रह

जयपुर में एक सरकार के साथ हमारी भेंट हो रही है। मालूम होता है कि यह मुठभेड़ है। आशा है कि बाद में इसमें से हमारा आलिंगन होगा, मुठभेड़ नहीं। यह भरत-भेंट साबित हो। लेकिन भरत-भेंट के लिए पहले आवश्यक यह है कि हमारे हृदय में प्रेम की शक्ति हो, मनोबल हो। इसमें हम अपनी विवशता न मानें। और तो और राम का भाई लक्ष्मण भी भरत को देखकर भयभीत हो गया था और चतुरंगिनी सेना लेकर राम से लड़ाई लड़ने आया था। लेकिन भेंट होते ही युद्ध नहीं हुआ। भरत-भेंट हो गयी। यह तो पहले हो सकता है कि दोनों पक्ष एक दूसरे से सतर्क रहे, भयभीत रहे, लेकिन अन्त में भरत-भेंट होकर रहेगी यही हमारा लक्ष होना चाहिए, हमारी मंशा होनी चाहिए।

आचार्यकुल

आचार्यकुल की चर्चा में यहाँ कहा गया कि उनको अपने विचार का प्रचार नवयुवकों में करना चाहिए, शिक्षकों में करना चाहिए। मैं आपसे हाथ जोड़कर कहने आया हूँ कि माफ कीजिए अपने विचार का प्रचार मत कीजिए। अपने विचार का प्रचार आसुरी प्रचार है। आप विचार-शक्ति का विकास कीजिए। उनको विचार करने के लिए प्रेरित कीजिए। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो दुनिया में किसी भी युग में कभी कोई दुनिया को आगे नहीं ले जायगा। हमको

अपने विचार का प्रचार नहीं ही करना है और अपने विचार का प्रचार नहीं करना है तो गांधी और विनोबा के विचार का प्रचार तो बिलकुल ही नहीं करना है, न राम का करना है, न कृष्ण का ही करना है, न भगवद्गीता का करना है, न वेदों का करना है, न बाइबिल का करना है।

ग्रामस्वराज्य

ग्रामस्वराज्य में इतना सब सुनने के बाद भी मैं कहना चाहता हूँ कि हम पुरुषार्थ गाँव का चाहते हैं अपना नहीं। हमारे पुरुषार्थ से क्रान्ति नहीं होगी। क्रान्ति होगी गाँव के पुरुषार्थ से, प्रेरणा हमारी होगी, सहयोग हमारा होगा और इतना सहयोग कि हम कहीं दिखाई भी न पड़ें। इतना शून्यवत हम हो जायें, ऐसा सहयोग हमारा होगा। हमारा से मतलब आपका कह रहा हूँ, अपने को नहीं गिन रहा हूँ; क्योंकि अपने को तो समर्पण में आस्था नहीं है। इतना अहंकारी हूँ। लेकिन जो क्रान्ति करना चाहते हैं उनको मेरा कहना है कि क्रान्ति में पुरुषार्थ उनका होना चाहिए जिनको क्रान्ति की आवश्यकता है। आपके पुरुषार्थ की क्रान्ति उधार की क्रान्ति होगी। उसमें से कभी उनका पुरुषार्थ जगेगा नहीं। आपको अगर त्याग, संयम, वैराग्य की तमन्ना है तो अपनी आत्मोन्नति के लिए करें उनके उपकार के लिए नहीं।

नागरी लिपि

नागरी लिपि का बहुत बड़ा महत्त्व है, लेकिन अब मैं इसे बहुत आगे बढ़ाऊँगा नहीं। आपका ध्यान एक ही बात की तरफ दिलाना चाहता हूँ कि भाषा और लिखावट दो अलग-अलग चीजें हैं। यहाँ लिखा है अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन नागरी लिपि में। यह गुरुमुखी में लिखा होता तो यहाँ जितने पंजाब के बाहर के लोग बैठे हैं सब के सब निरक्षर हो जाते। लिखा है अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन। चाहे गुरुमुखी में लिखिए, चाहे उर्दू में लिखिए, चाहे तमिल, तेलगू, कन्नड़ में लिखिए, शब्द तो वही रहेंगे—अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन। अखिल भारतीय है तो अखिल भारतीय लिखेगा चाहे तमिल वगैरह में थोड़ा बदल जाय, वह अलग बात है। अब हम यहाँ तक नीचे उतर आये हैं कि हमारी लिपि का भी झगड़ा चलने लगा है, भाषा की बात तो छोड़ दीजिए। जो भाषा से लेकर लिपि के झगड़े पर आ गये हैं वे किस संस्कृति का विकास करेंगे? वहाँ भारतीय संस्कृति का विकास हो सकेगा क्या?

संगठन

आज की संस्थाएँ युग की आवश्यकता की पूर्ति करनेवाली नहीं हैं। इस युग में आनेवाले जमाने की झाँकी दिखाई देती है। इन संस्थाओं को अहिंसा का विरोधी कहा था कुमारप्पा ने। विरोध सरकार का नहीं समाज का। समाज में जो आज संस्थाएँ हैं उनसे भिन्न प्रकार की संस्थाएं आनेवाले समाज की कुछ झाँकी दिखा देनेवाली हैं। एक क्रान्ति प्रतिकार की, जो समाज के बुनियादों को उखाड़ती है। दूसरी क्रान्ति नये समाज की बुनियादें डालने की, जो समाज होगा उसकी बुनियाद डालनेवाली संस्थाओं की क्या शक्ल होगी उसकी कुछ झाँकी हम देख सकते हैं तो संस्थाओं को देखें। दूसरी चीज, संस्थाएँ चुस्त नहीं होती, लेकिन कागज की चीज होती हैं। अध्यक्ष महोदय मुझे क्षमा करें। संस्था जब चुस्त होती है तो क्रान्ति क्षीण होती है, सदस्यता चुस्त होती है और रिश्तेदारी ढीली होती है; शिथिल होती चली जाती है। संस्था में रिश्तेदारी का विकास होना चाहिए। मानव-निष्ठा उसका मुख्य सूत्र होना चाहिए। संविधान-निष्ठा नहीं, नियम-निष्ठा नहीं और विधि-निष्ठा नहीं। संविधान रहे लेकिन जोर संविधान पर नहीं, मनुष्य पर।

शासनमुक्ति

शासनमुक्ति अलग चीज है और अराजकवाद एक बिलकुल अलग चीज। शासनमुक्ति में नागरिक-नागरिक के बीच में किसी तीसरी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती। दो नागरिकों के बीच में तीसरी शक्ति की आवश्यकता न हो उसे शासनमुक्ति कहते हैं। दो नागरिकों के बीच में कानून की जरूरत नहीं, शासन की जरूरत नहीं, इसका नाम है शासनमुक्ति। इस शासनमुक्ति की तरफ हमें अपना हाथ बढ़ा देना चाहिए। इसके लिए आवश्यकता होगी पारस्परिकता, निर्वैरता और अनुशासन की। समाज में हमारा वैरी कोई नहीं। तीसरी चीज, जो अनुशासन होगा वह प्रेम के आधार पर होगा। अगर किसी का बेटा बीमार पड़ जाय तो हलक के नीचे निवाला भी नहीं उतरेगा। हलक के नीचे निवाला भी नहीं उतरता है इसमें जो अनुशासन आता है वह है प्रेम-प्रेरित अनुशासन। इसका विकास होना चाहिए।

निःशस्त्रीकरण या शस्त्र-सन्यास

बांगला देश के बारे में राधाकृष्णजी ने सुनाया कि उनसे बाहर के देशों के लोग कई सवाल कर रहे थे। इसमें आपको फैसला कर लेना चाहिए। काश्मीर के प्रश्न पर गांधी ने जो कहा था उस पर भी यही सवाल उठा था। १९६२ में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और विनोबा ने जो कहा था उस पर यही सवाल उठा। बांगला देश के वक्त भी यही सवाल उठा। निःशस्त्रीकरण और शस्त्र संन्यास दो अलग-अलग चीजें हैं। निःशस्त्रीकरण एक परिस्थिति है। शस्त्र-सन्यास एक दृष्टिकोण है, मन की एक भूमिका है। निःशस्त्रीकरण आवश्यक है लेकिन निःशस्त्रीकरण-जैसे शस्त्र-संन्यास आवश्यक नहीं। कहीं ऐसा न हो कि निःशस्त्रीकरण का नतीजा अंग्रेजी राज के बाद भारत में जो हुआ था वही अहिंसा के साथ भी हो। मैं दुबारा कह दूँ कि अहिंसा हमारे लिए अब सिद्धान्त नहीं रह गयी है। इसलिए अहिंसा के सिद्धान्त की अपेक्षा वीर-वृत्ति का मूल्य अधिक है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मनुष्य में वीर-वृत्ति जितनी बढ़ती है, वैर उतना कम

होता है। यह लक्षण है वीर-वृत्ति का। वीर-वृत्ति का जितना अधिक विकास होगा वैर-वृत्ति उतनी ही कम होगी। जितनी वैर-वृत्ति कम होगी हिंसा उतनी ही कम होगी। हिंसा अगर कम होगी तो शस्त्र-सन्यास होगा। शस्त्र-सन्यास की आवश्यकता है, निःशस्त्रीकरण की नहीं। इसका निर्णय हमको कर लेना होगा। दुनिया भर में आकांक्षा है कि निशस्त्रीकरण होना चाहिए। और, नित्य नये-नये शस्त्रों की जो खोज हो रही है उसमें वीर वृत्ति का विकास नहीं हो रहा है। शस्त्रों से आतंक छा गया है, शस्त्रों के कारण दुनिया भर के लोगों में गम छा गया है। इसमें से कभी भी अहिंसा नहीं निकलेगी, वीर-वृत्ति का विकास नहीं हो सकता। लेकिन यह तो मैंने विश्लेषण कर दिया है। निर्णय तो आपको करना है।

क्रान्ति का एजेण्ट

हमारा असर नहीं होता, इसलिए अपने साधनों को छोड़ते चलो। जिन साधनों से असर होता है उनको पकड़ो। तब तो तुम हारने ही वाले हो, उनके माहिर तो वहाँ बैठे हुए हैं ही। वे तो तुमसे कहीं अच्छे सिद्धहस्त हैं। उनके समक्ष तुम नहीं टहर सकोगे। तुम अपना असर चाहते हो कि समाज परिवर्तन चाहते हो? समाज-परिवर्तन किन साधनों से चाहते हो? नतीजे को देखकर लगता है कि परिवर्तन अहिंसक साधनों से ही होगा। किसी दूसरे साधन से समाज-परिवर्तन असम्भव है।

मित्रो! क्रान्ति में से प्रतिरक्षक हटा दीजिए। क्रान्ति का एजेण्ट नागरिक और कोई नहीं, पार्टी-नहीं, सेना नहीं, सर्वोदय-वालों की शान्तिसेना भी नहीं। नागरिक क्रान्ति करना नहीं चाहता है तो उसको प्रणाम कीजिए और उससे कहिए कि हम भी ईश्वरार्पण और आप भी कृष्णार्पण।

संघर्ष का भय क्यों?

अब एक प्रश्न उठता है कि निर्वैर होकर भी संघर्ष हो सकता है क्या? यह धर्म-युद्ध का लक्षण है। धर्मयुद्ध में वैर नहीं रहता संघर्ष होता है। जब निर्वैरता होती तब धर्मयुद्ध होता है। जितना आपका प्रतिकार, संघर्ष, क्रान्तिकारी होगा उतना वह निर्वैर होगा। अब वर्ग-संघर्ष की बात कहने की जरूरत क्या है? मित्रो मैं कह रहा था न कि वर्ग है ही नहीं और मुझे ऐसा कम्यूनिस्ट बतलाइये जो कहता हो कि खेती के क्षेत्र में, कृषि के क्षेत्र में, वर्ग है, जिसकी कल्पना मार्क्स ने की थी? ये तो सारे छोटे मालिक हैं। मैं इतना ही कह रहा था कि वर्ग संघर्ष को हौवा मत बनाइये, इससे घबराइये नहीं। हमने इसको हमेशा हौवा बनाया है। हकीकत में कुछ है ही नहीं। यह सारा का सारा खेत में आदमी का ढाँचा खड़ा करने की तरह है। हिंसावाद से जो डरता है वह अहिंसक होगा क्या? वर्ग-संघर्ष से जो घबराता है वह संघर्ष करेगा? वर्ग है ही नहीं, अमीरी और गरीबी है। अमीरी और गरीबी को हटाना चाहते हैं इसमें जो संघर्ष आयेगा वह संघर्ष हमारा नहीं, सबका होगा। क्रान्ति का संघर्ष होगा, आवश्यक संघर्ष होगा। अब उसमें से यह हो सकता है कि कुछ लोग डरें। हम किसी को डराना भी नहीं चाहते हैं और किसी को नाराज भी नहीं करना चाहते हैं। नाराजी भी टालना चाहते हैं और डर भी टालना चाहते हैं। जो डरा हुआ है, काँप रहा है, उसको हिम्मत दिलाने की जरूरत है। उसको हिम्मत दिलाने में अगर वह समझता है कि उसको डरा रहे हैं तो भगवान ही मालिक है। हम क्या कर सकते हैं? लेकिन एक बात पूरी तरह समझ लीजिए डर से, दहशत से, खौफ से, आतंक से, दुनिया में कोई क्रान्ति कभी नहीं हुई है न आज हो सकती है। हम दहशत या आतंक फैलाना नहीं चाहते हैं। निरातंक हमारी नीति का, योजना का एक अविभाज्य अंग है। हम सबको निर्भय बनाना चाहते हैं, लेकिन गरीब निर्भय बने इसीसे अगर वह डर जाये तो कहेंगे कि तू इसलिए डर रहा है कि तेरे पास अमीरी है, तू धनवान है। जिनके पास धन है वह अपने बेटे से भी डरता है, जिसके पास राज्य है वह अपने बेटे को भी कैद में रख देता है तो हम क्या कहें कि बेटेपन से भी इस्तीफा दे दें। इन भूमिकाओं में से विरोध पैदा होते हैं। हमारे पास उनका उपाय नहीं है।

हमको सबसे बड़ी फिक्र इसकी है कि हमारा प्रभाव नहीं हो रहा है। एक बन्दर ने एक बीज लगा दिया था। रोज कुरेद-कुरेद कर देखता था कि कितना अंकुरित हुआ? उससे किसी ने कहा था कि तीन माह में पेड़ हो जायगा। रोज कुरेद कर देखता था तो बीज का बीज ही रह जाता। हम तो बराबर प्रभाव देखते रहते हैं। मैं अपने बारे में सोचता हूँ कि इतने लोग मेरा भाषण सुनने आये हुए हैं, तो जब मैं मर जाऊँगा और मेरी श्मशान-यात्रा चलती होगी तो अरथी पर से उचक-उचक कर देखूँगा कि मेरी श्मशान-यात्रा में कितने लोग शामिल हैं। यह भयानक लोकैषणा है। अगर आपको कुछ भी विरक्ति है तो इस लोकैषणा को सबसे पहले छोड़िये। यह मैं क्यों कह रहा हूँ? इसलिए कह रहा हूँ कि पिछले पच्चीस वर्षों में २५ सौ उपवास और २५ सौ सत्याग्रह हुए होंगे। क्या जनता बहादुर हुई है? लोग हमसे कहते हैं विनोबा और जयप्रकाश ने सत्याग्रह नहीं किया इसलिए ऐसा हो रहा है। मैं विनोबा जयप्रकाश के बारे में कुछ कह नहीं सकता हूँ लेकिन आप लोगों से कहता हूँ कि आप लोग कोई तीसमार खाँ नहीं हैं। कहीं ऐसा न हो कि २५ सौ सत्याग्रही जैसे पट्ट बोल गये वैसे आप भी पट्ट बोल जायें। खूब याद रखिये 'तीर्थ क्षेत्रे कृतं पाप।' फिर, इस देश में सत्याग्रह के लिए कोई आशा नहीं रहेगी। गोकुल भाई का मौका आ गया है तो 'रिहर्सल' (अभ्यास) कर लीजिए।

साधन-शुद्धि

साधन-शुद्धि में एक बात आप लोगों की सेवा में निवेदित कर देना चाहता हूँ। हम अपने आयोजनों में क्या समाज की वर्तमान प्रतिष्ठाओं को क्षीण कर रहे हैं? यह

(शेष पृष्ठ ३३५ पर)

डेढ़ माह की परीक्षा में पास होना ही है

● विनोबा

हमने राजगीर सम्मेलन के बाद बिहार छोड़ा। उसे अब ढाई साल हो गये। ढाई साल की अवधि इस विज्ञान के जमाने में छोटी नहीं मानी जायेगी। पहले हम बिहार में घूमते थे तो कुछ काम हुआ, लेकिन बाद में लोग धीमे पड़ गये। फिर, जब वे लोग यहाँ आये थे (१९६४ ई० गोपुरी, सर्व सेवा संघ-अधिवेशन), तब हमने कहा कि 'तूफान करो तो बाबा बिहार आ सकता है।' अब बाबा खुद 'आफर' करे आने का और हम उसे कहें कि 'ना भाई, हम तो नहीं कर सकते; यह मुश्किल मामला था। फिर, मेरा ख्याल है, जयप्रकाशजी वगैरह लोगों ने बैठकर तय किया और 'हाँ' कहा। फिर हम वहाँ गये, चार साल वहाँ घूमे। चार साल में सारे बिहार में बिलकुल मंथन हो गया, और जाहिर हो गया कि बिहार प्रांत पूरा का पूरा ग्रामदान में शामिल है।

राजगीर में हमारा आखिरी व्याख्यान हुआ था। उसमें हमने कहा कि अब तक "तूफान" हुआ, अब "अति तूफान" करो। तो एक भाई ने कहा कि हम बहुत थके हुए हैं, हमें पन्द्रह दिन की छुट्टी दी जाये। सम्मेलन का समारोह हुआ, वह समेटना था। तो हमने पंद्रह दिन की छुट्टी मन्जूर की। और फिर हम इधर आ गये। उसके बाद अनेक घटनाएँ हुईं। लेकिन बिहार ठण्डा पड़ता गया।

फिर हमने कहा, सारा बिहार छोड़िये, एक जिला बनाइए। दक्षिण बिहार का जिला लेने में कोई सार नहीं, वह बहुत सारा आदिवासी एरिया है। उत्तर बिहार का जिला लेना चाहिए। उसमें भी सहरसा सबसे छोटा जिला है। उसकी सीमा नेपाल से लगी है। सहरसा लिया जाये और उसमें अपनी सारी ताकत लगायी जाये। कई महीने लगातार ताकत लगी और आखिर अभी महीना-डेढ़-महीना जोर लगा कर कुछ काम हुआ। उसमें हिन्दुस्तान के दूसरे प्रांतों के भी सौ-सवा-सौ लोग गये, बाकी बिहार के थे।

जब हमने कहा था कि "अति तूफान" करो, तो उसके साथ-साथ एक बात और कही थी, वह यह कि तुम लोगों में जो मतभेद होंगे, वे सारे एक साल जेब में रखो और एक साल में काम पूरा करो। काम पूरा करने के बाद सोचा जायेगा। वैद्यनाथ बाबू ने कहा कि हम तो जेब में भी रखेंगे नहीं, रखेंगे ही नहीं, हमने तो छोड़ ही दिये। और वे यथाशक्ति यथामति काम में लगे हैं। महाभारत में एक वाक्य है—किसी ने मुझ से कहा कि वह वाक्य पार्लियामेंट के दीवाल पर लिखा है—"न सा सभा न यत्र सन्ति वृद्धाः"—वह सभा नहीं, जिसमें वृद्ध नहीं। और तरुणों की अगर सभा हुई, तो क्या हालत होती है, यह बिहार को पूछो। अगर यह भी होता कि वृद्धों के लिए आदर नहीं, परवाह नहीं, लेकिन जवान आपस-आपस में मिलकर काम करते हैं, तो भी बात अलग होती। लेकिन वह भी नहीं हुआ।

महाभारत में प्रसंग है। एक दफा, दिन भर के युद्ध के बाद शाम को चर्चा चली। युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, कृष्ण, सब बैठे थे। युधिष्ठिर बोले—"अरे अर्जुन, तू इतना जवान, तेरे गाण्डीव की इतनी कीर्ति, किस काम का वह?" तो अर्जुन एकदम उसे मारने उठा। कृष्ण ने उसका हाथ पकड़ा और उसको रोककर कहा—"तुम बड़े मूर्ख दीखते हो, "न वृद्धाः सेविताः त्वया"—तुमने वृद्ध की सेवा नहीं की है। अर्जुन की प्रतिज्ञा थी कि जो गाण्डीव की निंदा करेगा, उसे मारूँगा। कृष्ण ने उसे समझाया कि युधिष्ठिर ने गाण्डीव की निन्दा की, वह तो तुम्हारे पुरुषार्थ को जगाने के लिए, हत्या करने के लिए नहीं। इतनी भी अक्ल तू नहीं रखता, कारण तूने वृद्धों की सेवा नहीं की।

महाभारत में यक्ष-प्रश्न है। भीष्म जवाब दे रहे हैं, यक्ष पूछता है—कथं ज्ञानम्; उसका उत्तर दिया भीष्म ने—"सज्ञानं वृद्धोपसेवित."—वृद्धों की सेवा करने से ज्ञान प्राप्त होता है। वृद्ध की सेवा को और उनके आशीर्वाद को इतना महत्व दिया। उसमें मुझे लगता है, एक साल गया। अब सहरसा में जोर लगाया तो कुछ काम हुआ। मैं खुले दिल से बात इस लिए कह सकता हूँ आप लोगों से, क्योंकि मेरा आप लोगों से हार्दिक सम्बन्ध है। हिंदुस्तान के सब प्रांतों में मिलकर एक हजार लोग ऐसे हैं, जिनका बाबा के साथ हार्दिक सम्बन्ध है, और जिनसे बाबा खुले दिल से बात कर सकता है, इस वास्ते हृदय को चुभे तो भी बाबा बोल देता है।

ये लोग सहरसा में महीना-डेढ़-महीना तक जोर लगाकर आये। वहाँ जितनी शक्ति लगी, उस हिसाब से काम अच्छा ही हुआ, कहना होगा। उसके लिए मैंने उनका अभिनन्दन भी किया। दो दिन यहाँ चर्चा चली। हमने इनसे कहा, दुबारा निर्णय करो, सहरसा में कब तक काम पूरा करोगे? इन लोगों ने निर्णय किया कि इस साल के अन्त तक काम पूरा करेंगे। तय किया कि छः माह में २१ प्रखंड पूरे करेंगे—पूरा जिला। तो मैंने सुझाया कि प्रथम चार प्रखण्ड लेकर १४ मई से जून अन्त तक डेढ़ माह में वहाँ का काम पूरा करो। उसमें सच्चाई होनी चाहिए। किसी प्रकार की कोई गलती काम की नहीं। सब लिखित पत्रक तैयार होना चाहिए। स्वच्छ, निर्मल काम हो। उसमें जिस तरह अभी तक 'बंगलिंग' हुआ, वैसा नहीं चलेगा। यह चार प्रखण्ड हो गये तो मान सकते हैं, इस तरह बाकी २० प्रखण्ड भी हो सकते हैं।

अगर डेढ़ महीने में ये चार प्रखण्ड नहीं हुए, तो बाबा बिहार पर श्रद्धा रखेगा नहीं और समझेगा कि बिहार भगवान को समर्पण। आखिर बाल पुरुष

होता है। कालात्मा। 'कालोऽस्मि लोक-क्षयकृत्प्रवृद्ध' "मैं काल हूँ, कालरूप और लोगों में प्रलय के लिए प्रवृत्त हुआ हूँ। तो बाबा कहेगा, 'हे भगवान अब तुम अपनी लीला करो, जो करनी है।' हम इसमें ज्यादा राह देखेंगे नहीं। यह बिहार तुम्हें समर्पण है। तो इस छह महीने में चार प्रखण्ड पूरे करोगे, तो बाबा बिहार पर विश्वास करेगा। बात ऐसी है कि बाबा विश्राम ही विश्राम लेना चाहता है हमेशा। परन्तु प्रत्येक वस्तु की एक हद होती है। उससे ज्यादा विश्राम रखने में मजा नहीं। इस वास्ते भगवान पर छोड़ देना ज्यादा अच्छा है।

हिन्दुस्तान में छः हजार प्रखण्ड हैं। सारे प्रखण्डों में काम करना है। अभी सर्व सेवा संघ के कुछ लोगों की बैठक हुई थी। उनसे मैंने पूछा कि कितने प्रखण्डों में सर्व सेवा संघ का स्थान होगा। तीन हजार में है। तो पता चला कि तीन हजार में भी नहीं है। उन लोगों ने अभी तय किया कि एक हजार प्रखण्डों में खादी आफिस बनायेंगे। सर्वोदय सम्मेलन में इसका प्रान्तवार बँटवारा करेंगे।

आज पूरे भारत से बाबा को मिलने लोग यहाँ पर आते हैं। उनमें खास काम हुआ हो ऐसा दीखता नहीं। यह सभा हुई, वह सभा हुई, फलाने का व्याख्यान हुआ, इत्यादि होता है। इसलिए इस वक्त सर्वोदय के जितने सेवक हैं, भारत में, उनको एक होकर एक दिल से काम करना चाहिए।

मुश्किल यह है कि हम अनेक कामों में गिरफ्तार हैं—नम्बर एक, अपने शरीर का आरोग्य। बीमार पड़ते रहते हैं, आरोग्य सम्भालना एक काम है। नम्बर दो, घर का काम। नम्बर तीन, आसपास के लोगों की माँगें। सामाजिक माँगें, कुटुम्ब की माँगें और कुछ शरीर की माँगें। और फिर हम तय करते हैं कि अगले दिसम्बर तक हम काम पूरा करेंगे। एक भाई ने हमसे कहा कि मेघराज को अपनी सेहत दिखाकर फिर एक तारीख को काम पर हाजिर होंगे। तो मैंने उसमें जोड़ दिया—"बशर्ते जिन्दा रहें"। आखिर हमारी चोटी भगवान के हाथ में है, और बात करने जाते हैं। "जो कल करें सो आज करें, जो आज करें सो अब कर लें" ऐसी तीव्रता होगी, तो हम केवल निमित्त मात्र होंगे और भगवान काम करायेगा। हम अपनी शक्ति से तो काम करते नहीं, सब भगवान ही करता है। लेकिन भगवान भी किसे औजार बनायेगा? जो पूर्णतया निरहंकार होगा, सारी चिन्ता भगवान पर छोड़ देगा। मेरा कुछ भी नहीं—"न मम"। भगवान व्यास ने लिखा है, दो अक्षरों में बैर और तीन अक्षरों में मोक्ष है—भगवान मृत्यु है। और फिर कहा है—"मम" यानी मृत्यु "न मम" यानी मोक्ष। "न मम"—"मेरा कुछ भी नहीं"। मम शरीरम् मम कुटुम्बम्, मम समाजः—ऐसा कुछ भी नहीं। इस वास्ते हमारी परीक्षा १४ मई से शुरू होगी और साल के अन्त तक उस परीक्षा में पास होना ही है। भगवान की वही कृपा होगी अगर पूर्ण निरहंकार होकर "न मम" कहकर काम में लगेंगे।

(सहरसा के साथियों के बीच विनोबाजी द्वारा २९-४-'७२ को ब्रह्म विद्या मन्दिर, पवनार में दिया गया भाषण)

सर्व सेवा संघ की नयी प्रबन्ध समिति के सदस्य

१. श्री सिद्धराज ढड्ढा (अध्यक्ष)
२. श्री ठाकुरदास बंग (महामंत्री)
३. श्री जयप्रकाश नारायण
४. ,, जगन्नाथन्जी
५. आचार्य राममूर्ति
६. श्री नरेन्द्र दुबे
७. ,, कान्ति भाई शाह
८. ,, यशपाल मित्तल
९. ,, सुदर्शन शर्मा
१०. ,, कैलाश प्रसाद शर्मा
११. ,, नारायण देसाई
१२. ,, निर्मला देशपाण्डे
१३. ,, अरुणाचलम्
१४. ,, मनमोहन चौधरी
१५. ,, सदाशिवराव भोयरे
१६. ,, गोविन्दराव देशपाण्डे
१७. ,, देवेन्द्र कुमार गुप्त
१८. ,, राधाकृष्ण
१९. ,, डा० सुन्दरम्‌जी
२०. ,, सोमभाई
२१. ,, बहुर फातमी
२२. ,, बद्री प्रसाद स्वामी
२३. ,, अन्नपूर्णा महाराणा
२४. ,, वी० रामचन्द्रन्-मैनेजिंग ट्रस्टी

समिति के स्थायी निमंत्रित

१. कुमारी सरला बहन
२. श्रीमती सुमन बंग
३. श्रीमती प्रभावतीजी
४. ,, हेमलता हेगिष्टे
५. ,, हरविलास बहन
६. श्री चारुचन्द्र भण्डारी

७. श्री कृष्ण राज मेहता
८. श्री रामकृष्ण पाटील
९. डा० दयानिधि पटनायक
१०. श्री जीवनलाल
११. ,, राधाकृष्ण बजाज
१२. श्री वंशीधर श्रीवास्तव
१३. ,, गोकुल भाई भट्ट
१४. ,, अनन्त कुमार दरब
१५. ,, उजागर सिंह बिलगा
१६. ,, शिरीष राय चौधरी
१७. ,, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी
१८. ,, पूर्णचन्द्र जैन
१९. ,, सुन्दरलाल बहुगुणा
२०. ,, महावीर सिंह
२१. ,, गयाप्रसाद अग्रवाल
२२. ,, धीरेन्द्र मजूमदार
२३. ,, त्रिपुरारिशरण
२४. ,, दादा धर्माधिकारी
२५. ,, कोमीलायन् नायर
२६. ,, मोहम्मदभाई
२७. ,, सोमेश्वर शास्त्री
२८. ,, फूलीबाई मेर
२९. ,, गौरा देवी
३०. ,, डा० चारलु
३१. ,, स्वामी कृष्णानन्द
३२. ,, प्रेमभाई
३३. ,, मैत्रेय डोम्बटकर
३४. ,, धर्मेन्द्र प्रकाश
३५. ,, वी० रामचन्द्रन्
३६. ,, कपिल भाई

सकोदर,
१९-५-७२

श्रोताओं के समक्ष लोकमन
कैसा रहा बागी जीवन ?

सव

सुश्री सरलाबहन
(उद्घाटन)

←श्री सिद्धराज ढड्ढा एवं ठाकुरदास बंग।
अध्यक्ष-मंत्री : चिन्तन

खादी ग्रामो

सम्मेलन
की
झाँकियाँ

← मण्डप में श्रोतागण

श्री एस० जगन्नाथन्
अलविदा के क्षण

दादा धर्माधिकारी
(समापन)

...री का दर्शन

आचार्य राममूर्ति (अध्यक्षीय भाषण)

२९ मई

भोपाल से नकोदर : एक सिंहावलोकन

भोपाल संघ अधिवेशन के ६ माह के बाद हम लोग नकोदर में मिल रहे हैं। इस बीच देश और दुनिया में कई घटनाएँ घटी हैं। बांगला देश स्वतंत्र हुआ और भारत ने एकतरफा युद्ध-विराम कर अपनी नयी प्रतिष्ठा कायम की। इसी अरसे में देश में सर्वोदय आन्दोलन आगे बढ़ता चला गया। कई विषयों में प्रगति अपेक्षाकृत धीमी रही। कई विषयों में चमत्कार-सी लगनेवाली प्रगति हुई। इन सब घटनाओं का यहाँ संक्षिप्त ब्योरा प्रासंगिक होगा।

ग्रामदान

इस अवधि में ग्रामदान-पुष्टि ही आन्दोलन की मुख्य धारा रही। सारे सर्वोदय-जगत की आँखें सहरसा की ओर लगी रहीं। वहाँ पिछले डेढ़ साल से चन्द साथी जन-जागृति की अनवरत कोशिश कर रहे थे। इन कोशिशों के परिणाम-स्वरूप मार्च १८ से अप्रैल १८ तक के एक मास की अवधि में पुष्टि की गतिविधियों ने उच्चांक प्रस्थापित किया। भारत भर के तीन सौ से अधिक कार्यकर्ताओं ने इस एक मास की अवधि में जिले भर में पदयात्राएँ कीं। फलस्वरूप एक हजार एकड़ से अधिक जमीन का बँटवारा १८ अप्रैल को हो सका। अस्वास्थ्य के कारण जयप्रकाशजी की अनुपस्थिति के बावजूद मुसहरी में काम आगे बढ़ रहा है। पूर्णिया जिले में रुपौली के बाद अब भवानीपुर प्रखण्ड में पुष्टि का काम जारी है। सुदूर तमिलनाडु के तंजावूर जिले में काम आगे बढ़ा है। अद्वैतमत में माननेवालों का यहाँ प्राबल्य होने के कारण एवं मठ-मन्दिरों के पास बड़ी तादाद में भूमि रहने के कारण यहाँ का पुष्टि-कार्य कठिन हो गया है, लेकिन कार्यकर्ता मैदान में डटे हुए हैं। ये कठिनाइयाँ जैसे एक चुनौती हैं वैसे ही एक सुअवसर भी है। बीकानेर में तवा ठंडा पड़ गया है। आगरा जिले की जगनेर प्रखण्ड में मार्च महीने में एक सप्ताह की पुष्टि-पदयात्राएँ हुईं। इससे कार्यकर्ताओं में उत्साह का संचार हुआ और एक सप्ताह में उनके प्रयत्नों से ८ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनीं, साथ-साथ ग्रामदानी गाँवों में ४० दाताओं से ७८ एकड़ जमीन वितरण के लिए मिली, जिसमें से ४६ एकड़ जमीन बाँटी भी गयी।

ग्रामदान के अभियान में इन ६ महीनों में की गयी पदयात्राओं ने एक नया आयाम जोड़ा है। इन पदयात्राओं में ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि की प्रक्रियाओं को एवं कार्यकर्ताओं को समन्वित किया गया। इस नये दरवाजे को खोलने का श्रेय आन्ध्र प्रदेश के महबूबनगर जिले के जड्चरला प्रखण्ड को देना होगा। यहाँ नवम्बर में श्री सुरेन्द्र शर्मा के मार्गदर्शन में एक सप्ताह की पदयात्राएँ चलीं। यह प्राथमिक प्रयास अपेक्षा से अधिक सफल रहा। फिर भी भारत के ६ प्रान्तों में ऐसी एक सप्ताह की पदयात्राएँ संगठित की गयीं। इन पदयात्राओं की निष्पत्ति नीचे की तालिका में दरसायी गयी है।

इन आँकड़ों से सिद्ध होता है कि कमोबेश सब प्रदेशों में मिला एवं प्राप्ति-पुष्टि एक साथ की जा सकती है यह सिद्ध हुआ। कडोली क्षेत्र में तरी अच्छी, मध्यम एवं सामान्य और हर प्रकार की ५ प्रतिशत जमीन दाता से प्राप्त करने में सफलता मिली। कोल्हापुर में कई गाँवों में लोक-पदयात्रा का स्वरूप प्रकट हुआ। ऐसे नये-नये गुल इस बगीचे में खिलते गये। देश के कई कार्यकर्ताओं ने विभिन्न प्रान्तों में जाकर ये पदयात्राएँ चलायीं। इसलिए राष्ट्रीय एकात्मता सहज में ही सधी।

बागियों का आत्म-समर्पण

अप्रैल के अन्त में एवं मई के आरम्भ में एक चमत्कार हुआ और २७० चम्बल के बागियों ने स्वेच्छा से महात्मा गांधी की मूर्ति के सम्मुख आत्म-समर्पण किया। दुनिया अचम्भे में पड़ गयी। श्रद्धेय जयप्रकाशजी अस्वस्थ होते हुए भी इस कार्य को अंजाम देते रहे एवं उनके मार्गदर्शन में चम्बल घाटी शान्ति समिति के कार्यकर्ताओं ने परदे के पीछे रहकर अनवरत कार्य किया। इन बागियों के पराक्रम से सर्वोदय का नाम आज गगन को स्पर्श कर रहा है। इन बागियों की किन शब्दों में प्रशंसा की जाय।

शराबबन्दी

शराबबन्दी के बारे में भी क्या मद्रास, क्या उत्तराखण्ड, क्या बुलन्दशहर

प्रदेश	प्रखण्ड	अवधि	संकलित ग्रामदान	गाँवों में ग्रामसभा संगठित	दाता संख्या	भूमिहीनों को बाँटने के लिए मिली जमीन (एकड़)	वितरित जमीन (एकड़)
आन्ध्र	जड्चरला	नव. ७१	४६	३३	७८	६८६	६६४
आन्ध्र	विजयापल्ली	दिसं. ७१	४५	४५	—	१४०	१४०
महाराष्ट्र	जामनेर	,, ,,	१६	१२	—	४७	२४
कर्नाटक	कडोली	जन. ७२	२५	२०	—	६५	—
पंजाब	बड़ोहर	,, ,,	७	४	—	२१	२
मध्यप्रदेश	तराना	फर. ७२	७	७	—	३०	—
उड़िसा	गोंदिया	मार्च ,,	६०	२२	१९७	१११	८१
आन्ध्र	कोल्हापुर	अप्रैल ,,	२७	२३	१००	३११	२३३

या क्या राजस्थान, सभी जगह जन-आन्दोलन की चिनगारियाँ प्रकट हुई हैं। लोभ के वश होकर तमिलनाडु एवं महाराष्ट्र की सरकार ने शराबबन्दी को छोड़ दिया। तमिलनाडु के साथियों ने जगह-जगह इसके विरुद्ध पिकेटिंग किया एवं जुलूस निकाला। श्री एस० आर० सुब्रह्मण्यम् ने कई महीनों की जन-जागरण-पदयात्रा निकाली। श्री आर० टी० पी० सुब्रमण्यम् ने उपवास किया। उत्तराखण्ड में श्री सुन्दरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में ग्रामीणों ने, जिनमें महिलाओं का प्राधान्य था—पिकेटिंग किया एवं कारावास का वरण किया। श्री बहुगुणा ने कई दिनों तक उपवास किया। बाद में इस प्रश्न का समाधानजनक हल निकला। बुलन्दशहर में पिकेटिंग चल रहा है। अभी सबकी आँखें राजस्थान की ओर लगी हुई हैं। वहाँ की सरकार ने शराबबन्दी की घोषित नीति का भंग कर आश्वासनों को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया है। इसके परिणामस्वरूप राजस्थान के वयोवृद्ध तपस्वी नेता श्री गोकुल भाई भट्ट १६ मई से अनिश्चित काल तक का उपवास प्रारम्भ कर दिया है।

मतदाता-शिक्षण

इस वर्ष, पिछले वर्ष से कुछ कम ही क्यों न हो, मतदाता-शिक्षण का काम चुनावों के दिनों में चला। गुजरात, असम एवं दिल्ली में यह कार्यक्रम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा। असम में नागरिकों की मतदाता परिषद सर्वोदय मण्डल ने बनायी एवं उसने यह काम किया। असम के कई शहरों में नागरिकों ने इस कार्य में अभिक्रम दिखाया।

बांगला देश

बांगला देश के शरणार्थियों की सेवा शान्तिसेना के मार्गदर्शन में की गयी एवं बंगाल से दिल्ली तक पदयात्रा बांगला देश के युवकों ने शान्तिसेना के मातहत की। अब स्वतन्त्र बांगला देश की परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए श्री नारायण देसाई के नेतृत्व में एक अध्ययन दल वहाँ गया था।

दंगाशमन

केरल में तेल्लीचेरी एवं भीवंडी के दंगों के बाद शान्ति एवं सद्भाव स्थापन करने का अच्छा काम हुआ है।

आचार्यकुल

आचार्यकुल धीरे-धीरे विस्तृत हो रहा है और दक्षिण में इसे फैलाने का विशेष आयोजन किया जा रहा है।

लोकगंगा-यात्रा

लोकगंगा के किनारे सहरसा में सर्वोदय जगत के भीष्माचार्य श्री धीरेन्द्र मजूमदार की यात्रा चल रही है।

आदिवासी

आदिवासियों पर चल रहे अत्याचारों एवं शोषण के खिलाफ आदिवासियों को महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल के मार्गदर्शन में श्री गोविन्दराव शिंदे संगठित कर रहे हैं, और इसमें थोड़ी सफलता भी मिली है।

लोकयात्रा

बहनों की लोकपदयात्रा गुजरात भर घूमी एवं उससे अपूर्व जन-जागरण हुआ। अब यह पदयात्रा महाराष्ट्र में चल रही है।

गोवा में सर्वोदय मण्डल

गोवा में प्रथम बार सर्वोदय मण्डल का गठन हुआ है।

चर्चा के प्रमुख प्रश्न

प्रधानमंत्री के नेतृत्व में सीलिंग-कानूनों के द्वारा भूमिसुधार का प्रश्न इस समय प्रमुख प्रश्न बन रहा है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का जनता का आन्दोलन एवं भूमिसुधार के शासकीय प्रयत्न, इन दोनों का सम्बन्ध क्या हो यह प्रश्न नकोदरअधिवेशन के सम्मुख एक प्रमुख प्रश्न है।

अगले तीन वर्षों के लिए जो साथी सर्व सेवा संघ के पदाधिकारी बनेंगे उन्हें हमारा सहयोग तो रहेगा ही। हमारा कार्यकाल पूरा हुआ। सबने जो सहयोग दिया इसलिए सबको प्रणाम।

गोपुरी — ठाकुरदास बंग
१६-२-७२ — मंत्री

(पृष्ठ ५२९ का शेष)

कारण है जिसके कारण हमारा 'इम्पेक्ट' नहीं हो रहा है। गांधी निधि में श्री देवेन्द्र भाई गिड़गिड़ाता फिरता है—अरे सरकारवालों हमसे कुछ बातचीत करो! हमसे कुछ बातचीत करो। आपको मान्यता के लिए दर-दर भटकना पड़े; कभी सोचा है आपने इसका कारण क्या है? इसका एक ही कारण है मित्रो। समाज में जो वर्तमान प्रतिष्ठाएँ हैं उनका सहयोग आप चाहते हैं। उनका आश्रय खोजने की हमारी भूमिका समाप्त हो जानी चाहिए। राज्यसत्ता, जन्मसत्ता, शस्त्रसत्ता, ये तीन समाज की प्रतिष्ठित सत्ताएँ हैं। इन सत्ताओं के आश्रित बनकर क्रान्ति करनी है तो क्रान्ति इन सत्ताओं के पेट में चली जायगी।

आत्म-परीक्षण अगर करना है तो आत्म-परीक्षण इस विषय में कीजिए कि हमने साधन-शुद्धि कहाँ तक मानी है। साधन-शुद्धि का आचरण हमने कहाँ तक किया है। जहाँ तक हमने भाषण सुने, भाषणों में प्रचण्ड आँधी थी और सूर्यदेव की तरह अधिक गर्मी थी। कहा था न अमरनाथ ने कि यह तरुण तो ज्वलनशील पदार्थ है। यह ज्वालादायी पदार्थ होगा तो होगा लेकिन यहाँ तो बड़ा शीतलदायी पदार्थ है। राधाकृष्ण को पूछा था अमेरिका के लोगों ने—कि नौजवान हमारे आन्दोलन में क्यों नहीं आते? मुझे पता नहीं यहाँ कितने बूढ़े बैठे हुए हैं। या कितने प्रौढ़ बैठे हुए हैं। मुझे फिर भी यहाँ काले बाल ज्यादा दिखायी दे रहे हैं। इनकी कोई गिनती नहीं है। नवयुवक इसमें क्यों नहीं आते तो इसका उत्तर है कि इस देश के युवकों को जीविका की खोज है और अमेरिका के युवकों को जीवन की खोज है। यह बुनियादी बात आपसे कह रहा हूँ इससे अधिक इसमें और कुछ नहीं कहूँगा।

नकोदर,
१६-२-७२

सरकार का सीलिंग कानून और सर्वोदय की भूमिका

भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को भूमि मिले, भूमि की विषमता कम हो, ऐसी माँग वर्षों से देश में होती रही है। भूमि-सुधार सम्बन्धी कई कानून भी बने किन्तु करोड़ों लोगों को अब तक न्याय नहीं मिल पाया। कानून में खामी के कारण भूमिवानों ने इन कानूनों से बचने के गलत उपाय ढूँढ निकाले, इस कारण भूमिहीनों को कानून द्वारा भूमि नहीं मिल सकी।

यद्यपि राजनैतिक दलों एवं सरकार द्वारा समय-समय पर भूमिहीनों को भूमि देने-दिलाने की घोषणाएँ होती रहीं, किन्तु फिर भी ये लोग वंचित रहे।

सर्वोदय आन्दोलन ने पूज्य विनोबाजी के मार्गदर्शन में वर्षों से भूमिहीनों को भूमि दिलाने तथा समाज में भूमिहीनों एवं भूमिवानों के बीच सम्बन्ध सुधारने के प्रयत्न किये हैं। देश भर में भूमि-वितरण के लिए विचार-प्रचार द्वारा जनमत तैयार करने की कोशिश की है। इस तरह भूदान-ग्रामदान आन्दोलन ने लाखों एकड़ जमीन का वितरण भूमिहीन खेतिहर मजदूरों में किया है। ग्रामदान के माध्यम से ग्राम-समाज में सहयोग की भावना बढ़ाने का काम चल रहा है।

अब केन्द्रीय सरकार के प्रयास से राज्य सरकारों द्वारा भूमि-हदबन्दी कानूनों में सुधार कर सीमा को घटाने की चर्चा चल रही है। कई राज्यों में इस आशय का बिल भी पेश हो चुका है। सर्व सेवा संघ इस कदम का स्वागत करता है तथा ऐसे प्रयत्नों को सफल बनाने में सहयोग देना अपना कर्तव्य मानता है।

जन-जागृति एवं जन सहयोग के अभाव में ऐसे कानूनों का उद्देश्य विफल हुआ है, यह पिछले वर्षों का अनुभव बताता है। केवल शासन के बल से यह काम नहीं हो सकेगा। इस काम के लिए जन-सहयोग अति आवश्यक है। सक्रिय जन-सहयोग प्राप्त करने के लिए सब राजनैतिक दलों और समाज-सेवी संगठनों को प्रयत्न करना होगा।

भूमि-हदबन्दी कानून को ठीक ढंग से लागू कराने के लिए सर्वदलीय समिति बनानी चाहिए और गाँव-गाँव में ग्राम सभा में इस कानून द्वारा जितनी भूमि निकलनी चाहिए उसकी घोषणा करनी चाहिए और प्राप्त जमीन को बाँटने में *भूमिहीन खेतिहर मजदूर को प्राथमिकता* दी जाय।

पिछले वर्षों में भूमि-हदबन्दी कानून से बचने के लिए भूमि का बेनामी हस्तांतरण किया गया है। ऐसे बेनामी हस्तांतरण को कानून में नाजायज घोषित किया जाना चाहिए।

भूमि-हदबन्दी कानून में जो भूमि की छूट देने के अपवाद रखे जाते हैं, वह कम-से-कम हों। लेकिन यदि कोई भूमिवान भूदान देकर भूमिहीन खेतिहर मजदूर को जमीन देना चाहे तो ऐसी छूट कानून में रखी जाय। इससे सरकार मुआवजा देने से बचेगी और गाँव में परस्पर-सम्बन्ध सुधारने में सहायता मिलेगी।

सर्वोदय आन्दोलन यह भी मानता है कि ऐसे कानून भूमि की विषमता मिटाने तथा सहयोगी समाज बनाने में बहुत मददगार नहीं हो सकते। इसके लिए अन्तिम हल ग्रामस्वराज्य ही है, क्योंकि उसमें गाँव का कारोबार ग्रामीण लोग ही चलायेंगे।

राजस्थान में शराबबन्दी

गांधी शताब्दी वर्ष १९६८-६९ में राजस्थान में श्री गोकुल भाई भट्ट के नेतृत्व में शराबबन्दी के लिए विशाल जन-आन्दोलन चला और सत्याग्रह भी हुए। उस आन्दोलन तथा सत्याग्रह के फलस्वरूप राजस्थान सरकार ने जनमत का आदर करके आर्थिक, नैतिक और सामाजिक सब पहलुओं पर विचार करते हुए क्रमिक रूप से पूरे राजस्थान में १ अप्रैल १९७२ तक पूर्ण शराबबन्दी लागू करने की घोषणा की। इसके अनुसार शराबबन्दी का क्रमिक कार्यक्रम भी कुछ समय चला और ६ जिले तथा ६ प्रखण्डों में शराबबन्दी की गयी।

जब कि यह आशा की जा रही थी कि १ अप्रैल १९७२ को पूरे राजस्थान में पूर्ण शराबबन्दी के एलान कर राज्य सरकार अपने वचन का पालन करेगी, इसके सर्वथा विपरीत आर्थिक घाटे की पुरानी दलील देकर शराबबन्दी लागू होने की अवधि के चन्द दिन पहले, राजस्थान सरकार ने धारा-सभा के अधिवेशन में इस कार्यक्रम को स्थगित कर देने की अप्रत्याशित घोषणा की।

किसी भी राज्य सरकार के लिए अपनी घोषित नीति और कार्यक्रम को, खासतौर से शराबबन्दी जैसे समाज हित से सम्बन्धित वायदे को, पूरा न करना जनता के साथ विश्वासघात ही कहलायेगा। स्वाभाविक ही शराबबन्दी सत्याग्रह के नेता श्री गोकुल भाई भट्ट ने इसे सरकार का वचन भंग माना और उसके प्रायश्चित स्वरूप आमरण अनशन का अपना संकल्प जाहिर किया है। राजस्थान समग्र सेवा संघ और वहाँ की नशाबन्दी समिति ने श्री गोकुल भाई के संकल्प का स्वागत किया और सरकार की इस नीति का कड़ा विरोध करते हुए उसके परिमार्जन के लिए अहिंसक आन्दोलन चलाने का निर्णय लिया है।

यह उल्लेखनीय है कि शराबबन्दी के महत्व और राजस्थान सरकार के घोषित नीति पर कायम न रहने के कारण श्री गोकुल भाई जैसे सौम्य व्यक्ति के जीवन की बाजी लगा देने के निर्णय को देखते हुए सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश

नारायण जी ने राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री बरकतउल्लाखां द्वारा सम्पर्क किये जाने पर इस मामले में हस्तक्षेप किया। श्री जयप्रकाश नारायणजी और अखिल भारतीय नशाबन्दी परिषद की अध्यक्षा डा० सुशीला नायर ने इन सभी प्रश्नों को लेकर केन्द्र और राज्य के मंत्रियों से बातचीत की। श्री जयप्रकाश नारायणजी के निर्देशन पर श्री गोकुल भाई को एक सप्ताह के लिए अपना अनशन स्थगित करना पड़ा। किन्तु राजस्थान राज्य के इस प्रश्न के हल अर्थात् अपने वचन की पूर्ति और शराबबन्दी की घोषित नीति को कार्यान्वित करने का कोई रास्ता नहीं निकाला। परिणामतः श्री गोकुल भाई को १६ मई से आमरण अनशन आरम्भ करना पड़ा है और पूरे राजस्थान में सरकार की इस नीति के अहिंसक विरोध की कार्रवाई करनी पड़ रही है।

सर्व सेवा संघ समय-समय पर जाहिर करता रहा है कि सारे देश में शराबबन्दी लागू किया जाना न सिर्फ संविधान के मद्य-निषेध सम्बन्धी निर्देशन के पालन के लिए उचित और आवश्यक है, बल्कि राष्ट्र एवं समाज के नैतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक सब तरह के हित, विकास और प्रगति की दृष्टि से भी यह कदम अनिवार्यतः अमल में लाये जाने योग्य है। स्पष्ट ही संविधान के निर्देशक तत्वों के कार्यान्वयन की जिम्मेवारी केन्द्रीय सरकार की भी है और शराबबन्दी देश में लागू होने में देर होती है तो वह अपने दायित्व से मुकर नहीं सकती।

सर्व सेवा संघ मानता है कि शराबबन्दी के मसले पर राजस्थान में जो स्थिति बनी है और जिसके कारण श्री गोकुल भाई तथा वहां के सर्वोदय सेवकों एवं जनता को अनशन व आन्दोलन का जो कदम उठाना पड़ा है वह समाज की उपेक्षा करनेवाली सरकारों की मनमानी नीति को जाहिर करती है और लोक-शक्ति द्वारा उसको सुधारने के अहिंसक प्रयासों का प्रतीक है।

इस पृष्ठ भूमि में सर्व सेवा संघ श्री गोकुल भाई के पवित्र संकल्प और राजस्थान सर्वोदय संगठन तथा शराबबन्दी समिति द्वारा लिये गये निर्णय का पूर्ण समर्थन करती है और प्रबन्ध समिति को इस सम्बंध में आवश्यक कार्रवाई करने का निर्देश देता है। संघ को विश्वास है कि शराबबन्दी के इस अहिंसक आन्दोलन को देश में सब ओर पूर्ण समर्थन व सक्रिय सहयोग मिलेगा। सर्व सेवा संघ अभी भी आशा करता है कि राजस्थान सरकार की सद्बुद्धि जागृत होगी और वह शराबबन्दी के अपने वचन को अविलम्ब कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक कार्रवाई करेगी।

अखिल भारत नशाबन्दी परिषद ने २१ मई को नशाबन्दी के लिए देश भर में सामूहिक जुलूस, मौन प्रार्थना और उपवास का कार्यक्रम आयोजित करने का आवाहन किया है। संघ इस निर्णय का पूरा-पूरा समर्थन करता है। आशा है इसके साथ ही देश भर के समाचार-पत्रों में शराब के विज्ञापनों पर भी रोक लगाने के लिए वातावरण बनाने की आवश्यकता है। इसके लिए जगह-जगह शराब पीने के विरुद्ध अभियानों का आयोजन करना चाहिए●

प्रादेशिक विवरण

प० बंगाल

ग्रामदान पू० विनोबाजी की सलाह के अनुसार बंगाल सर्वोदय मण्डल ने बांकुड़ा जिले में ग्रामदान-अभियान चलाने का तय किया था। उसके अनुसार श्री चारुचन्द्र भण्डारी के मार्गदर्शन में गंगाजल घाट प्रखण्ड में फरवरी १९७२ से कार्य शुरू किया गया है। इस काम में १४ कार्यकर्ता भाग ले रहे हैं। इसके अलावा बंगाल के उत्तरी तीन जिलों में और २४ परगना में ग्रामदान का कार्य किया जा रहा है।

सहरसा जिले के पुष्टि-अभियान में बंगाल से तीन कार्यकर्ता भेजे गये हैं, जो वहां कार्य कर रहे हैं।

शान्तिसेना तथा आचार्यकुल

शान्तिसेना तथा आचार्यकुल के संगठन का कार्य बंगाल में शुरू करने की दृष्टि से इन दोनों कार्यों के लिए समितियां गठित हुई हैं। शान्तिसेना का कार्य श्री सौरेन्द्रकुमार बसु के संयोजकत्व में तथा आचार्यकुल का कार्य श्री ईश्वरचन्द्र समाजिक के संयोजकत्व में शुरू हुआ है।

खादी-कार्य बंगाल में खादी-कार्य के उचित मार्गदर्शन के लिए श्री नगेन्द्रनाथ सेन की अध्यक्षता में एक खादी समिति नियुक्त की गयी। इस समिति ने खादी-संस्थाओं की समस्याओं के समाधान के लिए स्टेट खादी बोर्ड तथा खादी कमीशन से सम्पर्क करना शुरू किया है।

अन्य कार्य श्री चारुचन्द्र भण्डारी के मार्गदर्शन में सर्वोदय कार्यकर्ताओं की एक टोली ने साल्ट लेक बांगला देश शरणार्थी शिविर में जुलाई '७१ से फरवरी '७२ तक सफाई का काम किया। बांगला देश के युवकों को गांधीवादी विचारों से परिचित कराने के लिए गांधीजी के लेख... का एक संग्रह 'विद्रोहेर आह्वान' नाम से प्रकाशित किया गया। इसी तरह की और दो पुस्तकें भी शीघ्र प्रकाशित की जायेंगी।

आम चुनाव के समय कलकत्ता में मतदाताओं के मार्गदर्शन के लिए एक सभा आयोजित की गयी, जिसमें कई अग्रज गणमान्य सज्जन उपस्थित थे। हिंसा और द्वेषमूलक प्रचार न करने के लिए सब राजनैतिक पक्षों को लक्ष्य कर एक पत्रक वितरित किया गया।

सर्वोदय-साहित्य के प्रचार के लिए एक समिति का गठन, कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए शिविर का आयोजन आदि कुछ अन्य कार्य भी किये जा रहे हैं।

सुन्दरी, सबसे पहले सवेरे-सवेरे भजन सुनते हैं। एक लाउडस्पीकर प्रातः ६ बजे से ही भक्ति संगीत गुन्जरित करने लगता है :

आया हूँ दरबार तुम्हारे।
बहुत जनम का भूला-भटका,
सगवाले प्रभु चरण सहारे।
धन नहिं माँगू, माँगू न सत्ता,
नहिं माँगू विषयन की ममता,
हे प्रभु प्रेम की दृष्टि निहारो।
आया हूँ दरबार तुम्हारे।

स्नान आदि से निवृत्त हुए कि १० बजे से स्कूल शुरू हो जाता है जिसमें हाजिरी जरूरी नहीं है लेकिन जब दादा धर्माधिकारी का प्रवचन २७, २८, २९ और ३० अप्रैल को, ४ दिन चला तो एक भी बागी अपनी बैरक में बैठा नहीं रहा। दादा की वाणी का जादुई प्रभाव देखते ही बनता था। दादा ने लोक-प्रचलित किस्से कहानियों को इस ढंग से कहा कि अनेकों की आँखें भर आईं—सत्यवादी हरिश्चन्द्र की कथा में डोम के घर काम करते समय रोहिताश्व का कहना कि मेरी चिन्ता न करें, हरिश्चन्द्र का कठोर श्रम करना और वचन की लाज रखने के लिए हँसते-हँसते दुख झेलना आदि का वर्णन उनके मन पर बड़ा असरकारक रहा। शेखचिल्ली और सवाई शेखचिल्ली जो किसी मैदान को देखकर लड़ पड़े कि बगीचा लगे या खेती हो, पर जमीन है किसकी? यह सोचा ही नहीं, ऐसे चुटकुलों पर सब खूब हँसे और उन्हें लगा कि सचमुच यह धरती किसी की नहीं है, मरने पर किसी के साथ नहीं जाती। सब यहीं छूट जाती है।

श्री जयप्रकाशजी जेल में उन लोगों से मिलने १७ अप्रैल और ३० अप्रैल '७२ को, दो बार गये। उनसे मिलने मात्र से उनके चेहरे प्रसन्न थे। भावातुर होकर बागी कल्याण पण्डित ने आभार प्रकट करते हुए भजन गाया :

"मैंने अपने को सौंप दिया
सरकार तुम्हारे हाथों में।"

जयप्रकाशजी ने परिवार की रक्षा का पूरा-पूरा आश्वासन दिया। उनको बहुत आशंका है कि कहीं लोग उनके गुनाहों का बदला उनके स्वजनों से न लें। इसलिए पहली चिन्ता उनकी यही है। कहते हैं किसी को मार दिया, फिर आप क्या कर लेंगे—'का वर्षा जब कृषि सुखानी' शान्ति मिशन की जेल-सम्पर्क समिति इस ओर विशेष सावधानी बरत रही है। उनके परिवारवालों से मिलने पर मानव स्वभाव के विविध पक्ष उजागर होते हैं। बागी रूपसिंह का भाई सूबेदार सिंह कहने लगा? २ रुपये रोज की मजदूरी करता हूँ और भावज व बच्चों की देखभाल में लगा हूँ।" उसने शादी इसीलिए नहीं की कि फिर वह दायित्व ठीक से नहीं निभा पाता।

जेल में करते क्या हैं?

हथकड़ी बेड़ी कुछ नहीं पड़ी है। मुक्तरूप से रहते हैं। लिखना-पढ़ना सीखने के अलावा उनका मन लगा रहे इस हेतु श्री काशिनाथ त्रिवेदी के नेतृत्व में भजन संगीत का जो कार्यक्रम चलता है उसमें उनका खूब मन लगता है। श्री गोपाल भट्ट की खजरी जब बजती है तो उनके हृदयों के तार झनझना उठते हैं। वे भी दुहराते हैं —

अँधियारा मेरे अन्तर का
प्रभु दूर करो हे दूर करो
तन हो उजला, मन हो उजला
प्रभु जीवन उजला करो करो
तन में मन में और जीवन में
प्रभु चेतन नवनन्द भरो भरो।

जेल में एक छोटा सा पुस्तकालय है, जिसमें हिन्दी के दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र नियमित आते हैं। एक अंग्रेजी का भी दैनिक आता है। साप्ताहिक हिन्दुस्तान उन्हें विशेष प्रिय है। उनके गत अंकों के लेखों का उनके बीच कई बार वाचन हुआ है। उसमें प्रकाशित चित्र देखकर खुश होते हैं। माधोसिंह जो अपने मास्टरजी कहलाते थे। वे तो *उपन्यास* लिखने की चर्चा कर रहे हैं। उनसे जब उनके दामाद जेल में मिलने आये तो कहा कि पहला खण्ड जंगल का तुम लिखो और जेल के भीतर का स्वयं लिखेंगे। उनके जीवन में कुछ औपन्यासिकता है भी। दो-दो पत्नियों और आठ बच्चों के होते हुए भी उन्हें अपना तन और मन दोनों जवान लगता है और हर समय कुछ नया ही सोचते रहते हैं।

जेल अधीक्षक हैं श्री दलवलसिंह। जेल में अखाड़ा बन गया है। रोज कुश्ती होती है, कभी-कभी कबड्डी भी जमती है। फुटबॉल और वालीबॉल की भी शुरूआत हुई है। २७० बागियों का सहजीवन अपने में एक दिलचस्प अध्ययन का विषय है। अभी उनके मुकदमें शुरू नहीं हुए है। पर सब जानते हैं कि सजाएँ होंगी। मुकदमों की उन्हें चिन्ता तो है पर कोई बेचैनी नहीं है। कहते हैं यह सरकार का काम है, वह करेगी। इनके मुकदमों के लिए शान्ति मिशन की ओर से एक पैरवी समिति सात वकीलों की बन गयी है जिसके अध्यक्ष श्री जे० एम० आनन्द और मन्त्री श्रीबाबूलाल भार्गव काम देख रहे हैं। इनके तथा इनके द्वारा पीड़ित परिवारों के पुनर्वास का काम श्री एस० एन० सुब्बाराव देख रहे हैं, जिनका प्रयत्न है कि इनके परिवारों को इनके दुश्मनों से बचाया जाय। उजड़े हुए मकानों को रहने लायक तथा खेतों को खेती करने लायक बनाया जाय। इसमें शुरू-शुरू में कुछ साधनों की मदद करनी पड़े तो की जाय। क्षेत्रीय और जिला स्तर की शान्ति समितियाँ बनाई जायँ जिससे आगे होने या हो सकने वाली अशान्ति का शमन हो।

पुनर्संस्कार की दृष्टि से श्रेष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता जेल में सतत जाते रहें इसकी व्यवस्था हुई है। इनके जीवन में धीरे-धीरे फर्क आ रहा है। इनसे बात करते समय बड़े मजे की बातें होती हैं। कोई तो अपनी कहानी बचपन से शुरू करता है और सब कुछ कह डालना चाहता है क्योंकि उसका पक्ष आज तक किसी ने हमदर्दी से सुना नहीं। इसलिए

(शेष पृष्ठ ५४२ पर)

गांधी रचनात्मक संस्था सम्मेलन का निवेदन

देश में गांधी विचार के अनुसार कार्य करनेवाली रचनात्मक संस्थाओं का सम्मेलन ११, १२ तथा १३ मई '७२ को राजघाट, नयी दिल्ली में हुआ। इस सम्मेलन ने राष्ट्र की कुछ मुख्य समस्याओं के बारे में विचार-विमर्श किया। सम्मेलन में बुनियादी प्रश्नों पर निम्नलिखित आम राय रही।

राजनैतिक क्षेत्र

इस समय गाँव-गाँव में समता और सम्पन्नता की आकांक्षा तथा आत्म-विश्वास की व्यापक भावना पैदा हुई है। शासन, भूमि तथा अन्य सम्पत्ति पर सीमा लगाने का कानून बना रहा है। ये कदम उपयोगी हैं, किन्तु आवश्यकता इस बात की है कि गाँवों का विकास और संगठन स्वदेशी, स्वाश्रयिता और स्वायत्तता के आधार पर किया जाय। इसके लिए सत्ता का ऐसा विकेन्द्रीकरण आवश्यक है जिसमें आम व्यक्ति की अभिक्रमशीलता अर्थात लोक-शक्ति का जागरण हो और उसे यह उत्तरोत्तर प्रतीत हो कि इस राजतंत्र को चलाने में वह हिस्सेदार है। ऐसी संगठित, स्वाश्रयी और स्वायत्त इकाइयों को देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था में समुचित स्थान दिया जाय, क्योंकि आज के औपचारिक, पाश्चात्य ढंग के लोकतंत्र के जो दोष प्रकट हुए हैं तथा जिस तरह पैसा, डण्डा और झूठा प्रचार सही लोकमत के प्रकट होने में बाधा पैदा कर रहा है, उसे देखते हुए यह आवश्यक है कि भारतीय परम्परा ने लोक-जीवन के जो शुभ तत्व विकसित किये हैं उनकी खोज की जाय तथा लोकतंत्र की भूमिका में राजनीति के स्थान पर लोकनीति की उपयुक्तता पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय।

आर्थिक क्षेत्र

आर्थिक क्षेत्र में समाज की कमजोर से कमजोर कड़ी को मजबूत बनाने तथा 'गरीबी हटाओ' के नारे को सार्थक करने के लिए यह आवश्यक है कि .

(क) हर गाँव में बेकार को काम देने की जिम्मेदारी ग्राम-संगठन की मानी जाय और उसके लिए खादी और ग्रामोद्योगों को व्यापक किया जाय तथा इसके अतिरिक्त और भी काम दिलाने के साधन जुटाये जायें।

(ख) औद्योगीकरण की नीति में उन्नत कृषि तथा कृषि आधारित उद्योगों की व्यवस्था की जाय। ऐसे गाँवों में विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाय जहाँ बिजली जैसे उन्नत साधन नहीं पहुँचे हैं।

(ग) छोटे-बड़े और मध्यम आदि विभिन्न स्तर के उद्योगों में परस्पर स्पर्धा होने से कमजोर स्तर को नुकसान पहुँचता है इसलिए उत्पादन के क्षेत्रों का विभाजन करके छोटे उद्योगों को सुरक्षित किया जाय।

(घ) उद्योगों के लिए ऐसे स्वरूप को विकसित करना भी आवश्यक है जो हमारे देश की परिस्थिति के अनुरूप मध्यम तकनीक (इण्टरमिडिएट टेकनालॉजी) के हों।

(ङ) 'गरीबी हटाओ' के लिए आवश्यक है कि गरीबों की गाढ़ी कमाई छीननेवाले, शराब आदि मादक पदार्थों के सेवन को समाप्त करने के लिए नशाबन्दी की नीतियों को बढ़ावा दिया जाय।

सामाजिक क्षेत्र

सामाजिक क्षेत्र में समानता की भूख यानी मानवमात्र समान है की भावना दिन ब दिन बढ़ रही है और अब जब हम देश की स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती मना रहे हैं, यह आवश्यक है कि देश में सामाजिक विषमता से पीड़ित हरिजन, आदिवासी तथा अन्य अल्प-संख्यकों के साथ होनेवाले दुराव और अन्याय का अन्त किया जाय। समाज में यह प्रतीति जगायी जाय कि वह स्त्रियों के साथ किस तरह दमन और अनीति का व्यवहार कर रहा है। इस दृष्टि से लोक-शिक्षण का कार्य जोरों से करने की जरूरत है। साथ ही यह भी जरूरी है

सम्मेलन का एक दृश्य : श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त सम्मेलन का उद्देश्य समझा रहे हैं।

कि शासकीय नीति-रीति में इन तत्वों के लिए समानता की स्थिति मान्य की जाय।

स्वास्थ्य

स्वास्थ्य के सम्बन्ध में :

(क) देश में स्वच्छता के आन्दोलन को बढ़ाने के साथ भंगी-कार्य में लगे भाई-बहनों को इस अमानवीय कार्य से मुक्त किया जाय, तथा उन्हें सम्मानपूर्ण कमाई के दूसरे साधन दिये जायें।

(ख) गरीब से गरीब को स्वास्थ्य मिले इसके लिए कुदरती उपचार और दूसरे स्थानीय साधनोंवाली ऐसी देशी पद्धतियों को प्रोत्साहन दिया जाय जो उन्हें उपचार के मामले में अधिकाधिक स्वावलम्बी बना सकते हैं।

(ग) दुष्पोषण की समस्या को सुलझाने का विशेष प्रयास किया जाय।

शिक्षा

शिक्षा के सम्बन्ध में नयी तालीम के सिद्धान्त को उत्तरोत्तर लागू किये बिना नयी पीढ़ी को समाजोपयोगी तथा उद्योगशील बनाना सम्भव नहीं होगा। इसके लिए :

(क) विश्वविद्यालय में, शिक्षा में नयी तालीम की दृष्टि दी जा सके तो नीचे के स्तर पर शिक्षा के क्षेत्र में काम करना आसान होगा।

(ख) नौकरियों के देने में योग्यता की परख डिग्री को आधार मानकर ही चलती रहेगी तो नयी शिक्षा-पद्धतियों का विकास न हो सकेगा। अतएव नौकरियों के साथ डिग्री न जोड़ी जाय।

(ग) तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल जैसे कार्यक्रम, जो क्रमशः विद्यार्थियों और शिक्षकों में सामाजिक चेतना पैदा करते हैं, को बढ़ावा दिया जाय।

(घ) हर विद्यालय अपनी आन्तरिक व्यवस्था में स्वायत्त हो।

(ङ) शैक्षणिक प्रयोगों को प्रोत्साहन मिले।

उपरोक्त बातों के बारे में रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों के इस सम्मेलन का विश्वास है कि आजादी के इन २५ वर्षों में समाज में चेतना उत्तरोत्तर बढ़ी है तथा गांधी-कार्य के विभिन्न पहलुओं पर जो काम हुए हैं वे इसमें सहायक हुए हैं। ये सारे कार्य एक समग्र शान्तिपूर्ण क्रान्ति के माध्यम हैं, जिसका केन्द्रबिन्दु सत्य, प्रेम, करुणामूलक ग्रामस्वराज्य का आदर्श है। सम्मेलन यह भी महसूस करता है कि इस काम के लिए एक ओर संस्थाओं में आपसी समन्वय हो तथा साथ-साथ शासन और उनके बीच सम्वाद और विचार-विमर्श का क्रम जारी किया जाय। इस बारे में सम्मेलन के प्रतिनिधि मण्डल की प्रधानमंत्री से हुई बातचीत से एक आशादायी कदम बना है।

सम्मेलन इस निश्चय पर पहुँचा है कि हमारी राष्ट्रीय समस्याओं की वास्तविक कुंजी लोक-शक्ति है ऐसी लोक-शक्ति जो समाज की नवरचना के लिए उद्यत तथा आवश्यकतानुसार अनीति के प्रतिकार के लिए तत्पर हो। संगठित लोकशक्ति, सरकार तथा संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से समस्याओं का समाधान निश्चित है।

यह सम्मेलन आशा करता है कि उपरोक्त सुझावों पर अमल करने के साधन ढूँढे जायेंगे।

राजघाट, नयी दिल्ली,
दिनांक . १३ मई, १९७२

(पृष्ठ ५४० का शेष)

सुननेवाला मिल गया तो सब सुना डालना चाहते हैं बिना इस बात का ध्यान किये कि दूसरे के पास कितना समय है! उनके पास तो समय ही समय है इसलिए उन्हें बात खत्म करने की जल्दी नहीं होती। कुछ बड़ी मनुहार के बाद बोलते हैं और वह भी नपा-तुला। कुछ तो हाथ ही नहीं धरने देते—"बीत गयी सो बात गयी" कह कर एक उत्तर में सारे प्रश्न निपटा देते हैं।

इनके मन में चल रहे द्वन्द्व के परिचय के लिए मुझे स्मरण आ रहा है कि एक ने अपने दुश्मनों की सूची बनायी और दूसरे ही दिन कह दिया कि मैं तो पढ़ा-लिखा हूँ, गीता प्रवचन बाँचते समय लगा, अब तो कोई दुश्मन ही नहीं रहा। उस सूची को फाड़ दीजिए। उनके साथ-साथ ये पंक्तियाँ लिखते समय मेरा मन भी गा उठता है 'भगवान तेरी लीला अजब निराली है।" श्री जयप्रकाश नारायण जैसे क्रान्तिकारी ने हर भाषण में इसे भगवान की महिमा कह कर स्वयं को निमित्त बताया और केन्द्रीय शासन, विशेषकर प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी के सहयोग और मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रकाश चन्द्र सेठी के सहकार के प्रति धन्यवाद दिया। इसलिए कह सकते हैं कि गाली और गोली से समाप्त न होनेवाले नासूर का यह करुणामूलक एक व्यावहारिक रास्ता है। इसपर इस क्षेत्र में और देश में मिली-जुली प्रतिक्रियाएँ हुई हैं। इतना निश्चित कहा जा सकता है कि अब आगे पर्याप्त सावधानी और दूरदर्शिता से काम लिया गया तो चम्बल घाटी का यह अभिशाप वरदान में बदल सकता है। कहते हैं कि आशा वह घास है जो कहीं पर भी उगती है जबकि ये तो जीते-जागते माटी के पुतले हैं। ये जरूर बदलेंगे और वह भी अपने अन्तर में छिपी सुमति के प्रताप से। गोस्वामी तुलसीदास बहुत पहले कह गये हैं "सुमति कुमति सब कर के माहीं।" ●

महबूबनगर में पदयात्रा

आन्ध्र में महबूबनगर जिले में कोलापुर प्रखण्ड में ता० २८ अप्रैल से ४ मई तक ९ टोलियों में २५ कार्यकर्ताओं ने पदयात्रा की। ६४ गाँवों में ग्रामस्वराज्य का प्रचार हुआ, जिनमें से २७ गाँव संकल्पित ग्रामदान हुए। इनमें से २२ गाँवों में ग्रामसभाओं की स्थापना हुई। वितरण के लिए सौ दाताओं से ३३१ एकड़ जमीन मिली और इनमें से १४ गाँवों में ५७ भूमिहीनों को २३३ एकड़ जमीन बाँट दी गयी। ३४ गाँवों में ग्राम-शान्तिसेना बनायी गयी। ८० एकड़ भूदान की पुरानी भूमि का भी पुनर्वितरण हुआ। ●

संघ अधिवेशन के चार दिन

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन १६ मई को तीसरे पहर आरम्भ हुआ। संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् ने कार्यवाही की शुरुआत की। प्रारम्भ में दिवंगत कार्यकर्ता साथियों के प्रति दो मिनट मौन रखकर शोक व्यक्त किया गया। फिर स्वागत समिति के अध्यक्ष सरदार दरबारा सिंह ने अधिवेशन में आये हुए प्रतिनिधियों का स्वागत किया। पिछले संघ अधिवेशन की कार्यवाही की पुष्टि के बाद संघ के नये अध्यक्ष के चुनाव का विषय अध्यक्ष ने पेश किया। चुनाव-कार्य श्री बैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के सभापतित्व में संचालित हुआ। संघ के अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् ने अपने पद से मुक्त होने का इजहार मंच से नीचे उतर कर किया। नये अध्यक्ष के लिए सभापति ने लिखित नाम माँगे। १४ नाम प्रस्तावित हुए। एक नाम तो एक व्यक्ति ने अपना ही दिया था। अतः सर्वश्री धीरेन्द्र मजूमदार, एस० जगन्नाथन्, सिद्धराज ढड्ढा, आचार्य राममूर्ति, कपिल भाई, ठाकुरदास बंग, सुमन बंग, कान्ता बहन, हरविलास बहन, सोमभाई, नरेन्द्र भाई, स्वामी कृष्णानन्द, सरला बहन, १३ नामों में से किसी एक नाम पर एक राय होने की बात थी। जिन लोगों ने नाम प्रस्तावित किये थे उनको सभापति ने मंच पर बुलाया और उनसे निवेदन किया कि वे लोग आपस में राय करके किसी एक नाम को सर्वसम्मति से चुन दें। जब १०-१५ मिनट तक कोई फैसला नहीं हो पाया तो अध्यक्ष के लिए प्रस्तावित व्यक्तियों को भी इस चर्चा में शामिल होने का निवेदन सभापति ने किया और फिर भी जब कोई निर्णय नहीं हो पाया तो प्रस्तावकों ने प्रस्तावितों के ऊपर निर्णय छोड़ कर मंच से चले गये। लगभग १५-२० मिनट के बाद सभापति ने सभा को बताया कि श्री सिद्धराज ढड्ढा के नाम पर सब राजी हुए हैं। सभा ने प्रसन्नता के साथ इस प्रस्ताव का स्वागत किया। इस चुनाव की प्रक्रिया से किसी को शिकायत नहीं, *कोई विरोध नहीं, सबको समाधान।*

श्री सिद्धराज ढड्ढा ने सहयोग की माँग करते हुए सब साथियों के प्रति आभार प्रकट किया और आसन ग्रहण किया।

दादा धर्माधिकारी ने श्री जगन्नाथन् के प्रति पिछले तीन वर्षों तक के कार्यों के लिए आभार प्रकट करते हुए उनको सूत की माला पहनायी और उन्हें विदाई दी। इसके बाद नये अध्यक्ष का दादा ने परिचय देते हुए सूत की माला पहनाकर *स्वागत किया।*

श्री ठाकुरदास बंग को अध्यक्ष ने पुनः महामंत्री नियुक्त किया। उन्हें पिछले तीन वर्षों का अनुभव है इसलिए आशा है कि दोनों मिलकर आन्दोलन को सही दिशा में तेज गति से आगे बढ़ायेंगे।

राजस्थान में शराबबन्दी सत्याग्रह *श्री गोकुल भाई का अनशन और राज्य-*सरकार के रुख को ध्यान में रखते हुए पहले इसी विषय पर चर्चा आरम्भ हुई। चर्चा के बाद इस विषय पर एक निवेदन भी पास हुआ। (देखें पृष्ठ ५३६ पर) सर्व-सम्मति से निश्चय हुआ कि जयपुर के इस सत्याग्रह को सहरसा के साथ ही दूसरा राष्ट्रीय मोर्चा माना जाय। १६ मई से श्री गोकुल भाई का पूर्व निश्चित अनशन जयपुर में आरम्भ हुआ। उनके इस अनशन के समर्थन और सहानुभूति में *लगभग ५०० लोकसेवकों ने १७ मई को* २४ घण्टे का उपवास रखा।

एक छोटी-सी खादी ग्रामोद्योग प्रदर्शनी भी सम्मेलन के स्थान पर लगी थी जिसका उद्घाटन श्री विचित्रनारायण शर्मा की अध्यक्षता में पंजाब के मुख्यमंत्री श्री ज्ञानी जैलसिंह ने किया।

१७ मई को दूसरी बैठक आरम्भ हुई जिसमें आचार्यकुल का विषय लिया गया। केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक श्री वंशीधरजी ने पूरे देश में आचार्यकुल की प्रगति का हवाला देते हुए इस विषय को प्रस्तुत किया। कई लोगों ने इस चर्चा में भाग लिया।

इसके बाद साहित्य-प्रकाशन पर चर्चा हुई। श्री राधाकृष्ण बजाज ने इस विषय को प्रस्तुत किया।

शराबबन्दी पर चर्चा आरम्भ हुई। सुश्री डा० सुशीला नायर तथा सरला बहन ने *अपना विचार रखा। श्री अक्षय-*कुमार करण और श्री पूर्णचन्द्र जैन ने भी इस चर्चा में भाग लिया।

तीसरी बैठक में भी शराबबन्दी पर चर्चा हुई। *इसके पश्चात खादी-ग्रामोद्योग* का विषय लिया गया। श्री वी० रामचन्द्रन् ने विषय पेश किया और फिर चर्चा हुई। आमतौर पर लगभग इन सभी विषयों की चर्चाओं में यह स्पष्ट झलकता रहा कि चर्चा करते समय विषय का ध्यान नहीं रहा है। यही कारण है कि दिनभर की चर्चा बहुत ही नीरस और थकानेवाली प्रतीत हुई। वक्ता को इस बात का ध्यान नहीं रहता कि सुननेवाले उसकी बात में रुचि रखते हैं अथवा नहीं, वह बोलता चला जाता है, यहाँ तक कि अध्यक्ष की घण्टी बज *जाने पर भी अध्यक्ष के साथ* नोक-झोंक करके कुछ और बोल लेने का आग्रह करता है। खादीग्रामोद्योग की चर्चा में तो जिन समस्याओं को वी० राम-चन्द्रन्जी ने पेश किया उस पर किसी ने भी चर्चा नहीं की मानो वे समस्याएँ उनकी हैं और वे ही हल करेंगे।

तीसरे दिन ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की चर्चा का *आरम्भ हुआ। ठाकुरदास बंग* ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की दिशा को स्पष्ट करते हुए सहरसा के राष्ट्रीय मोर्चा पर जुटने की अपील भी की। इसके बाद आचार्य राममूर्ति ने लोक-शक्ति विकसित करने की नयी प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए एक प्रस्ताव अधिवेशन के सामने रखा, जिसे सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने सर्वसम्मति से स्वीकृत किया था। सब

अधिवेशन ने इस प्रस्ताव को बिना किसी संशोधन के सर्वसम्मति से मंजूर कर लिया। (देखें पृष्ठ ५२२ पर)।

इस विषय की चर्चा में ज्यादा लोगों ने भाग लिया। लगभग सबका स्वर एक ही था। सबने प्रस्ताव के समर्थन में, प्रस्ताव के स्पष्टीकरण में ही दो-चार बातें कहीं। लोगों ने यह महसूस किया कि हमें जितना करना चाहिए था उतना हमने किया नहीं। आज की चर्चा से लगा कि अब आन्दोलन में लोक-शक्ति को ज्यादा-से-ज्यादा शरीक करने की प्रक्रिया शुरू होगी और ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन तेजस्वी बनेगा। परन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि आगे पूरे देश में या सहरसा में भी आन्दोलन की क्या व्यूह-रचना की जाती है।

इस विषय के बाद 'भूमिहदबन्दी' (लैण्डसीलिंग) का एक प्रस्ताव रखा गया। (देखें पृष्ठ ५३६ पर) इस प्रस्ताव को भी सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

शाम को श्री राधाकृष्ण बजाज ने लोकसेवक संविधान में कुछ सुधार प्रस्तुत किया जिसे संघ की प्रबन्ध समिति ने स्वीकार किया था, परन्तु काफी देर तक चर्चा के बाद भी ये सुधार कई कारणों से स्वीकृत नहीं हो सके। जब संगठन, संविधान का प्रश्न उठता है तो उनमें कई अड़चनें खड़ी हो ही जाती हैं।

चौथे दिन १९ मई को शान्तिसेना का विषय रखा गया। श्री नारायण भाई ने शान्तिसेना मण्डल द्वारा किये गये कामों के सन्दर्भ में शान्तिसेना के नये आयाम को पेश किया। चर्चा के लिए उन्होंने कुछ प्रश्न भी प्रस्तुत किये।

बांगला देश, डाकुओं का आत्म-समर्पण शान्तिसेना के अन्य कार्य, तथा तरुण-शान्ति-सेना के संगठन पर चर्चा हुई। श्री राधाकृष्ण जी ने विश्व के युवा आन्दोलन के सन्दर्भ में भारतीय युवा-आन्दोलन को समझाने की कोशिश की। परन्तु इस विषय पर समस्याओं की पृष्ठभूमि में चर्चा नहीं हुई और अन्त में श्री नारायण भाई को कहना पड़ा "कि सब धन्यवाद की भावना से बोले, चर्चा या प्रश्नों के उत्तर की आवश्यकता किसी ने महसूस नहीं की।

चूंकि श्री जयप्रकाश नारायणजी आगे शान्तिसेना मण्डल के अध्यक्ष, नहीं रहेंगे इसलिए अध्यक्ष-पद को ही हटा दिया गया। और श्री नारायण देसाई के संयोजकत्व में मण्डल का नया गठन हुआ।

इसके बाद संघ अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने संघ के नये सदस्यों के नामों की घोषणा की और अपना अध्यक्षीय भाषण भी दिया। (पढ़ें अगले अंक में)

अन्त में दादा ने अधिवेशन की समाप्ति पर समापन भाषण दिया। (पूरा भाषण पढ़ें पृष्ठ ५२७ पर) —कृ० कु०

राजस्थान प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन सम्पन्न

जयपुर ७ मई। दो दिवसीय सर्वोदय सम्मेलन यहाँ राजस्थान खादी ग्रामोद्योग संस्था संघ के प्रांगण में सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन का समारोप करते हुए श्री गोकुलभाई ने कहा कि आज हमारे सामने चुनौती उपस्थित है। आपने कहा कि राजस्थान में शराबबन्दी आन्दोलन की सफलता से देश के अन्य प्रदेशों को भी प्रेरणा मिलेगी।

इस अवसर पर डा० सुशीला नायर ने गांधी के देश में नैतिकता पर आधारित जीवन-मूल्यों पर जोर दिया।

सम्मेलन ने अन्त में प्रदेश की सम्पूर्ण जनता को इसमें सब तरह के सहयोग के लिए आह्वान किया है। ●

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी–१
तार : सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

कानून के दंड को मृत्यु के स्पर्श से कौन बचा सकता था? सर्वोदय विचारधारा और दृष्टिकोण ने अपना काम किया। जहाँ सशस्त्र पुलिस न पहुँच सकी वहाँ सर्वोदय के सीधे-सादे कार्यकर्ता पहुँचे। उनका प्रवेश डाकुओं के मनों और दिलों में हुआ। डाकुओं को बड़ा आश्चर्य हुआ कि कोई उनके पास बिना शस्त्र कैसे आया। वे यह देखकर बहुत प्रभावित हुए कि कोई उन्हें समझना चाहता है और उनसे इन्सानी व्यवहार करना चाहता है। और सबसे बड़ी बात तो इस विश्वास में था कि एक डकैत भी एक सामान्य नागरिक की तरह शान्तिमय हो सकता है। डाकुओं के सामने यह नयी चुनौती थी जिसका पहले उन्हें कभी सामना नहीं हुआ था। डाकुओं का उत्तर भी अनोखा था। उन्होंने आत्म-समर्पण का निर्णय कर लिया यह निर्णय स्वेच्छा से नये जन्म लेने के अतिरिक्त और कुछ भी न था।

छतरपुर में आत्म समर्पण के समय एक बागी द्वारा श्री जयप्रकाशजी का चरणस्पर्श

हमारा नारायण

नेहरू ने भारत की खोज की और गांधी ने भारत के अन्तिम व्यक्ति की, जिसे उन्होंने 'दरिद्रनारायण' कहा। १ अप्रैल १९५१ को देश में जिस पंचवर्षीय योजना की शुरुआत हुई वह भारत के अन्तिम व्यक्ति की नहीं थी। गांधी ने कहा था कि भारत का विकास अन्तिम व्यक्ति से शुरू हो, वही उसका मापदण्ड हो, वही उसका साध्य और साधन बने। नेहरू ने सोचा कि अगर देश की टोटल दौलत बढ़ेगी तो छनकर कुछ-न-कुछ दौलत अन्तिम व्यक्ति के पास भी पहुँचेगी।

इसमें कोई शक नहीं कि पिछले कई वर्षों में देश की कुल दौलत बढ़ी है, इसलिए गणित के हिसाब से औसत आमदनी भी बढ़ी है। लेकिन अन्तिम व्यक्ति के पास कितनी पहुँची है? क्या कोई ऐसी बात हुई है जिससे उसे आशा हुई हो कि उसका भी भाग्य बदल सकता है?

आज की रचना में शासन-सूत्र और जीविका के साधन, दोनों विशिष्ट व्यक्ति के हाथों में हैं। अब यह विशिष्ट व्यक्ति सामान्य व्यक्ति (कामन मैन) की भाषा बोलने लगा है। उसके गरीबी हटाओ के नारे में संकेत 'कामन मैन' का है, न कि अन्तिम व्यक्ति (लास्ट मैन) का। सामान्य व्यक्ति वह है जिसके पास कुछ-न-कुछ साधन हैं। उसका जीवन कठिन है, उसे भूख से हमेशा मुक्ति नहीं है, वह महाजन से कर्ज लेकर ही गुजर करता है और समाज के रस्म-रिवाज पूरा करता है। लेकिन वह अनाथ और असहाय नहीं है। इसके विपरीत अन्तिम व्यक्ति वह है जो निराधार है। उसके पास एक ही साधन है--उसकी, उसकी पत्नी और बच्चों की मेहनत जिसे वह बाजार में खरीददार के भाव से बेचता है, और बेचकर अपना पेट पालता है। भूमिहीन मजदूर, बँटाईदार, भूमि के दो-चार टुकड़े रखनेवाला छोटा खेतिहर, घरेलू दस्तकार आदि इसी कोटि में आते हैं। आदिवासी भूमिहीन तो नहीं है, किन्तु महाजनों ने उसे अन्नविहीन कर रखा है। वे उसके खेत का पूरा अन्न कर्ज में से लेते हैं। कई लोग स्त्रियों को भी अन्तिम व्यक्ति की ही कोटि में गिनते हैं। कई दृष्टियों से वे उस कोटि में हैं भी।

जो अन्तिम व्यक्ति हैं वे सौ में चालीस से कम नहीं हैं। बिहार के कई जिलों में इनका प्रतिशत ६० से ८० या इससे भी अधिक है। कई गांव ऐसे हैं जिनमें भूमिहीन ९०-९५ प्रतिशत तक हैं। इक्कीस वर्षों में देश ने, हमारी सरकार और उसकी पंचवर्षीय योजना ने, अपने इतने नागरिकों के लिए क्या किया है?

इस वक्त भूमि पर सीलिंग लगाने की हवा है। अगर सही सीलिंग लग जाय; और जमीन निकल भी आये--जो सम्भव नहीं भी दिखाई देता तो किसे मिलेगी? छोटे खेतिहर को जिसके पास कुछ थोड़ी भूमि है, या पूरे भूमिहीन को? अर्थशास्त्री कहेंगे कि भूमिहीन को थोड़ी भूमि देने से अनार्थिक जोतें बढ़ेंगी, गोया पहले से जितनी जोतें हैं वे सब आर्थिक हैं।

चाहे जैसी सीलिंग लगायी जाय हर भूमिहीन को भूमि नहीं मिल सकती, यह हर एक जानता है। सरकार कहती है कि ऐसे लोगों को भूमि-सुधार, सड़क, मकान बनाने, और पेड़ लगाने आदि का काम दिया जा सकता है, जिससे मजदूरी मिल सकती है। अच्छा है इस तरह भी कुछ राहत मिले, लेकिन राहत फिर भी राहत है! राहत ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी का उपाय नहीं है। इसीलिए गांधीजी ने गृह और ग्रामोद्योगों की बात कही थी। वह घर-घर का औद्योगीकरण चाहते थे। गृह-वाटिका के लिए जमीन का टुकड़ा हो, घर और गांव में उद्योग के साधन हों, तो कोई आदमी मजदूरी करने के लिए विवश नहीं होगा। तब खेती खेतिहरों के परस्पर सहकार से होगी, मजदूरों के शोषण से नहीं। बिजली की बदौलत उद्योगों की व्यापक योजना गांव-गांव में लागू की जा सकती है, लेकिन सरकार को ऐसी योजना पसन्द नहीं है। वह यह नहीं सोचती कि अगर उद्योग न हो तो घर-घर में साधन कैसे फैलेंगे? सरकार मजदूर के लिए मजदूरी से ज्यादा कुछ सोच नहीं पाती। वह यह नहीं सोच पाती कि अगर भूमिहीनों की संख्या बढ़ेगी तो मजदूर अधिक होते जायेंगे, और मजदूरी कम होती जायगी। बिहार के कोसी-नहर-क्षेत्र में हरित-क्रान्ति के होते हुए भी मजदूरी घट रही है।

हम भूमि, शिक्षा, प्रशासन, और न्याय में से किसी एक की भी व्यवस्था जड़ से नहीं बदलना चाहते। समाज परिवर्तन की बात न सरकार करती है न कोई राजनैतिक दल। हम ऐसी योजनाएँ चला रहे हैं जिनसे समाज के साधन और विकास के अवसर थोड़े हाथों में केन्द्रित होते चले जा रहे हैं। गांव के बड़े मालिक ने कानून की आँख में धूल झोंककर जमीन का बँटवारा कर रखा है। कानून में उसके पास कम बीघा जमीन (भूमि) है, लेकिन ४-५ सौ बीघे भूमि का अन्न उसके घर में आता है। उसके दर्जनों मजदूर और बँटाईदार हैं। वह उन्हें अपने ऊपर आश्रित रखकर इनकी मेहनत से मुनाफा कमाता है। वह मशीन के सहारे मजदूर से मुक्त हो जाने को तैयार है, किन्तु वह इस बात के लिए तैयार नहीं है कि मजदूर की हैसियत बदले।

यह बड़ा भूमि का मालिक (शहर का सेठ) कानून से नहीं

हारता, कत्ल से नहीं डरता। शक्ति और सत्ता के स्रोतों को अपनी मुट्ठी में कैसे रखा जाता है, यह रहस्य उसने जान लिया है। वह पंचायत का मुखिया होता है, एम० एल० ए० होता है, एम० पी० होता है, स्कूल कमिटी का मेम्बर तथा कोऑपरेटिव और बैंक का डाइरेक्टर होता है, पुलिस से दोस्ती रखता है, और अगर किसी ने जरा भी सिर उठाया तो उसे मुकदमे में फँसा देता है। वह अपनी पार्टी का लोकल नेता है, राजनीति के मन्त्रियों तक उसकी पहुँच है। अधिकारियों पर उसका दबदबा है, चुनाव में वह पैसे और डण्डे का पूरा इस्तेमाल करता है, और जब चाहता है 'बूथ' भी 'कैप्चर' कर लेता है। शक्ति को अपने हाथों में बनाये रखने के लिए वह कुछ भी करने को उतारू हो गया है।

जिस अन्तिम व्यक्ति के पास जीविका का अपना साधन न हो, जो वोट दूसरों की कृपा से ही दे सकता हो, जो शिक्षा से वंचित हो और जो समाज में तिरस्कृत और अप्रतिष्ठित हो, जिसे शराब पिलाकर सरकार करोड़ों की आय करती हो, उस अभागे अन्तिम व्यक्ति की नागरिकता का क्या मूल्य है?

भारत का 'लोकतन्त्र' है तो विशिष्ट व्यक्ति के हाथों में, लेकिन नारे लग रहे हैं सामान्य व्यक्ति के। अन्तिम व्यक्ति की बात करना विशेषज्ञों की दृष्टि में अव्यावहारिक और नेताओं की दृष्टि में 'पागलपन' है। लेकिन क्रान्ति की दृष्टि में? गांधीजी ने अन्तिम व्यक्ति को 'दरिद्रनारायण' कहा था। दूसरे कुछ भी कहें लेकिन कोई क्रान्तिकारी अपने नारायण को कैसे छोड़ेगा? हमारा नारायण वही अन्तिम व्यक्ति है।

बागी नहीं लेकिन बगावत चाहिए

पंजाब के सर्वोदय सम्मेलन में किसी ने बागी श्री लोकमन से पूछा : "आप डाका क्यों डालते थे?" उन्होंने कहा : "हम डाका डालते ही नहीं थे, हम तो धनियों से कहते थे कि अपने सूद की कमाई का एक हिस्सा हमें दे दो, तुम्हारा भी काम चलता रहे, और हमारा भी खर्च निकलता रहे। हम डाकू नहीं थे, बागी थे।

चम्बल घाटी के जिन लगभग चार सौ 'बागियों' ने आत्म-समर्पण किया है वे अपने को चोर या डाकू नहीं मानते थे। वहाँ की जनता भी उन्हें बागी ही मानती थी, चोर डाकू या हत्यारा नहीं। ऐसा नहीं है कि कानून के अनुसार उन्होंने डाके नहीं डाले, या हत्याएँ नहीं कीं, फिर भी अपनी और दूसरों की नजर में वे बागी ही थे, अपराधी नहीं। इसका कारण यह था कि जिस मूल प्रेरणा के प्रभाव में उन्होंने घर और समाज से निकलकर घाटियों और जंगलों की शरण ली थी वह क्षोभ की थी, बदला लेने की थी—उन लोगों से बदला लेने की जिन्होंने उनके साथ ज्यादती की थी और उन्हें इतना परेशान किया था कि वे चैन के साथ रह नहीं सके। वे समाज की अनीति और पुलिस के दमन के विरुद्ध बगावत करके निकल गये थे। और जब एक बार वे जंगल में पहुँच गये, और पुलिस ने उनकी जिन्दा या मुर्दा गिरफ्तारी पर इनाम बोल दिया तो वे पक्के हो गये, और अपने अस्तित्व को कायम रखने तथा जुल्म का बदला लेने के लिए उन्हें जो कुछ करना पड़ा उन्होंने निडर होकर किया। इन बागियों के जीवन की वास्तविकता अब देश के सामने आ रही है, और लोग समझ रहे हैं कि किस तरह मनुष्य अनीति और दमन का शिकार होकर सामान्य जीवन छोड़ने और 'अपराधी' का जीवन स्वीकार करने पर विवश हो जाता है। इस विवशता की जिम्मेदारी किस पर है? स्वयं मनुष्य पर या समाज और सरकार पर?

श्री लोकमन से दूसरा प्रश्न पूछा गया : "आपको हथियार कहाँ से मिलते थे?" उन्होंने उत्तर दिया : "जिनके पास हथियार होते हैं वे ही हथियार देते थे।" हथियार पुलिस से मिलते थे, सेना के कारखानों और तस्कर व्यापारियों से मिलते थे। तभी तो इन बागियों के सारे मददगार पुलिस के अधिकारी, व्यापारी, नेता और धनी लोग जिनकी बागियों से साँठ-गाँठ थी—आत्म-समर्पण से नाराज हैं और शान्ति के काम में तरह-तरह की बाधाएँ डाल रहे हैं।

कुछ लोग यह सोचते हैं कि ये बागी पुलिस की कार्रवाइयों से घबड़ा गये थे, या लूटपाट कर उन्होंने इतनी दौलत इकट्ठा कर ली थी कि पेट भर गया था, इसलिए आत्म-समर्पण कर दिया, उनका शुद्ध रूप से हृदय-परिवर्तन नहीं हुआ। बात यह है कि उनका हृदय मनुष्य का ही था, अपराधी का था ही नहीं। अपराधी उन्हें बनाया गया, माना गया था। जब विनोबा और जयप्रकाश जैसे लोगों ने उन्हें फिर मनुष्य मानने का साहस दिखाया, तो उनकी गयी हुई मनुष्यता वापस आ गयी। वे ऊँची मनुष्यता के स्पर्श से ऊँचे उठ गये, और अपने क्षोभ तथा बदले की भावना को भूल गये। परिस्थिति की उत्तेजनाओं से मुक्त होकर वे फिर सहज सामान्य मनुष्य बन गये और हृदय-मंथन की प्रक्रिया से गुजर कर सहज सामान्य मनुष्यों के उसी समाज में लौट आये जिससे उनका हृदय बँधा हुआ था, लेकिन जिससे किसी तात्कालिक परिस्थिति ने उन्हें काट कर अलग कर दिया था। मनुष्य के सहज हृदय को वापस लाना हृदय-परिवर्तन नहीं तो और क्या है? एक बार हम अपने हृदय का मैल निकाल कर दूसरे मनुष्य को मनुष्य मानने का साहस करें तो मनुष्यता का द्वार खुल जाता है। लेकिन कठिनाई यह है कि हम अपने और दूसरे मनुष्य के बीच दुराव और अविश्वास की तरह-तरह की दीवालें खड़ी कर लेते हैं, और एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। मनुष्य मनुष्य है, जो 'अपराधी' है—वह भी मनुष्य है, यह सीख गांधीजी ने हमें दी। विनोबा और जयप्रकाश से अहिंसा के इस शीतल स्पर्श को पाकर बागियों का विश्वास जगा और उन्होंने अपनी मनुष्यता पहचानी। लेकिन हमें विश्वास नहीं होता। हिंसा से ग्रस्त हमारा मानस अहिंसा की सामान्य क्रियाओं को भी समझ नहीं पाता और नाहक अनास्था से अपने को संकुचित कर लेता है।

किसान और जमीन के मसले पर ध्यान दीजिए

दादा धर्माधिकारी का सर्वोदय सम्मेलन में समापन भाषण

परसों से मैं बहुत ध्यान से सारे भाषण सुनता रहा हूँ। एक बात, एक सवाल मेरे मन में लगातार उठता रहा है कि यहाँ जो आया उसने यही कहा कि यह क्यों नही करते, यह करो, यह क्यों नही करते, यह करो, यह क्यों नही करते, यह करो, तो कुछ ऐसा मालूम हुआ कि यह बेकारों की जमात काम की खोज में बाजार में बैठी हुई है। जो कोई आता है वह अपना नुस्खा उसको बताता है। तो यह बेकार भी है और मरीज भी है, ऐसा कुछ ख्याल हुआ।

मैं सोचने लगा कि आखिर ये बागी विनोबा के ही पास क्यों आये? क्या इस देश में साधुओं की कमी है? क्या इस देश में आध्यात्मिक पुरुष हैं ही नहीं? विनोबा से कहीं पहुँचे हुए कहीं बड़े आध्यात्मिक पुरुष हैं। फिर भी यहाँ जितने लोग आये, वे इन बेकार, निकम्मे सर्वोदयवालों से ही कहते रहे कि यह क्यों नही करते हो, वह क्यों नहीं करते हो! पर वे साथ-साथ यह भी कहते रहे कि तुम्हारा कोई असर नही, तुम निकम्मे हो, तुम्हारा कोई इम्पैक्ट नही। तो भाई, आते क्यों हो और कहते क्यों हो? निकम्मे को कहने से कोई फायदा? यह क्या आप मुर्दों से बात कर रहे थे? यहाँ ये बागी विनोबा के ही पास आये और गाय को बचानेवालों से लेकर शराबबन्दीवालों तक सभी लोगों ने आप से कहा कि आप यह नही करते हैं, यह आप का गुनाह है, यह आप का कसूर है, यह आपकी कमी है!

इसकी वजह एक ही है कि जो इन डाकुओं की तलवारों के पीछे ताकत है, वह ताकत जिस अन्न से आती है, उस अन्न के उपजानेवाले की तरफ विनोबा ने तवज्जु दी (ध्यान दिया)। जिसके हाथ में औजार हैं और अन्न उपजाने के औजार हैं, वह सबसे निचला लेकिन बुनियादी इनसान है। उसके बगैर न इन बागियों की बन्दूक में दम होता, न पुलिस की संगीन में दम होता, और न यह तख्त और न तलवार तथा तिजोरीवाले पनपने पाते। वह विभूति है सामाजिक जीवन की, जिसकी तरफ हमारा ध्यान विनोबा ने दिलाया और इसलिए सबका ध्यान विनोबा की तरफ गया।

इसलिए आप लोगों की सेवा में एक ही दरख्वास्त है कि वह जो हमारा मेन करेण्ट है, जो मुख्य-प्रवाह है, इनसान और जमीन के ताल्लुकातों को बदलने का, इनसान और इनसान के ताल्लुकातों को बदलने का, उसकी तरफ से अपना ध्यान जरा भी न हटने दीजिए। इस किसान का मसला और जमीन का मसला, इसकी ओर से ध्यान न हटने दीजिए।

दो मोर्चे तो यों ही कायम हो गये हैं। एक जयपुर का है और दूसरा यह चम्बल घाटी का। सहरसा का पहले से है ही। अगर आप चाहते हैं कि आपकी ताकत न बिखरे और अगर आप चाहते हैं कि आपकी कुछ शान रहे और कुछ इज्जत रहे, तो मेहरबानी कीजिए और इस देश में ज्यादा मोर्चे खड़े न कीजिए। इतनी ही प्रार्थना है।

सबको धन्यवाद, सबको नमस्कार।

नकोदर (पंजाब)

२१ मई १९७२

→इस मामले में भारत की एक विशेषता है। शुरू से आज तक देश के हर भाग में ऐसे सन्त और सुधारक हुए हैं जिन्होंने लोक-मानस में अहिंसा के संस्कार का प्रवेश कराया है। यह कम कौतुक की बात नहीं है कि आज से ढाई हजार वर्ष पहले महावीर और बुद्ध ने अहिंसा को जीवन का बुनियादी मूल्य घोषित किया और अशोक ने तो सम्राट होते हुए भी भेरी-घोष की जगह धर्म घोष किया। महावीर, बुद्ध और अशोक सभी क्षत्रिय थे, और शस्त्र ही उनका जाति-धर्म था। उन्होंने ऊँची मानवता के समक्ष शस्त्र का परित्याग किया, समाज से मिला हुआ अपना जाति-धर्म छोड़ा। गांधीजी भारतीय लोक-हृदय की इस अन्तरधारा को पहचानते थे, इसीलिए भारत के हृदय ने गांधी को स्वीकार किया। था शायद बांगला देश में भारत के धर्म-युद्ध के पीछे उसको इस परम्परा का भी जबरदस्त प्रभाव था।

बागियों का प्रायश्चित और शस्त्र-त्याग दण्डशक्ति की निस्सारता का प्रमाण है। वह प्रमाण है इस बात का कि मनुष्य की मूलभूत मनुष्यता जगायी जा सकती है। इससे आगे बढ़कर वह इस बात की चेतावनी भी है कि हमारी सामाजिक या अन्य समस्याएँ प्रशासन और राजनीति के सतही उपायों से नही हल हो सकती, अगर वे हल होंगी तो उन उपायों से जिनमें सामान्य मनुष्यों के सामान्य गुणों पर भरोसा होगा। भारत के हृदय को अहिंसा छू सकती है। अहिंसा से ही उसकी चेतना जग सकती है। अहिंसा शासन की शक्ति नहीं है, समाज की शक्ति है, नागरिक का धर्म है।

हमें खुशी है कि हमारे कुछ बागी भाई अपने कार्य के इस व्यापक आयाम को समझते हैं। वे मानते हैं कि अब वे 'बागी' तो नही रहे, किन्तु उनकी बगावत कायम रहनी चाहिए--बगावत उस व्यवस्था से जो मनुष्य को मनुष्यता से गिराती है। हमें भरोसा है कि हमारे भाई अहिंसा के सिपाही बनेंगे, और उनकी शक्ति अहिंसा की क्रान्तिकारी शक्ति संगठित करने में लगेगी।●

हृदय-परिवर्तन का चमत्कार

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के हंगामों में चुपचाप सामाजिक परिवर्तन का काम करनेवालों पर नजर नहीं जाती। बन्दरगाहों पर बिछायी जानेवाली सुरंगें, नगरों पर बरसाये जानेवाले बम नष्ट होनेवाली सड़कें, तबाह होनेवाले पुल, महिलाओं की इज्जत से खेल और बच्चों का खून-खराबा संहार की मुख्य सूचनाएँ बनती हैं। ऐसे ही, बड़ी शक्तियों के दूत जब पेरिस या मास्को में मिलते हैं तो सारे संसार की आँखें उन पर लगी होती हैं, यद्यपि उनकी जेबों में अणुबम और आई० बी० एम० होते हैं। लेकिन जब मार्टिन लूथर किंग द्वारा मजदूरों के संगठन की कोशिश होती है और मानव अधिकार के लिए संघर्ष होता है, या जब जयप्रकाश नारायण की तरह का सर्वोदय कार्यकर्ता अपने साथियों की *टीम चम्बल घाटी में भेजता है* ताकि वे डकैतों को हिंसा और लूट के रास्ते से हटा सकें तो उस पर किसी का ध्यान नहीं जाता। संसार की नींद उस समय टूटती है जब किंग को गोली मार दी जाती है या जब डकैत सैकड़ों की संख्या में शस्त्र छोड़कर अपने-आप को कानून के हवाले कर देते हैं। परन्तु यह नींद देर तक टूटी नहीं रहती कुछ ही दिनों बाद एकबार फिर सामाजिक क्रान्तिकारियों का मौन सत्ता की राजनीति में डूब जाता है।

वे लोग जो घटना को खुले दिल व दिमाग से देखते हैं उन्हें यह मान्य करने में जरा भी संकोच नहीं होता कि मध्य प्रदेश में जो कुछ हुआ है वह एक चमत्कार से कम नहीं है। कम-से-कम पिछले बीस वर्षों से मध्य प्रदेश की पुलिस उत्तर प्रदेश और पंजाब की पुलिस की मदद से चम्बल घाटी में डकैतों को उनके गढ़ों से निकालने की कोशिश कर रही थी। ये डकैत केवल सरकार का विरोध करने में ही सफल नहीं रहे थे बल्कि उन्होंने अपनी कार्रवाइयों का क्षेत्र और अपनी शक्ति भी बढ़ा ली थी। सौभाग्य की बात है कि उन्होंने अपना कोई राजनैतिक झण्डा नहीं बनाया था और न ही अपना कोई घोषणा-पत्र प्रकाशित किया था।

अगर उनमें से कुछ दिमागवालों ने ऐसा सोचा होता तो ठीक भारत के हृदय में एक बहुत बड़ी राजनैतिक चुनौती पैदा हो गयी होती। हमारे कुछ पड़ोसी देश जो क्रान्ति के निर्यात के लिए सदा इच्छुक रहते हैं उन्हें मुक्ति सेना की उपाधि भी दे सकते थे। उन डकैतों में गोरिल्ला सेना की सभी विशेषताएं मौजूद थीं—जैसे साहसी नेतृत्व, स्थानीय लोगों से गहरा सम्पर्क, क्षेत्र की जानकारी, शस्त्र और गोले-बारूद का न खतम होनेवाला भण्डार इत्यादि।

ऐसा मालूम होता था कि *सरकारी कोशिश से डकैतों का खतरा कम नहीं* होगा, यद्यपि वे समय-समय पर दबा जरूर दिये जाते थे। इस प्रकार राज्य सरकार की लाचारी और उसकी परिस्थिति स्पष्ट थी। डकैतों की परिस्थिति भी विचित्र हो गयी थी। उनके सामने इस असामाजिक पेशे से भाग निकलने का कोई रास्ता नहीं रह गया था, चाहे निकल भागने की उनकी कितनी ही इच्छा क्यों न हो। पिछले १५ सालों में, एक ओर भय और रक्तपात, दूसरी ओर बदला और पीछा करने की भावना का न अन्त होनेवाला सिलसिला चम्बल घाटी की कहानी है, जब कि देश के दूसरे भागों में विकास के काम हो रहे थे।

चम्बल के क्षेत्र को मृत्यु के स्पर्श से कौन बचा सकता था? सर्वोदय विचार-धारा और दृष्टिकोण ने अपना काम किया। जहाँ सशस्त्र पुलिस न पहुँच सकी, वहाँ सर्वोदय के सीधे-सादे कार्यकर्ता पहुँचे। उनका प्रवेश डकैतों के गढ़ों और दिलों में हुआ। डकैतों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि कोई उनके पास बिना शस्त्र कैसे आया। और भी वे यह देखकर प्रभावित हुए कि कोई उन्हें समझना चाहता है और उनसे इनसानी व्यवहार करना चाहता है। और सबसे बड़ी बात तो इस विश्वास में थी कि एक डकैत भी एक सामान्य नागरिक की तरह शान्तिमय हो सकता है। डकैतों के सामने यह नयी चुनौती थी जिसका पहले उन्हें कभी सामना नहीं हुआ था। डकैतों का उत्तर भी अनोखा था। उन्होंने आत्म-समर्पण का निर्णय कर लिया। यह निर्णय स्वेच्छा से नये जन्म लेने के अतिरिक्त और कुछ भी न था।

आमतौर पर यह बात कही जाती है कि ऐसी घटना केवल भारत में ही हो सकती है। परन्तु थोड़े ही से लोग आगे बढ़कर यह जानना चाहते थे कि यह क्यों हुआ? उत्तर एक ही था कि कभी हम लोगों के बीच एक ऐसा आदमी था जिसे संसार गांधी के नाम से जानता था। उसने सामाजिक परिवर्तन को *अहिंसा और हृदय-परिवर्तन* की भाषा में सोचा, प्रस्तुत किया। शायद उसी में केवल यह हिम्मत थी कि परम्परागत पद्धतियों से अलग सोच सके, कुछ कर सके, जब कि हम दूसरे लोग मार्क्सवादी, समाजवादी, लोकतंत्रवादी पश्चिम के बताये हुए सबक को दोहरा रहे थे। गांधी ने अपने आप पर सोचने का उत्तरदायित्व लिया। उन्होंने अपने दुश्मनों को किसी वर्ग का प्रतिनिधि नहीं माना, उन्हें बुनियादी तौर पर इनसान माना। अवश्य उनके पास कोई बना बनाया उत्तर न था। परन्तु एक विशेष परिस्थिति में उनकी जो भी प्रतिक्रिया होती थी उनमें वे बुनियादी मानवीय मूल्यों को अधिक-से अधिक ध्यान में रखते थे। आज आक्रमण और अनैतिक राजनीति के युग में यह जानकर कितनी खुशी होती है कि गांधीवादी परम्परा अब तक हमारे बीच जीवित है—म्यूजियम के किसी वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि ऐसी शक्ति के रूप में जो पत्थर-से-पत्थर जैसे दिलों में भी परिवर्तन ला सकती है।

—जनता, अंग्रेजी का सम्पादकीय

नयी शिक्षा में आमूल परिवर्तन की माँग

अ० भा० नयी तालीम सम्मेलन का निवेदन

[शारदाग्राम, गुजरात में गुजरात के राज्यपाल और नयी तालीम समिति के अध्यक्ष श्री श्रीमन्नारायण की अध्यक्षता में ३–४ जून को अखिल भारत नयी तालीम सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का निवेदन हम यहाँ दे रहे हैं। सं०]

शारदाग्राम (गुजरात) में ३–४ जून '७२ को आयोजित अ० भा० नयी तालीम सम्मेलन ने आपसी विचार-विमर्श के बाद तीव्रतापूर्वक यह अनुभव किया कि भारत की स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती वर्ष को शिक्षा में आमूल क्रान्ति का वर्ष मानकर सारे देश में पूर्व-प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक की समूची शिक्षा-प्रणाली को इस तरह बदला जाय जिससे देश के लोक-जीवन में शिक्षा अपने वास्तविक रूप में विकसित और प्रतिष्ठित हो सके तथा उसमें बुनियादी शिक्षा के समस्त सर्वमान्य तत्वों का भलीभाँति समावेश किया जा सके। शिक्षा को समाजवादी लोकतांत्रिक राष्ट्रीय जीवन की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए उक्त परिवर्तन अनिवार्य है। इस समय देश में पूर्व-प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा का जो रूप प्रचलित है उसमें राष्ट्रीय शिक्षा के उन तत्वों का भारी अभाव है, जो शिक्षकों और विद्यार्थियों के चरित्र और जीवन को सही दिशा और दृष्टि देते हैं।

इस सम्मेलन की यह निश्चित राय है कि देश में पूर्व प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक की समूची शिक्षा-व्यवस्था में बुनियादी शिक्षा के नीचे लिखे चार मूलभूत तत्वों का समावेश निरपवाद रूप से किया जाय: (१) शिक्षा का माध्यम आदि से अन्त तक बालक की अपनी मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा हो, (२) शिक्षा किसी-न-किसी समाजोपयोगी उत्पादक उद्योग के माध्यम से दी जाय, (३) शिक्षा के द्वारा नागरिकों में सर्वधर्म समभाव की भावना को विकसित और पुष्ट किया जाय, (४) शिक्षा को समाज-निर्माण और समाज-सेवा की प्रवृत्तियों के साथ जोड़ा जाय। सम्मेलन का अपना यह दृढ़ विश्वास है कि शिक्षा के क्षेत्र में शहरी और देहाती शिक्षा के बीच कोई भेद न रखा जाय। मूलभूत तत्वों का आग्रह सर्वत्र समान रूप से रहे। उत्पादक उद्योगों के प्रकार में आवश्यकता के अनुसार गाँवों या शहरों में जो अन्तर रखना इष्ट हो, रखा जाय। शिक्षा के क्षेत्र में ऐसी किसी व्यवस्था को प्रश्रय न दिया जाय जिससे समाज में वर्ग-भेद और श्रेणी-भेद को प्रोत्साहन मिले। देश में शिक्षा की समानान्तर प्रणालियाँ न चलायी जायँ और लोक-शिक्षा की एक ही सामान्य विद्यालय-प्रणाली को सर्वत्र अनिवार्य रूप से अपनाया जाय।

यह सम्मेलन भारत-शासन से और प्रान्तों की सरकारों से अनुरोध करता है कि वे अपने यहाँ बुनियादी शिक्षा को उसके पूर्ण रूप में विकसित करने का बीड़ा उठायें और ऐसा कोई प्रतिगामी कदम न उठने दें जिससे बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति में बाधा पहुँचे।

सम्मेलन चाहता है कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही हो। पाँचवीं कक्षा से या उसके बाद एक और वैकल्पिक भाषा सिखायी जाय और आगे की पढ़ाई में विद्यार्थी की रुचि के अनुसार देश-विदेश की किसी भी एक भाषा को सिखाने की समुचित व्यवस्था सर्वत्र की जाय। सम्मेलन यह भी चाहता है कि राष्ट्रीय सेवाओं के लिए जो परीक्षाएँ ली जाती हैं, वे सब मातृभाषा में ही ली जायें और जो लोग इस प्रकार राष्ट्रीय सेवा के लिए चुने जायँ, उनको एक निश्चित अवधि में हिन्दी अथवा अंग्रेजी सिखाने की समुचित व्यवस्था की जाय।

सम्मेलन का यह दृढ़ विश्वास है कि शिक्षा के क्षेत्र में प्रमाण-पत्र का नौकरी से सम्बन्ध-विच्छेद होना ही चाहिए। नौकरी या रोजगार देनेवाला अपनी परीक्षा स्वयं ले और इस परीक्षा में बैठने के लिए किसी दूसरी परीक्षा के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता न हो। इस प्रकार के सम्बन्ध-विच्छेद से वे बहुत से भ्रष्टाचार दूर हो सकेंगे, जो आजकल सामान्य हो रहे हैं।

सम्मेलन चाहता है कि केवल वार्षिक परीक्षाओं के स्थान पर छात्रों के कामों का सतत मूल्यांकन हो और प्रत्येक स्तर की शिक्षा समाप्त करने के बाद जो प्रमाण-पत्र दिये जायँ वे वर्णनात्मक हों और उनमें उत्तीर्ण-अनुत्तीर्ण का अथवा श्रेणी का उल्लेख न किया जाय।

सम्मेलन यह आवश्यक समझता है कि दसवीं अथवा ग्यारहवीं कक्षा की पढ़ाई के बाद विविध उद्योगों के शिक्षण की ऐसी व्यवस्था की जाय, जिससे लाभ लेकर अधिकांश छात्र आत्मनिर्भर जीवन जीने योग्य बन सकें और विश्वविद्यालय में पहुँचनेवाली भीड़ छँट सके।

सम्मेलन की अपनी यह मान्यता है कि इस देश में शिक्षा स्वायत्त बननी ही चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा के मूलभूत सिद्धान्तों को स्थिर कर लेने के बाद शिक्षा की व्यवस्था और संचालन के सारे सूत्र शासन के हाथ से निकालकर राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तर पर बनी स्वायत्त शिक्षा-समितियों के हाथों में सौंपे जाने चाहिए, जिससे शिक्षा के क्षेत्र में सरकारी अथवा अर्द्ध-सरकारी नियन्त्रण कम-से-कम रह जाय। इन समितियों में ऐसे शिक्षा-विद् रखे जायँ जिन्होंने शिक्षा की समस्याओं पर चिन्तन किया हो और शिक्षा के क्षेत्र में जिनका अपना प्रत्यक्ष अनुभव भी हो। ये समितियाँ निश्चित रूप से अराजनैतिक और दल-मुक्त होनी चाहिए।

(शेष पृष्ठ ५३१ पर)

क्रान्ति के अग्रिम मोर्चे पर एकजुट होकर लगने की अपील—हिन्द-स्वराज्य को ग्रामस्वराज्य में विकसित करने का संकल्प

२० वें सर्वोदय समाज सम्मेलन का निवेदन

गुरुनानक देव की धरती पंजाब में आयोजित यह सर्वोदय सम्मेलन चम्बल घाटी के बागियों के आत्म-समर्पण को अहिंसा और प्रेम की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानता है। इस चमत्कार के लिए श्री जयप्रकाश नारायण और शान्ति-मिशन के समस्त कार्यकर्ता साथियों का हम हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। इस घटना की पृष्ठ-भूमि में हम सरकार से अपील करते हैं कि दण्ड-व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किया जाय और गांधी के इस देश से फांसी की सजा सदा के लिए समाप्त कर दी जाय।

यह सम्मेलन उत्तराखण्ड में नशाबन्दी के लिए किये गये सफल सत्याग्रह के लिए वहाँ के कार्यकर्ताओं का अभिनन्दन करता है और उत्तर प्रदेश शासन का भी आभार मानता है। लेकिन हमें इस बात का हार्दिक दुख है कि राजस्थान सरकार नशाबन्दी के लिए दिये गये वचन को भंग कर रही है। ऐसी स्थिति में राजस्थान के अनन्य सेवक श्रद्धेय श्री गोकुलभाई भट्ट को आमरण उपवास के लिए विवश होना पड़ा। यह सम्मेलन राजस्थान सरकार से अपील करता है कि वह अपना वचन निभाये और प्रदेश में नशाबन्दी घोषित करे। आशा है, सरकार तुरन्त उचित कदम उठायेगी।

आज सारे विश्व में शान्ति और समता की चाह है लेकिन शोषण, दमन और हिंसा पर आधारित विश्व-समाज की यह आकांक्षा तबतक पूरी होना असम्भव है जबतक समाज की रचना और जीवन-मूल्यों में अपेक्षित परिवर्तन न हो। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य द्वारा मानवीय सभ्यता और संस्कृति को सत्य और अहिंसा की बुनियाद पर पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया जा रहा है। इस दृष्टि से सहरसा, मुसहरी (बिहार) और तंजावूर (तामिलनाडु) आदि में ग्रामदान-पुष्टि तथा विभिन्न प्रदेशों में चलाये जा रहे ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि के अभियानों का अपना विशेष महत्त्व है। आशा है इन प्रयोगों से लोकशक्ति प्रकट होगी और देश में अहिंसक क्रान्ति के लिए एक जबर्दस्त जन-आन्दोलन खड़ा हो सकेगा। इसलिए हम देशभर के रचनात्मक कार्यकर्ताओं और शान्तिपूर्ण परिवर्तन की आकांक्षा रखनेवाले नागरिकों से अपील करते हैं कि सर्वोदय आन्दोलन के इन अग्रिम-मोर्चों को सफल बनाने के लिए भरसक प्रयत्न करें।

आज हमारे देश में त्वरित परिवर्तन के लिए वातावरण बना है। हमारी सरकार को सामान्य मनुष्य की चिन्ता है और उसके कल्याण के लिए भूमि और सम्पत्ति की हदबन्दी के कानून बनाये जा रहे हैं। ये सारे कदम स्वागत-योग्य है, लेकिन हमारी मुख्य चिन्ता इस देश का अन्तिम-व्यक्ति है। देश का यह अन्तिम-व्यक्ति दीन हीन और चेतनाशून्य है। इसलिए सारे देश के नियोजन, शिक्षा, और कृषि-औद्योगिक नीति की दिशा अन्तिम-व्यक्ति की जीवन-समस्या के तत्काल समाधान की होना अनिवार्य है। 'अन्त्योदय' की बुनियाद पर ही आर्थिक और सामाजिक नीतियाँ टिक सकती हैं और सफल हो सकती हैं।

भारत की राष्ट्रीय एकता यहाँ की सांस्कृतिक एकता पर आधारित है। भारत में अनेक धर्म और समृद्ध भाषाएँ हैं। ऐसे राष्ट्र की अन्तर्निहित हार्दिक एकता के विकास के लिए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि देश की सभी भाषाएँ एक ही लिपि में लिखी जायें। इसके लिए नागरी लिपि का उपयोग सर्वथा उपयुक्त है। यदि सारे देश के लोग सभी भाषाओं के लिए नागरी लिपि को स्वीकार कर लें तो देश की सांस्कृतिक एकता मजबूत होगी और इससे आपसी प्रेम, सहिष्णुता और ज्ञान का भी प्रसार होगा।

आज समाज में सत्य और अहिंसा के युगानुकूल मूल्यों में शोध करने की और लोक-जीवन में उन्हें प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता है। गांधी-प्रणीत रचनात्मक संस्थाओं की इस में बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। इसके लिए संस्थाओं के आपसी समन्वय और निर्धारित समान लक्ष्य की ओर एक साथ बढ़ने का प्रयत्न आवश्यक है। नैतिक शक्ति के पुनरुत्थान के लिए देश के समस्त रचनात्मक सेवकों और संस्थाओं को सहचिन्तन, सहयोग और समन्वित प्रयत्न द्वारा अथक परिश्रम करना होगा। यह सम्मेलन समस्त रचनात्मक संस्थाओं से अपील करता है कि वे राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुकूल सम्मिलित कदम उठाने के लिए संगठित रूप से आगे बढ़ें।

विश्व राष्ट्रों के परिवार में बांगला-देश एक नये सदस्य के रूप में सम्मिलित हुआ है। इसका हम हार्दिक स्वागत करते हैं। बांगला देश की आजादी विश्व में स्वतंत्रता के लिए महानतम कुर्बानी और मैत्री के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने की भावना के एक ज्वलन्त प्रतीक के रूप में इतिहास में सदा अमर रहेगी।

यह वर्ष भारत की स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती का वर्ष है। हम इस पुण्य वर्ष में हिन्द स्वराज्य को ग्रामस्वराज्य में विकसित करने का संकल्प करते हैं और अपने को विश्व में सत्य और अहिंसा पर आधारित 'सर्वोदय-समाज' की स्थापना के लिए समर्पित करते हैं।

नकोदर (पंजाब)
२१-५-७२

सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण

१. सत्य और अहिंसा की तराजू

हम जो इतने साथी यहाँ इकट्ठा हैं, सब ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्यकर्ता नहीं हैं। यह सम्मेलन सर्वोदय समाज का सम्मेलन है जिसके सदस्य अलग-अलग रचनात्मक प्रवृत्तियों में लगे हुए हैं, तथा देश और दुनिया के प्रश्नों के बारे में अलग-अलग रायें रखते हैं। लेकिन एक तत्त्व है जो हम सब में समान है। हम जो भी काम कर रहे हैं गांधी का नाम लेकर कर रहे हैं। गांधीजी के कार्यों के तीन मुख्य भाग थे—समाज-परिवर्तन, सभ्यता-परिवर्तन, जीवन-परिवर्तन। उनका सारा जीवन त्रिविध साधना का जीवन था। गांधीजी के बाद हममें से कुछ लोग समाज की बुनियादें बदलने के काम में, जिसे हमने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का नाम दिया है, लगे हुए हैं। इसी तरह लोग समाज को आज की सभ्यता के अभिशापों से मुक्त करने का काम कर रहे हैं। हमारे आदरणीय साथी श्री गोकुल भाई भट्ट जो अनशन कर रहे हैं वह किस लिए है? समाज को सभ्यता के एक घोर अभिशाप से मुक्त करने के लिए। तीसरे प्रकार के साथी हैं जो अनेक प्रकार की साधनाओं से अपने जीवन को परिष्कृत करते हैं, ऊँचा उठाते हैं, और समाज के सामने शुद्ध सात्त्विक, सेवा-परायण जीवन का नमूना पेश करते हैं। हममें से हर एक का अपना क्षेत्र है, अपना कार्यक्रम है। कुल मिलाकर गांधी-परिवार में प्रत्यक्ष काम करनेवाले ४०-५० हजार लोगों से कम नहीं हैं। बहुत बड़ी संख्या है यह! लेकिन प्रश्न उठता है कि इतने अधिक और विविध लोगों में कोई समान तत्त्व—कामन फैक्टर—भी है, या हर एक की अपनी अलग डफली और अपना अलग राग है? क्या ग्रामस्वराज्य वह समान तत्त्व हो सकता है? अभी तक नहीं हुआ है। कोई कह सकता है, 'ग्रामस्वराज्य हमें मान्य नहीं है। हम राजनीति को ठीक मानते हैं।' दलीय राजनीति लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। सत्ता से अलग समाज की कोई शक्ति नहीं बन सकती। लोकनीति-राजनीति के बारे में ऐसा विचार रखने वाले हमारे बीच में मौजूद हैं। हम यह नहीं कह सकते कि गांधी-विचार में उनकी निष्ठा हमारी निष्ठा से किसी तरह कम है। विचारों की ऐसी विविधता होते हुए भी हम यहाँ इकट्ठा होते हैं। फिर भी कोई तो ऐसा धागा होगा जो हम सबको बाँधता होगा। वह धागा क्या है?

क्या गांधी की कल्पना सत्य और अहिंसा को अलग रखकर की जा सकती है? अगर नहीं, तो दूसरी बातों में चाहे जितने मतभेद हों, सत्य और अहिंसा में क्या मतभेद हो सकता है? सत्य और अहिंसा का एक पैमाना है जिससे हम अपने और अपने काम को नाप सकते हैं, नापना चाहिए। सत्य और अहिंसा, हमारे लिए जीवन के शाश्वत मूल्य हैं। इसलिए हम सर्वोदय समाज के सम्मेलन में इस बात की छानबीन कर सकते हैं—अवश्य करनी चाहिए—कि सत्य और अहिंसा की दिशा में हम कितना आगे बढ़े हैं—या पीछे हटे हैं। इस सम्मेलन में तो हमें यह सोचना चाहिए कि जब से गांधीजी गये तब से अब तक सत्य और अहिंसा की दृष्टि से हमारी क्या स्थिति रही। हम कितना आगे हटे या पीछे हटे। इससे अधिक क्यों नहीं बढ़े, या इतना पीछे क्यों हटे?

२. मारल बैलेन्सशीट

हममें से अनेक लोग किसी-न-किसी संस्था से जुड़े हुए हैं। कई संस्थाएँ विशुद्ध सेवा की हैं, कई खरीद-बिक्री भी करती हैं। हम अपनी संस्था के नफे-नुकसान की बैलेन्सशीट बनाते हैं। लेकिन क्या गांधी का नाम लेनेवाले हम लोगों ने कभी यह भी सोचा कि हमें 'मारल बैलेन्सशीट' (नैतिक लेखा-जोखा) भी बनानी चाहिए और दुनिया को बताना चाहिए, जैसा गांधीजी कहते थे कि कितना सत्य हमारे और हमारी संस्था के जीवन और कार्यों में है, तथा कितनी अहिंसा है संस्थावालों के आपसी और समाज के साथ हमारे सम्बन्धों में? क्या हम इसका कभी हिसाब नहीं करेंगे कि हमने कितना सत्य गँवाया, और हमारी अहिंसा में कितना टोटा लगा? अगर हम नहीं करते तो हमारी जबान पर गांधी के नाम की क्या महिमा रह जायगी? निश्चित रूप से हमने अपनी नैतिक पूँजी का बहुत बड़ा अंश गँवा दिया है।

३. नाम का आग्रह क्यों?

हम एक दूसरी बात भी सोचें। जो काम हम कर रहे हैं उसे सिर्फ इसलिए नहीं कर रहे हैं कि उसके साथ गांधीजी का नाम जुड़ा हुआ है बल्कि इसलिए कर रहे हैं कि वह हमारा काम है, देश का काम है, और उसमें हमारी पूर्ण निष्ठा है। हम देश के काम का गांधी और मार्क्स के नामों में बाँटकर नाहक विवाद क्यों खड़ा करें? नामों के विवाद से क्या लाभ है? क्यों हम देश को नामों का अखाड़ा बनायें? क्या हमारे लिए इतना काफी नहीं है—ऐसा सत्य जिसका देश की परम्परा, प्रतिभा और परिस्थिति से मेल हो? सत्य हमारा साध्य, अहिंसा हमारा साधन: इससे अधिक हमें क्या चाहिए?

४. अलग अलग सत्य

कठिनाई तब होती है जब सत्य एक नहीं रह जाता! गांधीजी के जमाने में भी सत्य एक नहीं था। कांग्रेस के सत्य को मुस्लिमलीग ने अपना सत्य नहीं माना। दोनों के सत्य परस्पर-विरोधी हुए। इससे विभाजन हुआ। और कांग्रेस ने भी गांधीजी के सत्य को पूरा-पूरा कहाँ माना? इसका परिणाम यह हुआ कि स्वतंत्रता मिलते ही देश गांधी के रास्ते को छोड़कर भटक गया; अभी तक भटका

हुआ है। इस वक्त भी पूरे देश का एक सत्य कहाँ है? यहाँ बैठे हुए लोगों का भी कहाँ है? जितने दल हैं उतने सत्य हैं। हर राज्य, हर वर्ग, हर जाति का अपना सत्य है। आंशिक सत्यों की भरमार है। सभी 'सत्यों' को जोड़ डालिए तो एक बड़ा सत्य नहीं असत्य निकलेगा। विलक्षण गणित है यह जिसका शिकार भारत बन गया है! गांधीजी ने सत्य को पन्थ, गुट, दल और सत्ता सबसे मुक्त किया था और अन्तरात्मा को उसका साक्षी बनाया था। उन्होंने 'अन्तिम व्यक्ति' को इस देश के सत्य का साक्षात अवतार माना था। उन्होंने कहा था कि अन्तिम व्यक्ति हमारे सामने रहेगा तो सत्य के बारे में संशय नहीं रहेगा। लेकिन मुझे सन्देह है कि आज भी हम सब के हृदय इस राष्ट्रीय सत्य को नहीं स्वीकार कर रहे हैं। परिणाम यह है कि गांधी-परिवार भी 'एक' नहीं दिखाई देता।

५. 'गरीबी हटाओ'

गांधीजी को गये २४ साल बीत गये। इन २४ वर्षों में हमने क्या प्रगति की? गांधीजी की मृत्यु के ३ वर्ष बाद अप्रैल १९५१ का महीना देश के लिए अत्यन्त निर्णायक महीना था। उस महीने की १ तारीख को पहली पंचवर्षीय योजना का शुभारम्भ हुआ। दलीय शासन और सरकारी योजना ने मिलकर देश के भविष्य का एक नक्शा प्रस्तुत कर दिया और उसी के अनुसार नेताओं ने देश को चला दिया। १७ दिन बाद १८ अप्रैल '५१ को विनोबा की भूदान-यात्रा शुरू हुई। साल एक, महीना एक, केवल १७ दिन आगे-पीछे दो समानान्तर धाराओं का सूत्रपात हुआ—एक राज्य शक्ति की, दूसरी लोक-शक्ति की। पिछले वर्षों में कहाँ पहुँची है राज्य-शक्ति और कहाँ पहुँची है लोक-शक्ति? इसका हम थोड़ा लेखा-जोखा लें। आज लगभग पूरे देश में एक दल का शासन है। 'वन पार्टी, वन लीडर' का बोलबाला है। विरोधी दल लगभग समाप्त है। सरकार के हाथ में ज्यादा-से-ज्यादा शक्ति केन्द्रित है। अपने हाथ में पूरी शक्ति केन्द्रित कर अब उसने 'गरीबी हटाओ' का नारा दिया है। बहुत बड़ा नारा है यह! यह एक आश्वासन है जो देश के विशिष्ट व्यक्ति, सामान्य व्यक्ति और अन्तिम व्यक्ति को दे रहे हैं। जिस गरीबी को लेकर इतिहास में एक के बाद दूसरी हिंसक क्रान्तियाँ हुई हैं उसके अन्त का आश्वासन भारत में स्वयं सत्ता की ओर से दिया जा रहा है। धन और सत्ता रखनेवाले विशिष्ट व्यक्ति समय का संकेत पहचानें और अपनी ओर से सामान्य तथा अन्तिम व्यक्तियों की समस्याओं को हल करने के लिए आगे बढ़ें। यह एक नयी बात है। अगर उन्होंने नेकनीयती का परिचय दिया और उनके प्रयत्न सफल हुए तो देश रक्तपात से बच जायगा। लेकिन अगर उन्होंने इस नारे को भी अपनी सत्ता मजबूत करने का ही हथकण्डा बनाया तो निश्चित रूप से 'गरीबी हटाओ' उनके और उनके साथ शायद देश के गले की फाँसी बन जायगा।

हमारे कई ऐसे साथी हैं जिन्हें राजनीति के आश्वासनों में विश्वास नहीं होता। इसमें आश्चर्य की बात नहीं है। आज तक सत्ता की हमारी राजनीति ने देश की हर समस्या को, जनता के हर क्षोभ को, अपनी बन्दूक में बारूद बनाया है। क्या गरीब की गरीबी, क्या जवान की बेरोजगारी और क्या कोई दूसरा सवाल, हर चीज का इस्तेमाल नेता अपनी सत्ता के लिए ही करते रहे हैं। वे वोट के सिवाय दूसरी कोई चीज पहचानते ही नहीं। इसलिए हो सकता है कि 'गरीबी हटाओ' के नारे का भी इस्तेमाल गरीबों के वोट के लिए किया जा रहा हो। गरीब की गरीबी को सत्ता का हथकण्डा बनाना इतिहास में कोई नयी बात नहीं है। इस शंका के दो कारण मुख्य हैं। एक यह है कि गरीबी हटाने के साथ साथ नया समाज बनाने की बात नहीं कही जा रही है। क्या हमारे नेता यह कहना चाहते हैं कि आज की भूमि और उत्पादन की सामन्तवादी-पूँजीवादी व्यवस्था, अफसरशाही का प्रशासन, दलबन्दी की राजनीति, और नौकरी की शिक्षा ज्यों-की त्यों बनी रहेगी और गरीब की गरीबी मिट जायगी? आखिर, योजना किस बात की है? गरीब को 'रूरल वर्क्स' के व्यापक कार्यक्रम में राहत के तौर पर काम और मजदूरी देने की या गरीब की हैसियत बदलने की तथा भारत के हर निवासी को ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी देने की, और ऐसा समाज बनाने की उसमें दरिद्रता और विषमता हमेशा के लिए खत्म हो जायें? पेट को रोटी और तन को कपड़ा जरूर चाहिए, लेकिन मनुष्य को नया समाज और नया जीवन चाहिए जिसमें समता और मनुष्यता हो, जिसमें राज्य का दमन और पूँजी का शोषण न हो। गरीबी हटाओ के साथ साथ इस तरह की दूसरी भी कोई बात नहीं कही जा रही है। क्यों?

दूसरी बात है साधन बनाम मजदूरी की। हमें गरीबों को जीविका के स्थायी साधन देने हैं, उन्हें उत्पादक बनाना है या उन्हें साधनों से वंचित रखकर सिर्फ काम और मजदूरी देनी है और मजदूर बनाये रखना है? क्या इस तरह भारत के गरीबों को स्थायी जीविका की गारण्टी मिल सकेगी, और दूसरों के साथ समान धरातल पर उनकी नागरिकता प्रकट हो सकेगी? 'रूरल वर्क्स' से कुछ दिनों के लिए मजदूरों को राहत भले ही मिले लेकिन खेती और उद्योग द्वारा घर-घर को जीविका का आधार दिये बिना गरीब को न स्थायी जीविका मिलेगी, न उसकी उँगलियों में हुनर आयेगा, और न उसका व्यक्तित्व निखरेगा। योजना सरकारी हो या गैर-सरकारी, उनमें काम करनेवाले मजदूर, मजदूर ही रहेंगे। उनकी संख्या दिनों दिन बढ़ेगी। सरकार सबको कभी मजदूरी दे नहीं सकती। मजदूरी का आश्वासन अन्त में कोरा भ्रम सिद्ध होगा।

गांधी-विचार में विश्वास रखनेवालों को इस बात की चिन्ता है—होनी भी चाहिए—कि भारत के निर्माण में वर्तमान

व्यक्ति की, जो कुल जनसंख्या का ५० प्रतिशत है, क्या स्थिति रहनेवाली है। हम 'गरीबी हटाओ' के उत्साह में करोड़ों का हित, जिसमें देश और समाज का भी स्थायी हित है, नहीं भुला सकते।

६. कामन मैन और लास्ट मैन

हम सामान्य व्यक्ति (कामन मैन) और अन्तिम व्यक्ति (लास्ट मैन) में भेद मानते हैं। वह भेद स्पष्ट है। समाज का अन्तिम व्यक्ति वही नहीं है जो राजनीति और सरकार का 'कामन मैन' है। दोनों दो हैं। मोटे तौर पर कहें तो सामान्य व्यक्ति वह है जिसकी समस्याएँ तो हैं लेकिन जो अपनी समस्याओं को जानता है, समझता है, और उन्हें दूर करने के लिए हाथ-पैर पटकता है। इसके विपरीत अन्तिम व्यक्ति वह है जो कठिनाइयों को झेलता है समझता नहीं, जिसे यह आशा नहीं है कि उसकी समस्याएँ कभी हल हो सकेंगी। वह यह भी नहीं जानता कि हाथ-पैर कैसे पटका जाता है। हमारी चेतना कामन मैन तक तो पहुँची है, लेकिन अन्तिम व्यक्ति अभी उस पहुँच के बाहर है। अनजान में ही सही, हमने मान लिया है कि यह जमाना कामन मैन का है, अन्तिम व्यक्ति का नहीं। इसलिए आर्थिक प्रगति के औसत आँकड़े बताये जाते हैं। कामन मैन के जीवन-स्तर की बात कही जाती है। राजनीति का नारा ही है—कामन मैन। राजनीति में सत्ता और सम्पत्ति के स्रोत विशिष्ट व्यक्ति के हाथों में रखकर राजनीति योजनाएँ सामान्य व्यक्ति की बनाती है और नारे अन्तिम व्यक्ति की लगाती है। क्या हम सर्वोदय के लोग भी 'सर्व' में अन्तिम व्यक्ति को, जिसे गांधीजी ने दरिद्रनारायण कहा, यही स्थान देकर सन्तोष मान लेंगे ?

७. भूमिहीनावतार

आज देश में हमारा अन्तिम व्यक्ति किस चक्रव्यूह में फँस गया है इसका विराट दर्शन एक महीने के अभियान में हमें सहरसा में हुआ। जानते हम पहले से भी थे, लेकिन वहाँ हमें एक नया दर्शन हुआ— कलियुगी भूमिहीनावतार का। बात ऐसी है। एक दिन शाम का समय था। हमलोग जमीन के एक बड़े मालिक के दरवाजे पर पहुँचे। आलीशान मकान, सामने बड़ा-सा हाता, एक ओर अच्छे-तगड़े बैल, गायें, भैंसें, गैरेज में जीप, ट्रैक्टर, चारों ओर बिजली की फिटिंग, एक कमरे में सोफा सेट, आदि ग्रामीण वैभव की प्रायः सभी चीजें वहाँ मौजूद थीं, नौकर ने बताया 'मालिक के पास हाथी भी है।' शामको सामने के मैदान में सभा हुई। मैंने ग्रामदान की बात कही और बीघा-कट्ठा भूमि माँगी। हमारे अतिथेय बोले—'मैं तो भूमिहीन हूँ।' यह सुनकर हम जितने कार्यकर्ता थे हक्का-बक्का रह गये। कहाँ यह वैभव और कहाँ यह भूमिहीनता ? अगर भूमिहीन का यह हाल है तो पंचवर्षीय योजना को क्या करना रह गया ? मैंने पूछा, 'आप भूमिहीन कैसे हो गये ?' बोले 'मेरे खुद अपने नाम बहुत थोड़ी जमीन है। ज्यादा-तर जमीन बीवी के नाम है, बच्चों आदि के नाम है। अपने हिस्से की भूमि से बीघा-कट्ठा जब कहिए दे दूँ।' 'कितना होगा ?' मैंने पूछा। उत्तर मिला : 'ज्यादा-से-ज्यादा दस बीघे या दस कट्ठा।' बाद को गाँववालों ने बताया कि इस विलक्षण भूमिहीन के घर में पूरे पाँच सौ बीघे का अनाज आता है। बड़े पैमाने पर महा-जनी होती है। पंचायत के मुखिया हैं। ठीके भी लेते हैं। इधर-उधर और कई तरह का कारोबार है।

ऐसा भूमिहीनावतार देश के हर भाग में हो गया है। पंजाब में भी ! यह 'अवतार' 'कामन मैन' के दमन जी० एन० पी० (ग्रोस नेशनल प्रोडक्ट) और औसत आय की अर्थनीति के कारण हुआ है ! यह देन है सरकार की योजनाओं और उसके 'समाजवादी' कानूनों की !

पूरे देहाती क्षेत्र पर यह भूमिहीन हावी है। वे पंचायत के मुखिया हैं, स्कूल के मैनेजर हैं, कोऑपरेटिव के डाइरेक्टर हैं। अपनी जमीन की बदौलत वे अपने बँटाइदारों, मजदूरों, कर्जदारों को मुट्ठी में रखते हैं। थानेदार और बी० डी० ओ० उनके यहाँ चाय पीते हैं, खाना खाते हैं। बेचारा स्कूल का मास्टर तो अर्दली की तरह उनके दरवाजे पर रहता ही है। वे चुनाव की राजनीति का पूरा खेल खेलते हैं। उन्हें समाज-वाद की राजनीति पसन्द है। पिछले चुनाव में उन्होंने अपने उम्मीदवारों को जिताने के लिए लठधारियों को भेजकर बूथ के बूथ कैप्चर करा लिये थे। पटना तक उनकी पहुँच है। दिल्ली भी जाते रहते हैं। विकास, कानून, राजनीति तथा सामा-जिक जीवन के सारे सूत्रों को मुट्ठी में रखनेवाले ये भूमिहीन कानून से हारे नहीं, बन्दूक से डरे नहीं, करुणा से पिघले नहीं। उन्होंने भूदान में भूमि भी दी है, लेकिन इसके लिए वे हरगिज तैयार नहीं हैं कि मजदूर की हैसियत बदले। उन्होंने अंग्रेजी जमाने का सामन्तवाद देखा है, स्वतन्त्र भारत का पूँजीवादी समाजवाद देख रहे हैं, हरित क्रान्ति के मुख्य नायक होने के नाते अब वे आगे बढ़कर गरीबी हटाओ का नारा भी लगा रहे हैं।

८. सर्व की सत्ता

गांधी का दरिद्रनारायण उनके चक्र-व्यूह में फँसा हुआ है। वह भूमि से वंचित है, शिक्षा में उपेक्षित है; समाज में तिरस्कृत है, विकास की दुनिया से बहिष्कृत है। अब उसका वोट भी खतरे में पड़ गया है।

नेहरू ने भारत की खोज की थी, लेकिन गांधी ने भारत के अन्तिम व्यक्ति की खोज की। हमें भूदान-ग्रामदान आन्दो-लन के पिछले इक्कीस वर्ष लग गये उस अन्तिम व्यक्ति के पास पहुँचने में, उसे पहचानने में, उसके लिए कुछ करने में, और 'सर्व' के बीच उसका स्थान तय करने में। भारतीय समाज के परम सत्य 'अन्तिम व्यक्ति' को अब हमने समझ लिया है, लेकिन प्रश्न है अहिंसा से उस सत्य को सिद्ध करने का।

क्या इस सत्य की सिद्धि पुराने जमाने की वर्ण-व्यवस्था से होगी जिसमें द्विजों की सत्ता थी, और शूद्र सम्पत्ता की

परिधि से बहिष्कृत था ? क्या उसकी सिद्धि ऐसी पूँजीवादी व्यवस्था में होगी जिसमें मालिकों की सत्ता है, और मजदूर चाहे उसकी जो मजदूरी हो मजदूर ही बना रहता है ? क्या साम्यवाद की सर्वहारा की सत्ता में होगी जिसमें स्वामियों का ध्वंस सहन करने के बाद सर्वहारा अपने ही सर्वाधिकारी राज्य के नीचे दब जाता है ? इस सत्य की सिद्धि इनमें से किसी में नहीं होगी। आज के लोकतंत्र में भी नहीं होगी जिसमें मतदाताओं की सत्ता बतायी जाती है।

इन सबसे अलग गांधी ने 'सर्व की सत्ता' की बात कही जिसमें न कोई मालिक है, न मजदूर; सब उत्पादक हैं। यह एक नयी बात थी जो सारे इतिहास में पहली बार कही गयी। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के पिछले इक्कीस वर्षों में हमने प्रयोग करके अच्छी तरह देख लिया कि सर्व की सत्ता की सबसे नीचे की इकाई गांव से बन सकती है जिसे गांधीजी ने 'गांव-गणराज्य' कहा था। आज की राजनीति और आज की सरकार के लोग गांवों को इस रूप में नहीं देखते। उनके लिए गांव मात्र घरों का समूह है जिनमें वोटर (मतदाता) और टैक्सपेयर (करदाता) रहते हैं। व्यापारी के लिए गांववाले 'कस्टमर' (ग्राहक) हैं, नेता के लिए 'वोटर'। विशुद्ध मानव वे किसके लिए हैं ? वह कौन है जो गांव को एक इकाई मानता हो, और गांव का एक विशिष्ट व्यक्तित्व देखता हो ? हमारे लिए तो गांव लोकशक्ति (पीपुल्स पावर) की बुनियादी सीढ़ी है जो प्रखण्ड, जिला, और राज्य से बढ़ती-बढ़ती विश्व तक राष्ट्र तक पहुँचेगा।

९. राज्य की भी हिंसा समाप्त हो

अन्तिम व्यक्ति को जीविका के साधन मिलें, उसकी हैसियत बदले, और लोकशक्ति का विकास हो, यह आज के सामाजिक ढांचे में जिसका आधार निजी स्वामित्व (प्राइवेट या फैमिली ओनरशिप) है, सम्भव नहीं है। दुनिया जानती है कि अगर निजी स्वामित्व ने वर्ग-हिंसा (क्लास वायलेन्स) को जन्म दिया है, तो साम्यवाद के सरकार-स्वामित्व (स्टेट ओनरशिप) ने भयंकर राज्य-हिंसा (स्टेट वायलेन्स) पैदा की है। हिंसा कोई भी हो, अन्तिम व्यक्ति की शत्रु है। इसलिए हमने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन में न परिवार-स्वामित्व की बात मानी है, न सरकार स्वामित्व की, इनके स्थान पर हमने ग्रामस्वामित्व को मान्य किया है।

हम इस बात पर यहां सन्तोष प्रकट कर सकते हैं कि हमने गांव-गणराज्य यानी ग्रामस्वराज्य के भव्य चित्र की रूप-रेखाएं स्थिर कर ली हैं, और अपने प्रयोग-क्षेत्रों में यह भी देख लिया है कि लोक-मानस इस विचार से विमुख नहीं है, यद्यपि अभी कठिनाइयां एक-से-एक बढ़कर पार करनी हैं।

१०. मुक्ति की शक्ति

यहीं प्रश्न उठता है शक्ति का। वह कौन-सी शक्ति होगी जिसके बल पर समाज बदलेगा, नयी व्यवस्था कायम होगी, नये मूल्य मान्य होंगे, और गांव राज्य-हिंसा से मुक्त होकर एक गणराज्य के रूप में वास्तविकता बनेगा ? क्या यह काम राज्य की शक्ति से होगा ? या, उस शक्ति से होगा जिसकी कल्पना गांधीजी के अन्तिम वसीयतनामे और विनोबाजी के ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आंदोलन में है ? गांधीजी ने 'पावर कैप्चर' करने की बात नहीं, 'पावर जेनरेट' करने की बात कही थी। पावर किसका ? निस्संदेह जनता का। वही लोकशक्ति है। अगर जनता का पावर नीचे से 'जेनरेट' नहीं होगा तो अन्तिम व्यक्ति अपनी मुक्ति की लड़ाई कैसे लड़ेगा ? क्या हम उसे अपनी ही मुक्ति के लिए पुरुषार्थ करने से भी अलग रखना चाहते हैं ?

इक्कीस वर्षों तक हमने लगातार लोकशक्ति का जप किया है। हम इतना ही कह सकते हैं कि हमने बुनियाद की ईंट डाल दी है। हम मानते हैं कि ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का काम अभी व्यापक नहीं हो सका है। उसमें अनेक कमियां और कमजोरियां हैं। लेकिन बिहार, तमिलनाडु तथा अन्य राज्यों के कुछ चुने हुए क्षेत्रों में इतना काम हुआ और हो रहा है कि सम्भावनाएं स्पष्ट होती जा रही हैं। जहां ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की प्रक्रियाएं लागू होती हैं वहां लोगों को अपनी संगठित सामूहिक शक्ति का भान होता है। अन्याय और अनीति के प्रति लोग 'नहीं' (नो) कहना सीख रहे हैं—वह अनीति चाहे भूमि के मालिक की हो, और चाहे सरकार के अधिकारी की। लोकशक्ति से नये सत्य की स्थापना की जा सकती है, और अहिंसा की शक्ति विकसित की जा सकती है, इसका रास्ता ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य ने खोल दिया है।

११. चार तथ्य

स्वतंत्रता के बाद देश में चार मुख्य घटनाएं हुई हैं जिनकी अहिंसा की दृष्टि से महत्त्व है। वे हैं (१) बालिग मताधिकार और संविधान में नागरिक के मूल अधिकार; (२) बांगला देश, (३) ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन; (४) चम्बल घाटी में बागियों का आत्म-समर्पण। हमारे संविधान के कारण देश में यह स्थिति बनी हुई है कि सरकार लोक-सम्मति से बदल सकती है, उसके लिए हिंसक विद्रोह आवश्यक नहीं है। बांगला देश के मुक्ति-संग्राम का निर्णय अन्तिम चरण में यद्यपि सशस्त्र कार्रवाई से हुआ फिर भी बांगला देश की स्वतंत्रता लोक-शक्ति का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। चम्बल घाटी के बागियों के आत्म-समर्पण ने यह सिद्ध कर दिया है कि अपराधों के दमन में जो सरकार का सामान्य कर्तव्य है, दण्ड-शक्ति कितनी अपूर्ण है। इसके अलावा इस कौतुक से यह बात सामने आ गयी कि व्यक्तियों के समाज-विरोधी आचरण का स्रोत अक्सर समाज के जीवन में है, न कि अपराधी के मन में। समाज की व्यवस्था, तथा जन-जन के जीवन में परिवर्तन और सुधार लाये बिना अपराध-वृत्ति को खत्म करना कठिन है। यह भी सिद्ध हो गया कि कितना भी बड़ा

अपराधी हो वह अहिंसा के प्रभाव के परे नहीं है।

अहिंसक समाज-परिवर्तन की दृष्टि से सबसे अधिक महत्व ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का है। उसने सामान्य व्यक्ति के सामान्य गुणों पर भरोसा किया है, और समाज-परिवर्तन के क्षेत्र में हिंसा और संघर्ष का एक सम्पूर्ण विकल्प प्रस्तुत किया है। उसने देश के सामने स्वामित्व और प्रतिनिधित्व की एक बिलकुल नयी पद्धति रखी है। उसने ग्राम-स्वायत्तता द्वारा राज्य का दायरा सीमित करने की बात की है। उसकी ग्रामस्वराज्य की योजना जनता के दैनन्दिन जीवन को राज्य के हस्तक्षेप से मुक्त करने की दिशा में एक साहसपूर्ण कदम है।

१२. लोक की अहिंसा से लोकशक्ति

विचार और प्रयोग के स्तर पर हमने काफी काम कर लिया है। हमने जान लिया है कि लोकशक्ति के स्रोत क्या हैं, सर्व की सत्ता का स्वरूप क्या है, उसका प्रारम्भ बिन्दु कहाँ है, तथा ग्रामदान में इनकी सम्भावनाएँ क्या हैं। लेकिन हमें मानना पड़ेगा कि जिस लोकशक्ति से समाज-परिवर्तन तथा सभ्यता-परिवर्तन का काम पूरा होनेवाला है वह अभी हमारे हाथ नहीं आयी है। जब कि परिवर्तन की वास्तविक गतिशीलता उसी में है। वह लोकशक्ति कैसे बनेगी?

गांधीजी ने लोक को जिस व्यावहारिक अहिंसा की दीक्षा हमें दी थी उसके तीन तत्व थे—(१) सद्विचार का उपहार (२) बुराई से असहकार, (३) अन्याय का प्रतिकार। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के पिछले इक्कीस वर्षों में हमने मुख्य 'सद्विचार के उपहार' का प्रयोग किया है, असहकार या प्रतिकार का नहीं। भूमि भी हम कार्यकर्ताओं ने ही माँगी है, भूमिहीनों ने नहीं। अभी मार्च-अप्रैल में सहरसा के एक महीने के अभियान में हमने देखा कि वहाँ के गाँवों में ६० से ९५ प्रतिशत तक भूमिहीन हैं! जनसंख्या का इतना बड़ा भाग भूमिहीन होते हुए भी हमारे आन्दोलन से अलग है। ऐसी हालत में कोई आश्चर्य नहीं कि लोकशक्ति की गणित नहीं बैठ रही है। इतने 'लोक' को छोड़कर लोकशक्ति कैसे बनेगी? स्पष्ट है कि इतने प्रयोग और अनुभव के बाद हमें अपने आन्दोलन में 'अहिंसक लोक-क्रिया' (नानवायलेन्स पीपुल्स ऐक्शन) के लिए तैयार होना चाहिए। केवल कार्यकर्ताओं के 'ऐक्शन' से हम जहाँ तक जा सकते थे जा चुके। अब प्रत्यक्ष जनता का ऐक्शन चाहिए। लेकिन इसके परिणाम हमें समझ लेना चाहिए। हमारे ऐक्शन के साथ हमारा विचार जुड़ा हुआ था। विचार को लेकर हम इक्कीस वर्षों तक प्रतीक्षा कर सकते थे। इससे अधिक प्रतीक्षा करनी हो तो कर सकते हैं। लेकिन जब हजारों-लाखों की संख्या में जनता भूमि माँगने निकलेगी तो उसके साथ उसकी भूख जुड़ी होगी। वह प्रतीक्षा नहीं कर सकेगी, उसे बेहद जल्दी होगी। प्रतीक्षा जितनी कर सकती थी वह कर चुकी। शासकों, विद्वानों, सन्तों और सुधारकों, सबको वह देख चुकी।

अगर हमें यह नया ऐक्शन करना हो तो उसकी पद्धति, संगठन, नेतृत्व, ट्रेनिंग, सबके बारे में अच्छी तरह सोच लेना होगा। एक बात जो पक्की है वह यह है कि अहिंसक लोक-क्रिया में शरीक होने के लिए जो हजारों-लाखों लोग सामने आयेंगे उनमें से एक-एक व्यक्ति को पहले स्वयं ग्रामदान की भूमि में 'दाता' बन जाना होगा। ऐसे दाता अपनी संगठित नैतिक शक्ति लेकर निकलेंगे-भूमिहीनता मिटाने, ग्रामकोष निकलवाने, ग्रामस्वराज्य-सभा बनाने, ग्राम-शान्तिसेना खड़ी करने। एक बार लोक-चेतना, लोक-शक्ति, और लोक-शक्ति लोक-संगठन, का रूप ले लेगी तो भूमि की समस्याओं तथा उनके साथ-साथ गाँव की अन्य समस्याओं को हल करने के सूत्र हाथ आ जायेंगे। कितना उपहार, कितना असहकार कितना प्रतिकार, इसका निर्णय परिस्थिति के अनुसार होगा। तफसील की बातें हम यहाँ या अपने क्षेत्र में बैठकर तय करें किन्तु मेरा अनुरोध है कि अब हम 'नानवायलेण्ट पीपुल्स ऐक्शन' से कम की बात न सोचें। भूमि सार्वत्रिक समस्या है, उसका छोर पकड़कर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। और जगह-जगह जो 'ऐक्शन' होगा, उससे राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक ऐक्शन की भूमिका बनेगी। गाँव की शक्ति से राज्य की बढ़ती हुई हिंसा का मुकाबला करना होगा।

१३. रचनात्मक कार्य

'पीपुल्स ऐक्शन' की ही पद्धति से दूसरे रचनात्मक कार्यों के गतिरोध भी हल होंगे। लोकशक्ति के अभाव में हम कब तक शराबबन्दी और नयी तालीम के लिए अपनी विनय पत्रिका सरकार के दरबार में देते रहेंगे? सत्य का साध्य, अहिंसा का साधन, जनता की शक्ति, इन तीन के मेल के बिना अब हमारा काम नहीं बनेगा। शहीद की अन्तरात्मा का सत्य काफी नहीं है, उसे जनता का 'कन्सेन्सस' चाहिए, सेवक की साधना की अहिंसा काफी नहीं है, उसे लोक का संगठन चाहिए। नया समाज और नयी सभ्यता बनाने के काम में सरकार की शक्ति के तिरस्कार का प्रश्न नहीं है। हमारी सरकार को लोक-सम्मति प्राप्त है इसलिए उसके शुद्ध सहकार का सदा स्वागत है, स्वागत ही नहीं, अपेक्षा भी रहेगी। लेकिन पहले सरकार-शक्ति से हाथ मिलानेवाली लोकशक्ति बननी चाहिए।

१४. मधुर चित्र

पिछले वर्षों के अथक परिश्रम से हमने समय की शिला पर क्रान्ति के कुछ मधुर चित्र बनाये हैं। चित्र में रंग नहीं है, सिर्फ रेखाएँ बनी हैं। साथियो, देखना है, ये रेखाएँ कहीं मिट न जायँ। अगर ये रेखाएँ मिट गयीं तो हम मिट जायेंगे, और हमारे साथ शायद नया समाज बनाने की नयी आशा भी।

(शेष पृष्ठ ५६९ पर)

गतांक से आगे

समग्र मनुष्य के निर्माण से ही अहिंसक समाज-रचना सम्भव

२० वें सर्वोदय सम्मेलन में सुश्री सरला बहन का उद्घाटन भाषण

समस्या प्रेरणा का स्रोत बनी

बागी सरदार माधोसिंह कुछ वर्षों से इस जीवन से परेशान थे। वह समझ गये थे कि बागी और पुलिस दोनों ने इस इलाके में हजारों महिलाओं का सुहाग लूट लिया है। यह घोर पाप है—उसे छोड़ना है तथा औरों को भी इससे छुटकारा दिलवाना है। कुछ वर्षों तक वे तीर्थों में घूमते रहे और १९७० ई० के जुलाई में उन्होंने विनोबाजी से सम्पर्क करके उन्हें आश्वासन दिया कि उनका जीवन इस काम के लिए समर्पित है और उन्होंने विनोबाजी से इस में कुछ समय देने की प्रार्थना की। क्षेत्र-सन्यास की वजह से विनोबाजी ने उन्हें जयप्रकाश बाबू से सम्पर्क करने का सुझाव दिया था। काम के भार के नीचे दबे हुए होने पर भी जयप्रकाशजी ने माधोसिंह की तीव्रता को समझकर उस काम को उठाना स्वीकार किया, बशर्ते कि तीनों प्रान्तों की (मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और राजस्थान) तथा केन्द्रीय सरकार का सहयोग मिले। ये सरकारें अनुकूल भी थीं, लेकिन शंकाशील भी थीं। जयप्रकाशजी की नम्रता, धीरज और हिम्मत से धीरे-धीरे अनुकूलता बढ़ती गयी, शंका घटती गयी। बागियों पर प्रभाव डालने की दृष्टि से उत्तर प्रदेश सरकार ने २४० वर्ष की सजा काट रहे तहसीलदार सिंह को छोड़ दिया। अब बड़े पैमाने पर बीहड़ों का दौर फिर शुरू हो गया। पण्डित लोकमन, तहसीलदार सिंह, देव सिंह, रोशान, माधोसिंह दिन-रात एक करके अपने पुराने साथियों को समझाने के लिए बीहड़ों में दौड़ने लगे। उनके साथ बाबा के १९६० ई० के पुराने अहिंसक बागी महावीर भाई और हेमदेव भाई के साथ-साथ चरण सिंहजी और भगवत सिंहजी भी दौड़ रहे थे। आकस्मिक और खतरनाक बीमारी के बावजूद भी दिल्ली में तथा प्रान्तीय सरकारों के साथ जयप्रकाश बाबू का शान्तिस्थापना और पारस्परिक विश्वास बढ़ाने का काम बराबर जारी था।

कार्य आगे बढ़ता है

बागी सरदारों से सम्पर्क करना आसान नहीं था। वर्षों से ये पुलिस से छिपने में निपुण रहे। हमारे साथियों से छिपना उनके लिए बच्चों का खेल था। लेकिन आखिर में सबसे खूंखार बागी सरदार मोहर सिंह से सम्पर्क हो पाया था। सबसे खूंखार, लेकिन इसके साथ सबसे नम्र और उदार। चम्बल घाटी के लोगों के हृदय में राम-रावण युद्ध देखकर आश्चर्य होता है कि जो सबसे खूंखार है वह सबसे नम्र, सरल और उदार भी हो सकता है। डाका डालने में जितना उत्साह, रामायण और भजनों में भी उतना ही उत्साह। जब मोहर सिंह ने विचार समझ कर अपने दल से सलाह ली और सबने आत्म-समर्पण में शामिल होने का आश्वासन देकर शर्त लगायी कि सर्वप्रथम उनका आत्म समर्पण होगा तब कार्यकर्ताओं को विजय निकट लगने लगी। इसका असर सब गिरोहों पर पड़नेवाला था।

अब शान्तिमय समाधान पर सरकार का विश्वास बढ़ने लगा और मध्य प्रदेश-सरकार ने एक महीने के लिए एक शान्तिक्षेत्र की घोषणा की, जिसमें बागियों तथा पुलिस दोनों की तरफ से कोई अप्रिय घटना नहीं होगी। अब मिलने-जुलने का काम और आसान हो गया और वर्तमान बागी सरदार भी इस कार्य के लिए घूमने लगे। सरकार ने उस काम के लिए कुछ जीपें उपलब्ध करायीं और दौड़-धूप की रफ्तार बढ़ती गयी। फलस्वरूप, गांधीजी और विनोबाजी की तस्वीरों के सामने अपने शस्त्रों को समर्पित करके जनता से क्षमा मांग कर जयप्रकाशजी तथा मुख्यमंत्री श्री सेठीजी के चरणों को छूकर, तथा अपने हाथों में रामायण-गीता को पकड़े १४ अप्रैल को ८२, १६ अप्रैल को ८२, २१ अप्रैल को २५ तथा १ मई को ८१ बागी भाइयों ने स्वेच्छा से जेल में प्रवेश किया। यह आश्चर्यजनक हृदयस्पर्शी घटना थी। सबके कण्ठ भर आये। श्री सेठी ने हर एक को सहलाकर उनके घर की परिस्थिति पूछी और १५ वर्षीय कुट्टासिंह को एक पिता, जैसे अपने शैतान परन्तु प्रिय बेटे को थप्पड़ लगाता है, एक थप्पड़ लगायी। समर्पण की तैयारी में पगारा बांध पर जो शिविर हुआ, उसमें एक अद्भुत दृश्य देखने को मिला। लगभग १५० बागी कन्धे पर बन्दूक लगाये आजादी से घूमते थे, बैठकर भजन गाते थे। हजारों की संख्या में रिश्तेदार, मित्र और पड़ोसी उन लोगों से मिलने के लिए या उनके दर्शन करने के लिए दिन भर घूमते रहे। वहां पर एक भी पुलिस का सिपाही मौजूद नहीं था। जब ये समर्पण समारोह के लिए पहुंचे तो सबके सब अपनी बन्दूकें लिए हुए थे। वहां कोई सशस्त्र पुलिस नहीं थी। सिर्फ समर्पित बन्दूकों की सुरक्षा के लिए तीन-चार सशस्त्र पुलिस के सिपाही थे। यह बाबा के कथन की पुष्टि करता है कि मनुष्य नहीं, बन्दूक ही खून करती है। अब बन्दूकों पर ही पहरा लगाना चाहिए।

भविष्य की चुनौती

चम्बल घाटी में काम जारी है। बुन्देलखण्ड में भी काम शुरू हो गया है।

दोनों शान्ति-क्षेत्र हैं। बागी और पुलिस दोनों ने शान्ति की शर्तें पूरी तरह मानी हैं। सरकार के सहयोग से यह काम सम्भव हुआ है। भूतपूर्व बागियों तथा वर्तमान बागियों की सूझबूझ और सच्चे पश्चात्ताप की भावना बढ़ती गयी। अब उनकी कृष्ण-भवन की यात्रा को साधना-यात्रा बनाने में उन्हें मदद देना हम लोगों का परम कर्तव्य हो गया है। उनकी पैरवी की व्यवस्था करना, उनके घरों की देख-रेख करना, और उनके साथ-साथ चम्बल घाटी के जन-जन में शान्ति-स्थापना का दृढ़ संकल्प कैसे हो, यह हिमालय-सा आरोहण हमारे सामने है। भौगोलिक कठिनाइयों को जीतकर, बस, साइकिल और पैदल यात्रा करके गाँव-गाँव में पहुँचना और बागियों से मिलना, गाँववालों से मिलकर शान्ति-स्थापना के लिए जन-शक्ति को जागृत करना, गाँव-गाँव में ग्रामसभाएँ बनाना ताकि वे अपने गाँव की शान्ति की जिम्मेवारी खुद उठा सकें—आदि काम, गौरीशंकर की चढ़ाई से कम हिम्मत और दृढ़ता का नहीं है। लेकिन यदि यह काम नहीं हो पाता तो बागियों का आत्म-समर्पण व्यर्थ हो जायगा। समाज उन बागियों को डाकू के नाम से पुकारता है और 'डाकू' शब्द एक घृणित शब्द माना जाता है। लेकिन हमें इस बात का सतत् भान रहना चाहिए कि सिर्फ बन्दूक लिये हुए उपेक्षित बागी डाकू नहीं हैं। समाज में सफेद पोशाक पहने हुए ऐसे सम्मानित लोग भी रहते हैं जो उनसे भी ज्यादा डाकू कहलाने के योग्य हैं जिनकी काली करतूतों से, निर्दय वृत्ति से, दमन, शोषण और भ्रष्टाचार से ये प्रकट डाकू असहाय होकर कोई दूसरा मार्ग न मिलने से ये पैदा होते हैं। समाज की अन्तरात्मा को सफेदपोश डाकू-वर्ग के विरुद्ध जगाना है ताकि अब, जब आतंक का वातावरण कम हो जायगा, आम जनता अपने गाँव के संगठन द्वारा इस प्रकार के कार्यक्रमों को रोकने का शान्तिमय कानून-निरपेक्ष मार्ग खोज सके। इस समय इस काम की सफलता से जनता में एक अपूर्व श्रद्धा, कौतूहल और उत्साह की लहर पैदा हुई है। यदि इससे पूरा लाभ उठा कर उसे सृजनात्मक दिशा देनी है तो यह एक ऐसा राष्ट्रीय मोर्चा है, जो सहरसा के मोर्चे से कम महत्व का नहीं है लेकिन उससे कई गुना और ज्यादा कठिन भी है।

साथियों से

क्या हमारे देश भर में बिखरे हुए साथी इस सहज-प्राप्त अवसर को स्वीकार कर, काम को सफल बनाने के लिए कम-से-कम एक वर्ष की कैद को स्वीकार करने को तैयार होंगे? मैं देश के नौजवान साथियों का आह्वान करना चाहती हूँ क्योंकि तरुणों का स्वभाव सामाजिक और भौगोलिक कठिनाइयों से भिड़ने का होता है और उन्हें एक अपूर्व आनन्द आता है। उनके भावी जीवन के लिए उसमें एक अपूर्व शक्ति पैदा हो सकती है। बुजुर्गों के लिए भी कई समस्याओं का हल सोचकर ढूँढ़ने का एक अपूर्व मौका मिलेगा। क्या हमारे देश में कम-से-कम तीस, और ज्यादा-से-ज्यादा पचास साथी, इन कठिन परिस्थितियों में ग्रामस्वराज्य की जन-शक्ति की भावना को स्थापित करने के लिए समय नहीं दे सकेंगे? क्या सिर पर कफन बाँधकर आगे आने के लिए तैयार नहीं हो सकते हैं? बागियों ने हिम्मत और दृढ़ता से आत्म-समर्पण कर नये समाज के निर्माण के लिए सर्वसम्मति से निर्णय किया। इस कदम से नये समाज के निर्माण के लिए रास्ता खुलता है। क्या हम अभी सारे समाज को इस दिशा में बढ़ने के लिए प्रोत्साहन दे सकेंगे? क्या हम अपने भाइयों को धोखा देकर बैठे रहेंगे और परिस्थिति को ज्यों-का-त्यों बने रहने देंगे? इसके साथ ही साथ, मैं सर्वोदय समाज की ओर से मध्य प्रदेश सरकार का आह्वान करना चाहती हूँ कि दण्ड-प्रथा के सुधार के लिए उन्हें एक अनमोल अवसर मिला है। जेल में किस प्रकार उन बागी भाइयों की हिम्मत और शारीरिक शक्ति को एक रचनात्मक दिशा मिल सकती है? क्या इस दरम्यान भी उनकी शक्ति का उपयोग चम्बल घाटी की समस्या का हल करने में सम्भव नहीं है? बीहड़ों को समतल करने का प्रयास प्रारम्भ हुआ है ताकि छापामार युद्ध की सम्भावनाएँ घट जायँ और आबाद करने लायक भूमि बढ़ जाय। बागियों के छूटने पर उन्हें आजीविका का साधन देना अति आवश्यक है। क्या यह सम्भव नहीं है कि बन्द जेल के बदले में खुले शिविर में बीहड़ों के बीच में रह कर बीहड़ों को समतल बनाने का काम करें और उनकी रिहाई के बाद उन्हें उस समतल की हुई भूमि पर बसाया जाय? ताकि उनके भविष्य की आजीविका की व्यवस्था में खुद उनका भी परिश्रम शामिल रहे।

चम्बल का सबक

चम्बल के बागियों के समर्पण से सारी दुनिया को सोचने की एक नयी दिशा मिली है। यदि इस प्रयास में सरकार, जनता तथा समाज विरोधी तत्वों से इस खूंखार इलाके में एक शान्तिमय समाज की स्थापना होती है तो सारी दुनिया के सामने अहिंसक समाज-रचना की सम्भावना स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। बन्दूक का स्थान सत्य, प्रेम और करुणा की भावना ले सकती है, जो बन्दूक की नोक से नहीं हो सकता। दण्ड-शक्ति को जीतने की शक्ति प्रेम-शक्ति में है। स्वराज्य प्राप्ति के बाद ही प्रथम बार दुनिया को व्यावहारिक तरीके से अहिंसा की शक्ति प्रकट करने का अपूर्व मौका मिला है। समस्याओं को पैदा करनेवालों के द्वारा ही समस्या का हल होना—यह अहिंसक प्रक्रिया की अद्भुत शक्ति है। छोटे पैमाने पर चम्बल घाटी में दुनिया की सब समस्याएँ मौजूद हैं। इन सब समस्याओं का स्थायी हल खोजने में यदि हम सफल हो सकें तो दुनिया के सामने एक नया व्यावहारिक मार्ग खुलता है।

इन सारी घटनाओं से दो-तीन बातें स्पष्ट होती हैं। एक, जब हम किसी ज्वलन्त समस्या (बर्निंग प्रॉबलेम) का व्याव-

हारिक हल खोजने का प्रयत्न करते हैं तो जनता तथा सरकार दोनों का श्रद्धा और सहयोग प्राप्त होता है। दो, यह सफलता तब सम्भव होती है, जब समस्या का हल करने की इच्छा समस्या से पीड़ित लोगों में तीव्रता से उठती है और वे उसके लिए प्रायश्चित्त करने को तैयार रहते हैं। तीन, अति-दण्ड-शक्ति की असफलता सिद्ध होने पर यह हल सम्भव हुआ, लेकिन अन्य दिशाओं में भी अति का इन्तजार नहीं करना चाहिए। पहले से आत्म-विश्वास के साथ आगे बढ़ने की हिम्मत पैदा होनी चाहिए।

सामाजिक क्रान्ति के क्षेत्र में स्त्री-शक्ति

गांधीजी, विनोबाजी लगातार स्त्री-शक्ति को जागृत करने की पुकार करते रहे हैं। उत्तराखण्ड में पहले से घर-घर में स्त्री-शक्ति जागृत थी ही लेकिन इधर दस वर्षों से कुसंस्कारी शराबी-वृत्ति के विरुद्ध वह बराबर सगठित रूप में प्रकट होती रही है। यह हमारे देश की शिक्षित महिलाओं के लिए चुनौती है कि वे अपनी पिछली दृष्टि को छोड़कर अपनी शक्ति की सही दिशा को समझें। घर में वे एक प्रेममय और सेवामय वातावरण बनाती रहीं, और इसके द्वारा देश की संस्कृति सुरक्षित रही है। लेकिन अब बाजार के कुसंस्कारों का प्रभाव घर में पहुँच रहा है और महिलाएँ बहुत जल्दी से उसका शिकार बनती जा रही हैं। अभी चेतना के लिए समय है। महिलाएँ सबला हैं, अबला नहीं हैं। जिस प्रकार अभी तक वे अपने परिवार को कुसंस्कारों से बचाने की कोशिश करती रहीं, विज्ञान के युग में उन्हें संगठित होकर समाज में प्रवेश करके, समाज को भी कुसंस्कारों से बचाना पड़ेगा। गलत सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक मूल्यों के प्रकोप से दुनिया भर का बचाव करना पड़ेगा, सम्बन्धों को सुधारना पड़ेगा। पारिवारिक, सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ये सारे सम्बन्ध सत्य, प्रेम और करुणा पर आधारित रहने चाहिए। अभी तक सन्तों की इस पुकार को हमने सिर्फ पारिवारिक सम्बन्धों के सिलसिले में ही सुना था। भविष्य में हमें इन सब सम्बन्धों में उसका विस्तार करना पड़ेगा। नये सम्बन्धों को स्थापित करने में महिलाओं का एक महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। बागियों के परिवारों के सम्पर्क में आने से एक दर्शन हुआ कि उनमें स्त्री-शक्ति का सम्पूर्ण अभाव है। गलत तरीके से कमाये हुए अन्न, धन और जेवर का उपयोग करने में कोई संकोच नहीं है। सफेदपोशवाले डाकुओं के परिवारों में भी यह परिस्थिति है। यदि उनमें सच्चे मूल्य होते तो शायद समस्या इतनी नहीं बढ़ती। लेकिन निश्चित है कि सफेदपोशवाले डाकुओं के हृदय-परिवर्तन के लिए स्त्री-समाज के समग्र सहयोग की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यक है कि स्त्री-समाज समझे कि उसकी सच्ची शोभा सजधज आभूषणों तथा अन्य शारीरिक प्रदर्शनों में नहीं, बल्कि अपने हृदय के सरल और सच्चे तथा व्यापक सृजनात्मक प्रेमभाव में है। मातृ-शक्ति का विस्तार करके उसे सम्पूर्ण समाज पर लागू करने में है।

सहरसा की प्रेरणा

सहरसा में व्यापक काम ने हमें दिखाया कि पुराने मूल्यों को जड़ से बदलने में कितने परिश्रम और साहस की आवश्यकता है। लेकिन जब राष्ट्रीय पैमाने पर हम उसे उठाते हैं तो एक शक्ति भी पैदा होती है। वह छोटी टोली, जो दो साल से वहाँ पर सातत्य से डटी हुई है, हमारी बधाई की पात्र है। आशा है कि मार्च, अप्रैल में हुए अभियान से देशभर के साथियों ने उस काम का महत्त्व समझा होगा और अब प्रान्त-प्रान्त में ऐसे एक सघन क्षेत्र को उठाने की हिम्मत होगी। जब सारे भारत की शक्ति को बीच-बीच में इकट्ठा करने की शक्ति हुई। अब आशा है कि प्रान्त-प्रान्त में भी, चाहे छोटे पैमाने पर क्यों न हो, एक सघन क्षेत्र में समग्र काम को उठाने की प्रेरणा मिली होगी।

नयी तालीम का नया स्वरूप

इस वर्ष भी तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल के द्वारा शिक्षा की समस्या की ओर जनता की रचनात्मक दृष्टि को खींचने का प्रयास प्रारम्भ हुआ है, विद्यार्थी और शिक्षक वर्ग, दोनों में प्रवेश शुरू हुआ है। कई वर्षों से सभी विचारशील नागरिकों में वर्तमान निष्क्रिय शिक्षा-पद्धति के विरुद्ध असन्तोष रहा है—लेकिन यह असन्तोष निष्क्रिय ही था। जहाँ भी सर्वोदय के कार्य को व्यापक पैमाने पर आगे बढ़ाने का प्रयास हो रहा है—वहाँ पर जनता और शिक्षकगण में, शिक्षा में कर्म और ज्ञान के सन्तुलन तथा सरकारी हस्तक्षेप के निराकरण की एक व्यापक भावना पैदा कराने की आवश्यकता है। मेरी नम्र राय में सहरसा और चम्बल घाटी में जागृत जन-शक्ति के द्वारा, स्थानीय जनता अपनी समझी हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आगे बढ़कर स्थानीय शिक्षा की योजना अपने हाथ में ले ले, तब वहाँ का काम अन्त में अपना पूरा स्वरूप ले सकेगा। केन्द्रित व्यवस्था से निष्क्रिय शिक्षा, विकेन्द्रित स्वावलम्बी समाज के विकास में बाधक तत्त्व होगा। कम-से-कम इन दो क्षेत्रों में शिक्षकों तथा जनता को मिलकर स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप स्वावलम्बी शिक्षा के द्वारा अपने इलाके की समस्याओं का हल करने का एक व्यापक प्रयत्न करना चाहिए। यह ग्रामस्वराज्य की भावना को जागृत रखकर आगे बढ़ने के लिए एकमात्र तरीका है। बहुत खुशी की बात है कि सहरसा में इस ओर एक विस्तृत प्रयास काफी लोकप्रिय हो रहा है।

उत्तराखण्ड तथा राजस्थान के सक्रिय नशाबन्दी आन्दोलन हमें सचेत करते हैं कि राष्ट्रीय विकास में अवरोधक नशा के विरुद्ध कदम उठाने में हमें जनता का कैसा व्यापक सहयोग मिल सकता है। जमाना हमारे लिए अनुकूल है। जनता निराशा की सीमा पर पहुँच रही है और एक नये मार्ग के लिए मार्गदर्शन चाहती है। विश्वास है कि यदि हम सक्रिय होंगे,

तो उसका सहयोग हमें मिल सकता है। सज्जन-शक्ति प्रबल करके विजय की ओर बढ़ना है।

शुरू में मैंने आपसे कहा है कि मैं आपके सामने कोई पेंचीदा राजनैतिक या आर्थिक विचार नहीं रखूँगी। इसलिए मैंने अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं, मसलन वियतनाम, बांगला देश, इजराइल इत्यादि की ओर आपका ध्यान नहीं खींचा, क्योंकि मैं मानती हूँ कि जैसे-जैसे हमारे आन्दोलन की अहिंसक शक्ति प्रकट होती जायगी—वैसे-वैसे उसका प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में भी पड़ सकेगा। क्या यह सम्भव है कि चम्बल घाटी का यह जादू इस युग में दुनिया पर अपना प्रभाव डाल पायगा ?

सन्दूषण

आजकल दुनिया भर में तेजी से बढ़ते हुए यन्त्रीकरण के द्वारा उत्पन्न सन्दूषण की ओर जनता और आधुनिक वैज्ञानिकों का ध्यान जा रहा है। विकासशील देशों में भी आजकल यह समस्या बहुत तेजी से तथा अनियोजित तरीके से बढ़ रही है। आजकल भारत के औद्योगिक नगरों तथा बन्दरगाहों में सन्दूषण एक अमानवीय स्तर तक पहुँच रहा है। इस ओर विचार करके, सर्वोदय समाज की दृष्टि क्या है, और इस सिलसिले में हम समाज को क्या मार्गदर्शन दे सकते हैं ? मैं आशा करती हूँ कि इस सम्मेलन में उस समस्या के हल लिए हम कुछ रचनात्मक नतीजे पर पहुँच पायेंगे। बढ़ते हुए सन्दूषण को देखकर पश्चिम के आधुनिक विचारक एक विकेन्द्रित सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक समाज की आवश्यकता समझने लगे हैं। हालांकि अखबारों के शीर्षकों को देखकर ऐसा लग सकता है कि यह जमाना हमारे लिए बहुत प्रतिकूल है, तथापि मैं कहना चाहती हूँ कि जब झूला अपनी ऊँचाई की परम सीमा तक पहुँचता है तो वह अपने आप गिरने लगता है। अब केन्द्रीकरण और यन्त्रीकरण अपनी परम सीमा पर पहुँच रहे हैं—और पश्चिमी समाज में सन्तुलन शास्त्रियों से लेकर हिप्पियों तक सब विचारशील लोगों में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न हो रही है—जो विकेन्द्रित अहिंसक समाज के लिए अनुकूल है। इस बालिग अवस्था में हम एक अत्यन्त अनुकूल युग में प्रवेश कर रहे हैं। ईश्वर हमें इस स्वर्ण अवसर का फायदा उठाने की शक्ति प्रदान करे। ●

सहकार, संगठन और सत्याग्रह हमारे आन्दोलन का मूलभूत अङ्ग है।

• प्रो० ठाकुर दास बंग

बाबा की चिन्ता

बहनो और भाइयो !

ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के बारे में विषय प्रवेश कराने के लिए मैं यहाँ पर उपस्थित हुआ हूँ। मैं आपको तीन सप्ताह पूर्व २५ अप्रैल के एक प्रसंग की याद दिलाना चाहता हूँ। २५ अप्रैल के ३॥ बजे शाम को परधाम में बाबा के सम्मुख हम सब लोग बैठे हुए थे और आन्दोलन के बारे में उनके निर्देश और आदेश को सुनने के लिए आतुर थे। उन्होंने बोलना प्रारम्भ किया—"पिछले एक साल से मैं कोशिश कर रहा हूँ कि सूक्ष्म में रहते हुए भी कार्यकर्ताओं के पत्रों द्वारा उनसे सम्पर्क रखूं। उत्तर नहीं लिखता हूँ, लेकिन डेढ़ सौ जिलों से जिला सर्वोदय मण्डलों की ओर से या प्रमुखों की ओर से मुझे पत्र आते हैं। उन पत्रों में प्रतिमा आती है, माह भर के काम का विवरण लिखा हुआ रहता है। मैं जब उन पत्रों को देखता हूँ तो मुझे लगता है कि देश में कुछ अपवादों को छोड़कर ग्रामस्वराज्य आन्दोलन समाप्त हो गया। उन पत्रों में खाने-पीने की चर्चाएँ रहती हैं। कभी उपवास हो गया इसकी चर्चाएँ होती हैं। कताई की चर्चा होती है, सफाई की चर्चा होती है। प्रार्थना करता हूँ यह भी लिखा जाता है। ये सब अच्छी बातें हैं। लेकिन ग्रामदान आन्दोलन के बारे में कुछ हो रहा है ऐसा ९० प्रतिशत पत्रों से कुछ होता नहीं दीखता।" तब हम सबको सोचना चाहिए कि २५ अप्रैल १९७२ को बाबा ने जो बात कही है वह हमारे जिले पर, हमारे प्रदेश पर, जहाँ हम काम कर रहे हैं कितना लागू होता है। आज हम सबको आत्म परीक्षण करने का अवसर प्राप्त हुआ है। आज दिन भर और आगे भी हमें जितना समय हो अपना आत्मपरीक्षण करें।

हमारा राष्ट्रीय मोर्चा

इस तरफ यह बात है, दूसरी तरफ अपवाद स्वरूप ही क्यों न हो कुछ प्रयोग हुए हैं। हमने यह माना कि सहरसा, मुसहरी और तंजोर हमारे तीन अग्रिम मोर्चे रहेंगे। यह हमने अपना सर्वोपरि कार्यक्रम माना था। उन तीन मोर्चों पर कुछ प्रयोग हमारे साथियों ने किया है। तंजोर में वैवाहन में क्या हुआ ? वहाँ सत्याग्रह कैसे करना पड़ा ? कोर्ट में कैसे जाना पड़ा ? बहनों की शक्ति वहाँ किस प्रकार से पैदा हुई ? और उसमें प्रश्न का हल किस प्रकार से निकला ? आगे हम किस प्रकार से काम करना चाहते हैं ? इस बारे में मेरे बाद वहाँ एक दो लोग नटराजन् आदि बोलनेवाले हैं। जगन्नाथन्‌जी भी बोलनेवाले हैं। मैं तफसील में नहीं जाऊंगा, लेकिन वहाँ एक प्रयोग चल रहा है और साथी आगे बढ़ रहे हैं। मुसहरी में क्या हो रहा है ? आप सब जानते हैं। जे० पी० की अनुपस्थिति के बावजूद वहाँ काम आगे बढ़ रहा है। सहरसा में जिसे हमने अपना अग्रिम मोर्चा माना है वहाँ एक-सवा साल तक साथियों ने घोर तपस्या की, लेकिन वह तपस्या व्यर्थ नहीं गयी। १८ मार्च से १८ अप्रैल तक बाबा के निर्देशानुसार वहाँ एक माह का सघन अभियान चला उसमें ३०० साथियों

हिस्सा लिया। करीब १०० साथी बिहार के बाहर के थे। बाकी सब साथी बिहार के ही थे। अभियान की अवधि में नजर आया कि कुछ प्रखण्डों में काम हुआ ही नहीं। कुछ साथियों की कमी के कारण कुछ प्रखण्डों में काम कम हुआ, और कुछ प्रखण्डों में अधिक काम हुआ। कुल मिलाकर कुछ प्रखण्डों को बारे में अच्छी धारणा बनी है। लोगों ने जो भूदान में जमीन दी थी और बँटी नहीं थी उसके बारे में उनलोगों को याद है और जब हम जमीन माँगने के लिए जाते थे तो अक्सर दाता इनकार नहीं करते थे। कभी-कभी एक-दो बार जाने पर जमीन का खाता-खसरा मिल जाता था। कभी-कभी प्रेम का आग्रह भी करना पड़ता था। प्रेम-परिचय भी (मैं उसे सत्याग्रह तो नहीं कहूँगा) करना पड़ता था।

तीन मोर्चे हैं जो प्रबन्ध समिति में आये थे: सहरसा, मुसहरी और तंजौर। इस काम को हमें प्राथमिकता देनी चाहिए और देश भर में इस काम को सबको मिलकर पूरा करना चाहिए। ये मोर्चा बिहार का ही नहीं, सहरसा जिले का ही नहीं, तंजौर का ही नहीं, मुसहरी का ही नहीं, यह हमारा राष्ट्रीय मोर्चा है। वहाँ कुछ प्रयोग हो रहे हैं। इन प्रयोगों से सारे भारत को लाभ मिलेगा। ग्रामस्वराज्य की दिशा स्पष्ट होगी। ये तीनों हमारे अग्रिम मोर्चे हैं। इसमें सब लोगों को साथ देना चाहिए। क्या जरूरत है मुसहरी के लिए? सहरसा जिले के लोगों ने यह माँग की है। यह विस्तार से आप को बताया जायगा। धीरेन् भाई ने अन्तिम भाषण करते हुए कहा था 'कि सहरसा जिला का चुनाव बहुत ही ठीक है। ग्रामस्वराज्य का चित्र-निर्माण करने की दृष्टि से यहाँ कम-से-कम लोगों को पाँच साल देने चाहिए। भारत भर से सक्षम कार्यकर्ताओं की माँग की जा रही है। पाँच साल देनेवाले कितने कार्यकर्ता हैं। केवल हमको १०० कार्यकर्ता चाहिए, हड्डी गलाने के लिए नहीं। पहले हड्डी गलाने की बात थी। लेकिन अब कम-से-कम पाँच साल के लिए आप समय दें। ऐसे वे कार्यकर्ता होने चाहिए जो कम-से-कम २० स्थानीय कार्यकर्ताओं को निकाल सकें। फिर खुद को काम करना नहीं है, जा-जाकर हमें करवाना है और स्थानीय जन-शक्ति खड़ी करनी है। इसलिए २० स्थानीय कार्यकर्ताओं को निकाल सकें ऐसी क्षमता रखनेवाले १०० साथी बाहर से सहरसा के लिए चाहिए। यह माँग है और उसके पहले साल में किस्त के तौर पर या आज अभी चलिये। कितने ही साथी इतने लम्बे समय के लिए नहीं जा सकते। उनके लिए यह माँग की गयी है कि मई १४ से, अब मई समाप्त हो गयी लेकिन जितना जल्दी सम्भव हो सके उतना जल्दी, कल-परसों जब हमारा सम्मेलन समाप्त हो जायगा तबसे समझिये। चूँकि सवा डेढ़ महीने में चार प्रखण्ड लिये गये हैं वहाँ का काम पूरा करने के लिए काम को आगे बढ़ाने के लिए जितने सक्षम साथी आगे आवें उन लोगों को सहरसा जाना चाहिए। अतः हमने जो अपना राष्ट्रीय मोर्चा माना है उसकी माँग है और उस माँग की पूर्ति अवश्य होनी चाहिए। इसलिए आप के सम्मुख इस आशा से अपनी बात रख रहा हूँ। यह हमारा पहला कार्यक्रम हुआ।

ग्रामदान-प्राप्ति का काम जारी रहे

दूसरा कार्यक्रम हमारा यह होगा कि संकल्पित ग्रामदान-प्राप्ति का काम जो चल रहा था देश भर में वह ठण्डा हो गया है, वह काम आगे पूर्ववत् जारी रहना चाहिए। उसमें जितना सुधार-संशोधन हम कर सकें उतना जरूर करें। वह न कर सकें तो कोई चिन्ता नहीं। लेकिन उस काम का निषेध कहीं भी नहीं हो। नासिक में हमने ग्रामदान की परिभाषा बदली। लेकिन उसमें भी यह कहा गया है कि संकल्पित ग्रामदान की प्राप्ति के लिए प्रयास बराबर जारी रहनी चाहिए। हमारा दूसरा कार्यक्रम होगा, संकल्पित ग्रामदानों की प्राप्ति। पहले जिस प्रकार से हम किया करते थे वह आज भी और आगे भी जारी रखें।

हमारी नयी प्रयोगशालाएँ

तीसरा हमारा कार्यक्रम यह है कि क्या ग्रामदान प्राप्ति और पुष्टि साथ-साथ हो सकती है? पूर्व तैयारी के बाद एक सप्ताह में या दस दिन में भी की जा सकती है? इसका प्रयोग करने के लिए, सर्वप्रथम आन्ध्र जिले के महबूब नगर के जड़चरला प्रखण्ड में हुआ। मैं आप को नवम्बर, '७१ ई० में ले जा रहा हूँ। जड़चरला में वहाँ के जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री सुरभि शर्मा के कहने पर तथा वहाँ के प्रदेश सर्वोदय मण्डल के आवाहन पर प्रदेश के सब सर्वोदय कार्यकर्ता इकट्ठे हुए और उन्होंने कोई अनुभव नहीं रखते हुए भी इसके लिए कोशिश की। क्या प्राप्ति और पुष्टि सम्भव है? क्योंकि उनके सामने यह तर्क रखा गया कि भाई, मुसहरी में, सहरसा में, तंजौर में कुछ तकलीफ हो रही है। अब तो कुछ तकलीफ कम हो गयी है रिजल्ट की दृष्टि से। लेकिन वहाँ तकलीफ जारी है। इसका क्या कारण है? उन्होंने कहा कि तवा ठण्डा हो गया है। तो मैंने उनसे कहा कि जब पेंकू (तवा) गरम हो, जब हस्ताक्षर किये जा रहे हों, तब ग्रामदान क्या है? ग्रामस्वराज्य क्या है? समझाया जा रहा हो तो उसी समय उन चार शर्तों पर अमल करने की कोशिश क्यों नहीं की जाती? ग्रामस्वराज्य-सभा का गठन क्यों नहीं किया जाता? जितनी जमीन आप बाँट सकते हैं उसका बँटवारा क्यों नहीं किया जाता? आगे का काम करने के लिए ग्राम-शान्ति-सेना का गठन क्यों नहीं किया जाता? कोशिश तो की जाय! किसी को कोई अनुभव नहीं रहते हुए भी उनकी मदद के लिए मैं गया। हमने भी कोशिश की। नतीजा आश्चर्यजनक निकला। बाबा को जब मैंने १४ दिसम्बर को रिपोर्ट की, सारी घटनाओं की जानकारी दी, तो बाबा ने निम्न बातें कहीं—"एक चमत्कार आन्ध्र में हुआ।" क्या चमत्कार

हुआ ? ४०-५० गाँव सम्मिलित ग्रामदान हुए। तीन सप्ताह में उनके तीन चौथाई गाँवों में ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। ९८९ एकड़ जमीन मिली। ७८९ एकड़ दूसरे सप्ताह में। मैंने कहा इतना अच्छा सरकारी काम भी नहीं होता। मैं चला जाऊँगा लेकिन आप 'फॉलो' कीजिए। मैं तो आपकी भाषा जानता नहीं हूँ। मेरा कोई खास उपयोग भी नहीं है। लेकिन आप इस काम को आगे बढ़ाइए। एक-दो सप्ताह में ९८९ एकड़ जमीन मिली। ६००-७०० एकड़ जमीन का बँटवारा उसी अवधि में हो गया और जगह-जगह ग्राम-शान्तिसेना बना दी गयी।

ऐसे कई प्रसंग हुए इसलिए आप को मैंने कहा कि आपको १९५२-५३ के पुराने जमाने में ले जा रहा हूँ या १९७१ की बात कह रहा हूँ मुझे मालूम नहीं। लेकिन घटनाएँ ऐसी कई जगहों में हुई हैं। उड़ीसा में मैं गया। उस गाँव का नाम मैं भूल गया हूँ। वहाँ के एक भाई ने कहा कि ६ महीने में जो ६-७ प्रान्तों में पदयात्राएँ हुईं, ग्रामदान-प्राप्ति-पुष्टि की दृष्टि से। उड़ीसा की पदयात्रा सर्वश्रेष्ठ रही। आन्ध्र का नम्बर पहला है चूँकि उसने दरवाजा खोला। उड़ीसा का नम्बर भी बहुत अच्छा है। सबसे अच्छा है बहुत माने में क्योंकि १२३ भूदान दाताओं ने भूदान में दान दिया। एक सप्ताह में, जो सबसे ज्यादा है। वहाँ के एक भाई ने कहा 'जे अत्याचारे राजद्वारे शेई अत्याचारे आजी उडिशा में वहाँ पहले ढेन्कानाल राजा का राज्य था। चूँकि राजा का राज्य था उसमें अत्याचार सहन करना पड़ता था वही अत्याचार आज भी हमें सहन करना पड़ रहा है। 'जेई गरीब पूर्वरे शेई गरीब आजी' बहुत सरल है आप समझ सकते हैं। तो मैंने कहा, 'फिर आप क्या चाहते हैं ? क्या परिस्थिति है आपकी ? क्या दुख है ?' यह तो थ्योरिटिकल मालूम होगा। जो 'लाच दुष्यावली ला आजी बई गुना चले लांच' रिश्वत पहले चलती थी वह आज भी और अधिक रूप में चल रही है। तो आप चाहते क्या हैं ? जाति मूल्या, समान मूल्या। कृषि और मूल्य समान होने चाहिए। यानी किसान और मूल्य समान होने चाहिए, यही हमारी आकांक्षा है। तो ग्रामस्वराज्य उसी के लिए है। वहाँ के हमारे मित्र हरेकृष्ण पटनायक ने उसके कन्धे पर हाथ रखा और कहा कि गांधी राज्य गरीबों का है। हमें गांधी राज्य स्थापित करना है यहाँ क्योंकि हमने लड़ाई गांधी राज्य प्राप्त करने के लिए लड़ी है। २५ साल पहले देशी राज्य था। उन्होंने कहा— गांधी-राज्य स्थापित करना है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य गांधी राज्य का रास्ता है। मैंने कहा— चार शर्तें हैं। आप दान दीजिए। उन्होंने हस्ताक्षर किया और दान दिया। तरह इस की कई घटनाएँ घटीं। इसलिए ५२-५३ की या ५४-५५ की घटनाएँ कहीं कम कहीं अधिक आज भी घटित हो सकती हैं। इसलिए ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि एक सप्ताह में ही सम्भव है। १५ दिन पहले आन्ध्र में मैं फिर गया था तो कोल्हापुर नाम के एक ब्लाक में प्राप्ति-पुष्टि पदयात्राएँ चलायी गयीं। अब हमें और आगे बढ़ाना चाहिए। आन्ध्र ने पोचमपल्ली द्वारा सारे देश का मार्ग खोला है। फिर जड़चरला ने जो मार्ग खोला है उसे हमें आगे बढ़ाना चाहिए। कार्यकर्ता केवल पदयात्रा नहीं करेंगे बल्कि लोक-पदयात्राएँ निकलनी चाहिए। उन्होंने कहा कि जरूर लोक-पदयात्राएँ निकालेंगे और उस गाँव का नाम तो मैं भूल गया। उस गाँव की पदयात्रा में मैं पहुँचा तो रास्ते में २५० लोग हमको वापस आते हुए मिले। कहाँ गये थे ? आप तो इस गाँव से उस गाँव में गये थे। हमारे गाँव का ग्रामदान किया, उसकी ग्रामसभा बनायी। उस गाँव की जितनी जमीन एक दिन में बाँटना सम्भव था उतनी बाँट दी। ग्राम-शान्तिसेना बनायी। वही सन्देश दूसरे गाँव को पहुँचाने के लिए हम जा रहे हैं। कोल्हापुर प्रखण्ड में मैंने पन्द्रह दिन पहले यह दृश्य देखा। तेलगू भाषा मेरी समझ में आती नहीं थी, मेरे साथी रहते थे वही समझाते थे। वे मुझे कहते थे—'आप बोलिये।' मैं कहता था कि क्या बोलूँगा। मैं इतना ही कहता था उनसे—ग्रामदान अर्थात् 'सब तरि दुख, अन्तरी दुख'—एक का दुख सबका दुख। अब तो समझ गये हैं ? इतना ही मैं पूछता था। भाष्य भी चलता था और लोग कहते थे कि समझ गया, समझ गया। और ग्रामदान पत्र पर हस्ताक्षर कर देते थे। ग्रामसभा गठन और पुष्टि की कार्यवाही वहाँ होती थी। ऐसे दृश्य जब कई गाँवों में हुए तो मुझे ऐसा लगा कि यहाँ की भूमि ऐसी है यहाँ यदि हम सब लोग, प्रदेश सर्वोदय मण्डलों के अध्यक्ष, मंत्री और जिम्मेदार कार्यकर्ता १० दिन के लिए पहुँच जायें, वहाँ जरा जोर लगायें, कुछ पद्धति में संशोधन करें, कुछ कमियों की पूर्ति करें; क्योंकि हममें बहुत कमियाँ हैं। और वहाँ के कार्यकर्ताओं में भी काफी कमियाँ रह जाती हैं। अब हम सब मिलकर संशोधन करें और एक पद्धति को परिपूर्ण बनाने की चेष्टा करें। जून १ से जून १० तक इस प्रकार का एक आयोजन वहाँ के कार्यकर्ताओं ने किया है और सर्व सेवा संघ के मंत्री ने सभी प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्षों और मंत्रियों को एक चिट्ठी भेजी है कि जो भाई सहरसा नहीं जा रहे हैं किसी कारण से वे कृपापूर्वक दस दिनों के लिए यहाँ आवें। सर्व सेवा संघ उनलोगों से प्रार्थना करता है कि हम सब मिलकर प्राप्ति और पुष्टि की समन्वित पद्धति का संशोधन करें जो लोक-पदयात्रा की दिशा में जानेवाली हो। आगे के कार्यक्रम की दिशा क्या हो इस विषय में आपके सम्मुख राममूर्तिजी विस्तार से बोलनेवाले हैं। इसलिए मैं उसमें अधिक समय नहीं लूँगा।

बाबा के सुझाव

तो हमारा यह तीसरा कार्यक्रम ग्रामदान प्राप्ति और पुष्टि समन्वित पद-

यात्रा की चौथी बात तय हुई कि ६ हजार ब्लाक्स हैं हमारे भारत-वर्ष में। कितने प्रखण्डों में काम चलता होगा? तो हम लोगों ने कहा कि करीब ३००–४०० प्रखण्डों में चलता होगा। तो उन्होंने कहा कि साल भर में आप कितने प्रखण्डों में इस प्रकार के काम कर सकेंगे जिनमें दो कार्यकर्ता रहें। एक कार्यालय को सम्भालनेवाला जिसमें प्रखण्ड-सभा का दफ्तर रहे दूसरा और कभी-कभी पहला दोनों मिलकर पदयात्रा करने जायें। पदयात्रा में क्या करना है? आचार्यकुल का फैलाव करना है, ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाना है ऐसे कार्य कितने ब्लाक में कर सकेंगे? हम सबने सोचा और आप सब की ओर से जवाब दिया। हम प्रयत्न करेंगे कि एक साल में ऐसे १००० प्रखण्ड हों जहाँ कार्यालय हो। यहाँ खर्च के बारे में क्या होगा? तो बाबा ने कहा कि *सूतांजलि है, सर्वोदय पात्र है,* सर्वोदय मित्र है और हम लोगों ने यह भी सोचा कि १११ रु० देनेवाले लोग देश-भर में इकट्ठा किये जा सकते हैं, उनसे सम्पर्क किया जा सकता है। ऐसी एक केन्द्रीय योजना सर्व सेवा संघ बनावे। जिसपर अमल आप और हम सब मिलकर प्रखण्डों में, प्रदेशों में, जिलों में करें। वैसे ही हम एक पखवारा बनावें कि जिसमें ५ लाख या १० लाख सर्वोदय मित्र बनाये जायें उससे हमारा कुछ सम्पर्क भी बढ़ेगा, लोगों से पहचान भी अधिक होगी। कौन मदद कर सकेगा इस काम में? यह भी *पता चलेगा तथा दक्षिणा के रूप में* कुछ पैसा भी मिलेगा।

संगठन, सहकार और सत्याग्रह की त्रिसूत्री का कार्यान्वयन हो।

हमारा पाँचवा कार्यक्रम यह है कि इस काम को करते-करते हमें ऐसे १५-२० पाकेट्स-सघन क्षेत्र हमारे देश भर में बनाने चाहिए। सहरसा, मुसहरी, तंजौर अग्रिम क्षेत्र हैं लेकिन हर आदमी तो सहरसा, मुसहरी, तंजोर जा नहीं सकेगा। तंजोर में भाषा की भी दिक्कत है। इसलिए जहाँ-जहाँ सामयिक समस्याएँ हों, जो भी हो, उनसे इन ग्रामस्वराज्य-सभाओं का अनुबन्ध होना चाहिए। मैं आपसे और थोड़ा पीछे ले जाता हूँ। अक्तूबर, '७१ में वमण्डल के लोग गोपुरी में इकट्ठा हुए। उस समय उन्होंने बीस-पच्चीस साल के काम का सिंहावलोकन किया और उन्होंने कहा कि बहुत अच्छा काम हम लोगों ने किया है। दान द्वारा लोगों को समझा-बुझाकर काम किया। अब उस पटरी को छोड़ना *नहीं है लेकिन वह नई जगह अपर्याप्त है* इसी में से हमें आगे बढ़ना चाहिए। इसी दान में से दाताओं का संगठन होना चाहिए श्रम देनेवाले, पैसा देनेवाले, मजदूरी का अंश देनेवाले, जो भी दान देनेवाले हों उनका एक संगठन बने। उसमें दाताओं की शक्ति बिखरी न रहकर एक संगठित शक्ति बने। जिस दिशा में हमको काम करना है उसके सम्बन्ध में राममूर्तिजी विस्तार से आपको बतायेंगे। आखिरी बात कहकर मैं समाप्त करूँगा मैं दो-तीन मिनट और लेता हूँ। समय ज्यादा हो गया है इसका मुझे भान है।

२५ अप्रैल को परंधाम में हम सब लोग बैठे थे। बाबा एक-एक प्रदेश में क्या चल रहा है *उसका वर्णन कर रहे थे।* इस प्रान्त में कुछ नहीं हुआ, उस प्रान्त में कुछ नहीं हुआ, उस प्रान्त में इतना-सा ही हुआ है। कुल मिलाकर मतलब यह है कि ग्रामदान का मैनस्ट्रीम (मुख्य धारा) समाप्त हो गया। इन अपवादों के रहते हुए भी सामान्य नियमों की दृष्टि से ग्रामदान-प्राप्ति का, ग्रामस्वराज्य की पुष्टि का, मैनस्ट्रीम *समाप्त हो गया है,* शुष्क हो गया है। फिर वे हँसते-हँसते कहने लगे, मराठी की एक कहावत है। उसकी उन्होंने याद दिलाई 'अति झाले हॉसू आले'—बहुत ज्यादा मुझे दुख हो गया इसलिए रो भी नहीं सकता इसलिए हँस रहा हूँ।

भाइयो, बहनो! जो हमारा नेता १४ साल तक पैदल चले, ठन्डी व गरमी में, बारिश में और उसको इस वृद्धावस्था में सूक्ष्म में जाने पर यह कहना पड़े—"मुझे इतना दुख हो गया है कि मैं रो भी नहीं सकता हूँ, इस पर मुझे हँसी आ रही है।" क्या आपका और हमारा यही फर्ज है कि जीवित अवस्था में उनको यह दुख देखना पड़े? और आगे मैं क्या कहूँ आपसे। इसलिए बाबा ने जो यह अत्यन्त गम्भीर चेतावनी दी कि मुझे हँसी आती है क्योंकि मैं रो भी नहीं सकता। क्या इसका हमारे चित्त पर कोई स्पर्श नहीं होगा? भगवान बुद्ध की यह कहानी *कहकर मैं समाप्त करूँगा। भगवान* बुद्ध जब निर्वाण को जाने लगे तब वहाँ पर परम शिष्य, साथी आनन्द बैठा हुआ *था। वहाँ उसने भगवान* से रोते हुए पूछा "भगवान आप जा रहे हैं, हमारा क्या होगा और कौन हमको मार्ग-*दर्शन करेगा? तो* बुद्ध *भगवान* ने जो बात कही वह हम सब पर भी लागू होती है। अप्पोदीपो भव। अर्थ है अपना दीप आपही बनिये। यह पाली भाषा है। हमारा दीप हम खुद बनें। हम सब अधिक अच्छी तरह से अनुराग करें परस्पर विचारों की पूर्ण सफाई हो लेकिन साथ साथ उत्साह हो, पूर्ण अनुराग भी हो। इस प्रकार से हम काम करें तो पिछले सालभर में प्रयोगशालाओं में जो प्रयोग किये गये हैं, और जो दिशाएँ खुली हैं, उससे अंधकार दूर होगा। मुझे विश्वास है कि जब हम अगले साल मिलेंगे, इस प्रकार से काम करेंगे कि बाबा को यह कहने की जरूरत नहीं रह जायगी कि मुझे इतना दुख हुआ कि मैं रो भी *नहीं सकता। धन्यवाद।*

(सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुर दास बंग द्वारा दिनांक १८-५-७२ को सर्व सेवा संघ अधिवेशन में दिये गये भाषण से।)

दान अभियान गुण से अधिक गणना पर आश्रित

• जैनेन्द्र कुमार

[सहरसा (बिहार) में एक महीने की पदयात्रा के बाद "कल्प" के सम्पादक श्री जगतराम साहनी ने श्री जैनेन्द्र कुमार से भेंट की और उनसे कुछ प्रश्न पूछे। वही प्रश्नोत्तर यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है।]

प्रश्न—आपके विचार में भारत में शोषणमुक्त समाज के निर्माण के लिए गांधीजी के बाद आज उनके कार्य को आगे कैसे बढ़ाया जा सकता है?

उत्तर—शोषणमुक्त भारत को बनाने से पहले खुद को बनाना होगा। हर कोई देखे कि उसकी रोजी का जरिया क्या है। वह कसौटी मुश्किल नहीं होनी चाहिए। हर शख्स पायेगा कि अगर वह श्रम, यानी शारीरिक श्रम, से दूर है तो जाने-अनजाने किसी के श्रम का शोषण भी कर रहा है। यानी हर किसी की जीविका का जोड़ यत्किंचित् शारीरिक उत्पादक श्रम से बढ़े, इस पर ध्यान होना चाहिए। तब शोषण अपने आप कम होगा। शोषण के दबाव बढ़ते जाने में मुझे लगता है कि बुद्धिजीवी-वर्ग सबसे बड़ा अपराधी है। कुर्सी और कलम के काम को वह इतना महत्त्व दे लेता है कि उसके एवज में हर एक सुभीते पर उसका हक हो जाता हो। हम लोग पूँजीवाले में शोषक की मूरत देख लेते हैं, नेता तथा दूसरे व्यवस्थापक जन का शोषण हमारे ध्यान में ही नहीं आता। इसीलिए, राजनीतिक या दूसरे उपदेशकों की भरमार होती जाती है। वे आदर्श या क्रान्ति से कम किसी उगाने-बनाने के काम में उतरना ही नहीं चाहते। उस आदर्श-क्रान्ति-कर्म के विश्लेषण में जायें तो वहाँ भी शोषण दिखाई देगा। चुनाव अभी हुए हैं और धूम-धाम की तब हद न थी। हो-हल्ला वह सब किस चीज का था? राजनीतिक दलों के घोषों, वक्तव्यों और दम-दिलासों का ही ना! क्या आप कहेंगे कि इसमें वोटर के भले की चिन्ता थी? वोटर के प्रति न्याय था? उलटे क्या वहाँ शोषण ही न था? तो शोषण का प्रश्न अर्थ सीमित ही नहीं है, वह गहरा और नैतिक है। और मुझे लगता है कि विचारवादिता और क्रान्तिकारिता के नाम पर चलनेवाली प्रवृत्ति को भी इस कसौटी पर परखा-कसा जाना चाहिए।

प्रश्न—तो फिर क्या ग्रामस्वराज आन्दोलन आज की आवश्यकता नहीं?

उत्तर—आन्दोलन के साथ और पहले, कार्यकर्ताओं के चित्त में आत्म-स्वराज्य चाहिए। ग्रामस्वराज्य कौन करे? काम यह ग्रामवासियों का ही होगा न! और अगर काम वह हो जाय किसी बाहरी समिति-संघ का तो ग्रामस्वराज्य एक अभिमत बना रहता है और ग्राम-रचना के मौलिक काम से वह अलग एवं अछूता पड़ जाता है। स्वावलम्बी ग्रामस्वावलम्बी परिवारों के आधार पर बनेगा अर्थात स्वावलम्बिता का भाव ऊपर से नीचे, हर इकाई के लिए आवश्यक है। यहीं उत्पादक-श्रम जीवन का मौलिक मूल्य ठहर जाता है। श्रमाधारित जीवन के लक्ष्य से किसी क्रान्तिकारी अथवा व्यवस्थापक अथवा उपदेशक को छुट्टी क्यों हो? चरखा इसीलिए मरते दम तक गांधी से नहीं छूटा। कम्यूनिस्ट का श्रमवाद सत्ता पाने के साथ ही जैसे नीचे छूटा रह जाता है। इस अन्तर पर सबको गौर करना है। तभी न गांधी को साम्यवाद से आगे का कदम मानना पड़ता है।

साम्यवाद ने निजी स्वत्व का लोप करना चाहा। नतीजे में सब स्वत्व चुप-चाप समाज के नाम पर राज में आ टिका। अतः देखा गया कि स्वत्व के भाव अथवा अभाव से बनी विषमता की समस्या उससे कट नहीं पायी। 'अपरिग्रह' उससे अग्रिम विचार है। उसमें स्वत्व की धारणा ही निराधार ठहर जाती है। पता चलता है कि व्यवस्था और उपयोग से अलग स्वत्व वास्तव में कुछ होता ही नहीं।

अधिकांश सोशलिस्टिक विचार-पद्धति स्वत्व के सम या पुनर्वितरण पर केन्द्रित रहती है, इतनी कि जैसे स्वत्व सचमुच ही कुछ हो। अतः उस विचार धारा से स्पर्धा या व्यूहचक्र अथवा दलमत का संघर्ष, विरट होने से बचता नहीं। फल होता है युद्ध और युद्धनिष्ठ उद्यम-उद्योग। उस चक्र से अगर निकलना हो तो स्वत्व की धारणा के मूल को ही कृत्रिम देख लेना होगा। फिर इस सद्दर्शन के द्रष्टा-जनों को स्वत्व-त्याग के आदर्श को अपने जीवन में उतार कर दिखाना होगा। यह क्रम भारत में कभी सर्वथा टूटा नहीं था। सन्तों, ऋषियों, मुनियों की परम्परा सदा से यहाँ रहती आयी है। पर इधर गांधी के बाद उसकी कड़ी टूटी दीखती है। आज का सन्त जैसे राजपति के समक्ष निरुपाय और निस्तेज हो पड़ा है। क्या मैं कहूँ कि भारत के अपने स्वराज्य में भारतीयता मानो इस अर्थ में अस्तप्राय हुई जा रही है। परतन्त्रता के दिनों में भारत इतना मूर्छित नहीं था। सम्राट के सामने अपना महात्मा अधिक गौरवशाली जचता था। आज के जिले, प्रान्त और केन्द्र के अनगिनत राजाओं के समक्ष भला कौन दूसरा है जो तनिक भी टिकता दीख सकता हो यह स्थिति सोचनीय है, भयंकर है। और हुई इसलिए है कि हमने धर्म और कर्म को, नीति और राज को, अलग खानों में बँट जाने दिया है। उसी कारण शरीर श्रम और प्रबुद्ध-चैतन्य, जीवन के दो अलग स्तर बन गये हैं। यह विभेद टूटना चाहिए और गांधी-कार्यकर्ता को इस अभेद को अपनी जीवन-विधि में सिद्ध करके दिखा देना चाहिए।

प्रश्न - तब इस तरह तो ग्रामदान-अभियान का कोई महत्त्व ही नहीं रह जाता। क्या आप इसे गांधीजी द्वारा कार्यों का अगला कदम नहीं मानते?

उत्तर—ग्रामदान बापूजी ज्यादा हुआ, ऐसा जयप्रकाशजी अगर कह पाये तो क्यों? धार्मिक दृष्टि गांधी से सगत नहीं है। परिणाम के माप में अवगणित काम आ सकता है, मूल प्रेरणा में उसके लिए स्थान नहीं है। दान-अभियान कदाचित गुण से गणना पर अधिक आश्रित हो रहा। इसमें मैं नहीं जानता कि मनुष्य से निरपेक्ष भूमि या ग्राम का विचार नहीं कर डाला गया। यही हो जाया करता है। योजनाएँ सम्वेदन से स्वतन्त्र हो जाती हैं। वैसी योजना अथवा कृति निष्फल न रहे तो क्या हो? अगर ग्रामदान का अभियान लोक-भावना के अर्थ में फलीभूत नहीं हुआ, या कम हुआ, तो कारण में सहसम्वेदन की यह त्रुटि ही रही होगी। विनोबा यों भी उत्तीर्ण सन्त हैं, पारिवारिक वह हैं भी कहाँ?

प्रश्न—तो फिर गांधी के सपने के भारत के निर्माण की दिशा में किस कार्यक्रम को हाथ में लेना चाहिए?

उत्तर—स्वतन्त्रता गांधीजी के समय राजनीतिक ही मिली। आशय, देश 'पर की अधीनता' से स्वतन्त्र हुआ। बाकी अपनी तन्त्रता और अधीनता का निर्माण शेष रह गया था। वह निर्माण इन २५ वर्षों के बाद ज्यों का त्यों ही शेष बचा है। अपना तन्त्र नहीं बना है, अपना अनुशासन नहीं उगा है। पर से स्वतन्त्र होना स्वतन्त्रता का तट मात्र था। अपने में स्वतन्त्र होने की यात्रा के लिए सच्चे रचनात्मक पुरुषार्थ की आवश्यकता थी और आवश्यकता है। राज तो यन्त्र मात्र है। समाज आपसी सम्बन्धों पर टिकता है और आपसी सम्बन्ध अन्तरंग हेतुओं और भावनाओं के अनुरूप बनते हैं। आवश्यक वहीं भी शुद्धि और संस्कार है। गांधी ने कहा कि राज पर दूसरे आदमी को भेजो तुम देश की निगाह में पहले हो। तुम लोक-जीवन की तह में पहुँचो और वहाँ से उस उत्कर्ष दो। पर यह सूक्ष्म दृष्टि कांग्रेसियों को मिल न पायी। वे राज पर आसीन हुए और देखा गया कि देश अब के उत्कर्ष बिन्दु से नीचे ही आता गया है। उन्नति हुई है, पर वह गिनाने भर लायक है। अनुभूति के तल पर तो वह उन्नति-अवनति-सी लग जाती है। मन का चैन गायब है, काम से हाथ खाली हैं और शहरों की रंगरेलियाँ दीन-दुखियों को स्वर्ग-की-सी क्या लगती हैं, उन्हें चिढ़ाती आन पड़ती हैं। धन बढ़ा है, उतना ही जितना अपराध बढ़ा है। तो यह लक्षण है कि स्वतन्त्रता राजन्यों को मिली है और रुक गयी है। प्रजाजन उसके लिए तरस रहे हैं, पर उसका उपाय होता नहीं दीखता। आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में एक ओर प्रभुता है तो दूसरी ओर परमुखापेक्षा है। गांधी का अभीष्ट पूरा होनेवाला हो तो कुछ समर्थ और कुशल जनों को सत्ता के स्थानों से लौट कर जनता में अपना स्थान बनाना होगा। और वह स्थान, शिक्षक अथवा उपदेशक का न होगा, बल्कि उनकी तरह धर्मिक, सहयोगी ग्रामीण सेवक का होगा। ●

बेरोजगारी व विषमता के सन्दर्भ में ग्राम्य नियोजन

• ऋषि कुमार गोविल

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री गुनार मिर्डाल ने अपनी पुस्तक 'एशियन ड्रामा' में यह विचार व्यक्त किया है कि आर्थिक नियोजन का सर्वोच्च कार्य यह है कि अर्द्ध-विकसित देशों में पायी जानेवाली अतिरिक्त श्रम-शक्ति को नवीन उत्पादक रोजगार में लगा सके, जिससे कि बेरोजगारी और अर्द्ध-बेरोजगारी की समस्या दूर की जा सके। इसी प्रकार की विचार धारा भारत की प्रथम व द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं में भी व्यक्त की गयी है। प्रथम योजना के शब्दों में 'एक विकास योजना मूलतः पूर्ण रोजगार प्राप्त करने की दशाओं का निर्माण करने का प्रयास है।" ऐसा अनुमान था कि १९५१ में ग्रामीण क्षेत्रों में ३० प्रतिशत के लगभग बेरोजगारी थी। परन्तु इसके साथ अर्द्ध-बेरोजगारी की जटिल दशा भी विद्यमान थी। कृषि एवं उद्योग की आवश्यकता की तुलना में निवेश की मात्रा कम होने के कारण बेरोजगारी की समस्या के समाधान में प्रथम योजना कोई प्रभाव न डाल सकी।

सर्वप्रथम द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बेरोजगारी की विस्तृत व्याख्या की गयी। योजना के आरम्भ में लगभग ५३ लाख लोग बेरोजगार थे। २५ लाख शहरी क्षेत्रों में और २८ लाख ग्रामीण क्षेत्रों में। इसके अतिरिक्त ५ वर्षों की अवधि में रोजगार चाहनेवालों की संख्या में १ करोड़ की वृद्धि हुई। महालनबीस माडल के आधार पर द्रुत-औद्योगीकरण और बेरोजगारी की समस्याओं का एक ही साथ समाधान करने का प्रयास किया गया। आर्थिक विकास की नींव मजबूत करने के हेतु इस्पात, सीमेण्ट मशीन, विद्युतीकरण आदि भारी एवं मूलभूत उद्योगों को प्राथमिकता दी गयी। उपभोग की वस्तुओं की पूर्ति को यथासम्भव विकेन्द्रित क्षेत्रों के लिए छोड़ दिया गया। परन्तु औद्योगीकरण की यह दोहरी प्रक्रिया सफल न हो सकी और तीसरी योजना के आरम्भ में ९० लाख लोगों का 'बैकलाग' पाया गया। इसके साथ में अर्द्ध-रोजगारी की स्थिति ग्रामीण-अर्थ-व्यवस्था पर और भी अधिक कुप्रभाव डाल रही थी। १९६९ में जब चतुर्थ पंचवर्षीय योजना आरम्भ हुई तो उस समय बेरोजगारों की कुल संख्या १ करोड़ २० लाख पायी गयी।

उपरोक्त संक्षिप्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि भारत में योजना का आर्थिक विकास अपने दो प्रमुख उद्देश्यों को पूरा नहीं कर पाया है। प्रथम, प्रत्येक बेरोजगार नागरिक को लाभप्रद व उत्पादक रोजगार प्रदान करना व द्वितीय, निर्धन वर्ग के जीवन स्तर का न्यूनतम आधार प्रदान करना। राष्ट्रीय सर्वेक्षण के आंकड़ों से इन दोनों निष्कर्षों की पुष्टि प्रतिवर्ष की जा सकती है। सूक्ष्म

विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय ग्रामीण समाज में गरीबी का मूल कारण रोजगार के अवसरों का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना ही है। यदि खेती व अन्य सहायक कार्यों में ग्रामीण समाज को संगठित करके पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त की जा सके तो गांव के औसत नागरिक को अधिक आय प्राप्त हो सकेगी और उसके उपभोग में सुधार होगा। १९६०-६१ में ग्रामीण क्षेत्रों के ६.३८ प्रतिशत बिलकुल निम्नवर्ग लोगों का खर्च आठ रुपया प्रतिमास अर्थात् २७ पैसे प्रतिदिन था। कतिपय अन्य निम्न श्रेणियों को मिलाकर लगभग ४० प्रतिशत ग्रामीण जनता ऐसी थी जो ५० पैसे से कम में गुजर करती थी। क्या कारण है कि २० वर्षों के आर्थिक नियोजन के उपरान्त भी भारत में ग्रामीण नियोजन पर्याप्त श्रम-उपयोग की सम्भावनाएँ उत्पन्न नहीं कर पा रहा है और गांव के एक बहुत बड़े वर्ग, जिसमें कि भूमिहीन व साधनहीन व्यक्ति पाये जाते हैं, उनका जीवन-स्तर और आवश्यक वस्तुओं का उपभोग स्वस्थ व सांस्कृतिक जीवन के लिए अपर्याप्त है? खेती में नयी तकनीक के विकास के सन्दर्भ में भूमिहीन, छोटे किसान तथा बड़े किसान के बीच विषमता की खाई गहरी होती जा रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे समाजार्थिक दबाव पड़ रहे हैं जिनके सफल समाधान को जल्द न ढूँढ पाने पर न केवल आर्थिक असफलता होगी अपितु प्रजातान्त्रिक समाजवाद का आदर्श भी हमसे बहुत दूर हट जायगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी व अर्द्ध-बेरोजगारी को दूर करने के लिए श्रम-प्रधान तकनीक का विकास करना होगा; परन्तु ऐसा करने के लिए यह आवश्यक होगा कि उपलब्ध भूमि, साधनों व पूंजी का समष्टिवादी दृष्टिकोण से उपयोग किया जाय। भूमि और पूंजी, दोनों का ही अभाव ग्रामीण क्षेत्र में पाया जाता है। भारतीय अर्थशास्त्री इस प्रश्न पर एक मत नहीं हैं कि भूमि-सुधार तथा पूंजी के वितरण के द्वारा भारतीय समाज में विषमता को दूर किया जाय अथवा केवल उत्पादित साम-ग्रियों का तुल्य वितरण ही समान हो। वास्तव में इस लेख में हमें इन्हीं प्रश्नों पर विचार करना है कि हमारा ग्रामीण नियोजन (विलेज प्लानिंग) कैसा हो जिसके द्वारा भूमि और पूंजी के स्वल्प साधनों का सफल और न्यायपूर्ण उपयोग करते हुए बेरोजगारी और विषमता की गहरी बुराइयों पर रोकथाम की जा सके। यहां यह कह देना भी असंगत नहीं होगा कि ग्रामीण नियोजन के इस पेचीदे कार्य के हेतु गांव के किसान, सम्पन्न वर्ग, गैर-कृषि व भूमिहीन श्रमिक, समाज-शास्त्री आदि को उचित संगठन में बांधना होगा जिससे कि गांव के समस्त उत्पादन के साधनों का अभिनियोजन आर्थिक दृष्टिकोण से किया जा सके और ग्रामीण योजना को ब्लाक तथा जिले के स्तर की योजनाओं से सम्बन्धित किया जा सके। पिछले योजना-काल में सरकारी रिपोर्टों में इन विचारों को व्यक्त तो अवश्य किया गया है परन्तु कार्यान्वित करते समय केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों द्वारा दिये गये अनुदान को यथासम्भव उपयोग करने मात्र से ही सन्तोष किया गया है। इसलिए बचत व पूंजी-निर्माण योजनाओं को भी गांव में यथेष्ट प्रश्रय नहीं मिल पाया है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय ग्रामीण समाज में भूमि, पूंजी व सम्पत्ति का पर्याप्त एकत्रीकरण है और उनका दुरुपयोग भी होता है। इस परिस्थिति के कारण ग्रामीण बेरोजगारी, अर्द्ध-बेरोजगारी, विषमता व शोषण आदि का जन्म होता है। वास्तव में यह ग्रामीण-संरचना की ऐसी बुराई है कि उत्पत्ति अथवा आय के वितरण में कुछ परिवर्तन करने मात्र से इसे ठीक नहीं किया जा सकता, जैसा कि प्रो० दाण्डेकर और श्री नीलकण्ठ रथ ने अपने लेख "पावर्टी इन इण्डिया" में प्रदर्शित किया है।

विषमता और तकनीक

हरित क्रान्ति के सन्दर्भ में अर्थशास्त्रियों के सामने कुछ नवीन प्रश्न उठे हैं। पहला, क्या खेती में तकनीकी प्रगति खेती की आमदनी के वितरण में विषमता बढ़ायेगी? दूसरा, क्या इसके कारण खेती में नीची हदबन्दी की जा सकती है? अर्थात् जीविका के लिए आज जितनी भूमि आवश्यक है उससे कम की आवश्यकता है? तीसरा, क्या नयी तकनीक से खेती में रोजगार की सम्भावना बढ़ेगी ताकि भूमिहीन को भले ही भूमि न मिले परन्तु उसे खेती में पर्याप्त काम मिल जाय?

यद्यपि पंजाब और हरियाणा में हरित क्रान्ति से देश के राज्य-कर्मचारी, विदेशी विशेषज्ञ एवं कुछ अर्थशास्त्री बहुत प्रभावित हुए हैं और यह भी सही है कि हरित क्रान्ति ने कृषि-उत्पादन बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, फिर भी ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि १० प्रतिशत अथवा अधिक-से-अधिक २० प्रतिशत कृषक परिवार खेती की इस उन्नति के भागीदार हो सके हैं। भारत में अन्य अर्द्ध-विकसित देशों की भांति ही कृषि-जोतों का एकत्रीकरण है और थोड़े-से व्यक्तियों के पास देश की अधिकांश खतिहर भूमि विद्यमान है। इसके साथ गैर-कृषि रोजगार की कमी के कारण सीमित भूमिखण्ड पर अत्यधिक जनसंख्या का भार है। ऐसी परिस्थिति में ग्रामीण समाज में अत्यन्त स्वल्प भूमि के मालिक अथवा भूमिहीन श्रमिक का बाहुल्य है। लगभग २२ प्रतिशत भूमि एक प्रतिशत आबादी के पास है और १६ प्रतिशत भूमि पर लगभग ७० प्रतिशत आबादी गुजर कर रही है। यह पूरे देश का चित्र है। अलग-अलग राज्यों का चित्र समान नहीं है। १९६०-६१ में केरल में ५४ प्रतिशत ग्रामीण परिवार भूमिहीन थे या उनके पास आधा एकड़ से कम भूमि थी। लगभग यही हाल तामिलनाडु का भी था। पंजाब, हरियाणा में ४८ प्रतिशत से अधिक ग्रामीण परिवार भूमिहीन और आधे एकड़ से कम भूमि-

वाले थे। राष्ट्रीय सर्वेक्षण के आकड़ों के अनुसार लगभग ३० प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास १५ एकड तक की जोत है और इस प्रकार के निर्धन किसान समस्त भूमि का केवल १७·५६ प्रतिशत उपयोग कर रहे हैं। पूरे देश में विषमता का यही हाल है, भूमि का बडा भाग थोड़े लोगो के हाथ में है और अधिकाश खेतिहर परिवारों के पास छोटे टुकडे हैं या वे भूमिहीन हैं। ये भूमिहीन और अनार्थिक जोतवाले ही हमारे खेतिहर ढाँचे की मुख्य समस्या है। ऐसे लोगों के लिए पूरा काम नही है। ये मनमानी, बेदखली, कम मजदूरी और शोषण के शिकार होते हैं।

ग्रामीण समाज का भूमि-सम्पन्न वर्ग सम्पूर्ण कृषि-व्यवस्था पर एकाधिकारी की दशा में होता है और इसलिए समस्त उत्पादन के साधनो और संस्थाओं को प्रभावित करने का सामर्थ्य उसी में होता है। यही कारण है कि खेती में सभी तकनीक के प्रयोग में बड़े किसान को सहकारी व अन्य स्रोतो से अधिक निवेश प्राप्त हो सके हैं और उसकी आमदनी में यथेष्ट वृद्धि भी हुई है। कृषि-पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि के कारण भी इस वर्ग की आमदनी में विकास हुआ है और छोटे व अनार्थिक जोतोवाले किसानो की तुलना में सम्पन्न किसानो की आर्थिक दशा अधिक सुदृढ हो गयी है। इस वस्तुस्थिति के कारण समाज में असन्तोष और भूमि के प्रति लगाव बढ़ा है। छोटे किसानो का एक बहुत बड़ा समूह इस बात के लिए इच्छुक है कि वह खेती की इस नयी तकनीक में भागीदार बने व अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार कर सके।

दूसरा प्रश्न सीलिंग के कानून से सम्बन्धित है। यह तो निर्विवाद है कि खेती मे नयी तकनीक के प्रभाव से सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है और किसान खेती में अधिक पूंजी लगाने लगे हैं। इससे उत्पादन तो अवश्य बढ़ा है लेकिन उत्पादन के साधन थोड़े लोगो के हाथो में केन्द्रित होते जा रहे हैं। सिंचाई के साधन बनते हैं समाज के खर्च से, परन्तु उसका लाभ थोड़े से लोगो को ही प्राप्त हो रहा है। ऐसी परिस्थिति मे आर्थिक विकास और न्यायोचित वितरण मे तालमेल बैठाने की आवश्यकता है। न केवल भूमि पर सीलिंग की सीमा कम की जा सकती है, अपितु बढी हुई खेतिहर आमदनियो पर यथेष्ट आयकर लगाकर बेरोजगारी और निर्धनता को दूर करने की दिशा में भी सरकार कदम बढ़ा सकती है जैसा कि जापान, यूगोस्लाविया के आर्थिक विकास के इतिहास से विदित होता है। योजना आयोग मे 'सहकारी ग्रामीण व्यवस्था' की बात कही गयी है, जिसके अन्तर्गत भूमिहीन मजदूरो की हालत सुधरेगी और उन्हे ज्यादा रोजगार प्राप्त होगा। यह सही है कि इस सहकारी ग्रामीण व्यवस्था मे अथवा संयुक्त सहकारी कृषि की दिशा में, भारत में कोई कारगर कदम नही उठाये जा सके हैं, फिर भी किसी अर्द्ध-विकसित देश के औद्योगीकरण की अवधि में एक सुसगत भूमि-नीति की आवश्यकता है जिससे खाद्यान्न व कच्चे मालो का पर्याप्त विपणन अतिरेक प्राप्त हो सके और ग्रामीण क्षेत्र में असमानता और पूँजीवादी खेती की प्रक्रिया को बढ़ावा न मिले। इसी सन्दर्भ में विनोबाजी द्वारा किये गये ग्रामदान समाज का भी काफी महत्व है।

तीसरा प्रश्न यह था कि हरित क्रान्ति अथवा खेती में नयी तकनीक के सम्बन्ध में रोजगार की सम्भावना बढ़ेगी अथवा नही ? नयी खेती सघन खेती है। उसमें भूमि व मनुष्य-शक्ति दोनो का सघन इस्तेमाल होता है। इसके साथ ही यंत्रीकरण क्रमशः बढ़ता है और मनुष्य-शक्ति का इस्तेमाल कम होता जाता है। अब तक के अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अन्त में खेती की तकनीकी विकास के कारण रोजगार घटेगा, बढ़ेगा नही। परिवार का काम बढ़ेगा। कार्यशील मजदूरो की मजदूरी भी बढ़ेगी, लेकिन खेती में काम न पाने वालों की संख्या भी बढ़ेगी। सौदाशक्ति क्षमता के अभाव में तथा खेती में अन्य रोजगार न प्राप्त होने के कारण खेतिहर मजदूरो के शोषण की सम्भावना होना पूँजीवादी खेती का अनिवार्य परिणाम है। भूमिहीन वर्ग की बडी संख्या होते हुए भी तथा कृषि-उत्पादन में पंजाब व हरियाणा की तुलना में उत्पादन की वृद्धि-दर छोटी होते हुए भी खेतिहर वास्तविक मजदूरी की दरें उत्तर-पश्चिम भारत की तुलना में केरल में अधिक तेजी से बढी हैं। वस्तुतः इस भेद का कारण यह है कि केरल में किसानों के संगठन यथेष्ट रूप से शक्तिशाली हैं जैसा कि देश के अन्य भागो में नही है तथा १९६७ ई० के बाद केरल राज्य मे वामपंथी सरकारें कृषि-संगठनो की मांग की तरफ अधिक संवेदनशील रही हैं।

वास्तव में आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय ग्रामीण समाज को अपनी परम्परागत पिछडी अवस्था से निकलने के लिए समष्टिवादी चेतना (मैक्रो-रिटमुनी) उद्बुद्ध की जाय। जैक्सवी, गैडगिल, कारिनर आदि अर्थशास्त्रियो ने इस बात पर बल दिया है। इसी परिप्रेक्ष्य में ग्रामदान प्रजातांत्रिक ग्राम-संयोजन का एक नमूना प्रदान करता है। रूस, चीन व अन्य समाजवादी देशो ने ग्रामीण समूह के विकास हेतु दूसरी प्रक्रिया अपनायी है। एक संगठन अथवा ग्राम-समाज बनाकर तीन दिशाओ में एक साथ बढ़ना होगा। पहला, कृषि-पद्धतियो में सुधार करके उत्पादकता को बढ़ाना होगा जो कि बढती हुई जनसंख्या के लिए गाँव व शहर में योजना-सामग्री उपलब्ध कर सके। इससे ग्रामीण आय, स्तर भी ऊंचा उठेगा जिससे लघु व कुटीर उद्योगो के बने सामानो को खरीदने की क्षमता बढ़ेगी। दूसरा भूमि-सुधार योजनाओ को और अधिक सक्रिय रूप से लागू किया जायगा। सीलिंग को कम किया जाय, पट्टे की सुरक्षा और बँटाई-प्रथा पर नियंत्रण किया जाय।→

बांगला देश के गांधीवादी

• जगदीश थवानी

'बांगला-भारत-युवा सम्प्रीति-संघ' के अध्यक्ष श्री नजरुल आजम कुरेशी के निमंत्रण पर अप्रैल-मई माह में मैंने सोनार बांगला की यात्रा की।" यद्यपि हमारा देश सोनार बांगला कहलाता है, तथापि सोना अभी यहाँ पैदा नहीं हुआ, अभी तो सब भूखा बांगला है। जनता गृहहीन, वस्त्रहीन, अन्नहीन है, उसकी हर जरूरत बाकी है, लाखों परिवारों की यह दशा है। गांधीजी हमें कहा करते थे, कि भूखे आदमी के सामने भगवान की बात मत करो। उसका भगवान तो रोटी है"—श्री चारु चौधरी ने रामकृष्ण मिशन, ढाका से अपने पत्र में मुझे लिखा था। चारुदा इकहत्तर वर्ष के हैं, बांगला देश के सबसे पुराने गांधीवादी। नोआखाली में आपका गांधी-आश्रम था, जहाँ स्कूल, दवाखाना, बीस एकड़ का फार्म, सबकुछ रजाकारों के कब्जे में अभी है। अनेक कत्तिन-बुनकर बेकार हो गये, वे आश्रम का पुनरारम्भ चाहते हैं, किंतु सब साधन तो नष्ट हो गये, पूंजी कहाँ से आये? चार आश्रम-कार्यकर्ता मारे गये; एक श्री अजीत दे गत माह रजाकारों द्वारा मारे गये। सशस्त्र रजाकार गाँवों में घूमते रहते हैं और हिन्दुओं के पीछे पड़े रहते हैं। स्वयं को मुक्ति-वाहिनी घोषित कर वे शासक दल "अवामी-लीग" तथा प्रशासन में घुस गये हैं। प्रधानमंत्री मुजीब इन्हीं प्रशासकों के हाथों में हैं। कौन जानता है, गांधी की तरह मुजीब की भी हत्या हो जाय! मुजीब पूजे जाते हैं, परन्तु उनके क्रान्तिकारी विचारों पर अमल नहीं होगा जैसा सब महापुरुषों के साथ हुआ है, जो दुर्गति हमलोगों ने गांधीजी की की है अर्थात् उन्हें चन्द संस्थाओं में कैद कर लिया है। चारु चौधरी नौ वर्ष जेल में रहकर अब रिहा हुए हैं। रिलीफ-कार्य करते हैं। बांगला देश में 'सर्वोदय समाज' स्थापित करने को उत्सुक हैं।

ईसाई मिशनरी, रामकृष्ण मिशन और 'भारत सेवाश्रम संघ' यही कुल बांगला देश की स्वयंसेवी संस्थाएँ हैं। वस्त्र, कम्बल, दूध, औषधि, अनाज बाँटना और गृह निर्माण आदि इनके कार्य हैं। ढाका में रामकृष्ण मिशन एक हाईस्कूल, दवाखाना और कालेज के छात्रों के लिए होस्टल चलाता है। वृद्ध गांधीवादी सुनील कुमार ६५ साल वर्ष जेल काटकर अब रामकृष्ण मिशन में रहते हैं।

सिलहट में कर्मी-संघ नामक पुरानी रचनात्मक संस्था है, किन्तु सन्'६५ के युद्ध ने इसका काम लगभग बन्द कर दिया। श्री पूर्णेन्दु सेनगुप्त यहाँ हैं। एक कार्यकर्ता की हत्या हो गयी।

राजशाही में रजत कुमार दत्त सफलीक खादी-कार्य कर रहे थे, वह कार्य मुक्ति-संग्राम में बन्द हो गया। कार्यकर्ता अभी भी आशंकित हैं, अतएव यह तय नहीं कर पा रहे हैं कि कार्य पुनः आरम्भ करें या नहीं।

बरीसाल का गांधी आश्रम भी बन्द हो गया है।

ब्रह्मणबारिया में पुराने गांधीवादी श्री विश्वरंजनदास रिलीफ और पुनर्वास का अच्छा काम कर रहे हैं।

कोमिल्ला में 'अभय आश्रम' की दो-तीन लाख रुपये की सम्पत्ति नष्ट कर दी गयी और कार्यकर्ता पीटा गया। आश्रम-मंत्री प्रबोध दास गुप्त, राजेन्द्र चक्रवर्ती, परिमल दत्त, नगेन्द्र घोष वयोवृद्ध गांधीवादी हैं, सभी ब्रह्मचारी हैं। गत पचास वर्षों से यहाँ सेवारत हैं। "गांधी ने हमें आज्ञा दी, "स्टिक टु योर पोस्ट", सो हम यहीं अड़े हुए हैं। शासन हमें मुक्तसेवा के लिए अवसर नहीं देता। 'रिलीफ नहीं, काम दीजिए', वे मुझे नारियल पिलाते हुए कहते हैं। अभय आश्रम का गाँवों में फैला हुआ खादी कार्य, पूँजी के अभाव में रुक-सा गया है।" पूरा की कुटियों में कालेज के छात्रों के लिए होस्टल चला रहे हैं। धीरज कान्ति साहा बी० काम० के विद्यार्थी हैं, कपड़े की मिल में काम भी करते हैं, मुक्तिवाहिनी के योद्धा थे। 'इस क्षेत्र से पन्द्रह हजार नवयुवक सैनिक-प्रशिक्षण लेने हेतु देहरादून भेजे गये थे। मुक्ति के बाद पचास प्रतिशत सैनिकों ने अपने-अपने शस्त्र समर्पित कर दिये। शेष सैनिक 'गृहयुद्ध' कर रहे हैं', धीरज ने मुझे बताया। शरणार्थियों को न उनके घर वापस मिले हैं, न उनके पास पर्याप्त कपड़े हैं, और न पर्याप्त खाना। रिलीफ सामग्री अधिकारियों द्वारा सही ढंग से वितरित नहीं हो पाती। 'मुजीब सच्चे हैं, पर वे अकेले क्या कर लेंगे?' सिरा-सन-तेल ढाई रुपया सेर, चीनी आठ रुपया, सरसों तेल नौ रुपया, चावल दो रुपया, सनलाइट साबुन डेढ़ रुपया, कपड़ा पाँच रुपया गज, बाजार में बिकते हैं। चढ़ी हुई कीमतों के लिए जनता भारत को दोष देती है, क्योंकि प्रायः सभी वस्तुएँ भारत से आयात की जाती हैं। चावल, मछली, रिलीफ सामग्री (टीन की चादरें) स्मगलर भारत ले जाते हैं—ऐसा आरोप है। मुक्तिसंग्राम के समय का देशप्रेम कहाँ चला गया? अभी स्वार्थ, खून, भ्रष्टाचार का बोलबाला है, भारत से कई गुना अधिक। भारत के बाहर जाने पर लगता है कि भारत कितना अच्छा है। कोमिल्ला में ऐसे परिवारों से मिला तथा उनके घरों में ठहरा,

---

→तीसरा आर्थिक नियोजन व प्रगतिशील ग्रामीण समाज के दृष्टिकोण से गाँव अथवा गाँव के निकट गैर-कृषि-कार्यों व सहकार्य योजनाओं के कार्यक्रम को खोजना होगा। 'विलेज प्लानिंग' में ग्रामीण भूमि, श्रम व पूंजी का सफल उपयोग महत्त्वपूर्ण है। इन समस्त कार्यों के सम्पादन में सामाजिक कार्यकर्ता का एक वर्ग (कैडर) चाहिए। केवल सरकारी मिशनरी द्वारा 'विलेज प्लानिंग' का कार्य अधूरा ही होगा। ●

जिनके पुत्र अथवा पौत्र मारे गये हैं।

चटगाँव में, 'प्रवर्तक संघ' नामक पुरानी संस्था कुमारी मीरा सिन्हा और कुमारी झरना चौधरी चला रही हैं। एकमात्र यही गांधीवादी संस्था बांगला देश में इस समय जीवित है, जब कि अन्य संस्थाएँ मृतप्राय हैं। यह आश्रम भी नष्ट कर दिया गया था, ग्यारह कार्यकर्ताओं की हत्या हुई। कृषि एवं उद्योग की शिक्षा के साथ चार सौ छात्रों व शिक्षकों का परिवार आश्रम-विद्यालय में रहता है। आश्रम के अनाथालय में १८० बच्चे हैं।

श्री मनोरंजन धर अरविन्द दल के आतंकवादी थे, अब गांधीवादी राजनीतिज्ञ हैं, बारह साल जेल भुगत चुके हैं। उन्होंने मुझे बताया : "पश्चिम बंगाल का सान्निध्य यहाँ लोकतन्त्र लायेगा जो कि भारत की बड़ी देन है। स्वस्थ विचारों का आदान-प्रदान पहली जरूरत है। असामाजिक तत्व, जमींदार, रजाकार जो शासक पार्टी में शामिल हो गये हैं, गाँवों में साम्प्रदायिक तनाव पैदा कर रहे हैं। कई जगह पोस्टर लगाये हैं "हिन्दू भारत वापस जाओ।" धन्य हैं ईसाई मिशनरी (लगभग ढाई सौ) जिन्होंने लाखों लोगों की जान बचायी। "कितनी शर्म की बात है कि हमारे मुक्ति युद्ध को भी जयप्रकाश नारायण ने 'गांधीवादी' आन्दोलन कहा, जो कि वास्तव में था नहीं!"

बांगला देश के वयोवृद्ध गांधीवादी 'चारुदा' से कुछ प्रश्न :

प्रश्न : बांगला देश के मुक्ति-संग्राम के प्रथम चरण में अहिंसक गांधीवादी तरीका अपनाया गया था, ऐसा हमने पढ़ा-सुना। इस तरीके के लिए क्या अवकाश है (क) मुक्ति संग्रामों में, (ख) आर्थिक प्रश्न सुलझाने में?

उत्तर : भारत के गांधीवादियों की यह गलतफहमी थी कि बांगला देश ने गांधी-मार्ग अपनाया। वह हिंसक-असहयोग आन्दोलन था। हमारी समस्याएँ गांधी-मार्ग से ही सुलझ सकती हैं किन्तु शासन की इसमें आस्था नहीं है।

प्रश्न : भारत बांगला देश में स्थायी मैत्री कैसे हो?

उत्तर : अवसरवादी जो 'अवामी लीग' और शासन में घुस गये हैं, वे इस मैत्री को तोड़ रहे हैं। आप जैसे गांधीवादी परिव्राजक अधिकाधिक यहाँ आयें।

प्रश्न : साम्प्रदायिकता को रोकने के उपाय?

उत्तर : बांगला देश में जो पचास वर्ष से अधिक आयु के हैं साम्प्रदायिक हैं, पैंतीस से पचास वर्ष के निरपेक्ष हैं, नवयुवक निर्मल हैं।

प्रश्न : दक्षिण एशिया-महासंघ की सम्भावना?

उत्तर : है।

प्रश्न : भारत के लिए सन्देश?

उत्तर : भारत स्वयं को 'सुपर-पावर' नहीं समझे, मित्र की तरह बांगला-देश के विकास में मदद करे, अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप न करे। भावी विश्व के लिए सर्वोदय ही एकमात्र सन्देश है।

महिला कालेज की प्रिंसिपल हुस्नेआरा मुझे प्रधानमंत्री से मिलाने ले गयीं। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, शहीद सूर्यसेन और विद्यासागर के विशाल चित्र 'बंग-भवन' में लटके हुए थे, जहाँ पर प्रधान मंत्री 'बंगबन्धु' शेख मुजीबुर्रहमान को मैंने सर्वोदय साहित्य भेंट किया। अंग्रेजी मासिक "सर्वोदय" के बांगला देश-विशेषांक को पढ़ते हुए वे बोले, "क्यों न मैं भी सर्वोदय में शामिल हो जाऊँ?"

मैंने कहा : 'आप तो सर्वोदय का काम कर ही रहे हैं।'

फिर मैंने उनसे पूछा—'दस वर्ष पूर्व विनोबा जब बांगला देश से गुजरे थे, आप मिले?'

मुजीब : 'मैं चाहता था, लेकिन जेल में था।'

मैं : 'भारतीय जनता आपको प्यार और श्रद्धा करती है। मुझे दुख इस बात का है कि अधिकांश भारतीय मुसलमान बांगला देश के समर्थक नहीं हैं।'

मुजीब : 'शायद वे पाकिस्तानी सेना के अत्याचार को नहीं जानते।'

मैं : 'जानते हैं।'

मुजीब : 'वे अपनी भूल महसूस करेंगे।'

गठीले, लम्बे, सुन्दर, मुस्कराते, सफेद कुर्ते-पाजामे और काली जाकेट में 'बंगबन्धु' रोज टेलीविजन में देखे जाते हैं। 'बंगबन्धु' ने यह स्पष्ट कर दिया है कि इस्लाम बांगला देश के चार सिद्धान्तों, राष्ट्रीयता, लोकतंत्र, समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता के अनुकूल है और उनकी सरकार 'मजहब को राजनीति से जुड़ने नहीं देगी।' मजहब का दुरुपयोग व शोषण तथा दमन का अस्त्र कैसे पाक शासन ने पच्चीस वर्ष और पाक सेना ने हाल ही में किया, इसका अनुभव बांगला देश को है। 'मानस-परिवर्तन' की आवश्यकता यहाँ प्रत्येक के लिए है। मुनाफाखोरी, रिश्वत, भ्रष्टाचार बन्द होने चाहिए। व्यापारी और दूकानदार, जो परिस्थिति का नाजायज फायदा उठा रहे हैं और कीमतें बढ़ा रहे हैं, उन्हें चेतावनी दी जाती है' (किन्तु परिणाम?) ●

(पृष्ठ ५५६ का शेष)

हम सत्य और अहिंसा को मानने वाले गांधी-परिवार के लोग यहाँ इकट्ठा हैं। दो दिन तक हम अपने को, अपने अब तक के काम को, और आगे की योजना को सत्य और अहिंसा की तराजू में तौलें। 'सर्व' हमारा ब्रह्म, और 'सर्व' ही हमारी उपासना हो, सर्व हमारी प्रेरणा, और सर्व ही हमारी शक्ति हो।

नकोदर, —रामभूति

१९-५-७२

ग्रामदान के द्वारा ग्राम-शक्ति खड़ी करें और अन्यायों का डटकर मुकाबला किया जाय

श्री एस॰ जगन्नाथन् का कार्यकर्ता साथियों से आवाहन

जब सुब्रह्मण्यमजी ने नशाबन्दी के लिए अनशन शुरू किया तो मैंने सुब्रह्मण्यमजी से कहा कि अनशन छोड़ दीजिए। हमारा मुख्य काम है, प्रत्यक्ष कारंवाई (डायरेक्ट एक्शन)। सत्याग्रह का आन्दोलन शुरू करना है इसलिए अनशन को छोड़ दीजिए। श्री कामराज ने भी ऐसी ही प्रार्थना उनसे की थी। सुब्रह्मण्यमजी ने अनशन छोड़ दिया। उसके बाद सुब्रह्मण्यमजी और सर्वोदय मण्डलवाले मिले। हम सब लोगों ने तय किया कि सुब्रह्मण्यमजी तमिलनाडु में नशाबन्दी का वातावरण तैयार करेंगे। हमारे जैसे कार्यकर्ता जो ग्रामदान पाकेट में काम कर रहे हैं, हम उस पाकेट को इस बात के लिए तैयार करेंगे। मैंने सुब्रह्मण्यमजी से कहा—"मान लीजिए आपको दो हजार कार्यकर्ता चाहिए, मैं आपको एक ब्लाक में, जहाँ हम ग्रामदान का काम कर रहे हैं, वहाँ की ग्रामसभा द्वारा हम एक हजार सत्याग्रही तैयार कर देंगे।" उसके बाद हमने पूरे तमिलनाडु में राज्य-स्तर पर यात्रा की और अब प्रत्येक जिले में पदयात्राएँ हो रही हैं, यह आप जानते ही हैं। इसलिए डाक्टर सुशीला नायर से मैं इतना ही पूछनेवाला हूँ कि कौन सत्याग्रह करनेवाला है? १९३० में गांधीजी की पिकेटिंग शुरू हुई। मैं कालेज में पढ़ता था। एक दिन शाम को पिकेटिंग देखने गया। वहाँ मैंने देखा कि लाठी चार्ज हुआ। किसी का सिर फूटा, और खून बहने लगा। उसे देखकर मन में बहुत दुख हुआ। वकील, डाक्टर और व्यापारियों ने स्वयंसेवक के रूप में भाग लिया। कांग्रेस के द्वारा वह हुआ था। वैसा आन्दोलन आप भी खड़ा करना चाहते हैं क्या? सर्वोदयवाले करेंगे क्या? मेरा मानना यही है कि जनता को करना है, जो इस कदर नशा में डूबती जा रही है। आम जनता को आकर उसमें भाग लेना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि ग्रामदान का जिस ब्लाक में जोर है, जहाँ पुष्टि का काम हो रहा है, वहाँ इस बात पर जोर देंगे। इससे ग्रामदान की पुष्टि के काम में सहयोग मिलता है और इस आन्दोलन से ग्रामसभा मजबूत बनती है। जो भी समस्या हो, आर्थिक हो, सामाजिक हो, नशाबन्दी को हाथ में लेने से जनता में जागृति हो सकती है, जन-शक्ति वहाँ प्रकट हो सकती है। इसलिए मैं इसमें भाग लूँगा लेकिन ग्रामदान को छोड़कर नहीं। मैदान में डटा रहूँगा और उस क्षेत्र में जन-जागृति और जन-शक्ति खड़ी करूँगा। एक क्षेत्र में आन्दोलन खड़ा करने से वह जरूर फैलेगा। उसका असर पड़ेगा। हमारे केरल के नेता मन्मथन्‌जी ने एक अच्छा भाषण दिया। उन्होंने 'पोलिटिकल एक्शन' की बात कही। 'पोलिटिकल एक्शन' नशाबन्दी के मामले में भी हो सकता है। लेकिन 'पोलिटिकल एक्शन' राजनीतिक दल से ही सकता है क्या? जहाँ हमारा ग्रामदान का काम होता है, पुष्टि का काम होता है, वहाँ की जनता की शक्ति प्रकट हो सकती है। इसके बारे में तमिलनाडु में प्रयास हो रहा है।

राममूर्तिजी ने हमारे आन्दोलन की दिशा क्या हो सकती है, इस पर प्रकाश डाला। आप जानते हैं कि रामनाड जिले (तमिलनाड) में उसी तरह का काम सालों से हो रहा है। भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन के अलावा और भी हमारा दृष्टिकोण होना चाहिए। जहाँ-जहाँ लोगों पर अन्याय होता है वहाँ पर लोगों को न्याय दिलाने के लिए हमारे प्रयत्न होने चाहिए। आप जानते हैं कि बेदखली हुई, भूदान की जमीन पर कुछ गल्तियाँ हुईं, जमींदारों ने देने का वादा किया, फिर भी उन्होंने वादाखिलाफी की। उस मौके पर हम लोगों ने प्रत्यक्ष कारंवाई की।

ग्रामदान में ही 'पोलिटिकल एक्शन' है

मन्मथन्‌जी से विनती करता हूँ कि मैं 'पोलिटिकल एक्शन' को मानता हूँ, स्वागत करता हूँ। जो ग्रामदान का मंत्र विनोबाजी ने हमको दिया है उसमें 'पोलिटिकल एक्शन' के लिए गुंजाइश है। उसमें 'पोलिटिकल एक्शन' के लिए क्या चाहिए? गांधीजी ने 'पोलिटिकल एक्शन' किया, उसके लिए एक संगठन—गाँव में, जिला में, प्रान्त-स्तर पर पूरे देश में खड़ा किया और उसके द्वारा उन्होंने आन्दोलन किया। अब मन्मथन्‌जी 'पोलिटिकल एक्शन' चाहते हैं। कैसे करें? सर्वोदय मण्डल करेगा क्या? गांधी स्मारक निधि करेगा या जो संस्थाएँ हैं वे करेंगी? 'पोलिटिकल एक्शन' के साधन क्या हैं? आपका संगठन कहाँ है? मन्मथन्‌जी ने कहा, "विकेन्द्रीकरण हमारी माँग है। ग्रामस्वराज्य का उद्देश्य यही है। लेकिन विकेन्द्रित राजनैतिक कारंवाई के लिए कोई संगठन आपके पास है क्या? सर्व सेवा संघ वह कर सकता है क्या? एक विकेन्द्रित राजनैतिक कारंवाई के लिए विकेन्द्रित संगठन चाहिए न! जो विकेन्द्रीकरण की आपकी माँग है उस, माँग को कौन पूरा करेगा? मैं माँग करता हूँ, मन्मथन्‌जी करते हैं और सर्वोदय के भाई-बहन माँग करते हैं लेकिन इसके लिए विकेन्द्रित संगठन की जरूरत है या नहीं? इसलिए मेरे मन में यह आता है कि यह ग्रामदान-ग्रामसभा 'पोलिटिकल एक्शन' के लिए एक मजबूत विकेन्द्रित संगठन है।

विनोबाजी एक आध्यात्मिक नैतिक संगठन हमको दे रहे हैं। जितना जल्द-से-जल्द हम ग्राम-स्तर पर, प्रखण्ड-स्तर पर, ग्रामदान का विचार फैलायेंगे, ग्राम-सभा को स्थापित करेंगे, उतना ही जल्दी आप जो एक्शन चाहते हैं, वह हो सकता है; नहीं तो हमारी बात हवा में ही रहेगी। बाबा ने राजनीति-विज्ञान के रूप में ग्रामदान को रखा है। गाँव के लोगों का कर्त्तव्य है कि वह ग्रामसभा को सब कुछ दे दे। बीस दिन में एक दिन दे दो ग्राम-सभा को, चालीसवाँ हिस्सा अपनी आमदनी का दे दो। ऐसी कुछ नैतिक सम्मति बाबा ने बनायी है। विनोबाजी ने पूरे भारत की पैदल यात्रा करते-करते एक बड़ा सुन्दर क्रान्तिकारी आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक विचार हमको दिया है ग्रामदान के रूप में। ग्रामदान के द्वारा जो कुछ 'एक्शन' हम चाहते हैं वह सम्भव है। हम लोग जो 'एक्शन' कर रहे हैं वह ग्रामसभा द्वारा तथा लोगों द्वारा कर रहे हैं। इससे काफी बल मिलता है। तंजौर के एक ब्लाक में हम काम करेंगे। दो-तीन ब्लाक में हम मन्दिर की ३ हजार एकड़ जमीन निकालनेवाले हैं। उससे एक बड़ा एक्शन शुरू होनेवाला है। हमको उम्मीद है कि काफी संख्या में भाई-बहन वहाँ खड़े हो जायेंगे।

हमें जगह-जगह स्थानीय क्षेत्र में जन-शक्ति जगाने का कार्य करना चाहिए। यह हमारा राष्ट्रीय मोर्चा बन जायेगा। गांधीजी का आन्दोलन भी स्थानीय क्षेत्र में शुरू हुआ और वही बाद में राष्ट्रीय मोर्चा बन गया। चम्पारण और बारदोली उसके नमूने हैं। हम भी तंजौर में, बिहार में, जो कुछ भी कर रहे हैं वही हमारा राष्ट्रीय मोर्चा बन जायेगा।

मैं आप भाई-बहन से विनती करता हूँ कि स्थानीय क्षेत्र में प्रत्यक्ष कार्रवाई के लिए लोगों को तैयार कीजिए।

पंजाब में क्या हो ?

पंजाब में शिल्प उद्योग बड़ा है लेकिन भूमिहीन बहुत हैं। बंटवारे के बाद काफी मुस्लिम पाकिस्तान गये। उनकी छोड़ी हुई जमीन किसके पास है ? पूछिए यहाँ के सर्वोदय कार्यकर्ताओं से कि पाकिस्तान से आये नागरिकों के पास है क्या ? हम लोगों ने उसके लिए कोई जाँच-कमिटी नियुक्त की है। इस प्रश्न पर आन्दोलन खड़ा करने के लिए पंजाब के लोग तैयार हैं ? भूदान नहीं मिलता है, ग्रामदान नहीं मिलता है, तो क्या करना चाहिए ? यह राष्ट्रीय समस्या है, आखिर यह जमीन किसको मिलनी चाहिए ? बेजमीनवालों को मिलनी चाहिए न ? कहाँ मिली ? मैं मानता हूँ कि यह अन्याय है। इस अन्याय का अन्त करने के लिए जन-शक्ति खड़ी करनी है या नहीं ?

पंजाब सर्वोदय मण्डल सत्याग्रह करने के लिए तैयार नहीं है तो किस काम के लिए तैयार है ? सिर्फ भूदान माँगने के लिए तैयार है ? ग्रामदान माँगने के लिए तैयार है ? और वह नहीं मिलता है तो क्या करना है ? मुसलमान जो जमीन छोड़कर पाकिस्तान चले गये वह जमीन सरकार की है न ? फिर तो किसी को मिलनी ही चाहिए ? हरिजन को मिलनी चाहिए ? वह उन्हें नहीं मिली और बड़े जमींदारों के पास चली गयी है।

तंजौर में जमीन की समस्या है वह पंजाब में नहीं है। पंजाब विकसित प्रान्त है फिर भी विषमता है और मामला बहुत कठिन है। आप जानते हैं यहाँ सरकार ने भूमिहदबन्दी को भी लाने की कोशिश की। अभी क्या हुआ ? भूमिहदबन्दी का जो बिल पास हुआ उसके बारे में क्या होगा ? भूमि मालिक का इस कानून के प्रति क्या रुख है ? वे बहुत कमजोर नहीं हैं। ये भूमि मालिक बेजमीनवालों के साथ बहुत-सी नाजायज हरकतें करते हैं।

पंजाब में भूदान-ग्रामदान का काम नहीं चलता है तो उसकी कोई चिन्ता नहीं। लेकिन हमको यह समस्या हाथ में लेनी चाहिए ताकि भूमिहीनों को भूमि मिल सके। यहाँ यह कहना चाहिए कि जिसके पास जमीन नहीं है उसको इकनॉमिक यूनिट मिलनी चाहिए। हम सत्य की बात करते हैं; कहाँ है सत्य ? सब कुछ एकदम असत्य है। आपके सामने मेरा यही निवेदन है। आप ग्रामदान के आन्दोलन में डटे रहेंगे और अन्याय तथा अत्याचार के लिए जन-आन्दोलन खड़ा करने और जन-संगठन खड़ा करने का काम ग्रामदान और ग्रामसभा के द्वारा करेंगे। अगर हम ग्रामसभा को मजबूत बनायेंगे तो जन-शक्ति पैदा होगी और हमारा राजनैतिक कदम स्पष्ट होगा।

हम एक होकर ग्रामशक्ति जगायें

सर्व सेवा संघ ने अध्यक्ष पद से मुझे मुक्ति देकर क्षेत्र में काम करने का मौका दिया है। मैं अपने क्षेत्र में जा कर ग्राम-स्वराज्य के काम में जुट जाऊँगा। मैं ग्रामदान का काम करूँगा, सत्याग्रह भी करूँगा, पुष्टि का भी काम करूँगा। वी० रामचन्द्रन् को मैंने कहा, "आप पागल हैं खादी के काम का, मैं पागल हूँ ग्रामदान के काम का। हम दोनों मिलें और क्षेत्र चुनकर काम करें। आइए आप भी काम कीजिए मैं भी काम करूँगा। दोनों मिल-कर, जुटकर काम करेंगे।" अभी अरणाचलम्‌जी भी बैठे हैं। हम सब लोग मिलकर काम कर सकते हैं। विनोबाजी के दिल में दुख है। रोना आता है, उससे हमारा दिल भी रोता है। दुख होता है कि जनता के लिए आजादी के इतने वर्षों के बाद भी यह क्या हो रहा है ? हमारा दिल रोता है तो हमको रोते-रोते बैठे रहना है क्या ? हम सब अपने क्षेत्र में काम करेंगे, लेकिन जो कार्रवाई हम लोग चाहते हैं वह किस तरह का होगा ? वह जनता का होगा, या राजनैतिक होगा ? ग्रामसभा को हमें मजबूत बनाना है तब आन्दोलन मजबूत बनेगा। ग्रामसभा द्वारा शक्ति जागृत कर समस्या को हाथ में लें। ऐसा लोक-राज्य अपने देश में होने दें। ऐसा हो सकता है, मुझे इसकी पूरी उम्मीद है।

जय जगत् !

नकोदर, १८-५-७२

२० वाँ सर्वोदय सम्मेलन

[पिछले अंक में हमने संघ-अधिवेशन की रिपोर्ट प्रकाशित की है। यहाँ हम सर्वोदय सम्मेलन की रिपोर्ट दे रहे हैं। सं०]

१९ मई की चार बजे शाम को २० वां सर्वोदय-समाज सम्मेलन आचार्य राममूर्तिजी की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम दादा धर्माधिकारी ने इस सम्मेलन के अध्यक्ष तथा उद्घाटनकर्त्री सुश्री सरला बहन का परिचय कराया। दादा ने परिचय में उनके जीवन के उन सारे गुणों का दर्शन कराया जिनकी तरफ हमारा आपका ध्यान आमतौर पर नहीं जाता।

सुश्री सरला बहन का लिखित और छपा उद्घाटन भाषण पहले ही वितरित कर दिया गया था, परन्तु उन्होंने अपना भाषण पढ़ा नहीं बल्कि उन्हीं मुद्दों पर जबानी भाषण किया। (उनका भाषण पिछले अंक में दिया गया था, इस अंक में पूरा हो रहा है।) इसके बाद सम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य राममूर्ति ने अपना अध्यक्षीय भाषण किया। उन्होंने अपने एक घण्टे के भाषण में सर्वोदय आन्दोलन के नये आयाम की खोज में लोकशक्ति के पक्ष उद्घाटित करने की कोशिश की। उन्होंने कहा कि इस सम्मेलन में एक ही विषय पर हम चर्चा करेंगे और वह विषय होगा—सत्य और अहिंसा। इस विषय में वे सारी बातें आ जायेंगी जिनका हम जप और तप कर रहे हैं।

श्री नरेन्द्र दुबे ने चर्चा के लिए विषय-प्रवेश कराया और तदुपरान्त चर्चा का प्रारम्भ हुआ।

श्री बाबूराव चन्दावार ने शोषण और दमन के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन शुरू करने की सलाह दी। उनका मानना है कि दमन और शोषण के उन्मूलन में थोड़ी बहुत हिंसा हो जाय तो उसे हम हिंसा न मानें, उसका हमारे मन में भय न हो।

डा० आरम् ने नागालैण्ड में अब तक हुए कार्यों की चर्चा की और बताया कि वहाँ अहिंसा की दिशा में सन्तोषजनक प्रगति हुई है। वहाँ के लोग यह महसूस करने लगे हैं कि हिंसा से समस्या का समाधान नहीं होगा। ग्रामस्वराज्य की चर्चा करते हुए आपने कहा कि नागालैण्ड के गाँव पहले से ही आत्मनिर्भर हैं, वहाँ ग्रामस्वराज्य की भूमिका मौजूद है और इस छोटे-से राज्य में अहिंसक आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक पुनर्रचना की सम्भावना है।

श्री जगतराम साहनी ने सहरसा के अपने अनुभव के आधार पर कुछ मुद्दे उठाये। (इनका अनुभव १५ मई के भूदान-यज्ञ में छपा है।)

खादी ग्रामोद्योग कमीशन के अध्यक्ष श्री जी. रामचन्द्रन् पिछले अनेक सर्वोदय सम्मेलनों में दिखाई नहीं पड़े परन्तु इस सम्मेलन में आपने भाग लिया। आपने अपने भाषण में गांधी परिवार को एक होने और भाईचारा कायम करने की आकांक्षा व्यक्त की।

श्री प्रेमभाई ने ग्रामदान के बाद विकास-कार्य की चर्चा की और आपने कहा कि ग्रामदान की पुष्टि के बाद काम बन्द न हो, बल्कि विकास को आगे बढ़ाना चाहिए। आपने साक्षरता और प्रौढ़-शिक्षण पर भी जोर दिया। श्री प्रेम भाई गोविन्दपुर (मिर्जापुर, उ० प्र०) में कार्य कर रहे हैं।

श्री जगन्नाथनजी ने कहा कि हमें एक हजार ब्लाकों के एक हजार गाँवों में काम करना चाहिए और एक ऐसी परिस्थिति खड़ी करनी चाहिए जिनमें विकास-कार्य, खादी-कार्य हो और जात-पात के भेद-भाव का उन्मूलन हो।

श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने बताया कि आज के जमाने में सत्याग्रह का स्वरूप भिन्न होगा। जब पुराने मूल्य बदलेंगे और नये सामाजिक मूल्यों की स्थापना होगी तो समाज-परिवर्तन होगा। अतः उन्होंने जोर दिया कि मनुष्य की मान्यता को पहले बदलने का काम किया जाय।

श्री वसन्तराव नारगोलकर ने भी अपना मत प्रकट किया। वह एक ही बात पर जोर देते रहे कि सर्वोदय के लोगों ने सत्याग्रह का रास्ता छोड़ दिया, गांधी का मार्ग छोड़ दिया, उन्हें उधर पुनः लौटना चाहिए। श्री नारगोलकर की एक विशिष्ट दृष्टि है और वे उस दृष्टि से अलग हटकर कभी सोचने का प्रयत्न नहीं करते तथा उनकी बात अन्य लोगों के गले उतरती भी नहीं और नतीजा यह होता है कि वह अपनी बात कहते रहते हैं, लोग सुन भी लेते हैं। इसके आगे कोई चर्चा होती नहीं।

श्री लवणम् पिछले चुनाव में पक्ष-मुक्त जनतंत्र के लिए स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़े थे। उन्होंने अपना अनुभव बताया। उन्होंने कहा कि आज राजनीति में जो राजनीतिक जातिवाद को बढ़ावा मिला है उसे समाप्त किया जाय।

श्री चारुचन्द्र चौधरी बांगला देश से आये थे। उन्होंने भी अपना विचार सम्मेलन में रखा। इनके अलावा अनेक लोगों ने भी चर्चा में भाग लिया। जयपुर घेराबन्दी सत्याग्रह की भी चर्चा हुई।

नकोदर की स्थानीय जनता में यह बात फैली थी कि इस सर्वोदय सम्मेलन में कुछ डाकू आनेवाले हैं। श्री तहसीलदार सिंह और पण्डित लोकमन १९ मई को सम्मेलन में आये। जनता इन्हें देखने के लिए बहुत उत्सुक थी। बच्चे, औरतें पुरुष, सभी आते थे और उनकी आखें उनको ही ढूँढती थीं और जानकार लोग दूर से इशारा करके पहचान कराते थे। कोशिश होती थी कि वे मंच पर ऐसी जगह बैठें जहाँ से लोग उन्हें देख सकें। इनका स्वागत सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष और पंजाब विधानसभा के अध्यक्ष सरदार दरबारा सिंह ने किया।

श्री महावीरसिंह और श्री हेमदेव शर्मा ने चम्बल घाटी में बागियों के आत्म-समर्पण की चर्चा की और अपने अनुभव सुनाये। —४

ग्रामस्वराज्य का दूसरा अभियान

सहरसा में १४ मई को फिर से अभियान शुरू हो और ३० जून तक ४ प्रखण्डों में काम पूरा किया जाय, ऐसा पवनार में बाबा के साथ चर्चा होने के बाद तय हुआ था। उसके अनुसार सुश्री निर्मला बहन तथा सर्वश्री विद्यासागरजी, बाबूलाल मीतल, ब्रजमोहन शर्मा, डा० द्वारकादास जोशी, राजा बाबू आदि लोग १४ मई से पहले ही यहाँ पहुँच गये।

सोचा गया कि जिन प्रखण्डों में स्थानीय लोगों का विशेष उत्साह है उन्हीं प्रखण्डों में काम किया जाय। पिछले अभियान में जहाँ विशेष काम हुआ था उन प्रखण्डों से सम्पर्क किया गया। सलखुआ तथा महिषी में प्रखण्ड स्तर पर बैठकें हुईं, जिनमें प्रखण्ड की पंचायतों से प्रमुख व्यक्ति आये थे, सबने अभियान के लिए अपना समय देना तथा अभियान के खर्च के लिए हर पंचायत से अनाज इकट्ठा करना स्वीकार किया। छातापुर से भी सम्पर्क किया गया। वहाँ के शिक्षा पदाधिकारी ने अभियान के दिनों में शिक्षकों का सहकार मिल सके इस दृष्टि से छुट्टियाँ बरसात के दिनों में देना मंजूर किया। मुरलीगंज के शिक्षा पदाधिकारी ने भी यही निर्णय किया। मुरलीगंज में प्रखण्ड के काम की दृष्टि से सोचने के लिए एक सभा हुई जिसमें शिक्षकों ने विशेष दिलचस्पी ली। सहरसा शहर में बम्बई की मंगला बहन, महाराष्ट्र की लक्ष्मी बहन, उ० प्र० की सरोज बहन तथा आसाम के श्री चुनी भाई ने सम्पर्क का काम जारी रखा था।

सहरसा खादी भण्डार में ता० २१ मई को आदरणीय श्री राजा बाबू की अध्यक्षता में जिलास्तरीय बैठक हुई। चारों प्रखण्डों के प्रमुख स्थानीय व्यक्ति व कार्यकर्ता उपस्थित थे। इन्हीं चार प्रखण्डों को अभियान की दृष्टि से चुना गया। चारों प्रखण्डों में प्रखण्ड कार्यालय कायम हो चुके हैं। रात को प्रार्थना-सभा में अलग-अलग प्रखण्डों के लिए कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की गयी। उसके अनुसार ता० २२ मई की सुबह सभी लोग अपने-अपने क्षेत्र में रवाना हो गये।

गुजरात के डा० जोशी, अरुण भट्ट, *मीरा बहन छातापुर गये हैं।* सर्वश्री अंबालाल शाह, लीलाधर दावड़ा, रावजी चौहान भी सम्मेलन से सहरसा पहुँचे और छातापुर के लिए रवाना हो गये। महाराष्ट्र की दोपदिबहन व उ० प्र० की सरोजबहन वहीं जा रही हैं। जिले के कार्यकर्ताओं में से सर्वश्री टेक नारायणजी, बालेश्वर पोद्दार, गजानन सिंह तथा तपेश्वरजी छातापुर में हैं। श्री धीरेन्द्र भाई की पदयात्रा ता० २९ मई से उसी प्रखण्ड में शुरू होगी व जून के अन्त तक चलेगी। दरभंगा के श्री बालेश्वरजी, मुजफ्फरपुर के मधुसूदन भाई तथा उ० प्र० के श्री नारायण भाई तथा उनकी पत्नी बिन्दा बहन दादा के साथ हैं।

महाराष्ट्र के श्री अण्णा जाधव, श्री कालूराम गरुड व उ० प्र० के श्री प्रभुनाथ यादव पिछले अभियान के समय से मुरलीगंज में लगे हैं। अब श्री विद्यासागरजी मुजफ्फरपुर के श्री हरिश्चन्द्र मिश्र तथा दरभंगा के श्री दुर्गानन्दजी वहाँ पहुँचे हैं। सम्मेलन से लौटकर गुजरात की सुश्री कान्ता बहन, हर विलास बहन तथा सर्वश्री कान्ति शाह, जगदीश लखिया, नानु भाई मजूमदार, प्रताप सिंह *परमार भी मुरलीगंज के लिए रवाना* हो गये। सर्वश्री नारायण प्रसाद यादव, लक्ष्मीनारायण शर्मा व रामायणी भाई स्थानीय मित्र वहाँ काम में लगे हैं।

केरल के स्वामी सत्यानन्दजी, निर्मला बहन तथा महाराष्ट्र की लक्ष्मी बहन सलखुआ गये हैं। मुंगेर के श्री ब्रजमोहन शर्मा, रामनारायण सिंह तथा हेमनाथ सिंह, दरभंगा के श्री कृष्ण श्रमिक व सहरसा के श्री महेन्द्र भाई, श्री लक्ष्मीनारायण, श्री रामकरणजी, श्री रामदेव यादव, श्री कृष्णदेव, श्री सुरेश भाई उसी प्रखण्ड में पहुँच गये हैं।

महिषी में उत्तर प्रदेश के सर्वश्री अलखनारायण भाई हैं। श्री रामस्वरूप

(शेष पृष्ठ ५७५ पर)

→पण्डित लोकमन से लोगों ने आग्रह किया कि वह भी कुछ कहें। उन्हें बोलने में संकोच होता था। इसलिए कुछ प्रश्नों के उत्तर देने को वह राजी हुए। मंच पर जब वह खड़े हुए तो प्रश्नों की झड़ी लग गयी। उनसे बागी जीवन के अनेक प्रश्न पूछे गये और उन्होंने एक-एक प्रश्न का उत्तर *बड़ी खूबी, संजीदगी और बिना लाग-लपेट के साथ दिया।* उनके जवाब से लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये। १५-२० मिनट का यह अच्छा कार्यक्रम रहा। ये लोग जिधर भी जाते लोग इन्हें घेरे रहते और उनसे बातें करते।

गोविन्दरावजी ने सम्मेलन की ओर से सम्मेलन की व्यवस्था करनेवालों के प्रति आभार प्रकट किया। सम्मेलन में ठहरने, पानी, सफाई, भोजन की काफी अच्छी व्यवस्था थी। गर्मी बहुत ज्यादा थी। अतः टेंटों में ठहरनेवाले लोगों को दोपहर में गर्मी के कारण बहुत परेशानी होती थी। सभा मण्डप भी धूप से जलता रहता था। तेज हवा के साथ धूल भी उड़ती रहती थी।

अगले सर्वोदय सम्मेलन के लिए हरियाणा की तरफ से श्री सोमभाई ने निमंत्रण दिया।

दादा समारोप भाषण करनेवाले थे। काफी देर हो चुकी थी। दादा ने ५ मिनट का समारोप भाषण किया। अध्यक्ष ने सम्मेलन समाप्ति की सूचना दी और सम्मेलन समाप्त हुआ। सम्मेलन में लगभग ४ हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ●

—ह० कु०

सर्वोदय साहित्य पर विशेष रियायत : कुछ निश्चय

सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर नकोदर (जालधर)में दिनाक १७-५ ७२ को केन्द्रीय सर्वोदय-साहित्य समन्वय समिति की बैठक हुई थी। उसमें खादी भण्डारों पर खादी खरीदी के अनुपात में या विभिन्न रूप में सर्वोदय-साहित्य पर रियायत के सम्बन्ध मे निम्न प्रस्ताव पारित हुए है

प्रस्ताव १८—विभिन्न प्रदेशों में साहित्य पर रियायत

श्री राधाकृष्णजी ने विभिन्न राज्यो की खादी सस्थाओं की एवं साहित्य योजना की स्थिति का विवेचन करते हुए बताया कि समन्वय समिति की बम्बई की बैठक में प्रस्ताव नं० ९, १०, ११ के अनुसार रियायती साहित्य के सम्बन्ध में विभिन्न प्रदेश की समन्वय समितियों ने निम्नलिखित निर्णय लिये हैं।

(अ) ग्राहक जितनी कीमत की खादी खरीदें उतने तक का साहित्य ५०प्रतिशत रियायत पर दिया जाय (१-महाराष्ट्र, २-मध्य प्रदेश)

(आ) ग्राहक यदि खादी का खरीददार है तो बिना किसी अनुपात के वह मांगे उतना साहित्य ५० प्रतिशत रियायत पर दिया जाय। (१-पंजाब, २-हरियाणा)

(इ) खादी भण्डार में से हर एक को मान्य सर्वोदय साहित्य २५ प्रतिशत रियायत पर दिया जाए।

खादी-खरीद की शर्त न रहे। (१-तमिलनाडु, २-आन्ध्र, ३-कर्नाटक, ४-केरल, ५-राजस्थान)।

प्रस्ताव १९-खादी-खरीद पर शत-प्रतिशत साहित्य-रियायत से

यह प्रश्न उठाया गया कि जिन प्रदेशो में समन्वय समितियाँ नही बनी हैं या जिन समितियो ने अन्य कोई निर्णय नही लिया है उनके बारे में क्या नीति रहे ? तय हुआ कि खादी-खरीद पर १० प्रतिशत तक मान्य साहित्य ५० प्रतिशत रियायत से देने की आज तक जो सामान्य नीति रही है उसकी जगह खादी-खरीद पर अब १०० प्रतिशत तक मान्य साहित्य ५० प्रतिशत रियायत से देने की नीति रहे। यानी १०.००की खादी-खरीदने वाले को १०.०० तक का साहित्य आधे मूल्य पर दिया जा सकेगा। बम्बई प्रस्ताव नं० ९, १०, ११ के अनुसार प्रदेश समन्वय समितियो का इसमें बदल करने का अधिकार बना रहेगा।

जिन प्रदेशो ने भिन्न निर्णय लिया है उन्हे छोडकर निम्न प्रदेशो के लिए यह प्रस्ताव लागू रहता है। १—महाराष्ट्र, २—मध्य प्रदेश, ३—उत्तर प्रदेश, ४—बिहार, ५—गुजरात, ६—जम्मू-कश्मीर, ७—हिमाचल प्रदेश, ८—दिल्ली, ९—आसाम, १०—बगाल, ११—उड़ीसा।

उक्त प्रस्तावों के अनुसार

१—दक्षिण के चार राज्यो तथा राजस्थान में बिना खादी की शर्त के हर एक को मान्य सर्वोदय-साहित्य २५ प्रतिशत रिबेट से मिलेगा।

२—अन्य सभी प्रदेशो में खादी खरीदनेवालो को ही सर्वोदय साहित्य पर ५० प्रतिशत रिबेट मिल सकेगा। अब तक १० रु० की खादी खरीदने पर १ रु० मूल्य का साहित्य आधे मूल्य पर देने का नियम था। अब खादी के मूल्य के बराबर यानी १० रु० की खादी लेनेवालों को रु० १०.०० का साहित्य आधे मूल्य पर मिलेगा। पंजाब तथा हरियाणा में खादी से अधिक मूल्य का साहित्य भी ५० प्रतिशत रिबेट पर मिलेगा।

सर्वोदय साहित्य के पाठकों को इस सुविधा का लाभ उठाना चाहिए।

समस्त खादी सस्थाओं से अनुरोध है कि वे अपने भण्डारो पर मान्य सर्वोदय साहित्य-बिक्री के लिए रखें और नियमानुसार रिबेट दें।

—राधाकृष्ण बजाज

उत्तर प्रदेश कार्यकर्ता-शिविर

नकोदर सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर १९ व २० मई को उ० प्र० सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्द की उपस्थिति में प्रदेश के कार्यकर्ताओं की बैठकें प्रदेश में चल रहे सर्वोदय आन्दोलन पर चर्चा करने के लिए आयोजित की गयी थीं। उन बैठकों में वहाँ पर उपस्थित प्रदेश के सभी साथियों ने तीव्रता से यह महसूस किया कि एकसूत्रता के अभाव में प्रदेश का आन्दोलन अपेक्षित गति नहीं पकड़ पा रहा है। यद्यपि काम करनेवाले सक्षम और निष्ठावान साथियों की प्रदेश में कमी नहीं है। जगह-जगह काफी महत्वपूर्ण काम हो रहे हैं, लेकिन उनमें आपस की एकसूत्रता न होने के कारण पूरे काम की संगठित तेजस्विता नहीं प्रकट हो पा रही है। यह स्थिति प्रदेश और देश के आन्दोलन की दृष्टि से काफी चिन्ताजनक है।

इस स्थिति को बदलने और प्रदेशीय आन्दोलन को अधिक तेजस्वी बनाने की दृष्टि से वहाँ सबने चर्चा करके यह तय किया कि प्रदेश भर के सक्रिय साथियों का चिन्तन-चर्चा-सहजमैत्रीयुक्त आठ दिवसीय शिविर का आयोजन किया जाय।

उक्त सन्दर्भ में आगामी २१ जून से ३० जून तक बुलन्दशहर जिले के कलक्ती नरौरा में शिविर आयोजित किया जा रहा है। मोटे तौर पर शिविर के दो उद्देश्य माने गये हैं—१—प्रदेश के सक्रिय कार्यकर्ता साथी आपस में जुड़ें, जो निष्क्रिय हो गये हैं वे सक्रिय हों। २—क्या करें, जिससे आन्दोलन गति से चल रहा है यह महसूस हो।

दिनांक २१-२४ को कलक्ती नरौरा में आपसी चर्चा होगी, २५-२६ तक एक साथ या टोलियों में घूमना होगा और फिर २९-३० को बुलन्दशहर में शिविर होगा। शिविर में निवास, भोजनादि की व्यवस्था स्थानीय होगी और आने-जाने→

सर्व सेवा संघ के मंत्री का पत्र

प्रिय बन्धु,

नकोदर सर्व सेवा संघ अधिवेशन समाप्त हुआ। उसमें से पंचविध कार्यक्रम निकला। इसकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करने के लिए यह पत्र आपकी सेवा में भेज रहा हूँ।

१—भारत भर में १००० प्रखण्डों में १००० सम्पर्क-केन्द्र बनाने हैं। इनमें दो पूरा समय देनेवाले कार्यकर्ता रहेंगे। ये दोनों प्रखण्ड भर में ग्रामस्वराज्य-सभा का प्रचार करेंगे एवं केन्द्र भी सम्हालेंगे। सर्वोदय-पात्र, शान्तिसेना, सूत्रांजलि, लोकसेवक आदि को भी प्रखण्ड में ये बढ़ावा देंगे। इससे अनेक सहयोगी मिलेंगे। इन कार्यक्रमों के द्वारा काम के लिए लगनेवाला अर्थ-संग्रह भी होगा। रचनात्मक कार्यकर्ताओं एवं अन्य लोगों के सहयोग से सारे कार्य करने हैं।

२—इन प्रखण्डों के अलावा अन्यत्र देश भर में व्यापक काम जारी रखना है।

३—ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि की समन्वित पदयात्राएँ निकालनी हैं। इन पदयात्राओं को निकालते समय जनता का इन्वाल्वमेण्ट हो इसलिए लोक-पदयात्राओं को अपनाना चाहिए। इस विषय में संघ अधिवेशन में प्रस्ताव भी हुआ है। इसे ध्यान में रखकर हमारी कार्य-पद्धति बदलनी होगी। जहाँ ऐसी प्राप्ति-पुष्टि पदयात्राएँ सम्भव न हो वहाँ संकलित ग्रामदानों को प्राप्त करने का काम भी जारी रहना चाहिए। यह भी लोक-पदयात्राओं के द्वारा अधिकाधिक किया जाय।

४—देशभर में बीस-पच्चीस सघन क्षेत्रों का निर्माण किया जाय, जहाँ ग्रामदान-प्राप्ति-पुष्टि के बाद का ग्रामस्वराज्य का काम चले। इस काम को करते-करते आवश्यकता पड़े तो अन्याय एवं शोषण के विरुद्ध असहयोग एवं सत्याग्रह के भी प्रयोग भी किये जायें। नकोदर अधिवेशन के प्रस्ताव में इसका उल्लेख है।

५—सहरसा, मुसहरी, एवं तंजौर को संघ ने अपना अग्रिम मोर्चा माना है। वहाँ आवश्यकतानुसार कार्यकर्ताओं की शक्ति लगायी जाय।

एक सामयिक काम यानी राजस्थान के लिए सत्याग्रहियों को तैयार रखा जाय। इस बारे में आपको परिपत्र भेजा जा रहा है।

इन विषयों में आप क्या करने जा रहे हैं इसकी सूचना गोपुरी कार्यालय को भेजने का कष्ट उठावें।

—ठाकुरदास बंग

→ का मार्ग-व्यय जिला या नगर सर्वोदय मण्डलों को करना होगा।

शिविर-स्थल पहुँचने के लिए अलीगढ़, इलाहाबाद, बदायूं से राजघाट रेलवे स्टेशन के लिए बसें मिलेंगी—राजघाट स्टेशन अलीगढ़-बरेली मार्ग पर स्थित है। राजघाट से शिविर-स्थल कनकसी नगोरा के लिए तांगे मिलते हैं।

—कृष्णचन्द्र सहाय

कार्यकर्ताओं से निवेदन

राज्य सरकार के वचनभंग और श्री गोकुल भाई के अनशन से सार्वजनिक क्षेत्रों में, खासकर सर्वोदय कार्यकर्ताओं में क्षोभ पैदा होना स्वाभाविक था। ता० १६ से २१ मई तक नकोदर (पंजाब) में सर्व सेवा संघ के अधिवेशन तथा सर्वोदय सम्मेलन के निमित्त एकत्रित विभिन्न प्रदेशों के कई भाई-बहनों ने राजस्थान के सत्याग्रह में शामिल होने के लिए अपने नाम लिखाये थे। इस बीच प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा मध्यस्थता के आश्वासन पर श्री गोकुलभाई भट्ट ने अपना अनशन तोड़ दिया है और शीघ्र ही वे इस प्रश्न के हल के लिए प्रधानमंत्री से मिलनेवाले हैं।

अतः फिलहाल राजस्थान में सत्याग्रह किये जाने की आवश्यकता नहीं होगी। जिन भाई-बहनों ने अपना नाम सत्याग्रह के लिए दिया था, उनके प्रति सर्वसेवा संघ कृतज्ञता प्रगट करता है। विश्वास है कि भविष्य में भी आवश्यकता पड़ने पर इसी प्रकार सर्वोदय कार्यकर्ता भाई-बहन अन्याय के प्रतिकार के लिए तत्पर रहेंगे।

३०-५-१९७२ —सिद्धराज ढड्ढा,
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

(पृष्ठ ५५० का शेष)

सम्मेलन को विश्वास है कि यदि उपर्युक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखकर भारतीय स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती के वर्ष में राष्ट्रीय शिक्षा को राष्ट्र की आवश्यकता के अनुरूप ढालने का निश्चय किया जायगा तो उन अनेकानेक जटिल समस्याओं के हल खोजे जा सकेंगे, जो आज इस देश के शिक्षा-जगत के सामने गम्भीर चुनौती के रूप में खड़ी हैं।

सम्मेलन देश की सभी सरकारों से और समस्त नागरिकों से अनुरोध करता है कि वे शिक्षा के क्षेत्र में आमूल-क्रान्ति का हृदय से स्वागत करें और उसके लिए सब प्रकार की आवश्यक तैयारी में लगें। ●

(पृष्ठ ५७३ का शेष)

चौबे, श्री खलील भाई बम्बई के एली भाई तथा गुजरात के हृदय भाई शुरू से काम में लगे हैं। सर्वश्री रघुनाथ झा, श्री दयाकान्त झा, श्री भोला प्रसाद सिंह आदि स्थानीय मित्र भी वहाँ काम में लगे हैं।

सहरसा एस० गफ्फार
२८।५।७२

क्षमायाचना

पाठकों से हम क्षमा चाहते हैं कि यह अंक आपको काफी विलम्ब से प्राप्त हो रहा है। हमारी तमाम कोशिशों के बावजूद भी प्रेस की कठिनाई के कारण हम यह अंक समय से नहीं निकाल सके। ५ और १२ जून का संयुक्तांक बिना पूर्व सूचना के इसीलिए निकालने का निश्चय किया गया ताकि अंक समय से निकल सके परन्तु इसमें सफलता नहीं मिली। अगले दो अंक भी कुछ विलम्ब से प्रकाशित होने की सम्भावना है। आशा है पाठक हमारी मजबूरी को समझकर क्षमा करेंगे। सं०

भूदान-यज्ञ ५.१२-६-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

प्रधानमंत्री के आश्वासन और अनुरोध पर श्री गोकुलभाई ने उपवास तोड़ा

स्व० राष्ट्रनायक श्री जवाहरलाल नेहरू की पुण्यतिथि के अवसर पर २७ मई '७२ को जयपुर में प्रातः ९ बजे रामनिवास बाग स्थित अलबर्ट हाल में गांधीजी के चित्र के सामने सर्वोदय नेता श्री गोकुलभाई भट्ट ने अपना उपवास तोड़ा। प्रार्थना और रामधुन के वातावरण में ७५ वर्षीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी को राज्य के मुख्यमंत्री श्री बरकतुल्लाखां सन्तरे का रस दिया।

शराबबन्दी के लिए श्री गोकुलभाई के अनशन का आज बारहवाँ दिन था। ज्ञातव्य है कि प्रधानमंत्री के आश्वासन और अनुरोध पर ही उन्होंने उपवास त्यागने का निश्चय किया।

इस अवसर पर मुख्यमंत्री श्री बरकतुल्लाखां ने कहा कि प्रधानमंत्री ने इस सम्बन्ध में पहल की, यह सन्तोष का विषय है। आपने कहा कि राजस्थान सरकार पूरी ताकत से प्रदेश में शराबबन्दी लागू करेगी। वित्तमंत्री श्री चन्दनमल बैद ने विश्वास दिलाया कि मन्दिर, धर्मशाला, विद्यालय आदि से २०० मीटर के भीतर स्थित शराब की दूकानों को हटाने के नियम का कड़ाई से पालन किया जायेगा।

डा० सुशीला नायर ने कहा कि श्री गोकुलभाई के उपवास ने देश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं को नवस्फूर्ति प्रदान की है। आपने आन्दोलन की सफलता के लिए राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक सभी संगठनों का सहयोग एक जुट होकर करने की आवश्यकता पर बल दिया। श्री सिद्धराज ढड्ढा ने बताया कि देश के गांधीजनों की वेदना श्री गोकुलभाई के उपवास के रूप में प्रकट हुई। उन्होंने कहा कि गोकुलभाई का उपवास ही समाप्त हुआ है, लेकिन प्रदेश को शराब-मुक्त कराने का हमारा काम अभी समाप्त नहीं हुआ है। श्री करणभाई ने आशा व्यक्त की कि राजस्थान का यह कदम देश का मार्गदर्शन करेगा।

अन्त में श्री गोकुलभाई ने सब लोगों के प्रति आभार प्रकट करते हुए कहा कि अहिंसक सत्याग्रही को सबपर विश्वास रख कर चलना पड़ता है। उन्होंने बताया कि केवल अनशन ही छूटा है, उनका जन जागृति का काम नहीं छूट सकता।

खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय का सत्र

इन्दौर, ८ मई। सर्वोदय शिक्षण समिति द्वारा खादी-आयोग की सहायता से संचालित खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, मावला (इन्दौर) में नवीन खादी-कार्यकर्ता (सत्रावधि ६ माह) और खादी-ग्रामोद्योग संगठक एवं ग्रामसहायक पाठ्यक्रम (सत्रावधि ११ माह) के नवीन-सत्र क्रमशः आगामी १ अगस्त व १५ अगस्त, १९७२ से प्रारम्भ होंगे। इन पाठ्यक्रमों का उद्देश्य खादी ग्रामोद्योग-संस्थाओं, पंचायतों तथा अन्य समाजसेवी कार्यकर्ताओं को कताई-बुनाई के नये साधनों में प्रशिक्षित करना है। सत्र-काल में प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को ६० रु० मासिक की छात्रवृत्ति एवं प्रवास-व्यय दिया जायगा। शैक्षणिक योग्यता हायर सेकेण्डरी अथवा उसके समकक्ष हो। अधिक जानकारी के लिए इच्छुक व्यक्ति--प्राचार्य, खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, पोस्ट-मावला (कस्तूरबाग्राम) जिला इन्दौर, म० प्र० के पते पर सम्पर्क कर सकते हैं।--प्रदेश

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१
सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर।
इस अंक का मूल्य ४० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित।

वर्ष : १८, अंक : ३८ १९ जून, '१९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

संघ के अध्यक्ष की ओर से

साथियों से

पिछले महीने नकोदर (पंजाब) में जो सर्व सेवा संघ का अधिवेशन हुआ था उसमें संघ के अध्यक्ष की जिम्मेदारी उठाने के लिए मुझे कहा गया। आन्दोलन में लगे हुए मित्र और साथी, या पू० विनोबाजी तथा जयप्रकाशजी जैसे नेताओं ने जब कभी मुझे किसी काम के लिए कहा, मैंने उसे अपना कर्तव्य तथा आन्दोलन में अपना योगदान देने के एक अवसर के रूप में स्वीकार किया है। इस नयी जिम्मेदारी को भी मैंने बहुत नम्रतापूर्वक उसी भावना से अंगीकार किया है।

देश के विभिन्न हिस्सों में हजारों कार्यकर्ता भाई-बहन हैं जो सर्वोदय में निष्ठा रखते हैं और, चाहे पूरा समय, चाहे अन्य कामों के साथ, वे सर्वोदय की सिद्धि के लिए काम करते रहते हैं। हम लोग सब एक विशाल आन्दोलन के अंग हैं, एक ऐसी नयी तलाश के, जो शान्तिमय तरीके से सामाजिक परिवर्तन लाना चाहती है। हम में से हर एक अपने क्षेत्र में, या कार्य-विशेष में लगा हुआ है। लेकिन इस प्रकार के तमाम प्रयत्न भले ही वे अपने-अपने दायरे में कितने भी तत्पर तथा असरकारक हों, अगर वे आपस में जुड़े हुए नहीं हों तो परिस्थिति पर उनका बहुत असर नहीं होता। अलग अलग रहने पर वे पानी की उन बूंदों की तरह हैं जो सूख जाती हैं। मिलने पर यही बूंदें एक प्रवाह का रूप धारण कर लेती हैं जो चारों ओर जीवन तथा पोषण देता चलता है। इसलिए इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि हम लोग अपने विचारों तथा अनुभवों का आदान-प्रदान करते रहें। मैं अपनी ओर से हिन्दी भूदान-यज्ञ तथा अंग्रेजी पीपुल्स एक्शन के जरिये समय समय पर अपने विचार और अनुभव व्यक्त करता रहा हूँ और नये सन्दर्भ में अधिक नियमितता से इन पत्रिकाओं के जरिये साथियों तक इन्हें पहुँचाने की कोशिश करूँगा। मुझे विश्वास है कि आन्दोलन में लगे हुए अन्य मित्र और साथी भी या तो सीधे मुझे लिखकर या इन पत्रिकाओं के जरिये, अपना हिस्सा पूरा करते रहेंगे।

यह कहना एक साधारण-सी बात मालूम होती है, लेकिन अक्सर ऐसी साधारण बातें समझने में बहुत मदद देती हैं कि हर आन्दोलन के तीन अंग होते हैं—(१) विचार, (२) उस विचार को अमल में लानेवाले औजार और, (३) कार्यक्रम। औजार या विचार के वाहक भी दो होते हैं—एक कार्यकर्ता और दूसरे उस विचार को आगे बढ़ानेवाला संगठन। सर्वोदय आन्दोलन के सन्दर्भ में ये दोनों एक ओर तो हम लोकसेवक और दूसरी ओर सर्वोदय मण्डल तथा सर्व सेवा संघ हैं। हालांकि आन्दोलन के अन्य दो अंग—विचार और कार्यक्रम के बारे में भी समय-समय पर हमें अवश्य चर्चा करते रहना

'अंग्रेजी शराब'

शहरों में, और देहाती बाजारों में भी, जगह-जगह दूकानों पर अंग्रेजी शराब के साइनबोर्ड देखने को मिलते हैं। उस दिन दिल्ली में एक मित्र ने एक मजेदार बात बतायी। उसने कहा कि एक राज्य सरकार एक ऐसी 'मधुशाला' बनवा रही है जिसकी शक्ल बाहर से देखने में अंग्रेजी शराब की बढ़िया बोतल-की-सी होगी। ठीक भी है, जब सरकार को शराब पिलानी है तो वह झोपड़ी में क्यों पिलाये? जैसी वैभव-प्रिय सरकार है, उसी तरह वैभवपूर्ण उसकी मधुशाला भी होनी चाहिए।

अंग्रेजी राज, अंग्रेजी प्रशासन, अंग्रेजी शिक्षा, अंग्रेजी भाषा, अंग्रेजी न्याय, अंग्रेजी शराब, अंग्रेजी तौर-तरीके, आदि *अंग्रेजी चीजों में से सिर्फ अंग्रेजी राज समाप्त हुआ, लेकिन* दूसरी सब चीजें बढ़ी हुई हैं और बढ़ रही हैं। और, यह वृद्धि जनता के चाहने से नहीं हो रही है, बल्कि नेताओं की मर्जी से हो रही है। उन्हें हर चीज अंग्रेजी पसन्द है—शराब भी। अंग्रेजी शासक गये, लेकिन भारतीय शासकों का दिमाग अंग्रेजी बना हुआ है।

शराबबन्दी संविधान में है, कांग्रेस के लम्बे इतिहास में है, इस देश की परम्परा में है; जनता के मन में है फिर भी शराब-बन्दी होती नहीं। उल्टे सरकार की ओर से पीने को ज्यादा-से-ज्यादा प्रोत्साहन दिया जा रहा है। कई राज्यों में बस के अड्डों पर यात्रियों के लिए शराब की सुविधा दी जा रही है ताकि वे जब चाहें उतरकर पी सकें।

सरकार कहती है कि शराब से उसे काफी बड़ी आमदनी होती है जिसे वह जनता के कल्याण में खर्च करती है। कोई भला-मानुस यह क्यों नहीं सोचता कि शराब पीनेवाले गरीब की आधी कमाई शराब में निकल जाती है, वह और उसके बच्चे खाने-कपड़े से वंचित हो जाते हैं, बुद्धि कुंठित होती है, शारीरिक शक्ति का ह्रास होता है, आपसी मर्यादाएँ टूट जाती हैं। शराब शराबी को साहूकारों के चंगुल में डाल देती है, और समाज में गुंडागीरी का वातावरण फैलाती है। लेकिन ये सारे सामाजिक, नैतिक और आर्थिक दुष्परिणाम सरकार की नजर में महत्त्व नहीं रखते। उसे टैक्स चाहिए, और ठीकेदार को मुनाफा चाहिए, यद्यपि शराब की बिक्री से सरकार को जितना टैक्स मिलता है उससे अधिक टैक्स उसे दूसरे माल की बिक्री से मिलेगा क्योंकि शराब का पैसा बचेगा तो दूसरी चीजों पर खर्च होगा।

क्या यह माना जाय कि गरीब के कल्याण के लिए गरीब का बर्बाद होना जरूरी है? सरकारों ने शायद ऐसा ही मान रखा है। क्या गरीबों ने भी मान रखा है? क्या वे भी नहीं सोचते कि उनकी कमाई बढ़कर भी क्या करेगी जब वे उसका एक बड़ा भाग नशे में गँवा देंगे?

भारत की सरकारें गरीब वोटरों की सरकारें हैं। गरीबों के प्रतिनिधि गरीबों के कितने हितैषी हो सकते हैं, यह देखना हो तो भारत के गरीब अपने प्रतिनिधियों और उनकी शराब-नीति को देखें।

शराब का प्रश्न केवल नैतिकता का प्रश्न नहीं है, नागरिक की नागरिकता का प्रश्न भी है। सरकार को यह अधिकार किस कानून से मिला है कि वह अपने नागरिकों को दरिद्र बना सकती है, तथा लाखों युवकों-युवतियों और श्रमिकों के बौद्धिक, नैतिक, आर्थिक और शारीरिक ह्रास को बढ़ावा दे सकती है?

कोई नहीं कहता कि सरकार शराब नहीं पिलायेगी तो पीनेवाले पीना बन्द कर देंगे। जो पीना चाहते हैं वे पीयेंगे। जिनके लिए पीना जरूरी होगा उन्हें परमिट भी दे दिया जायगा। शराब-बन्दी की माँग सिर्फ इतनी है कि सरकार अपनी ओर से शराब की दूकानें न खोले, ठीके न दे, विज्ञापन न करे, शराब को सम्मान न दे। सरकार की ओर से इतना हो जाय तो बाकी काम सुधारक कर लेंगे। समाजवादी सरकार समाज का इतना ध्यान तो रखे कि अपनी ओर से बर्बादी न फैलाये।

परिभाषा की माँग

पंजाब के कुछ बड़े किसानों ने प्रश्न उठाया है कि समाजवाद की परिभाषा होनी चाहिए। वे कहते हैं कि यह कैसा समाजवाद है जिसमें जोत पर इतनी नीची सीलिंग लगायी जा रही है? कई शहरी लोगों ने भी आवाज उठायी है कि रहने के मकानों पर या ऐसे मकानों पर जिनका किराया ही मकान मालिक की जीविका का सहारा है, सीलिंग नहीं लगनी चाहिए। इस तरह का समाजवाद न्यायपूर्ण नहीं है। इसी तरह अगर कहना चाहें तो मजदूर भी कह सकते हैं कि पूँजीवादी व्यवस्था में वे अपनी मेहनत बेचकर गुजर करते हैं, लेकिन अगर सरकार की 'समाजवादी' योजना में भी उन्हें मजदूरी के लिए अपनी मेहनत ठीकेदार के हाथ बेचनी ही पड़ी तो उनके लिए पूँजीवाद और समाजवाद में क्या अन्तर हुआ, सिवाय इसके कि कोरा पूँजीवाद उन्हें भूखों मरने की छूट देता है, जबकि 'समाजवादी' सरकार कहीं सड़क बनाने या नहर खोदने में उन्हें काम दे देने का आश्वासन दे रही है।

समाजवाद का नारा जब एक बार चल पड़ा तो यह स्वाभाविक है कि उसकी परिभाषा की माँग हो। मालिक यह जानना चाहते कि उनके पास कितनी सम्पत्ति रहेगी, तथा अधिक-से-

शराबबन्दी के लिए आखिरी मौका

• सिद्धराज ढड्ढा

राजस्थान के वयोवृद्ध नेता और जनसेवक श्री गोकुलभाई भट्ट ने २७ मई को ११ दिन का अपना अनशन समाप्त करते समय जो वक्तव्य दिया उसमें जाहिर किया था कि "मेरा अनशन समाप्त हुआ है पर आन्दोलन जारी है। राजस्थान के शराबबन्दी आन्दोलन की एक विशेष पृष्ठभूमि और इतिहास है। अब जिस प्रकार इसके साथ सारे देश की नशाबन्दी का प्रश्न जुड़ गया है, इसे समझ लेना चाहिए।

आजादी के आन्दोलन के समय राष्ट्र के नेताओं ने भारत की जनता को तरह-तरह के आश्वासन और आजादी मिल जाने पर उसके उत्थान और विकास के लिए कुछ विशिष्ट काम सम्पन्न करने के वचन दिये थे। इनमें से कई महत्त्वपूर्ण बातों को भारतीय संविधान में भी दाखिल किया गया, जिनमें सम्पूर्ण नशाबन्दी—केवल शराबबन्दी नहीं—प्रमुख थी। इस प्रकार गम्भीरतापूर्वक किये गये वादों में बहुत-से तो ऐसे थे जिनमें कुछ-न-कुछ कदम आगे बढ़े हैं और जिनके बारे में कुछ प्रयत्न भी हुए हैं, पर नशाबन्दी ही शायद एक ऐसा विषय है जिसमें पिछले २५ वर्षों में प्रगति होने के बजाय संविधान में दिये गये आश्वासन से उल्टी दिशा में बड़े कदम हैं जबकि जनता का वास्तविक बहुमत—केवल दिल्ली, बम्बई जैसे शहरों में रहनेवाले कुल देश के दो-चार प्रतिशत लोगों का नहीं—आज भी शराब और नशे के खिलाफ है और उससे त्रस्त है। इसीलिए शायद शराबबन्दी के प्रश्न को लेकर समय-समय पर राष्ट्र के विभिन्न राज्यों में छोटे बड़े आन्दोलन और सत्याग्रह पिछले वर्षों में होते रहे हैं।

राजस्थान में भी सन् १९६८ में शराबबन्दी के लिए एक व्यापक सत्याग्रह हुआ था। सैकड़ों कार्यकर्ताओं, नागरिकों और माँ-बहनों ने इस आन्दोलन में भाग लिया। आखिरकार राजस्थान सरकार ने समझौता किया और १ अप्रैल १९७२ से प्रदेश में पूर्ण शराबबन्दी करने की घोषणा की। इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए उन्होंने कुछ कदम भी उठाये। आज राजस्थान के २६ जिलों में से करीब साढ़े छः जिलों में शराबबन्दी है।

पर प्रदेश में पूर्ण शराबबन्दी लागू करने की उपरोक्त तिथि से तीन दिन पहले ही अचानक राजस्थान सरकार ने आर्थिक तंगी का कारण बताते हुए अपना वचन निभा सकने की असमर्थता जाहिर की और शराबबन्दी के आगे के कदमों को अनिश्चित काल के लिए स्थगित करने की घोषणा कर दी। जिन जनप्रतिनिधियों या संगठनों के साथ सन् १९६८ में उन्होंने सार्वजनिक रूप से पूर्ण शराबबन्दी का इकरार किया था उनसे भी यह घोषणा करने से पहले किसी प्रकार का विचार-विनिमय करना उन्होंने जरूरी नहीं समझा। जनआन्दोलन और सत्याग्रह के फलस्वरूप दिये गये अपने वचन का पालन न करना और इस प्रकार का फैसला एकतरफा कर लेना जनतंत्र की पद्धति, प्रक्रिया और भावना के प्रतिकूल आचरण है, इसकी गम्भीरता राजस्थान सरकार के ध्यान में नहीं आयी यह दुर्भाग्य की बात है। राजस्थान सरकार द्वारा अपने वचन से मुकरने में केवल शराबबन्दी का सवाल नहीं है, बल्कि सवाल जनतंत्र में जनता के विश्वास का है।

जिम्मेदारी के साथ दिये हुए वचन का पालन न कर सकने के लिए राजस्थान सरकार ने एकमात्र दलील आर्थिक तंगी की दी है। चाहे वह राजस्थान सरकार हो या भारत सरकार शराबबन्दी जैसे

→अधिक उन्हें कितनी कमाई और कितना खर्च करने की छूट रहेगी। इसी तरह मजदूर भी जानना चाहेंगे कि जिन परिस्थितियों में वे आज तक काम करते रहे हैं, उससे नयी परिस्थितियाँ कितनी भिन्न होंगी। उन्हें जीविका के स्थायी साधन भी कभी मिलेंगे या नहीं ? या, समाजवाद का महल बनाने में पसीना बहाने की जिम्मेदारी तो उनकी रहेगी, मगर उस महल में रहने का अवसर उन्हें नहीं मिलेगा।

समाजवाद के नारे के साथ-साथ कई प्रश्नों का उठना अनिवार्य है। उन प्रश्नों में तीन मुख्य हैं—पहला प्रश्न है जीविका के साधनों के स्वामित्व का। किसकी रहेगी जमीन, किसके रहेंगे कल-कारखाने, और किसका होगा थोक व्यापार ? क्या सरकार और आज के मालिक मिली-जुली अर्थनीति के नाम में स्वामित्व को अपने ही हाथों में रखेंगे या स्वामित्व में जनता का भी स्थान होगा ? दूसरा सवाल है व्यवस्था का। क्या समाजवाद में सारा काम सरकार की योजना और उसके आदेश के अनुसार ही होगा या निर्णय का कुछ अधिकार जनता को भी मिलेगा ? तीसरा प्रश्न है मजदूर की हैसियत का। क्या वह उत्पादन का साधन पाकर उत्पादक भी बनेगा, या सदा मेहनत बेचनेवाला मजदूर ही बना रहेगा ? यह सम्भव नहीं है कि समाजवाद का सिर्फ इतना अर्थ मान लिया जाय कि भूमि और मकान पर सीलिंग लग जाय, और समाजवादी व्यवस्था, या समाजवाद के मूल्यों के प्रश्न न उठाये जायँ। वास्तव में स्वामित्व, निर्णय और हैसियत, ये तीन प्रश्न ऐसे हैं जिनकी कसौटी पर समाजवाद कसा जायेगा। समाजवाद का नारा लगानेवालों को बताना होगा कि उनका समाजवाद किन अर्थों में, किन गुणों में प्रचलित सरकारी और गैर-सरकारी पूँजीवाद से भिन्न है। सेठ हो तो पूँजीवाद, शासक हो जाय तो समाजवाद, यह समाजवाद की परिभाषा नहीं हो सकती। पूँजीवाद और समाजवाद का भेद गुण और पद्धति में प्रकट होना चाहिए। •

नैतिक और सर्वजनहित के नाम को न कर सकने के लिए आर्थिक तंगी की दलील बहुत ही भ्रामक और अशोभनीय हैं। यह जनता को गुमराह करने की बात है। स्वर्गीय पण्डित जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में "शराबबन्दी के खिलाफ आर्थिक दलील देना निरी मूर्खता, शियर नोनसेन्स है।" इससे अधिक इस बारे में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है, हालाँकि तथ्यों और आँकड़ों के आधार पर भी अनेक बार यह बताया जा चुका है कि शराबबन्दी से आर्थिक घाटा होने की बात में कोई सार नहीं है।

यह पृष्ठभूमि थी जिसमें राजस्थान के जननेता श्री गोकुलभाई को, जो १९६८ के सत्याग्रह नेता भी थे और राजस्थान सरकार से पूर्ण शराबबन्दी की नीति स्वीकार कराने में जिनका प्रमुख हाथ था, आमरण अनशन का निश्चय करना पड़ा। गोकुलभाई का अनशन शराब बन्द करवाने के लिए नहीं था। शराबबन्दी की नीति तो पिछले सत्याग्रह के फलस्वरूप राज्य-सरकार स्वीकार कर चुकी थी। यह अनशन तो वचन-भंग और विश्वासघात के कारण पैदा हुई अन्तर-वेदना की अभिव्यक्ति के रूप में था, और इसलिए कि राजस्थान सरकार अपनी गलती महसूस करके वापस शराबबन्दी के लिए कदम उठाये।

गोकुलभाई ने ता० ८ अप्रैल को अपने अनशन का निश्चय जाहिर किया और एक माह की मोहलत सरकार को दी। ता० ६-७ मई को प्रदेश सर्वोदय सम्मेलन बुलाया गया और तबतक सरकार ने वापस शराबबन्दी के लिए कदम न उठाया तो ८ मई से उनका आमरण अनशन शुरू होगा ऐसी घोषणा गोकुलभाई ने की।

गोकुलभाई के इस निर्णय से न सिर्फ राजस्थान में बल्कि सारे गांधी परिवार और देश प्रेमियों में खतरा, क्षोभ और कुछ चिन्ता का भी भाव प्रकट होना स्वाभाविक था। अखिल भारतीय नशाबन्दी परिषद की अध्यक्षा डा० सुशीला नैयर तथा परिषद के अन्य मित्रगण व श्री जयप्रकाश नारायण आदि ने राजस्थान सरकार और भारत सरकार से विचार-विनिमय किया। बातचीत के लिए पूरा मौका देने की दृष्टि से श्री जयप्रकाशजी के अनुरोध पर गोकुलभाई ने अपना अनशन एक सप्ताह के लिए स्थगित भी किया, पर आखिरकार कोई नतीजा न निकलता देखकर ता० १६ से उन्होंने आमरण अनशन प्रारम्भ कर दिया।

सयोग से इसी दिन से नकोदर (पंजाब) में सर्व सेवा संघ के अधिवेशन और सर्वोदय सम्मेलन के निमित्त देश भर से गांधी विचार में आस्था रखने वाले हजारों भाई-बहिन एकत्र हुए थे। गोकुलभाई के अनशन और दूसरे ही दिन आत्महत्या के आरोप में राजस्थान सरकार द्वारा उनकी गिरफ्तारी के समाचार से नकोदर अधिवेशन और सम्मेलन में चिन्ता की भावना व्याप्त होना स्वाभाविक था। गोकुलभाई के साथ भावनात्मक तादात्म्य और उनके समर्थन की अभिव्यक्ति के स्वरूप नकोदर में कार्यकर्ता और स्वयंसेवक मिलाकर करीब एक हजार व्यक्तियों ने ता० १७ को उपवास रखा। देश के विभिन्न हिस्सों से आये हुए कई भाई-बहिनों ने राजस्थान के सत्याग्रह में शामिल होने के लिए अपने नाम दिये, क्योंकि राजस्थान सरकार द्वारा दी गयी चुनौती केवल राजस्थान के लिए ही नहीं थी बल्कि जनतंत्र में विश्वास और जनहित की आकांक्षा रखनेवाले देश के हर नागरिक के लिए थी। अन्याय कहीं भी हो, उसके प्रतिकार के लिए भारत के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की एकात्मता का नकोदर में बहुत स्पष्ट दर्शन हुआ।

गोकुलभाई के अनशन से सिर्फ सर्वोदय कार्यकर्ताओं का ही नहीं बल्कि देश में सरकारी, गैर-सरकारी सभी क्षेत्रों में शराबबन्दी के प्रश्न पर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ। यह सवाल फिर से देश में जीवन्त हो उठा—यह गोकुलभाई की तपस्या का सबसे बड़ा योगदान मानना चाहिए। अनशन प्रारम्भ करते ही गोकुलभाई ने उसकी सूचना प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को भी दी थी। उत्तर में प्रधानमंत्री की ओर से जो पत्र आया वह शायद इस देश के शराबबन्दी इतिहास में एक नये अध्याय का आरम्भ साबित हो सकता है। पिछले कुछ अर्से से देश में ऐसा वातावरण बन गया है कि केन्द्रीय सरकार शराबबन्दी के लिए तत्पर नहीं है। पर इन्दिराजी के पत्र से इस बात का संकेत मिलता है, और उसके बाद अभी हाल ही में लोकसभा में भी सरकार की ओर से यह जाहिर किया गया कि संविधान में दाखिल की गयी नशाबन्दी की नीति से पीछे हटने का या उसे बदलने का सरकार का इरादा नहीं है। अपने पत्र में प्रधानमंत्री ने गोकुलभाई से यह अनुरोध भी किया कि वे अनशन छोड़ दें और मिलजुलकर नशाबन्दी के राष्ट्रीय लक्ष्य को पूरा करने में मदद करें। पूरे देश में नशाबन्दी के लक्ष्य को आगे बढ़ाने की प्रधानमंत्री की भावना का स्वागत करते हुए गोकुलभाई ने यह आशा व्यक्त की कि वे राजस्थान के प्रश्न को हाथ में लेकर उसे सुलझा देंगी। प्रधानमंत्री के इस आश्वासन पर कि वे इसकी कोशिश करेंगी, गोकुलभाई ने ता० २७ मई को अपना अनशन छोड़ा।

राजस्थान सरकार द्वारा किये गये वचन भंग के फलस्वरूप श्री गोकुलभाई के अनशन के साथ-साथ राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में शराबबन्दी के लिए सामूहिक उपवास, प्रदर्शन तथा पिकेटिंग आदि शुरू हुए। यह न केवल गोकुलभाई के प्रति श्रद्धा और उनका जीवन खतरे में आने से व्याप्त चिन्ता का द्योतक था, बल्कि राजस्थान को शराब-मुक्त कराने की तीव्र भावना का भी सूचक था। ये कार्यक्रम और जनता की भावना की अभिव्यक्ति अनशन के बाद भी चल रही है। कानून द्वारा पूर्ण शराबबन्दी हो जाने पर भी उसकी सफलता जागृत और संगठित जनमत पर निर्भर है।

(शेष पृष्ठ ५९१ पर)

बुन्देलखण्ड के दस्युओं का भी आत्म-समर्पण

• प्रा० गुरुशरण

१५ मई को छतरपुर में बुन्देलखण्ड के १९ दस्युओ के आत्म-समर्पण के बाद हवा का रुख विंध्य की ओर हो चला है। दस्यु सरदारों के हाजिर न होने के पीछे केवल एक ही कारण है कि वे अपने सभी सगी-साथियो को बटोरने में लगे हैं। उधर शान्ति-मिशन का काम भी देर से शुरू हुआ और मुख्यमंत्री की धमकियों के साथ ७ मई को छतरपुर में विशाल पैमाने के साथ शौर्य-दर्शन हुआ। श्री जयप्रकाशजी से बात करने के बाद उनके मन में विश्वास बना और अपने-अपने दल के कुछ साथियों को १५ मई के दिन हाजिर कराके उन्होंने उस विश्वास की पुष्टि की।

जटाशंकर कहाँ है ?

बिजावर से बारह मील दूर एक गांव है जो बड़ागांव कहलाता है। वहां पानी के दो बड़े-बड़े कुण्ड हैं। एक में गर्म और दूसरे में ठण्डा पानी रहता है। इन कुण्डों में नीचे के जल स्रोतों से मनुष्यों जैसे बाल यदा-कदा निकला करते हैं जिससे इस क्षेत्र के लोगो की आम धारणा बन गयी है कि ये शंकरजी की जटाएं हैं और वह स्थान जटाशंकर कहलाने लगा। वहां क्षेत्र के सबसे बड़े दस्युराज श्री मूरतसिंह ने भगवान शंकर का शिवलिंग स्थापित करा दिया और वह स्थान पूजा-अर्चना का स्थान बन गया। ५ वर्ष पहले श्री मूरतसिंह ने जब इस स्थान पर २ लाख रुपये खर्च कर यज्ञ कराया तो यह स्थान बहुचर्चित हो गया। जय-जयकार सुनकर श्री मूरतसिंह ने भगवान राधाकृष्ण का मन्दिर भी यहाँ स्थापित करा दिया। नये मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा के उपरान्त श्री मूरतसिंह ने जगल से जेल जाना स्वीकार किया। अभी तक आत्म-समर्पण की प्रक्रिया गांधी-विनोबा के चित्र के चरणो में और फिर मंच पर उपस्थित सभी छोटे-बड़े के चरणस्पर्श से चली है यहाँ तक कि इन पंक्तियों के लेखक ने जौरा में देखा कि आई० जी० पुलिस और उनके साथ खड़े अन्य अधिकारी स्पर्श हेतु चरण बढ़ाये खड़े थे और एक-दो को छोड़कर सभी उनके पैर छू रहे थे। आत्म-समर्पण के बाद पुलिस अधिकारियों के चरणों का इतना दिव्य हो जाना महत्त्वपूर्ण माना जाना चाहिए।

श्री मूरतसिंह का आग्रह था कि भगवान जटाशंकर के चरणों में सगुन-साइत से शस्त्र-समर्पण की विधि हो, जो मान्य कर ली गयी। इसमें वैसे कोई बुराई नहीं लगती क्योंकि महान आश्चर्य की बात है कि श्री मूरत सिंह के गिरोह से पुलिस-मुठभेड गत २० वर्षों में एक बार भी नहीं हुई। श्री मूरत सिंह की सूरत देखकर लगा कि कोई प्रौढ़ पुलिस अधिकारी सामने बैठा है। अत्यन्त मितभाषी पर बात को गहराई से समझनेवाला। श्री देवीसिंह डाकू की मृत्यु के बाद उसका गिरोह बिखरकर कई छोटे-बड़े गिरोहों में बंट गया, फिर भी श्री मूरत सिंह को सभी अपना मुखिया मानते हैं। मैंने श्री मूरतसिंह, श्री मोनी, श्री रामसहाय, श्री शंकरसिंह और श्री फई राजा से छतरपुर से २८ किलोमीटर दूर स्थित डाकबंगले पर १० और ११ मई को भेंट की जबकि वे श्री जयप्रकाश नारायण से वार्ता करने के लिए आये थे। बुन्देलखण्ड के डाकूग्रस्त क्षेत्र में सागर, दमोह, पन्ना और टीकमगढ़ के जिले शामिल हैं जिनका क्षेत्रफल १४१७६ वर्गमील है और ३३॥ लाख जनता इस समस्या से ग्रसित है। वैसे इस सम्बन्ध में दो धारणाएं हैं—पुलिस इसे डाकू-समस्या कहती है और जनता पुलिस-समस्या। इस क्षेत्र में चम्बल के समान बेहड़ और डांग नहीं हैं बल्कि घने वृक्षों से आच्छादित जगल हैं। प्रमुख व्यवसाय तेंदू-पत्ती के ठेके और जगल की लकड़ी का निर्यात है। छतरपुर से सागर बस-मार्ग पर जाते समय रास्ते में मीलों तक कोई गांव नहीं मिलता, है भी तो वह अत्यन्त दीन-हीन अवस्था में। पुलिस सूत्रों के अनुसार इस क्षेत्र में ८ प्रमुख गिरोह हैं जिनकी कुल संख्या अभी सौ के लगभग बतायी जाती है। इनमें श्री मूरत सिंह पर सर्वाधिक तीस हजार, श्री पूरनसिंह पर २५ हजार, श्री मोनी और श्री रामसहाय पर सात-सात हजार, श्री फई राजा पर तीन हजार रुपये के पुरस्कार घोषित हैं। कहा जाता है कि इन लोगों ने आम जनता को चम्बल घाटी की अपेक्षा बहुत ही कम लोगों को जान से मारा है इसलिए पुरस्कारों की संख्या भी कम है। इनका काम तो बड़े-बड़े ठेकेदारों से धन वसूल करना और सारे ठेकों पर अपना आधिपत्य कायम रखना है। यहाँ की स्थिति कई अर्थों में चम्बल से भिन्न है और यहाँ की समस्याएँ भी अलग हैं।

मौसेरे भाई

मौली डाकबंगले पर भीड़ का पार नहीं। आदमी ही आदमी। जब भी कोई जीप आती सभी की आंखें उस ओर उठ जातीं। श्री तहसीलदार सिंह, श्री पण्डित लोकमन और श्री लोकेन्द्रभाई जब श्री मोनी, श्री रामसहाय को लेकर आये तो लगा पुलिस के वरिष्ठ अधिकारीगण आ गये। उसी तरह की ड्रेस, स्टार आदि सब कुछ, बस फर्क था तो कारतूसों की पट्टी के पट्टे में, मूँछों की नोक में और गले की तुलसी माला में। ये दोनों मौसेरे भाई हैं। कुर्सियों पर बैठे कुर्सियाँ ही टूट गयीं। भीमकाय स्वस्थ-पुष्ट शरीर, अवस्था ५० के लगभग। कहने लगे "लक्खन (लाखों) पुलिस ढूँढती फिरे पर नहीं पा सकती लेकिन आप सबके प्रेम से चले आये। हम भी जानते हैं कि यह काम अच्छा नहीं है पर दूसरा कोई रास्ता नहीं इसलिए इसमें हैं। हमने तो आजादी मिलने के बाद स्वतंत्र भारत में १९४८ में ही आत्म-समर्पण कर दिया था। उस समय शुरू में तो कुछ नहीं, पर ६ महीने के भीतर पुलिस ने इतना अत्याचार किया कि उनका वर्णन आप

सुन नहीं सकोगे। मुँह में टट्टी (पाखाना) भरी गयी और परिणाम स्वरूप हम जेल तोड़कर हथकड़ी पहने ही भाग निकले और तभी से बागी हैं। चम्बल में बागी कहे जाते हैं और यहाँ की जनता हमें राजा कहती है और हम भी उनके साथ राजा जैसा अच्छा सलूक करते हैं। हमारी बन्दूकों से जो मरे हैं वे पुलिसवाले या फिर जंगल के ठेकेदार।" मैं बड़े ध्यान से उनकी बातें सुन रहा था और जनता द्वारा उनका अभिनन्दन खुली आँखों देख रहा था।

पद्दे राजा

बागी बने ३ साल ही हुए हैं। आगे आकर बोले कि यहीं मलहरा के पास मुझ अकेले को ८०० पुलिसवालों ने घेर लिया था और फिर भी एक सिपाही को मारकर भाग निकले। श्री पद्दे राजा की औरतों-जैसे बड़े बड़े बाल हैं उनका माता-पिता द्वारा रखा नाम तो नाहर सिंह है पर सभी उनको पद्दे राजा के नाम से जानते-मानते हैं। ये भी जबलपुर जेल से भागे थे। इनके एक और साथी गजबली कहलाते हैं, वैसे हैं वे हरप्रसाद। रामफल मिश्र अपनी टामी गन टाँगे मुरारी बाट रहे थे। ये मौनी और रामसहाय के भानजे हैं।

पूजा बब्बा

श्री पूरन सिंह जिन्हें पूजा बब्बा कहा जाता है उनके गैंग के सुरई अपनी राइफल बाने टहल रहे थे। पूछा, 'पण्डा जी आप?' बोले "हम पण्डित नाहीं हम तो यादव हैं, गैंग में तो सब जाति के लोग हैं। बब्बा तो बहुत बीमार हैं। तीरथ करे जाई चाहत हैं। हमें जे सब दसवें को पठानो है" जनता और बागी आमने-सामने मिल-बैठकर बात कर रहे हैं। पुलिस का कोई सिपाही वर्दी में नहीं था, कोई सादे कपड़ों में हो तो हो। कलक्टर व्यवस्था में व्यस्त थे। अनहोनी घटना होने जा रही थी। क्षेत्र के विधायकगण भी यह कलंक धोने में लगे हैं। श्री दशरथ जैन तो शान्तिसेना का कार्य करते घूम रहे हैं। श्री जयप्रकाशजी कहते हैं यह तो अब अपने हो गये। श्रीमती विद्यावती चतुर्वेदी (राज्यसभा सदस्या) भी आ गयी हैं। उनके पति बाबू रामजी भी सहयोग में लगे हैं। श्री चतुर्भुज पाठक और श्री लोकेन्द्र भाई सारे कार्यक्रम के सूत्रधार हैं। गोवर्धन उठाने में सबके हाथ लगे थे। अब श्री जयप्रकाश नारायण के शब्दों में इस नैतिक पुनरुत्थान के काम में सभी का योगदान अपेक्षित है। एक ओर जहाँ सारे देश में नैतिक ह्रास की बात बड़े-छोटे सभी स्तरों पर कही जाती है वहाँ नैतिक उत्थान की पहल डाकुओं की ओर से शुरू हुई है, यह एक अद्भुत बात है।

मूरत सिंह

मौनी जीप लेकर श्री मूरत सिंह को लेने चल पड़े तो लोगों के चेहरे इस चमत्कार से हर्षित हो उठे। वे मूरत सिंह के प्रतिनिधि झल्लू राजा को लिवा लाये जो मृत डाकू दर्शनसिंह के भाई हैं। उन्होंने बताया कि उन्हें मुहूर्त का बड़ा ख्याल है इसलिए कल सबेरे १० बजे पूरे गैंग के साथ आयेंगे। श्री मूरत सिंह अपनी ५०० एकड़ खेती कराते हैं डीजल पम्प, ट्रैक्टर, ट्राली जीप, ट्रक सभी कुछ हैं। मलहरा के पास जैन तीर्थ नैना में डेढ़ लाख की लागत का मकान बनवाया है। राजाओं के यहाँ जैसा उसका फाटक है जिसमें से हाथी निकल सकता है। रहते छतरपुर में हैं पर कार्य-क्षेत्र सागर और दमोह है।

श्री मूरत सिंह एक ट्रक में अपने सभी गैंग के लोगों को लेकर आ गये और श्री जयप्रकाशजी से गले मिले। जयप्रकाशजी कह रहे हैं, "आपका ही इन्तजार था।" उनका उत्तर है 'सेऊ सात हाजिर हैं आप कहो तो अबहि तैयार हैं।" इस समय की वार्ता रामचरित मानस के राम-केवट-संवाद का स्मरण दिला रही थी। "मुनि केवट लपटे अटपटे..."। श्री जयप्रकाशजी ने कहा, "आप लोग विचार कर लें, हमें जल्दी नहीं है। आप वार्ता के लिए आये यह बहुत अच्छी बात है।' श्री मूरतसिंह ने बिजावर से कुछ दूर जटाशंकर नामक स्थान पर शिव-मन्दिर में हथियार-समर्पण करने को कहा तो श्री जयप्रकाश जी ने स्वीकृति दे दी और तय हो गया कि ३१ मई को जटाशंकर पर भगवान शंकर के चरणों में बुन्देलखण्ड की बन्दूकें समर्पित होकर इस क्षेत्र के बागी अपने जीवन की राह बदलेंगे। इन्हें भी चम्बल के बागियों-जैसी ही सुविधाएँ प्रदान की जायेंगी। जब यहाँ कहा गया कि आप वे सुविधाएँ देखना चाहें तो ग्वालियर जाकर देख सकते हैं, तो मूरतसिंह ने कहा "का देखना हम तो आप के वचन मानते हैं।" इतना सुनकर श्री जयप्रकाशजी का गला भर आया और उन्होंने चम्बल में कहे वाक्य यहाँ भी दुहराये—"मैं अपने प्राणों की बाजी लगा दूँगा। आप लोगों को फाँसी नहीं होगी।" उन्होंने और भी कहा, "यदि पहले की तरह आप के साथ कोई गैर-कानूनी बे-इनसाफी हुई तो छतरपुर आकर उपवास करूँगा और भूखे मर जाऊँगा पर जोतजी आप के साथ इनसाफ के खिलाफ कुछ नहीं होगा।"

मौनी, रामसहाय और मूरत सिंह की तरह शंकरसिंह से भी वार्ता बड़े ही प्रेमपूर्ण वातावरण में हुई और विश्वास से विश्वास बढ़ने की बात दोनों ओर से हुई। शंकरसिंह को लाने के लिए संसद-सदस्य श्री रिछारिया के साथ भाई श्री प्रेमनारायण शर्मा गये और ढूँढ़ ही लाये।

पूरनसिंह (पूजा बब्बा) तक भी उनके प्रतिनिधि के माध्यम से समाचार पहुँच चुके हैं और भी छोटे-बड़े बागियों तक धीरे-धीरे शान्ति मिशन के कार्यकर्ता पहुँच रहे हैं। इन तक बिना इनके खास विश्वस्त व्यक्ति के कोई दूसरा सहज ही नहीं पहुँच सकता। हाल ही में ७ मई को छतरपुर में शासन ने जो शौर्य का सिंहनाद किया उसका इन लोगों के मन पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा। उनके शब्द हैं "शान्ति की बात डण्डे से करना ठीक नहीं है।'

यह इस क्षेत्र में सर्वत्र प्रसन्नता की बात समझी जा रही है जो बार-बार दुहरायी जानी चाहिए।●

धूलिया जिले में लोकयात्रा

● लक्ष्मी बहन

गुजरात की ९ महीने की यात्रा समाप्त कर पिछले ९ अप्रैल को हमने महाराष्ट्र के धुलिया जिले के नवापुर में प्रवेश किया। सह्याद्रि पर्वतमालाओं के किनारे का यह रमणीय प्रदेश, आदिवासियों का निवास स्थान था। ऋतुराज वसन्त का आगमन हो गया था, फिर भी वनों में, जंगलों में उसका दर्शन नहीं होता था, मानो उसने पूरी ताकत लगाकर भी एक महुआवृक्ष को ही सजा पाया था—नये पल्लवों से, फूलों से।

सुबह चार-पाँच बजे हमारी यात्रा शुरू होती थी। चारों तरफ की सृष्टि में अन्धेरा छाया रहता था। जंगलों में जगह-जगह आग का प्रकाश दीखता था। लगता था जैसे आदिवासियों के घर का प्रकाश हो लेकिन सुबह होते ही मेरा यह भ्रम मिट जाता था, क्योंकि वहाँ पर उनके घर नहीं थे। वे लोग महुआ के फूलों की रखवाली के लिए इसी तरह आग जलाकर सारी रात वहाँ रहते हैं। महुआ उनका आहार तो है ही साथ ही वे लोग उसमें से शराब भी बना लेते हैं। सुबह होते-होते महुआ चुनकर पुरुष, स्त्रियाँ, बाल-बच्चे सिर पर टोकरी रखे वापस घर चले जाते हैं। इस मौसम में यह उनका नित्य का कार्यक्रम है।

एक दिन एक लड़की को महुआ का फूल चुनते समय साँप ने काटा। बैलगाड़ी में सुलाकर उसे घर तो ले आये, लेकिन इलाज के लिए नजदीक में न तो अस्पताल था, न डाक्टर ही। आखिर घर में ही जड़ी-बूटियों से बाँध कर उस लड़की को भगवान भरोसे रख दिया। पैर में सूजन आ गई थी, खून बह रहा था और लड़की रो रही थी। लेकिन माता-पिता को मालूम था कि दस-बारह मील बैलगाड़ी में ले जाकर इलाज कराना उनके लिए नामुमकिन है।

एक सभा में हमने श्रोताओं से पूछा—"अपने देश का नाम क्या है, जानते हो ?" किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। फिर पूछा—"महात्मा गांधी एक बड़े महान पुरुष हो गये, जानते हो ?" इस बार भी मौन। आखिर में पूछा—"वोट किसको दिया ?" जवाब मिला "गांधी को।" शिक्षण का प्रचार नहीं, बीमारियों के लिए इलाज की व्यवस्था नहीं, खेती का नया विज्ञान नहीं, और पानी की व्यवस्था नहीं, उन्हें गले लगानेवाले, सेवा द्वारा उन्हें बराबर के आसन पर बैठानेवाले नहीं। अभी भी मानवाकृति में अवहेलित जीवन ये लोग बिता रहे हैं। सेवा-क्षेत्र और सेव्य दोनों हैं लेकिन सेवक नहीं। एक छोटे आदिवासी गाँव में खीस्ती लोग मिले। पता चला सुदूर अमेरिका के भाई-बहनों ने उनकी सेवा की और उन्हें गले लगाया। सुना है इस देश में ३८ हजार खीस्ती ब्रह्मचारिणी बहनें सेवा में मग्न हैं। क्या भाई-बहन धर्म, पन्थ, जाति, पक्ष, भाषा, प्रान्त इन सब भेदों से परे होकर मानव मात्र की सेवा के लिए आगे नहीं आ सकते ? कविवर रवीन्द्रनाथ की भाषा में—"सबार पीछे सबार नीचे, सब हारादेर अर्थात् माझे" सबसे आखिर, सबसे नीचे और जिसने सब कुछ खोया है ऐसे उपेक्षित जनों में अपने राम को झाँकने की इच्छा करेंगे ?

गुजरात आदिवासी क्षेत्रों में भी हमारी यात्रा चली थी। वहाँ हमने देखा, शिक्षण के द्वारा नयी चेतना लाना, नव संस्कार देने का काम एक-दो साल से नहीं चालीस-पचास सालों से श्री जुगतराम दवे एकाग्रतापूर्वक कर रहे हैं। ब्रह्मचर्य व्रत से व्रती उन तपस्वी के कारण वहाँ अनेक कार्यकर्ता निकले, जो गाँव-गाँव में आश्रमशालाएँ खोलकर नयी पीढ़ी को बनाने का काम कर रहे हैं, जहाँ सेवा के द्वारा उन उपेक्षित जनता को गले लगाया, वहाँ विदेशी मिशनरी कैसे घुसेंगी ? इसलिए उस क्षेत्र में खीस्ती लोग मिले नहीं, जिन्हें अवहेलित, उपेक्षित होने के कारण धर्म छोड़ना पड़ा हो।

देगाँव। वह था आदिवासी गाँव। सम्पूर्ण गाँव स्वच्छ। कहीं भी कचरा दीखता नहीं था। पूरा गाँव आम के पत्तों से सजाया गया था। गाँव गरीब था, लेकिन लोकहृदय श्रीमान, इसलिए आतिथ्य में कहीं भी कमी नहीं रखी गयी थी।

आदिवासी क्षेत्र समाप्त हुआ। साथ ही साथ, स्वागत करते समय 'ज्ञानोबा तुकाराम, ज्ञानोबा-तुकाराम' का उद्घोष सुनने को मिला। गाँव के मुख्य रास्ते को आम के पत्ते तथा फूलों से सजाते थे, घर-द्वार लीप-पोतकर अल्पना निकाल कर, आरती की थाली लेकर स्वागत के लिए बहनें खड़ी रहती थीं। हमारे ललाट हल्दी-कुंकुम से भर जाते थे और हाथ नारियल से। गाँव-गाँव में अत्यन्त उत्साह दीखता था मानो उस दिन पूरे गाँव में उत्सव हुआ हो। हजार से भी अधिक पुरुष-स्त्रियाँ सभा में एकत्रित होते थे। रोज एक बार स्वागत होता था, लेकिन एक दिन तो दो बार स्वागत-कार्यक्रम चला। लोगों की भक्ति-भावना देखकर हम दंग रह जाते थे। इतनी भक्ति, इतना प्रेम ! फिर भी गरीबी क्यों ? सोचने पर पता चलता है कि रोज जिससे वास्ता पड़ता है उनका गुण-दोष नजर आता है और इसलिए उनसे प्रेम करना कठिन हो जाता है।

गुजरात-यात्रा के बाद हमने महाराष्ट्र में प्रवेश किया। समग्र प्रान्त है गुजरात, इसलिए यहाँ गरीबी झाँककर देखने की जरूरत नहीं पड़ती। लोगों का रहन-सहन पहनना-ओढ़ना, खान-पान, घर बार स्वयं ही गरीबी बता देते

चार-छः नमूने बनाये गये तथा परीक्षण के बाद अल्युमुनियम फ्रेम का पेटीवाला नमूना प्रवास एवं यज्ञअम्बर के लिए निर्धारित किया। इस चरखे का पेटी सहित वजन २·६५० किलो है। चरखा चालू करने में किसी पुर्जे को जोड़ना नही पड़ता। इस चरखे में सभी दांतचक्र एवं धारीवेलन नायलोन पदार्थ के ही लगाये गये है।

प्रयोग—१. अनुभव प्राप्त करने की दृष्टि से प्रवास अथवा यज्ञ-अम्बर के नमूने देश में अलग-अलग व्यक्तियों को दिये गये हैं। चालन-सम्बन्धी क्षेत्रीय अनुभव प्राप्त किये जा रहे हैं।

२. उच्च गुणक के प्रयोग (एकम्बर में) यह अनुभव आ रहा है कि कताई करना सरल है किन्तु कताई के लिए अच्छी अम्बर कच्ची प्राप्त नहीं होती है।

खादी-जगत् में ही नहीं, मिल जगत् में भी उत्पादन की दृष्टि से पूर्व-प्रक्रिया के समय में बचत कर कताई में अधिक समय देने का आयोजन चल रहा है। पूर्व-प्रक्रिया में समय एवं श्रम बचाने का एक ही मार्ग है और वह है कताई के गुणक में वृद्धि करना। इसके लिए मिल-जगत् में ६०० तक का गुणक कताई में लिया जा रहा है।

अम्बर चरखे में तेज गुणक की शक्यता के बाबत प्रयोग शुरू किये गये हैं। कताई में तेज गुणक के उपयोग से यह लाभ होगा कि केवल गुणित-पट्टी से कताई की जा सकेगी एवं उसके द्वारा पूर्व-प्रक्रिया की दृष्टि से व्यक्ति अथवा समूह-स्वावलम्बनता आ सकेगी।

(अ) ५० गुणक चार बेलन : कताई में उच्च गुणक लेने की दृष्टि से प्रथम रूप से एकम्बर चरखे चार बेलन के उपयोग से ५० गुणक लिया गया। इस चरखे पर नया एक अंक की गुणित पट्टी से ५० नया अंक का सूत काता जा सकता है। किन्तु यह देखा गया कि नया एक अंक की गुणित पट्टी बनाने में तथा इतनी पतली पट्टी को सम्हालने में समय व तज्ञता लगती है। फिर भी इस चरखे का अनुभव लिया जा रहा है।

(आ) ११२ गुणक का चरखा : ज्यादा तेज गुणक का लाभ लेकर अधिक मोटी गुणित पट्टी से कताई करने की दृष्टि से एकम्बर चरखे में चार ही बेलन के उपयोग से ११२ गुणक की व्यवस्था की गयी। चरखा चलाने में काफी हल्का है तथा साथ ही आधे अंक नया से कम की गुणित पट्टी से कताई करना अब आसान हुआ है। हिसाब की दृष्टि से गुणित पट्टी बनाने में केवल १० मिनट का समय तुनाई बेलनी पर लगता है तथा उतने समय में तैयार गुणित पट्टी से ५० मिनट तक कताई की जा सकती है। अर्थात् अब पूर्व प्रक्रिया में केवल २० प्रतिशत समय लगता है, जब कि ८० प्रतिशत समय कताई के लिए मिल जाता है। इस साधन के बाबत ज्यादा तफसील से अभ्यास एवं संशोधन का काम चल रहा है।

(इ) स्लिप ड्राफ्ट चरखा—एप्रन पद्धति के लाभ को प्राप्त करने की दृष्टि से कताई के बेलनों में स्लिप-ड्राफ्ट-पद्धति का उपयोग कर चरखे की रचना की गयी है। इस साधन में चार बेलन हैं, दो स्लिपझोन रखे गये हैं। छोटे रेशे एवं लम्बे रेशे रुई की कताई इसमें की जा सकती है। अभी चरखा प्रयोग-अवस्था में है। अलग-अलग रेशे की रुई से विविध अंक का सूत कातकर अनुभव लेने का काम चल रहा है।

(ई) समग्र चरखा — उच्च गुणक के कारण गुणित पट्टी से कताई सम्भव हो सकी है, उसका अनुभव भी उत्साहप्रद आ रहा है। इस अनुभव का लाभ लेकर रुई से कताई तक की समग्र प्रक्रियाएँ एक ही साधन पर करने का आयोजन किया जा रहा है। उच्चतम गुणक की मर्यादा ४२१ तक रखने का नमूना तय हुआ है तथा साथ-साथ ही तुनाई के ढोल के पट्टे से ही सीधे कताई कर सकें, यह इस साधन का मुख्य ध्येय है। ●

सर्वोदय सम्मेलन

बधाई है पजाब के मित्रो को जिन्होने सर्वोदय सम्मेलन बुलाया और निष्ठा-पूर्वक उसका सयोजन किया। हम तारीफ करेंगे सरदार उजागर सिंह बिल्ला की, जिन्होने यह हिम्मत की। उनके साथ लग गये डा० धीर और गोयल साहब। इस प्रकार इस त्रिमूर्ति की मेहनत और लगन से यह सम्मेलन हो सका। आनन्द का विषय है कि इसकी अध्यक्षता आचार्य राममूर्ति ने की और उद्घाटन किया सरला बहन ने।

मगर सम्मेलन में ज्यादा जान नजर आ रही थी। ऐसा लगता था कि लोगों का मन कही और है और चाहते यह हो कि जल्दी से खत्म हो। शायद इसी वजह से दूसरे ही दिन से ता० २० मई को अनेक भाई चले गये और प्रबन्ध समिति तक के अधिकाश सदस्य नही रहे। निवेदन पढा गया २१ ता० को, सम्मेलन की समाप्ति के समय, जिस पर न कोई चर्चा हो सकी और न सुझाव ही आ पाये। अब आप इसे उदासीनता कहिए या मजबूरी, यह है चिन्ताजनक।

*   *   *

सन् १९५८ में पढरपुर में जब सर्वोदय सम्मेलन हुआ था तो विनोबा ने उसे स्नेह-मिलन नाम दिया था। चर्चाओं से ज्यादा बडी चीज है आपस के प्यार का धागा, एक से दूसरे का लगाव और उससे हमदर्दी। चौदह बरस में यह धागा मजबूत होने की बजाय कमजोर पडता जा रहा है। कई साथियो ने हमसे कहा—"किसी को फिक्र ही नही है कि कोई क्या करता है, क्या नहीं करता, उसको अड़चने क्या हैं और काम कैसे आगे बढ़े।" एक अनाथ-जैसी हालत!

इसके अनेक कारण हो सकते हैं। लेकिन हमारी समझ में मुख्य है ऊपर वालो का (जिनके हाथ में तत्र है) नीचे वालो से (जो क्षेत्र में मुसीबतें सहते हैं) अलगाव। और जाने-अनजाने तत्र का सम्बन्ध बढ रहा है पैसे से। *पजनी में तत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का* जो मौलिक सूत्र विनोबा ने सन् १९५६ में दिया था, वह मानो पुराने काग ने के सुपुर्द हो गया हो।

*   *   *

अभिनन्द करते हैं हम जगन्नाथनजी का, जिन्होने सघ के अध्यक्ष पद पर तीन साल से ज्यादा अर्से तक बने रहने से इनकार कर दिया। नही तो, छ-छ साल का रिवाज-सा पडता जा रहा था, जिसका नतीजा यह है कि अन्य सस्थाओ या सगठनो में लोग दस-दस साल या ज्यादा अर्से तक डटे रहते और अपने साथियो से ही विमुख हो जाते हैं। जहां राजनीति में हर पाँचवे साल जनता के सामने आना पड़ता और सही या गलत उसके सामने सफाई देना होता है, और मुकाबले की भीषण आग में से गुजरना होता है, वहां गाधी बाबा के नाम पर हम हटने का नाम ही नही लेते। तब फिर हमारे काम में तेजस्विता कैसे आ सकती है?

पंजाब

आज का पजाब किधर जा रहा है? इसकी झाँकी हमें मिली वापसी सफर में। नकोदर से हम जालधर जा रहे थे अपने मित्र रवीन्द्र सिंह सोढ़ी, उनकी धर्म-पत्नी महेन्द्र कौर और बहन सन्तोष के साथ। बीच में किसी स्टेशन पर गाडी रुकी। दोपहर का वक्त था। दो हट्टे-कट्टे जवान उस डिब्बे में चढे। सीट पर धूप आ जाने के कारण भाभी महेन्द्र ने हटकर खाली जगह (जहाँ धूप नही थी) ले ली। भाई रवीन्द्र भी थोडा खिसक गये। यह देखते ही एक जवान तुरन्त भभूका पर टूट पडा और दूसरे ने उनके सीने पर लात जमायी। भाई गोविन्दनजी (केरल) भी साथ थे, जो स्वर्गीय केलप्पनजी के अन्तिम क्षणो का मार्मिक विवरण सुना रहे थे। अचानक यह मार-पीट देखकर हम सभी दग रह गये। उनको समझाने की कोशिश की तो दोनो जवानों का पारा और भी चढ़ गया।

ओफ! देखा कि दोनो पीये हुए थे, छोटा, जिसने लात मारी उसकी आँखें तो बहुत ही चढी हुई थी।.. कुछ अर्से बाद उन दो में से जो बडा था उसने भभूका रवीन्द्र से माफी मांगी और मिन्नतें करने लगा। फिर, मेरी तरफ घूमकर कहा—"*पजाब में ऐसा ही होता है, इसका इलाज आप बताइये।*" मैने कहा—"इसी कारण से तो सर्वोदय सम्मेलन हमने यहां किया। नये की दवा करनी होगी और विकास के बीच होश को सम्भालकर रखना होगा।"

गोविन्दनजी से उसने कहा, 'आपसे भी हम माफी चाहते हैं। आपकी क्या खातिर करें?'

"आपको अपना होश दुरुस्त रखना चाहिए, जैसा इन्होने बताया"—गोविन्दनजी बोले।

"नही, नही! जालधर स्टेशन आ रहा है, *आप कुछ चाय-पानी कर लीजिए।*"

"चाय तो हम पीते नही, आप हमें अमृतसर की गाडी में सवार करा दें, इतना काफी है।"

जालधर स्टेशन उतरकर गोविन्दनजी उसके साथ अपनीगाड़ी पकड़ने चले गये, हम रवीन्द्र परिवार के साथ उनके घर की तरफ बढे।

आदमी और कुत्ता

अपने देश की गरीबी किसी से छिपी नही है। और गरीब की जो दुर्दशा है वह भी सभी जानते हैं। उसका रोना यह नही है कि उसकी हालत सुधारी नही जाती, बल्कि यह है कि उसे "आदमी" नहीं समझा जाता। उसे अमीरो से शिकायत यह नहीं है कि भोग विलास का जीवन बिताते हैं, (जैसा कार बिताते) बल्कि यह है कि ०

जानवर तक को ज्यादा चाहते और महत्त्व देते हैं।

इसके सिवाय हमारी सरकारी संस्थाएँ भी हैं। दिल्ली का सफदरजंग अस्पताल मशहूर है। अक्सर कहा जाता है कि गरीबों की छाती की जाँच के लिए एक्सरे प्लेटों की कमी है। लेकिन वहाँ पर रविवार २८ मई १९७२ को एक कुत्ते की सेवा के लिए सारे साधन प्रस्तुत कर दिये गये। पता चला कि वह कुत्ता स्वास्थ्यमंत्रालय के किसी ऊँचे अफसर का पाला हुआ था। बलिहारी है उस अस्पताल की जहाँ अधिकारी के कुत्ते के लिए गुंजाईश है लेकिन आम आदमी के लिए नहीं। क्या यही समाजवाद है जिसका नमूना राजधानी पेश कर रही है?

राजा राममोहन राय

हाल ही में सारे देश में सुप्रसिद्ध देश-भक्त और राष्ट्र-निर्माता राजा राम मोहन राय की दूसरी जन्म-शताब्दी मनायी गयी। २०० साल पहले, २२ मई १७७२ को उनका जन्म हुआ था। उनका देहान्त १८३३ में इंगलैण्ड में हुआ था। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में "वह इस देश के महान पथ-प्रदर्शक हैं जिन्होंने हमारी प्रगति के रास्ते में हर कदम पर आनेवाली बड़ी-बड़ी बाधाओं को दूर किया और मानव समुदाय के विश्व-व्यापी सहयोग के आधुनिक युग के लिए हमको प्रारम्भिक दीक्षा दी।"

यह जानकर बड़ा आश्चर्य और हर्ष होता है कि राजा राममोहन राय ने उस जमाने में दो सवालों को जोर-शोर से उठाया था—खेतिहर मजदूरों का और नमक का। उन्होंने कहा था 'जमींदारी हो या रैयतवारी, दोनों पद्धतियों में सरकार और जमींदार या भूमिवान की तो मौज है, लेकिन भूमिहीन मजदूर की हालत बद से बदतर होती जा रही है।" उन्होंने कहा कि इसमें सुधार होना चाहिए और उस दृष्टि से दो सुझाव रखे।

कलक्टरों को मजिस्ट्रेट के अधिकार नहीं मिलने चाहिए।

(२) राजस्व अधिकारियों के खिलाफ कोई शिकायत हो तो न्याय अदालतों द्वारा उनकी तुरन्त जाँच करानी चाहिए।

अंग्रेजी हुकूमत ने उनकी बात नहीं मानी और हमारे देहातों का शोषण दिन-दूनी रात चौगुनी गति से चला। क्या स्वराज्य की सरकारें भी उसी शिकंजे में फँसी रहेंगी या उससे बाहर निकलकर राजा राममोहन राय के दूरदर्शी सुझावों को अमल में लाने की हिम्मत करेंगी!

इसी प्रकार नमक पर सरकारी ठीके के राजा राममोहन राय सख्त खिलाफ थे। १८३१ में उन्होंने अपने एक वक्तव्य में दुखपूर्वक कहा, "नमक जैसी आम जरूरत की चीज कलकत्ते में महँगी है, मिट्टी मिला नमक मिलता है रुपये का सात से आठ सेर और खालिस नमक चार से पाँच सेर।" राजा ने कहा कि नमक की मिलावट खत्म होनी चाहिए और उसके दाम कम होना चाहिए ताकि हर आदमी उसे खरीद सके। उन्होंने सरकार से कहा कि उसपर से अपना एकाधिकार हटा लेना चाहिए। यही चीज आगे चलकर इस माँग में बदल गयी कि नमक पर से टैक्स (कर) खत्म कर दिया जाय जिसे लेकर महात्मा गांधी ने स्वराज्य के लिए सत्याग्रह का जबरदस्त और शानदार आन्दोलन चलाया। राजा राम मोहन राय की दूरदर्शिता और दरिद्र नारायण के हितों की चिन्ता पर उनका कोटिशः अभिनन्दन। —दादू

शोक-समाचार

श्री प्रद्युम्न मिश्र (गुरुजी) शाहाबाद जिले के पुराने सर्वोदय सेवक का ५ जून '७२ को डिहरी-आन-सोन के अस्पताल में स्वर्गवास हो गया। उनकी उम्र ९५ वर्ष थी। बाबा ने शाहाबाद की यात्रा के समय उनको सर्वोदय आश्रम जमुहार में ही रहने को कहा था। भगवान उनकी आत्मा को शान्ति दे।

—रामेश्वर राय

चम्बल घाटी के नागरिकों से श्री जयप्रकाश नारायण की अपील

चम्बल घाटी शान्ति मिशन के अध्यक्ष एवं सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने चम्बल घाटी के शस्त्रधारी नागरिकों से निम्नलिखित अपील की है:

"आज जब चम्बल घाटी में बागियों ने आत्म-समर्पण कर दिया है और एक नया युग शान्ति और समृद्धि का प्रारम्भ होने जा रहा है, आम नागरिक जो अपनी सुरक्षा के लिए हथियार रखते थे उनको भी अपने हथियार अपने पास न रखकर पुलिस थानों को सौंप देने चाहिए। इस क्षेत्र में छोटी बातों पर भी बड़े झगड़े हो जाते हैं जो बाद में हत्या और फरार होने के साथ बागी-समस्या तक पहुँच जाते हैं। अगर सारे क्षेत्र में बन्दूकें समर्पित करने का कार्य सब मिलकर करें तो आपसी झगड़े भी बढ़ नहीं पायेंगे और शान्ति का वातावरण बनाये रखने में सहायता मिलेगी। बन्दूक से समाज कभी भयमुक्त नहीं हो पाया है और न उसके साधन से शान्ति या सुरक्षा ही मिल पायी है। अब बन्दूक पर भरोसा रखने के बजाय हर छोटी-बड़ी बस्ती में शान्ति-समिति बने जो आपसी झगड़े और मनमुटाव सुलझाने के रास्ते निकाले। हमारी अपील है कि आजादी की पच्चीसवीं वर्षगाँठ को यह इलाका बन्दूक-त्याग-समारोह के रूप में मनाये और जो एक डेढ़ लाख लाइसेंस की बन्दूकें ग्वालियर सम्भाग में हैं वे थानों में जमा कराकर शान्ति और आपसी भाईचारे का पर्व मनाया जाये। हमें पूरी आशा है कि जिस भूमिका से बागी भाइयों ने गांधी के चरणों में अपनी बन्दूकें रख दी हैं उसीको जनता भी आगे बढ़ायेगी। इसके लिए १५ अगस्त, १९७२ तक सभी की ताकत लगे तो अवश्य यह काम पूरा होगा और सबको नयी जिन्दगी का आसरा और उत्साह प्राप्त होगा।"

तमिलनाडु में सर्वोदय कार्य

अक्तूबर ७१ से मार्च ७२ तक का कार्य-विवरण

श्री एस० आर० सुब्रह्मण्यम् तमिलनाडु सर्वोदय आन्दोलन के एक मुख्य कार्यकर्ता नशाबन्दी कार्यसमिति के मंत्री हैं। उन्होंने मद्रास से कन्याकुमारी तक १०० दिनों की पदयात्रा की। उन्होंने अपनी पदयात्रा २ अक्तूबर को शुरू की और ९ जनवरी ७२ को वह कन्याकुमारी पहुँचे। मद्रास शहर की सर्वोदय पात्र की १० महिला कार्यकर्ता पूरी यात्रा में साथ रहीं। उनकी शिरकत से महिलाओं से रास्ते में सम्पर्क स्थापित करने में बड़ी सहायता मिली। रास्ते में और सभी गाँवों में इस उद्देश्य के लिए सहानुभूति प्राप्त हुई।

कन्याकुमारी में तमिलनाडु रचनात्मक कार्यकर्ताओं का सम्मेलन हुआ और यह निश्चय किया गया कि हर जिले में पदयात्रा की जाय, ताकि जनता में नशाबन्दी के समर्थन में वातावरण पैदा हो और प्रत्यक्ष कार्रवाई के कार्यक्रम के लिए स्वयंसेवक आ सकें।

एक दूसरे नेता आर० टी० पी० सुब्रह्मण्यम् ने मुख्यमंत्री को लिखा कि सभी शराब की दूकानें बन्द की जायँ या कम-से-कम राज्य भर में इस पर लोकमत प्राप्त किया जाय ताकि जनमत मालूम हो। ऐसा न होने पर वह अनशन करके मर जायेंगे। चूँकि उन्हें १४ अप्रैल तक मुख्यमंत्री से कोई सूचना नहीं मिली, उन्होंने विरुधुनगर में अनशन आरम्भ कर दिया। सेलम के श्री मनी अय्यर ने भी सेलम में जिलाधीश के कार्यालय के सामने अनशन किया।

राजाजी ने अपना एक वक्तव्य जारी किया जिसमें उन्होंने ऐसे अनशनों के बारे में अपना विचार प्रकट किया। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि ये लोग अनशन फौरन छोड़ दें और आवश्यकता हो तो किसी शराब की दूकान पर पीकेटिंग करें और जेल जाने के लिए तैयार रहें। पर्यटन मंत्री श्री राजाराम ने श्री आर० टी० पी० एस० से भेंट की और उनसे बातें की जो राजाजी के तार की पृष्ठभूमि में हुईं। इसका अनशन करनेवाले आर० टी० पी० एस० पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्होंने २४ अप्रैल ७२ को ८ वें दिन अनशन बन्द कर दिया।

सर्वोदय कार्यकर्ताओं द्वारा सेलम, तंजौर, तिरुची, तिरुनेलवेली जिलों में पदयात्रा चलायी गयी।

तंजौर का काम

पूर्वी तंजौर में वलीवलम गाँव के लोग अपने कठिन परिश्रम के द्वारा पैदा की हुई फसल काटने के लिए इन्तजार कर रहे थे।

जब कि मन्दिर की भूमि के रय्यतों ने फसल काटना शुरू किया तो नगपट्टीनम के न्यायाधीश का आदेश आया कि वे फसल को न काटें। फसल कटवाने के लिए एक कमिश्नर नियुक्त हुआ और निश्चय हुआ कि वह फसल काटे और न्यायालय में धान जमा करे जब तक कि जाँच होकर कोई फैसला न हो जाय।

न्यायालय ने जो फैसला दिया उससे गरीब किसानों को बड़ा सदमा पहुँचा। वे फसल काटने का बहुत परेशानी से इन्तजार कर रहे थे। मन्दिर के व्यवस्थापकों ने अपना मुकदमा पेश करने के लिए वकील रखा। परन्तु यह बेकार रहा। वलिवलम मन्दिर के वकील को ४ फरवरी की शाम में यह सूचना मिली कि न्यायाधीश ने एक कमिश्नर नियुक्त कर दिया है जो फसल कटवा लेगा। वलिवलम गाँव की ग्रामसभा तुरन्त मिली और उसने फैसला किया कि पिकेटिंग करके न्यायालय के आदेश का उल्लंघन किया जाये और बाहर के मजदूरों को फसल न काटने दिया जाय। ग्राम शान्तिसेना सक्रिय हो गयी। दिन-रात धान के खेतों की निगरानी करने के लिए ग्रुप बनाये गये। गरीब लोग जिनके पास शरीर ढाँकने को कपड़े नहीं थे रात की ठण्डक में सिकुड़ते रहे और अपने अधिकारों की रक्षा में संलग्न रहे।

५ फरवरी को सबेरे ग्रामसभा के सचिव ने यह सूचना दी कि बाहर के मजदूर नीवीलाकू खेत में फसल काटने आ रहे हैं। गाँव में यह खबर आग की तरह फैल गयी। इमली के पेड़ के नीचे पुरुष और स्त्री एकत्रित हुए, उन्हें यह निर्देश दिया गया कि वे 'पीकेटिंग' करें और बाहर के मजदूरों को बिना शारीरिक दबाव के फसल काटने से रोकें। कुछ मिनटों के अन्दर ही महिलाओं का एक जत्था भजन गाता और नारे लगाता हुआ नीवीलाकू क्षेत्र की ओर रवाना हुआ।

इस बीच नीवीलाकू गाँव के लोग फसल के स्थान पर तेजी से दौड़े और बाहर के मजदूरों से यह अनुरोध किया कि वे फसल के खेत में प्रवेश न करें। परन्तु यह अनुरोध कारगर साबित नहीं हुआ, तो नीवीलाकू और किरणगुडी की महिलायें नीचे के खेतों में उतर गयीं ताकि बाहर के मजदूरों को फसल काटने से रोक सकें। उन्होंने केवल अपनी बाहें फैला दीं और आक्रमणकारियों से कहा कि वे उनके सिरों को काटने के बाद ही फसल काट सकते हैं। जीते-जी उन्हें फसल न काटने देंगी। नीवीलाकू की निरक्षर हरिजन महिलाओं का यह अहिंसक कार्य एक शक्तिशाली कार्रवाई सिद्ध हुआ। कमिश्नर, देशीधार के एजेन्ट और बाहर के मजदूर न समझ सके कि आगे क्या करें और चुप खड़े मुँह ताकते रहे। अगर उनका हिंसक प्रतिकार किया जाता तो वे दूसरी कार्रवाई कर सकते पर अहिंसा की रण-नीति ने उन्हें जीत लिया।

फिर कुछ देर बाद जमींदार के लोगों ने इन मजदूरों को फसल काटने के लिए आगे बढ़ाना चाहा, परन्तु यह सब व्यर्थ रहा। मजदूरों ने जमींदार के एजेन्टों के चिल्लाने पर भी ध्यान नहीं

दिया। वे चुपचाप खेतों से चले गये, ताकि घर जाने के लिए पहली बस पकड़ सकें। खेत पूरे तौर से लोगों के कण्ट्रोल में था। जमींदार के हारे हुए 'जनरल' सिर झुकाये जमींदार के खलिहान की ओर चले गये।

१८ अप्रैल को तिरुवल्लूर में सभी दलों की एक सभा हुई और उसमें यह फैसला हुआ कि जमींदार के पास जाया जाये और यह कहा जाये कि वह सीलिंग से ऊपर की बची हुई सभी जमीन और मन्दिर की वह जमीन जो उनके कण्ट्रोल में है उन्हें जनता को समर्पण कर दें। लोग जमींदारों और सम्बन्धित पदाधिकारियों से मिलेंगे, अगर जरूरत हो तो वे प्रत्यक्ष कार्रवाई भी करेंगे। यह निश्चय एक सभा में किया गया। सभा के बाद एक नाटक खेला गया। जिसमें धनी जमींदारों द्वारा किसानों का शोषण दिखाया गया। क्षेत्र के महत्वपूर्ण केन्द्रों में यह नाटक दिखाया जाता।

सर्वे-कार्य

उस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर सर्वे किया गया। यह सर्वे दिसम्बर, '७१ में हुआ इसमें गांधी निकेतन कम्युनिटी आर्गनाइजर सेण्टर के ३३ प्रशिक्षार्थी, १४ पुराने प्रशिक्षार्थी और ४-४ स्थानीय लोगों ने भाग लिया। सर्वे टीम ने यह पाया कि ३३०१ एकड़ मन्दिर और मठ की जमीन, बड़े जमींदारों के नाजायज कब्जे में है। गांधी शान्ति केन्द्र के कार्यकर्ता इस कार्य को अपने हाथ में लेंगे।

दक्षिणी क्षेत्रों में पुष्टि कार्य

यह निश्चय किया गया था कि १८ मार्च से १८ अप्रैल तक तंजौर, तिरुची, मदुराई, रामनाड और तिरुनेलवेली जिलों में बड़े पैमाने पर पुष्टि-कार्य किया जाये। कम्युनिटी आर्गनाइजर के प्रशिक्षार्थी, महत्वपूर्ण कार्यकर्ता और स्थानीय लोग इस कार्य में लगे हुए थे।

तिरुनेलवेली जिले के नानगुनेरी ब्लाक में ५० गांव तैयार किये गये हैं, जो ग्रामदान की परिभाषा पर पूरे उतरते हैं। भूमिहीनों में बांटने के लिए ७५ एकड़ जमीन प्राप्त की गयी है। इसमें से २५ एकड़ १५ भूमिहीन परिवारों में बांट दी गयी। २५ गांवों में ग्रामकोष इकट्ठा किया गया है जो ५० रुपये से लेकर ५०० रुपये तक है और पोस्ट-आफिस के सेविंग बैंक में जमा किया गया है। रामनाड जिले के मुदुगुलतुर जिले में पुष्टि के कार्य में १७ कार्यकर्ता लगे हुए हैं। वे १४४ गांवों में गये और २० गांवों में ग्रामदान के लिए हस्ताक्षर इकट्ठा किये ताकि शर्तें पूरी हो सकें। १३ ग्रामसभाएं बनायी गयीं। १३ गांव ग्रामदान के 'कन्फरमेशन' के लिए चुन लिये गये हैं मदुरै जिले के मनारपरली ब्लाक के ४० गांव के कन्फरमेशन के लिए तैयार हैं। ५४ ग्रामसभाएं बना ली गयी हैं। भूमि के १।२० वें भाग के तौर पर १० से ५२ एकड़ भूमि प्राप्त की गयी है।

तिरुची जिले के मनीकण्डम ब्लाक में १० ग्रामसभाएँ बनीं। भूमि का १।२० वां भाग के तौर पर १६ एकड़ जमीन प्राप्त की गयी है।

कृषि की राष्ट्रीय कमीशन का निरीक्षण

कृषि की राष्ट्रीय कमीशन का अध्ययन ग्रुप २८, २९, ३० मार्च को सकरनकोल और नानगुनेरी ब्लाक के क्षेत्र में गया, और तमिलनाड के मुख्य कार्यकर्ताओं और जिला पदाधिकारियों से बातचीत की। यह सम्भावना है कि इस पूरे क्षेत्र को ग्राम-विकास कार्य के लिए चुना जावे।

—के० एम० नटराजन्

बागियों के आत्म-समर्पण से विनोबा प्रसन्न

नयी दिल्ली, १७ जून। चम्बल घाटी और बुन्देलखण्ड के कोई चार सौ डाकुओं के आत्म समर्पण की अभूतपूर्व घटना से सन्त विनोबा बहुत खुश है।

समेस द्वारा ली गयी एक भेंट में उन्होंने कहा है कि यह एक बहुत बड़ी घटना हुई है। ऐसी घटनाएं जब-जब होती है तब-अहिंसा की शक्ति को बल मिलता है और अहिंसा के कार्य में लगे कार्यकर्ताओं की शक्ति बढ़ती है। उन्होंने आगे कहा कि इस घटना से देश में जो ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन चल रहा है, उसे भी बल मिलेगा।

सन् १९६० और '७२ में हुए बागी आत्म-समर्पण के अन्तर को स्पष्ट करते हुए विनोबा ने कहा कि, उस बार सरकार और पुलिस का रुख अनुकूल नहीं था, इसलिए उस समय काम नहीं हो पाया। अगर सरकार और पुलिस का रुख अनुकूल होता तो उसी समय यह बागी-समस्या बहुत कुछ हल हो जाती और फिर उस समय मैं सिर्फ इसी कार्य के लिए डाकूग्रस्त क्षेत्रों में गया नहीं था। मैं तो अपनी ग्रामदान-यात्रा के दौरान उस क्षेत्र में गया था और इस समस्या को सहज ही उठा लिया था। इस समय स्थिति विपरीत है, जयप्रकाशजी को तीनों राज्य सरकारों और केन्द्र सरकार का भी सहयोग प्राप्त है। इसलिए इस बार काम अच्छा हुआ।

क्षेत्र सन्यास छोड़कर बागियों से मिलने ग्वालियर जाने की सम्भावना से इन्कार करते हुए उन्होंने हंसते हुए उत्तर दिया, "बागियों और हमारे बीच टैलीपैथी का सीधा सम्बन्ध है, इसलिए वहां जाने की जरूरत ही नहीं है। हम उनसे यहां बैठे हुए भी जुड़ें है।"

विनोबाजी ने प्रसन्नता व्यक्त की है कि जेल में बागी 'गीता-प्रवचन' का अध्ययन कर रहे हैं। यह विनोबा का ही सुझाव था कि समर्पणकारी बागियों को 'गीता प्रवचन' व 'रामायण' की एक-एक प्रतियां दी जानी चाहिए।

आन्दोलन के समाचार

अन्तर्राज्यीय छात्र-शिविर शुरू

इन्दौर, १२ जून। प्राप्त जानकारी के अनुसार महात्मा गांधी सेवा आश्रम, जौरा (मुरैना) में गत ७ जून से मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और दिल्ली के महाविद्यालयों के ९० छात्र-छात्राओं का एक शिविर शुरू हुआ है, जो आगामी २२ जून तक चलेगा। चम्बल घाटी में केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के युवक-कार्यक्रम विभाग तथा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सहयोग से आयोजित शिविरों की शृंखला में यह एक महत्वपूर्ण शिविर है, जो हाल ही में चम्बल घाटी में ४०० से अधिक बागियों के आत्म-समर्पण के परिप्रेक्ष्य में उनके परिवारों तथा उनके द्वारा पीड़ित परिवारों के पुनर्वास-कार्यक्रम में छात्रों के योगदान की दृष्टि से आयोजित है। ये छात्रगण जौरा के निकटवर्ती २० गांवों में ४ दिन के लिए जायेंगे और बागी तथा बागी-पीड़ित परिवारों से सम्पर्क करेंगे और शिविर से जाने के बाद भी उन परिवारों के प्रति उनका भाईचारा कायम रहेगा। शिविर का संचालन श्री एस० एन० सुब्बाराव कर रहे हैं।

महबूब नगर में अभियान

आन्ध्र प्रदेश के महबूब नगर जिले में शादनगर प्रखण्ड में ता० ४ जून से १३ जून तक पदयात्राएँ आयोजित की गयीं, जिनमें १७ टोलियों में ५० कार्य-कर्ताओं ने भाग लिया। लोकपदयात्रा इस कार्यक्रम की एक विशेष बात थी, यानी अपने गांव के ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने, ग्रामसभा का गठन करने और अपने गांव में भूमि वितरण करने के बाद उस गांव के लोग दूसरे *गांव में पदयात्रा करते हुए ग्रामदान* कार्यक्रम का प्रचार करने के लिए जाते थे। ४६ गांवों में इस तरह की पदयात्राएँ आयोजित की गयी और उनमें ४३२५ लोगों ने हिस्सा लिया। फलस्वरूप पदयात्रा के ९५ गांवों में से ६१ गांवों का ग्रामदान घोषित हुआ और उनमें से ५९ गांवों में ग्रामसभाएँ गठित की गयीं। १७३ दाताओं से १२०० एकड़ भूमि प्राप्त हुई, इसमें से करीब आधी जमीन मालिकों की दी हुई रक्षित टेनण्ट्स् की थी। इसमें से ८३३ एकड़ जमीन इन गांवों के २१६ आदाताओं को दी गयी। पुरानी भूदान की २८० एकड़ जमीन का भी वितरण हुआ। ७१ गांवों में ग्रामशान्ति-सेनाएँ गठित की गयीं। शादनगर के अभियान में आन्ध्र प्रदेश के बाहर से श्री ठाकुरदास बंग, श्रीमती सुमन बंग, सर्वश्री यशपाल मित्तल, *सेंदुर्णीकर, अच्युतभाई, नन्दलाल बाबरा,* तथा श्रीआचार्य ने भाग लिया। आखिरी दिन आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री की उपस्थिति में समारोह सम्पन्न हुआ, जिसमें उन्होंने अभियान को आगे बढ़ाने के लिए कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहित किया और उपस्थित जनता को सम्बोधित कर कहा कि मैं भी अपने को एक भूदान कार्यकर्ता मानता हूँ।

इलाहाबाद नगर में सर्वोदय कार्य

पिछले कुछ महीनों से इलाहाबाद के सर्वोदय प्रेमी मित्रों ने सर्वोदय विचार-प्रचार समिति कायम की है। इस समिति के मारफत नगर में सर्वोदय विचार के प्रचार का कार्य हो रहा है। इस समय समिति के द्वारा नीचे लिखे काम चल रहे हैं :—

१—इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर सर्वोदय साहित्य का स्टाल श्री चन्द्र-प्रकाशजी की देख-रेख में चल रहा है। श्री चन्द्रप्रकाशजी के अलावा और दो पूरा समय देनेवाले साथी स्टाल पर काम कर रहे हैं। विभिन्न विद्यालयों और संस्थाओं में भी साहित्य पहुँचाने का प्रयत्न चलता रहता है।

२—*भूदान-यज्ञ, मैत्री, पीपुल्स* एक्शन, सर्वोदय, तरुणमन आदि पत्रिकाएँ लगभग २०० की संख्या में नियमित रूप से ग्राहकों के पास पहुँचायी जाती हैं।

३—मार्च १९७२ से एक चल पुस्तकालय प्रारम्भ हुआ है, पुस्तकालय में करीब ५०० पुस्तकें हैं। पुस्तकालय के इस समय १०० सदस्य हैं जिनको हर हफ्ते पुस्तकें घर पर पहुँचायी जाती हैं। चल पुस्तकालय की पुस्तकों की सूची भी प्रकाशित की गयी है।

४—हर शनिवार को साप्ताहिक सर्वोदय गोष्ठी होती है जिसमें विभिन्न विषयों पर चर्चा होती है।

५—इलाहाबाद नगर के ४ मुहल्लों में सर्वोदय केन्द्र शुरू किये गये हैं जिनके माध्यम से पुस्तकालय, वाचनालय, सफाई, खेलकूद, नारी-मण्डल, मोहल्ले का सर्वे, पानी-बिजली आदि की असु-विधाओं के सम्बन्ध में कार्रवाही, स्कूलों के जरिये छात्रों से सम्पर्क-इत्यादि काम हाथ में लिये गये हैं। इन केन्द्रों की साप्ताहिक अथवा पाक्षिक गोष्ठियाँ होती रहती हैं। मुहल्ला सभाएँ बनाने का प्रयत्न चल रहा है।

काम करने की इच्छा रखनेवाले थोड़े-से लोग भी मिलकर क्या कर सकते हैं उसका अच्छा उदाहरण इलाहा-बाद के मित्रों ने पेश किया है। शहरों में रहनेवाले भाई-बहन अक्सर पूछा करते हैं कि हम क्या काम हाथ में ले सकते हैं? कार्यक्रम अनेक हो सकते हैं, उनकी कमी नहीं है। कमी सिर्फ सूझ-बूझ, लगन और काम करने की है।

—सि० रा०

(पृष्ठ ५८१ का शेष)

राजस्थान के मामले में अब प्रधान मंत्री से बातचीत चल रही है। आशा है, एक बार राजस्थान का विशेष मसला हल हो जाने पर संविधान द्वारा देश की जनता को दिये गये पूर्ण नशा-बन्दी के वचन को पूरा करने के मामले में भी आवश्यक कदम उठाये जायेंगे। देश में जो परिस्थिति बन गयी है तथा बनती जा रही है उसके कायम रहते हुए नशाबन्दी के लिए यह आखिरी मौका है ऐसा मालूम होता है।●

भूदान-यज्ञ १९-६-'७२ लाइसेन्स नं० प ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

मुसहरी प्रखण्ड स्वराज्य सभा की बैठक

दिनांक ९ जून, '७२ को मुसहरी प्रखण्ड में स्वराज्य सभा की बैठक ३ बजे दिन में लक्ष्मीनारायण स्मारक भवन, सर्वोदयग्राम में हुई।

भीषण गर्मी का मौसम होने के बावजूद ग्रामस्वराज्य सभाओं के प्रतिनिधियों एवं सर्वोदय कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त श्री गीताप्रसाद सिंह, परियोजना पदाधिकारी, ग्रामीण उद्योग, नवादा (गया) एवं स्थानीय उद्योग निदेशालय के [illegible] विशिष्ट अतिथि के रूप में आज की बैठक में उपस्थित थे। इन अतिथियों ने, जो ग्रामीण औद्योगिक योजनाओं में गहरी दिलचस्पी रखते हैं, विगत २ जून से ही प्रखण्ड के विभिन्न परिक्षेत्रों में घूम-घूमकर ग्राम-स्वराज्य सभाओं के पदाधिकारियों से सघन सम्पर्क किया और स्थानीय परिस्थिति का अध्ययन करते हुए ग्रामीण उद्योगों की सम्भावनाओं का अवलोकन किया। क्षेत्र-परिभ्रमण के क्रम में आये अनुभवों [illegible] मुसहरी के विकास के लिए आगे के कार्यक्रमों को शुरू करने के [illegible] ध्यान में रखते हुए [illegible] विचारों के आदान-प्रदान हेतु खुली चर्चा के रूप में आज की बैठक का विशेष महत्व था। आज की बैठक की अध्यक्षता श्री बद्रीनारायण सिंह, अध्यक्ष-बिहार भूदान यज्ञ कमेटी कर रहे थे। बैठक के कार्यक्रम का प्रारम्भ शान्ति सैनिक श्री उमाकान्त ठाकुर के जागरण गान से हुआ। फिर गत बैठक की कार्यवाही पढ़ी गयी और सम्पुष्ट की गयी। कार्य-प्रगति का विवरण संयोजक महोदय ने प्रस्तुत किया। यद्यपि गत बैठक में लिये गये निर्णयों के अनुसार डिलीफ कमेटी ने भावनात्मक ऋण सम्बन्धी किश्तों की अदायगी के लिए अधिकांश किसान उपभोक्ताओं के अद्यतन हिसाब को शीघ्रता में उन्हें मुहैया करने में तत्परता बरती है फिर भी कुछ गांवों का हिसाब अद्यतन (अद्यतन होकर) किसानों के पास नहीं पहुँच सका, जिससे सम्बद्ध लोगों में काफी चिन्ता दीख पड़ी। ऋण की अदायगी निर्धारित समय पर न किये जाने से सम्बद्ध बैंक आगे लेन-देन करने में काफी उत्साह नहीं दिखा रहा है। कई सदस्यों ने महसूस किया कि इससे प्रखण्ड स्वराज्य सभा की साख में गिरावट आ सकती है। अतः प्रखण्ड सभा ने इस पर देर तक चर्चा की और वितरित ऋण-वसूली और अदायगी में काफी मुस्तैदी बरतने का निश्चय किया ताकि आगे बैंक से लेन-देन में कोई काम रुके नहीं। श्री गीताप्रसाद सिंह ने, जो आज की बैठक के मुख्य अतिथि भी थे, विस्तार से औद्योगिक योजनाओं एवं सम्भावनाओं के बारे में प्रकाश डाला।

मुसहरी के कार्यकर्ताओं की बैठक

४ जून को अपराह्न ४ बजे मुसहरी अभियान में लगे कार्यकर्ताओं की एक बैठक लक्ष्मीनारायण स्मारक भवन में हुई। बैठक में श्री गीता प्रसाद सिंह विशेष रूप से उपस्थित थे। मुसहरी प्रखण्ड के आगे के कार्यक्रम पर चर्चा हुई। निश्चय किया गया कि जिन गांवों में ग्रामस्वराज्य सभा का गठन नहीं हुआ है, वहां पर गठन कराया जाय, परन्तु गठित ग्रामस्वराज्य सभाओं की बैठकें नियमित हों, उनका अधिक-से-अधिक बीघा-कट्ठा बँट जाय और ग्रामकोष संग्रह हो, इस दिशा में ग्राम-स्वराज्य सभाओं को सक्रिय करने का प्रश्न ज्यादा महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से अभियान में लगे साथियों को अलग-अलग पंचायतों की ग्रामसभाओं से सतत सम्पर्क रखने की जिम्मेदारी सौंपी गयी।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी–१
तार, सर्वसेवा   फोन : ६४३९१

सम्पादक
रामसूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०, या ३० शिलिंग या ४ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित।

: १८, अंक : ३९

२६ जून, '१९७२

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

लोकतंत्र कैसे बचे ?

मैं बहुत तीव्रता से अपने अन्तर में यह महसूस कर रहा हूँ, आज काफी समय से, कि अपने देश की राजनीति में बहुत बड़ा परिवर्तन आ रहा है। और, ऐसी सम्भावना हमें दिख पड़ती है कि लोकतंत्र का ढांचा कायम रहे और फिर भी इस ढांचे के अन्दर लोकतंत्र खत्म हो जाय। ऐसा लगता है कि अगर हम लोगों ने इस पर ध्यान नहीं दिया और कोई उपाय नहीं सोचा तो शायद जैसा मैंने कहा ढांचा रहेगा, मगर भीतर कुछ नहीं रहेगा, 'सबस्टेंस' नहीं रहेगा। आप ले लें चुनाव को, दलों की प्रथा को। दलों के बगैर यह लोकतंत्र चल नहीं सकता—शासन करनेवाला दल और विरोधी दल। इस पद्धति का आधार जनता का मतदान है। अब आप देखिए कि किस प्रकार से चुनाव में खर्चे बढ़ते जाते हैं। किस प्रकार से हिंसा बढ़ती जाती है। किस प्रकार से झूठ बढ़ता जाता है। जिन लोगों के हाथों में सत्ता है, खासकर दिल्ली की सत्ता, उनके लिए आसान है रुपया इकट्ठा करना। जो लोग टैक्स की चोरी करते हैं, जो काला बाजार करते हैं, जो ब्लैक मनी है, वे तो मुक्त हस्त दे सकते हैं, जिनके हाथों में सत्ता है उनको, अपने बचाव के लिए। इस प्रकार से करोड़ों रुपया इकट्ठा होता है। दूसरी पार्टियाँ भी करती हैं, लेकिन उनके हाथों में सत्ता नहीं है इसलिए वे अधिक नहीं कर पाती हैं। सिद्धान्त में कोई भी मतभेद नहीं है। अब समाजवाद किस प्रकार से बन सकेगा इस ढंग से चुनाव कराने और करने से यह मेरी समझ में नहीं आता है, क्योंकि यह सारा रुपयों का खेल हो जाता है। हिंसा की बात लीजिए। जिनके हाथ में ताकत है वे पूरे 'बूथ' पर कब्जा कर लेते हैं और स्टैम्प लगाकर वोट डाल देते हैं, वोटर को आने नहीं देते। दूसरे का वोट डलवा दिया जाता है और कहा जाता है कि तुम्हारा वोट डलवा दिया गया।

केवल यही एक बात ले ली जाय, तो आप सोचिए कि कैसे सम्भव होगा कि लोकतंत्र चले, कायम रहे, बढ़े ? विरोधी दलों के नेताओं से मेरी बात होती है तो वे कहते हैं कि अब कोई उपाय नहीं है कि अब हम लोकतांत्रिक उपाय से जीतें !

आज दिल्ली में एक भय का वातावरण रहता है। जो मंत्री हैं वे भी खानगी में कहते कि ऐसा वातावरण कभी नहीं था कि हम मुक्त भाव से, प्रच्छन्न भाव से जो हमारा विचार है वह बैठकर हम अपने मित्रों से न कहें, क्योंकि पता नहीं कौन हमारी बात (इन्दिराजी तक) पहुँचा देगा और फिर हमें उसका मूल्य देना पड़ेगा। प्रेस है। प्रेस भी हमारे देश में इसी संविधान के अन्दर और इसी प्रेस ऐक्ट के कायम रहते हुए भी कितना स्वतंत्र रह जायेगा इसमें हमें सन्देह है। बुद्धिजीवी हैं। बुद्धिजीवियों में भी यह भय है कि वे अपना स्वतंत्र विचार प्रकाशित कर सकें, क्योंकि सभी किसी-न-किसी रूप में चाहे वे किसी संस्थान में काम करते हों, विश्वविद्यालय में काम करते हों, और कहीं काम करते हों सरकार के पैसों से उनका वेतन मिलता है। तो यह स्थिति है देश में और इसका एहसास नहीं है और चिन्तन भी नहीं है कि क्या करना चाहिए। मुझे कहना इतना ही है कि इस विषय पर सोचना चाहिए, क्योंकि लोकतंत्र मिट जाता है तो हमारे आन्दोलन को चलाना, जो क्रान्ति हम करना चाहते हैं वह करना, असम्भव तो नहीं बहुत कठिन होगा, आज जितना कठिन है उससे कई गुना कठिन हो जायगा।

—जयप्रकाश नारायण

(गांधी रचनात्मक संस्था सम्मेलन में दिये गये भाषण से नयी दिल्ली, १२-६-७२)

वाराणसी का साम्प्रदायिक उपद्रव : एक शान्तिसैनिक से मुलाकात

कबीर का शहर सचमुच बदनाम हो गया

जब वाराणसी में दंगा शुरू हुआ तब शान्ति सैनिकों ने शान्ति स्थापन-कार्य में काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। युवा सर्वोदय कार्यकर्ता श्री श्यामबहादुर 'नम्र' दूसरे दिन से शान्ति स्थापना के काम में अपने चन्द साथियों के साथ जुट गये। श्री श्यामबहादुर 'नम्र' एक कर्मठ और चिन्तनशील युवक हैं। कर्मठता इनकी जीवनी शक्ति है और चिन्तनशीलता इनके कर्म में तेजस्विता और प्रखरता लाती है। जब इनके दिमाग में किसी काम का निश्चय हो जाता है तब उस काम को करने में बिना आगा-पीछा किये लगन से जुट जाते हैं और उस क्षण तक दम नहीं लेते जब तक उस काम को पूरा न कर लें। वाराणसी के दंगे में उन्होंने जो कुछ देखा, समझा और किया उसे हम यहाँ उनसे हुई एक मुलाकात के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

श्री श्यामबहादुर 'नम्र'

प्रश्न : आपको दंगे की सूचना कब मिली और आपने उसके बाद क्या किया? दंगा हो जायेगा इस सम्भावना को क्या आप पहिले से मानते थे?

उत्तर : मैं नगर में सर्वोदय का कार्य करता हूँ। अतः नगर के मानस का कुछ परिचय तो अवश्य हुआ है। १६ जून को काला दिवस मनाने की सूचना से वाराणसी नगर में ११ जून से ही दफा १४४ लागू हो गयी थी और सभा, जुलूस आदि पर प्रशासन ने रोक लगा दी थी। इससे स्थिति की गम्भीरता कुछ समक्ष में आयी थी लेकिन दंगे की सम्भावना मुझे बिलकुल नहीं थी। मैं मानता था कि लोग काला दिवस मनायेंगे और जिला प्रशासन दंगा का रूप नहीं लेने देगा। प्रशासन की ओर से इस प्रकार का आश्वासन भी मिला था। काला दिवस हिंसक स्वरूप न ले, इसलिए यहाँ के प्रतिष्ठित हिन्दू-मुसलमानों के साथ हमने एक वक्तव्य में मुसलमानों से यह अपील की थी कि वे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अधिनियम का स्वागत करें और काला दिवस का समर्थन न करें। हिन्दुओं से भी अपील की गयी थी कि काला दिवस को वह सम्पूर्ण अहरापक्षकों द्वारा मनाया जानेवाला दिवस न समझें और उनके प्रति अपने मन में कटुता का भाव न लायें।

१६ जून को शाम को मुझे दंगे की सूचना मिली। पूरी जानकारी के लिए मैंने शाम को स्थानीय अखबार देखा। दूसरे दिन सुबह इस सन्दर्भ में मेरी जिलाधीश श्री महेश प्रसाद से और शहर कोतवाल श्री वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव से फोन पर बात हुई। नगर के उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में चूँकि कर्फ्यू लागू हो गया था अत मैंने निश्चय किया कि कर्फ्यू पास लेकर, शहर के प्रभावशाली नागरिकों से मिलकर, उनके सम्मिलित प्रयास द्वारा शान्ति-स्थापना का कार्य किया जाना चाहिए। शुरू में मैं, नगर सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री मोहन भाई और श्री काशीनाथजी कर्फ्यू पास लेकर श्री रोहित मेहता से मिले। उनसे बात करके दंगाग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया और श्री रोहित मेहता, नगर स्वराज्य समिति के अध्यक्ष प्रो० राधेश्याम शर्मा, मंत्री श्री गौरगोपाल बनर्जी से मुलाकात की। पहले हमने श्री मोहन भाई के साथ दंगाग्रस्त क्षेत्रों में, मुख्य रूप से मदनपुरा, रेवड़ीतालाब व नयी सड़क, दालमण्डी आदि क्षेत्रों का दौरा किया और शाम को श्री रोहित मेहता की अध्यक्षता में एक सर्वदलीय नगर शान्ति समिति गठित की गयी। समिति की ओर से एक वक्तव्य में शान्ति बनाये रखने की अपील की गयी। १८ जून को इस समिति की ओर से जब काम शुरू हुआ तो हमें शान्तिसेना मण्डल के साथी सर्वश्री भगवान बजाज, अमरनाथ भाई, सत्यनारायण भाई, और तरुण-शान्तिसेना के श्री अशोक भार्गव, नगर सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री कृष्ण कुमार भाई का सक्रिय सहयोग मिला। शान्ति समिति के सदस्य और शान्ति सैनिकों को चार टुकड़ियों में बाँटकर शान्ति-स्थापना के कार्य का आयोजन किया गया। पूरे दंगे की अवधि में दिन भर काम करने के बाद शाम को हम एक बार मिलते थे और अगले दिन की कार्य-योजना बनाते थे।

प्रश्न : आपके कार्य में प्रशासन का सहयोग प्राप्त हुआ? आपने कर्फ्यू-काल में कौन-सा काम अपने हाथ में लिया? नगर के नागरिकों ने भी आपका सहयोग किया?

उत्तर : प्रशासन की ओर से और खासकर ऊँचे अधिकारियों से काफी सहयोग प्राप्त हुआ। मई के प्रारम्भ में नगर सर्वोदय मण्डल की ओर से पुलिस-नागरिक सम्बन्ध पर एक गोष्ठी आयोजित

हुई थी जिसके कारण अधिकारियों से विश्वासपूर्ण परिचय हो गया था। अतः अधिकारियों ने हमें कर्फ्यू-पास देने में पूरा विश्वास किया और जो सूचनाएँ हम उन्हें देते थे उनपर वे तुरत कार्रवाई भी करते थे। वाराणसी के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक ने तो भावातिरेक में हमलोगों की संस्था के प्रति श्रद्धा भी व्यक्त की, लेकिन प्रशासन में नीचे के अधिकारी उतने सक्रिय अथवा जिम्मेदार नहीं दिखाई पड़े जितना कि इस तनाव के समय दिखाई पड़ना चाहिए था, जिसका हमें काफी खेद था। कहीं-कहीं तो किसी धर्मस्थल के टूटने पर ऊँचे अधिकारियों के आदेश के पालन में भी छोटे अधिकारियों ने ढिलाई की। एक जगह तो पी॰ए॰सी॰ की एक टुकड़ी दो दलों के झगड़े की चीख-आवाज सुनकर भी पेड़ के नीचे सोयी और बैठी रही, और बाद में स्थिति इतनी तनावपूर्ण हुई कि एक व्यक्ति का मकान फूँक दिया गया और शाम को पुलिस को गोली भी चलानी पड़ी। कहीं-कहीं तो पुलिस के छोटे अधिकारी भी साम्प्रदायिक भावना…।

प्रश्न : (बीच में ही टोककर) जब आपने लोगों की चीख और मार की आवाज सुनी तो आप उस स्थान पर क्यों नहीं गये ?

उत्तर : शान्ति सैनिक के नाते हमें वहाँ जाना चाहिए था परन्तु न तो वह हमारा परिचय-क्षेत्र था और न तो वहाँ के लोग शान्तिसेना जैसे धर्मनिरपेक्ष संगठन से परिचित ही थे। इसलिए ऐसे मौके पर हमें पुलिस का ही सूचित करना ज्यादा उचित मालूम हुआ। बेनियाबाग के इलाके में हमारी एक टुकड़ी अचानक ही दो दलों की पत्थरबाजी के बीच पड़ गयी और उन लोगों के बीच में जाते ही ढेले रुक गये तथा लोग अपने-अपने क्षेत्रों में वापस चले गये। यहाँ कर्फ्यू पहले से लागू था।

हाँ, तो अब अपने मूल प्रश्न पर आइये। आपने पूछा है कि हमने कर्फ्यू-काल में क्या काम किया। हमारी शक्ति बहुत कम थी। हमारे साथ काम करनेवाले मित्रों ने अपनी सीमित शक्ति से काम भी बहुत थोड़े किये हैं, फिर भी मैं आपको एक-एक काम गिना देता हूँ :

१. परिस्थिति का निरीक्षण और अध्ययन—जिसमें लूट-पाट किये और जलाये गये घरों को देखने *तथा आतंकित परिवारों से मिलने का काम भी शामिल था।*

२ नये उपद्रवों का पता होने पर वहाँ जाकर लोगों को समझाना तथा स्थिति पर काबू न होने पर प्रशासन को सूचित करना।

३ अफवाहों का खण्डन करना।

४. कर्फ्यू में फँसे हुए और छूटे हुए लोगों की सूचना उनके परिवारों को देना।

५. दंगाग्रस्त क्षेत्रों में सतत घूमते रहना।

६ आतंकित परिवारों के आतंक का दूर करना तथा पीड़ितों को सान्त्वना देना।

७ आंशिक कर्फ्यू छूट के समय *दूकानों पर भीड़ का नियंत्रण।*

आपने नगर के नागरिकों के सहयोग की बात पूछी है। नगर में अलग-अलग लोग अपने-अपने ढंग से अपने-अपने क्षेत्रों में काम कर रहे थे। नगर प्रमुख की अध्यक्षता में गठित एक समिति का कार्य भी हो रहा था। नगर सर्वोदय मण्डल के तत्त्वावधान में गठित नगर स्वराज्य समिति की मुहल्ला समितियों ने आंशिक कर्फ्यू छूट में अपने-अपने क्षेत्रों में भीड़-नियंत्रण का काम किया। विशेषकर खालिसपुरा की मुहल्ला समिति ने अल्पसंख्यक लोगों को राहत पहुँचाया जिसके कारण इस समिति के संयोजक श्री शिवाजी राव देवधरजी को मुहल्ले के कुछ साम्प्रदायिक लोगों की धमकी का शिकार भी होना पड़ा।

प्रसिद्ध उर्दू शायर श्री नजीर बनारसी के सहयोग से मदनपुरा के अल्पसंख्यकों की स्थिति की जानकारी प्राप्त करने में काफी सहूलियत हुई। कई अवाम मित्रों ने नये उपद्रवों की सूचना देने में बहुत मुस्तैदी दिखायी।

प्रश्न : दंगा के शुरू होने के कारणों को कुछ स्पष्ट करेंगे ? काला दिवस ने दंगा का रूप कैसे धारण किया ?

उत्तर : वाराणसी के हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे के प्रति भयपूर्ण अविश्वास भले ही रखते हों लेकिन किसी भी साम्प्रदायिक *दंगे का स्वागत वह नहीं करना चाहते।* अल्पसंख्यकों के एक छोटे-से ग्रुप का काला दिवस मनाने की छूट अगर दी गयी होती और पुलिस का पूरा नियंत्रण रखा गया होता तो यह हिन्दू-मुस्लिम दंगा नहीं हुआ होता। एक और काला दिवस मनाने की छूट नहीं मिली और दूसरी *ओर पुलिस का पूरा इन्तजाम नहीं हुआ।* काला दिवस काफी संगठित रूप से मनाया जा रहा था और उसके आयोजक भी संगठित थे। कहा जाता है कि काले झण्डे लगाने और जुलूस निकालने में वे कम संख्यावाली पुलिस के विरोध में पथराव करने में जोश पर गये और कमजोर पड़ी हुई पुलिस की *मदद में हिन्दू शामिल हो* गये। हिन्दुओं के शामिल होने पर इस दिवस ने हिन्दू-मुस्लिम दंगे का रूप ले लिया और तब तो उन मुसलमानों को भी क्षति पहुँची जो काले दिवस का *समर्थन नहीं कर रहे थे।*

वाराणसी के अखबारों ने भी अपनी खबरों में अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक या हिन्दू-मुसलमान के नाम से जो खबरें प्रकाशित कीं उनसे हिन्दू मानस काफी उत्तेजित हो गया और यह दंगा नगर के व्यापक क्षेत्रों में फैल गया। इस दंगे में हत्याएँ कम हुईं और लूट-पाट तथा आगजनी ज्यादा हुई। अनेक परिवारों को अपने घर छोड़कर दूसरी जगह शरण लेनी पड़ी। कहीं-कहीं तो लोगों को पकता हुआ खाना, पकना हुआ चावल, गुंथा हुआ आटा, बँधी हुई बकरियाँ, पींजड़े में तोते, छोड़कर अचानक भागना पड़ा है। कहीं-कहीं आगजनी और लूट-पाट में साम्प्रदायिक वृत्ति से अधिक पुरानी रंजिश और लूट की वृत्ति ने काम किया है।

प्रश्न : आपने तो मुहल्लों-मुहल्लों में घूम-घूमकर देखा है, लोगों से बातें

(शेष पृष्ठ ६०७ पर)

आधुनिक जीवन की शोकान्तिका
कृत्रिम गर्भाधान

● विनोबा

[गुजरात के श्री शिवाभाई पटेल ने अपनी लिखी "श्वेत क्रान्ति" नामक किताब पू० विनोबाजी को भेंट की और गायों के कृत्रिम गर्भाधान तथा गायों का दूध बढ़ाने के सम्बन्ध में उनके समक्ष अपने विचार रखे। उनके साथ पू० विनोबाजी की जो चर्चा हुई उसका वृत हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। सं०]

विनोबा : हिन्दुस्तान में जो गोवंश है उसे सुधारना होगा और अधिक दूध की योजना करनी होगी। आपने जो लिखा है उसमें बाहर से मजबूत सांड लाकर उनसे संकर करके मजबूत बैल और ज्यादा दूध देनेवाली गायें पैदा करेंगे, उससे दूध ज्यादा होगा यह मुख्य विचार है। इस विचार की मर्यादा ध्यान में लें, तो मैं इस विचार से सहमत हूँ। लेकिन मैं इसके खिलाफ हूँ कि उत्तम बैल का वीर्य लाकर वह गाय की योनि में "इंजेक्ट" करना, एक बैल के वीर्य का एक लाख गायों को लाभ होगा, मजबूत बैल भी पैदा होंगे, और दूध भी ज्यादा होगा। बाहर का बैल लायेंगे तो खर्च ज्यादा होगा, वीर्य लायेंगे तो खर्च कम होगा और आजकल तो वीर्य का पाउडर भी होता है, वह लायेंगे तो खर्च और कम होगा—यह सब मुझे जंचता नहीं। गाय की बात छोड़िए, मानव की बात लीजिए। मानव में भी ऐसा किया जाय कि बाहर के किसी बलवान मनुष्य का वीर्य लाकर किसी स्त्री की योनि में डाल दिया जाय, तो जो सन्तान होगी वह मजबूत होगी, लेकिन माता-पिता को अन्योन्य संगम का यानी प्रेम का अनुभव तो नहीं आया। ऐसी हालत में जो सन्तान उत्पन्न होगी, वह प्रेमशून्य होगी। उसमें न सत्य रहेगा, न प्रेम रहेगा, न रहेगी करुणा। जो न्याय मनुष्य के लिए लागू है वही गाय के लिए है। लेकिन गाय के बारे में तो लोग कहते है कि वह तो पशु है। वास्तव में गाय पशु नहीं है, वह गोमाता है। गोमाता की उपासना वेदों के जमाने से चली आयी है, इसलिए दूध बढ़ाने के लिए इस तरह की प्रक्रिया की जायेगी तो वह आध्यात्मिक अवनति का कारण होगा।

बहुतों ने वर्णन किया है और वैज्ञानिकों ने भी माना है कि गाय-बैल का जब संगम होता है, तब दोनों को इतनी तन्मयता होती है कि उस वक्त सामने हरा रंग रखा जाय तो बछड़े का रंग हरा होगा और लाल रंग रखा जाय तो बछड़े का रंग लाल होगा।

आजकल लोग द्राक्ष (अंगूर) को खून की खाद देते हैं। ज्ञानेश्वरी में उपमा दी है। ज्ञानेश्वरी गोरक्षा का तो ग्रन्थ नहीं है। लेकिन उसमें दृष्टान्त दिया है। *जब तपस्या करते हैं, तब तकलीफ होती है। लेकिन जब मोक्षरूपी फल मिलता है, तब आनन्द होता है।* यह विचार समझाने के लिए दृष्टान्त दे रहे हैं। जैसे "द्राक्षी दूध पाजाले" द्राक्ष की बेली को दूध डाला तो व्यर्थ गया, ऐसा लगा। लेकिन जब "फल परिपक्वी आले" जब फल मिला, तब आनन्द हुआ। दीखता है कि ज्ञानेश्वर के जमाने में द्राक्ष को दूध की खाद देते होंगे। ऐसा दीखता है कि इतना दूध उस जमाने में होगा। अब हम आगे बढ़े हैं, तो खून देते हैं। यह मैंने सहज दृष्टान्त दिया।

अध्यात्म को खोकर हमारा आधिभौतिक ज्ञान बढ़ेगा, तो हम कहीं के भी नहीं रहेंगे।

आज बाबा की जो कल्पना है वह "श्वेत क्रान्ति" वालों की नहीं है। हिन्दुस्तान में आज ५५ करोड़ जनसंख्या है। प्रति व्यक्ति एक एकड़ जमीन है। आगे तो और भी संख्या बढ़ेगी। फिर जमीन कम पड़ेगी। तो बिना बैल की खेती करनी होगी। दूध पीने से मुक्त होना पड़ेगा। बिना दूध कैसे चले, इसका प्रयोग करना होगा। जापान में यह प्रयोग चला है। हमें भी *वहाँ खेती में से बैल को* मुक्ति देनी होगी और दूध से गाय को मुक्ति देनी होगी। इंग्लैण्ड में एक प्रयोग चला है। वहाँ घास से दूध बनाते हैं—गाय को हटाकर घास का दूध। मतलब मनुष्य को गाय, *बैल के साथ रहना होगा, तो संयम से* रहना होगा। ब्रह्मचर्य की साधना करनी होगी। अगर वह नहीं करनी है, तो गाय को खाना होगा। "सहस्त्रधारा पयसा मही गौ।"

वेद में वर्णन आया है। एक-एक गाय सहस्त्रधारा दूध देनेवाली थी। सहस्त्रधारा यानी एक हजार तोले से ज्यादा होगा। २५—३० रतल (पौण्ड) दूध वाली गायें उस वक्त थी। क्योंकि जंगल था, खूब घास खाती होंगी। *आज जंगल* कट गया है। कमजोर गायों को बंध्या करने का आपने सोचा है। उसकी इजाजत तो नहीं ली। मानव को भी बंध्या करने की प्रक्रिया तो चली ही है। अगर *यह प्रक्रिया जारी रही, तो आप 'गांधी'* को रोकेंगे। भावी गर्भ में कैसा-कैसा तत्त्व *पड़ा है, आप तो जानते नहीं। उसी गर्भ से गांधी हुए, ज्ञानदेव,* नामदेव, शुकदेव हुए। कौन कह सकता है ऐसा महान् कोई पुरुष पैदा होता? लेकिन आपने बीच में ही रोका। यानी गर्भ हत्या-भ्रूण-हत्या है। भ्रूण-हत्या से बढ़कर पाप नहीं। बच्चे की गर्भ में ही हत्या, यह महापातक है, क्योंकि भावी जो महान् आनेवाला था उसे आपने रोका। अनेक महापुरुषों को आप रोकेंगे और ५०० पौण्डवाले मजबूत को रखेंगे, जो कृत्रिम गर्भधारण से पैदा होंगे, यह आज के जीवन की "शोकान्तिका" है। इसलिए गीता ने ब्रह्मचर्य और अहिंसा को एक साथ रखा है। ब्रह्मचर्य का पालन

नहीं करेंगे, तो हिंसा आयेगी, मार-काट होगी।

शिवाभाई : आज की परिस्थिति में बैल की खस्सी करते हैं, यह तो पाप हुआ ही। भैंस के पाड़े को भी मारते ही हैं। कृत्रिम गर्भधारण में एक बैल के वीर्य से एक लाख गायों को एक वर्ष में गर्भ-धारण होता है। तो गाय को बचाने के लिए यह क्यों न किया जाय ?

विनोबा : भैंस को खत्म करना, बैल को बध्या करना और कमजोर गायों को भी बध्या करना, इतना पाप तो करते ही हैं तो और पाप क्यों न किया जाय ? ऐसा ही आप पूछते हैं। "वा वा अधिकस्य अधिकं फलम्" ऐसी भयंकर स्थिति में दूध छोड़ने का ही प्रयोग क्यों न किया जाय ? इसीलिए बाबा ने तीन साल दूध छोड़ा था। तब बाबा कमजोर हो गया। उस समय बापू थे। बापू ने बाबा को लिखा, 'तुम्हारे जीवन का उद्देश्य क्या है, यह तुमको निश्चित करना होगा। अभी तो तुम नयी तालीम, खादी वगैरह का काम कर रहे हो। अगर दूध के बिना मानव-जीवन कैसे चलता है यह देखना, यही तुम्हारे जीवन का उद्देश्य हो, तो फिर बाकी सारे काम छोड़कर उसी के पीछे लगना होगा। उस विषय का साहित्य पढ़ना होगा। शास्त्रज्ञों से चर्चा करनी होगी।' वह पत्र बाबा ने पढ़ा और उसी दिन से दूध पीना आरम्भ कर दिया। मेरी व्यक्तिगत बात छोड़ दीजिए। मानव को दूध छोड़ने का प्रयोग करना होगा या तो फिर ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि यह कृत्रिम इलाज चलते रहेंगे, तो मानव इस पर आयेगा कि मानव को खाना गलत नहीं। मानव को मारना तो नहीं, लेकिन मारा, एक पाप तो किया; अब इतना सारा विटामिन ऐसा ही व्यर्थ जाने देना यह दूसरा पाप होगा। इस पर मैंने विचारप्रेरक दर्शन में लिखा है। प्रसिद्ध चीनी लेखक लिन युटांग ने लिखा है—

"मेरे पेट का 'आपरेशन' करवाना हो तो मैं चीनी डाक्टर को पसन्द नहीं करूँगा उससे 'आपरेशन' नहीं करवाऊँगा, क्योंकि चीनी लोग चाहे जो चीज खाते हैं, तो मेरा 'आपरेशन' करते-करते मेरा कोई ऐसा अवयव उसे दीख जाये, तो चीनी डाक्टर वह खा जायेगा। इसलिए मैं यूरोपियन डाक्टर के हाथ से ही 'आपरेशन' करवाऊँगा।" इतने युटिलिटेरियन (उपयोगितावादी) होते हैं, चीनी लोग।

शिवाभाई : अपने यहाँ जैसा नीतिशास्त्र है, वैसा क्या चीन में नहीं है ?

विनोबा : चीन में भी नीतिशास्त्र है। लेकिन अपना नीतिशास्त्र होते हुए भी तरह-तरह के पाप करते हैं कि नहीं ? और दलील भी करते हैं कि इतने पाप करते ही हैं तो और पाप क्यों न करें ?

शिवाभाई : ब्रह्मचर्य-पालन आज कठिन होगा। दूध बढ़ाना आसान है। विज्ञान का युग है।

विनोबा : आज ब्रह्मचर्य-पालन आसान है।

"दशास्यां पुत्रान् आधे हि
पतिं एकादश कृधि"

यह वेद में आया है। इसका अर्थ है तुम दस पुत्रों को जन्म देना और ग्यारहवाँ अपना पति समझना। आज तो दस पुत्र कौन माँगेगा ? आज २-४ पुत्र माँगते हैं। मतलब, प्राचीन काल में ब्रह्मचर्य का आध्यात्मिक मूल्य था। इसलिए प्राचीनकाल में ब्रह्मचर्य-पालन वे ही लोग करते थे, जिनको कोई आध्यात्मिक खोजें करनी थीं, जिनको आत्मसाक्षात्कार करना था। लेकिन आज ब्रह्मचर्य तो सामाजिक मूल्य (सोशल वैल्यू) है। इसलिए आज तो ब्रह्मचर्य-पालन करना आसान हो गया। दुगुना मूल्य (डबल वैल्यू) उसे आयी है।

शिवाभाई : आज टेम्प्टेशन्स (आकर्षण) इतने बड़े हैं कि संयम असम्भव है। सिनेमा, अश्लील साहित्य इत्यादि बहुत बढ़ा है।

विनोबा : टेम्प्टेशन्स (आकर्षण) किसने पैदा किये ? ईश्वर ने ? वह तो आपने पैदा किये हैं। आपके हाथ में है। आप उसे बन्द करें। कोई भी किसान क्या ऐसा ही व्यर्थ बीज बोयेगा ? क्या वह यह चाहेगा कि बीज तो बोऊँ, लेकिन वह उगे नहीं, अंकुरित न हो ? क्या इस तरह वह नाहक अपना बीज फेंकेगा ? अगर इस बीज का इतना महत्त्व है, तो फिर मनुष्य-बीज का—वीर्य का—तो उससे कई गुना अधिक महत्त्व है ! किसान तो मुहूर्त और समय देखकर बोता है। वैसे ही प्राचीन ऋषियों ने समझाया है। इसलिए योग्य समय और उम्र देखकर, ब्राह्मणों को बुलाकर, उनका आशीर्वाद लेकर 'गर्भाधान-विधि' होती है। सबको मालूम होता है कि आज 'गर्भाधान' होनेवाला है। प्रज्ञा है बत्ती और वीर्य है तेल। जिसके वीर्य की हानि हुई उसकी प्रज्ञा की हानि हुई। तो ऐसे कृत्रिम इलाजों से आपकी सन्तान भी नहीं बढ़ेगी और प्रज्ञा की हानि होगी।

शिवाभाई : आपके साथ मैं सहमत हूँ। लेकिन आज क्या चल रहा है, वह बता रहा हूँ।

विनोबा : जो चला है उसे रोकना कैसे ? मेरे सामने यही सवाल है। एक दफा पूना के नजदीक गायों की प्रदर्शनी थी। मगनलाल भाई मुझे ले गये थे। वहाँ बड़ी मोटी गाय थी और दूध का स्तन बड़ा था। वह देखकर मुझे अच्छा नहीं लगा। ऐसा बताया गया कि एक गाय ८० पौण्ड दूध देती है। मैंने पूछा, "क्या ये गायें दौड़ती हैं ?" बोले, "नहीं।" मैंने कहा, "इस गाय का दूध पीने से न ताकत आयेगी, न आध्यात्मिकता।" वैद्यशास्त्र में कहा है कि गाय का शाम का दूध सर्वोत्तम होता है, क्योंकि "व्यायामातिपसेवनात्" जंगल में जाती हैं, लौटती हैं तो अच्छा व्यायाम भी होता है और अच्छी हवा भी मिलती है। उसके बाद का दूध अच्छा होता है। पुरानी प्रथा थी, गाय से सेवा लेती है, तो उसके बछड़े को

उसका दूध पहले पीने देते थे। बाद में अपने लिए दूध दुहते थे। आज तो मशीन से दूध निकालते हैं। गाय का दूध बछड़ा पीता है, तो उससे गाय को प्रसन्नता होती है। उसके बजाय मशीन लगाना, इससे अधिक कठोरता और क्या हो सकती है!

"मैं 'क्रास ब्रीडिंग' के खिलाफ नहीं हूँ। उसकी मर्यादाएँ देखनी होंगी। "ब्रीड" धीरे-धीरे "डिटेरिओरेट" (नाश) न हो यह देखना होगा।

शेरनी गर्भधारण के बाद शेर को नजदीक आने नहीं देती, लेकिन मानव में यह चलता है। फिर कई प्रकार की तकलीफें होती हैं। यदि दो शेर एक शेरनी के पीछे लगें तो शेरनी क्या करती है? दूर रहकर उन दोनों को लड़ने देती है। दो में से जो बचता है, उसे वरण करती है—"नलदमयन्ति स्वयंवर"। कमजोर शेर को वरण नहीं करेगी। क्यों? क्योंकि सन्तति मजबूत, पराक्रमी कैसे पैदा हो, इसका विज्ञान उसे मालूम है।

शिवाभाई : आज विज्ञान (साइन्स) इतना विकसित हुआ है कि अनाज में भी अणुशक्ति (एटामिक एनर्जी) का उपयोग करते हैं।

विनोबा : और इतना सारा होने के बाद क्या होगा? पृथ्वी ठण्डी हो रही है और २०० करोड़ साल के बाद एक भी आदमी बचेगा नहीं। कोयना (महाराष्ट्र) में भूकम्प हुआ। कहते हैं, ईरान से लेकर मलाबार के किनारे तक समुद्र ८०० मील जमीन के नीचे धँसा है। यानी उतना जमीन का हिस्सा पानी पर है। कब वह सारा हिस्सा पानी में डूबेगा, कह नहीं सकते। मैं तो राह देख रहा हूँ कि जैसे पेड़ हवा से पोषण लेते हैं वैसे हम भी हवा से कब पोषण लेंगे और खाना कब बन्द होगा। इतना अगर विज्ञान ने किया तो ऐसा माना जायगा कि अहिंसा की दिशा में विज्ञान आगे बढ़ा।

कृत्रिम गर्भाधान को विनोबा की सहमति नहीं—कोई इजाजत मांगे तो इजाजत भी नहीं। क्योंकि उस प्रक्रिया से जो दूध पैदा होगा, उसकी आध्यात्मिक कीमत नहीं रहेगी, वह प्रेमशून्य दूध होगा। ●

'यह ईश्वर की लीला है'

● जयप्रकाश नारायण

[ग्वालियर में १ जून '७२ को बागियों के आत्म-समर्पण के समय सभा में दिया गया श्री जयप्रकाशजी का पूरा भाषण हम यहाँ दे रहे हैं। इस भाषण में बागी-समस्या, अपनी कठिनाई और नागरिक-कर्तव्यों पर श्री जयप्रकाशजी ने प्रकाश डाला है। सं०]

मैं अपना बड़ा सौभाग्य मानता हूँ कि यह कार्य आसमान से मेरे कन्धों पर उतर पड़ा। १९६० में जब विनोबाजी भिण्ड-मुरैना की यात्रा पर आये थे उस समय जो आत्म-समर्पण हुआ था, आत्म-समर्पण के बाद जो कुछ कार्य हुआ था या जो नहीं हुआ था उस सबसे मेरा बहुत ही थोड़ा सम्बन्ध रहा। उस समय केवल एक बार भिण्ड की एक सभा के लिए आया था। मैं दूसरे कामों में था, सर्वोदय के ही, और दूसरे लोग ये काम यहाँ कर रहे थे। इस बार भी मेरे मन में, सपने में भी, कभी यह बात नहीं आयी थी कि चम्बलघाटी या बुन्देलखण्ड की डाकू-समस्या के हल का काम मैं अपने कन्धों पर लूँगा। वैसे ही कमजोर कन्धे हैं। उम्र भी हो चुकी है। स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहता। जीवन का काम समाप्त हो चुका है, ऐसा ही मैं मानता हूँ। जो काम पहले के हैं वे भी छोड़ रहा था, अब भी छोड़ ही रहा हूँ। और इस साल के अक्तूबर से बहुत कुछ कार्यों से मुक्त हो जाऊँगा। यही मेरी मनोभावना थी कि जो प्रसिद्ध बागी हैं वे समर्पण कर दें। हम तो उन्हें बागी ही कहते हैं, वे भी अपने को बागी कहते हैं, इस इलाके के लोग भी उन्हें बागी कहते हैं। केवल एक बागी है जिनका आत्म-समर्पण आज होगा जो अपने आप को डाकू कहते हैं। उनका पत्र मुझे मिला, पिछली बार जब मैं आया था। लिखा हुआ था श्री श्री श्री जंगल निवासी डाकू ठाकुर मलखान सिंह पंवार।

ईश्वर की यह लीला है। मैं शुरू से ही यह रट लगा रहा हूँ। इसमें कोई भी श्रेय मुझे है, ऐसा मैं मानता नहीं हूँ। इस सारे नाटक में मेरा पार्ट किस कारण से है, मैं जानता नहीं। इन सभी बागी भाइयों ने कहा कि हमारा विश्वास या तो विनोबाजी पर है या आप पर है। आप मध्यस्थता करें और जिस किसी के सामने समर्पण करने को कहें, हम करेंगे। बस इतना ही भर रहा कि उनका किसी कारण से हम पर विश्वास रहा और हमें वह विश्वास खींच लाया और मेरे हाथों से यह काम हुआ। नहीं, तो मैंने बराबर अपने को पीछे रखा, गांधी और विनोबा का नाम लेता रहा। विनोबा ने यह बीज बोया, उसका पौधा हुआ, पेड़ हुआ, उसके ये फल लगे। २० के बदले में ४०० के करीब अब हो जायेंगे। यह सारा हुआ है। जैसा सेठीजी ने कहा, बार-बार मैं भी कहता हूँ, विदेशी पत्रकार भी कहते हैं कि भारत ही ऐसा देश है जहाँ यह हो सकता है।

अब इस देश की यह क्या महिमा है? आज हमारे नवजवान लोग हैं, कहाँ तक इसको समझ रहे हैं, हमारे पुराने लोग हैं, राजनीतिवाले हैं, व्यवसायवाले हैं; समाज-सेवी लोग हैं, किसी भी क्षेत्र के लोग हैं, वकील हैं, डाक्टर हैं। अपने देश की यह महिमा है, यह बात तो हम कहते हैं, लेकिन उसकी जिम्मेदारी हमारे ऊपर इस देश के पुत्र की हैसियत से, नागरिक की हैसियत से, क्या होती है यह हम नहीं समझते। नहीं तो आज इस देश का हाल यह नहीं होता जो आज है। बहुर-

हाल यहाँ का काम जब काफी हो चुका था तो सेठीजी ने कहा कि बुन्देलखण्ड का काम भी आप लोग लें। तो सेठीजी भी आज यहाँ बैठे हुए हैं, मैं कहना चाहता हूँ कि बुन्देलखण्ड की डाकू-समस्या क्या है और वहाँ राजनीति आदि की क्या पेचीदगियाँ हैं, सर्वोदय आन्दोलन की भूमिका कितनी कमजोर है। इन बातों का पूरा-पूरा पता होता तो वह काम हरगिज मैं अपने हाथों में नहीं लेता। वह काम हो गया, लेकिन मुझे बहुत भय है इस बात का कि उसके आगे का काम जो होनेवाला है वह ठीक से हो पायेगा। जो कुछ वहाँ हुआ उसका मुझे खेद है। सेठीजी से मैं अलग बात करूँगा, उनको वक्त मिलेगा तो, नहीं तो पत्र लिखकर ही सन्तोष कर लूँगा। जिस रीति से वह काम चला, उस रीति से तो आगे नहीं चल सकता है। अब मेरा ख्याल है कि *बागियों के आत्म-समर्पण* का या डाकुओं के आत्म-समर्पण का यह एक पहला अध्याय समाप्त हुआ।

अब मैं एक निवेदन आप सबसे करना चाहता हूँ कि आगे समर्पण के लिए मैं नहीं आऊँगा चाहे वह सोबरनसिंह हो चाहे कोई सिंह हो। उसकी मैं आवश्यकता नहीं समझता। वहाँ एक ऐसा वातावरण पैदा हो गया है, मैंने बुन्देलखण्ड में महसूस किया, छतरपुर में जाकर, कि जैसे कुछ सेठी बनाम जयप्रकाश का मामला है। अब क्या मुकाबला! बताइए! देश का जो सबसे बड़ा प्रदेश है उसके वे मुख्यमंत्री हैं और मैं एक साधारण नागरिक हूँ। लेकिन ऐसी कुछ परिस्थिति पैदा हो गयी है। उस परिस्थिति के कारण भी और स्वास्थ्य के कारण भी। जब मैं मद्रास पहुँचा और पहाड़ पर पहुँचा, काफी दूर, मद्रास से भी कोई २४० मील दूर गया। मेरी तबीयत अच्छी नहीं रही। डाक्टरों ने कहा कि आप जिन्दा रहना चाहते हैं तो सफर बन्द कीजिए। तो मैंने पहले सेठीजी को यह तार दे दिया कि मैं नहीं आऊँगा आप समर्पण लीजिये, मेरी तरफ से काम कीजिए और मूरतसिंह और उनके साथियों के नाम चिट्ठी लिखकर भेज दी थी कि मैं नहीं आ सकता हूँ इस कारण से आप सबसे मेरी प्रार्थना है कि आप सेठीजी के सामने आत्म-समर्पण करें। मेरे प्रतिनिधि स्वरूप देवेन्द्रभाई (देवेन्द्र कुमार गुप्त) वहाँ रहेंगे, जो कुछ कहना करना होगा वहाँ वह करेंगे। लेकिन अकस्मात हमें खबर मिली कि वे लोग कह रहे हैं कि हम समर्पण नहीं करेंगे, जयप्रकाश नहीं आयेंगे तो नहीं करेंगे। मजबूरन मैं दौड़कर वहाँ से वापस आया, क्योंकि मैं जानता था कि ३१ को अगर समर्पण नहीं हुआ और पहली जून से अगर पुलिस की कार्यवाही शुरू हुई तो जो कुछ हम लोगों ने काम किया है, कराया है पिछले सात-आठ महीनों में, सब पर पानी फिर जायेगा, बेकार हो जायगा। तो जोखिम लेकर मैं आया। हृदयरोग का तो कुछ पता नहीं, यह आप देख रहे हैं कब क्या हो जायगा। कमलनयनजी रात को अच्छे भले सोने गये, सुबह उनकी लाश निकली, विक्रम साराभाई का भी यही हाल हुआ। फिर वहीं वापस जाना है हमें। तो मैं अब समर्पण के लिए तो हर्गिज नहीं आनेवाला हूँ। सेठीजी समर्पण लें। वहीं समर्पण हो, पुलिस कार्यवाही करे, जो कुछ करना हो करें।

दूसरी बात यह है, अब तक हम *लोग सेठीजी से समय माँगते रहे हैं और* उन्होंने बहुत कृपा करके हमारे काम के लिए ३१ मई तक का समय दिया था। अब ३१ मई के बाद यह पहली जून है- अब आगे के लिए हम एक दिन का समय *माँगते नहीं।* यह भी नहीं कहते कि हम *अपना काम बन्द कर देंगे।* हम अपनी पद्धति से, हमारे जो मुट्ठी भर साथी हैं, हम करते रहेंगे अपना काम। प्रशासन अगर पुलिस-कार्यवाही चाहे तो उसके पास सब कुछ है, खून की नदियाँ भी बहाना चाहे तो बहा सकता है, जो भी करना चाहे करे। अपनी तरफ से हम समय माँगते नहीं, अपना काम करते रहेंगे, जो राजी हो जायेगा, सेठीजी के चरणों में लाकर हम पेश कर देंगे—वह उनको गले से लगायें, वह उनको जेल भेजें, जो करना हो सो करें।

तीसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ *कि मैं तो एक अदना आदमी हूँ विनोबाजी* का और मेरा कोई मुकाबला नहीं है। लेकिन जो विनोबाजी के वक्त में, इतना प्रचार और प्रोपगेण्डा हुआ उसे सुनते-सुनते मेरे कान पक गये कि सर्वोदयवालों *ने डाकुओं को हीरो बनाया। पन्तजी ने* पार्लियामेण्ट में कहा कि 'ग्लैमराइज' किया। ये शब्द इस्तेमाल होते हैं। १९ मई की सभा में सेठीजी ने भी कहा कि अखबारों में जो कुछ हुआ, इन सर्वोदय वालों ने उनको हीरो *बनाया, ये शब्द हैं।* तो मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि जो लोग हमारी शरण में आते हैं, हमारे पैरों पर पड़ते हैं उन्हें हम उठाकर अपने गले लगाते हैं। हमारे लिए उस दिन से वे *डाकू नहीं रह गये।* हमने उनको कोई वादा नहीं किया है कि आपके ऊपर मुकदमा नहीं चलेगा। माधवरावजी सिंधिया ने उनको कहा कि हम तुमको माफी कर देंगे। माफी ही नहीं जमीन *भी दी और जिन लोगों ने* उनको हाजिर कराया था उन्हें जागीर दी उन्होंने। तो हमने 'एमनेस्टी' की बात उठायी नहीं, न उन्होंने की। ये खुद बेचारे कहते हैं कि हम अपने किये पाप का फल भुगतेंगे, सिर्फ हमारी मौत की सजा अगर हो तो हमें फाँसी न लगे, इतना ही है। हमारे साथ अच्छा व्यवहार हो। यह न हो कि जैसे ये मौनी कोरी रहे थे, देवीसिंह ने, उस वक्त समर्पण किया था तो मनुष्य का मैला उनके मुँह में डाला था पुलिस ने, सन् '४८ में। अब उसी का भय है उनके मन में आज तक कि हम समर्पण नहीं करेंगे। हमको कल लिखकर दिया कि हमको पुलिस के हाथ में नहीं दिया जाय, हमें सीधे जेल भेजा जाय। हमने कहा कि यही हो रहा है भाई, आप डरिये नहीं, सीधे जेल भेजा जायगा। तो हमने किसी को हीरो नहीं बनाया है, भाई बनाया है, गांधी-परिवार में उनको शामिल किया है। मूरतसिंह की चिट्ठी में हमने

लिखा था, हमारी चिट्ठी यह है कि आप मेरे सामने समर्पण करें, चाहे सेठी साहब के सामने, करें चाहे अन्य किसी के सामने करें, आप इस भाव के साथ करें कि आप ईश्वर के चरणों में समर्पण कर रहे हैं। इस भाव से करेंगे तो आपको चिन्ता करने का कोई कारण नहीं है। फिर वह करुणानिधान सारी फिक्र आपकी करेगा—इस भाव से आप समर्पण करें। मैं नहीं समझता हूँ कि हमारे लिए तथा सर्वोदयवालों के लिए कोई जन्म से डाकू बनकर आता है, जो डाकू है उसका भी सुधार हो सकता है, उसे सुधारना चाहो तो जेल में सुधार सकते हो। मेरी जो पन्तजी से पहली मुलाकात हुई तो उन्होंने पूछा कि विनोबाजी के सामने जिन लोगों ने समर्पण किया था, उनमें से कोई डाकू फिर न भगा, डाकू फिर बना, फिर कोई जंगलों में, बेहड़ों में गया ? मैंने कहा कि कृष्णचन्दजी जहाँ तक मुझे मालूम है, कोई गया नहीं। दरियाफ्त करके ठीक-ठीक आपको खबर दूँगा क्योंकि मैं उस काम में नहीं था। मैंने दरियाफ्त कर मालूम किया कि कोई नहीं गया। एक आदमी भी वापस नहीं गया। लेकिन मैंने पन्तजी से यह पूछा कि आप बताइये कि आप जिन्हें आजन्म सजा देते हैं, वह १२ बरस की सजा काटकर आता है तो वह फिर डाका नहीं डालता है ? फिर बदमाशी नहीं करता है ? जेल तो कारखाने बने हुए हैं जहाँ कि ये अपराधी तैयार होते हैं। हम तो चाहते हैं कि उनका सुधार हो। इसलिए हमने सेठीजी से भी निवेदन किया है, भारत सरकार से भी। बाकी दोनों सरकारों से भी किया है कि सजा हो जाय, जो भी सजा हो, चाहे आजीवन कारावास की, उस सजा के बाद उनको मामूली जेलों में आप न रखें, खुले हुए जेलों में रखें उनको जैसे सम्पूर्णानन्दजी के जमाने में जेल, उस जमाने में राजस्थान में बरकतुल्लाखां साहब को मालूम है, वे खुद ही मुझसे कह रहे थे कि दिन को जहाँ चाहे जा सकते हैं, परिवार के साथ रह सकते हैं, रात को उनको वापस आना होता है। उन्हें जमीन दी जाती है, खेती करते हैं। ये लोग अपने इन बेहड़ों के विकास, इन पिछड़े हुए इलाकों के विकास में अगर मोहरसिंह का, माधोसिंह का, इन लोगों का सहयोग मिलता है, तो इनको मौका देना चाहिए। तस्वीरें ली गयी पगारा में तो हमने किसी को बुलाया नहीं था। मैं समझता हूँ कि कल्पना-शक्ति की बहुत बड़ी कमी थी भारत सरकार की, आपको नहीं कह रहा हूँ, आप तो कह देते कि हम इसके विरोध में नहीं थे (कि) दुनिया के इतिहास में—इस घटना में मैं पड़ा हूँ इसलिए नहीं कह रहा हूँ—ऐसी घटना घटी नहीं कभी, यह एक ऐतिहासिक घटना घट रही थी, तो पूरा इसका टेलीविजन लेना था, सारी मुलाकातें होनी चाहिए थीं, तो असर होता उसका, सारा दिखाया जाता। सारे देश के ऊपर जो अपराध हो रहा है, बढ़ता जा रहा है, 'ला एण्ड आर्डर' की विधि-विधान की परिस्थिति, व्यवस्था की परिस्थिति, बिगड़ती जा रही है, देश में—उस पर असर होता। 'तस्वीर छप जायेगी तो शिनाख्त करने में कठिनाई पैदा होगी।' बाबा ! बीस हजार की भीड़ के सामने जो समर्पण कर रहा है, तो फिर शिनाख्त की कौन-सी बात रह जाती है। हमने उनको राजी कर लिया है कि वे अपना अपराध स्वीकार कर लेंगे और अगर झूठा मुकदमा पुलिस लायी तो नहीं करेंगे, सच्चा मुकदमा होगा तो कहेंगे कि हाँ, हमने यह कत्ल किया है। जाकर मोहर सिंह से बात कीजिए। कल वे गणेशजी, गंगासेवकजी मुझसे खुद ही कह रहे थे कि मैं तो उससे मिलकर बड़ा प्रभावित हुआ। पूछा कि कत्ल किया ? तो कहा कि हाँ किया, क्यों नहीं करते हम ? हमारे साथ ऐसा हुआ था। तो वे तो वहाँ जाकर अदालत के सामने अपने अपराध कबूल करनेवाले हैं, तो हम बिलकुल इस बात से इनकार करते हैं चाहे सेठीजी नाराज हों, इन्दिराजी नाराज हों, इनके पुलिसवाले नाराज हों—विनोबाजी के जमाने में तहसीलदारने जो बयान दिया था वह कोई विनोबाजी की शान के मुताबिक नहीं था। कभी हम मानते नहीं इस बात को कि हमने उनको हीरो बनाया है। हमने उनको भाई बनाया, आदमी बनाया है। मेरी पत्नी ने उनके माथे में तिलक लगाया और हाथ में राखी बाँधी है और अगर यह भेद खोलने में नुकसान न हो जाय हमारे कमिश्नर साहब का, डी० आई० जी० साहब का तो उनकी पत्नियों ने भी आकर राखी बाँधी हैं पगारा में। मानवता का काम हो रहा है। मानव-मानव को कैसे बनायेंगे ? उसको कहते रहना कि तुम डाकू हो, तुम डाकू हो, डाकू हो !

अन्तिम बात मुझे यह कहनी है आपसे कि ठीक है, सेठीजी के लिए अहिंसा और शक्ति का समन्वय, शान्ति और शक्ति का समन्वय, आप देखते हैं... मैं तो समझता हूँ कि गांधीजी के देश में, तो हमारे मुख्य मंत्री और प्रधानमंत्री उनको भी कहना चाहिए कि पुलिस का रवैया कुछ दूसरा भी हो सकता है, दूसरे प्रकार से भी जो दुनिया की पुलिस काम करती है, करती रही है उससे भिन्न प्रकार से भारत की पुलिस काम कर सकती है। जब दुनिया कहती है कि भारत (टाइम मैगजीनवाले ने लिखा) ही एक देश है जहाँ इस प्रकार की घटना घट सकती है, तो यहाँ की पुलिस जो इंग्लैण्ड की पुलिस करती है, जो अमेरिका की पुलिस करती है उससे कुछ भिन्न नहीं कर सकती ? ये भी कोई अहिंसा का काम नहीं कर सकते हैं ? ये भी लोगों का मानस-परिवर्तन नहीं कर सकते हैं; हृदय-परिवर्तन नहीं कर सकते हैं ? आज शुक्ला साहब, नागू साहब एक डाकू को अपने सामने बैठाकर आदर से उसका सत्कार करते हैं—तुम भाई, तुमने यह काम किया है। अपना गुनाह मानो, अब आगे के लिए तुम्हारी जिन्दगी ठीक रहेगी, वह जरूर उनकी बात मानेगा। हमारे अन्दर कौन-सी शक्ति है कि हमको मान लेगा ? तो पिछले जितने महीनों में हमारा काम चल रहा था उनमें मैं नहीं समझता हूँ कि शक्ति-प्रदर्शन कोई आवश्यक था, उसका उपयोग नहीं हुआ भग-

वान की कृपा है। आगे जो आप करना चाहें करें, मैंने कह दिया है कि आपसे अब समय में माँगता नहीं हूँ। हम लोगों को जो करना होगा करेंगे। हमें चिन्ता इस बात की है कि जो कुछ मैं गहराई में गया कि इस समस्या, दस्यु-समस्या की जड़ें बहुत गहरी हैं, इतिहास में भी हैं, भूगोल में भी हैं, मनोविज्ञान में भी हैं, समाज की रचना में भी हैं और प्रशासन की रचना में भी हैं, राजनीति में भी हैं।

काम शुरू हो जाने के छः महीने बाद पहला बयान मैंने १० अप्रैल को दिया, जिसको पढ़कर प्रधानमंत्रीजी ने कहा कि आपने तो इसमें आवश्यकता से अधिक नम्रता दिखायी है। आप तो वहाँ बैठे ही हुए थे। वही मेरा भाव है। मैंने कोई खास इस भाव से लिखा ही नहीं। मैं मानता ही नहीं कि जादू हुआ, क्या हुआ, जादू करनेवाला वह होगा। हमने तो कोई जादू किया नहीं। हमने क्या किया? हम तो बेहड़ों में गये भी नहीं। तीन दिन वहाँ पगारा में बैठे थे। उन लोगों से मिले हम बस, वहाँ एक दिन १० तारीख को और फिर ११ तारीख को मौनी मिले। १० को शकरसिंह मिले, और ११ तारीख को बाकी ये मूरत सिंह और फिर ये मौनी महाराज, रामसहाय और उनके गंग के लोग मिले। मेरी तो इतनी ही बातचीत उनके साथ हुई।

तो मित्रो! आगे हमें भय है इस बात का जो १० अप्रैल के बयान में कहा था हमने क्योंकि उस वक्त २०० की बात सुनी थी हमने कि लोग समर्पण करेंगे अप्रैल १४, १६ को। तो इतने बागियों के आत्म-समर्पण कर देने से यह समस्या हल नहीं होगी या कुछ दो-चार सौ और हो जायें; समर्पण कर देने से हल नहीं होती है यह समस्या। इस समस्या का हल करना कोई सर्वोदयवालों का, जयप्रकाश नारायण का अकेले बूते के बाहर की बात है, यह असम्भव बात है। हमारी ऐसी शक्ति नहीं है। कुछ भी शक्ति हमारी नहीं है। जो शक्ति है, वह अहिंसा की शक्ति है, प्रेम की शक्ति है हमारी क्या शक्ति है? और उस शक्ति से दुनिया में कोई बड़ी शक्ति नहीं है, मैं मानता हूँ—प्रेम की शक्ति से दुनिया में कोई शक्ति बड़ी नहीं है। चाहे बड़े-से-बड़े हथियार बना लें ये लोग, आखिर वियतनाम को और अंग्रेजों को, अमेरिका को और रूस को मिलकरके सन्धि करनी पड़ी। आखिर उनके पास कम हथियार हैं? उन हथियारों के भय से करना पड़ा। इन हथियारों से हमारी समस्या नहीं हल होगी, शान्ति नहीं स्थापित होगी। मनुष्य-मात्र शान्ति चाहता है, जीव-मात्र शान्ति चाहता है। हम समाज में कैसी शान्ति कायम रख सकते हैं? यह तो वहाँ जो आपके माउण्टआबू में पुलिस स्कूल कालेज है वहाँ सिखाना चाहिए आप लोगों को।

यह गांधी का देश है, महावीर का देश है, बुद्ध का देश है। यह कोई साधारण देश हमारा नहीं है। आज हम गिर गये हैं, ठीक है, बहुत पतित हो गये हैं हम, लेकिन फिर भी कुछ दूसरा ढंग हमारा हो सकता है और होना चाहिए। हमारा दावा कभी नहीं रहा जैसा मैंने कहा, मैंने बराबर अपने को पीछे रखा, बराबर मैंने धन्यवाद दिया है सेठीजी को। भूरि-भूरि प्रशंसा और धन्यवाद! हर सभा से और हर मंच से, आज देता हूँ, हृदयपूर्वक देता हूँ। इनके सहयोग, इनके अधिकारियों के सहयोग के बगैर यह काम होता नहीं। इनके अधिकारियों के हथियार नहीं, इनका यह हेलीकाप्टर नहीं, इनकी आटोमेटिक मशीनगनें नहीं, उनका सहयोग मिला है। बार-बार दौड़कर सेठीजी आये हैं, गर्मी के दिनों में कहाँ-कहाँ गये हैं, यह तो हम शुरू से कहते हैं। यह हमारी मिली-जुली खोज है। हमको तो बीच में खींच लाये हैं ये लोग, और मैं खिंचकर आ गया। अच्छा काम, भला काम था, ठीक है, अगर मैं निमित्त बना लिया गया किसी कारण से तो भगवान जाने वह काम सिद्ध हुआ; नहीं हुआ तो भगवान जाने क्यों नहीं हुआ? हम मिलकर इस काम को करते रहे हैं। इतना मैं जरूर कहूँगा कि अधिकारियों का, चाहे वह आपके सचिव हों, चाहे आपके वह शुक्ला साहब आई० जी० पुलिस हों, विशेष आई० जी० पुलिस नागूजी हों, डी० आई० जी० साहबान हों, कलेक्टर साहबान हों, एस० पी० साहबान हों, इन सबकी मदद नहीं होती, तो मैं मुक्तकंठ से कहता हूँ कि सफलता हम लोगों को नहीं होती। लेकिन सेठीजी को यह भी मालूम होना चाहिए कि इन्हीं के अन्दर ऐसे तत्त्वों को खोजना चाहिए, जिन लोगों ने काम बिगाड़ने की कोशिश की, और आगे भी काम बिगाड़ेंगे, क्योंकि निहित स्वार्थ है उनका कायम में, इस प्रकार के जुल्म में, जल्द-से-जल्द इन इलाकों की सफाई होनी चाहिए। १४ ता० को आपने जो कहा कि अफसरों का तबादला करेंगे, यानी एस० पी० और कलेक्टर के नीचे के जो लोग हैं, पुलिस के अधिकारी हैं, पटवारी हैं उनको और अच्छे लोगों को भेजेंगे तो और अच्छा होगा। यह जल्द करना चाहिए। हथियार देनेवाले लोगों में पुलिस और फौज के लोग थे, इसी इलाके के लोग थे, इसकी सौदागीरी करनेवाले लोग हैं, वे लोग गाँव में इनकी डकैती का माल रखते थे (और जो इसकी व्यापार करते थे) वे लोग हैं जो हिस्से लेते हैं, जो ठेके लेते हैं, ये सारे लोग निहित स्वार्थवाले लोग हैं। ये लोग देखते हैं कि बिजनेस हमारा खत्म हो गया, यह कहाँ से आ गया मामला! और इसको वे फिर पैदा करेंगे। इसलिए इसमें जल्दी होनी चाहिए। आप कह चुके हैं। कल जेल में जाना है। हमारे साथी कहते हैं कि जेल में जाना हमारे लिए मुश्किल हो गया है। यही वे पूछते हैं कि भाई हमारे दुश्मनों को जो हथियार दिये थे, उनको लेने की बात थी तो कितना नाम हुआ, क्या हुआ, कुछ हथियार लिये गये हैं, लेकिन ने मीटिंग की

हमारी मिन्नत थी, लेकिन आज तक हम लोगों को डी० आई० जी० साहब ने सूची नहीं दी है। जिन-जिन से हथियार लिये गये है, हम जाकर वह सर्वे, मोहरसिंह या और लोगों से, जो पूछें कि साहब इतने वापस हो गये हैं, काम हो रहा है। इसमें कानूनी अड़चन है, वे लोग सुप्रीम कोर्ट तक जा सकते हैं जिनको लाइसेन्स दिया गया है। तो सरकार को बात आप समझिये। यह तो नहीं है कि दे दिया और छीन लिया। समझा-बुझाकर उस काम को भी किया जा सकता है। समय लगेगा, लेकिन जो भी हो, इसमें इनको आश्वस्त हम कर सकेंगे। इनकी रक्षा का भार सरकार के ऊपर भी है, हम क्या कर सकते है उनकी रक्षा, लेकिन भगवान उनकी रक्षा करे, हुकूमत करे। सेवा कर सकते हैं हम उनकी, उसे हम करेंगे।

तो मित्रो, कुछ दुखी हृदय से मैंने आज बात कही है आपसे कि यहाँ का तो शायद ठीक हो जाय, लेकिन बुन्देलखण्ड का मुझे भय है कि जो वातावरण वहाँ का है वह शुद्ध नहीं होता है तो काम बिगड़ सकता है। यहाँ का भी वातावरण बिगड़ सकता है, लेकिन बिगड़ा नहीं है। यह हमारे सौभाग्य की बात है। अभी आगे का काम है। रुपयेवालों का अजब हाल है। कोई पकड़कर ले जायेगा उनके घर से, एक लाख माँगेगा तो एक लाख वह हाजिर कर देंगे। जब पहली बार आया यहाँ तो इतनी तारीफें सुनी, कोई चैम्बरवाले आये, म्युनिसिपैलिटीवाले आये, कोई वकील आये, कोई ये आये, कोई वे आये कि साहब बड़ी राहत हो गयी। सबलोग सुख की नींद सो सकेंगे। सुना कि रुपया इकट्ठा कर रहे हैं कुछ लोग, नगरपालिका देनेवाली है, कुछ चैम्बर ऑफ कामर्स देनेवाला है—अभी तक एक पैसा नहीं दिया किसी ने। अब यह काम चले तो कहाँ से चले, कोई जयप्रकाश के पास, विनोबा के पास जादू का खजाना है? ३ तारीख को जाने के पहले एक अपील करूँगा मैं, आखिर सबसे ज्यादा जिम्मेदारी तो आप पर है न? अभी मान लीजिए ४००-५०० हो जाते हैं वे लोग, फरार लोग हैं उनकी सूची हो जाये तो, उनके ऊपर कोई वास्तविक जुर्म है, तो उन पर भी मुकदमा चले और नहीं तो छोड़ दिये जायँ। पुलिस देख ले, हमको इसमें कुछ कहना नहीं है। अब इनके परिवार हुए, इनके द्वारा पीड़ित परिवार हैं, जिनको लूटा है, मारा है, कत्ल किया है, उसमें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बात कही जाती है, लेकिन जो भी हो उसमें मैं नहीं जाना चाहता हूँ। अब इनकी देखरेख का, बच्चों के लिए पढ़ाई का जिम्मा आपने लिया है और भी वे चीजें देंगे (सरकार) लेकिन जनता का भी तो है। मान लीजिए कि हम सारे कार्य पर पचास लाख रुपया खर्च करते हैं तो २५ लाख सरकार दे और २५ लाख जनता को देना चाहिए और उसका अधिकांश देना चाहिए ग्वालियर डिवीजन और बुन्देलखण्ड डिवीजन को और बाकी प्रदेश के लोगों के लिए और दूसरे प्रदेशों का भी कुछ होना चाहिए। मद्रास के लोग मुझसे पूछ रहे थे, हम लोग भी कुछ चन्दा देना चाहते हैं। हमने कहा, पहले वहाँ चन्दा तो होने दीजिये तब आप दीजियेगा। यह काम कैसे आगे बढ़े। लोग भूखे हैं, गरीब है, कपड़ा नहीं है उनको। अब हम उनको कहाँ से खाना देंगे? क्या उनको लेकर हम कमिश्नर साहब के पास जायेंगे कि आप रुपया दीजिये हमको, हम कपड़ा देंगे उनको, यह सरकार ही जिम्मेदार है, आप नहीं हैं? अगर इस इलाके की जनता को लाभ हुआ है, राहत मिली है आप लोगों को, तो आपकी भी जिम्मेदारी है कि नहीं? आप थोड़े-से लोग हैं यहाँ और ऐसे लोग होंगे जिनके पास कोई बहुत ज्यादा कमाई नहीं होगी, सभा में मध्यम वर्ग के लोग आये होंगे लेकिन आप बातें तो करें, आप भी थोड़ा-थोड़ा दें, इकट्ठा करें तो बूँद-बूँद से सागर भर जाता है, तालाब भर जाता है, तो (आप भी) कर सकते हैं इसे। आज यह मौका है।

ग्वालियर : १ जून, '७२

एक ऐतिहासिक प्रयोग

"मेरा ३० एकड़ का दान लिख लीजिए।" श्री देवदानम् ने आमसभा में ही घोषणा की। "कितनी जमीन है आपके पास?" कार्यकर्ता ने प्रश्न पूछा। "कुल साठ एकड़।" उत्तर मिला।

सबकी निगाह देवदानम् की ओर लगी हुई थी। कान सभी बातें सुन रहे थे।

"हम तो पाँच प्रतिशत माँगते हैं। आपको पचास प्रतिशत देने की प्रेरणा कैसे हुई?" कार्यकर्ता ने सोचा शायद शराब पिया हुआ होगा।

देवदानम् ने उत्तर दिया, "आपने भाषण में आपने कहा कि बाबा विनोबा कहते हैं कि 'मुझे अपना एक बेटा मानकर अपनी भूमि का हिस्सा दीजिए। मैं भूमि-हीन के लिए *भूमि की भीख नहीं माँगता,* आपका बेटा बनकर हिस्सा माँगता हूँ। मुझे एक लड़का है। दूसरा बेटा मैंने विनोबा को माना और आधी भूमि उनको देने का संकल्प किया। हमारे गाँव में बहुत लोग भूमिहीन हैं। आप उन्हें मेरी यह भूमि बाँट दीजिए।"

इस दुख के लिए मर मिटनेवाला किसान अपनी आधी भूमि अपनी खुशी से, समझ-बूझकर दान में दे रहा था अपने ही गरीब गाँव में रहनेवाले भूमिहीन भाइयों के लिए। कैसी उदात्त भावना और कैसा अनोखा त्याग! सारी सभा स्तब्ध रह गयी घड़ी भर। और, फिर तो *एक-पीछे-एक दाताओं ने दान की बौछार* कर दी।

आन्ध्र के महबूबनगर जिले में शादनगर प्रखण्ड में ता० ४ से १२ जून तक पदयात्रा हुई। ता० १, २ और ३ जून तक कार्यकर्ताओं का तथा प्रखण्ड के प्रमुख नागरिकों का शिविर हुआ श्री नारायण-भाई देसाई की अध्यक्षता में, और ता० ११ जून को समारोह हुआ। आन्ध्र के भिन्न-भिन्न जिलों से करीब ४०-४५ नवजवान, नवशिक्षित कार्यकर्ता आये थे।

• ठाकुरदास बंग

आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री आर० के० राम तथा मंत्री श्री चारी इस पदयात्रा में पूरा समय थे। दूसरे प्रदेशों से सर्वश्री शेंडुर्णीकर, यशपाल मित्तल, अच्युतभाई देशपाण्डे, नन्दलाल कावरा, शिवरतन आचार्य, सुमन बंग तथा मैं था। ता० १२ व १३ जून को श्री रा० कृ० पाटील भी उपस्थित थे। अन्य स्थानीय वरिष्ठ साथी बीच-बीच में आते थे।

पदयात्रा की सफलता काफी अंश में पूर्व तैयारी पर निर्भर करती है। अब तक का अनुभव इस विषय में अच्छा न रहने से *इस बार पूर्व तैयारी* पर विशेष ध्यान दिया गया था। महबूबनगर जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री सुरभि शर्मा तथा मंत्री श्री परशुराम और श्री सुब्बाराव इन तीनों ने इसके लिए नवोदर सर्वोदय सम्मेलन में आने का मोह संवरण किया और भिड़ गये डटकर पूर्वतैयारी करने में। *पूर्वतैयारी में स्थानीय लोगों का,* विशेषत श्री रामदेव रेड्डी (एम० एल० सी० और अध्यक्ष एग्रीकल्चर युनिवर्सिटी) का बहुत अच्छा सहयोग मिला। ता० १७ मई से ही इन चारों ने पूर्वतैयारी का काम जोर-शोर से शुरू कर दिया।

परिणामतः पूर्वतैयारी में ही १०० में से करीब पचास गाँवों में आमसभाएँ की गयी और बिना खास प्रयत्न किये सवा सौ एकड़ भूमि मिली एवं अनेक गाँवों में ग्रामदान पत्र पर हस्ताक्षरों का प्रारम्भ हुआ।

आन्ध्र के अन्य जिलों से आये हुए ज्यादातर कार्यकर्ता बिलकुल नये थे। ना विचारों की पकड़ थी, ना काम का उन्हें अनुभव था। अत मन में डर था कि शायद काम ठीक नहीं होगा। पर नव-जवान जब किसी काम को मन से उठा लेते हैं तो वे क्या नहीं कर सकते! इन नवजवान साथियों ने नौ दिन में जो काम किया वह उत्साहवर्धक रहा। काम में *आसानी हो अत पूरे प्रखण्ड को तीन* विभागों में विभाजित किया गया और तीन समर्थ साथियों को एक-एक विभाग की जिम्मेदारी सौंपी गयी। उनकी मदद के लिए हरेक को एक-एक जीप भी दी गयी। इन तीनों विभाग-प्रमुखों की मदद के लिए एक सम्पर्क टोली भी बनायी गयी। इस *व्यूहरचना के कारण* हर रोज साधारणत हर टोली के पास प्रमुख साथी मदद के लिए जा सके जिससे उनका मनोबल तथा उत्साह बढ़ा और कठिना-इयाँ चट से दूर होती गयी।

शादनगर की पदयात्राओं की दो

लोक पद यात्रा का एक दृश्य

विशेषताएँ थीं—एक, लोकपदयात्राएँ। दो, शान्ति-पुष्टि साथ में करना। अब तक हमारा आन्दोलन प्रमुखतः कार्यकर्ता-आधारित रहा। लोगों का सहयोग गौण रहा। इस बार पदयात्रा-टोली को सहयोग देकर अपने गाँव का काम पूरा करके लोग उस टोली को छोड़ने दूसरे गाँव जायें और उस गाँव के लोगों को ग्रामदान करने को कहें यानी लोकपदयात्रा निकलें ऐसा प्रयत्न हुआ। और, खुशी की बात है कि इसमें काफी सफलता मिली। लोकपदयात्राओं में सैकड़ों भाई-बहन शामिल होते थे। एक गाँव से दूसरे गाँव तक भजन गाते हुए, नारे लगाते हुए, ढोल पीटते हुए खुशी-खुशी जाते थे। इसमें क्या मालिक, क्या मजदूर, क्या दाता, क्या आदाता सब शामिल होते थे। वह रम्य दृश्य आँखों के सामने से हटता ही नहीं। अपनी समस्याएँ सुलझाने के लिए एक ओर चलनेवाला मार-काट, खून-खराबी का रास्ता, एक ओर जबरदस्ती से, कानून से छीनने का रास्ता और एक ओर यह मंगल, पवित्र, उच्च भावनाओं से भरा, भक्तिपूर्ण तथा कर्तव्य को स्मरण करा देने की बात करनेवाला मार्ग—जमीन आसमान का अन्तर। एक में आतंक और भय छाता है तो दूसरे में आनन्द, उत्साह भरता है। किस रास्ते को आदमी अपनायेगा ?

इन लोकपदयात्राओं में प्राण फूँकना होगा। शादनगर में पहला ही प्रयोग होने से उसमें कुछ कमियाँ रहना स्वाभाविक था। इन लोकपदयात्राओं का सर्वत्र अच्छा असर हुआ। ये ही लोकपदयात्राएँ आगे चलकर सत्याग्रह का भी साधन, आवश्यकता पड़ी तो, बन सकती हैं। एक गाँव में जब लोकपदयात्रा आयी, तब उसके भीतर छिपी शक्ति का एहसास जमींदारों को शायद हुआ और इसीलिए एक प्रकार से उन्होंने संगठित असहकार हमसे किया। वे कहने लगे—"ग्रामस्वराज्य तो हमारे यहाँ चल ही रहा है। हमारे यहाँ ना कोई दुखी है ना कोई समस्या। आप दूसरे गाँव चले जाइये।" यह सुनकर कुछ गरीब लोग सभा में से उठकर चले गये और कहने लगे—"क्या फायदा है इन लोगों के साथ बैठकर बात करने से ? अमीर और गरीब दोनों की वकालत येही करते हैं। हमें अवसर ही नहीं देते हैं बोलने का।" लोकपदयात्रा के कारण यह हिम्मत उनमें आयी।

वैसे पदयात्रा के लिए यह बड़ा ही प्रतिकूल समय था क्योंकि खूब शादियाँ थीं। लेकिन लोगों में भक्तिभाव और उदारता होने से काफी अच्छा काम हो सका। गाँव-गाँव में राजकीय दलबन्दियाँ बहुत दिखाई दीं। उसके कारण एक का सहकार लेने जाते तो दूसरा भाग जाता। काफी कोशिशों के बावजूद भी एक गुट काम काफी आगे बढ़ाने में उदासीन ही हो गया, नहीं तो और भी अच्छा काम बनता। इस दलबन्दी से गाँववाले तंग आ गये हैं। अतः ग्रामदान की सर्वसम्मति की बात उन्हें एकदम पसन्द आती है।

सीलिंग और टेनेन्सी ऐक्ट के कारण भी कहीं-कहीं कुछ बड़े जमींदार कुछ सरलता से दान दे देते थे। जो भूमि मिली उसमें करीब आधी 'प्रोटेक्टेड टेनेन्सी लैण्ड' है। समयाभाव में कई बड़े जमींदारों के पास हम पहुँच नहीं पाये अन्यथा और ज्यादा भूमि मिली होती। आप ४-६ दिन के बाद आइये, मैं अपना रेकार्ड देखकर फलाने गाँव की अपनी पूरी की पूरी भूमि (टेनेन्सी की) आपको देता हूँ। ज्यादातर बड़े जमींदार ऐसा ही कहनेवाले मिले।

इस पदयात्रा की आँकड़ों में फलनिष्पत्ति निम्न प्रकार है :

(१) मिली हुई भूमि—१२०० एकड़
(२) बँटी हुई भूमि—८३३ "
(३) ग्रामदान — ६१ "
(४) ग्रामसभाएँ — ५९
(५) लोकपदयात्राएँ— ४६
गाँवों में ४३२५ लोगों द्वारा
(६) शान्ति केन्द्र— ७१
(७) शान्ति सैनिक—३७४
(८) टोलियाँ — १६
(९) कार्यकर्ता — ५०
(१०) साहित्य-बिक्री—१७० रु०
(११) दाता —१७३
(१२) आदाता —२१६

आन्ध्र के मुख्यमंत्री श्री पी० वी० नरसिंहराव तथा आबकारी विभाग के मंत्री और पुराने भूदान कार्यकर्ता श्री महेन्द्रनारायण ता० १३ के समारोह के कार्यक्रम में उपस्थित थे। ग्रामदानी गाँवों के सैकड़ों भाई-बहन तथा नयी गठित ग्रामसभाओं के पदाधिकारी, ग्राम-शान्तिसैनिक भी बड़ी तादाद में आये थे। मुख्यमंत्री ने कहा—"मैं तो पुराना भूदान कार्यकर्ता हूँ। विनोबाजी ने यह भूदान का बहुत अच्छा काम शुरू किया है। आप हिम्मत से आगे बढ़िये। जमाना आपके साथ है। जमींदारों को उन्होंने सलाह दी कि अपने लिए सीलिंग के कानून से जितनी रख सकते हैं उतनी ही भूमि रखकर बाकी बची हुई भूमि जल्द-से-जल्द आप भूदान में दे दीजिए। इससे गरीबों का प्रेम आपको मिलेगा और दान देने का पुण्य भी लगेगा। नहीं, तो कानून से हम आपकी भूमि छीनने ही वाले हैं। फिर क्यों नहीं आप अपनी इच्छा से देकर दिल जोड़ने का और भाईचारा बढ़ाने का पवित्र कार्य करते हैं ?" आबकारी मंत्री श्री महेन्द्रनारायण ने भी कहा—"पंचायत राज जिस उद्देश्य से चालू किया था वह उद्देश्य सफल न होने से वह बन्द किया जा रहा है। उसके बाद सिवाय आपकी ग्रामसभाओं के हमारे पास दूसरी कोई एजेन्सी नहीं है जिससे कि सरकार देहातों से सम्पर्क कर सके। अतः ग्रामस्वराज्य का काम आप आगे बढ़ाइए, सरकार आपको पूरा सहयोग देगी। आपको आगे बढ़ने के लिए यह एकदम योग्य समय और अवसर है।

शुरू से ही स्थानीय लोगों का आग्रह था और हम सब साथी भी महसूस करते थे कि जो काम हुआ है वह आगे बढ़ता रहे, खण्डित न हो। अतः एक

है। किसानों के यहाँ भुखमरी होगी, और देश के कृषि उत्पादन पर प्रभाव पड़ेगा।

सैकड़ों किसान सुबह से शाम तक आश्रम में पूछ-ताछ करने आते हैं। इसके समाधान के लिए वनवासी सेवाश्रम के अध्यक्ष श्री हरिवल्लभ परीख बम्बई गये तो स्वयं श्री आदरकर, बंक के कस्टोडियन से मुलाकात की। गुजरात के उप क्षेत्रीय मैनेजर श्री छोटू भाई पटेल भी उपस्थित थे। बातचीत के बाद बैंक ने २५ लाख के बदले १७ लाख रुपये देने की अनुमति दी। १२ लाख रुपये भैंस खरीदने के लिए और पाँच लाख रुपये अनाज के लिए। भैंस खरीदने के लिए सर्टिफिकेट प्राप्त करना सम्भव नहीं है। इसलिए बैंक ने हेल्थ सर्टिफिकेट फौरन देने पर आग्रह नहीं किया। बात यह तय पायी कि आश्रम और बैंक की सहायता से जानवरों के लिए एक डाक्टर भी नियुक्त किया जाय। बैंक के कहने से यह भी तय किया गया कि भैंस के लिए कर्ज की मुद्रा से १० प्रतिशत 'रिस्क' फण्ड काट लिया जाय। चूँकि भैंसों का बीमा नहीं हो सकता इसलिए यह बीमा का विकल्प होगा। श्री हरिवल्लभ भाई परीख भी इससे सहमत हुए। यह भी तय पाया कि ४ लोगों की एक समिति बने, जो भैंसों का मुआयना करे। इस समिति में दो प्रतिनिधि किसानों के हों, एक बैंक का पदाधिकारी और एक आश्रम का कार्यकर्ता हो। इस बातचीत का अन्तिम मसविदा भी तैयार कर दिया गया। श्री हरिवल्लभ परीख इस विश्वास के साथ लौटे थे कि बैंक स्वीकार की हुई योजना को क्षेत्रीय कार्यालय में फौरन भेज देगा। १२ ता० तक कोई सूचना न मिलने पर उसी दिन बैंक के कस्टोडियन के पास तार भेजा गया। १३ ता० को बैंक ने फिर वही पुराना उत्तर भेजा।

कस्टोडियन ने इस योजना को अपने अन्य साथियों से सलाह लेने के बाद स्वीकार किया था। अन्तिम क्षण में इस विश्वासघात ने एक गम्भीर परिस्थिति पैदा कर दी है। १४ जून को इस परिस्थिति पर गौर करने के लिए वनवासी सेवा समाज और पंचमहाल प्रदेश ग्रामस्वराज्य सर्वोदय मण्डल की एक सभा श्री हरिवल्लभ परीख की अध्यक्षता में हुई। सदस्यों ने आदिवासियों की परेशानी व्यक्त की। कुछ लोगों ने तो बैंक के कर्ज की उम्मीद पर भैंसें भी खरीद ली थीं। कुछ लोगों ने यह बताया कि रुपये मिलने पर ही खाद और बीज खरीद पायेंगे। वर्षा होने के बाद लोगों की परेशानियाँ बढ़ जायेंगी। ये सारी बातें सुनकर श्री हरिवल्लभ परीख ने बैंक से हुए पत्राचार और बम्बई में हुई बात की तफसील बतायी। वर्किंग कमिटी ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये :

१—साढ़े बारह हजार एकड़ खेत में समय से बीज बोना और जोतना सम्भव नहीं होगा इसलिए सरकार को उन पदाधिकारियों के विरुद्ध कदम उठाना चाहिए—नयी शर्तें बनाकर।

२—बैंक के कार्यकर्ताओं का यह षड्यन्त्र असहनीय है। यह फैसला किया गया कि संसद और प्रेस में ऐसे लोगों के विरुद्ध एक चार्जशीट दी जाय जो सरकारी नीति का उल्लंघन कर रहे हैं।

३—योजना को आगे बढ़ाने के लिए और जारी रखने के लिए सरकार फौरन हस्तक्षेप करे। एक दिन देर होने से भी सैकड़ों परिवार का बड़ा नुकसान होगा और बैंक की कर्जवसूली पर भी इसका असर पड़ेगा।

४—यह समिति आनन्द निकेतन आश्रम के कार्यकर्ताओं को इस बात पर मुबारकबाद देती है कि इन लोगों ने बड़ी लगन और मेहनत से पिछले ४ महीनों में १७ सौ अर्जियाँ तैयार कीं। संस्था ने लोगों के रहने और खाने का इन्तजाम आश्रम में किया है, और इसके लिए आश्रम कुछ मुआवजा नहीं लेता।

५—समिति को श्री हरिवल्लभ भाई परीख के द्वारा किये जानेवाले आमरण अनशन को सुनकर दुख हुआ। उन्हें ऐसा बैंक के विश्वासघात के कारण करना पड़ रहा है।

६—यह समिति सरकार के राष्ट्रीयकरण की नीति का समर्थन करती है। और इसलिए वह कोई भी ऐसा कदम नहीं उठायेगी जो सरकार की नीति के रास्ते में आ जाय।

७—समिति ने यह तय किया कि श्री रतुभाई अदानी और सनतकुमार मेहता से २० जून के पहले सम्पर्क किया जाय। उसने यह भी फैसला किया कि रिजर्व बैंक ऑव इण्डिया के गवर्नर और भारत के वित्तमंत्री के पास एक प्रतिनिधि मण्डल जाय ताकि वे इसमें कुछ मदद दे सकें।

८—रुपये कर्ज देने का यह तरीका पिछले दो साल से इस क्षेत्र में लागू है। गुजरात और देश में यह बात जानी जाती है। इसकी काफी प्रशंसा भी हुई है। इसमें १०० प्रतिशत वसूली हुई है। बैंक ने अपने प्रधान कार्यालय को इसकी सूचना दे दी है। बैंक की रिपोर्ट में भी यह बात छपी है। इसलिए २९ ता० को १ लाख १७ हजार रुपया बँट जाने के बाद स्थिति में क्या परिवर्तन आया पता नहीं। सोच-विचार के बाद समिति को दो सम्भावनाएँ नजर आयीं :

क—भैंस के बेचनेवालों से भैंस खरीदने की कीमत चेक के रूप में अदा करनी होगी। चेक से पैसे अदा करने की सूरत में किसान के पास कोई विकल्प नहीं रहता। जिस कीमत पर भी भैंस मिलें उन्हें खरीदनी ही होती है। इस तरह से केवल भैंस के सौदागर का फायदा होता है। इसलिए यह भी सम्भव है कि बैंक के पदाधिकारियों से सौदागरों ने हाथ मिला लिया है।

ख—यह सम्भव है कि चूँकि योजना बैंक के कार्यकर्ताओं के निहित स्वार्थ में कोई फायदा नहीं पहुँचा रही है इसलिए वे नहीं चाहते हैं कि यह सफल हो।

९—यह तय किया जाता है कि

(शेष पृष्ठ ६०८ पर)

(पृष्ठ ५९५ का शेष)

की है, आप इस दंगे के दरम्यान दोनों सम्प्रदायों की मनोभावना का कुछ चित्रण करेंगे?

उत्तर : आप पहले हिन्दू मानस को देखिए। इस दंगे में अल्पसंख्यकों द्वारा दो हिन्दू लड़कियों को भगा ले जाने की अफवाह तथा अखबार में प्रकाशित एक धनी मुसलमान की गोली से मरे हुए एक हिन्दू बालक के चित्र ने हिन्दू मानस को काफी उत्तेजित कर दिया। और सदियों से दबा हुआ मुसलमानों के प्रति अविश्वासपूर्ण भय उभरकर सामने आ गया। बांगला देश के मुक्ति-संघर्ष में भारतीय मुसलमानों के रुख से हिन्दू पहिले से नाराज थे और इस दंगे में कुछ बदमाशों द्वारा पाकिस्तान जिन्दाबाद के नारे लगाये गये तथा जिलाधीश द्वारा आग्नेय अस्त्रों को जमा करने के आदेश पर मुसलमानों की तरफ से एक भी बन्दूक जमा नहीं की गयी जिससे हिन्दू मानस की नाराजगी और बढ़ गयी। बहुसंख्यकों द्वारा की गयी आगजनी और लूट-पाट में निम्न-स्तरीय पुलिस अधिकारियों का भी हिन्दू मानस उनकी उदासीनता और तुरन्त कार्रवाई न करने की प्रक्रिया में स्पष्ट दिखाई दे रहा था। जहाँ तक मुसलमानों के मानस का प्रश्न है, एक मुसलमान के घर में छत पर हमें टोकरी में रखी हुई ईंटें मिलीं। यह नहीं कहा जा सकता कि वे ईंटें उसने आक्रमण के लिए रखी थीं या सुरक्षा के लिए। मदनपुरा में कुछ मुसलमानों ने पुलिसवालों को दंगाइयों के ऊपर गोली चलाने के लिए ललकारा भी था और अपने घरों में दंगाइयों को पनाह भी नहीं दी थी, लेकिन जब पी० ए० सी० के सामने उन्होंने हिन्दुओं द्वारा अपनी दूकानें लुटती हुई देखीं तो उन्हीं दंगाइयों से उन्हें मदद माँगनी पड़ी।

दो-तीन रात तक रात में 'अल्लाहो अकबर' और 'हर हर महादेव' के नारे जगह-जगह सुनाई पड़े। हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे से इतने भयभीत थे कि बजरडीहा में शान्ति समिति के गठन हेतु इकट्ठा हुए लोगों को एक समुदाय ने उसे दंगे की तैयारी समझा और उनके द्वारा दी गयी सूचना के आधार पर पुलिस की एक टुकड़ी को निरर्थक दौड़ना पड़ा। देवनाथपुरा में भी एक मृत वृद्धा की लाश फूँकने की तैयारी को दूसरे सम्प्रदाय के लोगों ने आक्रमण की तैयारी समझकर पुलिस को खबर कर दी और पी० ए० सी० को अनावश्यक परेशान होना पड़ा। कहीं-कहीं तो रात में पी० ए० सी० को परेशान करने के लिए ही गलत सूचनाएँ देकर दौड़ाया गया।

एक बात मैं आपको और बताना चाहता हूँ। बनारस कबीर का शहर है और कबीर के शहर में जब हमने जले और टूटे हुए करघे देखे, तो लगा कि कबीर का शहर सचमुच बदनाम हो गया। तनावपूर्ण क्षेत्रों में जिन गलियों में पी० ए० सी० जाने में भय खाती थी, वहाँ जाकर शान्ति सैनिकों ने निर्भयता-पूर्वक मुस्लिम-परिवारों से मुलाकात की। शान्ति-सैनिकों की भूमिका तो कबीर की भूमिका थी . **कबिरा खड़ा बाजार में दोनों दल की खैर। ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर॥** इस भूमिका में काम करने के नाते कुछ हिन्दू भाई हमसे नाराज भी रहे; कुछ हिन्दू मित्रों को हमारी जान की भी चिंता रही लेकिन हमें कहीं भी कुछ खतरा मुसलमानों के मुहल्लों में अपनी जान के लिए नहीं दिखाई पड़ा। कुछ मुसलमानों ने यह भी बताया कि उनके घर के लूट-पाट में उनके पड़ोसी हिन्दुओं का नहीं, बल्कि दूर से आये हुए लोगों का हाथ था। जिन-जिनके घर लूटे या जलाये गये थे वे अपना दुख शान्ति सैनिकों को सुनाकर मन हलका करना चाहते थे, वह भी इसलिए नहीं कि हम सरकार से कहकर उन्हें कुछ दिलवायेंगे बल्कि मात्र इसलिए कि हमारी निष्पक्षता और मानवता के प्रति प्रेम का उन्हें आभास हो गया था।

वाराणसी में एक ओर जहाँ हिन्दू-मुस्लिम मानस में तनाव चल रहा था वहीं दूसरी ओर औद्योगिक और व्यापारिक दृष्टि से जुड़े हिन्दू-मुसलमान फोन पर एक दूसरे का कुशल-क्षेम भी पूछ रहे थे। एक मुस्लिम परिवार जब घर छोड़कर भाग रहा था तो उसके छूटे हुए एक किशोर बालक को एक हिन्दू महिला ने तीन दिन तक अपने घर में छिपाकर रखा। और जब मैं रामापुरा में अपने मित्र श्री जमील अहमद से मिलने गया तो वे बुखार से पीड़ित थे और काशी विश्वविद्यालय के एक हिन्दू लेक्चरर को उनकी सेवा करते हुए भी देखा। वाराणसी के एक मुहल्ले में प्रतिष्ठित हिन्दू-मुसलमानों ने शान्ति बनाये रखने के लिए प्रशासन को लिखित आश्वासन दिया और किसी भी प्रकार के उपद्रव हो जाने पर स्वयं को गिरफ्तार कराने की उन्होंने अपनी तैयारी बतायी। प्रह्लादघाट में उपद्रव की आशंका से क्षेत्रीय शान्ति समिति के २०-२५ सदस्य रातभर पहरा देते हुए दिखाई पड़े।

प्रश्न : अभी आपने अपने कार्य की क्या योजना बनायी है?

उत्तर : अभी हम दंगा-पीड़ित क्षेत्रों का सर्वे कर रहे हैं। इस कार्य में मुख्य रूप से सर्वश्री भगवान भाई, कृष्ण कुमार, सत्यनारायण भाई, गौरगोपाल बनर्जी और प्रो० राधेश्याम शर्मा काफी सक्रिय हैं। इसके साथ ही हम लोग घर छोड़कर चले गये लोगों को अपने घरों में वापस लाने, मुहल्ले-मुहल्ले जाकर दोनों वर्गों के लोगों को एक जगह बैठाकर साम्प्रदायिक सद्भाव कायम करने का काम कर रहे हैं। राहत का काम बड़ा है लेकिन आर्थिक अभाव में हम इस कार्यक्रम को अभी नहीं उठा पाये हैं। वैसे राहत का कार्य शीघ्र हो सके इसके लिए हम सरकार और नगर के धनी-मानी लोगों से सम्पर्क कर रहे हैं।

—दीनबन्धु

२२-६-'७१
वाराणसी

भूदान-यज्ञ २६-६-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

आन्दोलन के समाचार

रीवाँ सर्वोदय मण्डल की बैठक

रीवां १५ जून। जिला सर्वोदय मण्डल की बैठक श्री वृजराज सिंह तिवारी की अध्यक्षता में स्थानीय गांधी शान्ति केन्द्र में पूर्वाह्न हुई। बैठक में प्रदेश सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री इन्द्रलाल मिश्र उपस्थित थे। बैठक में सर्वसम्मति से श्री जगमोहनलाल निगम को जिला सर्वोदय मण्डल का अध्यक्ष तथा गिरीश भाई को मंत्री निर्वाचित किया गया, साथ ही डा० मंगल प्रसाद को गांधी स्वाध्याय मण्डल (शान्ति केन्द्र) का संयोजक मनोनीत किया गया।

श्री रोहिणी प्रसाद त्रिपाठी को जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति का संगठक नियुक्त किया गया।

बैठक में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित कर प्रदेश में शराब की दूकानों को बढ़ाने की घोषणा पर हार्दिक दुःख व्यक्त किया गया और माननीय मुख्यमंत्री से यह प्रार्थना की गयी कि वे प्रदेश को "दारू-मुक्त" बनाने का प्रयत्न करें।

बैठक में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए जिला के १९२ ग्रामदानी गांवों से सम्पर्क करने और वहाँ प्रारम्भिक रूप से सर्वोदय मित्र बनाकर स्वावलम्बन समितियां कायम करने तथा सर्वोदय-साहित्य एवं पत्र पहुँचाने व एकता, प्रेम, भाईचारा हेतु प्रयत्न करने के संकल्प को दुहराया गया।

शराबबन्दी सत्याग्रह समिति द्वारा आन्दोलन तेज करने का निश्चय

जयपुर २० जून। राजस्थान शराबबन्दी सत्याग्रह समिति ने यहाँ दो दिवसीय बैठक के अन्तिम दिन प्रदेश में शराबबन्दी आन्दोलन को तेजी और अधिक उत्साह से चलाने का निश्चय किया है। मद्य-निषेध के लिए लोकशक्ति जागरण तथा सरकार की घोषित नीति के विपरीत चलनेवाली अवैध शराब की दूकानों को हटाने हेतु आन्दोलन संगठित करने का तय हुआ है। समिति ने बीकानेर तथा फलौदी में शराब के गोदाम आदि पर जारी पिकेटिंग के अवरोधात्मक कार्यक्रम का समर्थन किया है। बैठक की अध्यक्षता श्री गोकुलभाई भट्ट ने की।

सर्व सेवा संघ के सहमंत्री

सर्व सेवा संघ के व्यापक काम को एवं देश की विशालता को देखते हुए तथा संघ के कार्य-संचालन के लिए समर्थ साथियों के सहयोग की आवश्यकता थी। इसे ध्यान में रखते हुए श्री नरेन्द्र दुबे एवं श्री यशपाल मित्तल को संघ के सहमंत्री तथा श्री सत्यव्रत (श्री गुण्डाचार) को संघ का कार्यालय-मंत्री नियुक्त किया गया है। प्रबन्ध समिति के एक रिक्त स्थान पर उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी को संघ की प्रबंध समिति का सदस्य मनोनीत किया गया है।

(पृष्ठ ६०६ का शेष)

आखिरी हथियार के तौर पर बैंक के कस्टोडियन के पास एक पत्र भेजा जाय जिसमें उसको परिस्थिति समझायी जाय।

१०—समिति ने यह फैसला किया है कि इन बातों से निपटने के लिए एक कार्य उप-समिति बनायी जाय। परिणाम के बारे में बहुत सोच-विचार करने के बाद यह फैसला किया गया है।

मंत्री,
आनन्द निकेतन आश्रम

पत्र-व्यवहार का पता :

सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग

राजघाट, वाराणसी—१

तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक

राममूर्ति

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित।

वर्ष : १८, अंक : ४०

[जुलाई, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

विभिन्नता में एकरूपता लायें

एक मुसलमान है और वह भला है। अब वह भला है तो भला ही है। मुसलमान है, यह हम क्यों याद रखें? इसी तरह एक हिन्दू भला है तो उसे भला ही समझें। हिन्दू क्यों समझें? हिन्दू का अर्थ है कि वह किस तरह परमेश्वर की प्रार्थना करता है और मुसलमान है तो किस तरह करता है? परमेश्वर व्यापक है, अनन्तरूप है तो उसकी प्रार्थना भी अलग-अलग प्रकार से हो सकती है। उसमें सोचने की बात ही क्या? ठीक है, जिसे जिस प्रकार प्रार्थना, उपासना करनी हो, करे। उस चीज को हम कोई सामाजिक मूल्य नहीं देते। यही हमारे सर्वोदय की विचार-पद्धति है। हम मानते हैं कि जब तक एक-एक जाति के ही हित का विचार करेंगे, तब तक किसी जाति का भला नहीं होगा और न समाज का ही।

हमें दूसरों के सुख-दुःख का विचार करना चाहिए, अपने सुख-दुःख का नहीं। इसी तरह जातियों के बारे में सोचना हो, तो दूसरी जाति के सुख-दुःख का विचार करना चाहिए। एक देश को दूसरे देश की भलाई का विचार करना चाहिए। अभी तो यह सारा बिलकुल अव्यावहारिक-सा मालूम देगा, देखते-देखते व्यावहारिक हो जायेगा। कारण, आज विज्ञान तेजी से फैल रहा है। वह सबको इतना नजदीक ला रहा है कि एक दूसरे के बारे में सोचने की आदत पड़ रही है। उसके बिना हम टिक ही न पायेंगे। राष्ट्रीय पैमाने पर भी इसी ढंग से सोचना पड़ेगा। गांधीजी यही कहते थे, 'सारे विश्व की चिन्ता करने के लिए ही हमें आजादी चाहिए। स्वातंत्र्य एक ऐसी मूलभूत वस्तु है कि वह न हो तो हम दुनिया की क्या सेवा कर सकेंगे?'

८—२—५८ —विनोबा

दोष किसका है ?

● सय्यद मुस्तफा कमाल

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय विधेयक ने भारत के मुस्लिम समाज में कम्पन पैदा कर दिया है। सामान्य मुसलमान परेशान और भयभीत हैं। उसका नेतृत्व करनेवाले उन्हें हिस्ट्रीया का शिकार बना रहे हैं। वे इसे एक समस्या (इशू) बनाकर अपनी 'लीडरी' चमकाने के चक्कर में हैं। क्योंकि देश और मुस्लिम समुदाय की दूसरी समस्याओं का न उन्हें कोई अन्दाजा है और न उनको हल करने के लिए उनके पास कोई कार्यक्रम है, दृष्टिकोण है, नहीं इनमें उन समस्याओं को हल करने के लिए पहल करने की हिम्मत या योग्यता है।

हो भी कैसे ? सर सय्यद के बाद मुसलमानों के यहाँ कोई रचनात्मक सुधारक हुआ ही नहीं। हिन्दुस्तानी मुसलमानों का इतिहास यह बताता है कि वे बन्द समाज बनाने के चक्कर में रहे। उन्हें हमेशा यह चिन्ता रही कि डेढ़ ईंट की हमारी एक अलग मस्जिद हो। पिछले दो सौ साल में मुसलमानों के बीच कोई बड़ा वैज्ञानिक, दार्शनिक, विचारक, इंजीनियर, इतिहासकार पैदा नहीं हुआ। 'नोबेल प्राइज' कोई बड़ी चीज नहीं है लेकिन साहित्य, शान्ति और विज्ञान के तमाम क्षेत्रों में 'नोबेल प्राइज' लेनेवालों की सूची देख जाने पर एक भी मुसलमान का नाम नहीं मिलता जब कि इसी हिन्दुस्तान में गुलामी की हालत में भी साइन्स और साहित्य में यह इनाम आया। और यूरोप के छोटे-से-छोटे मुल्क में भी नोबेल पुरस्कार पानेवाले कम-से-कम एक दर्जन लोग तो निकल ही जायेंगे।

आधुनिक विज्ञान, टेक्नालॉजी, दर्शन और विचार से अपरिचित होने के कारण, और आधुनिक ऐतिहासिक शक्तियों की कोई जानकारी न होने से मुसलमानों की हालत बड़ी ही अजीब हो गयी है। उनमें राजनैतिक समझ-बूझ की कमी है—और वे यह नहीं समझ पाते कि उनका भला किसमें है और उन्हें अपने जायज उद्देश्यों के लिए किस तरह कोशिश करनी चाहिए।

१. अलीगढ़ विश्वविद्यालय विधेयक के अध्ययन से पता लगता है कि उसका स्थानीय चरित्र कायम रहेगा।

२. विश्वविद्यालय की निमाजें और मस्जिदें ज्यों-की-त्यों रहेंगी।

३. इस्लामी दर्शन, विचार, कानून और इस्लाम धर्म की शिक्षा दी जाती रहेगी।

४. मुसलमानों की संख्या-अध्यापकों या विद्यार्थियों-में कमी करने की कोई कोशिश नहीं की जायगी।

५. परिणामस्वरूप स्टुडेण्ट्स कौंसिल, एकेडमिक कौंसिल और एक्जीक्यूटिव कौंसिल में बहुमत मुसलमानों का ही रहेगा।

६—विश्वविद्यालय की व्यवस्था और प्रशासन में लोकतन्त्रात्मक पद्धति अपनायी जायगी अर्थात् यहाँ की राजनीति पर मुसलमानों का कण्ट्रोल ज्यों-का-त्यों रहेगा।

७-अलीगढ़ का सौभाग्य है कि वहाँ विद्यार्थी कौंसिल होगी और उसकी राय एकेडमिक कौंसिल और एक्जीक्यूटिव कौंसिल के फैसलों को प्रभावित करेगी।

अलीगढ़ के विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय की व्यवस्था और प्रशासन में प्रतिनिधित्व मिला है, यह बड़ी बात है। पेरिस से सन्फ्रान्सिस्को, न्यूयार्क से टोकियो, बर्लिन से ब्युनेस आयस और रोम से रियोडिजनारियो तक हर स्थान पर विद्यार्थियों का आन्दोलन चल रहा है कि विश्वविद्यालय के प्रशासन और व्यवस्था में उन्हें प्रतिनिधित्व दिया जाय ताकि वे शिक्षा के पद्धति को एक नयी दिशा दे सकें। यूरोप और अमेरिका के विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के आन्दोलन के उद्देश्य ये हैं :

१—शिक्षा की व्यवस्था में विद्यार्थियों को बराबर का प्रतिनिधित्व मिले,

२—विश्वविद्यालय के प्रशासन में उनकी राय ली जाय और विश्वविद्यालय के पदाधिकारी उस राय के पाबन्द हों और

३—उन्हें विश्वविद्यालय के कैम्पस के अन्दर वही सुविधाएँ दी जायँ जो समाज में दूसरों को हासिल हैं।

सारबोन, लन्दन, बर्कले और बनारस विश्वविद्यालय के विद्यार्थी ऐसी शिक्षा से सन्तुष्ट नहीं हैं जो सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की वास्तविकताओं और आवश्यकताओं से अलग हो। वे ऐसी शिक्षा चाहते हैं जो समाजी उत्तरदायित्व को निभाने और सांस्कृतिक उन्नति में ठोस मदद दे सके। वे नये विचार, मूल्य और रहन-सहन, पढ़ाई और नौकरी के नये तरीकों की खोज में हैं।

कोनबेण्डिथ, तारिक अली, एडसोलोमन के नेतृत्व में चलनेवाले आन्दोलन यह मानते हैं कि समाज रोगी और ये विश्वविद्यालय इस रोगी समाज के प्रतिबिम्ब हैं। चूँकि क्रान्ति घर से शुरू होती है इसलिए उन्होंने इन विश्वविद्यालयों को क्रान्ति का केन्द्र बना दिया है ताकि समाज के रोग पर पहली चोट यहीं की जाय।

स्पष्ट है कि विधेयक के अन्तर्गत विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को समाज के रोग को दूर करने में मदद मिलेगी—समाज के वे मूल्य जिन्हें संसार के दूसरे विद्यार्थी अस्वीकार कर चुके हैं अलीगढ़ के लड़के आज चाहें तो उनका नेतृत्व कर सकते हैं और विद्यार्थी आन्दोलन को एक दिशा दे सकते हैं।

इस ऐक्ट का विरोध करके मुसलमानों और अलीगढ़ के विद्यार्थियों को घाटे के सिवा और कुछ न होगा। अलीगढ़ को अल्पसंख्यक संस्था बनवाने पर जोर देने का अर्थ होगा कि हम व्यावहारिक तौर पर दूसरे विश्वविद्यालयों में शिक्षा

प्राप्त करने के अधिकार से स्वयं वंचित होना चाहते हैं। यह मांग कुछ ऐसी ही मांग है जैसी पाकिस्तान की मांग थी। आज बहुत जगह मुसलमानों को यह कहा जाता है कि तुमने अपना 'होम लैण्ड,' माँगा था जो मिल गया, अब यहाँ क्या कर रहे हो पाकिस्तान जाओ। इसी तरह अगर अलीगढ़ विश्वविद्यालय विधेयक में फिर से संशोधन करके इसे अल्पसंख्यक संस्था मान लिया जाय तो फिर मुसलमान विद्यार्थियों को हिन्दुस्तान के दूसरे विश्वविद्यालयों में यह उत्तर मिल सकता है कि अलीगढ़ जाइये, आपका शिक्षालय वही है।

मुस्लिम नेतृत्व के भोलेपन पर बड़ा ताज्जुब होता है और इस बात का बहुत अफसोस होता है कि इसे आज की परिस्थितियों का कोई भी अन्दाजा नहीं है। पिछले पच्चीस साल की घटनाएँ उसे सद्बुद्धि न दे सकीं, और उसने उनसे कोई सबक नहीं सीखा।

अलीगढ़ ऐक्ट के विरोध में योमेस्याह (काला दिवस) मनाया गया। योमेस्याह से क्या मिला? साम्प्रदायिक दंगे-फिरोजाबाद, वाराणसी के दंगे। इन दंगों में मुसलमानों को जानों और मालों की अधिक क्षति हुई। गिरफ्तार भी वही ज्यादा हुए। उन्हें वहीं से भी नैतिक समर्थन तक नहीं मिला। वे साम्प्रदायिक और उपद्रवी कहलाये। नेशनल प्रेस ने उनके विरुद्ध सख्त सम्पादकीय लिखा। किसी ने इस विरोध को 'डेन्जर सिग्नल' कहा, किसी ने 'डेन्जरस गेम'।

यह सब देखते हुए हमें कुछ दूसरी अल्पसंख्यक आबादियाँ याद आती हैं, वह अल्पसंख्यक आबादी जो हजरते ईसा की कातिल थी, वह जो पूरे यूरोप और अमेरिका में बदनाम थी। जिससे घृणा व्यक्त करने के लिए अंग्रेजी ड्रामा ने शायलाक जैसा चरित्र लिखा। शायलाक जो यहूदियों के चरित्र का सम्बन्ध है।

लेकिन पोप ने उसे हजरते ईसा का खून माफ कर दिया। जर्मनी के पागल तानाशाह हिटलर ने उनके साथ जो ज्यादतियाँ की थी उसके एवज के तौर पर पश्चिमी संसार के लोगों ने उन्हें एक देश दे दिया जो इसराइल के नाम से जाना जाता है। परन्तु यह सब हुआ क्यों? इसलिए कि (१) यूरोप और अमेरिका में यहूदियों का योगदान स्वयं यूरोप और अमेरिकावालों से अधिक है। (२) यूरोप और अमेरिका की सभी सामाजिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक, क्रान्तिकारी और टेकनीकी आन्दोलनों का नेतृत्व यहूदियों ने किया और अपनी आबादी की तुलना में वे इन आन्दोलनों में अधिक थे। (३) यूरोप और अमेरिका के बड़े-बड़े कलाकार, कवि, संगीतकार, वैज्ञानिक, स्टेज निर्देशक यहूदी हैं। और, आधुनिक विचार के जन्मदाता मार्क्स, फ्रायड, स्पिनोजा, यहूदी थे। प्रसिद्ध जीवन लेखक आइजक डिस्चर और वैज्ञानिक आइन्सटाइन यहूदी थे। (४) यहूदियों ने बहैसियत एक समुदाय की यूरोप और अमेरिका में कभी कोई मांग नहीं की। कभी संविधान की दोहाई नहीं दी। कोई अधिकार नहीं जताया। परन्तु हां, पश्चिमी दुनिया के अधिकतर जन-आन्दोलनों और ट्रेड यूनियनों का नेतृत्व उन्होंने किया। केवल इसी साम्यवाद के इतिहास में ही ट्राटस्की नहीं मिलता। बल्कि हर आन्दोलन में कोई न कोई ट्राटस्की मिल ही जाता है। ट्राटस्की का असली नाम ब्राउन स्टाइन था और वह यहूदी था।

दूर क्यों जाइये अपने ही यहाँ एक छोटी-सी अल्पसंख्यक है जिसे पारसी कहा जाता है। वे अपनी सभी विशेषताओं के साथ हिन्दुस्तान में रहते हैं। उन्होंने भी कोई अपना देश नहीं बनाया, न मांग की। अगर भारत में अणुविज्ञान की तरक्की का इतिहास लिखा जायगा, और उसमें डा० भाभा और डा० सेठना का जिक्र न आयेगा तो यह इतिहास अधूरा होगा। हिन्दुस्तान की सैनिक तरक्की में मानिक शाह का नाम सोने के हरफों से लिखा जायगा। कोई कैसे सोच सकता है कि भारत में उद्योग के विकास का जिक्र हो और टाटा का नाम न आये।

क्या हिन्दुस्तान के मुसलमान इन अल्पसंख्यकों का मुकाबला कर सकते हैं? शायद नहीं! वे प्रगतिशील तत्वों और जन-आन्दोलनों का नेतृत्व करने के बजाय प्रतिक्रियावादी तत्वों को ताकत पहुँचा रहे हैं।

इण्डोनेशिया, मलेशिया, पाकिस्तान, ईरान, ईराक, अल्जेरिया, मोरक्को, ट्यूनेशिया, सीरिया, सूडान, मिश्र, लिबनान आदि देशों ने मुस्लिम पर्सनल लॉ में सुधार कर लिये हैं। परन्तु तुर्की और अल्बानिया ने उसे रद्द कर दिया है। लेकिन भारत के मुसलमानों को ऐसा करने में शरीअत खतरे में नजर आती है। इस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी कौन है? क्या वे उत्तरदायी नहीं हैं जो मुसलमानों की वास्तविक समस्याओं की ओर से जेहन हटाकर काल्पनिक समस्याओं की ओर लगा देते हैं? अर्थात उनका लीडरशिप जो उन्हें अन्धकार की ओर ले जा रही है। क्या वे भी दोषी नहीं हैं जो अपने आपको राष्ट्रवादी कहते हैं और जिन्होंने पिछले २४ वर्षों में मुसलमानों के बीच किसी प्रकार का कोई ठीक काम नहीं किया है? क्या वे समाजी कार्यकर्ता इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं जो समाजी परिवर्तन और समाज सेवा की बात करते हैं, परन्तु जिन्हें यह नहीं मालूम कि समाज के ८ करोड़ लोगों का मानस किस तरह काम करता है? उनकी समस्याएँ क्या हैं? उनकी शिकायतें कहाँ तक जायज हैं? और जायज शिकायतें कैसे दूर हो सकती हैं? ●

भारत के गुप्त संगठनों का तुलनात्मक अध्ययन

[भारत में कुछ संगठन ऐसे हैं जिनकी गतिविधियाँ बहुत प्रकट नहीं होतीं। इन संगठनों में से कुछ बड़े संगठनों का एक अध्ययन हम यहाँ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं। सं०]

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर० एस० एस०) के नेता जो कहते हैं, और उनका संगठन जो करता है, उसमें कोई सम्बन्ध नहीं है। संगठन का कहना है कि यह सांस्कृतिक कार्यों को करता है। इसकी रोजाना की कार्रवाइयाँ हिन्दू समाज और हिन्दू संस्कृति की उन्नति के लिए हैं। परन्तु संस्कृति का सैनिक तथा शारीरिक व्यायाम से क्या सम्बन्ध है, यह बात समझ में नहीं आती। आर० एस० एस० के लोग इन दोनों का सम्बन्ध अब तक आम लोगों को समझा नहीं पाते हैं।

शाखाओं में होनेवाले भाषणों और वार्ताओं को सुनकर यह अन्दाजा होता है कि इस संगठन का संस्कृति से कोई सम्बन्ध नहीं है। वहाँ कभी भी दर्शन, साहित्य, कला, इतिहास या जीवन के मूल्यों पर बात नहीं की जाती। अगर कभी उनका जिक्र होता भी है तो क्रोध जगाने के लिए। आर० एस० एस० का सैद्धान्तिक दर्शन राजनैतिक है। वे राष्ट्रीयता की बातें करते हैं और सच्चा राष्ट्रवादी मानने के लिए शर्तें लगाते हैं। वे संसद में बननेवाले कानूनों और राष्ट्रीय नेतृत्व की आलोचना करते हैं। वे भारत के दूसरे देशों से सम्बन्ध क्या हों, इस पर भी बातें करते हैं। आर० एस० एस० के बारे में वे भी सन्देह रखते हैं, जिन्होंने खुली आँखों से उसे देखा है। आर० एस० एस० के लोग प्रश्नों का उत्तर नहीं देते और उन्हें टाल जाते हैं।

संगठन की दृष्टि से आर० एस० एस० एक फासिस्ट दल है। दल के सबसे बड़े नेता को बहुत सारे गुणों वाले आदमी के रूप में पेश किया जाता है। कुछ उन्हें सन्यासी भी कहते हैं। युवकों को यह बताया जाता है कि गुरु गोलवरकर को अखबार नहीं पढ़ना पड़ता। वे अपनी साधना द्वारा सब कुछ जान जाते हैं। आर० एस० एस० के सदस्यों के लिए गोलवरकर का शब्द अन्तिम शब्द है। उनसे न कोई बहस कर सकता है, न उनके दिये हुए वक्तव्यों के सिलसिले में प्रश्न पूछ सकता है, और इस बात को अनुशासन कहा जाता है।

विचार की दृष्टि से भी आर० एस० एस० एक फासिस्ट दल है। राष्ट्रीयकरण के मुकाबले पर भारतीयकरण की बात आर० एस० एस० विचार-धारा की खास बात है।

वे सदा हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म की बात करते हैं परन्तु उनकी इस बात का हिन्दुत्व के आध्यात्मिक पहलुओं से कोई सम्बन्ध नहीं होता। आर० एस० एस० गाय की पूजा, जनेऊ पहनना जैसी अन्य बातों पर जोर देता है।

देश के अन्दर आर० एस० एस० हिन्दुओं और गैर-हिन्दुओं के बीच लड़ाई कराता है। लड़ाई कराने के लिए यह गाय की पूजा, हिन्दी भाषा, युनीफार्म, सिविल कोड इत्यादि की समस्या पर लोगों में क्षोभ पैदा करता है। यह सब करने का उद्देश्य यह है कि गैर-हिन्दुओं को अलग किया जाय और उन्हें विदेशी करार दिया जाय। इस बात के बहुत सारे उदाहरण मिलते हैं कि इसने बड़े अच्छे तथा विश्वसनीय लोगों के विरुद्ध अफवाहें फैलायी और उनके बारे में आम लोगों में सन्देह पैदा किया। साम्प्रदायिक दंगों के पीछे भी आर० एस० एस० का हाथ होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध में आर० एस० एस० का रुझान भी अजीब है। इसके अनुसार केवल हिन्दू ही वह ज्ञान और आध्यात्मिक शक्ति रखता है जो मानवता को बचा सके। आर० एस० एस० एक संगठित सेना बनाना चाहता है जो सारे संसार पर काबू पा ले।

लगभग २० लाख लोग आर० एस० एस० के सदस्य हैं। संगठन उनकी संख्या नहीं बताता। एक बार पूछने पर यह उत्तर मिला, "क्या तुम गंगा के पानी के बतरों को गिन सकते हो?" सदस्यों का न तो कोई रजिस्टर है न कुछ और। यही कारण है कि आर० एस० एस० के सदस्य पर कोई जिम्मेदारी नहीं थोपी जा सकती। मान लीजिए कि आर० एस० एस० का एक सदस्य अफवाह फैलाता हुआ, हिंसक कार्रवाइयों को उकसाता हुआ, और कत्ले-आम करता हुआ पकड़ा जाता है, लेकिन यह सिद्ध करने का कोई तरीका नहीं है कि यह सदस्य आर० एस० एस० का है। नाथूराम गोडसे ने गांधीजी की हत्या की। कहा जाता है कि वह आर० एस० एस० का आदमी था। आर० एस० एस० ने इससे इनकार किया और यह बात खटाई में पड़ी रही। चार साल पहले ग्रेग वाक्स्टर ने अपनी पुस्तक जनसंघ में यह राज खोला कि गोडसे उन युवकों में से था, जिसने सबसे पहले आर० एस० एस० में शिरकत की थी और वह १९३० में डाक्टर हेडगेवार के साथ महाराष्ट्र के प्रवास में शामिल था। इस पर भी आर० एस० एस० का यह कहना है कि गोडसे ने जब गांधीजी की हत्या की, उस समय उसका आर० एस० एस० से कोई सम्बन्ध नहीं था। जब कोई रिकार्ड नहीं, तो इसे किस तरह साबित किया जाय! यह कठिनाई उस समय सामने आती है जब सरकारी कर्मचारी पर पाबन्दी लगाने की बात सोची जाती है। आर० एस० एस० ने भारतीय सरकार के पास जो संविधान पेश किया है, उसमें लिखा है कि नाबालिगों को बगैर अभिभावक की आज्ञा के सदस्य नहीं बनाया जायेगा। परन्तु वास्त-

बिल्कुल ठीक उल्टी है।

आर० एस० एस० में चूंकि सदस्यता का कोई रजिस्टर नहीं है, इसलिए कोई नियमित फीस भी नहीं है। किसी भी चन्दा या दान देनेवाले को कोई रसीद नहीं दी जाती। इस संगठन के पास काफी पैसे हैं; और इसने बहुत सारे स्थानों में सम्पत्ति प्राप्त कर रखी है। यद्यपि अभी उस पर इन्कम टैक्स नहीं लगाया गया है।

चन्दा गुरुदक्षिणा की शक्ल में मिलता है। हर शाखा में साल का एक ऐसा दिन होता है जब कि सभी सदस्य पैसों का एक बक्स में रखते हैं जो आर० एस० एस० के झण्डे तले रखा होता है। कोई नहीं जानता है कि दूसरे ने कितना दिया। महीने भर पहले एक भाषण दिया जाता है जिसमें लोगों से अधिक-से-अधिक चन्दा देने की बात की जाती है।

सभी बक्स जिला हेडक्वार्टर में जमा होते है, जहाँ वे खोले जाते हैं और पैसे गिने जाते हैं। जमा की हुई रकम प्रान्तीय हेडक्वार्टर में भेज दी जाती है और फिर सभी प्रान्तों से प्राप्त पैसे हेडक्वार्टर नागपुर भेज दिये जाते हैं। नीचे के लोग यह नहीं जानते कि कुल कितनी रकम जमा हुई है। (खर्च के लिए पैसे केन्द्र से दिये जाते हैं।) विश्वास के साथ यह कहना कठिन है कि सभी खर्च गुरुदक्षिणा से ही पूरे होते हैं और आश्चर्यजनक रकम किसी-न-किसी स्तर पर देश के अन्दर या बाहर से उसे प्राप्त नहीं होती।

इसका चरित्र और इसकी कार्रवाइयों द्वारा यह ज्ञात होता है कि यह एक गुप्त संगठन है। इसके शिविरों में लाठी, छूरा और दूसरे हथियार चलाने की ट्रेनिंग दी जाती है।

आर० एस० एस० और जनसंघ का बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह कहा जाता है कि जनसंघ बनते समय आर० एस० एस० ने बहुत सारे लोगों को महत्वपूर्ण स्थानों पर रखा था। श्री दीनदयाल उपाध्याय जनसंघ के मंत्री होने से पहले उत्तर प्रदेश आर० एस० एस० के संगठक थे। बहुत दिनों तक वे इसके बारे में इनकार करते रहे, परन्तु उनकी मृत्यु पर आर० एस० एस० के मंत्री बाला साहब ने उनकी एक स्वयंसेवक के नाते बड़ी *प्रशंसा की, और यह दावा किया कि* उनकी प्रथम वफादारी आर० एस० एस० के साथ था।

जनसंघ आर० एस० एस० का राजनैतिक अंग है। दूसरे दायरों में भी आर० एस० एस० के अंग मिलते हैं—जैसे छात्रों का *विद्यार्थी परिषद, मजदूरों में* भारतीय मजदूर संघ, धार्मिक दायरों में काम करने के लिए विश्व हिन्दू परिषद।

ये सब एक दूसरे से जुदा और स्वतंत्र हैं और ये केवल आर० एस० एस० के नेतृत्व के सामने उत्तरदायी हैं, जो इनकी कार्रवाइयों का निरीक्षण और नियंत्रण करता है।

जमायते इस्लामी

यह जमायत मौलाना मौदूदी ने अगस्त १९४१ में कायम की थी। इनकी पुकार पर ७५ आदमी लाहौर में जमा हुए थे, उनमें उलमा विश्वविद्यालय के स्नातक, मजदूर, *कारीगर और पेशेवर* लोग भी थे। इसका उद्देश्य 'दीन' को स्थापित करना था जिसका अर्थ था इस्लामी आदर्शों और मूल्यों को रोजाना जीवन में जीना।

जमायते इस्लामी समाजवाद, राष्ट्रीयता और धर्मनिरपेक्षता में विश्वास नहीं रखती। यह जमायत मानती है कि इस्लाम-आधारित राज्य ही मुसलमानों का राज्य हो सकता है। उस राज्य का कानून शरीअत पर आधारित होगा। शरीअत, जो अटल और स्थायी है तथा जिसमें संशोधन नहीं *हो सकता।*

इसके अनुसार मनुष्य का सारा जीवन धार्मिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। महिलाएँ परदे में रहती हैं ताकि वे इस धरती पर नरक न बन जायें और शैतानी स्वतंत्रता के केन्द्र न हो जायें। महिला जिस आजादी की खोज में है वह सारी सभ्यता को भस्म करनेवाली है। इस सामाजिक वातावरण में फाइन आर्ट (ललितकलाओं) का कोई स्थान नहीं है।

इस पृष्ठभूमि में जमायत ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग का बड़ा विरोध किया है। जमायत का कांग्रेस के बारे में यह ख्याल था कि यह हिन्दुओं की जमायत है, और इसमें कुछ कम्यूनिस्ट *भी शामिल हैं तथा दोनों ही इस्लाम* के लिए खतरनाक हैं। जमायत के दृष्टिकोण से मुस्लिम लीग उन लोगों का संगठन था जिन्हें इस्लाम और इस्लामी सभ्यता से कोई सम्बन्ध नहीं था और *पाकिस्तान का बन जाना मुस्लिम* राष्ट्रीयता और लोकतंत्र की जीत थी, इस्लाम और इस्लामी राज्य की नहीं।

देश के बँटवारे के बाद मौलाना मौदूदी पाकिस्तान चले गये। उन्होंने पाकिस्तान के लोगों को यह बताया कि इस्लामी राज्य पाकिस्तान में स्थापित किया जाय। लोगों की धार्मिक भावना को जगाकर उन्होंने राजनैतिक कठिनाइयों पर बड़ी सफलता से काबू पा *लिया, पाकिस्तानी नेतृत्व ने लोगों को* धर्म-निरपेक्षता में ट्रेनिंग नहीं दी थी। इस कमजोरी से फायदा जमायत ने उठाया।

भारत में परिस्थिति भिन्न थी। इसका यह अर्थ नहीं कि भारत में धर्म-निरपेक्षता की जड़ें गहरी थी बल्कि नेहरू के धार्मिक कट्टरता को बेअसर बना दिया था।

भारतीय मुसलमानों के सामाजिक पिछड़ेपन और धार्मिक कट्टरपन ने जमायत को इस बात का अवसर दिया कि वह दृष्टिकोण के लेहाज से आक्रमणकारी बन जाये। देश के बँटवारे से जमायत के चरित्र या नीति में कोई अन्तर नहीं हुआ।

जमायत के नेतृत्व ने इस्लाम को मनुष्यों की सभी समस्याओं का हल बताया। आज के संसार में जो नैतिक पतन है, उसे इस्लाम ही दूर कर सकता

है। एक धार्मिक क्रान्ति की आवश्यकता है, और साथ ही साथ लोगों में धार्मिक जागृति लाने की भी आवश्यकता है। यह आध्यात्मिक क्रान्ति वे लायेंगे जिसको खुदा ने इस काम के लिए चुना है।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जमायत ने यह फैसला किया है कि वह कभी ऐसा रास्ता न अख्तियार करेगी जो नैतिक सीमा से बाहर हो, सच्चाई तथा ईमानदारी के विरुद्ध हो, जिससे साम्प्रदायिकता फैले, वर्ग-संघर्ष बढ़े या धरती पर फसाद फैले। जमायत रचनात्मक और शान्तिमय तरीकों से इस्लामी विचारों द्वारा मानसिक दृष्टि और चरित्र बदलने का प्रयास करती है, ताकि देश का सामाजिक और नैतिक जीवन सुधर सके। इसलिए जमायत इस्लामी का दावा है कि वह एक गैर-साम्प्रदायिक दल है जो लोकतन्त्रात्मक पद्धति से दृष्टिकोण में नैतिक और आध्यात्मिक परिवर्तन लाना चाहती है। जमायत यह जानती थी कि देश के बँटवारे के बाद सबसे बड़ी समस्या साम्प्रदायिकता और आबादी-परिवर्तन की थी। जमायत ने मुसलमानों को यह सलाह दी कि वे धैर्य रखें। भारत के मुसलमान जो बँटवारे के बाद बिलकुल टूट गये थे, उनमें जमायत ने हिम्मत पैदा की। इसने मुसलमानों से कहा कि वे अल्लाह पर विश्वास रखें और भविष्य के बारे में उदासीन न हों।

जमायत राष्ट्रीयता, समाजवाद, धर्म-निरपेक्षता और लोकतन्त्र में विश्वास नहीं रखती। राष्ट्रीयता के विरुद्ध शायद मौलाना मौदूदी से अधिक किसी भी मुसलमान लेखक ने नहीं लिखा है। अबुल लैस इसलाही का कहना है कि राष्ट्रीयता स्वार्थ का दूसरा नाम है। यह व्यक्तिगत स्वार्थ से भी अधिक खराब है। जमायत यह मानती है कि धर्म-निरपेक्षता वास्तव में धर्म का अभाव है। इस्लाम को धर्म से अलग नहीं किया जा सकता। जमायत धर्म-निरपेक्षता की इतनी विरोधी है कि यह एक हिन्दू भारत को धर्म-निरपेक्ष भारत से अच्छा मानती है।

जमायत सभी मुसलमानों को सही मुसलमान नहीं समझती। आम मुसलमानों को वह भटका हुआ मुसलमान मानती है। जमायत इस्लामी भारतीय मुसलमानों के लिए ३ बातों पर जोर देती है।

(१) इस्लाम के आधार पर मुसलमानों की एकता।

(२) देश की राजनीति से अलग रहना।

(३) मुसलमानों का एक अलग संगठन।

जमायत यह मानती है कि साम्प्रदायिकता को दूर करने के लिए अलग-अलग हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों, बौद्धों और जैनियों का मजबूत संगठन होना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम एकता दोनों सम्प्रदायों के संयुक्त संगठन द्वारा नहीं प्राप्त की जा सकती। प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय का अपना अलग राजनैतिक संगठन होना चाहिए और प्रत्येक समस्या पर हर सम्प्रदाय के प्रतिनिधियों द्वारा आपसी वार्ता में सोच-विचार होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि जमायते-इस्लामी राज्य के अन्दर एक मुस्लिम समाज स्थापित करना चाहती है।

जमायत यह मानती है कि इस्लाम कोई धर्म नहीं है, बल्कि एक आन्दोलन है जो मनुष्य और मनुष्य के बीच के सम्बन्धों को निर्धारित करने के बाद एक प्रसारव्यापी राज्य (वर्ल्ड स्टेट) बनाना चाहती है।

जमायते-इस्लामी यह नहीं मानती कि सभी धर्म एक ही हैं। यह इस्लाम को सबसे अच्छा धर्म और मुसलमानों को सब लोगों से अच्छा मानती है। जमायत का संगठन बहुत ठोस है और इसमें अनुशासन प्रथम दर्जे का है। इसमें अधिकतर मध्यम वर्ग के लोग शामिल हैं, यद्यपि इसने यह कोशिश की है कि इसे मुसलमानों के सभी वर्गों का समर्थन प्राप्त हो सके। जमायते इस्लामी का मुसलमानों पर जबर्दस्त प्रभाव है, यद्यपि इसके सदस्य कुल पन्द्रह सौ लोग हैं। इसका कारण यह है कि यह साम्प्रदायिक दंगों में पीड़ित लोगों की बड़ी सेवा करती है। इसने मुसलमानों को यह विश्वास दिला रखा है कि मुसलमानों की भलाई और साम्प्रदायिक हिंसा से मुक्ति के लिए मुसलमानों का एक होना अनिवार्य है।

आनन्द मार्ग

आनन्द मार्ग के संस्थापक श्री प्रभात रंजन सरकार हैं। ये जमालपुर रेलवे वर्कशाप के कारिन्दे थे। यह संगठन उन्होंने आज से १५ साल पहले ९ जनवरी १९५५ को बनाया था। आनन्द मार्ग के लोग श्री पी० आर० सरकार को एक नयी सभ्यता को लानेवाला और गुरु मानते हैं। उन्हें आमतौर से लोग बाबा कहते हैं और उन्हें भगवान का तीसरा अवतार माना जाता है। पहला अवतार शिव और दूसरा अवतार कृष्ण को माना जाता है। आनन्दमूर्ति का दर्शन मनुष्य को सदा रहनेवाली आध्यात्मिक प्रसन्नता देता है। यह मनुष्य को भौतिकवाद से अलग रखना चाहता है। आनन्द मार्ग का उद्देश्य सर्वप्रिय समाज स्थापित करना है। एक आनन्द मार्गी के लिए मानव शरीर एक खाली बर्तन के समान है और मनुष्य को अपने विश्वास अर्थात् आनन्द मार्ग के लिए अपना जीवन बलिदान करने से हिचकिचाना नहीं चाहिए। आनन्द मार्ग का साहित्य पढ़ने से यह पता लगता है कि आनन्दमूर्तिजी का बताया हुआ मार्ग वास्तव में तांत्रिक पूजा है। श्री सरकार ने अभिमत में लिखा है, 'यद्यपि आधुनिक भारतीय संस्कृति वैदिक मालूम होती है, यह मूल में तांत्रिक है। अगर भारतीय संस्कृति सोने के जेवर की तरह है तो तांत्रिक सोना है।'

उनके अनुसार लोकतंत्र 'मूर्खों' की सरकार है, जो मूर्खों द्वारा, मूर्खों के लिए चलायी जाती है। आनन्दमूर्तिजी का विचार है कि एक आध्यात्मिक तानाशाही या नैतिक तानाशाही ही मुक्ति का एक मात्र मार्ग है।

प्राउटिस्ट ब्लाक ऑव इण्डिया आनन्द मार्ग का राजनैतिक अंग है। जिसका उद्देश्य बाबा की तानाशाही स्थापित करना है। आनन्द मार्ग के माननेवालों में डाक्टर, प्रोफेसर, विद्यार्थी, सरकारी नौकर, सैनिक, पुलिस के बड़े-बड़े पदाधिकारी सभी हैं। सारे भारत में इसकी २,००० शाखाएँ हैं। एक हजार पूरे समय के कार्यकर्ता हैं जो अवधूत कहलाते हैं और ५० ल.ख चुस्त कार्यकर्ता हैं। आनन्द मार्ग एक आधुनिक और व्यवस्थित संगठन है। इसके हर विभाग के अलग-अलग मंत्री हैं। संगठन के कार्यों के लिए मार्ग को ९ भागों में बाँट दिया गया है। बर्लिन, पूर्व यूरोप, हांगकांग, लन्दन, मनीला, नैरोबी, नयी दिल्ली, न्यूयार्क तथा सिडनी।

आनन्द मार्ग के मुख्य अंग को आनन्द मार्ग प्रचारक संघ कहा जाता है। इसके अध्यक्ष स्वयं श्री सरकार हैं।

प्राउटिस्ट ब्लाक का सबसे बड़ा उद्देश्य साम्यवाद को बढ़ने से रोकना है। प्राउटिस्ट ब्लाक का केन्द्रीय संसद या राज्य विधानसभाओं में कोई प्रतिनिधित्व नहीं है।

आनन्द मार्ग के विद्यार्थी दल का नाम प्राउटिस्ट विद्यार्थी फेडरेशन है, और उसके मजदूर अंग का नाम यूनिवर्सल प्राउटिस्ट लेबर फेडरेशन है। इन सभी अंगों के मुख्य व्यक्ति अवधूत ही हैं। इन अवधूतों की नियुक्ति बड़ी जाँच-पड़ताल के बाद होती है। आनन्द मार्गी साधुओं के ५ दर्जे हैं। साधक, तांत्रिक, आचार्य, अवधूत, पुरोधा। पहला सबसे नीचा ओहदा है और आखिरी सबसे ऊँचा। आनन्द मार्गी साधू केसरिया रंग का कपड़ा पहनते हैं और एक बड़ा छूरा अपनी कमर से बाँध रखते हैं।

हर रविवार को धर्मचक्र होता है जिसमें हर आनन्द मार्गी साधू को भाग लेना आवश्यक होता है। इसमें पूरे समय काम करनेवाले व्यक्ति महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर बातचीत करते हैं। साल में एक बार धर्म महाचक्र होता है, जिसमें केवल चुने हुए लोगों को शरीक होने की आज्ञा दी जाती है। आनन्दमूर्तिजी के बारे में बहुत-सी मनगढ़ंत कहानियाँ मशहूर हैं, जिनसे उनकी बुजुर्गी जाहिर होती है।

आनन्द मार्ग एक साप्ताहिक और तीन दैनिक अखबार निकालता है। इस संगठन के पास बहुत सारे प्रेस हैं जिनके द्वारा यह प्रचार-साहित्य, अंग्रेजी और अपने देश की अन्य दूसरी भाषाओं में छपवाता है।

आनन्द मार्ग के काम करने का तरीका अनोखा है। यह बातों के गुप्त रखने पर जोर देता है। आनन्द मार्ग के माननेवाले एक तरह के मानसिक उन्माद की स्थिति में रहते हैं। वह हमेशा इस तरह सतर्क रहा करते हैं जैसे किसी शत्रु का सामना कर रहे हों। इस संगठन में बातें इतनी गुप्त होती हैं कि एक अवधूत को यह पता नहीं होता कि दूसरा अवधूत क्या कर रहा है। संगठन में दाखिल होने पर अवधूत का नाम बदल दिया जाता है।

आनन्द मार्ग का दफ्तर या निवास स्थान शहर से बाहर होता है—हर जगह ऐसा ही है, पुरुलिया, रांची, पटना, कलकत्ता और दिल्ली में। इन स्थानों पर कोई आसानी से नहीं आ सकता। बाबा आनन्दमूर्ति लोगों के सामने कम ही आते हैं। आनन्दमूर्ति जहाँ कहीं भी जाते हैं, सशस्त्र बॉडीगार्ड उनके साथ होते हैं। उनका मामूली चेला भी बड़ी होशियारी से घूमता-फिरता है। सम्मेलन और सभाएँ गुप्त रखी जाती हैं। एक अवधूत नगर में उतनी ही देर ठहरता है जितनी देर वहाँ उसका काम होता है। आनन्द मार्ग के सदस्य बहुत सारे स्कूल चलाते हैं, और शहर के दूसरे कार्य भी करते हैं। शिक्षण-संस्थाओं के द्वारा आनन्द मार्ग को चेले मिलते हैं तथा शहर के कार्यों द्वारा गुप्त रूप से मिलनेवाले रुपयों के लिए एक परदा मिल जाता है।

आनन्द मार्ग द्वारा २०० शिक्षा की संस्थाएँ चलायी जाती हैं, जिनमें कुल सेकेण्डरी स्कूल हैं और एक कालेज है। इनसे दोहरा काम होता है। एक तो यह कि इनके माध्यम से समाज में वे समाज-सेवक के रूप में जाते हैं। दूसरे, इन्हें छोटे-छोटे बच्चे मिल जाते हैं जो कच्चे माल के तौर पर प्रयोग में लाये जाते हैं। नाजियों की तरह आनन्द मार्ग भी छोटे बच्चों को पसन्द करता है। यह सभी स्कूल दिमाग बदलने के केन्द्र हैं। इन बच्चों से बाबा की भगवान की तरह पूजा करायी जाती है। आनन्द मार्ग ने अपने संगठन में बहुत सारे सेना, पुलिस और प्रशासन के पदाधिकारियों को भर रखा है। इस कारण मार्ग अपनी कार्रवाइयों को अधिक स्वतंत्रता के साथ करता है। मई १९७१ में रांची सम्मेलन में एक आई० ए० एस० पदाधिकारी ने एक प्रेस कान्फ्रेंस को भी सम्बोधित किया था। अपनी नौकरी छोड़कर बहुत सारे सैनिक भाग आये हैं जो अवधूतों को सैनिक प्रशिक्षण देते हैं।

आनन्द मार्ग का चरित्र मूलतः साम्प्रदायिक है। पुरुलिया में आदिवासियों से टकराव के बाद आनन्द मार्गियों ने इसे साम्प्रदायिकता का रंग दे दिया। वक्तव्य में यह कहने के बजाय कि आनन्द मार्गियों और स्थानीय लोगों में टक्कर हुई। यह कहा गया कि हत्या मुसलमान गुण्डों ने की थी। इस वक्तव्य के बँटने के एक सप्ताह बाद ही जमालपुर के हिन्दू मन्दिर में गाय का गोश्त पाया गया।

जहाँ कहीं भी आनन्द मार्ग का खेमा लगता है वहाँ दंगा हो जाता है। यही पुरुलिया में हुआ और रांची में भी हुआ। बिहार सरकार की दरख्वास्त पर सी० बी० आई० ने इस सम्बन्ध में

जाँच शुरू की। जाँच में पटना, कलकत्ता, दिल्ली, वाराणसी में जो कागज पकड़े गये उनसे पता चला कि यह संगठन एक समानान्तर सरकार चला रही थी। इसके अलग-अलग शिक्षा, सामाजिक भलाई, वित्त, और न्यायालय थे। प्रशासक एक्जीक्यूटिव और न्यायालयों के प्रधान स्वयं श्री सरकार थे। जिन्हें 'विटो' प्राप्त है। कैबिनेट के दूसरे मंत्री या न्यायाधीश केवल सलाह दे सकते हैं, परन्तु स्वयं कोई फैसला नहीं कर सकते। यह न्यायालय बेंत लगाने से लेकर फाँसी तक की सजा दे सकता है। जो लोग संगठन से गद्दारी करते हैं, उन्हें फाँसी की सजा दी जाती है।

आनन्दमूर्तिजी अवधूतों को छोटी-सी गलती पर कड़ी सजाएँ देते थे। ५०० बेंत एक दिन में लगाये जाते थे। कई दिनों तक अकेले कमरे में बन्द रखा जाता था। सी० बी० आई० का कहना है कि आनन्द मार्ग के प्रधानमंत्री ने इन्दिरा गांधी को भी कत्ल करने का षड्यंत्र किया था। सितम्बर १९६९ में वाराणसी में आधे दर्जन साधू इस सिलसिले में गिरफ्तार हुए थे। हाल की तहकीकात ने कत्ल के षड्यंत्र पर कुछ और रोशनी डाली है, जिस पर सी० बी० आई० फिर तहकीकात शुरू करेगी।

कागजातों से यह भी पता चला कि संगठन को नियमित रूप से कुछ लोगों द्वारा देश के अन्दर और बाहर से रुपये मिल रहे थे। सी० बी० आई० की इस तहकीकात ने आनन्द मार्ग को तोड़कर रख दिया। यहाँ तक कि मार्ग-माता श्रीमती उमा सरकार ने और आनन्दमूर्ति के निजी सचिव अवधूत विशोकानन्द ने भी संगठन को छोड़ दिया।

इन अवधूत और अवधूतियों ने बताया कि आनन्दमूर्ति ने दर्जनों अवधूत सन्यासियों को कत्ल किया है और अपने चेलों के साथ समलिंगी मैथुन करते रहे हैं, उन्हें यह विश्वास दिला कर कि वे पहले जन्म में लड़की थे। श्रीमती सरकार के अनुसार मार्ग की ऊँची श्रेणी के लोगों में समलिंगी मैथुन आम बात है।

शिव सेना

शिव सेना स्वामी प्रथा पर आधारित एक संगठन है। यह बम्बई और उसके पड़ोस के नगरों तक ही सीमित है। इसका आधार मराठा राष्ट्रीयता है। बढ़ती हुई बेकारी और भारी संख्या में बाहर से आनेवाले लोगों के कारण इसे बढ़ावा मिला। इसके संस्थापक कार्टूनिस्ट बाल ठाकरे हैं।

शिवाजी को आर० एस० एस० और जनसंघ ने हिन्दू राष्ट्रीयता का प्रतीक माना। शिव सेना ने उन्हें राष्ट्रीय माना, यद्यपि इसका आधार भी हिन्दू राष्ट्रीयता है। शिव सेना शिवाजी से प्रेरणा प्राप्त करती है। उनकी सफलता की कहानी उन मराठों की सफलता की कहानी है, जिन्होंने एक बड़े साम्राज्य का विरोध किया और भारत में सबसे बड़ी सैनिक शक्ति की कुछ दिनों के लिए बुनियाद हिला डाली। मई १९७० के भिवण्डी के दंगे के पहले, शिवाजी किस रूप में देखे जाते थे, उसका अनुमान 'टाइम्स ऑव इण्डिया' के निम्नलिखित वक्तव्य से होता है।

शिव जयन्ती के तुरन्त बाद ही भिवण्डी में एक नया संगठन उत्पन्न हुआ, जिसका नेतृत्व स्थानीय जनसंघी और आर० एस० एस० के नेता कर रहे थे। एक राष्ट्रीय उत्सव मण्डल बना जिसने अपने दफ्तर के सामने एक बड़ा बोर्ड रख छोड़ा था, जिसका काम हिन्दू साम्प्रदायिक भावनाओं को जगाना था। १९७० के मार्च महीने में राष्ट्रीय उत्सव मण्डल ने मुहर्रम के जुलूस में दखल डाला। फिर पुलिस की हिदायत के विरुद्ध होली के त्यौहार के अवसर पर आग का बड़ा गड्ढा खोदा गया। मुहर्रम के जुलूस के दिन उन गड्ढों में आग लगा दी गयी ताकि ताजिया का जुलूस न निकाला जा सके और उस जुलूस का रास्ता रोका जा सके, यद्यपि होली अभी तीन दिन बाद होनेवाली थी।

५ मई को शिव-जयन्ती के अवसर पर जो वक्ता बुलाये गये थे उनमें एक आर० एस० एस० के नेता भी थे। शान्ति-समिति के हिन्दू और मुसलमान नेताओं ने उन्हें यह कहा था कि परिस्थिति नाजुक है, इसलिए अपना भाषण नर्म दें। परन्तु उन्होंने अपने भाषण में कहा कि शिवाजी मस्जिदों की इज्जत करते थे परन्तु राज्य के विरुद्ध कार्रवाइयों को बर्दाश्त नहीं करते थे। ६ मई की रात के कार्यक्रम में एक नाटक शामिल किया गया जिसमें एक मुगल सरदार द्वारा अपहरण की हुई हिन्दू लड़कियों की बेइज्जती दिखायी गयी थी।

ये कुछ झाँकियाँ हैं कि किस तरह शिव-जयन्ती मनायी गयी।

शिव सेना ने क्षेत्रवाद (रिजनलिज्म) को जागृत किया है और मराठी भावनाओं का रिश्ता उन दिनों से जोड़ा है जब मराठा साम्राज्य स्थापित था। इसने मराठा और गैर-मराठा का अन्तर खड़ा किया है।

भाषा और नासमझदारी की बुनियाद पर इसने लोगों में गलतफहमी पैदा की है। वे नगर की सभी बुराइयों का कारण बाहरवालों को मानते हैं। शिव सेना का मुख्य काम ट्रेड यूनियन आन्दोलन को हर प्रकार से तोड़ना रहा है। इस सिलसिले में सभाएँ भंग की जाती रही हैं, दफ्तरों पर आक्रमण किया जाता रहा है।

यह साम्यवादियों और सभी प्रकार के वामपंथियों का विरोध करती है और बम्बई नगर को लाल खतरे से पवित्र रखना चाहती है।

बाल ठाकरे ने स्पष्ट कहा है कि टाटा और बिड़ला मराठों के मित्र और अन्नदाता हैं।

(मार्च, '७२ के 'सेमिनार के आधार पर)

केन्द्रीय आचार्यकुल : विवरण

[नकोदर के सघ अधिवेशन में १७ मई को केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक ने यह विवरण प्रस्तुत किया। सं०]

इस विवरण अवधि में मध्य प्रदेश, असम और दिल्ली के तीन प्रदेशों में आचार्यकुल का सक्रिय काम हुआ है। दूसरे प्रदेशों में भी काम आगे बढा है और आचार्यकुल के सदस्य शिक्षा और समाज में समग्र क्रान्ति करने के प्रयास में सहयोग कर रहे हैं।

गत १२-१३ सितम्बर १९७१ को केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की तीसरी बैठक विनोबाजी के सान्निध्य मे पवनार में सम्पन्न हुई जिसमें दो महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। एक तो ग्रामस्वराज्य के माध्यम से जिस समाज की रचना का प्रयास किया जा रहा है उसके अनुरूप शिक्षा-नीति तैयार करके उसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

दूसरा महत्व का निर्णय यह हुआ कि आचार्यकुल का एक संविधान बनाकर स्वीकृत किया गया है।

प्रदेशों में आचार्यकुल की प्रगति

असम : इस साल असम में भी आचार्यकुल का काम आरम्भ हुआ है। लखीमपुर जिले में भाई श्री अनिरुद्धजी ने माजगाँव, पानीगाँव में दस केन्द्र कायम किये हैं। वहाँ अब तक कुल ७७ सदस्यों ने निष्ठापत्र पर हस्ताक्षर किये हैं और हर केन्द्र पर एक संयोजक की नियुक्ति की गयी है।

गुजरात : गुजरात में आचार्यकुल का आरम्भ हो गया है। बड़ौदा में आचार्यकुल की स्थापना के लिए १३ फरवरी को शहर के प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षण से सम्बन्धित शिक्षकों का सम्मेलन गुजरात प्रदेश के आचार्यकुल के संयोजक श्री ईश्वरभाई पटेल के सान्निध्य में आयोजित किया गया था। ईश्वरभाई ने शिक्षकों को सम्बोधित करते हुए कहा—'आज की सत्ताभिमुख राजनीति की छाया जीवन के सभी क्षेत्रों में पड़ी है। इस छाया में कुछ उगेगा ऐसी स्थिति नहीं है। जिस प्रकार पौधे को उगने के लिए सूर्य के प्रकाश की जरूरत है, उसी तरह व्यक्ति और समाज आगे बढे, इसे दूर करने के लिए राजनीति की छाँह का दूर करना आवश्यक है। आचार्यकुल का एक प्रमुख लक्ष्य इस छाया को दूर करना है।'

इसके पहले जनवरी में अहमदाबाद में भी श्री ईश्वरभाई की अध्यक्षता में शिक्षकों का सम्मेलन हुआ जिसे प्रसिद्ध विद्वान श्री रोहित मेहता ने सम्बोधित किया था।

उत्तर प्रदेश : यहाँ आचार्यकुल अधिक सक्रिय है। इनकी नियमित बैठकें होती हैं और शिक्षा, शिक्षक व समाज की समस्याओं पर विचार-विनिमय होता है।

इस आख्या-अवधि में बागला देश के शरणार्थियों की सेवा और सहायता के काम में वाराणसी, अलीगढ, मुरादाबाद, आगरा और बरेली के आचार्यकुलों ने चन्दा और वस्त्र एकत्र कर भेजे हैं। आगरा से लगभग ७० हजार वस्त्र भेजे गये हैं और वाराणसी नगर से लगभग १५,००० रुपये के वस्त्र और बर्तन। आगरा में आचार्यकुल ने छात्रों और शिक्षकों के सहयोग से इस वर्ष की परीक्षाएँ शान्तिपूर्ण ढग से कराने में सफलता प्राप्त की है। दयालबाग (आगरा) में इजीनियरिंग के छात्रों, अध्यापकों और व्यवस्थापकों के बीच एक विवाद को सभी पक्षों के लिए समाधानकारक तरीके से हल कराने में आचार्यकुल को सफलता मिली है।

आगरा के आचार्यकुल के सदस्यों ने अपनी ओर से समाज विज्ञान, विद्यापीठ के मोटर ड्राइवर को उसकी अन्य चिकित्सा के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की है।

देवरिया, बस्ती, गोंडा, बहराइच और गोरखपुर में पिछले माहों में अनेक सह-जीवन शिविर लगाये गये हैं और इनका अनुभव बहुत अच्छा रहा है।

बस्ती जिले की उपलब्धि : उत्तर प्रदेश में आचार्यकुल का काम माध्यमिक कालेजों और विश्वविद्यालयों से ही आरम्भ हुआ और वह उन्हीं में चल रहा था। किन्तु इस साल बस्ती में वह प्राथमिक शिक्षकों तक ही पहुँचा है। वहाँ गत ६-७ मार्च को जिला प्राथमिक शिक्षकों के हेडमास्टरों की जनपदीय गोष्ठी हुई, जिसमें प्रधानाध्यापकों ने आचार्यकुल का विचार मान्य किया और प्रारम्भिक विद्यालय-स्तर पर आचार्यकुल की स्थापना हुई।

नियमित बैठकें करने के अलावा जगह-जगह आचार्यकुलों ने छात्र और शिक्षक-कल्याण के कार्य भी हाथ में लिये हैं। समाज-सुधार के लिए भी अनेक स्थानों में प्रयास किये गये हैं। गोरखपुर आचार्यकुल के प्रयास से इस वर्ष वहाँ दयानन्द कालेज में हड़ताल नहीं हुई। कालेज के नये भवन के निर्माण-कार्य में छात्रों और अध्यापकों का सक्रिय सहयोग भी इस साल वहाँ मिला है। बहराइच में आचार्यकुल ने छात्रों के गाँवों में सम्पर्क का सिलसिला आरम्भ किया है और इसके फलस्वरूप कालेज के निर्माण में पहले से अधिक जन-सहयोग मिला है। देवरिया में फाजिल नगर कालेज के आचार्यकुल ने गाँवों में दवाइयाँ बाँटने का काम हाथ में लिया है और पडरौना में हरिजन बस्तियों में श्रमदान और सफाई-कार्य सम्पन्न किया गया है। वहीं पर एक मामले में सामाजिक न्याय के लिए आचार्यकुल के संयोजक श्री परसुराम मिश्रजी ने अनशन भी किया और फलस्वरूप वह मामला सही ढग से हल हो गया। नशाबन्दी के लिए भी आचार्यकुल काम कर रहा है तथा ग्रामदान-पुष्टि-कार्य में तो वह लगा ही है। पथरदेवा (देवरिया) में आचार्यकुल ने पुष्टि-कार्य हाथ में लिया है।

बिहार : बिहार के कुल १७ जिलों में से १० जिलों में आचार्यकुल का संगठन बना है। अधिकतर काम गोष्ठियों द्वारा विचार-प्रचार और तरुण-शान्तिसेना के साथ सह-जीवन शिविर लगाने का हुआ है। किन्तु पूर्णिया (रुपौली और भवानीपुर), सहरसा, बिरौल (दरभंगा) और मुसहरी (मुजफ्फरपुर) में आचार्यकुल ग्रामस्वराज्य के प्रत्यक्ष कार्य में लगा है। सहरसा में, जो ग्रामस्वराज्य का राष्ट्रीय प्रयोग-क्षेत्र माना गया है, आचार्यकुल ने सारे अभियान में महती जिम्मेदारियाँ निभायी हैं।

ग्रामस्वराज्य के काम को करने के साथ-साथ पुष्टि-क्षेत्रों में आचार्यकुल ने शिक्षा में सुधार का काम भी हाथ में लिया है। जहाँ प्रखण्डसभाएँ बन गयी हैं और ग्राम-विकास का काम प्रारम्भ हुआ है वहाँ पुरानी शिक्षा-पद्धति नहीं चलनी चाहिए। मुसहरी प्रखण्ड में जयप्रकाशजी ने नये वातावरण के अनुकूल नयी शिक्षा कैसी हो; इस काम को भी अपने हाथ में लिया है और वहाँ का काम गुजरात स्नातक प्रशिक्षण महाविद्यालय, गांधी विद्यापीठ वेड़छी के प्राचार्य श्री ज्योतिभाई देसाई के निर्देशन में चल रहा है। रुपौली में भी श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के नेतृत्व में शिक्षा में सुधार की एक पंचवर्षीय योजना बनायी गयी है जिसे आचार्यकुल के माध्यम से सम्पन्न किया जायेगा। उसी प्रकार सहरसा में श्री धीरेन्द्रभाई के मार्गदर्शन में और श्री गंगाधर पाठणकर के सहयोग से शिक्षा में सुधार की एक योजना आरम्भ की गयी है जिस पर जिला आचार्यकुल की शिक्षा-सुधार उप-समिति काम कर रही है। इस योजना का उद्देश्य दो-तरफा है। एक तो बिहार के प्रचलित पाठ्यक्रम को सही ढंग से क्रियान्वित करने के लिए शिक्षकों और शिक्षा-विभाग को उन्मुख करना और उसके लिए कुछ मॉडल विद्यालयों का चयन करना। दूसरे जिले में श्री धीरेन्द्रभाई की ग्राम-गुरुकुल की योजना के अनुसार कुछ नये प्रयोग-केन्द्र कायम करना।

सहरसा में आचार्यकुल के काम को गति देने के लिए जिले में लगभग २५० केन्द्र कायम किये गये हैं जो आचार्यकुल, तरुण-शान्तिसेना और ग्रामस्वराज्य का त्रिविध कार्यक्रम सम्पन्न करने का प्रयास कर रहे हैं।

अभी तक सहरसा का काम हाईस्कूल तक ही सीमित रहा, किन्तु अब कालेजों में भी आरम्भ किया जा रहा है और सुपौल डिग्री कालेज में आचार्यकुल की एक इकाई गठित हुई है। शिक्षकों के अलावा सहरसा के अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं का सहयोग भी इस कार्य के लिए प्राप्त है और शिक्षा-सुधार उप-समिति में काफी ऐसे लोग हैं जो प्रत्यक्ष विद्यालयों में पढ़ाने का काम कर चुके हैं, किन्तु अभी अवकाश पर हैं।

महाराष्ट्र : महाराष्ट्र के २६ में से २४ जिलों में आचार्यकुल का संगठन बना है। इस वर्ष १००० सदस्य पूरा करने का निश्चय किया गया है और इस रिपोर्ट के लिखने के समय तक ७५६ सदस्य बने हैं। महाराष्ट्र के काम की एक विशेषता यह है कि वहाँ पर आचार्यकुल के साथ-साथ तरुण-शान्तिसेना का काम भी आचार्यकुल ने हाथ में लिया है। यह बात यद्यपि अन्यत्र भी होती है, किन्तु महाराष्ट्र में इस ओर अच्छी प्रगति हुई है। महाराष्ट्र में सदस्यों का सदस्यता-शुल्क जमा करने का काम केन्द्रों को सौंप दिया गया है।

मध्य प्रदेश : मध्य प्रदेश में इस साल आचार्यकुल का काम काफी आगे बढ़ा है। वहाँ भाई श्री गुरुशरण जी (जो मध्य प्रदेश आचार्यकुल के संयोजक हैं) के प्रयास से अब प्रदेशीय तदर्थ समिति का गठन हो गया है जिसका पहला सम्मेलन पिछली नवम्बर में सघ-अधिवेशन के समय ही भोपाल में सम्पन्न हुआ है। वहाँ भी अब तक प्रान्त के ४४ जिलों में से २२ में आचार्यकुल का संगठन बना है। कुल १६५ सदस्य बने हैं। १४ मार्च को सिवनी और छिंदवाड़ा के आचार्यकुलों का सम्मेलन श्री नरेन्द्र दुबे की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। मध्य प्रदेश के भूतपूर्व शिक्षामंत्री श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने सम्मेलन का उद्बोधन किया।

दिल्ली : दिल्ली में अब तक १० इकाइयाँ स्थापित हुई हैं और ४१ सदस्य बने हैं। गत २९ नवम्बर को दिल्ली प्रदेश आचार्यकुल का सम्मेलन श्री जैनेन्द्रकुमार की अध्यक्षता में गांधी भवन में सम्पन्न हुआ है। श्री चिन्तामणि देशमुख और डा० शान्तिनारायणजी और गांधी भवन के निदेशक डा० एस० एन० रानडे आदि लोग उपस्थित थे। दिल्ली में भी आचार्यकुल ने तरुण-शान्तिसेना का काम उठाया है और दोनों के प्रयास से सफाई और एक हरिजन बस्ती का सर्वे का काम हाथ में लिया गया है। कुछ ऐसी कन्याओं की पढ़ाई का भी प्रयास किया जा रहा है जिनकी पढ़ाई गरीबी या अन्य घरेलू कारणों से छूट गयी है। गत १५ फरवरी को डा० शान्तिनारायणजी की अध्यक्षता में प्रदेशीय तरुण-शान्तिसेना का शिविर भी सम्पन्न हुआ है।

सदस्य-संख्या : अब तक देश के कुल ६ प्रदेशों में आचार्यकुल का काम संगठित रूप से हुआ है। कुल ३१५५ सदस्य बने हैं। इनका प्रान्तवार आँकड़ा इस प्रकार है

१. असम	७७
२. बिहार	१२४४
३. उत्तर प्रदेश	८७२
४. दिल्ली	४१
५. मध्य प्रदेश	१६५
६. महाराष्ट्र	७५६

दंगा या रिहर्सल ?

"यह मेरा लड़का अठारह बरस का है"—एक वयोवृद्ध खाँ साहेब ने अपनी जवान औलाद का परिचय देते हुए कहा।

"बहुत खुशी हुई आप दोनों से मिलकर"—मैंने कहा।

"सुनिये तो, हम तो इसकी उम्मीद ही छोड़ बैठे थे। जब हमारे घर पर चढ़ाई होनेवाली थी उसके शायद आध घण्टे पहले छोटे बच्चों-बच्चियों और औरतों को लेकर हम तो भाग निकले, यह पीछे रह गया। और जब तीन रोज तक उसका कोई पता नहीं चला तो हमने समझा कि उसे हमलावरों ने खत्म कर दिया। मगर हुआ यह कि पड़ोस में एक धोबिन रहती है, उसने तीन दिन तक अपने घर में उपलों के बीच इसे छिपाये रखा और किसी को खबर नहीं होने दी।"

"आप उस धोबिन का नाम बतला सकते हैं।" हमारी टोली के मुखिया, प्रोफेसर राधेश्याम शर्मा ने पूछा।

"नहीं, उसने अपना नाम इस लड़के तक को नहीं बताया, कहती थी कि अगर पता चल गया तो मुहल्ले के लोग उसका ही सफाया कर देंगे।"

"यह गलत है। अब ऐसा डर नहीं है। उस धोबिन ने तो कमाल कर दिया। उसे विशेष पुरस्कार मिलना चाहिए। अपनी जान को खतरे में डालकर उसने साम्प्रदायिक एकता का शानदार नमूना पेश किया।

× × ×

"हलो, मैं राधेश्याम शर्मा बोल रहा हूँ। आप कौन हैं ?"

"हलो, मैं (अधिकारी) बोल रहा हूँ।"

"देखिये अमुक मुहल्ले में एक मस्जिद तोड़ी जा रही है, वहाँ पुलिस फोर्स भेजिए।"

"पहले हम खुद पता कर लें और फिर जैसा जरूरी होगा किया जायगा। आपका नम्बर क्या है ?"

भाई साहब राधेश्यामजी ने अपना नम्बर दे दिया। तीन घण्टे गुजर गये, कोई नहीं पहुँचा। इतनी देर में फोन आया—"हलो, प्रोफेसर साहब। हमने पता करवाया, आपकी भेजी इत्तला गलत थी, मस्जिद सलामत है, किसी फोर्स की दरकार नहीं है।"

भाई साहब के काटो तो खून नहीं। रात के आठ बजे थे, सारे शहर में कर्फ्यू था। जहाँ उन्हें मस्जिद के बचने की खुशी थी, वहाँ अपने पर ग्लानि थी कि मैंने झूठी इत्तला पर कैसे यकीन कर लिया और अधिकारियों को क्यों नाहक परेशान किया। अब आगे मेरी बात का क्या वजन है ! क्या माना जायगा ? उनकी पत्नी श्री लीला भाभीजी (जो बसन्त महिला डिग्री कालेज की प्रधानाचार्या हैं) ने भी कहा कि इस तरह बिना सोचे-समझे कुछ नहीं करना चाहिए। रात भर भाई साहब ने बेचैनी में काटी।

सुबह हुई। उस भाई के पास पहुँचे जिसने इत्तला दी थी। देखते ही उस पर बरस पड़े·········· वह हँसता रहा। इन्हें और भी गुस्सा आया। फिर उसने बड़ी नम्रता से कहा—"प्रोफेसर साहब मुझे सब मालूम है, मेरी इत्तला एकदम सही है। चलिए आप वह मस्जिद देख लीजिए।"

भाई साहब ने उस भाई को अपनी गाड़ी में बिठाया। वह उन्हें मस्जिद पर ले गया और बोला—"देखिए, यह है।"

भाई साहब हैरत में रह गये। "पूछने लगे··· तो फिर अमुक अधिकारी ने यह क्यों कहा कि कुछ हुआ ही नहीं है।"

वह सज्जन हँसने लगे और बोले, "बात यह है कि पुलिस के दरोगा साहब आये थे दर्याफ्त करने; तो दूर से ही मुहल्ले के लोगों ने उन्हें घेर लिया और दूसरी मस्जिद ले जाकर दिखा दी जो सही-सलामत थी।"

भाई साहब ने घर आकर फिर फोन किया और अधिकारी को सब बताया। दो घण्टे बाद उसका फोन आया, "प्रोफेसर साहब, आपने बिलकुल सही बतलाया। हमें बड़ा अफसोस है कि आपकी कल की इत्तला को हमने गलत मान लिया। हमें क्षमा कर दें। अब हमें सब ठीक पता चल गया है। फोर्स जा रही है। आपके हम बहुत आभारी हैं।"

× × ×

हनुमानजी के मन्दिर का दरवाजा टूटा हुआ था। पुजारीजी से हमने पूछा, "यह कैसे टूटा ?"

"मियाँ लोग आये थे, बड़ा भारी हुजूम था। पहले उन्होंने गोली चलायी और फिर आस-पास चढ़ाई कर दी। उसके बाद इस मन्दिर की तरफ बढ़े।"

"तब क्या हुआ ?"

वहाँ खड़े एक अधेड़ उमर के आदमी ने कहा, "साहब ! हमारी बस्ती में हिन्दू ज्यादा हैं और आस-पास में मुस्लिम आबादी है। जब हम लोगों के घर लूटे जाने लगे तो मन्दिर के इन पुजारीजी ने ही उन लोगों को समझाया और हमारी जान बचायी। इस वास्ते जब इनके मन्दिर पर हमला हुआ तो हमने रोका और कहा यह गलत काम नहीं होना चाहिए। सिर्फ दरवाजा जरा-सा तोड़ कर सब चले गये थे।"

उस गोली से एक आदमी मारा गया था। खून के छींटे हमने एक मकान पर देखे।

× × ×

ये तीनों प्रसंग काशी नगरी के हैं जहाँ १६ जून को दुर्भाग्यपूर्ण आग भड़क उठी। अधिकारी शुरू में तो भ्रम में थे, लेकिन बाद में उनमें जागृति आयी और फिर बड़ी कड़ाई से स्थिति को कण्ट्रोल में लिया। इस विकट समय में

राहत का काम किया नगर सर्वोदय मण्डल की मार्फत शान्ति सैनिक भाइयों ने और नगर प्रमुख द्वारा बनायी शान्ति कमिटी के कुछ सदस्यों ने।

दंगे को सुनते ही शान्ति सेना मण्डल (राजघाट) के मित्र चिन्ता में पड़ गये। मण्डल के संयोजक श्री नारायण देसाई बाहर गये हुए थे। सवाल था क्या किया जाय। तय पाया कि अधिकारियों से सम्पर्क कर कर्फ्यू-पास लिये जायें और जो कुछ सेवा बन पड़े की जाय। तदनुसार सर्वश्री श्याम बहादुर नम्र, (अध्यक्ष नगर सर्वोदय मण्डल) मोहन भाई तथा कृष्ण कुमार (मंत्री), सत्यनारायण भाई, अमरनाथ भाई और भगवान बजाज तथा अशोक भार्गव निकल पड़े। साथ में लिया नगर के तरुण नेता श्री गौर गोपाल बनर्जी को और नगर की दो वयोवृद्ध विभूतियों को श्रद्धेय श्री रोहित मेहता और आदरणीय प्रोफेसर राधेश्याम शर्मा।

इन आठों ने रात-दिन एक कर दिया और जगह-जगह पहुँच कर लोगों का धीरज बँधाया और उनकी मदद की। बाईस तारीख को जिला मजिस्ट्रेट महोदय ने कलक्ट्री में बुलायी नागरिक परिषद की मीटिंग में इनके काम की तारीफ की। वहाँ एक शान्ति समिति बनायी गयी, जिसके संयोजक नगर प्रमुख श्री पूर्णचन्द्र पाठक मनोनीत किये गये। पाठकजी ने दंगा शुरू होते ही एक छोटी-सी शान्ति समिति बना ली थी, अब उसका और विस्तार कर लिया गया। उन्होंने भी शान्ति सैनिकों की सराहना की। मुट्ठी भर आदमी भी निष्ठापूर्वक लगने पर कितना कुछ कर सकते हैं, इसका प्रमाण है काशी में किया शान्ति सेना का पुरुषार्थ।

श्री रोहितजी तो अपने प्रोग्राम के अनुसार २१ तारीख को वम्बई चले गये थे, लेकिन भाई राधेश्यामजी लगातार साथ रहे। उन्होंने जितनी मदद की उससे हम कभी उऋण नहीं हो सकते। अपनी कार में हम साथियों को बिठाकर वह खुद ड्राइव करते और सुबह से रात तक घूमते रहते।

× × ×

मस्जिद के प्रश्न को लेकर बहुत से मित्र भाई साहब से नाराज भी हो गये। लेकिन उन्होंने उनके गुस्से की कोई परवाह नहीं की और अपने आदर्श पर अटल रह कर सेवा में जुटे रहे। एक ने कहा—"आपको इन बातों की वजह से आपको जान से हाथ धोना पड़ जायेगा।"

"हाथ हमें क्या धोना पड़ेगा, हम तो आराम से चले जायेंगे। हाथ धोना पड़ेगा आपको जो हमें पहुँचायेंगे।...... लेकिन नहीं, हम इतने लायक नहीं हैं कि कुर्बानी दे सकें। यह दर्जा तो बड़ी पुण्याई से मिलता है।"

भाई राधेश्यामजी का मेरा इकतीस बरस पुराना साथ है। उनसे सबसे पहली मुलाकात नैनी जेल में व्यक्तिगत सत्याग्रह के दौरान १९४१ में हुई थी। तभी से उनकी आदर्शवादिता, सच्चरित्रता और निष्ठा का मैं कायल रहा हूँ। उनकी सबसे खास खूबी है—मस्ती, हँसना और हँसाना। यद्यपि वह यूनिवर्सिटी से रिटायर हो गये हैं और बासठ वर्ष के हैं फिर भी उनकी मस्ती और जवानी लगा-

गांधी-परिवार में कौटुम्बिक भावना का विकास हो

सर्वोदय सम्मेलन में जी. रामचन्द्रन् की आकांक्षा

यह भारत का गांधी-परिवार है। दुनिया में भी एक बिरादरी है जो गांधी की है। हम लोगों का रिश्ता नजदीक का होना चाहिए, पिता-पुत्र, पति-पत्नी की तरह। कौटुम्बिक सम्बन्ध खून के कारण है लेकिन यह सम्बन्ध विचारों का है, भाईचारा का है। यह पारिवारिकता का सम्बन्ध इतना पुख्ता हो जितना होना चाहिए। भारत जैसे देश में यह मुश्किल काम नहीं कि हम एक परिवार होकर काम करें। अगर हम एक परिवार के नाते काम करें तो भारत सरकार या राज्य सरकारें हमारे पास आयेंगी। आज हम अपने काम के लिए सरकार के पास जाकर काम का निवेदन करते हैं। अगर हम सब, जो गांधीजी की आत्मा और शरीर हैं, की ओर से कोई दिल्ली जायेगा—दादा जायें और कहें—तो वह जरूर करने के लिए मजबूर होगी। मेरे कहने का मतलब यह है कि हमारे बीच जो एकता चाहिए वह नहीं है। आनेवाले दिनों में यह एकता हम कैसे बढ़ायें? मेरे पास कोई एक जवाब नहीं है। सभी अपने दिल में सोचें और जवाब ढूँढ़ें। यह जो जमात है, इसमें उच्चतम मेधावी मौजूद हैं। भारत में अच्छे लोग हैं, लेकिन कोई एक अच्छी चीज नहीं दे रहे हैं।

खादी कमीशन के अध्यक्ष के नाते २४ घण्टे कुछ-न-कुछ विचार चलता ही रहता है। स्पष्ट है कि खादी और ग्रामोद्योग के विषय में गांधीजी के सारे कार्यक्रमों से अलग नहीं सोचा जा सकता है। सत्य के बारे में सोचते हैं, अहिंसा के बारे में सोचते हैं। इन्हें हम दूर नहीं कर सकते। सत्य और अहिंसा का विचार मानव के जितना पुराना और नया भी है। लेकिन जमाने के साथ सत्य और अहिंसा विभिन्न रूपों में आते रहते हैं। गांधीजी के विचार को जितना मैं समझता हूँ सत्य, अहिंसा के साथ खादी जुड़ी हुई है। नेहरू ने खादी को आजादी की वर्दी कहा था। उन दिनों उन्होंने यह बड़ी बात कही थी। लेकिन हमारे लिए इसका मूल्य सत्य और अहिंसा की वर्दी है। अगर सत्य और अहिंसा विचार के रूप में रहें तो अलग बात है, लेकिन व्यवहार में तो हम खादी में ही इन्हें देखेंगे।

सत्य और अहिंसा का सम्बन्ध कैसा हो, मैं सोचता हूँ। खादी ग्रामोद्योग उसका मूर्तस्वरूप है। स्थूल स्वरूप जमाने के अनुसार बदलेगा। खादी ग्रामोद्योग का काम मुझे सौंपा गया तो कमीशन के कार्यकर्ताओं ने कहा कि खादी पहनने के लिए मजबूर न किया जाय। इस सम्बन्ध में हमने कहा कि हम इस पर सोचें। लेकिन यह भी कहा कि खादी का काम करनेवालों में खादी के प्रति विश्वास नहीं होगा तो खादी कैसे चलेगी? उन्हें नशाबन्दी की मिसाल दो। नशाबन्दी के कार्यकर्ता अपने लिए छूट मांगें पीने के लिए, कैसी विडम्बना है यह? उन्हें समझाया और उनसे कहा कि अगर मैं आपको नहीं समझा सका तो मुझे कमीशन को छोड़ देना चाहिए।

मुझे आपसे कहने में संकोच नहीं—लोग कहते हैं कि खादी गलत रास्ते पर है। मैं भी इसे कबूल कर रहा हूँ। कमीशन के साथी सदस्य जो यहाँ हैं वे मुझे माफ करेंगे। खादी ग्रामोद्योग का काफी पैसा दरिद्रनारायण को नहीं मिलता, परन्तु कुल काम पर ध्यान देंगे तो आप देखेंगे कि बेरोजगारों को रोजी देने का काम खादी ग्रामोद्योग कमीशन ने किया है। दूसरा कोई संगठन नहीं है जो रोजी-रोटी इतना दे सके। इसे आगे और बढ़ाने की जरूरत है।

मुझे शान्तिसेना का विचार पसन्द है। शान्तिसैनिक को खादी ग्रामोद्योग का शिक्षक बनना चाहिए। जाति-पांति को मिटाने के लिए मिशनरी की तरह लगा रहना चाहिए। अगर कम्युनिस्ट के पास गांधी जमात से आधी सख्या भी होती तो वे इस देश को कम्युनिस्ट बना देते।

देवेन्द्र भाई सबको जोड़ने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन सफल नहीं हो रहे हैं।→

→भार कायम है और सर्वोदय के लिए एक बड़ा वरदान है। नैनी जेल से ही मुझे उन्होंने अनुरागपूर्वक अपना लिया और भाई का वात्सल्य सदा दिया है।

× × ×

आश्चर्य है कि काशी में साम्प्रदायिक दंगों के लिए जो पुराने मुहल्ले बदनाम हैं—जैसे कालभैरो, हनुमान फाटक, पाण्डे हवेली, मदनपुरा, वहाँ इस बार पूरी शान्ति रही। उनके बजाय नुकसान हुआ मदनपुरा, रमापुरा, रेवड़ीतालाब, मत्तोखम्भा, देवनाथपुरा, नगवा, नरिया, सरैया, लहुरतारा, बजरडीहा आदि क्षेत्रों में।

बजरडीहा जैसी सुदूर बस्ती में "योम स्याह" (काला दिन) मनाने के इश्तहार दीवारों पर बड़ी तादाद में देखे तो हमें आभास हुआ कि कितनी जबरदस्त तैयारी थी। सच तो यह है कि अलीगढ़ यूनिवर्सिटी बिल के विरोध की आड़ में सब कुछ दूसरा ही है। वह है मुस्लिम बन्धुओं को फिर से उकसाकर और "इस्लाम खतरे में" का होवा खड़ाकर एक तहरीक चलाना। और पृथक चुनाव, जनसंख्या अनुपाती प्रतिनिधित्व आदि की प्रतिक्रियाशील मांगें करना।

इस तरफ स्पष्ट संकेत किया है डा० अब्दुल जलील फरीदी ने अपने उस भाषण में जो ६ मई को उन्होंने मुस्लिम मजलिस के प्रान्तीय सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए इलाहाबाद में दिया। उन्होंने साफ कहा कि हमारे सब का प्याला लबरेज हो चुका है और जुलाई से हम अपनी तहरीक शुरू कर देंगे।

क्या अलीगढ़, फिरोजाबाद और काशी के दंगे उसी के रिहर्सल तो नहीं हैं?

—दादू

सर्वोदय और राजनीति

सम्पादकजी,

२९ मई १९७२ के भूदान-यज्ञ को देखने का अवसर मिला। उससे यह पता चला कि सघ अधिवेशन तथा सम्मेलन में आचार्यकुल, साहित्य-प्रकाशन, शराबबन्दी, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य, भूमि-हदबन्दी, शान्तिसेना तथा डाकुओं का आत्म-समर्पण आदि सभी विषयों पर चर्चाएँ हुई। कुछ प्रस्ताव पास किये गये तथा कुछ निर्णय लिये गये। मेरा ख्याल है कि यह जो कुछ हो रहा है उससे कुछ करने का आत्म-सन्तोष भले ही प्राप्त हो लेकिन अनुभव से यह साफ जाहिर है कि इससे न तो जनता में कुछ करने के लिए प्रेरणा प्राप्त हो रही है न नवयुवकों को वीर-वृत्ति के विकास के लिए कोई आधार बन रहा है। यह तो जाहिर है कि आज का नवयुवक अधिकतर अपनी रोटी की फिकर में है। इसके अलावा वह यदि किसी तरफ आकर्षित है तो केवल वर्तमान राजनीति की ओर। इसका भी कारण है। कारण यह है कि 'पार्टी-पॉलिटिक्स' के कारण नवयुवकों को अपनी बात कहने का अवसर प्राप्त होता है और कभी-कभी स्थानीय अथवा व्यापक स्तर पर विरोध करने का उनको मौका मिलता है। अपने व्यक्तित्व के सम्मान अथवा अन्याय के विरोध में वे एक दूसरे के विरुद्ध खड़े हो जाते हैं और एक प्रकार की निष्क्रियता समाप्त हो जाती है। यदि ऐसा न होता तो उनकी हालत उन हिप्पियों की हो जाती जिन्हें कहीं भी सन्तोष नहीं है तथा घुटन के कारण केवल आत्महत्या ही उनके पल्ले पड़ती। यदि लोगों का यह ख्याल हो कि आज की 'पार्टी पॉलिटिक्स' बेकार है, उससे कुछ होनेवाला नहीं है, तो किसी हद तक यह बात विचारणीय हो सकती है। लेकिन केवल इतना भर कह देने से काम चलनेवाला नहीं है। क्योंकि अभी पार्टी-पालिटिक्स का कोई विकल्प सामने नहीं आया है। सर्वसम्मत और दलमुक्त राजनीति का विकास नहीं हो पा रहा है। क्योंकि जो लोग सर्वसम्मत निर्णय और दलमुक्त राजनीति का विचार करते हैं वे जाहिर तौर पर राजनीति से अलग हैं लेकिन गुप्त षड्यंत्रों द्वारा वे राजनीति को पूरी तरह से उलझा दिये हैं। उसका फल यह है कि उनकी अपनी तो कोई राजनीति बन नहीं पाती है लेकिन राजनैतिक पार्टियों और सरकार द्वारा प्रतिपादित राजनीति के वे शिकार हो जाते हैं। चाहे शराबबन्दी हो, चाहे डाकू-समस्या हो, चाहे भूमि-सीलिंग हो, इन सबका सीधा सम्बन्ध राजनीति से है। सर्व सेवा संघ और उसके नेता चाहे जो दावा करें लेकिन तत्सम्बन्धी मामलों में वे सीधे राजनीति में आ जाते हैं। इन सारी बातों का निर्णय जनता द्वारा न होकर सरकार द्वारा होता है। अतः सरकार अपनी बात पर कायम भी नहीं रह पाती है क्योंकि गलत या सही वह सोचती है कि जनशक्ति अथवा जनमन उसके साथ है। और यह बात भी वह केवल राजनैतिक पार्टियों को दृष्टि में रखकर कहती और करती है। क्योंकि राजनैतिक पार्टियाँ सभी पराजित हैं। लेकिन पराजय का यह तात्पर्य नहीं है कि वे शक्तिहीन हैं अथवा उनकी उपेक्षा की जा सकती है। अगर विरोधी पार्टियाँ न होतीं तो सत्ताधारी पार्टी आज विलासिता के घोर वैभव में फँसी होती और देश रसातल को चला गया होता। लेकिन विभिन्न पार्टियों के कारण कुछ सन्तुलन बनाये रखने में सहायता अवश्य प्राप्त होती है। वैसे इतनी अधिक पार्टियाँ न होकर २ या ३ पार्टियाँ होतीं तो देर या सबेर देश में आज के विश्व में प्रचलित लोकतन्त्र के विकास के लिए अधिक अवसर प्राप्त होता। जहाँ तक सर्वोदय का सम्बन्ध है उसे राजनीति की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, भले ही पद और प्रतिष्ठा वाली राजनीति से अलग रहे। बिना इसके सर्वोदय के लिए कोई आकर्षण होगा, न वीर-वृत्ति के परिचय का अवसर मिलेगा। वह केवल बौद्धिक विलासिता का प्रतीक होकर रह जायगा; क्योंकि आज के उसके प्रस्ताव पर जनता की कोई प्रतिक्रिया नहीं होती।

—शिवमूर्ति

शराबबन्दी समिति के शिष्ट मण्डल की वित्तमंत्री से भेंट

जयपुर २० जून। सर्वोदय नेता श्री गोकुलभाई भट्ट के नेतृत्व में आज यहाँ राज्य के वित्तमंत्री श्री चन्दनमल वैद से शराबबन्दी सत्याग्रह समिति का शिष्ट मण्डल मिला। उसने सरकार की घोषित नीति के विपरीत चलनेवाली अवैध शराब की दूकानों को हटाये जाने की माँग की। शिष्ट मण्डल ने राज्य के मुख्यमंत्री द्वारा मन्दिर, मस्जिद विद्यालय, अस्पताल तथा मजदूर बस्तियों के समीप की दूकानों को तुरन्त हटाये जाने की घोषणा की ओर आपका ध्यान आकर्षित किया। ●

→हम इस सम्मेलन में देवेन्द्र भाई को कहेंगे कि आप इस काम में पूरा समय लगायें। खादी ग्रामोद्योग कमीशन की तरफ से मैं संस्थाओं को जोड़ने के काम में मदद करने के लिए कहूँगा।

यह रजत जयन्ती का वर्ष है। आजादी दिल्ली के बड़े लोगों के प्रयास से नहीं, देश की कोटि-कोटि जनता की कुर्बानी से आयी है। अतः इस रजत जयन्ती वर्ष में हमने निम्न कार्यक्रम सोचा है :

हम एक लाख परिवारों के नाम खादी के राष्ट्रीय रजिस्टर पर दर्ज करेंगे। हर एक राज्य में खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के डाइरेक्टर इस कार्य को करेंगे। इस रजिस्टर पर दर्ज परिवारों के सभी सदस्य खादी पहनें, उसके साथ और काम भी करें। ये परिवार जाति-पाँति भी नहीं मानेंगे।

मकोदर,
२०-५-'७२

सहरसा के अनुभव : कुछ प्रकट चिन्तन

हाल ही में बिहार के सहरसा जिले में जो ग्रामस्वराज्य महायज्ञ का अभियान हुआ, उसमें भाग लेने का मौका मिला। वहाँ जो देखा उसके आधार पर एक प्रकट चिन्तन लिख रहा हूँ।

सहरसा में हमने देखा कि बहुत से गाँवों में ग्रामदान के पत्र पर हस्ताक्षर नहीं हुए हैं। लोगों को पूरी जानकारी भी नहीं है। ऐसी परिस्थिति देखकर मन में अविश्वास पैदा हो गया है। जितना हुआ उसको बढ़ा-चढ़ा कर जाहिर करने से हमारे काम को ही धक्का लगा है।

हमने देखा और सुना कि भूदान में मिली जमीन का बँटवारा कहीं तो सिर्फ कागजों ही रहा है और उसमें भूदान बोर्ड कोर्ट-कचहरी भी कर रही है। एक ओर तो हम गाँव में कोई झगड़ा न हो, और हो तो गाँव में ही उसका निपटारा हो, ऐसा कर रहे हैं। और दूसरी ओर हम ही कोर्ट-कचहरी करें, यह क्या ठीक है? सच तो यह है कि ऐसे विषयों में हमको सत्याग्रह का ही सहारा लेना चाहिए, लेकिन कोर्ट-कचहरी नहीं करनी चाहिए।

भूदान बोर्ड के कार्यकर्ताओं ने भी घूस लिया है और भूदान में मिले पैसे का अपव्यय किया है, ऐसा भी हमने देखा। जहाँ-जहाँ भूदान हुआ वहाँ-वहाँ हमने गाँव की कमिटी न बनाकर नौकरी करनेवाले कार्यकर्ताओं को रखा, उससे गाँव के लोगों को काम में अपनापन नहीं लगता है।

बिहार में भूदान में बहुत जमीन मिली है, जिससे उसके बँटवारे में कुछ गड़बड़ हो जाय, यह स्वाभाविक है लेकिन अभी भी भूदान मिले १८-१९ वर्ष हुए फिर भी बहुत जमीन बिना बँटवारा किये पड़ी रही है और कहीं कहीं तो ऐसी जमीन पर गाँव के कुछ जाने-माने लोगों का कब्जा हो गया है। तो अब ऐसा कार्यक्रम सोचना चाहिए कि अमुक अवधि में सभी भूदान का बँटवारा होना चाहिए या यदि अगर न हो सका तो जितनी भूमि का बँटवारा हुआ उससे सन्तोष मानकर बचे हुए दानपत्र का नाश कर देना चाहिए।

जाने-अनजाने आज सर्वोदय-कार्य में कई दुर्बलताएँ फैली हुई हैं उसको साफ करने के लिए और सही रास्ते पर लाने के लिए हमको नये सिरे से कुछ सोचना चाहिए।

१—सारे देश में सभी सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को शुद्धि आन्दोलन करना चाहिए और सार्वत्रिक २४ घण्टे के अनशन से उसकी शुरुआत करनी चाहिए।

२—सर्वोदय-कार्य में शामिल होनेवाले कार्यकर्ताओं का नैतिक स्तर ऊँचा होना चाहिए, उनका जीवन शुद्ध और सात्विक होना चाहिए।

३—कोई भी काम पर पूरा अमल नहीं हो जाय तब तक उसकी जाहिरात नहीं करनी चाहिए। भूदान मिलने के बाद उसका सही बँटवारा हो और भूमिहीन को उसका कब्जा मिल जाय उसके बाद ही उसकी जाहिरात होनी चाहिए।

४—जहाँ-जहाँ भूदान मिले वहाँ गाँव की कमिटी बनाकर उसको जिम्मेवारी सौंप दी जाय तो अच्छा काम होगा और लोगों को दिलचस्पी रहेगी तथा अपनी जवाबदारी का भान भी पैदा होगा।

—वल्लभदास दोषी

धावरवाटा, गुजरात

८-५-७२

नाम-प्लेट बनवाइए

पीतल के निकिलदार प्लेट—'शान्ति सैनिक', 'जय जगत', 'सर्वोदय-मित्र', 'लोकसेवक', 'तरुण-शान्तिसैनिक', 'ग्रामसेवक', आदि हर प्रदेशीय भाषा में—बनवाने के लिए श्री रामगोपाल आजाद सर्वोदय कार्यकर्ता, सराय मानसिंह, अलीगढ़ (उ० प्र०) से सम्पर्क करें।

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदानी कार्य

ग्रामदान की पुष्टि और प्राप्ति के लिए कर्नाटक सर्वोदय मण्डल ने जनवरी के दूसरे सप्ताह में एक अभियान आयोजित किया था, जिसमें बलगाँव तालुका में कडोली गाँव के नजदीक ३२ में से २८ गाँवों का ग्रामदान हुआ। २० एकड़ जमीन भूमि के २० वें भाग के तौर पर प्राप्त हुई। ३ एकड़ जमीन वहीं पर बाँट दी गयी।

१८ गाँवों में एडहाक समितियाँ बनायी गयीं। अब तक एक से अधिक दिशाओं में वैज्ञानिक और महत्त्वपूर्ण उन्नति हुई। एडहाक समितियों ने ग्रामकोष के लिए अनाज जमा किया। १० गाँवों ने ग्रामकोष में १५५½ बोरे अनाज जैसे धान और रागी जमा किया।

ग्रामकोष : कडोली सहित तीन गाँवों में ग्रामकोष इकट्ठा किया जा रहा था। एडहाक समिति के अध्यक्ष के नेतृत्व में लोगों का जत्था परिवारों में जा-जाकर ग्रामकोष माँग रहा था। उन्हें यह बात भी कही जा रही थी कि वे जो दें वह अपनी आर्थिक स्थिति और उत्पादन के अनुपात में हो। चूँकि फसल तुरन्त ही कटी थी और जो ग्रामकोष इकट्ठा कर रहे थे वे सभी परिवारों को जानते थे। इसलिए वह यह निश्चित कर सके कि किसको कितना देना है। किसी परिवार ने उसका विरोध नहीं किया। इसलिए ग्रामकोष का कार्य तेजी से चलता रहा। अब तक जो कुछ इकट्ठा हुआ उसकी कीमत १०,००० रुपये है। यह कोई मामूली बात नहीं है। श्री सदाशिवराव भोमले का खयाल था कि और बहुत कुछ इकट्ठा किया जा सकता था। मनोकेरी में पुष्टि-कार्य के लिए एक और केन्द्र खोला गया। श्री बी० एम० भूमा दूसरे ग्रामदानी गाँवों का दौरा कर रहे हैं और कार्यों को फैला रहे हैं।

ग्राम-शान्तिसेना शिविर : वामबेरिज और हान्दीगनोर गांव में ग्राम-शान्तिसेना शिविर चलाये गये। शरीक होनेवालों की संख्या ५० और ७० थी। शिविर में हरिजन भी शामिल हुए।

श्रमदान : ४ गांवों के लोगों ने स्वेच्छा से एक कुंआ बनाने, दूसरे में गांव का तालाब साफ करने, तीसरे गांव में एक नहर खोदने, चौथे गांव में ६ फर्लांग लम्बी सड़क बनाने के लिए श्रमदान किया।

अलतगे के युवकों ने श्रमदान की योजना की, और नये जोश से उन्होंने पूरे दिन शिरकत की। बहुत सारे लोग जिन्हें पीने की आदत थी शराब से दूर रहे।

इन कार्यक्रमों से एक बड़ा लाभ यह हुआ कि एक युवक ने आन्दोलन के लिए पूरा समय देने का निश्चय किया।

पुष्टि-कार्य के लिए जो क्षेत्र चुना गया, वह सक्रिय और प्रगतिशील है और ग्रामदान को वास्तविकता बनाने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है।

—सत्यव्रत

राष्ट्र-सेवा और क्रान्ति के लिए एक साल

प्रचलित शिक्षा निपटकर या छोड़कर राष्ट्र-सेवा और क्रान्ति के लिए एक साल दो—यह तरुण-शान्तिसेना का एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। १९७१ में अहमदाबाद और इन्दौर शिविर से १ साल देनेवाले तरुण आगे आ रहे हैं, और इस कार्य के लिए पूरा समय अर्पित करने के कार्यक्रम को गति मिल रही है।

इस ग्रीष्मावकाश में राष्ट्रीय-स्तर का एक शिविर तथा सम्मेलन एवं महाराष्ट्र में प्रान्तीय स्तर के ३ शिविर हुए। इन शिविरों में कई विश्वविद्यालयीन स्तर के नवजवानों ने अपना एक साल देने की घोषणा की है—

(क) पिछले १ वर्ष या उससे भी अधिक समय से पूरा समय देकर काम करनेवाले तरुणों में से निम्न तरुणों ने आगे भी यही काम करने की घोषणा की है :

लखन 'दीन' (सहरसा, बिहार), मदाकिनी दवे (अहमदाबाद, गुजरात), दिनकर चौधरी (वर्धा, महाराष्ट्र), किशोर देशपाण्डे (अमरावती, महाराष्ट्र), नरेश बदनोरे (यवतमाल, महाराष्ट्र), अशोक बंग (वर्धा, महाराष्ट्र), सन्तोष भारतीय (उ० प्र०), विजय भोसले (इन्दौर, मध्य प्रदेश)।

(ख) पिछले कुछ महीनों से पूरा समय देकर काम कर रहे निम्न साथियों ने अगला एक साल भी देने की घोषणा की है।

अशोक भार्गव (उ० प्र०, राजस्थान), नंदिनी भोसले (वडोली, मैसूर), अशोक वैराले (म० प्र०, सहरसा), नचिकेता देसाई (वाराणसी, उ० प्र०),

(ग) गर्मी की छुट्टियाँ समाप्त होते ही इस साल में पूरा एक साल देने की घोषणा निम्न साथियों की है—

विनायक भालाडे (कोल्हापुर, महाराष्ट्र), माया देशपाण्डे (अमरावती, महाराष्ट्र), राजीव पतके (वर्धा, महाराष्ट्र), आशा भार्गव (राजस्थान), सुर्यादि वानो (उ० प्र०), उर्मिला मराठे (बेलगांव, मैसूर) शिवाजी वाणगीकर (वडोली, मैसूर), महेश बादल (रीवा, म० प्र०), पूर्णानन्द कुमार (असम),

इनके अलावा यत्र-तत्र कुछ साथी ऐसे भी हैं जो पूरा समय देकर काम कर रहे हैं किन्तु उन्होंने ऐसी घोषणा अभी तक नहीं की है।

—अशोक बंग

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१
सम्पादक
रामसूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ४१-४२ १०, १७ जुलाई, १९७२; संयुक्तांक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

करुणामूलक प्रक्रिया से ही साम्ययोग

साम्य करुणामूलक हो, तभी उसका साम्ययोग बनता है, वरना वह यांत्रिक पद्धति से लाया हुआ स्थूल साम्य हो जाता है, जो वास्तव में साम्य है ही नहीं। दुनिया का सारा पानी नीचे की ओर दौड़ता रहता है। सबसे नीचे समुद्र नाम का जो गड्ढा है, उसे भरने के लिए सारी नदियाँ करुणावश उसकी ओर दौड़ती हैं। नदी बहनेवाली करुणा ही है। साम्य करुणामूलक न हो तो वैषम्य, झगड़े पैदा होते हैं। इस साम्ययोग को लाने की एक व्यावहारिक प्रक्रिया बुद्ध और महावीर ने उपस्थित की। कुएँ में घड़ा-भर पानी निकालें तो पानी में घड़े के आकार का गड्ढा नहीं पड़ता, बल्कि पानी की ही सतह कुछ नीचे जाती है, क्योंकि पानी के बिन्दु चारों ओर से गड्ढा भरने के लिए दौड़ पड़ते हैं। लेकिन चावल के ढेर से एक सेर चावल निकालें तो गड्ढा पड़ जाता है। सिर्फ दो-चार महात्मा चावल वह गड्ढा भरने के लिए दौड़ते हैं, बाकी सभी अपनी ही जगह बैठे रहते हैं। स्नेह और अनुराग के कारण पानी में साम्य की स्थापकता का गुण आता है। इस प्रकार की करुणा-वृत्ति हो तभी साम्ययोग सिद्ध होगा।

इन दिनों अर्थ-शास्त्र, साम्यवादी आदि कृत्रिम और भौतिक प्रक्रिया से साम्य स्थापित करने की कोशिश करते हैं, लेकिन वे साम्य के बजाय वैषम्य ही पैदा करते हैं। उससे मानसिक वैषम्य तो होता ही है बाह्य वैषम्य भी आता है। रूस में साम्य की स्थापना की कोशिश की गयी फिर भी वहाँ वेतनों में ७०-८० गुना भेद है, ऐसा कहा जाता है। वहाँ साम्य की स्थापना इसलिए नहीं हो सकी कि उनकी प्रक्रिया करुणामूलक नहीं थी। करुणामूलक प्रक्रिया से ही साम्ययोग की स्थापना हो सकती है।

—विनोबा

सिन्ध का दंगा : उर्दू-सिन्धी

● सैय्यद मुस्तफा कमाल

आज से २५ साल पहले हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने एक स्वप्न देखा था—मधुर और सुहाना स्वप्न। वह स्वप्न था "मुस्लिम होमलैण्ड" का। अंग्रेजी राजनीति ने उसे वास्तविक बनाया। पाकिस्तान—एक कवि की कल्पना और एक विद्यार्थी का अपरिपक्व ख्याल—स्थापित हुआ।

मुसलमान गलत तौर पर यह समझ बैठे थे कि धार्मिक इकाई एक जीवित शक्ति है। जबकि भाषा और संस्कृति की इकाई, राष्ट्रीयता और आर्थिक विकास की अभिलाषा वे शक्तियाँ हैं जिनके मुकाबले पर धार्मिक इकाई नहीं टिक सकती। कोई भी आबादी यह नहीं बरदाश्त कर सकती है कि उसका धार्मिक भाइयों के हाथों शोषण हो और उसकी भाषा और संस्कृति के उचित अधिकार छीन लिये जायें। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि इस्लाम एक ऐसी सोसाइटी स्थापित करना चाहता है जो आर्थिक, सांस्कृतिक और भाषाओं की सीमा से परे हो। लेकिन इतिहास में ऐसी कोई सोसाइटी स्थापित नहीं हुई है। ईरानियों और अरबों, अरबों और तुर्कों, तुर्कों और अरबों के बीच का संघर्ष हमें यह बताता है कि धर्म में अब इतनी शक्ति नहीं रही है कि वह विभिन्न भाषाओं और संस्कृति के लोगों को बांध कर रख सके।

"इस्लामी वहदत" की बुनियाद पर बना हुआ पाकिस्तान टूट चुका है। उसे टूटना ही था। २५ साल की देर इसलिए हुई कि नशा गहरा था और हिन्दुस्तानी दुश्मनी के हौवे ने पाकिस्तानी इलाकों में रहनेवालों की आँखों से उनके हित छिपा दिया था।

अभी पाकिस्तान के पूर्वी हिस्से का आजाद हुए बहुत दिन नहीं हुए हैं कि सिन्ध की धरती खून में नहा गयी है। यह खून नये और पुराने सिन्धियों का है। नये सिन्धी, हिन्दुस्तान से गये हुए उर्दू बोलने वाले लोग हैं और पुराने सिन्धी, सिन्ध के असली रहने वाले हैं। दोनों एक दूसरे के खून के प्यासे हैं।

'इस्लामी वहदत और अखूवत' आज कायदे-आजम मुहम्मद अली जिना की मजार पर शरमसार बैठी है।

सिन्ध की भाषा सिन्धी करार पा गयी है। उर्दू भाषा के होते से नये सिन्धी जो पुराने सिन्धियों पर हावी हो गये थे अब हावी नहीं रह पायेंगे। सिन्धियों ने अपनी जो संघर्ष समिति, (सिन्ध यूनाइटेड एक्शन कमिटी) बनायी है उसके प्रस्ताव निम्नलिखित हैं :—

१—सिन्ध की भाषा सिन्धी ही हो सकती है। कोई दूसरी (उर्दू) नहीं।

२—सिन्ध में अब कोई दूसरा गैर-सिन्धी न बसाया जाय।

३—बांगला देश के बिहारियों को किसी भी कीमत पर सिन्ध में लाकर आबाद न किया जाय।

हम हिन्दुस्तान के लोगों को सिन्ध के इस खून-खराबे पर चिन्ता है। हम दुश्मनों का भी बुरा नहीं चाहते। पाकिस्तान तो हमारी दोस्ती की दिशा में आगे बढ़ रहा है। हम उसका बुरा क्यों चाहेंगे! हमें उसकी बदनसीबी पर अफसोस है। हमारी सहानुभूति दोनों, नये और पुराने, सिन्धियों के साथ है। हम यह चाहते हैं कि पुराने सिन्धियों को उनका जायज अधिकार मिले और नये सिन्धी, सिन्धी-समाज में सुखी और प्रतिष्ठित रहें।

लेकिन क्या किसी समाज में सुखी और प्रतिष्ठित रहने का यही तरीका है। नये सिन्धी बांगलादेश के बिहारियों की गल्तियों को दोहरा रहे हैं? उर्दू को सिन्ध की भाषा घोषित करने की मांग गलत है। करांची और उसके इर्द-गिर्द के क्षेत्रों को केन्द्र के अधीन एक प्रान्त बनाने की मांग और भी अहमकाना थी।

अल्पसंख्यकों का हित सदा इसमें है कि वे अपने को बहुसंख्यकों से अलग न करें। उनकी आवाज बहुसंख्यक आवाज में इस कदर मिल जाय कि सुननेवाले को कोई अन्तर न नजर आवे। उन्हें चाहिए कि वे हर स्थानीय और जन-आन्दोलन में आगे बढ़कर हिस्सा लें। संसार के जिन अल्पसंख्यकों ने इस बात को समझा है उनकी कोई समस्या नहीं है। वे सुखी हैं और उनकी आइडेण्टिटी भी सुरक्षित है। जिन अल्पसंख्यकों ने इस भेद को नहीं समझा है वे परेशान-हाल हैं। हिन्दुस्तान के मुसलमान इसके उदाहरण हैं और बांगला देश के बिहारी इस उदाहरण के विकसित रूप।

हिन्दुस्तान के मुसलमानों, सिन्ध के नये सिन्धियों, और बांगला देश के उन बिहारियों को जो अभी सोचने और समझने की स्थिति में हैं, यह समझना चाहिए कि हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बांगला देश में लोकतन्त्र है। इन देशों के लोकतन्त्रात्मक जीवन में नयी उभरती हुई राजनैतिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में एक वास्तविक, गतिशील, और विधायक रोल अपनाना ही उनकी समस्याओं का हल है। ●

संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराजजी का कार्यक्रम

जुलाई २३ से २४	वाराणसी
जुलाई २५ से २८	मुसहरी (बिहार)
जुलाई २९ से ३ अगस्त	सहरसा
अगस्त ५	दिल्ली
अगस्त ६ से ९	जयपुर
अगस्त १० से ३०	राजस्थान के जिलों में प्रो० ठाकुरदास बंग के साथ भ्रमण

बिलकुल नयी जागतिक क्रान्ति

● काका कालेलकर

आजकल सब लोग क्रान्ति की ही बातें करते हैं। क्रान्ति की इच्छा हो या न हो, तैयारी हो या न हो, बोलने में, लिखने में और योजनाएँ बनाने में, क्रान्ति शब्द बार-बार लाने की आदत ही लोगों को पड़ गयी है। नतीजा यह हुआ कि लोग केवल क्रांति शब्द के आदी बन गये हैं और भूल गये हैं कि क्रान्ति का अर्थ है जल्दी-से-जल्दी जीवन में और परिस्थिति में आमूल परिवर्तन करना। पुरानी बातें चाहे जितनी स्थिर हों, मजबूत हों, अगर वे आइन्दा काम की नहीं हैं, तो उन्हें तोड़ने के लिए हिम्मत बताना, यह है क्रान्ति का स्वरूप।

किसी भी क्षेत्र में हम काम करते होंगे, थोड़े ही अनुभव से हम देख सकते हैं कि पुरानी बातें, चलती आयी हुई बातें, आइन्दा सचमुच काम नहीं दे सकती। अगर सफलतापूर्वक जीना है, और जीने का प्रयोजन सिद्ध करना है तो पुरानी रचना और पुरानी व्यवस्था तो बदलनी ही होगी। इसके अलावा, पुरानी रचना और व्यवस्था से आदी बना हुआ मन भी, बड़ी तेजी से बदलना होगा।

जब तक इसकी तैयारी नहीं हुई है क्रान्ति शब्द का उपयोग करना, क्रान्ति के लिए बेवफा बनना है।

सारी दुनिया के "मानवता के सेवक" सेवा करते-करते इस नतीजे पर आ गये हैं कि पुरानी-संस्कृति अब काम नहीं दे सकती। "या तो हम बदलें या नष्ट हो जायँ" यह है क्रान्ति का प्रधान और कठोर सूत्र।

क्रान्ति के बाधक तत्त्व

इसमें कठिनाई कौन-सी है? बाहर की कठिनाइयाँ चाहे जितनी हों, उनके साथ हम लड़ सकते हैं लेकिन जब मानवी मन पुरानी बातों का (रिवाजों का, रचना का, व्यवस्था का या संस्कृति का) आदी बन जाता है, तब मन ही *परिवर्तन के लिए तैयार नहीं होता।* आदत के कारण मन अपना लचीलापन खो बैठता है। (किसी ने ठीक कहा है, यौवन का लक्षण है लचीलापन। इसे खो दिया तो हम बुड्ढे बन गये।) ऐसे लोग भी समाज में पाये जाते हैं, *जो शरीर में और कार्यशक्ति में बुड्ढे* नहीं बने हैं किन्तु जिनका बनी हुई आदतें छोड़ने का दिल ही नहीं करता। यह स्वभाव एकदम बुरा है सो भी नहीं। हर एक संस्कृति में मजबूती के लिए और सफलता के लिए *स्थैर्य की आवश्यकता होती ही है।* हर एक संस्कृति को विजय पाने के लिए भी स्थैर्य की उपासना करनी पड़ती है। दुनिया भर की तमाम संस्कृतियाँ सफलता पाते ही स्थैर्य की ही उपासना करती आयी हैं। (जवानी और बुढ़ापा इन दोनों के बीच हर एक मनुष्य को जो दीर्घकाल मिलता है, उसमें पुरुषार्थ के लिए स्थैर्य की ही खास आवश्यकता होती है।)

लेकिन मानव जाति ने स्थैर्य की उपासना अति चलायी, दीर्घकाल तक चलायी। अब यह स्थैर्य प्रगति के लिए *बाधक है अगर आइन्दा* केवल जिन्दा रहना है तो पुरानी बातों का स्थैर्य छोड़ ही देना पड़ेगा।

आज हम जिस क्रान्ति की बात करना चाहते हैं वह केवल धर्म-क्रान्ति नहीं, राष्ट्रीय क्रान्ति नहीं, हम तो समस्त मानव जाति के जीवन क्रम में और जीवन-व्यवस्था में क्रान्ति करने की बात सुझा रहे हैं। इसका आधार केवल भारत का इतिहास नहीं है, केवल यूरोप, अमेरिका का इतिहास नहीं है। समस्त मानव जाति का इतिहास और अनुभव देखकर हम इस निर्णय पर आये हैं कि आजतक जो व्यवस्था चली सो चली। उसकी उपयोगिता सिद्ध हो चुकी थी, इसलिए वह चली और उसने अपने लिए एक भव्य और गम्भीर नाम भी धारण किया "मानवी संस्कृति"। अब इस मानवी-संस्कृति में एक महत्त्व का आमूल परिवर्तन करना है।

इस परिवर्तन का विचार समझाने के लिए अनेक किताबें लिखवानी पड़ेंगी। पृष्ठ-दर-पृष्ठ उसी क्रान्ति का काम करना पड़ेगा। आज हम इस केवल युगान्तरकारी परिवर्तन का केन्द्रीय स्वरूप समझायेंगे। हमारी अपेक्षा नहीं है कि मानव इस क्रान्ति का स्वरूप समझते ही उसको स्वीकार करेगा। स्वीकार हो या विरोध, वह बाद की बात है। आज इस क्रान्ति का स्वरूप केवल समझ में आया तो बस है। चन्द हृदय उसका स्वीकार तुरन्त करेंगे। इससे अधिक संख्या के हृदय उसका जोरों से विरोध करेंगे। जिनके हक में यह नयी क्रान्ति करने जा रहे हैं वे ही शायद इस क्रान्ति का जोरों से विरोध करने को तैयार हो जायेंगे। लेकिन मानव जाति अन्तर्मुख होकर अपने अनुभव पर विचार करेगी तब उसे कबूल करना पड़ेगा कि यह परिवर्तन आवश्यक है, समयानुकूल है। इसके बिना युगान्तर हो नहीं सकता। और यह युग क्रान्ति न की तो मानवजाति नामशेष हो जायेगी।

इतनी लम्बी-चौड़ी प्रस्तावना अत्यावश्यक नहीं होती तो इसके पीछे हम इतना समय भी नहीं देते। जो बातें करनी हैं, उसी से प्रारम्भ करते।

स्त्री पुरुष समानाधिकार

प्राणी-जगत में नर-मादा के संयोग से नयी पुश्त तैयार होती है, और जीवन-परम्परा अखण्डित चलती है। प्राणी-जगत में शुरू से नर और मादा यह विभाग चालू है। इन दोनों के सहयोग के बिना नये प्राणियों की उत्पत्ति हो नहीं सकती। प्राणी-जगत में कहीं-कहीं नर की श्रेष्ठता पायी जाती है, कहीं-

रहो मादा की। जहाँ जैसी व्यवस्था पायी जाती है उसमें परिवर्तन की कोई गुंजाइश ही नहीं दीख पड़ती।

प्राणियों में मनुष्य ही एक ऐसी कृति है जिसमें बुद्धि का तत्व तेज होने से, परिवर्तन, प्रगति, विकास और उत्कर्ष के लिए अवकाश है। मनुष्य-प्राणी भी नर और मादा में विभक्त है। (फर्क इतना ही है कि हम अपने लिए नर और मादा जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं करते। पुरुष और स्त्री शब्द से ही हम अपना काम चला लेते हैं।)

किसी भी देश की, किसी भी वंश की, और किसी भी जमाने की मनुष्य-जाति को लीजिए। एक बात स्पष्ट पायी जाती है कि स्त्री-पुरुष दोनों के बीच पुरुष-जाति श्रेष्ठ मानी जाती है और स्त्री-जाति इस स्थिति को स्वीकार करके ही चलती आयी है। श्रेष्ठत्व के लिए आज तक स्त्री-पुरुष में कभी संघर्ष हुआ ही नहीं। पुरुष ने जिस स्वाभाविकता से अपना श्रेष्ठत्व मान लिया और व्यवहार में चलाया, उसी स्वाभाविकता से स्त्री-जाति ने पुरुषों का श्रेष्ठत्व मान्य रखा है। अब दुनिया भर की सब माताएँ अपनी लड़कियों को जो शिक्षा या संस्कारिता प्रदान करती हैं उसमें यह बात अवश्य होती ही है कि "स्त्रियों को पुरुषों का श्रेष्ठत्व मान्य करके ही चलना चाहिए।"

अब तक यह बात सार्वभौम थी और स्वाभाविक मानी जाती थी। स्त्रियों को और पुरुषों को यह बात एक-सी मान्य होने के कारण उसमें मतभेद या चर्चा के लिए स्थान ही नहीं था। मनुष्य ने मान लिया था कि यह कुदरती व्यवस्था है इसे मानकर ही चलना चाहिए।

अब स्त्रियों में कहीं-कहीं इस पुरानी व्यवस्था के प्रति असन्तोष जाग उठा है। वे कहती हैं, "कुदरती तौर पर हम दोनों समान हैं। पुरुष स्त्रीजाति पर राज्य चलावे यह हमें अब मंजूर नहीं है। दोनों साथ बैठकर सोचें, समानता से अपनी-अपनी दृष्टि समझावें और दोनों की सम्मति से परस्पर अनुकूल नयी संस्कृति की स्थापना करें।"

यह देखा गया है कि समाज व्यवस्था अथवा समाज-रचना का चिन्तन करनेवाले पुरुष (इनकी संख्या भले कम हो) आसानी से कबूल करते हैं कि स्त्री-पुरुष दोनों के हक समान होने चाहिए। एक-दूसरे की राय पूछकर सर्वानुमति से जो तय होगा उसी का अमल होना चाहिए। पुरुष और स्त्री के अधिकार समान हों, दोनों की प्रतिष्ठा एक-सी हो और दोनों को अपने-अपने विकास के लिए एक-सा अवकाश मिले।

स्त्री-पुरुष में श्रेष्ठ कौन?

कुदरत ने स्त्री-पुरुषों के शरीर में और जीवन-कार्य में जो फर्क रखा है वह तो रहेगा ही लेकिन इसके कारण न पुरुषों की श्रेष्ठता सिद्ध होती है, न स्त्री की हीनता साबित होती है। अगर फर्क करना ही है तो माता अपने बच्चे को नौ महीने अपने पेट में अपने खून के द्वारा पोषण पहुँचाती है, बच्चे के जन्म के बाद अपनी छाती का दूध पिलाती है। बच्चों को प्राथमिक संस्कार देने का काम भी ज्यादातर स्त्रियाँ ही करती हैं। इसलिए स्त्रियाँ अपने श्रेष्ठत्व की बात जरूर कर सकती हैं। लेकिन पुरुषों का श्रेष्ठत्व कुदरती नहीं है।

पुरुषों ने ऐसी चर्चा में आज तक विशेष भाग नहीं लिया होगा। लेकिन बच्चों की परवरिश में स्त्रियों का भाग अधिक है और उन्नति के सब शुभ संस्कार बच्चों को माता से ही मिलते हैं, पुरुष इसको मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते आये हैं।

अब सवाल यह पूछा जाता है कि सारी दुनिया में आज तक सर्वत्र पुरुष का ही श्रेष्ठत्व मान्य हुआ है, इसका जरूर कुछ कारण होगा।

कारण स्पष्ट है। इतिहास ही बताता है कि मनुष्य अपनी छोटी-बड़ी जमातें बनाकर रहता है। इन अलग-अलग जमातों में सहयोग शुरू होने के पहले जमीन के बारे में और कुदरत से मिली सहूलियतों के बारे में झगड़ा शुरू हो जाता है। "जीना है तो संघर्ष किये बिना चल नहीं सकता।" जीने के लिए मनुष्य को पशु-पक्षियों से, सब प्राणियों से संघर्ष करना ही पड़ता है। और उसी तरह मानवी जमातें भी आपस में लड़ती आयी हैं। हर जमाना कहता आया है कि लड़ाई करके दूसरे को मारे बिना हम अपने को और अपने बाल-बच्चों को बचा नहीं सकते।

मनुष्येतर प्राणियों में अपने बच्चों को बचाने के लिए नर और मादा दोनों लड़ते हैं।

मनुष्यों में बच्चों को जन्म देना, उनका पालन करना आदि सेवा स्त्री को ही देनी पड़ती है। इसलिए मनुष्य-जाति ने तय किया कि आपस में लड़ना हो तो पुरुष ही लड़ें और स्त्रियों को लड़ने के कर्तव्य से मुक्त रखें यह है मानव-जाति की सार्वभौम व्यवस्था। स्त्रियों और बच्चों की रक्षा का भार पुरुषों ने अपने सिर पर ले लिया। इसलिए पुरुषों की श्रेष्ठता सिद्ध हो गयी और स्त्री-जाति को रक्षित प्राणी होने से पुरुषों की आज्ञा में रहने की तैयारी बतानी पड़ी। स्त्री-पुरुषों में भेद का यह एक बड़ा तत्व पुरुषों को श्रेष्ठता दे चुका।

बाद में दूसरा तत्व इसमें शामिल हो गया।

जीना है तो आजीविका प्राप्त किये बिना चारा नहीं। अब बच्चों को सम्भालना और आजीविका ढूंढने के लिए घूमते रहना, दोनों काम करना स्त्रियों के लिए कठिन हो गया। तब पुरुषों ने आजीविका ढूंढने का काम अपने सिर पर ले लिया। पुरुष शिकार करने जायें या ग्रामीण उद्योग-हुनर चलावें, आजीविका चलाने का भार पुरुषों ने अपने सिर पर ले लिया। इस कारण भी पुरुष-जाति की श्रेष्ठता कुदरती तौर पर सिद्ध हो चुकी। रक्षा और आजीविका दोनों का भार पुरुषों ने लेकर स्त्री-जाति को आश्रित बनाया। यही व्यवस्था समस्त मानवजाति में दुनिया के सब देशों में और इतिहास के सब युगों में सर्वमान्य हो चुकी। ●

भूमि-समस्या और भूमि-हदबन्दी

● एस० जगन्नाथन्

देश के लाखों भूमिहीन पिछले बहुत वर्षों से अतिरिक्त जमीन पर अपने जायज अधिकार से वंचित रहे हैं। यह अतिरिक्त जमीन मन्दिर, मठ और दूसरे समुदाय के पास है। बड़े बड़े जमीदारों ने जमीन पर कब्जा किया है। राजनैतिक दलों का कहना है कि भूमि जोतनेवालों की है। परन्तु उनकी यह आवाज केवल एक नारा साबित हुई है। और, इसके कारण निराश भूमिहीन बिलकुल ही निराश हो गये हैं।

भूमि के कानून के असफल होने के मुख्य कारण ये कहे जा सकते हैं :

१—भूमि के कानून का उचित न होना। भूमि पर सीलिंग का ऊँचा होना और अपवाद के नियमों का होना जिनके द्वारा कानून से बचा जा सके।

२—जमीदारों का असामाजिक व्यवहार, जिनके कारण भूमि का बिना किसी सिद्धान्त के तबादला होता है और वे अपने लिए मठ, मन्दिर और सामान्य भूमि को अपनाते हैं।

३—कानून के कार्यान्वित करने में पदाधिकारियों की दिलचस्पी का न होना।

४—भूमिहीनों का संगठित न होना और लाचार होना।

५—राजनैतिक दलों द्वारा भूमिहीन मजदूरों की दुहाई का भंग किया जाना और शोषण करना।

कुछ राज्यों—जैसे उ० प्र०, बिहार, उड़ीसा में भूमिहीन बड़ी गरीबी और बेकारी का जीवन बिता रहे हैं। भूमिवानों ने अपनी जमीनें बढ़ा ली हैं। स्वतंत्रता के बाद गरीब वर्ग की पूरी जमीन बड़े जमीदारों के पास चली गयी है। सीलिंग से बचकर अपनी मालकियत को कायम रखते हुए सामान्य भूमि भी उनके कब्जे में आ गयी है। प्रगतिशील प्रान्तों में भी समस्या कोई सन्तोषजनक नहीं है। तमिलनाडु में अपने स्वार्थ के लिए कई मन्दिरों की ३-४ लाख एकड़ जमीन जमीदारों ने कब्जा कर लिया है। पंजाब में भी जो अपने देश का प्रगतिशील भाग है बँटवारे के बाद पाकिस्तान चले गये लोगों की जमीन केन्द्रीय सरकार से सस्ते दामों पर बड़े भूमि-मालिकों ने खरीद ली है। इनमें से कुछ जमीन सतलज के किनारे है जिसे प्रभावशाली जमीदारों और सीनियर पदाधिकारियों द्वारा कब्जा कर ली गयी। श्री ज़ैलसिंह की सरकार इसकी तहकीकात के लिए एक कमिटी नियुक्त कर रही है। इसी तरह पंजाब के राजनैतिक दलों ने, विशेष तौर से हरिजन आबादी ने, सीनियर पदाधिकारियों और प्रभावशाली जमीदारों जिन्होंने शामलेट के कई हजार एकड़ कब्जा कर लिये हैं, के विरुद्ध जाँच की माँग की है। शामलेट की यह जमीन गैर-कानूनी किसान मालिकों के हाथ में है, जिनका गाँव की पंचायत पर कब्जा है।

अपने पद और प्रभाव से नाजायज लाभ उठाने का रिवाज ऊपर से नीचे तक पाया जाता है। बहुत सारे लोग जो सत्ता में हैं या सत्तारूढ़ दल में हैं जमीन हड़पने में लगे हुए हैं। यह केवल उच्च पदाधिकारियों तक सीमित नहीं है बल्कि एम० पी०, एम० एल० ए० और एम० एल० सी० और सत्तारूढ़ दल तक के बड़े लोग इसी में लगे हुए हैं। जो सत्ता में हैं वे अपनी भूमि बढ़ाने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देते। इस तरह से अपने देश में भूमिवानों, राजनीतिज्ञों और पदाधिकारियों ने सत्ता प्राप्त करके भूमिहीन किसानों को गुलाम बना लिया है और गैर-कानूनी तौर से सामान्य सरकारी, मन्दिर और समुदाय की भूमि पर कब्जा कर रखा है।

राज्य सरकारों के 'लैण्ड सीलिंग' के कानून सामन्ती मानस के प्रतीक हैं क्योंकि इस बात का ध्यान नहीं रखा गया है कि अपने देश की सीमित भूमि प्रति एकड़ प्रति व्यक्ति भी नहीं पड़ती, सभी राज्यों में सीलिंग बहुत ऊँची रही है। स्वतंत्रता के बाद पहली कृषि-सुधार कमिटी (जो अर्थशास्त्री डा० जे० सी० कुमारप्पा की अध्यक्षता में बनी थी) कि सिफारिशें कोल्ड स्टोरेज में डाल दी गयीं। उसी कांग्रेस सरकार ने राज्यों और केन्द्र में अपनी समितियों की सिफारिशें भी नजर अन्दाज कीं और एक व्यक्ति के लिए ६० से १०० एकड़ तक की सीलिंग तय की। इससे पता लगता है कि लाखों मेहनतकशों के प्रति कितना कम ध्यान है। अधिक-से-अधिक 'होल्डिंग' निश्चित करके इसका रास्ता खोल दिया गया कि अपवाद के अधिनियमों द्वारा बचा जाये। यह नाटक इतना पूर्ण था कि सभी राज्यों में भूमि का सीलिंग-कानून एक धोखा सिद्ध हुआ। 'लैण्ड सीलिंग' की यह बेदिली और हल्की कोशिश ने किसानों को एक विचित्र परिस्थिति में डाल दिया है।

यह प्रसन्नता की बात है कि हम लोगों की प्रधानमंत्री भूमि-समस्या पर अधिक ध्यान दे रही हैं और केन्द्रीय सरकार राज्यों को यह निर्देश दे रही है कि सीलिंग नीचे लायी जाये, अपवाद रद्द किये जायें, और दूसरे भूमि के कानून रद्द किये जायें। सामान्य लोगों में एक नया जोश आया है। एक नयी भावना जगी है और कई सरकारें सत्ता में आ गयी हैं। पूरी भूमि-समस्या को समझने के सिलसिले में हम केन्द्रीय और राज्य सरकारों की गम्भीरता का स्वागत करते हैं।

यह दुर्भाग्य है कि कुछ राज्य मन्दिर की जमीन के लेने की केन्द्र की कोशिश का विरोध कर रहे हैं। मन्दिर की दैनिक आवश्यकताएँ लोगों के चन्दे से पूरी होनी चाहिए। मन्दिर को अच्छी तरह सजाकर रखना भक्तों और लोगों का कर्तव्य होना चाहिए। मन्दिर के नाम जमीन होने के कारण लोग अपने कर्तव्य

नहीं समझते। भारत के लोग अपने दैनिक चन्दे से मन्दिर को कायम रखने के लिए आगे आयेंगे इसलिए मन्दिर की जमीन ले लेने में सरकार को संकोच न करना चाहिए।

जागीरदारी के समय शिक्षा, दवाएँ और सामाजिक कार्यों का काम दान (गिफ्ट) द्वारा होता था, और उस समय ऐसी संस्थाओं को जमीनें दी जाती थीं। परन्तु आज लोकतंत्र के जमाने में इन सब सेवाओं का उत्तरदायित्व स्वयं सरकार ने ले लिया है। दुर्भाग्य से 'लैण्ड सीलिंग ऐक्ट' में शिक्षा, दवाएँ और सामाजिक कार्यों के लिए कुछ अपवाद माने गये थे, और बहुत से भूमिवानों ने इसका लाभ उठाया। पुरानी जागीरदारी प्रथा के कारण जमीन की आय से स्कूल, कालेज और अस्पताल चलाये जाते हैं, जबकि इन जमीनों में काम करनेवाले किसान भूखे मर रहे हैं। इसलिए लोकतांत्रिक सरकार का यह कर्तव्य हो जाता है कि ये जमीनें ले ली जायें और शिक्षा तथा औषधि के कार्य सीधे सरकार द्वारा किये जायें।

लैण्ड सीलिंग : डा० जे० सी० कुमारप्पा, कांग्रेस के द्वारा स्थापित की हुई पहली कृषि समिति के अध्यक्ष ने सिफारिश की थी कि एक परिवार पर अधिक-से-अधिक सीलिंग प्रति परिवार के जोतने की क्षमता की तिगुनी दी जानी चाहिए। किसी भी हालत में एक परिवार के पास सिंचाई की जमीन का १० एकड़ से अधिक नहीं होना चाहिए।

भूतलक्षी प्रभाव : पिछले वर्षों में जमीन को जाली तौर पर दूसरों के नाम करने के हजारों उदाहरण मिलते हैं। ऐसा इसलिए किया गया कि कानून से बचा जाये और जमीन का विभाजन लगभग हर बड़े जमींदार ने किया। प्रधानमंत्री का भूमि-सुधार के सभी प्रयास और लोगों का उत्साह, लैण्ड सीलिंग में अगर भूतलक्षी प्रभाव से बचा नहीं गया तो, बेकार होगा।

स्वेच्छया जन-आन्दोलन : पिछले बीस वर्षों के भूमि-सुधार के कानूनों के समानान्तर विनोबाजी के मार्गदर्शन में एक स्वेच्छया जन-आन्दोलन भी चल रहा है। इस आन्दोलन के कारण लोग भूदान और ग्रामदान के द्वारा अपनी जमीनें भूमिहीनों को दे रहे हैं। इससे बहुत कुछ प्राप्ति हुई और संसार भर का ध्यान इसने आकर्षित किया और यश प्राप्त किया। भूदान ने जितनी जमीनें बांटीं, वह सभी राज्य सरकारों द्वारा बांटी हुई जमीन से अधिक है।

भूदान आन्दोलन के पहले दौर में अर्थात् १९५१ से १९५७ तक ४२ लाख एकड़ जमीन जमा की गयी जिसमें से २२ लाख एकड़ जमीन १३ लाख लोगों में बांटी गयी। जमीन बांटने की प्रक्रिया अब भी जारी है यद्यपि इसकी गति धीमी है। जो भी जमीन दान में मिली है वह भूदान आन्दोलन का केवल भौतिक उप-प्राप्ति (बाई प्रोडक्ट) है। जबकि विनोबाजी की लगातार शिक्षण-प्रक्रिया से १९५८ से ७१ तक के प्रचार के कारण लोक-भावना इस प्रकार की बनी कि जमीन की मालिकी समाज की है न कि व्यक्ति की यानी ग्रामदान का वातावरण बना। ऐसे हजारों ग्रामदानी गांव देश भर में फैले हुए हैं। बिहार, तमिलनाडु, उड़ीसा राज्यों में जिला और ब्लॉक स्तर पर बहुत सारे ग्रामदानी गांव के क्षेत्र हैं।

कुछ राज्य-सरकारों ने ग्रामदान को कानूनी मान्यता दे दी है। गांव-समाज ग्रामदान की कल्पना का ऊपरी छोर है। गांव के बालिगों की ग्राम-सभा होगी और ग्रामसभा की मालकियत होगी। हम लोगों को प्रसन्नता है कि योजना-मंत्रालय ने ग्रामदान को मान्यता दे दी है, और देश के कुछ ग्रामदानी हिस्सों के लिए पूर्ण विकास की योजना बनायी है।

हमारे देश के राजनैतिक नेताओं और अर्थशास्त्रियों को ग्रामदान के विचार पर गम्भीरतापूर्वक ध्यान देना चाहिए और राष्ट्रीय पैमाने पर काम करने की योजना बनानी चाहिए। ग्रामदान केवल भूमि की समस्या के लिए ही नहीं, बल्कि गांव के स्तर से ब्लाक और जिला तक के स्तर पर एक लोकतन्त्रात्मक जन-संगठन, लोकतन्त्रात्मक बुनियाद उपलब्ध करता है, ताकि विकास की योजना कार्यान्वित हो सके और उसमें भाग लिया जा सके।

कृषि में दिलचस्पी का अभाव : मैसूर के मुख्यमंत्री डा० देवराज उर्स ने एक बड़ी सच्ची बात कही है। स्वतन्त्रता के बाद किसी मुख्यमन्त्री की यह पहली आवाज है। वह यह कि एक आदमी, जो दूसरे पेशे में है, और उसके काम के दूसरे साधन हैं, उसे जमीन रखने का अधिकार नहीं होना चाहिए। जमीन केवल उनके लिए होनी चाहिए जिनकी आय का मुख्य स्रोत भूमि है। खेती से दिलचस्पी रोज-ब-रोज कम होती जा रही है। साल-ब-साल शिक्षा फैल रही है। कार्यालयों द्वारा नौकरी बढ़ रही है, उद्योग और व्यापार बड़े पैमाने पर बढ़ रहे हैं। कृषि से दिलचस्पी न होना देश के लिए विरोधाभास है, और परिणाम-स्वरूप भूमिहीनों की संख्या बढ़ रही है। शिक्षक, लिपिक, सिपाही का मध्यम वर्ग और व्यापारी, डाक्टर, इंजीनियर, वकील, उच्च पदाधिकारी, जिनके पास जमीन है, ग्राम की अर्थ-व्यवस्था और भूमिहीनों की समस्या को पेचीदा बना रहे हैं। इसलिए जमींदारी के खात्मा की तरह इसका भी अन्त होना आवश्यक है। यह व्यापारी और पेशावराना जमींदारी भूमिहीन किसानों को, भूमिहीनों को, जमींदारों से ज्यादा कुचल रही है, जो कि हजारों लाखों की संख्या में बढ़ रही है। इसलिए ऐसे कानून बनाये जा सकते हैं, जिससे जमीन इन लोगों के पंजे से निकल कर वास्तविक खेतिहर को मिले।

रैयती और कम मजदूरी : रैयती का मोकर्रर होना, बंटाईदारी, मकानों की मालकियत, उचित हक मजदूरी पर भी खेतिहरों को कमाई के लिए

(शेष पृष्ठ ६२६ पर)

स्वतंत्रता के मूल्य, लोकतंत्र के आधार और सर्वोदय-क्रान्ति

● बाबूराव चन्दावार

सर्वोदय-आन्दोलन स्वतंत्रता-आन्दोलन के उद्देश्यों को साकार करनेवाला आन्दोलन है। लेकिन क्या स्वतंत्रता-आन्दोलन के उद्देश्यों तक पहुँचने की क्षमता सर्वोदय आन्दोलन में आयी है? यदि वह क्षमता आयी है तो उसका रूप दर्शन कुछ होना चाहिए। यदि वह क्षमता नहीं आयी है तो क्यों नहीं आयी इसका तटस्थता से विश्लेषण किया जाना चाहिए।

स्वराज्य का अगला चरण

आज जिस प्रकार की शिथिलता सर्वोदयआन्दोलन में आयी है वह बहुत ही चुभनेवाली चीज है। शिथिलता कितने ही कार्यकर्ताओं के मन को चुभती है। लेकिन उन कार्यकर्ताओं के मन को तथा उनकी भावनाओं को समझने की कोशिश सर्वोदय आन्दोलन में करीब करीब नहीं के बराबर दिखती है। ऐसा ही कुछ आज का दृश्य है। यह दृश्य बहुत ही भद्दा है। इसीलिए शायद यह आन्दोलन बिखर रहा है। लेकिन इस आन्दोलन के बिखरने से स्वतंत्रता-आन्दोलन ही समाप्त हो जायगा। स्वतंत्रता-आन्दोलन का समाप्त होना मानव-द्रोह माना जायगा। लेकिन इस द्रोह का आरोप सर्वोदय आन्दोलन पर नहीं आना चाहिए। इसीलिए गम्भीरता से सोचना होगा। इस द्रोह के आरोप से सर्वोदय मुक्त रहना चाहिए। किसी राष्ट्र को राजनैतिक स्वतंत्रता मिलने से स्वतंत्रता का मूल्य प्रतिष्ठित हुआ ऐसा नहीं माना जा सकता। क्योंकि राष्ट्र की स्वतंत्रता एक अत्यन्त सन्दिग्ध चीज है। यह स्वतंत्रता केवल किसी साम्राज्य से मुक्ति पाना है। लेकिन इस प्रकार की स्वतंत्रता राष्ट्र की स्वतंत्रता में अभीतक अन्तर्भूत नहीं हुई है। इसीलिए भारत की स्वतंत्रता का सही अर्थ क्या था इसे समझने की आवश्यकता है। 'हिन्दस्वराज्य' में महात्मा गांधी ने स्वराज की भूमिका (गोल) दुनिया को समझायी है। इस भूमिका को स्वतंत्रता का क्रांतिकारी कदम ही मानना होगा। क्योंकि इस भूमिका में भारत देश में मूलतः परिवर्तन लाने का और इस देश की तथा देश के मानस की नयी रचना करने का संकल्प है। लेकिन यह संकल्प लगता है अभी तक अधूरा-सा ही रहा है। स्वतंत्रता को महात्मा गांधी ने सभ्यता से जोड़ा था। एक ऐसी सभ्यता, जिसमें मानवों के सम्बन्ध मानवों-जैसे ही रहेंगे। मानवता का विकास होगा। जिन कारणों से मानव के सम्बन्ध मानवीय रहने में बाधा आयी और *मनुष्य साम्राज्य या राज्य का दास बना*, तथा मनुष्य-समाज अनेक भेदों से आपस में बँटा और टूटा, उन कारणों को जड़मूल से उखाड़ फेंकने का संकल्प स्वतंत्रता की भूमिका में महात्मा गांधी ने देखा था। इसीलिए उन्होंने सभ्यता से स्वतंत्रता को जोड़ा था। औद्योगिक सभ्यता ने साम्राज्यवाद को जन्म दिया है। इसी सभ्यता का साम्राज्य भारत पर ढाई सौ साल तक रहा। ब्रिटिश साम्राज्य से गांधी ने संघर्ष किया था, लेकिन संघर्ष ब्रिटिशों के विरुद्ध नहीं था, उनकी औद्योगिक सभ्यता के विरुद्ध था। अर्थात् यह संघर्ष एक मानवीय सभ्यता को इस देश में बनाने के लिए था। इसे यहाँ के लोगों ने अभी तक समझा नहीं है। और जिस अर्थहीन स्वतंत्रता से आज यह राष्ट्र गुजर रहा है, वह मानवीय सभ्यता को बनाने की क्षमता रखता है या नहीं, इसे समझने की कोशिश भी नहीं हो रही है।

स्वतंत्रता की भूमिका मानवीय सभ्यता के निर्माण की भूमिका है। लेकिन इस भूमिका का असर भारत की जनता के दिलों-दिमाग पर अभी नहीं के बराबर है। ब्रिटिश साम्राज्य के अस्त के साथ जो राजनैतिक सत्ता का हस्तान्तरण इस देश में हुआ, और स्वदेशी राज्यसत्ता का निर्माण हुआ, वह स्वतंत्रता की भूमिका भूल बैठा। यह स्वाभाविक ही था। क्योंकि राजनीतिज्ञों को राजनैतिक हस्तांतरण से स्वतंत्रता-प्राप्ति का समाधान मिला था। वस्तुतः इन राजनीतिज्ञों में स्वतंत्रता की भूमिका से कम आस्था थी, करीब-करीब आस्था थी ही नहीं। इसलिए राजनैतिक सत्ता-हस्तांतरण को ही उन्होंने स्वतंत्रता मान लिया था और इसी वजह से यहाँ की राजनीति आजतक स्वतंत्रता की मूल भूमिका से अनभिज्ञ रही है। स्वतंत्रता की भूमिका से जो परम्परा हमेशा विरोधी रही, उसी ब्रिटिश संसदीय परम्परा को यहाँ के राजनीतिज्ञों ने अपना लिया। इसलिए राजनीतिज्ञों पर स्वतंत्रता की मूल भूमिका विकसित करने की, मानवीय सभ्यता की दृष्टि से ठोस परिणाम निकालने की जिम्मेदारी नहीं थी। लेकिन स्वतंत्रता की भूमिका समझनेवाले, और वह भूमिका बनाने में जिन्होंने सूझ-बूझ के साथ हिस्सा लिया था उनपर जिम्मेदारी थी। सर्वोदय-आन्दोलन का प्रारम्भ उस जिम्मेदारी को पूरा करने के लिए ही हुआ है।

औद्योगिक संरचना और औपचारिक लोकतंत्र

स्वतंत्रता की भूमिका में मानवीय सभ्यता को बनाने का प्रयास करना कैसे सम्भव था, इसपर विचार करने की आवश्यकता है। आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थिति के परिणामों से व्यवस्था बनती है। इस परिस्थिति की जड़ में मनुष्य तथा समाज के भविष्य को प्रभावित करनेवाली प्रेरणाएँ सूक्ष्म रूप से काम करती हैं। इन प्रेरणाओं को मनुष्य-प्रतिष्ठा का मूल्य बनाना हो तो मनुष्य तथा समाज का भविष्य उज्ज्वल बनता है। लेकिन मानवीय प्रतिष्ठा के मूल्य बनाने का उद्देश्य इन प्रेरणाओं का न हो तो मनुष्य तथा समाज के भविष्य में अन्धकार फैलता है। तो आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थिति के

जड़मूल में जो प्रेरणाएँ थीं वे औद्योगिक थीं इसलिए वे मानवीय प्रतिष्ठा के मूल्य बनानेवाली नहीं थीं। ऐसा एक रूप व्यवस्था के सामने आया। क्योंकि इस व्यवस्था ने मनुष्य की प्रतिष्ठा को बढ़ाया नहीं, घटाया है। यानी औद्योगिक प्रेरणा से जो व्यवस्था बनी, उसमें मानवीय सम्बन्धों को बनाने की क्षमता आ नहीं पायी, बल्कि मानवीय सम्बन्ध बिगड़ने की स्थिति पैदा हुई। मनुष्य को भोग-विलास की लालच में औद्योगिक परिस्थिति इस प्रकार से घोटती है कि मनुष्य अपनी स्वतंत्रता सहजता से भूल बैठे। आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थिति की जड़ में जो औद्योगिक प्रेरणा थी, उससे मनुष्य तथा समाज का उज्ज्वल भविष्य बनाने में बाधा आयी और सभ्यता का अन्त होने लगा। इसलिए स्वतंत्रता का अर्थ हुआ औद्योगिक प्रेरणा से बने आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थिति से छुटकारा पाना। यानी स्वतंत्रता की भूमिका मनुष्य-मुक्ति की भूमिका है। इसे जानने के लिए औद्योगिक प्रेरणा की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थित के स्वरूप को आंखों के सामने लाना जरूरी है। क्योंकि इससे औद्योगिक समाज अपना जीवन-स्तर ऊपर उठाने की जो योजना बनाता है, उससे मनुष्य की सभ्यता का सवाल कहाँ तक हल होता है, इसे समझने में मदद होगी।

औद्योगिक प्रेरणा से बनी सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थिति ने ही संसदीय व्यवस्था को बनाया है। इसलिए संसदीय व्यवस्था औद्योगिक प्रेरणा से अलग नहीं हो सकती। इसीलिए संसदीय व्यवस्था का अस्तित्व औपचारिकता से स्थिर होता है। यही वजह है कि संसदीय लोकतंत्र में औपचारिकता का महत्त्व है। इस औपचारिकता ने लोकतंत्र को बेकाम बना दिया है। लोकतंत्र परिणामों की दृष्टि से आज अकार्यक्षम दिखाई देता है, उसका सारा श्रेय औपचारिकता को है। औपचारिकता से सम्बन्ध बनते नहीं, सम्बन्ध बनने का केवल दिखावा-मात्र होता है। इन दिखावों को ही लोकतंत्र में आज प्रतिष्ठा मिलती है। लेकिन इससे लोकतंत्र के अनुकूल परिणाम निकलना कभी भी सम्भव नहीं हुआ, और आगे भी सम्भव नहीं होगा। क्योंकि केवल आभास मात्र से मनुष्यों के सम्बन्ध बनते नहीं, ज्यादातर बिगड़ते ही हैं। तो औपचारिकता से सम्बन्धों के निर्माण में बाधा पैदा हो गयी। इसीलिए संसदीय लोकतंत्र में लोगों को साझेदार बनना सम्भव नहीं हुआ, सम्भव नहीं होगा। औद्योगिक सभ्यता ने यंत्रयुग को अपनाकर मनुष्यों को मनुष्यों से अलग कर दिया और मानवीय सम्बन्धों को नष्ट करके मशीनी सम्बन्धों को जन्म दिया। उसकी पुष्टि करने के लिए ही संसदीय लोकतंत्र का स्वरूप औपचारिकता का बनाया गया है। यंत्र संस्कृति मानवीय सम्बन्धों के बिना जैसे अभिव्यक्त हुई है, वैसे ही मानवीय सम्बन्धों के बिना केवल औपचारिकता से ही लोकतंत्र के संसदीय स्वरूप को बनाने का संकल्प औद्योगिक सभ्यता का है। इसका मतलब यही है कि लोकतंत्र में लोगों की साझेदारी यानी मानवीय प्रेरणाओं की साझेदारी औद्योगिक सभ्यता नहीं चाहती है। यह मनुष्य-सभ्यता को समाप्त करने का ही प्रयास है। इसीलिए मनुष्य को उसकी सभ्यता बनाने के लिए स्वतंत्रता चाहिए।

समन्वय या समझौता?

सर्वोदय आन्दोलन की क्रान्तिकारिता उसके मानवीय सम्बन्धों को बनाने का संकल्प में है। और, सम्बन्धों की क्रान्ति की घोषणा इस आन्दोलन से कई बार गूँज उठी है। लेकिन इस क्रान्ति के लिए सर्वोदय आन्दोलन को समझौते की जटिलता से सर्वप्रथम बाहर निकलना होगा। सर्वोदय आन्दोलन जटिल इसलिए हुआ है कि समझौते में वह अधिक फँसता जा रहा है। इसका एक कारण समन्वय का दृष्टिकोण भी है। समन्वय को समझौता मान बैठना शायद समन्वय को नहीं समझ पाने की ही स्थिति है। समन्वय को द्वन्द्वात्मकता लाने के लिए है लेकिन समझौते से द्वन्द्वात्मकता लाना कभी भी सम्भव नहीं होता। समझौते से आन्दोलन में जो गुण हैं उन्हें समाप्त करने की ही प्रक्रिया शुरू हो जाती है। इसे कुछ विस्तार से सोचना जरूरी है।

महात्मा गांधी द्वारा पोषित स्वतंत्रता की भूमिका राजनैतिक स्वतंत्रता के बाद १९५७ तक दुर्लक्षित रही थी। लेकिन तेलगाना के पोचमपल्ली ने स्वतंत्रता की यह भूमिका बनाकर उसे बचा लिया। सन्त तुकाराम के स्वरचित अभंग (भग न होनेवाले गीत) नदी में डुबाये गये थे। लेकिन कहते हैं विठोबा ने (भगवान ने) उसे उठा लिया था। इसलिए वह बचे। ऐसा ही कुछ गांधी तथा उनकी स्वतंत्रता की भूमिका के सम्बन्ध में भी हुआ है। विनोबा तो प्रारम्भ से अन्त तक शून्य में ही रहे। विनोबा का मूल्य गांधी के अद्वितीय एकत्व के पीछे विनोबा का शून्य लगने से बढ़ा, ऐसा विनोबा अपने बारे में 'अभंग व्रतों' की प्रस्तावना में लिखते हुए कहते हैं। (अद्वितीय जि एकत्व गुरूचे गौरवूनि जें, निन्याशून्य विनाभूप पावला गणितापरी। मराठी रचना।) इसीलिए स्वतंत्रता-आन्दोलन चलाने के लिए विनोबा को ही गांधी के बाद पदयात्रा करनी पड़ी। इसे वह भगवत्कृपा मानते हैं। अब वे शून्य में प्रवेश कर गये। उनका शून्य-प्रवेश दुनिया में सर्वोदय-आन्दोलन का मूल्य बनने के लिए सहायक ही होगा, क्योंकि आन्दोलन पर उनका शून्य चढ़ गया है।

स्वामित्व-विसर्जन की क्रान्ति

१८ अप्रैल १९५७ से स्वतंत्रता-आन्दोलन फिर शुरू हुआ, ऐसा मैं मानता हूँ। इस आन्दोलन ने भूदान का निमित्त साधकर स्वामित्व-विसर्जन को महत्त्व दिया। क्योंकि सम्बन्धों का निर्माण स्वामित्व-विसर्जन से ही होता है, यह उसके पीछे सही धारणा थी। मनुष्य अहंकार से निवृत्त होकर ही दूसरे मनुष्य से मिल सकता है। मनुष्यों के हृदयों को जोड़ने के लिए स्वामित्व-विसर्जन की भूमिका सर्वश्रेष्ठ भूमिका

थी। लेकिन स्वामित्व-विसर्जन की क्रान्ति, जिसे १९५७ तक सतआवन कहा गया था, हो नहीं पायी। इससे जो निराशा सर्वोदय आन्दोलन में आयी, उससे केवल विनोबा ही बचे रहे, और कोई नहीं बच पाया। यहीं से आन्दोलन के बिखराव का प्रारम्भ हुआ। '५७ के बाद ग्रामदान ने आन्दोलन को क्रान्ति के आरोहण तक आने के लिए प्रेरित किया है। लेकिन ग्रामदान से स्वामित्व-विसर्जन का शक्तिशाली रूप अभी तक सामने नहीं आया है। तो '५७ से आन्दोलन को जो मोड़ मिला, वह स्वतन्त्रता की भूमिका में बहुत कुछ गड़बड़ी पैदा करनेवाला ही सिद्ध हुआ है। वह कैसे हुआ यह समझाने की आवश्यकता है।

एक भारी भ्रम

सम्बन्धों की क्रान्ति साकार करने में राज्यशक्ति भी साधक हो सकती है, ऐसी धारणा इस आन्दोलन में प्रवेश कर गयी। इसलिए राज्यशक्ति से समझौता करना उचित माना गया। इससे सर्वोदय-आन्दोलन का तेज नष्ट होने लगा। राज्यसत्ता ने इस आन्दोलन के शोषण की प्रक्रिया शुरू कर दी। राज्यशक्ति की सहायता लेते रहने की गलती ने लोकशक्ति को आन्दोलन से अलग कर दिया, और आन्दोलन का कानूनी रूप प्रकट होने लगा। सर्वोदय-आन्दोलन ने लाचारी से ही राज्यशक्ति से समझौता किया है। लेकिन यह लाचारी क्रान्ति के रास्ते में बाधा बन गयी। इस लाचारी ने ही राज्यशक्ति को आन्दोलन का शोषण करने के लिए अवसर दिये। राज्यशक्ति की किसी भी प्रकार की सहायता सत्वहरण करनेवाली होती है। राज्यशक्ति ने ऐसा ही सत्वहरण सर्वोदय-आन्दोलन का किया है। दुर्भाग्य से अभी तक इस वस्तुस्थिति पर गौर नहीं किया जाता। इसका एक कारण यह भी है कि राज्यशक्ति की सहायता लेने से इनकार कर देते हैं तो यह आन्दोलन उसका विरोधी बनेगा। किसी का विरोधी बनना यह आन्दोलन का उद्देश्य नहीं है लेकिन किसी आचरण से आन्दोलन क्रान्ति की भूमिका से हट जाता है तो क्या उसे हटने देना चाहिए? इससे आन्दोलन क्रान्ति-विरोधी नहीं बनता है क्या? राज्यशक्ति को विरोधी नहीं बनने देने की भूमिका ने सर्वोदय-आन्दोलन को क्रान्ति-विरोधी बनने की परिस्थिति पैदा की है। इसीलिए सर्वोदय-आन्दोलन क्रान्ति का आन्दोलन नहीं है, क्योंकि उसने क्रान्ति की भूमिका ही छोड़ दी है ऐसा प्रभाव युवकों के मन पर हुआ है। क्रान्ति का आन्दोलन मानव-विरोधी नहीं रहेगा, नहीं रहना चाहिए क्योंकि मनुष्यों में सम्बन्ध बनाना ही उसका प्रयोजन है। लेकिन यह सम्बन्ध बनाने की प्रक्रिया चलती है तो आन्दोलन को राज्यशक्ति-विरोधी बनना अनिवार्य होता है। क्योंकि प्रतिगामी, जगचट्टे मूल्यों का रक्षण राज्यशक्ति की दण्डनीति से ही हुआ करता है। इन मूल्यों की जगह पर नये प्रगतिशील मूल्यों को स्थापित करना यानी राज्यशक्ति तथा उसकी दण्डनीति को एक प्रकार से चुनौती देना ही होता है। राज्यशक्ति तथा उसकी दण्डनीति को ललकारे बिना नये प्रगतिशील मूल्यों को समाज में प्रस्थापित करना कभी भी सम्भव नहीं हुआ, आगे भी सम्भव नहीं होगा। इसलिए दण्डशक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति बनाने की बात सोची जाती है, वह क्रान्ति की प्रक्रिया को चलाने में कहाँ तक उपयोगी होती है, इसे ठीक से समझना होगा।

तीसरी शक्ति का निर्माण

हिंसा-विरोधी दण्डशक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति को प्रकट करने का सकल्प सर्वोदय-आन्दोलन को पूरा करना है। विनोबा बार-बार इसकी याद दिलाते रहे हैं। लेकिन दण्डशक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति स्वतन्त्र रूप से कैसे प्रकट होगी इसका उपाय किसी की समझ में नहीं आता। क्योंकि दण्डशक्ति से समाज इतना प्रभावित है कि उससे भिन्न तीसरी शक्ति स्वतन्त्र रूप से प्रकट होने की सम्भावना करीब-करीब नहीं दीखती। ग्रामदान से तीसरी शक्ति के लिए सकल्प खड़ा करने की एक प्रक्रिया शुरू की गयी। लेकिन सम्बन्धों के निर्माण में ग्रामदान की सफलता लोकशक्ति के रूप में अभी प्रकट नहीं हुई। ग्रामदान तथा उसकी पुष्टि से ग्रामसभाएँ बनेंगी। भूमि का बीसवाँ हिस्सा वितरित होगा। ग्रामकोष कार्यरूप में लाया जायगा। लेकिन इससे गाँव के आपसी सम्बन्धों में कैसे परिवर्तन आयेगा? जो परिवर्तन आयेगा, वह भेदों को भूलकर मानवीय सम्बन्धों को बनानेवाला होगा या नहीं? इन सन्देहों से बाहर अभी हम नहीं निकल पाये हैं। लेकिन यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि दण्डशक्ति की एक प्रक्रिया चलती है—राज्यशक्ति को बनाने की। उस पर ग्रामसभाओं का, भूमि-वितरण का तथा ग्रामकोष का क्या असर होगा, यह अभी देखा नहीं गया है। लेकिन राज्यशक्ति बनाने की प्रक्रिया पर असर डालनेवाली चीज ग्रामसभा बनती है तो वहाँ दण्डशक्ति से संघर्ष होकर रहेगा। इसमें सन्देह नहीं होना चाहिए। इसलिए दण्डशक्ति के अस्तित्व को ग्रामदानी प्रक्रिया से जहाँ तक बाधा नहीं पहुँचती है, वहीं तक दण्डशक्ति का उपयोग ग्रामदान में सम्भव होगा। केवल इसी कारण से आज की चलायी गयी ग्रामदान की प्रक्रिया क्रान्ति की प्रक्रिया नहीं बन पाती। इसका एक निष्कर्ष ऐसा निकलता है कि ग्रामदान दण्डशक्ति के लिए सहायक बन सकती है। लेकिन दण्डशक्ति अपना अस्तित्व खोकर ग्रामदान को अपना सहायक नहीं मान सकती। लेकिन ग्रामदान दण्डशक्ति का अस्तित्व बनाये रखने के लिए नहीं है। दण्डशक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति बनाने के लिए है। तो यह तीसरी शक्ति खड़ी करने का प्रयास, मुझे लगता है, केवल हिंसाशक्ति से ही नहीं बल्कि दण्डशक्ति से भी विरोधी बनने से सफल हो सकेगा।

संसदीय लोकतन्त्र की औपचारिकता

को बनाने के लिए दण्डशक्ति का आज उपयोग किया जाता है। क्योंकि इसीसे संसदीय लोकतंत्र में राज्यशक्ति का प्रभाव बना रहना सम्भव है। आज संसदीय लोकतंत्र राज्यशक्ति से प्रभावित है। इसलिए संसदीय लोकतंत्र की भूमिका राज्यशक्ति का मूल्य बनाने की रही है। इससे एक बात जाहिर होती है कि संसदीय लोकतंत्र तीसरी शक्ति की विरोधी है। क्योंकि वह दण्डशक्ति से भिन्न नहीं रह सकता। तो ग्रामदान से तीसरी शक्ति बनाकर एक नया विकल्प खड़े होते देखना संसदीय लोकतंत्र के लिए सम्भव नहीं है। क्योंकि वह उतना सहनशील नहीं है। राज्यशक्ति के दबाव से संसदीय लोकतंत्र दबा हुआ है। यह उसके सहनशील नहीं होने की वजह है। इसीलिए तीसरी शक्ति बनाने में राज्यशक्ति बाधक बनती है, यह बात स्पष्ट है। इसीलिए कहना पड़ता है कि राज्यशक्ति से समझौता करके सर्वोदय आन्दोलन ने क्रान्ति की भूमिका छोड़ दी है। और यह साफ दिखता है कि इस आन्दोलन का राज्यशक्ति ने सम्पूर्ण रूप से शोषण ही किया है। क्योंकि सर्वोदय आन्दोलन को राज्यशक्ति ने अपना विरोधी नहीं बनने दिया।

गाँवों को स्वतंत्रता और अर्थतंत्र

१९५१ में स्वतंत्रता-आन्दोलन का नया चरण विनोबा की तेलंगाना-पदयात्रा से प्रारम्भ हुआ था। वह आन्दोलन राज्यशक्ति से समझौता करने के कारण स्वतंत्रता की मूल भूमिका से हटते दिखायी दे रहा है। इससे बिखराव पैदा हो गया है। यह बिखराव स्वतंत्रता-आन्दोलन को ही बिखराकर रख देगा। इसलिए नये ढंग से सोचना होगा।

स्वतंत्रता का अनुभव इस देश के लोगों को प्राप्त करने लिए, औद्योगिक सभ्यता के प्रति जो भी आस्था दिखाई देता है, उसकी समाप्ति की प्रक्रिया चलानी होगी। इसका प्रारम्भ गाँवों की स्वतंत्रता से ही होता है। गाँवों की स्वतंत्रता यानी सम्बन्धों में मानवता लाने के लिए आवश्यक सामाजिक तथा आर्थिक रचना की स्वतंत्रता औद्योगिक सभ्यता में जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने का आकर्षण होता है। मनुष्य की आवश्यकताएँ बढ़ाकर उनकी पूर्ति के लिए प्रयास करना यानी जीवन-स्तर ऊँचा उठाना माना जाता है। लेकिन मनुष्य की आवश्यकताएँ मानवता को बनाये रखने में उपयोगी रहेगी या नहीं, इसका जीवन-स्तर उठाने की प्रक्रिया में ध्यान नहीं दिया जाता। तो मानवता से जीवन-स्तर का सम्बन्ध करीब-करीब नहीं के बराबर होता है। इसलिए जीवन-स्तर की कल्पना और उसकी प्रक्रिया मानवता से अलग पड़ जाती है। यानी मानवीय सम्बन्धों की जिम्मेदारी का भान औद्योगिक सभ्यता को शुरू से आखिर तक नहीं रहता है। इस दृष्टि से गाँवों की स्वतंत्रता यानी मानवीय सम्बन्धों की स्वतंत्रता है। इसलिए गाँवों में स्वतंत्रता की प्राण-प्रतिष्ठा करनी चाहिए। गाँवों की आर्थिक तथा सामाजिक रचना में मानवीय सम्बन्धों को बनाये रखने का प्रयास होना चाहिए। यह गाँवों में सम्भव है। क्योंकि गाँव एक समाज के रूप से सामने आता है तो वह मनुष्यों के सम्बन्धों का ही होता है। लेकिन जब गाँव टूटते हैं तब मनुष्यों के सम्बन्ध टूटे हुए होते हैं। सम्बन्ध बनते हैं तो गाँव बनता है, गाँवों में समाज बुना हुआ होता है। सम्बन्ध बिगड़ते हैं तो गाँव टूटता है, समाज बिखराता है। इसलिए सम्बन्ध बनेंगे, बिगड़ेंगे नहीं और गाँव-समाज रहेगा। ऐसी - स्थिति जिस आर्थिक तथा सामाजिक रचना से बनेगी उसी को अपनाना होगा। लोगों की आवश्यकताएँ आपस में पूरा करने की जिम्मेदारी उठानेवाली अर्थरचना गाँव की होगी। गाँव की या गाँव के प्रत्येक की आवश्यकताएँ पूरी होने के लिए गाँव पर तथा पड़ोसी गाँव पर ही निर्भर रहना होगा। लेकिन आवश्यकताएँ पूरी करनेवाला कोई दूसरा है यह मानकर उस पर निर्भर रहना छोड़ना होगा। इस 'निर्भरता से आपस की दूरी बढ़ती है। दूरी बढ़ानेवाले उत्पादन से आवश्यकताएँ पूरी होंगी भी, लेकिन सम्बन्ध नहीं बनेंगे। जिसमें परावलम्बिता ही नहीं है, बल्कि एक दूसरे को भूलना है। गाँव का समाज आपसी सम्बन्धों का होगा। यह सम्बन्ध नहीं बनानेवाले उत्पादन को समाज छुये नहीं। सम्बन्धों में दूरी पैदा करनेवाला उत्पादन किसी उपयोग का नहीं। वह तो समाज को बिगाड़ने वाला है। यह गाँववाले समझने लग जायेंगे तो ही स्वतंत्रता की भूमिका में कुछ प्राण आना सम्भव होगा। इसकी एक पृष्ठभूमि सर्वोदय आन्दोलन बनाता है। इसे कोई भी भूल नहीं पायेगा। यही एक बड़ी उपलब्धि मानकर आगे की दृष्टि से सोचना होगा। सर्वोदय आन्दोलन को बिखराव से बचाने की शक्ति इस पृष्ठभूमि में है। लेकिन गाँवों के आज के स्वरूप में नयी स्वतंत्रता के प्राण डालने के लिए शहरों के आकर्षण का घातक स्वरूप गाँव के लोग समझ पायेंगे ऐसी परिस्थिति बनानी होगी। इसके लिए गाँवों को एक दूसरे के सम्पर्क में लाना होगा। गाँवों को संगठित करना होगा। यह संगठन औद्योगिक सभ्यता से बने शहरों की अमानवीयता को तथा आपस की दूरी को मिटाने के लिए होगा। यह करते समय कुछ कठिनाइयाँ आ सकती हैं, बल्कि आयेंगी ही कहना ठीक होगा। इन कठिनाइयों का सामना सत्याग्रह-शक्ति से करना होगा। गाँवों के निर्माण में बाधा डालनेवाली शक्तियों का प्रतिरोध सत्याग्रह के द्वारा ही किया जा सकता है। इन शक्तियों से असहयोग करना आवश्यक होगा। सत्याग्रह असहयोग के रूप में यहाँ प्रकट होगा। लेकिन यह सत्याग्रह केवल प्रतीकात्मक कार्यक्रम को चलानेवाला नहीं होगा बल्कि सम्बन्धों के निर्माण का साधन भी बनेगा। इससे औद्योगिक सभ्यता से बने संसदीय लोकतंत्र के स्वरूप में फर्क पड़ेगा। लोकतंत्र में लोगों की सही अर्थ में साझेदारी बढ़ेगी। राज्यशक्ति के दबाव से लोकतंत्र मुक्त होगा। दण्ड-→

ग्राम स्वराज्य गोष्ठी-सहयात्रा

सन्दर्भ . नरोरा सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर गत १९, २० मई को उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी की उपस्थिति में प्रदेश के कार्यकर्ताओं की बैठकें प्रदेश में चल रहे सर्वोदय-आन्दोलन पर चर्चा करने के लिए आयोजित की गयी थी। उक्त बैठकों में वहाँ पर उपस्थित प्रदेश के सभी साथियों ने तीव्रता से यह महसूस किया कि 'एक-सूत्रता के अभाव में प्रदेश का आन्दोलन अपेक्षित गति नहीं पकड़ पा रहा है, यद्यपि काम करनेवाले सक्षम और निष्ठावान साथियों की प्रदेश में कमी नहीं है; जगह-जगह काफी महत्त्वपूर्ण काम हो रहे हैं, लेकिन उनमें आपस की एकसूत्रता न होने के कारण पूरे काम की संगठित तेजस्विता नहीं प्रकट हो पा रही है। यह स्थिति प्रदेश और देश के आन्दोलन की दृष्टि से काफी चिन्ताजनक है।'

इस स्थिति को बदलने और प्रदेश में आन्दोलन को अधिक तेजस्वी बनाने की दृष्टि से वहाँ सबने चर्चा करके यह तय किया कि प्रदेशभर के सक्रिय साथियों का चिन्तन-चर्चा सत्कर्म-युक्त आठ दिवसीय शिविर बुलन्दशहर में २३ से ३० जून तक आयोजित किया जाय। स्वामीजी (अध्यक्ष, उ० प्र० सर्वोदय मण्डल) का इस बात पर विशेष जोर था, और वहाँ उपस्थित प्रदेश के कार्यकर्ता साथियों ने इसकी महत्ता को महसूस किया कि प्रदेश के सक्रिय कार्यकर्ता साथियों में एक सामूहिक चिन्तन, कर्तृत्व और भाई-चारे का विकास इस शिविर में हो, तथा पूरे आन्दोलन को इससे गति मिले, ऐसी कोशिश की जाय।

स्वरूप : तदनुसार प्रदेश सर्वोदय मण्डल की ओर से कुल ५१ व्यक्तियों को आमंत्रित किया गया, जिनमें से ३५ व्यक्तियों ने बुलन्दशहर में आयोजित इस कार्यक्रम में भाग लिया। शुरू में दो दिन हम कलकत्ती-नरौरा में रहे। उसके बाद क्रमश वेलोन, डिबाई, अहमदगढ़ और शिकारपुर पदयात्रा करते हुए पहुँचे और आखिर में २ दिन बुलन्दशहर में रहे। यों इस आयोजन का मुख्य उद्देश्य तो हमारा आपसी सह-चिन्तन और एक दूसरे के करीब आना था, लेकिन पदयात्रा के कारण सहज ही पड़ावों पर जन-सम्पर्क और आमसभाएं हुईं, जिन्हें हम उपलब्धि मानते हैं। बुलन्दशहर में हमने कचहरी में चलनेवाले भ्रष्टाचार को 'चेक' करने की प्रतीकात्मक सीधी कार्रवाई तथा शराबबन्दी सत्याग्रह में भी भाग लिया और दोनों के अच्छे अनुभव आये। हमने यह अनुभव किया कि किसी एक स्थान पर बैठकर चिन्तन-चर्चा करने की अपेक्षा यह जंगम गोष्ठी अपने लक्ष्य की प्राप्ति में अधिक अनुकूल सिद्ध हुई और पूरे आयोजन में एक प्रकार की गत्यात्मकता दिखाई पड़ी।

इस गोष्ठी की न तो कोई पूर्व निर्धारित रूपरेखा थी, न चर्चा के पूर्वनिश्चित मुद्दे थे। संचालन की भी कोई आरोपित प्रक्रिया नहीं अपनायी गयी थी। मुक्त मन से खुली चर्चा में सबने भाग लिया और पूरे समय हम लोग एक स्वयप्रेरित और स्वचालित प्रक्रिया से होकर गुजरे। इसके कारण हम लोग अपेक्षित दिशा में बढ़ सके और इस कार्यक्रम की सफलता का अनुभव कर सके।

सहचिन्तन . नरौरा की धर्मशाला में हमारी गोष्ठी २३ जून को सुबह साढ़े आठ बजे शुरू हुई। स्वामी कृष्णानन्दजी ने गोष्ठी का सन्दर्भ प्रस्तुत करते हुए कहा, "विभिन्न दिशाओं से आकर हम आन्दोलन में लग गये। आज आन्दोलन में एक शिथिलता महसूस हो रही है इसलिए यह सोचा गया कि हम काम करनेवाले ही क्यों न इसका सहचिन्तन करें, कोई रास्ता खोजें। जिसको मंजिल तक जाना है, वही मार्ग का भी शोध करे। ऊपर से योजना बने और नीचे के स्तर पर उसके अनुसार काम हो। इस पद्धति का सर्वोदय-विचार-दर्शन से मेल नहीं है। यह हमारे साथियों की चेतना का प्रतीक है कि हम स्वतन्त्ररूप से सोचने के लिए बैठे हैं, कोई पूर्व निर्धारित स्वरूप नहीं है। हम खुले दिल-दिमाग से सहचिन्तन करेंगे तो कोई अच्छी ही चीज निकलेगी।"

आत्मपरिचय, आन्दोलन और चर्चा के बिन्दु

सबसे पहले यह सोचा गया कि हम अपने आपको आन्दोलन के सन्दर्भ में अभिव्यक्त करें। इस प्रकार संक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय (परिवार की सीमा तक), आन्दोलन से लगाव, कार्यानुभव और गोष्ठी में चर्चा के लिए अपनी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मुद्दे प्रस्तुत करने का सिलसिला चला, जो २४ की सुबह तक चलता रहा।

गोष्ठी में भाग ले रहे लोगों में करीब आधी संख्या ऐसे लोगों की थी जो स्वराज्य-आन्दोलन में भी सक्रिय रूप से भाग ले चुके थे, और सन् '५२ से '५५ के बीच सर्वोदय-आन्दोलन में लग गये थे। तीन तरुण थे, जो दो-तीन साल के अन्दर ही इस आन्दोलन से जुड़े थे, शेष ऐसे लोग थे, जो सन् ५३ से ५६ के बीच आन्दोलन में सक्रिय हुए थे, इसलिए करीब-करीब सबको आन्दोलन का काफी अनुभव था।

चर्चा के लिए कुल ३४ मुद्दे सुझाये गये, जिन्हें संकलित करके निम्नलिखित विषयों के अन्तर्गत लिया गया :

→शक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति अपने प्रभाव को बनेगी। तभी सर्वोदय आन्दोलन में स्वतन्त्रता-आन्दोलन के उद्देश्यों तक पहुँचने की क्षमता आयेगी। मानव-द्रोह के आरोप से यह आन्दोलन निश्चित रूप से मुक्त होगा। ●

(१) आन्दोलन की समीक्षा-मूल्यांकन, (२) विचार-दर्शन : क्रान्ति की परिकल्पना, (३) कार्य-पद्धति, (४) कार्यकर्ता, (५) कार्यक्रम, (६) संगठन, और (७) सुझाव।

इस प्रकार चर्चा के पहले दौर में से गोष्ठी की रूपरेखा प्रकट हुई और तदनुसार चर्चाएँ चलीं। इनमें से क्रम १, २, ३ की चर्चाओं का सार भूदान-यज्ञ के पाठकों के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है।

आन्दोलन की समीक्षा

करीब-करीब सभी साथी सर्वोदय आन्दोलन में पिछले कई वर्षों का अनुभव लिये हुए थे, आन्दोलन के प्रति समर्पित वृत्ति के थे, इसलिए काफी गम्भीरतापूर्वक उन्होंने इसका मूल्यांकन प्रस्तुत किया। चूंकि सभी के अन्दर आन्दोलन की श्रद्धा भी है, इसलिए वर्तमान स्थिति के प्रति चिन्तित अवश्य थे, दिल में उसकी बेचैनी भी थी, लेकिन चिन्ता और प्रतिक्रिया में नहीं, बल्कि वैज्ञानिक वृत्ति और तटस्थता के साथ सबने मूल्यांकन करने की कोशिश की।

करीब १२ घण्टों की चर्चा में से महत्व के कुछ बिन्दु निम्न प्रकार सामने आये (१) भूदान-आन्दोलन के रूप में, विनोबा के निमित्त से, इतिहास का अपार-प्रवाह तेलंगाना में प्रकट हुआ, जहाँ बाहरी समस्याओं की जटिलताएँ थीं और उनके कारण उथल-पुथल थी। यह इस युग की क्रान्ति का दिशा-संकेत था। (२) विनोबा उस संकेत से प्रेरित होकर क्रान्तिपथ पर चल पड़े, स्वयंप्रेरित लोग इसमें आकर्षित होने लगे, और एक स्वयंस्फूर्त आलोड़न देश में दिखाई देने लगा। (३) तब तक किसी भी राजनीतिक दल ने (मार्क्सवादियों को छोड़कर) या सरकार ने भूमि की समस्या पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं किया था। देश में एक नयी सतेज और क्रान्तिकारी शक्ति के निर्माण की सम्भावना प्रकट हुई। (४) इसी बीच सेवापुरी में (गांधी-विचार में श्रद्धा रखनेवालों के भाईचारे के रूप में पुर्नगठित) सर्व सेवा संघ ने भूदान-आन्दोलन को अपना मुख्य कार्यक्रम घोषित किया। अपने नैतिक प्रभाव से उसने देश की रचनात्मक संस्थाओं को इसमें पूर्ण सहयोग देने की अपील की। कांग्रेस ने भी इसे अपने प्रस्ताव द्वारा समर्थन दिया।

(५) भूमि-प्राप्ति के लक्ष्यांक घोषित किये जाने लगे, निश्चित अवधि में उसकी पूर्ति के प्रयत्न किये जाने लगे और इस प्रकार एक स्वयंस्फूर्त आन्दोलन जन-आन्दोलन की राह पर कुछ दूर चलकर संस्थात्मक प्रवृत्ति का रूप लेने लगा। निश्चित अवधि में लक्ष्यपूर्ति करने पर प्राप्त होनेवाले श्रेय का लोभ भी इसमें दाखिल हुआ और साध्य के साथ साधन की परिशुद्धता पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा सका। बल्कि यह वृत्ति ही क्षीण हुई। (६) भूदान से ग्रामदान और राज्यदान तक पूरी प्रक्रिया में—हम करानेवाले हैं, करनेवाले नहीं, इस चिन्तन और स्पष्टीकरण के बावजूद—करनेवाले हम ही रहे। यह नहीं हो सका कि भूदान में दाता-आदाता के बीच सीधा सम्पर्क हो, आमना-सामना हो, ग्राम में भी हम ही बीच में पुरोहित बने रहे। परिणामस्वरूप आन्दोलन समस्याग्रस्त लोगों को आन्दोलित नहीं कर सका। वे इसे हम पुरोहितों का काम समझते रहे।

(७) इस प्रक्रिया में हम बिहारदान तक पहुँचकर ठिठक गये। विचार की शक्ति पर हम श्रद्धा रखते हैं, लेकिन लक्ष्यपूर्ति के मोहवश विचार-शिक्षण की प्रक्रिया अधूरी रही। जिस स्तर पर समाज है, उसकी पकड़ में आने लायक विचार-शिक्षण की प्रक्रिया का शोध नहीं हुआ। आमतौर पर कार्यकर्ताओं ने अपनी मनोभूमिका से विचार-शिक्षण के प्रयत्न किये। (८) सामान्य मनुष्य की जड़ता और निष्क्रियता को तोड़ने के लिए स्वराज्य आन्दोलन में गांधीजी ने प्रतीकार के प्रतीकात्मक आन्दोलन किये, जिनके कारण एक व्यापक जन-चेतना पैदा हुई। हमने उस प्रक्रिया को नहीं अपनाया, यहाँ तक कि इस आन्दोलन के गर्भ से पैदा हुई समस्याओं को भी हल करने के लिए हमने जनशक्ति तैयार करने की जगह कानून का सहारा लिया।

(९) ग्रामस्वराज्य के लिए ग्रामदान-पद्धति यह मानी गयी कि जनता अपने अभिक्रम से अपनी समस्याओं को हल करे, लेकिन हमारे प्रयत्न जनता का अभिक्रम जगाने की जगह अपने लक्ष्यांक पूरे करने तक, जाने-अनजाने सीमित रहे। इसी प्रक्रिया में हमने समाज की मौजूदा शक्तियों का सहारा लिया, जिनके आधार वही थे, जिन्हें हम तोड़ना चाहते थे। जन-अभिक्रम के अभाव में हम उन शक्तियों पर इस क्रान्ति के मूल्यों का सीधा प्रभाव नहीं डाल पाये, बल्कि अधिकतर ऐसा हुआ कि हमारे प्रयत्नों पर उन रूढ़ और क्रान्तिविरोधी मूल्यों का प्रभाव पड़ा। इसके कारण कार्यकर्ताओं का नीति-धैर्य निर्बल हुआ।

(१०) हमने गणसेवकत्व की बात सोची, लेकिन हम उसका कोई ठोस स्वरूप नहीं विकसित कर पाये। विचार-निष्ठा पर व्यक्तिनिष्ठा हावी रही।

(११) श्रद्धावृत्ति हमारे अन्दर भरपूर रही लेकिन वैज्ञानिक वृत्ति का बहुत अभाव रहा, जिसके कारण आन्दोलन के मूल्यांकन और उस सन्दर्भ में क्रान्ति की प्रक्रिया विकसित करने का काम नहीं हो पाया। हम मूल्यांकन को नैराश्य के भय से टालते रहे।

(१२) लेकिन बावजूद इन सारी अपूर्णताओं के हमारा इस विचार-दर्शन में पूर्ण विश्वास है। क्रान्ति में पराजय नहीं होती, प्रयोग के अनुभवों पर से आगे का मार्ग ढूँढ़ना होता है, और हम इसी खोज में अब तक जहाँ पहुँचे हैं, उससे आगे बढ़ने के सामूहिक प्रयत्न-हेतु यहाँ एकत्र हुए हैं।

विचार-दर्शन : क्रान्ति की परिकल्पना : कार्य-पद्धति

मूल्यांकन करते-करते हमने इस बात की आवश्यकता महसूस की, कि क्रान्ति की अपनी-अपनी परिकल्पनाएँ हम स्पष्ट करें। इस तरह क्रान्ति यानी क्या? क्रान्ति का दर्शन, उसकी प्रक्रिया, व्यूह-रचना और कसौटी पर सबने अपने-अपने विचार व्यक्त किये, जिनका सार निम्न प्रकार है :

(१) क्रान्ति, इतिहास-काल का एक शाश्वत प्रवाह है जो निरन्तर गतिशील है, जिसके परिणामस्वरूप मानव की विकास-यात्रा निष्पन्न होती है।

(२) लेकिन आमतौर पर जिस युग-विशेष में, काल-विशेष में, समाज को घुटन का कारण बन रही समस्या-विशेष से मुक्ति का सघन प्रयत्न होता है, उसे आन्दोलन के रूप में, उक्त शाश्वत प्रवाह की उठती-गिरती लहरों के रूप में हम देखते हैं।

(३) समस्या के दबाव की पराकाष्ठा, ऐतिहासिक अनुकूलता का संयोग और उस समस्या से मुक्ति चाहनेवालों का पुरुषार्थ एक साथ होता है, तो क्रान्ति का एक विशेष स्वरूप प्रकट होता है।

(४) इस युग की क्रान्ति मानव की जागृत चेतना और विचार-शक्ति से ही निष्पन्न होगी। शासन और पूँजी के शोषण-दमन से मुक्ति और स्वावलम्बी समाज के निर्माण की दिशा में मानव की चेष्टा, उसका प्रकट स्वरूप होगा।

(५) इतिहास में पिछली जो क्रान्तियाँ हुई हैं, उनके दायरे सीमित रहे हैं। समस्याओं का स्वरूप सीमित रहा है, उनसे मुक्ति का चिन्तन भी सीमित दायरे से प्रभावित रहा है। लेकिन पिछले २५-३० वर्षों में दुनिया विज्ञान की नवीनतम उपलब्धियों—खासकर संचार की द्रुतगति के कारण छोटी हुई है। इस सन्दर्भ में क्रान्ति की पाँच बातें सामने आती हैं :

(क) क्रान्ति का आधार वर्ग-मुक्त सर्वांगीण चिन्तन होगा।

(ख) प्रामाणिकता का आधार परम्परा, पुस्तक या पुरुष नहीं, सामयिक सहचिन्तन होगा। सन्दर्भ के रूप में ही उक्त तीनों का इस्तेमाल होगा।

(ग) प्रेरणा भय या लोभमूलक नहीं होगी, आत्माभिव्यक्ति होगी, अपने पूर्णत्व को प्रकट करने की होगी, जो मनुष्य का अन्तर्निहित स्वभाव है।

(घ) *मूल्यांकन उपाधियों से नहीं,* मनुष्य के आन्तरिक गुणों से होगा कि मनुष्य मनुष्य से कितना जुड़ा, एकरूप हुआ। आज तो सत्ता और सम्पत्ति की कुर्सी मनुष्य को सुशोभित करती है, उसकी जगह मनुष्य उसको सुशोभित करने लगेगा, यानी मनुष्य ही सर्वोपरि मूल्य बन जायगा।

(ङ) समाज को नक्शों में घेरने की या ढाँचों में जकड़ने की कोशिश नहीं की जायगी, सहज स्फूर्त मानवीय सम्बन्धों का विकास होगा।

(६) सर्वोदय इस युग की क्रान्ति का एक विशेषण है, ग्रामस्वराज्य उसका आन्दोलन है, हिन्दस्वराज्य की अपूर्णता को पूर्ण करने का कार्यक्रम है।

(७) शोषण और दमन से मुक्ति का अभियान इस युग की क्रान्ति का स्थूल स्वरूप है। इसके लिए जीविका के साधनों का समाजीकरण और सत्ता का छोटी-छोटी इकाइयों में विकेन्द्रीकरण अनिवार्य है।

(८) भारत में सबसे बड़ा और सबसे अधिक लोगों के लिए जीविका का स्रोत कृषि है। इसीलिए सर्वाधिक सहज इकाई गाँव को हमने क्रान्ति की प्राथमिक इकाई माना है। इसमें अन्तिम व्यक्ति सबसे अधिक प्रभावित है। ग्रामदान की चार शर्तों के माध्यम से हमने भूमि-केन्द्रित ग्राम-शक्ति जगाने का कार्यक्रम लिया था, जिसको लेकर हम आज जहाँ पहुँचे हैं, वहाँ से आगे बढ़ने में कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं।

(९) वास्तव में जिस जन की शक्ति, अभिक्रम को हम जगाना चाहते हैं, उसकी शुरुआत उस बिन्दु से होनी चाहिए जो लोगों की स्थूल और तात्कालिक अनुभूति का हो। जो उनकी सुप्त चेतना को जगा सके, उनके पुरुषार्थ को झकझोर सके। इसे हम अहिंसक क्रान्ति की 'परेड' कह सकते हैं। इसका स्वरूप गाँवों में मुख्यतः भूमि-केन्द्रित हो सकता है, और नगरों में नागरिक जीवन को स्पर्श करनेवाले अन्य प्रकार के अन्यायों के प्रतीकारमूलक कार्यक्रमों के रूप में हो सकता है। इस दिशा में बुलन्दशहर के शराबबन्दी, नगर-सफाई और कचहरी में भ्रष्टाचार को नागरिक-शक्ति से रोक करनेवाले अभियानों के अनुभव महत्वपूर्ण रहे हैं।

(१०) सत्ता और सम्पत्तिमूलक सभी प्रकार की शक्तियों से जनशक्ति ऊपर है, इसे क्रियात्मक रूप में सिद्ध करनेवाले प्रतीकारात्मक कार्यक्रमों से जो *जनशक्ति जागृत होगी,* वह ग्रामस्वराज्य का व्यापक आन्दोलन खड़ा करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी।

(११) जैसे-जैसे व्यापक जन-चेतना क्रान्ति के सन्दर्भ में जागृत और संगठित होती जायगी, अलग से क्रान्ति करानेवाली जमात की आवश्यकता समाप्त होती जायगी। और इस प्रकार प्रतिक्रान्ति के खतरों से भी मुक्ति मिलती जायगी।

(१२) इन सारे प्रयत्नों में, चूँकि हमारी दिशा मानव को सर्वोपरि मूल्य मानकर होगी, इसलिए सहज ही उसकी प्रक्रिया विघटनकारी नहीं, रचनात्मक होगी।

(१३) *अहिंसा की सूक्ष्मतम व्याख्या* हमारी दृष्टि में होगी, लेकिन उसका अभ्यास सामान्य मनुष्य जहाँ है, वहीं से हो सकेगा।

(गोष्ठी में भाग लेनेवाले साथियों की ओर से)

नागालैण्ड में राजनैतिक तनाव और समाज-परिवर्तन

● डा० एम० आरम्

केवल कुछ ही वर्षों में नागालैण्ड में सामाजिक परिवर्तन स्थायी रूप ले रहा है। १८३२ से पहले जब कि अंग्रेज नागा हिल्स आये थे, उस समय वहाँ के लोग बाहरी दुनिया से बिलकुल अलग थे। १८३२ और १९४७ के बीच जबकि अंग्रेजों ने नागा हिल्स और भारत छोड़ दिया तो नागा-समाज में तीन बड़े परिवर्तन आये: (१) प्रशासन, (२) ईसाई धर्म का फैलाव और (३) आधुनिक शिक्षा। १९४७ से आज तक नागालैण्ड में बड़े-बड़े परिवर्तन हुए हैं। राजनैतिक आन्दोलन, जो वास्तव में १९४७ से पहले शुरू हुआ था, १९५६ से अण्डर ग्राउण्ड संघर्ष तथा १९६३ में राज्य का गठन और १९६४ में शान्ति, ये पिछले २५ वर्षों के ४ बड़े परिवर्तन हैं। राज्य के गठन और शान्ति ने सामाजिक विकास और परिवर्तन की रफ्तार बढ़ा दी है।

अगर आज के नागा समाज की स्थिति देखी जाय तो ध्यान इस ओर जाता है कि १८३२ और उसके बाद यह कितना बड़ा परिवर्तन हुआ है। वास्तव में एक सामाजिक क्रान्ति हुई है। इतनी जल्दी इतना परिवर्तन हुआ है, और क्रान्ति अब तक जारी है।

अंग्रेजों से पहले के जमाने में विभिन्न नागा कबीले-अओस, अगामी, सेमा, लोथा, जीलीयांग, आपस में लड़ रहे थे। गाँव एक आत्मनिर्भर इकाई था। एक गाँव दूसरे गाँव के विरुद्ध लड़ता था, एक कबीला दूसरे कबीले के विरुद्ध लड़ता था। उनके बीच एकता नहीं थी, कोई परस्पर जागृति नहीं थी।

पश्चिम में अहोम, दक्षिण में मनीपुरी और दक्षिण-पश्चिम में काचारी, नागाओं से अक्सर सम्पर्क करते रहे। परन्तु आम तौर से शान्तिमय सह अस्तित्व रहा। नागा अपना जीवन अलग बिताते रहे। उनके जीवन की शान्ति किसी भी प्रकार भंग नहीं होती थी।

१८३२ से अंग्रेज नागा हिल्स में आने लगे। १८६६ में पहला प्रशासकीय केन्द्र अगामी क्षेत्र के सेमुगुडिंग में खोला गया। १९७६ में एक प्रशासकीय केन्द्र कोहिमा में खोला गया, कोहिमा भी अगामी क्षेत्र में है, परन्तु मध्य में है। १८८१ में नागा हिल्स जिला स्थापित किया गया, फिर भी ट्यूएनसांग क्षेत्र प्रशासन से स्वतंत्र रहा।

प्रशासन ने कबीलों और गाँव के झगड़े खतम कर दिये। इसने सर शिकार करने की प्रथा भी खतम कर दी। परिणामस्वरूप स्वतंत्रता और सुरक्षा का नया वातावरण बना। लोग बिना डर के घूम-फिर सकते थे। पहले एक ग्रामीण *नागा सदा चौकस रहा करता था।* जब वह अपने गाँव से निकलता था तो चौकन्ना रहता था। कोई ग्रामीण शत्रु उस पर झपटकर उसका सर लेकर भाग सकता था। प्रशासन स्थापित होने से यह सब खतम हो गया। पहले हर गाँव में सुरक्षा का विशेष इन्तजाम था। विशेष तौर से दरवाजे पर संतरी हुआ करते थे। मोरंग होते थे जहाँ युवकों को युद्ध करना सिखाया जाता था। सर का शिकार समाज में प्रतिष्ठा बढ़ाता था। दुश्मन के सर आने पर सारा गाँव खुशी मनाता था। गाँव के लोग नाचते और गाते थे। प्रशासन के स्थापित होने से यह सब खतम हो गया। समाज में प्रतिष्ठा के नये आयाम सामने आये। अंग्रेजी प्रशासन की नीति थी कि लोगों के जीवन में कम-से-कम हस्तक्षेप किया जाय।

नागा संस्कृति को बचाने की फिक्र में, प्रशासन ने शिक्षा या विकास के लिए कुछ नहीं किया। साधनों का प्रश्न शायद दूसरा कारण था।

ईसाई मिशनों का रवैया, जो १८७२ में नागालैण्ड में आये, ठीक इसके विपरीत था। इस साल डा० क्लार्क नाम के एक आदमी ने 'आओ' गाँव में काम शुरू कर दिया, जो आसाम के मैदानों के अगुरी नामक स्थान से दूर नहीं था। १८९४ में यह मिशन इगपुर चला आया जो आओ क्षेत्र के बीच में था। इगपुर अभी भी नागालैण्ड का प्राथमिक शिक्षण-केन्द्र है।

इस साल के अन्त में नागालैण्ड में मिशन के कार्य की शताब्दी मनायी जा रही है। इन सौ वर्षों में ईसाई धर्म कोने-कोने में फैल गया है। लगभग हर गाँव में एक गिरजा है। कुछ गाँव में एक से अधिक गिरजे हैं। नागालैण्ड में ८१४ गाँव हैं, और इतने ही गिरजे हैं। अमेरिकी मिशन ने सेवा और प्रेम के जरिये बहुत जोश और लगन से काम किया। इस नये धर्म ने लोगों के दृष्टिकोण में बड़ा अन्तर लाया है। *उनकी भूमिका व्यापक बनी है।*

ईसाई मिशन ने नागाओं को इस बात का उत्साह दिया कि वे बिलकुल ही नया जीवन आरम्भ करें। इसमें घरेलू संस्कृति की कुछ अच्छी बातें भूल गयीं। जैसे कि नागा लिबास जो अधिक रंगीन और आकर्षित करनेवाला था, छोड़कर पश्चिमी लिबास पहने जाने लगे। ईसाईयत के साथ पश्चिमी संस्कृति भी अपनायी जाने लगी। नागाओं की जो सबसे बड़ी सेवा मिशन ने की वह उनके बीच आधुनिक शिक्षा देना था। इनमें से कुछ को शिक्षा देने के काम में प्रशिक्षित *किया गया।* पहला स्कूल १८७७ में मुलपुमीनसेन में खोला गया। ठीक ५ साल बाद मिशन ने उसी जगह काम करना शुरू कर दिया। १८८६ में कोहिमा में भी *शिक्षा-कार्य* शुरू किया गया।

डा० क्लार्क, जो पहले मिशनरी थे,

उन्होंने ने नागालैण्ड में प्रेस का प्रवेश कराया। प्रेस को गोलनमिमसेन में लगाया गया और नागा-इतिहास में पहली बार छपाई शुरू हुई।

जल्दी ही 'आओ' भाषा रोमन लिपि में लिखी जाने लगी। शब्दों की सूचियाँ तैयार की गयी। स्कूलों के लिए प्राथमिक किताबें लिखी जाने लगीं।

अब प्रशासन ने स्कूल के मूल्य को समझा। शिक्षित नागा छोटे-छोटे सरकारी कार्यों में लगाये जा सकते थे। सरकार ने अपनी ओर से कई प्राथमिक स्कूल स्थापित किये ताकि स्कूली शिक्षा दी जा सके। उन्होंने मिशन-प्रशिक्षण-केन्द्र को भी सहायता दी।

शिक्षा सामाजिक सुधार का नागालैण्ड में एक बड़ा माध्यम बन गया। नागाओं ने शिक्षा के लाभ को समझा। लोगों ने बड़ी संख्या में बच्चों को स्कूल भेजना शुरू किया। सामाजिक जीवन प्राप्त करने का शिक्षा एक नया साधन बनी। क्योंकि इसके कारण सरकार में अच्छे-अच्छे ओहदे मिलने लगे।

१९४४ में द्वितीय विश्व युद्ध कोहिमा तक फैल गया। इसका नागा हिल्स पर बड़ा प्रभाव पड़ा। लगभग पूरा कोहिमा गाँव और नगर तबाह हो गया। नागा बहुत नजदीक से नये विदेशियों, अमेरिकनों और जापानियों को देख सकते थे। उन्होंने आधुनिक युद्ध की प्रगति देखी—तोप, वायुयान, बम, टैंक और जीप।

नागा राष्ट्रीय कौंसिल के एक दस्तावेज में लिखा गया है कि इन सब घटनाओं से नागा लोग इतना परेशान हुए थे कि अपने आपको सही साबित करने के लिए सुई चुभाने थे।

युद्ध के बाद निर्माण की बहुत बड़ी समस्याएँ थीं। पुरानी कार्य-पद्धति सदा के लिए खत्म हो गयी थी। युद्ध के कारण सड़कें बन गयी। बाहरी संसार से सम्पर्क बन गया। जीवन का अन्दाजा बदल गया।

नागाओं ने यह जाना कि अंग्रेज भारत से जा रहे हैं। वे यह देख रहे थे कि परिवर्तन आ रहा है। नागा हिल्स में राजनैतिक जागृति शुरू हुई।

१९४५ में युद्ध के एक साल बाद नागा हिल्स जिला ट्राइबल कौंसिल बनी। एक साल बाद १९४६ में उसका नाम नागा नेशनल कौंसिल कर दिया गया। यह संस्था नागा राजनैतिक आन्दोलन का वाहन बनी। १९४७ में आसाम के गवर्नर सर अकबर हैदरी कोहिमा आये और नागा नेशनल कौंसिल के नेताओं से बातचीत की। यह बातचीत स्वतंत्र भारत में नागा हिल्स के राजनैतिक स्थान के बारे में हुई। संधि तो हुई, परन्तु एक मुद्दे पर वाद-विवाद शुरू हुआ। नागाओं से इस सिलसिले में उनकी रायें पूछी गयी।

नागा परेशान थे और उनकी परेशानी के तीन कारण थे—(१) समुदाय के व्यक्तित्व का गौरव, (२) शोषण का भय, (३) स्वतन्त्रता का प्रेम। समुदाय के व्यक्तित्व की खोज नागा राजनैतिक आन्दोलन के पीछे मुख्य उद्देश्य था। भारतीय संविधान की छठी अनुसूची से पहाड़ी लोगों के लिए कुछ नियम थे। परन्तु यह नागाओं की आशा से बहुत कम था। इसलिए उन्होंने १९५१ के चुनाव का बहिष्कार किया।

कुछ वर्षों तक परिस्थिति ठीक थी, परन्तु अनिश्चित थी। १९५६ में गुप्त आन्दोलन शुरू हुआ और नागा संघात्मक सरकार बनी। यह चुनाव की पद्धति पर आधारित था। नागा राष्ट्रवादियों और भारतीय सुरक्षा सेना में लड़ाई छिड़ गयी। हिंसा और जवाबी हिंसा हुई। तनाव बढ़ा। नागालैण्ड एक अशान्त क्षेत्र बना। सामान्य लोगों को काफी तकलीफ हुई।

१९५७ में पहला नागा कन्वेन्शन हुआ। इसके बाद दो और कन्वेन्शन हुए। १९६० में पंडित नेहरू नागाओं के एक प्रतिनिधि मण्डल से मिले और नागालैण्ड को प्रदेश बनाने के लिए सहमत हो गये। १९६३ में यह कार्यान्वित हुआ। प्रदेश बनने से पहले वह एक राष्ट्रीय सीमा थी।

नागाओं के इतिहास में प्रदेश का बनना एक बड़ी बात थी। इससे जनता में बड़ी सन्तुष्टि आयी, फिर भी इससे अशान्त परिस्थिति खतम नहीं हुई। इसलिए चर्च कौंसिल ने पहल करके १९६४ में एक शान्ति समिति बनायी। शान्ति समिति लड़ाई रोकने में सफल हुई। छिपे हुए नागाओं और सुरक्षा सेना की लड़ाई रुकी। इससे सभी को राहत मिली और सभी ने इसका स्वागत किया। शान्ति के कारण सद्भाव और शान्ति का नया जमाना शुरू हुआ। १९६४-६५ में संघात्मक नेताओं ने भारत सरकार के प्रतिनिधियों से बातचीत की। १९६६-६७ में उन्होंने नयी दिल्ली के प्रधानमंत्री से ६ बार बातें की। दुर्भाग्य से कोई हल नहीं निकला। १९६७ में वार्ता रुक गयी। यह भय था कि परिस्थिति और खराब हो सकती है। सौभाग्य से जनता की राय मजबूत थी और शान्ति हो गयी। शान्ति रहने और समस्या का समाधान न होने से नये राजनैतिक तनाव पैदा हुए। विभिन्न दृष्टिकोण उभरे—फेडरल, रिवोल्यूशनरी और होकिंग। ये दृष्टिकोण गुप्त राजनीति के हैं।

इसी प्रकार से खुली राजनीति में भी नागा राष्ट्रीय संगठन, सत्तारूढ़ दल, दो ग्रुपों में बँट गया। विरोधी दल का नाम यूनाइटेड फ्रॉण्ट ऑफ नागालैण्ड है। हाल में ए० एन० ओ० और यू० एफ० एन० ने नागालैण्ड स्टेट एसेम्बली में यूनाइटेड पार्लियामेण्टरी ब्लॉक बनाने का निश्चय किया है। हमारी आशा है कि विभिन्न राजनैतिक ग्रुपों के बीच सहमति होगी और समस्या का समाधान हो सकेगा। परिस्थिति के सामान्य और शान्त होने के बावजूद यह सबकी इच्छा है कि राजनैतिक समस्या हल हो और स्थायी शान्ति कायम रहे।

शीत काल की शान्ति और प्रदेश निर्माण के आठ साल सामाजिक परिवर्तन और विकास हुआ है। पदाधिकारियों और टेक्नीकल लोगों के लिए यह सम्भव हुआ है कि स्वतंत्रतापूर्वक घूम सकें और लगन के साथ काम कर सकें। परिणाम भी बहुत अच्छा आया है।

आज १००० से अधिक शिक्षा-केन्द्र हैं। उनमें एक लाख विद्यार्थी पढ़ते हैं। १९७१ की जनगणना के अनुसार नागालैण्ड में शिक्षा २७.३ प्रतिशत है। यह लगभग राष्ट्रीय औसत के बराबर है। मुकुकचुंग जिले में तो ३८.८ प्रतिशत है।

सड़कों में भी काफी उन्नति हुई है। आज वहाँ ३००० किलोमीटर से अधिक मोटर चलाने लायक सड़कें है। सभी शहर सड़कों से जुड़े हुए हैं, जिससे यह सम्भव हो सका कि आदमी एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र उसी दिन जा सके। सबसे बड़ी बात यह है कि नागालैण्ड के अस्सी गाँव और नगरों में बिजली है। ९ नगरों में टेलीफोन है।

उद्योग के क्षेत्र में भी नये कदम उठाये गये हैं। कृषि की भी उन्नति हुई है। डाक्टरों की सेवाएँ भी दी गयी हैं।

शान्ति के कारण नागालैण्ड में आधुनिकता भी आयी है। घर, निवास, फर्नीचर सभी में आधुनिकता देखी जा सकती है। पहले यहाँ केवल ईसाई धर्म के बैपटिस्ट समुदायवाले थे। परन्तु अब वहाँ कैथोलिक और नागाओं के अपने धर्म के माननेवाले भी हैं। धार्मिक दृष्टिकोण में कट्टरता नहीं है। आधुनिक शिक्षा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ यहाँ धर्म-निरपेक्षता का भी प्रवेश हुआ है।

इतिहास में एक शताब्दी कम समय है। परन्तु इतने ही समय में नागालैण्ड प्राथमिक युग से आधुनिक युग में आ गया। इतने कम समय में नागाओं ने जितनी तरक्की की, उस पर उनका गौरव करना उचित है। ●

शान्तिसेना की परिधि

(नकोदर में १९ मई को शान्तिसेना विषय की चर्चा का प्रारम्भ करते हुए श्री नारायण देसाई ने जो भाषण किया उसे हम यहाँ दे रहे हैं। सं०)

शान्तिसेना का मतलब सिर्फ निष्ठा-पत्र भरना नहीं है। जहाँ पर लोकशक्ति के निर्माण का काम चल रहा हो तथा शान्तिसेना को स्पर्श करता हो, अलबत्ता उसका प्रयोग अपने लिए नहीं होता है, वरन् उसका प्रयोग भाषा और राष्ट्रों की सीमा लांघकर विश्व की परिधि तक पहुँचता है। और पहला कदम के तौर पर पड़ोसियों को हमारे काम का स्पर्श हो, इसका भी हम प्रयोग करेंगे।

इसी दृष्टि से पिछली बार हम लोग इकट्ठा हुए थे और अभी भी इकट्ठा हो रहे हैं। इस बीच जो मुख्य प्रवाह शान्तिसेना में आये हैं उनके बारे में प्रारम्भ में मैं निवेदन कर देना चाहता हूँ।

बांगला देश में जो घटना हुई, उसमें शान्तिसेना ने काफी सहयोग दिया। आप लोग जानते हैं कि जब पाकिस्तानी शासन था और यहाँ पर लाखों शरणार्थी आये तो सर्व सेवा संघ की ओर से तीस शरणार्थी शिविरों में करीब ८-९ लाख शरणार्थी के बीच सेवा का काम हुआ और उसमें सबसे बड़ी बात यह हुई कि हिन्दुस्तानवालों को यह विश्वास हुआ कि राष्ट्रीय आफत के समय में हम खड़े हो सकते हैं और दुनिया के गरीब लोगों के हृदय में प्रवेश करते हैं। यह अनुभव बांगला देश की स्वाधीनता से पहले हुआ। बांगला देश के स्वाधीन होने के बाद वहाँ पर कुछ प्रवृत्तियों का आरम्भ सर्व सेवा संघ की ओर से हुआ है।

श्री जयप्रकाशजी ने अभी हम कुछ मित्रों को बांगला देश की परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए भेजा था। वहाँ के बारे में बहुत अधिक तफसील से रिपोर्ट नहीं दूंगा। लेकिन वहाँ जाने पर हमारे मन पर जो असर पड़ा उसके बारे में कहना चाहता हूँ।

गांधी के अपने आन्दोलन की जो एक विशेषता थी उस विशेषता का महत्त्व बांगला देश में जाकर हमारी समझ में और अधिक आया। स्वराज्य होने के बाद गांधी के आन्दोलन के कारण इस देश के पास रचनात्मक कामों में जुड़ा हुआ एक नेतृत्व था जिसका वहाँ पर अधिकांशतः अभाव पाया जा रहा है। इसलिए यह देश एक बड़ी आफत में से बच गया। रचनात्मक नेतृत्व के कारण यह विशेष अनुभूति वहाँ जाकर हुई। दूसरी चीज जो हमको लगी कि थोड़ा नेतृत्व वहाँ पर था उसका बहुत महत्त्व वहाँ पर प्रकट हुआ। हालांकि संख्या में कम और निष्ठा में अधिक है, इसके कारण उसका प्रभाव वहाँ हुआ। बांगला देश के ऊपर परिस्थिति लादी हुई थी, परिणामत अन्तिम प्रयास हिंसक हुआ जिसका प्रारम्भ असहयोग आन्दोलन से हुआ था। उसकी कुछ प्रतिक्रियाएँ आज भी देखने को मिलती हैं। वह दो प्रकार से विशेष तौर पर मिलती हैं। एक तो सामान्य लोगों के हाथ में या तो असामान्य लोगों के हाथ में, तथा गुण्डों के हाथों में शस्त्र वगैरह पड़े हुए हैं जिसके कारण सारे समाज में एक प्रकार का सन्त्रास छाया हुआ है और किस समय सामाजिक कानूनों का भंग होगा यह विश्वास नहीं है। तो यह भाव कि समाज में शान्ति से अगर बढ़ना हो, तो आगे बढ़ने का साधन भी शान्तिमय होना चाहिए, यह एक बार विश्वास दिलाती है वहाँ की परिस्थिति—जो हम वहाँ देखते हैं। दूसरा तत्व जो उसी में से पैदा होता है—विद्वेष। विद्वेष की भावना वहाँ दीखती है जिससे कि हम लोग स्वराज्य के बाद बच गये थे। स्वराज्य के बाद हम लोगों ने जो कुछ गल्तियाँ की हैं उनमें से कुछ गल्तियाँ दुर्भाग्य से वहाँ भी हो रही हैं—

सारी चीजों का आधार रखना शासन पर, शासन आधार रखेगा नौकरशाही पर, नौकरशाही आधार रखेगी अमुक नियमों पर, और कुल मिलाकर सारी जनता में इस भावना का निर्माण हो रहा है कि नौकरशाही अमुक अमुक काम नहीं कर रही है। इसकी भी शिकायत सुनने को मिली। ऐसा अपने देश में भी हुआ और बांगला देश में भी। उसमें से वे जितना जल्द मुक्त हो सकें उतना अच्छा है। इस विषय में अगर हम लोग कुछ मदद कर सकते हों तो मदद करने की हमारी तैयारी अवश्य होनी चाहिए। इतना ही बांगला देश के सम्बन्ध में मैं कहूँगा।

प्रतिज्ञा के साथ-साथ निरहंकारिता और ऋजुता इन दोनों के रूप में हमारे आन्दोलन को श्री जयप्रकाशबाबू ने एसी चीज दी है जो हमें सुलभता से प्राप्त नहीं होती। शान्तिसेना के संगठन का जो प्रश्न है जिसका इसे उल्लेख कर देना चाहिए—एक है, तरुण-शान्तिसेना का संगठन। संगठन ने एक रूप लिया। दूसरा, ग्राम-शान्तिसेना के संगठन ने एक स्वरूप लेने का आरम्भ किया। तरुण-शान्तिसेना का रूप यह है कि उसकी अधिकांश जिम्मेदारी तरुणों ने ले ली और मैं यह मानता हूँ कि यह एक बहुत अच्छी चीज हुई। मैं हमेशा यह भी अनुभव कर रहा हूँ कि अधिकांश विषय में हमें ये तरुण मार्गदर्शन देते रहते हैं और आगे दे सकेंगे। आगे यह मानता है कि इस आन्दोलन को नया प्राण दे सके इसकी एक नयी कड़ी तरुण-शान्तिसेना ने पैदा कर दी।

तरुण सहायता के आन्दोलन में या और भी जिस क्षेत्र में क्रान्ति के काम में लगे हैं वहाँ एक नया आयाम आरम्भ हुआ—शान्तिसेना का। वह था, ग्राम-शान्तिसेना का संगठन और उस ग्राम-शान्तिसेना के संगठन के बारे में मुझे इतना ही निवेदन करना है कि सर्व सेवा संघ को अगले साल की योजना में ग्राम-शान्तिसेना पर आज तक जितना ध्यान दिया है उससे ज्यादा ध्यान देना चाहिए। ग्रामदान आन्दोलन को पुष्ट और मजबूत करने के लिए, ग्रामदान आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए दोनों दृष्टियों से ग्राम-शान्तिसेना पर विशेष ध्यान देना चाहिए। शान्ति सेना मण्डल प्रशिक्षण आदि जितना सहायता दे सकेगा, देगा। सर्व सेवा संघ अपने प्रमुख कार्यक्रम के तौर पर ग्राम-शान्तिसेना को ले ले। उसे इस मंच से निवेदन करता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि पूरे आन्दोलन में कैसे लोगों की जरूरत है जो लोग अहिंसा के विषय में बराबर चिन्तन करते रहेंगे और अपने सारे काम को अहिंसा की कसौटी पर कसते रहेंगे। वह अगर करेंगे तो शान्तिसेना का निष्ठा-पत्र भरा है या नहीं वह प्रश्न गौण हो जाता है वह तो संगठन की जिम्मेवारी है, निष्ठा-पत्र अगर भर सकते हैं तो उसका हम स्वागत ही करेंगे लेकिन फिर भी प्रधान चीज हो तो वह शान्ति सैनिक माने जायेंगे।

मुझे फिर भी लगता है कि सारे आन्दोलन में पद्धति की अपेक्षा तत्व प्रधान है। अपनी शान्तिसेना में तत्व अहिंसा का है, अहिंसक लोक-शक्ति का है। पद्धतियाँ देश और काल के अनुसार बदलती रहेंगी। श्री जयप्रकाशजी ने कहा है और विश्व एम्बेस्डर के नाम से एक पत्र लिखा है कि प्रतिनिधि मण्डल को पाकिस्तान भेजना चाहते हैं। चूँकि हम देखते रहे हैं कि बांगला देश में जो समस्या है उसका हल केवल बांगला देश में सम्भव नहीं, लेकिन पूरे भारत के महाद्वीप का है इसलिए वहाँ भी हम भेजना चाहते हैं, पता नहीं हमें इजाजत मिलेगी या नहीं। वह यह चाहते हैं कि सरकार की ओर से जो प्रयत्न हुआ है वह तो हो लेकिन जनता की ओर से भी इस प्रकार के प्रयत्न होने चाहिए। इसलिए यह प्रयत्न प्रारम्भ हुआ।

मैं यह कहना चाहता था कि यहाँ से शुरू करके हम जय जगत तक पहुँचेंगे लेकिन वहाँ तक पहुँचने के लिए अगर हमको कोई बुनियाद चाहिए तो अहिंसा के विषय में निष्ठा रखना चाहिए तथा क्रान्तिनिष्ठ कार्यकर्ता हों। ऐसे कार्यकर्ता अपने आन्दोलन को अधिकाधिक मिलते रहें इतनी ही प्रार्थना करके अपना प्रास्ताविक निवेदन समाप्त करता हूँ।

'धर्मघोष या भेरीघोष'

[श्री दादा धर्माधिकारी ने "भेरीघोष या धर्मघोष" पुस्तक का विमोचन सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर नकोदर, पंजाब में किया था। यह पूरा भाषण हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।—स०]

जिस पुस्तक का आप लोगों के सामने यहाँ विमोचन करता हूँ उसका नाम है "भेरीघोष या धर्मघोष"*। पुस्तक का विषय नहीं है जिसकी चर्चा आप यहाँ कर रहे हैं। यह पुस्तक लिखी है निर्मला देशपाण्डे के पिता श्री पुरुषोत्तम यशवन्त देशपाण्डे ने। पी० वाई० देशपाण्डे महाराष्ट्र के हैं। वह सिर्फ अंग्रेजी और मराठी में लिखते हैं। हिन्दी के सिद्धहस्त लेखक नहीं हैं। मराठी में उन्होंने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। वे एक प्रतिभाशाली, स्वयं-प्रज्ञ और विचारशील साधक हैं। स्वयं-प्रज्ञ, बौद्धिक स्वतंत्रता उनकी विशेषता है। किसी एक मत को या किसी एक दर्शन को कभी उन्होंने माना नहीं। इसलिए उनकी प्रतिभा के उन्मेष नित्य नूतन रहे हैं। जब जिस दर्शन से अभिभूत होते हैं, उसे शत-प्रतिशत मानते हैं तो बहुत शुद्ध और अबाध्य तर्क से उसका प्रतिपादन करते हैं। कम्युनिज्म को उन्होंने कभी बुद्धि का लक्षण नहीं माना है। ऐसे एक प्रतिभाशाली व्यक्ति ने जिसने कई विषयों पर पुस्तकें लिखी हैं, काव्य-ग्रन्थ लिखे हैं, दार्शनिक ग्रन्थ लिखे हैं, अपनी आत्मकथा भी लिखी है, जिसे साहित्य अकादमी से पारितोषिक मिला है। करीब-करीब मेरी उम्र के हैं, ७० साल से ज्यादा। बाल कुछ सफेद हो गये हैं। "न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः" बाल सफेद हो गये हैं, इसलिए ये बूढ़े नहीं हुए। उम्र बढ़ गयी है।

इस पुस्तक में जिसमें सम्राट अशोक की विभूति का वर्णन है एक उपन्यास है, 'धर्मघोष या भेरीघोष'? धर्मघोष एक मानवीय जीवन की सत्ता है। इन दोनों के टकराव में मानवीय जीवन की सत्ता क्या कभी विजयी हो सकती है? क्या शस्त्र-सत्ता समाज-व्यापक होते हुए भी कोई समय ऐसा आ सकता है कि शस्त्र-सत्ता की जगह मानवीय जीवन की आत्मसत्ता ले ले? यह प्रतिपाद्य विषय है। यह एक दार्शनिक उपन्यास है, जिसकी भूमिका हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार प० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखी है और उन्होंने यह कहा है कि इसमें जिस प्रतिभा का दर्शन है वह अद्भुत है, आश्चर्यजनक है और यह बहुत सशक्त उपन्यास है। सशक्त उपन्यास इसलिए है कि इसमें इतिहास की एक नयी व्याख्या करने का प्रयास है। इतिहास की कई व्याख्याएँ हुईं। मार्क्स की एक व्याख्या हुई कि इतिहास में भी एक नियतिवाद है। दूसरी व्याख्या समाजवादियों ने की कि इतिहास के जो बहुत प्रभावशाली व्यक्ति होते हैं उनकी विभूतियों और जीवनियों का रोमांटिक इतिहास है। यह इतिहास को काव्यमय बना देते हैं, अद्भुत रम्य इतिहास। पी० वाई० की इस पुस्तक में इतिहास की एक नयी व्याख्या का प्रयास है जिसे आप 'स्प्रिचुअल इन्टरप्रिटेशन' कह सकते हैं—इतिहास की मानव निष्ठ व्याख्या। इसमें कहा यह कहा है कि विश्व-चेतना जब मनुष्यों के सम्बन्धों में और मनुष्यों से ज्यादा विभूतियों में अभिव्यक्त होती है और जब उसका आविष्कार करने का प्रयास होता है तब जो सजीव घटनाएँ घटती हैं उनमें से नये इतिहास का निर्माण होता है। परम्परा का इतिहास, कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं, इस इतिहास में केवल अवास्तव घटनाओं की सूची नहीं। इतिहास व्यक्ति-गत जीवन, सामाजिक जीवन और वैश्विक जीवन के सामंजस्य में से घटित होता है। एक नया टकराव है, नया सूत्र है। इसमें कई इस तरह के भाषण और संवाद हैं जो पठन करने की योग्यता के हैं। इसकी हिन्दी भाषा, उनकी सुपुत्री निर्मला की है जो किसी मदमुल्ले की हिन्दी नहीं है, किसी पंडित की नहीं है। इस शैली में एकसूत्रता है।

मैं दो-एक बातों का और उल्लेख करूँगा, क्योंकि मैं इस पर बहुत लम्बा भाषण कर सकता हूँ। लेकिन केवल आपकी रुचि इस विषय में बढ़ाने के लिए दो-तीन बात इस विषय में कहूँगा।

इसमें सबसे अधिक प्रभावशाली पात्र एक स्त्री पात्र है। यह है तिष्यरक्षिता। दूसरा स्त्री पात्र है ईशान देवी—सम्राट अशोक की बहू है, उनके पुत्र की पत्नी, जो पुत्र जानता नहीं था कि मैं अशोक का बेटा हूँ। उनकी जो ग्रीक रानी थी, जिससे विधिवत् विवाह नहीं हुआ था उसका बेटा, उसकी पत्नी ईशान देवी। ईशान देवी शक्ति-पूजक है—शक्ति। भौतिक शक्ति के 'सेंक्शन' के बिना सिर्फ राजशक्ति के सेंक्शन से समाज में धार्मिक आचरण, नैतिक सदाचार और सांस्कृतिक उन्नति असम्भव है। इसका प्रतिनिधि है इस उपन्यास का अमात्य राधागुप्त। यह राधागुप्त आचार्य चाणक्य का अनुयायी है—वह आचार्य चाणक्य, आचार्य कौटिल्य, जिसने राज्यशास्त्र लिखा है और जो मौर्य राज्य का संस्थापक माना जाता है। ईशान देवी शक्ति की उपासिका, शक्ति की अधिष्ठात्री है। मनु ने कहा है 'न दण्डस्य हि भयात् जगत् भोगाय कल्पते' सारे संसार के लोगों को और आपको सुख-शान्ति देनी है तो उसे दण्ड का अधिष्ठान चाहिए। क्या दण्ड जीवन का अधिष्ठान हो सकता? क्या धर्म के अधिष्ठान पर समाज-जीवन चल सकता? यह प्रश्न अशोक के सामने आया कलिंग के युद्ध के बाद। जब उसे शस्त्रों से विरक्ति हुई, तब यह प्रश्न उसके सामने आया। तब यह धर्म क्या है? इस धर्म की व्याख्या

* प्रकाशक :—सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१
मूल्य :—पाँच रुपये।

की है निरुपाधिक, अहेतुक निष्कारण मानवीय सम्बन्ध। समाज-प्रवृत्त दो मनुष्यों के बीच सम्बन्ध में कोई उपाधि नहीं, कोई लगाव नहीं, भौतिक आधार नहीं, फिर भी दोनों एक-दूसरे के लिए आत्म-समर्पण करने के लिए तैयार, आत्मोत्सर्ग करने के लिए तैयार हैं, यह जीवन है। और यह जीवन कभी अर्थ-शून्य नहीं होता है। इस जीवन का कोई दर्शन प्रयोजन खोजने की आवश्यकता नहीं।

इसमें एक पात्र है जालुक, जो अशोक का बेटा है और भीक रानी से पैदा हुआ था। उसकी पत्नी है ईशान देवी। दूसरा था छोटा बेटा कुणाल। कुणाल क्या होता है मुझे पता नहीं। उन्होंने लिखा है कि कुणाल पक्षी होता है जिसकी आँखें बहुत सुन्दर होती हैं। सुन्दर आँखें राजपुत्र की थीं, इसलिए उसका नाम रखा कुणाल। ईशान देवी, तिष्यरक्षिता और यह जालुक, इन तीनों के सामने बुद्धिवाद में अशोक बार-बार परास्त हो जाता है। फिर भी सम्राट अशोक भारतवर्ष की ही नहीं, संसार की अद्वितीय विभूति क्यों है? एच० जी० वेल्स ने संसार का इतिहास लिखा है। इस इतिहास में धर्म-संस्थापकों में से सिर्फ गौतम बुद्ध का नाम है और इतिहास के राजाओं में सिर्फ अशोक का नाम है। उल्लेख तो बहुतों के हैं, लेकिन राजा हुआ है अशोक, एक ही राजा, जिसने कहा कि 'शस्त्र विरोधी दण्ड निरपेक्ष समाज-व्यवस्था' सम्भव है और इसने आधार लिया तथागत बुद्ध का। यथागत और तथागत, इन दोनों में सामंजस्य हो सकता है और यह सामंजस्य सम्भव हुआ अशोक के शासन-काल में। इसलिए पी० वाई० ने लिखा है कि तथागत के कोष में 'असम्भव' शब्द ही नहीं है। गया उन्हीं कहायी जा सकती है, असम्भव सम्भव हो सकता है, लेकिन वह किसी दर्शन से नहीं, किसी तत्त्वज्ञान से नहीं, किसी बुद्धिवाद से नहीं, बल्कि मनुष्य के सजीव सम्बन्धों में से जो घटनाएँ घटित होती हैं उनके कारण ही। ये दोनों घटनाएँ इसमें हैं।

यह जो ईशान देवी है, वह शक्ति की उपासिका है और इसका पति जालुक है। यह चाहती है कि मेरा पति जालुक अशोक के बाद राजा बने। अशोक को कोई आपत्ति नहीं। लेकिन अशोक स्वयं मानता है कि धर्मशक्ति श्रेष्ठ है और दण्डशक्ति कनिष्ठ। और इस श्रेष्ठतर शक्ति के आधार पर, उसके अधिष्ठान पर समाज की रचना होती है। इसमें तो जालुक विश्वास करता नहीं। यह अशोक के सामने समस्या है। इस समस्या को लेकर कुणाल जाता है और कुणाल जब जाता है तो ईशान देवी उससे कहती है कि मेरा पति युवराज पद से त्यागपत्र दे सकता है, लेकिन उसकी कुछ शर्त है। और वह शर्त यह कि अशोक के बाद कोई उसका और दावेदार न निकल जाये, कुणाल ही हो सकता था। कहते हैं कि जिसकी आँख चली गयी हो, वह राजा नहीं बन सकता, यह शास्त्र-मर्यादा है। मेरी आँखें बहुत सुन्दर हैं, ऐसा तुमने कई बार कहा है। इसलिए मैंने अब यह संकल्प कर लिया है कि आँखों को निकाल कर फेंक दूँगा। इसको दे दूँगा, तो फिर कोई सम्भावना नहीं रहेगी कि मैं राजा बन सकूँ। बस, इसमें कोई विचार नहीं, कोई त्याग की भावना नहीं। जिस सहजता से कुणाल यह कहता है, उससे उसके हृदय का परिवर्तन हो जाता है और वह कहती है कि यह हरगिज नहीं होगा। लेकिन इधर वह कह रही है, इतने में वह आकर आँखें निकाल देता है। पी० वाई० कहते हैं कि इतिहास में ऐसा ही हुआ है। इतिहास में हमने काल का, समय का विचार किया, क्षण का विचार कभी नहीं किया। हम चाहते हैं कि दीर्घ काल तक अनन्त काल तक हमारी व्यवस्था कायम रहे। हम क्षण का विचार छोड़ देते हैं। जिस क्षण जो सुख-दुख उपस्थित होता है, उसका सामना अगर हम उसी क्षण करेंगे तो उसका क्षणिक दर्शन आ जाता है जीवन क्षण-भंगुर नहीं, जीवन क्षणिक है। क्षणिक का मतलब शाश्वत नहीं, सत्य है। सत्य और शाश्वत का यह भेद बहुत अच्छी तरह से इसमें उपस्थित किया गया है, प्रकट किया गया है।

उसके बाद अशोक निर्णय करता है कि अब क्या हो। कुणाल की आँखों के बारे में क्या अब कुछ नहीं किया जा सकता? धन्वन्तरि से पूछता है कि क्या तुम्हारे वैद्यक शास्त्र में इसका कोई उल्लेख है कि किसी की आँख अलग हो गयी तो उसे फिर से अपनी जगह पर बैठा दिया जाय और उसमें दृष्टि आ जाय। वह कहता है कि आँख बैठायी तो जा सकती है, लेकिन उसमें दृष्टि नहीं आ सकती है। तो फिर क्या हो? भरी सभा में सब लोग बैठे हुए हैं। सबके पास एक-एक दोना दिया जाता है और इस घटना का वर्णन होता है। लोगों की आँखों में अश्रुधारा बहती है। दोने उससे भर जाते हैं। उस पवित्र जल से कुणाल की आँखें फिर से बैठायी जाती हैं और धोयी जाती हैं। उससे उसे दृष्टि प्राप्त हो जाती है। यह है मानवीय सम्बन्धों की सजीवता और विज्ञान की मर्यादा।

अन्त में तिष्यरक्षिता, जिसने अपने जीवन भर धर्म-जीवन का अभ्यास किया है, व्यक्तिगत जीवन और विश्व जीवन के सामंजस्य का प्रयोग किया है—प्रयोग से मतलब बुद्धिपूर्वक नहीं, सहज प्रेरणा से घटित हुआ प्रयोग—अन्त में क्या करती है? अब मैं समझ गया। लेकिन आत्मज्ञान के बिना इस नये धर्मयुग का उपक्रम नहीं होगा, इसका आरम्भ नहीं होगा, इसलिए अन्त में अपने शरीर का उत्सर्ग अग्नि में कर देती है, और यहीं उपन्यास समाप्त होता है। बुद्धिवाद में अशोक हमेशा परास्त होता है। घटनाओं के समय उसकी मति कुंठित हो जाती है। वह अपने 'इन्ट्यूशन' से मार्गदर्शन पाता था। मतलब एक 'इन्स्टिंक्ट' है। जवाहरलालजी

ने लिखा है अपनी जीवनी में कि इस गांधी में क्या है, हमको पता नहीं। बुद्धिमत्ता इससे अधिक बहुत लोगों में है और जिसे "कर्मयोगी" कहते हैं उससे भी श्रेष्ठ कर्मयोगी हमारे देश में हैं। कहीं अधिक बड़े तपस्वी, त्यागवीर रहे हैं। कहीं अधिक क्लेश सहन किया है, ऐसे कई लोग हैं। लेकिन कोई एक ऐसी चीज इसमें है, इस जमीन में गड़ी छिपी हुई है, कोई एक अन्तर्ज्ञान इसको उपलब्ध है, जिसके कारण घटनाओं में यह सही निर्णय कर सकता है। यह जो निर्णय-शक्ति है, आत्मशक्ति है, वह बुद्धि से परे कोई शक्ति है। मैं जानता नहीं, मेरे में है नहीं लेकिन उसकी खोज है। वह निर्णय अशोक में थी, जो इनमें से किसी में नहीं थी—सम्यक निर्णय-शक्ति, जिसको कोई वारण नहीं दे सकता था। इस शक्ति के आधार पर अशोक निर्णय कर लेता है और इसी में अशोक की श्रेष्ठता है। इस शक्ति का अधिष्ठान कहाँ है, स्वरूप क्या है, यह खोज है। दार्शनिकों, साधु-संतों और मुमुक्षुओं की इस खोज के मुकाम पर लाकर यह उपन्यास छोड़ देता है। इतना रुचिकर, इतना उदात्त और सुन्दर हिन्दी भाषा में लिखे गये उपन्यास का मैं विमोचन करता हूँ।

पिछले दो महीनों में मैंने जो पुस्तकें पढ़ी हैं उनमें एक तो पी० वाई० देशपाण्डे की 'मेरीघोष या धर्मघोष' है और दूसरी 'बापू, बापू और विनोबा' के बारे में लिखी पुस्तक कमलनयन बजाज की है। इन दोनों पुस्तकों में अपनी अनुपम शैली में, बहुत संक्षेप में, लेकिन सीधे हृदय से निकली अनपढ़ भाषा, लेकिन बहुत सुन्दर भाषा, सहज सरलता उसमें है। एक तरह का महत्त्व उसकी भाषा में है। उसमें एक पुस्तक पी० वाई० देशपाण्डे की विमोचन करते, मैं मुझे बड़ा हर्ष होता है और मैं अपने-आपको गौरवान्वित मानता हूँ। ●

भूख

भूख।

क्योंकि काम नहीं।

क्योंकि जल नहीं।

गत दो माह से संथालपरगना (बिहार) के पुराने ग्रामदानी गाँवों को जगाने का प्रयास कर रहा हूँ। लेकिन 'ग्रामदान' नाम से नहीं, चूँकि 'ग्रामदान' नाम से ये लोग भड़कते हैं। दोष हमारा भी है, तीन बरस पहले सैकड़ों ग्रामदान कराये, तूफान आया, गया। हमने समझा, लोग इसे उठा लेंगे। अस्तु।

डा० वाजिदअली सर्वोदय कार्यकर्ता के साथ दस मील पैदल चलकर गग डा (महेशपुर पाकुड़) गाँव पहुँचता हूँ। लगभग एक सौ लोग, अधिक भूमिहीन मुसलमान, श्री मोहम्मद जलील के 'दरवाजे' पर जुटे हुए हैं। लालटेन की रोशनी में सभा शुरू हुई। इस गाँव का आधा भाग बंगाल में है। बगल में, सरकारी राहत-योजना के अन्तर्गत मिट्टी खोदकर सड़क बनाने में हजारों बेकार, जिनमें ग्रेजुएट भी शामिल हैं, लगे हुए हैं। संथालपरगना में जहाँ 'पहाड़िया'—आदिवासी भूख से मरे हैं, वहाँ सरकार ने राहत-योजना चलायी है—शेष जगह वह भी नहीं। समस्या की जड़ कहाँ है? जनसंख्या का आधिक्य। मैं उन्हें समझाता हूँ, शादी देर से करो, बच्चे कम पैदा करो, चाहे लूप-निरोध आदि का प्रयोग करो। ग्रामसभा, ग्रामकोष, खादी, ग्रामोद्योग ·······

"यह तो हुई भविष्य की बात। अभी क्या?" वे पूछते हैं।

'आसाम में काम मिलेगा। शराब पीते हो?'

'पेट खाली है, शराब कहाँ से आयेगी?'

'तुम्हारे बच्चे स्कूल जाते हैं?'

'गाय-बकरी चरायेंगे, या स्कूल जायेंगे?'

एक बात देखो। इन्हें न भूमिवान पर विश्वास है, न नेता पर। "इन्दिरा-विनोबा पर हमें विश्वास नहीं" वे साफ कहते हैं।

'अच्छी बात है। अपने पर विश्वास करो', मैं कहता हूँ। लोग जाग रहे हैं। चरखे बैठ गये। भूदान-वितरण में गड़बड़ी हुई। अब कहाँ जायें, किससे कहें?

"हम रेडियो सुनते हैं—बांगला देश को अनाज दिया गया, इधर हम भूखे मर रहे हैं", वे कहते हैं।

मैं उन्हें सरकार का 'रोल' समझाता हूँ कि वह आपके आधार से टिकी हुई है। आप हाथ से पकड़े हुए हैं तभी छाता आपको बचाता है। अपनी शक्ति को पहचानिए। उनसे सर्वोदय की बातें कहता तो हूँ, लेकिन मेरा मन नहीं मानता बातों के पुलाव से। पलसा के मौलाना मोइजुद्दीन हमें खीर खिलाते हैं, गले में अटकने लगती है। चारों ओर भुखमरी है। लोग कृषि-'लोन-पेंटीशन' लिखवा रहे हैं। 'पेंटीशन' ब्लॉक में देंगे, 'किरानी' घूस लेगा।

रद्दीपुर के मुखिया शमसुलहुदा (मो० जलील और शमसुलहुदा 'लोक-सेवक' हैं) कहते हैं, 'लोग विद्रोह नहीं करेंगे तब तक सरकार का ध्यान नहीं जायेगा।' बिरकिटी के शिक्षक मोहम्मद मूसा भी कहते हैं, 'बच्चा जब तक रोता नहीं, उसकी माँ दूध पिलाती नहीं।' लोग धीरज खो रहे हैं। हमारे ग्रामदान से अधिक उन्हें नक्सलवाद आकर्षित कर रहा है। ग्रामदान, जिसको विनोबा 'हर मर्ज की दवा' बताते हैं, क्यों नहीं सफल हो रहा है? अगर उसमें कमी है तो क्या उसे 'रिवाइज' नहीं करना चाहिए? सुलभदान से सुलभ ग्रामदान और सुलभ-ग्रामदान से?

—जगदीश चवानी

शान्ति मिशन को तहस-नहस करने की साजिश

पुलिस रिमाण्ड १२ ग्वालियर जेल में बन्दी मूरतसिंह, रामसहाय, नथुआ और बाबूसिंह–चार आत्म-समर्पणकारी दिनांक २७–६–७२ को रात्रि ९ बजे छतरपुर पहुँचे। श्री मूरतसिंह और श्री रामसहाय के आग्रह के कारण शान्ति मिशन के दो-तीन कार्यकर्ता (लोकेन्द्र भाई, हरि भाई व चतुर्भुज पाठक) ग्वालियर से आये। दिनांक २८-२९ जून को श्री मूरतसिंह ने अपने गाँव सैंपपा से तीन-चार मील दूर पाटन के हार में बनवाये मन्दिर में शिवजी की मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा की। *यहाँ पुलिस के करीब सौ जवान और ५-६ गाड़ियों की व्यवस्था रही।* जैसे ही मन्दिर का काम पूरा हुआ श्री खान साहब डी० एस० पी० ने कहा कि हमें आदेश है कि आपको हम छतरपुर रात को ही ले जायें और वे रात्रि १२ बजे रवाना होकर २ बजे फोर्स सहित आ गये। मार्ग में भी भारी पुलिस तैनात रही। छतरपुर आते ही स्पष्ट मालूम होने लगा कि पुलिस कत्लों एवं बन्दूकों की खोज में शायद अकेले में पूछताछ करना चाहती है, क्योंकि पुलिस ने रिमाण्ड में यह लिखाया कि हम इन लोगों से कत्ल के सम्बन्ध में हथियारों की बरामदी कराने के लिए इन्हें ले जा रहे हैं। डी० एस० पी० ने वहाँ स्थित शान्ति मिशन के कार्यकर्ताओं को आदेश भेजवाया कि मिशन के लोग हट जायें। गांधी भवन में भी डी० एस० पी० व एस० पी० आये और कार्यकर्ताओं को श्री पाठकजी से वापिस बुलाने की बात कहने लगे। शान्ति मिशन (बुन्देलखण्ड क्षेत्र) के अध्यक्ष श्री पाठकजी ने अपनी असमर्थता प्रकट की। कार्यकर्ताओं ने तय किया कि चाहे कुछ हो हम नहीं हटेंगे। स्थिति यह है कि शान्ति मिशन के कार्यकर्ताओं के बगैर श्री मूरतसिंह, श्री रामसहाय आदि यहाँ आने के लिए तैयार नहीं थे, इसलिए ग्वालियर से चलते समय ही यह उत्तरदायित्व मिशन के कार्यकर्ताओं पर आ गया था कि उन्हें सुरक्षित वापिस ग्वालियर सेण्ट्रल जेल पहुँचायें। पुलिस के वर्तमान आग्रह के कारण पुलिस अधिकारियों के सामने शान्ति मिशन को यह स्पष्ट करना पड़ा कि मिशन के कार्यकर्ता इन समर्पणकारियों को ग्वालियर सेण्ट्रल जेल पहुँचाने तक किसी भी हालत में साथ नहीं छोड़ेंगे और शान्ति मिशन के तीनों कार्यकर्ता (लोकेन्द्र भाई, दुर्गाप्रसाद आर्य, व द्वारिका प्रसाद तिवारी) वहाँ से टस-से-मस नहीं हुए, यहाँ तक कि श्री लोकेन्द्र भाई व दोनों साथियों ने उचित समाधान न होने तक भोजन न लेने का निर्णय किया और उनकी सहानुभूति में स्थानीय सर्वोदय कार्यकर्ता सुरेन्द्र कुमार ने भी एक दिन के भोजन का त्याग किया व पुलिस लाइन में रात्रि का समय बिताया। डी० एस० पी० खान सा० ने श्री मूरतसिंह, रामसहाय आदि से चर्चा के दौरान शान्ति मिशन के कार्यकर्ताओं व अन्य उपस्थित जनों के सामने यह कहा, "बताते हैं कि आप लोग जो शान्ति मिशन का सहयोग लेते हैं, उसका मतलब यह होता है कि आपको शासन व हम पर विश्वास नहीं है। यदि विश्वास होता तो इन लाल पट्टी वालों को साथ में रखने का इतना आग्रह न रखते। मेरा सुझाव मानें तो इन्हें अपने पास से हटा दें। यदि आप इन्हें नहीं हटायेंगे तो आपका बहुत नुकसान हो सकता है। इसका दुष्परिणाम यहाँ तक निकल सकता है कि आपको जान से ही मार दिया जाये।" इस पर मूरतसिंह ने कहा कि जब हम जंगलों में थे तब जान हथेली पर रखकर घूमते थे और अब जब हाजिर हो गये हैं, तब भी मार दिये जायें तो क्या फर्क पड़ता है। इस पर श्री मूरतसिंह का छोटा लड़का रामसिंह रोने लगा, जिससे द्रवित होकर श्री मूरतसिंह भी बरबस रो पड़े।

शान्ति मिशन के पास बच रहीं चारों जीप गाड़ियों को मिशन द्वारा सुपुर्द किये जाने के बजाय, डी० एस० पी० खान साहब के आदेश से आर० आई० दुबे ने उस जीप के ड्राइवर को उतार लिया। जिस जीप द्वारा, फोन खराब हो जाने से उपरोक्त समाचार श्री पाठकजी तक भेजवाने की व्यवस्था की जा रही थी, पुन दूसरी जीप मँगायी तो वह भी जब्त कर ली गयी। पुलिस अधिकारियों ने शेष दो जीपें भी ले लीं। कहते हैं कि मुख्यमंत्रीजी का आदेश प्राप्त हुआ है कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मिशन का काम समाप्त हो गया है, इसलिए उनकी जीपें वापस करा ली जायें। अभी भी शान्ति मिशन के सामने निम्न तात्कालिक कार्य करने को शेष हैं (१) बाकी बचे हुए बागियों या डाकुओं से सम्पर्क करके उनको आत्म-समर्पण के लिए राजी करना, (२) जो समर्पण कर चुके है उनके कानूनी बचाव के लिए प्रबन्ध करना, (३) जो जेल में हैं उनके साथ घनिष्ठ सम्पर्क बनाये रखकर उनके सुसंस्कारों को बलवान बनाने के प्रयास को जारी रखना, (४) बागियों के तथा उनके द्वारा पीड़ित परिवारों के पुनर्वास और सहायता का प्रबन्ध करना, (५) बागी परिवारों और उनके दुश्मनों के बीच समझौता कराकर सौहार्द पैदा करना और (६) सम्बन्धित गाँवों में शान्ति और सहकार का वातावरण बनाना। इन्हीं को ध्यान में रखकर चाहा गया था कि फिलहाल दो गाड़ियाँ शान्ति मिशन के पास रह जायें। *किन्तु, जीप वापस कराने के पीछे रहस्य कुछ दूसरा ही है।* जब ये आत्म समर्पणकारी ग्वालियर से चले थे तो ग्वालियर की ही फोर्स और गाड़ी दी गयी थी। एक क्षेत्रीय विधायक भी उस गाड़ी में पुलिसवालों पर रोब डालकर आना चाहते थे, किन्तु शान्ति मिशन ने इन्हें अपने साथ न लाने का तय किया था। सुना जाता है कि मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द्र

सेठी उक्त विधायक से अत्यन्त प्रभावित हैं।

सुना जाता है कि पुलिस इन बागियों का उपयोग छोटे राजा के गिरोह को समर्पित कराने में करना चाहती है, जबकि श्री मूरतसिंह, श्री रामसहाय आदि ने लिखकर दिया है कि छोटे राजा से हमारी वैमनस्यता चल रही है और इससे उनका व उनके कुटुम्बियों का जीवन खतरे में है। इन्होंने यह भी सूचित किया है कि न तो कोई हथियार इन्हें देना है और न ही किसी प्रकार का बयान ही पुलिस को देना है।

शान्ति मिशन के कार्यकर्ताओं को वहाँ से हटाने का तो यही मतलब हो सकता है कि या तो पुलिस इनके विरुद्ध मुकदमे के सिलसिले में कुछ कड़ी कार्रवाई करना चाहती है या उनके जीवन को किसी भयानक संकट में डालना चाहती है।

इन परिस्थितियों में एक ओर रिमाण्ड जो ६ जुलाई तक का था, उसे जल्दी रद्द कराने का प्रयत्न हुआ और दूसरी ओर पुलिस अधिकारियों ने मिशन के साथियों को उनके साथ जाने देने के लिए अपना रुख अनुकूल बनाया। परिणामतः १ जुलाई को शाम को ६-३० बजे श्री मूरतसिंह तथा श्री रामसहाय आदि को शान्ति मिशन के कार्यकर्ताओं एवं पुलिस गार्ड के साथ ग्वालियर सेण्ट्रल जेल को वापस होना पड़ा।

—सुरेन्द्र कुमार

शिमला शिखर-वार्ता : कुछ निर्णय

भारत व पाकिस्तान ने ३ जुलाई को जिस समझौते पर हस्ताक्षर किये उसके कुछ महत्त्वपूर्ण अंश ये हैं :

१. भारत व पाकिस्तान की सरकारों का संकल्प है कि वे दोनों देशों के बीच अब तक चले आ रहे मनमुटाव और विवादों को खत्म करके पारस्परिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध व उपमहाद्वीप में स्थायी शान्ति की स्थापना के लिए काम करेंगी, ताकि दोनों देश अपने साधनों व शक्ति का उपयोग अपनी जनता के हित में कर सकें।

इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भारत व पाकिस्तान की सरकारें इन बातों पर सहमत हैं कि :

(क) दोनों देशों का संकल्प है कि वे अपने मतभेदों को द्विपक्षीय वार्ता द्वारा शान्तिपूर्ण उपायों से या ऐसे शान्तिपूर्ण उपायों से जिनके बारे में दोनों देशों के बीच सहमति हो गयी हो, हल करेंगे। जब तक दोनों देशों की समस्या का अन्तिम हल न निकल आये, कोई भी एक पक्ष स्थिति को नहीं बदलेगा और दोनों देश इस बात का प्रयास करेंगे कि ऐसा कोई काम न हो जिससे शान्तिपूर्ण सम्बन्धों को क्षति पहुँचे।

(ख) संयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा के अनुसार दोनों राष्ट्र एक दूसरे की सीमाओं का अतिक्रमण तथा राजनैतिक स्वतन्त्रता में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

२. दोनों ही सरकारें अपनी सामर्थ्य के अनुसार एक-दूसरे के प्रति घृणित प्रचार नहीं करेंगी। दोनों राष्ट्र उन सभी समाचारों को प्रोत्साहन देंगे जिनके माध्यम से आपसी सम्बन्धों में सुधार की आशा हो।

३. आपसी सम्बन्धों में समानता लाने की दृष्टि से (क) दोनों राष्ट्रों के बीच डाक-तार-सेवा तथा जल, थल, वायु मार्गों द्वारा पुनः संचार-व्यवस्था स्थापित की जायेगी। (ख) एक-दूसरे देश के नागरिक और निकट आयें इसलिए नागरिकों को आने-जाने की सुविधाएँ दी जायेंगी। (ग) जहाँ तक सम्भव हो सके व्यापारिक एवं अन्य आर्थिक मामलों में सहयोग का सिलसिला जल्द-से-जल्द शुरू हो। (घ) विज्ञान एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में आदान-प्रदान बढ़ाया जायेगा।

४. स्थायी शान्ति कायम करने की प्रक्रिया का सिलसिला आरम्भ करने के लिए दोनों सरकारें सहमत हैं कि (क) भारतीय और पाकिस्तानी सेनाएँ अपनी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा में लौट जायेंगी। (ख) दोनों देश बिना एक-दूसरे की स्थिति को क्षति पहुँचाये जम्मू-कश्मीर में १७ दिसम्बर १९७१ को हुए युद्ध-विराम के फलस्वरूप नियन्त्रण-रेखा को मान्य रखेंगे। (ग) सेनाओं की वापसी इस समझौते के लागू होने के ३० दिन के भीतर पूरी हो जायेगी।

५. दोनों देशों की सरकारें इस बात पर सहमत हैं कि उनके राष्ट्राध्यक्षों की भविष्य में फिर भेंट होगी और ऐसे अवसर पर होगी जो दोनों के लिए सुविधाजनक हो। इस बीच दोनों देशों के प्रतिनिधि स्थायी शान्ति की स्थापना और सम्बन्धों को सामान्य करने के लिए आवश्यक प्रबन्धों के बारे में विचार-विमर्श करें। इनमें युद्धबन्दियों एवं नागरिकों की वापसी, जम्मू-कश्मीर के अन्तिम हल व कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने के प्रश्न शामिल हैं। ●

पता परिवर्तन

वाराणसी नगर सर्वोदय मण्डल का कार्यालय संस्कृत विश्वविद्यालय मार्ग से साधना केन्द्र, राजघाट स्थानान्तरित किया गया है और नगर स्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री राधेश्याम शर्मा को नगर सर्वोदय मण्डल में पदेन स्थायी आमन्त्रित मनोनीत किया गया है।

समर्पित बागियों के बीच काका कालेलकर

काका साहब कालेलकर चम्बल घाटी शान्ति मिशन की ओर से श्री काशिनाथ त्रिवेदी के निमन्त्रण पर २९ व ३० जून और १ जुलाई, '७२ को तीन दिन का समय आत्मसमर्पणकारी बन्दी बागियों के बीच दिया। इस बीच उनकी श्री जोक, सदस्य राजस्व आयोग, म० प्र०, तथा श्री दीवान, डो० आई० जी० पुलिस, श्री अयोध्या नाथ पाठक, एस० पी० ग्वालियर, श्री सुरजीतसिंह एस० पी० मुरैना और श्री गंगासेवक त्रिवेदी चीफ इन्वेस्टीगेशन आफीसर क्रिमिनल ब्रान्च के साथ गम्भीर वार्ताएँ हुईं। शिक्षा महाविद्यालय, नगरनिगम और पद्मा उ० मा० विद्यालय में उनके सार्वजनिक प्रश्नोत्तर कार्यक्रम चले। अधिकांश रूप में उन्होंने प्रश्नों के उत्तर के माध्यम से अपनी बात श्रोताओं तक पहुँचायी। वह प्रश्नोत्तर हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

प्रश्न: आपने बन्दी बागियों के दर्शन को यात्रा नाम दिया वह कैसे?

उत्तर: भगवद्गीता में भगवान ने कहा है कि मन गुनहगार भी हो तो भी गुनाह का सारा जीवन छोड़कर कोई व्यक्ति अच्छे रास्ते आता है तो उसे साधु मानना चाहिए। साधु-जीवन के रास्ते आये लोगों का दर्शन एक यात्रा ही है।

प्रश्न: आपके जेल-जीवन का अनुभव सुनना चाहते हैं।

उत्तर. मैंने गांधीजी के साथ यरवदा जेल में 'स्टेट प्रिजनर' की तरह भी जेल काटी और सख्त कैद, सी क्लास और वह भी उस समय की खराब से खराब बीजापुर जेल में। गांधीजी को जब स्टेट प्रिजनर की तरह रखा गया तो उन्हें एक साथी देने की दृष्टि से मुझे साबरमती जेल से यरवदा जेल बुलाया गया। महात्माजी यरवदा जेल को यरवदा मन्दिर कहते थे। पर कुछ समय बाद सरकार ऐसी नाराज हुई कि मुझे 'सी' क्लास में बीजापुर भेज दिया और वहाँ खराब से खराब कैदियों के बीच रखा। पर मैंने कहा कि गांधी का आदमी हूँ इसलिए यहाँ भी वायुमण्डल बनाऊँगा। बीजापुर जेल को मन्दिर बनाने में काफी तकलीफ उठानी पड़ी। लेकिन उसमें सफल हुआ। बुरे-से-बुरे आदमी के अन्दर भी भलाई होती है, उसे खोजने का काम हमारा है। हम सबने मिलकर सरकार से कहा कि हमें ईमानदारी से जीना है इसलिए हम काम मांगते हैं। हाथ से काम किये बिना किसी को भी यहाँ तो क्या भगवान के यहाँ भी अधिकार नहीं है। एक नहीं दो-दो हाथ इसलिए दिये हैं कि 'कर काम रे'।

आप चाहें तो इस जेल को भी मन्दिर बना सकते हैं। इसके लिए (१) आपका रहन सहन सादा हो। आपमें से किसी के पास चाहे जितनी दौलत सम्पत्ति हो पर यहाँ सादगी का जीवन जीना है। (२) हाथ से सेवा का काम अवश्य करें। एकदम पूरे-पूरे गांधीजी के रास्ते नहीं आयेंगे पर चन्द दिल से बुड्ढे और कुछ मेरे जैसे जवान आराम का ख्याल छोड़कर जब सेवा का काम करेंगे तो यह जेल भी मन्दिर बन जायेगा। (३) बुराई से आँख मूँद कर भलाई का ही सोचेंगे तो मन धीरे-धीरे पवित्र बनता जायेगा। जिनका आपके हाथों अहित हुआ है उनकी सेवा आपका धर्म बन जाय तो आप भगवान के सच्चे भक्त बन जायेंगे। भगवान का आदेश है कि पिता का भी किसी ने खून किया हो और यदि वह बीमार है तो उसकी सेवा करना भक्त का धर्म है।

प्रश्न बन्दी-जीवन के बाद क्या-क्या काम करने चाहिए?

उत्तर. मैं चाहता हूँ कि आप लोगों में से चन्द लोग ऐसे मजबूत निकलें कि उनकी सेवा से इस क्षेत्र का कसूर सदा-सर्वदा के लिए समाप्त हो जाय। शुरू दिन से सेवा करनेवाला कभी भूखो नहीं मरा है। कठिन दिनों में, दुख के दिनों में आदमी रोये नहीं तो शक्ति प्राप्त होती है। सेवा करते-करते ही आपमें तेजस्विता आयेगी, आप बड़े बनेंगे। मैं आपको विश्वास से कहता हूँ कि फाँसी नहीं होगी। आपके मन में भलाई पहुँच गयी तो भगवान की ओर से आपको सेवा का अवसर मिलना ही चाहिए।

जेल में रहकर आप उत्तम सेवा और उत्तम शिक्षा प्राप्त करें। उम्र से नहीं, बल्कि दिल से जवान बनें। यहाँ से जाने के बाद दो तरह के आश्रम चलायें—एक पुरुषों के लिए, दूसरा स्त्रियों के लिए। पुराने-नये मिलकर काम करें। चन्द लोगों को प्रण करना चाहिए कि जेल से छूटने के बाद सेवा ही करेंगे जैसा आपके बीच श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने तथा श्री हेमदेव शर्मा ने व्रत लिया है कि जिन्दगी भर सेवा करेंगे। चम्बल नदी का पुराना नाम चर्मणवती है। इसके किनारे सेवा आश्रम खुलें। यहाँ तीन राज्यों की सीमा मिलती है तो जिस तरह गुनहगारों को सुविधा थी उसी तरह सेवा करनेवाले सेवकों को भी सुविधा हो। आपके सेवा के जीवन को देखने दुनिया भर के लोग आयेंगे। मैं गांधीजी का आदमी हूँ। मैं आपको कहता हूँ कि आप सब उत्तम सेवा करते-करते सन्त बनते जायेंगे। सेवा करना जीवन का सदुपयोग है। सुख है जीवन के लिए और दुख है शिक्षा पाने के लिए। मेरा आपसे बस यही कहना है कि आपका जीवन सेवामय हो।

प्रश्न आप जेल में क्या-क्या करते थे?

उत्तर. जेल में किसी नौकर की सेवा नहीं लेते थे। गांधीजी के कमरे में जाकर पहले उनका कमोड रखता था। फिर उन्हें जगाने जाता था। वे टट्टी गये तो उनके हाथ-मुँह धोने का सामान यथा-स्थान रख देता था। फिर कमोड अच्छी तरह धोकर रख देता था। मुझे महात्माजी के साथ रहने का मौका मिला

तो मैं सेवा का मौका क्यों छोड़ूँ! वे मना भी करते थे तो भी मैं अपना काम करता रहता था।

गांधीजी के कपड़े धो डालता था। उन्होंने कहा काका तुमको संस्कृत आती है गीता के श्लोकों का उच्चारण सिखाओ तो मैं वह भी करता था। वे कहते थे इस काम में गुरु हो तो गलती नहीं रहनी चाहिए। मैंने सारी भगवद्गीता का उन्हें उच्चारण सिखाया। उनके पास बैठकर सैंकड़ों बार उसका पारायण किया।

उनको ही नहीं एक यूरोपियन बन्दी था वीलर। मेरी उससे दोस्ती हो गयी मैंने उसे भी जेल में गीता सिखायी। वह थोड़ा-थोड़ा समझता तो खुश हो जाता था। उसकी खुशी से मुझे भी खुशी होती थी।

मैंने जेल-जीवन में रत्ती भर समय की बर्बादी नहीं की, उसका पूरा सदुपयोग किया। अच्छे-अच्छे ग्रन्थ पढ़े। हाथ के काम सीखे। पुस्तकें भी लिखी।

प्रश्न : आपके दर्शन होते रहें जिससे आपके सत्संग का लाभ मिलता रहे।

उत्तर : मेरे दर्शन नहीं, बल्कि वह दिन आये कि आपके सत्संग के लिए लोग आयें। सेवा करनेवालों का भगवान के यहाँ उत्तम स्थान है। वह तब होगा जब आप सत्ता और सम्पत्ति के पीछे नहीं पड़ेंगे। पिछले गुनाह धो डालने के लिए दूसरों का भला करने का प्रयत्न सर्वोत्तम मार्ग है। यहाँ जेल में आपको कुछ सहूलियतें मिली हैं। जेलवाले आप पर विश्वास करते हैं। आपका भी उसके अनुकूल आचरण होगा तो एक अच्छा वायुमण्डल बनेगा। अब जीना है तो सेवा के लिए, दूसरों के उद्धार के लिए। आपके हाथों अब बुरा काम नहीं होगा तो फिर देखिए भगवान का चमत्कार। आपने जेल में अपने हाथ से कते सूत की माला जो मुझे दी है उसकी कीमत मेरे दिल में बहुत है।

जेल में दूसरे दिन थोड़े दुखी मन से सभा शुरू हुई। दो बागी सरदारों में पिछले दस वर्षों से गहरी दुश्मनी थी। अब वे दोनों अपने साथियों सहित एक साथ हैं तो साथियों की ओर से कुछ झगड़ा हुआ तो श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने उस सबद पर रोशनी डालने के लिए काका साहब से प्रार्थना की।

काका साहब : बाहर का आदमी होकर नहीं बल्कि आपके भाई के नाते कह रहा हूँ कि घर के अन्दर और बाजार के अन्दर के झगड़े में कुछ फर्क होता है। बाहर अपनी आबरू सम्भालनी होती है।

सबसे प्रेम-भाव रहे। अपने से जो छोटे हैं, हरिजन हैं उनके साथ हमारा और भी प्रेम-भरा व्यवहार हो। भगवद्गीता में कहा है "विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे . . . पण्डित समदर्शिना" चरण-स्पर्श भी करना हो तो मैं पहले हरिजन का करूँगा। उसके अन्दर भी भगवान है। भगवान के आदमी के तिरस्कार करने से भगवान का श्राप होगा। मैंने हरिजन लड़की और ब्राह्मण लड़के की शादी अपने हाथों गांधीजी के आश्रम में करायी है। गांधीजी ने आशीर्वाद दिया। गांधीजी जाति से वैश्य और श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ब्राह्मण। उनकी लड़की ने गांधीजी के लड़के से शादी के बारे में पूछा तो उनकी भी शादी कराकर आशीर्वाद दिया। मैं तो कहता हूँ कि अब एक जाति में शादी करना ही नहीं चाहिए। मेरे लड़के ने जैन कन्या से शादी की। आप में जो अभी तक दुस्साहस था उसकी जगह साहस आवे और आप खराब रूढ़ियाँ तोड़ें। अपना धर्म सनातन धर्म है उसे सनातन रखना है। पुराना जरूर है तो उतना ही कचरा ज्यादा है, उस कचरे को निकालें। धर्म ताजा रहना चाहिए तभी भविष्य के लिए मजबूत होगा। हम अगर आपस में लड़ते रहे तो हमारी कीमत गयी।

प्रश्न : प्रायश्चित्त और सुधार के लिए आपकी क्या सलाह है?

उत्तर : सजा पानेवाला सुधर जाय अपने मन की ताकत से, किसी डर और भय से नहीं। अहंकार न रखें। जोरवाला मार सकता है पर जोरवाले के पास सत्य ज्यादा नहीं होता। जिसकी भूल है वह कबूल करे और फिर आइन्दा कभी न करे। अपना मिजाज कभी न खोये। कोई अगर एक गाली देता है तो उसके मुँह में एक नरक और दस गुनी गालियाँ दो तो दस नरक। गाली देनेवाले का मुँह पहले गन्दा होता है। वह तय करे कि आइन्दा गाली नहीं देंगे।

प्रश्न : जिस पर मार पड़े उसकी तो सब के बीच इज्जत चली गयी फिर दूसरे के माफी माँगने से क्या लाभ?

उत्तर मार से दर्द होगा, इज्जत कैसे चली जायगी? मैंने गाली नहीं दी, अपना मुँह गन्दा नहीं किया तो इसमें इज्जत क्या गयी? सिर नीचा नहीं किया। डर के मारे पाँव नहीं छुआ तो इज्जत बनी, गयी नहीं। मार पड़ने पर दर्द होगा, इज्जत नहीं जायेगी। इज्जत मारनेवाले की जायेगी। निडर व्यक्ति की इज्जत हमेशा कायम रहती है।

तीसरे दिन आखिरी भेंट-वार्ता में मन्दिरों की रक्षा व ध्यान-पूजन की बात चल निकली कि अभी तक बागियों द्वारा बनाये मन्दिरों की वे मदद करते थे अब सरकार उनकी देखभाल करे।

काका साहब : मैंने आज देवी के मन का भार लिया है। देवी का भक्त हूँ। यह देखो आज भी मेरी जेब में माला है पर भारत सरकार सबकी सरकार है इसलिए वह अगर मन्दिर लेना भी चाहे तो मैं नहीं लेने दूँगा। मन्दिर में ईमानदारी से कमाई आमदनी और वह भी अपने परिवार के पोषण के बाद बची हुई खर्च करनी चाहिए, दूसरों की छीनना नहीं है। भगवान के नाम से मन्दिरों के पुजारी धन के उपासक हैं। धर्म और पूजा धन से नहीं मन से होती है। धन का तो रिवाज चल गया है।→

विनोबा निवास से

'कोशानन्द'

रूसी-हिन्दी कोश, जापानी-मराठी कोश, फ्रेंच कोश, चीनी कोश एक के बाद एक कोश बाबा की चारपाई पर दीखने लगे। जब वे रूसी कोश में तल्लीन थे, ताई को बहुत हंसी आयी। खूब हंसने लगी, अपनी हंसी रोक नहीं सकी, आखिर लोट-पोट हो गयी। उनकी हंसी देख बाबा भी हंसने लगे। हंसी के कारण का बाबा को पता नहीं था, पर हंसने लगे; बस! कुटी में हंसी। हंसी!! हंसी!!! क्यों, क्या हुआ, अत्यधिक हंसी के मारे आंखों में आया पानी पोंछते हुए ताई कहने लगीं, कहते हैं ग्रन्थ-मुक्ति, अध्ययन-मुक्ति और सारा दिन बाल को कहते रहते हैं, यह कोश लाओ, वह कोश लाओ। तुकाराम ने कहा है न, 'मूल स्वभाव जाईना' (मूल स्वभाव जाता नहीं)। तो अध्ययन का आपका स्वभाव ......"। बाबा हंसते-हंसते कहने लगे, "अरे, अध्ययन-मुक्ति यानी वेद, उपनिषद् ऐसे ग्रन्थों का अध्ययन नहीं करना। यह कोश तो मैं मनोरंजन के लिए देखता रहता हूं। आध्यात्मिक अध्ययन नहीं। कोश, व्याकरण, गणित, विज्ञान, यह तो पढ़ सकते हैं।"

वाकई! बाबा को कोश पढ़ने में बहुत रस आता है। एक दिन कहने लगे, "बाबा अगर सन्यास लेगा तो कौन-सा नया नाम लेगा? कोशानन्द।"

आन्दोलन के मोर्चे

सहरसा के मोर्चे से सिद्धराजजी आये थे। हाल ही में वे सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष चुने गये हैं। उन्होंने बाबा के हाथ में लम्बा पत्र रखा, जिसमें उनको अध्यक्ष पद की जिम्मेदारी किस परिस्थिति में उठानी पड़ी इसका जिक्र था, राजस्थान में शराबबन्दी के आन्दोलन को कैसे उठाया गया इसका वर्णन था तथा सहरसा के मोर्चे की अद्यतन जानकारी थी। सबको लगा कि बाबा कुछ बोलेंगे, सावधान हो गये। लेकिन बाबा ने शान्ति से पत्र पढ़ना पूरा किया और पेंसिल से पत्र पर दो जगह कुछ लिखा। पत्र सिद्धराजजी के हाथ में देते हुए कहा, "समाप्तम्"। सिद्धराजजी के साथ बगसाहब, सुमनताई बंग, यशपाल मित्तल (पंजाब), नरेन्द्र दुबे (म० प्र०) भी आये थे। सब हंसने लगे। सिद्धराजजी के पत्र में जहाँ सहरसा के तथा राजस्थान के शराबबन्दी की बात लिखी थी उन दो स्थानों के मार्जिन में बाबा ने ॐ अक्षर लिख दिया था। 'समाप्तम्' का अर्थ वह विषय समाप्त हुआ यह लें या बैठक ही समाप्त। फिर भी साथी बैठ रहे। बाबा ने इतना ही कहा आप लोग सर्व-सम्मति से जो भी तय करते हैं, बाबा को मंजूर है। दूसरी बात यह है कि दादा धर्माधिकारी ने आपको सम्मेलन में आखिर में सूचना दे रखी है। 'अगर फजीहत नहीं होना है तो मोर्चे ज्यादा मत बढ़ाओ।' वह ध्यान में रखकर जो उचित है किया जाये।"

इतना कहने के बाद उन्होंने नागरी लिपि का विषय छेड़ा। नागरी के सिवाय ठीक उच्चारण दूसरी लिपि में नहीं हो सकता है, यह बताया। अन्त में कहा, अगर आपके प्रयत्नों से भारत भर में नागरी-लिपि चली तो लोग हजारों साल बाद भी आपको याद रखेंगे। भारत के अलावा, चीन, जापान, मलेशिया वगैरह देशों को भी इस लिपि से लाभ होगा।

डाक्टर को मंत्र

बम्बई के डा० किसन कोटेचा कलकत्ता से वापस जाते हुए दर्शन-श्रवण हेतु एक दिन के लिए आये थे। उन्होंने गर्भपात, आत्महत्या, डाकुओं का आत्म-समर्पण आदि कई विषयों पर बाबा से सवाल किये थे और बाबा ने उनकी विस्तृत चर्चा भी की। उनका पहला प्रश्न था, "मेरे जैसे व्यवसायी को आप कौन-सा मंत्र देंगे?"

बाबा. "निष्पक्षपात बुद्धि से बीमारों की उत्तम सेवा करें, यह बहुत अच्छा धन्धा है। बीमार की मुफ्त सेवा करें। दुरुस्त होने के बाद बीमार प्रसन्न-चित्त से जो देगा, वह लें। कोई तकरारी

→इसके लिए सरकार के पास मत जाइये। आपमें अपहरण की हिम्मत कहाँ से आयी? क्या वह समाज को मान्य था? जब आप में अधर्म की हिम्मत थी तो अब धर्म की हिम्मत क्यों नहीं आ सकती? आप हिम्मत वाले चारित्र्यवान बनें। नियत साफ हुई तो पाप धुल जाता है। भगवान हृदय को पहचानता है और न्यायालय न्याय को। हम कष्ट से डरें क्यों? मन में नेकी आ गयी तो फल मिलेगा ही। भक्त होना बच्चों का खेल नहीं है। भक्त मानता है कि भगवान जैसा रखेगा रहूंगा। भगवान मेरे पास है तो समाज चाहे जितनी निन्दा करे। आपके हृदय में पुण्य आ गया तो भगवान के आशीर्वाद की आप पर वर्षा होगी और आप यहाँ से नेक हृदय लेकर जायेंगे।

प्रश्न विनोबाजी का दर्शन हमें मिलना चाहिए।

उत्तर: आप उनके दर्शन के अधिकारी हैं। उनके दर्शन भी होंगे। आशीर्वाद भी मिलेगा। आप अच्छे बनने की हिम्मत करें। मैं हिमालय में गया तो अपने साथ मूर्ति नहीं ले गया। आद्य माता देवी हृदय में दर्शन देती थी। मैंने साक्षात की कभी कामना नहीं की। मैंने किसी चमत्कार की शक्ति भी नहीं चाही। बस हृदय में सतता आ जाय और मामूली सेवक बना रहूँ यही हमेशा चाहा है। निर्भयता और उत्तम चारित्र्य यही सज्जनता की सबसे बड़ी कसौटी है।

—प्रस्तुतकर्ता : प्रो० गुरुशरण

हो और दुरुस्त होने पर ५ रुपये देता है तो खुशी से लें और कोई गरीब दो आना दे तो वह भी लें। मतलब 'फ्री न लें।' आपने मंत्र माँगा। मंत्र हमेशा कठिन होता है।"

चारुदा

बापू की नोआखाली की यात्रा की व्यवस्था का भार उठानेवाले पूर्व बंगाल के चारुदा (चारुचन्द्र चौधरी) बाबा की पाकिस्तान-यात्रा के भी संयोजक थे। जून के प्रथम सप्ताह में जब वे बाबा से बहुत प्यार से मिले तब उन्होंने खुशी के आँसुओं को बहने दिया और कहा, "इसी की प्रतीक्षा में था। मुझे आपसे कुछ भी कहना नहीं है। सिर्फ मौन से आपके पास बैठने से मुझे सन्तोष होगा।" बाबा ने उनकी पूछ-परछ की। पूछने पर बाबा को मालूम हुआ कि ढाका से वर्धा आने का खर्चा लगभग १७५ रु० है। बाबा ने चारुदा को सुझाया, "हमारा स्थान (ब्रह्मविद्या-मन्दिर) आपके स्थान से लगभग १७५ रु० के फासले पर है। तो आप यहाँ हर साल आया कीजिए, चन्द रोज यहाँ बिताइये। आपको अपने दो घर बनाने चाहिए एक ढाका में और दूसरा ब्रह्मविद्या मन्दिर में।"

चारुदा ने सुझाव को स्वीकार किया। दूसरे दिन चर्चा के दौरान बाबा ने कहा, "बांगलादेश में अपार दारिद्र्य है। चार मनुष्य के पीछे एक एकड़ जमीन है। नदियों में अपार बाढ़ आती रहती है। तूफान होता है। और, लगातार २१ साल पाकिस्तान ने उसका शोषण किया है। इस वास्ते वहाँ की जनता आज आशा से मुजीब की तरफ देखती है। आज मुजीब हैं, कल नहीं होंगे, तो जनता क्या करेगी? लोगों का विश्वास तथा श्रद्धा जागृत रखना हो तो गाँव-गाँव को अपनी शक्ति से उठ खड़े होकर काम करना होगा। नहीं तो हिन्दुस्तान-जैसी हालत होगी। यहाँ आजादी मिले २१ साल हुए पर आर्थिक दृष्टि से खास कुछ हुआ नहीं। हिन्दुस्तान आगे बढ़ा नहीं। इसलिए देश को उठाने के लिए सारे ग्रामीणों को उठाना चाहिए। आज गाँवों में मिल्कियत है, छोटे लोगों का बड़े लोगों द्वारा शोषण होता रहता है। जबतक गाँवों की शक्ति खड़ी नहीं होती, तबतक देश खड़ा नहीं होगा।"

चारुदा—"जी हाँ! आपकी बात सही है। मैं वहाँ यह कोशिश करूँगा। कुछ नये जवानों को, छात्रों को संगठित कर रहा हूँ।"

बाबा—"आप जेल में कितने साल थे?"

चारुदा—"साढ़े आठ साल।"

बाबा—"लोकमान्य तिलक जेल में छह साल थे। उन्होंने वहाँ गीता-रहस्य लिखा। अरविन्द को जेल में भगवद्-दर्शन हुआ। जेल अनेकों को लाभदायी होता है।"

चारुदा—"मैंने तो यह कुछ नहीं किया। मैंने जेल में सिर्फ सब्जी और फूलों का बगीचा लगाया और बच्चों को पढ़ाता था।"

बाबा—"और आनन्द में रहता था, है कि नहीं? आनन्द भगवान का रूप है।"

बाबा का सूक्ष्म प्रवेश

७ जून १९१६ को बाबा बापू से पहली बार मिले थे। ७ जून १९६३ को बाबा ने सूक्ष्मप्रवेश जाहिर किया। ७ जून १९७० को बाबा ब्रह्मविद्यामन्दिर में आये—'सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरम्' कहकर। अब इस साल ७ जून को क्या जाहिर होता है इस तरफ सबका ध्यान था। लेकिन ७ के बदले ६ जून की प्रातःकाल में ध्यान के पूर्व अनपेक्षित ही बाबा ने कहा—

"दो साल पहले ७ जून को मैं यहाँ आया था सूक्ष्म प्रवेश करके। एक साल तो मैं इधर-उधर मोटर वगैरह में जाता रहा, लेकिन एक साल पहले क्षेत्र-संन्यास जाहिर किया, तब से आज तक इसी क्षेत्र में रहा। अब कल नया साल शुरू होता है मेरे लिए क्षेत्र-संन्यास का। इसलिए अधिक सूक्ष्म में प्रवेश करना स्वाभाविक है। दो साल मैं यहाँ पर सफाई के काम में काफी समय देता रहा, फिर कुछ दिन यहाँ कुटी के सामने सफाई करता था, वह सफाई करना कल से मैं बन्द करूँगा। दूसरी बात, गीता प्रवचन आदि पुस्तकों पर मैं हस्ताक्षर देता था। लाखों गीता प्रवचनों पर मेरे हस्ताक्षर हुए हैं। कल से हस्ताक्षर देना भी बन्द होगा। उसका प्रचार ४० साल तक चला—१९३२ के प्रवचन हैं और आज १९७२ है; इसके आगे लोग अपनी शक्ति से जो करेंगे, वह करें। अब उसके प्रचार की वासना मुझे नहीं रहनी चाहिए। अच्छी वासना है लेकिन वह कार्यकर्ताओं पर छोड़ देता हूँ। तीसरी बात, डाक्टर महोदय रोज मुझे मालिश करते थे, वह मालिश कल से बन्द होगा। उसके अलावा और भी कुछ निर्णय होंगे, लेकिन वह धीरे-धीरे प्रकट होंगे।

जयप्रकाश नारायण

जयप्रकाशजी इन दिनों बंगलूर के पास एक सरोवर के किनारे आराम कर रहे हैं। जुलाई के प्रारम्भ में सर्व सेवा संघ के कुछ साथी उनसे वहाँ भेंट कर चर्चा करेंगे। (६ से १२ जुलाई तक चर्चा हुई-स०) चर्चा के लिए चार-पाँच विषय रखे गये हैं। इसकी जानकारी सिद्धराजजी तथा दादासाहब ने बाबा को दी और पूछा, "और किस विषय पर उनसे हम चर्चा करें?"

बाबा—"कम-से-कम विषयों पर चर्चा हो। इस साल अक्तूबर में उनकी जिन्दगी के ७० साल पूरे हो रहे हैं। तब से एक साल वे स्थूल काम छोड़कर आराम करेंगे। हमने उनको सुझाया था कि आपका अगला साल 'फुल स्टॉप' (पूर्ण विराम) होगा तो इस साल 'सेमिकोलन' (अर्ध-विराम) हो। यानी इसी साल से→

सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य आरोहण : एक प्रतिवेदन

(१४ मई से ३० जून '७२)

विगत ग्रामस्वराज्य महायज्ञ अभियान—१८ मार्च से १९ अप्रैल—के प्रगति-विवरण के आधार पर गत २९-३० अप्रैल को पूज्य बाबा से अभियान के आयोजकों की सहरसा के काम के सम्बन्ध में हुई चर्चा में से नये अभियान की रूपरेखा का आविर्भाव हुआ। नये अभियान का नामकरण—सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य आरोहण—किया गया। बाबा ने स्वयं इसकी अवधि १४ मई से ३० जून निर्धारित की।

पूर्व तैयारी

प्रवेशिक बैठक : बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की ९ मई की पटना बैठक में सहरसा के काम के सिलसिले में विगत २९ अप्रैल को ब्रह्मविद्या मन्दिर पवनार में दिया गया बाबा का प्रवचन पढ़कर सुनाया गया तथा उसपर गम्भीरता से विचार हुआ। बिहार के विभिन्न जिला सर्वोदय मण्डलों तथा रचनात्मक संस्थाओं की ओर से कुल ५० कार्यकर्ता सहरसा-अभियान के लिए भेजना तय हुआ।

क्षेत्र निर्धारण : १५ से ३० मई तक सर्वश्री डा० द्वारकादास जोशी, निर्मला बहन, विद्यासागर भाई, व्रजमोहन शर्मा और महेन्द्र भाई, की यात्रा छातापुर, मुरलीगंज, बिसुनगंज, सलखुआ, महिषि, बिसनपुर आदि प्रखण्डों में अभियान के लिए उपयुक्त ४ प्रखण्डों का चुनाव करने हेतु हुई। विगत अभियान के दौरान उन प्रखण्डों में सहयोग देने वाले स्थानीय सहयोगियों, तदर्थ प्रखण्ड, ग्रामस्वराज्य समिति के पदाधिकारियों, शिक्षकों, सरकारी सेवकों आदि की बैठक में विचार-विमर्श कर क्षेत्र का चुनाव करने का प्रयास किया गया। फलस्वरूप छातापुर, मुरलीगंज, महिषि और सलखुआ ये ४ प्रखण्ड पिछले अभियान की निष्पत्ति तथा स्थानीय *सहयोगियों के उत्साह एवं सहयोग के* आश्वासन को देखते हुए, अभियान के लिए अपेक्षाकृत अनुकूल प्रतीत हुए।

जिला बैठक २२ मई को सहरसा में जिला ग्रामस्वराज्य अभियान समिति की बैठक में अभियान को सफल बनाने पर गम्भीरतापूर्वक विचार हुआ। उपर्युक्त ४ प्रखण्डों को बैठक में नये अभियान के लिए प्रयोग-क्षेत्र मान्य किया। अभियान में लगनेवाले स्थानीय समर्थ कार्यकर्ताओं की सूची तैयार की गयी। ऐसे कार्यकर्ताओं की कुल संख्या १४ हुई। पूरे बिहार प्रदेश से *लगभग ७०* व्यक्तियों ने अभियान में शरीक होने की अपनी तैयारी बतायी।

सर्वोदय सम्मेलन नकोदर में सर्व सेवा संघ अधिवेशन तथा सम्मेलन में आये देश के सर्वोदय सेवकों का बाबा की माँग के आधार पर सहरसा अभियान में भाग लेने के लिए संघ के अध्यक्ष और मंत्री ने आवाहन किया। साथ ही सुश्री हरविलास बहन (गुजरात) एवं श्री कैलाश प्रसाद शर्मा, मंत्री, बिहार गांधी स्मारक निधि ने इस निमित्त विधिवत् अपील की। परिणामत गुजरात, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि राज्यों से कार्यकर्ताओं के आने का आश्वासन मिला।

बिहार भूदान यज्ञ कमिटी का आश्वासन बिहार भूदान यज्ञ कमिटी के अध्यक्ष-मंत्री से अभियान के ४ प्रखण्डों के क्षेत्र में भूदान की जमीन-सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु ८ कार्यकर्ताओं की सहायता मिलने का आश्वासन मिला।

आवश्यक कागजात सम्बन्धित ४ प्रखण्डों की भूदान की वितरित तथा अवितरित जमीन का गाँववार विवरण तैयार कराया गया। इसी प्रकार पिछले अभियान तथा पुराने जिलादान अभियान के दौरान उन प्रखण्डों में ग्रामदान के भरे समर्पण-पत्र भी प्रखण्डों में भेजने हेतु गाँव एवं पंचायतवार व्यवस्थित करवाये गये। अभियान का सन्दर्भ, उद्देश्य और कार्यक्रम की जानकारी देनेवाला पर्चा क्षेत्र में वितरण-हेतु छपवाया गया।

कार्यारम्भ : २२ मई को अभियान-समिति की बैठक के अवसर तक सहरसा आये हुए स्थानीय प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर के कुल २६ कार्यकर्ताओं की एक-

---

→काम करना शुरू करें। लेकिन वह नहीं हो सका। उनको बहुत ज्यादा मेहनत हुई—बागियों के काम के कारण। इसलिए मेरा सुझाव है कि ये जो तीन महीने इधर काम के गये हैं वे अब अगले साल के आराम में जोड़ दिये जायें और आराम अभी से शुरू हो। जुलाई में आप लोगों से चर्चा होने के बाद वे १५ महीना पूर्ण आराम करें।"

बाबा का स्वास्थ्य

सिद्धराजजी : "आपका स्वास्थ्य कैसा है?"

बाबा : "गये साल मुझे तीनों मौसम में तीन रोग हुये थे। इस साल तीनों मौसम में कुछ भी नहीं हुआ। सिर में थोड़ा चक्कर का भास रहता है फिर भी रोज एक मील चलता हूँ। सुबह आधा मील और बाद में दो बार पाव-पाव मील। रोज बड़ी फजर १५-२० मिनट आसन, प्राणायाम आदि करता हूँ। ध्यमुक्ति तो जाहिर ही की है। जापानी कोश इन दिनों देख रहा हूँ—वैदिक संस्कृति के साथ जापानी शब्दों का कहाँ तक सम्बन्ध है यह देखने के ख्याल से। घण्टा भर लगभग शतरंज खेलता हूँ। रात और दिन मिलकर दस घण्टे पड़ा रहता हूँ, जिसमें आठ घण्टे नींद आती है। नींद निःस्वप्न होती है।"

'मैत्री' से साभार

एक टोली निम्नांकित सज्जनों के नायकत्व में ४ प्रखण्डों में भेज दी गयी। हर टोली को अपने क्षेत्र के लिए आवश्यक कागजात दिया गया।

प्रखण्ड	प्रभारी
छातापुर	डा० द्वारका दास जोशी और श्री देवनारायण सिंह
मुरलीगंज	श्री विद्यासागर भाई और श्री कृष्णा यादव
महिषि	निर्मला देशपाण्डे और अलख-नारायण
सलखुआ	रामनारायण सिंह और स्वामी सत्यानन्द

तत्पश्चात कार्यकर्ता छिट-पुट ढंग से १५ जून तक बारी-बारी से आते रहे और उन्हें क्षेत्र की आवश्यकता और कार्यकर्ता की अनुकूलता को देख कर उस-उस प्रखण्ड में भेजा जाता रहा। अन्ततः आनेवाले कुल कार्यकर्ताओं की संख्या ८३ हुई।

कार्य-पद्धति

सामान्यतः प्रति पंचायत एक कार्यकर्ता लगाने की योजना थी। परन्तु अधिकतर पड़ोसी पंचायतों के दो कार्यकर्ता एक टोली बनाकर दोनों पंचायतों में काम करते रहे। कहीं-कहीं ५-६ कार्यकर्ताओं ने एक साथ जुड़कर एक ही पंचायत में केन्द्र स्थापित कर कुछ समय तक सघन रूप से कार्य सम्पन्न करने का प्रयोग किया। इस प्रकार बारी-बारी से अपने लिए निर्धारित अन्य पंचायतों में भी केन्द्र स्थापित कर कार्य-सम्पादन का यत्न करते रहे।

ग्रामस्वराज्य को प्राथमिकता : प्रत्येक कार्य में ग्रामस्वराज्य की भावना को जनमानस में प्रतिष्ठित करने पर विशेष बल देने की ओर ध्यान रहा। इस दृष्टि से ग्रामदान की दोनों शर्तों की पूर्ति के आवश्यक कागजात तैयार करा-कर ग्रामसभा के गठन का प्रयास रहा। बीघा-कट्ठा-निस्तरण सामान्यतः ग्राम-सभा के माध्यम से ही कराने की दृष्टि रही; परन्तु हस्ताक्षर कराने के क्रम में जिनसे बीघा-कट्ठा जमीन का विवरण प्राप्त हो जाता था उसे प्रमाण-पत्र पर दर्ज कर बीच में भी वितरित किया गया।

भूदान की जमीन व वासगीत का पर्चा : भूदान की जमीन की विविध समस्या की छानबीन पर भी बहुत शक्ति लगानी पड़ी, क्योंकि जगह-जगह लोग उसका सवाल उठाकर ग्रामस्वराज्य के काम में बाधा उपस्थित करते थे। इसी प्रकार वासगीत के पर्चों का सवाल भी जगह-जगह सहज ही खड़ा होता था। इस दिशा में भी यत्र-तत्र कार्य किया।

कार्यान्वयण

कार्यकर्ता : बिहार के बाहर से आनेवाले कार्यकर्ताओं में मुख्य शक्ति गुजरात से आनेवाले एक दर्जन प्रथम पंक्ति सुयोग्य कार्यकर्ताओं की थी जिसका नेतृत्व डा० द्वारकादास जोशी कर रहे थे। इनके अलावा बम्बई से श्री कान्तिलाल बोरा तथा श्री राम देशपाण्डे, मध्य प्रदेश से श्री पुखागीराय तथा उत्तर प्रदेश से श्री हरि सिंह आये। महाराष्ट्र से दो तरुण शान्ति सैनिक, सुश्री शोभाताई और श्री विनय कुमार पण्ड्या आये। शेष जो कार्यकर्ता पहले से यहाँ कार्यरत थे वे तो रहे ही।

बिहार के अन्य जिलों से आनेवाले कार्यकर्ताओं में मुंगेर जिला से श्री राम-नारायण बाबू के नेतृत्व में ९ कार्यकर्ता आये, पूर्णिया से दो, मुजफ्फरपुर से दो, चम्पारण से एक, गयाजिला से एक, पटना से दो, भूदान यज्ञ समिति से तीन और दरभंगा से श्री देवानन्द मिश्र के नेतृत्व में ६ कार्यकर्ता आये। जो कार्यकर्ता पहले से कार्यरत थे, वे तो रहे ही।

सहरसा जिला के पुराने तथा नये कार्यकर्ता १४ की संख्या में श्री गंगा बाबू और श्री महेन्द्र भाई के नेतृत्व में अभियान में लगे रहे। इसके अलावा सम्बन्धित प्रखण्डों में निम्नांकित स्थानीय सज्जनों ने अपने अभिक्रम से बहुत ही सराहनीय कार्य किया। मुरलीगंज में सर्वश्री रमानारायण वर्मा, नारायण प्रसाद यादव, केदारनाथ सिंह—क्षेत्रीय संगठक खादी भण्डार—राजनन्दन प्रसाद यादव विधायक—श्याम-सुन्दर प्रसाद मण्डल, मुखिया तमोर परसा, महेश्वर मण्डल आदि; छातापुर प्रखण्ड में सर्वश्री महावीर गोस्वामी, श्यामनन्दन मिश्र, मारकण्डे झा आदि; महिषि प्रखण्ड में सर्वश्री भोला प्रसाद सिंह, रघुदत्त झा आदि; सलखुआ प्रखण्ड में सर्वश्री सूर्यनारायण मंडल, सीताराम यादव आदि।

विशिष्ट यात्राएँ—पूज्य धीरेन्द्र भाई की लोक-गंगा यात्रा २१ मई से २० जून तक छातापुर में चलती रही। उनकी यात्रा से उस प्रखण्ड में चल रहे अभियान-कार्य को बल मिला तथा वातावरण स्वस्थ बना।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा अपनी धर्मपत्नी श्रीमती उमा बहन के साथ इस अवधि में ९ जून से १४ जून तक सहरसा में रहे। इस बीच आपने छातापुर और मुरलीगंज प्रखण्ड के अभियान-कार्य का दौरा किया। चालू अभियान तथा सहरसा की भावी रूप-रेखा एवं व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में यहाँ के मुख्य साथियों से आपने १४ जून को विनोबा आश्रम में विचार-विमर्श किया।

बिहार भूदान यज्ञ समिति के मंत्री श्री श्याम प्रसाद सिंह तथा बिहार ग्राम-स्वराज्य समिति के संयोजक श्री सूर्य-नारायण दास भी साथ-साथ दिनांक १७ जून को सहरसा आये और मुरलीगंज क्षेत्र में गये।

फलश्रुति आँकड़ों में : अभियान में भाग लेनेवाले कुल ८३ भाई-बहनों, जिनका ४ दिनों से लेकर ६० दिनों तक का समय उपलब्ध हुआ, के प्रयास के फलस्वरूप जो उपलब्धि हुई वह आँकड़ों में निम्न प्रकार है :

४ प्रखण्डों के ४० पंचायतों में १५५ गाँवों में ग्रामसभा स्थापित हुआ। गाँव-गाँव में मिलनेवाले छोटे-बड़े १०६ स्था-नीय सहयोगियों की सहायता से १०८८

भूमिवालों के तथा १५६१ भूमिहीनों के नये समर्पण-पत्र भराये गये। इसके आधार पर ३३ गाँवों में ग्रामसभा गठित की गयी तथा १३४ दाताओं से १२६ बीघे ६ धूर जमीन प्राप्त हुई। इसमें से ९६ दाताओं से प्राप्त ७४ बीघे २ कट्ठे १२ धूर जमीन १३० आदाताओं के बीच वितरित की गयी। भूदान की जमीन में से ५६ दाताओं से प्राप्त ५५ बीघे १४ कट्ठे १८ धूर जमीन ९० आदाताओं के बीच वितरित की गयी। दानपत्र के २०५ पर्चे भी दिये गये। ८१२.६० की साहित्य-बिक्री हुई तथा भूदान-यज्ञ के चार और मैत्री के दो ग्राहक बनाये गये।

अनुभव

स्थानीय प्रभारी सहयोगी प्रगति से : समर्थ से समर्थ साथी के जी-तोड़ प्रयास से भी जहाँ कार्य नहीं बढ़ पाया वहाँ स्थानीय प्रभारी सहयोगी के मिलते ही काम देखते-देखते सहजता से सम्पन्न हो गया।

सर्वोदय सेवक सम्बन्धी ग्रामीण मान्यता : ग्रामीणों की निगाह में सर्वोदय सेवकों को देखते ही जमीन माँगनेवाले सेवकों की तस्वीर ही मात्र रहती है। ग्रामस्वराज्य की अन्य बातों को वे मात्र ऊपरी भूमिका मान लेते हैं और जमीन लेना और बाँटना, इतना ही मुख्य उद्देश्य समझते हैं। फलतः सामान्यतया ग्रामीण सर्वोदय-सेवकों से कतराते, बचते और टाल-मटोल कर पिण्ड छुड़ाने का ही प्रयास करते हैं।

कार्यकर्ता शक्ति का अभाव : नकोदर सम्मेलन के कारण अभियान में सम्मिलित होनेवाले कार्यकर्ता बहुत विलम्ब से और बारी-बारी से सहरसा पहुँचते रहे। बिहार से तथा अन्य प्रदेशों से प्राप्त आश्वासनों की तुलना में बहुत कम कार्यकर्ता पहुँच पाये।

इस प्रकार कार्यकर्ता-संख्या कम रहने एवं बारी-बारी से ११ जून तक आते रहने के कारण इस बार के प्रयास को अभियान का रूप नहीं आ सका।

भीषण गर्मी और शादी-विवाह : भीषण गर्मी के दौर के कारण दिन के अधिकांश समय में कार्यकर्ताओं के लिए काम करना कठिन होता था और सुबह-शाम ग्रामीण मिलने में अपनी कठिनाई बताते थे। इस बीच शादियों की धूम की अवधि रहने के कारण लोग आसानी से कार्यकर्ताओं को टाल दिया करते थे।

—गजानन

फीरोजाबाद की तबाही

"आप बाहर के हैं। आपको मालूम ही क्या है? इस्लामिया कालेज पाकिस्तानियों का अड्डा था और इसलिए इसके जल जाने से हमें बहुत खुशी है।"—एक अधेड़ उमर के सुशिक्षित सज्जन ने फीरोजाबाद में मुझसे कहा।

"आपने देखा भी है कि उसकी क्या हालत कर दी गयी है?" वहाँ न तो लाइब्रेरी में एक किताब बची है, न दफ्तर में एक रजिस्टर या कागज, न लेबोरेटरी में एक ट्यूब या स्टैण्ड और न कोई कमरा ऐसा छोड़ा जो मरम्मत या नयी तामीर के लायक न हो।"

"मैं वहाँ गया तो नहीं, लेकिन जब आप देखकर आये हैं और यह सब बता रहे हैं तो हमें और भी ज्यादा इत्मीनान हो गया कि जो हुआ, सो ठीक हुआ।"

"लेकिन मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि क्या भारतीय जनतंत्र को बलवान बनाने का यही तरीका है?'

वह भाई कुछ इधर-उधर की दूसरी बातें करने लगे। मैंने आग्रह किया, "आप मेरे सवाल पर आइये कि क्या इस तरह की हरकतों से हिन्दुस्तान मजबूत होगा और यहाँ के बाशिन्दों के आपसी ताल्लुकात सुधरेंगे?"

वह कुछ जवाब नहीं दे सके और बात टालकर रह गये।

× × ×

मुहल्ला महमदनगर में एक कारखाना है। उसकी दीवार में एक रोशनदान है। फीरोजाबाद के प्रतिष्ठित नागरिक और जनसेवक, श्री जगन्नाथ लहरी जी ने वह मुझे दिखाया और कहा, "इस रोशनदान में से अतिरिक्त जिलाधीश (ए० डी० एम०) महाशय ने करीब डेढ़ सौ मुसलमान भाई निकलवाये। अगर उस दिन वे मौके पर न पहुँच जाते और लोगों को न निकालते तो सबके सब खतम हो जाते और पता नहीं फीरोजाबाद की क्या हालत होती?"

बगल में खड़े एक मुस्लिम युवक ने कहा, "हाँ साहब, ए० डी० एम० साहब ने तो सचमुच जान बख्श दी, वर्ना हम तो समझे थे कि जिन्दा नहीं निकल पायेंगे। उनके हम बहुत अहसानमन्द हैं। अल्ला उनकी उम्र में बरकत दे।"

लहरी जी ने बातचीत के दौरान में बाद में कहा कि अगर अधिकारियों ने इतनी सतर्कता और सावधानी अन्य क्षेत्रों में भी बरती होती तो यह दंगा इतना विकराल रूप न लेता।

× × ×

'सुना है कि तुमने अपनी बाँह पर पीली पट्टी लगायी थी'''एक तरुण से मैंने पूछा।

"सच बात है। जब मुसलमानों ने काली पट्टी बाँधी तो हमने केसरिया रंग की बाँधी।"

"वह क्यों?"

"वह अलीगढ़ युनिवर्सिटी बिल का मातम मना रहे थे, हम खुशी मना रहे थे।"

"क्या जनतंत्र में किसी नागरिक को यह अधिकार नहीं है कि शान्तिपूर्ण उपायों से पट्टी बाँधकर, सभा कर, जुलूस निकाल कर किसी बिल या कानून के विरुद्ध अपना मत-प्रदर्शन करे?"

"है क्यों नहीं? और अगर नहीं है, तो होना चाहिए।"

"तब फिर तुम जैसे लोगों ने उसमें बाधा क्यों पैदा की?"

"हमने बाधा कहाँ डाली? हमारे अन्दर भी जवानी का जोश आ गया और केसरिया पट्टी लगा ली। एक भाई मुसलमान के मिले। उन्होंने कहा "मैं काली पट्टी नहीं लगाऊँगा, मैं लाल टोपीवाला हूँ।" तो उनको हमने लाल पट्टी बाँध दी और इस तरह तीनों रंग की पट्टियाँ लग गयीं।"

"मैंने सुना है कि चौराहे के पास एक बड़ा-सा कलश लाकर रख दिया गया था। तुम जानते हो कि मस्जिद से लौटते हुए जब लोग इधर से गुजरेंगे तो यह बीच में पड़ेगा और रास्ता रुकेगा, तो तुम लोगों ने वह कलश क्यों रखा?"

उस युवक को तैश आ गया। गुस्से पर आग-बबूला होकर बोला, "भाई साहब! आप नहीं जानते कि इन लोगों की पहले से क्या-क्या तैयारियाँ थीं? और आपको मालूम है कि इन्होंने नारे क्या-क्या लगाये थे?"

"अल्ला हो-अकबर का तो मैंने सुना है।"

"जी नहीं, इससे कहीं ज्यादा लज्जाजनक नारे लगे। उन्होंने भारत माता को और इन्दिराजी को गाली देनेवाले नारे लगाये थे।"

मुसलमान मित्रों से मैंने पुष्टि की कि सचमुच गालीवाले नारे लगे थे!!

× × ×

"फीरोजाबाद में हुआ क्या?" यह सवाल जब मैंने वहाँ के सुप्रसिद्ध निवासी और लेखक, श्री रतन लाल बंसल जी से किया तो उन्होंने कहा—"यहाँ जो हुआ वह एक प्रसंग से आपकी समझ में आ जायगा। मान लीजिए आप स्टेशन पर उतरे। आपने अमुक जगह के लिए रिक्शा किया। रिक्शावाले ने तेजी से रिक्शा दौड़ाया। मंजिल पर पहुँचकर आप उसको चार आने पैसे देने लगे। उसने कहा—नहीं बाबूजी, एक रुपया हुआ, इससे कम नहीं लूँगा। आपने आठ आने दिये, तब भी वह नहीं माना। उसने आपका हाथ पकड़ लिया। आपको आ गया गुस्सा। आपके हाथ में लोहे का डण्डा था। वह आपने उसपर जोर से जमा दिया और रिक्शावाला वहीं खत्म हो गया। यह है यहाँ की घटनाओं का सार व स्वरूप!"

थोड़ी देर रुककर वह कहने लगे, 'दरअसल इसे दंगा नहीं कहना चाहिए। दंगा तो तब कहते जब एक तरफ से

'अल्ला हो अकबर' वाले होते और दूसरी तरफ से 'जय बजरंग बली' वाले और दोनों आपस में कट-मरते। यह तो हुआ नहीं। एक तरफा ही सब कुछ हुआ।"

× × ×

ठाकुर बजराज सिंहजी फीरोजाबाद के प्रख्यात वकील हैं और ससोपा के बड़े नेताओं में उनकी गिनती है। पांच साल तक लोकसभा में फीरोजाबाद का प्रतिनिधित्व भी कर चुके हैं।

उनसे जब बातचीत हुई तो उन्होंने कहा—"फीरोजाबाद में इस तरह का काण्ड कभी नहीं हुआ था। सरकारी रिपोर्ट है कि चौबीस आदमी मारे गये। कहा जाता है कि मुसलमानों की तरफ से बन्दूकें चलीं और जवाब में फायर हुआ तो उनका मारा जाना कुदरती था। अब मैं नहीं जानता कि गोली किसने पहले चलायी या नहीं चलायी, लेकिन जब गोली चली है और लोग मारे गये हैं तो इसकी 'जुडीशियल इन्क्वायरी' सरकार क्यों नहीं कराती?"

"यह तो डाक्टर लोहियावाली बात है जहाँ-जहाँ 'पुलिस फायरिंग' हो वहाँ न्यायिक जांच करा डालनी चाहिए।"

"जी हाँ, मैं उसे ठीक और जरूरी समझता हूँ।"

जरा ठहरकर वह कहने लगे—"मुझे सबसे ज्यादा दुःख एक और बात का है।"

"वह क्या?"

"जब मैंने सुना कि मुसलमानों की दुकानें जलायी जा रही हैं तो मैंने अपने एक मुस्लिम दोस्त को फोन किया। मेरे पास तो फोन है नहीं, इसलिए थोड़ी दूर पर एक जगह जाकर फोन करने की कोशिश की। देखा कि कोई जवाब नहीं। दूसरे को किया, कोई जवाब नहीं। तीसरे का भी वही हाल...बाद में पता चला कि तीन रोज तक सारे मुस्लिम निवासियों के टेलीफोन डेड कर दिये गये थे।"

"यह तो बहुत गजब है।"

"और सुनिये। इसलामिया कालेज फूंका गया, या मस्जिद के इमाम को पेड़ में बांधकर जला दिया गया, ईदगाह के चौकीदार को छुरा भोंका गया। यह सब काम हुए कब हैं? आपको सुनकर ताज्जुब होगा कि यह कर्फ्यू के दौरान हुए हैं। शहर में कर्फ्यू है और यह सब हो रहा है। शर्म लगती है कहते हुए, मगर बताया मुझे यह गया कि जिन दुकानों को लूटा गया, वहाँ जो नगद पैसा था वह पुलिसवालों ने ले लिया और माल ले गये लूटनेवाले। निश्चित जानिए कि अगर 'बोर्डर सिक्यूरिटी फोर्स' न आया होता तो कहीं ज्यादा तबाही बरपा हो गयी होती। बी० एस० एफ० के आने से शहर बच गया।"

श्री जगन्नाथ लहरीजी के साथ तीन दिन मुहल्लों में घूमकर और लोगों से मिलकर फीरोजाबाद की स्थिति की जानकारी मैंने ली। वहाँ के कबीलपुरा, मैनपुरी गेट, अहमदनगर, मुस्लिमाबाद, कश्वूहान, सदर बाजार और सब्जी मण्डी—नामक मुहल्लों में बहुत बरबादी हुई। वहाँ एक शान्ति कमिटी द्वारा कुछ राहत-कार्य किया जा रहा है। उस कमेटी में लहरीजी नहीं हैं।

उनसे मैंने पूछा कि आप इसमें क्यों शामिल नहीं हुए?

उन्होंने कहा, "ऐसी कमिटियाँ सरकार के इशारे पर बनती हैं और कुछ होना-जाना है नहीं। मैं जानबूझकर अलग रहा हूँ।"

"इसका कोई कारण तो होगा?"

"आपसे क्या छिपाना? बात स्पष्ट है। आप जानते हैं कि हमारा यह फीरोजाबाद चूड़ियों के कारखानों के लिए मशहूर है। सारे देश को चूड़ियाँ यहीं से जाती हैं। इन कारखानों में से ज्यादातर हिन्दू श्रीमानों के हैं, और कारीगर विशेषकर ऊँचे दर्जे के और बारीक काम करनेवाले विशिष्ट कारीगर, ज्यादातर मुसलमान हैं। अब आप यह भी जानते हैं कि शहर में कोई भी दंगा या अशान्ति बिना पैसेवालों के इशारे के नहीं हो सकती। बदनाम किये जाते हैं गुण्डे लोग, लेकिन उनको दोष देना ज्यादती है। उनके पीछे अमीर लोग रहते हैं जो उन्हें बढ़ावा देते हैं।"

"यह आप सही कह रहे हैं। ऐसा करीब-करीब सभी जगह देखने में आया।"

"हाँ, तो होता यह है कि दंगा शुरू होने के बाद जब कारखाने बन्द पड़ जाते हैं तो इन मालिकों का नुकसान होने लगता है। तब ये मालिक, हिन्दू और मुसलमान, दोनों मिल जाते हैं और अधिकारियों से मिलकर सारी चीज दबवा देते हैं। नतीजा यह है कि जो वास्तव में असामाजिक तत्व हैं वे फिर मुक्त हो जाते हैं और उन्हें आगे के लिए रास्ता खुल जाता है। वही इस बार भी किया जा रहा है और इस वास्ते मैंने अलग रहने का फैसला किया है।"

ऊपर के प्रसंगों से फीरोजाबाद में १६-१७-१८ जून को जो हुआ उसकी झांकी सामने आ जाती है। मांग है कि न्यायिक जांच होनी चाहिए। और अगर यह न हो सके तो अन्य उच्च-स्तरीय जांच हो, केवल मैजेस्टीरियल जांच से कुछ लाभ नहीं होगा।

फीरोजाबाद में भी मैंने अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी बिल के विरोध में १६ जून को कार्यक्रम करने की नोटिसें बड़ी तादाद में देखीं। एक मुस्लिम सज्जन से पूछा कि क्या उनको बिल की कुछ जानकारी है तो उनके पास कोई जवाब नहीं था। एक हवा बह रही है—उसी के शिकार वे लोग फीरोजाबाद में भी हैं। और बनारस में बनी मेरी वह राय यहाँ पर और भी पक्की हो गया कि बिल के विरोध की आड़ में दूसरा आन्दोलन चलाने की तैयारी है। यू० पी० मुस्लिम मजलिस के सदर, डा० फरीदी ने ऐलान भी कर दिया है कि आगामी ९ अगस्त से वह अपनी तहरीक शुरू करेंगे।

—दादू

वर्ष : १८, अंक : ४३ २४ जुलाई, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

करुणा साम्राज्ञी बने

आज विज्ञान के युग में बहुत बड़ी माँग यह है कि करुणा का स्रोत फूट निकले और अहिंसा एक दासी नहीं, साम्राज्ञी बने। दण्डशक्ति के राज्य में अहिंसा रहे, यह तो आज तक चला ही। राज्य दण्डशक्ति का ही रहा है, भले ही उसके रूप अलग-अलग हों। अभी 'लोकतंत्र' का रूप आया, फिर भी राज्य दण्डशक्ति का ही है। अहिंसा पहले थी और आज भी है, लेकिन है वह दासी ही। मैं बहुत बार कहता रहता हूँ कि 'युद्ध में सेना की सेवा करने के लिए जानेवालों में करुणा और दया दोनों हैं। किन्तु वह करुणा युद्ध को समाप्त नहीं कर सकती। युद्ध में रुचि पैदा कर सकती है। युद्ध का पाप घटाकर एक तरह से वह युद्ध को बल ही देती है।' वह करुणा तो पहले भी थी और आज तक है। यदि वह भी न होती तो हम जानवर ही होते।

गांधीजी जो करुणा चाहते थे, वह यह नहीं। वे ऐसी करुणा चाहते थे, जो साम्राज्ञी हो, उसी के आधार पर मानव समाज बने। वह बन सकता है और हम बना सकते हैं, ऐसा विश्वास मानव को हो। धीरे-धीरे दण्डशक्ति क्षीण हो जाय और आखिर उसका परिवर्तन दूसरे रूप में हो—करुणा-मूलक, साम्य पर आधृत स्वतंत्र लोकशक्ति के रूप में वह बढ़े। आगे एक जमाना आयेगा, जब कि करुणा साम्राज्ञी बनेगी। वह जल्दी आना ही चाहता है। यदि हम शीघ्र उसके योग्य नहीं बनते, तो आज ही नष्ट हो जाने की नौबत है। विज्ञान ने जो साधन पैदा किये हैं, उनके साथ अहिंसा जुट जाय तो स्वर्ग उतर आयेगा। इसके विपरीत उनके साथ हिंसा जुड़ जाय तो मानव-जाति का विनाश हो जायगा। हम ऐसी गलतफहमी में न रहें कि हम विज्ञान को नहीं चाहते। मेरा दावा है कि विज्ञान को अधिक से-अधिक चाहने का मुझे हक है। दूसरे जो विज्ञान को चाहते हैं, नाहक चाहते हैं। सर्वोदय सेवक का ही विज्ञान पर सच्चा हक है। विज्ञान पर अहिंसा का ही अधिकार है। इसलिए हम विज्ञान को खूब चाहते हैं।

—विनोबा

पुलिस का भी हृदय परिवर्तन हो

डाकू परिवर्तित हो गये। सरकार, कानून अथवा किसी दण्ड के दबाव में आकर नहीं, बल्कि उस विशुद्ध मानवीय विचार से अनुप्राणित होकर जो उनकी आत्मा में गहरा पैठ गया, जिसने उनकी आत्माओं के तारों को स्पन्दित कर उन्हें आत्म-समर्पण के लिए विवश कर दिया। यह दानवता पर मानवता की एक अपूर्व विजय हुई। सरकार, कानून अथवा दण्ड-व्यवस्था जिस काम को अपनी शक्ति से नहीं करा पायी वह मानव-हृदय से निकले निश्छल स्नेह ने पलक झपकते ही करा दिया।

डाकू अपना काम पूरा कर चुके हैं। अब समाज तथा सरकार को अपना दायित्व निभाना है। यह शक्ति जो किसी समय समाज के ध्वंसात्मक कार्यों में लगी हुई थी अब उसे रचनात्मक बनाना है।

विचारणीय बात यह है कि इन थोड़े-से डाकुओं के आत्म-समर्पण से क्या हम यह मान लें कि समूचा डाकू-वंश नष्ट हो गया अथवा वह विचार और धरातल ही मिट गया जिसके कारण अथवा जिस पर डाकू जन्म लेते है? जिन डाकुओं का अब तक समर्पण हुआ है वे वे डाकू थे जो समाज को लूटते और जंगलों में बसते थे। उनकी संख्या भी उंगलियों पर गिनी जा सकती है। किन्तु जिस समाज में हम सब रहते हैं उसी में असंख्य सफेदपोश ऐसे डाकू भी मौजूद हैं जो समाज में रहकर ही समाज को लूटते हैं। अब उनके भी आत्म-समर्पण कराने की आवश्यकता है।

इस प्रकार के कार्य में जहाँ तक पुलिस का प्रश्न है बहुत सम्भव है कि उसे यह अभियान ठीक न जँचे, और वह इसमें व्यवधान भी पैदा करे; क्योंकि इस प्रकार के आत्म-समर्पणों से पुलिस, कानून और दण्ड-व्यवस्था की असफलता सिद्ध होती है और बहुतों की मिली-जुली रोजी-रोटी भी समाप्त हो जाती है।

डाकू पैदा करने में जहाँ सामाजिक अन्याय और विषमता मूल रूप से काम करती हैं वहाँ पुलिस का अत्याचारी डण्डा भी एक बहुत बड़ी भूमिका निभाता है। अतएव जहाँ सामाजिक अन्याय, और विषमता को समाप्त करने के लिए समाज में बसे उन असंख्य सफेदपोश डकुओं को आत्म-समर्पण कराने की बात है वहीं पुलिस के हृदय-परिवर्तन की बात भी कम महत्त्व की नहीं है। यदि ऐसा न हो सका तो जितने डाकुओं का अब तक समर्पण हो चुका है उससे दस गुना अधिक डाकू पैदा हो जायेंगे।

—निर्मल कुमार प्रेमी

सर्वोदय कार्य की नयी दिशा

नकोदर के सर्वोदय सम्मेलन में आचार्य राममूर्तिजी ने सर्वोदय क्रान्ति के लिए 'पीपुल्स ऐक्शन' के द्वारा 'बुराई से असहकार और अन्याय का प्रतिकार' का प्रोग्राम अपनाने की बात कही थी। उन्होंने यह भी कहा था कि 'यदि हमें ऐक्शन करना हो तो उसकी पद्धति संगठन, नेतृत्व, ट्रेनिंग इन सब के बारे में अच्छी तरह सोच लेना होगा।'

हमारा विचार है कि यही एक मात्र कार्यक्रम है जो सर्वोदय आन्दोलन को क्रान्ति के मार्ग पर अग्रसर कर सकता है और इसी की कमी की वजह से अभी तक सर्वोदय आन्दोलन से क्रान्ति की चिनगारियाँ न निकलकर छोटे-छोटे स्थानीय सुधार ही सम्भव हो सके जो अपने में अच्छे तो है किन्तु क्रान्तिकारी नहीं।

मुझे मालूम नहीं कि नकोदर सम्मेलन में इस कार्यक्रम पर कितना विचार हुआ। सर्वोदय (भूदान-यज्ञ) पढ़ने से मालूम होता है कि न केवल निवेदन में ही इसका पूर्ण अभाव है बल्कि वहाँ इस पर अधिक चर्चा भी नहीं हुई, कोई रूपरेखा तैयार करना तो दूर रहा।

आचार्य राममूर्तिजी से प्रार्थना है कि वे ही इसकी पद्धति, संगठन, नेतृत्व व ट्रेनिंग की एक रूपरेखा बनाकर 'भूदान यज्ञ' में प्रकाशित करें और एक सम्मेलन वाराणसी, पटना अथवा किसी अन्य स्थान पर जो प्रस्तावित कार्यक्षेत्र से समीप हो अथवा मुसहरी सहरसा से भी अधिक दूर न हो बुलावें तो कार्य करने के लिए उपयोगी होगा। और इस सम्मेलन के निश्चयों के बाद सम्भवतः सितम्बर १९७२ से कार्य, प्रारम्भ हो जावे।

मुरादाबाद —जीवाराम

श्री धीरेन्द्र मजूमदार का कार्यक्रम

तिथि	स्थान	पत्र-व्यवहार का पता
२१ जुलाई से २७ जुलाई	बीकानेर	खादी मन्दिर, बीकानेर (राजस्थान)
२८ से ३१ जुलाई	जोधपुर	बाल निकेतन, जोधपुर (राजस्थान)
१ अगस्त से ३ अगस्त	आबूरोड	मार्फत श्री रामेश्वरदयालजी अग्रवाल, पा० आबूरोड
४ एवं ५ अगस्त	अजमेर	खादी ग्रामोद्योग प्रतिष्ठान, हाथी भाटा (अजमेर) राजस्थान
६ से १२ अगस्त	भीलवाड़ा	सेवा सदन, भीलवाड़ा
१४ से १९ अगस्त	उदयपुर	श्री दीनदयालजी दशोत्तर, २९ फतहपुरा (उदयपुर)

'२० अगस्त को प्रातः अहमदाबाद के लिए प्रस्थान।

परीक्षा

पिछले दिनों अपने दो सीनियर साथियों से मुलाकात हुई। साथियों से मुलाकात होने पर चर्चा का अक्सर मुख्य विषय होता है अपना ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन। उस दिन दो घण्टे का पूरा समय इसी विषय की छान-बीन में बीता।

'बातें सब दिमाग में साफ हैं, लेकिन कितना भी करो गाड़ी आगे नहीं बढ़ती,' साथी ने कहा।

'आपके ही यहाँ नहीं, पूरे देश में यही हाल है। बिहार में भी काफी शिथिलता है, जहाँ हम लोगों ने ग्रामदान में इतनी शक्ति लगायी, और अब भी दूसरे राज्यों से साथी इकट्ठा कर पुष्टि में लगा रहे हैं,' मैंने कहा।

इसी तरह चर्चा देर तक चलती रही। साथी नहीं हैं, साधन नहीं हैं, परिस्थिति बेहद उलझी हुई है, अमीर के दिल में गरीब के लिए उदारता नहीं है, और गरीब के दिल में अमीर के लिए कोई स्थान नहीं रह गया है, हमारा संगठन ठोस नहीं है, हमारा विचार जनता के मन में स्पष्ट नहीं है, लोग हर चीज के लिए सरकार पर भरोसा करते हैं, और सरकारी तंत्र दिनों-दिन असमर्थ होता चला जा रहा है, आदि बातें बारबार सामने आती रहीं। लेकिन एक बात उन्होंने जो कही वह मेरे दिमाग को कुरेद गयी। चर्चा के दौरान वह बोले, 'लेकिन मैं देखता हूँ कि कुछ युवक जो सोचते विचारते हैं, गांधी की तरफ मुड़ रहे हैं—कलकत्ता जैसे शहर में भी। अब वे गांधी का विरोध छोड़कर गांधी को समझना चाहते हैं।' यह सुनकर मैंने कहा, 'अगर सही है, तो आशा की बात है यह। लेकिन क्या आपका यह ख्याल नहीं है कि युवक अब तक अपने दिमाग में परिस्थिति को ढालते थे, अब परिस्थिति में दिमाग को ढालने लगे हैं? उनके जो प्रश्न हैं उनका उत्तर और कहीं न देखकर गांधी में देखने लगे होंगे।' बोले, 'हाँ ऐसी ही बात है। कई युवकों को मैंने यह कहते हुए सुना है कि जब गांधी का इतना नाम है तो वह पागल तो नहीं हो रहा होगा!'

परिस्थिति जो सीख देती है वह सबसे पक्की होती है। परिस्थिति से बड़ा कोई गुरु नहीं। परिस्थिति ने ही साम्यवादियों को सिखाया कि देश 'हिंसा की क्रान्ति' के लिए तैयार नहीं है, इसलिए उन्हें भी वर्गशक्ति से अधिक भरोसा लोकमत की शक्ति पर करना चाहिए। परिस्थिति सभी दलों को सिखा रही है कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में दलों के स्तर पर मात्र राजनैतिक विरोध का कोई खास अर्थ नहीं रह गया है। परिस्थिति के ही कारण हमारे कुछ नेता और विचारक भी कहने लगे हैं कि हर चीज में पश्चिम की नकल करने से भारत के सवाल नहीं हल होंगे।

परिस्थिति सबके लिए एक है। जो परिस्थिति दूसरों को यह सिखा रही है वह क्या सर्वोदय के साथियों को कुछ नहीं सिखा रही है? क्या परिस्थिति का संकेत हमें यह नहीं बताता कि हमारी दिशा ठीक है? क्या हम देख नहीं रहे हैं कि हमारे देश में कोई गांधी का नाम ले या न ले, अगर वह चलना चाहता है तो उसे गांधी की ही दिशा में चलना पड़ेगा? क्या इससे हमारा आत्म-विश्वास नहीं बढ़ता? क्या यह विवाद की बात रह गयी है कि हमारी समस्याएँ किसी वर्ग या समुदाय की संकुचित शक्ति से नहीं हल होंगी अगर हल होंगी तो जनता की अजेय शक्ति से ही हल होंगी। जनता की व्यापक शक्ति जगाये बिना दूसरा कोई रास्ता नहीं है। गांधी ने बार-बार लोकसेवक और लोकशक्ति की बात कही थी।

कोई क्रांति दैनन्दिन जीवन के धरातल पर नहीं होती। क्रान्ति के लिए सोचने और काम करने का धरातल रोज के सोचने और काम करने के धरातल से कुछ ऊँचा होना चाहिए। धरातल को ऊँचा उठाना, परिस्थिति की प्रतीति जगाना, सामने के अँधेरे में प्रकाश की रेखा दिखाना आदि क्रान्ति का काम है जिसे वह धैर्य और मेहनत के साथ करता जाता है। कई बार उसे 'बनवास' में रहना पड़ता है, किन्तु वहाँ रहने के लिए उसे योजना बनानी पड़ती है। बनवास में भी वह सक्रिय रहता है इस प्रतीक्षा में कि कोई ऐसी घटना घटेगी जो परिस्थिति को पकाकर क्रान्ति का विस्फोट करा देगी। वह घटना कब होगी, कैसे होगी, वह नहीं जानता, इतना ही जानता है कि होगी अवश्य। माँ जैसे बच्चे को पालती है उसी तरह क्रान्तिकारी क्रान्ति को पालता है।

अभी ६ से १२ जुलाई तक सर्व सेवा संघ के कुछ वरिष्ठ साथियों की श्री जयप्रकाशजी के साथ बंगलोर में एक हफ्ते तक चर्चा हुई, विस्तार के साथ दिल खोलकर चर्चा हुई। चिन्ताएँ भी प्रकट हुईं, और आशाएँ भी सामने में आयीं। अन्त में सब अन्य कई बातों के साथ-साथ इन बातों पर सहमत हुए कि (१) हमें देश भर में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के पच्चीस प्रयोग-क्षेत्र बनाने चाहिए जिनमें एक-एक निर्वाचन-क्षेत्र का विस्तार हो ताकि आगे के निर्वाचन में लोकप्रतिनिधित्व का प्रयोग किया जा सके (२) आचार्यकुल और तरुण शान्तिसेना 'शिक्षण में क्रान्ति' का काम ज्यादा तेजी के साथ उठायें, (३) हम तात्कालिक अनीति या आवश्यक संकट के प्रति उदासीन न रहें। इन कामों को करने के लिए हमें गाँवों में भूमि-समस्या का छोर पकड़ना होगा, शहरों का काम हाथ में लेना होगा, तथा समाज के दूसरे सक्रिय तत्त्वों का भी, जहाँ तक सम्भव हो सके, सहयोग प्राप्त करना होगा, या उन्हें अपना सहयोग देना होगा। इस कार्य में हमारे धैर्य, विवेक, और समग्रता की परीक्षा होगी। उसी परीक्षा में हमें उत्तीर्ण होना है। देश गांधी-विचार की व्यावहारिकता का प्रमाण चाहता है। वह उसे आश्वासन से नहीं उदाहरण से ग्रहण करेगा। हम जान लें कि इस समय हमारे लिए परीक्षा की घड़ी है। ●

आचार्य-संवाद

(७ जुलाई, ७२ को सर्वोदय आन्दोलन के लब्धप्रतिष्ठ नेता और विचारक श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने अपने दिल्ली प्रवास के दौरान प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक श्री काकासाहब कालेलकर से भेंट की। दो पुराने मित्रों में हुई अनौपचारिक बातचीत यहाँ प्रस्तुत है – सं०)

काका साहब : आइये, आइये, स्वागत है।

धीरेन्द्रदा : आपकी तबियत कैसी है?

काका साहब : मेरी तबियत अच्छी है। कुछ समय पहले सिर में चक्कर आया पर भूल से और माफ करने लायक। मेरी कठिनाई दूसरी है। कान के नजदीक और जोर से बोलने पर सुनाई पड़ता है। नहीं तो कोई कहता कुछ है और मैं समझ दूसरा लेता हूँ। इसलिए सुनने के बाद खात्री करनी पड़ती है। आजकल पुरानी सभी बातें भूलने लगा हूँ। उम्र ८७ साल की हो गयी है। ८५ तक स्मृति ठीक थी। अभी एक भाई आये थे और उन्होंने मुझे याद दिलाया कि वे मेरे साथ जबलपुर जेल में थे। मैं यह भी भूल गया था कि मैं जबलपुर जेल में रहा। इसका इलाज कुछ नहीं। यह बीमारी नहीं बुढ़ापा है। अभी मैं कुछ दिनों के लिए प्रवास पर जाऊँगा। जापान भी जाऊँगा। हाँ, अब आप कहिये।

धीरेन्द्रदा : हम तो आपके दर्शन के लिए आये हैं।

काका साहब : दर्शन चीज 'म्युचुअल' होती है। यों कहिये कि दर्शन लेने व देने आये हैं।

धीरेन्द्रदा : हम अपना-अपना समझ लें।

काका साहब : (हँसते हुए) हाँ, यह ठीक है। अब कहिये।

धीरेन्द्रदा : अभी सबसे निवृत्त होकर फिरना शुरू किया है। अपनी यात्रा का नाम लोक-गंगा यात्रा रखा है।

काका साहब : लोक-गंगा जैसे शब्दों के साथ निवृत्ति नहीं जोड़ना चाहिए।

धीरेन्द्रदा : अपने से निवृत्ति नहीं लोगों से, तंत्र से। चल सकता नहीं, इसलिए बैलगाड़ी पर लेट जाता हूँ। एक गाँव में दो दिन।

काका साहब : जहाँ-जहाँ लोगों ने बुलाया वहाँ जाते हैं?

धीरेन्द्रदा : नहीं, हर गाँव लगातार।

काका साहब : कबसे शुरू किया?

धीरेन्द्रदा : पिछले साल दिसम्बर से। चौमासे में यात्रा स्थगित रखने का तय किया है।

काका साहब : 'ओल्ड लाज' भी कबूल किया! दिल्ली कब तक रहेंगे?

धीरेन्द्रदा : कल आया, कल वापस जाऊँगा।

काका साहब : आपको दिल्ली यानी पचास गाँव ऐसा मानकर रहना चाहिए।

धीरेन्द्रदा : दिल्ली यानी 'माइनस' गाँव। यहाँ लोक नहीं है, लोक-सेवक है। हमारी लोक-यात्रा चल रही है।

काका साहब : यहाँ 'लोक' है पर हाथ नहीं आता।

धीरेन्द्रदा : ये हमसे भी तेजी से भागा करते हैं।

काका साहब : विनोबा ने क्षेत्र-सन्यास ले लिया।

धीरेन्द्रदा : तो हम लोगों को निकलना चाहिए। मुझे सत्तर साल से ऊपर हुए, अब वानप्रस्थ खतम करके परिव्राजक बन गया।

काका साहब : 'आर यू लायल टु लाइफ आफ ओल्ड एज' ?

धीरेन्द्रदा : लोगों के बीच ही घूमूँगा। चातुर्मास में भी यानी आषाढ़ से आश्विन तक चार महीना घूमता रहूँगा—एक-एक महीना एक-एक प्रदेश में। दस-दस दिन एक जगह रहना।

काका साहब : अभी अभी मैंने एक लेख लिखा, उसका 'सम्स्टेंस' सुनाता हूँ। वेद से पुराणों तक भारतीय संस्कृति के जनरल विचार लोगों ने गाँव-गाँव तक पहुँचा दिये और इन विचारों को उन्होंने पकड़ रखा है, वे छोड़ते नहीं। और आधुनिक विचार गाँव तक नहीं पहुँच पाया।

धीरेन्द्रदा : पर गाँववालों ने एक चीज को छोड़ दिया है : वह है आश्रम व्यवस्था।

काका साहब : सारी गीता में कहीं आश्रम शब्द है? जबकि गीता के समय में आश्रम था। गीता ने सन्यास-वृत्ति की प्रतिष्ठा खूब बढ़ायी पर आश्रम का नाम भी नहीं लिया।

धीरेन्द्रदा : और, वानप्रस्थ आश्रम के बारे में?

काका साहब : वानप्रस्थ को तो मैं कच्चा मानता हूँ—गृहस्थाश्रम और सन्यास के बीच का ट्रांजीशन आश्रम। तो हमारे सन्तों ने, आचार्यों ने जो समाज-व्यवस्था दी वह गाँवों तक पहुँचा दी, वह लोगों ने नहीं छोड़ी। गाँव के लोगों से कहेंगे कि महात्मा गांधी कहते हैं कि छुआछूत मत बरतो तो वे कहेंगे कि कलियुग आ गया है इसलिए महात्मा भी यही कहेगा। मेरा ऐसा मानना है कि आनेवाले वर्षों में एक नयी संस्कृति गाँवों से शहरों में आनेवाली है। आज कहते हैं कि गाँव पिछड़े हैं व शहर आधुनिक हैं, पर थोड़े समय बाद गाँव कहेंगे कि 'वी आर लीविंग, वी आर लायल टु लाइफ' हम जाकर शहर को सुधारेंगे। 'राउन्ड ट्रांसफरमेशन' आनेवाला है। गाँववाले कहेंगे कि हम 'माडर्न' हैं। यही 'लेटेस्ट' बात है, सोचा आपके कानों तक पहुँचा दूँ। गाँव के लोग प्राचीन बातें पहले भूल जायेंगे फिर 'डिसआन' करेंगे।

धीरेन्द्रदा : भूलना तो शुरू किया है, पर पूरा नहीं हुआ।

काका साहब : ये जो शहरों में 'माडर्न यूथ' कहते रहते हैं न कि 'गांधीज एज हेज गॉन।' वैसे गाँव के लोग कहेंगे आर्य संस्कृति सब पुराना। मैं तो कहता हूँ कि गांधी शुरू नहीं हुआ। गांधीवाद को 'डिसआन' करनेवाले पुराने हो जायेंगे

फिर गाधी शुरू होगा। गाधी आये और गये। 'रीडिंग आफ द सिचुएशन' कहता हूँ।

धीरेन्द्रदा : पहले सगम होगा। आज गाँव में सगम हो रहा है। गगा का पानी व यमुना का पानी अलग-अलग दीखता है।

काका साहब . हाँ, 'टू कलर्स कैन बी डिफरेन्शिएटेड।'

धीरेन्द्रदा : गाँव में दोनो चल रहा है, शहर में एक ही। गाँव में एक दूसरे को 'लिक्वीडेट' करेगा। गाँव में जाने पर उनके उठने-बैठने, चलने-फिरने का ढग हर पहलू के दो रूप दीखेंगे।

काका साहब : जैसे चम्बल और यमुना जब मिलते हैं मीलो तक दोनों के पानी का रग अलग-अलग। 'नो हरी टु युनाइट।'

धीरेन्द्रदा : मैं इसलिए कहता हूँ कि एक दूसरे को 'लिक्वीडेट' करें। क्योकि दोनों एक दूसरे से घृणा करते हैं। घृणा से एक दूसरे को 'लिक्वीडेट' करेंगे।

काका साहब : आपने बिलकुल 'करेक्ट एनेलाईज' किया। पर 'कलर लिक्वीडेट' होगा, पानी नही; क्योंकि वह तो 'लिक्विड' ही है।

धीरेन्द्रदा : आज जो मन स्थिति है उसमें दोनो (आधुनिक व पुरानी सस्कृति) का समन्वय नही होगा। क्योकि 'म्युचुअल रिस्पेक्ट' नही है, 'टेट्रेड' है।

काका साहब . दो 'करेण्ट' है एक—आर्यन और एक आधुनिक। गाँवो में पुराने का 'वर्स्ट' पहुँचा और नये का 'वर्स्ट' पहुँचा।

धीरेन्द्रदा : नही पुराने का वर्स्ट बचा और नये का वर्स्ट पहुँचा।

काका साहब . बराबर है।

धीरेन्द्रदा : अच्छा तो बचा नही।

काका साहब : गाँव की 'वायटेलिटी' नया 'क्रिएट' करेगी—'विथ रिस्पेक्ट पार नाइदर।'

धीरेन्द्रदा : 'सेल्फ प्रिजर्वेशन' का 'इन्हेरण्ट' भीतर से निकालेंगे जिसकी हम कल्पना भी नही कर सकते। हमारा काम 'रियलाईजेशन' कराना है कि जिन्दा रहना है, तो सोचिए।

काका साहब—लोग मुझसे पूछते हैं कि विनोबा तो आप से दस वर्ष छोटे हैं, उनको सूक्ष्म में जाने का क्या हक था? उनका 'सक्सेसर' कौन होगा? 'लिटरेचर' है पर उससे नही चलेगा। गाधी के बाद विनोबा और विनोबा के बाद कौन? गाधी ने दो नाम अपने उत्तराधिकारियो के कहे—जवाहरलाल और विनोबा। हम दोनो के पीछे चले। अब विनोबा सूक्ष्म में गये। विनोबा भी अपने दो उत्तराधिकारी कहे।

धीरेन्द्रदा विनोबा को तो लोगो ने खोजा, नाम लेकर तो जवाहरलाल को ही उत्तराधिकारी बनाया।

काका साहब नही दोनो का ही नाम लिया। राजनीतिक क्षेत्र में जवाहरलाल और दूसरे सब मामो में विनोबा। और, फिर गाधी के बाद सारे लोग विनोबा के पास ही गये।

धीरेन्द्रदा आप लोगो का जैसा 'थीसिस' होता है वैसा विनोबा का है कि अब कोई नेता नही होगा।

काका साहब गाधी ने तो बताया, लोग गये उनके पास।

धीरेन्द्रदा · लोग ही खोजें।

काका साहब लोग तो दस खोजेंगे। खोजने से दस होगे। 'नेम्ड' करने से एक मिलेगा। लोग एक को चाहते हैं जिसके पीछे वे चलें। पर भारत की परम्परा है कि कोई आयेगा।

धीरेन्द्रदा यह परम्परा अवश्य है और यह 'नेम्ड' करने की परम्परा नहीं है।

काका साहब है भी और नही भी। दोनो है। शकराचार्य ने तो 'नेम्ड' ही किया। दोनो में लाभ है।

धीरेन्द्रदा लाभ-हानि सबमें है। विनोबा तो कहते हैं कि उनका यह क्षेत्र-सन्यास का ढोंग है, कब टूट जायगा पता नही।

काका साहब . हाँ—बराबर है। सूक्ष्म में भी जब गये तो कहा कि मैं शून्य में नही जा रहा हूँ, सूक्ष्म में जा रहा हूँ। दोनों का मुझे अच्छा लगा। यह ठीक है।लेकिन उनमें इतनी 'वायटेलिटी' है, इसलिए उनको रहना चाहिए। वह इतना घूम चुके हैं कि उनसे हम किस मुँह से कहें।

धीरेन्द्रदा . विनोबा कहते हैं कि अब जो कुछ करना है, लोग करें। हमसे कुछ पूछना है तो हम 'एवेलेबुल' हैं।

काका साहब · गाँवो को इस बात की तो शिकायत भी नही है।

धीरेन्द्रदा . विनोबा ने तो यह भी कई बार कहा कि कब ईश्वर का सकेत होगा और कब निकल पडेंगे, पता नहीं।

काका साहब : ईश्वर का सकेत होगा तो दूसरा भी करेंगे, यह ठीक है। विनोबा में अन्धता नही कि शब्द को पकड कर बैठ जायें। अब गाँवो में से 'वायटेलिटी' आयेगी क्योकि 'एलेक्शन' आया, वोट आया। लोग उनकी खुशामद करते हैं, पर 'एजुकेट' नही करते। इससे 'सीनीसिज्म' आयेगा।

धीरेन्द्रदा . गाँव में अब खुशामद से वोट नही लेते। डराना, धमकाना और लालच होता है। इससे सीनीसिज्म जल्दी आयेगा। 'ईगो' के 'स्प्रेशन' में से फोड़कर निकलेगा। 'ईगो इन्हेरेण्ट' है।

काका साहब वह अच्छी 'वायटेलिटी' होगी। मेरी आस्तिकता कहती है कि गाँव से 'वायटेलिटी' आयेगी। 'ऐज ए रिएक्शन' खूब 'वायटेलिटी' आयेगी।

धीरेन्द्रदा उसी का डर है। 'रिएक्शन' से पहले एजुकेशन का 'प्रोसेस' हो तो 'रिएक्शन चैनेलाइज' होगा नहीं तो विस्फोट होगा।

काका साहब : मुझे डर है कि 'विस्फोट' के बाद ही नया 'क्रिएशन' होगा।

धीरेन्द्रदा · तब पूछना पडेगा कि क्या वे सर्वनाश से सर्वोदय चाहते हैं? सर्वोदय तो होगा ही, टालकर होगा कि स्नान कर होगा।

काका साहब : 'चूज' करने की बात नही है। वह कहेगा कि जो भाग्य में होगा वह होगा। भाग्यवाला 'चूज' नहीं करेगा।

धीरेन्द्रदा : हमारा देश भाग्यवाला ही है।

काका साहब : हाँ आप बराबर कहते हैं।—*प्रस्तुतकर्ता. श्रवण कुमार गर्ग*

क्या सयानी स्वतंत्रता हमें सयाना बनायेगी ?

● काशिनाथ त्रिवेदी

१५ अगस्त, १९७२ के दिन हम भारतवासी अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती मनाने जा रहे हैं। उस दिन हमें अपने इस प्राचीन देश में स्वतंत्र हुए २५ वर्ष पूरे हो चुकेंगे। कोई १९० सालों तक हमने अंग्रेजों की गुलामी भुगती। लगभग १०० सालों तक हम अपनी आजादी के लिए जी-जान से जूझे। कठिन-से-कठिन तप-त्याग और महान् से महान् बलिदानों की उज्ज्वल परम्परा के फलस्वरूप हमने अपने इस पर-पद-दलित, पीड़ित, शोषित और पराधीन देश में राजनीतिक स्वतंत्रता के दर्शन सन् १९४७ के अगस्त महीने की १५ तारीख के दिन पहली बार किये। वह दिन हमारे देश के वर्तमान इतिहास का एक धन्य और पुण्य दिन बना। एक पराधीन राष्ट्र को उस दिन स्वाधीन बनने का सुख और सौभाग्य प्राप्त हुआ। करोड़ों भारतवासियों के जीवन में उस दिन एक नयी आशा का संचार हुआ। लोगों ने उस दिन को अपनी धन्यता और कृतार्थता को अनेकानेक रूपों में प्रकट किया। भारतमाता के और महात्मा गांधी के जय-जयकार से इस देश की दसों दिशाएँ गूँज उठीं। लोगों के हर्ष और आनन्द का पार न रहा। उस दिन इस देश की करोड़ों-करोड़ सूनी और प्यासी आँखों ने अपने भावी जीवन के जो सुनहले सपने संजोये थे, २५ वर्षों की लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के बाद भी वे सपने अधिकतर तो सपने ही बने रहे हैं, इसकी कचोट आज हममें से कितनों के दिलों और दिमागों को कसमसा रही है, कौन कह सकता है ?

औसत आदमी : स्वतंत्रता की उमंग

२५ सालों में इस देश की स्वतंत्रता तो सयानी हो गयी, पर क्या इस देश का औसत नागरिक, जिसे संविधान ने स्वतंत्र और प्रभुता-सम्पन्न नागरिक बनाया है, सही मानों में स्वतंत्र और सयाना बन पाया है ? क्या उसे स्वतंत्र और सयाना बनाने का कोई व्यवस्थित और सुयोजित प्रयत्न और पुरुषार्थ करने का बीड़ा इन २५ वर्षों में किसी ने संकल्पपूर्वक-सातत्यपूर्वक, उठाया है ? सच तो यह है कि स्वतंत्रता के इन २५ वर्षों में इस देश के करोड़ो-करोड़ नागरिकों के दरवाजे दरवाजे पहुँच-कर उनको स्वतंत्रता का और लोकतंत्र का सही अर्थ समझाने-जँचाने का कोई भारतव्यापी काम हम अपने इस पुण्यदेश में लाखों-करोड़ों समझदार लोगों के सक्रिय सहयोग से लगातार कर ही नहीं पाये। जो काम पूरी लगन, मेहनत और समझदारी के साथ १५ अगस्त, १९४७ के दिन से ही समूचे देश में शुरू हो जाना चाहिए था, वह आजादी के २५ लम्बे साल बीत जाने पर भी कहीं ठिकाने से शुरू नहीं हो पाया है। यही कारण है कि हमारी आजादी तो सयानी बन गयी, पर आजाद माना जानेवाला औसत हिन्दुस्तानी सारी सरकारी और गैर-सरकारी छिट-फुट कोशिशों के बावजूद न स्वतंत्र और सयाना बन पाया, और न उसमें दानापन ही आ पाया। इस देश का यह औसत आदमी, क्या नया और क्या पुराना, अपनी आजादी की रजत-जयन्ती के मौके पर क्या सोचकर खुश हो और क्या देकर तथा क्या लेकर मन में सुख और सन्तोष का अनुभव करे ? रजत-जयन्ती मनाने की धुन में लगे लोगों के सामने आज सब सवालों में सबसे बड़ा सवाल कोई है, तो यही है कि इस देश के करोड़ों भूखे, प्यासे, नंगे, बेकार बे-धन्धे, बे-आसरा और बे सहारा लोग किस आशा और विश्वास को लेकर अपने प्यारे देश की आजादी की २५ वीं साल-गिरह आँखों में हँसी और दिलों में उमंग और उल्लास लेकर मनायें ?

रजत-जयन्ती का स्वरूप कैसा हो ?

यह सच है कि १५ अगस्त, १९७२ के दिन भारतीय स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती के नाम से सारे देश में और दुनिया के उन सब देशों में भी जहाँ-जहाँ भारतवासी जाकर बसे हैं, और जहाँ भारत को चाहनेवाले लोग बसे हैं, एक पर्व और त्योहार के-से वातावरण में तरह-तरह के आयोजनों द्वारा शहरों और कस्बों में बसे खुशहाल लोगों के बीच खुशियाँ मना ली जायेंगी, मिठाइयाँ बँट जायेंगी और यहाँ रात के अँधियारे में आँखों को चौंधियानेवाली रोशनी की जगमगाहट भी हो जायेगी, पर सवाल यह है कि क्या इतने भर से इस देश की आजादी की रजत-जयन्ती भलीभाँति मना ली जा सकेगी ? क्या इस बाहरी जगमगाहट से वे करोड़ों बुझे दिल और दिमाग जगमगा पायेंगे, जिन्होंने अपने जीवन के आरम्भ से आज तक अपने को सब प्रकार के अभावों और अभिशापों से ही घिरा पाया है ? रजत-जयन्ती का नाम सुनकर उनके मुरझाये दिल क्यों कर खिलेंगे ? उस दिन हम उन्हें कौन-सा दिलासा दे पायेंगे ? वह कौन-सी संजीवनी होगी, जो उस दिन उनमें नयी आशा का, नये जीवन का और नये पुरुषार्थ का संचार करेगी ?

क्या उस दिन इस देश का औसत नागरिक एक स्वतंत्र और लोकतंत्री देश के प्रभुता सम्पन्न नागरिक की सब प्रतिष्ठाओं से मण्डित होकर समान भूमिका पर कमाने, खाने और जीने की स्थिति में आ सकेगा ? क्या उसे सम्मान और समता-सूचक सम्बोधन से सम्बोधित करने की कोई उत्कट चेतना इस देश के बुद्धिजीवियों और सुखी-सम्पन्न तथा सत्ताधारी लोगों के चित्त में प्रकट होगी ? क्या उस दिन मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने और उसके साथ मानवता का व्यवहार करने की शुद्ध-बुद्धि इस देश के आम और खास लोगों के

जीवन में जागेगी? क्या उस दिन हमारा सुखी और सम्पन्न समाज अपने को पीछे रखकर, जो कोटि-कोटि भारतवासी अब तक दलित, पीड़ित, शोषित और वंचित बनकर जीते आ रहे हैं, उनके दलन, पीड़न, शोषण और अभाव को संकल्पपूर्वक समाप्त करने के लिए कमर कसकर मैदान में उतरने की तैयारी दिखायेगा? यदि अपनी स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती के दिन भी हम अपने देश में इन सब कामों के लिए कोई व्यापक चेतना नहीं जगा सके, तो निश्चय समझिए कि जिस तरह स्वतंत्रता के बाद १५ अगस्त, २६ जनवरी और २ अक्तूबर की तिथियों को हम इस देश में सूने दिल-दिमाग से और सूनी रीति से सिर्फ एक रस्म-अदाई के तौर पर मनाते चले आ रहे हैं, उसी तरह रजत-जयन्ती का दिन और साल भी सूने-सूने वातावरण में ही मना लिया जायेगा और फिर हम सबके देखते वह हमारे इतिहास की एक चीज बनकर रह जायगा। उससे न देश बनेगा, न देश का औसत आदमी ही बनेगा।

पर्वों और त्योहारों की तो भारत में कभी कोई कमी रही नहीं। साल के ३६५ दिन भी आज तो इनके लिए कम पड़ रहे हैं। पर सदियों से इन पर्वों और त्योहारों को सदा मनाते रहने पर भी भारतमाता की गोद में जन्म लेकर जीनेवाले मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी और पेड़-पौधे भी आज तो इस जमाने की आसुरी सम्पत्ति और सत्ता के मद से मत्त लाचार लोगों की संहार-लीला के शिकार बनते जा रहे हैं। हममें कौन हैं, जो संहार की इस आंधी बाढ़ को अपनी छाती अड़ाकर या बाँह फैलाकर रोकने की बात भी क्षणभर के लिए सोचते हों? क्या भारत जैसे पुण्यदेश और पुराणदेश की स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती करोड़ों-करोड़ भारत-वासियों के हाहाकार, चीत्कार, विलाप और सन्ताप की ज्वालामुखी आहों और सिसकियों के बीच मनाने का कोई उपयोग होगा? सोचने की बात है; समझने की बात भी है। कोई सोचना चाहेगा? समझना चाहेगा?

रजत-जयन्ती और सर्वोदय-जमात

और कोई चाहे सोचे, या न सोचे, इस देश में जिनकी आन्तरिक निष्ठा और आस्था सर्वोदय के विचार में और उसके कार्यक्रम में दृढ़ हुई है, जो अन्त्योदय के रास्ते सर्वोदय की मंजिल तक बढ़ने की कोशिश में लगे हैं, उन्हें तो गम्भीरता और उत्कटता के साथ इस सम्बन्ध में सोचना ही होगा। वे तो किसी प्रवाह-पतित और प्रदर्शन-प्रधान काम के फेर में पड़कर अपने असल रास्ते से दूर हटना और भटकना पसन्द नहीं करेंगे। रजत-जयन्ती के निमित्त से उनका अपना चिन्तन और दर्शन तो मूलगामी ही होना चाहिए। डाल-पत्तों की सिंचाई में या उनके साज-सिंगार में भला उन्हें क्या दिलचस्पी हो सकती है? उन्हें तो इस निमित्त से सीधे देश के दरिद्रनारायणों के पास ही पहुँचने और उनके नानाविध दारिद्र्य को समाप्त करने के भगीरथ काम में ही जुटने-जूझने की बात सोचनी चाहिए। हमारे मन में रजत-जयन्ती का असल काम तो यही है। पर हम हैं कितने? और आज हमारी स्थिति क्या है? दूसरों की तरफ देखने से पहले हमें अपनी तरफ देखना होगा और अपने को ठीक-ठाक करके फिर दूसरों की सेवा-सहायता के लिए कमर कसनी होगी। आज हमारे अपने बीच भी तो अनगिनत सवाल खड़े हो गये हैं। जब तक उन्हें हम अपने ही अन्दर ठीक से हल नहीं कर लेते, दूसरों के हमसे भी अधिक उलझे सवालों को हल करने की शक्ति और सुबुद्धि हममें कैसे आ पायेगी?

आज हमारे सामने खड़े सब प्रश्नों में सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि हम अपने बीच के अलगाव, बिखराव, टकराव और मनमुटाव को किस तरह दूर करें? वह कौन-सी विधि और युक्ति हो, जिससे सर्वोदय-विचार में निष्ठा रखनेवाले हम सब साथी एक रस और एक जीव होकर सोचने और काम करने की अपनी व्यक्तिगत और सामूहिक शक्ति का समुचित विकास कर सकें? यह स्पष्ट है कि आज ऐसी सुखद स्थिति हमारे बीच बनी नहीं है। हम सब अपनी-अपनी मर्यादाओं से बँधकर और अपनी अपनी रुचि-अरुचि से प्रभावित एवं प्रेरित होकर सर्वोदय के इस विशाल क्षेत्र में काम कर रहे हैं। हमारे बीच सुरुचि, सौहार्द, और सद्भाव की त्रिवेणी सदा बहती रहे और हम नित्यप्रति उसमें नहा करके नवजीवन और नवचेतन प्राप्त करते चलते जायं, ऐसी सौभाग्यपूर्ण स्थिति हमारी अब तक बन नहीं सकी है। इससे हमारे संकल्पित कामों की गति कुण्ठित हो रही है और हम अपने लक्ष्य से दूर हटते जा रहे हैं। हमारे अन्दर इतनी उलझनें खड़ी हो गयी हैं कि उनसे सुलझकर क्रान्ति-कार्य के लिए अपने को होम देने की हमारी भावना प्रबल ही नहीं हो पा रही है। रजत-जयन्ती का अवसर अवश्य ही एक ऐसा शुभ अवसर है, जो हमें पुनः अन्तर्मुख बनने और आत्मशोधन करने की प्रेरणा दे सकता है।

माना गया है कि सर्वोदय-विचार में आस्था रखनेवालों का संगठन रूढ़ अर्थों में संगठन नहीं, एक मुक्त भाईचारा-सा होता है, जिसकी मदद से हमें अपने मूल लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ने का बल मिलता है। इस संगठन में न कोई दावेदारी होती है, न उम्मीदवारी। यह सत्ता और सम्पत्ति का वाहक नहीं, सेवा, साधना और समर्पण का सम्बल है। इसमें जुड़े सब लोग आपस में एक-दूसरे के साथी हैं, सहयोगी हैं, परस्पर पूरक हैं, पोषक हैं। उनके बीच न होड़ की बात आती है, न तोड़-जोड़ की। उनमें न कोई नेता है न अनुयायी। सबकी एक समान भूमिका है, और वह है सेवक की, साधक

की, तथा समर्पित जीवन जीनेवालों की। नेतृत्व का विसर्जन और गणसेवकत्व का सृजन हमारी अपनी साधना का एक मुख्य लक्ष्य है। इस लक्ष्य की माँग है कि हम स्वेच्छा से नम्र बनें, स्वयं अपने लिए गौणता स्वीकार करें, अपनी अनिवार्यता को भूलें, अपनी वाणी को संयत बनायें तथा अपने आचार, विचार और उच्चार को सतत परिष्कृत करते रहने की दक्षता बरतें। सहज भाव से सबके साथी-सहयोगी बनकर अपने हिस्से में आयी जिम्मेदारी को अपनी पूरी भक्ति और शक्ति के साथ निबाहने में जुटे रहें। हमारी मूल प्रेरणा दैवी सम्पद् की है, आसुरी की नहीं।' आत्म-जय हमारा असल लक्ष्य है, दिग्विजय या विश्व-विजय नहीं। हमारा मिशन सब पर छा जाने का नहीं, बल्कि सबके बीच छिप जाने और सबके दिल-दिमाग में छप जाने का है। हमारी मूल प्रेरणा अन्तर्मुख जीवन जीने की है, बहिर्मुख जीवन की नहीं। निर्भयता, नम्रता, निर्मलता, निश्छलता, निरभिमानता, सरलता और सरसता में हमारी शोभा है। इनमें ही हमारी शक्ति छिपी है। मात्र विद्वता हमारा असल वैभव नहीं। विरक्ति और अनासक्ति हमारा मूल धन है। इसी के सहारे हम आगे बढ़ सकते हैं और ऊपर उठ सकते हैं। हमारे लिए विद्वता या पाण्डित्य की कमी, कमी नहीं, पर यदि हममें से सरलता सरसता और सहृदयता चली जाती है, तो हमारा सबकुछ चला जाता है। सर्वोदय की मूल प्रेरणा करुणा की, सरलता की, समता की और सहृदयता की प्रेरणा है। उससे हटकर चलने में हम अपने 'स्व' को खो बैठते हैं। हम अपनी मूल भूमिका से ही दूर भटक जाते हैं।

हमें लगता है कि भारतीय स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती को निमित्त बनाकर हम सब अन्तर्मुख बनें। लोक-सेवक के नाते हम अपने रूप-स्वरूप के बारे में तटस्थ भाव से सोच सकें, और अपनी व्यक्तिगत और सामूहिक दुर्बलताओं से ऊपर उठने का कोई रास्ता खोज सकें, तो उससे हम अपनी सेवा-शक्ति और कार्य-शक्ति में नया निखार ला सकेंगे और अपने मिशन को सफल बनाने की दिशा में हमारे पैर भी मजबूती से उठ और बढ़ सकेंगे।

आज तो हममें तीव्रता, एकाग्रता, तातत्य और तल्लीनता की कमी स्पष्ट ही दीख रही है। हमारी निष्ठाएँ भी बहुत दृढ़ और सुस्पष्ट नहीं हैं। साधनामय और शुद्ध-बुद्ध जीवन जीने की रुचि-वृत्ति को भी हम अपने अन्दर पुष्ट नहीं कर पा रहे हैं। हमारा चिन्तन और जीवन भी खण्डित होकर रह गया है। वैचारिक क्षेत्र में हम क्रान्ति की बात कहते-सुनते जरूर हैं, पर समग्र क्रान्ति को पुष्ट करनेवाला जीवन जीने की उत्कटता और सजगता हम अपने में ला नहीं पाते। खान-पान, रहन-सहन, बोल चाल, वेष-भूषा, पर्व-त्योहार, ब्याह-शादी आदि के मामलों में क्रान्ति को पुष्टि करनेवाले मूल्यों से चिपटकर सोचने और जीने की जिस प्रवृत्ति को हम अपने बीच बढ़ाते चले जा रहे हैं, उसके कारण समग्र और अहिंसक क्रान्ति-सम्बन्धी हमारा सारा चिन्तन ही असंगत बनता जा रहा है। हमें लगता है कि प्रश्न के इस पहलू पर भी हमें अन्तर्मुख होकर सोचना हो चाहिए। इस सम्बन्ध में हम अपना कोई पैमाना तय नहीं करेंगे, तो जिस समग्र और शान्त-क्रान्ति की और लोक-क्रान्ति की बात हम कहते-सोचते हैं, वह कभी सिद्ध हो ही नहीं सकेगी और न हम अपने को सही अर्थों में स्वतंत्र भारत की रजत-जयन्ती के सच्चे सन्देशवाहक ही बना पायेंगे।

भारत की स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती का महापर्व इस देश की भूखी, प्यासी, नंगी, बेकार, बीमार, बे-सहारा और बे-आसरा बनकर जीनेवाली दीन-दुखी जनता की निःस्वार्थ और निःसंग सेवा-सहायता का, शिक्षा-दीक्षा का, और सम्मान-सत्कार का महापर्व बन सके, इसके लिए हम सर्वोदयवालों को तो प्रायश्चित्तपूर्वक सोचना ही चाहिए। इसे हम अपना विशेष दायित्व मानें और रजत जयन्ती वर्ष को इस तरह मनाने की तैयारी में लगें कि जिससे गाँव-गाँव और नगर-नगर में उखड़ा-उजड़ा जीवन जीने-वाले अपने उपेक्षित और अभाव-ग्रस्त भाइयों, बहनों और बच्चों के चेहरों पर नया जीवन जी लेने की एक आशा छलक सके और विश्वास गड़ सके। रजत जयन्ती-वर्ष के चलते हम अपनी शक्ति-भक्ति के अनुसार अपने सेवा-क्षेत्र में बसे दरिद्रनारायणों में से कुछ के चेहरों पर भी नया और सही जीवन जी लेने की चमक और दमक पैदा कर सकें, तो हमें विश्वास है कि हम अपने पुण्यदेश की स्वतंत्रता की सच्ची रजत-जयन्ती मनाने का भरपूर सुख और सन्तोष अवश्य ही लूट सकेंगे। तभी हम छाती पर हाथ रख-कर यह कहने की स्थिति में होंगे कि हमारी स्वतंत्रता ही सयानी नहीं हुई है, नागरिक के नाते हम में भी सयानापन आया है। ●

बागियों का आत्म-समर्पण : विवाद और स्पष्टीकरण

● देवेन्द्र कुमार गुप्त

मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द सेठी ने अपने एक बयान में बागियों के आत्म समर्पण को लेकर कुछ ऐसे अशोभनीय प्रसगों का उल्लेख किया जिससे सर्वोदय के कार्यकर्ताओं और सरकार के बीच के भेद अखबारों में चर्चा के विषय बने और इसपर कई दैनिक अखबारों ने अग्रलेख भी लिखे। इस प्रसग पर शान्ति मिशन के उपाध्यक्ष श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त ने इस आशय से एक प्रेस वक्तव्य से स्पष्टीकरण किया है ताकि गलतफहमियाँ दूर हो सकें।—स०]

समर्पणकारी डाकुओं को सभ्य समाज में लाने, उनके और उनके द्वारा सताये गये परिवारों की पुनर्स्थापना करने और बागी-समस्या की ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक जड़ों को समाप्त करने का कार्य इतना बड़ा है कि उसमें छोटे-मोटे विवादों को कोई जगह नहीं है। सदियों पुरानी इस समस्या के हल की एक शुरुआत हुई है और भारत की इस महान उपलब्धि, जो केन्द्रीय शासन तथा सम्बन्धित राज्य शासनों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के संयुक्त प्रयास से सम्भव हुई है, किसी प्रकार बिगड़ जाय यह बड़े खेद का विषय होगा। इस सारे कार्य में परस्पर विश्वास का ही आधार है। एक ओर डाकुओं और सर्वोदय कार्यकर्ताओं के बीच वचन का विश्वास और दूसरी ओर कानून-कायदों की परम्पराओं से बँधे शासन के चानकों का नये प्रयोग में विश्वास, इस वातावरण में कोई भी अविश्वास का वचन बड़ी गहरी प्रतिक्रियाएँ पैदा कर सकता है।

मध्य-प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द सेठी और सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने इस संयुक्त सफलता के लिए एक-दूसरे को बार-बार बधाई दी है। श्री जयप्रकाशजी दोहराते रहे हैं कि सेठीजी, मध्य प्रदेश पुलिस तथा उनके शासन की दूरदर्शिता और संयम का ही नतीजा है कि यह कार्य सर्वोदय सेवकों के सहयोग से सम्पन्न हो सका। फिर भी जो गलतफहमी पिछले दिनों श्री सेठीजी के अखबारों में छपे बयानों से पैदा हो गयी है उसके कारण सवा चार सौ के करीब ऐसे मानव जिन्होंने सभ्य नागरिक जीवन का रास्ता स्वयं ही बन्द कर लिया था और जो आज प्रायश्चित करके कानून के सामने अपने को समर्पित कर चुके हैं, वे अपने तथा अपने परिवार के भविष्य के प्रति चिन्तित हो सकते हैं। उनके प्रति सहानुभूति रखते हुए सेठीजी के वक्तव्यों में कुछ तथ्य गलत जानकारी के कारण आ गये हैं इसलिए उनका स्पष्टीकरण आवश्यक हो गया है। निम्नलिखित मुद्दों का स्पष्टीकरण इस प्रकार है :

विश्वास का उल्लंघन—अखबारों में श्री सेठीजी का यह आरोप प्रकाशित हुआ है कि मिशन के कार्यकर्ता 'बी० बी० सी०' और 'टाइम' पत्रिका के सवाददाताओं को केशरिया रूमाल पहनाकर चोरी-छिपे पगारा ले गये और बी० बी० सी० के लिए टेलीविजन फिल्म खींचने में मदद की और इस तरह गृहमन्त्रालय के तत्वावधान में हुई मुख्यमंत्रियों की बैठक के करार का उल्लघन किया। तथ्य इस प्रकार है :

'बी० बी० सी०' और 'टाइम' पत्रिका के सवाददाता १५ अप्रैल १९७२ को अन्य पत्रकारों की तरह ही अपनी मर्जी से जौरा आये थे जबकि ८२ डाकुओं का पहला दल १४ अप्रैल को आत्म-समर्पण कर चुका था और इसकी खबरें और फोटो देशभर के अखबारों में छप चुके थे। कई अखबारों के सवाददाता, फोटोग्राफर और ग्वालियर तथा आगरा के व्यवसायी फोटोग्राफर श्री जयप्रकाश नारायण के ११ अप्रैल के पगारा पहुँचने के पहले ही धोरेरा गाँव हो आये थे जहाँ के शान्ति-क्षेत्र में डाकू समर्पण के लिए इकट्ठे हो रहे थे। इन सवाददाताओं और फोटोग्राफरों को मिशन ने नहीं बुलाया था न पगारा पहुँचने में कोई मदद की थी और न इनको रोकने का कोई साधन उसके पास था। दिल्ली, ग्वालियर और भोपाल के पत्रकार इस तथ्य से परिचित हैं। पगारा में चारों दिन हजारों लोग आ-जा रहे थे और उन्हें रोकना पुलिस के लिए भी सम्भव नहीं था। वहाँ किसी को चोरी-छुपे ले जाने की जरूरत ही नहीं थी।

'बी० बी० सी०' और 'टाइम' पत्रिका के सवाददाता जब १५ अप्रैल को पगारा पहुँचे तो माधोसिंह से कई पत्रकार बात कर रहे थे। दूसरे कई पत्रकारों के साथ 'बी० बी० सी०' और 'टाइम' के सवाददाता ने माधोसिंह से बातचीत की और बाद में फोटो खीचे। इन सवाददाताओं के पास कोई केसरिया रूमाल नहीं था। १६ अप्रैल को डाकुओं के दूसरे दल के समर्पण के बाद श्री सेठीजी ने श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में जब जौरा के सर्किट हाउस में पत्रकार परिषद को सम्बोधित किया था तब 'बी० बी० सी०' द्वारा टेलीविजन फिल्म लिये जाने का मामला उठा था और 'बी० बी० सी०' के सवाददाता ने वहीं उठकर कहा था कि उसने 'बी० बी० सी०' के लिए कोई फिल्म नहीं ली है।

१७ अप्रैल के 'टाइम्स आफ इण्डिया' में यह प्रकाशित भी हुआ कि 'बी० बी० सी०' ने कोई फिल्म नहीं ली है। इस पर भी जब सेठीजी का यह कथन अखबारों में छपता रहा कि फिल्म ली गयी है तो 'बी० बी० सी०' के दिल्ली कार्यालय ने मध्य प्रदेश के सूचना सचालक और बाद में स्वयं श्री सेठीजी को सूचित किया कि 'बी० बी० सी०' ने न कोई फिल्म खींची है न प्रसारित की है।

श्री जयप्रकाश नारायण और प्रधान मंत्री : अखबारों में श्री सेठीजी की यह कहते बताया गया है कि ग्वालियर की एक आमसभा में श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा, "किसी घटना के प्रचार-प्रसार को रोकने वाली प्रधान मंत्री कौन होती हैं?" तथ्य यह है कि जे० पी० ने हर आत्म-समर्पण के समय केन्द्रीय शासन और प्रधानमंत्री के सहानुभूतिपूर्ण रुख की सराहना की है और वे अब भी इस सम्बन्ध में प्रशंसा का रुख रखते हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण का १ जून '७२ का भाषण जो टेपरेकार्ड किया गया है और उसकी अविकल प्रतियाँ स्वयं जे० पी० ने श्री सेठीजी और राज्य गृहमंत्री श्री पन्तजी को ७ जून को भेज दी थीं। श्री जयप्रकाश नारायण इन आरोपों का उत्तर दे रहे थे कि सर्वोदय वालों ने डाकुओं को हीरो बनाया है और कह रहे थे कि सन् १९६० में विनोबाजी को भी इसी आरोप का सामना करना पड़ा था। जे० पी० ने कहा, "हम यह नहीं मानते कि हमने डाकुओं को हीरो बनाया। बारह साल पहले जब विनोबाजी ने २० डाकुओं का आत्म-समर्पण कराया तब से यह आरोप लगातार लगाया जा रहा है।" और इसी विशिष्ट सन्दर्भ में बड़े दर्द के साथ उन्होंने आगे कहा, "तो हम इस बात से बिलकुल इनकार करते हैं—चाहे सेठीजी नाराज हों, इन्दिराजी नाराज हों, चाहे पुलिसवाले नाराज हों—विनोबाजी के जमाने में रुस्तमजी ने जो बयान दिया था वह कोई विनोबाजी की शान के मुताबिक नहीं था। कभी हम मानते नहीं कि हमने उनको ग्लैमराइज किया है, हीरो बनाया है। हमने उनको आदमी बनाया है, भाई बनाया है। हमारी पत्नी ने उनके माथे पर तिलक लगाया है और हाथ में राखी बाँधी है तथा अगर यह भेद खोलने से नुकसान न हो जाये, हमारे कमिश्नर साहब का, डी० आई० जी० साहब का, तो इनकी पत्नियों ने आकर राखी बाँधी है पगारा में।"

मुकदमें : श्री सेठीजी ने यह भी कहा बताते हैं कि 'सर्वोदयवाले अब कह रहे हैं कि समर्पणकारी डाकुओं पर मुकदमें न चलाये जायें।' इस सम्बन्ध में तथ्य यह है कि श्री जयप्रकाश नारायण से लेकर छोटे-से-छोटा कार्यकर्ता समर्पणकारी डाकुओं को समझा रहा है कि वे अदालत में अपने अपराध कबूल करें। इससे पुलिस का काम तो आसान होगा ही आत्म-समर्पण की प्रक्रिया का सही परिणाम भी निकलेगा। कानून से जो कार्यवाही उन पर होनी चाहिए उसके लिए उनको तैयार करने की कोशिश हो रही है। यह जे० पी० के १४ अप्रैल के भाषण से स्पष्ट है। "आत्म-समर्पण कर दिया। यह जानकर नहीं कि उनको माफी मिल जायेगी। यह जानते हुए कि वे जेल जायेंगे, उन पर मुकदमा चलेगा, उन्हें सजा मिलेगी। वे कहते हैं कि हमने जो किया है उसका फल भुगतेंगे। मैंने अपनी तरफ से आपकी तरफ से नहीं, अपनी तरफ से, आश्वासन दिया है कि चाहे कोई भी अदालत, सेशन जज, हाईकोर्ट, उनको मौत की सजा दे, मेरा आश्वासन है कि उनको फाँसी नहीं होगी।" इस नीति में आज भी कोई अन्तर नहीं आया है।

सरकारों की भूमिका : सरकारों और खासकर मध्य प्रदेश की सरकार और पुलिस के सहयोग की श्री जयप्रकाश नारायण से लेकर मिशन के सभी लोगों ने सराहना की है। माधोसिंह जब पिछले साल पहली अक्तूबर को जे० पी० से पटना में मिले तो उन्हें भी जे० पी० ने यही कहा था कि जबतक सरकारों का सहयोग नहीं मिलेगा वे यह काम नहीं उठायेंगे। इस काम की शुरुआत करने के पहले जे० पी० गृह राज्य-मंत्री श्री पन्तजी, उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री कमलापति त्रिपाठी और मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री श्यामाचरण शुक्ल से मिल चुके थे और उनके सहयोग के आश्वासन पर ही काम शुरू किया था। ग्वालियर के जिस भाषण में कहा गया है कि जे० पी० ने सरकारों की आलोचना की उसी में उन्होंने कहा, "मैंने अपने को बराबर पीछे रखा है, बराबर मैंने धन्यवाद दिया है सेठीजी को। भूरि-भूरि प्रशंसा और धन्यवाद। हर सभा में और हर मंच से, आज देता हूँ, हृदयपूर्वक देता हूँ। इनके सहयोग, इनके अधिकारियों के सहयोग के बगैर यह काम होता नहीं। इनके अधिकारियों के हथियार नहीं, इनकी आटोमेटिक मशीनगनें नहीं, इनका सहयोग मिला है। यह तो हम शुरू से कहते हैं कि 'ज्वाइण्ट वेंचर' है, यह हमारा मिला-जुला काम है।"

आशा है यह स्पष्टीकरण सही प्रकाश में लिया जायगा और किसी भी प्रकार की दुर्भावना बनने न पाये इस सम्बन्ध में पूरा प्रयास होगा तथा शासन और सर्वोदय का यह संयुक्त मोर्चा सफल नतीजे ला सकेगा।

नयी दिल्ली, १९ जुलाई, '७२

सर्वोदय मित्र मण्डल की बैठक

दिनांक २७।६।७२ को रात्रि ८-३० बजे देवनगर की सामाजिक कार्यकर्त्री विजय लक्ष्मी शर्मा के निवास स्थान पर करौल बाग सर्वोदय मित्र मण्डल की दूसरी मासिक बैठक हरिकिशन जी की अध्यक्षता में हुई। बैठक में इस क्षेत्र के शिक्षा, सामाजिक सेवा और मजदूर क्षेत्र के विभिन्न १८ भाई-बहन उपस्थित रहे।

प्रारम्भ में दिल्ली प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री वसन्त व्यास ने ग्रामीण क्षेत्र और शहरी क्षेत्र में चलाये जाने वाले सर्वोदय कार्यक्रमों की रूपरेखा बतायी। तत्पश्चात् आगे के कार्यक्रम की चर्चा की गयी। ●

गांधी और विनोबा

● बनारसी दास चतुर्वेदी

महात्मा गांधीजी के विषय में बहुत-सी किताबें निकली हैं और भविष्य में भी निकलती रहेंगी, लेकिन आचार्य विनोबाजी की पुस्तक 'गांधी : जैसा देखा समझा' अपना अलग ही महत्त्व रखती है। इस पुस्तक का संकलन और सम्पादन गुजराती में श्री कान्ति भाई शाह ने किया है। यह पुस्तक सरसरी निगाह से पढ़ने की नहीं है, बल्कि स्वाध्याय के तौर पर अध्ययन करने की है। एक बात ध्यान देने योग्य है, वह यह, कि विनोबाजी किसी के भी अन्ध भक्त नहीं। वे स्वतंत्र चिन्तन करते हैं और अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व भी रखते हैं। एकाध जगह उन्होंने महात्माजी की स्पष्ट आलोचना भी की है। उदाहरण, के लिए उन्होंने यह बात लिखी है कि अन्य ग्यारह व्रतों के साथ बापू ने 'स्वाध्याय' पर जोर नहीं दिया। उनके कार्यक्रम की यह न्यूनता विनोबाजी की तीक्ष्ण दृष्टि से बच नहीं सकी। विनोबाजी यह नहीं चाहते कि हम लोग बिना सोचे-समझे गांधीजी का अन्धानुकरण करते रहें। जमाना बदल रहा है और तेजी से बदलता जायगा। ऐसी स्थिति में गांधीजी के सिद्धान्तों की खूंटी से बंधे रहना ठीक नहीं। विनोबाजी ने एक और बात भी स्पष्ट कर दी है कि गांधीजी निरन्तर प्रगतिशील थे और जो लोग यह कहते हैं कि 'यदि आज गांधीजी जीवित रहते तो यह करते, वह करते' वे भयंकर भूल करते हैं। विनोबाजी लिखते हैं : "यह भलीभांति समझ लेने की बात है कि गांधीजी पल-पल विकसित होते रहे। अगर इसे हम नहीं समझते तो गांधीजी को जरा भी नहीं समझ सकेंगे। वे तो, रोज-रोज बदलते, पल-पल विकसित होते रहे हैं। वह आदमी ऐसा नहीं था कि पुरानी किताब के संस्करण ही निकलता रहे। कोई नहीं कह सकता कि आज वे होते तो कैसा मोड़ लेते। उन्होंने अमुक समय अमुक बात कही थी, इसलिए आज भी वैसे काम को आशीर्वाद ही देंगे, ऐसा अनुमान लगाना अपने मतलब की बात होगी। मैं कहना चाहता हूँ कि ऐसा अनुमान लगाने का किसी को हक नहीं। 'लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति'—लोकोत्तर पुरुष के चित्त की थाह कौन पा सकता है? इसलिए गांधीजी आज होते तो क्या करते और क्या न करते, इस तरह नहीं सोचना चाहिए।'

विनोबाजी बापू के कितने ऋणी थे। यह बात इस ग्रंथ में भली प्रकार स्पष्ट कर दी गयी है। यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि विनोबाजी ने उस ऋण को चक्रवृद्धि ब्याज सहित चुका दिया। यदि आज भारतवर्ष में बापू के 'सच्चा नाम-लेवा' हैं तो वे विनोबाजी, काका कालेलकर और जयप्रकाशजी जैसे अल्प संख्यक व्यक्ति ही हैं। विनोबाजी ने इस बात पर जोर दिया है कि बापू में वात्सल्य-भाव की प्रधानता थी। कार्यकर्ताओं के वे पिता ही नहीं, माता भी थे।

इस ग्रन्थ में अनेक प्रेरणादायक वाक्य यत्र-तत्र छिटके पड़े हैं। विनोबाजी ने जो कुछ पढ़ा है उसे उन्होंने भलीभांति हृदयंगम भी कर लिया है, और वे अपने स्वाध्याय से निकाले हुए रत्नों को दूसरों को भी दिखलाते हैं। एक जगह पर उन्होंने लिखा है—'शंकराचार्य का वाक्य मुझे हमेशा याद आता है कि मनुष्य के परम भाग्य तीन होते हैं. १—मानव-देह की प्राप्ति, २—मुमुक्षुत्व-मुक्ति की छटपटाहट और ३—किसी महापुरुष के आश्रय का लाभ : मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुष-संश्रयः।'

'शंकराचार्य के इस वाक्य पर विचार करता हूँ तो मेरा हृदय आनन्द से उछलने लगता है। मैं परम धन्य हूँ कि मानव-देह मिली, मुक्ति की धुन लगी और महापुरुष का सत्संग मिला। सन्त-महात्माओं की वाणी पुस्तकों में पढ़ना एक बात है और उसका प्रत्यक्ष सत्संग करना, उनके मार्ग-दर्शन में काम करना, प्रत्यक्ष उनका जीवन देखना अलग बात है। मुझे यह भाग्य प्राप्त हुआ, इससे मैं धन्य हो गया।'

कई जगह विनोबाजी ने बड़े मौलिक विचार प्रस्तुत किये हैं। संस्थाएँ किस प्रकार निष्प्राण और निस्तेज बनती जाती हैं, इस पर उनके विचार बड़े उत्तेजक हैं। उदाहरण के लिए उन्होंने रवीन्द्र के शान्ति-निकेतन, मालवीयजी के हिन्दू विश्वविद्यालय और रामकृष्ण परमहंस के आश्रम तथा गुरुकुलों का जिक्र किया है और महात्माजी की संस्थाओं का मूल रस कैसे सूख रहा है इसका भी उल्लेख किया है। उन्होंने एक जगह लिखा है—"अब मेरे सामने सवाल उठता है कि क्या स्फूर्ति-क्षय कालानुक्रम से होता रहता है? इसमें कोई शक नहीं कि वेगक्षयकारी सामर्थ्य काल में होती है, इसलिए बार-बार गति देनी पड़ती है। चैतन्य का स्पर्श बार-बार होना चाहिए तभी गति मिलती है। घड़ी को बार-बार चाभी देनी पड़ती है। इससे यह समझ सकते हैं कि कालानुक्रमेण स्फूर्ति का क्षय होगा। लेकिन वह इतना जल्दी अपेक्षित नहीं था। यह तो २०-२५ वर्षों के अन्दर ही पहले की स्फूर्ति एकदम लुप्त हो रही है।

इसके कारणों पर विचार करने पर दो-तीन बातें ध्यान में आती हैं। हमारी संस्थाओं का देखते-देखते जीवन-रस सूखता जा रहा है, इसका कारण है स्वाध्याय का अभाव। हम कर्मयोग में पड़े हैं। कर्मयोग में उसके लाभ के साथ-साथ हानि भी होती है। शंकराचार्य, रामानुज, बुद्ध, महावीर आदि के अनुयायियों के जो कुछ दोष थे, वे हमने सुधारे, यह बात सही है। हमने कर्मयोग पर अधिक भार दिया। यह सुधार जरूरी था। लेकिन वे लोग आत्मज्ञान में जितने गहरे उतरते

थे, उतने गहरे हम नहीं उतरते। इससे कार्य के विकास के साथ-साथ हमारी विचार-निष्ठा और तत्व-निष्ठा घटती जाती है। हमारे कामों की गठरी भारी बनती जाती है, लेकिन उसका तत्व उड़ रहा है। मनुष्य चला जाता है, रास्ता रह जाती है। फिर वह निस्तेज, फीकी पड़ती जाती है, दृष्टि छिछली बनती जाती है।'

इस पुस्तक का 'गांधी-विश्वास या आत्म-विश्वास' नामक अध्याय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विनोबाजी परमुखापेक्षी नहीं हैं। वे स्वतन्त्र विचार तथा आत्म-विश्वास, स्वाध्याय और चिन्तन को बहुत महत्व देते हैं। वे यह नहीं चाहते कि हम लीक को पीटते रहें। आजकल सर्वोदय विचारधारा में शिथिलता आ गयी है। उसके कारण भी उन्होंने बतलाये हैं। इसकी मुख्य वजह उन्होंने यह बतलायी है कि हम लोगों में स्वाध्याय का अभाव है और हम प्रश्नों की गहराई में नहीं उतर सकते। मिल-जुलकर सामूहिक रूप से कार्य करने की प्रवृत्ति हम लोगों में जाग्रत नहीं हुई। विनोबाजी ने लिखा है-'यदि बुद्ध भगवान ने जीते-जी यह कह दिया होता कि सब आप लोग एक समुदाय बनाओ और विचार करो। जिस विषय में सब एक मत हों, वह करो। मैं केवल साक्षीरूप रहूँगा। कभी मेरी सलाह पूछो आवश्यकता हो तो आऊँगा अवश्य, लेकिन वह बन्धनकारक न होगा। आप सबको ही मिल-जुलकर करना है।' उन्होंने ऐसा किया होता तो उनके बाद चार शिष्य बुद्ध के नाम पर ही जिस तरह एकदम भिन्न-भिन्न चार सम्प्रदायों में बँट गये, उस तरह वे कदाचित् न बँटे होते।

बुद्ध ने ऐसा नहीं किया, इससे उनके निर्वाण के बाद उनके शिष्यों के बीच तीव्र मतभेद पैदा हो गये—चार पन्थ खड़े हो गये। चारों कहते कि 'मुझे भगवान् बुद्ध ने ऐसा सिखाया है।' एक ने कहा, 'दुनिया पूर्ण सत्य है।' दूसरे ने कहा, 'नहीं शून्य है।' तीसरे ने कहा, 'विज्ञान है।' दर्शन का सारा झमेला बुद्ध के नाम पर चला। हजार वर्ष तक उनके बीच झगड़े चले। इसलिए निर्बलता आयी और बाद में शंकराचार्य के प्रहार से तो एकदम सारा टूट गया।

विनोबाजी ने यह पुस्तक अत्यन्त श्रद्धापूर्वक लिखी है। उनका एक वाक्य पढ़ लीजिए—'कुछ निमित्तों से मैं उनके पास पहुँच गया। उन्होंने मुझ जैसे असभ्य मनुष्य को सभ्य तो नहीं, लेकिन सेवक जरूर बना दिया। मेरे भीतर के क्रोध के ज्वालामुखी का और दूसरी अनेक वासनाओं की बड़वाग्नि का शमन कर देनेवाले तो बापू ही थे। आज मैं जो कुछ हूँ, वह सब बापू के आशीष का चमत्कार है। बहुत-बहुत बातें मैंने बापू के चरणों में रहकर सीखी।'

किसी विचारशील पाठक के लिए इस ग्रन्थ से अनेक प्रेरणाएँ मिल सकती हैं। सन् १९३८ में विनोबाजी का शरीर अत्यन्त क्षीण हो गया और वजन सिर्फ ८८ पौण्ड रह गया था। उस समय बापू ने उनको बुला भेजा और बहुत-सी बातचीत करने के पश्चात् कहा—'तुम्हें सारा चिन्तन बन्द करना पड़ेगा। सारे विचार छोड़ देने पड़ेंगे। आश्रम, काम अथवा किसी भी विषय का विचार नहीं करना।' विनोबाजी ने उनकी आज्ञा का अक्षरशः पालन किया और पौष्टिक आहार लिया तथा सारा समय शान्त एवं प्रसन्नचित्त से बिताया। नतीजा यह हुआ कि दस महीने में उनका वजन ८८ पौण्ड से बढ़कर १२८ पौण्ड हो गया।

यह ग्रन्थ विनोबाजी के संस्मरणों, लेखों तथा प्रवचनों से लेकर बनाया गया है। पहले गुजराती में छपा था और अब हिन्दी में आ गया है। ग्रन्थ की हिन्दी भाषा में प्रवाह है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि आचार्य विनोबाजी ने इसे देखकर मान्यता प्रदान कर दी है। गांधी और विनोबा दोनों के विचारों को समझने में यह पुस्तक अत्यन्त सहायक है। इसका सन्देश निराशा का नहीं आशा का है। अन्त में विनोबाजी का एक वाक्य उद्धृत किया जाता है—'विचारों की हमेशा छानबीन होती रहनी चाहिए। सभी प्रेरक विचारों का अध्ययन हो। उनमें अविचार, दुर्विचार के जो अंश हों, उनका निवारण किया जाय। इस तरह विचारों का अनुशीलन होता रहेगा, तो जो स्फूर्तिप्रद मालूम पड़ रहा है, वह मालूम नहीं पड़ेगा।' हमारी समझ में यही इस पुस्तक का महत्वपूर्ण सार है। ●

सहरसा में २३ जून से ३१ जुलाई तक अभियान की फलश्रुतियाँ

प्रखण्ड	कार्यकर्ता सहयोगी	कार्यक्षेत्र पंचायतें	ग्राम-सभाएँ	ग्रामसभाएँ	समर्पणपत्र भूमिवान	समर्पणपत्र भूमिहीन	बीघा कट्ठा प्राप्त बी०क०धू०	बीघा कट्ठा वितरित बी०क०धू०	भूदान वितरण बी०क०धू०	दाता	आदाता	साहित्य बिक्री रु० पै०	पत्रिका के ग्राहक
मुरलीगंज	२७।५३	२४		३	४०६	९२०	१२-०४-०८	१२-०४-०८	५१-१४-१८	८१	१२०	४६ ३०	२
छातापुर	२३	८	३१	९	३८८	२४३	९३-१८-१४	५४-०२-१०	२७-००-००	६६	११६	४९ ६०	
सलखुआ	११	६	१५	१९	२५४	१२०	१५-००-००						
महिषी	३	१	२		४०	१०	१०-००-००	१०-००-००		३०	६०	६२५ ००	३
	६४	३९	४८	३१	९८८	१२९३	११०-०२-०२	७६-०६-१८	८२-१४-१८	१८०	३११	७२० १०	५

आन्दोलन के समाचार

मध्य प्रदेश का छह सूत्री कार्यक्रम

इन्दौर, ६ जुलाई। मध्य प्रदेश गांधी स्मारक निधि के तत्वावधान में दिनांक २ और ३ जुलाई को मध्य प्रदेश की प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं का एक सम्मेलन इन्दौर में किया गया। सम्मेलन में स्वाधीनता की रजत-जयन्ती के सिलसिले में व्यापक विचार-विमर्श के बाद छह-सूत्री कार्यक्रम सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया, जो इस प्रकार है :

(१) चम्बलघाटी और बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बागियों के आत्म-समर्पण से अहिंसा की शक्ति का दर्शन हुआ है। लेकिन इस महान उपलब्धि के संरक्षण और संवर्द्धन के लिए बागी और बागी-पीड़ित परिवारों के पुनर्वास और क्षेत्र में स्थायी शान्ति के लिए व्यापक परिश्रम करने की आवश्यकता है। क्षेत्र में स्थायी शान्ति के लिए ग्राम-सभाओं का गठन और उनके द्वारा शान्ति-रक्षा, बागियों के परिवारों के पुनर्वास आदि का कार्य करने के लिए कार्यकर्ताओं की और आर्थिक साधनों की बहुत आवश्यकता है। प्रदेश की सभी रचनात्मक संस्थाओं को इस महत्त्वपूर्ण कार्य को अपना कार्य मानना चाहिए और शान्ति-मिशन को सब प्रकार की सहायता प्रदान करनी चाहिए।

(२) रचनात्मक संस्थाओं को अपनी सम्मिलित और संगठित शक्ति लगाकर प्रदेश में रचनात्मक कार्य का स्वरूप प्रस्तुत करना चाहिए। प्रदेश की सभी प्रमुख संस्थाएँ मिलकर इन्दौर क्षेत्र को ऐसा सघन क्षेत्र विकसित करें और योजनाबद्ध रूप से ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य, खादी-ग्रामोद्योग, भंगी-मुक्ति, मद्य-निषेध, शान्ति-सेना, स्त्री-शक्ति-जागरण आदि रचनात्मक कार्य उठायें। इसके लिए रजत-जयन्ती वर्ष में योजनाबद्ध रूप से कार्य किया जाना चाहिए।

(३) खादी-आयोग द्वारा-प्रस्तावित खादी पहननेवाले परिवारों के पंजीकरण और ऐसे परिवारों की संख्या बढ़ाने की योजना सब लोग स्वीकार करते हैं। आशा है, रजत-जयन्ती-वर्ष में प्रदेश के लिए निर्धारित ८,००० खादी-परिवारों को बनाने का लक्ष्य सब लोग मिलकर पूरा कर सकेंगे और आगे ऐसा प्रयत्न कर सकेंगे जिससे प्रदेश के प्रत्येक गाँव में कम-से-कम एक खादीधारी परिवार बन सके।

(४) प्रदेश भर में गाँव-गाँव ग्राम-स्वराज्य का विचार पहुँचाने के लिए व्यापक कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए। इसके लिए प्रदेश के प्रत्येक-जिले में "ग्राम स्वराज्य-सम्मेलन" आयोजित किये जायँ और सभी जिलों में पदयात्राओं द्वारा गाँव-गाँव विचार पहुँचाया जाय।

(५) प्रदेश के शहरी क्षेत्र में खादी, शान्तिसेना और भंगी-मुक्ति तथा ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामदान, खादी-ग्रामोद्योग और मद्य-निषेध के कार्य को प्राथमिकता देनी चाहिए। और रजत-जयन्ती वर्ष में "अपना गाँव अपना राज" की भूमिका देश के सामने रखनी चाहिए। अर्थात् लोग स्वयं अपनी शक्ति से अपना कारोबार चलायें ऐसा अभिक्रम जनता में पैदा करना चाहिए।

(६) प्रदेश में ग्रामस्वराज्य के लिए लोक चेतना जाग्रत करने के लिए "ग्राम-स्वराज्य-ज्योति" लेकर पदयात्रा करने का सुझाव है।

ये सारे कार्यक्रम जिला सर्वोदय मण्डल, नगर सर्वोदय मण्डल, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समितियों और रचनात्मक संस्थाओं के सेवा-केन्द्रों के माध्यम से चलाये जायँगे। इसके लिए सब रचनात्मक संस्थाओं के सेवा-केन्द्र समग्र दृष्टि से काम करेंगे और अपनी-अपनी विशिष्ट प्रवृत्ति चलाते हुए अन्य रचनात्मक कार्यों में भी यथाशक्ति पूरी-पूरी मदद करेंगे।

उक्त सम्मेलन की प्रथम दिन की अध्यक्षता सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने तथा दूसरे दिन श्री दादा भाई नाईक ने की। चम्बलघाटी शान्ति मिशन की ओर से श्री एम० एन० सुब्बाराव ने विशेष रूप से भाग लिया।

चम्बल घाटी शान्ति मिशन के साथियों का स्वागत

कानपुर : स्वामी कृष्णानन्द, श्री महावीर सिंह, श्री तहसीलदार सिंह तथा श्री लोकमन दीक्षित का १८ जून को प्रातः कानपुर में शान्ति सैनिकों ने स्वागत किया।

प्रात ८-३० बजे लायन्स क्लब में स्वागत किया गया। क्लब की ओर से ५०१ रु० की थैली भेंट की गयी। सर्वोदय मण्डल आदि नगर की संस्थाओं की ओर से १०१ रु० की थैली भेंट की गयी।

सायं ४ बजे पत्रकारों के बीच में चेम्बर्स में चर्चा की तथा खत्री धर्मशाला में कार्यकर्ताओं के साथ चर्चा की। सायं ६ बजे नानाराव पार्क में आयोजित विशाल सभा में उनका अभिनन्दन किया गया। वहाँ पर चौक व्यापारी संघ की ओर से ५०१ रु० भेंट किये गये।

रात्रि में रोटरी क्लब तथा रोटरी क्लब ऑव कानपुर के संयुक्त कार्यक्रम में स्वागत किया गया। ११०० रुपये की थैली भेंट की गयी। इसके पूर्व स्वराज्य आश्रम की ओर से १०१ रुपया भेंट किये गये। इन सारे कार्यक्रम का आयोजन गांधी शान्ति प्रतिष्ठान तथा नगर सर्वोदय मण्डल के संयुक्त प्रयास से किया गया था।

१९ को लखनऊ में लगभग ५०० लोगों ने स्टेशन पर स्वागत किया।

सायं ४ बजे प्रेस रूम कौंसिल हाउस में पत्रकारों से बातचीत की तथा सायं ७ बजे अमीनुद्दौला पार्क में नगर प्रमुख की अध्यक्षता में नागरिक-अभिनन्दन किया गया। आम सभा में जिला एवं नगर सर्वोदय मण्डल की ओर से ८००रु० की थैली भेंट की गयी। इस अवसर पर नगर प्रमुख ने १०१ रु० तथा श्री हकीम श्याम दास ने १०१ रु० भेंट किये।

लखनऊ में यह सारा आयोजन गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, जिला एवं नगर सर्वोदय मण्डल के संयुक्त प्रयास से हुआ था।

इटावा में स्टेशन पर हजारों लोगों ने स्वागत किया।

१ बजे कलक्टरी कचहरी पर कड़कड़ाती धूप में उनका स्वागत किया गया। ३ बजे यशवन्त नगर में आयोजित विशाल सभा में उनका अभिनन्दन किया गया। ५ बजे पत्रकारों से चर्चा हुई तथा साय ७ बजे नगरपालिका, इटावा द्वारा चेयरमैन की अध्यक्षता में नागरिक अभिनन्दन किया गया। इस छोटे शहर में १५ हजार की उपस्थिति थी। सभा में *जिला सर्वोदय मण्डल की ओर से १ हजार* की थैली भेंट की गयी। जिला सर्वोदय मण्डल की ओर से कार्यक्रम बना था।

उ० प्र० सर्वोदय मण्डल की ओर से तीनों जिलों का कार्यक्रम बनाया गया था।

—कृष्णचन्द्र सहाय

जुड़वी बम्बई का विरोध

बम्बई जैसा एक नया महानगर निर्माण करने का निर्णय महाराष्ट्र शासन ने लिया जिसे जुड़वी बम्बई कहते हैं। बम्बई के पास कुलाबा जिले के पनवेल उरण प्रखण्डों के करीब अट्ठावन गांवों की भूमि खरीदने का प्रयास शासन कर रहा है। लेकिन इन गांवों ने विरोध प्रकट किया है। शासन ने महानगर-निर्माण के लिए जो 'सिडको' (सिटि एण्ड इण्डस्ट्रीज डेवलपमेण्ट कार्पोरेशन) नाम से एजेन्सी खड़ी कर रखी है उसका *काम* शुरू तो हुआ है, लेकिन गांव के सब लोग इस काम का बड़ा विरोध कर रहे हैं। इस विरोध का कुछ भद्दा प्रदर्शन भी हुआ है। अतः यहां पर हिंसात्मक परिस्थिति खड़ी न हो और परिस्थिति का अध्ययन करने की दृष्टि से एक अध्ययन-पदयात्रा महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल के प्रस्ताव के अनुसार तथा कुलाबा जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजन में आयोजित की गयी। पदयात्रा में महाराष्ट्र से आये दस मित्र थे। २ जुलाई को उरण में शिविर हुआ। ३ जुलाई से ७ जुलाई तक करीब पचपन गांवों में अलग-अलग टोलियों में पदयात्री गये। पदयात्रा में गांव के लोगों का विरोध किसलिए हो रहा है, यह जानने की कोशिश पदयात्रियों ने की तथा ग्रामस्वराज्य का दृष्टिकोण समझाया गया। महानगर की परिस्थिति को टालने का 'ग्रामस्वराज्य ही एकमात्र उपाय' है, यह समझाया गया। लोगों को ग्रामस्वराज्य की बात समझ में आती है, यह पदयात्रियों को दिखा। लेकिन हिंसा की परिस्थिति टालने के लिए तथा महानगर का विरोध संगठित करने के लिए *विरोध प्रयत्नों की आवश्यकता है।* महाराष्ट्र में उसकी चर्चा बहुत हो रही है। महाराष्ट्र के बुद्धिवादी तथा मित्रों का एक चर्चा-शिविर ९ जुलाई को पूना में गोखले इन्स्टीट्यूट के संचालक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री वी० एम० दाण्डेकर की अध्यक्षता में हुआ। सर्वोदय मण्डल की तरफ से श्री *बाबूराव चन्दावार*, श्री गोविन्द राव शिन्दे, श्री अब्दुल भाई, तथा श्याम कुलकर्णी ने हिस्सा लिया। अनियंत्रित औद्योगीकरण का विरोध तथा उद्योगों का ग्रामोद्योगीकरण हो, आदि बातों पर सर्वोदय के मित्रों ने आग्रह रखा। गांवों का शोषण रोका जाय इस बात का आकर्षण शिविर में हुआ। कम्यूनिस्ट, सोशलिस्ट, जनसंघ आदि राजनीतिक पार्टी के प्रमुख नेता इस शिविर में आये। श्री वी० एम० दाण्डेकर ने चर्चा-शिविर का समारोप करते हुए कहा कि सर्वोदयमित्रों की तरफ से श्री बाबूराव चन्दावार ने तथा कम्यूनिस्ट मित्रों की तरफ से श्रीमती कमलाताई भागवत ने जो दृष्टिकोण रखे वे बहुत विचारणीय हैं। कम्यूनिस्ट मित्रों ने औद्योगीकरण का विरोध नहीं किया, लेकिन औद्योगीकरण में पूंजीवाद का जो नियंत्रण है उसे तोड़ने को कहा गया। जुड़वी बम्बई के निर्माण में पूंजीपतियों की प्रेरणा मुख्य रूप से काम कर रही है। इसलिए उन्होंने जुड़वी बम्बई का विरोध किया।' सोशलिस्ट मित्रों का नेतृत्व विधायक श्री मृणाल गोरे तथा श्री पन्नालाल सुराणा ने किया। उनका कहना था कि शासन का आन्तरिक हेतु कुछ है और लोगों को भुलावे में डालकर शासन जुड़वी बम्बई का निर्माण करना चाहता है। इससे आर्थिक सन्तुलन बिगड़ेगा और महाराष्ट्र में क्षत्रीय भांगों के लिए आन्दोलन खड़ा होगा। 'सिडको' की तरफ से मुख्य अधिकारी श्री कोपड़ेकर भी आये थे। लेकिन शासन का समर्थन *करने में वे कामयाब* नहीं रहे। मराठवाड़ा, विदर्भ, बम्बई, कोकण इन सब क्षेत्रों से करीब एक सौ विद्वान पूना के एस० पी० कालेज में एकत्र हुए। दिवंगत श्री धनंजयराव गाडगिल के नाम व दिवंगत शंकर राव देव स्मारक की तरफ से इसका आयोजन किया गया था।

सर्वोदय मण्डल की तरफ से जुड़वी बम्बई का विरोध करने का निश्चय किया गया है। आगे किस तरह से काम किया जाय यह शेतकरी कामकरी दल तथा गांवों के प्रमुख नेताओं की एक सभा में तय किया जायगा। यहां शेतकरी कामकरी दल का बहुत प्रभाव है। उनके नेता *विधानसभा में विरोधी दल का नेतृत्व* करते हैं। यह पक्ष अहिंसा तथा शान्ति के उपायों को स्वीकार करे ऐसा सर्वोदय मण्डल का प्रयास हो रहा है।

—बाबूराव चन्दावार

पूर्णिया जिला सर्वोदय सम्मेलन

श्री बहादुर मण्डलजी के मंगल गान से २४, २५ मई, '७२ को पूर्णिया जिले के ठाकुरगंज प्रखण्ड में आठवां पूर्णिया जिला सर्वोदय सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षता आचार्य राममूर्तिजी ने की। सम्मेलन में नवोदर सर्वोदय सम्मेलन के स्वीकृत लोकशक्ति का निर्माण तथा शान्ति सम्बन्धी प्रस्ताव पर चर्चा हुई। श्री रामकृपाल सिंह जिला सर्वोदय मण्डल ... चुने गये।

भूदान-यज्ञ २४-७-'७२ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ४३५

सरकार का रुख अच्छा नहीं रहा तो आगे और नये डाकू बन सकते हैं !

—विनोबा की चेतावनी—

गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण गत १३ जुलाई को अपने ६० वें जन्म-दिवस पर वर्धा से छः मील दूर पवनार आश्रम में आचार्य विनोबा भावे को प्रणाम करने पहुँचे तो उस अवसर पर उनकी अनेक विषयों पर विनोबाजी से चर्चा हुई। पिछले दिनों चम्बल घाटी में डाकू आत्म-समर्पण का विषय निकला तो बाबा (विनोबाजी) ने कहा—'जब मैं कश्मीर में था तब तहसीलदार सिंह का जेल से मुझे पत्र आया था कि अगर आप भिंड-मुरैना में आयेंगे तो डाकू आपके सामने आत्म-समर्पण करेंगे। कश्मीर में यदुनाथ सिंह मेरे साथ थे। यदुनाथ सिंह वहीं के (भिंड-मुरैना) थे। वे उन डाकुओं से मिले। मैं वहाँ गया। मुख्य-मुख्य बीस बागियों ने आत्म-समर्पण किया। लेकिन मैंने एकाध महीने में देखा कि वहाँ की सरकार को लगा कि उनकी 'प्रेस्टिज' जा रही है। मैं तो वहाँ अपनी यात्रा के दौरान गया था। वह क्षेत्र मुझे छोड़ना ही था। तो मैंने वह क्षेत्र छोड़ा, पुलिस और सरकार, दोनों प्रतिकूल थे।

अभी जो बागी समर्पण में आये उनमें माधोसिंह मुख्य है। वे मुझसे मिलने आये थे। मैंने उनको जयप्रकाशजी का नाम बताया, तो वे उनसे मिले।

इस वक्त जयप्रकाशजी पन्त, प्रधान (प्रधानमंत्री) से मिले, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान के मुख्यमंत्रियों से मिले। उनके अधिकारियों वगैरह सबसे मिले। उन लोगों ने सहयोग का आश्वासन दिया। जयप्रकाशजी वहाँ गये। घटना बहुत बड़ी हुई। जयप्रकाशजी ने लगभग अपना जीवन उस कार्य में डाला। क्योंकि स्वास्थ्य उनका ठीक नहीं है। अत्यन्त जीर्ण हो गये हैं। फिर भी वे वहाँ गये और एक बड़ा काम बना।

लेकिन अब वहाँ की सरकार का रुख बदलता है। उनको लगता है कि उनकी सरकार की 'प्रेस्टिज' जा रही है। सरकार का रुख अच्छा नहीं रहा तो आगे और नये डाकू बन सकते हैं।

अभी तहसीलदार सिंह और लोकमन मेरे पास आये थे। दस दिन रहे। यहाँ के बाग में उन्होंने काम किया। मैंने उनसे कहा, अब बागी शब्द का अर्थ "बगावत करनेवाला" पुराना हो गया। अब नया अर्थ है "बागी यानी बाग-बगीचे लगानेवाला।"

साथियों से एक अनुरोध

सर्वोदय की समग्र क्रान्ति में लगे हुए साथियों में अनेक ऐसे हैं जो अपनी शादी में जाति-सम्प्रदाय, लेन-देन तथा झूठे दिखावे आदि रूढ़ियों को तोड़ चुके हैं, अन्य अनेक ऐसे भी हैं जो इन रूढ़ियों को दृढ़तापूर्वक अस्वीकार करते हैं और उनकी तैयारी है कि उनकी सन्तानों की शादी में जाति-पाँति का प्रश्न न उठे, लेन-देन का नाम न हो और विवाह में किसी प्रकार का टीम टाम या दिखावा न किया जाय, ये मित्र अपनी सन्तानों पर भी यही संस्कार डालने में प्रयत्नशील हैं।

देशभर में फैले हुए ऐसे क्रान्तिनिष्ठ साथियों का परस्पर स्नेह सम्पर्क बढ़े तो इन्हें अपनी निष्ठाओं पर दृढ़ रहने और अन्य मित्रों को उन्हें अपनाने के लिए प्रेरित करने में प्रोत्साहन मिलेगा, अतः निवेदन है कि अपना नाम व पता निम्न पते पर हमें सूचित करें। —विनय भाई गांधी शान्ति-प्रतिष्ठान केन्द्र, १४।२२९, सिविल लाइन्स, नागपुर। (उ० प्र०)

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी—१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक

रामसूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ४४

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सत्याग्रह की प्रक्रिया क्या हो ?

कुछ लोग कहते हैं कि 'सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम् प्रक्रिया निकालकर बाबा ने सत्याग्रह-विचार ही हवा में उड़ा दिया।' लेकिन सोचना चाहिए कि लोकशाही में, जहाँ मत-प्रचार की पूरी स्वतंत्रता है, पूरा अधिकार है, वहाँ विचार-प्रचार की स्वतंत्रता, नम्बर एक में इंग्लैण्ड में है, और नम्बर दो में भारत में है। विचार-प्रचार की जहाँ इतनी स्वतंत्रता हो, उस वातावरण में हमें सत्याग्रह-प्रक्रिया पर अवश्य सोचना चाहिए और उसकी छानबीन करनी चाहिए।

दूसरी बात यह कि विज्ञान और अणुशक्ति के इस जमाने में जैसे शस्त्रास्त्र बदलते जाते हैं, वैसे ही सत्याग्रह का रूप भी बदलेगा या नहीं ? गांधीजी बड़े संवेदनशील थे। इतने लचीले कि परिस्थिति को देखकर झट परिवर्तन कर देते थे। तो, हमें भी सोचना होगा कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम क्या कर सकते हैं ?

मैं यह नहीं कहना चाहता कि इस विषय का कोई निर्णायक रूप हमारे हाथ लग गया है। यही कहना चाहता हूँ कि इस पर तटस्थ भाव से चिन्तन हो। यह नहीं मानना चाहिए कि विनोबा ने सत्याग्रह का विचार ही उड़ा दिया। उद्देश्य यह है कि सत्याग्रह का ठीक संशोधन हो। उसकी शक्ति अकुण्ठित रहे इसके लिए विचारों का संशोधन करना ही होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में झगड़े उठते हैं, अशान्ति होती है, उस समय हमें क्या करना चाहिए, इसकी कोई मिसाल गांधीजी के जीवन में नहीं मिलेगी। वह तो आपको ही सोचना होगा। ऊपर-ऊपर सोचने से नहीं चलेगा, नये ढंग से सोचना होगा। मैं उसकी तफसील में नहीं जाता। वह तो चर्चा का विषय है। लेकिन आक्रमणकारी आये तो मैं उससे कहूँगा कि 'तुम प्रेम से आओ। बातचीत के लिए आओ। हमारे बच्चे, हमारी बहनें तुमसे मिलने आयेंगी, डरेंगी नहीं। हम तुम्हें प्रेम से बुलायेंगे, लेकिन कोई गलत काम हमसे करवाना चाहो, तो साफ कहेंगे कि इसे मान नहीं सकते, चाहे हमें समाप्त ही कर दो।'

—विनोबा

गरीबी : जीवन-पद्धति

गरीबी केवल गरीबी नहीं होती। कुछ पीढ़ियों तक गरीबी और शोषण में रहने के बाद, गरीबी गरीब की जीवन-पद्धति बन जाती है। तब वह सिर्फ आर्थिक न रहकर मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक भी बन जाती है। ऐसी समग्र गरीबी जीवन को जिस धरातल पर पहुँचा देती है, उसी पर गरीब के जीवन का 'एडजस्टमेण्ट' हो जाता है, और वह उसी पर जीने लगता है। अक्सर उसे असमाधान भी नहीं होता। उदाहरण के लिए गाँव में मुसहरों को देखिए। वे खेतिहर मजदूर हैं; पेशे के रूप में मिट्टी खोदने का काम करते हैं। लोग कहते हैं—और बात बिलकुल सही है—कि जबतक मुसहर के घर में अन्न या पैसा रहता है वह काम पर नहीं जाता। अगर किसी दिन उसे मजदूरी में कुछ अधिक रुपया मिल गया तो मुसहर, मुसहरिन और बच्चे डटकर माँस और भात खायेंगे, शराब पीयेंगे, और मस्त होकर पड़े रहेंगे। जो कमाई दस दिन चल सकती थी उसे दो दिन में फूँक डालेंगे, और जब घर में कुछ नहीं रह जायगा तो फाकामस्त हालत में मालिक या ठीकेदार के पास जायेंगे, पेट दिखायेंगे, और कहेंगे 'मालिक, काम दो न।' दो-चार वर्ष नहीं, पीढ़ी-दर-पीढ़ी, मुसहरों की सारी जिन्दगी इसी तरह बीत रही है। अकेले मुसहर का ही नहीं, सारे खेतिहर श्रमिक समुदाय का लगभग यही हाल है। गरीबी जिन लोगों की जीवन-पद्धति बन गयी है उनकी संख्या बहुत बड़ी है।

मुसहर एक विषम उदाहरण है उस जीवन और चरित्र का जो सदियों में विकसित हुआ है। उसके विकास की जड़ में जो कारण रहे हैं उनमें मनुष्य का मनुष्य द्वारा होनेवाला शोषण मुख्य है। एक प्रकार का चरित्र बनता है शोषित होनेवाले का, दूसरे प्रकार का चरित्र बनता है शोषण करनेवाले का। चरित्र के बनने में बहुत बड़ा हाथ रहता है उस भौगोलिक तथा सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति का जिसमें मनुष्य जीता है।

तीन-चार महीने तक भारत के गाँवों में घूम लेने के बाद उस दिन जर्मनी से आये हुए एक युवक ने कहा : "आपके देश की गरीबी कोई विशेष स्थिति नहीं, जीवन की पद्धति है। एक 'समग्र समस्या' (टोटल प्रॉबलेम) है। यह समस्या सिर्फ आर्थिक कार्यक्रम से नहीं हल होगी। आर्थिक कार्यक्रम बहुत महत्वपूर्ण है, किन्तु काफी नहीं है। कार्यक्रम समग्र होना चाहिए, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, जो एक साथ पेट भर सके, दिमाग बदल सके, सम्बन्ध सुधार सके, और लोगों की आँखों को अतीत से हटाकर भविष्य की ओर ला सके, जीवन का सम्पूर्ण सन्दर्भ बदल सके।"

कौन कहेगा कि इस युवक की कही हुई बातें गलत हैं! हमारी योजनाओं की सबसे बड़ी कमी रही है कि वे समग्र नहीं हैं, एकांगी हैं। वे सम्पूर्ण जीवन को नहीं छूतीं। शिक्षण तो उनमें है ही नहीं।

गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रम में इतनी चीजें क्यों रखी? क्या इनसे कम में काम नहीं चल सकता था! क्या इससे अधिक भी नहीं हो सकती थीं। रचनात्मक कार्यक्रम में कार्यों की विविधता का अर्थ यह है कि उन्होंने सम्पूर्ण मानव को सामने रखा था तथा जीवन की समस्याओं और उनके समाधान को समग्रता में देखा था। यह दृष्टि हमारी आज की विकास-योजनाओं और समाज-सुधार के कार्यों में नहीं है। परिणाम यह है कि योजनाएँ चलती जा रही हैं, और सुधार-कार्य होते जा रहे हैं, किन्तु जीवन का धरातल नहीं उठ रहा है, कोई समस्या पूरी-पूरी हल नहीं हो रही है, और अगर एक समस्या हल होती भी है तो तीन नयी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। अब जब कि हम गरीबी हटाने की बात सोच रहे हैं तो गरीबी के साथ-साथ शोषण की जीवन-पद्धति भी मिटाने की बात सोचनी चाहिए—वह चाहे शोषण करने की हो, चाहे शोषित होने की।

साम्यवाद : शासन की पद्धति

जब हम मार्क्स, लेनिन या माओ की किताबें पढ़ते हैं तो हमें साम्य के सिद्धान्त का दर्शन होता है, और हम मानव की मुक्ति की प्रेरणा के प्रभाव में अपने को ऊँचा महसूस करने लगते हैं। लेकिन जब हम रूस या चीन की राजनीति की दैनन्दिन दुनिया में देखते हैं तो साम्यवादी सरकार का स्वरूप सामने आता है। साम्यवाद सिद्धान्त के रूप में जो होता है उससे बहुत भिन्न हो जाता है सरकार के रूप में। सरकार साम्यवाद से कहीं अधिक साम्यवादी के हाथ में होती है, जो मनुष्य होता है—ऐसा मनुष्य, जो दूसरे मनुष्यों पर सत्ता चलाता है, और अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए जो कुछ कर सकता है वह सब करता है। →

बंगलोर में क्या चर्चा हुई

● सिद्धराज ढड्ढा

अभी हाल ही में (६ जुलाई से १२ जुलाई) सर्वोदय कार्यकर्ताओं का एक छोटा-सा समूह बंगलोर में एक सप्ताह के लिए मिला था, जयप्रकाशजी कुछ दिनों से स्वास्थ्य-लाभ के लिए वहाँ आये हुए थे, और बंगलोर से २० मील दूर एकान्त स्थान में एक सरोवर के किनारे उनका निवास था। बिना किसी किस्म की दौड़-धाम के देश की परिस्थिति और आन्दोलन की चर्चा के लिए अनुकूल शान्त वातावरण था।

सर्वोदय के शब्द और विचार दोनों को गांधीजी समाज-परिवर्तन की एक नयी गतिशील प्रक्रिया के रूप में सामने लाये और पददलित, शोषित लोगों को इससे एक नयी आशा की झलक मिली। आजादी मिलने पर जब इस विचार और प्रक्रिया को अमल में लाने का मौका आया तभी संयोग से बापू तो चले गये, लेकिन विनोबा उनकी जलायी हुई मशाल को लेकर आगे बढ़े, और आजादी मिलने पर भी अधूरी रही हुई क्रान्ति को पूरा करने की तमन्ना रखनेवाले नये-पुराने लोगों का समूह विनोबा के साथ इस यात्रा पर चल पड़ा।

इस बात को इक्कीस बरस से ऊपर हो गये। हममें से बहुत-से लोगों ने इन बरसों में अपने जीवन का एक अच्छा-खासा हिस्सा इस काम में लगाया है। अब पिछले बरसों के काम का सिंहावलोकन और आगे के काम के बारे में विचार-विनिमय करने की इच्छा स्वाभाविक थी। देश की परिस्थिति भी, आर्थिक, और राजनैतिक दोनों, पिछले कुछ समय से एक नयी दिशा ले रही है। इस नयी दिशा को आशा और आशंका दोनों दृष्टियों से देखा जा रहा है, हालांकि बंगलोर में एकत्र करीब-करीब सबके मन में आशंका का भाव अधिक था। सर्वोदय-आन्दोलन का एक प्रमुख बिन्दु है लोकशक्ति का विस्तार। आम जनता उत्तरोत्तर ज्यादा स्वावलम्बी हो, स्वाश्रयी हो, उसका आत्मविश्वास अधिकाधिक जगे, उसका अभिक्रम कर्तृत्व और शक्ति बढ़े, उसके रोजमर्रा के जीवन का नियंत्रण उसके अपने हाथ में हो, वह स्वयं सीधे स्वराज्य का सच्चा उपभोग कर सके यह सर्वोदय आन्दोलन का मुख्य लक्ष्य है। इस दृष्टि से देखा जाय तो देश की आज की राजनैतिक, और आर्थिक धारा का रुख गहरी चिन्ता का विषय जरूर है। आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, हर क्षेत्र में राज्य का दखल और नियंत्रण तेजी से बढ़ता जा रहा है, लोग असहाय हो रहे हैं। इस चुनौती का मुकाबला करने के लिए हमारी अपनी व्यूह-रचना में, काम की पद्धति या कार्यक्रम में कोई परिवर्तन जरूरी है क्या? यह सवाल भी बंगलोर की संगति में सबके मन में था।

इन चर्चाओं में हम लोगों की मदद करने के लिए देश के करीब एक दर्जन विद्वान मित्रों और चिन्तनशील जनसेवकों को भी बुलाया था। अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, राजनीतिज्ञ—अपने-अपने क्षेत्र में इन मित्रों का प्रमुख स्थान रहा है। आन्दोलन से बाहर होने के कारण वे तटस्थता से हमारे काम के बारे में क्या सोचते हैं? देश की मौजूदा परिस्थिति में हमारे लिए उनकी क्या सलाह है?

→हमें आश्चर्य होता है जब हम देखते है कि रूसी और चीनी नेताओं से मिलने के बाद वियेतनाम में निक्सन की संहार, लीला पहिले से कहीं ज्यादा बढ़ गयी। ऐसा लगता है जैसे अमेरिका वियेतनाम का अस्तित्व ही समाप्त कर देने पर उतारू हो गया है। चीन के पड़ोस में अमेरिकी बम एक साम्यवादी दल को समाप्त कर रहे हैं लेकिन चीन चुप है। एशिया की सामूहिक सुरक्षा की बात करने वाला रूस निक्सन से हाथ मिलाकर मानो यह कह रहा है कि हमारी ओर से निश्चिन्त रहो। साम्यवाद के सिद्धान्त में वर्ग दो ही थे—स्वामी और सर्वहारा। लेकिन राष्ट्रवादी राजनीति में वर्ग सिद्धान्त का नया रूप दिखाई दे रहा है। शायद वर्ग-सिद्धान्त पर वर्ग-सिद्धान्त का रंग चढ़ गया है, और अमेरिका, रूस और चीन की सरकारों का एक 'वर्ग' अलग बन गया है। इस उच्च वर्ग में बेचारे वियेतनाम को स्थान कहाँ?

सरकार सरकार होती है, उसका कोई स्थायी विचार नहीं होता। इसलाम, ईसाई, और बौद्ध धर्म को माननेवाली सरकारें हुई हैं, फासिस्टवादी और साम्यवादी सरकारें हुई हैं, लेकिन गुणों की दृष्टि से एक सरकार और दूसरी सरकार में क्या अन्तर हुआ है? विचार सरकार नहीं समाज की चीज है। इसलिए ऐसी सरकार गनीमत है जिसमें सत्ताधारी कम से कम बदलते तो रहते हैं। किसी 'वाद' का नाम लेने वाले सरकार में आकर खतरनाक साबित होते हैं क्योंकि वे अपने से भिन्न विचारवालों को शत्रु समझने लगते हैं, और एक बार सत्ता हाथ में आ जाती है तो उसमें उचित-अनुचित हर सम्भव उपाय से बने रहने की ही कोशिश करते हैं। साम्यवाद में मानव मुक्ति की प्रेरणा चाहे जितनी हो, राष्ट्र, दल और शासक की त्रिविध सत्ता से जुड़कर उसने अपनी मूल प्रेरणा खो दी है। इसलिए अब मनुष्य के सामने राज्य की सत्ता से मुक्ति का उतना ही बड़ा प्रश्न है जितना बड़ा प्रश्न शोषण से मुक्ति का है।

जब कभी किसी काम के बारे में भी भूतकाल पर नजर डालने बैठते हैं तो स्वाभाविक ही छोटी-मोटी कई ऐसी बातें ध्यान में आती हैं जो अब लगता है कि करने या न करने से काम के नतीजों में और परिस्थिति में फरक पड़ा होता। भूदान-ग्रामदान जैसे आन्दोलन के बारे में भी, जिसमें इतने व्यापक पैमाने पर देशभर के हजारों कार्यकर्ताओं ने बरसों तक काम किया हो, ऐसी बातें ध्यान में आयें, यह ताज्जुब की बात नहीं है। बल्कि ऐसा न हो तो ताज्जुब होगा। इन सब बातों की गिनती करने का बहुत उपयोग नहीं है, पर बंगलोर की चर्चाओं में एक बात सभी को लगी कि एक ही काम पर ध्यान केन्द्रित करने का लाभ होते हुए भी इसके कारण भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में लगे लोगों के बारे में आम तौर पर यह धारणा बन गयी है कि ये लोग एकांगी और संकुचित हैं। हमारा काम आस-पास की और देश की परिस्थिति से कटा हुआ चलता है और इसलिए लोग इसे दूरगामी दृष्टि से अच्छा मानते हुए भी इसमें ज्यादा दिलचस्पी नहीं लेते, क्योंकि उनको तत्काल की समस्याओं और मुसीबतों का उन्हें इसमें कोई हल नजर नहीं आता।

बंगलोर में दो बातें थोड़ी आश्चर्यजनक लेकिन सन्तोष देनेवाली सामने आयीं। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को एक सवाल का सामना अक्सर करना पड़ता है कि वे राजनीति में यानी चुनावों में हिस्सा क्यों नहीं लेते? राजनीति से दूर क्यों भागते हैं? जयप्रकाशजी को खास तौर से खानगी या सार्वजनिक रूप में इस आक्षेप का जवाब देते-देते कई बार परेशान होना पड़ा है। हममें से कइयों की धारणा थी कि देश की बिगड़ती जा रही परिस्थिति के सन्दर्भ में इस बार बाहर के मित्रों की ओर से, खास तौर से हमें भूतकाल के के लिए, यह उलाहना और आगे के लिए सलाह सुनने को मिलेगी कि हम लोगों को चुनाव की राजनीति में हिस्सा लेना चाहिए। लेकिन सिवाय एक के और उन्होंने भी बाद में इसपर जोर नहीं दिया-किसी ने भी यह बात नहीं कही, बल्कि इस बारे में सर्वोदय-आन्दोलन की नीति का समर्थन ही किया। दूसरे, उन्होंने इस बात का भी समर्थन किया कि हम लोग ग्रामस्वराज्य के, नीचे से बुनियादी सामाजिक इकाइयों को मजबूत करने के, जिस काम में लगे हुए हैं वही आज की परिस्थिति में उपयोगी और आवश्यक काम है।

बंगलोर की चर्चाओं से हमारे आगे के काम के बारे में दो-तीन बातें स्पष्ट हुईं। ग्रामस्वराज्य का काम बुनियादी और मुख्य काम है। देशभर में जगह-जगह जहाँ भी सम्भव हो, सघन क्षेत्र लेकर उनमें ग्रामस्वराज्य के काम में शक्ति लगानी चाहिए। जहाँ तक हो सके इन सघन क्षेत्रों का विस्तार एक, दो या अधिक धारासभाई चुनाव क्षेत्रों के विस्तार से मिलता हुआ हो जिसमें संगठित ग्रामसभाएँ समय आने पर इन चुनाव क्षेत्रों में से अपने प्रतिनिधि खड़े कर सकें। ग्रामस्वराज्य के काम की कसौटी यही है कि उस क्षेत्र के आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, सारे जीवन पर संगठित जनता का नियमण हो।

लेकिन ग्रामस्वराज्य के इस बुनियादी काम को करते हुए हमें देश की मौजूदा राजनैतिक, आर्थिक नीतियों तथा गतिविधियों के प्रति उपेक्षा नहीं बरतनी चाहिए। हमें जागरूक और सावधान रहकर इन बातों के बारे में समय-समय पर अपनी निष्पक्ष राय जाहिर करनी चाहिए। इतना ही नहीं, लोकतंत्र में आस्था रखनेवाले अन्य नागरिकों, खासकर गांधी-विचार की दृष्टि से जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में काम कर रहे व्यक्तियों के साथ मिलकर बिगड़ती हुई परिस्थिति पर रोक लगाने और उसे सुधारने के लिए काम करना चाहिए। ये काम अखिल भारतीय और प्रदेशीय, दोनों स्तरों पर करने चाहिए। देश के आर्थिक विकास और राजनैतिक जीवन पर असर डालने की कोशिशों के बारे में हमें उदासीन नहीं रहना चाहिए। जन-जीवन के रोजमर्रा के प्रश्नों में भी हमें सक्रिय दिलचस्पी लेनी चाहिए, खासकर के *अन्याय के प्रतिकार* में। ग्रामस्वराज्य के काम के लिए जो सघन क्षेत्र चुने जायँ उनमें तो इन कामों को हमें करना ही होगा, दूसरी जगहों में सर्वोदय कार्यकर्ताओं को इस बारे में सक्रिय होना चाहिए। इन कामों के कारण जनता से हमारा सम्पर्क बढ़ेगा, उनका विश्वास प्राप्त होगा और ग्रामस्वराज्य के काम में उनकी दिलचस्पी बढ़ेगी। शहरों में सर्वोदय-कार्य की खासकर उद्योग-व्यापार और मजदूर क्षेत्रों में ट्रस्टीशिप के विचार को, आगे बढ़ाने पर विशेष ध्यान देना चाहिए, इस पर भी बंगलोर की चर्चाओं में जोर दिया गया।

जिस तरह बंगलोर में अखिल भारतीय स्तर से चर्चाएँ हुईं उसी तरह प्रदेशस्तर पर आन्दोलन में लगे हुए कार्यकर्ता तथा दूसरे तरह मित्रों के साथ समय समय पर हमारे काम का सिंहावलोकन हो तो उससे आन्दोलन में प्राण आयेगा और उसे गति मिलेगी यह सबने महसूस किया। हम खुद अक्सर अपने काम और उसके असर के बारे में शंकित रहते हैं पर परिस्थितियाँ ऐसा बनती जा रही हैं कि आनेवाले दिनों में लोगों का ध्यान सर्वोदय-आन्दोलन की ओर अधिकाधिक आकर्षित होगा। हमें सर्वोदय के इस ऐतिहासिक 'रोल' की पूर्ति में आस्था, विश्वास और सातत्य के साथ जुटे रहना चाहिए। ●

गरीबी दूर करने की आर्थिक योजना
कृषि और ग्रामीण उद्योग

● के० अरुणाचलम्

देश ने पिछले २५ वर्षों में कृषि और उद्योग के क्षेत्र में बड़ी उन्नति की है। परन्तु विकास का फल नगर के धनी लोगो तक सीमित ही रहा है। ग्रामीणो और गरीब लोगो को यह छू तक नही गया है। इन वर्षों में गरीबी और बेकारी बढ़ी है। श्री डण्डेकर और नीलकण्ठ रथ के अध्ययन में इसका उल्लेख है। उन्होंने यह अध्ययन पूना के 'इण्डियन स्कूल ऑव पॉलिटिकल इकोनामी' की ओर से किया था। उनके अनुसार १९६०-६१ में, ग्रामीण संख्या के ४० प्रतिशत लोग, और नागरिक आबादी के ५० प्रतिशत लोग गरीबी की लाइन के नीचे थे अर्थात् ऐसा खाना उन्हें मिल रहा था जो कैलोरी की दृष्टि से भी कम था।

राष्ट्रीय आय १२ वर्षों में १९६८-६९-८०-८१ में दुगुनी हो जायेगी और प्रति व्यक्ति आय ४२ प्रतिशत बढ़ जायेगी। अगर यह होता भी है तो विकास का लाभ बराबर तौर से गरीब और अमीर को नहीं मिलेगा। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि देश में योजना की आधुनिक पद्धति से धनी और धनी होंगे, गरीब और गरीब होंगे। दूसरे अर्थशास्त्री डा० महबूबुलहक ने हाल ही में यह दृष्टिकोण दिया है कि आरम्भ के नमूने जिनमें अधिक ध्यान जी० एन० पी० पर दिया गया था बावजूद उत्पादन की बढ़ोतरी के उसने अविकसित देशो में तनाव और बेचैनी पैदा की। उनका दृष्टिकोण है कि उत्पादन और विभाजन की उलटी नीति एक धोखा और खतरनाक है, अत. विभाजन की नीति उत्पादन की नीति के अनुसार हो। डा० हक ने चार महत्त्वपूर्ण बातें अपने लेख में लिखी हैं जो जनवरी में "इनसाइट" में छपा है, जिन्हे अगर स्वीकार और कार्यान्वित किया गया तो गरीबी और बेकारी की समस्या में दरार पैदाकर देंगे। ये विचार नये नही हैं। श्री जे० बी० कृपालानी ने सितम्बर १९५६ में लोकसभा में ये विचार व्यक्त किये थे। ये 'सर्वोदय और संयोजन' नामक सर्व सेवा संघ की पुस्तिका में भी हैं। उन्होंने कहा है कि "आमतौर से जैसा कि समझा जाता है भारत में प्रश्न केवल राष्ट्रीय प्रति व्यक्ति आमदनी बढ़ाने का नही है।"

जरूरत इस बात की है कि कम-से-कम आयवालों की आय बढ़ायी जाय, गाँव के रहनेवालो को जिस चीज की तुरन्त जरूरत हो उन्हे दी जाय या उनकी मदद की जाय कि वे ये चीजें स्वयं बना सकें। उन्होंने योजना के हर उद्देश्य का विश्लेषण किया है। जैसे :

(१) रहन-सहन का स्तर बढ़ाने के लिए।

(२) बुनियादी और भारी उद्योगों का तेजी से औद्योगीकरण—विकास पर विशेष जोर दिया जाय।

(३) काम देने का बड़े पैमाने पर अवसर।

(४) आय और सम्पत्ति की समता में कमी करना तथा आर्थिक शक्ति का और अच्छा विभाजन। उन्होंने दिखाया है कि उचित राजनीतिक कार्यक्रम और परिवर्तन के दृष्टिकोण के अभाव में बेकारी और गरीबी को दूर करना असम्भव है।

श्री जयप्रकाश नारायण ने भी कई बार यह बात कही है कि लाखों भूखों की कोई भलाई नही हो रही है। १९६१ में आन्ध्र प्रदेश के अगतूर सर्वोदय सम्मेलन में उन्होंने अपने भाषण में औद्योगीकरण, विदेशी सहायता, शोध-कार्य अर्थात् पूरे विकास-पद्धति पर नये सिरे से सोचने की सलाह दी थी। इस पर ऊपरी स्तर पर विचार किया गया, और कुछ ज्यादा नहीं किया जा सका। एक ग्रामीण उद्योग योजना समिति बनायी गयी, परन्तु निश्चित स्पष्ट नीति के न होने के कारण इसका कोई नतीजा नही निकला। कुछ आलोचको का कहना है कि खादी ग्रामोद्योग आयोग और दूसरी संस्थाओं को एक अवसर मिला था कि स्वावलम्बन और विकेन्द्रीकरण के द्वारा अर्थव्यवस्था में अपना रोल अदा करें, परन्तु वे अपना उत्तरदायित्व निबाहने में असफल रही। ये मित्र पूरी कहानी नहीं जानते। कर्वे आयोग ने तफसीली सिफारिशों के साथ विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर उत्पादन का कार्यक्रम बनाया था। इसे सरकारी स्तर पर नीति-निर्धारण और आर्थिक सहायता की आवश्यकता थी। चूँकि यह नही हो सका इसलिए परिणाम न मिल सका। विकेन्द्रीकरण किये हुए क्षेत्र संगठित क्षेत्र की बराबरी में नही आ सकते। कमियों के होते हुए भी खादी और ग्रामीण उद्योगों ने २० लाख लोगों को काम दिया जो १०३ करोड़ के इस्तेमाल के सामान और ९० करोड़ के बाजार के सामान तैयार करते हैं। यह सब ७३ करोड़ के उस कर्ज से हुआ जो ३१ मार्च १९७० को खत्म होनेवाले साल में मिला था। खादी ग्रामोद्योग ने चौथी योजना में उससे दुगुना लोगों को काम देने की तैयारी की थी, परन्तु उसके लिए पूँजी और नीति की आवश्यकता थी, जो नही हो सका।

एक दूसरे अर्थशास्त्री डा० लोकनाथ ग्रामीण उद्योग का प्रचार करते रहे हैं, इसलिए कि उससे गाँव को काम मिलता है। इसके कारण गाँव के लोग नगरो में जाने से बच जाते हैं, जहाँ कि उन्हे बड़ी खराब हालत में रहना पड़ता है, और जहाँ रहने की कोई आसानी नही होती। ग्रामीण उद्योग से जो लाभ मिलते हैं उनका नगरीकरण

के कम-से-कम खर्च से मुकाबला किया जाना चाहिए। वास्तव में ग्रामीण, गृह उद्योग के समर्थन में सबसे बड़ी बात यह कही जाती है कि इसके कारण लोग गाँव से उखड़ने से बच जाते हैं और उन्हें खराब वातावरण में नहीं रहना पड़ता। नगर के औद्योगीकरण के सामाजिक मूल्य भयंकर हैं, और किसी भी ऐसी नीति में जिसमें लोगों की आमदनी बढ़ाने की बात की जाय, उसमें इस बात पर ध्यान दिया जाय कि बढ़ी हुई आमदनी की प्राप्ति बिना अधिक सामाजिक मूल्य चुकाये हो। इसलिए गरीबी हटाने और भौतिक विकास के लिए गाँव के औद्योगीकरण की बात में काफी जान है। परन्तु गरीबी दूर करने के रास्ते में कौन-सी बातें रुकावट हैं? जैसा कि बताया जा चुका है यह उद्देश्य महत्वपूर्ण है और उसे नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। दूसरी बात यह है कि केवल ठोस मदद ही न की जाय बल्कि कुछ लघु और गृह उद्योगों के क्षेत्र सुरक्षित रखे जायें। जहाँ दोनों क्षेत्रों को काम करना हो, और वह भी विभिन्न शिल्प में तो वहाँ कर्वे आयोग का उत्पादन कार्यक्रम स्वीकार कर लिया जाय।

कुछ अर्थशास्त्रियों और राजनीतिज्ञों का ख्याल है कि खादी के कार्यकर्ता विज्ञान और तकनीकी के प्रयोग के विरुद्ध हैं, यह गलत है। हर औसत खादी कार्यकर्ता देश के साधनों में हिस्सा चाहता है, और वह यह भी चाहता है कि राष्ट्र के आर्थिक कार्यों में हर व्यक्ति भाग ले।

हाल ही में प्रधान मंत्री और योजना मंत्री ने सामाजिक न्याय की बातें की हैं। उन्हें देश से गरीबी दूर करने की जल्दी है। हमें इसका स्वागत करना चाहिए और प्रशासन के सभी कार्यों में सहयोग करना चाहिए ताकि देश के हर आदमी की मौलिक आवश्यकताएँ पूरी हों और लोग कृषि-औद्योगिक विकास की योजना के अन्तर्गत स्वस्थ जीवन बिता सकें। ●

अरुणाचल की चुनौती

● वा० ना० चिवले

सन् १९७१ का अन्त हुआ और भारत के पूर्वी क्षितिज पर चार नये राज्यों का उदय हुआ। असम के पाँच टुकड़े हुए। राज्यों के टुकड़े होना, नये *नगर बसाना, इस बात के नगाड़े अपने-*अपने तरीके से बड़े जोरों से बजते हैं। बम्बई और चंडीगढ़ उसके उदाहरण-स्वरूप मौजूद हैं। लेकिन भारत के इस पूर्वी क्षेत्र में हुए स्थित्यंतरों के बारे में सभी क्षेत्रों में आम तौर पर उदासीनता ही देखी गयी।

यह उदासीनता प्राचीन है। असम के पाँच टुकड़े होने के पहले भी इतनी ही उदासीनता थी। उसमें कोई फरक पड़ा नहीं। इन राज्यों में अरुणाचल प्रदेश केन्द्रशासित प्रदेश बना है। पहले इसी विभाग को 'नार्थ ईस्ट फ्रान्टियर एजेन्सी' के नाम से (नेफा) पहचाना जाता था। हम लोग भी यह मानते थे कि वह सीमावर्ती हिस्सा है और यहाँ की कुछ समस्याएँ होंगी तो वह सीमा से सम्बन्धित और विशेषत सेना से सम्बन्ध रखनेवाली होंगी। उसके बारे में हमें विचार करने जैसी कोई चीज होगी इसकी कल्पना भी नहीं होती थी।

१९६२ के भारत-चीन-युद्ध ने हम पर कई उपकार किये हैं। उनमें यह भी एक है कि हमारा ध्यान भारत के इस हिस्से पर गया। आज शान्तिसेना मण्डल के ६ केन्द्र यहाँ हैं और निष्ठावान २० कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। आश्चर्य की बात है कि इस क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों ने प्रवेश नहीं पाया और शायद सर्वोदय वालों के लिए यह क्षेत्र सुरक्षित रहा।

इस प्रदेश की आबादी चार लाख पैंतालीस हजार तथा भूमि ३१,५०० वर्गमील (लगभग) है ऐसा कहा जाता है (भूमि के बारे में अधिकृत रूप से आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं)। इसमें पाँच जिले हैं जिनमें चार को उत्तरी मानें; मुख्यतः तिब्बत (चीन) की सीमा है और एक जो दक्षिण की ओर है वह बर्मा की सीमा है। ऐसे आम तौर पर अनजान प्रदेश की समस्याएँ कौन-सी हैं?

अरुणाचल की समस्याएँ उपेक्षितों की समस्याएँ

सभी प्रकार से उपेक्षित ऐसा यह प्रदेश है। इस प्रदेश में १७ वीं सदी की औद्योगिक क्रान्ति अब तक हुई नहीं–इस अणुयुग में भी! ये लोग अभी भी ४०० वर्ष पीछे हैं।

भाषा और संस्कृति

अत्यन्त छोटे-से इस प्रदेश में (भारत के मध्यम दर्जे के किसी नगर की जनसंख्या से आसानी से तुलना हो सकती है) ४१ भाषाएँ हैं। इसका मतलब यह *है कि ४१ संस्कृतियों का उदय यहाँ हुआ।* उनके रीति-रिवाज अलग, सामाजिक बन्धन अलग, सामाजिक संगठन के प्रकार भी अलग-अलग हैं। इनको बगैर जाने *अरुणाचल को समझना मुश्किल है। किसी* एक ही जमात में कुछ रीति-रिवाज अत्यन्त सुधरे हुए–आधुनिकतम होते हैं तो उसी में कुछ बहुत ही पिछड़े हुए। लेकिन जब कभी ये बने हैं, उस समय की विचार-पूर्वक माँग के अनुसार बने हैं, ऐसा लगता है। आज भले ही उसकी उपयुक्तता कालबाह्य हो। इनकी भाषा तिब्बती, आसामी तथा संस्कृत शब्दों से बनी है। अर्थात् जहाँ-जहाँ जिस भाषा की सीमा है, उसका असर भाषा और संस्कृति दोनों पर होना अनिवार्य है। ऐसा होते हुए भी इस क्षेत्र में इस प्रकार का असर कम हुआ है। इसका कारण मुख्यतः आवागमन की कठिनाइयाँ तथा अपनी सीमा से बाहरवाला अपना दुश्मन ही होगा इस तरह की भावना। इस भावना के कारण हमेशा इनमें छोटे-मोटे झगड़े, मारकाटी हुआ करती थी।

नरहत्या का लक्षण प्रतिष्ठा का लक्षण !!

तिरप जिले में हैतुवा गांव में गांव बूढ़े के निमंत्रण पर उसके घर गया। घर में प्रवेश करते ही बरामदे में बांस की टेक दी जिसमें नर-मुण्डो को (खोपड़ी) सजा कर रखा था। अनायास ही उसके बारे में मैंने सवाल पूछा तो गाँव बूढ़े ने सीना तान कर कहा कि यह सबसे ऊपरी कतार है–हमारे परदादा पराक्रम से २० शत्रुओं के सिर काटकर लाये थे और दूसरी कतार हमारे दादा लाये हुए हैं–अब हमारा नम्बर लगा नहीं कि यह सरकार आयी और यह सब बन्द कर दिया। मैंने कहा, चलिये हम सरकार से कहते हैं कि हमें एक-दूसरे को मारने के लिए इजाजत देवें।' गांव-बूढ़ा थोड़ा विचार में पड़ा, बाद में उसने कहा, "नहीं जी, वैसे तो मनुष्य मनुष्य को मारे यह कोई अच्छी बात थोड़े ही है?" उसके मन में इन दोनों चीजों का आदर देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। खैर! इस प्रवृत्ति के कारण नदी का मोड़ और पहाड़ की सीमा पारकर उसे इन लोगों ने कभी पार नहीं किया। कई सालों से क्या कई युगों से उनका एक अपना ही विश्व, अपना समाज, और उसमें वे घुलमिलकर सुख से, चैन से, आराम से, चिन्ता रहित, जीवन व्यतीत करते हैं। किसी जाति में तो एक पुरुष को पाँच स्त्रियाँ २५ पुत्र-पुत्रियाँ; २५ में से किसी को पशु उठा ले गया, कोई चट्टान पार करते समय लुढ़क गया, कोई किसी रोग से मरा, तो भी आठ-दस तो जीवित रहते ही हैं। फिर रोग हो तो क्यों चिन्ता घर में अनाज नहीं हो तो क्यों चिन्ता और कपड़ा तो, शादी-ब्याह में कभी लिया जाता है, अपनी लंगोटी रहनी ही है।

मुख्य प्रश्न पेट का !

इसी जिले में मैंने देखा कि लोगों का मुख्य भोजन पशु है (मांस) अनाज तो पूरक है। स्थिति यह है कि निबिड़ अरण्यों और पहाड़ो-नदियों के होते हुए आक्रामक पशु (बाघ, सिंह आदि) तो हैं ही नहीं। हैतुवा गाँव में तो गाय या बैल था ही नहीं। मैंने पैदल चलते हुए गायों के झुण्ड देखे थे (यहाँ की गाय बहुत ही छोटी होती है)। इसलिए पूछ बैठा तो जवाब मिला कि वह पड़ोसी गाँव की है और वह भी बहुत कम है। *यहाँ गाय, बैल एवं बछड़े को खाया जाता है।*

सेवाग्राम में गो-सेवा का अभ्यास करते समय हमने श्रद्धापूर्वक सुना था कि "गाय इवेल परपस एनिमल" है। हमारी पुनीत तथा अत्यन्त प्राचीन संस्कृति में गाय को जो स्थान है वह इस कारण है। मेरे भारतीय गाय विषयक प्राचीन संस्कारों पर यह पहला *आघात था।*

लेकिन विचार करता हूँ तो अरुणाचल के बारे में 'जीवो जीवनस्य जीवनम्' यही जीवन का आधार मालूम पड़ता है। खैर! पशु-संख्या घट रही है मनुष्य-संख्या बढ़ रही है, खेती सिर्फ मनुष्य-शक्ति से तथा अत्यन्त पुराने औजारों द्वारा (मुख्य औजार तो हाथ पैर ही हैं।) होती है। *धान मुख्य फसल होता है, फल, सब्जी आदि होने लगा है* लेकिन असम से लगे प्रदेश में या जहाँ प्रयत्न-पूर्वक *कुछ किया गया है वहाँ, मिलिटरी* कैम्पों के समीप आदि क्षेत्रों में इन *चीजों का प्रभाव बच्चों के भरण-पोषण* पर हो रहा है। प्रोटीन, विटामिन, फैट *आदि की कमी से होनेवाले रोग प्रचुर* मात्रा में हैं।

दूध दृश्य वस्तु नहीं

बच्चों को दूध से ही सभी प्रकार की भरण-पोषण की चीजें प्राप्त होती हैं लेकिन यहाँ की परम्परा और संस्कृति में दूध तो स्तनपान का विषय, माँ-बेटे के बीच का विषय होता है। अलग से किसी गाय का या पशु का दूध नहीं निकाला जाता। हमारे मुरी केन्द्र में (अरुणाचल) जब गाय रखी और बछड़ा होने पर दूध निकालना शुरू किया तो गाँव का 'केबांग' (पंचायत) हुआ और कार्यकर्ता को चेतावनी दी गयी कि बछड़ा दुबला दीख रहा है, आप लोग उसका दूध पीते हैं अगर बछड़े को कुछ हुआ तो आप जिम्मेदार होंगे और इसके लिए कम-से-कम एक मिथुन (अरुणाचल की गाय और भैंस के बीच का प्राणी–कीमत प्रत्येक की रु० १२०० से १५००) देना होगा और निर्णय तो केबांग में ही होगा। सजा इससे भी बढ़ सकती है। आज यहाँ सफलतापूर्वक दो गायें पाली जाती हैं, और इनका दूध भी निकाला जाता है। लेकिन इसके लिए काफी लम्बे समय तक इन्तजार करना पड़ा।

अरुणाचल की गायों से दूध प्राप्त करना हो तो गायों की दो पीढ़ी बिना दूध को पालनी होगी तब दूध मिलना शुरू होगा।

अरुणाचल प्रदेश में वराह और *कुकुट के सिवा और किसी भी पशु को* पाला नहीं जाता।

क्या अरुणाचल नागालैण्ड जैसी समस्या बनेगा?

इन सारी चीजों को देखते हुए लगता है कि कुछ प्रयत्न नहीं किये गये तो तिरप जिले का यह भाग अभावग्रस्त होगा, बहुत ही नजदीक भविष्य में अभावग्रस्त होगा। यहाँ छात्रावासों में आदिवासी लड़के पढ़ रहे हैं, उनमें जागृति आयी है। अपने अधिकारों के लिए 'हड़ताल' करने की जानकारी उन्हें हुई है। स्कूलों से बाहर आने के बाद इन्हें कोई काम नहीं मिलेगा फिर किसी हिंसक संगठन का कोई बुरका पहनकर ये लोग असम के सघन क्षेत्रों पर डाके नहीं डालेंगे तो क्या करेंगे?

कम-ज्यादा मात्रा में पूरे प्रदेश में यही स्थिति है।

सरकार इस बारे में प्रयत्नशील जरूर है, लेकिन लोगों तक कई कठिनाइयों के कारण पहुँच नहीं पाती है, समस्या के मुकाबले में प्रयत्न रुपयों में बहुत बड़े दीखते हैं, समस्यापूर्ति के लिए नगण्य हैं।

मुख्य समस्या की जानकारी न होना

अरुणाचल प्रदेश में जहाँ भी मैं गया यह सवाल पूछता रहा कि आपकी अड़चनें क्या है ? क्या करने से आपको सुख मिलेगा ?

किसी गाँव ने कहा, हमें स्कूल चाहिए तो किसी ने कहा, पानी का नल ! एक गाँव की सभा में इस माँग को सुनकर मैं आश्चर्यचकित हुआ कि उन्हें तीन भाषा सिखाने के लिए स्कूलों में शिक्षक चाहिए : अंग्रेजी, असमी, हिन्दी। इनका रहन-सहन, पोशाक, घर आदि वही ४०० वर्ष पुराने जमाने के तरीके के हैं, लेकिन बुद्धि कम नहीं मालूम हुई। सवाल सिर्फ यही है कि इसे इतना ही सजग रखकर उपयुक्त तथा रचनात्मक कैसे बनायें।

करीब तीन माह के अरुणाचल के मेरे भ्रमण में किसी ने यह नहीं कहा कि हमें अनाज की कमी है या वस्त्र की। (यहाँ तो स्त्रियाँ भी बहुत कम ही वस्त्र पहनती हैं, कमर में छोटा-सा वस्त्र होता है बाकी पूरा शरीर-छाती भी निर्वस्त्र ही होती है)। भारत के करीब सभी आदिवासियों के वस्त्र के बारे में यह स्थिति कम अधिक-मात्रा में पायी जाती है। लेकिन अरुणाचल प्रदेश के ठण्डे बर्फीले वायुमण्डल में वस्त्र की आवश्यकता अधिक महसूस होती है। फिर संस्कार का भी सवाल है। कपड़ा कितना हो ? कितना शरीर ढँका रहे ? अरुणाचल प्रदेश ने इस प्रकार के सवालों को, जो कम-ज्यादा-मात्रा में सेवा-कार्य करने-वालों के सामने आते ही हैं, नग्न रूप में सामने रखा है।

शिक्षा की समस्या—कुत्ते की पूँछ !

ऐसे प्रदेश में जहाँ एक भी उद्योग नहीं है, (उद्योग की मौजूदा व्याख्या के अनुसार) यातायात के साधन नगण्य हैं तथा भौगोलिक स्थिति और जनसंख्या अत्यन्त विरल होने तथा पहाड़ी इलाके के कारण 'व्यापार' के लिए बहुत कम गुंजाइश है। बड़े कारखानों की तो पूछना ही क्या ! उनको तो बगैर-रास्ता-मोटर के चलेगा ही नहीं। ऐसे स्थान पर भी नगरी शिक्षा-प्रणाली धड़ल्ले के साथ चालू है। अरुणाचल में शिक्षा पर काफी धनराशि खर्च हो रही है लेकिन वह उपयोगी सिद्ध नहीं होगी।

सरकारी खर्च पर आधुनिक हास्टलों में १५-१६ वर्ष तक रहने के बाद, विद्यार्थी-जीवन से मुक्त होने पर कितने छात्रों को नौकरी मिलेगी ? अरुणाचल में तो बहुत कम गुंजाइश है। गिनती में तो नगण्य ही मानी जायेगी। छात्र-जीवन से मुक्त होने पर वह अपने घर में मदद करने की मानसिक शक्ति खो बैठता है और शरीर को तो आदत ही नहीं होगी। फिर, पिता के साथ शिकार में हाँफता फिरेगा, खेती से उसे घृणा होगी, क्योंकि हाथ से काम कैसे करेगा ? यंत्र चाहिए-बल चाहिए ? अब नेफा में यह उसके साथ कब जायेगा ? कल का हल अरुणाचल में चलने के लिए बहुत प्रयत्न करने पर भी अभी दो पीढ़ी गुजरेंगी। मौजूदा पीढ़ी का क्या होगा ? स्कूलों में तो जीवन को सम्पन्न बनाने की सारी शक्तियाँ खोयी जाती है, भुलाई जाती हैं, और फिर उनसे घृणा भी होती है। हमारे यहाँ शिक्षा की समस्या भी ऐसी ही है। अरुणाचल में नये सिरे से शिक्षा शुरू हो रही है। वहाँ भी किताबी शिक्षा ही शुरू की गयी है। अभ्यासक्रमों में या छात्रावासों में कुछ संस्कार देने की 'जीवन-शिक्षा' की बात लिखी है लेकिन उसे शिक्षक और शिक्षणाधिकारी ही समझे नहीं तो वह छात्रों तक कैसे पहुँचेगी ?

अरुणाचल जैसे प्रदेश में जो सभी प्रकार से अभावग्रस्त है और प्रकृति ने जहाँ अपनी सम्पत्ति दोनों हाथों से उड़ेली है वहाँ की शिक्षा इस प्राकृतिक सम्पत्ति का उपयोग मनुष्य जीवन को स्वावलम्बी तथा सम्पन्न बनाने में कैसे कर सकती है, इस उद्देश्य को लेकर सभी प्रवृत्तियाँ शिक्षा—प्रवृत्ति भी चलनी चाहिए।

अरुणाचल में भूमि-समस्या नहीं है—भूमिहीन कोई नहीं है। ऐसी स्थिति में समस्या की जानकारी देना तथा रचनात्मक, और सृजनात्मक पराक्रम जाग्रत करने का कार्य है। समाज-रचना ऐसी है कि लोग एकत्रित हो सकते हैं।

ग्रामदान स्थूल रूप से हो चुका है। नगरी संस्कृति का प्रेरक दर्शन नहीं है, इसलिए आदिवासी 'ग्रामाभिमुख' तो हैं ही। उनकी इस ग्रामाभिमुखता को सगठित और गतिशील बनाने की चुनौती है। इस चुनौती को स्वीकार कर विचारपूर्वक युवक पहुँचेंगे तो (वे अपने को आदिवासी कहते हैं) 'आदि'-स्वराज्य का श्रीगणेश उनके पौरुष तथा पराक्रम के हाथों में रहेगा। सीमा पर काम कर रहे किसी भी सैनिक से यह कार्य महत्त्व का है, उपयोगी है, और आवश्यक है।

इन सीमावासियों को अभी हमारे बारे में अपनत्व नहीं है। होगा भी कैसे ? प्रचलित देश-धर्म की भावना से ये लोग परे हैं। उन्हें अपना बनाना चाहिए, स्वावलम्बी, सगठित बनाना चाहिए। उनकी भुजाओं में अभी बल है उसे रचनात्मक प्रेरणा की आवश्यकता है। सर्वोदय जगत को, विशेषतः सर्वोदय प्रेमी युवकों को यह चुनौती है।

सौराष्ट्र में सर्वोदय साहित्य-प्रचार

सौराष्ट्र रचनात्मक समिति ने सर्वोदय साहित्य-बिक्री-योजना को सौराष्ट्र में कार्यान्वित करने के लिए अपने यहाँ एक पुस्तक विभाग प्रारम्भ किया, और बिक्री को बढ़ावा देने हेतु एक कार्यकर्ता को नियुक्त किया, जिन्होंने अलग-अलग जिले में जाकर सम्पर्क करके सरकारी, स्वायत्त एवं व्यक्तिगत मालिकी की संस्थाओं से आर्डर प्राप्त किये। कुल छः जिलों में मिलाकर ४३०३३·७४ रु० का साहित्य बिका। इस अभियान की सफलता से उत्साहित होकर समिति ने सर्वोदय साहित्य प्रचार की योजना आगे भी जारी रखने का निर्णय लिया है।●

सेवाग्राम का खादी सम्मेलन

दिनांक २९, ३० जून व १ जुलाई '७२ को अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग कमीशन की ओर से ५ लाख से अधिक सूती खादी उत्पादन करनेवाली संस्थाओं का सम्मेलन सेवाग्राम में आयोजित किया गया था।

दिनांक २९-६-'७२ को प्रात. १० बजे महादेव भाई सभा भवन में कमीशन के अध्यक्ष श्री जी० रामचन्द्रन् की अध्यक्षता में सम्मेलन आरम्भ हुआ। अतिथियों का स्वागत करते हुए श्री द्वारकानाथ लेले ने कहा कि सेवाग्राम की इस बुनाई प्रयोगशाला में आपका आखिरी बार स्वागत किया जा रहा है। सर्व सेवा संघ और खादी कमीशन ने इसको बन्द कराने का निर्णय किया है, फलस्वरूप सारी व्यवस्था नये सिरे से करनी पड़ी है। फिर भी मैं मानता हूँ कि कमियों व कठिनाइयों के बावजूद कार्यक्रम को निभा लेंगे।

सभा की कार्यवाही का आरम्भ करते हुए कमीशन के सदस्य सचिव श्री सोमभाई ने सेवाग्राम में सम्मेलन बुलाने की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए बताया कि सेवाग्राम का अपने आप में खादी-कार्य की दृष्टि से बहुत बड़ा महत्त्व है। गांधीजी, जाजूजी, तथा आचार्य विनोबा भावे जैसे युग द्रष्टाओं से प्रेरणा एवं मार्गदर्शन लेते रहे हैं और हम काम में आगे बढ़ते रहे हैं। आज भी विनोबा जी से मार्गदर्शन ले सकें, इसी उद्देश्य से यह सम्मेलन यहाँ बुलाया गया है।

खादी कमीशन के अध्यक्ष ने अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए कहा कि खादी कमीशन खादी ग्रामोद्योग के कार्य को गांधी के बताये मार्ग से गाँव-गाँव तक पहुँचाना चाहता है और इस दृष्टि को ध्यान में रखते हुए सूती खादी के उत्पादन-कार्यक्रम पर तीन रोज तक सभी पहलुओं से विचार किया जायगा। इसी सन्दर्भ में अध्यक्ष ने स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती तथा खादी की स्वर्ण-जयन्ती मनाने का उल्लेख करते हुए कमीशन की ओर से उठाये गये विशेष कार्यक्रम की घोषणा की।

अध्यक्षीय भाषण के बाद सम्मेलन अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार चला और विषयानुसार विभिन्न पहलुओं पर चर्चाएँ हुईं।

विनोबा का मार्गदर्शन

दिनांक ३०-६-'७२ को सायकाल ३ से ४ बजे तक पवनार आश्रम पर पूज्य विनोबाजी के सान्निध्य में मीटिंग चली। उनके सामने अध्यक्षजी ने सम्मेलन की भूमिका व चर्चा का सार बताया और इस पर उनका मार्गदर्शन चाहा। बाबा ने कहा कि खादी के कार्य के बारे में मैंने अनेक बार कहा है। अब मुझे कुछ कहना नहीं है। जो योजना एक लाख परिवार को खादीधारी बनाने की रखी है, यह एक अच्छी योजना है। इस योजना में यह सुधार करें कि भारतवर्ष में एक गाँव में एक खादीधारी परिवार बने इस प्रकार एक लाख गाँवों में ऐसे एक लाख परिवार होने चाहिए। अगर हम प्रकार इस योजना को चलायेंगे तो जो गांधीजी चाहते थे कि हमारे कार्यकर्ता भारत के ५ लाख गाँवों में होने चाहिए, उस दिशा में यह कार्य हो सकेगा।

तीन दिन के गहरे विचार-विमर्श के बाद सम्मेलन ने निम्न सिफारिशें स्वीकार कीं.

संगठन—

सम्मेलन में यह अनुभव किया गया कि खादी के कार्य में कत्तिन, कामगार और कार्यकर्ताओं को अधिक-से-अधिक कार्य के नजदीक लाने तथा गाँवों तक कार्य को पहुँचाने के लिए मौजूदा व आगे बननेवाले संगठन को किस प्रकार खड़ा किया जाय।

(क) विकास खण्ड स्तर से कम की छोटी संस्था नहीं होनी चाहिए, चाहे वह सरकारी सहकारी समिति हो अथवा संस्थागत।

(ख) सघन कार्य के रूप में जिले का कार्य विकसित हुआ हो तो वहाँ विकास खण्ड स्तर की संस्थाओं का जिला स्तर का फेडरेशन हो।

(ग) प्रान्तीय स्तर के फेडरेशन बनाये जायँ।

(घ) जहाँ ग्रामदान हुआ हो और ग्रामसभा हो वहाँ संगठन की अन्तिम इकाई ग्रामसभा मानी जानी चाहिए।

पारम्परिक चरखा तथा अम्बर चरखा कार्यक्रम

(क) देश में चालू पारम्परिक चरखों को चालू रखा जाना चाहिए। इसके लिए प्रयत्न यह किया जाय कि कत्तिनों को मजदूरी अधिक मिले। इस दृष्टि से एक तकुवा अम्बर चरखे को दो तकुवा चरखे में परिवर्तन किया जाय।

(ख) पुराने अम्बर चरखे जो चल रहे हैं उनको प्रोसेसिंग यूनिट से पूनी बनाकर दी जाय तथा जिन क्षेत्रों में नये चरखे चलाते हों वहाँ नये मॉडल के चरखे ही दिये जायँ।

(ग) नये मॉडल के छः तकुवा के चरखे की यूनिटें सारे देश में अच्छे ढंग से चल रही हैं। इसमें मुख्य रूप से गुजरात, और दक्षिण में ये चरखे पूरी क्षमता से चल रहे हैं। उत्तरी भारत में इनकी उत्पादन क्षमता कम है, क्योंकि मोटे सूत की अधिक माँग है। इसलिए उत्तर भारत में मोटी कताई के लिए न्यू मॉडल यूनिट दी जानी चाहिए।

(घ) बारह तकुवा के चरखों को चालू करने के लिए संस्थाओं की माँग नहीं है फिर भी चालू वर्ष में कमीशन ने जो कार्यक्रम स्वीकार किया है उसका परीक्षण दक्षिण भारत में किया जाय।

बुनाई के सुधरे ओजारों का उपयोग और अंकों का सन्तुलन

बुनाई की दृष्टि से सेवाग्राम की बुनाई-शाला में पिछले कई वर्षों से काफी प्रयोग हुए हैं। इसमें टेकर मोशन, कुण्डी

रजत-जयन्ती वर्ष में खादी कमीशन की योजना

● श्री० रामचन्द्रन्

सारा भारत इस समय आजादी की रजत-जयन्ती मनाने के प्रयत्नों में संलग्न है। इन सबके साथ खादी और ग्रामोद्योग कमीशन का भी अपने उद्देश्यों और कार्य-प्रणाली के अनुसार रजत-जयन्ती मनाने का एक विशेष कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का केन्द्र बिन्दु है आदतन खादी पहननेवाले और कपड़े की जरूरतों के अलावा अन्य चीजों की आवश्यकता के लिए स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करने का व्रत लेनेवाले एक लाख परिवारों की सूची तैयार करने का राष्ट्रीय अभियान। इस सन्दर्भ में स्वदेशी का अर्थ है जहाँ तक सम्भव हो ग्रामोद्योगी वस्तुओं का उपयोग।

एक लाख खादी परिवारों की सूची तैयार करने के राष्ट्रीय अभियान को दो अन्य पूरक, परन्तु महत्त्वपूर्ण अभियान शक्ति प्रदान करेंगे। इनमें पहला होगा खादी और ग्रामोद्योग की प्रदर्शनियों की शृंखला, जो कि भारत के चुने हुए दो सौ स्थानों में लगायी जायेंगी और जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक वस्तुओं के विकेन्द्रित उत्पादन की महत्ता एवं वास्तविकता पर जोर डाला जायेगा। इन प्रदर्शनियों में यह भी दर्शाया जायेगा कि उत्पादन के औजारों, सरजामों में खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के अनुसन्धानों और उसके लागू करने के कार्यक्रमों के अन्तर्गत कितनी अधिक उन्नति हुई है और किस प्रकार गाँवों के कारीगरों से राष्ट्र को उन्नत उत्पादन प्राप्त हुए हैं। इन प्रदर्शनियों से जनता को चार्टों, नक्शों, सांख्यिकीय सामग्री, चित्रों व तस्वीरों के जरिये खादी और ग्रामोद्योग की अर्थ-व्यवस्था के बारे में जानकारी देने में सहायता मिलेगी।

दूसरा कार्यक्रम होगा–पुस्तिकाओं, पैम्फलेटों, फिल्मों, रेडियो प्रसारणों, विचार-गोष्ठियों, अध्ययन-केन्द्रों व प्रतिष्ठित सुयोग्य वक्ताओं के भाषणों के जरिये जनता का प्रशिक्षण।

लगभग ४००० खादी भण्डारों के जरिये विभिन्न उम्र के लोगों के लिए व विभिन्न क्षेत्रों के अनुकूल ७ करोड़ रुपये के तैयार (रेडीमेड) वस्त्र इस वर्ष के दरम्यान तैयार करने व बेचने की भी योजना है।

एक लाख खादी परिवारों की सूची तैयार करने के सिलसिले में विभिन्न राज्यों में बाँटने के लिए एक लाख से कुछ अधिक परिवार-पत्र छापे जायेंगे। ये पत्र आकर्षक ढंग के बनाये जायेंगे और इन पर क्रमसंख्या भी पड़ी होगी। हर परिवार को जिसका नाम सूची में लिख लिया गया है, एक पत्र कमीशन की ओर से मिलेगा और उस परिवार को इस पत्र पर अपनी खरीद करनी होगी। हर परिवार को कम-से-कम ६० मीटर सूती खादी खरीदनी होगी और कोई भी परिवार एक पत्र पर २०० वर्गमीटर से अधिक की खादी नहीं खरीद सकेगा। इस तरह की हर खरीद पर आम तौर पर मिलनेवाली छूट के अलावा ५ प्रतिशत अतिरिक्त छूट वर्ष के दरम्यान मिलेगी और इस प्रकार बुनाई-उत्पादन सहित कुल छूट २५ प्रतिशत होगी। उस पत्र पर गांधीजी का चित्र होगा। उसमें चार पृष्ठ होंगे; वह जेब में रखा जा सकता है। अन्तिम पृष्ठ पर 'हमारी निष्ठा' लिखी होगी, जिसके अन्तर्गत निम्न पाँच बातें होंगी—

१—स्वदेशी का उपयोग और ग्रामोद्योगी वस्तुओं के उपयोग को प्रधानता।

२—शराब से परहेज और शराबबन्दी को सक्रिय समर्थन।

३—जातिवाद और साम्प्रदायिकता का पूरी तरह परित्याग।

४—अगर परिवार के पास जमीन हो तो उसका बीसवाँ भाग या अपनी पसन्द के भूमिहीन श्रमिकों को दान।

५—आपसी शिकायतें केवल अहिंसक तरीकों से दूर करना।

इस प्रकार आप यह देखेंगे कि इस कार्यक्रम का उद्देश्य केवल खादी और ग्रामोद्योगी वस्तुओं को अधिक मात्रा में तैयार करना और बेचना ही नहीं है बल्कि गांधीवादी क्रान्ति की भावना और दृष्टिकोण को पुनर्जागृत करना और खादी-ग्रामोद्योगों को राष्ट्रीय निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रमों से समन्वित करना है। इस प्रकार खादी और ग्रामोद्योग को अधिक सम्पन्न, सम्पूर्ण व प्रगतिशील समाज-व्यवस्था की स्थापना के लिए एक विस्तृत एवं राष्ट्रव्यापी आन्दोलन के रूप में फिर से सर्वोच्च भूमिका निभानी होगी।

प्रस्तुतकर्ता—लक्ष्मीचन्द भण्डारी

→पाई, लम्बाई ताना की पद्धति मुख्य रूप से अच्छी साबित हुई है। इससे उत्पादन बढ़ता है, बुनकर को सुविधा होती है और रोजगार भी अधिक मिलता है। इन प्रयोगों का लाभ दक्षिण की संस्थाओं ने उठाया है परन्तु उत्तर भारत की संस्थाओं ने इसका लाभ नहीं उठाया है। अतः सम्मेलन की सिफारिश है कि देश की सभी खादी-संस्थाओं को बुनाई के कार्य में इन सुधरी हुई पद्धतियों का उपयोग करना चाहिए।

पंचवर्षीय योजना में खादी का स्थान

सम्मेलन में मौजूदा कार्यकारी पूंजी के स्वरूप व कास्ट चार्ट पर चर्चा हुई और यह तय रहा कि एक कमिटी बनायी जाय जो इसके सभी पहलुओं पर गहराई से विचार करके तीन माह में अपनी रिपोर्ट कमीशन को दे दे, जिससे विचार करके निर्णय लिया जा सके। इस निर्णय के अनुसार एक कमिटी बनायी गयी। यह काफी महत्त्वपूर्ण विषय था परन्तु समयाभाव के कारण इस पर चर्चा होकर निर्णय नहीं लिया जा सका।

इस प्रकार सम्मेलन बड़े उत्साहपूर्ण वातावरण में उपरोक्त सिफारिशों के साथ समाप्त हुआ। —स० म०

तेरहवाँ अखिल भारत तरुण-शान्ति-सेना शिविर
कडोली

१३ वाँ अखिल भारत तरुण-शान्ति-सेना शिविर १६ मई से २७ मई तक बेलगाँव (मैसूर) के निकट कडोली गाँव में हुआ।

कभी कदाच टेण्ट-उखाड़ हवा, टेण्ट चीरकर बिस्तर गीला कर देनेवाली बरसात, और टेण्ट के इर्द-गिर्द हवा से टूटे हुए कच्चे आम—ऐसे में भारत के विभिन्न कोनों से (कश्मीर, पूर्वांचल व केरल को छोड़कर) आये युवक-युवतियों का यह शिविर बड़ी ही गम्भीर समस्याओं पर चर्चा करने के लिए आरम्भ हुआ।

तरुणों ने प्रथम बार अखिल भारतीय स्तर के शिविर एवं सम्मेलन के संयोजन का जिम्मा उठाया, वैसे सुब्बाराव भाई और नारायण भाई ने कभी साथ और कभी एक-दूसरे के पूरक होकर इन तरुणों को मदद की।

शिविर में आने का निमंत्रण स्वीकार करने के बावजूद प्रो० श्री सु० श्री० पाण्डरीपाण्डे और श्री यदुनाथ थत्ते के अलावा अन्य कोई वक्ता उपस्थित नहीं हुए। परेशानी हुई। फिर भी सुब्बाराव भाई, नारायण भाई और हमारे तरुण साथियों ने शिविर-जीवन का उद्देश्य, सामाजिक परिवर्तन और चित्त-शुद्धि की आवश्यकता, आज की जागतिक समस्या में वर्तमान शिक्षा-प्रणाली, चम्बल की बागी समस्या और उनका समर्पण, यंत्र और मानव, युवा-विद्रोह, भूमि-समस्या, अहिंसा, नये सन्दर्भ में शिक्षा में क्रान्ति, समग्र क्रान्ति, ग्रामस्वराज्य की भूमिका में सफाई और विज्ञान तथा तरुण-शान्तिसेना आदि गम्भीर विषयों पर चर्चा करने में काफी मदद की। व्याख्यानों के अलावा चर्चा-गोष्ठियों से सोचने में बहुत सहायता मिली।

कडोली में शिविर-स्थान के आस-पास की जमीन बारिश के पानी से कट-कट कर नष्ट हो रही थी। बारिश का पानी बाँध द्वारा रोककर उसे एक नाले के जरिये एक निश्चित मार्ग देकर जमीन के कटाव को रोकना हमारे *श्रम-कार्य का प्रोजेक्ट था।*

कई बरसाती रातों के बावजूद पीने के पानी की तंगी ने लोगों से बैल का काम लिया। शिविरार्थी खुशी-खुशी बैल का काम करते थे और चन्द घण्टों में पूरे शिविर के लिए पानी निकल आता था। मजबूरी को किस प्रकार आनन्द का विषय बना दिया जा सकता है इसका यह अच्छा उदाहरण था।

एक टोली शिविर-स्थल की सफाई एवं सजावट में, एक रसोई घर की मदद में, दो टोलियाँ पानी लाने में और बाकी की टोलियाँ श्रम-कार्य में पूरे ढाई घण्टे जुटी रहती थीं।

शिविर-जीवन पर सांस्कृतिक कार्यक्रम का काफी प्रभाव पड़ा। २४ मई को बेलगाँव के कला मन्दिर रंगमंच पर एक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत *करना था। समय कम था और तैयारी* काफी करनी थी। शिविर के व्यस्त जीवन से समय निकालकर ८० लोग अलग-अलग ढंग से अलग जगहों पर तैयारी में लग जाते थे। कम समान और रंगमंच के तमाम आडम्बरों को न अपनाते हुए शिविरार्थियों के अपने प्रयास से तैयार किया हुआ यह सांस्कृतिक कार्यक्रम निर्धारित दिन को बेलगाँव के नागरिकों के सम्मुख प्रस्तुत *किया गया। कभी-कभी तो लगता था कि इस सांस्कृतिक कार्यक्रम ने शिविर-जीवन को ही नाटकमय बना दिया।* इन तमाम अतिरेक प्रवृत्तियों के बावजूद इस शिविर की कुछ उपलब्धियाँ रहीं जो तरुण-शान्तिसेना के इतिहास में अभूतपूर्व थीं। जैसे :

४० युवक-युवतियों ने पैतृक सम्पत्ति के हक को छोड़ने की इच्छा व्यक्त की तथा सब लड़के-लड़कियों ने दहेज न लेने-देने का संकल्प किया।

ऐक्शन प्रोग्राम

शिविर-सम्मेलन के दौरान व्यक्तिगत, सामूहिक एवं राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम साल भर में क्या हो वह भी तय *किया गया।* जैसे—

व्यक्तिगत कार्यक्रम

पैतृक सम्पत्ति का त्याग, (ट्रस्टी *बनें या बनायें*)।

विकेन्द्रित उद्योग की चीजों का उपयोग।

दैनिक जीवन में एक घण्टा उत्पादक, *श्रम।*

दहेज नहीं लेंगे, नहीं देंगे।

जाति या सम्प्रदाय से मिलनेवाले लाभ का भी त्याग करेंगे।

डिग्री को प्रतिष्ठा नहीं देंगे।

सामूहिक कार्यक्रम

स्थानीय क्षेत्रों में युवकों की सभा (व्याख्यान) चर्चा-गोष्ठी आयोजित करेंगे।

अपने विशेष कौशल का उपयोग निर्माण-कार्य में करेंगे। सामूहिक श्रम से श्रम की प्रतिष्ठा प्रस्थापित करेंगे।

बालवाडी, प्रौढ़ शिक्षा, लोकशिक्षण के कार्य से समाज में व्याप्त अज्ञान मिटायेंगे।

समाज में सेवा-कार्य प्रसंगानुसार करते रहेंगे।

कालेज-चुनाव में जाति, सम्प्रदाय या क्षेत्र के भेद को मिटाने तथा भय *और भाव को नाकामयाब बनाने का* प्रयास करेंगे।

योग्य उम्मीदवार को सर्वानुमति से चुना जाय।

कालेज के यूनियन में कार्यक्षम व्यक्तियों को ही शामिल करें और उनके पास महीने में एक बार कार्य एवं पैसे *सम्बन्धी हिसाब माँगा जाय।*

कालेज-संचालन में विद्यार्थियों की भागीदारी (पार्टीसिपेशन) हो इसलिए महीने में एक बार एसेम्बली की बैठक की माँग की जाय। →

तरुण-शान्ति सेना का कार्यक्रम

वर्तमान शिक्षा-पद्धति व आजादी के २५ वर्षों की प्रगति के खोखलेपन के बारे में जन-जागरण के लिए तरुण-शान्ति-सेना ने ६ अगस्त से १५ अगस्त तक एक कार्यक्रम करने का निश्चय किया है।

इस दौरान ६ अगस्त को तरुण-शान्तिदिवस से कार्यक्रम का आरम्भ कर ७, ८, ९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति के लिए रैली एवं शिक्षण-संस्थाएँ बन्द कर एक दिवसीय श्रम-स्वाध्याय शिविर का आयोजन तथा ११ से १५ अगस्त तक आजादी की रजत-जयन्ती मनाने के लिए हम गाँवों की पदयात्रा करेंगे यह समझने के लिए कि पिछले २५ वर्षों में असली भारत ने क्या प्रगति की है।

प्रस्तावित कार्यक्रम निम्नानुसार है :

६ अगस्त

प्रतिवर्ष की भाँति हिरोशिमा दिवस एवं तरुण-शान्ति दिवस के रूप में हम इसे मनायेंगे। इस अवसर पर 'आणविक हथियार और भारत', 'निःशस्त्रीकरण' एवं 'शक्ति सन्तुलन' आदि विषयों पर गोष्ठियों का आयोजन किया जा सकता है। शान्ति-दिवस-बिल्ला एवं साहित्य-बिक्री करें।

७ अगस्त

विद्यालयों में छात्रों से सम्पर्क कीजिए। शिक्षा में क्रान्ति एवं अपने आगामी दिवसों के कार्यक्रम के बारे में चर्चा कीजिए। अपने कार्यक्रम की सूचना देनेवाले पोस्टर्स लगाइए। ८ अगस्त की रैली में नागरिकों को आमंत्रित कीजिए।

८ अगस्त

'शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन, फीस के बदले काम लो' की माँगों को लेकर मौन जुलूस का आयोजन कीजिए। अपने नारे प्लेकार्ड्स पर लिख लें। रैली का समापन आमसभा के रूप में भी किया जा सकता है, रैली के साथ भी कोई श्रम-कार्य, यदि किया जा सकता हो तो, अवश्य करें। उदाहरण के लिए वृक्षारोपण, सफाई आदि। रैली में श्रम-साधन (फावड़ा, कुदाल आदि) हाथ में लेकर चलें।

९ अगस्त

शिक्षण-संस्था बन्द करवाकर एक दिन का श्रम-स्वाध्याय शिविर आयोजित करें। यदि शिक्षण-संस्था बन्द न करवा सकें तो जितने भी साथी विद्यालय न जाने को तैयार हों उन्हीं को लेकर आयोजित करें।

शिविर में २॥–३ घण्टे का एक श्रम का कार्य अवश्य हो, अच्छा शिविर एवं श्रम का स्थल विद्यालय के निकट ही हो। शिविर में जागतिक समस्याओं पर चर्चा करें। शाम को कुछ सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन भी करें।

१० अगस्त

इस दिन पिछले दिनों किये गये कार्यक्रमों का मूल्यांकन करके आगे का कार्यक्रम बनाइए। अपने आस-पास के कुछ गाँव इस कार्य के लिए चुन लीजिए। अपने साथ ले जाने की सामग्री रस्सी, टार्च, मग, चाकू, डायरी, साहित्य-बिक्री, एवं प्रचार-साहित्य की व्यवस्था कर लीजिए। अपने साथ ले जाने के लिए हल्का बिस्तर और दो जोड़े कपड़ों को हाथ में उठाने या पीठ पर लादने लायक बण्डल बना लीजिए।

११ से १५ अगस्त
पाँच दिवसीय पदयात्रा

उष:काल में पदयात्रा करना सुविधाजनक रहेगा। सुबह से दोपहर तक खेतों पर जाकर गाँववालों से मिलने का कार्यक्रम रखा जा सकता है। दोपहर को विश्राम करके सन्ध्या एवं रात्रि को गाँववालों से पिछले २५ वर्षों की प्रगति के बारे में जानिए, सभा आयोजित कीजिए, शिक्षा में क्रान्ति एवं लोकनीति और ग्रामस्वराज्य के बारे में उन्हें बताइए।

ग्रामस्वराज्य से सम्बन्धित चित्रों की प्रदर्शनी भी की जा सकती है (चित्र वाराणसी कार्यालय से मँगाये जा सकते हैं)। सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन भी किया जा सकता है। एक दिन में एक-दो गाँवों की यात्रा करें। ■

→राष्ट्रीय कार्यक्रम

६ अगस्त से १५ अगस्त

शिक्षा में क्रान्ति—स्वराज्य-प्राप्ति का उत्सव।

१५ अगस्त से २६ जनवरी

स्वावलम्बी गाँव, स्वावलम्बी भारत का कार्यक्रम उठायें।

सेवाग्राम से राजघाट दिल्ली तक प्रचार के लिए पदयात्रा।

विदेशी चीजों का बहिष्कार, ग्राम-स्वावलम्बन के लिए ग्रामोद्योग विकेन्द्रित उद्योग और उत्पादक श्रम को सहयोग।

—नचिकेता

सहरसा, महिषी प्रखण्ड के बीरगाम पंचायत में

ग्रामस्वराज्य के बढ़ते चरण

मैंने महिषी प्रखण्ड में बीरगाम पंचायत को लेकर काम करना प्रारम्भ किया। आगरा (उत्तर प्रदेश) के एक दूसरे साथी श्री विजयनारायण दुबे १०-१२ दिनों के बाद मेरे साथ हो गये।

हम लोगों ने घर-घर जाकर सम्पर्क शुरू किया। शुरू-शुरू में गाँववाले कहते थे कि बात तो अच्छी है, लेकिन इससे क्या होनेवाला है? आजकल भाषण देनेवालों की कोई कमी नहीं है। आप भी अपने ही लाभ के लिए घूम रहे हैं। इस प्रकार गाँव के लोग सर्वोदय कार्यकर्ताओं को बैठने भी नहीं देते थे।

हम लोग भूमिहीनों से मिले। उन्हें यह बात समझायी कि आप लोग अहिंसात्मक तरीके से अपना संगठन बनाइये, ताकि भूमिवानों पर कुछ प्रभाव पड़े। भूमिहीन इतने दबे हुए थे कि अपने मालिकों के सामने कुछ बोलना उनके लिए असम्भव था। उन्हें लगता था कि मालिक उन्हें काम भी नहीं देंगे और गाँव से भगा देंगे। इस हालत में वे मालिकों से जमीन क्या माँगते! गाँव में हर क्षेत्र में फैली हुई असमानता तथा वर्गभेद की बीमारी, अमीर-गरीब, भूमिवान-भूमिहीन में जो जमीन आसमान का अन्तर है, उसका निराकरण उन्हें स्वप्न-सा प्रतीत हो रहा था।

इस गाँव में एक ही व्यक्ति बड़ा भूमिवान है, शेष १०१ लोगों के पास १ बीघा से लेकर १० बीघा तक जमीन है, तथा उनके परिवारों में १० से लेकर ३० तक सदस्य हैं।

काफी दिनों की चर्चा के बाद गाँववालों ने समझा कि ग्रामस्वराज्य के विचार में गाँव की पूर्ण सुरक्षा है, जिसे अपना सामन्तशाही शासन टूटने का डर लगता है वे हमें टिकने नहीं देते हैं। धीरे-धीरे अधिकतर लोग ग्रामस्वराज्य के विचार के अनुकूल बने। सर्वसम्मति से ग्रामसभा का गठन हुआ। सर्वश्री बिलटरायजी अध्यक्ष, तारिणी झा मंत्री तथा बृजकिशोरजी कोषाध्यक्ष चुने गये। ये सभी पढ़े-लिखे नौजवान लोग हैं। सबसे पहले अध्यक्ष श्री बिलटरायजी ने अपनी १० बीघा जमीन में से १० कट्ठा जमीन का प्रमाण-पत्र भरा। इस प्रकार भूमिवान भूमिहीन के दिल जोड़ने के तथा भूमिहीन को धरती का बेटा बनाने के कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ और दानगंगा बहने लगी। अब गाँववाले स्वयं भूमिहीनों के लिए जमीन निकालने के प्रयास में जुट गये। श्री बिलटरायजी तथा अन्य ५-७ लोगों ने इस काम में काफी समय दिया। लोकशक्ति का दर्शन हुआ। गाजे-बाजे के साथ बड़ी धूमधाम से ता० २५ फरवरी को गाँव का भूमि-वितरण-समारोह सम्पन्न हुआ। एक त्योहार का रूप उस दिन गाँव में मनाया गया। दोपहर को दो बजे रामधुन गाते हुए, नारे लगाते हुए फेरी निकली। जिन भूमिवानों ने जमीन नहीं दी थी, उनको निवेदन करते हुए तथा सबको सभा का निमंत्रण देते हुए सभी लोग अध्यक्ष महोदय के दरवाजे पर एकत्रित हुए। राष्ट्रीय गीत, क्रान्तिगीत तथा जयजयकारों के बाद ७०० लोगों की उपस्थिति में कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। कार्यक्रम के लिए चन्दम्माबहन, लक्ष्मी बहन, नीलकण्ठ स्वामीजी, भलखनारायण, राजमणि शुक्ल आदि सर्वोदय के साथियों को खास तौर पर निमंत्रित किया गया था। गाँववालों ने वक्ताओं के विचार शान्तिपूर्वक सुने। भूमिवानों ने भूमिहीनों को तिलक लगाया। भूमिहीनों ने भूमिवानों को पुष्पमाला पहनायी तथा भूमि का प्रमाण-पत्र प्राप्त किया। 'भेदभाव छोड़ दो, दिल से दिल को जोड़ दो' 'हमारे गाँव में बिना जमीन कोई न रहेगा' आदि नारों ने आकाश को गुँजा दिया। १७ दाताओं ने ३० आदाताओं को १० बीघा ३ कट्ठा ६॥ धूर जमीन दी। इसमें ४ बीघा २ कट्ठा भूदान की जमीन भी शामिल है। इसी सभा में गाँव की योजना बनाने की दृष्टि से धान देकर ग्रामस्वराज्य-कोष का प्रारम्भ किया गया। सभी गाँववालों ने संकल्प लिया कि गाँव की आजादी को मजबूत बनाकर भाई चारे के तरीके से गाँव का नवनिर्माण करेंगे। इस प्रकार नयी प्रेरणा लेकर प्रार्थना के बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ। गाँव के शान्ति सैनिकों ने व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी उठायी थी।

ग्रामसभा के अध्यक्ष सर्वोदय-विचारों में पूरी निष्ठा रखते हैं, तथा दलीय सम्बन्धों से मुक्त हो गये हैं। समय-समय पर ग्रामसभा करवाना गरीबों की दिक्कतें समझ लेना, गाँव के मुकदमों को कोर्ट से हटाकर आपस में सुलझाना इस दिशा में उनका प्रयास सतत जारी है।

ग्रामस्वराज्य की चर्चा के साथ में गाँववालों को वैज्ञानिक कृषि, गोपालन, ग्रामोद्योग, खाद बनाना, ग्रामसभा, सामूहिक प्रार्थना, भजन-कीर्तन, लड़कियों की शिक्षा, श्रमनिष्ठा, मजदूरों पर अवलम्बित न रहना, स्त्रियों का खेती आदि कामों में हाथ बँटाना आदि विषयों का महत्त्व समझाना रहा। लोग बहुत दिलचस्पी से ये सारी बातें सुनते थे तथा इसके कारण उन में कुछ जागृति भी दिखायी देने लगी। साथ-साथ हम पंचायत के दूसरे गाँव से सम्पर्क करने लगे। तब तक बीरगामवालों ने ग्रामकोष में २ मन अनाज का संग्रह कर लिया।

नया टोल बीरगाम का एक टोला है। अभियान शुरू होने पर २० मार्च को हम इस गाँव में आये। मालिकों के प्रश्न को लेकर कुछ लोगों ने नया टोल वालों को बहकाने की कोशिश की, लेकिन नया टोल के लोगों ने बीरगाम का आदर्श अपने सामने रखा था। उन्होंने

बिलटरायजी को ही अपना अध्यक्ष चुना। दूसरे ही दिन ९ दाताओं के २ बीघा १ कट्ठा १६॥ धूर जमीन का वितरण १० आदाताओं के बीच धूमधाम से किया गया। गाँव में ५ शान्तिसैनिक बने। ग्रामस्वराज्य-कोष का शुभारम्भ ५ किलो अनाज से किया गया।

तरही बीरगाम पंचायत का दूसरा बड़ा गाँव है। उस गाँव में भी सर्वसम्मति से ग्रामसभा का गठन किया गया। श्री महेन्द्रकुमार अध्यक्ष मनोनीत हुए। गाँववालों की सभा में निश्चय हुआ कि बीरगाम पंचायत में ग्रामस्वराज्य का जो कार्यक्रम शुरू हो गया है वही गाँव को बचाने का एकमात्र तरीका है। ५-६ दिनों के प्रयास के बाद ही श्री ब्रह्मदेवजी ने १४ धूर का पहला प्रमाण-पत्र भरा। तब गाँव के अन्य लोग आगे बढ़े। ता० ४ अप्रैल को अंग्रेजी गाजे-बाजे के साथ २५० व्यक्तियों की उपस्थिति में जूनियर स्कूल के मैदान में गाँव का वितरण-समारोह सम्पन्न हुआ। १३ दाताओं ने २४ आदाताओं में ४ बीघा ३ कट्ठा ७॥। धूर जमीन बाँटी। समारोह में उत्तर प्रदेश के साथी श्री प्रकाशभाई पधारे थे। उन्होंने ग्रामस्वराज्य का विचार बखूबी समझाया। बीरगाम के अध्यक्ष बिलट रायजी तथा मंत्री तारिणी शाजी ने अपने गाँव की प्रगति की रिपोर्ट पेश की। इस गाँव में १० शान्तिसैनिक तथा २ सर्वोदय पत्रिका के ग्राहक बने। ग्रामस्वराज्य-कोष का उद्घाटन हुआ। तुरन्त सभास्थल पर १० किलो अनाज का संग्रह हुआ।

तरही के बाद पड़ोस के चतरिया गाँव में सभा होकर सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य का कार्यक्रम प्रारम्भ किया तथा ग्रामसभा का निर्माण हुआ। अध्यक्ष श्री बद्रीराय बने। २०० लोगों की उपस्थिति में ता० ७-४-'७२ को गाजे-बाजे तथा ग्राम-फेरी के साथ धूमधाम से ७ दाताओं ने १७ आदाताओं के बीच ३ बीघा १२ कट्ठा जमीन का वितरण किया।

बीरगाम पंचायत में अब एक ही गाँव बचा हुआ था अमाही। इस गाँव की ग्रामसभा का गठन सर्वसम्मति से दि० ९-४-'७२ को किया गया। श्री सूर्यनारायण सिंह अध्यक्ष चुने गये। साथ-साथ धूमधाम से वितरण-समारोह हुआ। ३ दाताओं ने ७ आदाताओं के लिए १२ कट्ठा १४ धूर जमीन दी। गाँव के लोगों ने संकल्प किया कि वे गाँव के लिए सच्ची आजादी प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहेंगे। तरही, चतरिया तथा अमाही में अब एक भी भूमिहीन नहीं रहा।

बीरगाम का दूसरा छोटा-सा टोला है—सहरवा। इस गाँव के निवासी श्री सम्भू साहू ग्रामस्वराज्य के विचार से ओत-प्रोत हैं। उनकी विशेष सहायता से ग्रामसभा का गठन हुआ। लोगों ने उन्हें ही अध्यक्ष मनोनीत किया। श्री सैनी मुखिया मंत्री तथा श्री महावीर साहू कोषाध्यक्ष बने। सभा में ग्रामस्वराज्य के विचार का अच्छी तरह मंथन हुआ। दूसरे दिन सभी मिलकर दरवाजे-दरवाजे गये और मालिकों से बीघा कट्ठा देने के लिए निवेदन किया। हम दोनों उनके साथ रहे—केवल विचार समझाने की दृष्टि से। दो ही दिनों में काम पूरा हुआ। तीन-चार लोगों ने करीब ३० किलो अनाज ग्रामस्वराज्य-कोष में जमा किया। जिस गाँव में शिक्षा नहीं के बराबर है जिसमें एक पढ़े-लिखे युवक ने रात्रि पाठशाला के लिए समय देने का संकल्प किया। भूमि-क्रान्ति के दिन १८ अप्रैल को प्रातः सभी गाँववालों ने गाजे-बाजे, भजन के साथ गाँव की परिक्रमा की। लोगों ने इकट्ठा होकर उत्साह से भूमि-वितरण समारोह मनाया। गाँव में अधिकतर जमीन कामतवालों की है। अतः ७ दाताओं की १६ कट्ठा १० धूर जमीन ८ भूमिहीनों में बाँटी गयी। इस तरह महायज्ञ अभियान की समाप्ति के साथ बीरगाम पंचायत का कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

—रामस्वरूप चौबे
मथुरा (उ० प्र०)

सभी राज्य-भूदान बोर्डों की सेवा में

प्रिय महोदय,

यह पत्र आपकी सेवा में विशेष निमित्त से लिख रहा हूँ। पिछले कुछ समय से सर्व सेवा संघ के कार्यालय के साथ कुछ भूदान मण्डलों का सम्पर्क नहीं के बराबर है। कुछ मण्डलों की तो अद्यतन स्थिति की जानकारी भी संघ आफिस में नहीं है। आन्दोलन की दृष्टि से आप यह स्वीकार करेंगे कि राज्य भूदान मण्डलों और सर्व सेवा संघ का जीवन्त सम्बन्ध अत्यन्त आवश्यक है। आपकी ओर से मासिक तथा त्रैमासिक रिपोर्ट निरन्तर मिलती रहे तो सारे देश की भूदान-प्राप्ति और वितरण आदि का संकल्प करने में सुविधा होगी और उस पर से भावी कार्यक्रम के चिन्तन में भी मदद मिलेगी।

अतः मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप कृपया अपने प्रदेश की अब तक की भूदान प्राप्ति तथा वितरण (एकड़ में), दाता-आदाता संख्या, अवितरित जमीन में से वितरण लायक जमीन, झगड़े की जमीन, अन्य कारणों से वितरण के अयोग्य भूमि के आंकड़े यथाशीघ्र सूचित करने की कृपा करें और भविष्य में भी भेजवाते रहें। इसके अतिरिक्त अपने मण्डल के सम्बन्ध में भी निम्नलिखित जानकारी देने की कृपा करें।

१-वर्तमान मण्डल का गठन कब हुआ? २-सरकार की ओर से गजट हुआ क्या? ३-सदस्यों की नामावली। ४-आर्थिक व्यवस्था। ५-पूरे समय के कार्यकर्ताओं की संख्या। ६-कार्ययोजना। ७-अन्य कोई विशेष उल्लेखनीय बात हो तो।

पत्रोत्तर, प्रस्थान आश्रम पो० बा० नं० १६ पठानकोट, के पते पर दें तो सुविधा होगी।

आपका,
प्रकाशचन्द्र मित्तल,
सहमंत्री, सर्व सेवा संघ

उत्तर प्रदेश तरुण शान्तिसेना समिति

उत्तर प्रदेश तरुण-शान्तिसेना की तदर्थ समिति की एक आवश्यक बैठक २३ जुलाई १९७२ को प्रातः ८ बजे जिला तरुण-शान्तिसेना शिविर-स्थल (काशीनाथ अतिथिगृह) हरदोई में हुई।

तदर्थ समिति का पुनर्गठन

प्रथम प्रान्तीय सम्मेलन में बनायी गयी प्रदेशीय तदर्थ समिति का कार्यकाल विगत ३० जनवरी को समाप्त हो चुका था, अतः संगठन को व्यापक करने एवं तीव्रता से काम करने के लिए यह आवश्यक था कि तदर्थ समिति का पुनर्गठन किया जाय-पुनर्गठित समिति के सदस्य हैं : (१) सर्वश्री विनय भाई, अध्यक्ष, २. अरुण कुमार, ३. रमेशचन्द्र श्रीवास्तव, ४. शिवसहाय मिश्र, ५ अमरनाथ मिश्र, ६. प्रो० सत्येन्द्र कुमार शान्ती, ७. अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल-पदेन, ८. संयोजक-उत्तर प्रदेश आचार्यकुल (सर्वोदय मण्डल) पदेन, ९. संयोजक प्रदेश शान्तिसेना समिति पदेन, १० रामचन्द्र राही, विशेष निमंत्रित, ११. सन्तोष भारतीय-संयोजक

जिला संयोजकों का मनोनयन

बरेली सम्मेलन में ही तदर्थ जिला संयोजकों का मनोनयन हुआ था, परन्तु कुछ जिलों में संगठनात्मक कुछ भी काम नहीं हुआ। अतः जिला संयोजकों का भी पुनर्गठन हुआ। इटावा-सर्वश्री सुलतान सिंह, गोरखपुर-भागवत प्रसाद, कानपुर-देवप्रिय, फर्रुखाबाद-रविशंकर रवि, इलाहाबाद-अरुण चौधरी, लखनऊ-राम प्रकाश चतुर्वेदी, मथुरा-महेशचन्द्र पाण्डेय, झांसी-रामकुमार खरे, टिहरी-कुँवर प्रसून, वाराणसी-अरुण कुमार, मुरादाबाद-किशोरी सिंह, बाराबंकी-शिवनाथ शुक्ल, हरदोई-रमेशचन्द्र श्रीवास्तव, अलीगढ़-सुशील कुमार, उन्नाव-अशोक पाण्डेय, बुलन्दशहर-जगदीश प्रसाद।

नये सत्र का कार्यक्रम

नये सत्र के लिए प्रमुख कार्यक्रमों के रूप में १. सदस्य बनाना तथा २. इकाइयों का गठन करना एवं प्रान्तीय सम्मेलन से पहले अधिक-से-अधिक शिविर करना व सम्पर्क करना निश्चित हुआ। यह कार्यक्रम अक्तूबर के प्रान्तीय सम्मेलन तक के लिए ही सोचा गया है। आगे का कार्यक्रम सम्मेलन तय करेगा।

राष्ट्रीय पखवारा

अभी प्रदेश में संगठन अपने मजबूत रूप में प्रकट नहीं हुआ है। अतः राष्ट्रीय पखवारे को परिवर्तित रूप में मनाने का निश्चय हुआ। संगठन को मजबूत करने के लिए सभी सम्भव प्रयास किये जायेंगे। परन्तु जिन केन्द्रों पर राष्ट्रीय कार्यक्रम सम्भव हो सकता है उनमें असरदार तरीके से करने का निश्चय हुआ।

आर्थिक संयोजन

प्रदेश तरुण-शान्तिसेना का बहुत ज्यादा काम आर्थिक कमी के कारण ही नहीं हो पाता। अतः इसका संयोजन करने का भी महत्त्वपूर्ण निश्चय हुआ। आय के निम्नलिखित साधन सुझाये गये :-

१ शिविरों और अन्य कार्यक्रमों में जनता से गोलक अभियान द्वारा प्राप्त सहायता

२. सांस्कृतिक कार्यक्रमों के द्वारा प्राप्त सहायता।

३. साहित्य-बिक्री से प्राप्त सहायता।

४. अखिल भारतीय शान्तिसेना मण्डल से सहायता. (एक वर्ष देनेवाली योजना के माध्यम से)।

५. उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा प्राप्त सहायता।

६. प्रदेश शान्तिसेना द्वारा प्राप्त सहायता।

८. शान्ति-बिल्लों एवं तरुण-शान्ति-सेना बैजों की बिक्री से प्राप्त सहायता।

प्रान्तीय शिविर तथा सम्मेलन

दशहरे की छुट्टियों में प्रान्तीय शिविर व सम्मेलन इटावा में करने का निश्चय किया गया, यदि किसी कारणवश यह सम्भव न हो सका तो इसे कानपुर में करने का निश्चय हुआ।

जिलों के तथा क्षेत्रीय शिविरों के सम्भावित कार्यक्रम

(अ) क्षेत्रीय शिविर-वाराणसी १९ से २३ अगस्त।

(ब) क्षेत्रीय शिविर उरई-२५, २६, २७ अगस्त।

(स) क्षेत्रीय, शिविर—मथुरा-१, २, ३ सितम्बर।

(द) उत्तराखण्ड क्षेत्रीय शिविर-२३ सितम्बर से ७ अक्तूबर।

जिम्मेवारियाँ

सारा कार्य विकेन्द्रित ढंग से तथा नियोजित तरीके से हो सके इसके लिए प्रदेश समिति के साथियों ने निम्न कामों की जिम्मेवारी स्वीकार की है

१ साहित्य-बिक्री व बैज-बिक्री-श्री विनय भाई

२ शिविर-सम्पर्क—अमरनाथ भाई, विनय भाई।

३ कार्यालय-शिवसहाय मिश्र।

४ कार्य-संयोजन-सन्तोष भारतीय और अरुण कुमार।

५ सांस्कृतिक कार्य-संयोजन-अरुण कुमार।

एक वर्ष राष्ट्र सेवा के लिए

प्रदेश तरुण-शान्तिसेना समिति द्वारा अनुमोदित युवकों को एक वर्ष की योजना में शामिल किया जाय ऐसी अ० भा० शान्तिसेना मण्डल से प्रदेश तरुण-शान्तिसेना की अपेक्षा है।

—सन्तोष भारतीय

आन्दोलन के समाचार

रुपौली में धीरेन्द्र भाई की लोक-गंगा-यात्रा

२४-४-७२ से २८-५-७२ तक रुपौली प्रखण्ड की १५ बापोरव ग्राम-सभाओं में सर्वोदय जगत के भीष्माचार्य श्री धीरेन्द्र मजूमदार की लोक-गंगा-यात्रा चली। प्रत्येक पड़ाव पर दो-दो दिन ठहरने का निर्धारित समय था।

यात्रा के कार्यक्रम : प्रातः जागरण ... नित्य क्रिया से निवृत्त होकर ...ों, शिक्षकों तथा ग्रामीणों के साथ ...ों में श्रम किया जाता था। ... मुख्यतया सिंचाई का काम होता था। ... के किसान भी साथ रहते थे। ५ बजे शाम को सभा होती थी। श्री धीरेन्द्र भाई सरल भाषा में ग्रामस्वराज्य के विचार समझाते थे। श्री धीरेन्द्र भाई के समसामयिक एवं समाधानकारक विचार को सुनते ही किसान, मजदूर, व्यापारी, छात्र, शिक्षक, चाहे वह किसी भी वर्ग के हों सब यही कहते थे कि यह नेताओं का कोरा बकवास नहीं, बल्कि काल-पुरुष की पुकार है।

रुपौली क्षेत्र के १५ पड़ावों पर लगभग ३० हजार व्यक्तियों ने उनके विचार सुने तथा इस उपयोगी कार्यक्रम में हाथ बँटाया। विशेषकर आचार्यकुल के सदस्यों, शिक्षकों तथा छात्रों का प्रशंसनीय सहयोग इस कार्यक्रम को मिला। प्रत्येक पड़ाव की पूर्व तैयारी तथा व्यवस्था आदि कार्यों में श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद राय, श्री सुधीर कुमार मण्डल, श्री रामशरण भाई, तथा श्री श्रीकान्त प्रसाद सिंहजी आदि प्रमुख कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

टोली के लोगों की संख्या बराबर ६-७ रही। ग्रामसभा के पदाधिकारियों का मानस-परिमार्जन करते हुए, दादा कहते थे, "मैं कुछ देने नहीं आया हूँ, सिर्फ आपको एक विचार-बीज देकर जाता हूँ। इसे आप अमल में लायें। यह शक्ति बीज है और जमीन फोड़कर निकलेगा।"

राज्य-कार्यकर्ताओं की सभा

पश्चिम बंगाल के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की ३ दिन की एक सभा बर्दवान में सुश्री निर्मला देशपाण्डे की अध्यक्षता में हुई। बर्दवान राज कालेज में १० जून १९७२ को श्री चन्द्रकान्त भण्डारी ने सभा का उद्घाटन किया। सभा में ५०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। उद्घाटन सभा में श्री अनंग विजय मुखर्जी ने सुश्री देशपाण्डे और श्री भण्डारी का परिचय कराया। सचिव श्री विमल लाल मण्डल ने पिछले साल की रिपोर्ट दी। श्री नारायण चौधरी और श्री सुरेन्द्र बोस ने यह बताया कि एक ऐसे जिले में, जो राजनैतिक उथल-पुथल का गढ़ रहा है, बैठक का होना बहुत महत्त्व की बात है। इस बैठक ने अपने तीन दिन की चर्चा में नयी सामाजिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि में आज की समस्याओं पर विचार किया और अन्त में एक वक्तव्य में इस बात पर जोर दिया कि जनता स्वयं अपने प्रयास से आन्दोलन में शक्ति लाये। इस बात पर भी जोर दिया गया कि गरीबी हटाने के लिए गाँव के औद्योगीकरण और शिक्षा में नयी दिशा मिलनी चाहिए। वक्तव्य में अध्यापकों, युवकों तथा विद्यार्थियों के योग का भी उल्लेख हुआ।

सम्मेलन में आचार्यकुल पर भी चर्चा हुई। केन्द्रीय आचार्यकुल के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने इस चर्चा में विशेष रूप से भाग लिया। चर्चा के बाद प्रदेशीय स्तर की एक तदर्थ आचार्यकुल समिति की स्थापना हुई।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा   फोन : ६४३९१

सम्पादक

राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
[illegible]

वर्ष : १८, अंक : ४५ ७ अगस्त, १९७२

ग्रामस्वराज्य

सच तो यह है कि हमें गाँवोंवाला भारत और शहरोंवाला भारत, इन दो में से एक को चुन लेना है। गाँव उतने ही पुराने हैं, जितना कि यह भारत पुराना है। शहरों को विदेशी आधिपत्य ने बनाया है। जब यह आधिपत्य मिट जायगा, तब शहरों को गाँवों के मातहत होकर रहना पड़ेगा। आज तो शहरों का बोलबाला है और वे गाँवों की सारी दौलत खींच लेते हैं। इससे गाँवों का ह्रास और नाश हो रहा है। गाँवों का शोषण खुद एक संगठित हिंसा है। अगर हमें स्वराज्य की रचना अहिंसा के पाये पर करनी है तो गाँवों को उनका उचित स्थान देना होगा।...... मैं कहूँगा कि अगर गाँवों का नाश होता है, तो भारत का भी नाश हो जायगा। उस हालत में भारत भारत नहीं रहेगा। दुनिया को उसे जो सन्देश देना है, उस सन्देश को वह खो देगा।

ग्रामस्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा। और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए—जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस तरह हर एक गाँव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले। (इसके अलावा) उसके पास इतनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिए, जिसमें ढोर चर सकें और गाँव के बड़ों व बच्चों के लिए मनबहलाव के साधन और खेलकूद के मैदान वगैरह का बन्दोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बची तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसलें बोयेगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ उठा सके, (लेकिन) वह गाँजा, तम्बाकू, अफीम वगैरह की खेती से बचेगा।

हर एक गाँव में गाँव की अपनी एक नाटकशाला, पाठशाला और सभाभवन रहेगा। पानी के लिए उसका अपना इन्तजाम होगा—वाटर वर्क्स होंगे जिससे गाँव के सभी लोगों को शुद्ध पानी मिला करेगा। कुँओं और तालाबों पर गाँव का पूरा नियंत्रण रखकर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीम के आखिरी दरजे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी। जहाँ तक हो सकेगा, गाँव के सारे काम सहयोग के आधार पर किये जायेंगे। जात-पाँत और क्रमागत अस्पृश्यता के जैसे भेद आज हमारे समाज में पाये जाते हैं, वैसे इस ग्राम-समाज में बिलकुल नहीं रहेंगे।

—मो० क० गांधी

कठिन समस्या, कठोर तपस्या

३० जुलाई को सहरसा में नवगठित ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक हुई। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष के अतिरिक्त जिले के मुख्य कार्यकर्ता और नागरिक-सहयोगी उपस्थित थे। विचारणीय प्रश्न तो कई थे, किन्तु सब प्रश्नों का एक प्रश्न सबसे ऊपर था—पुष्टि के क्षेत्र कैसे बढ़ाये जायँ, पुष्टि को सघन कैसे बनाया जाय, पूरे जिले में जल्द-से-जल्द कैसे पुष्टि पूरी की जाय। दिन भर की चर्चा के बाद काम की कुछ नयी भूमिका स्पष्ट हुई, कुछ योजना बनी, साथी और साधन जुटाने के कुछ उपाय सोचे गये। नागरिक-मित्रों का उत्साह देखकर हमारा उत्साह भी कुछ बढ़ा।

क्या सहरसा, क्या मुसहरी, और क्या कोई दूसरा क्षेत्र, जहाँ कहीं भी हमारे साथी काम में लगे हुए हैं, या अब लग रहे हैं, वे महसूस करते हैं कि पुष्टि की समस्या कितनी कठिन है, और इसके लिए कितनी कठोर तपस्या की जरूरत है। पुष्टि का कार्य सरल है, यह भ्रम किसी को नहीं होना चाहिए; व्यावहारिक पुष्टि सीमित समय में भी सम्भव और साध्य है, यह विश्वास हर एक को होना चाहिए। अपने काम में अडिग विश्वास होगा तो हिम्मत आयेगी, और हिम्मत होगी तो हिकमत सूझेगी। क्रान्ति में संशय और पराजय के लिए स्थान नहीं है। साथ ही यह बात भी है कि इस जमाने में क्रान्ति भी उसी तरह सुनियोजित होगी जैसे और कोई चीज; हमारा काम सही न हो तो शहीद होना काफी नहीं है।

पुष्टि का तात्कालिक लक्ष्य स्पष्ट है। ग्रामदान की शर्तों के आधार पर ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बनें, और सक्रिय हों। उनके प्रतिनिधियों को लेकर प्रखण्ड (ब्लॉक) स्वराज्य-सभा गठित हो, वह सक्रिय हो। गाँव और प्रखण्ड के स्तर की ये दोनों सभाएँ इतनी सक्रिय हो जायँ कि अगले चुनाव में जनता 'अपने' उम्मीदवार विधान सभा में भेज सके। यह है पुष्टि का अगले साल-दो साल का कार्यक्रम। देश में अधिक नहीं तो बीस-पचीस क्षेत्रों में यह करके दिखाना है कि राजनैतिक संगठन के लिए प्रचलित से भिन्न एक नया विकल्प सम्भव है, व्यावहारिक है, और अधिक उपयोगी है, और लोकतंत्र में सरकार बनाने के लिए आज की तरह दलों की जरूरत नहीं है। अगर हम इतना भी न दिखा सकें तो देश को 'ग्रामस्वराज्य' की व्यावहारिकता में कैसे विश्वास होगा, और उसके पुरुषार्थ को कैसे प्रेरणा मिलेगी? आदर्श को व्यवहार में उतारने की पहली जिम्मेदारी हमारी ही है।

ग्रामस्वराज्य की सिद्धि के लिए 'मास ऐक्शन' चाहिए, 'क्लास ऐक्शन' नहीं; संगठन जनता का चाहिए, दलों का नहीं। 'मास ऐक्शन' में विचार, असहकार, प्रतिकार सबके लिए स्थान है। अहिंसक क्रान्ति की समग्र पद्धति में कब, किस 'अस्त्र' की आवश्यकता है इसका विवेक क्रान्तिकारी को होना चाहिए। हमारे साथियों द्वारा इस दिशा में सघन प्रयोग होने चाहिए। आंशिक प्रयोग, और एकांगी निष्ठा से काम नहीं चलता। हमने नकोदर में जो प्रस्ताव मान्य किया वह इस प्रश्न पर स्पष्ट है।

जिस शोषण-मुक्ति और दमन-मुक्ति की कल्पना और कामना सामाजिक क्रान्तिकारियों ने, मनुष्य मात्र ने सदा की है, उसका नाम हमने 'ग्रामस्वराज्य' माना है। सामन्तवाद, पूँजीवाद, सरकारवाद और सैनिकवाद का अन्त हमने अपने 'त्रिविध कार्यक्रम' में देखा था; इन सबसे मुक्ति ग्रामस्वराज्य में है। ग्रामस्वराज्य के आरोहण की सीढ़ियाँ इतनी स्पष्ट हो गयी हैं कि अब किसी को जरा भी भ्रम में रहने की गुंजाइश नहीं है। इन सीढ़ियों को बनाने में 'सर्वोदय मित्र' हमारी पहली ईंट है, और ग्रामस्वराज्य-सभा पहली सीढ़ी। इतना सब जानते हुए भी यह मानकर चलना पड़ेगा कि पुष्टि की समस्या कठिन है जो कठोर परिश्रम से ही हल होगी। हमारे साथी कम हैं, साधन अत्यन्त सीमित हैं। लेकिन हम ऐसे बिन्दु पर हैं कि साहस करके आगे बढ़ने पर ही हमें साथी भी मिलेंगे, और साधन भी मिलेंगे। उनकी प्रतीक्षा में बैठे रहने से हम अपनी बची-बचायी पूँजी भी गवा देंगे। कोई दूसरा साथी हो या न हो, क्रान्ति तो हमारी साथी है ही।

पेट के लिए!

'मजदूरी मत दीजिएगा, पेट के लिए जो चाहिएगा दे दीजिएगा।'

आज जगह-जगह उन लोगों की आर्त पुकार सुनने को मिल रही है जो अपनी मेहनत बेचकर रोज कमाते, रोज खाते हैं। पानी नहीं बरस रहा है। पानी न बरसे तो खेत में काम क्या हो, और काम ही न हो तो मालिक क्या काम दे और मजदूर क्या काम करे? मालिक, मजदूर दोनों लाचार हैं।

लोटे, गाय, बकरी का बिकना शुरू हो गया है। जमीन के छोटे टुकड़े गिरवी रखे जाने लगे हैं। मजदूरों के झुण्ड के झुण्ड बिहार छोड़कर पेट भर अन्न के लिए काम की तलाश में घूम रहे हैं। सरकार कहती है अन्न की कमी नहीं है। बाजार में दाम बेतहाशा बढ़ते जा रहे हैं। अन्न तो है पर खरीदें कैसे? जेब में पैसा कहाँ से आवे?

राजनैतिक दल अपने प्रदर्शन कर रहे हैं लेकिन अलग-अलग, साथ मिलकर नहीं। भूखे-नंगे को अपने प्रेम का प्रमाण देने का इससे अच्छा दूसरा अवसर कब मिलेगा?

युद्ध के लिए सरकारें रसद का भण्डार जुटाकर रखती हैं, लेकिन अधिकांश परिवार ऐसे संकटों के लिए कुछ नहीं रख→

ग्रामोद्योगीकरण और खादी

●वी० रामचन्द्रन्

गांधीजी ने 'नवजीवन ट्रस्ट' को अपने साहित्य के प्रकाशन सम्बन्धी सभी अधिकार देते हुए एक बात विशेष रूप से स्पष्ट कर दी थी कि 'यदि किसी को किसी अमुक विषय पर उनके दो या दो से अधिक वक्तव्यों या विचारों में कोई विरोध या विरोधाभास प्रतीत हो तो उनका दोनों में से बादवाला या सबसे अन्तिम वक्तव्य या विचार स्वीकार किया जाय और उसके पहिले के विचार छोड़ दिये जायँ। लेकिन जहाँ तक खादी का सम्बन्ध है, लोगों की एक लम्बी-चौड़ी संख्या इस विचार के विपरीत कार्य करने के लिए अनुसन्धान कर रही है। सम्भवतः खादी और ग्रामोद्योगों के पुनर्संगठन पर गांधीजी की आखिरी से जो चर्चाएँ हुईं, जिसे सामान्यतः 'नवसंस्करण' नाम से जाना जाता है, उन्होंने खादी और ग्रामोद्धार-कार्य पर उनकी कही हुई पूर्व की सभी बातों को पीछे छोड़ दिया है। आत्मनिरीक्षण के लिए यदि हम मार्क्स-वादी शब्दावली का प्रयोग करें तो कहा जा सकता है कि हम निश्चित मार्ग से इतना हट गये हैं कि हमें 'डेविएशनिस्ट्स' यानी पथभ्रष्ट कहा जा सकता है। ऐसा कहने पर मेरे ही सहधर्मियों में से कई मुझे रूढ़िवादी कहेंगे। इस तरह, गांधी-विचार माननेवालों में से भी आपको 'परिवर्तनवादी', रूढ़िवादी या न बदलने वाले और प्रोटेस्टेण्ट, पथभ्रष्ट या परि-वर्तनशील लोग मिल जायेंगे। इसलिए, हम लोग अब एक सामान्य उद्देश्य को लेकर चलनेवाली जमात नहीं रह गये हैं। सत्यावादी ज्यादातर लोगों के लिए खादी-कार्य का उद्देश्य केवल ग्रामीण जनता की 'बेरोजगारी और न्यूनरोजगारी' ही कम करना है। लेकिन जब अर्थशास्त्री उसे विचार और तर्क की कसौटी पर कसता है तो रूढ़िवादी धीरे धीरे यह मान लेता है कि खादी-कार्य करनेवाले को केवल इतनी मजदूरी दिलवाता है जिससे उसका पेट भी नहीं भरता, यानी उसे कृषि-कार्य में मिलनेवाली सामान्य मजदूरी से भी कहीं कम दिलवाता है। इस तरह मिलने वाली रोजगारी सिर्फ आंशिक या कुछ समय की रोजगारी रहती है।

१९५२ में खादी-कार्य करीब १ लाख कामगरों से प्रारम्भ हुआ जिसमें कि आज ११ लाख के आसपास कातने और बुनने-वाले तथा दूसरे कामगर लगे हुए हैं। कुछ साल पहिले कहा गया था कि यह संख्या १२.५२ लाख के ऊपर चला गयी है। लेकिन ऐसा कहना इसलिए हास्यास्पद लगा क्योंकि इस तरह प्रत्येक कामगर की वार्षिक आय सिर्फ २० २१ रु० ठहर रही थी जो कि बहुत ही कम है। इसलिए कामगरों की संख्या स्वयं खींच कर वहाँ तक आ गयी जहाँ प्रति व्यक्ति आमदनी विश्वसनीय लगे। इसी तरह गांवों की जितनी संख्या में खादी ग्रामोद्योग-कार्य हो रहा है उसके सम्बन्ध में भी सत्य कुछ अप्रिय ही है। कहा तो यह जाता है कि करीब एक लाख गांवों में हमारा यह कार्य चल रहा है, लेकिन मेरा ख्याल है कि सिर्फ परम्परागत क्षेत्रों में ही खादी-कार्य हो रहा है। और ग्रामोद्योग-कार्य भी केवल ऐसे ही क्षेत्रों में हो रहा है, क्योंकि कच्चा माल, प्रशिक्षण, ज्ञान, प्रेरणा और जीविका के अन्य विकल्पों की कमी आदि से अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। यहाँ १९६० की 'खादी मूल्यांकन समिति' की रिपोर्ट से, जो कि अब एक पुरानी रिपोर्ट ही कही जायगी,

---

→पाते। बाजारों के भण्डार व्यापारियों की मुनाफाखोरी के काम आ रहे हैं।

चारों ओर सूखा है, लेकिन नदियाँ भरी हुई हैं। उनका पानी किनारे के खेतों को भी नहीं मिल पाता। सब पानी समुद्र में जा रहा है। किसान कितना पुरुषार्थ करे? मजदूर, छोटे किसान और दस्तकार का एक-एक दिन संघर्ष से भरा हुआ है। वह चाहते हुए भी पुरुषार्थ नहीं कर सकता।

गाँव में जाइए, लोग यह कहते हुए मिलेंगे कि अगर सरकार ने और कुछ न करके सबसे पहिले खेत-खेत में नदियों या धरती के नीचे का पानी पहुँचा दिया होता तो किसान एक बार भगवान का भी मुकाबला कर लेता। इसमें कोई शक नहीं कि अपनी गलत विकास-नीति के कारण सरकार ने ग्रामीण समाज का भयंकर अहित किया है। विज्ञान से हम अपने देश के लोगों को उठा सकते थे, उसे एक नया भविष्य दे सकते थे, लेकिन ऐसा न कर हमने उन्हें शोषण की शक्तियों के हाथ में असहाय छोड़ दिया जो उसकी हर मुसीबत को अपने लिए मौका बना रही है। क्या कोई यह हिसाब लगायेगा—लगा भी सकेगा?—कि सूखे के इस संकट के कारण कितने जान से हाथ धोयेंगे, कितनी जमीन गरीबों के हाथ से निकल कर अमीरों के हाथ जायेगी, गरीबों पर कितना कर्ज लदेगा जिसे अदा करने के लिए वे और उनके बच्चे महाजनों के हाथ बिकेंगे, पैसे के लिए कितनी युवतियाँ अपनी इज्जत बेचने पर विवश होंगी, और कितने घरों की छोटी-छोटी चीजें तक बिक जायेंगी? ऐसे संकट में मनुष्य भगवान पर न भरोसा करे तो किस पर करे? यह ऐसा संकट है जो मनुष्य की आस्थाएँ हिला देता है उसकी जीविका को अस्त-व्यस्त कर देता है, मनुष्य में मनुष्य के प्रति सहानुभूति नहीं रहने देता; वर्ग-द्वेष को उभाड़कर सहकार के स्रोतों को सुखा देता है; मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देता।

कौन आंकेगा उस आर्थिक, सामाजिक, और नैतिक क्षति को जो विज्ञान के होते हुए भी मनुष्य को प्रकृति के ऐसे संकट में उठानी पड़ रही है? क्या पानी का एक बार न बरसना विज्ञान के जमाने में भी असाध्य संकट माना जायेगा?

कुछ उद्धरण देना उपयुक्त होगा।

'३२६ प्रमाणित संस्थाओं में से २३१, ५०,००० मूल्य से भी कम की खादी प्रतिवर्ष उत्पन्न करती हैं। ५ लाख या उससे अधिक की खादी प्रतिवर्ष उत्पन्न करनेवाली संस्थाओं की संख्या सिर्फ २० है। ५ और ५० लाख रुपये के बीच के मूल्य की खादी प्रतिवर्ष उत्पन्न करनेवाली बड़ी संस्थाओं की संख्या १३ है जिनमें से आन्ध्र, बिहार, राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश में से प्रत्येक में ऐसी एक-एक संस्था है, जबकि मद्रास में २ हैं। श्री गांधी आश्रम लखनऊ और बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, मुजफ्फरपुर वर्ष में एक करोड़ से भी ऊपर की खादी का उत्पादन करते हैं, हैदराबाद खादी समिति, तमिलनाडु सर्वोदय संघ और राजस्थान खादीसंघ प्रत्येक ५० लाख रुपये प्रतिवर्ष का खादी-उत्पादन करता है और ये संस्थाएँ श्री गांधी आश्रम व बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के साथ मिलाकर कुल खादी-उत्पादन का ८० प्रतिशत उत्पादित करती हैं। यह विश्लेषण स्पष्ट करता कि ६ राज्यों यानी उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, राजस्थान, आन्ध्र और मद्रास की १९ बड़ी और १३ मध्यम संस्थाएँ सारे देश के खादी-कार्य पर हावी हैं।

'परम्परागत रूप से खादी उत्पादन करनेवाले इन राज्यों में भी नये क्षेत्रों में खादी-कार्य का संगठन नहीं हुआ है। पिछले ६ वर्षों में इन संस्थाओं ने कुछ नये क्षेत्रों में सतही स्तर पर कुछ काम को छोड़कर, खादी-कार्य को फैलाने के बजाय परम्परागत क्षेत्रों में ही अपने कार्य को और सघन किया है।' १९६८ में खादी संस्थाओं की स्थिति पर 'अशोक मेहता कमिटी' ने निम्न प्रकाश डाला है : 'ऐतिहासिक रूप से देखा जाय तो पंजीकृत संस्थाएँ ही खादी-कार्य का आधार ठहरती हैं। खादी कमीशन के अनुसार ऐसी संस्थाओं की संख्या १०३७ है। इनमें से कमीशन ने ३५५ बड़ी संस्थाओं को, जो कि सारे खादी-उत्पादन का ८० प्रतिशत उत्पादन करती हैं, सहायता प्राप्त संस्थाओं की पहली सूची में रखा है। इनमें से कई संस्थाएँ जो शेष २० प्रतिशत का उत्पादन करती हैं, नयी हैं। अतः उन्हें काफी सहारे की जरूरत है।'

इस चर्चा से जो मुद्दे निकलते हैं वे इस प्रकार हैं : १—खादी और ग्रामोद्योग कार्य सभी राज्यों और क्षेत्रों में समान रूप से नहीं फैला है, २—यह अपेक्षाकृत प्रति व्यक्ति औसत कम आमदनीवाले राज्यों और पिछड़े क्षेत्रों के कम की दृष्टि से भी विस्तारित नहीं किया गया है, ३—जिन राज्यों या क्षेत्रों में खादी और ग्रामोद्योग कार्य काफी फैला, कहा जाता है उनमें भी वह पूरे राज्य या बड़े क्षेत्रों में न फैलकर कुछ चुने हुए सीमित क्षेत्रों में ही फैला हुआ है, ४—खादी और ग्रामोद्योग-कार्य ने भी अन्य उद्योगों की तरह काफी क्षेत्रीय असन्तुलन उत्पन्न कर दिया है।

जहाँ तक ग्रामोद्योगों का सम्बन्ध है, उनकी भी स्थिति कुछ बहुत भिन्न नहीं है। यह अच्छा ही है कि अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने १९५३ में अपना कार्य जिन संस्थाओं को लेकर प्रारम्भ किया उनकी संख्या उपलब्ध नहीं है। लेकिन १९६८ में रजिस्टर्ड संस्थाओं की संख्या १९९२ और देश भर में विभिन्न ग्रामोद्योगों के विकास में लगी कोऑपरेटिव सोसाइटियों की संख्या करीब २२,२८१ थी, जो कि देश भर के औद्योगिक-सहकारी समितियों की संख्या का लगभग ३० प्रतिशत थी।

इस तरह खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगों ने १९६९-७० में जिन लोगों की रोटी-रोजी की व्यवस्था की उनकी कुल मिलाकर संख्या करीब २० लाख ठहरती है, जिनकी कुल कमाई २७१४.०८ रु० आती है। इस कमाई में नये ग्रामोद्योगों से की गयी कमाई भी शामिल है। इस प्रकार हिसाब बैठाने पर प्रति व्यक्ति वार्षिक औसत आमदनी १३५.७ रु० आती है। इन लोगों में से लगभग ११ लाख व्यक्ति केवल खादी-कार्य में लगे हैं जो १४९२.९८ रुपये अर्थात् औसतन प्रति व्यक्ति १३५.७२ रुपयों की कमाई करते हैं। ग्रामोद्योगों में लगे हुए कामगर जिनकी संख्या लगभग ९ लाख है, १२६१.१० लाख रुपये अर्थात् प्रति-व्यक्ति १४०.१ वार्षिक कमाई करते हैं, जो कि खादी में लगे हुए कामगरों की कमाई से कुछ अधिक है। लेकिन यही एक दूसरी कठिनाई खड़ी हो जाती है। खादी के क्षेत्र में लगे बुनकर तथा अन्य कामगर उस क्षेत्र में लगे कताई करनेवालों से अधिक कमाई करते हैं, जबकि इन्हीं कताई करनेवालों की संख्या इस क्षेत्र में प्रति बुनकर की वार्षिक औसत आमदनी ४०६ रु० है, व्यवस्था-कार्य में लगे प्रति व्यक्ति की ११८० रु० जबकि कातनेवाले की मात्र ८८४ रु० है। इस तरह इस क्षेत्र में लगे सबसे कम और सबसे अधिक पानेवाले व्यक्ति की आमदनी में १२,१३ गुने का फर्क है और यदि इस क्षेत्र में लगे राज्यों तथा केन्द्रीय सरकार और अर्द्ध-सरकारी संस्थाओं के लोगों की आमदनी का भी ध्यान रखा जाय तो यह फर्क ३० गुने का हो जाता है। स्पष्ट है कि सबसे गरीब तबके के लोगों की गरीबी और असमानता में भी कितनी वृद्धि हुई है।

यह एक कठोर सत्य है जिसमें हम आज रह रहे हैं। जब जरा इस तथ्य पर विचार कीजिए कि किसी भी वास्तविक, सार्थक, और सृजनात्मक जीवन की कोटियाँ क्या हैं। कम-से-कम वे तीन कही जा सकती हैं. (१) व्यक्ति की स्वयं अपने बारे में क्या मान्यता हो, (२) अपने साथियों के बारे में क्या मान्यता हो, और, (३) प्रकृति, जगत और सत्य के बारे में उसकी क्या मान्यता है। अपने सारे खादी-कार्य को दृष्टि में रखें तो हम पायेंगे कि हमारी आशाओं और जिन चीजों का हमें डर है उनमें एक मूलभूत विरोधाभाव है;उसी तरह जैसे हमारे लक्ष्यों और कृत्यों में पर्याप्त अन्तर प्रतीत होता। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपने रास्ते से अनभिज्ञ थे। ग्रामो इकाई, ग्राम-स्वावलम्बन, सघन विकास कार्यक्रम, सघन क्षेत्र-योजना, ये सभी हमारी प्रतीति

से ही उत्पन्न हुए थे। लेकिन फिर भी हम अपनी ही पथभ्रष्टता और परतंत्रता के शिकार बन गये हैं। जो कुछ कोशिशें हमने की भी हैं वे नाकामयाब रहीं। जैसे, न्यूनतम और अधिकतम आमदनियों के बीच का फर्क हमने टेकनालॉजी की मदद से कम करने की कोशिश की, जो कि लागत और कार्यान्वयन दोनों ही दृष्टियों से महँगी पड़ी। कच्चे माल की बढ़ती कीमतों और वास्तविक मजदूरी में गिरावट ने परम्परागत साधनों से कताई करनेवालों को निकम्मा बना दिया। संक्षेप में आज जो स्थिति है वह यही है, जहाँ हम अपने पिछले काम का लेखा जोखा और आगे की दिशा के सम्बन्ध में विचार करने के लिए बैठे हुए हैं।

इन सभी ग्रामोद्योगों का प्रकार और उनकी सीमाएँ ऐसी हैं कि उनमें से अधिकांश अपने अच्छे-से-अच्छे रूप में सिर्फ मौसमी, किसी अन्य धंधे की सहायक या किसी समग्र सन्दर्भ में एक दूसरे की पूरक मात्र हो सकती हैं। इन्हें किसी राष्ट्रीय स्तर के स्टैण्डर्ड पर लाना कठिन है क्योंकि इनके उत्पादन-रूपों और प्रक्रियाओं में इतनी भिन्नतायें हैं कि इन्हें समान स्तर पर नहीं रखा जा सकता। इनकी कलात्मकता, सौन्दर्य और इनके बाजार में बिक सकनेवाले रूपों में विभिन्नता की काफी सीमा तक गुंजाईश तो है लेकिन उनकी निर्माण विधि का कोई स्टैण्डर्ड तय नहीं किया जा सकता। खादी के बारे में भी ये बातें सत्य हैं, जो मैं उसके नवीनीकरण, उसकी तकनीक और उसके बढ़े उत्पादन का काफी कायल हूँ। इसलिए इन उद्योगों का टिकाऊपन आर्थिक सहायता के मुकाबले स्थानीय सामुदायिक तथ्यों पर अधिक निर्भर है। ये समुदाय द्वारा तो रक्षित हो सकते हैं लेकिन राज्य द्वारा नहीं। इसलिए हमें देश में उस आवश्यक नैतिक वातावरण का निर्माण करना है जिसमें ये उद्योग बढ़ और फलफूल सकें।

अब हम जरा भारत सरकार द्वारा जनवरी १९५३ में स्थापित अखिल भारतीय खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड तथा १९४६ में स्वयं गांधीजी के निर्देश में अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा खादी एवं ग्रामोद्योगों सम्बन्धित निर्धारित सिद्धान्तों और गाँवों के सम्पूर्ण आर्थिक जीवन के पुनरुद्धार सम्बन्धी स्वयं गांधी के कथन पर विचार करें तो जिस सीमा तक हमने उन्हें स्वीकार किया है और जिस हद तक हम उनसे अलग रहे हैं उसे देखकर हमें स्वयं आश्चर्य होगा। जो बातें सामने आती हैं उनमें इन तथ्यों का भी समावेश होता है (१) खादी-उत्पादन का ४० प्रतिशत से भी कम आत्म-निर्भरता के लिए उत्पादित होता है, (२) विकेन्द्रीकरण अब भी दूर, बहुत दूर है, (३) हमने शुरूआत तो आत्म-निर्भरता के लिए की थी लेकिन पहिले किसी भी समय की अपेक्षा हम अधिक निर्भर बन गये हैं, (४) ग्रामीण कामगरों और गाँवों से सम्पर्क की बात छोड़िए, कार्यकर्ताओं या स्वयं पारस्परिक सम्पर्क शून्य तक पहुँच रहा है, (५) कई दूसरे राज्यों तक से भी नहीं बल्कि अब विदेशों से मगाई जा रही है, (६) जिस दिन यह बची-खुची सब्सिडी खत्म हुई उसी दिन यह सब खादी-कार्य ढह जायगा, (७) सरकारी मदद तकनीकी मार्गदर्शन के बजाय पैसा देने पर अधिक जोर दे रही है, (८) खादी की सहकारी समितियाँ बहुत ही कम संख्या में बनायी या प्रोत्साहित की जा रही हैं या उत्पादन की इकाई के रूप में चलायी जा रही हैं। लाखों रुपये की हैसियत वाली संस्थाएँ अभी भी संगठन की इकाइयाँ बनी हुई हैं, और, (९) पड़ोस या अपने ही राज्य में खादी बेचने को प्राथमिकता देने के बजाय दूर-दूर जगहों में खादी भेजने के लिए किसी केन्द्रीय संगठन से परामर्श की आवश्यकता नहीं समझी जाती। केन्द्रीय संगठन तक की भी दिलचस्पी खादी विदेशों तक में अधिक-से-अधिक भेजवाने में ही है। खादी अब समानता की प्रतीक नहीं रही। यह वर्ग-भेद दिखाने की ओर ही उन्मुख रही है। इससे तो अब त्याग झलकना भी बन्द हो गया है। इसने अब पद और प्रतिष्ठा का प्रतीक बनना प्रारम्भ कर दिया है।

बात यह नहीं कि समय समय पर सुधार के प्रयास नहीं हुए। १९६० की पहली खादी मूल्यांकन रिपोर्ट, इसके बाद इस सम्बन्ध में वर्किंग ग्रुप की एक दूसरी रिपोर्ट, फिर 'अशोक मेहता कमिटी' की रिपोर्ट, अपनी जगह सभी इसी प्रयास के प्रमाण हैं। हाँ, इतना जरूर है कि इन सभी रिपोर्टों में सिर्फ खादी तथा अन्य ग्रामोद्योग-कार्य में आनेवाली कठिनाइयों और उनके निराकरण के उपायों की चर्चा है लेकिन सामाजिक, आर्थिक और संगठनात्मक समस्याओं के सुलझाव के लिए अधिक कठिन कार्यक्रमों को कौन पूरा करेगा? यही एक शून्यता की-सी स्थिति सामने आ जाती है, क्योंकि इन समस्याओं के सुलझाव की तरफ कोई प्रयत्नशील नहीं है। ऐसी स्थिति में हमारे सामने रास्ता क्या है?

स्थानीय स्तर पर खादी ग्रामोद्योगों का कामगर सहकारी समितियों या कामगर संगठनों के रूप में संगठन किया जाय जो कि ब्लॉक स्तर से बड़ा न हो। सभी प्रकार की आर्थिक या राजकीय सहायता ब्लाक स्तर की औद्योगिक सहकारी समिति या पंचायत या पंचायत समिति की मार्फत दी जाय। राष्ट्रीय स्तर के संगठन इन छोटे स्तर के संगठनों को केवल तकनीकी मार्गदर्शन व प्रशिक्षण और उत्तम सम्बन्धी हुनर प्रदान करें। इन छोटी इकाइयों का संगठन, समुदाय, पूँजी, सदस्यों की संख्या, भौगोलिक स्थिति तथा उत्पादन का ध्यान रखकर किया जा सकता है। किसी अकेले कार्यक्रम को पूरा करने के लिए न तो कोई संगठन बनाया जाय न ऐसे किसी संगठन को प्रोत्साहित किया जाय, क्योंकि इसका सामाजिक, आर्थिक व व्यापारिक बड़ा ही दुष्परिणाम होता है। इसलिए किसी ब्लॉक के अन्दर की सभी ग्रामोद्योगी सहकारी समितियों को एक दूसरे से सम्बन्ध करके या एक दूसरे में मिलाकर या उन्हें आपस में

(शेष पृष्ठ ७०२ पर)→

गांधी-मार्ग और समाज-परिवर्तन

● आर० आर० दिवाकर

[दिल्ली में रचनात्मक संस्थाओं के सम्मेलन में दिये गये उद्घाटन भाषण के आधार पर यह लेख यहाँ प्रस्तुत है। सं०]

रचनात्मक संगठनों और सरकारों के आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध है। परन्तु भारतीय जीवन की सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के लिए और अधिक शक्ति लगाने की आवश्यकता है। संसार और भारत की समस्याओं के सन्दर्भ में गांधीजी का विचार था कि केवल राजनैतिक स्वराज्य काफी नहीं है। दक्षिण अफ्रीका में भी जब वह भारतवासियों के लिए लड़ाई कर रहे थे तो वहाँ भी उन्होंने वह कार्य शुरू कर रखा था, जिसे सामाजिक कार्य का पहला कदम कह सकते हैं। उन्होंने इस तरह का काम चम्पारण में भी शुरू कर रखा था। इस सिलसिले में उन्होंने स्कूल खुलवाये, और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य, और सफाई के विचार फैलाये। भारत में इस प्रकार के रचनात्मक कार्य और समाज-सेवा के कार्यक्रम के १४ सूत्रों का अभियान चलाने के बाद बढ़ते गये। ये सूत्र बाद में बढ़ाकर १८ कर दिये गये। वैसे कोई यह कह सकता है कि रचनात्मक कार्यक्रम का कोई प्रश्न नहीं है। वास्तव में ये कार्यक्रम भारत की पूरी सामाजिक-आर्थिक पुनर्जीवन के हैं, जिनमें सबसे पहला काम गरीबों की गरीबी दूर करना और गिरे हुए लोगों को ऊपर उठाना है—अर्थात् सर्वोदय। परन्तु इसे अन्त्योदय से शुरू होना चाहिए, गरीबों से होना चाहिए जो समाज का सबसे शोषित और दबा हुआ वर्ग है।

यह याद रखने की बात है कि गांधी-जी का सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम और काम केवल सुधार के लिए ही नहीं था, यह अनिवार्यतः विषमता दूर करने और उन लोगों को राहत पहुँचाने के लिए था जिनके साथ इस सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में न्याय नहीं होता और दूसरी बुराइयों के वे शिकार रहते हैं। उनके उद्देश्य क्रान्तिकारी थे। उनका उद्देश्य आधुनिक समाज को वर्गहीन और जाति-हीन समाज में बदलना था। इसका अर्थ था क्रान्ति, और क्रान्ति का अर्थ होता है निर्माण और रचना के मूल्य में परिवर्तन। वह अपने उद्देश्य में क्रान्तिकारी थे और अपनी पद्धति में विकासवादी थे। इसका अर्थ यह है कि वह सदा शान्तिमय, अहिंसक और शैक्षिक प्रक्रिया से क्रान्ति लाने की बात सोचते थे। वे ऐसी पद्धति चाहते थे जिससे सामाजिक विवेक की जागृति हो और समाज शक्तिशाली बने तथा सामाजिक क्रान्ति की प्रक्रिया जारी रहे। वह यह नहीं चाहते थे कि केवल राजनैतिक शक्ति या सत्ता के डर से परिवर्तन हो, बल्कि परिवर्तन इस विश्वास के साथ हो कि परिवर्तन मनुष्य की उन्नति और विकास के लिए जरूरी है।

यद्यपि स्वतंत्रता के संघर्ष के बीच गांधीजी ने कौंसिल या विधान सभाओं में जाना पसन्द नहीं किया था। वह उस समय भी इस बात के विरोधी नहीं थे कि छुआछूत के हटाने के लिए कानून का प्रयोग किया जाय। अंग्रेजी राज्य में भी कुछ अत्यावश्यक सुधार लाने के लिए वह कानून के विरुद्ध नहीं थे। इस बात पर जोर बहुत स्पष्ट है कि कानून और राजनैतिक शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है जबकि जनमत बहुत मजबूत है और कानून का पूरा-पूरा समर्थन करता है।

स्वतंत्रता के बाद हमारे पास एक लोकतन्त्रात्मक पद्धति की सरकार है। हमारे यहाँ आम चुनाव हुए और केन्द्र एवं राज्यों में लोकतंत्रात्मक सरकारें काम कर रही हैं। भारत की सभी सरकारें 'कल्याणकारी राज्य' की कायल हैं। सरकारें भी लोकशिक्षण द्वारा समाजवाद लाने की बात करती हैं। वे जनमत द्वारा एक समाजवादी और लोकतन्त्रात्मक राज्य बनाने के लिए कानून कार्यान्वित करेंगी।

इसलिए जितनी भी गांधीवादी संस्थाएँ काम कर रही हैं, अगर उनका परस्पर उद्देश्य विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रम हैं और उनमें देर हो रही है तो सरकार को भी चाहिए कि सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन को पूरे तौर से शक्ति पहुँचाये। क्योंकि सरकार भी लोकतन्त्रात्मक है, इस लिए बहुत सारे ऐसे बिन्दु होंगे जिनमें रचनात्मक संगठन, मंत्रालय और विभाग न केवल एक दूसरे के मित्र हो सकते हैं बल्कि वे अधिक-से-अधिक सहयोग आपस में कर सकते हैं, ताकि जहाँ तक जल्दी हो सके परिवर्तन आये।

सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन या तो राजनैतिक दबाव और कार्य के द्वारा लाया जाता है या नीचे से, या दोनों शक्तियों के एक ही समय में लगाने से। पिछले २५ वर्षों से भारतीय समाज को मौलिक अधिकारों, अच्छा जीवन बिताने तथा लोकतंत्र और रहन-सहन के ऊँचे स्तर की शिक्षा दी जा रही है। उस सीमा तक यह अपने अधिकार से परिचित है। जनमत सम्बन्धी हमारी शिक्षा में यह कमजोरी है कि लोग अपने इस उत्तरदायित्व से परिचित नहीं हैं कि समाज के प्रति उनका क्या कर्तव्य है। उन्हें पश्चिमी राष्ट्र-प्रेमी और व्यक्तिगत तौर पर सोचनेवाले के बदले सामूहिक रूप से सोचनेवाला होना चाहिए। जिस प्रकार की भी जागृति हो, सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन में उसकी स्पष्ट भूमिका होनी चाहिए। इसी प्रकार केन्द्रीय और राज्य सरकारें अपने उत्तरदायित्व को समझें और जितना जल्दी हो सके सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के सन्दर्भ में कदम बढ़ायें। ●

हिंसा की जड़ें : कितनी गहरी

● विद्या

समाज में हिंसा के अनेक रूप हैं। कुछ ऐसे हैं जिनकी तरफ हमारा ध्यान भी नहीं जाता। धर्म, राजनीति, उद्योग, शिक्षा, सभी स्थान हिंसा के केन्द्र बने हुए हैं। ये सभी स्थान ऐसे हैं जिनकी तरफ हमारा ध्यान सहज ही चला जाता है, और सरकार तथा समाज का हस्तक्षेप होता है, कानून भी सुधार करने की कोशिश करता है। लेकिन हिंसा का एक सुरक्षित क्षेत्र है। वह है अपना घर, जहाँ सरकार, समाज, और कानून की पहुँच नहीं है। परिवार मानव की पहली पाठशाला है, सुख-सुविधाओं और शान्ति का केन्द्र तथा सामाजिक जीवन का मूलाधार है। परिवार में हिंसा होने से हिंसा जीवन का एक अनिवार्य अंग बन गयी है।

समाज में पितृमूलक परिवार है, जिसमें पुरुषों की सत्ता है। सत्तामूलक समाज में व्यक्ति की मनोवृत्ति ऐसी बन गयी है कि वह हर जगह अपनी सत्ता कायम रखना चाहता है। इस सत्ता के प्रश्न को लेकर जीवन का हर क्षेत्र संघर्षमय होता जा रहा है। परिवार कलह का केन्द्र बना हुआ है। उसका वातावरण ऐसा दमघोटू होता जा रहा है कि चैन की सांस लेना कठिन हो रहा है।

परिवार और बच्चे

परिवार में हिंसा किसके साथ होती है ? यह सोचने पर मुख्य रूप से बच्चे, पत्नी, विधवा और नौकर सामने आते हैं। बच्चा परिवार में जन्म लेता है। वहाँ उसका पालन-पोषण होता है। परिवार उसके जीवन की प्रथम पाठशाला और माँ उसकी प्रथम गुरु मानी जाती है। लेकिन परिवार ही वह स्थान है जहाँ बच्चों की इच्छाओं और भावनाओं की अवहेलना की जाती है और माता-पिता अपनी इच्छाओं को उन पर थोपते हैं। यह कोई नहीं सोचता कि बच्चे का भी एक स्वतंत्र अस्तित्व है, उसकी भी अपनी एक निराली दुनिया है। उसका मन हमसे अधिक संवेदनशील है। यदि इस ओर ध्यान दिया जाय तो बच्चों में हीन ग्रन्थियों, आक्रोश और माता-पिता के प्रति अनादर की भावना पैदा नहीं होगी और हम बड़प्पन के झूठे अहं से मुक्त हो सकेंगे। बच्चों के साथ दमन का व्यवहार तो होता ही है, दण्ड और हिंसा का भी भरपूर प्रयोग होता है। यातनाएँ तक दी जाती हैं। अनाड़ी ही नहीं, इस तरह का व्यवहार समझदार माता-पिता भी करते हैं। वास्तव में हमारे बच्चे हमारी हिंसा के पहले शिकार हैं।

स्त्री की भूमिकाएं

परिवार में स्त्री की अनेक भूमिकाएँ है, जैसे बेटी, बहन, पत्नी, और माँ। संसार में जन्म लेते ही उसके साथ दुराव शुरू हो जाता है। कुछ परिवारों में लड़की पैदा होते ही मार डाली जाती है। यह आज ही नहीं पहले से होता आ रहा है, लेकिन इस ओर न समाज का ध्यान जाता है न सरकार का। यों तो हर परिवार में लड़के और लड़कियों में अन्तर माना जाता है किन्तु कुछ परिवारों में लड़की की अधिक उपेक्षा होती है। इन सबके मूल में दहेज-प्रथा है जो निरन्तर बढ़ती जा रही है। इसे सरकार का कानून बन्द नहीं कर सकता। जबतक समाज की मान्यताओं द्वारा पोषण मिलता रहेगा, दहेज-प्रथा कायम रहेगी। दहेज न मिलने पर स्त्रियों को कितनी यातनाएँ सहनी पड़ती हैं और उसका कोई स्थान परिवार में नहीं बन पाता, वह उपेक्षित रहती है। इसी प्रकार विधवा होना भी एक अभिशाप है। विधवा का समाज और परिवार में जो स्थान है उसे आप और हम अच्छी तरह जानते हैं। उसके जीवन में यातना, प्रताड़ना, और लांछन के सिवाय रह ही क्या जाता है ? परिवार में वह घृणा की दृष्टि से देखी जाती है और उसके लिए समाज ने ऐसे कठोर नियम बनाये हैं जिनका पालन करना लगभग असम्भव है।

परिवार में जो हिंसा होती है उसमें ऐसा नहीं है कि कोई एक व्यक्ति सबके साथ हिंसा करता हो। इसके अन्तर्गत अपने सभी रिश्ते और सम्बन्ध आते हैं जिनको हम मधुर भी मानते हैं, जैसे— सास-बहू के सम्बन्ध, ननद-भाभी के सम्बन्ध, देवर-भाभी के सम्बन्ध और पति-पत्नी के सम्बन्ध। इन सम्बन्धों की कल्पना कितनी मधुर है और वास्तविकता कितनी कठोर है, यह प्रत्यक्ष अनुभव से जाना जा सकता है। परिवार में पुरुष ही स्त्रियों पर अत्याचार करते हों, ऐसा नहीं है, बल्कि स्त्रियों द्वारा स्त्रियों पर अधिक जुल्म किये जाते हैं। पति-पत्नी के सम्बन्ध को देखा जाय तो आज कितने लोग हैं जिनका सुखी दाम्पत्य जीवन कहा जा सकता है ? स्त्री जिस पति को परमेश्वर समझती है और जिसे पाकर अपने जीवन की धन्यता महसूस करती है क्या वह उसके साथ वास्तव में परमेश्वर का व्यवहार करता है ? परिवार में पुरुष की सत्ता होती है, उसी की महत्ता रहती है, स्त्री का कोई महत्व नहीं रहता, स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व भी नहीं माना जाता।

घरेलू नौकर

घर में नौकर के साथ जो व्यवहार किया जाता है, क्या इस लोकतन्त्र के युग में एक व्यक्ति का दूसरे से यही होना चाहिए ? क्या आज हम उसकी सेवाओं का उचित मूल्य आंकते हैं और उसे भी एक व्यक्ति या मनुष्य मानकर उचित सम्मान देते हैं ? उसके खाने-पीने, सोने-जागने और उसकी इच्छाओं का जरा भी ध्यान नहीं रखा जाता, वह सदैव हमारे अविश्वास का पात्र बना रहता है। ऐसी स्थिति में नौकर का भी मालिक के प्रति जो विश्वास, लगाव, ईमानदारी होनी चाहिए, नहीं रह पाती है। ऐसा लगता है कि उसकी सेवाओं के बदले में पैसे

उनको दिये जाते हैं, उससे हम उसका समय ही नहीं बल्कि उसकी आत्मा तक को खरीद लेते हैं। इतना ही नहीं, बात-बात में उस पर डण्डे भी बरसाते हैं।

सभ्यता की ये मर्यादाएँ

ये हिंसाएँ ऐसी हैं जिनको हम हिंसा नहीं समझते बल्कि यह मानते हैं कि ये समाज की पारम्परिक मान्यताएँ, मर्यादाएँ तथा रीति-रिवाज हैं जिनका हम पालन करते रहते हैं। इनके साथ किसी के अधिकार और किसी के कर्तव्य की भावना जोड़ दी गयी है, और हमने भी इस स्थिति को स्वीकार कर लिया है। सभ्य समाज ने जो मान्यताएं, मर्यादाएँ बना रखी हैं, सभ्यता का लबादा ओढ़नेवालों में उसे तोड़ने का साहस नहीं है। न जाने कब तक हम इस घुटन में साँस लेते रहेंगे? इस प्रकार समाज की पारम्परिक मान्यताओं द्वारा हिंसा को पोषण मिल रहा है और परिवार में हिंसा होने से हमने मान लिया है कि हिंसा हमारे जीवन में अनिवार्य है।

प्रत्यक्ष हिंसा : अप्रत्यक्ष हिंसा

हिंसा के दो रूप हैं : एक वह जो मनुष्य के शरीर को समाप्त कर देता है, और दूसरा वह जो मनुष्य के शरीर को समाप्त तो नहीं करता बल्कि उसके जीवन को निराशा, अपमान, तिरस्कार तथा घृणा की आग में जलाता रहता है, और उसे घुट-घुट कर जीने को विवश किये रहता है। एक हिंसा होती है जिसमें खून की नदियाँ बहती हैं तो दूसरी हिंसा ऐसी होती है जिसमें खून शरीर के अन्दर ही सूखता रहता है। इसी हिंसा के अन्तर्गत घरेलू हिंसा आती है जिसे हम हिंसा नहीं मानते हैं।

समस्याएँ एक युग से दूसरे युग में बदलती रहती हैं, क्योंकि लोगों की कल्पनाएँ, भावनाएँ, आवश्यकताएँ, आशाएँ बदलती रहती हैं। हम अपने युग के प्रभाव से पूरा-पूरा अलग नहीं हो पाते हैं। यह परिस्थिति की विवशता है। जैसे गांधी ने 'सर्व' की बात कही, इसलिए सत्य और अहिंसा की बात कही। मार्क्स में 'सर्व' की भावना तो थी, लेकिन वह पार्थक्य से आगे की पद्धति नहीं निकाल सका, उसके दर्शन से वर्गवाद ही निकल सका। गांधी ने 'सर्व' की स्पष्ट योजना की जिसमें एक-एक नागरिक शरीक हो सकता है, जिससे क्रान्ति स्वयं 'सर्व' की हो जाती है। इसलिए यह मानना चाहिए कि समय के साथ हमें अपनी सामाजिक मान्यताएँ और मर्यादाएँ भी बदलते रहना है, क्योंकि इन्हीं मान्यताओं और मर्यादाओं के अन्तर्गत घरेलू हिंसा को पोषण मिलता है।

आज ये चीजें समाज में इसलिए व्याप्त हैं कि मनुष्य का विशुद्ध मानवीय विकास नहीं हुआ है। लोकतन्त्र तात्विक दृष्टि से शान्ति की शक्ति पर आधारित है लेकिन उसकी वृत्तियाँ लोकतंत्र के विपरीत हो जाती हैं। लोकतन्त्र में व्यक्ति की महत्ता है किन्तु हिंसा के वातावरण में व्यक्ति की महत्ता नहीं रह जाती है।

विज्ञान और लोकतन्त्र के युग में

विज्ञान में सत्य की सत्ता होती है। सत्य पक्षरहित, वस्तुनिष्ठ, आग्रहमुक्त होता है। अगर विज्ञान किसी पक्ष या विचार के आग्रह से जुड़ जाय तो वह विज्ञान नहीं रह जायगा। उसी तरह अगर लोकतन्त्र अहिंसा का आधार छोड़ दे तो वह सत्तातन्त्र या अधितन्त्र बन जायगा। आज हर जगह हिंसा की सत्ता दिखाई देती है। विनोबाजी कहते हैं कि विज्ञान और आत्मज्ञान का मेल होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होगा तो विज्ञान ने जो शक्तियाँ पैदा की हैं, जो साधन बनाये हैं उनसे मनुष्य-जाति अपना सर्वनाश कर डालेगी। इसलिए अगर विज्ञान को मनुष्य-जाति के अभाव, अज्ञान और अन्याय से मुक्ति का साधन बनाना हो तो समाज में अनुकूल मानवीय सम्बन्ध स्थापित होने चाहिए। मनुष्य-मनुष्य के बीच मनुष्य होने के नाते मूलभूत एकता है। मनुष्य 'एक' होकर ही रह सकता है तथा अपना विकास कर सकता है।

लोकतन्त्र और विज्ञान इन दोनों के विपरीत समाज का संस्कार बनाने में परिवार की हिंसा का बहुत बड़ा हाथ है। आज आवश्यकता है कि लोकतन्त्र और विज्ञान दोनों का उपयोग हमारे घरेलू जीवन में भी हो। परिवार समाज की बुनियादी ईकाई है। बच्चा परिवार में ही जन्म लेता है, वहीं उसका पालन-पोषण होता है, वहीं उसके व्यक्तित्व की रचना होती है, वहीं उसकी भावनाएँ और मनोवृत्तियाँ बनती हैं। व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति से समाज बनता है और व्यक्ति ही समाज को सही दिशा में ले जाता है या दिशाहीन कर देता है, इसके अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं। अनेक महापुरुषों ने समय-समय पर समाज को नयी दिशा दी है और देते रहेंगे। इस प्रकार व्यक्ति और समाज का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। व्यक्ति का प्रभाव समाज पर और समाज का प्रभाव व्यक्ति पर पड़ेगा। इसलिए हमें सबसे पहले उस स्थान पर ध्यान देना चाहिए जहाँ उसके शरीर, चित्त और वृत्तियों की रचना होती है अर्थात् परिवार। परिवार के वातावरण का प्रभाव, जब से बच्चा गर्भ में रहता है तभी से पड़ता है। यह तो आदिकाल से माना जाता है और इसके उदाहरण भी अपने धार्मिक-ग्रन्थों में मिलते हैं जैसे–प्रह्लाद और अभिमन्यु।

हिंसामुक्ति के लिए मूल्य-परिवर्तन

इससे यह सिद्ध होता है कि समाज में व्याप्त हिंसा खत्म करने के लिए तात्कालिक समाधान के रूप में हम भले ही यह सोचें कि सरकार की दण्ड-शक्ति समाज की हिंसा को मिटा सकती है, किन्तु यह हिंसा को मिटाने का स्थायी और कारगर तरीका नहीं हो सकता। यदि सरकार हिंसा को मिटाना चाहेगी तो उसके लिए वह हिंसात्मक, दमनात्मक कार्य करेगी। उससे हिंसा घटेगी नहीं बढ़ेगी। इसी तरह समाज के हस्तक्षेप से कभी-कभी तात्कालिक शान्ति हो जाती है, लेकिन टकराव की स्थिति भी पैदा हो सकती है।

हम जिस समाज की कल्पना करते हैं

उसे बनाने में हमें समाज की पारम्परिक मान्यताओं, मर्यादाओं, रीति-रिवाजों और मूल्यों को बदलना होगा। इसके लिए हमें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा शिक्षा के क्षेत्रों में अपना दृष्टिकोण बदलना होगा, नये मूल्य स्थापित करने होंगे। यह युग वैज्ञानिक ही नहीं मनोवैज्ञानिक भी है। इसमें व्यक्ति और उसके मन की महत्ता माननी होगी। व्यक्ति का विशुद्ध मानवीय विकास हो इसके लिए परिवार में स्वस्थ सम्बन्ध तथा समुचित वातावरण अनिवार्य है। परिवार के वातावरण को स्वस्थ और शुद्ध बनाना हर स्त्री और पुरुष की जिम्मेदारी है। स्त्री और पुरुष के विशुद्ध प्रेम ने ही मानव के अस्तित्व का ताना-बाना बुना है। प्रेम सार्वभौम है किन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने विशुद्ध सम्बन्ध-सूत्रों से उसमें नये जीवन, नये उत्साह तथा उल्लास का संचार कर सकता है। इस प्रकार हमें अपने घर में विज्ञान, लोकतन्त्र, तथा आत्मज्ञान, तीनों को अपनाना होगा। जैसे, एक छोटे से बीज में एक विशाल वृक्ष का अस्तित्व समाया रहता है उसी प्रकार समाज में व्याप्त हिंसा का अस्तित्व अपने घर में छिपा हुआ है। घरेलू हिंसा ही समाज में फैली हिंसा का उद्गम स्थान है। मनुष्य में मुख्य वस्तु मन है। भावना, वासना, कामना, प्रेरणा, आशा, निराशा आदि की सारी मानसिक वृत्तियाँ मनुष्य में काम करती हैं। भय, साहस, अभिमान, मानापमान, प्रेम, आसक्ति, द्वेष, तिरस्कार, घृणा ये सब मानव की मनोवृत्तियों के खेल हैं। मनुष्य की इन वृत्तियों का विकास, शमन और दमन परिवार से शुरू होता है। घरेलू हिंसा को खत्म करने के लिए हमें अपने जीवन का सारा ताना-बाना बदलना पड़ेगा। सही अर्थों में लोकतन्त्र, विज्ञान, तथा आत्मज्ञान, इन तीनों के अनुसार सारा अभ्यास परिवार को करना होगा तब हम समाज में मनुष्य का मनुष्य से विशुद्ध मानवीय सम्बन्ध देख सकेंगे। ●

शिमला-वार्ता: उद्देश्य की ओर पहला कदम

● जयप्रकाश नारायण

भारत की प्रधान मंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति द्वारा किये जानेवाले सन्धि में दोष निकालना सम्भव है। परन्तु हरेक हिन्दुस्तानी को जो इस उप महाद्वीप में शान्ति का इच्छुक है उसे दिल से इस सन्धि का समर्थन करना चाहिए। परिस्थिति के कारण दो सरकारों के प्रधानों के द्वारा पहली मुलाकात में की हुई सन्धि अन्तिम हल की दिशा में केवल पहला कदम होती है। आरम्भ में ही पूर्ण रूप से सहमति की आशा रखना अवास्तविक था। मैं खुश हूँ कि कई ठोस और अमली कदम उठाने के सिलसिले में वादा हो गया है। मुझे यकीन है कि अगर उन्हें ईमानदारी से कार्यान्वित किया गया तो भविष्य में कदम उठाने के लिए रास्ता साफ हो जायगा। मैं प्रधान मंत्री श्रीमती गांधी और राष्ट्रपति भुट्टो, दोनों के साथियों और सहयोगियों की प्रशंसा करता हूँ। बड़े अफसोस की बात है कि एक ऐसा व्यक्ति, जिसने इसके लिए बड़ी सख्त मेहनत की थी वह एकाएक बीमार पड़ गया और वार्ता में अन्त तक भाग न ले सका।

यह आवश्यक मालूम होता है कि पाकिस्तान और उसके मित्रों को याद दिलायी जाय कि बिना बांगला देश को पाकिस्तान द्वारा मान्यता दिये उप-महाद्वीप में स्थायी शान्ति की दिशा में कदम बढ़ाना असम्भव है। बांगला देश में कैद होनेवाले ९० हजार सिपाहियों और नागरिकों के प्रति भुट्टो की चिन्ता ठीक है और बांगला देश की सरकार ने उनपर (युद्धबन्दियों पर) जो मुकदमा चलाने का फैसला किया है, उस पर भी उनकी चिन्ता ठीक है। यह स्पष्ट है, परन्तु इसे दुबारा कहने की आवश्यकता है कि यह गुत्थी बिना पाकिस्तान द्वारा बांगला देश को मान्यता दिये सुलझ नहीं सकती। ऐसा होने से मुझे कि प्रधान मंत्री शेख मुजीबुर्रहमान को इस बात पर राजी करना आसान हो जायगा कि वह पाकिस्तानी नागरिकों एवं फौजियों पर मुकदमा चलाने का विचार छोड़ दें। मैं कम-से-कम इसी बात की कोशिश करूँगा कि शेख मुजीबुर्रहमान ऐसा न करें।

एक दूसरी समस्या भी है जिसको हल किये बिना तीनों देश की सरकारों के बीच भाईचारा नहीं हो सकता। यह २० लाख (बांगला देश में रहनेवाले) बिहारी मुसलमानों की समस्या है जिनकी परिस्थिति अवश्य चिन्ताजनक है। इसी तरह ४ लाख बंगालियों की भी समस्या है जो पाकिस्तान में हैं। इस समस्या के कारण बड़े पैमाने पर केवल इससे इनसान पीड़ित ही नहीं हो रहा है बल्कि सम्बन्धित देशों के सम्बन्ध भी खराब हो रहे हैं। मैं उम्मीद करता हूँ कि सदर भुट्टो, जिन्होंने दूरदर्शी राजनीतिज्ञ होने का सबूत दिया है, इस परिस्थिति का सामना करेंगे और वह काम करेंगे जो सही है और उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जरूरी है। इस बात की ओर भी संकेत कर देना चाहिए कि भविष्य में बांगला देश और पाकिस्तान के बीच जो सम्बन्ध बनेंगे वे इस बात पर निर्भर करेंगे कि पाकिस्तान बांगला देश की स्वतन्त्र हैसियत स्वीकार कर ले और उसे मान्यता दे दे।

कश्मीर के बारे में भी एक बात कहना सही होगा। यह बड़ी खुशी की बात है कि प्रधान मंत्री और शेख अब्दुल्ला, हाल ही में मिले हैं और दोनों इस बात पर सहमत हो गये हैं कि कश्मीर की पुरानी और दीमक खायी हुई किताब में नया वर्क उलटा जाय। भारत और पाकिस्तान में इस युद्ध-विराम रेखा को स्थायी शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सीमा मानने के सिलसिले में जो भी सन्धि हो, पहला कदम यह होना चाहिए। ●

स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती मनानेवालो

हमें आपसे कुछ पूछना है, कुछ कहना है !

हम देश के लाखों टूटे हुए गांव हैं। एक जमाना था, जब हम सचमुच गांव थे। हमारे ग्रामवासी एक दूसरे से मिल-जुलकर रहते थे, दुख-सुख मे एक-दूसरे का हाथ बंटाते थे, अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए हमे शहर और सरकार का मुंह नही ताकना पड़ता था। हम लड़ने-झगडते भी थे, लेकिन पच परमेश्वर के सामने मामले निपटा भी लेते थे। आज तो हम कचहरियों मे दौड़ते-दौड़ते बर्बाद हो जाते हैं, लेकिन न्याय नही मिलता। हमारे उद्योग-धन्धे चौपट हो गये। गांव दिनो-दिन कगाल हो रहे हैं, बाजार दिनो-दिन मालामाल हो रहे हैं! नेता आते हैं, चुनाव लाते हैं, वादे दे जाते हैं, वोट ले जाते हैं, और एक कलह की आग हमारे बीच धधका जाते हैं। हम भारत के गांव हैं। कहा जाता है कि भारत गांवो का देश है! तो विनाश की आग मे धू-धू कर, जलनेवाले गांवो का देश क्या हमारी बर्बादी की खुशी मना रहा है ?

मैं एक खेतिहर मजदूर हूँ

सुनता हूँ कि देश में अपना राज है। अंग्रेजों की गुलामी को खत्म हुए २५ साल हो गये। २५ साल ! इतने सालो मे तो एक लड़का पैदा होकर जवान बन जाता है। बल्कि हम लोगों के लड़के तो २५ साल में अब बूढ़े होने लगते हैं। यह भी सुनता हूं कि दिल्ली में इस बात की बड़ी खुशी मनायी जा रही है कि अपना राज आये २५ साल हो गये।

जब नेता लोग वोट मांगने आते हैं तो कहते भी हैं कि यह देश की जनता का राज है। हमसे भी वोट मांगते हैं। कहते हैं यह राज तुम्हारा ही है। बाबू लोग कैसे-कैसे मजाक हम गरीबों से करते हैं ? जिसको सिर छिपाने के लिए अपनी एक झोपड़ी नहीं, जो अधभूखा ही जिन्दगी गुजारता है, जिसके तन पर लाज ढकने लायक वस्त्र भी नही, खून-पसीना एक करके भी जो इज्जत और सुख की जिन्दगी के लिए तड़पता ही मर जाता है, मरने पर जिसके कफन का भी जोगाड़ नही हो पाता, उससे कहा जाता है कि यह तुम्हारा राज है! वाह रे हमारा राज !

हमें हरिजन कहा जाता है

गाधी बाबा के सुराजी लोगो ने हमारी बस्ती मे आकर कहा था, "अंगरेजों का राज अब खतम हो रहा है, सुराज आनेवाला है। सुराज मे ऊँच-नीच का भेद नही रहेगा। कोई भी छोटा-बड़ा नही माना जायगा। सतयुग आयेगा। जमाना बीत गया, इस बात को सुने, लेकिन हम तो जहां के वहीं हैं। आज भी हमारे लिए भाग्य म नरक भोगना ही लिखा है। सुराज हुआ तो गाधी बाबा के चेलो की चांदी कटी। पहले के बाबू बडका लोग अब नेता कहलाने लगे हैं। लेकिन हमारे लिए तो अब भी वही बेगारी, ऊपर से गाली-गलौज, मारपीठ, हर समय बस्ती से खदेड़े जाने की धमकी !"

धरती का एक टुकड़ा अपना नही, पीने के लिए पानी का एक कुआं तक नही! हम क्या जाने सुराज क्या होता है! जिनका सुराज होगा, वे मनायें इसकी खुशी !

सारी मार किसान ही पर ?

चारो ओर से हमारे ऊपर ही आफत है। सरकार जमीन की मिल्कियत पर अपना कब्जा जमाना चाहती है, नेता लोग हमें ही कोसते हैं, गांव के हरिजन, मजदूर सब हमारे ही जिम्मेदार होना चाहते हैं, लेकिन हमारी हालत पर भी कोई नजर दौड़ाता है ?

तन, मन, धन लगाकर किसी तरह इज्जत बचाये रखने के लिए खेती करते-कराते हैं, और पैदावार हुई नहीं, कि बाजार में भाव गिर जाते हैं। कितना खर्च लगाया, कितनी उपज हुई, इस पर से हमारी उपज का भाव नहीं लगाया जाता। बीज, खाद, सिंचाई, मजदूरी सबके भाव बढ़ते जा रहे हैं। जब पैदावार हमारे घरों से बाजारों में पहुँच जाती है तो फिर भाव आसमान छूने लगते हैं! उधर बाजार की चीजों के भाव एक बार बढ़ गये तो फिर घटने का नाम नहीं लेते। हम पर दुहरी

मार पड़ती है। हम क्या मनायें स्वराज्य की खुशी? खुशी मनायें वे, जिनकी पांचो उँगलियाँ घी मे हैं, वे सेठ-साहूकार, नेता-अफसर, ठीकेदार-दलाल! जिनकी कमाई सूखे-पाले, बाढ़-तूफान मे और भी बढ़ जाती है!

हमारी जिन्दगी भी क्या है?

पिछली बार जब वोट पडा था, तो बड़ा शोर था कि इन्दिरा गाधी का राज हो गया है। औरत के राज मे औरतो का जीवन सुखी होगा। यही सोचकर हम सब औरतो ने इन्दिरा गाधी को ही वोट दिया था। लेकिन वहाँ कुछ फर्क पड़ा? इन्दिराजी भले ही देश की मालकिन बन गयी हो, हमें तो घर मे भी कोई नही पूछता। हमारी जिन्दगी तो मर्दों की इच्छा पर है। लड़की थी, खूब पढना चाहती थी, घरवालो ने पढने नही दिया। चाहती थी अपने पैरो पर खड़ा होना, लेकिन बाप ने हमारा जीवन सुखी बनाने के लिए हजारों रुपयों मे हमारे लिए सुखी-समृद्ध घर और वर खरीद दिया, और हम वहाँ सुख भोगने के लिए रख दी गयी। वहाँ हमारा सुख यही था कि सास-ससुर से लेकर घर के सब लोगो को खुश रखने की हर कोशिश करूँ, पति की इच्छानुसार चलूँ, माँ बनकर चाहे जितने बच्चों का पालन-पोषण करूँ, हर तरह की दुख-तकलीफ सहूँ, घुट-घुटकर मरूँ, और सबको खुश रखूँ। यही जिन्दगी मेरी माँ ने, सास ने बितायी, पीढियो से लोग यही जिन्दगी बिताती और आनेवाली बेटी-बहू पर उसका भार सौंपती आयी हैं, मैं भी शायद यही करके चली जाऊँगी। क्या अंग्रेजी राज, क्या सुराज और क्या इन्दिरा राज, सब हमारे लेखे बराबर हैं। सोचती हूँ क्या कभी हम भी मर्दों की तरह समाज के नागरिक बनकर जी सकेंगी?

कौरववादी समाज के हम अभिमन्यु करें क्या?

नेता जब हमारे बीच भाषण करते हैं तो कहते हैं, तुम भारत के भविष्य का निर्माता हो। देश की बागडोर तुम्हारे हाथो में आनेवाली है। तुम्हें इसे सम्भालने योग्य बनना चाहिए। तुम देश की नयी जिन्दगी के प्रतीक हो, देश का नव-निर्माण तुम्हारे हाथो मे है। वही नेता जब कही और भाषण देते हैं तो कहते हैं, देश का भविष्य अन्धकारमय है। तरुण पीढ़ी उच्छृंखल, आवारा और गैर-जिम्मेदार हो गयी है। उसके अन्दर विध्वंसक वृत्ति पैदा हो गयी है। देश का भविष्य खतरे मे है। यही नेता जब अपनी पार्टी के लिए हमारा इस्तेमाल करते हैं तो इन विध्वंसक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देते हैं, इतना ही नही, उसकी हमें ट्रेनिंग भी देते हैं। देश की संसद तक मे उठा-पटक होती है तो क्या हम उसे शिष्टाचार कहेंगे? देश का भविष्य सचमुच अन्धकारमय है, हम खुद उस अन्धकार के भय से चीखते-चिल्लाते हैं, छ पटाते हैं, तो हमें गैर-जिम्मेदार कहा जाता है। आखिर भविष्य-निर्माता हम हैं, इतना कहने मे वर्तमान के निर्माता अपने काले-कारनामो से मुक्त हो जायेंगे? *ऐसा लगता है कि परिवार, विद्यालय और समाज के सत्तावादी चक्रव्यूह में हम अभिमन्यु फँस गये हैं और इस कौरववादी समाज के भीष्म, द्रोण भी हमारे ही ऊपर प्रहार कर रहे हैं। स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती आ गयी है। शहीदों की याद करके हमें कुछ प्रेरणा भी मिलती है, लेकिन इस चक्रव्यूह में फँसे हम अभिमन्यु करें क्या?*

हम भारत के निर्माता, या कोल्हू के बैल?

बच्चो को हम इतिहास पढ़ाते हैं, अंग्रेजो ने भारत को सदियो तक गुलाम बनाये रखने के लिए यहाँ की शिक्षा, संस्कृति को नष्ट कर डाला और एक ऐसा तंत्र खड़ा किया जिसमें से उनके शासन के गुलाम पैदा हो जो उनकी भट्ठी राजगद्दी को भारत मे टिकाये रखने के लिए आधार, बुनियाद बने। लार्ड मेकौले ने इसके लायक शिक्षा-प्रणाली देश में लागू की थी। "स्वराज्य के यानी १५ अगस्त १६४७ के बाद मे यही पाठ हम दुहराते आ रहे हैं। २५ वर्ष हो गये ये बातें दुहराते। अब स्वराज्य की रजत-जयन्ती मनायी जा रही है। हमें तो कभी-कभी *शर्म आती है, इस छलना से जब यह ध्यान में आता है* कि मेकौले तो आज भी शिक्षा में कायम है! शासक बदले, शासन के ढांचे में कुछ फेर-फार हुए, देश का झण्डा बदला, लेकिन क्या शिक्षा भी बदली? गुलाम बनानेवाली मेकौले की शिक्षा की निन्दा हम रोज करते हैं, और कोल्हू के बैल की तरह उसी के चारों तरफ स्वराज्य के पहले की तरह ही चक्कर भी लगाते हैं, क्या गुलाम बनानेवाली शिक्षा मे हम आजाद भारत की संस्कृति का निर्माण कर सकेंगे? यह कैसी विडम्बना है कि मेकौले के कोल्हू में जुते हम बैलो से कहा जाता है कि तुम नये भारत के निर्माता हो!

—रामचन्द्र राही

खादी-कार्य को क्रान्तिकारी बनाने के लिए

हड्डी गलानेवाले कार्यकर्ता आगे आयें

श्री धीरेन्द्र मजूमदार की जयपुर में खादी-कार्यकर्ताओं से चर्चा

राजस्थान के खादी जगत की जो परिस्थिति है, वही करीब-करीब सारे देश की है। फर्क इतना ही है कि ऊनी उत्पादन व साबुन उद्योग राजस्थान की संस्थाओं को आज टिकाये हैं। पर ये तात्कालिक बातें आन्दोलन को नहीं टिका सकतीं, संस्था के कुछ कार्यकर्ता कुछ समय के लिए उससे भले ही टिक जायें। यदि आपको क्रान्ति करनी है, तो बुनियाद में जाना होगा, नहीं तो आपको अपनी मर्यादा मानकर केवल मदद करने की दृष्टि तक ही सोचना होगा।

१९४४ में गांधीजी ने चरखा संघ को विकेन्द्रित कर देने की सलाह दी थी और चाहा था कि अब तक खादी का काम राहत का काम रहा पर अब उन्हें यह सिद्ध करना है कि चरखा शोषण व शासन-मुक्ति का प्रतीक है। गांधीजी की सलाह उस समय नहीं मानी गयी, हालांकि उस समय परिस्थिति इसके लिए अनुकूल थी पर मनःस्थिति अनुकूल नहीं थी। आज तो परिस्थिति भी अनुकूल नहीं। ऐसी स्थिति से सारे काम को नया मोड़ देना कठिन है अतः नया छोर ही निकालने का प्रयत्न करना होगा।

इसलिए हमें अपना निश्चित रोल समझ लेना चाहिए। खादी के द्वारा हम छोटे पैमाने पर राहत देने का कार्य चाहे भले ही कर सकें पर बेरोजगारी दूर कर सकेंगे, यह सम्भव नहीं। कार्य उसी उद्योग से दिया जा सकता है जिसका स्वाभाविक 'मार्केट' हो। खादी के लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता। अतः इसके द्वारा तो राहत के काम में पहल व क्रान्ति के काम में मदद ही दी जा सकती है।

आजकल 'क्रान्ति' शब्द बहुत प्रचलित है। अनाज ज्यादा पैदा हो जाय तो 'हरित क्रान्ति' हो गयी। कहीं फौजदारी हो गयी तो क्रान्ति हो गयी। हमारी आजादी की लड़ाई में जो लोग बम वगैरह फेंकते थे उनको हम क्रान्तिकारी कहते थे परन्तु दुनिया में जहां-जहां भी स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी गयी उसको उन्होंने 'क्रान्ति' शब्द से सम्बोधित न कर वार ऑफ इण्डिपेण्डेण्ट (स्वातन्त्र्य युद्ध) ही कहा। हमें ठीक से समझ लेना है कि युद्ध, विद्रोह और क्रान्ति ये सब शब्द अलग-अलग अर्थ रखते हैं। गांधीजी ने हमें 'युद्ध' से 'क्रान्ति' की ओर चलने की प्रेरणा दी, इसीलिए उन्होंने कहा कि अंग्रेजी राज्य से विद्रोह स्वतंत्रता का पहला कदम है।

गांधीजी ने हमें बताया कि शक्ति और यंत्र में परिवर्तन होने पर क्रान्ति होती है। केवल शक्ति या यंत्र के चालक बदल जाने से क्रान्ति नहीं होती। गांधी ने समुद्र की लहरों के समान भारतीय समाज की रचना का सुझाव दिया था और कहा था कि चरखे के द्वारा अब राहत का नहीं, क्रान्ति का कार्य सम्पन्न किया जाना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट कहा कि क्रान्ति का कार्य सरकारी मदद के सहारे नहीं हो सकता। अतः खादी-कार्य को सरकारी सहायता से मुक्त रहना चाहिए।

आजादी मिलते ही सरकार ने वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से खादी-कार्य चलाने की जब योजना बनायी तो गांधी ने उसे अस्वीकार कर दिया और कहा कि यदि सरकार यह काम शुरू करना चाहती है तो हमारे लोगों को इसमें नहीं पड़ना चाहिए। जो काम वह नहीं कर सकती, वही हमें उठाना चाहिए।

पर खेद है कि गांधी ने हमें जो गांव-गांव में बिखरकर ग्रामस्वराज्य की साधना करने का आदेश दिया उसको तो किया नहीं बल्कि उल्टे उन्होंने जो नहीं करने को कहा वह किया। सरकार को खादी का काम सौंपकर हम अलग नहीं हटे बल्कि खादी-कार्य के लिए सरकारी सहायता व धन प्राप्त करने लगे।

विनोबा ने भूदान-ग्रामदान के द्वारा हमें दूसरी दिशा की ओर मुड़ने को प्रेरित किया है। जगह-जगह ग्रामदानों की घोषणा के साथ इस विचार का उद्घोष व प्रदर्शन हुआ, देश व विदेश तक का ध्यान आकर्षित हुआ, पर अब कुछ क्षेत्रों को चुनकर इस विचार को असली रूप देकर, प्रयोग से सिद्धकर बतलाना होगा, तब ही लोगों का इसमें 'पार्टीसिपेशन' होगा। पहली स्टेज के कार्य में तो चाहे जिस प्रकार के लोगों द्वारा कार्य कराया जा सकता था पर दूसरी स्टेज में—किसी एक निश्चित बिन्दु तक ग्रामवासियों को ले जाने का कार्य अत्यन्त कठिन है, यह 'साइड बिजनेस' से नहीं हो सकेगा। जिनकी हड्डी गलाने की तैयारी हो, ऐसे लोगों द्वारा ही यह कार्य सम्पन्न हो सकेगा।

खादीवाले प्रायः कहा करते हैं कि खादी कपड़ा नहीं, विचार है। इसके पीछे बहुत बड़ी सच्चाई है। कपड़े की हैसियत में खादी टिक नहीं सकती। एक अर्थशास्त्री ने सारा हिसाब निकालकर बताया कि खादी-कार्य के निमित्त से सरकार व जनता जो खर्च कर रही है उतनी राशि यदि ग्रामीण सिंचाई के साधनों में खर्च की जाती तो खादी से ज्यादा रोजगार दिया जा सकता था। अतः तर्क के आधार पर आप टिक नहीं सकते। केवल भावना के आधार पर बाजार नहीं मिल सकता। अतः खादी-कार्य करनेवालों को अपनी मर्यादाएं स्पष्ट समझ लेनी चाहिए और आप कोई क्रान्तिकारी कार्य कर रहे हैं, यह वहम भी मन में नहीं रहना चाहिए।

आज जो ग्रामदान की पुष्टि हुई कर ग्रामस्वराज्य सभाएं गठित हो रही हैं, वह स्वयं ग्रामस्वराज्य नहीं। वह तो कांग्रेस की तरह ही एक संस्था-मात्र का किसी उद्देश्य विशेष के लिए जनता को संगठित करना मात्र है। ग्रामस्वराज्य-सभा को एक एक कदम आगे बढ़कर सारे

(शेष पृष्ठ ७०३ पर)→

कार्यकर्ताओं एवं रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों की बैठक : कुछ निश्चय

बिहार के जिला सर्वोदय मण्डल एवं जिला ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष, मंत्री एवं संयोजक, रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ताओं की द्विदिवसीय बैठक १९ और २० जुलाई को मुंगेर जिला के खड़गपुर में श्री परमेश्वरी दत्त झा के सभापतित्व में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई। इस बैठक के पहले बिहार के लगभग दो दर्जन प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ताओं की पंचदिवसीय बैठक १५ जुलाई से १९ जुलाई तक खड़गपुर झील पर हुई। झील की बैठक को स्नेह-मिलन का नाम दिया गया और वास्तव में यह स्नेह-मिलन बैठक के प्रारम्भ से अन्त तक स्नेह पूर्ण रहा।

लगभग एक वर्ष पहले, इस प्रकार की बैठक का आयोजन हजारीबाग जिला के प्रसिद्ध जैन तीर्थस्थान मधुवन में किया गया था जिसमें निर्णय तो स्नेह उत्पन्न करनेवाला किया गया था, लेकिन बातचीत एवं भाषण ने वातावरण में बहुत कटुता पैदा की थी।

जब १५ जुलाई को बैठक प्रारम्भ हुई, तब इस बैठक के संचालन के लिए कोई अध्यक्ष नहीं था। स्नेह मिलन में सर्वोदय आन्दोलन की आध्यात्मिक भूमिका एवं आगे का कार्यक्रम, भूमि-सुधार कानून एवं सर्वोदय आन्दोलन, सगठन एवं आन्दोलन का मूल्यांकन आदि विषय पर चर्चा हुई और सर्वसम्मति से कुछ कार्यक्रम स्वीकार किये गये, जिन्हें १९ जुलाई की बैठक में विचारार्थ रखा गया।

१९ और २० जुलाई को सर्वोदय कार्यकर्ताओं की बैठक में, जिसे सर्वोदय संघ की बैठक के नाम से हमलोग पुकारते हैं, सर्व सेवा संघ के सम्मेलन, नकोदर (पंजाब) में स्वीकृत प्रस्ताव, ग्रामस्वराज्य पुष्टि-अभियान के बिहार के राष्ट्रीय मोर्चा सहरसा एवं मुसहरी के चयन का स्वागत किया तथा इन क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य की स्थापना, ग्रामस्वराज्य पुष्टि-अभियान की सफलता के लिए एक योजना स्वीकार की गयी। स्वीकृत योजनानुसार इन क्षेत्रों में दो दर्जन पूरा समय देनेवाले समर्पित कार्यकर्ता कम-से-कम दो वर्ष लगातार काम करेंगे और प्रत्येक पांच महीने के बाद एक महीने के लिए विशेष आन्दोलन का आयोजन किया जायगा जिसमें राज्य एवं देश के विभिन्न स्थानों से कार्यकर्ताओं का अपार समूह इसमें तीव्रता से जुट जायगा।

इस अभियान में ग्रामीणों को, विशेष कर चेतनशील शोषित व्यक्तियों को सगठित कर कार्यक्रम की सफलता के लिए आगे करने की दिशा में प्रशिक्षित करने की योजना है। ऐसे प्रशिक्षित व्यक्तियों का संगठन खड़ा कर ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि अभियान खड़ा करने का कार्यक्रम बनाया गया है जिसमें भूमि-सुधार कानून को कार्यान्वित करने एवं सभी तरह के अन्याय का यथाशक्ति विरोध कराने का प्रयास किया जायगा।

इन राष्ट्रीय मोर्चों के अतिरिक्त प्रत्येक जिले में कम-से-कम एक विधान सभा चुनाव-क्षेत्र को इकाई मानकर सर्वोदय आन्दोलन के विभिन्न कार्यक्रम को कार्यान्वित करने का प्रयास रहेगा। इस प्रकार के क्षेत्र चयन करने का एक प्रमुख कारण आगामी आम चुनाव के अवसर पर ग्रामदानी गांवों के विभिन्न क्षेत्रों से ग्रामसभा के प्रतिनिधियों द्वारा सर्वसम्मति से पक्ष-मुक्त लोक-प्रतिनिधि उम्मीदवार का चयन करने एवं उन्हें संसद एवं विधान सभा में भेजने की योजना भी शामिल है। लोक-प्रतिनिधि का चयन से पहले चुनाव क्षेत्र के गांवों में ग्रामस्वराज्य की स्थापना करना तो आवश्यक है ही, लोगों को निर्भीक बनाने, ग्रामसभा एवं ग्रामकोष का गठन, मालकियत का स्वामित्व-विसर्जन एवं गांव के प्रत्येक भूमिवान द्वारा अपनी जमीन का बीसवां अंश, बीघे में कट्ठा भूमिहीनों के बीच वितरण कराने का कार्यक्रम भी आवश्यक है।

बैठक में सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग के सुझाव पर इस राज्य में कम-से-कम एक सौ सम्पर्क-क्षेत्र बनाने का निश्चय किया है और प्रत्येक जिले के सर्वोदय कार्यकर्ताओं को इस सम्पर्क-क्षेत्र के चयन से लेकर लोक-प्रतिनिधि के चयन तक कार्य करने की दिशा में लग जाने की अपील की है।

बैठक में उपस्थित व्यक्तियों को आचार्य श्री राममूर्तिजी ने बंगलोर में हुई चर्चा से अवगत कराया। सर्वोदय संघ की बैठक ने बिहार में बिहार सर्वोदय मण्डल की स्थापना करने का निर्णय लिया तथा बिहार सर्वोदय मण्डल के कार्य को कार्यान्वित करने के लिए सर्वश्री विद्यासागरजी, कैलाश प्र० शर्मा, सर्वनारायण दास, श्याम प्रकाश सिंह, गोपालजी झा शास्त्री, रामनारायण सिंह, रामनन्दन सिंह, सच्चिदानन्द, त्रिपुरारी शरण, बैद्यनाथ प्र० चौधरी एवं महेन्द्र नारायण ११ व्यक्तियों की तदर्थ समिति का गठन किया। बैठक ने बिहार सर्वोदय मण्डल तदर्थ समिति से निवेदन किया कि जल्द-से-जल्द मण्डल के विधान की रूपरेखा तैयार कर प्रस्तावित सर्वोदय मण्डल से स्वीकृत करा ले तथा स्वीकृत विधान के आधार पर बिहार सर्वोदय मण्डल के गठन होने तक आवश्यक कार्य की जिम्मेवारी उठायें। तदर्थ समिति की प्रथम बैठक बुलाने की जिम्मेवारी श्री कैलाश प्रसाद शर्मा को सौंपी गयी।

बैठक में सर्वोदय कार्यक्रम में तीव्रता प्रदान करने हेतु धन-संग्रह करने की बिहार ग्रामस्वराज्य समिति द्वारा गठित बिहार सर्वोदय कोष समिति को मान्यता प्रदान की गयी तथा इस समिति के अध्यक्ष, दो मंत्री एवं कोषाध्यक्ष को आवश्यकतानुसार अन्य सदस्य को मनो-→

आन्दोलन के समाचार

तरुण-शान्तिसेना, आचार्यकुल शिविर

जिला तरुण-शान्तिसेना हरदोई का त्रिदिवसीय शिविर दिनांक २१ जुलाई से श्री रमेशचन्द्रजी के संयोजन में हरदोई शहर में प्रारम्भ हुआ। शिविर का संचालन श्री सन्तोष भारतीय ने किया। शिविर में शिविरार्थियों की उपस्थिति ५६ थी, जिनमें फर्रुखाबाद, इटावा, बाराबंकी और वाराणसी के ४ तरुणों ने भी भाग लिया था। शिविर में तरुण शान्तिसेना के उद्देश्य तथा कार्यक्रम पर श्री अमरनाथ भाई, समाज-परिवर्तन की आवश्यकता तथा उसमें प्रतिकार के स्थान पर श्री विनय भाई एवं शिक्षा में क्रान्ति पर श्री रामचन्द्र राहीजी ने प्रकाश डाला। इन विषयों पर हुई परिचर्चा में शिविरार्थियों ने काफी उत्सुकता से भाग लिया।

शिविर के दूसरे दिन २२ जुलाई को शिविरार्थियों ने शराब के विरोध में जुलूस निकालने का निश्चय किया। जुलूस ने सायंकाल नगर की मुख्य सड़क पर से शराब-विरोधी नारे लगाते हुए शराब की दूकान के सामने धरना दिया। शराब की तीन दूकानों के सामने धरना दिया गया। इस जुलूस का समर्थन नागरिकों ने भी किया। नागरिकों ने भी शराब-विरोधी नारे लगाने में उत्साह से भाग लिया। यहाँ तक कि शराब की दूकान से जो पीनेवाले बाहर निकले उन्होंने भी इस कार्य में भाग लिया। इसकी पूर्व सूचना जिलाधीश को दे दी गयी थी।

शिविर में ७ शिक्षिकाओं ने भी भाग लिया था। उन्होंने चर्चाओं में तथा शिविर के दैनिक कार्यक्रम में बड़े ही उत्साह से भाग लिया। भविष्य में तरुण शान्तिसेना के कार्यक्रम को आगे चलाया जाय, इसका उन्होंने संकल्प लिया।

हरदोई के तरुणों पर, जिसमें हाईस्कूल से लेकर एम० ए० तक के विद्यार्थी थे, शिविर के दैनिक वातावरण तथा तरुण-शान्तिसेना के कार्यक्रमों का प्रभाव पड़ा और वे भविष्य में इसके संगठन तथा अन्याय एवं भ्रष्टाचार के विरोध में कार्य करेंगे ऐसा संकल्प लिया।

इस शिविर को सफल बनाने में शहर के ही डा० के० एल० गुप्ता, श्री शंकर नाथ गुप्ता, रामहित भाई, मूछोंवाले वकील साहब का नाम उल्लेखनीय है।

शिविर के समावर्तन में दीक्षान्त भाषण करते हुए उ० प्र० सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष स्वामी कृष्णानन्दजी ने कहा कि यदि अब भी धर्म के ठीकेदार, शिक्षा के ठीकेदार नहीं चेते, जनता और विद्यार्थियों के प्रति अपने कर्तव्य को नहीं समझे तो जनता उन्हें माफ नहीं करेगी और यदि वे स्वयं नहीं बदले तो समय उन्हें बदल डालेगा। इस समारोह में नगर के प्रमुख लोग भी उपस्थित थे। समारोह का आयोजन नगर के ही बाल-विहार विद्यालय में हुआ था।

—अरुण कुमार

मन्दसौर जिला शिविर सम्पन्न

मन्दसौर जिला सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में दो दिवसीय मित्र-मिलन शिविर सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। जिले के विभिन्न स्थानों से आये हुए कार्यकर्ताओं ने उक्त अभिनव आयोजन की महत्ता प्रतिपादित करते हुए विषम, सामाजिक, आर्थिक व व्यक्तिगत समस्याओं पर उन्मुक्त रूप से विचार किया। परस्पर गुण-विकास और रचनात्मक शक्ति-साधना, सहयोग, सौहार्द बढ़ाने तथा मिलकर नव-समाज-निर्माण के विभिन्न पहलुओं पर संगोष्ठियाँ हुईं।

म० प्र० सेवक संघ के मंत्री श्री बनवारी लाल चौधरी ने मित्र-मिलन शिविर की उपयोगिता और आवश्यकता को सिद्ध करते हुए प्रेरणाप्रद विचार व्यक्त किये। प्रदेश सर्वोदय मण्डल के के मंत्री इन्द्रलाल मिश्र ने उद्घाटन करते हुए सम्बोधित किया। अध्यक्षता मानव मुनि ने तथा संचालन मुकुन्द लाल बघेरवाल ने किया। श्री मधुप एवं मदन कुमार चौबे के संयोजन में रात्रि को कवि-गोष्ठी का सरस आयोजन किया गया। अन्त में जिला सर्वोदय मण्डल के मंत्री राम गोपाल शर्मा ने सबका आभार मानते हुए शिविरार्थियों को विदाई दी। मण्डल के संयोजक श्री दुलीचन्द शर्मा का सहयोग सराहनीय रहा। जिले में इस प्रकार का यह पहला प्रयास था।

→नीत करने का अधिकार सौंपा गया।

बैठक ने सर्वश्री विद्यासागर सिंह, कैलाश प्रसाद शर्मा, सर्वनारायण दास एवं श्याम प्रकाश सिंह को सम्मिलित अधिकार दिया कि वे हिसाब-किताब-संग्रह एवं धूपन-व्यवस्था का प्रयास करें जिसमें सर्वोदय के विभिन्न अहिंसात्मक अस्त्र-शस्त्र का व्यवहार शामिल है। बैठक ने आवश्यकतानुसार कानूनी कार्रवाई करने का अधिकार भी बिहार ग्राम-स्वराज्य समिति तदर्थ समिति के संयोजक श्री सर्वनारायण दास को दिया।

बैठक ने भूमि हदबन्दी कानून का स्वागत किया तथा इस कानून को कार्यान्वित करने की दिशा में प्रयास करनेवाली सरकार एवं समाज-सेवियों को नैतिक समर्थन देने का आश्वासन दिया। बैठक ने इसे कार्यान्वित करने के लिए सर्वदलीय समिति बनाने का सुझाव दिया। स्वयंसेवी संस्थाओं को शामिल करने का सुझाव भी दिया।

—रामनन्दन सिंह

जयप्रकाशजी का कार्यक्रम

अगस्त

१२ से १८	ग्वालियर
१९ से २२	वर्धा
२३	वर्धा से प्रस्थान
२४	बम्बई

सितम्बर

४ से ६	दिल्ली

प्रादेशिक ग्रामस्वराज्य-पदयात्रा

इन्दौर, २७ जुलाई। मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा प्रसारित एक ज न-कारी के अनुसार आगामी १५ अगस्त, १९७२ से ग्वालियर से मध्यप्रदेशीय ग्रामस्वराज्य-पदयात्रा प्रारम्भ होने जा रही है। पदयात्रा-योजना को गांधी स्मारक निधि, चम्बल घाटी शान्ति मिशन, कस्तूरबा ट्रस्ट, हरिजन सेवक संघ आदि रचनात्मक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त है। पदयात्रा टोली का नेतृत्व प्रदेश के वयोवृद्ध सर्वोदय सेवक श्री दादाभाई नाईक (संचालक, विसर्जन आश्रम, इन्दौर) करेंगे। इसके लिए पू० विनोबा जी का आशीर्वाद भी उन्हें मिल चुका है। रजत-जयन्ती वर्ष में पदयात्रा का यह कार्यक्रम मुख्य रूप से ग्वालियर सम्भाग (चम्बल घाटी) और छतरपुर-बुन्देलखण्ड क्षेत्र में चलेगा। इन क्षेत्रों में सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में शान्ति-मिशन के प्रयासों और शासकीय सहयोग से डाकुओं के सामूहिक आत्म-समर्पण द्वारा अहिंसा की जो शक्ति प्रकट हुई है उसे ग्रामस्वराज्य का आधार मिल सके—इसके लिए प्रयत्न होगा। वैसे समूचे प्रदेश में उक्त पदयात्रा का उद्देश्य गांव-गांव में ग्रामस्वराज्य का सन्देश व्यापक रूप से फैलाना है। जब तक हिन्द-स्वराज्य की परिणति ग्राम-स्वराज्य में नहीं होती तब तक देश में लोकतंत्र को स्वस्थ आधार नहीं मिल सकता।

हरियाणा में पदयात्रा

हरियाणा प्रान्त के सभी जिले के सर्वोदय मण्डल अगले वर्ष (१९७३) होनेवाले अ० भा० सर्वोदय सम्मेलन की पूर्वतैयारी में जुट गये हैं।

करनाल जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री काशी लाल सिंहजी अपने साथी लोकसेवक श्री भीम सिंहजी के साथ मिलकर सम्मेलन के समय तक अखण्ड-पदयात्रा अपने जिले में शुरू कर रहे हैं।

गन्नौर ब्लॉक जिला रोहतक में श्री महावीर त्यागीजी कर्मठ लोकसेवक श्री छज्जूराम गुप्ताजी के साथ १० दिन की पदयात्रा पर निकल रहे हैं।

दोनों यात्राओं का उद्देश्य स्कूल, कालेजों एवं ग्रामीणों में सभा तथा विचार-गोष्ठियों द्वारा जन-जन विचार-सन्देश पहुँचाना, साहित्य-बिक्री करना एवं सम्मेलन हेतु अर्थ-संग्रह करना होगा।

—मांगेराम शौचल

पाठकों से

हमारी पत्रिकाओं की व्यवस्था तथा प्रकाशन के स्थान आदि में नई परिवर्तन हो रहे हैं। इस क्रम में 'गांव की आवाज' जुलाई के अंक से वर्ष पूरा करके फिलहाल स्थगित रहेगी। इसलिए हमारा अपने पाठकों और शुभचिन्तकों से निवेदन है कि वे 'गांव की आवाज' के नये ग्राहक अभी न बनें या बनायें। नयी व्यवस्था हो जाने पर हम सूचित करेंगे।

—सम्पादक

(पृष्ठ ६९३ का शेष)

विलीन करके उनकी ब्लॉक स्तर की एक अकेली बहुधन्धी ग्रामगर संस्था बना दी जायगी जो कि सभी उद्योगों, कलाओं और दस्तकारियों के सम्बन्ध में पारस्परिक हित की दृष्टि से आयोजन करेगी।

मात्र यही उपाय गरीबी के उन्मूलन, ग्राम-समुदाय की एकता और गांवों के लाखों कुशल दस्तकारों और सरल उत्पादकों के लिए एक सार्थक जीवन के निर्माण में सक्षम रूप से कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। अब तक हमने जो गलत रास्ता अपनाया है उसे छोड़कर सही मार्ग अपनाने का भी यही एक उपाय है।

—प्रस्तुतकर्ता : रामभूषण

सभी ग्रामदान समिति, बोर्ड एवं प्रादेशिक सर्वोदय मण्डलों के नाम

प्रिय बन्धु,

यह पत्र आपको एक विशेष महत्त्व के काम के लिए लिख रहा हूँ। अपने देश में पिछले वर्षों में ग्रामदान-प्राप्ति का काम हुआ है और कुछ विशेष क्षेत्रों में पुष्टि तथा फॉलोअप और उनके निर्माण के प्रयास भी चल रहे हैं, लेकिन उनकी जानकारी संकलित नहीं हो पाती। कुछ राज्यों में ग्रामदान-कानून पास हो चुके हैं और तदनुसार ग्रामदानी गांवों को कानूनी मान्यता दिलवाने के लिए भी कोशिश जारी है, लेकिन कुछ प्रान्तों में अभी ग्रामदान अधिनियम भी पास नहीं हो सके हैं।

मेरी आपसे प्रार्थना है कि कृपया सूचित करें कि आपके राज्य में ग्रामदान अधिनियम पास करवाने की दिशा में क्या प्रयास हो रहा है? क्या माडल ग्रामदान एक्ट पर मसविदा तैयार हो गया है? सरकार से बातचीत चल रही है? इस दिशा में अब तक की क्या प्रगति है? कब तक कानून स्वीकृत हो जाने की आशा है? इस सम्बन्ध में आपको सर्व सेवा संघ से किसी सहयोग की अपेक्षा हो तो वह भी सूचित कीजियेगा।

ग्रामदान अधिनियम के सम्बन्ध में अपेक्षित जानकारी तो आप देंगे ही इसके अतिरिक्त कृपया सूचित कीजिए कि आपके यहां अब तक जिलावार कितने ग्रामदान हुए हैं। पुष्टि के सिलसिले में अब तक क्या कार्य हुआ है? कितनी ग्रामसभाएँ बनी? कितने ग्रामों में बीसवें हिस्से की भूमि का वितरण हुआ? क्या ग्रामकोष शुरू हुआ? कितने ग्रामों में?

इन सबको भविष्य में भी अपने यहां के ग्रामदान की मासिक अथवा त्रैमासिक रिपोर्ट सर्व सेवा संघ को भेजवाते रहेंगे तो कृपा होगी। रिपोर्ट प्रस्थान आश्रम, पठानकोट (पंजाब) के पते पर भेजेंगे तो अधिक सुविधा होगी।

सधन्यवाद।

यशपाल मित्तल
सहमंत्री,
सर्व सेवा संघ

भूदान-यज्ञ ७-८-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

सिन्धी शरणार्थियों को बलपूर्वक पाकिस्तान भेजना दुर्भाग्यपूर्ण

अ० भा० शान्ति सेना मण्डल के संयोजक श्री नारायण देसाई ने एक वक्तव्य में कहा है "भारत, राजस्थान और गुजरात की सरकारों का यह निर्णय कि सिन्धी शरणार्थियों को बलपूर्वक पाकिस्तान भेजा जायेगा, यदि सही है तो दुर्भाग्यपूर्ण है।

"सिन्धी शरणार्थियों की दशा की तुलना बांगला देश के शरणार्थियों के साथ नहीं की जा सकती। बांगला देश से आये लोग स्वदेश लौट सकते थे क्योंकि उनका देश स्वतन्त्र हो चुका था, और वहाँ उस दल का शासन था जिसको उन्होंने १९७० में उत्साह के साथ समर्थन दिया था। पश्चिम से आये इन शरणार्थियों पर यह बात लागू नहीं होती।

"पश्चिम में युद्ध और राजनीति ने घृणा और भय का वातावरण पैदा कर दिया है, जबकि यह स्वाभाविक है कि दोनों देशों द्वारा सन्धि पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद दोनों ओर से शरणार्थियों को अपने घरों को वापस जाना चाहिए और उनकी सरकारें उनकी सुरक्षा और उनके पुनर्वास की जिम्मेवारी लें। उसी प्रकार बेचारे शरणार्थियों का वापस जाने से हिचकना मानवता सुलभ है। बलपूर्वक शरणार्थियों को वापस भेज देने से कोई मतलब नहीं सधेगा।

"सिन्धियों को वापस जाने पर मजबूर करना उन्हें युद्ध द्वारा पैदा किये हुए घृणा और भय के वातावरण में ढकेल देना होगा। इन शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या गरीब और अशिक्षित मेघवालों, सोधा राजपूत इत्यादि की है, जिनकी निराशा की कमजोर आवाज सिन्ध की वर्तमान राजनीति के हंगामे में नहीं सुनी जायेगी।

"दूसरा कोई कारण नहीं है कि, जबकि हजारों सिन्धियों को हिन्दुस्तानी नागरिकता अभी हाल तक दी गयी है, इन मेहनतकश भूमिपुत्रों को इस देश में एक शान्तिमय उत्पादक जीवन बिताने का अवसर न दिया जाय।"

मैं आशा रखता हूँ कि इस उपमहाद्वीप की समस्याओं को सुलझाने में दोनों देशों के नेता संकुचित राजनीति को मानवता के विचार से गरिमा नहीं देंगे और राजनैतिक नीतियों को विवेक के ऊपर हावी होने देंगे।

(पृष्ठ ७०० का शेष)

ग्राम को 'ग्रामस्वराज्य' की दिशा में ले जाना होगा और इसके लिए ग्राम को शासन व शोषण से मुक्त करना होगा। यानी सरकार-मुक्त गाँव व बाजार-मुक्त गाँव की दिशा में आगे बढ़ना होगा। अब इस दिशा में इनका मार्गदर्शन कौन करे? मार्गदर्शन तो वही कर सकता है जो मार्ग जानता हो, पर यह तो एकदम नया मार्ग है, इसके लिए मार्गदर्शन नहीं, मार्ग खोजनहार, मार्ग पर चलकर बतानेवाले चाहिए। गाँव किस तरह सरकार व संस्था मुक्त रहकर अपने बलबूते पर काम चला सकते हैं व आगे बढ़ सकते हैं—यह हमें सिद्ध करके बतलाना है।

बाजार-मुक्ति के लिए आपका चरखा बड़ा मददगार साबित हो सकता है। आपकी संस्थाओं से भी जिन लोगों की इस काम के लिए हड्डी गलाने की तैयारी हो, उनको खादी-कार्य से मुक्त कर, पूरी मदद व सहयोग का आश्वासन देकर आप इसमें लगने को प्रेरित कर सकते हैं। जब तक ऐसे लोग नहीं निकलेंगे, क्रान्ति का कार्य बिलकुल नहीं चलनेवाला। अतः ऐसे उत्सादी (बेस्ट टैलेंट्स) को आगे आना है, जो गाँव-गाँव बैठकर जनता को मोबिलाइज (गतिशील) कर सकें।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर

वर्ष : १८, अंक : ४६ १४ अगस्त, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

संसदीय शासन-व्यवस्था

स्वराज्य से मेरा अभिप्राय है लोक-सम्मति के अनुसार होनेवाला भारतवर्ष का शासन। लोक-सम्मति का निश्चय देश के बालिग लोगों की बड़ी-से-बड़ी संख्या के मत द्वारा होगा, फिर वे स्त्रियाँ हों या पुरुष, इसी देश के हों या इस देश में आकर बस गये हों। वे लोग ऐसे होने चाहिए, जिन्होंने अपने शारीरिक श्रम के द्वारा राज्य की कुछ सेवा की हो और जिन्होंने मतदाताओं की सूची में अपना नाम लिखवा लिया हो।...

फिलहाल मेरे स्वराज्य का अर्थ होगा भारत की आधुनिक व्याख्यावाली संसदीय शासन-व्यवस्था।

आज मेरी सामूहिक प्रवृत्ति का ध्येय तो हिन्दुस्तान की प्रजा की इच्छा के अनुसार चलनेवाला पार्लियामेण्टरी पद्धति का स्वराज्य पाना है।

तब हमारी संसद क्या करेगी? जब हमारी संसद हो जायगी तब हमें महान भूलें करने और उन्हें सुधारने का अधिकार होगा। प्रारम्भिक अवस्थाओं में बड़ी-बड़ी भूलें हमसे होंगी ही।.. ब्रिटेन की लोकसभा का इतिहास बड़ी-बड़ी भूलों का इतिहास है। एक अरबी कहावत कहते हैं, "मनुष्य भूलों का अवतार है।" स्वराज्य की परिभाषा है भूल करने की स्वतंत्रता और की हुई भूलों को सुधारने का कर्तव्य। और ऐसा स्वराज्य पार्लियामेण्ट—संसद—में ही निहित है। उसी पार्लियामेण्ट की हमें जरूरत है। आज हम उसके योग्य हैं।

—मो० क० गांधी

सथालपरगना, बिहार की पुष्टि-लोकयात्रा से

मैं कौन हूँ, क्या हूँ, क्यों हूँ, हम असफल क्यों ?

● जगदीश थवानी

आदिवासियो की समस्याएँ हर जगह वही हैं—पर्याप्त भूमि के मालिक होते हुए भी वे कगाल है। कानूनन उनकी जमीन न बिक्री हो सकती है, न बन्धक रखी जा सकती है। फिर क्यो उनकी जमीन महाजन जोत रहे हैं ? कारण है, जब फसल आती है तब आदिवासी शराब-मास खाकर लुटा देते हैं, भविष्य को नही सोचते। फिर भुखमरी के समय महाजन के आगे हाथ फैलाते हैं। महाजन या हम बाहर वालो को आदिवासी 'दीकू' कहते हैं। 'दीकू' यानी जो 'दिक' करता है, परेशान करता है। बाहरवालों ने आदिवासियो को परेशान किया है, सताया है। किन्तु महाजनो के बिना इनका गुजर भी तो नही होता। बोने को बीज तक इनके पास नही रहते, ऐसे आड़े वक्त यही बदनाम महाजन काम आते हैं। महाअज्ञानी होने के कारण आदिवासी गरीब हैं और महाजनो के कारण आदिवासी जीवित हैं। भगवान ने उन्हे गरीब नही बनाया, उसने पर्याप्त भूमि दी। अपनी गलती से ये गरीब हैं, ये अपनी आदत और सस्कार के गुलाम हैं। महाजनो के चगुल से इनकी भूमि छुडवायें, तो शराब पीकर आदिवासी फिर से अपनी जमीन बन्धक रख देंगे। कैसे बचायें इन्हे ? और क्यो ? समस्या का एक मात्र हल है—'लोकशिक्षण।' हम इन्हे बदल नही सकते, और बदलनेवाले होते भी कौन हैं ? क्या हमने ठीका लिया है ? बस, इनके सामने प्रश्न खड़े करें, इन्हे सोचने का मौका दें, ये स्वयं अपने को बदल सकते हैं—अपनी आदतो और सस्कारो से लड़कर। मूल प्रश्न है यह जानना कि मैं कौन हूँ, क्या हूँ ?

सथालपरगना (बिहार) की लोकशिक्षण-यात्रा के दौरान रामनाथपुर गाँव में आदिवासियो की सभा हो रही है। बीज बोने का वक्त बीत रहा है, लेकिन बीज नही है। 'ब्लॉक' के 'ग्रेनगोला' या महाजन से नहीं मिला, क्योकि पिछला लौटाया नही। जिसके पास साठ बीघा भूमि है, वह भी हताश बैठा है, शादी में मद-मास में खर्च कर चुका है। तीन बातें मुख्य रूप से उन्हे समझाता हूँ। गाँव में 'ग्रेनगोला' (ग्राम-कोष) बनाना, बच्चे कम पैदा करना, और शराब बन्द। सब लोग 'ग्रेनगोला' का निर्णय लेते हैं। दो माह बाद मकई होगा तो मनसेरा निकालकर ग्रामकोष में जमा करेंगे ताकि भविष्य में बीज की समस्या खड़ी न हो। लेकिन अभी क्या ? चारो ओर भुखमरी है। मुझे खिलाने को किसी के घर भात नही। चरण टुडु के घर चटाई पर सो जाता हूँ।

बेलियाडेगल की परिस्थिति भिन्न नही है। 'पहाड़िया' आदिवासी भूखे बैठे है, काम नही मिलता। वर्षा होने पर खेतों में काम मिलेगा। तब तक सरकार बगाल की तरह, सड़कें बनाने का काम इन्हे दे सकती है (मुफ्त रिलीफ नही)। दो 'कठोर श्रम-योजनाएँ' महेशपुर ब्लॉक के लिए स्वीकृत है, लेकिन बी० डी० ओ० (प्रखण्ड विकास पदाधिकारी) योजना वही शुरू करेंगे जहाँ लोग मरने लगेंगे। सरकार उनके मरने की राह देख रही है! तब वह जागेगी, ऐक्शन लेगी। सूखे शरीर, पिचके पेट, लटके स्तन। साग-पत्ती उबालकर खाकर प्राण रक्षा करते हैं, कभी आधे पेट, कभी उपवास। चेहरा देखने से लगता है मानो जीवित-मृत हो। आजादी की पच्चीसवी वर्षगाठ मनायी जा रही है, 'गरीबी हटाओ' के नारे लगाये जा रहे हैं। गरीब को ही क्यो न दुनिया से हटा दें ? उसमें चिल्लाने की भी शक्ति नही रह गयी, जो वह अपनी तरफ नेताओ का ध्यान आकर्षित कर सके। नेताओ को केवल उसके वोट से मतलब है, उस आदमी से नही। वह जीये, चाहे मरे। आजादी के पहले क्या ये अधिक सुखी नही थे ?

रामपुर की सभा में भी वही तीन बातें समझाता हूँ—शराब, बच्चे, ग्रेन-गोला। उत्तर मिला कि 'ग्रेनगोला' बनाया था, पर हिसाब ठीक से नही रख सकने के कारण टूट गया। शिक्षा निहायत जरूरी है। स्कूल का यह हाल है कि मास्टर हफ्ते में तीन-चार दिन आता है। शुक्र है, आता तो है। कई जगह आता ही नही ! स्कूल-इन्सपेक्टर को घूस देकर, घर बैठा रहता है। किससे शिकायत करें, किस किस की शिकायत करें ? शिकायत है तो स्वय से, कि नाहक इस झमेले में फंस गये ! लेकिन बैठे चैन ही नही आता। कम्बख्त नशा ! आदिवासी शराब पीने को तीन विचित्र दलील देते हैं ! एक, सैकड़ो बरसो से पीते आ रहे हैं, हमारे पुरखे गलत नही हो सकते। दो, हमारे देवता भी पीते हैं देवता को भोग लगाकर फिर हम पीते हैं। तीन, हम हजम कर सकते हैं इसलिए पीते हैं। इधर खाने को नही, तिस पर भी घर-घर में "हड़िया" (चावल की शराब) या 'महुआ' ! लम्बी बहस के बाद (मुझे खुशी होती है कि वे मेरी बात जल्दी नही मान लेते) वे निर्णय लेते हैं कि पर्व-त्योहार की बात अलग है, लेकिन रोज नही पीना चाहिए।

चन्दरपुरा-मिशनवालो से बात होती है, तो वे आधी कीमत पर बीज देने को तैयार हो जाते हैं। मिशन की बढ़िया खेती है, पोल्ट्री है, स्कूल है, अस्पताल है। धर्म-प्रचार के साथ ठोस सेवा है। या यह कहें, कि सेवा के द्वारा धर्म-प्रचार है। और हमारे पास कोरा प्रचार ! इस लिए वे सफल हैं, हम असफल। ●

लौटो, अब भी लौटो

स्वतन्त्रता के इतने वर्षों बाद दिल्ली को गरीबी हटाने की सूझी। जब आधे देश में सूखा पड़ा तो खेत-खेत में पानी न पहुँचाने की भूल समझ में आयी। जब राजधानियों की योजना अपार धन खर्च करने और सरकारी कर्मचारियों का जाल बिछा देने के बाद भी गाँव-गाँव में नहीं पहुँच सकी तो याद आया कि योजना तो गाँव से बनकर ऊपर की ओर जानी चाहिए थी। योजना की बुनियाद सचमुच वहाँ होनी चाहिए थी जहाँ घास उगती है। इसलिए अब 'ग्रास रूट प्लैनिंग' की बात कही जा रही है। आखिर, आंकड़ों का पर्दा आँखों पर कब तक डाला जा सकता था?

बावजूद 'हरी क्रान्ति' के देश की खेती में जीवनी-शक्ति नहीं है। बावजूद कुछ बड़े कल-कारखानों के देश का उद्योगीकरण नहीं हुआ है। बावजूद विकास के गरीबी, बेरोजगारी और विषमता से मुक्ति पाने की कुंजी हाथ नहीं आयी है। बावजूद समाजवादी नारों और घोषणाओं के समाजवाद की शुरुआत नहीं हुई है। इसलिए बुरा नहीं होगा अगर अब भी यह समझ में आ जाय कि जब हमें अपनी राह पर चलने का मौका मिला तो हम गलत राह पर चल पड़े, और चलते-चलते हम वहाँ पहुँचे जहाँ आज पहुँच गये हैं। हम कहाँ पहुँचे हैं? हम वहाँ हैं जहाँ विकास हुआ, पेट नहीं भरा, तन नहीं ढका, जहाँ दल बने, लोकतंत्र नहीं बढ़ा, जहाँ स्कूल बढ़े, बुद्धि और विवेक नहीं बढ़ा जहाँ पुलिस बढ़ी सुरक्षा नहीं बढ़ी, जहाँ अदालतें बढ़ीं, इनसाफ नहीं बढ़ा, जहाँ विज्ञान फैला, इनसान नहीं बना। हम वहाँ हैं जहाँ देश अन्तर्विरोधों का शिकार होकर रह गया है।

गांधी ने कहा था कि देश गाँवों में रहता है—आज भी ८२ प्रतिशत लोग वहीं रहते हैं—इसलिए गाँवों को सामने रखकर विकास की बात सोचनी चाहिए। विकास, व्यवस्था, शिक्षण, सबको गाँवों की ओर अभिमुख होना चाहिए। और, गाँव की योजना भी गाँव के अन्तिम व्यक्ति से शुरू होनी चाहिए। गाँव को 'ग्रास रूट प्लैनिंग' अन्तिम व्यक्ति से शुरू होकर देश और दुनिया तक पहुँचती। इस संयोजन का नाम गांधी ने 'स्वदेशी' रखा। गाँव की मनुष्य-शक्ति तथा वहाँ पाये जानेवाले साधनों का पूरा पूरा इस्तेमाल हो तो गाँव मुँहताज नहीं होगा—कम-से-कम रोज के जीवन की चीजों के लिए। इसे गांधी ने 'ग्रामस्वावलम्बन' कहा। आज जब हम यह देख रहे हैं कि गाँवों में रहनेवाले करोड़ों लोगों के लिए—भरपूर वर्षा हो तब भी—प्रश्न खाने और कपड़े का ही है तो बात समझ में आ रही है कि खेती, उद्योग, पशुपालन यानी 'एग्रोइण्डस्ट्रीयल इकानॉमी' द्वारा गाँवों को 'स्वावलम्बी' बनाना कितना आवश्यक था? कितना आवश्यक था सारे प्रशासन, विकास और शिक्षा को उस ओर मोड़ना?

स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती का यह वर्ष देश के इतिहास में एक नया मोड़ लायेगा अगर हम नेकनीयती के साथ अब भी अपनी भूलें स्वीकार करें, और लौटकर सही रास्ते पर चलने के लिए अपने कदमों को मोड़ें। स्वतन्त्रता मात्र शहीदों और शासकों की चीज नहीं है, उसकी सार्थकता इसमें है कि जन जन को सन्ताप से मुक्ति मिले—ऐसी मुक्ति जिसमें जन-जन का पुरुषार्थ प्रकट हो। जिस राह पर हम बेतहाशा चले जा रहे हैं वह राह हमें मुक्ति की ओर नहीं ले जा सकती। इसलिए लौटने, जल्द लौटने, में ही कल्याण है।

छोटी हिंसा, बड़ी हिंसा

इसी महीने के एक अंक में हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध साप्ताहिक ने मुखपृष्ठ पर एक चित्र छापा है। चित्र में कुछ गोल-गोल रेखाएँ हैं, कोई आकृति नहीं है। रेखाओं का संकेत कुछ शीर्षक लिखकर प्रकट किया गया है। शीर्षक ये हैं 'कराची में शूट ऐंड साइट का आर्डर', 'हत्या करते हुए नक्सालवादियों को गोली मारने का आदेश', 'फिरोजाबाद व वाराणसी में उपद्रवियों को गोली से उड़ाने का आदेश।' चित्रकार और पत्रकार ने ये रेखाएँ खींचकर और ये शीर्षक लिखकर भारत ही नहीं पूरे उप-महाद्वीप का एक चित्र प्रस्तुत किया है। क्या भारत, क्या पाकिस्तान, और क्या बांगला देश, हर जगह ऐसे लोग हैं जिन्हें दबाने के लिए सरकार संहार का सहारा लिया है। वह कहती है कि अब दूसरा उपाय नहीं रह गया है; समाज को रक्षा के लिए समाज के शत्रुओं का सफाया करना ही होगा।

ये कौन लोग हैं जिनके विरुद्ध राज्य ने अपनी पूरी हिंसा-शक्ति का प्रयोग करने का निश्चय किया है? क्या वे चोर-डाकू और हत्यारे हैं? कराची में भाषा के आन्दोलनकारी बनाम सरकार का प्रश्न है। सिन्ध के लोग सिन्धी भाषा चाहते हैं, अपने घर में स्वायत्तता और सम्मान चाहते हैं। भारत का नक्सालवादी गरीब के लिए न्याय चाहता है, समता का नया समाज चाहता है। बांगला देश का विप्लवकारी भी इससे भिन्न क्या चाहता है? कोई नहीं कहता कि ये आकांक्षाएँ किसी सरकारी कानून के विरुद्ध हैं, या समाज की मर्यादा का उल्लंघन करती हैं। लेकिन सरकार यह कहती है कि बात कुछ भी हो और माँग कोई हो, जब उसके ऊपर प्रहार होगा तो वह अपने शस्त्रों का पूरा इस्तेमाल करेगी और जरूरत पड़ने पर संहार से भी जवाब देगी, क्योंकि सरकार की हिंसा समाज की रक्षा के लिए आवश्यक है। प्रश्न यह है कि यदि गैर-सरकारी छोटी हिंसा का एक ही जवाब रह गया है सरकार की

बड़ी हिंसा, तो देश का सारा कायदा-कानून, नागरिक का मूल अधिकार, और लम्बी-चौड़ी न्याय-व्यवस्था किस लिए है ? तब तो यह मानना पड़ेगा कि बाकी सब चीजें ऊपरी हैं, निर्णय की वास्तविक शक्ति हिंसा के ही हाथों में है। हिंसा में भी बड़ी हिंसा, उससे बड़ी हिंसा, सबसे बड़ी हिंसा के हाथों में सबसे बड़ा निर्णय है।

हिंसा-प्रतिहिंसा की बढ़ती हुई इस परिधि में सामान्य, सभ्य, शान्तिप्रिय, नागरिक और उसके जीवन-मूल्यों का स्थान कहाँ है? क्या हिंसा द्वारा भारत की परम्परा की रक्षा सम्भव है ? क्या हिंसा में उसकी प्रतिमा की अभिव्यक्ति हो सकती है ? हर एक जानता है कि आज समाज में जो समस्याएँ पैदा हो गयी है वे आज की समाज-व्यवस्था में हल नहीं हो सकती। हर एक मानता है कि समाज को बदलना चाहिए और नयी व्यवस्था कायम होनी चाहिए। फिर भी हम देखते हैं कि परिवर्तन होता नहीं; होने दिया जाता नहीं। परिवर्तन न होने से समस्याएँ गम्भीर होती जाती है, तनाव बढ़ते जाते हैं, और संघर्ष तीव्र होते जाते हैं। सरकार सहज सामाजिक प्रश्नों को, और उनसे जुड़ी हुई मानवीय परिस्थितियों को भी *शान्ति और सुव्यवस्था* (लॉ ऐण्ड आर्डर) का प्रश्न बना लेती है। वह मान लेती है कि उसका निर्णय समाज के हित में है; उससे समाज का अहित हो ही नहीं सकता। बस, इस मान्यता से आन्दोलन और 'आर्डर' का, हिंसा और प्रतिहिंसा का, क्रम शुरू हो गया है, और सारा समाज हिंसा के दुश्चक्र में फँस जाता है।

हिंसा सारी मानव-सभ्यता का संकट बन गयी है। राज्य की हिंसा के सामने नागरिक दिनों दिन निरुपाय होता जा रहा है। निरुपाय नागरिक अन्त में समाज के लिए खतरा ही सिद्ध होता है। क्या भारत के नागरिक को निरुपाय बनाकर भारत के सत्ताधारी भारत का कल्याण करना चाहते हैं? क्या आजादी की खुशियों के बीच हम जन-जन की आजादी के लिए पैदा होनेवाले इस खतरे के प्रति बेखबर रहेंगे ? देश की स्वतन्त्रता बनी रहे, और देशवासियों की स्वतन्त्रता *बढ़ती जाय, यह स्वतन्त्रता की माँग है। यह माँग नहीं पूरी* हो रही है, इसलिए चिन्ता है। छोटी हिंसा और बड़ी हिंसा के बीच नागरिक पिसता, दबता, पिसता जा रहा है।

हिंसक राज्य का एक ही उत्तर है—निर्भय, संगठित, किन्तु *अहिंसक नागरिक*। •

कुछ सुझाव

नगरों में सर्वोदय-कार्य की दिशा

सर्वोदय-कार्य की दृष्टि से नगरों में क्या-क्या काम हो सकते हैं, इस विषय पर कुछ सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं :

१. उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र में लगे हुए मालिक, संचालक, मजदूर आदि सब लोगों के ध्यान में यह बात आये कि इन प्रवृत्तियों का मुख्य हेतु समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है, इसलिए उनका संचालन *समाज के हित में होना चाहिए। व्यक्तिगत या किसी* वर्ग के मुनाफे के लिए नहीं।

२. व्यापार के क्षेत्र में भी व्यापार-संगठनों के जरिये सामाजिक उत्तरदायित्व का तत्त्व दाखिल करने की कोशिश की जाय। इस सम्बन्ध में फेयर ट्रेड प्रैक्टीसेस एसोसियेशन, बम्बई कुछ प्रयत्न कर रहा है।

३. जिस तरह ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम-सभाओं के जरिये लोकनीति से कम्युनिटेरियन पोलिटी विकसित करने का कार्यक्रम है, उसी प्रकार नगरों की व्यवस्था में लोकनीति और लोगों के प्रत्यक्ष सहभाग का कार्यक्रम सोचना और उठाना चाहिए।

४ छोटे-छोटे मुहल्लों में या पड़ोस में सामूहिक शक्ति से वहाँ समस्याओं के हल करने के और परस्पर सहायता के कार्यक्रम उठाये जा सकते है।

५. नगरों में शान्तिसेना, तरुण-शान्तिसेना आदि के संगठन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। तरुण-शान्ति-सेना के अन्तर्गत श्रम, सेवा, स्वाध्याय के *कार्यक्रम तथा सप्ताहान्त शिविर चलाये* जा सकते हैं। नगरों में शान्ति बनाये रखने की जिम्मेदारी शान्तिसैनिक उठा सकें, ऐसा प्रयत्न करना चाहिए। शहरों में जो शान्ति-प्रतिष्ठान-केन्द्र हैं वे इन कामों में पहल कर सकते हैं।

६. सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम अभी तक प्रभावशाली ढंग से नहीं हो सका है पर यह कार्यक्रम शहरों के लिए बहुत उपयोगी है। सम्भव हो, तो कुछ जगह सर्वोदय-पात्र का सघन प्रयोग करना चाहिए।

७. भूदान की तरह नगरों में सम्पत्ति-दान का कार्यक्रम उठाना चाहिए। आगे जाकर इसकी परिणति ट्रस्टीशिप में हो सकती है।

८. शहरों में आबादी के केन्द्रीकरण के कारण कुछ विशेष समस्याएँ, जैसे—आवागमन की दिक्कत, गन्दी बस्तियाँ, सफाई आदि नागरिक सुविधाओं का अभाव खड़ा हो जाता है। इन प्रश्नों के बारे में लोक-मानस को जाग्रत करना चाहिए।

९. शहरों में, खासकर विद्यार्थियों और बुद्धिजीवी वर्गों में सर्वोदय-विचार तथा आन्दोलन की जानकारी पहुँचाना जरूरी है। शान्ति-प्रतिष्ठान केन्द्रों की मदद से सभाएँ, गोष्ठियाँ आदि की जायँ। *सर्वसेवा संघ ने सर्वोदय-संचयन (डाइजेस्ट)* को हाथों-हाथ शहरों के चुने हुए प्रमुख लोगों के पास पहुँचाने की योजना बनायी है, उसका पूरा लाभ उठाना चाहिए। प्रोफेसर वर्ग, मैनेजीरियल वर्ग, समाज-सेवी संस्थाएँ, रोटरी क्लब आदि से सम्पर्क।

१०. शिक्षक वर्ग में आचार्यकुल का कार्यक्रम।

११. साहित्य-प्रचार, साहित्य-प्रदर्शनियों का आयोजन। —नरेन्द्र दुबे

बाबा जैसा विश्वास करता है, बोलता है

[सुश्री निर्मला बहन हाल ही मे तीन रोज बाबा के साथ ब्रह्मविद्या मन्दिर मे रहीं। आपने बाबा से विभिन्न विषयों पर चर्चा की। उस चर्चा का कुछ अंश यहाँ दिया जा रहा है।—सं०]

निर्मला बहन : सहरसा में अभी १४ मई से ३० जून का जो अभियान हुआ उसकी रिपोर्ट आपके पास आयी होगी। इस बार अपेक्षा की थी उससे बहुत कम परिणाम निकला। कुछ लोग निराश भी हुए। लेकिन धीरेनदा ने कहा, "जितनी शक्ति लगी, उस हिसाब से जो परिणाम आया, उससे मुझे सन्तोष है। इस बार इससे अधिक होगा, ऐसी आशा थी ही नहीं। लेकिन सातत्य बना रहा, यह बहुत बड़ी बात है।" वैसे कहीं-कहीं अच्छा अनुभव रहा। स्थानिक लोग कुछ अच्छे, प्रभावी मिल रहे हैं। मधेपुरा प्रखण्ड में ८० प्रतिशत काम पूरा हुआ। नये लोग निकले हैं। अभिक्रम जाग्रत हो रहा है। फिर भी कुछ लोगों को लगता है कि 'सहरसा' हा क्यों चुना ? इस चुनाव में कहीं गलती तो नहीं हुई ?

दिसम्बर के अन्त तक काम पूरा करने का आपने कहा है। उस विषय में आप मार्गदर्शन देंगे ?

बाबा : सहरसा के बारे में धीरेन्-भाई की जो राय है, वही मेरी राय है। जितनी शक्ति लगी उस हिसाब से काम अच्छा हुआ है। अब दिसम्बर में काम पूरा होगा उसके लिए पूरी शक्ति लगानी चाहिए। सबका जोर लगाकर दिसम्बर के अन्त तक पूर्ण करना।

'शब्द शक्त्युत्तर अचिन्त्यत्वात्' शब्द की शक्ति अचिन्त्य होती है। 'सहरसा' यह एक शब्द निकला। अब वह गलत है या योग्य है इसकी चर्चा सिपाही करते नहीं। सिपाही कहते हैं, हमें मण्ड पर जाना है, बस! वह जिला अच्छा है ऐसा मैंने कहा। अच्छा यानी कठिन। कठिन यानी अन्त्योदय का। कम-से-कम शक्ति से काम होगा ऐसा वह जिला है। आप पूरी शक्ति लगाइए तो अनुभव आयेगा।

तुलसी रामायण में एक वाक्य है, 'सो धन धन्य प्रथम गति जाकी।' जिस धन की प्रथम गति है वह धन धन्य है। धन्य यानी धनपात्र। 'प्रथमगति' शब्द तुलसीदासजी ने भर्तृहरि के एक श्लोक से लिया है। धन की तीन गतियाँ बतायी हैं।

"यो न ददाति न भुङ्क्ते, तस्य तृतीया गतिर्भवति" धन की तीन गतियाँ हैं—दान, भोग, नाश। प्रथम गति यानी दान। जो देता नहीं, भोग भी नहीं लेता उसका नाश होता है। हमें जीना कितना है ? चार दिन। अगर हम दान देंगे तो मरते समय वह पुण्य कार्य उपयोगी होता है। नहीं देते हैं तो वह धन यहाँ उपयोगी होता है।

निर्मला बहन प्राप्ति के साथ पुष्टि की होती तो क्या ठीक नहीं होता ? प्राप्ति में कुछ अशुद्धियाँ रह गयी हैं।

बाबा अगर मुझे कुआँ बनाना होता तो अत्यन्त निर्मल पानी का बनाता। लेकिन मुझे समुद्र बनाना था। समुद्र में गंगा भी आती है और गन्दे नाले भी आते हैं। इसलिए कुछ गन्दगी इसमें रही होगी। उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। कुछ लोग कहते हैं इसके बजाय, ग्रामसभा बने, जमीन बँटे, इस तरह पुष्टि होने के बाद ग्रामदान-जाहिर करना चाहिए। बाबा बिनिंग विथ 'बी', बिहार बिगिनिंग विथ 'बी', बी स्टार्ट्स बीइंग। लेकिन हमें अगर लगता कि प्राप्ति का काम करने में १० साल लगेगा तो हम साथ-साथ पुष्टि करते। लेकिन प्राप्ति तो १-२ साल में हो रही। उसके बाद तुरन्त पुष्टि के काम में लगना चाहिए था। मैं वहाँ से निकला तो कहकर निकला था कि प्राप्ति का तूफान किया, अब पुष्टि के लिए शान्ति तूफान करो। मुझे बिहार छोड़े, पौने तीन साल हो गये, शान्ति तूफान तो हुआ ही नहीं, तूफान भी नहीं हुआ। मतभेद थे आपस में। वह जेब में रखो ऐसा कहकर मैं आया। लेकिन वैसा हुआ नहीं। वैद्यनाथ बाबू ने कहा, 'मतभेद जेब में भी नहीं रखेंगे'। वे काम में लग गये। जवानों ने मतभेद कायम रखे। बाबा आया, उत्साह आया, बाबा गया, उत्साह गया। ऐसा होता है। वह नहीं होना चाहिए। 'सातत्य योगो नाम' गीता का आठवाँ अध्याय है। सातत्य टिकता नहीं। वह रहेगा तो काम होगा।

व्यापक काम करता है तो थोड़ी अशुद्धि उसमें रहेगी। थोड़ा-सा काम करना होता तो शुद्धि रहती। इस वास्ते बाबा ने जो पद्धति अपनायी उस पद्धति के बारे में बाबा को पश्चात्ताप नहीं है।

निर्मला बहन कुछ लोग कहते हैं कि बाबा तो कहते हैं कि फलाने समय में काम पूरा होगा, पूरा होगा। लेकिन होता तो नहीं। क्या इससे शब्द शक्ति क्षीण नहीं होती ?

बाबा बाबा जैसा विश्वास करता है वैसा बोलता है। बाबा जानता है कि पूरी ताकत लगी तो काम हो सकता है।

बाबा ने कहा था कि इतनी-इतनी ताकत लगानी चाहिए। उतनी ताकत लगती तो काम होता। लेकिन उतनी ताकत लगी नहीं। बाबा जानता होता कि काम पूरा होनेवाला नहीं है फिर भी कहता रहता कि काम होगा, तो अलग बात थी। ऐसा बाबा कहता नहीं। इससे उल्टे बाबा को यह विश्वास है कि जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं उनमें से ९० प्रतिशत देंगे। देते समय थोड़ा मोह होता है वह अलग बात। इसलिए ताकत पूरी लगती तो काम कठिन नहीं था, असंभव भी नहीं था। लेकिन ताकत लगी नहीं। जितनी ताकत लगी उस हिसाब से काम

अच्छा हुआ।

गांधीजी ने कहा था एक साल में स्वराज्य होगा। हुआ तो नहीं, लेकिन वे जैसा मानते थे; वैसा कहते थे। २६ साल के बाद स्वराज्य हुआ।

निर्मला बहन : धीरेनभाई कहते हैं कि काम ५ साल में पूरा होगा।

बाबा : 'काम' की व्याख्या पर आधारित है। क्या हुआ तो काम पूरा होगा? सामान्य मनुष्य का परिवार का काम ५० साल तक पूरा नहीं होता, लड़के की शादी, फिर नाती की चिन्ता। परिवार का काम जल्दी पूरा नहीं होता। आप जो चाहते हैं ग्रामस्वराज्य का पूरा चित्र वह ५ साल में, ऐसा वे मानते होंगे। हमने इतना ही माना है कि जमीन बाँटना, आमदनी का ४० वाँ हिस्सा देना, जमीन का २० वाँ हिस्सा देना, ग्रामसभा बनाना, मालकियत-विसर्जन इतना हो जाय। ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए और काम करना होगा। उसके लिए १० साल भी लग सकते हैं। ५ साल में परिस्थिति कितनी बदलेगी इसका अन्दाज किसको है?

निर्मला बहन : कुछ लोगों को लगता है, आज प्रजातंत्र खतरे में है। सत्ता का केन्द्रीकरण हुआ है।

बाबा : सत्ता का केन्द्रीकरण हुआ है, उसके लिए ग्रामस्वराज्य यही उपाय है। दूसरा उपाय नहीं। गाँव को उनको अपनी ताकत पर खड़ा करना चाहिए।

प्रजातंत्र खतरे में है ऐसा नहीं कह सकते। आज जनसंघ शिमला-करार का इतना विरोध कर रहा है। 'देश को बेच डाला' ऐसा कह रहा है। फिर भी जनसंघ पर सरकार ने प्रतिबन्ध नहीं लगाया है। इससे बेहतर प्रजातंत्र का उत्तम उदाहरण और कौन-सा हो सकता है?

राजनैतिक परिस्थिति आज हमारे लिए यानी हमारे काम के लिए बहुत अनुकूल है। बांग्ला देश स्वतंत्र हुआ है। वहाँ प्रजातंत्र तथा सेक्युलरिज्म मान्य किया है। यह बहुत बड़ी बात है। अपने जैसे कार्यकर्ताओं का वहाँ स्वागत होगा, ऐसी परिस्थिति वहाँ है।

निर्मला बहन : दुनिया का भविष्य कैसा है?

बाबा : दुनिया का भविष्य अच्छा है। दक्षिण तथा उत्तर कोरिया एक हो रहे हैं। चीन तथा जापान की मैत्री हो रही है, मिस्र और इजराइल के बीच आज या कल बातचीत होने की सम्भावना है। यूरोप में कॉमन मार्केट बना है। पूर्व और पश्चिम जर्मनी की मैत्री जम रही है। इस तरह से सारी दुनिया योग्य रीति से प्रगति कर रही है। थोड़ी-सी मारामारी इधर-उधर होती है, वह कोई विशेष नहीं।

२३-७-७२ —कुसुम

अलीगढ़ विश्वविद्यालय : संशोधित अधिनियम

● डा० रफीक अंजुम

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय का आरम्भ एक छोटे-से हाई स्कूल के रूप में हुआ, जिसे १८७५ में सर सैयद अहमद खाँ ने अलीगढ़ में स्थापित किया था। १८७७ में इस स्कूल ने मोहम्मडन ऐंग्लो ओरियण्टल कालेज का रूप धारण कर लिया।

इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि सर सैयद का उद्देश्य हिन्दुस्तानी मुसलमानों को नवीन शिक्षा से अवगत कराना था। चूँकि हिन्दुस्तान में रहनेवाले सभी जातियों के लोग सर सैयद की दृष्टि में समान थे, इसलिए उन्होंने इस संस्था के द्वार जाति-धर्म का भेदभाव किये बिना प्रत्येक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी के लिए खोल रखा था। केवल यही नहीं कि कालेज में गैर-मुस्लिम विद्यार्थियों का स्वागत किया जाता था वरन् सर सैयद ने इस महत्त्वपूर्ण काम में जिन लोगों से आर्थिक और नैतिक सहायता ली थी, उनमें राजा जयकिशन दास, राजा शम्भू नारायण, राजा किशन कुमार, महाराजा पटियाला और महाराजा बनारस के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पटियाला के महाराजा सर महेन्द्र सिंह बहादुर की सेवा में मानपत्र प्रस्तुत करते हुए सर सैयद ने कहा था, "इस मदरसे में शिक्षा के जो नियम तय किये गये हैं, उनके अनुसार हिन्दू और मुसलमान दोनों इस मदरसे में शिक्षा पायेंगे। इसके संस्थापकों का उद्देश्य शिक्षा और आत्मज्ञान को फैलाना है और इसका उद्देश्य यह है कि हिन्दुस्तान की दोनों कौमें अर्थात् हिन्दू और मुसलमान बराबर प्रगति करें और शिक्षा एवं दक्षता से लाभान्वित हों।"

सर सैयद और उनके सहयोगियों के निरन्तर परिश्रम ने इस कालेज को अद्वितीय ख्याति प्रदान की। इस कालेज को विश्वविद्यालय बनाने का स्वप्न सर सैयद के जीवन काल में पूरा नहीं हो सका। परन्तु उनके स्वर्गवास के बाद १९१० में 'मुस्लिम विश्वविद्यालय फाउण्डेशन समिति' स्थापित हुई, जिसने एम० ए० ओ० कालेज को विश्वविद्यालय बनाने का प्रयास आरम्भ किया। १९२० में विश्वविद्यालय से सम्बन्धित एक अधिनियम पास हुआ, जिसकी धारा-२ (५) में कहा गया कि विश्वविद्यालय में पूर्वी तथा इस्लामी विषयों के अध्ययन के लिए सुविधाएँ उपलब्ध की जायेंगी।

धारा २३ के अनुसार यूनिवर्सिटी कोर्ट सुप्रीम गवर्निंग बॉडी होगी जिस पर विश्वविद्यालय के संचालन की पूरी जिम्मेदारी होगी। यह बॉडी एग्ज्यूक्यूटिव कौंसिल और एकेडमिक कौंसिल के कार्यों की देखभाल भी करेगी। इस धारा के भाग-१ में यह भी कहा गया है कि कोर्ट के सदस्य केवल मुसलमान हो सकते हैं।

धारा ८ में कहा गया है कि विश्वविद्यालय में जाति और धर्म का भेद

किये बिना प्रत्येक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी को दाखिला लेने का अधिकार हासिल होगा।

शिक्षा-प्रणाली

स्वतंत्रता से पहले हमारी शिक्षा-पद्धति पर अंग्रेजी हुकूमत की राजनीतिक नीति की गहरी छाप थी। जहाँ-जहाँ सम्भव हो सकता था, वह हिन्दुओं और मुसलमानों के मनमुटाव से राजनीतिक लाभ उठाती थी और प्रयास करती थी कि किसी एक मंच पर यह दोनों एकत्र न हो सकें। १९४७ के पश्चात् जब हमने अपनी शिक्षा-पद्धति का विवेचन किया तो बहुत-से सुधार और संशोधनों की आवश्यकता महसूस हुई। अलीगढ़ विश्वविद्यालय के १९२० के अधिनियम में भी आंशिक संशोधन किये गये। जिसमें एक संशोधन यह था कि धारा—२३ (१) के अनुसार जो शर्त लगायी गयी थी कि कोर्ट के सदस्य केवल मुसलमान हो सकते हैं, उसे निकाल दिया गया। यह १९५१ की बात है। इसके विरुद्ध कुछ आवाजें उठायी गयी, लेकिन हिन्दुस्तान के धर्म-निरपेक्ष संविधान के सामने उन्हें चुप हो जाना पड़ा।

अचानक १९५१ में एक लज्जाजनक घटना घटी, जिसका विवरण यह है कि बदरुद्दीन तैयबजी, जो दो साल अलीगढ़ में वाइसचांसलर रह थे, जाने-जाते यूनिवर्सिटी कोर्ट से यह फैसला करा गये कि तकनीकी कालेजों के ७५ प्रतिशत दाखिले वहीं के विद्यार्थियों के लिए सुरक्षित रहेंगे। यह बहुत भावनात्मक और तर्कहीन कदम था। क्योंकि उसका अर्थ था कि इंजीनियरिंग और मेडिकल कालेजों में ७५ प्रतिशत दाखिले उन विद्यार्थियों को मिलेंगे, जिन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा अलीगढ़ में प्राप्त की है, चाहे वे इसके योग्य हों या न हों। ये दोनों पाठ्यक्रम ऐसे हैं, जिन पर सरकार हर साल करोड़ों रुपये खर्च करती है, ताकि योग्य डाक्टर और इंजीनियर पैदा हो सकें। भारत में कोई विश्वविद्यालय ऐसा नहीं है जिसने इतनी बड़ी संख्या में स्थान सुरक्षित किये हों। अधिकतर विश्वविद्यालय अपने विद्यार्थियों के लिए कोई स्थान सुरक्षित नहीं करते और जो करते हैं वह १० या १५ प्रतिशत। भारत के समस्त तकनीकी कालेजों में दाखिले के लिए बड़ा सख्त मुकाबला होता है। केवल उन विद्यार्थियों को लिया जाता है जो उसके योग्य होते हैं। ७५ प्रतिशत स्थान सुरक्षित कराने का अर्थ यह था कि लगभग ७० प्रतिशत ऐसे विद्यार्थियों को दाखिला मिलता जो किसी तरह भी उसके योग्य नहीं थे। परिणामस्वरूप ये विद्यार्थी परीक्षाओं में किसी भी तरह उत्तीर्ण न होते और यदि हो भी जाते तो उन्हें नौकरी मिलना कठिन और कभी-कभी तो असम्भव होता। क्योंकि रोजगार के मैदान में मुकाबला होने पर ये दूसरे विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों का मुकाबला नहीं कर सकते थे और फिर अलीगढ़ विश्वविद्यालय के स्तर के विरुद्ध एक ऐसा विचार बन जाता कि लोग यहाँ के विद्यार्थियों को अयोग्य समझकर रोजगार न देते। इस तरह एक तरफ राष्ट्र के करोड़ों रुपये व्यर्थ जाते और दूसरी तरफ अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के विद्यार्थी नाकामी और हीनता के शिकार रहते।

१९६५ में जब अली यावर जंग उपकुलपति हुए तो उन्होंने यह संख्या ७५ प्रतिशत से घटाकर ५० प्रतिशत कर दी और यूनिवर्सिटी कोर्ट से इसकी मंजूरी ले ली। उन्हें ऐसा अवश्य करना चाहिए था लेकिन वातावरण अनुकूल बनाने के बाद''। इसके बाद जो कुछ हुआ और जिस प्रकार विद्यार्थियों ने उपकुलपति को मारा-पीटा, उससे अलीगढ़ से प्रेम और आदर करनेवाले लोगों के सिर लज्जा से झुक गये। इस घटना का दुखद पहलू यह था कि यूनिवर्सिटी कोर्ट बिलकुल बेअसर रही। पहले तैयबजी ने जो चाहा वह स्वीकार करा लिया और फिर अली यावरजंग ने जो निर्णय किया कोर्ट ने उसे भी मंजूर कर लिया। ऐसी दशा में सरकार के सामने इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था कि कोर्ट के अधिकारों को समाप्त कर दिया जाय। इसीलिए एक संशोधित अधिनियम द्वारा कोर्ट की हैसियत केवल एक एडवाइजरी बोर्ड की कर दी गयी और एक इमर्जेंसी ऑर्डिनेन्स लागू कर दिया गया। १९६५ से अबतक यूनिवर्सिटी इसी इमर्जेन्सी ऑर्डिनेन्स के अधीन काम कर रही है।

पिछले दिनों कुछ मुस्लिम राजनैतिक दलों ने अपने फायदे के लिए इस समस्या को खूब उछाला। विधान सभाओं के गत चुनावों के दौरान मुस्लिम लीग ने विशेष रूप से इस समस्या का फायदा उठाकर मुस्लिम जनता के जजबात को भड़काया। अफसोस है कि एक शुद्ध शैक्षिक मसला ऐसे राजनीतिज्ञों के हाथ में चला गया जिन्हें शिक्षा-पद्धति से कभी दूर का भी वास्ता नहीं रहा।

संशोधित अधिनियम की विशेषताएँ

२९ मई, १९७२ को पार्लियामेण्ट में मुस्लिम यूनिवर्सिटी संशोधित बिल पेश किया गया। अगर संकुचित दृष्टिकोण और निजी फायदे से ऊपर उठकर देखा जाय तो यह संशोधित बिल विश्वविद्यालय की संचालन पद्धति में वहाँ के शिक्षकों और विद्यार्थियों को जो अधिकार देता है वह भारत के सभी विश्वविद्यालयों के लिए ईर्ष्या का विषय है। इस बिल ने यूनिवर्सिटी कोर्ट का पूरा ढाँचा बदल दिया है। अब तक इसके सदस्य आमतौर पर वे लोग होते थे जिनका शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं होता था। जो राजनीति अथवा धन के सहारे कोर्ट के सदस्य बनते थे। अब पहली बार विश्वविद्यालय के शिक्षक इतनी बड़ी संख्या में कोर्ट के सदस्य होंगे और विश्वविद्यालय के इतिहास में पहली बार विद्यार्थियों को यह महत्त्व दिया गया है कि वे कोर्ट के सदस्य बनें। १०४ संख्या में केवल २६ सदस्य नामजद होंगे अर्थात् अब विश्वविद्यालय का भाग्य हाथ उठानेवालों के नहीं वरन् वहाँ के विद्यार्थियों और शिक्षकों के हाथों में होगा।

संशोधित अधिनियम की धारा—२४ (१) के अन्तर्गत विश्वविद्यालय में एक विद्यार्थी परिषद होगी जो विद्यार्थियों के शैक्षिक मामलों, संचालन, कल्याण और छात्रावास के संचालन के बारे में विश्वविद्यालय के कर्ता-धर्ताओं को अपनी सिफारिशें पेश करेगी। विश्वविद्यालय के इतिहास में पहली बार विद्यार्थियों को यह महत्व मिला है। १९४३ के एक संशोधित बिल के अन्तर्गत कोर्ट को यह अधिकार दिया गया था कि यदि वह चाहे तो स्थानीय कालेजों को विश्वविद्यालय से जोड़ सकती है। २९ मई, १९७२ के बिल के अनुसार विश्वविद्यालय का आवासीय कैरेक्टर बना रहेगा और किसी भी स्थानीय कालेज को विश्वविद्यालय से सम्बन्धित नहीं किया जायगा। अलीगढ़ विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों और मुस्लिम राजनीतिक दलों की मांग थी कि

(१) अलीगढ़ विश्वविद्यालय का आवासीय कैरेक्टर बाकी रखा जाय अर्थात् अलीगढ़ के नगर स्थानीय कालेजों का विश्वविद्यालय से सम्बन्ध न होने दिया जाय।

(२) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के नाम से मुस्लिम शब्द न निकाला जाय।

(३) अलीगढ़ विश्वविद्यालय को संविधान की धारा—३० के अन्तर्गत अल्पसंख्यक संस्था घोषित किया जाय।

सरकार ने पहली दोनों मांगें स्वीकृत कर ली हैं परन्तु तीसरी मांग नहीं मानी।

शैक्षिक समस्या और राजनीति

राजनीतिक मंच से बार-बार यह बात दोहरायी जाती रही है कि अलीगढ़ का अल्पसंख्यक कैरेक्टर बाकी रखा जाय। अल्पसंख्यक कैरेक्टर से क्या तात्पर्य है, इसकी व्याख्या कभी किसी ने नहीं की। यद्यपि किसी-किसी मुस्लिम राजनीतिज्ञ ने दबे शब्दों में यह अवश्य कहा है कि समस्त भारत में केवल एक ही तो विश्वविद्यालय है जहाँ मुसलमान नवीन शिक्षा पाते हैं अथवा पढ़े-लिखे मुसलमानों को रोजगार मिलता है। यदि अल्पसंख्यक कैरेक्टर से यही तात्पर्य है तो यह वास्तविकता से जानबूझकर मुँह मोड़ना है। अलीगढ़ में इस समय ८ हजार विद्यार्थी हैं। जिनमें ६ हजार से अधिक मुसलमान नहीं हैं। तो क्या समस्त देश में केवल इतने ही मुस्लिम विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं? फिर अलीगढ़ में विद्यार्थी बहुधा उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश से आते हैं। किसी अन्य प्रदेश के विद्यार्थी यहाँ कभी-कभी ही आते हैं। यदि मुसलमानों के लिए इस विश्वविद्यालय को सुरक्षित कर दिया गया तो जम्मू-कश्मीर, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, मैसूर, केरल इत्यादि के विद्यार्थियों का क्या होगा? अलीगढ़ विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने का खर्च कम-से-कम २०० रु० मासिक है। भारत में कितने परिवार हैं जो यह खर्च बर्दाश्त कर सकते हैं। वास्तव में यह एक राजनीतिक नारा है, जो बहुत ही हानिकारक है। भारतीय मुसलमानों की शिक्षा का अलीगढ़ विश्वविद्यालय से पूर्णरूपेण कोई सम्बन्ध नहीं है। अलीगढ़ की समस्या पर जिन राजनीतिज्ञों को आज कल बहुत चिन्ता है उन्हें मुसलमानों की शैक्षिक समस्या का कोई ज्ञान नहीं है। क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि अन्य विश्वविद्यालयों में मुस्लिम विद्यार्थियों की संख्या आश्चर्यजनक सीमा तक कम क्यों है? क्या कभी उनकी दृष्टि इस तथ्य पर गयी है कि मुकाबले की परीक्षाओं में इतने कम मुसलमान क्यों बैठते हैं? और जितने बैठते हैं उनमें से उत्तीर्ण होनेवालों की संख्या कम क्यों है? नवीन शिक्षा का विशेष उद्देश्य रोजगार प्राप्त करना है। यदि अलीगढ़ विश्वविद्यालय पर मुसलमान की छाप लग गयी तो क्या इससे विद्यार्थियों के विरुद्ध भेदभाव उत्पन्न नहीं हो जायेगा?

रोजगार देने का काम गैर-मुसलमा
के हाथ में है और यदि उनके मन
यह बात बैठ गयी तो सरकार कि
भी आर्डिनेन्स के द्वारा उनका मन
नहीं कर सकती। क्या हमारे अलीगढ़

विद्यार्थियों को आजीवन कारावास का दण्ड देना चाहते हैं ?

मुसलमानों की मुख्य समस्या यह नहीं है कि अलीगढ़ विश्वविद्यालय को मुस्लिम बनाया जाय। मुख्य समस्या यह है कि एक ओर उन्हें यह कोशिश करनी चाहिए कि राष्ट्र के अन्य लोग उनकी समस्याओं को समझें और उनसे सहानुभूति का रवैया पैदा हो। दूसरी ओर यदि उनके विरुद्ध किसी भी विश्वविद्यालय में भेदभाव बरता जाता है तो वे आन्दोलन करें। और सबसे बड़ी बात यह है कि वे स्वयं हर तरह के भेदभाव से ऊपर हों।

—दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रथम मुसहरी ग्रामस्वराज्य-सम्मेलन : 'तीसरी शक्ति' का संकेत

गत् ३० और ३१ जुलाई को जे० पी० की मुसहरी मोर्चे पर एक विशेष चहल-पहल रही । श्री जयप्रकाशजी अपनी लम्बी बीमारी, बांगला देश और चम्बलघाटी की व्यस्तताओं के कारण पिछले आठ-साढ़े-आठ महीने से मुसहरी में समय नहीं दे पाये थे, लेकिन यहाँ के काम का सिलसिला बराबर चलता रहा है। सर्वश्री कैलाश प्रसाद शर्मा, कामेश्वर बाबू आदि लोग मोर्चे पर डटे रहे हैं। 'ग्राम-सेवा-सगम' की ओर से विकास-निर्माण-कार्य भी चलता रहा है, लेकिन प्रखण्ड में जिस प्रकार की हलचल जे० पी० के रहने के कारण बनी रहती थी, उसका अभाव तो महसूस होता ही था, उनके अभाव की पूर्ति भला कौन कर सकता है ? इस सम्मेलन के सन्दर्भ में एक ग्रामस्वराज्य-सभा के प्रतिनिधि ने यह भाव व्यक्त करते हुए कहा, "इसीलिए तो सोचा गया कि जे० पी० इतने दिनों बाद आ रहे हैं, और थोड़े दिनों के लिए आ रहे हैं, तो क्यों न एक साथ मिलने का कार्यक्रम बनाया जाय ? और यही एक साथ मिलने का कार्यक्रम मुसहरी का प्रथम ग्रामस्वराज्य-सम्मेलन हो गया। अब आये हैं सब लोग, तो अपने काम का लेखा-जोखा भी कर लेंगे, कुछ आगे की योजना भी बना लेंगे, जे० पी० का मार्गदर्शन भी मिल जायगा।"

मुजफ्फरपुर शहर से तीन मील दूर सुस्ता गाँव में यह सम्मेलन आयोजित था, जिसमें भाग लेने के लिए इस प्रखण्ड की ८१ ग्रामस्वराज्य-सभाओं के २५३ प्रतिनिधि एक रुपया प्रतिनिधि शुल्क सहित आये थे, जिन्होंने सम्मेलन के निबन्धन कार्यालय में अपना नाम दर्ज कराया था। बहुत से ऐसे लोग भी दोनों दिन सम्मेलन में आकर भाग लेते रहे थे, जिन्होंने विधिवत् शुल्क जमा कराकर अपना नाम नहीं दर्ज कराया था। करीब ३१ लोग जिले के अन्य प्रखण्डों से भी आये थे। ३१ जुलाई को विशेष रूप से प्रखण्ड के ३५ शिक्षकों ने भी भाग लिया, क्योंकि मुसहरी की शिक्षा के बारे में भी विचार-विमर्श किया जाना था।

सम्मेलन की अध्यक्षता इसी क्षेत्र के प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता श्री बद्री बाबू ने की। ३० जुलाई को जब ३ बजे से सम्मेलन की कार्यवाही शुरू हुई तो पूरा सम्मेलन-पण्डाल भरा हुआ था। मच पर भी काफी भीड़ थी। मुजफ्फरपुर के तीन विधायक, कृषि-मंत्री श्री ललितेश्वर प्रसाद शाही तथा सरकारी अधिकारी, क्षेत्र के गणमान्य नागरिक और सर्वोदय कार्यकर्ता उत्साह के साथ सम्मेलन में उपस्थित थे।

अध्यक्ष के आसन-ग्रहण की औपचारिकता के बाद स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री रामदेव प्रसाद शर्मा का छपा हुआ भाषण एक दूसरे व्यक्ति ने पढ़कर सुनाया; क्योंकि स्वागताध्यक्ष महोदय अपनी अस्वस्थता के कारण सम्मेलन में उपस्थित नहीं हो पाये थे। स्वागत भाषण में दो-ढाई साल पहले की क्षेत्र की आतकपूर्ण स्थिति, उसमें जे० पी० का समाधान ढूंढने के लिए आकर जुटने और सर्वोदय कार्यकर्ताओं का जो जान से जे० पी० के प्रयत्न में शामिल होने के प्रति क्षेत्र की जनता की ओर से आभार व्यक्त किया गया था। यह जानकारी दी गयी थी कि प्रखण्ड में १०० ग्रामस्वराज्य-सभाएँ बन चुकी है। (बाद में एक और ग्रामसभा के गठन की सूचना दी गयी) जे० पी० के स्वास्थ्य की स्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए उनके सुस्वास्थ्य और शतायु होने की शुभकामना भी सहज ही स्वागत-भाषण में प्रकट की गयी थी।

जे० पी० की अनुपस्थिति में मुसहरी का मोर्चा सम्भालनेवालों में से एक प्रमुख व्यक्ति श्री कैलाश बाबू ने प्रखण्ड में हुए काम की लम्बी रिपोर्ट पेश करते हुए कुछ नयी जानकारियाँ भी दीं। आपने बताया कि प्रखण्ड में पुलिस-अदालत मुक्ति-अभियान की दिशा में काफी सफलता मिली है, और सैकड़ों मामलों-मुकदमों का निपटारा ग्रामस्वराज्य-सभाओं द्वारा किया गया है तथा प्रयत्न निरन्तर जारी है। बिहार रिलीफ कमिटी की ओर से २४५ पेयजल के तथा ८८३ सिंचाई हेतु डेढ़ इंच व्यास के चापाकल इस प्रखण्ड में लगवाये जा चुके हैं। ग्राम-सेवा-सगम की ओर से ६ पोखरों का जीर्णोद्धार कराया गया है, जिनसे करीब ५९ एकड़ जमीन में सिंचाई हो सकेगी। ४४ छोटे पैमाने के उद्योगों का निबन्धन भी ग्रामीण औद्योगिक परियोजना, नवादा (गया) के परियोजना अधिकारी श्री गीता प्रसाद सिंह के प्रयत्नों से हो चुका है।

सरकार की ओर से अब तक ४ गांवों का, कानूनी दृष्टि से, पुष्ट ग्रामदान के रूप में गजट हो चुका है। कुल ३१ ग्रामदानी गाँवों के कुल १५१ आदाताओं में कुल ५९ बीघा १७ कट्ठा १९॥ धूर जमीन का वितरण हुआ है; जिस पर सभी आदाताओं का दखल हो चुका है।

काम की रिपोर्टिंग के बाद विधायकों ने एक-एककर अपनी बात सम्मेलन के समक्ष रखी। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के विधायक श्री रामदेव शर्मा ने प्रखण्ड में चल रहे भूदान-ग्रामदान के काम की गलतियों की ओर लोगों का ध्यान खींचा। समाजवादी विधायक श्री रमई राम ने जे० पी० से अनुरोध किया कि वे अन्य प्रखण्डों की ओर भी ध्यान दें। समाजवादी विधायक श्री साधुशरण शाही ने आशा व्यक्त की कि जिस तरह चम्बल के बागियों ने जे० पी० के चरणों में अपने हथियार डाल दिये, वैसे ही समाज के

अन्यायी लोग भी एक-न-एक दिन जे० पी० के चरणों में हथियार डालेंगे ही। श्री ललितेश्वर प्रसाद शाही, कृषि मंत्री (बिहार राज्य) ने विकास के मार्ग की रुकावटों को स्पष्ट करते हुए यह कहा कि विकास के लिए पूँजी लगाने की भावना का अभाव आज देश में पाया जा रहा है। लोग बचत नहीं करते।...अन्त में आपने मंत्री के लहजे में हमारे 'मंत्रालय की सहायता यहाँ के काम में हमेशा उपलब्ध रहेगी' का आश्वासन दिया।

अपने भाषण में श्री जयप्रकाश नारायण ने पिछले आठ-साढ़े आठ महीने क्षेत्र से बाहर रहने का दुःख व्यक्त करते हुए अपने स्वास्थ्य के बारे में संक्षिप्त जानकारी दी, जिसे जानने के लिए सम्मेलन में उपस्थित करीब २००० लोग आतुर थे। यों इस समय उनका स्वास्थ्य काफी सुधरा है। देखने से ही एक-दो माह पूर्व की स्थिति में और आज की हालत में काफी सुधार नजर आता है।

जे० पी० का पूरा भाषण किसी नेता का मंचीय भाषण नहीं, एक बड़े परिवार के बुजुर्ग की पारिवारिक चर्चा थी। आपने कहा कि, "यहाँ से दूर रहने पर भी मुझे काम की जानकारी बराबर मिलती रही है। काम यहाँ बराबर चलता रहा है, इसका मुझे सन्तोष है, लेकिन गति कुछ धीमी है। स्थानीय नया नेतृत्व विकसित हो रहा है, ग्रामसभा, तरुण-शान्तिसेना, और ग्राम शान्तिसेना की सक्रियता से काम आगे बढ़ रहा है, लेकिन अभी पूरे क्षेत्र में गतिशीलता नहीं आयी है। ग्रामदान की चारों शर्तों की पूर्ति अभी तक नहीं हुई है। इन शर्तों की पूर्ति होने पर ही ग्रामस्वराज्य की ठोस बुनियाद बन सकेगी।"

ग्राम-व्यवस्था की पुरानी भारतीय परम्परा और उस पर अंग्रेजी राज के विध्वंसक प्रहार की चर्चा करते हुए जे० पी० ने कहा कि, "यद्यपि आज नगरों में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है, लेकिन गाँवों में भी यह बढ़ोत्तरी जारी है, भारत में नगर और गाँव का जो अनुपात है, उसके कारण गाँवों की जनसंख्या बराबर अत्यधिक ही रहनेवाली है। इसलिए भारत के विकास की योजना कृषि-औद्योगिक ही हो सकती है। इसी आधार पर गाँवों को मजबूत बनाया जा सकता है और गाँव मजबूत बनेंगे, तभी देश मजबूत होगा।" आपने ग्रामस्वराज्य-सभा को ही वास्तविक 'लोकसभा' की संज्ञा दी क्योंकि इसी सभा में गाँव का हर व्यक्ति-प्रत्यक्ष भाग ले सकता है। बाकी तो ऊपर के जितने संगठन हैं, सब प्रातिनिधिक हैं। यह लोकसभा जितनी मजबूत होगी, देश का लोकतंत्र उतना ही शक्तिशाली होगा।

प्रायः देश के हर पिछड़े इलाके में सूदखोरी की समस्या भीषण है। पिछले दिनों सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा मुसहरी में दौरा कर रहे थे, उसी दरम्यान एक गाँव की ग्रामसभा में एक गरीब आदमी ने यह बताया कि ४०० रुपये उसने बैल के लिए कर्ज लिये थे, ३ प्रतिशत प्रतिमास चक्रवृद्धि ब्याज की दर से बढ़ते-बढ़ते थोड़े ही दिनों में कर्ज इतना हो गया कि १६ कट्ठा जमीन उसे रेहन रखनी पड़ी और अब उसके पास सिर्फ ७ कट्ठा जमीन बच रही है। वह आदमी दो दिनों से भूखा था।

श्री सिद्धराजजी ने जे० पी० को इस घटना की जानकारी देते हुए पत्र लिखा था, जिसे उन्होंने सभा में पढ़कर सुनाया और बड़े ही मार्मिक शब्दों में लोगों के समक्ष यह सवाल पेश किया, "क्या ये अन्याय चलते ही रहेंगे?"

दूसरे दिन यानी ३१ जुलाई, '७२ को पूर्वाह्न में अलग-अलग मण्डपों में चर्चाएँ हुईं। लोगों ने खुलकर चर्चा की और सर्वसम्मत सुझाव सम्मेलन के समक्ष पेश करने के लिए तैयार किये गये। गोष्ठी में भाग लेनेवालों की चर्चाएँ काफी सुलझावकारी और व्यावहारिक हुईं, कहीं भी मतभेद ने मनभेद का रूप नहीं लिया, एक-दूसरे की बात को समझने-समझाने का ही दौर चला।

अपराह्न में गोष्ठियों के संयोजकों ने अपनी-अपनी रिपोर्ट सम्मेलन में पेश की।

सबसे पहले शिक्षा में क्रान्ति विषयक गोष्ठी की रिपोर्ट श्री देवेन्द्र अनल, एक शिक्षक ने पेश की। इस गोष्ठी में जिन लोगों ने भाग लिया, उनमें अधिकांश शिक्षक थे। केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने भी इस गोष्ठी में भाग लिया और अपने सुझाव दिये। इस गोष्ठी की रिपोर्ट के अनुसार प्रखण्ड में ६८ प्राथमिक, १० माध्यमिक, ५ उच्च और १ प्राथमिक शिक्षक महाविद्यालय हैं। गोष्ठी की सिफारिशें मुख्य रूप से ये थीं:

(१) परीक्षा-पद्धति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो।

(२) नौकरी से डिग्री का सम्बन्ध न रहे। जिस तरह का काम हो, उसके लिए उसी समय परीक्षा ली जाय।

(३) ३ घण्टे की पाठशालाएँ गाँव-गाँव में चलें।

(४) दो तरह की शिक्षण-व्यवस्था (एक उच्च और सम्पन्न वर्ग के लोगों के लिए और सामान्य लोगों के लिए) बन्द हो,

(५) सामुदायिक प्रवृत्तियों को शिक्षण का माध्यम बनाया जाय।

(६) शिक्षा का संचालन प्रखण्ड स्वराज्य समिति द्वारा हो।

(७) शिक्षक, विद्यार्थी और अभिभावक इसके लिए प्रयत्नशील हों।

समाज के अन्तिम व्यक्ति की स्थिति में सुधार के विशेष प्रयास किये जायँ। इस विषय पर चर्चा करनेवालों की ओर से प्रखण्ड-स्वराज्य समिति के संयोजक श्री रामचन्द्र महतो ने नम्र सुझाव रखे:

(१) अब आमतौर पर लोग मजदूरों को मजदूरी पैसों में देते हैं, इसलिए उनके लिए सस्ते-गल्ले की दुकानें ग्रामस्वराज्य-सभाओं की ओर से गाँव-गाँव में खोली जायँ।

(२) मजदूरों में वही अनाज दिये जायँ, जो खेत में पैदा हुए हों। जान-बूझ

कर घटिया अनाज मजदूरी में न दिया जाय।

(३) सरकार द्वारा निम्नतम मजदूरी की दर फिलहाल लागू का जाय।

(४) सप्ताह में १ दिन का अवकाश मजदूरों को मजदूरी सहित दिया जाय ताकि इससे कार्यक्षमता भी बढ़ेगी और मजदूरों को एक-दिन का आराम भी मिलेगा।

(५) बासगीत के पर्चों में जो त्रुटियाँ रह गयी है, उन्हें सुधारा जाय। जिन्हें पर्चा अभी तक नहीं मिला है, उन्हे दिलवाया जाय।

(६) भूदान की जमीन के मामले दाता-आदाता को आमने सामने बैठाकर सुलझाये जायें।

(७) अपनी माँगों को दृढ़ता के साथ पेश करनेवालों को लोग 'नक्सलवादी' बताकर पुलिस के चक्कर में फँसाते हैं। ग्रामसभा इसका प्रतिकार करे।

(८) सड़कों-बाँधों पर झोपड़ी डालकर रह रहे मजदूरों को गैरमजरुआ जमीनों पर बसाया जाय।

(९) ग्रामसभा ऐसे व्यक्तियों की व्यक्तिगत जमानत पर रोजगार के लिए १०० रुपये से १००० तक का कर्ज दिलाये।

ग्राम-विकास-गोष्ठी के संयोजक श्री कामेश्वर सिंह ने, एक गोष्ठी के द्वारा सुझायी गयी निम्न बातें रखीं :

(१) ग्रामसभा चकबन्दी कराये। इसके पूर्व रेहन की जमीन को छुड़ाया जाय।

(२) सिंचाई के लिए नलकूप ही लगायें जायें। नहर की जरूरत नहीं, उसमें जमीन बहुत चली जायेगी। पहले ही नेशनल हाईवे में काफी जमीन निकल गयी है। (नदी से नहर निकालने की योजना चल रही है, जिसका विरोध लोगों ने किया।

(३) कृषि-बैंक खोला जाय, जिसका संचालन प्रखण्ड स्वराज्य-सभा द्वारा उन्नत बीज, खाद, विकसित औजारों की मदद मिले।

(४) इसी बैंक से जुड़ी हुई एक अपनी मण्डी होनी चाहिए।

(५) उपलब्ध कच्चे माल के आधार पर ग्रामोद्योग खड़े किये जायँ।

(६) सांस्कृतिक विकास के लिए अधिक विभाग जरूरी है। लोक-शिक्षण और वैज्ञानिक सूझ-बूझ के कामों से क्षेत्र का सांस्कृतिक विकास हो सकेगा।

(७) अब तक जो कर्ज लोगों ने बैंकों आदि से लिये हैं, उनकी वसूली के लिए ग्रामस्वराज्य-सभा के लोग अधिक ध्यान दें।

चौथी और अन्तिम गोष्ठी ग्रामसभा की सक्रियता की रिपोर्ट संयोजक श्री देवेन्द्र पाठक ने पेश की

(१) ग्रामस्वराज्य-सभा के पदाधिकारी पहले अपनी जमीन का बीघा-कट्ठा निकालकर फिर दूसरों से निकलवाने का प्रयास करें।

(२) जो भूमिवान अपना बीघा-कट्ठा निकाल चुके हैं, वे दूसरे भूमिवानों से निकलवायें।

(३) जो भूमिहीन अपने श्रम का हिस्सा ग्रामसभा को समर्पित करते हों, वे सामूहिक रूप से भूमिवानों के यहाँ जाकर बीघा-कट्ठा निकालने का निवेदन करें।

(४) अभियान चलाकर भूमिवानों को ग्रामसभा में शामिल किया जाय।

(५) विकास के काम उन्हीं गाँवों में किये जायें जिनमें ग्रामकोष निकलता हो।

(६) ग्रामकोष का हिसाब ग्रामस्वराज्य-सभा में पेश किया जाय। आय-व्यय की बातें सर्वसम्मति से तय हों।

(७) विकास के काम प्रखण्ड स्वराज्य-सभा की ग्रामसभा की राय से हों, इससे मनमुटाव नहीं होगा।

(८) साल में दो बार ग्राम-शान्ति-सेना की विशेष रैलियाँ और शिविर हों।

(९) ग्रामसभा और ग्राम-शान्ति-सेना की हर माह बैठकें हों।

(१०) ग्राम-शान्तिसैनिकों को रोजगार देने के लिए उद्योग-धन्धे शुरू किये जायें।

(११) ग्रामसभा में ऐसा वातावरण बनाया जाय कि गरीब अपनी बात भय-मुक्त होकर कह सकें।

(१२) बैठकें रात में हों, ताकि सब लोग उसमें भाग ले सकें।

(१३) ग्रामस्वराज्य-सभा या प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के पदाधिकारी राजनैतिक दलों में न रहें, ताकि गाँव में एकता बनी रह सके।

(१४) प्रखण्डस्वराज्य-सभा अपने निर्णयों की जानकारी ग्रामस्वराज्य सभाओं को भेजे।

सम्मेलन का समारोप करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने इस बात पर सन्तोष व्यक्त किया कि गोष्ठियाँ बहुत ही ऊँचे स्तर की और व्यावहारिक हुईं। आपने भारत के अनपढ़ ग्रामीणों की व्यावहारिक सूझबूझवाली बुद्धि के प्रति आस्था व्यक्त करते हुए कहा, कि "पढ़े लिखे देश के नेताओं की लोकसभा में या विधान सभाओं में तो उठा-पटक की नौबत आ जाती है। फिर जे० पी० ने देश की सारी राजनीतिक शक्ति एक पार्टी और एक नेता के हाथ मे सिमटने पर चिन्ता व्यक्त करते हुए इस बात की आवश्यकता बतायी, कि "हम जिस लोकनीति की बात कहते हैं उसका व्यावहारिक दर्शन अगर अगले आम चुनावों में कुछ क्षेत्रों में ही सफलतापूर्वक करा सकें यानी लोक-प्रतिनिधि खड़े कर उन्हें क्षेत्र की जनता द्वारा चुनाव में विजयी बना सकें, तो दलीय प्रतिनिधित्व की जगह लोक-प्रतिनिधित्व के विकल्प का एक प्रत्यक्ष दर्शन लोगों को हो सकेगा और देश की जनता आगे चल कर इसे अपना सकेगी।"

सम्मेलन के अध्यक्ष श्री बद्री बाबू ने इसे एक शुरुआत बताते हुए आगे की महत्त्वपूर्ण सम्भावनाओं की ओर संकेत किया और औपचारिक धन्यवाद के आदान-प्रदान के साथ सम्मेलन सम्पन्न हुआ।

—रामचन्द्र राही

इन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में विजय पाई

आइये ! हम राष्ट्र निर्माण के युद्ध में विजय प्राप्त करें
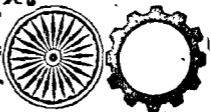
चाहिये। क्या मजदूरी रोज मिल जाती है? इस प्रश्न के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि यहाँ के मजदूर रोज इस स्थिति में कमाते और खाते हैं। अतः सामान्यतया रोज मजदूरी प्राप्त हो जाती है। जहाँ तक काम का प्रश्न है वह प्रतिदिन मिलना सम्भव नहीं। खेती एक ऐसा काम है जिसमें सालभर काम मिलना सम्भव नहीं। उपजाऊ जमीन रहने के कारण हमेशा कोई-न-कोई फसल लगी रहती है। सर्वेक्षण के बाद इस बात की पुष्टि हुई कि यहाँ मजदूरों को साल में ६ माह काम मिल जाता है। शेष दिनों में या तो काम नहीं मिलता या आधे समय तक काम मिलता है। मजदूरों की इस प्रकार की स्थिति रहती है कि कुछ मजदूर ऐसे रहते हैं जिन्हें आसानी से काम मिलता है और इनका किसानों से निकट का सम्बन्ध रहता है। पर ऐसे *मजदूरों की संख्या काफी है जिन्हें नियमित* काम नहीं मिलता है। फिर परिवार के प्रत्येक सदस्य को काम मिल सकना सम्भव नहीं। मजदूर परिवार के स्त्री-पुरुष दोनों सदस्य काम करने की स्थिति में होते हैं। ऐसा पाया गया कि प्रायः पुरुष, काम मिलने पर, अपेक्षाकृत अधिक काम पर जाते हैं। जबकि महिलाओं की स्थिति यह होती है कि कार्य के प्रकार एवं पारिवारिक कारणवश अपेक्षाकृत कम काम मिलता है। महिलाएं हर प्रकार के कार्य को करने की स्थिति में नहीं होती है।

महिलाओं के कार्य की जो परिस्थिति होती है उसे देखते हुए यह कहा जाना आवश्यक है कि उनको कठिन शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है। महिलाओं का जिस शारीरिक हिंसा का सामना करना पड़ता है उससे उनके स्वास्थ्य को काफी नुकसान पहुँचता है। कठिन शरीर-श्रम करने और अपूर्ण आहार के कारण कम उम्र में ही शरीर कमजोर हो जाता है। फिर किसान उनके साथ कोई रियायत नहीं बरतता है। मिट्टी ढोने से लेकर घरेलू कार्य तक, सब में कठिन परिश्रम करने पड़ते हैं। कार्य की इस परिस्थिति में इस वर्ग की महिलायें छोटे बच्चों को साथ में रखकर कार्य को पूरा करती हैं।

मजदूर को जो भी मजदूरी मिलती है उसका उपभोग परिवार का प्रत्येक सदस्य बाँट कर करता है। जितनी मजदूरी मिलती है उसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य का पेट भरना सम्भव नहीं। भोजन की इस छीना झपटी के कारण संयुक्त परिवार नहीं टिक पाता। यही कारण है कि इस वर्ग में संयुक्त परिवार नहीं के बराबर देखने को मिलते हैं। प्रायः एक पीढ़ी एक साथ रहती है, लड़का बड़ा होता है, शादी होती है और अलगाव की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। भौतिक चीजों की कमी आपसी सम्बन्धों को किस हद तक प्रभावित करती है इसका एक नमूना इसमें देखा जा सकता है। ●

बाँसवाड़ा जिले में साहित्य बिक्री-योजना

श्री जगन्नाथजी कसारा अध्यक्ष बाँसवाड़ा जिला सर्वोदय मण्डल परतापुर ने जन-आधारित साहित्य-बिक्री की योजना बनाकर १२ व्यक्तियों से ४०० रु० जिला सर्वोदय मण्डल परतापुर से २५० रुपये वापस देने की शर्त पर इकट्ठा कर *१५ अगस्त* १९७१ से साहित्य-बिक्री शुरू की। वर्ष भर में ११३९ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई है। साहित्य-बिक्री के लिए रोज एक घण्टा नियमित समय देते हैं।

इस योजना के सहयोगी सदस्यों की बैठक १-८-७२ को जिला सर्वोदय मण्डल के कार्यालय में हुई। बैठक में इस योजना को पुनः चालू रखने का निर्णय किया गया। साहित्य-बिक्री से १७५ रुपये का लाभ हुआ। बैठक में इस वर्ष अधिक सदस्य बनाने का भी निश्चय किया गया। —गोपालहरि वर्मा

शिमला-सन्धि

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा का वक्तव्य

स्वतन्त्रता के बाद दुर्भाग्य से भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध भय, अविश्वास, और सन्देह पर आधारित रहे हैं। इसके कारण पिछले पच्चीस वर्षों में केवल सशस्त्र युद्ध ही नहीं हुए, बल्कि बढ़ती हुई शस्त्र की दौड़ भी जारी रही। परिणामस्वरूप विकास और भलाई के लिए जिन साधनों की आवश्यकता थी उन्हें अनुत्पादक उद्देश्यों में लगाया गया, जिससे गरीब लोगों को बड़ी कठिनाई हुई।

शिमला सन्धि भारत-पाक सम्बन्धों में एक नये दौर की शुरुआत है और इसे जनता की भलाई चाहनेवाले, विशेष तौर से गरीबों से सहानुभूति रखनेवालों का पूरा समर्थन मिलना चाहिए। जो लोग इस सन्धि में दोष निकाल रहे हैं उन्हें यह समझना चाहिए कि कोई भी सन्धि इस बुनियाद पर नहीं की जा सकती कि 'सर हमारा, दुम तुम्हारी'। अगर कोई दो पक्ष युद्ध को टालना, सन्धि करना चाहते हैं तो उन्हें यह सुलह 'लो और दो' की बुनियाद पर करनी पड़ती है।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि बांगला देश के बन जाने से पूरी परिस्थिति बदल गयी है। हमें वास्तविकता को सामने रखते हुए इस उपमहाद्वीप में शान्ति के किसी भी अवसर को, हाथ से नहीं जाने देना चाहिए। इसलिए मैं विरोधी दलों से अपील करता हूँ कि वे परम्परागत राजनीति से ऊपर उठें और परिस्थिति को एक बड़े राजनीतिज्ञ की हैसियत से देखें। हम लोग अपने आप को सत्ता की राजनीति का यंत्र न बनने दें, जो कि बड़ी शक्तियाँ गरीब देशों की कीमत पर हमें बनाना चाहती हैं।

२१८३ एकड़ भूदान-भूमि ५०१ भूमिहीनों में वितरित

भोपाल, २७ जुलाई। मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड द्वारा प्रसारित एक जानकारी में बताया गया है कि गत दो महीनों—मई व जून—में जिला मुरैना में १४११ एकड़, गुना में ७६३ एकड़, सागर में ५.४० एकड़ तथा जबलपुर में ३.५९ एकड़, इस प्रकार कुल २१८२ ९९ एकड़ भूदान-भूमि ५०१ भूमिहीन परिवारों में वितरित की गयी। आदाता परिवारों में १८७ हरिजन, ६० आदिवासी, २८२ सवर्ण एवं २२ पिछड़ी जातियों के लोग सम्मिलित हैं।

यह उल्लेखनीय है कि जून माह में दुर्ग जिले में एक दाता से ८.३२ एकड़ का नया भूदान भी मिला।

भूमि-वितरण

रतलाम जिले के ग्राम केरवासा तथा ग्राम बिरमावल में म० प्र० भूदान यज्ञ बोर्ड के द्वारा छः भूदान धारक को २३ बीघा भूमि के पक्के पट्टे दिये गये।

तरुण-शान्तिसेना

तरुण-शान्तिसेना की प्रदेश स्तर की, पश्चिमी बंगाल की पहली बैठक हुगली जिले में डटापुता में हुई। बैठक में ३५० से अधिक युवक और युवतियों ने भाग लिया। यह बैठक श्री दिनेश मुखर्जी ने बुलायी थी। प्रसिद्ध लोगों में श्री जैनुल आबदीन थे जो जिले के युवक नेता हैं तथा मृणालिनी दास गुप्ता, न्यायाधीश, एस० पी० मित्रा, प्रो० सुदिन भट्टाचार्य और श्री भवानी चटर्जी ने भी बैठक में भाग लिया। वक्ताओं ने इस बात पर जोर दिया कि झगड़ों को दूर करने का अच्छा तरीका यह है कि गांधीजी की सीख और जीवन-पद्धति के अनुसार जिन्दगी बितायी जाय।

जमशेदपुर नगर सर्वोदय मण्डल का चुनाव

जमशेदपुर नगर सर्वोदय मण्डल का सर्वसम्मत चुनाव ता० ७-७-७२ को हुआ। निम्नलिखित व्यक्ति मण्डल के सदस्य चुने गये

१	श्री लक्ष्मी निधि, एडवोकेट—	अध्यक्ष
२	,, अब्दुल मन्नान—	मंत्री
३	,, आरिफ मही—	सदस्य
४	,, अयूब खाँ—	,,
५	,, चन्द्र मोहन सिंह—	,,
६	,, नागेन्द्र नाथ मरण्डी—	,,
७.	,, राम सेवक पाण्डे—	,,

—अब्दुल मन्नान, मंत्री
जमशेदपुर (बिहार)

पुष्टि-अभियान-गोष्ठी

२६ और २७ जून '७२ को बनमनखी (पूर्णिया) में बिहार के पुष्टि-अभियान में लगे कार्यकर्ताओं की एक द्विदिवसीय गोष्ठी हुई। गोष्ठी में सर्वश्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, आचार्य राममूर्ति, निर्मला देशपाण्डे, डि० एन० झा, रुद्र नारायण सिंह, हरेश्वर सिंह, त्रिवेणी प्रसाद सिंह, महेन्द्र मिश्र, रामेश्वर ठाकुर उपस्थित थे।

शोक-समाचार

बिहार के वरिष्ट सर्वोदय कार्यकर्ता श्री राम नारायण बाबू के पिता श्री रोहन सिंह का ७५ वर्ष की उम्र में ५ अगस्त '७२ को देहान्त हो गया। उन्होंने स्वराज्य की लड़ाई में सक्रिय भाग लिया था और जेल गये थे। आज भी उनके दो लड़के श्री रामनारायण बाबू और श्री निर्मल बाबू सर्वोदय आन्दोलन में सक्रिय हैं। सर्वोदय परिवार उनके प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वर्ष : १८, अंक : ४७ २१ अगस्त, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सच्चा स्वराज्य

जब राजसत्ता जनता के हाथ में आ जाती है, तब प्रजा की आजादी में होनेवाले हस्तक्षेप की मात्रा कम-से-कम हो जाती है। दूसरे शब्दों में जो राष्ट्र अपना काम राज्य के हस्तक्षेप के बिना ही शान्तिपूर्वक और प्रभावपूर्ण ढंग से कर दिखाता है, उसे ही सच्चे अर्थों में लोकतंत्रात्मक कहा जा सकता है। जहाँ ऐसी स्थिति न हो, वहाँ सरकार का बाहरी रूप लोकतंत्रात्मक भले हो, परन्तु वह नाम के लिए ही लोकतंत्रात्मक है।...सच्ची लोकशाही केन्द्र में बैठे हुए दस-बीस आदमी नहीं चला सकते। वह तो नीचे से हरएक गाँव के लोगों द्वारा चलायी जानी चाहिए।

स्वराज्य का अर्थ है सरकारी नियंत्रण से मुक्त होने के लिए लगातार प्रयत्न करना, फिर वह नियंत्रण विदेशी सरकार का हो या स्वदेशी सरकार का। यदि स्वराज्य हो जाने पर लोग अपने जीवन की हर छोटी बात के नियमन के लिए सरकार का मुँह ताकना शुरू कर दें तो वह स्वराज्य-सरकार किसी काम की नहीं होगी।

—मो० क० गांधी

साथियों से

जून के उत्तरार्द्ध में 'भूदान-यज्ञ' सर्वोदय साप्ताहिक के जरिये सर्वोदय आन्दोलन के सम्बन्ध में मैंने कुछ बातें साथियों के सामने रखी थी। उस पत्र में मैंने इस बात पर जोर दिया था कि आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए जो दो औजार, कार्यकर्ता और संगठन हैं उनकी धार तेज होनी चाहिए और उनमें चुस्ती तथा कसावट आनी चाहिए, क्योंकि आन्दोलन के लक्ष्य और उसके कार्यक्रम को आगे बढ़ाने का काम कार्यकर्ता और संगठन पर ही निर्भर करता है। अगर ये औजार काम के अनुकूल तेज और चुस्त न हो तो स्वाभाविक ही काम जैसा चाहे वैसा आगे नहीं बढ़ सकेगा।

हमारे संगठन की बुनियादी इकाई लोक-सेवक है। लोक-सेवकों से ही सर्व सेवा संघ बना है। लोक-सेवकों के लिए हमने कुछ निष्ठाएँ मानी हैं। उन निष्ठाओं के अनुरूप और उन निष्ठाओं को जीवन में प्रतिबिम्बित करनेवाला उनका आचरण हो, ऐसी उनसे अपेक्षा है। हम चाहते हैं कि देशभर में अधिक-से-अधिक लोक-सेवक बनें, पर साथ ही हमें इस बात पर पूरा ध्यान रखना चाहिए कि वे ऐसे ही व्यक्ति हों जो निष्ठाओं और आचरण की कसौटी पर खरे उतरते हों। संख्या जरूर बढ़े लेकिन गुणवत्ता की कीमत पर नहीं।

लोक-सेवकों के लिए जो बदली शर्तें सर्व सेवा संघ ने मान्य की हैं उनके अनुसार अब यह तो जरूरी नहीं है कि लोक सेवक *आन्दोलन के काम में ही पूरा* समय देनेवाला हो। आजीविका के लिए अन्य काम करने पड़ें, उनमें तथा अन्य जरूरी कामों में जो समय जाय सो जाय, लेकिन बचे हुए *समय का उपयोग* वह आन्दोलन के लिए करे। नये लोक-सेवक बनाते समय इस शर्त को सावधानी से पालन करना चाहिए, ऐसा मेरा नम्र सुझाव है। जो किसी-न-किसी रूप में आन्दोलन में सक्रिय हों वे ही लोक-सेवक बनें या उन्हीं को बनाया जाय, इसका हमें आग्रह रखना चाहिए। ऐसा हम नहीं करेंगे तो उद्देश्य सफल नहीं होगा। इसी दृष्टि से जहाँ एक ओर सर्व सेवा संघ ने लोक-सेवक के लिए पूरा समय आन्दोलन में लगाने की शर्त को छोड़कर आंशिक समय देनेवालों को भी स्वीकार किया है, वहाँ दूसरी ओर पहले जो यह मान लिया जाता था कि खादी आदि किसी भी रचनात्मक काम में लगे हुए सभी लोग "पूरा समय और सर्वस्व चिन्तन" आन्दोलन में ही दे रहे हैं, उसे छोड़ दिया। अब सवाल पूरे समय या आंशिक समय का उतना नहीं है जितना इस बात का कि लोक-सेवक ऐसे ही व्यक्ति हों जो आन्दोलन के किसी-न-किसी काम में सक्रिय हों।

सर्वोदय के क्षेत्र में जिला या प्रदेश मण्डल तथा सर्व सेवा संघ आदि जो संगठन हमने बनाये हैं उनमें मुख्य दृष्टि भाईचारे की रहे, यह हमने माना है। वह उचित है और जरूरी है। हमें उसी ओर बढ़ना है, लेकिन इसका मतलब ढिलाई का नहीं होना चाहिए। संगठन का कुछ उद्देश्य होता है और कुछ नियम भी होते हैं। हम अक्सर इन नियमों के पालन में ढिलाई होने देते हैं क्योंकि हम समझते हैं कि नियमों के पालन का आग्रह करेंगे तो उससे दूसरों को बुरा लगेगा और भाईचारे में कमी आयेगी। मेरी राय में यह ठीक नहीं है। इस प्रकार की ढिलाई से उद्देश्य की पूर्ति में भी बाधा पहुँचती है। प्रदेशों में, जिलों में, और जगह-जगह नये लोक-सेवक बनाने और सर्वोदय मण्डलों के गठन में हम इन बातों का ध्यान रखेंगे और संगठन को चुस्त बनायेंगे तो अच्छा होगा, तभी संगठन आन्दोलन को आगे बढ़ाने में सफल हो सकेगा। ढीला संगठन असरकारक सक्रिय नहीं होता।

—सिद्धराज ढड्ढा

अखिल भारत राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन

नयी तालीम समिति (सर्व सेवा संघ) और शिक्षा मण्डल, वर्धा के संयुक्त तत्वावधान में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन सेवाग्राम में दिनांक २२, २३ अक्तूबर १९७२ को सम्पन्न होने जा रहा है। सम्मेलन में उन महत्वपूर्ण शैक्षणिक समस्याओं की ओर, जो राष्ट्र के सम्मुख हैं, ध्यान खींचा जायगा। बुनियादी शिक्षा के शिक्षक, सर्वोदय विचार के तज्ञ, शिक्षण के काम में लगे हुए रचनात्मक कार्यकर्ता तथा जो गांधीजी द्वारा बतायी गयी शिक्षण-पद्धति में रुचि रखते हैं, उन सबको सम्मेलन में भाग लेने हेतु आमंत्रित किया जाता है।

केन्द्र तथा राज्यों के शिक्षामंत्री, विश्वविद्यालयों के एवं कुछ अन्य सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्रियों को भी चर्चाओं में भाग लेने हेतु आमंत्रित किया जायेगा। इस सम्मेलन के उद्घाटन के लिए प्रधानमंत्री से अनुरोध किया जा रहा है। श्री श्रीमन्नारायण, राज्यपाल (गुजरात) सम्मेलन की अध्यक्षता करेंगे।

अन्य जानकारी के लिए कृपया निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—के० एस० आचार्लू
मंत्री, नयी तालीम समिति, सेवाग्राम,
वर्धा (महाराष्ट्र)

नया साम्राज्यवाद

जार्ज टाउन में होनेवाले सदस्य देशों के विदेश मंत्रियों के सम्मेलन का यह कहना कि दुनिया के बड़े और समृद्ध देश पिछड़े देशों पर आर्थिक दबाव डालकर अपनी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का नये ढंग से परिचय दे रहे हैं इस बात का प्रमाण है कि अब उन्हें अपनी सही स्थिति का भान हो रहा है। उन्हें अब यह प्रतीति हो रही है कि सीधे विदेशी शासन के अलावा दूसरी भी गुलामी होती है जो कम भयकर नहीं होती। उन्नत देश सहायता, व्यापार, और तकनीक आदि के नागफाँस में *गरीब देशों को जकड़ते जा रहे हैं, और विवश होकर गरीब* देश को धनी और शक्तिशाली देशों की धौंस बर्दाश्त करनी पड़ रही है—केवल आर्थिक मामलों में नहीं, बल्कि विदेश-नीति आदि मामलों में भी। एशिया और अफ्रीका के देशों को अब निश्चित रूप से जान लेना चाहिए कि पश्चिम की दुनिया की नकल करने में उनकी मुक्ति नहीं है। पश्चिम का विकास गुलाम देशों के मानवीय तथा भौतिक साधनों के शोषण के बल पर हुआ है। क्या हम भी पश्चिम की ही राह पर चलना चाहते हैं? क्या हम चल भी सकते हैं? अगर नहीं, तो हमें अपने लिए नयी राह निकालनी चाहिए। हर देश को अपने लिए अलग राह निकालनी होगी। किस देश के लिए कैसा राजनैतिक संगठन, कैसी विकासनीति, और किस तरह की शिक्षा अनुकूल होगी, यह उसकी परम्परा, राष्ट्रीय प्रतिभा और परिस्थिति पर निर्भर है। उधार और नकल गुलामी का दूसरा नाम है। मुक्ति स्वदेशी में है। स्वावलम्बन परस्परावलम्बन की पहली सीढ़ी है। भारत मुक्ति की नयी लड़ाई में अगुआई कर सकता है क्योंकि उसने स्वदेशी और स्वावलम्बन का पाठ सीधे गांधी से पढ़ा है। स्वदेशी की बुनियाद पर बनी सच्चे स्वराज्य का 'ब्लू प्रिंट' जिसे विनोबा ने सवार का व्यावहारिक और ग्राह्य बना दिया है गांधी की विरासत के रूप में हमारे पास मौजूद है। जरूरत है उसे समझने की, और अपनाने की। यही रास्ता है हमारी मुक्ति का। यही हमारी क्रान्ति का उत्तरार्द्ध भी है जिसे हमें पूरा करना है।

एक नया प्रयोग

अखबारों में खबर आयी है कि त्रिवेन्द्रम में एक कालेज को स्वयं विद्यार्थी चला रहे हैं। अगर यह बात सही हो तो मानना पड़ेगा कि बहुत दिनों के बाद शिक्षा-जगत में एक नया कदम उठा है। *किसी शिक्षा-संस्थाओं की अवस्था में नयी* सम्भावनाएँ प्रकट की हैं। शिक्षा की समस्या विद्यार्थी नहीं है। मूल दो समस्याएँ दूसरी हैं—एक, स्वयं शिक्षा जो नितान्त निकम्मी है, और दूसरी, व्यवस्था जो भ्रष्ट और अक्षम है। विद्यार्थी और शिक्षक दोनों निकम्मी शिक्षा और भ्रष्ट व्यवस्था के शिकार हैं, यहाँ तक शिकार हैं कि वे अब स्वयं अपने विद्यालय को भ्रष्ट और निकम्मा बनाने में शरीक हो गये हैं। इतना स्पष्ट है कि आज जिन हाथों में शिक्षा और शिक्षालयों की व्यवस्था है वे सर्वथा अयोग्य सिद्ध हो चुके हैं। उनकी अयोग्यता का दण्ड सबसे अधिक विद्यार्थियों को ही भोगना पड़ रहा है, इसलिए स्वाभाविक है कि वे आमूल परिवर्तन की माँग करें और स्वयं जिम्मेदारी लेने के लिए आगे बढ़ें। त्रिवेन्द्रम में उन्होंने सम्भवतः उसी तरह का एक कदम उठाया है। लेकिन विद्यार्थी विद्यालय की इकाई के केवल एक अंग हैं, उसके दूसरे दो अंग शिक्षक और अभिभावक हैं। हर विद्यालय की व्यवस्था *शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक की एक सम्मिलित समिति के हाथ में* होनी चाहिए। यह व्यवस्था स्वायत्त हो। सरकार धन से उस व्यवस्था की सहायता करे, लेकिन उसकी स्वायत्तता में हस्तक्षेप न करे। उसे अभ्यास क्रम, परीक्षा, आन्तरिक जीवन आदि सब में पूरी छूट होनी चाहिए। विद्यालय की समिति अपने कामों के लिए विद्यालय की आमसभा और समाज के प्रति उत्तरदायी होगी। आज की घोर अव्यवस्था का उत्तर स्वायत्त व्यवस्था है, न कि सरकार का नियंत्रण।

चाँदी आजादी की, सोना खादी का

स्वतंत्रता की रजत-जयन्ती और खादी की स्वर्ण-जयन्ती: स्वतंत्रता और खादी दोनों के प्रेमियों के जीवन में सोने-चाँदी की ऐसी गंगा-जमुनी पहिले कभी नहीं प्रकट हुई थी। स्वतंत्रता पचीस वर्ष की हो गयी, खादी पचास वर्ष की। गुलामी के दिनों में खादी 'आजादी की वर्दी' थी। लेकिन जिस गांधी ने देश को आजादी की यह वर्दी पहनायी थी उसने खादी को 'गरीब की आजादी' के रूप में भी देखा था। उसकी नजर में खादी के बिना गरीब की आजादी का कोई अर्थ *नहीं था। खादी गांधी के लिए नहीं, गरीब के लिए थी,* जैसे आजादी शासन के लिए नहीं, सेवा के लिए थी। पचीस साल हो गये, आजादी गरीब के लिए नहीं हुई, पचास साल हो गये, खादी गरीब के लिए नहीं हुई। इसलिए गरीब आज यह सोचता है कि आजादी की खुशी वह मनाये जो आजादी की चाँदी काट रहा हो, और खादी भी वह पहने जिसके घर में सोने की कमी न हो। अगर भारत के गरीबों की यह भावना है तो जाहिर है कि आजादी और खादी दोनों अपना सही रास्ता छोड़कर भटक गयी हैं, दोनों के वास्तविक गुणों का ह्रास हो गया है। सोचना चाहिए कि ऐसा क्यों हुआ। जिस देश में गरीबों का प्रबल बहुमत है, उसमें क्यों आजादी और खादी-→

चीन का कम्यून

पेकिंग से बस द्वारा ६ घण्टे चलने पर शा-शी-यू नाम का गाँव मिलता है। ६ सौ ७० व्यक्तियों के इस गाँव में दो या तीन कमरों के कुल १३० घर हैं जो मक्के के खेतों में और पहाड़ के ढाल पर सेब के वृक्षों के बीच बने हुए हैं। गाँव के तीन ओर पहाड़ हैं। एक पहाड़ी ढाल पर तीस फीट ऊँचे अक्षरों में लिखा हुआ है : 'माओत्से तुंग अमर हों'।

चीनकी ७५ करोड़ जनसंख्या में अस्सी फीसदी लोग गाँवों में रहते हैं। लगभग २५ हजार की आबादी के अनेक गाँवों को मिलाकर एक कम्यून कहलाता है। कम्यून के भीतर जितनी भूमि होती है उसका स्वामित्व सामूहिक होता है; उसी तरह पशुओं, खेती के औजारों, स्वास्थ्य तथा अन्य कल्याण-सेवाओं का भी स्वामित्व सामूहिक ही होता है।

घर के साथ एक गृह-वाटिका जुड़ी होती है जिसमें किसान अपनी मर्जी की फसलें उगा लेते हैं, और सूअर पालते हैं। शा-शी-यू में लोग दो सौ गज दूर के कुएँ से पानी लाकर दरवाजे पर रखे एक ड्रम में भर लेते हैं। अक्सर लोग ईंट के चौड़े चबूतरों पर सोते हैं। चबूतरे इतने चौड़े होते हैं कि पूरा परिवार बाँस की चटाई बिछाकर साथ सो सके। जाड़े में गरमी के लिए अँगीठी जलायी जाती है।

शा-शी-यू में बिजली पहुँच गयी है। वहाँ के लोग उस जमाने को याद करते हैं जब जमींदार गाँव का मालिक होता था। शा-शी-यू का जमींदार गाँव से ६ मील दूर रहता था। गाँव के लोग उसी से जमीन लेकर खेती करते थे। उपज का आधा मालिक ले लेता था, और बची हुई आधी उपज का आधा हिस्सा टैक्स में सरकार को दे देना पड़ता था। गाँव के मजदूरों का बुरा हाल था। जमींदार अपने मजदूरों को चावल की पतली खिचड़ी के सिवाय और कुछ नहीं देता था, उसे भी उसकी पत्नी पानी डालकर पतली कर देती थी।

१९४७ में कम्यूनिस्टों के आने के पहले इस गाँव में ७८ घर थे—घर क्या थे, झुग्गियाँ थीं; जमीन पहाड़ी और खेती के लिए बिलकुल निकम्मी थी। जो कुछ गाँव के लोगों की मेहनत से पैदा होता था वह दो जमींदारों और दस धनी किसानों के घर चला जाता था। जमींदार पहाड़ों के दूसरी ओर उपजाऊ घाटी में रहते थे, बाकी ३८ परिवार बेहद गरीब और भूमिहीन थे। जमीन सिर्फ दस परिवारों के पास थी। उन्हीं की जमीन पर काम पाने के लिए मजदूरों में होड़ लगी रहती थी और मजदूरी करके भी कभी पेट नहीं भरता था। २१ परिवारों को साल में कुछ महीने भीख माँगकर जीना पड़ता था और १७ परिवार पूरे साल भिक्षा माँगते थे। बच्चे बचपन में ही जमींदार के हाथ बिक जाते थे और सारी जिन्दगी मजदूरी करने के बाद जब शरीर थक जाता था, तो कोई पूछनेवाला नहीं होता था। कितने ही बच्चे भूख और बीमारी से मर जाते थे।

जब कम्युनिस्टों का राज हुआ, तो गाँव की पूरी जमीन ७८ परिवारों में लगभग बराबर-बराबर बाँट दी गयी। धनी और भिक्षा माँगने वाले परिवारों

→दोनों गरीबों को छोड़कर विशिष्टों की बन गयी ? देश की सत्ता, देश की सम्पत्ति, देश की शिक्षा, नौकरियाँ, सुख-सुविधाएँ, आदि सभी पर विशिष्ट जन का इस तरह अधिकार हो गया है जैसे इस देश में सामान्य-जन रहते ही नहीं, और उनका इस देश पर कोई अधिकार ही नहीं है। अंग्रेजों ने अपने जमाने में जो कुछ किया वह किया, लेकिन स्वतन्त्रता ने उस अन्याय और अनीति को मिटाने के लिए कितना किया, क्या किया ? ये भ्रष्ट और खर्चीले चुनाव, ये पब्लिक स्कूल, और यह हरी क्रान्ति, सब इस बात के प्रमाण हैं कि 'विशिष्ट जन' ने जान-बूझकर 'सामान्य जन' को अलग रखने का 'षड्यन्त्र' कर रखा है। लोग पूछते हैं कि खादी गरीब से अलग क्यों है ! उसने अन्तिम व्यक्ति तक पहुँचने की कोशिश क्यों नहीं की ?

हमारे सैकड़ों खादी-भण्डार चलते हैं। उनमें अच्छे-से-अच्छे कपड़े बिकते हैं। क्या यह सम्भव नहीं है कि उनके साथ दस-बीस अम्बर चरखों के जीविका-केन्द्र भी चलें जहाँ गरीब जाकर कह सके : 'मैं आठ घण्टे काम करने को तैयार हूँ; मुझे काम दो,' और उसके उत्तर में खादी का हमारा साथी कह सके : 'लो, इस चरखे पर सूत कातो। शाम को चलते वक्त दो रुपये ले लेना।' ऐसे सूत की खादी बनायी जाय और भण्डार में अलग काउण्टर पर बेची जाय—यह कहकर बेची जाय कि यह गरीब की खादी है, महँगी बिकेगी। गरीब की खादी का बड़प्पन ही इसमें है कि महँगी बिके, क्योंकि वह शुद्ध खादी है, पवित्र खादी है, मानवीय खादी है। सरकार का 'गरीबी हटाओ' नारा पाँच व्यक्तियों के लिए एक सौ रुपये मासिक से अधिक की बात नहीं कहता। खादी देश भर में दस-बीस हजार को साठ रुपये तो देकर दिखावे ! अगर आज के वर्ष में हम इतना भी नहीं कर सकें तो क्या खादी की स्वर्ण-जयन्ती, और क्या 'आजादी की रजत-जयन्ती, फिर तो यही मानना पड़ेगा कि सोने-चाँदी की पूजा जैसे शुरू हुई है उसी तरह आज भी हो रही है। लेकिन हम यह जान लें कि 'दरिद्रनारायण' का तिरस्कार करने वाली सोने-चाँदी की पूजा अमीर के भारत को गरीब के भारत से तेजी के साथ अलग करती जा रही है। क्या हम देख नहीं रहे हैं कि आजादी की रजत जयन्ती और खादी की स्वर्ण-जयन्ती के प्रति सामान्य जनता का क्या रुख है ! क्या हम इस रुख का संकेत नहीं समझ पा रहे हैं ? जनता का बेरुख होना आजादी और खादी दोनों के लिए जबर्दस्त खतरा है। ●

को बराबर जमीन मिली। गांव की जमीन बेहद खराब थी। मनुष्य के शोषण और प्रकृति की प्रतिकूलता, दोनों का सामना करना था। गांव में एक ही किसान था जिसके पास सबसे ज्यादा तो १३ एकड़ जमीन थी। उसकी जमीन बंट चुकी है, लेकिन अभी तक उसने नयी व्यवस्था को मन से नहीं स्वीकार किया है। १९६५ तक वह बराबर सोचता रहता था कि हो सकता है, किसी दिन च्यांग काई शेक तैवान से लौट आये। उसके रुख के कारण उसे राजनैतिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया है। वह गांव के सबसे छोटे घर में रहता है और गांव की ग्रामसभा में शरीक होने का अधिकार उसे प्राप्त नहीं है। उसके ६ लड़कों में से पांच का विवाह हो चुका है और वे गांव के दूसरे लोगों की तरह सामान्य जीवन बिता रहे हैं।

यह गांव भूमि-वितरण के बाद भी बहुत दिनों तक गरीब बना रहा और लगभग दस वर्षों तक सरकार उसे अन्न की सहायता देती रही। जैसी जमीन थी उससे गांव भर के लिए भोजन पैदा करना एक संघर्ष था। १९५१ में यह तय हुआ कि पेड़ लगाये जायें ताकि जमीन कटाव से बचे। आज गांव में लगभग डेढ़ सौ एकड़ जमीन पर जंगल खड़ा है। दूसरी समस्या पानी की थी। १९५३ तक सबसे नजदीक पानी दो मील दूर था, जहाँ एक पहाड़ी पर चढ़ कर पहुंचना पड़ता था। सिंचाई के लिए भी पानी बहुत कम मिलता था। १९५३ में गांववालों ने अपनी मेहनत से एक चालीस फीट गहरा तालाब खोदा। १९६६ में पड़ोसी गांव की मदद से पहाड़ पर एक कुआं खोदा। इस कुएं से पानी पम्प करके तालाब में इकट्ठा करने लगे। १९६८ में २७० फीट गहरा एक दूसरा कुआं खोदा।

१९५९ में चीन में कम्यून-व्यवस्था लागू हुई। जमीन का सामूहिक स्वामित्व हुआ। हर गांव एक 'प्रोडक्शन ब्रिगेड' उत्पादन टोली बन गया। ऐसे बीस गांवों या उत्पादन टोलियों को मिलाकर कम्यून बना। यह कम्यून देहाती क्षेत्र का मुख्य संगठन माना गया।

१९६३ में शा-शी-यू गांव ने फल की खेती करने का निर्णय लिया। सारे पहाड़ के ढाल पर पांच हजार सात सौ गड्ढे खोदे गये। लोगों ने उन्हें दूर से मिट्टी लाकर भरा और हर एक में एक सेब का पेड़ लगाया। इस वक्त गांव में भनों सेब होता है, मक्के और गेहूं की खेती होती है और अभी हाल में अंगूर उगाना शुरू किया है। चट्टानों को तोड़-तोड़कर खेत बना लिये गये हैं। ये खेत हाथ की मेहनत से बने हैं। गांव में पानी के पम्प, हाथ का एक ट्रैक्टर और थ्रेशर के सिवाय दूसरे कोई यंत्र नहीं थे। मुख्य भरोसा मनुष्य-शक्ति पर था। गांव के काम करनेवाले २७० पुरुषों और स्त्रियों ने एक सौ बीस एकड़ नये खेत बनाये हैं और ७० एकड़ में बाग लगाया है और पहाड़ी ढाल पर मक्के और कपास की खेती की है। यह सब मेहनत से हुआ है। हर खेत के किनारे एक पत्थर गड़ा हुआ है जिस पर उन लोगों के नाम लिखे हुए हैं जिनकी मेहनत से खेत बना है। कुछ पर तो यह भी लिखा है कि कितनी टोकरियां मिट्टी की निकाली गयी और कुल कितने घण्टे की मेहनत से खेत बना। गांव में अब १०० स्थायी घर बने हुए हैं। भूमि-सुधार के पहले स्थायी घर नहीं थे। गांव में अब बाइसिकिलें हैं और सामान आदि ढोने के लिए गधों की गाड़ियां। २० स्त्रियों को कम्यून की ओर से सिलाई की मशीनें मिली हुई हैं जिनसे वे कपड़े तैयार करती हैं और कम्यून के हाथ बेचती हैं। गांव की सब स्त्रियां काम करती हैं, उनके बच्चे नर्सरी में रहते हैं। चीन में कोई स्त्री केवल गृहिणी नहीं होती।

क्रान्ति के पहले स्त्रियां पुरुषों की गुलाम थीं। उनकी गुलामी के चिन्ह थे, उनके छोटे पैर, जिन्हें बांध-बांधकर उन्हें छोटा रखना पड़ता था। आज भी चीन में कुछ बूढ़ी स्त्रियां हैं जो अपने छोटे पैरों पर लँगड़ाती चलती हैं।

शा-शी-यू गांव में फसल के समय अनाज का बंटवारा होता है। ज्वार, मक्का, शकरकंद, सोयाबीन, कपास, तेल-हन, ईंधन आदि परिवारों में हर एक की सदस्य-संख्या के आधार पर बांट दी जाती है। कुछ भाग गांव में जमा कर रख दिया जाता है—संकट की स्थिति के लिए। पशुओं के लिए चारा अलग इकट्ठा किया जाता है। जो बच जाता है वह निश्चित मूल्य पर कम्यून के द्वारा सरकार के हाथ बेच दिया जाता है। बिक्री से, जो पैसा मिलता है वह गांववालों में बांट दिया जाता है। बंटवारे का आधार काम के घण्टे हैं। हर पुरुष-स्त्री या बच्चा काम के घण्टों के अनुसार अपना हिस्सा पायेगा। बच्चे हफ्ते में एक दिन या छुट्टी के दिनों में खेतों में पूरा काम करते हैं। १९७० में प्रति परिवार लगभग डेढ़ हजार से बारह सौ रुपये तक मिले थे। यह रकम अन्न तथा अन्य चीजों के अलावा मिली थी।

गांव की आमदनी में जो भाग मिलता है, उसके अलावा चीनी किसान के पास आमदनी का एक दूसरा स्रोत भी है—उसका निजी प्लाट, जिस पर वह सब्जी उगा लेता है और सुअर पालता है। चीनी जीवन में सुअर का बहुत महत्व है। सुअर से मांस के अलावा खाद मिलती है। सुअर और मनुष्य का मल-मूत्र ही कम्यून की मुख्य खाद है। गृह-वाटिका हर परिवार की लगभग बराबर होती है। शा-शी-यू में दो सौ से अधिक एकड़ में खेती होती है, जिसमें सिर्फ नौ एकड़ गृह वाटिका में है।

इंग्लैण्ड या अमेरिका के किसान की आमदनी की तुलना चीनी किसान की आमदनी से करना निरर्थक है। चीनी किसान की समृद्धि इसमें है कि उसके जीवन में पैसे की जरूरत बहुत कम कर दी गयी है। पैसे की जरूरत उसे बहुत थोड़ी चीजों के लिए पड़ती है—जैसे, साबुन, जूता, हैट, टूथपेस्ट आदि, जो गांव की दूकान में मिल जाता है। गांव की दूकान कम्यून की ओर से चलती

है। उसके लिए सबसे अधिक खर्चीली चीज है—मकान बनाना। पत्थर और लकड़ी अगर वह खुद इकट्ठा कर ले तो बढ़ई और कारीगर उसे कम्यून की ओर से दाम चुकाने पर मिल जाते हैं। कारीगर, बढ़ई, दूकानदार और शिक्षक ऐसे हैं, जिन्हें मासिक नकद पारिश्रमिक मिलता है। इसके अलावा किसान की तरह अपने हिस्से का अनाज और ईंधन भी मिलता है। ये लोग किसान से कुछ अच्छी हालत में रहते हैं। लेकिन शारीरिक श्रम हर एक को करना पड़ता है। चीन में सांस्कृतिक क्रान्ति के बाद शारीरिक श्रम से किसी को मुक्ति नहीं है। हफ्ते में छह दिन और हर दिन आठ घण्टे का काम चीन में सामान्य नियम है। खेती में इससे अधिक भी काम करना पड़ता है। कौन बच्चा बड़ा होकर क्या काम करेगा, यह स्कूल में या विश्वविद्यालय में तय होता है। ७ से १४ साल तक की शिक्षा सब बच्चों के लिए अनिवार्य है। पढ़ाई में सफलता परीक्षा और शिक्षक की जाँच दोनों को मिलाकर होती है। १४ साल के बाद मिडिल स्कूल की पढ़ाई होती है। जो कारीगर बिजली के मिस्त्री या ग्राम-शिक्षक होना चाहते हैं वे मिडिल स्कूल में जाते हैं। हर बच्चे में बचपन से राज्य-भक्ति और समाजवादी समाज के प्रति निष्ठा की भावना भर दी जाती है।

सांस्कृतिक क्रान्ति के बाद युनिवर्सिटी की भर्ती केवल परीक्षा के परिणाम पर नहीं होती है। मिडिल स्कूल के बाद जो विश्वविद्यालय में जाना चाहते हैं उन्हें कम-से-कम तीन साल तक खेत या कारखाने में काम करना पड़ता है। उसके बाद गाँव के किसान या कारखाने के मजदूर मिलकर तय करते हैं कि वह यूनिवर्सिटी की शिक्षा पाने लायक है या नहीं। सरकार बता देती है कि किस कम्यून से कितने विद्यार्थी विश्वविद्यालय में लिये जा सकते हैं। सांस्कृतिक क्रान्ति के पहले शा-शी-यू जैसे गाँव से कोई विद्यार्थी विश्वविद्यालय तक पहुँचने की बात भी नहीं सोच सकता था। सारे चीन में भयंकर निरक्षरता थी। आज स्थिति बहुत बदल गयी है। सामान्य लोगों में भी राजनैतिक चेतना बहुत बढ़ गयी है। लोग देश-दुनिया की पूरी जानकारी रखते हैं। सांस्कृतिक क्रान्ति के बाद से हर गाँव, वस्तुतः हर संगठन का काम क्रान्तिकारी समितियों के द्वारा सचालित होता है, जिसे स्वयं किसान चुनते हैं। इस व्यवस्था के कारण गाँव-गाँव में जानकार और जिम्मेदार लोग बड़ी संख्या में पैदा हो गये हैं। दैनन्दिन कार्य का निर्णय समितियाँ करती हैं और बड़े निर्णय गाँव की ग्रामसभा। कम्यून की क्रान्तिकारी समिति में कम्यून के हर गाँव से भेजे हुए प्रतिनिधि होते हैं। कम्यून की समिति गाँव की उत्पादन टोली के लिए उत्पादन का वार्षिक लक्ष्यांक तय करती है। कम्यून की समिति दूकानें चलाती है और कारीगरों के काम की व्यवस्था करती है। कम्यून से ऊपर के स्तरों के शिक्षकों और डाक्टरों का वेतन सरकार की ओर से मिलता है। गाँव-गाँव के स्वास्थ्य के लिए किसान-डाक्टर हैं। गाँव के कुछ किसानों को एक साल की मेडिकल ट्रेनिंग दी जाती है। हफ्ते में वे तीन दिन खेत पर काम करते हैं और तीन दिन गाँव की क्लिनिक में। इनको नंगे-पाँव (बेयर-फुट) डाक्टर कहा जाता है। कम्यून के अस्पताल में प्रशिक्षित डाक्टर रहते हैं। वहाँ दवा के लिए थोड़ा पैसा देना पड़ता है। गाँव की क्लिनिक द्वारा परिवार-नियोजन का भी काम होता है। माओ के इस विचार को लोग मानते हैं कि २६-२७ वर्ष के पहले विवाह नहीं करना चाहिए।

चीन के देहाती क्षेत्रों में कानून और व्यवस्था की समस्या नहीं के बराबर है। बहुत कम अपराध होते हैं। गाँवों में एक प्रचलित दण्ड यह है कि अपराधी गाँव की ग्रामसभा में बैठने के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है। देहातों में स्थायी पुलिस नहीं है। गाँव-गाँव में किसानों की सुरक्षा समितियाँ हैं।

जो व्यवस्था शा-शी-यू में है वही लगभग सभी गाँव में है। जीवन इतना बदल गया है कि आज चीनी किसान को यह विश्वास नहीं होता कि ऐसे भी देश होंगे जिनमें लोगों के पास सैकड़ों एकड़ जमीन होगी और एक दूसरे का शोषण करता होगा। शा-शी-यू में हर एक अपने काम में लगा हुआ है और खुश है।

—'इम्प्रोण्ट' के एक लेख के आधार पर

अभिव्यक्ति और आस्था : पत्रकार और पत्रकारिता

राही : अपनी अभिव्यक्ति (एक्सप्रेशन) और आस्था (फेथ) में सन्तुलन रहे ऐसी कोशिश रही है। लेकिन कभी-कभी इन दोनों में असन्तुलन और अन्तरविरोध भी महसूस करता हूँ। यह स्थिति न आये, इसके लिए क्या करना चाहिए ?

बाबा : जितने साहित्यिक और कवि वगैरह हैं उनके सामने यह समस्या होती है। 'एक्सप्रेशन' जिनके लिए होता है उनको सामने रखकर 'एक्सप्रेशन' कैसे करना यह सोचना पड़ता है और उस मुताबिक 'एक्सप्रेशन' होता है। बाबा के सामने गाँव के लोग हों तो बाबा एक प्रकार का बोलेगा, अगर विद्वान् बैठे हों तो बाबा का 'एक्सप्रेशन' अलग होगा। युनिवर्सिटी के विद्यार्थी हों तो 'एक्सप्रेशन और अलग होगा। 'एक्सप्रेशन' परिस्थिति पर निर्भर करता है और 'फेथ' है सब्जेक्टिव। वह हृदय के अन्दर होता है। शब्द से परे होता है। उसे शब्द की जरूरत नहीं होती। शेरनी तो बड़ी भयावह होती है—बड़े-बड़े दाँत, नाखून। लेकिन उसके बच्चों को उसका भय नहीं मालूम होता है। दूसरे लोग भले शेरनी से डरें। लेकिन उसके बच्चों के मन में उसके लिए श्रद्धा है, प्रेम है और उसके भी मन में बच्चों के लिए प्रेम होता है। उसके बच्चे सहज प्रेम से उसके पास जाते हैं। वह जो 'फेथ' है मन में, उसके लिए शब्द की जरूरत नहीं होती है। मैंने शेरनी का उदाहरण इसलिए दिया है कि शेरनी के पास भाषा नहीं है। हमारे पास 'फेथ' भी है और भाषा भी है। परन्तु 'फेथ' भावात्मक, सब्जेक्टिव, होता है। 'एक्सप्रेशन', बाह्य परिस्थिति जिस प्रकार है, उसे ध्यान में रखकर होता है। दोनों के बीच अन्तर रहेगा, लेकिन विरोध नहीं रहेगा। विचार-प्रकाशन और मानसिक चिंतन में विरोध न हो, अन्तर भले हो। कोई यह नहीं कह सकता कि भावना पूरी-की पूरी शब्द में आती है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इतना सारा लिखा। वे आज की परिस्थिति में होते तो उनका 'एक्सप्रेशन' अलग होता है। वे जिस परिस्थिति में थे उसका असर उनके साहित्य पर है। कालिदास उज्जैन में था। दो हजार साल पहले जो परिस्थिति थी वहाँ, उसका असर उसके 'एक्सप्रेशन' पर है। इस प्रकार परिस्थिति, काल और सामाजिक स्थिति इस पर 'एक्सप्रेशन' निर्भर करता है। दोनों में, 'फेथ' और 'एक्सप्रेशन' में विरोध नहीं होगा, अन्तर जरूर रहेगा, और वह अन्तर उस दिशा में होगा जिस दिशा में 'फेथ' है।

राही : रिपोर्टिंग के काम में प्रत्यक्ष जो दर्शन होता है उसी को पाठकों तक पहुँचाने की कोशिश करता हूँ। इससे गुण-दोष, दोनों आ जाते हैं। केवल अभिनन्दन नहीं हो पाता, आलोचना भी हो जाती है। गुण-दर्शन की दृष्टि के साथ इसका कैसे मेल बिठाया जाय ?

बाबा : रिपोर्टिंग फोटो के जैसा होता है। मान लीजिए कोई मनुष्य किसी को मजाक कर रहा है बेरहमी से तो, उसका चित्र कैसा आयेगा ? क्रूरता करने का ही फोटो आयेगा, प्रेम करने का नहीं, इसलिए रिपोर्टिंग में सत्यता चाहिए। इतना ही ध्यान रखा जाये कि किसी को सदमा न पहुँचे। इसलिए मधुर शब्द में लिखा जाये। वस्तुस्थिति का सत्य दर्शन तो रखना ही चाहिए। केवल एक बाजू रखना, अच्छा ही अच्छा लिखना तो ठीक नहीं होगा। इसलिए आलोचना जरूर आयेगी। परन्तु वह मधुर शब्दों में होनी चाहिए। एक ज्योतिषी ने एक आदमी से कहा, 'तुम्हारे सारे रिश्तेदार तुम्हारे सामने मरेंगे।' दूसरे ज्योतिषी ने कहा, 'तुम्हें तुम्हारे आसपास के लोगों की आयु की अपेक्षा ज्यादा आयु है' इस तरह कहने का भी एक ढंग होता है।

राजनीति जो होती है वह तोड़नेवाली होती है, जोड़नेवाली नहीं। अपने चित्त में शक्ति कितनी है चिंतन करने को, सेर भर है कि पाव भर ? वह जो थोड़ी-सी शक्ति है वह क्षीण होगी, अगर हम राजनीति का चिन्तन करेंगे या अन्य कई प्रकार के काम में लगेंगे। हमारा जो लोकनीति का काम है उसमें चिन्तन ज्यादा चले। राजनीति का निरीक्षण जरूर करें, पढ़ें भी, लेकिन यहाँ (सिर पर हाथ रखकर) उसका चिन्तन-चक्र नहीं चलना चाहिए। कई लोग हमसे सवाल पूछते हैं कि राजनीति की फलानी समस्या पर अपनी राय दीजिए। मैं कहता हूँ यों कहकर आप मुझ पर तीन जिम्मेदारियाँ डालते हैं : (१) मैं सब पढ़ूँ, जानूँ। (२) उस पर सोचूँ, चिन्तन करूँ। (३) बिना पूछे सलाह, राय दूँ। बाबा को पूछता कौन है ? (हँसी) हाँ, अभी राम-कृष्ण के जैसा बाबा ने नहीं किया है। वे कहते थे, पैसे का छूने से विषय वासना बढ़ती है। बाबा पैसे को छूता है, दूर भी अछूता रहता है। यह योग की भूमिका है। उनकी सन्यास की भूमिका थी।

अभी हमने एक सूत्र बनाया है : 'शुद्ध विषयेषु ज्ञान शक्ति न धारयेत्', शुद्ध विषय में ज्ञान-शक्ति खर्च न करें।

ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार,

१२-२-७२

खादी का आधार ग्रामस्वराज्य

■ धीरेन्द्र मजूमदार

[श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने ग्राम सेवा मण्डल, अजमेर में खादी कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए गांधी के क्रान्तिकारी स्वरूप की चर्चा की और आपने बताया कि खादी को ग्रामस्वराज्य का आधार मिलना चाहिए। हम उनके भाषण का सारांश यहाँ दे रहे हैं।—सं०]

गांधीजी के व्यक्तित्व के दो पहलू थे। वे योद्धा भी थे और क्रान्तिकारी भी। उन्होंने आजादी की लड़ाई योद्धा के नाते लड़ी और स्वराज्य का भावी चित्र क्रान्तिकारी के नाते रचनात्मक कार्यों द्वारा प्रकट किया।

दुनिया में तीन प्रकार के काम होते हैं—पुण्यकार्य, मुक्तिकार्य, एवं क्रान्तिकार्य।

पुण्य-कार्य : समाज में सर्वमान्य विकृति को संस्कृति में परिवर्तन करने का प्रयास पुण्य-कार्य है। ऐसा कार्य करना समाज के प्रत्येक नागरिक का फर्ज और दायित्व है।

मुक्ति-कार्य : परदेशी राज से छुटकारा पाने के लिए जो प्रयत्न किया जाता है वह मुक्ति-कार्य है। गुलामी कोई भी समाज नहीं चाहता। समाज में गुलामी से मुक्ति सर्वमान्य सिद्धान्त है।

क्रान्ति-कार्य : समाज के वे प्रचलित मूल्य जो समाज के लिए घातक हैं परन्तु जिनके लिए लोक-मान्यता बनी हुई है कि वे कार्य समाज के लिए पालक हैं—इस प्रकार के मूल्यों को बदलने का कार्य क्रान्ति कार्य है।

आमतौर से भ्रम हो जाता है कि मुक्ति-कार्य ही क्रान्ति-कार्य है। इसलिए बम फेंकनेवाले क्रान्तिकारी माने गये जब कि वस्तुतः वे मुक्ति-कार्य के योद्धा थे। सत्ता का हस्तान्तरण मुक्ति-कार्य है और समाज की मान्य पद्धति का रूपान्तर क्रान्ति-कार्य है। गांधीजी ने आज के घोर वैज्ञानिक युग में चरखे की बात रखी, यह मुक्ति-कार्य के लिए नहीं, क्रान्ति के लिए थी। गांधीजी ने खादी कार्यकर्ताओं को कभी मुक्ति-कार्य में नहीं लगाया। गांधीजी उन्हें छावनी के सिपाही कहते थे। इसलिए चरखा संघ का जन्म क्रान्ति-कार्य के लिए हुआ था (पुण्य-कार्य या मुक्ति-कार्य के लिए नहीं) यह बात कार्यकर्ताओं के ध्यान में रहना आवश्यक है।

प्राचीन काल में समाज का दायरा बहुत ही छोटा था। व्यक्ति बहुत छोटा था, समस्याएँ स्थानीय थीं। व्यक्ति अपनी समस्याएँ सुलझा लेते थे। विज्ञान से चेतना का क्षेत्र बढ़ा। राजा-पुरोहित सब छोटे पड़ गये। समाज के काम को आगे चलकर संस्था ने सम्भाला। गांधी ने देखा कि विज्ञान राष्ट्रीय दायरों को तोड़ रहा है, विश्व एक परिवार बन रहा है। इसलिए नेशन-स्टेट के दायरे से विश्व के दायरे में सोचने लगे। वे समझ गये कि राज-संस्था, धर्म-संस्था आदि समाज को अब नहीं चला सकती, ये छोटी पड़ गयी हैं। जिस समाज की सेवा करने के लिए संस्था अस्तित्व में आयी वह निहित स्वार्थ का घर बन गयी है। जब निहित स्वार्थ हो तो सेवा शोषण का माध्यम बनेगा। आज बाजार और राज-संस्था पूरे समाज को चाट रहे हैं। दोनों से मुक्ति का नारा गांधी की क्रान्ति थी। बाजार-मुक्ति का आशय है—बाजार-निरपेक्ष समाज अर्थात् स्वावलम्बी समाज। इसलिए बाजार के लिए हम चरखा चलायेंगे तो बाजार में उसके लिए कोई स्थान है नहीं। यह सही है कि ऊबानेवाला कोई यंत्र आज के वैज्ञानिक युग में नहीं चलायेगा। उसका अच्छे-से-अच्छा स्वरूप बनाइये, जो घर-घर में आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

विज्ञान एक तटस्थ साधन है, इनसान उसे कैसे काम में ले, यह उसकी मर्जी पर निर्भर है। उत्पादन के क्षेत्र में विज्ञान का काम का भार हल्का करना है; पर यह ऑटोमेशन और साइबरनेशन तक पहुँचा। ऑटोमेशन में डाइरेक्शन के लिए मनुष्य की जरूरत थी। साइबरनेशन ने वह काम भी कम्प्यूटर को सौंप दिया इसलिए चरखा यदि पिछड़े जमाने का यंत्र है तो कम्प्यूटर को स्वीकृति देनी होगी। फिर लोग खाली और बेकार हो जायेंगे। इसलिए यंत्र इस प्रकार के बनाये जायें कि वे हाथ को खाली न करें बल्कि उनका इस्तेमाल हाथ को आराम देने के लिए हो।

गांधी ने कहा था कि ग्रामस्वराज्य का काम करने के लिए ७ लाख कार्यकर्ताओं को ७ लाख गाँवों में बैठना होगा। ग्रामस्वराज्य का काम केवल राज बदलने से नहीं होगा, उसके लिए राज की डिजाइन बदलनी होगी। कोयलों से चलनेवाले इंजिनों को डीजल से नहीं चलाया जा सकता, उसकी डिजाइन बदलनी होगी।

ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति को हम चार स्तरों में विभाजित कर सकते हैं :

१. डिक्लारेशन (घोषणा)।

२. डिमन्स्ट्रेशन (प्रयोगद्वारा सम्भावना के प्रकार)।

३. मोबिलाईजेशन (लोकसंग्रह)।

४. आर्गेनाईजेशन (संगठन)।

आज की खादी-संस्थाओं ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को घोषणाओं के रूप में घर-घर पहुँचाया। बीस साल की अल्पावधि में कोई क्रान्ति-विचार इतनी जल्दी जनता में प्रवेश नहीं कर पाया इसलिए खादी की संस्थाएँ बधाई की पात्र हैं। परिस्थितियों की प्रतिकूलता के बावजूद भी कुछ गांवों में पुष्टि-कार्य पूरा करके इस विचार के सिद्ध होने की सम्भावना सिद्ध की जा चुकी है। अब आगे लोकसंग्रह के लिए मेरी अपील है कि राजस्थान की संस्थाएँ ऐसे कार्यकर्ताओं को ग्रामस्वराज्य-कार्य के लिए

(शेष पृष्ठ ७३६ पर)

लाल फीताशाही

[रजत-जयन्ती के अवसर पर गांधीजी की चेतावनियों की ओर एक नजर उठाकर देखना चाहिए। इसी नीयत से उनका यह विचार यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

मन्त्री, दफ्तरी घिसघिस में इस तरह जकड़े हुए हैं कि उन्हे सोचने-विचारने का समय ही नही मिलता। उन्हें तो इतनी भी फुर्सत नही कि वे मुझसे मुलाकात और विचार विनिमय करें कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। उनकी स्थिति जानते हुए मुझे भी यह हिम्मत नही होती कि उन्हे पत्र ही लिख दूं। 'हरिजन' के स्तम्भों द्वारा तो मुझे उनसे बात ही नहीं करनी चाहिए।......

अगर मन्त्री अपनी नयी जिम्मेदारियो से निपटना चाहते हैं, तो उन्हे दफ्तरी तरीकों—लाल फीताशाही—को खत्म करने की कला खोजनी चाहिए। पुरानी शासन-व्यवस्था लाल फीताशाही के द्वारा और उस पर ही जीवित रह सकती थी। लेकिन वह नयी व्यवस्था का गला घोट देगी। मन्त्रियो को लोगो से जरूर मिलना चाहिए, जिनकी सद्भावना से ही वे इन पदों पर आसीन रह सकते हैं। उन्हें छोटी-से-छोटी और बड़ी-से-बड़ी शिकायतें जरूर सुनना चाहिए। लेकिन उनके पास जितनी शिकायतें और चिट्ठियाँ आती हैं उन सबका और अपने फैसलो का रिकार्ड रखने की जरूरत नहीं। उन्हे अपने पास केवल उतने ही कागजात रखने चाहिए, जिनसे उनकी याददाश्त ताजी रहे और काम का सिलसिला बना रहे। विभागीय पत्र-व्यवहार बहुत कम हो जाना चाहिए। वे अपने उन लाखो मालिकों के प्रति जवाबदार हैं, जो न तो यह जानते हैं कि दफ्तरी कार्रवाई का ढग क्या है और जिन्हें उसके जानने की चिन्ता है। उनमें से कितने ही लोग तो लिख और पढ़ भी नहीं सकते। पर वे चाहते हैं कि उनकी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी हों। कांग्रेस-जनों ने उन्हें सोचना सिखा दिया है कि शासन-सूत्र कांग्रेस के हाथ में आते ही हिन्दुस्तान भर में न तो कोई भूखा रहेगा और न तन ढकने की इच्छा रखनेवाला कोई नंगा रहेगा। यदि मन्त्री उस विश्वास के साथ न्याय करना चाहते हैं, जिसका उन्होंने अपने ऊपर भार लिया, तो उन्हे इस प्रकार की समस्याएँ सुलझाने के लिए सोचने विचारने में समय देना चाहिए।

अगर वे तथाकथित गांधीवाद को मानते हों, तो उन्हे जानना चाहिए कि वह 'वाद' क्या है; इसका पता उन्हे मुझसे नहीं, बल्कि आत्म-निरीक्षण करके लगाना चाहिए। शायद मैं भी हमेशा यह नहीं जान सकता कि वह क्या है। लेकिन मैं इतना जरूर मानता हूँ कि अगर उसकी उचित रूप में खोज की जाय और उसका अनुसरण किया जाय, तो वह इतना मौलिक और क्रान्तिकारी है कि भारत की सभी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।

कांग्रेस एक क्रान्तिकारी सस्था है। लेकिन उसकी क्रान्ति उन सभी राजनैतिक क्रान्तियो से अलग, जिनका हाल इतिहास में लेखबद्ध है। जहाँ पहली क्रान्तियों का आधार हिंसा थी, वहाँ कांग्रेस की क्रान्ति का आधार जान-बूझकर अहिंसात्मक रखा गया है। अगर यह भी अहिंसात्मक होती, तो शायद क्रान्ति का पुराना ढग और रिवाज बहुत कुछ उसी तरह कायम रह जाता। लेकिन कांग्रेस ने बहुत-से पुराने तरीकों को निषिद्ध मान लिया है। सबसे बड़ा परिवर्तन पुलिस और सेना का है। मैंने यह स्वीकार किया है कि जब तक कांग्रेसजन पराधीन हैं और वे व्यवस्था की सुरक्षा के लिए शान्तिपूर्ण उपाय नहीं खोज लेते, तब तक इन दोनों का प्रयोग उन्हें करना ही होगा। लेकिन मन्त्रियों के सामने सदा ही यह प्रश्न रहना चाहिए कि क्या इन दोनो चीजों के प्रयोग का परित्याग नहीं किया जा सकता? अगर नहीं तो क्यों? यदि जाँच करने पर भी—यह जांच पुराने तरीको से नही की जानी चाहिए, जो कि खर्चीले और प्रायः व्यर्थ सिद्ध होते हैं, बल्कि बिना खर्च के और साथ ही पूर्ण तथा परिणामकारी ढग से होनी चाहिए। उन्हे पता चले कि पुलिस और सेना का प्रयोग किये बिना वे राज-काज नही चला सकते तो अहिंसा का यह तकाजा है कि कांग्रेस को मन्त्री-पद त्याग देना चाहिए और पुनः वनवास मे जाकर उस दुर्लभ 'अमृत' की खोज करनी चाहिए।

गरीबी लज्जा की बात नहीं

लोग कहते हैं कि पहले कांग्रेस को एक लाख रुपये जमा करने में भी मुसीबत होती थी। लोग देते तो थे, मगर हम भिखारी थे। आज करोड़ो रुपये हमारे हाथ में आ गये हैं। करोड़ो लेने की ताकत भले आयी, पर खर्च तो हमारा वही अंग्रेजी जमानेवाला है। कुछ लोग यह मानते हैं कि जितना रुपया उड़ाना है उडावें और शान से रहें तब उसका असर देश से बाहर भी पड़ेगा। लेकिन उन्हे समझना चाहिए कि पैसा शौक के लिए खर्च करना चाहिए या देश के काम के लिए? यह बात ठीक है कि हम इंग्लैण्ड के साथ मुकाबला करें तो कर सकते हैं। पर वहाँ एक आदमी की जो आमदनी है उससे यहाँ बहुत कम है। ऐसा गरीब देश दूसरे देशो के साथ पैसे का मुकाबला करे तो वह मर जायगा।

फिर लोग कहते हैं कि मन्त्री लोग इतने पैसे लेते हैं, और हम सरकार की नौकरी करें तो हमें भी ज्यादा पैसे मिलने चाहिए। सरदार पटेल को अगर १५०० रुपये मिलें तो हमें ५०० तो मिलने ही चाहिए। यह हिन्दुस्तान में रहने का तरीका नहीं है। जब हर एक आदमी आत्मशुद्धि का प्रयत्न करता हो, तब यह सब सोचना कैसा? पैसे से किसी की कीमत नहीं होती।

—मो० क० गांधी

पाकिस्तान के बिखराव का दोषी कौन ?

पाकिस्तान की राष्ट्रीय एसेम्बली में श्री भुट्टो का भाषण

[श्री जुल्फिकार अली भुट्टो का यह भाषण हम यहाँ इसलिए दे रहे हैं ताकि पाठक श्री भुट्टो के विचारों से अवगत हों। भुट्टो ने स्पष्टीकरण दिया है कि बांगला देश अस्तित्व में आया, उस का दोषी वह स्वयं नहीं हैं।—सं०]

अब हम पूर्व पाकिस्तान को अलग होने की बात पर आते हैं। यह जुदाई कैसे हुई ? क्या इसका मैं एक सही और आसान जवाब आपको दूँ ? एक ऐसा उत्तर, जो मेरे बहुत सारे दोस्तों को खुश करेगा ? क्या आप यह समझते हैं कि पूर्व पाकिस्तान के जुदा होने का उत्तरदायित्व लरकाना के जुल्फिकार अली भुट्टो पर है ? वह आदमी, जो १९५४ तक पाकिस्तान की राजनीति में नहीं था, जो कैलिफोर्निया, हार्वर्ड और बम्बई में पढ़ रहा था। क्या वह पूर्व पाकिस्तान के अलग होने के लिए उत्तरदायी है ?

अगर आप ऐसा चाहते हैं और आपको इससे सन्तोष होता है तो मैंने जहाँ बहुत सारे बोझ अपने ऊपर लिये हैं वहाँ यह बोझ भी अपने ऊपर ले लेता हूँ। मैंने ही ऐसा किया, यहिया खाँ ने ऐसा नहीं किया, अयूब खाँ ने यह नहीं किया, शोषण की राजनीति ने नहीं किया, यह एक हजार मील की दूरी ने नहीं किया, पूर्व पाकिस्तान बहुसंख्यक था और विभिन्न भाषा बोलता था, इस वास्तविकता ने नहीं किया। इस वास्तविकता ने की कि १९४७-४८ में सुहरावर्दी कायदे आजम जिन्ना के पास आये जो एक विशाल बंगाल के लिए लड़ने जा रहे थे, और कायदे आजम ने यह उत्तर दिया कि जाओ और विशाल बंगाल के लिए लड़ो, अगर हिन्दू तुम्हारा साथ दे। सुहरावर्दी गांधी के साथ काम करने के लिए चले गये, और फिर भी वह उत्तरदायी नहीं हैं। १९५० में अतावुर्रहमान ने ढाका में एक मीटिंग की और कहा कि वे साथ नहीं रहना चाहते; फिर भी वे उत्तरदायी नहीं हैं।

यह मेरा दोष है। यह मेरा दोष कैसे है ? चूँकि मैंने कहा कि १५ फरवरी के बदले २१ मार्च को एसेम्बली बुलायी जाय या यहिया के द्वारा किये गये आर्डर में, जिसमें १२५ दिन का उल्लेख है, उसे हटा लिया जाय और इसके कारण पूर्वी पाकिस्तान टुकड़े-टुकड़े हो गया। मैं आपसे यह चाहूँगा कि आप निरपेक्ष होकर सोचें। अगर एसेम्बली की बैठक १५ दिन बढ़ा देने का प्रस्ताव किया जाता है तो यह एक गैर-जनतंत्रात्मक कानून को रद्द करने के लिए कहा जाता है। तो क्या इसका यह अर्थ होता है कि देश अलग हो जाय ? क्या वह इस्लामी इकाई के विरुद्ध है ? क्या वह राष्ट्रीयता की कल्पना के विरुद्ध है ?

यह हमारे किस्मत का कसूर है। जब मैं १९६८ में पूर्वी पाकिस्तान गया था तो वहाँ से वापसी के बाद मैंने अपने दोस्तों से कहा था कि हम लोग ऐसे मोड़ पर पहुँच गये हैं, जहाँ से मुड़ा नहीं जा सकता। वे हमें देखना नहीं चाहते हैं। वे हमसे दूर रहना चाहते हैं। हम लोगों को सच्चाई का सामना करना चाहिए। अगर आप मुझे इसके लिए फाँसी देना चाहें तो दे सकते हैं, लेकिन मैं इसके लिए जिम्मेदार नहीं हूँ। मैं पन्द्रह साल से एक पाकिस्तान में विश्वास रखता हूँ। मैंने इसके लिए लड़ाई की है। मैंने पूरी कोशिश की कि शेख मुजीब से मामला निपट जाय।

जब मुजीबुर्रहमान १९६९ में कराँची आये तो कुछ सिन्धी नेताओं ने उन्हें निमंत्रण दिया। मैंने उन्हें फोन किया और कहा कि आप मुझसे क्यों नहीं मिलते। उन्होंने कहा कि मैं तुमसे मिलना नहीं चाहता। २७ दिसम्बर और ७ जनवरी को उन्होंने मुझसे कहा, "मैं जानता हूँ कि एक ही आदमी है जो पूर्वी पाकिस्तान को अलग होने से रोक सकता है, और वह तुम हो। इसलिए मुझे तुमसे कोई सरोकार नहीं है।"

बहुत से लोग मुजीब की दोस्ती का दम भरते हैं। मुजीब ने एक पाकिस्तान को कभी नहीं माना। उन्होंने पाकिस्तान के लिए कभी संघर्ष नहीं किया। १९५३ में जब मुजीब से मेरी मुलाकात सुहरावर्दी के घर पर हुई तो वह पाकिस्तान के नाम से गाली बक रहे थे और मैंने उसी समय यह निष्कर्ष निकाला कि इस आदमी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अब आप इस आदमी की प्रशंसा कर रहे हैं। मुजीब तो एक स्वतंत्र बांगला देश चाहते थे। जब वह जनवरी में वापस गये तो उन्होंने कहा कि उनके २५ साल का स्वप्न पूरा हो गया है। वह ८-९ महीने जेल में रहे। कौन कहता है कि मुजीबुर्रहमान को पाकिस्तान में ही विश्वास था ? कौन कहता है कि वे संयुक्त पाकिस्तान चाहते थे ? अगर वह एक संयुक्त पाकिस्तान चाहते तो कोई समस्या ही नहीं आती। कोई भी देश से अलग होनेवाला यह नहीं कहता कि वह देश से अलग होना चाहता है। बहुत दिनों तक हम लोगों से अलग होने का कारण देते रहे और अब अन्त में उत्तरदायी मैं हूँ। अगर आप मुझ पर इल्जाम देना चाहते हैं तो अपना निर्णय दें। मैं जनता में जाऊँगा और उनसे पूछूँगा। आप इतिहास देखें और इस तरह निर्णय न दें। ऐसा न कहें कि पीपुल्स पार्टी ने ऐसा किया या अल्पसंख्यक ने ऐसा किया। पश्चिमी पाकिस्तान में पीपुल्स पार्टी का कोई सदस्य भी ६ सूत्रों पर नहीं चुना गया। हम अब ६ सूत्रों पर कैसे सहमत हो सकते थे। ६ सूत्रों के माने अलग होना था। हम लोगों ने यह भी कहा कि अगर आप सब चाहते हैं तो

नमन्त्री हो जाइये। पाकिस्तान के
ो हो जाइए। याहिया ने भी उन्हें प्रधान-
ो मान लिया था। मैंने मुल्तान में
कहा ? मैंने कहा, "मैं खुश हूँ। उन्हें
संयुक्त पाकिस्तान का प्रधानमन्त्री
ा चाहिए।" परन्तु अगर कन्फेडरेशन
तो फिर केवल दो हिस्से न थे बल्कि
ा प्रान्त भी थे। एक युनिट ने समस्या
ल्ता दी। ५ प्रान्तों के अतिरिक्त दो
से थे। और जब कन्फेडरेशन के दो
से हैं तो बहुसंख्यक को कैसे देंगे ?
तो दोनों ही इकाइयों को प्रतिनिधित्व
ा होगा। इसीलिए मैंने संयुक्त सरकार
लिए कहा था। यही कारण था कि
ा कहा था कि अगर आप संघ चाहते
तो आप दफ्तर ले लें। उस सूरत में
ा लीग विरोधी दल होते और यह सारी
स्याएँ और सिन्ध-समस्या भी कन्धों
ा के कन्धों पर होती। हम लोग उन्हें
धानमन्त्री बनाना चाहते थे क्योंकि
नते थे कि वे ६ महीने से अधिक नहीं
केंगे। कोई भी आदमी ६ से ९ महीने
अधिक नहीं टिक सकता।

इसलिए हमें मुजीब के प्रधानमन्त्री
ने में कोई एतराज नहीं था। परन्तु
ह एक कन्फेडरेशन के प्रधानमन्त्री नहीं
ा सकते थे और बहुसंख्यक दल को
पश्चिमी पाकिस्तान को] बाहर नहीं
ा सकते थे। अगर पूर्वी पाकिस्तान के
अलग होने के लिए पश्चिमी पाकिस्तानी
तरदायी था तो वह याहिया खाँ
। वह एक मूर्ख थे, शराबी थे, और
यूब खाँ के हाथ का खिलौना थे। इस
ए वास्तव में अगर पूर्वी पाकिस्तान के
लग होने का कोई कारण था तो वह
यूब खाँ थे।

४ जनवरी १९६८ को जब लाहौर
नेताओं की बैठक हुई तो इसमें सभी
ोग मौजूद थे। वहाँ क्या हुआ ? मुजीब
ो खास तौर से पूर्वी पाकिस्तान से लाया
या। उन्हें हवाई जहाज भेजकर बुलाया
या। पत्रिकाओं ने उन्हें शेख साहब
हना शुरू किया। शेख साहब
ाहौर आये। यहाँ आने के बाद
उन्होंने ६ सूत्र टेबल पर पटक दिया।
हमारे दोस्तों ने क्या किया ? नसरुल्ला
ने क्या किया ? सबों ने उसे देखने से
इनकार किया। अगर उन लोगों ने उसे
देखा होता तो क्या बिगड़ जाता ?

उन लोगों ने उसे नहीं देखा और
आज वे मुझसे पूछते हैं कि आप १९७१
में एसेम्बली में क्यों नहीं गये ? अगर मैं
वहाँ गया होता तो आज आप यहाँ नहीं
होते। मिस्टर मुजीब पूर्वी पाकिस्तान
गये। उनके तमाम कार्यक्रम वहाँ सूचना
और प्रचार मंत्रालय ने तय किये।

जब १९६६ में मैंने अयूब खाँ से
कहा कि अयूब खाँ, क्या आप आँधी को
नहीं देखते ? आँधी आ रही है। मुजीब
का राजनैतिक तौर से मुकाबला कीजिए।
मुझे उनसे चर्चा करने दीजिए। ६ सूत्रों
पर एक राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा, ताकि
मैं उनके दोषों को बता सकूँ। उन्होंने
मुझसे कहा कि मैं हथियार की भाषा
इस्तेमाल करूँगा। मैंने कहा, आपको भाषा
का हथियार इस्तेमाल करना चाहिए।

—'इण्डियन एक्सप्रेस' से

जे० पी० और बागी

'फ्रीडम फर्स्ट' ने अपने हाल के अंक में लिखा है:

"जयप्रकाश नारायण अपने मन में सोचते होंगे, 'अगर इस तरह के मित्र मिल जायें तो शत्रुओं की क्या जरूरत रह जायगी।' भोपाल में १० जुलाई को मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री सेठी, जिन्हें मद्रास के मुख्यमंत्री श्री करुणानिधि ने 'नयी दिल्ली के रेडीमेड मुख्यमंत्रियों में से एक कहा है', अचानक जे० पी० और उनके सहयोगियों पर टूट पड़े और उन्हें बागियों के आत्म-समर्पण के सम्बन्ध में विश्वासघात का दोषी ठहराया। श्री सेठी ने सर्वोदय कार्यकर्ताओं पर यह दोष भी लगाया कि उन्होंने राज्य-सरकार, मुख्य रूप से पुलिस के प्रयत्नों को हलका करके दिखाने की कोशिश की है। सेठीजी का जे० पी० पर अन्तिम आरोप यह था कि उन्होंने प्रधानमंत्री की सत्ता को चुनौती देने का ओछापन दिखाया है। इसका क्या अर्थ होता है, सेठीजी ही जानें।

यह पूरा प्रसंग दुःख का है। श्री सेठी ने बागियों के आत्म-समर्पण में जे०पी० के साथ जितना सहयोग किया था उसका श्रेय उन्हें मिल चुका था। आत्म-समर्पण पर पूरे देश ने खुशी जाहिर की थी। अफसोस है कि श्री सेठी ने अपने किये हुए अच्छे काम पर पानी फेर दिया।

इण्डियन एक्सप्रेस ने अपने सम्पादकीय में लिखा है: "उनके जैसे नवसिखिए के लिए जे० पी० जैसे सम्मानित राष्ट्रीय नेता के लिए असम्मान की ऐसी बातें कहना अत्यन्त क्षुद्र किस्म की धृष्टता है। सम्पादकीय के अनुसार मुख्यमंत्रीजी ने ऐसा अपनी इस आदत के कारण किया है कि वह बार-बार लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचना चाहते हैं।" पत्र ने ठीक कहा है कि उनकी इस प्रकार की ओछी प्रदर्शन-प्रियता का जे० पी० या उनके सर्वोदय आन्दोलन पर कोई असर नहीं पड़नेवाला है।

आचार्य विनोबा भावे ने बागियों के आत्म-समर्पण के श्रेय का बँटवारा किया है। मुख्यमंत्रीजी को श्रेय की बहुत अधिक चिन्ता रही है। विनोबाजी के अनुसार ३३ प्रतिशत श्रेय स्वयं बागियों को है जिन्होंने आत्म-समर्पण किया, ३३ प्रतिशत पुलिस को जिसने सहयोग किया, और ३३ प्रतिशत सर्वोदय कार्यकर्ताओं तथा मध्य प्रदेश की जनता को है। १ प्रतिशत श्रेय जो बच गया किसको मिलेगा ? यह १ प्रतिशत विनोबाजी ने अपने लिए रखा था क्योंकि काम उन्होंने ही शुरू किया था, लेकिन अब उन्होंने इसे भी परमेश्वर के चरणों में समर्पित कर दिया है। परमेश्वर को १ प्रतिशत ही श्रेय मिला !

आप क्या सहयोग कर सकते हैं?

●श्री रामचन्द्र नवाल

४१४ बागी ग्वालियर जेल में बन्द हैं। दुनिया का सबसे बड़ा इस तरह का न्यायालय प्रायः तैयार है। शीघ्र ही मुकदमें आरम्भ होंगे और समर्पण के इस कार्यक्रम में एक अध्याय आरम्भ होगा।

आत्म-समर्पण के इस कार्यक्रम को लगभग चार महीने हो गये। शासन अभी तक पुनर्वास की दिशा में जिस तेजी से उसे अग्रसर होना था, नहीं हो सका। शिक्षा के लिए शासन के आदेश आ गये हैं; परन्तु पुनर्वास में शिक्षा एक बात है। गिरे उजड़े या पुलिस द्वारा उजाड़े मकान हैं, बंजर पड़े खेत हैं। उनके लिए बीज चाहिए, बैल चाहिए, नये हल-बक्खर चाहिए और खड़ी फसलों को दुश्मन चरा नहीं सके, ऐसा वातावरण चाहिए। घरों में आमदनी के साधन चार महीनों से बन्द हो गये। वहाँ गेहूँ चाहिए, कपड़ा चाहिए, बीमारी के उपचार, दवा-दारू के लिए रुपये चाहिए; नमक, तेल, लकड़ी, घर-गृहस्थी के लिए पूरे साधन चाहिए।

सवा चार सौ बागी और उनके द्वारा सताये गये परिवार अलग-कुल एक हजार परिवारों का पुनर्वास करना है। इनके लिए मकान चाहिए, बैल चाहिए, कृषि के लिए कुँए चाहिए, टूटे नलकूपों को ठीक करने लिए धन चाहिए।

इसके अलावा आगे की योजना चाहिए। अनेक भाई जेल से चार-छः महीने में छूटेंगे। उनके लिए पुनर्वास की पूरी योजना बनानी है। पशुपालन में भारी रुचि है, कृषि है, अन्य काम हैं, नौकरी की लालसा भी है।

पशुपालन में वहाँ भैंसो की नस्ल-सुधार का काम शासन ने किया है। जंगल है, पानी है। क्या इस क्षेत्र में 'अमूल' को अनुरूप रूप नहीं दिया जा सकता है? अभी से उसकी तैयारी हो। कुछ चुने हुए युवकों को वहाँ भेजकर काम का रूप, कल्पना दिखाई-समझाई जाय। उस महौल को वे देखें, तो उन्हें पता लगेगा कि दूध का कितना बड़ा व्यापार है।

भेड़ों का भी यही हाल है। अनुकूलता है, परन्तु सवाल है, प्राथमिकता देकर इस पथ पर तेजी से विचारपूर्वक आयोजन करके बढ़ने की।

मुरैना, भिण्ड जिले में सरसों खूब होता है। क्या वह 'होमइण्डस्ट्रीज' बन सकने की स्थिति में है?

यह तो कुछ बड़ी बातें हैं, परन्तु हमारे लिए क्या? हम क्या कर सकते हैं?

(१) कुछ गरीब बागी परिवारों के बच्चों को मासिक सहायता दी जा सकती है। उन्हें या उनके परिवारों को दत्तक लिया जा सकता है।

(२) कुछ अच्छे छात्रों की उच्च शिक्षा के लिए व्यवस्था की जाय।

(३) कुछ बहुत गरीब परिवारों के लिए वस्त्र-व्यवस्था की जाय।

(४) इन परिवारों को त्योहारों पर मिठाई के लिए रुपये भेजे जायें। रक्षा-बन्धन के अवसर पर पूरे बागी परिवारों को उनके घरों पर मनीऑर्डर भेजे जायें।

कई बातें सम्भव हैं। समाज से उपेक्षित अलग-अलग पड़े लोगों को समाज में सम्मानजनक स्थान पर लाना है। उनके बच्चों को हीन-मनोदशा से निकाल कर उज्ज्वल पथ पर अग्रसर करना है। उन सताई, दबी-पीड़ित भोली बहनों के मन में आशाप्रद भविष्य के जीवन की ज्योति प्रकट करना है। आप तन-मन-धन दें। भगवान सबको इस मंगल पथ पर अग्रसर करे। यह प्रार्थना तो अवश्य करें। समर्पण करनेवालों के परिवार के सामने भूख का भय न रहे, उनके बच्चे शिक्षित हो जायें, गाँवों में भय का वातावरण न हो, समाज में उनका उपहास न हो। वे क्षमायाचना कर रहे हैं। प्राणप्यारे हथियार उन्होंने त्याग दिये हैं, वे पश्चात्ताप कर चुके हैं और उनसे आप क्या चाहते?

उनको जो करना था, वे कर चुके। अब तो हमें हमारे देश के लिए, देश के गौरव के लिए अग्रसर होना है। अगर चूक गये तो हमें इतिहास क्षमा नहीं करेगा। चाहे वह पुलिस हो, चाहे मुख्यमंत्री, चाहे सर्वोदयवाले सबको करना है। यह व्यक्ति का नहीं, नयी चेतना का सवाल है। कानून का नहीं, उससे ऊँचे दर्जे का सवाल है।

वे क्षमा माँग चुके हैं। अब उनका उत्तरदायित्व समाज का है, हमारा है। हमारे पर्व और त्योहार निकट आने, हँसने, खेलने के त्योहार हैं। उन्हें इसमें अपने साथ लीजिए, नये परिवार बनाइए नये मित्र चुनिए।

रजत-जयन्ती

रजत-जयन्ती मनायेगा कौन ? देश की उस पचास-साठ फीसदी आबादी के—जिसे भर पेट भोजन पीढ़ी दर-पीढ़ी कभी नसीब नहीं हुआ और आज भी जिसे एक रुपये (जो आजादी के वक्त के रुपये के मुकाबले बयालीस पैसे या लगभग सात आने रह गया है) रोज से कम पर गुजर करनी पड़ती है—कान तक इसकी भनक भी नहीं पहुँचेगी। रहे चालीस, उनमें से ज्यादातर अपनी रोजी-रोटी कमाने में लगे हैं और जयन्ती का सुनकर एक "ऊँह" करके रह जायेंगे। हाँ, एक-दो फीसदी ऐसे जरूर होंगे जिनकी मुस्तकिल आमदनियाँ हैं, जो हुकूमत में हैं या अपने उद्योग व दुकान की गद्दी पर या दफ्तर की कुर्सी पर शान से बैठे हैं, जिनको रजत-जयन्ती में काफी दिलचस्पी है, उनमें से कुछ तो ऐसे होंगे जो इस मौके पर कुछ ऐसी कमाई कर ही लेंगे, या तो नाम की या पैसे की। उनके लिए रजत-जयन्ती एक धन्धा है जिससे उनको मुनाफा मिलना ही चाहिए। और इस सबका बोझ पड़ेगा किस पर ? उन्हीं दीन हीन भूमिहीन मजदूरों और उनके बाल-बच्चों पर जिनके नाम पर आजादी की लड़ाई लड़ी गयी या अब रजत-जयन्ती मनायी जा रही है। क्या चक्र है कि जो पिसता चला आ रहा है वही और ज्यादा पिसता है !

ऐसे दुःख और आश्चर्य की बात है कि स्वराज्य के पहले जो पूँजीवाद उद्योग के क्षेत्र तक सीमित था वह स्वराज्य के बाद कृषि के क्षेत्र में भी हावी हो गया है। "साहब बहादुर काश्तकारों' की एक नयी पौद खड़ी हो गयी है। इन दिनों भूमि-सुधार की बहुत चर्चा है और जोत की हदबंदि के विषय पर बड़ा विचार चला है और कांग्रेस ने प्रस्ताव भी पास किये हैं, लेकिन वे अमल में कितना आते हैं और उनसे भूमिहीनों को वास्तविक न्याय कितना होता है, यह देखना है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध कृषि शास्त्री प्रोफेसर लाडजिन्सकी ने कहा है कि एशिया में यद्यपि बड़े-बड़े कारखाने खुल रहे हैं और मशीनों का वैभव दीख रहा है लेकिन वहाँ की आर्थिक समस्या की कुंजी अभी देहात में ही है। अगर एशिया के देशवासी अपने ही प्रयत्न से आर्थिक विकास करना चाहते हैं, अगर वे अपनी खाली थालियों को भरना चाहते हैं या आधी परसी हुई को पूरा करना चाहते हैं तो खेती और जमीन पर ही इस सवाल का हल ढूँढ़ना होगा। पण्डित जवाहरलाल नेहरू की इच्छा थी कि सारे भारत के नक्शे का केन्द्र-बिन्दु किसान बन जाय लेकिन उनका वह सपना पूरा नहीं हो सका।

यूरोप के प्रख्यात अर्थशास्त्री प्रोफेसर डैनियल थार्नर ने भारत की खेती का गहन अध्ययन किया है और बड़े दुःख के साथ कहा है कि इधर पूँजीवादी खतिहरों का एक वर्ग बन रहा है जो प्रगति के नाम पर खेती में पूँजीवाद फैला रहा है। उन्होंने चेतावनी दी है कि अगर मजदूरों की कठिनाइयों की ओर उचित ध्यान नहीं दिया गया तो आगे चलकर बड़ी समस्या खड़ी हो जायगी और उन पूँजीपति खतिहरों को अनुभव आयेगा कि ग्रामीण भारत बहुत बेचैन और अशान्त है।

चालीस साल हुए महात्मा गांधी से किसी ने पूछा कि भारतीय अर्थनीति का स्वरूप क्या है ? उन्होंने तुरन्त जवाब दिया, "जो ऊपर है उनका बोझ नीचे वालों को दबाये डाल रहा है।" स्वराज्य के पचीस साल बाद भी इस स्थिति में कोई फर्क नहीं आया है।

यही हालत आज भी बदस्तूर कायम है। "तन का पसीना बहाने" के लिए उनकी तैयारी होने पर भी क्या समाज, क्या सरकार, कोई भी उन्हें काम नहीं दे सका है। सन् १९५१ में प्लानिंग कमीशन के सामने विनोबा ने माँग रखी कि बाहर से अनाज मँगाना बन्द कीजिए और हर बालिग को काम दीजिए। मगर हमारे योजनाकारों ने उनकी बात नहीं मानी। विनोबा के शब्दों में :

'प्लानिंग कमीशन से मेरा दो महत्त्वपूर्ण बातों में मतभेद रहा। पहली यह कि मैं चाहता था कि अनाज का आयात बिलकुल बन्द कर दिया जाय, लेकिन प्लानिंग कमीशन का विचार था कि यह अनिश्चित काल तक चलेगा। दूसरी यह कि मैंने आग्रह किया कि हर बालिग को पूरा काम या रोजगार मिलना चाहिए। अपने कर्तव्य के तौर पर तो प्लानिंग कमीशन ने इसे मान्य किया है, किन्तु वर्तमान परिस्थिति में इसे उठाने की तैयारी उन्होंने नहीं दिखायी। जब वे यह जिम्मेदारी उठा लेंगे तभी गाँवों के विकास में और उनके स्वावलम्बी होने में सहायक हो सकेंगे।"

ऐसी हालत में देश में अगर बेकारी बढ़ती रही तो कोई आश्चर्य नहीं किया जा सकता। केवल बेरोजगारी ही नहीं बढ़ी, महँगाई भी बढ़ी है। स्वराज्य के बाद से चीजों के दाम लगातार चढ़े, और सन् '६४ के बाद से तो तेजी से चढ़े। उपभोक्ता मूल्य सूचनांक ऊपर उठता गया और रुपये की कीमत गिरती चली गयी। गत ४ अगस्त को भारत के वित्तमंत्री ने जो दर्दनाक आंकड़े संसद में पेश किये वे इस प्रकार हैं

वर्ष	उपभोक्ता मूल्य सूचनांक	रुपये की क्रय शक्ति
१९४९	१००	१००
१९५०	१०१	९९.१
१९५६	१०५	९५.२
१९६२	१३०	७६.६
१९६३	१३४	७४.६
१९६६	२०९	४७.८
१९६८	२१५	४६.५

१९६९	२१८	४६.१
१९७०	२२४	४४.६
१९७१	२३०	४३.५
जून १९७२	२३६	४२.४

अगर १५ अगस्त १९४७ वाले रुपये को लेकर चलते तो आज उसका क्रय-मूल्य चालीस पैसे से भी कम होता। रुपये के मूल्य का यह पतन देश में हिंसा को बढ़ाने का एक मुख्य कारण रहा है। रुपये के गिरने से लोगों के स्वभाव तक में अन्तर आ गया है, चिड़चिड़ापन पैदा हुआ है, और अतिथि सत्कार में संकोच करने लगे हैं। साथ ही भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी भी इसकी वजह से बढ़े हैं।

भारत में विदेशी आर्थिक प्रभुत्व और आन्तरिक शोषण स्वराज्य के बाद तेजी से बढ़ा है। इन दोनों से मुक्ति मिलनी चाहिए और आर्थिक स्वराज्य की तरफ तेजी से कदम बढ़ाने चाहिए। देरी करना ठीक नहीं। देश के प्रसिद्ध मनीषी, स्वर्गीय किशोरलाल घनश्याम लाल मशरूवाला अपनी प्रख्यात रचना, "गांधी और साम्यवाद" में चेतावनी दे गये हैं

"गांधीजी के मार्ग और मार्क्सवाद में बड़ा फर्क है। लेकिन उससे भी ज्यादा फर्क गांधीवाद तथा अनियंत्रित पूँजीवादी सामन्तशाही और जातिशाही व्यवस्थाओं में है। जो आज की व्यवस्था में धन या जाति आदि के रूपों में विशेष अधिकारों की स्थिति का सुख भोग रहे हैं, वे यदि उसका त्याग नहीं कर देते, अपनी सम्पत्ति के ईमानदार ट्रस्टी नहीं बन जाते, ऊँच-नीच का भेदभाव छोड़कर जनता में घुल-मिल नहीं जाते, देश की गरीबी के अनुसार अपनी शान-शौकत कम नहीं कर लेते, तो गांधीजी के समान ही महान अहिंसा-मार्गी नेता के अभाव में साम्यवाद और उसके साथ चलनेवाली हिंसा जरूर आयेगी। वैसी हालत में जो लोग यह कहते हैं कि साम्यवाद गांधीवाद की पूर्वावस्था है, वे सत्य के अधिक नजदीक माने जायेंगे। इस हिंसक संघर्ष से बचने का एक ही उपाय है कि हम अपनी इच्छा से एक क्रम के अनुसार आज का जीवन बदलते जायें। दर्जा, जाति, छुआछूत आदि को मिटा देना चाहिए। बेकारी और भूख मिटा देनी चाहिए। राष्ट्रीयता में खुदगरजी, लड़ने की हवस, साम्राज्य लगातार बढ़ाने की लालसा, आदि का लेश भी नहीं होना चाहिए। रहन-सहन के ऊँचे-से-ऊँचे और नीचे-से-नीचे स्तरों का भेद बहुत बड़ी हद तक कम हो जाना चाहिए। सरकार के न्याय और शासन-तंत्र में जल्दी काफी नैतिक सुधार दीखना चाहिए। और लोकतंत्र के मौजूदा दिखावे की जगह सच्चा लोकतंत्र स्थापित होना चाहिए, और लोगों तथा सरकारी कर्मचारियों में आज के गैर-जिम्मेदारी भरे बर्ताव की जगह शुद्ध कर्तव्यनिष्ठा की भावना आनी चाहिए।"

सरकार और जनता, दोनों के लिए मशरूवालाजी के उपर्युक्त कथन में मार्ग-दर्शन है। इसे पूरा करने पर ही रजत-जयन्ती मनाने का हमारा दावा सच्चा साबित होगा।

—दादा

राष्ट्रीयकरण का मतलब हस्तक्षेप न हो

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के आचार्यकुल के संयोजक श्री प्रो० टी० आर० अनन्तरमन के आमंत्रण पर वाराणसी नगर के आचार्यकुल के प्रतिनिधि सदस्यों की एक बैठक २ अगस्त, '७२ को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हुई। बैठक में अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी संशोधन ऐक्ट, केरल राज्य में उच्च शिक्षा में संकट, और उत्तर प्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा के राष्ट्रीयकरण पर विचार हुआ। केन्द्रीय आचार्यकुल के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने बैठक की अध्यक्षता की और वाराणसी थियोसोफिकल सोसाइटी के श्री रोहित मेहता ने विचार-विनिमय का आरम्भ किया। निम्न प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए।

( ) हम अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी संशोधन ऐक्ट, १९७२ का हार्दिक स्वागत करते हैं। हम इसको सही दिशा में एक प्रगतिशील कदम मानते हैं क्योंकि इसमें अलीगढ़ विश्वविद्यालय की श्रेष्ठ परम्पराओं को कायम रखने का प्रयास किया गया है। विश्वविद्यालय को राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से संलग्न करने की चेष्टा की गयी है, और विश्वविद्यालय सम्बन्धी मामलों में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में छात्रों और अध्यापकों के प्रत्येक वर्ग को सही लोकतांत्रिक ढंग से सहकार का अवसर प्रदान किया गया है।

हमें प्रसन्नता है कि विश्वविद्यालय के प्रशासन में छात्रों के सहकार की आधुनिक संकल्पना को कार्यान्वित करने का एक अच्छा आरम्भ हुआ है। हम इस नवीन प्रयोग में सफल छात्र सहकार की आशा करते हैं तथा हृदय से चाहते हैं कि इस कदम से देश के प्रत्येक विश्वविद्यालय में छात्रों के अधिकाधिक सहकार का एक नया अध्याय आरम्भ होगा। अलीगढ़ विश्वविद्यालय लगभग पूर्णतः केन्द्रीय सरकार के आर्थिक अनुदान से चलता है, अतः हमें सन्तोष है कि इस ऐक्ट की धाराएं विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय चरित्र के अनुरूप हैं। अन्त में हम अपने समुदाय के उस वर्ग से जो इस नये ऐक्ट की धाराओं के कारण चिन्तित और उत्तेजित है, यह अपील करना चाहते हैं कि वे ऐक्ट की धाराओं का धैर्यपूर्वक विस्तार से तटस्थ विश्लेषण करें तो हमें विश्वास है कि उनको यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस ऐक्ट में किसी वर्ग विशेष के हितों को हानि पहुँचाने की कोई चेष्टा नहीं की गयी है।

(२) हमें केरल में हुई उन घटनाओं पर, जिनसे उस राज्य में उच्च शिक्षा अव्यवहारतः लगभग बन्द हो गयी है, गहरा

खेद प्रकट करते हैं। आचार्यकुल की शिक्षा नीति में, अन्य बातों के साथ-साथ शुल्क का समान ढांचा बनाने पर जोर दिया गया है। इस प्रकार हम निस्सन्देह केरल सरकार की इस मांग का समर्थन करते हैं कि सभी निजी या सरकार द्वारा चलाये जानेवाले शिक्षालयों में शुल्क का एक ही ढांचा हो। हम सभी स्तरों पर शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने के हर प्रयास का स्वभावतः समर्थन करते हैं। हम विश्वास करते हैं कि समान शुल्क के इस ढांचे के साथ-साथ शिक्षा-संगठन के अन्य घटकों—शिक्षकों के वेतन, शिक्षक-छात्र अनुपात, और शिक्षा के उपकरण आदि का ढांचा भी समान होना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति में समय लग सकता है। अत एक अन्तरिम व्यवस्था के तौर पर राज्य द्वारा सहायता पानेवाले सभी शिक्षण-संस्थानों में शुल्क के समान ढांचे की इस मांग का हम समर्थन करते हैं। हम अनुभव करते हैं कि राजकीय सहायता में अनुदान आदि के सदुपयोग पर राज्य की आवश्यक देखरेख भी अन्तर्निहित है। किन्तु इसका अर्थ शिक्षालयों में शैक्षिक मामलों पर राज्य का नियन्त्रण नहीं होना चाहिए। हमें यह देखकर खेद हुआ है कि केरल सरकार की ओर से इसी सत्र में समान शुल्क के ढांचे को लागू करने जैसा महत्त्वपूर्ण कदम उठाने में सम्भवतः कुछ जल्दी बाजी हुई है। इसलिए हमारी नम्र सलाह है कि शिक्षा में इस तरह के क्रान्तिकारी सुधार करने से पूर्व पर्याप्त जन-संवाद, विचार-विनिमय और शिक्षा-शास्त्रियों से व्यापक सलाह मशविरा आदि होना चाहिए।

(३) उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा नगर-पालिकाओं और स्थानीय संस्थाओं के हाथों से प्राथमिक शिक्षा के प्रबन्ध को अपने हाथ में लेने का यह कदम वांछित है, जिसकी मांग सब ओर से सतत होती रही है। परन्तु हम चाहते हैं कि इसका अर्थ विद्यालयों की दिन-प्रतिदिन की शैक्षिक और प्रशासनिक स्वतन्त्रता में सरकार का किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। इसलिए हम इन विद्यालयों के संचालन के लिए बनाये गये प्रशासन प्रबन्ध से, जो सरकारी अफसरों के बोझ से अत्यधिक बोझिल है, प्रसन्न नहीं हैं। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि राज्य सरकार द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा को, हमने हाथ में लेने के इस कदम को प्रबन्ध समितियों में प्रबुद्ध शिक्षा-शास्त्रियों को अधिकाधिक सम्मिलित कर मजबूत बनाने की आवश्यकता है। विभिन्न विद्यालयों में इमारतें और शिक्षा के अन्य उपकरण भी, जो निस्सन्देह बुरी अवस्था में हैं और जिनमें पर्याप्त सुधार करके अद्यतन बनाने की आवश्यकता है, उसे सरकार द्वारा अधिगृहीत किये जाने चाहिए। हमारा यह भी सुझाव है कि यदि सरकार प्राइमरी शिक्षा को बुनियादी शिक्षा के नाम से ही पुकारना चाहती है तो राज्य के हर प्राइमरी स्कूल के हर क्रियाकलापों से बुनियादी शिक्षा की आत्मा प्रकट होनी चाहिए। ●

आन्दोलन के समाचार

जिला ग्रामस्वराज्य समिति सहरसा की मासिक बैठक

जिला ग्रामस्वराज्य समिति सहरसा की मासिक बैठक ३० जुलाई को समिति के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र मिश्र के सभापतित्व में हुई। बैठक बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, सहरसा के प्रांगण में हुई। बैठक में समिति के सदस्यों के अतिरिक्त सर्व सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा भी उपस्थित थे। सहरसा ग्रामस्वराज्य-अभियान समिति के क्षेत्र के अन्तर्गत सहरसा जिला के २३ प्रखण्ड, पूर्णिया जिला के रुपौली एवं भवानीपुर तथा दरभंगा जिला के बिरौल प्रखण्ड, इस तरह कुल २६ प्रखण्ड शामिल हैं।

बैठक में सर्वसम्मति से सहरसा जिला के महिषी, मरौना, किशनगंज, मुरलीगंज, राघोपुर तथा पूर्णिया जिला के रुपौली एवं भवानीपुर कुल सात प्रखण्डों को ग्रामस्वराज्य अभियान का सघन क्षेत्र बनाया गया। इस क्षेत्र में कम-से-कम ५०० सर्वोदय मित्र बनाने, सर्वोदय आन्दोलन का प्रचार-कार्य करने, तथा प्रखण्ड के सभी गांवों में ग्रामसभा बनाने का निश्चय किया गया है। इन सघन क्षेत्रों में ग्रामदान की घोषणा के साथ ही प्रत्येक भूमिवान से बीघा में एक कट्ठा लेकर भूमिहीनों में वितरण कराना, ग्रामसभा का गठन, ग्रामकोष का निर्माण, घोषित ग्रामदानी गांवों के दस्तावेज पुष्ट कराने की दृष्टि से पुष्टि पदाधिकारी के कार्यालय में वासगीत की जमीन का पर्चा दिलाना एवं ग्राम-शान्तिसेना का गठन करना, आदि कार्यक्रम शामिल हैं।

बैठक में २० नवम्बर से २० दिसम्बर तक एक महीने का सामूहिक अभियान चलाने का निश्चय किया गया है, जिसमें शामिल होने के लिये सहरसा जिला के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त बिहार एवं देश के अन्य सर्वोदय कार्यकर्ता, रचनात्मक संस्था एवं सर्वोदय कार्य में रुचि लेनेवाले व्यक्तियों को आवाहन किया गया है। बैठक में उपस्थित व्यक्तियों ने स्थानीय व्यक्तियों को इस कार्यक्रम में शामिल करने की आवश्यकता पर जोर दिया। आचार्य श्री राममूर्तिजी ने सर्व सेवा संघ के अधिवेशन एवं २० वें अखिल भारत सर्वोदय समाज सम्मेलन, नकोदर का प्रस्ताव, श्री सिद्धराज ढड्ढा ने श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में बंगलोर में हुए सर्वोदय आन्दोलन एवं विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ व्यक्तियों की सम्मिलित बैठक में हुई चर्चा, श्री निर्मला देशपाण्डे ने श्री विनोबाजी द्वारा ग्रामस्वराज्य अभियान सहरसा के सम्बन्ध में दी गयी सलाह और श्री सूर्यनारायण दास ने बिहार के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की खड़गपुर बैठक के सुझाव की जानकारी दी।

बैठक ने इस भूमिका में ग्रामस्वराज्य-अभियान एवं सर्वोदय आन्दोलन को सफल बनाने के लिए स्थानीय व्यक्तियों को

वर्ष : १८, अंक : ४८

२८ अगस्त, १९७२

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भूदान-यज्ञ

भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति

युग की जड़ता के खिलाफ
एक इनक्लाब है,
हिन्द के जवानों का
एक सुनहरा ख्वाब है,
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति...
व्योम में हमारी पहुँच बढ़ रही है आज, पर
दूर हो रहा है घर पड़ोसी का।
आदमी को आदमी के करीब लायेगी,
भारतीय सांस्कृतिक — क्रान्ति...
आदमी भविष्य में यंत्र का न हो गुलाम
मानवीय गुण बढ़ेंगे काम से
ऐसे योग-युक्त काम
हर जगह चलायेगी,
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति...
ले के हाथ हल-कुदाल
और ज्ञान की मशाल
आओ चलें साथ-साथ गाँवों को
क्योंकि गाँव-गाँव से दीनता मिटायेगी
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति...

—तरुण-शान्तिसेना-गीत

ग्रामदान के लिए राष्ट्रीय सामूहिक-अभियान

अध्यक्ष एवं मंत्री, अ० भा० रचनात्मक संस्थाएँ; प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल, एवं सदस्य, सर्व सेवा संघ प्रबन्ध समिति के नाम पत्र

महोदय,

आपको विदित ही है कि देश में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए ग्रामदान में निहित सम्भावनाओं को प्रकट करने के उद्देश्य से सहरसा (बिहार) को प्रयोग-क्षेत्र के रूप में चुना गया है। गत दो वर्षों से यहाँ ग्रामदान-पुष्टि के लिए सतत् कार्य चल रहा है और समय-समय पर देश के कार्यकर्ताओं की सामूहिक शक्ति भी यहाँ लगायी गयी है। सामूहिक शक्ति लगाने से काम तो आगे बढ़ता ही है साथ ही आपसी भाईचारा और गण-सेवकत्व भी विकसित होता है।

अतः संघ ने यह निश्चय किया है कि सारे देश के सेवक दिनांक २० नवम्बर '७२ से २० दिसम्बर, १९७२ तक एक माह का समय सहरसा में सामूहिक अभियान के लिए दें।

आपसे सादर प्रार्थना है कि इस अभियान के लिए अपनी संस्था और प्रदेश के सक्षम साथियों से समय देने का अनुरोध करें। कृपया सूचित कर अनुगृहीत करें कि आपकी संस्था और प्रदेश से कौन-कौन मित्र इस अभियान में सम्मिलित होंगे ?

आपको यह भी मालूम ही होगा कि गत दो वर्षों से ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि साथ साथ करने के उद्देश्य से सकलित अभियान चलाने के प्रयोग देश के अनेक प्रदेशों में सफलतापूर्वक हुए हैं। सभी प्रदेशों में एक साथ ऐसे प्रयोग करने की आवश्यकता है जिससे यह कार्य एक पद्धति के रूप में विकसित हो जाय। यह तभी सम्भव है जब भिन्न-भिन्न प्रदेशों के प्रमुख कार्यकर्ता जो अपने-अपने प्रदेशों में अभियानों का संयोजन और संगठन करते हों, ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि साथ-साथ करनेवाली पद्धति को समझें और कार्यरूप में परिणित करें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मण्डल की सहायता से दिनांक १६ से ३१ अक्तूबर, '७२ तक महबूबनगर जिले में सामूहिक अभियान चलाने का निश्चय संघ ने किया है।

अतः आपसे प्रार्थना है कि अपनी संस्था और प्रदेश से कम-से-कम तीन प्रमुख कार्यकर्ता साथी आन्ध्र प्रदेश के अभियान के लिए भी अवश्य भेजें।

सर्व सेवा संघ प्रबन्ध समिति के सदस्यों तथा निमन्त्रितों से भी यह अपेक्षा है कि इस वर्ष इन दो में से किसी एक अभियान में वे अवश्य समय दें। कृपया सूचित करने का कष्ट करें कि आप किस अभियान में कितने दिन का समय देंगे।

संघ की आर्थिक मर्यादा को देखते हुए यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि अभियानों में भाग लेनेवाले साथियों का यात्रा-व्यय सम्बन्धित संस्था या प्रदेश सर्वोदय मण्डल ही वहन करे।

आशा है, इन अभियानों की सफलता के लिए हर सम्भव प्रयत्न करेंगे।

—नरेन्द्र दुबे

सहमंत्री, सर्व सेवा संघ

युवकों का भी सरकारीकरण ?

सरकार की ओर से घोषणा हुई है कि उसकी ओर से देश भर में एक सौ नेहरू युवक केन्द्र खुलेंगे। इन केन्द्रों में क्या होगा ? खेल के मैदान होंगे, खेल के सामान होंगे। इसके अलावा और क्या-क्या होगा ? और, ये युवक कौन होंगे ? कहा गया है कि इन केन्द्रों में खेल के साथ-साथ कुछ युवक-नेता भी प्रशिक्षित किये जायेंगे। इन 'नेताओं' को क्या प्रशिक्षण मिलेगा, और ये नेता प्रशिक्षित होकर क्या करेंगे ?

युवकों को कमाने, खाने, खेल, और सीखने की जितनी सुविधाएँ मिल सकें, मिलनी चाहिए। लेकिन युवक स्वतंत्र, निर्भय, नागरिक बनें, यह चिन्ता सबसे पहिले होनी चाहिए। क्या नेहरू युवक केन्द्र की इस योजना से यह उद्देश्य पूरा होगा ?

हमें ऐसा लगता है कि अब सरकार युवकों को भी सरकारी-करण की अपनी दूरगामी योजना में सम्मिलित करने जा रही है। अगर हमारे युवक भी सरकार के हो जायेंगे तो क्या बचेगा जो समाज का होगा ?

लोकतंत्र स्वतंत्र रहे, इसके लिए दो चीजें आवश्यक होती हैं : एक, राजनीति में सभी दलों को बराबर स्वतंत्रता हो, और दो, शिक्षा स्वतंत्र हो। लेकिन हम देखते हैं कि दोनों दृष्टियों से हमारा लोकतंत्र कमजोर हो रहा है। सरकार अधिक-से-अधिक अधिकार अपने हाथ में करती जा रही है। विरोधी दलों की स्थिति दिनोंदिन बिगड़ रही है। जो विरोधी दल ऊपर से भरे-पूरे दिखाई देते हैं वे भी अन्दर-अन्दर खोखले होते जा रहे हैं। अनेक 'विरोधी' सदस्य कमाई और सुविधाओं तथा भाई भतीजों के लिए नौकरी की लालच में मंत्रियों से उपकृत रहते हैं जिसके कारण उनके विरोध में कोई दम नहीं रहता। राज-नीति के बाजार में वोट और नेता दोनों बिकाऊ माल हो गये हैं। जब राजनैतिक दल भी सरकारीकरण के प्रवाह के सामने नहीं खड़े हो सकते तो दूसरी-संस्थाएं क्या खड़ी होंगी ? सरकार *अजगर की तरह अपना मुँह फैलाती जा रही है*, और व्यापार, उद्योग, खेती, शिक्षा, स्वास्थ्य, यहाँ तक कि आदमी का रोज का खाना-कपड़ा भी उसके पेट में समाता जा रहा है। विद्रोही कहा जानेवाला युवक भी उसी ओर दौड़ता दिखाई दे रहा है। सत्ता के फेंके हुए चारे को न चुगनेवाली चिड़िया आज देश के सार्वजनिक जीवन में विरले ही मिलेगी। हमारे नेता इस कला में निपुण हो गये हैं कि भूखे की भूख और जवान की जवानी को सत्ता की लपेट में कैसे लाया जाता है। उनके पास सरकार के अपार साधन हैं, और सामने गरीबी-बेरोजगारी की मारी हुई असहाय जनता है, और 'कुशिक्षित' युवकों-युव-तियों की सेना है। कुल मिलाकर ऐसी परिस्थिति बन गयी है कि देश सरकार की शरण में जाने के लिए विवश है।

यह बढ़ता हुआ सरकारीकरण भविष्य की दृष्टि से अत्यन्त अशुभ है। हमारी रहन-सहन का पश्चिमीकरण हो, राजनैतिक और आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण हो, देश के जीवन का सर-कारीकरण हो, तो क्या बचेगा जिसे जनता अपना कह सकेगी ? निश्चित रूप से अगर सरकारीकरण का यह सिलसिला जारी रहा तो लोक-जीवन का लोप होगा, और हम सैनिक और शासक की मर्जी पर जीने के लिए विवश होंगे। क्या इस देश के करोड़ों नर-नारियों के लिए, स्वतंत्रता का अर्थ सरकारीकरण ही होगा ? क्या हमारे युवक स्वतंत्रता का यह अर्थ स्वीकार करेंगे कि लोकतंत्र में लोक की सत्ता न होकर शासक की सत्ता हो, और अन्य चीजों की तरह उनका भी सरकारीकरण हो जाय ?

पहिले क्या ?

महेन्द्र बाबू गाँव के एक अच्छे किसान हैं। मेहनत से खेती करते हैं। पूरी कोशिश करते हैं कि उत्पादन अधिक-से-अधिक हो। लेकिन क्या करें जब पानी ही नहीं बरसता ! महेन्द्र बाबू आज सुबह कहने लगे "सरकार को अब भी यह बात क्यों नहीं समझ में आती कि हमारे सब काम बन्द करके सबसे पहिले खेत-खेत में पानी पहुँचा दे ? पाँच साल, दस साल, यह काम कर ले, उसके बाद दूसरे काम करे। बिहार की नदियों में पानी बह रहा है लेकिन दुख यह है कि हमारे खेतों में पानी नहीं है।"

अगर हमारे सरकारी लोग भी चीन, जापान के सरकारी लोगों की तरह धान-रोपाई में शरीक होते तो उन्हें पता होता कि खतिहर देश में विकास की किस चीज पर ध्यान सबसे पहिले देना चाहिए। इतने वर्ष हो गये लेकिन आज तक हमारे विकास की प्राथमिकताएँ नहीं तय हो पायीं। कैसे तय हो जब हमारे मंत्रियों, योजनाकारों और अधिकारियों के हाथ में मिट्टी नहीं लगती, और उनके दिमाग में विकास और व्यवस्था से अधिक सत्ता और शासन घुसा हुआ है ? गाँवों में निर्माण का सारा काम मुखिया और ठीकेदार करते हैं। भ्रष्टाचार नीचे से ऊपर तक व्याप्त है। दिमाग दिल्ली में है, कुदाल गाँव में। कहीं किसी चीज का वास्तविकता से मेल नहीं है। योजना सरकार के दफ्तरों में बन्द है, किसान बाजार में। किसी को जीवन से मतलब नहीं है।

यही देश है कि अपने पेट और भाग्य के साथ विकास के नाम में इतना क्रूर खेलवाड़ निरीह, निर्विकार, मन से बर्दाश्त कर सकता है। ●

विनोबा-संवाद

[श्री तहसीलदार सिंह ७ जुलाई को विनोबाजी से मिले थे। उनकी उनसे हुई बातचीत हम यहाँ दे रहे हैं।—सं०]

प्रश्न : मैं आपका आशीर्वाद चाहता हूँ।

उत्तर : वह तो आपको मिल चुका है और मिलता रहेगा, जब तक आप सत्य के रास्ते चलते रहेंगे।

प्रश्न : मैं जब-जब ध्यान या भजन करने बैठता हूँ, तब-तब मन अधिक चंचल हो उठता है।

उत्तर : *यह प्रश्न भगवान से अर्जुन ने* भी पूछा है। मन चंचल है। लेकिन जब तक हम चित्त को शुद्ध नहीं करते तब तक भगवान में ध्यान नहीं सध सकता है। बहुत-से लोग चित्त के मल शुद्ध किये बिना ध्यान की कोशिश करते हैं, एकाग्र होने की, तो चित्त दौड़ता है। जैसे, हम भगवान की पूजा के लिए बैठते हैं, तो स्नान करके बैठते हैं, बिना स्नान किये बैठते नहीं, वैसे ध्यान के पहले चित्त का स्नान होना चाहिए। चित्त के जो मल हैं, वे साफ कर लेना चाहिए। तब ध्यान सधेगा? जब तक चित्त शुद्ध हुआ नहीं, तब तक ध्यान सधता नहीं, यह हमारे लिए अच्छी बात है, लाभदायी है। क्योंकि तब चित्त शुद्ध करने के लिए हम प्रयत्नशील रहेंगे और धीरे-धीरे चित्त शुद्ध होगा। चित्त शुद्ध हुए बिना ध्यान सधा, और सध भी सकता है किसी को, तो उसके परिणाम भयानक आयेंगे। उससे नुकसान पहुँचेगा, अपने को भी और दुनिया को भी। जैसे रावण ने शिवजी का ध्यान किया था। उसे साक्षात्कार हुआ और उसने क्या माँग लिया? ऐसा वर माँग लिया जिससे उसका भी और दुनिया का भी नाश हुआ। इसलिए चित्त शुद्धि के बिना ध्यान सध भी जाये, तो लाभदायी नहीं होगा। परमात्मा अपने बाहर नहीं है। कभी ध्यान के लिए दीपक, पानी की धारा वगैरह लेते हैं, वह आलम्बन है। वास्तव में परमात्मा अन्दर है, हृदय में। उस पर आवरण है बुद्धि का, हृदय का। ऊपर यह आवरण है और अन्दर वह ढँका है। अन्दर ज्योति है लेकिन ऊपर जो आवरण है उस पर मल है, जैसे लालटेन होता है। लालटेन के अन्दर ज्योति होती है। काँच पर मल हो तो अन्दर की ज्योति साफ दीखती नहीं। अगर मल साफ कर दो तो ज्योति दीखती है। वैसे परमात्मा की ज्योति अन्दर है, वह दीखती नहीं, क्योंकि बुद्धि पर मल है। मल को साफ कर लें तो एकदम परमात्मा दीखेगा। यह ध्यान की मुख्य प्रक्रिया है।

प्रश्न मेरे पापों का अन्त कैसे होगा?

उत्तर पापों का अन्त करने के लिए एक तो नये पाप न करने का निश्चय करना चाहिए। दूसरा, पुराने पापों का इजहार करना चाहिए, जाहिरा तौर पर। लोगों में कह देना चाहिए। तीसरा, पश्चात्ताप यानी प्रायश्चित्त करना चाहिए। उसके लिए अपने को दण्डित करना चाहिए। दण्डित करना यानी उपवास करना, सम्पत्ति छोड़ना, आदि। और, चौथा नाम स्मरण। मैं पुनः दुहराता हूँ (१) आगे पाप न करने का निश्चय, (२) उसको जाहिर करना, (३) पश्चात्तापपूर्वक प्रायश्चित् और (४) नाम स्मरण, जिससे पाप खतम हो जायेंगे।

प्रश्न . क्या एक ही जन्म में मोक्ष मिल सकता है?

उत्तर : अवश्य मिल सकता है। क्योंकि मानवदेह ऐसी है कि उसमें चिन्तन शक्ति पड़ी है। यह शक्ति चींटी में नहीं। चींटी चिन्तन करेगी तो खाने की चीजें इकट्ठा कैसे करना इसका करेगी, इससे ज्यादा चिन्तन उससे नहीं होगा। परमात्मा का चिन्तन करने की शक्ति मानवदेह में है। लेकिन परमात्मा का निरन्तर ध्यान और सत्कर्म करते हुए भी मोक्ष नहीं सधा इस जन्म में, तो अगला जन्म मानव-जन्म मिलेगा और मोक्ष सधेगा। लेकिन प्रयत्न करना चाहिए इसी जन्म में प्राप्त करने का, तो शायद अगले जन्म में प्राप्त होगा। अगले जन्म में प्राप्त करेंगे ऐसा सोचेंगे, तो शायद दस जन्म लग जायेंगे।

प्रश्न : गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए ईश्वर की प्राप्ति हो सकेगी?

उत्तर गृहस्थ धर्म यानी क्या समझना चाहिए। हम खेती करते हैं, तो क्या ख्याल रखते हैं? उत्तम मौसम हो, अच्छी ऋतु हो, पानी हो, तो बीज बोया जाये। वैसे ही पति-पत्नी-संगम केवल सन्तान-उत्पत्ति के लिए हो। इसका नाम गृहस्थाश्रम है। गृहस्थ से पूछा जाये कि कितने दफा संगम हुआ, कहेगा कि आठ लड़के हुए और हजार दफा संगम हुआ। यह हालत है। उससे मोक्ष सधेगा नहीं। लेकिन केवल सन्तान-उत्पत्ति के लिए ही संगम होता है, दो सन्तान है और दो ही बार संगम हुआ, तो वह गृहस्थाश्रम। इससे तो ब्रह्मचर्य आसान है। गृहस्थाश्रम में दो-तीन बार संगम करके फिर अपने पर जब्त रखना यह ब्रह्मचर्य से अधिक कठिन है। लेकिन अब आप तो वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करेंगे, करें।

प्रश्न : सब बागी भाइयों ने आपसे प्रार्थना की है कि आप उनको दर्शन दें।

उत्तर : हमारा दर्शन हमारी एक किताब में होता है। उसका नाम है 'गीता प्रवचन।' वह किताब हर एक को मिल जाये। जो पढ़ना नहीं जानते वे पढ़ना सीखें और उसे पढ़ें, जो पढ़ना जानते हैं वे बार-बार पढ़ें। नहीं तो क्या होगा? जो दर्शन करेगा, यानी जो देखेगा बाबा को, उसको क्या दीखेगा? दो आँखों के बीच में नाक है और उस नाक को दो छेद हैं इससे अधिक तो कुछ दीखेगा नहीं।

[१७-७-७२ को श्री बर्ट हार्टमन,

प्राध्यापक बरटन विश्वविद्यालय (अमेरिका) से निम्न संवाद हुआ था। मूल अंग्रेजी।

प्रश्न : पश्चिम की संस्कृति का भारत के गाँवों पर, और उसी प्रकार सर्वोदय आन्दोलन पर मुख्यत. क्या असर रहा है ? पश्चिम के मूल्य तथा भारतीय पारम्परिक मूल्य इनके बीच किसी प्रकार का समन्वय सम्भव है ? और है तो पूर्व और पश्चिम के मूल्यों के कौन-से पहलू जतन करने योग्य माने जायेंगे ?

उत्तर : इन दोनों सवालों के जवाब मैं एक साथ दूँगा। पूर्व की संस्कृति और पश्चिम की संस्कृति, इस तरह कोई फरक मैं नहीं करता। दोनों संस्कृतियाँ खेती पर अवलम्बित हैं, इसलिए मूलत. वे एक ही हैं। लेकिन पश्चिम के देशों में आधुनिक जमाने में विज्ञान ने प्रगति की है। इसलिए हमें अपने को आधुनिक विज्ञान की आवश्यकताओं के मुताबिक बनाना होगा। चाहे हम भारत में हों, जापान, चीन, अमेरिका, रूस, इंग्लैण्ड किसी भी देश में हों, विज्ञान ने जो वातावरण बनाया है उसके मुताबिक हमें अपने को बनाना होगा। इसलिए पूर्व और पश्चिम में ऐसा भेद करने के बदले हमें यह समझना चाहिए कि इस वक्त दुनिया में दो ताकतें टिकनेवाली हैं—विज्ञान और आत्मज्ञान। पूर्व और पश्चिम के देशों को, दोनों को विज्ञान और आत्मज्ञान दोनों की आवश्यकता है। मुख्य बात जो ध्यान में रखनी है वह यह है कि आत्मज्ञान के मार्गदर्शन में विज्ञान काम करे। विज्ञान गति देनेवाली शक्ति है, वह अपना खुद का मार्गदर्शन नहीं कर सकती। आजकल विज्ञान राजनीति के मार्गदर्शन में काम कर रहा है और राजनीति के मार्गदर्शन में चलनेवाला विज्ञान विनाश ले आता है। विज्ञान को चाहिए कि राजनीति का मार्गदर्शन लेने से वह इनकार करे और अध्यात्म से मार्गदर्शन लेना स्वीकार करे। अगर विज्ञान अध्यात्म के मार्गदर्शन में चलेगा और उस पर अध्यात्म का नियन्त्रण रहेगा, तो वह भूमि पर स्वर्ग लायेगा।

प्रश्न : अपनी स्वतन्त्रता के पचीस वर्षों में भारत की सर्वोत्तम सफलता कौन-सी मानी जायेगी और सबसे बुरी असफलता कौन-सी ?

उत्तर : भारत की सबसे बड़ी असफलता यह है कि वह अपनी अर्थ-रचना ग्राम की बुनियाद पर खड़ी करने में असमर्थ रहा। भारत की सफलता राजनीतिक है। उसकी उत्कृष्ट सफलता है, स्वतन्त्र बांगला देश। और मेरा खयाल है, दूसरी प्रमुख सफलता है पाकिस्तान और भारत का कम्प्रोमाइज फॉर्मूला (समझौते का सूत्र)।

प्रश्न : गांधी, आप और श्री नारायण जैसे दैवी शक्तिवाले नेतृत्व पर सर्वोदय आन्दोलन किस हद तक निर्भर है और किस हद तक उसे जनता का आन्दोलन कहा जायेगा ?

उत्तर : आप जानते हैं, पहाड़ों की चोटियाँ बारिश को केवल खींच लाती हैं। वैसे ही बड़े नेता हमेशा वायुमण्डल का निर्माण करते हैं। ईसा के बिना ईसाइयत की कल्पना आप कर नहीं सकते, मुहम्मद के बिना इस्लाम की। परन्तु, आधुनिक विज्ञान के इस युग में दैवी शक्तिवाले नेतृत्व की अपनी मर्यादाएँ होंगी। जहाँ तक बाबा का ताल्लुक है, बाबा महसूस करता है कि उसमें कोई दैवी शक्तिवाला व्यक्ति नहीं है, सिवाय इसके कि उसे एक छोटी-सी दाढ़ी है। मेरे मित्र (श्री बाबाजी मोघे, जिनकी लम्बी दाढ़ी है, नजदीक बैठे थे) को तो और बड़ी दाढ़ी है। आप शायद जानते होंगे कि मैंने सूक्ष्म में प्रवेश किया है—क्रिया का परित्याग कर अपने को ध्यान-चिन्तन में लगाना। इसलिए, अब एक तरह से बाबा चित्र से बाहर है।

प्रश्न : हमारे पाठक हमारे लेख में सर्वोदय के बारे में पढ़ेंगे, उनके लिए आपका क्या सन्देश है ?

उत्तर : चाहे अमेरिका हो या रूस, चीन हो या भारत, समाजवादी राज्य हो, लोकशाही हो या फासिज्म हो, सभी में दो बातें समान हैं। एक, जनता का अपने नेताओं पर विश्वास है, अपने पर विश्वास नहीं है। निक्सन, जानसन और ऐसे दूसरे अनेक 'सन' हमारे जीवन को आकार देंगे, और वे चाहेंगे उस आकार में हम ढलेंगे। सभी राष्ट्रों में यह बात समान है, फिर वह देश समाजवाद का प्रचार करता हो या और किसी वाद का। यह 'दे' इज्म ('वे' वाद) है—'वे हमारे लिए सब कुछ करेंगे'। हमें सिर्फ बच्चे पैदा करना है, क्योंकि वह काम प्रतिनिधियों को सौंपा नहीं जा सकता। हमारा सारा जीवन उन सरकारी लोगों से नियन्त्रित होगा। इसलिए हमारी कोशिश है लोकनीति (पीपुल्स पालिटिक्स) प्रस्थापित करने की। दूसरी समान बात है सेना पर उनका अन्तिम आधार। वही उनका बल है। इस तरह दो बातें समान हैं—'दे' इज्म ('वे' वाद) और मिलिटरीज्म (सैनिकवाद)। हमारी कोशिश इन दोनों से छुटकारा पाने की है। आपने 'जय जगत' सुना होगा। दुनिया की जय! ग्राम परिवार हो और दुनिया राष्ट्र हो। और आज जो सारे राष्ट्र हैं वे प्रान्त हों। आपका 'युनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका (अमेरिका का संयुक्त राज्य) है। हम चाहते हैं 'युनाइटेड स्टेट्स ऑव वर्ल्ड (दुनिया का संयुक्त राज्य)। हमें स्केल (मापदण्ड) बढ़ानी होगी—

ग्राम—परिवार

भारत—प्रान्त

जगत—राष्ट्र

इस स्केल (मापदण्ड) में स्थिर रहें।

प्रश्न : हम चाहते हैं कि आज और कल हम आपके साथ रहें और आपके दैनिक कार्यक्रम की तस्वीरें खींचें। क्या आपकी इजाजत है ?

उत्तर : एक फोटो लेने की मैं सम्मति दूँगा। परमात्मा एक है। अन्यथा, अगर मैं आपके फार्मूले (पद्धति) को सम्मत हूँ, तो वह हमें 'परसनालिटी कल्ट (व्यक्ति-पूजा) की ओर ले जायेगा।

—'मैत्री' से साभार

समाज का नेतृत्व : शिक्षक की भूमिका

● धीरेन्द्र मजूमदार

इस युग की सबसे बड़ी उपलब्धि विज्ञान और लोकतन्त्र है। विज्ञान ने जो परिस्थिति पैदा की है उसमें शिक्षक की भी जिम्मेदारी है। लोकतन्त्र शिक्षक से क्या अपेक्षा रखता है इस पर विचार करना चाहिए।

विज्ञान व टेक्नॉलोजी तेजी से प्रगति कर रही है। इसमें समाज-परिवर्तन की रफ्तार बहुत बढ़ गयी है। इसलिए 'जेनरेशन गैप' बहुत बढ़ गया है। आज की पीढ़ी का अनुभव अगली पीढ़ी के काम नहीं आयगा। आज का बच्चा १२ वर्ष बाद जीवन में प्रवेश करेगा तब तक आज की भूमिका की शिक्षा प्राप्त करके भी वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो जायगा। इसलिए आवश्यक है कि दूर-द्रष्टा बनकर आगे के सन्दर्भ में शिक्षा की योजना और अभ्यासक्रम बनाया जाय। आज की पाठ्यपुस्तक जिस शिक्षण की उपज है वह १५-२० वर्ष पुराने अनुभव के आधार पर तैयार की गयी है। वह आज की एवं आगे की बदली हुई परिस्थिति के सन्दर्भ में अनुपयोगी हो जायगी। इसलिए शिक्षा को अब पुस्तकों के दायरे में बाँधकर नहीं रख सकेंगे। समाज व परिवेश के सन्दर्भ में शिक्षा का अनुबन्ध करना होगा।

शिक्षा की दूसरी चुनौती है—समाज-संचालन के लिए कौन-सी शक्ति का इस्तेमाल किया जाय? अब तक शस्त्र-शक्ति एवं दण्ड-शक्ति से ही समाज का संचालन हुआ है। धर्म-संस्थापन-हेतु अवतार के हाथ में भी शस्त्र रहा है। अहिंसा के प्रचारक महावीर और बुद्ध ने भी राजाओं की शस्त्र-शक्ति और दण्ड-शक्ति का निषेध नहीं किया। वे भी नहीं समझ सके कि दण्डशक्ति का निषेध करेंगे तो समाज कैसे चलेगा? पर विज्ञान ने शस्त्र का स्वरूप बदल दिया है। आज दुनिया के सामने सवाल है कि इन शस्त्रों से कैसे मुक्त हों? महावीर, बुद्ध और ईसा जो नहीं कह सके वह बात आज निःशस्त्रीकरण की माँग द्वारा रखी जा रही है। निःशस्त्रीकरण आज दुनिया की अनिवार्य आवश्यकता बन गयी है। निःशस्त्रीकरण में सिपाही की भूमिका समाप्त होती है। अर्थात् जो दण्ड-शक्ति रक्षा करती है उसके स्थान पर रक्षा कौन करेगा? आज शस्त्र रखें तो सर्वनाश (विकल्प के अभाव में), न रखें तो सर्वनाश। परिणामस्वरूप दुनिया की आकांक्षा निःशस्त्रीकरण की है और आयोजन शस्त्रीकरण का हो रहा है; क्योंकि विकल्प नहीं है।

गांधीजी ने ध्यान दिलाया कि यह वांछनीय ही नहीं आवश्यक भी है कि सम्मति से समाज चले, क्योंकि लोकतन्त्र की असली शक्ति सम्मति की शक्ति है। उसका साधन शिक्षा है। आज जो स्थान सैनिक का है भविष्य में शिक्षक का बने।

समाज को दण्ड-शक्ति से चलाने की एक पद्धति है। यदि सम्मति-शक्ति से समाज को चलाना हो तो पद्धति बदलनी होगी। इसके लिए आज परिस्थिति और मनःस्थिति, दोनों अनुकूल हैं। विज्ञान में रोशनी और चेतना दोनों बढ़े हैं। प्रकृति का नियम है कि अंधकार में आदमी को भय होता है। रोशनी हिम्मत दिलाती है। इसलिए आज भय कम हुआ है और स्वाभिमान बढ़ा है। आज मालिक मजदूर को, शिक्षक छात्र को भय से नहीं चला सकते। पहले के जमाने का ५० वर्ष की उम्र का बेटा बाप के सामने थर-थर काँपता था, पर आज का ३ साल का पुत्र कान नहीं पकड़ने देता। पहले शिक्षक कक्षा में डण्डा लेकर पढ़ाने जाता था, आज डण्डा लेकर जाये तो वह डण्डा उसी की पीठ पर पड़ सकता है। इसलिए आज के शिक्षण की आयोजना में सोचना होगा कि अधिकार के सहारा कैसे निकले? परस्पर सहकार से समाज कैसे चले? यह खोज करनी होगी अन्यथा यह पीढ़ी खो जायगी।

लोकतन्त्र की पहली शर्त मतदान है। मतदाता को इतनी न्यूनतम शिक्षा तो मिलनी ही चाहिए कि जिससे वह चुनाव-घोषणा-पत्र को समझकर मत दे सके। आज के स्तर के अनुसार हायर सेकण्डरी की शिक्षा न्यूनतम माँग है। कृषि प्रधान देश भारत में प्रौढ़ों, स्त्रियों एवं बच्चों के काम के दायरे बँटे हुए हैं। जो बच्चे किसान के घर में काम करते हैं उन्हें शिक्षित करना हो तो उनके कामों को शिक्षा का माध्यम बनाना होगा।

लोकतन्त्र में शिक्षा का स्वरूप बुनियादी शिक्षा का होगा। सामाजिक और प्राकृतिक परिस्थिति के अनुबन्धों द्वारा शिक्षा देनी होगी।

आज लोकतंत्र में नेतृत्व का संकट हो गया। क्योंकि या तो नेता जन-प्रतिनिधि बन गया है या जन-प्रतिनिधि को गलती से नेता समझा जाने लगा है। प्रतिनिधि सदा जनमत के पीछे चलनेवाला होता है। आज जनता को कोई मार्गदर्शन करानेवाला नहीं है। यदि भविष्य में जनता को आगे बढ़ाना है तो नेतृत्व का संगठन खड़ा करना होगा। वह संगठन शिक्षक है। शिक्षक को समाज का नेतृत्व अपने हाथ में लेना होगा। यह तभी सम्भव है जब कि शिक्षक की भूमिका ऊँची हो। उसे जन-प्रतिनिधि से 'उदासीन' रहना होगा। उदासीन अर्थात् उद्‌आसीन—ऊपर आसन जमाया हुआ—तटस्थ नहीं। जज का जो स्थान आज के प्रशासन में है; वही स्थान शिक्षक का होना चाहिए।

आज शिक्षकों के अखिल भारतीय संगठन हैं लेकिन वे अत्यन्त सीमित दायरे में सोचते हैं। वे अपने वेतन बढ़ाने की माँग हेतु हड़ताल करते हैं। यदि हड़ताल करना ही हो तो वह शिक्षा के विषय को न्याय के समान स्वतन्त्र करने के विषय पर होनी चाहिए। आचार्य विनोबा ने इसके लिए 'आचार्यकुल' के रूप में रास्ता खोला है। प्रेषक : महेन्द्र कुमार—शिक्षक प्रशिक्षण-संस्थान, बीरबालो, अजमेर के भाषण का सारांश

शिमला-समझौता

यह कहा जाता है कि छोटे दिमाग और बड़े साम्राज्य का मेल नहीं बैठता। इस देश में शिमला समझौता के सिलसिले में जो प्रतिक्रिया हुई है, उससे पता चलता है कि छोटे दिमाग उन लोगों के है जो हिन्दुस्तान की विशालता की बात करते हैं। वे सन्धि को लाभ और हानि के रूप में आँकते हैं। उनका इतिहास गलत है और दक्षिणी एशिया में भारत के रोल के बारे में उनका दृष्टिकोण भी सकीर्ण है।

३ जुलाई की सुबह में भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी और पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री भुट्टो ने जिस सन्धि पर हस्ताक्षर किये, वह पहिले की हुई सन्धियों से भिन्न है। कश्मीर जनमत सग्रह समझौता, जो ५ जनवरी १९४९ के यू० एन० सी० आई० पी० के प्रस्ताव में मिलता है और १९६५ में कच्छ के सम्बन्ध में होनेवाली सन्धियों का उद्देश्य उन झगड़ों को निपटाना था जिनके कारण सीमित युद्ध हुए थे। जनवरी १९६६ में होनेवाले ताशकन्द समझौता का उद्देश्य भी पश्चिमी भारत-पाक सीमा, जहाँ सितम्बर १९६५ का युद्ध हुआ था, पर ज्यों की त्यों परिस्थिति बनाये रखना था। उसमें आगे वार्ता के लिए सुविधा थी, लेकिन दोनों ही जानते थे कि उनके हित की दृष्टि से यह व्यर्थ था। ताशकन्द सन्धि कार्यान्वित होने के बाद और जम्मू-कश्मीर के सिलसिले में भारत-पाक सम्बन्ध बिगड़ने के बाद सबसे ज्यादा फायदा रूस को हुआ। हर अवसर पर फिलहाल तक, उसने ताशकन्द समझौते की याद की और अपने रोल (भूमिका) को जताया। अब ये सब पुरानी बातें हैं।

२० अगस्त १९५३ को कश्मीर के सिलसिले में होनेवाले नेहरू-मुहम्मद अली समझौते के बाद शिमला-समझौता पहला बड़ा राजनैतिक समझौता है, जो भारत और पाकिस्तान के आपसी प्रयास से हुआ। नेहरू-मुहम्मद अली समझौता इसलिए असफल रहा कि पाकिस्तान ने समझौता के तुरत बाद ही अमेरिकी हथियार प्राप्त करने शुरू किये। परन्तु अब भारत-पाक की स्थिति बिलकुल भिन्न है। पूर्वी और पश्चिमी, दोनों सीमाओं पर एक लड़ाई लड़ी गयी और इसमें भी निर्णयात्मक हार हुई। यही नहीं, इसका पूर्वी बाजू भी कट गया।। परिणामस्वरूप, दक्षिण एशिया में भारत एक शक्ति के रूप में उभरा है। किसी भी समझौते से दो उद्देश्य पूरे होते हैं, एक तो यह कि युद्ध के बाद जो परिस्थिति पैदा हुई है उसमें सुधार आये और दूसरे यह कि एक स्थायी शान्ति के लिए स्पष्ट और ठोस निर्देशक सिद्धान्त मिलने चाहिए।

राष्ट्रपति श्री भुट्टो का यह कथन सही है कि स्थायी शान्ति और मनवायी हुई शान्ति में विरोधाभास है। दिसम्बर १९७१ में भारत का सबसे बड़ा उद्देश्य बांगला देश को मुक्त कराना था, अब वह उद्देश्य पूरा हो चुका है। अच्छा होगा कि अब हम वर्सलीज के समझौते के शब्दों न सोचकर बिस्मार्की समझौते के शब्दों में में सोचें। जैसा कि डा० हेनरी ए० किसींगर ने कहा है, "बिस्मार्क निजी स्वार्थ के दर्शन पर आत्मनियन्त्रण रख सकता था। उसके उत्तराधिकारियों ने उसके युद्ध को तो याद रखा परन्तु उसकी उदारता से जो फल प्राप्त हुए थे, उसे भूल गये।"

निःसन्देह कश्मीर समस्या का हल ढूँढ़ने का यह सर्वोत्तम समय है। परन्तु जो लोग विजयी होने के नाते अधिकृत हल की बात करते हैं उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय अनुशासन की वास्तविकताओं का सही ज्ञान नहीं है। एक मनवायी हुई शान्ति झगड़े की राह दिखायेगी और उभयपक्षीय समझौते की सम्भावना को समाप्त कर देगी।

आलोचकों के गणित पर गौर कीजिये, उनमें से किसी ने भी २१ दिसम्बर १९७१ के सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव पर ध्यान नहीं दिया है। इसके अनुसार तो युद्ध-क्षेत्र में स्थायी युद्धबन्दी होनी चाहिए। यह उस समय तक रहनी चाहिए जब तक सशस्त्र सेनाएँ अपनी असली सीमाओं में वापस न चली जायँ और जम्मू-कश्मीर में उस स्थान पर, जहाँ कि सयुक्त राष्ट्र संघ के पर्यवेक्षक निगरानी करते हैं।

पाकिस्तानी सीमाओं से भारत का पीछे हटना कौंसिल के प्रस्ताव के अनुसार है और इसकी अपनी घोषित नीति के अनुसार भी। भारत ने यह कहा था कि पाकिस्तान ने वह लाभ प्राप्त कर लिया है जिसका प्रस्ताव में जिक्र है और युद्ध विराम-रेखा की मौजूदा स्थिति से सहमत हो गया है। अन्तिम हल न होने तक यही स्थिति रहेगी।

यह इससे भी सहमत है कि भारत-पाक दो में से कोई भी कानूनी-व्याख्या और आपसी मतभेद के बावजूद इसे अपने तौर पर बदलने की कोशिश नहीं करेंगे। साथ ही, दोनों देश अपने मतभेद को शान्तिमय साधनों से हल करेंगे। यह शान्तिमय साधन उभयपक्षीय होगा या दोनों की सहमति से तय किया गया कोई दूसरा शान्तिमय साधन। दोनों देशों के बीच आखिरी हल न होने तक दो में से कोई भी परिस्थिति को नहीं बदलेगा और दोनों ही अच्छे सम्बन्ध और शान्ति के रास्ते के रोड़ों को, जो किसी सगठन, सहायता या प्रोत्साहन के कारण होगा, को हटायेंगे।

परिषद के प्रस्ताव में यह कहा गया है कि महामंत्री से यह निवेदन किया गया है कि प्रस्ताव के कार्यान्वित होने के सिलसिले की सभी बातों से सदस्यों को सूचित करेंगे। ये सारी बातें उभयपक्षीय वार्ता के कारण कमजोर पड़ गयी हैं। इस पर सहमत होने में पाकिस्तान निःस्वार्थ अवश्य रहा है। इसने केवल वास्तविकता को समझा है कि उपमहाद्वीप के गन्दे कपड़े को सयुक्त राष्ट्र सघ में धोने से कोई लाभ नहीं जहाँ कि आजकल किसी भी

लोकयात्रा से

[लोकयात्री बहनें बम्बई में ४० दिन रहीं। २८ जुलाई को वे बम्बई से विदा हुईं। अब इनकी यात्रा पूना जिले में शुरू हुई है। ब्रह्मविद्या मन्दिर की सुश्री उषा बहन लोकयात्री बहनों के साथ ४ दिन बम्बई में रहीं। उनका यह संस्मरण यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

बम्बई महानगरी में लोकयात्रा चल रही थी। एक ओर गगनचुम्बी इमारतों में रहनेवाले इने-गिने लोग तो दूसरी ओर झोपड़ी, पट्टी तथा फुटपाथ पर सोनेवाले हजारों-हजार लोग। और इनके बीच, जीवन-आवश्यकता की चीजों के आसमानी भावों के साथ जिन्दगी बसर करनेवाले, सामाजिक प्रतिष्ठा के खयालों से दबे जानेवाले अनगिनत मध्यमवर्गीय परिवार। हर एक वर्ग की अपनी-अपनी समस्याएँ हैं। और सब वर्गों को समरूप से लागू होनेवाली इस महानगरी की भी अपनी समस्याएँ हैं। यातायात के साधनों की विपुलता, समय के साथ होड़ लगाता भागा-भागा-सा फिरता नागरिक जाने-अनजाने वह वेग के आवेग का शिकार बना हुआ है। हर क्षण, हर स्थान, भीड़ ही भीड़! बस के लम्बे 'क्यू', मनुष्यों से खचाखच भरी बसें, ट्रेनें...और इन सबके बीच शान्ति से पैदल चलनेवाली ये चार बहनें। लोगों की समझ में ही नहीं आता कि ये बहनें पदयात्रा क्यों कर रही हैं? उन्हें पूछा जाता है—'वाहन का उपयोग न कर आप पैदल क्यों चलती हैं?'

'आज सुबह हमने देखा। आपका छोटा बच्चा बस के लिए 'क्यू' में खड़ा था। बस नहीं आ रही थी। आधी तक भी उस बच्चे का नम्बर नहीं लगा। फिर से वह अपनी बारी की प्रतीक्षा करते खड़ा रहा। ऐसी घटनाएँ इस महानगरी के लाखों लोगों के जीवन में रोज घटती हैं। जहाँ देखो वहाँ भीड़, जल्दबाजी...इन सबके कारण चित्त पर एक तनाव निर्माण होता है, इसका भान उनको नहीं। और इस पर सोचने की जरूरत है यह भी वे महसूस नहीं करते। हमें भी अपना रास्ता तय करना है। हर रोज नियत समय पर हम निकल पड़ती हैं, परन्तु हमारे चित्त पर कोई बोझ नहीं, कोई तनाव नहीं। मंजिल हमारी लम्बी है किन्तु पैरों के सामने दिशा है और चित्त मुक्त है। और यह मुक्त चित्त ही स्वस्थ मानव की महत्त्व की आवश्यकता है...।'

लोकयात्रा का एक उद्देश्य है स्त्री-शक्ति-जागरण। और उस दृष्टि से जगह-जगह बहनों से मिलना होता है। बहनों की खास सभाओं का आयोजन भी होता है। बहनें लोकयात्रियों से पूछती हैं—'आप चारों अकेली घूम रही हैं?' अपने भाषणों में लोकयात्री जवाब देती हैं—'हम तो चार हैं। चार होने के बाद भी अकेली! क्योंकि खुद स्त्रियों ने अपने को अबला माना है। अपने समाज में दो नीतियाँ चलती हैं। पुरुष के लिए एक नीति और स्त्री के लिए दूसरी नीति। खुद बहनें ही बहनों को प्रतिष्ठा नहीं समझतीं। माँ को एक लड़की हुई तो ठीक है, दूसरी हुई तो माँ दुखी होती है और तीसरी हुई तो रो देती है। लड़के को एक तरह से पालेगी, लड़की को दूसरी तरह से। जब तक इस प्रकार की दो नीतियाँ चलती हैं, स्त्री अबला ही रहेगी।'

लड़की की शादी माता-पिता के लिए एक समस्या बनी रहती है। इसका जिक्र करते हुए वे कहती हैं—'लड़की का मूल्य इतना कम क्यों? बाजार का नियम है कि जो चीज कम है, उसका दाम ज्यादा होता है। १९७१ की जनगणना के अनुसार भारत में कुल जनसंख्या ५४,७३,६७,९२३ है। इसमें प्रति १००० पुरुष पर ९३२ स्त्रियाँ हैं, यानी ६८ स्त्रियाँ कम हैं। तो उनका मूल्य ज्यादा होना चाहिए। लेकिन स्थिति इससे उल्टी है। शादी के बाजार में लड़के के दाम बोले जाते हैं, हजारों रुपये के दहेज की बात चलती है। देश की प्रधानमन्त्री बनने से यानी सत्ता हाथ में आने मात्र से या हाथ में बन्दूक यानी शस्त्रास्त्र आने से स्त्री महान नहीं बनती। सत्ता और शस्त्र होते हुए भी दिल में डर बना रह सकता है। आत्मबल के आधार पर ही स्त्री आत्मनिर्भर बन सकती है। स्त्रियों को सुरक्षित ही नहीं रहना है, स्व-रक्षित भी होना है। प्रखर ज्ञाननिष्ठा का आधार रहेगा तभी यह सम्भव होगा...।

बम्बई की बहनें बड़ी उत्सुकता और कौतूहल से इनकी बातें सुनने आती हैं। जिस क्षेत्र में पड़ाव होता, वहाँ के महिला-मण्डलों के द्वारा ही अधिकतर सभाओं का आयोजन होता है। ज्ञाननिष्ठा के आधार पर बहनों को शक्ति जगाने के विचार का उन्हें आकर्षण होता है। बहनें स्वयं कहती हैं, सीता-सावित्री का आदर्श आज पर्याप्त नहीं। ज्ञाननिष्ठा के आधार पर ही हमें संगठित होना होगा।

'शादी के बाजार में लड़कियाँ खड़ी न रहें, दहेज माँगनेवाले से शादी न करें,

---

→समस्या का हल निकलता।

अगर पाकिस्तान पर सख्ती की गयी तो उभयपक्षीय सम्पर्क टूट जायगा। यह उसी हालत में कायम रह सकता है जबकि उसे समझौते का अवसर दिया जाय। शिमला समझौता यही करता है और इससे आगे कुछ नहीं। भारत, पाकिस्तान और बांगला देश के बीच युद्ध ने जो गन्दगियाँ छोड़ी हैं उन्हें साफ करने और उनके बीच एक समझौता होने और कश्मीर का कोई न कोई हल निकल आने का यह मौका देता है ताकि इस उपमहाद्वीप में स्थायी शान्ति स्थापित हो सके।

कश्मीर का हल और इन तीनों देशों के बीच समझौता हो जाने की सम्भावना काफी है। शर्त यह है कि सभी फरीक 'लो और दो' की भावना को राह दें, जो शिमला-समझौते में पायी जाती हैं।

—'फोरम फर्द' से साभार

आपकी ये सब बातें ठीक हैं, पर हम लड़कियों के यह कहने से क्या होनेवाला है, हमारे भाई-पिताजी से कहना चाहिए।' सोफिया कालेज की लड़की सभा में खड़ी होकर व्यथा उपस्थित कर रही थी। परतंत्रता की हमारी बेड़ी हम नहीं तोड़ सकती, वह तोड़ने की सामर्थ्य पुरुषों में है, पढ़ी-लिखी अपने को स्वतंत्र माननेवाली बहनों से भी अगर ऐसी ही ध्वनि निकलेगी, तो यह बेड़ी टूटेगी नहीं, बल्कि लड़कियाँ अधिकाधिक गुलाम बनती चली जायेंगी। पुरुष प्रधान समाज-रचना में जंजीर की मजबूती के बीज पड़े हैं। स्त्रियों को समाज का नेतृत्व अपने हाथ में लेना है। समाज-जीवन के नये शास्त्र बनाने हैं। ये सारे विचार आम स्त्री के लिए अभी नये-नये-से ही हैं, किन्तु विचार सुनकर उनमें एक प्रकार की आन्तरिक खलबली जरूर मच जाती है।

बम्बई का पेडर रोड! उच्च मध्यम-वर्गीय समाज का-सा निवास स्थान। सर्वोदय-मित्र मनोरमा बहन का घर भी वहीं है। लोकयात्रियों ने कुछ घण्टे उनके घर पर बिताये। सहज ही आसपास की परिचित बहनें इकट्ठी हो गयी। उनकी भी अपनी समस्याएँ थीं-हम जिस 'सोसाइटी' में रहती हैं, उसके मुताबिक रहन-सहन रखना पड़ता है। क्लब पार्टियों में जाना पड़ता है, वहाँ सादगी से नहीं जा सकतीं। आपकी बात अलग है, आप कुछ मूल्य लेकर निकली हैं . । अपना जीवन मूल्यविहीन, खोखला महसूस करनेवाली ये बहनें जानती नहीं थीं कि उनके खुद के इस कथन में उनके प्रश्न के उत्तर पड़े हैं।

कभी एक युवती अपनी समस्या कहती है-"मैं सादा सेवामय जीवन चाहती हूँ। बचपन से ही शादी न करने की इच्छा है। मुझे लगता था, मैं माता-पिता को समझा पाऊँगी, चार-पाँच सालों से समझा रही हूँ, पर वे नहीं समझ पा रहे हैं। वे कहते हैं, तुम बिना शादी के रहोगी तो समाज हमें क्या कहेगा?"

"माता-पिता सम्मति देंगे नहीं। अभी चार दिन पहले ही हमें एक बहन से परिचय हुआ। वह भी चाहती थी अपना स्वतंत्र जीवन जीना। माता-पिता इजाजत नहीं दे रहे थे। उसने तय कर लिया कि अब अपना मार्ग अपने हाथ में। घर छोड़ दिया। स्कूल में नौकरी करने लगी। जैसे ही पैसा इकट्ठा हुआ चल पड़ी अरविन्द आश्रम में।" लक्ष्मीबहन ने अपने व्यापक लोकसम्पर्क का एक अनुभव उस युवती को सुनाया।

"और एक उदाहरण। कल की ही बात। कालेज में पढ़नेवाली एक बहन। सर्वोदय विचार की ओर काफी आकर्षित है। वह रही थी, मैं अपने को तैयार कर रही हूँ। जिस दिन भी पूरी तैयारी हो जायेगी, घर छोड़ निकल पड़ूँगी। तब तक इस सम्बन्ध में किसी से एक शब्द न कहूँगी, ताकि नाहक विरोधी वातावरण पैदा न हो।" निर्मलबहन ने दूसरी मिसाल सामने रखी।

कमाठीपुरा की वारांगनाएँ। १२-१५ का एक समूह। लोकयात्री बहनें उनके बीच भी पहुँच गयीं। स्पष्ट ही है, एक ही मुलाकात में उनके दिल की बात समझना सम्भव नहीं था। समाज बहिष्कृत इस वर्ग को मिलने का एक सांकेतिक मूल्य अवश्य था। किन्तु इस सामाजिक सन्दर्भ के अलावा, अपनी इस दुर्भागी बहनों के साथ सहानुभूति के तार जोड़ने की भावना लोकयात्री बहनों के हृदय में थी। उनके साथ बात करते हुए निर्मलबहन ने कहा-"हम आपके पास क्यों आयी हैं? तुलसीदासजी ने कहा है-तुलसी या संसार में सब से मिलिये धाय। ना जाने किस वेष में नारायण मिल जाय॥ हम यही ढूँढ़ने निकले हैं कि कहाँ किस रूप में नारायण मिल जाता है आप तो मजबूरन इस परिस्थिति में फँसी हैं। एक ही बार में आपसे अधिक बातें तो नहीं हो सकतीं। हमें तो आगे जाना है, किन्तु हमारी बम्बई की साथी मंगलाबहन बम्बई में काम करती हैं। भगवान ने चाहा तो वे आपसे मिलती रहेंगी। आप एक बात अवश्य करें। किसी एक सद्ग्रन्थ को लेकर, जैसे रामायण, बाइबिल रोज थोड़ा पढ़ें। उससे आपको आन्तरिक बल मिलेगा।

आमतौर पर बहनों में लोकयात्रा के कार्यक्रम के प्रति विशेष आकर्षण पाया। बारह साल की पदयात्रा पर निकली इन बहनों का समाज के हर तबके के साथ सम्पर्क आता है, फिर वह आर्थर रोड के कारागृह के कैदी हों, कोलाबा के 'यंग' मेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन' (क्रिश्चियन युवकों का मण्डल) का समूह हो, प्रार्थना समाज के या जैन युवक संघ के उत्साही कार्यकर्ता हों, स्कूल-कालेज के विद्यार्थी हों, मजदूर संघ हो या कमाठीपुरा की वारांगनाएँ हों सबके सामने वे आत्मबल के आधार पर व्यक्ति-निर्माण तथा साम्य-बल के आधार पर समाज-निर्माण के बुनियादी पहलू को बड़ी ही निर्भीकता से पेश करती हैं।

आखिरी दिन, जब मैं उन्हें मिली तब मिल-मजदूर संघ की पाँच मंजिल की बड़ी इमारत में लोकयात्री बहनों का पड़ाव था। परेल-लालबाग की मजदूर बस्ती। काफी तादाद में मजदूर भाई-बहनें इकट्ठा हुई थीं।

प्रारम्भ में गुजरात की सर्वोदय-सेविका कान्ताबहन ने मराठी में लोकयात्री बहनों का परिचय कराया। उसके बाद "तुम्ही गुजराती भगिनीची मराठी ऐकली, आता ऐका असमीया भगिनीची मराठी·····" कहकर असम की लक्ष्मी बहन ने स्खलित मराठी में करीब पौन घण्टा भाषण दिया। भारत के पूर्व छोर की वह असम-कन्या पश्चिम छोर के निवासियों के साथ उनकी भाषा में बात कर अपने दिल के तार उनके दिल से जोड़ रही थी।

'मैत्री' से

आत्म-समर्पणकारी बागियों की समस्याएँ
एक धुँधली तस्वीर

● रामचन्द्र नवाल

मध्य प्रदेश में सैकड़ों बागियों ने आत्म-समर्पण किया। समर्पण की बात तो अब बासी हो गयी। अब सवाल है इनकी समस्याओं को वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करके इसके निराकरण की योजना बनाने का।

हमारे देश में एक तो योजना बनती है वैज्ञानिक ढंग से (बहुत कम इस प्रकार बनती है), दूसरी बनती है आदर्शों से प्रेरित होकर भावुकता या भावनावश। हमारा अहम् तो उससे तुष्ट हो जाता है, परन्तु शीघ्र ही थकान शुरू होती है और योजना, योजना के कागज हमारे लिए भार बनकर रह जाते हैं, तथा निराशा हमें दबोचती है।

समर्पण जब हुआ, अन्दाज था १५० तक आँकड़ा पहुँचेगा। १५० से २०० हुआ, बढ़ते-बढ़ते यह ४१४ तक पहुँचा। शासन ने जो समर्पण करवाया, वह मिलाकर ४५० के आसपास आँकड़ा जा रहा है।

हमने ८३ प्रकरण पर कार्य आरम्भ किया। हमारा सौभाग्य है कि गांधीजी की अंग्रेज शिष्या सरलाबहन ने मोनाथी राजवाड़े को साथ लेकर इस दिशा में पहल की। लगन से इस उम्र में उन्होंने परिश्रमपूर्वक एक धुँधली तस्वीर तैयार कर ली।

मध्य प्रदेश के चम्बल घाटी के इस क्षेत्र में समस्यामूलक दो जिले हैं, मुरैना एवं भिण्ड, और इनमें भी दो तहसील हैं। भिण्ड जिले में लहार एवं मुरैना जिले में अम्बाह। टेबुलेशन में कुछ मुद्दे इस प्रकार सामने आये हैं :

भिण्ड जिले में ११८ बागियों ने आत्म-समर्पण किया है।

भिण्ड जिले में बारह हजार लोगों के पास बन्दूकों के लाइसेंस हैं। अभी लाइसेंस दिये जा रहे हैं, बिना लाइसेंसवाले शस्त्र भी अवश्य होंगे ही। यानी ११८ बागियों के भय से (इन ११८ में अनेक बिना बन्दूकवाले भी हैं) अठारह हजार व्यक्तियों को बन्दूकें दी गयीं। इसका क्या अर्थ लगाया जाय? मेरी मान्यता है कि डाकुओं के भय के या आतंक की आड़ में मूँछ पर ताव देकर, बन्दूक रखकर दूसरों को आतंकित करने का यह व्यापार है और इसे स्वार्थी तत्वों ने बढ़ावा दिया है तथा अधिकारियों ने इस लाभप्रद व्यापार की बहती गंगा में हाथ धोये हैं, अन्यथा आँकड़े कहते हैं कि एक बागी के पीछे १०० से १२५ बन्दूकें जनता की, और शासन की बन्दूकों का तो हिसाब ही क्या? इस असफलता के ढोल आज भी उच्चाधिकारी बजाने में गौरव मान रहे हैं। इस दुर्भाग्य को क्या कहा जाये?

समस्या डाकुओं की कही जाती है। समस्या बन्दूकों की है, जिससे आज भी, अभी भी आँखमिचौनी की जा रही है—यह कैसा दुर्दैव है हमारा?

८८ बागियों ने दुश्मनी के जो कारण बताये, वे इस प्रकार हैं :

दुश्मनी १९ ने प्रकट की (अमजात)।

जमीन दबाने के तीन प्रकरण हैं।

घर छोड़ने को विवश होने के २० प्रकरण हैं।

मकान और जमीन बेचकर बागी बनने के सात प्रकरण हैं।

भाइयों पर पुलिस द्वारा मामला चलाने के पांच प्रकरण हैं।

पुलिस उस समय दो को सता रही थी (अब संख्या में खासी वृद्धि हुई है)।

कत्ल करके बागी बनना आठ ने स्वीकार किया है।

छः व्यक्तियों ने पुलिस-गार्ड का संरक्षण चाहा है।

पुलिस ने तीन मकान गिराये हैं।

दो परिवारों की पुलिस ने कुर्की की है।

एक व्यक्ति कर्ज के कारण बागी बना है।

जमीन की मांग ४५ ने की है।

यानी जमीन की मांग के सिवाय अन्य तस्वीर कार्यकर्ताओं के मानस में भी ही नहीं, यहां की प्राकृतिक सम्भावना और कार्य की मनोदशा को आंका ही नहीं गया। ५० बच्चों का शैक्षणिक स्तर इस प्रकार है :

प्राइमरी २७, मिडिल २, हाईस्कूल ४, कालेज १, छात्रावास २, कुल ३६। छोटे बच्चे १४, इस प्रकार कुल ५०। अविवाहित २६ व्यक्ति हैं।

कर्ज के कारण बागी बने भाई की कहानी इस प्रकार है : २३ वर्ष का जवान हरिजन है। एक हजार का कर्ज एक ब्राह्मण से लिया। उसके ब्याज वह में उसके यहां हाली का काम करता रहा। ब्याज में पूरे वर्ष काम करता रहा। कर्ज, उतारने की समस्या सामने थी। वृद्ध पिता, जवान पत्नी, नन्हा बालक, एक दिन कर्जेदार ब्राह्मण ने कहा, "मैं तुझे बन्दूक देता हूँ, मेरे दुश्मन को मार दे, रुपये माफ कर दूंगा।"

हरिजन युवक के लिए प्रथम लालच एक हजार के कर्ज से मुक्ति थी। दूसरी लालच बन्दूक मुफ्त मिलने की। उसने तैयारी प्रकट की और डांग में चला गया—चम्बल के बेहड़ में। ब्राह्मण ने बन्दूक नहीं दी और कर्ज के एवज में उसके वृद्ध बाप से काम करवाने लगा। यह तरुण एक गैंग में मिलकर परिश्रम, डाके, हत्या आदि करके उस ब्राह्मण को तीन हजार दे चुका है, परन्तु उसके नाम पर एक हजार लिखे ही हैं, और बाप से मजदूरी मुफ्त में करवाता रहा है।

एक वास्तविकता है। मैं कुछ भी टिप्पणी करना नहीं चाहता। पुनर्वास का आयोजन जो करेंगे, उन्हें इन आड़े-टेढ़े रास्तों पर चलना है, मार्ग खोजना है,

और योजना बनानी है, ताकि आगे डाकू न बनें। शासन भी यही चाहता है, मिशन भी यही चाहता है।

मैं जब इस काम में पड़ा, मेरी यह तैयारी नहीं थी, पुनर्वास का काम अगर सही ढग से हो, मैंने इस दिशा में विचारा, कुछ अपने ढग से तैयारी की, परन्तु उसमें कई कमियाँ हैं, तथ्यों का वैज्ञानिक ढग से चयन करने में कार्यकर्ताओं ने लगन प्रकट नहीं की। भावनाओं में बह गये। असल में मुझे कहना है, वे इस कार्य के लिए तैयार ही नहीं थे या योग्य ही नहीं थे।

दूसरी कमी है क्षेत्र के लोगों की पहुँच। भाषा की सुविधा, इस महत्त्वपूर्ण कार्य को एक महत्त्व की आवश्यकता मैं मानता हूँ, उस महत्त्व की आवश्यकता ने इस काम का महत्त्व ही नहीं माना।

मनोदशा बदलने का दायित्व जिन्हें दिया गया वे स्वयं सीखियों में बन्द थे। मनोविज्ञान को या आयोजन के वैज्ञानिक पक्ष को उन्होंने गौण माना। जेल-अधिकारियों ने शरीर-श्रम का महत्त्व भुला दिया। वे अपने पुराने कवच में ही मुस्कराते रहे और यह इतना बड़ा मनोवैज्ञानिक ढग से तैयारी का काम, चार महीने हो गये, सिसकता रहा, उपेक्षित रहा, उबासियाँ लेता रहा, तस्वीर चाहे धुँधली हो। हम कूल्हे में मगन हैं, समस्या बागियों की है, समस्या खड़ी है, हम बगलें झाँक रहे हैं। तस्वीर कुछ धुँधली चाहे हो, एक सही कदम है, चुनौती है, इस क्षेत्र के उन भाई बहनों के लिए जो समाजशास्त्र के रसिक हैं या प्रेमी हैं। वे अगर इस सागर में गोता लगायें, बड़ा उपकार करेंगे, इस क्षेत्र में गोताखोर मोती ला सकेंगे, अन्यथा बन्दूकें तो मौजूद हैं और मैं मानता हूँ कि अब समस्या डाकू नहीं हैं, समस्या बन्दूकें हैं।

बन्दूकें दोषी-निर्दोषी को पहचानने में असमर्थ हैं। उन्होंने असंख्य सुहागवती बहनों के सुहाग की लाली को चाटा है, असंख्य पैरों के नूपुरों का मल्हार रुदन में परिणित की है। असंख्य बहनों को

दो महान विभूतियाँ

हाल ही में सारे सर्वोदय जगत को अपने परिवार के दो बुजुर्गों के चले जाने से बड़ा भारी सदमा पहुँचा है। वे हैं, पितामह सरीखे विलफ्रेड वेलॉक और अपने बड़े भाई जैसे डोनाल्ड ग्रूम। वेलॉकजी का स्वर्गवास २३ जुलाई को इग्लैण्ड में अपने घर पर हुआ और लोकबन्धु ग्रूम का १२ अगस्त को। लोकबन्धु भारत आये हुए थे और हवाई जहाज द्वारा भोपाल से दिल्ली आ रहे थे। पालम पर उतरते-उतरते वह जहाज किसी पहाड़ी से टकरा कर चकनाचूर हो गया और उसमें बैठे सभी चौदह मुसाफिर और चालक दल के चारों व्यक्ति इस भीषण दुर्घटना के शिकार हो गये।

वेलॉक की अवस्था ८१ के आस-पास पहुँच रही थी। वह इग्लैण्ड के उन शान्तिवादियों में से थे, जिन्होंने अपने विचार खातिर अपने को कुर्बान कर दिया और तिल-तिल कर अपने को घुलाते रहे। उन्होंने हिम्मत के साथ पहली जंग में भर्ती होने से इनकार किया। इसकी वजह से उनको सन् १९१७ में दो साल की जेल भुगतनी पड़ी थी। लड़ाई खत्म होने पर वह दुबारा गिरफ्तार हुए और खुशी-खुशी डेढ़ बरस की सजा काटी। इसके बाद से वह ब्रिटिश शान्ति-आन्दोलन के अग्रणी नेता हो गये और सदा उसका मार्गदर्शन करते रहे।

ब्रिटेन के इतिहास में विलफ्रेड वेलॉक शायद अकेले व्यक्ति थे जो युद्ध-विरोधी टिकट पर १९२७ में ब्रिटिश-पार्लियामेन्ट के सदस्य चुने गये। चार साल तक वह पार्लियामेण्ट में रहे। लेकिन वहाँ उन्हें जो अनुभव आया उससे वे इस नतीजे पर पहुँचे कि दलगत राजनीति के माध्यम से शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना नहीं हो सकती और उसके लिए जनता के बीच काम करते हुए शान्ति-आन्दोलन को ही मजबूत बनाना होगा। अपने विचारों के अनुसार उन्होंने अपने जीवन को ढालना शुरू किया, जिसमें उनकी पत्नी श्रीमती फैनी वेलॉक ने पूरा साथ दिया। उन्होंने अपनी आमदनी घटाकर इतनी कम कर दी कि सरकार को आयकर देने का सवाल ही खत्म हो गया और अपना बंगला छोड़कर वह एक काटेज में रहने लगे, जहाँ वे अपनी मेहनत से साग-सब्जी और फल पैदा करते थे। वह ऊन भी कातने लगे और अपने लायक ऊनी कपड़ा तैयार कर लेते थे।

आचार और व्यवहार का ऐसा अद्भुत सगम बहुत कम देखने को मिलता है। वेलॉकजी उत्तम सत्याग्रही होने के साथ-साथ कलम के भी जबरदस्त धनी व्यक्ति थे। पन्द्रह वर्ष की उम्र से उन्होंने लिखना शुरू कर दिया और आखिर तक लिखते ही रहे। सौभाग्य से हमारे वरिष्ठ साथी और अंग्रेजी मासिक "सर्वोदय" के सुप्रसिद्ध सम्पादक अन्ना रामास्वामी ने उनका स्नेह और विश्वास प्राप्त किया और उन्होंने अपनी रचनाएँ "सर्वोदय" में प्रकाशन के लिए उनके पास बराबर भेजते रहे। "सर्वोदय" में ही उनकी आत्मकहानी क्रमशः छपती रही, जो बाद में "बॉथ दि बीटेन ट्रैक" नाम से पुस्तक के रूप में निकली। इसमें उन्होंने कहा है कि "परिस्थिति के कारण जीवन के अर्थ का विचार करने के लिए मैं अपने बचपन में ही मजबूर हो गया और तेईस साल की

कलाई की खनक हमेशा हमेशा के लिए नष्ट की है। तस्वीर चाहे धुँधली हो, तस्वीर है। इसे नया रूप, नयी रौनक समाजशास्त्र के इस क्षेत्र के भाई-बहनों को देना है।

मेरी मान्यता है कि समस्या इस क्षेत्र की बन्दूकें हैं और समस्या का अभिमन्यु कौरवों से घिरा है। सवाल है क्या अभिमन्यु का फिर वध होगा? कौरव फिर अट्टहास करेंगे?

इस में मुझे यह अनुभव हुआ कि ज्वलन्त सत्य की एक चिनगारी मेरी आत्मा में प्रवेश कर गयी है और तब से वह लगातार मेरे साथ रही है। इस अनुभव के आधार पर ही मैंने अपनी जीवन-कहानी को पिटी लकीर से भिन्न कहा है। मेरा जीवन जीने की कला में प्रयोगों की एक अटूट शृंखला है और हर प्रयोग मुझे पिटी लकीर से दूर ले गया है। आज भी वही हालत है और यह बना रहेगा।" बारह साल पहले कहा हुआ उनका यह वचन आखिर तक सही उतरा।

आज से कोई साढ़े नौ बरस पहले जनवरी १९६३ में जब कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी, मुझे उनके घर पर उनके साथ ठहरने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ८८ वर्ष की उम्र में वह डेढ़ मील पैदल चलकर प्रेस्टन स्टेशन पर मुझे लेने आये और अपने साथ घर ले गये। माताजी फैनी ने विशेषकर शाकाहारी भोजन तैयार किया था और रात को ओढ़ने-बिछाने का पूरा इन्तजाम भी। रात को भोजन के बाद बेलॉक आराम करने चले गये, लेकिन सुबह तड़के उठकर दो घण्टे तक बातचीत करते रहे। उन्होंने कहा कि आज भौतिक मूल्यों की तरफ लोग ज्यादा आकर्षित दीखते हैं, मगर यह 'फेज' चन्दरोजा है और वह दिन दूर नहीं जब नैतिक मूल्य समाज में प्रधान होंगे।

इस अनुपम युगल-जोड़ी के रग-रग से वात्सल्य टपकता था। माताजी फैनी की वृद्धावस्था में सारी दुनिया के शान्ति-वादियों की सहानुभूति उन्हें मिलेगी। और ईश्वर से हम सबकी प्रार्थना है कि उनको धीरज व साहस प्रदान करे और पितामह बेलॉक की आत्मा को शान्ति दे।

अपने बन्धु डोनाल्ड ग्रुम तो पूरी तरह अपने थे और भारत में उनकी मृत्यु होना सिद्ध करता है कि वह इस भारत भूमि से बिलकुल समरस हो गये थे और उनकी सारी वासनाएँ, अगर अन्त समय तक कुछ शेष रही होंगी, भारत को अर्पित हो गयी थीं।

करीब तीस बरस पहले वह सेवा के इरादे से हिन्दुस्तान आये और बापू से मिले। बापू ने उनको सलाह दी कि गाँव में बैठकर ग्रामीण सेवा में लग जायें। जिला होशंगाबाद के रसूलिया गाँव को उन्होंने पसन्द किया और अपनी जवानी के पन्द्रह-बीस वर्ष वहीं सेवा में बिता दिये। उसने और उनकी पत्नी एटिका ने देहात की सारी यातनाएँ सहीं और अपने को एकदम भुला दिया। उनकी तीनों सन्तानों में से, दो बेटे राबर्ट और ब्रियान और प्यारी बिटिया हेलेन, दो का जन्म भी वहीं हुआ और आज भी रसूलिया ग्रुम परिवार को याद करता है।

भूदान आन्दोलन के शुरू होने पर डोनाल्ड को बड़ा आनन्द हुआ और उन्होंने मध्य प्रदेश की पदयात्रा की। उन्हें भूदान में जमीन मिली, जिसे भूमिहीनों में बँट जाने पर उनको अहिंसा की शक्ति का दर्शन हुआ। बाद में उन्होंने अमेरिका का दौरा किया और फिर इंग्लैण्ड आ गये। इधर थोड़े दिन से अपने बड़े पुत्र राबर्ट के आस्ट्रेलिया में बस जाने पर वह भी आस्ट्रेलिया चले गये थे और वहाँ की नागरिकता ग्रहण कर ली थी।

लेकिन बीच-बीच में भारत आते रहते थे। १९५९ की दिसम्बर में बड़े दिन पर्व के अवसर पर वह विनोबाजी से पंजाब में मिले और पचीस दिन तक पदयात्रा में साथ रहे। इस पर उन्होंने एक पुस्तक 'विद विनोबा' लिखी है। ईशावास्य उपनिषद् (विनोबा कृत टीका) का भी उन्होंने अंग्रेजी में अनुवाद किया। इसके अलावा अनेक लेख व निबन्ध लिखे।

विनोबाजी ने उनको प्यार का नाम दिया-लोकबन्धु ग्रुम। इसको उन्होंने सार्थक किया और वह सचमुच लोकबन्धु ही गये थे। सारा आलम उनका घर था और जन-सेवा उनका एक मात्र धर्म। वह सच्चे माने में विश्व नागरिक थे और हृदय के बड़े सरल व उदार। अतिथि-सत्कार तो उनमें और भाभी एटिका में कूट-कूट कर भरा था। पितामह बेलॉक के दर्शन करने के पूर्व मैं ग्रुम-दम्पति के साथ लन्दन में रहा और अनेक विषयों पर उनसे चर्चा होती रही।

लोकबन्धु अपनी यात्रा के दौरान एक बार इलाहाबाद आये। मैं उनके साथ घूमने निकला। सड़क पर एक युवती भंगन झाड़ू लगा रही थी। लोकबन्धु ने उसकी तरफ इशारा करके कहा—"जानते हो, भारत की गरीबी की मेरी कसौटी क्या है?" मैंने पूछा-"आप बतलाइये।" तो वह बोले—"भारत के भंगियों की दशा। अब भी छोटी-सी झाड़ू हाथ में लिये इन्हें कमर झुकाकर सफाई करनी पड़ती है। आपकी कई योजनाएँ निकल गयीं, लेकिन क्या आपके योजनाकार इनकी झाड़ुओं में डण्डे (या हैण्डिल) नहीं लगवा सकते जिससे वे कमर सीधी किये झाड़ू लगा सकें?

आज स्वाधीनता की रजत-जयन्ती के सन्दर्भ में लोकबन्धु ग्रुम का यह दर्द भरा वाक्य एक चुनौती बनकर सामने आता है। क्या हम सफलतापूर्वक उसका जवाब दे सकेंगे?

विलफ्रेड बेलॉक और लोकबन्धु ग्रुम, दोनों महान विभूतियों को पावन स्मृति को शतशः प्रणाम। —दादू

लोकबन्धु डोनाल्ड ग्रुम के निधन-पर शोक-सन्देश

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने ११ अगस्त को दिल्ली के पालम हवाई अड्डे के पास हुई यान दुर्घटना में लोकबन्धु डोनाल्ड ग्रुम के असामयिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट किया है। ग्रुम-परिवार के प्रति सहानुभूति का तार सन्देश भेजते हुए श्री ढड्ढा ने कहा है कि बरसों तक भारत में सेवा करनेवाले डोनाल्ड ग्रुम की दुःखद मृत्यु से भारत के सर्वोदय कार्यकर्ताओं को गहरा धक्का लगा है। श्री ग्रुम को खोकर विश्व-शान्ति-आन्दोलन अनाथ-सा हो गया है।

इसी आशय का सहानुभूति-सन्देश ग्वालियर से तार द्वारा सर्वोदय-नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने भी भेजा है।

सर्वोदय-मित्र अभियान : संयोजन के लिए कुछ सुझाव

सर्वोदय-मित्र और सर्वोदय सहयोगी

देश में सर्वोदय विचार के लिए व्यापक लोक-सम्मति हासिल करने तथा आन्दोलन को सुदृढ़ आर्थिक लोकाधार प्रदान करने के लिए ३० जनवरी, १९७३ तक देश भर से दस लाख सर्वोदय-मित्र और बड़ी संख्या में सर्वोदय सहयोगी बनाने का निर्णय सर्व सेवा संघ ने लिया है।

अपेक्षा यह है कि इस वर्ष ११ सितम्बर से सर्वोदय-मित्र बनाने का शुभारम्भ किया जाय और लक्ष्यांक पूर्ति के लिए १५ जनवरी से ३० जनवरी तक सारे देश में सामूहिक-अभियान चले।

आशा है, इस वर्ष के लिए निर्धारित यह लक्ष्य हम लोग अवश्य प्राप्त कर सकेंगे और आगामी वर्षों के लिए ऐसी परम्परा की नींव डाल सकेंगे जिससे प्रतिवर्ष १५ दिन के सामूहिक प्रयास से आन्दोलन को पर्याप्त साधन प्राप्त हो जाय।

अभियान के संयोजन के लिए आवश्यक सूचनाएँ तथा लक्ष्यांक का प्रदेशानुसार विभाजन निम्नानुसार है।

इस अभियान के सम्बन्ध में आप क्या कार्यवाई कर रहे हैं, सूचित कर अनुगृहीत करें।

सर्वोदय मित्र : सर्वोदय विचार और आन्दोलन को सम्मति-स्वरूप प्रतिवर्ष एक रुपया प्रदान करनेवाले सर्वोदय-मित्र होंगे।

सर्वोदय-सहयोगी : सर्वोदय विचार और आन्दोलन के लिए प्रतिवर्ष रु० १११) (एक सौ ग्यारह रुपये) प्रदान करनेवाले सर्वोदय-सहयोगी होंगे।

संयोजन-संगठन : प्रदेश स्तर पर प्रदेश सर्वोदय मण्डल तथा जिला और नगर स्तर पर जिला एवं नगर सर्वोदय मण्डल ही अभियान का संयोजन करेगा। जहाँ आवश्यक संख्या में लोकसेवक न बनने से ऐसे संगठन न हों वहाँ प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा अधिकृत सर्वोदय-केन्द्र और कार्यालय अभियान का संयोजन करेंगे। सामान्यतः तीन से पाँच तक लोकसेवक बनकर सर्वोदय-केन्द्र बनाया जा सकता है, तथापि ऐसे केन्द्र को प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा मान्य और अधिकृत किया जाना आवश्यक है।

रसीद-बही अभियान के लिए सर्वोदय-मित्र और सहयोगी की रसीद-बहियाँ प्रदेश सर्वोदय मण्डल की ओर से ही छपाना चाहिए तथा जिला और नगर के लिए निर्धारित लक्ष्यांक के आधार पर वहाँ भेजना चाहिए। रसीद-बही के कट्टे या नीचे की प्रति में सर्वोदय मित्र और सहयोगी का नाम और पता स्पष्ट लिखा जाना चाहिए।

रजिस्टर सर्वोदय-मित्र और सर्वोदय-सहयोगी के रजिस्टर जिला, नगर और प्रदेश स्तर पर रखना आवश्यक है। इस रजिस्टर में मित्र और सहयोगी का नाम, पता, तारीख तथा वर्ष इत्यादि स्पष्ट लिखना चाहिए।

अंशदान राष्ट्रीय कार्य-हेतु संग्रह का १० प्रतिशत सर्व सेवा संघ को भेजना अनिवार्य है। प्रदेश, जिले और नगर में संग्रह का विभाजन किस प्रकार हो यह प्रदेश सर्वोदय मण्डल निश्चित करे।

बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास, हैदराबाद आदि महानगरों से प्राप्त संग्रह की राशि का ५० प्रतिशत राष्ट्रीय कार्य में लगे, यह अपेक्षित है।

अभियान के लिए कुछ कदम

१ सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष की अपील संघ के अध्यक्ष इसके लिए अपील प्रसारित करेंगे। इस अपील को प्रान्तीय भाषाओं में अनूदित कर प्रकाशित किया जायगा।

२. प्रादेशिक स्तर की अपील : प्रदेश स्तर पर किये गये सर्वोदय कार्य का उल्लेख करते हुए तथा आन्दोलन का लक्ष्य और कार्यक्रम स्पष्ट करते हुए एक अपील जारी करना चाहिए।

३. सर्वोदय का घोषणा-पत्र : शीघ्र ही प्रसारित किये जानेवाले इस घोषणा-पत्र का प्रान्तीय भाषाओं में अनुवाद कर इसे प्रकाशित किया जाय और इसे सर्वोदय-मित्र और सहयोगी को दिया जाय।

४. रचनात्मक संस्थाओं से सम्पर्क : गांधी-निधि, कस्तूरबा ट्रस्ट, हरिजन सेवक संघ, आदिवासी, सर्व सेवा संस्थाएँ, खादी-ग्रामोद्योग संस्थाएँ आदि के केन्द्रों पर कार्यकर्ता-सभा आयोजित की जायें। आन्दोलन के उद्देश्य स्पष्ट किये जायें, कार्यकर्ताओं को सर्वोदय-मित्र बनाया जाय तथा उनसे सामूहिक अभियान के लिए समय-दान माँगा जाय।

५. खादी-ग्रामोद्योग संस्थाओं से विशेष अपेक्षा इन संस्थाओं के माध्यम से कत्तिन, बुनकर, दर्जी, रंगरेज, तथा अन्य कारीगरों तक पहुँचा जाय। इनकी सभाएँ की जायँ, विचार समझाया जाय और उन्हें सर्वोदय-मित्र बनाया जाय।

६ आचार्यकुल, तरुण-शान्तिसेना, और शिक्षक संगठन के माध्यम से विद्यार्थी और शिक्षक-समाज तक पहुँचा जाय।

७. शासकीय एवं अर्द्ध शासकीय विभागों के कर्मचारियों तक विभागाध्यक्ष और कर्मचारी-संगठनों के माध्यम से पहुँचा जाय।

८. श्रमिकों के बीच उनके संगठनों के माध्यम से पहुँचा जाय। राजनैतिक पक्षों द्वारा निर्मित अलग-अलग श्रमिक संगठनों से अलग-अलग सम्पर्क करना होगा।

९. व्यापारी और उद्योगपतियों को सर्वोदय-सहयोगी बनाना सरल है। अतः इनसे इसी के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

१० नगरों में अनेक प्रकार के शैक्षणिक एवं धार्मिक ट्रस्ट होते हैं। इन ट्रस्टों से भी सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और इन्हें सहयोगी बनाना चाहिए।

११. ग्रामदानी-गाँवों की ग्रामसभाओं को सर्वोदय-सहयोगी तथा भूदान दाता और आदाता को सर्वोदय-मित्र बनाना

चाहिए।

रिपोर्ट : आगे काम की रिपोर्ट और अभियान-सम्बन्धी जानकारी सघ के प्रधान कार्यालय तथा सर्वोदय प्रेस सर्विस १२८, नितनाथ, इन्दौर-४ (म० प्र०) को अवश्य भेजिए।

सर्वोदय-मित्र-अभियान

(११ सितम्बर, १९७२ से ३० जनवरी, १९७३) सदस्यांक का प्रदेशवार विभाजन

१. महाराष्ट्र	१,५०,०००
२. मध्य प्रदेश	१,००,०००
३. उत्तर प्रदेश	१,००,०००
४. गुजरात	१,००,०००
५. बिहार	१,००,०००
६. आन्ध्र	५०,०००
७. कर्नाटक	५०,०००
८. तमिलनाडु	५०,०००
९. पंजाब	५०,०००
१०. हरियाणा	५०,०००
११. राजस्थान	५०,०००
१२. उत्कल	५०,०००
१३. दिल्ली	२५,०००
१४. हिमाचल	२५,०००
१५. बंगाल	२५,०००
१६. असम	२५,०००
१७. केरल	२५,०००
१८. जम्मू-कश्मीर	१०,०००
१९. नागालैण्ड	१०,०००
२०. गोआ	१०,०००
२१. पाण्डिचेरी	५,०००
२२. मेघालय	५,०००
२३. मणिपुर-त्रिपुरा	५,०००
२४. अरुणाचल	१,०००
२५. अन्य केन्द्र शासित प्रदेश	२,०००

नोट : यह विभाजन मात्र सूचक है। प्रदेश सर्वोदय मण्डल इसमें आवश्यक संशोधन कर सकते हैं। संशोधित सदस्यांक के बारे में हमें सूचित करने की कृपा करें।

नरेन्द्र दुबे

सहमंत्री, सर्व सेवा संघ

नशाबन्दी कार्यकर्ता सम्मेलन

इन्दौर, १८ अगस्त। प्राप्त जानकारी के अनुसार आगामी ९-१० सितम्बर को जयपुर (राजस्थान) में अ० भा० नशाबन्दी कार्यकर्ता सम्मेलन होना निश्चित हुआ है। यह सम्मेलन नशाबन्दी आन्दोलन के इतिहास के अत्यन्त नाजुक अवसर पर हो रहा है। गुजरात राज्य के अतिरिक्त शेष सभी राज्य सरकारों ने नशाबन्दी नीति की घोर अवहेलना की है और अपने प्रदेश की गरीब जनता का आर्थिक एवं सामाजिक स्तर ऊँचा उठाने के बजाय आबकारी कर (आमदनी) के मोह में शराब की दूकानों के द्वार उनके लिए खोल दिये हैं। राज्य सरकारों एवं राजनैतिक दलों के नशाबन्दी की नीति के प्रति उदासीनता दुर्भाग्यवश नयी पीढ़ी को भी मादक पेयों एवं नशीले पदार्थों के सेवन के लिए प्रोत्साहित किया है। ऐसी विकट परिस्थिति में नशाबन्दी विचार-विमर्श होगा।

सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों के लिए रेलवे-कंसेशन प्राप्त करने के लिए रेलवे विभाग से सम्पर्क किया जा रहा है।

दरभंगा जिला सर्वोदय कार्यकर्ताओं का त्रिदिवसीय शिविर

संस्कृत पाठशाला कपिलेश्वर स्थान में दिनांक ५, ६, ७ अगस्त '७२ को जिले के प्रत्यक्ष कार्यरत कार्यकर्ताओं का एक त्रिदिवसीय शिविर किया गया। इसमें ४४ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। शिविर-चर्चा के दरम्यान नकोदर सम्मेलन के निश्चय के सन्दर्भ में निर्णय हुए। स्मरण रहे सर्व प्रथम सहरसा बैठक के निश्चय, बाद में हवेली खड़गपुर, खादीग्राम और पटना की चर्चा के मुताबिक ही यह शिविर आयोजित हुआ। शिविर की अध्यक्षता श्री मनताराम मिश्रजी ने की। जनाधारित आयोजन व्यवस्था में मुख्य आयोजक श्री मदन शास्त्री रहे। श्री उदित नारायणजी, श्री रामचन्द्रजी श्री देवानन्दजी, श्री रामगुलाम ठाकुरजी ने सहयोग दिया।

बैठक में सर्वसम्मति से यह तय पाया गया कि—

(१) आन्दोलन के जिला स्तरीय संगठनों को सक्रिय व सक्षम बनाया जाय। सर्वोदय मैत्री मण्डल की स्थापना की गयी।

(२) सर्वोदय-कार्यकर्ता क्षेत्र तय करें और उनमें सघन रूप से काम करें।

(३) सर्वे की अवधि में भूदान की जमीन बचाने के लिए भूदान यज्ञ कमिटी के साथ सहयोग करें।

—श्री शकुन भण्डारी

चम्बल घाटी पुनर्वास बोर्ड

भोपाल, १८ अगस्त। मध्यप्रदेश सरकार ने चम्बल घाटी पुनर्वास बोर्ड की घोषणा कर दी है। इस बोर्ड के अध्यक्ष मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द सेठी होंगे तथा इसमें कुल ४० अन्य सदस्य रहेंगे।

सरकार ने चम्बल घाटी शान्ति मिशन के दो व्यक्तियों को बोर्ड में उपाध्यक्ष पद दिया है। कुल तीन उपाध्यक्ष होंगे, जिनमें मिशन की ओर से दो व्यक्ति स्वामी कृष्णानन्द एवं श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त तथा तीसरे शासन की ओर से विधिमंत्री रहेंगे। इसके अतिरिक्त मिशन के श्री सुब्बाराव बोर्ड के एक मंत्री होंगे। राजमंत्री श्री बाबूराम चतुर्वेदी को सदस्यों में सम्मिलित किया गया है।

सदस्यों में उच्चाधिकारियों, विधायकों, पत्रकारों तथा मिशन-कार्यकर्ताओं एवं प्रमुख समाज-सेवियों को सम्मिलित किया गया है। सदस्यों में, जो शासकीय प्रतिनिधि सदस्य के रूप में सम्मिलित

ंगये गये हैं, वे हैं :—मुख्य सचिव, पुलिस महानिरीक्षक, विशेष पुलिस महानिरीक्षक तथा वित्त, गृह, राजस्व, समाज-कल्याण, शिक्षा-विभागों के सचिव, उत्पादन आयुक्त, विशेष सचिव गृह व विशेष सचिव उद्योग, सम्भागायुक्त रीवाँ व ग्वालियर। ग्वालियर व रीवाँ में होनेवाली बैठकों में वहाँ के जिलाधीश व पुलिस अधीक्षक विशेष आमंत्रित होंगे। अशासकीय सदस्यों में सर्वश्री पहाड़सिंह, रघुवरदयाल, परसाईया, शीतलासहाय, महेन्द्रकुमार मानव, दशरथ जैन, सरदारसिंह, चौधरी रामाराम, भागवत साहू, चन्द्रकला सहाय, चोरड़िया आदि हैं। इनके अतिरिक्त मिशन के चार प्रमुख कार्यकर्ताओं सर्वश्री चतुर्भुज पाठक, तहसीलदारसिंह, महावीर सिंह, रामचन्द्र नवाल को लिया गया है। जिन दो पत्रकारों को बोर्ड में प्रतिनिधित्व मिला है, वे दैनिक नवप्रभात, ग्वालियर एवं दैनिक भास्कर के सम्पादक हैं।

शिक्षा में क्रान्ति दिवस

नयी दिल्ली, १० अगस्त। ९ अगस्त के ऐतिहासिक दिन को स्थानीय राजघाट अहिंसा विद्यालय से सम्बद्ध दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने शिक्षा में क्रान्ति दिवस के रूप में मनाया। लगभग ६० छात्र-छात्राओं का एक मौन जुलूस राजघाट स्थित गांधी समाधी से प्रारम्भ होकर नगर के विभिन्न मार्गों से होता हुआ वोट क्लब पहुँचा। सभी छात्र-छात्राएँ अपने हाथों में तख्तियाँ लिये हुए थे जिनपर आज की प्रचलित शिक्षा-प्रणाली को बदलने की माँग सम्बन्धी वाक्य लिखे हुए थे। छात्र-छात्राओं को राजघाट से वोट क्लब तक की अपनी ७ मील की यात्रा के दौरान हजारों लोगों को शिक्षा-नीति में परिवर्तन की माँग सम्बन्धी परचे बाँटे। जब जुलूस वोट क्लब के निकट पहुँचा तब प्रसिद्ध सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने जुलूस में भाग लेनेवाले साथियों को अपना आशीर्वाद दिया और आयोजन के प्रति अपनी शुभकामना प्रकट की। वोट क्लब पर विद्यार्थियों की ओर से एक माँग-पत्र पढ़ा गया जिसमें माँग की गयी कि शिक्षा-नीति में तुरन्त परिवर्तन किया जाये, नयी पीढ़ी के लिए नयी शिक्षा दी जाये, शिक्षा उत्पादक हो और उसका सम्बन्ध जीवन से हो, शिक्षा डिग्री प्रधान न हो, तथा सरकारी नियंत्रण से मुक्त हो। सभा के बाद चार लोगों का एक प्रतिनिधि मण्डल अपना माँग-पत्र प्रस्तुत करने के लिए शिक्षा मंत्रालय भी गया।

जयप्रकाश बाबू कानपुर सर्वोदय साहित्य स्टाल पर

कानपुर ७, अगस्त'७२। श्रीजयप्रकाश नारायण काशी से दिल्ली होकर चम्बल-घाटी जाते हुए आज रात कानपुर स्टेशन से गुजरे, नगर सर्वोदय कार्यकर्ताओं, शान्ति सैनिकों और तरुण शान्ति सैनिकों ने सर्वोदय साहित्य स्टाल पर उनसे भेंट की। विनयभाई ने उनसे सभी भाई-बहनों का परिचय कराया और स्टाल आदि प्रवृत्तियों का विवरण बताया। नगर सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री इकबाल बहादुर सिनहा ने नगर के काम की जानकारी दी।

स्मरण रहे कि सर्व सेवा संघ प्रकाशन के तत्त्वावधान में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र द्वारा कानपुर सेन्ट्रल स्टेशन पर फर्म प्रह्लादराय द्वारा निर्मित इस स्टाल का कार्यारम्भ गत अप्रैल से हुआ है। गत चार माह में स्टाल में कुल ८,९२६ ८७ रु० का साहित्य बिका।

पदयात्रा

हरियाणा प्रान्तीय सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में दिनांक १ अगस्त '७२ को वयोवृद्ध सर्वोदय नेता श्री ओमप्रकाश त्रिखा के मार्गदर्शन में दो पदयात्रा टोलियों का गठन किया गया। ये टोलियाँ आगामी २१ वें अखिल भारत सर्वोदय समाज सम्मेलन तक पदयात्रा करती रहेंगी।

अन्य कार्यकर्ताओं तथा ग्रामवासियों के अतिरिक्त संघ के सहमंत्री श्री यशपाल मित्तल, श्री सत्यप्रकाश शर्मा कार्यकारी अध्यक्ष, हरियाणा सर्वोदय मण्डल एवं माता श्रीमती लक्ष्मी त्रिखा भी शरीक रहे।

रतलाम जिले में ग्रामसभाओं का गठन

रतलाम जिले के रतलाम विकास खण्ड में २९ जुलाई से ५ अगस्त तक ग्रामदानी गाँव विरमावल के पटेल श्री तुलसीराम के नेतृत्व में ग्रामस्वराज्य-पदयात्रा सम्पन्न हुई। परिणामस्वरूप कुशलागर, रत्नाखेड़ा, विरमावल, जावड़ा, तलगारा, बख्तपुरा, भैसोला, मुंडोला ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभाओं का गठन किया गया व कार्य की योजना बनायी गयी। विशेषता यह रही कि यात्रा में रतलाम नगर के सर्वोदय प्रेमी प्रतिष्ठित व्यापारी श्री चम्पालाल पिरोदिया और श्रीमती धूलीबाई के अतिरिक्त अन्य छः सदस्य ग्रामदानी गाँवों के थे। पदयात्रा का अच्छा प्रभाव हुआ, प्रेरणा मिली व उत्साह बढ़ा। गाँवों के अच्छे किसान आगे आयेंगे तो ग्रामस्वराज्य का काम आगे बढ़ेगा, यह अनुभव इस यात्रा से हुआ है।

काम चाहनेवाले को काम मिलेगा

६ अगस्त को सेवाग्राम में आश्रम प्रतिष्ठान तथा सर्व सेवा संघ की कार्यकारिणी की मिलीजुली बैठक में रजत-जयन्ती समारोह में सेवाग्राम आश्रम का क्या योगदान हो, इस पर बातचीत करते हुए फैसला लिया गया है कि १५ अगस्त से आस-पास के क्षेत्रों में आश्रम के लोग घूम-घूमकर ऐसे व्यक्तियों की एक फेहरिश्त बनायेंगे जिनके पास जीविका या तो है ही नहीं और यदि है भी तो बहुत अधूरी। निर्णय किया गया है कि जो भी व्यक्ति काम चाहता है उसे एक अम्बर चरखा दिया जायेगा तथा बिना इस बात पर विचार किये कि उस चरखे के माध्यम से वह कितना सूत कातता है उसे दो रुपया रोज दिया जायेगा।

भूदान-यज्ञ : २८-८-'७२ लाइसेंस नं० ए १४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ११४

इसी तरह जिसे कातना नहीं आता उसे प्रशिक्षित किया जायेगा। प्रशिक्षण के दौरान उसे भी दो रुपया मजदूरी मिलती रहेगी तथा ऐसे व्यक्ति जो दिन भर में दो रुपये से ज्यादा का सूत कातेंगे उन्हें उसी हिसाब से मजदूरी दी जायेगी। सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान ने यह भी तय किया है कि स्वास्थ्य और स्वच्छता के विचार से आस-पास के गांवों में सर्वेक्षण किया जाय और जहाँ सम्भव हो वहाँ ग्रामपंचायत की मदद से और नहीं तो गाँववालों की मदद से गाँव-गाँव में सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण किया जायेगा।

जयप्रकाशजी द्वारा पूर्ण खादी के उपयोग का प्रण

नई दिल्ली, ९ अगस्त। भारतीय स्वाधीनता की २५ वीं वर्षगाँठ पर देश भर में एक लाख खादी पहननेवाले परिवारों को दर्ज करने की खादी कमीशन की योजना का स्वागत करते हुए प्रसिद्ध सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने यह प्रण व्यक्त किया है कि वे अपवाद-स्वरूप खादी के अतिरिक्त भी जिन कुछ वस्त्रों का उपयोग कर लेते थे उनका त्याग कर अब पूर्णतः खादी का ही उपयोग करेंगे।

खादी कमीशन को प्रेषित अपने सन्देश में श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि खादी ग्रामोद्योग कमीशन के नये अध्यक्ष श्री जी० रामचन्द्रन् की अपील—कि स्वराज्य की रजत जयन्ती के वर्तमान अवसर पर भारत के कम-से-कम एक लाख परिवार केवल खादी के वस्त्र का व्यवहार करने का प्रण करें—का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। मेरी पत्नी प्रभावती तो इस व्रत का पालन पिछले २५-३० सालों से कर ही रही हैं। मैं कुछ ऊनी या नायलन के वस्त्र, स्वेटर आदि जैसे वस्त्रों का व्यवहार करता रहा हूँ जो अक्सर खादी के नहीं होते। विदेश यात्राओं में भी केवल खादी के ही कपड़े पहनूँ, ऐसा नहीं हो पाता। तो अब रामचन्द्रनजी की अपील पर मैं भी प्रण करता हूँ कि केवल खादी के वस्त्रों का ही उपयोग जीवन भर करूँगा चाहे स्वदेश या विदेश में। मैं अपने देशवासियों से अपील करने का अधिकारी नहीं हूँ। मेरे अपने प्रण मात्र से किसी को यदि प्रेरणा मिले तो मुझे प्रसन्नता होगी।

तरुण शान्ति सेना की सदस्यता

प्रतिवर्ष आठ माह से तरुण शान्ति सैनिकों की सदस्यता का नवीनीकरण होता है। तरुण शान्तिसेना की सदस्यता के इच्छुकों से अपेक्षा है कि वे सदस्यता के लिए आवेदन-पत्र भरकर एक रुपये के डाक टिकट या मनीआर्डर के साथ तरुण शान्तिसेना, राजघाट, वाराणसी–१ (उ० प्र०) को शीघ्र भेजें।

यदि आवेदन-पत्र न हो तो उपर्युक्त पते से मँगाया जा सकता है।

जिन मित्रों ने जनवरी १९७२ के बाद आवेदन-पत्र भरकर भेजे हैं, उन्हें दुबारा भेजने की आवश्यकता नहीं है।

बेलगाँव के अखिल भारतीय तरुण शान्तिसेना सम्मेलन में :

(१) तरुण शान्ति सेना के लिए सदस्यता की आयु-सीमा बढ़ाकर १६ से ३० वर्ष कर दी गयी है।

(२) सदस्यता-शुल्क का विभाजन अब स्थानीय केन्द्र, जिला व राज्य में न किया जाकर पूरा वाराणसी कार्यालय को ही भेजा जायगा।

पत्र-व्यवहार का पता :

सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग

राजघाट, वाराणसी–१

तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक

राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर

एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ४९ • ४ सितम्बर, १९७२

सत्याग्रह का मूलभूत सिद्धान्त

१. मनुष्य कितना ही स्वार्थान्ध क्यों न बन गया हो और चाहे जैसे घातक अथवा कुटिल उपायों से काम लेने की उसकी तैयारी क्यों न हो, फिर भी अपने दिल की गहराई में उसे यह प्रतीति होती है कि सत्य ही सबसे श्रेष्ठ है और इसी कारण उसके मन में सत्य के लिए आदर और भय भी रहता ही है। मनुष्य मात्र के हृदय में सत्य के लिए यह जो गुप्त प्रतीति, आदर और भय पाये जाते हैं, वे सत्याग्रह के शस्त्र की बुनियाद हैं। इसीको मनुष्य के हृदय में विद्यमान 'अन्तःकरण की आवाज' कहा जा सकता है।

२. स्वार्थ के वश होनेवाला मनुष्य कुछ समय तक अन्तःकरण की इस आवाज की उपेक्षा करता है अथवा इसे दबा देने की कोशिश में रहता है; किन्तु यदि उसका विरोधी सच्चा सत्याग्रही सिद्ध हो, तो अन्त में उसे इस आवाज को सुनना ही पड़ता है।

३. उसके सामने यह आवाज अनेक रूप में प्रकट होती है : उसे अपने अन्याय का विश्वास हो जाय और उसके लिए पश्चात्ताप हो, यह उसका श्रेष्ठ प्रकार है। इसीका नाम 'हृदय-परिवर्तन' है।

४. किन्तु इससे कम तीव्रता के साथ भी यह आवाज उठ सकती है! उदाहरण के लिए, लोक-लाज के रूप में अथवा सर्वनाश के भय के रूप में।

५. जब सत्याग्रही का विरोधी कोई एक व्यक्ति नहीं, पर एक राष्ट्र, कौम या तंत्र होता है, तब ऐसा अन्तर्नाद उसके किसी अधिक चरित्रवान मनुष्य को पहले सुनाई पड़ता है और पहले उसका हृदय परिवर्तन होता है। बाद में वह मनुष्य अपने लोगों को यह आवाज सुनाता है और सत्य का पक्ष लेकर उनका विरोध भी करता है।

६. प्रत्येक सत्याग्रह का साध्य यह है कि विरोधी के हृदय को अन्तःकरण की आवाज के प्रति जाग्रत किया जाय। अन्याय को दूर करने के लिए विरोधी को जो-जो भी कदम उठाने चाहिए, वे सब इस साध्य में से, इसके परिणाम-स्वरूप, अपने-आप ही उठते हैं।

—कि० घ० मशरूवाला

'जायें तो जायें कहाँ ?'

— किशोरभाई शाह

१९६८ में ब्रिटेन की पार्लियामेण्ट ने एक ऐक्ट पास करके ब्रिटेन में रंग-भेद पर आधारित दो दर्जे की नागरिकता-नीति को स्वीकृति दे दी। पूर्वी अफ्रीका में बसने के लिए आ रहे एशियाई ब्रिटिश नागरिकों का प्रवाह रोकने के लिए उस समय की लेबर सरकार को ऐसे शर्मनाक कदम उठाने की आवश्यकता पड़ी। दो तरह के नागरिकों के बीच में एक बुनियादी असमानता का तत्व दाखिल करके हजारों लोगों को नागरिक होते हुए भी स्टेटलेसनेस (अनागरिकता) की अजीब परिस्थिति में एकाएक डाल दिया। इसवीं की छठी दशक के पहले वर्षों में पूर्वी अफ्रीकी देशों की स्वतंत्रता के बाद की व्यवस्था के लिए जब सलाह-मशविरा चल रहा था, तब इन देशों में बस रहे ब्रितानी और एशियाई मूल के लोगों के भविष्य का प्रश्न सामने आया। ये प्रवासी अपने-आप को असुरक्षित महसूस कर रहे थे। और उनको, खास कर गोरे लोगों को, निश्चित करने के लिए ब्रिटिश नागरिकता का विकल्प दिया। एशियाइयों को दिया नागरिक अधिकार शायद इसलिए था कि ब्रिटिश सरकार को यह अंदाा नहीं थी कि वे लोग ब्रिटेन में बसना पसन्द करेंगे, तथा गोरे और एशियाइयों के बीच भेद करने की आवश्यकता नहीं देखी। लेकिन यह अपेक्षा गलत निकली और बड़ी संख्या में कीनिया के एशियाई ब्रिटेन में अपना घर बनाने लगे। नतीजा यह हुआ कि २३ फरवरी १९६८ के दिन ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में इमाइग्रेशन बिल का प्रवेश हुआ, ऐक्ट बना। और एक देश ने अपने ही नागरिकों को मुक्त प्रवेश देने से इनकार किया। बिल-पेश होने और ऐक्ट बनने के बीच ब्रिटिश जनता और प्रेस ने एक जबर्दस्त आवाज उठायी। लेकिन यह आवाज असफल रही। ब्रिटिश जनता ने रंगभेद-नीति को इस आधुनिक युग में सरकारी तौर पर स्वीकार कर लिया।

इस ऐक्ट के फलस्वरूप हजारों एशियाई "ब्रितानी पारपत्रधारियों" की मानसिक स्थिति शरणार्थी की-सी हो गयी। और, हर देश उनको स्थान देने से घबराने लगा। यह एक ऐसी जमात खड़ी हो गयी, जिनको पूर्वी अफ्रीकी देशों ने काम करने की परवानगी देना बन्द करना शुरू कर दिया, ब्रिटेन और अन्य देशों ने सीमित संख्या में प्रवेश दिया और जिन देशों ने मुक्त प्रवेश दिया उन्होंने जीविका का साधन नहीं दिया। यह जमात दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गयी।

इस बीच उगाण्डा के राष्ट्रपति ईदी अमीन पर "खुदा की मेहरबानी" हुई और ८० हजार उगाण्डा के एशियाइयों का भविष्य एकाएक अन्धकारमय हो गया। अमीन को "खुदा ने एक स्वप्न में बताया कि ब्रितानी पारपत्रधारियों का उगाण्डा से निष्कासन उगाण्डा की प्रगति के लिए आवश्यक है।" राष्ट्रपति ने घोषणा की कि ९० दिन के भीतर वहाँ के ५७ हजार ब्रितानी पारपत्रधारियों को देश छोड़ना होगा, अब ये जायें तो कहाँ जायें ? ब्रिटेन ने देरी से "उदारता" के साथ अपने वादा को निभाना कबूल किया, अपने नागरिकों को अपने देश में प्रवेश देना स्वीकार किया। यह स्वीकृति मिली ही थी कि एक नयी समस्या खड़ी हो गयी। अमीन ने ब्रिटेन के १९६४ के कानून से भी एक कदम आगे बढ़ने की धमकी दी। उगाण्डा में बसनेवाले २३,००० उगाण्डा के एशियाई नागरिकों को भी देश छोड़ने

[शेष पृष्ठ ७६७ पर]
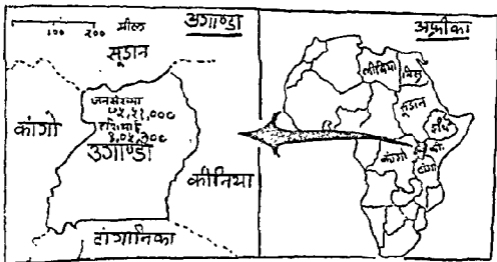
क्या कोई राष्ट्र नैतिक गुणों के बिना भी जीवित रह सकता है ?

● जयप्रकाश नारायण

किसी अविकसित और पिछड़े मुल्क में जहाँ विशाल और ज्यादातर निरक्षर आबादी हो, अनगिनत भिन्नताएँ और सामाजिक तथा आर्थिक विस्तृत असमानताएँ हों, लोकतंत्र सचमुच एक अपूर्व घटना है। और यह तथ्य कि, वह उन २५ वर्षों तक जीवित रहा हो, जिसमें तीन-तीन बड़ी लड़ाइयां लड़ी जा चुकी हों, कम-से-कम दो भयंकर अकाल पड़ चुके हों, अमीर गरीब के बीच की खाई बढ़ती गयी हो, करीब आधी आबादी जीवन-निर्वाह स्तर के भी नीचे रह चुकी हो, अनेकानेक राजनीतिक पार्टियाँ रही हों, जिनका नेतृत्व देश के बजाय स्वयं अपने से अधिक मतलब रखनेवाले झगड़ालू राजनीतिज्ञों द्वारा होता रहा हो; राजनीति और सरकार के सभी स्तरों को दूषित करनेवाला द्रुतगामी भ्रष्टाचार रहा हो, बढ़ती बेरोजगारी रही हो, शिक्षा के क्षेत्र में निपट अस्पष्टता और दिशा तथा उद्देश्य का अभाव रहा हो जिसके परिणामस्वरूप गलत ढंग से शिक्षित प्रमादी युवकों की संख्या चौंकानेवाले ढंग से बढ़ती रही हो और, जिसमें इसी तरह की अनेक बुराइयां रही हों, एक कौतुक के सिवाय और कुछ नहीं है।

इस कौतुक को कई तरह से समझाने की कोशिशें की गयी हैं। यहाँ उन सबका जिक्र करने की जगह नहीं है। मेरा स्वयं अपना स्पष्टीकरण तेहरा है। पहली बात तो यह है कि आमतौर पर हिन्दुस्तान की आजादी गांधीजी द्वारा बताये गये शान्तिपूर्ण सामूहिक प्रयास द्वारा पायी गयी, जिससे कि बना-बनाया लोकप्रिय एक ऐसा आधार तैयार हो गया जो लोकतन्त्र के लिए जरूरी है। मुझे कोई शक नहीं है कि यदि हिन्दुस्तान ने अपनी आजादी हिंसा के जरिये पायी होती तो ऊपरी ढांचे के बावजूद लोकतंत्र किसी-न-किसी प्रकार की तानाशाही का महज एक आवरण मात्र ही रहता।

दूसरी व्याख्या जो मुझे सूझती है वह गांधीजी के नेतृत्व में एक सुविधा-सम्पन्न शहरी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उस सार्वजनिक सामूहिक संगठन के रूप में बदल जाने में निहित है जिसकी लाखों सदस्य-संख्या और शाखाएँ सारे देश में और दूर-दूर गाँवों तक पहुँच गयी हों। आजादी मिलने पर लोकतंत्र की मशीन चलाने के लिए इससे जनता को एक बनी-बनायी पार्टी मिल गयी। इसके अलावा उन दिनों कांग्रेस अपनी सबसे निचली कमेटी से लेकर सबसे ऊँची कमेटी तक जिस तरीके से काम करती थी वह स्वयं अपने में सर्वसाधारण व हजारों राजनीतिक आन्दोलनकारियों के लिए लोकतंत्र के प्रशिक्षण का एक माध्यम थी। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की वे कई जोशीली और कभी-कभी तूफानी बहसें मुझे अभी तक याद हैं जब उस समय के हम युवा वामपंथी-समाजवादी न केवल सरदार पटेल जैसे दिग्गजों से ही झड़पते थे बल्कि स्वयं गांधीजी के विचारों और कार्यक्रमों तक को निःशंक चुनौती दिया करते थे। और हमलोगों जैसे अपने आलोचकों से भी गांधीजी जैसा व्यवहार करते थे वह लोकतंत्र का एक ऐसा पाठ है जिसे भूला नहीं जा सकता। इस पाठ की अपेक्षा है कि विरोध को न केवल बर्दाश्त किया जाय बल्कि उसे पूरी आजादी दी जाय और उसके साथ सम्मान का व्यवहार किया जाय।

मेरी तीसरी व्याख्या जो शायद सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, उस सार्वजनिक व्यवहार और लोकतांत्रिक मूल्यों में प्राप्त की जा सकती है जो दादा भाई नौरोजी से लेकर महात्मा गांधी तक के राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान प्रस्थापित हुए थे। आजकल यह कहना एक फैशन हो गया है कि राजनीति में नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं है और लक्ष्य की प्राप्ति में जो कुछ भी सहायक हो जाय वह नैतिक ही है। लेकिन लोकतंत्र और उससे भी कहीं अधिक तौर पर लोकतांत्रिक समाजवाद, जीवन और सार्वजनिक व्यवहार के कुछ पारस्परिक रूप से स्वीकृत मूल्यों के आधार के बिना और किसी रूप में ठीक से चल नहीं सकता।

अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि इन तीनों पहलुओं की दृष्टि से पिछली चौथाई शती में निरन्तर ह्रास हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप हमारे लोकतंत्र का भविष्य गम्भीर रूप से सन्देहास्पद बन गया है। १९४७ में सत्ता में आने के शीघ्र ही बाद कांग्रेस का आन्दोलनात्मक रूप समाप्त हो गया (यों इसके सम्बन्ध में गांधीजी के अन्य विचार थे)। फिर भी, इसने अपना लोकतांत्रिक स्वरूप, सार्वजनीक संगठनात्मक ढांचा और आन्तरिक जीवनी शक्ति काफी सीमा तक बनाये रखी। यह सब पिछले दो या तीन सालों में एकदम बदल गया है। कहने में यह जरा विरोधाभास जरूर लग सकता है, फिर भी, १९७१-७२ की चुनाव सम्बन्धी अपनी भारी विजयों के बावजूद कांग्रेस आज एक खोखले आवरण से कुछ थोड़ा ही अधिक रह गयी है। इसमें कोई अन्दरूनी ताकत या माद्दा नहीं है। आज वह पैसे और अपने नेता के लोक-आकर्षक व्यक्तित्व के सहारे चलायी जा रही है। इसमें अब महज नाम मात्र का या कहिये कोई अन्दरूनी लोकतंत्र शेष नहीं रह गया है। इसके राजनेता या मुख्यमंत्री ज्यादातर पसन्द किये गये लोग हैं बजाय इसके, कि वे स्वयं नेता के रूप में जाने-माने लोग हों। सच्चाई तो यह है कि ऐसे राष्ट्रीय और राज्यस्तर के

नेताओं के, जिनका कि पार्टी और लोगों के बीच अपना कोई आधार है, पैर के नीचे से धरती खिसकाने की एक व्यवस्थित कोशिश की गयी है। यहाँ तक कि, जब नेहरूजी का पार्लियामेण्ट में उनकी बेटी के आज के मुकाबले कहीं अधिक बहुमत था, फिर भी, संगठन के ऊँचे व महत्त्व रखनेवाले लोगों को छाँट देने की ताकत उनमें नहीं थी। उन्हें भी तथाकथित कामराज योजना जैसे किसी टेढ़े तरीके का ही सहारा लेना पड़ा।

आज जो स्थिति है वह इन्दिराजी मार्का नेतृत्व के अनुकूल हो सकती है, लेकिन एक लोकतांत्रिक संगठन के रूप में कांग्रेस और सच पूछा जाय तो स्वयं भारतीय लोकतन्त्र के लिए यह बरबादी का नुस्खा है। क्योंकि जो संगठन खुद अपने अन्दरूनी मामलों में लोकतन्त्र का प्रयोग नहीं करता वह राष्ट्र के मामलों में लोकतन्त्र के संरक्षण से अपना बड़ा लगाव महसूस करेगा, यह उम्मीद रखना तर्कसंगत नहीं है। 'लोकतांत्रिक केन्द्रीय शासनवाद' को जो नेता के अधिनायकवाद के लिए कहने का एक सरल रूसी ढंग है और जिसकी तरफ इन्दिराजी की कांग्रेस जानबूझकर ले जायी जाती लग रही है, यदि बेरोक-टोक छोड़ दिया गया तो वह भारतीय लोकतन्त्र को निश्चित ही अपने साँचे में ढाल लेगा।

इस प्रेरणा या बहाव के—मुझे पहली ही चीज लग रही है—दो परिणाम हैं, पहला, लोकतन्त्र के लिए और दूसरा, समाजवाद के लिए। जहाँ तक पहले का सम्बन्ध है, परिणाम यह हुआ है कि असहमति का अब न कोई मूल्य है न कोई स्वागत। यहाँ इस बात पर जोर देने की जरूरत है कि असहमति यानी दूसरे शब्दों में 'विचार की स्वतंत्रता' केवल एक 'बौद्धिक विलास' नहीं है जैसा कि हमारे कम्युनिस्ट मित्र कहना पसन्द करेंगे, बल्कि एक आवश्यक उत्प्रेरक माध्यम है जिसके प्रति समाज अपनी उन्नति, अपनी क्रान्तियों और अपनी तकनीकों तथा वैज्ञानिक प्रगतियों के लिए ऋणी है। बिना असहमति के समाज अवश्य ही गतिहीन और मृतप्राय बन जायगा। लेकिन दुर्भाग्य से हमारी आज की बौद्धिक दुनिया में भय का एक प्रकार का घातक वातावरण बन रहा है। सभी विश्वविद्यालयों और शोध-संस्थानों के पूर्णत या अधिकांशतः सरकारी अनुदानों पर निर्भर रहने के कारण इस व्याप्त वातावरण में शिक्षक या शोधकर्ता अपनी स्वतन्त्र राय व्यक्त करने में समान रूप से बाधा अनुभव करते हैं। थोड़े-से लोग जो हिम्मत करते भी हैं उन्हें किसी न किसी रूप में भुगतना ही पड़ता है। दूसरी ओर, जो सरकार के अनुगामी हैं, वे सरकार द्वारा अनेक प्रकार से पुरस्कृत हो सकते हैं। इस स्थिति को एक निजी बातचीत में एक विद्वान ने बड़े ही मेधावी ढंग से इस प्रकार व्यक्त किया : 'बौद्धिक व्यक्ति के सामने आज दो विकल्प हैं : (अ) यदि वह अपनी बौद्धिक प्रामाणिकता सुरक्षित रखना चाहता है तो उसे पुराने ब्राह्मणों की तरह सादे जीवन का आदर्श अपनाना होगा। (जिसके सम्भवत अन्तिम ज्वलन्त उदाहरण भारतरत्न स्वर्गीय डा० पांडुरंग वामन काने थे जिन्होंने धर्मशास्त्रों पर अपनी प्रसिद्ध रचना बम्बई के एक १०'×१२' आकार के मामूली कमरे में बैठकर की और जिन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय के उपकुलपति होते हुए और मोटरकार के इस्तेमाल का अधिकार रखते हुए भी ट्राम द्वारा ही दफ्तर जाना ठीक समझा)। (ब) यदि वह विश्वविद्यालय अनुदान-आयोग के वेतनमान द्वारा प्रदत्त सामान्य सुविधाओं की कामना रखता है तो देर-सवेर उसे सरकार के अनुरूप चलने की भी तैयारी रखनी चाहिए।

प्रेस के सम्बन्ध में तो स्थिति और भी खराब है। समाचार पत्रों की स्वतंत्रता में वैसे मुसलमखुल्ला कोई कमी नहीं की जाती, फिर भी, सरकार के पास कर्मनिष्ठ सम्पादकों को न सही लेकिन मालिकों व प्रकाशकों को अनुशासन में रखने के अनेक अन्दरूनी तरीके हैं। इन तरीकों का इस्तेमाल बढ़ता ही जा रहा है, और इसका परिणाम समाचार-पत्रों व पत्र-पत्रिकाओं के कलेवर पर देखा जा सकता है। कुछ साहसी अपवाद कबतक चल पायेंगे, यह इस बात पर निर्भर है कि जिन लोगों का स्वतन्त्र चिन्तन व विचार में विश्वास है वे करते क्या हैं। प्रयोजन अभी हाथ से एकदम निकल नहीं गया है। लेकिन उसे एक सचेत, साहसपूर्ण और दृढ़-निश्चय सम्पन्न लड़ाई के बिना बचाया भी नहीं जा सकता। थोड़े-से स्वतन्त्र व वीर व्यक्ति यदि सतर्क रहकर सम्मिलित रूप से विरोध करते हैं तो वे इसकी और इसके साथ-साथ भारतीय लोकतन्त्र की भी रक्षा कर सकते हैं।

समाजवाद के परिप्रेक्ष में देखा जाय तो एक लोकतान्त्रिक समाजवादी दल की कीमत पर ''लोकतान्त्रिक शासनवाद'' या वैयक्तिक नेतृत्व की तरफ से जाने का परिणाम यह हुआ है कि राजनीतिक शक्ति तो इस तथाकथित ''वचनबद्ध'' व सुविधा सम्पन्न नौकरशाही के पास है ही, आर्थिक शक्ति भी उसीके हाथों में चली जा रही है और इस वर्ग का सर्वोच्च शासन-विभाग स्वाभाविकतः प्रधान मंत्री का सचिवालय ही है। प्रचार के तौर पर तो लोकतांत्रिक समाजवाद का शोर हमें अभी भी सुनाई पड़ता है। लेकिन वर्तमान नौकरशाहीवाले समाजवाद में ऐसा कुछ भी नहीं है जो किसी ऐसे लोकतांत्रिक समाजवाद से मिलता-जुलता हो, जिसके लिए विकेन्द्रीकरण, औद्योगिक लोकतन्त्र, लोगों विशेषकर सुविधा-सम्पन्न—व्यक्तियों के समाजवादी मूल्यों और उन्हें जीवन में प्रयुक्त करने की आवश्यकता की दृष्टि से शिक्षा तथा अन्य कई चीजों की जरूरत है। साफ है कि यह एक कठिन रास्ता है और इसका प्रधान मन्त्रीवाली राजनीति से मेल नहीं बैठता। सवाल यह है कि क्या नौकरशाहीवाला समाजवाद सफल हो सकता है? मुझे पंदा

लगता है यह नहीं हो सकता, जब तक कि इसका पूरा तर्क न स्वीकार कर लिया जाय; यानी सर्वसत्तावाद को ही अनिवार्य न मान लिया जाय। क्या यह देश यह होने देगा ? क्या प्रधान मन्त्री स्वयं इसका पूरा अर्थ समझती हैं ? या क्या पुराने कुछ सदस्यों या कुछ अन्य इने-गिने लोगों को छोड़कर कांग्रेस के उनके सहकर्मी ही इसे समझते हैं ?

अब अन्तत: स्वातंत्र्य आन्दोलन के दौरान विकसित लोकतान्त्रिक मूल्यों और लोक-व्यवहार के प्रतिमानों, जिन्होंने मेरी दृष्टि से अपना लोकतन्त्र बचाये रखने में बड़ी मदद की है, की ओर रुख करने पर वर्तमान स्थिति बड़ी ही निराशाजनक लगती है। इसमें शक नहीं कि स्वतन्त्रता के बाद इन मूल्यों में बराबर गिरावट आयी है लेकिन इधर आकर तो भयंकर पतन हुआ है। अब तो स्थिति यह है कि जब तक कोई भी साधन साध्य की पूर्ति में सहायक बनता है तब तक वह ठीक माना जाता है। यानी किसी भी बात की अब मनाही नहीं है।

हमारे जैसे पिछड़े समाज में जहाँ लोकतन्त्र का कोई दृढ़ रूप न विकसित हुआ हो तथा जिसमें किसी विकसित समाज की बराबरी करने की शक्ति न हो, निपट कूटनीति के परिणाम देश के लिए विनाशकारी ही होंगे। श्री मार्लिग्य जैसी घटना—यह तो कोई नहीं कहेगा कि हिन्दुस्तान के मुकाबले ब्रिटेन की राजनीति कम आधुनिक है—इस देश में कोई सोच नहीं सकता। इसी प्रकार राजनीतिक और प्रशासनिक भंडाफोड़ की भी बात यहाँ कोई सोच नहीं सकता। उदाहरण के लिए जैक एण्डरसन केस लीजिए, जैसा कि पश्चिमी प्रेस समय-समय पर उद्घाटित करता रहता है। मिसाल के तौर पर, क्या कोई पत्रकार 'नागरवाला केस' की तह तक पहुँच कर उसे लोगों के सामने उद्घाटित करने की उम्मीद कर सकता है ?

हाल के वर्षों में चुनाव-फण्ड जिस तरह इकट्ठा किये गये हैं, चुनाव में जो पैसा बहाया गया है, लम्बे-चौड़े पैमाने पर फर्जी नाम घुसेड़ देने की जो धांधलियाँ हुई हैं, "चुनाव-बूथों" पर कब्जा कर लेने की जो घटनाएँ हुई हैं, ये और ऐसे ही अन्य तरीके चुनाव को मात्र औपचारिकता बना देने पर तुले हुए हैं।

यह द्रुतगामी राजनीतिक भ्रष्टाचार दूसरों को भी प्रभावित करनेवाला व पतनकारी है, क्योंकि किसी भी अविकसित समाज में राजनीति का तो दबदबा रहता ही है। राष्ट्रीय जीवन के सारे विस्तार, यानी व्यापार का क्षेत्र, वह चाहे प्राइवेट हो या पब्लिक, प्रशासन पेशे, शिक्षा, यहाँ तक कि रीति-रिवाज, तौर-तरीके और वैयक्तिक सम्बन्ध, सभी पर यह हावी रहती है। लोकतन्त्र और समाजवाद की बात छोड़िए, सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या कोई राष्ट्र नैतिक गुणों के बिना भी जीवित रह सकता है ? सिर्फ राजनीतिज्ञों को ही नहीं, हम सभी को इसका जवाब देना है।

सौजन्य 'द रैडिकल ह्यूमैनिस्ट'
अगस्त, १९७२
रूपान्तरण रामभूषण

'लोकबन्धु चारित्र्यवान व्यक्ति थे'

● विनोबा

हमारे साथी अंग्रेज भाई क्रिश्चियन होते हुए भी सब धर्मों के लिए समान आदर रखनेवाले डोनाल्ड ग्रुम, जिनको हमने 'लोकबन्धु' नाम दिया था, जैसे एण्ड्रूज को गांधीजी 'दीनबन्धु' कहते थे। वह 'लोकबन्धु' शब्द रोज हमारे स्मरण में होता है—'लोकबन्धु' लोकनाथो माधवोभक्तवत्सलः' विष्णुसहस्रनाम में है। उनकी मृत्यु हुई, एक दुर्घटना में। दिल्ली के नजदीक हवाई जहाज गिर गया, उसमें कई लोग मरे, उनमें डोनाल्ड ग्रुम भी थे।

वे बहुत ही चारित्र्यवान व्यक्ति थे। मेरे सुझाव पर बंगलूर में काम करते थे। परन्तु फिर उनको इंग्लैण्ड जाना जरूरी हुआ तो वे वहाँ गये। लेकिन वहाँ भी भूदान, ग्रामदान-विचार का प्रचार किया, फिर अमेरिका गये थे। वहाँ भी इसी विचार का प्रचार उन्होंने किया। बाद में वे आस्ट्रेलिया गये थे, और वहाँ रहने लगे थे। वहाँ से उनके पत्र आते थे। उससे पता चलता था कि वे वहाँ भी सर्वोदय के विचार का ही प्रचार कर रहे थे। अभी अगर वे जीवित रहते तो यहाँ मुझसे मिलने आते।

उन्होंने 'ईशावास्य उपनिषद' का अंग्रेजी में अनुवाद किया है। उसका प्रचार भी वे करते थे। वे बहुत लोकप्रिय हो गये थे। वे मुझसे दस साल छोटे होंगे।

अब यह सवाल आता है कि ऐसे लोग चले जाते हैं, उनकी मृत्यु होती है तो उनका काम खत्म होता है क्या ? अगर वे भगवान में लीन हुए हों तो कुल दुनिया में छा जायेंगे। कुल दुनिया पर उनका अव्यक्त परिणाम होगा। अगर वे भगवान में लीन नहीं हुए हों तो अपना काम पूरा करने के लिए देहधारण करेंगे। मैं तो उम्मीद करता हूँ कि वे भारत में जन्म लेंगे।

उनका स्मरण सबको होगा। बाबा को तो रोज ही रहेगा। यहाँ विष्णु-सहस्रनाम रोज बोला जाता है। उससे उनका स्मरण रहेगा।

वे मुझे हिन्दी में पत्र लिखते थे। नीचे "लोकबन्धु" ऐसा हस्ताक्षर करते थे।

ऐसे व्यक्ति की मृत्यु का दुःख करना व्यर्थ है। बल्कि उनकी आत्मा को शान्ति मिले ऐसी हम प्रभु से प्रार्थना करें।

ब्रह्मविद्या मन्दिर
ता० १२-८-'७२

ग्रामीण राजनीति में हिंसा

● डा० अवध प्रसाद

[डा० अवध प्रसाद ने मुसहरी (मुजफ्फरपुर) प्रखण्ड का पिछले दिनों ग्रामीण हिंसा के कारणों का विधिवत शास्त्रीय अध्ययन किया है। उसी अध्ययन का एक अंश हम यहाँ दे रहे हैं जिसमें यह दिखाया गया है कि ग्रामीण राजनीति को कौन-कौन से तत्व प्रभावित करते हैं।—सं०]

ग्रामीण जीवन में राजनीति के नाम पर होनेवाली हलचलों को राजनीति शास्त्र की परिभाषा में परिभाषित करना कठिन है। ग्राम-राजनीति का आधुनिक राजनीतिशास्त्र की परिभाषा के अनुरूप न तो संगठन ही है और न क्रियाएँ ही। यहाँ की राजनीतिक सक्रियता में इन तत्वों का समावेश पाया जाता है

१. जातिगत भेद।

२. परम्परागत रूढ़ियाँ।

३. ग्रामीण समस्याएँ।

४. राजनीतिक विचारधारा।

५. आपसी सम्बन्ध।

६. स्वार्थ।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर ही ग्रामीण राजनीति पर विचार किया जा सकता है। पहले इस बात पर विचार करें कि ग्रामीण राजनीति को उपरोक्त बातें किस रूप में प्रभावित करती हैं।

जातिगत भेद

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, ग्रामीण जीवन में, या यों कहें कि पूरी समाज व्यवस्था में, जातिगत संकीर्णता की जड़ें काफी मजबूत हैं। और ये मजबूत तथा गहरी जड़ें गाँव की राजनीति को हर स्तर पर प्रभावित करती हैं। इसका प्रकट प्रभाव मतदान के समय आसानी से देखा जा सकता है, जबकि एक ही जाति के कई उम्मीदवार हों। तब उपजातीय समीपता का ध्यान रखा जाता है। वैसे जाति के आधार पर कोई संगठन इस क्षेत्र में सक्रिय नहीं है, परन्तु क्रियाएँ इसी संकीर्णता से प्रभावित होती हैं। इस क्षेत्र में ग्रामीण राजनीति पर राजपूत तथा भूमिहार जाति का प्रभाव है, इस कारण दो बातें देखने में आयीं। राजपूत तथा भूमिहार जाति हर स्तर पर विभाजित है। अन्य जातियाँ उपरोक्त जातियों के प्रभाव के अनुसार विभाजित होती हैं। अन्य जातियाँ किसके प्रभाव में हैं यह व्यक्ति के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है।

जाति के सन्दर्भ में ग्रामीण हलचलों को देखने पर दो प्रकार की हलचलें देखी जा सकती हैं। एक, ग्राम-स्तर पर या यों कहें बाहर की राजनीति से प्रभावित हलचल। दो, पूर्णरूप से एक जाति तक सीमित राजनीतिक हलचल। इस क्षेत्र में क्षेत्रीय स्तर पर जातिगत संगठन नहीं है। कुछ लोगों का जातिगत संगठन से सम्बन्ध अवश्य है। जहाँ तक जातिगत भेद के कारण राजनीतिक तनाव को बढ़ावा देने का प्रश्न है, उच्च जाति के लोग इसमें नेतृत्व करते हैं। ये लोग उच्च तथा निम्न सभी स्तर की जातियों को विभाजित कर स्वार्थ साधना चाहते हैं।

ग्राम-स्तर के संगठन को जाति रोजमर्रा के कार्यों को प्रभावित करती है। गाँव में कई प्रकार की प्रवृत्तियाँ चलती हैं। इन प्रवृत्तियों में पंचायत का प्रमुख स्थान है। इसके अलावा विद्यालय, सरकारी सुविधाओं की प्राप्ति के लिए बने संगठन तथा स्वेच्छा से बने संगठन मुख्य हैं। मुसहरी तथा पारो प्रखण्ड में पंचायत, विद्यालय तथा अन्य संगठनों पर जातिगत दबाव को आसानी से देखा जा सकता है। यहाँ संगठन में जाति के प्रवेश (पदाधिकारी-सदस्य) के संख्यात्मक पहलू छोड़कर इस बात को जानने का प्रयास किया गया कि संगठन पर जाति का दबाव कितना है। क्योंकि यह देखने को मिला कि अपने लाभ के लिए अन्य जाति के लोगों को भी आगे बढ़ाया जाता है। प्रयास यह रहता है कि हरिजन वर्ग विभिन्न संगठनों में नहीं आयें। इसके लिए हरिजनों को दबाने का हर सम्भव प्रयास किया जाता है। पहले तो रूढ़िगत संस्कार से हरिजन आगे आते नहीं; फिर, यदि आगे आने का प्रयास करते भी हैं तो उच्च जाति के लोग इन्हें आने नहीं देते। हरिजनों को संगठन में न आने देने के लिए कई उपाय किये जाते हैं। इनमें मुख्य ये हैं :

१. जाति का दबाव डाला जाता है।

२ यदि उनमें जागृति आ गयी है तो किसी-न-किसी प्रकार से परेशान किया जाता है, उनके ऊपर गलत मुकदमा चलाया जाता है, तथा आपस में लड़ाया जाता है।

३ प्रलोभन दिया जाता है।

वर्तमान व्यवस्था का जो रूप है, उसमें सामान्य ढंग से निम्न वर्गीय लोग *संगठन में नहीं आ पाते। पंचायत के* चुनाव तथा विद्यालय आदि की कार्यकारिणी में शामिल होने की बात को ही लें। इन सबमें आगे आने के लिए पैसा तथा प्रतिष्ठा आवश्यक तत्व है, क्योंकि जाति के आधार पर ये लोग पहुँच नहीं सकते। परिस्थिति के अध्ययन से इस बात की पुष्टि हुई कि वर्तमान ढाँचे में हरिजन तथा अन्य निम्न मध्यमवर्गीय लोगों को गाँव की राजनीति के संगठन में प्रवेश आसान नहीं है; असम्भव है, ऐसा नहीं कह सकते। इस क्षेत्र में निम्न मध्यम वर्ग तथा हरिजनों की जो स्थिति है, उसपर से कुछ बातें सामने आती हैं।

इस वर्ग में *जागृति आ रही है।* वे यह समझने लगे हैं कि हमारी जाति का भरपूर शोषण किया गया है। इस अमानवीय स्थिति को दूर करने के लिए प्रयास की आवश्यकता को भी वे समझते हैं। जागृति आयी है। इस कारण वे गाँव की राजनीति में हिस्सा लेने लगे हैं।

इस स्थिति में दोनों वर्गों में संघर्ष तथा सम्बन्ध की दूरी बढ़ती जाती है। निम्न मध्यम वर्ग तथा हरिजन दो प्रकार के प्रयास करते हैं :

एक, वर्तमान संगठन में प्रवेश के लिए प्रयास।

दो, हिंसक आन्दोलन की ओर झुकाव।

सर्वेक्षित क्षेत्र में पिछले ३-४ वर्षों में राजनीति इस रूप में बदली है कि निम्न मध्यम वर्ग तथा हरिजन वर्तमान व्यवस्था से ऊब गये हैं। यह विश्वास बलवती होती जा रही है कि वर्तमान ढांचे में उनका हित नहीं है। हित की खोज में इस क्षेत्र के हरिजन तथा कुछ उग्र विचार के युवकों का सम्पर्क हिंसक विचार से हुआ। हाल के वर्षों में, हिंसक घटनाओं का जो दौर प्रारम्भ हुआ है इससे साफ जाहिर होता है कि इनके मन में हिंसा के प्रति विश्वास मजबूत होता जा रहा है। क्षेत्र में घटी घटनाओं का विश्लेषण अन्यत्र किया गया है।

परम्परागत रूढ़ियाँ

ग्रामीण राजनीति परम्परागत रूढ़ियों से सीधा प्रभावित होती है, हालांकि युवा वर्ग उन रूढ़ियों को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं है। रूढ़िगत दृष्टि से उच्च जाति के लोग निम्न वर्ग पर दबाव डालते हैं। इस प्रश्न को लेकर दोनों (उच्च तथा निम्न वर्ग) में व्यावहारिक स्तर पर तनाव उत्पन्न होता है। इसका एक उदाहरण पर्याप्त है। क्षेत्र में ग्रामदान आन्दोलन के सिलसिले में ग्रामसभा के गठन की बात आती है। इसमें हर जाति तथा स्तर के लोग समान स्तर पर आ जाते हैं। उच्च जाति के लोगों में यह भय है कि ग्रामसभा में हरिजन भी हमारे बराबर का हो जायेगा। यह भय इस स्तर तक है कि उच्च वर्गीय प्रतिष्ठित किसान हरिजनों को भूमि देने तथा बीघा-कट्ठा निकालने के लिए तो तैयार हो जाते हैं पर ग्रामसभा में शामिल नहीं होते। देखने में यह आया कि ग्रामदान की एक शर्त—ग्रामसभा का गठन—उच्च जाति के लोगों को अधिक भयभीत करता है। इस भय के पीछे पारम्परिक रूढ़ियाँ हैं। उच्च वर्ग के लोग गाँव का नेतृत्व अपने हाथ से निकलकर हरिजनों में जाने देने की मानसिक स्थिति में नहीं हैं। परन्तु हरिजन तथा निम्न मध्यम वर्ग के लोग नेतृत्व-प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हैं। परम्परागत रूढ़ियाँ भी ढीली हो रही हैं।

ग्रामीण समस्याएँ

गाँव की समस्याओं को सुलझाने के लिए राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण किया जाता है। ग्राम-राजनीति को ग्राम-समस्या के साथ विचार करने पर इस बात की पुष्टि होती है कि समस्या गौण और आपसी सम्बन्ध तथा स्वार्थ मुख्य निर्णायक तत्व बन जाते हैं। आपसी सम्बन्ध तथा स्वार्थ को लेकर गाँव कई गुटों में बँट जाता है और वह सीधे गाँव की राजनीति को प्रभावित करता है। इन दोनों बातों को लेकर बननेवाले गुटों में आपसी प्रतिस्पर्द्धा के कारण ग्राम-स्तर पर किये जानेवाले कार्यों में भरसक रुकावट डालने का प्रयास किया जाता है। हर गुट अपने स्वार्थ के लिए संगठन पर हावी होना चाहता है और उसका उपयोग करना चाहता है।

राजनीतिक विचारधारा

जहाँ तक राजनीतिक विचारधारा का प्रश्न है, ग्राम-स्तर पर उसका धुँधला चित्र अवश्य दीखता है, परन्तु उस विचार-धारा पर जाति, गुट तथा स्वार्थ का रंग इतना गहरा है कि मूल रंग दिखाई नहीं देता। ऐसा लगता है कि जिस राजनीतिक विचार से स्वार्थ सधे उसे स्वीकार कर लिया जाय। मतदान के समय विभिन्न दलों के मिले मतों को उनके विचार के समर्थकों की संख्या का अन्दाज नहीं लगाया जा सकता है।

हर विचार के लोग इस क्षेत्र में हैं। कांग्रेस, सो० पा०, जनसंघ, कम्युनिस्ट समर्थक लोग भी मिलेंगे। मार्क्सवादी लेनिनवादियों की संख्या भी (गुप्त रूप से) अच्छी मानी जा सकती है। स्वार्थप्रेरित यह राजनीतिक विचार ग्राम्य-जीवन में हिंसा फैलाने में काफी सहायक होती है। सर्वेक्षण के बाद यह बात सामने आयी कि एक भी राजनीतिक दल ऐसा नहीं है जो अपने विचार का प्रचार मान्य लोकतांत्रिक पद्धति से करे। सभी दल मतदान के समय मुखर होते हैं। मार्क्सवादी लेनिनवादी विचार के लोग भूमिगत होकर अपने ढंग से काम करते हैं।

आपसी सम्बन्ध

आज भी गाँव का नेतृत्व उच्च जाति के हाथों में है। गाँव में पंचायत, विद्यालय, पुस्तकालय तथा आर्थिक कार्यों को लेकर जिस प्रकार के सम्बन्ध बनते हैं उनसे ये संस्थाएँ सीधे प्रभावित होती हैं। गाँव का राजनीतिक जीवन *जिन तत्वों से प्रभावित* होता है उस पर गौर करने से इस बात का अन्दाज सहज ही लग जाता है कि ग्रामराजनीति अस्वस्थ स्थिति में है। राजनीति गाँव को जोड़ने के बजाय तोड़ने में अधिक सहायक है। एक बात यह भी देखने को मिली कि जिन लोगों का सम्बन्ध बाहर की राजनीति से है, तथा जो ग्राम-राजनीति को सही दिशा दे सकते हैं, वे या तो गाँव में रहते ही नहीं या कतिपय कारणों से उसमें रुचि नहीं लेते। फलस्वरूप गाँव की राजनीति तीसरे दर्जे के लोगों के हाथों में है।

गाँव के बुजुर्ग सत्ता एवं संगठन से दूर नहीं हैं, जैसा कि जिला, प्रान्त या राष्ट्र-स्तर पर भी देखा जाता है कि बुजुर्ग सत्तात्मक नेतृत्व नहीं छोड़ना चाहते। पंचायत, आर्थिक एजेंसियाँ तथा अन्य किसी भी संगठन में वे घुसने से बाज नहीं आते। यहाँ यह कहा जा सकता है कि यहाँ बुजुर्ग या युवा का प्रश्न क्या अर्थ रखता है। अन्य बातों को छोड़ भी दें तो एक कारण से इस पर विचार किया जा सकता है। ग्रामीण समाज में सामाजिक पारस्परिक शोषण तथा हिंसा का अपना स्थान है। नयी पीढ़ी तथा पुरानी पीढ़ी के बीच सामाजिक दृष्टि से मानस में काफी फर्क है। उच्च, मध्यम तथा निम्न→

अभाव से आत्म-निर्भरता की ओर

● श्री फखरुद्दीन अली अहमद

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के २५ वर्षों में कृषि में जो प्रगति हुई है उस पर भारत को निश्चय ही गर्व हो सकता है। २५ वर्षों में ऐसे भी मौके आये हैं जब प्रगति हुई और ऐसे भी मौके आये हैं जब कुछ रुकावटें भी आयी हैं। लेकिन यदि सरसरी तौर पर देखा जाय तो तस्वीर अच्छी ही नजर आती है। स्वतंत्रता के बाद का समय खाद्यान्नों के अभाव, कीमतों के नियंत्रण और राशन का समय था, उस समय हमारे कारखानों के लिए पटसन और कपास भी पूरा नहीं मिल पाता था। आज स्थिति यह है कि हम काफी आराम से हैं। जनसंख्या में वृद्धि के बावजूद प्रति व्यक्ति उपभोग की दर में वृद्धि हुई है।

यह तो सभी जानते हैं कि भारत में खाद्यान्नों की कमी हमेशा रही है। १९ वीं शती के अन्तिम चरण में देश में जबर्दस्त अकाल पड़ा था। उससे मनुष्यों और जानवरों की अपार क्षति हुई थी। वर्तमान शती में भी, १९४१ में बर्मा से चावल की आपूर्ति बन्द हो जाने से खाद्यान्नों की बेहद कमी महसूस की जाने लगी थी। १९४३ में बंगाल में भयंकर सूखा पड़ा। सरकार को एक ओर खाद्यान्नों की सप्लाई को नियंत्रित करने के लिए कदम उठाने पड़े और दूसरी ओर 'अधिक अन्न उपजाओ' अभियान के द्वारा खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाने पर ध्यान देना पड़ा।

१९४७ में आजादी मिलने के बाद देश के कुल सिंचित क्षेत्र का ३० प्रतिशत भाग पाकिस्तान में चला गया, जिसमें अविभक्त भारत की कुल जनसंख्या का १८ प्रतिशत भाग निवास करता था। इससे खाद्यान्नों की कमी और भी बढ़ गयी। इसके अलावा पटसन पैदा करनेवाले अधिकांश क्षेत्र और कपास पैदा करनेवाले उत्तम इलाके भी भारत से अलग हो गये। पटसन, मिलों और सूती कारखानों को कच्चे माल का आपूर्ति जारी रखने के लिए यह जरूरी हो गया कि देश में कपास और पटसन के उत्पादन को बढ़ाने की चेष्टा की जाय, साथ ही 'अधिक अन्न उपजाओ' अभियान भी जारी रहा।

१९५१-५२ के बाद से हर पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्नों में आत्म-निर्भरता प्राप्त करने और कपास, पटसन, तिलहन तथा गन्ने का उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाता रहा है। १९६०-६१ तक खाद्यान्नों का जो उत्पादन बढ़ा, वह सिंचाई, नयी भूमि को खेती योग्य बनाने, खेती के सुधरे तरीके अपनाने, पौद संरक्षण के उपायों पर अमल करने और किसानों को उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन देने से बढ़ा है। इसके बाद उत्पादन बढ़ाने के लिए अथक प्रयत्न करने पर जोर दिया जाता रहा है। आरम्भ में, विभिन्न राज्यों में चुने हुए १६ जिलों में सघन कृषि जिला कार्यक्रम (आई० ए० डी० पी०) शुरू किये गये। इसमें उत्तम बीजों, पर्याप्त मात्रा में उर्वरकों के इस्तेमाल और पौद संरक्षण के उपायों पर अमल, आदि बातों पर एक साथ ध्यान दिया गया। १९६५-६६ और १९६६-६७ के वर्षों में देश में सूखा पड़ने के कारण खाद्यान्नों की बहुत कमी महसूस की गयी और उसे दूर करने के लिए कृषि-विकास के लिए एक नयी नीति तैयार की गयी। उस नीति के मुताबिक उत्पादन बढ़ाने के लिए जोरदार प्रयास किये गये।

कृषि-विकास की नयी नीति के अनुसार कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिए विज्ञान और औद्योगिकी का अधिकाधिक उपयोग किया जाता है। खेती में सुधरे किस्म के बीजों का उपयोग किया जाता है। सिंचाई की अच्छी व्यवस्था की जाती है। उर्वरक सही मात्रा में डाले जाते हैं और पौदों को सुरक्षित रखने के उपायों पर अमल किया जाता है। व्यापारिक फसलों के लिए भी सघन खेती के कार्यक्रम अपनाये जा रहे हैं। तिलहनों के लिए सोयाबीन और सूरजमुखी की खेती को बढ़ावा देने की कोशिश की जा रही है।

हमारे प्रयत्नों के फलस्वरूप उत्पादन का क्षेत्रफल काफी बढ़ा है। फसल बोये जानेवाले क्षेत्र में १९४७-४८ की तुलना में लगभग ५० प्रतिशत की वृद्धि हुई है। १९४७-४८ में फसल बोया जानेवाला क्षेत्र कुल ११ करोड़ ३० लाख हेक्टेयर था, जो कि वर्तमान समय में १७ करोड़ हेक्टेयर है। सभी फसलों के अन्तर्गत सिंचित क्षेत्र लगभग दुगुना हो गया है। पहले सिंचित क्षेत्र २ करोड़ हेक्टेयर था, जो अब ४ करोड़ हेक्टेयर है। सिंचाई के विकास के सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि इसमें नलकूपों और पम्पसेटों से भूमिगत जल का काफी उपयोग किया गया है। ये नलकूप या पम्प निजी बचत के धन से तथा ऋण देनेवाली संस्थाओं की सहायता से लगाये गये हैं। इस क्षेत्र में गत छह वर्षों में बहुत प्रयत्न किये गये हैं। इस अवधि में निजी नलकूपों की संख्या पाँचगुनी बढ़कर ५ लाख ७० हजार हो गयी है तथा बिजली से चलनेवाले पम्प-सेटों की संख्या लगभग

→जाति, सबमें बुजुर्ग तथा युवा मानस में काफी फर्क है। बुजुर्ग नेतृत्व में अपने से नीची जाति के साथ व्यवहार—सामाजिक हिंसा—का जो रूप है वह रूप युवकों में नहीं है। वो, बुजुर्ग भी सत्ता पर हावी होने का प्रयास करते हैं। जहाँ तक युवकों का प्रश्न है वे संगठनात्मक नेतृत्व में कम रुचि लेते पाये गये। युवकों का ग्राम-नेतृत्व से अलग रहने के कुछ कारण निम्न हैं: समझदार तथा शिक्षित युवक गाँव में रहता ही नहीं, बाहर रहने पर गाँव से सम्बन्ध घटता जाता है, गाँव के कल्याण में रुचि नहीं और सब अपने-अपने धन्धे में व्यस्त हैं, आदि। (क्रमशः)

तिगुनी बढ़कर १९ लाख तक पहुँच गयी है।

सुधरे किस्म के बीजो का उपयोग हमारे किसानों में बहुत लोकप्रिय हो रहा है। १९६६-६७ के बाद से गेहूँ और चावल की अधिक पैदावार देनेवाली किस्मों तथा ज्वार, बाजरा और मक्का की संकर किस्मों के बाजार में आ जाने से बहुत अधिक किसान उत्तम बीजो का उपयोग करने लगे हैं। १९७०-७१ में अनाजों की अधिक पैदावार देनेवाली किस्में १ करोड़ ८० लाख हेक्टेयर भूमि में बोयी गयी थी। गेहूँ बोये जानेवाले सम्पूर्ण क्षेत्र के लगभग ३० प्रतिशत क्षेत्र में अब गेहूँ की अधिक पैदावार देनेवाली किस्मों की खेती होती है और इसी प्रकार चावल पैदा करनेवाले कुल क्षेत्र के लगभग २० प्रतिशत भाग में चावल की अधिक पैदावार देनेवाली किस्में बोयी जाती हैं।

उर्वरकों का उपयोग कृषि के क्षेत्र में आधुनिक तरीके अपनाये जाने का प्रतीक माना जाता है। हमारे देश में १९५०-५१ में १ लाख टन से भी कम रासायनिक खादों का प्रयोग होता था, लेकिन व्यापक प्रचार एवं प्रदर्शन के कारण खादों का उपयोग बढ़ा, और १९६५-६६ में ८ लाख टन खाद की खपत हुई। उसके बाद उन्नत बीजों के प्रचार के कारण खादों की खपत और भी बढ़ी। पौद-संरक्षण के लिए कीटनाशक दवाओं का उपयोग भी काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। १९७०-७१ में ५ करोड़ हेक्टेयर भूमि में पौद-संरक्षण के उपाय किये गये।

सघन खेती का आधार विकसित करने में काफी प्रगति हुई है। कृषि प्रसार सेवा का जाल देश भर में फैलाया गया है। कृषि अनुसंधान और शिक्षा के क्षेत्र में कईगुनी प्रगति हुई है। सहकारी समितियों के माध्यम से कृषि के लिए दी जानेवाली राशि में ३० गुनी वृद्धि हुई है। व्यापारिक बैंकों ने भी कृषि-विकास के लिए काफी ऋण देना शुरू कर दिया है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद से उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। हमारे सामने बड़ी कठिन समस्या है और इनका सामना करने के लिए हमने जो संघर्ष छेड़ा, वह भी बहुत कठिन पड़ा। हालांकि १९६४-६५ तक हमारी वार्षिक प्रगति ३ प्रतिशत की दर से होती रही, परन्तु जनसंख्या की वृद्धि और सुनियोजित विकास के फलस्वरूप लोगों की आमदनी बढ़ने और तदनुसार माँग में वृद्धि होने से यह वृद्धि अपर्याप्त रही। लेकिन १९६७-६८ के बाद से खाद्यान्नों के उत्पादन में त्वरित वृद्धि से हम चुनौती का सामना कर लिया गया। १९४७-४८ की तुलना में खाद्यान्नों के उत्पादन में १९७०-७१ में ८० प्रतिशत की वृद्धि हुई।

स्वतन्त्रता के समय ३६ करोड़ लोगों के लिए भी हमारे पास पर्याप्त अनाज नहीं था। आज हमारे पास ५५ करोड़ लोगों के लिए पर्याप्त अन्न मौजूद है जो कि १९४७ के समय की जनसंख्या से डेढ़गुना से अधिक है। मजे की बात तो यह है कि प्रति व्यक्ति वार्षिक अन्न की उपलब्धि १९४८ में १५६ किलोग्राम से बढ़कर अब १७० किलोग्राम हो गयी है। अभाव और कमी की समस्या अब खत्म हो गयी है। खाद्यान्नों का आयात १९६६ में १ करोड़ ४ लाख टन से घटकर १९७१ में २० लाख टन रह गया और अब आयात नहीं के बराबर रह गया है। सरकारी खरीद के अन्न से अब लोगों की जरूरतें पूरी की जा सकती हैं। सरकार अपने पास ६० लाख टन अन्न का भण्डार रखती है, इससे अब खाद्यान्न के अभाव की समस्या हमारे पास फटकने भी नहीं पायेगी।

व्यापारिक फसलों का उत्पादन भी काफी बढ़ा है। कपास का उत्पादन, जो १९४७-४८ में २२ लाख गाँठ था, १९७१-७२ में बढ़कर ६० लाख गाँठ हो गया है। इस प्रकार, इसके उत्पादन में १७० प्रतिशत की वृद्धि हुई है। पटसन का उत्पादन जो १९४७-४८ में १९ लाख गाँठ था, १९७१-७२ में २०० प्रतिशत बढ़कर ५७ लाख गाँठ हो गया है। पांच प्रमुख तिलहनों का उत्पादन स्वतंत्रता के समय के ५२ लाख टन से बढ़कर १९७०-७१ में ९२ लाख टन हो गया। गन्ने का उत्पादन इसी अवधि में ७३ लाख टन से बढ़कर १३२ लाख टन हो गया। पहले हमारे देश में चीनी बाहर से मँगायी जाती थी, परन्तु अब पिछले कुछ वर्षों से हम कई देशों को चीनी का निर्यात करने लगे हैं। इन आँकड़ों से पता लगता है कि भारतीय कृषि में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। केन्द्र व राज्य सरकारें, वैज्ञानिक व आयोजक किसान तथा जनता सभी ने आत्म-निर्भरता के कठिन पथ पर पाँव बढ़ाकर जो सफलता प्राप्त की है; उस पर वे निश्चय ही गर्व कर सकते हैं। हमारी अर्थ व्यवस्था के लिए एक मजबूत आधार अब तैयार हो चुका है।

पत्र सूचना कार्यालय भारत सरकार के सौजन्य से

शान्ति-सैनिकों का अशान्ति-शमन का प्रयास

● बद्रीप्रसाद स्वामी

[हाल ही में चूरू जिले में आचार्य तुलसी की पुस्तक 'अग्नि परीक्षा' को लेकर जैन-अजैन मत-मतान्तर ने हिंसक वारदातों का स्वरूप ले लिया और इस जिले का वातावरण इससे विषाक्त हो गया। इस आन्दोलन को समाप्त कराने व वातावरण को शान्त बनाने में राजस्थान के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने काफी प्रयत्न किया। उस प्रयत्न की एक झांकी यहां दी जा रही है। —सं०]

श्री आचार्य तुलसी की 'अग्नि-परीक्षा' पुस्तक को लेकर रायपुर में जो भयंकर उपद्रव व अशान्ति पैदा हुई थी, वही स्थिति दो वर्ष बाद राजस्थान में भी पैदा हो गयी, और ऐसे क्षेत्र में यह स्थिति बनी है जो इनका पूर्ण परिचित, प्रभावशाली व पारिवारिक क्षेत्र रहा है। इस बार आचार्यश्री का चौमासा राजस्थान के चूरू नगर में है। चूरू नगर की ओर बढ़ते हुए जुलाई के आरम्भ से ही रतनगढ़ शहर में उक्त पुस्तक को लेकर विवाद शुरू हो गया था और सनातनियों द्वारा विरोध प्रारम्भ कर दिया गया था। आचार्यश्री ने इस विवाद को समाप्त करने के लिए 'अग्नि-परीक्षा' का संशोधित संस्करण प्रकाशित करवा दिया, जिसमें विवादग्रस्त प्रकरण हटा दिया गया, ऐसा बताया गया। फिर भी, सनातनियों का समाधान नहीं हुआ और उनका विरोध जारी रहा। ज्यों-ज्यों आचार्यश्री चूरू के नजदीक पहुँचते गये, त्यों-त्यों विरोध उग्र रूप धारण करता गया और इसी समय जगद्गुरु श्री शंकराचार्य महाराज भी यहाँ पहुँच गये।

चूरू में प्रवेश के पहले दिन काले झण्डों से उनका सख्त विरोध किया गया और इसी दिन प्रातः आपस में काफी पथराव भी हुआ, जिससे कुछ लोगों को चोटें भी आयीं। आचार्यश्री ने इस दिन नगर-प्रवेश स्थगित रखा तथा दूसरे दिन २२ जुलाई को आर० ए० सी० पुलिस के संरक्षण में प्रवेश किया और अपने पड़ाव स्थान पर सुरक्षित पहुँच गये। इन्हीं दिनों चूरू के जिलाधीश महोदय एवं अन्य कुछ सज्जनों के अथक प्रयत्नों से शंकराचार्य व तुलसी महाराज का मिलन हो सका, और आपस में बातचीत हुई। बातचीत के दौरान जो नतीजा निकला उसके अनुसार समझौता-पत्र तैयार किया गया। परन्तु, दुर्भाग्यवश हस्ताक्षर के प्रश्न को लेकर समझौता भंग हो गया। जगद्गुरु श्री शंकराचार्य हैदराबाद चले गये और इधर अग्नि परीक्षा विरोधी आन्दोलन पुनः आरम्भ हो गया।

इन दिनों मैं श्री धीरेन्द्रभाई के कार्यक्रम में व्यस्त था। उस कार्यक्रम से मुक्त होकर ज्यों ही २७ जुलाई को मकराना पहुँचा, मेरे साथी कार्यकर्ता, शान्तिसैनिक श्री मालचन्द बोथरा (लाडनूं निवासी) का मुझे पत्र मिला जिसमें उन्होंने चूरू की स्थिति की जानकारी देते हुए मुझे शीघ्र वहाँ आने के लिए लिखा। मैं तत्काल दूसरे दिन लाडनूं पहुँचा। उनसे सारी स्थिति को समझा। 'अग्नि परीक्षा' पुस्तक के पुराने व नये संस्करणों को देखा और तत्काल मालचन्दजी व अन्य तीन साथियों को लेकर चूरू पहुँचा। मार्ग में चूरू की वारदातें सुनने को मिलीं। जहाँ कारें जलायी गयी थीं एवं पथराव हुआ था, वह स्थान देखे। नगर में पहुँचने पर हम पाँचों स्थिति का अध्ययन करने के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में चले गये। हम चूरू जिले के गांधी आश्रम के खादी-केन्द्र पर ठहरे। एक तांगेवाले मुस्लिम भाई ने हमें बताया कि इन बड़ों की लड़ाई में हम गरीबों की मौत है। हमने जगह-जगह आचार्य तुलसी-विरोधी अभद्र वाक्य दीवारों पर लिखे हुए देखे।

खादी-केन्द्र पर पहुँचते ही वहाँ के मुख्य व्यवस्थापक से स्थिति की अवगत जानकारी ली। इसके बाद शाम को हम अग्नि-परीक्षा-विरोधी संघर्ष समिति के अधिकारियों से मिलने गये। उनको अपना परिचय देकर दो घण्टे तक उनके सारे दृष्टिकोण को समझा। उन्होंने बताया, कि हमें राम के बहुपत्नी वाले प्रकरण पर सख्त एतराज है। हम तो अहिंसक विरोध ही कर रहे हैं। समझौते पर आचार्यश्री तुलसी ने हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया, अतः समझौता भंग हो गया। इसमें हमारी कोई गलती नहीं है। इन लोगों से बातचीत करने के बाद हम आचार्य तुलसी से मिले एवं उनसे सारी जानकारी प्राप्त की। उन्होंने हस्ताक्षर के सम्बन्ध में बताया कि हमारी तरफ से हमारे प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर कर दिये थे। हमारे जैन साधु-साध्वियों में हस्ताक्षर करने की परम्परा नहीं है।

दूसरे दिन हम जिलाधीश महोदय से मिले। उन्होंने सारी स्थिति से हमें अवगत कराया और समस्या के हल के लिए कई अच्छे सुझाव दिये। उन सुझावों को लेकर हम पुनः संघर्ष समिति के अधिकारियों से मिले और उनसे विवाद को हमेशा के लिए समाप्त करने के लिए प्रस्तुत मुद्दों पर बात की, जो कि जिलाधीश से चर्चा करते समय सामने आये थे: दोनों तरफ के प्रतिनिधि ही समझौते पर हस्ताक्षर कर दें या राजस्थान सरकार अथवा केन्द्र, पुस्तक के सम्बन्ध में कमीशन कायम कर दे या समझौते की शर्तों के सम्बन्ध में दोनों आचार्यों के वक्तव्य टेपरेकार्ड कर लिये जायें; उपद्रवों को रोकने के लिए शान्ति-समिति का गठन किया जाय। शंकराचार्यजी की अनुपस्थिति में संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों ने शान्ति समिति के प्रस्ताव को छोड़कर, अन्य प्रस्तावों को मान्य नहीं किया। इस सारी चर्चा से हमने आचार्य श्री तुलसी को अवगत कराया और नगर की गम्भीर परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उनसे निवेदन कराया कि उन्हें अपनी

ओर से इस विवाद को समाप्त करने के लिए कोई कदम जल्दी-से जल्दी उठाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया गया तो नगर के वातावरण को देखते हुए १ अगस्त को 'चूरू बन्द दिवस' पर भयंकर अशान्ति व उपद्रव होगा। हमने उन्हें बताया कि नगर में जैन व अजैन दो स्पष्ट खेमें बन गये हैं। बच्चे से बड़े तक के दिमाग में अग्नि-परीक्षा के विरोध का उन्माद छाया हुआ है, जिसके भयंकर परिणाम निकल सकते हैं। मैंने सहज ही बातचीत के दौरान उनसे निवेदन किया कि जगद्गुरु शंकराचार्य द्वारा प्रस्तुत समझौते के मुद्दे आपको मान्य हैं ही तो शीघ्र उसे कार्यरूप में परिणित कर दें। उन्होंने कहा कि मेरा भी इस दिशा में चिन्तन चल रहा है। दो-तीन घण्टे तक उन्होंने गम्भीरता से इस पर विचार किया और अन्त में पाँच बजे अपने प्रमुख लोगों को बुलाकर अपने निश्चय की जानकारी देते हुए उन्होंने छ. बजे एक सम्मिलित सभा की व्यवस्था करने का आदेश दिया, जिसमें प्रेस-प्रतिनिधि, सरकारी अधिकारीगण एवं संघर्ष समिति के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हुए।

ठीक छ बजे एक संयुक्त सभा का आयोजन किया गया, जिसमें सभी पक्षों के लोग उपस्थित हुए और उनके समक्ष आचार्यश्री तुलसी ने सारी परिस्थिति पर वेदना प्रकट करते हुए जगद्गुरु शंकराचार्य द्वारा प्रस्तावित शर्तों को मान्य करने की घोषणा की और साथ ही यह भी जाहिर किया कि ३१ तारीख को दोपहर के एक बजे से अग्नि-परीक्षा पुस्तक का प्रकाशन, प्रचार और विक्रय तब तक बन्द रहेगा जब तक कि शंकराचार्यजी राम का बहु-पत्नीत्व सनातन धर्म के ग्रन्थों से ५ वर्ष के भीतर साबित न कर दें।

ता० ३१ को प्रातः मैं तथा श्री मालचन्दजी एक हायर सेकेण्डरी स्कूल में वहाँ के प्रधानाचार्य के निमन्त्रण पर सर्वोदय विचार पर भाषण देने गये। कई घण्टे तक सभा पूर्ण शान्ति के साथ चली, जिसमें सर्वोदय-आन्दोलन के सम्बन्ध में जानकारी देते हुए दुनिया में आज बड़े-से-बड़े मुल्क शान्तिमय तरीके से समझौते के जरिये, आपसी समस्याओं को हल करने का जो प्रयत्न कर रहे हैं, उसका जिक्र करते हुए मैंने जब यह कहा कि प्यारे बालको, अपने लिए अत्यन्त प्रसन्नता की बात है कि आपके नगर में जो कई दिनों से अशान्ति व भय का वातावरण बन रहा था, उसको कल आचार्यश्री तुलसी ने शंकराचार्यजी द्वारा प्रस्तुत समझौते की शर्तों को मान्य करते हुए समाप्त कर दिया है तथा आज १ बजे से विवादग्रस्त 'अग्नि-परीक्षा' पुस्तक का प्रचार, प्रकाशन व विक्रय बन्द हो जायगा। ज्योंही मैंने यह जानकारी दी, एक तरफ से आवाज आयी—झूठ है, धोखा है। मेरा भाषण समाप्त होने पर जिधर से आवाज आयी थी उधर के एक छात्र ने खड़े होकर प्रश्न किया कि आपने यह झूठी जानकारी किस आधार पर दी? बालकों को ३० तारीख की शाम के आयोजन की जानकारी देते हुए समाधान कराया और सभा समाप्त हुई। बालक कक्षाओं में गये और प्रधानाचार्य कार्यालय से बाहर निकले।

ज्योंही हम स्कूल से रवाना होकर पचीस-तीस कदम आगे बढ़े थे कि हमें दस-पन्द्रह छात्रों ने घेर लिया। न हमें आगे बढ़ने दिया गया और न पीछे हटने दिया गया। हमने पूछा कि आप हमें क्यों रोक रहे हो? क्या चाहते हो? उस पर उन्होंने कहा, कि तुम धर्म-विरोधी तुलसी के दूत यहाँ क्यों आये? हमने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया। संघर्ष समिति के कार्यालय व प्रधानाध्यापक के कार्यालय में चलने को कहा, परन्तु कौन किसकी सुनता? धर्मान्धता और अज्ञान के नशे में चूर नवयुवकों ने 'धर्म-विरोधी गद्दारों को मारो' के नारे लगाकर हम दोनों को पकड़ लिया और धक्का-मुक्की तथा घूसों से मारना शुरू कर दिया। हम दोनों को मारते-मारते वे अलग-अलग गलियों में ले गये। कपड़े फाड़ डाले, चश्मा तोड़ दिया और अन्त में, सीने में चोट लगने से मैं नीचे गिर पड़ा। तब एक बूढ़े ने रहम करके मुझे उठाकर दूर ले जाकर एक तांगे पर लिटाकर रवाना किया। दूसरी तरफ श्री मालचन्दजी ने एक घर में शरण ली तो उसमें से भी बाहर निकाल कर उन्हें पीटा गया। जब वे भी गिर पड़े, तब उन्हें छोड़ा। किसी तरह वे अपने स्थान पर पहुँचे। इस घटना की खबर चारों तरफ फैल गयी। आचार्यश्री, साधु साध्वी, जिलाधीश महोदय, एस० पी० साहब एवं अन्य अधिकारीगण हमें सम्भालने आये। डाक्टरी जाँच की, और इलाज हुआ। सभी ने काफी पश्चात्ताप किया। नगर में यह चर्चा का विषय बन गया। इस घटना के प्रायश्चित-स्वरूप पहली तारीख को आचार्यश्री ने सामूहिक उपवास की घोषणा की। नतीजा यह हुआ कि १ तारीख के बन्द दिवस पर चूरू में कोई घटना नहीं घटी और वातावरण भी काफी शान्त रहा। मुझे विश्वास है कि आचार्यश्री की घोषणा व सामूहिक उपवास के बाद नगर व आसपास के क्षेत्रों में अब किसी प्रकार का उपद्रव व अशान्ति नहीं होगी और संघर्ष समिति तथा जगद्गुरु श्री शंकराचार्य स्थायी शान्ति के लिए पूर्ण प्रयत्न व सहयोग करेंगे ताकि जैन-अजैन की खाई पुनः पट सके और भाई-भाई की तरह सब मिलजुल कर रह सकें।●

शिक्षा में क्रान्ति-दिवस

सहरसा में दिनांक ९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति दिवस मनाया गया। छात्रों का एक जुलूस निकला तथा आम-सभा हुई। इस अवसर पर आयोजित 'निबन्ध प्रतियोगिता' में ७६ तथा 'व्याख्यान-प्रतियोगिता' में २० छात्र सम्मिलित हुए थे। कार्यक्रमों की विशेषता यह थी कि संयोजन, प्रचार आदि कुल कार्य श्रीलखनभाई के नेतृत्व में छात्रों ने ही किया। इस कार्यक्रम को सफल बनाने का सारा श्रेय

दा साहब

गांधी-परिवार के वयोवृद्ध पितामह, श्रद्धेय हरिभाऊजी उपाध्याय का २४-२५ अगस्त की रात को अचानक देहावसान हो गया। दा साहब के नाम से वह सारे देश में प्रसिद्ध थे और उनकी गिनती बड़े मनीषियों और जन-सेवकों में की जाती थी। पिछले तीन बरस से वह बीमार थे, लेकिन इधर तबीयत सुधर गयी थी और लिखने-पढ़ने का अपना काम करने लगे थे। शायद उसी में जोर ज्यादा पड़ा और वे चिर-निद्रा में विलीन हो गये।

दा साहब गांधीजी के भक्त थे और सोलह आने गांधीवादी थे। लेकिन उनके अन्दर कुछ विशेषता थी जो उन्हें दूसरों से अलग करती थी और यही वजह है कि वह सदा प्रसन्न रहा करते थे। उनके चेहरे की मुस्कराहट कभी भुलायी नहीं जा सकती—जिससे टपकती थी उनकी कर्त्तव्यपरायणता, उनका आत्मविश्वास, और उनकी नम्रता।

ये तीनों गुण बहुत हद तक उनके अन्दर प्रवेश कर गये थे। इसकी झलक १९२८ के एक प्रसंग से मिलती है। बापू साबरमती आश्रम में थे और उनका स्वास्थ्य कुछ खराब था। दा साहब देखने गये तो मन हुआ कि बापू के अच्छे होने तक वहीं रुक जायें। साथ में सेठ जमनालाल बजाज भी थे। दा साहब ने बापू से कहा, "आपकी तबीयत देखकर हम अपना प्रोग्राम बदलने की सोच रहे थे। पीछे सोचा कि एक दिन तो ऐसा आने ही वाला है जब आपका वियोग हमको सहन करना होगा, तो हमें उसकी तैयारी रखनी चाहिए। हमारा धर्म है कि आपके काम का बोझ जितना हो सके, हल्का करें और इसलिए हमने जाने का ही निश्चय किया है।"

सुननेवालों को लगा कि हरिभाऊ बहुत अशिष्टतापूर्ण और अहंकार भरी बात कह रहा है। लेकिन बापू यह सुनकर बड़े खुश हुए और बोले "हाँ, तुम ठीक कहते हो। तुम लोग निश्चिंत होकर जाओ।"

हम लोगों ने यह भी निश्चय किया है कि मामूली सलाह-मशविरे के अलावा आपको कष्ट नहीं देंगे। आपका सिद्धान्त भरसक समझ लिया है। असली बात तो उस पर अमल करना है।

इस प्रकार बापू के आशीर्वाद लेकर दा साहब और जमनालालजी अपने काम पर चले गये।

दा साहब कर्मठ सेनानी थे, अद्वितीय पत्रकार थे, और इन सबसे ज्यादा "दा साहब" थे, न केवल अपने घरवालों के लिए बल्कि सारे गांधी-परिवार के लिए। राजस्थान के सार्वजनिक जीवन को एक उन्नत रूप देने का श्रेय जिन तीन-चार विभूतियों को है, उनमें उनकी गिनती है। पत्रकारिता की शिक्षा-दीक्षा उन्होंने ली आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी से, प्रयाग में "सरस्वती" में काम करके, अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थीजी से, कानपुर में "प्रताप" में काम करके, और स्वयं बापू से अहमदाबाद में "नवजीवन" में काम करके। उन्हें हम सिद्ध सम्पादक कह सकते हैं। यही कारण है कि पिछले तीस साल से "जीवन साहित्य" कुशलतापूर्वक निकल रहा है और भाई यशपाल जी जैन ने दा साहब की बीमारी के बावजूद उसमें कोई कमी नहीं आने दी। और हमें यकीन है आगे भी नहीं आने देंगे।

आज से सैंतालीस बरस पहले, १९२५ में सस्ता साहित्य मण्डल की स्थापना दा साहब ने अजमेर में की थी। बाद में इसका कार्यालय दिल्ली आ गया और तब से इसके मंत्री का दायित्व मार्तण्डजी उपाध्याय (दा साहब के छोटे भाई) *बड़ी योग्यता और मनोयोग से सम्भाल* रहे हैं। एक शाखा इलाहाबाद में भी खोली गयी, जिसका संचालन तीसरे भाई, वृहस्पतिजी उपाध्याय निष्ठापूर्वक करते हैं। इस प्रकार पूरे खानदान ने अपने को हिन्दी की सेवा के लिए समर्पित कर दिया है।

कुछ दिन पहले दा साहब को मैंने अजमेर एक चिट्ठी भेजी, जिसमें कुशल-क्षेम पूछा। कुछ अर्से के बाद चि० सन्तोष (वृहस्पतिजी के सबसे बड़े पुत्र) वहाँ गये तो दा साहब ने मेरी चिट्ठी की चर्चा की और बोले—"तबीयत ठीक होने पर इलाहाबाद आऊँगा और उनसे यह देखा कि तब भेंट करूँगा।" उनका यह वात्सल्य हम तरुणों के लिए बड़ा वरदान था।

दा साहब चले गये। लेकिन नहीं, अपनी रचनाओं के रूप में वह अमर रहेंगे और उनकी तपस्या की सुगन्ध जन-जीवन को सदा प्रफुल्लित करती रहेगी। माता भगीरथी देवी को, उनकी तीनों पुत्रियों को, बहन शकुन्तला, शीला और पुष्पा को, और सबसे ज्यादा मार्तण्डजी को हम अपनी संवेदनाएँ भेजते हैं और श्रद्धेय दा साहब की पावन आत्मा को शतशः प्रणाम। —दादू

अनोखा प्रयोग

आन्ध्र का कडप्पा जिला स्वामी वीरब्रह्मम् की कर्मभूमि है। भविष्य का दर्शन करनेवाला यह व्यक्ति चार सौ साल पहले ही हुआ था, परन्तु कडप्पा के जन-मानस पर अब भी उसका असर है। यहां के मन्दिरों में सबको प्रवेश मिलता है। भूदान का जन्म इसी आन्ध्र प्रदेश में हुआ था। कडप्पा जिले के जो गांव हमने देखे उन्हें गांव कहने के बजाय टोले कहना ज्यादा उचित होगा। गांव में रहनेवाले गरीब तथा पिछड़ी जाति के लोगों में अपनी तरक्की करने की भावना जगी। ग्रामदान के सन्देश में उन्हें आशा की किरण दिखाई पड़ी, परन्तु जो लोग सम्पन्न हैं, सुखी हैं, उनमें ग्रामदान की प्रेरणा कब जगेगी और पूरा गांव ग्रामदान होने पर कब विकसित होगा? ऐसा इस विषय में शंका होने से हीन, दीन, पतित माने जाने-वाले इन लोगों ने भले ही वे संख्या में कम हों, अलग से अपनी बस्तियां बसायीं। जो भूमि अपने पास थी वह समाज को अर्पण किया, और ग्रामदान की दिशा में कदम बढ़ाने लगे। इन्हें सरकार से मिली हुई इनामी भूमि का दर्जा हल्का था। साधन भी पास नहीं था। अतः परिस्थिति तथा सरकारवश इन लोगों ने सहकारी कृषि करने का निर्णय किया। नया विचार, नयी बस्ती और नया जोश होने से अच्छा काम हुआ है। ग्रामदान का विचार पहुँचने के पहले भी इन्हें सहकार का कुछ अभ्यास था ही। अब साथ में सर्वोदय कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन मिलने लगा।

ता० १४ से १६ जुलाई तक के तीन दिन के दौर में हमने करीब ९-१० गांव देखे। साथ में आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री आर० के० राम व मंत्री श्री चारी, महबूबनगर जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री सुरभि शर्मा, कडप्पा के प्रमुख कार्यकर्ता श्री नरसिंहलु साथ थे। जिन लोगों में ग्रामदानोत्तर, विकास-कार्य हुआ है वे लोग ज्यादातर हरिजन तथा क्रिश्चियन हैं। आज जो क्रिश्चियन हैं एक जमाने में वे हरिजन थे। उनके दुख-दारिद्र्य में 'मिशनरीज' ने उन्हें स्नेह तथा इज्जत दी, आर्थिक मदद की और धर्म-परिवर्तन करवाया। यद्यपि पहले से इनकी आर्थिक स्थिति कुछ अच्छी है, फिर भी वे लोग काफी गरीब हैं।

वन्दे मल्लायपल्ली गांव के बारह क्रिश्चियन परिवारों ने अलग से अपना गांव बसाया है। सरकारी समिति बनायी है। बारह हजार रुपयों का कर्ज कुएं के लिए सरकार से उन्हें मिला है। हर घर में आठ से बारह बच्चे हैं। "आपने परिवार-नियोजन नहीं किया?" हममें से एक ने प्रश्न पूछा। "नहीं, नहीं, हमारे पोप ने इसके लिए मनाही है।" जवाब मिला। धर्म के नाम पर कैसा यह राज-नीति का खेल? बेचारे इन गरीबों को बच्चों के बोझ से बेकार में परेशान होना पड़ता है। हम शाम को करीब ६ बजे उनके पास गये थे। "बहनों को बुलाइये न।" मैंने उनसे विनती की। सुबह से हमारे बारह घरों में से एक भी घर में चूल्हा नहीं जला है। आज दिन भर काम मिला, और बहनें अब पकाने में लगी हैं। सुबह से आबाल-वृद्ध सब भूखे हैं। वे काम करना चाहते हैं, शक्ति भी है, पर उनके लिए काम नहीं जबकि देश को काम की आवश्यकता भी है। यह कैसी विडम्बना!

"मान लीजिए आपके स्वप्न में प्रभु ईसु आये तो आप उनसे क्या मांगेंगे?" श्री बंग ने प्रश्न पूछा। "हमारी फसल अच्छी होने दे, बस इतना ही।" जवाब मिला। भूखा इससे ज्यादा क्या मांग सकता है? फिर वे अपने-आप ही बोलने लगे, "हमारे सौभाग्य से सर्वोदयकार्यकर्ता यहां आये, उन्होंने राह दिखायी, मदद की। अतः पहले साल में जो आठ माह आधा पेट रहना पड़ता था, अब सिर्फ तीन माह और, यदि एक कुआं बनाने के लिए कहीं से केवल पांच हजार रुपये कर्ज मिल जाता है तो हम पूरे साल भर-पेट खा सकते हैं।" क्या इन बारह परि-वारों की यह मांग गैरवाजिब है? पूंजी के अभाव में कितने लोगों को भूखा सोना पड़ता है। ऐसी स्थिति में विलास की चीजों में पूंजी लगाने का क्या हमें नैतिक हक है? जिन-जिन गांवों में हम गये सबने एक ही मांग की—"हमें पूंजी दीजिये, कर्ज के रूप में ही क्यों न हो, हम मेहनत करके पेट भरेंगे और धीरे-धीरे कर्ज भी अदा करेंगे।"

चर्च में सब लोग इकट्ठा हुए। गांव छोटा-सा था। "प्रभु ईसु स्वप्न में आये और तुम्हें मनचाहा वर मांगने के लिए कहे तो क्या मांगोगे?" श्री बंग ने प्रश्न पूछा। "हमें मुक्ति दे, शान्ति दे। यही मांगेंगे।" जवाब मिला। "काम न होने से आपको भूखों रहना पड़ता है तो क्या प्रभु ईसु से खाना नहीं मांगोगे?" मैंने प्रश्न पूछा। "रोजमर्रा की ये छोटी-मोटी समस्याएँ तो चलती ही रहेंगी। इनके लिए प्रभु से क्या मांगना।" एक प्रौढ़ भाई ने जवाब दिया। हमारे देश के खून में ही अध्यात्म रम गया है। इसका यह ज्वलन्त उदाहरण था।

कडप्पा जिले में अस्सी गांवों में सहकारी समितियों के मार्फत सहकारी खेती का यह प्रयोग चल रहा है। आपस में कोई लड़ाई-झगड़ा नहीं है। पूंजी न होने से प्रगति बहुत धीमी हो रही है। ये साधनहीन गरीब लोग रात-दिन मेहनत करते हैं। पिछले तीन सालों में यहां अकाल होने से दरिद्रता की सीमा नहीं है। बेकारी की समस्या हल करने की दृष्टि से इन गांवों में पहले काफी चरखे चलते थे, लेकिन वर्षा के अभाव में वे कपास पैदा नहीं कर सके। पूनी खरीद कर कताई करना आर्थिक दृष्टि से इन्हें पुसाता नहीं। अतः करीब-करीब सारे चरखे आज बन्द पड़े हैं। कुछ प्रमाण में रोजी-रोटी देनेवाला और बेकारी की समस्या हल करनेवाला यह एक ही

उद्योग भी बन्द हो जाने से बेकारी ने भीषण स्वरूप धारण कर लिया है। चमड़े का उद्योग काफी बड़े पैमाने पर चल सकता है। प्लास्टिक तथा बाटा के चप्पल-जूतों ने इनका बाजार सीमित कर दिया है, भूमि हल्के दर्जे की है। अत: घास अच्छी पैदा होती है, डेयरी का अच्छा उद्योग खेती के साथ विकसित हो सकता है। पर पूँजी की समस्या खड़ी हो जाती है। जहाँ दो जून भर पेट खाना ही नहीं मिलता है वहाँ वे खुद पर्याप्त पूँजी कैसे खड़ी कर सकते हैं!

लोकतांत्रिक समाजवाद की हम बात जरूर करते हैं, सहकारी खेती की अनिवार्यता हमें जरूर महसूस होती है। पर सिवाय बातों के हम क्या अधिक कर रहे हैं? हमारे देश की अधिकांश जनता गरीब है। उसके नाम पर सारे काम किये जाते हैं। पर सच में वे उसके भले के लिए कितने सही साबित होते हैं? समाजवाद आज के युग की माँग है, राष्ट्र का यह नारा है। जिन लोगों ने अपने पास जो भी था उसका सामाजीकरण किया है, अपनी भूमि और श्रम समाज को अर्पण किये हैं, समाजवाद की ओर सही कदम बढ़ाया है। भारत भर में सहकारी खेती का इतना अच्छा काम शायद ही कहीं हुआ होगा। लेकिन इतना अच्छा काम करने के लिए इनाम के तौर पर उन्हें क्या मिला है? सामान्य किसान को जो सहूलियतें कर्ज आदि के रूप में आज मिलती हैं उनकी वे भी सहूलियत बन्द कर दी गयी हैं। इस तरह प्रोत्साहित करने के बजाय शासन ने उन्हें दण्डित किया है, निरुत्साहित किया है।

अगल-बगल खेती-योग्य कितनी सारी भूमि पड़ी है, पर बार-बार माँग और प्रयत्न करने पर भी वह उन्हें सरकार से अभी तक नहीं मिल पायी है।

प्रगति की प्रेरणा एवं मुक्मति के कारण रात-दिन शराब में डूबे रहनेवाले इन लोगों ने अपने यहाँ स्वेच्छा से सम्पूर्ण शराबबन्दी की है। कई गाँव ऐसे हैं जो गाँव के बाहर के शराब पीये हुए आदमी को अपने यहाँ प्रवेश भी नहीं करने देते हैं। पुश्त-दर-पुश्त चली आयी शराब से मुक्ति पाना क्या सामान्य बात है? जीवन में इन नये मूल्यों को प्रतिष्ठित करना क्या क्रान्ति नहीं है? लोगों की जिन्दगी कैसी बदल रही है इसका यह एक अच्छा नमूना है। देश में हरित क्रान्ति हुई है, लेकिन किसने उससे लाभ उठाया? बड़े शिक्षित किसानों ने। पर यहाँ इन छोटे-छोटे लोगों ने जो किया है वह अन्त्योदय का काम है। पहले चोरी-डकैती, खून-खराबी का काम करनेवाले यहाँ के कई लोगों ने उससे मुक्ति पायी है। अब वे सभ्य नागरिक बनकर काम कर रहे हैं। इस तरह जीवन की दिशा बदलने का यह काम क्या कम क्रान्तिकारी है? दहेज और शादियों में होनेवाले अनाप-सनाप खर्चे के कारण सुसस्कृत, सभ्य कहलानेवाले हमारे समाज में कितनी लड़कियों के पालक बर्बाद हुए हैं और रात-दिन हुए जा रहे हैं। पर अनाड़ी कहलानेवाले इन लोगों ने सामूहिक शादियों को स्वीकार करके इन बुराइयों से अपना पिण्ड छुड़ाया है, और यह काम दो-चार लोग कर रहे हैं ऐसी बात नहीं है, करीब पचपन हजार लोग इस काम में जुटे हुए हैं। कार्यकर्ताओं का नित्य नियमित सम्पर्क जितना अधिक बढ़ेगा उतना यहाँ का काम अधिक उभरेगा। क्योंकि मूल बात जो है बाँट-बाँटकर खाने की एवं सहकार की वह यहाँ है और साथ में जुड़ गयी विकास की प्रेरणा। अत: योग्य, समयोचित और आवश्यक मार्ग-दर्शन और मदद मिलता रहा तो अच्छा काम यहाँ हो सकेगा। यहाँ आज जो काम केवल दलित, पीड़ित, पिछड़े हुए लोगों में हो रहा है, वह व्यापक होना चाहिए, अन्यथा इन लोगों को अपने मार्ग से विचलित करने का प्रयास दूसरे लोग कर सकते हैं, और जाति के आधार पर बने हुए इन लोगों के समुदायों को अपने सकुचित दायरों से बाहर निकालने का और जो खुद को उनसे श्रेष्ठ मानते हैं उनका श्रेष्ठत्व का जातीय भाव खत्म होने के लिए मौका नहीं मिलेगा।

यहाँ की सहकारी समितियों में शुरू में जो पदाधिकारी बने थे वे ही बरसों बाद आज भी चल रहे हैं। एक से अधिक बार एक ही व्यक्ति पदाधिकारी न बनने की परिपाटी होना अधिक उपयुक्त होता है। उससे नये-नये लोगों की बुद्धि, शक्ति और विशेषताओं का लाभ मिलता है। लम्बे समय तक पद पर रहने से स्थापित स्वार्थ-निर्माण होने की सम्भावना रहती है।

देश के ग्रामदानोत्तर विकास-कार्य अनेक गाँवों में हो रहा है। परन्तु पिछड़े हुए नीचे माने जानेवाले इन मुट्ठी भर लोगों ने सहकारिता का जो प्रयोग किया है वह अनोखा है। अधिक ध्यान दिया जाय तो बहुत अच्छा काम यहाँ हो सकता है। यह प्रयत्न क्रिश्चियन एवं हरिजनों का होने से इनका महत्व विशेष हो जाता है। सारे भारत का ध्यान इसकी ओर आकर्षित होना चाहिए।

—सुमन बंग

जयप्रकाशजी का कार्यक्रम

सितम्बर

३ से ५ तक—मेरठ में खादी पर चर्चा।

२१ शान्तिनिकेतन कस्बी, पो० विष्णुपुर, जिला चौबीस परगना (प० बंगाल) में सर्व सेवा संघ की समितियों और उपसमितियों के पदाधिकारियों की बैठक।

२२ से २४ तक—सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक।

२५ —सभी प्रान्तों के सर्वोदय मण्डलों के अध्यक्षों और मन्त्रियों की बैठक, ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक।

(पृष्ठ ७५४ का शेष)

का आदेश मिल सकता है ऐसा अमीन ने एक वक्तव्य में बतलाया। इस जमात को आश्रय देने के लिए ब्रिटिश सरकार भी वचनबद्ध नहीं है। दुनिया का दबाव पड़ने पर अमीन ने अपनी धमकी वापस ले ली है लेकिन एक बार धमकी सुन लेने के बाद उगाण्डा के एशियाई नागरिकों की बेचैनी अवश्य बढ़ गयी है। उगाण्डा की जनता इच्छा-अनिच्छा से इस क्रूर तमाशे को देख रही है।

भारत सरकार ने १९६८ में और १९७२ में भी यह रुख अपनाया कि ब्रिटिश नागरिकों की सुख-सुरक्षा और मानव-अधिकार के लिए ब्रिटेन जिम्मेदार है और उगाण्डा के नागरिकों के लिए उगाण्डा। लेकिन ब्रिटेन को अपनी जिम्मेदारी का एहसास करवाने के लिए भारत सरकार ने जो कदम उठाया वह ब्रिटेन की रंगभेद-नीति का समर्थन करता है। १९६८ में कीनिया के एशियाई, ब्रिटिश पारपत्रधारी और १९७२ में उगाण्डा के एशियाई पारपत्रधारी पर वीसा रेगुलेशन लागू कर दिया जो सामान्य ब्रिटिश नागरिकों पर लागू नहीं होते हैं। जो भेद ब्रिटेन ने किया वही भेद भारत ने किया। वीसा रेगुलेशन करना ही था तो सब ब्रितानी नागरिकों पर क्यों नहीं किया?

अब इन प्रवासियों को तो उगाण्डा से जाना ही है। ४ नवम्बर के बाद वहाँ एशियाई ब्रितानी पारपत्रधारी रह सकेंगे इसकी कोई उम्मीद नहीं दीखती है। ये लोग कहीं और जाकर बसेंगे, प्रवासी ही बनकर रहेंगे। क्या नयी जगह पर भी वे वही गलती दुहरायेंगे? जिस देश में वे बसेंगे उस देश की संस्कृति, जीवन और समस्याओं से परे रहेंगे? और सवाल केवल इन एशियाइयों के लिए ही नहीं है, बल्कि दुनिया के सब प्रवासियों के लिए है। प्रवासी क्या, देशी भी अगर अपने को मिट्टी के साथ मिला नहीं सका, तो आज नहीं तो कल, उनका भी वही हाल होने वाला है। दूसरा प्रश्न यह उठता है कि क्या एशियाइयों के निष्कासन से उगाण्डा की समस्याओं का हल हो जायगा? क्या शोषण मिटाने के लिए उगाण्डा से एशियाइयों को निकालना जरूरी था? यदि जिस व्यवस्था के कारण एशियाई एक शोषक वर्ग बने रहे उसे नहीं बदलते हैं तो एशियाई की जगह पर या तो दूसरे विदेशी आ जायेंगे या वहीं के निवासियों का एक नया शोषक वर्ग खड़ा हो जायगा। उगाण्डा से किसी को निकालने की जरूरत नहीं, जरूरत थी व्यवस्था बदलने की। तीसरा प्रश्न यह है कि जब भी और जहाँ भी मानवता का अपमान हो, जैसे ब्रिटेन ने १९६८ में किया और उगाण्डा अब कर रहा है, तब बाकी दुनिया क्या वैसे ही देखती रहेगी? ऐसे मौके पर संयुक्त राष्ट्र संघ भी चुप रहता है तो जनता के पास विरोध करने का कौन-सा मंच रह जायेगा? ●

शान्ति-समाचार

सिविल नाफरमानी

वेल्श भाषा और संस्कृति को बचाने के लिए ब्रिटेन में एक बड़ा आन्दोलन चलाया जा रहा है। यह सिविल नाफरमानी का आन्दोलन है।

आज वेल्श भाषा को जिस संकट का सामना करना है, उसे कुछ ही लोग जानते हैं। वेल्श पर शासन करनेवालों ने इस भाषा को घृणा की निगाह से देखा। सभी सरकारी अखबार न्यायालयों की कार्यवाही और सड़कों के चिह्न केवल अंग्रेजी भाषा में मिलते थे। इस भाषा में रेडियो और टी० वी० के भी कम-से-कम प्रोग्राम थे। इन सभी बातों से यह प्रभाव पड़ता था कि वेल्श भाषा एक निम्न स्तर की भाषा है। जिसे उत्तरी और दक्षिणी वेल्श भाषा के थोड़े से लोग बोलते हैं।

संकट का सामना करने के लिए १९६२ में वेल्श लेंग्वेज सोसाइटी बनी। उस समय से अब तक इसे अंग्रेजी के बराबर स्थान दिलाने के लिए वेल्श में कई अहिंसक डायरेक्ट ऐक्शन' आन्दोलन चलाये गये।

आजकल यह सोसाइटी डाकखाना और प्रचार पर अधिक ध्यान दे रही है और अंग्रेजी में पाये जानेवाले पोस्टर को कार्यालयों से निकाल रही है। इसने इस बात के लिए भी कहा है कि टी० वी० का लाइसेंस उस समय तक नहीं दिया जाय जब तक कि बी० बी० सी० वेल्श भाषा में इसके लिए प्रबन्ध करे।

वेल्श सोसाइटी यह भी मानती है कि वेल्श का आर्थिक और राजनैतिक शोषण हो रहा है। इस बात के लिए भी आन्दोलन चलाया जा रहा है कि लन्दन और बर्मिंघम के लोगों को वेल्श में रहने की इजाजत न दी जाय।

फिलाडेल्फिया के शान्ति लुटेरे

युद्ध ने संसार को एक गरीब और भयभीत घर बना रखा है। हम इसके जाल से निकल नहीं पा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण इण्डोचीन के लोगों के विरुद्ध चल रहा युद्ध है। अभी जो हनोई और हाईफोंग में बमबारी हुई, इससे पता लगता है कि अमेरिकी सरकार दक्षिण वियतनाम को छोड़ने के लिए तैयार नहीं है।

अप्रैल के महीने में सैगान और अमेरिका की सेनाओं ने, जो एक दूसरे को मारा था, उसका अनुपात ८:१, सम्भवतः १००:१ है। इसमें मरनेवाले नागरिकों की गिनती शामिल नहीं है। जॉनसन के जमाने में प्रतिमाह मरने वालों का औसत ९५ हजार था। निक्सन के जमाने में यह बढ़कर १ लाख ३० हजार है। शान्ति चाहनेवालों को इससे बड़ी निराशा होती जा रही है।

अमेरिका के युद्ध-विरोधी लोगों ने अमेरिका के द्वारा वियतनाम को भेजे जाने वाले हथियारों के विरोध में आन्दोलन शुरू कर दिया है। २४ अप्रैल को निट्रो नामक जहाज युद्ध का सामान लेकर वियतनाम जानेवाला था। जब यह रवाना हुआ तो जल सेना के शान्ति

चाहनेवाले सिपाहियों ने विरोध किया और ७ मल्लाहों ने जाने से इनकार कर दिया। यह कोशिश नये समाज के लिए आन्दोलन चलानेवाले लोगों की ओर से संगठित किया गया था तथा इसमें फिलाडेल्फिया रेसिस्टेन्ट, फिलाडेल्फिया वेट्स और लाइफ सेण्टर के लोग भी शामिल थे।

यह जहाज रवाना तो हो गया, परन्तु अहिंसक सीधी कार्रवाई के द्वारा युद्ध में भाग लेने के पूरे प्रश्न को नये सिरे से उठाया गया। इस कार्यवाही से सैनिकवाद को चुनौती दी गयी है।

वातावरण का संदूषण

यह आमतौर से माना जाने लगा है कि अगर जल्दी ही दूषित वातावरण की सफाई के लिए कदम न उठाया गया तो मनुष्यता पर बहुत बड़ा खतरा पैदा होगा। मानव वातावरण की नयी पत्रिका 'अम्बियो' ने इस बात पर बहुत जोर दिया है। यह एक द्वैमासिक पत्रिका है, जिसमें वातावरण से सम्बन्धित विज्ञान, टेक्नालॉजी, प्रकृति-विज्ञान आदि विषयों पर शोधपूर्ण निबन्ध होते हैं।

'अम्बियो' के दो उद्देश्य हैं .

१—वातावरण के बारे में वैज्ञानिक सूचनाएँ इकट्ठा करना।

२—इन सूचनाओं से दिलचस्पी रखनेवालों को परिचित कराना।

अभी 'अम्बियो' में मुख्य रूप से डेनमार्क, फिनलैण्ड, आइसलैण्ड, नार्वे और स्वीडेन आदि देशों में होनेवाली वातावरण से सम्बन्धित शोधपूर्ण लेखों को मुख्य स्थान दिया जायगा। साथ ही, इसमें वातावरण के शोध के अन्तरराष्ट्रीय पहलू भी शामिल किये जायँगे। यह वातावरण के संदूषण से सम्बन्धित एक अच्छी पत्रिका है।

सेना पर होनेवाला यह असीमित व्यय !

युद्ध में होनेवाले खर्च को छोड़ भी दें तो भी संसार में सेनाओं और सैनिक साज-सामानों पर होनेवाले खर्च का सही-सही अनुमान लगाना मुश्किल है। हथियारों की दौड़ और सैनिक खर्चों के सामाजिक आर्थिक प्रभावों की चर्चा के सन्दर्भ में संयुक्त राष्ट्र की अन्तरराष्ट्रीय समिति ने यह रोचक जानकारी प्रस्तुत की है।

प्रस्तुत जानकारी के साथ विश्व की सेनाओं में लगभग २३० लाख लोगों पर लगभग १,४६,००० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष खर्च किया जाता है। यह खर्च १,३००,०००,००० की आबादी के अधीन, एशिया व सुदूर पूर्व की तीसरे विश्व की संयुक्त आय से भी अधिक है। शस्त्रों व सेना से सम्बद्ध लोगों व सैनिक शोध पर होनेवाला विश्व-व्यापी व्यय विश्व के कुल उत्पादन का साढ़े छः प्रतिशत है, शिक्षा पर होनेवाले व्यय का ढाई गुना है व विकासशील देशों को प्रत्यक्ष मिलनेवाली कुल आर्थिक मदद का ३० प्रतिशत है। विश्व सरकारें १८,२५० करोड़ रुपया सिर्फ सैनिक शोध पर खर्च करती हैं जबकि चिकित्सा-सम्बन्धी शोध पर होनेवाला कुल व्यय २९७० करोड़ है।

सेना सम्बन्धी कार्यों पर होनेवाले इस महान खर्च का भार (लगभग ८० प्रतिशत) अमेरिका, रूस, फ्रांस, यू० के०, चीन, व जर्मनी द्वारा वहन किया जाता है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सेना सम्बन्धी कार्यों में संलग्न व्यक्तियों की संख्या ५०० लाख आँकी गयी है जो कि फ्रांस की कुल आबादी के तुल्य है।

ये आँकड़े तो वे हैं जिन्हें सरकारों से सरकारी तौर पर जाना जा सकता है पर, सैनिक कार्यों पर होनेवाला सही खर्च जान पाना तो मुश्किल ही है।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ५०

११ सितम्बर, १९७२

११ सितम्बर, १९७२ को विनोबाजी की ७८वीं जयन्ती के अवसर पर,
दीर्घायु होने की हमारी शुभकामना।

हरी क्रान्ति : लाल या पीली ?

उस दिन एक मित्र कहने लगे। "मैंने अपनी खुद की खेती बन्द कर दी है और खेत बँटाई पर लगा दिया है।" मैंने पूछा : "क्यों ?" बोले : "हरी क्रान्ति करने की हिम्मत नहीं रह गयी है।"

एक ही नहीं, ऐसे अनेक लोग हैं जो हरी क्रान्ति से हिम्मत हारते जा रहे हैं। छोटे खेतिहर ने तो मान लिया है कि यह क्रान्ति उसके वश की नहीं है। खेती की हरी क्रान्ति को लोग इस तरह हार कर छोड़ें इससे बड़ी हार दूसरी क्या होगी ? कितने जमाने के बाद एक ऐसी क्रान्ति हुई थी जिसने खेतिहर भारत को हिलाया था, जगाया था; जिसने विज्ञान को गाँव-गाँव पहुँचाने का क्रम शुरू किया था, और जिसके कारण यह सम्भावना प्रकट हुई थी कि अब देश का सम्मान बचेगा, और देशवासियों का पेट भरेगा। यह कोई नहीं कह सकता कि हमारे खेतिहरों ने हरी क्रान्ति को उत्साह के साथ नहीं अपनाया था। उन्होंने दिल खोलकर अपनाया था, और अपनाये रहना चाहते भी हैं, लेकिन क्या करें वे अपने को बेबस पा रहे हैं।

क्या बेबसी है उनकी ? हमारे मित्र ने बताया कि बोरिंग, बीज, खाद आदि के लिए लिया गया कर्ज खेती की आमदनी से अदा नहीं हो पा रहा है। नतीजा यह है कि सरकार हो या साहूकार, किसान दोनों के कर्ज के नीचे दबा जा रहा है। बीज, खाद, दवा, औजार और यन्त्र आदि सबके दाम दिनोंदिन बढ़ते जा रहे हैं। सरकार उन्हें सस्ते दाम पर न सप्लाई कर पाती है, और न मूल्यों पर नियन्त्रण रख पाती है। खेती आज भी ज्यादातर भगवान् के ही भरोसे चल रही है। लगातार तीन साल अच्छी फसल नहीं होती। और जब उपज होती भी है, तो उसका बाजार में क्या भाव रहेगा इसका ठिकाना नहीं रहता। अक्सर लागत भर भी दाम नहीं मिलता। सरकार कोई गारण्टी नहीं दे पाती। अधिकांश लोगों को पेट काटकर अनाज सस्ते बाजार में बेच देना पड़ता है।

लोग पंजाब और हरियाणा की मिसाल देखते हैं। जरूर उन राज्यों ने खेती में बहुत अच्छा काम किया है। लेकिन यह मान लेना गलत होगा कि पंजाब या हरियाणा ने गरीबी, बेरोजगारी, विषमता आदि के आर्थिक सवाल हल कर लिये हैं। फिर भी जो काम हुआ है वह अच्छा हुआ है। वहाँ खेती की चकबन्दी है। अक्सर किसान को खेती के लिए कर्ज नहीं लेना पड़ता। उसके पास वेतन और पेंशन के रूप में फौज का पैसा ही पैसा है। खेती के साथ चलनेवाले उद्योग हैं। अनेक घरों के एक-दो आदमी रहते बाहर देश-विदेश में कमाई करते हैं। इसके अलावा पंजाब में पुरुषार्थ तो है ही।

बिहार जैसे क्षेत्र में इनमें से कोई बात मौजूद नहीं है। वहाँ वे ही खेतिहर परिवार खुशहाल हैं। जो खेती पर ही निर्भर नहीं हैं, बल्कि जिनके यहाँ महाजनी, नौकरी, या व्यापार का भी पैसा आता है। बँटाई की खेती में मुनाफा ही मुनाफा है क्योंकि उसमें विशुद्ध शोषण है।

हरी क्रान्ति का अभी तक न तो समुचित आर्थिक आधार बना है, और न सामाजिक। अगर ये आधार तैयार नहीं होते तो हरी क्रान्ति हरी नहीं रह जायेगी; वह या तो लाल होगी या पीली पड़ जायेगी। यह बात स्पष्ट होती जा रही है कि भारत जैसे देश में सामाजिक क्रान्ति के बिना दूसरी कोई क्रान्ति, चाहे वह किसी भी रंग की हो, टिकाऊ नहीं हो सकती। कठिनाई यह है कि यह बात हमारे हितैषियों की समझ में अभी तक नहीं आ रही है।

'नहीं' की शक्ति

अगर कल्याण चाहते हो तो कल्याणकारी भ्रष्टाचार में शरीक हो। जहाँ देने की जरूरत हो दो, जहाँ लेने का मौका हो लो। चुनाव के लिए चन्दा इकट्ठा करना हो, कोटा-परमिट-लाइसेंस लेना हो, रेल के स्लीपर डिब्बे में जगह पानी हो, मुकदमे में फँसा दिये जाने पर किसी तरह जान छुड़ानी हो, आदि कोई भी स्थिति हो, हमारे देश के लोगों ने भ्रष्टाचार को शिष्टाचार मानकर स्वीकार कर लिया है, और जनम-जनम से बने सदाचार के संस्कारों में समय देखकर संशोधन कर लिया है। जिन्होंने अभी तक नहीं किया है उनकी संख्या दिनोंदिन घट रही है। वे बुद्धू और पुराने ख्याल के माने जाने लगे हैं। वे व्यंग्य में 'धर्मराज' कहे जाते हैं। सरकारी कार्यालयों, संस्थाओं, राजनैतिक दलों, या बाजारों में जो ईमानदारी बरतने की कोशिश करते हैं उनका तिरस्कार होता है, कई बार वे सताये जाते हैं, और उनको नुकसान पहुँचाया जाता है। भ्रष्टाचार और अनाचार अब थोड़े और छोटे लोगों की चीज नहीं रह गया है, कौन बड़ा इनसे कितना मुक्त है, कहना कठिन है।

समाज के मूल्य गये; सरकार कर्तव्य से च्युत हुई; संस्थाओं और उनके सेवकों की अन्तरात्मा सुप्त हुई। ऐसी स्थिति में नैतिकता का क्या नाम लिया जाय ? फिर भी प्रश्न केवल नैतिकता का नहीं रह गया है। भ्रष्टाचार इस देश के करोड़ों

लोगों के जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है। सफेद बाजार के समानान्तर एक देश-व्यापी, सुसंगठित, चोर-बाजार तैयार हो गया है। उसमें ३० अरब रुपया है या ७० अरब, यह अलग बात है। लेकिन यह स्पष्ट है कि उसका सरकार और बाजार दोनों पर कब्जा है; समाज का गला उसके हाथों में है। लोग क्या खायें, क्या पहनें, कैसे जीयें यह बहुत कुछ वही तय कर रहा है। नागरिक को बाजार के शोषण से रक्षा करने की शक्ति सरकार में होती है, होनी चाहिए, लेकिन अगर नमक ही नमकीन न रह जाये तो वह दाल में जाकर क्या करेगा? कल्याण का भूखा नागरिक कल्याण का शिकार हो गया है।

पिछले चुनावों के बाद राजगोपालाचारीजी ने बड़े मारके की एक बात कही थी। उन्होंने कहा था कि अब देश को अहिंसात्मक बगावत (नानवायलेन्ट इनसरेक्शन) के लिए तैयार होना चाहिए। बगावत के प्रश्न पर मतभेद हो सकता है, किन्तु प्रतिकार, व्यापक और सगठित प्रतिकार की आवश्यकता में शायद दो रायें नहीं होंगी। प्रतिकार के स्वरूप के बारे में अलग-अलग रायें हो सकती हैं।

सरकार के लोग खुद कह रहे हैं कि चोरबाजारी और मुनाफाखोरी से बचने के लिए जनता को सगठित होना चाहिए और डटकर कहना चाहिए कि हम उचित से अधिक मूल्य नहीं देंगे। ठीक है, ऐसा जरूर होना चाहिए। लेकिन स्वयं सरकार के दमन और भ्रष्टाचार के लिए क्या हो? दिखाई तो यह देता है कि जनता बाजार से जितनी परेशान है, उससे कम परेशान सरकार के आदमियों और कानूनों से नहीं है। जब देश की सरकार ही अनीति और अन्याय पर उतारू हो जाय तो मान लेना चाहिए कि सीमा के पार हो जाने में देर नहीं है। तब लोकशक्ति द्वारा प्रतिकार के सिवाय दूसरे उपाय भी नहीं है।

गांधी ने हमें बुराई के सामने 'नहीं' कहना सिखाया था। पचीस वर्षों में हम 'नहीं' कहना भूल गये। हम भूल गये कि 'नहीं' मुक्ति का मन्त्र है। 'नहीं' सत्य के साथ जुड़कर सत्याग्रह का अस्त्र बन जाता है। अगर हम बुराई को अस्वीकार नहीं कर सकते तो अच्छाई को स्वीकार करने की शक्ति कहाँ से आयेगी? आज स्थिति ऐसी है कि समाज की प्रतिकार-शक्ति जगनी ही चाहिए। प्रतिकार व्यक्तिगत हो या सामूहिक, और किस ढग से हो, यह विवेक का प्रश्न है, लेकिन अनाचार की शक्तियों को मालूम होना चाहिए कि अब हम उनके सामने 'हाँ' कहने, या चुप रहने के लिए तैयार नहीं हैं। अन्याय का प्रतिकार हमारे आन्दोलन में ग्रामदान के बाद का एक मुख्य काम है। हमारी ग्रामस्वराज्य सभाओं तथा ग्राम शान्तिसेना, तरुण शान्तिसेना को सोचना चाहिए कि वे वहाँ किस तरह सक्रिय और प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं। अन्याय को स्वीकार करना अन्याय करने से कहीं ज्यादा बुरा है।

प्रमाण दीजिए

'योजना असफल रही।' 'हम जड़ तक नहीं पहुँच सके।' 'योजना किसी एक दल के नहीं, पूरे राष्ट्र के पुरुषार्थ की चीज है।'

हमें कृतज्ञ होना चाहिए कि हमारे नये योजना-मन्त्री श्री डी० पी० धर ने सरकार की ओर से उस सत्य को स्वीकार किया जिसे देश की जनता ने बहुत पहिले ही जान लिया था। योजना-मन्त्री की यह स्वीकृति इस बात का प्रमाण है कि सरकार और जनता के सोचने-समझने में समय का कितना अन्तर है। इतने वर्षों तक जनता भोगती रही, और सरकार भ्रम में पड़ी रही। अब सरकार का भ्रम टूट रहा है, लेकिन क्या जनता के भोगने का अन्त भी होगा?

अन्त कैसे होगा, यह श्री धर और उनकी सरकार ने अभी नहीं बताया है। और, केवल बताने से काम भी नहीं चलेगा, अब तो करके दिखाना होगा। खोया हुआ विश्वास आसानी से वापस नहीं आता। बातें बहुत हुई हैं, और होती जा रही हैं। लाखों की हुई हैं, करोड़ों की हुई हैं, अब अरबों की हो रही हैं। जनता बड़ी-बड़ी बातों, वादों, और आँकड़ों को रोटी और रोजगार की शकल में देखना चाहती है। सरकार भी ऐसा ही सोचती है, इसके सार्थक संकेत अभी तक नहीं मिले हैं।

योजना जड़ तक कैसे पहुँचेगी? क्या हमारे योजनाकार गाँव-गाँव के लोगों को अपनी योजना खुद बनाने देंगे? या, अब भी विकास के अधिकारियों, नेताओं और मुखियों को ही सब कुछ मानकर उनके द्वारा दूर दफ्तरों में बनायी हुई उलटी-सीधी स्कीमें जनता के गले उतारने की कोशिश करते रहेंगे?

योजना राष्ट्रीय कैसे बनेगी? अभी तक योजना सरकार की रही है, सर्वदलीय भी नहीं। योजना राष्ट्रीय तब मानी जायेगी जब हर गाँव, हर नगर, हर स्कूल, हर कारखाना, हर कार्यालय, हर संस्थान, उसमें अपना स्थान देखेगा, जब हर नागरिक योजना के साथ अपना पुरुषार्थ जोड़ेगा, और उसकी सफलता में अपना भविष्य देखगा।

योजना को विकेन्द्रित कीजिए। गाँव तक ले जाइए। उसे मनुष्य केन्द्रित बनाइए। मनुष्य को आँकड़ों से नहीं, आँखों से देखिए। इतना कीजिए, जल्द कीजिए। अगर यह हो जाय तो जनता अब भी विश्वास करने को तैयार बैठी है; विश्वास का प्रमाण देना, श्री धर, आपका काम है। ●

हम सब परमेश्वर के ही अंग

● विनोबा

अभी परमेश्वर के अस्तित्व के विषय में एक लेख देखा। उस लेख के अन्त में लेखक ने 'विचार-पोथी' में से एक वचन लिखा है और उसीसे लेख समाप्त किया है। 'विचार-पोथी' में मैंने एक विचार लिखा है कि 'किसीने मुझसे पूछा, सामने के दीपक को जितना आप निश्चित कह सकते हैं, उतना ही क्या आप ईश्वर के अस्तित्व के विषय में मानते हैं ? मैंने उत्तर दिया, परमेश्वर के अस्तित्व के विषय में तो निश्चित हूँ, मुझे तो इस बात का यकीन नहीं है, या मैं यकीन नहीं दिला सकता कि सामने जो दीपक है, उसका अस्तित्व है या नहीं। उस दीये के अस्तित्व की कोई गारण्टी मैं नहीं दे सकता हूँ।' 'विचार-पोथी' का मेरा यह वचन बहुत पुराना, सन् १९२८ का है। इस बात को ३० साल हो चुके। ईश्वर को साक्षात् देखने का आभास मुझे कितनी ही बार हुआ है। कुछ श्रद्धा के कारण भी ऐसा होगा, जो कुटुम्ब से मुझे मिली थी। कुछ ग्रन्थों पर विश्वास है, उसका कारण भी होगा, परन्तु उतने पर मेरी श्रद्धा निर्भर नहीं है, बल्कि वह आँखों से देखती है कि सामने ईश्वर है। बाकी जो भिन्न-भिन्न प्राणी, जीव, मनुष्य हमारे सामने खड़े हैं, ये सारे उस ईश्वर के अनेक संकल्प हैं। मैंने ईश्वर-स्वरूप को इस तरह समझा है कि वह एक चैतन्य समुद्र है और उसमें लहरें उठती और गिरती हैं, उछलती हैं और समुद्र के अन्दर ही फिर घुलमिल जाती हैं। फिर से नयी लहरें उठती हैं और फिर वे घुलमिल जाती हैं। एक जीवात्मा यानी ईश्वर की एक लहर उठी। एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म उछलती रही और आखिर उसके अन्दर लीन हो गयी, तो जीवात्मा मुक्त हो गया। उसमें कोई ऊँच नहीं, कोई नीच नहीं, सिर्फ तरह-तरह के संकल्प उठते हैं। सृष्टि-उत्पत्ति का संकल्प उठा और हमने उसको ब्रह्मदेव नाम दिया और तब से उत्पत्ति होती ही रहती है। ब्रह्मदेव-रूप संकल्प जारी ही है। उसको अभी मुक्ति नहीं मिली। एक दिन आयेगा, जब उसको मुक्ति मिलेगी और वह समुद्र में लीन हो जायगा। यह तो ईश्वर का एक बहुत बड़ा संकल्प है। ऐसे अनेकविध संकल्प, अनेक शक्तियों से भरे उठते हैं। वे पूर्ण होते हैं और फिर समुद्र में लीन हो जाते हैं। इनमें ऊँच-नीच कुछ नहीं है, ये भिन्न-भिन्न हैं। यह भिन्न है, वह भिन्न है। किसी कारण से कोई जीव हमें आकर्षक मालूम होता है, तो दुनिया उसको सिर पर उठाती है, कोई जीव हमको अरुचिकर मालूम होता है, तो दुनिया उसको भूल जाती है, यह सब चलता है।

चैतन्य ही संकल्पकर्ता

चैतन्य संकल्प करता है और वह जीवात्मा के स्वरूप में लहर के मुआफिक ऊपर उठता है और अपना संकल्प पूरा करके पुन. चैतन्य में लीन हो जाता है। जैसे समुद्र में लहर पानी से ऊपर उठती है, परन्तु समुद्र का पानी और लहर के पानी के बीच कुछ शून्य (हवा) निर्माण नहीं होता है, वहाँ भी पानी ही है, वैसा ही जीवात्मा और परमात्मा के बीच कोई शून्यावकाश नहीं है। ये दोनों जुड़े हुए हैं। चैतन्य को सृष्टि-निर्माण, सृष्टि-रक्षण और सृष्टि-संहार के संकल्प शुभाशुभ, दोनों हो सकता है; बड़ा-छोटा भी हो सकता है—जैसे समुद्र की लहर बड़ी भी हो सकती है, छोटी भी हो सकती है। एक दफा वह लहर उठी और पानी में मिल गयी। अब वह अगर पुन. उठेगी, तो वह वही पानी लेकर उठेगी, ऐसा हम निश्चित नहीं कह सकते हैं। एक बरतन का पानी समुद्र के पानी में डाला जाय और फिर से बरतन से भरा जाय, तो वही पानी उस बरतन में आयेगा, ऐसा नहीं कह सकते हैं। ऐसा ही जीवात्मा के बारे में है। हाँ, अगर सीलबन्द बरतन पानी में डुबाया जाय, तो उस बरतन में वही पानी रहेगा, जो पहले था। वैसे अगर कोई उपाधि-युक्त जीवात्मा अपनी उपाधि के साथ ही मरता है, तो वह चैतन्य में लीन हुआ, ऐसा नहीं कह सकते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि हम पति-पत्नी बारह-बारह जन्म तक पति-पत्नी बनकर ही जन्म लेंगे, यह गलत विचार है। एक दफा दो लहरें एक साथ उछली, थोड़े अन्तर के बाद मानो मिल भी गयीं, तो उसके मानी यह नहीं है कि वे लहरें उछलकर नीचे आयेंगी, समुद्र में मिल जायेंगी और पुनः वे ही लहरें एक साथ उठेंगी—लहरों में एक-दूसरी लहर का पानी आ सकता है। शंकराचार्य ने जन्म लिया उन्हीं का कुछ अंश लेकर ज्ञानदेव पैदा हुए। शंकराचार्य और ज्ञानदेव दोनों के कुछ-कुछ अंश लेकर एकनाथ पैदा हुए, ऐसा हो सकता है। मेरी दृष्टि से चैतन्य समुद्र-स्वरूप है और जीवात्मा उस चैतन्य में संकल्प-स्वरूप है।

परमेश्वर का अंग होना ही मुख्य

मैं जब अपने लिए सोचता हूँ कि मैं कौन हूँ और मेरा भाग्य क्या है, तो कुछ स्थूल भाग्य भी याद आ जाते हैं और उसका बहुत बड़ा ढेर हो जाता है। मुझे जो माता-पिता मिले, वे कुछ विशेष ही थे, ऐसा लोग मानते हैं। मुझे जो भाई मिले, उनकी भी अपनी विशेषता है, ऐसा मान सकते हैं। मुझे जो मार्गदर्शक मिले, वे तो निःसंशय ही लोकदृष्टि में महात्मा ही माने गये। मुझे जो स्नेही मित्र मिले, वे भी सबके सब लोगों के प्रेम-पात्र हो गये। मुझे जो विद्यार्थी मिले, उन पर तो मैं स्वयं ही मुग्ध हूँ। तो, यह सब भाग्य का ढेर लग जाता है। लेकिन भी

मुझे अनेक भाषाओं का ज्ञान होने के कारण अनेक सन्तपुरुषों और धर्मपुरुषों का विचार-रस सेवन करने का निरन्तर मौका मिला और मिलता ही रहता है। यह भी एक बड़ा भाग्य ही है। इस तरह एक भाग्य-राशि बन जाती है। लेकिन वह सबकी सब भाग्यराशि काल्पनिक ही है। मुख्य भाग्य वही है जो मेरा है, आपका है और सबका है कि हम परमेश्वर के अंग, हिस्से, अवयव, तरंग है। ऐसे मनुष्यों को मैं जानता हूँ जो महात्मा की संगति में रहकर भी बहुत नहीं पा सके। मुख्य भाग्य तो यही है कि हम परमेश्वर के अन्दर समाविष्ट हैं—यह अगर हम महसूस करें, तो हमारा बेड़ा पार है।

रामकृष्ण परमहंस का चित्र

ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव तो अनेक लोगों को होता ही है। अभी हमारी यह यात्रा ही एक अनुभव है। रोज वह हमें किस तरह बचाता है, मदद करता है, यह अनुभव तो हम सबको होता है, परन्तु यह बहुत स्थूल अनुभव है। इसमें ईश्वर-रस चखने को नहीं मिलता है। यह अनुभव भी गौण है। मैं अभी स्वामी विवेकानन्द का चरित्र पढ़ रहा था। बचपन में तो वह चरित्र कई-दफा पढ़ा है—मराठी, हिन्दी, बंगाली में। लेकिन इस समय गुजराती में पढ़ा। कर्नाटक में एक गुजराती भाई ने, जो रामकृष्ण परमहंस आश्रम के सन्यासी थे, वह किताब लिखी है और मुझे वह भेजी तो फिर से पढ़ना ठीक समझा और पढ़ ली। उसमें विवेकानन्द ने मायावती आश्रम में रामकृष्ण परमहंस का चित्र भी नहीं रखने दिया। बाकी सर्वत्र, सब आश्रमों में रामकृष्ण की मूर्ति रहती है। उसकी पूजा, आरती चलती है। उनको भगवान के स्वरूप में ही भजते हैं। विवेकानन्द भी उनको भगवान् के स्वरूप में भजते थे। रामकृष्ण की पूजा के लिए स्वामी विवेकानन्द ने श्लोक भी बनाये हैं। लेकिन उस मायावती आश्रम में उन्होंने कहा कि 'इसको अद्वैत आश्रम ही रखा जाय। एक भी तो स्थान ऐसा होना चाहिए, जहाँ पूर्ण अद्वैत हो।' फिर भी उनकी गैरहाजिरी में किसी ने रामकृष्ण का चित्र लगा दिया, तो विवेकानन्द ने कहा, 'उस चित्र को मैं यहाँ नहीं चाहता हूँ।' मैं नहीं जानता हूँ कि मायावती आश्रम में अब वह चित्र है या नहीं। परन्तु उस चरित्र में ऐसा लिखा है कि विवेकानन्द ने कहा कि 'कम-से-कम एक स्थान तो रहे, जहाँ केवल अद्वैत रहे।' उनमें रामकृष्ण के लिए अत्यन्त गहरी भक्ति थी, तो भी उसे उन्होंने अद्वैतानुभव में गौण माना। खैर, यह तो बहुत ऊँची बात है।

विश्वास की प्रबल शक्ति

हम छोटी-सी चीज समझ लें कि हम जो भूदान, ग्रामदान के काम में लगे हैं, उसमें हमको उत्तम से उत्तम साथी मिले हैं। मैं जब एक-एक के बारे में सोचता हूँ तो मुझे सब हीरे और रत्न मालूम होते हैं। जवानी में कितनी तकलीफ उठाते हैं, वह भी केवल निष्काम भावना से। उसमें दूसरी कोई अपेक्षा नहीं है। पचासों नाम मेरे सामने आते हैं। इतनी सुन्दर संगति हमें मिली है। सब दुनिया को परमेश्वरमय देखने का भाग्य तो जब प्राप्त होगा, तभी होगा, परन्तु हमें जो साथी-मित्र मिले हैं, उनको आपस में एक-दूसरे के लिए कोई शंका न रहे, तो परमेश्वर ने हम पर पूर्ण कृपा की, ऐसा हमें मानना चाहिए। इतने से हमारा काम होगा। आगे सर्वत्र हरि दिखेगा। लेकिन प्रथम इतना हरि-दर्शन होना चाहिए, आंशिक हरिदर्शन। जो साथी हैं, एकत्र काम करते हैं, एक उद्देश्य लेकर आये हुए हैं, हम सब एक जीव हैं। इतना अगर हो जाय, तो फिलहाल 'एक कदम बस थाय' (वन स्टेप इज एनफ फार मी) इतना हमारे लिए पर्याप्त हो जायेगा। उसके आगे जो कुछ होना है, वह होगा। स्थूल ग्रामदान-ग्रामस्वराज्यादि और सूक्ष्म हरिदर्शनादि आगे होना है और मेरा मानना है कि यह होनेवाला ही है। मैं भगवान से आज प्रार्थना करता हूँ कि प्रभो, हम सबको अन्योन्य विश्वास दे।

मैं इन दिनों विश्वास की शक्ति बताता हूँ। वैसे आज तक वेदान्त और विज्ञान की शक्ति का नाम वर्षों से लेता था, परन्तु इन दो शक्तियों के अलावा एक तीसरी शक्ति की जरूरत है। यद्यपि वह चीज वेदान्त में आती है, फिर भी उसको अलग करके सामने रखने की जरूरत है। वह शक्ति है विश्वास! हम जब कुल दुनिया पर विश्वास रखने की बात कर रहे हैं तब तो आपस के लिए परम् विश्वास होना ही चाहिए और ऐसी प्राप्ति हमको हो यही प्रार्थना करके आप सब मित्रों का अत्यन्त उपकार मानता हूँ। आपके बिना मैं कुछ भी नहीं हूँ, मैं सतत् अनुभव करता हूँ। वैसे तो मुझे अनेक दोष स्पर्श करते हैं, परन्तु मैंने अपने में एक दोष नहीं पाया जो बहुतों ने मुझमें पाया। यह एक अजीब-सी बात है कि दूसरे लोग मुझमें जो दोष पाते हैं, उन्हें मैं खुद अपने में नहीं पा रहा हूँ और वह दोष अपने लिए अभिमान है। मुझे अपने लिए अभिमान रखने का कोई कारण ही नहीं मिला। यह ठीक है कि मेरी बुद्धि उत्तम काम करती है, परन्तु वह मेरी वजह से नहीं है। उसको उत्तम बनाने में कितनों का उपकार है यह देखा जाय तो उसको 'मेरी' कहने का अधिकार ही मुझे प्राप्त नहीं होता है।

आजकल मैं कृत्रिम दाँत नहीं लगाता। इनके सौन्दर्य की प्रशंसा भी हुई है। लेकिन मैं जानता हूँ कि इन दाँतों के सौन्दर्य के साथ 'मेरा' ताल्लुक नहीं है। जैसा दाँत के बारे में मुझे स्पष्ट अनुभव होता था, वैसा ही मुझे अपनी बुद्धि के बारे महसूस होता है कि मुझमें जो बुद्धि-प्रकाश दिखता है वह मेरा नहीं है। उसमें शास्त्र-ग्रन्थ की मदद, गुरुजनों की मदद, मित्र, विद्यार्थी, साथियों की मदद मिली है। अनेक लोगों की मदद से जो चीज बनी है, उसके लिए अपने को अभिमान हो कि मुझमें बुद्धि-प्रकाश है, तो वह बुद्धि-प्रकाश नहीं है, ऐसा ही सिद्ध होगा।

(११-९-१९५९)

भारतीय संस्कृति की उदारता की रक्षा की जाय

● जयप्रकाश नारायण

[आचार्यश्री तुलसी की पुस्तक 'अग्नि-परीक्षा' के विवाद के कारण चुरू में जो उपद्रव हुआ, उसमें श्री जयप्रकाशजी को बीच-बचाव करना पड़ा। समझौते के बाद उन्होंने सार्वजनिक सभा में जो भाषण दिया, वह यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

आज का यह अवसर बहुत शुभ है। बहुत ही सुन्दर कार्य आप लोगों ने आपस में मिलकर, आपस की चर्चाओं द्वारा कल और आज में सम्पन्न किया है। पुरानी बातें कहने की जरूरत नहीं है। जो बातें बीत चुकी हैं, उसका स्मरण हमें नहीं रहे, यही हम सबकी कामना है; क्योंकि जो कुछ हुआ है, जिसने भी किया है, जिस कारण से भी हुआ है, वह अच्छा नहीं हुआ है। लेकिन अब जो हुआ है, हर रीति से, हर विचार से, बहुत ही उत्तम हुआ है। इसके लिए मैं यहाँ के जैन समाज को, हिन्दू समाज को धन्यवाद देता हूँ।

पता नहीं मेरे जैसा एक व्यक्ति, जिसमें अनेक दोष हैं और उन दोषों को मैं जानता हूँ, अन्तर्यामी जानता है, एक निमित्त बना लेता है। अभी-अभी चम्बल घाटी में मुझे निमित्त बना लिया गया और यहाँ भी मैं निमित्त बन गया। लेकिन मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ। जो कुछ भी हुआ है, वह सब ईश्वर की कृपा से हुआ है।

विजय अहिंसा की हुई

आप सब जिन भाइयों ने कल आचार्यश्री का भाषण सुना होगा, उन्हें स्मरण होगा कि किन शब्दों में उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये और अपना निर्णय आपके और समाज के सामने पेश किया। आपमें से कोई सनातनी भाई, चाहे वह सघर्ष समिति का ही क्यों न हो, अगर यह मानता है कि उसकी विजय हुई है तो यह भूल होगी। विजय अहिंसा की हुई है, प्रेम की हुई है, मानव की हुई है और मानवता की हुई है। परसों जब मैं आचार्यश्री का भाषण सुना तो उन्होंने कहा कि मुझसे अब कोई पूछता है कि तुम कौन हो? तो मैं कहता हूँ कि मनुष्य हूँ। फिर पूछता है कि कौन हो, तब कहता हूँ कि धार्मिक हूँ और जब फिर पूछता है कि कौन हो, तब उत्तर देता हूँ कि जैन हूँ।

जो व्यक्ति (आचार्यश्री) अपना परिचय सर्वप्रथम मनुष्य के नाते देना चाहता हो, उस मनुष्य की, उस मनुष्यता की और उस मानवता की विजय हुई है। आपकी मानवता सबकी मानवता है, सारे समाज की मानवता है। मुझे इस बात का पूरा-पूरा विश्वास है। आचार्यश्री ने बार-बार इस बात को अपने हृदय की वेदना के साथ व्यक्त किया। उन्होंने स्पष्ट कहा कि मेरे चित्त में, मेरे हृदय में, स्वप्न में भी राम और सीता के प्रति कोई दुर्भावना हो, कोई लाञ्छन लगाने की नीयत हो, ऐसा कभी सम्भव नहीं है। सीता के लिए उन्होंने सतियों में श्रेष्ठा आदि सब कुछ कहा। भाष्य में अन्तर होता है। कुछ लोगों को लगा कि इसमें ऐसा नहीं है और आप लोगों ने आन्दोलन शुरू कर दिया। आचार्यश्री ने कल ही कहा था कि मेरे हृदय में राम और सीता के प्रति वैसी भावना नहीं है, जैसा मेरे विरुद्ध प्रचार किया जा रहा है। फिर भी अगर दूसरों को ऐसा लगता है तो भी, मैं इसे अपनी साधना, अपनी तपस्या में कोई कसर है, ऐसा मानता हूँ।

सचमुच, आचार्यश्री ने जो कुछ कहा है, वैसा कोई महापुरुष ही कह सकता है, साधारण व्यक्ति नहीं कह सकता। 'यह मेरा ही दोष होगा, मेरी ही कमी होगी, जिसके कारण हमारे कुछ भाइयों को दुःख हुआ।' आचार्यश्री के इन शब्दों को सुनकर तो मुझे महात्मा गांधीजी याद आ गये।

अहिंसा विनिमय नहीं है

आचार्यश्री ने कल एक और बहुत ऊँची बात कही, वह यह कि अहिंसा में विनिमय नहीं होता, सौदा नहीं होता। अहिंसा विनिमय नहीं है। यह बहुत ऊँची बात है। आप मानें या न मानें आगे आनेवाली दुनिया, मानव-समाज, इस पृथ्वी पर बचेगा नहीं अगर वह अहिंसा के मार्ग को नहीं अपनायेगा। भाई-भाई के बीच, हमारे और हमारे बन्धुओं के बीच हिंसा फूट पड़ी, क्या यह कम दुःख की बात है! चाहे वह मुसलमान हो, हिन्दू हो, ईसाई हो या जैन हो, अहिंसा का मार्ग सबके लिए उपयोगी है। इसलिए कि हिंसा की शक्तियों का ऐसा विकास हुआ है, ऐसा विराट रूप हिंसा के शस्त्रों का हुआ है कि ईश्वर न करे कि कभी विश्व-युद्ध हो; और अगर हो गया तो मानवमात्र नहीं बचेगा, मिट जायगा, ऐसे विध्वंसकारी शस्त्र हैं।

हिन्दू धर्म क्या है?

मैंने प० मौलिचन्द्रजी शर्मा से पूछा कि आपके पिताजी सनातन समाज के ऊँचे व्यक्ति थे, नेता थे और महापण्डित थे। वे हिन्दू धर्म की क्या परिभाषा करते थे? आपने कहा, "परिभाषा क्या? जितने धर्म, जितनी संस्कृतियाँ भारत में पैदा हुईं, उनके माननेवाले सब हिन्दू हैं। पिताश्री कहते थे कि यह तीस चालीस करोड़ हिन्दू क्या, अस्सी नब्बे करोड़ हिन्दू हैं। ये चीन में कौन हैं? बरमा से लेकर वियतनाम तक कौन हैं? बौद्ध हैं तो हिन्दू ही हैं।" हिन्दू की यह परिभाषा है। कलकत्ता में हमारे कितने मित्र हैं जिनकी हिन्दू पत्नी है तो जैन पति हैं, हिन्दू पति है तो जैन पत्नी है। इतना मिला जुला समाज है, जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं।

आज हमारा देश स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती मना रहा है। हम राष्ट्रीय एकता की, राष्ट्रीय एकीकरण की बात कह रहे हैं, यह ठीक है। परन्तु अभी आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि कितने हरिजनों को जिन्दा जला दिया, हरिजन

नारियों को नंगा करके गाँव के रास्ते पर घुमाया गया। आप तो शायद भूल गये होंगे अपना इतिहास! हमारी पुरानी परम्परा तो चली गयी।

मित्रो, नारे लगाना एक बात है और धर्म का अध्ययन करना, उसको समझना दूसरी बात है। उसे जीवन में उतारना अलग बात है। वह धर्म की बात न व्यापारी के जीवन में उतरती है, न कृषक के जीवन में, न मंत्री के जीवन में, न वकील के जीवन में, न डाक्टर के जीवन में, और न राजनीतिज्ञ के जीवन में। अगर वह बात जीवन में उतरती तो इतनी दरिद्रता नहीं होती। एक तरफ गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ और दूसरी तरफ झोपड़ियाँ नहीं होतीं। अगर हम सत्य पर चलते तो समाजवाद की आवश्यकता नहीं होती, साम्यवाद की आवश्यकता नहीं होती।

आप लोग तालियाँ तो बजा देते हैं परन्तु बात को समझते नहीं हैं। मैं समझाने के लिए आया हूँ। हमें कोई प्रशंसा नहीं चाहिए। मैं तो गालियाँ भी सुनता रहता हूँ, प्रशंसा भी सुनता रहता हूँ। परन्तु दोनों में एक जैसा रहता हूँ। एक बात तो हमने यह आचार्यश्री से सीखी कि हर मनुष्य को चाहिए कि वह अपना आत्म-निरीक्षण करे, अपने को कसौटी पर कसे कि हम कैसे हैं?

मैकडोनल्ड साहब ने अवार्ड किया कि हरिजन हिन्दू-समाज से पृथक हैं। महात्मा गांधी ने यह सुनते ही २१ दिन का उपवास किया, तब रवीन्द्रनाथ ठाकुर वहाँ आये। आखिर, उन्होंने अवार्ड वापिस ले लिया। लेकिन उसी समय महात्मा गांधी पर पत्थर फेंके गये। यह कहा गया कि गांधीजी तो हरिजनों को मन्दिर में प्रवेश कराने जा रहे थे। गांधीजी पर प्रहार हुआ, लाठी का प्रहार हुआ। यह प्रहार किसने किया? हिन्दू ने किया, मुसलमान या ईसाई ने नहीं किया। यह है हमारा हिन्दू समाज!

कल ही प्रकाशवीर शास्त्री ने बताया कि आज राजपूत राजपूत को वोट देगा, अहीर अहीर को वोट देगा, ब्राह्मण ब्राह्मण को वोट देगा और फिर अब उसमें भी गोत्र निकाल लिया गया है। गोत्र गोत्र को वोट देगा। कितने टुकड़े हो गये हैं समाज के। इस राष्ट्र में अब कोई शक्ति नहीं है। मैं गुरु गोलवलकरजी की सब बातों से सहमत नहीं हूँ, परन्तु इस राष्ट्र को एक करें, हममें शक्ति आये, चारित्र्य हो हमारे युवकों में, इसके लिए उन्होंने जो उद्यम किया है उसका मैं अवश्य प्रशंसक हूँ। और भी कई बातें हैं, जिनका मैं प्रशंसक हूँ। अगर आज भी हम नहीं चेतेंगे तो हमारे अन्दर दरार पड़ती जायगी और हम टूटते जायेंगे।

हिन्दू धर्म और धर्म परिवर्तन

मैंने सुना कि अलीगढ़ में जितने भी मलकाने राजपूत मुसलमान हुए थे, आज वे सबके सब हिन्दू बनने के लिए तैयार हैं। उस वंश के नवाब छतारी हैं। उनके घरों में आज भी आप जाइए, वे मलकाने तो नहीं हैं, मुसलमान हैं किन्तु शादी-ब्याह, रस्म-रीति आज भी वही चलती है। मुसलमान राजपूतों ने कहा कि हम अपने परिवार में वापिस तो आना चाहते हैं, परन्तु म्लेच्छ होकर नहीं आयेंगे तुम्हारे यहाँ। एक जमाना वह भी था जबकि हमारे राष्ट्र के जीवन में, हमारी संस्कृति में इतनी शक्ति थी कि बाहर से जो भी आया, उसको हमने हजम कर लिया। चाहे हूण आये, चाहे शक आये, चाहे कोई भी आया, हमारी संस्कृति में घुल-मिल गया।

परन्तु जो दल बिछुड़े हैं, और आज वापिस आना चाहते हैं, उनको हम मनुष्य मानने के लिए भी तैयार नहीं हैं, उनको ईश्वर के मन्दिरों में भी नहीं जाने देंगे। कितने दुःख की बात है!

हम कहते हैं कि ईसाई लोग धर्म-परिवर्तन करते हैं। धर्म-परिवर्तन का मैं कोई पक्षपाती नहीं हूँ। परन्तु अपने ही एक भाई को हम अस्पृश्य मानें, यह कहाँ का न्याय है? इतना पद-दलित, शोषित और उपेक्षित होने के बाद भी आज वे हिन्दू ही हैं। उन्होंने बहुत सोच-विचार किया कि हम किधर जायें? अन्त में वे बौद्ध धर्म में रहे यानी भारतीय संस्कृति के अन्दर ही। यह उनकी महानता थी। लेकिन महाराष्ट्र के जो नव-बौद्ध हैं, उनका हिन्दू जाति से संघर्ष क्यों चलता है? वे क्यों नव बौद्ध हो गये? उन्होंने कहा कि हममें स्वाभिमान आया है। अब हम अस्पृश्य नहीं हैं। जो ईसाई हो जाने में भावना होती है, मुसलमान हो जाने में होती है, ऐसी भावना हो गयी है। वे समाज में अपना बराबरी का दर्जा चाहते हैं। वे कहते हैं हम मरे हुए ढोरों की चमड़ी नहीं उठायेंगे। क्यों नहीं उठायेंगे? यह हमारा काम नहीं है। तुम्हारी टट्टी साफ करना हमारा काम नहीं है। एक जाति-विशेष का काम टट्टी उठाना नहीं है। तुम भी करो, हम भी करेंगे। आपमें से जो हिन्दू भाई हैं, उनसे मेरा निवेदन है कि हिन्दू-समाज में जो प्राण था, जो शक्ति थी उसको आत्मसात् किया जाय।

भाईचारा कायम हो

अब आप सबकी उदारता से, जैन समाज की उदारता से, हिन्दू समाज की उदारता से यह एक महान कार्य हो गया है, इसमें कोई विघ्न नहीं आना चाहिए। अब आपकी संघर्ष-समिति का कोई स्थान नहीं रह गया है। अगर संघर्ष समाप्त हो गया है तो समिति भी समाप्त हो जानी चाहिए। वह फैसला आप स्वयं ही करेंगे। दूसरी बात यह है कि जितने भाई जेल में हैं, उन्हें भी छोड़ देना चाहिए, सब मुकदमे उठा लेने चाहिए। यह मेरा निवेदन सरकार से है। मैंने तो यह सुझाव भी दिया था कि हिन्दू की जमानत जैन भाई लें और जैन की जमानत हिन्दू भाई लें तो एक भाईचारे का चित्र सामने आयेगा।

मैंने देखा तो नहीं, सुना है कि शहर के अन्दर दीवालों पर गन्दे नारे लिखवाये गये हैं, गन्दे चित्र बनवाये गये हैं, अब आकर उन्हें धो डालिये। अपने हाथों से मिटा डालिये। यह कलुष है। कृपा करके बच्चों को न खींचिए आपसी झगड़े में। राजनीतिवाले जो करते हैं, [illegible]

चुरू की अग्नि-परीक्षा

आजादी की रजत-जयन्ती के अवसर पर देश में जो कुछ प्रमुख घटनाएँ हुईं उनमें एक घटना राजस्थान के चुरू जिले में उत्पन्न हुई साम्प्रदायिक तनाव भी है। इस घटना की विशेषता यह रही कि विस्फोट की चरम स्थिति पर पहुँचा हुआ पूरा तनाव श्री जयप्रकाश नारायण के पहुँचते ही शान्त हो गया। चम्बल के बीहड़ों में जयप्रकाशजी के अहिंसात्मक प्रयासों की सफलता के तुरन्त बाद मिली इस सफलता ने लोगों के इस विश्वास पर अपनी मुहर लगायी कि बड़ी से-बड़ी समस्याओं के हल प्रेमपूर्वक समझा-कर हृदय-परिवर्तन कर देने से ही सकते हैं।

चुरू राजस्थान के कुछ प्रमुख जिलों में से है जो दिल्ली से १७६ मील की दूरी पर दिल्ली-जोधपुर रेलमार्ग पर स्थित है। चुरू नगर की आबादी ५१ हजार के लगभग है। इसमें ज्यादातर संख्या हिन्दुओं की है जिनकी संख्या करीब ३० हजार है, १५ हजार मुसलमान हैं। ३ हजार जैनी हैं जिनमें से आधे लोग अधिकांश समय बम्बई, कलकत्ता और दिल्ली में रहते हैं। चुरू में उत्पन्न तनाव जैनियों और हिन्दुओं के बीच का था।

८ अगस्त को जे० पी० (श्री जय प्रकाश नारायण) दिल्ली में थे और दिल्ली का कुछ काम समाप्त कर १२ को ग्वालियर जा रहे थे जहाँ १९ अगस्त तक रहकर विनोबाजी से मिलने वर्धा जाने का कार्यक्रम था। १० अगस्त को उनके एक मित्र श्री प्रभुदयाल डाबरीवाला उनसे मिलने आये और चुरू की दुखद स्थिति का वर्णन किया। डाबरी-वाला का दिल्ली और कलकत्ता में व्यापार है और चुरू से पारिवारिक सम्बन्ध। ११ की रात में जे० पी० ने आचार्य तुलसी के लिए एक पत्र लिखा। १२ को पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार जे० पी० ग्वालियर रवाना हो गये और श्री डाबरी-वाला उनका पत्र लेकर चुरू चल पड़े।

१४ अगस्त को जे० पी० ग्वालियर के सर्किट-हाउस में थे और समर्पणकारी बागियों के पुनर्वास एवं उनके मुकदमों की पैरवी आदि के प्रश्नों से चिन्तित थे। इन सब कार्यों के लिए लाखों रुपयों की आवश्यकता वे महसूस कर रहे थे और पैसा कहीं से प्राप्त नहीं हो रहा था। इसी दिन श्री डाबरीवाला वहाँ आये और जे० पी० से निवेदन किया कि वे तुरन्त चुरू चलकर स्थिति सम्भालें, वरना सब कुछ काबू से बाहर हो जायेगा और हिन्दू-जैन संघर्ष पहले राजस्थान में फिर सम्पूर्ण देश में फैल जायेगा। जे० पी० ने पाँच मिनट में निर्णय कर लिया और चुरू के लिए निकल पड़े।

चुरू का सारा विवाद अणुव्रत आन्दो-लन के प्रवक्ता आचार्य तुलसी की पुस्तक 'अग्नि-परीक्षा' को लेकर था। १९६० में यह पुस्तक आचार्य तुलसी ने जैन रामायणों की कथावस्तु के आधार पर लिखी थी। यह पुस्तक १९६१ में प्रकाशित हुई। ९ वर्षों बाद १९७० में कुछ सनातनियों ने पुस्तक का प्रतिवाद किया। उनका आरोप था कि इसमें सीताजी के प्रति अप्रिय शब्दों का प्रयोग किया गया है और उनकी निन्दा की गयी है। आचार्य तुलसी ने आरोप का खण्डन किया कि उक्त कृति सीताजी की महिमा के लिए लिखी गयी है और कृति में जो जनापवाद का वर्णन है, उसके सन्दर्भहीन पद्यांशों को लेकर ऐसी धारणा बनाना सही नहीं है। आचार्य तुलसी के स्पष्टीकरण का कोई प्रभाव नहीं हुआ और रायपुर साम्प्र-दायिकता की आग में जितना झुलस सकता था, झुलसा। पुस्तक को लेकर उत्तेजना के कारण मध्यप्रदेश सरकार ने पुस्तक पर प्रतिबन्ध लगा दिया, जिसके विरुद्ध न्यायालय में याचिका दर्ज की गयी। अन्ततोगत्वा, मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने पुस्तक को निर्दोष घोषित कर

→कीजिए। बच्चे नासमझ होते हैं। आप उनसे आज शंकराचार्य की जय बुलवा लीजिए तो कल आचार्य तुलसी की जय बुलवा लीजिए। इसलिए मैं कहता हूँ कि बच्चों की कुमार उन्हें गन्दी राजनीति में मत घसीटिए। आप बच्चों को अच्छी चीज सिखायें। अगर उन्हें गाली देना सिखायेंगे तो वे आपको भी गाली देंगे। आपके बच्चे आपके लिए ही भस्मासुर बन जायेंगे। हम और आप को जो करना था, कर चुके हैं। जो जवान हैं, उनके हाथों में यह नयी पीढ़ी है। अगर उनके संस्कार अच्छे नहीं होंगे तो देश का भविष्य अन्धकारमय बन जायेगा। भाई प्रभुदयालजी डाबड़ीवाला का पत्र मुझे मिला था। वे स्वयं मुझसे मिले थे। मेरे आने की आवश्यकता हुई। एक अहिंसा के सिपाही के नाते मेरा धर्म है इसलिए मैं आ गया। सारी बातें हो गयीं। बहुत बड़ा काम हो गया है। समाज में जो प्रबुद्ध लोग हैं, भले लोग हैं, उन्हें आगे आकर काम करना चाहिए। समाज में जब कुछ गलत बातें हो जाती हैं तो असामाजिक तत्वों को मौका मिल जाता है। असामाजिक तत्वों की कोई राजनीति नहीं है, उनका कोई सिद्धान्त नहीं है, कोई भावना नहीं, कोई चेतना नहीं, कुछ भी नहीं। वे तो ऐसी बातों से लाभ उठाते हैं। वे हमेशा यही चाहते हैं कि समाज का बुरा होता रहे। क्योंकि इसमें ही उनका लाभ है।

मैं आप सबको बहुत-बहुत बधाई देना चाहता हूँ और विश्वास करता हूँ कि अब यहाँ जो शान्ति कायम हुई है, वह हमेशा कायम रहेगी। हमारे विचारों में सहिष्णुता होनी चाहिए। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह आप सबको सद्बुद्धि दे।"

प्रेषक : कमलेश चतुर्वेदी

उसे प्रतिबन्ध से मुक्त कर दिया गया। पर तब तक रायपुर में बहुत कुछ घट चुका था जो बड़ी मुश्किल से सम्भाला जा सका।

मध्यप्रदेश से आचार्य तुलसी राजस्थान आ गये और उनके पीछे-पीछे रायपुर में ठण्डा हुआ, तनाव भी राजस्थान में आ गया।

१४ और १५ जुलाई की रात जगद्गुरु बीकानेर मेल से चुरू आये। १५ जुलाई को उनका पहला प्रवचन हुआ जिसमें उन्होंने कहा कि 'अग्नि-परीक्षा' नामक पुस्तक में सनातन धर्म पर आक्षेप लगाये गये हैं। अतः श्री तुलसी पुस्तक वापस ले लें। जगद्गुरु ने यह भी कहा कि अगर आचार्य तुलसी पुस्तक वापस ले लेते हैं तो वे पहले व्यक्ति होंगे जो उनका स्वागत करेंगे। इसके बाद हजारों लोगों की उपस्थिति में उनके रोजाना तीन प्रवचन होने लगे। १९ की रात को एक सभा आयोजित हुई जिसमें २० जुलाई को एक जुलूस निकालने का आवाहन किया गया। काले झण्डों के साथ २० को जुलूस निकला। जुलूस में हजारों लोग थे, जगद्गुरु जुलूस में नहीं थे। शहर में तनाव व हिंसा की आशंका से जिलाधीश एवं अन्य लोगों ने प्रयास किया कि मामला शान्ति से सुलझ जाये। ये लोग जगद्गुरु के पास गये और उनसे निवेदन किया कि वे और आचार्य तुलसी जिलाधीश-कार्यालय में अगले दिन आपसी चर्चा से मामला सुलझा लें। जगद्गुरु ने स्वीकार कर लिया और जुलूस आधे रास्ते से वापस लौट आया। २० तारीख को आचार्य तुलसी १६ मील दूर स्थित घातड़ा नामक स्थान से चुरू शहर में बने 'त्रिलोक बाल विहार' में आ गये थे और पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार २१ जुलाई को शहर में प्रवेश करनेवाले थे।

जिलाधीश-कार्यालय में २१ जुलाई को होनेवाला संवाद २० को सायंकाल ही आयोजित हुआ। एक घण्टे तक जगद्गुरु शंकराचार्य व आचार्य तुलसी के बीच चर्चा हुई। वार्तालाप में जगद्गुरु ने पुस्तक में वर्णित राम के बहुपत्नित्ववाद पर आपत्ति प्रकट की। आचार्य तुलसी ने कहा कि यह बात जैन रामायणों में है, *कुछ सनातन ग्रंथों में भी हो सकती है।* इस पर जगद्गुरु ने कहा कि यदि आचार्य तुलसी पाँच वर्ष की अवधि में सनातन धर्म ग्रन्थ के आधार पर राम की बहुपत्नियाँ सिद्ध कर देंगे तो पुस्तक पर उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी और अगर आचार्य तुलसी इसे सिद्ध नहीं कर पाये तो पुस्तक बन्द रहेगी। इस समझौते पर दोनों की सहमति हुई। समझौते के प्रस्ताव का प्रारूप भी बना पर ऐसा 'कुछ' हुआ कि दोनों के हस्ताक्षर उस पर नहीं हो पाये। बनती हुई बात बिगड़ गयी और बिगड़ती चली गयी।

१६ अगस्त को सुबह जे० पी० चुरू पहुँच गये। पं० प्रकाशवीर शास्त्री व पं० मौलीचन्द शर्मा भी जे० पी० के अनुरोध पर इस समय तक चुरू पहुँच गये थे। इस समय तक भी दोनों पक्षों में तनाव कायम था। इसका जीता-जागता प्रमाण शहर की दीवारें थीं जिन पर तरह-तरह के गन्दे चित्र और पोस्टर चिपके हुए थे। एक पोस्टर हजारों की संख्या में चिपका हुआ था जिस पर छपा था—'२० अगस्त रविवार को चुरू चलो। तेरापंथी श्री ... लसी की अग्नि-परीक्षा पुस्तक के विरोध में एक लाख का प्रदर्शन।'

साढ़े नौ बजे जे० पी० तैयार होकर उस पण्डाल में पहुँच गये जहाँ आचार्य तुलसी के प्रवचन होते थे। श्री प्रकाशवीर शास्त्री व पं० मौलीचन्द शर्मा भी जे० पी० के साथ थे। इस सभा में जे० पी० कुछ नहीं बोले। कुछ भी बोलने से पहले वे दोनों पक्षों से बातचीत कर लेना चाहते थे। *प्रकाशवीरजी ने अपने भाषण में* कहा कि आज देश को राजनीति ने आपसी सद्भावना को समाप्त कर दिया है। चुरू की घटनाओं के पीछे भी राजनीति ही काम कर रही है। लड़ने के लिए और भी मसले हैं जिनसे लड़ सकते हैं। लड़ना है तो हम समाज की कुरीतियों से लड़ें। जे० पी० की उपस्थिति की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा नेता चुरू आया है जिसके पीछे कोई सरकारी पुछल्ला या ओहदा नहीं है। जिसने अपने तप से भारत के ५५ करोड़ लोगों के मन में अपना स्थान बनाया है। जयप्रकाशजी की तपस्या के कारण ही मध्यप्रदेश के डाकुओं ने अपने शस्त्र उनके चरणों में डाल दिये। चुरू के लोग भी अपने सारे झगड़े उनकी झोली में डाल दें।

लगभग साढ़े दस बजे जे० पी० की आचार्य तुलसी से चर्चा प्रारम्भ हुई। शास्त्रीजी व शर्माजी भी चर्चा में मौजूद रहे। चर्चा में आचार्य तुलसी ने जगद्गुरु शंकराचार्य के साथ हुई चर्चा के बारे में बताया। सभी ने यह महसूस किया कि मौजूदा स्थिति का अन्त होना चाहिए। मौलीचन्दजी ने कहा कि समस्या का समाधान इस प्रकार होना चाहिए कि जयप्रकाशजी की बात टल नहीं सके। दोनों ही पक्ष उसे मान्य करें।

साढ़े ११ बजे रेस्ट हाउस पहुँचकर जे० पी० ने संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों से चर्चा की और उनकी माँगें सुनीं। प्रतिनिधियों ने कहा कि अगर आचार्य तुलसी अपनी पुस्तक वापस ले लेते हैं तो वे भी अपना आन्दोलन समाप्त कर देंगे। जे० पी० ने उनसे कहा कि वे तीन बजे आचार्य तुलसी से चर्चा करेंगे। चर्चा के बाद सभा होगी उसमें वे भी बोलेंगे। इस अवसर पर सनातन धर्म के लोग भी वहाँ इकट्ठे हो सकते हैं।

तीन बजे के कुछ देर बाद जे० पी० आचार्य तुलसी के पास पहुँच गये। लगभग पौन घण्टे तक दोनों में चर्चा हुई। चर्चा-समाप्ति के १५ मिनट पूर्व श्री *मौलीचन्द शर्मा व जयप्रकाशजी* की धर्मपत्नी प्रभावतीजी चर्चा में सम्मिलित हुईं। चर्चा के बाद जब जे० पी० कमरे से निकले तो उनके चेहरे पर सन्तोष का भाव था। बाहर पण्डाल में हजारों लोग बेसब्र होकर चर्चा का परिणाम जानने के लिए बैठे थे।

ग्रामीण राजनीति में हिंसा—२

● डा० अवध प्रसाद

['ग्रामीण राजनीति में हिंसा' की यह दूसरी और अन्तिम किश्त यहाँ दी जा रही है। ग्रामीण हिंसा के कारणों का अध्ययन डा० अवध प्रसाद ने मुसहरी प्रखण्ड को केन्द्र मानकर किया है। इस अध्ययन में से राजनीतिक कारणों को हमने पाठकों के सामने रखा है। अगले अंकों में आर्थिक, सामाजिक कारणों को भी हम पाठकों के सामने रखनेवाले हैं। —सं०]

निम्न वर्ग में चेतना हिंसा का कारण

गाँव की वर्तमान राजनीति किसी को सुहाती नहीं। फिर भी रुचि सभी लेते हैं। वर्तमान से सन्तोष किसी को नहीं, पर उसे बदलने की कोशिश भी नहीं। हिंसा-अहिंसा का विचार मन में नहीं है, पर व्यवहार का परिणाम हिंसा को बढ़ानेवाला होता है, घटानेवाला नहीं। वर्तमान राजनीति का विकल्प तलाशने का प्रयास भी नहीं हो रहा है। एक बात दिखाई दे रही है कि परम्परागत समाज-व्यवस्था का स्वरूप बदल रहा है और इसका प्रभाव-राजनीति पर पड़ता है। सामाजिक स्तर के अनुसार ग्राम-राजनीति पर पड़नेवाले तनावपूर्ण प्रभाव को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि उच्च जाति के विरुद्ध निम्न मध्यम तथा हरिजन जातियाँ समानान्तर में खड़ी होने के लिए प्रयत्नशील हैं। इस प्रयत्न में इन जातियों को व्यवहारगत क्रियाओं में विरोध का सामना करना पड़ता है। इन जातियों को मुख्य रूप से निम्नलिखित स्थिति में उच्च जातियों के लोगों के गुस्सा तथा उनके द्वारा की गयी हिंसा का सामना करना पड़ता है :

१. काम के समय जाने-आने तथा काम करने के समय किये जानेवाले व्यवहार तथा बातचीत।

२. उठना-बैठना तथा अन्य नित्य के व्यवहार के समय।

३. मजदूरी तथा अन्य अर्थ-व्यवहार के समय।

४. वास की जमीन के प्रश्न पर।

५. पशु के चराने के समय।

६. ग्रामीण गुटबन्दी तथा मतदान के समय।

इन अवसरों पर उच्च जाति के लोग, खासकर सम्पन्न किसान, उनसे अपने पक्ष में मनमाना निर्णय लेना चाहते हैं। फिर युवा समुदाय (हरिजन, पिछड़ा) व्यवहार में वह प्रतिष्ठा तथा हीनता का भाव नहीं जताता जैसा कि उनके पूर्वज जताते आये हैं। सभी स्वीकारने की स्थिति अभी नहीं आयी है।

राजनीतिक दल, सरकारी पैसा और ग्रामपंचायत की भूमिका

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद ग्रामीण जीवन में लोकतांत्रिक पद्धति का विकास करने का प्रयास किया गया। इस प्रयास में ग्राम राजनीति में सरकारी पैसा, राजनीतिक दलों तथा पंचायत की राजनीति का प्रवेश हुआ। पैसा, दल और पंचायत की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि सत्ता हाथ में आये। परिणाम-स्वरूप हर स्तर पर हितों का टकराव आरम्भ हो गया। जहाँ कहीं भी किसी का हित टकराता है वहीं तनाव आ जाता है। गाँव में बनी सभी संस्थाएँ पैसा और सत्ता की प्राप्ति के घेरे में घिर गयी हैं। सरकार ग्राम-विकास के लिए सभी सहायता गाँव में बनी सार्वजनिक संस्थाओं के माध्यम से देती है। पंचायत इसकी मुख्य संस्था है। इसके अतिरिक्त सहकारिता के सिद्धान्त पर बनी संस्थाएँ भी हैं। पिछले दो दशकों में सरकारी तथा अर्ध सरकारी एजेंसियों से प्राप्त सुविधाएँ ग्रामीणों को सुलभ हुई हैं। इन सुविधाओं में आर्थिक तथा राजनीतिक शोषण किस सीमा तक हुआ है तथा हिंसा को किस अंश तक प्रश्रय मिला है इसका प्रामाणिक अध्ययन नहीं किया जा सकता है। लेकिन यहाँ दो बातों पर विचार करेंगे—

(क) राजनीतिक तथा आर्थिक सुविधाएँ किन्हें मिल पाती हैं?

(ख) इसमें हिंसा की दिशा क्या है?

वर्तमान राजनीति में किन्हें स्थान मिलता है तथा कौन लोग गाँव के लाभ के लिए बनी संस्थाओं से अधिक लाभान्वित होते हैं, इस प्रश्न के उत्तर में जो बातें कही गयी उससे ये तथ्य सामने आते हैं

१ जो गलत ढंग से पैसा देने की स्थिति में होते हैं।

२ अधिकारियों के सम्बन्धी।

३ नेता तथा उनके सम्बन्धी।

४ गाँव की राजनीति जिनके हाथ में है।

स्पष्ट है कि जिन लोगों को राजनीतिक लाभ मिलता है उनकी संख्या काफी कम है। सामान्य जन इसमें रुचि नहीं लेता। जिन लोगों को लाभ मिलता है तथा जिस प्रक्रिया से लाभ मिलता है उसने ग्रामीण नैतिकता को सीधे प्रभावित किया है। सामान्य किसान तथा निम्न स्तर के लोगों का यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि राजनीतिक संस्थाओं से लाभ लेना है तो उपर्युक्त में से एक या अधिक रास्ते अपनाने होंगे। देखने में यह आया कि मध्यम तथा सम्पन्न किसान अपनी क्षमता एवं पहुँच के अनुसार गलत-सही रास्ते से लाभ ले लेते हैं। निम्न मध्यम तथा हरिजन समुदाय को लाभ नहीं मिल पाता। वर्तमान राजनीति की इस परिस्थिति पर हरिजन तथा निम्न मध्यम वर्ग के लोगों से चर्चा करने पर उनकी शिकायतें इस प्रकार रहीं —

४५ हरिजनों ने इस बात की शिकायत की कि पिछले दो दशकों में

सरकार या गाँव की पंचायत की ओर से किसी प्रकार की सुविधा नही मिली। ५ लोगो ने कहा कि बीच-बीच में कुछ पंसे तीस-चालीस रुपये मिले है। अकाल के समय प्राप्त भोजन-वस्त्र से कमोवेश लाभ सबको मिला। इनके मन में यह धारणा है कि सरकार या पचायत बड़े लोगो के लिए है। हाँ, इतना जरूर समझते है कि वोट के समय वोट माँगे जाते हैं और कभी-कभार कुछ मदद भी मिल जाती है। सामान्यत गाँव की राजनीति से इन्हें कोई मतलब नही है। निम्न मध्यम वर्ग के लोग अधिक जागरूक है। इस जागरूकता का लाभ उन्हे नही मिल पाता। हाँ परिस्थिति का ज्ञान होने के कारण विरोध तथा विद्रोह का मानस सहज ही बनता है। वैसे जातिगत सकीर्णता इतनी जटिल है कि हरिजन तथा निम्न मध्यम वर्ग की सभी जातियाँ जिनकी आर्थिक-सामाजिक स्थिति प्राय एक-सी है, राजनीतिक हित के नाम पर एक नही हो पाती। पिछली हिंसक घटनाओ से वातावरण में आशिक परिवर्तन आया है। इन घटनाओ के प्रति सहानुभूति देखी गयी।

राजनीतिक सगठनो से जिस प्रक्रिया से लोगो को लाभ मिलता है उससे मुख्य दो प्रकार के लोगो के बीच तनाव बढ़ता है तथा हिंसा को प्रश्रय मिलता है—

१. लाभ प्राप्त विभिन्न गुटो के बीच।

२. जिन्हे लाभ नही मिल पाता है।

सत्ता-प्राप्ति के लिए बने गुटो में एका स्थापित करने का प्रयास प्राय: नही किया जाता है। फलस्वरूप हर गुट का स्वार्थ बढ़ता जाता है तथा दूरी भी बढ़ती जाती है। इस दूरी का मुखर रूप चुनाव के समय देखा जा सकता है। सामान्य स्थिति में ये गुट गाँव में फूट डालने तथा आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं।

राजनीतिक गुटो का निर्माण किसी उद्देश्य को लेकर नही किया जाता है। सहज में विकसित मनमुटाव बाद में जाकर विरोधात्मक गुट बन जाते है। वैसे गुटो के निर्माण में सहायक परिस्थिति की खोज की जाय तो ये बातें सामने आती हैं—(१) पुराना मनभेद, (२) किसी प्रकार का झगड़ा, (३) जाति, (४) आर्थिक लाभ की आकांक्षा (५) सत्ता प्राप्ति की आकांक्षा। एक ही गाँव में कई नेता होने पर इन परिस्थितियों को अधिक बल मिलता है। ●

श्रीगांधी आश्रम का स्तुत्य कार्य

आचार्य कृपालानी के सचालन में श्रीगांधी आश्रम लगभग ५४ वर्षों से खादी जगत की जो सेवा कर रहा है, वह किसी से छिपी नही है। आजकल श्री-गांधी आश्रम का प्रधान कार्यालय लखनऊ में है। मेरठ, सहारनपुर, आगरा, मुरादाबाद, अमृतसर, अकबरपुर, फेफना, मगहर, प्रयाग में क्षेत्रीय कार्यालय हैं। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, पजाब, कश्मीर और असम, इतने राज्यो में आश्रम का काम चलता है। उसमें सूती और ऊनी माल विशेषरूप से चलता है, रेशमी कुछ कम बनता है। १९७१-७२ की कुल उत्पत्ति करीब ५ करोड रु० की है और बिक्री ११ करोड रु० की। आश्रम का काम २० हजार गाँवो में चलता है। ५२४ उत्पत्ति केन्द्र एव ४०३ बिक्री भण्डार है। कत्तिन १ लाख २३ हजार, बुनकर ८ हजार, अन्य कारीगर ५ हजार व कार्यकर्ता ३,५००, कुल १ लाख ४० हजार लोगो को आंशिक व पूरी रोजी मिलती है।

जिसका इतना विशाल काम है उस श्रीगांधी आश्रम की वार्षिक सभा गत ता० २२ से २४ अगस्त को मुजफ्फरनगर में आश्रम के प्रधानमंत्री श्री विचित्र नारायण शर्मा की अध्यक्षता में हुई। उसने सर्वोदय साहित्य-बिक्री में पूरी ताकत लगाने का सकल्प किया है और अपने कार्यकर्ताओं से अपील की है कि वे स्वयं तो सर्वोदय साहित्य का अध्ययन करें ही, ग्राहकों को भी अधिक-से-अधिक साहित्य दें। श्रीगांधी आश्रम ने साहित्य-प्रचार के लिए खास रियायतें एलान की हैं—

१. हर खादी के खरीददार को, जितने की खादी खरीदेगा उतना मान्य साहित्य आधी कीमत पर दिया जायगा।

२. सर्वोदय साहित्य सेट, जिसमें रु० ११-०० का साहित्य है, वह रु०४-०० में हर ग्राहक को दिया जायगा। इसके लिए खादी-खरीद का बन्धन खादी-स्वर्ण जयन्ती तक नही रहेगा।

सर्वोदय साहित्य सेट में निम्न पुस्तकें रहती हैं: १—आत्मकथा : गांधीजी २—बापूकथा ३—तीसरी शक्ति : विनोबा ४ गीता प्रवचन और ५—मेरे सपनो का भारत या अन्य साहित्य रु० २-०० मूल्य का। इस प्रकार ११ रु० में ११०० पृष्ठो की ये ५ किताबें केवल चार रुपयो में दी जायेंगी। साहित्य पर दी जानेवाली रियायत का पूरा भार श्रीगांधी आश्रम का प्रधान कार्यालय उठायेगा।

श्रीगांधी आश्रम के इस स्तुत्य निर्णय के लिए हम बधाई देते हैं और आशा करते है कि उसके विभिन्न केन्द्र-व्यवस्थापक साहित्य-प्रचार के कार्य में दिलचस्पी लेकर इसे आगे बढ़ायेंगे।

राधाकृष्ण बजाज
अध्यक्ष
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी

सत्याग्रही गिरफ्तार

तार द्वारा प्राप्त सूचनानुसार ३१ अगस्त को तंजोर जिले (तमिलनाडु) के वालवलम् ट्रस्ट की २६८ एकड़ जमीन के पट्टे के झगड़े को लेकर २४ किसानों ने श्री जगन्नाथन् के नेतृत्व में सत्याग्रह किया और सभी गिरफ्तार कर लिये गये।

१ सितम्बर के एक अन्य तार द्वारा दूसरी सूचना आयी है कि श्री मणिवरम् के नेतृत्व में ४८ किसानो ने सत्याग्रह में भाग लिया और ये भी सभी गिरफ्तार कर लिये गये।

क्षेत्रीय आचार्यकुल-तरुण शान्तिसेना — शिविर-प्रतिवेदन

(२० अगस्त से २४ अगस्त' १९७२)

उत्तर प्रदेश में तरुण शान्ति सेना के काम को तेज करने की जरूरत बहुत दिनो से महसूस की जा रही थी। साथ ही यह भी अनुभव आ रहा था कि आचार्यकुल और तरुण शान्तिसेना यदि साथ-साथ मिलकर तरुण अभिक्रम जागृत करने का काम करे तो सफलता की बड़ी अधिक सम्भावना है। इस दृष्टि को सामने रखकर वाराणसी में आचार्यकुल और तरुण शान्तिसेना का यह क्षेत्रीय शिविर आयोजित किया गया।

पूर्व तैयारी

वाराणसी में तरुण शान्तिसेना का सगठन व उसकी शक्ति नाम-मात्र की थी। सभी शिक्षण-सस्थाओ, सामाजिक क्षेत्र में लगे मित्रो तथा नागरिकों से शिविर के आर्थिक सयोजन व शिविरार्थियो की प्राप्ति हेतु सम्पर्क करने का निश्चय किया गया। विश्वविद्यालय के साथियो ने छात्रावास में रहनेवाले अपने मित्रो से इस सम्बन्ध में सम्पर्क करने का निर्णय किया। पूर्व तैयारी में केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के सयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव, प्रसिद्ध विचारक श्री रोहित मेहता, व अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के प्रशिक्षक श्री अमरनाथ भाई का सक्रिय सहयोग मिला। तरुण साथियो में श्री किशोर शाह व कुमार प्रशान्त ने बाहर से आकर इस शिविर आयोजन में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। उत्तर प्रदेश तरुण शान्तिसेना के अध्यक्ष श्री विनय भाई भी शिविर में उपस्थित थे।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वसन्त कन्या महाविद्यालय कमच्छा, सेण्ट्रल गर्ल्स स्कूल, काशी विद्यापीठ, उदयप्रताप कालेज, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय एन० एस० सी०, आचार्यकुल काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, अग्रसेन कन्या महाविद्यालय, हरिश्चन्द्र इण्टर कालेज, सनातन धर्म इण्टर कालेज, सुभाष इण्टर कालेज चोबेपुर, वसन्त महिला महाविद्यालय से आर्थिक व शिविरार्थियो की सहायता प्राप्त हुई। शिविर के आयोजन में शिक्षण-सस्थाओ, सामाजिक कार्यकर्ताओ व नागरिको ने सयोजक की भूमिका निभायी।

शिविर

शिविर में मिर्जापुर–१०, गाजीपुर–७ बलिया–३, देवरिया–१, जौनपुर-४, हरदोई–५, व वाराणसी–८२; कुल ११२ आचार्यों व तरुणो ने भाग लिया।

इस प्रकार ५६ विद्यार्थी, ३८ छात्राओ, १२ आचार्यो एव ६ शिक्षिकाओ ने भाग लिया। इसके अलावा १० आयोजक कार्यकर्ता भी थे। इस तरह कुल सख्या १२२ रही।

शिविर का उद्‌घाटन

शिविर का उद्‌घाटन २० अगस्त को आचार्य राममूर्ति ने किया। उन्होने शिविरार्थियो को बताया कि सत्ता के विरोध का अर्थ क्रान्ति नही होती। सत्ता के विरोध में सत्ता की भूख छिपी रह सकती है। क्रान्ति का अर्थ है सामाजिक मूल्यो में परिवर्तन। इस परिवर्तन का काम जो करे, वही तरुण है। इस शिविर में आचार्य और तरुण एकत्र हुए। यह बहुत अच्छी चीज हुई। क्योकि हमको अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि आज के युग में परिवर्तन विचार-शक्ति से ही हो सकता है और आचार्य तथा तरुण दोनो इस पथ के पथिक हैं। उन्होने कहा कि स्वतन्त्रता के २५ वर्षो के बाद भी आज का समाज भ्रष्ट राजनीति और अनैतिक व्यवसाय एव निकम्मी शिक्षा की भुजाओ से बना हुआ त्रिभुज है। तरुण इस त्रिभुज का आधार है। आचार्य और तरुण इस त्रिभुज के आधार को तोड़ दें तो त्रिभुज नही बनेगा और सामाजिक क्रान्ति होगी।

उद्‌घाटन समारोह के अध्यक्षीय पद से बोलते हुए काशी विद्यापीठ के कुलपति श्री रघुकुल तिलकजी ने कहा कि यह शिविर सरकार तथा दल दोनो से मुक्त है। उन्होने आशा व्यक्त की कि इस शिविर में सास्कृतिक क्रान्ति की बात की जायगी और अहिंसक ढग से सामाजिक मूल्यो में परिवर्तन की चर्चा होगी। उन्होने कहा कि मैं तरुण विद्रोह का हमेशा स्वागत करता हूँ। लेकिन विद्रोह की दिशा ठीक होनी चाहिए, जिससे सृजनात्मक शक्ति पैदा हो।

व्याख्यानों के विषय

शिविर में व्याख्यानो के विषय निम्नलिखित थे

१ आचार्य, तरुण और परिवार।
२ आचार्य, तरुण और विद्यालय।
३ आचार्य, तरुण और समाज।
४ अध्यात्म और विज्ञान।
५. तरुण शान्तिसेना और आचार्यकुल।

इनके अलावा "शान्ति" भी एक विषय था। इन विषयो पर डा० बी० बी० चटर्जी, आचार्य वशीधर श्रीवास्तव, डा० गागुली, श्री नारायण देसाई, निर्मला देशपाण्डे, आचार्य राममूर्ति, शुभदा तैलग, डा० रमेशचन्द्र तिवारी, श्री रोहित मेहता एव अमरनाथ भाई के व्याख्यान हुए। इन्हीं विषयो पर शिविरार्थी अलग-अलग समूहो में चर्चा करते थे। इन गोष्ठियो में सभी शिविरार्थी भाग लेते थे। इससे उनमें विश्लेषण शक्ति का अच्छा विकास हुआ।

शिविरोत्तर कार्यक्रम

शिविरार्थियो ने साथ-साथ बैठकर इस शिविर के बाद तरुण शान्तिसेना व आचार्यकुल को मजबूत करने का निर्णय किया। साप्ताहिक गोष्ठियाँ, सेवाकार्य, नियमित अध्ययन, श्रम का कुछ काम, सप्ताहान्त शिविर व अन्याय के प्रतिकार के कार्यक्रमो को करने का भी निश्चय किया गया। ग्रामीण क्षेत्रो में जाना, चिकित्सालयो में सेवाकार्य, हरिजन बस्तियो की सफाई व जन-शिक्षण के काम में भी शिविरार्थियो ने अपना पूरा सहयोग देने का निश्चय किया।

समारोप समारोह मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति श्री कालूलाल श्रीमाली मंच पर बैठे हुए और श्री रोहित मेहता बोलते हुए दिखाई दे रहे हैं।

लगभग शत प्रतिशत शिविरार्थी दहेज-प्रथा के विरोधी थे। उन्होंने दहेज न लेने, न देने व न लेने-देने का निश्चय किया। कुछ लोगों का यह भी कहना था कि हम पैतृक सम्पत्ति क्यों लें?

सहजीवन

शिविर की सबसे बड़ी विशेषता सहजीवन थी। छात्र एवं छात्राएँ ५ दिन तक साथ-साथ रहे एवं उन्होंने प्रत्येक कार्यक्रम में उत्साहपूर्वक हिस्सा लिया। अन्तिम दिन अनुभव सुनाते हुए एक बहन ने कहा कि "मैं पहले सोचती थी कि अलग रहने से ही अच्छा होता है लेकिन इस शिविर में पता चला कि साथ-साथ रहने से ज्यादा स्वस्थ वातावरण बनता है।" इसी प्रकार एक प्रतिक्रिया थी कि यहाँ पर ग्रुप भावना का तो सवाल ही नहीं उठा, जब कि दूसरी संस्थाओं के शिविरों में यह सामान्य बात होती है।"

रात्रि के सास्कृतिक कार्यक्रम ने भी शिविरार्थियों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। शिविरार्थियों ने इसमें उत्साह से भाग लिया। सभी शिविरार्थी सुबह साढ़े चार बजे रात्रि दस बजे तक के सभी कार्यक्रमों में साथ-साथ हिस्सा लेते थे। इनमें सफाई, श्रम, भोजन परोसना, खेल, वर्ग आदि कार्यक्रम शामिल थे।

शिविर-समापन

शिविर का समापन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति डा० कालूलाल श्रीमाली ने किया। डा० श्रीमाली ने अपने समापन भाषण में प्रसन्नता व्यक्त की कि इस प्रकार की एक शिविर-योजना वाराणसी में की गयी। तरुण का प्रमुख काम शिक्षा ग्रहण करना है। परन्तु समाज-सेवा के काम से वे विरत न हों। इन दोनों कामों से अधिक महत्त्व का काम है स्वस्थ दृष्टिकोण और आदर्श को लेकर चलना।

अध्यक्षीय भाषण देते हुए श्री रोहित मेहता ने कहा कि डा० श्रीमाली ने अभी जो दृष्टिकोण बदलने की बात कही है वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अगर किसी भी काम के पीछे स्वस्थ और रचनात्मक दृष्टिकोण नहीं रहा तो सर्जन नहीं विसर्जन होगा। आचार्य और छात्रों ने एक साथ बैठकर विचार किया और इस तरह एक स्वस्थ परम्परा का प्रारंभ हुआ है। यह शिविर का समापन नहीं है यह तो प्रारम्भ है। एक के बाद दूसरा शिविर और दूसरे के बाद तीसरा शिविर होगा और सतत हमारा चिन्तन चलेगा तथा चिन्तन का कार्यान्वयन हो तो समस्या का हल निकलेगा।

अन्त में अ० भा० शान्तिसेना मण्डल के प्रशिक्षक श्री अमरनाथ भाई ने, जिन्होंने इस शिविर का संचालन किया था, सबको धन्यवाद दिया और वाराणसी जिला तरुण शान्तिसेना के संयोजक श्री अरुण कुमार ने शिविर के आय-व्यय का हिसाब प्रस्तुत किया।

अन्त में स्नेह-मिलन का समारोह सम्पन्न हुआ जिसमें छात्राओं ने शिविरार्थी छात्रों, आचार्यों और समारोह में आये हुए सज्जनों को राखी बाँधी। यह समारोह कु० पैटल, प्रिंसिपल सेन्ट्रल हिन्दू गर्ल्स स्कूल की कृपा से सम्भव हुआ।

शिक्षण-संस्थाओं तथा नागरिकों द्वारा इस शिविर खर्च के लिए ३, ३२० रु० प्राप्त हुए और ५ दिन के इस शिविर में कुल २,२४८.३८ पै० खर्च हुए।

—अरुण कुमार

शिविर मे शामिल छात्र-छात्राएँ समारोप-समारोह में; नगर के अन्य नागरिकों ने भी समारोह में भाग लिया।

मध्यप्रदेश ग्रामस्वराज्य पदयात्रा

पूज्य विनोबाजी के आशीर्वाद तथा सम्मति से मध्यप्रदेश के वयोवृद्ध सर्वोदय लोकसेवक श्री दादाभाई नाईक ने समस्त प्रदेश में ग्रामस्वराज्य सर्वोदय विचार-प्रचार के उद्देश्य से सम्पूर्ण प्रदेश में पदयात्रा पर निकलने का संकल्प किया और १५ अगस्त, १९७२ को ग्वालियर से श्रद्धेय जयप्रकाश नारायण के आशीर्वचन के साथ उनकी पदयात्रा आरम्भ हो गयी है। उनके साथ पदयात्रा में बीच-बीच में श्रीमती आनन्दीबाई नाईक, और पूर्ण वर्ष भर श्री प्रमोद उपाध्याय (छिन्दवाड़ा) श्रीराम (बालाघाट) तथा कुमारी सध्या (मिरजापुर) रहेंगी।

यह यात्रा ग्वालियर से आरम्भ होकर चम्बलघाटी के बागी पीड़ित क्षेत्रों शिवपुरी, मुरैना, भिण्ड, दतिया, टीकमगढ़, सागर, दमोह, छतरपुर, पन्ना आदि जिलों से होते हुए गुजरेगी।

पदयात्रा में गाँव-गाँव में सभाएँ, गोष्ठियाँ और चर्चाएँ करने, ग्रामस्वराज्य का विचार फैलाने (ग्रामसभा बनाने, ग्रामकोष कायम करने, गाँव के झगड़े और अन्य समस्याएँ गाँव में ही तय करने और ग्रामशान्तिसेना बनाने ग्रामाभिमुख खादी) के कार्यक्रम शामिल हैं। अब तक ग्वालियर जिले में ७ गाँव में सभाएँ हुईं। पड़ाव पर ग्रामीणों के अलावा युवकों, छात्रों और शिक्षकों से भी सम्पर्क किया जाता है। यात्रा में अब तक १२५ रुपयों की पुस्तक-बिक्री हुई है।

आचार्यकुल का योगदान

चम्बलघाटी में बागी-समर्पण की जो चमत्कारी घटना हुई है, उसको एक सामाजिक शक्ति के रूप में संगठित और सक्रिय बनाना बहुत आवश्यक है, तभी यह घटना सार्थक बन पायेगी। इस दृष्टि से मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल और आचार्यकुल के आमंत्रण पर केन्द्रीय आचार्यकुल के संगठक श्री कामेश्वर बहुगुणा भी इस पदयात्रा में दादाभाई नाईक के साथ घूम रहे हैं। वे जगह-जगह शिक्षकों से सम्पर्क करके आचार्य-कुल के विचार समझाते हैं और उसे संगठित रूप देने का प्रयास कर रहे हैं। इससे आशा की जाती है कि क्षेत्र की परिस्थिति के सन्दर्भ में आचार्यकुल कोई कार्यक्रम विकसित कर सकेगा।

—प्रमोद उपाध्याय

हरियाणा में पदयात्रा

हरियाणा के लोगों में आगामी सर्वोदय सम्मेलन को लक्षित करते हुए विचार-पुष्टि-कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए पदयात्राओं का तांता शुरू कर दिया है। दो अखण्ड पदयात्राएँ इससे पहले शुरू हो चुकी हैं। अब एक तीसरी पदयात्रा ता० १७-८-७२ को प्रातः आठ बजे ग्रामोत्थान-विद्यापीठ, संगरिया (राजस्थान) के संचालक स्वामी केशवानन्दजी महाराज के आशीर्वाद से आरम्भ हो गयी है।

इस यात्रा में बालब्रह्मचारी श्री सूरत बाबाजी, व्यवस्थापक गांधी हरिजन सेवा आश्रम रोहतक, फुलिया भगतजी, महाशय मुशीरामजी वयोवृद्ध समाज सेवक शामिल हैं। ये २१वें सर्वोदय सम्मेलन के शुरू होने तक अखण्ड रूप से चलते रहेंगे।

यात्रा आरम्भ के समय ग्रामोत्थान विद्यापीठ का स्टाफ, गंगानगर जिला सर्वोदय मण्डल के सदस्यों और शिक्षार्थियों ने सैकड़ों की संख्या में उपस्थित होकर यात्रियों को भावपूर्ण विदाई दी।

सर्वोदय सम्मेलन की तैयारी

हरियाणा सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में ता० १८-८-७२ को सायं को हरियाणा के प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता और राजनैतिक नेतागण गान्धी स्मारक भवन सैक्टर १६ ए चण्डीगढ़ में इकट्ठे हुए। हरियाणा में होनेवाले २१ वें अखिल भारत सर्वोदय समाज सम्मेलन की पूर्व तैयारी के लिए एडहाक स्वागत समिति का गठन निम्न प्रकार किया गया है

मार्गदर्शक—प० ओमप्रकाश त्रिखा।
अध्यक्ष—श्री बनारसी दास गुप्ता, स्पीकर हरियाणा विधान सभा।
उपाध्यक्ष—माता सत्यवती।
मंत्री श्री सोमदत्त वेदालकार।
सहमंत्री—श्री मांगेराम शीतल।

सभा में यह तय पाया कि प्रचार और संग्रहकार्य को व्यापक रूप से चलाया जाय।

भूदान-यज्ञ ११-९-'७२ लाइसेन्स नं० ए १४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १३४

रजत-जयन्ती और शिमला-सन्धि पर विनोबा के विचार

"आजादी की रजत-जयन्ती मनायी जा रही है। आपकी दृष्टि से इस जयन्ती-कार्यक्रम की क्या विशेषताएँ होना हितकर होगा?" अभी हाल में ब्रह्म-विद्या-मन्दिर, पवनार (वर्धा) में गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण द्वारा पूछे गये उक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए आचार्य विनोबा भावे ने कहा :—

"रजत-जयन्ती पर अपना विश्वास नहीं है। अभी गांधीजी की शताब्दी मनायी गयी। मैंने कहा कि यह गांधीजी की महिमा नहीं है, गणित की महिमा है, १०० साल हुए फिर १०१ साल हो जायेंगे और फिर १०२ साल। खूब धूमधाम मचाया गया साल भर। गांधी-शताब्दी में एक बहन ने उत्तम प्रोग्राम दिया। उसने कहा था कि इस अवधि में सौ गांधी-वादियों को मरना चाहिए। मैंने गिनती भी की तो मरनेवाले गांधीवादियों में से ३०-३५ मित्र मिल गये मुझे।

अभी हाल ही में महावीर की शताब्दीवाले आये थे। मैंने उनसे कहा कि देखो महावीर ने कहा था, 'मुझे याद मत रखो, मेरे विचार अमल में लाओ।' इसलिए गांधीजी की तरह महावीर की भी हालत क्यों करते हो?"

शिमला-सन्धि के बारे में आपकी क्या राय है? आगे होनेवाली शिखर वार्ता में भारत को किन बातों की ओर विशेष ध्यान रखना चाहिए? राज्यपाल महोदय के इस दूसरे सवाल का जवाब देते हुए विनोबाजी ने कहा :

"बाबा ने अपना चित्त राजनीति से हटा लिया है। मैं रोज अखबार पढ़कर उसे दबाकर रख देता हूँ। कचरे को दबाकर रखना चाहिए।

"इन्दिराजी की जो राय है वही राय मेरी भी है। दोनों देशों को अपनी सेना पर कम खर्च करने की सहूलियत मिलेगी। पाकिस्तान अपने कुल बजट का सत्तर प्रतिशत सेना पर खर्च करता है, शेष ३० प्रतिशत अन्य और चीजों पर। यदि सेना में कम खर्च हो जायेगा तो उसका उपयोग अन्य विकास-कार्यों पर किया जा सकता है।

"मेरी राय यह है कि लेन-देन में भारत को कंजूसी नहीं करनी चाहिए। भारत एक बड़ा देश है। दोनों देशों के बीच में एकता, मैत्री करने का मौका मिलता है तो ज्यादा देने में घबड़ाना नहीं चाहिए। भारत में उदारता होनी चाहिए, वह एक बड़ा देश है। लेकिन मुख्य बात यह है कि अक्ल खोनी नहीं चाहिए। मेरा ख्याल है कि इन्दिरा अक्ल खोयेगी नहीं।"

संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति तथा अन्य उपसमितियों की बैठकों की तारीखों में कुछ अनिवार्य कारणों से परिवर्तन हुआ है। बैठकें उसी स्थान (प्रकृति निकेतन, कचोकी, पो० विष्णुपुर, जिला २४ परगना, प० बंगाल) पर होंगी। परिवर्तित तारीखें निम्न प्रकार हैं :

दिनांक		
२१ सितम्बर	सुबह १० बजे	संघ की विभिन्न समितियों के पदाधिकारियों की बैठक होगी
२२ से २४ सितम्बर	सुबह १० बजे	प्रबन्ध समिति की बैठक
२५ से २६ सितम्बर	सुबह ९ बजे	प्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्षों और मन्त्रियों की बैठक
२६ सितम्बर	सुबह ९ बजे	ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
७० पैसे। ... , भद्र द्वारा सर्व सेवा ... ... प्रेस वाराणसी में ...

वर्ष : १८, अंक : ५१

१८ सितम्बर, १९७२

दस क्षणिकाएँ

● भवानीप्रसाद मिश्र

क्षमा

अपने प्रति कठोर रहो
नरम बन सको जिससे
दूसरों के प्रति !
अति
अच्छी है यहीं
और कहीं नहीं !!

मार्दव

बाँध सकता है
तुम्हारे स्वर का
मीठा आरोह
कितना विरोध, कितना विद्रोह !
जोड़ सकता है तुम्हारी
एक स्निग्ध-सी चितवन
कितने बिखरे भाव
कितने टूटे मन !!

आर्जव

आज ही देखो छोड़कर
अपने सुख के लगाव को
और आज ही देखो जोड़कर
अपने हर काम को
दूसरों के सुख से
देखोगे फिर तुम
भीतर-बाहर जहाँ तक
जाती है निगाह
बन गयी है अपने-आप
एक ऋजु, सरल, सीधी
राह !

सोच

अवचेतन की प्रतिकूल धाराएँ,
पैदा कर देती हैं जब भँवर
भिड़कर आपस में
तैर आता है जीवन में तब
मटमैलापन !

और तब हमारा चेतन
निर्मल प्रार्थना के अतिरिक्त
और कुछ नहीं कर सकता
यह भी हमसे तब बनेगा
जब हमारा चेतन शुचिता से
कुशलता सम्भाल कर
अवचेतन को
गहरे से गहरा खनेगा !!

सत्य

जितना और जो
सच मानता हूँ उसे कहूँ
चारों तरफ उसी सच को
अपनी साँसों से !
और बहे वह धारा बनकर
ऐसी गहरी और ऐसी सम
कि न कहीं ज्यादा, न नहीं कम
और फिर थाही न जा सके वह
बेचारी कल्पना के बाँसों से !!

संयम

जो जितना ऊँचा चढ़ता है
धरना पड़ता है उसे
उतना ही साधित कदम !
ऊँचाई पर लापरवाही
राही की मौत सिद्ध हो सकती है
ऊर्ध्वता चाहे पार्थिव हो
चाहे अपार्थिव
यम-नियम संयम से ही
सिद्ध हो सकती है !!

तप

उद्देश्य तुम्हारे होने का
तुम्हारे ही बड़े-से-बड़े अभाव
और करुणा और पीड़ा से
गढ़ा जाता है
आना है उच्च पथ पर धीरज से
तुम्हें अपने तक !
वह तप ही है
जो पहुँचाता है आदमी को
आदमीयत के सपने तक !!

त्याग

इतना अगर करूँ तो उतना मिले
त्यागी नहीं बनाता मन में
सच्चे अथवा झूठे ऐसे किले !
भाव नहीं होता त्यागी को त्याग का
उसमें लेश नहीं होता
इस इच्छा, उस अनुराग का !!

आकिंचन्य

सुबह हो गयी है
हम सब झुकें
कि चुके हैं जिस तरह हमारे
अँधियारे
उजाले भी हमारे
उसी तरह चुकें
क्योंकि गण्य तो दिव्य का प्रभात ही है
नगण्य हैं हम और हमारा व्यक्तिगत उजाला -
अखिल के लिए तो वह रात ही है !

ब्रह्मचर्य

धरती पर कणों की गिनती नहीं है
न कमी है आसमान पर तारों की
इनमें भटक कर
स्थिर नहीं हो पाता मैं
अपने भीतर के केन्द्र के सिवा
अपने को
कहीं नहीं खो पाता मैं ! ●

—घो॰नि॰वि॰सेवा के सौजन्य से

खेल : खेल या और कुछ

जब १८९६ में बैरन पीरे द कुबर्टिन ने ओलंपिक खेलों की स्थापना की तो उसने यही सोचा होगा कि खेल खेल के लिए खेले जायेंगे। उसके मन में यह बात आयी भी नहीं होगी कि जैसे जैसे समय बीतता जायेगा इन खेलों में मिलावट बढ़ती जायेगी, और एक दिन ये खेल हत्या और आक्रमण तक के अवसर बन जायेंगे।

इस वक्त म्यूनिख में खेल चल रहे हैं। इसी मौके पर म्यूनिख में ही अठारह सौ वैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों, डाक्टरों और पादरियों की एक सभा हुई जिसके विचार का विषय था 'आज के समाज में खेलकूद का स्थान।' उस सभा में पश्चिमी जर्मनी के शिक्षा और विज्ञान के मंत्री ने यह विचार प्रकट किया कि खेलकूद में वैज्ञानिक ज्ञान और यांत्रिकी के इस्तेमाल होने के कारण कई अशुभ परिणाम प्रकट हो रहे हैं।

पहिले कहा जाता था कि खेल में स्वस्थ प्रतियोगिता होती है जिसके कारण मन के तनाव निकल जाते हैं, और शरीक होनेवालों के बीच सद्भावना बनती है। लेकिन आज यह दिखाई दे रहा है कि परिणाम ठीक इसके विपरीत आ रहे हैं। हमारे खेल उत्तेजना, प्रतिद्वन्द्विता, और आक्रमण के माध्यम बन गये हैं। तनाव और संघर्ष को कम करने की बात तो दूर है, खेल के मैदान की प्रतिद्वन्द्विता आगे बढ़कर राष्ट्रीय शत्रुता का रूप ले लेती है।

खेलाड़ी और दौड़ाक शक्ति और स्पीड बढ़ाने के लिए जिन औषधियों का प्रयोग करते हैं तथा जहरीली चीजों की सूइयाँ लेते हैं उनसे उनके शरीर को स्थायी क्षति पहुँचती है। कई खेलाड़ी जिगर और प्रास्टेट आदि के रोगी हो जाते हैं; कई स्त्री-खेलाड़ियाँ बाँझ हो जाती हैं।

इतना ही नहीं, खेलों का शोषण राजनीति के लोग और मुनाफाखोर भी कर रहे हैं। कई जगह यह बात साफ-साफ कही जाने लगी है कि राजनीति और खेल साथ-साथ चलनेवाली चीजें हैं। खेलों द्वारा कूटनीति के प्रयोग होते हैं, खेलों को साधन बनाकर दूसरे साध्य सिद्ध किये जाते हैं। उदाहरण के लिए पौने दो करोड़ की जनसंख्या का कम्यूनिस्ट देश पूर्वी जर्मनी अपने खेलकूदों को अन्तरराष्ट्रीय उद्देश्यों का साधन बना रहा है। वह खेलों पर लगभग ढाई अरब रुपये सालाना खर्च कर रहा है। खेलकूद की दृष्टि से छ-सात साल के होनहार बच्चे चुन लिये जाते हैं। वे सुबह पढ़ते हैं, और तीसरे पहर खेलकूद की ट्रेनिंग पाते हैं। उन्हें सिखाया जाता है : 'यह सब समाजवाद के लिए है।' बड़ा होने पर इन खेलाड़ियों को कई सुविधाएँ दी जाती हैं जो अन्य नागरिकों को नहीं मिलती। पूर्वी जर्मनी में एक बड़े खेलाड़ी का वह स्थान है जो एक प्रोफेसर का है।

इस बार म्यूनिख में पहली बार पूर्वी जर्मनी को एक सर्वाधिकार प्राप्त राष्ट्र का सम्मान मिला है। उसका अपना झण्डा और राष्ट्रगीत है। और, यह सम्मान उसे अपने प्रतिद्वन्द्वी पश्चिमी जर्मनी की धरती पर मिल रहा है जो उसके लिए विशेष सन्तोष का विषय है।

जब सत्ता की शक्तियों ने हर चीज को अपना साधन बना रखा है, तो खेल ही क्यों छूटें? बात जाहिर है कि खेल सिर्फ खेल नहीं रहे, वे बहुत-कुछ और बन चुके हैं।

जवान बनाम जवान

पटना में पुलिस के जवान बनाम कालेज के जवान, दिल्ली में कांग्रेस के जवान बनाम जनसंघ के जवान, वाराणसी में हिन्दू जवान बनाम मुसलमान जवान, तमिलनाडु में ब्राह्मण जवान बनाम अ-ब्राह्मण जवान, मध्य प्रदेश में आदिवासी जवान बनाम गैर-आदिवासी जवान जहाँ देखिए वहाँ जवानों की जवानों से भिड़न्त है। लोग कहते हैं कि आजकल पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के बीच खाई (जेनरेशन गैप) है जो दिनोंदिन बढ़ रही है। लेकिन ये भिड़नेवाले सब नयी पीढ़ी के हैं, इनमें कौन-सा 'गैप' है जो एक को दूसरे से भिड़ा रहा है?

क्या यह मान लेना चाहिए कि हमारे जवान हिंसा के सिवाय दूसरी कोई भाषा जानते ही नहीं? यूनियन का चुनाव लड़ना हो, इम्तहान देना हो, मैच खेलना हो, सिनेमा देखना हो, या रिक्शेवाले से किराया तय करना हो, हर जगह वह एक ही भाषा का प्रयोग करता है—डण्डे की। क्या हमारी शिक्षा का प्रतीक डण्डा ही रह गया है?

विद्यालयों का जवान किताब पढ़ते-पढ़ते डण्डे पर पहुँच गया है। लेकिन पुलिस के जवान को तो शुरू से डण्डा ही सिखाया गया है। जरूर उसने भी उन्नति की है, और अब गोली से कम में उसका काम नहीं चल रहा है। पुलिस का डण्डा सरकार का डण्डा है। तो, क्या सरकार ने भी वही भाषा सीखी है जो दूसरे जवानों ने सीख ली है? सरकार के पास इस बात का क्या जवाब है कि सरकार तोड़-फोड़ के सिवाय दूसरी कोई भाषा समझती ही नहीं? सरकार के सामने उपद्रव से बड़ा कोई तर्क नहीं। लेकिन सरकार केवल पुलिस नहीं है, उसमें जनता के वोट से चुने हुए नेता हैं जिनके आदेश पर पुलिस चलती है। क्या सरकार के नेता, पुलिस के जवान, और कालेजों के जवान, सबने एक ही भाषा बोलने और समझने का निर्णय कर लिया है? →

विचार-निष्ठा के बिना आचार-निष्ठा सम्भव नहीं

● विनोबा

अध्ययन न करने का गांधीवालों का लक्षण मैं बरसों से देख रहा हूँ। वे तत्व-विचार नहीं करना चाहते, गहराई में नहीं जाना चाहते, कुछ रचनात्मक कार्य जो उनके जिम्मे होते हैं, कर लिये तो उनका सन्तोष हो जाता है। इस दृष्टि के साथ मैं कभी भी सहमत नहीं हो सका। यह दीर्घदृष्टि नहीं है, ह्रस्वदृष्टि है। आचार का मूल, उसकी प्रेरणा, उसका समर्थन, उसके विकास का दिशा-सूचन, विचार में ही होता है। पेड़ के नीचे जमीन में पानी बहता रहता है। उसके पानी से पेड़ हरे-भरे दीखते हैं, गर्मी की धूप में भी। इतना ही नहीं, लेकिन बाहर से धूप अन्दर से पानी का प्रवाह, दोनों मिलकर वह विशेष ही परिपुष्ट होते हैं। अन्दर का प्रवाह सूख जाय, तो वृक्ष सूख जायगा। लेकिन हम इस बात को न समझ रहे हैं। मैं तो रामदास स्वामी के विचार से सहमत हूँ कि जिस स्थान पर और लाख बातें मिलती हों, किन्तु नित्य श्रवणमनन का अवसर नहीं मिलता, वहाँ साधक को नहीं रहना चाहिए, एक क्षण भी।

लेकिन गांधीवाले कहते हुए सुने जाते हैं कि विचारों की गहराई में क्यों जाना चाहिए। उससे उन्हें समय का क्षय होता दीखता है। और वे मिसाल पेश करते हैं--बुद्ध भगवान की, जो इन लोगों के ख्याल में विचार की गहराई को टालते थे। लेकिन जहाँ तक मैं बुद्ध को समझ सका हूँ, बुद्ध के बारे में यह ख्याल गलत है। बुद्ध भगवान विचार की गहराई में जाते थे, और इतनी सूक्ष्मता में प्रवेश करते थे कि उनके शिष्य उनके आशय को समझ नहीं पाते थे। और आखिर गुरुजी क्या बोले इस विषय में उनका मतभेद हो गया था। परिणाम-स्वरूप बुद्ध के नाम परस्पर विरोधी चार तत्व-विचार उनके शिष्यों ने रूढ़ किये। अगर बुद्ध भगवान केवल आचार कथन तक ही सीमित रहे होते तो इस तरह विचार की विविध शाखाओं और ऐसे मतभेद उनके शिष्यों में नहीं होते। इतनी ही बात है कि बुद्ध

→ राज्य की सरकारी हिंसा और समाज की गैर-सरकारी हिंसा में जमीन-आसमान का अन्तर है। जब शिक्षा सरकार के हाथ में है, और दिनोंदिन शिक्षा पर सरकार का नियंत्रण बढ़ता जा रहा है, तो विद्यालयों के जवानों को नयी भाषा, जो तोड़-फोड़ की भाषा से भिन्न हो, सिखाने की जिम्मेदारी सरकार पर है। सरकार इस जिम्मेदारी को निभाये या शिक्षा को अपने नियंत्रण से मुक्त करे। विद्यालयों को उनमें पढ़नेवाले विद्यार्थी, उनके अभिभावक, तथा पढ़ानेवाले शिक्षक मिलकर चला सकते हैं; उन्हें चलाना चाहिए। शिक्षा हो या अन्य कोई चीज, लोकतंत्र की भाषा हिंसा की नहीं हो सकती। लोकतंत्र में हर नागरिक को मतभेद प्रकट करने, विरोध करने, यहाँ तक कि प्रच-लित सरकार के स्थान पर (राज्य नहीं, सरकार) नयी सरकार कायम करने का अधिकार है। इसलिए हमारी शिक्षा-संस्थाओं में यह सिखाया जाना चाहिए कि लोकतंत्र में मतभेद, विरोध, और विद्रोह की भाषा क्या होनी चाहिए; क्यों वह भाषा हिंसा की नहीं हो सकती।

सरकार को हिंसा करने का अधिकार समाज ने दिया है। समाज पुलिस और सेना के लिए टैक्स देता है। आज का समाज चाहता है कि सरकार अपनी हिंसा-शक्ति का प्रयोग भीतरी अपराधियों तथा बाहरी आक्रमणकारियों के विरुद्ध करे। लेकिन हम देखते हैं कि सरकार ने हिंसा-शक्ति के प्रयोग का दायरा बहुत बढ़ा लिया है। जो दल या गुट सत्ता में होता है वह अपने विरोधियों के विरुद्ध पुलिस का इस्तेमाल करता है। चुनावों में हमारे राजनैतिक दल खुल्लमखुल्ला लाठीधारियों का प्रयोग कर रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे सत्ता को प्राप्त करना और सत्ता को चलाना, दोनों का आधार हिंसा की ही शक्ति है। लोक-कल्याणकारी राज्य पुलिस-राज्य बनता जा रहा है। सरकार और समाज के बीच पुलिस के सिवाय सम्बन्ध के दूसरे माध्यम समाप्त होते जा रहे हैं।

वाराणसी में एक महाविद्यालय के प्राचार्य पर प्रहार होता है। शहर में क्षोभ की लहर दौड़ जाती है। उ० प्र० के पुलिस मंत्री और शिक्षामंत्री (दोनों एक ही हैं) वाराणसी के निवासी हैं। फिर भी वह अपने नगर के नागरिकों से सीधे-सीधे बात करने की जरूरत नहीं समझते। उन्हें भरोसा है अपनी पुलिस पर, नागरिकों का पुलिस पर भरोसा नहीं है। नतीजा यह होता है कि नागरिक और उनकी अपनी सरकार के बीच तनाव पैदा होता है, खाई बन जाती है। इस स्थिति का अन्तिम लाभ असामाजिक तत्वों का होता है।

नागरिक-जीवन के हर क्षेत्र में पुलिस का बढ़ता हुआ हस्त-क्षेप, सरकार तथा राजनैतिक दलों का सत्ता के लिए अधिका-धिक हिंसा पर भरोसा, तथा नागरिकों का शान्त जीवन की रक्षा के लिए दिनोंदिन पुलिस पर अधिक मुँहताजी; ये तीनों स्थितियाँ लोकतंत्र ही नहीं, सभ्य जीवन के लिए गम्भीर खतरा है। अगर इस खतरे से बचना हो तो एक ही उपाय है : नागरिक जागरूक हों और संगठित हों। उन्हें अपने दैनन्दिन जीवन में सरकार, पुलिस और राजनीति का दखल घटाने की बात सोचनी ही होगी। जबतक ऐसा नहीं होगा सरकारी जवान बनाम गैर-सरकारी जवान, तथा एक गैर-सरकारी जवान बनाम दूसरे गैर-सरकारी जवान की भिड़न्त होती रहेगी, और समाज का जीवन अशान्त, अरक्षित, बना रहेगा। ●

भगवान लेखक नहीं थे, उन्होंने लिख नहीं रखा। इससे उनका निश्चित विचार मालूम होने में कठिनाई हुई है। जिस भूमि में उनसे पहिले उपनिषद हो गये, उस भूमि में बिना तत्व-विचार के वे खड़े ही नहीं हो सकते थे। इसलिए उन्होंने गहरा तत्व-विचार किया था महावीर ने भी किया था।

जैसे उनके विषय में गलतफहमी है, वैसे सन्तों के विषय में भी है। कहते हैं कि वे सारे भक्तिभाव पर सन्तुष्ट रहे और विचार की गहराई में नहीं गये। मैं मानता हूँ कि यह ख्याल भी गलत है। हाँ, व्यक्तिगत कुछ सन्त जरूर ऐसे थे जो विचार की उलझन में उतरना नहीं पसन्द करते थे, श्रद्धा से काम लेते थे। लेकिन जब समूचे भक्ति-सम्प्रदाय को देखते हैं तो यह नहीं कह सकते कि वे विचाराधिष्ठित नहीं थे। भक्ति और उपासना के मध्ययुगीन सम्प्रदाय शंकर, रामानुज आदि के विचारों की दृढ़भूमि पर खड़े हैं। कोई सन्त रामानुजी, कोई शांकर और कोई माधव है, और ये सारे तत्व-विचारक थे।

इस चर्चा में पड़ने की वैसे हमें खास जरूरत नहीं होनी चाहिए। मेरे लिए यह वस्तु स्पष्ट है कि जैसे बीज बिना फल नहीं, वैसे विचार-निष्ठा के बिना आचार-निष्ठा सम्भव नहीं है। आधुनिक जमाने में साम्यवादी तत्व-निष्ठा का आधार छोड़ते नहीं। वैसे तो रशियन क्रान्ति का उन्हें बल मिला है। वह न मिला होता तो वे उतने आगे न बढ़े होते। फिर भी केवल रशियन क्रान्ति के कारण ही वे आगे नहीं बढ़े। मार्क्स के तत्व-ज्ञान के बल पे टिक पाये हैं। रशियन क्रान्ति भी मार्क्स के तत्वज्ञान के बिना सम्भव नहीं हो पाती। मैं अभी विस्तार नहीं करूँगा। मैं कई बार कह चुका हूँ कि गांधीजी के बाद केवल अंधश्रद्धा से और यांत्रिक आचार से हम दुनिया के विचार-प्रवाह के खिलाफ नहीं टिक पायेंगे। इसलिए विचार का चिन्तन-मनन, निदिध्यासन, साधक-बाधक चर्चा करते रहना चाहिए।

यह नहीं कि कर्मयोग को छोड़कर यह सब किया जाय, बल्कि कर्मयोग के साथ किया जाय। मैं तो मानता हूँ कि कर्मयोग आचरनेवालों का ही यह खास अधिकार है कि वे ऐसी चर्चा करें। दूसरे जो कर्मयोग नहीं आचरते और ज्ञान-चर्चा करते रहते हैं, वे वास्तव में उसके अधिकारी नहीं हैं।

महिला आश्रम, वर्धा
८-९-'४९

भारत का मेरा आकर्षण : गांधी-विनोबा

● डोनाल्ड ग्रुम

[लोकबन्धु डोनाल्ड ग्रुम दिल्ली की हाल की ही एक हवाई जहाज-दुर्घटना के शिकार हो गये। हिन्दुस्तान में दिया हुआ उनका यह अन्तिम भाषण प्रस्तुत किया जा रहा है। —सं०]

मैं सोचता हूँ, अपना परिचय खुद ही देना पड़ेगा। कई वर्षों बाद यहाँ आया हूँ। यहाँ के समाजसेवी ग्रुप से मेरी अभी मुलाकात नहीं हुई है। मुझे अभी पता नहीं कि यहाँ कौन-कौन से लोग काम कर रहे हैं, क्योंकि कई वर्ष हो गये मुझे लोगों से मिले हुए।

सच पूछिये तो मैंने हिन्दुस्तान, जो लगभग मेरा घर ही हो गया था, १९६१ में छोड़ा। वैसे हिन्दुस्तान में तो १९४० से ही था और गांधीजी के साथ तो मेरा नजदीकी सम्बन्ध १९४० से ४६ तक रहा। गांधीजी से सेवाग्राम में मैं अक्सर मिलता था। वहाँ मेरा विशेष सम्पर्क आर्यनायकम्जी और आशा देवी से था। वे लोग मेरे घर, मध्य प्रदेश में भी आया करते थे। और तब हम सभी जंगल में जाकर भारतीय आजादी का झण्डा फहराया करते थे। हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में अपने को शामिल करने की बात तो मुझे हमेशा याद रहेगी, और मेरा ख्याल है कि यह चीज मुझे हिन्दुस्तान के लोगों के, और चीजों के मुकाबले ज्यादा नजदीक ले आयी। कोई भी मुझसे ये स्मृतियाँ नहीं छीन सकता, चाहे मैं इस देश में रहूँ या उस देश में।

मैंने हिन्दुस्तान १९६१ में छोड़ा जरूर, लेकिन तब से यहाँ कई बार आ चुका हूँ। मेरा ख्याल है, जिन्दगी में मेरा जो दूसरा बड़ा सौभाग्य है, वह है विनोबाजी के सम्पर्क में आना, या यों कहिए १९५६ से '६१ पाँच सालों तक विनोबाजी के साथ एकरूप हो जाना। १९५६ में मैं दादाभाई नाइक के साथ पूरे मध्यप्रदेश में एक वर्ष तक घूमा, करीब ३५०० मील पैदल चला। यही पहला मौका था जब मैं विनोबाजी के नाम के साथ लोगों की जिन्दगी में गहराई से घुस सका। पदयात्रा के पूरे समय हम लोग गाँववालों की कृपा पर निर्भर थे। पैसा मेरे पास था नहीं, लेकिन एक अंग्रेज होते हुए भी मुझे गाँववाले अपने मित्र की तरह ही स्वीकार करते थे, उसी तरह जैसे मेरे साथ किसी भी दूसरे आदमी को। मैं हमेशा कहता हूँ कि मुझे हिन्दुस्तानी लोगों की संस्कृति पर यही सबसे जोरदार टिप्पणी करनी है कि सचमुच वे किसी रंग या चमड़ी या ऊँच-नीच में कोई भेद नहीं करते। गाँव में यह बिलकुल सही है और भारतीय संस्कृति और यहाँ के गाँवों की यह एक बहुत बड़ी मजबूती भी है।

मैं विनोबाजी के साथ चार साल यानी १९६१ तक रहा और उन्हें उन्हीं के कहने पर छोड़ा। उन्होंने मुझे नाम भी दिया 'लोकबन्धु'। वह गा रहे थे, जैसे कि वे हमेशा करते हैं "लोकबन्धु लोकनाथो... विष्णुसहस्रनाम," और एक दिन उन्होंने वह ही तो दिया। 'यही तुम्हारा नाम है।' और जब-जब मैं विनोबाजी के पास गया हूँ उन्होंने मुझसे यही कहा कि उन्होंने मुझे रोज

याद किया है, क्योंकि वह रोज ही विष्णुसहस्रनाम कहते हैं और मुझे तो ऐसा लगता है कि इस नाम में बड़ी ताकत छिपी है। लेकिन उन्होंने मुझसे कहा कि मैं हिन्दुस्तान छोड़ दूँ और यदि हिन्दुस्तान से मैंने कुछ भी सीखा है और सर्वोदय आन्दोलन से कुछ सीखा है तो मैं पश्चिमी देशों में जाऊँ, इग्लैण्ड जाऊँ, अमेरिका जाऊँ, जहाँ चाहे वहाँ जाऊँ और मैं देखूँगा कि जैसा हिन्दुस्तान में लोग इस "चतुर्थ आयाम" के प्रति प्रतिक्रिया दिखाते हैं वैसी ही प्रतिक्रिया मुझे सर्वत्र मिलेगी। उन्होंने इन शब्दों का इस्तेमाल किया। जैसा कि आप सभी जानते हैं। 'चतुर्थ आयाम' मनुष्य मात्र के बीच क्रियाशील नये युग को कहते हैं।

मैं तो यही कह सकता हूँ कि इंग्लैण्ड में इस तरह की कई वर्षों की जिन्दगी बिताने के बाद और अमेरिका में काफी यात्रा करने और कई वर्षों तक शान्ति आन्दोलन में काम करने के बाद (मैं नेशनल पीस कौंसिल का सेक्रेटरी था। यह संगठन सभी शान्ति आन्दोलन में *समन्वय स्थापित करता है।* मैं चार साल तक सेक्रेटरी रहा, और इग्लैण्ड की कवेकर पीस कमिटी का भी चार साल तक सेक्रेटरी रहा।) मैं पिछले तीन सालों से उस अद्भुत देश में रहा जिसे आस्ट्रेलिया कहते हैं।

विनोबाजी कहते थे, आस्ट्रेलिया में जमीन तो बहुत काफी है जिसमें भूदान के लिए बड़ी गुंजाइश है। लेकिन आस्ट्रेलिया में ज्यादातर जमीन ऐसी है जिसे लोग लेना नहीं चाहेंगे। अब पूछिये तो, दो सप्ताह पहिले मैंने जब आस्ट्रेलिया छोड़ा लन्दन जाने के लिए, तो मैं सिडनी से एक जम्बोजेट में रवाना हुआ। उसमें ४०० आदमी बैठे थे। जम्बोजेट ६०० मील प्रतिघण्टे की रफ्तार से उड़ रहा था और ४ घण्टे तक हम आस्ट्रेलिया के रेगिस्तान के ऊपर से ही उड़ते रहे। मैंने देखा कि इस रेगिस्तानी जमीन की कोई कीमत नहीं है। और, आस्ट्रेलिया के बारे में एक अजीब बात यह है कि दो साल पहिले उन्होंने १९७० में अंग्रेज कप्तान कुक द्वारा आस्ट्रेलिया की खोज का उत्सव मनाया। आस्ट्रेलिया की खोज तो अंग्रेजों ने ही की थी और अंग्रेज लोगों की यही मनोवृत्ति भी बनी हुई है। आस्ट्रेलिया के आदिवासी तो वहाँ दस हजार वर्षों से रहते चले आ रहे हैं और आस्ट्रेलिया में रहनेवाले आदिवासी शायद हिन्दुस्तान से आये। आस्ट्रेलिया में लोगों के मन में यह बड़ा तगड़ा शुबहा है कि वहाँ के आदिवासी मूलतः यहीं भारत के ही द्रविड थे। आर्यों के पहिले के युग में समुद्र यात्रा करनेवाले लोगों ने ही आस्ट्रेलिया बसाया। दुनिया के लोगों और आस्ट्रेलिया के आदिवासियों में यही सम्बन्ध है कि ये आदिवासी दक्षिणी भारत के टोडा लोग हैं। वे हिन्दुस्तानी पहाड़ी आदिवासियों के ही वंशज हैं। ये टोडा लोग आस्ट्रेलिया के आदिवासियों की तरह ही लगते हैं। और उनकी जो प्रकृति है, जो परम्परा है वह विनोबा की कल्पना का सर्वोदय ही है, यानी जमीन भगवान के सिवाय और किसी की नहीं है और वे भूमि और भगवान के पुत्र हैं। आस्ट्रेलिया के आदिवासी ऐसा ही मानते हैं और ऐसा वे हमेशा मानते आये हैं। हम लोग यह तथ्य अब जान पाये हैं। हम इन आदिवासियों के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। आस्ट्रेलिया में अंग्रेजों ने सारे आस्ट्रेलियाई आदिवासियों का ही सफाया करना चाहा और मैं समझता हूँ यह मनुष्य-मात्र का एक घोर पाप है। और अपने आस्ट्रेलिया निवास-काल में मैंने सोचा भी कि इस पाप भार को मिटाने के लिए मैं कुछ करूँ। उनके ऊपर से सारे जुल्म सिर्फ इस लिए हैं क्योंकि वे आक्रामक नहीं हैं, चूँकि वे मानते हैं कि वे भूमिपुत्र हैं और भूमि सबकी है। सिर्फ इसीलिए उन्हें मनुष्य नहीं माना जा रहा है और इसीलिए उन्हें जीने भी नहीं दिया जा रहा है। आस्ट्रेलिया के आदिवासियों को वहाँ भी कोई अधिकार नहीं है। यह एक अजीब स्थिति है। वे न भूमि खरीद सकते हैं न रख सकते हैं। लेकिन दो हजार या दस हजार वर्षों तक वहाँ की जमीन उन्हीं की थी और तब कैप्टेन कुक और उसके आदमी वहाँ आये और लन्दन का शासन वहाँ भी जम गया या जमने के लिए भेज दिया गया।

आस्ट्रेलिया हिन्दुस्तान से काफी बड़ा है। उत्तर दक्षिण यह करीब तीन हजार मील लम्बा है और पूरब पश्चिम भी उतना ही है। वहाँ सिर्फ एक करोड़ तीस लाख लोग रह रहे हैं जबकि हिन्दुस्तान में पचपन करोड़ लोग रह रहे हैं। आस्ट्रेलिया के बारे में यह एक अजीब बात है।

लेकिन सचमुच जो चीज मैं कहना चाहता था वह यह है कि मैंने जबसे हिन्दुस्तान छोड़ा मैं सर्वोदय और विनोबाजी का सन्देश अपने साथ ले गया, तभी से यह सन्देश मेरी चेतना में बस गया है। मैं जहाँ कहीं भी गया मैंने हमेशा प्रेरणा और मार्गदर्शन के लिए हिन्दुस्तान की ओर देखा है। मुझे हमेशा उत्सुकता रहती है यह जानने की कि यहाँ क्या हो रहा है, यहाँ यानी उस जगह यहाँ के लोगों को दुनिया के दो बड़े लोगों—गांधीजी और विनोबाजी ने कुछ करने के लिए चुनौती दी है। मैं ऐसा क्यों सोचता हूँ? उसका कारण यही है कि गांधीजी और विनोबाजी का जो सन्देश है वह आज के समय में पश्चिमी दुनिया के लिए सबसे ज्यादा उपयुक्त है। इस सन्देश की उपयुक्तता के बारे में कोई प्रश्न नहीं है। बात सिर्फ इतनी है कि हम इस सन्देश को लेंगे किस प्रकार; उसको क्रिया में, इन्सान की जिन्दगी के ताने-बाने में, रखेंगे किस प्रकार। मैं समझता हूँ यही वह क्षेत्र है जहाँ हम ज्यादातर फेल हो गये हैं, चाहे हिन्दुस्तान हो या पश्चिम की दुनिया।

हम अभी इस बात की खोज करते हैं कि गांधीजी और विनोबाजी के दर्शन और सन्देश को समाज में लागू कैसे किया जाय। इसे जीवन में कैसे लागू

किया जाय और इसे समाज में एक ताकत कैसे बनाया जाय। इसे सिर्फ उस चीज की तरह न रखा जाय जिसका अपने पास रहना या जिसका जानना हमें थोड़ा सुख देता है बल्कि इसे उस चीज की तरह रखा जाय जिसमें समाज और लोगों के जीने के तरीके को बदल देने की ताकत है, जिसमें सारे समाज की नीतियों और लोगों के विचारों को भी बदल देने की ताकत है। मैं अभी शेफील्ड (इंग्लैण्ड) की वार रेसिस्टर्स इण्टरनेशनल से आया हूँ। इस कान्फ्रेन्स में शामिल होने के लिए ही मैं मेलबोर्न से इंग्लैंड, १३,५०० मील उड़कर आया। इस सम्मेलन के बाद शान्ति आन्दोलन के बारे में मेरा यह मत बना है कि हम लोगों ने अभी यह नहीं सीखा है कि गांधीजी के सिद्धान्तों को दुनिया में कैसे लागू किया जाय ताकि गांधीजी समाज में शक्तिशाली और क्रान्तिकारी शक्ति बन जायें। हम अभी विचारों के साथ ही खेल रहे हैं और दुनिया के मामलों पर असर डालने की ताकत अभी हममें नहीं है, जिससे कि हम एक ऐसे समाज का निर्माण कर सकते जिससे यह दर्शन और ये सिद्धान्त प्रकट हो सकते हैं। पश्चिम में रहनेवाले हम लोग हम जहाँ कहीं भी हैं, उतने ही कमजोर या मजबूर हैं जितना कि हिन्दुस्तान है। यहाँ की स्थिति में कोई अन्तर नहीं है। मेरा ख्याल है कि हिन्दुस्तान में भी सर्वोदय आन्दोलन के सामने अब भी यह मूलभूत चुनौती है कि वह एक ऐसी ताकत कैसे बने जो लोगों के जीवन और सरकार की नीतियों को प्रभावित कर सके और इन सिद्धान्तों पर आधारित एक समाज का निर्माण कर सके। बिलकुल यही चीज वहाँ भी है, चाहे इंग्लैण्ड हो, अमेरिका हो, आस्ट्रेलिया हो या यूरोप हो। संसार की पुरानी पीढ़ी बेसब्री के साथ जिन्दगी के इसी रास्ते की ओर देख रही है।

(इस भूमिका के साथ श्री डोनाल्ड ग्रूम ने प्रश्न आमंत्रित किये थे।)

बम्बई, ७-८-'७२ —अनु० रामभूषण

मजदूरी

● डा० अवध प्रसाद

[ग्रामीण हिंसा के कारणों के अध्ययन की यह तीसरी किस्त यहाँ प्रस्तुत है। यह अध्ययन मुसहरी प्रखण्ड को ही केन्द्र मानकर किया गया है। इस लेख में आप पायेंगे कि गांवों में मजदूरी-निर्धारण में कौन-से तत्व काम करते हैं और क्या मजदूरी दी जाती है। —सं०]

पिछले दो दशकों में ग्रामीण जीवन की आर्थिक परिस्थितियाँ बदली हैं। इस बदलाव में परम्परागत आर्थिक परिस्थितियों में भी परिवर्तन आया है। अनेक प्रयासों के बावजूद आज भी ग्रामीण जीवन का आधार कृषि तथा उससे सम्बद्ध अन्य कार्य हैं। शहर के समीप होने के कारण इस क्षेत्र में अन्य सहायक धन्धे भी हैं। शहरी जीवन का सीधा प्रभाव पड़ा है जिससे फुटकर दूकानें, रिक्शा चलाना, शहर में जाकर दूकान में विभिन्न प्रकार के कार्य करना और साथ ही नौकरी करनेवालों की संख्या भी अपेक्षाकृत अधिक है। आज की बदलती आर्थिक परिस्थिति में इस क्षेत्र में अर्थ-व्यवस्था का जो स्वरूप है उसे देखते हुए विभिन्न कार्यों को इस रूप में विभक्त कर सकते हैं

१–कृषि
 क–कृषक मजदूर।
 ख–किसान।
२–ग्रामीण व्यापार।
३–ग्रामीण उद्योग।
४–नौकरी।
५–अन्य कार्य।

इन कार्यों में दो प्रकार के सम्बन्धों का विकास होता है: एक, प्रत्येक कार्य की अपनी कार्य-पद्धति है, और इस कार्य-पद्धति के कारण उसकी अपनी समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ हैं। दो, एक कार्य का दूसरे कार्य के साथ सम्बन्ध ऐसा है कि प्रत्येक कार्य का कृषि के साथ सम्बन्ध रहता है। नौकरी, व्यवसाय, उद्योग तथा अन्य फुटकर कार्य करनेवालों का भी कृषि से सीधा सम्बन्ध रहता है। फर्क इतना रहता है कि एक का मुख्य धन्धा कृषि है तो दूसरे का पूरक धन्धा कृषि है।

आर्थिक कार्यों की प्रकृति एवं परिणाम पर विचार करने पर यह स्पष्ट पाया गया कि आज कृषि का जो रूप है उसमें शोषण एवं हिंसा का विकास होता है। कृषि में भी जो व्यवस्था आज प्रचलन में है उसमें आर्थिक तनाव को बल मिलता है। फिर भूमि-व्यवस्था तो ग्राम्य-हिंसा का एक प्रमुख तत्व है, जिस पर अलग से विचार किया गया है। कृषि-कार्य को पूरा करने में दो प्रकार की मानवीय शक्ति लगती है

१–किराये पर ली गयी मजदूरों की श्रम-शक्ति।

२–भू-स्वामित्व की अपनी शक्ति।

मजदूरी को प्रभावित करनेवाले तत्व

पहले मजदूर एवं उसकी श्रम-शक्ति पर विचार करें। ग्रामीण जीवन में सामन्ती मानस का पूर्ण समावेश है। बदलती परिस्थितियों के कारण मालिक-मजदूर का आपसी सम्बन्ध बदला है, फिर भी पुराना सामन्ती मानस आज भी मालिक मजदूर के बीच भौतिक सम्बन्धों को कटु बनाता है। परम्परा से मालिक, हरिजन मजदूर को गुलाम-सा समझता रहा है। इस परिस्थिति में मालिक उसे कम-से-कम देकर अधिक-से-अधिक लेने का प्रयास करता है। हालांकि अब मजदूर भी, जो दिया, वही ले लेने की मानसिक स्थिति में नहीं है। इस विरोधी मानस के कारण ही मजदूरी एवं कार्य को लेकर तनाव आता है। आज जो मजदूरी दी जाती है वह मान्य तथा कानून सम्मत नहीं कही जा सकती है।

फिर पूरे क्षेत्र में एक-सी मजदूरी भी नहीं है। स्थिति तो ऐसी देखने में आयी कि एक पंचायत के दो गाँवों में भी कोई एक मान्य मजदूरी की दर नहीं है। कभी-कभी एक ही गाँव में एक ही काम के लिए भिन्न-भिन्न लोग अलग-अलग मजदूरी देते हैं। ऐसी स्थिति में सर्वसामान्य मजदूरी का निश्चित आँकड़ा प्रस्तुत करना कठिन है। सर्वेक्षण से इस बात की पुष्टि हुई कि मालिक-मजदूर परिस्थिति एवं आवश्यकता को देखकर मजदूरी तय करते हैं। मजदूरी-निर्धारण में इन तत्वों का समावेश पाया गया .

१—मजदूरों की माँग एवं पूर्ति।

२—काम का स्वरूप।

३—कार्य की परिस्थिति।

४—आपसी सम्बन्ध।

५—मजदूरों का संगठन।

६—क्षेत्र में मजदूरी की परम्परा।

यहाँ भी माँग एवं पूर्ति का सिद्धान्त प्रभावी है। परन्तु ऐसा नहीं कि माँग एवं पूर्ति के सिद्धान्त के आधार पर ही मजदूरों की मजदूरी तय होती है। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि ६ तत्वों के प्रभाव से मजदूरी तय होती पायी गयी है। ये सभी तत्व मजदूरी-निर्धारण में प्रभावी होते हैं। इतना कहा जा सकता है कि माँग एवं पूर्ति इसके निर्धारण में अधिक मजबूत तत्व हैं। आबादी की दृष्टि से यह एक घना क्षेत्र है, और प्रति वर्ग मील एक हजार से अधिक आबादी है। शहर समीप होते हुए भी श्रमिकों की संख्या पर्याप्त है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि पूरा जिला या यों कहें पूरे उत्तरी बिहार में ही जनसंख्या का घनत्व अधिक है। इसी कारण यहाँ मजदूरों की पूर्ति अधिक है, फिर भूमि के केन्द्रीकरण एवं कार्य-विभाजन की दृष्टि से ऐसे लोगों की संख्या अधिक है, जिनके पास ऐसा स्थायी धन्धा, जिससे पूरी जीविका चल सके, कम है। कृषि के अतिरिक्त ऐसे धन्धे नहीं के बराबर हैं जिनसे सालभर जीविका चल सके। हाँ, जो लोग नियमित शहर में काम प्राप्त करते हैं, उनकी जीविका चल जाती है। फुटकर कार्य मिल जाने के बावजूद भूमि आज भी जीविका का मुख्य आधार है। और यहाँ इस भूमि का इतना केन्द्रीकरण है कि आबादी का बड़ा हिस्सा भूमिहीन या अलाभकर जोत की सीमा में आ जाता है।

इस क्षेत्र में मजदूरी करनेवालों की संख्या माँग से अधिक है। परिणामस्वरूप मजदूरों की अधिक संख्या भी कम मजदूरी को प्रश्रय देती है। कम मजदूरी को प्रश्रय देने के अन्य तत्व भी हैं। परन्तु स्थिति यह नहीं है कि जब चाहें कम मजदूरी पर मजदूर प्राप्त हो जाय। कभी-कभी तो ऐसी स्थिति भी होती है जब मजदूर मिलता नहीं। खेती एक ऐसा उद्योग है जिसमें सभी किसान एक साथ खेती करते हैं। अतः खेती के मौसम में मजदूरों की तंगी हो जाती है। मजदूरों की दो बार हड़ताल हुई जिससे प्रह्लादपुर पंचायत में ५० पैसे से लेकर ७५ पैसे तक दैनिक मजदूरी में वृद्धि हुई। इस संगठन ने मालिकों में इस बात का एहसास कराया कि मजदूरों में भी शक्ति है और इनसे मनमाने ढंग से काम नहीं कराया जा सकता है।

मजदूरी की दर

मजदूरी की दर काफी हद तक क्षेत्रीय सामाजिक परम्परा पर निर्भर करती है। मालिक-मजदूर दोनों परम्परागत मान्यताओं को स्वीकार करने की मानसिक स्थिति में होते हैं। एक तरफ मालिक परम्परागत सामाजिक रूढ़ियों एवं मान्यताओं के अनुसार ही मजदूरी देने की मानसिक स्थिति में होता है तो दूसरी ओर मजदूर भी उन रूढ़ियों एवं मान्यताओं का कड़ा विरोध करने की स्थिति में नहीं होता है। युवा मजदूर अवश्य इनके खिलाफ आवाज उठाने को उत्सुक रहता है। इस प्रकार दोनों ओर से पुरानी मान्यताओं को कायम रखने में मदद पहुँचायी जाती है। परिणामस्वरूप जो मजदूरी की दर पहले से तय है उसमें परिवर्तन के लिए तेज प्रयास की गति को धीमा किया जाता है।

मजदूरी-निर्धारण के जो भी तत्व पाये गये उसे एकाकी रूप से माप का आधार नहीं माना जा सकता है। सभी तत्वों के प्रभाव से ही मजदूरी तय होती है। इस निर्धारण में तात्कालिक कारण भी काफी महत्व का होता है। बढ़ती हुई महँगाई, समाजवाद का विचार एवं युवा मानस इसे सीधा प्रभावित करते हैं। महँगाई के चपेट में आया श्रमिक रोजमर्रा की जिंदगी को गुजारने में अपने को असमर्थ पाता है तो मजबूरन अधिक मजदूरी की माँग के लिए संघर्षरत हो जाता है।

उपरोक्त पृष्ठभूमि में यह देखना आवश्यक है कि इस क्षेत्र में मजदूरी की क्या स्थिति है .

मजदूरों की स्थिति

कार्य	मात्रा (किलो में)
हल चलाना	२-२५ और नाश्ता
अन्य कृषि-कार्य	२-२५ नाश्ता आवश्यक नहीं,
अन्य कार्य	२-२५
फसल-कटाई	८ वाँ हिस्सा
स्थायी मजदूर	२-२५ + ५ बिस्वा कट्ठा खेती की जमीन

(स्त्री एवं पुरुष दोनों को प्रायः समान मजदूरी दी जाती है।)

मजदूरी वस्तु तथा नगद दोनों रूप में दी जाती है। नगद मजदूरी देने की स्थिति में स्त्री-पुरुष की मजदूरी में थोड़ा फर्क पाया गया। परन्तु नगद मजदूरी में कार्य-भेद का स्थान कम है। प्रायः सभी प्रकार के कार्यों में २ रु० के आसपास मजदूरी दी जाती है। महिलाओं को नगद मजदूरी १-५० रु० से १-७५ रु० तक दी जाती है। नगद मजदूरी के साथ नाश्ता देना आवश्यक नहीं है। कुछ लोग नाश्ता देते हैं। १९६८ से पूर्व नगद मजदूरी काफी कम थी। १ से १-५० रु० में लोग दिनभर मजदूरी कराते थे। हाल के वर्षों में मजदूरी बढ़ी है। यह वृद्धि नगद मजदूरी में हुई है। वस्तु के रूप में मज-

दूरी की मात्रा प्रायः जस का तस है। नगद मजदूरी में वृद्धि अब से १ रु० से भी आगे बढ़ रही है। शहरी प्रभाव के कारण नगद मजदूरी में वृद्धि को सहज ही प्रोत्साहन मिल जाता है।

किसान सामान्यतया आज भी वस्तु में ही मजदूरी का भुगतान करते हैं। वस्तु में भुगतान मजदूरों के लिए लाभकर है; क्योंकि मात्रा की दृष्टि से उतनी ही मजदूरी है जितनी की पहले थी और उससे उनकी आवश्यकता का जो अंश इससे पूरा होता था वही आज भी पूरा होता है। लेकिन नगद लेने पर प्राप्त रकम से उतनी वस्तु नहीं खरीदी जा सकती है। यही कारण है जिन गाँवों में नगद मजदूरी का रिवाज है वहाँ मालिक-मजदूर के बीच मजदूरी के प्रश्न पर तनाव अधिक है।

पारो खण्ड के बड़ादाड़द क्षेत्र में नगद मजदूरी का प्रचलन कुछ अधिक है। पारो तथा मुसहरी दोनों क्षेत्रों में आधे समय काम कराने की भी परम्परा है। सामान्य दिनों में, जबकि आवश्यक काम नहीं रहता है, किसान आधे समय मजदूरी कराना चाहते हैं। इससे किसानों को काफी लाभ पहुँचता है, और मजदूरों को उतनी ही हानि होती है। आधे समय के काम का यह रूप होता है –

क–पूरे दिन की जितनी मजदूरी मिलती उसकी आधी मजदूरी दी जाती है।

ख–नाश्ता आमतौर से नहीं दिया जाता है।

ग–दोपहर तक काम कराया जाता है।

व्यवहार में जो परिस्थिति बनती है उसमें मजदूरों की स्थिति इस प्रकार की हो जाती है—

१. *आधी मजदूरी मिलती है और* नाश्ता भी नहीं मिलता है।

२. किसान प्रातःकाल से ही काम *प्रारम्भ कराने को तत्पर रहता है।*

३. गाँव में दोपहर का निर्धारण घड़ी देखकर नहीं किया जाता है। परिणामस्वरूप दिन के दो बजे तक काम करना पड़ता है। स्पष्ट है कि इस स्थिति में श्रमिक को अधिक देर तक काम करना पड़ता है।

देखा यह जाता है कि उपरोक्त लाभ को देखकर किसान आधे समय तक काम कराने को उत्सुक रहता है। जबकि मजदूर पूरे समय काम करने के प्रयास में रहता है।

ऊपर हमने वस्तु में प्राप्त होने वाली मजदूरी की दर से सम्बन्धित आँकड़े दिये हैं। मजदूरी की दर सामान्यतया प्रतिदिन २-२३ किलो है। नाश्ते की मात्रा में थोड़ा फर्क है। कृषि-कुछ कार्यों में प्रायः मजदूरी के साथ-साथ नाश्ता भी दिया जाता है। फसल-कटाई में मजदूरी की दर भिन्न है। जो जितना फसल काटता है उसी अनुसार मजदूरी मिलती है। धान एवं रबी की कटाई में ८ हिस्सा में एक हिस्सा आमतौर से काटनेवाले मजदूर को प्राप्त होता है। यह हिस्सा बोझे के रूप में प्राप्त होता है। यदि किसी ने ८ बोझे फसल काटी है तो ९ वां बोझा उसका होगा। कौन-सा बोझा मजदूर का होगा इसका निर्णय किसान करता है। इससे सभी बोझे समान बाँधे जाते हैं। यहाँ फसल काटने का तात्पर्य काटकर अनाज घर में पहुँचाने तक ... है।

भारत में गरीबी—१५

कमाई का काम करने का अधिकार

[भारत में गरीबी, स्तम्भ में हम एक लेखमाला 'भूदान-यज्ञ' में देते आये हैं। कुछ कारणों से वह लेखमाला अधूरी रह गयी है। १५ मई'७२, अंक ३३ में १४ वीं किस्त दी गयी है। इस अंक में हम उसके आगे यह लेख शुरू कर रहे हैं।—स०]

१. उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व रखते हुए तुल्य वितरण के दो उपाय हो सकते हैं। एक यह कि साधनों का ही वितरण किया जाय, दूसरा यह कि साधनों का वितरण न कर उनसे होने वाली केवल आमदनी का वितरण किया जाय। जो लोग पहले उपाय को मानते हैं वे कहते हैं कि सबसे पहले खेती की भूमि का वितरण होना चाहिए। उसके साथ-साथ ऐसी यांत्रिकी भी अपनायी जानी चाहिए जो हमारे लिए उपयुक्त हो। जहाँ तक भूमि का प्रश्न है उसके वितरण की बात प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही कही जाती रही है। और अब ज्यादा जोरों के साथ कही जा रही है। लेकिन भूमि के साथ कठिनाई यह है कि वह काफी मात्रा में उपलब्ध नहीं है, और उसके वितरण की सीमा भी है। एक सीमा के बाद उसके टुकड़े खेती लायक नहीं रह जाते। जहाँ तक उपयुक्त यांत्रिकी का प्रश्न है, पहली पंचवर्षीय योजना से ही इस बात पर जोर है कि गाँवों की परम्परागत यांत्रिकी का विकास होना चाहिए। लेकिन अनुभव यह बताता है कि अगर ग्रामीण यांत्रिकी नयी यांत्रिकी के मुकाबले छोड़ दी जाती है तो वह टिक नहीं पाती, क्योंकि आज का प्रवाह उसके विरुद्ध है। ऐसी हालत में दूसरा कोई विकल्प नहीं रह जाता सिवाय इसके कि साधनों के वितरण की बात छोड़कर केवल उनसे होनेवाली आमदनी बाँटने की बात सोची जाय। लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि हर व्यक्ति को जो काम करने के लिए तैयार हो, उसे न्यूनतम *मजदूरी पर काम की गारण्टी दी जाय।*

२ काम की ऐसी गारण्टी की नीति स्पष्ट रूप से तीसरी पंचवर्षीय योजना में अपनायी गयी थी, और कहा गया था कि ऐसा करने के लिए दो तरह की योजनाएँ अपनानी पड़ेंगी—एक, ब्लाक और गाँव के स्तर पर, दो, बड़े काम जिनमें संयोजन और तकनीकी निरीक्षण की जरूरत

हो। ब्लॉक स्तर पर खेती, पशुपालन, सहकारिता, सिंचाई, सड़क आदि की योजनाएँ बनायी जा सकती हैं। फिर इसी आधार पर गाँव की योजनाएँ तैयार की जा सकती हैं। इन सब योजनाओं में मजदूरी गाँव में प्रचलित दर पर दी जाय। ब्लॉक स्तर पर निर्माण के आवश्यक संगठन और श्रमिकों की सहकारी समितियाँ बनायी जायँ। ये संगठन औजार रखें, ठीके लें, तकनीकी और व्यवस्था-सम्बन्धी सलाह प्राप्त करें, कारीगर रखें, आदि। गैर-सरकारी सेवा-संस्थाएँ ऐसे स्थानीय संगठनों को नेतृत्व प्रदान कर सकती हैं।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में यह बात स्पष्ट हो गयी थी कि बड़े पैमाने पर काम निर्माण के क्षेत्र में मजदूरी पर ही देना सम्भव है, न कि उत्पादन के साधन बाँटकर घर-घर में। यह सोचकर तीसरी योजना में १ अरब ५० करोड की व्यवस्था की गयी। लेकिन होते होते कुल १९ करोड रुपये ही खर्च किये जा सके। अन्तिम वर्ष में कुल मात्र ८ करोड़ खर्च किये जा सके, और सिर्फ ४ लाख लोगों को साल में एक सौ दिन २ रुपये रोज की मजदूरी पर काम दिया जा सका।

चौथी योजना में तीसरी योजना की बात और अधिक जोरदार ढंग से नहीं गयी। यह बताया गया कि देश भर में अपनी शक्ति उन क्षेत्रों में केन्द्रित की जानी चाहिए जहाँ जनसंख्या का जमीन पर दबाव बहुत अधिक हो, बेरोजगारी और अर्द्ध-बेरोजगारी अधिक हो, और भूमिहीन भी अधिक हों।

३ तीसरी और चौथी योजनाओं के विचारों को सामने रखकर १९६९ में महाराष्ट्र सरकार ने 'पाइलट एम-प्लायमेण्ट गारण्टी स्कीम' चलाया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य खेतिहर मजदूरों को बेरोजगारी के दिनों में काम देने का था – ऐसा काम जिसमें कारीगरी या हुनर की जरूरत न हो। जो काम सोचे गये वे तीन तरह के थे:

(१) खेतों के बाँध, सिंचाई, (२) सड़क, जंगल, कुआँ, चारागाह, (३) ग्रामोद्योग, विशेष रूप से बताई। सारे काम की योजना बनाने का काम गाँव-पंचायत का था और उसी की देखरेख में उसे चलाया जाना था। मजदूरी तहसीलदार तय करता, लेकिन वह सामान्य मजदूरी से १० प्रतिशत कम होती। जिले की सब योजनाओं के लिए एक डिस्ट्रिक्ट कोआरडिनेशन कमिटी होती जिसमें विपक्षों का प्रतिनिधित्व होता। गुजरात की सरकार ने भी एक 'राइट टु वर्क' स्कीम चलायी है। इसका भी यही उद्देश्य है जो महाराष्ट्र-योजना का था।

—राममूर्ति

म्यूनिख की दुखान्त घटना

ओलिम्पिक खेलों के बीच म्यूनिख में जो दुखान्त दुर्घटना हुई है उसके प्रति पीड़ा की अभिव्यक्ति शब्दों में सम्भव नहीं है, न उसकी निन्दा के लिए कोई भी शब्द ज्यादा सख्त माने जायेंगे। अभी कुछ ही सप्ताह पहले लिड्डा के हवाई अड्डे पर २६ निर्दोष लोगों की जानें इसी प्रकार की घटना में जा चुकी हैं। समय आया है जबकि दुनिया की अन्तरात्मा की आवाज ऐसे घृणित कार्यों के खिलाफ उठनी चाहिए।

इस प्रकार की घटनाएँ राष्ट्रीयता के नाम पर या किसी एक मुल्क के खिलाफ दूसरे मुल्क के हितों के नाम पर की जाती हैं। यह और भी खतरनाक और निन्दनीय है, क्योंकि इन कारणों से ऐसे जघन्य अपराधों को कुछ लोगों की निगाह में इज्जत और वीरता का स्थान मिल जाता है। अपने किसी भी मकसद के लिए, चाहे वह कितना भी अच्छा या व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर हो, इस प्रकार निर्दोष नागरिकों की जानें खतरे में डालना क्षम्य नहीं माना जा सकता। हवाई जहाज उड़ा लेना, लोगों को या बच्चों को जबरदस्ती उठाकर ले जाना, और बदले में अपनी शर्तों की पूर्ति चाहना, इत्यादि घटनाओं के कारण किसी भी नागरिक का जीवन आज सुरक्षित नहीं है। कोई भी व्यक्ति इस प्रकार के झगड़ों से कितना ही अलिप्त क्यों न हो, किसी भी समय उसका शिकार हो सकता है।

यह कहना शायद अव्यावहारिक या भोलेपन की बात मालूम हो, पर ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए जो कम-से-कम किया जा सकता है वह यह है कि कोई भी सरकार या राष्ट्र ऐसे दल से समझौते की बातचीत न करे। ऐसी इनकारी कुछ निर्दोष लोगों की जान जाने के खतरे से खाली नहीं है, लेकिन म्यूनिख की ताजी घटना ने साबित कर दिया है कि समझौते की बातचीत चलाने से भी अन्तिम दुर्घटना या शोकान्तिका टाली नहीं जा सकती। इस प्रकार की घटनाओं का दूसरा पहलू भी विचारणीय है। आज की सरकारें या सत्तारूढ़ लोग दूसरों की भावनाओं के प्रति उत्तरोत्तर संवेदनहीन होते जा रहे हैं, और दुर्भाग्य से लोगों की यह आम धारणा बन गयी है कि राष्ट्रीय या अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में सत्तारूढ़ लोगों की चेतनाहीन अन्तरात्मा को इस प्रकार झकझोर कर ही जागृत किया जा सकता है। लेकिन अनुभव से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि यह धारणा भी भ्रामक ही है। इस प्रकार की हिंसा-प्रतिहिंसा का कोई अन्त नहीं आ सकता। इसके अलावा, विज्ञान के आज के युग में सरकारें और सत्ताधारी लोग जिस प्रकार की हिंसा-शक्ति से, अस्त्र-शस्त्रों से, सज्जित हैं वैसा कोई भी गैर-सरकारी गिरोह नहीं हो सकता। इस प्रकार की अर्थहीन कार्रवाइयों से केवल निर्दोष व्यक्तियों की क्षति और समाज के जीवन और उसकी प्रगति में बाधा ही पड़ सकती है। विचारवान लोगों को गम्भीरता से इस बात पर सोचना होगा कि समाज के *आन्तरिक या अन्तरराष्ट्रीय झगड़े शान्तिमय* तरीकों से किस प्रकार हल किये जायँ।

—सिद्धराज ढड्ढा

भारतीय मंत्रिपरिषद की सामाजिक पृष्ठभूमि

● मर्तं श के० अरोड़ा

संसदीय लोकतंत्र में मंत्रिपरिषद का बड़ा स्थान होता है। यह राष्ट्रीय सत्ता की सबसे ऊँची और शक्तिशाली मण्डली होती है। नीति-निर्धारण और किये हुए फैसलों को कार्यान्वित करना इसका मुख्य काम होता है। संक्षिप्त में यह किसी भी लोकतंत्रात्मक राज्य में सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्तियों का ग्रुप (संगठन) होता है। १९६२ से लेकर १९७२ तक भारतीय मंत्रिपरिषद में जो लोग नजर आते है वे अपनी शिक्षा, पेशा एवं आयु के लेहाज से किस हैसियत के मालिक हैं और किस वर्ग से उनका सम्बन्ध है, इसका एक अध्ययन निम्नलिखित है। इससे यह भी अन्दाजा होगा कि भारत के आम लोगों की पृष्ठभूमि और उनकी पृष्ठभूमि में कितना तालमेल है।

जबकि भारत की ८० प्रतिशत से ज्यादा आबादी गाँवों में रहती है। १९६२ से १९७२ तक बनी हमारी मंत्रिपरिषदों के अधिकतर सदस्य नगर के रहनेवाले थे। आधे से अधिक ऐसे थे जो गाँवों में नहीं पैदा हुए थे। १९६२ से लेकर १९७२ तक हिन्दुस्तान की शहरी आबादी ने अधिक-से-अधिक मंत्री हमें दिया जबकि शहरी आबादी भारत की पूरी आबादी का २० प्रतिशत है। इसमें से दो तिहाई ऐसे शहरों के रहनेवाले थे जिनकी आबादी १ लाख से अधिक है। दो ऐसे भी मंत्री थे जो विदेश में पैदा हुए थे : एक प्रांस में, दूसरे लन्दन में। जाहिर है कि ऐसे लोग गाँव के समाज और उनकी समस्याओं से अपरिचित होंगे।

क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व . आमतौर से यह बात कही जाती है कि अधिक-से-अधिक लोग उत्तर प्रदेश के थे, परन्तु यह गलत है। भारत के सभी क्षेत्रों को मंत्रिपरिषद में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा। उत्तर प्रदेश की आबादी कुल आबादी का १७ प्रतिशत है। मंत्रिपरिषद के सदस्य भी उसी अनुपात में थे। पूर्वी क्षेत्र के प्रतिनिधि भी अपने अनुपात में ही थे। उत्तरी क्षेत्र का भी वही हाल था। दक्षिणी क्षेत्र के लोगों को कुछ अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा है, और सबसे अधिक प्रतिनिधित्व मंत्रिपरिषद के सदस्यों में पश्चिमी क्षेत्र के लोगों को मिला है। मुसलमानों का प्रतिनिधित्व भी उनकी आम आबादी के अनुपात में ही रहा है।

शिक्षा संसार की सभी मंत्रिपरिषदों को देखने के बाद यह कहना पड़ता है कि भारत की मंत्रिपरिषद में सबसे ज्यादा पढ़े-लिखे लोग रहे हैं। इस दस साल में केवल २ से ४ प्रतिशत ऐसे लोग थे जिन्हें विश्वविद्यालय की शिक्षा नहीं प्राप्त हुई थी। प्रत्येक मंत्रिमण्डल (कौंसिल ऑव मिनिस्टर्स) और मंत्रिपरिषद (कैबिनेट) में दो तिहाई सदस्य स्नातकोत्तर थे। पिछले मंत्रिमण्डल में हर पाँच में से ४ सदस्य स्नातकोत्तर थे, और मंत्रिपरिषद के आधे सदस्यों के पास विश्वविद्यालय की डिग्री के अलावा कानून की डिग्री भी थी। श्रीमती गांधी की आखिरी मंत्रिपरिषद में हर चार में से तीन सदस्य वकील थे। लोकसभा के सदस्यों में से तीन-चौथाई के पास विश्वविद्यालय की डिग्रियाँ रही हैं। मंत्रिपरिषद के ३० प्रतिशत से कम लोगों ने विदेश में शिक्षा प्राप्त की थी। चौदह में से ग्यारह विलायत पढ़े हुए थे, दो अमेरिका के और, एक पश्चिमी जर्मनी के। मंत्रिपरिषद के सदस्यों में चार ऐसे थे जिनकी कानून में ट्रेनिंग लन्दन में हुई थी। दो की लन्दन स्कूल ऑव इकोनामिक्स में हुई थी।

मंत्रिपरिषद और मंत्रिमण्डल के सदस्यों की शिक्षा

मंत्रिपरिषद :

	जिनके पास कोई डिग्री नहीं प्रतिशत में	जिनके पास डिग्री थी प्रतिशत में			
		बी० ए०,	एम० ए०,	पी० एच० डी०,	कानून
(१) नेहरूजी—	१३	१७	४	४	६२
(२) शास्त्रीजी—	२३	१२	–	–	६५
(३) इन्दिराजी-(प्रथम)	२५	१२	–	–	६३
(४) ,, (द्वितीय)	८	१७	८	१७	५०
(५) ,, (तृतीय)	१३	७	–	७	७३
मंत्रिमण्डल					
(१) नेहरूजी—	११	१९	१४	७	४९
(२) शास्त्रीजी—	१४	२०	११	५	५०
(३) इन्दिराजी-(प्रथम)	१६	२१	१५	६	४३
(४) ,, (द्वितीय)	१०	१२	१७	१०	४२
(५) ,, (तृतीय)	९	१५	१८	९	५१

व्यवसाय : व्यवसाय की दृष्टि से भारतीय मंत्रिपरिषद पर वकीलों का एक मात्र आधिपत्य रहा। कृषि से सम्बन्धित लोगों की संख्या १७ प्रतिशत बराबर रही, और शेष दूसरे सदस्य शिक्षा, डाक्टरी, और इंजिनियरिंग के पेशे के रहे हैं। श्रीमती गांधी के दूसरे मंत्रिमण्डल में लोकसभा के सदस्यों के अनुपात में १२ प्रतिशत वकील अधिक थे, और तरह प्रतिशत कृषकों की संख्या में कमी आयी। बुद्धिजीवी और व्यवसाय सम्बन्धित वर्ग में लगभग ९० प्रतिशत,

सदस्य मंत्रिमण्डल में थे और ३६ प्रतिशत लोकसभा में थे। १९५१ तक मंत्रिपरिषद में १३ से १८ प्रतिशत तक ऐसे व्यक्ति थे जिनका व्यवसाय कृषि था। परन्तु, १९७१ में जो मंत्रिपरिषद बनी उसमें उनका प्रतिनिधित्व शून्य था। उसमें वकीलों की तादाद न घटी न बढ़ी, और शेष दूसरे व्यवसायवाले या तो घटे या बिलकुल खतम हो गये।

मंत्रिपरिषद में वकीलों का बहुत अधिक संख्या में होना भारत के लिए कोई अनोखी बात नहीं है। अमेरिका की मंत्रिपरिषद में ७० प्रतिशत और कनाडा की मंत्रिपरिषद में ६० प्रतिशत वकील बराबर रहे हैं। जर्मनी में नाजियों से पहले, उनके बाद और उनके शासन-काल में, मंत्रिपरिषद के आधे सदस्य वकील थे। (देखो सारणी १-२)

अवस्था :

नेहरू और शास्त्री के मंत्रिमण्डल में एक चौथाई लोग ५० साल से नीचे के थे। जबकि इन्दिरा गांधी के मंत्रिमण्डल में एक तिहाई से कम लोग ५० साल से कम उम्र के थे, और उनके अन्तिम दो मंत्रिमण्डलों में आधे से अधिक सदस्य ५० साल से कम थे। मंत्रिपरिषद और मंत्रिमण्डल के अनुपात में सबसे ज्यादा कम उम्र के लोग उप-मंत्री रहे हैं। इन्दिरा गांधी के आखिरी मंत्रिमण्डल में उप-मंत्रियों में से एक तिहाई तीस और चालीस वर्ष के बीच थे। उनकी मंत्रिपरिषद में कोई भी सदस्य ४० से कम नहीं है।

श्रीमती गांधी आमतौर से कम उम्र के लोगों को नियुक्त करती हैं। ऐसे लोग जिनकी उम्र ५० साल से कम हो, नेहरू और शास्त्री के जमाने में मंत्रिमण्डल में आधे से कम थे। परन्तु इन्दिरा गांधी के तीसरे मंत्रिमण्डल में ये लगभग ७० प्रतिशत थे। इन्दिरा गांधी के जमाने में शास्त्रीजी के मुकाबले में ऐसे लोग जिनकी उम्र ५० से कम है उनकी संख्या दुगनी हो गयी है। (देखें सारणी नं० ३)

सारणी नं० १

मंत्रिपरिषद और मंत्रिमण्डल में सदस्यों का व्यवसाय

मंत्रिपरिषद :	कृषि	व्यापार	इंजीनियरिंग	डाक्टरी	कानून	शिक्षा	सामाजिक और राजनीतिक कार्य	पत्रकारिता	अन्य	कोई सूचना नहीं
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
१. नेहरूजी	१७	४	—	—	३०	४	३४	९	—	—
२ शास्त्रीजी	१८	६	—	—	३५	—	२९	१२	—	—
३. इन्दिराजी(प्रथम)	१३	—	—	—	३८	—	५०	—	—	—
४. ,, (द्वितीय)	१३	—	—	—	१८	१३	२९	—	८	—
५ ,, (तृतीय)	—	—	—	—	६०	—	२७	७	७	—
मंत्रिमण्डल :										
१. नेहरूजी	१६	७	३	७	३३	५	१८	७	५	२
२ शास्त्रीजी	१८	७	४	७	३२	४	१४	६	४	२
३ इन्दिराजी(प्रथम)	१७	८	४	४	३२	—	२५	४	४	४
४. ,, (द्वितीय)	१८	१३	२	—	२९	१०	१९	१	७	—
५. ,, (तृतीय)	१५	९	४	१	३७	१५	१५	४	४	—

सारणी नं० २

तुलनात्मक व्यवसाय वितरण

प्रतिशत

	चौथी लोकसभा	मंत्रिमण्डल (१९६७—७०)
१—वकील	१७	२९
२—अध्यापक और शिक्षा-विशेषज्ञ	७	१०
३—पत्रकार	५	१
४—इन्जिनियर, डाक्टर और पुराने सरकारी और सैनिक सेवक	७	३
५—व्यापारी	८	१३
६—कृषक	३१	१८
७—राजनैतिक और सामाजिक कार्यकर्ता	२३	१९
८—अन्य	२	७

सारणी नं० ३

मंत्रिपरिषद में पहली बार प्रवेश करनेवाले की अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अवस्था का तुलनात्मक अध्ययन

राष्ट्र	(३० – ३९)	(४०–४९)	(५०–५९)	(६० और ऊपर के)
भारत (१९६२–७२)	२	२२	४७	२९
अमेरिका (१९००–५८)	१	३३	३७	२८
कनाडा (१४६–५७)	५	४३	३४	१८
ग्रेटब्रिटेन (१९२२–६०)	७	२६	४६	२
फ्रांस (१९४५–५८)	१६	४२	३८	७
आस्ट्रेलिया(१९४६–५७)	११	४८	३७	४ →

चीन का वीटो

शुक्रवार, २५ अगस्त १९७२ का दिन संयुक्त राष्ट्रसंघ के इतिहास में अमर रहेगा और साथ ही साथ चीन, भारत, बांगला देश और पाकिस्तान को भी इसकी याद तरह-तरह से सताती रहेगी। उस दिन जब संयुक्त राष्ट्रसंघ की सुरक्षा-परिषद में *बांगला देश को मान्यता देने का प्रस्ताव* आया तो चीन ने अपना वीटो इस्तेमाल कर उसे खारिज कर दिया और इस प्रकार बांगला देश के लिए संयुक्त राष्ट्र का दरवाजा एक अनिश्चित काल तक के लिए बन्द हो गया।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की सुरक्षा-परिषद के पाँच स्थायी सदस्य उसके जन्म से (१९४५ से) ही चले आते हैं—अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन। पचीस साल तक एक घोर अन्याय चला कि चीन की जगह पर ताईवान (फार्मूसा) का प्रतिनिधि बैठता था, मगर एक बरस हुए जब चीन की प्रजातंत्री सरकार (पीकिंग) को यह स्थान मिला। इन पाँच के अलावा, दस अस्थायी सदस्य होते हैं जो हर दो साल बाद बदल जाते हैं। आजकल वे दस ये हैं—अर्जेन्टाइना, इटली, गिनी, जापान, पनामा, बेल्जियम, भारत, युगोस्लाविया, सूडान और सोमालिया। अध्यक्ष हर महीने बदलता रहता है। अगस्त में बेल्जियम का प्रतिनिधि उस आसन को सुशोभित कर रहा था।

बांगला देश की सदस्यता के लिए यह प्रस्ताव रखा था चार सदस्यों ने—भारत, ब्रिटेन, युगोस्लाविया और रूस। इसका समर्थन किया सात अन्य राष्ट्रों ने—अमेरिका, फ्रांस, जापान, बेल्जियम, इटली, अर्जेनटाइना और पनामा ने। तीन तटस्थ रहे—सूडान, गिनी, सोमालिया। विरोध केवल एक सदस्य, चीन ने किया और वीटो के साथ *किया, जिससे वह प्रस्ताव गिर गया।*

जैसाकि सर्वविदित है, स्वाधीन गणतन्त्री बांगला देश का जन्म १७ दिसम्बर १९७१ को *हुआ। वहाँ की आबादी साढ़े* सात करोड़ है और संयुक्त राष्ट्रसंघ के १३२ सदस्य-देशों में से ८६ ने उसे मान्यता दे रखी है। इनमें शामिल हैं भारत, रूस, ब्रिटेन, अमेरिका आदि। न माननेवालों में हैं—पाकिस्तान, चीन, और मिस्र आदि।

गत २४ अगस्त को बांगला देश सरकार ने सुरक्षा परिषद को एक पत्र भेजा कि संयुक्त राष्ट्रसंघ की हमारी सदस्यता के आवेदन पत्र पर "शीघ्रतापूर्वक और सहानुभूतिपूर्वक" विचार किया जाना चाहिए। उसमें पाकिस्तान सरकार पर आरोप लगाया गया था कि वह झूठे बयानों का प्रचार करके उसकी सदस्यता में बाधा डाल रही है। यह भी उल्लेखनीय है कि १० अगस्त को ही राष्ट्रपति भुट्टो ने अपने एक व्याख्यान में प्रधानमंत्री मुजीबुर्रहमान को यह चेतावनी दी थी कि "अगर वह समझते हैं कि भारत में बन्द पाकिस्तानी युद्धबन्दियों की वापसी में वह रोड़ा लगा सकते हैं तो हम भी संयुक्त राष्ट्रसंघ में बांगला देश के प्रवेश पर चीन के वीटो का उपयोग कर सकते हैं।' *वही हुआ।*

चीन का यह वीटो आज सारी दुनिया में राजनैतिक चर्चा का विषय बन गया है। सचमुच, यह बड़ा दुर्भाग्य है कि जो चीन अमेरिका के वीटो तथा अन्य प्रयत्नों के कारण संयुक्त राष्ट्रसंघ में पचीस साल तक प्रवेश नहीं पा सका, उसी चीन ने स्वयं अपने प्रथम वीटो के अधिकार का इस्तेमाल बांगला देश जैसे मान्यता प्राप्त देश के खिलाफ किया। चीन ने सुरक्षा परिषद में अपने इस दुःखद कदम उठाने के दो कारण बताये—एक बांगला देश में विदेशी सैनिक मौजूद हैं, दूसरा पाकिस्तान के नब्बे हजार सैनिक अभी तक बन्द पड़े हैं। बांगला देश के लिए प्रस्ताववालों ने पहले कारण को निराधार और दूसरे को असंगत बताया है। स्वयं बांगला देश ने घोषणा की है कि उसकी धरती पर एक भी परदेशी सैनिक नहीं है।

चीन के मानस का अन्दाज दो और बातों से भी मिलता है। गत २८ अगस्त को जब चीन के उप-विदेश मंत्री श्री चियो कुआन हुआ, इस्लामाबाद दो दिन की वार्ता के लिए आये तो उन्होंने कहा, 'एक बड़ी ताकत अपने गुर्गे को प्रोत्साहन दे रही है ताकि चीन और पाकिस्तान के आगे मुसीबत खड़ी करे।" इसके अलावा, २९ अगस्त को पीकिंग के प्रमुख सरकारी दैनिक, "पीपुल्स डेली" में अपनी सम्पादकीय लेख छपा, जिसमें कहा गया कि रूस और भारत ने मिलकर 'गठबन्धन' किया है। आगे चलकर उसने लिखा कि भारत ने अपने सैनिक नहीं हटाये हैं और नब्बे हजार से अधिक सिपाही व नागरिक पाकिस्तान के खिलाफ धमकी देने का काम छोड़े हैं। और, रूस जो को संयुक्त राष्ट्र में इस

→ मन्त्रिपरिषद् तक पहुँचने का रास्ता

१९६२ से लेकर १९७२ तक सभी मंत्रिपरिषदों में ४२ प्रतिशत मंत्री लोकसभा के सदस्य थे, और १२ प्रतिशत राज्यसभा के। मंत्रिपरिषद में हर तीन में से एक सदस्य या तो उसमें रह चुके थे या राज्य मंत्री थे। और, ४० प्रतिशत कैबिनेट मंत्री ऐसे लोग थे जो न कभी लोकसभा के सदस्य थे और न कभी राज्यसभा के।

नियुक्ति का स्रोत	मंत्रिपरिषद के सदस्य	प्रतिशत
१. मन्त्रिमण्डल से तरक्की पाकर	३२	६
२. संसद से सीधे चुने गये	२४	४
लोकसभा (११–२)		
राज्य सभा (१२–२)		
३. संसद या मन्त्रिमण्डल के बाहर से	४२	६

'इकोनामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली' के विशेष अंक से

वाले पगोट लेना चाहता है ताकि उसका 'मनहूस मनूबा' पूरा हो। वह यह कि दक्षिण-एशियाई उप-महाद्वीप और हिन्द महासागर में अपना प्रभाव-क्षेत्र बढ़ाता जाये और घबड़ाहट पैदा करके अपना उल्लू सीधा कर ले।"

इससे पता चलता है कि चीन द्वारा वीटो के उपयोग के तीन मुख्य कारण हैं—पाकिस्तान का समर्थन, भारत के प्रति नाराजगी और रूस का अविश्वास का डर। जाहिर है कि वैचारिक या सैद्धान्तिक दृष्टि से पाकिस्तान का चीन से कोई नाता या साम्य नहीं है, लेकिन पिछले दस-बारह वर्षों से जो दोस्ती चली आ रही है उसे वह निभा रहा है। भारत से उसका गुस्सा भी उतना ही पुराना है। इस सिलसिले में महत्व की एक बात यह है कि गत २५ दिसम्बर १९७१ को जब फ्रांस के प्रधान मंत्री, श्री मिण्डेस फ्रांस पीकिंग में प्रधानमंत्री चाउ एन लाई से मिले तो चीनी नेता ने कहा कि "भारत ने एक ऐसी आग जलायी है जो उसे जला डालेगी।" (नोट : भारत-पाकिस्तान युद्ध १७ दिसम्बर को बन्द हुआ था और एक दिन पहले बांगला देश का जन्म हुआ था)। चीन को यह भी शंका है कि आज अगर वह बांगला देश को मान्यता देता है तो कल भारत सीमा के निकट तिब्बत में या रूसी सीमा के निकट सिक्यांग, मंगोल आदि क्षेत्रों में अल्पसंख्यक भी स्वाधीनता की मांग कर सकते हैं। जहां तक रूस की बात है, वह तो चीन के लिए निरन्तर चिन्ता और भय का विषय बना है। जो भी हो, चीन ने यह अच्छा नहीं किया। हमें विश्वास है कि एक दिन आयेगा जब चीन अपनी इस नादानी पर पछतायेगा।

चीन के इस वीटो का बांगला देश में विरोध किया जाना स्वाभाविक है। लेकिन एक अखबार ऐसा भी है जिसने स्वागत किया है—वह है मौलाना भसानी का "हक कथा" (सत्य बात)। उसमें एक लेख में कहा गया है कि चीन बांगला के खिलाफ नहीं है, लेकिन वह चाहता है कि हम अपनी आजादी का सच्चा सबूत दें। कसौटी के लिए वह हमसे पटसन खरीदना चाहता था, मगर भारत के बीच में पड़ने से बांगला देश ने वह सौदा खारिज कर दिया। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हम अपना पटसन जिसे चाहें नहीं बेच सकते। न जाने यह बात कितना सही है और कितना गलत।

हमें यह भी नहीं भूलना है कि मौलाना भसानी चीन के पक्के समर्थक हैं और हाल ही में उन्होंने "संयुक्त बांगला" का नारा भी लगाया है, और अपने समर्थन में स्वर्गीय श्री शरत् चन्द्र बसु और सुहरावर्दी साहब के नाम उछाले है। मौलाना भसानी का यह रवैया निहायत खतरनाक है जिससे सावधान रहने की जरूरत है, न सिर्फ बांगला देश को, बल्कि भारत को भी।

सवाल है अब जब चीन ने बांगला देश को संयुक्त राष्ट्रसंघ की सदस्यता पाने में बाधा डाल दी, तो भारत क्या करे ? इसका जवाब एक ही है—अपने को सक्षम बनाये और अपने पैरों पर खड़ा हो। आज वह लगभग साढ़े सात हजार करोड़ रुपये का विदेशों का कर्जदार है और विशेषकर अमेरिका का, जबकि चीन पर किसी का भी एक डबल तक उधार नहीं है। स्वावलम्बी होने पर ही भारत की विदेशी नीति में ताकत आयेगी और परदेश में उसकी आबरू बढ़ेगी। अमेरिका के इस कर्ज के रहते हमारी कोई इज्जत नहीं है। २५ अगस्त को ही जब सूडान ने यह प्रस्ताव रखा कि बांगला देश के प्रश्न को कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया जाय तो अमेरिका ने उसका समर्थन किया। यह और बात है कि बाद में जब भारत युगोस्लाविया का प्रस्ताव आया तो उसका समर्थन किया—क्योंकि शायद वह जानता रहा होगा कि चीन का वीटो आ ही रहा है।

किसी भी देश की विदेश नीति उसकी आन्तरिक शक्ति पर निर्भर करती है। आज भारत को रूस का मुँहताज समझा जाता है और यद्यपि १६ दिसम्बर को युद्धबन्दी की घोषणा प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने स्वयं की। लेकिन किसी ने कहा कि रूस के इशारे पर की, और किसी ने कहा कि अमेरिका के डर से ऐसा हुआ। सवाल यह है कि ऐसे बेबुनियाद सन्देह पैदा ही क्यों होते हैं ? जवाब है—हमारी कमजोरी और अकर्मण्यता। इसका दर्शन देश के अन्दर अनेक मोर्चों पर मिलता है—नियोजन, भूमि-वितरण, शिक्षा, आदि। यह शक-शुबहे तभी दूर होंगे जब सरकार मजबूती से कदम उठायेगी और वह तब सम्भव होगा जब उसके सामने कोई परिपूर्ण वैचारिक आदर्श (आईडियॉलोजी) होगी। समाजवाद, जिसका नाम बहुत लिया जाता है, इस कमी को कुछ हद तक दूर करता है, लेकिन पूरी तरह नहीं, क्योंकि वह एक प्रतिक्रिया का परिणाम है। स्वयं सम्पन्न, समर्थ और सम्पूर्ण आदर्श गांधी विचार या सर्वोदय का ही हो सकता है जिसे अपनाये बिना भारत की सरकार हो, या भारत की जनता हो, किसी की गुजर नहीं होनेवाली है। चीन के वीटो का यही एक मात्र जवाब है।

—दादू

आन्दोलन के समाचार

सर्वोदय साहित्य भण्डार, इन्दौर

१९७१-७२ का संक्षिप्त विवरण

सर्वोदय साहित्य भण्डार, इन्दौर द्वारा पिछले वर्ष ७१-७२ में कुल १,३९,०६४०० के साहित्य की बिक्री हुई। इसमें आधी गांधी-सर्वोदय साहित्य की तथा आधी आध्यात्मिक, बाल-साहित्य एवं अन्य विभिन्न विषयों पर उत्कृष्ट साहित्य की बिक्री सम्मिलित है। 'भण्डार' द्वारा ११वर्षों में १०.७५ (पौने ग्यारह लाख) लाख रुपये का साहित्य-विक्रय किया जा चुका है।

उक्त बिक्री में लगभग ६० प्रतिशत विक्रय 'भण्डार' पर फुटकर बिक्री के रूप में हुआ जो नगर एवं प्रान्त के नवयुवकों, शिक्षार्थियों, अध्यापकों, महिलाओं एवं श्रमिकों आदि द्वारा स्वेच्छापूर्वक क्रय की जाती हैं। यह विशेष समाधानजनक है कि इनकी संख्या एवं निरन्तरता सतत् वृद्धि पर है। शेष ४० प्रतिशत में अधिकांश म० प्र० शासन के विभागों में तथा शासकीय एवं अशासकीय शिक्षण-संस्थाओं में हुआ।

इस प्रकार के सहयोग के कारण पिछले ग्यारह वर्षों से यह 'भण्डार' स्वावलम्बन के आधार पर चल रहा है।

पिछले वर्ष मध्य प्रदेश शासन द्वारा 'भण्डार' को उसका वर्तमान स्थान नाम मात्र के स्थायी लीज पर प्रदान कर दिया गया है। यह स्थान शहर में अत्यन्त मौके का है तथा इसपर स्थानीय जनता के अनुदान से हो ३०' × ३०' के भवन का तथा उसमें उपयुक्त फर्नीचर का निर्माण हो चुका है।

गत दिसम्बर में सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी के तत्वावधान में 'भण्डार' के द्वारा दो 'सर्वोदय साहित्य प्रचार-प्रशिक्षण शिविरों' का संचालन किया गया जिसमें कुल ३२ शिविरार्थियों ने भाग लिया।

एक विशेष प्रयोग 'भण्डार' द्वारा गत जनवरी '७२ से आरम्भ किया गया। 'भण्डार' के उत्साही सदस्य व सहयोगी सतीश जैन की स्मृति में एक अविराम पुस्तक-माला शुरू की गयी। इसके अन्तर्गत कुछ चुनी हुई पुस्तकें निःशुल्क जिज्ञासु पाठकों को वितरित की जाती हैं ताकि वे निरन्तर अविराम रूप से एक के आगे एक पाठकों तक पहुँचती रहें।

'खादी भण्डारों' के माध्यम से खादी के साथ-साथ साहित्य-विक्रय एवं प्रचार पर विशेष जोर दिया गया। इस हेतु मुख्यतः स्थानीय खादी भण्डारों में तथा कुछ प्रान्तों की खादी संस्थाओं में भी प्रयत्न किया गया। साथ ही ग० भा० समन्वय समिति की योजनानुसार कुछ खादी भण्डारों में नियमित प्रचारक निश्चित कर 'हॉकर' योजना आरम्भ की गयी है। इस हेतु मध्य प्रदेश खादी संस्था संघ द्वारा एक आकर्षक पोस्टर भी छपवाया गया।

गत ६ माह से भोपाल रेलवे स्टेशन पर सर्वोदय साहित्य की ट्राली शुरू कर दी गयी है और वहाँ स्थायी स्टाल हेतु उपयुक्त स्थान प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है। रतलाम का स्टाल पहले से काफी अच्छा और अब नियमित चलने लगा है एवं जबलपुर स्टाल के निर्माण की कार्यवाही जारी है।

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान सेवा-कार्य

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, केन्द्र कलकत्ता ने पन्द्रह अगस्त '७२ के दिन शहर के गन्दी बस्तियों में सेवा का काम प्रारम्भ किया है। इसका उद्घाटन कलकत्ता हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश श्री एस० पी० मित्रा ने किया। इसके अन्तर्गत बच्चों का स्कूल, पौष्टिक भोजन का बाँटना, बाल स्वास्थ्य केन्द्र और वयस्क शिक्षा, आदि कामों को प्रारम्भ करने का सोचा गया है। इस योजना को कलकत्ता मेट्रोपोलिटन डेवलपमेण्ट आथरिटी और पश्चिम बंगाल सरकार का संरक्षण प्राप्त है।

बांकुड़ा में ग्रामदान आन्दोलन

पश्चिमी बंगाल सर्वोदय मण्डल ने बांकुड़ा जिले के गंगजला घाटी प्रखण्ड में ग्रामदान आन्दोलन को गतिशील बनाने की दृष्टि से एक अभियान चलाने का निश्चय किया है। यह २४ अक्तूबर से प्रारम्भ होकर दो सप्ताह तक लगातार चलता रहेगा। इसमें करीब एक सौ कार्यकर्ता रहेंगे।

गत फरवरी माह से ही श्री चारु चन्द्र भण्डारी के नेतृत्व में कार्यकर्ताओं की एक टोली अनुकूल पृष्ठभूमि तैयार करने में लगी हुई है। इस टोली के अथक परिश्रम का ही यह फल था कि गोविन्दधाम नामक गाँव के कुछ किसानों ने अपनी जमीन दान में दी जिसे भूमिहीनों में वितरित कर दिया गया।

खादीग्राम में श्रमजयन्ती

१० सितम्बर '७२ को खादीग्राम में श्री धीरेन्द्र भाई की ७२ वीं वर्षगांठ श्रम जयन्ती के रूप में मनायी गयी।

इस अवसर पर श्रम-प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। प्रतियोगिता में गाँवों के मजदूर सम्मिलित हुए थे। प्रतियोगिता विजेताओं को पुरस्कार दिया गया। पुरस्कार-वितरण श्रीमती पार्वती बहन के हाथों सम्पन्न हुआ।

शाम को सभा में गांव के लोगों से धीरेन्द्र भाई के श्रमनिष्ठ जीवन से प्रेरणा ग्रहण करने की अपील की गयी।

—नरेश कुमार

बाढ़ पीड़ितों के बीच जिला सर्वोदय मण्डल आगरा का सहायता-कार्य

११ अगस्त से १७ अगस्त के बीच हुई भयंकर वर्षा से आयी बाढ़ ने आगरा, भरतपुर, बयाना के बीच के क्षेत्र को जल-प्लावित कर दिया। इस जल-प्लावन के परिणामस्वरूप, २००० जानवर बह गये, ४५आदमी मर गये, सड़कें टूटीं, घर गिरे और लोग दाने-दाने को

इस अवसर पर आगरा जिला सर्वोदय मण्डल के श्री गणेश भाई, श्री लोचन प्रसाद, श्री रामलाल वर्मा, श्री शिव नारायणजी तथा श्री विजय नारायण दूबे आदि कार्यकर्ताओं ने पीड़ित लोगों की सहायता के लिए दो सहायता शिविर खोल रखा है।

शहर के व्यापारी वर्ग के लोगों ने भी इस अवसर पर मुक्त हस्त से पीड़ितों के लिए दान देना प्रारम्भ कर दिया है।

—श्री जी० एम० शिरोमणि

चकबन्दी में धाँधली

पटना जिला के रतनपुरा गाँव में चकबन्दी का कार्य हो रहा है। इस कार्य में चकबन्दी कर्मचारी से मिलकर कुछ लोग अपना लाभ तथा दूसरे का नुकसान करने पर तुले हैं। गाँव के धनी एवं वरिष्ठ व्यक्ति पैसे खर्च करने के अतिरिक्त अपना रोष प्रदर्शित कर अपने पक्ष में लाभ करा रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप गरीब एवं निरीह जनता का गला कट रहा है।

सर्वोदय कार्यकर्ता श्री जयमंगल सिंह ने कर्मचारी एवं उनके दलाल के इस कार्य का सख्त विरोध किया जिससे रंज होकर गाँव के कुछ स्वार्थी एवं दुष्ट लोगों ने उन्हें चोरी का इल्जाम लगाकर जेल भेजवा दिया है। पुलिस एवं स्वार्थी ग्रामीणों ने उन्हें खूब पीटा भी है।

इस सम्बन्ध में प्रखण्ड सर्वोदय मण्डल ने बिहार सरकार के उच्च अधिकारियों द्वारा इसकी जाँच की माँग की है।

—कपिलदेव कुमार

विनोबा-जयन्ती

वाराणसी। स्थानीय टाउनहाल स्थित गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के कार्यालय में वाराणसी की सभी रचनात्मक संस्थाओं के तत्वावधान में ११ सितम्बर को विनोबा-जयन्ती के अवसर पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस गोष्ठी की अध्यक्षता श्री नारायण देसाई ने की।

गोष्ठी का विषय था, 'भारत की भूमि-समस्या के हल में विनोबा का योगदान।' नगर के नागरिकों ने इस अवसर पर भूमि समस्या के हल में विनोबा के योगदान की प्रशंसा की और उन्हें महान सन्त के साथ-साथ क्रान्तिकारी के रूप में श्रद्धांजलि अर्पित की।

अन्त में आचार्य राममूर्ति ने कहा कि विनोबा ने भूमि-समस्या के हल के लिए निजी स्वामित्व और राज्यस्वामित्व के स्थान पर एक तीसरा विकल्प 'ग्राम-स्वामित्व' का प्रस्तुत किया है। भूमि का प्रश्न गाँव की अन्य समस्याओं के साथ ही हल किया जा सकता है। श्री नारायण देसाई के अध्यक्षीय भाषण से गोष्ठी समाप्त हुई।

श्री सिद्धराज ढड्ढा का कार्यक्रम

सितम्बर :

२० से २७	कलकत्ता, प्रबन्ध समिति तथा अन्य मीटिंगें २१ से २६, प्रकृति निकेतन।
२८	पटना।
२९ से १ अक्तूबर	वाराणसी, रेणुकूट-वनवासी सेवा आश्रम।

अक्तूबर :

३ से ७	जयपुर।
८ से १२	सर्वोदय केन्द्र, खं.मेर।
१४ से १७	वर्धा, राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन, सेवाग्राम-१४ से १६
१८ से १ नवम्बर	मदुरैनगर, ग्रामस्वराज्य अभियान।

पत्र-व्यवहार का पता :
सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग
राजघाट, वाराणसी-१
तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक
राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

वर्ष : १८, अंक : ५२ 　　　　　　　　　　　　　　　　२५ सितम्बर, १९७२

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

शेख मुजीबुर रहमान को श्री भुट्टो से मिलना स्वीकार करना चाहिए।

श्री जयप्रकाश नारायण ने एक वक्तव्य में बांगला देश के प्रधान मंत्री शेख मुजीबुर रहमान से अपील की है कि मान्यता देने की प्राथमिकता का आग्रह छोड़कर उन्हें श्री भुट्टो से बात-चीत करने के लिए तैयार होना चाहिए। इससे इस उपमहाद्वीप में अनुकूल परिस्थिति बनेगी जिसके चलते वह आज लाखों लोगों के कष्ट का कारण बना हुआ है।

श्री जयप्रकाशजी का वक्तव्य निम्न प्रकार है :

"काफी गम्भीर चिन्तन के बाद, और संकोच के साथ, मैंने निश्चय किया है कि शेख मुजीब से मैं कहूँ कि वे श्री भुट्टो के निवेदन के प्रति कड़ा रुख न अपनायें। मैंने सुना है कि श्री भुट्टो ने शेख मुजीब से यूरोप में फोन पर अपना निवेदन दुहराया है कि वह 'कभी और कहीं भी' उनसे मिल सकते हैं। मैं महसूस करता हूँ कि इसमें बांगला देश का कुछ भी नुकसान नहीं होगा अगर बांगला देश के प्रधान मंत्री श्री भुट्टो से बांगला देश के एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उनकी मान्यता से पहले मिलते हैं। इन दोनों नेताओं के बीच बातचीत होती है तो बांगला देश की सम्प्रभुता पर जरा भी असर नहीं पड़नेवाला है।

भारत, बांगला देश, और पाकिस्तान को शान्तिपूर्वक, पारस्परिक सद्भावना और सहकार के साथ रहना सीखना चाहिए। हमारे झगड़े केवल बड़े राष्ट्रों को हमारे आपसी मामलों में हस्तक्षेप करने में मदद करेंगे, और वह भी हमारे भले के लिए नहीं बल्कि उनके अपने विश्वव्यापी उद्देश्य की सिद्धि के लिए।

जैसा कि इसे मैं समझ रहा हूँ, अब यह चीज शेख मुजीबुर रहमान के हाथ में है। उन्हें चाहिए कि वह उदार बनें, और किसी चीज के लिए नहीं, तो कम-से-कम दो महत्त्वपूर्ण कारणों के लिए : एक, श्री भुट्टो की उदारता का प्रदान जिसके कारण शेख की जान बची, तथा दो, इस उपमहाद्वीप में जो कठिन परिस्थिति बनी है उसको समाप्त करने के लिए, जिसके चलते आज इसके लाखों निवासी तकलीफ झेल रहे हैं।

यह सच है कि श्री भुट्टो यह चाहते हैं कि ९० हजार और उसके पूर्व के युद्ध-बन्दी शीघ्र अपने घरों को वापस लौटें। और, श्री शेख मुजीबुर रहमान भी उतनी ही जल्दी चाहते हैं कि चार-पाँच लाख बंगाली, जो पाकिस्तान में तकलीफ झेल रहे हैं, वापस आयें।

इसके अतिरिक्त, एक बात और है कि बांगला देश में लाखों गैरबंगाली मुसलमान हैं जिनकी राजभक्ति पाकिस्तान के लिए है उन्हें अपने नये राष्ट्र के नागरिक के नाते अपने कर्तव्यों को समझना। यह उन मुसलमानों, जो पुरानी पीढ़ी के हैं और जिन्होंने इस उपमहाद्वीप में मुस्लिम राष्ट्र बनाने के लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया था, की जिम्मेदारी है। गैर-बंगाली मुस्लिमों की नयी पीढ़ी, जो बांगला देश में है, सम्भवतः वह जीवन की इस नयी वास्तविकता के साथ घुल-मिल जायेगी। यह सबके हित में होगा जिनका इसके साथ सम्बन्ध है, और

(शेष पृष्ठ ८०६ पर)

आन्दोलन का दायरा व्यापक बनायें

देशभर में चल रहे सर्वोदय काम से तथा कार्यकर्ताओं से सम्पर्क रखना, उनके बीच कड़ी का काम करना और काम को गति देने में मदद करना, यह सर्व सेवा संघ का मुख्य काम है। इस दृष्टि से संघ के मंत्रियों ने तथा मैंने क्षेत्रों का तथा कामों का बँटवारा किया है, फिर भी हमारा देश इतना बड़ा है कि सब जगह प्रत्यक्ष पहुँचकर सम्पर्क बनाये रखना सम्भव नहीं होता। अतः नकोदर के बाद शुरू से ही मेरी यह इच्छा रही कि 'भूदान-यज्ञ' तथा अन्य हिन्दी अंग्रेजी पत्रिकाओं के जरिये आन्दोलन में काम कर रहे मित्रों से परस्पर सम्पर्क तथा सम्वाद बनाये रखूँ। मुझे खेद है कि यह सिलसिला अभी तक नियमित नहीं हो पाया है, लेकिन मेरा प्रयत्न चालू है और आशा है कि अब आगे कम-से-कम माह में एक बार, इस प्रकार यह सवाद चल सकेगा।

सर्वोदय आन्दोलन का मुख्य जोर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम पर है, और वह सही है। जनतंत्र में जनशक्ति ही सर्वोपरि होनी चाहिए, और वह भी प्रतिनिधियों के जरिये अपरोक्ष रूप से नहीं, बल्कि सीधे स्वयं लोगों के अभिक्रम और कर्तृत्व के आधार पर। ग्रामदान आन्दोलन जनता की इस सोयी हुई शक्ति को जगाने का आन्दोलन है और इसलिए वह बुनियादी कार्यक्रम है।

पर, ग्रामदान के जरिये जगायी गयी और संगठित की गयी जनशक्ति का उपयोग ग्रामस्वराज्य की स्थापना में, यानी जनता द्वारा स्वयं सीधे अपनी व्यवस्था को चलाने में, होना चाहिए। बल्कि उससे भी आगे बढ़कर सर्वोदय समाज-रचना के लिए अर्थात् ऐसी समाज-रचना के लिए होना चाहिए जिसमें सबको अपने विकास का पूरा मौका मिले और किसी के द्वारा किसी का शोषण न हो। ग्रामदान केवल तंत्र या साधन है, हमारे सारे आन्दोलन का मंत्र या साध्य तो ग्रामस्वराज्य और सर्वोदय है, यह हमें नहीं भूलना चाहिए।

विनोबाजी ने दस बरस पहले रायपुर सम्मेलन में ग्रामदान के साथ ग्रामाभिमुख खादी और शान्तिसेना पर जोर दिया था। इस त्रिविध कार्यक्रम में यह संकेत था कि हमारी दृष्टि व्यापक रहनी चाहिए। हम किसी कार्यक्रम पर एकाग्र हों लेकिन संकुचित नहीं। अब तक ग्रामदान के विचार को फैलाने में हम सबकी शक्ति लगी, पर अब इस प्रचारात्मक काम को आगे बढ़ाने के साथ-साथ हमारा ध्यान चुने हुए पचीस-पचास क्षेत्रों में समग्र दृष्टि से ग्रामस्वराज्य के विकास में लगना चाहिए। भूदान के बाद ग्रामदान, और ग्रामदान के बाद अब ग्रामस्वराज्य, इस प्रकार तीसरे दौर में हमारा आन्दोलन प्रवेश कर रहा है।

ग्रामस्वराज्य का या सर्वोदय समाज-रचना का काम जीवन के आज के सारे प्रवाह को और मूल्यों को बदलने का काम है। इस काम में जीवन के किसी अंग को हम अछूता नहीं छोड़ सकते। सर्वोदय-दर्शन एक समग्र जीवन-दर्शन है, इसलिए ग्रामस्वराज्य की रचना में हमें जीवन के सब पहलुओं पर ध्यान देना होगा। इसीलिए गांधीजी एक के बाद एक विविध रचनात्मक काम अपने कार्यक्रम में जोड़ते रहे। शुरू में चार-छः, फिर चौदह और बाद में अठारह तक इन कामों की संख्या पहुँची। परिस्थिति के अनुसार इन कामों में और भी जुड़ सकते हैं, कुछ छूट भी सकते हैं।

बापू ने इन रचनात्मक प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाने के लिए समय-समय पर कई रचनात्मक संघों की स्थापना की थी, जैसे अ० भा० चरखा संघ, अ० भा० ग्रामोद्योग संघ, गो सेवा संघ, तालीमी संघ आदि। पर ये प्रवृत्तियाँ अलग-अलग और संकुचित न हो जायँ इसलिए आजादी के तत्काल बाद उनका ध्यान इस तरफ गया कि इन सब प्रवृत्तियों को इस प्रकार परस्पर आपस में जोड़ा जाय कि सबका काम समग्र दृष्टि से चले। सर्व सेवा संघ का प्रारम्भ इसी कल्पना में से हुआ था। सर्व सेवा संघ इन सभी प्रवृत्तियों का उत्तराधिकारी है। इसके अलावा, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, सर्वोदय आन्दोलन अपने आप में व्यापक और समग्र है। अतः हमारे काम के दायरे में सभी रचनात्मक प्रवृत्तियाँ आती हैं जो गांधी-विचार से अनुप्राणित हैं। गांधीजी द्वारा स्थापित या उनके विचारों से प्रेरित कुछ रचनात्मक संघ तो सर्व सेवा संघ में विलीन हो गये, कुछ अभी स्वतंत्ररूप से काम कर रहे हैं।

बापू की कल्पना थी कि अपनी अपनी विशिष्ट प्रवृत्तियों में लगे हुए होने पर भी ये सब संस्थाएँ सर्वोदय के महान लक्ष्य की सिद्धि के लिए समग्रदृष्टि से काम करें। पिछले २५ वर्षों में विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं ने यथाशक्ति अपने अपने कामों को बढ़ाया है, लेकिन कुल मिलाकर गांधी-विचार का जो प्रभाव परिस्थिति पर पड़ना चाहिए था उसके बजाय देश उत्तरोत्तर गांधी-विचार से दूर गया है। अलग-अलग रहकर हम इसको रोक नहीं पा रहे हैं। दूसरी ओर, देश और दुनिया की परिस्थितियाँ ऐसी बनती जा रही हैं कि वातावरण गांधी-विचार के अनुकूल बन रहा है। इस परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए सम्मिलित प्रयत्नों की आज अत्यन्त आवश्यकता है। अपने-अपने सीमित कार्य अच्छी तरह कर सकने के लिए भी एक दूसरे के काम की जानकारी होना तथा परस्पर कठिनाइयों व अनुभवों से लाभ उठाना जरूरी है।

यह खुशी की बात है कि सर्व सेवा

(शेष पृष्ठ ८१२ पर)

अप्रकाशित—विनोबा-वार्ता के बाद का प्रवचन

बाबा का अभिध्यान चलता है

● विनोबा

हम लोगों में यह जाहिर हुआ है कि बाबा ने सूक्ष्म-प्रवेश किया है, और उसका अभिध्यान चलता है। यह जो अभिध्यान शब्द बाबा ने लिया है वह शास्त्रों में से लिया है। लेकिन, जैसाकि रिवाज है हमारी संस्कृति का, उसमें नया अर्थ भर दिया है : समाज के अभिमुख रह करके अन्तर में ध्यान करना। जितनी अन्तर में शून्यता आयेगी उसका, उतना असर दुनिया पर पड़ेगा। गणित की भाषा में मैंने कहा था कि मनुष्य के जीवन का मूल्य उसकी सेवा कितनी है उसके परिमाण पर निर्भर नहीं है, उसका अहंकार कितना कम है, उस पर निर्भर है। मानलीजिए किसी की सेवा है ५०० और अहंकार है २५० तो २५० से विभाजित होगा। ५००/२५० यानी कीमत आयेगी २। मान-लीजिए किसी की सेवा ५ है और अहंकार १ है तो ५/१ यानी कीमत ५। अगर वह नीचे का छेद (हर) शून्य हो गया तो गणित शास्त्र कहता है कि कोई भी संख्या डिवा-इडेड बाई जीरो, शून्य से विभाजित करने पर इज इक्वल टु इनफेनिटी, अनन्त होती है। सेवा आपकी कितनी भी कम हो अगर अहंकार-शून्य हो तो उसका परि-णाम अनन्त होगा, मूल्य अनन्त होगा। और, गणित-शास्त्र की खूबी यह है कि इनफेनिटी के लिए चिह्न जो है वह भी दो शून्य। उसके लिए स्वतंत्र संज्ञा नहीं है। संस्कृत में अनन्त को शहर कहा है। प्राचीन काल में भारत में गणित विद्या विकसित हुई थी और खासकर शून्य का काफी संशोधन हुआ था। ख यानी आकाश। शून्य से विभाजित करने पर अनन्त आता है। इसलिए अभिध्यान करनेवाले का अहं अगर शून्य हो जाय तो केवल ध्यान मात्र से विश्व की सेवा होगी। कर्म में अकर्म रह सकता है यह बाबा ने प्रयोग करके जाना, ३०-४० साल तक उसका प्रयोग किया। अब अकर्म में कर्म का प्रयोग चल रहा है। अकर्म करते जाओ और कर्म होता जाय, इसका प्रयोग है अभिध्यान। अभिध्यान के कुछ विषय होते हैं। जिन विषयों में प्रेरणा देनी है उन विषयों की तरफ चित्त खोलकर अन्दर परमात्मा का ध्यान करना। तो इन दिनों बाबा का अभिध्यान किन विषयों पर चल रहा है उसका थोड़ा-सा जिक्र करूँगा।

अभिध्यान का पहला विषय : ब्रह्म-विद्यामन्दिर

बाबा के अभिध्यान का पहला विषय है—ब्रह्मविद्या मन्दिर। इसे १२-१३ साल हुए हैं, लेकिन १२ साल में मैं बाहर घूमता ही रहा। कुछ पत्र-व्यवहार के द्वारा मार्गदर्शन किया, लेकिन उसके बाद मैंने जब पत्र-व्यवहार भी छोड़ दिया तो वह मार्गदर्शन भी समाप्त हुआ। अब दो साल से मैं यहाँ हूँ। उसमें आखिरी एक साल क्षेत्र-संन्यास यानी इस स्थान को छोड़कर इधर-उधर जाना बन्द किया है। गोपुरी, सेवाग्राम वगैरह भी नहीं जाता हूँ। इसे शास्त्र में कहते हैं—क्षेत्र-संन्यास। परिणाम यह है कि इस संस्था में जो सामूहिक साधना का प्रयोग चल रहा है उसका अभिध्यान किया जाता है। बाबा के अभिध्यान का वह पहला विषय है।

दूसरी है—स्त्रियों की सामूहिक साधना। प्राचीन काल में भी सामूहिक साधना हुई है लेकिन जहाँ तक हम जानते हैं पुरुषों की हुई है। बहुतों की व्यक्तिगत साधना भी हुई। काश्मीर की लल्ला, राजस्थान की मीरा, महाराष्ट्र की मुक्ता, कर्नाटक की अक्का और तमिलनाड की आंडाळ, ये ब्रह्मवादिनी स्त्रियाँ ऐतिहासिक काल में हो गयीं। वैसे वेद में भी ब्रह्म-वादिनी का जिक्र है। लेकिन बीच के काल में यह उदाहरण है। इन सबको समाज के खिलाफ बगावत करके काम करना पड़ा। समाज की तरफ से, माता-पिता की तरफ से न कोई सहयोग मिला न सहानुभूति मिली, बल्कि विरोध ही मिला। 'माता छोड़े, पिता छोड़े, छोड़े सगा सोई, असुवन जल सींच-सींच प्रेम बेलि बोई। मीरा प्रभु गिरिधर नागर, होनी होय सो होई॥' अब जो होना होगा, होगा। राणा भेजा जहर का प्याला, मैं अमृत कर पीया। डिबिया में काला नाग भेजा, और किसी ने नहीं, प्रत्यक्ष बाप ने भेजा। मैं शालिग्राम पहचाना। इस तरह समाज का पूर्ण विरोध करके, घरवालों का पूर्ण विरोध करके उनको साधना करनी पड़ी। बीच के जमाने में स्त्रियों को ब्रह्मचर्य का अधि-कार नहीं था तो ब्रह्मचारी रहना यानी सामाजिक परम्परा का विरोध करना। जो भी ब्रह्मचारिणी रहने की कोशिश करेगी सारा समाज उसकी तरफ शंका की निगाह से देखेगा। बीच के जमाने में स्त्रियों को ब्रह्मचर्य का अधिकार क्यों रोके रखा, इसका एक सामाजिक कारण भी है। हिन्दुस्तान में १,००० पुरुषों के पीछे ९४० स्त्रियाँ हैं। कभी वह आँकड़ा ९३० या ९२० भी होता है। इसका मतलब यह होता है कि एक पुरुष को एक स्त्री मानें तो समाज में ये ८० पुरुषों को अवि-वाहित रहना पड़ेगा। इस हालत में अगर ५-५० स्त्रियाँ ब्रह्मचारिणी रहने लगेंगी तो ज्यादा पुरुषों को अविवाहित रहना पड़ेगा। यह उसका सामाजिक कारण है। लेकिन इस प्रथा को तोड़कर मीरा, मुक्ता, अक्का ब्रह्मचारिणी रहीं, तो समाज का पूरा बहिष्कार हुआ।

प्राचीन काल में पुरुषों की सामूहिक साधना हुई है लेकिन अब यह स्त्रियों की सामूहिक साधना चल रही है। सामूहिक साधना एक नया विषय है। जब मैं बंगाल में घूमता था तब मुझे उस सरोवर के पास ले गये जहाँ रामकृष्ण परमहंस की समाधि लगी थी। वहाँ बैठकर

मिनट ध्यान किया और उसके बाद मेरा व्याख्यान हुआ। उसमें मैंने कहा कि रामकृष्ण को समाधि लग गयी लेकिन अब हमको सामूहिक समाधि लगानी है, व्यक्तिगत समाधि तो लग गयी। लेकिन सामूहिक साधना के द्वारा सामूहिक समाधि लगानी है। यह शब्द मैंने वहाँ पर इस्तेमाल किया। पूरा समूह का समूह-समाधि में मग्न हो, केवल सामूहिक साधना नहीं बल्कि सामूहिक समाधि; पूरे समूह की समाधि। पूरा समूह ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे और भक्ति के द्वारा साधना करे यह सब नया विषय है। इसलिए मेरे अभिध्यान का वह पहला विषय है।

यहाँ पर इन लोगों को पाखाना-सफाई, मल-मूत्र की सफाई से लेकर खाना पकाना आदि कुल-के-कुल काम करने होते हैं। दूसरी बात है कि खेती, सफाई आदि काम करने होते हैं। और, तीसरी बात है कि स्वावलम्बन के लिए प्रेस आदि का काम करना होता है। छ या साढ़े छः घण्टे काम करना होता है। हमने कहा था कि ब्रह्मविद्या को इन दिनों मजदूरों के क्षेत्र में काम करना होगा। मजदूरी के क्षेत्र में ब्रह्मविद्या प्रकट होनी चाहिए, इस वास्ते स्वावलम्बन का प्रयोग करना है। ब्रह्मविद्या के क्षेत्र में मजदूरी यह शब्द हमें सूझा था लेनिन-क्रान्ति के समय। १९१७ में रूस में क्रान्ति हुई। वह जब हमने सुना तो उस वक्त मैं यहीं वर्धा में रहता था। उस दिन मेरा व्याख्यान हुआ। मैंने कहा कि अब 'शूद्र-युग' का आरम्भ हुआ है। एक जमाना था प्राचीन काल में जब ब्राह्मण-युग था। ब्राह्मणों में विद्या थी और उसने उसके द्वारा समाज पर शासन चलाया, समाज का नेतृत्व किया। फिर क्षत्रियों का युग आया। क्षत्रिय ही राजा-महाराजा थे, शूर पुरुष थे। समाज को बनाना या बिगाड़ना उनके हाथ में था। क्षत्रिय-युग के बाद वैश्य-युग आया। दुनिया भर में वैश्यों की बात चली। ईस्ट इण्डिया कं० यहाँ आयी। व्यापार किया, कालोनीज बनायी तो दुनिया भर में वैश्य-युग चला। लेनिन की क्रान्ति के दिन मैंने कहा कि अब शूद्र-युग आ रहा है। शूद्र यानी मजदूर। तब से मेरे ध्यान में था कि अब ब्रह्मविद्या को मजदूरी के क्षेत्र में सबसे पहले सफल होना होगा, विजय पाना होगा। यहाँ पर दो साल में जो प्रगति हुई है वह मेरी जितनी अपेक्षा की थी, उससे ज्यादा है।

अभिध्यान का दूसरा विषय : नागरी-लिपि का प्रचार

मेरे अभिध्यान का जो दूसरा विषय है वह अजीब है। मुझे १० साल पहले यह सूझा और उस पर बोलना-लिखना मैंने शुरू किया। लेकिन इस वक्त मैं उस बारे में तीव्र हूँ। वह है देवनागरी लिपि का प्रचार। यूरोप में आज कॉमन मार्केट हो रहा है। यूरोपियन इकोनामिक कम्युनिटी, ई० ई० सी० बन रही है। कॉमन मार्केट उनके लिए आसान बन गया, क्योंकि वहाँ पर लिपि एक थी। मैंने इंग्लिश, फ्रेंच, दोनों भाषाएँ कालेज में सीखी थी इसके अलावा जर्मन, लैटिन और एसपेरेन्टो सीखी—जर्मन तो १५-२० दिन में, लैटिन सवा महीने में और एसपेरेन्टो १८ दिन में। मुझे वह याद रह गया क्योंकि गीता के १८ अध्याय हैं। उस वक्त चेकोस्लावाकिया का मनुष्य मुझे एसपेरेन्टो सिखाने के लिए हमारी यात्रा में आया था। मैंने उससे कहा कि यात्रा मेरी जारी रहेगी, आपको मेरे साथ घूमना पड़ेगा तो वह घूमा। रोज एक घण्टा हम सीखते थे। यह सब आसानी से क्यों हो सका इसलिए कि लिपि एक थी। भारत में वह चीज है जो यूरोप में नहीं है। भारत १५-१६ भाषाओं का एक देश है। यूरोप में हर एक भाषा का अलग-अलग देश है। मैंने उसे ट्रैंबलिंग्ज नाम दिया है। समाजशास्त्र में योरोप हमसे पीछे है, विज्ञान में हमसे आगे है लेकिन अब वे धीरे-धीरे एक हो रहे हैं। भारत में हमने १६ भाषाओं का एक देश बनाया जो बड़ी बात है। पहले संस्कृत भाषा थी, जो जोड़ती थी। शंकराचार्य केरल से लेकर कश्मीर तक घूमे तो संस्कृत भाषा का आधार लेकर घूमे। रामानुजाचार्य भी संस्कृत का आधार लेकर सारे भारत में घूमे। उन दिनों संस्कृत ही चलती थी। इसलिए एक ही लिपि चलती थी ब्राह्मी लिपि। बाद में नागरी लिपि आयी। उसके बाद जब अलग-अलग भाषाएँ बनीं तो अलग-अलग लिपियाँ आयी। आज भिन्न-भिन्न प्रदेश के लोग लिपि-भेद के कारण अलग हुए हैं। दक्षिण की चार भाषाओं की चार लिपियाँ हैं। अगर एक लिपि हो तो चारो प्रान्तोवाले एक दूसरे की भाषा १५ दिन में सीख सकते हैं। उनकी भाषाओं में बहुत से शब्द समान हैं और संस्कृत के शब्द तो समान हैं ही। लेकिन लिपियाँ चार हैं इसलिए एक दूसरे की भाषा सीखना कठिन है। इसलिए इन दिनों मेरा अभिध्यान इस विषय पर चला है।

इंग्लिश भाषा के लिए रोमन लिपि अत्यन्त खराब है। उस लिपि में बिलकुल अराजक चलता है। एक नकार लीजिए एन-ओ-नो। एन से शुरू हुआ। दूसरा के एन ओ डब्लू, के से शुरू हुआ। तीसरा जी एन ओ डब्लू जी से शुरू हुआ और निमोनिया में पी से शुरू होता है। यानी एक नकार एन में, के में, जी में, पी में। बिलकुल अराजक है। अत्यन्त अव्यवस्था है। एक बेचारा 'न' चार जगह बँटा रहेगा। इसके बजाय नागरी लिपि में इंग्लिश डिक्शनरी लायी जाय तो क्रान्ति हो जायेगी, बहुत आसान होगा। रोमन लिपि से तंग आकर बर्नार्ड शॉ ने अपनी विल में पैसा रखा था नयी लिपि की खोज करने के लिए। वह ऐसी लिपि चाहता था जिसके प्रत्येक अक्षर के लिए एक उच्चारण हो। उसे १२५ लोगों ने अलग-अलग लिपियों के नमूने पेश किये। उनमें से एक मान्य हुआ। वह लिपि चली नहीं, क्योंकि रोमन लिपि में लाखों पुस्तकें लिखी गयी थीं। लेकिन शॉ का वह अपना पैसा था। वह लिपि 'लन्दन टाइम्स' में छपी है। उसमें एक

कहानी आइरोलिस और लायन की छपी और लाइट ब्रेयर छपी। उसकी एक प्रति मेरे पास भेजी थी।

अभी मेरे पास एक किताब आयी है—जापानी भाषा का कोश नागरी में। जापानी भाषा काफी सरल है और उसकी रचना हमारी भाषाओं के समान है। उसमें 'प्रिपोजीशन्स' नहीं हैं। पोस्ट-पोजीशन्स हैं। इन द रूम, ऐसा नहीं है: कोठरी में, ऐसा चलता है। वाक्य में प्रथम कर्ता फिर कर्म और फिर क्रिया ऐसा चलता है। मतलब शब्दशः जापानी का तर्जुमा करें तो हिन्दी-मराठी में हो सकता है। जापानियों को ल बोलना कठिन होता है। हमें र बोलना कठिन होता है। बचपन में राम राम बोलने के लिए कहते तो मैं लाम लाम कहता फि' माँ सिखाती राम बोलना। इंग्लिश के कारण जापानी शब्द गलत ढंग से हमारे पास आते हैं। टोकियो का उच्चारण है तोक्यो। जापानी कोश में पहला शब्द है आई। मराठी में वह शब्द है। उसका मतलब है माता और जापानी में उसका अर्थ है प्रेम। तो बहुत समानता है। पहला शब्द ही समान मिला। गो माता को जापानी में गिउ कहते हैं और इंग्लिश में काऊ कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि गाय भारत की थी और भारत से सब दूर फैली। धेनु वाचक शब्द संस्कृत में अनेक हैं। लेकिन यह स्वाभाविक है कि जापान में इतनी बारिश होती है तो वहाँ गायों का रहना मुश्किल होता होगा। वहाँ भैंसें ज्यादा रहती होंगी।

अब इंग्लिश भाषा नागरी लिपि में चले, ऐसी कोई अपेक्षा हम नहीं रखते। वह तो यूरोप के लोग देखें। लेकिन सारे भारत में नागरी चलेगी तो जापान के लिए वह लिपि लेना सहज हो जायेगा। अभी उनको दो हजार अक्षर पढ़ने पड़ते हैं। इसलिए वह रोमन लिपि की तरफ जा रहे हैं। चीनी की भी वही हालत है। दोनों के लिए नागरी आसान है। अगर भारत में चले तो वे भी ले सकते हैं। फिर जावा, सुमात्रा वगैरह देशों में भी वह चल सकती है। यह सबका सब नागरी का क्षेत्र है। वह आगे की बात है। लेकिन कम-से-कम भारत का क्षेत्र तो नागरी में आये।

इसका आरम्भ कहाँ से हो? हमने सोचा कि हमारी पत्रिकाएँ नागरी में छपें। अभी ११ तारीख से बंगाली पत्रिका नागरी में छपेगी। नवम्बर अक्तूबर से छपेगी। गुजराती और तेलगू छप रही हैं। इस तरह शुरू हुआ है। यह चले तो भारत का भला है। सब प्रान्त नजदीक आयेंगे। नेपाली भाषा नागरी में लिखी जाती है इसलिए बाबा ने घर बैठे-बैठे नेपाली सीख ली। नेपाली का एक बगली कोश (पाकेट डिक्शनरी) ले लो और पुस्तक पढ़ना शुरू किया। यह इतना आसान हुआ क्योंकि लिपि एक थी। बाबा ने हिन्दुस्तान की सब भाषाएँ सीख लीं। उसके लिए उसे कितनी तकलीफ हुई वह वही जानता है। ये आँखें आधी चली गयीं। यानी आधी आँख भाषाओं को समर्पण हुई। लेकिन भाषा सीखने के लिए आँख गवाना यानी 'आहे कारण मूल गँवावो', ऐसा होगा।

बीच में मुसलमान लोग हमारे पास आये। उन्होंने कहा कि बिहार में उर्दू को सरकार राज्य-भाषा के तौर पर माने। मैंने कहा कि मैं इसके लिए तैयार हूँ बशर्ते कि उर्दू को नागरी में लिखो। अगर नागरी में नहीं लिखोगे तो मुझे मंजूर नहीं है। इतने बड़े राजेन्द्र बाबू और उनके मित्र मौलाना आजाद, लेकिन मौलाना साहब राजेन्द्र नहीं बोल सकते थे। राजेन्दर परशाद, यह कहते हुए हमने सुना है। क्योंकि लिपि उनकी ऐसी है। उस लिपि में 'अजमेर गये' या 'आज मर गये' दोनों समान हैं। इसलिए उस लिपि से तंग आकर कमाल पाशा ने रोमन लिपि कर ली और रोमन लिपि में कुरान छापा। वह कुरान मेरे पास आयी है। उसके लिए काफी सभाएँ अलग करनी पड़ी। इस तरह हमारे अभियान का यह दूसरा विषय है।

अभियान का तीसरा विषय : आचार्यकुल

हमारे अभियान का तीसरा विषय है—आचार्यकुल। हम चाहते हैं कि आचार्यों की शक्ति बने। आज सबके सब पार्टीवालों के गुलाम बन गये हैं—कहते हैं कि अमुक कालेज जनसंघ का है। अमुक कम्युनिस्टों का है। इस कालेज में आधे प्रोफेसर इस पक्ष के हैं और आधे उस पक्ष के। परिणाम यह हुआ है कि आचार्य गुलाम बन गये हैं। वास्तव में आचार्यों को नेतृत्व करना चाहिए। आज आचार्यकुल का काम बेचारा एक बूढ़ा (श्री वंशीधर श्रीवास्तव) करता है। सारे भारत में कितना काम हुआ? १ प्रतिशत। उस बूढ़े की मदद में सुरेशराम भाई लगें, जवान लोग मदद में लगें तो काम बहुत होगा। प्रोफेसरों को राजनीति से मुक्त करना है। इन्दिराजी से पूछो कि तुम्हारे पूर्वज कौन हैं—कहा जायेगा कि समुद्रगुप्त, श्री हर्ष, अकबर की वंशज हैं। आचार्यों के पूर्वज कौन हैं—शंकर, रामानुज, वल्लभ। तो उनसे कहना चाहिए कि अपने पूर्वज कौन हैं—उसे जरा याद रखो। आचार्य का महत्त्व यह था कि आचार्य राजाओं से अलग रहते थे। राजाओं की सत्ता कभी आचार्य पर नहीं चलती थी। आचार्य हमेशा उनके मार्गदर्शक थे। प्रोफेसरों से कहा जाय कि इसे याद रखिए कि आप इन आचार्यों के वंशज हैं।

अभियान का चौथा विषय : ग्रामदान मूलक, ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति

हमारे अभियान का चौथा विषय है—अपना काम, जो हम हमेशा रटते हैं—ग्रामदानमूलक, ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति। जब यह सूत्र बना तो नारायण और धीरेन भाई हमारे पीछे पड़े थे कि उसमें नयी तालीम कहाँ है। मैंने कहा कि 'अहिंसक' यह जो शब्द है उसमें नयी तालीम आती है। अहिंसक यानी नयी तालीम के द्वारा

→क्राइस्ट से पूछा गया कि सामनेवाले को तुम माफ करोगे फिर भी वह हमला करेगा तो क्या करोगे। उसने कहा, दुबारा माफ करूँगा। उससे पूछा गया कि इस तरह कितनी बार माफ करोगे, तो उसने कहा कि सेवन्टी टाइम्स सेवेन। तुम गिनते चले जाओ। अपना शस्त्र "क्षमा" है। वह मारता चला जाय, हम क्षमा करते चले जायें। शंकराचार्य ने ठीक यही कहा था कि मैं एक दफा समझाऊँगा और समझाने से नहीं समझा तो दुबारा समझाऊँगा। मैं समझाता ही जाऊँगा। जब तक वह नहीं समझता है तब तक समझाता रहूँगा। वह नहीं समझने में हारता नहीं तो मैं समझाने में क्यों हारूँ? लेकिन शंकराचार्य ने उससे भी बड़ी बात बतायी है कि हम हैं ज्ञापक, कारक नहीं। 'शास्त्र ज्ञापकम् न कारकम्' हम आपका हाथ पकड़ कर ले नहीं जायेंगे। सामने धोखा है, खतरा है, बता देंगे, लिख देंगे कि खतरनाक रास्ता है। फिर भी तुम जाना चाहो तो जाओ। हम तुम्हारा हाथ पकड़ कर खींचेंगे नहीं, हम बता देंगे। करना न करना आपके हाथ में है। हमारा काम है सन्देश पहुँचाना, सतत बोलते चले जाना, कहते जाना, यह हमारा चौथा काम है। अपना काम है अहिंसक-क्रान्ति। उसके लिए एक जीवनदान पर्याप्त नहीं हो सकता है। उसके लिए अनेक जीवनदान करने पड़ेंगे। एक जीवन वहाँ खतम होगा दो-चार साल के अन्दर तो अनेक जीवन देंगे। गीता में कहा है, "अनेक जन्म संसिद्धि" एक जन्म में सिद्धि नहीं मिली तो अनेक जन्म लेंगे। इसी तरह हमें ग्रामदान-मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति करनी है। हमें इस तरह से काम करना है कि गाँव के टुकड़े नहीं पड़ने चाहिए और गाँव का शहरों पर असर होना चाहिए। आज शहरों का गाँवों पर असर होता है। उससे उलटा होना चाहिए।

हमने कार्यकर्ताओं से कहा है कि महीने में कम-से-कम एक दफा बाबा को पत्र लिखना चाहिए। उत्तर नहीं मिलेगा। तुम लिखोगे तो अभिध्यान होगा। खानदेश के हमारे पुराने साथी हैं चव्हाण, जो २२ साल से हमको हर महीने की १८ तारीख को पत्र लिखते हैं। दो-चार बार वाक्य लिख देते हैं और फिर राम-राम-राम लिखते हैं। हमने कहा कि लिखने लायक कुछ खास काम न हुआ हो तो ऐसा लिखो कि कुछ खास काम नहीं हुआ इस महीने में। राम-राम.. बाबा को लिखना है इसलिए काम होना ही चाहिए ऐसा सोचोगे।

—ब्रह्मविद्या मन्दिर,
पवनार, १४-८-७२

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

सबसे ज्यादा बांगला देश के हित में होगा। अगर ये तथाकथित बिहारी मुस्लिम, जो बांगला देश के प्रति अपनी वफादारी नहीं प्रकट करते हैं, उन्हें पाकिस्तान जाने का अधिकार देना चाहिए।

यह सब तब तक सम्भव नहीं होगा जब तक कि बांगला देश और पाकिस्तान के दोनों नेता निजी तौर पर मिलते नहीं। श्री करंजिया की रिपोर्ट के अनुसार श्री भुट्टो ने इसे निःसन्देह स्पष्ट किया है कि शेख मुजीबुर रहमान उनसे इसलिए मिलें ताकि बांगला देश को शीघ्र-से-शीघ्र मान्यता मिले।

यह सम्भव है कि राष्ट्रपति भुट्टो अपने शब्द से मुकर जायें, परन्तु वह एक जोखिम है कि इस कलहपूर्ण उपमहाद्वीप में शान्ति की सम्भावना खत्म हो जाय जबकि गरीबी और सामाजिक न्याय की पुकार है कि इस समस्या का शीघ्राति-शीघ्र कोई हल हो। देर-सबेर इस उपमहाद्वीप के नेता अपने मतभेदों को उभयपक्षीय या त्रिपक्षीय तरीके से दूर करना सीखेंगे। शीघ्र ही दुनिया के इस भाग के गरीब और वंचित लाखों लोगों के लिए नये दिन का उदय होनेवाला है।

यह क्षण इच्छाओं की प्रतिद्वन्द्विता का नहीं, बल्कि सामान्य चेतना, समझौता और पुनर्मैत्री का है। इस उपमहाद्वीप के तीनों राष्ट्रों के लिए हर चीज अपने ही रास्ते नहीं प्राप्त हो सकती। उन्हें अपने मतभेदों और हितों को परस्पर सबके सामान्य लाभ के लिए अनुकूल बनाना होगा।

अतः मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक प्रधान मन्त्री शेख मुजीबुर रहमान से निवेदन करता हूँ कि इस परीक्षा की घड़ी में वे राजनीतिज्ञता और दूरदर्शिता दिखायें। मैंने बांगला देश के उद्देश्य के लिए जो भी अच्छी-से-अच्छी सेवा हो सकती है, वह उसके इतिहास के काले क्षण में की है। अतः मैं बांगला देश के एक मित्र के नाते यह निवेदन कर रहा हूँ। मुझसे यह पूछा जा सकता है कि राष्ट्रपति भुट्टो से यह नहीं पूछा जा सकता कि वह राजनीतिज्ञता दिखायें और बांगला देश की वास्तविकता को बिना किसी पूर्वाग्रह के स्वीकार करें? यह सही सवाल है। मेरा उत्तर है कि श्री भुट्टो इस स्थिति में है, वह स्वयं अपने आपको इस स्थिति में पाते हैं। क्या भारत और बांगला देश उनकी इस वास्तविकता को पहचानने में मदद करेंगे? भारत ने वह अवसर पैदा किया है। मुझे आशा है कि बांगला देश भी वैसा ही करेगा। (मूल अंग्रेजी से)

भोजन

● डा० अवध प्रसाद

[पिछले अंक मे मजदूरी की चर्चा की गयी है—मजदूरी कितनी मिलती है, क्या मिलती है। इस अंक मे आप देखिए कि गाँव के लोग क्या खाते हैं और कितना खाते हैं और इसका सामाजिक सम्बन्धों पर असर क्या है।—सं०]

गाँव में उच्च स्तरीय उपभोग की तलाश सम्भव नही। फिर भी उपभोग दो स्तर का मान सकते हैं—(१) सामान्य उपभोग स्तर और (२) निम्न उपभोग स्तर।

गरीबो का भोजन किस स्तर का है इसकी जाँच करने पर जो तथ्य सामने आये। उस पर विश्वास भले ही न हो पर वास्तविकता यही है। मौसम के अनुसार पारो क्षेत्र के गरीब का भोजन इस प्रकार का पाया गया :

गर्मी में : सतू, महुआ, मजदूरी में प्राप्त अन्न

बरसात में : मक्का, मजदूरी में मिला अन्न, मछली, आदि

जाड़े में : शकरकंद, मक्का, मजदूरी में *मिला अन्न*

(इसमें उच्च जाति ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार आदि—को छोड़कर शेष जातियाँ शामिल हैं। १ एकड़ या उससे कम जमीनवाले परिवार गरीब माने गये हैं। मजदूरी में सामान्यतया खेसारी, मक्का, जौ, शकरकन्द आदि दिया जाता है।)

जिस परिवार का पुरुष बाहर काम करता है उसे प्रतिमाह प्राय २० से ३० रुपये प्राप्त होता है। इस क्षेत्र से कुछ लोग असम की ओर जाकर मजदूरी करते हैं। बाहर रहनेवालों का भोजन स्तर भी प्राय यही है।

गाँव में मिलनेवाले भोजन का माप नगद के रूप में करना उनके प्रति न्याय नही होगा। खास कर इस वर्ग के लोगों को मजदूरी अन्न में मिलती है। यहाँ एक बात स्पष्ट रूप से समझने की है कि भोजन पर *कितना व्यय किया जाता है* या कितनी मात्रा ली जाती है, इसका माप निश्चय करना सम्भव नही। उसका अन्दाज ही लगाया जा सकता है। इसी क्षेत्र के गरीबो को भोजन में निम्नलिखित* *मात्रा प्राप्त होती है।*

इस सम्भावित मात्रा में वस्तु का प्रकार काफी सीमित होता है। सामान्यतया मक्का, जौ, खेसारी, चना, शकरकन्द आदि वस्तुओ का उपयोग किया जाता है। गरीब परिवारो में वस्तु की मात्रा में फर्क पाया गया परन्तु वस्तु के प्रकार में समानता पायी गयी।

अमीर का भोजन

उच्च वर्गीय भोजन को वस्तु की दृष्टि से देखने पर मात्रा से अधिक वस्तु के प्रकार *में फर्क मिलता है।* उच्च वर्गीय लोगो के भोजन की मात्रा ५०० से ६०० ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति दिन पाया गया। अन्न की पर्याप्तता के कारण मात्रा प्राय. सभी परिवारो में समान पायी गयी। वस्तु के प्रकार में भी विभिन्न उच्च परिवारों में ज्यादा फर्क नहीं है। उच्च वर्गीय भोजन में चावल, गेहूँ, मक्का, दाल तथा सब्जी का उपयोग *किया जाता है। इस वर्ग में किस समय* किस वस्तु का उपयोग किया जायगा यह उत्पादन पर निर्भर करता है।

इस वर्ग में उच्च जाति तथा अच्छी आर्थिक स्थितिवाले किसान आते हैं। आर्थिक स्थिति के विचार से देखें तो ५ एकड़ से अधिक जमीनवाले लोग इस स्तर का भोजन प्राप्त करने में समर्थ *होते हैं। कौन व्यक्ति किस समय कौन*-सी वस्तु का उपयोग करेगा यह तो तात्कालिक परिस्थिति पर निर्भर करता है। करीब दूगने का फर्क देखा जा सकता है। हाँ, घर के बाहर जाने पर *चाय आदि पर जो व्यय किया जाता* है वह इसमें शामिल नही है। घर पर भोजन में जिन चीजो का उपयोग होता है उसकी सम्भावित कीमत माननी चाहिए। दूध-दही, फल-सब्जी तो घर *में उपलब्ध होने पर ही उपयोग में* लाया जाता है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि गाँव के कुछ सम्पन्न परिवारों का भोजन-स्तर इससे काफी ऊँचा है। इस प्रकार के परिवारों को इसमें शामिल *नही किया गया है।*

भोजन मे अन्तर के परिणाम

भोजन की इस स्थिति में गाँव का *गरीब वर्ग अपने भविष्य के प्रति कितना* उदासीन है तथा उसकी जीवन की क्या दिशा है इसका अन्दाज सहज ही लगाया जा सकता है। उनके बच्चों के पालन-पोषण एव शिक्षण का क्या स्वरूप है तथा वे किस पर्यावरण में रहते हैं इसका अन्दाज नीचे की तालिका से लगाया जा *सकता है।*

गरीबी में बच्चों का पालन-पोषण

जीवन का ढंग	प्रतिशत
दिन भर गन्दगी में खेलते हैं—	७२
पशु चराते तथा घास निकालते हैं—	२५
पहनने के कपड़े नहीं हैं—	७३-८

*** भोजन की मात्रा**

परिवार संख्या	सम्भावित प्रति व्यक्ति प्रतिदिन प्राप्त मात्रा (ग्राम में)
परिवार संख्या १	२५०
परिवार संख्या २	५००
परिवार संख्या ३	३००
परिवार संख्या ४	२५०
परिवार संख्या ५	६००

अहिंसक कार्य-कक्ष : एक अभिनव प्रयोग

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान द्वारा संचालित राजघाट अहिंसा विद्यालय (दिल्ली) के सम्पर्क में आये चालीस कालेजों के तीन सौ पच्चीस छात्र-छात्राओं ने अक्सर यह प्रश्न किया है कि अहिंसा-विचार अपने में एक क्रान्तिकारी और चिरनूतन विचार है, किन्तु इसे क्रियात्मक रूप देने के लिए; एक साधारण विद्यार्थी (जो कई प्रकार की परिस्थितियों में जकड़ा हुआ है) अपनी सीमित शक्ति से क्या कर सकता है।

अहिंसा को व्यवहार में लाने और जन साधारण तक पहुँचाने के लिए एक अहिंसक कार्य-कक्ष की योजना बनायी गयी है। इस योजना के उद्देश्य निम्न हैं।

१—उस नगर या मुहल्ले में, जहाँ कक्ष खोला गया है, युवक-युवतियाँ, छात्र-छात्राएँ एक मंच पर आयें और उनमें ऐसी पारिवारिक सदस्य-भावना का विकास हो जिससे वे परिवार की रूढ़िवादी परम्पराओं को तोड़कर समता और मानव-स्नेह के नये मूल्यों की स्थापना कर सकें। साथ ही, अपना लक्ष्य बनायें कि यह नया परिवार अहिंसा और स्नेह द्वारा समाज-परिवर्तन की दिशा में अग्रसर हो।

२—नगर या मुहल्ले की स्थानीय समस्याओं का अध्ययन करें और जहाँ तक हो सके अपने-अपने सामर्थ्य और शक्ति के अनुसार उन समस्याओं के अहिंसक हल ढूँढ़ें।

३—जब कक्ष इस कदर मजबूत हो जाय कि उसके सदस्यों में परिवार-भावना और स्थानीय समस्याओं के प्रति पूर्ण रूप से जागृति आ जाये तब वे सदस्य उन मूल्यों के प्रति, जो समाज को परम्परावादी और रूढ़िवादी बनाने में सहायक हों, के विरुद्ध अहिंसक कदम उठायें। समाज के अन्दर पड़ी बुराइयों के प्रति जनमानस को जागरूक करने के प्रत्येक कार्यक्रमों में वे भाग लें।

प्रयोगात्मक रूप में दिल्ली की तीन बस्तियों में अहिंसक कार्य-कक्ष की स्थापना की गयी है। अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि यदि योजना को स्थानीय सहयोग मिले और युवक वर्ग इस ओर दिलचस्पी दिखायें तो यह सफल हो सकती है। युवा पीढ़ी को इससे नयी राह मिल सकती है।

सबसे पहला अहिंसक कार्य-कक्ष दिल्ली के निकट के एक गाँव (घोंडा) में आज से चार माह पूर्व खोला गया था। इसका आरम्भ भी वहीं के नवयुवकों द्वारा ही हुआ। ये नवयुवक पिछले डेढ़ वर्षों से अहिंसा विद्यालय के कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेते रहे हैं। इस कक्ष के अभी तक ७२ सदस्य बन चुके हैं, जिसमें नवयुवकों के अलावा गाँव के कर्मठ नागरिक भी हैं। कक्ष ने उद्देश्य के अनुरूप ग्राम की तीन मुख्य समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया— यातायात (परिवहन), शिक्षा और बढ़ती हुई शराबखोरी।

बसों की कमी के कारण प्रायः रोज ही बस-व्यवस्थापकों और बस-यात्रियों में संघर्ष होते थे, उन्हें दूर करने के लिए चार कर्मठ शान्ति सैनिक दिल्ली परिवहन के उच्च अधिकारियों से मिले। परिणामस्वरूप अब बस का कोई भी यात्री बस-सेवा से असन्तुष्ट नजर नहीं आता। कक्ष के सदस्यों ने शिक्षक-वर्ग में बढ़ रही ट्यूशनखोरी, भाई-भतीजावाद और अन्य प्रकार के अनैतिक कार्यों के विरुद्ध भी आवाज उठायी और शिक्षकों को अपनी कमजोरियों पर विचार करने के लिए मजबूर होना पड़ा। शराबखोरी की समस्या इस गाँव की स्थानीय समस्याओं में मुख्य है। सदस्यों ने शराब पीनेवाले उन भाइयों को शराब की बुराइयों से अवगत कराया और दो दिवसीय नशाबन्दी अभियान चलाया। अब कइयों ने शराब त्याग दी है और ऐसा अनुभव आ रहा है कि शराबी जब कार्यकर्ताओं के सामने आता है तो वह अपने ऊपर एक नैतिक दबाव महसूस करता है।

दूसरा कक्ष दरियागंज में शुरू किया गया है जिसमें २० सदस्य हैं। सफाई कर्मचारियों की हड़ताल के दौरान यहाँ मोहल्ला-सफाई-अभियान चलाया गया।

तीसरा कक्ष ग्रीन पार्क में है। यहाँ छात्रों ने यातायात की समस्या हल करने के लिए और बसों की लम्बी प्रतीक्षा से बचने के लिए क्षेत्र के साधन-सम्पन्न निजी वाहनवालों से घर जा-जाकर सम्पर्क किया है और उन्हें अब उनकी निजी वाहनों में लिफ्ट मिलने लगी है। दिल्ली की अन्य बस्तियों में कस्तूरबा नगर और शाहदरा में भी ऐसे कक्ष खोले जा रहे हैं। ●

→भरपेट खाना नहीं मिलता है— ७४
गाली-गलौज करते हैं— ६८
मारपीट करते हैं— ९०

उपरोक्त जीवन के ढाँचे में उनका आर्थिक भविष्य क्या होगा इसका अन्दाज सहज लगाया जा सकता है। इस वर्ग में शिक्षा के प्रति रुचि नहीं दिखाई दी। ये लोग शिक्षा की आवश्यकता नहीं समझते। मानस ऐसा है कि पढ़कर क्या करना, काम जो आज करते हैं वही आगे करना है। बच्चा १३-१४ वर्ष की उम्र से कुछ-न-कुछ करने लगता है। आज के किशोर एवं युवकों की आकांक्षा शहर में दफ्तर काम करने की होती है। वे खेत में मजदूरी करने की अपेक्षा शहर में कुलीगिरी या रिक्शा, ठेला चलाना अच्छा समझते हैं। शहर की भीड़ में खोकर कठिन श्रम करना उनके लिए अधिक प्रतिष्ठा एवं सम्मान का कार्य है। इस प्रवृत्ति ने इन्हें गाँव में रहते हुए भी दूर किया है। लेकिन शहर में सबको खपना सम्भव नहीं है। गाँव की अर्थ-व्यवस्था में ही आपसी सम्बन्धों का जो रूप बनता है उसमें तनाव, शोषण एवं कटुता की अन्तः-क्रियाएँ क्रमशः बढ़ती जाती हैं। ●

राजस्थान में शराबबन्दी की तैयारी

महोदर सम्मेलन में विभिन्न प्रान्तों के कई भाई-बहनों ने राजस्थान के शराबबन्दी आन्दोलन में हिस्सा लेने की तैयारी जाहिर की थी। इस आन्दोलन के सम्बन्ध में कुछ बातों की स्पष्टता कर लेना जरूरी है। चार साल पहले सफल सत्याग्रह तथा जनमत के दबाव के कारण राजस्थान सरकार ने सन् १९७२ तक पूर्ण नशाबन्दी करने की अपनी नीति की विधिवत घोषणा की थी। सरकार ने इस नीति पर अमल भी शुरू कर दिया था, हालांकि उसकी गति उतनी तेज नहीं थी जितनी अपेक्षित थी। राजस्थान के २६ जिलों में से करीब साढ़े छः जिलों में इस बीच शराबबन्दी लागू की गयी।

पूरे प्रदेश में शराबबन्दी लागू करने की तिथि से तीन दिन पहले अचानक राजस्थान सरकार ने यह घोषणा कर दी कि वित्तीय कठिनाइयों के कारण वह शराबबन्दी के सिलसिले में आगे कदम उठाने में असमर्थ है। इस वचन भंग को लेकर प्रदेश नशाबन्दी आन्दोलन के नेता श्री गोकुलभाई भट्ट ने आमरण अनशन करने की घोषणा की। बार-बार याद दिलाने के बावजूद भी जब प्रदेश सरकार ने इस बारे में कोई समाधानकारक उत्तर नहीं दिया तब पिछली १६ मई को बाध्य होकर गोकुलभाई को अपना अनशन प्रारम्भ करना पड़ा और प्रदेशभर में सरकार के वचन भंग के विरुद्ध सत्याग्रह चालू हो गया। प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा मध्यस्थता के आश्वासन पर ११ दिन बाद २७ मई को गोकुलभाई ने अनशन छोड़ा।

इस बात को तीन महीने से ऊपर बीत चुके, लेकिन प्रधान मंत्री की ओर से अभी तक कोई निर्णय सामने नहीं आया। हालांकि प्रदेश नशाबन्दी समिति ने गोकुलभाई के अनशन की समाप्ति के अवसर पर यह कहा था कि गोकुलभाई का अनशन समाप्त हुआ है, लेकिन आन्दोलन जारी है, फिर भी वस्तुस्थिति यह है कि एक बार प्रधान मंत्री के निर्णय के लिए मामला सौंप दिये जाने के कारण अनिश्चितता का वातावरण बन गया। यह सवाल भी पैदा हुआ कि प्रधान मंत्री के निर्णय पर कबतक प्रतीक्षा की जाय? क्या इस प्रतीक्षा की कोई मर्यादा नहीं है? आखिरकार इसी सप्ताह जयपुर में हुए अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन के अवसर पर सब लोगों की सलाह से यह तय रहा कि प्रधान मंत्री के निर्णय के लिए आखिरी मर्यादा आगामी १४ नवम्बर तक की मानी जाय।

लेकिन १४ नवम्बर को यह अवधि प्रधान मंत्री के लिए तथा राज्य सरकार के लिए है। प्रधानमंत्री इस तिथि के पहले अपना निर्णय दे दें कि राजस्थान सरकार पूर्ण शराबबन्दी की नीति को आगे किस प्रकार बढ़ायेगी। पर राजस्थान के *कार्यकर्ताओं के सामने दो काम बिलकुल स्पष्ट हैं*। पहला तो यह कि प्रदेश के अधिक से-अधिक गाँवों में इस बात का प्रचार करके कि देश में बढ़ती जा रही शराबखोरी के कारण कैसी विषम परिस्थिति पैदा हो रही है। ग्राम-पंचायतों के प्रस्ताव और उनके समर्थन में गाँव के तमाम लोगों के हस्ताक्षर करवाये जायँ कि वे अपने क्षेत्र *में शराब नहीं चलने देना चाहते।* अत अगर वहाँ शराब की दूकान हो तो वह *उठा ली जाय।* दूसरी ओर, शहरों में *स्वयं* सरकार के नियमों के विरुद्ध जो अन्धाधुन्ध शराब की दूकानें चल रही हैं उन्हें बन्द कराने के लिए जनमत को जागृत, संगठित और सक्रिय किया जाय। इन कामों के लिए हमें १४ नवम्बर की बाट देखने नहीं बैठना है। प्रधान मंत्री के निर्णय या किसी प्रकार की बातचीत के कारण इन कामों के लिए रुकने की आवश्यकता नहीं है। हमें पूरी आशा रखनी चाहिए कि प्रधान मंत्री १४ नवम्बर से पहले अपना निर्णय देंगी और पूर्ण नशाबन्दी के बारे में रुके हुए सरकारी *कदम भी फिर से आगे बढ़ेंगे।* लेकिन उस दशा में भी उपरोक्त दोनों काम आवश्यक होंगे, क्योंकि शराबबन्दी जैसा कठिन काम केवल कानून से सम्भव नहीं है। कानून के साथ साथ व्यापक लोक-शिक्षण हर हालत में आवश्यक होगा।

किसी कारणवश निश्चित अवधि के भीतर प्रधान मंत्री का निर्णय न मिला या प्रतिकूल गया तब भी इन कामों के जरिये प्रदेश में ऐसा वातावरण तैयार हुआ होगा कि आगे का कदम उसमें से सहज ही निकलेगा।

उपरोक्त दोनों कामों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर लोगों से शराबबन्दी के पक्ष में संकल्प-पत्र भराने और नशाबन्दी संगठन को मजबूत करने का काम चलाने का भी तय हुआ है।

—सिद्धराज ढड्ढा

नशाबन्दी को देश की विकास-योजनाओं का अविभाज्य अंग माना जाय

अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन सम्पन्न

जयपुर में आयोजित दो दिवसीय अ० भा० नशाबन्दी सम्मेलन ११ सितम्बर को अपराह्न स्थानीय महावीर दिगम्बर जैन स्कूल में सम्पन्न हुआ। डा० सुशीला नायर की अध्यक्षता में आयोजित सम्मेलन में मांग की गयी कि नशाबन्दी को 'गरीबी हटाओ' तथा देश के निर्माण व विकास-योजनाओं का अविभाज्य अंग मानकर प्राथमिकता दी जाय।

१० सितम्बर को सम्मेलन का उद्घाटन गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने किया। उन्होंने कहा कि कमजोर वर्ग के लोगों के आर्थिक हितों की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि समूचे भारत में मद्यनिषेध का कार्यक्रम अनिवार्य रूप से एक व्यवस्थित ढंग से लागू किया जाय।

विचार-विमर्श में भाग लेते हुए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने कहा कि शराबबन्दी आन्दोलन लोकशक्ति जागृत करने का कार्यक्रम है। जनता की ताकत के बल पर ही मद्यनिषेध की बात सुनी जायेगी। उन्होंने वर्तमान दुरावस्था को दूर करने के लिए जड़मूल से क्रान्ति का आह्वान किया।

सांसद श्री श्यामनन्दन मिश्र ने कहा कि नशाबन्दी संविधान के निर्देशक सिद्धान्तों में है, उससे हटना एक जुर्म है। पंचवर्षीय योजना में नशाबन्दी कार्यक्रम लागू करवाने के लिए जन-आन्दोलन संगठित किया जाना चाहिए। उन्होंने शराबबन्दी के पक्ष में आकाशवाणी से व्यापक प्रचार की आवश्यकता पर बल दिया।

गुजरात के आबकारी उपमंत्री भानुप्रसाद पण्ड्या ने मद्यनिषेध के लिए लोक-शिक्षण तथा कानून दोनों को आवश्यक बताया। गुजरात के श्री प्रभुदास पटवारी तथा इन्दुमति बहन ने बताया कि गुजरात में नशाबन्दी कार्यक्रम से हटना सम्भव नहीं होगा।

श्री गोकुलभाई भट्ट ने कहा कि देश में एक के बाद एक सरकारें शराबबन्दी से हटती जा रही हैं। अतः हमें इस चुनौती का सामना करने को खड़ा होना होगा। श्री त्रिलोकचन्द ने राज्य-सरकार द्वारा प्रदेश में शराब की दूकानों के लिए लाइसेंस देने की नीति को जनहित में घातक बताया। उन्होंने देश की राजधानी दिल्ली में शराबबन्दी के लिए आन्दोलन आरम्भ करने का सुझाव दिया।

विचार-विमर्श में गुजरात के श्री कान्तिभाई तथा छगनलाल जोशी, पंजाब के ओमप्रकाश त्रिखा, बिहार के रमावल्लभ चतुर्वेदी तथा रामनन्दन सिंह, तमिलनाडु के सुब्रह्मण्यम तथा सरस्वती देवी, मेघालय के श्री मारवेन तथा बसन्ती देवी, हिसार के जगतस्वरूप एडवोकेट, आन्ध्र के माणिक्यराव तथा राजस्थान के मंत्री हरिसिंह मेहता, बसन्तलाल अग्रवाल, जवाहिरलाल जैन, रामवल्लभ अग्रवाल, कच्छ के मेयर दाऊलाल आदि ने भाग लिया। अन्त में, अध्यक्ष पद से डा० सुशीला नायर ने कहा कि देश में समाजवाद लाने तथा आर्थिक विषमता और सामाजिक असमानता-निवारण के लिए शराबबन्दी आवश्यक है। उन्होंने इस राष्ट्रीय कार्यक्रम में सभी वर्गों से सहयोग का आह्वान किया।

एक प्रस्ताव में सम्मेलन ने कहा है कि "यह सम्मेलन इस बात पर खेद प्रकट करता है कि केन्द्र तथा राज्यसरकारों द्वारा नशाबन्दी सम्बन्धित संविधान की धारा ४७ के निर्देशात्मक सिद्धान्त की उत्तरोत्तर अवहेलना की जा रही है।

यह गहरी चिन्ता का विषय है कि सरकार द्वारा मदिरा-सेवन को सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ायी जा रही है जिसके परिणाम स्वरूप व्यसन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है और युवक तथा विद्यार्थी समुदाय इस लत का तेजी से शिकार हो रहा है। अब युवा वर्ग शराब से भी अधिक नशीली दवाइयों की ओर प्रवृत्त होने लगा है।

सम्मेलन का यह निश्चित मत है कि मदिरा-सेवन के प्रचलन को बढ़ावा देना गरीब जनता का शोषण करना और उसकी गरीबी में वृद्धि करना है।

"गरीबी हटाओ" अभियान नशाबन्दी के बिना कदापि सफल नहीं हो सकता। नशाबन्दी कार्यक्रम गरीबी हटाने तथा राष्ट्र के नवनिर्माण के लिए साधन जुटाने का अविभाज्य अंग है। राष्ट्र के आर्थिक, नैतिक एवम् सामाजिक पुनरुत्थान की दृष्टि से भी केन्द्रीय सरकार का यह परम कर्तव्य है कि वह राज्य सरकारों को अपने केन्द्र-शासित क्षेत्र में तुरन्त शराबबन्दी लागू कर अनुप्रेरित करे और निर्देश दें कि वे संविधान के निर्देश के अनुसार आवश्यक नशाबन्दी लागू करने की उचित कार्यवाही करें।

"इस सम्मेलन की यह भी मांग है कि जिस प्रकार पहली, दूसरी तथा तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं में नशाबन्दी कार्यक्रम को स्थान दिया गया था उसी प्रकार पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भी नशाबन्दी प्राप्त करने के लक्ष्य को स्थान दिया जाना चाहिए। नशाबन्दी करनेवाली राज्य-सरकारों को नशाबन्दी से होनेवाली आर्थिक क्षति को पूरा करने के लिए केन्द्रीय मदद चालू रखी जाय और नशाबन्दी को 'गरीबी हटाओ' तथा देश के नवनिर्माण एवं विकास कार्यों का अविभाज्य अंग मानकर इस कार्यक्रम को योजना में प्राथमिकता दी जाये।"

एक दूसरे प्रस्ताव में नशाबन्दी के लिए सत्याग्रहियों का आवाहन किया गया है और कहा गया कि वे सत्याग्रही-सेना में अपना नाम लिखायें। साथ ही महाराष्ट्र के वर्धा जिले को नशाबन्दी का राष्ट्रीय मोर्चा बनाने रखने की सिफारिश की है। ●

ब्रह्मविद्या मन्दिर में विनोबा-जयन्ती

१९५२, ११ सितम्बर, सोमवार का दिन। सुबेरे ६ बजे से ही मिलनेवालों का, दर्शनार्थियों का ताता लग गया। लोग आते और विनम्र भाव से प्रणाम करते। किसी ने चरण छुए, किसी ने सूत की माला दी और किसी ने एक फूल अर्पण कर सन्तोष किया।

विनोबा ने हाथ जोड़कर 'जयजगत्' कहा। सर पर हरा टोपा, सफेद दाढ़ी और प्रसन्न चित्त। आंखों से ज्योति टपकती और ताजगी हमेशा से ज्यादा।

विनोबा जयन्ती का कार्यक्रम सोच-वाले हाल में करना तय पाया। शुरू होने जा ही रहा था कि विनोबा ने चुटकी बजायी कि बाहर बैठ जायें। स्वर्गीय वल्लभस्वामी की समाधि के पास जा बैठे और वहीं सारा समूह जमा हो गया। पौने दस बजनेवाले थे।

सब धर्मों से प्रार्थना हुई। चौदह मिनट उसमें लगे। सब चुप बैठे थे और इन्तजार था कि बाबा कुछ कहेंगे। वह उठने लगे तो महादेवी ताई ने टोका और संकेत किया, कुछ बोलें। बगल में ही मौजूद थे दादा धर्माधिकारी। बाबा ने उनसे बोलने का इशारा किया। दादा ने इनकार किया—'मैं तो रोज ही बोलता हूँ, आज आपका दिवस है।'

कई मिनट भाव-मुद्रा में निकल गये। फिर बाबा कहने लगे कि आज मैंने बोलने का कुछ सोचा नहीं था। विचार था कि सब धर्मों की प्रार्थना से परमात्मा का स्मरण होगा फिर विष्णु सहस्रनाम का पाठ और तत्र समाप्तम्। लेकिन आग्रह होता है कि बोलना चाहिए।

उपनिषद की कथा याद आती है। एक ऋषि से पूछा गया कि आत्मा कैसी है तो वह कुछ बोले नहीं। फिर प्रश्न किया तब भी नहीं बोले। तीसरी बार पूछने पर भी वह चुप रहे। तो चौथी बार जब प्रश्न किया तो कहा कि उत्तम-से उत्तम उत्तर दिया मैंने, लेकिन आप समझे नहीं, तो फिर मामूली भाषा में बोलना पड़ता है कि आत्मा शान्त है।

इसके बाद शंकराचार्य का वचन याद किया…"द्वैताद्वैत विवर्जिते मम रमे, मौन परं सम्मतम्।

हम कौन हैं… न हम द्वैत हैं, न अद्वैत। हम सब अलग हैं ऐसा भी नहीं। हम सब एक सिद्ध हो गये, ऐसा भी नहीं… तो क्या है सम्बन्ध ? समरस। न द्वैत, न अद्वैत। अनेकत्व नहीं, एकत्व नहीं… उसका नाम है समरसता ऐसी अवस्था जहां हो वहां क्या करना पड़ेगा ? वहां के लिए बताया है 'मौनं'। समरस अवस्था में मौन परं सम्मतम्—मौन ही हो सकता है। व्याख्यान नहीं हो सकता। मौन माने मुनि वृत्ति धारण करना, मनन करना, चुप्पी साधना नहीं। इस वास्ते हम अब दो मिनट मौन रहेंगे।

ओम् शान्ति शान्ति शान्ति के साथ दो मिनट का मौन शुरू हुआ और इसी से समाप्ति भी। उसके बाद ब्रह्मविद्या मन्दिर की बहनों ने विष्णु सहस्रनाम का मधुर कंठ से पाठ किया…।

× × ×

सर्व सेवा संघ के कार्यालय मंत्री श्री गुरुशरण ने बाबा को खबर दी कि तंजौर जिले में श्री जगन्नाथन्‌जी का सत्याग्रह चल रहा है। विस्तृत रिपोर्ट देखकर विनोबा ने कहा कि यह बहुत अच्छा काम हो रहा है। विनोबा-जयन्ती पर इससे बढ़कर समाचार क्या हो सकता था ? रात को ही एक तार वहां से आया कि जमींदार ने अपना वचन-भंग किया जिसके कारण श्री जगन्नाथन्‌जी ने सात दिन के लिए उपवास शुरू कर दिया है और सत्याग्रह जारी है। अब तक ४२ सत्याग्रही गिरफ्तार हो चुके हैं।

× × ×

तीसरे पहर को लगभग एक घण्टा समय बाबा देते हैं। एक दिन पहले मैंने उनको अपनी पुस्तक 'श्रीनिवास रामानुजन्' भेंट की थी। किसी ने कहा कि दक्षिण के लोग गणित में बहुत निपुण होते हैं।

बाबा बोले 'इसका कारण मैंने खोज निकाला है। फिर वह गिनती बताने लगे। 'अपने यहां है—११, १२ १९, २०। उसके बाद २१, २२…२८, २९ उसके पीछे ३०'। लेकिन दक्षिण के चारों प्रदेशों में कहेंगे—दस एक, दस दो, दस नौ, दो दस…। उसके बाद बीस एक, बीस दो, … बीस …नौ, तीन दस। इस तरह बिल-कुल क्रम से चलना है। २९ ३०, २९,५० जैसी कठिनाई नहीं'। इसलिए वहां के बच्चे गणित में ज्यादा अच्छे होते हैं।'

थोड़ा रुककर बाबा कहने लगे, 'उत्तर के लोग बड़े आलसी होते हैं। उनकी भाषा है राष्ट्रभाषा और इस वास्ते कोई दूसरी भाषा सीखते नहीं। अब हिन्दी में देखो, क्या है—मैं आता हूँ, तुम आते हो, वह आती है, वे आते हैं,… सब अलग अलग। मलयालम में क्या है—एक पोकुन्नू। मैं पोकुन्नू, तुम पोकुन्नो, वह पोकुन्नो, सब पकुन्नो… और देखो कैसा झमेला है लिंग का। पत्थर पुलिंग है, उसकी बनी दीवार स्त्रीलिंग और जो मकान खड़ा हुआ वह पुलिंग'। वहां जितने अचेतन पदार्थ हैं वे सब एक ही लिंग में'। इतना सरल है फिर भी दूसरी भाषा नहीं सीखते।'

पास में ही ताजी डाक से आया एक संस्कृत दैनिक अखबार रखा था। बाबा ने कहा, 'इसे देखो, दैनिक पत्र है संस्कृत भाषा का। मैसूर से निकलता है, तीन साल से चल रहा है।…कितनी मेहनत करते हैं' उत्तरवालों को अपना आलस्य छोड़कर मेहनत करनी चाहिए।'

बीच-बीच में मिलनेवाले आते और दर्शन कर चले जाते। इस तरह दिन भर चलता रहा। पौने छह बजे प्रार्थना हुई और उसके बाद

→ (पृष्ठ ८०२ का शेष)
संघ के निमंत्रण पर ६ सितम्बर को दिल्ली में गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, हरिजन सेवक संघ, कस्तूरबा ट्रस्ट, कृषि गो सेवा संघ, नशाबन्दी परिषद आदि के प्रमुख लोग मिले थे। सबने इस प्रकार के सम्पर्क और विचारों के आदान-प्रदान की आवश्यकता महसूस की, और यह सिलसिला हर तिमाही जारी रखने का तय किया।

सर्व सेवा संघ में जो प्रवृत्तियाँ विलीन हुईं उन विविध कामों को आगे बढ़ाने के लिए भी संघ ने अपनी-अपनी समितियाँ बना रखी हैं। सर्व सेवा संघ की इन विभिन्न उप-समितियों के संचालकों की बैठक सितम्बर के तीसरे सप्ताह में कलकत्ते में बुलायी गयी है। कुछ मित्रों को यह शिकायत रही है, और उसमें कुछ तथ्य भी है, कि सर्व सेवा संघ अलग-अलग कामों के लिए समितियाँ या विभाग बनाकर स्वयं उस-उस जिम्मेदारी से अलग-सा हो गया। अब यह सोचा है कि संघ की विभिन्न समितियों तथा विभागों के संचालकों की बैठक प्रबन्ध समिति की हर बैठक से एक दिन पहले की जाय जिसमें सब साथी एकत्र मिलकर अपनी-अपनी जिम्मेदारी के कामों की प्रगति, उनमें आनेवाली कठिनाइयाँ, आगे की योजना, आदि के बारे में परस्पर विचार-विनिमय करें। सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय को भी सब प्रवृत्तियों के साथ ज्यादा निकट सम्पर्क रखने में इससे मदद मिलेगी। आशा है कि प्रदेश-स्तर पर भी इस प्रकार समन्वित ढंग से और समग्रदृष्टि से काम करने की कोशिश की जायगी। —सिद्धराज ढड्ढा

१५ सितम्बर, १९७२

→कहकर ठीक ६ बजे विनोबाजी सो गये।

सारे आश्रमवासी बड़े मगन थे, आज के शान्तिपूर्ण आयोजन पर, और इससे भी ज्यादा इस बात पर कि अगले दिन बारह तारीख को श्री जयप्रकाश बाबू आनेवाले हैं और तीन दिन यहाँ रहेंगे। —बालू

देश के कोने-कोने में विनोबा-जयन्ती

बम्बई

बम्बई में छुट्टियों का दिन सबसे व्यस्त दिन होता है, जिसकी राह बहुत पहले से देखी जाती है। ११ सितम्बर को गणेशचतुर्थी थी और विनोबा-जयन्ती भी। अतः एक अच्छी खासी भीड़ जब चौपाटी स्थित भारतीय विद्या भवन के गीता हाल में इकट्ठी हो गयी तो सुखद आश्चर्य हुआ।

हल्की-सी सजावट थी। सूत की माला से विनोबा की तस्वीर सजायी गयी थी और एक बड़ा पोस्टर वक्ताओं के पार्श्व में लगा था, जिसपर 'सबै भूमि गोपाल की' का मंत्र देते हुए विनोबा का चित्र था।

दो-तीन कविताओं के साथ कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। मराठी नहीं जाननेवाला भी कविताओं के प्रवाह को समझकर आनन्द ले रहा। अध्यक्ष महोदय ने तीनों वक्ताओं—धीरेन्द्र मजूमदार, एस० एम० जोशी तथा जयप्रकाश नारायण का परिचय समानुकूल दिया और फिर माइक कुर्सी पर लेटे धीरेन् दा के सामने रख दिया गया।

धीरेन् दा

"...विनोबा का जन्मदिन मनाने हम यहाँ इकट्ठे हुए हैं। बहुत लोग विनोबा को गांधी का उत्तराधिकारी कहते हैं। और भी कई लोग हैं जो गांधी के उत्तराधिकारी कहलाते हैं। तो फिर ये विनोबा किसके उत्तराधिकारी हैं?...

"... मैं मानता हूँ कि गांधी के व्यक्तित्व के तीन पहलू थे। एक तो वह था 'महात्मा' गांधी, दूसरा था 'विद्रोही' गांधी और तीसरा था 'क्रान्तिकारी' गांधी। भिन्न-भिन्न पहलुओं को लेकर लोग गांधी की चर्चा करते हैं। पर गांधी से पहले भी विद्रोही तो बहुत हुए थे। गांधी ने विद्रोह की प्रक्रिया में क्रान्ति का स्थान बनाया।" पर लोग तो ऐसे मानते नहीं हैं। सत्याग्रह की बात कहते हैं, लेकिन अपने इस विचार की सम्भावना प्रकट कर दी। जब सम्भावना प्रकट होती है तब लोग मानते हैं।

"... इतिहास के प्रारम्भ से हिंसा से संचालित समाज के प्रमाण हैं। समाज संचालन से चलता है, सहकार से नहीं, इसके पक्ष में दर्शन भी है।" पर आगे हम कहते हैं कि लोकतंत्र है तो लोकशक्ति से चले...और लोकशक्ति हमेशा अहिंसक होती है। समाज जिस शक्ति से चालित होता है उसी तरह का कहलाता है। हिंसा से चलेगा तो हिंसक समाज, अहिंसा से चलेगा तो अहिंसक समाज। शासन चाहे किसी वाद पर आधारित हो, दंड-पद्धति से चलता है। अतः समाज हिंसक प्रणाली से नियंत्रित हो रहा है।" अब आप इस ढाँचे को बदलना चाहते हैं तो उस अनुसार उसकी पद्धति बदलनी होगी।"

लोकतंत्र का आज खूब विकास हुआ तो 'पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी' एक चिन्तन चला है। विनोबा स्वयं उत्तराधिकारी हैं। वह इस 'पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी' की कल्पना से आगे गया। विनोबा-गांधी की इस विचार-प्रक्रिया का उत्तराधिकारी है।"देश के लोग कहते हैं कि यह सम्भव है क्या? आधुनिक समय की समस्याओं के साथ 'रेलिवेंट' कहाँ है? ठीक है, 'रेलिवेंट' नहीं है तो काम नहीं चलेगा। पर दण्डशक्ति से आज की समस्या का उत्तर मिल रहा है? क्यों दण्ड-निरपेक्ष शक्ति की माँग है?..."जिसे वर्षों से लोकतंत्र द्वारा सिद्ध किया है, उस जन को आप अब डंडे से मनाना चाहते हैं। कैसे मनाया जा सकेगा?"

कोई क्रान्तिकारी क्रान्ति सिद्ध कर नहीं करता है। क्रान्ति कोई समाज कर नहीं सकता है। सम्भावना प्रकट करता है। विनोबा जी ने यह किया है।

आपसे प्रार्थना है कि जहाँ तक सम्भव हो उनके काम में सहयोग करें।"

एस० एम० जोशी

"विनोबाजी का जन्मदिन मनाने इकट्ठे हुए हैं तो मेरे मन में जो विचार है उन्हें संक्षेप में रखता हूँ। "धीरेन्द्र भाई ने जो कहा वही हमें सोचना है कि विनोबाजी जो कह रहे हैं उसका 'रेलिवेंस' क्या है?" पिछले दिनों राजधानी में एक अखबारवाले ने मुझसे पूछा कि गांधी आज की परिस्थिति में कितना 'रेलिवेंट' है? मैंने कहा कि आज वह जितना 'रेलिवेंट' है उतना तो तब भी नहीं था जब वह था। ऐसा मैं मानता हूँ।"'स्थिति दिन-प्रति दिन खराब होती जा रही है। विस्फोटक अवस्था है। आज यदि कुछ नहीं हुआ तो क्या है विनोबा का 'रेलिवेंस'?"

"मैंने विनोबाजी को थोड़ा समझा है, पूरा समझा है यह दावा तो नहीं करता, पर जितना समझा है उससे मैं कहना चाहता हूँ कि जब स्थिति इतनी बुरी है, जब जनता सड़कों पर उतर आती है तब हम अलग काम करते रहें, यह क्या 'रेलिवेंस' है? [भीड़ के कोनों से छिट-पुट तालियाँ बजीं।] आज तो उदासीनों को भी उदासीनता छोड़कर नेतृत्व करने आना चाहिए।"' मैं सर्वोदयवालों को चुनाव लड़ने के लिए नहीं कहता।" मैं तो उस राजनीति में रहा हूँ"'स्काउन्ड्रल्स' की जमात में रहा हूँ। अब आपसे कहता हूँ कि जिनका नैतिक अधिष्ठान है समाज में, उन्हें आगे आना चाहिए। विनोबाजी की उम्र ज्यादा हो गयी है। अब वे नहीं कर सकते, मार्गदर्शन दे सकते हैं। पर क्या दूसरे लोग जो हैं वे भी बैठे रहेंगे? [तालियाँ] लोगों का प्रबोधन नहीं होगा तो क्या होगा?"'

"'" *जब हम कमरे में बैठकर गांधी* के 'रेलिवेंस' की चर्चा करते हैं तो हम खुद 'इररेलिवेंट' हो जाते हैं।"'अच्छे लोगों को मैदान में आना चाहिए और उदासीनों को लाना चाहिए।"

जयप्रकाश नारायण

"इस पुनीत अवसर पर इतने लोग इकट्ठे हुए हैं यह उत्साहवर्द्धक है।.. इतने लोगों की आशा मुझे नहीं थी।

" पूज्य विनोबाजी से मैं आठ वर्ष छोटा हूँ। मेरे सामने बहुत बड़ी समस्या है आज। उत्तर देने का समय नहीं है। *जीवन के अन्तिम दिन हैं।*"' इसलिए, कुछ सद्-गृहस्थों को भी इसमें लगा देखता हूँ तो मुझे इतना समाधान होता है कि भविष्य अच्छा है।" परिस्थिति का ठोस मुकाबला हो ऐसा लोग आपसे, सर्वोदय-जमात से चाहते हैं, ऐसा एस० एम० आई की बात से और छिटपुट हुई हर्षध्वनि से लगता है।

.. कहते हैं कि गांधी मर चुका है आज की परिस्थिति में। मुझसे पिछले दिनों 'इलेस्ट्रेटेड विकली' ने इन्टरव्यू में यही पूछा। छपेगा तो आप पढ़ेंगे।"' समस्याएँ बहुत हैं—आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक और भी बहुत सारी बातें हैं।" अब गांधी को कई लोग यन्त्र-विरोधी कहते हैं, कि वह तो सिर्फ चरखा-तकलीवाला था। तो *यह तो बिलकुल गलत बात है।*"' विज्ञान और यांत्रिकी का जहाँ खूब विकास हुआ है, वहाँ सन्दूषण की इतनी भयंकर परिस्थिति पैदा हुई है!' वहाँ गांधी याद आ रहा है। उसने तो बहुत पहले कहा था कि मशीनों पर कल्याणकारी नियन्त्रण नहीं रहा तो मनुष्य के लिए कोई उपाय नहीं रहेगा। आज जो स्थिति है उसमें वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ५० नहीं तो १०० वर्षों में मनुष्य का रहना असम्भव हो जायेगा।"'

आज सबेरे एस० एम० से देर तक चर्चा हुई। आज वह पक्ष-मुक्त हैं। किस दल में जायें इसके लिए बहुत जोर पड़ रहा है इन पर। मैंने उन्हें सलाह दी है कि *जो सक्रिय राजनीति में हैं* उन्हें ६५ वर्ष के बाद तो रिटायर होना ही चाहिए।"'अनुभव की कमाई के साथ जन-जागरण के काम में शक्ति लगानी चाहिए।"'एस० एम० मुझसे तीन साल छोटे हैं। तो मुझे आशा है कि एस० एम० फिर से *उस मोह-जाल में नहीं* फसेंगे।

"'"*समाजवादी पार्टी में जब मैं* था तो 'गरीबी मिटाओ' पर पुस्तक लिखी थी मिलकर। 'गरीबी हटाओ' से 'गरीबी मिटाओ' ज्यादा 'रेलिवेंट' है। हटाने से अच्छा तो मिटाना ही है, खत्म करना है।" पर हमने तो यह बाद में कहा। गांधी ने कहा था कि इसकी शुरुआत तो अन्त्योदय से ही होगी। नेहरू के नेतृत्व में देश ठीक इसकी उल्टी दिशा में गया। गांधी के बड़े बड़े मित्र सरदार, राजेन्द्र बाबू और तब राजाजी भी थे, कोई गांधी के रास्ते पर तो नहीं चला। "नारा गूँजता रहा, पर काम नहीं हुआ। '*बिल्डिंग फ्रॉम बिलो*' कहते हैं तो किधर से शुरू करना है? *प्लान ऊपर से आता है और ऊपर ही* चला जाता है। नीचेवाले स तो पूछा ही नहीं। 'पावर्टी लेवल' (गरीबी की सीमा) से नीचे करीब आधे लोग आज हैं इस देश के। "अब इस परिस्थिति में रास्ता क्या है?

"एक तो हर्ष-ध्वनिवाला मार्ग अपनाकर, राज्य पलटने और वहाँ जाकर बैठने का रास्ता है। तो क्या होगा? क्या किया वहाँ रहकर सरदार और राजेन्द्र बाबू ने? मैं उनसे अधिक गांधी को समझता हूँ यह तो कह नहीं सकता। हम ही वहाँ पहुँचकर क्या करेंगे?

"" *अब हर पार्टी अपनी हमदर्दी* जताती है मजदूरों से। हड़ताल होती है। मजदूरी बढ़ती है। फिर दाम बढ़ता है। फिर मजदूरी बढ़ती है। फिर दाम बढ़ता है। नोट छपता है।"'आखिर इस रास्ते से कहाँ जा रहे हैं हम!"'*ठीक है कि* मजदूर की और बुद्धिजीवी की मजदूरी बराबर हो। श्रम का मूल्य एक माना जाय।" पर जरा, खेत के उस मजदूर की मजदूरी से *तुलना कीजिये! कितना* मिलता है उसे? दो मजदूरों की मजदूरी में कितना बड़ा अन्तर है?" गांधी का एक विचार था जो साम्यवाद और समाजवाद से भी आगे ले जानेवाला था, ट्रस्टी-

शिप का सिद्धान्त। मजदूर अपनी मेहनत का ट्रस्टी, मालिक अपने धन का ट्रस्टी।... पर बात समझ में आती नहीं है।...

"काम बहुत है। ये झुग्गीवाले हैं। आदमी के रहने की जगहें हैं ये? अब एक आदमी आगे आये। उनसे कहे कि अपने लिए एक घण्टा निकालो। अपनी सहायता आप करो तो हम तुम्हारी सहायता करेंगे।...

"अरविंद गफ्तलाल से बातें हुईं। वे कुशल व्यापारी हैं, उत्साही हैं और उम्र भी कम है। उनकी बातें सुनकर मैं दंग रह गया। उन्होंने कहा कि वे गाँवों के लिए योजना बना रहे हैं और ऐसी स्थिति बना देंगे कि लोग यहाँ से गाँवों को जाने के लिये मजबूर हो जायेंगे। इन्हें यहाँ रहना कठिन हो जायेगा।

"...वे कम-से-कम २० लाख लोगों को यहाँ से ले जाने की योजना रखते हैं। अब गाँवों की योजना बने, उनके यहाँ जो सम्भावनाएँ हैं उनका पूरा उपयोग हो तो वे खड़े हो सकेंगे।. हम गाँव के विकास की समस्या में उलझ जाते हैं, चूँकि वह काम आपका है। आप उसके जानकार हैं।...अब जरूरत ऐसे ही स्वप्नदर्शी लोगों की है जो कुछ करने की सोचें और उसे पूरा करें।"

हॉल में साहित्य-बिक्री की व्यवस्था थी, जहाँ से सौ रुपये से ज्यादा का साहित्य बिका। —कुमार प्रशान्त

दिल्ली

दिल्ली सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में विनोबा-जयन्ती का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस समारोह में श्रीमती कौशल्या मणिक, सरदार श्री दर्शन सिंह, श्रीमती पद्मा श्रीवास्तव, श्री शान्तिलालजी, श्री कृष्ण चन्द्र महाशय, रहानी सत्संग की माताजी, श्री सुरजीत सिंह, श्री वसन्त व्यास ने विनोबाजी के ग्राम-स्वराज्य-विचार के लिए उनकी प्रशंसा की और उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। समारोह के अध्यक्ष पद से बोलते हुए सुप्रसिद्ध विचारक श्री जैनेन्द्र कुमार ने विनोबा को वर्तमान विश्व की नैतिक शक्ति का प्रतिनिधि बताया। स्थिति परिवर्तन के लिए मानस परिवर्तन की आवश्यकता बताते हुए उन्होंने कहा कि विनोबाजी ने इसी को क्रान्ति का मुख्य साधन माना है। विनोबाजी के कई विचार और कार्य आनेवाली नयी समाज-रचना की आधार शिलाएँ बनेंगी। श्री हरिकिशनलाल ने अन्त में धन्यवाद दिया और श्रीमती सत्या बहन तथा सरदारीलाल ने सबका आतिथ्य किया।

ग्वालियर

ग्वालियर। जिला सर्वोदय मण्डल ग्वालियर के तत्वावधान में आयोजित विनोबा-जयन्ती के अवसर पर ११ सितम्बर की संध्या को विचार सगोष्ठी में प्रमुख वक्ता के रूप में बोलते हुए वेड़छी आश्रम, गुजरात के तपस्वी साधक श्री बबलभाई मेहता ने भूदान-ग्रामदान आन्दोलन व त्रिविध कार्यक्रम की पृष्ठभूमिका प्रस्तुत की।

इस अवसर पर जिला संयोजक श्री गुरुशरण ने गत वर्ष के काम का विवरण देते हुए कहा कि ११ सितम्बर से विधिवत कार्यालय शुरू हो जाने से अब काम में गति आयेगी। कार्यालय पर सर्वोदय स्वाध्याय योजना तथा सर्वोदय सहयोगी एवं सर्वोदय मित्र बनाने का अभियान सघन रूप से चलेगा। आचार्यकुल और तरुण शान्तिसेना आदि सभी सर्वोदय प्रवृत्तियों का यह केन्द्र रहेगा। सर्वोदय-साहित्य की बिक्री और घर-घर चलते-फिरते पुस्तकालय की भी व्यवस्था कार्यालय से की गयी है।

सर्वोदय सहयोगी के रूप में वर्ष भर के लिए १११ रु० श्री भुवनकिशोरजी ने श्री बबलभाई को भेंट किया। सभा में उपस्थितजनों ने अपने-अपने विचार प्रकट किये। श्री रहुवीरदार सिंह भी सभा में उपस्थित थे।

मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने श्री बबल भाई का परिचय दिया और अध्यक्षीय भाषण के रूप में सर्वोदय विचार की व्याख्या की। अन्त में एडवोकेट श्री जयदीपचन्द्र वटियार ने आभार प्रकट किया

पटना

पटना। स्थानीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन भवन में ११ सितम्बर को संत विनोबा की ७८ वीं जयन्ती मनायी गयी। इस अवसर पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता श्री ध्वजा प्रसाद साहु ने की। *समारोह का उद्घाटन अ० भा० खादी ग्रामोद्योग आयोग के उपाध्यक्ष श्री टी० एस० भारदे ने किया।*

समारोह में व्याख्यान देते हुए बिहार के मुख्यमंत्री श्री केदार पाण्डेय ने कहा कि देश की ४० प्रतिशत जनता और बिहार की ६० प्रतिशत जनता गरीबी की सीमा रेखा से नीचे की जिन्दगी जी रही है। मदद की सबसे ज्यादा जरूरत इन्हें है, लेकिन मूक होने के कारण वे उपेक्षित हैं। गरीबों की सीमा के ऊपर के जीवन वाले लोग वाचाल होने के कारण योजना और विकास का ज्यादा से ज्यादा लाभ स्वयं उठा लेते हैं और अन्तिम व्यक्ति की चिन्ता नहीं करते। इस दुःखद स्थिति को बदलना आवश्यक है।

इस अवसर पर बिहार सर्वोदय कोष का शुभारम्भ हुआ। मुख्यमंत्री श्री केदार पाण्डेय ने कोष में १,००१ रुपये का दान दिया। इनके अतिरिक्त सर्वोदय सेवकों ने अपनी ओर से ५४६ रुपये का दान अर्पित किया। यह कोष बिहार के सर्वोदय आन्दोलन के लिए है। संग्रह-कार्य की अवधि कस्तूरबा पुण्यतिथि ता० २२ फरवरी '७३ तक मानी गयी है। पाँच लाख रुपये संग्रह करने का निश्चय बिहार सर्वोदय कोष समिति ने किया है।

राँची

राँची। जिला ग्राम स्वराज्य समिति के तत्वावधान में करबला टैंक रोड स्थित कार्यालय भवन में ११ सितम्बर को संत विनोबा का ७८ वां जन्मदिन सादगी के साथ से सम्पन्न हुआ।

सर्वोदयमित्र और सर्वोदय सहयोगी बनाने का संकल्प लिया गया।

बिहार में आन्दोलन की गतिविधि

मुजफ्फरपुर

मुशहरी प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य सभा की कार्यसमिति की बैठक ता० ३ अगस्त को हुई। इसमें जे० पी० भी शामिल थे। बैठक में अबतक के हुए कार्यों की समीक्षा आगे के कार्य के स्वरूप तथा उसकी योजना एवं विकास-सम्बन्धी कार्यक्रमों पर विचार किया गया। बिहार तरुण शान्ति सेना समिति के मंत्री श्री नवल किशोर सिंह के नेतृत्व में ता० १५ अगस्त से ३१ अगस्त तक पदयात्रा टोली का कार्यक्रम इसी क्षेत्र में चला। टोली में तरुण शान्ति सैनिक और ग्राम शान्ति सैनिक भी शामिल थे। ग्रामसभाओं के शिक्षण, ग्रामकोष निकालने तथा ग्रामसभा के रजिस्टर व्यवस्थित रखने के सम्बन्ध में जानकारी दी गयी। इस पदयात्रा का एक विशेष उल्लेखनीय अनुभव यह रहा कि महिलाएँ भी बैठकों में भाग लेती थीं। महिला-मण्डल का गठन किया गया है।

छतरपुर

विनोबाजी के ७८ वें जन्म दिवस के उपलक्ष में गांधी स्मारक भवन एवं जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-समिति, छतरपुर (म० प्र०) के संयुक्त तत्वावधान में प्रभातफेरी, श्रमदान सफाई, सामूहिक प्रार्थना एवं सभा का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। गांधी-सेवा-समिति के कम्पाउण्ड की सफाई की गयी। कई विद्वान वक्ताओं ने विनोबा के जीवन एवं भूदान, ग्रामदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन तथा अहिंसक क्रान्ति के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए सन्त के प्रति अपनी श्रद्धा समर्पित की।

ता० ८, ९ और १० अगस्त को खादी सदन नरसिंहपुर में विद्यासागर भाई के अभिक्रम से आध्यात्मिक चर्चा गोष्ठी हुई। प० श्री रामनन्दन मिश्रजी का उद्बोधक मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। गोष्ठी में ३० व्यक्ति शामिल हुए।

दरभंगा

ता० ५, ६ और ७ अगस्त को कपिलेश्वर स्थान में जिला के कार्यकर्ताओं का सहजीवन शिविर आयोजित हुआ। पिछले कार्यों की समीक्षा की गयी। संगठन को सबल बनाने, भाईचारा का विकास करने तथा प्रखण्ड स्तर की कार्य-योजना पर विचार हुआ और तदनुसार कार्य-प्रारम्भ किया गया है।

सदर अनुमंडल में २९ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई।

गया

कोआकोल प्रखण्ड के अन्तर्गत सघन पुष्टि-कार्य चल रहा है। ग्राम मधुरापुर उत्तरी धमनी में २ एकड़ ५४ डिसमिल जमीन बीघा-कट्ठा मजदूरों में बँटी और मननपुर में ग्रामसभा का गठन हुआ।

वारासगंटी प्रखण्ड में ९४७० रु० का साहित्य बिका। उच्च माध्यमिक विद्यालय, सकरदास, नवादा में जिला तरुण शान्तिसेना का शिविर हुआ। बीस तरुण शान्ति सैनिकों ने भाग लिया। गया में ता० २७ अगस्त को तरुण शान्ति सेना की बैठक हुई।

इस अवसर पर जिले के गुरसारी गाँव के एक भाई ने २.३५ एकड़ का भूदान उसी गाँव के एक हरिजन भाई को देकर घोषणा की और लिखित दान-पत्र भर लिये गये। —शिवनाथ शर्मा

मथुरा

मथुरा (उत्तर प्रदेश) में विनोबा-जयन्ती मनायी गयी। प्रभातफेरी, सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक सूतयज्ञ, मानस प्रवचन का आयोजन किया गया। इसके अलावा चम्पा अग्रवाल इण्टर कालेज में एक गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसमें विनोबाजी के कार्यों की चर्चा हुई। गोष्ठी की अध्यक्षता श्री वा० व्रजगोपालजी भाटिया ने की। —शिवनारायण शास्त्री

सारण

ता० २७ अगस्त को जिले के कार्यकर्ताओं की बैठक हुई, जिसमें जिला में हुए अबतक के कार्यों पर चर्चा की गयी। बैठक में श्री सर्वनारायण दास तथा कैलाश प्रसाद शर्मा ने प्रान्तीय संगठन के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया।

पलामू

श्री परमेश्वरी दत्त झा द्वारा भूदान यज्ञ में दी गयी १६ एकड़ जमीन का १२ आदाताओं में वितरण किया गया। भूदान की वितरित भूमि पर हुई बेदखली के निराकरण की कोशिश हुई।

पटना नगर

बिहार सर्वोदय मण्डल गठन समिति की बैठक २० अगस्त को पटना में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अध्यक्षता में हुई। बैठक में प्रस्तावित बिहार सर्वोदय मण्डल के स्वरूप पर चर्चा हुई और इसके लिए एक विधान-निर्माण-समिति गठित की गयी।

बिहार सर्वोदय कोष समिति की बैठक श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अध्यक्षता में ता० २१ अगस्त को हुई। कोष-संग्रह की योजना स्वीकृत हुई। तय पाया कि विनोबा जयन्ती ता० ११ सितम्बर से कोष-संग्रह का शुभारम्भ किया जाय और संग्रह की अवधि कस्तूरबा पुण्य-तिथि ता० २२ फरवरी ७३ तक निश्चित हुई। पाँच लाख रुपये संग्रह करने का निश्चय किया गया। तदनुसार योजना शुरू हो गयी है।

वाणी मन्दिर का रजत-जयन्ती समारोह

जयपुर, १३ सितम्बर। स्थानीय वाणी मन्दिर द्वारा साहित्य-सेवा के पच्चीस वर्ष पूर्ण करने के उपलक्ष्य में आगामी

भूदान-यज्ञ २५-९-'७२ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं०_एल. १३४

माह रजत-जयन्ती-समारोह मनाने का निश्चय किया गया है। इस समारोह के अन्तर्गत साहित्य प्रदर्शनी, स्मारिका प्रकाशन विचार-गोष्ठी तथा सभा-सम्मेलन के आयोजन किये गये हैं। समारोह समिति के संयोजक श्री जवाहिरलाल जैन हैं।

थाना जिले में सघन ग्रामदान-कार्य

ज्ञात हुआ है कि महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल की कार्यकारिणी ने राज्य के थाना जिले को सघन ग्रामदान-कार्य के लिए चुना है। आचार्य विनोबा भावे ने सलाह दी है कि महाराष्ट्र के नब्बे प्रतिशत कार्यकर्ता अपनी सामूहिक शक्ति जिले थाना में ग्रामदानोत्तर पुष्टि-कार्य में लगावें। महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल ने बाबा की सलाह मान ली है और उस दिशा में कार्य की शुरुआत भी कर दी है।

लोकयात्रा
अब तक १२,३०० मील की पदयात्रा सम्पन्न

अखिल भारत महिला लोकयात्री दल द्वारा अब तक १२,३०० मील की पदयात्रा सम्पन्न हो चुकी है। आचार्य विनोबा भावे की प्रेरणा और आशीर्वाद से सुश्री प्रेम भगवानी, लक्ष्मी फुकन, निर्मल वेद और दर्पो सीसवानी ने २५ अक्तूबर, १९६५ को कस्तूरबाग्राम (इन्दौर) से इस महिला लोकयात्रा की शुरुआत की थी। महिला लोकयात्रा का उद्देश्य १२ वर्ष तक भारत-भ्रमण करते हुए स्त्री-शक्ति जागरण एवं अभ्युत्थान के लिए सन्देश देना है। यह उल्लेखनीय है कि ७ राज्यों में भ्रमण पूरा करने के बाद लोकयात्रा आजकल महाराष्ट्र राज्य में चल रही है। महाराष्ट्र में भी धुलिया, नासिक, थाना, बम्बई, कोलाबा, पूना और अहमदनगर जिलों की पदयात्रा पूरी करते हुए लोकयात्री दल आगामी १८ सितम्बर को बीड़ जिले में प्रवेश करेगा। प्राप्त जानकारी के अनुसार महिला लोकयात्री बहनों का उत्साह बढ़ता जा रहा है।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन : सेवाग्राम में

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन का आयोजन दिनांक १४, १५ और १६ अक्तूबर १९७२ को नयी तालीम समिति (सर्व सेवा संघ) और वर्धा शिक्षा मण्डल के संयुक्त तत्वावधान में सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) में किया जा रहा है।

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने १४ अक्तूबर को ११-३० बजे इस सम्मेलन का उद्घाटन करना स्वीकार किया है। सम्मेलन के समय आचार्य विनोबा भावे के भी शैक्षणिक विचारों को सुनने का अवसर प्राप्त होगा। केन्द्र के शिक्षा मन्त्री, सभी राज्यों के शिक्षा मन्त्रियों, अधिकांश उपकुलपतियों, प्रमुख शिक्षा-शास्त्रियों, गणमान्य सर्वोदय विचारक एवं बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में काम करनेवाले प्रमुख कार्यकर्तागणों को इस सम्मेलन में भाग लेने और चर्चा करने के लिए आमन्त्रित किया गया है। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य प्राइमरी स्तर से लेकर विद्यालय स्तर तक की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में आमूल परिवर्तन करने के बारे में विचार-विमर्श करना है जिससे इसे राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुरूप अधिक उद्देश्यपूर्ण और उत्तरदायी बनाया जा सके।

पत्र-व्यवहार का पता :

सर्व सेवा संघ, पत्रिका-विभाग

राजघाट, वाराणसी-१

तार, सर्वसेवा फोन : ६४३९१

सम्पादक

राममूर्ति

इस अंक में

वार्षिक शुल्क । १० रु० (सफेद कागज । १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २५ रु०; या ३० शिलिंग या ४ डालर
एक अंक का मूल्य २० पैसे । श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित